

जाननेवालोंने सिमिली द्वीप और विलायतके कर्ण-
वालकी प्राचीन कामिनेरो देश माना है। यद्यपि
अब भी कर्णवाल नामक स्थानमें खानमें जितनी टोन
निकलती है उतना यूरोपके और किसी दूसरे स्थानमें
नहीं निकलती।

प्राचीन कालमें आर्य श्रद्धा लोग अथवा फिनिकोय
सगिक्, लोग टीनसे कौन चीज बनाते थे, उसका कोई
साक्षात् प्रमाण नहीं मिलता। यद्यपि टोनकी जड़रत पड़ती
थी, या इस लोहाकी यलुबंदसे पता लगता है। स्थितिमें
त्रपुको गिनती मूल्यवान् वस्तुमें की गई है। टोन और
तंबाकी एक साथ मिलानेसे कासा बनता है, यह भी
भारतवासी बहुत प्राचीन कालसे जानते हैं।

इजिप्ट, धारधार, गुजरात और मध्यभारतके
बस्तार राज्यमें कई जगह टोन पत्थर (Tin stone)
पाया गया है। किन्तु अच्छी टोन कहीं भी नहीं
मिलती। ब्रह्मदेश, मलयप्रायद्वीप, यवद्वीप और
शानमें त्रपुको खान मिलती है जिनमेंसे मलयप्रायद्वीप
की खान संसारमें प्रसिद्ध है। इतनी टोन और कहीं
नहीं मिलता। प्राचीन कालमें यहाँसे भारतवर्षमें त्रपु
भेजा जाता था। यहाँके तावय नगरमें १५८१ ई०के
प्रसिद्ध भ्रमणकारी राफकिथ आकर यहाँ लिख गये हैं—

I went from Pegu to Malacca, passing
many of the sea-ports of Pegu, as Martaban,
the island of Tavoy; whence all India is sup-
plied with tin, Tenasserim, the island of Junk
Ceylon, and many others.

अब भी मलयमें भारतवर्षमें टोन पाता है। यहाँमें
टोनकी प्रति वर्ष १२०१६ लाख रुपयेकी रकतनी
होती है।

त्रपु खानके भीतर दो अथवा दोमें रहता है।
कभी कभी यह सिक्ताखन, तबि और मोसे आदि
साथ चिमटा रहता है। इसकी टोन-लोह कटते हैं।
इसकी गन्ना कर परिष्कार करनेमें टोन-आ टुकड़ा बनता
है। दूसरी अवस्थामें यह आलू आदिसे साथ मिश्रित
रहता है, इसकी गिनती पछत्तिम टोनमें की गई है।

त्रपुक्कट्टी (मं० खो०) १ त्रपुपो, ककड़ी। २ ममा,
खीरा।

त्रपुटी (मं० खो०) मुन्नेमा, छोटी इलायची।

त्रपुन (मं० खो०) अति अमिश्रणमें मज्जते इस
अप-वाह-उमच्। रङ्ग, रंग।

त्रपुव (मं० खो०) अ-वाह-उम। १ रङ्ग, रंग। २
त्रपुपो फल, खीरा। पर्याय—कण्टकिल, सुधा-
वास और सुगीतन। छोटी फलके गुण—नील, बल,
लवणा, भ्रम, दाह, पिप्प और रक्तपित्तनाशक। यह
फलके गुण—मज्ज, लवण, पित्तल, कफ और वातनाशक।
बड़े फलका गुण—सुवन, गोत, रुच, पिप्प और
अस्त्रकषणनाशक।

त्रपुपत्तेन (मं० खो०) त्रपुवोजतेन, खीरेका तेल।

त्रपुपो (मं० खो०) त्रपुव गोरा, डीप्। १ ककटो,
ककड़ी। २ त्रपुव, खीरा।

त्रपुम (मं० खो०) अ-वाह-उमकात् उम। १ रङ्ग, रंग।
२ ककटो, ककड़ी।

त्रपुमा (मं० खो०) त्रपुपो, महेन्द्रवारणो, बड़ा इन्दा-
यण।

त्रपुमो (मं० खो०) त्रपुव गोरा डीप्। १ महेन्द्रवारणो,
बड़ा इन्दायण। २ फल लताविशेष, गोरा (Cucum-
ber)। पर्याय—पोतपुगा, काण्डासु, त्रपुक्कट्टी, अ-
फला, कोपफला, सुन्दलफला, कण्टकीलता, सुधावामा।
गुण—यह रुच, मधुर, मिश्रित, शुद्ध, भ्रम, पिप्प,
विदाह और अमननाशक है। (रात्रि०) इसकी दो जाति
है, एक ती भूमिचारिणी पर्यात् जमोन-पर फलने वाला
और दूसरी मध्यवारिणी पर्यात् मचान वा दोवार पर
फलनेवाली। भूमिचारिणीका फल छोटा और मोटा
होता है। एवं मीतजानमें पोषकान तक रहता है।
मध्यवारिणीका फल लम्बा और साध ही साध मोटा भी
होता है। किसीका फल मकेट और किसीका मज्ज
रंगका दिखनेमें पाता है। इसकी तरकारी भी
बनती है, परन्तु अधिकतर लोग इसे नमक मिर्चके साथ
कषा हो खाते हैं। इसके बीज दुबके काममें पाता
है। फल और बीजोंको तासोर उग्रो होती है। इसके
भीतरमें अमला अंग पाया जाता है, इसी कारण लोग
इसे खीरा वा खीरा कहते हैं। यह फल यहाँसे ले कर
भारतकाल तक पाया जाता है। १ ककड़ी।

तत्त्वादि (मं० पु०) रक्षादि सप्त धातु, रांगा इत्यादि ज्ञात धातुओंके नाम, जैसे—रांगा, मोसा, तांवा, चाँदो, सोना, काला मोहा, लोहकी मैस ।

वप्सा (सं० स्त्री०) घनोद्भूत स्त्रीधादि, जमो हुई स्त्रीधा या कफ ।

वयस्य (सं० स्त्री०) घनेतर दधि, पतला दही ।

वय (सं० स्त्री०) त्रि-तयप् । १ त्रितय, तोन युक्त । २ त्रित्व संख्या युक्त । तीसरो संख्या ।

वयःपञ्चाशत् (सं० स्त्री०) १ वयधिकपञ्चाशत्, तिरपन ।

वयशाय्य (सं० पु०) वयं जन्मवयं याति या बाहु० धाय्य । जन्मवयप्रप्त, वह जिसने तीनों प्रकारके जन्म पाये हैं । तीनों जन्मके समय साष्टगर्भसे जन्म तक प्रथम, मौलिवन्धन अर्थात् उपनयन संस्कार द्वितीय और यज्ञदीक्षा तृतीय ।

वययत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) वयधिका चत्वारिंशत्, त्रिगदस्य वयस् पादेषः । वह संख्या जो चालीससे तीन अधिक हो, तैंतालीस ।

वयःपटि (सं० स्त्री०) वयधिका पटिः । वह संख्या जो साठ और तोनके योगसे बनो हो, तिरैसठ ।

वयम् — आदेय विधेय, अथोति शब्द और बहुव्रीहि समास के सिवा मंख्यावाचक उत्तरपद पर रहने का त्रि शब्दके स्थानमें वयस् होता है । यथा वयोदश आदि । अथोति शब्द पर रहने पर नहीं होता है । यथा—व्रथोति । (पा ६।१।४८)

वयस्त्रिंश (सं० त्रि०) वयस्त्रिंशत् पूर्ण-डट् । जो तीसरे तीनःअधिक हो ।

वयस्त्रिंशत् (सं० स्त्री०) वयधिका त्रिंशत्, त्रि शब्दस्य त्रयम् पादेषः । वह संख्या जो तीस और तोनके योगसे बनती हो ।

वयस्त्रिंशत्पति (सं० पु०) वयस्त्रिंशत् देवानां पतिः । १ इन्द्र । वेदमें ३३ देवताओंकी कथा है, उनमें इन्द्र सबसे बड़े माने गये हैं, अतः इन्द्रका नाम वयस्त्रिंशत्पति हुआ है । २ प्रजापति । ये देवताओंके अधिपति हैं, अतः वयस्, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य ये एकत्रिंशत् इन्द्र और प्रजापति ये वयस्त्रिंशत् हुए ।

(उत्तरपत्रा १११११३)

वयस्त्रिंशत्तोम (सं० पु०) वयस्त्रिंशत्तोमो अयम् । वृषभेद, एक प्रकारका यज्ञ ।

वयस्त्रिंशत् (सं० स्त्री०) वयस्त्रिंशत् ऋचः सत्यस्मिन् इति डिट् । वयस्त्रिंशत् ऋक् द्वारा गोयमान साम-

भेद, वह साम जो ३३ ऋकों द्वारा गाया जाता है ।

वयःममति (सं० स्त्री०) वयधिका ममतिः । तीन अधिक सत्तर, त्रिदत्तरको संख्या ।

वयो (सं० स्त्री०) वय-डोप् । ऋक्, यजुः और साम ये तीनों वेद । ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर । सगं के आदिमें ऋङ्मय ब्रह्मा, स्वर्गस्थितिमें यजुर्मय विष्णु, स्वर्ग नाशमें नाममय रुद्र ये ही वयो हैं । २ पुरुषो, पति पुत्र कन्या आदिसे भरो पूरा स्त्री । ३ सुमति । ४ सोमराजी स्त्रता । ५ भवानो, दुर्गा ।

वयोतनु (सं० पु०) वयो वेदो एष तनुः शरीरं यस्य । सूर्य । समस्त वेद सूर्यसे प्रचारित हुए हैं । इसीसे सूर्य का नाम वयोतनु पड़ा है ।

वयोधर्म (सं० पु०) वयस्य वेदत्रयेण विधेयमानो धर्मः । वैदिक धर्म, जैसे ज्योतिषोम यज्ञ आदि ।

वयोमय (सं० पु०) वयोधर्मकः मयट् । १ सूर्य । (त्रि०) २ वयोधर्मात्मक । ३ वैराहस्प । (पु०) ४ परमेश्वर । (नाग० २।४।१७)

वयोमुख (सं० पु०) वयो मुखे यस्य । ब्राह्मण ।

वयोदश (सं० त्रि०) वयोदशानां पूरणः वयोदशान् डट् । वयोदश संख्याका पूरण, तेरह ।

वयोदशचारित्र्य (सं० स्त्री०) जैनधर्मानुसार सुनियोंके लिए अवश्य पालनीय तेरह चारित्र्य । यथा—(१) पूर्ण चर्हिना, (२) पूर्ण सत्य, (३) पूर्ण अचौर्य, (४) पूर्ण ब्रह्मचर्य, (५) पूर्ण परिग्रहत्याग, (६) मार्ग संशोधनपूर्वक गमन करना, (७) मिष्ट, हितकर, मार्जित और संदेह रहित वचन बोलना, (८) दिनमें एक बार निर्दोष और अनुद्विष्ट पाछार ग्रहण करना, (९) शरीर, शब्द, क्रम-शत आदि उपकरणोंको मैत्रीसे देख कर रखना और रक्षाना, (१०) वस और स्वाधर किसी भी प्रकारके क्रोध की पोढ़ा न हो, ऐसी शृङ्ग प्राणिरहित भूमि पर मनमु-त्तादि चेषण कर प्रासुक ललने शीचक्रिया करना, (११) मनकी (१२) वचनकी और (१३) कायकी पूर्ण रूपसे वशमें करना या रोकना । जैनधर्म देखो ।

हिन्दी विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेंद्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहापेंथ,

विद्याल-वारिधि, सङ्ग्रहालय, तत्त्वचिन्तामणि, एम. कार, प, दस,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्गठित ।

दशम भाग

[तोक्नि-दादयमास]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. X.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, *Prāchyavidyāmahārṇava*,
Siddhanta-vāridhi, *Sabda-ratnākara*, *Tattva-chintāmaṇi*, M. R. A. S.

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of *Bangla Sahitya Parichay*
and *Khyashta Patrika*; author of *Castes & Sects of Bengal*, *Mayura*
bhanga, *Archæological Survey Reports* and *Modern Buddhism*;
Hon. *Archæological Secretary*, *Indian Research Society*,
Member of the *Philological Committee*, *Asiatic*
Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by P. C. Bose, at the Visvakosha Press.
Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu
5, Visvakosha Lane, Esplanade, Calcutta.

1925.

त्रयोदशदीर्घ (मं० पु०) जैन-भाष्यानुसार वे तैरह दीर्घ जिनमें पक्षयिज जिनमन्दिर है। अम्बुधातकोमण्ड, पुष्करवर, धारणीवर, मोरवर, छतवर, चौद्वर, नन्दी-मर, चरुणवर, चरुणभामवर, कुण्डलवर, गहवर और कृषिकार इन तैरह दीर्घोंमें पक्षस्थित जिन मन्दिरोंको पटाङ्किकापर्वमें पूजा की जाती है।

त्रयोदश (मं० त्रि०) त्राधिका दश। यह मंख्या जो तीन और दशके योगमें बनती हो, तैरहकी मंख्या यह शब्द नित्य बहुवचनः सः है। २ त्रयोदश मंख्यायुक्त, किमो समय तैरह यज्ञोक्तिका संवत्सर होता है। मन्मथ होने पर तैरह मशीनेका वर्ष होता है।

त्रयोदशवाचकशब्द—१ पचपञ्चतिश, २ इन्द्रिया-निपट, ३ चमरधरता, ४ चमा, ५ लज्जा, ६ तितिया, ७ चनघुया, ८ श्याम, ९ मरुता, १० ध्यान, ११ दैर्घ्य, १२ दया, १३ चर्हिना ये हो सब स्वरूप हैं। (भारत संहिता ११२ व०)। त्रयोदश दीर्घ—१ काम, २ मोक्ष, ३ मोक्ष, ४ मरु, ५ मात्मन्य, ६ दैर्घ्य, ७ शोक, ८ निद्रा, ९ पकार्यपहति, १० चमूया, ११, छपा, १२ भय, १३ प्रति-विधानिच्छा। (भारत संहिता ११२ व०)

त्रयोदशगुणगुण (मं० पु०) गुणगुण चोपधर्मेट। इसको प्रमुखप्रणाली—वर्द्ध, चरुणभा, चरुणा, गुलच, यतमूली, मोक्ष, राधा, श्यामासता, गुलका, गठो, यवानी और गुण्टी इनके समान भागोंकी चूर कर जितना हो चतना हो गुणगुल और गुणगुलवे आधा हो मिश्रः वे बाद १ तोना भातःकान जन, यूप, मय, चयुजन, दुध वा मांसम इनमेंमें किमो एकके माय सेवन करने-से विकशुल, जागुगुल, चरुणभा, बाहुगत वात मभि, पक्षिखानु और मज्जागत वात कोडगत वायु, वात शैलिक रोग, वायुके कारण जठोग और योनिरोग, भग्नस्थि, भग्न, चरुता, गठमो तथा पक्षाघात रोग जाते रहते हैं। (भारतसंहिता द्वितीयभा०)

त्रयोदशो (मं० त्रि०) त्रयोदश दिवात् दीप्। तिदि-विशेष, जिसो पक्षको तैरहयों तिथि, तैरह। पुराणके अनुसार यह तिथि धार्मिक कार्य करनेके लिये बहुत उपयुक्त है।

त्रयोविंशति (मं० त्रि०) त्राधिका त्रयति। जो गिनती-में त्रयोविंशती अधिक हो, तिरास है।

त्रयोविंशति (मं० त्रि०) त्राधिका त्रयति। यह मंख्या जो त्रयोविंशती योगमें बनती हो, तैरहकी मंख्या।

त्रयारूप (मं० पु०) त्रयारूपावशके त्रिधर्मोत्पत्तिका नाम। २ पन्द्रहमें आपरके एक व्यासका नाम। ३ भरत-वंशोय जहचवके पुत्र एक राजाका नाम।

त्रयारूपि (मं० पु०) एक प्राचीन श्रमिका नाम। ये शोमहर्षणके शिष्य और काश्यप, माध्वि, पञ्चतन्त्र, मिश्रपणन और डारोतके सहपाठी थे (मय०)

त्रस (मं० त्रि०) त्रसति विमं दन्त्यदिमन् एम चयत्तं ज। १ वन, जंगल। २ लज्जा। ३ तमरपु, लज्जाफल। ४ जैन धर्मांशुमार एक प्रकारके जीव। इन जीवोंके चार भेद हैं। जैन—होन्द्रिय पर्यात् दो इन्द्रियांयाने जीव होन्द्रिय तीन इन्द्रियांयाने जीव, चतुरिन्द्रिय पर्यात् चार इन्द्रियांयाने जीव और पञ्चन्द्रिय पर्यात् पाँच इन्द्रियांयाने जीव।

त्रसदस्य (मं० पु०) पुत्रकुलर्ष पुत्र और मान्याताके एक पौत्रका नाम।

त्रसन (मं० त्रि०) त्रस-भावे ल्युट्। १ भय, डर। २ लज्जा। कर्त्तरि ल्युट्। (त्रि०) ३ त्रसयुक्त, जिसमें डर लगा हो।

त्रसर (मं० पु०) त्रस वाहु परन्। तन्नुवायका उपकरण विशेष, लुत्ताकीको दुरको, तमर। पर्याय—चूत्रवेदन तमर।

त्रसरेणु (मं० पु०) त्रसयजनत्वात् भाग इव रेणुः। लज्जाफल, ये छोटे छोटे चमकीले फल जो देहमें पाते हैं इन्हें धूपमें नाचना वा घूमता दिवार्द्र देता है। १ परमाणु वा इन्द्राणामेक त्रसरेणु होता है। परमाणु दिवार्द्र नहीं पड़ता है, किन्तु जब त्रसरेणु होता है पर्यात् १ परमाणु एकत्र होने है तभी यह देहमें पाता है। शरीरको क्षिरण तब भरीयमें होकर प्रवेद करती है, तब त्रस प्रकाशमें जो छोटा पदार्थ विचरन करता दिवार्द्र देता है, यही त्रसरेणु है। (त्रि०) २ शूर्यज्योतिर्द, शूर्यको एक श्लोका नाम।

त्रसिन (त्रि० त्रि०) भयभीत, डरा हुआ। त्रसुर (मं० त्रि०) त्रस-वरण, मोद, डरपोक।



वस्तु (सं० वि०) वस्तु-ज्ञ। १ भोत, डरा हुआ। २ चकित, जिसे, पावर्ष्य हुआ हो। ३ शोध, जल्दी। ४ पोहित, जिसे कष्ट पहुँचा हो।

वस्तु (सं० वि०) वस्तुतोति वस्तु-ज्ञ। वस्तुयुक्त, भय-भोत, डरा हुआ।

वाटक (सं० पु०) योगके पटकर्मोंसे बड़ा कर्म वा साधन। इसमें धनिमेवदपमे किसी विन्दु पर दृष्टि रखी जाती है।

वाच (सं० स्त्री०) वै भावे ल्यट् वा क्तः पठे तस्य नत्वम्। १ रक्षण, रक्षा, वचाव। २ वायते इति कर्त्तरि ल्यट्। २ रक्षिता, जिसको रक्षा की गई हो। (स्त्री०) वायतेऽनेन इति कर्त्तृ ल्यट्। ३ रक्षाका साधन, कवच। ४ वायमाणा जाता।

वाणकट (सं० पु०) रक्षक।

वाणाः (सं० स्त्री०) वाण टाप्। वायमाणा जाता।

वात (सं० वि०) वि-क्त, विकल्पे तस्य नत्वाभायः। १ रक्षित, जिसको रक्षा की गई हो। (स्त्री०) भावे क्त। २ रक्षण, वचाव।

वातश्च (सं० वि०) वा-तश्च। रक्षा करनेके योग, वचानेके लायक।

वाता (हिं० पु०) रक्षक, वचानेवाला।

वातार (सं० पु०) रक्षक, वह जो रक्षा करता हो।

वाट (सं० वि०) वै-टच्। रक्षाकर्त्ता, वचानेवाला।

वापुष (सं० पु०) वपुषा निहृत्तं षण्। सुक्-ष। रङ्ग-निर्मित पात्रादि, रंगिनी बना हुआ वस्त्र या धोती की पदार्थ।

वामन् (सं० वि०) वै पालने मनिन्। रक्षक, वचानेवाला।

वायन्तिका (सं० स्त्री०) वायमाणा जाता।

वायन्ती (सं० स्त्री०) वा-क्लिप् वा षयति इ-गट् ततः ङोप्। वायमाणा जाता।

वायमाण (सं० वि०) वै कर्मणि षानच्। रक्षमाण, वचानेवाला।

वायमाणा (सं० स्त्री०) वायमाण-टाप्। सुट् सुभ्युरा-कृति फललताविशेष। वनफलेको तरहकी एक प्रकारकी रस्ता जो जमीन पर फैलती है। इसमें बीज बीजमें

छोटी छड़ियाँ निकलती हैं और उनमें कसले-धोज होते हैं। पर्याय—वायिका, वायन्ती, वल-भद्रिका, वलदेश, सुभद्रोषो, भद्रनामिका, कृतवा, वाय-मणिका, वनभद्रा, सुकामा, वायिका, गिरिजा, धनुजा, माङ्गल्यार्थ, देवनामा, पानिमो, भयनाशिनो, चवनो, रक्षणी धोर वाता। गुण—यह शीत, मधुर, शुक्ल, स्वर, कफ, पित्त, भ्रम, तृष्णा, घृण, श्लानि, विष धोर छर्दि-नाशक है। भायपकाशमें इसे कपाय, तिक्तारम, सारक, पित्त कफ, स्वर रोग, हृद्गुल्म, चर्म, भ्रम, शूल धोर विषनाशक माना है।

वायमाणिका (सं० स्त्री०) वायमाणा जाता।

वायवन्त (सं० पु०) वनपदेशजात गण्डोर नामक शाकविशेष, गंडोर या गुंडिरी नामका माग।

वायोदश (सं० वि०) वयोदशां भावे षण्। वयोदशी-भव जो काम वयोदशीमें किया जाय।

वाम (सं० पु०) वस भावे घञ्। १ भय, डर। २ वणिका एक दोष। ३ कष्ट, तकलीफ।

वासकर (सं० वि०) वास-क-ट। भयजनक, डरानेवाला। २ निवारक, दूर करनेवाला।

वासदष्ट (सं० पु०) कुष्ठ, रुदष्ट रोगभेद। यह रोग जो कुत्ते के काटनेसे उत्पन्न हो।

वासदस्य (सं० स्त्री०) वसदस्यु के श्रोत्र-धस्यन्ती साम।

वासदायो (सं० वि०) वासं भयं ददाति दा णिनि। भययाता, डरानेवाला। इसका नामान्तर गहुर है।

वासन (सं० स्त्री०) वस-णिच् भावे ल्यट्। १ भयोत्पादन, डरानेका कार्य। (वि०) कर्त्तरि ल्यट्। २ भयोत्पादक, डरानेवाला, भय दिखानेवाला।

वासनोय (सं० वि०) वस णिच्-पनीयर। ताड़नोय, दण्ड देने या डराने योग्य।

वासित (सं० वि०) वस-णिच्-क्त। १ भोत, जो डराया गया हो। २ वस्तु, जिसे कष्ट पहुँचाया गया हो।

वासिन् (सं० वि०) वस-णिच्-णिनि। भययोग, डरा हुआ।

वाहि (सं० क्रि०) वै-जोट्-हि। रक्षा करो, बचाओ। वाहि कहनेसे 'सुम रक्षा करो' ऐसा समझना चाहिये।

वि (सं० वि०) तस्तीति ट्-ङि। वारं वारं। वन्-वारं।

हिन्दी विश्वकोष

[दशम भाग]

निन् (सं० पु०) तुनेव तोनं तत् विद्यते पय्य इति ।
[नागराणि ।

निया, (हि० स्त्री०) एक प्रकारका मोटा भ गोडा ।
इ छान पाटि करनेके बाद शरीर पीछनेके काममें
गती है ।

नो (हि० स्त्री०) १ महोकी एक प्रकारकी छोटी
पात्ती । २ महोका छोड़े सुँहका बड़ा भरतन । इसमें
बैयेपकर गुड़ रखा जाता है ।

नी (सं० पु०) तुनेव तोर्नः तत् विद्यते पय्य इति ।
तुनाराणि । तुनादण्डं मानदण्डं धारयति यः सः ।
तुनादण्डधारी यणिक् । १ बद्धानकी तिनी जानि । यह
जाति तुनादण्ड धारण कर संघपरम्परामें व्यवसाय करती
पाई है, इस कारण तिनी जातोका दूसरा नाम तोनी
पडा है । कोई कोई इस जातिको तोनिक समझते है,
परन्तु तोनिक प्रतिभोम वर्धमद्धर जाति है, समके माय
तोनी जातिका कोई भी सम्बन्ध नही ।

तिनी ओ० तैलिक देखी

न्या (सं० त्रि०) तुनया परिच्छिद्यं ण्यत् । १ तुना-
द्वारा परिच्छिद्य, जो तोन कर बाँटा गया हो । २ तुन्या,
महय ।

तोत्वनपायन (सं० पु०) तुत्वनस्य ऋषेरण्यं युवा
तुत्वन-इव फक् । तुत्वन ऋषिरे युवा संज्ञक ।

तोत्वनि (सं० पु०) तुत्वनस्य ऋषेरण्यं इज् । तुत्वन
ऋषिरे संज्ञक ।

तोत्त्वनादि (सं० पु०) पाणिनिना गणविशेष । तोत्त्वनि,
धारणि, वारणि, रावणि, टैनीवि, टैवति, वाकं नि,
नैषकि, देवमति, देवयष्टि, चाफरकि, वेल्वकि, वेदि,
पानुराहति, पोत्तरमादि, पानुराहति, पानुति, मादो-
हति, नैमिय, माडाहति, माभ्रकि, यंशोति, पानिनामि,
पाडिमि, पानुति, नैमिषि, पानिबभ्रकि, पोत्तरण
पानि, यैकणि, यैरकि, वैरति । (पाणिनि २।४।१)

तोवरक (सं० त्रि०) तुपया इदं पणं स्वार्थे कन् । १ तुपये
सम्बन्धीय छेडादि । २ तुवरक ।

तोविनिहा (सं० स्त्री०) चोपधमेट, एक प्रकारकी
टपा ।

तोपायन (सं० त्रि०) तुपय षट्पदेमादि पद्यादित्वात्
फक् । तुपये समोपयसोर्देग ।

तोपार (सं० पु०) १ तुपारका जल, दादेहा फःमो ।
(त्रि०) तुपारम्बेटं तुपार-इण् । २ तुपार सम्बन्धीय ।

तुपार देखी

विश्व संह्याविगिट, तोन । तोमके वाचकमन्त्र काल—
भूत, भविष्यत्, वर्तमान, अग्नि—दक्षिण, गाहपल,
बाहवनीय, भुवन—स्वर्ग, मर्त्य, पाताल; गङ्गामार्ग—
मन्दाकिनी, भागोरयो, भोगवती; शिवचतु—चन्द्र, सूर्य
घोर अग्नि; गुण—सत्व, रज, तम; सन्ध्या—प्रातःसन्ध्या,
मध्याह्नसन्ध्या, सायं सन्ध्या; राम—पराशराम, दामरयो राम,
वत्सराम । यह शब्द बहुवचनान्त है ।

त्रिंश (स० त्रि०) त्रिंशत्-डट । तस्य पूरणे डट् । वा
५।२।४८ । त्रिंशत्तम, तोसथा ।

त्रिंशक (स० त्रि०) त्रिंशता क्रीतः पुन-डिच । निमि
खरोटनेमें तोम द्रव्य लगे हो ।

त्रिंशच्छत (स० श्लो०) त्रिंशदधिकं शतं । यह संह्या
को एकसौ घोर तोमके योगसे बनती हो, एक सौ तोमकी
संह्या ।

त्रिंशत् (स० त्रि०) त्रयो दशमः परिमाणमस्य । पंगिक
त्रिगणित । वा ५।१।५८ । इति निपातनात् साधुः । संह्या-
विशेष, तोस ।

त्रिंशतक (स० त्रि०) त्रिंशत् परिमाणमस्य कन् ।
त्रिंशत्परिमाण । २ छतनो हो संह्या ।

त्रिंशति (स० श्लो०) त्रिंशत् त्रयोदशदित्वात् साधुः ।
तीसकी संह्या ।

त्रिंशत्तम (स० त्रि०) त्रिंशतः पूरणः तमप । तोम
संह्याका पूरण, तोमथा ।

त्रिंशत्पत्र (स० श्लो०) त्रिंशत् संह्यानि पत्राणि दत्तानि
प्रतिपुष्पमस्य । कुसुद, कोईका फूल ।

त्रिंशंग (स० पु०) त्रिंशत्विंशत् पूरणांगः । १ किमी
पदार्थका तीसवां भाग । २ राशिका त्रिंशत् पूरणभाग,
एक राशिका तोमवां भाग । इसका विषय ज्योतिषमें इस
प्रकार लिखा है—भेदादि बारह राशियोंको तोसवे भाग
देने पर जो चंग पाया जाता है, उसीका नाम त्रिंशंग
है । यह त्रिंशंग भेदादि राशियोंमें जिस तरह व्यवहृत
होता है, उसके नियम इस प्रकार हैं—

भेदादि बारह राशियों 'विषम' घोर 'सम'में विभक्त
हैं । जो छह राशियाँ विषम माने गई हैं, उनके
त्रिंशंगके विचार करनेमें मङ्गल, शनि, बृहस्पति, बुध घोर
यज्ञ से पांच यह क्रमसे ५।१।८।१५ चंगके अधि-

पति होने हैं । प्रत्येक राशि तोम चंगमें विभक्त है, यह
पञ्चसे हो कदा जा चुका है । अतएव जिस किसे विषम
मन्त्रक राशिके त्रिंशंगका विचार करना हो, छह
राशिके प्रथम चंगमें पञ्चमांग तक मङ्गलपक्ष त्रिंशंगके
अधिपति, फिर पठांगमें दशमांग तक शनिपक्ष त्रिंशंगके
अधिपति होते हैं । ११ चंगमें १८ चंग तक बृहस्पति,
१८से २५ चंग तक बुध, २५ चंगमें ३० चंग तक शुक्र
त्रिंशंगके अधिपति होते हैं ।

जिस प्रकार ६ विषम राशियोंके त्रिंशंगका विचार
किया गया है, उसी प्रकार ६ समराशियोंके त्रिंशंग-
विचार करनेमें भी शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि घोर मङ्गल
यह क्रमसे त्रिंशंगके अधिपति होते हैं । (कोष्ठीप्र०)

सभी राशियोंको तोम भागोंमें बाँट कर मङ्गल, शनि,
बृहस्पति बुध घोर यज्ञ ये क्रमसे मेष, मिथुन, मिथु,
तुला, धनु घोर कुम्भ इन छः विषम राशियोंमें ५।५।
८।०।५ भागके अधिपति होते हैं । तथा श्व, कर्कट,
कन्या, हृषिक, मकर, मीन इन छः राशियोंमें मेष-
शेखरादिसार हैं पर्याप्त शुक्र, बुध, शनि, मङ्गल क्रमसे
पञ्च, छम, घट, पञ्च घोर पञ्चभागके अधिपति माने
गये हैं ।

त्रिंशंग क्रमक—मङ्गलके तोसवें चंगमें जन्म होनेमें
मनुष्य श्री-विजयी, धनहीन, शोषपरायण, पाकविषयमें
गर्वित, तस्करकर्मकारी एवं पुत्र घोर विता-
विहीन होता है । यदि बुधके दोसवें चंगमें हो, तो वह
छलटविवश घोर सुखसम्पन्न, ज्ञान प्रकाशके स्वप्ति
समन्वित होता है एवं दिनोदिन समस्त कोपामागकी
हडि होती है । बृहस्पतिके त्रिंशंगमें जन्म होनेमें श्रेष्ठ
कामिनीका वक्त्र, नित्यभाग्यमस्य, राजप्रिय घोर दोषानु-
यव शकके त्रिंशंगमें जन्म होनेमें श्रीमान्, बहु धान्या-
युक्त, दानधर्मपरायण, देवताओंका अर्पण तथा नृप-
गोतममायुक्त होता है ।

जिसका जन्म शनिके त्रिंशंगमें हो, वह पापाका,
मीनो, परनिन्दक, परदाररत घोर धनवान् होता है ।
मृशारान्तर—मङ्गलके त्रिंशंगमें जन्म होनेमें मनुष्य सर्व
धातुविषयोंका वक्त्र, सर्वदा क्रियायुक्त, धन घोर दास-
वर्जित, तस्कर, मलिनपक्ष घोर धनसम्पन्न होता है ।

तोड़ने (सं० स्त्री०) अपमान, अपतिष्टा, वेष्टकृती ।

कन (सं० पुं०) भाग्यन् भाग्योपः । भागा ।

त्यक्त (सं० त्रि०) त्यज-क्त । कृतत्यागो, त्यागा द्रुष्या, छोड़ा द्रुष्या । पर्याय—हीन, समुज्झित, उत्सृष्ट, धूत, विधूत, विनाशित, विरहित और निर्वृष्ट ।

त्यक्त्य (सं० त्रि०) त्यज-तथ्य । त्यजनीय, छोड़ने योग्य ।

त्यक्त्वा (सं० त्रि०) त्यज्-त्वच् । त्यागकारो, छोड़ने वाला ।

त्यक्त (सं० पुं०) व्यक्तकर्ता, वह जो किताब बनाता हो ।

त्यग्नायि (सं० स्त्री०) सामभेद, एक प्रकारका साम ।

त्यजन (सं० स्त्री०) त्यज-जन् । त्याग, छोड़नेका काम ।

त्यजनीय (सं० त्रि०) त्यज-घनीयर् । त्यागने योग्य, छोड़ने काविल ।

त्यजस् (सं० पुं०) त्यज भावे भ्रसन् । १ त्याग । (त्रि०)

कर्त्तरि भ्रसन् । २ त्यागकर्त्ता, छोड़नेवाला ।

त्यज्यमान (सं० त्रि०) जिसका त्याग कर दिया गया हो, जो छोड़ दिया गया हो ।

त्यद् (सं० त्रि०) त्यज-प्रदि सच् छित् । (त्यजितनीति । उण् ।

११११) । १ आकाश । २ वायु । (भा० १०।२।२६)

३ सर्वदा परीक्षाभिधानार्थं यस्मि । ४ प्रसिद्ध, मशहूर ।

यद् शब्द सर्वनाम है । इसका रूप त्वदादिको नाई होगा, जैसे पुलिङ्गमें स्यः, त्वो, त्वे, स्त्रीलिङ्गमें स्या, त्वे, त्वाः और क्लोबलिङ्गमें त्यद्, ते, तानि इत्यादि । भ्रश्यो-भाव ममासमें इस शब्दका अच् समासान्त होता है । यथा—त्यस्य समोपि उपत्यद् इत्यादि ।

त्यदादि (सं० पुं०) पाणिनीय गणध्वेजित् शब्द समूह—

त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवत्, किम् । अस्त्र विधिमें अर्थात् टि स्थानमें अत् होता है । इस विषयमें शब्द पर्यन्त ग्रहण ही भाष्यकारका अभिलषित है । त्यदादिके टि स्थानमें अत् होता है, इसमें त्यद्से ले कर किम् पर्यन्त मासूम पड़ता है, किन्तु भाष्यकारका कहना है कि अस्त्र विधिमें द्वि पर्यन्त ग्रहण जानना चाहिये ।

त्याग (सं० पुं०) त्यज-भावे घञ । १ उत्कर्ष, किसी पदार्थ परसे अपना स्वत्व हटा लेने अथवा उसे अपने पामसे भ्रस्र कर देनेकी क्रिया । मनुने लिखा है, कि माता,

पिता, स्त्री और पुत्र ये चारों त्यागने योग्य नहीं हैं अर्थात् इन्हें त्याग नहीं करना चाहिये ।

२ दान । ३ धिवेकी पुष्टि, धानी मनुष्य । ४ सर्व कर्मफल विसर्जन, विरक्ति आदिके कारण सांसारिक विषयों और पदार्थों आदिको छोड़नेकी क्रिया । त्यागका विषय गोतामें इस प्रकार लिखा है—

संन्यास और त्यागमें तत्समुच्च कोई विभेद नहीं है ।

संन्यासकी हो एक विशेष अवस्थाको त्याग कहते हैं ।

विद्वानोंने समस्त काम्यधर्मके परित्यागको संन्यास और समस्त कर्मके फलकी त्यागा न रखनेको त्याग वतलाया है । अतएव संन्यासको विशेष अवस्थाको गिनते त्यागमें की गई है । त्याग और संन्यासके विषयमें कुछ ऋषियोंके जटिल विद्वान्त देख कर मतभेदमा प्रतीत होता है, किन्तु बहुत गौरसे देखा जाय, तो कोई मतभेद नहीं मालूम पड़ता । कोई कोई कहते हैं, कि जोव देह, मन और इन्द्रियादि द्वारा जो काम करता है, वह केवल बन्धनके लिये है । इस कारण

यह भी अत्याग्य दोषोंकी नाई परित्याग्य है । फिर

कोई ठीक इसका विपरीत कहते हैं । उनका कहना है,

कि यज्ञ, दान और तप आदि कर्मानुष्ठानों द्वारा विशुद्ध

हो कर चित्त ब्रह्मज्ञानका अधिकारी होता है, अतएव

यह परित्याग्य नहीं है । भगवान्ने इसके विषयमें अर्जुन-

से श्री कहा था—“त्यागके तीन भेद हैं, सात्विक,

राजसिक और तामसिक । यज्ञ, दान और तप आदि कर्म

कमो भी छोड़ने योग्य नहीं हैं । इनका अनुष्ठान सर्वदा

करना चाहिये, क्योंकि यज्ञ, दान और तप आदि कर्मोंसे

मनुष्योंको देह, मन और इन्द्रियां विशुद्ध वा निर्मल हो

जाते हैं । अतएव आसक्ति और फलकामना रहित हो

कर इन सबका अनुष्ठान करना कर्त्तव्य है । विद्वानोंने

बन्धनके भयसे जिस कर्मके परित्यागको धात कही है,

वह तो कर्म है । अमुक कार्य द्वारा हमें अमुक प्रकारके

सुख मिलेंगे, इस उद्देश्यसे जो काम किया जाता है,

उसे काम्यधर्म कहते हैं । काम्यधर्मद्वारा आत्मज्ञान

लाभके उपयुक्त विचारहि तो नहीं होते; पर स्वर्गादि

फल अवश्य मिलते हैं । सुतरां सुख नहीं हो कर बन्धन

हो द्रुष्या । इसीसे जो ऐहिक और पार्थिव किसी प्रकार

गनिके त्रिंशदगमे जन्म होनेसे मलिन, धूसर, सर्वदा कातर, सय्य और गौचविष्टोन्, मेधापरायण, रूपण और नोचस्त्रभावयुक्त; वृद्धम्रतिके त्रिंशदगमे जन्म होनेसे उग्र स्वभावविशिष्ट, सुन्दर शरीरयुक्त, बुद्धिमान्, भोक्ता, धनी सुखी, गुणाढ्य और विषम नोचनविशिष्ट; बुधके त्रिंशदगमे जन्म होनेसे सर्वदा धर्म, धर्म, काम, सुख, कीर्ति और जगयुक्त, प्रज्ञाविबेककुशलो, गुणवान्, उत्तम प्राययुक्त, दिव्याङ्ग और सुगन्धि पुष्पयुक्त तथा शुकके त्रिंशदगमे जन्म होनेसे बहुगुणपरिपूर्ण, सुन्दर, मनोहर, दृष्टिमन्त्र, युवतियोंको आमोददाता; सर्वशान्त चैत्ता, ब्राह्मण और गुरुभक्त; दानगोत्र और लघालु होता है। (कोशप्र०)

त्रिक (मं० लो०) त्रयाणां मण्डः कन् । १ त्रिविधस्या, तीनता समूह २ पृष्ठ वंशाधर, रीढ़के नोचेका भाग जहाँ कूल्हेकी दृष्टि मिलती है। ३ कटिभाग, कमर। ४ त्रिकला। ५ त्रिकटु, ६ त्रिपयसस्थान त्रि-सुहानी। ७ गोचुर, गोखर। ८ त्रिमद। दृष्टीयेन रूपेण ग्रहणं यस्य कन् पूरणप्रत्ययस्य वा लुक् । ९ दृष्टीयक, तीसरे दिन पानेवाला ज्वर। त्रयः पधिका; शुकलाभो हृदिर्वा यत्र गतादौ। १० तीन रूपये सैकड़े का नूद या लाभ आदि। ११ मन्थिमेंट, शरीरका जोड़ या गिरह।

त्रिकुट (मं० त्रि०) त्रीणि ककुटसदृशानि ध्वजतुलानि शृङ्गाणि यस्य ककुटस्य अन्यलोपः। त्रिकुटपर्वते। वा ५।४।१४०। १ त्रिकटु पर्वत। २ त्रिणु। इन्होंने एक बार एकदल और तीन शृङ्ग बराह मूर्त्तिधारण कर धृज्योका उहार किया था, इसीमे इनका नाम त्रिकुट पड़ा है (मातृशक्ति १४४ म०) ३ दशरात्रसाध्य यक्षमेंट, दश दिनोंमें होनेवाला एक प्रकारका यक्ष। (त्रि०) ४ जिसके तीन शृङ्ग हों।

त्रिकुम् (मं० पु०) त्रैधा कं पोतं चटकं स्कुम्भाति स्कुन्म-किप् क्कान्दस्य मनोपः। १ उदानवायु जिससे उकार और किक भाती है। २ मधरात्रसाध्य यक्षमेंट नौ दिनोंमें होनेवाला एक प्रकारका यक्ष।

त्रिकुब्धामन् (मं० पु०) मूर्द्धधोमध्यभेदेन तिसृणां ककुम्भां दिशां समाहारः त्रिकुब्धत्वं धाम प्राययो यस्य त्रिणु।

त्रिकपट (मं० पु०) एक प्रकारका वातरोग। त्रिकट (मं० पु०) त्रीन् वातादिशेषान् कटति प्राह-शक्ति-धम्। गोचुरहच, गोखर।

त्रिकटु (मं० लो०) त्रयानां कटुरसानां समाहारः। सेंट मिचं और पोपल ये तीन वस्तुएँ। पर्याय—त्रुपण, व्योप, कटुत्रय कटुत्रिक। गुण—यक्ष दोषन, काष्ठ, श्यान, त्वक् रोग, गुल्म, मेह, कफ, श्लेष्म, भेद, श्लोषद और दोषन नाशक है।

त्रिकटुक (मं० लो०) त्रिकटु, त्रिकला, भजन, मोहि-जनका मूल, विहङ्ग, हौंग, कुटको, वृहता, कण्टकारी, हरिद्रा, दाहहरिद्रा, भजवायन, भतोस, चोतेको हाल, मोनर्बल, जोरा, हनुपा और धनिधा, प्रत्येकको पाध कटाक ले कर उसे चून् करे। पोछे औका मत्त, साढ़े ग्यारह सेर, घो तीन पाव, तिलका तेल तीन पाव और मधु तीन पाव सबको एक साथ मिला कर मोदक बनाया जाता है। प्रत्येक दिन दो तोला भर खानेसे कठिनमे कठिन प्रमेह नष्ट हो जाता है।

(भावप्र० तृतीयभा० प्रमेहाधि०)

त्रिकटुगुटिका (मं० लो०) गुटिका चोपधमेद। प्रसुत-प्रणाली-त्रिकटु, और त्रिकलाचूर्ण पाध पाव तथा गुग्गु, एक पाव इनको एकत्र कर गोखरके काढ़े से ७ दिन तक भावना दे। दोष, काल और वक्तानुसार इसका व्यवहार करनेसे मेह, वातरोग, वातरक्त, मूत्रा-घात, मूत्रदोष और पदर आदि रोग जाते रहते हैं तथा वायु भी खपघामो हो जातो है।

(भावप्र० तृतीयभा० प्रमेहाधि०)

त्रिकटुकावर्त्ति (मं० लो०) वर्त्ति चोपधमेद। प्रसुत-प्रणाली-त्रिकटु, सैन्धव, सर्पग, शृङ्गधूम, कुङ्ग और म-फल सबका मिश्रित परिमाण २ तोला, मधु ८ तोला और गुड़ २ तोला इन सबका एकत्र पाक कर चण्डके बराबर सत्ती बनावे। पोछे उसे घोंमें भिंगो कर गुग्गुमें प्रयोग करनेसे थानाह, उदावर्त्त, उदर और गुनमरोग दूर हो जाता है। (भावप्र० तृतीयभा०)

के सुखभोगको इच्छा नहीं रहती, केवल मुक्ति भव्यात् भ्रातृप्राप्तन द्वारा देह, मन और इन्द्रियादि जड़पदार्थोंके माय धर्मवशात् हमें त्यागना पड़ता है, वे हमें भ्रातृप्राप्तनके विनाशके लिये सुभक्त प्रार्थना करते हैं। इस कारण काम्यधर्मके अनुष्ठानको उन्हें अक्षरत नहीं पड़तो, यही समझ कर वे नितर और नैमित्तिक कर्मका क्रमो भो परि- त्याग नहीं करते। क्योंकि नितर और नैमित्तिक कर्मोंका यथाविधि अनुष्ठान करनेसे जोयका क्रमो बन्धन नहीं होता, परन्तु ब्रह्मज्ञान प्रवृत्त होता है। चतुर्थ मोहवश हम सब कर्मोंके परित्यागको त्यागमत्याग कहते हैं। शारीरिक लैंग और अर्थभयादिके डरसे अतन्त्र कष्ट- जनक ज्ञान जो कर्म परित्याग किया जाता है, उसे राजन परित्याग कहते हैं। इस तरह कर्मत्याग करनेमें त्यागका फल नहीं होता। जो समस्त भ्रातृप्राप्तन फलकांक्षाको त्याग छोड़ कर केवल कर्मव्यक्त शालसे जो नितर और नैमित्तिक कर्म किया जाता है, वही शालिक त्याग है। कर्ममें भ्रातृप्राप्तन और फलभिलाषके परित्यागको ही कर्मत्याग कहते हैं, न कि क्रियाके त्याग को।

जो न तो प्रकृत कर्मोंमें कुछ विद्वेष रहती है और न शुभजनक कार्योंमें भ्रातृप्राप्तन हो रहती है, वे ही यथार्थ- में कर्मत्यागी हैं। जब तक देह, मन और इन्द्रिया कायम रहेंगे, तब तक कोई भी प्राणी अनेक कर्म परि- त्याग नहीं कर सकता। क्योंकि जीवन धारण करने- में देह, मन और इन्द्रियोंका क्रिया प्रवृत्त होती ही है। यहाँ तक कि व्यासभ्यामि भी क्रिया बन्द नहीं रहती। अतएव कर्मोंका जो परित्याग है, वह क्रियाका भी परित्याग है, ऐसा नहीं समझना चाहिये। किन्तु जो कर्मोंके फलप्राप्ति हैं, वेही त्यागी कहलाते हैं। कर्म- फलप्राप्तन ही त्याग पदार्थ है।" (गीता १८ अ०.) १ किसी बातको छोड़नेको क्रिया। २ समस्त या सगल न रहनेको क्रिया। ३ कन्यादान। (टि०) (वि०) ८ त्यागकर्ता, छोड़नेवाला।

त्यागना (हि० क्रि०) प्रकृ- करना, छोड़ना।

त्यागपत्र (म० स्त्री०) त्यागपत्र पत्र। १ दानपत्र, वर पत्र जिसमें किसी प्रकारके त्यागका उल्लेख हो।

२ दारपरिग्रहानामा, तिलाकनामा। ३ इच्छाका। त्यागवान् (सं० वि०) त्यागी, जिसने त्याग किया हो प्रवृत्त जिसमें त्याग करनेकी शक्ति हो।

त्यागयोग (म० वि०) त्याग एवं योग दोनों का योग, दानयोग, दान, दानो।

त्यागशीकार (म० पु०) त्यागशीकार विमर्जन, अपने सुखका परित्याग।

त्यागिन् (सं० वि०) त्यागिनी त्याग-प्राप्ति। १ दाना, दानो। २ शूर। ३ यज्ञयोग, छोड़नेवाला। ४ कर्म- फलत्यागी, सामाजिक सुखको छोड़नेवाला।

त्यागिन् (म० वि०) त्यागिन् निवृत्त, त्याग-मपू। त्याग, छोड़ा हुआ।

त्याग्य (म० वि०) त्याग्येति त्याग कर्मणि त्याग्य इति न कृत्वा। १ यज्ञयोग, जो छोड़ देने योग्य हो। २ दानके योग्य।

त्याग्य (म० वि०) त्याग्य इव दृश्यते इतो त्याग्य दृग्- क्रि०। त्याग्य, उसकी समान, वैसा।

तर्ग (हि० क्रि०-वि०) १ उच्च प्रकार, उच्च तरह। २ तत्त्वान, उसी समय।

तर्गरी (हि० स्त्री०) चबनोकन, दृष्टि, निगाह।

तर्गरी (हि० पु०) धर्मिक या आसीय उत्सव-दिन, पर्वदिन।

तर्गरी (हि० स्त्री०) तर्गरीके उपनयनमें छोटी लड़कियाँ या लड़कियाँ पादोंको दिये जानेका धन।

तर्गरी (हि० क्रि०-वि०) रक्षे देखा।

तर्गरी (हि० पु०) दंग, तर्ग।

तर्गरी (हि० पु०) तर्गरी देखा।

तर्गरी (हि० क्रि०) तर्गरीके चक्र पाना, माया प्रदान।

तर्गरी (हि० स्त्री०) तर्गरी देखा।

तर्गरी (हि० पु०) तर्गरी देखा।

तर्गरी (हि० पु०) तर्गरी देखा।

तर्गरी (हि० स्त्री०) तर्गरी देखा।

तर्गरी (म० पु०) तर्गरी-पत्र। पुरमेद, एक प्राचीन नगर- का नाम जो पहले राजा हरिश्चन्द्रका राजनगर था।

तर्गरी (म० वि०) तर्गरी-पत्र। तर्गरी-पत्र, जिसमें सत्ता पाई हो।

त्रिकट्ट (स० पु०) वयः कण्ठः कण्ठकाः वयः । १ गो-
चुर, गोचर । २ स्तुती वृत्त । ३ मन्त्रभेद, टेंगरा
मन्त्रो । ४ पयगुप्त, तिधारा, यूर । ५ वृद्धतो मिश्रित
भस्मिदमनो धोर दुरात्मना इन तोनों द्रव्योंका समूह ।

पर्याय—कण्ठकारीवय, कण्ठकावय, कण्ठकवय ।

त्रिकण्ठक (स० पु०-श्लो०) १ मधुगर्भमन्त्र, टेंगरा
मन्त्रो । (२) कण्ठकवयान्वित, त्रिभस्मं तीन कटि
हो । ३ गोचुर वृत्त, गोचर । ३ त्रिशूल ।

त्रिकण्ठकताय (स० पु०) ज्ञाय शोधविशेष । इसको
प्रस्तुत-प्रणाली—कण्ठकारी, मीठ और गुन्ध प्रत्येकका
समभाग लेकर आधा बनावे । पीछे उस काढ़े में पोपलका
चूर्ण डाल कर पान करनेसे जोण फर, पचवि, श्वामो,
शूल, धाम, भस्मिमाय, प्रतिश्याय (शुक्राम) और लघ्व-
गत रोग जाता रहता है । इस ज्ञायको भवेरे सेवन
करनेका विधान है ।

त्रिकण्ठ (स० पु०) त्रिफला, त्रिकुटा और त्रिभेद, दड़,
बड़ेडा और भावला, सौल, मिर्च और पोपल तथा मोथा
चीता और वायविडंग इन सबका समूह ।

त्रिकण्ठायनौह (स० पु०) शोधविशेष । इनको
प्रस्तुत-प्रणाली—मण्डू, छस, शर्करा, मधु प्रत्येकका
आठ-आठ तोला और कान्तनौह १ तोला, इन सबको मीठ,
पोपल, मिर्च, दड़, भावला, बड़ेडा, मोथा, चीता और
विहङ्गके जायसे पयद या लोहके बरतनमें भाषना दे कर
धूपमें सुखावे । पादि, मध्य और चरममें समुपानके साथ
सेवन करनेसे सुदाह्य पाण्डू, कामला और जलोमक
रोग जाता रहता है । (रोगप्रशङ्गः)

त्रिकट्टक (स० पु०) ज्योतिः गो और शायुः नामक यष्ट
जो ऋतु दिनेमें समान होता है ।

त्रिकर्षण (स० पु०) त्रीणि कर्षाणि यस्य । त्रिर्षं यष्ट
करना, यष्ट कराना, दाम लेना, दाम देना, पट्टका और
पट्टाना ये ३ ब्राह्मणोंके धर्म हैं । इन ३ कर्मोंमें हस्तिर्षं
निये याजन, प्रतिपह और अश्वयनके सिवा चतुर्थयं
दान, दण्डा और अश्वयनरूप कर्मकारी ब्राह्मणको
त्रिकर्म कहते हैं । (भारत भूगणः १२१ म०)

त्रिकर्म (स० पु०) १ तीन मातापिता शब्द, प्रत । २
दोईका एक भेद । इसमें ८ शुक्र और १० मधु पक्ष
होते हैं । (त्रि०) जिसमें तीन कलाएं हों ।

त्रिकर्मि—त्रिकर्म और त्रिनिर्ग शब्द देना ।

त्रिकर्म (स० श्लो०) त्रिष्टयां कर्मानां तद्वाचानां ममा-
चारः । कर्मावातवय, कौटु मारनेके तीन प्रकार का
भेद ।

त्रिकर्म (स० श्लो०) त्रिकर्म शूलं, १ तत् । रोगविशेष,
एक प्रकारका वातरोग । मितस्यको दोनों इष्टियों एवं
शुद्धको दोनों इष्टियोंके मन्त्रिस्थानको त्रिक कहते हैं ।
इन दोनोंमें पयथा दोमेंसे किसी एकमें जब वायु द्वारा
पेक्षा होने लगती है, तब उसे त्रिकर्म कहते हैं ।
ऐसा जानसमें यन्त्रके साथ बानूका चोट तथा रोगोंके पीछे
बनगोइलोको प्राग देना चाहिये । (भावः)

त्रिका (स० श्लो०) त्रिधा ज्ञायति कै क, तनटाप । कृप-
समीपस्य जनोंद्वाराक चिदादय यन्त्रभेद, कुएँ घरका
वह चौखटा जिसमें गराहो खगो होती है ।

त्रिकाण्ड (स० पु०) त्रीणि काण्डान्यस्य । १ अमरसिंहके
एक कोषका नाम । इसमें तीनकाण्ड हैं—स्यगर्गादि
काण्ड, भूमिगर्गादि काण्ड और मामान्य काण्ड । तीन
काण्ड रहनेके कारण इसका नाम त्रिकाण्ड पड़ा है । २
त्रिफला । इसमें भी तीन काण्ड हैं—प्रथम काण्ड मधु-
चक्र, द्वितीय नैगम, तृतीय टैवत ।

त्रिकाण्डी (स० श्लो०) यथावा काण्डानां तमाहारः
डोप । १ काण्डवय वह प्रत्य जिसमें कर्म, स्यामना
और ज्ञान तोनोंका वर्णन हो (त्रि०) २ त्रिकाण्डयुक्त,
जिसमें तीन काण्ड हों ।

त्रिकाम (स० पु०) बुद्धि ।

त्रिकाय (स० पु०) त्रयः कायाः यस्य यदा त्रिकं भयति
तदा स्यादानीं यष्ट घञ् वा । बुद्ध ।

त्रिकायिक (स० श्लो०) जयाय हितं ठक । तयाणां वान-
विस्तकजानां कायिकं । नागवय, चतुर्मा और मोथा इन
तीनोंका समूह । २ त्रिकय परिमाण, ३ तोला ।

त्रिकाय (स० श्लो०) यथावा त्रयं कायभूतमविशत्
कायानां समाहारः । १ भूत वर्तमान और भविष्य
काल । २ प्रातः मध्याह्न और सायंक काल ।

त्रिकामय (स० पु०) त्रिकायं ज्ञानं ज्ञा-ज । १
चक्षुः, त्रिनेन्द्र । २ बुद्ध । (त्रि०) ३ भूत, भविष्य और
वर्तमानका ज्ञान ।

त्रपा (सं० स्त्री०) त्रप्यते इति त्रय-भङ्, ततटाप् । १ लज्जा, लाज, शर्म । २ कुलटा, क्षिवाल स्त्री । ३ कोर्त्ति । यग ।

४ कुल, वंश । (त्रि०) ५ ससज्ज, लज्जित, शरमिन्दा । त्रपाक (सं० पु०) त्रपते लज्जते त्रय-भा-क । खेच्छ विशेष, नीच जाति ।

त्रपानिरस्त (सं० त्रि०) त्रपया निरस्तः । निर्लज्ज, लज्जा-हीन, वैशर्म, बेहया ।

त्रपान्वित (सं० त्रि०) त्रपया पन्वितः । लज्जायुक्त, शर-मिन्दा ।

त्रपारण्डा (सं० स्त्री०) त्रपायां रण्डेव, लज्जाहोन्त्यात् तथाल् । वैश्या, रंडो ।

त्रपावत् (सं० त्रि०) त्रपा विद्यतेऽस्य, त्रपा-मनुप, मस्य व । लज्जाशील, लज्जावान्, हयामन्द ।

त्रपित (सं० त्रि०) त्रय-क्त । त्रपायुक्त, लज्जित, शर-मिन्दा ।

त्रपिष्ठ (सं० त्रि०) त्रयमेपामतिशयेन त्रप-इष्टम् । प्रिय-स्थिरैतदादिना त्रप-शब्दस्य त्रप-आदेशः । अत्रान्त लज्जित, बहुत लज्जावान् ।

त्रपीयस् (सं० त्रि०) त्रयमनयोरतिशयेन त्रपः त्रप-ईयसुन् त्रपस्य त्रप-आदेशः । त्रपिष्ठ, अत्रान्त लज्जित ।

त्रपु (सं० स्त्री०) अग्निं दृष्ट्वा त्रपते इव त्रप-उत् । १ सोधक, सोसा । २ रङ्ग, टोन । इसे तामिलमें तगरम, मलयमें तिम, फलच, ब्रह्ममें खैम । अरबमें कसदिन, रसस और पारसमें उरजिज कहते हैं । (It-latta, handa, stagnata, Fr. Ferblace; Ger. Weissblech, zinn; Rus. Blacha sheet)

यह धातु देखनेमें चांदीकी तरह होती है । जब यह परिष्कार रहती है, तब बहुत सफेद दीख पड़ती है । इसमें कुछ स्वाद भी है । घिसनेसे एक प्रकारकी गन्ध निकलती है । सोना जैसी नहीं होने पर भी यह धातु मोमामे कुछ कड़ी होती है । इसका भारीपन ७२८ है । यह बड़ा ही घातघट्ट है, किंतुना ही इसे पीटें तो भी यह टूटती नहीं । यहां तक कि एक टोनसे ५०० पतलो चहर बन सकती है । १००० इंच परिधिविशिष्ट टोनके तारमें मोलेब्र संवह चिरका बोझ लटक सकती है । इसको पीट कर इच्छानुसार जितना पतला कर

सकते हैं, उनना चोड़ा नहीं कर सकते । यह बहुत ही कोमल होता है, मधुममें हो कुग जाता है । तांबा, जस्ता आदि धातुओंके साथ टोन बहुत आसानीसे मिल सकती है । दूसरे धातुओंमें कलई करने वा टांकनेमें टोन बहुत व्यवहृत होती है । इसको चहर द्वारा मढ़नेसे लोहेमें मोरचा नहीं लगता । धर्मिका स्वयं करानेसे टोन लोहेके मोतर भी प्रवेश करतो है और लवका रंग सफेद बना देतो है । मालूम पड़ता है, इसी कारण स्लीटलेण्डमें टोनकी चहर खेतलोह (White iron) नामसे प्रसिद्ध है । टोनको गला कर लोहमें पतलो लोहेकी चहर डुबो देनेसे साधारणतः 'खेतलोह' बनता है । विलायतमें खेतलोहका खूब आदर है ।

तांबेके रसोई बनानेके वरतणोंमें बहुत जल्द मोरचा लग जाता है, किन्तु यदि टोनको चहरसे लोहमें कलई की जाय तो फिर मोरचा नहीं पड़ता । नाइट्रिक स्यूरियाटिक, नाइट्रोसलफ्यूरिक और टार्टरिक एसोडमें टोनको गला कर वह बहुतसे रंगोंमें मिलायो जातो है । इससे रंग मढ़ा एकसा बना रहता है और सफेदी भी बढ़ती है ।

बहुत प्राचीन कालसे टोन जनसाधारणके काममें आ रही है । गलुर्थेदनें हम लोग 'त्रपु' शब्दका लक्ष्य पाते हैं—

"लौहश्चमे सीसश्चमे त्रपुश्चमे यत्नेन ११२ ग्तामश्रुतयतुः १८१२

इसके सिवा प्रथमवेदमें (११।१८) आदोग्योपनिषत् (४।१८७) आदि श्रुतियोंमें एवं मनु याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियोंमें 'त्रपु' अर्थात् टोनका उल्लेख है । गपुंसक (पण्णची) की हत्या करने पर याज्ञवल्क्यने प्रायश्चित्संस्कार एक माण और भीसा दान करनेको व्यवस्था की है । (१।२७३)

महाभारतमें त्रपुको चांदीका मल बतलाया है ।

(नारत उद्योग ३८७०)

भारतमें जिस तरह वैदिक युगसे त्रपुका व्यवहार चला आ रहा है उसी तरह यूरोपमें भी चिरकालसे इसका प्रचार है । हिरोदोतस, दिपोदोरस, सिक्युलस और द्राको फिनीकीय वर्षिकोंके कासितेरो देग वा टोन हीप-में यात्राका विवरण लिखित कर गये हैं । पुत्राणके

विकालवृत्ता (सं० श्लो०) १) तीनों कालोंको धामें जानने को यत्ति। २) जनधर्मानुसार यह ज्ञान को बहन्त के होता है, वेदज्ञानत्व।

विकालदशक (सं० वि०) ओ तीनों कालोंको बार जानने हो। (पु०) जिन भगवान्।

विकालद्विगता (सं० श्लो०) त्रिकालवृत्ता देखो।

विकालदर्शी (सं० पु०) विकाल पश्यति दृग्-गणिनि। १) जिन, बहन्त २) जटि, सुनि। ३) त्रिकालवृत्त, भूत भविष्यत् और वर्तमानका जाननेवाला व्यक्ति।

विकृत (सं० पु०) श्लेषि कृतानि श्रुतास्तस्य। त्रिद्विष्व पर्वत-विशेष, तीन गिरवाला पर्वत, वह पर्वत जिसको तीन चोटियां हों। यह पर्वत लवणसमुद्रके मध्यस्थित और लड़ापुरका आधार है। पर्याय—सुवेल, त्रिकुल, विकृत, त्रिद्विष्व, चित्रकूटक। यह एक पठस्थान है। यहां भगवतो रुद्रसुन्दरोके रूपमें विराजित हैं। (देवीमा० ॥ १०६६॥)

२) श्रीरुद्रसमुद्रके मध्यस्थित पर्वत, समरुका पुत्र। यह पर्वत समुद्र भेद कर बाहर निकला है। यहां ऐश्वर्य रहते हैं और विद्याधर, निधर, अक्षर, गन्धर्व, सिंह और चारण्य ज़ीड़ा करने पाते हैं। इसको तीन चोटियां हैं। एक चोटी मोनेकी है जहाँ सूर्य पायय लेते हैं। दूसरी चोटी चंदोको है। यह चोटी तरु तरुके फूलोंसे आच्छादित है। यहां चन्द्रमा वास करते हैं। तीसरी चोटी वरफसे ठकी रहती है और वैदूर्य, इन्द्रजाल आदि मणियोंकी प्रभासे चमकती रहती है। यहां पहाड़को सबसे ऊँचो चोटी है; यह पर्वत नास्त्रिकी और पापियोंकी दिखलाई नहीं देता। (भागवतपु०) (श्लो०) विकृतः पर्वतः उत्पत्तिस्थानत्वेन चरुस्य धर्म आदि-त्वात् षष्ठः। ३) सिन्धुलवण, मेधा नमक।

विकृतलवण (सं० श्लो०) विकृत मासुद्रोमिव लवणं। श्लेषो लवण, एक प्रकारका नमक।

विकृतवत् (सं० पु०) श्लेषि कृतानि चरुस्य चित्रकूट-मनुष्य-मस्य व। विकृत पर्वत।

विकृता (सं० श्लो०) भैरवीभेद, तान्त्रिकोंको एक भैरवी।

विकृताष्टय (सं० श्लो०) काचलवण, काचिया, नोन, कासा नमक।

विकूर्चक (सं० श्लो०) सुस्तोत्रं शंखभेदः, सुस्तोत्रके अनुसार जोड़े पादि चौरनका एक शस्त्र। इसका व्यवहार वासक, हृद, मोर, राजा आदिकी पञ्च-विक्रिस्ताके लिये होता है।

विकोण (सं० श्लो०) वयः कोणा यद्यः। १) योनि, भग। २) कामरूपस्य पोडविशेष, कामरूपके भस्मगत एक तोय जो मिश्रपोड माना जाता है। करतोपम से कर दिकर-वासि तक सी योजन फैला हुआ सर्व सिद्धिदा माना गया है। कामरूप देखो। ३) लग्नस्थानसे नयम और पश्चिम स्थान। ४) विभुज चैतन्य, तीन कोनका क्षेत्र। ५) मोक्ष। ६) त्रिकोटियुक्त पदार्थ, तीन कोनवाली कोई वस्तु।

विकोणक (सं० पु०) तीन कोणका पिण्ड, त्रिकोणा पिण्ड।

विकोणघण्टा (सं० पु०) एक प्रकारका त्रिकोणा बाजा, जो जोड़ेकी मोटी सुलाखका बना हुआ रहता है। इस पर जोड़ेके एक दूसरे टुकड़ोंसे आघात करके ताल देते हैं।

विकोणफल (सं० श्लो०) विकोणा तरुसं फलं यम्य। श्रुताटक, सिंघाड़ा। २) विभुजका क्षेत्रफल।

विकोणमवन (सं० श्लो०) विकोणस्थान, लग्नकुण्ड-ओमें लग्नसे पाँचवाँ और नवाँ स्थान।

विकोणमण्डलभूमि (सं० श्लो०) मन्दोके सुशाना पर स्थित मातागुप्त्य प्रकारके जैसा द्वीप, डेलटा।

विकोणमिति—(विकोण + मिति = परिमाण) शास्त्रभेद, त्रिकोण वा विभुजको बाहु और कोणका सम्बन्ध निर्णय करना जो पहले इन शास्त्रका सुस्पष्ट उद्देश्य था, किन्तु गणितशास्त्रको उन्नतिके साथ साथ त्रिकोणमितिका कलेवर पुष्ट होता गया और बीजगणितका विषय भी इसमें शामिल कर दिया गया। अब त्रिकोणमिति कहने में सभी धन्यका बोध होता है जिनमें विभुज, चतुर्भुज आदि क्षेत्रोंको बाहु और कोणका विचार हो। सबसे पहले यीकोनि यह शास्त्र प्रकाशित किया। हमारे भारत-वर्षमें भी पूर्वकायसे त्रिकोणमिति प्रचलित है और वह गणितविद्यामें विशेष पारदर्शी बड़े भारी विद्वान् द्वारा लिखा गया है। त्रिकोणमितिके विषयमें वे जितना जानते थे, सबको विपिण्ड करवा उन्होंने पापगणन

जिननेवालोंने सिमिली-द्वीप और विनायतके कर्ष-
वालेकी प्राचीन कामिनेरो देश माना है। यथायाम
पक्ष भी कर्षवाले नामके स्थानमें खानसे जितनी टोन
निकलती है उतना यूरोपके और किसी दूसरे स्थानमें
नहीं निकलती।

प्राचीन कालमें पर्याय श्रृंगुती लोग अथवा फिनिकीय
वणिज, लोग टोनमें कौन चीज बनाते थे, उसका कोई
बात प्रमाण नहीं मिलता। यद्यपि टोनको जल्दतर पहुँचते
थे, यह हम लोगोंकी यथुर्वेदमें पता लगता है। स्मृतिमें
श्रृंगुती गिनती मूल्यवान् वस्तुमें की गई है। टोन और
तथैकी एक साथ मिलानेमें काँसा बनता है, यह भी
भारतवासी बहुत प्राचीन कालसे जानते हैं।

हजारोबाग, धारवार, गुजरात और मध्यभारतके
बस्तार राज्यमें कई जगह टोन पत्थर (Tin stone)
पाया गया है। किन्तु अच्छे टोन कहीं भी नहीं
मिलती। ब्रह्मदेश, मलयप्रायद्वीप, यव-द्वीप और
चीनमें श्रृंगुती खान मिलती है जिनमेंसे मलयप्रायद्वीप
को खान संसारमें प्रसिद्ध है। इनमें टोन, और कहीं
नहीं मिलता। प्राचीन कालमें यहाँसे भारतवर्षमें श्रृंगुती
भेजा जाता था। यहाँके तावय नगरमें १५८६ ई०के
प्रसिद्ध भ्रमणकारी शफकिश पाकर यहाँ लिख गये हैं—

I went from Pegu to Malacca, passing
many of the sea-ports of Pegu, as Martaban,
the island of Tavoy; whence all India is supplied
with tin, Tenasserim, the island of Junk
Ceylon, and many others.

यह भी मलयमें भारतवर्षमें टोन जाता है। यहाँसे
टोनकी प्रति वर्ष १२०१६ लाख रुपयेकी रकतनी
बोती है।

श्रृंगुती खानके भीतर दो अवस्थाओंमें रहता है।
कभी कभी यह मिश्रतामय, तबि और मोसे बादिके
साथ बिमटा रहता है। इसको टोन-सोड कहते हैं।
इसको गला कर परिष्कार करनेमें टोन में टुकड़ा बनता
है। दूसरी अवस्थामें यह बाल-बादिके साथ मिश्रित
रहता है, इसको गिनती अन्तिम टोनमें की गई है।
श्रृंगुती (सं० श्रो०) १ श्रृंगुती, ककड़ी। २ गला,
भीर।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, छोटी इमायवी।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, अन्तिम अन्तिम मन्त्रित इव
अव-वाहू, उल्लू, रङ्ग, रङ्गा।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, उल्लू, रङ्ग, रङ्गा। २
श्रृंगुती फल, खोरा। पर्याय—कण्टकिल, सुधा-
वास और सुगीतन। छोटे फलके गुण—नीर, बल,
वृद्धा, भ्रम, दाह, पित्त और रक्तपित्तनाशक। पक्ष-
फलके गुण—घन, उल्लू, पित्त, कफ और वातनाशक।
बड़े फलका गुण—मृदुल, शीत, रक्त, पित्त और
अम्लकण्टकनाशक।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, खोरा, खोरा।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, खोरा, खोरा। १ ककड़ी,
ककड़ी। २ श्रृंगुती, खोरा।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, खोरा, खोरा। १ रङ्ग, रङ्गा।
२ ककड़ी, ककड़ी।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, महेन्द्रवाक्यो, बड़ा इन्द्रा-
यव।

श्रृंगुती (सं० श्रो०) श्रृंगुती, खोरा, खोरा। १ महेन्द्रवाक्यो,
बड़ा इन्द्रावण। २ फल मलाविषीय, खोरा (Cucum-
ber)। पर्याय—मोमपुष्पा, कण्टकिल, श्रृंगुती, बड़-
कला, कोयकला, तुन्दिकला, कण्टकीयता, सुधावासा।
शुच—यह दृष्ट, मधुर, गिरि, शुद्ध, भ्रम, पित्त,
विदाह और अमलनाशक है। (राजनि०) इसको दो जानि
है, एक तो भूमिचारिणी पर्याय अमल-पर फल मलाना
और दूसरी मलचारिणी पर्याय मलान वा दोवार पर
कैननेवाली। भूमिचारिणीका फल छोटा और मोटा
होता है। एवं शीतकालमें पोषकाल तक रहता है।
मलचारिणीका फल मलान और माय ही माय मोटा भी
होता है। किमोका फल महेन्द्र और किमोका मलान
रङ्गका देहनेमें जाता है। इसको तरकारी भी
बनती है, परन्तु अधिकतर लोग इसे नमक मिर्चके साथ
कच्चा ही खाते हैं। इसके बीज दवाके काममें जाता
है। फल और बीजोंको ताखोर उल्लू बोती है। इसके
भीनमें अन्धता पैदा होता जाता है, इसी कारण लोग
इसे खोरा वा खोरा कहते हैं। यह फल पर्याय से कर
भारतकाल तक पाया जाता है। ३ ककड़ी।

मंसर्ग। सोलम होता है, जमोन पादि मापनेके लिए रेखागणितयुक्तय किसी विद्वान्ने पहले पहल इसका प्रयोजन किया था।

त्रिकोणमिति प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है—सरल त्रिकोणमिति (Plane trigonometry) और वक्र त्रिकोणमिति (Spherical trigonometry)। इनके सिवा और भी एक कोण है, जिसे भौतिक त्रिकोणमिति (Analytical trigonometry) कहते हैं।

साइन, कोसाइन, टैजेंट, कोटैजेंट, सेकैण्ट और कोसेकैण्ट ये सब शब्द त्रिकोणमितिमें प्रचलित व्यवहृत हुआ करते हैं। ये सभी भूमित्यादि हैं। जैसे इनके लक्षण निम्ने लाते हैं—

मान लो, क ख ग एक समकोण त्रिभुज है और ख कोण एक समकोण है।



खग कख खग
—, —, —, ये यथाक्रम कोणक, कोसाइन
कग कग कख

(Sine), कोसाइन Cosine) और टैजेंट (tangent)

कग, कख कख
नामसे तथा इनके विपरीत अनुपात—, —, और —,
खग कख खग

यथाक्रम कोसेकैण्ट (Cosecant), सेकैण्ट (Secant)

और कोटैजेंट (Cotangent) नामसे पुकारे

जाते हैं। किसी कोणविशेषके (यथा क कोण) साइन

पादि निम्नमें साइन क, इन तरह लिखा जाता है

और यदि इन सब राशियोंके व्यंजकों पादि लिखते हों, तो

(साइन क)^२ (कोसाइन क)^२ पादि न लिख

कर साइन क, कोसाइन क, इन तरह लिखना

चाहिये।

रेखागणितके मतमें जब दो भिन्न सरल रेखाएँ भिन्न

भिन्न दिशाओंमें या कर एक दूसरेसे मिल जाती हैं,

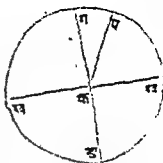
तब कोण बनता है। किन्तु त्रिकोणमितिमें कोणको

व्यक्ति किसी और प्रकारसे बतानाई गई है और यही

सब गणितशास्त्रमें प्राच्य है।

मान लो, क ख ग एक
निर्दिष्ट रेखा है और क
एक निर्दिष्ट बिन्दु है।

क प एक दूसरी रेखा
पहले क ख के साथ मिल
कर घड़ीको घूरेगी



गतिसे विपरीत घोर घूमती है। इस घुमनेवाली रेखा
और क ख निर्दिष्ट रेखाके योगमें क प कोण उत्पन्न
होता है। रेखागणितके मतमें क प कोण कहनेमें
सूक्ष्म कोणका ही बोध होता है। किन्तु त्रिकोणमितिमें
मतमें क प क कहनेमें समकोण समझी जाते हैं।
क्योंकि जितनी बार एक समकोण घूर्णन होय होता है,
उतनी ही बार समकोण जोड़ने पड़ते हैं।

क प रेखाको घ बिन्दु तक घटाओ और ग क प एक
सम्मो रेखा करो। जब क प रेखा क ग रेखाके साथ
मिलेगी, तब एक समकोण बनेगा। योद्धे क प रेखाके
साथ मिलनेसे दो समकोण, क प के साथ मिलनेसे १
समकोण और फिर क प रेखाके साथ मिलनेसे ४
समकोण बनेंगे।

रेखागणितके साथ त्रिकोणमिति का एक घोर भेद
यह है। रेखागणितके कोणके पहले कोई चिह्न नहीं
लगता, किन्तु त्रिकोणमितिमें विपरीत दिशामें घुमनेमें
उत्पन्न कोई न कोई चिह्न लग ही जाता है। गणितज्ञ
सोच एक मत हो कर पूर्व दिशामें चिह्नित और उत्पन्न
कोणको धीरे धीरे विपरीत घोर उत्पन्न कोणको
विपरीत चिह्नसे चिह्नित करते हैं।

इसी प्रकार रेखाके विपरीत भेद भिन्न भिन्न चिह्न
व्यवहृत होते हैं। क प के ऊपर घोर क ग के समान
जितने रेखाएँ होवें गये हैं, उनमेंमें धीरे धीरे

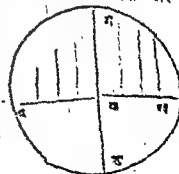
विपरीत घोर चिह्नसे
विपरीत चिह्न होता है।

फिर धीरे धीरे जो सब

रेखाएँ क ख के साथ सम-

ाना कर ग घको दाहिनी

और बायीं गये हैं, वे



त्रपा (सं० स्त्री०) वयते इति त्रय-भङ्, ततटाप् । १ सज्जा, लाज, यम । २ कुलटा, छिनाल स्त्री । ३ कोर्ति, यम । ४ कुल, वंश । (त्रि०) ५ सलज्ज, सज्जित, शरमिन्दा । त्रपाक (सं० पु०) त्रपते सज्जते त्रय-भा-क । खेच्छ विशेष, नीच जाति ।

त्रपानिरस्त (सं० त्रि०) त्रपया निरस्तः । निर्लज्जा, सज्जा-हीन, वैशर्म, बेहया ।

त्रपान्वित (सं० त्रि०) त्रपया चन्वितः । सज्जायुक्त, शर-मिन्दा ।

त्रपावण्डा (सं० स्त्री०) त्रपायां ण्डेव, सज्जाहोतृत्वात् तथाल् । येश्या, रंडी ।

त्रपावत् (सं० त्रि०) त्रपा विद्यतेऽस्य, त्रपा-मनुष्य, मस्य य । सज्जाशील, सज्जावान्, हयामन्द ।

त्रपित (सं० त्रि०) त्रय-क्त । त्रपायुक्त, सज्जित, शर-मिन्दा ।

त्रपिष्ठ (सं० त्रि०) त्रयनीपामतिग्रयेन त्रप-इष्टन् । त्रिय-स्थिरैतदादिना त्रप-ग्रन्थस्य त्रप-आदेशः । त्रपयन्त सज्जित, बहुत सज्जावान् ।

त्रपीयस् (सं० त्रि०) त्रयमनयोरतिग्रयेन त्रपः त्रप-ईयसन् त्रपस्य त्रप-आदेशः । त्रपिष्ठ, त्रपयन्त सज्जित ।

त्रपु (सं० स्त्री०) अग्निं दृष्ट्वा त्रपते इति त्रप-उसम् । १ सोसक, सोसा । २ रङ्ग, टीन । इसे तामिलमें तगरम, मलयमें तिम, फलघ, ब्रह्ममें खैम, अरबमें कसदिन, रसस और पारसमें उरजिज कहते हैं । (It-latta, banda, stagnata, Fr. Ferblace; Ger. Weissblech, zinn; Rus. Blacha sheet)

यह धातु देखनेमें चांदीकी तरह होती है । जब यह धरिष्कार रङ्गती है, तब बहुत सफेद दीख पड़ती है । इसमें कुछ स्वाद भी है । जिसनेसे एक प्रकारकी गन्ध निकलती है । सोना जैसे नदी होने पर भी यह धातु भीमासे कुछ कड़ी होती है । इसका भारीपन ७२८ है । यह बहुत जो घातसह है, कितना ही इसे पोटें तो भी यह टूटती नहीं । यहाँ तक कि एक टीनसे ५०० पतनो चढ़ बन सकती है । ०००-इंच परिधिविशिट टीनके तारमें सोनेह मंयह सेरका बोझ लटका सकते हैं । इसको पोट कर इच्छानुसार जितना पतला कर

सकते हैं, उतना चौड़ा नहीं कर सकते । यह बहुत ही कोमल होता है, मज्जमें हो भुग जाता है । तांबा, जस्ता आदि धातुओंके साथ टीन बहुत भासानोसे मिल सकती है । दूसरी धातुओंमें कलई करने वा टांकनेमें टीन बहुत व्यवहृत होती है । इसको चढ़ा द्वारा मढ़नेसे लोहमें मोरचा नहीं लगता । अग्निका स्पर्श करानेसे टीन लोहके भीतर भी प्रवेश करती है और उबका रंग सफेद बना देती है । मालूम पड़ता है, इसी कारण स्कोटलैण्डमें टीनको चढ़ा खेतलोह (White iron) नामसे प्रसिद्ध है । टीनको गला कर उसमें पतलो लोहकी चढ़ा डुबो देनेसे साधारणतः 'खेतलोह' बनता है । विनायतमें खेतलोहका खूब आदर है ।

तांबेके रसोई बनानेकी वस्तुओंमें बहुत जल्द मोरचा लग जाता है, किन्तु यदि टीनको चढ़ासे उसमें कलई की जाय तो फिर मोरचा नहीं पड़ता । नाइट्रिक म्यूरियाटिक, नाइट्रोसलफ्यूरिक और टॉरिक एसोडमें टीनको गला कर यह बहुतसे रंगोंमें मिलायो जातो है । इससे रंग मढ़ा एकसा बना रहता है और सफेदी भी बढ़ती है ।

बहुत प्राचीन कालमें टीन जनसाधारणके काममें आ रही है । यजुर्वेदमें हम लोग 'त्रपु' शब्दका उल्लेख पाते हैं—

“लोहवर्धने सीतवर्धने त्रपुश्चये यद्देन वक्षन्तामनुकलयतुः । १८।१२

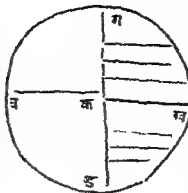
इसके सिवा चयवर्धने (११।१।८) आन्धोप्यपनिपत् (४।१८।०) आदि श्रुतिधर्मोंमें एवं मनु याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियोंमें 'त्रपु' अर्थात् टीनका उल्लेख है । नपुंसक (पशुपत्नी) की इच्छा करने पर याज्ञवल्क्य ने प्रायश्चित्संस्कार एक माण और सीसा दान करनेको व्यवस्था की है । (४।२०३)

महाभारतमें त्रपुकी चांदीका मल बतलाया है ।

(भारत उद्योग ३८७०)

भारतमें जिस तरह वैदिक युगसे त्रपुका व्यवहार चला आ रहा है उसी तरह यूरोपमें भी चिरकालसे इसका प्रचार है । हिरोदोतस, दिमोदोरस सिकलम और इग्नो फिनिकोय वगैरहोंने कामिनेरी देग वा टीन हीप में यात्राका विवरण निपिबद्ध कर गये हैं । पुराणके

योजन से घोर विपरोत
घोर दोषो ज्ञानि पर विद्यो-
अक विष्टमे चिह्नित होतो
है, हटाना स्वल्प यदि क
ख रेखाको सख्याई $\times 2$
मान लें, तो क ख रेखा-
को सख्याई १ माननी
पड़ेंगी।



एक समकोणको ८० भागोंमें बाँटनेसे प्रत्येक
भागकी १ डिग्री घोर प्रत्येक डिग्रीको ६० समभागोंमें
बाँटनेसे प्रत्येक भागकी १ मिनट एवं इसी तरह १
मिनटकी ६० समभागोंमें विभक्त करनेसे प्रत्येक सेकेण्ड
कहते हैं। डिग्री, मिनट और सेकेण्डके चिह्न क्रमशः
' $^{\circ}$ ', ' $'$ ' हैं। ५ पाँच डिग्री ६ मिनट ८ सेकेण्ड यदि
लिखना हो, तो $५^{\circ} ६' ८''$ इस प्रकार लिखा जाता है।

कोण मापनेकी एक घोर प्रक्रिया है। तदनुसार
एक समकोणको १०० भागोंमें विभक्त करना होता है।
प्रत्येक भागकी एक घंड, घोर प्रत्येक घंडकी १००
भागोंमें बाँटनेसे प्रत्येककी १ मिनट तथा प्रत्येक मिनट-
की १०० भागोंमें बाँटनेसे प्रत्येककी १ सेकेण्ड
कहते हैं। इनके चिह्न यथाक्रम ये, ' $^{\circ}$ ', ' $'$ ' हैं। पन्द्रह
घंड छः मिनट घोर सात सेकेण्डकी महत्तम इस प्रकार
लिखते हैं, जैसे— $१५^{\circ} ६' ०''$ । प्राप्तमें इसी प्रक्रियासे
कोण मापनेका प्रस्ताव किया गया था, किन्तु वह कार्य
परिचित न हुआ।

उपयुक्त दोहो सिद्धा कोण मापनेकी घोर भी एक
प्रक्रिया है। यही प्रक्रिया मन्त्रने अधिक काममें लाई
जातो है घोर उपगणितमें केवल इसी प्रक्रिया द्वारा
कोण मापा जाता है। किसी वृत्तकी परिधिका समके
व्यास द्वारा भाग देनेसे जो संख्या पाई जातो है, ये वृत्त-
के निम्ने एक है। यह संख्या योक वर्ष (π) इसी द्वारा
निर्णी जाती है, इसका परिमाण $३.१४१५८...$ चर्चात
प्रायः 3.१४ है, यदि किसी वृत्तकी परिधिमें उसके व्यास-
के समान कर एक पंथ करके लिया जाय, तो उस
परिधिखण्डके अभिमुखी केन्द्रस्थ कोणका परिमाण समो

वृत्तके निम्ने समान है। इस परिमित कोणको एक
रेडियन (radian) कहते हैं। जिस प्रकार डिग्री घोर
योज प्रभृति द्वारा कोणका परिमाण निर्णय किया जाता
है, उसी प्रकार इस रेडियनके परिमाणमें भी कोण निर्दिष्ट
होता है।

यदि क घोर ख दो घनपूरक (Complimentary)
कोण हों, तो ख चर्चात $क + ख = ९०^{\circ}$

माइन क = कोमाइन ख
कोसाइन क = साइन ख
टैजेंट क = कोटैजेंट ख

सोकण्ट क = कोसीकण्ट ख
कोसीकण्ट क = सोकण्ट ख

क घोर ख यदि परिपूरक (supplementary)
कोण हों चर्चात $क + ख = १८०^{\circ}$ हों, तो

माइन क = साइन ख

कोसाइन क = कोसाइन ख

टैजेंट क = टैजेंट ख

उपयुक्त सम्बन्धमें सोकण्ट, कोसीकण्ट घोर को-
टैजेंटका विषय मानलू किया जाता है। यथा—

सोकण्ट क = $\frac{1}{\text{कोसाइन क}}$ कोसाइन क = $\frac{1}{\text{सोकण्ट क}}$
इसी प्रकार—

कोसीकण्ट क = $\frac{1}{\text{टैजेंट क}}$ टैजेंट क = $\frac{1}{\text{कोसीकण्ट क}}$

कोटैजेंट क = $\frac{1}{\text{कोटैजेंट क}}$ कोटैजेंट क = $\frac{1}{\text{कोटैजेंट क}}$

१ से १६०° तकके कोणमनुष्य माइन चाँदिके परि-
माण घोर विष्टमें को मा परिवर्तन हुआ करता है, यह
निम्नलिखित चित्रसे मालूम हो जायगा।

क	0°	६०°	१८०°	१००°	१६०°
माइन क	०	+	१	+	०
कोसाइन क	१	+	०	-	१
टैजेंट क	०	+	०	+	०
कोसीकण्ट क	०	+	१	+	०
सोकण्ट क	१	+	०	-	१
कोटैजेंट क	०	+	०	-	०

स्तम्भमें पूर्व लिखित यदि कोणका परिमाण हो, तो साइन आदिका परिमाण जो होगा, वही १, २, ५, ७, ८ स्तम्भमें लिखा गया है।

कोणका परिमाण यदि ० से ८०°, ८०° से १८०°, १८०° से २००° और २००° से ३६०° हो, तो उनके पहले कोन चिह्न खगेगा, वह २, ५, ६, ८ स्तम्भमें लिखा गया है।

प्रत्येक त्रिकोणमें ३ भुज, ३ बाहु और ३ कोण होते हैं, इसमेंसे यदि १ बाहु और दूसरे २ भुज ज्ञात हों, तो तीसरे भुजका परिमाण निर्णय किया जा सकता है। केवल एक जगह इसका कुछ वैलक्षण्य हो जाता है। यदि किसी त्रिभुजके कोणोंको क घ ग कड़े और उक्त कोणोंको विपरीत बाहुके नाम क घ ग और ग हो, तो

साइन क साइन घ साइन ग

$$\frac{\sin k}{\sin g} = \frac{\sin g}{\sin k} \quad \text{क, घ, ग, क, घ, ग, क, घ, ग}$$

$$\sin k = \frac{\sin g \cdot \sin g}{\sin k}$$

$$\sin g = \frac{\sin k \cdot \sin k}{\sin g}$$

$$\sin k = \frac{\sin g \cdot \sin g}{\sin k}$$

इसके सिवा क + घ ग = १८०° = १८०° और अन्यथा त्रिकोणमिति के विविध विविध नियम विविध विविध स्थानोंमें व्यवहृत होते हैं। उक्त नियमों और रेखागणितको कईएक प्रतिष्ठानोंको सहायतामें त्रिकोणका निर्णय विषय निकाला जाता है

यह त्रिकोणमिति घटनचक्रादिके अवलोकन और पर्याय्य करनेके लिये व्यवहृत होती है। यदि कोई समतल त्रिभुज वस्तुतः केन्द्र भिन्न कर देने दो छत्रोंमें विभक्त करे, तो प्रत्येक वस्तुतः केन्द्र महाउत्तर कहलाता है। इस तरह ३ महाउत्तर द्वारा भोमावर्त समतल त्रिभुजके वस्तुतः त्रिकोण (spherical triangle) कहते हैं। सरल त्रिकोणमितिमें जो सब नियम व्यवहृत होते हैं, वस्तुतः त्रिकोणमितिमें भी वही सब नियम लागू हैं।

त्रिकोण (मं० को०) १ योनि, भग। २ श्रुताष्टक, निष्ठाष्टकी मता।

त्रिचार (मं० को०) त्रिचराणां चराणां समाहारः मत्स्यस्य समूह, त्रिचाचार, मत्स्यो और सुहागा इन तीनों पक्षोंका समूह।

त्रिचुर (मं० पु०) त्रिचुराणां चराणां समाहारः। कोक-माच हच, तान मत्स्यानां।

त्रिधु (मं० को०) त्रिधा वं चाक्रामोऽयक्रामः फलैः। त्रिपु, त्रिपरा।

त्रिधु (मं० को०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधास्य, तीन चारचारोंका समूह।

त्रिधु (मं० को०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० को०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० पु०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

त्रिधु (मं० को०) त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः। त्रिधुणां त्रिधाणां समाहारः।

१५ म. गहरमें एम. पी. जी. हाइस्कूल, चंघेजीका एक सेना-निवास और दक्षिण-प्रदेशके रेलवेका एक प्रधान कार्यालय है। यहांकी जनसंख्या बहुत सामान्य है।

त्रिचूर—मन्दाजके कोचीनराज्यका एक शहर। यह पचा० १०° ३२' उ० और देशा० ७६° १३' पू० के मध्य अवस्थित है। भूविस्तर १६ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः १५५८५ है। यह एक प्राचीन शहर है। यहांके स्थान-पुराणके अनुसार परगु राम इसके अधिष्ठाता माने जाते हैं। १७७० ई० में फ्रेंचोंने इसे पर चढ़ाई करके अपना दखल जमा लिया था। पीछे १७७६ ई० में यह स्थान हैदर अलीके और १७८८ ई० में टोपू सुलतानके हाथ आया। १७७४ ई० में यहां मद्रासका एक दुग बनाया गया था, जो सभी अन्धप्रदेशमें गढ़ा है। यह शहर वाणिज्य-का एक प्रधान केंद्र है। यहां डिस्ट्रिक्ट-जज, मजिस्ट्रेटकी अदालत, चिकित्सालय और तीन हाइस्कूल हैं। इनके सिवा शंकराचार्यके छावनीके बनाए हुए बहुत प्राचीन तीन मठ हैं। इनमेंमें एक मठमें किलहान ब्राह्मण की भोजन तथा वेदकी शिक्षा दो जाती है।

त्रिजगत् (मं० श्लो०) त्रिगुणित जगत् सत्तात्वात् कर्म-धारयः। स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल ये तीनों लोक।

त्रिजट (मं० पु०) तिलः जटाः यस्य। १ महादेव। २ ब्राह्मणका नाम जिसकी बनावटके समय रामचन्द्रने बहुतसी गायें दीं थीं।

त्रिजटा (मं० श्लो०) त्रिषु जटाः यस्याः। राक्षसोर्मेट, विभीषणकी बहन। यह राक्षसी पशुकी शक्तिमें जानकी-जैसे पाम रक्षा करती थी। मोताके प्रति इसका बहुत प्रेम था। जब कभी पन्थाय्य राक्षसी मोता पर पन्थाचार करती, तब यह उन्हें रोक देती थी। त्रिजटाने स्वप्नमें राक्षसीका भ्रमजन देखा था और वह स्वप्नवृत्तान्त सुना-सुना कर मोताकी वकाहित करती थी।

(रामा० ७३२-२७-३० अ०)

१ विष्णुहृत्, रत्नका पिंड। इसके तीन पक्षोंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर रहते हैं। हस्त शक्तिद्वारे हैं, हस्त मूलमें चक्र रहता है तथा मूलमें पत्तं ब्रह्मचक्र है। इन पक्षोंमें हर या हरिको पंचना करनेवाहिये। शक्ति-पूजामें धर्मके पक्ष चक्षुष्य प्रयोजनोप है। इन पक्षों-

हारा पूजा करनेमें कैवल्यपाम होता है।

(शान्तिपर्व ६५०)

त्रिजटो (मं० पु०) महादेव, विष्णु।

त्रिजट्ट (हिं० पु०) १ कटारौ। २ तनवार।

त्रिजातक (मं० श्लो०) त्रिजातवर्ण कम्। इसाश्वी, दारवोनी और तैजसपत्ता इन तीन प्रकारके पदार्थोंका समूह। इसे त्रिगुणित भी कहते हैं। गटि इसमें भाग-देशर भी भिन्न दिया जाय तो इसे त्रिगुणित कहेंगे। त्रिजात और त्रिगुणित ये दोनों ही ऐश्वर्य, धन, तीक्ष्ण, मनुष्योद्य, सुखगत-दुर्गन्धनाशक, सत्व, विज्ञानरूप, चमत्कारक, वर्णप्रसादक तथा कल, वायु और विष्णु-नाशक हैं।

त्रिजोवा (मं० पु०) त्रिषु रात्रिषु जोवा। तीन रात्रियों पर्याप्त ८० चण्डों तक जाने हुए सायकी व्या।

त्रिज्या (मं० श्लो०) व्यासकी बाधो रेखा, किसी वृत्त केन्द्रसे परिधि तक खींची हुई रेखा।

त्रिषा (मं० श्लो०) त्रय प्रयोदशः साधुः। ४८५. घाम।

त्रिषता (मं० श्लो०) त्रिषु स्थानेषु भूता नश्यन्त्यत्वं। पूर्वद्वार संघातवत्। वा पा० ३३। १ पट्ट, धनुष। (वि०) २ जो तीन जगह झुका हुआ हो।

त्रिषत्त्व (मं० श्लो०) त्रिष्वप्य भाव त्रिषत्त्वः। त्रयका भाव।

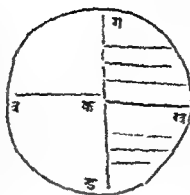
त्रिषयन (मं० पु०) त्रिणि नयनानि यस्य। त्रिच, महादेव।

त्रिषव (मं० पु०) त्रिषावसा नवच समामानः संपा-त्वात् पत्वत्। सप्तविंशत्यस सामप्तोर्मेट, साम-मान-को एक प्रणाली, जिसमें एक विशेष प्रकारके लकड़ी के पत्तोंसे पाहलियां करते हैं। सप्ताहिन बार पाह-लियां करनेमें प्रथमपर्यायमें, प्रथम तीन, मध्यम ३ और उत्तम ३। द्वितीयपर्यायमें प्रथम एक, मध्यम तीन और उत्तम पांच तथा तृतीयपर्यायमें प्रथम पांच, मध्यम एक और उत्तम तीन। इन तीन पर्यायोंमें जो-जो करके नम को पर्याप्त २० बारकी पाहलियां सामप्तोर्मेट हैं। इस समष्टि कोमको सभी पाहलियां करनेमें त्रिषव होता है।

त्रिषाव—त्रिच देखो।

त्रिषाचिकेत (मं० पु०) त्रिः त्रयविधो नाचिकेतः पत्न्य-र्थेन, पूर्वपदादिनि पत्वत्। २ टकुपेटके एक विनि

घोत्र ३६ घोर विपरोज
घोर घोत्रो ज्ञान पर विधो-
जक विज्ञाने चिह्नित होतो
हैं, हटाया स्वरूप यदि क
व रेखाको लम्बाई $\times \frac{1}{2}$
मान लें, तो क व रेखा-
को लम्बाई १ माननी
पड़ेगी।



एक समकोणको ८० समान भागोंमें बाँटनेसे प्रत्येक
भागकी १ डिग्री घोर प्रत्येक डिग्रीको ६० समभागोंमें
बाँटनेमें प्रत्येक भागकी १ मिनट एवं इसी तरह १
मिनटको ६० समभागोंमें विभक्त करनेमें प्रत्येक सेकेण्ड
कहते हैं। डिग्री, मिनट घोर सेकेण्डके चिह्न क्रमशः
'°', '′' हैं। ५ पाँच डिग्री ६ मिनट ८ सेकेण्ड यदि
लिखना हो, तो ५° ६′ ८″ इस प्रकार लिखा जाता है।

कोण मापनेको एक घोर प्रक्रिया है। तदनुसार
एक समकोणको १०० भागोंमें विभक्त करना होता है।
प्रत्येक भागको एक घेड, घोर प्रत्येक घेडको १००
भागोंमें बाँटनेसे प्रत्येककी १ मिनट तथा प्रत्येक मिनट-
को १०० भागोंमें बाँटनेसे प्रत्येककी १ सेकेण्ड
कहते हैं। इनके चिह्न यथाक्रम घे, '′' हैं। एक घेड
घेड छः मिनट घोर सात सेकेण्डकी पहलमें इन प्रकार
लिखते हैं, जैसे—१५ घे ५′ ०″। प्राक्शमें इसी प्रक्रियासे
कोण मापनेका प्रस्ताव किया गया था, किन्तु वह कार्यके
परिचित न हुआ।

उपर्युक्त टीके निम्ना कोण मापनेकी घोर भी एक
प्रक्रिया है। यही प्रक्रिया सबसे अधिक काममें आने
जाती है घोर सशगचितमें केवल इसी प्रक्रिया द्वारा
कोण मापा जाता है। किसी वृत्तकी परिधिका उसके
व्यास द्वारा भाग देनेसे जो संख्या पाई जाती है, वे वृत्त-
के लिये एक हैं। यह संख्या गोक वर्ण (π) इसी द्वारा
निर्णीत जाती है, इसका परिमाण ३.१४१५८... पर्याप्त
प्रायः ३.१४ है; यदि किसी वृत्तकी परिधिसे उसके व्यासदि-
व समान कर एक पंथ करके लिया जाय, तो उस
परिधिघेडके परिमपुत्रो केन्द्रस्य कोणका परिमाण समो

वृत्तोंके लिये समान है। इस परिमिति कोणको एक
रेडियन (radian) कहते हैं। जिस प्रकार डिग्री घोर
घेड प्रकृति द्वारा कोणका परिमाण निर्धार्य किया जाता
है, उसी प्रकार इस रेडियनके परिमाणमें भी कोण निर्दिष्ट
होता है।

यदि क घोर ख दो संपूरक (Complimentary)
कोण हों, तो ख पर्याप्त क + ख = ८०°

माइन क = कोसाइन ख
कोसाइन क = साइन ख
टेन्जेंट क = कोटैन्जेंट ख

सोकोण क = कोसीकोण ख
कोसीकोण क = सोकोण ख

क घोर ख यदि परिपूरक (supplementary)
कोण हों पर्याप्त क + ख = १८०° हों, तो

माइन क = साइन ख
कोसाइन क = कोसाइन ख
टेन्जेंट क = टेन्जेंट ख

उपर्युक्त सम्बन्धमें सोकोण, कोसीकोण घोर को-
टेन्जेंटका विषय मानून किया जाता है। यथा—

सोकोण क = कोसाइन क = कोसाइन ख = सोकोण ख
इसो प्रकार—

कोसीकोण क = टेन्जेंट क = साइन ख = कोसीकोण ख

कोटेन्जेंट क = टेन्जेंट क = टेन्जेंट ख = कोटेन्जेंट ख

१ से ३६० तकके कोणसमूहके माइन पाठिके परि-
माण घोर चिह्नमें को भा परिवर्तन हुआ करता है, यह
निम्ननिमित्त चित्रमें मालूम हो जायगा।

क	०°	६०°	१२०°	१८०°	२४०°	३००°
साइन क	०	+	१	+	०	-
कोसाइन क	१	+	०	-	१	-
टैजेंट क	०	+	२	-	०	+
कोकोसक क	२०	+	१	+	२०	-
सोकोसक क	१	+	२०	-	१	-
कोटेजेंट क	२	+	०	-	२	+

भाषा नाम । २ 'इमं भाषते वदयाते' । यजुर्वेदका प्रख्यात भाग विद्याभित्त नामने ख्यात है । ३ भारा-
यण । (मंत्र १२।१३।१४)

विन (मं० पु०) १ देवताभिद, एक देवताका नाम ।
२ ब्रह्माके मानसपुत्ररूप कविभिद, एक कविका
नाम जो ब्रह्माके मानसपुत्र माने जाते हैं । ३ मोतम-
सुनिके पुत्र । एतल पोर दित नामक इनके दो भाई
हैं, पर ये दोनोंमें अधिक तेजसो पोर विद्वान् हैं । कवि
लोग इनका गुण देख कर इन्हें मोतमको भाई पुजा
करते हैं । जिनो समय ये अपने भाइयोंके पत्नीरोधने
उनके साथ वसमं वद करके लिए जड़ममें गये । वहां
दोनों भाइयोंने इनके संयुक्त किये हुए पण लोग का
इन्हें चढ़ना छोड़ कर घरका शस्त्र लिया । इनो बीच
एक भिदिया बाण, जिसे देख कर ये करके मारे दोड़ने
मर्ग पोर दोड़ने हुए एक गधे कुएँमें जा गिरे । वहाँ
इन्होंने वीरयोग प्रारम्भ किया, जिसमें देवता लोग भा
या पहुँचे । वहाँ देवताओंके वरने ये कुएँमें निकले ।
महाभारतमें लिखा है, कि इनो कुएँ में भरपूरतो नदीका
पाविर्भाव हुआ ।

विनच (मं० स्त्री०-स्त्री०) पयाणां तत्त्वं समाहारः चच्
समा० । तोनों तत्त्व, तोनों सुत्तर ।

विनक्तोयोवा—वीणावाद्यविशेष । यह कच्छुको वीणा-
की तरहका होता है । जिसका इनका योन काटका
रमा होता पोर इसमें तोन धावक रहते हैं । इस वीणाके
तेज मार कच्छुकी नायकोपुर पोर पञ्चमके जैसे होते
हैं । बजानेका ढंग भी कच्छुयोमा है । वयःपौर ।

इसका प्राधुनिक नाम मितार है, जो वीणाका पञ्च-
कल्प है । विनक्तो पोरमो भाषामें 'वि' कहते हैं,
इसीसे धमोर बुझने तीन तारामें गुरु त्रितक्तोका
मेतार या मितार नाम रखा है ।

विनय (मं० स्त्री०) लघोऽवयवा चच् वि-नयच् । (ईदवाका
अवयवे तदन् । पा० ५।१।४३) धर्म, धर्म पोर काम इन
तोनोंका समुच्च । २ नमिषात । (वि० ३ निवकार,
तोत तरह ।

विनय (मं० स्त्री०) त्रितक्तव, तीन सुत्तरका पार ।

विताप (मं० स्त्री०) पयाणां तापानां समाहारः प्राधा-

निक, प्राधिमौनिक पोर प्राधिदैविक ये तोनों प्रकार
के दुःख । प्राध्यात्मिक दुःख दो प्रकारका होता है, गारो-
रिह पोर मानसिक । तात पित्त पोर श्लेष्मादिके विप-
र्ययमें उत्पन्न प्यह, पतिसार पाटि रोग गारोरिक दुःख
है । काम, क्रोध, मित्रविषयोग पोर पविषयव्यादने
जो दुःख उत्पन्न होता है, वह मानसिक दुःख है ।
प्राधिमौनिकके चार भेद हैं, जरायुज, पण्डज, स्वदेज
पोर उद्भिज । श्रोत, उष्ण, मात, वर्षा पोर वयपतन
पाटिमें जो दुःख उत्पन्न होता है, उसे प्राधिदैविक
कहते हैं । लोग वितापमें पड़ कर तरह तरहके कष्ट पाते
हैं । यवज, मनन, निदिध्यासन ये सभी वितापके नाशक
हैं । वितापके नाम होनेसे जो मोक्ष मिलता है । लगा-
तार वितापमें पड़ने रक्षनेके बाद समुच्चके नामसे शास्त्र-
विज्ञानाका उद्देश्य पहुँच जाता है । शास्त्रविज्ञानाका
उद्देश्य पहुँच जानेसे जो वे मोक्षके पथ पर पचपच
होते हैं ।

विदण्ड (मं० पु०) विदण्डं चतुरङ्गमनोनामवेदना-
न्योन्यमन्वयं चत्त्यल्ल, चर्ग बादित्वादन । १ मन्नामा-
न्यम, संन्यास पाद्यमका विद्व । (स्त्री) लयाणां
दण्डानां समाहारः । पविर्वाते चार चतुर्भुजपरिमित तोन
दण्ड जो एक दूसरेमें बंधे रहते हैं । यथा—वागदण्ड,
मनोदण्ड पोर कायदण्ड ।

विदण्डक (मं० स्त्री०) विदण्डं स्थायि कन् । विदण्ड ।
विदण्डो (मं० पु०) विदण्डमन्यल्ल इति इति । विदण्ड-
धारी यति, वे त्रिकके कायदण्ड, मनोदण्ड पोर वाग-
दण्ड बुद्धिमें स्थापित है पर्यात् जो ध्यानबलसे मन,
वचन पोर ऊर्म इन तोनोंको दमन कर सकते, वे ही
विदण्डो कहला सकते हैं । जिसका तोनों दण्ड धारण
कर लेनेसे ही विदण्डो बन नहीं सकते । वस्तु काम पोर
क्रोधको दूर दृष्ट कर जो विदण्डका पदार्थबहाव करती,
वे ही विदण्डोपदवाप्य तथा निदिध्यामके अधिकारी
हैं । (मन् १२।१।१२)

विदण्डपक्षण करनेमें उनका प्रीति दूर हो जाता
है । विदण्डोका पाद्ययाह नहीं करना पड़ता है;
विश्वभूतके बाद प्यारके दिनेमें पाद्यप्याह करना
पड़ता है । २ यज्ञोपवीत, खनैज ।

स्तम्भमें पूर्वनिश्चित यदि कोणका परिमाण हो, तो साइन पादिकः परिमाण जो होगा, वही १, २, ३, ४, ८ स्तम्भमें लिखा गया है।

कोणका परिमाण यदि ०° से ८०°, ८०° से १८०°, १८०° से २००° और २८०° से ३६०° हो, तो उनके पहलें कोण विज्ञ सहीगा, यह २, ४, ६, ८ स्तम्भमें लिखा गया है।

प्रत्येक त्रिकोणमें ६ पंथ, ३ बाहु और ३ कोण होते हैं, इनमेंसे यदि १ बाहु और दूसरे २ पंथ ज्ञात हों, तो तीसरे पंथका परिमाण निर्णय किया जा सकता है। किन्तु एक जगह इनका कुछ बेलचण्य हो जाता है। यदि किसी त्रिभुजके कोणोंको क ख ग कहें और उक्त कोणोंको विपरीत बाहुके नाम क ख और ग हो, तो

साइन क साइन ख साइन ग

$$क, ख, ग, \frac{ग^2 + ग,^2 - क,^2}{२ ख, ग,}$$

$$य कोसाइन क = \frac{२ ख, ग,}{ग,^2 + क,^2 - ख,^2}$$

$$कोसाइन ख = \frac{२ ग, क,}{क,^2 + ख,^2 - ग,^2}$$

$$कोसाइन ग = \frac{२ क, ख,}{क,^2 + ख,^2 - ग,^2}$$

इसके सिवा क + ख + ग = १८०° = ११ और चयान्य त्रिकोणमिति के विशेष विशेष नियम विशेष विशेष ग्रन्थोंमें व्यवहृत होते हैं। उक्त नियमों और देशागणिकों को कईएक प्रतिप्रायोंको सहायतासे त्रिकोणका निर्णय विषय निकाला जाता है

वस्तुतः त्रिकोणमिति घटनचलादिके चयनान और पथनिर्णय करनेके लिये व्यवहृत होता है। यदि कोई समतल कोण वस्तुजका केन्द्र भेद कर इसे दो खण्डोंमें विभक्त करे, तो प्रत्येक वस्तुजकेन्द्र महासतल कहलाता है। इस तरह ३ महासतल द्वारा गोमावृत्त समतल चतुर्भुज वस्तुज त्रिकोण (spherical triangle) कहते हैं। सरल त्रिकोणमितिमें जो सब नियम व्यवहृत होते हैं, वस्तुतः त्रिकोणमितिमें भी वही सब नियम लागू हैं।

त्रिकोण (मं० को०) १ योनि, भग। २ गृहादिक, निष्ठादीकी सत्ता।

विचार (मं० स्त्री०) त्रिधायां चराणां समाहारः मन्त्रादयः समूह, जवाहार, सज्जो और सुहागा इन तीनों धारोंका समूह।

विचुर (मं० पु०) चोचि चुराचोच चयाचि यक्ष। कीक-साच हच, तान मयाना।

विख (मं० स्त्री०) त्रिधा खं चाकागोऽयकागः फलेऽय। त्रुप, खौर।

विखट्ट (मं० स्त्री०) विखट्टा खट्टानां समाहारः। खटादय, मोन चारवाइयोका समूह।

विखट्टी (मं० स्त्री०) विखट्ट-कोप, विखट्ट-वेणी।

विखट्ट (मं० पु०) सामवेदकी गाथाके विविधाध्यायो।

विगह (मं० पु०) त्रिस्तो गह्वा नद्यो यत्त वद्गोत्रायें "नदीमिच" इति सूत्रेण वक्ष्ययोगावः। तापे भेद, महाभारतके पुरुवार एक तोयका नाम।

विगण (मं० पु०) त्रयाणां धर्मार्थकामानां गणः धर्मः। त्रियर्ग, धर्म, धर्म और काम।

विगन्धक (मं० स्त्री०) त्रयाणां गन्धद्रव्याणां समाहारः। त्रिगत वेणी।

विगन्धोर (मं० पु०) त्रिभिः गन्धोरः। वह त्रिभुजा सत्व (चावरण), स्वर और नाभि गन्धोर हो। योगाका विग्रह है कि ऐसा चादमो गटा सुखी रहता है।

विगत (मं० पु०) त्रयो गतां यत्त। १ देगविशेष। इनका वर्तमान नाम ज्ञान्यर है। हचक इति के पुरु मार यह ज्ञानविभागके उत्तरकी ओर पर्वव्यत है। (हरनृ० ११/२५) गह्वर देगो। २ त्रिगत देगस्य भूमि। ३ इस देगके निवासि।

विगतक (मं० पु०) त्रिगतं यत्त स्वायं कम्। त्रिगत देग। त्रिगतपठ (मं० पु०) त्रिगतः वष्टो वर्गा यस्य। पाठ, जोविभक्त भेद।

विगतां (मं० स्त्री०) त्रयो योनिषाः गतां यस्याः। १ कामुको पता, क्षिप्राय पता। कामुको पतो वक्ष्योनिका कोने पर भी मैथुनके समय त्रियोनिकाके मुण्य हो जाती है, इसीसे इनका नाम विगतां पड़ा है। २ पुरपुरा।

विगतिक (मं० पु०) त्रिगतं देग।

त्रिगुण (मं० स्त्री०) त्रयाणां भूतजन्तुमर्मा गुणानां समा-हारः। काव्याग्र-प्रसिद्ध भूत, राज और तमीगुणः

त्रिदल (सं० पु०) त्रिषु दलानि यस्य । त्रिविधस्य, त्रैलोक्य-
का पेट ।

त्रिदला (सं० स्त्री०) त्रिषु दलानि प्रतिपद्यमानाः ।
गोधापटोसता, दंभद्वय ।

त्रिदल (सं० पु०) त्रयोधा दला यस्य । त्रिदलस्यात्र
त्रिभागवत् त्रयोधाशक्तता वा त्रिस्रो जन्मसत्ता-विना-
शाख्याः न तु मर्त्यलोकात्मिक हृदिपरिणामवशात्त्याः दला
यस्यः यदा, तौ न तापान् दहति दन्त घञर्थे क प्रथो-
मापुः वा त्र्यधिका विराट्प्रकाः दल परिमाणमस्य ।
देवतापौका स्थिर योदनमस्य । देवतापौके जन्म,
सत्तां चौर विनाशाख्या भवत्यां है। किन्तु यत्र यस्या
मानवो के वीसा दृष्टि, परिणाम चौर सत्यस्य नहीं है ।
देवतापौक मनुष्यो के आध्यात्मिक, आधिभौतिक चौर आधि-
दैविक त्रितापौको नाम करत है । देवतापौका मस्या
तीन आहृति दल भवति तोम है; किन्तु उनका परिमाण
त्रयस्त्रिंशत् भवति तैतोम वतनाथा है । यहाँ पर एक
एक त्रिदलस्यता द्वारा उच्चारण के कारण त्रयस्त्रिंशत्-
का बोध होता है । इन्को सब कारणोंसे देवतापौका
नाम त्रिदल पड़ा है ।

.तैतोम प्रधान देवतापौके हैं—१२ अर्क, ११ दृष्ट,
८ अष्टवसु चौर २ अग्निनीकुमार । कोई कोई कहते हैं,
कि दोनों अग्निनीकुमारकी टीड, इन्द्र चौर प्रजापतिकी
नेकर तैतोम होती है । त्रिस्रोदलाः जापटावस्था यस्य ।
२ श्रीय । ३ देवतापौका सामस्यान, स्त्रग । (त्रि०)
त्रिंशत्परिमित, तोम ।

त्रिदलगुह (सं० पु०) त्रिदलानां देवानां गुहः इत्यतः ।
देवगुह, हृदयमिति ।

त्रिदलगोप (सं० पु०) त्रिदलो देवमंदिर इन्द्रः गोपी
रक्ष कोटस्य । इन्द्रगोपकीट, बोरवहृटी नामका कीड़ा ।

त्रिदलत्व (सं० स्त्री०) त्रिदलस्य भावः त्रिदल-त्व । देवत्व ।

त्रिदलदाह (सं० स्त्री०) देवदाहकाण्ड ।

त्रिदलयोर्विका (सं० स्त्री०) त्रिदलानां देवानां दोर्विका ।

त्रयद्रा, चात्रयद्रा ।

त्रिदलपति (सं० पु०) त्रिदलानां पतिः इत्यतः । इन्द्र ।

त्रिदलमन्त्रो (सं० स्त्री०) त्रिदलपति मन्त्रो यस्याः ।

मन्त्रावतान् न कप । सुषमी ।

त्रिदलवधू (सं० स्त्री०) त्रिदलानां वधूः । चन्द्ररा ।
त्रिदलवर्धन (सं० स्त्री०) त्रिदलानां वर्धन । नमः,
आकाश ।

त्रिदलमर्ष (सं० पु०) त्रिदलपतिः सत्यः । देवमर्ष,
एक प्रकारको सरसो ।

त्रिदलद्वय (सं० पु०) त्रिदलस्य अद्वयः । इन्द्र ।

त्रिदलाचार्य (सं० पु०) त्रिदलानां आचार्यः । देवतापौ-
के गुरु हृदयमिति ।

त्रिदलाधिप (सं० पु०) त्रिदलानां अधिपः । त्रिदलके
अधिपति, इन्द्र ।

त्रिदलाध्यक्ष (सं० पु०) त्रिदलानां अध्यक्षः । विष्णु ।

त्रिदलायन (सं० पु०) त्रिदलानां अयनं यत्र । विष्णु ।

त्रिदलायुध (सं० पु०) त्रिदलानां आयुधः । वज्र, इन्द्रका
धनुष ।

त्रिदलारि (सं० पु०) त्रिदलानां देवानां अरिः इत्यतः ।

देवतापौके गन्ध, चक्षुर ।

त्रिदलानय (सं० पु०) त्रिदलस्य आनयः इत्यतः । १ स्वर्ग ।
२ सुमेरुपर्वत ।

त्रिदलावास (सं० पु०) त्रिदलानां आवासः । १ स्वर्ग ।
२ सुमेरुपर्वत ।

त्रिदलाहार (सं० पु०) त्रिदलानां आहारः । अमृत, दुधा ।

त्रिदलेश्वर (सं० पु०) त्रिदलानां ईश्वरः । इन्द्र ।

त्रिदलेश्वरो (सं० स्त्री०) त्रिदलेश्वर-इत्यतः । दुर्गा ।

त्रिदलिका (सं० स्त्री०) त्रिदलिका हृदयमिति, आमर-
कपा, घातला ।

त्रिदिनद्वय (सं० पु०) त्रिदिनं चान्ददिनत्रयं ऋषयि
स्त्वय-द्वय । अथाह, यत्र तिथि ओ तीन दिनोंकी अग
करतो है ।

६० दण्डचतुराशके मध्य यदि दो तिथियोंका मध्य
अवमान हो तो उसे अथमदिन कहते हैं और एक एक
तिथि यदि लोग बारको अर्थ करनी हो, तो उसे दण्ड-
अर्थ कहते हैं । ऐसे दिनमें स्नान और दानादिके प्रति-
रिक्त धार कोई शुभकाय नहीं करना चाहिये ।

त्रिदिन (सं० पु०) यत्रो ब्रह्मविष्णुदेवाः दोषनाशक,
दिव-पञ्च, वा दोषान्ति इति दिवा। दिव-पञ्च, त्रयः पञ्च-
रत्नमोक्षदाः दिवा ब्राह्मणा यदा । १ स्वर्ग ; ब्रह्मा,

प्रधान । मत्स्य, रज और तम इन्हींमें सबसे पहले प्रधान की उत्पत्ति हुई : इस प्रधानका नाम है बुद्धितत्त्व । इस बुद्धितत्त्वमें ही सब उत्पन्न होता है । (श्रीरक्षा० ११)

त्रिगुण चतुर्विधो, विषय, सामान्य, चेतन और प्रमत्तधर्मों है । प्रधान व्यक्त महान् है । यह परिदृश्यमान संसार त्रिगुणात्मक और चतुर्विधो है, पर्याप्त इसके विवेक या भेद नहीं है । यह गाय है, यह घोड़ा है, जिस तरह यह पृथक् किया जाता है, उस तरह व्यक्त और गुण पृथक् नहीं किया जा सकता । इसी कारण जो जो गुण है, वही वही व्यक्त है । गुण और व्यक्त एक ही है । विषय भोग्य है ऐसा जानकर जिसे भोग करते हैं वही पदार्थ भोग्य है । त्रिगुण वा त्रिगुणोत्पन्न व्यक्त भोग्य पदार्थ है, इसीमें व्यक्तका नाम विषय पड़ा है । यह व्यक्त सभी पुरुषोंके भोग करनेका पदार्थ है ।

सामान्य सेव्याको तरह सभीका भोग्य-पदार्थ है, इस कारण व्यक्त सामान्य है । चेतन, सुख, दुःख और मोहका बोधाभाव है, अतः व्यक्त चेतन है । प्रमत्तधर्मों बुद्धिमें अष्टाङ्गादि निकले हैं, इस कारण व्यक्त प्रपञ्चधर्मों है । अष्टाङ्गमें एकादश इन्द्रिय और पञ्चतन्मात्र तथा तन्मात्रमें पञ्चमहाभूत हुए हैं ।

यह त्रिगुण पंचिम भावमें अड़ा हुआ है । व्यक्त भी त्रिगुण है और अप्रकृत भी त्रिगुण है, जिसका कार्य है यह महादादि, यह भी त्रिगुण है । यह गुण है, यह प्रधान है, इसको पृथक् नहीं कर सकते । त्रिगुण वा प्रधान चेतनका अनुमान इस प्रकार है, चेतन सत्त्विण्डमे चेतन पड़े हो बन सकते हैं । इस कारण प्रधान वा प्रधानोत्पन्न सुख दुःख और मोहमें चेतनता नहीं है, इस कारण त्रिगुण चेतन है । यह त्रिगुण पर्याप्त मत्स्य, रज और तम प्रकाशार्थ है, प्रहृत्यर्थ है । प्रहृत्यर्थ और नियमार्थ है, एक दूसरेमें अभिभूत है, एक दूसरेका धारित है, एक दूसरेमें उत्पन्न होता है, एक दूसरेमें मैट्टन सम्बन्ध है, एक दूसरेमें वर्तमान है एवं यह सुख, दुःख और मोहात्मक है । सुख मत्स्य है, दुःख रज है और मोह तम है । मत्स्य गुण प्रकाशार्थ पर्याप्त प्रकाशमय है । रज प्रहृत्यर्थ पर्याप्त प्रहृत्यमय है, तम नियमार्थ पर्याप्त नियममय है वा नियम मयमें स्थित है । अतएव

मत्स्य रज और तमोगुण क्रमशः प्रकाशक्रिया और स्थिति-गोन रूपमें परिगणित होता है । एक दूसरेमें अभिभूत है पर्याप्त प्रत्येक गुण तम दो गुणोंको अभीभूत करता है । अब मत्स्यगुण उत्कट होता है, तब रज और तमोगुण अपने अपने गुणोंमें अभिभूत हो कर प्रीति और प्रकाश स्थावमें बान्ध करता है । अब रजोगुण उत्कट होता है, तब मत्स्य और तमोगुण अभिभूत हो कर प्रीति और प्रहृतिधर्ममें बान्ध करता है । तमोगुण जब उत्कट होता है, तब मत्स्य और रजोगुण अभिभूत हो कर विषाद और स्थितिगोन धर्ममें बान्ध करता है । यह त्रिगुण परस्पर मिश्रणभावमें सम्पन्न है । रज उत्पत्तिको ले कर मिश्रण और मत्स्य रजकी भी ले कर मिश्रण हुआ है पर्याप्त यह एक दूसरेका सहायक है । त्रिगुण एक दूसरेमें वर्तमान है पर्याप्त सभी गुण त्रिगुणमें ही अन्वाधिकभावेमें रहते हैं, इसका एक उदाहरण देनेसे स्पष्ट हो जायगा । एक सुन्दरी स्त्री स्वामीके सुख, सप-न्नोके दुःख और लम्पटकी मोहका कारण है । उनमें यह त्रिगुण है । ऐसा जान कर ही वह इस प्रकार प्रकृतिके अनुसार सुख-दुःख और मोहका कारण हुई है । इसी प्रकार संसारके सभी विषयोंमें ही समझना चाहिये ।

मत्स्यगुण मनु और प्रकाशक है, रजोगुण उपपत्तिक और चञ्चल है तथा तमोगुण गुरु और धारक है । ये तीनों एक साथ मिलाकर प्रदीपको नाईं किसी विषय प्रयोजनको निबध्न करते हैं । अब मत्स्यगुण उत्कट होता है, तब अष्टादि लघु, बुद्धि प्रकाश और सभी इन्द्रियां प्रसन्न होती हैं । रजोगुण उपपत्तिक और चञ्चल सभी प्रकार है, जिस प्रकार एक हथ जब दूसरे हथकी देखता है, तो वह उपपत्तिक पर्याप्त रजोगुण द्वारा धारित होता है । इस समय इसी रजोगुणका आधिक्य होता है । इस कारण चित्त चञ्चल हो जाता है और वहीके अनुसार काम करने लगता है । तम गुरु और धारक है । जब तमका आधिक्य होता है तब अष्टादि भारी मानस पदमें लगता है और सभी इन्द्रियां आच्छन्न हो जाती है पर्याप्त चपला काम नहीं कर सकती ।

यहां यह कह सकते हैं, कि त्रिगुण जब एक दूसरेके निबध्न रहता है, तब यह किस प्रकार प्रदीपको नाईं

विन्नु चोर महेगार नाममें रहते हैं। इसमें स्वर्ग का नाम
विदिवा पड़ा । १. पाकायः । (स्त्री०) ३. सुष ।
विदिवा (मं० घा०) मदाभेद. एक नदी का नाम ।
२. एता. इनायचो ।

विदिवाधोग (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगः । इन्द्र ।

विदिवाध (मं० पु०) विदिवाध्व देवः । देवता ।

विदिवाधर—विदिवाधन देवो ।

विदिवाधोग (मं० स्त्री०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः
१. मूलयला. बहु इनायचो । २. गङ्गा । (त्रि०) ३. स्वर्ग-
भयमात्र, जो स्वर्गमें लयाय हुआ हो ।

विदिवाधम् (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता ।

विदिवा (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता ।
भूतदीनि पश्यति इन्द्रः । विनयन, मदाभेद, मिथ ।

विदीय (मं० स्त्री०) विदीया देवायः समाहारः । १. वात,
पित्त चोर कफ ने तोन दीय । २. विदीयन रोगभेद.
गान्ध, पित्त चोर कफ ने तपत्र रोग. मविगत ।

विदीयन (मं० वि०) विदीयायायने जनः । वात, पित्त
चोर कफजनित मविगत चादि रोग । उवा देवो ।

विदीयन मविगमेन चरन्त गृह्य. भुक्तद्रव्योवा
चराक, पक्षि, दाह, विषासा, श्वास चोर मोह कोला
३ । इसका रोगी सर्वदा उवा, जोन या शक्तव्य मव-
पात्रमविगिट पदार्थ समन करता है ।

विदीयन (मं० वि०) विदीय देवा इन्द्रः । विदीय-
नामक ।

विदीयनानाम (मं० पु०) उवरमें दिव्ये ज्ञाने वा
एक प्रकारका रस ।

विदीयनोचितो (मं० स्त्री०) गनेका एक रोग जो विदीय-
न लपक होता है ।

विदीयनध्व (मं० पु०) मविगत ।

विदीयध्व (मं० पु०) उवरको चोवधि ।

विदिवा (मं० पु०) एक प्रकारको रागिणी ।

विदिवाध्व (मं० पु०) गुणव्या राजाई एक पुत्रका नाम ।
ये विदिवाध्व तपस्व नामक सर्वविद्याविगारक एक
पुत्र निकले । (हरिवंश १२ स०)

विदिवा (मं० पु०) मदाभेद, मिथ ।

विदिवा (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवा (मं० पु०) विन्नु धर्मोक्तामान् दधाति पुत्रा-
नीति भा तुम् । १. गयेम । (स्त्री०) यथाभा धातुनां समा-
हारः । भातुव्य, गोमा, चादी चोर तावा ।

विदिवा (मं० स्त्री०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

विदिवाध्व (मं० पु०) विदिवाध्व अधोगे यस्याः । देवता,
तोन तरहमे ।

किसी विशेष प्रयोजनको सिद्ध कर सकता है। इसका उत्तर यह है, कि प्रदीपमें तीन, चमक और बत्ती इन तीनों पदार्थोंके विरुद्ध स्वभाव होने पर भी यह एकत्र संयोगमें प्रकाश द्वारा दूसरे दूसरे पदार्थोंकी प्रकाश पहुँचाता है। इसी प्रकार मत्त, रज और तम एक दूसरेके विरुद्ध रहने पर भी यह अपने अपने स्वायंसाधनमें समर्थ है। (सात्विक) कोई कोई कहते हैं, कि त्रिगुण वैशेषिक दर्शनोक्त गुणपदार्थ है वा द्रव्य पदार्थ। इसमें गुण शब्द रहनेमें गुण पदार्थ समझा जाता है, किन्तु पदार्थमें यह गुणपदार्थ नहीं है। सांख्यदर्शनके भाष्यमें इस प्रकार सोमंसा को गई है—

“अस्वादीनि इत्यादि न वैशेषिकवद्व्यानाः संयोगवशात् त्रिगुण-वशात्-तुल्यवादिषमंकारवाच्यं न्यूनवादी तु गुणवद्व्यानाः पुनरीकरणशक्तौ पुनरवयवव्यवस्थानकप्रतिगुणानामकमहदादि रज्जुनिर्माणवाच्यं प्रयुज्यते” (सांख्य-भाष्य १।१५)

अस्वादि तीनों गुण द्रव्य पदार्थ न कि गुणपदार्थ। संयोगत्वात् नित्यं तत्तुल्य, चलत्वं चौरं तुल्यं वादि इत्यपदार्थोंके ही धर्म हैं। गुण पदार्थोंके धर्म नहीं हैं। इसे दूसरे पदार्थ न कह कर गुण पदार्थ कहा गया है। इसका कारण यह है कि पुनरवयव व्यवस्थान करनेके निमित्त प्रकृति त्रिगुण महादादि रज्जु बनाते है। इसीसे इसको गुणपदार्थ बतनाया है। विशेष विवरण प्रकृति सम्यक् देखा। (त्रि०) २ अस्वादि गुणयुक्त, जिसके अस्वादि तीनों गुण हैं। समुचित सिद्धा है, कि जगत् त्रिगुणमय है, एक प्राणाके चिया और सभी पदार्थोंमें ही त्रिगुण वर्तमान है। १ तीन द्वारा गुणित, तीनगुना, त्रिगुण। ४ त्रिगुण, जिसको तीन भाग्य हैं।

त्रिगुणा (सं० छी०) तयो गुणा यस्याः। १ दुर्गा। २ माया ३ स्वनामस्यात् भोजनं च, तन्ममें एक प्रसिद्ध भोजनका नाम।

त्रिगुणाक्षय (सं० त्रि०) त्रिगुणो क्षयो यस्य। त्रिगुण कर्णरूप लक्षणमित्यतः। जिसके कान तीन भागोंमें चीरे हुए हैं। यह समलक्षणका चिह्न है।

त्रिगुणाकृत (सं० त्रि०) त्रिगुणैः कर्तृत्वं लभते। त्रिगुणा वात्। संस्काराद्य गुणान्वायाः। वा ३।१५। जो चेत तीन बार होता गया हो।

त्रिगुणाख्यरस (सं० पु०) वातरोगका रस। त्रिगुणाक्षय (सं० छी०) तयो गुणाः तत्रोपपन्नत्वात् प्राणागो यस्याः। त्रिगुणविशिष्ट, जिसमें सत्व, रज और तम ये तीनों गुण हैं।

त्रिगुणित (सं० त्रि०) त्रिभिर्गुणितः। त्रिगुणित, जो तीन बार गुणा किया गया हो।

त्रिगुणो (सं० छी०) तयो गुणा पत्वं यस्याः। विरुद्धत्व, विनष्टा पक्ष। येनके पक्षे तीन तीन एक भाग्य होते हैं। इसमें इस का यह नाम पड़ा।

त्रिगुल (त्रिगुल) - बम्बई-प्रदेशवासी एक जाति। जिनकी तीन पोढ़ी गोसक (आरज) हैं, ये ही त्रिगुल नामके प्रसिद्ध हुए हैं। किमो किमो स्थानके त्रिगुलोंका कहना है कि ब्राह्मण भ्राता और गृह विताके शोरसमें उनका वृत्ति हुई है। प्रवाद है, कि वेगताचोंके वाचनशालामें जितनी भी ब्राह्मण-स्त्रियाँ और ब्राह्मण विधवायें परगुणके महत्त्वमें गर्मवती होती थीं, उन्हें महाराष्ट्रके प्रधान तोय पण्डितपुरमें भेज दिये। वहाँ वे प्रसवके बाद नवजातशिशुको चूम्य किनोकी दे देती थीं। इसी कारण पण्डितपुरमें शोर समके निजट-वर्त्तमानोंमें त्रिगुलीको संस्था पधिक है।

इन तीनोंके बाहिरम, मराठा, हरिनाथ, काग्यप, मोहित और ओवस गोत्र हैं। ये हमारा भागमयत है, देखनेमें प्रायः मराठा ब्राह्मणोंके सदृश हैं। ये भोग प्रधानतः धर्मजोषी हैं, पर कुछ दिनोंमें बहुतसे भोग शय्यशयवाय, महाजनी, इत्यादिद्वारा शोर भोजन करने लग गये हैं। मक्को-पण्ड्या एकता नहीं है। बाह्य व्यवहार, चान-चवन सब दिग्गम्य ब्राह्मणोंमें मिलते मिलते हैं। ब्राह्मणोंकी तरह ये भी भोग-पयोत वहनते हैं। किन्तु किमो दूसरी ओर ब्राह्मण इन भोगोंके साथ बाह्य वा विवाह-मादो नहीं करते। दिग्गम्य ब्राह्मण ही इनके पुनोहित हैं। बाराणसी, नासिक, पाल्घाट, पण्डितपुर और तुलजापुर ये इनके प्रधान भाग्य हैं।

इन भोगोंमें कई वर्ष विमोच निवस है। पहले प्रसव के समय कियों विज्ञाके घर पातो है। प्रसवान उपरान्त होनेके बाद प्रसविकाके हीन रूप लक्ष्य होना प्रसविका

नानि यद्यः, पूर पदात् स'चायामि'त प्राप्ते सुप्रदिपु च
इति निषेधात् न तत् । १ शिव, महादेव । महादेवः
तोसरे नेत्रको उत्पत्तिरूपे विषयमेव इम प्रकार निष्ठा है—
एक दिन पार्वतीने ह'मोसे महादेवको दोनों पाँते पपने
हाथोंसे मूँद रखीं । ऐमा करनेसे सारा स'सार स'चकार-
मय दोषने लगा और होम तथा वषट्कार शून्य हो
गया । तब महादेवके सत्ताट्टेयमे एक युगात्कालोन
प्रचण्ड भास्तेण सद्यः नेत्र उत्पन्न हुआ । इस नेत्रको
ज्योतिसे चारों दिशाये जगमगा उठी । बहुत जल्द सन्ध-
कार दूर हो गया और हिमालय पर्वत दग्ध होने लगा ।
यह प्रकृत दृश्य देख कर पार्वती महादेवका श्राव
करने लगी । तब महादेयने प्रकृतिसूक्ष्म हो कर पार्वतीसे
कहा,—देवि ! मूने बिना पाये-पोंछे सोचे मेरो दोनों
पाँते मूँद रखीं थो', जिससे सारा स'सार स'चकार-
मय और विनष्टमाय हो गया था । उस समय मैंने उन
मयकी रक्षाके लिये ही इस मनुज्ज्वल तृतीय नेत्रको
सृष्टि की है । (भारत अनुवाकन १०० अ०)

(त्रि०) २ नीचनवययुक्त, जिसको तीन पाँते हैं ।
त्रिनयना (स'० स्त्री०) त्रीणि नयनानि यस्याः टाप् ।
दुर्गा ।

त्रिनयति (स'० स्त्री०) त्र्यधिसा नयति । यह स'स्या
को तीन और मन्त्रके योगसे बनती हो, तिरानेकी
स'स्या । २ उक्त स'स्यासूचक चट्ट । (त्रि०) ततः पूर्य-
ट्ट । ३ तिरानये ।

त्रिनयतितम (स'० त्रि०) त्रिनयति-तमप् । तिरानयेवा ।
त्रिनाक (स'० पु०) त्रिभिः अक्षैः दुःखं यस्मिन् नाकं
पुण्यलोकः तृतीयं नाकं । १ तृतीय नाक, अर्ध ।
२ उत्तम स्थान ।

त्रिनाभ (स'० पु०) त्रयो लोको नामो यस्य अथ त्रि-
साम्नाः । विष्णु ।

त्रिनिष्क (स'० त्रि०) त्रिभिर्निष्केः कोतं तज्ज-तय
वापुं लुक् । ओ तोम निष्कमे खरीदा गया हो, त्रि-
को कीमत तोम निष्क हो ।

त्रिनेत्र (स'० पु०) त्रीणि नेत्राणि यस्य । १ महादेव, शिव ।
२ स्वर्ण, मोता ।

त्रिनेत्र—भास्मानादुक् लघुतर-राक्षसं समर्थत एक प्रविह

धाम । यह अभी तरनेन नाममे मगहर है और विजयत
पाचोन नगरपालके पाश्चिमे-पश्चिमि है ।

यानमाहात्म्यके मतमे मुराट्टके एक स'गंगा नाम
देवदेवान है । यहाँ त्रिनेत्रेश्वर महादेव रहते हैं ।
इन्द्र नामाशुभार इस स्थानका नाम त्रिनेत्र या तरनेत्र
पड़ा है । त्रिनेत्रमाहात्म्यके मतानुसार सत्ययुगमें
मायाताने यहाँ एक सुव्योमन्दिर निर्माण किया था ।
स्कन्दपुराणके प्रभासखण्डमें लिखा है,—

'त्रिपथगामिनो गङ्गाके ईशान कोणमे स'गानेश्वर
नामक एक तोयके माहात्म्यमे यहाँको सब महानियं
तान पाँचवाली हो गई थी' । इस तोयमें स्नान करनेसे
कथे पाप जाति रहते हैं । ये सब कर्ति सुन कर पार्वतीने
एक दिन महादेवसे पूछा, कि त्रिपथगामिना गङ्गा
किन कारण यहाँ आई थी और यहाँकी महानियं
कों त्रिनेत्र हो गये हैं ? इसके उत्तरमें महादेवने कहा,—
'किन्हीं कारणसे चक्षालाभ्य श्रवणोनि सुभके श्राव
दिया । इस पर बहुतमे श्रवण सुभके श्रावपदा देव
कर पठोर तपस्या करने लगे । मैंने भी श्रवणोंके श्रावसे
राज्यरूप धारण किया था । कठोर तपस्या करने पर भी
उन्हे सुभके दर्शन न हुआ, सुभके साक्षात् नहीं होने
पर भी वे सब त्रिनेत्र हो गये हैं । तभीसे यह स्थान एक
प्रधान तोयमें गिना जाने लगा । यह मन्वाट चारों ओर
फैल जाने पर भृगु प्रभृति ऋषिगण आकर कठोर
तपस्यामें प्रवृत्त हुए और उन्होंने वही स'गानेश्वर नामक
महादेवको स्मृति स्थापन की । उन्हीं भा सुभके दर्शन
नहीं होने पर तोम पाँते हो गई' । बाद उन्होंने आनमें
मेरा स्वरूप जान कर कहा 'प्रभो ! यदि पाप हम पर
मस्तुट हैं तो हमें यहाँ पर होजिये, कि यहाँ त्रिपथ-
गामिनो गङ्गा प्रवाहित हो' । उन्ही समय मेरे अनुग्रहमें
त्रिपथगामिनो गङ्गा जलोन बह कर बाहर निकली
और हमने महानियंके तोम पाँते हो गई' ।

(प्रभासखण्ड २१० अ०)

यहाँके गङ्गानेश्वर महादेव ही त्रिनेत्रेश्वर कहलाने
हैं । यहाँ बहुतमे मनुष्य काम करने हैं ।

त्रिनेत्रचूडामणि (स'० पु०) त्रिनेत्रद्वय चूडामणिः त्रिरी-
भूषणं । चन्द्र, चन्द्रमा ।

जाता है। प्रत्येक वाट प्रथम दस दिन ग्रामको पुरोहित या कर शास्त्रिपाठ करते और छोड़े प्रसन्निको धानमे पाणीवाट देते हैं। फिर इतना ही नहीं, वे प्रसन्निको और गिरुने मन्नाटमें भस्म भी लगाते हैं। इस देशमें जिस तरह छठोके दिन पुरोहित पाकर यष्टी-राखिकी पूजा करते हैं, उसी तरह इन लोगोंने भी पांचवें दिन घाय या कर यष्टीरोति यष्टी-पूजा करते हैं। इस दिन चार ब्राह्मण रात भर जग कर शास्त्रि पाठ करते हैं और सबरे लनको कुछ दक्षिणा तथा धान-सुपारी दे कर बिटा करते हैं। ग्यारहवें दिन प्रसन्निको और गिरु खानादि करके शुद्ध होते हैं। सन्तान उत्पन्न होनेके लोग मास वाट प्रसन्निको अपने स्वामीके घर जाते हैं।

१० वर्ष होनेके पहले भी शास्त्रिकका जपनयन होता है।

त्रिगुह (मं० पु०) स्थितिके विषयमें पुनर्पौका वृत्त।

त्रिपामो (मं० जो०) वयाणां ग्रामाणां समाहारः।

१ तीन पामोका समूह। २ एक ग्रामका नाम।

त्रिचण्डा—एक कल्पित नगर जो हिमालयको चोटी पर अवस्थित माना जाता है। कहा जाता है, कि यहाँ विश्वाधर वाटि रहते हैं।

त्रिचक्र (मं० पु०) त्रिणि चक्राणि यस्य। चक्रिनो कुमारि-का राय।

त्रिचतु (मं० पु०) त्रिणि चतुर्वि यस्य। त्रिनेत्र महादेव।

त्रिचतुर (मं० ति०) त्रयो वा चत्वारो वा त्रिकल्पायं हवः समाम्नाः। तीन या चार।

त्रिचत्वारिंश (मं० ति०) बाधिका चत्वारिंशत् पूरणं इत्। तैत्तलीमवा।

त्रिचत्वारिंशत् (मं० ति०) त्र्यधिका चत्वारिंशत्। त्रि गिनतोर्मे चानोममे तीन अधिक हो, तैत्तलीम।

त्रिचिन्त (मं० पु०) त्रीन् चिन्तोन् चिन्तोति स्म चि-भूते जिप। चत्तोनाम्नितय चयनकारो।

त्रिचित (मं० पु०) त्रिभिः त्रिमासोक्तधामिरित्कामिः चितः। गाहपय चमिमेद, एक प्रकारका गाह-धामि।

त्रिचिनापल्ली (त्रिगिरापल्ली)—मन्नात्र प्रदेशके चत्तान्त एक जिला। यह पचा० १०° १६' से ११° ३२' उ० और

देगा० ८८° ८' से ७८° १०' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल १६१२ वर्गमील है। इसमें पूर्वमें तखोर, उत्तरमें पाकट और नर्मम, पश्चिममें कोयाम्पुतुर और मद्रुप, तथा दक्षिणमें पुदुकोट राज्य है।

इस जिलेमें जितनी भी नदियाँ हैं, उन सबमें कावेरी नदी प्रधान है। यह पश्चिममें पूर्वको और वल्लोई नदी ओरद्वम् दोपके निकट वा दो शाखाओंमें विभक्त हो गई है, जिनमेंसे एक तो कावेरी नामसे प्रसिद्ध है और दूसरी कोलेकन नामसे। कावेरी नदीके दक्षिण और उत्तरमें चूने और लोहेको खानें हैं; परन्तु वे काममें नहीं लाई जाते। यहांको जनबाहु शुद्ध तथा स्वास्थ्यकर है। वार्षिक हटिपात लगभग ३४ ई० है।

इसमें कुल गहर और ग्राम मिला कर ८३० लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः १४४००० है, जिनमें अधिकांश हिन्दू और छोड़े मुसलमान तथा ईसाई हैं। ये लोग तामिल बोली बोलते हैं, किन्तु कुछ तेलगू तथा कर्णाटो भाषाका भी व्यवहार करते हैं। तमाम जिला कुलितनै, मुमिरि, परमेस्वर, त्रिचिनापल्ली और उदयारपालयम् इन पांच तहसीलोंमें विभक्त है।

विशेष ऐतिहासिक विवरण इन्हीं नामके गहरमें देगे।

२ उक्त जिलेका एक तालुक यह पचा० १०° १८' से ११° ३०' उ० और देगा० ७८° २८' से ७८° १' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ५४२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३८२०८१ है। इसमें गहर और ग्राम दोनों मिला कर १८३ हैं।

३ उक्त जिलेका प्रधान गहर। यह पचा० १०° ४८' उ० और देगा० ७८° ४२' पू०के मध्य कावेरी नदीके दाहिने किनारे मन्नात्रसे १८५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है।

इस गहरको उत्पत्तिके विषयमें ऐसा प्रवाद है—पूर्व समयमें त्रिगिरा नामका एक राजस पर्वतको मुहाने रहता था। पर्वतसे चारों ओर घना जंगल था। एक रातमें भयंकर कोई बर्फ आनेका आह्वान मचो करता था। वाट सुरबदिप्पान नामक किसी गाहमी और पुष्टने इस राजसकी मार डाला। उसी दिनसे इसका नाम त्रिगिरापल्ली पड़ गया। सुरबदिप्पानने त्रिगिरा-राजसकी मार कर सबका जंगल कटवा डाला और

विनेयसूत्र (मं० पु०) औपनिषदिक, एक प्रकारको दवा
 त्रिमल। व्यवहार मन्त्रिशतसंग्रह होता है। इसकी
 प्रामुख्यताको इस प्रकार है—औषध रूप धार, मन्त्रक दो-
 फुलें रूप तीर्थका बराबर भाग लेकर जितना हो, उतने
 हो गायक दूधमें छेने लगते हैं। दोहरे बड़ो धूपमें सुना
 कर छेने संगमन्य धोर मोहियुक्तके छायने एक दिन तक
 फिर मर्दन करते हैं। बाद छेने तीन बना कर एक
 चम्पूपायनमें रखते धोर बालुकायनमें तीन प्रहर
 तक धाक करते हैं। इसके बाद छेने चुरलमें दोन कर
 चुर चुर कर डालते हैं। चुरमें इसके पाठवें भागके
 बराबर दिय सिना कर इसे चण्डो तरह लगते हैं धोर
 एक एक गोली २ रसीली बनाते हैं। चण्डकोनके ज्ञाय
 धायवा बकरीके दूधके साथ मेषन करनेमें कठिनमें कठिन
 मन्त्रिजातल्लर नाम हो जाता है। (भावः०)

विनेयः (मं० स्त्री०) नाराको कहते।

विनेयिक (मं० स्त्री०) विनिर्निष्कः क्लोतं विनिष्क-
 क्लृप्तं उन्नित्तत्परदण्ड हृदिः। जो तीन निष्कमें खोटा
 गया हो, जिसका मूल्य तीन निष्क हो।

विपय (मं० पु०) प्रतोयः पयः मंस्यामद्वयं हसो
 पुरवायत्वात्। यतोयपयः, तोनरा यय। पाययाह-
 कायने से तोहृयमे हयोसमं नहीं होने पर विपयमें विधा
 जा सकता है।

“बड़े माणि विपयें हा।” (भाटगव)

विपयसू (पय०) तीन पटीमें।

विपय (मं० स्त्री०) विमुक्ताः पयः। जो गिनतीमें दण्ड
 में पंच अधिगत हो, पण्डः। यह शब्द निम्न बह-
 वसमाना है।

विपयसू (मं० पु०) विपय पण्डदण्ड पदानि यय।
 ‘ममाधिमेद’। इस ममाधिमें ११ पण्ड हैं, यथा यय, निग्रम,
 गायम, मोन, शेष, सुकासता, चामन, मूलवन्ध, देहमाय,
 इक्षुमिनि, वाह-मंयसम, प्रयाशर, धारवा, धाम-
 ध्याम धोर ममाधि।

विपयसू (मं० स्त्री०) विपयसू पुरवे डट्। जो
 गिनतीमें पचामे तीन धोर अधिगत हो, निरयन।

विपयसू (मं० स्त्री०) तांघका पचामनः। १ पचामने
 तीन अधिगत होला। २ वन संख्यापुत्रक यय।

विपयसू (मं० स्त्री०) विपयसू पुरवे तमपु। विपय
 मंस्याका पुरय।

विपय (मं० पु०) १ हांन, गोमा। २ विपु सेय्य धोर
 हाथ से तीन प्रकारके मन्त्रक।

विपय (मं० स्त्री०) विपयः पचका हय रेखा ययः।
 १ विपयशान्ति ममाटटम। माया वा ममाट विपय
 तीन वन पड़े हा। २ मयमा धोर पचामिना छोड़ सेय
 तीन संनियोंको छठाकर पायका केलना।

विपय (मं० स्त्री०) विपयः रेखा।

विपय (मं० पु०) विपयः पचका ययः। १ विपयसू,
 वेलका पेट्ट। २ तीन तीन दण्ड लगे हुए वेलके पत्ते।
 वेलका पेट्ट परम तोय मागा गया है। इसके तीन
 पत्तोंमें ऊपरका पत्ता गिद स्वदर, धाया पत्ता ज्ञान
 धोर दक्षिण पत्ता विपु है। (वि०) यथावा पत्तावा
 ममाधारः। ३ विपयय, जिसमें तीन पत्ते लगे हा।

विपयसू (मं० पु०) विपय मंघाणी कन्। १ यमागुल,
 टांका पेट्ट। (स्त्री०) ययवा पत्तावा ममाधारः।
 मंघाणी कन्। २ तुलसी, कुंद धोर वेलके पत्तोंका
 समूह।

विपय (मं० स्त्री०) १ परचरका पेट्ट। २ विपयिवा
 घाम

विपय (मं० स्त्री०) तगावा पत्ता ममाधारः पच, ममा०।
 १ कर्म, धान धोर चपामना दन तीनों मार्गिका समूह।
 २ विपयसूक विमुशानी।

विपयसू (मं० स्त्री०) विपय वर्तमः पंचाक्षर नाम
 गच्छतीति सम-ड। महा। स्वयं, मय्यं धोर पाचाम इन
 तीन श्लोकमें महा वचनो है, यमानिये इसे विपयना
 कहते हैं।

“मंग विपयसू वम विपयः मयोमीनि य।

वीर पयो मयवर्गीति तमारा विपयसू मया ॥”

(ममा० १) ४४ ६)

विपयसूमिनी (मं० स्त्री०) विपय-मम-चनि-डोव्। महा।

विपय—विपय रेखा।

विपय (मं० पु०) विपय पदानि यय। १ विपयसू, पर-
 मंघाः २ विपयः। ३ विपयसू—यथा हा पेट्टी मयवर्गी
 पाचामिना वलका एक जय का पायः तीन धायमें कुछ वन

उसी जगह राजधानी स्थापन की। ये किस समय में स्थापित हुए थे, इसका पता नहीं चलता। सुरसिं-
त्तानने त्रिचिरापल्ली के भयंकर जनपदको रक्षा की
थी, इसीसे यहाँ के लोग कावेरी नदी के दोनों किनारे
विशाल निर्माण कर मुद्राग्राल नाम से चक्र को पूजा
करते हैं।

कहा जाता है, कि इसको पाचवीं शताब्दी के पहले से
वहाँ चोल-राजाओं का राज्य था। मगध के चण्डीक राजा के
विजयस्तम्भों की मिलावट है, उसमें चोल-राजाओं के
नाम पाये जाते हैं। उरुर नामक स्थान में चोल-राजाओं
को राजधानी थी, जो त्रिचिरापल्ली से एक मील की
दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १०४०११
है, जिनमें अधिकांश हिन्दू और कुछ मुसलमान तथा
ईसाई हैं।

जिस समय रामाजुजायाय औरइन्दु के रह कर
त्रिचिरापल्ली तमिलका प्रचार कर रहे थे, उस समय कवि-
काल नामक कोई चोल-राज त्रिचिरापल्ली में राज्य करते
थे। १०१० ई. में योशामानुजाचार्य का जन्म हुआ था और
१० वर्ष की उम्र में वे काञ्चीपुर और वहाँ से फिर औरइन्दु-
को पढ़ाने गये थे, पोछे वे वैष्णवधर्म में दक्षिण हो कर
काञ्चीपुर की ओट पाये। इसके बाद वे तिरुपति गेले हुए
त्रिचिरापल्ली तमिलका प्रचार करने के लिये औरइन्दु गये।
उन समय चक्र को छत्र ५० वर्ष से कम न होगा।
इसके भी बहुत समय बाद औरइन्दु ने उनका देहान्त
हुआ था। इससे प्रतीत होता है, कि चोल-राजने करि-
काल १०६० ई. के बाद किसी समय राज्य किया होगा।
मधुरापुरी के विवरण में लिखा है, कि सुन्दर पाण्डुराने
उरुर की जमा खाना था और वहाँ के पूर्व शासनकर्ता के
पुत्र करिकाल की कुम्भकोष का शासन करता बनाया था।
मि० टेनरने धर्मरागत विवरण को सहायता से यह
दिखाया है, कि उरुर के तदुपम इन्द्र की जगह पर
चोल-राजधानी उठ कर कुम्भकोष बनो गई था।

१०७१ ई. में विजयवाट्ट मल्ल के विद्रोह पर बैठे।
उनके राजत्वकाल में चोल-राजने सिंघन पर आक्रमण
किया, किन्तु वे हतकाय न हो सके। सिंघन के राजाने
१११६ ई. में चोलराज पर धावा किया। वे भी हतकाय

न हो कर बहाने चोट पाये। पराक्रमवाद्दने १११६ से
११२६ ई. तक सिंघन में राज्य किया। पाण्डुरान-
गिर के सिंघन-राजसे पराजित होने पर चोल-राजने
उन्हें नष्ट राज्य सौटाने में सहायता की थी। इस पर
पराक्रमवाद्दने प्रतिशोध लेने के लिये चोलराज पर धावा
किया और कुछ प्रदेश दण्ड कर लिए।

मुसलमानोंने किस समय त्रिचिरापल्ली पर आक्रमण
किया था, इसका पता लगाना बहुत कठिन है। इन्-
रत सुलतान पनाउद्दौन साहबने १२८० ई. में मधुरापुरा
जोन कर उसे अपने राज्य में मिला लिया था। १११०
ई. में दिल्ली के बादशाह पनाउद्दौन के प्रधान मीनायाक
बलान-राजधानी हारमसुद मूट कर रामेश्वर तक
प्रसरण हुए हैं। त्रिचिरापल्ली के आक्रमण के विषय में कोई
विशेष विवरण नहीं मिलने पर भी चम्पनः इत्यादि अनु-
मान प्रकाश किया जा सकता है, कि उन लोगों ने त्रिचिरा-
पल्ली मूट सचाई थी।

तञ्जौर और मधुरापुरी के विवरण में जाना जाता है, कि
तञ्जौर के गेय राजा चोरयेन्दुने त्रिचिरापल्ली चोर मधुरा-
पुरी की चपट में राज्य में मिला लिया था। विजयनगर-
के मीनायाक कतिवान नामायाकने चोरयेन्दु को
परास्त कर त्रिचिरापल्ली, तञ्जौर और मधुरापुरी पर कब्जा
किया था। विजयनगर के राजा पाण्डुरायने अपने साने
मैयपानायक को तञ्जौर चोर त्रिचिरापल्ली का शासन-
कर्ता नियुक्त किया। इस समय त्रिचिरापल्ली के दुर्गों को
मंजुषा बहुत बढ़ गई और उनसे लोग बहुत भय
माने लगे। विजयनगर के मधुरापुरी के शासनकर्ता
होने के बाद त्रिचिरापल्ली के दुर्गों का प्रभाव मान्य हो
गया। उन्होंने तञ्जौर के राजा को त्रिचिरापल्ली के बटने
बलान नामक दुर्ग दे दिया और साथ ही वहाँ था कर
देखा, कि त्रिचिरापल्ली के बलान आस्थावर स्थान है और
दुर्ग का संस्कार हो जाने से वह और भी सुदृढ़ हो
जायगा। ऐसा सोच कर उन्होंने राजधानी स्थापित की।
त्रिचिरापल्ली के प्राचीन साक्षरका संस्कार कराया
तथा एक ई. चहार-दीवारी भी बनवाई। इसी साक्षर-
क यथाभाग से पाई खुदवा कर उसे दुर्ग में भर
दिया। यहाँ से जल करने के लिए कावेरी नदी तक दूरी

હોતો યો । (ત્રિ •) ૪ ત્રીન પદયુક્ત, જિમને ત્રીન પદ
યા ધરણ હો ।

त्रिपदा (म० स्त्री०) त्रयः पादाः मूलानि यस्याः । त्रिपि
पादस्य पञ्चावः । १ हंसपदाक्षता, लान रङ्गा मञ्जू
पद्योय—गोधापदा, सुवह्नी शोर हंसपदा है । (त्रि०)
त्रयः पादाः चरणानि यस्याः । २ त्रिपादयुक्त गायत्री
गायत्रीनि कैयल तीन ही पद होते हैं । हमोलिये हमका
यह नाम पड़ा । त्रिपदागायत्री ही एकमात्र ब्रह्मप्रामिका
उपाय है ।

त्रिपदिका (स० स्तो०) त्रयः पदाः यस्याः त्रिपदी ततः
संज्ञार्था कन् ततष्टाप् । पूजा कानोन गद्य रत्नका पात्र
एक प्रकारका पात्र जिम पर देवपुजनक समय गद्य रत्ना
जाता है । यह त्रिपाईका तरङ्गका पोतन पादिका बना
होता है । इस पत्रके ऊपर गद्य रत्न कर भर्घ्यं स्थापन
करना पड़ता है । २ त्रिपाई । ३ सहायशागका
एक भेद ।

त्रिपदो (न० स्त्री०) त्रयः पादाः अस्याः अत्यलोपः समा०,
 द्वीपि पञ्चायः । १ विगदयुक्तः । २ गायत्र्योक्तः । इमं
 प्रत्येक पदमेव च अथार होतुं है, इमांनये तोन पदमे २४
 अथारका एक कृत होता है ।

“इदं विष्णु त्रिचक्रे प्रोवा निदधे पदं समूहमस्य पाशुरे ।
(बृह. १ । २३ । १७)

३. इतिहासिक पादव्याख्यानार्थं रत्नमुद्र, बह रण्यो
जिससे इतिहासिक पाद बंधि जाते हैं । ४. अन्धधारा पात-
मुद्र, तिपाई । ५. इन्द्राविषय, एक प्रकार का इन्द्र ।
सूचक—

“यजुस्तटिकाग्रंथः।

यदि धनकङ्काला

द्वादश परिणत मात्रा ।

दिग्दर्शन

तद्विनिनिर्गति

ସୋଇଶବାସନୋମା ॥' (କାଞ୍ଚୋଦୟ)

त्रिपदोऽन्तर्मे सोन सोन कर के पद रहती है । श्रित्तर्मे
पहले चौर दूसरे पद के साथ तथा छतोऽपद युग्मपर्यन्त
छतोऽपद के साथ तक बन्दो रहती है ।

द्विपथ (मं० पु०) सम्प्रसारकं दश घोड़ोंमेंसे एक ।

विपरिक्रान्त (म० पु०) शिव हस्तये कर्मसु परिक्रान्तः
पेटमानः । यत्र ब्राह्मणो यत्र कुरी, पत्नी-पदावे । और
दान हे ।

त्रिषर्प (भ० पु०) त्रिषि त्रिषि पर्णानि यन् । १ पञ्चम-
का पेंह । (त्रि०) = त्रिदन्तवत्तय, त्रिगने मोन पशे चे ।

त्रिपल्लविका (मं० प्लो०) त्रालि त्रालि पर्वाणि यस्याः
मंश्रायो कन्-ठाप्-टालि पनरवः । कन्दसिमेप, एक
प्रकारकी मूत्रो । पर्याय—हृदयुखा । त्रिषण्डिका,
कन्दमु, कन्दवर्मा, पाण्डुरो, त्रिनाक्ष पोर त्रिपर्णी
इ । इसका गुण मधुर शीतल, ग्राम, हान, विष पोर
स्रवणिनाशक है । २ यवाम ।

त्रिपर्णी 'सं० ज्यो० । त्रिणि त्रिणि पर्णानि यस्याः ।
गोरादित्वात् ङाप् । १ मानपर्णी । २ दनद्वार्ण्यो, दन-
कणाम् । ३ पृथ्वीर्णी, त्रिदशमन्ता ।

त्रिज्याय (मं० त्रि०) जिनमें तीन तक जाते हैं ।

त्रिषणा (मं० स्तो०) त्रिकणा ।

त्रिपाठ (मं० पु०) वशात् पाठः। तत्र पदक्रम-
महिताका पाठः।

विषाढो (मं० पु०) यौग्यं पदक्रममङ्गितारूपपन्थान्
पठति पठ-विनि । १ तोम पदार्था जागर्ग्यामा पृथ्व,
विवेदो । २ राष्मिणीको एक आति. विवेदो. शिबारा ।
विगण (मं० स्त्री०) विः कृत्वः पानं उदयपानं यष्म,
हृमो सुषो मोघः, मङ्गलायात् पत्वं । १ पृथ्वी मो तोम
बार भियोया गया भो । २ पृथ्वी, इति ।

त्रिपाट. (सं० पु०) त्रयः पाटाः चत्वारः सन्त्यापूर्यन्ते इति
मन्त्राभावादिधेरनिवृत्त्याभावाद्येव । १ परमेश्वर ।
२ सूर्यः, इन्द्रः ।

त्रिषाढ (मं० पु०) ययः पादा षष्ठ्य, मंथ्या पूर्णत्वादन्ता-
 न्नोणः । त्रिषिञ्जन विष्णु । भगवान् विष्णु ने वामनरूप
 धारण कर शक्तिने तीन पद भूमि मांगी । तेजसी बलि-
 ने तत्परा ऋक्ष कर इनकी मांग पूरी की । उसी समय
 भगवान् ने वामनरूप परिवर्त्याम क्रिया और शक्तिकी सत्ता
 देखसक विषाढरूप दिवसपाया । शक्तिकी ऐसा सामर्थ्य
 पड़ा कि पृथ्वी तकने दोनी घेर ली, आकाश मर्याद दे,
 जम्बू घोर सूर्य दोनी नेत्र ली । इत्यादि । तन्नि भयानक
 विषमरूप देख कर मोहित हो गये । तब भगवान् ने
 एक घेरने शक्तिसे सारे भूमि, ज्योतिष आकाश, दोनी
 वादने सब दिशाएँ ढाई । जगत् दूसरे पदमें, स्वर्ग में
 प्राय, सभी स्थान आ गये । किन्तु तीसरा पद रहने ।

नामा मंगा दिया। इस समय मदीके दोनों पारके जड़न कटवा कर बाबादो की गई और भिन्न भिन्न देशों के मित्रकारों को ला कर यहाँ बसाया गया। विचिनापल्ली में ब्राह्मणों के रहने के लिए स्वतन्त्र घर बनवा दिये थे। ओढ़े दो दिनों के मध्य यह नगर सुख-सम्पन्नियों को देखोमि गिना जाने लगा। इस समय इन्होंने औरङ्गजेब के राजनायकों के मन्दिर के बाहरवाले दरवाजे पर एक गोपुर निर्माण किया। ये कमो मधुरामे और कमो विचिनापल्ली में रहते थे। इस समयसे ले कर चाँदसाहब के अधिकार के समय (१०३६ ई०) तक मधुरापुरी और विचिनापल्ली नायक-राजाओं के शासनाधीन था। मद्रास देगो। नायक-राजगण अधिकार समय तक विचिनापल्ली में रह कर राजकाज करते थे। १६२६ ई० में तिरुमल के राजा होने पर ये राजधानी को छोड़ कर मधुरापुरी को ले गये। इनके पुत्र चन्द्राद्रि (मल्लु वीरप्पा) ने विचिनापल्ली दुर्ग का पुनः मंजूर किया। इनके पुत्र श्रीवन्ध्या १६६१ ई० में जब राजसिंहासन पर बैठे, तब उन्होंने पुनः विचिनापल्ली में राजधानी कायम की। नायक-राजाओं ने उनके समयसे ले कर १०३१ ई० तक विचिनापल्ली में वास किया था। १०३१ ई० में अन्तिम नायक-राज विजय राघवको मृत्यु हुई। उन्हें कोई सन्तान न थी, इसलिए उनकी विधवा को मोनाचो देवीने ब्रह्माद-तिरुमल के पुत्र विजयकुमार सुत, तिरुमल को गोद लिया और पाप नयानिग को अभिभाविका हो कर राज-कार्य करने लगी। इस समय ब्रह्माद-तिरुमलने प्रकृत चत्तराधिकारी होने का दावा किया। ये स्वातन्त्र्य तिरुमल नायक के छोटे भाई और कुमार सुत के प्रपौत्र थे। इनके पिता कुमार तिरुमलने वृद्धता सुत वीरप्पा के समयमें ओढ़े दिनों के लिए युवराज का कार्य किया था। जब इनके प्रपितामह राज्य के अधिकारी न हुए, तब ये किसी जालतले प्रकृत चत्तराधिकारी हो नहीं सकते थे। दन्त-वाय बेंकटाचार्य ने तिरुमल को राजा बनाने को पूरा चेष्टा की; किन्तु ये कृतकार्य न हो सके। अन्तिम बेंकटाचार्य ने अपने मन्त्रियों को सिद्धि कर कोई लयाय न देय चाहता हूँ, नवाय दोस्त बनो, पुत्र सुवेदार बनो की ओर और उनके ऊपर—“यदि पाप ब्रह्माद-तिरु-

मल को राजसिंहासन पर बैठा सके, तो पापको १० लाख रुपये दिये जायेंगे।” सुवेदार बनो चन्ना भोज हाय पाता देख कर चाँदसाहब के साथ विचिनापल्ली के दुर्ग के सामने पाप दुर्ग से और उन्होंने सहसा वसपूर्वक रामो के सैन्य-सामानों को पराजय किया। पोले उन्होंने देखा, कि दुर्ग अधिकार करना बहुत महज है; इस हितु दस करके दोनों पक्षों का विवाद मिटाने के लिए उन्हें अपने दरबार में बुलाया। ब्रह्माद-तिरुमल तो दरबार में पहुँच गये; किन्तु मानाचा देवों के पक्ष में कोई नहीं गया। तब उन्होंने ब्रह्माद-तिरुमल को प्रकृत स्वत्वाधिकारी लिए कर राज्यगामन का भार प्रेषण किया और १० लाख रुपये का एक पत्र उनके लिखवा लिया। रुपये वसूल करने का भार चाँद साहब के हाथ दे कर नवाय के पुत्र चारुकाड़ को चले गये। उनके चले जाने पर मोनाचो देवी-चाँदसाहब की कहला भोजा “यदि राज्य ब्रह्माद-तिरुमल के बटले सेर हो जायें रखा जाय, तो मैं पापको १ करोड़ रुपये दूँगी।” चाँदसाहबने रुपये के लोभमें यह कर ब्रह्माद-तिरुमल को रानी के हाथमें ही सौंप दिया। चाँदसाहबने अपना बात पूरा करने के लिये मोनाचो देवी के सामने हाथमें कुरान ले कर गवय खाया था। कोई कोई इतिहास-लेखक कहते हैं कि—“उन्होंने कुरान के बटले एक ईंट का पथरी कपड़े से ढक कर अपने हाथ में ले गवय खाया था।” मोनाचराम के रुपये नहीं रखने से एक करोड़ रुपये के रत्नादि दिये गये। मोनाचो देवीने ब्रह्माद-तिरुमल को मधुरापुरी का शासन-कर्ता बना कर भेजा। १०३६ ई० को चाँदसाहबने विचिनापल्ली में पा कर धीरे-धीरे दुर्ग में प्रवेश किया और रामो को अपने घर में मजदूर बना कर पाप राजा बन बैठे।

रानीने अपने बचाव का कोई रास्ता न देख निपटारा पासहत्या कर डाली। अब चाँदसाहब निष्कण्टक हो गये। ब्रह्माद-तिरुमलने अपने को निरावलम्ब देख सतारा ला कर मद्रास-प्रपत्ति मचायता भागे। मद्रास में नायक रघुजी भोमसे एक दस सेन्स ले कर कपाटक प्रदेश को गये। चारुकाड़ ने नवाय दोस्त अर्थात् अपने छोटे-काड़ को; किन्तु १०४० ई० को रानी मरिका से लेकर निकट पराजित हो कर मार डाली गई। रघुजी

कहीं जगह न बधो, तब भगवान् ने मधे मधमे नि कर
मार मोह, जनमेक दोर तपोमे करे ऊपर मन्मोह-
मे कोनाया । भगवान् का गुरु चरण चन्दन दुर्लभ है ।
(मन्दन पार० अ० श्री हरिवंश २५, अ०) कामन की
रति देयो । २. ऊपर, गुणार ।

विवादिका (म० श्लो०) अथः वादिका भूमानि दण्डाः
कपू तनटाड, टापि यत इत्ये । १. कंमगटीवना, मान
रुद्धका मन्त्रालु । मंमृतपराय—इमपटी, कंम-
पादो, कौटम्बना चोर विवादिका है । २. तियाई ।

विवापचक्र (म० श्लो०) विवापचक्र चक्रम् । ज्योतिषोच
विवापविमदक चक्र । इस चक्रमें वर्ष भरका शुभा-
शुभ फल जाना जाता है । ज्योतिषमें इस प्रकार
निचा है,—

राशिचक्रमें पचिमो घाटि २० नक्षत्र हैं । प्रत्येक
मनुष्य का किमी न किमी मूलमें जन्म हुआ हो करता
है । इसी कारण २० नक्षत्रों का एक चक्र निचा गया ।
इन चक्रों को देख कर हर एक मनुष्य जिस वर्ष का
घाटे शुभाशुभ फल मान्य कर सकता है ।

विवापचक्रफल—विवापचक्रके शिखर वर्षमें चन्द्र
चोर बुध वर्षाधिपति हो' उस वर्षमें शुभफल जानना
चाहिये । फिर जिस वर्षमें राहु चोर गनि वर्षपति हो,
उस वर्षमें मृत्युतुल्य फल दो हृदयपतिमें सुख, मंगल
चोर रवि वर्षाधिपतिमें दुःख होता है । कृत्यपाको,
नेतृकुण्डलो चोर शुद्धकुण्डलो इन तीनोंके मतमें भी यदि
पापवृद्धका वर्ष हो, तो उस वर्ष जोषनका डर रहता
है । रवि चोर मंगलके वर्षमें दुःख, कृत्यके वर्षमें महा-
क्षेम, चन्द्र चोर बुधके वर्षमें सुख, हृदयपति चोर शुकके
वर्षमें राज्यनाम तथा राहु चोर गनिके वर्षमें महा-
क्षेम होता है ।

विवापचक्रमें दो रविके रहनेमें क्षेम, दो चन्द्रके
सुख, दो मंगलके चम्बिभय चोर पैहा, दो बुधके
धनमयुध, दो शनिके मर्षनाम, दो हृदयपतिमें
राजभोग, दो राहुके पक्षाभय चोर दो शुकके रहनेमें
नामा प्रकारके सुख मिलने हैं । विवापचक्रमें तीन रवि
हो, तो विनाशनाम, तीन चन्द्र हो, तो शीघ्र चोर शुभवशा-
नाम, तीन मंगल हो, तो जोषनमयुध, तीन बुध हो,

तो दयनाम, तीन शनि हो, तो यथ चोर मयना, तीन
हृदयपति हो, तो पतुन मयना, तीन राहु हो, तो पक्षा-
नाम, तीन शुक हो तो मर्षना नाम चोर पति मोम केतु
हो, तो ऊपरपोड़ा होता है । विवापके वर्षमें नामा
प्रकारके कष्ट हुआ करते हैं । (ज्योतिष०)

विपिटक (म० श्लो०) बोडोका धर्मपत्र । बुधको मनु-
के उपनाम वनके ३०० गिणाने घटलोपुतके निजट-
नको किमी गुदामें एकत्र हो कर वनको उपदेगा-
वकोका मंघट किया । एहा बोडोको पटलो ममिति
है । इसी प्रकारही धर्म-ममिति का नाम मनु है । उद्योगे
मनुके उपदेगो की तीन भागमें विभक्त किया (१)
मिणोंके प्रति बुद्धका उपदेग, (२) तत्पदमिणित नियम
विधि, (३) तत्कथित धर्ममन । यद्यो तीन विटक
सूय, विनय चोर धर्मिधर्म काममें प्रमिद हैं । प्रथम
विटकमें नीति वा विनय मन्त्रतोय विषयीका वर्णन है,
द्वितीय विटकमें शूरायवो चोर तृतीय विटकमें दार्शनिक
तत्त्वमनुको धारें निचाई हैं । द्वितीय चोर तृतीय
विटक लभो लभो धर्म नाममें भी पुकारे जाते हैं । ये
मय सूत्र शास्त्रमुनिमत वननाये जाते हैं । इनमें
कथोपकथनके हलमें नीतिमाना चोर दार्शनिकतत्त्व-
को पानोपना को गई है । नारायण, जगदीश, शिव,
ब्रह्मा, विनायक, यक्ष, गह्वर, कुबेर, शक्र, काम-विद्य-
कमी ममृति देवताओंका भी उल्लेख इस धर्मपत्रमें
है । रण्डिया-पाकिमको मारुये रामें चोम-भाषामें निचा
हुवा ओ घोडाका विपिटक है, यह २००० पत्रोंमें
विभक्त है । कोई कोई अनुमान करते हैं, कि "परा-
कथा" नामक पानिभाषामें ओ टिप्पणो चो, उसे पयोके
के पुद मरुन्दने मिहलमें ले जा कर यहा वमका
मिहलो-भाषामें अनुवाद किया चोर बुद्धोपने प्रायः
४१० ई०में योगेश यन्त्रका अनुवाद पुनः पानिभाषामें
किया । कि किमी किमीका मत है, कि राधा यन्त्र-
मन्त्रादि राजतरङ्गामें (ईसाके ८८—७६ मन् पदमें)
मिहलके यात्रकों चोर कानिफमें जो धर्मगमा मंग-
ठिन हुई चो (१०—४० ई०) लभोमें लक्ष मन विवि-
ध हुआ । मिहलके यात्रकोंमें ओ बुद्ध निचा है, यह
मिहला-भाषामें हो है चोर पाडे इस ई० मन्में यह

भी मलेने त्रिचिनापल्ली पर्वत पर १०४१ ई० की २६ वीं मार्च की दुर्ग अधिकार किया। इधर चांदमाहवने भी उनके पुत्रों को बौद्ध कर मसारा भेज दिया और सेना-नायक सुरारि राव को त्रिचिनापल्ली शासन-भार सौंपा, १८ हजार महाराष्ट्र-सेना रख कर पाप मितारा की चले गये। ब्रह्मास्तिवसमने इनसे भेंट कर राज्य-प्राप्त को इच्छा प्रगट की। रघुजो भीसलने युद्धका पक्ष १० लाख रुपये मांगे। ब्रह्मास्तिवसमने उस समय उतना देने को राजो हो गये; किन्तु वे पट्टा कर न सके। १०४१ ई० में जब निजाम-उल-मुल्क-पासफजाह त्रिचिनापल्ली को पर्वत कर देने पाये तब सुरारी राव भी दुर्ग छोड़ कर भाग चले। उस समय त्रिचिनापल्ली और मधुरापुरो निजाम के आदेशसे पादकाहु के नवाब के पक्ष में हो गया। ब्रह्मास्तिवसमने पुनः भाग्य-परीक्षा के लिये निजाम की शरण ली। निजाम बहादुरने उन्हें सम्मान करते हुये कहा, कि 'युद्ध-व्यय १० लाख रुपये और यादों व भेंट १० लाख रुपये देनेसे उन्हें राज्य मिल सकता है।' इस समय त्रिचिनापल्ली के शासन-कर्त्ता पनवर उद्दोने ब्रह्मास्तिवसम की दैनिक धरये के लिये १०० रुपये और उनके पुत्र को १५० रुपये नियत कर दिये तथा मधुरापुरो लोहा देने को बात दी। ब्रह्मास्तिवसम इस हतिका भोग करते करते परलोकको चले गये।

१०४८ ई० में निजाम-उल-मुल्क की मृत्यु हुई। उनके लहके नागिरजने विजयपद प्राप्त किया। इन समय चांदमाहवने भी मसारा से लुटकारा पाया। निजाम के एक दोहित सुजफरजज अब नागिरज के विरुद्ध चांदमाहवने पक्षधरों गामिल हुये, तब फ्रांसीसियोंने भी सुजफरजजका पक्ष पवनमयन किया। पहरजोने नवाब पनवर उद्दो और निजाम नागिरजका साथ दिया। १०४८ ई० की ११ वीं जुलाई को पादकाहु से १५ मील दूर पन्नर नामक स्थानमें लड़ाई हुई। इस लड़ाईमें पनवर उद्दो पराजित हो कर मृत्यु को प्राप्त हुये। इनके दूधरे लहके महम्मद यनीने त्रिचिनापल्ली भाग कर पादकाहु के नवाबका नाम पक्ष किया और पहरजज-गर्भभण्डसे सहायता मांगी। इधर चांदमाहव पुदिचेरोमें फ्रांसीसी-युद्धमें लड़ने सहायता-

में कर्षाटकके नवाब हो गये। चांदमाहवने फ्रांसीसी-सेना साथ से त्रिचिनापल्ली जा घेरा। इन समय महम्मद यनी पक्ष के पनायमें बहुत हो कटमें थे। उन्होंने महिसुरके राजासे पक्ष और सेनाको सहायता मांगने के लिये प्रतिपादन इस प्रकार लिख भेजा,— "यदि पाप मुझे इस धार विपदमें धवावे तो त्रिचिनापल्ली प्रदेश पापको पक्ष कहे।"

महिसुरके सेनानायक दलगाय नन्दोराव और महाराष्ट्रके सेनानायक सुरारिराव नवाबको सहायता के लिये पना पना सेनाको साथ से लखनारायचपुरके निकट आ पहुँचे। फ्रांसीसी सेनाने उन्हें रोका। कानून कोप यह संवाद पाकर उनको सहायता के लिये चल पड़े और पराजित हो कर करानकानके गाममें कैम गये। इसके बाद कानून दण्डने इस युद्धमें सहायता पड़ पायो। नन्दोराव और सुरारिराव पना पना सेना के साथ त्रिचिनापल्ली तक पनवर हुए। इधर तत्पौरके राजांन महम्मद यनीके भावाय लिये पन सेनानायक महोजोके साथ १००० पगारोहो और २००० पदातिसेना भेजी। पदकोईके तख्तीमान ४०० मो पगारोहो और १०० मो पदातिक सैन्य साथ से आ पहुँचे। बाद में सर सरने गण्डकेविह-दुर्ग से ४०० मो गोर और ११०० सा मियाहोको से त्रिचिनापल्ली को पार पाने समय फ्रांसीसी रक्त से मोप फ्रांसीसियोंको परास्त किया और से त्रिचिनापल्ली दुर्गके भीतर आ डटे। उन्होंने चांदमाहवको पराजय करनेका दृढ़ महत्त्व किया। इस समय चांदमाहव और फ्रेंचके विष्णुमन्दिरमें और फ्रांसीसी लष्करकी छावनीमें ठहरे हुए थे। दोनों पक्षोंमें कई एक छोटी छोटी लड़ाईयां चलती रहई। धीरे धीरे विपक्षियोंको समझ कम जानने कारण फ्रांसीसी सेनानायकने जम्बुद्वार छोड़ कर और मन्दिरमें पायव लिया। तब मेजर मनेन्दने और फ्रेंच सन्धु दहने दारो पर्वत कर दिया। इस समय फ्रांस उत्तरकी ओर कोमदन लटोके जिनारे, तत्पौरके सेना-नायक महोजो विष्णुमन्दिरके निकट और महिसुरके सेनानायक नन्दोराव रदिककी ओर पयला कर रहे थे।

पान्निभाषामं चतुर्वादित दृष्टा; किन्तु पूर्वोक्त धर्म-
मभामं संस्कृत भाषा हो व्यवहृत दृष्ट हो। औद्यमिके
प्रतिष्ठित मत चिरकाल तक एकमे गर्हीं रहे। बोध
बोधमें उनका परितर्जन भी होता गया। महावैशं नामक
ग्रन्थमें लिखा है, कि बुद्धको मृत्युके बाद २०० वर्षके
पश्चात्तर १८ बार इसी प्रकार परिवर्तन दृष्टा था।
बौद्धधर्मके जन्मभूमि भारतवर्षमें वैदिक चतुर्वाधियों-
ने इसका घोर विरोध किया था; किन्तु सिंघलमें इसमें
विरुद्ध कोई विरोध न हुआ हो। १६ अताद्धीमें
तामिलोंने सिंघल पर आक्रमण कर बौद्धगार्होकी
तहम नष्ट कर आत्मनिका खूब प्रयत्न किया था; किन्तु
वहाँके याजकोंने यह हत्तामा दूत द्वारा आत्मदेगमें
कहला भेजा। पोद्धि ब्रह्मदेगमें उपयुक्त याजकोंने पा-
कर धर्मग्रन्थको रक्षा की। पठारद्वीप अताद्धीका जीव न
होने पाया था, कि सिंघलमें याजकोंके यद्यपि बौद्धधर्म-
को बहुत पुनः संजवत हो गई। तभीमें याजक लोग
उत्साहो हो कर बौद्धधर्मके मतका प्रचार कर रहे हैं।
इन भीनोंके कारणोंने चलन हैं और वहाँमें अनेक
पुस्तक तथा छोटे छोटे धर्मग्रन्थ प्रकाशित होते हैं।
त्रिपिट (सं० स्त्री०) त्रीणि पिण्डानि हेयानि यत्। पार्श्व-
व्याहमे पिता, पितृमह और प्रपितामहके उद्देश्यसे दिये
हुए तीनों पिण्ड।

त्रिपिटो (सं० स्त्री०) त्रयाणां पिण्डानां समाहारः डोव।
त्रिपिट देखो।

त्रिपिब (सं० पु०) कर्षाभ्यां जिह्वा च विपति पाक।
प्राणिम सम्यक्कर्ण लागभेट; मन्त्रे कानयाना
नहा चलो। यह चपने दोनों कान और जीभमें जल
पोता है, इसीमें इसका नाम त्रिपिब पड़ा। ऐसा करने
मनुके चतुर्दार पित्रकर्मके लिए बहुत उपयुक्त होता है।
त्रिपिटप (सं० स्त्री०) मय्यं, पामानपेचया लयीयं पिटकं
भुवनं ह्यो विगम्य विभागवत् पूर्यार्या। १ लम्।
२ पाकाग।

त्रिपिटपमद (सं० पु०) त्रिपिटपे मोदति मद क्रिय।
देयता।

त्रिपु (सं० पु०) स्त्री, घोर।

त्रिपुट (सं० पु०) त्रीणि पुटानि यस्य। १ सतोष्क,

मटर। २ तोर, किनारा। ३ दम्भेट, एक रायका
माप। ४ ताम्रकण्ठ, ताम्र। ५ गीनुरहृत्, गोपटका
पेट। ६ गर। ७ चैमारो। इसका पर्याय—त्रिपुट घोर
खण्डक है। इसका मुख—मधुर, तिष्ठ, तुवर, कृष्ण, कर्क
घोर पितामह, कविकर, प्राहक, मोहन, चन्द्र घोर
प्रह्लादक तथा चताना वायु-नुडिहक है।

विपुटक (सं० पु०) विपुट मन्त्रायां कन्। १ सेंटन
चैमारो। २ कोटका एक पाकार। ३ त्रिभुज।

विपुटा (सं० स्त्री०) त्रीणि पुटानि यस्याः। १ मन्त्रि, २
चर्मो। २ चैलोका कन्। ३ विपुट, चैलका पिट।
४ चूर्मोला, कोटो इलायचो। ५ चूर्मोला, धक्को इला-
यचो। ६ विपुट, निमोय। ७ कर्णस्मोटमता, कर्णोद्वा
चैल। ८ रक्तविपुट। ९ रक्तविपुट। १० कुनयिन्ना,
कुलपो। ११ तस्मोत्तदेवाविमोय, ताम्बिनीको एक देवो
को भगिददावो मानो ज्ञाती हैं।

यह विपुटा देवो पारिजातवनमें सुन्दर वनमय
मिहामन घर कल्पवृक्षके नीचे रहती हैं। इनको
पूजा सदा करना चाहिये। ये भगिददावो हैं।

विपुटिन् (सं० पु०) त्रीणि पुटानि समस्य रनि डोव।
१ एणहृत्, १ डुका पेट। २ विदमविमोय, चैमारो।
विपुटो (सं० स्त्री०) त्रीणि पुटानि सत्यस्याः पञ्च गोरीं
क्षीय। १ विपुटा, निमोय। २ चूर्मोला, कोटो इला-
यचो। त्रयाणां प्रादपानं चैय कानां पुटानामा-
काराणां समाहारः डोव। प्राता, प्रान घोर प्रवेदय
तीनों पुट।

विपुटक हैत या होके पभावर्क निवे सभी भूतो-
को उत्पत्तिके पहले केवन मन्त्रावो चैतन्य था,
इसके निवा घोर कुक नहीं था। प्रात, चैय घोर प्राता
इन तीनोंका नाम विपुट है। प्रवेदयानमें यह विपुटो
नहीं रहती है। आगतिक सृष्टिकालमें इस विपुटोका
चयक चयक प्रात दृष्टा करना है। प्रवेदयानमें वि
पमिहप्रात नहीं रहता। जो हो प्राता है, ये हो चैय
है घोर है हो प्रात भी है। अतः मह एव हो है।

उत्पत्ति विषयमय कोवो प्राता कहते हैं। मनो-
मय कोव प्रात है तथा मन्त्र वर्मादि सभी विषय कोव
हैं। इनके समूहका नाम विपुटो है। उत्पत्तिके पहले

चांदसाहब इस तरह चारों ओरमें घिरे गये। जब क्राइमने पूछा कि फ्रांसोसोसिना चांदसाहबकी महायत्ना-
के लिये था रहो है, तब से विपक्ष १०० को गोर, १०००
मियाहो और दो हजार महाराष्ट्रमेंनाको साथ में फ्रांसोसो-
को रोऊनेके लिये चांगे बड़े। बलिकन्दपुके मामने
दोनोंमें घनघोर युद्ध मचा, जिसमें क्राइवकी दो जीन
दुई। इस युद्धमें १०० मो फ्रांसोसो, ४०० सा मियाहो और
३४० देगाय बगारोहोके साथ फ्रांसोसो-सेनानायक कौद
किये गये। चांदसाहबने यह समझा दुन कर तन्त्रोके
सेनानायक मंकोजोमि मन्थि कर लो। चांदसाहब-
ने मंकोजोके ऊपर विग्राम करके उन्हे पावनमयण
किया। मंकोजाने विग्राम-चातकतासे चांदसाहबको
घरने हाथमें मार डाला। फ्रांसोसोका परामय और
चांदसाहबकी मृत्युका समझा पाकर फ्रांसोसो भासन-
कसा उड़ने पत्तल दुःखित हुए।

बाद १०५३ ई०के नवम्बर मासमें फ्रांसोसियोका
मई सेना पाने पर विपक्षियोंने रातके समय विचिनापल्ली
परिहार करनेके समीपवासे दलहन-स्युहके निकट
पाकमय किया। किन्तु सकलता प्राप्त न को। इसमें
३५ फ्रांसोसोसिना बहुरेसोके हस्तगत हुई। १०५४
ई०के फरवरी मासमें बहुरेसोको रसद कलिपुर नामक
स्थानमें था जगये फ्रांसोसो सेनानायकने यह रसद
ज्ञान ला और पदुकोहाई-प्रदेशमें लूट मार मचाते हुये
तन्त्रोकी ओर चपलर द्ये। इसक बाद प्रसन्न मामने
पनामें बहुरेसो और फ्रांसोसोके बीच कई एक छोटी
झांटी, नडाइया हुई। किन्तु पक्षि दोनोंमें मन्थि हो गई।
महिपुरके सेनापतिका नाम इस सन्धिमें मरहनेसे ये इस
मन्थिकी मानमें पाध्य न हुए और उन्हीं के कहना मजा
कि—'मैं इस नियमसे बाध्य नहीं हो सकता।'

कालान्तर १५० गोर और १०० काले मियाहो में
कर विचिनापल्ली दुर्गको रक्षा कर रहे थे। उन्हींने
दुर्गका अच्छी तरह मंस्तर किया। फ्रांसोसोने इस दुर्ग
पर आक्रमण करनेका पूरी कीशिम को। किन्तु ये
इसमें कृतकार्य न हो सके।

१०५६ ई०के मई मासमें हैदर पन्थो महिपुरके प्रधा-
नी गये। १८८० ई०में उन्हींने चंभोकोके साथ लड़ाई

डाल दी और १०८२ ई०में ये नया कर्णाटकमें था कर
विचिनापल्ली और मदुराम लूट-मार मचाते लगे। उन्हींने
असमयलोका बांध काट कर सब पासादो जमान
नट कर दो ओर ऊर्ध्वनथीको कौद कर महिपुर भेज
दिया। बाद विचिनापल्लीका दुर्ग अधिकार किया। सर-
पावरकूट पराजित हो कर पछि हट गये; किन्तु एनो
मुत्ताईकी जो नडाइ दिड़ी, उसमें हैदरको चार ओर
सर-पावरकूटको जीत हुई।

१०८२ ई०में हैदर पन्थोने मरने पर उनके लड़के
टापू सुलतान कर्णाटकको छोड़ कर महिपुरको लौट
चाये। १०८२ ई०में मयमें एन्ने भाय नवाबको एक
मन्थि हुई।

१०८८ ई०में टीपूकी मृत्युके बाद श्रीरङ्गपत्तन अधि-
कृत हो जाने पर अन्त्या कागजोंके साथ नवाब हैदरके
बहुतसे पत्र पाये गये। 'नवाब चंभोजीके विरुद्ध टीपूके
पक्षमें है और १०८२ ई०में उन्हींने मन्थि तोड़ दो है'
इस कारण इतिहासमें एन्ने यह प्रदेश पपने साम्राज्यमें
मिना लिया और नवाबका हस्त कायम कर दा।

पन्थो विचिनापल्लीमें दुर्ग नहीं है, केवल दो दरवाजे
पूर्वगोरवका परिषय दे रहे हैं। दुर्गको दोवार टूट-
फूट गई है और उसके चारों ओरकी खड़ीको भंग कर
उसके ऊपर रास्ता बना दिया गया है। दुर्गके भीतर
पुराना राजभवन आज भी विद्यमान है, जिसमें तह-
सानदारका कचहरी, मुंसफका कचहरी, स्थानीय कोषा-
गार और बोधधान्य पसल पसल बना दिये गये हैं।

विचिनापल्ली दुर्गका पर्यंत तयुमानसामानमय
नामने प्रसिद्ध है। पर्वतके ऊपर जानेके लिये चारों ओर
पत्थरको साढ़िया बनी हुई है। मांझाके ऊपर महादेव
तयुमानस्वामीका मन्दिर है। सामनेका पहाड़ काट कर
एक घर बना दिया गया है। कर्णाटकके युद्धके समय
जबमें बाहदुरगो आती थी। इस मन्दिरका इग्न बहुत
सुन्दर है। अनुमान किया जाता है, कि मन्दिर खोल-
राजाचाये बनाया गया होगा। प्रति वर्ष माद्रसामने
महादेवका उत्सव होता है। जयमें विचिनापल्ली चंभो-
के हाथ पाया है, तबमें यहांकी बहुत उन्नति हुई
है। यहां जिनके जज, जजपट्टर, मुंसफ, डाक्टर, पुलिस,
सुराधिकृत, पट्टर आदि रहते हैं।

[illegible]

मिमुन्स (मं० को०) तथावां मुन्सुणां हनुमदाकाराणां
प्रचारः । तिष्ठन्नेष्ट, भग्नको तोन पात्रो वैवाचीव ।
तिष्ठन्नेष्टो दौष्ट या शालमोग मनाष्ट पर जगते ई ।
हनुमन् धारण कर मिम-मुन्स परमेष्ठ । विधान ई ।

विना भयं यो। विपुल भयं विपुल भयं विपुल
 ५। गीतको विपुल भयं विपुल भयं विपुल
 करना चाहते। जो लोग विपुल भयं विपुल
 मामो महादेवको विपुल भयं विपुल
 भयं, ये मामो विपुल भयं विपुल
 भयं विपुल भयं विपुल

त्रिपुनित्त, १—मन्थानके कोषीनके राज्यके पञ्चमंश अन्नप्रद
 ताम्रकला एक मर्द। यस पत्नी ८५७७० पोर रेमा
 २५२० पूरके पञ्च पण्डित है। जनमं रेमा ३००० है
 मगगा है। मर्दमें १६ मोन दूर एक पहाड़के ऊपर
 सुन्दर भवन बना हुआ है, जिनमें कोषीनके राजा पञ्च-
 मा वा कर रक्षा करते हैं।

विनुर (ग० स्त्री०) विगुणिताः पुनः समामानादिपे-
नित्यत्वात् पार्थिवस्य समाः । सप्तदशमके दशमे
इयं सप्तमैरे लीनीं नगर ।

निपु (मं० लो०) तथापि पुराणां गमाश्चरः । अमुनि-
 त्तमो पुनः । निपुणता विषय मर्यादयतेन एव प्रकार
 निष्ठा है, "तारकाश, कमलाच पीर विष्णु, कानो नामक
 तारकाशुनि तीन मन्त्रेनि जरीर मण्डा पादस्थ को ।
 मन्त्रा गमनीयको तपस्यानि मण्डल को वर देनेको उद्यम
 पुनः । एव पर मन्त्रेनि पादस्थ को, जि विषये एव लोम
 मण्डल भूतेनि चण्ड्य कोरे, मन्त्रा वर देनेको कृपा है" ।
 पर मन्त्रा मन्त्र वर देनेको राजी न पुनः । पाद एव लोम
 मण्डलेनि निष्ठ कर विर मन्त्रादि एव प्रकार स्थित्युक्त किया,
 "एव लोम मन्त्रो वर पादस्थ है, जि एव लोमो मान परमे

रह कर जनमसाक्षी पूजित होई घोर कष्ट न भई बाद
 जय हम सातीं यह माय मिल जाये, उम समय यदि कोई
 पद य. जमि गेनेने पुरीं का एक माय मंहर कर मरे, तो
 हम सातीं का उगाई कादमे मृगु को गो ' मछा तमाय
 कष्ट कर चय दिये । हम समय दम तोनीने तीम पुर
 निर्माय करनेके निवे मयदानधको नियुक्त किया । मय-
 दानधने चयने तनीधनमे चर्ममं कायनमय, चलागेचमं
 १७१८८८ पोर मयमोतीमं मोहमय तीन पुरींका निर्माय
 कि. १. २२ एक पुर मो मोहम गिह्यत या पोर यद गद,
 पदाविका, पाका, तीरन पाटिमे मुमोमित होता या ।
 तारकास चर्ममय पुरीका, कमलाय वनमय पुरीका पोर
 निधुआना मोहमय पुरीका यणीयर दूया । इन भीगनि
 जय पयके उचमे मोतीं लाक पर पाक्रमय किया, तब
 चमुर मोग देवतापींकी भागा प्रकाशक कट देने लगे ।
 तारकापका हरि नामक एक पुर या जिनमे
 कहीर तपस्या करके मछामे यह वर मांगा
 कि 'मि चयने पुरीं एक पैसा तामाव प्रयुक्त
 करनेका इच्छा करता हूं कि जिनका जन यदि चय
 निहत मोतींके लपर केका जाय तो ये पुनर्जीवित हो
 जायें ।' इसमे ये भीर भी दुर्घर हो गये । देवतापींने
 दद दद पर आच्यिन हो मछाको गर' मां पोर निमग-
 पुन क जय उचमे चयुराके टीराभरती कया कष्ट मुनाई
 तब मछामे कहा, 'ये मोतीं दानव भीरों वरके प्रभावमे
 चमिमाममे पूर पुर हो रहें हैं, मोत्र हो उन मोतींका
 मर्तमाय होगा । मरदियेके मिता पोर कीई देवता एक
 बाणमे इन तीन पुरींकी भंड लहों मरता । चम' हम
 मोग इन्हीके घाम चमे' । इनमे मोतीं पुरींका चति मोघ
 माय होगा पीर ये मोतीं दानव मारे जायने ।' यह कह
 कर ये मयके मय मरदियेके मनीप गये । मरदियेके
 देवतापींकी बात गुन नर पडा, 'हम मोग पयमे हमारे
 चापे यमकी मेकर मुष्ट करनेको रोगा हो जातो ।' हम
 पर दं लगन बोले, 'हम मोग पावको चापी मरि मं कर
 लहें' । पैसा नाममां हममे मरें हैं, बरिच पाव पीं हम
 भीरोंके चापे यमका यमय हरे तो पीर यमका हो ।' तब
 मरदियेके यमापींने चापे-दण्डा मे कर पीर भी पयिक
 यममायो हो लहे । उर्दी मययमे मित्रका नाम मरदिये

कृपा है। महादेवने देवताओं से कहा, "तुम लोग यदि मेरे लिये धनुष और रथ तैयार कर दो, तो मैं बहुत जल्द विष्णुको दण्ड कर दानुंगा।" तब देवगण विप्रकर्मा की नुमा कर रथ बनवाने लगे। उन्होंने पर्वत, वन, हीप और भूतों से परितप्त विशाल नगरसम्यक् यक्षप्रा- की महादेवका रथ बनाया। मन्दिर, पर्वत, दानवालय और जलनिधि रथका पक्ष; भागोरथो लक्ष्य; दिगम्भ भूयण; नक्षत्र देवा; सत्ययुग और स्वयंयुग काष्ठ; भुजग- राज, चमत्तदेव, कुबेर, हिमालय, विन्ध्याचल, सूर्य और चन्द्र चक्र; समर्पि मण्डल चक्ररक्षक; गङ्गा, सरस्वती, सिन्धु और साक्षागधूभाग, जल और नदो बन्धनवासदी; दिन, रात्रि, काला, काष्ठा, ऋः ऋतु और समस्त दोसपक्ष भक्तुर्कर्म; तारागण वरदा; धर्म, धर्म और काम त्रिवेदा; फलमुष्ये सुशोभित धोयधि और लता छण्डा; रात्रि और दिनपूर्व और चरपक्ष; छतराष्ट्रसुग दगनागपति देवा; महोरगगण योद्धा; सम्पत्त का मेघ युगवर्म, काल वृक्ष; नक्षत्र, कर्कोटर, चमत्तय और चन्दाय नागगण चर्मों के केशवन्धन; समस्त दिगम्भ और धर्म, सत्य, तप, तथा धर्म चरपरिम; सन्ध्या, धृति, मिधा, स्थिति, सवति और चक्षु-लक्ष्यादिसे सुशोभित नभोमण्डल बाह्या- वरण; लोकेश्वर, इन्द्र, वरुण, यम और कुबेर पक्ष; पूर्व- चमावस्था पूर्व दोषभागे, उत्तर चमावस्था और उत्तर दोषभागे चरग्रीवा, पूर्व चमावस्था के अधिष्ठित पिङ्गण, युगकोलक, मन, रथोपस्थ, सरस्वती, रथका पयाङ्गाग; शक्र- पापसमन्वित विद्युत् पवनोद्भूत पताका। वयट्कार प्रतोद एवं गायत्रो गोप्यन्धन हुई। विष्णु, सोम और कृतासन ये तीनों महात्मा के योगसे महादेव के वाय कल्पित हुए। चन्द्र उस वायका काष्ठ; सोम फलक और विष्णु तोषणधारस्वरूप हुए। पक्षसे ईशान के यक्षमें जो यक्ष कल्पित हुआ था, सभी उसने शरामनका रूप और सावित्रीने सोयीका रूप धारण किया। कास्यकर्मसे चर्मसे दिव्यवर्म चरिभूत हुआ। मेनाक और मरुपर्वत ये दोनों ध्वजयष्टि हुए। वेदादिमनो सवित मेघमाता पताका हुई। इस प्रकार अपूर्व रथ शरामनादिसे तैयार हो जाने पर देवताओंने यह हतास महादेवसे आ सुनाया। महादेवने उस पर चपने प्रभाव समस्त प्रतीकों रखा

और साक्षात्को ध्वजयष्टि बना कर समस्त शराम- रूपभक्तो मन्त्रिगीत किया। तत्रादण्ड, कामदण्ड, रुद्रदण्ड और चक्र, रथ के पाङ्ग रक्षक; चरम और साक्षिराम, चक्र- रक्षक तथा ऋग्वेदादि पाङ्ग चर हुए। "सोकार" रथ के सामने निक्ष दिया गया। महादेवने ऋः शत्रुपत्ति गृह सम्बन्धको विविध शरामन बना कर चपनी दायाकी हो सोयी बनाया। भगवान् रुद्र मातात् कास्यकर्म है, न चत्वर उनके शरामन है, इसो लिये उनको दायाद्वय कास्यरात्रि उस शरामनको सोयी हुई। विष्णु, चन्द्र और चन्द्र ये लोग उनके वायस्वरूप हुए। महादेवने इन शरीरपर शत्रु और चक्रिकाको यक्षमभूत दुःसह क्रोधान्तिको स्थापन किया। महादेवने इस रथ पर चढ़ कर देवताओंसे कहा, "वभी कोन महात्मा मेरे मारयोका काम करेगे?" इस पर देवगण बोले,—"चाप जिनकी पात्रा देवे, वे हो चापके मारयो होंगे।" फिर महादेवने कहा,—"जो सुकर्म अधिक यथ हो, तुम लोग उसका विचार कर चर्चे बहुत जल्द सारयो बना कर मीरो।" यह सुन कर देवताओंने पितामहको शर से भर कहा, "इस युद्धमें चाप हीकी मारयोका काम करना होगा।" पितामह इसे शोकार कर महादेवके मारयोके पद पर अभिहित हुए। तब महादेव विष्णु, सोमानि-समुपय शर धारण कर रथ पर चढ़े। कमलयोगि (वज्रा) भूतनायके वास्यानुसार विष्णुको और रथ चञ्चल करे। शूलपाणि महादेव जब क्रोधसे चपौर हो उठे, तब तीनों लोक कोपने लगा। उस समय वह रथ गोम, चन्द्र, विष्णु, वज्रा, रुद्र तथा उस शरामनके संचालनसे चलन सका। तब मारायपने उस शरामनसे निकल कर उपम- रूप धारण कर उस महाशरयोको चपनी पीठ पर रथ लिया। महादेव घोड़ोंकी पीठ और उपमके मध्यक पर मवार हो कर सिङ्गनाद करते हुए दानवपुरको और देखने लगे और उन्होंने घोड़ों के दानको काट डाला तथा उपमके चुरोंकी दो चुरोंमें विभक्त किया। सभीसे घोड़े दानहोन है और गोममूङ्के चुर दो भागोंमें बँटे हुए हैं। बाद महादेव शरामनको प्रत्यक्षा शीघ्र और उधे वायु- पताकामें संशोजित कर विष्णुकी रथया करने लगे।

बाड़ीकी प्रजाकी नाममें अभिहित है। पार्वत्य प्रत्येक प्रांशमें एक एक मंदार मंदारकी नामकी बाद बाड़ी शब्द जोड़ कर सब प्रांशका नामकरण किया जाता है। यह प्रदेश साधारणतः पर्वतमय है। भूमि पश्चिममें ऊँची होती गई है। ५।६ पर्वतमालाएँ समानान्तररूपमें अवस्थित हैं। प्रत्येक पर्वतमें ६ कोसका पत्तार है। पर्वत पर बाँसका जङ्गल और निम्नभूमिमें बैलका जङ्गल ही अधिक है। पूर्व दिशाके प्रधान पर्वतका नाम जाम्बुई है। इसकी सबसे ऊँची चोटी बैलनिङ्गगिब ३२०० फुट ऊँची है। यहाँको प्रधान नदियाँ गोमतो, काँवरा, खोपाई, बलाई, मनु, लुरी और कैनी हैं। इन नदियोंमें जंगलके बड़े बड़े वृक्षको गावयें बहा कर जाती हैं, जिनसे अच्छी अच्छी नावें बनाई जाती हैं। सुमाईगण अंगलमें बड़े बड़े बोया नामके बाँवको मारते और उनका मांस खाते हैं। जाम्बुईके सिवा इन प्रदेशमें और भी कई एक पर्वतमाला हैं। गोमती नदी—घटरसुहा पर्वतमें चायमा और लहा तराई पर्वतमें रायमा नामक दो नदियाँ निकल कर सुमरा नामक जलप्रपातमें ऊँच ऊपर एकत्र हो कर गोमतो नाम धारण करती हैं। काशीगाहा और पितागाहा नामकी दो उपनदियाँ हैं, जो बोधी-बाजार नामक ग्रामके निकट जिला विपुरामें प्रवेश करती हैं। मनु नदी—सकन्तलङ्ग पर्वतके ओईशिव शिखरमें निकल कर थोड़ेही प्रवेश करती है। देव और दुलाई नामक इनकी दो उपनदियाँ यथाक्रमसे कामगाँव और कदमडाता नामक स्थानमें इनके साथ मिल गई हैं। इन सब नदियोंमें पानवी, डिडी, शाकतो पाई चलती हैं। इन नदियोंमें ६० मन मोक्ष बाद कर नावें चला सकाती हैं। पर्वत पर कहीं कहीं कोयले और तरबूँ तरबूँके पत्थर पाये जाते हैं। कामगाँव और गियो पर्वत पर दो नदियाँ हैं, जिन्हें मुनचड़ा कहते हैं। इन दो नदियोंके सम्पत्तिमानका जल सवपात्र और उष्ण होता है। जाम्बुई पर्वत पर लसकी खाज है। जङ्गलमें हाथी और चीत बहुत देखे जाते हैं। हाथी पकड़नेके लिए राज-दरबारमें अनुमति लेने पड़ती और कर देना पड़ता है। प्रत्येक हाथी घने जंगल

भी समके मूलमें राजप्राय कहे कर समका पातवा पंग राजाकी देना पड़ता है। जङ्गलमें सुगा पकड़ कर अन्य देशमें भेजनेमें राजा एक प्रकारका कर लेते हैं। यहाँके जंगल जङ्गलविभागमें डम, मच्छड़, चादि इनके अधिक होते हैं, कि वनवासी भी कभी कभी अपना वास स्थान छोड़ कर अन्यत्र जाने जाते हैं। पार्वत्य त्रिपुरा पागरतमा और कैलागहर इन दो विभागमें विभक्त है। पागरतमा विभागमें ४२ हजार और कैलागहर-विभागमें ६ हजार पार्वतीय लोगोंका वास है। समस्त स्थानमें कुल २० हजार मनुष्य रहते हैं। पार्वतीय जाति तीन भागमें विभक्त है। १, तिपरा या टिपरा। तिपरा देखो। २, जामाडता, ३, नोपातिया और रियर। यहाँ कुँकी और सुमारयाँका भी वास है। कुँकी भी सुनाई देता। पार्वतीय उपन्यकारों मणिपुरी जाति रहती है। वे निम्नलिखित कई एक उत्सव मनाते हैं—१, देव मानके पश्चिम-दिनमें मान समाधि होनेके उपनयनमें एक उत्सव करते हैं। इसमें भोज और चामोद-पात्राद हो अधिक किया जाता है। यह उत्सव सात दिन तक रहता है। २, पश्चिम समाधि फसल काटने समय "मिकाटान" वा नवाच नामक उत्सव होता है। पार्वतीय लोग यह उत्सव मनाते हैं। इसमें देवतामें कमीनको उर्वरताके लिये प्रार्थना करते हैं। ३, पशुप्रायण समाधि ऐमनिक धान्य काटे जाने पर नूतन मद्यका एक उत्सव होता है। इसमें वे "मनुई" नामक धान्यमें एक प्रकारकी काँजी प्रस्तुत करते और देवताकी नवीन चायन उत्सर्ग करते हैं और सब ओई गंधीन चायन खाते तथा बकरा, घोड़ा और गुरुर पादिकी भी बलि दिते हैं। इन लोगोंके प्रधान उत्सवका नाम 'बिरपुत्रा' है। मर्यादमूलिक लिये चायाइ मानमें यह उत्सव होता और ठाई दिन तक रहता है। सब ओई पहले दिनके दस बजे रातमें तोमरी दिनके दस बजे प्रातःकाल तक अपने अपने घरका दरवाजा बन्द रहते हैं। यहाँ बाहर कोई नहीं जा सकता है। बीसमें कुछ कामके लिये

दनमें दो बार बाहर निकल सकते हैं। पागरतनामें राजमासादेक निकट एक स्थान बांसमें घिरा हुआ है। यही जगह उत्सव मनाया जाता है।

विदेशियों का बाध—चट्टग्रामके पार्यत्य प्रदेशमें सुभाई-
रुके समय कुनोका काम करनेके लिये चाकमा जाति लोग इस देशमें आबस गये हैं।

ग्राम-नगरादि—एक पागरतना नगरके सिवा और कोई दूसरा प्रसिद्ध नगर नहीं है। कैनायधर और त्रिपुराको प्राचीन राजधानी उदयपुर ग्राम ही इस प्रदेशमें सबसे बड़ा है।

पागरतना कुमिनाये ३० मीलको दूरी पर अवस्थित है। यहाँको पहालिकायें उतने सुन्दर नहीं हैं। सामान्य श्रेष्ठका मकान ही राजभवन है। यहाँ केवल नौ तो मनुष्यों का बास है, सड़कें अच्छी नहीं हैं।

कैनायधर—पर्वतके नीचे अवस्थित एक ग्राम है। एक उपविभागका मन्दर होनेके कारण यहाँ हाट लगती है। इस हाटमें तमाकू, सुपारी और सूखी मछलीके साथ ईर् दूधलो जातो है।

उदयपुर—यह गोमतोके बायें किनारे प्राचीन राजधानी उदयपुरमें कई कोसको दूरी पर अवस्थित है। यहाँ पार्श्वतोय रुईको हाट लगती है। बड़ादूरी काठ, बांस और रुईके बटले पहाड़ों लोग तमाकू, नमक और सूखी मछली ले जाते हैं। १८६१ ई०को वर्तमान उदयपुरमें कूकी लोगोंने बहुत भयानाचार भयाया था। वे ग्रामके अधिकांश मनुष्योंकी मार कर और बहूतोंको पकड़ कर अपने देश ले गये थे।

वर्तमान पागरतनासे २ कोस पूर्वमें प्राचीन पागरतना है। १८६४ ई०में यहाँ १ हजार मनुष्य रहते थे। पहले यहाँ राजाओंका वास था। १८४४ ई०को पागरतनामें नूतन राजधानी हुई। प्राचीन पागरतनाका राजभवन अभी भी भग्नावस्थामें विद्यमान है। यहाँ राजा और रानियोंके कई एक स्मरणस्तम्भ हैं। पुराने राजभवनके निकट एक छोटी मन्दिरमें पहाड़ी लोगोंके पीढ़ देवताओंकी प्रतिमा है। मन्दिरके निकट होकर जाते समय सब कोई यहाँ तक कि सुसज्जमान भी प्रतिमाकी प्रणाम किया करते हैं।

प्राचीन उदयपुर सोलहवीं शताब्दीके प्रथम राजा उदयमाणिक्यसे राजधानीमें परिणत हुआ और वही नाम पर इसका नामकरण हुआ है। यह भी गोमतोके बायें किनारे पड़ता है। प्राचीन राजभवन आदि अभी भी धने जङ्गलमें वर्तमान हैं। यहाँ ८ फुट लम्बा एक लोहेका कामान है। लोगोंका विश्वास है कि इस पर फूल रखनेसे शुभाशुभ जाना जाता है। पछि क कामान देख कर सलाम करते हैं। यह कामान किसका है और किस तरह कहासे यहाँ आया है कोई भी नहीं बता सकता।

यह प्राचीन उदयपुर एक पोट स्थान है। यहाँकी देवीका नाम त्रिपुरादेवी और भैरवका नाम त्रिपुरेश है। यहाँ सतीका दाहिना पैर गिर पड़ा था। भैरवलिंग सफेद पत्थरके बने हुए हैं। त्रिपुरादेवीके मन्दिरमें बनेक यात्री एकत्र होते हैं।

भारतवर्द्धने भैरवका नाम नम्र बतलाया है। देवीके मन्दिरके निकट बहुत बड़े छोटे छोटे पहालिकाओंके ऊपर बङ्गला घरमें खुदा हुआ मिलाविल है। मन्दिरके समीपमें चण्डाकार एक बड़ा तथा परिष्कार तालाब है। इसके किनारे दुग्धप्रवेष्ट जङ्गल है।

त्रिपुराका इतिहास—बङ्गला भाषामें लिखा हुआ राजमाला नामक एक काव्यग्रन्थ है, जिसमें त्रिपुराके राजवंशका इतिहास लिखा है। त्रिपुरा प्रत्यन्त प्राचीन कालसे प्राजतक एक राजवंशके अधीन आ रहा है। राजमालाके मतसे यह राजवंश चन्द्रवंशोद्भूत है। चन्द्रवंशमें ययातिके पुत्र दुह्युसे इस वंशकी उत्पत्ति गणना की जाती है; किन्तु गौर कर विचार करनेसे स्थिर हुआ है कि यह वंश ग्राम जातिसे उत्पन्न हुआ है। ग्राम जाति मोहिल्यवंश नामसे प्रसिद्ध है। अंगरेज लोग इस जातिके व्याख्याकालमें इसे Tibbeto-Burman कहते हैं।

त्रिपुराके राजाओंमें प्रतिष्ठित एक पद अभी भी प्रचलित है। इस देशमें प्रचलित सन्धे १ वर्ष पहले त्रिपुराई प्रतिष्ठित हुआ।

अब चन्द्रवंशीय राजगण भारतवर्षमें सम्नाट, ये, तब भारतके पूर्व सीमासर्वसी हिमालय देशके दक्षिण

हैं और तानके पागे पूजो जाती हैं। इसीसे इनका नाम त्रिपुरा पड़ा है। (कालिकापु० १३ अ०)

इस देवीका मण्डल त्रिकोण—तोन रेखा में निर्मित है, तोड़ पुर मन्द के तोन पसर है, रूप तोन प्रकारके हैं और त्रिदंशोको सृष्टिके लिए कुण्डलाग्रिभा तान हो प्रकारको है। ये सभी वस्तु तोन तोनको हैं, इसीसे इनका नाम त्रिपुरा पड़ा है। (कालिकापु० १३ अ०)

इनका रूप सिन्दूरपुष्पमय है, इनके तोन नेत्र हैं, चार भुजा हैं, बायाँ ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पुष्प-धनु है, पक्षो हस्तमें पुस्तक है, दाहिने ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पाँच बाण हैं, पक्षो हस्तमें पद्ममाला है, चार कुण्ड (हरदा) पाँठ पर ओर एक रत्नाके लिए लण्डायमान है, जटाजूट है। यह चन्द्र द्वारा बहकेश है, नन्दा है, मध्यदेशमें त्रिवलि द्वारा सुगोमिता है, सब भक्तकारोंसे भूयिता है। सर्वाङ्ग सुन्दरो है, भाद्रसेमयो है, धनविहरणकारिणी है तथा सर्वलक्षणसम्पन्ना है। इसा प्रकार उस मूर्त्तिका ध्यान करना पड़ता है।

इसो रूपसे पहले ध्यान करना चाहिये और अपनेको भी तोन प्रकारके रूपोंमें समझना चाहिये।

द्वितीय त्रिपुरा-मूर्त्ति इस प्रकार है—बन्धुकुण्डल-सदृश, जटाजूट तथा चन्द्रद्वारा मण्डिता, सर्वलक्षण-सम्पन्ना, सब प्रकारके पद्महारोंसे सुगोमिता, उदन्तसूर्य-सदृश वस्त्रपरिधाना, पद्मपर्यङ्कमण्डिता, सुखा और स्वाधक्युता, योगोपतपयाधरयुक्ता, त्रिवलिसुगोमिता, पावकके पानोदने सन्तुष्टा, नेत्राघ्रादकरो, विद्यरा, जगत्को सोमियो, दिनेत्रा, योगिसुद्राङ्गे प्रति ईषत् हास्य-समायुक्ता, नवयोगनसम्पन्ना, गृहान्तत्य वस्तुभूजा, बायाँ ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पुस्तक, पक्षो हस्तमें पद्मय, दाहिने ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पद्ममाला, पक्षो हस्तमें वर, गन्ध-रत्ना, सुवर्णाभा, कटकोपवनान्तरिता, शुभदायिनी और कामाघ्रादकारो है। यही अनोदरा द्वितीय त्रिपुरा-मूर्त्तिका ध्यान है। (कालिकापु० १३ अ०)

तृतीय त्रिपुराको मूर्त्ति अवाकुसुम-सदृश, मुक्तहेशो, प्रमानना और हास्यकारी है। ये मदायिकी प्रेतवत् स्थापन पर लक्ष्मी के हृदय पर प्रसादनके रूपमें बैठे हैं हैं। शीघाटेशसे पाण्डवजिनो श्लोकाभिमित्य मुक्त-

मानाधारिणो, योगोपतपयोगेधरा, वस्तुभूजा, दिगम्बरो, दाहिने ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पद्ममालाधारिणो, पक्षो हस्तमें वरदा, बायाँ ओरके ऊर्ध्व हस्तमें भी पद्ममालाधारिणो तथा पक्षो हस्तमें वरदायिनी, दिनेत्रा, हास्यमुखी, गन्ध-दुधिरभोगात्ता और सर्वाङ्ग सुन्दरो है। माधवकी रमो प्रकार तोमरो मूर्त्तिका ध्यान करना चाहिये।

(कालिकापु० १३ अ०)

पावकप वागमाव, द्वितीय कामयोग और तृतीय उदर एवं मोहन नामसे प्रसिद्ध है। माधवको चाहिये कि वे पहले एक एक करके तीनों रूपोंका ध्यान कर बाइसके सदृश हृदयाभ्यन्तरमें भी गोनों मन्त्रोंकी उच्चारण कर दोहूगोपचारसे प्रत्येककी पूजा करें। देवीको तीनों मूर्त्ति एकत्र कर उसकी ओरमें तीनों मन्त्र एक साथ करके हृदयमें रखें।

कामरूपिणी त्रिपुरादेवीको जो प्रकारसे पूजा की जाती है, विधिवत् त्रिपुराकी पूजा करनेसे साधकके सभीष्ट पूर्ण होते हैं और पक्षमें वे देवलोकको जते हैं।

(कालिकापु० १३ अ०)

त्रिपुरा—पूर्व-वज्रालका एक प्रान्त-भूभाग। इस प्रदेश-के कई भंग जिला-त्रिपुरा नामसे वज्रान्तरे नाटक पक्षोन ओर कई भंग पावलय-त्रिपुरा नामसे त्रिपुराके बाघोन राजवंशसे पक्षोन है।

जिला त्रिपुरा—यह पक्षा० २३° २' से २४° १६' उ० ओर देशा० ८०° १४' से ११° २०' पू० में अवस्थित है। भूपरिमाण २४८८ वर्ग मील है। इसमें उत्तरमें ब्रह्मजंते पन्तगत मैसमिंह जिलेके कई भंग और पश्चिममें पन्तगत जोरहा जिला, दक्षिणमें नोपागानो जिला, पश्चिममें मिथना नदी और पूर्वमें पावलय-त्रिपुरा है। जिला-त्रिपुरा-को पूर्व-सोमा को ब्रिटिशभारतकी पूर्वाञ्चल-सोमा है। १८५४ ई० में भारत गवर्नमेंण्टको ओरसे मि० जिनेटरने और त्रिपुराराजको ओरसे मि० क्वाथेनने यह सोमा निर्धारित की। पहले यह जिला नदपामके कमिश्नरके पक्षोन था। १८०५ ई० में यह टाकाके कमिश्नरके पक्षोन हो गया।

इस जिलेकी भूमि सब जगह समान है, कोवल पूर्वाञ्चलमें कई कई आलमार्द पर्वतजा शृङ्खलाएँ हैं।

पूर्वतमय राज्य 'किरात' देय कहलाता था। विराट देवे।
चन्द्रवंशोय राजा ययाति के चौथे पुत्र राजा दुष्य।
राजमाता के मतमे द्वितीय पुत्र द्रुह्य पितमि परित्यक्त
होकर इसी किरात देशमें पाये। किरात देशकी कपिला
(ब्रह्मपुत्र) नदीके किनारे किरातराजके साथ
द्रुह्य का युद्ध हुआ। इस युद्धमें किरातीकी पराजय करके
वे राजा बन बैठे। बाद उन्होंने कपिलाके किनारे विवेक
नामक नगर निर्माण कर यहाँ राजधानी स्थापन की।
द्रुह्यको ययातिने गांध दिया था कि "द्रुह्य ! तुमने मेरे
हृदयमें लज्जग्रहण करके भी अपनी उमर पड़ान न की;
इस कारण तुम्हारा मित्रतर अभिप्राय कहीं भी मित्र नहीं
होगा। जहाँ घोड़ा, रथ, शस्त्र, राजाके योग्य मवारों,
गाय, गदहा, बकरा, घासको चादि हाथ नमनागमन न
हो सके, सर्वदा मेझा पीर प्रुतमति हाथ पायागमन
हो सके पीर जहाँ राजशब्द प्रसिद्ध न हो, तुम स्वयं गम
उसी देशमें वास करोगी।" (महाभा० पञ्चम ८४ अ० १०)
भद्राभारतके मतानुसार इनके वंशमें 'भोजगण' उत्पन्न
हुए थे। (पृ० ४५० अ० २५ अ० १०)

राजमाताके मतमे यहाँ किरातदेग विपुला है
पीर ययाति के पुत्र हो यहाँ के प्रथम राजा थे। राज-
माताके मतानुसार द्रुह्य के बाद उनके पुत्र विपुल राजा
हुए। विष्णुपुराण पीर हरिवंशमें द्रुह्य के दो पुत्र
धन्व, पीर सेतु के नाम पाये जाते हैं। सेतु के वीरका
नाम गान्धार था। श्रीमद्भागवतमें गान्धारके परवर्त्ती ५
पुरुषके नाम पाये जाते हैं, किन्तु उनमें विपुलका नाम
नहीं मिलता है। पुराणके मतानुसार द्रुह्य के पुत्र गान्धार-
के गान्धारका नामकरण हुआ है। इस तरह गौरा-
णिकके मतमें देवा स्वोकार किया जाता है, कि द्रुह्य
भारतवर्ष के पूर्व प्राक्तर्त्त न था कर पश्चिमप्राक्तर्त्त गये
थे।

जो कुछ हो, राजमाताके मतमें सत्त विपुलसे मे कर
वर्त्तमान काल तक विपुल एक ही राजवंशके प्रधान
था रहा है।

विपुलने राज्यमिहामन पर बैठ किरात राज्यका नाम
परित्यक्त किया पीर अपने नामके अनुसार विपुला राज्य
पीर किरात जातिका नाम विपुला (टिपरा) जानि रखा।

विपुल प्रजापीडक थे पीर मिपट्टी को कर उठाने
अपने राज्यमें गैर नाम मीप किया। धर्मदोषी
विपुलके चत्वार्षारवे ब्राह्मण धीरे धीरे दूसरे देग जा कर
बसने लगे। बहुतसे प्रधान प्रजाने चत्वार्षारोके हाथमें
राज्योद्धारके लिए कामरूपके अधिपतिमें प्रार्थना की,
किन्तु वे विपुलपतिके समयमें इस विषयमें महमत न हुए।
प्रजा हताश हो कर स्वदेशको मोट पारि। इतनेमें
अपुत्रक विपुलकी मृत्यु हुई। विधवा रानी मिहामन
पर बैठ कर राज्य करने लगीं। ब्राह्मणोंने राजवंश
नष्टप्राय देख मित्रको चाराधना की। मित्रोंने घर
दिया कि, "तुम लोगोंको रक्षाय पूर्व होगी। मेरे पीरम
पीर विधवा रानीके गर्भमें एक सुतत्पन्न पुत्र उत्पन्न
होगा।" कुछ समयके बाद ये मा हो हुआ। रानीने
तोन नेत्रवाला एक पुत्र प्रमथ किया, जिसका नाम
त्रिभोचन रखा गया। दस वर्षको अवस्थामें त्रिभोचन
राजा हुए। राजा त्रिभोचनने समयः प्रजाको युध्विद्या
सिखायी। बाट पारों पीरके राज्य लय कर अपने राज्यकी
उन्नति करने लगे। उन्होंने ही विपुलपतिगामें राज-विष्णु,
पीर ध्वनहत्तका पहने पहल व्यवहार किया।
तभीसे पात्र तक सत्त विष्णु चत्वार रखा है। पात्रवर्त्ती
हैडिम्ब-देग अधिपतिने विपुलाधिपति-त्रिभोचनके साथ
महाव रथनेके लिए अपनी सहायका विवाह कर दिया।
महाराज त्रिभोचन मित्रभक्त थे पीर मित्रके पादेगमें
चन्दने पीरद देवमतिमा प्रतिष्ठित कीं। ये पीरद
देवता ही विपुला पतिदेवके कुनदेवताके रूपमें आज भी
पूजे जाते हैं।

"इराता हरिवादी कुवारी नदीके किनारे।

कापि नंगा सिद्धि कामे विनादिष चन्द्रह॥"

हर, चमा, हरि, अछो, मरुवतो, क्षारिक, गधेग,
चन्द्र, पाकाय, मसुद्र, गङ्गा, काम पीर विमानय थे ही
पीरद देवता हैं।

त्रिभोचनने एक यज्ञका अनुष्ठान करके देवय-ब्राह्मण-
को अपनेके लिए गङ्गासागरदेवमें अपने पादपीकी भिजा
था। बहुतसे देवदेव ब्राह्मणकी प्रथ मान्य हुआ
कि विपुलराज कोविन हैं, तब पददे तो मे पानिकी
गनी न हुए; किन्तु अन्तमें विपुलकी मृत्यु-सम्पाद पर

विग्राम कर उन्होंने जा कर त्रिलोचनका यज्ञसम्यक् किया। इस यज्ञमें किरात (त्रिपुरा) घोर क्रूरियोंसे साथे हुए उनके सम्महिषादि बलिदान किये गए। हैह्य-राजकुमारोंके गर्भमें त्रिलोचनके बारह पुत्र उत्पन्न हुए। राजमाताके मतमें ये सब पुत्र विष्णु और शिवकी देहको नार्हे अर्द्ध-प्रत्यङ्गविशिष्ट थे। वर्त्तमान कालमें भी प्रवाद है, कि राजवंशधर इसी तरह लक्षण-मान्य हैं।

राजमातामें लिखा है, कि—“त्रिपुराधिपति त्रिलोचन राजा युधिष्ठिरके समसामयिक थे; किन्तु महाभारतमें उनका नामोल्लेख नहीं है, पर राजसूययज्ञकालमें भीमसे पूर्व देश जय करनेके समय किरात राजाका पराजय-विवरण और घोषणाके बाद कर्णसे पूर्व दिशामें जयके समय त्रिपुरा राज्यका जयविवरण लिखा है। महाभारतको लड़ाईमें त्रिपुराधिपति किमो पक्षमें उपस्थित नहीं थे। ऐसा प्रतीत होता है, फिर राजसूययज्ञके समय उपस्थित राजाध्यामोंमें भी उनका नाम पाया नहीं जाता है; किन्तु त्रिलोचन और युधिष्ठिरका समय निरूपण कर देखनेसे दोनों समसामयिक प्रतीत नहीं होते हैं। त्रिलोचनकी वंशवली राजमातामें जो कुछ लिखी है, उसमें जाना जाता है, कि त्रिपुराके राजा वीरचन्द्र माणिक्यके भतीजे ब्रजिन्द्रचन्द्र तक त्रिलोचनसे १०८ पीढ़ी हो गई है। वर्त्तमान प्रव्रतस्वविदोंके मतानुसार त्रिलोचन ब्रजिन्द्रचन्द्रसे १६१६ वर्ष पहले वर्त्तमान थे। वर्त्तमान त्रिपुरा राजकी पूर्ववर्ती महाराज ईशानचन्द्रमाणिक्यके १२०० ब्रह्माब्दकी १० वर्षकी अवस्थामें मृत्यु हुई, तब उनके पुत्र ब्रजिन्द्रचन्द्र बहुत बच्चे थे। अभी यदि युधिष्ठिर कलियुगके प्रारम्भमें वर्त्तमान थे, ऐसा स्वीकार किया जाय, तो ब्रजिन्द्रसे ४८६८ वर्ष पहले विद्यमान होंगे; क्योंकि महाराज ईशानचन्द्रकी मृत्युके समयमें कलियुगके ४८६८ वर्ष बीत चुके थे। इस हिसाबसे युधिष्ठिर और त्रिलोचनमें १३११ वर्षका फर्क रहता है। १३११ वर्षमें ४० पुरुषका प्रभाव देखा जाता है; किन्तु महाभारतके वनपर्वमें जय त्रिपुरा नाम पाया जाता है, तब अनुमान किया जा सकता है,

कि त्रिलोचनके पिता त्रिपुर युधिष्ठिरके पूर्ववर्ती न थे, पर समसामयिक थे। सभापर्वमें भीमके दिग्विजयके समय जब किरात राज्यका नाम त्रिपुरा नाम न हो कर किरात नाम ही देखा जाता है, तब यह भी सम्भना होगा कि राजसूययज्ञके समय त्रिपुरके रहने पर भी उन्होंने खराबका नाम परिवर्त्तन नहीं किया। यह भी सम्भव है; क्योंकि राजसूययज्ञके बाद दुर्गाधनने द्यूत-क्रीड़ामें पाण्डवकी बारह वर्षके लिये वन भेजा था। इसी बारह वर्षके अन्तमें घोषणावा दूई। इसके बाद कर्णसे त्रिपुरा जीता गया। सुतरां भीमसे किरात राज्य जीते जानिके बारह वर्ष बाद कर्णसे त्रिपुरा नामक किरात राज्यका जीता जाना कुछ असम्भव नहीं है। इसी घटनासे त्रिपुराकी युधिष्ठिरका समसामयिक कह सकते हैं। राजमाताके मतसे त्रिपुरा द्रुह्यके पुत्र हैं। यदि ऐसा स्वीकार किया जाय, तो त्रिपुरा युधिष्ठिरके बहुत पूर्ववर्ती हो जाते हैं; किन्तु त्रिपुरामें एक प्रवाद है, कि “त्रिपुरा द्रुह्यके पुत्र नहीं हैं। केवल उत्तर-पुरुषमात्र हैं। द्रुह्यसे बीस राजाओंके बाद त्रिपुरा सिंहासन पर बैठे।” इस प्रवाद पर विश्वास करनेसे देखा जाता है, कि यथातिके तीसरे पुत्र द्रुह्यसे निम्न १३वीं पीढ़ीमें त्रिपुरा और यथातिके कनिष्ठ पुत्र पुरुको १८वीं पीढ़ीमें युधिष्ठिर वर्त्तमान थे। पौराणिक-विवरणमें ४१५ पुरुषका अन्तर (१५०१०५ वर्षका फर्क होने पर भी) अर्थात् नहीं है। अतएव राजमाताके मतसे त्रिलोचनकी युधिष्ठिरके समसामयिक स्वीकार करनेकी अपेक्षा, महाभारतके मतसे त्रिपुराकी युधिष्ठिरके समसामयिक स्वीकार करना ही सही है; किन्तु इस जगह यह कहना उचित होगा, कि ये सब घटनायें निःसन्देह ऐतिहासिक नहीं कही जा सकती हैं।

राजमाताके पुत्र माने गये हैं, किन्तु उपा-
गया...

हैं और तानके पाने पूजा जाती हैं। इसीसे इनका नाम त्रिपुरा पड़ा है। (कालिकापु० ६१ अ०)

इस देवोका मण्डल त्रिकोण—तोन रेखासे निर्मित है, तोन पुर मन्त्रके तोन अक्षर हैं, रूप तोन प्रकारके हैं और त्रिदेवोको सृष्टिके लिए कुण्डनोद्यमि भी तान हो प्रकारको है। ये सभी वस्तु तोन तोनको हैं, इसीसे इनका नाम त्रिपुरा पड़ा है। (कालिकापु० ६१ अ०)

इनका रूप सिन्दूरपुञ्जसदृश है, इनके तोन नेत्र हैं, चार भुजा हैं, बायीं ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पुष्प-धनु है, दायीं हस्तमें पुस्तक है, दाहिनी ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पाँच बाण हैं, दायीं हस्तमें पञ्चमाला है, चार कुण्ड (धरका) घोट पर और एक रत्नाके लिए दण्डायमान है, जटाजूट है। शर्व चन्द्र द्वारा सहकेश हैं, गन्गा हैं, मध्यदेशमें त्रिवलि द्वारा सुगोमिता हैं, सब अलंकारोंसे भूषिता हैं। सर्वाङ्गसुन्दरी हैं, मङ्गलमयी हैं, धनवितरणकारिणी हैं तथा सर्वलक्षणसम्पन्ना हैं। इसी प्रकार सब भूर्त्तिकी ध्यान करना पड़ता है।

इसी रूपसे पहले ध्यान करना चाहिये और अपनेको भी तोन प्रकारके रूपोंमें समझना चाहिये।

द्वितीय त्रिपुरा-मूर्ति इस प्रकार है—अत्युत्कृष्ट-सदृश, जटाजूट तथा चन्द्रद्वारा मण्डिता, सर्वलक्षण-सम्पन्ना, सब प्रकारके अलङ्कारोंसे सुगोमिता, उच्चतुल्य-सदृश वस्त्रपरिधाना, पद्मपद्मदण्डस्थिता, सुल्ला और रत्नावलीयुता, पौनोपतपयोधरयुक्ता, त्रिवलिसुगोमिता, आनन्दके आनन्दमें मनुष्टा, निवाह्यादकरी, विष्टरा, जगत्की सीमिणी, त्रिनेत्रा, योनिमुद्राके प्रति ईदृश हास्य-समायुक्ता, नवयोधनसम्पन्ना, स्थानात्यन्त चतुर्भुजा, बायीं ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पुस्तक, दायीं हस्तमें पञ्चमाला, दाहिनी ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पञ्चमाला, दायीं हस्तमें वर, गलद-रत्ना, सुगन्धा, कदम्बोपधानाभारिता, शुभदायिनी और कामाह्लादकरी हैं। यही अनोईश द्वितीय त्रिपुरा-मूर्त्तिकी ध्यान है। (कालिकापु० ६३ अ०)

तृतीय त्रिपुराकी मूर्त्ति जवाकुसुम-सदृश, मुकुटमयी, शमानना और हास्यकारी है। ये सदाशिवकी प्रेतजन्म स्थापन कर लगेके इष्ट पर परामर्शके रूपमें बैठा रहते हैं। पोषादेयसे पाषाणमयिनी रत्नोत्पन्नमिश्रित सुव-

मानाधारिणी, पौनोपतपयोधरा, चतुर्भुजा, दिग्भवा, दाहिनी ओरके ऊर्ध्व हस्तमें पञ्चमालाधारिणी, दायीं हस्तमें वरदा, बायीं ओरके ऊर्ध्व हस्तमें भी पञ्चमालाधारिणी तथा दायीं हस्तमें वरदायिनी, त्रिनेत्रा, हास्यमुखी, गल-द्विधरभोगात्ता और सर्वाङ्ग सुन्दरी हैं। माधककी इसी प्रकार तीसरी मूर्त्तिकी ध्यान करना चाहिये।

(कालिकापु० ६३ अ०)

पाद्यरूप बाणभाव, द्वितीय कामवीर्य और तृतीय कामरूप एवं मोहन नामसे प्रसिद्ध हैं। माधककी चाहिये कि वे पहले एक एक करके तीनों रूपोंकी ध्यान कर वाङ्मयके सदृश इष्टयाभ्यन्तरमें भी तीनों मन्त्रोंकी उच्चारण कर पौष्ट्योपचारमें प्रत्येकको पूजा करें। देवोको तीनों मूर्त्ति एकत्र कर समकी ओरमें तीनों मन्त्र एक साथ करके हृदयमें रखें।

कामरूपिणी त्रिपुरादेवोकी नौ प्रकारमें पूजा की जाती है। विधिवत् त्रिपुराकी पूजा करनेमें माधकके समीप पूर्ण होते हैं और अन्तमें वे देवलोककी जाती हैं।

(कालिकापु० ६३ अ०)

त्रिपुरा—पूर्व-वज्रात्मका एक प्रान्त-भूभाग। इस प्रदेशके कई भंग जिला-त्रिपुरा नामसे वज्रात्मके माटके दायीं ओर कई भंग पावण-त्रिपुरा नामसे त्रिपुराके प्राचीन राजवंशके दायीं हैं।

जिला त्रिपुरा—यह पश्चात् २१° २' से २४° ११' उ० और ८०° १४' से ८१° २०' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण २४८८ वर्ग मील है। इसमें उत्तरमें वज्रात्मके अन्तर्गत मैसूरमिह जिलेके कई भंग और पश्चिममें अन्तर्गत जोरहा जिला, दक्षिणमें जोधापावो जिला, पश्चिममें मिथना नदी और पूर्वमें पावण-त्रिपुरा है। जिला-त्रिपुराकी पूर्व-सीमा को इटिगभारतकी पूर्वाञ्चल-सीमा है। १८१४ ई०में भारत सरकारके अधीन में लि० लिनेटरने और त्रिपुराराजकी ओरने लि० बदायूँने यह सीमा निर्धारित की। पहले यह जिला पट्टापरके कमिश्नरके अधीन था। १८०१ ई०में यह टाकाई कमिश्नरके अधीन हो गया।

इस जिलेकी भूमि सब जगह समतल है, केवल पूर्वाञ्चले कई-कई नालसराएँ बहती हैं। कुछ कुछ भंग

भार त्रिभोजनमें जो १३३३ वर्ष वा ४० पोटोका धनतर पड़ता है, उसमें अनुमान किया जा सकता है, कि उक्त ४० पिटियों भयवा उनमें भी अधिक पिटियोंके राजा-त्रिपुराको तरह देवद्विजविष्टो थे। इस कारण राजमानाके कवियोंने अपने इतिहासमें उक्त विष्टो राजाओंका उल्लेख न करके शैव और द्विजभक्त राजा त्रिभोजनको गिबके वरसे प्राप्त गिवपुत्र माना है।

त्रिभोजन यशार्थमें चन्द्रवंशोद्भव नहीं है। राजमानाओंमें भी उन्हें शिवजीके चोरसमे उत्पन्न वतनाया गया है। इधर पाद्यात्म्य गवेषणाने स्थिर हुआ है, कि मणिपुर राजवंशको नाई त्रिपुराका राजवंश भी शान वा लोहितव्यंशोद्भूत है चयवा यदि उसे चन्द्रवंशोप भी कहा जाय, तो भी प्रमाणको कोई विगोच सुविधा नहीं। क्योंकि इसमें पढ़ने हो देखा गया है, कि दृष्टसे लेकर त्रिपुराके मध्य १२ राजाओंके नाम तथा त्रिपुरासे ले कर त्रिभोजनके मध्य ४० राजाओंके नाम नहीं मिलते हैं। कौन कह सकता है, कि उक्त दो समयके मध्य राज्य एक राजवंशमें दूसरे वंशके हाथ नहीं गया होगा।

जो कुछ हो, अभी राजमानाष्टन इतिहास हीका अनुसरण करना होगा। त्रिभोजनके जोनेजो उनके प्रसुर ऐडिम्प्रपतिको ख्यु हुं। ये अपुत्रक थे। त्रिपुराके बारह राजकुमार मातामह राज्यके उत्तराधिकारी बन कर आपसमें राज्याधिकारके लिये झगड़ने लगे। इसपर त्रिभोजनने अपने बड़े पुत्रको ऐडिम्प्रदेशका राजा बना कर आतृविरोध शांत किया। महाराज त्रिभोजनने बहुत समय तक राज्य किया। उनके समान दीर्घायु राजा आज तक कोई त्रिपुराके मिहामन पर न बैठे, किन्तु उनके बड़े भाई मातामह-राज्य ऐडिम्प्रदेशके राजा हुए थे। वे ही पैल्लकराज्य पानिके लिये राजा दक्षिणके विरुद्ध समेन्य चयसर हुए थे। मात दिनी तक दोनों भारद्वाजमें युद्ध होता रहा। बाद ऐडिम्प्रराजने मध्यम भ्राताको पराजित कर पिट्टराज्य अधिकार कर लिया और ये दोनों राज्यको मिलाकर शासन करने लगे। राज्यभूत राजा दक्षिण और उनके दूसरे दग भारद्वाज त्रिपुरा परित्याग कर ध्यानालषा नदो पार हो,

एक जगह सामस्यान स्थिर किया। महाराज त्रिभोजनके इस बड़े पुत्रका नाम राजमानाओंमें नहीं पाया जाता।

कुछ समयके बाद प्रजा-विद्रोहने ऐडिम्प्रराज, राज्यभूत और प्रबामो राजा दक्षिण पुनः मिहामन पर प्रतिष्ठित हुए। महाराज दक्षिणके बाद उनके पुत्र तथदक्षिण राजा हुए। इनमें लेकर प्रमार तक ३३ राजाओंके शासनकालमें त्रिपुरामें कोई विगोच घटना नहीं घटी। महाराज प्रमारके पुत्र कुमार राजा हो शासननगरमें गिबके दृग्मन कानि गये। शासननगर गिबका नियोजन समझा जाता था। यह शासननगर कहा है, उसका पना नहीं चनता। पर कहते हैं, कि चयामने उसरोय पर्वतका सुपनिह ग्रन्थ नाय-गिवमन्दिर बहुत प्राचीनकालमें त्रिपुराधिपतिका बनाया हुआ है। यह भी मन्दिरके संस्कारका वर्ष त्रिपुरा राजकीपने दिया जाता है। इसमें अनुमान किया जाता है कि यही स्थान उस समय शासननगर नामसे प्रसिद्ध था।

राजमानाके त्रिभोजनसे ले कर मिय २०० पुत्रपते महाराज ईश्वरको 'का' को उपाधि थे। त्रिपुराभाषामें 'का' का अर्थ 'पिता' होता है। कोई कोई राजा गोरपके लिये यह 'का'को उपाधि ग्रहण करते थे।

महाराज कुमारके बाद उनके पुत्र सुकुमार, सुकुमारके बाद उनके पुत्र तथराव और तथरावके बाद उनके पुत्र राज्येश्वर त्रिपुराके मिहामन पर बैठे। महाराज राज्येश्वर बहुत लघुव्यभारके थे। उन्होंने पुत्र पानिके लिये गिबजीको तपस्या की। किन्तु तपस्यामें विफल हो उन्होंने क्रोधित हो कर मन्दिरको गिबप्रतिमाके दोनो पैर बाणमें छेद दाने। गिबजीने इस चयराधने त्रिपुरा छोड़ दिया। अन्तमें महाराज राज्येश्वरने गिबके लङ्गमे दो गरवनि देकर दो पुत्र प्राप्त किये। शायद इसी समयसे त्रिपुरामें गरवजिको प्रथा पहले पहल चारम्भ हुई। महाराज राज्येश्वरके बाद उनके बड़े लङ्गे मियनिराज राजा हुए। उनके छोटे मन्तान न पो, इस कारण उनके बाद उनके छोटे भाई निराज-का राज्य मिहामन पर बैठे। निराज-काके बाद मान राजा और हुए। उन लोगोंके शासनकालमें कोई विगोच घटना न हुई।

घाट महाराज प्रतीत राज्यसिंहासन पर बैठे। उन्होंने ऐतिष्ठ्य राजके माय दोनो राज्यों को सीमानिर्धारण कर सन्धि स्थापन को और दोनों राज्यों की सन्धिके स्थान पर एक मंत्रवर्ण का स्तम्भ निर्माण करके दोनों राजानि गण्य थाये, कि यदि वे पापघन सीमा सहन करें, तो फाना कोवा भी संकेत हो जायगा। दोनों राजाओं में ऐसा गहरा प्रेम देख पायें वही राजा भयभीत हो गये और वे एक दूसरे से फूट कराने की कोशिश करने लगे। अन्त में किसी राजानि त्रिपुरेश्वर के पास एक सुन्दरी स्त्री की भेंट में भेजा। ऐतिष्ठ्य-राजने इस स्त्री की सुन्दरता सुन कर त्रिपुरेश्वर के हाथ से उसे लेने की कोशिश की, किन्तु पूर्वोक्त दृढ़सहस्रके कारण वे ना म किया। महाराज प्रतीतके बाद और कितने राजा हुए। इन लोगों के समय में भी कोई घटना न हुई।

इसके बाद महाराज जनक-का राजा हुए। ये बड़े युद्ध कुशल थे। इन्होंने राज्य-सीमा बढ़ाने की भाग्यनि दक्षिण में अनेक देग जय किये। अन्त में रांगामहोके पधोपार निकलने दश हजार सुसिद्धि कृती सेनाओं को साथ ले उन्हें रोका; किन्तु युद्ध में पराजित हो कर उन्हें भागना पड़ा। महाराज जनक-फानि रांगामहो में त्रिपुरा की राजधानी स्थापन की। इनके समय में ब्रह्मदेश की राजधानी चमरापुर तक त्रिपुरा के राजाका अधिकार विस्तृत था। अन्त में उन्होंने बंगदेश जय करने का संकल्प किया, किन्तु युद्ध में राजकीय शून्य हो जाने पर उनका उद्देश्य निरुद्ध हुआ। इनके बाद २० राजा और हुए जिनके नाम-सांख इतिहास में हैं।

बाद सिंहतुङ्ग-का राजा हुए। इनके समय में चार-खान राजा के एक चौधरी बहुतसे सन्धिमाणिक्य भेंट ले कर गौड़पतिके समीप जा रहे थे। महाराज सिंहतुङ्ग-फानि उन्हें वसपूर्वक धोन लिया। गौड़ेश्वरने यह भयानक पाकर त्रिपुरा जीतने के लिये एक बड़ी सेना भेजी। त्रिपुरापतिने गौड़ेश्वरके सेनाबलसे भयभीत हो सन्धि करनी चाही, किन्तु रानीने अपने स्वामी की कायर धननाति हुए तिरस्कार किया और सेनाओं की उत्साहित करने के लिये कहा,—‘तुम लोगों के राजा गङ्गाबाली तरह कार्य कर रहे हैं; किन्तु मैं उसे पसन्द न करती। मैं स्वयं

युद्ध करूँगी, जिसकी इच्छा हो, वह मेरे साथ लड़े और कुल्लुगौरवको रचा करे।’ समस्त सेना रानी का साथ देने को प्रसुत हुई। रानीने सेनाओं परम पुत्र हो कर उन्हें भेजे और शकरी के मांसमें अच्छी तरह भोजन कराया। दूसरे दिन दोनों में लड़ाई छिड़ी। त्रिपुरा की रानी हाथों पर सवार हो, सैन्यपरिचालन करने लगी। युद्ध में गौड़-सेना प्रायः समीप विनष्ट हुई। इन समय गौड़ाधिप कोन थे, यह मानूँ न चैं। राजमाला में उनका नाम भी नहीं है। महाराज सिंहतुङ्ग फाने स्वयं के बाद उनके पुत्र कुल्लुहोम-का राजा हुए। ये योग्य पिताके योग्य पुत्र थे; किन्तु उनको छोड़ उनको माताको तरह संजखिनो और बिट्टो यों। महाराज कुल्लुहोम-फाने बाद उनके पुत्र दानकुह-का राजा हुए। उनके १८ पुत्र थे। भविष्य में इन १८ पुत्रों में से राज्याधिकारी कौन होंगे, इसका निरूपण करने के लिये महाराज दानकुह-फाने १० कोड़ाशाल सुर्गों की चनाहार कुल काल तक बन्द कर रखा। अन्त में वे अपने पुत्रों को ले एक साथ भोजन करने को बैठ गये। इसके पहली रातों में उन सब सुघातुर सुर्गों की भोजन करने के स्थान पर द्विपक्ष छोड़ देने के लिये अपने अनुचरों से कह दिया था। जब सुर्गों वसपात्र में सुख देने लगे, तब महाराजने अपने पुत्रों से कहा,—‘तुम लोगों में यदि कोई सामर्थ्यवान् हो, तो किसी उपायसे इन्हें यहां से हटावो।’ वे बहुत उपाय करने लगे, किन्तु एकबार बहुतसे सुर्गों की हटना सके। अन्त में छोटे राजकुमार रत्न-फानि कुछ पत्र अपने हाथ में ले लिया और थोड़ी दूर जाकर जमीन पर लिहक दिया। इस पर सभी-सुर्गों उमो जगद भोजन करने को चले गये। राजाने छोटे कुमारको बुद्धिमत्ता और प्रयत्नसमत्तिल देण कर उन्हें उत्तराधिकारी निरूपण किया।

महाराज दानकुह-फाने स्वयं की बाद राजकुमारी-ने पड़वन्द करके पितृनिर्वाचित राजकुमार रत्न-फाने राज्यमें अलग कर सभ्य बड़े राजकुमार राजा-फाने सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया।

कुमार रत्न-फाने राज्यमें भगवै जानी पर गौड़ेश्वरको शरण ली। उस समय सुचरित्र राजा गौड़के शासनकर्ता

खान परगनेमें बहागस्त, वादिवाह गस्त और नुरनगर परगनेमें मनघारोगस्त को विशेष विख्यात है। इनमें कोई भी १ वर्ग मोलसे कम नहीं है। बहागस्त ४८ वर्ग मोल विस्तृत है।

इस जिलेके उत्तरमें मल्लोका कारवार है। ये सब मल्लिषां टाका और चहधाम सेजी आते हैं।

जिलेसे मोतलपाटो बनाने योग्य घास और मोनाको रफ्तानो होती है।

जिलेका अधिकांश क्षेत्र पशुमय होनेके कारण घान-की फसल अच्छी लगती है और पोधा बहुत मस्या बढ़ता है। सरासरी परगनेमें २० फुट मस्या पणाल देखा गया है।

चालमाई पहाड़ पर १८०१ ई०में बहुतसो लोहकी खानें पाविष्कृत हुईं; किन्तु अच्छा लोहा और खानमें पबिक कोयला नहीं रहनेके कारण खानका काम धारण नहीं हुआ।

इस देशका आम बहुत धराय होता है। अन्य स्थानोंको नाई पामकी लकड़ी भी उतनो अच्छी नहीं होता है। सुपारी, बेत, खजूर आदिके रससे पामदनो होमा है। यहाके जङ्गलोंमें हाथो, बाघ, चोता, अंगको सूपर, गीदड़ और भैंस पबिक पाये जाते हैं। तरह तरहके पक्षी भी मिलते हैं, जो खोन और चहधाम भेजी जाते हैं। यहा भैंसेके चमड़ेका व्यवसाय भी होता है।

त्रिपुरामें तिपारा नामक एक पसम्भ जातिका वास है। ये बङ्गालियोंसे कोई सम्पर्क नहीं रखते। इन लोगोंकी भाषा स्तनन है; किन्तु कोई वर्णमात्रा नहीं है। एक प्रकारका विलत हिन्दुधर्म जो इन लोगोंका धर्म है।

सरासरी परगनेमें एक प्रकारका ममलिन कपड़ा प्रसृत होता है, जिसे ताजिब कहते हैं और यह टाकाके विख्यात ममलिनसे किसी चंगमें कम नहीं है। इसका सूत हाथसे काता जाता है। इससे बिना मोतलपाटोका व्यवसाय भी यहा कुछ चलता है। चण्डा नामक स्थानमें पहले चंगरेजीके पधोन बाफता कपड़ेका कारवार था। अब उसका विमजुल कारखाना बन्द हो गया है।

त्रिपुरा जिलेमें चंगरेजीके राजसंस्थानका इतिहास—१७१५ ई०में बङ्गालके पन्थान्य स्थानोंके साथ त्रिपुरा भी चंगरेजीके हाथ पा गया। इसके पहले १५८८ ई०में त्रिपुरा और मोपाखानो सरकार सुवर्णधामके पधोन था। १७२३ ई०में सरकार सुवर्णधाम और सुवर्णान सुत्राने जो जो चंगरेजीके कर इन सरकारके पन्थानुक्त किये थे, वे १३ चकलीमें विभक्त हुए। उनमेंमें त्रिपुरा और मोपाखानो चकला जहाङ्गौरनगरके पधोन था। चकला जहाङ्गौरनगर पुनः कई एक जमींदारियोंमें विभक्त हुआ। जिनमें जलालपुरके जमींदार प्रधान गिने जाते थे। १७२८ ई०में सुत्रा खाने बङ्गालकी २५ "इकतियाम" नामक चंगरेजीमें विभक्त किया। इन समय पूर्वाञ्चल जहाङ्गौर जमींदारोंको एक 'इकतियाम' बनाया गया। मोपाखानो और त्रिपुरा अभी इकतियामके पन्थानुक्त था। १७१५ ई०में चंगरेजीका बङ्गालमें अधिकांश जमीने जलालपुरका शासन-भार राजा शिवाय-मिह और जमरत खां नामक दो जमींदारोंके हाथ सौंप दिया गया। बाद १७८८ से १७७२ ई० तक मोन पुषप चंगरेजीके तत्त्वावधानमें रहे, जिनके नाम मि० कलमाल, मि० हारिस और मि० स्पमट थे। १७७२ ई०में एक व्यक्ति को कलवपुरको कपाधि दी कर उनके हाथ शासन-भार सौंपा गया। १७७४ ई०में मोमिकियल कोमियल स्थापित हुई। तभीसे १७८० ई० तक कोमिलके त्रिपुरा नायब की राजस्वसम्बन्धकी सभी कार्य करते थे और दूसरे दूसरे कार्य कई एक निश्चित चंगरेज कामचारियों द्वारा किये जाते थे। १७८१ ई०में मोपाखानो और त्रिपुरा स्तनन विभाग गिला जाने लगा। बहुतसे चंगरेज-कामचारी-के हाथमें इस नूतन विभागका भार रहा, किन्तु उन लोगोंकी हाथमें मजिस्ट्रेटकी समता न थी। चकलेमें १८२२ ई०में त्रिपुरा और मोपाखानो पुनः विभक्त किया गया। इसके बाद भी बीसा और परगनेको व्यवसाय के कर समय समय पर बहुत परिवर्तन हो गया है।

इन जिलेमें तीन विभाग हैं—सदर उच्चविभाग, चण्डपुर और माछाचण्डिया उपविभाग। सदर उच्च विभागमें कुमिका, मुपटनगर, दाउदखानि, चाँदिका,

ये। इनके साथ रत्न-फाकी मिलता हुई। उन्होंने कुमारकी चार वर्ष तक बहुत खाटसे अपने पास रखा। बोहे एक बड़ी मेना साथ दे कर विजराज्यका उद्धार करनेमें सहायता की।

जब रत्न-फा समेत त्रिपुरामानमें पहुँचे, तब राज-वंशकी चर्चक सुद्धोंने उनका साथ दिया। सुद्धोंने त्रिपुराके राजाको हार हुई। कुमार रत्न-फा निकलकर होनेके लिये उन विजराज्यकी १० मास्योका प्राण-भाग कर पाप राजा बन बैठे। शायद यह घटना ६८८ त्रिपुराब्देमें (१२०३ ई०) हुई होगी। यह त्रिपुराब्द त्रिपुराके राजाओंका निज प्रतिष्ठित एक पद है। यह पद किससे, कब और क्यों प्रतिष्ठित हुआ? इसका पूरा पता नहीं चलता। १८६२ ई०में महाराज ईमान चन्द्रमाधिक्यकी मृत्यु हुई। उस समय त्रिपुराब्द १२७२ था। अतः ईदमे और त्रिपुराब्देमें १८० वर्षका अन्तर पड़ता है। अतएव ६८२ ई०में प्रथम त्रिपुराब्द प्रचलित हुआ।

महाराज रत्न-फाने राज्य लाभ करं कृतप्रसादके निद-शमस्वरूप तुघरिन-फाकी १०० फावो और तरह तरहके माधिमामिष्य प्रदान किये। इन रत्नेमिने एक ऐसा रत्न था कि बैसा बड़ा रत्न गोडुंभरकी भी न था। तुघरिन-ने इस रत्नको पाकर बहुत पानन्दसे रत्न-फाकी माधिक्य की उपाधि और ४००० सुमिसित सैन्य प्रदान की। रत्न-फाने महीपकारी बन्धुदत्त उपाधि धारण कर यह नियम बनाया, कि कृतप्रताके चिह्नस्वरूप उनके वंश-धर प्रत्येक राजा यह 'माधिक्य' उपाधि धारण करेगी। सुमनमान ऐतिहासिकगण इस घटनाकी तुघरिन-कृत 'त्रिपुरा-विजय' कह कर वर्णन कर गए हैं। मि० सर्वमानने अपने इतिहासमें लिखा है कि गोडुंभे शासन-काली गयाम-सदोन्ने त्रिपुराके राजासे कर पक्ष किया था, किन्तु राजमामामें इसका कोई उत्तर नहीं है। महाराज रत्नमाधिक्यने अपने राज्यमें बहुतसे दुर्ग निर्माह किये थे।

महाराज रत्नमाधिक्यके बाद प्रतापमाधिक्य राजा हुए। इनके समयमें सुवर्ण-पामके पञ्चासिप ग्राम-प-चरीन्ने प्रताप-माधिक्य पर आक्रमण किया। इस युद्धमें

पावत्य त्रिपुरा छोड़ कर और सभी पान सुमनमानके हाथ आ गये। प्रताप-माधिक्यके प्रगोवके समय तक यही सब स्थान सुमनमानोंके अधिकारमें थे। महाराज प्रतापकी अपुवक पक्षस्थामें मृत्यु हुई। सुवर्ण उनके छोटे भाई सुकृत राजा हुए। महाराज रत्नमाधिक्यके बड़े बड़े श्रीधर्मने उनको शोचन द्वागमें ३० मंश्याम पक्ष किया और छोटे बड़े श्रीधर्म उनके मरते समय कमधोन थे।

वसन्तरोगेने महाराज रत्नमाधिक्यका देहान्त हुआ। कुमार श्रीधर्म उस समय मंश्यामी होकर कामोंमें थे। महाराज रत्नमाधिक्यकी मृत्युके बाद त्रिपुराके बहुतसे मधुप्य उनके तनागमें कामों पहुँचे। वहाँ उन्होंने श्रीधर्मसे कहा, 'कुमार! आपके पिताकी मृत्यु हो गई। मेनाचोंमें प्रतिज्ञा की है, कि आपके जेने-जो दूसरेकी बात ती दूर रहे, छोटे कुमारकी मो सिंहा-सन पर नहीं बैठने देंगे।' राजकुमारने इस अनुरोधमें बाध्य होकर रावणमार पक्ष किया। ये ८१३ त्रिपुराब्द-में (१४०० ई०में) राज्यनिर्वाहण पर अभिविष्ट हुए। इन्हीं सुमनमानोंके हाथमें त्रिपुराके सभी रावण्य लोटा गिए। महाराजने इस सब प्रदेशोंकी इस तरह लूट लिया था, कि कुछ दिनों तक वहाँके पक्षिशायियोंकी वस्तुन पड़ना पड़ा था। इसका बटना लेनेके लिये गोडुंभेने पक्षमदमाइकी मेनाकी पराजित कर पूर्वबहान लूटा। कुमिमानगरमें इन्हीं एक मरीनर पौदवा कर उसका नाम धर्ममागर रखा। इनके बगानमें दो वर्ष लगे थे। इन्हीं तत्त्वमासनके हाथ ब्राह्मणोंकी बहुतसे जमीन दान दी। इनके समयमें ब्राह्मणोंकी पुत्र कन्याके विवाहका सर्व राजकीयमें दिया जाता था। इन्हींके समयमें ब्रह्म पण्डितमें राजमामा रचो गई। १२ वर्ष राज्य करनेके बाद महा-राज धर्ममाधिक्य परलोककी जन गये। महाराज श्रीधर्मके बाद ८४८ त्रिपुराब्देमें (१४१८ ई०में) जनर छोटे सुकृत राजा हुए। राजमामामें उनका नाम नहीं है। बहुत छोड़े समयमें बाद ही मेनामिषिकी पक्ष-यन्त्रमें से मारे गये और श्रीधर्मके छोटे भाई श्रीधर्म राजा हुए। श्रीधर्ममाधिक्यने राजा होनेके बाद ही

है। नदी घोर खाड़ीकी संख्या अधिक है। देशका वाणिज्य प्रायः नाव द्वारा हो चलता है। शोषकालमें नदी घोर खाड़ीके सुख जानि पयवा जलको कम जानि पर मो उसी राह हो कर वाणिज्य होता है। बड़ी बड़ी नदियोंमें वर्षाकालमें बाढ़ आ जाती है, जिससे निकटवर्त्ती घर यदि जलमग्न हो जाते हैं। निम्नस्थानकी मछो बहुत जलको घोर उच्च स्थानको कहीं पाई जाती है।

लालमाइ पहाड़ पर कपासको खेती अधिक होती है। लङ्गन परिष्कार किये जाने पर इस पहाड़ पर सब जगह बैलगाड़ो आ-जा सकती है। इस पहाड़के उत्तर मयनामतो पहाड़ पर पार्वत्य-त्रिपुराके महाराजको कई एक पहालिकायें हैं, वहाँ जिला-त्रिपुराका प्रधान शहर कुमिला है जहाँ पञ्चरैज लोग वास करते हैं। समस्त लालमाइ पहाड़ पहले महाराजके अधोन था; किन्तु कुछ दिनसे मयनामतोके घरके सिवा गवर्मेण्टने घोर कहीं भी महाराजका अधिकार न दिया। अन्तमें महाराजने प्रायः २८ हजार रुपये दे कर समस्त पहाड़ खरीद लिया है। त्रिपुराको राजवंशो लालमाइ (लाल-मयो) नामक किसी राजकन्याके नामसे इस पहाड़का नामकरण हुआ है।

इस जिलेके पश्चिममें मेघना नदी प्रवाहित है। केवल इसी नदीमें बड़ी बड़ी नावें आ जा सकती हैं। गोमतो, डाकानिया तथा तितांस प्रभृति नदियोंमें डोंगो सब समय चलती है।

मेघना—चांदपुरके निकट मेघनामें गङ्गा घोर ब्रह्म-पुत्र मदी मिली है। तीन नदियोंका जल मिल जानेसे इस जिलेकी मेघना नदीका परिसर घोर बेग अधिक हो गया है। नदीमें कई जगह घर भी पड़ गया है। इस नदीमें घाना लाना बहुत खतरानाक है। नदीमें धंसे हुए बहादुरी काठ घोर बड़े बड़े लकड़ो शाखाओंमें टकरानेसे प्रायः नावें मट हो जाया करती हैं। रैमैल साहबके समयमें ब्रह्मपुत्र घोर मेघनाका मङ्गल वसंतमान खनसे ६० मोल उत्तर भैरवराज नामक स्थानमें था। कालक्रमसे घर पड़ जानेके कारण नदीको गति बटल गयी है। इस नदीके निकटवर्त्ती स्थानमें बरिसालके कमानकी नाई कामानका शब्द होता है। यह शब्द कहींसे आता

है, इसका ठीक ठीक पता नहीं चलता।

गोमती—मेघनाके बाद ही गोमतो इस जिलेको प्रधान नदी है। यह सालमाई नदीसे निकली है घोर जिला त्रिपुराको दो समान भागोंमें विभक्त करती है। जिलेका प्रधान शहर कुमिला नगर इसीके किनारे अवस्थित है। नगरसे ८ मोल उत्तरमें यह नदी इस जिलेमें प्रवेश करती है। दाउदकान्दिके निकट गोमतो मेघनामें मिलती है। वर्षाकालमें यह नदी बहुत प्रवल हो चढती है। शीतकाल घोर शोषकालमें यह कई जगह सुख जाती है घोर लोग इसे पैदल पार हो जाते हैं। कुमिला छोड़ कर इसकी किनारे जाफरगञ्ज तथा पांचपोखरिया नामक घोर दो प्रधान शहर पड़ते हैं। नदीको लम्बाई कुल ६६ मोल है जिसमेंसे २६ मोल इसी जिलेमें पड़ता है।

हाकातिया—यह पार्वत्य-त्रिपुराके निकल कर सुभागाजो नामक स्थानमें त्रिपुरा जिलेमें प्रवेश करती है। इसकी लम्बाई १५० मोल है। यह पश्चिमको घोर लाचाम, चितोखो घोर हाजोगञ्जके निकट होती हुई पश्चिमको घोर बह गई है। फिर वहाँसे दक्षिणकी घोर ६१ मोल जानेके बाद नौधाखालो जिलेको रायपुर नामक स्थानके निकट मेघनामें मिली है।

तिताथ—यह नदी इस जिलेके उत्तरमें प्रवाहित है घोर लालपुरके घरके निकट मेघनामें गिरी है। इसकी लम्बाई ८२ मोल है। इसके किनारे ब्राह्मणवाहिया पड़ता है।

उक्त नदियोंकी सिवा सुहरो, विजयगांग, वृद्धीगांग चादि घोर भी कई एक छोटी छोटी नदियाँ हैं। इन सब नदियोंको पार होनेके ८ घाट हैं। गोमतोमें कुमिला, कम्पनीगञ्ज घोर लुरपुरा सुदुरीमें शम्भुपुर, पथराम घोर कारभुनो, तितासमें वजानी शहर घोर विजयगञ्जमें नयानपुर नामक स्थानमें पार होनेके घाट हैं।

समस्त जिलेमें १०४ खाड़ियाँ हैं, जिनमेंसे चांदपुरको खाड़ी घोर गोकर्णको खाड़ी विशेष विख्यात है। इनमें बड़े बड़े गन्त भी हैं, जिनमेंसे सराइन परगनेमें घाट-कोपागर्त, ककाइगर्त, बड़ाहिंगर्त, चालतागर्त, काजलागर्त, आलतागर्त, खोलधारोगर्त, श्वदा-

क्रान्त सेनापतियों को समता प्राप्त करनेके लिए मन्त्रियोंमें मनाह थी। एक दिन उन्होंने अपने कटका सम्वाद देकर किसी निज्जनस्थानमें दुर्गात्म सेनापतियों को बुलाया। उस निज्जनस्थानमें राजाके भादृग्से अनेक गुप्तधर एकत्र थे। उन्होंने सेनापतियों पर आक्रमण कर उन्हें मार गिराया। दुर्गको के मारे जाने पर युद्ध-कुशल विग्रह राय चयचाम नामक व्यक्तिके प्रधान सेनापति बनाकर महाराज अधनमाषिका राज्य करने लगे। इस समय त्रिपुराके पूर्वमें एक सफेद हाथी वद्विगत हुआ। महाराजने इसे पकड़ानेकी कष्ट। कृत्रियोंने हाथीको पकड़ा, किन्तु उन्होंने उसे राजाके पास न भेजा। इस पर सेनापति चयचामरायने शानामोनगरमें कृत्रियोंको पराजित कर हाथी ले लिया और उन्हें चिरयमोभूत भी कर लिया। ये सभी भी कई वर्षोंमें त्रिपुराके राजाके वशोभूत हैं। बाद योर-धर चयचामने ८२२ त्रिपुराब्दमें (१११२ ई०में) चारा-कानके राजाकी सेनाधीको पराजित कर चट्टाम प्रदेश त्रिपुराराज्यमें मिला लिया। इस पर गौड़के नवाध सैयद हुसैन शाहने क्रुपित हो कर गोरमल्लिक नामक एक ब्रह्मालोकी सेनापति बना कर भेजा। कुमिलार्में चयचाम और गोरमल्लिकसे साथ लड़ाई किड़ी। प्रथम युद्धमें त्रिपुरामें पराजित हो कर पीछे हट गई और सुसलमान-सैन्य मिहिरकुल दुर्ग अधिकार कर राजामही-की और अचर हुई। सेनापति चयचामने छोटने समय सोणामहोके दुर्गमें आश्रय ले कर गोमतो नदीमें एक बांध बांध दिया, जिससे ३ दिनों तक जलस्रोत बन्द हो गया। सुसलमान लोग नदीकी सूखा समझ ज्यों ही वेदल पार कर रहे थे त्यों ही सेनापतिने बांध तोड़ दिया। जिससे अधिकार सुसलमान-सेना जनमें डूब मरो। जो कुछ बच रह्यो उन्होंने चण्डोगढ़में आ कर आश्रय लिया। किन्तु रातकी त्रिपुराकी सेनाने दुर्गमें प्रवेश कर बहुतों-की मार डाला। बहुत थोड़ी सेना अपने प्राण से कर गौड़की भाग सभी। मिहिरकुलदुर्गमें शत्रुको पराजित करनेकी आशासे महाराज अधनमाषिकाने एक काले चण्डालके बालककी भवानीके निकट वनि दी थी। बाद चयचामने चाराकानराज्यके कई वर्ष जीत लिये।

हायनन चा नामक गौड़के एक दूसरे सेनापति इस समय पुनः त्रिपुराकी ओर अचर हुए। कुमिलार्के निकट युद्ध हुआ। पहले युद्धमें चयचाम तो पराजित हुए, किन्तु अन्तमें पूर्व-कौशल अथवा अन्त कर उनने सुगहिया दुर्गके ओर से सुसलमान-सेनाको जनमें बहा दिया। यही सेनाने सुगहिया दुर्गमें आश्रय लिया। दिगुण सैन्य नहीं होनेसे त्रिपुराका जीतना असम्भव है, ऐसा जान कर वे दो ग्यारह हो गये। बहुतने कैद भी किये गए।

त्रिपुरामें पहले चोदह देवताओंके निकट वार्षिक एक हजार नरबलि दी जाती थी। महाराज अधन-माषिकने उसे बन्द कर चराधो और युद्धमें बन्दो यद्वाओंकी बलि देनेको प्रथा प्रचलित की। उन्होंने मिथिलामें गौतमाधिविभारद मनुष्योंकी भुना कर अपने राज्यमें सन्तानवित्याका वृद्ध प्रचार किया। तभीसे राज-वंशके प्रत्येक मनुष्यका कुछ न कुछ पशुभाग उस ओर देखा जाता है। महाराज अधनमाषिकने एक गिय-मन्दिर और १ मन खेतीको भुवनेश्वरो-प्रतिमा निर्माण की। ८२५ त्रिपुराब्दमें (१५१५ ई०में) उनको मृत्यु हुई। महाराजो भी उनके साथ सती हो गईं। अधनके बड़े लड़के भजमाषिक राजा हुए। ३ वर्ष राज्य करनेके बाद इन्द्र नामका एक गिहपुत्रकी छोड़ महाराज भज-माषिक परलोककी सिधारे।

बाद भजमाषिकने छोटे भाई देवमाषिक ८३२ त्रिपुराब्दमें (१५२२ ई०में) राजा हुए। ये पहले पहल चट्टामसे प्रचुर धन और बहुतसे दुष्ट मनुष्योंको कैद कर लाये। बन्दि लोग चोदह देवताओंके निकट बलिदान दिये गये। चोत्ताई (चोदह देवताओंके प्रधान पूजक)-ने इस समय राजासे कहा,—'गियजोने प्रधान सेनापतियोंका रक्त चाहा है।' देवताको खुश करनेके लिये महाराजने दुष्ट पुरोहितको मन्त्रपासे प्रधान सेनाप-तियोंकी वध किया। कुछ दिन बाद हो जब उन्होंने जाना कि चोत्ताई भजमाषिकको खोके माय मिल कर उन्हें मार डालनेको कोशिशमें है, तब वे भी मृत्यु हो गये। किन्तु अचरम पर आ कर चोत्ताईने द्विपके उन्हें मार कर इन्द्रमाषिकको ८४५ ई० में सिंहासन पर बिठाया और

खान परगनेमें बहागत्, वादवाह गत् और मुलनगर परगनेमें मनघारोगत् को विशेष विख्यात है। इनमेंसे कोई भी १ वर्ग मोलसे कम नहीं है। बहागलेगत् ४८ वर्ग मोल विख्यत है।

इस जिलेके उत्तरमें मझबीका कारवार है। ये सब मझबीयां टाका और चट्टाम भेजी जाती हैं।

जिलेसे मोतसपाटो बनाने योग्य घाम और मोनाको रक्तमो होती है।

जिलेका अधिकांश क्षेत्र पट्टमय होनेके कारण घानकी फसल अच्छी लगती है और पोषा बहुत लम्बा बढ़ता है। सराइल परगनेमें २८ फुट लम्बा पयान देखा गया है।

सालसाई पहाड़ पर १८०१ ई०में बहुतसो मोटेकी खानें पाविकृत हुईं; किन्तु अच्छा पोषा और खानमें अधिक कोयला नहीं रहनेके कारण खानका काम चारवा नहीं हुआ।

इस देशका घाम बहुत खराब होता है। अन्य स्थानोंको नहीं घामकी लकड़ो भो वतनो अच्छी नहीं होता है। चुपारो, धेत, खजूर आदिके रससे घामदगो होता है। यहाँके जंगलोंमें जायो, माघ, पोता, अंग्लो घुघर, गोदक और भैंस अधिक पाये जाते हैं। तरह तरहके पत्तो भो मिलते हैं, जो खोन और चट्टाम भेजी जाते हैं। यहां भैंसेके चमड़ेका व्यवसाय भो होता है।

त्रिपुरामें त्रिपारा नामक एक प्रसिद्ध जातिका वास है। ये ब्रह्मजियोंमें कोई सम्पर्क नहीं रहती। इन लोगोंकी भाषा स्वतन्त्र है; किन्तु कोई वर्षमासा नहीं है। एक प्रकारका मिलत हिन्दूधर्म ही इन लोगोंका धर्म है।

सराइल परगनेमें एक प्रकारका समलिन कपड़ा प्रसृत होता है, जिसे ताजिब कहते हैं और यह टाकाके विख्यात समलिनसे किनो चंशमें कम नहीं है। इसका रस हाथसे खाता जाता है। इससे मिठा मोतसपाटीका व्यवसाय भी यहां कुछ चलता है। सर्पटा नामक स्थानमें पहले चंगरेजोंके पथोन बांझता कपड़ेका कारवार था। अब उसका हिलकुल कारवाया बन्द हो गया है।

त्रिपुरा जिलेमें चंगरेजोंके राजदवाडवा इतिहास—१७११ ई०में ब्रह्मान्तके पन्थान्य स्थानोंके माघ त्रिपुरा भो चंगरेजोंके हाथ चर गया। इनके पहले १५८८ ई०में त्रिपुरा और नोपाखामो सरकार सुवर्णग्रामके पथोन था। १७३३ ई०में सरकार सुवर्णग्राम और सुनतल सुजानि जो जो चंश जोत कर इस सरकारके पन्थान्य किये थे, ये १५ चकलोंमें विभक्त हुए। उनमेंमें त्रिपुरा और नोपाखामो चकला जहाङ्गिरनगरके पथोन था। चकला जहाङ्गिरनगर पुनः कई एक जमोदारियोंमें विभक्त हुआ। जिनमें जन्मसुपुरके जमोदार प्रधान गिने जाते थे। १७२८ ई०में सुजा खाने ब्रह्मान्तकी २५ “इहतिमाम” नामक चंशोंमें विभक्त किया। इस समय पूर्वार्ध जन्मसुपुर जमोदारोंको एक “इहतिमाम” बनाया गया। नोपाखामो और त्रिपुरा इन्हीं इहतिमामके पन्थान्य था। १७४५ ई०में चंगरेजोंका ब्रह्मान्त अधिकांश जिलेमें जन्मसुपुरका शासन-भार राजा हिसतमिंह और जमरत खां नामक दो जमोदारोंके हाथ सौंप दिया गया। बाद १७५८ से १७८२ ई० तक तीन मुख्य चंगरेजोंके तत्त्वावधानमें रहे, जिनके नाम मि० कलसाल, मि० हारिम और मि० म्पवट थे। १७८२ ई०में एक व्यक्ति को कमकरकी उपाधि दे कर उनको हाथ शासन-भार भोवा गया। १७८३ ई०में प्रोमिस्विस कोमिसनर स्थापित हुई। तमोसे १७८० ई० तक कोमिसनर त्रिपुरा माघ ही राजस्वसम्बन्धकी सभी कार्य करते थे और दूसरे दूसरे कार्य कई एक निजित चंगरेज कामचारियों द्वारा किये जाते थे। १७८१ ई०में नोपाखामो और त्रिपुरा स्वतन्त्र विभाग गिना जाने लगा। बहुतसे चंगरेज-कर्मचारियोंके हाथमें इस नूतन विभागका भार रहा, किन्तु उन लोगोंके हाथमें सविष्टको चपला न थे। पन्थानें १८२२ ई०में त्रिपुरा और नोपाखामो पुनः विभक्त किया गया। इसके बाद भी मोसा और परगनेको व्यवसाय के कारण समय समय पर बहुत परिवर्तन हो गया है।

इस जिलेमें तीन विभाग हैं—सदर उपविभाग, चांदपुर और झांझपाड़ा उपविभाग। सदर उपविभागमें कुमिला, मुरादनगर, टाजदवाडवा, चारिम,

चाप रानोंके साथ राज्य करने लगे। चार महीनेके बाद जब सेनापति ने जाना कि चीन्हाईने रानोंको मनाहने देवमाणिक्यको मार डाला है। तब उन्होंने उपाय हो कर पराजित चीन्हाई, पापियों रानी और पापोयमाके गर्भजात शिशु महाराज इन्द्रमाणिक्यको विनाश कर एक गड्ढे में गाड़ दिया।

इसके बाद देवमाणिक्यके बड़े लड़के विजयमाणिक्य ८४५ त्रिपुराब्दे में (१५१५ ई० में) राज्यसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। विजयने राजा हो कर जब देखा, कि मन्त्रो की प्रकृतराजा है, वे माचो गोपालमात्र हैं। तब उन्होंने खुद शराव पिनाकर मन्त्रोको मार डाला। इनके समयमें दिक्को मन्त्राट में त्रिपुराको स्वाधीनता स्वीकार की। विजयमाणिक्यने कई हजार पठान चमारोंको सेना नियुक्त की। चासियाके राजा उन्हें पापिक ५ हाथी और १० घोड़े करस्वरूप देते थे। अभिमानमें पा कर जब जयन्त्याके राजाने उनको अधोक्षता स्वीकार न की, तब विजयमाणिक्यने उनका विनाश करनेके लिए १२वीं भंगोकी १२ मी कुदालो दे कर भेजा। भंगोके हाथमें मरना अपमानजनक समझ कर जयन्तोडे राजाने उनको अधोक्षता स्वीकार की। पीछे उन्होंने पठान सेनाको चहधाम जीतनेके लिए भेजा; किन्तु उन लोगोंकी तन-प्राह बाकी थी। इसलिए वे राजाको मार डालनेके लिए तैयार हो गये। महाराज विजयमाणिक्यका जब यह बात मालूम हुई तब उन्होंने स्वयं युद्ध करके उन लोगोंको कौट कर लिया और चौदह देवताओंके सामने बलिदान दिया। बाद बह्मालके जहाज सुनेमानने एक हजार चमारोंको और १० हजार पदाति सेनाके साथ महम्मद प्वा नामक सेनापतिकी त्रिपुरा भेजा। चहधाममें ८ मास तक लड़ाई होती रही। युद्धमें पहले त्रिपुराके सेनापति निरत हुए मरने; किन्तु पीछे सुमनमानोंकी हो हार हुई। सेनापति महम्मद प्वा मोड़के दिक्कतमें बन्द करके राजधानीको भागे गए; यहाँ चौदह देवताओंके निकट उनकी बलि दी गई।

कुछ दिन बाद विजय-माणिक्यने स्वयं बह्मदेव पर आक्रमण किया। उनके साथ २६ हजार पदाति, ३ हजार चमारोंको और ५ हजार गाँव थीं। सुवर्णधाममें

लड़ाई दिहो, सुमनमान लोग हार गये। पीछे वे माचो मदे पार कर पद्मावर्मा के धनिक व्यापारियों मूट मार मरति हुए भीट पाये। ब्रह्मपुत्र मदेके किनारे आकर मूटकी मामथी राजधानी भेज दी गई और पाप ओहईमें मूट मार मराने लगे। ओहईकी मूट कर उन्होंने वहाँके एक धामके समीप चधियासियाँकी विनाश कर डाला और पीछे बहुतसे जहाजय खुदवा कर वे मदेयकी भीट पाये।

विजयमाणिक्य एक दिन कम्पतह हुये थे। इनके छोटे लड़के चमरने सेनापति गो-प्रसादकी कन्यासे विवाह किया। किन्तु ज्योतिषीने राजासे कहा था, कि उनके छोटे लड़के की राजा संगी 'यह सुन कर उन्होंने अपने बड़े लड़केकी तोय यात्राके चहानेमें सुदयोत्तममें भेज दिया। विजयमाणिक्य प्रजन पराक्रममें ४० वर्ष राज्य कर ८८१ त्रिपुराब्देमें बध्मरोगसे मरे। बह्ममो रानियाँ भी उनके साथ मरी हुईं।

बाद उनके छोटे लड़के चमरत गुरुश्रीको सहायतासे राजा हुए, किन्तु छह वर्षके बाद गुरुश्री की गुप्त तोरसे मार डाले गये। उनको सौ जह्नमों की नीने की चली, तब उनके पिता गो-प्रसादने उनको रोका। चमरने राजाने स्वयं सिंहासन पर बैठनेकी इच्छा प्रगट की; किन्तु विजयमघातक जामादहन्ता गो-प्रसाद कन्याकी राज्यसिंहासन न दे कर स्वयं उदयमाणिक्य नाम धारक करके ८८५ त्रिपुराब्दे में (१५८५ ई० में) सिंहासन पर बैठे। बाद उन्होंने कन्याको चण्डागढ़धाम जामोर देकर हम्पोगढ़की रानी बनाया। गो-प्रसाद पहले धर्मनगरके तहसीलदार थे, पीछे राजाके पाचक बाद चौकोदार और चमरने शासकधामकी लूकर मयव या करके सेनापति हुए।

उदयमाणिक्यने राजधानी रात्रामोको नाम बदल कर उदयपुर रखा। उनके समयमें बहुतसे जलामय और प्रसाद बनाये गये। उनके २४० सिपाई थीं जिनमें से धनिक अठारह थीं। इस समय मोड़के एक सुमनमान ब्रह्मपुत्र भ्रमण करनेके लिये त्रिपुरा पाये। महाराजने उनका शूच सत्कार किया। अष्ट रानियोंमें से किसी की भी इनके साथ भी रहना की। यह १५९५ साल

जगन्मयोधो और लासां नामक छह थाने हैं। इस उपविभागमें प्रायः ४ हजार ७ सौ ग्राम लगते हैं। ब्राह्मण साहित्यमें कगडा, नविनगर और ब्राह्मणवाडिया ये तीन थाने तथा चांदपुरविभागमें चांदपुर और छातोगन्ध नामक दो थाने हैं। समग्र जिलेमें ११७ परगने पड़ते हैं। इसका क्षेत्रफल २४८१ वर्ग मील है। लोकसंख्या लगभग २,११,०८८१ है जिनमेंसे मुसलमानोंकी संख्या अधिक है। पार्वत्यत्रिपुरा—यह स्थान त्रिपुराके प्राचीन राजवंशकी प्रधान है। राजा चंगरेजोंके भित्त है। चंगरेजोंकी ओरसे एक पोलिटिकल-एजेंट इस राजसभामें रहते हैं। आगरतला नामक स्थानमें राजधानी है। यह नगर हावड़ नदीके ऊपर अवस्थित है। इस राज्यके उत्तरमें आसामके भूतगंत औहट जिला, दक्षिणमें नोपाखाली और चट्टग्राम, पूर्वमें लुसाई, और चट्टग्रामका पार्वत्यप्रदेश और पश्चिममें बङ्गालके भूतगंत जिला त्रिपुरा है। त्रिपुराराजको पार्वत्य-राज्य कोष्ठ कर जिला-त्रिपुरामें एकता-रीसनावाद; नामक एक बड़ी जमींदारी है। ब्रिटिशगवर्मेण्टकी इसका कर देना पड़ता है। समग्र राज्यसे राजाकी जो कुछ आमदनी होती है, उससे अधिक इस जमींदारीकी आमदनी है। सम्भवतः राजा मुसलमानोंकी कर देते हैं। समस्त भूभागके लिए वे मुसलमानकी कर देते हैं। मुसलमानोंने लुसाईयोको जाग्रमे राज्यका उत्पात दूर करनेके लिए माघद ज्ञान-भूक्त कर ही पार्वत्य-प्रदेश राजाकी हाथसे किसी दिन लेनेकी चेष्टा न की। इससे ज्ञाना जाता है, कि राजाके राज्यमें कुछ करद जमींदारी और कुछ स्वाधीन राज्यकी सृष्टि हुई होगी। प्रति राजाको श्रुत्युक्त बाद उत्तराधिकारोंके लिए बहुत गड़बड़ी मचती थी। उत्तराधिकारों कुकियोंके साथ मिल कर घमसान युद्ध करने थे। राजा स्वयं उत्तराधिकारों निर्दोष कर देते थे। जो भविष्यमें राजा होते, उनको उपाधि युवराज होती थी। युवराजके बाद बड़े ठाकुरका पद मिलता था। राजाको श्रुत्युक्त बाद युवराज राजा और बड़े ठाकुर युवराज होते थे। राजाके पुत्र रहने पर भी युवराज ही राज्य पाते थे। यदि राजा युवराजादि निरुक्त किये बिना मर जाते, तो

उनके व्योह पुत्र को गद्दी-पर बैठते थे। इस तरह युवराजके राजा होने पर वे बड़े ठाकुरकी ही युवराजका पद देनेमें बाध्य होते थे। उनसे जो विस रहते भी बड़े ठाकुर एक दिन तक राज्यभोग कर सकते थे। पछसे, इष्ट-पण्डिया, कम्पनी प्रत्येक राजाके राज्यारोहणके समय कुछ नजराना पातो थे और कुछ उन्हें पानाक उपाधि तथा मनद प्रदान करता था। वर्तमान समयमें राजा स्वाधीनभावसे सभी कार्य कर सकते हैं। १८७१ ई०से एक पोलिटिकल-एजेंट नियुक्त हुए हैं। राजाके साथ चंगरेजोंका कोई सम्बन्ध नहीं है। प्रत्येक राजाके राज्यारोहणके समय सभी भी ब्रिटिश-गवर्मेण्टकी पार्वत्य-त्रिपुराका एक वर्षके राजस्वका चर्चों में उत्तराधिकार-कर-स्वप (Succession-duty) देना पड़ता है।

राजा खेच्छाचारी होते हैं। राजाकी इच्छाके अनुसार प्रादेश भी पाईने हैं। ईंटोंके घर बनाने, ताजा व खोदवाने और विवाहोत्सवमें वालकी व्यवहार करनेमें राजाकी आज्ञा लेनी पड़ती है। राजा चिरानुगत प्रयाणोंको मानते हैं। प्रायः सभी राजकमचारी राजाके स्वममकीय व्यक्त होते हैं। बहुतसे पद पुनः वर्गगत हो गये हैं। इससे कभी कभी १०१२ वर्षके बालक भी जिलेके कमिश्नरको नाई चकपद पर प्रतिष्ठित होते देखे गये हैं।

१८७१ ई०में बङ्गाल गवर्मेण्टकी ओरसे बाबू मोलमणिदास नामक एक विचक्षण बङ्गाली त्रिपुराराज्यमें दोबान नियुक्त हुए। इन्होंने राज्यको खूब चर्चति हुई है। राज्यका परिमाण ४०८६ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः एक लाख है। मोलमणि बाबूने यहाँ ब्रिटिश गवर्मेण्टके दृष्टान्तमें व्यवस्थापकसभा, फौजदारी-पाईन, दीवानो-पाईन, पुलिस-पाईन, तमादी-पाईन। इत्यादि प्रचलित किये हैं; किन्तु राजाका आदेश पत्र भी सर्वोपरि है।

पार्वत्य-त्रिपुरामें समस्तबासी और पर्वतबासी ये दो प्रकारकी प्रजा है। समतलबासी प्रजा जिला-त्रिपुराकी लोगोंकी नाई है। पलिस-भीमावे-दो कोम प्रगन्त स्थानमें तथा नोपाखाली, जिना त्रिपुरा और चट्टग्रामके सीमाक्षेत्रमें इन लोगोंका वास है। पर्वतबासी पाना-

हो जाने पर उदयमाणिक्यने गौड़-राजपुत्रको देगने निकलवा दिया और भेटा। मित्रों को जायके पैसों से बुझवा दिया।

सुगर्नेने पुनः इस समय घटपाम पर अधिकार किया। सुर्गमें १४ हजार त्रिपुरमेघ बिन्दु हुई। १८ दुर्ग ५ वर्ष बाद किमो सुर्गेने विष बिना कर राजाके प्राण नाश किये। उदयमाणिक्यके समय त्रिपुरमें घोर दुर्भिक्ष पड़ा जिससे बहुतसो प्रजा मर गई।

उदयमाणिक्यके बाद उनके लड़के जयमाणिक्य १००६ त्रिपुराब्देमें (१५८६ ई०में) राजा हुए। वे नाममात्र के राजा थे। उनके चाचा रङ्गनारायण ही सर्वसर्वा हो कर राज्य चलाते थे। रङ्गनारायणने देखा कि महाराज जयमाणिक्यके चाचा (विजयमाणिक्यके भाई) अमर बहुत प्रबल हो उठे हैं, उनको गोघ्न दमन नहीं करनेमें पुरातन राजवंश पुनः इनके हाथ लग जायगा। यह सोच कर उन्होंने एक दिन अमरको भोजन करनेके लिये बुलाया। वहाँ अमरके एक यन्त्रने तनवारमें एक पानकी दो गुण्ट कर उन्हें इशारा किया। अमर यह इशारा समझ ठगता पस्यताका बहाना करके चौड़े दर मथार हो चल दिये। पोछे वे एक दूसरेको मारनेकी चेष्टा करने लगे। रङ्गनारायणने भय ग्रा का दुर्गमें आश्रय लिया और पत्नद्वारा अपने भाईकी सखीन्य पाकर अमर पर वड़ाई करनेके लिये बुलाया। रातमें पतवाहक अमरमें पकड़ा गया और घेद कर लिया गया। अमरने रङ्गनारायणका चलाए बना एक छत्रिमण्डल तैयार कर रङ्गके निज विग्रह अमर पर हाथ उनके भाईके पास भेज दिया। रङ्गके भाईने पत्र पाकर माहकफा व्योहो आनिष्ठन किया व्योहो हो पट उनका मस्तक काट कर पगरके पास से पाया। अमरने उस मस्तककी दुर्गमें रङ्गके पास भिजवा दिया। रङ्ग मस्तक देखे व्याकुल हो उठे और सोचने लगे, कि जब भाई मारे जा चुके हैं, तब अमर ही उनको सेना भी निहत्त हुई होगी। इस पर वे पाप भी भयभीत हो किना छोड़ कर भाग गये। दो दिन हिपके रहनेके बाद अमरकी एक सेनाने उन्हें देख पाया और उसने तुरत उनका मस्तक काट कर अमरकी पदहार दिया। अमरने सुग हो कर उस भी निकलो 'महामनारायण'की उपाधि दी।

जयमाणिक्यने यह समाद पा कर अमरकी एक पत्र लिख कर पूछा कि वे ऐसा पत्ताचार क्यों कर रहे हैं? अमर पत्रासुपसे उत्तर देनेके लिये ससैन्य अमर हुए। महाराज जयमाणिक्य डरकर वहाँ भाग गये। अमरको सेनाने उन्हें रातमें पकड़ कर मार डाला। केवल एक वर्ष राज्य करनेके बाद जयमाणिक्य मारे गये थे।

१००० त्रिपुराब्देमें अमरमाणिक्य राजमिहामन पर बैठे। राजा होनेके पाप ही इन्होंने त्रिपुराके सभी जमींदारोंकी निम्न भिजा, "एक सुदोष दोषिका खुददानो होगी। इसके लिये पाप लोग कुदाल भेजें।" उनके कथनानुसार ८ जमींदारोंने ७३० कुदाल भेजे थे। बाद उदयपुरमें जो बड़ी दोषिका खुदवाई गई, वह पात्र भी अमरनागर नामने प्रसिद्ध है। ओहड़के अन्तर्गतके जमींदारोंने इस कार्यमें कुदालो नहीं भेजी थी। इस कारण महाराज अमरने उन्हें कैद करनेके लिये २२ हजार सेना भेजी। जमींदारोंने भाग कर ओहड़के सुमनमान शासनकर्त्ताको प्रार्थना की। उनके लड़के कैद कर लिये गये। अमरमाणिक्यने यह सुन कर ओहड़के सुमनमान शासनकर्त्ताके विरुद्ध यात्रा की और गड्डब्यूह बनाकर सूर्योदयके समय लड़ाई हिड़ दी। दो पहरकी कुहकान तत्र विश्राम करनेके बाद पुनः युद्धप्रारम्भ हुआ। सन्ध्याकालमें सुमनमान लोग पराजित हुए। १००८ त्रिपुराब्देमें (१५८८ ई०में) गायद यह घटना हुई होगी। इसी समयमें ओहड़ त्रिपुराका कर प्रद हुआ। नोपाखाकोई अन्तर्गत वल्लभामके जमीन्दारोंने पक्षी अमरमाणिक्यको कर नहीं दिया और कहा कि, अमर नाराज है। अतएव वे राज्यके विधिप्रति पधिकारी नहीं हो सकते। यह सुनकर महाराज अमरने एक दम सेना भेजकर युद्धमें उन्हें पराजित बनाया। इस समय वाकनाचन्द्रहीन बहुत मन्दगाली था। अमरमाणिक्यने धनके लोभमें उस राजासे लूटपाट मचाई और बहुतसे पधियासियोंकी दामके रूपमें मन्द किया बहुतोंकी खरोदा भी। बाद उन्होंने आश्रय-दम्पती और मुनापुत्र दान किया तथा दीर्घिका बनाई। १०१८ त्रिपुराब्देमें बहालके नवान अमनमान

शनि राजधानी टाकामे त्रिपुरा पर धावा किया। चमर माणिक्यदेव दया खाँ नामक एक सुवसमान सेनापति था। एक बड़ी सेना दे कर महाराज चमरने चन्दी की युद्धमें भेजा। दया खाने शत्रु के सामने होते हुए भी समय जान कर पाकमण्य न किया। त्रिपुरा के प्रधान मन्त्रियों ने यह सुनकर घोर भी एक दन सेना उनको महा-यत्ना के लिये भेजो घोर दया खाँ को बुझा दिया, कि ये चमर समय को पचसान कर विषय पर पाकमण्य करे। इन समय चमरमाणिक्यको खोने दया खाँ को प्रसादस्वरूप अपना चरणामृत भेजया दिया। दया खाँ ने राजा के इस अनुग्रहमें उत्काहित हो बारह हजार चमाराही घोर कुक्ष पटाति सेना से उर शत्रु पर कडातु पाकमण्य किया। सुनसमान लोग पराजित हो कर भाग चले घोर दया खाँ विजयो होकर मोट पाये।

इसके बाद चमरमाणिक्यने चाराकान पर पाकमण्य कर उनमें चमरगत कई एक प्रदेश जोत लिये। चाराकानपतिने बार बार पराजित होने पर पोसु-मोजीको महायत्ना को घोर त्रिपुराके राजा पर धावा किया। युद्धमें पहले त्रिपुरापति पराजित हुए, किन्तु अनुसन्धय कर पुनः चाराकान पर चढ़ाई करनेको छयात हुए। इस पर चाराकानके राजाने एक वर्ष तक नज़ाई बन्द रखनेके लिये चतुरोध किया। दोनों पक्षों लोग पागामो दुर्गोत्सवके पहले युद्ध करनेकी सहमत हुए, क्योंकि युद्धमें चन्द्रियीको दुर्गके सामने बनि दे सकेंगे। त्रिपुराको सेना मीट पाई। चाराकानपतिने पच्छा मोका देव मन्त्रिमन्त्र का दो तथा चहयाम पर पाकमण्य कर अधिकार कर लिया। त्रिपुरापतिने अपने तोनों पुर्वीकी सेनापति बना कर एक बड़ी सेनाके साथ भेजा। चाराकानपतिने मयभोन की हाथोटाई बना दूधा मुकुट उपहार दिया घोर राजकुमारोंके निकट मन्त्रिका प्रस्ताव पेश किया। मुकुटके अधिकारके लिये तोनों राजकुमारोंमें चमकन हो गई। ऐसे चयन पर चाराकानके राजाने त्रिपुराकी सेना पर धावा किया। दोनों राजकुमारोंमें एक पाहन हाथोंको पोठ परसे गिर कर पक्षकी प्राप्ति हुए घोर मय दो राजकुमार पराजित हो कर भाग चले। मगोने उनका

चतुस्रय किया था। पुनः दोनोंमें युद्धमेह हुई। इस बार त्रिपुराके पठान-चमाराहीदोनों दयाख खाँ लानेसे कुमारोंको हार हुई। मग मोग राजधानी उदयपुर पहुँच गये। चमरमाणिक्य दुर्गछय नमक राजधानी छोड़ कर देवघाट नामक स्थानको चले गये। मग मोग उदयपुरकी नृत कर वापिस आ गये। उसी समय केनो नदो त्रिपुराको दलियोसोमा निर्दिष्ट हुई। चहयामादि स्थान चाराकानराजाके चमरगत हुए। महाराज राजाको चवव्या, पुर्वीकी बुद्धि घोर विवेचना पाटि देख कर दुःखने व्याकुल हो उठे। चमरने एक दिन पवित्र मनु नदीमें स्नान कर चन्दने चकीम प्या कर प्राणत्याग किया। उनकाँ खो भी मतो हो गई।

१०२१ त्रिपुराब्दे (१६११ ई०में) चमरमाणिक्यके पुत्र राजधर राजा हुए। ये शान्तिप्रिय वैष्णव थे। मिर्क देवकार्यमें लगे रहते थे। उन्होंने एक सुन्दर विष्णुमन्दिर निर्माण किया था, जिसमें च गायक सर्वदा हरिनाम-स्तोत्र करनके लिये नियुक्त थे। चन्दों ने बहुतमें ब्राह्मणोंको विन्दार जमोन टाग दो थे। मन्त्रियोंके उनको उदारता पर छिड़-छाड़ करने पर महाराज राजधर बोले,—“मेरे चवव्याको मीरे चहटमें क्या होगा, यह कौन कह सकता है। समय रहने चाराकानका उपाय करना पच्छा है।” दधर बहानके महावने राजधरको दोनो चवव्या सुन त्रिपुरा पर पाकमण्य करनेके लिये एक मेन्वदम भेजा; किन्तु त्रिपुराके सेनापतिके कोमनने ये पराजित हुए। राजधर १ वर्ष राज्य कर गोमतोमें लुप्त मरे।

बाद १०२३ त्रिपुरागब्दे (१६११ ई०में) राजधरके पुत्र यन्तोधर राजा हुए। राजा होनेके साथ ही इन्हीं त्रिपुरामें मग मोगोंका चवव्याचार नियारव किया। इनके समयमें दिमोयर जहागीरने कई एक हादो करचद्वय मंगे थे। महाराज यन्तोधरके दिनेमें चन्तोकार करने पर दिमोके चादेयमे बहानके महावने त्रिपुरा पर पाकमण्य किया। दिमोने मुगल-सेन्य मो पहुँच चुको थे। युद्धमें त्रिपुराके राजा पराजित घोर बन्दो हुए। मुगलसेना राज्यका कुछ पंग नृत बन्दो महाराज यन्तोधरमाणिक्यको गाय ने कर

विपिनविहारोने १२६५ त्रिपुराब्दमें त्रिपुराका गामन भार अपने ऊपर लिया । कमकर्ममें कार्य बनाने-के लिये इस समय यज्ञचन्द्र चंडोपाध्याय नामक एक पत्यक्त बुद्धिमान् मनुष्य पाममोक्षार नियुक्त हुए । ये कह मांम कमकर्ममें घोर लड़ मांम पागरतनामें रहते न । गुह विपिनविहारोने पमात्वाके परामर्शमें राज्यका लक्ष्यगोध अपने ल सपायमें लिया । ईमानचन्द्रने २ वर्ष भूमि आवाद कराकर उनका नाम अपने दो पुत्रोंके नाम पर अजिन्दनगर घोर लक्ष्यगोध रखा । गुहको सभाहमें इन्होंने अपने दोनों पुत्रोंको युवराज घोर बह ठाकुरके पद पर नियुक्त कराना चाहा । इस पर उनके भाई अक्रान्त करने लगे । उन्होंने मयमें ईमानचन्द्रको कहना भेजा कि ईमानके दो पुत्रोंके सिवा घोर किमो-को कोई उत्तराधिकारी पद नहीं देंगे । राजाको भी क्षिपनें मादू जाननेको कोमिग होने लगे, किन्तु गुह-घरके कोमगने यह बात जान लेने पर राजाने सङ्घ पक्ष में गया घोर क्रोध कर लिया । इस समय लहाम-में मिपाही विद्रोह प्रारम्भ हो गया था । ईमानचन्द्रने इसे दमन करनेमें पंगरेजोंको चुन सहायता की ।

१२६८ त्रिपुराब्दमें कूकियोंका उत्थात छद्म हुआ, किन्तु महाराजने उसे तुरन्त दमन किया । इस समय बहू ठाकुर घोर युवराजके पद पानेके लिये नीजलक्ष्य घोर घोरचन्द्र नामक ईमानके दोनो भाई पापममें अगहने लगे । सु-दमा करने पर भी वे विजयों न हुए, किन्तु इसके परिणाममें एटिंग गवर्मेण्टके साथ त्रिपुराको मित्रताके रूपमें एक सन्धि हुई ।

ईमानचन्द्रने तोउरे पुत्रके नाम पर भी रोहिणी नगर नाम रखकर एक नूतन नगर बनाया घोर तोमरे पुत्रको जागोर दो । तिन्ना परामनें गनी चन्द्रशरी महादेवीके नाममें एक श्राद्ध बनाया गया । चन्द्रशरीने हस्त्यागने राधामाधवीको एक भूर्ति स्थापन की ।

१२७२ त्रिपुराब्दके ११ आषषरी ३४ वर्षको पंचम्यामें महाराज ईमानचन्द्रमाधिकर उत्तराधिकारी नियुक्त किये बिना बातरोममें परमोजकी रूप बसे ।

इन्होंने ही त्रिपुरामें नूतन राजमापाद निर्माप किया था । केवल एक दिन तक इन्होंने इस मापादका भोग किया था । बहुत तक वित्तके बाद घोरचन्द्रमाधिकर-में राज्य प्राप्त किया । ये धार्मिक तथा माधित्वापुराणे थे । इन्होंने ययमें त्रिपुराराज्यमें बहुतमें सुनियम बनाये गये हैं । इनके बाद राजा विजयमाधिकर घोर राजा राधाकिशोर देव वर्मनामाधिकारने त्रिपुरा-राजनिं दामन-को सुयोमित किया । वर्तमान राजाशा नाम II, II, राजा घोरचन्द्रकिशोरमानिष बहादुर है । इनके जटिय गवर्मेण्टकी ओरमें १३ तोर्वको सत्तामें मिलती है । त्रिपुरामें बौद्धधर्म प्रचलित है ।

"रामपामक राजत्वकालमें प्रसिद्ध बौद्धतामिक-विषय आविर्भूत हुए । इनका दूसरा नाम धर्मपाम था । इनके प्रधान गियक्षा नाम कानविद्वय था । एक समय पाचार्य कानविद्वय त्रिपुराको पाये । उनका मनुष्यदेग सुनकर त्रिपुरावति विमुक्त हो गये घोर उनमें ताम्बिक-बौद्धधर्ममें दीवित हुए । पाचार्यके निकट रहते रहते राजा भी एक निह हो गये । ताम्बिक बौद्धके मतमें भी शक्तिवह्यम नहो होनेमें सिद्धिनाम नहो होती है । एक दिन राजाकी भी पट्टेग मिला कि पद्मावती नामक डोमकी कन्याको गहिरामने पक्ष करने पर छद्म निदि प्राप्त हो सकतो है । राजाने छटबिलमें डोमनी-को पक्ष किया । उसको माय में वे राजधानी छोड़ घन-को चने गये घोर बहो साधना करने लगे । क्रमगः वे डोमराज या डोमाचार्य नाममें विख्यात हुए । इनके पमा-धारय समता थी । किन्तु डोमकन्यामें मक्षधम करनेके कारण वे राज्यमें निर्वासित हुए थे । उनको पनुपसिन्ति-में राज्यमें महामारी पहुँची । ज्योतिषियोंने गणना कर कहा कि राजाके लहो रहनेमें ही ऐसी दुष्टता घटवित्त हुई है । पजाने राजाकी बहुत ययमें हुनाया । राजाके पाने पर राज्यमें शान्ति स्थापित हुई । इन्होंने धर्म नामक ताम्बिकबौद्ध मतका प्रचार किया । बहुत छोटे दिनोंके मध्य बहुतमें भोगोंने इस मतको पक्ष पर लिया । धर्मपुत्रमें बचपोंमिलो, कक्षशारादो, दम-द्राहिनी, दममेवष का सेवाम, नाय पादिही पूजा हो जाती है ।"

को जानि पर उदयमाधिका ने मोह-राजपुत्रको देखे निजकन्या दिया और भटा खिचो को बायोके पैसे बुचनया दिया ।

सुगन्ते नि पुनः इस समय बहाम पर अधिकार किया गुप्त १४ हजार त्रिपुरामे बिन्दु दूरे । यह दुर्ग ५ वर्ष बाद किसी क्षीने विष लिना कर गाने प्राण लाग क्रिये । उदयमाधिका के समय त्रिपुरामे घोर दुर्मिष पड़ा जिसने बहुतसो प्रजा नष्ट हुई ।

उदयमाधिका के बाद उनके लड़के जयमाधिका १००६ त्रिपुराब्दे (१५८६ ई.) राजा हुए । ये नाममात्र के राजा थे । उनके चाचा रत्नारायण को सर्वसत्ता हो कर राज्य चलाते थे । रत्नारायण ने देखा कि महाराज जयमाधिका के चाचा (विश्वमाधिका के भाई) पर बहुत प्रभुत्व हो उठे हैं, उनकी गोघ्न दमन नहीं करने में पुरातन राजवंश पुनः इनके हाथ लग जायगा । यह सोच कर उन्होंने एक दिन परमरको भोजन करने के लिये बुलाया । वहाँ परमर के एक बन्धु ने तनधारिने एक पानकी दो खण्ड कर उन्हें इगारा किया । परमर यह इगारा समझ उठा कि असुस्थताका बहाना करके छोके पर मवार हो चल दिये । सोझे वे एक दूसरे की मारने की चेष्टा करने लगे । रत्नारायण ने भयभीत हो दुर्मिष पर पात्रय लिया और पक्षद्वारा अपने भाई की समस्त आत्मा परमर पर बढ़ाई करने के लिये बुलाया । राजा ने पक्षवाहक परमरने पकड़ा गया और पैद कर लिया गया । परमरने रत्नका हस्तारणना एक क्षमिपक्ष तैयार कर रत्न के निज विग्रह पर नुचर डाल उनके भाई के पास भेज दिया । रत्न के भाई ने पक्षपाक वाहकका खोले को पालि-हून किया तो ही यह उमका मद्राक काट कर परमरके पास ले पाया । परमरने उस मद्राककी दुर्मिष रत्न के पास भिजवा दिया । रत्न मद्राक देखे व्याकुल हो उठे और सोचने लगे, कि जब भाई मारे जा चुके हैं, तब पक्षद्वारा ही उनकी सेवा भी निहत हुई होगी । इस पर वे पाप भी भयभीत हो किता कीड़ कर भाग गये । दो दिन हिपके रहने के बाद परमरकी एक सेनाने उन्हें देख पाया और उसने तुरत उमका मद्राक काट कर परमरको उपहार दिया । परमरने गुप्त को कर उस भी निहक को 'माहमनारायण' की उपाधि दी ।

जयमाधिका ने यह समाद पा कर परमरकी एक पक्ष लिपिकर पृष्टा कि ये ऐसा पक्षपात क्यों कर रहे हैं ? परमर पक्षसुमने उत्तर देने के लिये समस्त पक्षपर हुए । महाराज जयमाधिका उरकर वहाँ भाग गये । परमरको नेताने उन्हें 'राम' में पक्ष कर मार डाला । केवल एक वर्ष राज्य करने के बाद जयमाधिका मारे गये थे ।

१००० त्रिपुराब्दे परमरमाधिका राज्यमि-क्षान पर बैठे । राजा होने के माय ही उन्होंने त्रिपुरा के सभी जमींदारों को निज भिजा, 'एक सुदोष दोषिका खुददानो होगो । इसके लिये पाप लोग कुदाल भिजे ।' उनके कथनानुसार ८ जमींदारों ने ७३०० कुदाल भिजे थे । बाद उदयनुर में जो बड़ी दोषिका खुदवाई गई, वह पात्र मो परमरभागर नामने प्रसिद्ध है । ओहट के पक्षगत के जमींदारों ने इस कार्य में कुदालो नहीं भेजे थे । इस कारण महाराज परमरने उन्हें कैद करने के लिये २२ हजार सेना भेजे । जमींदारों ने भाग कर ओहट के सुनलमान गासनकर्त्ता को शरण ली । उनके लड़के कैद कर लिये गये । परमरमाधिका ने यह सुन कर ओहट के सुनलमान गासनकर्त्ता के विरुद्ध यात्रा की और गुरुद्वय बनाकर सूर्योदय के समय लड़ाई हुई दो । दो पक्षकी कुदाल तत्र विश्राम करने के बाद पुनः युद्ध, पक्षद्वारा हुआ । मद्राकालने सुनलमान लोग पराजित हुए । १००८ त्रिपुराब्दे (१५८८ ई.) माघद यह घटना हुई होगी । इसी समयने ओहट त्रिपुराका कर-प्रद हुआ । नोपाखाखे के पक्षगत वल्लभाम के जमीन्दारों ने पहले परमरमाधिका को कर नहीं दिया और कहा कि, परमर जारज है । तत्पश्चात् ये राज्य के विधिपक्षत अधिकारो नहीं हो सकते । यह सुनकर महाराज परमरने एक दल सेना भेजकर युद्धमें उन्हें करप्रद बनाया । इस समय यात्राका पक्षद्वारा बहुत सम-गाना था । परमरमाधिका ने धन के लोभसे उस राजा में नूटपाट मचाई और बहुतसे अधिवासियों को दाम के दम में गद्द किया बहुतांश की शरीरा भी । बाद उन्होंने मद्राक-दम्यते और नुनापुष्ट दान किया तथा दोषिका बनाई । १०१८ त्रिपुराब्दे महाराज के लोभसे इस राजा

त्रिपुरानन्द (मं० पु०) त्रिपुराण चर्यं करोति चर्या-विष्णु
चर्या । १. त्रिपुरा, महादेव ।

त्रिपुरा (मं० पु०) त्रिपुराण चर्या, इत्यत्र । १. त्रिपुरा,
महादेव । २. एक टीकाकारका नाम, पार्श्वतोमादये
पुत्र । इसको बनाई हुई चर्या राघव और मानसो-
माधवकी टीका पायी जाती है ।

त्रिपुराविषाद—एक संस्कृत कवि । मनुस्मृतिकांशमें
इसको जगिता उद्धृत हुई है ।

त्रिपुरावरिण (मं० पु०) धीपचविनेयः एक प्रकारकी
दवा । इसको प्रसुप्त प्रयाभी—हिंदू, मोल, पारा, मोहा,
गन्धक, मोहा, चम्बक, विष प्रत्येक १ तोला, चांदीकी
अर्धमा पाण तोला, इन सबकी एक साथ मिला कर चट-
रपाने इसमें मन्त्र है और बाद २ इसको मोली बनाने
हैं । इसका चतुर्दश सपु, सोने वा चंदनका रस है ।
इसके नेत्रन करनेमें पादों प्रकारके छ्पर, झोहोदर, गोघ
और चर्मसार बहुत अच्छे पाराम हो जाते हैं । मद्धरने
जिस प्रकार त्रिपुराकी दण्ड भर जाना था, उसी प्रकार
यह दवा भी रोगोंकी चर्म मोघ जल्दा देती है, इसीमें
इसका नाम त्रिपुरावरिण पड़ा ।

त्रिपुरा (मं० स्त्री०) त्रिपुराणी पुत्रपत्नी समाहारः । १.
विशद पुत्रपत्नी, पिता, पितामह और प्रपितामह । त्रयः
पुत्रपत्नी विवाहयो मोहारी यथ्य । २. भोगभेद, सम्पत्तिका
सह भोग श्री भोग पादियों समन समन करें ।

प्रपितामहमें जिसका भोग किया हो, वोदे उसने
पुत्रने किया हो और बाद जिसे उसका भी पुत्र भोग कर
रहा हो, तभी त्रिपुरा कहते हैं । किन्तु पितामह, पिता
और पुत्र इन तानाकी ओरिन रहते श्री भोग किया जाता
है, उसे एक पुत्र भोग कहते हैं ।

(त्रि०) त्रयः पुत्रपत्नी परिमाणमव्याः अन्तर्गतं लक्ष् ।
१. पुत्रपत्नीपरिमाण, श्री तोल दोहियोंमें जल्दा था रहा
हो ।

त्रिपुराद्रि (मं० पु०) त्रिपुराका एक पर्वत ।

त्रिपुर (मं० पु०) १. ककरो । २. घोड़ा । ३. रज्ज ।

त्रिपुरा (मं० स्त्री०) त्रिपुरा काशीटोदयतयान् पुत्रप-
त्नीनि पुत्रः, तनराय । कश्चित्त्रिपुरा, काशी निमोय ।

त्रिपुरार (मं० स्त्री०) त्रिपुराणी पुत्रपत्नी समाहारः ।

१. पुत्रपत्नी, समाहार तोय भेद । २. ज्योति, माधम और
कनिष्ठमें भेदमें पुत्रार उद । (पु०) १. महात, पार,
निमिदय चर्यायोगभेद । पुत्रपत्नी, उत्तरायादा,
हमिका, उत्तरचम्बुनो, पुत्रभाद, विगाया, रवि, मङ्गल
और मनिवार तथा दिताया, वसुमी, तथा दादमी तिथिमें
गन्धु, दोनोंमें त्रिपुरारयोग होता है । गन्धु, दिदिन लक्ष
पार, नक्षत्र और तिथिके घटनेमें ही इस प्रकारका
त्रिपुरारयोग लगता है ।

यह त्रिपुरारयोग बहुत प्रथम है । इस योगमें
जिसे धनिकी गन्धु, दोनोंमें बहुत अच्छे समझी, मान्ति
करने चाहिये, नहीं तो उसके परिवारके प्रायः सभी
पादमी मर जाते हैं, यहाँ तक कि उसके हथ पादि भी
मट हो जाते हैं । पूर्वार्ध तिथि, पार, नक्षत्रमें लक्ष दोनों-
में आरजयोग होता है । इसमें यदि कोई व्याम हो, तो
वेग हो नाम और तोल बार होता है, यदि जानि हो,
तो वे भी हो जानि और तोल बार होती है और यदि
कोई भोज चोरो मर्द हो, तो वे मोहो तोल बार चोरी
होती है । इस योगमें मरनेमें प्रथम मान ना वर्ष में पीडा
होती और उसके पुत्र विमट होने हैं । देवतामें रक्षाभी
जाने पर भी पुत्रको रक्षा नहीं है ।

त्रिपुरारयोगकी मान्ति चमोचके दिन करनी होती
है । इसमें देहो करनेमें और धीरे चर्या दोनों लगता
है । चर्या पुत्र, भाई, श्री, पति, प्रपुत्र, माता, पिता,
समा, चाचा, बहनोई, बेटे, भाई, मामा, चर्या इनमेंमें
एक एकको गन्धु क्रमयः होने लगती है । १५ मास पुत्र
पर भाव्य मट होने और यदि भाव्य न हो, तो बाप हथ
लक्ष भी जीवित नहीं रहते । इस योगमें यदि कोई
मर्द, तो उसके परिवारमें तोल पादमी और मरते हैं ।
यदि कोई बहुत व्याम हो, तो वेग हो नाम और तोल
बार होता है । इस प्रकार दम्भादम कार्यमें तोल तोल
कर मङ्गलामङ्गल होने हैं, इसीमें इस योगका नाम
त्रिपुरार दूदा है । इसकी मान्ति काममें पारा-मर्दि-
तांन चतुतहोम करना होता है । यदि इसमें कोई
पदम हो, तो उसे सुमचोदि दान करना चाहिये ।

पापार्थ दारा होम और बनि प्रार्थन की जाती है ।
कामिपरिणत पुत्रार दन्धने देहो ।

खुमि राजधानी टाकाने त्रिपुरा पर धावा किया। चमर माणिक्यके दशा खाँ नामक एक सुमनमान सेनापति था। एक बड़ी सेना ले कर महाराज चमरने छत्ती की युद्धमें भेजा। दशा खाँने मनु के सामने होते हुए भी समय जान कर पाक्रमण न किया। त्रिपुराके प्रधान मन्त्रोंने यह सुनकर घोर भी एक दम सेना उनको महा-यताने लिये भेजो घोर दशा खाँको दुबल दिशा, कि ये चमर समयको पचिषान कर विपक्ष पर पाक्रमण करें। इस समय चमरमाणिक्यको खोले दशा खाँकी प्रतादलक्ष्य चरना चरणान्त भेजवा दिया। दशा खाँने रानेके इस अनुग्रहसे उत्साहित हो बारह हजार चमरारोही घोर कुछ पडाति सेना से नर मनु पर कठान् पाक्रमण किया। सुमनमान लोग पराजित हो कर भाग चले घोर दशा खाँ विजयी होकर लौट पाये।

इसके बाद चमरमाणिक्यने चाराकान पर पाक्रमण कर उनके चलगर्त कई एक प्रदेश जोत लिये। चाराकानपतिने बार बार पराजित होने पर घोर-गोर्जाकी महायतना भी घोर त्रिपुराके राजा पर धावा किया। युद्धमें पहले त्रिपुरापति पराजित हुए, किन्तु दमनघृण कर पुनः चाराकान पर चढ़ाई करनेकी उद्यत हुए। इस पर चाराकानके राजाने एक वर्ष तक लड़ाई बन्द रखनेके लिये अनुमोद किया। दोनों पक्षके लोग पागामो दुर्गोत्थनके पहले युद्ध करनेकी महमत हुए, क्योंकि युद्धमें बन्दिओंकी दुर्गाके सामने धमि दे सकेंगे। त्रिपुराको सेना लौट आई। चाराकानपतिने अच्छा मौका देख मन्थिमङ्गल का दो तथा सध्याम या पाक्रमण कर अधिकार कर लिया। त्रिपुरापतिने अपने दोनों पुतोंको सेनापति बना कर एक बड़ी सेनाके साथ भेजा। चाराकानपतिने भवभोज हो हाथीदाँतवा बना दशा मुकुट उपहार दिया घोर राजकुमारोंके निकट मन्थिमङ्गल प्रस्ताव पेश किया। मुकुटके अधिकारके लिये दोनों राजकुमारोंमें घनघन हो गई। ऐसे घनघन पर चाराकानके राजाने त्रिपुराको सेना पर धावा किया। दोनों राजकुमारोंमें एक पादल हाथीको पीठ परसे गिर कर पक्षधरको प्राप्त हुए घोर द्वेष दो राजकुमार पराजित हो कर भाग चले। समीर्ण उनका

अनुसरण किया था। पुनः दोनोंमें युद्धमें हुए। इस बार त्रिपुराके पठान-चमरारोहियों बनाध हो जानसे हमारेको चार हुई। मग लोग राजधानी उदयपुर पहुँच गये। चमरमाणिक्य दुर्गोत्थन ममक राजधानी छोड़ कर देवघाट नामक स्थानकी चले गये। मग लोग उदयपुरकी लूट कर लामिप पा गये। उमो समय किनो नदी त्रिपुराको दक्षिणोसोमा निर्दिष्ट हुई। सध्यामादि स्थान चाराकानराजके चलगर्त हुए। महाराज राजाको चवस्था, पुतोंकी बुद्धि घोर पचिषना पाटि देख कर दुःखमें-आकुल हो उठे। चलाते एक दिन पवित्र मनु नदीमें स्नान कर चर्चने चकीम ध्या कर पाणत्याग किया। उनकी खो भी मतो हो गईं।

१०२१ त्रिपुराण्डमें (१६११ ई०में) चमरमाणिक्यके पुत्र राजधर राजा हुए। वे मानिसिय वैष्णव थे। मिर्क देवकार्यमें मग रहते थे। उन्होंने एक सुन्दर विष्णुमन्दिर निर्माप किया था, जिसमें च गायक मन्वेदा हरिनाम-स्तोत्रान करनेके लिये नियुक्त थे। उन्होंने बहुतमें प्राप्नवोंकी विस्तार प्रमोद दान दी थी। मन्थियोंके उनको उदारता पर लेह-हाह करने पर महाराज राजधर बोले,—“जिप चवस्थाको भेरे पदहमें क्या होगा, यह कीन कह सकता है। समय रहते पा-कालका उपाय करना अच्छा है।” इधर बहानके नवाबने राजधरको ऐसी चवस्था सुन त्रिपुरा पर पाक्रमण करनेके लिये एक समयदम भेजा; किन्तु त्रिपुराके सेनापतिके कोमलने वे पराजित हुए। राजधर १ वर्ष राज्य कर गोमतीमें डुब मरे।

बाद १०२३ त्रिपुराण्डमें (१६११ ई०में) राजधरके पुत्र यन्मोधर राजा हुए। राजा जोनेके साथ ही इन्हीं त्रिपुरामें मग लोगोंका चवाचार नियारण किया। उनके समयमें दिमोवर जहमीरने कई एक-हाथी चरणरूप मगि थे। महाराज यन्मोधरके दिनेमें चमोकार करने पर दिल्लीके बादशहने बहानके नवाबने त्रिपुरा पर पाक्रमण किया। दिमोवे मगल-सेन भी पहुँच चुकी थी। युद्धमें त्रिपुराके राजा पराजित घोर बन्दे हुए। सुमनमान राज्यका कुछ चंग लूट बन्दो महाराज यन्मोधरमाचिकरको साथ में कर

विष्ट (मं० पु०) कम-सुरंगानुसार पोदनपुर के राजा प्रजापति के पुत्र, इस युग के ८ मारायणों में से प्रथम मारायण । इनको माताका नाम भगवती था । मारायण विष्ट प्यारहवें तीर्थंकर भगवान् श्रैयसनाथ के समय में उत्पन्न हुए थे । इनका जीव पूर्वभवे में मारोचकी पर्याय में था । इनको पायु चौरासी लाख वर्षको थी । इनमें प्रतिमारायण चण्डयोवको युद्ध में पराजित होर निहत किया था तथा प्राप लोग खण्ड के स्त्रामो बने थे । इनके पाम चक्रवर्ती से पाछो सम्पत्ति थी, हमनिये ये चक्रवर्तवर्ती कहलाते थे । अन्य ८ मारायणों के विषय में मो वही बातें हैं । इनको १६०० रानियां थीं ; पहरानों का नाम था स्वर्णप्रभा । इनके चर्यट पुत्रका नाम श्रो-विजय था । इनकी पिता प्रजापति ने पिहितायव मुनि के निकट दोषानी थी होर निर्वाचन प्राप्त हुए थे ; किन्तु नाभायण विष्ट सर कर नरक गये ।

(प्राचीन जैन-इतिहास १म भाग पृ० ११२-११)

विशोप (मं० श्री०) श्रोत्र पिशादीन् पुत्रपान् व्याश्रति अन्य उत्तरपंडितः । पिशादि क्रमसे लोग पोदियों का भोग । अनुप्राण देवी ।

विशोमिया (हिं० श्री०) विशोमिया देवी ।

विष्णुपुर—मन्नाजने त्रिवाङ्गराजा के चत्वार्यत विष्णु-रम् तातुकका एक पाम । यह चला ८०० ३३ व० पोर देगा ०६५०० पू० में त्रिबन्धरमुख ५ मील उत्तर में अवस्थित है । जलमंथन प्रायः १६३० है । वहां विष्णु के चरचोंकी पूजा होती है, इस कारण इसकी गिनती तीर्थों में की गई है । कहते हैं कि, त्रिवा-ङ्गराज वंश के कुम्भदेवता चनकपद्मनाभका मस्तक तिवक्त्रमं, बहुत त्रिबन्धरमं होर वीर विष्णुमं है । इस कारण यह पाम बहुत पवित्र माना जाता है । त्रिमय (मं० पु०) मयाच दिग्दशकालानां प्रथः । १ दिक्दिग् होर पामविषयक प्रथ, दिगा, देग दोर काममम्भो प्रथ ।

त्रिप्रस्त (मं० पु०) त्रिपु कानिषु प्रस्तुतः । मद चरित मत्तगत्र, यह जायो त्रिम के मत्तक, कजोल होर मीव इन तीनों रयानों से मद भङ्गता हो ।

विप्रध (मं० पु०) जनदविशेष, एक बहुत प्राचीन देशका नाम ।

विक्रमा (मं० श्री०) त्रयानां कल्पानां ममादारः पञ्चादि-त्वात् । "दिनोः" (वा० ४१:२१) इति गुप्तेन श्लो० । १ पायने, बहु पोर बड़े के का समूह । हमका पर्याय—विक्रमी, कल्पत्रय पोर कल्पिक है । यह पालों के निय-हिनकारक, चमिदोपक, कविकारक, मारक तथा कफ, पित्त, मेह, कृत्र पोर नियमन्त्र का नाशक माना जाता है । इनके द्वारा वैद्यक में चनेक प्रकार के द्रव्य पादि बनाए जाते हैं ।

विक्रमावृत (मं० श्री०) विकल्पानां रसेन युक्तं द्रव्यं । द्रव्यपोषणमैद । घो ५४ मेर, कायके लिए मिना द्रव्य विक्रमा ८८ मेर, जल ६४ मेर, शेष १६ मेर, मायका द्रव्य ५४ मेर, चूर्ण मिना द्रव्य ५१ मेर इन्हें मक्के में म-से यह द्रव्य प्रयुक्त होता है । इनके सेवन करने में निमिर-रोग जाता रहता है । (भैषज्यर०)

प्रयुक्तको दूधवी विधि-वी ५४, कायके लिए विक्रमा (पन्थे कका) ५२ मेर, जल ४८ मेर, शेष १२ मेर, द्रव्य ५४ मेर, अस्वाद्य विक्रमा, विकट्ट, झाचा, घटिमधु, कुटको, पुच्छरीककाठ, शोटी इनावचो, विष्टा, मार्गमर, नोनोत्पल, चनकामूल, श्यामानता, रजचन्दन, हरिद्रा, टाहहरिद्रा पन्थे कका दो दो मोला से कर द्रव्य प्रयुक्त करते हैं । हमसे तिमिररोग एवं कामल, चर्मरुट, विमर्ष, पटर, कण्डू, पादि रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(भैषज्यर०)

विक्रमादिनोह (मं० श्री०) पोषणविशेष । हमके बनानेकी विधि यह है—विक्रमा, मोषा, विकट्ट, विष्टा, कुट, वच, पोतामूल, घटिमधु प्रन्थे कका चूर्ण १ दन, मोहचूर्ण ८ दन, गुग्गुलु ८ दन, इन सबको १२ दन मधुके साथ घोट कर पोषक बनाते हैं । प्रातःकाल इसका सेवन करने में दुःमान् चामपात, पाण्डू, हृन्म-मक, गुम, मयधु पोर नियमन्त्र जाता रहता है ।

विक्रमाद्यवृत (मं० श्री०) १ चक्रटोली द्रव्यपोषण-मैद । छोटी पोर बड़े के भेदमें यह दो प्रयोज्य है ।

मधुविक्रमाद्यवृत में ५४ मेर घो पोर १६ मेर दन-मूनीके झाचें कण्डू, विक्रमा पोर घटिमधु ५१ मेर

दिमी पट्टे पो। सम्राट् ने उन्हें छुटकारा दे कर कहा, कि यदि वे प्रति वर्ष कई एक चाची चोर छोड़े कान्यकुब्ज में, तो उनके विरह नष्ट हो जायेंगे। यमो धरने इसे चलोकार किया चोर यवनने पराजित होने पर वे तोषाटनमें वापदेख कर लेने लिये प्रयाग, मथुरा हस्तामनादि को गये। ७२ वर्ष की अवस्थामें हस्तामनमें विष्णु सेवा करते हुए उनका प्राणान्त हुआ। चधर त्रिपुरा में पतंगिष्ट सुगन्ध मेवा लगातार दो वर्ष तक राज्यमें लूट-मार मचाये रही। इतनेमें वहाँ महाभारत समाप्त हुई, जिसमें पश्चिमी सुगन्ध की मृत्यु हो गई और पतंगिष्ट प्राण जानकी भयने त्रिपुरा छोड़ दिङ्गो की चले पाये। बाद कल्याणमालिक्य सभी त्रिपुरावासियों को मर्यामि राज्यनिर्वाह पर बैठे।

१०१५ त्रिपुरावर्द्ध (११२५ ई० में) कल्याणमालिक्य राजा हुए। वे दिनके पुत्र थे, वह राजमानामें निवासी नहीं है, किन्तु लोग उन्हें यमोधरमालिक्यके प्रातिभ्राता धन्याते हैं। अनुमान किया जाता है, कि महाभारत समाप्त होने के एक भाई पाराकान-युद्धमें काठोरे पौरुषसे मर चुके थे और दो भाग गये थे। कल्याणमालिक्य नहीं दोनोंमें किसीके पुत्र होंगे। कल्याणमालिक्यके जन्मसमयमें भी एक लौकिकप्रवाद है—उनका पिता एक दिन पाण्डेयों की बाहर निकले। एक पनायित सुगन्ध छोड़े दोड़ते दोड़ते महाभारतकालमें वे व्यासके आश्रम में गये। बाद उनकी मृत्यु करती करती वे वाष्पाव-प्रजाके घर पर गये। त्रिपुरा जानिमें शाकान नामक एक मन्त्र-दाय है। कल्याणके पिता उन वाष्पावकी रूपयती कल्याणी देख कर मोहित हो गये। वाष्पाव-कुमारोंने भी राजपुत्रकी पाणममर्पण किया और उसीमें कल्याण-मालिक्यका जन्म हुआ। महाराज कल्याणमालिक्य विद्वान्, बुद्धिमान् और बलवान् थे। उन्होंने मेवाणोंकी सुमिश्रित किया। उन्होंने त्रिपुराके राजपरिवारमें एक मूल-नियम स्थापित हुआ। उन्होंने जो सबसे पहले गुप्तराज पट्टको छुट कर अपने बड़े बड़े गोविन्दको उस पट्ट पर नियुक्त किया और सिद्धमें चला। नामके साथ 'मि' देवनाम चढ़ित किया था। उन्होंने समय-वे राजनामके साथ देवनाम योग कर सिद्धा मुद्रित

हुआ करता था। मखाट् याज्ञज्जानने उनसे कर मांगा था, किन्तु कल्याणमालिक्यके चलोकार करने पर मखाट् ने यज्ञमन्त्र सुधेदा गार सुजाकी त्रिपुरा पर चढ़ाई करनेका वृत्त दिया। गार सुजाने जो मेवाटन भेजा था, उनके साथ एक चर्मनिर्मित कामान था। जो कुछ भी महाभारत कल्याणने सुगन्धानोंकी पराजित कर भगा दिया था। इनके बाद कल्याणने गुना उपनयनमें लड़ोवा, मथुरा पादि पूरे स्थानोंमें माधवाँकी पुनाकर प्रचुर धन दान दिये थे और अपने राज्यमें धूम धूम कर निःश्व प्रजाकी चर्चा दान तथा माधवाँकी घण्टे भूमि दान दी थी। जब कोई तोषाटनकी इच्छा करता तो, वे अपने राजकीयमें उसका पर्च देते थे। नूरनगरके कगवा नाममें उनकी पतिव्रता छोड़का बाज भी 'कल्याणनागर' नामसे विद्यमान है। कल्याण २४ वर्ष राज्य कर १०१८ त्रिपुरावर्द्ध स्वर्गको प्राप्त हुए।

बाद सुवराज गोविन्ददेव 'मालिक्य' की उपाधि धारण कर १०१८ त्रिपुरावर्द्ध (११५८ ई० में) राज्य-निर्वाह पर बैठे। उनको स्त्री कमला महादेवी बहुत धर्मपरायणा थी। उनके सिद्धोंके एक पट्ट पर मिश्र चोर स्वामीका नाम तथा दूसरे पट्ट पर उनका नाम चढ़ित रहता था। उनका निर्मित कमलासागर बाज भी कगवा नाममें वर्तमान है। महाराज गोविन्दके छोटे भाई मधवराय ब्रह्मके सुधेदार गार सुजाके माधव मिल कर त्रिपुरा शासन करनेको वरदान हुए; किन्तु महाराज गोविन्दमालिक्यने मोचा, कि इन युद्धमें चाड़े भी प्राण जायगा चयवा भी भाईका। यह समझ कर उन्होंने बिना कुछ किये नक्षत्रके हाथमें राज्य मोर्ष पाव पाराकान राज्यमें पायय ग्रहण किया। दूसरे मधवराय हर्म मालिक्य नामसे निर्वाह पर बैठे। महाराज गोविन्द पाराकानके पाययमें जब चढ़ेयाममें रहने थे, तब भावयुद्धमें पराजित गार सुजाने पा कर पाराकानमें पायय लिया। बादमें महाराज गोविन्ददेवमें उनका मूल मन्त्रा किया और यवामाधव मधवना भी दी। सुजाने उनके व्यवहारमें मन्त्रित हो कर समग्रार्थना मांगी और चयनी "निमणा" नामक बहुमुख तनना प्रदान की।

सुजाके पाराकाश पदचने पर पाराकाशके राजा सुजाको कन्याके रूपमें सुख हो गये। उसे दत्तगन्त करनेके निम्न उद्देशसे अपने राज्यमें यह प्रचार किया, कि सुजा अपने कौमयमें पाराकाश कोतनेके लिये पाये है, यतएव उन्हें मार डालना उचित है; किन्तु बिना युद्धका रहस्य गिरना लोगोंके नियममें अनुचित था, इसलिये उन्होंने जिसके सुजाको पकड़ मंगाया और उन्हें एक नावमें बांध कर नदीमें डुबो दिया। सुजाको पत्नी अपने पालोमें छुटे पुनः कर प्राण त्याग किया और दो कन्याओंमें विष खा कर आत्महत्या की। तीसरी कन्याको पाराकाशके राजाने पकड़ लिया था।

द्वार ७ वर्ष राज्य करके हवमाधिकार जगदाम और नरहरि नामक दो पुत्र छोड़ परलोक निधरि। हवको मृत्युके बाद मोहिन्ददेव पुनः सिंहासन पर बैठे। उन्होंने सुजाके प्रति पाराकाश-राजके लक्ष्मण-श्वशुरार्ये समर्पित हो कर सुजाको तनवारको महायताये चर्ममयक किया और कुम्भानगरमें एक मस्जिद बनवाई जो आज भी 'सुजा-मस्जिद' नामसे वर्णमान है। महाराज मोहिन्दमाधिकारने मंहेरकुल-पावाद और वातिमा ग्राममें दोहोंका खुदवाई। वे भी लक्ष्मणामन द्वारा घातकोंको बहुतसे लज्जित दान कर गये हैं। १०८८ विपुलाब्द (१६६८ ई०में) जनका देहात्त हो गया।

१०८० विपुलाब्दमें (१६७० ई०में) सुवराज रामदेव ठाकुर (मोहिन्दके छोटे पुत्र) राजा हुए। उन्होंने पहले अपने बाने बलिभोमनारायणकी सुवराजके पद पर नियुक्त किया। बाद अपने बड़े लड़के रवदेवकी भी उसी पद पर स्थापित किया। इसके पनवार उन्होंने सुवराज-पदका सम्पन्नित होनेके बाद को'बड़ा ठाकुर' नामक एक पदकी छटि कर उस पर अपने दूसरे पुत्र दुर्जय-देवकी नियुक्त किया। इनको राज्यभूत करनेके लिए पदग्रहण रखा गया, किन्तु इसका कुछ फल न हुआ। जनग्राम और चन्द्रमणि नामक उनके और भी दो पुत्र थे।

१०८२ विपुलाब्दमें (१६८० ई०में) सुवराज रवदेव राजा हुए। उन्होंने अपने छोटे भाई दुर्जयमणि को 'बड़ा

ठाकुर'का पद और मामा बलिभोमनारायणकी 'सुवराज'-का पद प्रदान किया; किन्तु उन्हें धीरे धीरे हटा कर राजवशोग सम्पत्तार्य और गोरोवरणकी सुवराज-पद पर तथा छोटे भाई चन्द्रमणिको 'बड़े ठाकुर'के पद पर नियुक्त किया। रवदेवके १२५ विवाह हुए थे। हव-माधिकारकी बहुत कछो सम-यो, किन्तु ज्योत्त सुवराजमण उनके अपनेका बड़े और बहुत पयावारा थे। इस समय बंगालके नवाब साइदायानि मरहटाठकुर नामक स्वमाधिकारके एक चाचाको महायताये विपुला पर प्राप्तमण किया और उसे जेल भेज दिया। बाद ये स्वमाधिकार और तोमों सुवराजोंको कैद कर लाये।

साइदा खाँकी महायताने मरहटाठकुर राजा हुए। तीन वर्ष राज्य करनेके बाद स्वमाधिकारने साइदा खाँकी दत्तगन्त कर पुनः स्वमाधिकार किया। २८ वर्ष राज्य करनेके बाद स्वमाधिकारके तीसरे भाई जनग्रामने उन्हें राज्यभूत किया।

जनग्राम राज्य वा कर महेन्द्रमाधिकार नामसे सिंहासन पर बैठे। मन्त्रोंके परामर्शसे महेन्द्रने एक छोटे दो स्वामी रक्षा सुलिसिद्ध नहीं है, यह जान स्वमाधिकारको मार डाला। यन्त्रों भावपथके पापसे दुःस्वप्न देखते देखते १ वर्ष के अन्तर ही उनका प्रा-वायु लड़ गया।

१२२४ विपुलाब्दमें (१७१४ ई०में) सुवराज दुर्जय-देव धर्ममाधिकार नाम धारण कर सिंहासन पर पादुङ्ग हुए। उन्होंने चन्द्रमणिकी सुवराजके पद पर और बड़े लड़के गंगापरको बड़े ठाकुरके पद पर नियुक्त किया। बंगालके नाजिने इस समय एक दम सैन्य भेज विपुलाके कई एक जिले अधिकार कर लिए और वहाँ सुवर्णमान जमोदार नियुक्त किया तथा एक दम मुगलसे यह लड़गुरमें रण हो। एक दिन मुगल लोग जय-निधिमाजिस्ते भोजन कर रहे थे, तब धर्ममाधिकारने जहाज उन पर आक्रमण किया और उन्हें टिच मिच कर मार डाला। बहुत छोटे लोग प्राण न कर भाग पाये।

हवमाधिकारके लड़के जगदामने इस समय टावाले मुगलमान-मन्त्रकर्मोंके कारण मिला कर विपुला पर

धर्मसौरीयका चरित्राने स्वतन्त्र है। यहाँ महाराजका एक कोसल है जिसको बनावट देखने योग्य है। १८२५ ई०को गहरमें एक मान-मन्दिर स्थापित हुआ है। महाराज ही इस मन्दिरके अधिष्ठाता है। १८५४ ई०में इस मन्दिरको एक शाखा चण्डेयेश्वर पर्वतके ऊपर स्थापित हुई है। पहले यहाँ युरोपीय ज्योतिषी रहते थे, अभी उनको जगह पर दे शोय ज्योतिषी हैं। पर्वत पढ़नेके कारण १६६५ ई०में चण्डेयेश्वरका मान-मन्दिर तोड़ डाला गया। यहाँका 'नेपियर म्यूजियम' नामक जादूघर बहुत सुन्दर है। त्रिबाहुराजकी ४५ पतिविद्यानाचोंमेंसे प्रधान पतिविद्याना जो इसी नगरमें अवस्थित है, राजप्यसे परिवर्तित होती है। 'त्रिबाहुराज-गण्ड' नामक साम्राजिक पत्र मलयालम् और चंगरेजी भाषामें इसी स्थानसे प्रकाशित होता है। नागरकयल गहरमें 'त्रिबाहुरा टाइम्स' नामक चंगरेजी समाचारपत्र महीनेमें तीन बार निकलता है। त्रिबाहुके राजाकी राय सेनार चण्डेयेश्वर यहाँ टेम्पलपाकिसे खोला गया है।

विष्णु (सं० पु०) १ इन्द्रके पौत्र एक राजाका नाम। २ नागदादि तीनों ध्वस्तके जीव।

विष्णु (सं० पु०) तिलोकाका पुत्र।

विष्णु (सं० पु०) विष्णुका वनि। उदरस्थित वली-स्य, वे तीन वल को पैर पर पहते हैं।

विष्णुक (सं० पु०) तिस्से वलीय वल कप। १ पायु। २ मलहार, गुदा।

विष्णु (सं० पु०) तयो वाह्वी यस्य। १ ब्रह्मचर्यभेद, ब्रह्मे एक चतुर्वर्का नाम। २ पवित्रवाकारभेद, लक्ष्यकारका एक वाद्य।

विष्णु (सं० पु०) त्रयाणां भागां शशोनां समाहारः। १ अन्नादि रागित्रय, लज्ज इत्यादि तीनों रागि। २ तीन रागि। (वि०) १ नक्षत्रयुक्त, जिसमें तीन नक्षत्र हों, ऐसी, चन्द्रिने और भरणी नक्षत्रयुक्त पाणिन, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद नक्षत्रयुक्त भाद्र, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी और इत्यादि नक्षत्रयुक्त फाल्गुन मास।

विष्णु (सं० पु०) त्रयोपि भूतानि वक्ष्यामि यस्य। लक्ष्म

विष्णु, तीन जगहमें टेढ़ा, त्रिजगहमें एक मूर्ति जिसमें भगवान्को पोषा, कटि और आङ्गुल वल भावसे बने होते हैं।

विष्णु (सं० पु०) १ माताहता इन्दोभेद, एकमात्रिक इन्दुका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें ३२ माताएं होती हैं और १०,८८,६ मातायां पर यति होती है। २ तावके मात सुष्य भेदोभेद वल। इसमें एक गुह, एक लघु और एक भूत माता होती है। ३ यह रागका एक भेद। (वि०) ४ त्रिभङ्ग, तीन जगहमें टेढ़ा।

विष्णुना (सं० पु०) विष्णु जीवा, इतत्। विष्णु, व्यासको पापो रेषा।

विष्णुना (सं० पु०) व्यासार्थ रेषा, त्रिजग।

विष्णुना (सं० पु०) त्रिजगतादि दोषान् भङ्गति परि-हसतीति भङ्ग-घञ्-ततो ङीप्। विहता, निवोच।

विष्णु (सं० पु०) त्रिषु नक्षत्रतद्वत्तत्तमर्द्धेनैवपि भद्रं यस्मिन्। प्रसङ्ग, भोग, रतिक्रिया।

विष्णुना (सं० पु०) त्रिजग, व्यासको पापो रेषा।

विष्णु (सं० पु०) त्रिजगो भागः त्रिजगो मस्या शब्दस्य पूरणायांत्वात्। त्रिजग भाग, तीसरा हिस्सा।

विष्णु (सं० पु०) त्रिषु स्रग् बर्द्धे एक राजाका नाम।

विष्णु (सं० पु०) त्रिषु कानेषु भावोऽप्य। त्रिजगनाम पदार्थ।

विष्णु (सं० पु०) त्रिषु भुक्तिरप्य। त्रिजगत्त वा विविता-देय।

विष्णु (सं० पु०) त्रयो भुजा यस्य। त्रिबाहुक, तीन भुजाओंका देव। सेन देवो।

विष्णु (सं० पु०) त्रयाणां भुवनानां लोकानां समा-हारः, पञ्चादित्यात् ङीप्। त्रिलोक, जगत्, पृथ्वी और पाताल।

विष्णु-गमाधितम् नामक सैन-यन्त्रके रचयिता।

विष्णु-गमाधितम्-दक्षिण इन्द्रके राजाओंको उपाधि। सेर, सोन, पाण्ड्य, चातुका प्रथम संश्लेष बह, तने राजाओंमें यह उपाधि बहक को पा।

विष्णु-गमाधितम्-१ गुजरातके चौतुका संश्लेष एक राजाका नाम। ये त्रिजगनाम नामसे प्रसिद्ध है। इन्होंने १२८८

चढ़ा रहे हो। गुहमें वरुने में विपुलाको भीत हुई: किन्तु
पौष्टि मन्त्रागम, धर्ममायिका पराजित हो कर भाग
गए।

११४२ त्रिपुराब्दमें (१०३२ ई.में) जगन्नाथमायिका-
ने मुमनमानोंके माहायमे राज्य प्राप्त किया, किन्तु उन-
में त्रिपुरामें जो चति हुई, वह पात्रतक मंथोहित न हो
सकी। मुमनमान हीवान मोर ब्रह्मोमें पावैव त्रिपुरा
काधीन राज्य पश्य समस्त ध्यान मुमनमान राज्यमें भिना
निए और उन्हें मुमनमान जमींदारके हाथ भौवा।
केवल जगन्नाथ-मायिकाको २२ परगनेका चकला रोमना
वाद आगारके रूपमें दे दिया। यह जमींदारी अब भी
मौजद है। त्रिपुराके राजा पमो इसका कर वृद्धि-
सकारको देते हैं।

धर्ममायिका राज्यपुन हो कर मुमनमानोंकी महा-
यतामें बिना और कोई दूधरा उपाय न देव मुनिदा-
वादकी चले गये। वहाँ उन्होंने जगत् में मेम मित्रता का
और उनकी महायतामें पुनः राज्यप्राप्त किया। धर्म-
मायिकामें मंगना भावामें महाभारतका चतुर्वाद किया।
योद्धे समयके बाद धर्ममायिकाकी मृत्यु हुई।

बाद टाकाके फोजदारने धर्ममायिकके बड़े मन्त्रके
गङ्गाधरकी उनके पिताके समयका भाकी राजल परि-
ग्रीध करनेकी कहा। इस पर उन्होंने अपनी चतुर्मता
प्रगट की। सुवराज चन्द्रमणि वह ब्रह्म परिग्रीध कर
फोजदारकी महायतामें मुकुन्दमायिक नाममें राजा
हुए। मुकुन्दने शास्त्र पा कर अधर्म नहीं किया।
उनने अपने भतीजे गङ्गाधरकी ही सुवराजके वद पर
और बड़े मन्त्र पांचकोहीकी बड़े ठाकुरके वद पर
निवृत्त किया तथा जामीनस्वरूप पांचकोहीकी मुनिदा-
वादमें रथ छोड़ा। मुकुन्दमायिकने चन्द्रमणि नामक
एक प्रातिकी दायी एककुनेके निवे मतिपा पहाड़ पर
भेजा। वहाँ चन्द्रमणिने सुवराजराय नामक पार्वतीय
शिष्या महारके हाथ मिल कर मुकुन्दमायिककी एक पत्र
निय भेजा, कि—'पार्वतीय त्रिपुराभ्य चतन-मन्त्रपमें
रहना नहीं चाहते। महाराजकी चतुर्मति पामें वे
फोजदार-मायुधर राजाके निवे मुनियकी बचकरनेमें
प्रसुत हैं।' मुकुन्दमायिकने पत्र पा कर चिन्तित हो उत्तर

दिया, कि—'पिता नहीं हो सकना, क्योंकि उनके बड़े
मन्त्रके जामीनस्वरूप मुनिदावादमें है।' चन्द्रमणि
इस पर भी स्थिर न हो कर फोजदारकी मार जानमें
निये तैयार हो गये। मुकुन्दमायिकने चिन्तित
विमृष्ट हो कर वह पत्र फोजदारको दिया। फोजदारने
प्राथरवाके निवे लतन न हो कर मोचा, कि महाराज
मुकुन्द भी इस वद्वपनमें शामिल है। सुतरां उन्होंने
जगत्, उनके मन्त्रके चन्द्रमणि, लतनमणि और बड़े
ठाकुर गङ्गाधरकी कैद कर लिये। चन्द्रमणिठाकुरने
यद मन्त्राद वा जर समर्थ या उदयपुरकी घेर लिया।

इस बीच महाराज मुकुन्दने यवनके हाथ मन्त्र
की जाने पर बिज पाकर पाचदश्या कर डाला। रामो
सती होनेकी तैयार हो गईं। इस पर महार सुवर-
नारायणने उन्हें उत्तराधिकारी निवृत्त करनेकी प्रतिज्ञा
की। रामने पहले अपने पुत्र पांचकोही, और उनके
बाद गङ्गाधरकी उत्तराधिकारी निर्देश किया। किन्तु
सुवरनारायणके चन्द्रमणिकी उत्तराधिकारी निर्वाचित
करने पर रामने चित्तमें बैठ पावहरया की।

महार सुवरनारायणके माहायमे चन्द्रमणिठाकुर
जयमायिक (२५) नाम धारण कर राज्यमिहामन
पर बैठे। वे गोविन्दमायिककी छोटे भाईकी छोटे
मन्त्रके ज्येष्ठ पुत्र थे। फोजदारने अपने अपना
पर लमा प्रार्थना मांगी। इस पर जयमायिकने उन्हें
पमवदान दिया। चन्द्रमणि प्रभृति राजकुमार बृटका
पाकर टाकाकी चतन दिये।

पांचकोही उस समय भी बङ्गालकी जवाबकी निकट
थे। वे बहुत दिनमें त्रिपुराका कोई मन्त्राद नहीं
पामें ले जावकी चतुर्मति ने नाम पर चढ़ कर चट्टेगकी
पा रहे थे। पन्नागममें उन्हें क्यों ही अणुमणिकी पदमें
राज्यकी चतन्य मामूम हो गई क्यों ही वे पुनः मुनिदा-
वाद भोट गये। जवाबकी उनमें सब भातें पुन कर
टाकाकी गामनकहाकी उन्हें महायता देनेका पादेम
किया। बङ्गालके जवाबकी इस समय पांचकोहीकी
मिहामन पर बैठनेकी चतुर्मति चरद्वय एक मनद दी।

पांचकोहीके समेत चतुर्मति चरद्वय पर प्रजा और
सभी क्षमधारिणोंने उन्हें अपना राजा बनाया। उदय-

डास कर भाग पर चढ़ाते हैं। थोड़ा देर बाद उसे उतार कर उसमें एक सेर मधु मिला देते हैं। इससे विटोपज तिमिररोग दूर हो जाता है।

त्रिफलाधमहाष्टत—एत ५४ सेर, क्वाथके लिए मिला हुआ त्रिफला ५२ सेर, जल ५६ सेर, शेष ५४ सेर, शङ्ख-राजस ५४ सेर पचवा वामकमूल ५२ सेर, जल ५६ सेर, शेष ५४ सेर, शतमूलोका रस ५४ सेर, क्वागदुग्ध ५४ सेर पचवा पूर्व वत् काय ५४ सेर, चायनेका रस ५४ सेर, कल्कायं पीपल, चोनी, झाला, त्रिफला, नीलोत्पल, यष्टिमधु, औरकाकोलिका, गन्धारीकी छाल, कण्टकारी आदिका मिश्रित भाग ५१ सेर लेकर यह महाष्टत प्रसृत करते हैं। इसके सेवन करनेसे सभी तरहके चक्षुरोग नष्ट हो जाते हैं। यह नेत्ररोगके लिए राम-धान है। (शेफरर०)

२. क्षमिरोगोक्त एत—श्रीपधमेद। यह एत ५४ सेर, गोमूत्र ५६ सेर, कल्कायं त्रिफला, निसोद्य, दन्तोमूल, घच, कमलगडा ५१ सेर लेकर प्रसृत किया जाता है। इसके सेवन करनेसे सब प्रकारके क्षमिरोग जाति रहते हैं।

हृत्सरो विधि—हड़, वहेडा, चावल, विडङ्ग प्रत्येक १६ पल, पोपल, पीपरामूल, चरई, चीतामूल, सोंठ मधुकी मिला कर १६ पल, दशमूल १६ पल, पाकायं जल १६ सेर, शेष ५८ सेर, एत ५४ सेर, कल्कायं मध्व लवण ५२ सेर सबकी एक साथ मिला कर भाग पर चढ़ाते हैं। बाद भाग परसे उतार कर ५१ सेर चोनी डाल देते हैं। इसका गुण भी पूर्ववत् है। (शेफरर०)

त्रिफलीकृत (सं० त्रि०) त्रि. त्रिवारं फली कृतः त्रिगुणी-कृतः। वह चावल जिसकी भूसी तीन बार निकाली गई हो।

त्रिबन्दरम्—मन्त्राजके त्रिवाङ्गु राजाकी एक राजधानी। यह अक्षा० ८° २८' ०" और देशा० ७५° ५०' पूर्व में अवस्थित है। भूपरिमाण ८८८ वर्गमील है और लोक-संख्या प्रायः ५७८८२ है। मलयालम् प्रदेशकी सामा-जिक प्रजाका एक केन्द्र होनेके कारण यह नगर बहुत प्रसिद्ध है। त्रिवाङ्गु राजाके प्रासाद, सभामण्डप और दुर्ग इनो नगरमें हैं। नगरके चारों ओरका दृश्य बहुत मनोहर है। समुद्रके किनारेमें यह एक छोम

दूर है। इसके सामने समुद्र गर्भमें एक बालूका चर और टनदभविशिष्ट दीप पश्चिमघाट पर्यन्तके कोह-वर्ती जमोनेके साथ मिल गया है। कुरुमानय नदी इस नदीके निकट हो कर बहती है। नगरका दक्षिण भाग अस्वास्थ्यकर है। घने मारियलके बगीचे होनेके कारण उस बगीची जनवायु खराब है। यहांका दुर्ग उतना मजबूत नहीं है, चारों ओर दृढ़ और जंघे प्राचीर से घिरा है। त्रिवाङ्गु राजाका यही सबसे प्रधान शहर है। यहां त्रिवाङ्गुके महाराज और हटिगसेना रहते हैं।

दुर्गमें राजवंशका प्रासाद तथा पद्मनाभ नामक विष्णुमूर्तिका विख्यात मन्दिर है। इन सब चट्टालि-कार्मिके बड़े बड़े बरामदे, भरोखे आदि काश्कार्य-युक्त हैं, जो देखनेमें बहुत सुन्दर लगते हैं। पद्मनाभका मन्दिर बहुत प्राचीन और पुण्यस्थान होनेके कारण प्रसिद्ध है। मन्दिरके रहनेसे हो यहां त्रिवाङ्गुकी राजधानी बसा कर लाई गई। मन्दिरकी देवोत्तर-सम्पत्तिसे वार्षिक ७५ हजार रुपयेकी आय है। वहुतोंने प्राध-निक राजाओंको यह अस्वास्थ्यकर स्थानका दुर्गवास छोड़नेके लिए प्रयत्न किया, किन्तु प्राचीन वास्तुस्थान की माया तथा ब्राह्मणोंके कथनानुसार वे यह स्थान छोड़ देनेकी राजी न हुए। प्रति पुण्यार्ष कर्ममें महा-राजको उपस्थितिका प्रयोजन पड़ता है, इस कारण वे और भी पद्मनाभके मन्दिरका सान्निध्य प्राप्त करित्याग नहीं कर सकते। इस नगरमें महाराजकी एक टकसाल जिसमें पैसके सिवा और कोई मुद्रा नहीं चलती है। शहरके उत्तरमें स्त्रीधधार, अस्वागार, अस्वाताल, नायर-विषयक नामक नायर मैन्यदलके कार्यालयदि और यूगोपेयनके वासस्थान है। मैन्यदलमें प्रायः १४ सौ सेना हैं जिनमेंसे तीन यूरोपीय सेनानायक हैं। ये लोग मन्त्राज गवर्नमेंसे पदमे नियुक्त हुए हैं। महाराज-के बाद ही दीवानका पूरा अधिकार रहता है। उनमें वासस्थान तथा कार्यालयादि भी इसी शहरमें हैं। शहरमें एक मठर अदालत, एक बिक्रिस्थालय और पंगरेज-डाक्टरके अधीन अस्पताल है, जिनमेंसे गर्मियोंका अस्-ताल, साधारण अस्पताल, पागमोंका अस्पताल और

पुरमें मढ़ाई डिहो। द्वितीय जयमाविष्य पराजित हुए। ११४८ त्रिपुराब्देमें (१०४८ ई०में) पांचकोशो इन्द्रमाविष्य (२५) नाम पदस्थ कर सिंहासन पर पारुद्ध हुए। उनके भाई जगन्मणि युवराज और हरिमणि बड़े ठाकुर हुए।

जयमाविष्य राजपूत हो कर हरिनाथय चौधरो नामक एक व्यक्ति समस्त मेहरकुलके मेष्ठदल और १४ सो सेनापतियों साथ से त्रिपुराके कई स्थान मूटने लगे। अन्तमें उन्होंने रियासत देकर टाकाके गामनकर्त्ता जनकादेरवांको समोभूत किया तथा इन्द्रमाविष्यके निरुद्ध सत्तेजित किया। रोमनाबादके बाको पञ्जानाके कारण जनकादेर वां इन्द्रमाविष्यको कैद कर टाका ले गये। इस समय टाकामें धर्ममाविष्यके पुत्र गङ्गाधर रहते थे। उन्होंने जनकादेर वांको घुस देकर राजा कोना खाहा। महेश्वर रवि नामक एक व्यक्तिने एक टन सेना साथ से जनकादेरको पाप्राधुमार गङ्गाधरको त्रिपुराके सिंहासन पर बिठाया। गङ्गाधर द्वितीय उदयमाविष्य नामसे राजा हुए।

जयमाविष्य राजपूत हो टाकाके १ परगनेका जमोदारोसत्य से कर वास कर रहे थे। (इसके बंगधर चब भी टाकामें हैं। वे 'कादवासे राजा' वा 'टाकाके राजा' नामसे प्रसिद्ध हैं।) जयमाविष्यने सफलता प्राप्त कर सकने पर तब जगन्नामको पुनः भुवामें डालनेको चेष्टा की। उन्होंने कहना भिजा, कि—'यदि जगन्नाम रियासत देकर टाकाके नवाबको समोभूत कर सकें, तो वे (जयमाविष्य) पुनः राजा हो सकते हैं और राजा हो पर जगन्नामके भाई नरहरिकी युवराज चवग्न बनायेंगे।' जगन्नामने भी वही हो किया। जनकादेर वां भी चणके दास थे। उन्होंने भी इसी समय उदयमाविष्यके मदसे जयमाविष्यको त्रिपुराका राजा खोकार किया। और उदयको भगा कर उन्हें सिंहासन पर बिठाया। जयमाविष्यने पुनः राज्य वाकर जगन्नामके भाई नरहरिकी युवराज बनाया।

इस समय नियादग महेश्वर टाकाके गामनकर्त्ता हुए। दुधेनकुली वां उनके सहकारी थे। इन्द्रमाविष्यने दुधेनकुलीसे मित्रता की और उनके सहा-

यतासे बङ्गालके नवाब चमोवर्दी, वांसे मेरु मेजर त्रिपुरा पर अधिकार जमाया। द्वितीय जयमाविष्य कैदो बनाकर सुगिंटाबाद भेज दिये गये। इन्द्रमाविष्यने दूसरी बार राज्यप्राप्त कर सुगिंटाबादमें एक प्रतिनिधि रखा। कुछ दिनोंके बाद सुगिंटाबादने मन्वाट पाया कि जयमाविष्यने मन्वाबको प्रियगद हाजो दुधेनके साथ मित्रता की है और हाजो दुधेन उन्हें राज्य देनेको चेष्टामें हैं। इन्द्रमाविष्य उद्विग्न हो सुगिंटाबाद गये और उन्होंने पत्र वांसे चलावर्दी वांसे कह सुनाई। नवाबने हाजो दुधेनको इसके लिये तैयार कर जयमाविष्यको कारागारमें रखनेका आदेश दिया। इन्द्रमाविष्य अपने राज्यको मोट पाये। इसके बाद हाजो दुधेन चवमागका मदना लेनेके लिये कुमिहाके फौजदार हो कर त्रिपुरा आये और इन्द्रमाविष्यके राज्यमें चलाचार करने लगे। इन्द्रमाविष्यने इसे सहन न कर नवाबको खबर दी। उन्होंने इसका पशुमन्त्रान लेनेके लिये दुधेन चवमागको भिजा। वे इसका पता लगा कर हाजो दुधेन और इन्द्रमाविष्यको साथ से सुगिंटाबाद गये। नवाबने हाकाका ही दोष ठहरा कर उन्हें इन्द्रमाविष्यको सतिपुर्ति करनेको कहा। १०४४ ई०में इन्द्रमाविष्य इस उपनयनमें सुगिंटाबादमें थे। मरहटा युद्धमें नवाबने उन्हें एक टन सेनाका भार सौंपा, किन्तु गौरीरिक्त संस्थ रहनेके कारण वे युद्धमें जान सके। उनके पत्न्यवृत्ताकी बात सुनकर नवाबने हाजो दुधेनके ऊपर विजिहाका भार दिया। हाजोने विजिहाके साथ परामर्श करके जो पौषध उन्हें लिखाई वो, सचोने उनका प्राणाल दया। नवाबने जोट कर उनके पौत्र को और शत्रुसम्राट सुनकर बहुत पासेप किया। बाद उन्होंने उनके छोटे भाईको राज्य देनेके लिये कहा जोत्रदार हाजो दुधेन वही हो करनेको राजा हुए और कुमिहा पहुँच कर उन्होंने युवराज जयमाविष्यको रोमनाबादमें भगा दिया एवं समस्त गाओ और पशुमन्त्राज नामक दो अहिर्वाक ऊपर गामनभार परोष किया। युवराज जयमाविष्य बाहुबलने स्वाधान त्रिपुराके कुछ पंग चपने दखनमें कर लिये। इसके बाद हाजो दुधेन सुगिंटाबाद आए और द्वितीय जयमाविष्यको कारागारमें

विमलसौरीगंगा पर्यन्तान् प्रवतन्त्य है । यहाँ महाराजका एक कालेज है जिसको बनावट देखने योग्य है । १८२५ ई० की शहरमें एक मान-मन्दिर स्थापित हुआ है । महाराज ही इस मन्दिरके अधिष्ठाता हैं । १८५४ ई० में इस मन्दिरको एक माया भगवत्सुन्दर पर्वतके ऊपर स्थापित हुई है । वही यहाँ यूरोपीय अतिथियों रहते थे, अभी उनको लगभग परदेसीय अतिथियों है । स्वर्ण पर्वतके कारण १६६३ ई० में भगवत्सुन्दरका मान-मन्दिर तोड़ डाला गया । यहाँका 'नेपियर स्पृजियम्' नामक जट्टधर बहुत सुन्दर है । विवाह-राज्यकी ४५ पतिव्रियावाचीमेंसे प्रधान पतिव्रियावासी जो इसी नगरमें अवस्थित है, राज्ययत्ने परिवर्तित होती है । 'विवाह-राज-गङ्गा' नामक सामाजिक पत्र मलयालम् और बंगरेजी भाषा में इसी स्थानसे प्रकाशित होता है । नागरकयल शहरमें 'विवाह-र टाइम्स' नामक बंगरेजी समाचारपत्र महीनेमें तीन बार निकलता है । विवाह-रुके राजाकी राय सेकर चहरेजीसे यहाँ टेलि-ग्राफवाहिक छोड़ा गया है ।

विश्वम् (सं० पु०) १ स्वर्णके पीछे एक राजाका नाम । २ जापदादि तीनों प्रवस्थाके जीव ।

विश्वम् (सं० पु०) विलोकका वस्तु ।

विश्वम् (सं० पु०) विप्रपिता वनिः । सदरस्थित वली-मय, वे लोग वल जो पैर पर पड़ते हैं ।

विश्वम् (सं० पु०) तिस्त्रो वस्त्रो यत्त कपः । १ बाघ । २ मलदार, गुदा ।

विश्वम् (सं० पु०) त्रयो माहवो वस्त्रः । १ वस्त्रावृत्तमैत, वस्त्रे एक पशुचरका नाम । २ पशुमुखाकारमैत, तलवारका एक भाग ।

विश्वम् (सं० पु०) त्रयो भागां शरीराणां समाहारः । १ जन्मादि रागितय, जन्म इत्यादि तीनों रागि । २ तीन रागि । (वि०) १ नक्षत्रमययुक्त, विश्वमें तीन नक्षत्र ही, ऐवती, पश्चिमी और भरणी नक्षत्रयुक्त पाणिन, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद नक्षत्रयुक्त भाद्र, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी और इत्यादि नक्षत्रयुक्त जाण्डिन्य नाम ।

विश्वम् (सं० पु०) त्रयो भूतानि वक्रानि यदा । १ य

विश्वम्, तीन जगहमें देहा, यौवनको एक मूर्ति जिसमें भगवान्की घोषा, कटि घोर जाडू कुच यज्ञ भावसे बने होते हैं ।

विश्वम् (सं० पु०) १ मातावृत्त इत्येवम्, एकमात्रिक इत्येवम् नाम । इसके प्रत्येक चरणमें १२ माताएँ होती हैं और १०,८,६ माताएँ पर यति होती है । २ तावत् साठ मुख्य भेदोंमेंसे एक । इसके एक गुरु, एक लघु और एक मूल माता होती है । ३ शुद्ध रागका एक भेद । (वि०) ४ विश्वम्, तीन जगहमें देहा ।

विश्वम् (सं० पु०) विश्वम् जीवा, इत्येवम् । विष्णु, व्यासकी पापी रक्षा ।

विश्वम् (सं० पु०) व्यासार्थ रक्षा, विज्ञाता ।

विश्वम् (सं० पु०) तीन वातादि होयान् भवति परि-हसतोति भवत्-पश्चत् नती कोप् । विज्ञाता, निरीय ।

विश्वम् (सं० पु०) विश्व नक्षत्रतदनास्तमर्द्धमेष्वपि भद्रं यस्मिन् । प्रसन्न, भोग, रतिक्रिया ।

विश्वम् (सं० पु०) विश्वम्, व्यासकी पापी रक्षा ।

विश्वम् (सं० पु०) त्रयो भागः त्रयो मन्त्रा मन्त्रय पूर्यार्थत्वात् । त्रयो भाग, तीसरा हिस्सा ।

विश्वम् (सं० पु०) त्रयो बन्धनके एक राजाका नाम ।

विश्वम् (सं० पु०) विश्व कालेषु मावोष्य । विश्वानि पदार्थ ।

विश्वम् (सं० पु०) विश्व सुखितम् । तिरहुत या मिथिला-देश ।

विश्वम् (सं० पु०) त्रयो भुजा यत् । विश्वम्, तीन भुजाओंका चेत । क्षेत्र देशों ।

विश्वम् (सं० पु०) त्रयो भागं भुवनानां लोकानां समा-हारः, पञ्चादित्यात् कोप् । त्रिलोक, वर्ण, दुर्भी घोर पाताल ।

विश्वम्—समाधितम् नामक जैन-ग्रन्थके रचयिता ।

विश्वम् चक्रवर्त्ति—दक्षिण प्रदेशमें राजाघोरी के राजा । चेर, चोच, पाण्ड्य, चालुक्य प्रधान मन्त्रिमें बहुतने राजाघोरी यह पदाधिपत्य को दी ।

विश्वम्—१ गुजरातमें चोलीकर मन्त्रि यह राजा का नाम । ये तिरहुत नामसे प्रसिद्ध है । २ ई० में १०८८

मुक्त कर त्रिपुरा में गए। जहाँ समय टाकाई बनको
मृत्यु हुई। तब राजाजीने उनके भाई हरिमल्लकुं-
को विजयमालिका नाम देकर मिश्रामन पर विवाह
पौर रोमनाबादमें मामिक एक हजार रुपये तब देने को
प्यवस्था कर दी। रोमनाबादका राजा स्वामी की रक्ष करने-
के कारण विजयमालिका को दत्त कर दिए गए और कुछ
कालके बाद वहाँ अपना प्राधान्य दृष्टा।

समय राजा को पौर चमदुन राजा रोमनाबादमें मामिक
करने लगे। त्रिपुरा आगने कर मांगने पर राजाजीने कहा
कि राजा स्वामी छोड़ कर पौर राजाजीको बंधन योग कर
लगे देंगे। इस पर उन दोनों मुसलमानोंने परामर्श
कर द्वितीय उदयमालिका को भीने बनमानो डाकू-
को लक्ष्मणमालिका नाम देकर त्रिपुराको राजा बनाने-
का सहाय्य किया। युवराज लक्ष्मणमालिकाको यह बात
मालूम होने पर राजाजीने त्रिपुराका राजमिश्रामन
तोड़ कर लंदीमें बसा दिया। लक्ष्मणमालिका को भीने
यदि हुए मिश्रामन पर परिमिश्र हुए। उन दो मुसल-
मानोंने उनके नामने गोपायानो पौर चमदुन प्रभुति
देनामें लूट-पाट करना चारण को तथा वे लूटके मालने
पचने चमदुन भरने लगे। रोमनाबादको प्रजाके उनके
पत्याचारको सहन न कर नवाब मोर-कागिस चलो
रामे प्रायोजा को। इस पर नवाबने मेला मीज दोनोंको
कौदो बना कर तोपने उड़ा डाला।

१८० त्रिपुराब्दे (१८० ई०में) युवराज लक्ष्-
मणि नवाब कागिस चलो चोको मद ले कर लक्ष्-
मालिका नामने राजा हुए। राजाजीने त्रिपुरामें नवाज
राजमिश्रामन प्रभुति किया पौर उदयपुर परिमिश्र कर
चमदुनमिश्रामन राजधानी स्थापित की। लक्ष्मणमालिका
पचने भाई हरिमल्लिको युवराजके पद पर पौर चमदुन
चलेके पौर मोरमल्लिको बड़े ठाकुरके पद पर नियुक्त
किया। इस समय चमदुनमें मुसलमान बहुत प्रमा-
चार कर रहे थे। लक्ष्मणमालिकाके लक्ष्मणमालिका। महा-
राज लक्ष्मणमालिकाके पराजित हो कर दुर्गमें पालय
किया पौर चमदुन चमदुनमिश्र कर मुसलमानोंको
परास्त किया। लक्ष्मणमालिका सम्राज्यमें यह भी जानने
कालके लक्ष्मणमिश्रामन है। इस समय चमदुनमें

बंगाल दमन किया। पौर १८११ ई०में लक्ष्मणमालिका
ने चमदुनको दोबारी पाकर राज्यमिश्र नामक एक
लक्षिको रिमिष्ट बना कर त्रिपुरा भेजा।

२१ लक्ष्मणमालिकाके कुमिसमें जो मदद दृष्टा-
मल्लिको चारण दिया था, उसे महाराज लक्ष्मणमालिकाके
मामिक कर समने जयचामको मूर्ति स्थापित की। युव-
राज हरिमल्लिको लक्ष्मणमालिका पौर राजधरमल्लिको नामक दो
मिश्रामन छोड़ कर पौरको लक्ष्मणमालिका मिश्रामन। महाराज लक्ष्-
मणमालिका पौर उनको लक्ष्मणमालिका देवो लक्ष्मणमालिका
चमदुन पौर राजधरका ममादर लक्ष्मणमालिका। १८२।
त्रिपुराब्दे (१८० ई०को, १९०) लक्ष्मणमालिका। महाराज
लक्ष्मणमालिकाको मृत्यु हुई। उस समय कुमार राजधर
कुमिसमें पौर रिमिष्ट लक्ष्मणमालिका चमदुनमें थे।

सामोको मृत्यु के बाद राजा लक्ष्मणमालिकाको त्रिपुरा
राज्य करने लगे। रिमिष्टमालिकाके लक्ष्मणमालिकाके लक्ष्मणमालिका
लक्ष्मणमालिकाके यह सहाय्य दृष्टा था। मिश्रामनके चमदुन-
मालिका चमदुन पर राजाजीने लक्ष्मणमालिका के लक्ष्मणमालिका
मिश्रामन पर लक्ष्मणमालिका के लक्ष्मणमालिका चमदुन को
लक्ष्मणमालिका। बड़े ठाकुर मोरमल्लिको लक्ष्मणमालिका
कर लक्ष्मणमालिका करनेके लक्ष्मणमालिका हुए, किन्तु लक्ष्मण-
मालिका को जानने के कुछ भी कर न सके। लक्ष्मणमालिका
लक्ष्मणमालिकाके लक्ष्मणमालिका मिश्रामन पचिहार
करनेकी चेष्टा की, किन्तु लक्ष्मणमालिकाके लक्ष्मणमालिका के
बमोभूत हुए।

लक्ष्मणमालिकाके लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका
पौर लक्ष्मणमालिकाको दोबो नामने लक्ष्मणमालिका है। लक्ष्मणमालिका
लक्ष्मणमालिकाके लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका त्रिपुरापति
मालिका किया। १८२५ त्रिपुराब्दे (१८० ई०में) महाराज
राजधरमालिका मिश्रामन पर लक्ष्मणमालिका पौर लक्ष्मणमालिका
महाराज लक्ष्मणमालिकाके पुत्र दुर्गमल्लिको लक्ष्मणमालिका
युवराजके पद पर नियुक्त किया। राजधर राजा हुए
पौर, किन्तु वे लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका
इसलिये चमदुन मदमालिका रोमनाबाद कुछ दिनोंके
लिये त्रिपुराके लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका दिया। इस समय
लक्ष्मणमालिका १८२००० रुपये की थी। महाराज
चमदुन लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका लक्ष्मणमालिका

मन्त्रमने ले कर केवल चार वर्ष तक राज्य किया था । किमोके मतसे इन्होंने ही सूर्यगतकको टोका रचा था ।

२ गोहराज धर्मपालके महासामन्ताधिवसि । ये नाम्नाय चौर पण्डितों का खूब पादर करते थे । इन्होंने पतुलोधसे राजा धर्मपालने नारायण भट्टारकको बहुत-से जमोन दान दो था । दूताहद नामक संस्कृत काव्या नाटकके रचयिता कवि सुभटने इन्होंने पायय चौर उस्ताहसे उल्ल पुष्पक रचना की थी ।

त्रिभुवनवास—नारदविलास नामक संस्कृतग्रन्थके रचयिता ।

त्रिभुवनेश्वर लिङ्ग (सं० श्लो०) भुवनेश्वर वा एकान्त चैल-का प्रधान लिङ्ग । एकाग्र और भुवनेश्वर देखो ।

त्रिभुवनसुन्दरी (सं० श्लो०) १ दुर्गा । २ पार्वती ।

त्रिभूम (सं० पु०) तिस्रो भूमयः ऊर्ध्वाधो मध्यस्था पृथ्वी, पच समामाना । प्रासादभेद, तीन छहोंवाला मकान, तिमहला घर ।

त्रिभोजन (सं० श्लो०) त्रितिजहत्त पर पढ़नेवाले ज्ञानिहत्तका ऊपरी मध्य भाग ।

त्रिमङ्गल—एक विख्यात द्वाविह पण्डित । इन्होंने त्रिमङ्गल-वार्त्तिक नामक मध्याचार्यका मतपोषक एक बड़ा ग्रन्थ प्रणयन किया है ।

त्रिमङ्गला (सं० श्लो०) लता भेद, एक प्रकारकी लह-सुली लकड़ी ।

त्रिमद (सं० पु०) त्रिगुणितो मदः संप्राप्तात् कर्मधा० ।

त्रिमासिक, त्रिमद, चौर चमित्रजमद ये तीन प्रकारके महोत्सव वर्ष व्रथ, परिवार, विद्या और धन इन तीन कारिकाओं के नामों पर चमित्रा । २ सुप्ता, चित्रक, विष्णु, शोभा, भीता और बाय विडङ्ग इन तीन चीजोंका वस्तु ।

त्रिमास (सं० श्लो०) त्रिगुणित मसः संप्राप्तात् कर्मधा० । १ पुष्पादिदिन, पुष्प नीली और गहरा इन तीनोंका समुह । (पु०) २ जलके ईकदिस, जलके रस एक चक्रका भाग । ३ जलके रस के समान, जलके रस के समान । ४ जल के त्रिगुणित वस्तु का वस्तु । ५ जलके त्रिगुणित वस्तु का वस्तु । ६ जलके त्रिगुणित वस्तु का वस्तु ।

त्रिमधुर (सं० श्लो०) त्रिगुणित मधुर संप्राप्तात् कर्मधा० । घी, गहरा, चौर चीनी इन तीनोंका समुह ।

त्रिमङ्गल—इस नामके बहुतसे संस्कृत और तामिल ग्रन्थकार दक्षिण प्रदेशमें हो गए हैं, जिनमेंसे निम्नलिखित प्रधान हैं—

१ म—इन्होंने गीतगोरी, गोपालाष्टा और भक्ति-विनाम चम्पू प्रणयन किए ।

२ य—इन्होंने 'धनुव्याख्या' नामक सिद्धान्तकौमुदीकी एक व्याख्या पुस्तक लिखी है ।

३ य—ये तिरुमल चावाई नामसे प्रसिद्ध हैं । इन्होंने मिडि नामक वेदान्त, सहस्रकिरणो और मारकौमुदी प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ इन्होंने बनाये हुए हैं ।

त्रिमङ्गलान—पाश्चात्यनीय विध्यपराध-प्रायश्चित्त नामक संस्कृत ग्रन्थकार ।

त्रिमङ्गलतन्त्र—कात्यायनज्ञानसूत्रकी एक टोकाकार ।

त्रिमङ्गलभट्ट—पल्लवारमङ्गल नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता ।

त्रिमङ्गलवैद्य—पायुर्वेदके ज्ञाननेवाले एक प्रसिद्ध वैद्य पण्डित । ये मिङ्गलके पोत्र, बल्लभके पुत्र और रमप्रदीपके रचयिता गहराभट्टके पिता थे । इन्होंने द्रव्यगुणवतश्रीको, योगतरङ्गिणी, हस्तमांशिकामाता और वैद्यचन्द्रोदय आदि वैद्यकग्रन्थ प्रणयन किये ।

त्रिमात (सं० त्रि०) त्रयाणां लोकार्णा माता, निर्माता ।

त्रिसोक्त-निर्मापकारक, तीनों लोकोक्ति बनानेवाले ।

त्रिमात्र (सं० पु०) त्रिचः मात्रा उच्चारणकालेभ्यः प्रुत स्वर । एकमात्र स्वर ऊँ, द्विमात्र स्वर दीर्घ, त्रिमात्र स्वर प्रुत और व्यन्जन परदेमात्र है, प्रणव त्रिमात्र है, प्रत्येक कार्यके प्रारम्भमें त्रिमात्र प्रणव उच्चारण करना पड़ता है ।

त्रिमात्रिक (सं० त्रि०) तीन मातापीका, जिसमें तीन मात्राएँ हो, प्रुत ।

त्रिमात्र (सं० श्लो०) त्रयाणां मार्गाणां समाहार । तीन प्रथ, त्रिगुणनी ।

त्रिमात्र (सं० श्लो०) त्रिभिर्मार्गे गच्छति गम-उ ।

राजधरने मणिपुरदे राजा जयसिंहको कन्यासे विवाह किया। इनमे इन्हे कोई सन्तान न थी। दूसरी स्त्रीके गर्भसे उनके चार पुत्र थे जिनमेंमें दो को गंग-कान्मने हो मृत्यु हुई और दो जीवित रहे।

इनके समयमें ब्रह्मदेशाधिपतिने त्रिपुरा और पारा-कान पर आक्रमण किया। सेनापति धायुमणिने भग्न लोगोंको पराजित किया। पाराकान ब्रह्मदेशमें पश्चि-कार्ममें थाया। कृत्रियेकि विद्रोहो होने पर सेनापति धायुमणिने उन्हें परास्त किया।

राजधरने अपने बड़े लहके रामगङ्गाको बड़े ठाकुर-के पद पर नियुक्त कर उनके हाथमें राज्यशासनका भार सौंपा। वे पिछमन्त्रो कालीचरणको मनाह ने कर पत्नी तरङ्ग राजकायें चलाते थे। ओहइके सिधो भद्र जायस्यकी कन्या चन्द्रतारासे रामगङ्गाका विवाह हुआ था।

राजधरने राजधानीमें हृन्दावन नामक एक विषहकी प्रातहा को और मोगराधाममें राजधरागन्ध नामका एक बाजार स्थापित किया। राजधर पत्निम धयल्यामें भैराव्य चवलस्यन कर १२१४ त्रिपुराब्दमें (१८०४ ई०में) कराल कालके गालमें फंसे। पिताकी मृत्युके बाद राम-गङ्गा राजा और भाई कामोचन्द्र युवराज हुए। युवराज दुर्गामणिने कुलाचारासुधार राज्य-धानिके सिधे समिदल किया। पत्निमें १८०८ ई०का १८वें जुलाईका प्रमिसियन काट के मतने भेड़ा रावनावाद जमोदारोंके अधिकारी ठहराये गये। महाराज रामगङ्गामाविषयने सहर होवानामें घोषल की। यहीचने भी दुर्गामणिका सत्व कायम रहा। पत्नि भंगरेज गवर्मेण्डने दुर्गामणिका त्रिपुरापति बनाया। रामगङ्गा राज्य छोड़ कर आइइकी चले गये और वहाँसे विपर्गाव और धामिगिरा नामक दो परगनेका जमोदारों सत्व से कर सपरिवार रहने लगे।

दुर्गामाविषय १८०८ ई०में राजा हुए। उन्होंने पहिले होवान रामराजकी कन्या सुमिता देवीको व्याहा, उनके गर्भमें दो कन्या उत्पन्न हुई। पीछे उन्होंने नकुल गोरनिमको कन्या मधुमतिसे विवाह किया।

दुर्गामाविषयने कामोने मिशका स्थापन और मिश-

मन्दिर निर्माण किया। उन्होंने दो वर्ष राज्य करने दितोय विजयमानिषयके पीत गम्भुचन्द्र ठाकुरको युवराज पदोपयोगी पत्रदण्डादि दिये थे, किन्तु उनका पमियेक नहीं हुआ। गम्भुचन्द्रके हाथमें राज्यभार देकर प्राप कामोको चले गये। राहमें १२२६ त्रिपुराब्द-को (१८०८ ई०में पमिन मामका) पटनेमें उनका देहान्त हुआ।

दुर्गामाविषयकी मृत्युके बाद रामगङ्गा चंगेजके समुद्रहने पुनः राजा हुए। कण्ठमवि ठाकुरके पुत्र (महा-राज राजधरके बड़े भाई) पशुनमवि ठाकुर, मनो-मोत युवराज गम्भुचन्द्र ठाकुर और रामो सुमिता महा-देवीने रीमनावाद जमोदारोंके सिधे सुकहमा चलाया; किन्तु रामगङ्गा माविषय वहाँसे बड़े ठाकुर के हस्ततिसे सहर होवानो पदान्तने उन्हेंका मत्व स्थिर किया गया। सुकहमा मिय होने पर रामगङ्गा १२३१ त्रिपुराब्दमें (१८२१ ई०में) दूसरा बार राजा हुए। कामोचन्द्र पुनः युवराजके पद पर और रामगङ्गाके पुत्र कान्तिमोह बड़े ठाकुरके पद पर नियुक्त हुए।

गम्भुचन्द्र सुकहमें चार कर काईपे भूमति कृत्रियों-के माय मिन गये और युद्धका पावोजन करने लगे, किन्तु त्रिपुरासे सेनापति सुबा धनस्यने पाला हुए। महाराजने त्रिपुरा पर चढ़ाई की, किन्तु रामगङ्गाने अपने कोमलने उन्हें राज्यमें प्रवेश करने न दिया। ब्रह्मपुत्रमें रहने चंगेजोंको महायता की थी।

महाराज रामगङ्गामाविकाने मोगराधाममें एक दोर्विका मुदशर जिमका नाम गङ्गामागर रपा गया। यह दोर्विका पात्र भी वस्तमान है। उन्होंने अपने गुरु भुवमोहन और मुक्तवी और त्रिमोरोदेवी नामके दो विषय प्रतिष्ठित किये। उनके बेलन एक की थी। वे पारमीभावामें पण्डित, मादा, मदा विद्या और मसपुत्रने पढ़े थे। १२३६ त्रिपुराब्दमें (१८२६ ई०में) चन्द्रचरणके समय रातको मयाकमें होवा-गुद का पद और सत्तदत्तमें शानधाम धारण कर महाराज रामगङ्गामाविहा स्वर्गलोकको प्राप्त हुए। हृन्दावनमें भी उन्होंने रामविहारी नामक देवता स्थापित किया। रात के बाद उनके हडिदा हृन्दावनके चढ़ी देहावनमें

त्रिमार्गगामिनो (स० स्त्री०) त्रिमार्गगं गच्छति गम-
यिनि-डोप् । गङ्गा ।

त्रिमार्गा (स० स्त्री०) तयो मार्गाः यस्याः । १ गङ्गा ।
२ तिसुहानो ।

त्रिमार्गी (स० स्त्री०) त्रिमार्गा देवो ।

त्रिमाली—बम्बई प्रदेशमें रहनेवाली एक प्रकारकी
भिजाजीवि जाति । इन लोगोंका कहना है, कि बहुत
दिन हुए हैं तबसे यह जाति कर्णाटक प्रदेशमें था बसो
है । ये लोग तेलगु भाषा बोलते हैं । भिजा जो इन-
की जातिगत उपजीविका है । कोई कोई बड़ाच,
तुलसीमाला, यज्ञसूत्र आदिका व्यवसाय करके भी
जीविका निर्वाह करते हैं । मछली, मांस, शराब आदि
व्यवहार इन लोगोंमें खूब है । ये लोग १० दिन तक
पशुच मानते हैं । आचार, व्यवहार, व्रत, उपवासदि
भराठो कृष्णवियों सरोखा है । वास्तवविवाह और विधवा
विवाह आदिको प्रथा प्रचलित है ।

त्रिसुकुट (स० पु०) त्रीणि सुकुटानोश्च त्र्यङ्गानि यस्य ।
त्रिकुट पर्वत, वह पहाड़ जिसकी तीन चोटियां हो ।
त्रिसुख (स० पु०) त्रीणि सुखानि यस्य । १ शाकामुनि ।
२ गायत्री जपनेकी चौबोस मुद्राओंमेंसे एक मुद्रा ।

सुभा देखो ।

त्रिसुखा (स० स्त्री०) त्रीणि सुखानि यस्याः । बौद्ध देवी-
भेदाः मायादेवी । पर्याय—मायीको, वज्रकालिका,
विकटा, वज्रधाराही, गौरी और पात्रिया है ।

त्रिसुखी (स० स्त्री०) बुद्धकी माता, मायादेवी । महा-
यान शाखाके बौद्धदेवी रूपसे इनकी उपासना करते हैं ।

त्रिसुनि (स० स्त्री०) त्रयाणां मुनेनां समाहारः
पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि ये तीनों मुनि । २
पाणिनि आदि तीनों मुनियोंके बनाये हुए व्याकरण ।

त्रिमूर्ति (स० पु०) त्रिस्रो मूर्तयो यस्य । १ ब्रह्मा,
विष्णु और शिव ये तीनों देवता । २ मूर्त । (स्त्री०)
ब्रह्मशक्तिभेद, ब्रह्माकी एक शक्ति । यह शक्ति एक
रूपकी होने पर भी जगज्जनपालनके रूपमें भिन्न
रूपकी हो गई है । ३ बौद्ध देवीभेद, बोधोकी एक
देवी ।

त्रिमूर्ति (स० पु०) त्रयो मूर्तानि यस्य, ब्रह्म, विष्णु, शिवसमा-

सान्तः । १ तीन देवता । (त्रि०) २ जिसके तीन मूर्तक
हो ।

त्रिमोहानो—यशोर जिलेका एक गण्ड ग्राम । यह प्रसा०
२२५४ उ० और देशा० ८८१० पू०, केरवपुरसे २३ कोस
पश्चिममें अवस्थित है । यहाँ भद्रानदा कपोताचसे प्रलग
हो कर बहती है । जिस जगह इस नदीके तीन सुख वा
सुहाने हो गये हैं वही जगह त्रिमोहानो नामसे प्रसिद्ध
है । नदीके किनारे यह स्थान छाटके लिये प्रसिद्ध है ।
इस जगहके ग्रामका नाम चन्द्रा है । यहाँ पहले बोनो-
का बहुत कारवार चलता था, लेकिन अब चलना
नहीं होता । तभीमो यहाँसे दूर दूर देशोंमें बोनोको
रफ्तानो होनी है । चेत माधमें बारणसीके समय यहाँ एक
बड़ा मेला लगता है । त्रिमोहानोसे एक पाव दूरमें मिर्जा-
नगर है जहाँ मुसलमानोंके समयमें यशोरके फौजदार
रहते थे । १८१५ ई० तक यह स्थान यशोरके मध्य एक
बड़ा नगर गिना जाता था, किन्तु अभी इसका पूर्व
गौरव जाता रहा ।

त्रिम्बक—बम्बईके नासिक जिलेका एक प्रसिद्ध शहर
और तीर्थस्थान । यह प्रसा० १८५४ उ० और देशा०
७१३३ पू० नासिक नगरसे २० मोल दक्षिण-पश्चिममें
अवस्थित है । जनसंख्या प्रायः ३३२१ है ।

स्थानमाहात्म्यमें यह स्थान त्रिम्बक नामसे प्रसिद्ध
है । त्रिम्बकेश्वर महादेव यहाँ प्रतिष्ठित हैं, इसीसे यह
पुण्य स्थानोंमें गिना गया है । इस त्रिम्बकके कई एक
माहात्म्य पाये जाते हैं, जिनमेंसे एक पद्मपुराणके पाताल-
खण्डके भन्तर्गत है, एक वराहपुराणके और एक
नारदपुराणके उत्तर खण्डमें वर्णित हैं ।

यहाँके त्रिम्बकेश्वर-महादेवका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध
है । वर्त्तमान मन्दिर मदागिव रायसे बनाया गया है ।
मन्दिरके खर्चके लिये गयमें रहते वार्षिक १२००० रु०
मिलते हैं । पद्मव्यासाईने यहाँ एक सुन्दर मन्दिर निर्माण
किया था ।

त्रिम्बक दुर्ग पहाड़के ऊपर समुद्रपृष्ठसे ४२४८
फुट और निकटवर्ती ग्रामसे १८०० फुट ऊँचे पर अव-
स्थित है । ऐसा दुर्ग यशोर दुर्गम दुर्ग इस प्रान्तमें और
कहीं नहीं देखनेमें आता । दुर्गमें आनेके केवल दो

गहो गहे । उनके आदि १८ हजार रुपये केवल
गरीबोंको बटि गये थे ।

१२१० विप्राब्दमें (१८२० ई०के मार्च मासमें)
गुजरात कागोचन्द्र राजा हुए । रामगढ़ामणिकरके
समयमें विप्रावर्जित पमिषेक काल तक छट्टिगाराज उनके
विनाश दिया करते थे । छत्ताकिगोर गुजरात और
छत्ताचन्द्र नामक कागोचन्द्रके पुत्र बड़े ठाकुर हुए ।
छत्ताचन्द्रका माता कुटियाची महादेवी मणिपुर-राज-
काया थी । उन्होंने अपने पुत्रोंको गुजरात बनाने कहा,
इसलिए कागोचन्द्रने सनका छेपट सिन्हास कर लिया ।

इस समय लासोमी एक कुर्जन रोमनावादके
पन्थके हुए । ये भ्रातृके विग्रहमण्डल को कर बहुत धन-
गान्धी को गये थे । इनके बड़े लड़के चन्दनगारमें सब
से सुन्दर प्रहासिका बना गए थे । कागोचन्द्र गराब
बहुत होते थे, इसलिए तीन वर्ष राज्य करनेके बाद ही
उनका प्राधान्य हुआ ।

१२१५-विप्राब्दमें छत्ताकिगोर राजा हुए । बड़े
ठाकुर छत्ताचन्द्रके मर जाने पर छत्ताकिगोरने अपने
लड़के ईमानचन्द्रको (जिसको समर ठाई योंको भी)
गुजरातके पद पर नियुक्त किया । छत्ताकिगोरने
तान्त्रिकोंके चतुरोपमे चलेक चण्डालोंका वध किया
और उनके मस्तकमे महापात और लडोमे महागह
को आना बलवा कर उन्हें तान्त्रिकोंको दान दिए ।
मिर्झान, धीर और मुहम्मदगल डोने पर भी ये मन्थ
और चन्द्रियवरायण थे, छत्ताकिगोरके समयमें परधान-
के कमिश्नरने विप्राका स्वाध्याय से लेनेकी चेष्टा की,
किन्तु गवर्नर जेम्सने उसे चतुर्मुदिन न किया । उन-
के दूसरे लड़के छपेन्द्र बड़े ठाकुर हुए ।

छत्ताकिगोर मिर्झारमिय थे । मिर्झारके ईद
उन्होंने जलामूमिमें रासधाना बनाई और उसका
नाम रखा 'मृतग हयेनी' । ८ पुत्र और १५ कन्याएं
कोड़ कर छत्ताकिगोर १२५८ विप्राब्दमें ब्याधातके
मरे । इनके पवरमित व्ययके कारण चाकमे रोमना-
वाद बहुत फैलने परिलक्षित था ।

१२५८ विप्राब्दके २० मासमें (१८६० ई०की
१कोबरवरीको) महाराज ईमानचन्द्रमणिकर राजा

और बड़े ठाकुर छपेन्द्र गुजरात हुए । उस समय
राजाका ११ मास रुपये खर्च था । छत्ताकिगोरने
पयनी माताकी महावरीके लड़के बलरामको पाया-
हामीके पद पर नियुक्त किया । ईमानने उसे छपतुर
समय कर दोयानका पद दिया, किन्तु बलराम अपने
माई ओदामकी महावरीने राजमें चलावा करके पयनी
कोय भर्त्तन लगे । यह देख कर राजा और गुजरात छोड़
कर और सभी बिराह को छोड़े । विप्राके प्रधान मन्त्र
उन्हें मार डालनेकी चेष्टा करने लगे । यन्त्रमें कुत्तियोंकी
सहायता से परोषित और कीर्ति नामक दो व्यक्तिगोंने
नायक को कर बलराम तथा ओदामके घर पर धावा
दिया । बलराम भाग गये और ओदाम मारे गए ।
ईमानचन्द्रने लूट लूट कर बलरामके मृत्यु की बन्दी
और ओदामका काशी का प्रायश्चित्त किया । बलरामके
प्रति प्रजाका विद्रोह ज्ञान कर महाराज ईमानने उन्हें
पदच्युत किया और ब्रजमोहन ठाकुरकी दोयान बनाया ।
दिलीप बिलवमणिकरके पुत्र इस समय केमो नदोके
दक्षिण किनारे बगावतन नामक स्थानमें एक छोटा
राजा स्थापन कर विप्राके दक्षिणार्धमें मूठ मार मर्चाते
थे । ईमानचन्द्रने उन्हें बगोभूत किया । गुजरात
छपेन्द्र पिता मराठे मन्थपाल और कुलियासक्त थे ।
१२६१ विप्राब्दमें उनको मृत्यु हो जाने पर विप्रामें
गान्धि विराजने लगे । ब्रजमोहन दोयान भी करण गोप
न कर सके । रोमनावाद कायमे निकलने पर हो गया ।
राजपरिवारका भरपरोषक लोभकर हो पड़ा । जन-
कर्मके ठाकुर बंगोय दक्षिणारण्य मुजोपाध्याय
इस समय विप्रा था पड़ने । उन्होंने महाराजकी
दिलीया दिया । इस पर महाराजने उन्हेंको मन्त्री
बनाना चाहा, किन्तु उनके चरित्रमें दोष रहनेके कारण
राजगुरु विजयविहारी गोस्वामिने समस्त कर्मचा-
रियोंके परामर्शमे महाराजको इस काममें बाधा दी ।
महाराज ईमान चलायत मुहम्मद थे । उन्होंने मुह-
म्मदके दक्षिण बाबूको बिदा करके उन्हें कहा, 'ममो !
मैं चाकमे रोमनावादको रखाका ब्याव नहीं देखता
हूँ । पायके चरण पर राजा और कर्मचारियों कीज्या
पाय हो इसकी रखा कीजिये'

मन्त्रमे ले कर केवल चार वर्ष तक राज्य किया था ।
- किमोके मतसे इन्होंने ही सूर्ययतनको टोका
रखी थी ।

२ गोहराज धर्मपालके महासामन्ताधिपति । ये
ब्राह्मण और पण्डितोंका खूब आदर करते थे । इन्होंने
चतुर्दश राजा धर्मपालने नारायण भट्टारकको बहुत-
सो समोन दान दी थी । दूताहद नामक संस्कृत काव्या
नाटकके रचयिता कवि सुभट्टने इन्होंने काव्य और
सत्ताहमे उत्तम पुष्पक रचना की थी ।

त्रिभुवननाल—नारदविलास नामक संस्कृतग्रन्थके
रचयिता ।

विभुवनेश्वर लिङ्ग (सं० श्लो०) भुवनेश्वर वा एकाग्र चेल-
का प्रधान लिङ्ग । एकप्र और भुवनेश्वर देखी ।

विभुवनसुन्दरी (सं० श्लो०) १ दुर्गा । २ पार्वती ।

त्रिभूम (सं० पु०) त्रिसो भूमयः ऊर्ध्वो मध्यस्था अधः,
अथ समासनाम् । प्रासादमिदं, तीन खण्डोंवाला मकान,
तिमहता घर ।

त्रिभोजनहसन (सं० श्लो०) त्रितिलहस्त पर पड़नेवाले
क्षान्तिहस्तका लपरी मध्य भाग ।

विमङ्गल—एक विख्यात द्वाविह पण्डित । इन्होंने विमङ्गल-
धार्मिक नामक मध्याचारका मतपोषक एक बड़ा
ग्रन्थ प्रणयन किया है ।

विमण्डला (सं० श्लो०) सूता भेद, एक प्रकारको लह-
रीली मकड़ी ।

विमद (सं० पु०) त्रिगुणितो मदः संप्रात्वात् कर्मधा० ।
विद्यामद, धनमद, और चमिजनमद ये तीन प्रकारके
मदोत्पन्न गर्वग्रथ, परिवार, विद्या और धन इन तीन
कारणोंसे होनेवाला अभिमान । २ सुप्ता, चित्रक,
विहङ्ग, मोथा, चीता और बाघ विहङ्ग इन तीन चीजोंका
समूह ।

विमधु (सं० श्लो०) त्रिगुणितं मधु संप्रात्वात् कर्मधा० ।
१ दुग्धादितय, दुध, चीनी और शर्करा इन तीनोंका
समूह । (पु०) २ ऋग्वेदकेदय, श्रग्वेदके एक
अंशका नाम । ३ ऋग्वेदका यागभेद, ऋग्वेदका
एक यज्ञ । ४ यह व्यक्ति जो विधिपूर्वक सन्न अंग पड़े ।
५ मधुवातादि तीनों ऋग्वेद जाननेवाला पुरुष ।

विमधुर (सं० श्लो०) त्रिगुणितं मधुरं संप्रात्वात्
कर्मधा० । घी, शर्करा, और चीनी इस तीनका
समूह ।

विमल—इम नामके बहुतसे संस्कृत और तामिल ग्रन्थ-
कार दक्षिण प्रदेशमें हो गए हैं, जिनमेंसे निम्नलिखित
प्रधान हैं—

१म—इन्होंने गोतगोरी, गोपालाख्या और भ्र-
विलास चम्पू प्रणयन किए ।

२य—इन्होंने 'चतुर्व्याख्या' नामक सिद्धान्तकौमुदी-
को एक व्याख्या पुस्तक लिखी है ।

३य—ये तिमल आचार्य नामसे प्रसिद्ध हैं । इन्होंने
मिहि नामक वेदान्त, सहस्रकिरणो और मारकोमुदी
प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ इन्होंने बनाये हुए हैं ।

विमलज्ञान—पाश्चात्यानीय विध्यपराध-प्रायश्चित्त नामक
संस्कृत ग्रन्थकार ।

विमलतनय—कात्यायनज्ञानसूत्रके एक टोकाकार ।

विमलमह—पल्लवारमस्वरी नामक संस्कृत ग्रन्थके रच-
यिता ।

विमलमह वैद्य—पायुर्वेदके जाननेवाले एक प्रसिद्ध
ते सन्न पण्डित । ये विद्वन्के पीत, वक्त्रकी पुत्र और
रसप्रदोषके रचयिता शङ्करभट्टके पिता थे । इन्होंने
द्वयगुणयतनको, योगतरङ्गिणी, हस्तमाणिकरमाता
और वैद्यचन्द्रोदय आदि वैद्यकग्रन्थ प्रणयन किये ।

विमाट (सं० त्रि०) त्रयोणां भोक्तारं माता, निर्माता ।

त्रिलोक-निर्माणकारक, तीनों लोकोंके बनानेवाले ।

विमात्र (सं० पु०) तिष्ठः मात्रा सचारणकालेस्य ।
भूत स्वर । एकमात्र स्वर ऊच्च, विमात्र स्वर दीर्घ,
विमात्र स्वर भूत और व्यञ्जन सर्वमान हैं, प्रणव विमात्र
है, प्रत्येक कार्यके प्रारम्भमें विमात्र प्रणव सचारण करना
पड़ता है ।

विमाविक (सं० त्रि०) तीन मातापिता, जिसमें तीन
माताएँ हों, भूत ।

विमार्ग (सं० श्लो०) त्रयोणां मार्गाणां समाहार । तीन
पथ, त्रिमुहानी ।

विमार्गगा (सं० श्लो०) त्रिभिर्मार्गे गच्छति गम-
यन्ना ।

विमार्गगामिनो (स० स्त्री०) विमार्गगं गच्छति गम-
यिनि-डोप । गङ्गा ।

विमार्ग (स० स्त्री०) त्रयो मार्गाः यस्याः । १ गङ्गा ।
२ तिसुहानो ।

विमार्गी (स० स्त्री०) विमार्गा देवो ।

विमाली—बम्बई प्रदेशमें रहनेवाली एक प्रकारकी
भिषाजीवि जाति । इन लोगोंका कहना है, कि बहुत
दिन हुए तो सङ्गसे यह जाति कर्णाटक प्रदेशमें आ बसो
है । ये लोग तेसगुं भाषा बोलते हैं । मिखा हो इन-
की जातिगत उपजीविका है । कोई कोई बद्राच,
तुलसीमाता, यक्षसुत्र आदिका व्यवसाय करके भी
जीविका निर्वाह करते हैं । मङ्गलो, मांस, धराव आदि
व्यवहार इन लोगोंमें खूब है । ये लोग १० दिन तक
पशुच मानते हैं । आचार, व्यवहार, व्रत, उपवासादि
भराओ कृष्णविद्यो सरोखा है । बाल्यविवाह और विधवा
विवाह आदिको प्रथा प्रचलित है ।

त्रिमुकुट (स० पु०) त्रीणि मुकुटानोव त्रिगुणि यस्य ।
त्रिमुकुट पर्वत, वषट् पहाड़ जिसकी तीन चोटियां हो ।
त्रिमुख (स० पु०) त्रीणि मुखानि यस्य । १ शाकामुनि ।
२ गायत्री जपनेकी चोबोस मुद्राओंमेंसे एक मुद्रा ।
मुद्रा देखो ।

त्रिमुखा (स० स्त्री०) त्रीणि मुखानि यस्याः । बौद्ध देवो-
भेदः, मायादेवो । पर्याय—भारोषो, बल्लकालिका,
विकटा, बल्लभाराहो, गौरी और पात्रिया है ।

त्रिमुखी (स० स्त्री०) बुद्धकी माता, मायादेवी । महा-
यान शास्त्रके बौद्धदेवो रूपसे इनकी उपासना करते हैं ।

त्रिसुनि (स० स्त्री०) त्रयाणां मुनेनां समाहारः
पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि ये तीनों मुनि । २
पाणिनि आदि तीनों मुनियोंके बनाये हुए व्याकरण-
त्रिमूर्ति (स० पु०) त्रितोः मूर्त्तयो यस्य । १ ब्रह्मा,
विष्णु और शिव ये तीनों देवता । २ सूर्य । (स्त्री०)
ब्रह्मशक्तिभेदः ब्रह्माकी एक शक्ति । यह शक्ति एक
रूपिणी होने पर भी अलगजलपानलके रूपमें भिन्न
रूपकी हो गई है । ३ बौद्ध देवोभेदः, बौद्धोंकी एक
देवी ।

त्रिसूई (स० पु०) त्रयो मूर्त्तानोस्त, त्रयुर्वी० दीव्यमा-

सान्तः । १ तीन देवता । (त्रि०) २ जिसके तीन मुखक
हो ।

त्रिमोहानो—यमोर जिलेका एक गण्ड ग्राम । यह पचा०
२२५४ स० पोर देगा० ८८१० पू०, केयवपुरसे २१ कीस
पथिममें अवस्थित है । यहां मद्रानदा कपोताक्षसे बनग
हो कर बहती है । जिस जगह इस नदीके तीन मुख वा
सुहानो हो गये हैं वही जगह त्रिमोहानो नामसे प्रसिद्ध
है । नदीके किनारे यह स्थान झाटके लिये प्रसिद्ध है ।
इस जगहके ग्रामका नाम चन्द्रा है । यहां पक्षसे सोनो-
का बहुत कारवार बनता था, लेकिन अब उतना
नहीं होता । नौमो यहांसे दूर दूर देशोंमें चोनोकी
रफ्तानो होनी है । चैत मासमें बारणोके समय यहां एक
बड़ा मेला लगता है । त्रिमोहानोसे एक पाव दूरमें मिर्जा-
नगर है जहां सुसलमानोंके समयमें यमोरके फौजदार
रहते थे । १८१५ ई० तक यह स्थान यमोरके मध्य एक
बड़ा नगर गिना जाता था, किन्तु अभी इसका पूर्व
गौरव जाता रहा ।

त्रिम्बक—बम्बईके नासिक जिलेका एक प्रसिद्ध शहर
और तीर्थस्थान । यह पचा० १८५४ स० पोर देगा०
७३३३ पू० नासिक नगरसे २० मोल दक्षिण-पथिममें
अवस्थित है । जमनास्थान प्रायः ३३२१ है ।

स्थानमाहात्म्यमें यह स्थान त्रिम्बक नामसे प्रसिद्ध
है । त्रिम्बकेश्वर महादेव यहां प्रतिष्ठित हैं, इसीसे यह
पुण्य स्थानोंमें गिना गया है । इस त्रिम्बकके कई एक
माहात्म्य पाये जाते हैं, जिनमेंसे एक पद्मपुराणके पाताक
खण्डके अन्तर्गत है, एक बराहपुराणके और एक
नारदपुराणके उत्तर खण्डमें वर्णित हैं ।

यहांके त्रिम्बकेश्वर-महादेवका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध
है । वसंतमान मन्दिर सदाशिवरावसे बनाया गया है ।
मन्दिरके खर्चके लिये गवर्मेण्टसे वार्षिक १२००० रु०
मिलते हैं । यहलयावादेने यहां एक सुन्दर मन्दिर निर्माण
किया था ।

त्रिम्बक दुर्ग पहाड़के जपर समुद्रतलसे ४२४८
फुट और निम्नतलकी ग्रामसे १८०० फुट ऊंचे पर अव-
स्थित है । ऐसा दुर्ग और दुर्गम दुर्ग इस प्रान्तमें और
कहीं नहीं देखनेमें आता । दुर्गमें अनेक केवल दो

त्रिपुल्ल (स० पु०) पलाश वृक्ष, टाकका पेड़ ।

त्रिपुल्ल (स० पु०) एकादश हापरके ध्यान, पुराणानुसार
ग्यारहवें हापरकी व्यासका नाम ।

त्रिपुल्ल (स० पु०) एक राजर्षिका नाम, त्रारुणके
पिता ।

त्रिवेणी (स० स्त्री०) तिस्ती बेंगला; वाविप्रवाहा विमुक्ताः
संयुक्ता वा यत् । बङ्गालके हुगली जिलेके अन्तर्गत गङ्गा-
तीरस्थ एक तीर्थ और ग्राम । यह पचा० २२° ५८' उ०
और देशा० ८८° २६' पू०में अवस्थित है । त्रिवेणी
ग्रामके सामने गङ्गामें धर पड़ गया है । इस चरके
दक्षिणमें दूसरे किनारे यमुनाका मुहाना है । त्रिवेणी
ग्रामके उत्तर ओर सरस्वती आ कर गङ्गामें मिल गई
है । इन तीन नदियोंके सङ्गमस्थानके कारण इसका
त्रिवेणी नाम पड़ा है । त्रिवेणी ग्राम पहले एक प्रधान
बन्दर था । योके लोग हम बन्दरका हाल जानते थे ।
हिन्दी लिख गए हैं कि दक्षिणमें गोदावरी मुहानेमें जो
सब जहाज पटने जाते उन्हें पहले त्रिवेणीको ओर
जाना पड़ता था । टेलीमोको पुस्तकमें भी त्रिवेणीका
उल्लेख है । त्रिवेणीके नीचे सरस्वतीको खाईमें मिट्टी
खोदते समय यमो बहुतसे मस्तूक, पुरानी नावें और
मृदालादि देखे जाते हैं । ग्राममें भी कई जगह मछो-
के नीचे प्रशस्तिकाओंकी दीवार मिलती हैं ।

सरस्वती मुहानेके उत्तरमें त्रिवेणीका सुप्रसन्न-घाट
है । कहा जाता है कि उड़ीसेके गजपतिवंशीय पत्तिम
स्वामीन राजा सुकुन्ददेवन यह घाट निर्माण किया था ।
१५५२ ई०में सुकुन्ददेव सिंहासन पर बैठे । तीन सौ
वर्षे अधिक हो गये हैं तो भी घाट क्योंकि खाँ बना
हुआ है । बीचमें एक झर इसकी मर्याद हुई है । इस
घाटमें चांदनो वा चर गहों है । इस घाटके बगलमें
चांदनो विगिष्ट एक सुन्दर घाट है जहां गङ्गा यात्रियोंके
घर हैं ।

त्रिवेणीकी दक्षिणसोमामें एक विख्यात मस्जिद
है जिसमें जाफर खाँ और उनके बंशके कई एक व्यक्तियों-
की समाधियाँ हैं । जाफर खाँ पाण्डुवाके गोहत्याने घटित
हुएके नायक ग्राह सफेके चचा थे । जाफर खाँके साथ
मुदियाके राजाका युद्ध हुआ था उसी युद्धमें जाफर मारे

गये थे । उनके लड़केने हुगलीके राजाको परास्त कर
उनको लड़कीकी ब्याह किया था । मस्जिदमें ज़म राजकुमारा-
की भी समाधि है । सुप्रसन्न पर्वमें हिन्दू लोग प्राज्ञ भो
राजकुमाराकी कब्रमें सिरनी चढ़ाते हैं । सुना जाता है
कि जाफर खाँ भी गङ्गाको पूजा करते थे ।

मि० बलाकम्याना जाफरकी मस्जिद देख कर हम
प्रकार लिख गये हैं—

मस्जिद दो दोवारोंसे घिरी है । बाहरवाली पहली
दीवार बड़े बड़े पत्थरोंकी बनी हुई है । कहा जाता
है कि भी हिन्दू मन्दिरकी तोड़ कर उन्होंने पत्थर संचय
किये थे । गङ्गाको घोर दीवार पर उसके कई एक प्रमाण
पाये जाते हैं । क्योंकि पत्थरों पर बहुतसे हिन्दू देव-
देवियोंकी अङ्गुलीन मूर्तियाँ और पंखदार साँप विष्णु
आदिकी मूर्तियाँ अंकित हैं । इससे अनुमान किया जाता
है कि ये सब पत्थर सचमुचमें किसी हिन्दू मन्दिरसे लिये
गये हैं । इस दीवार पर जमीनसे चार हाथ ऊपरमें एक
छोड़का खम्भा गढ़ा हुआ है । प्रवाद है कि यह जाफर
खाँका मुद्रास्थ था । दूसरी दीवार पहली दीवारके
दक्षिणको ओरसे निकल कर मस्जिदकी चोरी हुई है ।
यह दानादार पत्थरोंकी बनी हुई है । वर्तमान
खादिम शास्त्रानाके अध्यक्षकी निपट मूर्छ नहीं काढ़
सकते हैं । उन्होंने यह भी कहा है कि जाफर खाँका
कब्रिस्तान सबसे पश्चिममें है । पार्श्वेन खाँ, गार्शेन खाँ और
बोरखा गाँजी नामक जाफरके तीन पुत्रोंकी भी अलग
अलग तीन कब्रें हैं । पहली दीवारके मध्य दर खाँ
गाँजीके दो पुत्र रहीम खाँ गाँजी और करोम खाँ गाँजी
के समाधिस्थ हैं । दूसरी दीवारके मध्य पश्चिमकी
ओर ४० हाथके अन्तर पर एक मस्जिदका भग्नावशेष
देखा जाता है । यह भी हिन्दू मन्दिरके उपकरणसे
बनी हुई है । इसके मुख्यरके स्तम्भ बहुत मोटे हैं ।
इस मस्जिदकी पश्चिमी ओतमें बहुतसे लेख खुदे हुए
हैं और मोतारमें कई एक चरबी भाषामें लिखे हुए
लिपिलिपि हैं । उनके पढ़नेसे जाना जाता है कि
तुर्की खाँ महमूद जाफर खाँने १८८८ हिजरीमें (१८८४
ई०में) यह मस्जिद निर्माण की । इससे पचास बरतसे
हैं दो को मोतारके पश्चात्तम दिखनेमें आते हैं । पश्चात्त

हार हैं। दक्षिण द्वार छोकर रसद बादि पहुँचाने का भी है और उत्तर द्वार छोकर केवल एक मनुष्य जा सकता है। यह चारों ओर ऊँचे नीचे पहाड़ों से घिरा है। दुर्ग द्वार छोड़ कर पहाड़ पर कहीं कहीं बहुत से कुर्जे हैं। १८५० ई० में पण्डाचार्यो उत्तजना में कई एक भोज और ठाकुरों ने यहाँ के सरकारी कोषागार पर आक्रमण किया था। दक्षिण प्रदेश के मित्र मित्र स्थानों से बहुत से धातों यहाँ जुटते हैं। हृष्टमतिके मित्र रागिने प्रवेश के समय यहाँ भी कुम्भ लगता है। चामदनी ८८००, १०० को है। इसके सिवा धारिक १५००, ५० तोय-यात्रियों से भी प्राप्त होते हैं। शहर में केवल एक चिकित्सालय है।

त्रिम्बकजी देगलिया—पिंगया बाजीराव के एक विश्वासो धीर प्राणित व्यक्ति। ये पहले एक सामान्य जासूस वा गुप्तचरका काम करते थे। जिस समय होलकर के डर से बाजीराव पूना में पहाड़ में भाग आये थे, उस समय इन्होंने बाजीराव के पत्रका जवाब बहुत शय्य समय में उन्हें ला कर दिया था। इनकी कार्यकुशलता को देख बाजीराव इन पर बहुत खुश हुए थे। तभीसे त्रिम्बकजी हमेशा उन्हें के साथ रहा करते थे। वे अत्यन्त चतुर, धूर्त तथा पट, थे। योद्धा भी समय में बाजीराव के हृदय पर इन्होंने अपना प्रभाव जमा लिया। बाजीराव सबकी अपेक्षा इन पर अधिक विश्वास रखते थे। अतः धीरे धीरे ये उनके एक प्रधान मन्त्रदाता हो गये। सब प्रसिद्धि तो ये बाजीरावका बहुत सम्मान करते थे। बाजीराव जो फरमान, त्रिम्बक छिटाहितका विचार किये बिना उसे फौरन कर डालते थे। क्रमशः इनकी शक्त बढ़ती जाती लगी। सेनापति गणपत रावकी जागीर जब लूट कर ली गई, तब इन्होंने ही सेनापतिका पद ग्रहण किया था।

इसके कुछ दिन बाद ही सुसङ्गी ने जब कर्णाटक प्रदेश के शासन कर्तृत्वका पद त्याग कर रैसिडेंसी एजेंट का पद ग्रहण किया तब त्रिम्बकजी कर्णाटक के शासन कर्ता बनाये गये।

चंगीजी के लिये ये बहुत उत्तम थे। हटियागणकी शक्ति बरन रदा समी दृष्टिको भाषणवर्ष से विमुक्त

कर डालने के लिये इन्होंने कोई काम चला न रखा था। इनकी उत्तजना में बाजीराव, हटियागणमें एकत्र हो गये। उनके पंजी में बाजीरावकी स्थापना करने के लिये त्रिम्बक गोमाथी और भरवो सेना नियुक्त करने लगे। १८१५ ई० में इन्हीं के परामर्श से बाजीराव ने त्रिम्बका, मोसले, होलकर और पिण्डारियों के पास गुप्तचर भेजा। बाद सब कोई मिलकर येमडेन प्रकार से हटिया पराक्रम स्वयं हो जाय, वही पड़यत्न रचने लगे।

इसो वर्ष इन्होंने पण्डारपुर नामक मुख्यचतर्ग में गद्दाभर गाँधीकी गुप्तभावसे भरवा डाला। इस गद्दाहत्या के पार्षे से पीछे मिलन ही हो गये। यह पापकाण्ड छिपाने से भी छिप न सका। बम्बई के गवर्नर एल किटन साहबकी इस बातकी खबर लग गई। उन्होंने त्रिम्बकजीको बहुत जल्द हटिया गवर्नेट के हाथ संपर्ण करने के लिये पिंगवाको बुला भेजा। बाजीराव तो त्रिम्बकको बहुत चाहते थे। अतः वे उन्हें हटिया गवर्नेट के हाथ लगा देने को राजी न हुए। इसपर एक दल हटिया सेनाने पूना पर धावा मारा। त्रिम्बकजीने कोई उपाय न देखा (२५ सितम्बरको) हटिया गवर्नेटकी आक्रमण किया। सालमेटके याना दुर्ग में वे बन्दी हुए। बाजीरावने उन्हें कुछ खाने के लिये अपना कुल दिमाग लगाया। याना दुर्ग में केवल गोरा ही पड़क था, उन्हें विश्वास दे कर बगोभूत करना पड़ा। उनकी पाँखों में धून डाल कर उन्हें भगा देना कोई सहज काम नहीं था। केवल एक साईंसकी सहायता से त्रिम्बकजी किमो तरह याना दुर्ग से भाग आये थे। साईंसने त्रिम्बकजीसे कोई बात तो की नहीं, पर इगारेसे छोड़कर शरीर मलमल कर एक गीत गाया जिसका मर्म इस प्रकार था, 'भाईजी मध्य धनक धनुर्धर रहते हैं, वहाँ पहुँके तले एक घोड़ा बंधा हुआ है, फौरन यहाँ जाओ और घोड़े पर सवार हो दक्षिणालोक को स्थापित करो।'

त्रिम्बकजी उस गानका आशय समझ गये, पर यूरोपीय सैनिकोंकी कुछ भी समझ में न आया। मच-सुच वहाँ से भागते समय इन्होंने कुछ बहादुरी दिखलाई थी। आज भी महाराष्ट्रगण त्रिम्बककी हमरे कार्य के लिए तो नहीं, पर उनके भागने के साहस और कीर्ति की स्मृति तारीफ करते हैं।

विवाहमियों का कहना है कि ये सब 'सादिमों' के
र हैं।

प्राचीन पुष्पादिमें प्रयाग को त्रिवेणी नामसे प्रसिद्ध
। प्रयागमें गङ्गाके माथ यमुना और सरस्वतीके मिल
नमें उस स्थानको मुक्तनेवी और त्रिवेणी नामसे
गङ्गामें सरस्वती और यमुनाके सततत्व को कर
मय सुख को जानिये उस स्थानको मुक्तनेवी कहते हैं।
रघुनन्दनके प्रायश्चित्ततत्त्वमें लिखा है कि 'प्रयग्न-
गरको दक्षिण ओर सरस्वती नदीके उत्तरमें दक्षिण
याग है। इस स्थानमें गङ्गामें यमुना दूर रह गई है।
हाँ छान करनेमें प्रयागमें छान करनेका फल होता है।
मुक्तनेवी दक्षिण-प्रयाग, समग्रामके निकट दक्षिण
में त्रिवेणी नामसे प्रसिद्ध है।'।

अर्थात् रघुनन्दन श्री चैतन्यजी समकालवर्ती थे, सुतराँ
आर भी वर्ष पहले भी जो त्रिवेणी तोरण पर प्रसिद्ध और
यागके समान गिनी जाती थी उसका प्रमाण पाया
जाता है। इसके सिवा कविकदम्बी चण्डीमें भी त्रिवेणी-
का उल्लेख और उसकी मूर्ति का कुछ कुछ प्रमाण है।
वेणी को एक प्रधान तोरण और वाणिज्यका स्थान
र उक्त पुस्तकमें वर्णित है।

त्रिवेणीमें त्रिवेणी नामका एक स्थान है। इसके
नाममें गङ्गाके एक दृष्टको लोग कालोदक कहते हैं।

त्रिवेणी-घाटके उत्तरमें बान्सा पहाड़ है। यहाँ एक
महान् प्राचीन कालका एक बड़ा पत्थर विद्यमान है जिसे
योग बोधिका घाट कहते हैं। त्रिवेणीके घाटमें
उत्तरमें उस पत्थरके समीप एक पुष्करिणी भी है,
जो 'बोधिका पोथर' नामसे मशहूर है।

आफर खाँकी मस्जिदमें जो मोहदण्डकी कथा
रही जा चुकी है उसके विषयमें एक प्रवाद है। लोग
माधरवतः उसे 'गाँजोका कुठार' और उस स्थानको
दफरा गाँजोका तना' कहते हैं। यह मोहदण्ड नवानेसे
जाना जाता है, किन्तु दोबारेसे गिर नहीं पड़ता, इसीसे
एक प्रवाद इस प्रकार है, 'गाँजोका कुठार नवता, पड़ता
केन्द्र गिरता नहीं।' दफरा गाँजोके विषयमें एक कहानी
भी इस तरह है। दफरा गाँजो नामक कोई मुसलमान
रही थे। एक दिन शिमश्रुतके मोटते समय राहमें ठूफान

तथा हटने उन्हें रहर लिया। समीपमें कोई पाथर न था
कर वे पानके एक बड़े बट्टण पर चढ़ गये। कुछ
पान को ग्रहण था। भूत और प्रेतिनी उस वृत्त पर बैठ
पाथरमें कुछ बात चीत कर रही थीं, प्रेतिनीने भूतने
पूछा 'क्या मिरा विवाह नहीं होगा?' यदा इमो पथरका
चिरकाल तक रह्यो? भूतने जवाब दिया—'बहम!
पथर पानके दफरा गाँजोके नौकरको कल उसकी गाय
रने मार डालेगी यह मर कर भूत होगा। सभी भूत
माथ मुझे व्याहंगा।' दफरा गाँजोने सब बातें सुन लीं
और हटि बन्द होने पर उसने घरको राह ली। यहाँ
उसने किमोमें कुछ न कछ कर उस नौकरकी बुलाया और
उसे एक घरमें बन्द कर तामा लगा दिया, किन्तु वे
उसको ताली उसी जगह भूल पाये। उसको छोले उसे
झिग रखा। इधर उसकी गाय रग्यो तोड़ कर बहुत उत्पात
मचाने लगी। कभी वह गङ्गाके किनारे और कभी
घाटमें इधर उधर दौड़ती और पनपन करती थी। गृहिणी-
ने देखा कि यह भारी विपद् पान गयो, ऐसा होनेसे राह-
के मुसाफिर मारे जा सकते हैं। ऐसा सोच कर उसने
गायकी बांधनेके लिये उस नौकरको बाहर कर दिया।
जहाँही वह गायकी बांधने गया त्योंही उसने ऐसा सोच
मारा कि उसके घंटकी चंत्तकी पादि बाहर निकल पाई
और उसकी प्राचपाय रुक गई।

घर पाने पर दफरा गाँजोकी नौकरकी मृत्यु का
जान मान्य हो गया। वे किसीकी कुछ कहें दिना
मंथ्याके समय उसी ग्रामकाके बट्टण पर झिपते बैठ
गये। कुछ समयके बाद उन्होंने सुना, प्रेतिनी कह रही
है, 'तुमने कहा, कि दफरा गाँजोका नौकर मरने पर
भूत होगा लेकिन ऐसा तो हुआ नहीं।' भूतने कहा
'हाँ! उसका जन्म भूतयोनिमें न हुआ। गाय जब
रग्यो तोड़कर गङ्गाके किनारे गई थी, तब उसके सींगमें
गङ्गाको मही लग गई थी। मरने समय मृत्तिकाके रूपमें
नौकर उबार हो गया।' दफरागाँजोने यह सुनकर अपने
मनमें कहा, 'हिन्दूकी देवी गङ्गाका अब ऐसा माहात्म्य
है, तो मैं गङ्गाके किनारे रहनेमें क्यों बर्धित रहूँ।' यह
सोच कर दूसरे दिन जहाँ आफर खाँकी मस्जिद थी,
उसी जगह वे आकर रहने लगे। इधर दक्षिण ओरकी

वहसि भाग घाने पर वे चुप हो न बैठे। अ'यजो'की ऊपर उनका क्रोध और भी बढ़ गया। वे नायिक, सङ्गमनेत्रि, खानदेग और महादेग आदि पार्वतीय स्थानों में घूम घूम कर भील, रामुवी और बह-सैन्यकी संग्रह करने लगे। फलतनक अन्तर्गत रेवाड़ा नामक स्थानमें उनका प्रधान छड़ा था। वहाँ जङ्गलमें जब ये सो ज ले थे, तब ५०० रामुवी सेना सगस्त उनकी रक्षा करतो थी। दाजोशह भी इनसे उन लोगोंकी सहायता करने लगे।

पञ्च दिग्बल विण्डारियो 'बो' नाई' इटियम राज्यमें उत्पन्न मचाने लगे। एलफिन्स्टन साहबने फिर बाजी-रायको कहला भेजा कि वे तुरंत दिग्बलको जो पकड़-वादे, नहीं तो उनका बहुत प्रतिष्ठ होभा। जब तक वे दिग्बलको पकड़वा न देंगे, तब तक सि'हगढ़, पुरन्दर, तथा रायगढ़का दुर्ग इटियमके हाथ रहेगा। कुछ दिन तो बाजीरायने मीठो मीठो बातोंसे एलफिन्स्टनको भुलावेमें डालनेकी चेष्टा की, पर उससे कोई फल न हुआ। ७वीं मईको (१८१७ ई०) एलफिन्स्टनने पुनः कहला भेजा कि अब पञ्च भी पेशवाने दिग्बलके प्रतिभूस्वरूप तीन दुर्गको न छोड़ा, तब पूना पर अधिकार करनेके लिये सेना भेजनी पड़ी। इस पूनाके पास पंथेजी सेना पहुँच गई। बाजीरायने उक्त 'मोने' दुर्ग छोड़ दिये और भइरजीको प्रसन्न रखनेके लिए यह घोषणा कर दी कि दिग्बलको मरा या जिन्दा जो पकड़ कर लावेगा, उसे दो लाख रुपये पारितोषिकमें दिये जायंगी। इसके मित्रों के दिग्बलको अंगुलत आलोच्य स्वजनों के अपर भी लोगों को दिखानेके लिये प्रत्याचार करने लगे।

जो कहूँ ही, इस बार वाजीराव प्रकाश रुपसे चाहे जो करें, पर दिम्बकजी जिससे हटिगके पंजिमें न पड़े, गुप्तरूपसे उसका भो पायोजन करने लगे। भयो जिससे हटिगराज्य ध्वंस हो जाय, एतकिष्टन भो शीघ्र हो इस लोकसे चला बड़े, वाजीराव इसको भो विन्तामें लग गये। अपने इस कामनाको पूरा करनेके लिये वाजीरावने प्रधान मन्त्री बापूगोस्वामाको एक कोटि रुपये दिये। भोसले, मिथिया और होनकरसे भो पद-स्थव-

हारे होता था। इसी समय यशोवन्तरावने छोड़पट्टे में एलफिन्स्टनको यह शुभ समाचार कह दिया। एलफिन्स्टन बाजीरावसे वा मिले। इस समय भी दोनोंमें पच्छा सझाव था। जो कुछ हो, छोड़े दिनके बाद यह सुसंगती पाग धक्क सठे। चारों ओरसे मराठोसेना पूनामें आने लगी। एलफिन्स्टन साहब विपदको आगइा कर पूनासे दो कोम उत्तर किर्किं आमको चले गये। १८१७ ई०के ५ नवम्बरको किर्किंमें एक छोटी लडाई हुई। १७ नवम्बरको आंगरेजोसेनाने पूना पर अधिकार कर लिया। बाजीराव कई एक युद्धोंमें परास्त हो ससैन्य रूपसे भाग गये।

त्रिम्बकजी जूनिरके उत्तर लासघाटके बामनवाड़ी-
ग्राममें दलबलके साथ पेशवासे मिले। यहाँका गिरिसद्वट
बहुत दुर्गम था, जैनरस हिंस्र समेन्य उनका पोजा
करते था रहे थे। त्रिम्बकने यहाँ प्राणपणसे उनका
नामना किया था। कई एक युद्धोंमें पराजित हो जानेसे
महाराष्ट्र-सेना निरुत्साह हो गई थी। अतः त्रिम्बकजीके
विशेष प्रयत्न करने पर भी वे युद्ध कर न सके। पुनः
पेशवाको सड़ाईमें पोट दिखानी पड़ी। कड़ुर्गा नामक
स्थानमें भीषण युद्ध हुआ जिसमें बहुतसे यूरोपीय-कर्म-
चारो मारे गये तथा घायल हुए। त्रिम्बकने युद्धमें भाग
तो खूब दिखनाया, परं वे अंगरेजो भागनेय पक्षके
सामने ठहर न सके। महाराष्ट्रको छार हुई। युद्धमें
वाजोराने त्रिम्बक बादिको सम्बोधन देते हुये कहा
था, तुम खोगीको धिक्कार है, कि मुझे भर सेनाको तुम-
लोग हरा न सके, यमो यह तुम्हारा गर्व। कहा चला
गया ?

कई जगह भटकते भटकते त्रिव्यकजी छटिगके पंदिमें फस गये। इस बार उन्हें सुनारके दुर्गमें कैद किया गया, जस फिर मुक्ति लाभकी आशा न रह्यो।

त्रिभुज (सं० पु०) त्रिभुज, त्रिभुज ।
 त्रिभुजक (सं० पु०) त्रिभुजक त्रिभुजक । त्रिभुज, त्रिभुज ।
 (त्रिभुजक) पा ६।४।७७ त्रिभुज, त्रिभुज ।
 त्रिभुज (सं० स्त्री०) त्रिभुज त्रिभुज । त्रिभुज, त्रिभुज ।
 त्रिभुज, एक त्रिभुज त्रिभुज त्रिभुज । त्रिभुज, त्रिभुज ।
 त्रिभुज त्रिभुज त्रिभुज त्रिभुज । त्रिभुज, त्रिभुज ।

दोबार पर चर्चात् जहाँ गाजोका कुठार है, वहाँ बिना छतका एक पत्थरका घर देखनेमें आता है। कहा जाता है, कि दफरा गाजो गङ्गावाणी हो कर उस स्थान पर रहते थे। लोगोंका विश्वास है कि विष्णुकर्मने गङ्गाको आदेशसे गङ्गाभक्तके लिये रात भरमें बरष घर निर्माण किया था, किन्तु मवेरा हो जानेसे वे रह न सकी और घर बधूरा हो रह गया। दफरा गाजी गङ्गास्तव करके मुक्त हो गये थे।

गङ्गाकी स्तवमालाके मध्य संस्कृत भाषाके सुललित छन्दमें एक स्तव है जिसे दराफरा नामक किसी सुसलमानने रचा है। स्तव केसा भावविशुद्ध है वैसा हो सुललित भी है। प्रायः सभी हिन्दू यह स्तव जानते हैं और गङ्गास्नानात्क नित्य इसे पाठ करते हैं। इस स्तवका शेष इस प्रकार है—

“द्वरद्विमुक्तिकल्पे तारयेः पुण्यवस्तु”

स तस्मिन् निजपुण्यैस्तत्र किं वे महत्तमम् ।

यदि च गतिविहीनं तारयेः पापिनं मां

तदिह तव महत्त्वं तन्महत्त्वं महत्त्वं ॥”

इति दराफराविरचितं गंगाष्टकं समाप्तम् ।

गाजीका कुठार और जाफरखोका युद्धाश्च तथा दफरागाजी, दराफरा और जाफरखोके नाम और उनको गङ्गाभक्तिसे कहा सुन कर अनुमान किया जाता है, कि ये सब एक व्यक्तिके विवरण हैं। लोगोंके मुखमें एक जाफरखोके नामने हो। त्रिविध आकार धारण किया है।

पहले संस्कृत शिष्टाके लिये चार स्थान नदिया राज्योंमें विशेष विख्यात थे, इन चारोंको चार समाज कहते हैं। ये चारों स्थान नवदोप, भाटपाड़ा, गुलिपाड़ा और यही त्रिवेणी है। इस समय त्रिवेणीमें तोस संस्कृतकी पाठशालाये हैं।

सुविख्यात सर विलियम जोन्सके संस्कृत शिष्टक प्रतियोग पण्डित जगन्नाथ तर्कपञ्चाननने यहां जन्म ग्रहण किया था और वे उसी ग्रामके वासी थे।

जगन्नाथ तर्कपञ्चानन देखो।

वाङ्मयी और मकर-संक्रांतिको त्रिवेणीमें तीन दिनों तक मेला लगता है उस समय बहुत यात्री इकट्ठे होते

हैं। इसके शिवा ग्रहणादिमें भी अनेक यात्री पाते हैं।

२ इडा, विह्वला और सुपुष्करूप पारिभाषिक तीनों नदियोंका सङ्गमस्थान।

त्रिवेण (सं० पु०) त्रयो वेणवो यत्र । रघुसुखस्थित अवयव भेद, रथके प्रगले भागके एक भंगका नाम।

त्रिवेद (सं० पु०) त्रीन् वेदान् वेत्ति-विदु-षण्, त्रयो वेदाः प्रवीतत्वेन सन्तपस्य षण्वा । १ वेदत्रयवेत्ता, तीनों वेदके जाननेवाले। २ षट्क, यज्ञ और साम ये तीनों वेद । ३ वेदत्रयविहित कर्म, तीन वेदोंमें बतलाये हुए कर्म।

त्रिवेदी (सं० पु०) त्रिवेदं वेत्ति-दन् । १ वेदत्रयज्ञ, षट्क, यज्ञ और साम इन तीनों वेदके जाननेवाले। २ ब्राह्मणोंका एक भेद।

त्रिवेला (सं० स्त्री०) तिस्रो बेला सोमानोऽस्य । त्रिहन्, तिसीय।

त्रिवैदिक (सं० त्रि०) तेषां विस्तराणि स्वर्णकंपे मृद्यान्य-इति ठक तस्य च सुगमायः स्वर्णकंपे मृद्याह, जिसकी सोमत तीन स्वर्णकंपे हो।

त्रिगति (सं० स्त्री०) त्रिगुणिता गतिः । १ कालो, तारा और त्रिपुरा ये तीनों देवियाँ। २ इच्छा, ज्ञान और क्रियारूपी तीनों ईश्वरोय गतियाँ। ३ राजाघोको, प्रभाव, छाया और मन्त्र ये तीनों गतियाँ। ४ त्रिगुणात्मक प्रधान, बुद्धि। ५ गायत्री। त्रिगतिहृत् (सं० पु०) त्रिगतिं इच्छादिगतित्रयं धरति-हृत्किपः । १ परमेश्वर। २ विजिगोप राजाका नाम।

त्रिगह (सं० पु०) त्रयः गहव इव यत्र । १ मार्जार, बिल्ली। २ शूलम्, पतंग, टिही। ३ चातक पक्षो, पपोहा। ४ छद्योत, जुगनू। ५ पर्वतत्रिगोप, एक पहाड़का नाम। ६ सूर्य-वंशीय एक राजा। इनका विषय रामायणमें इस प्रकार लिखा है—राजा त्रिगह ने सगरोर स्वर्णलाभको कामनासे अपने गुरु त्रिगहदेवको यज्ञ करने कहा। त्रिगहने इसमें अनिच्छा प्रकट की और “ऐसा नहीं हो सकता” यह उनसे कहा। इस प्रकार त्रिगह त्रिगहसे विमुख हो कर दक्षिण दिशाकी चला दिये। वहाँ त्रिगहके लड़के तपस्या कर रहे थे। त्रिगहने उनको शरण की और यज्ञ करनेके लिये विशेष अनुश्रीय किया। तब त्रिगहके लड़कों-

त्रिपटि (मं० श्लो०) त्रिषु यातृविशङ्ककामहेषु दोषेषु
यटिग्वि । १ सुपभेदः पितृ पापद्वयं, मातृतरा । २ त्रिगुच्छः
कार ।

त्रियान (मं० श्लो०) बोहोके तोन प्रधान भेद या यान,
यया महायान, होनयान और माध्यमयान ।

त्रियामरु (मं० श्लो०) त्रिषु कालेषु यमयति यम-शुल-
पाप ।

त्रियामा (मं० श्लो०) त्रयो यामा चर्याः । निशा, रात्रि ।
रात्रिं पक्षे चार दण्डों और रात्रि चार दण्डों को
गिनती दिनमें की जाती है, जिसमें रात्रिमें केवल तीन हो
पहर बच रहते हैं, इसीसे इसे त्रियामा कहते हैं । २
हस्तिना, हस्ती । ३ यमुना नदी । ४ क्षण त्रिभुक्त, काला
निमीष । ५ नीली, नीलका पिङ्ग ।

त्रियुग (मं० पु०) त्रीणि युगानि सचत्वेतादापररूपाणि
चाविर्भाषकास्तोऽस्य । १ त्रिषु । २ यस्मादि काम
त्रय, यमन्त, ययो और शरद ये तीन ऋतुएँ । ३ मत्स्य,
त्रेता और द्वापर ये तीनों युग । (त्रि०) ४ यक्ष-
स्वर्गशाली, जिसे लक्षों प्रकारकी ऐश्वर्य हैं ।

त्रियुष्ट (मं० पु०) कविनाम्न सफेद रंगका घोड़ा ।

त्रिरत्न (मं० श्लो०) बौद्धधर्मके प्रधान तीन धन यथा बुद्ध,
धर्म और सत्त्व ।

त्रिरश्मि (मं० श्लो०) त्रिकोण ।

त्रिरमक (मं० श्लो०) त्रयाणां रमकाणां समाहारः ।

१ विप्रकार रमयुक्त सुरा, वज्र मदिरा, जिसमें तीन प्रकार-
के रम या स्वाद हैं । २ तीन बार मधु पान ।

त्रिरात्र (मं० श्लो०) त्रिमूर्ता रात्रेणां समाहारः अथ
समा० । मंथ्यापूर्वं स्वात्नं श्लोचता । १ रात्रिचय, तीन
रात । २ तदुपनिषत् तीन दिन । ३ गर्गत्रिरात्र नामक
योग । ४ एक प्रकारका व्रत जिसमें तीन दिनों तक उप-
वास करना पड़ता है ।

त्रिरूप (मं० पु०) त्रीणि रूपास्तस्य । अश्वमेधीय अश्वभेदः,
अश्वमेध यज्ञके लिये एक विशेष प्रकारका घोड़ा ।

त्रिरेश (मं० पु०) तिस्रो रेशा यत्र । १ शब्द । (श्लो०)

त्रिरेशां रेणानां समाहारः । २ रेणवय, तीन रेखा ।

(त्रि०) ३ तीन रेखापीयाना, जिसमें तीन रेखाएँ हैं ।

त्रिरन (मं० पु०) त्रयो नाः लघुवर्णा यत्र । लघुवर्णयुक्त
नगण ।

त्रिरुद्र (मं० त्रि०) त्रयो लघ्वो यत्र । १ रुद्रोपस्य प्रति-
नगण । २ पुरुषविशेष, वज्र पुरुष जिसको गर्दन, जंघा
और मूर्तेद्विष्य छोटी हो । पुरुषके लिये जो लघु लघु शब्द
माने जाते हैं । (काण्वीय ११ अ०)

त्रिरुच्य (मं० त्रि०) त्रयाणां लघुनां समाहारः, त्रिगु-
णितं लघुनां संज्ञात्वात् वा कर्मधारयः । लघुलघु,
छेधा, स्मर और मोचर नमज ।

त्रिरुद्रि (मं० त्रि०) त्रीणि रुद्रिणि अस्य । १ पुंस्त्वादि
तोनों रुद्रियुक्त शब्द । त्रीणि सत्त्वादीनि रुद्रिणि अथ-
मापकानि अस्य । २ पक्षद्वार आदि । ३ वात इत्यादि
धातुदोषसे उत्पन्न एक प्रकारका रोग । ४ तैलरुद्रि रोगका
वना संस्कृत रूप ।

त्रिरुद्रि—(तैलरुद्रि) दक्षिण भारतका एक प्राचीन देश ।
कोई कोई कहते हैं, कि कालिंजर, श्रीगौल और भीमे-
श्वर नामक तीन पहाड़ों पर त्रिरुद्रि रूपमें आविर्भूत
पुत्र ये गायद इसी कारण इस प्रदेशका नाम त्रिरुद्रि
पड़ा है । सभी उमरोंका अपभ्रंश रूप तैलरुद्रि है । फिर
कोई कोई कहते हैं, कि प्राचीन कालमें इसका नाम
त्रिकलिङ्ग था, 'क' का लोप हो कर त्रिलिङ्ग हुआ, एवं
अपभ्रंशरूपमें कोई तो गिलरुद्रि कोई तैलरुद्रि और कोई
तिरुद्रि इत्यादि कहा करते हैं । कलिंजरमें शिवलिंग
विवरण देखो ।

यद्यार्थमें त्रिकलिङ्गमें त्रिलिङ्ग हुआ है वा नहीं, यह
ठोक ठोक कह नहीं सकते । महाभारतके समयमें इस-
का विस्तार वैतरणी नदीसे लेकर गोदावरीके कलिङ्ग
राज्य तक था । किन्तु उस समय इसका कोई अंग त्रि-
कलिङ्ग वा त्रिलिङ्ग नामसे प्रसिद्ध न था । १ मो गताब्दी-
में प्रिगिने मोदोगलिङ्गम् (Modogalingam) शब्दका
उल्लेख किया है । तैलरुद्रि शब्दमें मृदुका अर्थ तीन है,
सुनरा मोदोगलिङ्गम् शब्दसे प्रयोगसे त्रिकलिङ्ग नामका
बोध हो सकता है । २ मो गताब्दीमें टलेमीने त्रिगलिण-
टन या त्रिगलिफन देशका उल्लेख किया है । यह शब्द
संस्कृत त्रिकलिङ्ग वा त्रिलिङ्ग इन दो शब्दोंका रूपान्तर
भाव हो सकता है ।

३ मो गताब्दीमें गिनालिपि या तासगासनमें त्रिक-

ने समझे कहा, 'माम्, म पढ़ता है कि तुम्हारी बुद्धि मागे गई है। जब पिताभोजी ने भस्मा चढ़ाने का दिया, तब तुम उसे उलट्टुन कर क्यों दूसरे को भस्म करते हो? उन्होंने जो कुछ कहा है वह समोच है। और किमो दानतने टन नहीं मरता। सुतरी जब उन्होंने "पिता नहीं हो सकता" यह कहा, तब हम लोग पिताजीको पात्राके विरुद्ध यह यज्ञ नहीं कर सकते।" इस पर विग्रह, बोले "पापके विनामे मुक्ति विमुख कर दिया और पापने भी ये साधो किया, यह मैं किमो दूसरेका पात्रय नेमको बाध्य हूँ।" यह सुन कर वसिष्ठके सङ्के कोधने पधोर हो उठे और 'तुम चाण्डाल हो जाओ' ऐसा गाव दे कर ये पवने पवने पात्रयको चम दिये। बाद विग्रह चाण्डालत्व प्राप्त कर इधर उधर भ्रमण करने लगे और दुःखमे नितास्त विह्वल हो उन्होंने महर्षि विष्णामित्रका पात्रय गहन किया। राजाको चाण्डालदण्डो और विफल कर्मादेव कर विष्णामित्रका हृदय दयाने भर पाशा और वे बोले 'मैं दिव्य वस्तुसे देखता हूँ कि तुम महा-बलमन्त्रण प्रयोधाधिपति हो और अभिप्रायमे चाण्डालत्व-को प्राप्त हुए हो। जिस कार्यके लिये तुम मेरे समोच पाये हो उसे कहो "तुम्हारा कल्याण होगा।" तब विग्रह, राजाने टाय जोड़ कर कहा, 'प्रभो! मैं यज्ञ करके मगरोर स्वर्ग जाना चाहता हूँ, यही मेरा अभिप्राय है। मैं गुरु वसिष्ठ और उनके सङ्केसे विमुख हो चुका हूँ, चमो पापधो मेरे एक मात्र पात्रयदाता है। मैंने पतेक यज्ञ किये हैं और कभी भी धर्म विगर्हित कार्य नहीं करता।" विष्णामित्रने विग्रह, को यह बात सुन कर कहा, 'उरी मन, गुरुके अभिप्रायमे तुम्हारी ऐसी व्यवस्था हो गई है। तुम इसी व्यवस्थामें मगरोर स्वर्गको पहुँच जायगी। चमो मैं यज्ञ साक्षात्कारी पुण्यकर्मा महर्षियों-को बुलाता हूँ, तुम निमित्त हो कर यज्ञ करो।' तब विष्णामित्रने पवने पुत्रोंको यज्ञका आयोजन करने कहा और सब मित्रोंको बुला कर कहा, 'तुम लोग मेरी पाशामें खटिज, और वसिष्ठपुत्रादि बहुयुत खटियों-को सुदृढ़ और मित्रोंके साथ बुला लावो। "जायगे वा नहीं" को लेना कहे यह मुक्ति खबर दो। गिनगन चारों ओर चल दिये। बंदविदु ममो खटि यज्ञमें जाने लगे,

केवल वसिष्ठके पुत्र और मगरोदय नामक खटि नहीं पाये। चमोने कहा कि मैं जा कि, जिस यज्ञका पात्रक खटिय है विमित्रतः जो चाण्डाल है उसको यज्ञ-व्यवस्थामें सुन और खटि लोग किस प्रकार खटि भोजन करेगे। विष्णामित्र यह यज्ञ सुन कर खूब हो बोले, "वसिष्ठके पुत्र जब बिना दोषके मुझे दोषो धरते हैं, तब ये मेरे इस अभिप्रायमे खुदप खुद साक्षात्कारी भोजीको योगिने बात को वर्षतक अन्ध सेकर इस भ्रममें भटकते फिरें। मगरोदय मो निपादत्वको प्राप्त कर अधिक समय तक दुर्गति भोगे।" बाद विष्णामित्रने समागत खटियों में कहा, 'विग्रह, ने मगरोर स्वर्ग जानेको इच्छा करने हुए मेरी गरव ली है। पतः ये जिसमें प्राप्त हरा मगरोर स्वर्ग जा सकें पाव लोग मेरे साथ उभरी यज्ञवा भुग्नान करें।'।

खटियोंने विष्णामित्रको चालता कोधित सामावका जान कुछ भी प्रतिवाद किये बिना यज्ञका आरम्भ कर दिया।

विष्णामित्र स्वयं इस यज्ञमें पात्रगु मने। मन्त्रका विदु शरितक गानानुसार सब कार्य करने लगे। महर्षि विष्णामित्रने देवताओंको हविर्भाग प्रदान किया, किन्तु कोई देवता यज्ञमें न पाये। तब विष्णामित्रने क्रोध हो मुखको सज कर विग्रह, ने यह कहा, 'नरेश्वर! मेरी चर्चित तपस्याका प्रभाव देवो! चमो मैं पवने तेजसे तुम्हें स्वर्ग भेजता हूँ। कोई भी मगरोर स्वर्ग नहीं जा सकता है, पर तुम जाओ। मैंने पवने तपस्या द्वारा जो फल प्राप्त किया है, तुम सबोंके प्रभावमे मगरोर स्वर्गको जा सकते हो।' विष्णामित्रके इतना कहने पर विग्रह, मगरोर स्वर्गको जाने लगे। इधर दन्ते विग्रह, को मगरोर स्वर्गको और पाले देव कर कहा, 'सूर्य! तुम्हारे लिये स्वर्गमें स्थान नहीं। तुम पर गुरुका गाव है, पतः यहमे शोध सुंद मयंमोजको नोट जावो।' विग्रह जब मोचे गिरने लगे, तब "मुझे बचावो" कह कर जोरसे पिछा पड़े। इस पर विष्णामित्र बहुत विग्रह, और "उर्रो, उर्रो" यह कह कर चमने दक्षिणको और दूसरे महर्षियों और नक्षत्रोंको रचना आरम्भ को। दन्तेने दृष्टि करनेको इच्छा करने

लिङ्ग देयका उल्लेख पाया जाता है। उल्लेख और कलिङ्ग के राजाओं में भी 'त्रिकलिङ्गनाथ' नाम से संघना परिचय दिया है।

११वीं शताब्दी के प्रथमभाग में उत्तकलराज उद्योत-केशरो के समय में उल्लोष ब्रह्मखर-लिपि में हम लोग सबसे पहले 'तिलङ्ग' देयका उल्लेख पाते हैं। इस शिलालेख में लिखा है, कि महाराज उद्योतकेशरो के पूर्व पुरुष पहले तिलङ्ग देय में राज्य करते थे, वह सब था कर उन्होंने उत्कल पर अधिकार जमाया। यही तिलङ्ग देय अभी तैलङ्ग नाम से प्रसिद्ध है, इसमें सन्देह नहीं। किन्तु यह 'तिलङ्ग' शब्द 'त्रिकलिङ्ग' शब्दका अपभ्रंश है वा 'त्रिलिङ्ग' का इसका कोई ठोक प्रमाण नहीं मिलता। लेकिन यह कह सकते हैं, कि कलिङ्ग राज्यका दक्षिणार्ध एक समय तिलङ्ग नाम से विख्यात था। शक्तिशाली-तन्त्र के संतानुसार योशिल से लेकर चोलेश के मध्य भाग तक तैलङ्ग देय है।

योशिल कर्णाल जिले में तथा चोलेश वा चोललिङ्ग-क्षेत्रों उत्तर बाकट जिले के शोलङ्गियुर में अवस्थित है। कर्णाल नदी से पेशर वा पिगाकिनो नदी तक दाक्षिणात्य में पूर्वी में प्रायः समस्त भूभाग पहले तैलङ्ग नाम से प्रसिद्ध था। कुछ लोगों का मत है कि पुराण में जो अंध-राज्यका उल्लेख है, वही तैलङ्ग देय है। ७वीं शताब्दी में चीन परियोजक यूएनचुयंग अंधराज्य में गये थे। उनके संतानुसार यह राज्य १०० लोह धर्मात् प्रायः ५०० मील विस्तृत है और इसको राजधानी का नाम वैङ्गि (वेङ्गि) है। गोदावरी जिले में इलोरा से ६ मील उत्तर वेङ्गि वा वेगि पड़ता है। इस हिस्से में (कनिहम) आदि प्रव्रतत्वविदों के मतों) अंध वा तैलङ्ग देय गोदावरी और कर्णाल नदी का मध्यवर्ती भूभाग होता है।

पाटन-ह-चक्रवर्ती में 'तिलिङ्गाना' वा 'तैलङ्ग' सूचा

Beal's Buddhist Records of the Western World, Vol. II, p. 217.

† H. Sewell's Lists of Antiquities in the Madras Presidency, Vol. I p. 36

† Jarrett's Aini Akbari, Vol. II p. 238, 237.

बराबर या बरार के दक्षिणार्ध में निर्दिष्ट हुआ है। उस समय सरकार तिलिङ्गना १८ परगनों में विभक्त था और ७१८०४००० दाम राजस्व वसूल होता था।

तिब्बत के पण्डित तारानाथ ने १६०८ ई० में लिखा है, 'कलिङ्ग त्रिलिङ्गका ही कुछ अंश है'।

फिर १७८१ ई० में रेनेन साहब लिख गये हैं, 'तिलिङ्गनकी राजधानी बरहल है। यह कर्णाल और गोदावरी के बीच तथा विसियापुर के (चिन्नापुर ?) पूर्व में अवस्थित है।

इस तैलङ्ग वा त्रिलिङ्ग के मनुष्य और उनकी अवस्थिति भाषा तैलङ्ग वा तेलगू नाम से प्रसिद्ध है। वर्तमान समय में उत्तर शोकाकोलम् (चिकाकोल) से लेकर दक्षिण परवर्णाडु (पुलिक्कट) तक तेलगू भाषा प्रचलित है। चिकाकोल के समीप उड्डियान और पुलिक्कट के बांटे से तामिल भाषा में तेलगूका स्थान अधिकार कर लिया है। इधर पयिमांश में महाराष्ट्रकी पूर्वसीमा, महिसुर, कर्णाल जिला और निजाम राज्य तक तेलगू भाषा चलती है। भाषा-नैखानकी और दृष्टिपात करने से तेलगू भाषा-प्रचलित भूभागकी जो तैलङ्ग देय कह सकते हैं। इस हिस्से में त्रिकलिङ्ग शब्द से त्रिलिङ्ग वा तैलङ्ग नाम पड़ा है, यह स्वीकार कर सकते हैं और कलिङ्ग देयकी तैलङ्गका एक अंश समझ सकते हैं।

कलिङ्ग देखो।

७वीं शताब्दी में यूएनचुयंग ने अंधदेश में जा कर देखा था, कि यहां मध्यभारतकी लिपि प्रचलित है। इससे हम लोगोंकी प्रमाण मिलता है, कि उन समय मध्यभारतकी वर्णमालाको साथ उड्डोसाकी वर्णमालाका भी आकार मिलता सुलता था। कालक्रम से पाजकल इतना विभेद पड़ गया है, कि तैलङ्गकी वर्णमालाकी एक सम्पूर्ण धृक् वर्णमाला कहने में भी कोई अशुक्ति नहीं।

कुमारिलभट्ट दाक्षिणात्यकी भाषाकी अन्ध-द्राविड़ भाषा कह कर वर्णन कर गये हैं। ताभिल देखो। कुमारिल वर्णित आन्ध्र भाषा आज भी तेलगू नाम से प्रसिद्ध है

† Schiefner's Taranatha, p. 264.

† Rennell's Memoir, 3rd edition, p. ex.

हुँ पुनः सोचा कि इन्द्रशून्य सृष्टि ही - प्रगल्भ है। सब देवता भयभीत हो कर विश्वामित्रको शरणमें पहुँचे। तब विश्वामित्रने उनसे कहा, मैंने विश्वदुःखी सगरीर स्वर्ग पहुँचाने की प्रतिज्ञा की है, अब वह किस प्रकार मिया हो सकते। अतः अब वह राजा जहाँके तहाँ वास करेंगे और जब तक मनुष्य वत्त मान रहेगे तब तक हमारे बनाए समधि और नक्षत्र उनके चारों ओर रहेंगे। आप लोग इस विषयमें क्या कहते हैं। देवताओंने उनकी यह बात स्वीकार कर ली। तबसे विश्वदुःखी आकाशमें सफेद नक्षत्रोंके बीच नीचे गिर किए हुए सटके हैं और नक्षत्र उनकी परिक्रमा करते हैं। (रामायण १।५७-६२ सर्ग)

हरिश्चन्द्रमें विश्वदुःखी विषय इस प्रकार लिखा है— महाराज त्रयारुणके सत्यव्रत नामक एक पुत्र था। ये बहुत पराक्रमी थे। उन्होंने वैवाहिक नियमका उल्लंघन कर दूसरीकी विवाहिता स्त्रीकी अपने घर ला उसे अपनी स्त्री बना कर रख लिया। जब महाराज त्रयारुणकी यह हाल मालूम हुआ, तब उन्होंने सत्यव्रतकी कान्हो समझ कर परित्याग किया। इस प्रकार पितासे तिरस्कृत होने पर सत्यव्रतने उनसे पूछा, 'मैं कहाँ रहूँ।' इस पर वे बहुत विगड़े और बोले, 'तुम चाण्डालोंके साथ जा कर रहो। मैं तुम्हारे सरोखा दुरात्मा पुत्र द्वारा पुत्रवान् होनेको इच्छा नहीं करता।' सत्यव्रत पिताके आदेशमें नगर छोड़ बाहर हो गये। थगिष्ठने भी इसमें कुछ छेड़ छड़ न की। इसी तरह सत्यव्रत अपना समय चाण्डालोंके साथ बिताने लगे। इन प्रान्त पर भगवान् इन्द्रको ऐसी कुदृष्टि पड़े कि बारह वर्ष तक दृष्टि हो न हुई। इधर विश्वामित्र अपनी स्त्रीकी इसी प्रान्तमें छोड़ पाप कनेर तपस्या करनेके लिए किसी दूसरी जगह चले गए थे। इससे विश्वामित्रकी स्त्री अन्यान्य पुत्रोंके भरणपोषणके लिए ऋषिके औरम-जात मध्यम पुत्रकी गलेमें बाँध कर सो गायोंको बेचने निकलीं। जब यह सत्यव्रतकी पास पहुँचे, तो उन्होंने ऋषिकी प्रसन्न रखने, पचवा अनुग्रह प्राप्ति की आशासे उनकी खबर की खबर उनके भरण पोषणका भार पड़ने दिया। विश्वामित्रकी पुत्र सत्यव्रतने

पासे गए थे, इसी कारण उनका नाम मालव पड़ा। सत्यव्रत प्रतिज्ञाबद्ध हो कर विश्वामित्रकी पत्नीका प्रतिपालन करने लगे। सत्यव्रतके राज्यसे वर्धित होने समय वगिष्ठने कुछ भो नहीं कहा था, इन कारण से ऋषि पर कुपित रहते थे। सत्यव्रतके ऊपर उनके पिता जो अप्रसन्न थे उसी महापापसे इन्द्रने बारह वर्ष तक दृष्टि बन्द कर दी थी। अभी सत्यव्रतने बारह वर्षोंके बीच दुर्बल टीका ग्रहण को अर्थात् पापसे निवृत्त हो कर कुम्भकी निष्कृति साम को; किन्तु एक बार मांसके प्रभावके कारण उन्होंने वगिष्ठको कामधेनु गौको मार कर उनका मांस विश्वामित्रके लड़केको खिलाया था और स्वर्ग भो खाया था, सुतर्ग यह चोर महापापका काम हुआ। वगिष्ठको जब अपनी गौके मारे जानेका हाल मालूम हुआ तब उन्होंने सत्यव्रतसे कहा, 'यदि तुम ये दोनों पाप नहीं किये होते तो निश्चय ही मैं तुम्हारे पावरूपी शत्रुको दूर कर देता। एक तो तुमने अपने पिताको भ्रमन्तुष्ट किया, दूसरे अपने गुरुकी गो मार, डाली और तीसरे उसका मांस स्वयं तथा ऋषि-पुत्रोंको खिलाया। यही तीन महापातक तुमने किये। अब किसी प्रकार तुम्हारी रक्षा नहीं हो सकती।' सत्यव्रतने ये तीन महापातक किये थे, इसीसे वे विश्वदुःख कलाप। उन्होंने विश्वामित्रको सो और पुत्रोंकी रक्षा को यो, इसलिये ऋषिने उनसे घर माँगनेके लिए कहा। विश्वदुःखी सगरीर स्वर्ग जानिकी प्रार्थना को विश्वामित्रने 'तयास्तु' कह कर स्वीकार किया। पीछे बारह वर्षोंकी पनाहटिका भय दूर होने पर उन्होंने विश्वदुःखी उनके पैतृक राज्य पर अभिप्रेत किया और स्वर्ग उनके पुरोहित बने। विश्वामित्रके यज्ञ करने पर देवताओंने भी वगिष्ठका पनाहद किया और विश्वदुःखी सगरीर स्वर्गारोहणको अनुमोदन किया। सत्यव्रतने केकयमंशकी सप्रथा नामक कन्याको ब्याह था और उसीके गर्भसे प्रसिद्ध मत्स्यवती महाराज हरियन्द्र उत्पन्न हुए थे। हरियन्द्रको वैशङ्कव भो कहते हैं।

अनन्तरविशेष, एक तारा। इसके विषयमें प्रसिद्ध है, कि यह सही विश्वकु है जिन्हें इन्द्र आकाशसे गिरा रहे थे और जिन्हें मार्गमें ही विश्वामित्रने रोक दिया था।

(हरिश्च ११-१३ अ०)

तैलङ्ग भाषानि १३ स्वर और १५ व्यञ्जनवर्ण हैं।
प, पा, व, व, ङ, ज, ज, य, य, (ङ्ग), य (दोघ),
ण, णो (ङ्ग), षो (दोघ) और चौथी १३ स्वर हैं
ए, क, ग, ग, घ, डा, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड,
ढ, ण, त, य, द, ध, नः प, फ, ब, भ, मः य, र, ल, व,
श, य, ग, ह, स और स यही १५ व्यञ्जन हैं।

तैलङ्गने पण्डितों का कहना है, कि कण्ठ मुनिने सत्रमे
पद्ये तैलङ्ग व्याकरणको रचना की। एक बार वे पायू-
राजकी भूमामें उपस्थित हुए थे। इसी राजके समयमें
संस्कृत भाषा तैलङ्ग देशमें प्रचलित हुई। उक्त प्रवादने
क, क, कु, कु, पैमा मानू म पड़ता है, कि व्याकरणानि पा-
कर हो तैलङ्ग देशमें संस्कृत भाषाका प्रचार किया और
उन्हींके आधार पर तैलङ्गसिधिर और तैलङ्ग व्याकरण
बनाया गया। कण्वका तैलङ्ग व्याकरण चमो वितुम
हो गया है। चमो जो मयवे पुराता तैलङ्ग व्याकरण
मिलता है, वह भी नयव वा नयवभट्टका संस्कृत भाषा-
में बनाया हुआ है। नयवभट्टने ही तैलङ्ग भाषामें महा-
भारतका प्रकाश किया। चमो नयवभट्टका महाभारत ने
तैलङ्ग भाषाका आदिग्रन्थ समझा जाता है। चालुकिराज
विष्णु वर्धनके समयमें नयव भाविभूत हुए थे। चालु-
कि वर्धने विष्णुवर्धन नामक जो दश राजाधिन विभिन्न
भूमयमें राजत्व किया था। बादव्यवस्था देखो। किस विष्णु-
वर्धनके समयमें नयव विद्यमान थे, उसका पता नहीं
चलता। यदि ये विष्णु वर्धनका समय हो तो भी नयव-
भट्टको ११वीं शताब्दीके कवि कह सकते हैं।

कोई कोई तो इन्हें आदि ग्रन्थकार मानते हैं पर
वह ठीक प्रतीत नहीं होता। इनके विस्तृत ग्रन्थ-
की रचना-प्रणाली और भाषाकी कटा देखनेसे ऐसा
मानू म पड़ता है कि तैलङ्ग भाषाकी सृष्टि इनके बहुत
पहले ही हो चुकी थी तथा इनके महाभारत बनाये
जानेके पहले भी उनके छोटे छोटे ग्रन्थ प्रचलित थे।
नयवभट्टके बाद अन्य कविने तैलङ्ग भाषामें एक तैलङ्ग
व्याकरण शीकके आधारमें प्रचयन किया।

वेमन नामक एक व्यक्तिने श्रुत्याकारमें दो हजारसे
अधिक धर्मेति-विषयक उपदेश तैलङ्ग भाषामें लिखे
हैं। इनकी वाक्यान्तमें रसकाण्ड और हेतुवादकी

निन्दा करनेसे कोई कोई इन्हें ईसाधर्मके परवर्ती
वतमानते हैं। किन्तु वेमनके विद्युद आध्यात्मिक और
पद्ये तैलङ्गविषयक मरन उपदेशोंकी भाषा पद्य में वह
बहुत प्राचीन प्रतीत होती है। इसके सिवा तैलङ्ग
भाषामें और भी कई एक ग्रन्थ हैं। सुद्रायन्त्रके प्रभाव-
से तैलङ्गमें भी प्रतिवर्ष अनेक ग्रन्थ प्रकाशित होते हैं।
त्रिनिङ्गक (सं० वि०) त्रिनिङ्ग स्वार्थ कर। त्रिनिङ्ग देवी।
त्रिनिङ्गो (सं० सो०) त्रयाणां निङ्गानां समाहारः डीपू।
लिङ्गवय, तोनों लिङ्ग।

त्रिलोक (सं० को०) १ त्रिभुवन, स्वर्ग, मर्त्य और
पामान ये तोनों लोक। (पु०) २ स्वर्ग, मर्त्य और
पामानके पश्चिमांग।

त्रिलोक—हिन्दीकी एक कवि। ये १७५४ ई०में वत्तमान
थे। सुज्ञानचरित्रमें इनका नाम दिया हुआ है। इनकी
रस पद्यकी कविता बड़ी सराहनीय होती थी। उदाहर-
णार्थ नीचे देते हैं,—

“मेरी मन मोड़ी सारो अरु घर ही मो पै रम्यो न आय।

चलन तिरछी मोई हौं सर्वरु मेरी सिधो गुताय ॥

मार्द ही गोरम के निहरी हृन्दावन होरी मंसार।

आय अचानक आनक मट्टी बही मेरी दोरी दार ॥

बहि अरु मो खो यों बड़ी कौन हो दुग बाधी नार।

के बेरी या मार्य गई दान हो हमारी दार ॥

और कहां लजि बरभिये कह लख री ओह आये लाज।

जब त्रिलोक प्रभुघो रंगी देखो मेरे तनकी बाज ॥”

त्रिलोकहृत् (सं० पु०) त्रयाणां लोकानां हृत् धृतिरस्य
धृ-क्षिप। परमेश्वर।

त्रिलोकदास—हिन्दीकी एक कवि। इनकी भजनायनी
नामक ग्रन्थ बनाया है। ये १७२० ई०की लगभग
विद्यमान थे।

त्रिलोकनाथ (सं० पु०) त्रयाणां लोकानां नाथः।
परमेश्वर।

त्रिलोकसिंह—एक हिन्दी कवि। इनका बनाया हुआ
भमा-प्रकाश नामक ग्रन्थ मिलता है, जिसे इन्हीं ने १७२०
ई०में बनाया था।

त्रिलोकात्मन् (सं० पु०) त्रयो लोकाः आत्मानः स्वयं
पाणि ग्रन्थ। परमेश्वर।

ने धनमे कहा, 'मान्य पदता है कि तुम्हारी बुद्धि
 मागे गई है। तब विनाशोने इसका सङ्कलन कर दिया,
 तब तुम उसे उलटकर सब को दूसरे को साथ मिले हो।
 उन्होंने जो कुछ कहा है वह समोच है। और किमो
 धनमे टन नहीं सकता। तुम्हारे अब उन्होंने 'विनाश
 नहीं हो सकता' यह कहा, तब हम लोग विनाशोको
 पाश्चात्तिक विचार यह यथार्थ नहीं कर सकते।' इस पर
 विगडू, बोले 'चापडे विनाशे मुझे विमुख कर दिया और
 चापडे भी वैसाही किया, अब मैं किमो दूसरेका साथ
 मिलेको साथ हूँ।' यह सुन कर विगडूके अङ्गुलि क्रोधमे
 चपारे हो गये और 'तुम चाण्डाल हो जाओ' ऐसा माप
 दे कर वे अपने अपने मार्गमको चल दिये। बाद विगडू
 चाण्डालत्व प्राप्त कर इधर उधर भ्रमण करने लगे और
 दुःखमे मिताना विह्वल हो उन्होंने महर्षि विष्णुमित्रका
 पात्रय ग्रहण किया। राजाको चाण्डालद्वारे और विकल-
 कर्मादेय कर विष्णुमित्रका हृदय दयामे भर पाया
 और वे दोनों 'मैं दिव्य चक्षुषे देखता हूँ कि तुम महा-
 बलमय्यव प्रयोज्याधिपति हो और अमिताभसे चाण्डालत्व-
 को प्राप्त हुए हो। त्रिभुक्तिके जिये तुम मेरे समोच
 पाये हो उसे कहो 'तुम्हारा कल्याण होगा।' तब
 विगडू, राजाने पाप जोड़ कर कहा, 'प्रभो! मैं यथार्थ
 समारोह स्वर्ग जाना चाहता हूँ, यही मेरा अमिताभ
 है। मैं गुरु विगडू और उनके लड़केमे विमुख हो चुका
 हूँ, चमो पापको मेरे एक माय पात्रयदाता है। मैंने
 अपनेक यज्ञ किये हैं और कभी भी धर्म विगर्हित कार्य
 नहीं करता।' विष्णुमित्रने विगडूको यह बात सुन कर
 कहा, 'इस मन, तुम्हें अमिताभमे तुम्हारे ऐसी प्रवस्था
 हो गई है। तुम इसी प्रवस्थामे समारोह स्वर्गको पहुँच
 जाओगे। चमो मैं यथार्थ साक्षात्कारी पुण्यकर्मा महर्षियों-
 की हुनाता हूँ, तुम निश्चित हो कर यज्ञ करो।' तब
 विष्णुमित्रने अपने पुत्रोंको यज्ञका आयोजन करने
 कहा और सब मित्रोंकी बुला कर कहा, 'तुम लोग मेरी
 पाश्चात्तिक शक्ति, और समित्तपुत्रादि वस्तुतः शक्तियों-
 की सुदृढ़ और मित्रोंके साथ बुला लाओ। 'जायमे मा
 नहीं' जो ऐसा कहें वह मुझे बुरा हो। मित्राण्य पारों
 और चल दिये। वेदविदू सभी शक्ति यज्ञमें जाने लगे,

केवल विगडूके पुत्र और समोदय 'शामक शक्ति नहीं'
 पाये। उन्होंने कहाया भोजन कि, जिस यज्ञका यज्ञक
 शक्ति है विष्णुमित्र जो चाण्डाल है उसको यज्ञ-
 कर्ममें सुन और शक्ति योग जिस प्रकार शक्ति भोजन
 करेंगे। विष्णुमित्र यह वचन सुन कर क्रुद्ध हो बोले,
 'विगडूके पुत्र जब बिना दोषके मुझे दोमो बनाते हैं, तब
 वे मेरे इस अमिताभमे सुदृढ़ कुङ्कुर मालाकारी भोजीको
 योनिमें मान लो यद्यपि जन्म लेकर इस संसारमें मरते
 फिरें।' समोदय भी निरादरको प्राप्त कर अधिक समय
 तक दुर्गति भोगे।' बाद विष्णुमित्रने समागत शक्तियों
 से कहा, 'विगडूने समारोह स्वर्ग जानेकी इच्छा करत
 हुए मेरी मरण मौ है। अतः ये शक्तिसे जान कर
 समारोह स्वर्ग जा सकें चाप लोग मेरे साथ सभी यज्ञका
 पशुदान करें।'।

शक्तियोंने विष्णुमित्रको चलाया क्रोधित चामाधका
 लान कुछ भी प्रतिवाद किये बिना यज्ञका आरम्भ कर
 दिया।

विष्णुमित्र स्वयं इस यज्ञमें पञ्चर्षु गये। सम्बन्धविदू
 शक्तिज शक्तानुसार सब कार्य करने लगे। महर्षि
 विष्णुमित्रने देवताओंकी शक्तिभाग प्रदान किया, किशु
 कोरे देवता यज्ञमें न पाये। तब विष्णुमित्रने क्रुद्ध हो
 भुवको उठा कर विगडूने यह कहा, 'मरेमर! मैंने
 चर्जित तपस्याका प्रमाण देवी। चमो मैं अपने तपने
 तुम्हें स्वर्ग भिजता हूँ। कोरे भी समारोह स्वर्ग नहीं जा
 सकता है, पर तुम जाओ। मैंने अपने तपस्या द्वारा जो
 फल प्राप्त किया है, तुम उसीके प्रभावसे समारोह स्वर्गको
 जा सकते हो।' विष्णुमित्रके दतना कहने पर विगडू,
 समारोह स्वर्गको जाने लगे। इधर दन्तने विगडूकी
 समारोह स्वर्गको और पाने देव कर कहा, 'सूर्य!।
 तुम्हारे जिये स्वर्गमें स्थान नहीं। तुम पर गुरुका
 माप है, अतः यज्ञमें शोध सुदृढ़ शक्तियोंकी जोड़
 लाओ।' विगडू अब जोषे गिरने लगे, तब 'मुझे
 बनाइये' कह कर कोरेने पिशा उठे। इस पर विष्णु-
 मित्र बहुत विगडूके और 'ठहरो, ठहरो' यह कह कर
 दन्तने दक्षिणकी ओर दूसरे सत्रर्षियों और लक्ष्मीकी
 रचना आरम्भ की। दन्तने दक्षिणकी ओर दन्त करत

त्रिलोकपति (स० पु०) परमेश्वर ।

त्रिलोको (स० स्तो०) त्रयाणां लोकानां समाहारः डोय । स्वर्ग, मर्त्य, और पाताल ये तीनों लोक; भूलोक, भुवन-लोक और स्वर्गलोक ।

त्रिलोकीनाथ (स० पु०) त्रिलोकनाथ देवा ।

त्रिलोकीनाथ भुवनेश—हिन्दी के एक कवि । ये शाक-दीपी ब्राह्मण, महाराज मानसिंह भयोधानरंग के भतीजे थे । ये भाषा के अच्छे कवि थे । इन्होंने पहले द्वापकनोतिका एकादश अध्याय पर्यन्त भाषा छन्दों में अनुवाद किया और फिर संवत् १८२७ में भुवनेशभूषण नामक ५० छंदों का एक टङ्गहार कविता का एक स्वतन्त्र ग्रन्थ बनाया । इनके बनाये हुए और भे दिये मिलते हैं; यथा भुवनेश-विलास और भुवनेश-प्रह-प्रकाश । इनके लुट्टस्व में प्रायः सभी थोड़ा बहुत काव्य रचना करते थे । भुवनेशजीका स्वर्गवास हुए करीब २५ वर्ष के हुए हैं । इन्होंने ब्रजभाषा में कविता को छे जो सरस और मनोहर है । उदाहरणार्थ इनका केवल एक छन्द नीचे लिखा जाता है—

“कर कंज केवार पै राजि रहे छहरी छति लौं छुटिके अतिके ।
बंगिराति जगति भली विधि सों लखै नैन आनि परी पलके” ॥
भुवनेश छ भाषे बने न कस मुख मंजुल अमृत से छलके ।
मनमोहन नैन मलिन्दन सों रज छेत न क्यो कटिके कटिके ॥”

त्रिलोकेन्द्रकीर्ति—एक दिगम्बर जैन ग्रन्थकार । इन्होंने सामायिकसूत्रको टीका रची है ।

त्रिलोकैय (स० पु०) त्रयाणां लोकानामीशः । १ परमेश्वर । २ सूर्य ।

त्रिलोचन (स० पु०) त्रैवि लोचनानि यस्य । १ शिव, महादेव । २ कामदेव चौदह लिङ्गों में से एक लिङ्ग । ३ एक संस्कृत ग्रन्थकार । इन्होंने पार्थविजय नामका एक काव्य बनाया है ।

त्रिलोचनतोष—विरजा चित्रके चक्रगत एक तोष ।

(कथितसंज्ञिता)

त्रिलोचन-दास—एक प्रसिद्ध व्यक्ति । वर्तमान में दश कोस उत्तर गुप्तकरा स्टेशन के पांच कोस दूर कुनर नदी के किनारे मङ्गलकोट के समीप कुषा वा को नामका एक ग्राम है; वहाँ १८८५ ई० में इनका जन्म हुआ था । इनके

बोरे तीन नाम हैं—सुलोचन, लोचनानन्द, लोचन । श्रेष्ठ लोचन नामसे ये ही प्रसिद्ध थे । चरितामृत और भक्तिरत्नाकरादि प्राचीन ग्रन्थों में ये सुलोचन नामसे ही मगधूर हैं ।

गुप्तकरा स्टेशन के समीप कांकरा ग्राम में विख्यात चैतन्यमङ्गल गायक प्राणकण चक्रवर्ती के घर में इनके हस्तलिखित ग्रन्थ हैं । इस मौलिक ग्रन्थ में तथा छापाई चैतन्यमङ्गल में जमीन ग्राममानका फर्क है ।

फिर बहुत से लोग कहते हैं, कि लोचनदास संस्कृत नहीं जानते थे, किन्तु यह चरम्य जान पड़ता है । प्रसिद्ध राय रामानन्द उक्त संस्कृत जगन्नाथचक्रवर्ती श्लोकाग्रका जो एक मनोहर पद्यानुवाद है वह लोचन दासका ही बनाया हुआ है । अगर ये संस्कृत नहीं जानते होते तो श्लोक के अनुवाद में उक्त कार्य नहीं हो सकती थे ।

इनको लिखावट अच्छी और बड़ी होती थी । अपने घर में एक पत्थर के ऊपर बैठ कर शून्य आकाश के तले से चैतन्यमङ्गल काव्य लिखते थे । वह पत्थर आज भी विद्यमान है । जिसने दर्शन के लिए वैष्णव लोग आज भी आया करते हैं । १५३० शक में इनका दिवंगत हुआ था ।

त्रिलोचन दास—एक प्रसिद्ध वैद्याकरण । इन्होंने कातन्त्र-हस्तिपञ्चिका और कातन्त्रोत्तरपरिमिटको रचना की है ।

त्रिलोचनदेव न्यायप्रधानन—नवहोपके एक नैयायिक पण्डित, रामके छात्र । ये न्यायकुसुमाञ्जलि तथा स्या रच गये हैं ।

त्रिलोचनपाल—महाराज राज्यपालके पुत्र । ये शायद प्रयाग पञ्चल में राज्य करते थे । प्रयाग से प्रदत्त जिनो-चनपालका १०८४ पञ्चद्विगत एक ताम्रग्रामन एमिया-टिक सोसाइटी में रखा हुआ है । उसे पढ़ कर प्रयत्न-विद किलहर्ष साहबने इस शब्दको सम्बन्धपूर्ण स्थिर किया है । (Indian Antiquary, vol. XVII, p. 34)

किन्तु इस ताम्रग्रामनको १०८४ शक सम्बत्त का भी

हुए पुनः सोचा कि इन्द्रशून्य छटि ही - प्रथम है। सब देवता भयभीत हो कर विश्वामित्रकी शरणमें पहुँचे। तब विश्वामित्रने उनसे कहा, मैंने त्रिगुणको सशरीर स्वर्ग पहुँचाने की प्रतिज्ञा की है, अब वह किस प्रकार मिथ्या हो सकता। अतः अब वह राजा जहाँके तहाँ वाप करेगे और जब तक मनुष्य वत्त मान रहेगे तब तक हमारे बनाए समर्पण और नक्षत्र उनके चारों ओर रहेगे।' भाव लोग इस विषयमें क्या कहते हैं। देवताओंने उनको यह बात स्वीकार कर ली। तबसे त्रिगुण, वहाँ आकाशमें मजिद नक्षत्रोंके बीच नीचे शिर किए हुए लटके हैं और नक्षत्र उनको परिक्रमा करते हैं। (राधावर्ण १। ५५-६२ सर्ग)

हरिवंशमें त्रिगुणका विषय इस प्रकार लिखा है— महाराज त्रयाक्षके सत्यव्रत नामक एक पुत्र था। ये बहुत पराक्रमी थे। उन्होंने वैवाहिक नियमका उल्लंघन कर दूसरेको विवाहिता स्त्रीको अपने घर ला उसे अपनी स्त्री बना कर रख लिया। जब महाराज त्रयाक्षकी यह बात मालूम हुआ, तब उन्होंने सत्यव्रतको कलहो समझ कर परित्याग किया। इस प्रकार पितासे तिरस्कृत होने पर सत्यव्रतने उनसे पूछा, "मैं कहाँ रहूँ।" इस पर वे बहुत विगड़े और बोले, "तुम चाण्डालोंके साथ जा कर रहो। मैं तुम्हारे सरोखा दुराका पुत्र द्वारा पुत्रवान् होनेको इच्छा नहीं करता।" सत्यव्रत पिताके आदेशमें नगर छोड़ बाहर हो गये। वसिष्ठने भी इसमें कुछ छेड़ छान की। इसी तरह सत्यव्रत अपना समय चाण्डालोंके साथ बिताने लगे। इस प्रान्त पर भगवान् इन्द्रको ऐसी कुदृष्टि पड़ी कि बारह वर्ष तक छटि हो न हुई। इधर विश्वामित्र अपनी स्त्रीको इसी प्रान्तमें छोड़ आ पकड़ो तपस्या करनेके लिए किन्हीं दूसरी जगह चले गए थे। इससे विश्वामित्रको जो अन्याय पुत्रोंके भरणपोषणके लिए श्रद्धिके औरस-जात मध्यम पुत्रकी गलेमें बाँध कर सी गायोंकी घेघने निकलीं। जब वह सत्यव्रतके पास पहुँचो, तो उन्होंने श्रद्धिके प्रसन्न रखने, चयवा अनुग्रह प्राप्ति की आशाने उनकी श्रद्धा से एवं उनके भरण पोषणका भार पड़ाना किया। विश्वामित्रके पुत्र सत्यव्रतसे

पावे गए थे, इसी कारण उनका नाम मानव पड़ा।

सत्यव्रत प्रतिज्ञावद ही कर - विश्वामित्रको पत्नीका प्रतिपानन करने लगे। सत्यव्रतके राज्यसे वर्धित होते समय वसिष्ठने कुछ भो नहीं कहा था, इस कारण वे श्रद्धि पर कुपित रहते थे। सत्यव्रतके ऊपर उनके पिता जो प्रथमथ से उसी महापापसे इन्द्रने बारह वर्ष तक छटि बन्द कर दी थी। अभी सत्यव्रतने बारह वर्षके बीच दुर्बल दोषा ग्रहण को अर्थात् पापसे निवृत्त हो कर कुसकी निष्कृति प्राप्त की; किन्तु एक बार मांसके भक्षणके कारण उन्होंने वसिष्ठको कामधेनु गौको मार कर उनका मांस विश्वामित्रके लड़केको खिलाया था और स्वयं भी खाया था, सुतरां यह चोर महापापका काम हुआ। वसिष्ठको जब अपनी गौके मारे जानैका हाल मालूम हुआ तब उन्होंने सत्यव्रतसे कहा, 'यदि तुम ये दोनों पाप नहीं किये होते तो मियय ही मैं तुम्हारे पापक्षयी शङ्खुको दूर कर देता। एक तो तुमने अपने पिताको भ्रमस्तुष्ट किया, दूसरे अपने गुरुकी गो मार, डाली और तीसरे उनका मांस स्वयं तथा श्रद्धि-पुत्रोंको खिलाया। यही तीन महापातक तुमने किये। अब किसी प्रकार तुम्हारी रक्षा नहीं हो सकती।' सत्यव्रतने ये तीन महापातक किये थे, इसीसे वे त्रिगुण कहलाए। उन्होंने विश्वामित्रको स्त्री और पुत्रोंकी रक्षा की थी, इसलिये श्रद्धिने उनसे घर माँगनेके लिए कहा। त्रिगुणने सशरीर स्वर्ग जानिको प्रार्थना की विश्वामित्रने 'तयास्तु' कह कर स्वीकार किया। पौके बारह वर्षकी अनादृष्टिका भय दूर होने पर उन्होंने त्रिगुणको उनके पैयक राज्य पर अभिषिक्त किया और स्वयं उनके पुरोहित बने। विश्वामित्रके यज्ञ करने पर देवताओंने भी वसिष्ठका पनादर किया और त्रिगुणके सशरीर स्वर्गरोहणकी अनुमोदन किया। सत्यव्रतने कैकयवंशकी सत्रथा नामक कन्याको व्याधा था और उसीके गर्भसे प्रसिद्ध मल्लवती महाराज हरिश्चन्द्र उत्पन्न हुए थे। हरिश्चन्द्रकी वैग्रह्य भी कहते हैं।

७ नक्षत्रविषय, एक तारा। इसके विषयमें प्रसिद्ध है, कि यह वही त्रिगुण है जिन्हें इन्द्र आकाशमें गिरा रहे थे और जिन्हें मार्गमें ही विश्वामित्रने रोक दिया था।

(हरिवंश १२-१३ अ०)

मान सकते हैं, क्योंकि मूल ताम्रग्रामनमें सम्बत् १८८
 म्पट नहीं है। ताम्रग्रामनमें इन्हें राज्यपालके पुत्र और
 विजयपालके पोत्र बतलाया है। ११८८ सम्बत्में श्री ताम्र-
 ग्रामन उत्कीर्ण हुआ है, उसमें महाराजपुत्र राज्यपाल-
 का परिचय है। (Ind. Ant. Xth 111, p. 96) पूर्वोक्तकी
 और गीर्वाणकी सम्बत् माननेसे राजागणके ताम्रग्रामनमें
 केवल २०० वर्षका अन्तर देखा जाता है। 'महाराज-
 पुत्र' राजापालने भी कान्यकुब्जराज गोविन्दचन्द्रकी
 सहायिनी भूमिदान किया था। ऐसा होनेसे राजा-
 पालका गोविन्दचन्द्रके अधीन होना भावित होता है;
 किन्तु त्रिलोचनपालकी परम भहारक महाराजाधिराज
 इत्यादि स्वाधीन राजाकी उपाधि मिलेगी।

२ एक पराक्रान्त राजा जो पश्चिमोत्तर प्रदेशमें राजा
 करते थे। उन्होंने सुनतान मधुसूदके साथ युद्ध किया था।

३ लाटदेगके चोलुक्कयंगोय एक विख्यात राजा,
 वत्सराजके पुत्र। ये ८२० गकमें राजा करते थे।

त्रिलोचन महाचार्य—न्यायमन्त्र नामक संस्कृत ग्रन्थके
 रचयिता।

त्रिलोचनमित्र-धर्मकीय नामक धर्मशास्त्रके संपादक।
 वर्तमान और प्राकृतिकतत्त्वमें रघुनन्दनने इनके वचन
 उद्धृत किये हैं।

त्रिलोचन शिवाचार्य--रत्नत्रयोद्योत और सिद्धान्तमारा-
 यन्त्र नामक शैवशास्त्रकार।

त्रिलोचना (स० स्त्री०) दुर्गा।

त्रिलोचनाचार्य--वैयाकरण कीटियत्र नामक संस्कृत
 ग्रन्थके रचयिता।

त्रिलोचनादित्य--एक संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने नाट्य-
 लोचन और लोचनशालाध्वज नामक ग्रन्थ रचये हैं।

त्रिलोचनाष्टमी (स० स्त्री०) त्रिलोचनाथ शिवपूजाय
 या षट्मी। ऋषभमासकी गोचराष्ट्र ज्ञ्याष्टमी।
 इस षट्मीमें शिवकी पूजा करनेसे शिवलोककी प्राप्ति
 होती है।

त्रिलोचनी (स० स्त्री०) त्रीणि लोचनानि यस्याः। दुर्गा।

त्रिलोचनेश्वरतोय (स० स्त्री०) त्रिलोचनेश्वर नाम
 तीर्थ। तोयं विभिय, एक तीर्थका नाम।

त्रिलोह (स० स्त्री०) सुवर्ण, रजत और ताम्र; सोना,
 चांदी और तांबा।

त्रिलोहक (स० स्त्री०) सोना, चांदी और तांबा ये तीनों
 धातु।

त्रिलोहक (स० स्त्री०) त्रीणि लोहानि धातवो यत्र,
 मंत्राय कन्। सुवर्ण, रजत और ताम्रमय पातादि,
 सोने, चांदी और तांबेके बरतन आदि।

त्रिवच (स० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक राग। यह दो
 पहरके समय गाया जाता है। कोरे कोई इसे हिंडोल-
 रागका पुत्र मानता है।

त्रिवचो (हि० स्त्री०) एक संकर रागिणी। यह शंकरा-
 भरण, जयश्री और भरनाशयकके योगसे बनती है।

त्रिवच (स० पु०) त्रयो वक्ताः वक्तराः यस्य सः। तीन
 वर्षका पशु।

त्रिवर्ग (स० पु०) त्रयाणां धर्मार्थकामानां वर्गाः
 समूहाः। १ धर्म, धर्म और काम। २ त्रिकला। ३
 विकट, ४ वृद्धि, स्थिति और चय। ५ सत्य, रज और
 तम ये तीनों गुण। ६ ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य ये
 तीनों प्रधान जातियां। ७ सुभीति। ८ गायत्री।

त्रिवर्ग (स० स्त्री०) १ तीन रङ्ग।

त्रिवर्षक (स० स्त्री०) त्रिवर्षं स्वार्थं कन्। १ ब्राह्मण,
 क्षत्रिय और वैश्य ये तीनों प्रधान जातियां। २ त्रिकला।
 ३ ग्राम, रज और पोत, जाना, कास और पोसा रंग।
 ४ गोधुत, गोखरू। ५ विकट।

त्रिवर्षक (स० पु०) सरट, गिरगिट। यह तीनों रंग
 धारण कर सकता है।

त्रिवर्षा (स० स्त्री०) वन कार्यामी, वन-रक्षास।

त्रिवर्षा (स० पु०) एक प्रकारका मोती। कहा जाता
 है कि जिनके पास यह मोती होता है उसकी दरिद्र
 कर देता है।

त्रिवर्षगा (स० स्त्री०) त्रिपथगा, गङ्गा।

त्रिवर्षन् (स० स्त्री०) १ त्रिपथ। त्रीणि वर्णानि यस्य।
 २ देवयान, पितृयान और दक्षिणयान इन तीनों मार्गोंके
 लोच।

त्रिवर्ष (स० स्त्री०) त्रयो वर्षा वक्तराः यस्य। १ तीन
 वर्षके लोच। (पु० स्त्री०) २ वर्षत्रय, तीन वर्ष।

त्रिवर्षा (स० स्त्री०) तीन वर्षकी गाय।

त्रिवर्षिका (स० स्त्री०) त्रिवर्षं देवी।

त्रिगिरम् (मं० पु०) त्रिगिराणां गते जन्म-इ । इतिगिर
राजा ।

त्रिगिर, पात्रो (मं० पु०) त्रिगिर, पात्रपति यज्ञ-पति ।
विश्वामित्र इति । त्रिगिर देवो ।

त्रिगिर (मं० लो०) त्रिगिरितं गतं मध्यमो० । त्रिगिरित
गत, त्रिगिरा मो, तोन मो ।

त्रिगिरावसारिपोतेन (मं० लो०) तैल पोयव भेद ।
प्रद्युत प्रणामो—तिन् तैल ४८ मेर, कावाट १००
पल पोर गाणाके माघ मारविमिट मध्यमद्वा १००
पल, पाकाय १०० मेर मेघ १६ मेर, चमगाव्या १००
पल, लव ६४ मेर, मीघ १६ मेर, दमचुल १०० पल, जल
६४ मेर, मीघ १६ मेर, दधिपा १०० मेर, काजो १२
मेर, लव पाकाय १०० मेर, लवपाय १०० मेर, मीघ
मय प्रत्येक १ पल, चंदरव ५ पल, भिषायेकी मुटि ३०
पल, विरासुल २ पल, चोतासुल २ पल, यवचार २
पल, मीघव २ पल, मघन लवच २ पल, मजोठ २ पल,
मध्यमद्वा २ पल, यटिमधु २ पल, इन मय द्रव्योको तैल
विधिरे चनुमार पाक कर उत्तार मेने ई । यह तैल
मध्यम, वृद्धिकर्म, निद्रा, पाक पोर नखायमें व्यवहृत
होता है । यह वातरोगका एक उच्छेदक तैल है । इन
तैलका व्यवहार करनेसे चर्मो प्रकारको वातज व्याधि
पोर मोर प्रकारकी पैलिक तथा इनेमिक व्याधि बहुत
जल्द प्रशमित हो जाती है । इनके सिवा शृंगरो,
चविमद्वा, मध्यानि, चरोनक, चणमार, लम्बाद, विभ्रम,
पलायन, मज्जाहृत, मातमुलम् आदि रोग जाने रहते
हैं । (मेघनरनामको)

त्रिगिरव (मं० लो०) त्रिगिराणां गते जन्म-इ । इतिगिर
राजा ।

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरितं गतं मध्यमो० । त्रिगिर
पोनो पोर मिश्रो इन मोनोका समूह ।

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन् माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिगिरा (मं० पु०-लो०) त्रिगिराणां गते जन्म-इ । इतिगिर
पोर मिश्रो इन मोनोका समूह ।

१. त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

(त्रिगिराव १०१८)

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिगिराव (मं० पु०) त्रिगिराव, चर्भन्माधु ।

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिगिराव (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिगिराव (मं० पु०) त्रिगिराव, चर्भन्माधु ।

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिगिराव (मं० पु०) त्रिगिराव, चर्भन्माधु ।

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिगिराव (मं० पु०) त्रिगिराव, चर्भन्माधु ।

त्रिगिरा (मं० लो०) त्रिगिरा गता यथाः पयोदं माधुः ।
चर्भन्माधुविमेष, चर्भन्माधु या महापोर व्यामोको
माताका नाम ।

त्रिवर्णीय (स० त्रि०) त्रिवर्ण भवः महादिभ्यसः । त्रिवर्णी-
त्पत्र, जो केवल तीन वर्णों तक ठहरता है ।

त्रिवर्णी (स० त्रि०) इन्दीवर, नोलकमल ।

त्रिवर्ण्य (स० पु०) बहुत प्राचीन कालका एक प्रकारका
बाजा । इस पर चमड़ा मड़ा होता था ।

त्रिवाङ्गुर (त्रिकवाङ्गुड वा त्रिकवाङ्गुड)—मन्द्राज
प्रदेशके अन्तर्गत देगोय राजशासित एक मिश्राज्य ।
यह अक्षां ८०° ४' और १०° २१' उ० तथा देशां ७६°
१४' और ७७° २०' पूर्व में अवस्थित है । इसके उत्तरमें
कोचीनराज्य, पूर्वमें मद्रास और तिरुचेली जिला, पश्चिम
और दक्षिणमें भारत महासागर है । यह राज्य उत्तर
दक्षिणमें ८० कोस लम्बा और २८ कोस चौड़ा है ।
भूपरिमाण ६७२० वर्ग मील है । इसमें २१ तालुक लगते
हैं । इसको राजधानी त्रिवन्दरम् है । यहाँ त्रिवाङ्गुरके
राजा वास करते हैं ।

यहो राज्य प्राचीन केरलका दक्षिणीय है । इसके
कई एक नाम पाये जाते हैं, यथा—योविक्कुकुण्ड, यो
वैल्लपुर और पयानामपुर । पेरिप्लसके अनुसार इसका
एक प्राचीन नाम 'पुरलि' है ।

त्रिवाङ्गुरका प्राकृतिकदृष्ट्य अत्यन्त सुन्दर है । पूर्वाञ्च-
में पर्वतमाला बहुत घने जङ्गलसे ढकी है । पर्वतका
शिखर ८ हजार फुट ऊँचा है । समुद्रके किनारेसे ५
कोस दूर समस्त क्षेत्रमें नारियल और सुपारीके वृक्ष देखे
जाते हैं । ये ही दोनों द्रव्य देशके घनागमके प्रधान उपाय
हैं । सारा देश एक प्रकारको उर्वर उपत्यकासे आच्छा-
दित है, पूर्व-पश्चिममें नदियाँ प्रवाहित हैं । समुद्रके
किनारे तथा अन्तर्गत बहुतसे ऊँचे जिनमेंसे खाड़ी
कट कर एक दूसरीसे मिल गई हैं । जब नदीमें जल
नहीं रहता था भासानीसे समुद्र होकर भा जा नहीं
सकते, तब इन्हीं ऊँची जगहों पर जल जमा जाता है ।
नाझिनाड नामक पूर्व विभागमें धान और ताड़ बहुत
उपजते हैं । यह नगर ठोकर तिरुचेली जिलेके जैसा है,
पर कहीं कहीं भुवनेश्वर जमीन भी पाई जाती है ।
समुद्रके किनारेकी जमीन सबसे अधिक उर्वरा है ।
पर्वतमालाका दृश्य बहुत मनोरम है । दक्षिणामें
पर्वतमाला जङ्गलीसे आच्छादित और खूब ऊँची है ।
मध्यस्थका पहाड़ उतना जगजा नहीं है । उपत्यकादिमें

ऊँचे मन्दिर और गिर्जा हैं । पश्चिमामें बहुतसे बगीचे
हैं । मनारगुडि, कोलाचल, विलिन्नम, पन्नाद,
अक्कोट्टी, कुडलीन (कोलम्ब), कायङ्गुलम्, पोरकाड और
अक्कोट्टी नामक प्रधान मन्दिर समुद्रके किनारे प्रवाहित
हैं । इनमेंसे अक्कोट्टी, कुडलीन और कोलाचल मन्दिरोंमें
हो बड़े बड़े जहाजादि पाते जाते हैं और सब दूसरे
मन्दिरोंमें देवी बड़े बड़े भावे पाते हैं । पेरियर नदीके
पश्चिममें पर्वतमालाका नाम अन्नमलय है । इसी
शिखरसे ताम्रपर्णी नदी निकली है । यहाँको उपत्यकामें
सब जगह काफी और चाय उपजती है । एरिविमलय
वा हामिलटन उपत्यका १ कोस लम्बी और ६ फुट
चौड़ी है जिसमेंसे २० हजार बोधे जमीनमें केवल काफी
और चायको फसल होती है । सेलमलय वा कानन्दवन
पर्वत पर भी ऐसा ही लम्बा चौड़ा चाय और काफीका
क्षेत्र है । त्रिवाङ्गुरके सबसे ऊँचे पर्वतशिखरका नाम
अन्नयमुडि है, जिसकी ऊँचाई ८८२० फुट है । हिमा-
लयके दक्षिणमें यहो सबसे ऊँचा पर्वत है । इसके
समीप और भी कई एक शिखरोंकी ऊँचाई ८ हजार
फुट है । इस पर्वतमालाके दक्षिणमें एलाचि-पर्वत-
माला है, जहाँ दारचोनी बहुत उपजती है । यह पर्वत-
माला दक्षिणमें क्षमयः पतली और छोटी होकर कान्या-
कुमारिका तक विस्तृत है । इस अक्षयमें मशैयोंका
वास बहुत कम है ।

घाट पर्वतसे इस देशको बहुतसे नदियाँ उत्पन्न
हुई हैं । पेरियर नदी ही इस देशमें प्रधान है । यह
पर्वतके बहुत ऊँचे स्थानसे निकल १४२ मील भाकर
कोदङ्गुर नामक स्थानमें समुद्रके एक जलावर्धनमें गिरी
है । इस नदीके मुहानेसे ऊपर १० कोस तक भावे
चलती है । इसके बाद पम्बद नदी है । इसकी पश्चिम-
कदल और कददा नामकी दो उपनदियाँ हैं । कुलि-
तोरह वा पश्चिमताम्रपर्णी नदी मङ्गलुगिरि नामक
पर्वतसे उत्पन्न हो कर तिरुचेली जिलेमें प्रवेश
करती है । बड़ी ताम्रपर्णी नदी भी पम्बदतोर पर्वतसे निकल
कर उसी जिलेमें प्रवेश करती है । दक्षिणामें प्रलय और
कोटर नामक स्थानमें पाण्ड्य राजाओंके धनाये हुए
बहुतसे पानिक्ट वा जलावरोध हैं । तीरवर्ती जलावर्धन

दोनो बचे थे। (त्रि०) ८ जिसके तीन गिर है।
त्रिगोष (स० त्रि०) त्रीणि शीर्षाणि यस्य । १ त्रिगिर, जिसकी तीन चोटियां हैं। २ त्वष्टा प्रजापतिके पुत्रका नाम।

त्रिगोषक (स० क्लो०) त्रिगोष-कण । त्रिशूल ।

त्रिगोषन् (स० पु०) त्रष्टाके एक पुत्रका नाम।

त्रिशुच (स० पु०) तिस्रः शुचो दीर्घयः शोका वा अथ ।

१ धर्म, जिसका प्रकाश स्वर्ग, पन्तरिच और पृथ्वी तीनों स्थानोंमें है। २ आध्यात्मिकादि शोकत्रयशुद्ध, वह जिसे दैहिक, दैविक और भौतिक तीनों प्रकारके दुःख हैं।

त्रिशूल (स० पु०) त्रीणि शृङ्गानि इव अथाणि यस्य । स्तनामख्यात अस्त्रविशेष, एक प्रकारका अस्त्र जिसके धरे पर तीन फल होते हैं। यह महादेवजीको अस्त्र माना जाता है। इसका संस्कृत पर्याय—त्रिशिख, शूल और त्रिगोषक है। २ दैहिक, दैविक और भौतिक दुःख। ३ तन्त्रके अनुसार एक प्रकारको मुद्रा। हममें अंगूठोको कल्पिता, उँगलोको साथ मिलाते हैं और बाकी तीन उँगलियोंको फैला देते हैं।

त्रिशूलवात (स० क्लो०) त्रिशूलेन घातं । तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम। इस तीर्थमें स्नान कर पिछ और देवताओंको अर्चना करनेसे माणपत्यदेह प्राप्त होता है।

त्रिशूलमुद्रा (स० क्लो०) त्रिशूलं आकारत्वेनास्त्वस्याः । मुद्राविशेष, एक प्रकारको मुद्रा। त्रिशूल देखो।

त्रिशूलो (स० पु०) त्रिशूलं अस्त्रमस्यस्य, त्रिशूल-इति ।

१ शिव, महादेव। (स्त्रो०) २ दुर्गा। (त्रि०) ३

त्रिशूलधारी, त्रिशूलकी धारण करनेवाले। (क्लो०) ४ पारद, पारा।

त्रिशू (स० पु०) त्रीणि शृङ्गाणि यस्य । १ त्रिकूट पर्वत। इसी पहाड़ पर लड़ा बली है। २ त्रिकोण।

त्रिशू (स० पु०) त्रीणि शृङ्गाणीव सन्त्यस्य त्रिशू-इति । रोहित मख्य, टिंगना नामकी मछली जिसके गिर पर तीन कांटे होते हैं।

त्रिशोक (स० पु०) त्रयः आध्यात्मिकादयः शोका अथ । जीव, आधिदैहिक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक ये तीन प्रकारके शोक जीवके होते हैं, इसीसे जीव मात्र

ही त्रिशोक है। २ कथं त्रिपिके एक पुत्रका नाम।

त्रिशुनिमध्यम (स० पु०) एक प्रकारका विकृत स्वर। यह मन्दोपनो नामकी श्रुतिसे आरम्भ होता है। इसमें चार श्रुतियां होती हैं।

त्रिपंशुक्त (स० त्रि०) त्रिभिर्हविर्भिः संयुक्तं वेत्ति छन्द-सीति चानुवृत्तो वेदे पत्वं । १ तीन बार हविर्भयुक्त यज्ञ। २ जो तीन चोत्रोंमें संयुक्त हो।

त्रिपंखरः (स० क्लो०) त्रयः संखराः साधनकाला अथ वेदे पत्वं । त्रिपं, आद्य सत्रभेद, तीन वर्षमें होने-जाना एक प्रकारका सत्र।

त्रिपन्थि (स० त्रि०) त्रयः सम्यगोऽस्य, वेदे वा पत्वं । त्रिसन्धियुक्त, जो तीन भागोंमें विभक्त हो।

त्रिपरण (स० क्लो०) स्यते सोमोऽत्र स आधारे ऋदुः पूर्व पदादिति । त्रिकाल, प्रातः, मध्याह्न और सायं ये तीनों काल।

त्रिपट (स० त्रि०) त्रिपट्टा युतं यतादित्वात् ङ । त्रिपट्टि युत यतादि, क्रममें तिरसठकी स्थान पर पढ़नेवाला, तिरसठवां।

त्रिपटि (स० क्लो०) त्राधिका पटि, बहुल्येऽपि एक-वचनं । त्राधिका पटि संज्ञा, वह संख्या जो सठसे तीन और अधिक हो, तिरसठको संख्या। २ उक्त संख्या सूचक शब्द।

त्रिपटितम (स० त्रि०) त्रिपटि पूर्ये तमप । त्रिपटि संख्याका पूरण, तिरसठवां।

त्रिपुष्प (स० पु०) त्रयः पुष्पांस्तदावकाशम् यत्र । १ बहुवृच वेदके एक भागका नाम। त्रिसौषण्यं देवं। २ उक्त व्रत। ३ उक्त व्रतधारी पुष्पय।

त्रिष्टुभ (स० क्लो०) त्रिपु-स्थानेषु सुभ्यते सुभ-क्तिप-पत्वं । एकादश अक्षर पाँदक वर्षवृत्त छन्दोभेद, एक वैदिक छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें ग्यारह अक्षर होते हैं। इन्द्र ग्यारह अक्षरोंसे त्रिष्टुभ छन्दका विधान करते हैं। (शुक्लजु० ५।३६)

यह छन्द प्रजापतिके मांससे उत्पन्न हुआ है।

(मागवत० १।२।२९।)

इसका प्रकार नीचे लिखे अनुसार है—

इन्द्रवक्ता ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

प्रवेश कर इनके नाम रूप व्याप्त करते हैं। इसी चमि-
प्रायमे दर्शन का सन तोन देवताओंमें एक एकको
तिगुणा करते हैं। जिस प्रकार भगवान् परिमाणके तोन
सुतीको तिगुना करनेमें समी बनती है, उसी प्रकार तेज,
जल और चप इन सबको भी तिगुत्करण समझना
चाहिए। किन्तु तोनोंके नाम प्रयक्, प्रयक्, रखे गये
हैं, पर्यात् यह तेज है, यह जल है, यह चप है इत्यादि
तेजोंकी विशेष भाषा है। उक्त तीनों तेज देवताओंके
उक्त रूपमें यथोक्त जोयोंके साथ पतःप्रविष्ट होते हैं और
वैराजविष्ट पर्यात् देवताओंके पिण्डमें अनुप्रवेश करके
इसके ये नाम हैं यव' इसके ये रूप हैं इत्यादि प्रकारसे
उसी तरह नाम रूप व्याप्त करते हैं। जिस तरह इस
महिःस्य पिण्डमें तोन देवताओंका विष्णुकरण हुआ है।
देवताओंका जो विष्णुकरण कहा गया है उसका उदा-
हरण हम प्रकार है—

चमिका जो मोहित रूप देखा जाता है, यह उन्हीं
तेजोंका रूप है, गुल रूप जलका है और जो लूण रूप
है उसे चमका पर्यात् चविष्णुजन प्रयोका रूप सम-
झना चाहिए। ऐसा होने पर भी लोग चमिको इन
तोनों रूपोंके प्रतिरिक्त मानते हैं। इससे चमिका चमिन्व
नष्ट हो गया है। पहले से तीनोंरूप विभक्तविज्ञान-
वगतः चमि समझे जाते थे, पर तेज द्वारा यह चमि-
बुद्धि और चमिबुद्धि चपगत हो गया है। रक्तोपधान
मंशुल स्फटिक मणिको चपण करनेसे पहले यह पदाराग
मणिके जैसा प्रतीत होता है, लेकिन जब इसके स्वरूप-
का ज्ञान हो जाता है, पर्यात् यह रक्तोपधान है ऐसा
मानूँ मैं पहने लगता है, तब फिर पदारागका ज्ञान जाता
रहता है। उसी तरह जब तक चमिके पूर्वोक्त तोन
गुणोंका ज्ञान नहीं होता, तभी तक चमिबुद्धि और
चमिबुद्धि रहता है। तीनों रूपोंका सम्यक् ज्ञान हो
जानेसे ही उनको प्रयक्ताका ज्ञान दूर हो जाता है।

यद्यपि यह विकार मात्र है, केवल तोनों रूप ही
सत्य है। तीनों रूपोंकी छोड़ कर और कुछ भी सत्य
नहीं है।

सूर्यका जो मोहित रूप देखा जाता है, यह तेजका
रूप है, चन्द्रमाका वह रूप जलका और जलरूप चप-

का पर्यात् चविष्णुजन प्रयोका है। जब तक लोगों
गुणोंका सम्यक् ज्ञान नहीं होता, तब तक ये प्रयक्
प्रयक् रूपमें प्रतीत होते हैं। निवेश ज्ञान की जानेसे
तोनों रूपोंके प्रतिरिक्त और कुछ भी नहीं रहता, इसी-
से केवल ये ही तीनों रूप एक मात्र सत्य हैं।

उक्त तोन रूपोंके प्रतिरिक्त और कुछ भी सत्य नहीं है।
तेज, जल और चप जिस तरह इन तोन देवताओंके
तिगुत्करणमें एक एक होता है, यह इसी तरह ज्ञानका
चाहिए। उन्हीं जो उदाहरण दिया गया, वह तेजका
था। चप जल और चपका उदाहरण दिया जाता है।

प्रयोमें गन्ध है और जलमें रस है; किन्तु तेजमें वे
सब नहीं हैं। गन्ध और रस तेजमें नहीं है, बारा
संसार विष्णु है, केवल तोनों रूप ही सत्य हैं, चप
और जल निष्प्राय प्रयुक्त जल ही सत्य है, जल भी केवल
तेजः सम्प्राय है। सुतरां जल और नाम मात्र तेज ही
सत्य है, तेज और सत्पदार्थ निष्प्राय है, सुतरां तेज भी
नाम मात्र है। पतः वही सत्पदार्थ सत्य है, वायु और
वाकाग विष्णुजन नहीं हैं, तभी से तेजके पतार्गत
नहीं हैं।

जितने विष्णुजन हैं, सभी चमत् हैं। केवल एक
मात्र सत् पदार्थ ही सत्य है। (गर्वाहं वपं माह)

विहत्ता (सं० वि०) विगुचित, तिगुना।

तिहत्ता (सं० स्त्री०) त्रिरहत्ता, तिगुना, निषीय।

तिहत्ति (सं० स्त्री०) तिघ्नः हस्तयः कर्मधा०। तिगुना,
निषीय।

तिगुत्तिका (सं० स्त्री०) तिघ्नः हस्तयोः स्थाः ऋषः।

१ तिगुना, निषीय। (वि०) २ विवाहतिगुत्तिका, जिसका
तोनों हस्तियां हो।

तिगुत्तर्णी (सं० स्त्री०) दोन दोपान् नाग्रत्वेन।
हृत्तिति तिगुत्त विदोषधं पदमप्याः। हिलमोचिका,
दूरदूर।

तिगुदेह (सं० पुं०) परमाद्यात्मना, त्रिवर्षते तिगुत्त कर्म-

धा०। १ तयोः मूलः यत्न और साम ये तीनों वेद।

२ उनमें सत्य प्रपञ्च। जो उक्त तीनों वेदको जानते
हैं, वे ही वेदविद् कहलाते और ये तीनों वेद जिनमें
प्रतिष्ठित हैं और जो पाथ पदार्थ प्रपञ्च पर्यात् प्रपञ्चको
जानते हैं, वे ही वेदविद् हैं।

विशङ्ख (मं० पु०) विशङ्खी शीघ्रते जन-प्र । हरिपञ्च
राजा ।

विशङ्खयाओ (मं० पु०) विशङ्खयात्रयति यत्र-विशि ।
विश्रामित शयि । विशङ्ख देवी ।

विशत (मं० लो०) विगुणितं यत् सञ्चयो० । विगुणित
मत, विगुना सो, तोम सो ।

विगतोप्रमारिवोतोम (मं० लो०) तीन चोपध भेट ।
प्रसुत प्रपायो—तिष्ठ तोम ४८ मीर, कायाय मूल-

पक्ष चौर शापाके माय माशविगिट मध्यमद्वा १००
पक्ष, वात्राय जल १४ मीर, शेष ११ मीर, चयनमा १००

पक्ष, जल १४ मीर, शेष ११ मीर, दशमूल १०० पक्ष, जल
१४ मीर, शेष ११ मीर, दधिका जल ११ मीर, चोओ १२

मीर, कल्प वात्राय जल १११ मीर, कल्पाय जोवनोय
मय प्रत्येक १ पक्ष, चदरय ५ पक्ष, मिमावेकी मुटि ३०

पक्ष, विपरासुल २ पक्ष, चोतासुल २ पक्ष, ययवार २
पक्ष, मेयव २ पक्ष, मयल मयव २ पक्ष, मजोठ २ पक्ष,

मध्यमद्वा २ पक्ष, यटिमथु २ पक्ष, इन मय दूष्योको तोम
विधिसे अनुसार पाक कर उत्तार सेते हैं । यह तीन

सम्भ्रष्ट, वस्त्रिकम्, निदह, पात चौर नस्यायमें व्यवहृत
होता है । यह वातरोगका एक उच्छेद तैल है । इस

तेलका व्यवहार करनेसे चण्डो प्रकारको वातज व्याधि
चौर जोष प्रसारकी पैसक तथा श्लेष्मिक व्याधि बहुत

जल्द प्रशमित हो जाती है । इससे मिवा गुग्गुली,
चव्यिमङ्ग, मन्दामि, चोवक, चयमार, लकाद, विम्बम,

पचायान, मजोडहन, वातगुग्गुम खादि रोग जाती रहते
हैं । (नेवहरराजाकी)

विशरय (मं० लो०) सोपि शरयामि यस्य । १ पुत्र ।
२ जंमियोडे एक आचार्यका नाम ।

विशर्या (मं० लो०) विगुणित मर्कश, सञ्चयो० । गुह,
चीनो चौर मिखो इन तोमोका समूह ।

विशमा (मं० लो०) विश्रः शला यस्याः पयोद० माधुः ।
यह मू मातृविश्रय, मर्कमान या मझापोर नामोको

माताका नाम ।

विशम्भ (मं० पु० लो०) जेभमोनुसार माया, मिष्यत्य
चौर निदान से तोम-मन्थ । मन्थमें चौर यक्षमें

है, तराय चण्डो जिनमन्थमें यक्षहाग वा मन्थ
करना मिष्यत्यमन्थ है चौर भविष्यमें विषयभीषोको

बाँहा करना निदानमन्थ है । इन तोमोडे रहने
वृष समुप्य ततो नहीं हो सकते चण्डो जिनमें ये तोम

मन्थे पाई जाय, उनका चर्हिमादि मत हवा है ।
(तरायचर ७१८)

विशाण (मं० लि०) विश्रः शापा यमापि यमः । मिष्य-
कार पक्षयगुह, जिनमें चामिको चौर तोम शापाय

निकनो हो ।

विशाणपुत्र (मं० पु०) विष्यपुत्र, वंशका पैह ।
विशाण (मं० लि०) तयः शापाः परिषाममसा तैः क्षीतं

या चय तमा ना मुह । १ विशाण परिमित । २ जो
एक विशाणमें वरोदा गया हो ।

विशामक (मं० लो०) विश्रः शापा यय ना कप ।
चिरपुत्रनामाय वधु भेट, वध इमारत जिनमें उत्तर चौर

चौर कोई इमारत न हो । ऐसी इमारत चण्डो ममानो
जातो है ।

विशिय (मं० लो०) विश्रः मिषा यमः । १ विशूल ।
२ किरोट । ३ रावणके एक पुत्रका नाम । ४ विश्र,

बैम । ५ तामय नामक मन्थनारके इन्द्रका नाम ।
(लि०) ६ मिषातपयुह, जिनको तोम मिषायें हैं ।

विशिवर (मं० पु०) सोपि विशरापि यस्य । विश्र-
वर्षत, यह वहाड़ जिनको तोम चोटियां हो ।

विशिविदना (मं० लो०) विश्रः दिवाः मन्थय इमि
माहं दममन्थ । माताकन्द नामक मूल ।

विशिविन् (मं० लि०) विश्रियाः मन्थय इमि । विश्रिच,
जिनको तोम चोटियां हो :

विशिरम् (मं० पु०) सोपि शिरामि यस्य । १ कुबेर । २
रावणके एक पुत्रका नाम । ३ शरके एक मेमायिका

नाम । ४ चर पुत्रय । इसे दामवीके राजा रावणकी मझा-
यनाके लिये मझादेवजीमें शपथ किया था । इससे तोम

मिर, तोम घेर, यह हाथ चौर को बाँधे गी । ५ जेन-
रय । ६ लछा प्रजापतिके पुत्रका नाम । ७ चमुराकिम,

एक राक्षस जिनका लखे मझामानमें है । यह खा-
नूयकी मेनामें मर्कमान था । जोरामोके हाथ १४
चत्वार रावणके मरि नाम पर विशिरा चौर कर के जो

चिनवस्त्रिभरायि ५ से ही गुणा क्रिया गया है, ऐसा समझना चाहिए, अन्यथा गुणक्रिया सम्भव नहीं है।

उदाहरण—यदि ८ भरी सेनिका मूल्य ४२) ६० हो, तो ३ भरी सेनिका मूल्य कितना होगा।

यहां पर पहले १ भरीका मूल्य निकाल कर उसे तीनसे गुणा करने पर तीन भरीका मूल्य निकल आवेगा।

एक भरीका मूल्य निकालनेमें ८ भरीकी मूल्य ४२ रूपयेमें उसे भाग देना होगा। ४२ रूपयेमें उसे भाग देने पर भागफल ५।) ६० होता है। अब उसे ३से गुणा करने पर १५।) १८० हुआ और यही प्रश्नका उत्तर है। अभी इस प्रश्नके शब्दोंको पूर्ववत् रखनेसे इस प्रकार होता है। जैसे—

भरी : भरी ६०

८ : ५ : : ४२ : ६० वा इट रायि

किन्तु ४२को पहले उसे भाग दे कर पीछे भागफलको उसे गुणा नहीं कर यदि ४२को ही उसे गुणा करे और गुणनफलको उसे भाग दे, तो फलमें कोई फलर नहीं पड़ेगा। अतएव ४२को ३से गुणा कर गुणनफल १२६में ८का भाग देनेसे भागफल १५।) हुआ। इसी प्रकार प्रश्नकी सभी प्रक्रियाओंको भली भाँति सोच विचार कर परवर्ती नियम स्थिर हो सकता है।

वैराग्यिकके षडपातका नियम-तीन निर्दिष्ट राशियोंमें से जो रायि इट चौथी राशिको जातिकी हो, उसे तीसरे स्थानमें रखते हैं। पीछे प्रश्नका भाव भली भाँति सोच कर यह देखना होता है, कि चौथी रायि तीसरी रायिसे बड़ी होगी वा छोटी। यदि बड़ी हो, तो निर्दिष्ट राशियोंमेंसे प्रविगिष्ट दोनो जो बड़ी होगी उसे चयवा यदि छोटी हो, तो उन दो राशियोंमेंसे जो छोटी होगी उसे दूसरे स्थानमें तथा तीसरी प्रथम स्थानमें रखते हैं।

प्रक्रिया घटित नियम—

पहली और दूसरी रायि यदि भिन्न भिन्न श्रेणियोंकी हों, तो उन्हें आवश्यकतानुसार सबसे निम्न वा एक श्रेणीमें करते हैं। क्रिया करते समय उन्हें चयव-स्त्रिभ समझना चाहिये। तीसरी रायि यदि भिन्न

रायि हो, तो उसे आवश्यकतानुसार सबसे निम्न श्रेणीमें लाते हैं। पीछे दूसरी और तीसरी रायिके गुणनफल पहली रायिसे भाग दे कर जो भागफल हो वही उत्तर होगा। तीसरी रायि जिस श्रेणीमें लाई गई है उत्तर भी उसी श्रेणीमें होगा।

पीछे जरूरत होने पर उसे उच्च वा निम्न भिन्न भिन्न श्रेणियोंमें लानेसे प्रकृत उत्तर निकल आवेगा। दूसरे सभी पद्धतोंको रखनेसे वा उन्हें अन्य श्रेणीमें लानेसे यदि पहली और दूसरी श्रेणिका चयवा पहली और तीसरीका कोई साधारण गुणनीयक रहे, तो उससे उनमें भाग देना होता है और भागफल से कर पूर्व लिखित कार्य करना होता है। ऐसा करनेसे कुछ प्रभेद नहीं पड़ेगा और प्रक्रियाको भी सुविधा होगी। क्योंकि भाज्य और भाजक दोनों राशिको किसी एक रायिसे भाग देनेसे भागफलमें कोई फलर नहीं पड़ता है। उदाहरण—यदि ५।) ३६० सेर तेलका दाम ४२।) १८० पाना हो, तो ४२।) ३६० सेर कितना होगा?

इस प्रश्नमें इट या अज्ञात रायि रूपवा है। अतएव उसी जातिका ४२।) १८० पाना तीसरे स्थानमें रखा गया एवं प्रश्नकी गतिसे ऐसा ज्ञात हुआ कि इट रायि तीसरी रायिसे कम होगी। इसी कारण प्रविगिष्ट दो राशियोंमेंसे जो रायि छोटी है उसे दूसरे स्थानमें और प्रथमको पहली स्थानमें रखा।

मन मन रूपवा
५।) ३६० : : ४२।) ३६० : : ४२।) ३६०

पीछे पहली और दूसरी राशिको सेरमें ला कर और तीसरी भिन्न राशिको पानेमें ला कर फिर इस प्रकार लिखा गया।

सेर सेर पाना
२२४ : : १६८ : : ६८४ : ६०

अब प्रक्रियाके नियमानुसार—

$\frac{६८४ \times १६८}{२२४} = \frac{६८ \times ३}{४} = १०१ \times ३ = ३०३$ पाना

अर्थात् ३०३ उत्तर हुआ।

यहां १६८ और २२४ को ५६से भाग देने पर शेष १ और ४२ चार हुआ; फिर ६८४ और ४ को ४ से भाग दिया गया।

त्रैविक्रम (सं० त्रि०) त्रिविक्रमस्य इदं अण् । १ त्रिवि-
क्रममन्त्रयो । (पु०) २ त्रिविक्रमावतार विष्णु ।

त्रैविद्य (सं० पु०) त्रिस्तो विद्याः समाहृताः ऋक्-यजुः-
सामरूप त्रिविद्यं तदधोने वेद वा अण् । १ त्रिवेदज्ञ-
तोनों वेदोंका ज्ञाननेवाला मनुष्य । २ तीन विद्या ।
१ व्रतविशेष, एक प्रकारका व्रत ।

त्रैविध मुनि—सिद्धान्तशिरोमणि नामक जैनग्रन्थके रच-
यिता ।

त्रैविध्य (सं० क्लो०) त्रिविधस्य भावः अण् । त्रिप्रका-
रत्व, तीन प्रकार, तीन तरह ।

त्रैविष्टप (सं० पु०) त्रिविष्टपे वसति अण् । स्वर्गमें
रहनेवाले देवता ।

त्रैविष्टपेय (सं० पु०) त्रिविष्टपे वसति वा ठक् । देवता ।
त्रैवृण (सं० पु०) त्रिवृणस्य अण् वा अण् । राज-
विशेष, एक राजाका नाम ।

त्रैवेदिक (सं० त्रि०) त्रिषु वेदेषु तदध्ययनार्थं विहितः
ठक् । तीनों वेद अध्ययन करनेके व्रतादि ।

त्रैगङ्गव (सं० पु०) त्रिशङ्कोरपर्यं अण् । त्रिशङ्क के पुत्र
हरिसङ्ग । त्रिशङ्क देखो ।

त्रैशाणः (सं० त्रि०) त्रयः शानाः परिमाणस्य तैः कृतं
वा अण्-विकल्प एवै नलुक् । १ त्रिशाण परिमित, जो
एक त्रिशाणके बराबर हो । २ त्रिशाण परिमाण द्वारा
कृत, जो एक त्रिशाणमें खरोदा गया हो ।

त्रैशोक (सं० क्लो०) त्रिशोकैर्न ऋषिणा इष्टं साम ।
'विश्वो हतना' इत्यादि ऋग्वेदका ब्रह्मसूतिविधायक
सामभेद ।

त्रैष्टभ (सं० त्रि०) त्रिष्टप् उक्तादि-अण् । त्रिष्टभस्य
सम्बन्धोय । त्रिष्टभ देखो ।

त्रैसानु (सं० पु०) त्रयस्त्रयस्य राजा गोभानुके पुत्रका
नाम ।

त्रैस्वर्य (सं० क्लो०) त्रिस्वर-स्वार्थे अण् । उदात्त,
अनुदात्त और स्वरित तीनों प्रकारके स्वर ।

त्रैहायण (सं० त्रि०) त्रिहायस्य इदं हायनान्तात्वा-
टण् । १ त्रिवर्षसम्बन्धे, तीन वर्षोंमें होनेवाला ।
(क्लो०) २ तीन वर्षका समय ।

त्रोटक (सं० त्रि०) त्रोट-ट्रि-अण् । १ छेदक । (क्लो०)

२ दृग्गकायभेद, नाटकका एक भेद । इसमें ५, ७, ८
वा ८ पाद होते हैं । स्वर्गीय और पार्थिव विषय इसके
प्रधान वर्णनीय हैं । यह नाटक गृह्यारसका प्रधान
है और इसका नायक कोई दिव्य मनुष्य होता है ।
स्थगितरश्मि और विक्रमोर्वशी प्रभृति त्रोटक दृग्गकाय
हैं । १ एक रागका नाम । ४ एक विषेला कौड़ा । ५
गङ्गादायक के एक गिणिका नाम ।

त्रोटको (सं० क्लो०) रागिणोपिशेष, एक रागिणोका
नाम ।

त्रोटि (सं० क्लो०) त्रोटिते भिद्यतेऽनेन त्रोटि-इ-अण्
१ । अण्-४।१३८ । १ कटकल, जायकल । २ चञ्चु,
चोंच । ३ पक्षिभेद, एक प्रकारको चिड़िया । ४ मौन
भेद, एक प्रकारको मन्त्रो ।

त्रोटिहस्त (सं० पु०) त्रोटिचञ्चु, इ-अण् । १ चञ्चुसंयुक्त
यस्य । पक्षी, चिड़िया ।

त्रोटो (सं० क्लो०) त्रोटि-डोप । १ टोटो । २ चिड़िया
की चोंच । त्रोटि देखो ।

तोतस (सं० क्लो०) १ तोड़ना तन्त्र । (त्रि०) २ तोतला,
जो बोलनेमें तुतलाता हो ।

तोत्र (सं० क्लो०) त्रायते भिद्यते नियम्यतेऽनेन त्रै उत्र
(अश्विनादिभ्य इतोमी । अण्-४।१७२) गवादि ताडन-
दण्ड, चानुक । पर्याय—प्राजन, तोदन और प्रवयण ।
२ अस्त्र । ३ भारूपक्रिया । ४ व्याधिभेद, एक प्रकारका
रोग ।

तोत्र्य—बम्बई प्रदेशके याना जिलान्तर्गत सासवेड तालु-
काका एक बन्दर । यह अक्षांश १८°२' उ० और देशांश
७२°५०' पू० बम्बई शहरसे ३ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित
है । जनसंख्या प्रायः २००२ है । यहाँ कुछपेड़ित
रोगियोंका एक आश्रम है ।

त्रांश (सं० पु०) त्रयोपदेशः । १ त्रयोप अंश, तीसरा
भाग । २ त्रिगुणित अंश, तिगुना भाग ।

त्राच (सं० पु०) त्रीणि अतोचि नेवाणि यस्य ततः
समासात्प्रत्ययः । त्रिनेत्र, त्रिव । २ दैत्यविशेष,
एक दैत्यका नाम । (त्रि०) १ नेत्र त्रयविशिष्ट, त्रिनेत्र
तीन आँखें हो ।

त्रासर (सं० पु०) त्रीणि अकारोकारमकाररूपानि

भीषुपानानां समाहारः वा० पात्रादित्वात् न डीप् ।
तीने वार मधु पान ।

त्रिसरा (सं० स्त्री०) त्रिधर देखो ।

त्रिसरो (सं० पु०) एक प्रकारका घोड़ा जिसके सर्वाङ्ग
भिन्न भिन्न वर्णके हों केवल शिर काला हो ।

त्रिसर्ग (सं० पु०) त्रयाणां स्वररजस्तमसां सर्गः ।
सत्त्व, रज और तम तीनों गुणोंका सर्ग, सृष्टि ।

त्रिसवन (सं० स्त्री०) त्रिकाल साध्य वैदिक सवन ।

त्रिसवनस्त्रायो (सं० पु०) त्रिसवने त्रिकाले स्नातोति
स्त्राणिनि। त्रिकालस्त्रायो, वह जो तीनों काल स्नान
करता हो ।

त्रिसामन् (सं० पु०) त्रीणि सामानि स्तुतिसाधनानि
यस्य । परमेश्वर ।

त्रिसामा (सं० स्त्री०) त्रिसामन्-टाप । महेन्द्र पर्वतसे
निकलनेवाला एक नदीका नाम । (भाग० ५।१।१८)

त्रिसाहस्र (सं० द्वि०) त्रीणि सहस्राणि परिमाणस्य अणु
उत्तरपदद्वयः । जो तीन हजारका हो अथवा जिसमें
तीन हजार हो ।

त्रिसिता (सं० स्त्री०) त्रिगुणिता सिता । त्रिशंकरा देखो ।

त्रिसत्त्व (सं० स्त्री०) त्रिवारं सौतया सहितं यत् ।
(नीतिशेषमिति । वा ५।५।११) वह जमीन जो तीन बार
जोतो गई हो ।

त्रिसुगन्धि (सं० स्त्री०) त्रयाणां सुगन्धिद्रव्याणां समा-
हारः । त्रिजातक, दानवीनो, इलायचो और तेजपात
इन तीनों सुगन्धित मसालोंका समूह ।

त्रिसुपर्ण (सं० पु०) १ ऋग्वेदके तीन विशिष्ट मन्त्रोंका
नाम । २ यजुर्वेदके तीन विशिष्ट मन्त्रोंका नाम ।
त्रिसुपर्ण देखो ।

त्रिसुपर्णिक (सं० पु०) वह पुरुष जो त्रिसुपर्णका जानने-
वाला हो ।

त्रिसुवचक (सं० पु०) चाङ्गिरस धावनरूप अग्नि ।

त्रिसोपण्य—त्रिधुगमि देखो ।

त्रिसोपण्य (सं० स्त्री०) सुपर्णैश्च विष्णोः स्नानं अणु
त्रिगन्धस्य सुजयता उत्तरपदद्वयः । सुपर्ण अयिका
किया हुआ एक व्रत । महर्षि सुपर्णने कठोर तपस्या,
नियम और दमसुपर्णके प्रभावसे स्वयं भगवान् नारायणसे

इस धर्मको पाया था और वे प्रतिदिन तीनवार करके
इसका पाठ किया करते थे । इसी कारण विद्वान्
योग इस धर्मको त्रिसोपण्य कहते हैं । इस धर्मका
वर्णन ऋग्वेदमें पाया है । इनका अनुष्ठान बहुत कठिन
है । जगतप्राण समोरणने महर्षि सुपर्णसे यह सनातन
धर्म पाया था । पौष्टि समोरणने यह धर्म विद्यमासे मह-
र्षियोंको और फिर उन्होंने भी इसे महासमुद्रको
प्रदान किया । बाद यह धर्म पुनः भगवान् नारायणमें
जोन हो गया । (भारत शास्त्र १५० अ०)

सुपर्णा एव स्वार्थे अणु, त्रयः सोपण्याः यत्र । २ मन्त्र
त्रिक, ऋग्वेदके निम्नलिखित तीन मन्त्रके नाम त्रिसो-
पण्य हैं—

चतुर्हवर्गं युवतिः प्रवेगा ह्यत्र प्रतीका वयुनानि दन्ते ।
तस्यां सुपर्णा ह्यपणा निवेदतु रथ देवा धृष्टि मागधेय ॥
एकः सुपर्णः सप्तसुहमादिबैष्णव स इदं विशदं युवन् विचष्टे ।
तं पाकेन मनुष्या पश्यन्ति तत्तत् मता द्विष व र ईदमातरं ॥
सुपर्णैर्विश्राः कपयो वयोभिरैकं सन्तं बहुधा कश्यपति ।
ह्यन्नाधि च दधतो अन्धरेषु प्रदातव्योमस्य निमये द्वादश ॥”
(ऋक् १०।११५।१५)

एक युवती स्त्री है, जिनके मन्त्रका पर चार वैष्णो
हैं, जो सुन्दर और शिन्ध है, जो अच्छी अच्छी वस्त्र पह-
नती है, दो पक्षी जिनके लपर बैठे रहते हैं और जहाँ
देवता अपना अपना भाग पाते हैं । (इस जगह भारी
मन्दका पर्यं यज्ञवेदी है) इसके चारों ओर चौं रहनेसे
यह शिन्ध है और इसीको वैष्णो कहा गया है । यज्ञ
सामग्र्यो ही अच्छी अच्छी वस्त्र है । इसमें जो दो
पक्षी बतलाये गये हैं, वे यज्ञमान और पुरोहित हैं ।
सुपर्ण अर्थात् जोय और परमात्मा इनमें नियत है । इस
वेदीमें अग्न्यादि देवता अपना अपना भाग पाते हैं ।
एक सुपर्णने (पक्षीने) सप्तसुहमे प्रवेग किया और
वहाँ इस विश्व भुवनको देव पाया । परिणत बुद्धि
द्वारा मैं उन्हें क्या देखता हूँ कि वे निकटवर्ति भो
माताको चूम रहे हैं और माता भो उन्हें चूम रही है ।
यहाँ पर पक्षीका अर्घ्य प्राप्तवायु या परमात्मा है, समुद्र
जो है, वह ब्रह्माण्ड है, उन्होंने इस विश्वको, समस्त

प्रचाराणि यस्य । १ प्रपञ्च । वाचर प्रपञ्च ही ब्रह्मा है । इसमें तोनी वेद प्रस्थित है । (को०) २ रुन्दो-
भेट, एक प्रकारका रुन्द । ३ त्रिवर्णात्मक तन्मोक्त
मन्त्रभेद, तन्त्रमें वक्ष्य यन्त्र जिसमें तीन प्रचर हो ।
४ घटक । (वि०) १ वर्षावयवुक्त मात्र, तीन प्रचरोंका ।
ब्रह्म (सं० को०) वीणि प्रज्ञानि अस्म्य । सीवित्कृत
हवि ।

ब्रह्मट (सं० को०) त्रिभिरङ्गैश्च्यते गम्यते ब्रह्म-पट-
पप्, शक्यध्यादित्वादन्तोपः । १ शिष्यभेद, लोका,
निकहर । २ धौताञ्जनी । (पु०) १ ईश्वर । ४ चन्द्रमा ।
ब्रह्मल (सं० वि०) तिस्रोऽङ्गुल्यः प्रमाणमस्य, तदि-
तायं दि० इयस्य तस्य लुकि यच्च समा० । १ अङ्गुलि-
त्रय परिमित, जो तीन अङ्गुलीका हो । २ अङ्गुलित्रय
परिमित खातयुक्त, जो तीन अङ्गुली खुदा गया हो ।
ब्रह्मन् (सं० को०) त्रयाणां ब्रह्मज्ञानां समाहारः ।
कामाञ्जन, रमाञ्जन और पुष्पाञ्जन ये तोनों ब्रह्मन्,
कामा दुरमा, रसौत और वे फूल जो ब्रह्मज्ञानों में मिलाए
जाते हैं, जैसे तिल, चनेनी, नोम, नौंग भगसुआ
इत्यादि ।

ब्रह्मन् (सं० को०) त्रयाणां ब्रह्मज्ञानां समाहारः वा०
टच, समा० । १ समाहृत तोनों ब्रह्मन्को । त्रिभिरङ्ग-
विभिः क्तोतः तद्विषयं दिगी तु तद्वितलुकि टच ।
२ ब्रह्मन्नि, जो तीन ब्रह्मन्निमें खरोदा गया हो ।
ब्रह्मपति (सं० पु०) त्रयाणां ब्रह्मपतिः इ-तत् । तोनों
लोकके ब्रह्मपति, कृष्ण, विष्णु ।

ब्रह्मिष्ठान (सं० पु०) त्रीणि मनोवाक् शरीराणि ब्रह्मि-
ष्ठानान्यस्य, तिसृणां जाग्रदादोनां ब्रह्मिष्ठानं वा ।
१ जीव । २ चेतन्य, चेतनता ।

ब्रह्मिणी (सं० पु०) त्रयाणां ब्रह्मिणीः । ब्रह्मपति, तोनों
लोकके स्वामी, विष्णु ।

ब्रह्मजा (सं० स्त्री०) त्रिभिरङ्गभिर्गच्छति । गङ्गा ।
ब्रह्मनोक्त (सं० पु०) त्रीणि तन्त्रवर्षगीतास्थानि त्री-
णानि गुणा भवन्ति । १ संवत्सराभिमानो देवताभेद ।
२ हाथी, घोड़े और रथको सेना ।

ब्रह्मक (सं० स्त्री०) त्रीणि ब्रह्मकानि गयनानि यस्या
त्रयाणां लोकानां ब्रह्मक पिता इति । १ शिव, महादेव ।

२ महादेवके चंगसे उत्पन्न चन्द्रशेखर, नामक पोथ्य
राजाके पुत्र । ये मार्वाभीम राजा होकर त्रिलोकमें
विख्यात हुए थे । ३ ग्यारह रुद्रीमेंसे एक रुद्र ।

ब्रह्मकसख (सं० पु०) ब्रह्मकस्य सखा टच, समा-
सन्तः । ब्रह्मकके सखा, कुवेर । कुवेर देखो ।

ब्रह्मका (सं० स्त्री०) त्रीणि ब्रह्मकानि यस्याः । दुर्गा,
जिनके सोम, सूर्य और चन्द्र ये तोनों नेत्र माने
जाते हैं ।

ब्रह्मतयोग (सं० पु०) त्रयाणां त्रिविचारनक्षत्राणां ब्रह्मत-
तुल्यो योगः । तिथि, नक्षत्र और वार विषयक योगभेद,
एक प्रकारका योग जो कुछ विविध तिथियों, नक्षत्रों
और वारोंके संयोगसे होता है । इस योगका विषय
ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है--

यदि रवि और मङ्गलवारको नन्दा अर्थात् प्रतिपद,
एकादशी और पञ्चमी, स्वातो, शतभिया, भार्गवा, ऐश्वरी,
चित्रा, अश्लेषा और मूला नक्षत्र हो, शुक्र और सोमवार
को भद्रा अर्थात् द्वितीया, द्वादशी और मन्मथी, भद्रा,
पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी, पूर्वभाद्रपद और उत्तर
भाद्रपद नक्षत्र हो, बुधवारको जाया अर्थात् त्रयोदशी,
चतुर्थी और दशम्या, ज्येष्ठा, श्रवणा, पुष्या, ज्येष्ठा,
भरणी, अभिजित् और अश्लेषा नक्षत्र हो, बृहस्पतिवार-
को चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी तिथि, उत्तराषाढा,
विशाखा, चतुराषा, मघा और पुनर्वसु नक्षत्र हो, शनि-
वारको पूर्णा, दशमी, पञ्चमी, पूर्णिमा वा अमावस्या
तिथि और रोहिणी, अस्तमा तथा धनिष्ठा नक्षत्र हो, तो
ब्रह्मतयोग होता है । यह योग यावाके लिये बहुत
शुभ है । यात्रिककारणमें यह ब्रह्मतयोग बहुत उत्तम
माना है । विटि मृत्योपातादि दोषयुक्त होने पर भी
यदि इस ब्रह्मतयोग योग हो, तो भी सब दोष नष्ट हो
जाते हैं । (ज्योतिषस्तत्त्व)

ब्रह्मण (सं० पु०) त्रिष्टण्यके पुत्र राजर्षिभेद ।
ब्रह्मणि (सं० वि०) त्रीणि भद्रपौषि रोचमानानि शम्भानि
ककुप, पृष्ठपाद, स्थानानि यस्य । रोचमान शुभ पृष्ठादि
स्थानत्रययुक्त गवादि, जिस पशुको पोठ पर तीन सुन्दर
भेदि ककुप या कुब्ज हो ।

ब्रह्मर (सं० वि०) सेवकत्रयविशिष्ट, जिनके तीन
नौकर हैं ।

वराह (मं० पु०) वराहासनाका कालः अपि त्रिस्तोत्रयो
यस्य । अष्टादश मास यस्यस्त वराह, अष्टादश महीनका
यस्य ।

वराह (मं० स्त्री०) वराणां अर्चनां ममाहारः । १ वर्ष
यय, तोन वर्ष । (वि०) २ विषयं यस्यस्त जिनकी उमर
तोन वर्षकी हो ।

वरागीत (मं० वि०) वरागीति ततः पूरणे डट् । वरागीति
मंस्याका पूरण, तिरासीयां ।

वरागीति (मं० स्त्री०) वराधिका वरागीतिः कर्मधा० । १
अथवा और तोनका जोड़, तिरासी । २ उक्त संख्या
सूचक अर्थ ।

वरागीतितम (मं० वि०) वरागीति पूरणे तमप । वरागीति
संख्याका पूरण, तिरासीयां ।

वराटक (मं० स्त्री०) स्रुतोक्त जननिषेपण स्थानभेद,
स्रुतते अनुसार यह स्थान जहाँ जल फेंका जाता है ।

वराट् (मं० वि०) विगुणिताः अट । १ चतुर्विंशति
संख्या, चौबीसकी संख्या । २ उक्त संख्यासूचक अर्थ ।

वराह (मं० स्त्री०) तिस्रः अस्तयः कोणा यस्य अच समान् ।
१ त्रिकोण । २ त्रिपुट क्षुप, अटरका गाछ । ३ व्याघ्र-
नख, बाघका नाखून । (स्त्री०) ४ शुक्र विवृति, भेद
निर्णय । ५ वार्षिक मल्लिका, चमेली ।

वराहफल (मं० स्त्री०) गलकी वृक्ष, मेमरका पेड़ ।

वराह (मं० पु०) वराणां अष्टां ममाहारः ममासाम्ना टच्-
ममाहारद्विगुत्वात् अष्टादेशः । दिनवय, तोन दिन ।

वराहवर्ष (मं० पु०) वराहचान्द्रदिनवयं सप्तगति स्पृश-
अण् । १ तिथिवयस्यर्षी एक सावन दिन, वह सावन
दिन जिसे तोन तिथियां अर्घ्य करती हैं । २ दिनवय,
दिनका घटना ।

वराहस्पृश (मं० स्त्री०) वराहं स्पृशति स्पृश-क । सावन
दिनवयस्यर्षी एक तिथि, वह तिथि जो तोन सावन
दिनोंको स्पर्श करती हो । ऐसी तिथि विवाह या
यात्रा आदिके लिए निषिद्ध पर स्नान-दान आदिसे निष-
पच्छी मानी जाती है । अथवा देखो । वराह-स्पृश-क्षिन्
वराहस्पृश ।

‘वराहो द्वादशी च रात्रिरेव प्रयोदशी ।

सहास्रं तद्वाराहपुर्वं स्या का रात्रिः ॥’ (शुक्लि) •

पहली एकादशी छोड़ द्वादशी और रात्रिके भयमे
वयोदशी होनेसे वराहस्पृश होता है । यहो तिथि उपोष
है अर्थात् हम तिथिमें उपवास करना चाहिए ।

वराहिकारिम (मं० पु०) रमेन्द्रमारमं यदोक्त पोषध
भेद । प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गन्धक, तुलिया और गहूके
प्रत्येक भागकी द्वावोमाक, जयन्ती और नटियां ग्राक-
के रमसे मात सात बार भावना दे कर ४ रत्तीकी
हर एक गोली बनाती है । जोरा और घोके माघ सेवन
करनेसे वराहिक या तिजारी ज्वर जाता रहता है ।

वराहोन (मं० पु०) क्षिप्रिहोमिः निवृत्तः अ । विदिन
माध्य क्रतुभेद, तोन दिनोंमें होनिवाला एक प्रकारका
यज्ञ ।

वराहिक (मं० वि०) ईहायां चेटायां भवं ऐहिकं धनं
वराह दिनवये पर्याप्तं ऐहिकं धनं यस्य । दिनवय-
निर्वाहोचित धनयुक्त, वह स्पृश्य जिसे यहाँ तोन दिन
तक निर्वाह करनेके लिए यहष्ट सामग्री हो ।

सद्युनि चार प्रकारके स्पृश्य बनता है—कुशुलधान्यक,
कुशीधान्यक, वराहिक और अश्वत्थानिक । जो स्पृश्य
तोन दिनको जोविका सक्षय कर रहते हैं उन्हें वराह-
हिक कहते हैं । ऐसे स्पृश्य मध्यम समझे जाते हैं ।

वराचायण (मं० पु०) वराचस्य युवा भवत्य अण् ।
शिशुपान्तरादिके युवा वंशज ।

वराचायणभक्ष (मं० पु०) वराचायणः तस्य विषयो देयः
पिपुकादिः भक्षः । वराचायणका विषय ।

वरायुष (मं० स्त्री०) वराणां वात्ययौवनस्यविराणां
पायुषां ममाहारः वेदे अच ममा० । वात्यादि आयुष्य,
वात्ययौवन और वयविर ये तोन अर्थलाये ।

वरापर्व (मं० पु०) वयः पार्षयाः पर्वयो यय । १ विप्रवर
गोत्रभेद, वह गोत्र जिसके तोन प्रवर हैं । वरपर्व
ठक् पार्षयः अष्टविधर्मः तय पार्षयाः धर्मो वेदा । २
अथ, वधिर और मूक, अथवा, बहुरा और गूंगा । इन
तोंनोंकी यज्ञमें जानेका अधिकार नहीं है । तोन अष्टविधी-
मेंसे एकसे दूसरीको चोज देव कर पाछे बंद कर भी ।
इसीमें वे अर्घ्य दूए, दूसरेमें परनिष्ठा अथवागृहा करके
कान सूट लिये, इसीमें वे बहुरे हो गये और तीसरेमें
गम्याकथनकी गृहा को छोड़, इसीमें वे गूंगे दूए थे ।

श्रीधुपानां समाहारः वा० पात्रादित्वात् न डीप् ।
तोने बार मधु पान ।

त्रिसरा (सं० स्त्री०) त्रिसर देखो ।

त्रिसरी (सं० पु०) एक प्रकारका घोड़ा जिसके सर्वाङ्ग
भिन्न भिन्न वर्णों के हों वेवल शिर काला हो ।

त्रिसर्ग (सं० पु०) त्रयाणां स्वररजस्तमसां सर्गः ।
स्व, रज और तम तीनों गुणों का सर्ग, सृष्टि ।

त्रिसवन (सं० स्त्री०) त्रिकाल साध्य वैदिक सवन ।

त्रिसवनस्त्रायो (सं० पु०) त्रिसवने त्रिकाली स्त्रातोति
का णिनि । त्रिकालस्त्रायो, वह जो तीनों काल स्नान
करता हो ।

त्रिसामन् (सं० पु०) त्रीणि सामानि स्तुतिसाधनानि
यस्य । परमेश्वर ।

त्रिसामा (सं० स्त्री०) त्रिसामन्-टाप् । महेन्द्र पर्वतसे
निकली हुई एक नदीका नाम । (भाग० ५।१।१८)

त्रिसाहस्र (सं० त्रि०) त्रीणि सहस्राणि परिमाणस्य अणु
उत्तरपदद्वयः । जो तीन हजारका हो अथवा जिसमें
तीन हजार हो ।

त्रिसिता (सं० स्त्री०) त्रिगुणिता सिता । त्रिशंख देखो ।

त्रिसत्य (सं० स्त्री०) त्रिवारं सौतया सहितं यस्य ।
(गौडयोगमति । पा ४।४।११) वह जमीन जो तीन बार
जोतो गई हो ।

त्रिसुगन्धि (सं० स्त्री०) त्रयाणां सुगन्धिद्रव्याणां समा-
हारः । त्रिजातक, दासचीनो, दलायचो और तेजपात
इन तीनों सुगन्धित मसालों का समुह ।

त्रिसुपर्ण (सं० पु०) १ ऋग्वेदके तीन विशिष्ट मन्त्रोंका
नाम । २ यजुर्वेदके तीन विशिष्ट मन्त्रोंका नाम ।
त्रिसुपर्ण देखो ।

त्रिसुपर्णिक (सं० पु०) वह पुरुष जो त्रिसुपर्ण का ज्ञानने-
माना हो ।

त्रिसुवचक (सं० पु०) आह्निरस चवनरूप अग्नि ।

त्रिसोमन्थ—त्रिगुणमि देखो ।

त्रिसोपण (सं० स्त्री०) सुपर्णं ऋषिणा स्नतं अणुं तृत्ती
त्रिगण्डस्य सुजयंता उत्तरपदद्वयः । सुपर्ण ऋषिका
किया हुआ एक व्रत । ऋषि सुपर्ण ने कठोर तपस्या,
नियम और दमगुणके प्रभावसे स्वयं भगवान् नारायणसे

इस धर्म को पाया था और वे प्रतिदिन तीनवार करके
इसका पाठ किया करते थे । इसी कारण विद्वान्
कीम इस धर्म को त्रिसोपण कहते हैं । इस धर्म का
अर्थ न ऋग्वेदमें थाया है । इनका अनुष्ठान बहुत कठिन
है । जगत्प्राण समोरणने ऋषि सुपर्ण से यह सनातन
धर्म पाया था । ऋषि समोरणने यह धर्म विद्यामसी मह-
र्षियों को और फिर उन्होंने भी इसे महाभसुद्रको
प्रदान किया । बाद यह धर्म पुनः भगवान् नारायणमें
सोन हो गया । (भारत वाग्मिव ३५० अ०)

सुपर्ण एव स्वार्थे अणु, त्रयां सोपणां यत्र । २ मन्त्र
त्रिक, ऋग्वेदके निम्नलिखित तीन मन्त्रोंके नाम त्रिसो-
पण हैं—

चतुष्कपर्दा युवतिः क्षुपेया ह्युत प्रतीक्षा वयुनानि दध्ने ।

तस्यां सुपर्णा सुपर्णा निवेदतु रथ देवा दधिरे मागधेयं ॥

एकः सुर्गैः ससमुद्रमाविशे स इह विश्वं सुवर्णं विचष्टे ।

तं पादेन मृणवा पश्यमन्तिवत्तं मता हिस व देहिमातरं ॥

सुपर्णैविश्राः कपयो वचोभिरेकं सन्तं बहुधा कष्टयमिति ।

हृन्दाधि व दधतो अश्वरेडु महाव्रतसोमस्य भिमये द्वादश ॥”

(ऋक् १०।११४।५)

एक युवती स्त्री है, जिनके मस्तक पर चार धोखे
हैं, जो सुन्दर और स्निग्ध हैं, जो अच्छे अच्छे वस्त्र पह-
नती हैं, दो पक्षी जिनके ऊपर बैठे रहते हैं और जहां
देवता अपना अपना भाग पाते हैं । (इस जगह नारी
शब्द का अर्थ यज्ञवेदी है) इसके चारों ओर चौं रहनेसे
यह स्निग्ध है और इसीको वैष्णो कहा गया है । यज्ञ
सामग्यो ही अच्छे अच्छे वस्त्र हैं । हममें जो दो
पक्षी बतलाये गये हैं, वे यज्ञमान और पुरोहित हैं ।
सुपर्ण अर्थात् जोव और परमात्मा हममें निवस्य हैं । इस
वेदीमें अग्न्यादि देवता अपना अपना भाग पाते हैं ।
एक सुपर्णने (पक्षीने) समुद्रमें प्रवेश किया और
वहां इस विग्रह सुवर्णको देख पाया । परिणत बुद्धिके
द्वारा मैं उन्हें क्या देखता हूँ कि वे निकटवर्तिनी
माताको चूम रहे हैं और माता भी उन्हें चूम रही है ।
यहां पर पक्षीका अर्थ प्राणवायु या परमात्मा है, समुद्र
जो है, वह ब्रह्माण्ड है, उन्हें ही इस विग्रहको, समस्त

अंगिरस (स० वि०) तिस्रः दधितकस्योक्त्या अंगिरसः
यस्य । अग्निहा वृषभेद ।

अंगिरस (स० पु० स्त्री०) त्रिभिः चक्षुषादै राहन्ति आ-
चन-चक्षुः 'पूर्वपदात् स'प्रथमम्' इति आचनं । सुश्रुत-
के अनुसार एक प्रकारका पक्षी ।

अंगिराव (स० पु०) त्रैयाहावक देवभेदः । त्रैयाहावक
नामका एक देव ।

अंगिराह (स० पु०) अंगिरा भवः उग्र । आपत्तात् पूर्व-
न ऐव । १ अंगिराह चरादि, हर तोनरे दिन पाने-
वाला चर । (वि०) २ तोन दिनोंमें होनेवाला ।

अंगिरस (स० स्त्री०) त्रिषु सवनेषु उद्यो गतिरस्य ।
सीमास्थ द्वय ।

अंगिर (स० पु०) त्रिभिः वसन्तग्रहे मन्त्रे ऋतुभिर्होष्य
अनङ्ग, कलत्र । वसन्तादिहोषोक्त वसन्तरूप वृषभ,
पानने योग्य साद ।

अंगिर (स० स्त्री०) त्रयाणां उपणानां समाहारः दृपो-
वा दोषः । १ त्रिकटु, सौंठ, पोपल और मिर्च । इसका
गुण—दोषन, श्वास, कास, त्वगामय, शुक्ल, मेघ, कफ,
खोष, मेद, शीपद और योनस रोगनाशक है । २ चर-
कोष्ठ, घृतविशेष, चरकके अनुसार एक प्रकारका घृत जो
उक्त औषधियोंके मेलसे बनाया जाता है ।

अंगिरादिमण्ड (स० स्त्री०) एक प्रकारकी औषध,
जिसका व्यवहार पाण्डु रोगमें होता है । इसको प्रसूतः
प्रणाली—त्रिकटु, त्रिफला, मोघा, विडङ्ग, चर्द, चीता-
मूल, दासहृदो, दासचोनी, खण्डमाचिक, पापूर, मूला
और देवदार प्रत्येकका दो दो पत्र चूर्ण । यह चूर्ण
जितना हो उससे दूना शोधित मण्ड रचूर्ण और मण्ड-
चूर्ण से ८ गुना गोमूत्रकी जरूरत पड़ती है । पहले गो-
मूत्रमें मण्डरको पाक करी और गाढ़ा होने पर उसमें
उक्त चूर्ण डाल देते हैं । पीछे अंजीरके (गूलरके) बरा-
बर गोबी बनाते हैं । मट्टके साथ इसका संयोजन करनेमें
कामल, मेघ, झोछा आदि रोग दूर हो जाते हैं । अत्रोर्ष
होने पर भोजन करना उचित नहीं है । (वैजयन्त०)

अंगिराद्यवर्त्ता (स० स्त्री०) वस्तिविशेष, एक प्रकार-
की वस्ती । त्रिकटु, त्रिफला, दासचोनी, सैन्धव और
मनःशिला इन सबकी मिला कर बची तैयार करने

पड़ती है । इस वस्तीका आखिरी प्रयोग करनेमें आंगिका
कोचड़ जाता रहता है ।

अंगिर (स० स्त्री०) त्रिचर्चा अर्था समाहारः अच, ममा० ।
अङ्कत्रय, अङ्कद्वयके तीन मन्त्र ।

अंगि (स० स्त्री०) त्रिणि एतानि अक्ष वा त्रिषु स्थानेषु
एतः कर्तुर्ये यस्याः 'वर्णादनुदात्तात्' डोप, तस्य नः,
ततो पत्व । कर्तुरा स्त्री, वह स्त्री जिसके शरीरमें
तीन जगह चितकबड़े दाग हैं ।

त्व (स० वि०) तर्नाति विस्तारयति तन-क्रिय, अन्वय मः
(तनोवे स्वरच वः) उन् २।१२ १ भिच, अन्व, दूपरा ।
२-एक ।

स्व (स० वि०) सर्वनाम युष्मद् प्रथमै कवचन । तुम,
आप ।

स्वक् (स० पु०) स्वक्, देवो ।

स्वक्, कण्डूर (स० पु०) स्वचः कण्डूरं राति रा-क ।
अण, कोड़ा ।

स्वक्, चोरा (स० स्त्री०) स्वचः वंश-अचः शीरमस्त्वय ।
वंशलोचना, वंशलोचन ।

स्वक्, चोरो (स० स्त्री०) स्वक्, चोर-गोरा जीव । वंश-
लोचना, वंशलोचन । पर्याय—वांशो, तुगाचोरो, तुगा,
वंशज, हम्बा, वंशचोरी, चोर वंशयो ।

स्वक्, चूर्द (स० पु०) स्वगीव हन्ती यस्य । चीरोग हच,
चीरक चुकी ।

स्वक्, चूर्द (स० स्त्री०) (Circumcision) सुमलमान
प्रभृति स्त्री चूर्द आतिथीका एक संस्कार । इसमें सुमल-
मान वालकीके निहोका अंगसा चमड़ा काटा जाता है ।

स्वक्, तरङ्ग (स० पु०) स्वक्, स्तरङ्ग इव । कण्डू पदार्थ ।

स्वक्, त्र (स० स्त्री०) स्वचः त्रायति त्रा-क । वर्म, आवच,
बखतर ।

स्वक्, पक्ष (स० स्त्री०) स्वर्चा पक्षक । यह, पोपल,
गूलर, सीरोम और धाकर ये पांचों वृक्ष । गुण—मोतन,
अण, शोथः विसर्प, विष्टम्भ और आधाननाशक, तिष्ठ,
कपाय, मधु और खेचन ।

स्वक्, पत्र (स० स्त्री०) स्वगीव पत्राणि यस्य । १ गुडुवक,
दारचोनी । २ त्रिपत्र, त्रिपत्ता । पर्याय—स्पर्ध,
अङ्ग, स्वच, शीच और बराङ्गक है ।

भुवनको एवं भूतजातको विशेषरूपसे स्थापित किया है। माताका धर्म वाक्य या बोलो है। प्राणके नहीं रहने-से बोलो नहीं; निरुक्त होती। सुषण एक ही है, पर पण्डितोंने कल्पना करके उनके अनेक रूप बतलाये हैं। ये लोग यज्ञके समय नाग प्रकारके हृन्द चञ्चल करके हैं और बारह सोमपात्र संस्थापन करते हैं। सुषण अर्थात् परमात्मा एक ही है; पर तत्त्वज्ञ लोग उन्हें हृन्द और स्त्रोत्रादि द्वारा अनेक बतलाते हैं। भिन्न भिन्न देवताओंका एक आत्मा है। (सायण) ३ परमेश्वरका नाम भेद, परमेश्वरका एक नाम।

'त्रिस्तोत्रं तथा मय्य युक्तं वसुधैव कुटुम्बकम्' । (भारत शां० २८६७०)

कई जगह 'त्रिस्तोत्र' ऐसा पाठ है। यह निमित्त प्रमाद है, इसीसे यह शब्द नहीं लिया गया।

त्रिस्तोत्र (स० स्तो०) त्रयः स्तोत्रा इव भवयथा यथा। ज्योतिःशास्त्र । नाना प्रकारके भेदविषयक ज्योतिःशास्त्र तीन स्तोत्रोंसे प्रतिष्ठित हैं। संहितास्तोत्र, तन्त्रस्तोत्र और होरास्तोत्र, येही तीन ज्योतिःशास्त्रके स्तोत्र हैं। जिसमें ज्योतिःशास्त्रके सभी विवरण रहते हैं, उसे संहितास्तोत्र; जिसमें गणित द्वारा ग्रहगतिका निरूपण होता है, उसे तन्त्रस्तोत्र और जिसमें भङ्ग विनियय अर्थात् यात्रा विवाह आदिका वर्णन रहता है उसे होरास्तोत्र कहते हैं। (इहवर्ष १८)।

त्रिस्तोत्रो (स० स्तो०) स्त्रयः स्तना भवताः डोण् । १ राक्षसी भेद, एक राक्षसोका नाम, जिसके तीन स्तन थे। २ गायत्री।

त्रिस्तोत्रा (स० स्तो०) त्रिगुणितः तावतो वेदिः अथ समाप्तान्तिलोपो समासश्च निपात्यते । (त्रिस्तोत्रा त्रिस्तोत्रा वेदि । पा ५।४।८४) । अथमेध यज्ञकी वेदी जो साधारण वेदीसे त्रिगुणी बड़ी होती थी।

त्रिस्तोत्रो (स० स्तो०) त्रयाणां गवाः काशो प्रयाग-रूप-स्थलानां समाहारः । काशो, गया और प्रयाग ये तीन पुण्यस्थान।

त्रिस्तोत्र (स० पु०) स्वर्ग, मर्त्य और पाताल तीनों स्थानोंमें रहनेवाला परमेश्वर।

त्रिस्तोत्र (स० स्तो०) त्रिषु काशेषु स्थानमत्र । त्रिकाल

स्थानाद् व्रतभेद, सबेरे, दोपहर, और संध्या। तीनों समयका स्नान जो त्रिस्तोत्र नामसे रहनेवालेके लिये आवश्यक है। कई प्रादयिक्तोंमें भी त्रिकालस्नान करना पड़ता है।

त्रिस्तोत्रा (स० स्तो०) तोषि चान्द्रदिनानि एकस्मिन् सावने दिने स्तोत्राणि श्रुतं क। एकादशीभेद। जिस एकादशीके पूर्वदिन दशमी और दूसरे दिन कुक्ष एकादशी, पोछे द्वादशी, और रातके अन्तमें त्रयोदशी होती है, उसे त्रिस्तोत्रा कहते हैं, अर्थात् एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी ये तीन तिथि एक सावन दिवसे रहनेसे त्रिस्तोत्रा होती है। ऐसी एकादशी बहुत उत्तम और पुण्यकार्यके लिये उपयुक्त माने जाती है। इसमें स्नानदानादि विशेष फलप्रद हैं।

त्रिस्तोता (स० स्तो०) त्रिणि स्तोतामि यस्याः, त्रिषु स्थानेषु स्वर्ग-मर्त्य-पातालेषु स्तोती यस्याः । गङ्गा।

त्रिस्तोता (त्रिस्तोता)—उत्तर बङ्गालको एक बड़ी नदी। यह भूसा० २८° २' ७०' और देशा० ८८° ४४' ५०' में अवस्थित है। तिब्बतके अन्तर्गत चतानू ज्वालसे इसकी उत्पत्ति हुई है। किर सिक्किमके काश्मजङ्गलप्रदेश में इसका दूसरा उत्पत्तिस्थान पाया जाता है। दार्जिलिङ्गको उत्तरी सीमामें यह नदी सिक्किमसे अलग हो कर ब्रिटिश राज्यमें प्रवेश करती है। कुछ दूर तक दार्जिलिङ्गकी सीमामें प्रवाहित होकर रञ्जित नदीके साथ मिलती है, और दक्षिणको और दार्जिलिङ्गके पहाड़ी प्रदेश होती हुई जलपाईगुडो जिलेमें प्रवेश करती है। यहाँ इसके किनारे पहाड़ पर शासकी जंगल है। जिस स्थान पर त्रिस्तोत्र शिवकमोला नामक गिरिवर्त्म होती हुई समतल भूमिमें गिरती है, उस जगह उसको चोड़ाई ७०८ सौ गज है। नदोमें कहीं कहीं पत्थरके बड़े बड़े टुकड़े रहनेसे नावके लिये बहुत विपन्नक है। तराईसे प्रथक् हो कर जलपाईगुडोमें और पोछे ब्रह्मपुत्रके निकट कोच-विहार राज्यमें यह नदी प्रवेश करती है और जयसिंह के निकट कोचविहार छोड़कर वाक्को ग्रामसे ६ मील उत्तर रङ्गपुर जिलेमें बहती है। रङ्गपुरमें भवानीगङ्ग उपविभागके मध्य चिलमारी स्थानके निकट बगोथा नामक स्थानसे नीचे यह ब्रह्मपुत्रमें गिरी है। रङ्गपुरमें

त्वक्पत्रो (स० स्त्री०) त्वक्. मोरा० डोप. १ हिङ्गु-
पत्रो । पर्याय—कारवो, पृथ्वी, वास्वीका, कवरो
भोरपण । २ केलिका पेड़ । ३ तेजपत्तके जैसी
पत्ता ।

त्वक्परिपुटन (स० क्लो०) त्वचः परिपुटनं । चमड़े-
का खींचना, शरीरसे चमड़ेका चमक करना ।

त्वक्पाक (स० पु०) त्वचः पाको यत् । शूकदोष
निमित्त पोढ़कारोगविषय, सुश्रुतके अनुसार एक
प्रकारका रोग जिसमें पित्त और रक्तके कुपित होनेसे
शरीरमें फुंमियां निकल आती हैं । शूकदोष देखो ।

त्वक्पाक्य (स० क्लो०) त्वचः पाक्यं कठोरता ।
त्वक्का काठिन्य, चमड़ेका कड़ापन ।

त्वक्पुष्प (स० क्लो०) त्वचः पुष्पमिव । १ रोमाक्ष,
रोएँ खड़े हो जाना । २ किलास, सेहूषा रोग ।

त्वक्पुष्पिका (स० स्त्री०) चर्मरोग विशेष, एक प्रकार-
का चमड़ेका रोग ।

त्वक्पु (स० स्त्री०) त्वच्यतेऽनेन त्वक् करणे असुनं ।
धूल, ताकत ।

त्वचोयस् (स० त्रि०) अतिशयेन त्वचिता ईयसुन्
दृष्टोऽलोपः । दोष, चमकता हुआ ।

त्वक्सार (स० पु०) त्वचि सारो यस्य । १ वंश, बांस ।
२ यंत्रका त्वक्, बांसका हिलका । ३ शुद्धत्वक्,
दारचोनी । ४ गोषहच, सनका पीषा ।

त्वक्सारभेदिनी (स० स्त्री०) त्वचः सारं भिनत्ति भिद-
गिनि डोप. । सुद्रवशुद्ध, छोटा चैंच ।

त्वक्सार (स० स्त्री०) त्वक्सारो वंश उपपत्तिकारत्वेना-
न्तस्याः पच. ततष्टाप. । संत्रोचना; वंसलोचन ।

त्वक्सुगन्ध (स० पु०) त्वचि सुगन्धः सद्गन्धो यस्य ।
१ नारंगी नीबू । २ नवह, लौंग ।

त्वक्सुगन्धा (स० स्त्री०) त्वचि सुगन्धो यस्याः । १ एल-
वालुका नामक गन्धद्रव्य, एलुवा । २ सूझैसा, छोटी
दसायचो ।

त्वक्स्वादो (स० स्त्री०) त्वचि स्वादो । दारचोनी ।

त्वक्शु (स० पु०) त्वचयमपः शुद्धरस्य । रोमाक्ष ।

त्वक्शीरो (स० स्त्री०) त्वक्शीरो मृषोदरा० म० पु० ।
वंशलोचना, वंसलोचन ।

त्वग्गन्ध (स० पु०) त्वचि गन्धो यस्य । नागरह, नारहो
नीबू ।

त्वग्ज (स० स्त्री०) त्वचः जायते जन-ड । १ रोम, रोपां ।
२ रुधिर, सेह ।

त्वग्दोष (स० पु०) त्वचो दोषो दूषणं यस्मात् । कुत-
रोग, कोढ़ । इसमें शरीर पर चकत्ते पड़कर फिर पोछे
हो जाते हैं । इसको गिनतो महारोगमें की गई है ।
महापातकज ८ प्रकारके जो रोग कहे गये हैं, उन्हींमेंसे
यह एक है । इस रोगमें यदि किसीको मृत्यु हो जाय
तो उसका प्रायश्चित्त किये बिना दाहकर्म करना निषिद्ध
है । मोहवश यदि कोई दाह कर्म कर ले, तो उसे
चान्दायणव्रत करना होता है । (शुद्धित्व)

लोभ, नीरास और कनकचूर्णको कुछ गरम कर जहाँ
जहाँ ये चकत्ते पड़ गये हों, वहाँ उसे लगा देनेसे रोग
जाता रहता है । (गह १८४ अ०)

त्वग्दोषपापहा (स० स्त्री०) त्वग्दोषं रोगविशेषं पपहन्ति
जन-ड-टाप. । सोमराजी, बकुचो, बाबचो ।

त्वग्दोषारि (स० पु०) त्वग्दोषस्य परिः, त्वचाग्रकत्वात्
तथात्वं । हस्तिकन्द । इससे त्वग्. दोष भट होता है ।

त्वग्दोषो (स० त्रि०) त्वग्दोषोऽस्माभ्य स्वग्दोष-इति ।
त्वग्दोषयुक्त, जिसे कुष्ठरोग हो ।

त्वग्भेद (स० पु०) त्वचो भेदः इ-तत् । त्वक्का भेद,
चमड़ेका फटना ।

त्वग्भेदक (स० पु०) त्वचो भेदकः । त्वक्भेदकारी, यह
जो चमड़ा छेदता हो । ममान जातिमें यदि कोई किसी
का चमड़ा छेद करे यथवा खून बहावे, तो उसे एक घी
पण दण्ड होगा ।

त्वग्द्वार (स० पु०) तुम इस प्रकारका यापव । गुरुजनोंको
त्वग्द्वार अर्थात् तुम इस तरहका वाक्य कहनेसे भारी
दोष समझा जाता है । ऐसो हालतमें कहनेवालोंको
चाहिये कि वे उपवास कर अपमानितोंके पैर पकड़े
और उन्हें प्रसन्न करनेको चेष्टा करे ।

त्वच् (स० स्त्री०) त्वच्यते मंत्रियते देशोऽनया, त्वचति
मंथपोति वा देहं त्वच-क्तिव । १ वस्त्र, कपड़ा । २
चर्म, चमड़ा । ३ स्वर्गयाहक बाह्येन्द्रियभेद. पांच
इन्द्रियोंमेंसे एक । यह इन्द्रिय सारे शरीरके लपरि भागमें

इसकी लम्बाई ११० मोल और चौड़ाई ६५ से ८ मी गज है। उस स्थान पर इसका स्त्रोत बहुत प्रखर है। सभी समय रङ्गपुरमें इस नदी होकर सो भन बोझ लाद कर भावें जाती आती हैं। तिस्रानदीका गर्म बालुमय है। इससे दक्षिण भागको कापाकियासे लेकर ननगण्डाट तक पागनी नदी कहते हैं।

तिस्राका जलस्त्रोत बहुत जल्दी जल्दी बदलता रहता है। इस तरह इसके अनेक पुरातन गर्म छोटी तिस्रा, बूढ़ी तिस्रा तथा मरी तिस्रा नामसे पुकारे जाते हैं। १७६४-७२ ई०में मेजर रेनेलके भूमापके समय तिस्राका प्रधान स्त्रोत दक्षिणकी ओर बहना दुधा दिनाजपुरकी आब्रेथी नदीके साथ मिल कर गङ्गा या पद्मा में गिरता था। १७८७ ई०की रङ्गपुरमें जो महाप्रायन हुआ था, उस समय तिस्रा उक्त पथको छोड़ गई थी और दक्षिण-पूर्वकी ओर अपनी डो एक गाछामें मिलकर बहुतसे देग, घाट तथा मनुष्योंको नष्ट करती हुई प्रसन्नपुरमें गिरी थी। इससे पश्चिमो किनारेका चोड़ा-मारा नामक दृष्टगुप्त जिस तरह प्रति वर्ष पोछे हटता जा रहा है, उससे अनुमान किया जाता है, कि उक्त ग्रामको प्रकृत अवस्थिति बहुत जल्द लुप्त हो जायगी। तिस्राके इस तरह परिवर्तन होनेसे उत्तर-बङ्ग-रेलवेके किनारे डोमर नामक स्थानमें घाट बाजार दिनों दिन बढ़ता जा रहा है।

दार्जिलिंगमें इसकी प्रधान शाखाओंके नाम रङ्गचु, रोचो, बड़ो रंजित, रङ्गजी, रायङ्ग और शिवक हैं। यहां इसका जल समुद्रके जैसा नीला और कभी कभी दूधसा सफेद हो जाता है। जलपाइगुड़ीमें तिस्राको अनेक उपनदियाँ और शाखा नदियाँ हैं जो अतनन प्रबल वा प्रयोजनोय नहीं हैं। इनमेंसे घाघट और मानस विख्यात हैं।

तिस्राका संस्कृत नाम त्रिस्रोता या त्रिष्ठा है। कालिका-पुराणमें इसका उत्पत्ति-विवरण इस प्रकार लिखा है— किन्ही समय एक शिवभक्त भगुरने भगवतीको उषेवा करते हुए उनकी माय सहाई जान दो। शुद्धमें कामर होकर यह भगुर त्रिष्ठातुर हो गया और शिवजीसे जनके लिये प्रार्थना को। इस पर शिवजीने भगवतीके

वचसे दूधको धाराके रूपमें पानी निकाल कर उसे पिता दिया। भगुरको त्रिष्ठा मिट जाने पर भी वह धारा बन्द नहीं हुई वरं तोन धाराओंमें विभक्त हो कर पृथ्वीमें प्रवाहित हुई।

त्रिस्रोतको (सं० स्त्रो०) तोषि स्त्रोतामि भन्ति, अथवा। वह नदी जिससे तोन स्त्रोत निकले हैं।

त्रिद्वय (सं० स्त्रो०) त्रिवारं हुतेन कृष्टं हन-यत्। वह स्त्रोत जो तोन बार जोता गया हो। इसका पर्याय-त्रिगुणाकृत, त्रतोयाकृत और त्रिगोत्र है।

त्रिहायण (सं० त्रि०) त्रयोः हायना वयोऽस्य, णत्व०। १ त्रिवर्ष वयस्क गवादि, तोन वर्ष का बछड़ा। २ त्रिवत्सर, तोन वर्ष।

त्रिहायणो (सं० स्त्रो०) त्रिहायण-डोय्। १ त्रिवर्ष गामि, तोन वर्ष का बछड़ा। २ श्रौपदी। कृत युगमें वेदवती, अर्थात् जनकामाजा और हापरमें श्रौपदी ये ही त्रिष्ठा और त्रिहायणो नामसे प्रसिद्ध हैं।

त्रिद्वत्—त्रिद्वत् द्वौ०।

त्रोयु (सं० त्रि०) त्रय इवः परिमाणमस्य कन् तस्य लुक्। वाणव्यपरिमित स्थान, तोन वाणों तकको दूरीका स्थान।

त्रोयुक्त (सं० स्त्रो०) त्रय इवो यत्र कप्। वाणव्ययुक्त धनु, तोन वाणवाला धनुष।

त्रोष्टक (सं० पु०) त्रिष्टः श्रृगादिद्वया दृष्टका यस्य। अग्निभेद, एक प्रकारको वैदिक अग्नि।

त्रुटि (सं० स्त्री०) त्रुटयते त्रुट-इन् नच कित्। १ सूझना, छोटी इलायची। २ अल्प, थोड़ा, कमो, कसर। ३ मंशय, मंदिह। ४ कालभेद, समयका एक अत्यन्त सूक्ष्म विभाग। दी परमाणुका एक पलु और तोन पलुका एक बामरेण होता है। जब सूर्य की किरण भूरीसे होकर घर्मे प्रवेश करती है तब यह बामरेण देखा जाता है। सूर्य की किरणके योगसे अत्यन्त सूक्ष्मत्वके कारण जो उधर उधर आकाशमें उड़ता दिखाई देता है वही बामरेण है। ऐसे ऐसे तीन बामरेण जो समय भोग करते उसोका नाम त्रुटि है। त्रुटिद्वयसे कालको दो भाग करनेसे एक वेध, तोन वेधका एक त्रय, तोनानवका एक त्रिमेघ और तोन त्रिमेघका एक त्रय होता है।

व्याप्त है। इसके द्वारा स्वर्ग होता है तथा कड़े और नरम आदिका ज्ञान प्राप्त किया जाता है। प्राचीन ऋषियोंने इसे वायुके सत्ताग्रसे उत्पन्न माना है और इसको अधिष्ठात्री देवी वायु बतलाई है। ४ शुद्धत्वक्, दारचीनी। पर्याय—त्वचा, वल्कल, भृङ्ग, बराङ्ग, मुखशोधन, शकल, चिह्नल, वन्य, सुरस, कामवन्धन, सल्लट, बहुगन्ध, विष्मल, वनप्रिय, नटपर्ण, गन्धवल्क, वर और शीत। गुण—यक्ष कटु, शीतल, कफ और कासनाशक, शुक्र और आमशोधनायक, कष्टशूलिकर तथा लघु है। ५ क'शुक, केशुल।

त्वच् (सं० स्त्री०) प्रयुक्ता स्वगन्धस्य, इति अर्थभादि-
त्वादाक्। १ शुद्धत्वक्, दारचीनी। २ त्वगपत्र, तैजपत्ता।

त्वचस् (सं० स्त्री०) त्वच-भसुन। त्वच्-देवो।

त्वचस्य (सं० त्रि०) त्वचसि हितं यत्। त्वगिन्द्रियका हितकर।

त्वचा (सं० स्त्री०) त्वच्-पक्षे टाप् वा त्वचति सङ्घोति सर्वशरीरमिति मच्-तत्ताप। १ त्वक्, चर्म, चमड़ा। २ मिष्ट वल्कल, दारचीनी।

त्वचापत्र (सं० स्त्री०) त्वचा त्वकपत्रमिव यस्य। १ शुद्धत्वक्, दारचीनी। २ तैजपत्र, तैजपत्ता।

त्वचिष्ठ (सं० त्रि०) भतिशयेन त्वग्मान्-त्वग्बत् इष्टन्, ततो मनुषो लुक्। (विष्मसोर्लुक्। पा ५।३।६४) अत्यन्त त्वकयुक्त, ज्यादा चमड़ावाला।

त्वचिसार (सं० पुं०) त्वचि सारी यस्य। वंश, वस। त्वचिसुगन्धा (सं० स्त्री०) त्वचि सुगन्धो यस्याः, समन्थाः भसुक्। सुदृढा, छोटी इलायची।

त्वचोयस (सं० त्रि०) भतिशयेन त्वग्मान् त्वच-ईयसुन् मतोलुक्। अत्यन्त त्वकयुक्त, जिनमें अधिक चमड़ा या त्विका हो।

त्वज्ज्ञान (सं० स्त्री०) त्वचा ज्ञानं। स्वर्गइन्द्रियसे उत्पन्न ज्ञान।

त्वज्ज्ञेय (सं० त्रि०) त्वचा ज्ञेयः। स्वर्गइन्द्रिय द्वारा ज्ञानने योग्य।

त्वत् (सं० त्रि०) तन-क्विप्-भनो वः लुक्। (तनोवेरन इवः। उण् २।६१) १ मित्र। २ युष्मद् शब्दकी प्रथमाके एकवचनका रूप।

त्वक्त (सं० त्रि०) त्वया क्तः १ तत्। तुमसे किया हुआ।

त्वत्तस (सं० अश्व) एकार्यहतेः युष्मदन्तसिन्। तुम्हारे निकटसे।

त्वदीय (सं० त्रि०) तव इदं त्वादित्वेन ब्रह्मत्वात् त्वत्, त्वादेशः। तुम्हारा। जिस जगह बहुवचन हो, उस जगह त्वदीय शब्द न होकर युष्मदीय शब्द होगा।

त्वद्धि (सं० त्रि०) तवेव विधा प्रकारो यस्य। त्वत्-सदृश, तुम्हारे जैसा।

त्वम्पदलघाव्य (सं० पुं०) त्वमिति पदस्य लघ्योऽर्थः। चैतन्य, चेतनता।

त्वम्पदवाच्य (सं० त्रि०) त्वम्पदस्य वाचाः। त्वं, ब्रह्म। जिस प्राणीके देखे आदि आवरण नहीं हैं वे ही त्वं हैं। त्वम्पदवाचाव्य (सं० त्रि०) त्वमिति पदस्य वाच्योऽर्थः।

भक्षानादिकी व्यष्टि।

त्वम्पदामिध (सं० पुं०) त्वंपदं अभिधान यस्य। त्वम्पद वाच्य जीव, जिनके 'मह' इत्यादि अभिमान क्षिप हुए हैं और बोधस्वरूपमें अवस्थित हैं, वे ही त्वम्पदामिध हैं।

त्वन्मय (सं० त्रि०) युष्मत् स्वरूपे मयट्। त्वत् स्वरूप। त्वयता (सं० स्त्री०) त्वया दत्तं दृष्टो साधुः। तुमसे दिया हुआ।

त्वरण (सं० स्त्री०) त्वर भावे श्युट्। त्वरा, शीघ्रता, जल्दी।

त्वरणोय (सं० त्रि०) त्वर-भनोयर्। हुतगमनशील, जल्दो जानेवाला।

त्वरमाण (सं० त्रि०) त्वर-मानच्। मत्वरं, तेज।

त्वर (सं० स्त्री०) त्वरणमिति, त्वर-भङ्, ततः टाप्। वेग, शीघ्रता, जल्दी। पर्याय—सम्भ्रम, आवेग, त्वरि, तूर्ण और संबेग है।

त्वरायण (सं० त्रि०) त्वरा भयनं यस्य। ततो यावत्। त्वरायत्त, शीघ्रता करनेवाला, जल्दशज।

त्वरारोह (सं० पुं०) पारावत, कपोत, कबूतर।

त्वरावत् (सं० त्रि०) त्वराभूतस्य त्वरा मनुष्य मस्य यः। त्वरायुक्त, शीघ्रता करनेवाला।

त्वरि (सं० स्त्री०) त्वरणमिति त्वर्भावे इन्। त्वरा, शीघ्रता, जल्दी।

५ कुमारदुश्चर माट भेद, कात्तिकेयकी एक माटकाका नाम । ६ चभाव । ७ भूल, चक । ८ चवनभङ्ग ।

वटित (मं० वि०) वट-कृत । १ द्विज, कटा या टटा हुआ । २ भग्न । ३ घात । ४ आघातित, जिस पर आघात लगा हो । ५ खलित, गिरा हुआ ।

वटिमोज (मं० पु०) चरुई, कष्ट ।

वटिद्वोकार (मं० पु०) दूटोना स्वरकारः । दोहस्वीकार भूल मंजूर करना ।

वेता (मं० स्त्री०) वेतु भेदान् एति प्राप्नोति वा द्वित्वा मिता प्रपा० भाषुः । १ अग्नित्रयं, दक्षिण, गार्हपत्य और आहवनीय नामक तीन प्रकारकी अग्नि । वेदविद मुनियोंने अग्निको तीन बार प्रणयण किया था, इसीसे अग्निके वेता नाम पड़े है । (हरिवंश २०५।५)

महाराज इलानन्दने एक चरित्र निर्माण कर शमो वृक्षसे अग्निमयनपूर्वक उसे तीन भागोंमें विभक्त किया तथा उस अग्निमें अग्निके प्रकारके यज्ञका अनुष्ठान किया । यज्ञमें महाराजकी गन्धर्वोंका भाषोक्त मिला जो पहले केवल अग्नि था । गन्धर्वोंके वरके प्रभादसे महाराजने उसे तीन भागोंमें बांट दिया । तभीसे अग्नि तीन भागोंमें विभक्त है । (हरिवंश २६, ४५, ४६)

२ चतुर्विध, तीन कौड़ियोंके चित हो जानेसे वेता होती है ।

जिस पक्षसे जुगा खेजा जाता है उसके जिस ओर तीन बिंदियां हो, उस ओर यदि वह पक्ष चित हो जाय तो वेता होती है । 'त्रैतया हतवर्षसः' (खरुचटिक) ३ सत्य और हापर युगान्तरवर्त्ती युगभेद, चार युगोंमेंसे दूसरा युग । कार्तिकेय नामकी शुक्लानवमी तिथिमें वेतायुगको उत्पत्ति हुई है, इसीसे कार्तिकेय नामकी शुक्लानवमी बहुत पुण्या तिथि मानी जाती है । इसी युगमें भगवान् ने यामन, परशुराम और श्रीरामचन्द्रके रूपमें अवतार लिया था । इस युगमें पुण्यसे तीन पाद और पापका एक पाद होता है । पुष्कर ही प्रधान तीर्थ है, ब्राह्मण सामिक है और प्राण अस्थिमंत है । मनुष्यका परिमाण चौदह हाथ और उनकी आयुका परिमाण दस हजार वर्ष होता है । चांदीके पात्र काममें आते हैं । यह युग १२८६०००

वर्षका होता है । इस समय सूर्य वंशीय वाहुक, मगर, वंशमान, चमसम्भा, दिलोप, भगीरथ, अज, दमरथ, श्रीरामचन्द्र और कृष्ण ये लोग राजवत्सवर्त्ती होंगे । तथा सब लोग दानधर्मपरायण, ब्राह्मण सामिक और राजगण यज्ञपरायण होंगे ।

वेता युगमें राजा अपने प्रजाको सत्तामकी तरह पालन करते हैं, इसीसे अन्तर्म वे स्वर्गको प्राप्त होते हैं । वेतायुगके अग्निमें जो धर्मका एक पद जाता रहता है । लोगोंकी अधिक कष्ट भुगना नहीं पड़ता । सबके सब दयालु होते, कोई भी धर्मका उल्लङ्घन नहीं करता । तथा वे वागयज्ञपरायण और विष्णुध्यानरत होते हैं । अत्रिय भूमिके अधिकारी होते, शूद्र ब्राह्मणोंकी सेवामें लगे रहते तथा ब्राह्मण उदारचित्त, वेदवेदान्त-पारंग, प्रतिग्रहनिरत, सत्यमन्त्र, जितेन्द्रिय और विष्णु-भक्ती होते हैं । स्त्रियां पतिरता होतीं, पुत्र विद्वान्नि-परायण होते तथा वसुन्धरा अस्थ्याग्निनी होती है ।

(पादो क्रियायोगवार)

मनुके मतानुसार इस युगमें मनुष्योंको आयु तीन सौ वर्ष होती है । महानिर्वाणतन्त्रमें लिखा है,—सत्ययुगके भीत जने पर वेतायुगमें मर्त्यलोक वेदोदित सभी धर्म अच्छे तरहसे नहीं हो सकता । इस समय वैदिक कर्म बहुत क्षीयकर होगा, वेदार्थयुक्त सभी शास्त्र स्मृतिके रूपमें अवस्थित रहेंगे और ऐसे घोर संसार सागरमें गिर ही एक मात्र चर्चा कर्त्ता होंगे ।

वेताग्नि (मं० पु०) दक्षिण, गार्हपत्य और आहवनीय ये तीन प्रकारकी अग्नि ।

वेताय (मं० पु०) वेताणां एकोऽयः । चतुर्भेद, पामा खेत्तनेका एक प्रकार ।

वेतायुग (मं० स्त्री०) वेतैव युगं । द्वितीय युग ।
वेता रेयो ।

वेतायुगाद्य (मं० स्त्री०) वेतायुगस्य आद्या तिथिः । कार्तिकेय शुक्लानवमी । इसी दिन वेताका जन्म था आरम्भ होना माना जाता है । यह तिथि पुण्य-तिथियोंमें गिनी जाती है ।

वेतिनो (मं० स्त्री०) वेता अस्त्यज्ञ इति-डोप । वेता-अग्निमोध्य किया, वहं किया जो दक्षिण, गार्हपत्य और आहवनीय तीनों प्रकारकी अग्नियोंमें हो ।

स्वरित (सं० स्त्री०) स्वर-रक्त । १. श्रोत्र, जन्तो । (वि०)
२. तेज ।
स्वरितक (सं० पु०) स्वरित कायति प्रकाशते जायते
कै०क । श्रोत्रभेद, सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका
चायन जिसे मूणक भी कहते हैं ।
स्वरिनगति (सं० स्त्री०) छन्दोभेद, एक वर्णवृत्तका
नाम । इसके प्रत्येक चरणमें दश अक्षर होते हैं । इसके
प्राथम्ये पोर दशवें वर्ण गुरु पोर शेष वर्ण लघु होते हैं ।
स्वरिता (सं० स्त्री०) देवोभेद, तन्त्रके अनुसार एक
देवी । इसकी पूजा युद्धमें विजय प्राप्त करनेके लिये की
जाती है । इसका विधान अग्निपुराणके १४१ अध्यायमें
पोर इसकी यन्त्रादिका विषय तन्त्रमार्गमें लिखा है ।
स्वरितोदित (सं० स्त्री०) स्वरित शीघ्र यथा तथा उदित
कथित । श्रोत्रोच्चारित वाक्य, बहुत जल्द उच्चारण
किया हुआ वाक्य ।
स्वनग (सं० स्त्री०) स्वलग प्रयो० साधुः । जलमर्ष; पानो-
का साध ।
स्वष्ट (सं० स्त्री०) स्वस्त तन्कृषीत् । तनू कृत, जो
पतला या सूक्ष्म किया गया हो ।
स्वष्टि (सं० पु०) मनूक्ता महोर्षे जातिभेद, मनुके अनुसार
एक संकर जाति ।
स्वष्टीमतो (सं० स्त्री०) स्वष्टा तदनुग्रहीऽभ्यस्याः मनुष्य-
प्रयो० साधुः । स्वष्टाकी अनुग्रहयुक्ता स्त्री, विश्वकर्माकी
दयालु स्त्री ।
स्वष्ट (सं० पु०) स्वपति दोष्यति विषय दोषी स्वच, इतो
परत्वच् (अन्तेदुस्वष्टोऽपिठि । उ० २।८६) १. आदिस्व-
भेद । वारच आदिर्योमिसे ग्यस्वर्ध्वे आदित्य । ये शान्तके
अधिष्ठाय देवता माने जाते हैं । विराट् पुरुषकी दो
शक्तिके डिस्व प्रथक, द्वयक, उत्पन्न होने पर लोकपाल
स्वष्टा (स्वारक्ष्ये आदित्य) अपने अंगसे चतुर्के साथ अधि-
देवता स्वरूप उभरते प्रविष्ट हो गये । उसी चतुर्मे जीवका
ज्ञान हुआ करता है । स्वचति तनूकरोति, काष्ठादिकं
मित्यकार्यं स्वात्स्वच—यच् । २. विश्वकर्मा । विश्व-
पुराणके अनुसार ये सूर्य के सात सारथिवर्षिसे एक हैं ।
३. विश्वकर्माके पुत्रविशेष, विश्वकर्माके एक पुत्रका
नाम । ४. प्रजापतिविशेष, एक प्रजापतिको नाम । ५.

महादेव, शिव । ६. वर्ष मद्धरजातिविशेष, सुवर्धर
नामको वर्ष संकरजाति । ७. चित्रा नक्षत्रके अधिष्ठती
देवताका नाम । ८. तत्त्वज्ञान, ब्रह्म । ९. पण्य पोर
मनुष्यादिके गर्भके अन्तर्गतस्थित शैतोदप विभाग-
कारक देवभेद, एक वैदिक देवता । ये पण्यो पोर
मनुष्योंके गर्भमें वीर्यका विभाग करनेवाले माने जाते
हैं । १०. वाय, ताँबा ।
त्वष्टमत् (सं० स्त्री०) त्वष्टृ अत्यर्थं मनुष्य । योर्धाधिष्ठाय
देवभेदयुक्त, एक देवता जो वीर्यके अधिष्ठाय देवता
माने जाते हैं ।
त्वाचप्रत्यक्ष (सं० स्त्री०) त्वाच अक्ष-प्रत्यक्ष प्रत्यक्ष ।
अर्थ ज्ञान, छु कर किसी चीजका अनुभव करना ।
त्वादत्त (सं० स्त्री०) त्वया दत्तः येदे साधुः । जो तुमसे
दिया गया हो ।
त्वादूत (सं० स्त्री०) त्वदूतो येयाः । तुम जिसके दूत हो ।
त्वादृष्ट (सं० स्त्री०) त्वमिव दृश्यते युषद् दृष्टः किन् ।
तुम्हारे जैसा, तुम सरोपा ।
त्वादृग (सं० स्त्री०) त्वमिव दृश्यतेऽसौ युषद् दृग-कञ्
(तदादिदृष्टो रनालोचने कंच । पा १।२।१०) तुम्हारे सदृश,
तुम्हारे जैसा ।
त्वायत् (सं० स्त्री०) त्वामात्मन इच्छति, सुप चात्मना
कृत्वा क्वजन्तादृष्टं शब्द । आत्माभिलाषी, जो अपने
इच्छत या प्रतिष्ठा चाहता हो ।
त्वायु (सं० स्त्री०) त्वाम्बन इच्छति ययत् युषदस्त्वदा-
देवे क्वाच्छन्दमि' इति च । जो तुम्हें चाहता हो ।
त्वायसु (सं० पु०) त्वं यस्य व्यापकोऽस्य त्वादेशः येदे
प्रयो० साधुः । तुमसे व्याप ।
त्वाह्व (सं० पु०) त्वया वर्धितः । तुमसे बढ़ाया हुआ ।
त्वाष्टो (सं० स्त्री०) दुर्गा ।
त्वाष्ट (सं० स्त्री०) स्वष्टा देवता पर्यवश्य । १. स्वष्टा
देवताके उद्देश्यसे लाया हुआ घी इत्यादि । २. हस्तपुर ।
३. स्वष्टा या विश्वकर्माका बनाया हुआ इन्द्रियार, यन्त्र ।
४. चित्रा नक्षत्र । ५. विश्वरूप ।
त्वाष्टो (सं० स्त्री०) स्वष्टा अधिष्ठानो देवता पर्यवश्य, स्वष्ट-
पण्य होय । १. चित्रा नक्षत्र । २. विश्वकर्माकी कन्या
संक्राण्टा एक नाम । यह सूर्यको व्याहरी पोर पोर इसके
गर्भमें अग्निनोक्तमार्गा जन्म हुआ था ।

वैधा (सं० प्र०) विप्रकारः वि-पधाच् सञ्ज्ञायां विधायां
धा । (पा ५।३।४२) इति-धा । (एवाच । पा ५।३।४६)
विप्रकार, तीन तरहसे ।

वैश (सं० स्त्री०) विगदश्यायाः परिमाणस्य ब्राह्मणस्य
ड । तीस अक्षराय परिमित ब्राह्मणभेद ।

वै (ङि० वि०) तीन ।

वैककुद (सं० स्त्री०) त्रिककुद नाम पर्वतः तत्र भव
अण् । सौवीराञ्जन, एक प्रकारका काजल या सुरमा ।

वैककुभ (सं० स्त्री०) त्रिककुभ अण् । १ उदान
सम्बन्धीय । २ नवरात्रि साध्य यज्ञभेद, एक प्रकारका
यज्ञ जो तीन दिनमें समाप्त होता है ।

वैकट, (सं० स्त्री०) त्रिकट् ।

वैकण्टक (सं० ति०), त्रिकण्टकः लघुगर्गमत्स्य ततः
परिमाणे रजतादि त्वात् षड् । लघुगर्गमत्स्यका
परिमाण, जो छोटे टेंगरा मछलीके परिमाणका हो ।
वैकालस्र (सं० त्रि०) त्रिकालस्र-अण् । त्रिकालस्र
सम्बन्धीय, तीनों कालका ।

वैकालिक (सं० त्रि०) त्रिकाले भवः ठञ् । भूत
भविष्यत् पौर वर्तमान कालवर्त्ता, तीनों कालमें या
सदा होनेवाला ।

वैकाव्य (सं० स्त्री०) त्रिकाल स्वार्थे ण्यञ् । भूत,
भविष्यत् पौर वर्तमान काल ।

वैकूटक—चेदिराज्यमें कलचूर वंशका समसामयिक
त्रिकूटक या त्रैकूटक यंत्र राज्य करता था । आज तक
इस वंशके धरसेन नामक केवल एक ही राजाका नाम
पाया गया है । उनका २०७ सम्बत्में प्रदत्त एक ताम्र-
शासन प्राप्तिज्ञत हुआ है । पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे
यह भद्र चेदि-सम्बत्-ज्ञापक है । यदि यह बात सत्य
हो, तो ४५६ ई०में राजा धरसेन विद्यमान थे, ऐसा
समझना चाहिये । (२४६ ई०में चेदि सम्बत् प्रति-
ष्ठित हुआ ।) त्रैकूटक राजाओंसे स्थापित एक अण्ड
प्रचलित था । उनके २४५ ई०में प्रदत्त पौर भी एक
ताम्रशासन पाया गया है जिसमें "त्रैकूटकर्त्ता प्रवर्द्ध-
मान राज्य मन्वत्" ऐसा लिखा हुआ है, किन्तु
उमेंसे इस वंशके किसी राजाका नाम नहीं है । राजा
धरसेनने अण्डमेध यज्ञ किया था, ऐसा उनके प्रदत्त

ताम्रशासनमें लिखा है । इससे प्रमाणित होता है,
कि त्रैकूटक वंशीय राजाओंका प्रभाव एक समय बहुत
बड़ा बढ़ा था ।

वैकीणिक (सं० पु०) १ वह जिसके तीन पार्श्व हों,
तिमहला । २ वह जिसके तीन कोण हों ।

वैगर्त (सं० पु०) त्रिगर्ता द्वैविधेयः सोऽभिजितोऽस्य
तस्य वा अण् । १ वह जो पुरुषाणुकमसे त्रिगर्त देयमें
रहता हो । २ त्रिगर्त देयके राजा ।

वैगर्तक (सं० त्रि०) त्रिगर्तस्य देयभेदस्य अष्ट
देगादि त्रिगर्त बुज् । त्रिगर्त देयके निकटवर्ती
देयादि ।

वैगुणिक (सं० त्रि०) त्रिगुणाद्ये द्वयं एक गुणं प्रयच्छति
त्रिगुण-ठक् । १ जो तीन बार गुण किया गया हो ।
२ जिसमें तीनों प्रकारके गुण हों ।

वैगुण्य (सं० स्त्री०) त्रिगुणानां भावः कर्म वा स्वार्थे
ण्यञ् । १ सत्त्वादि गुणत्रय, सत्व, रज और तम इन
तीन गुणोंका धर्म वा भाव ।

वैत (सं० पु०) त्रीन् वक्तान् तनोति युगपत् तन् वाङ्-
ड वितः गर्भभेदः तत्र भवः अण् । १ युगपत्कामधारक
गर्भजात पशु, वह पशु जिसके साथ साथ दो पौर पशु
पैदा हुए हों । २ किसी तीन चोरीका समूह ।

वैतन (सं० पु०) अत्यन्त निष्ठं दासभेदः ।

वैदमिक (सं० स्त्री०) त्रिदगा देवता अस्य ठञ् । देव
अङ्गुल्य रूप तीर्थभेद, चण्डिका चण्डिका भाग जो
तीर्थ कहलाता है ।

वैध (सं० प्र०) वि प्रकारः इति विधा ततः ध्रुज
द्विभोगधनुषः । पा ५।३।४५) विप्रकार, तीन तरहसे ।
वैधर्म्य (सं० स्त्री०) त्रयाणां वेदानां धर्मान् परस्परं
अण् । श्रुतिविषेद सम्बन्धीय होत ।

वैधातवी (सं० स्त्री०) उदवधः नोयास्य यज्ञभेद, एक
प्रकारका यज्ञ ।

वैधातवीय (सं० स्त्री०) वैधातवी गहादि ङ् । यज्ञ-
भेदाद् कर्मभेदः ।

वैधातुक (सं० त्रि०) त्रिभिः धातुभिः स्वर्ष रोप्यताम्-
निष्ठः ठञ् । १ स्वर्गादि धातुत्रय निष्पाद्य, जो तीनों
धातुओंसे बनाया गया हो । (पु०) २ तीनों लोक ।

त्रिप् (स० स्त्री०) त्रिप् दीप्ती सम्प्रदादि स्वादिक्रिप् ।
१ शीमा, प्रभा, चमक । २ वाक् । ३ व्यवसाय । ४
जिगोपा, जयकी इच्छा । (त्रि०) ५ दीप्यमान चमकता
हुषा ।
त्रिषा (स० स्त्री०) त्रिप् हलन्तात् वा टाप् । दीप्ति, प्रभा,
चमक दमक ।
त्रिषामोश (स० पु०) त्रिषां ईशः अलुक् चमासः । १
सूर्य । २ अर्क वृक्ष, आकका पेड़ ।
त्रिषाम्यति (स० पु०) त्रिषां पति, पठगाः अलुक् ।
१ सूर्य । २ अर्क वृक्ष ।
त्रिपि (स० स्त्री०) त्रिप् दीप्ती त्रिप् इन् सध कित्
(इण्पात् कित् । उण् ५।११९) किरण ।
त्रिपित (स० त्रि०) त्रिप् जातास्य तारकाटि इतच् ।
ज्वलित, चमकता हुषा ।
त्रिपौमत् (स० त्रि०) त्रिपि त्रिपतेऽस्य त्रिपि मत्पु,
वेदे दीर्घः । दीप्तिमत्, चमकता हुषा ।
त्रिषे (स० त्रि०) त्रिप् पचाद्यच् । दीप्ति, जगमगाता
हुषा ।
त्रिषेय (स० त्रि०) त्रिषेयच् । दीप्ति, चमकता हुषा ।
त्रिषेयश्च (स० त्रि०) त्रिषे दीप्ति च यच् यस्य । दीप्यमान
यगोयुक्त, जिसका यह जगमगाता हो ।

त्रिषेयश्च (स० त्रि०) त्रिषे यच् यस्य । प्रदीप यत्न,
जिसे यच्च ताकत हो ।
त्रिषप्रतोक् (स० त्रि०) त्रिष प्रतोक् : यसा । दीप्तिमुख,
जिसका मुँह बहुत चमकता हो ।
त्रिषरय (स० त्रि०) त्रिषः रयः यसा । दीप्तिरय,
चमकीला रय ।
त्रिषम (स० यस्त्री०) त्रिप् चसन् । दीप्ति, प्रकाशमान ।
त्रिषमद्वय (स० त्रि०) त्रिषः सद्वक् यस्य । दीप्ति
सद्वक् ।
त्रिषी (स० स्त्री०) दीप्ति ।
त्रि (स० अच्य०) १ त्रिषिप् । २ त्रितर्क ।
त्रिपौरयो (स० पु०) कुशिक ।
त्रिपौत (स० त्रि०) त्रिषा उतः वेदे माधुः । तुमने रचित,
जो तुमसे बचाया गया हो ।
त्रिपु (स० पु०) त्रिषरति कौटिल्य गच्छति त्रिपु । १
उग्रमुष्टि, तनवारको मुठ । इसका पर्याय—मुष्टिताल
तल है । २ सर्प, साँप ।
त्रिपारि (स० त्रि०) त्रिषरयुक्त, बहुत डरपोक ।
त्रिपारु (स० त्रि०) त्रिषो तद्युक् निपुणः । आकर्षण
कन्ततः स्वार्यं यत्न । अतिमुहनिपुण, जो तनवार
चलानेमें निपुण हो ।

थ

थ—यकार, संस्कृत और हिन्दी वर्णमालाका सत्रहवाँ
व्यञ्जनवर्ण और तवर्णका दूसरा अक्षर । इसका उच्चा-
रणस्थान—दन्तमूल है । दन्तमूलके द्वारा जिह्वाके
अग्रभागका स्पर्श होने पर इस वर्णका उच्चारण होता है ।
इस आध्यात्मिक प्रयत्नके कारण इसकी वर्णस्पष्टता होती
है । इसमें विचार, भाष, अघोष और महाप्राण वाद्य
प्रयत्न होते हैं ।
पर्याय—त्रिषासो, महाप्राण्य, चन्द्रिप्राद्य, भयानक,
शिखी, गिरसिध, दम्भी, मद्रकाली, मिथोचय, लघ्व,
बुद्धि, विकर्षा, दक्षिणाग्र, पक्षि, चमर, यरदा, भोगदा,
केश, वामजहा, अनस, अनस, मोक्ष, उज्जयिनी, पृथ्वी,

गुह्य, शश्वन्, विदारक । (वर्णमाला) इसका आकार
इस प्रकार है—“थ” ।
इसके ध्यानके मन्त्र—
‘नीलशर्वा त्रिषवती वदुर्वा वरवां वरात् ।
पीतवस्त्ररिचार्वा सदा सिद्धिदायिनीम् ॥’
एवं ध्याता यकारान् तुल्यं दत्ता जपेत् ।
यं यदेवमर्थं वर्णं यं यथाशक्तं सदा ॥
तद्वगदित्यसंछाद्यं यकारं व्रजाम्भारम् ॥’ (वर्णमाला)
माटकान्याधर्म—याम लहो पर, यकारका न्यास
किया जाता है ।
इसका स्वरूप—कुण्डली, मोचरूपिणी, त्रिगन्धि,

त्रैनिष्ठिक (सं० त्रि०) त्रिभिः निष्कैः क्रीतं ठक् । जो तीन निष्कोंमें खरीदा गया हो, जिसको कीमत तीन निष्क हो ।

त्रैपारायणिक (सं० त्रि०) त्रिः पारायणं ज्ञावत्तं यति ठक् । जिसने तीन बार वेद पढ़ा हो ।

त्रैपुर (सं० पु०) त्रिपुर-स्त्राघं षण् । १ त्रिपुरदेश २ उस देशके निवासी । ३ उस देशके राजा । ४ त्रिपुर नामक असुर भेद, त्रिपुरासुर नामका एक राक्षस ।

त्रैफल (सं० स्त्री०) त्रिफलानां तदाद्यद्वय्याणामिदं षण् । चक्रदत्तोक्त छतभेद, चक्रदत्तके अनुसार दैत्यकर्म एक प्रकारका छत । इसको प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार है—छत ४ सेर, काढ़े के लिये त्रिफला दो सेर, जल ४८ सेर, शंख २ सेर, दूध ४ सेर, चूने के लिये त्रिफला, त्रिकटु, द्राक्षा, यष्टिमधु, कुट्ट, पुण्डरीक काष्ठ, कोटी इलायची, विडुङ्ग, नागिन्नर नोलोत्पल, भगन्तमूल, श्यामा-कृता, रक्तचन्दन, हरिद्रा और दाहहरिद्रा प्रत्येक दो दो तोला, इन सब द्रव्योंको एक साथ मिला कर यथानियम छत प्रस्तुत करते हैं, इससे तिमिर, कामल, विसर्प, प्रदर आदि अनेक प्रकारके रोग प्रशमित होते हैं ।

(चक्रदत्त)

त्रैवल्लि (सं० पु०) ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम जिनका उल्लेख महाभारतमें आया है ।

त्रैमातुर (सं० पु०) त्रिसृणां मातृणामपत्यं षण् । मातुरत् । लक्ष्मण । ये कौशल्या, कैकेयी और सुमित्राके स्नेह-भाजन थे । सुमित्राने कौशल्या और कैकेयीके चरका अंश खाया था और उन्हींसे लक्ष्मणजीकी उत्पत्ति है इसीसे उनका नाम त्रैमातुर पड़ा । लक्ष्मण देखो ।

त्रैमासिक (सं० त्रि०) त्रैमासं तृतीयमासं भूतः स्वस्त्वाया प्राप्त ठक् । त्रिमस्य पूरणार्थत्वेन संख्यावाचकत्वाभावात् न द्विगुलं 'द्विगोत्तुगनपत्ये' इति ननुक् । १ जिसकी उम्र तीन वर्षकी हो । २ त्रिमासभव, हर तीसरे महीने होनेवाला ।

त्रैमास्य (सं० स्त्री०) त्रिमासं स्त्राघं षण् । त्रिमास, तीन महीने ।

त्रैमय्यक (सं० पु०) त्रैमय्यको दैवता भव्य । १ त्रैमय्यक देवताके उद्देशसे ग्रहण किया हुआ एक षण् । २ होम

भेद, एक प्रकारका होम । ३ रुद्र देवताकी धनुर्विद्या-भेद । ४ रुद्रदेवताके वलि प्रश्रुति, महादेवके उद्देशसे ग्रहण किये हुए उपहार आदि । (त्रि०) ५ त्रैमय्यक सम्बन्धी ।

त्रयय्यका (सं० स्त्री०) गायत्री ।

त्रैयाद्यावक (सं० स्त्री०) त्राद्यावे देगभेदे भवः धूमादि बुज्, भव इति निषेधात् ऐच् । त्राद्यावदेगभय, जो त्राद्यावदेगसे उत्पन्न हुआ हो ।

त्रैराशिक (सं० स्त्री०) त्रीन् राशीन् पश्चिज्गण्य प्रवृत्तं ठक् । गणितभेद, गणितकी क्रिया जिसमें तीन ज्ञात राशिओं-को सहायतासे चौथी अज्ञात राशिका पता लगाया जाता है ।

तीन राशिओं सेकर यह काम किया जाता है, इसीसे इसका नाम त्रैराशिक (Rule of three) पड़ा है । तीन निर्दिष्ट राशिओंमेंसे एक घोर फिर एकज्जा जितना गुणा वा भाग होगा, निर्णय चौथी अज्ञात राशिका उतना हो गुणा वा भाग होगा । अतः त्रैराशिककी प्रक्रिया गुणन घोर भागजो मूलक है । जैसे—एक मन चोनेका मूल्य ७॥ आना हो, तो ५ मन चोनीका मूल्य कितना होगा ?

इस प्रश्नमें ५ मन एक मनका जितना गुणा है, ५ मनका मूल्य भी एक मनके मूल्यका अर्थात् ७॥ आनेका उतना हो गुणा होगा । दूसरी ७॥ आनेकी पञ्चगुण या ५से गुणा करनेसे ५ मनका मूल्य ३५ हुआ इस प्रश्नके अर्थोंको दूसरी रीतिसे रख कर उत्तर निकाला जा सकता है, जैसे—

मन	मन	रूपया
१	५	७॥
५	३५	७॥

अर्थात् ५२ राशि । यह बहुपात-रस प्रकारसे पढ़ना होता है ।

ऐसे ५ सम्बन्धमें ७॥ आ० है वैसे उनकी सम्बन्धमें भी । इस लिये उ निकालनेमें ७॥ आनेकी ५से गुणा कर गुणनफलको १से भाग देना होता है, किन्तु १से भाग देना वा नहीं देना दोनों एकसा है । अतएव ५से गुणा कर जो गुणनफल होगा, वही धर्क बराबर है । यहाँ पर ५ मनसे गुणा किया गया, ऐसा न ग्यात कर

शरीर पर छयेनो द्वारा धीरे धीरे पड़ूँ चाया जाता है।
२ हाथमें चढ़िता चाड़िता ठोकनेको किया। ३ वह
कड़ा चाघात जो हाथमें झटकते पड़ूँ चाया जाना है।
४ यह सुंगरी जिनमें जमोन पोटा कर चोरस को जाती
है। ५ थापी। ६ मोटे मोटे कपड़े पोटेनेका धोवोका
सुंगरा।

यपड़ो (हिं० स्त्री०) करतलोंका परस्पर चाघात। दोनों
कौनों हुई छयेलियोंमें एक दूसरे पर मारनेको किया।
३ ताली बजनेको चावाज। ३ जोरा, नमक और
हॉग मिलो हुई बेसनको पूरी।

यपयपी (हिं० स्त्री०) यपसी देवो।

यपना (हिं० स्त्री०) १ स्थापित होना, ठहरना। २ प्रति-
ष्ठित होना। ३ धीरे धीरे पीटना या ठोकना।

यपना (हिं० पुं०) १ किमो धातुको पीटनेका पत्थर,
लकड़ो चादिका चोखार। २ थापी।

यपुषा (हिं० पुं०) चोड़ा, चौरम और चिपटा छाजन का
वपड़ा। खपरेलमें प्रायः यपुषा और नरिया दोनोंका
मेल होता है।

यपेड़ा (हिं० पुं०) १ वह चाघात जो छयेनोसे पड़ूँ चाया
जाता है, यपड़। २ धका, टकर, ठोकर।

यपड़ (हिं० पुं०) १ तमाचा, चपेट। २ धका, टकर।
३ दाद या मुँसियोंका छत्ता, चकत्ता।

यप्या (हिं० पुं०) एक प्रकारका जहाज।

यम (हिं० पुं०) १ स्तम्भ, खम्भा, यूनो। २ केलिका पेड़।
३ देवोको चढ़ानेकी कोटो कोटो पुरियाँ और हलुषा।

यमकारो (हिं० वि०) स्तम्भन करनेवाला, रोकनेवाला।

यमना (हिं० स्त्री०) १ रुकना, ठहरना। २ किमो चोख-
का लारी म रहना, बन्द हो जाना। ३ धैर्य धरना
सत्र करना।

यर (हिं० स्त्री०) १ तह, पात। (पुं०) २ बाघकी माँद।

यर और पार्कर—बम्बईके मिथ प्रदेशका एक जिला। यह
पचा० २४° १३' से २६° १५' उ० और देश० ६८° ५१' से
०१° ८' पू०में अवस्थित है। इसमें उत्तरमें खेरपुर राज्य,
पूर्वमें जयसमेर, मनागो, जोधपुर और वायव्यपुर राज्य,
दक्षिणमें अजमेरकी जयकाञ्च टन्टनभूमि और पश्चिममें
रेदराबाद जिला है। भूपरिमाण १३८४१ वर्गमील है।
जिलेका सदर पत्तनकोट है।

यर और पार्कर जिलेकी दो भागोंमें विभक्त कर
सकते हैं—एक भाग 'पट' वा समतल भूभाग और दूसरा
'थर' वा मरुभूमि है। पट भूभाग समुद्रसे ५० वा १००
फुट ऊँचा है। इसमें मध्य भो कहीं कहीं २०० फुट
ऊँचा बालूका पहाड़ विद्यमान है। किन्तु यरमें उसमें
ऊँचा बालूका पहाड़ एक मो नहीं देखा जाता।
कुछ दिन पहले यह भूभाग मरुभूमिमा दीप्तता था,
जलकी सुविधा भो वहाँ नहीं थी। लेकिन पम्भो रोड़ी
नामक खाड़ीके दो जनिसे जलका कट जाता रहा। इस
भूभागमें पहलेसे नारा और मियौ नामकी दो खाड़ियाँ
बहती थी रहीं हैं और इनमें चौर तथा घरानल नामके
दो जलमि स्त्रोत निकल कर प्रायः ८० मोन तक बह
गये हैं।

यर वा मरुमय थरमें एक भो नदी वा खाड़ी नहीं
है। इसमें दक्षिण-पूर्वमें पार्कर नामक भूभाग है जो
यरमें विलकुल विभक्त है। यहाँ कई एक छोटे
पहाड़ देखे जाते हैं जिनको ऊँचाई १५० फुटमें
अधिक की नहीं होगी। इसका पूर्वभाग सतना
ऊँचा नहीं है और जो कुछ है भो वह सब धीरे धीरे
समतलसेवमें परिवर्तित होता जा रहा है।

जिलेमें कई जगह सूखी नदीका गर्भ रह गया है
जो देखनेमें ही मानम पड़ता है, कि एक समय सिन्धु
नदी यथवा उसकी शाखा प्रयागाके स्त्रोत इसी की कर
बहती थी। पम्भो जहाँ मरुभूमि है, वहाँ उसी जगह
काको पनाज लपकते थे। बहुतसे ईंटें और पावादि
जो वहाँ पाये गये हैं उनमें जाना जाता है, कि एक
समय वहाँ मनुष्योंका वास था।

प्रातल्ल—पार्करके भूभागमें बहुतसे प्राचीन देवा-
लयोंके मन्त्रालयेय देखे जाते हैं। बिरायेमें १४ मोन
उत्तर-पश्चिममें गोर्वा नामक एक प्राचीन और प्रसिद्ध
जैन देवमन्दिर है। यहाँ की जिनमूर्त्ति देवनेके
मिये दूर दूर देशोंमें जैन लोग आते हैं। इसके निकट
पारा नगर नामक एक प्राचीन नगरका भूभागमें प
पड़ा है जिसका प्रायतन प्रायः ६ मोन होगा। धर्म-
मिन्द नामक किमो ध्यक्षिने यह नगर स्थापन किया था।
पहले यह विषय मरुद्विगानो और बहुजगाधों का।

१६वीं शताब्दीमें इसको भवनति हो रहो है। यहांके प्राचीन भग्न देवालयका शिखर पुष्प देख कर चमत्कृत होना पड़ता है। खिमानगरमें दक्षिण नाराखाड़ीके ऊपर रताकोट नामक एक विध्वस्त नगर देखा जाता है। प्रवाद है कि १००० वर्ष पहले रता नामक किसी मनुष्यने यह नगर स्थापन किया। छः सौ वर्ष पहलेसे इसको भवस्था शोचनीय हो गई है। जिलेके नाना स्थानोंमें तनपुर-मीरोंके समयके बनाये हुए मनेक दुर्ग देखनेमें पाते हैं, जिनमेंसे इस्लामकोट, मिस्र और सिङ्गल प्रधान हैं। अभी ये सब भग्नावस्थामें पड़े हैं।

इतिहास—जिलेका प्राचीन इतिहास बहुत कम जाना जाता है। यहांके सोदा राजपूतोंका कहना है, कि लज्जिनीमें उन लोगोंके पूर्वपुरुष परमार सोदा वास करते थे। १२२६ ई०में वे मिन्सुप्रदेशको भागे और यहांके शासनकर्त्ताओंको हरा कर पाप राजा बन बैठे। इनके पहले यहां खुरारागथ राज्य करते थे। कोई कोई कहते हैं, कि १६वीं शताब्दीमें खुरारागथ सोदा राजपूतोंसे परास्त हुए थे। १७५० ई०में वे भी कलहोरीकी अधो-नता स्वीकार करनेको बाध्य हुए। इस समय कुछ काल तक यह जिला सिन्धुराज्यके शासनाधीन रहा। कलहोरीके पक्षपातनके बाद यह जिला तनपुर-मीरोंके अधिकारमें आया। वे लोग उपजका ६ भाग प्रजामें वसूल करते थे। उनके समयमें यहां कई जगह दुर्गादि बनाये गये।

बहुत दिनों तक थर और पार्कर जिला डकैतोंका प्रहारा कष्ट कर प्रसिद्ध था। वे लोग कच्छ और निहट-वर्ती जिलाओंमें लूट मार मचाते थे।

१८२१ ई०में लक्ष्मिन्सुप्रदेश हटिशराज्यके अन्तर्भूत हुआ, तब इस जिलेके लोगोंमें कच्छके शासनाधीन रहनेको इच्छा थी। इसके पशुसार १८४४ ई०में बलि-यारी, टिपला, मिस्र, इसलामकोट, सिङ्गला, शिरावा पिटापुर, बीजानर और पार्कर कच्छमें मिलाये गये एवं चमरकोट, गदरा और नरार्दि खादि कई एक भूभाग ईदराबाद कसकरीके अधीन हुए।

माधराज और हिन्दू-विवाहके उत्सवमें घटेन या प्रधान लोग जो भनयक भय संधार करते थे, वह उठा

दिया गया और सर्दारोंकी पक्ष व्यवहार करनेमें भी नियत किया गया। इन सब कारणोंसे सोदाराजपूत लोग ताड़ गये और विद्रोहो हो उठे। १८४८ ई०में विद्रोह कुछ कुछ शान्त हुआ। गवर्मेण्ट उन लोगोंके असन्तोषके कारण जाननेको इच्छुक हुई। इस पर उन्होंने कक्षा, इसलोग कराइ बर्गियोंसे विवाहमें शरवस्व २५॥ रुपये और कृष्णके समय एक रुपया लेन करनेको इच्छा करते हैं, क्योंकि यह नियम बहुत दिनोंसे चला आ रहा है। इसलोग जो निष्कर जमीन भोग करते हैं, वह बहुत कम हो गई हैं और कुछ इसलोगोंसे हीन भी हो गई हैं, वह हमें लौटा दो जाय। विधेय कर दुर्भिक्षके समय इसलोगोंके व्यवहार में भोमो वा शस्यादि पर शुल्क न लगाया जाय। इसलोग बहुत दिनोंसे हो भ्रमणकालमें जब कभी बर्गियोंके घर पहुंच जाते तो बिना कुछ दिये हो भोजन करते और चराज पाते आ रहे हैं। इसलोगोंको यह प्रथा ल्योंको ल्यों घनी रहै। इसके अलावा चमरकोटमें जो शुल्क वसूल होता है, उसका कुछ अंश इसलोगोंको भी मिले।

उन लोगोंका यह भावेंदन सुन कर हटिग गवर्मेण्टने इस प्रकारका बन्दोबस्त कर दिया—

कराइ बर्गियोंके विवाहमें सोदाराजपूतगण कस्वरूप सेक १५ रु०के हिसाबसे (१०००) रु०का वार्षिक खर्च पावेंगे, बहुतसे निष्कर जमीन भी भोग कर सकेंगे और चमरकोटसे जो शुल्क वसूल होगा, उसका कुछ भाग उन्हें भी दिया जायगा।

१८५० ई०में सोदाके जमोदारके साथ चमरकोट और नारा विभागका एक प्रकारका बन्दोबस्त हो गया। पीछे १८५४ ई०में मिन्सु प्रदेशके कमिश्नर मर वाटेल प्रियरने यहां दम्भाला बन्दोबस्त कायम किया।

१८५६ ई०में इस जिलेका मरुमय भाग और पार्कर पुनः मिन्सुप्रदेशके साथ मिला दिये गये।

१८५८ ई०में बहुतसे कोमोमैय शानाके साथ मिल कर विद्रोहो हो गई। पीछे ईदराबादसे सेनानि जा कर उन्हें दमन किया। १८६८ ई०में विचाराधुमार शानाको १४ वर्ष और उनके मन्त्रोंको १० वर्षका निर्वासन दण्ड मिला। तमोसे जिलेमें कोई दुर्घटना न पड़ो।

ऐसी दगामें परिव्रज्या स्त्री मुनः शर्पना विवाह कर सकती है। परन्तु यह विवाह विधवा-विवाहको तरह होता है। इस तरहको स्त्रीको दोनो पंचवाले 'उरारो' स्त्री कहते हैं। परन्तु दूसरे पतिके श्राद्धोपसंगको सम्पत्तिके बिना विवाहिता होने पर तथा 'भताना' न देनेसे ऐसी स्त्री 'सुरेतिन' वा वैश्याके समान समझो जातो है। समाज-च्युत होने पर भी उसे 'भताना' देना पड़ता है।

आदिम अमभ्य जातियोंमें प्रचलित प्राणोपूजा और प्रकृतिपूजाका मियण हो याक्षोंका धर्म है। और ऋक्षेश्वर इनके एक प्रधान उपास्य देवता हैं। दूर देशमें जानिसे पहले उनको पूजा की जाती है। खेरो जिसके याक्ष लोग कहा करते हैं, जिस राजचक्रधारी वैष्णव ऋक्षेश्वर वा रत्न नामके एक पुत्र थे। राजाने क्रुद्ध हो कर आदिग किया कि उन्हें (ऋक्षेश्वरको) दत्त-सहित उत्तरको और ऐसे स्थानमें निर्वाहित किया जाय, जिससे फिर वे लौट न सकें। राजाके आदेशसे ऋक्षेश्वर अपने दत्त-सहित निर्वाहित हुए। राक्षसोंमें वे जहाँ तहाँ लूटने लगे, वनपुष्पक उन्होंने बहुतसो छियाँ भी इकट्ठी कीं। उन छियाँमें गर्भसे जो सन्तान हुई, वह याक्ष कहलाने लगी। ऋक्षेश्वरने हिमालयके वनमें बड़े यज्ञमें याक्षोंको रक्षा की थी। याक्षोंका विश्वास है, कि भय भीरु रणमें, वनमें, मार्गमें सब जगह ऋक्षेश्वर उनकी रक्षा करते हैं। ये सदैव घोर धरचण्डो नामके घोर भी दो देवताओंको पूजते हैं। गो, भेड़, गुरूर आदि निर्बिघ्न विचारण कर सकें, इसके लिए ये धरचण्डोको पूजा करते हैं। ये 'मरी' नामक देवताको भी उपासना करते हैं। कोई कोई 'मरी' और हिन्दुओंकी कालोदेवीको एक ही समझते हैं। चम्पारणमें 'कुषा', ग्राम्यदेवताकी तरह पूजा जाता है। परन्तु फिलिपिन इनमें शिव और कालो-पूजाका प्रचार होनेसे उक्त देवताओंको पूजा क्रमशः घटती जाती है। याक्ष लोग कालिका देवीको ही जगत्-में सर्वत्र देवता मानते और जीवन मरणकी कर्त्ता समझ उनको पूजा करते हैं। जिन छियाँके सन्तान नहीं होती, वे उसके लिए कालिकादेवीमें प्रार्थना करती हैं, गोष्ठा प्रदेशके देवोपाटनमें कालिकादेवीके पूजोत्सव-

में वे अनेक जन्तुओंका वध करते और उसीमें शानन्द मानते हैं। ये लोग भैरव, ठाकुर, महादेव आदि नाममें शिवके लिङ्गको प्रतिष्ठा कर उनको पूजा करते हैं। याक्ष लोग उन्हें सृष्टिके स्थितिकर्त्ता मानते हैं। बहुतसे याक्षोंके मुकानके सामने मिट्टीके टोले पर मिट्टीके शिव लिङ्ग देखनेमें पाते हैं।

अभी अधिकतर हिन्दूधर्मको मान कर चलने पर भी याक्षोंका पूर्व विश्वास तिरोहित नहीं हुआ है। ज्वर, श्लेष्म, उदरामय, मूर्च्छा, गिरःपोड़ा, उन्माद, दुःस्वप्न तथा अन्य रोगों-अवस्थित होने पर ये उन्हें उपा-देवताका कार्य समझते हैं। किसी भी प्रकारको पाड़ा-को न हो, ये भीष्माकी पथश्रु बुझाते हैं। उन लोगोंने किन्हीं ऐसा विश्वास बैठा हुआ है, कि अधिकांश उपदेवता भीष्माओंको आत्मा मानते हैं; भीष्मा चाहें तो पोकित शरीरसे भूतको धृष्ट कर सकते हैं और चाहें तो उन्हें स्थानान्तरित कर शत्रुओंको कष्ट दे सकते हैं, साथ तक नष्ट कर सकते हैं। इसलिए याक्ष लोग भीष्माओंमें बहुत डरते हैं। भूत भाड़ते समय भीष्मा बायें हाथमें कण्ठकी राख घोर गरवाँ से कर कालिकादेवीके लिए निम्न लिखित मन्त्र पढ़ते हैं—

“शुभ है शुभ भैर तन्व मन्त्र शुभ, सबै निरञ्जन, तोका सोई फूलका भार, हमका सोई गुन विद्याके भार, जहान सै विद्या नहो, कमरा, कामके विद्या। जैसे विद्या कमर काम के सागे, ऐसे विद्या नागद मोर।”

याक्षोंकी अत्यधिक्रिया जाना प्रकारकी है। बहुतेके मतसे पहले ये लोग सुरदेवी सिर्फ गाढ़ दिया करते थे। परन्तु अब हिन्दुओंको देखा-देखो ये शवदाह करने लगे हैं। सिर्फ ईसा घोर चैचकवालेकी गाड़ते हैं गाड़ने वा दाह करनेमें पहले ये मिन्तूर नष्ट कर सुरदेवी एक रात्रि घरके सामने मिट्टीके टोले पर बुना रखते हैं। याक्षोंका विश्वास है, कि रातकी मृत व्यक्तिकी प्रेतात्मा मन्त्र जन्तुओंको सहेड़ कर शवको रक्षा करती है। अत्यधिक्रिया ग्रामके दक्षिणार्धमें होती है। दाहके बाद उसकी भस्म से कर पाखरी नदोंमें डालते हैं। जो पहले चित्तमें भाग लगाता है, उसे १० दिन तक

यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ३६८४४ है। इसमेंसे मेरठ ५३ सुसज्जमान, २१ हिन्दू और पण्डित चमध्य जाति प्रायः मेरठ २३ है। इसमें चलाया यहाँ जैन, सिख, ईसाई, यहुदी और ब्राह्मण भी हैं। बाजरा और दूध की-यहाँकी लोगोंको प्रधान उपभोगिका है। धान प्यार और टमहनकी फसल भी कम नहीं लगती।

शास्त्र—यार और पारक संघे प्रधानतः तरह तरहके पनाज, पगम, घो, ऊँट, गाय, भैंड़े, चमड़े, मछली, नमक आदिकी रफ्तानो और रुई, धातु, सूया फल, रंग, कपड़ा, रसम, गुड़ और तमाकूकी चमदनो होती है। यहाँ जमी और खुनी कपड़े तैयार होते हैं।

शासन—राजल और विचारदिहा काम एक डिप्टी कमिश्नरके हाथमें है। इनके ऊपर जम और मजिस्ट्रेट इन दोनोंका अधिकार है। इनके अधीन एक डिप्टी कलक्टर और एक सुधितयार हैं।

विद्यास्थितिमें यह जिला बहुत गिरा हुआ है। अभी यहाँ कुल १५४ स्कूल हैं। अमरकोट टेकनिकल स्कूलमें बर्बर और मोहारका काम सिखाया जाता है। विद्या-विभागमें वार्षिक ३४००० रुपये खर्च होते हैं। इसके निया यहाँ चिकित्सालय भी है।

यराकाना (हि० क्रि०) भयसे काँपाना।

यराघर (हि० स्त्री०) १ भगदिहेतु कम्पन, डरसे काँपने-की सुझा।

यराघर-कंपनी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी कोठी चिड़िया। जब यह बैठती है तो काँपती हुई मानस पड़ती है।

यराघराना (हि० क्रि०) १ भयसे काँपना। २ काँपना।

यराघराहट (हि० स्त्री०) डरसे उत्पन्न कंपकपी।

यराघरी (हि० स्त्री०) यराघराहट देखो।

यरागा (हि० क्रि०) १ हथोड़ी आदिमें धातु पर पाघात करना। (पु०) २ पत्तोंकी नज़ामो यनानेका सुनारिका योजार।

यरावटी—निम्नप्रदेशके पनागंत पेशुविभागका एक जिला। यह पचा० १०° ३१' से १८° ४०' उ० और देशा० ८५° १५' से ८६° १०' पू०में अवस्थित है। भूविस्तर २८३१ वर्ग मील है। इसमें उत्तरमें मोम जिला, पूर्वमें पेशुविभाग-

गिरि, दक्षिणमें डन्वरटो और पश्चिममें दरावती नदी है। इसका प्रधान सहर यरावटी है। यरावटी समोप से कर दरावती-टॉट-रेनवे गई है।

यहाँकी दरावती और गिरि नदियोंकी चपवाहिका और पेशुविभाग पहाड़का प्राकृतिक दृश्य, बहुत मनोहर है। प्रधान शैल्युद्ध बरबेसजन और योकीपु-दह २००० फुट ऊँचे हैं। गीनमासाके मध्य क्योक्त-ए पर्याप्त गैससेतु नामक एक विविध पहाड़ है जो नासावके ऊपरमें चारों ओर विस्तृत है। यह सेतु है जैसा देखनेमें लगता है, इसीसे इसका नाम गैससेतु पड़ा है।

लोकसंख्या प्रायः ३८५५०० है, जिनमेंसे योहीकी संख्या सबसे अधिक है। अनेक हिन्दूधर्मावलम्बी हिन्दु-स्थानी, ब्रह्मणो, उड़िया, सिख और तामिल लोग भी यहाँ पाकर बस गये हैं। इस जिलेमें ५ शहर और १८८ ग्राम लगते हैं। यहाँकी जमीन वर्षा है, पतः तरह तरहको काफी फसल उत्पन्न होती है। इस जिलेका इतिहास जेनरटा जिलेके साथ मंजिट है। यरावटी (हि० स्त्री०) यह कंपकपी जो डरसे कारण हुई हो।

यराह—यराह और मोरवाड़ा राज्यका एक प्रधान नगर। यह पचा० २४° २१' १०" उ० और देशा० ०१° १०' पू०में अवस्थित है। यहाँ यराहके राजा पास करते हैं।

यराह और मोरवाड़ा—बम्बई प्रदेशके पात्रनपुर एजेन्सीके अधीन एक द्वीपीय राज्य। यह पचा० २४° १०' उ० और देशा० ०२° २८' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १००८८ है। यह राज्य उत्तर-दक्षिणमें प्रायः १२१ कोम तक विस्तृत है। इसके उत्तरमें मारवाड़ा जिला, पूर्वमें पात्रनपुरराज्य, दक्षिणमें भावर और तेलचारा-राज्य है। राज्यकी अधिकांश जमीन पशुवर् और बावुहामव है, गिरि पारोके निचट कुछ कुछ कानोमही पाई जाती है। यहाँ ५०से ८० हाथ जमीन गीटने पर पानी मिलता है। सुतर्ग जनकी विशेष सुविधा नहीं है। इसी कारण फसल यहाँ नहीं लगती। यहाँ पेशुविभाग और क्छेठ माममें पशुधर मारी पड़ती है। पानोमे

यात्रक रहता है। पागुदि-पयल्यामें हमको कोई भी दुःख नहीं, उसे खज्ज्या रहना पड़ता है। दस दिनके बाद (कहीं कहीं ११ दिन बाद) शून्य स्थिति परमांत्य भोग समकं घर या क्षेत्र चोरकर्म चोर पाग-भोजनादि करते हैं, जिनमें मध्य-मासका भी व्यवहार होता है।

मानो, गिज्ञार्थमें निदृष्ट, ऐन्द्रात्मिक या भौतिक
 यत् किमो प्रधान व्यक्तिको मृत्यु होने पर उसे ग्रामें हो
 गाढ़ देते हैं। उस दिनसे वह घर देवमन्दिरके समान
 समझा जाता है; उस घरमें फिर कोई रहता नहीं।
 यादवीका कहना है, कि उस घरमें निरुक्त मृत व्यक्तिकी
 आत्मा को पवित्रित रहते हैं और वह अपने परिवारयोग-
 की चागीचाँद दिया करती है। लोग या छ-मकोने बात
 मृत व्यक्तिके पालीय और प्रतिवासीगण उस मयमन्दिरमें
 पाते हैं। यहाँ मिहोसे प्रतिमूर्ति बना कर उसे तरह
 तरहके रंगोंमें रंगते हैं; यहाँ मृत व्यक्तिकी प्रतिमा
 समझी जाती है। प्रतिमाके प्रभुत्व होने पर उसके पैरों
 पर रक्षा दुपा-भास और गरास थड़ा कर सब जमोन पा
 सेंट कर विनाश करते रहते हैं। उसके बाद किसी
 निदग्गनकी देव कर जब वे समझ लेते हैं कि मृत
 व्यक्तिकी आत्मा मूर्तिमें प्रविष्ट हो चुकी, तब सब
 पानन्दसे नाचते गाते हैं और अन्तमें उस प्रसादो मय-
 मांमको खा जाते हैं।

हिन्दू लोग यादों के हाथका पाने नहीं पीते।
हिन्दूओं के लिए ये समग्र व्यवस्था प्राप्ति में शामिल
है। यादप्राप्ति पश्चात् शान्तिमय है। किसी भी
हिन्दू-प्राप्ति में दुर्गता भगवत् याद

ये शुभ मया के समुसार
 होम पर भी ये पशुकर समुसार
 ये भोग जंगली जायी पशुकर
 इनमें पशु के पशु मादुर पा
 पाद भोग भी मादुर पा
 मुरग पशु के मया के

दाम (वि० ५०) धर्मा शास्त्र ।
 दाम (वि० ५०) १ पातशास्त्र, शास्त्र ।
 दाम न्यायादा जाता है ।

पाकी (हि० खों०) १ मौसम दिखना वरतम की जगह का
मौसमका बना होता है, बड़ी तराही । २ माचकी एक
मत्त ।

ਧਾਰ (ਹਿੰ. ਪ੍ਰੀ.) ਬਾਹ ਦੇਖੀ ।

साह (हिं० फी०) १ गहराईका घना, अनगण्य भाग । २ कम गहरा पानी । ३ गहराईका घना । ४ किसी मंदा या परिमादका घनमान । ५ परिमिति, घना, दृढ । ६ शुभ रीतिसे लगाया हुआ किसी बातका घना । ७ निराली बातका घना ।

यादना (दि० क्रि०) १ गहराईया पता लगाना । २
पुनर्मान करना, पंदाज लेना ।

घियटर (पं० पु०) १ रंगभूमि, रंग शाला । २ नाटकशा
स्त्र अभिनय ।

पिगलो (हिं० फी०) १ कपड़े यादिका छोटा टुकड़ा
जो किसी बड़े कपड़े यादिका हिंद बंद करनेके लिये
जोड़ कर भी दिया जाता है, चकती ।

पिति (हि० श्रो०) १ स्थापित, ठहराव । २ महान् ज्ञान
जर्हा याकर विद्याम क्रिया जाता ३ । २ रचन, रचानम ।
४ रक्षा । ५ अवस्था, दगा ।

दिवाळ (हि० पु०) दहिने चंगका फडकना । इमे
 ठग नांग अपने निये चहुम समझते है ।

यिर (वि० वि०) १ अचम, ठहरा हुआ । २ शान्त, धीर ।
३ स्थायी, दृढ़ ।

धिरक (हि० मु०) नृत्यमें पैरोजा दिखना होना ।
 धिरकना (हि० जि०) १ नृत्यमें चढ़ा चढ़ाव करना ।
 २ ठमक ठमक कर भावना ।

॥ श्रीः ॥ १ चण्डिका, २ हरारव । ३ स्यादिय ।
शान्ति ।

को एक प्रकारका बुद्ध-
को दिखाई पड़ता है।
रहना, पानोका
निष्ठ-

दाम (दि० पु०) धड़ो याजी ।

नाण (रि. ५०) १ पाठ्यान्तः भागः

• ताव्वा मलादा आता हे ।

माण्डवी तक एक पक्षी सड़क शन्यते मध्य ही कर गई है।

यहां बहुत दिनोंसे बघेला राजपूतगण राज्य करती थे। १८१८ ई०में खोसा आदि लुटेरोंके उत्पातसे तड्का कर यहांके सामन्तराजने वृष्टिग गवर्मेण्टकी शरण ली थी।

राज्यके भूतपूर्व सरदारका नाम ठाकुर खेहरसिंह था। राजा थराड़ नामक नगरमें रहते और राजकार्य स्वयं चलाते हैं।

राज्यकी आय ८५,००० रु० है। इन्हें ५० पश्मा-रोही और १० पदातिक सैन्य है। राजाके भरने पर उनकी बड़े लड़के को उत्तराधिकारी होते हैं।

थरि (हि० खो०) बाघ आदिकी मांद, घुर।

थरिया (हि० खो०) थाली देको।

थरुहट (हि० पु०) घासघोंको बत्ती।

थर्मामीटर (थ० पु०) वह यन्त्र जिससे सड़ो गरमो नापी जाती है। तापमान देखे।

थराना (हि० खि०) भयसे कांपना, दहलना।

थल (हि० पु०) १ स्थल, जगह, ठिकाना। २ शुष्क स्थान, सूखी धरती। ३ थलका मार्ग। ४ प्रथमपड़ल, फोड़ेका लाल और सजा हुआ चिरा। ५ चवथोके बराबरका बादलका गोल साज। यह बच्चोंको ठोपी आदि पर टांका जाता है। ६ रेत पड़ी हुई स्थान, रेगिस्तान, भूड़। ७ बाघकी मांद। ८ ऊँची धरती, टोला।

थलकना (हि० खि०) १ भोल पहनेके कारण लपट नीचे हिलना। २ थल थल करना, मोटाईके कारण शरीरका मांस हिलना।

थलघर (हि० पु०) वह जोव जो पृथ्वी पर रहते हैं।

थलघारी (हि० वि०) भूमि पर चलनेवाला।

थलघन (हि० वि०) हिलता हुआ।

थलघलाना (हि० खि०) मोटाईके कारण शरीरका मांस हिलना।

थनवेड़ा (हि० पु०) वह लगह जहां नाव या जहाज आ कर ठहरता है, नाव या जहाज लगनेका घाट।

थनभारी (हि० पु०) कहाँकी एक कोलो। इससे वे विहम कहाँकी धाने रेतोसे मीदानका होना सूचित करते हैं।

थलिया (हि० खो०) धानी।

थली (हि० खो०) १ स्थान, जगह, ठिकाना। २ ऊँची जमीन, टीला। ३ पारतो जमीन। ४ बालूका मैदान, रेतोली जमीन। ५ बैठनेका स्थान, बैठक। ६ जलके भोचिका ताल।

थवई (हि० पु०) वह लो मकान बनाता हो, कारीगर, राज।

थवन (हि० पु०) बधुको तोसरी बार अपने पतिके घरको याता।

थवना (हि० पु०) कहीं मटोका एक गोता। इसमें खगो हुई लकड़ोके छेदमें चरखोको लकड़ो पड़ी रहती है।

थहराना (हि० खि०) १ कमजोरीके कारण चट्टीका कांपना। २ कांपना।

थहराना (हि० खि०) गहराईका पता लगाना, याह लेना। २ किसीकी विद्या या आन्तरिक इच्छाका पता लगाना।

थहराना (हि० खि०) लहाजकी ठहराना।

थंग (हि० खो०) १ वह गुम स्थान जहाँ और या डाकू आ कर ठहरते हैं। २ अनुसन्धान, खोज, पता। ३ गुप्त रूपसे किसी बातका पता लगाना, भेद।

थंगी (हि० पु०) १ वह मनुष्य जो चोरोका काम लेता हो या अपने पास रखता हो। २ चोरीका भेदिया। ३ वह मनुष्य जो चोरीके मानका पता लगाता हो, जासूस। ४ चोरीके गोनका सरदार।

थंगोदारी (हि० खो०) थंगीका काम।

थंग (हि० पु०) १ पश्मा। २ धुनी, चाड़।

थोवला (हि० पु०) किसी लगे हुए पोषका चिरा या गद्दा, थाना।

था (हि० खि०) 'है' शब्दका भूतकाल, रहा।

थाई (हि० वि०) १ स्थिर रहनेवाला, जो बहुत दिनों तक बना रहे। (पु०) २ बैठनेका स्थान, बैठक। ३ धुवपद, स्थायी। यह पद गानेमें बार बार कहा जाता है।

थाक (हि० पु०) १ थामभोसा, गाँवकी भरहद। २ पुत्र, रागि, टेर।

करना जिससे उसमें धूलो हुई मल आदि नीचे बैठ जाय । ३ धिरा कर किसी धूलो हुई वस्तुको नीचे बैठने देना । ४ धिरा कर पानो छानना ।

यी (हि० क्रि०) 'या'का स्त्री ।

यीरा (हि० पु०) आपत्तिके समय रक्षा या सहायताका भार । यामका प्रत्येक समर्थ मनुष्य भारी भारोसे इस तरहका भार अपने ऊपर लेता है ।

योधो—ब्रह्मदेशके पन्तिम स्वाधीन राजाका नाम ।

योरागढ़—कर्णाट प्रदेशका एक नगर ।

युकवाना (हि० क्रि०) युक्ताना देखो ।

युकहाई (हि० वि०) यूकी ज्ञाने योग्य स्त्री, जिसकी निन्दा सब करते हैं ।

युकाई (हि० स्त्री०) यूकनेका काम ।

युकाना (हि० क्रि०) १ किसी दूसरेसे यूकनेका काम कराना । २ समलवाना । ३ तिरस्कार या निन्दा कराना ।

युकाक्रीहम (हि० स्त्री०) निन्दा और तिरस्कार, धिक्कार ।

यूकी (हि० स्त्री०) रेशमके तानेमें उन्हें कुलभानेके लिये यूकका लगाना ।

यूही (हि० स्त्री०) धिक्कार, मानत ।

यूत्तार (सं० पु०) क-भावे घञ्, युत् इत्यव्ययशब्दस्य कारः करणं यत् । निठोवन, यह शब्द जो यूक केकनेसे होता है ।

यूथना (हि० पु०) यूथन देखो ।

यूथाना (हि० क्रि०) अप्रसन्न होना, सुँह फुलाना ।

यूथुक्त (सं० स्त्री०) यूथु इत्यव्ययशब्दकरो-त्यस्तां क-भा० आधारे क्तिप् । १ हेलाछा, यह आवाज जो जोरसे यूकनेमें सुँहसे निकलतो है । २ पक्षीविशेष, एक प्रकारकी चिड़िया ।

यूथिर (हि० पु०) गठिवर्मका एक भेद ।

यूथी (हि० स्त्री०) स्तम्भ, खंभा, चाड़ ।

यूथरना (हि० क्रि०) गरती पट्टीपानेके लिये महुँबेको वालोंका ढेर लगाकर दबाना ।

यूथरा (हि० पु०) महुँबेके वालोंका ढेर ।

यूथना (हि० क्रि०) १ कूटना । २ मारना, पीटना ।

यूथया (हि० वि०) १ कोटे हाथबाला, जिसको हथेलीमें कमचीज चावे । २ जिफायत करनेवाला ।

युवण (भ० स्त्री०) युधंभावे लुट् । जनन, उत्पत्ति, कतम ।

यलना (हि० पु०) पटाही जनों कपड़ा या कम्बल ।

यूसो (हि० स्त्री०) दम कर कई टुकड़े किया हुआ थनाज, दस्तिया ।

यूवा (हि० पु०) यूवा देखो ।

यूक (हि० पु०) यूक देखो ।

यूकना (हि० क्रि०) यूकना देखो ।

यू (हि० अव्य०) १ यूकनेका शब्द । २ तिरस्कार सूचक शब्द, धिक्, छिः ।

यूक (हि० पु०) निठोवन, खतार, तार । मनुष्य तथा और उच्चत स्तन्य जीवोंको जिह्वाके अग्र भाग तथा मुखके अन्त्यन्तरको मांसल भित्तियोंमें अत्यन्त चमरे हुए सूक्ष्म-छिद्र होते जो दानेको तरह दोख पड़ते हैं । ये छिद्र एक प्रकारके गाढ़े रससे भरे रहते हैं । भिन्न भिन्न अन्तुषोंमें भिन्न भिन्न प्रकारका रस होता है । मनुष्य आदि प्राणियोंके यूकमें मिला हुआ रासायनिक द्रव्य पाचनमें सहायता देता है ।

यूकना (हि० क्रि०) १ सुँहसे यूक फेंकना । २ सुँहमें रखी हुई वस्तुको मिसाना, उगलना । ३ तिरस्कृत करना, निन्दा करना, धिक्कारना ।

यूथन (हि० पु०) लम्बा निकला हुआ सुँह ।

यूथनी (हि० स्त्री०) १ यथन देखो । २ हाथोके सुँहका एक रोग । इसमें उसकी तालूम घाय हो जाता है ।

यूथरा (हि० वि०) यह सुँह जो यूथनके जैसा सावर निकला रहता है, भड़ा, चेहरा ।

यन (हि० स्त्री०) १ स्तम्भ, खंभा, चाड़ । (पु०) २ मन्द्राजमें होमिवाना एक प्रकारका गन्ध ।

यूना (हि० पु०) मटोका लौंदा । यह परेना खीस कर खेत या रेशम केरनेके काममें पाता है ।

यूनी (हि० स्त्री०) १ स्तम्भ, खंभा, धम । २ सड़ारकी खंभा, चाड़ । ३ गड़ो हुई लज्जो जिसमें रम्होजा फँदा लगा कर मयानोका डंढा पटकया जाता है ।

यूथी (हि० स्त्री०) साँवका विष दूर करनेकी एक युक्ति । इसमें खोहसे काटे हुए स्थानको दागते हैं ।

यूथना (हि० क्रि०) १ दमित करना, कूटना । २ ठूँस

याति (हि० श्री०) १ स्थिरता, ठहराव ।

यातो (हि० श्री०) यह मनु श्री समय पर काम धानेके लिए रखी जाती है । २ धरोहर, पमानत । ३ मन्त्र धन, जमा, पूंजी ।

यान (हि० पु०) १ स्थान, जगह, ठौर । २ घोड़े या चौगवे वाधनेका स्थान । ३ निवासस्थान, डेरा ।

४ मन्दिर, देवन । ५ निदिन्द्रिय । ६ मंथ्या, घट्ट । ७ घोड़ेके मोचे बिछाई जानेकी घास । ८ कपड़े गोटे आदिका पूरा टुकड़ा ।

यान—हिन्दीके एक कवि । इन्होंने १८४८ ई०में दलेन-प्रकाश नामक ग्रन्थ रचनाया । इनके पिताका नाम निहान-राय और पितामहका नाम महासिंह था । दलेन-प्रकाशमें एकादश पद्याय और कोरम साढ़ेतोन सौके छन्द है । आदिमें इन्होंने जिस छन्दका नाम था गया है उसका लक्षण भी उसी स्थान पर कह दिया है । इसी प्रकार जहाँ किसे छन्दमें कोई फलहार था गया वहाँ उसका भी लक्षण कह दिया है । एक स्थान पर राम रागिनियोंका नाम आया, वहाँ इन्होंने उसका भी वर्णन कर दिया है । ग्रन्थके अन्तमें कुछ चित्रकविता भी की गई है । इन्होंने चित्रकाव्यके विषयमें कृष्णचरोंका जो एक छन्द कहा है, वह बहुत अच्छा है । आपने अनुप्रासका समावेश भी किया है, पर अधिकतासे नहीं । कुल मिला कर यानरामकी कविता समीपजनक है । उदाहरणार्थ दो कविताएँ नीचे देती हैं—

(१) अँ लम्बोदर धम्मुपवन भग्मोदह-लोचन ।

आरति बन्दन बंदास बंदन हवि रोचन ॥

मुल मंजल गंठालि गंठ मंठित मुक्तिहंठक ।

हुंदाक सर हुंद बान बंदत भयंठ बल ॥

हर लम्ब गदा भंडुत परम धियन हलम मंगल बन ।

कवि मान महासौ सिद्धि सर एह हंठ है तुव वदन ॥

(२) गोपी पै दारिनी परम हंठकारिनी हो

गोपी पर गोपी गुर मंगल मंडल है ।

आसन व बल भंग भंवर पबल मुग

बंद छौं भरक रंग मंडल घटल है ॥

रोपी मनु भारीही भारी करत यान

जाको यह रिधि देखो बंशित पडत है ।

टाको दयादीउ माल बाहर निहारके

मुलये मपुर मंजु भयल करत है ॥

यान—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़ राज्यके पनागत सप्ततर राज्यका एक शहर । लोकसंख्या प्रायः ११२० है । बहुमानसे राजकोट तककी मद्रक रमो शहर हो कर गई है । शहरमें एक दुर्ग है । यहाँके तिनैयार-का मन्दिर, कन्दोनाका सूर्यमन्दिर और वसाहोका बासुकी मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है ।

शहरके निकट कमना और पीतम (प्रियतम) नामकी दो पुष्करिणी हैं । प्रवाद है, कि इन दो सरोवरोंमें लक्ष्मोभारायण स्नान करते थे । दुर्गका नाम कन्दोना है, यहाँ सुविख्यात सूर्यमन्दिर प्रतिष्ठित है । कन्दोना दुर्गके सामने पर्यंतके ऊपर सोनगढ़ दुर्ग है । बासुकी मन्दिरके औसत बन्धियाथेकी नामक स्थानमें बन्दूक नामका एक और भी सूर्यमन्दिर है । जिसके निकट टाना पर्वतमाना अवस्थित है । इस पर्वतके एक पंगको माण्डव पर्वत कहते हैं । इनके ऊपर माण्डव दुर्गका भग्नावशेष देखनेमें आता है ।

यानक (हि० पु०) १ स्थान, जगह । २ बबूना, किन । ३ वह गङ्गा या चेरा जिसके भीतर दीघा मगाया जाता है, याना । ४ मंगर ।

याना (हि० पु०) १ ठहरनेका स्थान, पड़ा, ठहराव । २ पुलिसकी बड़ी धीको । यहाँ अपराधोंकी सूचना दी जाती है और कुछ सरकारी विभागों भी रहते हैं । ३ बाँसिका समूह, बाँसकी कोठी ।

याना—बम्बई प्रदेशका एक जिला । यह अक्षा० १८°५१' से २०°२२' उ० और देशा० ७२° १८' से ७३° ४८' पू०में अवस्थित है । इसके उत्तरमें पोस्तगोज अधिष्ठित दमन और दमन जिला, पूर्वमें नासिकनगर, यहमदनगर और पुना, दक्षिणमें कोनावा जिला और पश्चिममें परबसागर है । जिसके उत्तरी और पूर्वी भूभाग लंबे हैं । नासिक जिलेके अन्तर्गत त्राव्यक पर्वतसे वेतरची नदी निकली है । यह एक पवित्र नदी है । जिसके निकट भागनेट दोप है ।

यहाँ बहुत एक भी नहीं है । अंकिन कुर्पा और यानामें बम्बई नगरसे ७५ कोसकी दूरी पर देहार नामक

पातक रहता है। पंगुचि-पयस्वामिं उसको कोई भी हृता नहीं, उसे चक्रेला रहना पड़ता है। दस दिनके बाद (कहीं कहीं १२ दिन बाद) मृत व्यक्तिके आत्मीय लोग उसके घर या कम चौरकम चौर पान-भोजनादि करते हैं, जिसमें मद्य-मांसका भी व्यवहार होता है।

ज्ञानो, गिकारमें मिहहस्त, ऐन्द्रजालिक या भैषज्य-वित् किसी प्रधान व्यक्तिकी मृत्यु होने पर उसे चरमें ही गाड़ देते हैं। उस दिनसे वह घर देवमन्दिरके समान समझा जाता है; उस घरमें फिर कोई रहता नहीं। श्राद्धोंका कहना है, कि उस घरमें सिर्फ मृत व्यक्तिकी आत्मा हो अधिष्ठित रहती है और वह अपने परिवारवर्ग-की आशीर्वाद दिया करती है। तीन वा छ-महोने बाद मृत व्यक्तिके आत्मीय और प्रतिवासीगण उस अवमन्दिरमें आते हैं। यहां मिहोसे प्रतिमूर्ति बना कर उसे तरह तरहके रंगोंसे रंगते हैं; यही मृत व्यक्तिकी प्रतिमा समझी जाती है। प्रतिमाके प्रभुत होने पर उसके घेरों पर रंधा हुआ मांस और शराब चढ़ा कर सब जमोन पर लेट कर विलाप करते रहते हैं। उसके बाद किसी निदर्शनको देख कर जब वे समझ लेते हैं कि मृत व्यक्तिकी आत्मा मूर्तिमें प्रविष्ट हो चुकी, तब संव धानन्दसे नाचते गाते हैं और अन्तमें उस प्रसादो मद्य-मांसको खा जाते हैं।

हिन्दू लोग श्राद्धोंके दायका पानी नहीं पीते। हिन्दूओंके लिए ये पशु, पक्ष, अश्वज जातिमें शामिल हैं। श्राद्धजाति अत्यन्त शान्तिप्रिय है। किसी भी हिन्दू-जातिसे इनका भगड़ा नहीं होता।

ये जुम प्रयागे अनुसार खेती करते हैं। कृषिजीवी होने पर भी ये एकधर अपना ध्यान बढ़ाना करते हैं। ये लोग जंगली हाथी एकड़नेमें बड़े सिहहस्त हैं। इनमें अच्छे अच्छे माइत पाये जाते हैं।

यारु लोग शांता नामके लपसे एक तरहकी सूख-सुरत घंटाई बनाते हैं।

यज्ञालमें यरीव २० हजार श्राद्धोंका पास है।

यान (हिं० पु०) बड़ी यात्री।

यात्रा (हिं० पु०) १ पानवान, यावला। २ कुंड़ी जिनमें आत्मा लगाया जाता है।

यानी (हिं० स्त्री०) १ गौर हिंदला-यस्तन जो कर्म या पीतलका बना होता है, बड़ी तगरी। २ नाचकी एक गत।

याव (हिं० स्त्री०) याह देखो।

याह (हिं० स्त्री०) १ गहराईका अन्त, जलाशयका तल भाग। २ कम गहरा पानी। ३ गहराईका पता। ४ किसी संख्या या परिमाणका अनुमान। ५ परिमिति, अन्त, हद। ६ गुप्त रीतिसे लगाया हुआ किसी बातका पता। ७ चित्तकी बातका पता।

याहना (हिं० क्रि०) १ गहराईका पता लगाना। २ अनुमान करना, अंदाज लेना।

यिएटर (अ० पु०) १ रंगभूमि, रंग शाला। २ नाटकका अभिनय।

यिगलो (हिं० स्त्री०) १ कपड़े आदिका छोटा टुकड़ा जो किसी बड़े कपड़े आदिका छेद बंद करनेके लिये जोड़ कर सी दिया जाता है, चकती।

यिति (हिं० स्त्री०) १ स्थायित्व, ठहराव। २ वह स्थान जहां आकर विराम किया जाता है। ३ रहन, रहाइस। ४ रचा। ५ अवस्था, दया।

यिवाज (हिं० पु०) दहिने पंगवा फड़कना। इसे ठग लोग अपने लिये अशुभ समझते हैं।

यिर (हिं० वि०) १ अचल, ठहरा हुआ। २ शान्त, धीर। ३ स्थायी, हृद।

यिरक (हिं० पु०) मृत्युमें पैरोंका हिलना डोलना।

यिरकना (हिं० क्रि०) १ मृत्युमें अङ्ग सञ्चालन करना। २ ठमक ठमक कर नाचना।

यिरता (हिं० स्त्री०) १ अचलत्व, ठहराव। २ स्थायित्व। ३ अचञ्चलता, शान्ति।

यिरथिरा (हिं० पु०) भारतधर्मका एक प्रकारका तुल्य पुत्र। यह प्रायः जाड़ेके दिनोंमें ही दिखाई पड़ता है।

यिरना (हिं० क्रि०) १ जलका मुख्यतः रहना, पानीका हिलना डोलना, बंद होना। २ पानी कम जाना, नियंत्रण। ३ पानोंमें मिथो हुई गन्दी वस्तुका उसके पैदेंमें जा कर जमना। ४ यिर कर साफ होना।

यिराना (हिं० क्रि०) १ लहराते हुए जलकी थिर होने देना। २ पानों या और किसी पतली चीजकी थिर

स्थानमें एक जनसङ्घ जलाशय है। जिसका परिमाण ४२०० बीघा है। इसका जल स्वर्द्ध शहरमें जाता है। तीन बांध दे कर यह जलाशय तैयार हुआ है। इसमें निकट खेती या वाणिज्य व्यवसाय करनेकी गवर्भण्ट भी थीरसे मनाही है। पहले इस जलाशयका जल परिष्कार रहता था, अभी इसमें नल आदिके लय नानेने कुछ खराब हो गया है।

जिलेके चारों ओर पर्वत हैं। सालमेट डोपके उत्तर-दक्षिणमें जो पर्वतमाला है, वही सबसे प्रधान है। मथेरन और दमन पर्वत भी कम ऊँचाईकी नहीं हैं। मथेरनी नदीके उत्पत्ति-स्थानसे उत्तर-दक्षिणमें बहुतने पहाड़ हैं। इनमेंसे किसी किसी पहाड़के ऊपर प्राचीन सुहृद् दुर्ग देखनेमें आते हैं जिनमेंसे माहुली और मल्लनगढ़ प्रसिद्द हैं।

पेगवाके अधिलत कुछ राज्योंको लेकर यह जिला संगठित हुआ है। अष्टाक्ष ऐतिहासिक विषय सम्बद्ध शब्द-में देपो। इसमें ७ शहर और १६४६ ग्राम समते हैं। लोकसंख्या प्रायः ८११४३२ है। सालमेट और वेमिन नामक स्थानके ईसाई लोग १६वीं शताब्दीमें खेष्ट-जीमियर और उनके पतुवरीये दोचित हुए। ये लोग भण्डारी, कुनवी, कोसो आदि जातिवासे ईसाई हुए हैं। ईसाई होने पर भी ये लोग जातिभेद मानते हैं, और अभी ईसाई भण्डारी, ईसाई कुनवी कहलाते हैं। इन लोगोंके पोतुगोज ईसाई भी नाम हैं। जब कभी मिर्जामें भिन्ना लगता है, तब ईसाईके सिवा और भी बहुतसे हिन्दू तथा पारसी वहाँ इकट्ठे होते हैं। उनकी विश्वास है, कि मिर्जामें जानसे अगक रोग दूर हो जाते हैं, इसीसे ये लोग वहाँ जाकर तरह तरहके पूजोपहार दिया करते हैं। ईसाई लोग भी हिन्दू धर्म्य देवताकी भक्ति और पूजा करते हैं। इसमें जो सात शहर लगते हैं, उनके नाम ये हैं—बन्दरा, बेमीन, भीवन्दी, कल्याण, केलवमाहीन, कुर्सा और थाना।

चावल, नमक, काठ, चून और खड़ी मकसोकी रफ्ताने और कपड़ा, चनाज, तमाकू, नारियल, कोनो और गुड़की पामदनी होती है।

कृषिकार्य की यहाँके लोगोंकी मुख्य उपजोषिका

है, बाद नमक तैयार करनेका काम है। नमकके २०० कारखाने हैं जिनमें प्रतिवर्ष ४६१०००० मन नमक प्रयुक्त होता है। समुद्रके जलको धूपमें सुखा कर नमक बनाते हैं।

शासनकार्यको सुविधाके लिये यह जिला तीन उपविभागोंमें विभक्त कर सहकारी कतहूर तथा एक डिप्टीकलेक्टरके पधान रखा गया है। विवारकार्य डिप्टिक और मेसन जज तथा छद्द सहकारी जर्ज हाा सम्पादन होता है।

यहाँ एक डिप्टीक जेन, ११ कोटे जेल, एक जवा-नत, ३ हाई स्कूल, ८ मिडिल और २४१ प्राइमरी स्कूल हैं।

२ थाना जिलेका एक प्रधान नगर। यह पचा० १८° १२' ४०" और देशा० ७२° ५८' ५०"में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६०११ है। सालमेट खाड़ीके तौर-वर्ती होनेके कारण यह नगर देखनेमें बहुत सुन्दर लगता है। दुर्ग, पोतुगोज-मिर्जा और कई एक जलाशय इसको पूर्व मन्दिरका परिचय देते हैं। तिरहवां शताब्दीमें यह एक स्वाधीन राज्यको राजधानी था। १११८ ई०में मुबारक खिलजी इसके शासनकर्त्ता हुए। १५२८ ई०में काम्येश्वरको मोघिनाजे विनष्ट और वेमिन-उपकूलके २५५ होने पर इस नगराधिपतिने पोतुगोजोंको पधानता स्वीकार की। पोतुगोजोंने इस नगरको दो बार और गुजरातोने एक बार लूटा था। १५११ ई०में सन्धिक अनुसार यह नगर पोतुगोजोंको दे दिया गया। उनके समयमें नगरको खूब उन्नति हुई थी। १७२८ ई०में पोतुगोजोंके हाथसे बेसिनके साथ साथ थानाका अधिकार जाता रहा। १८७४ ई०में पोतुगोजोंने पुनः थाना नगर कोतनेके लिये नो खेना भेजा। चनघोर सुबके बाद थंगरेज लोग विजयी हुए। इस नगरमें एक रेलवे स्टेशन है। बम्बईसे सिर्फ एक घण्टेका रास्ता होनेसे यहाँ बम्बईके अनेक थंगरेज कर्मचारी आकर रहते हैं। शहरमें जोजोभीय हाईस्कूल, शालक तथा यासिकाके मिडिल-इंग्लिश स्कूल और नवंबर नगर स्कूल हैं। १८६३ ई०में यहाँ स्यूनिगिपेलिटो स्थापित हुई है।

करना जिससे उसमें घुसो हुई मल आदि नीचे बैठ जाय । ३ धिरा कर किसी घुसो हुई वस्तुको नीचे बैठने देना । ४ धिरा कर पानो छानना ।

घी (हि० क्लि०) 'घा'का स्त्री ।

घीनरा (हि० पु०) आपत्तिके समय रक्षा या सहायता-का भार । ग्रामका प्रत्येक समर्थ मनुष्य वारी वारीसे इस तरहका भार अपने ऊपर लेता है ।

घोषो—ब्रह्मदेशके अन्तिम स्वाधीन राजाका नाम ।

घोरागढ़—कर्णाट प्रदेशका एक नगर ।

घुक्खाना (हि० क्लि०) घुक्खाना देखो ।

घुक्खाई (हि० वि०) घुक्की जाने योग्य स्त्री, जिसकी निन्दा सब करते हैं ।

घुक्खाई (हि० स्त्री०) घुक्कनका काम ।

घुक्खाना (हि० क्लि०) १ किसी दूसरेमें घुक्कनका काम कराना । २ उगलवाना । ३ तिरस्कार या निन्दा कराना ।

घुक्काफजीहत (हि० स्त्री०) निन्दा और तिरस्कार, धिक्कार ।

घुक्की (हि० स्त्री०) रीसके तागोंमें छद्म सुलभानेके लिये घुक्का लगाना ।

घुङ्गी (हि० स्त्री०) धिक्कार, शानत ।

घुङ्गार (सं० पु०) क-भावे घम, घृत् इत्यन्तमप्यस्य कारं करणं यत् । निष्ठोदन, वह शब्द जो घुक्कनके लिये होता है ।

घुङ्गना (हि० पु०) घुङ्गन देखो ।

घुङ्गाना (हि० क्लि०) अपसव होना, सुई फुटाना ।

घुङ्गुक्त (सं० स्त्री०) घुङ्गु इत्यन्तमप्यस्य करो-त्यस्या क-वा० आधारं क्तिप् । १ हुलासा, वह आवाज जो जोरसे घुक्कनमें सुईसे निकलतो है । २ पक्षीविशेष, एवं प्रकारको चिट्ठिया ।

घुङ्गेर (हि० पु०) गडिबनका एक भेद ।

घुङ्गी (हि० स्त्री०) स्तम्भ, खंभा, चाड़ ।

घुङ्गुरा (हि० क्लि०) गरमो पड़धानेके लिये महुबके बालोंका ढेर लगाकर दशना ।

घुङ्गुरा (हि० पु०) महुबके बालोंका ढेर ।

घुरना (हि० क्लि०) १ झूटना । २ मारना, घोटना ।

घुरहया (हि० वि०) १ झोटे हाथवाला, जिसको हथेली-में कमबीज पावे । २ किफायत करनेवाला ।

घुर्धण (भ० स्त्री०) घुर्धभावे झुट् । १ दहन, हत्या, कतल ।

घलना (हि० पु०) पहाड़ी जलो कपड़ा वा फम्यल ।

घुसो (हि० स्त्री०) दम कर कई टुकड़े किया हुआ अनाज, दमिया ।

घुवा (हि० पु०) घुग देखो ।

घूक (हि० पु०) घूक देखो ।

घूकना (हि० क्लि०) घूकना देखो ।

घू (हि० धन्य०) १ घूकनका शब्द । २ तिरस्कार सूचक शब्द, धिक्, क्लिः ।

घूक (हि० पु०) निष्ठोदन, खमार, सार । मनुष्य तथा और उच्चत स्तन्य जीवोंको जिज्ञाके अग्र भाग तथा मुखके अग्रभागको मांसल भित्तिमें अत्यन्त चमरे हुए सूक्ष्म छिद्र होते जो दानेको तरह दोख पड़ते हैं । ये छिद्र एक प्रकारके गाढ़े रससे भरे रहते हैं । भिन्न भिन्न जन्तुओंमें भिन्न भिन्न प्रकारका रस होता है । मनुष्य आदि प्राणियोंके घूकमें मिला हुआ रासायनिक द्रव्य पाचनमें सहायता देता है ।

घूकना (हि० क्लि०) १ सुईसे घूक फेंकना । २ सुईमें रखी हुई वस्तुको गिराना, उगलना । ३ तिरस्कार करना, निन्दा कराना, धिक्कारना ।

घूयन (हि० पु०) लम्बा निकला हुआ सुई ।

घूयनी (हि० स्त्री०) १ पथर देखो । २ हाथोके सुईका एक रोग । इसमें उसके तान्में घाय हो जाता है ।

घूयरा (हि० वि०) वह सुई जो घूयनके जैसा माडर निकला रहता है, महा चेहरा ।

घन (हि० स्त्री०) १ स्तम्भ, खंभा, चाड़ । (पु०) २ मन्दाग्रमें होमेवाला एक प्रकारका गन्ध ।

घना (हि० पु०) मधोका लौंदा । यह परेमा खोस कर खेत या रंगम फेरनेके काममें पाता है ।

घुनी (हि० स्त्री०) १ स्तम्भ, खंभा, घम । २ सड़ारकी खंभा, चाड़ । ३ गहो दरे लकड़ो जिसमें खोला फंदा लगा कर मधानीका डंठा पटकया जाता है ।

घुवी (हि० स्त्री०) साँपका विष दूर करनेकी एक युक्ति । इसमें मोहके काटे हुए स्थानको दागते हैं ।

घुरना (हि० क्लि०) १ दमिल करना, फूटना । २ ठूँस

२ पणोष्वाके पन्नागत उनाय त्रिमेका एक गहर ।
यह उनाय गहरमें २६० कोमको दूरी पर अवस्थित है ।
चक्रवर्त्त राजवृक्षानामं चोक्षान ठाकुर यानमि'ह चोर
पुगापमि'हमे यह नगर प्रतिष्ठित हुआ है । यानमि'ह
यहां एक दुर्ग भी निर्माणा कर गये हैं ।

धानापति (हिं० पु०) धाम देवता ।

धानाभवन—युक्तप्रदेशके मुजफ्फरनगर जिनके पन्नागत
कौराना तहसीलका एक गहर । यह पचा० २८°१५' उ०
पौर देगा० ७७°२५' पू० मुजफ्फरनगरमें ८ कोम उत्तर
पश्चिममें लया नदीके किनारे अवस्थित है । लोकम'व्या
प्रायः ८८१ है । चक्रवर्त्तके समयमें यह 'धानाभीम'
नामसे मगहर था । यहाँके भवान्देवोके मन्दिरमें वर्षे-
मान नाम प्रसिद्ध हुआ है । भवान्देवोके दग'न
करनेके लिये पनेक यात्री आशा करते हैं ।

विषाही विद्रोहके समय काजो महरुर पनोवा
चोर लगे भोजी दगायतपनोको अधिनायकतामें यहाँ
भी विद्रोह हुआ था । जीवजादागण इन विद्रोहियों-
के प्रधान थे । विद्रोहके बाद नगरको चहारदीवारी
चोर बाठ फाटक तोड़ डाले गये । यहाँ १००
गताब्दोको कई एक मस्जिदें चोर समाधिवाँ हैं ।

यानो (हिं० पु०) १ स्थानका सालिक । २ लोहपाल,
दिकपाल । (यि०) १ सम्पन्न, पूर्ण ।

यानैत (हिं० पु०) धर्मत देवी ।

यानैतार (हिं० पु०) यानिका चक्रम या प्रधान । इनका
काम मान्ति बनाये रखना तथा चपराधो'को जानबोन
करना है ।

यानैतारो (हिं० स्त्री०) यानैतारका पट या कार्य ।

यानैगर—१ पञ्चावर्त्त कर्णाल जिनके'का एक तहसील ।
यह पचा० २८°५५' से १०°२५' उ० पौर देगा० ७१°
३१' से ७०°१०' पू० यमुना नदीके पश्चिमो किनारे अव-
स्थित है । भूपरिमाण ५८८ वर्गमील चोर लोकम'व्या
प्रायः १०१२०८ है । इसमें यानैगर, लादव
चोर शाहाबाद नामके तीन गहर तथा ४१८ ग्राम लगते
हैं । तहसीलको पाप दो माव रुपयेसे अधिक है ।
पहले यह स्थान चम्पासा जिनके पन्नागत था । १८८०
ई०में यह कर्णाल जिनमें मिला दिया गया । तहसील-
के चारों चोर, टाक (पचा०) के अंग है ।

२ उक्त तहसीलका एक यवित नगर चोर पाबोन
हिन्दुतोय । यह पचा० २८° १८' उ० पौर देगा०
७१° १०' पू० कुकषेत्रके ठोह समतल क्षेत्रमें मानवो
नदीके किनारे अवस्थित है । इसका म'व्यक्त नाम
व्याप्तोशर है, इसीका चपरा'शरूप यानैगर हो गया
है । महाभारतमें व्याप्तोवीर्य नामसे इसका उल्लेख है ।
लोकम'व्या लगभग ५०११ है ।

७वीं गताब्दोमें युद्धपुत्रा'ज जय यहाँ पाये थे, उस
समय व्याप्तोशर (यानैगर) व्यक्त्य राज्योंमें मिला जाता
था । चोन-परिवाजकने लिखा है कि यह राज्य प्रायः
५८३ कोम विस्तृत था । १०११ ई०में गजनीके महमूदने
इस नगर पर आक्रमण किया चोर वे यहाँको प्रसिद्ध
चक्रवर्त्तको मुस्लि' गजनीको उठा ले गये ।

मिलोके अन्ध-दृष्टके समयमें मन्दार मिठानि'हने
यानैगर पर अधिकार जमाया । बाद में चयने भोजी
को यह पुनरावर्त्त चरण कर गये । सुगनाके अधिव्य-
धानमें यहाँके पनेक मन्दिर तोड़-तोड़ काले गये चोर
उस स्थान पर मस्जिदें बनाई गईं । मिलावे पुनः यह
मस्जिदें अधिकार कर यहाँ अपना धर्मपन्थ पाठका
स्थान बनाया ।

मिठानि'हका य'ग लोप होने पर यह स्थान १८५०
ई०में ब्रिटिशगवर्नेण्टके अधिकारभूत हुआ । पहले यहाँ
बहुत मनुष्योंका काम था । मन्दरके उठ जानेसे लोक
म'व्या बहुत कम गई है । कुक्षेत्र देखा ।

यानैत (हिं० पु०) १ किमी स्थानका सालिक । २ धाम-
देवता या किमी स्थानका देवता ।

याप (हिं० स्त्री०) १ तबले, गद्द' पादि पर पूरे पंजेका
आवत, ठाक । २ गपव, कसम । ३ मान, कदर ।
४ महरव स्थापन, प्रतिष्ठा, धार, भाक । ५ स्थिति,
अभाव । ६ पचायत । ७ हाप, गिमान । ८ यच्छ,
तमाचा ।

यापन (हिं० पु०) १ स्थापित करनेको क्रिया । २ प्रतिष्ठित
करनेका कार्य, रखनेका काम ।

यापना (हिं० क्रि०) स्थापित करना, बैठाना । २ हाप
या कपिसे लोट या टका कर हिंदी मीनो मनुको कुछ
बनाना । (स्त्री०) १ प्रतिष्ठा, स्थापन । ४ महराजमें

ठूँस कर खाना । ३ मारना, पीटना । ४ कस कर भरना ठूँसना ।

यूँसा (हि० वि०) यूँस-ऊँ । विनाशित, जिसकी शानि नष्ट हो ।

यूँसा (हि० वि०) छोट पट, मोटा ताजा ।

यूँसो (हि० स्त्री०) १ अनाजका वह मोटा कण जो टस कर अलग किया जाता है । २ गायकी बच्चा जनने पर दिये जानेका पक्काया हुआ दलिया । ३ सुजो ।

यूँसा (हि० पुं०) १ जंघो भूमि, टोला । २ मट्टीका लोटा । ३ टूटके आकारका काला रंगा हुआ पिंडा । तम्याऊँ बचनेवाले इसे अपनी टूकानों पर चिड़के लिये रखते हैं । ४ गोली मट्टीका पिंडा, घोंघा । ५ सीमासूचक स्तूप, मट्टीका वह चिड़ जो सरहदके निगानके लिये ठगया जाता है । (स्त्री०) ६ विकारका मूँद ।

यूँहर (हि० पुं०) एक प्रकारका छोटा पेड़ । इसकी टहनियाँ लचोली नहीं होतीं, गाँडों परसे गुन्नो या डंडे-के आकारके डंडल निकलते हैं । इसके कई भेद हैं । किसीमें बहुत मोटे दलके लम्बे पत्ते होते हैं और किसीमें एक भी पत्ता नहीं होता । इसके डंडलों और पत्तोंमें कड़ुआ दूध भरा रहता है । इसमें पोखे रंगके फूल भी लगते हैं । औषधके काममें इसका दूध बहुत उपयोगी है । यदि दूधमें सानी हुई वाजरेके पट्टीकी गोली कुछ काल तक रख कर सेवन करे तो पेटका दर्द जाता रहता है और पेट भी परिष्कार हो जाता है । यूँहरके दूधमें भिगोई हुई चनेकी दाल लुलावसा काम देती है । इसकी राखमें निकाला हुआ खार भी टवामें बहुत काम देता है और इसका कीयला बारूद बसानेके काममें पाता है । विशेष विवरण सुदी बरतमें देखो ।

यूँहा (हि० पुं०) १ रागि, टेर, टूँह । २ लंघो भूमि, टोला ।

यूँहो (हि० स्त्री०) १ मट्टीका टेर । २ मट्टीके खंभे । इन पर गाड़ो या घिरनोको लकड़ी ठहराई जाती है ।

यूँघर (हि० वि०) गान्त, सुप्त, ईरान ।

यूँघेघे (हि० वि०) ताल सूचक नाचकी पावाज और मुद्रा ।

यूँगली (हि० वि०) भिगली देखो ।

यैवा (हि० पुं०) १ भंगूठीका नगोना । २ सुहर खोदो आनिका धातुका पत्र । ३ नगोना जड़नेका भंगूठीका एक घर ।

यैवो (कनिष्ठ) एक प्रसिद्ध भ्रमणकारी । १८५६ में पारधमें जलप्रदण किया था । फ्रांसके मियाना नगरमें १६६० ई० ता० १८ नवम्बरकी इनकी मृत्यु हुई । ये Petis de la Croix के मित्र थे और इसलिए इनमें उनके Memoirs नामक ग्रन्थका सम्पादन किया था । यह ग्रन्थ (१६८८ ई०में) तीन खण्डोंमें हुआ था । यैवो १६६५ ई० ता० ६ नवम्बरकी बसेरासे, जहाज पर सवार हो जनवरीको १० तारोखकी सुरत आए थे । ये भट्टोंव होते हुए शहमदावाद, बम्बई, भागरा, टेंडली, इलाहाबाद, बरहमपुर, गोया, गोनकुण्डा, ईद्राबाद, मकलीपट्टम, सुरत, बन्दर अम्बास, तिराज, कूम और फरसद भ्रमण कर मियाना पहुँचे थे । इनके भ्रमण-वृत्तान्तसे उस समयकी भारतकी अवस्थाका कुछ कुछ परिज्ञान हो सकता है ।

यैचा (हि० पुं०) वह छप्पर जो छेतमें मसानके ऊपर रखा जाता है ।

यैला (हि० पुं०) किसी वस्तुकी भर कर बन्द करनेका एक पास जो कपड़े टाट आदिको से कर बनाया जाता है, बड़ा कोश । २ जंघेसे लेकर घुटने तकका पायजामेका एक भाग । ३ वह कोश जिसमें रुपये भरे रहते हैं, तोड़ा ।

यैलो (हि० स्त्री०) १ छोटा यैला, कोसा । २ अपघोषे परिपूर्ण कोश, तोड़ा ।

यैलीदार (हि० पुं०) १ खजानेमें रुपये लठानेका एक मनुष्य । २ तहसीलदार, रोकड़िया ।

यैलोवरदारी (हि० स्त्री०) यैलो लठा कर पहुँचानेका कार्य, यैलियोंको टोषाई ।

यौक (हि० पुं०) १ पुच्छ, रागि, टेर । २ समूह, भुण्ड, जट्या । ३ वह स्थान जहाँ कई एक ग्रामीणों को माँघ मिलतो हो । ४ एकड़ा बचनेको चीज । ५ एकवित वस्तु, कुल । ६ किसी खाम एक पादमीका जमीनका टुकड़ा ।

यौकदार (हि० पुं०) वह व्यापारी जो एकड़ा मास बेचता हो ।

दुर्गा-पूजाके लिये घट स्थापना । ५ किसी प्रतिमाको स्थापना या प्रतिष्ठा ।

यापरा (हि० पु०) छोटी नाव, डोंगी ।

यापा (हि० पु०) १ पंजेका कापा या निशान जिसे स्त्रियाँ किसी मद्रन्तकी भवसर पर दोवार खादि पर बनाती हैं । २ पुञ्ज, रागि, डेर । ३ गोलो सामग्री दबा कर या डालकर कोई वस्तु बनानेका साँचा । ४ नेपालियोंको एक जाति । ५ चन्दा जो गांवमें देवो देवताको पूजाके लिये संग्रह किया जाता है । ६ गोबर खादिका वह निशान जो खलियानमें बनाजके डेर पर लगाया जाता है, चाँकी । ७ रंग खादि पोत कर कोई चिह्न अंकित करनेका साँचा, कापा ।

यापिया (हि० स्त्री०) गायी देखी ।

यापो (हि० स्त्री०) १ काठका बना हुआ चौड़े छिरेको एक मुंगरो । इससे कुन्धार कच्चा सड़ा पोतता है । २ गध पोतनेको राज या कारोगरको छिपटो मुंगरो ।

याम (हि० पु०) १ क्षात्र, खंभा । २ मस्तूल । (स्त्री०) १ यामनेकी क्रिया या ढंग, पकड़ ।

यामना (हि० स्त्री०) १ गति प्रवृत्त करना । २ गिरने पड़नेसे बचना । ३ किसी कार्यका भार ग्रहण करना । ४ हाथमें लेना, पकड़ना । ५ सहायता देना, सहाय देना । ६ चौकसोंमें रखना, पहरेंमें करना ।

थायेतम्यो—निम्न ब्रह्मके पैगुंके अन्तर्गत एक जिला । यह अक्षां १८° ५२' से १८° ५८' उ० और देशां ८४° २४' से ८५° ५२' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण ४०५० वर्गमील है । इसमें उत्तरमें उत्तर ब्रह्म, पूर्वमें तोड़ जिला, दक्षिणमें प्रोम और पश्चिममें सान्दोये है । उत्तर ब्रह्मके लोक निम्नभागमें अवस्थित होनेके कारण यह जिला निम्न ब्रह्मके सोमान्त प्रदेशकी सीमा करता है । इरावतीका डेल्टा देखन करनेके बाद १८५३ ई०में जनरलसीने इसे निम्नब्रह्मसे एक कर सोमा निर्दिष्ट कर दिया । यह जिला उत्तरमें पाराकानसे पैगु-योमा गिरिमासा तक विस्तृत है । इसके पूर्वमें पैगु-योमा और पश्चिममें पाराकान-योमा गिरिमासा है । प्रियोत्त गिरिमासा ५००० फुट ऊँची है । कायित्त, नाहुदङ्ग और खोदङ्ग-मन्त्रिज्मा नामक इसके तीन शिखर हैं । यह पहाड़

देखनेमें बहुत सुन्दर है और इसमें अनेक नदियाँ निकली हैं । चार गिरिपथ इस पर्वतश्रेणीके मध्य हो कर सान्दोये प्रदेशकी चले गये हैं । थोपकानके सिवा इन राहों हो कर जाना पाना बहुत दुःसाध्य हो जाता है ।

इरावती इस जिलेकी प्रधान नदी है जो थायेतम्योके उत्तरसे दक्षिण तक विष्टत है । इसका निम्नारा बहुत लंबा है, इसमें इस जिलेका कोई स्थान वाटने नहीं डूबता । इस नदीमें दो द्वीप हैं—थायेतम्योनगरके सामनेका येवत्त द्वीप और म्योङ्ग-डिन्-सिप द्वीप । प्रोम-कासमें इस नदीका जल बहुत घट जाने पर भी किसी जगह पाँच फुटसे कम गहरा नहीं होता ।

पश्चिमकी ओरसे तीन ओर पूर्वसे दो नदियाँ इरावतीमें जा गिरी हैं । प्रथम तीन नदियोंके नाम—पान, मातान और मदी तथा प्रियोत्त दोके नाम कारिनी चो बालेट हैं । पान उत्तर ब्रह्मसे निकल कर कई मील जानेके बाद थायेतम्यो नगरके निकट और मातान निम्न ब्रह्मसे निकल कर दक्षिण-पूर्वकी ओर १५० मील जानेके बाद कामानगरके निकट इरावतीमें गिरी है । पूर्वकी दो नदियोंमेंसे एक कायिनी नदी उत्तर ब्रह्मके योमागैससे निकल कर मायिदे नगरसे कुछ दूर इरावती के साथ मिलती है । बाटले नदीसे सुँह पर ४५० फुट लम्बा काठका एक पुल है जिसके ऊपर हो कर रंगून और मायिदेका रास्ता गया है ।

इस जिलेमें बहुतसे गरम सोते वहाँ हैं । थायेतम्यो नगरमें ० मील उत्तर पश्चिममें पदकादिन नगरके निकट किरासन तेल पाया जाता है । जङ्गलमें चोता, वनवि-साव, हरिण, हाथी, गैँडा, बाघ खादि मिलते हैं ।

ब्रह्मदेशके इतिहासमें थायेतम्योका नाम बहुत कम पाया जाता है । पहले इस पञ्चलमें व्यूम् जातिके लोग रहते थे । भारतवर्षके धर्मयाजकोंने जब इस प्रदेशके लोगोंको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया, तब शायद इस जिलेका निम्नभाग धरपेत (योसेल-यङ्का प्रोम) के साथ मिला दिया गया । ४४४ ई० मन्त्रे पहले खूम्-ता-बोङ्गसे प्रोम वंश स्थापित होने पर यह प्रदेश उहाँके राज्य भूत हुआ । बाद की प्रोमवंशका पतन होने पर पहले शताब्दीके अन्तमें समन्द-रतने पगनमें एक राज्य

योदन (सं० क्री०) युद्ध-युद्ध । सम्बरण, आच्छादन
टफना ।

योडा (हि० वि०) न्यून, अल्प, कम, जरासा ।

योतो (हि० स्त्री०) मवेशीके मुखका अग्रभाग, घूयन ।

योय (हि० स्त्री०) १ निःसारता, खोखलापन । २ तोंद,
पेटो ।

योयरा (हि० वि०) १ खोखला, खाली । २ निःसार
घोला । ३ व्यर्थका, निरुपयोगी ।

योया (हि० वि०) १ जो बिना सारका हो, खोखला ।
२ कुपित, मोया, जिसकी धार तेज न हो । ३ बिना
पूँछका, बाँड़ा । ४ व्यर्थका, निरुपयोगी । (पु०)

५ मदीका वह साँचा जिसमें बरतन ढाँटा जाता है ।

योयो (हि० स्त्री०) एक प्रकारको घास ।

योपड़ी (हि० स्त्री०) यण्ड, चपत, धोम ।

योपना (हि० क्रि०) १ पानीमें सनो हुए वस्तुके लोढ़की
चिपकानेके लिये दूसरी वस्तु पर फैला कर ढालना । २
आक्रमण आदिमें रक्षा करना, बचाना । ३ मोटा सेप
चढ़ाना । ४ पारोपित करना, मत्थे मढ़ना ।

योवड़ (हि० पु०) दूधन ।

योव रखना (हि० क्रि०) जहाजकी धार पर चढ़ाना ।

योरो (हि० स्त्री०) एक हीन अनार्य जाति ।

योनिषक (सं० पु०) ग्रन्थि पर्व, गठिवनका पर्व ।

द

द—दकार, संस्कृत एवं हिन्दी वर्णमालाका अठार-
रहवाँ व्यञ्जनवर्ण और तत्पर्ययका तोसरा अक्षर । इसका
उच्चारण ध्यान दत्तामूल है । दत्तामूलके साथ जिह्वाके
अग्रभागका स्पर्श होने पर इस वर्णका उच्चारण होता
है, इसलिए इसमें स्पर्शवर्णता है । इस वर्णके उच्चा-
रणमें संवार, नाद और घोष बाह्यप्रयत्न होते हैं । यह
अल्पप्राण है । इसके पर्याय—भद्रि, ईग, धातकी, धाता,
दाता, दास, कलत्रक, दोन, दान, दान, भक्ति, आबहनी,
धरा, सुपुत्रा, योगिनी, सद्यःकुल्लन, वामगुल्लक, कात्या-
यनी, गिवा, दुर्गा, चन्द्रनामा, विकण्ठकी, स्वस्तिक,
कुटिलारूप, कृष्य, श्यामा, जितेन्द्रिय, धर्मकृत, वाम-
देव, अमरेश, सुचक्षुका, हरिश्चन्द्रपुरवेदो, दक्षपति, त्रिरे-
पक । (वर्णमिपान) इसको अष्टादशोद्गीका ध्यान
इस प्रकार है—

“ध्यानमस्य दकारस्य नक्षत्रे स्थितः ।

चतुर्भुजा पीतवस्त्रा नक्षत्रोत्पत्तिः ॥

अनेकस्मृत्युद्धारमनुष्ठेयमिति ॥

एवं शारदा दक्षाम्बु तन्मात्रं दृष्ट्वा कथेत् ॥

“शिवकिंचितं वेदिं शिविन्द्रुचरितं तथा ।

आत्मादितत्त्वसंयुक्तं दकारं प्रणमामहे ॥” (वर्णमिपान)

दकारको अष्टादशोद्गी चतुर्भुजा, पीतवस्त्रपरि-
धारा और नक्षत्रोत्पत्ति तथा शारदा रत्नादि खचित छार
न पुरादिमें सुयोमित हैं । इस प्रकार दकारका ध्यान कर
इसका दृश्य मार जप करना चाहिये । मोक्षे त्रिगुण
संयुक्त, त्रिविन्दुनक्षित और आत्मादितत्त्व संयुक्त दकार-
को प्रणाम करना चाहिये । कामधेनुतन्त्रमें दकारका
स्वरूप इस प्रकार कहा है—

दकार चतुर्वर्ग-प्रदायक है, पञ्चदेवमय और पञ्चप्राण-
मय है, त्रिगुण और त्रिगुणयुक्त है, रत्नविद्युत्तनाकार
और आत्मादितत्त्वसंयुक्त है । काव्यके आदिमें इस
वर्णका प्रयोग होने पर सुखको प्राप्ति होती है । (इतर-
दोहा) माटकात्यायनमें इस वर्णके वामगुल्लकमें व्यास
किया जाता है ।

द (सं० पु०) दैप यहो वा दा दाने दो बाहुनकात् क ।

१ चपन, पर्वत, पहाड़ । २ दत्त, दौत । ३ दाता ।

ददाति धानदमिति दाःक । (स्त्री०) ४ भावों, स्त्री ।

दो खण्डने सम्पादितत् भावेः किय । (स्त्री०) ५

खण्डन । ६ रक्षण, रक्षा । ददाति दाःक । (स्त्री०) दाता,

देनेवाला ।

दई (हि० पु०) १ ईसर, विधाता । २ देव मंयोग,

प्रारम्भ ।

मन्नादा। इनके संशोधन १९०० वर्षसे अधिक
राज्य किया। इस समय यादवतम्यो पगन राज्यके पन्ना-
भूत था। पीछे यह जिला मान भरदारोंने अधिकृत
रूपा। १८५२-५३ ई०में जब देगु सटिंग राज्यमें मिलाया
गया, तब यादवतम्यो भीम प्रदेशका एक महत्त्वपूर्ण
१८७० ई०में इसे पृथक् कर एक डिपटी कमिश्नरके
अधीन कर दिया गया है।

इसमें यादवतम्यो और पालनतम्यो नामके दो शहर
तथा १२०५ ग्राम मिलते हैं। लोकसंख्या प्रायः
२२८००६ है। इनमेंसे अधिकांश लोग विप्लव मग या
मजदूर हैं। इनके सिवा और कई जातियाँ यहाँ पायी
जाती हैं, यथा—चीन, तेलुगू, तामिल, हिन्दुस्थानी,
मान, कर्गो, ब्रह्मानी, चीन देशीय और पन्नातम्य।

जिलेके उत्पन्न द्रव्योंमें चावल, तिलहन, कई तमाकू
और व्याज प्रधान हैं।

इस जिलेमें कला, सुपारी, रुई, चावल, जमक, चम-
रिक्त रेशम और मिट्टीके बस्तनीकी रत्नो और चम-
रिक्त रुई, रेशम जोल, चमड़े चाटिनी चामदो
होती है।

इस पन्नातम्ये विद्याकी वृद्ध अवधि है। प्रति वर्ष
१६ हजार रुपयेमें अधिक इस विभागमें खर्च होता है।
यहाँ चार परवतान भी हैं।

२ लल जिल्लाका एक उपविभाग। इसमें कुल तीन
शहर मिलते हैं।

३ उपरील उपविभागका एक शहर। यह पन्ना-
१८०२ ई० और देगा० ८५० ई० में मन्नातम्यो नदीके
दाहिने किनारे अवस्थित है। कहते हैं, कि १९०६ ई०में
पगनके भीम राजाके यह शहर स्थापित हुआ है। लोक-
संख्या प्रायः १५८२४ है। यहाँ चमरी, मिनापाका
नाम है। चमरी और मन्ना नाममें यहाँ बहुत गरम पानी
है। शहरमें परवतान और वृद्ध हैं।

चारु—विहार और छहार भारतकी एक जाति।
यह दोनों उत्पत्तिसे विषयमें माना समझे जाते
हैं। इनकी 'रोहर' नामक खेतीका कला है कि वे
निजोरेके राजपूतोंमें उत्पन्न हुए हैं। परन्तु इनका कुछ
प्रमाण नहीं मिलता।

पूर्विकाके पन्नातम्ये कुम्भी मन्नातम्ये और मन्नातम्ये-
के पन्नातम्ये मन्नातम्ये तब हिमालय निम्न-प्रदेशमें रम
जातिका यह तब नाम है। पत्ति प्राचीन जमानेमें मोरघ-
पुरके मानगच्छके पास वातमान् और देवगच्छ पामने
चारुधिका नाम था, ऐसा कहाँ लोगोका विश्वास है।

चारु भोग देवनेमें जाने तथा इनके मिरके नाम
लम्बे और घने होते हैं। पालति और चामपन्नम प्रायः
व्यामोद लोगके समान ही होता है।

गोरगपुरके चारु भोग दो भागोंमें विभक्त है—एक
पूर्वी और दूसरे पश्चिमी। पश्चिमी भोग चमरीकी चमरी मत
माने है और पूर्विकाके साथ पाहार विहार नहीं करते।
पश्चिमियोंमें भी दो लोक हैं—बड़का और छुटका।
अधिकांश पन्नातम्ये गोरग प्रदेशके लहरिया और लंग-
रिया नामके चारुधियोंमें भी दो खेती हैं। विहारमें रउ-
तर खेती खेती समझी जाती है।

चित्तवनिया या चित्तोनिया कल्याणकारी चारु
जुलाहिका काम करते हैं। ये भोग वृत्तव्यक्तिको यादव
क्रियाएँ नहीं करते और न इनकी क्रियाएँ सम्यक् बाट
अधीन-पालन हो करती हैं। वाराणसीमें निम्न चार
पाँच पादमी जाते हैं और गाना बजाता कुछ भी नहीं
होता। चारु और मोड़ दोनों प्रकारके विवाह इनमें
प्रचलित हैं। लड़केका बाप जो रुपये कम्पनीकी देता है।
यह प्रथा इनमें बहुत दिनोंसे प्रचलित है। परन्तु
अवस्थाविशेषमें इनमें तारतम्य भी हो सकता है। नजों
विवाह-प्रथा निम्नखेतीके हिन्दुओंके समान है। ब्राह्मण
लोग पुरोहितका काम करते हैं। गट्टनिषा और चित्तो-
नियोंके विवाहमें (विवाहमें पन्ना) वर पक्षवाले तीन
दिन तक कम्पनी पक्षवालोंकी निमाते हैं। बहुत लम्बे
में व्याह होनेमें लड़की मोघ हो जातीके पास चाम
पड़ता है। इस समय लड़की और लड़के साथ चामदाने
लड़कियोंके चामदानेके लिए घरके घर "दुलहन भता-
वन" (बहमात) नामका उत्सव होता है। परन्तु लड़-
की लम्बे कम होने पर उसे पुनः दोहरा जाना पड़ता है
और मन्नातम्यो न होने तक लड़की बहमात पड़ता है।

इनमें बहुत विवाह और विधवा विवाह प्रचलित है।
विवाह बन्धन समाजकी अनुमतिमें छूट सकता है।

दर्शमारा (हि० वि०) जिस पर दर्शका कोप हो,
अभागा, कामवधतः ।
दंग (फा० वि०) १ चायद्योन्विन, विस्मयन, चकित
(पु०) २ भय, डर ।
दंगई (हि० वि०) उपद्रवो, लड़ाका, भगड़ानू ।
दंगल (फा० पु०) १ मजबूत, पहलवानों को कुश्ती ।
२ यह स्थान जहाँ पहलवान लड़ते हैं, भगड़ा । ३
समूह, जमात, टल । ४ बहुत मोटा तोमरक ।
दंगवारा (हि० पु०) किसानोंको आपसमें हल बैल
देकर सहायता, जिता, हरसोत ।
दंगा (फा० पु०) उपद्रव, बखेड़ा । २ शोरगुल, गुल-
गुमाड़ा ।
दंगैल (हि० वि०) १ उपद्रवो, लड़ाका । २ बागो ।
दंतिपा (हि० स्त्री०) छोटे छोटे दांत ।
दंद (हि० स्त्री०) १ वह गरमो जो किसी पदार्थमें
निकलती है । (पु०) २ दन्त, लड़ाई भगड़ा । ३ छला
गुप्ता, गुलगुमाड़ा ।
दंदाना (फा० पु०) उभरो हुई बलुओंकी पंक्ति जो दात-
के आकारका होती है ।
दंदानिदार (फा० वि०) जिसमें दांतको तरह निकले हुए
कंगूनोंकी पंक्ति हो ।
दंदाग (हि० पु०) छाता, फफोला ।
दंदो (हि० वि०) उपद्रवो, भगड़ानू ।
दंवरो (हि० स्त्री०) बैलोंसे रौंदवानेका काम जिससे
बनाजके सूखे छंत्तोंमेंसे दाने भट्ट जाते हैं ।
दंश (सं० पु०) दंश दंशने पदायध् । कोटविशेष,
डाँम, बगदर इसका पर्याय—अनमसिका, गोमसिका,
अरण्यमसिका, भभ्रारालिका, पांशर, दंशक, दुटमुख,
क्षूर, चुट्टिका और दंशमशक है । बिछा, मूख, मृतप्रेष
और सड़े हुए घंड़ोंसे दंश प्रभृति अनेक तरहके कोड़े
उत्पन्न होते हैं । इसके काटनेसे शरीरमें सूजन और
पोड़ा होती है । दगतोव शरीर । २ यर्म, एकतर ।
दंश भाषे घञ् । १ दंशन, दांत काटनेको क्रिया । ४
दोष । ५ सर्पघत, साँपके काटनेका घाव । ६ दन्तघत,
दांत काटनेसे उत्पन्न घाव । ७ दोष, वर । ८ दन्त
दांत । ९ विषसे अन्तुषीका डंक । १० पासेप्रबधन,

कटुक्ति, बौद्धार । ११ एक भस्तर जिसकी कथा मरा-
भारतमें इस प्रकार लिखी है—

सत्ययुगमें दंश नामका एक प्रवल पराक्रान्त भस्तर
रहता था । यह भृगु मुनिसे ज्यादा सम्पन्न था । एकदिन
यह भस्तर भृगुकी खोकी घरसे गया । इस पर भृगुने
प्रत्यक्ष कोषित हो कर उसे शाप दिया कि, 'तू मर
मूवका कीड़ा हो जा ।' शापसे डर कर जय भस्तरने
भृगुसे बार बार समा प्रार्थना की, तब उनका शरीर
दयासे पिघल गया और बोले—“मेरे वंशमें जो राम होगे
वही तुम्हें मुक्त करेंगे ।” बाद यह दंश कीटयोनिको
पाम हुआ । कर्ण जब परशुरामसे अस्त्रविद्या सीप
रहे थे, तब एक दिन परशुराम कर्णकी जाँघ पर अपना
मिर रखे कर सो गये । ठीक उसी समय वह कीड़ा कर्ण
के मनोप पहुँच उनकी जाँघमें काटने लगा । गुस्से
निद्रा भङ्ग होनेके डरसे कर्णने अपनी जाँघ न हटाई ।
कुछ समय बाद जब जाँघसे रक्तकी धारा निकल कर
परशुरामके शरीर पर गिरने लगी, तब परशुरामको भौंटे
टूटो । कर्णने सारा शान गुस्से कह सुनाया ।

परशुरामने कर्णकी बात सुन कर उस कीड़ेको घोर
ताका । वह सफेद कीड़ा था और उसके शरीरका आकार
सूपर सा, दाँत तेज और समूचा शरीर सड़े सरोखे रौं-
से ढका था । परशुरामके ताकतेहो कीड़ेने उसी रक्तके
बोच अपना कोट शरीर कीड़ा और शापसे विसृक्त हो कर
रामसे प्रार्थना की । बाद वह अपने स्थानकी चला
गया । (भारत वास्तव्य ३७०)

दंशक (सं० पु०) दंशतीति दन्त्य ण्यन् । १ दंश
डाँम नामकी मसखो । २ नृपभेद, एक राजाका नाम ।
ये कम्पन देशके पध्धिपति थे । (वि०) ३ दंशनकर्त्ता,
काटनेवाला; जो दाँतसे काट घाव ।

दंशन (सं० पु०) १ दाँतसे काटना, छचना । २ यर्म,
कवच ।

दंशनाशिनो (सं० स्त्री०) दंशं नाशयति नाशिन-
डीप । तेलकीटभेद, एक प्रकारका तेलका कीड़ा ।

दंशभीरु (सं० पु०) दंशात् वनमसि कातः भीरुः ।
महिष, भैंसा ।

दंशमूल (सं० पु०) दंशवदुषं मूलमस्य । ग्रिधुहष,
सहजनका पेड़ ।

ऐसी दशा में परित्यक्ता स्त्री सुमः अपना विवाह कर सकती है। परन्तु यह विवाह विधवा-विवाह की तरह होता है। इस तरह की स्त्री को दोनो पंचवाले 'उरारो' स्त्री कहते हैं। परन्तु दूसरे पतिके आश्रयवश को सम्पत्तिके बिना विवाहिता स्त्री पर तथा 'भताना' न देनेसे ऐसी स्त्री 'सुरैनिन' या वेश्याके समान समझी जाती है। समाज-च्युत होने पर भी उसे 'भताना' देना पड़ता है।

आदिम अमध्य जातियों में प्रचलित प्राचीन पूजा और प्रकृतपूजाका मियथ हो यारुषों का धर्म है। और ऋषेय्यर इनके एक प्रधान उपास्य देवता हैं। दूर देश में जानिसे पहले उनको पूजा की जाती है। खेरो जिलेके थारु लोग कहते हैं, कि राजचक्रवर्ती वेणुके ऋषेय्यर वा रघु नामके एक पुत्र थे। राजाने झूठ बो कर आदेश किया कि उन्हें (ऋषेय्यरको) दण्ड-सहित उत्तरको और ऐसे स्थानमें निर्वासित किया जाय, जिसमें फिर वे लौट न सकें। राजाके आदेशसे ऋषेय्यर अपने दण्ड-सहित निर्वासित हुए। राक्षसों में वे जहाँ पहुँचते लगीं; वनपर्वक उन्होंने बहुतसे स्त्रियाँ भी दकड़ो कीं। उन स्त्रियोंमें गंधसे जो मन्तान हुई, वह थारु कहलाने लगी। ऋषेय्यरने हिमालयके वनमें बड़े यज्ञमें थारुषों को रक्षा की थी। थारुषोंका विश्वास है, कि जब भी रणमें, वनमें, मार्गमें सब जगह ऋषेय्यर उनकी रक्षा करते हैं। ये मददेव और धरचण्डो नामके और भी दो देवताओंको पूजते हैं। गो, भेड़, गुरा आदि निर्विघ्न विचारण कर सकें; इसके लिए ये धरचण्डोकी पूजा करते हैं। ये 'मरी' नामक देवताको भी उपासना करते हैं। कोई कोई 'मरी' और हिन्दुओंकी कालोटेवोकी एक ही समझते हैं। चम्पारणमें 'कुषा' ग्राम्यदेवताकी तरह पूजा जाता है। परन्तु फिलहाल इनमें शिव और काली-पूजाका प्रचार होनेसे सत्त देवताओंको पूजा क्रमशः घटती जाती है। थारु लोग कालिका देवोको ही जगत् में सर्वोच्च देवता मानते और जीवन मरणकी कष्टों समझ उनकी पूजा करते हैं। जिन स्त्रियोंके सन्तान नहीं होती, वे उनके लिए कालिकादेवीमें प्रार्थना करते हैं। गोण्डा प्रदेशके देवीपाटनमें कालिकादेवीके पूजोत्सव-

में ये अनेक जन्तुओंका वध करते और उसमें पानन्द मानते हैं। ये लोग भैरव, ठाकुर, महादेव आदि नामसे शिवके लिङ्गको प्रतिष्ठा कर उनकी पूजा करते हैं। थारु लोग उन्हें खटिके स्थितिकर्ता मानते हैं। बहुतसे थारुषोंके सन्तानके सामने मिट्टीके टोले पर मिट्टीके शिव लिङ्ग देखनेमें आते हैं।

अभी अधिकतर हिन्दुधर्मको मान कर चलने पर भी थारुषोंका पूर्व विश्वास निरोहित नहीं हुआ है। क्वार, गामो, उदरामय, मूच्छा, गिरःपोड़ा, उन्माद, दुःखप्र तथा अन्योन्य रोगों में उपस्थित होने पर ये उसे उपदेवताका कार्य समझते हैं। किसी भी प्रकारका पोड़ा 'बो' न हो, ये भीमाकी परश्वर बुलाते हैं। इन लोगोंके दिलमें ऐसा विश्वास बैठा हुआ है, कि अधिकांश उपदेवता भीमाओंको पात्रा मानते हैं; भीमा वहाँ तो पण्डित शरीरसे भूतकी चमक कर मरते हैं और चाहे तो उन्हें स्थानान्तरित कर शवुषोंको कष्ट दे सकते हैं; प्रायः तक नष्ट कर सकते हैं। इसलिए थारु लोग भीमाओंमें बहुत डरते हैं। भूत भावने समय भीमा बाघों चारों ओर कण्डोकी राख और मरहों लें कर कालिकादेवीके लिए निम्न लिखित मन्त्र पढ़ते हैं—

“युद्ध है युद्ध और तत्त्व मन्त्र युद्ध, सब निरञ्जन, तोका सोई फूलका भार, हमका सोई गुन विद्याके भार, जहान के विद्या नहीं, कामर, कामके विद्या। जैसे विद्या कामर काम के भागे, ऐसे विद्या नागर और।”

थारुषोंकी अश्वेतिक्रिया माना प्रकारकी है। बहुतोंके मतमें पहले ये लोग मुरदेकी सिर्फ गाड़ दिया करते थे। परन्तु अब हिन्दुओंको देखा-देखी ये मयदाह करने लगे हैं, सिर्फ ईसा और चैचकवालेकी गाड़ते हैं गाड़ने वा दाह करनेमें पहले ये मिन्टु अपेट कर मुरदेकी एक राखि धरके सामने मिट्टीके टोले पर सुना रखते हैं। थारुषोंका विश्वास है, कि रातकी मृत व्यक्तिकी प्रताया अन्य जन्तुओंकी तरह कर शवकी रक्षा करती है। अश्वेतिक्रिया ग्रामके दक्षिणार्धमें होती है। दाहके बाद उसकी भस्म से कर पावकी नदोंमें जानते हैं। जो पहले चित्तमें भाग लगाता है, उसे १० दिन तक

दंशवदन (स० पु०) कङ्क पक्षी, सफेद चोत, काँक ।
 दंशिका (स० स्त्री०) वनमयिका, डीस ।
 दंशित (स० वि०) दंशो यमं मञ्जातोऽस्य परिहित-
 त्वादिति, दंश तारकादित्वात् इत्थत् । १ वमिंत, कवच
 आदिसे टका हुआ । दंशसे दन्त गिच् भावे क्त ।
 दष्ट, दांतसे काटा हुआ ।
 दंशो (स० स्त्री०) सुदो दंशः स्वार्थं डोप, वा दंश-
 तोति दंश-मच गौरा-डोप । १ रुद्र दंश, छोटा डीस ।
 २ कुकुर, कुत्ता । (वि०) जो दांतसे काटता हो, डमने
 वाला । ४ कट्, कट्टनीवाला, चापेप बचन कहने
 वाला । ५ डोपी, बैर रखनेवाला ।
 दंशुक (स० वि०) दन्त वाहुलकात् उक्त । दंशन-
 गोल, डमने योग्य ।
 दंशिर (स० वि०) दंश वाहुं एरक् । यपकारक, बुराई
 करनेवाला ।
 दंष्ट्र (स० पु०) १ दन्तग्र । २ दन्त, दांत, ३ शूकर, सूपर ।
 दंष्ट्रा (स० स्त्री०) दन्तसेनया दन्त करणे दन्त,
 (शान्तिपर्वेति । पा ३।१।२) वा 'सर्वधातुभ्य दन्त' इति
 दन्त । १ स्थूल दन्तभेद, बड़े बड़े दांत, दाढ़, चोमर ।
 २ दृष्टिकाली, बिहुषा नामका पौधा । इसमें रोईदार
 फल लगते हैं ।
 दंष्ट्रानखविप (स० पु०) दंष्ट्रायां गच्छे च विषे यस्य ।
 माजौरादि, वह जन्तु जिसके नाख और दांतमें विष हो ।
 विस्त्रो, कुत्ता, बन्दर, मकर, मेंढक, प्रचनाक (कोड़ा),
 क्षिपकनो, गोह, साँप और चार घेर वाले कोड़े दंष्ट्रा-
 नख, विष । उनकी दांत, नाख, मुत, विडा, बीर्य, लार,
 रस, सुँघ आदिमें विष रहता है ।
 दंष्ट्रायुध (स० पु०) दंष्ट्रा पायुध इव यस्य । बराह,
 सूपर ।
 दंष्ट्राज (स० वि०) दंष्ट्रा भक्ति बूढ़ादित्वात् क । १
 दंष्ट्रायुक्त, बड़े बड़े दांतोंवाला । (पु०) २ राजम-
 वियेप, एक राजसका नाम ।
 दंष्ट्राविप (स० पु०) दंष्ट्रायां विपमस्य । भीम सर्प, वह
 साँप जिसके दांतोंमें विष रहता है ।
 दंष्ट्राघा (स० पु० स्त्री०) दंष्ट्राघातिवात्य । बराह,
 सूपर ।

दंष्ट्रिका (स० स्त्री०) दंष्ट्रो विद्यतेऽस्याः, दंष्ट्रा, उन् ।
 १ दंष्ट्रा, दाढ़, चोमर । (वि०) २ दंष्ट्रायुक्त, जिसके
 दाढ़ हैं ।
 दंष्ट्रो (स० पु० स्त्री०) प्रशस्ता दंष्ट्रा चलाप्य इति दन्ति ।
 १ शूकर, सूपर । २ सर्प, साँप । (वि०) ३ दंष्ट्रायुक्त, बड़े
 बड़े दांतवाला ।
 दंसना (स० स्त्री०) दंस, बुरादित्वात् विच्, तनोभावे
 सुच् । कर्म, काम ।
 दंसनावत् (स० वि०) दंसना विद्यतेऽस्य सत्पुं, तनो
 मस्य वा । १ कर्मयुक्त । २ पलोकिक शक्तिमान, जिसे
 खूब ताकत हो ।
 दंसम् (स० स्त्री०) दंसस्-भसन् । कर्म, काम ।
 दंसि (स० पु०) दन्स-इन् । कर्म, काम ।
 दंसिष्ठ (स० वि०) दन्स लृप् दंसयिमा अतिगमेन,
 सः इत्थं लुकि थिलोपः । १ अत्यन्त कर्मकर्त्ता,
 जो खूब काम करता हो । २ दम नीयतम, देखने
 योग्य । ३ अत्यन्त शत्रुहंसक ।
 दंसु (स० स्त्री०) अनौकिक शक्ति, धन तत्ताजत ।
 दंसुशत (स० वि०) दान्त भग्नद्वारा सुष्ठुप्रेरित, जो
 लक्ष्मी तज घोड़े से भेजा गया हो ।
 दंसुपलो (स० स्त्री०) १ वह जिसे अनौकिक शक्ति-
 सम्यक् मालिख हो । २ दमन करने वाद असुरोंके पति ।
 दक (स० स्त्री०) दक एपोदरादित्वात् साधुः । जल,
 पानी ।
 दकनावणिक (स० पु०) यूपविशेष ।
 दकार (स० पु०) द स्वरूपे कारः । तवर्गका तीसरा
 पक्षर 'द' ।
 दकारादि (स० वि०) दकार आदियं स्य । जिसके आदि-
 में दकार हो ।
 दकारान्त (स० वि०) दकारोन्तो यस्य । जिसके अन्तमें
 दकार हो ।
 दंकीका (स० पु०) १ कोई बारीक घात । २ लुकि, उगय ।
 ३ लक्ष, लज्जा ।
 दकोटर (स० स्त्री०) दकं अवधकोतं-उटरं यस्य ।
 सुश्रुतोक्त सदरोगभेद, एक तरहको पीटको योमार्ग ।
 सुश्रुतमें ऐसा सिखा है, कि शरीरका समस्त दोष एवम्

मगाया। समके संशोधने ११०० वर्षोंमें अधिक राजा गया। इस समय धारित्त्यो पगल राज्यके पन्ना-भुक्त था। पीछे यह जिला साम भरदारोंमें विभक्त हुआ। १८५२-५३ ई०में अब पैगुलटिंग राज्यमें मिलाया गया। तब धारित्त्यो प्रोम प्रदेशका एक महत्त्वपूर्ण हुआ। १८०० ई०में इसे पृथक् कर एक डिपटी कमिश्नरके अधीन कर दिया गया है।

इसमें धारित्त्यो और धामन्यो नामके दो शहर तथा १२०५ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः २३८००६ है। इनमें अधिकांश लोग विद्युद मग वा मध्यमश्रेणी के हैं। इनके निवासी और कई जातियाँ यहाँ वास करती हैं, यथा—बौल, तैमूरू, तामिन, हिन्दुस्थानी, पान, करी, बहानी, बोल देसीय और अन्योन्य।

शिक्षक उपाय दृष्टीमें वायन, तैमूरुन, कई तमाकू और प्याज प्रधान हैं।

इस जिलेमें कट्या, सुपारी, हई, चायन, नमक, चय-स्थित रोग और मिछोके वरतनीकी रक्तनी और चय-स्थित हई, रोग भोज, चमड़े आदिकी धामन्यो होती है।

इस पञ्चममें विद्याकी वृद्धि उत्पत्ति है। प्रति वर्ष १६ हजार रुपयेमें अधिक इस विभागमें खर्च होता है। यहाँ चार चयवृत्त भी हैं।

२ वृत्त जिप्का एक चयविभाग। इसमें कुल तीन शहर लगते हैं।

३ उपरीष्ठ चयविभागका एक शहर। यह पन्ना १८०२ ई० और देगा ८५०१ ई०में इसको नदीके दाहिने किनारे चयस्थित है। कहते हैं, कि १६०६ ई०में पगलके गीय राजामें यह शहर स्थापित हुआ है। लोकसंख्या प्रायः १५२२३ है। यहाँ चयको मिलायाका नाम है। चयन और कई माममें यहाँ बहुत रोगों पड़ते हैं। शहरमें चयवृत्त और चयन है।

याद—विहार और पन्ना भारतको एक जाति। यादवीकी उत्पत्तिके विषयमें माना मतमें यह जाति है। इसको 'रोसल' नामक खेलोका कहना है कि वे निजीरके राजपूतोंमें उत्पन्न हुए हैं। परन्तु इसका कुछ प्रमाण नहीं मिलता।

पूर्विकाके चयनगत कुली मदीमें कुमायुँ और नैलाम-के चयनगत मारदानदो तक हिमालय निम्न-प्रदेशमें इस जातिका वन गल वास है। चयि मापीन वानमें मोरल-पुरके मानगच्छके पास वातकान् और देवगच्छ पासमें यादवीका वास था, ऐसा कहते मोरीका विभाग है।

याद लोग देवनेमें कामे तथा इनके मिरके धाम मध्ये और घने होते हैं। पालति और चामचमन प्रायः स्थानोद लोगोंके समान हो जाता है।

गोरगपुरके याद लोग दो भागोंमें विभक्त हैं—एक पुरवी और दूसरे पडमो। पडमो लोग चयिको चलो वन-कामे हैं और पूर्वियोंके साथ पाहार विहार नहीं करते। पडमियोंमें भी दो चोख हैं—बड़का और छुटका। चयोंध्याके चयनगत गोष्ठा प्रदेशके कठरिया और चंगरिया नामके यादवीमें भी दो चोखे हैं। विहारमें उत्तर चोखो यह समझो जातो है।

चित्तबनिया या नितोनिवा कहलानेवाली याद लुलाहका काम करते हैं। ये लोग गृहस्थश्रमिकों या श्राद्ध-क्रियाएँ नहीं करते और न इनकी जियाँ प्रसवके बाद चयोंच-वायन हो करती हैं। बारातमें भिक् चार पाँच यादवी जाते हैं और माना वज्राना कुछ भी नहीं होता। बाला और प्रोढ़ दोनों प्रकारके विवाह इनमें प्रचलित हैं। मङ्किका बाय मो रुपये कन्याको देता है। यह प्रथा इनमें बहुत दिनोंमें प्रचलित है। पान्नु चयवृत्ताविषयमें इसमें तारतम्य भी हो सकता है। मङ्की विवाह-प्रथा निम्नस्थानोंके हिन्दुओंके समान है। ब्राह्मण लोग पुरोहितका काम करते हैं। मर्दानिषा और चितो-नियोंके विवाहमें (विवाहमें चयने) मर चयवाली तीन दिन तक कन्या चयवालोंको पिलाते हैं। पङ्की चय-में ब्याह होनेमें चयुकी मोघ हो 'चामीके' पास चाना पड़ता है। इस समय चयु और समके साथ चयिवाले कुटुम्बियोंके स्वागतके लिए वरके घर "दुलहन भता-वन" (बहमान) नामका उल्लेख होता है। परन्तु चयु-को उल्लेख होने पर उसे पुनः छोड़ जाना पड़ता है और चयुमनी न होने तक नहीं रहना पड़ता है।

इनमें बड़-विवाह और विधवा विवाह प्रचलित हैं। विवाह चयन समानकी अनुमतिमें बूट सकता है।

दर्शभारा (हि० वि०) जिस पर देशरका कोप हो, प्रभागा, कमवधत।

दंग (फा० वि०) १ चाययोन्विन, विस्मित, चकित (पु०) २ भय, डर।

दंगई (हि० वि०) उपद्रवो, लड़ाका, भगड़ानू।

दंगान (फा० पु०) १ मजबूत, पहनवानोंको कुम्हो। २ वह स्थान जहाँ पहलवान लड़ते हैं, पगडा। ३ समूह, जमात, दल। ४ बहुत मोटा लोगक।

दंगवारा (हि० पु०) किसानोंको आपसमें दल बना देकर सहायता, जिता, हरघोत।

दंगा (फा० पु०) उपद्रव, बखेड़ा। २ शोरशुन, गुल-गवाड़ा।

दंगैत (हि० वि०) १ उपद्रवो, लड़ाका। २ बागो।

दंतिग (हि० स्त्री०) छोटे छोटे दांत।

दंद (हि० स्त्री०) १ वह गरमी जो किसी पदार्थमें निकलती है। (पु०) २ दन्त, लड़ाई भगड़ा। ३ बला गुहा, गुलगवाड़ा।

दंदाना (फा० पु०) चमरो दुई वस्तुओंको पंक्ति जो दात-के आकारका होती है।

दंदानिदार (फा० वि०) जिसमें दांतको तरह निकले हुए कंगूरोंकी पंक्ति हो।

दंदाग (हि० पु०) काला, फफोना।

दंदो (हि० वि०) उपद्रवो, भगड़ानू।

दंवरो (हि० स्त्री०) धैर्यसे रौंदवानिका काम जिससे चनाजके सूखे डंठलोंमेंसे दाने भड़ जाते हैं।

दंग (मं० पु०) दंग दंशने पदावध। कोटवियेप, डाम, बगदर। इसका पर्याय—बनमसिका, गोमसिका, परस्मसिका, भभरासिका, पांशर, दंशक, दुटसुख, क्रूर, चुद्रिका और दंशमशक है। विष्ठा, मूत्र, मृतदेह और सड़े हुए पंड़ोंमें दंग प्रगति करनेक तरहके कोड़े उत्पन्न होते हैं। इसके काटनेसे शरीरमें सूजन और पोड़ा होता है। दशतोय शरीर। २ वर्म, बकतर। दंग भाये घञ्। १ दंगन, दांत काटनेकी क्रिया। ४ दोष। ५ सर्पघत, सर्पके काटनेका घाव। ६ दन्तसन, दांत काटनेसे उत्पन्न घाव। ७ देप, वर। ८ दन्त दांत। ८ विपैसे जन्मपीका डंक। १० पायेप बचन,

कटु, क्रि, बोकार। ११ एक पसर जिसकी कथा महा-भारतमें इस प्रकार लिखी है—

सत्ययुगमें दंश नामका एक प्रयत्न पराक्रान्त पसर रहता था। यह भृगु मुनिसे व्यादा उन्मका था। एकदिन यह पसर भृगुकी स्त्रीको हरल्ले गया। इस पर भृगुने पत्न्यस्त क्रोधित हो कर उसे शाप दिया कि, 'तू मन-भूतका कोड़ा हो जा।' शापसे डर कर जब पसरने भृगुमें बार बार समा प्रार्थना की, तब उनका शरीर दयासे पिघल गया और बोले—“मेरे मंशमें जो राम कीति घड़ी तुम्हें मुक्त करेगी।” बाद यह दंश कीटपानिकी प्राय हुआ। कर्ण जब परशुरामसे अस्त्रविद्या सीख रहे थे, तब एक दिन परशुराम कर्णकी जाँघ पर अपना मिर रख कर लगे गये। ठीक उसी समय वह कोड़ा कर्णके समोप पहुँच उनकी जाँघमें काटने लगा। शुरुकी निद्रा भङ्ग होनेके डरसे कर्णने अपनी जाँघ न हटाई। कुछ समय बाद जब जाँघसे रक्तकी धारा निकल कर परशुरामके शरीर पर गिरने लगी, तब परशुरामको नोट टूटो। कर्णने सारा शान शुरुसे कह सुनाया।

परशुरामने कर्णकी मात सुन कर उस कोड़ेको घोर ताका। वह मफेद कोड़ा या घोर चमके शरीरका आकार-सुपर सा, दांत तेज घोर समूचा शरीर सूरि सरोखे रौं-से टका था। परशुरामके ताकतेहो कोड़ेने उसी शक्तके बीच अपना कोट शरीर कोड़ा और शापसे विमुक्त हो कर रामसे प्रार्थना की। बाद वह अपने स्थानको चला गया। (भारत वाग्निप० ३७०)

दंशक (मं० पु०) दशतीति दन्शन्त्युन्। १ दंश-डाम नामकी मसखो। २ नृपभेद, एक राजाका नाम। ये काम्पन देशके अधिपति थे। (त्रि०) १ दंशकसाँ, काटनेवाला; जो दांतसे काट लाय।

दंशन (मं० पु०) १ दांतसे काटना, छसना। २ घर्म, कवच।

दंशनाग्नि (मं० स्त्री०) दंश नाशयति नाग्नि-पिनि-हंप। तेजकीटभेद, एक प्रकारका तेजका कीड़ा।

दंशभोर (मं० पु०) दंशात् यन्मसि कातः भोरः। मक्षिप, भैंसा।

दंशमूल (मं० पु०) दंशयदुपं मूलमस्य। पिपुत्तप, सज्जनका पेड़।

दंशवदन (सं० पु०) कहूँ पची, मदिद चोस, काँस ।
 दंशिका (सं० स्त्री०) वनमलिका, डीस ।
 दंशित (सं० वि०) दंशो वमं सञ्जातोऽस्य परिचित-
 त्वादिति । दंश तारकादित्वात् इत्यच् । १ वमित, कवच
 आदिसे टका हुआ । दंशते दन्त गिच् भावे क् ।
 दट, दाँतसे काटा हुआ ।
 दंशो (सं० स्त्री०) सुदो दंशः सव्यायं डीप, वा दग्-
 तोति दंश-भच् गोरा-डीप । १ सुद दंश, छोटा डीस ।
 २ कुकुर, कुत्ता । (वि०) जो दाँतसे काटता हो, डबने
 वाला । ४ काटती कहनेवाला, भाषे वचन कहने
 वाला । ५ डोपी, बैर रखनेवाला ।
 दंशुक (सं० वि०) दन्त वाहुलकात् लक । दंशन-
 शील, डसने योग्य ।
 दंशीर (सं० वि०) दंश वाहुं एरक् । मपकारक, बुराई
 करनेवाला ।
 दंष्ट्र (सं० पु०) १ दन्त-त्र । २ दन्त, दाँत, ३ शूकर, सुपर ।
 दंष्ट्रा (सं० स्त्री०) दग्धतेऽनया दन्त करणे इत्, (दाम्नीशेति । वा ३।५।२२) वा 'मवधातुभ्य इत्' इति
 इत् । १ खून दन्तमें द, बड़े बड़े दाँत, दाढ़, चोमर ।
 २ दृष्टिकालो, विदुषा नामका पौधा । इसमें 'रोई' दाँत
 फल लगते हैं ।
 दंष्ट्रानखविप (सं० पु०) दंष्ट्रायां नखे च विपं यस्य ।
 मांशरादि, बड़ जन्तु जिसके नख चोर दाँतमें विप हो ।
 बिहो, कुत्ता, बन्दर, मकर, मेंढक, मध्याक (कोड़ा),
 द्विपक्षो, मोड़, बाँध चोर चार पैर वाले कोड़े दंष्ट्रा-
 नख, विप । उनकी दाँत, नख, मृत, बिडा, बीर्य, नाग,
 रज, सुँड़ आदिमें विप रहता है ।
 दंष्ट्रायुध (सं० पु०) दंष्ट्रा पायुध इव यस्य । बराह,
 सुपर ।
 दंष्ट्राल (सं० वि०) दंष्ट्रा अस्ति घृष्टादित्वात् ल । १
 दंष्ट्रायुध, बड़े बड़े दाँतवाला । (पु०) २ राक्षस-
 विषय, एक राक्षसका नाम ।
 दंष्ट्राविप (सं० पु०) दंष्ट्रायां विपमस्य । भीम सर्प, यह
 नाग जिसके दाँतोंमें विप रहता है ।
 दंष्ट्रास्त्र (सं० पु० स्त्री०) दंष्ट्रास्त्रमिवाय । बराह,
 सुपर ।

दंष्ट्रिका (सं० स्त्री०) दंष्ट्रो विद्यतेऽस्याः, दंष्ट्रा, ठन् ।
 १ दंष्ट्रा, दाढ़, चोमर । (वि०) २ दंष्ट्रायुध, जिसके
 दाढ़ हैं ।
 दंष्ट्रो (सं० पु० स्तो०) प्रगता दंष्ट्रा चमोस्य इति इति ।
 १ शूकर, सुपर । २ सर्प, बाँध । (वि०) ३ दंष्ट्रायुध, बड़े
 बड़े दाँतवाला ।
 दंसना (सं० स्त्री०) दंस, घुरादित्वात् गिच्, ततोभावे
 मुच् । कर्म, काम ।
 दंसनावत् (सं० वि०) दंसना विद्यतेऽस्य मनुष्य, नतो
 मस्य सः । १ कर्मयुक्त । २ श्लोकीक शक्तिमान, जिसे
 खूब ताकत हो ।
 दंसस् (सं० स्त्री०) दंसस्-पसुन् । कर्म, काम ।
 दंसि (सं० पु०) दन्त-इन् । कर्म, काम ।
 दंसिष्ठ (सं० वि०) दन्त लृष्ण दंसयिता पतिगयेन,
 सः इहन् लृणो लुकि भिलोपः । १ पत्यन्त कर्मकर्त्ता,
 जो खूब काम करता हो । २ दग नीयतम, देखने
 योग्य । ३ पत्यन्त शब्द हिंसक ।
 दंसु (सं० स्त्री०) श्लोकीक शक्ति, पद्म त ताकत ।
 दंसुजत (सं० वि०) दन्त चण्डाहारा सुष्टुमोरित, जो
 खूब तेज घोड़े से भेजा गया हो ।
 दंसुपक्षी (सं० स्त्री०) १ यह जिन श्लोकीक शक्ति-
 सम्पन्न मानिक हो । २ दमन करने बाद पसुरोंके पति ।
 दक (सं० स्त्री०) उदक श्रवोदरादित्वात् साधुः । नन,
 पानो ।
 दकलावणिक (सं० पु०) यूपविषय ।
 दकार (सं० पु०) द स्वरूपे कारः । तयर्नका तोमरा
 पक्षर 'द' ।
 दकारादि (सं० वि०) दकार आदियं स्या । जिसके आदि-
 में दकार हो ।
 दकारान्त (सं० वि०) दकारोऽन्तो यस्य । जिसके अन्तमें
 दकार हो ।
 दकीका (सं० पु०) १ कोई भारोक्त वात । २ शक्ति, उपाय ।
 ३ बाण, सहजा ।
 दकोदर (सं० स्त्री०) दकं जलस्फोटं उदरं यस्य ।
 सुन्तुलित उदररोगभेद, एक तरहको पेटको बोमारी ।
 सुन्तुलने ऐसा निम्बा है, कि शरीरस्य अमन्य दीप इत्यक्

दक्षिणाज्योतिस् (स० पु०) दक्षिणा दक्षिणस्यां ज्योति-
रस्य । पञ्चोदन क्षागभेद ।

दक्षिणात् (सं० प्रथ०) दक्षिणस्यां दिशि, दक्षिणस्या दिग्
दक्षिणा वा दिक्, दक्षिणा-भाति (उत्तराष्वरदक्षिणाभातिः ।
भा ५।२।१४) १ दक्षिण दिक्, दक्षिणकी ओर । २
दक्षिणमें । ३ दक्षिणसे ।

दक्षिणान्तिका (सं० प्रथ०) वैतालीय क्षन्द् । यह मात्रावृत्त
है । वैतालीय मात्रावृत्तके पहलें और तीसरे चरणमें
१४ मात्राएं और दूसरे तथा चौथे चरणमें १६ मात्राएं
रहती हैं ; किन्तु इसमें प्रमेद यह है ; कि यदि दूसरी
ओर तीसरी मात्रामें एक गुरु हो, तो यह दक्षिणान्तिका
मात्रावृत्त होगी और दूसरी दूसरी मात्रा वैतालीय हो
जाती है ।

दक्षिणापथ (सं० पु०) दक्षिणा पन्थाः पथ, समाप्तान्ताः ।
। देशभेद, एक देशका नाम । पथान्तो और प्रथ पवत
पार कर दक्षिण पथमें कई एक राहें गई हैं जो विन्ध्य
पर्वत और समुद्रगामिनी पयोथी नदी हैं । यहां मह-
विंशिके आश्रम और विदर्भके पथ हैं जो कोशलको और
चले गये हैं । इसके बाद दक्षिण दिशामें जो देश पड़ता
है, उसको नाम दक्षिणापथ है । (भारत १।६ अ०)
दक्षिणाल देहो । २ दक्षिणस्थितमार्गमात्र, वह रास्ता
जो दक्षिणकी ओर गया हो ।

दक्षिणापथिक (सं० त्रि०) दक्षिणापथोऽन्तःपथ इवाभिचिन
आवासत्वेन वा ठन् । दक्षिणापथदेशवासो, दक्षिणापथ
देशके राजा, दक्षिण देशके सम्बन्धी ।

दक्षिणापरा (सं० स्त्री०) दक्षिणाया अपराया दिगोऽन्त-
राक्ता दिक् । १ नैऋतकोण । (त्रि०) २ तत्-
संस्थित, जो नैऋत कोणमें पड़ता हो ।

दक्षिणापथ्य (सं० त्रि०) दक्षिणा दक्षिणस्यां प्रथमं
निम्न । उत्तरकी अपेक्षा दक्षिणकी ओर नीचा स्थान,
आदिदि प्रदेग । यह स्थान आदिदि के लिए प्रयुक्त
होता है ।

"दक्षिणं दिशि कंय गोपयेनोपदेवयेत् ।
दक्षिणा प्रथमं येन प्रयेनोरसादेव ॥" (मनु० १।२०६)
आह्वार्यके लिए पश्चिम वा आह्वारदिगुण शक्ति ओर
निर्जन प्रदेग निश्चित कर, उसे गोबरसे क्षीयना चाहिए ।

वह स्थान यदि स्वभावतः दक्षिणकी ओर प्रमगः नोचा न
हो, तो प्रयत्न करके उसे दक्षिणावनत करना चाहिए
"दक्षिणाप्रथमं" (कात्यायनश्रौ० २।२।१६) "दक्षिणाप्रथमं
देवयजनं भवति ।" (ऋक्)

दक्षिणाप्रति (सं० पु०) धुर्यपेक्षया मल्लटं देगमश्रीति
प्र-भग-क्षिब्ध दक्षिणा दक्षिणभागे, प्रतिः बाह्यः । १ धुर्यके
मध्य दक्षिणस्थित चक्रभेद, वह छोड़ा जो तीन छोड़ों-
के रथको गाड़नें पानी जाता जाता है । २ दक्षिणस्थित
प्रति सदृश चक्र ।

दक्षिणावन्ध (सं० पु०) दक्षिणायां वन्धः पनुवन्धः ।
गृहस्थ आदि के दक्षिणावन्धका एकभेद । जो भूमिमान
पूर्वक दक्षिणा देते हैं और काम मोह आदिसे भूमिभूत
हैं, ऐसे गृहस्थ, ब्रह्मचारी, भिक्षु और वैष्णवोंके लिए
हो दक्षिणवन्ध कहा गया है । "दक्षिणावधो नाम गृहस्थ-
ब्रह्मचारिभिक्षुदेवानां चर्मभेदोपवेतनं भूमिमानपूर्वकं
दक्षिणं प्रवेष्टव्यं दक्षिणावन्धं शत्रुवन्धे ।" (तन्त्रसार) वहा-
वस्थामें घर्षात् जिनका भूमिमान दूर नहीं हुआ है,
उनके लिए वहावस्था समभक्षना चाहिए ।

दक्षिणामुख (सं० त्रि०) १ दक्षिणा दक्षिणस्यां मुखं यस्य ।
दक्षिणादिमुख, दक्षिणास्य, जिसका मुख दक्षिणकी ओर
हो । पूर्वकी ओर मुंह करके भोजन करनेसे वायुशरी
हृदि और दक्षिणमुख बैठ कर भोजन करनेसे यक्री
प्राप्ति होती है । (मनु०)

परन्तु जिनके पिता जीवित हैं, उनके लिए यह विधि
नहीं है । वे यदि दक्षिणमुख बैठ कर भोजन करें, तो
उन्हें विष्टघातो समझना चाहिये । जीवितपितृकीको
समायाह, गयायाह, ओर दक्षिणमुख भोजन न करना
चाहिये । (शिवतर) दक्षिणकी तरफ मुंह करके
पितरोंका संवर्ष करना चाहिए । (कौ०) २ दक्षिणकी
ओर मुख ।

दक्षिणामूर्ति (सं० पु०) दक्षिणा पनुकूला मूर्तिरस्य
मन्त्रात्वात् न पुन्यत् । शिव-मूर्तिभेद, तन्त्रके अनुसार
शिवकी एक मूर्ति । साधकयज्ञको प्रति दिन शिवकी
दक्षिणामूर्तिका ध्यान करना चाहिये । इस मूर्तिका
एक वर्ष तक ध्यान करनेसे माधवाध्यायनकी गति
प्राप्त होती है । (तन्त्रसार)

रूपमें प्रयया मिल कर झोछोटर, बड़गुट, पागन्तुक और टकोदर घाटि रोग उत्पन्न करते हैं।

टकोदरके लक्षण—छे हपान द्वारा अनुवासित होने या घमन वा विरचन कराने प्रयया निकट यन्त्रिका प्रयोग करनेके बाद यदि शोथन लज पान किया जाय, तो जनधाहिनी नाड़ियोंके दूधित होने वा पहलकी मरफ अठरको पंतड़ियां खी होपलिस हो जातो हैं और उसमें टकोदर हो जाता है। इस रोगमें नाभिमण्डल स्थित किन्तु हस्तिकाओंमें शोथ ही उत्पन्न और जनसे भरा हुआ था हो जाता है। चर्मखण्ड जलपूर्ण होने पर जैसे जुब, कम्पित और गन्धित होता है, टकोदरमें भी वैसा हो जाता है।

इस रोगमें आभान, गमनको अगति, दोबंल्य, गाफ, अर्द्धीको अवसन्नता, वायु और मल रुक जाता है। (अनुत्) विशेष विवरणके लिये उद्धर शब्द देखो।

दक्खिन (हिं० पु०) दक्षिण देखो।

दक्खिनो (हिं० वि०) जो दक्षिण दिशामें हो, दक्खिनः।

दक्षिणी देखो।

दत्त (सं० पु०) दत्त कर्त्तरि यच् । १ तावत्तुष्ट, मुखा ।

२ पवि कपि । ३ शिववृषभ, महादेवका बैल । ४ हृत्त-भेद, एक तरहका पेड़ । ५ दत्त संहिताके कर्त्ता कोई सुनि । मनु, पवि आदिने जो धर्मशास्त्र रचे हैं, दत्त-संहिता सर्वोत्तममें एक है । ६ महेश्वर । ७ उग्रोन्नरके पुत्र नृपभेद, एक राजा जो उग्रोन्नरके पुत्र थे।

(भागवत ८.१४।, ८ विष्णु । ८ वल । (निघंटू०)

(क्रो०) १० बौर्य । (अपल अनु० १४।३)

(वि०) ११ चतुर, कुशल, निपुण, जिसमें किसी काम-का भ्रष्टपट और सुगमतासे करनेको शक्ति हो, होमि-यार । १२ दक्षिण भाग, दाहना।

(पु०) १३ एक प्रजापति, जिनसे देवताओंको उत्पत्ति हुई। (पुण)

श्रुतिदेके बहुतसे मन्त्रोंमें प्रजापति दत्तकी स्तुति की गई है। किसी किसी मन्त्रमें सनकी ज्योतिष्कांका पिता वतनाया है। जैसे—“हे शोभनदोमिशाओ सूर्य! दत्त जिनके पित्रपुत्र हैं, तुण शोभन-ज्योतिष्क देवोंसे हमारे अनपराधकी क्षमा करना।” (ऋ० ६।५.०२)

दत्त ऋषिदेके पिता है। ऋषिदेके ज्योतिष्क और

देवोंकी उत्पत्ति हुई है, इमोनिसे दत्तकी देवताओंका पित्रपुत्र माना गया है। ऋक्संहिताके अन्त्य मन्त्रों- (१०।०२ सु०) में लिखा है—“देवोंके उत्पत्त होनेमें पहली ब्रह्मज्योति कर्मकारकी तरह कार्य करते थे। अमर्त्यमें मनु उत्पन्न हुआ। देवोंकी उत्पत्तिके प्रथमकालमें (इस प्रकार) अमर्त्यमें मनुको उत्पत्ति हुई। बादमें उत्तानपदसे दिक्-हुषा। उत्तानपदमें ‘भू’ और ‘भू’ में टिकी उत्पत्ति हुई। अदितिसे दत्त उत्पन्न हुए, फिर दत्तमें अदिति। हे दत्त! जिनमें अदितिसे रूपमें जन्म ग्रहण किया है, वे तुम्हारी कन्या हैं, पोलि सन्धिमि भद्र और पविनागो देवोंको उत्पत्ति हुई।”

अदितिसे दत्त, फिर दत्तमें अदिति उत्पत्ति की हुई, इस बातका तात्पर्य क्या? इस विषयमें यास्कने निरुक्तमें लिखा है—“दत्त आत्मा (पर्यात् अदितिके पुत्र) हैं और आदितिके पुत्र होनेके कारण वे सत्य हैं। अदिति दाया-यणो पर्यात् दत्तकी कन्या हैं। (श्रुतिमें लिखा है, हि) ‘अदितिसे दत्त और दत्तमें अदिति उत्पन्न हुए हैं’ यह कैसा अश्वय हो सकता है? या तो दोनोंका एक साथ जन्म हुआ होगा अथवा देव धर्मके अनुसार दोनों को एक दूसरेमें उत्पन्न और प्रकृति-प्राप्त हुए।

जन्म विहाय रोयका मत है कि यहाँ दत्त Spirit-ual force है और अदिति Eternity।

अतपप्रजापतिमें लिखा है—“केवल प्रजापति ही सबसे पहलें हुए थे। प्रजापतिने प्रजाकामा हो कर पहली यज्ञ किया था कि सुमि बहुत सन्तान प्राप्त हो, जो प्राप्त हो, यगलो होज, और अन्न मिले। सर्वोत्तम नाम दत्त है।” (ऋ० १०।११)।

पुराणोंमें जिस तरह विष्णुको यज्ञका पालक वत-लाया है, उसी तरह दत्तकी भी माना है। जैसे—“प्रजापति हैं मरतः स हीदं सर्वं विगतिः।” (अथर्व १।८।१।२५) अर्थात् प्रजापति हो भरण है, क्योंकि वे सम्पूर्ण जगत्का भरणपोषण करते हैं।

हरिवंशमें दत्तकी विष्णुका हो प्रकट माना है—

“श्रुतिदेकेन्द्रिये विष्णुदे गारवा महाधम्मरः।

दत्तः प्रजापति भूत्वा सज्जते विष्णुः प्रजाः ॥”

(हरिवंश २।११ अ०)

० विष्णुपुत्राणके मतसे भी अदिति दत्तकी कन्या है (आ० १४।१५)

इमका ध्यान इस प्रकार है—

“सिद्धयल्लभसहस्रसुखं यत्तु मे सोमायनस्य भव” ।

प्रसन्नमनसुभुवुभिः प्रसिद्धिं सोद्वैरयवाननं व

सुखं सर्वस्यैव दयानमसकं कर्तुमीर शिव” ।

इत्यनः कनये सुखानामनितं धीदक्षिणामूर्ति” ॥

ये महाद्युते तने योगामनसे अवस्थित हैं, अध्यात्म-
तत्त्वके ज्ञासाधुयय चारों तरफसे उनका सुख निहारते
हैं, ये तर्कसुद्धा धारण क्रिये दृढ़ हैं, उनका सर्व कर्तृ-
त्व शुभ है, वे सर्वदा देतोप्यमान हैं। ऐसे दक्षिणा-
मुनि महादेवका सर्वदा ध्यान करना चाहिए। (तत्र-
गार, समासमें ‘कप, होना है, उस अवस्थामें ‘दक्षिण-
मुनि’क ऐसा रूप हो जाता है।

दक्षिणामूर्तिमुनि—उत्तरकोय वा कोपधाननिर्दय
नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रवेत्ता।

दक्षिणायन (ध० श्लो०) दक्षिणा दक्षिणस्था दक्षिणे गोत्रे
वा पयनं रवेः। १ सूर्यको दक्षिण गति, सूर्यको
ऊपरदेखते दक्षिण भ्रमर रेखाकी ओर गति। २ सूर्यका
दक्षिण गोमरूप तुम्हादि इहो रागिमें जाना।

सूर्य गगनमण्डलमें प्रतिघण्टा पादाङ्गुलमात्रके घन्तमें
उत्तरकी ओर जहाँ तक गमन करते हैं, वहाँ तकका
नाम उत्तरमंज्जान्ति और क्रान्ति तथा उत्तर क्रान्तिये
ने कर जहाँ तक दक्षिणकी ओर गमन करते हैं, इसका
नाम दक्षिणक्रान्ति है। इन दो प्रकारकी गतियोंको
दक्षिणायन और उत्तरायन कहते हैं। चर्यात् सूर्य जब
श्रावणमें पौषमास तक सप्तरी रेखासे दक्षिणी रेखाकी
जाते हैं, तब उसे दक्षिणायन और ज्येष्ठमास मानसे
पाषाण तक दक्षिणी रेखासे उत्तरीरेखाकी जाते हैं,
तब उसे उत्तरायन कहते हैं। इन दो मोमार्थोंके बीच
पूर्वोक्ता जो पंगु पड़ता है, उसका नाम मध्यखण्ड है।
इस खण्डमें १२ रागि हैं और इन आर्योंके पक्षार्गत
१०१६ मण्डल देखनेमें आते हैं। गगन-मण्डलके मध्य-
खण्डमें उत्तर जो पंगु है, उसे उत्तरखण्ड कहते हैं।
इस खण्डमें ३५ रागि चर्यात् शुभ हैं और उनमें भी
पक्षार्गत १४५६ मण्डल हैं। यह इस मोर्गे हो युरोपीय
क्योतिर्विंदी द्वारा पता लगा है। मध्य खण्डमें जितने
पक्षम पड़ते हैं, उनमेंसे कितनीकी एक एक कर

प्राप्ति निर्दिष्ट है पूर्वपक्षमें क्योतिर्विंदीने एक
बार भागोंमें रागिपक्ष नामसे मोमायन किया है।
इन बार रागियोंके नाम ये हैं—मेष, मृग, मिथुन,
कर्कट, सिंह, कन्या, तुला, विहा, धनु, मकर, कुम्भ और
मीन।

मेष रागिके प्रथमांशमें दो क्रान्तिगत होता है।
जिन दो दिनोंमें सूर्य उस रेखामें रहते हैं, उन दिनोंमें
दिवा और रात्रिमान बराबर होता है।

विषुवरेखाके उत्तरकी ओर ६ रागि चर्यात् मेष, मृग,
मिथुन, कर्कट, सिंह, कन्या और फिर दक्षिणकी ओर ६
रागि चर्यात् तुला, विहा, धनु, मकर, कुम्भ और मीन
हियेक मासमें अवस्थित है।

पृथ्वी पयने जल पर घूमते घूमते येशाल मासमें जब
मीन और मेषरागिके बीच पहुँच जाती है चर्यात् त्रिम
पंगुमें रागिपक्षके साथ विषुव रेखामें मिलती है, तब उस
पंगुके माद सूर्यका सममुखता होता है और मीन तथा
मेष रागि ओर सूर्यके सामने रहते हैं। इस समय
पृथ्वीके निरक्षरपक्षके ऊपर सूर्यरश्मि ठोक सीधे पड़ती
है। इनो कारण पृथ्वी पर सब जगह उस दिन दिवा और
रात्रिमान बराबर रहता है। चर्यात् जब सूर्य विषुव-
रेखा पर रहते हैं, तब उनकी क्रान्ति शून्य होती है और
एक महीने दूसरे मही तकका गोमकाई प्रकाशमय रहता
है। सूर्यको उत्तरक्रान्ति जितनी हो बढ़ती है, उतना
ही उत्तरमेघ पार कर सूर्यका प्रकाश फैल जाता
तथा दक्षिणमेघ प्रकाशहीन हो जाता है और सूर्यकी
दक्षिणक्रान्ति जितनी बढ़ती है, उतना ही दक्षिणमेघ
पार कर सूर्यका प्रकाश फैलता तथा उत्तरमेघ प्रकाश-
हीन हो जाता है। सूर्यकी क्रान्तिका परिमाण २३°-
२८° है। ये गगनमासमें सूर्य मेषरागिमें प्रवेश कर रोज
एक पंगुमें कुछ कम हो कर ज्येष्ठमासमें उत्तररागिमें
पहुँच जाते हैं। मेषरागिमें कुछ पक्षिम भी कुछ
उत्तरमें उत्तररागि अवस्थित है। सूर्य रोज एक पंगुमें
कम हो पालसे जा कर पाषाण मासमें मिथुन रागिमें प्रवेश
करते हैं। मिथुनरागिके उत्तररागिके ऊपर उत्तर पक्षिममें
अवस्थित है। सूर्य मिथुन रागि पार कर श्रावणमासमें
कर्कट रागिमें जाते हैं। त्रिम पक्षम पर रागिपक्षके

रामायण, महाभारत तथा पुराण-ग्रन्थोंमें दर्शयज्ञका जैसा प्रमद है, वेदमें उसका कुछ उल्लेख न रहने पर भी तैत्तिरीयसंहिताके २५ काण्डके ६४ प्रपाठकके रुद्रके प्रभाव प्रस्तावमें उसका कुछ आभास पाया जाता है।

महाभारत और पुराणादिके मतमें—ब्रह्माके दक्षिणा-श्रुष्टसे दक्षका जन्म है।

इससे पहले मानसको सृष्टि होती थी। दक्ष प्रजापति नै जन्म देता कि मानस-सृष्टिके द्वारा प्रजाओं का उद्भि नहीं होती, तब उन्होंने पहले पहल मैथुन-द्वारा प्रजाको सृष्टि की। तभीसे मनुष्य, पशु और पक्षी आदिकी मैथुन-द्वारा सृष्टि होने लगी है।

दक्षोत्पत्तिके विषयमें गरुड-पुराणमें इस प्रकार लिखा है—विधांताने प्रजा-सृष्टिकी अभिलाषामें पहले धर्म, रुद्र, मनु, सनक, शत्रु आदि प्रजाकर्त्ता मानसपुत्रोंकी सृष्टि की, पोछे उनके दक्षिणाश्रुष्ट-द्वारा दक्षको तथा वामाश्रुष्टसे दक्षपत्नीको उत्पत्ति हुई। दक्षने उन पत्नीसे बहुतसी कन्यायें उत्पन्न कीं और ब्रह्माके मानसपुत्रोंकी सौंप दीं। रुद्रने भी मतो नामकी कन्या प्राप्त हुई। क्रमसे रुद्रके भक्त्यर्थ महाबल पुत्र उत्पन्न हुए। किसी समय दक्ष इयमेध यज्ञ कर रहे थे, वहाँ सती भी बनाश्रुता होकर आईं और दक्ष-द्वारा अपमानित हो कर उन्होंने प्राण तन दिये। इस पर महादेव क्रुद्ध होकर यज्ञ ध्वंस कर दिशा और दक्षकी अभिलाषा दिया कि “तुम भूवर्गके वर्गमें उत्पन्न हो कर मनुष्यत्वको प्राप्त होवो।” बादमें भूवर्ग-शोषण प्रवृत्ताधिके जड़ों तपस्या द्वारा प्रजापतित्वको प्राप्त होने पर, सारिषाके गर्भमें दक्ष उत्पन्न हुए। अनन्तर दक्षने चतुर्विध मानस प्रजाको सृष्टि की। जब यह मानस-सृष्टि प्रजा भी उद्भि की प्राप्त न हुई, तब मैथुन द्वारा प्रजाकी सृष्टि करनेके लिए उन्होंने औरण प्रजापतिकी कन्या अभिलाषाके साथ विवाह कर लिया और उससे उन्होंने हजार पुत्र उत्पन्न किए। इन पुत्रोंमें भी प्रजाकी उद्भि न हुई। इससे बाद पश्चिमा-के ६० कन्यायें उत्पन्न हुईं जिनमेंसे दो पश्चिमाकी, दो क्रमात्मकी, दश धर्मकी, तीरह कश्यपकी और सत्ता-ईस चन्द्रकी प्रदान की गईं। धीरे धीरे इनके द्वारा धराधर जगत्को सृष्टि हुई और तभीसे मैथुन-द्वारा

सृष्टि क्रियाका प्रवृत्त न हुआ। (गरुड० ५१६ अ०)

कालिकापुराणमें लिखा है,—इस जगत्को आदि-सृष्टिके समय ब्रह्माने पर्वगरोरमें पुरुष, और पर्वगरोरमें स्त्री हो कर, उसी स्त्रीके गर्भमें विराट पुरुषकी उत्पत्ति किया और उससे कहा, “तुम प्रजापतिकी सृष्टि करो।” अनन्तर विराट-पुरुषने तपस्या करके स्वायम्भुव मनुको सृष्टि की। स्वायम्भुव मनुने तपस्याके प्रभावसे ब्रह्माकी परितुष्ट किया। ब्रह्माने मनुष्ट हो कर सृष्टिके लिए दक्षको उत्पन्न किया। “उत्पन्न होनेके माघ हो दक्षने मनु और विधिकी दश बार प्रणाम किया। इस पर ब्रह्माने और भी दश प्रजापतिकी सृष्टि की। दक्षने बहुततर प्रधान प्रधान देवर्षि, महर्षि चार मोमय आदि पितृ-गणोंको उत्पन्न कर सृष्टि प्रवर्तित की। यही दक्षका प्रतिमर्ग है। (शं० १८ अ०)

दक्ष प्रजापतिने योगमायाको लक्ष्य करके कठोर तपस्या की थी। योगमाया मनुष्ट हो कर प्रत्यक्षगोचर हुई और दक्षसे कहा—“तुम्हारे स्तनमें मैं मनुष्ट हुई हूँ, तुम अभिलषित वर मांगो।” दक्षने कहा—“यदि वर देती है, तो यह दोनिये कि पाप में से कन्या हो कर महादेवकी पत्नी होवें। महामाये! यह वर केवल मेरा हो नहीं है वरन् ब्रह्मा, विष्णु और महाेश्वरका भी भ्रममें।” महामाया उत्तरमें “तथास्तु” कह कर बोली कि “मैं शोच रही तुम्हारी पत्नीके गर्भमें तुम्हारी कन्यारूपमें अवतीर्ण हो कर शङ्करकी सङ्घर्षिणी होजंगी। किन्तु जिन समय मेरा तुम बनाद करोगे, मैं लम्बे समय देह त्याग दूंगी। मैं प्रत्येक सृष्टिमें तुम्हारी कन्या हो कर महादेवकी पत्नी होजंगी।” इतना कह कर महामाया अन्तर्हित हो गईं। अनन्तर दक्ष स्त्री-मनुके बिना ही महत्त्व, अभिसन्धि, मानस और चित्ताकी महायतासे प्रजा उत्पादन करने लगे। ये सब पुत्र नारदके उपदेशानुसार धृतिवैषयक करने लगे। इससे भी जब प्रजाकी उद्भि न हुई, तब आपने मैथुन-धर्ममें वीरणतनया पश्चिमाके साथ विवाह किया। ‘इमं कं गर्भं से स्तान्ता होवें’, पहले ऐसी अभिसन्धि करनेके माय हो उसके गर्भमें महामायाने जन्म लिया। ये सतीके नामसे प्रसिद्ध हुईं। देवीके प्रत्यक्ष महादेवके साथ

माघ उत्तरक्रान्तिको रेखा मिली है, यह स्थान उस दिन ठोक मूर्यके सामने रहता है। इससे बाद मूर्य उत्तरको घोर नहीं जाते। इसीसे उस समयको अयना-नाकाल कहते हैं। मूर्य इस राशिसे २०° पार कर भाद्रमासको सिंह राशिमें गमन करते हैं। यह सिंह राशि कर्कट राशिसे दक्षिण-पश्चिम भागमें अवस्थित है। पीछे मूर्य आश्विन मासको कन्याराशिमें जाते हैं। मेष-राशिमें विपुवरैखाने साथ चक्रका जैसा संयोग है, वैसा जो संयोग तुलाराशिमें समझना चाहिये। मेषराशि तुला राशिसे १८०° दूर है। इसी कारण मेषादि ६ राशियाँ राशिचक्रका पदे भाग घोर तुलादि ६ राशियाँ उप चक्रका अपराधें पंग है। मूर्य कार्तिक मासमें तुलाराशिमें, पषाढायन मासमें वृषिक राशिमें घोर पोष मासमें धनु-राशिमें प्रवेश करते हैं। जिस पंगमें राशिचक्रके साथ दक्षिणक्रान्तिको रेखा मिलती है, वह पंग उस दिशाके ठोक मूर्यके सामने पड़ता है। फिर इस स्थानसे मूर्य दक्षिणकी घोर नहीं जाते। इसीसे यह समय दक्षिण-यनाशकाल कहलाता है। इस राशिसे बाद कुभराशि घोर तब मोन राशि पड़ती है जिसमें मूर्य क्रमशः फाल्गुन घोर चैत्र मासमें प्रवेश करते हैं।

इस प्रकार पृथ्वी फिरसे वैशाख)मासमें मोन घोर मेषराशिसे मध्यरात्रिमें जा पहुँचती है। विपुवरैखाने साथ राशिचक्रका जो पंग मिलता है, उस पंगके मूर्य-मण्डलके सामने जाने पर दिवा घोर रात्रिमान सदा एक सा रहता है। यद्यार्थमें मूर्य ही एक राशिसे दूसरी राशिमें पूर्वाह्न रूपसे भ्रमण करते हैं, ऐसा नहीं, सचन पदार्थमें अवस्थित हो कर पचन पदार्थको घोर दृष्टिपात करनेसे उस पदार्थका गतिभ्रम होता है। इसी भ्रमके कारण ऐसा दोष पड़ता है। इसका फल यह निकलता है, कि पृथ्वी चरितोक्त क्रमसे एक राशिसे दूसरी राशिमें जा कर उत्तरायण घोर दक्षिणायनके अनुसार बारह राशियोंका भोग करता हुई एक वर्षमें सूर्यको एक बार परिक्रमा करता है। सूर्य, पृथ्वी और अथन देवो। दक्षिणायनमें मुख्य कर्म तथा प्रतिष्ठा पादि करना निषेध है।

मनमात्रतत्त्वमें निष्ठा है, कि दक्षिणायनमें विवाह,

व्रत, चहुादि संस्कार, दोषा, यज्ञ, श्रद्धाप्रवेश, दान पूजा, प्रतिष्ठादि नहीं करने चाहिये। यदि पीछे मोह-यज्ञ कर भो जे, तो उसे फल नहीं होता।

फिर स्मृतिमें भी निष्ठा है कि देवता, यागो घोर पारामादिको प्रतिष्ठा उत्तरायणमें करने चाहिये। दक्षिणायनमें नहीं करनेसे फल प्राप्त नहीं होता, किन्तु दक्षिणायनमें माघ, भैरव, वराह, नरसिंह, द्विविक्रम घोर मङ्गिपासुरहन्त्रीको प्रतिष्ठा को जा सकती है।

(कालमा० वैश्व-म०)

दक्षिणायन देवताओंकी रात्रि है इसीसे दुर्गा-स्तवके समय मन्त्रा कालमें देवीका उद्घोषन करना होता है। १ दक्षिणायनभिमानो देवताभेद। ४ दक्षिणभाग-स्थित प्राण।

दक्षिणारण्य (म० को०) दक्षिणार्ण्य परण्य। अरण्य-भेद, एक जंगलका नाम।

दक्षिणारुहम् (म० पु०) दक्षिण दक्षिणभागे चक्रवर्ण-यस्य। व्याधि कर्त्तृक दक्षिणारुह प्रसिद्ध मृग, वह शृगा जिसके दाहिने अङ्गमें व्याधिके मार मारनेमें घाय हो गया हो।

दक्षिणार्ह (म० पु०) दक्षिण। अर्हति दक्षिणार्हत् (भर्त्)। या १२।१२) दक्षिणार्हार्ण्य, वह जो दक्षिणके उग्रयुक्त हो। इसका पर्याय--दक्षिणीय घोर दक्षिण है।

दक्षिणायत् (म० वि०) दक्षिण अर्हत्ते मगुप, मस्य सः। दक्षिणायुक्त।

दक्षिणावर्त्त (म० वि०) दक्षिण आवर्त्तते आ-वृत्त पक्ष।

१ दक्षिणते आवर्त्तयुक्त जो दाहिनी पार घुमा हुआ हो। २ दक्षिणदिक् स्थित, जो दक्षिणकी घोर पक्षस्थित हो। (पु०) २ गृह विमेष, एक प्रकारका गृह जिसका सुमाव दाहिनी पोरका होता है।

दक्षिणावर्त्तकी (म० को०) हयिकानी नामका पोषा। दक्षिणावर्त्तवती (म० को०) दक्षिण आवर्त्तते आ-वृत्त मृग, गोरादित्वात् डोप, हयिकानी नामका पोषा।

दक्षिणावर्त्ता (म० को०) मेषयज्ञ, भेड़के माँग।

दक्षिणावह, म० पु०) दक्षिण दक्षिणदिक् तो यहति वह-पक्ष। दक्षिणाजिन, दक्षिणसे जानेवाली हवा।

दक्षिणाहत् (म० वि०) दक्षिण आवर्त्तते हत कि०। दक्षिणावर्त्त।

मतीका वियाह हो गया। प्रजापति दक्षमें एक मद्या-
यज्ञका अनुष्ठान करना शुद्ध कर दिया। इस यज्ञमें
पत्नी दशर ऋत्विक् होलकार्यमें स्थापित थे,
चौंसठ भुजार देवर्षि पशुनात थे, नारद आदि बहुत
ऋषि धन्युं घोर होता थे। समस्त देवताओं में साय
विष्णु इस यज्ञके अधिष्ठाता घोर स्वयं मद्या इसमें
देवविधि-प्रदर्शक थे। इस यज्ञमें समस्त दिकपालगण
हारपाल घोर रखक थे। इस म्यान पर मूर्तिमान्
यज्ञ स्वयं उपस्थित था। पृथिवी स्वयं यज्ञवेदी
थी। प्रजापति दक्षने स्त्रीको वरण किया था।
महादेव कपाली होनेके कारण यज्ञार्ह नहीं
है, ऐसा समझ कर दक्षने यज्ञमें निषेध लाने
का प्रयत्न नहीं किया था। मतो प्रिय-तनया होने पर भी
कपालीको भार्या नहीं, इस लिए वे भी निमन्वित नहीं
हुए। यह सुन कर मतो पत्न्यक्त क्रोधित हुई घोर
दक्षके इस निन्दारूप वाक्य का स्मरण कर जननी जन
जनने लगी। इस समय कोप-रक्तनयना मतोने योगबल
से समस्त द्वारों को रोक कर कुम्भक धारण किया; इस
महाकुम्भकमें ब्रह्मरन्ध्र भेद कर उनको प्राणवायु निकल
गई। उस समय शिव मानसरोवरमें स्नाना समापन
कर कैलासकी ओट रही थे। माग में मतोके देहत्यागका
संवाद पा कर वे शीघ्र ही घर ओट घोर वहाँ विजयाके
सुहृदों से सब सुन कर पत्न्यक्त हुए। उस समय महा-
रुद्रकी पाँच, काग घोर मुकुटधरने चमिकनीद्वारे,
प्रलयसूर्यसमिध ज्वलन्त उल्ला निकलने लगी। इसमें व द
महादेव यज्ञस्थानके बहिर्भागमें जा विराजि घोर दूरमें
सम समुज्ज्वल यज्ञस्थानकी देव कर घोरभद्रकी शोष हो
एवं भोज दिया। घोरभद्र अपने दलबलके साथ यज्ञ-
स्थानमें पहुँचे घोर महात्मा दक्षके यज्ञको ध्वंस करने
लगे। घोरभद्रकी यज्ञ ध्वंस करने देव देवी के साथ विष्णुने
उत्ते वारण किया। घोरभद्रकी निशानि होत देव
पालवीनी पानि कर महादेव स्वयं यज्ञस्थानमें घुम पहुँ
घोर यज्ञ ध्वंस करने लगे। उन्होंने समस्त देवताओं की
भगा दिया घोर नृगका रूप धारण कर भागते हुए यज्ञका
तोड़ा किया; यज्ञ ब्रह्मकीर्तन प्रविष्ट हो गया। पीछे पीछे
महादेव भी पहुँचे। विधारा यज्ञ उर गये घोर ब्रह्मसौक्य

में उतर कर अपने माथेमें मतोके भरोरने प्रविष्ट हो
गया। फिर कहा था, यज्ञाशुभासो बद्र मृत मतोके पास
पहुँचते हो उन्हें देव कर यज्ञको भूल गये घोर मतोके
शोकमें व्याकुल हो कर रोने लगे। (वाग्विष्णु ८-१८७०)
मतो देखो।

दक्षोत्पत्तिके विषयमें हरिचंक्रमे इस प्रकार निरा-
है—दश प्रचेताओं के मानस द्वारा मारिपाके गर्भ घोर
सोमदेवके चंक्रमे दस प्रजापति उत्पन्न हुए। पनन्तर
इन्होंने स्यावर, जङ्गम आदि विविध पदार्थों को सृष्टि
कर कुल मनःकल्पित कथाओं को सृष्टि को। उन
कथाओं में १० धर्म को दो गई, ११ कल्पको घोर
चवगित २१ कथाएं सोमदेवको दी गईं। उनके
गर्भसे गो, पक्षी, नाग, टैल्य, दानव आदि माना जातिके
प्राणियों को सृष्टि हुई। इसी समयमें स्त्री-पुरुषके सह-
योगमें प्रजा-सृष्टिका प्रारम्भ हुआ। इससे पहले मनम,
दर्शन घोर स्वर्गद्वारा प्रजाकी सृष्टि होती था रही थी,
वह सब वज्रित हो गई। ब्राह्मणके दक्षिण-पङ्क्त, हवे
दक्ष घोर यामाहु, हवे उनको पक्षी उत्पन्न हुई, यह बात
पत्न्यक्त कहो जा चुका है। परन्तु इस जगह दक्षकी
प्रचेताओं का पुत्र कहा गया है। सोमदेवके दोहित को
कर भी मैं किम तरह उनके स्वरूप हुए, इस सन्दर्भके
निवारणार्थ जनमेजयने कहा है—'उत्पत्ति निरोध
पर्याप्त जन्म मृत्यु, प्राणिमात्रका ही नियत धर्म है।
इसमें ऋषि घोर प्राणियों के लिए कोई मोहना विषय
नहीं है। प्रत्येक युगमें दक्ष आदि उत्पत्तियों को एक बार
उत्पत्ति घोर फिर सत्य हुआ है। पहले एवं उत्पन्न कनि-
ष्ठः कुल भी न था, एक मात्र तपोवन को उत्पन्न घोर
अपकर्षका कारण था। प्रजाविधाता दक्ष विधाता द्वारा
आदिष्ट हो कर मृतों की सृष्टि करने लगे। दक्ष
प्रजापतिने पहले ऋषि, देवता, गन्धर्व, चक्षुर, राक्षस,
यक्ष, भूत, विषाच, यक्ष, पक्षी घोर नृग आदिको मानम-
द्वारा सृष्टि को; किन्तु पीछे तब देखा कि मानम-
सृष्ट प्रजाको, हडि नहीं होती, तब उन्होंने प्रजा-सृष्टि-
को उत्कट सामनासे स्त्री-पुरुषके सहयोग द्वारा
विविध प्राणियों की सृष्टि करना ही प्रिय समझा घोर
घोर प्रजापतिकी चमिकनी नामकी कथा का पानि-

दक्षिणभागा (मं० स्तो०) दक्षिणा भागा दिक् । दक्षिण-
दिकः, दक्षिण दिगा ।

दक्षिणागमति (मं० पु०) दक्षिणस्या दिगाः अधिपति । १.
यम । २. मङ्गलपद ।

दक्षिणामदृ—दक्षिणवद् देखो ।

दक्षिणादि (मं० पद्य) दक्षिण दृश्यां चादि । दूरस्थित
दक्षिण भाग ।

दक्षिणित् (मं० पद्य) दक्षिणात् येदे रूपोदभादिवात्
भाषुः । दक्षिणको चोर ।

दक्षिणी (दि० स्तो०) दक्षिण देशको भाषा । (पु०) २.
दक्षिणदेशका निवासी । (वि०) ३ दक्षिणदेश मन्त्रयो,
दक्षिण देशका ।

दक्षिणीय (मं० वि०) दक्षिणागमति दक्षिणादि । १.
दक्षिणादि, जो दक्षिणाका पास हो । २ दक्षिण मन्त्रयो,
दक्षिणका ।

दक्षिणतर (मं० वि०) दक्षिणादितरः । दक्षिणसे इतर
भाग, बायी ।

दक्षिणन (मं० पद्य) दक्षिणवत् । दक्षिणको चोर
इस मन्त्रके यागमें दितोया विभक्ति जातो है ।

दक्षिणमन्त्र (मं० पु०) दक्षिणे ईमे ज्ञानं यस्य ततोऽग्निच् ।
व्याध कर्तृक दक्षिण पात्रका पाकृत मृग, बट वरिष
जिसके दक्षिणे वनमें व्याधजि तोरने चाव हो गया हो ।

दक्षिणमर—दक्षिणमें बोधोम परमने जिनके पत्नीगर्भ एक
याम । यह पुण्यो मदीके किनारे पनप्यित है चोर
हलकसमें कुछ उत्तरमें पड़ता है । यहाँ बाहुदरेंयार
करनेका कारणता, बारह मनोहर शिवमन्दिर चोर एक
सुन्दर कामाका मन्दिर है ।

दक्षिणतर (मं० वि०) दक्षिण चोर उत्तरको चोर पद-
स्थित, जो दक्षिण चोर उत्तरमें पड़ता हो ।

दक्षिणतरी (मं० वि०) दक्षिण भागमें उत्तर पवस्थित ।

दक्षिण (मं० वि०) दक्षिणां पदति दक्षिणा गत् ।
दक्षिणादि, जो दक्षिणाका पास हो ।

दक्षिणमरिद्ध (मं० स्तो०) कामोऽस्थित दक्षिणमरिद्धति
स्थापित निम्नभेद, कामोका एक निम्न जिसे दक्षिणमर-
पतिने स्थापित किया था । दक्षिणमरिद्धमें मरिद्धादि
मे कामीने शिवनिम्नकी स्थापना की थी । वहाँ से

पञ्चवित्तमे उत्तरी पृथदि करत है । मरिद्धने
मरुद हो टहकी या टिया धेर कहा—“तुम्हारे मरुद
पराध मैंने लमा कर दिये, तुम्हें चोरी भी एक बार
देना हो कि तुममें जिस निम्नकी प्रतिष्ठा की है, वह
दक्षिणमरिद्धके नामसे प्रसिद्ध होगा । जो लोग इस
निम्नकी सेवा करेंगे, मैं उनसे सहस्र सहस्र पराध
लमा कर दूँगा । तुम भी इस निम्नकी पूजाके कारण
सबसे माय्य धर्मसे चोर दो पराधकाभी बाद मोक्ष
प्राप्त करोगे ।” इतना कह कर मरिद्धने उन निम्नमें
धनार्जित की गये । (शान्ति० ३१ मं०)

दक्षिण (दि० पु०) पारमोके सुदं रक्षितका स्थान ।
पारभी लोग शयनी अर्थात् या मरुदने नहीं है, बल्कि उनमें
याम निजने स्वामिने रख देने है अर्थात् चोरी कोए चादि
उनका भाग या जान है । इस कामसे निवे चोरीका
स्थान पचोम तोम मुट जैचो दावारी धेर दिया जाता है
चोर इससे ऊपरी भागमें जंगला मड़ा जाता है । ये
इसमें जंगल पर शयन रख देने है, चोरी-कोए चादिने
उनका भाग चादि जानि पर वडिडवां जंगल छोकर मोचे
गिर पड़तो है ।

दक्षिण (पं० पु०) १ अधिकार, करण । २ वृषादिप,
हाथ डालना ३ प्रयोग, पद्विच ।

दक्षिणदिशो (दि० स्तो०) किसी वस्तु पर किसीकी
अधिकार दिना देना, करण दिनावाला ।

दक्षिणमासा (पं० पु०) दक्षिणदिशानीका मरकारो पात्रा-
पत्र ।

दक्षिण (पं० वि०) अधिकार रक्षितवाला ।

दक्षिणकार (पं० पु०) क्षमसे कम बारह वर्ष तक किसी
जमादारके पैन पर यवना दक्षिण जमाये रखनेका
धामासी ।

दक्षिणकारो (पं० स्तो०) १ दक्षिणकारका पद । २
वह जमान जिस पर दक्षिणशब्दका अधिकार हो ।

दक्षिण (दि० पु०) एक प्रकारका शीम जो लड़ाईमें
बजाया जाता है, जैसी शीम ।

दक्षिण (दि० वि०) माय वननहा विग्रह न करना ।

दक्षिण (पं० पु०) १ कर, भय । २ मर्दिन, मर्द ।
३ एक प्रकारकी कंठोष ।

ग्रहण किया। अनन्तर प्रजापति दत्तने उस भूमिको के गर्भसे ५ हजार वीर्यवान् पुत्र उत्पन्न किये। इनके ५००० पुत्र जो प्रजा-सृष्टिके लिये स्रष्टा थे, नारदके उप-देशसे वे निरुद्धि हो गये। दत्तने इस संवादके पाते ही नारदका भंडार किया ब्रह्माको मानस पट्टते ही वे स्वयं दत्तके पास चाये और पुत्रको प्रार्थना करने लगे। दत्त-ने उत्तर दिया—'मैं अपना कथा भूमिको तुम्हें दे रहा हूँ, उसके गर्भसे नारदका पुनर्जन्म होगा। अतएव इसे ले कर कश्यपको प्रदान करवा।' इतना कह कर उन्होंने अपना कथा ब्रह्माको सौंप दो। भूमिसम्पातके भयसे कश्यपने उस कथाको ग्रहण किया और उसके गर्भसे पुनः नारदको उत्पादन किया। उसके बाद प्रजा-पति दत्तने धर्मपत्नी बोरम्भतनया-द्वारा मातृ कन्यायें उत्पन्न कीं और धर्मको दश, कश्यपको तैरह, सोमको सत्ताईस, परिष्टनेमिको नार, वसुपुत्रको दो तथा अङ्गिरा और जगाम्यको भी दो चार कथाएँ दीं। अश्वत्थी, वसु, यामो, लम्बा, भानु, भरुत्वतो, संकल्पा, सुहर्षा, साध्या और विश्वामित्र दश कथायोंने धर्मको प्रतिग्रह किया। बादमें विवासे विश्वामित्र, साध्यासे साध्या-गण, भरुत्वतोसे भरुत्वतगण, वसुसे वसुगण, भानुसे भानु, सुहर्षासे सुहर्षगण, लम्बासे गोप, यामोसे नाग-बोयो, अश्वत्थीसे पार्यय पदार्थ, संकल्पासे भर्षात्मरूप तथा संकल्पा, यामिनो और नागबोयोसे हृष्य उत्पन्न हुए। इस तरह क्रमशः एक दत्त प्रजापतिसे बराबर जगत्को सृष्टि होती लगी। (हरिवंश २३ क०)

श्रीमद्भागवतमें लिखा है—प्रजापति दत्त ब्रह्माके धामज थे और मनु-कथा प्रसूतिके साय इनका विवाह हुआ था। प्रसूतिके गर्भसे ११ कथाएँ उत्पन्न हुई थीं, जिनमेंसे ११ कथाएँ धर्मको एक भूमिको तथा एक पितरोंको प्रदान की थीं। सती नामकी कथा-के साय महादेवने विवाह किया था। प्रजापति दत्त अत्यन्त दुहितृवत्सल थे। किसी समय विश्वरूपाध्यानि एक हस्त यज्ञका अनुष्ठान किया। इस यज्ञमें समस्त देवता उपस्थित थे। प्रजापति दत्त जब इस यज्ञमें चाये, तब उन्हें देव कर भय पड़े हो गये, सिर्फ ब्रह्मा और शिव नहीं उठे। दत्तके धामन ग्रहण करने तक महा-

देव अपने ही धामन पर बैठे रहें, दत्तका कुछ भी स्थान नहीं किया। दत्त मारे क्रोधके उन्मत्तपाय हो कर शिवको निन्दा करने लगे। महादेव रुष्ट न हुए, समानें ही बैठे रहें।

दत्त सिर्फ निन्दा करके ही चुप न रहें, वरन् क्रोध में था कर उन्होंने जल-व्यर्थ-पूर्वक यह भूमिगाय दिया कि "यह देवाधम शिव, इन्द्र और उपेन्द्रादिके साथ यज्ञभागको प्राप्त न होवे।" इस प्रजार शाप दे कर दत्त अपने घर सौट चाये। इधर गिरिगात्रवर नन्दी-खरको शापका हाल प्राप्त म हुआ; उन्होंने अत्यन्त क्रुद्ध हो कर, जिन्होंने दत्तके वाक्यका अनुमोदन किया था उनको ऐसा प्रतिपाद दिया कि, 'महादेव कभी किसीका अपकार नहीं करते। उनसे जो लोग ईष्य रखेंगे, उनको कभी भी कार्य सिद्धि न होगी। इस दत्तको बुद्धि देहको आत्मा मान कर ध्यान करती है और यह आत्मतत्त्व भूल गई है। दत्त पशुपतिके समान अत्यन्त स्त्री-कामी होगा और शीघ्र ही उसका बकरेका सुँह हो जायगा। वसुतः इस दत्तका सुँह बकरेके समान हो होना चाहिये, क्योंकि वह पवित्राको तत्त्वविद्या समझता है।'।

खर दत्त और जामाता शिव इन दोनोंमें सर्वदा इमी तरहका विवाद चलने लगा। कुछ दिन बाद परमेश्वरी ब्रह्माने दत्तको प्रजापतिका सब आधिपत्य प्रदान किया, जिससे दत्तका अभिमान और भी बढ़ गया।

अनन्तर दत्तने हहस्यतिके नामसे उन्मत्त यज्ञ प्रारम्भ किया। इस यज्ञमें शिवको निमन्त्रित हुआ। सिर्फ महा-देव और सतीभी निमन्त्रण नहीं दिया। यज्ञको श्वर पट्टते हो, सतीने महादेवसे यहाँ जानके लिए अनुमति मांगी। महादेवने आज्ञा न दी। परन्तु सती शिव निमन्त्रणके विज्ञापन पट्ट च गईं और यज्ञस्थलमें गिताने द्वारा अपमानित हो कर उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। महादेव नारदके सुँहसे सतीके शरीरत्यागको बात सुन कर अत्यन्त क्रुद्ध हुए और सती समय उन्होंने अपने मस्तक-से एक जटा उखाटन कर उसे भूमि पर फेंक दिया। जिसमें वीरभद्रभी उत्पत्ति हुई। वीरभद्र यज्ञ ध्वंस करनेके निघ गये। उन्होंने भृगुको दाढ़ी और पूजाके दान उखाड़

दग्दगाना (हि० क्रि०) चमकना, दग्दगमाना ।

दग्दगाष्ट (हि० स्त्री०) चमक, दग्दग ।

दग्दगी (हि० स्त्री०) दग्दग देखी ।

दगना (हि० क्रि०) १ धनुक या तोपका छटना । २ दागा जाना । ३ दग्दग होना, जलना ।

दगरी (हि० स्त्री०) बिना मनाईका दग्दी ।

दगलफसल (हि० पु०) घोषा फरेव ।

दगला (हि० पु०) रुईदार या मोटे कपड़ेका चंगरवा ।

दगवांन (हि० क्रि०) क्रिस्ते दूधको दगनेके काममें लगाना ।

दगहा (हि० वि०) १ दगवांन । २ सफेद दगवांन । ३ प्रेतकाम-कर्त्ता, जिनमें प्रेतक्रिया की हो । ४ जो दग्दग किया गया हो ।

दगा (घ० स्त्री०) कपट, छल, धोखा ।

दगाडार (फा० वि०) विश्वासपातक, धोखेवाज, छल ।

दगावांज (फा० वि०) १ चपटो, छली । (पु०) २ यह मनुष्य जो धोखा देता हो, छलो धादमी ।

दगावाजी (फा० स्त्री०) छल, कपट, धोखा ।

दगागल (सं० स्त्री०) दक्ष अक्षरगोष्ठस्य चगल-मिथ, गमध्यापते तु प्रयोदशदिवात् गकारस्य ककारः दकारः । निर्जन स्थानके ऊपर लक्ष्य देख कर भूमिके नीचे पानी की नीच भयवा न होनाका ज्ञान ।

दगका विषय दृष्टत्माहितानि दस प्रकार लिखा है—

जिम प्रकार मनुष्यके शरीरमें रक्तवाहिनो गिराएँ होती हैं, वही प्रकार पृथ्वीमें ऊपर नीचे जलवाहिनो गिराएँ होती हैं । एक-वर्षा और एक रक्तयुक्त जलके आकाशमें गिरने पर मही बनेक वर्षा तथा रक्तसे युक्त हो जातो है । इसी कारण जलको वरोधा मही द्वारा करनी चाहिये । दग्द, धमि, यम, निजलि, वक्ष, पवन, चन्द्र, शरर आदि देवगण क्रमगः प्रदक्षिणक्रमसे पूर्वार्ध समो दिगाधोके अधिपति हैं । आठो दिगाधोमें बहमे-वालो गिराएँ पवन अपने अधिपतिक नाममें पुकारो जातो है ।

पृथ्वीके मध्य जो गिरा प्रवाहित है, उसे महागिरा कहते हैं । महागिराके अज्ञाया और भी मेकड़ों गिराएँ हैं, जो ज्ञाना प्रकारसे निकल कर भिन्न-भिन्न नामोंसे प्रसिद्ध हैं ।

-चारों ओर अवस्थित तथा पातानसे उचित जो मन ऊर्ध्वगिराएँ हैं, वे धमजनक हैं । कीचको ओरसे धर्मात् धमि, नैऋत, वायु और दग्दग इन चार कीचोंमें निकली हुई गिराएँ शुभजनक नहीं हैं । यदि किसी निर्जन स्थानमें बैठता हुआ हो, तो समझना चाहिये कि उसमें पश्चिम तीन हाथकी दूरी पर छेड़ पुरमें नीचे अच्छे जलकी गिरा है और उसमें भी बाध पुरमें नीचे पाण्डुवर्ण मण्डक, पोतवर्ण मृत्तिका और पुटमेंदल पाषाण दग्द विच्छाके नीचे जल है । निर्जन प्रदेशमें यदि जागृत पड़े हो, तो उसमें उत्तर तीन हाथकी दूरी पर दो पुरमें नीचे पूर्ववाहिनो गिरा अवस्थित है । इस जगह एक पुरमें नीचे मीहगमिका मृत्तिका और पाण्डुवर्ण मण्डक है, ऐसा समझना चाहिये । जम्बूद्वीपके पुरमें नीचे पाम धो यदि बरसात की हो, तो उसमें दक्षिण दो पुरमें नीचे दूरी पर दो पुरमें नीचे स्यादित जल मिलेगा । मही खोदते समय यदि बाध पुरमें नीचे मृत्तकी और कथुरके समान पत्थर एवं मही नीलो निकले तो समझना चाहिये यहाँ बहुत समय तक जल रहता है । गूलरवृक्षमें तीन हाथ पश्चिम एक पुरमें जमीनके नीचे सफेद हड्डो और चम्पनके जैसा पत्थर निकले, तो बाध पुरमें नीचे दूरी पर उत्तम जलयुक्त गिरा मिलेगा । पञ्चम वृक्षमें तीन हाथ उत्तर यदि बरसात रहे, तो समझना चाहिये, पश्चिमको ओर बाध पुरमें नीचे दूरी पर जल है । मही खोदते समय यदि बाधपुरमें नीचे गोह नामक जन्तु और एक पुरमें नीचे धूम्रवर्ण मही तथा उत्तम भी कुछ नीचे पीलो एवं रेतिलो मही मिले, तो क्षण पश्चात् जल पाया जायगा । बरसातके एकत्रित निर्गुणों वृक्षमें तीन हाथ दक्षिण दो पुरमें नीचे चर्मण्य और स्वादु जल; उसमें भी बाध पुरमें नीचे रीरित मृत्तकी; तब कपिलवर्ण और उसमें भी नीचे मण्डर वर्ण तथा रेतिलो मही मिलेगा और यहाँका जल बहुत स्वादित होगा । यदि बेर पड़े पूर्व वस्तीके देवा जाय, तो उसमें वज्रमें तीन पुरमें नीचे जल चक्षुय मिलेगा । यहाँ टाक तथा बेरका पेड़ एक साथ मिला हो, वहाँ तीन पुरमें नीचे पश्चिमकी ओर अगिरा; उसमें भी

कर दण्डों वचनसंलपन मारा और है तो उस पक्षमें उनका मन्त्रक छेदने लगे। पशु पुनः पुनः चलावात कानि पर भी त्रय मन्त्रक छेद न भरे, तब उसने दसको बन्धु-निष्पेक्षनादिरूप परमारनोपयोगी एक यन्त्रमें डाल कर उनका मन्त्रक देखने पृथक् कर दिया। पछि उस द्विष मन्त्रकको दक्षिणाग्निमें होम कर यज्ञगाना जला डाली। हम तरह दसयज्ञका विलकुल ध्वंस हो गया। शोक-विनाशक ब्रह्मा दसके इस तरह मारे जानिकी मरर स्तन कर चलाव्य देवोंके साथ कैलस पर्वत पर उपस्थित हुए और नाना प्रकारके स्तवोंमें महादेवको मन्त्रुट कर उनमें दस चाटने जीवनकी प्राप्ति करा कर देने लगे। महादेवने मन्त्रुट हो कर कहा—दस जैसे बालकोंके अपराध पर मैं ध्यान नहीं देता। जो लोग देव-मायामें विमोहित है, उनकेको मैंने दण्ड दिया है। प्रजापति दसका मुँह भर दो चुका है, सब उगका मुख क्षण जैसा हो जायगा तथा सब भगदेव और मित नामक देवताई बहुत दारा अपने यज्ञभागदा दगन करेगा। पूजा स्वयं पिठमोजी लोंगे। ये यज्ञमानके दस दारा यज्ञोपद्रव्य मक्षण करेंगे और जिनके बहुत विलकुल मट हो चुके हैं, वे चर्ममोक्षमारदयको बाहु-दारा बाहु-विगिट होमें और पूजाके दस दारा दस्तवान और क्षणको दाढ़ी हो शृणुको दाढ़ी होगी। अनन्तर ब्रह्मानि देवोंके साथ महादेवके वाक्यानुसार दसका मन्त्रक चाटि पत्र उल्ल प्रकाशमें संयोजित कर दिये। फिर दसने विधानानुसार यज्ञ समाप्त किया और महादेवका नाना प्रकारमें स्तव करने लगे। (भागवत ५।१३ अ०)

'दस' और 'दस' शब्दमें विस्तृत विवरण देनी।

दसकन्या (मं० पृ०) दसस्य कन्या १-तत्। दसकी कन्या, सती। दसकी चर्मिकी नामकी स्त्रीमें १० कन्यायें उत्पन्न हुई थीं, जिनमें १० धर्मकी, ११ कर्मप-को, १० चन्द्रमाकी, शृणु, चट्टिरी और क्षणिक इन तीनोंको दो दो तथा तात्प्यको ४ कन्यायें व्याहो थीं। (भागवत ५।१३ अ०) मनुकी कन्या प्रभृतिर्गर्भमें १६ कन्यायें उत्पन्न हुईं जिनमेंसे ११ धर्मकी, १ चर्मिकी, १ विदुषकी और १ महादेवकी समर्पण की गई थीं। (भागवत ५।१३ अ०) दस देवी।

दसकतु (मं० पृ०) दसस्य कतुः १-तत्। दसका यज्ञ-भेद, दसका यज्ञ यज्ञ विधामें चर्ममें मिश्रीकी नदी मुलाया था। दस देवी। दसाः कुम्भः क्रमको संकथा येषां। २ चक्षुरादि इन्द्रियरूप प्रायः।

दसकतुर्धर्मो (मं० पृ०) दसकतुर्धर्ममयति धर्म-विश्व-गिनि। १ महादेव। २ महादेवके चर्ममें उत्पन्न औरमद्र। महादेवको अष्टामें इनको उत्पत्ति है। इन्होंने दसका यज्ञ विध्वंस किया था।

दसजा (मं० पृ०) दसात् जायते जन-उ। दसकी कन्या, सती, दुर्गा, चर्मिकी प्रभृति।

दसजपति (मं० पृ०) दसजानां दसकन्यानां पतिः। चन्द्र, महादेव प्रभृति।

दसतनया (मं० पृ०) दसस्य तनया। दस प्रजापति-को कन्या, दुर्गा चर्मिकी प्रभृति। प्रभृतिके गभ में यज्ञा, मंत्रो, दया, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उत्पत्ति, बुद्धि, मोक्ष, मूर्ति, तितिक्षा, शा, स्वाहा, स्वाहा और सती ये सोनह कन्यायें उत्पन्न हुईं। दस देवी।

दसता (मं० पृ०) दसस्य भावः भाषे तत्त-टाप्। नैपुण्य, पटुता, योग्यता, कामान।

दसताति (मं० पृ०) मानसिक शक्ति।

दसभिधन (मं० पृ०) सामभेद।

दसपति (मं० पृ०) दसानां वनानां पतिः। वनाधिपति जिनमें सप्तमें अधिक बल हो।

दसपिठ (मं० पृ०) दसः दस प्रजापतिः पिता उत्पाद-को यन्त्र, समामानाविधेनित्यत्वात् न कप्। दस प्रजापतिसे उत्पन्न प्राणमिमामो देव। २ वीर्योत्पादक। (पृ०) १ चर्मिकी प्रभृति, इनमें उत्पादक दस हैं, इन्हींमें इनका नाम दसपिठका पड़ा है।

दसयज्ञ (मं० पृ०) दसस्य यज्ञं या दस्येन अनुष्ठितं यज्ञं। दस प्रजापति द्वारा अनुष्ठित यज्ञविधेय, वह यज्ञ जो दसमें किया गया हो। दस देवी।

दसयज्ञभद्र (मं० पृ०) दसयज्ञस्य भद्रः। औरमद्रमें दसका यज्ञ विध्वंस।

दसयज्ञविनायिनी (मं० पृ०) दुर्गा। दुर्गा या सती हो दसयज्ञ भद्रके कारण हो, इसीसे दुर्गाको दसयज्ञ-विनायिनी कहते हैं।

दक्षयागापहारी (स० पु०) महादेय, शिव ।

दक्षविहिता (स० स्त्री०) दक्ष विहिता गीतिका । १ गीतिकाभेद, एक प्रकारका गीत । (त्रि०) २ दक्षकृत, दक्षसे किया हुआ ।

दक्षहथ (स० त्रि०) जिसने अपने योद्धासे लयति की हो ।

दक्षस् (स० स्त्री०) दक्ष करणे असुन् । धन, साकत् ।

दक्षसाधन (स० त्रि०) दक्षसाधनः । धनसाधक ।

दक्षसावर्णि (स० पु०) मनुमंद, नवम मनु । भागवतमें इनके विषयमें इस प्रकार लिखा है—वर्णसे इनको उत्पत्ति हुई ; भूतकृत, दैतिकांतु आदि इनके पुत्र थे । इस मन्वन्तरमें मरौषि गर्भ आदि देवता हैं, यहूत इनके इन्द्र हैं; द्युतिमान् आदि ऋषि, चायुषान्से धर्म-धारके गर्भमें भगवान् विष्णु ऋषभदेवके नामसे स्वतंत्र हुए थे । ये यहूत नामक इन्द्रकी सर्व सम्पत्समृद्ध त्रिलोक के भोगी बतलाते हैं । दशम मनुका नाम भो दक्षसावर्णि था । ये लक्ष्मीक के पुत्र थे । भूविषय आदि इन्हींके वंश-धर थे । इस मन्वन्तर हविष्मान् आदि ब्राह्मण अर्थात् हविष्मान्, सुकृत, सत्य, जय, मूर्त्ति आदि ऋषि और सुरसेन, चन्द्रिह आदि देव तथा गन्ध, देवराज हैं । भगवान् विष्णुने विष्णुलोक, विष्णुके घर विष्णुके पंग्राशसे जन्मग्रहण किया था; ये विष्णुस्वेन नामसे प्रसिद्ध थे । उस समय देवराजका गन्धुके साथ संबंध हुआ था । (भाग० ८।१३ म०) दक्षसावर्णिके समय पुनरुपुष हविष्मान्, भृगतनय सुकृति, अग्निपुत्र अग्निमूर्त्ति, अग्नि-हृत्तनय अष्टम, पुनरुपुष प्रमति, कश्यपपुत्र नभोग और अङ्गिरापुत्र सत्य ये सात महर्षि थे । ये ही ऋषि-मन्त्रके अद्वितीय सत्य कहे गये हैं । दक्षसावर्णिके सुत सप्तमीजा, वीर्यवान्, कृतिपञ्च, शतानोक, नरमित्र, हृष्येन, जयद्रथ, भूरिद्युन् और सुवर्चो ये १० पुत्र थे । (हरिवंश ७७० मार्कण्डेयपु० ८०७)

दक्षसुत (स० पु०) दक्षस्य सुतः । १ दैवता । (पञ्चमो०) प्रजापतिने दक्षके पुत्रोंके लट्ट को लाने पर सुत्रिका सत्यव की और चनसे देवता आदि उत्पन्न हुए । इन सुत्रिकाओंके पुत्र होनेके कारण दक्षोंने सुवत्त्व मित्र हुआ । विधाताने जब दक्षकी प्रजासृष्टिके लिये आदेश दिया,

तव चक्षेने मनसे प्रभावसे ऋषि, देवता, सुर, गन्धर्व आदिको सृष्टि को ।

२ हर्ष आदि पुत्र । दक्षप्रजापतिके हर्षसे आदि पुत्र हुए । वे सभी प्रजाको हर्षके लिए मघेट रहते थे; किन्तु नारदके उपदेशानुसार वे प्रविषोका परिमाण ज्ञाननेके लिए चारों दिशाओंकी गये थे; फिर लौट नहीं । (हरिवंश ३७०)

(स्त्री०) १ अग्निनी आदि दक्षकन्याओंका नाम । दक्षा (स० स्त्री०) दक्षते वर्धते भारधारण समर्था भवति दक्ष-सुव-टाय । पुत्री ।

दक्षाध्वरध्वंसक (स० पु०) दक्षस्य ध्वर ध्वंसयति ध्वन्स-पिच्छ-पुच्छ । १ शिव । २ शिवजीकी कृष्णम उत्पन्न धोरभद्र ।

दक्षाध्वरध्वंसकृत् (स० पु०) दक्षाध्वरस्य ध्वंसं करोति ।

कृत् क्षिप-तुगागमः । दक्ष-यक्ष-विनागक शिव, वोरभद्र ।

दक्षाय्य (स० पु०) दक्षने कायं पु समर्था भवति दक्ष-पाय्य । (हरिवंश ३७० मार्कण्डेयपु० ३७०)

१ गच्छ । २ गृह पक्षी । दक्ष हवीं पाय्य । (त्रि०) ३ वर्द्धक, बढ़ाने या उत्पत्ति करनेवाला । ४ पूजनीय ।

दक्षाराम (द्वापाराम)—गोदावरी जिलेके अन्तर्गत सुप्रसिद्ध स्नानार्थ । यह कोटोफलो नामक प्रसिद्ध तीर्थसे ७ मील पूर्व और रामचन्द्रपुरसे ४ मील दक्षिणमें अवस्थित है । यहाँ भोमेश्वरका एक बड़ा मन्दिर है । इसका निम्न दुर्गजनेको कृतको भेद कर दो फुट ऊँचा बना गया है । पूजाके वषट् पुरोहितकी दुर्गजन पर बैठ कर लिङ्गका अभिषेकादि करना पड़ता है । प्रधान मन्दिरके भीतर और भी छोटे मन्दिर हैं । प्रधान मन्दिर बड़ी खूबसूरतीकी लिए हुए, नामा प्रकारके विशेषोंसे चित्रित है । यहाँ भोमन्दाजीको दो खूबसूरत कर्मे हैं । भोमेश्वरके मन्दिरमें ईसाकी बारहवीं शताब्दीके बहुतने शिलालेख पाये जाते हैं ।

दक्षि (स० त्रि०) दक्षिणैः, उत्तरीये ज्ञाने योग्य ।

दक्षिण (स० त्रि०) दक्षते इति दक्ष-इनन् (दृग्निष्ठा निनन् । उ० २।५०) १ दक्षिणोद्भूत, लो दक्षिण दिगामि हो । २ परध्वन्मुखर्चो, जो दूसरेके पश्चिमपायमें जनता हो । ३ मङ्ग दिगा लो सूर्यको और सुन्द करके लक्ष्मी

व'श्लोचन, चन्दन, गेरू और गुलबुल इनको घोंसे मिला कर प्रलेप देना चाहिए। घबघा ग्राममें वा जल-बहुल देशमें जो पथ रहते हैं, उनका पथदा जलजन्तुका मांस पोष कर उष्णता भी प्रलेप दिया जा सकता है। पित्तजन्म विद्रधि होने पर जैसे निरन्तर उष्ण क्रिया को जानते हैं, हममें भी वैसा हो करना चाहिए। पित्त-दग्ध-स्थानका जो मांस शीघ्र हो जाता है, उसे उठा कर देखना चाहिए और उस पर शीतल क्रिया करना चाहिए। उसके बाद शान्तिधान्यके तुप-विहीन तड़ुनों (चावलों) को पोस कर घोंसे मिला कर घबघा गावके छापरमें गाव को छात्र पोस कर उसमें छत मिला कर उसका प्रलेप देना चाहिए। गुलबुलके पत्तोंमें घबघा पानीमें होनेवाले किसी पेड़के पत्तोंसे चत-स्थानको ठक रखना चाहिए। पित्तजन्म विमर्षरोगमें जो क्रियाश्र को जानते हैं, हममें भी उनका प्रयोग करना चाहिए। मोम, जठो-मधु, मोधके पेड़की छाल, धूना, म'जोठ, चन्दन और मृगामूल इनको एक साथ पीस कर, छत पाक करना चाहिए। इस बीमे सब प्रकारके पन्निदग्ध ग्रन्थ भच्छो तरह भर जाते हैं। स्नेह-द्रव्यके संयोगसे दग्ध होने पर उसमें रुच क्रिया ही विषय लाभदायक होती है।

उष्ण वायु और शीघ्र (धूप या घाम) द्वारा दग्ध होने पर शीतल क्रिया करना चाहिए। पतियय तेज-द्वारा दग्ध होने पर किसी भी प्रतिकारसे उसकी शान्ति नहीं होती। द्रव्याग्नि-द्वारा दग्ध हो कर यदि जोति रहै, तो तमाम शरीरमें छत तैलादि स्नेह-द्रव्योंका मर्दन और चिबन करना चाहिए तथा पूर्वोक्त अग्निदग्धके प्रलेपका भी प्रयोग करना चाहिए।

ग्रह-वृत्तिकारमें पन्निप्रक्रिया ही प्रधान है। पीड़ित स्थानको अग्नि-द्वारा दग्ध करनेका नाम पन्निप्रक्रिया है। पन्निप्रक्रिये के विधानानुसार दग्ध करनेमें यह रोग फिर कभी नहीं होता। जो रोग चार-द्वारा पारोष्य नहीं होते, वे पन्निप्रक्रियामें पारोष्य हो जाते हैं। स्नेह-द्रव्यमें पीड़ित स्थान पर पन्निप्रक्रिया करना ही, तो उसमें पिप्पुलो, क्षामोषिठा, गोदन्ता, गर, गलाका, जाम्बवोष्ठ पथवा अन्य किसी प्रकारका मोह, मधु, गुड़, छत, तैल और बसा-पादि द्रव्योंके संयोगकी आवश्यकता होती है।

किसी प्रकारके त्वक् रोगमें यदि दग्ध करनेकी आवश्यकता पड़े, तो पिप्पुलो, क्षामोषिठा, गोदन्ता, गर और गलाकाके द्वारा मांसगत रोगमें दग्ध करना ही, तो जाम्बवोष्ठ वा अन्य किसी प्रकारके मोह-द्वारा; मिरागन, स्नायुगत, सन्धिगत, वा पश्चिगत रोगमें दग्ध करना ही, तो गुड़, मधु वा अन्य किसी प्रकारके छत तैलादि स्नेह-द्रव्य द्वारा दग्ध करना चाहिए।

गरत् और पीपुल्यतुके मिश्र पथ्य सभी मृतुषोमें रोग-विशेषसे पीड़ित स्थान दग्ध किया जा सकता है। परन्तु दग्ध क्रियाका प्रयोग तभी करना चाहिए, जब कि वह रोग अन्य किसी भी प्रक्रियासे पारोष्य न हो। अन्यथा दग्धकर्म करना उचित नहीं।

रोगीकी, दग्धकर्म करनेसे पहले पिप्पुलिन पथ खिनाना चाहिए; तब दग्ध करना चाहिए।

किसी किसी विद्वान्के मतसे यह दो प्रकारका है—त्वक् दग्ध और मांसदग्ध। परन्तु सुदृढके मतसे गिरा, स्नायु, सन्धि और पश्चि-स्थानमें भी इस प्रकार दग्ध करनेका निषेध नहीं है। त्वक् को दग्ध करनेमें 'चट-चट' शब्द, दुर्गन्ध और त्वक्का मद्धोष होता है। मांस-को दग्ध करनेमें दग्धस्थान कपोतवर्ण, पथ्य रक्तैत, धेदनाविशिष्ट, शुष्क, संकुचित और तप्त हो जाता है। गिरा और स्नायु पर दग्धकर्म करनेसे दग्धस्थान क्षण-वर्ष और उन्नतग्रन्थविशिष्ट तथा रक्षादिका स्त्राय बंद हो जाता है। सन्धि और पश्चिको दग्ध करनेसे दग्धस्थान रुच, बह्वर्ण और कठम हो जाता है तथा दग्धजनित तप्त भी शीघ्र पारोष्य नहीं होता। गिरोरोग और पश्चिम्य रोगमें मृ, ललाट और ललाटको पश्चिको दग्ध करना पड़ता है। सर्वरोगमें, वस्तुके दृष्टि-स्थान पर पन्निप्रक्रियादिनादि कर्म, सर्व स्थानके रोग पर दग्ध क्रिया करने चाहिए। रोगके स्थानमें दग्ध पन्निप्रक्रिये के भी चार भेद हैं—वलय, बिन्दु, विमेषन और प्रतिमास। चूहीकी तरह मोल रखनेके प्रकार दग्ध करनेका नाम वलय है। बिन्दुके प्रकार दग्ध करना बिन्दु कथ्यता है। शरीरके विषय समूहकी जला देना विमेषन है। उष्ण छत वा तैलादि तमन पदार्थके संयोगसे भी दग्धकर्म होता है एवं जिसमें दग्धका उपकारी द्रव्य शरीरमें

श्रीरामे दहने शायकी घोर पड़नी है, उत्तरके मामनेकी दिशा। ॥ प्रपमय, दहना, दाहना। किमोकी दान देते समय पीकार गन्ध उच्चारण करके दहिने शायसे देने घोर मोक्षे श्रुति वाक्य पड़ते हैं। ५ नायकभेद, त्रिम नायकके वपुतसा नायिका हो घोर त्रिमका वपु-राग सबपर समान हो, उसे दक्षिणनायक कहते हैं। ६ प्रदक्षिण। ७ तन्त्रोक्त पाचार विमेष, म्रौपाचारसे दक्षिणाचार थोड़ा घोर दक्षिणसे दामाचार उल्टा है। ८ विष्णु, ९ दक्षिणाग्नि। ब्राह्मणोंके दहिने कामने ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सोम, सूर्य घोर चमत्तर रहते हैं, इससे क्षुत्त, दक्षोच्छिष्ट, वपुत घोर प्रतिरोधे साथ चालाप करते समय दहिना काम खर्च करना चाहिये। (परातर) १० उदर, पेट। ११ समर्थ, निपुण।

दक्षिणकालिका (सं० स्त्री०) दक्षिणा वपुतूला कालिका आद्यामक्ति, जिन्होंने शिवजीका छाती पर दहिना पेर रखा है, कालिका देवी। दामा और दण्डगणिका देवी। दक्षिणगोल (सं० पुं०) दक्षिणः गोलः। विपुल रूपाय दक्षिण पड़नेवाली छह राशियाँ। तुला, मिथुन, धनु, मकर, कुम्भ घोर मोन इन छह राशियोंका नाम दक्षिण गोल है।

दक्षिणतम् (सं० पञ्च) दक्षिण चतसृषु। १ दक्षिण दिशा। २ दक्षिण भाग।

दक्षिणतत्त्वपट (सं० त्रि०) दक्षिणतः शिरसी दक्षिण भोगे कपटचूड़ा यक्ष। दक्षिण भाग चूड़ागुल, जिसके दक्षिणकी घोर गिहर हो।

दक्षिणतार, सं० स्त्री०) दक्षिण तारं। दक्षिण तार, दहिना किनारा।

दक्षिणतौर (सं० स्त्री०) नदी इत्यादिका दहिना किनारा।

दक्षिणमा (सं० स्त्री०) दक्षिण वेदे निपातनात् मा। दक्षिणभागादि।

दक्षिणदिक् (सं० स्त्री०) दक्षिणस्य दिक्। पूर्व प्रश्रुति दश दिशाओंके चत्वारिगत एक दिशा, उत्तरकी विपरीत दिशा, तिमके अधिपति भोग है।

पूर्वकालमें सूर्यदेवने यथाविधि यज्ञानुष्ठान करके यह दिशा शुभ दशावली दक्षिणासक्त्य हो, उसी समयमें यह दिशा दक्षिण नामसे प्रसिद्ध हुई है। दिक्, देखो।

दक्षिणदेय—दायिनी देखो।

दक्षिणधुरीण (सं० त्रि०) मकरके दक्षिण भागका धुरा-युक्त, बैसाफीके दहिनी घोरका धुरा।

दक्षिणपथ—दक्षिणा देखो।

दक्षिणपथात् (सं० पञ्च०) दक्षिणस्याः परायाय दिग्गः पन्थात् दिक् वपुतो हो पाति, परस्पर पर्यादादिगः। नैराश कोण।

दक्षिणपथार्ध (सं० पुं०) दक्षिण-पश्चिम भाग।

दक्षिणपथिमा (सं० स्त्री०) दक्षिणस्याः परायाय दिग्गः पन्थारानादिक् ततः पुम्यत्। नैराश कोण।

दक्षिणशालातक (सं० त्रि०) दक्षिणशाला सम्प्रभोय।

वयात देखो।

दक्षिणपूर्वा (सं० स्त्री०) दक्षिणस्याः पूर्वस्याश्च दिगोः नारास इति समासः। १ पूर्व-दक्षिण कोण, पश्चिमकोण। (त्रि०) २ पश्चिमकोणस्थित, जो पश्चिमकोणमें पड़ता हो।

दक्षिणमानस (सं० स्त्री०) गद्यास्थित तोयं विमेष, गयाके एक तोयका नाम। यह तोय गयाके दक्षिण भागमें पड़ता है। इसमें तीन घोर तोय हैं।

दक्षिणमार्ग (सं० पुं०) १ तन्त्रोक्त पाचारभेद। २ पितृ-यान नामक मार्गभेद।

दक्षिणमेघ (सं० पुं०) दक्षिणकेन्द्र। (The south-pole)

दक्षिणराष्ट्र (सं० स्त्री०) राष्ट्रज्ञा दक्षिणांग। राष्ट्र देखो।

दक्षिणराय—सुन्दरयनके प्रसिद्ध मनदेवता। ब्रह्मलोक

दक्षिणांगमें जहाँ बहुतसे जङ्गल हैं घोर व्याघ्र आदिका भय है, वहीं दक्षिणरायकी पूजा होती है। ये व्याघ्रजातिके अधिष्ठाता समझे जाते हैं। मन्त्री, मोम्बा

जङ्गली पादि भीष कालियाँ दक्षिणराय घोर कान्तराय-को बड़ी भक्त हैं। जङ्गली लोग जब सुन्दरवनमें लकड़ों खोदने जाते हैं, तो पहले दक्षिणरायकी पूजा कर लेते हैं।

हायमण्ड-हारवर घोर मातलाकी तरह जहाँ जहाँ पायादा है, मर्त्य दक्षिणरायकी पूजा होती है। उष-थोकीके हिन्दुधर्म दक्षिणरायकी पूजा उत्तरी प्रचलित न होगे पर भी, मिथ्य धर्मोंके हिन्दुधर्म इनकी पूजा बहुत दिनोंसे प्रचलित है।

ब्रह्मलोक दक्षिणाङ्गलके नुमलमान भी घोर मार्जोकी तरह दक्षिणरायकी विमेष भक्ति करते हैं घोर समय समय पर पूजा भी करते हैं।

एक पुरमे नोचे दुन्दुभिका चिह्न ; यदि बेल और गुजर-
का पेड़ मिला हो, तो दक्षिणकी ओर तीन हाथ छोड़
कर तीन पुरमे नोचे जल तथा सममे भी आध पुरमे नोचे
क्षणमण्डूक मिलेगा । कठगूरन पेड़के समोप यदि
वल्मीक नजर आवे, तो समझना चाहिये, कि पश्चिमकी
ओर तीन पुरमे नोचे दिग्वाही-शिरा प्रवाहित है । इससे
भी आध पुरमे नोचे द्वैपत् पाण्डुवर्ण और पीली मिटो,
दूधके जैसा सफेदपत्थर और कुसुदके जैसा मूयक देखने-
में आवेगा । जलहीन स्थानमें जहाँ सफेद नौसादरका
पेड़ देखा जाय, वहाँ पूर्वकी ओर तीन हाथकी दूरी
पर प्रथम दक्षिणवाहिनो शिरा प्रवाहित होती है । इस
जगहको जमोन खोदनमें नोलोम्लवर्ण और कपोत-
वर्णविशिष्ट मालूम पड़ेगी तथा हाथ भरके फासले पर
अजगन्धो मस्य और खीर समन्वित जल मिलेगा ।
योगाक वृक्षके पश्चिम-उत्तरकी ओर दो हाथ छोड़ कर
कुसुद नामकी शिरा मिलेगी । यह शिरा तीन पुरमे नोचे
हो कर बहती है । यदि विभोतक वृक्षके दाहिने बगलमें
वल्मीक हो, तो समझना चाहिये, कि पूर्वकी ओर
आध पुरमे नोचे हो कर जलशिरा प्रवाहित है । यदि
वहाँसे हाथ भरकी दूरी पर वल्मीक रहे, तो साढ़े चार
पुरमे नोचे जल प्रवाहिणी शिरा अवश्य बहती होगी ।
इस जगहकी एक पुरमे नोचेकी मटो सफेद तथा कुङ्कुम
की तरह चमकीला पत्थर मिलेगा । तीन वर्ष बात
जाने पर वहाँको जलवाहिनो शिरा नष्ट हो जायगी,
ऐसा समझना चाहिये । (हरश्रुतिता ५२ अ०)

गैल (फा० वि०) १ जिसमें दाग हो । २ जिसमें कुछ
टोप हो । (पु०) ३ छली, कपटी, दगाबाज ।

ध (स० प्रि०) दह-ता । १ क्षतदाह, भस्मीकृत, जो
जल गया हो, जला या जलाया हुआ ।

"दृष्टा दग्ध" मनसिक् नोवयन्ति दौल या ।" (सुदित्यद०)
२ दुःखित, जिसे कष्ट पहुँचा हो, जिसका हृदय दग्ध
हुआ हो वा जो जल गया हो ।

(क्लो०) ३ शरीरस्थ अग्निदाहमेदः वह शरीर जो
जल गया हो । शरीरका कोई अङ्ग जल जाने पर निम्न-
लिखित प्रणालीसे उसका प्रतिविधान करना चाहिए ।
अग्नि दहतः तैः सादि-खेदविशिष्ट अथवा नोरस द्रव्यका

अथय ले कर दहन-कार्य सम्पन्न करती है । अग्नि द्वारा
सन्तप्त होने पर घृत तैल आदि खेद-द्रव्य सूक्ष्म शिराओं-
में प्रविष्ट हो जाते हैं, इस कारण वह त्वक् और मांस
आदिके भीतर प्रवेश कर शीघ्र ही दहन करते हैं । इसी
लिए खेद-द्रव्य द्वारा दग्ध होने पर अत्यन्त वेदना होती
है । यह अग्निदग्ध चार प्रकारका है—झुट, दुर्दग्ध,
सम्यक्दग्ध और अतिदग्ध । जिसमें जलन पड़े और रंग
दहन जाय उसे झुट कहते हैं । जिसमें दग्ध स्थान पर
स्फोट (फफोला) हो जाय और वह स्थान अत्यन्त उष्ण,
दाहयुक्त, रक्तवर्ण, पाक एवं वेदनाविशिष्ट हो तथा विल-
म्बसे चारोप्य हो, उसका नाम है दुर्दग्ध । दग्ध स्थान
गभीर न हो और एक ताड़की तरह उसका रंग हो तथा
पूर्वोक्त लक्षण उसमें विद्यमान हों, तो उसे सम्यक्, दग्ध
समझना चाहिये । अतिदग्ध होनेसे, दग्ध स्थानका मांस
भूल जाता है; शरीर शिथिल और शिरा, सायु, सन्धि,
एवं अस्थि भट हो जाती है तथा अत्यन्त ज्वर, दाह,
पिपासा, मूर्च्छा आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं । इसमें
क्षत स्थान देखे भरता है और भर जाने पर विषर्ण
हो जाता है । इस चार प्रकारके दग्धोंके द्वारा अग्नि-
कर्मका साधन हुआ करता है ।

अग्नि-द्वारा प्राणियोंका रक्त क्षुपित हो कर शीघ्र ही
वेग-विशिष्ट हो जाता है ।

रक्तके उस वेगके कारण पित्त भी वेगवान् हो जाता
है । अग्नि और पित्त दोनों प्रायः एक जातिके पदार्थ
हैं और एक ही रस-विशिष्ट हैं । इसीलिए, अग्नि-दग्ध
स्थानमें तीव्र वेदना, स्वभावतः जलन और स्फोट हो
जाते हैं तथा ज्वर और दृष्ट्याकी वृद्धि होती है ।

दग्ध-चिकित्सा—झुट दग्धमें अग्निका ताप तथा गन्ध-
क्रिया और उष्ण शोषधका प्रयोग करना चाहिए । उसके
द्वारा शरीर वर्माक होने पर और भी तरल हो जाता
है । शीतल जल द्वारा स्वभावतः उक्त स्कन्धित (जम
जाना) होता है । इस लिए प्लुट-दग्धमें उष्णके सिवा
शीतल क्रिया कभी भी सुखकर नहीं होती । दुर्दग्ध-
स्थान पर उष्ण एवं शीतल दोनों प्रकारकी क्रियाएँ
करनी चाहिए । दग्ध स्थान पर घी लगाया और शीतल
वस्तु सेचन करना चाहिए । सम्यक्दग्ध होने पर

मन्त्राचार्य, क्षत्रपराय आदि बहुतसे बड़ानो कवियों ने दक्षिणरायको सोनाके आधार पर कई ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें क्षत्रपरायदासका रायमङ्गल नामक ग्रन्थ उल्लेखयोग्य है। इसके पढ़नेसे मान्य होता है कि प्रभाकर नामके एक राजा थे, जिन्होंने वन कटवा कर राज्य स्थापन किया था। इन्हींको महादेवकी पूजा करनेमें दक्षिणराय प्राप्त हुए थे। दक्षिणराय चठारह भोटोंके राजा हुए थे। कान्धरायके परामर्शनुसार हिजली जा कर इन्हींने नरसिंह पर शासन किया था। वनिया नामक स्थानमें बड़ेछाँ गाजीके साथ इनका युद्ध हुआ था। यन्त्रमें दोनोंमें मित्रता हो गई थी।

बड़ेछाँ गाजीके प्रसङ्गसे मान्य होता है कि जिस समय बङ्गालमें मुसलमानोंका प्राबल्य था, उसी समय दक्षिणराय आविर्भूत हुए थे, उसके चारों तरफ व्याघ्रोंका बड़ा उपद्रव था। परन्तु इनके प्रतापसे व्याघ्र किसीका चलिष्ट न कर सकते थे। इसीलिए नोच लोग इन्हीं व्याघ्रारोही और व्याघ्रके राजा सम्मान कर बड़े भक्ति करते थे। कवि क्षत्रपरायने लिखा है, कि बड़ेछाँ गाजीके फकीरोंने दक्षिणरायके अधिकारमें जा, अशुगत उनको प्रजाको तन्त्र करना शुद्ध कर दिया, इसलिए दक्षिणरायसे बड़ेछाँ गाजीका युद्ध ठन गया और उस युद्धमें दक्षिणरायका गिर कट गया। परन्तु देववल्लभे कटा हुआ फिर फिर जुड़ गया। पाखिर महादेवने पा कर दोनोंका भगदूत निवटा दिया और दोनोंमें मित्रता कर दो। तभीसे बङ्गालके दक्षिणाक्षरमें मित्र-यैषीके हिन्दू और मुसलमान बड़ेछाँ गाजी और दक्षिणरायके मस्तकको पूजा करते पा रहे हैं।

वैष्णव-संक्रान्तिके दिन दक्षिणरायके साथ साथ उनके वाहन व्याघ्र और क्षत्रपरायका गन्धर्व मूर्त्तिको भी पूजा हुषा करने लगे हैं। कहीं कहीं दक्षिणराय और कान्धराय सेवकान्तिके रूपमें पूजे जाते हैं। किसी किसीका कहना है, कि महादेवने जब ब्रह्माका मस्तक छेदा था, उस समय ब्रह्माके मस्तकमें कान्धराय और दक्षिणरायकी उत्पत्ति हुई थी।

दक्षिण शाहवाजपुर—मिथना नदोके मुहानापर एक द्वीप। यह बाखरगञ्ज जिल्लाका एक महकूमा है। १८४१

ई०में इसे प्रत्यक्ष महकूमा किया गया। भोला और वरुण उहीन हान्गदर नामके दो याने इसके चत्तर्गत हैं। स्वरिमाण ६१५ वर्गमील है। इसमें ४०८ ग्राम लगते हैं।

प्रवाद है, कि १८७१ ई०की ११वीं फरवरी को जो तूफान उठा था उससे सन्तिन ग्वाँ नामक इस महकूमेके प्रायः सभी लोग विनष्ट हुए थे।

दक्षिणमट्ट (सं० वि०) दक्षिण भागमें स्थित, जो दक्षिणकी ओर पड़ता हो।

दक्षिणमसुद्र (सं० पु०) दक्षिणः समुद्रः कर्मधा०।

दक्षिणदिक्स्थित समुद्र, नवण समुद्र।

दक्षिणस्य (सं० वि०) दक्षिण भाग तिष्ठति स्था०।

१ बड़े सारथी जो अपने प्रभुके दक्षिण ओर गड़ा हो।

२ दक्षिण भागस्थित, जो दाहिनी ओर पड़ता हो।

दक्षिणा (सं० स्त्री०) दक्षिण-प्रायः। १ दक्षिण दिक्, दक्षिणदिश। पर्याय—चवाची, शामनी, यामो, वै-स्तो।

दक्षिण दिशाकी वायुका गुण यहरमयुक्त, चतुर्का हितकारक, वनवर्द्धक, रक्तपित्तनाशक, सुख, कान्ति और बुद्धिदायक, शयनागक, विदाही, अन्न और वायुवर्द्धक है। गण्डूध्रद (फोलपाव) कोटजनक है। इस दिशाके अधिपति हय कन्या और मकररामि है। (उपनिषत्संग्रह) २ यज्ञादिविधि दान। ३ प्रतिष्ठा, उन्नत, सम्मान। ४ यज्ञादिके अवसान पर ब्राह्मणोंको दिये जानेका धन, ब्राह्मणों वा पुरोहितोंको यज्ञादि कर्म करानेके वेदिके जो धन दिया जाता है, उसे दक्षिणा कहते हैं। दान पण्य व्रत आदिको दक्षिणा नहीं देनेसे, बड़े राखने की जाननेके जो सा निष्फल हो जाता है। इसीसे प्रत्येक कार्यको समाप्ति पर दक्षिणा देना कर्त्तव्य है।

“नदत्तदक्षिणं दानं प्रतर्जय श्रुतोत्तम।

विरक्तं तद्विद्वान्नीचाम्भस्वनीव हुषं हरिः॥” (मरिच्यपु०)

अभि हो कर भक्तिपूर्वक दक्षिणा देने श्राव्य है।

दक्षिणा दिये बिना किया कराया सब काम निष्फल हो जाता है। जितने दान कहे गये हैं उनमेंसे मोना ही श्रेष्ठ है। इसी कारण सभी दानोंमें मोनेकी दक्षिणा देनेका विधान है।

व'शजोचन, चन्दन, गेहूँ और गुनच इनको घोंपि मिला कर प्रलेप देना चाहिए। चयवा श्राप्ते में वा जल-वहुल देहों में जो पट रक्षित हैं, उनका चयवा जलजन्तुका मांस पोष कर उसका भी प्रलेप दिया जा सकता है। पित्तजन्य विद्रधि होने पर जेमे निरन्तर उष्ण क्रिया को जाता है, इसमें भी चयवा हो करना चाहिए। अति-दग्ध-स्थानका जो मांस शोष हो जाता है, उसे उठा कर देखना चाहिए और उस पर शीतल क्रिया करना चाहिए। उसके बाद आग्निधाम्य के तुल्य-विहीन त'हुनों (चायकों) को पोस कर घोंपे मिला कर चयवा गावके क्वाथमें गाव को क्षाल पोस कर उसमें छत मिला कर उसका प्रलेप देना चाहिए। गुनचके पत्ते में चयवा पानी में होनेवाले किमो पेड़के पत्ते से चत-स्थानको टक रखना चाहिए। पित्तजन्य विषय रोगमें जो क्रियाएं को जाती हैं, इसमें भी उनका प्रयोग करना चाहिए। मोम, जेठो-मधु, लोधके पेड़की हान, धूना, म'जोठ, चन्दन और मूर्धाभुज इनको एक साथ पोस कर, छत पाक करना चाहिए। इस छीमे सब प्रकारके अग्निदग्ध व्रण अच्छी तरह भर जाते हैं। स्नेह-द्रव्यके संयोगसे दग्ध होने पर उसमें दध क्रिया की विशेष लाभदायक होती है।

उष्ण वायु और रोद्ध (धूप वा घाम) द्वारा दग्ध होने पर शीतल क्रिया करना चाहिए। अतिशय तेज-द्वारा दग्ध होने पर किसी भी प्रकारसे उसको आग्नि नहीं होती। ब्रह्माग्नि-द्वारा दग्ध हो कर यदि जीवित रहे, तो तमाम शरीरमें छत तैलादि स्नेह-द्रव्योंका मर्दन और चेशन करना चाहिए तथा पूर्वोक्त अग्निदग्धके प्रलेपका भी प्रयोग करना चाहिए।

गन्ध-विक्रियामें अग्निक्रिया की प्रधान है। पीड़ित स्थानको अग्नि-द्वारा दग्ध करनेका नाम अग्निक्रिया है। अग्निजल के विधानानुसार दग्ध करनेसे वह रोग फिर कमो नहीं होता। जो रोग चार-द्वारा पारोग्य नहीं होते, वे अग्निक्रियामें पारोग्य हो जाते हैं। स्नेह-द्रव्यमें पीड़ित स्थान पर अग्निजल करना हो, तो उसमें पिप्पली, हामोविष्टा, मोदना, गर, शनाका, आम्बवोष्ठ चयवा अन्य किमो प्रकारका मोह, मधु, गुड़, छत, तेन और बसापादि द्रव्योंके संयोगको आवश्यकता होती है।

किसो प्रकारके त्वक् रोगमें यदि दग्ध करनेकी आवश्यकता था पड़े, तो पिप्पली, हामोविष्टा, मोदना, गर और शनाकाके द्वारा मांसगत रोगमें दग्ध करना हो, तो आम्बवोष्ठ वा अन्य किसी प्रकारके लोह-द्वारा; घिरागन, स्नायुगत, सन्धिगत, वा पश्चिगत रोगमें दग्ध करना हो, तो गुड़, मधु वा अन्य किसी प्रकारके छत तैलादि स्नेह-द्रव्य द्वारा दग्ध करना चाहिए।

गरतु और यौगन्धतुके निवा अन्य सभी स्तुधोमें रोग-विशेषमें पीड़ित स्थान दग्ध किया जा सकता है। परन्तु दग्ध क्रियाका प्रयोग तभी करना चाहिए, जब कि वह रोग अन्य किसी भी प्रक्रियामें पारोग्य न हो। अन्यथा दग्धकर्म करना उचित नहीं।

रोगीको, दग्धकर्म करनेसे पहले पिच्छिन पथ खिलाना चाहिए; तब दग्ध करना चाहिए।

किसो किमो विधानके मतमें यह दो प्रकारका है—त्वक् दग्ध और मांसदग्ध। परन्तु सुश्रुतके मतमें गिरा, स्नायु, सन्धि और पश्चि-स्थानमें भी इस प्रकार दग्ध करनेका निषेध नहीं है। त्वक् को दग्ध करनेमें 'चट-चट' गन्ध, दुर्गन्ध और त्वक् का सङ्कोच होता है। मांस को दग्ध करनेमें दग्धस्थान कपोतवर्ण, पद्म रङ्गीत, वेदनाविष्ट, शुष्क, संकुचित और छत हो जाता है। गिरा और स्नायु पर दग्धकर्म करनेमें दग्धस्थान कृष्ण-वर्ण और उत्तमवर्णविष्ट तथा रक्षादिका स्त्राय रङ्ग हो जाता है। सन्धि और पश्चिको दग्ध करनेमें दग्धस्थान दध, चरुवर्ण और कर्कश हो जाता है तथा दग्धजनित छत भी शीघ्र पारोग्य नहीं होता। गिरोरोग और पश्चिमय रोगमें भ्रू-ललाट और नन्दाटको पश्चिको दग्ध करना पड़ता है। वर्ज रोगमें, चतुर्दृष्टि-स्थान पर भ्रू-जक आच्छादिन कर्दुवर्ण-स्थानके रोग पर दग्ध क्रिया करना चाहिये। रोगके स्थानभेदसे अग्निजल के भी चार भेद हैं—वलय, विन्दु, विविधन और प्रतिमान। चूहेकी तरह मोल रेखाउं पाकार दग्ध करनेका नाम वलय है। विन्दुके पाकार दग्ध करना विन्दु कह्य जाता है। शरीरके निम्न समूहकी जन्मा देना विविधन है। उष्ण छत या तैलादि तरल पदार्थ के संयोगसे जो दग्धकर्म होता है एवं जिसमें दग्धका उपकारी द्रव्य शरीरमें

“सुरभे रसमं दानं सुखेन दक्षिणा दत्ता ।

सर्वमेव दत्तव्यं सुरभे दक्षिणेनैव ह” (व्यास)

बहुतेम दानोंमें जहाँ गोबध्नादि दक्षिणाका विधान है, वहाँ गो बध्नादि को देने चाहिये। जहाँ दक्षिणाका कोई उल्लेख नहीं है, केवल वहाँ सुवर्ण दक्षिणा प्रयत्न है। सभी धातुओंमें मोमा अच्छ है, इसी कारण ‘सुवर्णे दक्षिणैश्च’ ऐसा लिखा है।

“सुवर्णं रजतं तापं ताम्रं धातुमैव च ।

निव धातुं दीवदूमा कवेनेव वरक्षिणं” (ह्यस्तु०)

नित्याह, देवपूजा चाहिये मोम, चांदी, ताम्र, धातु और चावल सभीको दक्षिणा दो आ सकतो है। देव द्रव्य का दत्तोग्राह दक्षिणा देने चाहिये। लेकिन जिन दानको दक्षिणा नहीं नहीं गई है, उनका दमाग या शक्ति के अनुसार दक्षिणा देना भीतो है। (ह्यस्तु०)

गुणसुख पादि दानोंमें उसका दमाग या चर्च दक्षिणा देनेको लिखा है और जितने शक्ति हैं, सबको दम दम निव्य वष दक्षिणाके साथ यज्ञकर्त्ताको फल देता है। कार्य समान होने पर जो दक्षिणा देने चाहिये नहीं तो वह प्रतिक्षण बहुतो है। कार्य ही जाने पर सुहृत् कान्त भीतर नहीं देनेमें दिगुण हवि, एक दिन ब्रत जाने पर शत गुण, तीन दिन पर उसका दम गुण, एक महीने पर सात गुण और एक वर्ष ब्रत जाने पर तीन श्रोत्रि गुणको हवि कोतो है। पीछे यज्ञ-मानको उस काम का फल नहीं मिलता और कर्मकर्त्ता ब्रह्मणापहारो होता है। अच्छी श्राप दे कर वनके घरमें जाता रहनी है। बाद वह दरिद्र व्याधिगुण हो कर कष्टसे समय बिताता है और उसका दिया दूधा आहर्गणादि समझे विप्लवण भी वदण नहीं करते हैं। यज्ञमानकी यदि दक्षिणा देनेमें विमव्य हो जाय, तो पुरोहितको मांग लेनी उचित है, नहीं तो दोनों ही नरकगामी कोतो है। दक्षिणा मांगने पर यदि यज्ञ-मान न दे, तो वह ब्रह्मणापहारोके समान पातकी होता और नियम ही उसे कुम्भीपाक नरकको दवा पानो पहुतो है, केवल यही नहीं, यमदूत का दण्ड महते हुए वहाँ भास वय तक रहना पहुता है। पीछे वह पाण्डमानकी दीनिमें लग्न सेता और सब दान व्याधि-

गुण दरिद्र रहता है। यहाँ तक जिन समने पातने मान सुख तक नरकगामी कोतो है। (ह्यस्तु० ५०)

दक्षिणा यज्ञमें पद्यो है। कात्तिकी पूर्वमासी मातकी जो एक बार राममहीनव दूधा या लोनी ओ-लपके दक्षिणाग्निमें हमरी तपसि हुई थी, हमीने इसका नाम दक्षिणा पढ़ा।

दक्षिणाका दूधा नाम दोषा है। ये सभी व्यानीमें पूजो जातो है। बिना दक्षिणाके मंभारके सभी काम निष्फल हैं। (भागवत) ५ माणिकाविम्वय। माणिक पम्य सियों पर बामत हंमि पर भी जो लो पदमेको तरह नायकके प्रति गौरव, भय, प्रेम, सहाय पादि परित्याग नहीं करतो, उसे दक्षिणा नादिका कहते हैं। १ पुरस्कार, भेट ।

दक्षिणाग्रणो (मं० पु०) दक्षिणाग्नि दक्षिणाग्नि ग्रणी-उत्तम्य हवि। दक्षिणाग्रणिकित प्रयुक्त, वह जिनके दक्षिणे कर्म पर जोड़ा दूधा हो। पिताको वदन पश्यां फलोंके साथ मंभोग करनेमें यह रोग नापव होता है। यका दान करनेमें यह रोग जाता रहता है।

दक्षिणाकपट (मं० पु०) वनिष्ठ ।

दक्षिणाकान (मं० पु०) दक्षिणा देनेका समय ।

दक्षिणाग्नि (मं० पु०) दक्षिणाग्निः। दक्षिणाग्निमेव। यज्ञमें दक्षिणाकी ओर जो अग्नि स्थापित का जातो है उसका नाम दक्षिणाग्नि है।

दक्षिणाव (मं० पु०) दक्षिणाया वषमम्य। दक्षिणा देना। भाग्यश्लाघ दूगादि। वह दूध जिनका पानना भाग दक्षिण भागमें रहने ।

दक्षिणावय (मं० पु०) दक्षिणा दक्षिणाग्नि हिमि दक्षिणे दक्षिण प्रदेमे या स्थितोऽवयः पतेत। समय पतने, समयावय ।

दक्षिणाचार (मं० पु०) दक्षिणः अप्रतिपक्षः या ताः ।

१ तत्त्वोक्त पाचार भेट। हमने अपने पापको मित्र मान कर पयत्नरमे मित्राको पूजा को जातो है और मध्यम व्याजने मित्रधारण दिया जाता है। मित्रधारण भी पक्षमकारमें एक है। यह पाचार मामाधारमें अंत और प्रायः वैदिक माना जाता है। २ मित्राचारविदित यह और वत्तम पाचरण। ३ दक्षिणदिगमितामी, त्रिष्वकी गति दक्षिणेको ओर हो।

व्याम हो जाय उसे प्रतिसारण कहते हैं। इससे विलम्बमें
पारोग्यता प्राप्त होती है। (सुश्रुत) अग्निदग्ध देखो।

(लो०) ४ कटण, एक प्रकारको घास। (रत्नमाला०)

५ तिथिभेद-युक्त चन्द्राश्रित राशि। (ज्योतिस्तत्त्व)

इस दग्धयज्ञमें जो भी कार्य किया जाता है, वह नष्ट
हो जाता है। ६ वारभेद-युक्त नवतन्त्रभेद।

दग्धकाक (सं० पु०-स्त्री०) दग्ध इव काकः। श्लोककाक,
छोम कौवा।

दग्धपात्रन्याय (सं० पु०) न्यायभेद, एक प्रकारका
न्याय।

दग्धमन्त्र (सं० पु०) दग्धः मन्त्रः कर्मधा०। तन्त्रसारोक्त
मन्त्रभेद, तन्त्रके अनुसार एक मन्त्र। इसके मूर्धा प्रदेश-
में बद्ध और वायुयुक्त वर्ण होते हैं।

दग्धमन्त्र (सं० पु०) अग्निदग्ध मीन, भुनो हुई मछली।
दग्धरथ (सं० पु०) दग्धः रथः यस्य। इन्द्रकी एक सारथी,
चित्ररथ गन्धर्वका नामान्तर। ये इन्द्रके यहां सारथ्यका

काम करते थे। इनके एक विचित्र रथ था, इसीसे इनका
नाम चित्ररथ पड़ा। किसी समय पाण्डवगण पांचाल
को जा रहे थे, इसी समय दग्धरथ नोमान्ययण तोर्यमें
गङ्गामें पैठ कर रमणियोंके साथ क्रीड़ा कर रहे थे।
पाण्डवोंको अपनी ओर आते देख ये धनुषद्वारा
करते हुए अर्जुनके पास पहुँच गये और अभिमानसे
बोले,—“मैं यहां जलविहार करता हूँ। इस समय देव-
गण भी यहां आनेका साहस नहीं करते। तुमने मनुष्य
हो कर क्या मोच कर यहां आनेका साहस किया?” इस
प्रकार दोनोंमें कुछ काल तक वादानुवाद होता रहा।
पीछे उनघोर युद्ध छिड़ हो गया। अर्जुनने आर्जुन
शास्त्रके प्रभावसे इनका रथ दग्ध कर डाला। उसी
समयसे ये दग्धरथ नामसे प्रसिद्ध हुए। बाद इन्होंने
अर्जुनके साथ मित्रता कर ली और उन्हें चतुष्पथविद्या
मिखला दी। (महाभारत आश्वि० १३० अ०)

दग्धरुह (सं० पु०) दग्ध अपि रोहति रुहः। तिलकण।
तिलक हल।

दग्धरुहा (सं० स्त्री०) दग्धरुह-टाप्। हलविशेष, कुरुह
नामका पेड़।

दग्धवर्णक (सं० पु०) रोहिण नामक टण, रोहिण नामकी
घास।

दग्धा (सं० स्त्री०) १ सूर्यवस्थान दिक्, वह दिशा जिस
ओर सूर्य अवस्थान करता हो, सूर्यके भस्म होनेकी
दिशा, पश्चिम। २ हलविशेष, एक तरहका पेड़। इसे
कुरुह कहते हैं। पर्याय—कुरुह, दग्धरुहा, दिग्धिका,
स्यसेरुहा, रोमशा, कर्कशदला, भस्मरोहा, सुदग्धिका।
गुण—कटु, कषाय, उष्ण, कफवातनाशक, पित्तप्रकोपक,
जठराग्निकारक। (राजनि०)

२ राशिभेदयुक्त तिथिभेद, विशिष्ट राशियोंसे युक्त
कुछ विशिष्ट तिथियाँ। जैसे वैशाख मासकी शुक्लाष्टमी,
भाद्रपदकी शुक्लादशमी, कार्तिक-
की शुक्लाद्वादशी, पौषकी शुक्लाद्द्वितीया, फाल्गुनकी
शुक्लाचतुर्थी, व्यावर्णकी कृष्णाष्टमी आश्विनकी कृष्णा-
ष्टमी, भगहनकी कृष्णादशमी, माघकी कृष्णाद्द्वितीया,
चैत्रकी कृष्णाद्द्वितीया और ज्यैष्ठकी कृष्णाचतुर्थी। ये
दग्धा तिथियाँ निष्फला हैं और इनकी मासदग्धा कहते
हैं। इन दग्धा तिथियोंमें यदि कोई यात्रा करे, तो
उसको मृत्यु, निश्चित है, चाहे वह इन्द्रतुल्य क्यों न हो।
दग्धातिथिमें विवाह होनेसे स्त्री विधवा हो जाती है,
कृषिकार्यमें फलका अभाव, विद्यार्थमें मूर्खता,
स्त्री-सङ्गममें गर्भपात और मूलधनका नाश होता है।
अतएव दग्धातिथियोंमें कोई भी शुभ कार्य न करना
चाहिए। (ज्योतिस्तत्त्व)

रविवारकी द्वादशी, सोमवारकी एकादशी, मङ्गल
वारकी दशमी, बुधवारकी द्वितीया, वृहस्पतिवारकी पञ्ची
शुक्रवारकी अमावस्या और पूर्णिमा एवं शनिवारकी
सप्तमी होनेसे वह तिथि दग्धा समझी जाती है। इनकी
दिनदग्धा कहते हैं। दिनदग्धा तिथियोंमें भी कोई शुभ
कार्य न करना चाहिये। (ज्योतिस्तत्त्व)

दग्धाक्षर (सं० पु०) पिङ्गलके अनुसार भ, ङ, र, भ
और य ये पाँचो अक्षर। इनका कन्दके आरम्भमें रखना
वर्जित है।

दग्धास्य (सं० पु०) कुमारिच चूप लालमिर्चका पौधा।

दग्धाह (सं० पु०) धारप्रधान हलविशेष, एक प्रकार-
का पेड़।

दग्धिका (सं० स्त्री०) कुक्षिता दग्धा-कन् (कृषिते)। ग
५।१।७ टाप्। १ दग्धाक, जला हुआ भात। इसका
पर्याय—मिस्सटा, मिस्सिटा, मिषिटा, मिषिटा और
मिषिका है। २ दग्धाहल, कुरु नामका पेड़।

दण्डेष्टका (सं० स्तो०) । दण्डेष्टका, जलो हर्द ईंट,
भांवा ।

दम्घोदर (सं० स्तो०) दम्घं च्छदरं । हत्तीदर, जना
दृष्टा पेट ।

दणक (द्वि० ग्री०) १ वह घोटनी झटके वा दणवसे
हो जाती है । २ धक्का, ठोकर । ३ दवाव ।

दण्डकन (हि० क्रि०) १ ठोकर खाना। २ दण्ड जाना।
३ झटका खाना। यह सकर्मक क्रिया भी है।

दचना (.हि० क्रि०) गिरना, पड़ना ।

दृष्टान्त (चं० पु०) १ मिथ्यावादो, घृत्तं, वेदमान ।
२ निष्ठर ।

दहवल (हि० पु०) सड़देई नामका पोधा।

दङ्गोकना (हि० क्रि०) दहाड़ना, बाघ, साँड़ आदिका
भीलना ।

દરિયન (હિં. ષિ. દાદોયાલા, જિમને દાદો રખો હો ।
દણિયર (હિં. પ્ર.) સયે ।

दण्ड (सं. स्त्री.) दण्डघ्न, वा दाम्यतेऽनेन दम-ड।
 दान्तात् डः। ३७. १।१११। यष्टि, माठो, डंडा।

दण्ड धारण करनेसे लाभ—गिर पड़ने पर संसके सहारे उठ सकते हैं, शत्रु के आक्रमण करने पर अपनी रक्षा कर सकते हैं इत्यादि। यह प्रायुष्कर और सय-नाशक हैं। (पैथक) झाड़ने पर दंड उठाने पर लड़ने और प्रतिद्वन्द्व आचरण करना चाहिये।

२. वट दंड जिसे ब्राह्मचारी धारण करते हैं। साधन
चाहे तोनों पर्याप्त किए उपनयनक समय दंड धारण
करनेको विधि है। तदनुसार ब्राह्मणको पितृ और
पत्नीका, अग्निको वट और खुदिका, एवं 'वैश्वकी
पितृ और लुम्बिकाका दंड धारण करना चाहिये।
ब्राह्मणोंका दंड वैश्या पर्यन्त, अत्रियोंका दंड मना
पर्यन्त और वैश्योंका दंड नासिका पर्यन्त होना
चाहिए। (श्रु २।१४-१८)

संस्थासिद्धि के लिए दंड प्रणाली के विषय में विशेषता है ।
 यथा--

“कुटीयको दहृदको हं सरैव तृतीयकः ।

चतुर्थोऽप्यमो हंशो यो यः पश्चात् ॥ उत्तमः ॥" (हारीत);

कुटीचक, वहदक, हंस घोर परमहंस इन मन्त्र्या-

मिथिमें पइलेकी अपेला पोछिने सकरोत्तर छवत पोर
 योह है। कमनाजरने लिखा है, कुटोचक पोर बड-
 टककी तोन ट'ड, हंसकी एक बैणवट'ड तथा परम-
 हंसकी एक ट'ड रहवना चाहिय। (निर्णयि०)

मिधातिथि लिखते है—

“यावन्नस्युत्थयो द'डास्तावदेकेन वल्लयेत्”

पर्याप्त, जब तक त्रिटंही न हो सके, तब तक एक ही दंड रखो, परन्तु यहाँ त्रिटंड घटिपर नहीं है, बाग-दंडादि दसमपर है।

पक्षनेत्रों परमहंसके लिए एक दंडको बात कही गई है वह चविहारीके लिए है ; परमज्ञानियोंके लिये नहीं । महोपनिषद्में लिखा है-‘न दंड’ न तिषा नार्या-द्वन’ न भैक्षं नति परमहंसः । ‘शतमे वास्य दंडः ।’ अर्थात् ज्ञान हो परमहंसका दंड स्वरूप है ।

३. यू.इ.भेद, एक प्रकारका यू.इ.। अग्निपुराणके मतसे मण्डल और पक्ष इतके भेदसे नाना प्रकारके दण्ड हैं, यथा—तियगं, हस्ति, हस्ति, सर्वतोष्ठि, पृथगं हस्ति । इनके सामान्तर इस प्रकार हैं—प्रदर, दंडक, धमझा, चाप, वैकुचि, प्रतिष्ठ, सुप्रतिष्ठ, शनि, विजय, मञ्जय, विद्याल, सुवो, स्यूनाकण, चमूमुख, मण्डमुख, यन्त्र, पतिकाकल, प्रतिकाकल, विषयय, स्यूनापक्ष, धनु, पक्ष, हिस्यू, अक्ष, दंड, दिदंड, चतुर्दण्ड, गोमृत्तिका, मञ्जरो, प्रकट, मञ्जर, इत्यादि । ध्यर देखो ।

भावे चक्षुः । ४ दमन, घासन । ५ शरणागतत्वाच्च,
मयं भूतमेव चिह्नं सा घोरा दानरूप कर्म तय ।

(भारत मोक्षार्थ)

दृश्य इवावस्थिति दंड-क्षिप्ततो भावे च॥ १ दंड
(पुन्यस्थिति, दंड देने योग्य चक्षुः) दंड करणादो च॥
० प्रकाण्ड, बड़ा भारी। ८ चन्द्र, छोड़ा। ८ कोण,
कोना। १० मन्थन, मथाणे। ११ मेय, सेना। १२
मुमिका परिमाणभेद, जमीन मापनेका एक प्रकारका
दंड वा गज। यह चार बात नम्या होती है। (दीर्घाक्षी)

१३ सुयंका एक परिपट्टः । १४ यम, दण्डकसां ।

१५ अभिमान, घमण्ड । १६ देहाकार चरभट्ट, एक
घर जो दंडके आकारका होता है । मर्यादांगारक देगा ।

१० राजाकुरावके एक पुत्र । इन्कोके नामानुसार राजा-

धर्म, भय, काम और मोक्षरूप चतुर्वर्ग निहित है।
ब्रह्मनि पक्षसे लक्षाध्यायको दण्डनोति रचो तो, बादमें
प्रजावर्गको भाग्यको भयपता पर विचार कर उसको
मर्चित कर दिया। मङ्गेश्वरने इसे दण्ड हजार पञ्चायोंमें
प्रसिद्ध किया। उक्त संक्षिप्त नीतिशास्त्र 'वैशाखाच'के
नामसे प्रसिद्ध हुआ। धनन्तर इन्दुने उसका ५ हजार
पञ्चायोंमें वर्णन किया, जो 'बाहुदण्डक' नामसे
विख्यात हुआ। वृहस्पतिने इस 'बाहुदण्डक' पत्रका
तीन हजार पञ्चायोंमें प्रचार किया और वह 'बाह्यस्थल'
नामसे प्रसिद्ध हुआ। अन्तमें शुक्राचार्यने इस शास्त्रको
एक हजार पञ्चायोंमें रचा। इस प्रकारसे यह जगत्में
प्रचारित हुआ। एक दण्डनोतिके प्रभावसे ही जन-
समाजमें नीति और धर्म का प्रचार हुआ है।

(भारत गोपमप ५९ अ०)

२ प्रजाको दण्ड दे कर अथवा दौड़ित करके शासनमें
रखनेकी राजाओंको नीति, सेना आदिके द्वारा बल-प्रयोग
करनेको विधि।

दण्डनीय (म० त्रि०) दण्ड-अनीयर । दण्डार्ह, दण्ड
देने योग्य।

दण्डनैष्ठ (म० त्रि०) दण्ड नयति दण्ड मोक्ष्य । दण्ड-
विधाता, सजा देनेवाला।

दण्डप (म० पु०) दण्डने पाति पाक । दण्ड द्वारा
पालक राजा, दण्डके द्वारा शासन करनेवाला राजा।

दण्डपायल (म० पु०) दण्डेन दण्डधारणेन पायलः
नीचः । द्वारपाल, दरवान।

दण्डपाणि (म० पु०) दण्डः यष्टिः पाणौ यस्य । १ यम । ये
अपने हाथमें हमेशा दण्ड लिए रहते हैं। २ कायोपित
भैरवभेद, कागोमें भैरवकी एक मूर्ति। पूर्वमद्र
नामक किमो यत्ने महादेवकी पाराधना करके एक
पुत्र प्राप्त किया जिसका नाम रखा गया हरिकेश।
हरिकेश बचपनहीसे महादेवका बड़ा भक्त था।
पक्षि उर्वेति महादेवके उद्देश्यसे खटोर तपस्या
पारम्भ की। इस प्रकार बहुत दिन बीत गये। महादेव
इनको तपस्यासे प्रसन्न हो कर पार्वतीके साथ वहाँ
पहुँच गये और हरिकेशका शरीर स्पर्श किया। इस पर
हरिकेशके हृदयमें आनन्द का उदय हुआ और अपने चमोटे
देवकी सामने देव के फसे न समझाये और उनकी मूर्ति

करने लगे। बाद शिवजी बोले—'यष्ट ! त्वम् कामोके
दण्डहर हो जा। वहाँके दुष्टोंका शासन और साधुओंका
पालन करना। आजसे तुम्हारा नाम दण्डपाणि रहा।
सम्भ्रम और सद्भ्रम नामके भेरे दो गण तुम्हारी महा-
यत्नाके लिये मटा तुम्हारे पास रहेंगे। बिना तुम्हारी
पूजा किये कोई काशीमें मुक्ति नहीं पा सकेगा। जो
भेरे भक्त होंगे, उन्हें भी पहले तुम्हारी पूजा करना
पड़ेगी। देवगण और मानव समाजमें तुम ही प्रधान
पूजनीय होंगे।' इतना कह कर महादेवने चानन्दकानन
में प्रवेश किया। दण्डपाणि महादेवके आदेशानुसार
काशीपुराका शासन कर रहे हैं। (काशी ७२ अ०)

३ ध्वनामस्यात चन्द्रवर्गीय नृपविगीय, चन्द्रवर्गः । एक
राजाका नाम। ४ बुद्धमूर्तिभेद, बुद्धदेवके एक मूर्ति का
नाम।

दण्डपात (म० पु०) दण्डस्य पातः । सन्निपात रोग
विगीय । इसमें रोगीको नौद नहीं आती, वह दधर उधर
पागलकी तरह घूमता है।

दण्डपातन (म० क्लो०) दण्डस्य पातनं । दण्ड निक्षेप,
डंडका फेंकना।

दण्डपाश्वर्य (म० क्लो०) दण्डेन यत् पाश्वर्यं पश्यता दण्ड्य-
तेनेनेति दण्डोदेवस्तेन यत् पाश्वर्यं विरहाचरत् ।
१ व्यञ्जहार विपर्ययेन, दुष्टकार्य, मार पीट। दूसरेके
शरीर पर हाथ पैर और चप्पल आदिसे घाघात करने तथा
धूल मलमूत्र आदि फेंकनेको दण्डपाश्वर्य कहते हैं
पर्याय दण्डके प्रति जो कुछ विरहाचरत् किया जाय,
उसीका नाम दण्डपाश्वर्य है। २ राजाधीन सत् व्यसनी-
मेंसे एक। ३ गठारह विवादोंमेंसे एक। दण्ड देखो।
दण्डवास (म० पु०) दण्डं शरीरं पानयति पानि-
चम् । १ महाभेद, दौड़िका मझो। दण्डने पानयति पानि-
चम् । २ द्वारपाल, छोटीद्वार, दरवान।

दण्डपासक (म० पु०) दण्डपाशात् कायति कञ् ।
शकुलमाला, बाग मझो।

दण्डपासो (म० क्लो०) तुनायन्, तरान् ।
दण्डपाशक (म० पु०) १ प्रधान दण्डदाता, दण्ड देनेवाला
प्राधान्य धारो। २ घातक, खत्नाद।

दण्डपायिक (म० पु०) घातक, खत्नाद।

कारणका नामकरण हुआ है । (हरिवंश १० अ०)
१८ मोठ पलके बराबर समथ । पटियन्त देखो ।

१८ विष्णु । (मारत १३।१४।१०५) २० शिव । (मारत १३।२८६ अ०) २१ दंडाकार ऋजु स्य के परिधि का एक भेद । (बृहत्सं० १३ अ०) २२ दंडवत् स्थित सूर्यादिकी किरणों का संघात । (बृहत्सं० ३० अ०)

२३ राज्यकी रक्षाके लिये राजाओंकी ओरसे किया जानिवाला चौथा उपाय । सामं, दामं, भेद और दंड ये चार उपाय हैं । स्वदेश और परदेशके भेदसे दंडमें पाठ्यत्व होता है । राजा स्वदेश अर्थात् अपने राज्यमें प्रजाशासनके लिये जो दंडविधि प्रचलित करता है, उसे स्वदेश-दण्ड कहते हैं । अग्निपुराणमें लिखा है—परदेश-में प्रयोज्य दण्डादि प्रकाश और अप्रकाशके भेदसे दो प्रकारके हैं । लुण्ठन, आगघात, शस्त्रघात, अग्निदोषन, विय, अग्नि और विविध पुरुषोंकी सहायतासे वध, ये प्रकाश-दण्ड हैं । साधु-दूषण और उदक-दूषण इनको अप्रकाश-दण्ड कहते हैं । (अग्निपु० १७४ अ०)

प्रजा शासन दण्डके विषयमें महाभारत और हिन्दू-धर्मशास्त्रादिमें कैसा वर्णन है, यहाँ उसका सार भाव कहा जाता है ।

राजाको किस अपराधमें कैसा दण्डविधान करना चाहिए, इस विषयमें निम्न प्रकार लिखा है ।

ऋणदान—उत्तमर्णके कर्ज देने पर यदि अधमर्ण परिशोध (चुकता) न करे, पीछे उत्तमर्ण राजाके पास नालिश करे और अधमर्ण ऋणकी स्वीकार करे, तो अधमर्णको एक सौ पणमेंसे ५ पण दण्ड देना चाहिए, परन्तु अधमर्ण यदि ऋणकी स्वीकार करे, तो उसे सौ-पणमेंसे १० पण दण्ड देना उचित है । उत्तमर्णकी वस्तु (गिरवी) ले करे ऋणस्थानमें छद्म ग्रहण करना चाहिए अर्थात् प्रतिमास भैकड़ा पीछे अस्सी भागका एक भाग व्याज लेना चाहिए । यदि कोई भोगार्थ वस्तु वा दांस दासोंको उत्तमर्णके पास गिरवी रख कर अधमर्ण रुपये कर्ज लेवे, तो उन रुपयोंका जुदो व्याज नहीं ली जाते । इसका अतिक्रम करनेसे दण्डनीय होने ।

मिथ्या घोषण (झूठी गवाही)—लोकके वधवर्ती झूठी गवाही देनेमें हजार पण दण्ड होता है । मोहके

कारण झूठी गवाही देनेमें दण्ड भी पण, भयके कारण मिथ्या साक्षी देनेसे हजार पण, सौहर्षे या कर-झूठी गवाही देनेवालेको हजार पण, कामाधोन हो कर-झूठी गवाही देनेसे दण्ड हजार पण, क्रोधवश देनेसे तीन हजार पण, अज्ञानतासे देने पर दो सौ पण और पक्षावधानतासे झूठी गवाही देने पर एक पण दण्ड होता है । राजाको सत्यधर्मके पालनार्थ और अधर्मके शासनके लिए उक्त दण्डविधान करना चाहिए । परन्तु क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये तीन वर्ण यदि बारम्बार मिथ्या साक्ष्य दे, तो उन्हें पूर्वात दण्ड दे कर देशसे निकाल देना चाहिए । ब्राह्मणकी पर्यदण्ड न करके, सिर्फ निर्वासन-दण्ड ही देना चाहिए ।

निक्षेप—यदि कोई व्यक्ति विश्वासपूर्वक किसीके पास धन गच्छित (धरोहर) रखे और उसे फिर वह वापिस न दे, तो राजाको उचित है कि उसे स्वर्णादि-चोरके समान दण्ड दे । जो व्यक्ति मिथ्या प्रतारणादिके द्वारा परधन हरण करता है, उसको तथा उसके सहायकोंकी वध-दण्ड मिलता है ।

अस्वामि-विक्रय—जो स्वामी हो कर स्वामीकी अनुमतिके बिना उसकी चीज बेचता है और वह व्यक्ति यदि द्रव्य स्वामीके वंशका कोई हो, तो उसे ६ सौ पण दण्ड देना चाहिए और यदि द्रव्य-स्वामीके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध न हो, तो उसे चौरदण्डसे दण्डित करना चाहिए ।

सम्पत्समुत्थान—बहुतसे मिल कर काम करे, उनमेंसे परस्परका अंश भी यथा नियमसे विभाग कर ले । यदि मोहवश इनसे अन्यथा करे, तो राजाको चाहिए कि उसको चौर्यके निमित्त एक सुवर्णका दण्ड दे ।

क्रयविक्रयव्यवहार—क्रय वा विक्रय करके जो पीछे अनुताप करता है, वह उस द्रव्यको दश दिनके भीतर फिरतो दे वा फिरतो ली सकता है । परन्तु दश दिनके बाद इन तत्त्व फिरतो लिया वा दिया नहीं जा सकता । यदि बलपूर्वक लौटा दे वा फिरतो ले, तो उसको ६ सौ पणका दण्ड होता है ।

सोपनिगृहकन्यादान—दोपविगृहकन्याके पत्रगुणोंको क्रिया कर यदि उसका कोई सम्पदान करे,

दण्डपिण्डक (सं० पु०) दंडः दण्डः पिण्डोऽयम् । उत्तराय
दिग्भेद, एक दण्डका नाम जो उत्तरको ओर पड़ता है ।
दण्डप्रणाम (सं० पु०) दंडवत्, भूमिमें डंडके समान
पड़ कर प्रणाम करनेकी क्रिया ।

दण्डवधः (सं० पु०) दंडेन वधः । प्राणदण्डः ।
दण्डवानधिः (सं० पु०) दंड इव वानधिर्गस्य । हस्तो,
हाथी ।

दण्डवाहः (सं० त्रि०) दंड इव वाह्यस्य । १ दंडाकार
वाहयुक्त, जिसको वाह्य डंडके आकारसे हो ।

दण्डभोति (सं० स्त्री०) दंडस्य भोतिः इत्यत् । दंडित
कोनका भय, सजा पानेका डर ।

दण्डभृत् (सं० पु०) सक्तभामण्यस्य सगुहादिकं भ्रमति
भृत् क्तिप् तुगागम्य । १ कुम्भकार, कुम्हार । दंड दमनं
विभर्ति । (त्रि०) २ दंडधारक, डंडा रखनेवाला ।

दण्डमत्स्य (सं० पु०) दंड इव, मत्स्यः । दण्डाकार
मास्यभेद, एक प्रकारकी मछली जो देखनेमें डंडे या
साँपके आकारकी होती है, वाम मछली । इसका गुण—
तिक्त, पित्तकर श्रोत्र, कफनाशक, शुक्र तथा वनस्पतिक है ।

दण्डमातङ्ग (सं० पु०) तगर, एक प्रकारका पेड़ ।

दण्डमाय (सं० पु०) दंडकारी मायः पत्याः । प्रधान
पथ, सीधा रास्ता ।

दण्डमायिक (सं० पु०) दंडमायं भावति ठक् । प्रधान
पथसे भावमान वस्तु वह मनुष्य जो सीधे रास्तेसे
जाता हो ।

दण्डमानव (सं० पु०) दंडप्रधानो मानवः मध्यलो०
कर्मधा० । दंडप्रधान जन, वह जिसे दंड देनेकी
अधिक आवश्यकता पड़ती हो, बालक, लड़का ।

दण्डमुद्रा (सं० स्त्री०) दंडाकारा मुद्रा । तन्त्रपारोक्ष
मुद्राभेद, तन्त्रकी एक मुद्रा । इसमें मुद्रो बांधकर बीच-
की उंगली ऊपरको खड़ी करती हैं ।

दण्डयात्रा (सं० स्त्री०) दंडाय शत्रु दमनाय यात्रा या
यात्रा प्रयाण । १ दिग्विजय । २ सेनाको चढ़ाई ।

३ बरयात्रा, वारात ।

दण्डयाम (सं० पु०) दंडं यच्छति यम-यणः ।
१ यमराज । २ दिवस, दिन । दंडे इन्द्रियदमने यमः
संयमो यमः । ३ यमस्त-मुनि ।

दण्डयोग (सं० पु०) दंडविधान, शांतिप्रदान ।

दण्डरो (सं० स्त्री०) दंडं तदाकारं राति रा-क-पोरा०
डोय । डहरो हथ, एक प्रकारको कफही ।

दण्डवत् (सं० त्रि०) दंडः विद्यतेऽसा दंड-मत्प, ममा
वः । १ दंडविगट, दंडधारो । (स्त्री०) २ साट्टा
प्रणाम, घुटो पर सेट कर किया घुसा नमस्कार ।

दण्डवादिन् (सं० पु०) दंडेन वदति वद-णिनि । १ हार-
पाल । (त्रि०) २ दंडयन्ता, जो सजा देनेका डर
दिखाना हो ।

दण्डवाच्य (सं० स्त्री०) भवस्यानभेदः ।

दण्डवासिक (सं० पु०) हारपाल, छोटीदार, दरवान ।

दण्डवाधो (सं० पु०) दंडेन वसति वस-णिनि । १
हारपाल, दरवान । २ एक यामका शासनकर्ता, गांवका
हाकिम या मुखिया ।

दण्डवाही (सं० पु०) दंडं वहति वह-णिनि । दंडधारक
पुलिस कर्मचारी ।

दण्डविधि (सं० स्त्री०) वह नियम या व्यवस्था जो
अपराधोंके दंडसे सम्यक् रखता हो, जुर्म ओर सजाका
कानून । (Criminal law)

दण्डविशुद्ध (सं० पु०) दंडः मन्थनं दंडं विष्कभाति
निवधाति यव, वि-स्कृन्म अधिकरणे चञ् ततोपत्ये ।
मन्थनदंड बांधनेका स्तम्भ, मट्टा मथनेका खंभा ।

दण्डहव (सं० पु०) दंडादारः पत्रादिकोऽनवात् हवः ।

१ खुशीहथ, धूहर, सेडुह । (Euphorbia) स्थाय-
कम् । दंड हथक, एक प्रकारका पेड़ जिसमें पत्तों पादि
कुछ भी नहीं होते । यह डंडेको तरह खड़ा रहता है ।
इसीसे इसका नाम दंडहथ पड़ा है ।

दण्डहृष्ट (सं० पु०) दंडभ्रंशको व्यूहः । व्यूहभेदः,
सेनाकी डंडके आकारको स्थिति । इसमें आगे सेना-अध-
बोचमें राजा, पीछे सेनापति, दोनों ओर हाथी, हाथियों-
की बगलमें घोड़े ओर घोड़ोंकी बगलमें पैदल सिपाही
रहते थे । इस व्यूहका चक्केसु मनस्वृत्तिमें पाया है ।
अग्निपुराणमें इसके सर्वतोहृत्ति, तिर्यग्भूत्ति पादि
अनेक भेद बतलाये गये हैं ।

दण्डव्रतधर (सं० पु०) दंडव्य व्रतं तस्य धरः । १ दंड
रूप व्रतधारो राजा । २ दंडधर, यम । (त्रि०) ३ दण्ड-
धारक, डंडा रखनेवाला ।

ही राजा उसे २६ पणको दण्ड देता है। जो व्यक्ति दोषके कारण किसी कन्या पर 'संतोषिनी' है, 'कुमारी नहीं है' कह कर दोष लगाता है और उसे प्रमाणित नहीं कर सकता राजा उसे भी पणका दण्ड देता है।

स्वामि-पाल-विवाद—पशुओंके बारेमें स्वामी और पालक नियमका व्यतिक्रम करे, तो राजाको विचार पूर्वक दण्ड देना चाहिए। यदि कर्षकके दोषसे शूखको जानि हो, तो राजा उसे जितना शस्त्र राजाका प्राप्य है, उससे दण्ड शुना दण्ड दे। स्वामी और पशुपालके रक्षणके दोषसे पशुद्वारा शस्त्र मष्ट होने पर भी राजाको उक्त प्रकार दण्डविधान करना चाहिए।

श्रावण (गालोगलोज)—क्षत्रिय यदि ब्राह्मणको गाली देवे, तो उसे भी पण, वैश्यको छेद ना दो सो पण और शूद्रको घण (पर्याप्त दण्डविध शारोरिक दण्डमेंसे कोई एक) दण्ड देना चाहिए।

ब्राह्मण यदि क्षत्रियका गाली दे, तो उसे ५० पण दण्ड देना पड़ता है, वैश्यको दे तो २५ पण और शूद्रको दे तो १२ पण दण्ड होता है। द्विजातियोंमें, सम-वर्षमें परस्पर अपमानपत्र होने पर १२ पण दण्ड होना चाहिए। किन्तु यदि कोई अथव गाली-गलोज करे तो उसे पूर्वोक्त दण्डसे दूना दण्ड देना चाहिए।

एक जाति भर्षात् शूद्र यदि द्विजातियोंके प्रति कठिन वाक्यका प्रयोग करे, तो शूद्रको जिज्ञाच्छेदका दण्ड मिलना चाहिए। दण्डित भावसे शूद्र यदि ब्राह्मणकी धर्मपदेय दे तो राजाको उसके मुँह और कानमें गरम तेल डलवा देना चाहिए। किन्तु यदि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तिको विद्या, दैव्य, जाति, संस्कार और कर्मके विषयमें दर्प करके बन्धुया कुछ कहें, तो उसे दो सो पण दण्ड होना चाहिए।

माता, पिता, पत्नी, भ्राता, पुत्र अथवा गुरु, इनको गाली देनेसे एक सो पण दण्ड होना चाहिए।

दण्डपात्र (मारपीट)—यदि पश्वज (पर्यात् शूद्र) किसी भी पश्वमेथे जातिकी मारे, तो राजाको उचित है कि वह समके सम पश्वको छेद दे। शूद्र यदि थोड़ा जातिकी मारनेके लिए हाथ या डंडा उठावे, तो उसे हस्तच्छेदका दण्ड मिलना चाहिए और यदि पद-

द्वारा अपमान किया हो, तो पदच्छेद होना उचित है।

शूद्र यदि ब्राह्मणके साथ एक पामन पर बैठे तो राजाको उचित है कि उसके कटिदेग पर मोहनय तम शलाका दाग कर देगसे निकाल दे। घबरा मरने न पावे इस दंगसे उसका पयात्पामन (चूतड़) काट लें। दर्प करके यदि शूद्र ब्राह्मणके शरीर पर धूक दे, तो उसके थोड़ाधर छेद देना चाहिए। पेगाव करनेसे निह-च्छेद, अघोवायु त्यागनेसे गुह्यदेग छेदन, और पशुद्वारा पूर्वक यदि हस्तद्वारा ब्राह्मणके वेश धारण करे वा द्विसाजन्य पदद्वय और डाढ़ी पकड़े तो उसके दोनों हाथ छेद देना चाहिए। समान जातिमें यदि कोई किसीका चर्मभेद अथवा रक्त दर्शन करे, तो उसे एक सो पण दण्ड होगा। मांसभेद-कारोकी ६ निम्न दण्ड होगा। पश्वि भेद-करनेवालेको निर्वासनदण्ड होगा। मनुष्य अथवा पशुओंको मार कर पोड़ा देनेसे पीड़ाके अनुसार दंड होगा। पश्वभेद, चतुर्था रक्षणपत्र होने पर, मारने-वालेको पाहल व्यक्तिके पाराम पड़नेके लिए भोवध और पण्य आदिका खर्च देना पड़ता है; नहीं देनेसे उस व्यक्ति समान दंड होता है।

चौरादि—मासिकके सामने वस्त्र-पुर्षक जो चोरो की जातो है, उसे साहम कहते हैं और पसमचमें छिप कर चोरी करनेको चोरो। यदि कोई किसीको चोरा से कर पस्तोकार करे कि, "मैंने नहीं सो," तो उसे भी चोरो कहते हैं। चोर जिन जिन पश्वोंमें चोरी करता है, राजाको उचित है कि उसके वे पश्व छेद दें, जिनसे फिर वह चोरो न कर सके। पिता, पाचार्य, भार्या, पुरोहित आदि सभी दण्डयोग्य हैं। राजा यदि स्वयं अपराध करे तो उसके भी दंड प्रहण करना पड़ता है। राजा स्वयं जो पर्यदंड देंगे, उसे पानोमें लाभ देंगे वा ब्राह्मणको दे देंगे।

चोरो करनेवाला गुणदोषय यदि शूद्र हो तो पद-गुण, इसी प्रकार वैश्य चोरको १६ गुण क्षत्रिय चोरको २२ गुण और ब्राह्मण चोरको ६४ गुण दंड दिया जाता है। यदि ब्राह्मण बहुत गुन्वान् हो, तो यतगुण दंडकी व्यवस्था करना चाहिए, उसमें भी अधिक गुन्वान् होने पर १२८ गुण अधिक दंड होना चाहिए।

दण्ड संहिता (सं० स्त्री०) दंडस्य संहिता शास्त्रं ।

दंडविषयक शास्त्र, फौजदारी आईन (Penal Code)

दण्डसहाय (मं० पु०) दंडे सहायः । दृष्ट दमन प्रभृतिभिः
राजाका सहाय्य, वह महाप्रता जो दुष्टोंको दमन करने-
के लिये राजाको ओरसे पहुँचाई जातः है ।

दण्डमेन (मं० पु०) १ पुरुवंशके एक राजा जो बिम्बन्
मेनके पुत्र थे । २ क्षापरयुगके एक राजाका नाम ।

(भा त० आदित्य० १३०)

टण्डस्थान (म० क्रो०) टण्डस्थान दंडस्थान दंडका
स्थानविशेष, वह स्थान जहाँ दंड दिया, ज्ञा मन्ता
है। मतुने दंडके लिये १० स्थान निर्णय किये हैं,—
चपस्य, सदर, जिह्वा, दांता हाथ दोनों पैर, चक्षु,
नानिका, कर्ण, धन श्रोत्र देह। राजा शरार्थक अनुसार
रक्त दण्ड स्थानोंमें दंडका विधान कर सकते हैं। (मनु
८।१२४-२५) दंड देखो।

दण्डवत् (म० स्त्री०) दण्डवत् दस्तो हुनारूपो यस्य ।
नगरपुष्प, नगरका फूल ।

दण्डा (सं० स्त्री०) नागवला, गंगेरन, गुलमकरो ।

ਦਫ਼ਤਰ (ਹਿੰਦੂ ਪੁਰਾਣ) ਭੰਡਾ ਦੇਖੋ ।

दण्डाक्ष (सं० स्त्री०) तीर्थभेद, एक तीर्थस्थान जो चम्पा नदीके किनारे अवस्थित है। इसमें स्नान टागादि करनेसे हजारों गोदान करनेका फल होता है।

दण्डाघात (सं० पु०) दंढेन आघातः इत्यतः। दंढं द्वारा प्रहारः, डंढेने मारनेकी क्रिया।

दृष्टाजिन (स० क्रो०) दंडच भतिनच द्वयोः समा-
हारः । १ माधु संध्यासिधौके धारण करनेका दंड
भोर मृगचर्म । तच्छूलिन धारणतया पशुमय पच । २
शठता, कपट विद्या, झूठमूकता भाडम्वर । कपटो वाह-
सि तो दंड मृगचर्म भादि धारण करते, किन्तु भीतरसे
कपट भाग रहता है । इसी कारण दंडा शब्दसे शठ-
ताका भी पर्य होता है ।

दण्डाग्रा (मं० स्तो०) दंडश्च चाग्रा । दंडादेग, मग्रा
देनेका दक्ष ।

दण्डादण्डि (मं० अथ०) दंडेय दंडेय प्रहस्य प्रहस्य
युहं इच्छ समामान्तः पूषं पददोषः । इच्छं पददोषः ।
पा ५।४।२०) परम्परा यति द्वारा युद्ध, उड्डेकी मार
घोट, लड़ाजी ।

दण्डादि (सं० स्त्री०) दंड पादित्यस्य । पाणिन्युक्त
गणमेव । पाणिनिका एक गण । दंड, सुवन, मधुपर्क
कथा, पय, मेघ, सुवर्ण, तदक, वध, युग, गुहा, भाग,
इभ और भद्र ये दंडादि गण हैं । (पाणिनि)

दण्डाधिप (मं० पु०) दंडस्य अधिपतिः ६-तत् । दंडाधिपति, राजा ।

दण्डाधिपति (स० पु०) दंष्टस्य अधिपतिः ६-तत् । दंष्ट-
हेनेकं अधिपति, राजा ।

दण्डापतः नरु (सं० क्र०) वातरोगविशेष, एक प्रकारकी
वात-आदि। इसमें कफ और वात रू बिगड़नेसे मनुष्यको
देह सूखे काठकी तरह जड़ हो जाती है।

दण्डाप्रपन्थाय (सं० पु०) दण्डे दंडाक्षयं चतुर्पथ तत्त्व-
 त्वम्यस्य कथं तन्निगिदकन्यायः । न्यायमें ट, एक
 प्रकारका न्याय 'वा' टोटान्तकथन जिसके द्वारा यह
 सूचित किया जाता है कि जब किनोमें कोई कठिन
 कार्य हो गया तब उसमें मध्यम रखनेवाला सहज कार्य
 पथग्रहो दुष्टा होगा । जैसे—कोई गृहस्थ अपने घरके
 किमो जगह 'डण्डे'में बांध कर मानसूपा रख गया हो
 और जोट कर उसमें चूड़को डंडा छानि देखा हो, तो
 यह सहज हो समझमें आ जाता है कि उस चूड़ने
 मानसूपा तो पहल हो उड़ा दिया होगा क्योंकि जब
 वह डंडा सँखो कड़ा पोज खा रहो है, तो उसने
 मानसूपा नैसी नरम और मड़ी चीज न मारी हो
 यह कदापि संभव नहीं हो सकता । अतएव निर्णय
 हुआ कि चूड़ने पथग्रह हो मानसूपा खाया है । इसी
 प्रकार किमो कटवाय कार्यको निश्चिंत समान करने-
 की दण्डाप्रपन्थाय कहा जा सकता है । श्राव देगा ।

દખાયમાન (સં. તિ.) શ્રી હંદેકો તરફ સોખા
ગયા હો ।

दण्डार (मं० पु०) दंडं मच्छति कटं-पण् । १ वाहन,
गाड़ी, नाव आदि । २ मत्त द्रव्यो, मतदामा दायो ।
३ कुम्भकारचक्र, कुम्हारका पात्र । ४ यन्त्रभेद, धनप ।

दण्डार्थं (मं० स्तो०) चप्पा नदाकं समोपप्य तोयं
भंडं एकं तोयं लोचस्य नदीकं किंवा पंक्ता १.

दण्डानय (मं० पु०) १ न्यायानय जहानि दंडका विधान
को० २ दंड दिये जानिका स्थान। एक बन्द। कोरि
कोरि इसे दंडका मो कहता है।

वालो वा वैराग्यन—स्तो-न यह और परदारगन्धोग-
मे लोकमें वण मङ्गर सन्तान उत्पन्न होती है और
उमसे नाना प्रकारके अधम एवं सर्वनाश उत्पन्न होते
हैं। इसलिए परदारगन्धोगमें प्रवृत्त लोगोंके लिए नाना
प्रकार उद्देशजनक नासाकर्णच्छेदनादि कठोर दंड-
विधान करना उचित है। परश्वेको सुगन्ध माला आदि
भोजना, उमसे परिहास करना, आलिङ्गन करना, उसके
अनङ्गार छूना, वस्त्र पकड़ना, उमके साथ एक शय्या
पर सोना और एक साथ भोजन करना इत्यादि अपराध
करनेवालोंकी गणना स्त्री-संग्रहण रूपमें करना चाहिए।
स्त्रियोंके अप्रस्थान पर यदि पुरुष हाथ लगावे वा स्त्री
यदि पुरुषके अप्रस्थानको अर्थ करे और पुरुष कुछ न
कहे, तो यह दोष मानुमत स्त्रीसंग्रहणपदवाच्य होगा।

शूद्र यदि सकामा ब्राह्मणोंके साथ उक्त प्रकार व्यवहार
करे, तो उसे प्राण दंड होगा। चारों हो वणके लिए
भार्या सर्वदा पात्यन्त रक्षणीया है। भिचाजीवो, बन्दी,
श्रद्धांकी और स्वकारादि काहकर, ये लोग परस्त्रीके साथ
अनवारित भावसे बात चोत कर सकते हैं; किन्तु सामोके
निषेध कर देने पर उन्हें बोलना बन्द कर देना चाहिए।
निषेध करने पर भी जो बात चोत करता है, उसे एक
सुवर्ण दण्ड देना पड़ता है।

ऊपर जो विधि लिखी गई है, वह नष्ट, नतक वा
भार्याजीवो आदि नीचोंको स्त्रियोंके लिए लागू नहीं
हो सकते। तीमो उपयुक्त व्यक्तियोंको स्त्री वा दासोके
साथ क्षिप्र कर व्यभिचार करनेवालोंको किञ्चित् दण्ड
देना उचित है।

सकामा कन्याके साथ सम्भोग करनेसे सद्यः शारी-
रिक दण्ड होगा। समानजातीय सकामा कन्या-गमनमें
शारीरिक दण्ड नहीं है। अथल्ल जातीय स्त्री यदि अपने-
से उल्लट जातीय पुरुषको भजना करे, तो उसे कुछ
भो दण्ड नहीं होगा। जो पुरुष दर्प करके बल-पूर्वक
समान जातीय पर स्त्रीको योनिमें धङ्कुल प्रविष्ट करे,
उमको दो अङ्गुलि उसो समय छेद देने चाहिए और
५०० पण भी दण्ड देना चाहिए। सकामा समानजातीय
स्त्रीके साथ यदि उल्लट रूप व्यवहार किया जाय, तो उसको
५०० लि नहीं छेदो जायगो; किन्तु अत्यासक्ति निवारणके

लिए दो सो पण दण्ड अवश्य होगा। यदि कोई कन्या
अन्य कन्याको योनिमें उँगनी डाले, तो उसे दो सो
पण दण्ड तथा दूना शुल्क और दस धेत मारना उचित
है। (मनु ८। ३६९)

यदि वयस्का स्त्री-कन्याको उक्त प्रकारसे नष्ट करे,
तो उसका मस्तक मूंड कर अङ्गुलि छेद देना चाहिए
और गदहे पर चढ़ा कर राजशयमें घुमाना चाहिए।
जो स्त्री 'मैं धनको कन्या हूँ' यह समझ कर वा अपने
सौन्दर्यके भद्रमें आकर अपने पतिको त्याग दे और
परपुरुषके साथ रमण करे, तो उसे जनसमूहके बीचमें
ले जाकर कुत्तोंसे चुसवाना चाहिए। पाप करनेवाले जार
पुरुषको तम लोह पर सुनाकर जमाना चाहिए और जब
तक वह भ्रम न हो जाय, तब तक लकड़ो देते रहना
चाहिए। एक बार दण्डित हो कर यदि फिर एक वष
बीतने पर वही अपराध करे तो उस दुष्टको दूना दंड
देना चाहिए। ब्राह्मजात स्त्री और चांडालो स्त्रोंके साथ
गमन करनेसे भी यही दंड देना चाहिये। रक्षिता हो वा
अरक्षिता, शूद्र यदि हिजातीय स्त्रीसे सम्भोग करे तो
उसे लिङ्गच्छेद और सर्वस्व हरणका दंड देना चाहिए
तथा भर्तु आदि रक्षिता स्त्रीके साथ गमन करनेसे वध
और सर्वस्वहरण दंड होगा। वैश्य यदि रक्षिता
ब्राह्मणीसे रमण करे, तो उसे सहस्र पण दंड और
गदहेके मूत्रसे मस्तक मुण्डन करना चाहिए।

वैश्य और क्षत्रिय यदि रक्षाहीना ब्राह्मणीके साथ
रमण करे, तो उसे शूद्रवत् दण्ड होगा, अथवा दर्भ वा
गर द्वारा ठक कर उसे लला देना उचित है। ब्राह्मण यदि
रक्षिता ब्राह्मणीके साथ बलपूर्वक सम्भोग करे, तो सहस्र
पण दण्ड और सकामा ब्राह्मणी-गमनमें ५०० पण दण्ड
होगा। ब्राह्मणके समस्त पापयुक्त होने पर भी उसे सर्वस्व
धनके साथ अथवा शरीरमें निर्वासन दण्ड देना उचित
है। वैश्य यदि रक्षिता क्षत्रिया स्त्रीके साथ गमन करे
अथवा क्षत्रिय यदि इस प्रकारको वैश्य-स्त्रीसे सम्भोग
करे, तो दोनोंको अरक्षिता ब्राह्मणो-गमनमें जो दंड
दिया जाता है वही दंड देना उचित है। ब्राह्मण यदि
रक्षिता क्षत्रिया वा वैश्य स्त्री-गमन करे, तो सहस्र
पण दण्ड होगा। वैश्य यदि अरक्षिता क्षत्रियाके साथ

दण्ढासन (सं० स्त्री०) धामनभेद एक प्रकारका धामन ।

दण्डाहत (सं० स्त्री०) दण्डेन पाहत । १ तक्र, काक, मझ । (त्रि०) २ दंड द्वारा लातित, डंडसे मारा हुआ ।

दण्डिक (सं० पुं०) दंडोऽस्तस्य दंड-उन् । (अत-
स्मिन्नो प । धारा ११५) १ दंडधारक, वह जो डंडा
रखता हो । २ मत्स्याधियेय, एक प्रकारको मछली ।
इसका गुण—सिक्त, क्षफ, वायु और पित्तनाशक तथा
लघु है । (त्रि०) ३ दंडदाता, मारनेवाला ।

दण्डिका (सं० स्त्री०) दण्डिक टाप । १ द्वारविशेष ।
२ रज्जु, डोरी, रस्सी । ३ शोभाकहस । ४ वीस पचरों-
का एक वर्णवृत्त । इसके प्रायेण चरणने रगणके बाद
एक जगण इस प्रकार गणों का जोड़ा तीन बार आता
है और भन्तमें गुण लघु होता है ।

दण्डित (सं० वि०) सज्जातोऽस्य दंडतारकादित्वादि-
तत्त्व । छतदंड, दंड पाया हुआ, जिसे दंड मिला
हो । इसका पर्याय—दायित भार साधित है ।

दण्डिन् (सं० पुं०) दंडोऽस्तस्य दण्ड-इति । १ यम । २
नृप, राजा । ३ द्वारपाल । ४ मज्ज-घास, मूज । ५
सूर्य के एक पार्श्व चरका नाम । ६ जिनदेव । ७ दमनक
वृक्ष, दीनेका पौधा । ८ चतुर्थायमविशिष्ट, दंडायमो,
वह सन्यासी जो दंड और कमंडलु धारण करे वा
किये हो । दंडो देखो । ९ दंडधारक, दंडधारण करने-
वाला व्यक्ति । १० महादेव । ११ धतराष्ट्र के एक पुत्रका
नाम ।

१२ संस्कृत साहित्यके एक प्रधान कवि । कोई कोई
इन्हें व्यासके बाद ही आसन देनेके लिए प्रस्तुत हैं ।
एक उद्धृत श्लोक है—

“वाते अगति वारमोके कविरित्त्वभिधीयते ।

कवी इति ततोऽग्रासे कवयस्त्वयि दण्डिनि ॥”

वारमीक द्वारा हो ‘कवि’ शब्द प्रचलित हुआ ।
पर्याय् वात्मीकिके पहले किसीने कवि पास्या नहीं
पाई, उनके बाद व्यासने जन्म लिया तो ‘कवी’ पर्याय्
दो कवि हुए, फिर दण्डो हुए, जिससे ‘कवयः’ पर्याय्
तोन कवि हो गये !

किसो किसीका कहना है कि उन्हें शोक महाकवि
कालिदासका है, परन्तु ऐसा ही नहीं सकता ; क्योंकि
दण्डो महाकविके बहुत पीछे हुए हैं । पर हाँ, कालिदास
नामधारी अन्य किमो परवर्ती व्यक्तिका हो सकता है ।

ऊपरके श्लोकके अनुसार दंडोको कालिदाससे अंछ
नहीं कहा जा सकता ; क्योंकि कालिदासकी रचना
दंडोकी अपेक्षा कहीं अछत है । लेकिन दंडोके सुमधुर,
सुसजित और उत्तम कन्दोयित्वासको देख कर उन्हें भी
महाकवि कह सकते हैं ।

संस्कृतवित् पंडितोंका कहना है कि दंडोने तीन
ग्रन्थ रचे जिनमें ‘दमकुमारचरित’ और ‘काव्यादग’ ये
दो ग्रन्थ मिलते हैं । यादों दिन हुए प्रा० पिरुथेल माहमने
प्रकट किया था कि शुद्धक-रचित मृच्छकटिका नामक
जो नाटक है, वही दंडोका हस्तोद्योग ग्रन्थ है । उनको
विश्वास है, कि दंडोने काव्यादगमें (२।३६१) जो यह
श्लोक लिखा है कि—

“हिमतीव तनोद्भवा विषयीयाजनं नमः ।

अस्युदयवेदेव दण्डिकस्ततो गता ॥”

वह मृच्छकटिकके प्रथमाङ्कमें उद्धृत किया गया है ।
दंडोने कमो भी दूसरीका श्लोक उद्धृत नहीं किया ।
इसलिये मृच्छकटिक दंडोका ही रचा हुआ मान्य
पड़ता है । मृच्छकटिकमें जिस दण्डसे मानव-जोषनके
घटना-वैचित्र्यका वर्णन किया गया है, दंडोके दम-
कुमारमें भा वही दण्ड पाया जाता है * ।

पण्डित महेश्वरन्ध्र न्यायरत्नने इसमें उत्तरमें प्रमाणित
किया है कि “सक्त श्लोक दंडोका रचा हुआ नहीं है ;
अन्यान्ध्र अन्धकारग्रस्तोंमें भी इनका सक्त है । दंडोने
काव्यादगमें महाभारत, शकुन्तला तथा शिष्यपाठवध
में कोई कोई श्लोक मुलतः वा सामान्यतः उद्धृत किए
हैं जैसा कि नीचेके श्लोकमें स्पष्ट प्रतीत होता है—

“पूर्वशास्त्राणि वृष्ट्य प्रयोगानुपक्रम्य च ।

वयावाचनार्थमग्रायामि क्रियते काव्यमज्ञेन ॥”

पूर्व शास्त्रसे संघट्ट किया है यह कवि स्वयं स्वीकार
करते हैं । ऐसे दगामें मृच्छकटिकके वर्णन (२नोक)

अन्न कर, तो वैश्यको ५०० पण दंड, क्षीणा, क्षत्रिय-
के लिए गणके मूत्रमे मस्तक-मुंडन पश्चात् ५०० पण
दण्डकी व्यवस्था है। परचित्ता क्षत्रिया वा वैश्या गमन-
में ब्राह्मणकी सहस्र पण दंड होगा। चण्डालादि क्षत्रियों-
के साथ गमन करनेसे भी ब्राह्मणके लिए उक्त दण्ड ही
है। जिस राजाके राज्यमें दंडके भयसे कोई भी चोरो,
परस्त्री-गमन, याकूपाख्य, साहस-दण्डपाख्य आदि अप-
राध नहीं करता, वह राजा इन्द्रके समान प्रभाव-
शाली है।

यदि कर्मचम कृत्स्नको यजमान अकारण त्याग
दे पश्चात् यदि निर्दोष यजमानको पुरोहित अकारण
त्याग दे, तो दोनोंको एक सौ पण दण्ड देना पड़ता है।

(मनु ८ ८५-८८)

पिता, माता, स्त्री और पुत्र इनको बिना पतित हुए,
सीधे-पूर्वक परित्याग करनेसे ५०० पण दंड होता है।

हिंसातिथीमें, गार्हस्थ्यादि आयुष्य-घटित श्राधानु-
ष्ठानके विषयमें यदि परस्पर विवाद हो जाय, तो धर्म-
हितकारी राजाको चाहिये कि उसी समय कोई दण्ड
स्थिर न करे। ऐसी प्रवृत्तियों जो जिस प्रकार मन्त्रमके
योग्य हैं, उनको उनी प्रकारसे पूजा करके मान्यता
हारा उनके क्रोधका उपशम करना चाहिये और ब्राह्मणों-
की सहायतासे धर्मकी व्यवस्था सम्भाल देनी चाहिये।
कोई गृहस्थ यदि सांख्यिक कार्यमें २० ब्राह्मणोंको
भोज देना चाहे, और प्रतिवेशी शय्या तटन्तरवर्ती
भगवेशी भोजनाह ब्राह्मणको कोड़ कर अन्य ब्राह्मणोंको
बुलावे, तो राजाको उसे एक नासा चांदीका दण्ड देना
चाहिये। अन्य श्रोत्रिय होकर यदि कोई प्रतिवेशी वा
भगवेशी श्रोत्रिय साधुओंको विद्यादि भूति-कार्योंमें
भोजन न करावे, तो उसे भोजनसे हिण्ण भोज्य द्रव्य
और एक मासा मोमों दण्डस्वरूप देना पड़ता है।

जो पण्य-वस्तुएं राजाकी काम खट्वाती हैं, पयवा
जिनको देयास्त से जानेको राजाने मनाई कर दी है,
उन वस्तुओंको यदि कोई व्यवसायी लोभमें पाकर देय-
स्त से जाय, तो राजाको चाहिये कि उसका सर्वस्व
हरण करे। राजा पण्य द्रव्यके लब्धिममेंसे भोगवा
भाग लेने। यदि कोई व्यक्ति दण्ड न देनेके अभिप्रायमें

पयवृत्तमार्गका पयलम्बन करे, रात्रिकी कृत्य विकृत करे
वा बेची हुई चीजोंको मंथना छटा कर कहे, तो उसे
पापनापित राजदेयसे आठ गुना दण्ड मिलता है।

ब्राह्मण यदि प्रभुत्व एवं लोभके वशीभूत हो कर
अनिच्छुक ब्राह्मणसे पैर धोना आदि टास्यकर्म करावे
तो राजा उसके लिए ५०० पण दण्ड विधान करे।

(मनु ८ ८९)

वाग्यवल्कावहितामें दंडविधिके संबंधमें हम प्रकार
लिखा है—

राजाको क्रोध और लोभग्रस्त हो कर धर्मशास्त्रानु-
सार विद्वान् ब्राह्मणोंके साथ व्यवहारको विधेयरूपमें जान
कर दण्ड विधान करना चाहिये।

१५४-वारह—आघात, चिह्न और प्रयोजन-आदिको
पर्यालोचना तथा जन-प्रवादके ऊपर निर्भर करके, किन्तु
साक्षी-रहित विवादमें विवेक पर्यालोचना करके दण्ड
देना चाहिये। शरीर पर भस्म, पट्ट पयवा धूनि देने
पर दण्ड पण दण्ड होगा। पण्य-वस्तु पादधोत चो।
निष्कोचन जन सूर्य कारनेसे पूर्वोक्त दण्डको पचेसा दूना
दण्ड होगा। सम व्यक्तिके प्रति यह नियम है। उल्लट
व्यक्तिके पादपण्यके प्रति ऐसा करनेसे दूना दंड और भी न
व्यक्तिके प्रति ऐसा व्यवहार करनेसे पाशा दंड होगा।
वित्तवैकल्य वा मत्ततादि वगैरे ऐसा करनेसे दंड नहीं
होगा। स्वजातिको प्रहार करने वा उसके प्रति पर
छानेसे दण्ड पण दंड होगा। परस्पर इननाथ शपथ
उद्यत करनेसे उत्तम साहसका दंड होगा। पद, देश,
वश पयवा हाथ पकड़ कर खींचनेसे दण्ड पण दंड
होगा। वस्त्र द्वारा बन्धन, गालमर्दन एवं भाकपण्य-
पूर्वक पादप्रहार करनेसे भी पण दंड होगा। काष्ठादि
प्रहारसे पाहत व्यक्ति के रक्तपात न होने पर उस प्रहारी
व्यक्तिको २२ पण और रक्तपात होने पर उसमें दूना दंड
होगा। हाथ और पयवा दांत तोड़नेसे कान वा नाक
काटनेसे पूर्य प्रणको ल्पाटा बढ़ा देनेसे, और हिंसने
मनुष्य मुटुके मगन हो जाय ऐसी ताड़ना करनेसे
मध्यममाहसका दंड देना चाहिये। गमन, भोजन और
यात कटना बन्ध कर देनेसे चतु और जिह्वा छिट देनेसे
तथा घोषा बाह वा उर देनेसे मध्यम माहसका दण्ड
देना चाहिये।

काव्यादृश में रहनेके कारण मृच्छकटिकको दंडि रचित नहीं कहा जा सकता । विशेषतः दशकुमारचरितकी चाड्यर-युक्त भाषा और मृच्छकटिककी सरल भाषा इन दोनोंकी पर्यालोचना करनेसे दोनों ग्रन्थ एक वाक्कि के निखे हुए हैं, यह कदापि नहीं कहा जा सकता । मृच्छकटिकके रचयिता शुद्धक है जो दंडीमें बहुत पहले हुए हैं, इसके बहुत प्रमाण भी हैं '१' शुद्धक देगा ।

बहुतांका मत है कि दंडो इठीं शताब्दीमें प्राविर्भूत हुए थे । कोई कहते हैं कि काव्यादृशमें (१।१२) 'कन्दोविचित्रां सकलमस्तप्रचो निदग्गताः' इस वचनमें 'कन्दोविचित्रा' का लक्ष्य है और सबको दंडोका तोषण ग्रन्थ है और किसी किमोका यह कहना है, कि 'दशकुमारका' उत्तरार्द्ध दंडोका रचा हुआ नहीं है ।

१३ संस्कृत भाषामें अनामयस्तीत्येक रचयिता ।

१४ काव्यप्रकाशके एक टोकाकार ।

१५ नाममात्रा । नामक संस्कृत कोषके रचयिता ।

दण्डिमन (सं० पु०) दंडस्य भावः कर्म वा इमनिच ।

दंडभाव, दंड देनेका काम ।

दण्डो—हिन्दूका एक उपासक संप्रदाय । ये लोग दंड और कामंडलु लिए इधर उधर भ्रमण करते हैं, इसी कारण इनका नाम दंडो पड़ा । ब्राह्मणके सिवा और किसीको दंडो होनेका अधिकार नहीं है । फिर पिता, माता, पुत्र, कन्या और भायिके रहते भी दंडो होनेका निषेध है । (निर्माणतन्त्र १६ पटल)

पिता माता इत्यादिके नहीं रहने पर ब्राह्मण जब संन्यासाश्रम ग्रहण करनेके नितास्त उत्सुक हो, तभी वे किसी दंडी गुरुके पास जा सकते हैं । दंडी गुरु भी फिर उन्हें विशेषउपदेश लांचकर प्राप्तश्रम विषय जान लेंगे और जब उन्हें अच्छी तरहसे मात्स मसी जाता है कि यथायमं दंडो होनेको इनको गहरी ठकपड़ा है, तब उन्हें मन्त्र दान करते हैं ।

मन्त्रप्रदानका नियम यह है—गुरु पहले शिष्यके

† Proc. of the Asiatic Society of Bengal, 1887, p. 198.

§ 'नाममात्रा' नामक और एक संस्कृत कोष है जिसके रचयिता अनन्तर दंडि हैं । यह ग्रन्थ कर गुहा है ।

गधीरमें फूलार टे कर प्राण प्रतिष्ठा करते और पोछे श्वाशानादि सभी संस्कार फिरसे करते हैं । इसके उपरान्त दशाक्षर मन्त्र देते हैं । शिष्या इस मन्त्रको मूल मन्त्र समझ कर जप करता है । मन्त्र नेने समय तबको शिष्या झूठ दो जाते और जनेज उतार कर भस्म बना दिया जाता है । पहला नाम मो बदल दिया जाता है । इस प्रकार यथाविहित क्रियादि कर चुकनेके बाद गुरु दण्ड, कमण्डलु और गिरुषा भस्म देते हैं । दण्ड ही दण्डियोंके लिए चतुस्त पादरही वस्तु है, क्योंकि वे इसके ऊपर मष्टामायाकी कल्पना करके पूजा करते हैं ।

दण्डोयोग गुरुषा वस्त्र पहनने, भिर मुहाये रहने और भस्म तथा रुद्राक्षकी माला धारण करते हैं । ये लोग शनि, धातु, वा घातक पाश्चाटि भयग नहीं करते, सुतरां अपने हाथमें रसोई नहीं बना मजते हैं । साथमें यदि कोई ब्रह्मचारी रहे, तो उनकी रसोई बना कर खा सकते, अन्यथा किसी ब्राह्मणके घरमें पकी रसोई मांग कर खा सकते हैं । सोनेके लिए उन्हें केवल एक छोटी चटाई और एक तकिया चाहिए । इनके लिए दो बार भोजन करना तथा ब्राह्मणके प्रतिश्रुति और किसी दूसरी जातिका भक्ष्य खाना निषेध है । इन सब नियमोंका बारह वर्ष तक पालन करके बाद दंडोका जन्ममें फंक दंडो परमहंस प्रायश्चित्तको प्राप्त करता है ।

किन्तु कोई कोई बारह वर्षके पहले ही दंड फंक देना और कोई थोड़े ही दिन तक इस प्रायश्चित्तमें रहता है । दंडियोंके साधारणतः विषयचारा होने पर भी तात्त्विक दंडियोंके लिए द्विप कर मयमांसादि व्यवहार करनेको व्यवस्था निषेध है—

"वचदार" सदा सेव्य" गुप्तभावे जिनेद्विः ।"

(पापनैमिषी)

किन्तु ऐसी व्यवस्था रहने पर भी कितने तात्त्विक दंडो लोग मयमांसादिका व्यवहार नहीं करते । जो करते भी हैं, वे बहुत द्विप कर ।

निर्गुण ब्रह्मोपासना ही दंडियोंका प्रधान धर्म है । लेकिन जो इस प्रकारको उपासना नहीं कर मजने समने लिए शिवादिस्त्री उपासना निषेध है ।

प्राणी वा वैराग्यमन—स्रो-गं श्व और परदारगम्योग-
मे लोकमें वष महर सन्तान उत्पन्न होतो है और
उमसे नाना प्रकारके अधम एवं सर्वनाश उत्पन्न होत
हैं। इसलिए परदारगम्योगमें प्रवृत्त भोगिकों लिए नाना
प्रकार उद्देशजनक नासाकर्णच्छेदनादि कठोर दंड-
विधान करना उचित है। परस्त्रीको सुगन्ध माला चादि
भोजना, उमसे परिहास करना, आलिंगन करना, उमके
अनङ्गार छूना, वस्त्र पकड़ना, उमके साथ एक शय्या
पर सोना और एक साथ भोजन करना इत्यादि अपराध
करनेवालोंकी गणना स्त्री-संग्रहण रूपमें करना चाहिए।
स्त्रियोंके अपव्रस्थान पर यदि पुरुष हाथ लगावे वा स्त्री
यदि पुरुषके अपव्रस्थानको स्पर्श करे और पुरुष कुछ न
कहे, तो यह दोष मातृमत स्त्रीसंग्रहपटवाथ होगा।

शूद्र यदि अकामा ब्राह्मणोंके साथ उक्त प्रकार व्यवहार
करे, तो उसे प्राण दंड होगा। चारों ही वर्णोंके लिए
भार्या सर्वदा अत्यन्त रक्षणीया है। भिचाजीवी, बन्दो,
मृत्विक् और चूपकारादि काहकर, ये लोग परस्त्रीके साथ
अनवचित भावसे बात-चीत कर सकते हैं; किन्तु सामोके
निषेध कर देने पर उन्हें बोलना बन्द कर देना चाहिए।
निषेध करने पर भी जो बात-चीत करता है, उसे एक
सुवर्ण दण्ड देना पड़ता है।

ऊपर जो विधि लिखी गई है, वह नष्ट, नर्तक वा
भार्याजीवी चादि नीचोंकी स्त्रियोंके लिए लागू नहीं
हो सकते। तोभी उपायुक्त व्यक्तियोंको स्त्री वा दानोके
साथ द्विप कर व्यवहार करनेवालोंको किञ्चित् दण्ड
देना उचित है।

अकामा कन्याके साथ सभोग करनेसे सदा शारी-
रिक दण्ड होगा। समानजातीय अकामा कन्या-गमनमें
शारीरिक दण्ड नहीं है। अप्रकट जातीय स्त्री यदि अपने-
से उत्कृष्ट जातीय पुरुषको भजना करे, तो उसे कुछ
भी दण्ड नहीं होगा। जो पुरुष दर्प करके बल-पूर्वक
समान जातीय पर स्त्रीको योनिमें प्रवृत्ति प्रेष करे,
उसको दो अङ्गुलि उसी समय छेद देने चाहिए और
६०० पण भी दण्ड देना चाहिए। अकामा समानजातीय
स्त्रीके साथ यदि उक्त रूप व्यवहार किया जाय, तो उसको
पर लि नहीं छेदो जायगा; किन्तु अथावसति निवारणके

लिए दो सो पण दण्ड अवश्य होगा। यदि कोई कन्या
अन्य कन्याको योनिमें उँगनी डाले, तो उसे दो सो
पण दण्ड तथा दूना शुल्क और दग बेत मारना उचित
है। (मनु ८। ३६९)

यदि वयस्क स्त्री-कन्याको उक्त प्रकारसे नष्ट करे,
तो उसका मस्तक मूंड कर अङ्गुलि छेद देना चाहिए
और गद्दे पर चढ़ा कर रात्रियमें घुमाना चाहिए।
जो स्त्री 'मैं धनको कन्या हूँ' यह समझ कर वा अपने
बौद्धिक मंदमें आकर अपने पतिको त्याग दे और
परपुरुषके साथ रमण करे, तो उसे जनसमूहके वीषमें
से जाकर कुत्तोंसे नुचवाना चाहिए। पाप करनेवाले आर
पुरुषकी तम लोह पर सुलाकर जलाना चाहिए और जब
तक वह भस्म न हो जाय, तब तक सशुद्धो देते रहना
चाहिए। एक बार दण्डित हो कर यदि फिर एक वय
वैतने पर वही अपराध करे तो उस दुष्टको दूना दंड
देना चाहिए। ब्राह्मजात स्त्री और चांडालो स्त्रियोंके साथ
गमन करनेसे भी यही दंड देना चाहिये। रक्षिता ही वा
अरक्षिता, शूद्र यदि द्विजातीय स्त्रीसे सभोग करे तो
उसे लिङ्गच्छेद और सर्वस्व हरणका दंड देना चाहिए
तथा भर्तृ चादि रक्षिता स्त्रीके साथ गमन करनेसे वध
और सर्वस्वहरण दंड होगा। वैश्य यदि रक्षिता
ब्राह्मणीसे रमण करे, तो उसे सहस्र पण दंड और
गद्देके मूत्रसे मस्तक मुण्डन करना चाहिए।

वैश्य और क्षत्रिय यदि रक्षिता स्त्री ब्राह्मणीके साथ
रमण करे, तो उसे शूद्रवत् दण्ड होगा, यद्यवा दर्भ वा
गर द्वारा ठक कर उसे जला देना उचित है। ब्राह्मण यदि
रक्षिता ब्राह्मणीके साथ बलपूर्वक सभोग करे, तो महस्र
पण दण्ड और अकामा ब्राह्मणी-गमनमें ५०० पण दण्ड
होगा। ब्राह्मणके समस्त पापयुक्त होने पर भी उसे सर्वस्व
धनके साथ अचत शरीरमें निर्वासन दण्ड देना उचित
है। वैश्य यदि रक्षिता क्षत्रिया स्त्रीके साथ गमन करे
अथवा क्षत्रिय यदि इन्से प्रकारको वैश्य-स्त्रीसे सभोग
करे, तो दोनोंकी अरक्षिता ब्राह्मणी-गमनमें जो दंड
दिया जाता है वही दंड देना उचित है। ब्राह्मण यदि
रक्षिता क्षत्रिया वा वैश्या स्त्री-गमन करे, तो सहस्र
पण दण्ड होगा। वैश्य यदि अरक्षिता क्षत्रियाके साथ

इस धर्मसम्प्रदायमें जो विविध विधान हैं, वे तो घटना प्रचयांग ममय प्रचयनादिमें विनति हैं। ये मोमांसा, न्याय, वेदान्त और प्रत्यान्य शास्त्रों का अध्ययन करते हैं। बहुतने ब्राह्मण पंडित उनके समीप शिवा प्रभु करनेके निमित्त प्राते हैं।

मरने पर दंडियों का शवदाह नहीं होता, या तो शव मिटोंमें गाढ़ दिया जाता या नदोंमें फेंक दिया जाता है। कामीमें भाज भी बहुतने दंडी दिखाई देते हैं।

किर एक दूसरो श्रेणी के दंडी हैं जो अपने परिवार के साथ रहते हुए भी दंडो कट्टनाते हैं। ये लोग सांसारिक विषय वासनानमें लिप्त रहते हैं। इनको उपाधि 'तोय' 'प्रायम' पाई है। यहो नहीं, वरन् कभी कभी दंड, कमंडलु और गैला वस्त्र के साथ तोयंशावाको निकलते हैं। कामी जिलेमें रुई जगह इन सम्प्रदायके लोग देखे जाते हैं। ये लोग अपने सम्प्रदायमें जो विवाह करते न कि अपने मठके दंडीके घरमें।

इन घरबारो (गृहस्थ) दंडोके ऊपर एक गल्प है। कितने मंथ्यामियों के मुखमें ऐसा सुना जाता है कि कोई सुरसिक दंडो किसी स्त्राके रूप पर मोहित हो उसे ले कर मंसागै हो गये थे। उसीमें घरबारो (गृहस्थ) दंडा ऐसा नाम बना था रहा है।

वैष्णव दण्डा नामक एक और श्रेणीके दण्डा हैं। ये लोग अपने साथ विदण्डा अर्थात् तीन दण्डको एकत्र बांध डधर उधर लिए फिरते हैं। चतुर्भुज नारायण इनके उपास्य देवता हैं। ये लोग शिखा छोड़ कर तमाम निरा मुड़ा देते, गैला वस्त्र पहनते तथा गलेमें तुलसीकाठ और कमलबीजकी माला एवं यन्त्रोपवोत धारण करते हैं। वैष्णव दंडो बड़े शूद्राचारा होते हैं, यथासमय वेदाध्ययन और नित्य क्रिया किया करते हैं। इन लोगों का भोजन, अग्निस्पर्ग, कौपोन और कमंडलुधारण तथा जर्हदेहिक मभी क्रियाएं गैव दण्डियों सरोपा हैं; किन्तु कुलाचारी गैव दंडियों के ऐसा कोई मयामांका व्यवहार नहीं करते।

दण्डोत्पत्ति (मं. क्रो.) दण्डयुक्त उत्पन्नमिव। हसभेट, एक पोषिका नाम। (*Canseoria decussata*) यह

एक प्रकारका शाक जातीय पुष्प है। कमलके जमा इसका कुसुमस्थित हुल दण्डको तरह लम्बा होता है, इसीसे इसे दण्डोत्पत्ति कहते हैं। पीसा, मान और सफेद फूलके भेदने यह तीन प्रकारका होता है। दण्डोत्पत्ति के विषयमें बहुतोंका मतभेद देखनेमें आता है।

इसे कुछ लोग गुप्ता, कुछ लोग कुकरोधा और कुछ बहो सहदेया ममभते हैं। कोई कोई कहते हैं, कि इसका नाम दण्डकलम है। अब यह देखना चाहिए, कि दण्डोत्पत्ति को प्रकृतिक संज्ञाकी यदि दण्डकलम कहें, तो द्रोणपुष्पोके विषयमें भेद पड़ जाता है। क्योंकि द्रोणपुष्पोकी ही लोग दण्डकलम कहते हैं, कारण इसमें द्रोणकलमके जैसा छोटे छोटे सफेद दलयुक्त पुष्प लगते हैं। फल भी ठोक गोभीपंक्तको प्राकृतिका होता है, इसीसे उसे गोभीपंक्त भी कहते हैं। उद्गोमामें यह गोंदध और रस लोगोंके देगमें गुप्ता नामसे समझा है। दण्डोत्पत्ति को कहीं कहीं शूद्रपुष्पो या शूद्रादुली कहते हैं। किन्तु शूद्रपुष्पो और दण्डोत्पत्ति भिन्न भिन्न जातिका पांश है। शायद सामान्य पड़ता है कि इसके तीन भेद जो बतलाये गये हैं; उनमेंसे शूद्रपुष्प दण्डोत्पत्ति को शूद्रादुली और पोतपुष्प दण्डोत्पत्ति को गोवरिया कहते हैं। गोवरियाका अर्थभग गोवन्दिनी है। अद्वयपुष्प दण्डोत्पत्ति को उनसे भिन्न बतलाया है, लेकिन यह शुक्तिमय नहीं है। क्योंकि भावप्रकाशमें उक्त तीनों प्रकारके पुष्पोको कुकरोधाके चतुर्गत्त माना है। रत्नमालामें उसे कुकरोधा, गोवरिया और गोव्दाल नामसे उल्लेख किया है। इसमें यह साधित होता है, ये तीनों वृक्ष ही दण्डोत्पत्ति नहीं हैं और न इनके फूल ही कमलके जैसे लम्बे होते हैं। अब यह देखना आवश्यक है कि किस जातिके वृक्षको दण्डोत्पत्ति कह सकते हैं। जब पहले यह कहा जा चुका है कि दोषहन्तयुक्त कमलके मध्य जिसका फूल होता है वही दण्डोत्पत्ति है तब सहदेव जातीय पुष्पयाकको ही दण्डोत्पत्ति कहें तो कोई प्रत्युक्ति नहीं। क्योंकि इसका फूल उद्वन या और हल्ता भी लम्बा होता है। लोग इनके पोषिकों एकसार दोदानके ऊपर लगाया करते हैं। इनके पत्ते हरसिंगार (सिध्दो) के पत्ते मयह, पर उनसे कुछ मोटे होते हैं।

अन्न करे, तो वैश्यको ५०० पण दंड, होणा, चविय-
के लिए गधेके मूत्रसे मत्स्यक-मुंडन प्रथवा ५०० पण
दण्डकी व्यवस्था है। भरचिता चविया वा वैश्या गमन-
में ब्राह्मणको सहस्र पण दंड होगा। चण्डालादि क्षत्रियों-
के साथ गमन करनेसे भी ब्राह्मणके लिए उक्त दण्ड हो
ऐ। जिस राजाके राज्यमें दंडके भयसे कोई भी चोरो,
परस्त्री-गमन, वाक्पाक्य, साहस-दण्डपाक्य आदि अप-
राध नहीं करता, वह राजा इन्द्रके समान प्रभाव-
शाली है।

यदि कर्मसम कृत्स्नको यजमान अकारण त्याग
दे प्रथवा यदि निर्दोष यजमानको पुरोहित अकारण
त्याग दे, तो दोनोंको एक सो पण दण्ड देना पड़ता है।

(मनु ८।३८८)

पिता, माता, स्त्री और पुत्र इनको विना पतित हुए,
सौह-पूर्वक परित्याग करनेसे ६०० पण दंड होता है

हिजातियोंमें, गार्हस्थ्यादि आश्रम-वर्तित याज्ञान-
ष्ठानके विषयमें यदि परस्पर विवाद हो जाय, तो आत्म-
हितकारी राजाको चाहिये कि उसी समय कोई दण्ड
स्थिर न करे। ऐसो अवस्थामें जो जिस प्रकार सभ्यके
योग्य हैं, उनको उनी प्रजामें पूजा करके मान्यता
हारा उनको क्रोधका उपग्राम करना चाहिये और ब्राह्मणों-
की सहायतासे धर्मकी व्यवस्था समझा देने चाहिये।
कोई दृष्टव्य यदि माह्निक कार्यमें २० ब्राह्मणोंको
भोज देना चाहे, और प्रतिवेशी यथा तदनुस्तरवर्गों
अनुवेशी भोजनार्थ ब्राह्मणको छोड़ कर अन्य ब्राह्मणोंको
बुलावे, तो राजाको उसी एक मासा चांदीका दण्ड देना
चाहिये। स्वयं श्रोत्रिय होकर यदि कोई प्रतिवेशी वा
अनुवेशी श्रोत्रिय साधुषीको विद्यावादि भूति-कार्योंमें
भोजन न करावे, तो उसे भोजनसे दण्डित भोज्य द्रव्य
और एक मासा सोमं दण्डस्वरूप देना पड़ता है।

जो पण्य-वस्तुएं राजाकी खास कछुआतो हैं, प्रथवा
जिनको देशांतर से जानिके राजाने मगई कर दी है,
उन वस्तुषीको यदि कोई व्यवसायी लोभमें पाकर देगा-
न्तर से जाय, तो राजाको चाहिये कि उसका सर्वस्व
हरब कर ले। राजा पण्यद्रव्यके लब्धिमैसे दोमवा
भाग लेगी। यदि कोई व्यक्ति शुद्ध न देनेके परिणामसे

असत्सामांका अवनयन करे, रात्रिको क्रय विक्रय करे
वा वैशी दूरे चौजोंको संख्या घटा कर कहे, तो उसे
आपनापित राजदेवसे पाठ गुना दण्ड मिलता है।

ब्राह्मण यदि प्रभुत्व एवं सोभके योगीभूत हो कर
अनिच्छु क ब्राह्मणमें पैर धोना पाटि टाक्यकर्म करावे
तो राजा उसके लिए ६०० पण दण्ड विधान करेगी।

(मनु ८।३९०)

वायव्यस्वर्ग-हितार्थ दंडविधिके संबंधमें इस प्रकार
लिखा है—

राजाको क्रोध और लोभग्रस्त हो कर धर्मशास्त्रानु-
सार विद्वान् ब्राह्मणोंके साथ व्यवहारको विमोचकमें जान
कर दण्ड विधान करना चाहिये।

६०६-पारस्व-आघात, चिह्न और प्रयोजन-पाटिको
पर्यालोचना तथा जन-प्रवादके उत्तर निर्भर करके, किन्तु
साक्षी-रहित विवादमें विजय पर्यालोचना करके दण्ड
देना चाहिये। शरीर पर मर्म, पद्म प्रथवा धूमि देने
पर दण्ड पण दण्ड होगा। अर्थात् बहु पादधोत और
निष्कोवन जन स्पर्श करानेसे पूर्वार्थ दण्डको चपेता दूना
दण्ड होगा। सम व्यक्तिके प्रति यह नियम है। उल्टा
व्यक्ति वा परस्त्रीके प्रति ऐसा करनेसे दूना दंड और भीम
व्यक्तिके प्रति ऐसा व्यवहार करनेसे पाधा दंड होगा।
विचित्र कथ्य वा मत्ततादि वगैरह ऐसा करनेसे दंड नहीं
होगा। स्वजातिको प्रहार करने वा उसके प्रति पैर
छठानेसे दण्ड पण दंड होगा। परस्पर जननाय गंध
उद्यत करनेसे उत्तम माह्निकका दंड होगा। पद, केश,
वस्त्र प्रथवा हाथ एकद्वार खींचनेसे दण्ड पण दंड
होगा। वस्त्र द्वारा बन्धन, गायमर्दन एवं पाकपण-
पूर्वक पाद प्रहार करनेसे सो पण दंड होगा। काष्ठादि
प्रहारने पाहत व्यक्तिके रक्तगत न होने पर दण्ड प्रहर्ता
व्यक्तिको २२ पण और रक्तगत होने पर उसमें दूना दंड
होगा। हाथ पैर प्रथवा दांत तोड़नेसे जान वा नाक
काटनेसे पूर्व अथवा व्यादा बढ़ा देनेसे, और तिसमें
अनुप मुटके मगान हो जाय ऐसे ताड़ना करनेमें
मध्यम माह्निकका दंड देना चाहिये। गमन, भोजन और
बात कहना बन्द कर देनेसे चतु और ब्रह्मा हेट देनेमें
तथा घोषा बाध वा उक्त देदनेसे मध्यम माह्निकका दण्ड
देना चाहिये।

इसमें हत्या के ऊपर अन्य दण्डयुक्त चन्द्रमालिका मुष्णालानि-
के पुष्प लगते हैं। यह पुष्प प्रत्युत्पित हो कर सब रूप
जाता है, तब उसमें बहुत बारीक रुद्ध निकल कर हवामें
उधर उधर उड़ती है। यही यथायथ में खेतपुष्प दण्डो-
त्पत्ति है। यह दण्डयुक्त सड़तेबोको पोत दण्डोत्पत्ति और
इसी जाति के घृत्य पुष्पको बरुण दण्डोत्पत्ति कह सकते
हैं। पोत दण्डोत्पत्ति का नामान्तर गोवन्दनी और गन्ध-
वन्नी है। इसका गुण—घृत्य, श्वास और कामनागक
तथा अग्निदोषक है। (राजनि०)

दण्डोत्पत्ति (मं० प्लो०) खेत पुष्प दण्डोत्पत्ति, सफेद फूल
वाला दण्डोत्पत्ति।

दण्ड (सं० वि०) दण्ड कर्मणि यत्। दण्डनीय, दण्ड
यानि योग्य, जिसे दण्ड देना उचित हो।

दत् (मं० पु०) दत्ता द्योदरादि० साधुः। दत्त, दात।
दत्तवन (हि० प्लो०) दत्तवन देवी।

दत्तारा (हि० वि०) दातवाला, जिसमें दात हो।

दत्तितर—सम्बन्ध प्रदेयके अन्तर्गत धाना जिलेके माहिम
उपविभागका एक बन्दर। यह अक्षांश १८° १७' ७" और
देशांश ७२° ५०' पू०। माहिमसे १० मील उत्तर-पश्चिममें
अवस्थित है। इस बन्दरके निकट एक दुर्ग का अक्षांश-
पश्चिम देखनेमें आता है। शायद यह दुर्ग पोस, गौरीसे
बनाया गया होगा।

दत्तिया—१ बुद्धलखंडके अन्तर्गत एक देशीय राज्य। यह
अक्षांश २५° १४' से २६° १०' उ० और देशांश ७८° १०' से
७८° ५६' पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ८३६ वर्ग-
मील है। इसके पूर्वमें भांगी प्रदेश और तीनों ओर
श्यामियर राज्य पड़ता है। लोकसंख्या १५२० है।

१८०२ ई०की बेल्जिकी सन्धि के अनुसार बुद्धल-
खंडके अन्तर्गत प्रदेशोंके साथ दत्तिया राज्य शेषवासे
अंगरेजोंके हाथ सौंपा गया। १८०४ ई०में अंगरेजोंने
दत्तियाके राजा परीसित्ते के साथ सन्धि कर ली। राजा
परीसित्ते बाद सन्धि के दसक पुत्र विजय बहादुर राज्य
सिंहासन पर बैठे। १८५० ई०में राजा विजयकी मृत्यु-
के बाद सन्धि के पोष पुत्र भवानी राजा हुए। ये बुद्धल
राजपूत हैं। इनका जन्म १८४५ ई०में हुआ था। वर्त-
मान महाराजका नाम H. H. महाराज सर मोहन
गोविन्दसिंह बहादुर K. C. S. I. और युवराजका
नाम राजा बहादुर वसन्तदत्तसिंहजी है।

राज्यकी धामदनी प्रायः १०००००) स० की है।
सैनिक विभागमें ८० कमान, १५० गोमन्दाज, ७००
अश्वारोही और ३०४० पदातिक सेवा हैं। राजसभान-
के लिये १५ तोपें कीड़ी जाती हैं।

२ बुद्धलखंडके दत्तिया राज्यका एक नगर। यह
अक्षांश २५° ४०' उ० और देशांश ७८° ३०' पू० एक
छोटे पहाड़के ऊपर अवस्थित है। यह भांगरेसे १२५
मील दक्षिण-पश्चिम तथा समुद्रसे १४८ मील उत्तर-पूर्व
भांगरेसे समुद्र तक जानेवाले रास्ते पर पड़ता है। शहर
के मध्यभागमें तरह तरहके फल वृक्ष तथा प्रमोद उद्यान-
में मध्वन्तित राज-प्रामाद हैं। यहांमें प्रायः ४ मीलकी
दूरीमें बहुतसे जैनमन्दिर देखे जाते हैं।

दत्त (सं० वि०) दीयते दत्ति दा० क्त। १ रत्नित, वषावा
हुषा। २ रत्नित दान, दिया हुआ। इसका संस्कृत पर्याय—
विष्टत और वियापित है। (पु०) दा-भावे क्त। २ दान।
४ एक ऋषि। ये ऋषिके पुत्र और दत्तात्रेय नामसे
प्रसिद्ध थे। भागवतके मतसे ये विष्णु के बाईस अवतारों-
मेंसे छठें अवतार माने गये हैं। इन्होंने इस अवतारमें
चलन और प्रज्ञादके समीप आत्मविद्या वर्णन को दी।
इनके पुत्रका नाम निमि था। ५ चरितसिंहबुद्धन जैन-
भेद, जैसियोंके जो बाह्यदेवोंमेंसे एक। ६ एक राजाका
नाम। (भारत १२।२।१।१५) ७ युद्धगीय राजाधि-
देवरके पुत्र। (हरिवंश ३८।२) ८ वैश्याकी एक उपाधि।
९ ब्राह्मणोंमें शर्मन्, क्षत्रियोंमें चर्मन्, वैश्योंमें दत्त और
शूद्रोंमें दान ये चार एक साधारण उपाधि हैं। १० एक
प्रकारके बंगाली कायस्थोंकी उपाधि। गौड़में मज्जिका-
की दत्त उपाधि है। कुल। ११ पुत्रभेद, दत्तक।

दत्तक (सं० पु०) दत्त एक स्वार्थे कन्। दादशब्धि
पुत्रोंके अन्तर्गत पुत्रविशेष, बारह प्रकारके पुत्रोंमेंसे
एक, शास्त्रविधिसे बनाया हुआ पुत्र, यह जो वास्तवमें
पुत्र न हो पर पुत्र मान लिया गया हो, गोद लिया हुआ
सड़का, सुनवसा।

दत्तक-विषयक धर्मिक धर्म हैं, यथा—इवेराचार्य,
कोनप्पाचार्य, नन्द पंडित और राम पंडितको चार
‘दत्तकचन्द्रिका’, व्यासाचार्य का ‘दत्तचरण’, चनाराम
की ‘दत्तकदीपति’ तथा शास्त्री और विष्णुभाय उपा-
ध्याय प्रणीत ‘दत्तकनिर्णय’ चनाराम-प्रणीत ‘दत्तकपुत्र

जिस अपराधमें एक व्यक्ति को जो दण्ड हुआ है, बहुतसे मिल कर एक व्यक्ति को मारने तो उस अपराधमें उससे दूना दण्ड भोगना पड़ेगा। दूसरेको भित्ति मुगड़र पादिसे अभिहत, विदारित, दिहाहत तथा भूमिगाथित करनेसे उसका यथा—क्रमसे पांच दण्ड और सोस पण दंड होगा, तथा गंड स्वामीको पुनः संस्कार करने योग्य धन देना पड़ेगा। जो परकीय गृहमें दुःखजनक कष्ट-कादि वा विपत्तियादि प्राणहर द्रव्य फेंकेगा, उसे क्रमशः १६ पण और मध्यम साहसका दण्ड होगा। क्रागाद लुद्र पशुको ताड़न, रक्तपात, गृहादि छिदन एवं कर-चरणादि भद्रच्छेदन करनेसे यथाक्रमसे दो पण चार पण और बाठ पण दंड होगा। इनको कृत्वा अथवा लिङ्गच्छेदन करनेसे मध्यम साहसका दंड होगा। गंवादि महापशुके प्रति ऐसा व्यवहार करनेसे दूना दण्ड होगा।

जो साधारण वस्तुका अपलाप करता और दासोका धर्म नष्ट करता है, त्यागके उपयुक्त कारणसे विना ही पितामाता आदिको त्याग देता है, उसके लिए १०० पण दंड कड़ा गया है। रजक यदि शोधनार्थ ममर्षित परकीय वस्त्रको पहने, तो तीन दंड, बीच दे; भाड़े पर दे; गिरवी रखे वा बान्धवोंको पहननेके लिए दे, तो उसे दण्ड पण दंड होगा।

प्रायुर्वेदको बिना जाने ही, केवल जोविका निर्वाह करनेके लिए किसी पशुपक्षीको मिथ्या चिकित्सा करनेसे, चिकित्सकको प्रथम साहसका दंड होगा। साधारण मनुष्यको मिथ्या चिकित्सा करनेसे मध्यम साहस और राजपुरुषके साथ ऐसा व्यवहार करनेसे उत्तम साहसका दंड होगा। (यावत् २००)

वर्त्तमानमें ये दंडविधियाँ प्रचलित नहीं हैं। ब्रिटिश गवर्मेण्टने अब नये नये कानून चलाए हैं।

२४ कोरव पचीय एक वीर। इनके भाईका नाम दंडधार था। दंडधारकी मृत्यु के बाद ये बहुत नई हाथ मारे गये थे। (भारत कर्ण ११०) २५ हापरके एक राजाका नाम। (भारत आदि ६००) २६ इक्ष्वाकुके सौ पुत्रोंमेंसे एक। ये शुक्राचार्य के शिष्य थे। २७ धर्मके पुत्रका नाम। दंडयति कर्त्तारि भूत्। २८ राजा, दंड-विधानकर्त्ता। २९ हलको सव्यो लकड़ी।

दण्डक (सं० पुं० स्त्री०) दंडइय कायति कै-क। १ हन्दी-भेद। इस हन्दीके प्रत्येक चरबमें २० अक्षर होते हैं। दंडक दो प्रकारका होता है, एक गणात्मक और दूसरा मुक्तक। गणात्मक वह है जिसमें गणोंका अन्धन होता है अर्थात् किस गणके बाद फिर कौन गण आना चाहिये इसका नियम होता है। मुक्तक वह है जिसमें केवल अक्षरोंको गिनतो होती है अर्थात् जो गणोंके बंधनसे मुक्त होता है। किसी किमोमें कहीं कहीं मधु शुद्धका नियम होता है। हिन्दी काव्यमें जो कवित्त और घना-चरो हन्द् पधिव व्यवहृत हुए हैं वे इसी मुक्तकके अन्तर्गत हैं। २ इक्ष्वाकुराजाके एक पुत्रका नाम। ये शुक्राचार्य के शिष्य थे। इन्होंने एक बार शुद्धको कन्याका कौमार्य धर्म नष्ट किया। इस पर शुक्राचार्य ने श्राप दे कर उन्हें इनके पुरके साथ भस्म कर दिया। इनका देश लङ्गल हो गया और दंडकारण्य कहलाने लगा। (राधायण) ३ वातरोगविशेष, एक प्रकारका वातरोग। इस रोगमें हाथ, पैर, घोट, कमर आदि भद्र स्तब्ध हो कर बैठे जाते हैं। ४ दंड। ५ दंड देनेवाला पुरुष, शासक। ६ दंडकारण्य। ७ शुद्धरागका एक भेद।

दण्डकन्दक (सं० पुं०) दंडवत् कन्दो मूलं यस्य।

धरणी कन्द, सेमरका मुचला।

दण्डकस्तृ (सं० त्रि०) दंडस्य कस्तृ। जो दंड-विधान करते हैं।

दण्डकर्मन् (सं० स्त्री०) दंडस्य कर्म। दंडविधायक का काम।

दण्डकाल (सं० पुं०) हन्दीभेद, एक हन्दीका नाम। इसमें १०, ८-और १४के विरामसे ३२ मात्रार्थ होते हैं।

दण्डका (सं० स्त्री०) दंडक क्षोल्लिङ्गत्वादस टाप। नागवत्सलता।

दण्डकाक (सं० पुं०) दंडो यमदंडइय काकः, भमङ्गल सूचकत्वात् भयस्य तयात्। द्रोण काक, काला कौषा, डोम कौषा।

दण्डकारण्य (सं० स्त्री०) दंडक नाम चरण्यं। दंडका वन, दंडक नामक राजाका राज्य। यह प्राचीन वन विन्ध्य पर्वतसे लेकर गोदावरीके किनारे तक विस्तृत था। इस वनमें श्रीरामचन्द्रजी वनवासके कालमें बौद्ध

विधि', नन्दपंडित, माधवाचार्य और रामकवि-प्रणेत भिन्नभिन्न 'दत्तक मोमोसा', गूलपाणि-कृत 'दत्तकविशेषक' और 'दत्तकप्रत्ययता', चनकदेव-कृत 'दत्तकौत्सम्', धर्म-राजका 'दत्तरत्नाकर', माधव पंडितका 'दत्तादर्श', गङ्गदेव बाजपेयोकी 'दत्तकचन्द्रिका', नागोजी भट्टका 'दत्तकौत्सम्', लक्ष्मणमिश्रका 'दत्तकामाषण', शोनाथ भट्टका 'दत्तनिर्णय', दत्तकमिश्रका 'आदि ग्रन्थ प्रचलित हैं। इनमेंसे नन्द पंडितकी 'दत्तकमोमोसा' और देवानन्द भट्ट का कुवेर प्रणेत 'दत्तकचन्द्रिका' को सर्वापेक्षा मान्य है। ये दो ग्रन्थ भारतवर्ष के प्रायः समस्त प्रदेशों में तुल्यरूपसे प्रामाण्य और ममाहत होते हैं। 'दत्तक' के विषयमें, शास्त्रों में कोई विशेष मतभेद न होने पर भी जहाँ जहाँ 'दत्तकमोमोसा' और 'दत्तक चन्द्रिका' के मतमें भिन्नत्व है, वहाँ वहाँ 'दत्तकचन्द्रिका' का मत बह्वान और दक्षिणप्रदेशों के किसी किसी स्थानमें प्रादुर्भाव होता है—और 'दत्तकमोमोसा' का मत मिथिला एवं काशीकी तरफ मुख्यरूपसे गण्य है।

पुत्र उत्पन्न हुए बिना पित्रष्टयसे उद्धार नहीं होता और पुत्राभारतकका भोग होता है। इसलिये अपुत्रकको पुत्र ग्रहण करना चाहिए।

“अपुत्रेण पुत्रः कार्यः नष्टः तादृक् प्रयत्नतः।

विंशोदकशिशोर्नानसंकीर्तनाय च ॥

अपुत्रेणैव कर्तव्यः पुत्रप्रतिनिधिः उदा।

विंशोदकशिशोर्नानसंभाव्य कार्यः प्रयत्नतः ॥” (मनु)

अपुत्रक व्यक्ति को आह तर्पण आदि तथा नामकी रक्षाके लिए पतिशय प्रयत्नके साथ पुत्र ग्रहण करना चाहिए पर्याप्त विधेय प्रयत्न करके पुत्र-प्रतिनिधि दत्त आदि ग्रहण करना चाहिए। पुत्रके बिना अन्य किसी भी उपायसे नामको रक्षा नहीं होती और पित्रष्टय आहतर्पणादिके बर्भावसे मितान्त भयसम्पन्न हो जाते हैं। इसलिये अपुत्रकके लिए दत्तकादिका ग्रहण करना अवश्य कर्तव्य है। पुत्र उत्पन्न हो कर यदि मर जाय तो पित्रष्टयसे तो मुक्त हो सकते हैं; परन्तु आहतर्पण आदि कुछ भी सम्भव नहीं होते। इस कारण स्युतपुत्र व्यक्ति (पर्याप्त जमका पुत्र मर गया हो) को भी पुत्र ग्रहण करना आवश्यकोद्य है।

‘अपुत्रो मातृपुत्रो वा पुत्रार्थे’ अनुजेय च।

उदेतेन जलमात्रेण पुत्रो मर्त्यतः मानसः ॥

पित्रष्टयान्मुच्येयं च तद्व्याप्त्यनुपपत्तिः ॥” (वीरभट्ट)

‘स्युतपुत्रो वा’ इस पदसे व्यक्त होता है, कि स्युतपुत्र व्याजिका पुत्र-ग्रहण करना अवश्यकर्तव्यमें गण्य है। परन्तु जिनके पुत्रकी तो मृत्यु हो गई है और पोत्र वा प्रपोत्र जोवित है, ऐसी दृष्टिमें उसको दत्तक ग्रहण करना पड़ेगा या नहीं? इसका समाधान इस प्रकार है—‘उसको दत्तक ग्रहण करनेको जरूरत नहीं; कारण पुत्र-ग्रहणका उद्देश्य नाम-रक्षा और पित्रष्टयका आह तर्पणादि कार्य सम्भव होना है और वह कार्य पोत्र वा प्रपोत्रमें भी हो सकता है। इसलिये उसको पुत्र-ग्रहण करनेकी आवश्यकता नहीं। अपुत्रकको पुत्र प्रतिनिधि करना चाहिए। प्रतिनिधि ग्रहणमें स्युतज आदि ग्यारह प्रकारके पुत्र समझना चाहिए।

‘क्षेत्रज्ञादीन् ध्यानेतानेकादश यथोदितान्।

पुत्रप्रतिनिधीनाहूः कियानोऽगन् मनोयिनः ॥” (मनु)

क्रियाके लोपके कारण मनोयिर्वांसे स्युतज आदि ग्यारह प्रकारके पुत्रोंकी हो पुत्र प्रतिनिधि कहा है। जैसे वृत्तके अभावमें तैलको उसका प्रतिनिधि कहा गया है, उसी प्रकार औरसपुत्रके अभावमें ग्यारह प्रकारके पुत्रोंकी पुत्र-प्रतिनिधि समझना चाहिए। औरस-पुत्रकी भी कर पुत्र वारह प्रकारके हैं; यथा—औरस, स्युतज, दत्तक, हस्तिम, गृधोपम, चण्डविह, कानोन, सद्योद, क्रोत, गोमर्गव, न्ये दत्त और शीद्र। पुत्र देखो।

“अनेकधा कृताः पुत्रा कृतिर्निर्गुणातनैः।

न वाङ्मयस्तेऽपुना कर्तुं शक्नोतीततया नरैः ॥

पुत्र-प्रतिनिधि अनेक प्रकार हैं; पर भी कनियुग्में शक्तिहीनताके कारण अपुत्रक व्यक्ति एक समो प्रकारके पुत्रोंकी ग्रहण करनेमें समर्थ न होगी।

‘इमान् धर्मान् कनियुगे यथाज्ञाद्वेनोपिनः ॥’

दत्तक पुत्रके विना कनियुग्में अन्य प्रकारके पुत्र ग्रहण करना निषिद्ध वा मजिज है।

कनिकामर्गमें अपुत्रकके नामकी रक्षा और आह तर्पण आदिके लिए एकमात्र दत्तक पुत्र ही उपाय स्वरूप है। प्रत्येक अपुत्रक व्यक्ति के लिए दत्तक ग्रहण करना आवश्यक है।

वर्ग रहे थे। यहां शूर्पणखाके नाक-कान कटे थे और सोता धरण हुआ था। इस परस्परका बहुत थग था जो भी वर्त्तमान है। यह स्थान बहुत रमणीय है। (रामायण) दण्डकाण्ड (सं० श्लो०) दंडायं काण्ड । दंड सम्यग्योऽयं काण्ड । दंड देखो ।

दण्डको (सं० श्लो०) ढोलक ।

दण्डगोरो (सं० श्लो०) चप्पराभेद, एक चप्पराका नाम ।

दण्डग्रहण (सं० श्लो०) दंडस्य ग्रहणं । संन्यासायम प्रवृत्तत्वेन । इन प्रायश्चित्तोंके हाथमें प्रायम चक्रग्रहण एक एक दंड रहता है ।

दण्डग्राह (सं० त्रि०) दण्डं गृह्णाति ग्रह-ग्रण् । दण्ड-धारक, दण्ड रखनेवाला ।

दण्डन (सं० त्रि०) दंडेन देहेन हन्ति हन-टक् । १ दंडपाण्ड्यकर्त्ता, डंडेन मारनेवाला । जिस राजाके राज्यमें चोर परस्त्रोगामो, दंडपाण्ड्यकारी प्रभृति न हों वे इन्द्रलोकको पाते हैं । २ दंडको न माननेवाला, वह मनुष्य जो राजाके दिये हुए दंडको न मानता हो । दण्डवत् (सं० पु०) १ पुराणोक्त प्रक्रमेद । २ नैन्य विभागभेद ।

दण्डवत्तादिवाय । सं० पु०) न्यायभेद । न्याय देखो ।

दण्डवत्ता (सं० श्लो०) दंडा ताव्यमाना वत्ता । वाय विषय, दमामा, नगरा, धौसा । इनका संस्कृत पर्याय-नामो, घटी, घामनामो, यमेरुका, यामघोष, दमाम, दुन्दुभि, दुन्दु चोर गमोरिका है ।

दण्डताम्रो (सं० श्लो०) दंडेन ताड्यमानो ताम्रो ताम्र निर्मित वायं । ताम्रोवाद्यभेद, यह जनतश्च बाजा जिसमें तबिली कटोरिया काममें लादे जाते हैं ।

दण्डत्व (सं० श्लो०) दंडस्य भावः भावे त्व । दंडता, दंडका भाव ।

दण्डदाम (सं० पु०) दंडादि धन श्रदायं दामः । राज-कृत दंड शक्ति निये दास्य स्वीकार करनेवाला, वह जो दंडका स्वयं न दे सकनेके कारण दाम दृष्टा हो । दास देखो ।

दण्डदेवकुल (सं० श्लो०) दंडदेवस्य कुलं यत् । धर्मो-धिकारः, पुनिस प्रदायत ।

दण्डधर (सं० पु०) धरतीति धरः पंचाशत् दंडस्य धरः । १ यम, यमराज । २ राजा, शासनकर्त्ता । राजा समो लोगोको स्थितिके निये दंड धारण करने हैं इसीनिये राजाका नाम दंडधर पड़ा है । ३ मन्त्र्यामी । (त्रि०) ४ नगुड धारक, डंडा रखनेवाला ।

दण्डधार (सं० पु०) दंडं धरति धृ-धण् । १ यमराज ।

२ राजा । ३ मन्त्र्यामन्यात एक दृष्टि, एक राजाका नाम । इन्हीं कोधर्वहन पसुरके धर्ममें अन्त दण्ड किया था । कुहपाण्डवको नङ्गादिमें यह दुर्गोचनको चोर या चोर भर्तु नसे धार युद्ध करभारा गया था । इसका भाई दंड भी इसी युद्धमें मिकन हुआ था । भारत कर्ण १८ अ०) ४ पांडव पक्षोय एक चोर, पाण्डव पक्षके एक योद्धाका नाम । यह पांडवकी धोरमें नङ्गा था चोर कर्णके हाथमें मारा गया था । (भारत कर्ण ५० अ० ५) ५ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (त्रि०) ६ दण्डधारक, दंड धारण करनेवाला, शासक ।

दण्डधारण (सं० श्लो०) दंडस्य धारणं १ तत् । १ दंड ग्रहण । २ संन्यास प्रायमका प्रवृत्तत्वेन ।

दण्डधारो (सं० त्रि०) दंडं धरति दंड-धृ-णिनि । १ दंडधर, डंडा रखनेवाला । २ दंडायमो, संन्यास प्रायम प्रवृत्तत्वेन करनेवाला ।

दण्डधृम् (सं० पु०) दंडधारी ।

दण्डन (सं० श्लो०) दंडं हनूट् । दंड देनेकी क्रिया, शासन ।

दण्डनायक (सं० पु०) दंडं राज्ञः चतुर्थोपायं नयति मोक्षसू । १ सेनापति । २ दंडोपेता दृष्ट, दंडविधान करनेवाला राजा । ३ दंड देनेके अधिकारी, विचारपति, शासक । ४ मयके एक चतुर्धरका नाम ।

दण्डनिपातन (सं० श्लो०) दंडस्य निपातनं । दंड देनेकी क्रिया, शासन ।

दण्डनोति (सं० श्लो०) दण्डेन नोदते वा दंडो नोदते-इनया नो कर्मणि करषे वा हिनृ । १ धर्मशास्त्र, राजनैतिक शास्त्र, वह शास्त्र जिसमें राज्यशासन सम्बन्धी समस्त नियम चोर चपदेय हैं, प्रायश्चर्यादि के नैति-शास्त्र ।

१ दण्डेन नोदते चेदं दंडं नयति वा पुनः ।

दण्डनीतिरिति दर्शना कोन स्पष्टान्वितमेवे (१००)

अर्थ मैं कर तोन अणामि मुक्त होना प्रत्येक हिन्दूका कर्तव्य है। ब्रह्मचर्य द्वारा ऋषिपौर, यज्ञ द्वारा देवता-पौर, और पुत्रोत्पादन द्वारा पितरोंके अणामे विमुक्त हो सकते हैं। इसलिये पुत्रोत्पादन अवश्य विधि है। परन्तु जिनके पुत्र नहीं हुआ है, वे पितृ-ऋणमे मुक्त नहीं हो सकते; और इसीलिये उन्हें पुत्र-प्रतिनिधिकी आवश्यकता होती है। कलिकात्ममें स्यारह प्रकारके पुत्रनिधियोंमेंसे दत्तकके सिवा अन्य प्रकारके पुत्र-प्रतिनिधि ग्रहण करना निषिद्ध है; इस कारण कर्ममें अपुत्रक व्यक्ति के लिए दत्तक ग्रहण करनेके सिवा अन्य कोई उपाय नहीं है। 'अपुत्रक व्यक्ति दत्तक ग्रहण करें' इसमें यह समझना चाहिए कि स्त्रियाँको दत्तक ग्रहण करने-को समता नहीं है; पतिकी अनुमतिके बिना कोई भी विधवा स्त्री दत्तक ग्रहण नहीं कर सकती और स्त्रीकी अनुमतिके बिना पति भी दत्तक देने वा ग्रहण करनेमें समय नहीं हो सकता। स्वामी यदि मृत्यु समयमें अनुमति दे, तो वह विधवा को दत्तक ग्रहण कर सकती है। पति जितने दत्तक ग्रहण करनेकी अनुमति दे लाय, स्त्रीकी उतने ही दत्तक ग्रहण करनेका अधिकार है।

"न स्त्री पुत्रं दद्यात् प्रतिपत्नीयाया अन्यप्रातृप्रातृद्वयं रिपि अनेन विपदाया मय्यगुहानामममवार अनधिकारी गच्छते। न च सपत्न्या-सम्भवेनपुत्रोपाया पारतन्त्र्यम्।" (दत्तकमीमांसा)

सधवा स्त्री स्वामीकी अनुमति से कर दत्तकग्रहण कर सकती है या नहीं? इसका समाधान इस प्रकार है—सधवा स्त्री स्वयं कोई कार्य नहीं कर सकती किन्तु स्वामीके साथ मिल कर समो कार्य कर सकती है। स्वामी यदि दत्तकग्रहणको अनुमति बिना दिये ही मर जाय, तो विधवा स्त्रीकी दत्तक ग्रहण करनेकी आवश्यकता नहीं है; कारण यह कि स्वामीकी मृत्यु के बाद ब्रह्मचर्य धनन्यत्र कर पनायाम ही वह समस्त पापोंसे विमुक्त हो स्वर्गलोकको जा सकती है, अतएव दत्तक-ग्रहण निष्प्रयोजन है। जैसा कि कहा है—

"पूते भर्तरे संप्रको रक्षी ब्रह्मचर्यवते रिपता।

स्वर्गी गच्छत्यपुत्राणि यथा वे ब्रह्मचारिणः॥

इति मनुना ब्रह्मचर्येणैव तत्परिहाराभिधानादिति सच्छम-
कम्।" (दत्तकमीमांसा)

'अपुत्रेण' यह शब्द एक वचन है, इसलिये इसका अर्थ यह होता है कि एक ही अपुत्रक व्यक्ति दत्तक ग्रहण करें, दो वा तोन व्यक्ति मिल कर नहीं। कारण दत्तक आदिका सामुदायिकत्व अथवा विशद हुआ है, इस-
लिये ऐसा नहीं कर सकते।

"आपुत्राणां यः स्तुतं धर्मोक्तदयः।

गोत्रद्वयेऽपुत्रद्वयः शुंगेयि रसोर्वयः॥" (दत्तकमीमांसा)

दरिद्रविधि—ब्राह्मणोंका सर्पिंडमें पुत्र संघट्ट करना चाहिए; पर्याप्त सर्पिंडके पुत्रको दत्तक वा गोद लेवे। सर्पिंडका पुत्र यदि न मिले तो परसर्पिंड, और परसर्पिंडका भी न मिले तो सगोत्रके पुत्रको दत्तक ग्रहण करना चाहिए। यदि सगोत्रका पुत्र न मिले, तो असगोत्रका पुत्र ग्रहण करें, किन्तु दत्तक-ग्रहण करनेमें सर्पिंडका पुत्र ही सर्वापेक्ष श्रेष्ठ कहा गया है। अतएव सर्पिंडके पुत्र ही गोद लेनेके लिए विशेष प्रयत्न करना चाहिए। असम सुदृढ पर्यन्त ज्ञातिको सर्पिंड कहते हैं। सर्पिंड पुत्रके न मिलने पर समानोदक पुत्र, समानोदक पुत्रके न मिलने पर मातृपुत्र पुत्र और मातृपुत्र पुत्र भी न मिले तो सगोत्रका पुत्र दत्तक-ग्रहणके योग्य है। यह भी यदि न मिल सके, तो भिन्न गोत्रके पुत्रको गोद लेना चाहिये। इतनी विधियोंके द्वारा दत्तककी आवश्यकता टिखलाई है, किन्तु टीहिव, भागिनिय और मातृत्वस्व पुत्रकी कदापि गोद न लेना चाहिए।

"आप्राप्तानां सर्पिण्डु इतरेषु पुत्रसंभवाः।

तदमनेऽपिष्ठे वा अन्यत्र तु न कारयेत्॥"

ब्राह्मणादि सर्पिंड वा उसके समावर्तमें परसर्पिंड पुत्र ग्रहण कर सकते हैं, पर अन्यत्र नहीं कर सकते। 'अन्यत्र' अर्थात् अन्यत्र न करें, इसका समिप्राय यह है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदिके पुत्रको ग्रहण नहीं कर सकते। परन्तु 'अन्यत्र' अर्थात् सर्पिंड और परसर्पिंडके सिवा अन्यके पुत्रको ग्रहण न कर सकेंगे, ऐसा अर्थ करनेमें सधनास्त्रके साथ निरोध होता है, क्योंकि सधनास्त्रमें स्पष्ट लिखा है—

"यदिऽप्यस्य स्यैव सगोत्रस्यप्रापिका।

अपुत्रकोऽपि गोदमाह पुत्रवे गिरिधरये ॥

एक दण्डनीतिमें जो चीजोंमें भाटि विद्यापीका-
याम के पीर उपीके समस्त विद्यापीका प्रारम्भ कहा
गया है। दमन जो एकमात्र दंड है। इस दंडमें
राजा प्रवस्थान करता है; इस कारण राजाका नाम
भो दंड है। राजा जिसके द्वारा नौगोकी संस्थापित
करता है, उसे दंडनीति कहते हैं।

महाभारतके शान्तिपर्वमें लिखा है—

भगवान् कमलयोगि ब्रह्माने लोकस्थितिके लिये दंड-
नीतिका प्रणयन दिया है। इस नीतिशास्त्रमें चनेका-
नेक विषय है, यथा—धर्म, धर्म, काम और मोक्ष; सत्व,
रज और तम ये मोक्षके तीन वर्ग; हृदि, जय और समा-
नत्व नाम त दंडज विवर्ग; धित्त, देश, काल, उपाय
कार्य और सहाय ये नीतिज यद्ध्यर्ग; कर्मकांड, ज्ञान
कांड और कृपि वाणिज्यादि ओषिकाकांड; प्रमाथ-
रचायं नियुक्त घर और गुप्तचरोंका विषय, राजपुत्रके
लक्षण, चरोंके विविध उपाय, साम, दाम, दंड, भेद,
उपेक्षा, भेदकरण, मन्त्रण और विभ्रम, मन्त्रसिद्धि और
प्रसिद्धिका फल; भय, मत्कार और वित्तग्रहणाय चधम,
मध्यम और उत्तम ये तीन सन्ध्या, चतुर्विध यात्रा
काल, त्रिवर्गका विस्तार, धर्मयुक्त विजय, धर्मद्वारा
विजय और आसुरिक विजय; प्रमाथ, राष्ट्र, दुर्ग, वन
और कोय इन चार वर्गोंका त्रिविध लक्षण; प्रकाश और
प्रप्रकाश मेलाका विषय, अष्टविध गूढ़ विषय प्रकाश,
हस्तो, अश्व, रथ, पदाति, भारवह, चर, पीत और उपदेष्टा
इन अष्टविध मेलाओंका विषय, वस्त्रादि और अस्त्रादिमें
विषययोग; अभिचार, धरि, मित्र और उदासीनोंका विषय
पशु-गमनके घहनजवादि-जनित समस्त गुण, भूमिगुण,
आकराष्टा, आश्रय, रथादि निर्माणका अनुसन्धान, मनुष्य,
हस्तो, अश्व और रथसत्त्वके उपाय, विविध व्यूह; विविध
युद्ध-कीमल; धूमकेतु भाटि यहाँके उपाय, उल्का भाटि-
का घतन, समपानीमें युद्ध, पलायन, अश्वशस्त्रमें गाण-
प्रदान, सत्त्व-ज्ञान, मैत्र्य व्यमन, मोचन, सेनामें हर्षोत्था-
दन, पीडा, पापदकांड, पदाति-ज्ञान, खात, घनन, पता-
काटि श्रद्धान-पूर्वक शत्रुके अन्तःकरणमें भय संचारण,
चोर, उग्र-स्वभाव, अरण्यावासी, अग्निदाता, विषवधाकर,
प्रतिरूपकारो, प्रधान व्यक्तिके भेद, वृषभदेहन, मन्त्र-

तन्त्रादिके प्रभावमें हस्तियोका वस्त्र-ज्ञान, शूद्राउपायन,
अनुरक्त व्यक्तिके आराधन और विप्रवासजनक द्वारा पर-
राष्ट्रमें पीडा-प्रदान; राज्यको क्लृप्त-हृदि और समता,
कार्य सामर्थ्य, राष्ट्रहृदि, शत्रु मध्यस्थित मित्रोंका संघट्ट,
वस्त्रवाकोंका विनाश-साधन और पोहन, मूल्य व्यवहार,
खसका उन्मूलन, व्यायाम, दान, द्रव्य-मंथन, अमृत
व्यक्तियोंका भरण-पोषण, अमृत व्यक्तियोंका पर्यवेक्षण,
यथासमय धर्मदान, व्यसनमें प्रमासक्ति, भूपतिके गुण,
सेनापतिके गुण, त्रिवर्गके कारण और गुण-दोष, चमत्
अभिसन्धि, अनुगतोंके व्यवहार, सर्वमें भागद्वारा, चम-
वधानता-परिहार, प्रत्यक्ष विषयोंमें लोभ, लब्ध विषयों-
को हृदि, प्रवृद्ध धनके विधानानुसार नत्पात्रमें दान, धर्म,
अथ और काम; व्यसनोके विनाशार्थ धर्मदान, व्यग्रा,
असमीक्षा, सुरापान और स्तो-मधीम इन चार प्रकारके
कामज तथा वाक्पाद, उग्रता, दण्डपातय निग्रह,
आत्मत्याग और धर्मदू-ष इन छः प्रकारके लोभजन व्यसनो-
का विषय, विविधयन्त्र और कार्ययन्त्र, विजयिलोप,
सैत्य-क्षेदन, अवरोध, कृपादि कार्यका अनुशासन, नाना
प्रकारके उपकरण; द्रव्योपाकरणके लिये युद्धयात्रा, युद्धोपाय,
पथव, पानक, शङ्ख और भेरी इन छः प्रकारके द्रव्यो-
का विषय, लब्ध राज्यमें शान्ति स्थापन, माधुषीको पूजा,
विद्वानोंके साथ मित्रता, दान और होमका परिज्ञान,
माहृत्य वस्तुका अग्र्य, शरीर-मंस्कार, आहार, आस्ति-
कता, एक मार्गमें उन्नति लाभ; मय और मधुर वाक्य,
मामाजिक उत्सव, गृहकार्य, पत्न्यादि स्थानके प्रवेश
और वरोध व्यवहारका अनुसन्धान, ब्राह्मणकी अदण्ड-
नीयता, युक्तानुसार दण्डविधान, अनुजोवियोंमें जाति
और गुणगत पक्षपात, नगरवासियोंको रक्षाका विधान,
हादश राजमंडल विषयक चिन्ता, वृत्तर प्रकार शरीर-
रिक्त प्रतीकार; देग, जाति और कुलके धर्म, पर्व, काम
और मोक्षका उपाय; धर्मरूपदा, कृपादि मूषकाणोंको
प्रधानो, मायायोग, नौकानिमज्जनादि द्वारा नदीका
पथरोध इत्यादि।

इस शास्त्रके द्वारा जगत्के समस्त मनुष्य दण्ड-प्रभाव-
में पुत्रार्थ फलको प्राप्त करनेमें समर्थ होते हैं; इसलिये
इसका नाम दण्डनीति पड़ा है। इस दंडनीतिमें जो

समानोत्रमासि पात्रैर्दत्तमेवम् ।

रौद्रियं मासिनेयश्च माह्वस्यसुतं विना ॥”

पुत्रक द्विज मदिष्टादिने पुत्रको ग्रहण करे, उस-
के प्रभावमें समोत्रजपुत्रको ग्रहण करे और वह भी न
मिले तो अन्य गोत्रज पुत्रको दत्तक बनावे । परन्तु
दोहिव (धैवता), भागिनिय (भागजा) और माह्वस्य-
सुत (मोथेरा भाई) को कदापि दत्तक न बनावे । इस-
लिए अथर्व श्रद्धाका अर्थ मध्वर्णातिरिक्त समझना चाहिये
अर्थात् ब्राह्मण ब्राह्मणके ही पुत्रको दत्तक बना सकता
है, क्षत्रिय वा वैश्य वा शूद्रके पुत्रको नहीं । क्षत्रियादि
के विषयमें ऐसा ही समझना चाहिये । मनु और हठ
याज्ञवल्क्यने भी ऐसा ही कहा है—

“माता पिता वा दयातां यमद्विभः पुत्रनापदि ।

सद्यः प्रीतिमुपुक् व श्रेयो दग्निमःसुतः ॥ (मनु)

“व्रजातीयः द्रुतो मासः पिद्वाराय व शिवमाह ।

प्रतिग्रहोताके यदि पुत्र न हो, तो पिता और माताको
चाहिये कि वे उसे मनुष्टचित्तसे सजातीय पुत्रको प्रदान
करें; इसको नाम दग्निम वा दत्तकपुत्र है । यह सजातीय
दत्तक पुत्र पिण्डतपणादि करता है, इसलिये ग्रहीताके
धनका अधिकारी होता है । ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य
ये दोहिव भागिनिय आदिको दत्तक ग्रहण नहीं कर
सकते । परन्तु शूद्र इनको दत्तक ले सकता है ।

“क्षत्रिणां रवजातो न शुभोऽवमेवैषि वा ।

वैश्यानां वैश्यानेषु शूद्राणां शूद्रमासिपु ।

अथैषामेव वर्णानां मासिपेव न चान्यत्रः ।

रौद्रियो मासिनेयश्च शूद्रैः कियते सुतः ॥

ब्राह्मणादितरे नास्ति मासिनेयः द्रुतः वयविव ।”

(दत्तकमीमांसा)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सबको अपने अपने
वर्षमेंसे दत्तक ग्रहण करना उचित है इसका अतिक्रम
नहीं करना चाहिये । परन्तु ब्राह्मणादि तीन वर्ष
भागिनिय आदिको दत्तक ग्रहण नहीं कर सकते, एक
मात्र शूद्र ही भागिनिय आदिको दत्तक बना सकते हैं ।
शूद्रके विषयमें यह विशेष विधि है ।

द्विजदत्तक—जिसके एक ही पुत्र है, ऐसा याज्ञ-
दत्तक नहीं दे सकता; जिसके अनेक पुत्र हैं, वही पुत्र

दान कर सकता है । जिसके दो पुत्र हैं, वह भी पुत्र-
दान नहीं कर सकता । कारण उसमेंसे यदि एकको
दत्तक दिया जाय तो एक ही रह जाता है और पीछे
वह यदि मर जाय तो उसका भी नाम मीप हो जायगा,
पिंड-तपणादि कार्य सम्पन्न नहीं होंगे और अन्तर्नि-
प्रभावसे पिण्डतप अवस्य हो जायेंगे । इसलिये द्विपुत्र
वाक्ता भी पुत्र दान नहीं कर सकता ।

“नैवपुत्रेण वार्षिकं पुत्रदानं दद्यात्तन ।

बहुपुत्रेण वार्षिकं पुत्रदानं प्रत्येतः ॥

द्विपुत्रस्यापि पुत्रदाने वारपुत्रनासे वंशविच्छेदमातीत्यदा-
यदुपुत्रं वेति ॥” (दत्तकमीमांसा)

एक पुत्रका पिता कदापि पुत्र-दान नहीं कर सकता ।
बहुतसे पुत्रोंका पिता ऐसा कर सकता है । “बहु पुत्र-
वाक्ता पुत्रदान दे” इस विधानके द्वारा द्विपुत्र वाक्ताके
लिए भी पुत्रदानका निषेध किया गया है । किन्तु
पतिके रहते हुए अथवा प्रीयित या मर जाने पर पतिकी
अनुमति होने पर ही पुत्र प्रदान कर सकता है अन्यथा
नहीं ।

निरपेक्षदान—

“दयात् मातापिता वार्षं व पुत्रो दत्तको भवेत् ।”

माता और पिता जिसकी दान कर देते हैं उसे पुत्रको
दत्तक कहते हैं । जिस स्थान पर माता और पिता
प्रीति-पूर्वक, दूसरेके संगका नाश होते देख, उससे प्रति
दयापरवश्य ही पुत्र दान करते हैं, समो पुत्रको दत्तक
कहा जा सकता है ।

रूपया-पैसा दे कर पिता माताको मनुष्ट करके जी
पुत्र लिया जाता है, उसे दत्तक नहीं कहा जा सकता ।
ऐसे पुत्रको ‘क्रोतपुत्र’ कह सकते हैं । क्रोत पुत्रका
ग्रहण करना निषिद्ध है, यह बात पहले ही खोजी जा
सुकी है ।

पुत्र-प्रतिपदकी विधि—जिस दिन पुत्र ग्रहण करना
हो, उसके एक दिन पहले उपवास करना चाहिये और
दूधरे दिव (पुत्र ग्रहणके दिन) पहले चक्के बपढ़े
पहन कर बंदगारम याचार्यके साथ मधुपर्कादिष्ट द्वारा
राजा और रिजालियोंकी पूजा करनी चाहिये । समस्त
याज्ञीय-व्यजन तथा अनुवाच्योंकी आमन्त्रण कर उन्हें

सुमिष्ट भोजन खाटिके द्वारा परितुष्ट करना चाहिए।

तदनन्तर वस्तुओंके माध्य दाताके समक्ष जा कर "पुत्रं देहि" (पर्याप्त सुख पुत्रदान दोजिए) ऐसा याचना करनी चाहिए। दाता यदि पुत्रदान देनेमें समर्थ हो, तो यहीताकी चाहिए कि वह पुत्रदान-प्रयोगविधिके अनुसार पुत्रको ग्रहण कर ले। "देवस्य त्वदि" इस मन्त्रके द्वारा पुत्र ग्रहण किया जाता है। उपरान्त ऋक्जयका जप करके गिरुका मन्त्रक सूचना चाहिए और फिर मृत्यु मीत खाटि सामाजिक कार्योंके सम्मेलन होने पर उसे घर से पाना चाहिए। *

पनन्तर आचार्योंको दक्षिणा देने को चाहिए। यदि राजा दत्तक ग्रहण करे, तो राज्याई पर्याप्त राज्यकी जितनी प्राय हो, उससे आधी दक्षिणा देने को चाहिए। वैश्यादिको यथाशक्ति दक्षिणा देने को चाहिए। यहीताकी उचित है कि दत्तक ग्रहण कर, स्व-प्राप्तोक्त विधिके अनुसार उस दत्तक (पुत्र)-के पिताके द्वारा कोई संस्कार कार्यादि सम्पन्न करावे। यदि कोई संस्कार की शुका हो, तो पुनः संस्कार करानेको कोई आवश्यकता नहीं। जो संस्कार न हुए हों, उन्हें केवल संस्कारोंको कराना चाहिए।

जिस बालकका चूड़ाकरण संस्कार की शुका है, उसे दत्तकस्थमें लीना की उचित है और न देना। अतएव पांच वर्ष तकके बच्चोंकी हो गोद लेना चाहिए, फिर नहीं। *

* "गौतमोऽहं प्रवक्ष्यामि पुत्रसंप्रद्वारणं।
अर्धमो घृतपुत्री वा पुत्रार्थं सप्तगोष्य यः॥
बावधी कुण्डले हृदा वस्त्रोपैर्वांगुलीयकं।
आचार्यं धर्मसंपुक्तं वैश्वं वैदपारगं॥
मधुरं चैव संयुक्तं राजानन्दं दिवा नु शोभते।
दातुः समस्तं माया य पुत्रं देहीति माययेत्॥
इमे धर्मयो दाताभ्यां को गतेनेति चर्चमः॥" (दत्तकमीमांसा)
* "पितृगोत्रेण यः पुत्रं संस्तुतः सुविधीयते।
आपुत्रान्तं न पुत्रः सं पुत्रतां वादि धान्तः॥
चूडाया यदि संस्तुता मित्र गोत्रेण वै श्रुताः।
दत्तावास्तनयाइते स्मुरन्वया दात उच्यते॥
कथं न पुत्रमादाया न दत्ताया पुत्रा दृष्टे॥"

(दत्तकमीमांसा)

दत्तक द्वारा होनेवाले धादका निर्देश—दत्तक-ग्रहणके बाद यदि यहीताके पुत्र उत्पन्न हो, तो यहीताको मृत्यु होने पर, मरिण्डोकरणके बाद पोहूय याहमें दत्तकका पक्षिकार नहीं रहता। इसमें स्पष्ट और कनिष्ठके नियमकी रक्षा नहीं होती। दत्तक स्पष्ट होने पर भी, और मृत्युके रहते हुए मरिण्डोकरणके पक्षमें पोहूय याह नहीं कर सकता।

दत्तकग्रहीक—दत्तकके जननकुलमें यदि कोई मर जाय, तो उसका पगोच नहीं होता। केवल यहीदकुलमें जनन और मरणमें होनेसे विराति पगोच रहता है। पर्याप्त गृहीता खाटि व्यक्तियोंका यथामात्र जनन और मरण होने पर दत्तककी, तथा दत्तककी स्त्री और उसके पुत्रादिका यथामात्र जनन और मरण होने पर यहीता खाटिको तीन दिनका पगोच मगता है।

दत्तक यदि मरिण्ड हो, तो भी पगोच तीनही दिनका होता है, सम्पूर्ण नहीं।

"मित्रगोत्रः पुत्रं विंशतिः पुत्रं, संस्तुताः स्यात्।

जनने मरणे चैव दत्तकगोत्रस्य मागिनः॥

मित्रगोत्रः पगोचो वा नोतः संस्तुतः पगोचः॥

जनने मरणे तस्य दत्तकगोत्रं विधीयते॥"

(दत्तकमीमांसा)

दत्तक खाटि मरिण्ड हो और खाटि समोत्र वा मित्रगोत्र हो, जनन और मरणमें उसे तीन ही दिनका पगोच मगता है। दत्तकके समान दत्तक-गृहीताको भी तीन दिन पगोचका पालन करना पड़ता है। परन्तु दासपुत्रा-यव-दत्तकके जननकुल और यहीदकुल दोनों कुलोंमें तीन दिन पगोच होता है। जन्माकी जिन प्रकार पाक-पक्षमें मरिण्डा निहित होती है, दत्तकका भी उसी प्रकार पाकपक्षमें (पर्याप्त पक्षमें) मगता कर चतुर्थ पुत्रपर्वना मरिण्डाके कारण तीन दिनका पगोच होता है। दत्तककी पक्षम पुत्रपर्वने दत्तक पुत्रपर्वना एक दिनका पगोच मगता है। दत्तक पुत्रपर्वने ऊपर ध्यानमात्रसे श्रुति होती है। 'दत्तकचन्द्रिका'के मतमें यदि यहीता द्वारा दत्तक उपनीत हुआ हो, तो यहीताकी मृत्यु होने पर उसे दत्तक दिनका पगोच मगता।

"पुत्रपर्वने मित्रगोत्र मित्रेण संस्तुताम्॥

अतः दत्तकः न च दत्तकगोत्रेण दृष्टः॥"

स्तर, प्राणकर और मन्द्रजनक है। मोठा दहीमें चतुरोग उत्पन्न होता है तथा कफ और भेदको दृढि होती है। खड़ा दही पित्तशोषमात्रो बढ़ाता है और जो बहुत खड़ा है उससे रक्त दूषित होता है। मन्द्रजात अर्थात् जो अच्छा तरह जमने नहीं पाता, वह दही विदाहो होता है, तलेमें दाह उत्पन्न करता है तथा उससे मल, मूत्र, वायु, पित्त और कफको दृढि होती है।

गन्धदधि—स्निग्ध, मधुर, अम्लिकर, कृमिकर, और पवित्र है।

हारीदधि—लघु, कफ, पित्तका शान्तिकर, वायु-जन्तु उदरोगका निवृत्तिकर, अग्नि, श्वास और काम रोगका हितकर एवं अम्लिकर है।

मास्रिय दधि—मधुर, हृद्य, वायुपित्तका शान्तिकर, कफ-वर्धक और स्निग्ध है।

उष्ट्र दधि—उष्णान्न पर कटुर, सारयुक्त, गुरुपाक और भेदकर तथा वात, अग्नि, कुष्ठ, क्षमि और घंटको शोमारोमें शान्तिकर है।

षाणिक दधि—भेदक दूधका जमावा दूधा दंष्ट्रो वात, श्लेष्मा और अग्नि वर्धक। रस और पाक होने पर मधुर, चतुरोगकर एवं दोषवर्धक है।

घोड़ोका दधि—अम्लिकर, चतुरोग और वातवहक, रुच, उष्ण, कषाय एवं कफ तथा मूलनाशक है।

गारो दधि—स्निग्ध, पाक होने पर मधुर, वलकर, दमिकर, भार, चतुका हितकर एवं दोषशान्तिकर है।

वस्तिनीका दधि—लघुपाक, कफप्र, उष्णवीर्य, अजोर्ण, कफ एवं मलवर्धक है। लेकिन जितने प्रकारके दधि बतलाये गए हैं, उनमेंसे गन्ध दधि ही खेद है। गान्ध दही स्वादिष्ट होता है, खससे क्षानने पर यह शरीरको मजबूत बनाता है, वायुकी शान्त करता है और शोषमात्रो बढ़ाता है। लेकिन इतने पित्त कुपित नहीं होता। दधिकी मलाई गुरुपाक, उष्ण, वायुकी शान्तिकर, अम्लिकर एवं कफ और मलवर्धक है। विना मलाईका दधि रुच, ममरी-धक, वायुवर्धनकर, अम्लिकर, लघु, कषाय और रुचिकर होता है। गरु, घोष और वधनाकानमें दही खाना अमंगल और हानि गिरि तथा सर्वाकानमें प्रमत्त है। दहीका तोड़ा या पानी दणा और क्लानिनाशक, मधु,

शरीरके हारका शोधनकर, अम्ल, कषाय, मधुर और वातशोषाका शान्तिकर है, किन्तु यह नेत्रोवर्धक नहीं है। इसके विवा यह प्रष्टादकर, क्षमि, वल, रुचिकर तथा मलभेदक भी है। जितने प्रकारके दधि ऊपर बत लाए गए हैं उन्हें सात प्रकारके दधिके पतनमें समझना चाहिये। क्षुद्र, अम्ल, अम्लम्ल, मन्द्रजात, पक्षदुग्धजात, दधिरस और पसार यही सात प्रकारके दधि हैं। इनका तोड़ा या पानी भी दधि सरासा गुणकारो है। (वस्तुतः)

शरत्कालमें दधिका गुण—गुरु, अम्ल और रक्तपित्त-वर्धक, शोफ, लघुष्ण, ज्वर, मूल और विषमज्वरकारक है। हेमन्तकालमें दधिका गुण—गुरु, स्निग्ध, मधुर, कफ-क्षत और वलवर्धक, हृद्य, मेध्य, पुष्टि, तुष्टि तथा हृदि-दायक है।

शिशिरमें दधिका गुण—अम्ल, मधुर, गुरु, हृद्य, वल-कारक, वल और दोषनाशक है।

शोष्णमें दधिका गुण लघु पाक, उष्ण, रक्तपित्त-कारक, शोष, अम्ल और विषमज्वरकारक है।

वर्षामें दधिका गुण—ग्रीतन, शोष, वात, अम्ल, अम और पतितमारनाशक है। (शरत्काल) इन समय यः योग्य, पतितमार, ग्रीतन, विषमज्वर, अम्ल, मूलवृद्ध और कृमिगत रोगमें विशेष फलदायक माना गया है।

(दात ८ अ०) २ वस्त्र, कपड़ा।

दधि (हिं० पु०) मसूर, मागर।

दधिक (सं० पु०) शैवेष्टकृष्ण, मलाईका पेड़।

दधिकर्म (सं० पु०) दधिमंस्तरक कर्म। दधि-मंस्तरक वैदिक कर्मभेद।

दधिकंठा (हिं० पु०) एक प्रकारका शमय जो प्रायः जमाटमोके समय होता है। इसमें लोग हठ्ठा मिना दूधा दही एक दूसरे पर फेंकते हैं। प्रवाद है, कि जब योद्धागने जयपराजय किया था, तब गोर्गो और गोपिगोर्गो आनन्दमें मग्न होकर हठ्ठा मिना दूधा दही एक दूसरे पर इतना पथिक फेंका था कि गनियोंमें दहीका कोषक सा हो गया था।

दधिकृषिका (सं० स्त्री०) दधिजाता कृषिकों का वा पद-कोष दुग्धे दधनकृषोगान् जाता। दुग्ध विकार भेद, फटे हुए दुग्धका वह अंश जो पानी निरुद्धन पर

नि मरीषिचनेन शिष्यस्य गुरु प्रेतकार्यहरणमिति समाहा-
तीचमुच्यते मरुति, कस्य पुत्रस्य दत्तकप्राप्तिरिति। गुरुव्रतम्-

पति उपनयनादिबन्धुत्वात् नमस्य दत्तकस्य प्रतिमहीष्टिचकारकं च
एव दत्तकप्राप्तौ विदति, अतएव त्रिगुणम्" (दत्तकमोक्षोपायः)

साम्नि—दत्तकको सामान्यदत्तक याद एकीष्टि विधान-
का अनुसार करना चाहिये; पार्ष्ण्यविधानानुसार नहीं।

दत्तकके विवाद—दत्तकके विवाहादिमें परिवेदन दीय नहीं
होता, पर्याप्त व्येष्ट महीटरके पवित्राहित रहते हुए
दत्तक विवाह नहीं कर सकता और दत्तक पवित्राहित
हो तो उसको कनिष्ठ महीटरका विवाह नहीं हो सकता।
दत्तकके विवाहस्थल पर गृहीत्यकुलमें वै पुरुषिक साविण्य
है, पर्याप्त गृहीत्यकुलमें दत्तक चतुर्थी कन्याके साथ
विवाह कर सकता है।

दत्तकका मातामहपक्ष—यदि गृहीताको बहुतसो
स्त्रियाँ हों और गृहीत दत्तककी हडि उपस्थित हो, तो
दत्तक-गृहीताको कौन सी स्त्रीके पितादि उसका माता-
मह पक्ष होगा ? शास्त्रोंमें प्रथमा स्त्रीको धर्मपत्नी कहा
है, द्वितीया आदि कामपत्नी कहे गई है, चतुर्थ प्रथम
स्त्रीके पितादि की मातामह पक्ष होगा। जिस स्थल पर
पतिकी अनुमतिसे अनुसार विधवा स्त्रियाँ दत्तक ग्रहण
करती हैं, उस स्थल पर स्वामी अपनी स्त्रियोंमें जिसको
अनुमति दे जायगा और उसके अनुसार जो दत्तक
ग्रहण करेगा, उसीके पितादि दत्तकका मातामह पक्ष
होगा।

दत्तक-दायविभाग—दत्तक ग्रहणके बाद पोरन पुत्र
उत्पन्न हो, तो उस पोरन पुत्रकी १ भाग पोर
दत्तक पुत्रकी १ भाग मिलेगा। बंगालमें तीन भागमेंसे
दो भाग दत्तकको मिलता है।

"उत्तमे त्रौतरे पुत्रे तृतीयांशहरः स्मृतः।
चवर्णां अथवर्गस्तु मासकृदादनर्गिनः ॥
चतुर्णां शहरा स्मृता इति श्रौती चामे चरन्ति पाठः।"
(दत्तकपट्टिका)

दत्तक-दत्तकप्राप्तविधि—दोह्यादिके द्वारा उपकार
पानकी प्रत्याशा कर दत्तककन्या ग्रहण को ला सकती
है। यह शास्त्रानुमोदित है, मुद्राणादिमें इसका उदाहरण

मिलता है। दत्तकमें शान्ताको दत्तककन्याके रूपमें
ग्रहण किया था। इत्यादि।

अविवाहितके लिए दत्तकका निर्देश—अविवाहित-पुत्र
दत्तक ग्रहण नहीं कर सकता। दार परिपक्व न करनेसे
अपुत्रक तो कहनाता है, पर उसके पुत्र होनेको मना-
यना अवश्य है, इसलिए उसके लिए दत्तक ग्रहण करने-
का निषेध है।

वदन्ती स्त्रियोंके होने हुए यदि स्वामी उन स्त्रियों-
को दत्तक ग्रहण करनेकी अनुमति दे और तदनुसार
प्रत्येक स्त्री एक एक दत्तक ग्रहण कर ले, तो ऐसी दया-
में शास्त्रानुसार मिष्ट होने पर भी प्रथम गृहीत दत्तक
की धनका अधिकारी होता है तथा एक समयमें चनेक
दत्तक गृहीत होने पर किसी भी दत्तककी धन ग्रहण
करनेका अधिकार नहीं होता।

वोरमिष्टोदयके मतसे—पति यदि मरते समय दत्तक-
की प्राप्ति न दे भके और मर जाय, तो स्त्री स्वयं दत्तक
ग्रहण कर सकती है। ३ गालमें ऐसा नहीं होता।

स्त्री पचवा गृहको दत्तक ग्रहण करना हो, तो पहले
प्राप्त्यर्थके द्वारा होम कर लेना चाहिए। ऐसा नहीं
करनेसे दत्तकत्व मिष्ट नहीं होता। प्राप्तिप्राप्तिके द्वारा
प्राप्त्यर्थक मन्थादिका पाठ करना चाहिए। मन्थ-पाठके
बिना ही स्त्री पोर गृहादिका दत्तकत्व मिष्ट हो सकता
है, किन्तु होमके बिना कदापि दत्तकत्व मिष्ट नहीं
होता। उत्तरकालमें कोई अनर्थ न हो, हमके लिए मन्थ-
बान्धव पोर राजपुरुषके समक्षमें दत्तक ग्रहण करना
सहज है। (दत्तकपट्टिका, दत्तकमोक्षोपायः)

दत्तकग्रहण-प्रयोगविधि—गृहीताको दत्तक-ग्रहणके एक
दिन पहले उपवास करना चाहिए, फिर उसके दूसरे
दिन प्रातःकृत्य सम्पन्न करके प्रातःपूजा, विष्णुस्मरण
और नारायणकी मन्त्रपुष्टि पढ़ा कर कृत्वापूजन करना
चाहिये। "अ कर्तव्यं हिमन् पुत्रप्राप्त्यर्थकं विपुलाहं
भवतो ब्रह्म, तं पुत्राहं यद्दम्य तोन वार पदा
जाना है।

इस तरह स्तुति और गृहिकी तीन बार करना
चाहिये, परन्तु गृहिके लिए "कृत्वा भवतो ब्रह्म" इतना
ही कहना पर्याप्त होगा।

सामवेदियोंको—“ॐ भक्ति भोमोऽहं” और यजुर्वेदियोंको—“ॐ सूर्यः भोमो यमः कांतः” यह मन्त्र पढ़ना चाहिए।

उसके बाद “एते गन्धर्वा ये ॐ आदित्यादि नवग्रहेभ्यो नमः” ऐसा कह कर पूजा करें। फिर गणेशादि पञ्च देवता, इन्द्रादि दश दिक्पाल, गुरु और ब्राह्मणको पूजा करें। उसके बाद सङ्कल्प करें जो इस प्रकार है—

“श्रीविष्णु रौ तत्सदस्य भस्मके मा भ भस्मके पवि भस्मक तिथौ भस्मकगोत्रः शोभस्मक देवशर्मा (गुरु हों तो भस्मक दास) अमजालप्रयुक्तपैतृकवृत्तगणकरणपुत्राभिरकरा दान द्वारा शोभरमेश्वरप्रीत्यर्थं आत्मवैश्वरसाधनं मनुष्य-स्मृतिकर्मशुद्धिगोत्रकपरागाराधार्मिकव्याप्तुभारेण स्वगामो भविषिना पुत्रप्रतिपदमहं करिष्ये।”

सामवेदो हो तो ‘देवो भो’ इत्यादि, यजुर्वेदो हो तो ‘यज्वापतो’ इत्यादि, सत्कल्पसूक्त पाठ करना चाहिए बादमें विज्ञनायके लिए गणेशपूजा करें और ब्रह्म, होता, आचार्य और सदस्यको वरण करें।

‘दत्तक-पक्षीता कहे’—“भोम् साधु भवानासां” ब्राह्मण कहे—“भोम् साधुधर्मावे”, कर्त्ता कहे ‘भर्चय-ध्यामो भवन्तः’ और ब्राह्मण कहे—“भोम् पचय।” इसके बाद ब्राह्मणको वस्त्र अन्नद्वारा आदि दे कर उसके दक्षिण आनुवा स्पर्श कर कहे—

“विष्णुरौ तत्सदस्य भस्मके माभि भस्मके पवि भस्मक तिथौ सत्सङ्कल्पितगोत्रकायः भविषिना पुत्रग्रहणकर्मणि ब्रह्मकर्मकरणाय भस्मक गोत्रं शोभस्मक देवशर्माणं एभिः पाद्यादिभिरभ्यर्चं भवन्तु मङ्गं वृणु” (ब्राह्मण हों तो वृत्तांशिक कहे)। उसके बाद “यथाविहितं ब्रह्मकर्मकुर्वं” ऐसा कहे। ब्राह्मण हो तो ‘यथा ज्ञानं करवाणि’ ऐसा कहे। इस प्रकार होता, आचार्य और सदस्योको वरण करना चाहिए। बादमें होता, आदि वेदो पर बैठ कर पञ्च गन्धद्वारा स्वयोशोक्त यथाविहित मन्त्र पढ़कर पञ्चगव्यका शोधन करें। पञ्चगव्यका शोधन हो चुकने पर प्रभव द्वारा पञ्चगव्यकी प्रक्षाल्य करके इस मन्त्रसे वेदोका शोधन करना चाहिए—“भोम् वेदावेदिः समाप्यते बर्हिषा बर्हि-रिन्द्रियं युपेन यप आप्यायते प्रयोतोऽग्निरग्निना।” उसके बाद वेदोके ऊपर चन्द्राक्षर (चंदबा) लगाया चाहिये।

मन्त्र इस प्रकार है—“भोम् ऊर्ध्वोत्पण उत्तये सधादेनो नः सविता। ऊर्ध्वोराजस्य सविता यदेन्द्रिर्भोगामि-विज्ञायामहे।”

उक्त गान्तिकलमको दो वस्त्रोंमें आच्छादित कर “ॐ यक्षस्योत्तमममि यक्षस्य स्वभूत मज्जोत्य यक्ष-णस्य ऋत सदस्यमि यक्षस्य ऋत सदस्यमि यक्षस्य ऋत सदस्यो मासोद” इस मन्त्र द्वारा गान्तिकुशमें जल भरना चाहिए। उसके बाद वेदोके मध्य पञ्चवर्णके धूने-द्वारा सर्वतोमद्रमण्डल चयवा षट्पदनक्रम से लगाया चाहिए। इसमें गानपाम मिला स्थापन कर पूजा करनी चाहिए। पहले सामान्यार्घ्य और भूतशुद्धादि करें। प्रथम घटमें गणेश, द्वितीय घटमें सूर्य, तृतीय घटमें विष्णु, चतुर्थ घटमें शिव और पञ्चम घटमें दुर्गाको पूजा करें तथा आदित्यादि नवग्रहों और इन्द्रादि दशदिक्पालोंका वृषक, वृषक, आवाहनादि करने पूजन करें। पश्चात् गान्तिकलममें यक्षका पाञ्चान करके यथाशक्ति पूजा करें। फिर गणपति, प्रजापति, विष्णु और धर्मको पौडगोपचारसे पूजा करें। इस प्रकार पूजा करके विष्ट-गणका आवाहन कर गान्तिके अनुसार उनको पूजा करनी चाहिए। “भोम् विष्टभ्यो नमः, भोम् कुलदेवताभ्यो नमः, भोम् गुरुभ्यो नमः, भोम् चण्डये नमः, भोम् सूर्यमायिवा नमः, भोम् वायवे नमः, भोम् सूर्याय नमः, भोम् प्रजापतये नमः, भोम् भोमाय नमः, भोम् दिवे नमः, भोम् पृथिव्यै नमः, भोम् भूर्भुवः, भोम् भुवर्गमः, भोम् स्वर्गमः, भोम् भूर्भुवः स्वर्गमः, भोम् पानये जिहृक्षते नमः” इनकी पूजा कर स्व-गृहोक्त विधिसे कुंड वा खण्डिजमें बलिस्थापन कर होम करना चाहिए। यजुर्वेदियोंको यजुर्वेदोक्त और सामवेदियोंको साम वेदोक्त विधिके अनुसार कुण्डिका सम्यक् करना चाहिए। उसके बाद आचार्यको भी उचित है, कि ब्राह्मणादिके साथ पक्षीताकी टाताके पास से जा पर “भोम् पुत्रं देहि” इस प्रकार पुत्रकी याचना करें। बादमें पुत्रदाता आचमनपुर्वक विष्णुका नाम स्मरण कर गुरु, गणेश और नवग्रह आदिकी पूजा करें। फिर स्नातिवाचन करें—“भोम् कस्तं व्येतिमन् पुत्रदाम-कर्मणि भोम् पुत्राहं भवन्तो भवन्तु भोम् पुत्रांम्”

भाईमें हमे पायां था। वेष्टि इन्होंने उमों मन्त्रको पड़ोमि पसुरों का वन किया था।

भागवतमें भी दधोचिके पत्रगिरके विषयमें कुछ प्रसन्न है। ओधरन्नामोने भी मावय को तरह इस उपा-
ध्यान की प्राप्ति पश्यने बहुत बड़ा चक्र कर उद्घृत
किया है। (मावय ६।११ अ० और भीषटोका इत्यत्र)

महाभारतमें इनको कथा इस प्रकार मिली है—
दध जिन समय एहिद्वारमें विना शिवजीके यज्ञका अनु-
ष्ठान करने से, उस समय इन्होंने शिवजीको निमन्त्रित
करनेके लिए दधको बहुत समझाया था, किन्तु दधने
एक भी न सुनी। इस पर रुद्रभक्त दधोचि यज्ञभाषाको
छोड़ कर चले गये थे। इनके शिष्य नन्दो इनसे शिव-
मन्त्रमें दोषित हो शिवपाप द कष्टनाम लेने।

एक समय दधोचि बड़ो कठिन तपस्या करने लगे।
इस पर रुद्र बहुत डर गये और उन्होंने पल्लवुपा
पक्षीको यज्ञ भङ्ग करनेके लिये भेजा। जिस समय ये
मरुतनेकी किनारे तपण कर रहे थे, उसी समय पल-
लवुपा उनकी सामने आकर खड़ी हो गई। पल्लवुपाको
देखकर दधोचिका योग्यव्यक्तित हो गया जिससे एक पुत्र
को उत्पत्ति हुई। यहो पुत्र आरव्य नामसे प्रसिद्ध हुआ।
देवगण जब वृषासुरके भयसे तंग तंग था गये, तब
उन्हें मानस पड़, कि दधोचिका पत्न्यानिर्मित वध
पाये बिना वृषका नाश नहीं हो सकता है। तब देव-
राज रुद्रने इनके पास जा कर पत्निके लिये प्रार्थना
की। जो रुद्र दधोचिके लहर गये थे, आज वृषके
उपकारके लिये दधोचिमें पपना शरीर तक चरण कर
दिया। पत्निपुराणमें लिखा है, कि केवल वध ही नहीं
बल्कि दधोचिको पत्निके और भी पनेक पक्ष बनाये
गये थे।

दधीप्यस्थि (मं० स्तो०) दधोचिरस्थि। १ दधोचि सुनिको
पत्नि जिससे वध बनाया गया। २ वध। ३ शीरक,
दोरा। दधीचि देखो।

दधीसुप्त (मं० पु०) दधरभेद, एक रुद्रका नाम।

दध्य (मं० ति०) दध्योतोति, ध्य-जिन्, त्विवाटिक
निपातनात् सिद्धं (अथि० दधिगिरि। ग १।२।१९)
१ दध, निमल, शेटया। २ ध्यक, दधन करनेवाला,
मावमी।

दध्यनि (मं० ति०) दध्यनिवाचति दध्य निर,
मतो वाहुनकात् वनि। ध्यक, पमिमावक, पगजित
करनेवाला।

दध्र (मं० पु०) दधते जोषिभ्यः पापपुल्लकमाफनं दधा-
तोति दध दाने वाहुनकात् न। यम, चोदक यममिमे
एक यम।

दध्य (मं० स्तो०) दधिमर, दहीको मनाई।

दध्यह्र (मं० पु०) मरन द्रव्य, नीवान।

दध्यश्च (मं० पु०) दधि धारकं पचति चन्च-जिप्।
पचवां पचिके पुत्र दधोचि सुनि

रुद्रने दधोचिकी प्रवर्णविद्या और मधुविद्या
मिखा कर कहा था कि यदि तुम यह विद्या किसीको
बतलाओगे तो मैं तुम्हारा मिर काट डालूंगा। इस पर
पत्रिगुप्तने दधोचिका मि काट कर पनग रख दिया
और उसके धड़ पर चोड़का मिर लगा दिया। इस
तरह उन्होंने दधोचिसे प्रवर्ण, (मधु), चक्र, नाम और
यज्ञः प्रभृति विद्यायें भी दीं। जब रुद्रकी यह बात
मानस हुई तो उन्होंने वा कर उनका चोड़का मिर
वधने काट डाला। बाद पत्रिगुप्तने उनके धड़ पर फिर
उनका पपना मिर लगा दिया।

(श्रु १।१।११२ मा० १) दधीचि देखो।

दध्यव (मं० स्तो०) दध्यवमिन्नं पच। दधिमयित
पच, दही मिना हुआ पनग।

दधानी (मं० स्तो०) दधिवत् शुभतां पामयति पा-नो-
जिप्। सुदर्शन वृष, मदन मत्त।

दधानी (मं० स्तो०) दधानी देखो।

दध्यागिरि (मं० ति०) दधति पुण्याति इति दधि श्रुवाति
हिव्याति हत्यायो दध्यैव पात्रोप्यंय। दीपपातक।

दध्याह्रः (मं० पु०) कथित वृष, कथक। दिह।

दध्युत्तर (मं० स्तो०) दध्रः उत्तरं चरमावस्थां गच्छ-
तोति गम-ड। दधिच्छेद, दहीको मनाई।

दध्युत्तर (मं० स्तो०) दध्रः उत्तरं चरमावस्थां गच्छ-
तोति गम-ड। दधिच्छेद, दहीको मनाई।

दध्युद (मं० पु०) दधिचदुदकं यन्मै सदकप्य वृषादेः।
दधि-मुद, दहीका मसुद्र।

दधीदन (मं० पु०) दध्युपमिन्नः पोदनः। दधिमयित
पोदन, दही मिना हुआ भात।

(इमको तोन बार पढ़ना होगा ।) फिर स्वस्तिस्वस्ति का पाठ करें ।

चनत्तर घंटोके पूर्वमें पांच घट पारोपित कर घटस्था-
पनील मन्त्र द्वारा पांच घट स्थापन करें । फिर देवीके
ईशानकोष्में गार्गाकनन स्थापन करें ।

चनत्तर 'स्वस्तिनः इन्द्रो' और 'सूर्य' सोमो यमः
कान' ये दो मन्त्र पढ़ें बाटमें नारायणको मन्त्र पुत्र
दे कर पूजा करें और इन प्रकार मन्त्र स्थापन करें—

'ओषिणरो' तत्तदथ यमुके मामि यमुके पत्ने यमुके
तियो यमुक गोत्रः ओषमुक देवगर्मा ओषरमेवरप्रोत्पद्ये
पुत्रदानकर्माहं करिष्ये ।'

इसके बाद सद्गुरुस्नान का पाठ करें और गवेषा पादि-
की पद्यादि द्वारा पूजा कर पुत्रदान करें । उक्तर्ग करने-
का मन्त्र इस प्रकार है—

"विष्णुरो' तत्तदथ यमुके मामि यमुके पत्ने यमुके
तियो यमुक गोत्रः ओषमुक देवगर्मा यमुस्मिष्ट, प
पश्चात्तुष्ट, पुत्रदाने विष्टे यज्ञेन दक्षिण्या समपरि-
यज्ञिरे इति पठित्वा ये च यज्ञे त्यादि पञ्च ऋषय पठित्वा
इमं पुत्रं तय पैतृकस्नानपकरण पुनानमनकत्वाभवश-
रचामिहय्ये आत्मनय परमेश्वरप्रोत्पद्ये यमुक गोत्राय
यमुक प्रवराय ओषमुकाय तुभ्यमहं सम्पददे ।'

चनत्तर "मम प्रतिपुत्रातु पुत्रं भवान्" यह मन्त्र
पढ़ कर "प्रतिपुत्रोयुष्मै" कहते हुए अक्षतके साथ जल
जड़ावे और समस्त बाद दक्षिणा दें । चनत्तर "विष्णुरो
तत्तदथ यमुके मामि यमुके पत्ने यमुके तियो यमुक-
गोत्रः ओषमुकदेवगर्मा परमेश्वरप्रोत्पद्यमया याचते
त'पुत्रदानकर्मणः साद्रताय' दक्षिणामिदं कांचन'
तन्मन्त्र' वा ओषिणुरो' यमुकगोत्राय यमुकप्रवराय
ओषमुकाय, तुभ्यमहं सम्पददे" इतना कह कर बानकको
ग्रहोताके हस्तमें संपर्क करें । इसी समय दाता बानक-
को प्रतिग्रहोताको दें । दत्तकग्रहोता 'ॐ देवम्यत्वा
सवितुः प्रभवमिन्नोवां बुभुयो पुत्रो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णा-
म्यमो" इस मन्त्रको पढ़ कर बानकको अपने हाथमें ले
लेवे । फिर गोदमें बिठा कर 'ॐ यद्वाद्वात्तु मन्त्रमि
हृदयाभिज्ञाधने पाप्मायै पुत्रनामामि मंजोव ग्रहदः
ग्रते" इस मन्त्रके द्वारा बानकका मन्त्रक मुखे और यह

मन्त्र पढ़ें— "धर्मा यत्ता परिपुत्राणि ॐ मन्त्राण्य त्या
परिपुत्राणि ।" इसके बाद 'ॐ तन्मात्रि परिपुत्र' इस
मन्त्रके द्वारा बानक पराराना चाहिए । चनत्तर लक्ष्मीप
चोर कुंकुमादि द्वारा निमज्ज करें तथा 'ॐ हिरण्य-
मयमे लुभ्य' इस मन्त्रके द्वारा चनत्तर पर बानकको
गोदमें मंत्र । पश्चात् 'ॐ स्वस्तिनो मिमिक्षामिन्नोभ्यां
स्वस्ति ते व्यादिभि बन्धनः स्वस्ति भूया शरीरपात नः
स्वस्ति याद्या वा दृग्विषो सुवेतना स्वस्तये वायुमुपयुक्ता
महो सोम' स्वस्ति भुवम' यन्मतिः । ॐ हृदस्वति'
मर्षगण' स्वस्तये स्वस्तये चादित्य सोमा भवन्तु
नः विप्रदेवा गोत्रो स्वस्तये वैश्वानरा यमुस्मिः
स्वस्तये देवा भवमभवः स्वस्तये स्वस्तये स्वस्तिनो
बृहस्पारव' इमः स्वस्ति मित्रावहवा स्वस्ति पत्नी स्वस्ति
स्वस्ति न इन्द्रम्यमिन् स्वस्तिनो अदितये स्वस्ति ।
स्वस्तिपत्न्या मयुरेम सूर्यावन्दमवो च पुनर्दन्ता हन्ता
जानता सद्रमे मयि स्वस्तिरेव मन्त्रारिनेमि रिचमरिष्ट-
नेमि सहन्नतं वयम' देवतानां दमुरम' इन्द्रमव'
ममिहृद्यायसोनामिवाकहेम पर्यं सोमुवमाहोरमद्रपच
रास्त्रातेयं मनमा श ताच' प्रेतपाणि स्मरणं प्रपद्ये
स्वस्ति सव्यादेयमयवन्तु तदनु मित्रावहवा तदन्त्ये
मंथोरभ्यमन्तु वस्तं चगोमहि गाधयुतः प्रतिहवा मा
दिबे हृदते साधनाय गृह्याय प्रतिहासुतं तत् प्रतिहास'
मया याचा संस्त्य' तस्मादेत्य विदूरे पुत्रं जमते गृह्याय
वे जानाजिममिपति पयनां प्रतिहा ।"

इस मन्त्रको पढ़ कर चनिकी पश्चिम दिशामें संपर्क
गन करें और चनिकी पश्चिमदिशामें अपने दाहिने
बानकको बिठा कर आचार्यके दाहिने ग्रहोता स्वयं
बैठे । इसके बाद आचार्य होम करना प्रारम्भ करें ।

"ॐ यद्वाद्वात्तु पामाम्य मामोमत्य' माद्राज्ञोर्वा-
पिज्ञात वेदोवगोष्मासुधोहि प्रजाभिरान्नेरशुतचमया
खाडा ३२ ॥ ॐ यमैरेवां यज्ञेन जानयेद लोकोमनने-
कृषवस्त्रोचं यमिव' मयुविषं धोरयन्' गोमया यि'न-
यते खाडा ३२ ॥ ॐ त्वं स्वामने पयं यज्ञं ययों य-
तुनासह । पुनः पतिभ्योजायादा यम्येप्रकयामह
खाडा ३३ ॥ ॐ सोमोद्दुग्मभ्यां गन्धर्वोऽदित्ये
ययित्वापुत्रान्वादादे इमं मंथोव मन्त्रो इमां खाडा ३४

मासमें निकलने पर दाताकी घोर तीव्र मासमें निकलने पर महोदरको मृत्यु होती है। चार मासमें दांत निकलना शुभजनक है। पाँच मासमें दांत निकलनेमें जात्यात्मक मिष्टभोजी घोर सुखी होती है; ६ मासमें निकलनेमें पण्डित, ७ मासमें वसुधा, ८ मासमें दण्ड, ९ मासमें घोर घोर दण्ड मासमें निकलनेमें उषोदी मृत्यु होती है। ग्यारहवें और बारहवें महीनेमें दांत निकलना अच्छा है। यदि पूर्वोक्त चतुस्रजनक महोदरोंमें दांत निकले तो समस्त शान्ति करना आवश्यक है शान्ति करनेमें पहले ८ पुस्तिका बना कर उक्त सुगन्ध गन्धस्थो में प्रयुक्ति कर रहे हैं। छोड़े रहनेसे हारा क्षाति कर ब्राह्मणपूजा घोर होमादि करते हैं।

रतिक्रीडामें दन्ताघातका स्थान—मेष, नरक, ममय, धन, गण्ड, शीत घोर उधर इन पाँच स्थानोंमें दांत गड़ाना क्षीयोंके निये सुखजनक है।

“रतनशोभोदयोर्वै शोभे वैव तथापरे।

दन्ताघातः प्रकृत्यः शोभिनीनां हस्ताब्दः ॥” (शामशास्त्र)
गर्भकालके शतवें मासमें बालकके दन्तमूलका प्रादुर्भाव होता है।

दन्ता (मं० पु०) दन्तो दन्तमार्जने प्रसिद्धः कनः १। दन्तं मार्जनं प्रसिद्धं, वह योष जो दांत मलनेमें निकलतो है। दन्त इव कनः २ गन्धद्वय, पहाड़को चोटो। ३ पूर्वतमे वहिर्निगतं पादाग्रमिदं, पहाड़में निकलनेवाला एक प्रकारका पत्थर। श्राव्यं कनः ४ दन्त, दांत। दन्ताग्रहा (मं० श्लो०) जन्मद्विती, ऐसी बात जिसे बहुत दिनोंमें शीत एक दूधमें सुनते चले पाये हों। दन्ताकाराम (मं० पु०) दंतरोगमिदं, दांतकी एक प्रकारकी बीमारी। दन्तार्धव (मं० पु०) दन्तान् कर्षति क्षय-पु। जम्बोर, जंभीरो भीड़। दन्ताग्रह (मं० श्लो०) दंतगणनायं काष्ठं। दंतधावन-कृत्, दन्तुवण।

दन्ताग्रहका विषय हरकद्वितीमें हम प्रचार निरा है, बन्नी, दन्ता, शुभं घोर हस्तोंके अर्धदंते कारण हुआ है प्रचार्य दंतकाष्ठ की मूर्तते है। हम कारण किम किम हस्तका दंतकाष्ठ शुभजनक है घोर दिस किम हस्तका

चतुस्रजनक सो निम्नमें है। चतुस्रपुत्र काठका या पदममन्त्रित, शुभमवर्ष, पाटित उर्ध्वस्थ घोर त्वक्विज्ञोम दंतकाष्ठने दंतधावन नहीं करना चाहिए। वैकदन्त, शोफघ घोर कागोरी हस्तकी दन्तुवण करनेमें द्रव्यममन्त्रितो ध्याति प्राप्त होती है। सेमत्तद्वत्त दंतकाष्ठमें चतुस्रमा भार्या, वटहस्तमें हृदि, चक्रहस्तमें तिगोउर्ध्व, मधुक हस्तमें पुत्रनाम घोर ककुभहस्तमें सर्वाका मिश्रत्व प्राप्त होता है। शिरोघ घोर करभ हस्तका यदि दंतकाष्ठ हो, तो लज्जा, प्रसक्त हो, तो अभोक्षित पर्यभिहः जातिहस्तका हो तो मनुष्यत्व प्राप्ति, चतुस्र हस्तका हो, तो प्राधान्यनाम, वटघ घोर हस्तका हो तो शारीर्य घोर पायुवृद्धि, तथा विषघ घोर शिरोघ हस्तका हो, तो ऐश्वर्यकी वृद्धि होती है। गीमको दन्तुवण करनेमें पर्य प्राप्त, कारकोरने चतुस्रनाम, भाष्कोरने पर्य तथा चतुस्रनाम घोर पञ्चम हस्तको दन्तुवण करने में शत्रुनाम होता है। गाल, चक्रकर्ण, भद्रदाक घोर पाटव्यक हस्तमें दंतकाष्ठका व्यवहार करनेमें गौरव प्रकाश घोर मिश्रयु, चतुस्रनाम, जंघ तथा दाविसका व्यवहार करनेमें मय प्रकारके सुख प्राप्त होते हैं। पूर्व घोर उधर सुख बैठ कर दन्तुवण करनेमें चाहिए। दन्तुवण करके सुख धी सेना चाहिए। बाट उम दन्तुवण की किसी पण्डे स्थानमें किंक देना चाहिए। श्रौति-मूर्तवमें लिखा है, कि दंत-पाठके प्रसन्न दिवसों घोर गिरनेमें शुभकर घोर यदि वह जपरमें हो कर्षों पर पटक रहे, तो पत्यंत शुभजनक फल प्राप्त होता है। ऐसा नहीं होनेसे चतुस्रभर फल मिलना है।

प्रातः कालमें शोधादि कार्य सम्पन्न करके दन्तुवण करनी चाहिए। तिल, कटु, कषाय, सुगन्धि, कषण्डक, युक्त घोर चोरिकाष्ट मय दन्तुवणमें श्रेष्ठ है।

निषिद्धकाष्ठ—शुभा, ताम्र, हितान, कितको, राजूर घोर नारियल ये सब हस्त चक्रराज नाममें प्रसिद्ध है। पतः इतका दंतकाष्ठ काममें न लाना चाहिए।

घटिर, कटु, करभ, वट, तित्तु, वेणुपुष्ट, चाम्र, निंब, चतुस्रनाम, विन्ध, चक्र तथा दूधर इन सब हस्तोंके दंतकाष्ठ प्रसन्न माने गये हैं।

दंतकाष्ठका परिमाण—वेदार्थिक नियं बाह्य दन्तकी

मे येगाके घरको निकलो । राक्षसें मृगविह वनो-
माप्यय्य मयि तपस्या कर रहे थे । चन्नेरो रातमें कोई
सन्ध्यका घेर उठे लग गया । महर्षि साण्डव्य बहुत
बिगड़े घोर श्राव दिया, 'जिस महाधर्मि पावमें हमें डेन
दिया है, वह सूर्य निकलने निकलने सर जायगा ।' मन्त्रो
तो इस विरुद्ध पवित्रावकी सुन कर बहुत दुःखित हुई
घोर बोली 'जाओ ! सूर्यका उदय ही नहीं होगा, एतो
को बात टपनेको नहीं ।' जब सूर्यका उदय न हुआ तो
पृथ्वीके नामको सम्भावना हुई । इस पर सब देवता बहुत
विस्मित हो ब्रह्माके पास गये घोर सूर्योदयके नहीं
होनेसे यज्ञ-मोषी की कथा सुनाई । ब्रह्माने कहा, 'तेज
द्वारा तेजका घोर तपस्या द्वारा तपस्याका उपगम होता
है । जब पतिव्रताके, माताकाके प्रभावमें सूर्य उदय नहीं
होते हैं, तब पतिव्रता को द्वारा ही उनका उदय करना
होगा ।' ब्रह्माके कथनानुसार ये सब सब महामाध्या
पात्र मुनिका महाधर्मिणीके पास गये घोर चपना
दुखड़ा रोया । देवताओंको समुद्र करनेके लिए चम-
मूयाने जा कर ब्राह्मणपत्नीको समझाया घोर मधुर स्वर-
में कहा, 'तुम्हारे वचनमें सूर्यका उदय बन्द हो गया
है जिसमें यज्ञ घोर सृष्टिके मोष होनेको सम्भावना है ।
अतः तुम सूर्योदय होने दो, बाद तुम्हारे पतिके मरने
ही मैं लक्ष्मी फिर सत्त्व कर दूंगी घोरः उनका शरीर
नोरोग हो जायगा ।' चममूयाने बात सुन कर ब्राह्मण-
पत्नी महमत हो गई । सूर्यका उदय हुआ घोर मृत
ब्राह्मणकी चममूयाने जोषित कर दिया । देवताओंने
प्रसन्न हो कर जब चममूयाने वर मागने कहा, तब
वह बोली, 'ब्रह्मा, विष्णु घोर महेश तोमों में गर्भमें
जन्म ग्रहण करें ।' ब्रह्मादिने इसे स्वीकार कर लिया ।

यथा समय ब्रह्माने भोम बन कर, विष्णुने दत्तात्रेय
बन कर घोर महेश्वरने दुर्वास बन कर चममूयाने घर
जन्म लिया । ऐश्वर्याजने उदय सम्भावने जब पति
रंग पा गये, तब भगवान् दत्तात्रेय क्रुद्ध हो कर
मातर्वे ही दिन गर्भमें निकल पाए थे । दत्तात्रेय भनेक
ऐश्वर्यजन घोर शिटका पानन कर छोड़ो ही समरमें
रागो हो विषयभोगमें विरक्त हो गये थे । मे सदा सवि-
कुमारोंके साथ धान मापन किया करते थे । एक बार ये

पथमें मायिघो घोर सकारमें घुटकारा पानने लिये बहुत
समय तक रोवामें रुके रहे । घर में भी अविश्वामारीने
उनका संग न छोड़ा, वे सरोवरमें तिनारे लकड़ें धामने
बैठे रहे । लकड़ें लकड़ें लिये दत्तात्रेय एक तुम्हरीको
माय लिए निकले घोर लकड़ें माय मद्यपान तथा मृग-
गीत करने लगे । इस पर भी अविश्वामारीने उनका साथ
न छोड़ा । लकड़ें लिये, दत्तात्रेय महापुरुष है,
योगियोंके भी नियन्ता है, किसी विषयमें इनकी चामत्रि
नहीं है । सुतरा मद्यपान तथा मायकी कर्म-मा
लनमें लग नहीं सकते । जो योगविन् तथा योग्य
हैं, वे भी उनका समरण किया करते हैं ।

एक समय जन्मासुरके साथ देवताओंका घनघोर युद्ध
हुआ । इसमें चसुरीकी जो जीत हुई । लक्ष्मीकी
प्राप्तमें देवताओंने जा कर दत्तात्रेयको घुम किया ।
उनके कहनेमें देवताओंने पुनः दैत्योंके साथ युद्ध
घोषणा कर दी । किन्तु दैत्योंके प्रबल-प्राप्तमयमें डर
कर देवगण सहायताके लिये फिर भी दत्तात्रेयके पास
पाए । दैत्योंने भी उनका पीछा न छोड़ा, पर लक्ष्मी
रति हुए महा तक पहुँच गये । लक्ष्मीने देवा, कि दत्ता-
त्रेयी दत्तात्रेय पदवी बगलमें जन्मको घरीया लक्ष्मीको
लिप बैठे हुए हैं । लक्ष्मीके रूप पर दैत्यगण मोहित हो
गये घोर देवताओंकी छोड़ उनो समलोचनो होनीमें
चढ़ा चले बने । तब दत्तात्रेयने हँस कर देवताओंने
कहा, 'मोमाध्वजय पर तुम लोग विजयी हो गये ।
क्योंकि जब लक्ष्मी दैत्योंका समाग्र छोड़ कर उनमें गिर
पर चढ़ बैठो हैं, तब निश्चय ही लक्ष्मी परित्याग का
हिसा दूसरेका पात्रय लेगी ।' दत्तात्रेयने वचनोंने
उत्साहित देवताओंने दैत्योंका विनाश कर डाला । लक्ष्मी
भी उनके गिर परने निश्चय दत्तात्रेयको प्राप्त वरतां में
हुई ।

राजा काशकीधर्मजने विवेकके समीपमें हो पदने
राजपद ग्रहण करना न चाहा । किन्तु वे दत्तात्रेयके
कहनेमें निश्चयन पर बैठे थे । चमकें पादि राज-
विद्योने दत्तात्रेयने योगोपदेश प्राप्त किया था ।

दत्तात्रेयके नामं पर निम्नलिखित प्रत्यागमाष्ट प्रचलित है—

पञ्चतगोता, प्रवधुतगोत, दत्तगोतायोगमाष्ट, वण-प्रबोध, विद्यागोता, स्वात्ममन्त्रियुपदेश, दत्तात्रेयगोत्र-पोर दत्तात्रेयोपनिषत् । इसमें मित्रा दत्तात्रेयतन्त्र, दत्तात्रेयचन्द्रिका, दत्तात्रेयपटन, दत्तात्रेयसंहिता, दत्तात्रेयवृद्धय आदि कुछ तात्त्विक ग्रन्थ भी देखनेमें आते हैं । 'दत्तात्रेय-महापूजा-वर्णना' नामक संस्कृत ग्रन्थमें दत्तात्रेयको पूजादि वर्णित है । जैनो लोग भी दत्तात्रेयको पूजा करते हैं । दिगम्बरानुचर द्वारा रचित दत्तात्रेय-महात्म्यामें हम विषयको बहुतनी धातें लिखी हैं । भागवतमें लिखा है, कि दत्तात्रेयमें चोरोम पदार्थों-ने अनेक शिष्य-एँ सोखी थीं और उन्हीं चोरोम पदार्थों-को ये शत्रुना गुरु मानते थे । चोरोम पदार्थोंके नाम ये हैं—हथो, बाहु, चाकाग, जन, चम्लि, चन्द्रमा, चुयं, कव्तर, चजगर, मागर, पतङ्ग, मधुक, चायो, मधुहारो, हरिण, मछलो, पिङ्गला चिन्ता, गिह, बालक, कुमायी कन्या, ब्राह्म ब्रह्मनिधाना, माघ, मकड़ो पोर तितली । दत्तात्रेय देवज्ञ—विवाहभूषण नामक संस्कृत ग्रन्थमें प्रणीत ।

दत्ताप्रदानिक (सं० श्लो०) दत्तस्य मन्त्रदानं ग्रहणम-स्थस्य दत्ता-प्रदान-उक्तं । पट्टादम विवाद पदार्थागत विवादपदविशेष, पट्टारह प्रकारके विवाद पदोंमेंसे पौर्वा विवादपद । चार प्रकारके दानमार्गोंमें हो दत्ताप्रदानिक पदार्थके अन्तर्गत घटेय, ट्रेय, दत्त और चदस ये चार प्रकारके दानमार्ग हो दत्ताप्रदानिक नाम से प्रसिद्ध हैं ।

जो दान देकर किरने चत्थाय पूर्वक उसे प्राप्त करनेका प्रयत्न करता है, उसे दत्ताप्रदानिक कहते हैं और यह व्यवहारपदके अन्तर्गत है । इसका विषय वीर-मित्रोदयमें जो लिखा है, वह हम प्रकार है । स्यावर वस्तु पर प्रकाशरूपमें अधिकार कर सकते हैं । दानका जो विषय स्वीकार कर लिया गया हो, उसे प्रवण देना चाहिये और जो दे दिया गया हो, उसे किरने सेना कर्त्ता, नहीं है । सेनेधाना जब तक दानवस्तुको प्रवण न कर से तब तक दाताका मन्त्र वम परसे नहीं जाता ।

दाता उम वस्तु परसे अपना स्वत्व हटा मो वहाँ न ले, लेकिन जब तक वस्तुता उसे ग्रहण न करे ता तब दाताका स्वत्व उम पर बना रहता है । प्रमम्पूर्ण रूपसे दान दे कर किरने जो ग्रहण करनेको इच्छा प्रकट करे, तो उम ग्रहण करनेका नाम दत्ताप्रदानिक व्यवहार है । जब वस्तु टे टो आनी है, तब यहाँ ग्रहण करेगे ऐसा नियम कर उमो उद्देशमें दातार स्थांग करने पर प्रतीताका स्वत्व हो जाता है । यदि प्रतीताको इच्छा दान देनेको चोर न दे, तो वह स्वत्व नहीं रहता । याज्ञवल्कर-मंहितामें हम प्रकार लिखा है—परिवर प्रतिपाननके चारोधमें चाकोय द्रव्य दान कर सकता है । प्रयात् जितनेसे परिवारका भनो भाति पानन हो सके, उतना धन रख कर तब दान कर सकते हैं, अन्यथा नहीं । पुत्रपौत्रादिकें रहने सर्वस्व दान नहीं कर सकते एवं पहले यदि किसी दूसरेको कुछ वस्तु देनेको बान दे मो चुके हों तो भी वह नहीं दे सकते । प्रतिपक्ष प्रत्याग्र भावमें हो करना चाहिये । जो कुछ दान देनेको स्वीकार किया हो, वही दान करना उचित है । दान करके किरने उसे सेना बिलकुल निषेध है । दत्ताप्रदानिक (सं० श्लो०) दत्तस्य चणपकर्म चादानं यत् । दत्ताप्रदानिक, दान किए हुए पदार्थको चत्थाय पूर्वक किरने प्राप्त करनेका प्रयत्न । दत्तामित्र (सं० पु०) वीरवर मृपभेद ।

(भारत आदि १३९ अ०)

किसी किसी प्रसूतत्वविदके मतानुसार योक्त मीमांसे निकट यह शब्द Demitrius नामसे प्रसिद्ध है ।

दत्तावधान (सं० श्लो०) दत्तं अवधानं येन । अवहित, एकाग्र विद्या, सावधान ।

दत्तामन (सं० श्लो०) दत्तं धामनं येन । प्रदत्तामन, जिसे धामन दिया गया हो ।

दत्ति (सं० श्लो०) दा भावे क्तिन् । दान ।

दत्तिक (सं० श्लो०) प्रत्यो दत्तः ठक । प्रत्यदत्त, छोड़ा दिया हुआ ।

दत्ता (सं० श्लो०) दत्तमन्त्र्यः सगार्हा दत्ता सेना ।

दत्तोय (सं० पु०) दत्तायां चणचं पुमान् दत्त-ठक ।

दत्त ।

कपटक हथमें तथा चौरयुक्त हथमें जो कड़ु पा, कमेला, तोता और सुगन्धित हो, दंतकाष्ठ संश्रय करना चाहिए। दंतकाष्ठ देखो। दक्षिण और पश्चिममुखी होकर दंतुवन करना निषेध है। यदि कोई मोहवग दक्षिणमुखी हो कर दंतुवन करे, तो उसको बायुघट होतो है, पश्चिम-मुखी हो कर दंतुवन करनेमें रोग होता है। बाद भरने पर उसे नरक जाना पड़ता है।

"दक्षिणाभिमुखो भूत्वा पश्चिमभिमुखस्तथा।

अदन्तधावनं कुर्वीत कुर्वीत्येव नारथो मयेव ॥"

(भाट्टिहस्त)

पूर्व और उत्तरमुखी होकर दंतुवन करना प्रशस्त है। दांतोंको ऊपर नोचे भलोभाति दंतुवनसे घिसकर सुंइको लमवर्ण करनेमें तथा चक्षुको जनमें धोनेमें दृष्टि प्रसन्न होती है। चमामध्या, पण्डी, नवमो, प्रतिपद्, एकादशी और उपवासमें तथा ग्राह्यामरमें और रवि-धारके दिन लक्ष्मोमें दंतुवन न करने चाहिए। इन सब निषिद्ध दिनोंमें तथा उक्त स्थानमें जहां दंतुवन न मिलती हो, वहां कपड़ोंमें दांत और जोभ घिस कर बारह बार कुत्तो करके सुंइ साफ करना चाहिए। चर्दिन, कण्ठमूलपद्, दंतरीगो, नवज्वर, शोषरीगो, कागरीगो और मूर्च्छास्थायिक मनुष्योंको दंतकाटका व्यवहार करना विनकुल मना है। (राज०)

दन्तधावनका शुभ—प्रतिदिन दंतुवन करनेसे सुंइका कड़ुपापन तथा जोभ और दांतके भौन जाति रहती है और सुंइकी रुचि होती है। दांतोंकी तर्जनीसे कदापि घिसना न चाहिए, इसके लिये मध्यमा, यना-मिका वा हस्ताङ्गुल प्रशस्त है। मूर्च्छादिघट पक्षी दंतु-वन करना उचित है। जो मूर्च्छादिघट होने पर दंतुवन करते हैं, उनको मध क्रियासे भट होतो है। अग्राम करते यत्न दंतुवन करनेमें उनके पित्रगण निराश हो कर चले जाते हैं तथा देवता लोग उनके पूजा पक्ष नहीं करते। जो मध्याह्न और पराराह्न में मलय दंतु-वन करते हैं, उन पर देवता और पित्रगण बट रहते हैं।

"सुर्विदये दिग्भेदः कुर्वीत दन्तधावनः।

गिराधिकारकं नरप राक्षसेव विनश्यति ॥

यः शान्तमये कुर्वीत भिक्षुं दन्तधावनः।

Vol. X. 45

निराश। दितरो यति हय देवाः सुर्विदः ॥

दन्तधावनं कुर्वीत कोमलपादां पराक्रमी।

तस्य पुत्रं न पृच्छति देवताः दितरो बलं ॥"

(पाद्म विद्यायोगसार)

दन्तकाष्ठ कनिष्ठा चंगनीके चपभागके समान होना चाहिये। यह द्राघाणके लिये बारह चंगनी, क्षत्रियके लिये नौ, वैश्यके लिये पाठ और शूद्रके लिये छः चंगनी-का होना पावश्यक है।

दन्तधावनका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है—अनुय्य पणने स्नाम्यारचाके लिये द्राघमुहंतेमं जगं पोक्षि गोचकायादि करके हाथ पर धो डाले। इससे पनत्तर दंतुवन करे। दंतुवन बारह चंगनी नम्यो, कनिष्ठा चंगनिके चपभागके समान मोटो, मोधी तथा बिना गांठको होना चाहिए। बाद जिसमें दन्तवेष्टित भागमें चोट न पड़े इसके लिये दंतुवनके चपगागको सूंको मरोखा बनावे और संशमं दक्षगोधन चूष मिना कर दंतुवन करे।

मधुर, त्रिकटु मर्षपौल, मध्वदनयन, तेज और हवजन चूष द्वारा प्रतिदिन शोधन तैयार करे। मधुर-काष्ठमें मोलकाष्ठ, कटूरमयुक्त काष्ठमें करझ और तिष्ठ-रममयुक्त काष्ठमें निम्ब प्रशस्त है। यतः इदो मय पेक्षीको दंतुवन पक्षो मानी गई है। इस प्रकार दन्त-धावन करनेमें मुखकी विरमता, दन्तगतरीग, जिह्वागत रोग जाति रहते हैं तथा रुचि, सुखार्थ, निर्मलता और लघुता उत्पन्न होती है। चक्रवर्णको दंतुवन करनेमें बोध लाभ होता है; यद्यपे शरीरको कान्ति पुंजती है। करझ मय होतो है, प्राकरने पर्यं मयसिको हृदि होती है। यौमे शरीरमें सुगन्ध निकलती है, श्वमे घन प्राप्त होती है, वज्रमरमे बायुको सिद्धि होती है, चामने नोरीगो होता है। कदम्बमे धारचंगलि बढ़तो है, चम्पामे मति दृढ़ होती है। विरीय हृत्तये कोर्नि, गोभाय्य और परमायु प्राप्त होता है। भण्ड हृत्तये धारण शक्ति बढ़ती है, दादिक, पर्जन्य और कूटज हृत्तये दन्तधावन करनेसे मनुष्य सुन्दर प्राकृतिसम्पन्न होता है। आती, तगर और अम्बदारपुष्पाष्ठमें दुःखदूर होता है। सुषारोक्ष पेक्षीको दंतुवन काममें न माना

दशोपनिषद् (स० श्लो०) उपनिषद् भेद, एक उपनिषद् का नाम ।

दशोनि (स० पु०) पुनस्त्य मुनि का एक नाम ।

दश (स० श्लो०) दश-बाहु कवन । १ धन । २ विश्वा-मीमा ।

दशिम (स० ति०) दशिम निवृत्तः दश-विष्ट पत्रेर्म-पक्ष । १ दान द्वारा निष्पन्न । (पु०) २ दसक पुत्र ।

दशक देखो ।

दद (स० ति०) दश-बाहुः श । दाता, देनेवाला ।

ददन (स० श्लो०) दद भावे लृट् । दान ।

ददमर (स० पु०) दद विभिय, एक प्रकार का पेड़ ।

ददरा (हि० पु०) दशमि का कपड़ा, कसा, साफो ।

ददरी (हि० श्लो०) दद दाग जो पके हुए तम्बाकू के पत्रों पर पड़ जाता है ।

ददा (हि० पु०) दादा देखो ।

ददि (स० ति०) दश-क्रि । दाता, दान देनेवाला ।

ददिद (स० पु०) दाता ।

ददियामसुर (हि० पु०) शसुरका पिता, मसुरका बाप ।

ददियामान (हि० श्लो०) ददिया शसुरकी स्त्री, मासकी मास ।

ददिहात (हि० पु०) १ दादाका कुल । २ दादाका घर ।

ददोहा (हि० पु०) ददोहा देखो ।

ददोरा (हि० पु०) शरीर पर उभड़ा हुआ दद दाग जो मक्कर वरा पादिके काटनेसे हो गया हो, चकत्ता ।

ददशानपति (स० पु०) पति, पाग ।

दद—भद्रकक्षीयं गुर्जरवंशीय कर्ष एक राजा इसी नामसे परिचित है । उसको पाण्डवे उत्तोरन पति के नाम-शासन पाये गये हैं । क्रिमिके मतानुसार ये लोग वनभो-राजाध्वंजि नामक माने जाते हैं । इस दद नामके पतिरिक्त चोराकी नाम मान्य नहीं । ये भद्रकक्षीय के इस गुर्जर राजा नामसे प्रसिद्ध थे और प्रायः ४१० ई० में राज्य शासन करने लगे । इनके पुत्रका नाम जय-भट चौसराम था । इनके जयभटके चौसरामे २५ दद प्रशासक लोग उत्पन्न हुए थे । इनके समयके ४००, ४१३ और ४१० तकके दशोप शासकशासन पाये गये हैं । ये सभी चौसरामह्वयेकी राजा थे । इनोंने दार्शनिक

पन्थ भी तथा भाता स्थानों में मठ निर्माण करा वही पन्थ धर्ममत और आध्यात्मिक उद्देश के लिये प्रोत्साहित किया था ।

इनके बाद गुर्जरवंशीय लोग राजा राज्य करते रहे, उनका कोई प्रमाण प्राप्त नहीं मिला है । शायद-शासनमें (२५) ददका उत्पत्ति है । डाक्टर मुहम्मद अल्ले ये ५०० ई० में राज्य करने थे । चादिमनिमित्त ऐना नामा जाता है कि इन्होंने चमेरा, नागवंशीयों परास्त कर विजयमें तब चमेरा अधिकार किया लिया था । इनके उत्तराधिकारी (२५) जयभट हुए । जयभटके पुत्रका नाम (४४५) ददशानाशक था । छेड़ामे ३८० और ३८५ (चेदि) मध्यम उत्तोरन दो ताम्रशासन पाये गये हैं । जिनमें जाना जाता है कि (४४५) ददने ३८८ से ३३३ ई० तक राज्यका न किया । ये सुय के उपासक थे । इनोंने मन्नाट् ओषधदेवके प्रथम शासनमें वनभोराजकी सहायता की । इनकी कृतकृता टिप्पणियों पर भी दोनोंमें अधिक दिन तक श्रितता न बनी रही । वनभोराज (२५) भूषणमें ३८८ ई० में गुर्जर राजधानी भद्रकक्षीय शीत कर यहाँ ताम्रशासन पाये गये । विष्णु गुर्जरराज अधिक दिन तक गिरीद्वारों पर नहीं लगे । वनभोराज (४४५) धर-लेनके मने था (४४५) दद प्रशासक लोग प्रथम ही लगे । इनके कुछ दिन बाद ही चालुक्यराजने गुर्जर राज्यके दक्षिण दिश पर अधिकार कर लिया । ४४५ ददने पुत्रका नाम भी जयभट था । जयभटके पुत्र बादमहाय के चोर यही (५५०) दद हुए । वनभो और चालुक्य राजाध्वंजि मध्य ४४५ के निकट चले लड़ना पड़ा था । इनके पुत्रका नाम भी जयभट था । इनके ४४५ और ४८५ (चेदि) मध्यम उत्तोरन दो ताम्रशासन मिलते हैं । अन्तिम चेदि मध्यम ०३४-१३ ई० बीसा है । इनके बाद गुर्जर वंशीय चोर किमो राजाका नाम नहीं मिला ।

दद (स० पु०) १ दद, कदवा । २ ददति कद-मिति दद-बाहुः कः या ददिदति दद-पत्रेर्म-पक्ष, ददिद कदम्यामन पायः शसुराधिकार, ददका शीत । ददका पत्राण—ददरक, दद चौरा दद । दद रोग

कुष्ठरोगके चन्तर्गत माना गया है। भावप्रकाशमें लिखा है—कुष्ठमें रक्तवर्ण कण्डूयुक्त जो पीड़का मण्डलाकारमें निकलती है उसे दद्रु कहते हैं। उसकी चिकित्सा इस प्रकार है—कुटकी, विरुद्ध, चक्रवर्द्ध, हल्दी, मैश्वर और सरसों इन सबकी कज्जिके साथ पोम कर प्रलेप देनेसे दाग और कुष्ठरोग जाता रहता है। दूधरो विधि—दूध, मधा (घोषधधिगेय), मैश्वर, चक्रवर्द्ध और लन्दी वृष, इन सबका बराबर बराबर भाग ले कर कज्जिके साथ पोसते हैं। बाद तीन दिन तक रसका सेप देनेसे दद्रु और कुष्ठरोग चारोमुख हो जाता है।

भावप्रकाशके मतमें—गाँहुर घास, मकैद सरसों और धूरका पत्ता इन तीनोंको बराबर बराबर भागमें दूना चक्रवर्द्धका पत्ता, इन सबकी जिगा कूटे भट्टगुने गायत्री छान्नेमें लुबो देते हैं। तीन दिन बाद उन्हें एक साथ पोस कर सात दिन तक प्रलेप देनेसे दद्रुरोग नाश हो जाता है। प्रलेप देनेके पहले उस जगहको बनगोष्ठामे खुजला लेना चाहिये। कुष्ठसर्प, श्रीनिष्ठ (तारपोनका तेल), हरिद्रा, विषट्, चक्रमर्दका बोज और मूलकवीज इन सबकी छालके साथ पोस कर दाढ़ पर लगानेसे दाढ़रोग चारोमुख हो जाता है। मैश्वर, चक्रमर्दका बीज, गजरा नागकेशर और क्षणाजिनको केशके रसके साथ पोम कर प्रलेप देनेसे दद्रुरोग शीघ्र निवृत्त हो जाता है। वर्ण-चोरी, व्याधिवान, गिरोय, निम्ब शाल, कूटज और लता-मांसका धूप तैयार कर खानके बाटउमे दाढ़को जगह पर गिम कर लगानेसे दाढ़ बहुत जल्द जाती रहती है। (अष्टाङ्ग कृषि, ११) मरुद्वपुषणके मतानुसार यह एक प्रकारके दण जातिका रोग है। हरिद्रा, हरिताल, दूर्वा, गोमुख, और मैश्वर इन सबकी एक साथ पोम कर लगानेसे यह रोग चारोमुख हो जाता है।

(अष्टाङ्ग १८४ अ०)

दद्रुक (सं० पु०) दद्रुश्च स्वार्थं कन् । दद्रु रोग ।
दद्रु (सं० पु०) दद्रु दद्रु रोग इति इनउक् । चक्र-मर्दक, चक्रमर्द, चक्रवर्द्ध ।
दद्रु (सं० त्रि०) दद्रुरात्वस्य दद्रुण । दद्रु रोगो, जिसे दद्रु रोग हुआ हो ।
दद्रुनागिगो (सं० स्त्री०) दद्रु नागवति नम निचु चिनि-चीप् । तेसिनी कीट, एक प्रकारका हथ ।

दद्रुरोगी (सं० त्रि०) दद्रुरोगोऽन्त्यस्य दद्रुरोग-रति ।
दद्रुरोगविगिट, जिसे दाढ़का रोग हुआ हो ।

दद्रु (सं० पु०) दद्रुति द्रुगं च्छापयामनेति दद्रिद्रा-उः, रकारेणाकाराणां शोषय (रहितेनो शोषय । उन्-१।८२) दद्रु, दाढ़का रोग ।

दद्रु (सं० पु०) दद्रु इति इन उक् । दद्रु, दाढ़ ।

दद्रु (सं० त्रि०) दद्रु न । दद्रु ।

दधन्वत् सं० त्रि०) दधि-मत्तुः, घृते निपातनात् दधन्वा-देशे मस्य वा । दधिविगिट, जिसमें दही मिना हुआ हो ।

दधानिया—स्वर्धर प्रदेशके चन्तर्गत महीकायदाका एक राज्य । यहांके प्रधान एक कारद सदाई हैं। उन्हें बरोदा-के गयकबाइकी बापिक ७००) रु० 'घामदाना' कह कर तथा एदकी राजाकी ६००) रु० सैन्यको रगत कह कर कर स्वर्धर देने पड़ते हैं। महीकायामें ये अपने पंथके स्थापनकायमें हो राज्य करते पा रहे हैं। ये गिरोदिया राजपूत हैं और राजपूतानेमें यहां पा कर बस गये हैं। दत्ताक पुत्र जेने विपक्षमें इन लोगोंमें कोई छेड़काहु नहीं है। ज्येष्ठ पुत्र हो राज्यके अधिकारी होते हैं। १६०४ ई०में प्रथम ठाकुरया प्रधान एदरके राजा यहां नोकरी करते थे और उनोंने उन्हें ४८ पाम उपहारमें मिले थे। किन्तु योके जय से सारनारके राजकुमारको सेवा करनेको राजी न हुए, तब उनको उक्त हति कुछ घटा दी गई ।

दधि (सं० पु०) दधातोति धा-रि (सांगी भव, हृ-गविमति नमः) । या ३।१।५१) दुग्धनिर्कारविगेय दही, जमाया हुआ दूध । इसका पर्याय—घोरज, सङ्घ, बिरल और पयस्य है। इसका गुण—उष्णवीर्य, पित्त-दीप्तिकाशक, स्निग्ध, कषाय, शुक्ल, घनविपाक, धारक, रक्तपित्तकारक, शोथजनक, भेदीपक्क, कफप्रदायक, बलकारक, शक्तवर्द्धक, मूलजल्द, प्रतिश्याय, शीतक-नामक विषमज्वर, पतौमार, पक्षि और लगताके निचे बहुत उपकारी है। दधि पाँच प्रकारका होता है, परना मन्द, दूसरा म्नादु, तीसरा स्वादय, चौथा पयस और पचिवा पल्लव ।

मन्ददधि—जो दूध विजत हो कर कुछ गाढ़ा हो

फागुं सन माहबने सिङ्गो बौद्धाय दाढावंगकी दुहाई दे कर प्रमाणित किया है, कि प्राचीन दंतपुरी नगरी को यहाँकी पुरो नगरी है। पुरीमें जगन्नाथदेवका मन्दिर जो वेदोक्त स्थानके ऊपर निर्मित है; वह फागुं-सन माहबके सताशुमार बौद्धोंके दृष्टीबद्धे जैसा है और गठनप्रणाली भी ठीक उसीको तरह है। सुतराँ जगन्नाथका मन्दिर जो दंतमन्दिर है और पुरी दंतपुरी नगरी है। किन्तु दाढावंग पट्टनेमें जाना जाता है, कि उस नामक बुद्धके एक गिथने बुद्धदेवकी चितामें दाहकालमें एक दंत संभल किया। उन्होंने वह दंत जलितराज ब्रह्मदत्तकी दे दिया। ब्रह्मदत्तने उस दंतके ऊपर एक मन्दिर बनवाया जिसका भीतरी भाग सोनेसे ढँका दिया था। ब्रह्मदत्तने मन्दिरका निर्माण किया, दृष्टगोचरका नहीं। ब्रह्मदत्तके वंगमें ३००से ३८० ई०के समकालमें गुहगिब नामक एक राजा हुए। गुहगिब ब्राह्मणधर्म को श्रद्धा स्वीकार करने थे। वे ब्राह्मणके गिथ तथा ब्रह्मा, विष्णु, शिव्यादिके पूजक थे। एक दिन राजधानी दंतपुरमें दंतोत्सव देव से मुख्य हो गये और बौद्ध धर्म गये। इस पर ब्राह्मणयोग बहुत विगड़ें और उन्होंने पाटलीपुत्रके राजा पाण्डु राजकी यह समाचार कहना भिजा। पाण्डु राजने जब सुना कि उनके पक्षीगण राजाने दूसरा धर्म प्रवर्तमान कर लिया है, तब उन्होंने उन्हें कैद कर आनेके लिये चैतन्य नामक किसी सामन्त राजाकी दलबलके साथ भिजा। चैतन्य दंतपुर जाकर दंतमन्दिरादि देव मुख्य हो गये और उसी समय बौद्ध धर्म गये। किन्तु पाण्डु राजका आदेश जिसमें उत्तम न हो सके। इस कारण युद्धमें राजा गुहगिबकी पराजय और बन्धु कर दंतपुरसे दंत मो साथ ले वे पाटलीपुत्र पहुँच गये।

बुद्धदंतके पाटलीपुत्रमें आनेसे ही राज्यमें चलेक प्रकारकी आशय घटनाएँ होने लगीं। पाण्डु राज चाप भी बड़े विस्मित हो गए। इस पर ब्राह्मणयोग माराधकें सर्वव्यापकतय और धर्मव्यवस्थापकताकी कथाएँ सुना सुना कर राजाको प्रबोध देने लगे, लेकिन कुछ भी न निकला। पाण्डु भी आचारमें बौद्ध हो जी गए। उन्होंने दंतका एक मन्दिर भी बनवा दिया।

पाण्डुके मरने पर गुहगिब दंत से कर अपने राज्यको भोट पाए। चौरधार नामक एक राजाने उन पर आक्रमण किया, किन्तु वे ही युद्धमें मारे गए। चौरधारके भतीजे जब राजा हुए, तब वे एक एक करके गुहगिब की तह करने लगे। सम्यग्योके राजपुत्र दंतकुमारने राजा गुहगिबको कन्या हेमोलानसे विवाह किया था। गुहगिबने विपद्को पायाथा देव अपने जामाताने कहा, 'यदि युद्धमें मेरी मृत्यु हो जाय, तो दंत मे कर तुम सिङ्गसकी चला जाना।' वैसा ही हुआ भी। युद्धमें गुहगिब मारे गए, राजपुत्र दंतकुमार कीकी साथ दंत मे कर सिङ्गसकी चल दिये। राक्षसों से ताम्रनिर्गले ठहरे और वहनि जहाज पर चढ़ कर सिङ्गसकी रवाना हुए। इस प्रसङ्गसे जाना जाता है, कि दंतपुर जगन्नाथपुरी नहीं है। फाहियान जब ५वीं प्रताम्दीमें पुरी आए थे, उस समय पुरी को एक बड़ा मन्दिर था और दक्षिण आनेके लिए वही मन्दिरमें जहाज पर चढ़ना होता था। दंतकुमार वैसा न कर सिङ्गस आनेके लिए जब तमोलुक् गए थे, तब वह स्वीकार करना होगा, कि उसीके पास किसी स्थान पर दंतपुर अवस्थित था।

डा० राजेन्द्रनाथने अपने सङ्गीमाके प्रबन्धनमें लिखा है, कि सिद्धीपुरसे चलगत जलेश्वरसे ६ कोस दक्षिणमें दंतम नामका जो स्थान है वही प्राचीन दंतपुर है। यह तमोलुक्से २५ कोस दूरमें पड़ता है।

इस दंतमके विषयमें जगन्नाथके पंडा कहते हैं, कि जगन्नाथ जब दक्षिणकी पारहे थे, तब उन्होंने इसी स्थान पर दंतवासन करके दंतकाष्ठ लेका था। पंडा लोग यात्रियोंकी मन्दिरमें एक चांदीकी दलबन दिया-काया करते हैं।

पुराविद् कनिङ्गमने कथ्यकोट प्राचीन भूविवरणके ५१००वें पृष्ठमें रोमकपण्डित जिमोके भारतीय स्थान समूहके स्थाननिर्णय करते समय कहा है, कि प्राचीन कलिङ्गराज्य कलिङ्गन चत्तरोपसे दंतगुड़ नगर तक विस्तृत था। यह कलिङ्गन चत्तरोप चत्तमान कलिङ्गा-पल्लवके निवृत्त और दंतगुड़ नगर जिमोके मतानुसार गङ्गाके मुहानेसे १०४ मील दूर है। वर्तमान राजमहेंद्रो नगरकी दूरी मङ्गा-मुहानेसे मात्र ८० मील की होती।

गया हो पोर पच्छो तरह दधिके रूपमें न जमा हो, उमें मन्द दधि रहते है। इसका गुण—मन पोर मूलनिःसारक तथा विटोपजनक है।

प्यादुदधि—जो दूध पच्छो तरह गाढ़ा हो कर पच्यता मधुर रसके साथ जम गया हो पोर यह रसका प्रभुत्व न होता हो, उमें प्यादुदधि कहते है। इसका गुण—पच्यता पमिष्यन्तो, शक्तजनक मिटोपवर्क, कफ-कारक, वायुनाशक, मधुरविपाक पोर रक्तवित्तक ट.पनाशक है।

स्वदग्धदधि जो दूध गाढ़ा हो कर कृष्ण कसैला निवे मधुर पच्य स्वद देता हो, उमें स्वादग्ध दधि कहते है। इसका गुण सामान्य दधि मरोवा है।

पय्यदधि—जिम दधिमें मिठाम न हो, वरं पय्य-रस पाया जाय, उमें पय्यदधि कहते है। इसका गुण—पमिमन्तोपक, रक्तवित्तक पोर कफवर्क है।

पच्यन्नदधि—जिम दधिसे दन्त तथा रीम हर्ष हो जाय पोर कण्ठमें दाह देने लगे, उमें पच्यन्न दधि कहते है। इसका गुण—पमिदोमिकारक पोर रक्तवित्त-जनक है।

गण्यदधि—मधुर रस, वनकाशक, हृदिजनक पवित्र पमिदोपक, स्निग्ध, पुष्टिकारक पोर वायुनाशक है। मत्र प्रकारके दधिमें गण्यदधि ही पधिक गुणविशिष्ट है।

महिषदधि—पच्यता घोरुयुक्त, कफकारक, वायु पोर पित्तनाशक, मधुरविपाक, पमिष्यन्तो, शक्तवर्क, गुण पोर रक्तवृद्धक है।

हामोदधि—वृद्ध स'पामी, मधु, मिटोपनाशक, पमिदोमिकारक तथा ज्ञान, काम, चर्म, चय पोर कुरोगमें हितकर है।

पक्क दुग्धदधि—पच्छो तरह पचाने हुए दूधमें जो दधि घनता है, उसका गुण—हृदिकारक, स्निग्ध, पच्यता गुण-धारी, पित्त पोर वायुनाशक तथा भास्विनि समूहका वनकारक है।

निःसार दुग्धदधि—घमार दूध पछात् जिम दूधमें मन्त्रम निकाल निवा गया हो, येमे दूधमें जो दधि जमाया जाता है, वह कारक, मोतबोर्ग, वायु-वर्क, मधु, विटभी, पमिदोमिकारक, हृदिजनक पोर पच्यो रोगनाशक है।

मानितदधि—जिम दधिका मोठ निशान निवा गया है, उमें मानित दधि कहते है। इसका गुण—स्निग्ध वायुनाशक, कफकारक, गुण वनहारक, पुष्टि-जनक, हृदिजनक, मधुररस पोर पच्यता पित्तजनक नहीं है।

मर्क'गुण दधि—(चोमो मिला हुआ दधो) यह दधि मत्र प्रकारके दधिमें सेन गुणदायक है। इसमें प्याम, रक्तवित्त पोर दाह जाता रहता है। शुक्ल दधि वायु-नाशक, शक्तवर्क, शरीरका उपपदकारक, हृदिकार पोर गुण है। रातको दही पाना मना है। एकाला भोजन करने समय जल, घी, चोनी, मूंग, तरकारी, मधु पचवा खाया इनमेंसे किमो एकको दधिके साथ मिला कर खाना चाहिये। चय करके भी रातमें खा सकते है। यद्यपि रातमें दधि खाना निषिद्ध है तो भी घो चाहिये नाव मिला कर खानेसे वह दोषा-यह नहीं है। किन्तु रक्तवित्त पोर कफोद्वेग रोगमें जल वा घी मिला कर दहीका सेवन करना परममत्त है।

हैमन्त, शिशिर पोर वर्षा इन तीन ऋतुओंमें दधि खाना स्वास्थकर है तथा शरत् ऋतु पोर वसन्त इन ऋतुओंमें पक्षितकर। दधिमोनुप मनुष्य यदि एक निवस-का सकलन कर दधिका सेवन करे, तो वह ज्वर, रक्तवित्त, विसर्प, कुष्ठ, पाण्डू, श्वेत पोर लघु कमला रोगमें पीडित रहता है। दधिके खेह समन्वित कपरी भाग हो मलाई वा हानी पोर मन्त्रको मधु वा तोड़ करके है। दधिकी हानोमें मधुर रस, गुण, शक्तवर्क एवं वायु पोर पमिमन्त्राशक गुण है। पहा हो जाने पर इसका गुण दक्षिणोपक एवं पित्त पोर कफवर्क है। दधिके तोहमें हामिनाशक, वनकारक, पचा-मिनापजनक, खोतःसमूहका मोधजनक, पाश्चाद-जनक, खफ, पित्राशजनक, वातापहारक, पच्य, मोतिजनक पोर मोम हो पक्षित मलविहक गुण माना गया है। (अ वरणा)

सुदुग्धमें दधिका विषय हम प्रकार लिखा है—दही तीन प्रकारका होता है—मधुर, पच्य पोर पच्यता पचि-कयाव। यह स्निग्ध पोर लघु एवं मोम, विषमन्त्र, पतिमार, पदवि पोर मूत्रकुरोगनाशक, रक्त-

मूलके मांसके पकने पर मूलमें यन्त्रणा होनेसे गृह्याग्नी-
वीर रोग होता है ।

परिदर—दंतमांसके शीघ्र होनेसे, जिठोवनके समय
पर्याप्त शूल केकते समय मेहके निकलनेसे परिदररोग
होता है । यह रोग पित्त, रक्त और कककचक उत्पन्न
होता है ।

उपकुश—दंतमूलमें जब दट होता है और एक
कर जब दांत चमने लगते हैं, छोड़ो रगड़ने जब गोलित
निकलने लगता है, रक्तसावके बाद जब दंतमूल सूज
जाता है और मुखमें दुर्गन्ध पाने लगती है, तब उसे
उपकुश रोग कहते हैं । इस रोगकी उत्पत्ति रक्त-
पित्तसे है ।

दन्तवैदर्य—किसी तरह घर्षित होनेसे जब दंत-
मूलमें दट मानस पड़ें और वह सूज जाय तथा सभी
दांत हलने लगे, तब उसे दंतवैदर्य कहते हैं । यह
रोग किसी प्रकारके आघातसे उत्पन्न होता है । इसमें
वायुकचक खाभाविक दांतोंमें अधिक दांत निकलते
हैं । उन सब दांतोंके निकलने समय बहुत तोष वेदना
होती है ; किन्तु उनके निकल जाने पर पूर्वमो वेदना
नहीं रहती, बहुत कुछ कम जाती है ।

अधिमामक—गालके भीतरके शीघ्र भागके दांतोंमें
जब सूजन होती है और दट भी होता है तथा लेह
गिरने लगता है, तब उसे अधिमामक रोग कहते हैं ।
यह कफसे उत्पन्न होता है ।

दन्तमूलमें पांच प्रकारकी गलियां उत्पन्न होती हैं
यथा—हामन, क्षमिदंतक, दंतवैदर्य, भञ्जनक, शर्करा,
कपालिका और हनुमोच ।

हामन—जिसमें दांत विदोर्ण होनेके जैसा दट
होने लगता है, उसे हामनरोग कहते हैं । इस रोगकी
उत्पत्ति वायुसे है ।

क्षमिदन्त—दांतोंके ऊप्यवर्ण द्विद्रुण और चान्त
होनेसे, उनमें रक्तसाव निकलनेसे और चकारण हो
पर्याप्त बिना दावनेसे जो कड़ कड़ गन्ध करनेसे तथा
दट मानस पड़नेसे क्षमिदन्तरोग समझा जाता है ।
यह रोग वायुसे उत्पन्न होता है ।

दन्तवैदर्य—दांत जब गोलित का उत्पन्न होकर दाव

कर न मके, तब उसे दंतवैदर्य रोग कहते हैं । इस रोगकी
भी उत्पत्ति वायुसे है ।

भञ्जनक—सूज और दंतभङ्ग होनेसे तथा चक्षुस
यातना होनेसे भञ्जनक रोग समझा जाता है । यह
रोग कफ और वातसे उत्पन्न होता है ।

दंतशर्करा—सममक्षित जो कर शर्कराकी तरह
कठिन हो जानेसे दांतोंके शूलकी दानि होती है ।
इसीको दंतशर्करा कहते हैं । इस दंतशर्कराके साथ
जब दंतमूलका मांस मोचे मुल जाता है, तब उसे कदा-
लिका कहते हैं । इस रोगमें दंतगट हो जाते हैं ।
गोलितमिथित पित्तसे दन्तरीय हो कर ग्राम वा मोल
वर्ण हो जानेमें ग्रामदन्तरोग समझा जाता है । वायु
कटक उपद्रव होने पर बहुत जब सम्भिविगट हो जाता
है, तब उसे हनुमोच कहते हैं । इस रोगमें पदित वायु-
का लक्षण देखा जाता है । (धन सुतरीयवर्ण)

दन्तरोगकी चिकित्सा—गोताद नामक रोगमें रक्तकी
साफ कर मरसी, रिकला और मोघा इनके कायको
रसाञ्जनमें मिला कर कुत्ता करना चाहिये । प्रियद्रु,
रिक्ला और मोघा इनके चूर्णका लेप तथा यष्टिमधु,
उत्पन्न, पद्म और रिक्लाके कायको मस लेना चाहिये ।
गिरीविरचन, नस्य और शिख भोजन भी इनमें विशेष
हितकर है । दन्तवैदर्यमें मोघ, रक्तवन्दन, यष्टिमधु, और
साचा इन सबका चूर्ण, मधु, घृत और शर्कराके संयोग-
से यष्टिमधु रसा काय बना कर उसमें कुत्ता करते हैं ।
गोपोररोगमें रक्तमोचण करके लाघ, मोघा, रसाञ्जन
और मधुकी एक साथ मिला कर उनका लेप लगाने है
और यष्टिमधुके कायको कुत्ता करते हैं । परिदर
रोगमें गोताद रोगके जैसा प्रतिकार करना होता
है । दंतोपकुश रोगमें समन, विरेचन और गिरी-
विरचन करके काकडु, गुर या गोत्रिषाके पत्रोंमें
गोषितकी गालि करने चाहिये । पादो मवच और
विक्कटकी मधुके संयोगमें मञ्जन करना चाहिये ।
पोष, मरसी, चींट और नियुनके फल इन सबको जल-
में मिस्र कर कुछ अण्णावस्थामें हो कुत्ता करने चाहिये ।
श्रीवक्त्रके साथ थोड़ी पाक कर दूधो और मसका प्रयोग
करना भी हितकर है । दन्तवैदर्य रोगमें मांस दाव

दफ़र (फा० पु०) १ कायानयन, आक्रम, २ सविस्तर पत्र
समयों चोड़ो चिट्ठा, ३ विस्तृत सन्तति, चिट्ठा।

दफ़तरी (फा० पु०) १ किसी दफ़तरका काम चारों।
इसका मुख्य काम कागज़ पादि दुस्तकाना घोर रजि-
स्ट्री पादि पर हल खोजना है। २ वह जो किताबोंको
जिन्हें बांधता हो जिन्दमाज, जिन्दबन्द।

दफ़तरीवाना (फा० पु०) किताबोंको जिन्हें बांधनेका
स्थान।

दबंग (हि० वि०) प्रभावशाली, दबावशाली।

दबक (हि० स्त्री०) १ छिपकनेका भाव, २ निरुद्ध।

१ धातु आदि को लंबा करनेके लिये पोतनेकी क्रिया।

दबकगर (हि० पु०) दबका या तार बनानेवाला।

दबकना (हि० क्ति०) १ डरने मारने किसी तंग स्थानमें
छिपना। २ लुप्तना, छिपना। ३ किसी धातुको बढाना
या चोड़ा करना, पोतना। ४ डाँटना, छपटना।

दबकनी (हि० स्त्री०) भातोंका वह भाग जिसमें हो कर
‘उमने’ हवा प्रवेश होता है।

दबकवाना (हि० क्ति०) किसी दूसरेको दबकानेमें
लगाना।

दबका (हि० पु०) कामदानोंका लुप्तहवा चिट्ठा तार।

दबकाना (हि० क्ति०) १ छिपाना, डाँकना। २ डाँटना,
छपटना।

दबकी (हि० स्त्री०) १ मटोका एक वस्तुतः। इसका
आकार सुराही मा होता है। इसमें पानी भर कर खरवाड़
घोर किमान त्रिभ पर से ज़ाय करतें हैं। २ दबकने
या छिपनेका भाव।

दबकेका मनमा (फा० पु०) चमकीला मनमा।

दबकीया (हि० पु०) वह जो मोने चाटोने तारोंको पोत
कर बढाता घोर चोड़ा करता है, दबकगर।

दबगर (हि० पु०) १ वह जो डान बढाता हो। २ वह
जो चमड़ेके कुपों लगाना हो।

दबड़-पुगड़ (हि० वि०) कायर, डरपोक।

दबदबा (फा० पु०) प्रताप, शोचदाय।

दबना (हि० क्ति०) १ डोपके मोचे पाना। २ टाक या
पंजिमें पाना। ३ ऐसा पथगामों या जगह जिनमें कुछ
मन मन चल सके। ४ पंथविग रूपसे किसीको सोख दूसरेके

पथिकारमें चला जाना। ५ मानत रहना। ६ किसी
वातका एक हो जगह स्थिर रहना, किसी वातका प्रश-
का तर्ज रह जाना। ७ चपनी जगह पर उटान रहना
पोछे हटना। ८ किसीके प्रभाव या दबावमें पा कर
विषय होना। ९ पच्छा न लखना। १० संकोच
करना। ११ मन्द पड़ना, धोमा पड़ना।

दबमो (हि० पु०) हिमालय पहाड़ पर मिलनेवाला
एक प्रकारका बकरा।

दबवाना—राजपुतानेके बुन्दे राज्यका एक गहर। यह
पचा० २५°३४' उ० घोर देश ७५°४' पू० के मध्य बुन्दे
गहरमें ११ मोल उत्तर मजिद नदीके किनारे अवस्थित
है। लोकसंख्या ११३६ के लगभग है। १७५५ ई०में
यहां महाराज राजा समेदमिंहके पथीन शारंगपूनी-
के माय जयपुरके महाराज ईश्वरोमिंहको मेनाका
तुमुल संधाम हुआ था। युद्धमें महाराजको ही जीत
हुई।

दबवाना (हि० क्ति०) किसी दूसरेको दबानेमें लगाना।

दबवा—पञ्जाबके हिस्सर जिनके पन्नागत मिरमा तह-
सीनको एक उपतहसील। भूपरिमाण १४८ वर्ग मोल है।
इसमें ५८ ग्राम लगते हैं।

दबस (हि० पु०) वह मान जो जहाजो गोदाममें रहता
है, जहाज परको रसद तथा दूसरा सामान।

दबाई (हि० स्त्री०) गैदवानेका काम।

दबाज (हि० वि०) १ दबावशाली। २ जिसका
पगला भाग विहलते भागसे अधिक चौकल हो, लघू।

दबाना (हि० क्ति०) १ मारके मोचे रखना। २ किसी
पदार्थ पर बहुत जोर लगाना। ३ किसीको चमत्कार
पथस्थानमें ले जाना। ४ जल्दीसे पानी बन्द कर किसी
खोजको बन्द करना। ५ बंदेमानोंमें किसीको खोज
लवत करना। ६ मानत करना, दमन करना। ७ पदार्थ
स्थानमें पोछे हटना। ८ धरतीके मोचे गाढ़ना, दमन
करना। ९ और काम कर विषय करना। १० दूसरेके
गुपों या महत्त्वका प्रकाश न होने देना। ११ किसी
वातको फिसल न देना।

दबावा (हि० पु०) एक प्रकारका बहुत लम्बा चोड़ा
मन्दूक जो बाकका बना होता है। यह मुहको दब

सामग्री है। इसमें कुछ पादमियों की बिठा कर गुम रूप-
से सुरंग खोदने पधवा और कोई उपद्रव करनेके
लिये दुश्मनके किर्नेमें उतार देते हैं।

दवाय (हिं० पु०) १ दवानेकी क्रिया, चाप। २ दवानेका
भाव। ३ प्रताप, रोष।

दविल (हिं० पु०) हनयादर्थोंका एक बीजार। यह काठ-
का बना होता है और देखनेमें खुरपो या खुरचने या
लगता है। इसमें वे घेमुन खादि भूतनी, खोवा बनाते
या कोनोकी चागनी खादि मिलाते हैं।

दधीज (फा० वि०) मोटे दमका, गाढ़ा, सगीन।

दबीर (फा० पु०) १ वह जो लिखनेका काम करता हो,
सुशौ। २ महाराष्ट्र प्राणियोंकी एक उपाधि।

दबूसा (हिं० पु०) १ जहाजका पिछला भाग, पिछला।
२ पतवार लगे रहनेका बड़ी नावका पिछला भाग। ३
जहाजका कमरा।

दबैला (हिं० वि०) १ जिस पर रोष पड़ा हो, दबा
हुवा। २ जह्दो जह्दो होनेवाला।

दबैल (हिं० वि०) १ जो किसीके प्रभाव या दबावमें
पड़ा हो। २ जो बहुत डरता हो, दबू।

दबोचना (हिं० क्रि०) १ किसीकी शक्तस्मात् पकड़ कर
दबा लेना, धर दवाना। २ छिपाना।

दबोम (हिं० स्त्री०) घमकोका पत्थर।

दबीता (हिं० पु०) लकड़ीका एक कुंडा। यह पानीमें
मिगोए हुए नोनके डंठनी आदिकी दवानेके लिए
ऊपरसे रख दिया जाता है।

दबीनी (हिं० स्त्री०) १ बरतनों पर फूल पत्ती आदि
सभारनेका बीजार जो लोहेका बना होता है। २
लुनाईकी वर लकड़ी की मजनीके ऊपरको और
लगे रहती है।

दभोई (दभंवतो) बंवर प्रदेशके अन्तर्गत गायकवाड़
राज्यका एक नगर। यह यक्षा २०° १०' ८" और
देशा ७३° ०८' ०८" पू०, बड़ोदा राज्यसे १५ मील दक्षिण-
पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १४५३८ है।
यहां चटम हाउस, पयिकीका डाकघर, रेलवेस्टेशन,
बीमहालय, कारागार और बहुतसे विद्यालय हैं। इनके
मिया रुईने बाज बाहर निकालनेको एक कम सो है।

यहो ११वीं शताब्दीका प्रसिद्ध दभंवतो नगर माना
जाता है।

दभ्य (सं० वि०) दमे भच् ततो यत्। ब्रह्म, भारनेयोग्य,
कृत्य करने काविल।

दभ्य (सं० वि०) दम्भोतोति दन्म-रक्। (स्यादिनंवीति)
वन् २११) १ धन्य, योड़ा। २ धन्युक्त, जिसमें बहुत
कम समाता हो। (पु०) १ समुद्र। (श्लो०) ४ उत्तरदिक्,
उत्तर दिशा।

दम (सं० पु०) दम भावे घञ्। १ दण्ड, दमन, मज।
मनुष्योंको दमन करनेके लिये दण्ड का नाम दम पड़ा
है। दंड देवो। इसका पर्याय—दन्ति, दमय और दमन
है। २ बाह्येन्द्रिय नियंत्रक, इन्द्रियोंकी वशमें रखना।
गुरे कामोसे चित्त भी मोटनेका नाम दम है पर्याय जिससे
गुरे कामोमें चित्त प्रवृत्त न हो वा चित्तकी किसी कुकर्म-
की और भुका देख जिन शक्तिके प्रभुमें वह उस कुकर्म-
की घोरसे मोटाया जाता है उसकी दम कहते हैं।
३ कर्तव्य, कौचक। ४ दण्ड, धर। ५ एक प्राचीन
महर्षिका नाम। (भारत ११।२६।५) ६ महत्त-
राजके पुत्र। (भाग ८।२।२८) ७ महत्तके पौत्र। ये दुष्टों-
की दमन करते थे तथा बहुत बलवान् और दया दाहि-
ण्यादि सब प्रकारके मदगुणोंसे विभूषित थे। इन्होंने
बभ्रु की कन्या इन्द्रसेनाके गर्भसे जन्मग्रहण किया था।
ये नौ वर्ष तक माताके गर्भमें रहे थे। इनके पुरोहितने
समझा था, कि जिसको जननीकी नौ वर्ष तक इस
प्रकार इन्द्रियका दमन करना पड़ा है, वह बालक स्वयं
भी बहुत दमनशील होगा। इसी कारण पुरोहितने
इनका नाम दम रखा था। महाराज दमने हृदयवर्षासे
धनुर्वेद और दैत्यराज दून्दुभिने घनैक तरङ्गके यथादि
सोखे थे। वेद वेदाङ्गके भी ये अच्छे प्राता थे। (मार्क-
ण्डेयपु० १।३१-१।३५ अ०) ८ भोम राजाके एक पुत्र जो
दमयन्तीके भाई थे। (भारत १।५।१।१) ९ विश्व। १०
बुद्धका एक नाम।

दम (फा० पु०) १ श्वास, मांस। २ गरी आदिके लिये
मांसके साथ धुँवाँ छोड़नेका काम। १ प्राय, आन,
जो। ४ मांस धौं च कर औरसे बाहर फेंकनेका काम।
५ एक बार मांस खानेका समय, पन, लहमा। ६

तलकी पाक कर सूँड़में धारण करनेसे दातन, दंतद्वय, दंतमोच, कपालिका, गोताद, पूतिबला, अर्धचि चौर मुखमें रख नष्ट हो कर दांत मजबूत हो जाते हैं।

(आयुर्वेद)

दन्तरोगी (सं० त्रि०) दन्तरोगयुक्त, जिसमें दांतका रोग हुआ हो।

दन्तलेखक (सं० त्रि०) दंतान् लिखति जोविकार्यं तिस्रं स्तुम्भं नियममासः। दन्तलेखकरूप जोविका युक्त, जो दन्तलेखनेमें अपनी जोविका चलाता हो।

दन्तलेखन (सं० लो०) चन्द्रविशेष। इसके द्वारा दांतको जड़के पास मसूँहें चोर कर मवाद आदि मिश्रित जाते हैं जिससे दांतको पोड़ा दूर हो जाता है। दंतगर्भरा नामक रोगमें इस चन्द्रको आवश्यकता होती है। इसका एक छिरा धारदार चौर चोकोना होता है और दूसरा खूब लाला हुआ रहता है।

दन्तवक्त्र (सं० पु०) दृढविशेष। इन्होंने दृष्टकौस्तिके गर्भ चौर हृदयार्मके चौरससे जन्म ग्रहण किया था। ये कक्षय दीर्घे राजा थे और अत्यंत प्रबल पराक्रान्त तथा दन्तवक्त्र नामसे प्रसिद्ध थे। (हरिवंश ३३ अ०)

जन्मने द्वारकामें रहते समय इन्हें मारा था। (भाग०) ये मिश्रपाकसे भारी थे। मिश्रपाकके मारे जाने पर दन्तिष्ठा नामक घाममें जन्मने लड़कईमें अपनी गदखि इलका प्राण संहर किया। अंतमें यह कुम्भकण्ठ चौर मययुगमें शिरस्त्रकगिषु दीर्घ हुआ था।

(नीलकण्ठनामोत्तर)

दन्तवत् (सं० त्रि०) दंतः विधत्तेऽस्य दन्त-मनुष्य, ततो मस्य वः। दन्तविधित, जिसके दांत हो।

दन्तवस (सं० पु०) हृदि, हाथो।

दन्तवस्त्र (सं० लो०) दन्तस्य वस्त्रमिव। दन्तावरण वर्माक्षक मर्मभेद, दांतकी लड़के कपड़का मर्म, मसूँहा।

दन्तवर्ति (सं० लो०) दन्तनिर्मिता वर्ति। चक्रदन्तके अनुसार एक प्रकारकी बत्ती। वर्ति का टेंग।

दन्तवज्र (सं० लो०) दन्तानां वज्रं पाच्छेदकत्वात्। चोख, चोट।

दन्तवाधस् (सं० पु०) दन्तस्य बाध मध्यमिव पाव-रकत्वात्। चोट, चोट।

दन्तविधान (सं० पु०) दन्तस्य विधान। दन्ताधान, दांतका आधान।

दन्तविद्रुषि (सं० पु०) दन्तरोगभेद, दांतका एक रोग। दन्तरोग देखो।

दन्तवोज (सं० पु०) दन्ताश्च योजयामि यस्य। दाड़िम, चमार।

दन्तवोषा (सं० लो०) एक प्रकारको पोषा जो दांतमें लगा कर चलाया जाता है।

दन्तवेदना (सं० लो०) दन्तस्य वेदना दन्तत्। दन्तग्नया, दांतका दर्द।

दन्तवेष्ट (सं० पु०) १ दन्तरोगभेद, दांतका एक रोग। आर्य कन्। २ दन्तवेष्टक, मसूँहा। दन्तरोग देखो।

दन्तवेदम (सं० पु०) दन्तरोग भेद, दांतका एक रोग। दन्तरोग देखो।

दन्तव्यसन (सं० लो०) दन्तस्य व्यसन। दन्तनाश, दांतका बरबाद होना।

दन्तगङ्गा (सं० पु०) सुदुर्लभ। अक्षरभेद, चौर पाइका एक जोहार यह जोके पक्षिं पाकाशका जाता है।

दन्तगठ (सं० पु०) दन्तेषु गठ इव। दन्तगठ, दांतकी जोड़।

दन्तगठ (सं० पु०) दन्तेषु गठ इव। १ जम्बोर, लंबोरो-जीव। २ कपिल, कोय। ३ कर्मरत्नक, कमरस। ४ नागरत्नक, नारको। ५ पञ्च, चट्टाई। जिनके खानेसे चट्टाईके कारण दांत गुठले हो जायें वे हो दन्तगठ हैं।

दन्तगठा (सं० लो०) दन्तेषु गठा। १ चक्रोरो, चम-जोनी, खडानोनिया। २ सुद्राक्षिका, सुक, चूक।

दन्तगर्भरा (सं० लो०) दन्तस्य गर्भरैव। दन्तरोग विशेष, दांतोंका एक रोग जो मेल जम कर बैठ जानेके कारण होता है।

जिनके दांतोंमें मेल चोकोको तरह जम जातो है, उसीको दन्तगर्भरा कहते हैं। इसमें दांतके मुख गुच जाते रहते हैं। गोरसजकटो (गोरखी) को जड़ पोष कर जलके साथ लवे तोग दिन तक पीनेसे यह रोग दूर हो जाता है।

दन्तग्राह्य (सं० पु०) दन्तानां ग्राह्य इव। निपटव्य, क्षिणिके दांतमें लगानेका रोगोन्मज्ज, मिथी।

व्यक्ति । ७ औषधी गति । ८ पकानेकी एक क्रिया । इसमें किसी वस्तु पदार्थकी बरतनमें रखते और उसका मुँह बन्द करके घाम पर छोड़ा देते हैं । इस प्रकार बरतनके मोतरकी भाँफ जो बाहर नहीं निकलने पाती उस पदार्थको पकानेमें बहुत सहायता पहुँचाती है । ९ संशोधनमें किसी स्वरका देर तक उच्चारण । १० धोषा, धन, फरेब । ११ तलवार या दुरी चादिका बाड़, धार । दम (हि० पु०) एक प्रकारकी तिकोमी कामाची ओ दूरी बुननेवालोंके काममें आती है । इसमें सवा सवा गजकी तीन सजड़ियाँ एक दूसरेसे बंधी रहती हैं । ये कार्यमें पड़ो रहती और उनमें जोती बंधी रहती है । यह जोती पैरके पंगुठमें बांध दो जाती है । बुननेके समय यह पैरके बल मोचे दबाया जाता है ।

दमक (सं० हि०) दमयतोति दमन्विष्णुः । दमनकर्ता, शासनकारो ।

दमक (हि० स्त्री०) धृति, चमक, चमचमाहट ।

दमकना (हि० क्लि०) चमकना, चमचमाना ।

दमकल—पन्थिसे षड्वादिकी रचा करनेका एक यन्त्र । दमकल दो प्रकारकी होती है, एक हाथसे चलाने की और दूसरी वाष्पीय यन्त्रसे । नगरोंमें घृष्टदाहके निवारणके लिए बहुत पहलसे ही पन्थक तद्वीर होती पा रही है । ईसाजन्मके दो सौ वर्ष पहलसे भी ग्रीस और रोममें इस विषयमें कई एक यन्त्रादि उद्भावित और प्रचलित थे ।

विहाव । भुजनेल घोर ग्रीनी हामा (Hama) नामक एक प्रकारके यन्त्रको कया उल्लेख कर गये हैं । कितनेमें तो इसे एक प्रकारकी जलकूपी माना है, किन्तु रोमटनका कहना है, कि यह जलकूपी नहीं है । यह एक प्रकारका बड़ा ढक या टेढ़ा मोटा है जो किसी बड़े दण्डाधर्म बंधा रहता था । मान्य पड़ता है, इससे पन्थिमिगिट द्रव्यादिकी छौंच कर उन्ने बुझानेकी कोशिश करती थी ।

प्लिनी (Pliny the younger) नन या साहफनकी सहायतामें घाम बुझानेकी कया उल्लेख की है ।

जिसे कल कह सकते हैं, उसका ईसाजन्मके १५० वर्ष पहलसे पाविष्कार हुआ । विविधम (Oribasius)

नामक एक प्रसिद्ध यौक यन्त्रतत्त्ववित् टलेमी किनाउने पक्षके राजत्वकालमें मिय देगमें रहते थे । अब ये पन्थक जियिष्ठामें थे, तब हिरो (Hero) नामक समकै एभ हाव या ओ पयने स्पिरिटिमिया (Spiritalia) नामक यन्त्रमें एक प्रकारकी हस्तका वर्णन कर गये हैं । उस कालमें एक प्रकारका जनीसोनयन्त्र (Forcing pump) और दो बड़े नल लगे हुए थे । इस यन्त्रको उच्चति होनेसे ही यहाँकी हस्तचालित दमकलका चाविष्कार हुआ है । मिः विमने अपने जगत्की उच्चति नामक ग्रन्थमें कहा है, कि हिरोके इस यन्त्रमें वर्तमान हस्तचालित दमकलके समस्त मूल एव थे । केवल दिनों दिन ज्ञानोच्चतिके साथ साथ ही इन यन्त्रोंकी उच्चति हुई है ।

सम्राट् ट्रोजन (Emperor Trojan) अपने पहाजिके पायोनीडोरस (Apollodorus) नामक यन्त्रको कया उल्लेख कर गये हैं । इस यन्त्रमें जल भरा हुआ एक चमड़ेका कुप्पा रहता था और उस कुप्पेके साथ नल लगी हुआ था । कुप्पेकी दबानेसे नल हो कर जल पन्थिस्थानमें पहुँचता था ।

१५१ ई०की जर्मनीके पग्सवर्थ नगरमें घाम बुझानेके लिये विचकारोकी तरहको एक प्रकारकी कल थी जिसे (Instrument of fire वा Water-syringe) कहते थे ।

कस्पूर शोटने (Caspur Schott) एक घोर प्रकारकी कलका उल्लेख किया है । यह कल १६१९ ई०की सुरेनबर्गमें व्यवहृत होती थी और प्रायः हिरोका उल्लिखित यन्त्रकी तरह थी । इसे छोड़े गोचर कर ले जाते थे । इसमें एक बड़ा नल लगी हुआ रहता था । कलकी चालू करनेमें २८ सवुर्णोंकी श्रद्धात पड़ती थी । इससे एक दस सौटो जलकी चारा निकलती जो ८० फुट ऊपर जा कर गिरती थी । १७ वीं शताब्दीके पंतमें वायुचम (Air-chamber) के विषयका एक सौटा नल (Hose) व्यवहृत हुआ । ये सब द्रव्य संयुक्त कलें १६८८ ई०में व्यवहृत होती थी, इसका उल्लेख पेराल्ट (Perrault) कर गये हैं । उद्यमि १७० ई०में भास्कार वारड (Vander-Hae) मजदूर

दमय (स० पु०) दम लयगमे दम पद्यम् (बाहुवचन-
रगनिर्दिष्टपद्य । ८५ ११४) दम, दण्ड, मजा ।

दमय (स० पु०) दम भावे पद्यम् । दम, मजा ।

दमदमा—१ ब्रह्मानन्द २४ परगने जिनेके चत्तर्गत्त वारक-
पुर उपनिभागका एक मरकमा । यह पचा० २२ ३४
०० बीर २२ ४१ ०० तथा देशा ८८ २६ ०० बीर ८८
११ पू०के मध्य अवस्थित है भूपरिमाण २४ वर्गमील
है । इसके मध्य हो कर मध्य-वर्द्धनपथ गया है ।

२ उक्त मरकमेका एक गहर । यह पचा० २२ १८
०० बीर देशा ८८ २५ पू० कनकलामे ० मोल
उत्तरमें अवस्थित है । जलमैय्या प्रायः १०८०४ है ।
यहाँ म्युनिस्वपलिटो बीर मैनिकावास है । यह मैनिका-
वास ईटोंका बना हुआ है बीर बहुत प्रशस्त है ।
१०८१ ई०में लेकर १८५१ ई० तक यह कमान खादि
रखनेका स्थान था । १८५१ ई०में यह मोरट उठ कर
चला गया । उस समय यहाँ एक चस्पागार, मैनिका-
वास, चम्पताल, बड़ाबाजार, चमेक परिष्कार जलपूर्ण
हीवो बीर प्रेट्टियाण्टोंका गिरजा था । जिस सन्धिके
अनुसार ब्रह्मालके नवाबने चट्टरेजोंको कलकत्ता, कासिम-
बाजार बीर ठा का ये तोनों देग दे दिये थे, वह सन्धि
इसो स्थान पर हस्ताक्षरित हुई थी । (१०५० ई०की
६ ठो फरवरी) यहाँ पूर्ववर्द्ध देशकेको एक स्टेशन बीर
चट्टरेजी स्कूल है । प्रतिवर्ष सुसलमान फकीर गाह
फरोदके उद्देश्यमें यहाँ एक मेला लगता है ।

दमदमा (फा० पु०) मोरचा, धुन ।

दमदमा—पूर्व ब्रह्माल बीर चासामके लक्ष्मीपुर जिनेके
चत्तर्गत्त डिधरुगढ़ उपनिभागका एक ग्राम । यह
पचा० २० ३४ ०० बीर देशा ८५ ११ पू०के मध्य
अवस्थित है । यहाँ चाय का व्यवसाय खूब चलता है ।
यहाँ एक प्राचीन दुर्ग का भग्नावशेष देखनेमें आता है ।
दमदार (फा० वि०) १ जिसमें जोनीकी शक्ति बहुत हो ।
२ दृढ़, मजबूत । ३ जिसमें अधिक समय तक साम-रह
सके । ४ तेज धारवाला, चोखा ।

दमन (स० पु०) दाम्यनीति दम न्यु । १ दण्ड, दवानि
या रोकनेको क्रिया । २ इन्द्रियादिका याग्राहक-
निरोध, इन्द्रियोंको चंचलता रोकना । ३ पुण्यहर्षविशेष,

एक प्रकारका पेंद । ४ कुन्द पुण्यहर्ष । ५ अविशिष्ट,
एक जटिका नाम । (भारत १५२१) ६ दमराका-
के एक पुष्पका नाम । महाराज दमने दमन जटिको
बाराधना करके सब पुत्र प्राप्त किये थे, इसीसे इन्हीं
पुष्पका नाम दमन रखा था । (भारत १५१८) ७ विन्दु
(भारत १११४८१५४) ८ महादेव, शिव ।

दमनक (स० पु०) दमन एव स्थायं कन् । हर्षविशेष,
दोना । इसका पर्याय—दमन, दाना, गन्धोल्हाटा, मूनि,
जटिला, दंतो, पाण्डुरोग, मज्जजटा, पुण्डरीक, तापम-
पत्रो, पवित्रक, देवशेखर, कुलपल, निनीत, तपस्विपत्र,
मूनिपत्र, नवोघन, गन्धोल्हाटा, धसलटो बीर कुलपत्रक ।
(भावप्रकाश) इसके फूल सुगन्धित बीर जटाकृतिके
होते हैं । इसका गुण—शीतल, तिक्त, कषाय, कटु,
कुष्ठदोष, विष, विषकोट बीर विकारनाशक है ।
भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—द्रव्य, हृष्य बीरसु गन्धि,
यहणी, चरु स्नेह तथा कण्डूनाशक है । (ह्री०)
२ हर्षोद्दिशेष, एक हर्षका नाम । इसके प्रत्येक
चरणमें ६ चत्तर होते हैं । इसमें तीन नगण, एक लघु
बीर एक शुभ होता है । ३ एकादश चत्तरपादक हर्षो-
विशेष, एक हर्षका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें ११
चत्तर रहते तथा शेष वर्ष जोड़ कर बीर सब चत्तर
लघु होते हैं । (वि०) ४ दमनशील, दमन कर-
वाला ।

दमनकारीपणीस्तव (स० पु०) दमनकस्व पारीपण्यायं
य लक्ष्यः । योज्यको दमनक चर्पणार्थं महापुत्रादय
लक्ष्यविशेष । योज्यकी दमनक-दातोस्तव-विधि हरि-
भक्तिविधाममें इन प्रकार लिखा है—

चैत्रमासकी शुक्लादाशमीमें योज्यको दमनक
दान करके लक्ष्य करना चाहिये ।

मधुमासकी शुक्लाएकादश्यादिमें प्रातः कम
ममाम करके दमनक सममें जाते हैं बीर बड़ी निज
लिखित मन्त्रसे उसकी प्रार्थना करते हैं—

“अतोहाय नमस्तुभ्यं कामप्रोतीक्ष्णाय ।

छोकार्ति हर मे निर्वर्ण जामरुद ननस्व मे ॥

नेत्रवामि कृष्णशायि तवा कृष्णशीतिलार्धम् ।”

तिलको पाक कर मुँहमें धारण करनेसे दाहन, दंतद्वय, दंतमोच, कपालिका, शोभाद. पूतिवत्त. अथवि और मुखमें रख गट हो कर दांत मजबूत हो जाते हैं।

(भावरक्षा)

दन्तरोगी (सं० त्रि०) दंतरोगयुक्त, जिसे दांतका रोग हुआ हो।

दन्तलेखक (सं० त्रि०) दंतान् निर्वृति जोविकायं निख एवम् नित्यसमाप्तः। दंतलेखकद्वय जोविका युक्त, जो दंतलेखनसे अपनी जोविका चलाता हो।

दन्तलेखन (सं० स्त्री०) चक्षुर्विगोच। इसके द्वारा दांतको जड़के पास मसूड़े और कर मवाद खादि निगाले जाते हैं जिससे दांतको थोड़ा दूर हो जातो है। दंतगर्श नामक रोगमें इस चक्षुको आवश्यकता होती है। इसका एक सिरा धारदार और चौकोना होता है और दूसरा चूबना हुआ रहता है।

दन्तवक्त्र (सं० पु०) दृष्टविगोच। इन्होंने दृष्टकीर्ति के गर्म और हृदयमार्गके धोरसमे जल पचन किया था। ये कल्प देवसे राजा थे और अत्यंत प्रबल पराक्रान्त तथा दंतवक्त्र नामसे प्रसिद्ध थे। (हरिवंश २५ अ०)

जखने हारकामें रहते समय इन्हें मारा था। (भाग०) ये गिरघालने भाई थे। गिरघालने मारे जाने पर दन्ति नामक ग्राममें जखने लड़ाईमें अपनी गदासे इनका प्राण सँभार किया। तैतार्में यह कुम्भकर्ण और अय्ययुगमें हिरण्यकशिपु दैत्य हुआ था।

(भोदृष्टावनीभासून)

दन्तवत् (सं० त्रि०) दंतः विद्यतेऽस्य दंत-मनुष्ये. ततो मस्य वा। दंतविगिट, जिसके दांत हो।

दन्तवत् (सं० पु०) हस्ति, हाथी।

दन्तवक्त्र (सं० स्त्री०) दंतस्य वक्त्रमिव। दंतारण्य चर्मोक्त मर्मभेद, दांतकी जड़के ऊपरका भाग, मसूड़ा।

दन्तवर्ति (सं० स्त्री०) दंतनिर्मिता वर्ति। चक्रदन्तके अनुसार एक प्रकारकी वस्ती। वर्तिका देखो।

दन्तवस्त्र (सं० स्त्री०) दंतानां वस्त्रं धाच्छादकत्वात्। पोछ, पीठ।

दन्तवासस (सं० पु०) दंतस्य वासः यन्ममिव धाव-रत्नत्वात्। पीछ, पीठ।

दन्तविषाण (सं० पु०) दंतस्य विषाणः। दंताघात, दांतका आघात।

दन्तविद्वधि (सं० पु०) दंतरोगमेद, दांतका एक रोग। दन्तरोग देखो।

दन्तवोज (सं० पु०) दंतारण्य वोजानि यस्य। दाढ़िम, जगार।

दन्तवोषा (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी बोषा जो दांतमें लगा कर सजाया जाता है।

दन्तवेदना (सं० स्त्री०) दंतस्य वेदना। दंतत्। दंतग्न्या, दांतका दह।

दन्तवेष्ट (सं० पु०) १ दंतरोगभेद, दांतका एक रोग। स्नायु कन्। २ दंतवेष्टक, मसूड़ा। दन्तरोग देखो।

दन्तवेदम (सं० पु०) दंतरीग भेद, दांतका एक रोग। दन्तरोग देखो।

दन्तव्यसन (सं० स्त्री०) दंतस्य व्यसनं। दंतनाश, दांतका बरबाद होना।

दन्तग्रह (सं० पु०) सद्युतोऽस्य चर्माभेद, और काढ़का एक चीशर यह जोके पत्तिका चारका होता है।

दन्तगट (सं० पु०) दंतपु गट इव स्थानिजनकत्वात्। दंतगट।

दन्तगठ (सं० पु०) दंतपु गठ इव। १ जम्बोर, कंठोरो-मोवू। २ कपिय, कैय। ३ कमरुहक, कमरु। ४ नागरहक, नारहो। ५ चण्ड, चटाई। जिनके पानिसे छटाईके कारण दांत गुठले हो जायें वे हो दंतगठ हैं।

दन्तगठा (सं० स्त्री०) दंतपु गठा। १ चाङ्गरी, चम-मोनी, वृद्धानोमिया। २ सुद्राप्रिका, चुक, चुक।

दन्तगर्श (सं० स्त्री०) दंतस्य गर्शश्च। दंतरोग विगोच, दांतोंका एक रोग जो मैन जम कर बँट जाने-के कारण होता है।

जिसके दांतोंमें मैन चोनीको तरह जम जातो है, उसीको दंतगर्श कहते हैं। इसमें दांतके मध्य गुच जाते रहते हैं। गोरपटकटो (गोरपी) की जड़ पोस कर उनके साथ सड़े तोग दिन तक पीनेसे यह रोग दूर हो जाता है।

दन्तग्राह (सं० पु०) दंतानां ग्राह इव। निपटप, धिपणिके दांतोंमें लगानेका रोगीज मजम, मिष्की।

इस प्रकार प्रायः ना और प्रणाम कर दमनकाओ हाथ-
में लेते हैं। गोष्ठि पञ्चगव्य द्वारा उसे प्रचानन कर पूजा
करते हैं और मध्यमे आच्छादन कर चेटपाठ करते हुए
पर जाते हैं। चतुस्तर दमनकाधिवास करना होता है।

अध्यासधिया—श्रोत्रण्डके चारों हमें रख कर मध्यतो-
भट्टमण्डल करते हैं और उसके ऊपर हम दमनकाओ
संस्थापित कर निम्नमन्त्र द्वारा अधिवास करते हैं।
मन्त्र—

“पूर्वार्धे देवदेवरव विरमोर्ध्वोपवतेः प्रमोः।

दमन । त्वमिहागच्छ सातिष्यं कुरु ते ममः ॥”

गोष्ठि मन्त्रोप कामदेवकी पूजा करनेकी होती है और
एकओ पाठ बार कामगायत्रीका जप करके चामन्यप
करना होता है। पुण्याक्षलि द्वारा निम्नलिखित मन्त्रने
प्रवृत्ता की जाती है। मन्त्र—

“नमोऽस्तु पुष्पकाणां वगदाकारकारिणे ।

मन्त्रव्याप्य वर्ततेने तिम्रोक्षिप्रदायिने ॥”

बाद श्रोत्रण्डको इस मन्त्रसे चामन्यप करते हैं।

“वामतिष्ठतोऽति देवेष्ट । इतानुवृत्तोत्तमः ।

प्रातस्तमी पूजयिष्यामि छात्रिष्यं कुरु देवरा ॥

निवेदनायहं शुभं प्रातर्दमनकं शुभं ।

हर्षया वन्देदा विन्तो ममत्वेऽस्तु प्रवीद मे ॥”

इस प्रकार चामन्यप करके श्रुत्य गोतादि द्वारा रात्रि
जग कर चिताने हैं। दूसरे दिन सवेरे प्रातःकार्य समाप्त
कर दमनक पारोपणके लिये महापूजा की जाती है।
बाद दमनकाओ भक्तिपूर्वक हाथमें ले कर निम्न मन्त्रसे
श्रोत्रण्डकी चर्पण करते हैं। मन्त्र—

“देव देव वगजग्य वधितार्थप्रदायक ।

इन्द्रमन्त्रं पूज मे कृष्ण कामान् कोटिःश्रीतिव ॥

इदं दमनकं देव दृष्टाय मद्वसुधाय ॥

इदं वशिष्ठो पूज ममवशिष्ट पूज ॥”

चतुस्तर दमनक-पुष्पकी माला इस मन्त्रसे श्रोत्रण्डकी
चर्पति है—

“वशिष्ठिदु ममात्मानिर्भेदाकुपुनारिभिः ।

इदं वशिष्ठो पूजा तस्यानु मरुत्तमः ॥

वसुधायां वसु देव । श्रीगुरुवर्धनं हवि ।

गुरुदामनकी माता पूजा करने वदा ॥”

इसके पश्चात् श्रुत्यगोतादि तदा प्राप्ताप भोजन करा
कर महोत्सव करते हैं।

चैत्रमासमें दमनक पारोपण परमेश्वर यदि कोई
विघ्न हो जाय, तो वैशाख या श्रावण मासमें पर
मकरते हैं।

और इस दमनक पारोपणका उद्देश्य करम है, करने
ममी मनोरथ सिद्ध होते हैं, तथा अन्य मन्त्रों तीर्थ
स्नानादिका फल मिलता है। (हरिमणिकलाव १४ वि०)

दमनन्दि—चार्य तिलक नामक प्राज्ञ जैन ग्रन्थमें रच-
यिता।

दमनशाल (मं० वि०) दमन करनेको शिमकी प्रकृति
हो, दमन करनेवाला।

दमनो (मं० को०) दम्बनेग्निगया दम्ब-पुत्र, मिश्र
होय। अग्निदमनो वृक्ष।

दमनो (हिं० को०) मन्त्रोप, मन्त्रा।

दमनीय (सं० वि०) १ दमन होनेके योग्य। २ जो दशया
जा सके।

दमपुत्र (का० पु०) जो दम दे कर पड़ाया गया हो।

दमवाज (का० वि०) जो दम करता हो, बढ़ाना करने-
वाला।

दमवाजी (का० को०) दम या वशानः करनेका काम।

दमयत् (मं० वि०) दम बिच्छू-यत्। १ शान्तकर्ता,
शासन करनेवाला। (पु०) २ मित्र।

दमयन्ती (मं० को०) दमयन्ति नामयति चमत्प्रसादिक-
मिति दम-विच्छू-यत् होय। १ भद्रमसिका। २ मम
राजाकी पत्नी, वैदर्भराज भोमकी कन्या। सुन्दरनाम
यह चरितोप्य यौं मुनिवधराज मलयी जय इतने रूपकी
कन्या मालूम हुई, तब से इन पर लड़ हो रह्ये। उन्होंने
अपने प्रेमाका विषय एक कंठ द्वारा दमयन्तीके नाम
मिजवा दिया। दमयन्ती भी कंठमें मन्त्रक रूप और गुणदि
सुन कर उन पर आसक्त हो गईं। इसी समय विदर्भ-
राज दमयन्तीको विवाहयोग्य देख कर लयाहरकी
तेयारी करने लगे। देव देवके नृपगण इस अवसरमें
आये; यहाँ तक कि इन्द्रादिको लयालय भी दमयन्ती-
की पानकी रक्षा करके हुए पधारे।

राक्षोंमें आने समय देवताओंने उसकी देख कर अपने

ଦଳକିରା (୧୦୦ ଟଙ୍କା) : ଦଳକିରା ମିଶ୍ର ଦାମ : ଶାନ୍ତନୁ ।
 ଦଳକିରା (୧୦୦ ଟଙ୍କା) : ଦଳକିରା ମିଶ୍ର, ଦଳକିରା ମିଶ୍ର ।
 ଦଳକିରା (୧୦୦ ଟଙ୍କା) : ଦଳକିରା ମିଶ୍ର, ଦଳକିରା ମିଶ୍ର ।

दत्तार्जुन (अ० पु०) दत्तार्जुन, दत्तार्जुनदत्त
 विद्वत्पदादिकम् । दत्तार्जुन दत्तार्जुन गोप्य ।

दुर्गादेवी की स्तुति

हमसोय (सं० पु०) दंतव्य सं० क० इति । दंत वंश-
विभेद, दंत वृद्धि, दंतरे अमुकानां मोक्षवाचा एक प्रसार-
का कादा । नमस्त एतौ—हंसमुख, हंसोत्र योः
दिनकरं ई ।

दशमः प्रश्नः (मं० पु०) दशमः प्रश्नः । दशमः प्रश्नः ।
 दशमः प्रश्नः । दशमः प्रश्नः । दशमः प्रश्नः । दशमः प्रश्नः ।
 दशमः प्रश्नः । दशमः प्रश्नः । दशमः प्रश्नः । दशमः प्रश्नः ।

दत्तार्थ (गं १०) दत्तार्थः इति यस्मात् । दत्तार्थो
विर्जितः । त्रिमूर्ति दत्तः अत्र चोदक मयः न कश्चिदर्थः
तस्मिन् दत्तार्थो दत्तः ईति विद्या समस्तता जातिवि । दत्तार्थो
दत्तः । अत्रान्तरात् त्रिमूर्ति त्रिमूर्ति यस्मात् यस्मात् यस्मात्
चोदक दत्तार्थः यस्मात् चोदक चोदक चोदक चोदक
निकट समर्थः अत्रात् ।

दशार्थक (गं० पु०) दशान् चरन्ति च । निष-पुन ।
अन्वाह, शंखोर्मा नः ।

दशमोऽथ (सं० पु०) दंतान् जघंयति जघ-निष्पद्युः ।
अंशोर, लंघारी कोऽयम् ।

दशम (मं. प्र.) दशम अध्यायः दशमः अध्यायः
भागः

दशमपाठ (मं० ५०) दशमं पाठंति याज्ञिकपादः ।
 १ सिद्धं, मंत्रः । २ दशमपाठः, दशमं पाठान्ति ।

ਦਸਾਣ (ਸੰ ੧੫) ਬੁਧਾਨਿ ਨਿਰਾਦਰੁ ਲਿਖਿਓ ਮਿਤ,
ਦਸਿਓ ਨਹਿ ਧਾ ਸਾਖਿਓ ਧਰੁਨਿਓ ਭੀਓ । ਏ ਭਾਨੇ
ਨਦਰੁ ਭੀਓ ਚੋਰੁ ਭਾਖ, ਭਾਖੁਨੁ ਸਦਾ ਦਸਿ ਧਾਨੇ ਭੀ ।

एकादशति (सं०) सा०। एतेषु द्वयेषु पञ्चमे वृत्तः सुब
वृत्त-मन्त्राणां वृत्तानि शीघ्रं । वाक्पटु एतन्न्याय दाय
प्रत्यक्ष दूर, एक वृत्तानेकी दायनि ज्ञातनेकी अर्थात् ।

[illegible]

दस्तावेज (२००) दस्तावेज (२००) दस्तावेज (२००)
दस्तावेज (२००)

गुह्ये वाग गुह्ये मानये प्रविष्ट मर्षी गोपे गोपे
दलमज्जिन् पद्मादि भो मुनिवो प्रविष्ट मर्षी वा
गवते ।

दशावुष (५००) दशवुष दशावुष । दशावुष ।
दशावुष ।

दत्तात्रेय (गं. पु. जा.) दत्तत्रय वरदत्तः । दत्त-
त्रयः । दत्तत्रयः । दत्तत्रयः । दत्तत्रयः ।
दत्तत्रयः । दत्तत्रयः । दत्तत्रयः । दत्तत्रयः ।
दत्तत्रयः । दत्तत्रयः । दत्तत्रयः । दत्तत्रयः ।

दस्ताविजा (मं० खोः) दंतान् चरति पात्रिणीति चर-
चरन्, दासि चरन् । धना, भगाम ।

दशमोऽऽ (मं० पौ०) दशमं चतुर्त्विचं चतुर्दशमोऽऽदि
हागं दोषः ॥ दशमं, दशमः ॥

दशमवर्ष (स' ७ पु०) अतिनायितो द' लो यम्य द' न वल्ल
 (द' न' म' य' य' य') । १० २२ (१२) लो लो लो । १० लो,
 द' लो ।

दक्षिणा (मं० पा०) दम् नम् गीता-द्वीप-वार्धे नम्
ततो जम् : । दन्ती गुण, कर्मावगोष्ट ।

दक्षिणा (सं० स्त्री०) दक्षिण। दक्षिण भाग। दक्षिणा।
जमाजमोदा ।

दशदिना (मं० पु०) दंतिसा दंतः ६ म० । दक्षि-
दंत, वायोदं दीप ।

दक्षिण (मं० पु०) वायव्यो दक्षो द्यौः पृथ्वी दक्ष-पश्चिम ।
 वायव्यो, दक्षो ।

दन्तिनां (मं० ग्री०) दन्तदादादादोऽप्यन्ताः शून्ये दन्त-
दन्ति-दोषः । दन्तोश्च, तन्माप्नोति ।

दक्षिणधूमिका (मं० पत्तोः) दंतिसुखदंतमुनमिष सुस-
कृष्टाः सन्ति आदि यतव्यः । दंतोक्तता, जगामतेहा ।

समाप्तः ॥ (१८८८) ॥

प्रमाण उपर्युक्त है कि यह प्रमाण ही है कि (C) का
प्रमाण ही है कि यह प्रमाण ही है कि

यसको जङ्गलहरूमा बसिबास गर्नेको नाम जंगलवासी भनिन्छ। जंगलवासीहरूको जीवनशैली अत्यन्तै सरल र स्वच्छ हुन्छ। जंगलवासीहरूको घरहरू जंगलको बीचमा बनेका हुन्छन्। जंगलवासीहरूको जीवनशैली अत्यन्तै स्वच्छ हुन्छ। जंगलवासीहरूको जीवनशैली अत्यन्तै स्वच्छ हुन्छ।

दूत वमा दमयन्ती के पास भेजा। नन देवतः पीने वामे घमस्व रूपमें दमयन्ती के पास पहुँचे और देव-तापका अभिप्राय कह सुनाया। उत्तरमें दमयन्तीने कहा, "मैं पचनेवाले ननको खर चुकी हूँ। उगने मिना और कोई भी मेरे खासी नहीं हो सकते।"

यह सुन कर देवगण नन रूप धारण कर स्वयम्बर-स्थानमें खड़े रहे। दमयन्ती और कोई दूसरा उपाय न देख देवतापक्षी मुक्ति करने लगीं। पीछे इन्होंने देवतापक्षी स्तब्धरित, स्तब्धनेत्र, दिव्यमान्धारी देहमें ननको पचवान कर उनके गलेमें मांसा डाल दा। उन दोहोंने कुछ दिनोंतक सुखीय समय व्यतात किया। पीछे नन लुप्त भपना सर्वस्व खी कर बनका बने गये। पतिव्रता दमयन्ती भी उनके साथ हो लीं। दो भ्रष्ट होनेपर मनुष्यकी बुद्धि मारो जाती है। एक दिन ननराज पतिपरायणा मोहें दुई पक्षीको नियुक्त बनमें छोड़ पाग किन्हीं दूसरे वनमें चले गये। अंतमें दम-यन्ती बहुत कष्ट झेलती हुई पित्तके घर पहुँची।

दमयन्ती पतिविरहमें बहुत गंभीर हो गई। रजा-ति नाने ननको योजनमें सर्वत्र अपने पनुवर्गको भेजा, लेकिन कहीं भी उनका पता न लगा। तब दमयन्तीने कोई दूसरा उपाय न देख एक चक्रुत उपाय दृढ़ निकाला। वे जानती थीं कि राजा नन शोभत और अपमानित हो कर हा कहीं पदमय छिपे हुए हैं किन्हीं असामान्य घटनाके मिया उन्हें छिपे हुए स्थानमें बाहर निकालना समर्थ है। इसी कारण इन्हीं घीघण कर दो कि राजा ननके अनेक समय तक पचातवास करनेके कारण उनको को दमयन्तीने स्वयम्बर द्वारा विवाह करनेकी इच्छा कर ली है। यह संघाट पाते ही सर्वसहिष्णु नन स्थिर न रह सके। इतने दिनों तक वे पयोध्याधिपति ऋतुपर्णके यहां कुछ वेशमें अतिथान परगपानका काम करने थे। पयोध्याधिपति जब स्वयम्बरमें जाने लगे, तब राजा नन भी उनका सारथि बन कर विदम राज्यकी गये। दमयन्तीने दामोके सुखमें जब इस मारयिक पक्षीकि रूप मुपादि-की कथा सुनी, तब वे सन्दिग्धचित्तसे परगपानमें पहुँची। यहां परगपानकी अपना हृदयवस्त्र नन

पचवान कर उनके खरपी पर गिर पड़ी। पीर प्रयम्बर बोधका रूप घटनाके निचे समा प्राप्त ना की। दमयन्ती इस प्रकार खासीकी वा खर पुनः मरा, राज्यमें राज-महिषी हुई। (भारतवर्ष) नद देखी।

दमयन्ती—मन्द्राज प्रदेशके अंतर्गत उत्तर पन्नाटका एक गिरियथ। यह पन्ना १२°२५' ४०" उ० और देगा ७५° ५०' पू०में अवस्थित है। इसी राह हो कर महराष्ट्रवोर मियाजा १७९१ ई०में पहले बार कर्णाटक पर चढ़ाई करनेके लिये गये थे। इसी स्थान पर १७४० ई०में तथा दोम्नापनी महाराष्ट्रों से युद्धमें मार गये थे। १७८०-८२ ई०में हैदर अलीको सेनाने जब कर्णाटक पर आक्रमण किया था, तब इसी राह होकर रनद भेजी जाती थी।

दमनिद्रा—पन्नाजके अंतर्गत बमहर राज्यका एक ग्राम। यह पन्ना १२°४५' ७०" और देगा ७०°१८' पू० समुद्र पृष्ठसे ८४०० फुट ऊँचे पर अवस्थित है। यहांके अधिवासी चोन्तातारासे मिलते जुलते हैं। वे बौद्ध धर्मावलम्बी हैं।

दमान—१ पन्नाजके अंतर्गत एक बड़ा जिला। यह पन्ना २८° ४०' और २५°२०' उ० तथा देगा ८८°१०' और ८१°२०' पू०में अवस्थित है। सुलेमान पर्यतका पूर्वपाददेगस्थित प्रदेश और इसी दमान नामके अंतर्गत मित्युनदाका दक्षिणतार इस जिलेके अंतर्गत है। यहांका भूमिपटुवर और पन्नाटिविहीन है।

२ अम्बई प्रेसिडेन्सीके गुजरात प्रदेशके अंतर्गत पोर्चुगीजोंके अधीन एक नगर। यह पन्ना २०°२५' उ० और देगा ७२°५५' पू०में अवस्थित है। इसके उत्तर-में भगवान गढ़ी, पूर्वमें, सूर्य राय, दक्षिणमें कनिम, नदी और पश्चिममें कावेरी उपसागर है। नगर इसी परगनेके साथ इसका परिमाणफल १४८ वर्ग मील है।

दमानके दो विभाग हैं—१ परगना सावर या दमान परगना तथा २ परगना कनम पयोरी या दमान विस्ती। इनके निवा ५५० मील तक। जयमी परगनेका एक प्रथम, अंश है।

दमान नगर १५११ ई०में पोर्चुगीजोंसे मूटा गया था। यहांके अधिवासियोंने इसका पुनः संस्कार किया। बाद १५५८ ई०में पोर्चुगीजोंने पुनः इसे अधिकार कर

एरंडया पंडोशमे होते वह हृदयी है। पर्याय—
गोधा, श्वेतघण्टा, निजुधो, नागस्तोता, दंतिनी, उप-
चिप्ता, मद्रा, रुषा, रेषनी, श्वेतकुसा, निःशब्दा, चक-
दंतो, विगन्धा, मधुपुष्प, एरण्डकसा, तरुणो, एरण्ड-
पत्रिका, श्वेतरेवती, विगोधनी, कुम्भी, चण्डावरदन्ता,
निजुधदन्तिका, प्रत्यक्षपर्णी और उद्ग्वरपर्णी। (यम,
रात्रि) इसका गुण—कटु, उष्ण, शूल, घाम, त्वक्त्रोप,
घर्म, घ्न, घमरी और शब्दनाशक है। (रात्रिस्तन)।
चण्ड दंतोके फल मधुर रस, मधुर, विपाक, शीतवीर्य,
मल और मूत्रनिःसारक तथा गरदोप, शोथ और कफ-
नाशक है। दोनों दंतो मारक, कटु, रस, कटु, विपाक,
अग्निप्रदीपक, तोषण, उष्णवीर्य तथा शुद्धाह्वर, घमरी,
शूल, घर्म, कण्डू, कुष्ठ, बिदाह, पित्त, रक्तदोष, कफ,
शोथ, उदर और क्षमिनाशक है। (भावप्रकाश) वृत्त-
मान यूरोपीय चिकित्सकोंके मतसे यह बहुत विरिचक
माने गई है। इसके बीज अधिक मात्रामें देनेसे
विपका काम करते हैं। कहीं कहीं जयपालके बटने
दंतोके बोल व्यवहृत होते हैं। इसके रसमें मोहरा गल
जाता है।

दन्तीफल (मं० क्षी०) १ विष्णु। २ दंतोके बीज।
दन्तीफलमालाति। (मं० पु०) विम्वारुष, योधा।
दन्तीबीज (मं० क्षी०) जयपालबीज, जमानगोटका बीज।
दन्तीहरीतकी (मं० स्त्री०) शुष्माधिकारकी चोपध-
भेद। इसकी प्रचल प्रचालो इस प्रकार है—प्रयपोहनी-
वह हरीतकी २५, दंतोमूल २५ घन, लव ६४ खेर,
शिय ८ खेर। इस कायजलमें २५ घन पुराना गुड़
छास कर उसे ज्ञान लेते हैं। साठ उसमें भाय पूर्वोक्त
२५ हरीतकी दे कर पाक करते हैं। चासय पाकमें
जिसोयका चूर्ण ४ घन, तिलतैल ४ घन, पोपन चूर्ण
४ तोला और मोठ चूर्ण ४ तोला ज्ञान कर अच्छी तरह
हलते हैं और पोछे उत्तार लेते हैं। शीतल बीने पर
उममें मधु ४ घन, दारचीनी, तेजपत्ता, इसागर्षी और
नागकेसर प्रत्येक २ तोला मिना देते हैं। सेवनकी
मात्रा २ तोला और एक हरीतकी है। इसमें शुद्ध, मोहरा
और शोथ खादि पनेक प्रकारके रोग जाते रहते हैं।

(भैवगर० ग्रन्थि०)

दन्तुर (मं० ति०) उग्रता दंताः सप्तम्य दंत-उरष
(दंत उग्रत उरष। वा ५।२।१०९) १ सप्तमदंत, जिनके
दोन भागें निकसे हैं, दंतुला, दंतू। सुपरकी मारनेमें
दूधरे लक्षमें दन्तुर हो कर जन्मग्रहण करता है। (पातन)
सामुद्रिकके मतमें दंतुला मनुष्य कदाचित् हो मूत्र
होता है। (पु०) २ हस्ती, हाथो। ३ शूकर, सुपर।
दन्तुरक (मं० पु०) देगभेद. एक देग जा पूर्वदिगामें
अवस्थित माना गया है। (हृदय० १।१।१)

दन्तुरच्छट (मं० पु०) दन्तुर उग्रतानतच्छटो यस्य।
बीजपुर, बिजोरा जीवू।

दन्तवर—सम्यग्देगके वस्तार शब्दके अन्तर्गत एक
घाम। पचा० १८० ५५० ८० और देगा० ८१ २३ ३०
३०० पूर्वके मध्य दृष्टानि और लहानि नदिद्वीके उत्तम
स्थान पर तथा वैसा दिमाज नामक पहाड़के पश्चिममें
अवस्थित है। यहां दन्तवरी नामक कानोंका प्रसिद्ध
मन्दिर है।

दन्तीच्छट (मं० क्षी०) दन्तौ चच्छटं। दंत द्वारा
च्छट, वह जो दाँतमें जुड़ा किया गया हो।

दन्तीस्वन्ना (मं० स्त्री०) ग्रन्थि जातीपुष्प उन्न, मक्षि
जायकनशा पेड़।

दन्तीत्पाटन (मं० स्त्री०) दन्तस्य दृष्टपाटनं। दाँत का
छपाटन, दाँतका छपाटन।

दन्तीह्रद (मं० पु०) दन्तस्य ह्रदः। दन्तीह्रद
रहितका निकलना।

दन्तीमूषिक (मं० पु०) दन्तस्य उन्मूलकः मोक्ष्यान्ति
इति ठन्। (अतःविजिगी। वा ५।२।११५) वाच-
प्रत्यविशेष, एक प्रकारके संन्यासी। ये उल्लो खादिमें
जुटा हुआ घन नहीं खाते, दाँत द्वारा भोज खादिमें
चासय निकाल कर खाते हैं। ये वा तो फल खाते हैं
या हिमके सहित पत्ताजके दाने ये भोज पन्निपक्ष बीज
नहीं खाते।

दन्तीष्ठ (मं० क्षी०) दन्ताय बीजो य तेषां ममाहारः।
दंत और बीजका ममाहार, दाँत और बीज।

दन्तीठ (मं० पु०) दन्तीठे भवः ग्रोराययवत्वात्
यत्। दंत बीज द्वारा उधारबीज वर्ण, वह वर्ण जिसका
उधारच दाँत और बीजमें हो। द्वाभा अर्थ 'व' है।

यहाँ म्यायिद्वयसे रहनेका बन्दीबन्ध किया। इसमें २८ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः १०३८१ है।

यह स्थान कावेरी उपसागरके सामने अवस्थित है और दमनगट्टा नामक नदी द्वारा दमानग्राण्टि (बड़ा दमान) और दमानपिन्ने (छोटा दमान) नामक दो विभागोंमें विभक्त है। दमानग्राण्टि दक्षिणकी ओर याना नामक कृटिशाधिपति जिम्मेदार क्षेत्र है और दमानपिन्ने उत्तर की ओर धरतरे मोरति प्रदेशमें अवस्थित है। ग्रीष्मकाल में कनूट यागिनी द्विभागान्तरों पक्षीय पोस गोत्रानि १४५८ ई० की दूसरी फरवरीकी अधिपति हुआ। नगर क्षेत्रों परगनेका परिभाषक १० वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २०४६९ है।

१०० ई०की छठी जनवरीकी पूना नगरकी मन्त्रिण धनुमार यह परगना महाराष्ट्रमें पोस गोत्रांके हाथ परगना किया।

दमानकी प्रधान नदियाँ भगवान्, कनेम, नन्दनाना मा दमनगट्टा हैं। ये कावेरी उपसागरमें गिरते हैं। यहाँका जनबाध व्यापारकर है। यहाँ बहुत बड़े बड़े जहाज हैं। यहाँकी जमीन उर्वरा है। चावल, गेहूँ और तमाकू यहाँके प्रधान उत्पादक हैं। चावलकी शुविधा रहने पर भी यहाँ कुल २५ जमीन पावाट होती है। जमीन पर ही एक प्रकारका टेक निर्धारित है जिसमें प्रायः ८०००, ५० का राजस्व बसता होता है।

पोस गोत्रांको समता ग्राम क्षेत्रों परने पक्षीकां उपक्रमके साथ दमानका युद्ध व्यवसाय चलाता था। १८१०में १८३० ई० तक चीन राज्यके साथ यहाँका पक्षीका व्यवसाय होता था। किन्तु चैंगरीने मित्र देश चीन केाने बाद पक्षीका रफ्ताने बन्द हो गई और तभीसे दमानका पक्षीका व्यवसाय उठ गया है।

पूना समवेत कपड़े बुनने और रंगानेके लिए दमान शहर प्रसिद्ध था। बुननेका काम आज तक भी चल रहा है। यहाँ माकू और पत्रके पक्षीकी टोकरी बनाई जाती है।

शासनकार्यकी शुविधाके लिये दमानकी एक प्रदेगमें गिनती हुई है। यहाँ एक म्युनिसिपालिटी है। लोकसंख्या में जनसंख्या पक्षीय एक शासनकार्यसे दमान

शासित होता है। विचार विभाग एक जजके पक्षीय है और ये एक पक्षीय-जनरल तथा दो या तीन कर्चिककी सहायतामें विचारकार्य करते हैं।

यहाँ दो दुर्ग हैं। पहले दुर्गमें गवर्नरका प्रासाद, मैनका पावाग, पक्षताग, म्युनिसिपल पार्क, पदानन-घर, जेल, दो गिरजा और दूसरे दुर्गमें मकान हैं। छोटा दुर्ग मेषट जिरोंकी सहायतासे पोस गोत्र द्वारा स्थापित हुआ है जिसमें एक गिरजा और एक मोरस्थान है।

दममात्र (फा० पु०) किनो गवर्नरके गानेके समय ठमको सहायताके लिए स्वर भरनेवाला पादमी।

दमा (फा० पु०) एक प्रसिद्ध रोग। इसमें ग्राम-प्राणियों नवीके पक्षिमागमें पक्षीयन और ऐंठनके कारण ग्राम क्षेत्रमें बहुत दह होता है, खासी पानी है और एक एक कर बड़े कठिनतासे धीरे धीरे निकलता है। रोगी इसमें बहुत कष्ट पाने हैं। लोगोंका विश्वास है, जिसे रोग कभी पक्षीय नहीं होता।

दमाद (हि० पु०) जामाना, कन्याका पति।

दमादम (हि० क्रि० वि०) १ दम दम शब्दसे साथ।

२ लगातार, बराबर।

दमान (हि० पु०) दामन, पानकी चाटर।

दमानक (हि० प्रो०) तोपोंकी बाट।

दमास (हि० पु०) दमास देती।

दमासा (फा० पु०) नगरा, डंका।

दमाह (हि० पु०) बेलेका एक रोग। इसमें बेल फिकने लगता है।

दमित (म० वि०) दमने कम दमक। 'ह' दात काठि।

पा ०२१२०) १ शासित, जो बड़ा किया गया हो। २

छो शमहित, कष्ट सहनेवाला।

दमित (म० पु०) दम-वृक्ष। शासनकर्ता।

दमिन् (म० वि०) दमोःप्राप्तोति दम-रति। १

दमनविमिट, दमन करनेवाला। (क्रो०) २ नगर

और मित्रमित्रके दक्षिणस्थ तोपमें ट। ३ उक्त तोप-

प्रवर्तक एक क्षयि। यह तोप पापनामक है। यहाँ

प्रदादि देशकीपक्षि महेश्वरकी नवासना को दो। इसमें

खान और देशनापक्षि परिहृत वृद्धों पूजा करनेमें

ज्यादाविध समापाय जानि रहते हैं। पक्षिध यह करने-

दन्तगिरा (मं० स्त्री०) दंतानां गिरा यत् । मसूढ़ा ।
दन्तगुहि (मं० स्त्री०) दन्तस्य गुहि, इत्त् । दांतकी विशु-
द्धि, दांतकी सफाई ।

दन्तगूल (मं० पु०) दन्तस्य गूलश्च, गूलवेदनवद्
वेदनादायकत्वात् । दन्तवेदना दांत हो मोड़ा ।

दन्तरोग देखी ।

दन्तगोफ (मं० पु०) दन्तस्य गोफ इव । दन्त रोग-
विशेष, दांतबुँद; दांतके मसूढ़में होनेवाला एक प्रकार-
का फोड़ा । इसका पर्याय—दन्तगूल, दन्तगोफ और
द्विजवर्ण है ।

दन्तमर्चण (मं० पु०) दन्तस्य मर्चणः । दांतोंका
चर्चण, दांतमें दांतकी रगड़ । दन्त स चर्चण नहीं करना
चाहिये, करनेमें अशुभ होता है ।

दन्तहर्ष (मं० पु०) दन्तानां हर्षा यस्मात् । दन्तरोग
विशेष । जिसके दांत शोल और उष्ण मध्य न कर सके
उसे दन्तरोग हुआ है ऐसा समझना चाहिये । दन्तरोग
देखी । स्नान करते समय जिसका शरीर अत्यंत पोटित
और दन्तहर्ष उपस्थित हो जाय उसकी मृत्यु बहुत
निकट समझी जाती है ।

दन्तहर्षक (मं० पु०) दन्तान् हर्षयति हृष-णिव-ण्वुल ।
जम्बोर, जंबोरी नीबू ।

दन्तहर्षण (मं० पु०) दन्तान् हर्षयति हृष-णिव-ण्वुल ।
जंबोर, जंबोरी नीबू ।

दन्ताय (मं० स्त्री०) दन्तस्य अयः । दांतका अगला
भाग ।

दन्ताघात (मं० पु०) दन्तान् बाहति घा-इन-अप ।
१ निबूक, नीबू । २ दगनाघात, दांतका घाघात ।

दन्ताद (मं० पु०) सन्तुतोक्त दन्तादक-कामिरोगमेद,
दांतकी जड़ या मस्मिमें पड़नेवाली कोड़े । ये रक्तमें
उत्पन्न होती और घाव, नाबून तथा दांत खाते हैं ।

दन्तादन्ति (मं० स्त्री०) दन्तस्य दन्तस्य प्रहृत्य प्रहृत्य युद्धं
इव समाधानः पूर्वाची श्रेष्ठः । परस्पर दन्तमहार द्वारा
प्रहृत युद्ध; एक दूसरेकी दांतमें काटनेकी लड़ाई ।

दन्ताना - मध्यभारतके पश्चिम मासवा एनेसीके पचीन
एक सामान्य स्टारका राज्य । यहके ठाकुर या सदांर
सिन्धियासे १८०५ ई० समझाई पाते हैं ।

दन्तान्तर (मं० स्त्री०) दन्तस्य अन्तरः । दांतके मध्य,
दांतके बीच ।

मूँहके घाव मुँहमें जानेमें उच्छिष्ट नहीं होते और
दन्तमध्यस्थित अवादि भी मुँहकी उच्छिष्ट नहीं कर
सकते ।

दन्तायुध (मं० पु०) दन्तस्य आयुधं यस्य । गूहर,
गूपर ।

दन्ताबुँद (मं० पु० स्त्री०) दन्तस्य बुँदमिव । दन्त-
रोगमेद, मसूढ़में होनेवाला एक प्रकारका फोड़ा ।
इसका पर्याय—दन्तगूल, दन्तगोफ और द्विजवर्ण है ।

दन्तानिका (मं० स्त्री०) दन्तान् अस्मति पर्याश्रिति अस्-
त्युक्-टापि अतइत्वं । बला, लगाम ।

दन्ताची (मं० स्त्री०) दन्तान् अस्मति अस्-अस्-गोरादि
त्वात् डोप । बला, लगाम ।

दन्तावन्त (मं० पु०) अतिशायितो दन्तौ यस्य दन्तं वल्लभं
(दन्तिवात् संख्या । पृ० १२१) ततो दोषः । हस्तों,
हाथी ।

दन्तिका (मं० स्त्री०) दन्त-तन् गोरा-डोप-त्वापि कन्
ततो ऋस् । दन्तौ हव, जमानगोटा ।

दन्तिजा (मं० स्त्री०) दन्तिका प्रयो-साधुः । दन्तिका;
जमानगोटा ।

दन्तिदन्त (मं० पु०) दन्तिनां दन्तः इत्त् । इन्दि-
दन्त, हाथीके दांत ।

दन्तिन् (मं० पु०) प्रयस्यो दन्तौ स्तः अस्य दन्त-इति ।
हस्ती, हाथी ।

दन्तिनी (मं० स्त्री०) दन्तस्तदाकारोऽस्यस्याः मूले दन्त-
इति-डोप । दन्तोहच, जमानगोटा ।

दन्तिमूला (मं० स्त्री०) दन्ति गजदन्तयुक्तमिव मूल-
मस्याः कप-कापि अतइत्वं । दन्तोहच, जमानगोटा ।

दन्तो (मं० स्त्री०) दाम्यचनया दन्त-तन् ततो गोरादि-
त्वात् डोप । (इतिमृगिनेति । पृ० १८६) खनाम-

स्यात् हव, चंडोको जातिका एक पेड़ । (Croton
polyandrum or Baliospermum montanum)

इसकी जड़ सुपरके दांतसे होती है । दन्तों दो प्रकार-
की होती है—सजुदन्तो और हजदन्तो । जिसके दांत
गुलरके पत्तोंके जैसे होते हैं, वह सजुदन्तो और जिसके

ने जो पत्न होता है, जिनका यहाँ नाम नहीं है, यही पत्न प्राप्त होता है। (भाग १८८ पं०)

दमो (फा० प्रो०) १. एक प्रकारका जेबी या मकरी टैचा। (वि०) २. दम मगानेवाला। ३. गाँजा पीनेवाला, गंजोड़ो। ४. जो दमा रोगमें पसित हो।

दमोमारपि (मं० पु०) बुढ़का नामान्तर।

दमुनम् (मं० पु०) दमुनम्, 'दम्बो पामपि द्दुग्गने' इति पट्टि टीका; वा दम्-दमुन् (दमेरुविः। उ० ४१२४४) १. पत्ति। २. मुक्ताधार्य (वि०) ३. दम्पिता, दम्पन करनेवाला।

दमो (मं० पद्य) दम-वाहनकात्मे। ४८४, घर।

दमोड़ा (वि० पु०) मत्स्य, कीमत।

दमोदर (हि० पु०) दामोदर देखो

दमोह—१. मध्यप्रदेशके बीकानेरमिस्तरके ग्रामनाथीन जयलपुर विभागके अन्तर्गत एक जिला। यह पचास २३ १० से २४ २५ से ३० बीर देशा ० ०२ ५० पूर्व में अवस्थित है। भूपरिमाण २,८१६ वर्गमील है। इसके उत्तरमें मुन्देलखण्ड, पूर्वमें जयलपुर, दक्षिणमें नरसिंहपुर और पश्चिममें मागर जिला है। प्रधान नगर दमोह इमो ग्रामन विभागका मन्दर है। इस जिलेके चारों ओर पयतयेचो है, इनमें सीमा निर्धारण करनेमें बहुत मजुबूकी होती है। दक्षिणकी ओर बातुका-प्रान्तरमय जैचो पयतयेचो तथा चलेक गाँवा प्रगाँवों हैं जो नरसिंहपुर और जयलपुर जिलेमें इसकी प्रवृत्ति करती है। पूर्वकी ओर भीतला पहाड़ क्रमशः उत्थित हो कर पश्चिम में भाँड़के पर्वतमें मिल गया है। पश्चिममें विन्ध्याचल जैचो सीमाला प्रदेशके बहुत दूर तक फैली हुई है। अधिकांश भाग महाँ जैचो पर भी यह पर्वत जिलेमें परम रम्यता है और प्राकृतिक दृश्यके मोन्दर्यकी बढ़ावा है। बीच-बीचमें पथ जैचोद्वारे घने जङ्गलमें परिपूर्ण पर्वतकी उपलब्धता भूमि विराजमान है। इस उपलब्धता के कई पत्र मागर जिलेके अन्तर्गत है। इस तराई तीन ओर पयतयेचोमें स्थित दमोह जिलेकी सामभूमि उत्तरकी ओर कमभिष जैचो चली पा रहो है। अन्तमें नगर मोसाका भूभाग महमा पयतयेचो

की मुन्देलखण्डकी विन्धीप समतल भूमि देखनेमें पातो है। दक्षिण ओर पूर्व अन्तमें पयतयेचो भूमि छोड़ कर जिलेका अधिकांश समतल उर्वरा है, जेवन ओर-ओरमें एक दो हलभर पहाड़ देखि जाते हैं। जिलेका मध्य भाग ही सबसे अधिक उर्वरा है। जिलेकी समस्त नदियाँ दक्षिणसे उत्तरकी ओर प्रवाहित हैं, जिनमेंसे प्रधान मोनार और बेरमा नदियाँ विषास, कोषा, गुहा-इत्यादि उपनदियोंके साथ मिल कर बहुत पैगमें उत्तरी सोमा तक पहुँच गई है। इस स्थान पर मोनार नदी पूर्वकी ओर घूम कर बेरमाके साथ मिल गई है और पोछे उक्त संयुक्त नदियाँ दमोह जिलेसे बाहर निकल कर राहमें किसी दूसरी नदीके साथ मिल गई है, अन्तमें यमुनामें जा गिरी है।

पहले वर्षमान दमोह और मागर जिला महीवा नगरके चन्देल राजाओंके अधीन था और बाहिलरी नगरके प्रतिनिधिवे शासित होता था। कुछ प्राचीन मन्दिरके भग्नावशेषके सिवा चन्देल राजाओंकी ओर कोई कोर्त्ति अभी विद्यमान नहीं है। ११वीं शताब्दीके अन्तमें चन्देल राजाओंका पक्षपतन होने पर मुन्देलखण्डके खतोन्नावामो गोल्लाने इसका अधिकांश अधिकार कर लिया। पोछे प्रायः १५०० ई०में विस्वात मुन्देलराज बीरवर बहमिन्ददेवने गोल्लानेको परास्त कर दमोह पर अपना अधिकार जमाया। बाद यह जिला सुमलमानोंके हाथ आया। आज भी यहाँ सुमलमान शासनकर्त्ताओंके वंशधरण वास करते हैं; किन्तु इन लोगोंकी संख्या बहुत छोटी है और पयथा भी गौशनीय हो गई है। महाराष्ट्रके चम्पूराणके समय जहाँके सुमलमानोंका प्रताप घटने लगा, तबही पन्नावामो महाराज राजा छत्रग्रामने दमोह और मागरकी अपने राज्यमें मिला लिया। इन्हीं समयमें जहा दुर्ग बनाया गया है। १०३१ ई०में एक लालाटके नवापने दमोह पर राज्य मण किया। राजा छत्रग्रामने उन्हे मार भगानेके विधि पियवासे सहायता माँगी। इस सहायताके प्रतिदानमें छत्रग्रामने अपने राज्यकी तीन बराबर भागमें विभक्त कर दो भाग अपने दो महत्वांकी ओर एक भाग पियवाको दिया था। वर्षमान दमोह जिलेका कुछ भाग जहाँ

परंडया पंडोईने होते वृह हृहृदो है। पर्याय—
गोघ्रा म्येनघघ्रा, निकुम्भो, नागम्भोता, दंतिनो, सप-
चिन्ता, भद्रा, रक्षा, रचनी, पनुकृता, निगम्या, चक्र-
दंती, विगम्या, मधुपुष्प, परण्डफला, तरणो, परण्ड-
पविका, पनुदेयतो, विगोधनी, कुम्भी, सपुष्परक्षता,
निकुम्भदन्तिका, प्रत्यक्षपर्णी और उदुम्बरपर्णी। (अम,
रात्रिनि०) इसका गुण—कटु, उष्ण, मूल, पाम, त्वकटोय,
भर्ग, त्रय, धर्मरो और मध्यनागक है। (रात्रिचक्रव)

सपु दंतोके फल मधुर रस, मधुर, विपाक, शोतवीर्य,
मल और मूलनिःसारक तथा गरदोय, शोय और कफ-
नाशक है। दोनों दंतो सारक, कटु, रस, कटु, विपाक,
अग्निप्रदोपक, तोष्य, सण्यवीर्य तथा गुदाहृर, चर्मरो,
मूल, भर्ग, कण्डू, कुष्ठ, विदाह, पित्त, रक्तदोय, कफ,
शोय, उदर और क्षमिनागक है। (भास्करव) वर्त-
मान यूरोपीय चिकित्सकीके मतसे यह बहुत विरिचक
मानो गई है। इसके बीज अधिक मात्रामें देनेसे
विपका काम करते हैं। कहीं कहीं जयपामके बटने
दंतोके बीज व्यवहृत होते हैं। इसके रसमें लोहा मल
जाता है।

दन्तीफल (सं० क्लो०) १ पिप्पली। २ दंतोके रूबीज।
दन्तीफलमहाक्षति, (सं० पु०) विष्ठाहृष, पोष्टा।
दन्तीबीज (सं० क्लो०) जं पामबीज, जमाममोटिका बीज।
दन्तीहोतकी (सं० खो०) शुष्माधिकारकी बीजध-
भेद। इसकी प्रचल प्रचालो इस प्रकार है—श्रयपोहो-
वह हरोतकी २५, दंतोमूल २५ पल, जल ६४ शेर,
शेय ८ शेर। इस कायजलमें २५ पल पुराना गुड़
झाल कर उसे क्षान लेते हैं। बाद उसके साथ पूर्वोक्त
२५ हरोतकी दे कर पाक करते हैं। पामस पाकमें
निमोषका चूर्ण ४ पल, तिलतैल ४ पल, पोषण चूर्ण
४ तोला और मोठ चूर्ण ४ तोला झाल कर अच्छी तरह
हसते हैं और पोछे छतार लेते हैं। शीतल होने पर
उसमें मधु ४ पल, दारचोनी, तेजपत्रा, इलायची और
मातृशेर प्रत्येक २ तोला मिला देते हैं। मेवककी
माता २ तोला और एक हरोतकी है। इसमें शुष्म, शीघ्रा
और शोय पादि धनेक प्रकारके रोग जाने रहते हैं।

(मेवशेर शुष्माधि०)

दन्तुर (सं० ति०) उषता दंताः सत्यस्य दंत-उरथ
(दंत उरथ उरथ)। पा ५।३।१०६) १ उषमदंत, जिसके
दंत पागे निकले हैं, दंतुता, दंत,। सुपरकी मारनेमें
दूधरे जलमें दन्तुर हो कर जलप्रवृत्त करता है। (भास्कर)
सामुद्रिकके मतमें दंतुता मनुष्य कदाचित् हो मुख
होता है। (पु०) २ हन्ती, हाथो। ३ शूकर, मूषर।
दन्तुरक (सं० पु०) देगभेद. एक देग का पुयदिगामें
पवस्थित माना गया है। (हरद्व० १।११)

दन्तुरच्छद (सं० पु०) दन्तुर उषमानतच्छदी यय।
बीजपुर, बिजोरा नोबू।

दन्तेश्वर—मध्यप्रदेशके बम्हार शण्यके पन्नागत एक
पाम। पचा० १८० ५४० ४० और देगा० ८१ २३०
१०० पूंके मध्य दहानि और लहानि नादोंके मध्यम
स्थान पर तथा बिना दिनाज नामक पहाड़के पश्चिममें
पवस्थित है। यहां दन्तेश्वरी नामक कामाका प्रसिद्ध
मन्दिर है।

दन्तीच्छट (सं० क्लो०) दंतेश्वर चच्छट। दंत दारा
चच्छट, वह जो दांतसे जुड़ा किया गया हो।

दन्तीउषता (सं० खो०) म्ये जातीपुष्प उष, मनेध
जायकलशा पेड़।

दन्तीप्याटन (सं० क्लो०) दंतप्यः प्याटन। दांतका
छपाटन, दांतका छपाड़ना।

दन्तीहोद (सं० पु०) दंतव्य उहोदः। दंतोदगम
दांतका निकलना।

दन्तीनृपुत्तिक (सं० पु०) दंतनर उनुपुत्तः मोध्याप्ति
हति ठनु। (अनहनिठो)। पा ३।२।११५) वाच-
प्रसन्नविशेष एक प्रकारके मन्थ्यासी। ये सगुनी पादिमें
जुटा हुआ पच नहीं पाते, दांत दारा धान पादिमें
बाचन निकास कर खाते हैं। ये या तो फल माने हैं
या हिमके सहित पत्राजके दाने से मोल पन्निपत्र पात्र
नहीं पाते।

दन्तीध (सं० क्लो०) दंताय पोषी च निना समाहारः।
दंत और पोषका समाहार, दांत और पोष।

दन्तीधर (सं० पु०) दंतोद्धे भयः शरीराभयव्याप्त
यत्। दंत पोष दारा उचारपोय भय, यह भय जिसका
उचारय दांत और पोषि हो। दंता भय 'म' है।

मोन च'मीं पड़ा था। जो कुछ भी महराष्ट्रमें बहुत अनेक मारा राख चला गया।

तमीने यह जिन्ना मागरके महराष्ट्रमें चलाया था। उनके दोराकासे इसके अनेक स्थान परस्व में परिलत हो गये हैं। च'तमें १८१८ ई० में दमोद जिन्ना च'गरकी सौदा गया। तमीने इसको दिनों दिन जोड़ते चो रहे हैं।

यहाँको लोकसंख्या प्रायः २८५३२६ है। हिन्दुओं का राज्य और जलियोंको म'स्या प्रायः १/३ भाग है। श्याम्य हिन्दुओंमें कुर्मी को सबसे अधिक स्थल्य कहलाते हैं। ये लोग गिष्ठ और राजभक्त हैं। दूसरे दूसरे छवि जीवियोंमें मोधोगण प्रधान हैं। ये छविकार्योंमें कुर्मीयोंमें कम नहीं हैं, किन्तु ये लोग बहुत दुर्दोस्त और प्रतिहिंसाप्रिय होते हैं। इन लोगोंकी म'स्या सबसे अधिक है। ये एकजट संन्य होनेके उपयुक्त हैं। पबगिट जातियोंमें गोष्ठ, काको, चमार, धीमल और चण्डालाधिक हैं। सुसप्तमानोंको म'स्या बहुत थोड़ी है और जो कुछ है भी वे प्रायः सभी सुबो मन्दादायके हैं।

इन जिलेमें दमोद और बहा नामके दो गहर तथा १११६ घाम लगते हैं।

१८८१-८२ ई० में दमोद जिलेको कुल २०८८ वर्ग-मील जमीनमेंसे केवल ८१० वर्ग-मील, जमीन बागाद होती थी। जलियाजल दूधोंमें गेहूँ प्रधान है; श्याम्य चनाजोति धान और सरसों हो सबे ऊँचोय है। कपास भी कुछ कुछ उपजाई जाती है। प्रधान जल्य कुर्मी प्रायः २५० वर्ष पहले गढ़ा और वसुनाके मध्यदेशमें (चलाबेदीसे) यहाँ आ गये हैं। इन लोगोंमेंसे क्वा की बड़ा दुष्ट मसो रेत आ कर काम करते हैं और यही इन लोगोंकी लक्षितक मूल कारण है। कुर्मी लोग शास्त्रप्रिय और राजभक्त होते हैं। इनके बाद मोधोगण छविकार्योंमें विशेष पट्टे हैं। गोष्ठ लोग धार्म्यप्रदेशमें बहुत काम चोती करते हैं और जिनमें कुर्मी तथा मोधियोंके यहाँ मजदूरी कर लोचिका चलते हैं।

जिनका अधिकारि व्यवसायवाचिष्य प्रधानतः कुम्हलपुर और बन्दकपुरके दो म'सोमें हो दूधा करता है। कुम्हलपुरका म'सो चैतमासमें होशेके बादसे हो

बारम्ह होता और एक महीना तक रहता है। यहाँ नेमिनाथके मन्दिरके निकट यह म'सो लगता है। बहुतसे जैन एकलित हो कर नेमिनाथको उपासना करते और मामात्रिक विवाद विपक्षवादको मोमांसा करते हैं। इसमें बहुतोंको पयंटण्ट होता है जो मन्दिरके लक्षमें लगाया जाता है। बन्दकपुरका म'सो माघ और फाल्गुन मासमें समस्तपक्षमें और गिररात्रिके उपनयनमें लगता है। इस समय भिन्न भिन्न देगोंमें भक्तगण चपनो मनष्कामनानिर्दिष्टे क्रिये यागिपर महादेवके मन्दिरमें पाते और गढ़ा तथा नमंटाका जल लन पर चढ़ाते हैं। इस तरह पूजाके मन्दिरकी वार्षिक पाय प्रायः (१२०००) ६० होती है। दमोद-जिलामो महराष्ट्रोय पण्डित नागजी-बकालके पिताने १७८१ ई०में यह मन्दिर निर्मांय किया है। प्रवाद है, कि एक रात लक्षमें लगे दूधोंमें गढ़े दूध शिवलिंगका हान मान्म दूधा और लन स्थान पर मन्दिरके तैयार हो जागिसे महादेव पापने पाय जमीन फाड़ कर निकल पाये। तमीने यहाँ अनेक यात्रो चाने लगे हैं। चमो लक्ष पबमरपर प्रायः लागने अधिक यात्रो समागम होते हैं। बहुतसे व्यवसायो मोडागर चादि इस म'सोमें आ कर खरीद बिको करते हैं। तरह तरहके कपड़े, बरतन और विमोने चादि भी म'सोके प्रधान वाचिष्य द्रव्य है। पूर्व दिगामे विना-यतो और देगी लपड़े, तमाकू, पान, सुपारी, नारियल, तरह तरहके मसाले, चीनी, गुड़ चार धातुनिर्मित भाति भातिके बरतनोंको आमदनी होगी है। राजपूतानेमें लमक जाता है। इसीसेव दूधों जिलेमें बहुत काम लपत होती है; अधिकार्य द्रव्य यहाँमें दूसरे स्थानोंमें भेजे जाते हैं। रफ्तानोंमें गेहूँ, चना, चावल, धो, कपास, मोटा कपड़ा और वसुधम प्रधान है।

मागरमें जलसुपुरका राजपय, सागरमें भोकार्हे तह को सड़क, बहा होती हुई भागोद तहको महक तथा एक दूसरी सड़क दमोद चोती हुई गई है।

१८६१ ई०में दमोद मध्यप्रदेशके एक पदक जिलेके रूपमें परिवर्तन हुआ है। युरोपीय डिपटी कमिश्नरके एक सदसारी कमिश्नर और तहसीलदारकी मशायताने यहाँका मायनकाय चलाया जाता है।

दन्त्य (मं० त्रि०) दन्तिषु भवः दन्त यत् । (शरीरादय-
वत्तात्त्व । पा ५।३।५५) १ दन्तोद्भव, जिसका उच्चारण
दांतकी सहायतासे हो सवर्ग । २ दन्तमन्त्र्यो ।
३ दांतोंका हितकारो ।

दन्तवर्ण (मं० पु०) दन्तोद्भव वर्ण, दन्त द्वारा उच्चारित
वर्ण, त, थ, द, ध, न, स और ष है ।

दन्तग (मं० पु०) दन्त, दांत ।

दन्त्यशूक (मं० पु०) गर्हित दन्ति दन्त यद् शूकः । ज्व
ज्वरदशा रूढः । पा ३।२।१६६) १ सर्प, ज्ञाप । २ शल्यस ।

(त्रि०) ३ हिंस्र, हिंसा करनेवाला ।

दन्त्यध्वान (मं० त्रि०) दन्त्य, दन्तकता हुआ ।

दन्त्यमण (मं० त्रि०) दन्त-यद् मणश्च । कुटिल गति-
युक्त, टेढ़ी चालवाला ।

दन्त (हिं० पु०) तोपमादिके छूटनेका दन्त शब्द ।

दन्त (हिं० स्त्री०) छुड़की, डपट, डपेट ।

दन्तना (हिं० क्ति०) डाँटना, भिड़कना, छुड़कना ।

दन्त (हिं० पु०) दर्प, चक्कार, शिथी ।

दन्त (हिं० स्त्री०) दन्त देतो ।

दन्तना (हिं० क्ति०) दन्तना देखो ।

दन्ततर (हिं० पु०) दन्तर देखो ।

दन्तती (हिं० पु०) दन्तती देखो ।

दन्तरोखाना (हिं० पु०) दन्तरीखाना देखो ।

दन्तती (प्र० स्त्री०) गप्ता, कुट, बसली ।

दन्तन (प्र० पु०) १ किसी चीजकी जमीनमें गाड़नेकी
क्रिया । २ सुरदेकी जमीनमें गाड़नेकी क्रिया ।

दन्ताना (हिं० क्ति०) जमीनमें दधाना, गाड़ना ।

दन्तरा (हिं० पु०) नावके दोनों ओर लटकता हुआ
काठका टुकड़ा । दूसरी नावकी टक्करसे बचनेके लिये
यह लटकवाया जाता है, होम ।

दन्तराना (हिं० क्ति०) १ नावकी बापमें टक्कर लट्टनेसे
बचाना । २ पाल खड़ा करना । ३ रक्षा करना, बचाना ।

दफला—आसामके पन्तर्गत दरङ्ग और लक्ष्मीपुर जिलेकी
एक असभ्य जाति । ये लोग साधारणतः लक्ष्मीपुरके निक-
टस्थ पर्वतों पर बस करत हैं । १८७२ ई०में दरङ्गके
पन्तर्गत आसामतोला नामक स्थानके अधिवासी दफला-
गण जब पायत्वं दफलाओंसे आक्रान्त हुए थे, तब दृष्टि

गवर्भण्डने उन्हें दमन करनेके लिये पुलिस भेजी ।
पुलिसने दफलाके वासस्थान पर धावा मारा, किन्तु कोई
फल न निकला । बाद १८७४-७५ ई०में इन्दियारबंद
एक दूसरा सैन्यदल पड़ोसा ओर उभरे, इन्हीं दफ-
लाओंका उद्धार किया ।

दफलापुर—मत्ताराकी पोलिटिकल एजिण्टोके अधीन एक
जागीर । यह पचास १००'३० और देशा ०५'०'०'में
व्यवस्थित है । यह यथायथमें जाटराज्यका एक भाग है ।
दफलापुर ग्रामके पटेल इस जागीरके स्थापनकर्ता हैं ।
इसो ग्रामके नामानुसार उनका एक नाम दफला पड़ा
था । १८२० ई०में चम्पूरेशीने वर्तमान जाटपतिके पूर्व
पुर्वोक्त भाग एक सन्धि की । उसी सन्धिके अनुसार जाट-
पतिने अपने राज्यका स्थायी अधिकार पाया । १८७२
ई०में जाटपतिका कृष्णशोधके लिये मत्ताराके राजाने
इस जाट राज्यको अपने राज्यमें मिला लिया । बीर कृष्ण
शोध हो जाने पर १८७१ ई०में वह फिर उन्हें लौटा
दिया । इस जाट जागीरके आर्थिक विषयको व्यवस्था
कर देनेके लिये 'चम्पूरेशी'ने कई बार इसमें शासन-
कार्यमें हस्तक्षेप किया और बहुत तरहके अत्याचार हो
जानेसे १८७४ ई०में जाट राज्याधिकृतको ओरने उन्हें नि-
अपने हाथमें राज्यका भार ले लिया । आनेसे कुछ पड़ने
लक्ष्मीपुरके दफला नामको एक विधवा दफलापुरको
शासनकर्त्री थीं ।

दफलापुर राज्यमें १ घुघर, घुघर, ग्राम लगत हैं ।
इसमें चैत्रफल ८४ वर्ग मोल है । राजस्व प्रायः ८००,
१०० है । यहाँके प्रधान उत्पन्न द्रव्य धान, ज्वार, कई
और गेहूँ है । यहाँ तीन विशालय हैं ।

दफा (प्र० स्त्री०) १ बार, घेर । २ किसी कानूनी किताब-
का एक भाग जिसमें किसी एक चपराधके मन्त्र्यमें
व्यवस्था हो, धारा । (त्रि०) ३ शिरच्छत्त, हटाया हुआ,
टूट किया हुआ ।

दफादार (प्र० पु०) फौजके कर्मचारी जिसके अधिकार
कुछ सिपाहों हो ।

दफादारी (हिं० स्त्री०) १ दफादारका पद । २ दफा-
दारका काम ।

दफीना (प्र० पु०) गड़ा हुआ धन वा अजाना ।

दमोद जिनका जलपायु स्थाप्याकर है। नमं टा तोर-
यतीं भूभाग तथा लक्षरोग भारतको चपेला यहां थोका-
का मादुर्भास बहुत कम है। शीतकालमें प्रायः आमाश्व
हृष्टि होती है। हृष्टिके घाटने की पाने चादिका गिरना
उद्भूत हो जाता है। यार्थिक हृष्टियाम प्रायः ५५ इंच है।

जिनमें प्रग तथा सप्त रोगमें बहुत मनुष्योंको मृत्यु
होती है। जवने टोका देनेको प्रया चारभ दूर है।
नवमे सप्त रोगका मादुर्भास कुछ कम हो गया है।

२ उक्त दमोद जिनको एक तहमोल। यह भवा०
२३°१०' से २४°४' उ० और देशा० ७८° ३०' से ७८°
५०' पूर्व में अवस्थित है। भूपरिमाण १७८७ वर्ग मील
तथा लोकसंख्या १८३१६ है। इस तहमोलमें दमो नाम-
का एक गहर और १८२ ग्राम लगते हैं। सदर मिला
कर यहां ४ दोबानी और ७ कौजदारी बटावत है।
तहमोलको प्राय प्रायः २१६०००) रु० की है। इसमें
उत्तर-पश्चिममें खोनार नदी प्रवाहित है।

३ छपरोक्त दमोद जिनका एक प्रधान नगर और
मदर। यह भवा० २३°५०' उ० और देशा० ७८°
२०' पूर्व में अवस्थित है। कहते हैं, कि राजा नमकी की
दमयंतीके नाम पर शहरका नामकरण हुआ है। लोक-
संख्या प्रायः १३१५५ है। सागरमें जन्मपुरका ऊंचा
राजपथ और सागरमें जोकारि होता हुआ दलाबादका
राजपथ इसी नगर को कर गया है। नगरको दीवार
मालुकाप्रस्थरके ऊपर स्थापित है, इसीसे, यहाँका जल
पुष्करिणोंमें ठहरने नहीं पाता। कुएँ, चादि भी यहाँ
अधिक नहीं हैं। फुटेरा ताल नामकी जो एक बड़ी
पुष्करिणी है उसमें भी काफी जल नहीं है। शहरके पास
पाम पहाड़ रहनेसे यहाँ गर्मी बहुत पड़ती है। नगरमें
एक भी उन्नतयोग्य मन्दिर नहीं है। पक्षमें यहाँ
बहुतसे प्राचीन हिन्दू-देवीके मन्दिर हैं, किन्तु सुसज्ज-
मानोंके चर्चें तोड़ फोड़ कर दुर्ग चादि बना निवे
जिनका पक्षी केवल भग्नावशेष रह गया है।

दम्पती (मं० पु०) आया य पतिव दम्प आयादम्प
पति दमादेशः। मिमित आया और पति, श्रोतुवका
जोड़ा। यह मन्द निज दिव्यनाम है। दम्प समागमें
आयापती, दम्पती और जम्पती ये तीन पद होते हैं।

आयायाः जमभावी दम्पानय । आया मन्दं क्वाभं
विकल्पने जम् और दम् चाटोम होता है।

दम्प (मं० पु०) दम्पति इति दम्प-घञ् । १ कपट, हन,
घोषा । २ गाढ, घटजाती, शरारत ।

सागयतमें मिथा है, कि धर्म मन्त्राके पुत्र प और
उनको स्त्री मिथ्या हो। मिथ्याके गर्भमें माया नामक
एक कन्या और दम्प नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ।
माया और दम्प महीटर होने पर भी धर्ममिश्रभूतके
कारण परस्पर मियुन पर्यात् स्त्री पुरुष हुए थे। इसी
दम्प और मायामें लोभ और निम्ति (गठता) नामक
एक पुत्र और कन्या उत्पन्न हुईं। १ महारव दिशानें वा
प्रयोजन सिंह करनेके लिये झूठा चाडम्बर, पातण्ड ।
४ यह काम जो लोभ और पक्षमामें किया गया हो।
५ पूजा तथा मन्त्रान् धार्मिक लिये स्वधर्मि कल्प स्थापन ।
६ पमिमान, घमण्ड । ७ धर्मके प्रति चतुस्साह, पाप ।
दम्पक (मं० पु०) दम्प-कन्, न् । प्रतारक, पातण्डो,
टकीमनेहाज ।

जो मदा लुब्ध रहने पर्यात् जिनके हृदयमें महा धन
लोभकी इच्छा बनी रहती, जो धर्मके विरुद्ध प्रभृति
धारण करने और जनसमाजमें पवनी धार्मिकताका
परिचय देते, वे बेटाकमतिक है।

दम्पचर्या (मं० स्त्री०) गठता, बहना, ठगी ।

दम्पन (मं० पु०) दम्प भावे व्युट् । १ दम्प, पातण्ड ।
२ मोहन, लुभानेकी क्रिया ।

दम्पिन् (मं० लि०) दम्प-णिनि । १ दम्पकता, पातण्ड
रचनेवाला । २ चमिमानी, घमण्डो, झूठी ठमक-
वाला ।

दम्पिदय (मं० पु०) १ मावैभोम नामक एक राजा । ये
बहुत दान्धिक थे। नर नामक एक शत्रुने दम्पका
पमिमान चूर किया था। (मातृ दण्डो ८१ अ०) (लि०)
२ जो दम्प या ठगीसे किया गया हो।

दम्पिनि (मं० पु०) दम्प भावे पशुन्, दम्पिनि प्रेरण
पवति पर्याप्ति पश-इन् । वध, दम्पना ।

दम्प (मं० पु०) दम्पति इति दम्प-यन् । १ माय
मारवहनयोग्य यकतर, यह बहड़ा जिनको धर्मका
भीष टोनेकी हो गई हो। (लि०) २ दम्पती,

उत्पन्न करनेके योग्य । (पु०) । धनदान, यह वेद जो
वधिया करने योग्य हो ।

दय (म० पु०) दय बाहुल्यत्त्वः । दया, क्षमा,
कृपा ।

दया (म० स्त्री०) दय मिटावट, तटटाप । कृपा,
दुःखित जीवके प्रति अनुकम्पा, धर्मत्त्वः मनका वह
दुःखपूर्ण वेग जो दूसरेके कष्टको देख कर उत्पन्न होता
है और उस कष्टकी दूर करनेको चेष्टा करता है ।

क्रियायोग साधनमें लिया है, कि दूसरेके कष्टको
निवारणके लिये जो प्रयत्न अच्छा उत्पन्न होता है उसको
नाम दया है । सब जीवोंके प्रति मङ्गल और हित
कार्यके लिये जो सब कार्य किये जाते हैं, उन्हींका नाम
दया है । दया एक मात्र प्रधान कर्म है ।

देवो भागवतमें बहिराको परमधर्म बतलाया है
एवं सब जीवोंके प्रति दया करना उचित है । दया मोह-
का जो है । दयाके बिना हम बंमारमें सभी काम
निष्फल हैं ।

२ दयको एक कन्या जो धर्मको व्याहरी गई हो ।
है शान्तिरसका व्यभिचारिभाव ।

दयाकृष (म० पु०) दयाको कृषद्वय । नुहदेव ।
दयाक्षण—हिन्दीके एक कवि । इनके रचनाये हुए कई
एक ग्रन्थ मिलते हैं ।

दयादाम—हिन्दीके एक कवि । रत्नोंजि जनकप्रवास और
विनयमाला नामके ग्रन्थ रचाने हैं ।

दयादेव—हिन्दीके एक कवि । ये १०५४ ई०में विद्या-
मान थे । उन्होंने सुज्ञानचरितमें इनका नाम कहा है ।

दयादृष्टि (म० स्त्री०) जिसको प्रति बहुरा या अनुपह-
का भाव, रहस्य या निश्चयानाको नजर ।

दयानत (म० स्त्री०) सत्यनिष्ठा, ईमान ।

दयानतदार (म० पु०) सच्चा, ईमानदार ।

दयानतदारी (म० स्त्री०) ईमानदारी ।

दयानन्द सरस्वती—एक गुजराती वैदिकान्त और धर्म-
मत प्रचारक । इन्होंने अपना जीवनचरित हिन्दीके एक
संवादपत्रमें प्रकाशित कराया था ।

दयानन्द गुजरातके फलामत काठियावाड़ जिलेमें
मोरपोके राजाके शालागव्य जिले नगरमें उत्तर प्रदेशों

महाप्रवर्गमें उत्पन्न हुए थे । इन्होंने अपना पत्नी नाम
चोर वितामाताका नाम प्रकट नहीं किया । इनका
कारण आपने यह बतलाया है, कि 'मैंने धर्मानुरोधसे
अपने मातापिताका नाम प्रकट नहीं किया है । धर-
वासीको खबर लगने लगे थे मुझे घर छोड़ा से जायेंगे,
उनके साथ अन्यथा होती तो मुझे उनसे पभाव दूर करने
के लिये फिर अधिवाजन वा धर्मस्वयं करना पड़ेगा
और उसमें मैंने जिस कार्यके लिए अपना जीवन उत्सर्ग
किया है, उसमें विषम व्याघात पड़ेगा ।'

दयानन्दने पाँच वर्षको उत्तम वर्षमाना सोच भी
और ज्ञाति एवं वंशके नियमानुसार उसी उत्तम वर्ष
बहुतमें वैदिक मन्त्र कंठस्थ करा दिये गये । पाठ
वर्षको अवस्थामें आपका उपनयन मन्त्रारंभ हुआ । उप-
नयनके बाद ही आपने गायत्री, मन्त्रा, मन्त्रा और
इन्द्राध्यायमें से कर यजुर्वेद-संहिता तक पढ़ना शुरू
कर दिया ।

इनके पितामहों के थे, इसलिए बहुत थोड़ी उम्रमें ही
वे मिश्रमें शिवलिङ्ग बना कर उनकी पूजा करने लगे ।
श्रवोचित उपवास व्रतादिमें भी आप परमन्त्रा हो गये ।
परन्तु माता इन्होंने आपत्ति करती थी, क्योंकि आप सभी
वर्षों ही वे और उपवास पाटि करना बन्धोंके लिए
हानिप्रद है । इस विषयमें सभी कभी वितामातामें
परस्पर विवाद हो जाता था ।

इस समय दयानन्द सरस्वती व्याकरण साधने थे,
वैदिक मन्त्रादि कंठस्थ करने थे और प्रतिदिन पितार्के
साथ शिवपूजायें शिवमन्दिरमें जाया करते थे । चोटह
वर्षको अवस्थामें आपने सम्पूर्ण यजुर्वेदसंहिता,
मन्त्राया वेदोंके कुछ कुछ चयन तथा "मन्दरुपायना"
कंठ कर ली थी । उस देवके त्याग करनेमें विद्यागिरि
समाप्त समझते थे ।

इनके पिता कर यजुर्वेद करने और मन्त्रिष्टुटका भी काम
करते थे । दयानन्द कह गये हैं कि 'पिताने जब मुझे
पारिवर्गिकपूजाके लिए दीक्षित किया था, उस समय
मुझे बहुत कष्ट हुआ था ।' इसमें साक्ष्य होता है
कि दोषाके दिन ही आपका मत-परिवर्तन हुआ था ।
दोषाके दिन इन्हें दिन भर उपवास करना पड़ा था और

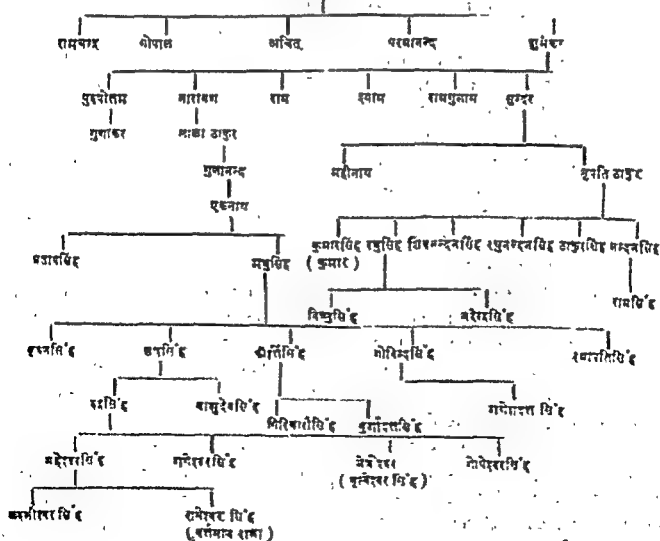
मोह, श्री श्री काठकी रक्तनी होती है।

इतिहास—महेश ठाकुरके पिताका नाम चाँद ठाकुर था। ये मध्य भारतके क्षत्रवाना कुमोहव ओरिय ब्राह्मण थे। ये मोहहवीं सताब्दीमें तिरहुत या कर भवमिह देवकीय राजाओंके यहाँ पुरोहितका काम करते थे। भविह देवका विवरण निम्नलिखित है।

रघुमन्दन राय नामक एक सेवित ब्राह्मण महेश ठाकुरके ब्राह्मण थे। दरभंगाके चम्पगत मोह परगनेके मध्यगत रामपुर ग्राममें रघुमन्दनका घर था। दिक्को मण्डाट, चकबरकी सब धर्तीकी कयायासाँ सुननेका बड़ा भोक्त था। इसी सुवसे रघुमन्दन एक दिन चकबरके दरबारमें पहुँचे। उन्होंने वहाँ शास्त्रीय तकमें जय प्राप्त की। चकबरने मनुष्य हो कर ८६५ फसलोको २४वीं चैतकी (१५६८ ई०में) उन्हें पण्डितका सिताव और

तिरहुतके चम्पगत जातो परगनेको जमींदारी प्रदान की। रघुमन्दन पण्डित दिग्विजयमें बहगत हुए थे, चतः सर्वाने उस जमींदारी चयने पाम रखनेकी इच्छा न की। उन्होंने देग या कर महेश ठाकुरको गुवटचिकामें जमींदारी दे दी। महेशने प्रथमतः दान यष्टन किया, किन्तु पछि वाप्य हो कर ग्रिष्टको शामना पुरो को। पर वे विषयके लोभी न थे, चतः बहन छठ करके सर्वाने पुनः रघुमन्दनकी जमींदारी छोटा दो। इसके बाद ही १३५८ ई०में महेशकी मृत्यु हुई। रघुमन्दन दिग्विजयमें निकले थे, इस कारण वे गुवटका धनका भोग करनेके लिये चितकुस राजी न हुए। इस पर महेशके दूतने मन्त्रके योगान ठाकुर पिताके दानग्रन्थके वनसे जातो परगनेका बन्दोबस्त करानेके लिए दिक्को गये। दिक्को दरबारके विचारने महेश

महेश ठाकुर।



रातको पिताने माघ मन्दिरमें जा कर जागरण करना पड़ा था। चाधी रातको थापने देखा, कि मन्दिरके पूजक, मध्य पौर कुछ सगमक मन्दिरके बाहर जा कर सो गये, उनके माघ चापके पिता भी थे। दयानन्द मन्दिराकुलितचित्तमे - शिवके ईश्वरत्वके विषयमें विचार करने लगे। मन्दिर बंद गया। थापने उस समय पिताको जगाया पौर उसमे प्रथम क्रिया। पिताने पूछा, "यह बात क्यां पूछ रहे हो?" दयानन्दने कहा, "यह देवमूर्ति को परमेश्वर है, ऐसी मुझे धारणा नहीं होती; उनके ऊपरसे चढ़े पाद चले जाते हैं, किन्तु सर्वशक्तिमान् को कर भी वे कुछ प्रतीकार नहीं करते।" इस पर पिताने इन्हीं सम्प्रदायिकी कीर्तियों को पौर कहा—"उस प्रतिमामें, गुरु-स्व प्राणपादिके द्वारा प्रतिष्ठित होनेके कारण देखल जा गया है। वर्तमान कलियुगमें किसीको भी शिवके मातात् दर्शन नहीं होता, भक्तगण इस प्रतिमामें ही भक्तिबलसे उनकी सत्ताको कल्पना करते हैं।"

इन बातोंसे दयानन्दको खिन्न न हुई। आत्मा की शुभा लगनेके कारण चाप पिताने अनुमति ले कर घर चले पाये। पिताने उपवास मङ्गल करकेके लिए विनोय भाषवे सत्कर्ण कर दिया; किन्तु घर पाने पर माताने उन्हें घिना दिया। दूसरे दिन पिताने चापको उपवास-मङ्गले पापका स्वरूप भ्रमभाया, पर इनको देवता-भक्ति पक्षसे ही दूर हो चुकी था, इसलिए उस बातोंको ये धारणामें न ला सके। इनके बाद चापने अपना मन चपकट रक्ता पौर विद्योवाञ्छनमें लग गये। इस समय चाप वैदिक कर्म-शास्त्र, निष्पट्ट, निरुक्त पौर पूर्व-सोमांसा पढ़ रहे थे।

ऊँच चाप मोनह वर्षके हुए, तब चापके छोटे भाईका जन्म हुआ। चापके चां भी दो छोटी बहनें पौर एक छोटा भाई था। एक दिन रातके समय चोदह वर्षको उम्रमें चापको एक बहन मर गई। दयानन्दके जीवनमें यह पक्षणा शोक था। इस शोकमें चाप मृत्यु पौर मुक्तिको विन्ता करने लगे। इस विन्तामें चापने प्रण कर लिया कि "कुद भोजी, सर्वशक्तिमान् कर में मुक्ति माग दूँगा।" फिर चापने

उपवास पापघिना पादिक मर छोड़ दिये, पर किसीने पचने मनको बात न कहा। इनके बाद ही चापके बुद्धतातका शरीराना हो गया। ये दयानन्दको बहुत ही प्यार करते थे। इनके विनोयमे दयानन्द पचल सुख हुए पौर जीवनको गम्हरताको भक्तीभाति समझ कर पचने प्रतिष्ठा-पानलसे निप तत्पर हो गये।

इस समय इनके पिता इनके विवाहको कीर्तित करने लगे। परन्तु विवह करनेको इच्छा इनको दिन-कुन न थी। बहुत परतो विनतो करने इच्छामें एक वर्षके लिए विवाह स्थगित करा दिया पौर जामोमें जा कर मंरजम शास्त्र पढ़नेके लिए पिताने अनुमति मांगी। परन्तु पिताने अनुमति न दी। गायद भाग जाय, इस डरसे इनके पिताने पचने पामगे तोन कोन हो दूरी पर एक याजकके पास इच्छे पढ़ने भिन्न दिया। कुछ दिन बाद फिर विवाहको तैयारियां होने लगीं। दयानन्द भी घर पाये। उस समय चापको उमर २१ वर्षकी थी। पच अनुरोध करनेसे कोई न मानेगा, यह सोच कर चाप दिए कर घरसे निकल पड़े। इनके पिताने, उम्रा समय कई पुङ्ग-नवार भिन्न, पर कुछ फल न हुआ—दयानन्दका पता न लगा।

दयानन्द पुङ्ग-नवारोंको जिगाहोंने किं कर वैदिक चलने लगे। राक्षोंमें मिलुक्त ब्राह्मणोंमें उगखा सर्वश्रद्धा डोन निधा पौर कहा—"मंभारामें जितना भी दास दोगे, परन्तु कमें उतना हो महल होगा।" कुछ समय बाद दयानन्द शैल नामक स्थानमें उपस्थित हुए। यहाँ नाम भगत नामके एक विद्वान् रहते थे, जिनकी बातें इन्हें पक्षे ही मान्य न थी। उनके सिवा शैलमें एक ब्रह्म-चारो भी रहते थे। दयानन्द उनके दलमें प्रविष्ट हो मंभ्यासी हो गये। दोनारके समय दयानन्दका नाम "गुरुचैतन्य" रक्ता गया। मंभ्यासीके विगमें गुरुचैतन्य नामी पदमदावादके निकटवर्ती ब्रह्मदावा नामक छोटेसे राक्षसे पढ़े। दुर्भाग्यवश वहाँ दयानन्दके परिवारवर्गके साथ एक मंभ्यासीको भेंट हो गई। उन लोगोंने दयानन्दके पिताको लखर हो कि "गुरुचैतन्य नामी मिहपुरके भेतामें जा रहे हैं। गुरुचैतन्यनामी पौर मंभ्यान्व ब्राह्मण जिम समय दरदो नामीके साथ

ठाकुरका मन्त्र कायम किया गया। जमींदारी बन्दोबस्त प्राप्त कर भीतरी समय १९८१ ई० की कामीमें गोगाणकी मृत्यु हुई। इस समय टोहरमल अहमदके दरबारमें रहने में। गोगाणके समयमें जो दिवसोंके दरभङ्गाका एक मोहरदार निगुल हुआ।

दरभङ्गा की प्रभाका प्रथम भूमिपति जहाँ परमनेका परिमाण २१०१४१ बीघा है। इस परमनेके भवारा नाममें महारा ठाकुरके संघपर रहने में। अहमदके समयमें महाराज सुवादा राजागुरुगोको बनाई है एक सन्निध भवारा नाममें वर्तमान है।

दरभङ्गा जिनका प्रायः ४ स्थान चले। दरभङ्गा राजकी अधिकारमें था गया है।

महारा ठाकुरने जमींदारी अधिकारों काय काय 'मादुर' कर प्रवृत्त करनेका अधिकार पाया था। किन्तु १८८८ ई० में कलकत्ता महाराजके निवेदित हुए विवरणमें जाना जाता है, कि १७२० ई० तक महाराजके संघपर इस प्रकारका कर प्रवृत्त करनेके अधिकारी न थे, पर १८२८ ई० में महाराजके सुवादा की समयमें उन्हें यह कर प्रवृत्त करनेकी समता दी गई थी।

१९१८ ई० में महारा ठाकुर पांच लड़के छोड़ कर परमनेकी निधारे। बड़े लड़के रामचन्द्र ठाकुरकी पवित्रावत पंचवर्षा में मृत्यु हुई। दूसरे लड़के गोगाण ठाकुर कुछ खान तक जमींदारी भोग करके कामीकी कामी हुए और १९८१ ई० में कामीकी कामी प्राप्त हुए। तीसरे पवित्र ठाकुर (पवित्र वा पण्डित) चतुर्थक पंचवर्षा में मरे। चौथे परमामन्द ठाकुर मध्यम भाई के बाद जमींदारी भोग करने लगे, किन्तु उनका भी चतुर्थक पंचवर्षा में देहांत हुआ। पीछे पाँचवें रामचन्द्र ठाकुरने जमींदारीका अधिकार प्राप्त किया। १९०० ई० में इनकी मृत्यु हुई। दरभङ्गाके वर्तमान राजगण इनकी रामचन्द्रके संश्लेषण हैं।

रामचन्द्रकी मृत्यु के बाद पुत्रपोषणमें विप्रमण्डित पारं। १९४२ ई० में उनके मरने पर उनके सबसे छोटे भाई सुन्दर ठाकुर कारो सम्पत्तिके अधिकारी हुए। २० वर्ष राज्य करने के बाद १९६२ ई० में उनके मरण हुआ। पीछे इनके बड़े लड़के में राज्याधिकार

पाया। १९८१ ई० में महीनाचरी चतुर्थक पंचवर्षा में मरने पर उनके छोटे भाई सुपति अक्षर राजा बन बैठे। १९०० ई० में सुपति मरने पर उनके दूसरे लड़के सुपति राज्याधिकारी हुए सुवादा महाराज जहाँ के चतुर्थक में देह रक्षित रने 'महा' की उपाधि पाई और कारिक काय कर्ण कर दे कर सरकार तिरहुतकी मुक्त रने जमा प्रवृत्त की। महा महाराजके दोन राजा धरपोषणकी फिर भी ५० हजार रुपये अक्षर राजा के कर कर्ण निविदादमें जमींदारी भोग करनेकी कल्पना कर ली। खुले नूतन जमींदारी और राजाकी उपाधि पा कर अपने वर्तमान 'ठाकुर' की उपाधि छोड़ दो और राजा बोधक 'मि' की उपाधि प्रवृत्त की। कुछ दिनों बाद राजा सुपति के पितामह सुन्दर ठाकुरके दूसरे भाई माराण ठाकुरके वजह एकमात्र ठाकुर इनके काय करने लगे। उन्होंने मया महाराज जहाँ के सुपना दी कि, राजा सुपति काय कर्ण कर दे कर जिन सरकार तिरहुतका भोग कर रहे हैं, उसकी चर्मी मान गुना हडि की गई है। मधुसूत १९८१ ई० में सरकार तिरहुतमें ७८८००० रु० राजन समुत्त होता था। महा महाराज का कर सवा समय तिरहुतकी पंच दिने और महाराज जहाँ के राजा सुपति सम्पत्ति प्रवृत्त कर ली गया उनके परि वारमर्ग की कट कर पटना भेज दिया। राजा सुपति के कर किया तरफ भागे। महा महाराज के पंचवर्षा के निवेदादमें निगुल जिये। कुछ दिनों के बाद के जहाँ महा महाराजके समीप पहुँचे और उनका प्रमाद काय कर पुनः राजाज्यमें प्रतिष्ठित हुए। किन्तु इस बार उनके मरण समता प्राप्तो रने। वे सरकार तिरहुतके लक्ष्मीनारायण मान हो कर रहे और 'मादुर' कर प्रवृत्त करने का अधिकार उन्हें इस मत पर मिला कि वे सरकार तिरहुतके निवारादि कार्य करेंगे, प्रभाका कट दूर रने में और देगकी चर्मीकी और निविदा भोग रने में। राजा सुपति जीवनके अन्तिम क्षणों में सब कार्य प्रतिष्ठित किये थे। १९४१ ई० में उनका देहांत हुआ। उनके बड़े लड़के सुपति के निविदादमें निविदा अधिकार पाया, किन्तु चतुर्थक पंचवर्षा में १९४० ई० की उनकी मृत्यु हुई। बाद उनके भाई मण्डल 'म' पंचवर्षा के अधिकारी

भोमकण्ठके मन्दिरमें ठहरें हुए थे, उस समय दयानन्दके पिता पाकर उनके सामने उपस्थित हुए। पिताने इन्हें पुनः घर मोटनेके लिए बहुत प्रयत्न किया। पर उन्होंने एक मंमानी। पात्रिर सब सब तरहसे हार गये, तब पिताने इन्हें कैदियोंको तरह सिपाहियोंके साथ सुपुर्द दिया। कुछ भी हो, दयानन्द कोयलसे फिर भाग कर पद्मदावाट पा गये। वहाँसे भाग कर कुछ दिन पाप बड़ीदा राज्यमें रहे। बड़ीदाके चेतनमठमें कुछ ब्रह्मचारियों और ब्रह्मानन्दस्वामीसे पापकी जाम-पहचान हो गई। इसी अवसर पापने पहने पहन वेदान्त पढ़ना शुरू किया था। ब्रह्मानन्दस्वामीके उपदेशसे ही पापकी शोच और ब्रह्मके एकत्वका भलोभाँती ज्ञान हुआ था।

इसके बाद पाप काशी आये। यहाँ प्रधान प्रधान पण्डितोंके साथ पापने परिचय किया। सचिदानन्द परमहंसने योग-शिवाके लिए इन्हें नर्मदातोखती चानोड़-कल्याणो जानेकी कहा। दयानन्द वहाँ पहुँच गए और दोषिन्तोंके परिचय होने पर परमानन्द परमहंसके गिर्य बन गये। इन्होंने पास रह कर पापने वेदान्तसार, वेदान्तपरिभाषा आदिका अध्ययन किया था। उसके बाद पाप योग-शिवाके लिए दोषित हुए। योहो उमार यो, हमसिए पहने दोषाके विषयमें कुछ माधा दो, किन्तु पोछे हमका पापह देकर परमानन्द परमहंसने दोषा दे कर दण्डवत् कर्मा दिया। इस दोषाके समय पापका नाम हो गया—दयानन्द सरस्वती। कुछ दिन बाद दयानन्द चानोड़में व्यासाश्रममें पहुँचे। योगानन्द नामके एक योगिराजने इन्हें योग-शिवा दी। कुछ समय योगाभ्यास करनेके बाद, योगकी उच्चतम शिवा चर्चन करनेके लिए पाप पद्मदावाटके निकट-वर्ती निमो स्थानमें गये। वहाँके दो योगियों पापकी योगविद्याके श्रेष्ठ गुण विषयको शिवा दी। उसके बाद दयानन्द, योगकी मूलतः प्रचाली मोषनेके लिए राज-पूतानाके चतुर्गल पादू पर्वत पहुँचे।

१८५१ ई०में दयानन्द हरिद्वारके महा-मैनामें उप-स्थित हुए। कुछ दिन वहाँ ठहर कर पाप लाहोरी नामके स्थानमें गये। वहाँ माँहाहरी ब्राह्मणों और तन्त्रशास्त्रकी

देखकर पाप बहुत विरक्त हुए। पनसार वाप योगार का कर देदारवाटके एक मन्दिरमें रहने लगे। यहाँ गङ्गागिरि नामक एक दार्शनिक माधुके नाम पापने दयानंशास्त्रका अध्ययन किया। दयानन्द-विषय पर पाप माधवाय भो करते थे। दो माम बाद संन्यासियों साथ पाप दृश्ययाग पहुँचे। वहाँसे भगवत्प्राथम्य गये। उनके बाद उनके उत्तरवर्ती शिवपुर नामक स्थानमें शीत काल व्यतीत कर देदारवाट और शुभकामोमें मोट पाये। चानोड़में रहते समय सद्गोपमें पाप गौत्रा दोनेमें अध्यस्त हो गये थे। एक दिन रातकी मग्यामें बृहत्कारा पानेके लिये दयानन्दने एक शिवमन्दिरमें जा कर प्रायश्च लिया। बरामदेमें उपमूर्ति और प्रकाण्ड मन्दोमूर्ति यो। उपमूर्तिको उदर रक्त था। सहसा दयानन्दको दृष्टि उपमूर्तिको उदरमें छिपे हुए एक मनुष्य पर पड़ी। पाप मूर्तिको उदरका द्वार खोलना ही चाहते थे, कि रतनेमें बड़ व्यक्त पुरातोंके निकल कर भाग गया। दया-नन्द प्रसन्नमूर्तिमें प्रविष्ट हुए और रात भर चानन्दसे सोये। सवेरे एक हवा रमणी उप मूर्तिको पूजा करती थी। पूजाके समय दयानन्द उपमूर्तिको उदरमें ही थे। कुछ देर बाद वहाँसे दधि और गुरु लाकर उपको (भोग) दिया और उसके भीतर दयानन्दकी देव, उन्हें नरकपो उप समझ प्रणाम किया एवं पाहारे उनके सामने रख दिया। दयानन्द सुधाने से सब खा गये। दधिके पानेमें उनका गया हट गया। यहाँसे फिर वे नर्मदाके उत्पत्तिस्थानमें चले गये।

दयानन्द श्रेष्ठ दयामें दुष्ट और पक्षके विषा और कुछ पाहारे न करते थे, पक्षमें पापने पक्ष भी दाढ़ दिया था।

संन्यासियोंको तरह पापका शरीर ह्रम वा घोष न था। पापका शरीर सुदीर्घ, सुन्दर और निमल्लभ सबल था। एक महाराष्ट्री पण्डितने पापके विषयमें कहा है—दयानन्द जीव वदलवानीको ताकत रखने के और पाण्डित्य भी उनमें पाँव बिहानीका मोब्रुट था।

दयानन्द मूर्तिपूजाके विरोधी थे। पढ़ने मन प्रचार के लिये पाप सर्वदा अध्ययन किया करते थे। जहाँ जाते थे, वहाँ "चार्य-महाज" नामकी समितिको स्थापना

दिए। १७५४ ई०में मन्दाक पत्रिपदी खाने छन्दे कई विषयोंमें 'दशरत्' वस्तुतः कारनेका अधिकार दिया गया।

नरेंद्रसिंह यह अधिकार पा कर प्रति भयम मौजमें 'निरिहदिह' पर्याप्त ११० रु०, प्रत्येक कबुनियतके प्रत्येक रूपयेमें एक पाना, प्रत्येक कबुनियतके रूपयेमें सैकड़ें २) रु० छुट् पोर दपनी जमींदारोंमें 'मैकड १०) रु० मलिकाना लिया करते थे। १७६० ई०को राजा नरेंद्रका चपुसकावस्थामें देशमात्र हुआ। उन्हींमें पूर्वज एत- नाथ ठाकुरके बड़े लड़के प्रतापको गोद लिया था। इस समय तक मधुपको निकट भोरा नामक स्थानमें 'राजप्रासाद' था। आज भी वहाँ मछोके दुर्गका भग्नावशेष विद्यमान है। इस दुर्गको राजा रघुने बनवाया था। प्रतापने राज्यप्राप्त कर १७६२ ई०को दरभङ्गमें एक प्रासाद निर्माप किया। आज भी वह प्रासाद वर्त्तमान है और दरभङ्गके राज- परिवार उसमें वास करते हैं। जवाब कामिस बनो गो- में राजा प्रतापसिंहको 'मादुह कर' वसूल करनेका अधिकार प्रदान किया, किन्तु 'चंगरेज गवर्नर'ने १७६२ ई०में 'मनकर' नाम 'दशरत्' वसूल करने और मलि- काना वसूल करनेका अधिकार सोटा लिया और राजा नरेंद्रको राजाको जावन-पत्रके लिये १०) पाम; राजा प्रतापके भाई मधुसिंहके लिये २ पाम और राजाको मासिक एक हजार रुपये दिये। १७७६ ई०में राजा प्रतापको चपुसकावस्थामें मृत्यु हुई। बाद उनके भाई मधुसिंह राजा हुए। ६ वर्ष के बाद उनके साथ सरकार तिरहुतका अधिकार बन्दोबस्त कर दिया गया। मधु- सिंह इतनी बड़ी जमींदारी पर शासन करनेमें बिलकुल समर्थ न थे। राजा मधुसिंहने राज्यप्राप्त कर चंगरेज से दशरत् वसूल करनेका अधिकार पुनः पाने का चाये- टन किया। उन्होंने कहा, कि उनके यहाँ प्राप्त रुपये बाकी रह लगेके कारण यह अधिकार भी लिया गया है। एमोस काउन्सिलने इनका अनुमत्यान करनेको इच्छा प्रकट करने पर राजा मधु मरद बाटि दिवानोंमें राखे गए। उन्होंने जवाब दिया कि कामगोका विभाव देखनेसे ही सब बातें मान्य हो जायेंगी। १७८३ सिवा एतानि जिस वर्षमें दशरत् वसूल करनेकी

समता मे ली गई थी उस वर्षमें से लेकर आज तक उनके जितने रुपये मुक्तमान हुए थे उसको एक ताजिका दो या ३ ली कुछ हो, चंगरेज गवर्नर'ने छन्दे ८ वर्षको बाकी दशरत्में पटनके कोषामारने १८१०००) रु० दिये और १८०१ ई०में गवर्नर मि० ब्यान्सि टार्टनने दशरत् पदा करनेकी समताके बदले मासिक एक हजार रुपये देनेकी व्यवस्था कर दी, किन्तु उसी वर्षके नमम्बर महीनेमें ऐसा सुना गया है, कि राजा मधुसिंह दशरत्- के बन्दोबस्तमें निछे हुए शर्तोंसे कोई शर्त प्रतिपालन नहीं करते हैं (पचात् देयकी भनाई नहीं करते, देयका कट दूर नहीं करते तथा देयकी उन्नतिकी पोर कुछ भी ध्यान नहीं देते), वरं प्रजासे लूनां जिमा पोर जमोन भी लोग लो है। इसके फलसा ये बन्दोबस्तो सर- कार तिरहुतमें भी सुचारु रूपसे शासन पालन नहीं कर सकते हैं। उनको ये सब गिफायतें सुन कर वे कोद कर लिए गये, किन्तु दूसरे वर्ष पुनः उन्होंने माय सरकार तिरहुतका बन्दोबस्त कर दिया गया। इस समय सरकार तिरहुतका कर २८५१८१) रु० निरूपित हुआ। राजा कुतकारा पा कर अपने राज्यको पाये, किन्तु राज- का किन्तो रूपवा बाकी पढ़ने लगा। कमलरके रिपोर्ट करने पर १८०८ ई०में यह शिर हुआ कि राजा के साथ बन्दोबस्त नहीं रहेगा। इस समय दमयाना बन्दोबस्तका आयोजन हो रहा था। राजा मधुसिंहने उन बन्दोबस्तमें कर्तव्य साधनेमें पराजित हो कर निवे- दन किया, कि जब तक 'चंगरेजराज' लड़े सरकार तिर- हुतका मुक्तारों बन्दोबस्त, मलिकाना पोर दशरत् वसूल करनेका अधिकार न देगे, तब तक मैं कुछ भी नहीं कहूँगे। इस पर गवर्नर जेम्स बर्नेट १८०८ ई०में राजाको जमींदारी फतेह-उद्दौन पोर बरकत-उल्ला खां के साथ बन्दोबस्त कर दो। फलमें बोर्डके विचारसे राजा मधुसिंहने पुनः मलिकाना पोर दशरत् पदा करनेका अधिकार पाया। किन्तु वे जमींदारी सोटानेके लिए मर- दान्य करने लगे। १८०९ ई०के नमम्बर महीनेमें फतेह नरौनमें अपना हथिया कोट दिया पोर कहा, कि राजा मधुसिंहके बहकानेसे कोई प्रजा मामगुजारी नहीं देती है, पतः कमलरने माय हो कर फतेह-उद्दौनका परिसर

पौर ममतामययो भाष्यमहित कृत्वेद प्रकाशित करते थे। भाष्य पापने स्वयं रचा है। इस भाष्यमें पापने मूर्तिपूजा प्रतिपादन का हकी भाष्य की चमत्कृत व्याख्या कर परम्परवादका प्रतिपादन किया है। दयानन्दके भाष्यका मूल्य पादर नहीं होता।

दयानन्द कलकत्ते भी पाये थे। सभी उनके निवे पापदास्त्रिण हुए थे। बङ्गालके प्रसिद्ध व्यक्ति केमचन्द मेनन इन्हें अपने मजान पर लहाराया था। केमचन्दके मजान पर एक प्रकाश सभामें पापका व्याख्यान हुआ था। पापकी भाषा मरल और भतेज हो। संस्कृतमें जो पापकी बातचीत होती थी। वह ज्ञाता हिन्दुओं में भी फैल गई थी। बम्बईमें परब-मालके किनारे पापका एक पाठ्यम था। पाप पुराणोंके उपास्याओं पर विनकुल विग्राम न करते थे। कोई यदि "कृष्ण" कह कर उनको व्याख्या करता था, तो पाप बहुत क्रोधसे बोल उठते थे,—"सब झूठा बतते हैं।" बम्बईमें रहते समय पापने गेदधा वसन छोड़ दिया थे और लातगाटकी धोती पहना करने थे।

पापने लाहौरमें एक वक्तृता दी थी, जिसके श्रवणमें कहा था—मायायाम द्वारा योगमार्ग प्रवक्तृत्वनेके सिवा मध्यमास्तिका अन्य कोई उपाय नहीं है। जो योगके भातर प्रयोग नहीं कर सके हैं, वे धर्ममन्दिरके यादर पुन रहे हैं।

दयानन्द पञ्जौरमें, १० फरवरी गतिकारकी शामके १ बजे, उनमंड यज्ञकी उमरमें परमोक सिधारे थे। बहुतसे लोग पापके शवके पीछे पीछे गये थे। दो मन चन्दन, पाठ सन भासाय काठ और टाई गिर कपूर पापकी चितामें दिया गया था।

इस समय, दयानन्दद्वारा प्रवर्तित "पाप मजान" विधवाविवाह आदि कार्याके प्रचारमें पचमर हो रहा है। दयानन्दने "मजान प्रकाश" नामकी एक पुस्तक लिखी है, जिसमें साम्प्रदायिक द्वेष मरा हुआ है। यह पुस्तक मजानकी पुष्टिके लिए लिखा गया है।

दयानाथद्वारे—हिन्दीके एक कवि। सन् १८३२ ई०में इन्होंने जन्म ग्रहण किया था। इनका बनाया हुआ प्रेम-सम्बन्धों एक पुस्तक मिलता है जिसका नाम है "पान्थ रस"।

दयानिधान (मं० पु०) दयाका पुत्र, रहन दयालु पुत्र।

दयानिधि (मं० पु०) १ वह मनुष्य जिसने विसर्ग बहुत दया दी, बहुत मोहरवान् पादमा। २ ईश्वरका एक नाम।

दयापात्र (मं० पु०) वह जिस पर दया करना उचित हो। दयानिधि—बैद्यनाथके रहनेवाले एक हिन्दी कवि। ये १०५४ ई०में जन्मे थे। राजा चणनसिंहजी पालासे इन्होंने गान्धिवर नामक एक पुस्तक लिखा था।

दयानान—१ दयानिधि नामक शास्त्राचार्यके सनातनमार्ग एक संस्कृत व्याकरणके रचयिता। २ यह देवदेव राजाका नाम। (मं० प्रवर्ग २०५४०)

दयामय (मं० लि०) दया-मय। १ पत्न्या दशासु, दयासे पूर्ण। (पु०) २ ईश्वरका एक नाम।

दयार (हिं० पु०) १ देवदारका पेड़। (च० पु०) २ माता, प्रदेव।

दयाराम—१ एक विख्यात म्मास पण्डित। इन्होंने दाम प्रदोष, पदवन्दिका, स्वस्तिमंयत्र नामक संस्कृत भाषामें कई धर्मशास्त्रीय पुस्तकें प्रकाश किये हैं। २ रामचरित-मिताभादाकारके रचयिता। ३ देवकीनन्दनके पुत्र। इन्होंने "रामनाम" नामक एक संस्कृत वैद्यक ग्रन्थ रचना की है। ४ कामोदयानी भास्वरामके पुत्र। इन्होंने लिखपुराणकोटीका प्रचलन को है। ५ दिग्भोके रहनेवाले एक कवि। ये जातिके भाष्यन थे। इनके पिताका नाम लहराम था। इन्होंने २२० पृष्ठका "दयानिधान" नामक एक पुस्तक बनाया है। ये १८०८ ई०में विद्यमान थे। ६ हिन्दीके एक कवि। ये जातिके वैद्य थे। इन्होंने मोतावरित उपन्यास और मनुस्मृतिभाष्य नामके दो पुस्तकें बनाये हैं।

दयाराम विवाहो—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म सन् १८०२ ई०में हुआ था। इनकी कविता प्रधानतः गाना-रसकी ओर झुकी हुई होती थी। इनका "पमोपाय" भी प्रसिद्ध है।

दयारामवाचस्पति—सुर्यबोधके एक टीकाकार।

दयाद (मं० लि०) दयासे भोग हुआ, दयालु।

दयान (मं० पु०) मोटीमोटी बोलनेवाली एक चिड़िया।

पंजाब राजा मनुके काय बंदीवन्त कर दिया। बरकत
उमा बां भी इस समय वरको वन परये गिर कर करान
कायने मानमें छेमे दोर जनने हजराधिकारियोंने जमी
दारी चउने पाम रजनेमें चमोकार करने पर चमगिट
जमींदारीका भी राजा मनुके काय बंदीवन्त कर देनेका
विचार हुआ। किन्तु राजा जमींदार परमने दोर सर-
कार निरद्वतही मुकरंरो जमा पाये बिना बंदीवन्त
करनेकी राजी न हुए। इस पर कमचरने १८२१ ई०में
बदलमे डेरदारीके साथ ७ वर्षके लिए बंदीवन्त
कर दिया। दोहे कमचरने पुनः राजाके मांग अनिवाला
घोर दहुरनेके चलावा १८२४ ई०में जमींदारी
बंदीवन्त कर देनेका विचार किया। पहले राजाने
घोर-भी १ हजार रुपये कमा देनेकी चेष्टा की, किन्तु
पानमें दम हजार रुपये घोर बढ़ाकर जमींदारीका भार
पड़न किया।

१८०८ ई०में मनुमिंद ५ मजने छोड़ कर जगकोक-
की मात्र हुए। बड़े मनुके लुचमिंदको चपुतकायवा-
में माय की गई। दोहे दूसरे मनुके लुचमिंद राजा
हुए। १८१८ ई०में लुचमिंदका भी देहात की गया।
इसमें की मजने पहले 'महाराज' की उपाधि प्राप्त की
गो। लुचमिंदको चपुत कीवन्त दामिं सारी सम्पत्ति
बड़े मनुके लुचमिंदके काय असर्ग को घोर छोटे माय-
देवको जराइन परगना, ४ मजान, २ बायो घोर राज-
मासादमें लई एक दर दिये। लुचमिंदने अपने मारयोमें
ने कोषि का परगना जवदी, कोविंदको परगना पहाड़-
पुर घोर खुलवा रामचरकी परगना पहाड़ी दिया।
जि भीन को कमचरनेमें चपुत नाम पारोच कर कर
चउने मनुके लुचका नाम लिखा गये थे। जिन्को
मनुके बाद माहदेमिंद काया राज्य पायेके बाद
कुमाचारकी लदिया करके बाधित की, किन्तु मुकदमें
है जा गये। दोहे चपुत कामे पर भी कुछ न हुआ।
महाराज लुचमिंद १८१० ई०में मरकोक की गियरी घोर
लुचके मनुके लुचका मिंद राजा हुए। १८१० ई०में
महाराजमें महाराजकी माय हुई। इस समय महाराज-
के दोही पुत्र मजोरा घोर पामेजर कायालित थे,
इस कारण सारा सम्पत्ति कोर-पाक-वाइके चपुत

हुई। इस समय जमींदारीको चपुत राजा ११ लाख
रुपयेको दो, किन्तु चपुत १० लाख रुपये दो, बंदीवन्त
भी चपुत मरं बा।

दरभंगा की जमींदारी निरद्वत, मुकद, पुर्चिया को
मायमपुरमें चपुतिया है। निरद्वतमें जाराक,
काटा घोर चमोपुर परगनेमें, मायमपुरमें बंधी,
निरद्वत घोर मरदोना परगनेमें, पुर्चियाके धर्मपुर
परगनेमें घोर मुकदके इमेको पामपुर परगनेमें दामडा-
राजकी जमींदारी है। धर्मपुर परगना १००१
ई०में मगाट, माहमानमें राजा जमापमिंदको
दिया था। १२ वर्षमें कोर-पाक-वाइके १० लाख
रुपे पुका कर राज्यकी पाय भो ८ लाख बढ़ा दो।
बाद जमोरापमिंदने बाधित की कर राज्यका भार
पड़न किया। १८८८ ई०में लुचके मजने पा लुचके कोर
भाई चपुत माय महाराजधिराज सर रामचरमिंद, मं०
मि०, पाइ०, २० लाख काय चपुत रहे है। ये कुछ समय
तक बायमरावको मजो-मभाके मज थे। राज्यकी
पामदमी ८० लाख रुपयेको है। कमचरना-विमविदा-
लयमें मंमय महाभातका एक भवन है जो 'दामडा'
विमविद' नाममें प्रसिद्ध है। जमींदारी कई एक
विभागमें विभक्त है। प्रत्येक विभाग एक एक मज
मनेजने चपुत है। प्रत्येक मनेजने चपुत
मजमोदार है जिन्को मायमजारी बादि मजम
मनेम
चपुतार है।

दरभंगा (पा० पु०) थोच, दामा।
दरभा (वि० पो०) बांमको एक प्रकारकी चरई।
इसमें बंगालमें भोपड़ियाको दोवार बनाई जाती है।
दरभावा (पा० पु०) मायिक दाम, लपवा।
दरभियाल (पा० पु०) मज, बीप।
दरभियालो (पा० वि०) १ मजका, बीपका। (पा० पु०)
२ मजका, एक मजुल जो दो बादमियोंके बीचके
भमकुका गियरी काता है, दामा।
दरवाभा (पा० पु०) १ दाम, मुवाभा। २ कमद,
बिवाह।
दरवी (वि० वि०) १ बांदका घन। २ बंधुकी, दाम-
पनाह। ३ बंधुल, लोहा।

दयान—१ हिन्दीके एक कवि। ये गुजराती साधन थे।
मन् १८८२ ई०में ये ज्ञातित थे। इसके पिताका नाम
मोम कवि था। इनको बनाई हुई दानदोषक नामक
पुस्तक मिनता है।

२ बनारसवासी एक हिन्दी कवि। इन्होंने रासि-
माना नामकी पुस्तक रची है। ये जातिसे कायस्थ थे।
दयानसिंह—इनका पूरा नाम मंदार दयानसिंह मजो-
ठिया था। इनका जन्म पञ्जाबमें एक प्रतिष्ठित सिख
कुलमें १८८८ ई०में हुआ था। इनका परिवार
दानगोत्रताके निचे स्थित है। इनके पितामह मंदार
देवासिंह जाटोंके नेता थे। मंदाराज रचनित्मिंहने
देवासिंहको इनके समरदोशक घोरः इनके सम्मुखों पर
प्रत्यक्ष हो कर उन्हें समस्तमरका माननकर्ता बनाया।
दयानसिंहके पिता नैहनासिंह गानना मेनाके मेना-
पति थे। १८५४ ई०में जब इनके पिताका देहांत हुआ,
तब इनको अवस्था केवल ५ वर्षकी थी। कोट भाक
बाईको देख देखमें इनको सम्पत्तिका प्रथम घोर
गिरा होने लगी। इन्होंने शोधशी चं०रेजी घोर फारसी
भाषाधर्म समिपता प्राप्त कर ली। अपनी सम्पत्तिका
वधिकार मिल जाने पर ये दो वर्ष तक इङ्ग्लैण्डमें भी
रहे थे। यहाँ इनकी मृत्यु गानिर हुई थी। वहासे लौट
कर उन्होंने देगमें सामाजिक घोर राजनीतिक विपरी-
तों वचन करनेके निचे प्रयत्न किया था। ये पञ्जाबके
राजनीतिज्ञ नेता थे। पञ्जाबके प्रधान चंगरेजी पत्र
'टिप्पू' के ये प्रतिभाता थे। मरते समय इन्होंने
पुस्तकालयके निचे ६० हजार रुपयेका एक दानपत्र
लिप दिया था। कानिज गोत्रनेके निचे इनकी ओ
सम्पत्ति दो घों समक मूल्य १५ लाख रुपये है। ये
काँटमेके मद्यानकोमेंमें एक थे। इन्होंने लहावतम
लाहोरमें काँटमेका चविदेमन हुआ था। १८०५ ई०में
इनकी मृत्यु हुई।

दयालु (म० लि०) दयते इति दश-भाषा-म्। (एडि रोपि
पर १२११५८) दयापुत्र, दयावान्। इनका पर्याय—
कारुणिक, क्षाणु घोर सुहृत् है।

दयानुता (म० जो०) दया करनेको महति, दया होने-
का भाव।

दयालु शर्मन्—मोपानमहसनामभूषणके रचयिता।

दयालु मित्र—कथोन्नयनद्वयद्वय कवि।

दयावत (हि० लि०) दयापुत्र, दयालु।

दयावत् (म० लि०) दया विधानम्य, दया-मत्तव, मय्य
यः। दयापुत्र, दयालु।

दयावती (हि० लि०) १ दया करनेवाली। (जो०)

२ कथमस्तरकी तीन श्रुतिधर्ममें वही श्रुति।

दयावान् (हि० पु०) जिसके चित्तमें दया हो, दयालु।

दयावीर (म० पु०) दयया वीरः १ तत्। २ दयापुत्र
वीर, वर मनुष्य जो दूसरोंके दुःख दूर करनेके निचे प्राण
तक दे सकता है। ३ दयापुत्र नायकमंद, वीर-रमके
नचनमें वीर नायकीका उल्लेख है—दानवीर, धर्म वीर,
दयावीर, वीर युद्धवीर।

दयामंदार—१ एक विख्यात धर्म साधक वल्लभ, धरयो-
धरके पुत्र। इनका बनाया हुआ माहायनीय पुस्तक-
कृतप्रयोग पदमेंमें ज्ञात होता है, कि ये १०६८ ई०में
जातिता थे। इनके बनाए हुए कई एक ग्रन्थ हैं जिन-
मेंमें कुछके नाम ये हैं—

पञ्चरपहति, साधनपहति, लक्ष्मविविध, धोईदेहि-
पहति, ज्ञातकमादि समावर्तनात्मप्रयोग, त्रिपिनिय-
य द्वात्रात्रप्रयोग, दानप्रयोग, मोतिविशेष, वीरगीककृत-
प्रयोग, रत्नाकर, वाणुचन्द्रिका, हृदियाहमिधि, प्रतीपा-
यनकोमुद्राप्रकाश, शहिरय, आहपहति, आहप्रयोग,
दासाविधानतन्त्र, साधनानुपनिषद्, साधननायनपुत्र-
हृति, माहायनपञ्चपुत्रका प्रयोगदोष, सामन्तप्रको-
टोका पाठि।

२ चतुष्टयपञ्चमवादके रचयिता।

३ शहदोषिका, प्रथमवीरमटोका घोर मन्त्रारिपहति-
टोकाके प्रवर्ता।

४ चित्तकालिका नामक वैद्यक ग्रन्थकार।

दयामोल (म० लि०) दया एव मोलं मय्य। दयालु,
दयावान्।

दयामयी—हिन्दीके एक कवि। ये रसउपकी अनैक
कवितारें बना गए हैं। इनकी कविता प्राग्गभाव
रही थी। लहावरवाच एक मोचे दते हैं—

‘‘तपिता ना कानै मोरी कविबन बरत पुच्छ।

दरवेश (का० पु०) १ सुमनमानोका भिषोपजोवो चम-
सम्प्रदायविशेष, फकोर, माधु। पहले यह सम्प्रदाय
बारह श्रेणियोंमें विभक्त था। पीछे इसको सन्ध्या घोर
भी बढ़ गई है। सुमनमानोमें प्रवाद है, कि श्रीवाइम
बिन-पमोर हम सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। किन्तु दरवेशके
वर्तमान जो मय सम्प्रदाय मारे सुमनमान राज्योंमें
विशेष मायसे फौजे हुए हैं, वे कहते हैं, कि प्रमनवि-
सौकेके प्रत्यक्षता मोलकी-सम्प्रदाय-प्रवर्तक जमाखुद्दीन
हमिसे यह सम्प्रदाय प्रवर्तित हुआ है।

तुल्यकप्रदेशके दरवेशगण ६० श्रेणियोंमें विभक्त
हैं। इन्हींमें सबसे पहला बहुत कुछ अधिकार जमा
मिया है। कनकानिनीपन्थके 'बतामो' या 'बैकतामो'
नामक सम्प्रदाय कुरानके निर्दिष्ट नियमोंके अनुसार
नहीं चलता घोर न, महम्मदकी हौ ईश्वर-पेरित
ममत्त कर विज्ञाप करता है। तुल्यकके रफई नामक
दरवेशगण पहला सामान्यीकरण करते हैं। वे इशारिया
नामसे प्रसिद्ध हैं। भरतवर्षके धर्मके दरवेश जो नीच
बंशोद्भव घोर धमकरिय हैं। इनमेंसे अधिकांश
यशस सम्प्रदायगुरु हैं। ये लोग कभी कभी इन्हींके
पवित्र प्रदेश तक धावा मारते हैं। भारतीय फकोरके
धमगिरीयों को वा-मरा सम्प्रदायगुरु हैं ये मजिह
कहलाते हैं।

बादि-खदीनगाह मदारके नाम या दरवेशके
सम्प्रदायका मदरिया नाम पड़ा है। बादि-खदीन
मदारको कोड़े कोड़े लान्दगा मदार भी कहते हैं।

महसाबन्दी दरवेशगण अपने धर्मतत्त्वकी जायदे
ममत्तानेकी चेष्टा करते हैं। नरक दरवेशोंमेंसे अधि-
कांश मिलित हैं। जब तक वे खबर ला कर गिर
नहीं पहुँचते, तब तक धूम धूम कर नाचते रहते हैं।

रफई या दरवेशगण इन्हींमें पहला शरीर, हेटने,
जन्मा हुआ चंगार निगलते, काँच चपाते तथा हथी
प्रकारके सपाय लकड़ सह्य कार्य करते हैं। वे
समझते हैं, कि हम प्रकार फकोर जाय करनेसे ईश्वरके
भाव पुनर्निमित्त हो जानेकी सम्भावना रहती है।

सुनमानिया नामक एक घोर प्रकारके दरवेश हैं।
ये लोग चक्का चक्का चक्राने हुए अपने सिरकी घाति

पीछे तब तक झुकाते रहते हैं, जब तक मूर्च्छित
हो कर गिर नहीं पहुँचते।

दरग (हि० पु०) दस देवी।

दरगन (हि० पु०) दर्शन देवी।

दरमाना (हि० जि०) दरमना देवी।

दरम (हि० पु०) १ दर्शन, देखा देखा। २ भेंट,
मुलाकात। ३ कप, सुन्दरता, बहि।

दरमन (हि० पु०) दर्शन देवी।

दरमना (हि० जि०) १ दिखाई पड़ना, देवतेमें जाना।
२ देखना, लवना।

दरमनोद्दी (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी दुर्घा जिससे
भुगतानकी मिनिको दस दिन या उसमें कम दिन बाकी
हो। २ एक ऐसी वस्तु जिसे दिखाते ही कोई दूसरी
वस्तु सामन हो जाय।

दरमान (सं० पु०) द-विदारवे द-चमानच्। श्रोत,
प्रकाश।

दरमाना (हि० जि०) १ दृष्टिगोचर कराना, दिवमाना।
२ स्पष्ट करना, प्रकट करना।

दरमाना (हि० जि०) दरमाना देवी।

दरानो (हि० स्त्री०) १ श्रमिया जिससे घाम या कलम
काटो जाती है।

दराज (का० वि०) १ दीर्घ, लम्बा, बड़ा। (का० जि० वि०)
२ अधिक, बहुत।

दराज (हि० स्त्री०) १ दराज, दरज, गिमाज। २ मनुक-
नुमा जाना जो मित्रमें लगा रहता है। ३ ममें दूक वस्तु
रख कर ताना लगा बजने हैं।

दरायुस (प्रथम) [अन्ध भाषामें दारयुस]—साधारणतः
वे Darius Hytaspas नामसे प्रसिद्ध हैं। ये इ-
स्लाम नामक किसी पारस्य सम्प्रदायके पुत्र थे।

कहते हैं, कि पारस्यराज काररमके पुत्र कामचाई-
मिचकी मृत्युके बाद म्मारदिम नामक पारस्यके एक
भपुत्रने (Magus) चम्पाय पूर्वके पारस्यराजा मिहामन
अधिकार कर लिया। दरायुसने पारस्यके छः गंधातोका
रुम बंधि कर म्मारदिमको मार डाला। इस इस्लाम-
काव्यके बाद बड़ा मज्ज ठठा, कि पारस्यके राजा कोम
होने। बहुत तर्कविदोंके बाद यह फिर हुआ कि दूसरे

काय साधन (मं० वि०) निरुद्ध नदेने वन ।

रंग मण्डो लोले गी बोरी बरत भट्टरे नवक ।

दयासागर पनःपम सरहरे मुक्त सर बरत विहात ॥

दयासागर (मं० पु०) जिसके भित्तों में प्रलय दया हो,
अर्थात् दयालु अनुग्रह ।

दयासागर—एक जैन मुनि ।

दयासागर—यमोदरचरित नामक संस्कृत जैन ग्रन्थके
रचयिता । ये जातिके कायस्थ थे ।

दयित (मं० पु०) दय-लः । १ पति । (वि०) २ प्रियपात्र,
प्यारा ।

दयिता (मं० स्त्री०) दयित-टापू । भार्या, पत्नी, स्त्री ।

दयिताघोम (मं० पु०) दयितायाः पक्षोभः । स्त्रीके यमो-
भूत, जोरुका गुमान ।

दयित्वा (मं० वि०) दय-रय । दयागम, दयालु ।

दयू (मं० वि०) देव क्षिप्र-ऊटू । देवमकसा ।

दर (मं० स्त्री०) १ गड्ढा । २ गत्त, गड्ढा, दरा । ३ भयः
कर । ४ ऊट्टर, गुफा । (पु० स्त्री०) ५ पर्यंतगुप्त,
परादृष्टी ऊट्टर ।

दर (मं० पु०) १ मेला, मसूदा । २ स्थान, जगह । ३
सुनाहीकी तानेकी छंटियां गाढ़नेका स्थानः (स्त्री०) ४
भाय, निर्धर । ५ प्रमाण, ठोक, ठिकाना । (वि०) ६
किञ्चित्, थोड़ा, जगमा ।

दर (फा० पु०) दार, दरवाजा ।

दरक (मं० वि०) दर भये छजादिभ्यो मुनः दति-
मुनू । भीरु, करवीर, क्षात्र ।

दरक (वि० स्त्री०) वह दरा को जार या दाब पड़ने-
से हो जाता है ।

दरठण्डिका (मं० स्त्री०) दर ईषत् छोटी यस्याः कप-
ठादि चम इत्यं । गलागरी, सलाबर नामकी पोषध ।

दरकप (वि० स्त्री०) १ वह जोट जो नीचे रहने या
नीचे रहनेमें लगे । २ वह जोट जो ऊपर रहनेमें लगे ।

दरहटी (वि० स्त्री०) भावका ठहराव, दरहटी मुकरी ।

दरहना (वि० स्त्री०) विद्यालं कीला, निरला ।

दरका (वि० पु०) १ विदेशी चीन्हा विद्रु, दार । २ वह
जोट जिसमें कोई रंग दार या फट जाय ।

दरकाश (वि० स्त्री०) १ काढ़ना । २ फटना ।

दरकार (फा० वि०) बावगाह, चट्टी ।

दरकिनार (फा० वि० वि०) दुबज, चमन, मूर ।

दरकुल (फा० वि० वि०) धरावर याता करनी दुवा ।

दरवासा (फा० स्त्री०) १ निषेदन-वाशना । २ मार्गना-
पत्र, निषेदन पत्र ।

दरवत (फा० पु०) हल, घिह ।

दरवाह (फा० स्त्री०) १ घोघट, देहो । २ दरवा-
जबंदी । ३ किसी सिवमुत्पत्ता सनाधिदान, भक्त-
वरा, मज्जार । ४ मठ, तीर्थस्थान ।

दरगुजर (फा० वि०) १ दयित, चमन, वान । २ चना-
मात्र, सुपाक ।

दरगुजरना (फा० स्त्री०) १ स्थानना, छोड़ना । २ चना-
करना, सुपाक करना ।

दरा—पावाम प्रदेशके अन्तर्गत एक जिला । यह पश्चात्
२६° १२' से २७° ०' और पौर देश ८१° ४२' से
८६° ४०' पूर्वमें अवस्थित है । भूपरिमाण १४८६ है ।
इसके उत्तरमें भूटान, दोग्ग पौर, पत्ता तथा दक्षिण
पश्चात् पूर्वमें ललितपुर जिला पौर मङ्गलदई नदी;
दक्षिणमें ब्रह्मपुत्र पौर पश्चिममें कामरूप है ।

यह जिला भीरवी पौर ब्रह्मपुत्रनदीके मध्य पर
अवस्थित है । तनपुर इस जिलेका मद्र है ।

यहूतथो बड़ी तथा छोटी गदियां इस प्रदेश
को कर प्रवाहित हैं । २०० से ५०० फुट लंबे पत्थर
को छोटे छोटे पहाड़ हैं । यह प्रदेश वन पौर कृष्यमय है ।
यहां सब प्रकारके वृक्ष जन्म पाये जाते हैं, गिकाराकी
बाघडा गिकार प्रदेशमें २०) ६०, पोता बाघ मारनेमें
५) ६०, मानू मारनेमें १०) ६० पौर वरिण मारनेमें
२५) ६० तक दिये जाते हैं । जंगलों बाघों कर्मी खमो
पनाज बहुत मुकवान् करता है ।

ब्रह्मपुत्र दरङ्गकी सबसे प्रधान नदी है । इसकी पाँच
मुख्य शाखायें हैं—१ भीरवी, २ धिमादरी, ३ अने-
गरी, ४ मोनारि पौर ५ बहो नदी । इनके सिवा यहाँ
पौर भी २६ छोटी छोटी गदियां बहती हैं । यहां बड़
एक भी नहीं है । पोताको सुविधातया ब्रह्मपुत्र नदीका
बाढ़ हीनके लिये दो बाँध हैं ।

पावामसे दृष्ट्य इतिहास दराका नदी है । पाव-

तब और स्वामीय परम्परागत प्रथाएँ जाना जाता है कि पुराकालमें ब्रह्मपुर जलोको उपत्यकामें सेकर बहुत दूर तक हिन्दू सभ्यता फैली हुई थी। तेजपुर नगरके चारों ओर पहाड़ मनुष्य पर जङ्गलावृत मन्दिर और प्रासादके जो मख भू-सागरेय हैं उनमें मानस होता है, कि ये स्व मन्दिरादि किमो विविध समतापथ जातिमें बसाये गये थे और ये लोग किसी प्राक्रमण कारीमें निमग्न हुए थे, यह महत्त्वमें अनुमान किया जाता है। कोई कोई कहते हैं कि, ब्रह्मलोक अधिपति कुनिमानके सेनापति काष्ठापहारने ही यं सब धर्म-विधातक काम हुए थे; फिर कोई कहते हैं, कि यह बाबराजाकी भाव शोकपूर्ण युद्धका फल है। हिन्दुराज्यके पतनके बाद धामामके समान्य प्रदेशोंको मारि दरङ्ग पुनः समर्थोंके हाथमें आ गया। ब्रह्म-देशके पहाड़ों पर ईर्ष्यामानव शोड्डत बाहोम जाति तरङ्गवीं गताम्होको ब्रह्मपुरको उपलक्ष्यमें प्रवेश कर धीरे धीरे नौसेको और समुद्र की ओर बढ़े गये। चंगरीकोई के पाममन काल तक इन्हीं को इस स्थानको अपने अधिकारमें कर रखा था। उत्तरमें पर्वत श्रेणियोंका प्रदेश बाहोम-राज प्रतिवर्ष ८ महीनेके लिये भुटियाको धान पादिको फसल उपजायके लिये देते और इसकी बदले उनमें प्रतिवर्षके उत्पन्न द्रव्योंमें कुछ पंथ ले लेते थे। वर्षके मेष चार मास पर्याप्त पापादुवे पागिन तक वे स्वयं ही इस प्रदेशके उपर राज्य करते थे। चंगरीकोई १८२१ ई०में धामाम जीत जानेके बाद भी कुछ दिनों तक यहाँ बन्दोबस्त चलता रहा। किन्तु १८४० ई०में भुटियाका ग्यान क्रमा क्रम लगे वायिक १०००, ६० दिने जाने लगे। इस विवादो, जमीनमें चंगरील सरकार ५१५०, ६० शल्ल पाने लगे।

जिन भुटियाको कया उपर निम्नो गई है, वे भूटान राज्यके पक्षीम नहीं, बल्कि भासा गवर्मेण्टके पक्षीम है। वे तिब्बतियोंके साथ कुछ व्यवसाय करते हैं। भुटियाके पक्षीम पूर्व दिशामें पक्षा वा जलो नामक एक छोटी जाति बाम करती है। ये वायिक १०००, ६० कर पाते हैं। यहाँ तक कि लम्पेने १८२१ ई०में भी एक प्रदेशका दावा करके हटिक अधिकार पर दृष्ट करमाया था। मधः देवी।

इसके और भी पूर्वमें एकना नामक एक जाति है : ये १८०२ ई०में चमतोना धाम पर प्राक्रमण कर यहाँके बहुतसे मनुष्योंको कैद कर ले गये थे। किन्तु १८०४-०५ ई०में एक दम सेनाने उन्हें उबार दिया। दस्ता देवी। यहाँको लोकसंख्या प्रायः ११०१११ है।

दरङ्गको अधिवासीयोंमें चमम्य जाति को प्रधान है। इनमेंसे जकारो, रामा और जोषको मख्या अधिक है। इनके सिवा पाहोम, भुटिया, भुटिया, दक्षिण, गारो, मेख पादि और भी कई एक जातियाँ हैं। यहाँके सभी मुसलमान मुन्सी हैं और इनका पक्षीम खूब बढ़ी चढ़ी है। कडारिणीमें बहुतसे ईसाई धर्म प्रचलनमें किया है। यहाँ एक गिरजा और बहुतसे मिशनरी स्तूप हैं। गवर्मेण्ट वायिक १५००, ६० स्तूपोंके खर्चके लिये देती है। १८८२ ई०को तेजपुरमें एक ब्रह्म-समाज स्थापित हुआ है।

तेजपुर जो इस जिलेका सबसे बड़ा नगर है। इसके सिवा विष्णुनाथ, इवाला, मोहनपुर, लखवाड़ी और कुर्यागांव नामक कई एक वायिकप्रधान धाम हैं।

यहाँ वायिक दो प्रधान मध्य है। वायिक दो प्रकारका होता—एसा भागो वा धामन, यह मोतकासमें काटा जाता और यहाँ प्रधान वायिक है। २रा पाठस—यह योष कालमें काटा जाता है। धान काटनेके बाद सरसो, मटर, सरट पादिको फसल होता है।

यहाँके जपकोई पक्षीम लराब नहीं है। ये गवर्मेण्टको खास जमीन दत्तन करते हैं क्योंकि इन जमीनोंमें ऐसी समता है। जिनके पास जमीन नहीं है वा कर खेतीकी भी समता नहीं है, वे भी वाधारायतः मजदूर करने नहीं जाते।

दरङ्ग न तो बाढ़के जलमें डूबित होता और न हटिके पक्षीममें भी लट पाता है दुर्भिक्षका यहाँ नाम भी नहीं है। बहुतसे यताम्होंके प्रवास भागमें एक बार चनात्रका कट हुआ था, यह भी निरर्थक प्रदेश वायिकोंके प्राक्रमणके कारण, न कि हटिके पक्षीममें।

राम नुनला जो यहाँका एक मात्र मिस्त्रम है। राम दो प्रकारका होता है। यँटिया और सुमा। यहाँ बहुतसे लोग स्तूप जाति, मुनते और रंजते हैं। राम-

दरवेश (का० पु०) ! सुमनमानीका भिन्नोपश्रोत्रो धर्म-
मन्मदायविधाय, फकोर, माधु। पहने यह मन्मदाय
सारथ्य श्रेष्ठियोंमें विभक्त था। पोछे हमको सँव्या चोर
भी बटु गये थे। सुमनमानीमें प्रवाद है, कि घोषाहम
विन-चमोर हम मन्मदायके प्रवर्तक थे। किन्तु दरवेशके
वर्तमान जो सब मन्मदाय सारे सुमनमान राज्यांमें
विच्छिन्न भावने फोने हुए हैं, वे कहते हैं, कि ममनवि-
मरीकके मन्मदाय मीनवी-मन्मदाय-प्रवर्तक जन्मालुहोने
हमने यह मन्मदाय प्रवर्तित हुआ है।

तुल्यप्रदेशके दरवेशगण ६० श्रेष्ठियोंमें विभक्त
हैं। इनमें से कई अपना बहुत कुछ अधिकार जमा
लिया है। कमलानिलोपकके 'बतामो' या 'बेकतामो'
नामक मन्मदाय कुरानके निर्दिष्ट नियमोंके अनुसार
नहीं चलता और न मन्मदायको ही ईश्वर-प्रति
ममक कर विज्ञाप करता है। तुल्यके रकई नामक
दरवेशगण बाल्या बाल्यनिर्वातन करते हैं। वे इसारिया
नामसे प्रसिद्ध हैं। भरतवर्षके अनेक दरवेश जो जीव
बंशोद्भव चोर धनचरित्र हैं। इनमेंसे अधिकतर
योगी मन्मदायभुक्त हैं। वे शीघ्र कभी कभी हस्तोंके
परिम प्रदेश तक धावा मारते हैं। भारतीय फकोरके
पचगिरीग जो बाभरा मन्मदायभुक्त हैं वे मजिक्त
कहलाते हैं।

बादि-उहीनगाह मदारके नाम पर दरवेशके
मन्मदायका मद्रिया नाम पड़ा है। बादि-उहीन
मदारको कोर कोर काटगा मदार भी कहते हैं।

मन्मदायके दरवेशगण अपने धर्मतत्त्वको हावसे
मममानकी चेष्टा करते हैं। नरक दरवेशमेंसे अधि-
कांश मिलित हैं। अब तक वे सहर या कर निर-
मर्ही पड़ते, सब तक घुम घुम कर गाते रहते हैं।

रकईया दरवेशगण कुरीने अपना शरीर, हेटने,
जलता हुआ बाँगर निगलने, जीव खाते तथा हमी
प्रकारके पर्याय लक्ष्म सहम करा करते हैं। वे
समभते हैं, कि हम प्रकार काठोर कार्य करनेमें ईश्वरके
माय पुनर्निमित्त की जिनकी मन्मदाय रहते हैं।

गुलमानिया नामक एक श्रेष्ठ प्रकारके दरवेश है।
यै लोग पन्नाह पन्नाह निहाने हुए अपने बिरकी भागें

पीछे तब तक झुलाते रहते हैं, जब तक मूर्च्छित
हो कर गिर नहीं पड़ते।

दरग (हि० पु०) दर देखो।

दरगन (हि० पु०) दर्शन देखो।

दरगाना (हि० लि०) दरगना देखो।

दरम (हि० पु०) १ दर्शन, देगा देखो। २ भेट,
मुलाकात। ३ ऊपर, सुन्दरता, हटि।

दरमन (हि० पु०) दर्शन देखो।

दरमना (हि० लि०) १ दिखाई पड़ना, देखनेमें पाना।
२ देखना, मखना।

दरमनोहंडो (हि० श्लो०) १ एक प्रकारकी दुर्डी जिसके
भुगतानकी मिनिकी दस दिन या नममें कम दिन बाकी
हो। २ एक ऐसी वस्तु जिसे दिखाते हो कोई दूसरी
वस्तु जानि हो जाय।

दरमान (मं० पु०) द-विचारसे द-प्रमाण। योम,
प्रकाश।

दरमाना (हि० लि०) १ दृष्टिगोचर कराना, दिखाना।
२ स्पष्ट करना, प्रकट करना।

दरमाना (हि० लि०) दरगना देखो।

दरानो (हि० श्लो०) १ द-विचार जिसमें ज्ञान या फलन
काटो जाती है।

दराज (का० वि०) १ दीर्घ, लम्बा, बड़ा। (का० लि० वि०)
२ अधिक, बहुत।

दराज (हि० श्लो०) १ दराज, दराज, गिगाफ। २ स-दृष्ट-
मुमा बाला को भेजमें लगा रहता है। ३ ममें कुछ वस्तु
रख कर जाना मग्न सकत है।

दरायुम् (प्रथम) [अन्ध भाषामें दारयुजुम्]—माधारवतः
ये Darum Hyatam नामसे प्रसिद्ध है। ये क-
प्यात्र नामक किसी पारस्व सम्प्रदायके पुत्र हैं।

कहते हैं, कि पारस्वराज कादरमके पुत्र कामबाई-
मिमकी मृत्युके बाद स्मारदिय नामक पारस्वके एक
मधुपने (Madhup) पन्नाह पृथक पारस्वका निर्माण
अधिकार कर लिया। दरायुजु पारस्वके हः संभालीका
दम बांध कर स्मारदियकी मार डाला। एक कथा-
कालमें बाद वही मन्त्र कथा, कि पारस्वके राजा योम
होने १ बहुत तकविनके बाद यह निर हुआ कि दूसरे

गण बुनने के निरा करे जगह पोतन और मिट्टी के बरतन भी तैयार किये जाते हैं।

चायकी येतो यहाँ देगन साइडों के द्वारा जो की जाती है और मगमगो भी चाय के बागों के हैं।

यहाँकी रकनगी दूधोमि चाय, मरमो और रेगम गण को पधोन है। चाय-बागोंके निकटस्थ स्थानोंमें प्रति गम्राह सेना लगता है। कहीं कहीं कार्मिक सेना भी दूधा करता है। यहाँ सुटिया मोग होते होते फोड़ें, कखन, लयन, मोम, मर्ब, जासा प्रयुक्ति केवते हैं।

ब्रह्मपुत्र नदी द्वारा स्टोमर पर मूब समय या जा सकने हैं। इसकी निवा जाने जाने के दूसरे रास्ते बहुत थोड़े हैं। चाकाम-राम्ता (Assam Northern Trunk Road) नामक एक प्रमत्त रास्ता दरङ्गके एक प्रांतमें नि कर दूसरे प्रांत तक प्रायः १४३ माः ल दूधा गया है। चाकाम-बङ्ग-रेल पथमें (Assam Bengal Railway) इस प्रदेशमें जाने जानेको बहुत सुविधा हो गई है।

यहाँ ५ घामि लगते हैं। तैत्रपुरमें सिमेका महर, मजिहूटको चढामत और चन्दाय लमंचायादि के कार्पोलय हैं।

ब्रह्मान के चन्दाय प्रदेशोंको नाई यहाँ गिवाको छपति देवी नहीं जाती। तैत्रपुरमें एक गवर्मेट पंग-रेको निव्दानय और मिगमरियोंका एक नामेल सङ्ग है।

मबिराम खर, चाकामय चादिरोग यहाँ प्रायः दूधा करत है। यहाँ दो टातय पोषधानय भी हैं।

दरङ्गिरि—चाकाम प्रदेशके गारोपहाड़के चलागत एक घाम। यह सीमें मरो नदीके किनारे पचा० २५' ४६ उ० और देगा० ८०' ५६' पू० में अवस्थित है। इसके निकट १० माः लम्यो और ६ माः ल थोड़ा एक सुन्दर कोयले की जमोन है। यहाँ घण्टे कोयला पाया जाता है।

दरङ्ग (हि० खो०) दरार, दरङ्ग।

दरभन (हि० पु०) रमन देवो।

दरजा (हि० पु०) १ दर्जो देवो। २ जोहा टावनेका एक यन्त्र।

दरजिन (हि० खो०) दर्जिन देवो।

दरको (हि० पु०) रको देवो।

दरप (मं० पु०) १ दरभे या सोरनेकी जिवा। २ ध्वज, रिताम।

दरभि (मं० पु० खो०) द बिदारभे यनि (रम-देवदेव)। यन्, २१२०१) दूधमन्त्र, यदोके हिलारेका दूटना। इसका मङ्गल पण्य—कमलपत्र और कलमन्त्र है। दरप (मं० पु०) द-बिदारभे यन् १ यगारक, भारी पोरका केसाय। २ गह, मङ्गटा, दारा।

दरद (मं० खो०) इनाति द-बिदारभे यति (रम-देवदेव)। २५, ११२८) १ कटि, पर्वत, पहाड़। २ मगय, भरना। ३ भय, डर, शोक। ४ ध्वज, प्राति। ५ देग-विमोय, एक देगया नाम। ६ तोर, किताब।

दरद (मं० खो०) दर ईपत् दायति दय्यतोति, द-क। १ बिङ्गुल ईगुर, सिंगरख। इसके पण्य-दरद, यो यन्, विम्राह पोर पुच पाट है। दरद तीन भागोंमें बिभक्त है—भमोर, शुकतुण्डक और कंमगाद। ये तीनों पण्यक्रम एक दूसरेमें पश्चिम गुवदायक है, यहाँतु लमोरमें शुक-तुण्डकमें पोर शुकमुण्डकमें कंमगादमें बिमय गुव है। भमोर मोतवर्ष, शुकतुण्डक पोतवर्ष पोर कंमगाद जवापुष मरोवा मोहितवर्ष होता है। कंमगाद दिङ्गुल की मर्वाकट है। पोतवर्ष दरदका व्यवहार करतों कंमगादको मगता है। मोहित दिङ्गुलका गुच—तिह, खपाय, कट, रम एवं चपुरांग, लक, पिता, कुन, खर, चाकामा, जोहा, चाकामात पोर मरदोयनायक है। दिङ्गुलकी पाम का लई पातगई निवमागुमर कमद-यन्त्रमें पाक करके जो रम बनता है, वह लभानतः बिहद है। यन्ः लमे मोधन करमेंको जढात नहीं पढ़ता।

दरद सेवन विधि—मोड़ोंके दूध पोर चमकई द्वारा यन्त्र के माग मातवार भावना दर्भमें दिङ्गुल मोधित होता है। दिङ्गुलक रम निजाभनेमें लमे कागसी नाद पदका मोलके पत्तोंके लमने एक पहर तक दोम खर पारेकी नाई कर पावन करत है। दोबे लमने पात-मंमन्त्र रमने से लेते हैं। यह घर पोर रितजनक होता है। दूसरी लमो कार्पमें इसका प्रयोग कर सकने है। (मगम०)।

लेनदमारम पथमें इस प्रकारके दिङ्गुलको दिङ्गुल, शुकतुण्डक और रममन्त्र नामसे उल्लेख किया है। रबेन्द्रमारम कहते मतये इनकी मोधन यन्त्रा—दरद

भस्त्रवर्ग के साथ पीछे भी सके दूध के साथ घोलने में हिङ्गुल जोधित होता है। दूसरी विधि—में होके दूध में गात बार और भस्त्रवर्ग में गात बार भाजना देने में भी यह जोधित होता है। तीसरी विधि—जैसे भी मोचूँके रस में दोनयन इमें पाक कर भस्त्रवर्ग में गात बार भाजना देने में यह विरुद्ध होता है। रसगन्धक हिङ्गुल देखने में गरुजके फल जैसा लगता है और सबसे समता होता है। विरुद्ध हिङ्गुल, सिंह और कुठहारक, रुचिकर, वनप्रद, मेघा और चन्दिवर्क है। (सिंहवारसंघट्ट)।

हिं'गुल देवो।

२ देगविगीय, कामोर और हिन्दूकुग पर्वतके प्रदेश का प्राचीन नाम। वृक्षरहितता में इस देशको ईमान कोष में स्थित बतलाया है। मेरिज पाजकल जो दरद नामकी पहाड़ी काति है उसका नामम्याम सहाय, गिनगित, विजयाम, नगर हुआ जादि स्थानों में हो है। प्राचीन यूनानो और रोमन सेवक भी इन जातिका नियाम-स्थान हिन्दूकुग के पास नाम को बतला गये हैं। (हरद्वं १४ अ०) १ दरदः देगविगीय, सोमिजगोष्ठ्य, तन्य राजा या पण्य, पदुप पाथो लुक्। दरद देगबामो, दरद देगके लोग। ४ दरद देगके राजा। दरद देग बामोको भय में दरद गन्ध बद्धचमाला जोना चाटिये, किन्तु पाच प्रयोग में कहीं कहीं एक बचनाना भी देखा जाता है। यथा—

"वाल्मीक्य दरदो विदेशविशिलपा।"

(हरिश्चं ८१ पा०)

५ मेरिज जातिभेद। इस जातिके लोग पहले सविध थे, पीछे उपनत्वको प्राप्त हो गये हैं। चार देवो।

मनुस्मृति में लिखा है कि घोण्डूक, भीड, द्रविड, काव्योन, जवग, गक, पारद, पञ्चन, चोन, किरात, दूद और स्वग ये सब देशोद्भव सविध लोग उपनयनार्थ मन्त्रारविहीन हो आने और ब्राह्मणोंका दर्शन न पानेसे गृह्यको प्राप्त हो गये हैं। पाजकल दरद नामकी जाति कामोरके पास पास सहायसे भी कर नगर-हुंजा और विद्यास तब पार जाते हैं। इस जातिके लोग पवित्रांग मुमनमान हो गए हैं। मेरिज यदि इनका भाषा और रीति ओतिको और दृष्टि कालो जाय,

तो ऐसा प्रगट होता है, कि ये लोग पायकुलोत्पन्न हैं। मुमनमान हो आनेके कारण ये कामो कपरीका मय-हार करते हैं मद्यो, मगर इनको भाषा कामोरीसे बहुत कुछ भिन्नतो लुप्तती है। (वि०) दर भय ददाति दा-क। १ मयदायक, मयदर।

दरद (फा० पु०) १ कट, पोड़ा, चया। २ कदवा, सहायमूर्ति, दया, तपः। रिषे दरं देवो।

दरदर (फा० क्रि० वि०) दार दार, दरयान दरवान।

दरदरा (हिं० वि०) जिनके कंध लून हो, जो मूव बांकि न पोसा हो।

दरदराना (हिं० क्रि०) बहुत बारीक न घोलना, चोड़ा घोलना।

दरदरो (हिं० वि०) जिनके रवे मोटे हो।

दरदवंत (फा० वि०) १ लपात, दवात। २ पोटित, दुपों।

दरदामान (फा० पु०) दानानके बाहरका दामान।

दरद (हिं० पु०) दर देवो।

दरपन (हिं० पु०) दरप, पारना गीगा।

दरपना (हिं० क्रि०) १ लोप करना। २ पहरार करना।

दरपनो (हिं० धो०) छोटा पारना।

दरपरदा (फा० क्रि० वि०) हिपाकर, पाहमें।

दरपिग (फा० क्रि० वि०) मन्मथ, मामन।

दरप (हिं० पु०) १ धन, दोस्त। २ पात। ३ एक प्रकारकी बादर जिसका तनासा मोटा हो।

दरवर (मं० पु०) दरिद्र गह्वरु सरः योष्ठः। वाक् जग्य गृह।

दरवहास (हिं० पु०) मड़े हुए वनस्पतियोंका एक प्रकारका मय।

दरवा (फा० पु०) १ काटका चामेदार मट्टक त्रिगने कव-सर चादि रचे जाते हैं। इसका एक एक स्थान में एक एक पत्थी रखा जाता है। २ जिनो पत्थी या चीनके रहनेका दीवार वा पिट्टका कोटर।

दरवान (फा० पु०) दारवान, दुष्टोदोदार।

दरवानो (फा० फी०) दारवानका कार्य, दरवानका काम।

दरवार (फा० पु०) १ राजा याप्रमिषके साथ जिन स्थान

कार जमा कर १००० सम्भ्रात मनुष्योंकी हत्या की और दुर्गादि की तोड़ फोड़ डाला (११६ ई० के पहले)।

बाबिलन भी हार गयी। यह दरायुस स्त्रिदिया राज्य पर आक्रमण करनेके लिए तैयारी करने लगे। प्रायः ७—८ लाख सेना इकट्ठी की गई। बम-फोरस, उपसगरके ऊपर एक काठका पुल बनाया गया। दरायुस प्रभूत सेनाको साथ ले सुमाने रवाना हुए और काठ पुल ही कर बमफोरस पार हो गए। यहाँ ये पुलके बनानेवाले सामिया दीपके अधिवासों माराहोक्कीमकी यथिष्ट पुनश्चार दे धुँसके मध्य होते हुए दानियूक नहीं पार हुए और खान नदीकी ओर जाने लगे। अन्तर्नि ये स्त्रिदियाके अन्धन्तर पट्टे के ओर स्त्रिदियन लोग सामने तो युद्ध न कर मरे, पर द्विप कर तथा सुविधा देण कर पारसियों पर आक्रमण करने लगे। दरायुस को रसद जब धीरे धीरे कमने लगी तब भी मोठ जानका तैयारी करने लगे। घेड़ित और दुर्ग सेनाओंको छोड़ कर एक दिन ये निगाकालमें छिपके रहलिये अन्ध टिए और काठके पुल द्वारा बमफोरस पार कर धूम होते हुए धीरे धीरे पश्चिमके अन्धन्तर पट्टे के। ये पाठ हजार सेनाओंकी सेनाविजयके पक्षीन रण कर लड़े धूम दर चढ़ाई करनेको कह पाये थे। सेनाविजयने इस समयमें बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर ली थी। इस प्रकार उनका स्त्रिदियाविजयका अन्तम निष्फल हुआ।

पारस्यको पट्टे के कर दरायुसने पुलको ओर सिन्धु नदी तक अपना प्रभुत्व फैला दिया।

४०१ ई० मनुके पहले मनुस्त्रीपमें जब गहमहा युद्ध हुई, तब यहाँके सम्भ्रात लोग इस प्रदेसको छोड़नेको बाध्य हुए और लड़ने जा कर मिनिटमके शासनकर्ता परिटमोरसमें सहायता माँगे। परिटमोरसने भी आदिमके शासनकर्ता दरायुसके भाई आर्ताकार-निमकी मदद पायी। आर्ताकारनिमने पारस्यके सम्राट्-से समझति से भी ओर मिनावेटिसके पक्षीन २०० अज्ञात लगा कर लड़े मिनिटम जानि और परिटमोरसकी सेनाको साथ ले मनुस्य, होप पर चढ़ाई कर देनेको पाठा दो। पार मास बरा दाले इन्होंने बाद परिटको-

रसने जब देखा कि रसद धीरे धीरे कमती जा रही है और मनु भी बाध्य नहीं जाता, तब लड़ने के भावो-नियोंकी विद्रोही होनेके निमित्त उत्तंजित किया। तदनुसार भावोनिनों ने विद्रोही हो कर मादिम नगर जमा डाला और मिनिटम होप मनु के साथ लगा।

(४८४ ई० के पहले)

ऐसेमके अधिवासियोंने सम विद्रोही परिटमोरस-को सहायता दी है, यह जान कर दरायुस बाग बबुला हो गये। इन्होंने डिटिस और आर्ताकारनिमके पक्षीन एक दल सेना पटिकाहोपमें निजो। सुमानह माध्यम युद्ध-क्षेत्रमें मिनावाडिमके पक्षीन पारस्य सेना एवं सवासोने पूरा तरह पराजित हो एगियाको नाट पाई। (४८० ई० बन्ने के पहले) दरायुस फिर भी एक बार एवं स पर चढ़ाईको तैयारी करने लगे। किन्तु युधारा-के पहले ही इनका अग्रवाग हो गया।

(४८५ ई० के पहले)

इसके समयमें पारस्यराज्य अत्यन्तकी चरम भीमा तक पहुँच गया था। राजकोय सम्राट् मित्रनेके निमित्त लड़ने निर्दिष्ट दूरीके अनुसार राज्य भरमें मनुस्य दारा डाक मित्रनेको व्यवस्था कर दी थी।

राजा होनेके पहले इनके तीन पुत्र थे, पोले पार पार पुत्रोंने लक्ष पहच किया था।

दरायुस (द्वितीय) — ये साधारणतः दरायुस, पञ्चास नामने प्रसिद्ध है। ये आर्ताकारनिमके लार्ज पुत्र थे। द्वितीय अरसेयके मारी जनेके बाद ये घातक मनदियानमको मिनासन च्युत कर स्वयं पारस्यके मिनासन पर बैठे (४२३ ई० मनुके पहले)।

इसके दो पुत्र थे। पहलेका नाम आर्ताकारनिम और दूसरेका कारस (Cyrus) था। ये मनुस्य के लड़ने कोरावन और अपना छो पारिसेटिमके परिचालित होते थे। अन्तः इनका राज्यमात्रम युद्ध के लड़ने नहीं बनता था। अनेक सन्निव राजविद्रोह हो गये, जिनमेंसे अधिकांशने पराजित हो कर इनको पक्षीनता कोकार कर ली थी। २० वर्ष राज्य कर चुकनेके बाद ४०४ ई० बन्ने के पहले इनका देशान्तर हुआ। पोले इनके पुत्र आर्ताकारनिम पारस्यके मिनासन पर चढ़िहुट हुए।

पर बैठ कर राजकोय काबे करतें हैं, कमीका नाम दरबार है। १ राजमहा, कबहरो। २ महाराज, राजा। ३ पद्मनगरमें मिर्जाका मन्दिर। इसमें पद्म-माहक रखा हुआ है। ४ द्वार, दरवाजा।

दरबारदारी (फा० श्री०) १ राजमहामें उपस्थिति, दरबारमें जाना। २ किसीके पास धारवाज आकर बैठने और बिलगो करनेका काम।

दरबारबिलगो (फा० पु०) द्वारपाल, दरवान।

दरबारी (फा० पु०) १ राजमहाका सभासद, दरबारमें बैठनेवाला आदमी (वि०) २ राजमहाके शीघ्र, दरबारके नायक।

दरबारी कागड़ा (फा० पु०) एक प्रकारका राग। इसमें यह वाद्यभक्त पतिरिक्त गेय सब कोमल स्वर लगते हैं।

दरम (हि० पु०) दर्भ देश।

दरभङ्गा—बिहार प्रदेशके तिरहुत कमिश्नरीके अन्तर्गत एक जिला। यह अक्षा० २५°२४' से २६°४०' उ० और देशा० ८५°११' से ८६°४४' पू० में अवस्थित है। पहले यह पटना कमिश्नरीके अन्तर्गत था। १८०५ ई० के जनवरी महीनेमें तिरहुत जिलेकी विभाग कर अन्तर्गत दो जिले कर दिये गये। उसी समय तिरहुत जिलेके पूर्वांशमें तिरहुत दरभङ्गा, मधुबनी और ताजपुर उपविभाग लेकर दरभङ्गा जिला सङ्गठित हुआ। इस जिलेके उत्तरमें नेपाल राज्य, दक्षिणमें मुङ्गेर और गढ़ाऊटी, पूर्वमें भागलपुर और पश्चिममें मुजफ्फरपुर है। जिलेकी लम्बाई ४८ कोस है। भूपरिमाण ११३८ वर्गमील और जनसंख्या लगभग २८१२६१ है। यहां शासक, बागम, राजपूत, चहौर, दुसाध, बाजुख, चौरा, मज्जाह, चमार, खेवट, कुर्मी, मुगल, तांगी और तेगो आदिकी संख्या अधिक है। इसमें अनाया मुसलमान और ईसाई भी हैं। जिलेमें पाय और रीमरक उद्यान यद्यपि हैं।

बाघमती, गण्डक, सोनी गण्डक, करार, कमला, तिलगंगा आदि नदियां प्रवाह हैं। २० वर्गमील परिमित तापवर्धक नामक ऋतु जिलेमें प्रचलित है। इस जिलेमें घातक बड़े बड़े लेपि लगते हैं जिनकी लंबाई ८ से १२ हाथ तक होती है। घात, मोहो, मोल, घासी, गेहूँ, महुआ, महुआ, बांदी, चना, जूट, मूंग,

कुहरो, बारनो, तमाखु आदिकी उपाय अनेक होती हैं। चम्पौर परगनेमें घातकी बीजो पधिक होती है। मोलका व्यवसाय पट्टेखानेमें परिवर्तनी और मोली विद्यमानोंके अधिकारमें है। ताजपुरमें अन्तर्गत पूजा नामक आश्रम तमाखुकी छोटी स्थापित हुई है। सुयोग्य और अन्तिम लम्पि-मन्त्रालीके अनुसार तमाखुकी बीजो और कुहरो तैयार होता है। जिलेमें ५ गहर और ३२११ घाम लगते हैं। मधुबनीमें मन्त्राली कई एक विद्यालय हैं। चार ही वर्षकी प्रधान स्थापि है।

२ इसी जिलेका प्रधान उपविभाग। यह अक्षा० २५° १८' से २६° २४' उ० और देशा० ८५° ४१' से ८६° ४४' पू० में पड़ता है। भूपरिमाण ११२४ वर्गमील और जनसंख्या लगभग १०६१८५ है। इसमें एक दोबारी और ५ कोटदारी पट्टावली है। तथा दरभङ्गा एक बगैरा नामके दो गहर और १४०६ घाम लगते हैं।

३ दरभङ्गा जिलेका प्रधान गहर। यह अक्षा० २६° १०' उ० और देशा० ८५° १४' पू० कीटी बाघमती नदीके किनारे अवस्थित है। बिहार प्रदेशके मध्य यही तीसरा गहर है। लोकसंख्या प्रायः ६६२४४ है जिनमें हिन्दू भी अधिक हैं। यहरमें म्युनिमपलिटो और बड़े बड़े मनोरम घरोंका है।

दरभङ्गा गहर मध्यवर्ती मुसलमान नगरों का। कोई कोई कहते हैं, कि दरभङ्गा शब्द यह नगर स्थापित हुआ है। किसीका अनुमान है कि द्वारकामें दरभङ्गा नाम दिया है। अन्तर्गत पुष्करिणी देव कर बहुतमें लोग कहते हैं, कि सेनानिवास स्थापन करनेके विधि मनुष्य मरी लो गई थी और ये दो गवा पुष्करिणीके रूपमें परिचित हो गये हैं।

गहरके चारों ओरकी जमीन बहुत मोची है और प्रायः बाघमती और कमलाकी बाढ़में बूझ जाती है। यहाँके बाजार बहुत बड़े बड़े हैं, बाट प्रतिदिन लगती है। तिरहुत स्टेट रेलवे महाराजगंजी बालिनदुर्ग या कर दरभङ्गा गहरमें मिल गई है। बाजितपुरमें लामने ६८ इन्चियन रेलवेके बाढ़ नामक स्टेशन है। दरभङ्गा जिलेमें बाढ़ने अराज पर चढ़ कर बाजितपुर की ओर चला दड़ता है। इस गहरके काफी आदि जलवा

दिन शरीरद्वयें समस्त मान मनुष्य घोड़े पर सवार हो किमी मिट्टी के प्यालेमें डबलिया था। वहाँ सिन्धवा थोड़ा समय पड़ने दिनदिमायेगा वही मिहामनके परिवारको दृष्टिगत जायगे। दरायुसने इबारिस नामका एक मित्रपुत्र को रिकतण भूष्य था। वहाँके खोदकने दरायुसका पाछा पड़ने पड़ने दिनदिमाया। लोक इन्हीं समय परिष्कृत शासनागते विप्रमोको दृष्टकृष्टादृष्ट और मित्रका मन्त्रन मुनाई पड़ा। इस घटनाकी देण चरम दरायुस पदम अनेक घोड़े पड़ने सार कर दरायुसके घोड़े नने दिग वही और वक्त भ्रष्टा व्याहार कर दिया।

इस प्रकार, इन्हीं २० मन्त्र पड़ने दरायुसने शारद्वका सिद्धान्त सुधीभित किया। पार्थी लोगको छोड़ कर एशियाई जिन सब जानियाने कारागम और कामयाबिमन्त्रको पधोतना व्याहार कर लायीं, वे भी चरम दरायुसको दृष्टकृष्टायेने पा गईं। मिहामन पर केतनेके बाद ही इन्हीं पड़ने पलोवा घोड़े पालिप्योन नामकी कारावरसका दो कण्याधर्म, पीछे कारावरके पुत्र शारद्विमको कन्या घटमिग और घोटागिस नामक एक नृमर्ष व्यक्तिका कन्यामें विवाह किया।

पड़ने प्रभुत्वको अष्ट मन्त्रदूत कर इन्हीं पड़ने एक घाममुनि बनवाई और उमके उपर इस प्रकार निपया दिया - 'क्षमाप्यके पुत्र दरायुसने पड़ने घोड़ेको चतुरता यथा इबारिस नामक भूष्यको भीष्टा बुद्धिके वलने पाप्यका मान्याप्य पाया था।'

इन्हीं चरमता इन्हीं पाप्य मान्याप्यको २० घट्टीमें विभक्त कर एक शासनकर्ताके पधोत प्रयोजका नाम पत्रापी (Datriphy) रखा। इस सब शासनकर्ताओंके नाम भी अष्ट पड़ने गये। प्रत्येक उत्तममें जितना कर लिखा जायगा तथा मेलावा और राजपरिवारके विभिन्न क्रतुता दण्ड देगा घट्टी, दरायुसने कन्या भी ताटाद दिया कर दी।

पुनः शारद्विमके शासनकर्ता पोरिष्टम विना कारागमके सम्मान्य भीरीकी कन्या बहुत निष्ठातामें किया करने दी। यह देण दरायुसने उन्हीं दण्ड देनेका संकेत कर दिया। पोरिष्टमने विद्वह मेला म भेज कर दरायुसने काने कुछ भीरीकी साथ ले चले सार पाया।

इन्हीं दण्ड समय बाद ही दरायुसने पालिप्योन विभक्त दे, तब गोड़ेमें चरमने समय दण्डा मुन्या पक्षमापूर हो गया था। दिनदिमादिन नामक एक विविधमन्त्रको विविधतामें इन्हीं दण्ड, अष्ट कारागम नाम कर दिया।

दरायुसने कामयाबिमन्त्र शरीर-रक्तन दण्ड कर मित्र गये थे, तब वहाँ व्यक्तमके दुर्जन शासनकर्ता पालिप्योनके भाई सिन्धामनके शरीर पर इन्हीं एक मिला घट्टा उपहा देवा कि जने शरीरद्वयको दण्डा दण्डा दण्डा कर गई। किन्तु मित्रो मने विना दृष्ट लिए ही उम इन्हीं दे दिया था। पीछे तब वे पारसके राजा हुए, तब मिन्धोमने पा का इन्हीं पड़ने की बात याद दिना दो इस पर इन्हीं प्रभुत्व पद पर १२३३ मुद्रा देना पाया। किन्तु मिन्धोमने पद मेला ता पधोकार किया पर पड़ने जन्मभूमि काममकी उद्धार कर उन्हीं प्रदान करनेको प्राथना की। दरायुस इस पर भी मन्त्रम की गये और व्यामणके उपारके लिए घोटागिसको एक दण्ड मेलाके साथ भेजा। घोटागिसने बहुत कामाजीवे व्यामण पर पधोकार कर उम मिन्धोमकी पर्यवे किया।

लोक इन्हीं समय बाबिलनके पधिशामा मिन्धोकी ही ठठे। दरायुसने यह संवाद पा कर ही प्रभुत्व मेलाकी साथ ले चरमके विद्वह पाता की और नगरको घेर लिया। कई दिन कोत गये, पर बाबिलोनियोंकी परास्त कर उन्हीं पधोतना व्याहार करानेका कोई लक्षण दीन नहीं पड़ता था। इसी प्रकार एक वर्ष बाद माघ गुजर गये। दरायुसने सभी खोदक बाबिलोनियोंके आगमें लिप्यन होने लगे। पधोतपके भीममें मर्षीनेमं दीपदिन नामक दरायुसके एक कामयाबीके मुद्रिकीमने शारद्वमन होनेमें पा गया। पोरिष्टम पड़ने माघ और माघ काट करे बाबिलोनियोंके मर्षी गये थे और दरायुसने उमकी दण्ड दुर्दण्डा दुई के, कर मुनाया था। बाबिलोनियोंने उमकी बात पर विमाम कर पड़ने सभी भार उम पर सुपुंर उर दिया। पक्षमा भीका देण कर पोरिष्टमने विमामता पक्षमने दरायुसके साथ बाबिलन नगर मर्षीके दिया। दरायुसने नगर पर दण्डा कर

कार जमा कर १००० सम्भ्रात मनुष्योंकी हत्या की
घोर दुर्गादिकी तोड़ फोड़ छावा (५१६ ई०के पहले)।

बाबिमन तो हाथ लगा गया। अब दरायुस
क्रिदिया राज्य पर आक्रमण करनेके लिए तैयारी करने
लगे। प्रायः ७—८ लाख सेना इकट्ठी की गई। बम-
कोरम उपसागरके ऊपर एक काठका पुल बनाया गया।
दरायुस प्रभूत सेनाकी साथ में सुमाने रक्षाभा द्रुप घोर
काठ पुल से कर बमकोरम पार हो गए। यहां ये पुलके
बनानेवाले सामिया दीपके अधिवासा माराडोकोयकी
यष्टेष्ट पुरस्कार देने धूमके मध्य होने हुए दानियूब नदी
पार हुए घोर हान नदीकी घोर जानी लगे। अन्तमें
ये क्रिदियाके अन्धतर पट्टे घोर क्रिदियन लोग
मानने तो युद्ध न कर सके, पर क्षिप कर तथा सुविधा
देव कर पारसियों पर आक्रमण करने लगे। दरायुस
को रसद जब धीरे धीरे कमने लगी तब ये लोट जानिकी
तैयारी करने लगे। वेदित घोर दुर्गम सेनाओंको
होड़ कर एक दिन ये निगाफालमें क्षिपके पहले घरे
दिए घोर काठके पुल द्वारा बमकोरम पार कर धूम होने
हुए धीरे धीरे एसियाके अन्धतर पट्टे। ये घाट
जहार सेनाओंकी सेनाविजयके अधीन रख कर उन्हें
धूम पर चढ़ाई करनेकी कह भावे थे। सेनाविजयमें
इन विषयमें बहुत लूट लफ्फता प्राप्त कर ली थी।
इन प्रकार इनका क्रिदियाविजयका अद्यय निष्फल
हुआ।

पारस्यको पट्टे कर दरायुसने पुलको घोर सिन्धु-
नदी तक अपना प्रभुत्व फैला लिया।

५०१ ई० सन्के पहले मकसम-दीपमें जब मनुष्यों
रुद्ध हुई, तब पहले सम्भ्रात लोग इस प्रदेशकी होड़ने-
की साथ द्रुप घोर उद्योगों ने का कर मिनिटमके शासन
कर्ता परिटमोरमसे सहायता मांगी। परिटमोरमने
भी आदेशिक शासनकर्ता दरायुसके भाई पार्साकार-
निसको मदद पाही। पार्साकारनिसने पारस्यके सम्राट्-
में सहायति से को घोर मिनिटमके अधीन २०० हजार
लगा कर उन्हें मिनिटम जानें घोर परिटमोरमकी
सेनाकी साथ में मकसम दीप पर चढ़ाई कर देनेकी
पात्रा दी। पार मान बिरा हाड़े इन्होंने बाद परिटमो-

रमने जब देगा कि रसद धीरे धीरे कमने लगी तो
घोर मद्र भी हाथ नहीं पाता, तब उन्हें मिनिटम-
नियोकी विद्रोही होनेके लिये उत्तेजित किया। तब
सार पार्सोनियोने विद्रोही हो कर माटिम नगर जला
हाना घोर मिनिटम दीप मद्र के हाथ लगा।

(४८४ ई०के पहले)

एथेन्सके अधिवासियोंने उस विद्रोहमें परिटमोरम-
की सहायता दी है, यह जान कर दरायुस पाग
बनुना हो गये। इन्होंने इटिम घोर पार्साकारनिसके
अधीन एक दन सेना पटिकादोपमें भेजा। सुमानद
मारथम युद्ध-क्षेत्रमें मिनिटमविजयके अधीन पारस्य-सेना
एथेन्सवासियों पुरो तरह पराजित हो एसियाकी माट
पाई। (४८० ई० सन्के पहले) दरायुस फिर भी एक बार
एथेन्स पर चढ़ाईकी तैयारी करने लगे। किन्तु युद्धारम्भ-
के पहले ही इनका स्वर्गवास हो गया।

(४८५ ई०के पहले)

इनके समयमें पारस्यराज्य उत्पत्तिकी चरम सीमा
तक पहुँच गया था। राजकोय सम्प्रदादि भेजनेके लिये
उन्होंने निर्दिष्ट दूरीके अनुसार राज्य भरमें मनुष्य हाग
हाक भेजनेकी व्यवस्था कर दी थी।

राजा होनेके पहले इनके तीन पुत्र थे, वेहे पार
चार पुत्रोंने जन्म पहल किया था।

दरायुस (दितोय)-ये साधारणतः दरायुस, पकाम नामके
प्रसिद्ध है। ये पार्सा ज़रथ्रेष्टके जारज पुत्र थे। दितोय
अश्वमेधके मारे जानेके बाद ये चातक मनश्रियामनकी
मिहासन च्युत कर स्वयं पारस्यके मिहासन पर बैठे
(४२३ ई० सन्के पहले)।

इनके दो पुत्र थे। पहलेका नाम पार्सा ज़रथ्रेष्ट
घोर दूसरेका साइरस (Cyrus) था। ये मध्य एशियके
कोरसम घोर अपना को पारिथेटिमने परिपालित
होते थे। पतः इनका राज्यमान सुबाह रूपमें नहीं
बलता था। उनके समग्र राजविद्रोहों हो गये, जिनमें
अधिजाग्रमें पराष्ट हो कर इनकी अधीनता नोबार
कर ली थी। १० वर्ष राज्य कर युद्धनेके बाद ४४५ ई०
सन्के पहले इनका देहान्त हुआ। ऐसे इनके पुत्र
पार्सा ज़रथ्रेष्ट पारस्यके मिहासन पर चढ़िदृष्ट हुन।

पहकोन नामक तीर्थ स्थापनी किया। इस तीर्थमें चार समुद्र भवस्थित हैं। जो इसमें स्नान करते वे सब प्रकारको दुर्गतियोंसे मुक्तकारा पाते हैं। (सात वन ७० ८३ अ०)
दर्म (सं० त्रि०) दृ-विदारि वाङ् म। दारक, फाड़ने-वाला।

दर्मन् (सं० पु०) दृ-विदारि वाङ् मनिन्। दर्म देखो।
दर्माण-पञ्चावके भन्तर्गत मुखदासपुर जिलेकी शहरगढ़ तहसीलका एक नगर। यहां एक सामान्य म्युनि-पलिटि है। पहाड़ी मछानन यहां वास करते हैं।

दर्मियान (हिं० पु०) दरमियान देखो।
दर्मियानी (हिं० वि०) दरमियानी देखो।
दर्य (सं० त्रि०) दक्ष दित गवादिवात् यत्। दरहित, भयमाघन।

दर्रा (फा० पु०) पहाड़ी रास्ता, घाटी।
दर्रा (हिं० पु०) १ मोटा घाटा। २ कंकरोनी मटो।
३ दरार, दरज।

दर्राज (फा० स्त्री०) काठ लोधा करनेका एक यन्त्र जो लकड़ीका बना होता है।
दर्राजा (हिं० त्रि०) बिड़ड़क चला जाना, बिना डरके चला जाना।

दर्व (सं० पु०) दृणाति विदारयतीति दृ-व। १ हिंसा करनेवाला मनुष्य, राक्षस। २ जाति विषय, एक जाति जिसका उत्पत्ति दरद, किरात आदिके साथ महाभारतमें पाया है। (सात २।५१।१६) ३ दर्व जातिकी निवास-भूत जलपदविषय, वह देश जहां दर्व जाति बसता थी। यह वस्तुमान पञ्जाब प्रदेशके उत्तरमें अवस्थित था। जियां टाप्। ४ उगोनरकी पवोमंद, उगोनरकी एक स्त्रीका नाम।

दर्वट (सं० पु०) दर्वयि हिंसाये भटति भट-भट् मृद-भादिवात् दलोपः। १ दण्डवादी, सजा देनेकी धमकी। २ डारपाल, थोड़ीदार, दरवाज।

दर्वशीक (सं० पु०) दृ-विदारि दृ-ईकन्। १ ईन्द्र। २ वायु। ३ वायुविषय, एक प्रकारका वाज।

दर्वी-१ वरारके बूल जिलेका एक तालुक। इसका क्षेत्रफल १०६२ वर्गमील है। इसमें ३२३ ग्राम प्रगत हैं। राजस्व कुल २६८२०० रु० है। यहां एक दोवानी, दो फौजदारी पदावत और ८ थाने हैं।

२ उक्त तालुकका एक नगर। यह पचा० २०°१८' ३०" उ० और देशा० ७७°४८' पू०में अवस्थित है। यह शहर बूल जिलेके मंदरसे २४ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहांसे लेकर सदर तक एक पक्की सड़क गई है। यहां एक थाना, एक डाकघर, पथिकोंके लिये एक बंगला और एक स्कूल है। दर्वी एक प्राचीन नगरी है।

दर्वि (सं० स्त्री०) दृणाति विदारयत्यनेन दृ-विन्। १ व्यञ्जनादि कारक, करछो, डोवा। इसका संस्कृत पर्याय-कम्बि, खजाका, दर्वी, कम्बी और खजाकज है। २ मर्पकी फणा, सपका फन।
दर्विक (सं० पु०) दर्वि स्त्रायो कन्, अभिधानात् पुंस्त्व। दर्वी देखो।

दर्विका (सं० स्त्री०) दर्वि स्त्रायो कन् टाप्। १ दर्विका, करछी, डोवा। २ कल्लनमंद, पालमें लगानेका एक प्रकारका काजल। यह घीसे भरे दीयोंमें धनी जला कर जमाया जाता है। यह काजल देवता और देवोंकी चढ़ाया जाता है। ३ गोजिझालता, बनगोमी, गोजिया।
दर्विपत्रिका (सं० स्त्री०) गोजिझा, गोजिया।
दर्विहोम (सं० पु०) दर्वाः होमः इ-तत्। दर्वीमाघन होममें द।

दर्विहोमो (सं० त्रि०) दर्विहोमोऽस्यास्तीति इनि। दर्विहोमकारी, दर्वी नामका होम करनेवाला।
दर्वी (सं० स्त्री०) दर्वि वाङ् डोवा। दर्वि, करछी, चमचा, डोवा।

दर्वीकर (सं० पु०) दर्वी फणां करोतीति कृ-ट, वा दर्वी फणा कर इवाच्य। सर्प, फनवाला नांव। दर्वीकर सर्पके विषयमें सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा हुआ है।

सर्प अनेक प्रकारके होते हैं, साधारणतः पक्षी प्रकारके हैं जो दर्वीकर, मण्डली, राजिमण्ड, निर्विष और वैकरञ्च इन पाँच त्रिपियोंमें विभक्त हैं।

इनमेंसे दर्वीकरके २६ भेद हैं, यथा-लघुसर्प, महालघु, लघुदर, खेतकपोत, महाकपोत, वनाहक, महासर्प, गृध्राण, मोहिताण, गधेधुक, परिसर्प, खण्डफणा, ककुद, पक्ष, महापक्ष, दर्मपुष्प, दधिमुख, पुण्डरीक, भ्रुकुटीमुख, पुष्पाभिकोण, गिरिसर्प,

दिन सुशोदयके समय सात मनुष्य छोड़े, पर सवार हो किमो निटिंट स्थानमें उपस्थित हों। वहां जिनका घोड़ा सबसे पहले दिनदिनाधिया, वही सिंहासनके अधिकारी उद्धार जायगे। दरायुसके इवारिम नामका एक विश्वस्त पोर दिवचय भृत्य था। उसने कौमलसे दरायुसका घोड़ा सबसे पहले दिनदिनाया। ठीक इसी समय परिष्कार पाकायमें विजनोंको अटकड़ाट पोर मेवका गजन सुनाई पड़ा। इस घटनाको देख अन्य कुछ मनुष्य बहुत क्रोध छोड़े परमे उतर कर दरायुसके पास तले फिर पड़े पोर उन्हें मस्त्राट, खोकार कर लिया।

इस प्रकार (५२१ ई० सन्के पहले) दरायुसने शारस्यका सिंहासन सुशोभित किया। चरबी लोगोंको छोड़ कर एगियाके जिन सब जागियों काहरम पोर कामवासिधको अधोनाता खोकार कर लो यो, वे भी पय दरायुसको हस्तक्षायमें था गईं। सिंहासन पर बैठनेके बाद ही इन्होंने पहले पतोया पोर पतिन्टोन नामकी काहरमको दो कन्याओंने, पोले काहरमके पुत्र सारदिसको कन्या पटमिग पोर पोटानिस नामक एक दूसरे व्यक्तिको कन्यासे विवाह किया।

चपने प्रमत्तको जड़ मजबूत कर इन्होंने पहले एक चरमूसि बनावई पोर उनके लवर इस प्रकार लिखवा दिया - 'इयतासके पुत्र दारयुसने चपने छोड़ेको चतुरता यया इवारिम नामक भृत्यको भीष्टा बुढिके इलने पारस्यका साम्राज्य पाया था।'

इसके पनत्तर इन्होंने पारस्य साम्राज्यकी २० प्रदेशोंमें विभक्त कर एक शासनकर्त्ताके अधीन प्रत्येकका नाम सवयो (Satrapy) रखवा। इन सब शासनकर्त्ताओंके नाम भी सतप रखि गये। प्रत्येक सवयमें कितना कर निश जायगा तथा सेनाओं पोर राजपरिवारके लिये कितना द्रव्य देना पड़ेगा, दरायुसने उनको भी तादाद म्भिर कर दो।

उधर मारदिसके शासनकर्त्ता पोरिटम दिना कारसके सम्मान्त लोगोंकी इच्छा बहुत निष्ठुरतासे किया करते थे। यह देख दरायुसने उन्हें दण्ड देनेका मकल्प कर लिया। पोरिटमके विरुद्ध सेना न भेज कर दरायुसने स्वयं कुछ लोगोंकी साथ में उन्हें मार डाला।

इसके कुछ समय बाद ही दरायुस जंग बासिडकों निकसे थे, तब छोड़ेमें उतरते समय इनका मुट्ठा चकनाचूर हो गया था। हिमवशिष्टिस नामक एक चिकित्सकको चिकित्सामें इन्होंने बहुत प्रवृत्त पारोय नाम कर लिया।

दरायुस जब कामवासिमिके शोर-रक्तन बन कर मिय गए थे, तब वही स्वामनके पुर्वत शासनकर्त्ता पतिन्टिमके भाई सिलोमनके शरार पर इन्होंने एक ऐसा सुंदर उपहास देवा कि उसे शरोदनेको इनका लकट इच्छा हो गई। किन्तु सिलोमनने बिना कुछ लिए ही उसे इच्छा दे दिया था। पीछे जब वे पारस्यके राजा हुए, तब सिलोमनने था कर इच्छा पहले को बात याद दिना दो इस पर इन्होंने प्रचुर खर्च पोर रत्न सुद्रा देना चाहा। किन्तु सिलोमनने धर्म सेना तो पखोकार किया पर अपनी जन्मभूमि स्वामनको उद्धार कर उन्हें प्रदान करनेको प्रायना को। दरायुस इस पर भी सजमत हो गए पोर स्वामनके उद्धारके लिए पोटानिसको एक दल सेनाके साथ भेजा। पोटानिसने बहुत पासनासे स्वामन पर अधिकार कर उसे विसोवनको शर्पण किया।

ठीक इसी समय बाविलनके अधिवासो विद्रोहो हो उठे। दरायुसने यह संवाद पा कर ही प्रभूत सेनाको साथ में उनके विरुद्ध यात्रा को पोर नगरको घेर लिया। कई दिन सोत गए, पर बाविलोनियोंकी पराज्ता कर उन्हें अधोनाता खोकार करानेका कोई नमन दोष नहीं पड़ता था। इसी प्रकार एक वर्ष पाठ मास गुजर गए। दरायुसके सभी कोशल बाविलोनियोंके सामने निष्फल होने लगे। चयरोधके बीसवें महीनेमें योपेरिम नामक दरायुसके एक कर्मचारीके बुढिकोमलसे बाधिन होलमें था गया। योपेरिम अपनी नाक पोर कान काट कर बाविलोनियोंके समीप गए थे पोर दरायुसमें उनको यह सुर्दशा हुई है, कह सुनाया था। बाविलोनियोंने उनकी बात पर विश्वास कर अपना सभी भार उन पर सुपुर्द कर दिया। पन्था मोका टैल कर योनीरामने विश्वासघातकतामें दरायुसके हाथ धातिलन नगर समर्पण किया। दरायुसने नगर पर पुरा अधिक

कार जमा कर ३००० सम्मान्त मनुष्योंकी हत्या की थीर दुर्गादिकी तोड़ कोड़ छासा (५१६ ई० के पहले)।

बाबिनन तो ह्राय मग गया। पच दरायुस स्क्रिदिया राज्य पर आक्रमण करनेके लिए तैयारी करने लगे। प्रायः ७—८ लाख सेना इकट्ठी की गई। बम-फोरस उपसागरके ऊपर एक काठका पुल बनाया गया। दरायुस प्रभूत सेनाको साथ ले सुषामे रवाना हुए और काठ पुल हो कर बमफोरस पार हो गए। यहाँ ये पुलके बनानेवाले सामिया दीवके अधिपति माराट्रोक्लीसकी यथेष्ट पुरस्कार दे, युँसके मध्य होते हुए, दानियूब नदी पार हुए और डान नदीकी ओर जाने लगे। अन्तमें ये स्क्रिदियाके अभ्यन्तर पट्टेचे ओर स्क्रिदियन लोग सामने तो युद्ध न कर सके, पर क्षिप कर तथा सुविधा देव कर पारसिकों पर आक्रमण करने लगे। दरायुस को रसद जब धीरे धीरे कमते लगी तब से मोट जानिकी तैयारी करने लगे। वीक्षित और दुर्बल सेनाओंको छोड़ कर एक दिन ये निगाकालमें कपके लड़ाई चल दिए और काठके पुल द्वारा बमफोरस पार कर युँस होते हुए धीरे धीरे एशियाके अभ्यन्तर पट्टेचे। ये फाठ हजार सेनाओंकी सेनाविजयके अधीन रूप कर लगे युँस पर चढ़ाई करनेको कर बाधे थे। सेनाविजयने इस विषयमें बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर ली थी। इस प्रकार जनका स्क्रिदियाविजयका सद्यः निष्पन्न हुआ।

पारस्यको पट्टेच कर दरायुसने पुनःको ओर सिन्धु नदी तक अपना प्रभुत्व फैला लिया।

३०१ ई० सन्के पहले मजूम-दीपमें जब गहबड़ों गड़ दुई, तब लड़ाई सम्मान्त लोग इस प्रदेशकी सीढ़ने-को साथ हुए और लड़ने में जा कर मिलिटमके शासन-कर्त्ता परिटनोरससे सहायता माँगी। परिटनोरसने भी फार्सिकके शासनकर्त्ता दरायुसके भाई आर्ताकार-निसकी मदद पाई। आर्ताकारनिसने पारस्यके सम्राट्-में सम्मति ले ली और मैकाथेटिमके अधीन २०० हजार मग कर लगे मिलिटम जाने और परिटनोरसकी सेनाको साथ ले मजूम, होव पर चढ़ाई कर देनेको आज्ञा दी। बार मास बँरा छाले इन्होंने बाद परिटको-

रसने जब देखा कि रसद धीरे धीरे कमतो आरहो है और शत्रु भी हाथ नहीं पाता, तब लड़ने में आद्यो-नियोंकी विद्रोही होनेके लिये उत्तेजित किया। तदनु-सार आद्योनियोंने विद्रोही हो कर सार्देस नगर जमा छासा और मिलिटम होव मजूमके हाथ मगा।

(४८४ ई० के पहले)

एवंसके अधिवासियोंने तब विद्रोहमें परिटनोरस-की सहायता दी है, यह ज्ञान कर दरायुस पाग बध्ना हो गये। इन्होंने डेटिम और आर्ताकारनिसके अधीन एक दम सेना पटिकाप्रोपमें भेजी। सुप्रसिद्ध मारथन युद्ध-क्षेत्रमें मिलिट्रायडिमके अधीन पारस्य-सेना एवंसवासिमें पूरी तरह पराजित हो एगियाकी माँट पाई। (४८० ई० सन्के पहले) दरायुस फिर भी एक बार एवंस पर चढ़ाईकी तैयारी करने लगे। किन्तु युवाश्व-के पडले ही इनका स्वर्गवास हो गया।

(४८३ ई० के पहले)

इनके समयमें पारस्यराज्य उत्पत्तिसे चरम सीमा तक पहुँच गया था। राजकोय सम्राट्तादि भेजनेके लिये लड़नेमें निर्दिष्ट दूरीके घनुवार राज्य भरमें मनुष्य दाग डाक भेजनेकी व्यवस्था कर दी थी।

राजा होनेके पहले इनके तीन पुत्र थे, दोहे बार बार पुतोंने जन्म ग्रहण किया था।

दरायुस (दितोय) — ये साधारणतः दरायुस, पकास नामसे प्रसिद्ध है। ये आर्ताकारनिसके शासन पुत्र थे। दितोय जश्मेगके मारे जानेके बाद ये शासक मनदियानम ही सिंहासन चढ़ा कर स्वयं पारस्यके सिंहासन पर बैठे। (४२३ ई० सन्के पहले)।

इनके दो पुत्र थे। पहलेका नाम आर्ताकारनिस और दूसरेका काररस (Cyrus) था। ये मजूम-क्षेत्रमें ओरासम और चपमो की पारिसेटिममें परिचित हो गये थे। पतः इनका राज्यमात्र सुबाह रूपसे नहीं बजता था। चनेक सज्जित शस्त्रविद्रोहो हो गये, निम्नमेंसे अधिकांशने पराजित हो कर इनकी पक्षोपना स्वीकार कर ली थी। १० वर्ष राज्य कर चुकनेके बाद ४०४ ई० सन्के पहले इनका देहाल हुआ। दोहे इनके पुत्र आर्ताकारनिस पारस्यके सिंहासन पर अधिकार हुए।

माधव तथा काशीमें भक्तपूर्णा आदिके दर्शन करनेसे प्रशय पुण्य लाभ होता है। (ब्रह्मसंहिता ७५० श्रीकृष्ण जन्म ७०)

दृश्यते यथायं तत्त्वमनेन दृष्ट करणे श्रुट् १०
शास्त्र, अध्यात्मवेदक शास्त्रभेद, जिसके द्वारा यथार्थ तत्त्वका ज्ञान होता है, उसे दर्शन कहते हैं।

ज्ञान लाभ करनेके लिए दर्शन ही एक मात्र उपाय है। दर्शनशास्त्रका अध्ययन बिना किये किसी भी तत्त्वका ज्ञान नहीं होता। यह दर्शन शास्त्र धार्मिक, नास्तिक, जैन, बौद्ध, वैष्णव आदि नाना भेदोंके कारण नामा प्रकार है। उपनिषदोंमें भार्य-दर्शनका मूलसूत्र प्रकट किया गया है। अध्यात्मतत्त्वविद् ऋषियण ब्रह्मदर्शिता द्वारा जिस तत्त्वका प्रकाश करते हैं, उसीका नाम दर्शन है। वेदकी महिमा, ब्राह्मण और उपनिषद्के आचार पर जो परमार्थ-सम्बन्धी कुछ मत प्रचारित हुए थे, उनका भी नाम दर्शन है। परमाय तत्त्वका अनुसन्धान करना ही भार्य-दर्शनशास्त्रका प्रधान लक्ष्य है। इन दर्शनशास्त्रोंमें ही जगत्के कारणोंका निरूपण और मनुष्यको युक्तियों वा पारलौकिक उन्नति साधनके उपाय निर्धारण आदि आलोचित हुए हैं। इनमें पङ्क दर्शन ही प्रधान है, जैसे—साङ्ख्य, पातञ्जल, न्याय, वैशेषिक, मोमांस और वेदान्त। माधवाचार्यने 'सर्वदर्शन संप्रदाय'में पङ्क दर्शनके निवा. और भी दश दर्शनोंका संक्षिप्त विवरण लिखा है, यथा—चार्वाक, बौद्ध, बौद्धत्वा जैन, मज्झिम, पाण्डित, पूर्णप्रज्ञ, रामानुज, रक्षेत्र, पाणिनि, शैव और प्रत्यभिज्ञा। ये सब दर्शन-शास्त्र सुख प्रणालीसे लिखे गये हैं।

दर्शनशास्त्रमें प्रवेश करनेके पहले 'तत्त्वपदार्थ' और 'कारण' आदि शब्दोंका अर्थ जान लेना आवश्यक है। न्याय, वैशेषिक, साङ्ख्य आदि दर्शनशास्त्रोंके प्रारम्भमें कुछ पदार्थ वा तत्त्व प्रस्तुत हुए हैं। जैसे—न्याय-शास्त्रमें बौद्धपदार्थ, वैशेषिकमें सप्त पदार्थ, साङ्ख्यमें पञ्चतत्त्व और पातञ्जलमें पङ्क विंशति तत्त्व माने गये हैं। बतमान समयमें पदार्थ शब्दका प्रचलित अर्थ केवल कतिपय इन्द्रियगोचर वस्तुओंका निर्देश करता है। जैसे—जल, सूर्य, पारद, मृत्तिका, इत्यादि। परन्तु दर्शनशास्त्रमें व्यवहृत पदार्थ शब्दका ऐसा अर्थ नहीं है

जैसे व्याकरणशास्त्रके पट्टनेमें पहले पहल कुछ स्वतः-सिद्ध मन्त्राणोंका ज्ञान कराया जाता है, उसी प्रकार दर्शनशास्त्रमें प्रवेश करनेसे पहले तत्त्व और पदार्थसे काम पड़ता है, इन्हीं दर्शनशास्त्रको धातु वा मन्त्रा ममभूता चाहिये। दर्शनशास्त्रके अनुसार हर एक कार्यका कारण है। न्याय और वैशेषिक दर्शनमें भिन्न शब्द द्वारा तथा वेदान्तदर्शनमें भिन्न शब्द द्वारा कारणका नामकरण हुआ है। न्याय और वैशेषिकमें कारण तीन प्रकार माना गया है—समवायि, प्रथम वायी और निमित्तकारण। वेदान्तिकानि और भी एक साङ्केतिक कारण माना है। उनका कहना है, कि जो कारण अन्य उपादानको सहायताके बिना ही कार्यकी उत्पत्ति करता है और स्वयं कार्यरूपमें परिणत नहीं होता उसे विवत उपादानकारण कहते हैं, जैसे रज्जु-मर्पका भ्रम होनेसे रज्जु ही उस मिय्या सर्पज्ञानमें विवत उपादानकारण होता है। यद्यत् रज्जु, स्वयं मर्प नहीं होती वस्तु अन्य उपादानकी सहायतासे मिय्या सर्पज्ञान उत्पन्न करती है।

अब माधवाचार्यके 'पङ्क दर्शन'के अनुसार यथा-क्रमसे चार्वाक आदि अन्य दर्शनोंका विवरण लिखा जाता है।

चार्वाक दर्शन—नास्तिकोंमें चार्वाक ही श्रेष्ठ है। इस दर्शनके अनुसार मनुष्यको जीवन भर सुखके उपायोंकी चिन्ता करने रहना चाहिए।

'माधवाचार्येण पुनः जीवेदं कृत्वा नृप' लिखे।
ब्रह्मभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कृतः ॥ (सर्वदर्शन ७०)

चार्वाकके मतसे देह ही आत्मा है, देहके सिवा आत्मा कोई पृथक् वस्तु नहीं है, प्रत्यक्ष साक्ष ही प्रमाण है, अनुमान आदि प्रमाण नहीं है। कामिनो-मन्त्राग उपादेय द्रव्य-भक्षण और उत्तम वसन-परिधानादिने उत्पन्न होनेवाला सुख ही परमपुरुषार्थ है। सुखान्वयणके निवा और कुछ भी प्रयोजनीय नहीं है। इस मतके अनुसार भूत चार हो है। चार्वाक मतानुसार स्वर्ग पाकागकी भूत नहीं मानते।

विशेष विवरण चार्वाक दर्शनमें देखो।
बौद्ध दर्शन—यह दर्शन चार श्रेणियोंमें विभक्त है,

दरायुस् (तृतीय) — द्वितीय दरायुस्के प्रयोग और इसी मंगके पश्चात् पारस्य राजा थे। इसीने तृतीय पार्स-जर्जेमके बाद पारस्य-मिह्रासनको सुगोभित किया था (३२६ ई० मनुके पक्षने)। इनके राजत्वके दूसरे वर्ष पसेकमन्दरने हुनेस्सेष्ट या कर एशियामें प्रवेश किया। दरायुस्के मात्र पसेकमन्दरको कई बार मुठ गेह दुन्देयी और हर समय दरायुस्को से हार होती गई थी। पचास वर्ष की अवस्थामें ये पक्षत्वकी प्राप्ति हुए (३१० ई० मनुके पूर्व)। इन्हींकेवल कुछ वर्ष राज्य किया था।

दरा (हि० स्त्री०) दरज, शिगाक।

दरारना (हि० स्त्री०) विदोर्ण होना, फटना।

दरारा (हि० पु०) धका, दररा, रगड़ा।

दरिदा (फा० पु०) मांसभक्षक वनजन्तु, फाड़ खा-वाला जन्तु।

दरि (सं० स्त्री०) दु विदारणे इन्-डोप्। १ कन्दर, गुहा। २ तपककुलजात सर्पमूढ।

दरित (सं० स्त्री०) द्रो मयमस्य मन्त्रातः, दर-तारकादि-त्वात् इतच्। भोत, डरपोक।

दरिद्र (सं० पु०) दरिद्राति दुर्गच्छति दरिद्रा-पच्। १ निर्धन, कंगाल मनुष्य। पर्याय—निम्न, दुर्बिध, दोम, दुर्गत, कोकट, दुख और पश्यामित। (सं० स्त्री०) २ निर्धन, गरीब, कंगाल।

पत्रपुराणमें लिखा है, कि जो मनुष्ययोगिनीं जन्म से कर तीस दिन भी उपवास नहीं करते पर्याप्त किसी व्रत नियमादिका अनुष्ठान नहीं करते और किसी तीर्थको नहीं जाते तथा सुवर्ण गो प्रभृति दान नहीं करते, ये ही दरिद्र हो कर जन्म ग्रहण करते हैं।

मनुका मत है, कि जो किसी शुभ कार्यादिका अनुष्ठान नहीं करते, ये ही दरिद्र होते हैं।

श्री, यासक, हृष, समस्त और दरिद्रको धनदण्डकी जगह व्रत पादिकी सजा देना चाहिये।

दरिद्रता (सं० स्त्री०) दरिद्रस्त्वःभावः दरिद्र-तस्। दरिद्रत्व, निर्धनता, कंगाली।

दरिद्रत्वं (सं० स्त्री०) दरिद्र-त्वं। दरिद्रता, निर्धनता, गरीबी।

दरिद्राय (सं० स्त्री०) दरिद्रको अवस्था, दरिद्रप, गरीबी।

दरिद्रायकः (सं० स्त्री०) दरिद्रातीति दरिद्रा-प्युत्। दरिद्र, दोम, गरीब।

दरिद्रित (सं० स्त्री०) दरिद्रा-त्त। दरिद्र, गरीब।

दरिद्रित्व (सं० स्त्री०) दरिद्रा-त्त्वत् या त्वत्। दरिद्रायक, दुःखी, गरीब।

दरिन् (सं० स्त्री०) दू-भये विदारि वा इति। १ भोद, डरपोक। २ विदारणयोग, फाड़नेवाला।

दरिया (फा० पु०) १ नदी। २ निम्न, समुद्र।

दरिया (हि० पु०) दलिया।

दरिया—पक्ष्मनिस्तानके पश्चात्त एक जूट। यह पचा० ३३° ३५' ३०" और देशा० ६४° ३' पूर्वमें अवस्थित है। यह सियाकीसे ४० मील दक्षिणमें पड़ता है।

दरिया इन्दिर नामक एक जूट पारसके पश्चात्त सरास नगरसे १० मील पूर्वमें अवस्थित है। इसकी लम्बाई ६० मील है।

दरियारै (फा० स्त्री०) १ नदी संस्थी। २ नदीमें रहने-वाला। ३ नदीके पानका। ४ समुद्र संस्थी। (स्त्री०) ५ गुच्छोको दूर से ला कर यहाँ छोड़नेकी क्रिया, भोली। ६ एक प्रकारकी रेशमी पतली सांठन।

दरियारैपोड़ा (हि० पु०) पक्षिकामें नदियोंकी किनारेको टमटनी और झाड़ियोंमें पाये जानेवाला एक प्रकारका जानवर। यह मेंटकी तरहका होता और इसको खान मोटी होती है। इसके घोंसेमें चार चार छंगलियाँ रहतीं जो चूरेके पांकारकी होती हैं। मेंटकी चन्दर कटोने दाँत होते हैं। इसका शरीर गाढ़ा, मोटा, भारी और बेटंगा होता है। इसके शरीर पर बाल नहीं होते। नाक फुनो और समरी हुई तथा पूँछ और पंखों कोटो होती है। इसका आवाय पदार्थ पोछेकी जड़ और कच्चा है। मारा दिन यह झाड़ियों पादिमें छिपा रहता है। रातको अपना आहार ठूँकनेके सिधे बाहर निकलता और फसल पादिकी खान पहुँचाता है। जराबा बटका या भय पाने की यह नदीमें जा कर मोता मार लेता है। यह बहुत डरपोक जानवर होता, इसी कारण नदीमें बहुत दूर नहीं जाता है।

१ माध्यमिक, २ योगाचार ३ भौतिकीय और ४ वैभा-
यिक। माध्यमिकी मतमें—कष्ट भी नहीं है, सब
कष्ट शून्य है। व्यावस्थामें जो सुख देवमें पातो
है, आद्यतन अवस्थामें भी नहीं दिखलाई देतो और जो
पदार्थ आद्यतन अवस्थामें दृष्टिगोचर होते हैं, वे व्याव-
स्थामें नहीं दीप्तते तथा सुषुप्ति अवस्थामें भी कष्ट
उपनधि नहीं होता। हमने मान्य होता है, कि
सुषुप्ति: कोई भी पदार्थ मत्त्व नहीं है। यदि मत्त्व होते,
तो समस्त अवस्थाओंमें दिखलाई देते। योगाचारके
मतमें—याज्ञ यज्ञ मावहो यमीक है, जेवन चार्तिक
विज्ञान रूप थाता हो मत्त्व है। यह विज्ञान दो प्रकार-
का है, १ प्रवृत्तिविज्ञान और २ धान्यविज्ञान।
ज्ञात और सुषुप्ति अवस्थामें जो ज्ञान होता है, उसे
प्रवृत्तिविज्ञान; और सुषुप्ति अवस्थामें जो ज्ञान होता
है, उसे धान्यविज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान केवल
थाताके प्रवृत्तिवचनमें हो उत्पन्न होता है। भौतिकीयके
मतमें—याज्ञ यज्ञ सद्य और धनुमानमिह है। वैभा-
यिकीके मतमें—याज्ञ यज्ञ प्रत्यक्षमिह है। बोधम-
के उपदेष्टा एकमात्र भगवान् बुद्ध होने पर भी, त्रिप्यामि
मतभीष्टका होना समर्थ नहीं है। जैसे किसी व्यक्तिमें
कहा कि "सर्व भस्म हो गया"। इस वाक्यको सुन
कर मम्यट और घोर, परदार और परधन-हरणका समय
उपस्थित हुआ, ऐसा समझते और मुनिव्यभिचर मन्त्रा-
वन्दनादिका समय हुआ, ऐसा समझते। हमने मान्य
होता है कि वहाँके एक ही वाक्यका योगागव अपने
परिभाषानुसार भिन्न भिन्न अर्थ लगा लेते हैं। हमने
धनुषार पद ज्ञानेन्द्रिय और पद ज्ञानेन्द्रिय, मन और
बुद्धि इन द्वादश इन्द्रियोंका आद्यतन होनेके कारण,
शरीरकी द्वादशाद्यतन कहते हैं। बोधके मतानुसार—
देवता मुक्त है, जगत् शाश्वत है, प्रत्यक्ष और धनु-
मान ये दो समाक्ष हैं एवं दुःख, पापतन, समुद्रय और
मार्ग ये चार तत्त्व हैं। विज्ञान, वेदना, मंशा, मंशार
और कष्टमत्त्व ये पदमत्त्व दुःखतत्त्व हैं। पांच इन्द्रिय
तथा रूप, रस, मन्त्र, शब्द और गन्ध ये पांच विषय
एवं मन और धर्माद्यतन (धर्मात् बुद्धि) ये द्वादश आद्य-
तनतत्त्व हैं। मनुष्योक्त दशाकरणमें प्रभावतः जो राग

होपादि उत्पन्न होते हैं, उन्हें समुद्रय-तत्त्व कहते हैं।
ममी मंशार चक्षमात्र व्याप्यो है। इसी तरह जो स्वर
वाचना है, धमका नाम मार्गतत्त्व है। यह मार्गतत्त्व
ही नियोज्य है। धर्मासन, कर्ममत्त्व, सुषुप्त, और,
पूर्वाङ्गमोजन, समुद्रावस्थान और रसाव्यय ये ० बोधके
यति धर्मके चार हैं।

विषय विवरण जानना हो तो बौद्ध धर्म देखो।

आर्यत वा जैवदर्म—पार्श्वतृण्य दिग्गम्य होने
है। हमने पागममें बोधके चार्तिकवादका स्पष्टन
किया गया है। पार्श्वतृण्यनके धनुषार थाता चार्तिक
नहीं बनू मत्त्व है। यदि प्रत्यक्ष शरीरमें एक एक
थाता निरन्तर विद्यमान न रहतो तो ऐहिक फल साधन
के लिए स्तुति-वाचिण्यादि कर्मोंमें किसी प्रकार भी
लोकोत्की प्रवृत्ति नहीं होती। कारण पदमें लिए हो
सब कोई उपायानुष्ठान करते हैं। यदि उपायानुष्ठान-
कर्त्ता थाता फल भोगके समय उपस्थित न रहे तो
एकके फल-भोगके लिए दूसरेको प्रवृत्ति किस प्रकार
सम्भव हो सकती है? पार्श्वतृण्यनुसार थाता विर-
ह्यावो है, जोवका परिमाण देखके सह्य है, पार्श्वत
(पार्श्वत) की परमपर या परमाणा है जो सर्वत्र,
एवं बोधराग धर्मात् रागहोपादिसे शून्य है। मन्त्र-
दर्म, मन्त्रज्ञान और मन्त्रचार्तिक ये तीन तत्त्व हैं,
इन्हींमें मोक्षका प्राप्ति होती है। जिमोक्त तत्त्वोंके ज्ञानमें
विपरीत ज्ञान और धर्मवादिका निवारणार्थ रूप मन्त्र-
वहाकी मन्त्रदर्शन कहते हैं। मंथेधर्म या विस्तारित-
रूपमें जैमोक्त तत्त्वोंके उपायानुष्ठानकी मन्त्रज्ञान कहते
हैं (जो मन्त्रदर्शन-पूर्वक हो होता है) और जैमो-
गमानुसार पार्श्वत, धनुष, पदार्थ, ब्रह्मचर्य और
परिवर्ध इन पांच प्रतीका धारण करना मन्त्रचार्तिक
है। स्थावर की चाहे जड़म, किसी भी प्रकारके जोवका
मन-वचन-चायने विनाश न करना पार्श्वत है, विना
द्विजे रूप पदार्थकी पहचान न करना पदार्थ है, मत्त्व और
हितकर प्रत्यक्ष प्रिय वचन बोधना धनुष है, ज्ञानकी
जातना ब्रह्मचर्य है तथा समस्त पदार्थोंमें समस्त
व्याग देना परिवर्ध है। ये पांच महाप्रती हैं। इनके
साधनसे परमपदकी प्राप्ति होती है। इन द्वादशमें

योग इसका गिकार गहरे छोट कर करते हैं। रातको गहरे में गिर कर फंम जानेंसे यह मार डाला जाता है। इससे घमड़ेसे एक प्रकारका लघोला घोर मजबूत चावुक बनता है। विशेष कर मित्र देगमें इस चावुकका प्रचार है। यहाँको प्रजा इसकी मारसे बहुत भय पाती है। पुर्य समयमें इस प्रकारके छोड़े मोल नदीके किनारे बहुत पाये जाते थे, पर अब गिकार होनेके कारण कुछ कम हो चले हैं।

हरियाई नारियल (हिं० पु०) चक्रोका, अमेरिका आदि में मसुद्रके किनारे होनेवाला एक प्रकारका नारियल। इसकी गिरी घोर हिलका स्वर्ण पर बहुत लड़ा हो जाता है। गिरी दबाके कामसे काई लातो है, खोपड़े का पात्र बनता है जिसे सन्यासो या फकीर अपने पास रखते हैं।

हरियागञ्ज—मारण जिलेके अन्तर्गत एक प्रधान व्यापिक स्थान।

हरियादामी—एक सम्प्रदाय। प्रवाद है, कि ये आधे हिन्दू घोर आधे मुसलमान होते हैं। ये निगुण उपासक हैं, जिसो देव प्रतिमूर्तिको चर्चना नहीं करते हैं। इस सम्प्रदायको हरिया साहब नामक एक व्यक्तिने बनाया था।

हरियादिन (फा० वि०) उदार, दानी।

हरियादिलो (फा० खो०) उदारता।

हरियापुर—१ बरारके अन्तर्गत अमरावती जिलेका एक तालुक। यह पचा० २०° ४८' से २१° २०' उ० घोर देगा० ७०° ११' से ७०° १८' पू० में अवस्थित है। इसका परिमाण फन ५०५ वर्ग मान है। कुल राजस्व १००००० रु० है। यहाँ ७ टोवानो घोर १ कौजदारो पदागत तथा दो घाने हैं। लोकसंख्या प्रायः १११६८८ है। इसमें एक महर घोर २२४ घाम लगते हैं।

२ उक्त तालुकका प्रधान नगर। यह पचा० २०° ५८' घोर देगा० ७०° २२' १०" पू० एलिचपुर नगरसे प्रायः १४ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहाँके अधिवासियों में कुलमैकी संख्या दो अधिक है। यहाँ कौजदारो घोर टोवानो पदागतके अतिरिक्त दो हज्जु घोर घाना है। नगरके चारों घोर बहुतसे मस्जिद घोर मस्जिद हैं।

Vol. X, 55

हरियाबाद—अयोध्याके अन्तर्गत, बड़वाँको जिलेका एक परगना। इसके उत्तरमें बांदोसगाय, पूर्वमें गगरानट घोर दक्षिणमें बघेरी परगना है। परिमाण फन २१ वर्ग मील है। यह परगना हिन्दुओंके मत्स्यनामो नामः सम्प्रदायका प्रधान पहाड है। यहाँके उत्पन्न वृक्षोंमें चावल, गेहूँ, ईस घोर ज्वार आदि प्रधान हैं।

२ गुरुप्रदेशके बड़वाँको जिलेके अन्तर्गत राममनेडो-घाट तहसीलका एक महर। यह पचा० २६° ५१' उ० घोर देगा० ८१° ३४' पू० अवध घोर रोहिलसगञ्ज ईलके संमोः अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५८२८ है। कहते हैं, पन्द्रहवीं शताब्दीमें जौनपुरके मध्यमदगाह नामक किसी कर्मचारीने इसे बनाया है। पहले यहाँ जिलेका सदर था, किन्तु जन्मवायु खराब रहनेके कारण पदागत तथा समस्त कार्यालय उठ कर बड़वाँकोको चले गये। यहाँ एक पञ्चतान, एक स्नान घोर दो बाजार हैं।

हरियाफत (फा० वि०) प्राप्त, मानसूत्र।

हरिया बरामद (हिं० पु०) हरियाबारा देवो।

हरियागरार (फा० पु०) यह भूमि जो किसी नदीको धारा छट जानेसे निकल जाती है घोर जिनमें चितो होते हैं।

हरियाबुर्द (फा० पु०) नदीको धारासे नटकी गई हुई जमीन। इस प्रकारको जमीन चेतोको योग्य नहीं रहती।

हरियाव (हिं० पु०) १ हरिया देवो। २ मसुद्र, मित्र। दरो (मं० खो०) दरि होय। १ यवतकी मुहा, लोह। २ पहाडके बीच गह मोहम्यान जहाँ कोई नदी बहती ना गिरती हो।

दरी (हिं० खो०) १ एक प्रकारका मोटा इनका बिक्रीना जो मोटे धूर्तीका गुना दुधा होता है, मत-रंजी। (वि०) २ विदोष करनेवाला, फाटनेवाला। ३ हठधोके, करनेवाला।

दरोफाना (फा० पु०) एक प्रकारका घर जिनमें बहुतसे दरवाजे हैं, बारहदरो।

दरोचा (फा० पु०) १ पिडकी, भरोवा। २ होटा दार। ३ पिडकीसे घाम बँडनेको जगह।

प्रायः सभी दर्शनोका अपसाहित्य खण्डन किया गया है। विलुप्त विवरण जाननेके लिए एवं भागमें जैनधर्म खण्ड देखो।

चक्रवीर-पाशुपत-दर्शन—यह दर्शन परम कारुणिक महादेवकी श्री परमेश्वर एवं जीवोंकी पशु व्रतलाता है। जीवोंके अधिपति होनेके कारण परमेश्वरकी पशुपति भी कहा जा सकता है। जैसे किसी विषयका सम्पादन करनेके लिये अस्त्रदादि, यन्त्रतः हस्तपदादिको महायत्ना लेनो पड़तो है, उसो प्रकार अन्य वस्तुकी सहायताके बिना ही जगदीश्वरने जगज्जात समुद्रय निर्माण किया है। इसलिए उनको स्वतन्त्रकर्त्ता भी कहा जा सकता है तथा अस्त्रदादिके द्वारा जो कार्य सम्पन्न होते हैं, उनके भी कारण परमेश्वर हैं; इसलिए उनको सब कार्यका कारण भी कहा जा सकता है। इस दर्शनके मतसे, मुक्ति दो प्रकारकी है—एक दुःखोंकी अत्यन्त निवृत्ति और दूसरो परमेश्वर्यकी प्राप्ति। दुःखोपव निवृत्तिरूप मुक्ति होने पर फिर कभी दुःख नहीं होता। इसलिए उस मुक्तिको परम दुःखनिवृत्ति कहते हैं। एक शक्ति द्वारा कोई विषय समिप्राप्त नहीं रहता, कितना भी सूक्ष्म, कितना भी व्यवहित वा दूरस्थ क्यों न हो, व्यक्त अव्यवहित और अदूरवर्ती वस्तुकी तरह दृष्टिगोचर होता है तथा जिध वस्तुमें जो गुण वा दोष है, वह भी मालूम हो जाता है; फलतः सभी विषय एक शक्तिमान् व्यक्तिके ज्ञानवश-के पथिक होते हैं। क्रियाशक्ति होनेसे जब जिस विषय-को समिलाया होता है, उसो समय वह सुसम्पन्न हुआ करता है। क्रियाशक्ति मुक्त व्यक्तिकी केवल इच्छा मात्र-को प्रपेक्षा करती है। मुक्त व्यक्तिको इच्छा होने पर अन्य किसी कारणकी प्रपेक्षा न कर, शीघ्र ही सर्वसंमनोरथको पूर्ति होता है। इस प्रकार एक शक्ति और क्रियाशक्तिरूप मुक्ति परमेश्वरकी तत्त्व शक्ति सट्टम है, इस कारण उसका नाम परमेश्वर्य मुक्ति है। पूर्ण प्रसङ्गदर्शनमें कथित भगवद्भक्त्य प्राप्तिकी मुक्ति कहा गया है। मुक्त व्यक्ति यदि दासत्वरूप अधोनेताश्रयनतामें वह भी रहा, तो उसे मुक्त किस तरह कहा जा सकता है? इत्यादि रूपसे इसमें प्रसङ्गपूर्ण दर्शनका खण्डन किया गया है।

इस दर्शनमें प्रधान धर्म साधनकी चर्याविधि कहते हैं। चर्या दो प्रकारकी है, एक व्रत और दूसरो हार। त्रिसन्ध्या भस्मस्वच्छण, भस्मगम्या पर शयन और उपहार इन तीन क्रियाओंकी व्रत कहते हैं। 'ह, ह, हा' इन प्रकार हाथरूप दस्तिस, गन्धर्वशास्त्रानुसार महादेवके गुणगानरूप गोत, नाथगान-भग्नमत नृच, पुत्रवन्दन चोत्कारके समान चोत्काररूप-हुद्दहार, प्रणाम और जप इन छः कर्मोंको उपहार कहते हैं। इस प्रकारके व्रत जानममाजमें न कर अथवा गुमरोतिमें सम्पन्न करने चाहिए। हाररूप चर्याके छः भेद हैं—प्राथन, मन्दन, मन्दन, शृङ्गारण, धवितकरण और धवितप्रापण। सुम न होने पर भी दिखनादि देनेको प्राथन कहते हैं। वायु-के सम्पर्कसे कम्पितकी तरह शरीरादिके कम्पनको मन्दन, खज्ज वाहिके समान गमनकी मन्दन, परम रूपवतो स्त्राके सन्दर्गनसे वास्तविक धामुक्त न होने पर भी कामुककी भांति कुलित ध्व-हार करनेको शृङ्गारण, कर्त्तव्याकर्त्तव्य ज्ञानशून्यको तरह विगर्हित कर्मानुष्ठानको धवितकरण और निरर्थक वाधितार्थक शब्दोच्चारणको धवितप्रापण कहते हैं। इस दर्शनके अनुसार तत्त्वज्ञान ही मुक्तिका साधन है। शास्त्रान्तरमें भी तत्त्वज्ञानकी मुक्तिका साधन कहा गया है, किन्तु शास्त्रान्तर द्वारा मुक्ति तत्त्वज्ञान होनेको न्यायवना न होनेसे यही शास्त्र समुच्चर्षोंके लिए अव-लम्बनीय है। विशेषरूपसे ममस्त वस्तुओंका ज्ञान बिना हुए तत्त्वज्ञान नहीं होता। इस शास्त्रमें परमेश्वर्य-को प्राप्ति और दुःखकी निवृत्ति इन दोनोंका ज्ञान ही मुक्ति है और ये ही दोनों योगका फल है। इस दर्शन-के मतसे कार्य निरर्थक है और परमेश्वर स्वतन्त्रकर्त्ता है।

चक्रवीर-पाशुपत देखो।

शैवेदर्शन—इस दर्शनमें शिवकी परमेश्वर और ओयोंकी पशु कहा गया है। चक्रवीरपाशुपत-दर्शनके मतमें परमेश्वरके कर्मादि निरपेक्षकर्त्तव्य कहें गये हैं, किन्तु ऐसा न मान कर जिस वांछिने जिस प्रकारका कर्म किया है, परमेश्वरने उसे तदनुसृत ही फल दिया है, इस कारण परमेश्वरकी कर्मादिप्रपेक्ष कर्त्ता कहा गया है। अस्त्रदादिके अतिरिक्त कोई एक जगत्कर्त्ता है।

दरीबी (फा० पु०) १ भगोवा, बिहारी। २ बिहारी के पास बैठनेकी जगह।

दरीबा (हि० पु०) १ पानका बाजार। २ बाजार।

दरीभूत (सं० पु०) पर्यंत, पहाड़।

दरीमुग (सं० स्त्री०) दूर्याः मुक् ६-तत्। १ गिरि-गुहाका मुख, गुफाका मुँह। २ रामकी सेनाका एक बन्दर।

दरीयत् (सं० लि०) दरी विद्यतेऽस्य दरी-मनुष्य, मस्य सः। गुहाविगृह्य पर्यंत, वह पहाड़ जिसमें बहुतसो गुहायें हों।

दरीती (हि० स्त्री०) घनाञ्ज दलनेका छोटा चौजार, चक्री।

दरीज (हि० पु०) बकाइनका पिड़।

दरीग (सं० पु०) कामी, कमर।

दरीना (हि० स्त्री०) १ रगड़ना, पीसना। २ रगड़ते हुए धक्का देना।

दरीरा (हि० पु०) १ रगड़ा, धक्का। २ मँहका भाना। ३ यहावका जोर, तोड़।

दरीस (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी छोट। (वि०) २ तैयार, बना घनावा।

दरीसो (हि० स्त्री०) तैयारो, मरकत, दुरुस्तो।

दरीग (सं० पु०) घमस्य, झूठ।

दरीगलको (सं० स्त्री०) १ सत्य बोलनेवा गपव खा कर सो झूठ बोलना। २ झूठी गवाही देनेका छुम।

दरीगा (हि० पु०) दारोगा देखी।

दरीद—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत काठियावाड़ प्रदेशके भालावर विभागका एक सामान्य राज्य। इसमें केवल एक ग्राम लगता है जिसमें दो करत आधोग अमीरदारी-का अधिकार है। राज्यकी भाषा प्रायः ११८० ई० ई जिस-में इटलिय गवर्मेण्टकी १६६ और छानागढ़के नवाबकी ५० ई० करस्वरूप देने पड़ते हैं।

दरीदर (सं० पु० स्त्री०) दरी मयं सज्जनकं सदरं यस्य वा दुरीदर स्यो साधु। दुरीदर, पाया-कोड़ा, चुषा।

दरीती—बहालके गादाबाद जिलेका एक ग्राम। यह राम-गढ़के ६ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहां मवर-कोई का अनामय है।

दरीनी—मारघ जिलेके अन्तर्गत पानवाहा विभागका एक प्रधान ग्राम। यहां हिन्दुओंके दो छोटे मन्दिरोंका अनामय टपुनेमें पाता है। इसके मिया यहां दो सुन्दर जमाअत घोर दो बड़े स्तूप हैं।

दरार (हि० स्त्री० वि०) दरार देखी।

दरगढ़ (हि० पु०) दरगढ़ देखी।

दर्ज (हि० स्त्री०) १ दर्ज देखी। (वि०) २ लिखा हुआ, कागज पर चढ़ा हुआ।

दर्जन (हि० पु०) बारहका समूह, एकत्रित बारह वस्तुएं।

दर्जा (सं० पु०) १ श्रेणी, कोटि, वर्ग। चढ़ाईके क्रममें ऊंचा नीचा स्थान। २ एक चोड़दा। ३ विभाग, खण्ड।

(हि० वि०) ५ गुणित, गुमा।

दर्जिन (फा० स्त्री०) १ दर्जो जातिको स्त्री। २ दर्जो-को स्त्री।

दर्जो (फा० पु०) १ कपड़े सोनेका व्यवसाय करनेवाला मनुष्य। २ कपड़ा सोनेवालो जातिका पुरुष।

दर्जु (सं० लि०) द बिदारे द-यच्छ धेदे दृढभावः। दार-यिता, विदारणकर्ता, फाड़नेवाला।

दर्जु (सं० पु०) द-वाहु स इडभावः कान्दमः। दारक, वह जो फाड़ता हो।

दर्द (फा० पु०) १ व्याध, पीड़ा। २ दुःख; तकलीफ।

३ सहायमूर्ति, करुणा, दया। ४ हानिका दुःख।

दर्दमंद (फा० वि०) १ पीड़ित, जिसे दर्द हो। २ जिसे सहायमूर्ति हो, दयावान्।

दर्दर (सं० पु०) द-यच्छ चक्षुः स्यात्। १ पर्यंत, पहाड़। २ ईषद भग्नभाजन, वह पात्र जो कुल कुल भग्न हो गया हो।

दर्दरान्न (सं० पु०) व्यञ्जन विशेष। इसका पर्याय—मोनाचोय है।

दर्दरीक (सं० स्त्री०) दारयतीय कर्षो द-विच्छिन्नम्।

१ बाधविशेष, एक प्रकारका बाधा। २ भेक, धंग।

दरुदर (सं० पु०) दृष्टाति कर्षो मय्देनेति द-वरध्। १ भेक, मिट्टक, धंग। २ मिध, वादन। ३ वाद्यमंद, एक प्रकारका बाजा। ४ पर्यंतभेद, मंजय पर्यंतसे लगा हुआ एक पर्यंत। ५ राघवमंद, एक राघवका नाम। ६ दम्भक धातुमंद, चबरक नामकी धातु। ७ एक पर्यंत निकट

यह अनुमान है। चन्द्रादिकी तरह परमेश्वरका प्रथम शरीर नहीं है, पञ्चमयात्मक शक्ति ही उसका शरीर है। ईशान, तत्पुत्र, अश्वर, वामदेव और मधो-
 काल ये चार मंत्र यथाक्रमे ईश्वरके मयात्मक, सुप्त, हृदय और वादन्तक हैं तथा अनुपद, तिरोभाव, प्रलय, स्थिति और सृष्टिक्रम पञ्चतत्त्वोंके भी कारण हैं।
 पापम द्वारा किमनुमान मान्य होता है कि चन्द्रादि-
 कोतरके ईश्वरके भी मयनादिविभिन्न शरीर हैं, परन्तु
 वास्तवमें ऐसा नहीं है। उन पापमोंका तात्पर्य इस
 प्रकार है, कि निराकार ब्रह्मको विमलाके स्वरूपका ध्यान
 नहीं हो सकता, इस कारण भक्तवत्सल परमेश्वर भक्तों-
 के उन कार्यात्मक सम्पादनायें कदापिपूर्वक कभी कभी
 तात्त्विक पाकार धारण करते हैं। इस दर्शनके मतमें
 पदार्थ तीन प्रकारका है, १ पति, २ पय और ३ पाप।
 पति पदार्थ स्वयं भगवान् शिव हैं और जो
 शिवत्वको प्राप्त हुए हैं, वे पय हैं तथा शिवत्व-
 पदकी प्राप्तिके लिए दोषादि उपाय पाप हैं।
 पय पदार्थ जीवात्मा है। यह जीवात्मा महत् स्वप्नादि
 पदवाच्य है; देहादिमें भिन्न सर्वव्यापक है, नित्य है,
 अपरिच्छिन्न, दुर्भेद्य और कर्त्तास्वरूप है। जीवात्मा देवों।
 पाप पदार्थ चार प्रकारका है—मन, काम, माया और
 मोघशक्ति। आभासिक सृष्टिको मन कहते हैं, जैसे
 तन्त्र सूत्र द्वारा पाच्छादित रहता है, उसी प्रकार यह
 मन हज्जशक्ति और श्रियाशक्तिको पाच्छादित कर देता
 है। धर्माधर्मको धर्म कहते हैं, प्रलयावस्थामें जिसमें
 समस्त कार्य नोन होती और फिर सृष्टिके समय पुनः
 उत्पन्न होती हैं, उसको माया और दुष्ट-तिरोधायक
 पापको मोघशक्ति कहते हैं। जाय पयपदार्थ है। यह पय
 पदार्थ तीन प्रकारका है—विज्ञानात्मक, प्रलयात्मक और
 मयात्मक। एकमात्र मयनरूप पापमुक्त जीवकी विज्ञाना-
 त्मक कहते हैं और मन, धर्म और माया इन पापतत्त्व
 द्वारा मुक्तको मयम। समाप्तकृत्य और प्रलयात्मकमुक्त
 भेदमें जाय भी दो प्रकारका है। प्रलयात्मक जीवके
 भी दो भेद हैं—प्रलयान्तर और प्रलयान्तर। प्र-
 लयान्तरकी शक्ति मिलती है। प्रलयान्तरकी पूर्णतक
 देव चारक कर शक्तानुसार नियंत्रक, अनुयायि विभिन्न

योगियोंके अन्तर्गत पड़ता है। इस मतमें—मन, बुद्धि
 और चक्षुहार, विज्ञानरूप प्रकाशरूप, भोगसाधन मन,
 काम, नियति, विद्या, राग प्रकृति और गुण ये सब तरह
 पञ्च महाभूत, पञ्च तन्मात्र, पञ्च धर्माश्रित्य और पञ्च
 धर्माश्रित्य इन एकविंशति तत्त्वानाम् शून्य देखी पूर्ण-
 तक देव कहते हैं। पञ्च पापतत्त्व जोधर्म शक्ति के पुनः
 निर्माण संचित हैं, उनको महेश्वर प्रविधीवतिर प्रदान
 करते हैं। मयात्मकत्व जीव भी दो प्रकारका है—एक
 क्षणिक और अक्षणिक। महादेव पञ्च कर्तृत्वकी मह-
 श्वरकी पदवी देते हैं और पञ्च कर्तृत्वोंको संभारकृपमें
 निहित करते हैं। देव देव।

पूर्वप्रवर्तन—पूर्वप्रवर्तन पापमत्तोयत्तत भाष्यके
 मतानुसार अपने दर्शनका मन्त्रन किया है। इस दर्शन-
 के अनुसार जीव शून्य और ईश्वर-मेषक है, पति पय-
 कषिय, सिद्धायें बोधक और स्वताःप्रमाण है, प्रत्यक्ष, अनु-
 मान और आत्ममय ये तीन प्रमाण हैं। 'प्रपञ्चमय'के
 विषयमें पूर्वप्रवर्तन और रामानुजका एकमात्र मत है, परन्तु
 रामानुजके मतमें हुए भेद, पमेट और भेदभेद इन तीन
 तत्त्वोंकी यह स्वीकार नहीं करता। पूर्वप्रवर्तन कहता
 है कि रामानुजके विचार तीन तत्त्वोंकी स्वीकार कर
 गहराचार्यके मतकी पुष्टि को है। यह मत अर्थव्यर्थ है।
 पापमत्तोयत्तत शरीरकमीमांसाके भाष्य पर दृष्टिगत
 कार्यमें साक्ष्य होता है कि जीव और ईश्वरमें जो परस्पर
 भेद है, उसमें कुछ भी भेद नहीं है। इस भाष्यमें लिखा
 है—“म पाप्मा तत्त्वमसि ज्ञेयतन्तो।” इस श्रुतिजा दृष्ट
 तात्पर्य नहीं कि ईश्वर और जीवमें परस्पर भेद नहीं
 है, किन्तु 'तत्त्व त्वं पर्याप्तु' 'कर्मके तुम' इस पदों समान
 द्वारा हममें 'जीव ईश्वरका मेषक है', ऐसा अर्थ निक-
 लता है। इस दर्शनमें तत्त्व दो प्रकारका माना गया है—
 स्वतन्त्र और अस्वतन्त्र। स्वतन्त्र भगवान् सर्वकोप-व्यवर्तित
 अर्थात् सद्गुरुकी आश्रयस्वरूप विष्णु; स्वतन्त्र तत्त्व
 हैं और आश्रय अस्वतन्त्र पर्याप्तु ईश्वरके अधीन हैं।
 ईश्वरकी सेवा तीन प्रकारमें होता है—एक, नामकरण
 और भजन। इसमें पञ्चनको पति आश्रयव्यवर्तित
 परिमिटमें विमिश्रकृपमें लिखा है तथा उसकी आश्रय-
 कृताका प्रतिपादन तैत्तिरीयक उपनिषद्में किया गया

का, टैम। ८. अनन वा, एक प्रकारका छोटा पौधा। ९. मन्दगोपकीट, गोरवृष्टो नामका एक कोड़ा। १०. गालि-धान्यभेद, एक प्रकारका धान।

दुदुरक (सं० पु०) दुदुराय कायति दुदुर इव कायति शब्दाद्यते वा कै-क। १ वाद्यभेद, एक प्रकारका बाजा। २ भेक, भेदक।

दुदुराच्छुदा (सं० स्त्री०) दुदुर इव कदो यस्याः। दाघो, वृष्टौ।

दुदुरदला (सं० स्त्री०) मण्ड कपर्णी, खुलकुहो।

दुदुरदर्पो (सं० स्त्री०) दृष्टभेद, एक पेड़का नाम।

दुदुरा (सं० स्त्री०) दृष्टाति दारयति वा चसुरान् दृ-वरच् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः, ततष्टाप्। चण्डिका, दुर्गा।

ददृ- (सं० पु०) ददृ रोग, दादकी बीमारी।

ददृ (सं० पु०) दरिद्रा बाहुं उः। ददृरोगभेद, दाद नामक रोग।

ददृप्र (सं० पु०) ददृ इति ददृ-उभटक्। चक्रमदं क, चक्रवर्द्ध।

ददृप्रपत्र (सं० स्त्री०) १ पत्रमाकविशेष, एक प्रकारका साग। २ चक्रमदं पत्र, चक्रवर्द्धका पत्ता।

ददृनामिनी (सं० स्त्री०) ददृ नामयति अश्विष्-णिनि ततो ङोप्। तैलिनौ, हृष।

ददृ (सं० पु०) ददृ रोग, दादकी बीमारी।

ददृष (सं० त्रि०) ददृष्याम्योति ददृ-न ततो णत्व (लोमादिरादिबिच्छिन्नादिभ्यः ङनेक्यः) वा ५। १। १००)

ददृरीगी, जिसे दादका रोग हुआ हो।

ददृरीगो (सं० त्रि०) ददृ रोगः चस्याम्योति ददृ रोग इति ददृ रोगी, जिसे दाद रूई हो।

दर्प (सं० पु०) दृष्यते इति दृ-भावे ञच्। १ पहाड़ार। इसका पर्याय—गर्भ, पहाड़, त, भवविषयता प्रथिमान, ममता, मान, धिसोचति और धर है।

अधिक धमादि होने पर दूसरेके प्रति जो अवस्था की जाती है उसोका नाम दर्प है।

द्रव्य धन और विद्यादिसे उत्पन्न होता है। एक मात्र द्रव्य ही सर्वनाशका मूल है। इस संसारमें सब तत्त्व मनुष्योंके दर्प नहीं होते, तभी तक वे उत्पत्ति कर सकते हैं। दर्प होनेके साथ ही अगत्यात् उसका प्रति-

फल देने है। क्या छोटे, क्या बड़े सभी दर्प होनेमें सत्तानीय हो जाते हैं। यहां तक कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, धर्म, यम, गुरु, ब्रह्मि, जय, विजय, सुर और असुर आदि जिनके गर्व होनेसे तत्त्वणात् प्रतिकूल पावते। इसलिए प्रत्येक उत्पत्तिकामोका दर्प परिहार करना अवश्य कर्तव्य है। २ मृगभेद, एक प्रकारका शरिण। ३ उषा, रिप, शीप। ४ उच्छृङ्खलत्व, उड़डता, अस्त्रदृष्टन। ५ धर्म मर्यादातिक्रम। ६ उखाड़। ७ कस्तूरी। ८ आतङ्ग, दबाव, रोक।

दर्पक (सं० पु०) दर्पयति दृषयति मोहयति वा दृष-णिच्-ण्वल्। १ कामदेव। ये सभी व्यक्तियोंकी मोहित करते हैं, इसीसे इनका नाम दर्पक पड़ा है। (त्रि० २ पहाड़ार और मोहकारक, प्रथिमान करनेवाला।

दर्पण (सं० स्त्री०) दर्पयति सम्प्रोषयति दृष-णिच्-ण्वल्। १ चन्द्र, नेत्र, चाँद। २ मन्दोपन, उभारनका कार्य, उत्तं जना। (पु० स्त्री०) दर्पयति दृष-णिच्-ण्वल् (नदि प्रवृत्ति। वा १। १। १३४) ३ रूपदर्शनाधार, भारती, बाहना। इसका पर्याय—सुहृत्, पादग, भावदर्श, नन्दर, दर्शन, प्रतिविम्बान, कर्क और कर्कर है। इसमें पापुः शोकारी और पापनाशकका गुण माना है। प्रातःकाल उठ कर दर्पणमें अपना मुख देखनेसे उस दिन राम होता है। ४ पर्यंतभेद, एक पहाड़का नाम। ५ नदीभेद, एक नदीका नाम। इस नदीके विषयमें कालिकापुराणमें इस प्रकार लिखा है—

तपस्य नामका एक प्रसिद्ध पर्यंत है। इस पर यज्ञोंके साथ कुवेर नवदा वास करते हैं। इसके मध्यमें रोहित मरुत्तोंके आकारके कैदा रोहण नामका एक पर्यंत है जिनके कुनेसे ही मोक्ष मोना हो जाता है। इसके पानहो दर्पण नामको एक नदी है। जो हिमालय पहाड़में निकली है। इसका फल लोहित्यनदीके जैना है। लोहित्यके उत्पन्न होनेसे शोकप्रणने सब देवताओंके साथ तथा सब तीर्थार्थिक द्वारा यहां स्नान किया था। इस स्नानमें उनका पाप और दर्प विलक्षण दूर हो गया था, इसीसे यह दर्पण नामसे प्रसिद्ध हुआ है। (कालिकापुराण ८१ अ०)।

जो कार्तिकमासकी शुरु-प्रतिपद् तिथिको १५ नदीमें स्नान कर दर्पपाथपर कुवेरको पूजा करते, वे

है। जिससे नारायणके शङ्खचक्रादि चिह्न विरकाल विराजित रहे, ऐसा करना चाहिए। 'भजनको प्रक्रियाएँ' भक्तिपुराणमें लिखी हैं। द्वितीय सेवा नामकरण है; अपने पुत्रादिकों का कथवादि नाम रखना चाहिए, इसमें बात बातमें भगवान् का नाम-कोर्तन होता है। तृतीय सेवा भजन करना है। यह सेवा तीन प्रकारकी है—कायिक, वाचिक और मानसिक। कायिक भजनमें तीन भेद हैं—दान, परित्राण और परिरेक्षण। वाचिकके चार भेद हैं—सत्य, हित, प्रिय और स्वाध्याय। मानसिक भजन भी तीन प्रकारका है—दया, स्मृष्टा और गृहा। जैसे "धर्मस्य प्राज्ञम्" मन्त्रा गृहीतुं प्राज्ञो भवेत्" इस वाक्यसे-गृह्ण मो भक्तिं साथ ब्राह्मणकी पूजा करे तो ब्राह्मणकी भांति पवित्रादि गुणविशिष्ट हो सकता है, ऐसा अर्थ समझमें आता है, उसी प्रकार 'ब्रह्मविदं ब्रह्म भवति'। इस श्रुति-वाक्यके द्वारा 'ब्रह्मज्ञ और ब्रह्मका अभेद' ऐसा अर्थ न हो कर ऐसा अर्थ होगा कि 'ब्रह्मज्ञानो व्यक्ति ब्रह्मकी तरह सर्वव्यापि गुणसम्पन्न होते हैं।' श्रुतिमें भाषा, अविद्या, निर्दोष, मोक्षिनी, प्रकृति और वासना इन दो शब्दों का प्रयोग है, जिनका अर्थ भगवान् की इच्छामात्र है, न कि अहंतादिकों की कल्पित अविद्या और जो प्रपञ्च शब्द कहा गया है, उसका अर्थ प्रकृत पञ्च भेद है। पञ्चभेद हम प्रकार है—जीवेश्वरभेद, जड़ेश्वरभेद, जड़जीवभेद जीवी तथा जड़पदार्थों का परस्पर भेद। ये प्रपञ्च सत्य और अनादिविद है। ब्रह्मका सर्वोत्कर्ष प्रतिपादन करना ही सम्पूर्ण शास्त्रोंका उद्देश्य है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ हैं, जिनमें मोक्ष ही नित्य है, अन्य तीन पुरुषार्थ अस्थायी हैं। बुद्धिमान् व्यक्तिमात्रका प्रधान पुरुषार्थ मोक्षकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना सर्वोत्तमार्थ है अर्थात् मोक्ष ही मोक्ष है। परन्तु ईश्वरके प्रसन्न हुए बिना मोक्षलभ नहीं होता। ज्ञानके बिना ईश्वर प्रसन्न नहीं होते। ज्ञान शब्दसे विष्णुका सर्वोत्कर्ष ज्ञान समझना चाहिये।

अर्थ और अर्थ पादिकां सम्यक् ज्ञान होनेसे विष्णुके साथ सहवास होता है, समस्त दुःख दूर हो जाते हैं और नित्य सुखका उपभोग होता है। श्रुतिमें लिखा है—एक वसुका अर्थात् ब्रह्मका तत्त्वज्ञान होनेसे समस्त

वसुओंका ज्ञान हो सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि जैसे धामस्य प्रधान व्यक्ति की जगत् सेनेसे धामका परिचय मिल जाता है तथा पिताकी जाननेसे पुत्रका परिचय प्राप्त होता है, उसी प्रकार इस जगत्के प्रधान भूत और पिता स्वप्न को ब्रह्म हैं। उनका ज्ञान ही ज्ञानसे सम्पूर्ण पदार्थोंका ज्ञान हो जाता है। अहंता-मतावलम्बोपश्रय व्यासकृत वेदान्तसूत्रका जो कृतार्थ किया करते हैं, वह कुछ नहीं है। उन सूत्रोंमेंसे एक सूत्रका तात्पर्य यहां लिखा जाता है। यथा—'अथातो ब्रह्मसिद्धिरसौ' इस सूत्रके 'अथ' शब्दके तीन अर्थ होते हैं—पानन्तर्य, अधिकांश और महत्त्व। 'अतः' शब्दका हेतुत्व गुरुपुराणके ब्रह्मनारद संप्रदायमें लिखा है। 'अथ नारायणकी प्रसन्नताके बिना मोक्ष नहीं' होता और उनके ज्ञानके बिना उन्हें प्रसन्नता नहीं होती, तब ब्रह्मज्ञानार्थ अर्थात् ब्रह्मकी जाननेकी इच्छा करना आवश्यक है।' यही इस सूत्रका अर्थ है। 'अन्त्यायस्य यः' इस सूत्रमें ब्रह्मके स्वरूप कहे गये हैं। इस सूत्रका अर्थ यह है कि 'जिससे हम जगत्की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहार होता है, और जो नित्य निर्दोष अविद्या अद्वैतगुणान्वित है, ऐसे नारायण ही ब्रह्म हैं।' 'ऐसा ब्रह्म है इसका प्रमाण क्या?' इस प्रश्नके उत्तरमें कहा है, 'शास्त्रयोगित्यत्' शास्त्र ही निरुद्ध ब्रह्मके प्रमाण हैं, कारण ब्रह्म ही शास्त्रोंका प्रतिपाद्य विषय है; शास्त्रोंके उपक्रम और उपसंहारमें ब्रह्म ही प्रतिपादित हुए हैं। पानन्तरीयके भाष्यमें समस्त विवरण विस्ताररूपसे लिखा है। पूर्णप्रश्न उस भाष्यके मतानुसार उसका रहस्य खोल दिया है। पूर्णप्रश्नकी ओर भी दो संशय हैं—मध्यमविर और मध्यम। पूर्णप्रश्न अपने मध्यमार्थमें लिखा है, 'मै वायुका तृतीय अवतार हूँ।' वायुके प्रथम अवतार हम मान् तथा द्वितीय अवतार भोम है। पूर्णप्रश्न देखो। रामानुजदर्शन-हैसमें पाहं समस्तका प्रतिवाद है। रामानुजने तर्कादि द्वारा यह प्रमाणित करनेका प्रयत्न किया है, कि वह अमरमाणिक और अमरहय है। कारण उनमें पञ्चतत्त्व, सत्तत्त्व और नवतत्त्वादि नामा विषय प्रकटित हुए हैं। प्रथमतः सबकी यह सन्देह उल्लिखित हो सकता है कि सत्तत्त्व, नवतत्त्व और पञ्चतत्त्व आदिमेंसे किस

दरीबी (फा० पु०) १ भरीवा, पिड़की । २ पिड़की के पास बैठनेकी जगह ।

दरीबा (हि० पु०) १ पानका बाजार । २ बाजार ।

दरीभत (मं० पु०) पर्वत, पहाड़ ।

दरीमुप (मं० स्त्री०) दया: सुखं इ-तत् । १ गिरि-गुहाका मुप, गुफाका मुह । २ रामकी सेनाका एक यन्त्र ।

दरीयत् (मं० वि०) दरी विद्यतेऽस्य दरी-मत्सुप् मस्य यः । गुहाविमिश्र पर्वत, वह पहाड़ जिसमें बहुतसो गुहायें हों ।

दरिंती (हि० स्त्री०) पनाज दलनेवा छोटा भीजार, धड़ी ।

दरिंक (हि० पु०) बकाइनका पिड़ ।

दरिग (च० पु०) कमी, कमर ।

दरिना (हि० स्त्री०) १ रगड़ना, पीसना । २ रगड़ते हुए धड़ा देना ।

दरीरा (हि० पु०) १ रगड़ा, धड़ा । २ मेंहका भाना । ३ बहावका जोर, तोड़ ।

दरीम (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी छोट । (वि०) २ तैयार, बना बनाया ।

दरीमो (हि० स्त्री०) तैयारो, मरम्मत, दुरुस्तो ।

दरीग (च० पु०) असत्य, झूठ ।

दरीगहलकी (च० स्त्री०) १ सत्य धोमनेका प्रथम ग्रा कर मो झूठ धोमना । २ झूठी गवाही देनेका जुर्म ।

दरीगा (हि० पु०) १ दरीगा देवी ।

दरीङ्ग-बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत काठियावाड़ प्रदेशके भानावर विभागका एक सामान्य राज्य । इसमें केवल एक ग्राम लगता है जिसमें दो करद स्वाधोग जमींदारी-का अधिकार है । राज्यकी प्रायः प्रायः (१८०) रु० है जिसमें छठम गवर्मेण्टकी १६६ घोर खानागड़के अवामकी ५० रु० करकाय देने पड़ते हैं ।

दरीदर (मं० पु० स्त्री०) दरी मयं तस्मिन्ने दरी यस्य वा दुरीदर घयो माधुः । दुरीदर, पाया-कोड़ा, लुप ।

दरीती-ब्रह्मर्षे शाशवाद् जिनेश एक ग्राम । यह राम-गढ़से ५ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है । यहां ग्राम-कीर्त्तिका धर्मभावमेव है ।

दरीबी-सारथ जिसेके अन्तर्गत पानवाड़ा विभागका एक प्रधान ग्राम । यहां हिन्दुधर्मके दो छोटे मन्दिरोंका धर्मभावमेव दृश्यमें आता है । इससे सिवा यहां दो सुन्दर जलाशय घोर दो बड़े झील हैं ।

दरार (हि० स्त्री०) दरार देवी ।

दरगंठ (हि० पु०) दरगः देवी ।

दर्ज (हि० स्त्री०) १ दर्ज देवा । (वि०) २ निगा हुआ, कागज पर चढ़ा हुआ ।

दर्जन (हि० पु०) बारहका समूह, एकत्रित बारह वस्तुएं ।

दर्जा (च० पु०) १ श्रेणी, कीटि, वर्ग । चढ़ाईके क्रममें ऊंचा नीचा स्थान । १ एक सीढ़ी । ४ विभाग, गुण ।

(हि० वि०) ५ गुणित, गुना ।

दर्जिम (फा० स्त्री०) १ दर्जी जातिको स्त्री० । २ दर्जी-की स्त्री ।

दर्जी (फा० पु०) १ कपड़े सोनेका व्यवसाय करनेवाला मनुष्य । २ कपड़ा सोनेवाला जातिका पुरुष ।

दर्जू (मं० वि०) द विदारे द-यच्छ भिदे इडभावः । दार-यित्वा, विदारणकर्त्ता, काढ़नेवाला ।

दर्तू (मं० पु०) द-वाहुः त इडभावःकायम् । दारक, यह जो काढ़ता हो ।

दर्द (फा० पु०) १ व्याध, पीड़ा । २ दुःख; तकलीफ । ३ सहातुभूति, कष्ट, दवा । ४ हानिका दुःख ।

दर्दमंद (फा० वि०) १ पीड़ित, जितने दर्द हो । २ जितने सहातुभूति हो, दयावान् ।

दर्दर (मं० पु०) द-यच्छ चच् घयो माधुः । १ पर्वत, पहाड़ । २ ईयद् भग्नभाजन, वह पात्र जो कुछ कुछ भग्न हो गया हो ।

दर्दरास्त्र (मं० पु०) व्यस्त्रम निमेष । रमका पर्याय-मोक्षस्त्री है ।

दर्दरीक (मं० स्त्री०) दारयतीय कर्षो द-विच्छ-इडम् । १ बाधविमेष, एक प्रकारका बाधा । २ भेक, बंग ।

दरुदर (मं० पु०) इषाति कर्षो शब्देनेति द-उर-ए । १ भेक, भिदक, बंग । २ भेक, बाधक । ३ बाधभेद, एक प्रकारका बाधा । ४ पर्वतभेद, मलय पर्वतमें मग हुआ एक पर्वत । ५ राक्षसभेद, एक राक्षसका नाम । ६ दम्भक धातुभेद, खबरक नामकी धातु । ७ उच्च पर्वतके निकट ।

का रोग । ८ पुनन वा, एक प्रकारका छोटा पीछा । ९ दन्द्रगोपकोट, बोरघड़ो नामका एक कोड़ा । १० गालि-
धान्यभेद, एक प्रकारका धान ।

दुदुरक (स० पु०) दुदुराय कायति दुदुर इव कायति
शब्दायते वा के-क । १ यायभेद, एक प्रकारका बाजा ।
२ भेक, भेदक ।

ददुराच्छटा (स० स्त्री०) ददुर इव छटो यस्याः । ज्ञाघो,
बूटी ।

ददुरदला (स० स्त्री०) मण्ड कपर्णी, खुलकुड़ा ।

ददुरधर्षी (स० स्त्री०) वृषभेद, एक भेदका नाम ।

ददुरा (स० स्त्री०) दृष्टाति दारयति वा घञ्श्रान् दृ-उरच्
प्रत्ययेन निपातनात् साधुः, ततश्चाप् । चण्डिका, दुर्गा ।

ददू (स० पु०) ददु रोग, दादकी बीमारी ।

ददू (स० पु०) दरिद्रा बाहुं चः । ददुरोगभेद, दाद
नामक रोग ।

ददूप्र (स० पु०) ददू वृत्ति ददू-उम-टक् । चक्ष्मदंका,
चकवड़ ।

ददूप्रपत्र (स० स्त्री०) १ पत्रभाकविशेष, एक प्रकारका
साग । २ चक्ष्मदं पत्र, चकवड़का पत्ता ।

ददूनाशिनी (स० स्त्री०) ददू नाशयति नश्य-णिच्-णिनि
ततो डोप् । तैलमी वृष ।

ददू (स० पु०) ददु रोग, दादकी बीमारी ।

ददूष (स० त्रि०) ददुरस्यास्ति ददू-न ततो णत्व
(लोमादिरामादिषिञ्छकादिभ्यः शनेनवाः । पा ५।२।१००)

ददुरोगी, जिसे दादका रोग हुआ हो ।

ददूरोगो (स० त्रि०) ददू रोगः यस्यास्ति ददूरोग इति
ददु रोगी, जिसे दाद हुई हो ।

दर्प (स० पु०) दृष्यते इति दृ-भावे घञ् । १ पङ्कहार ।
इसका पर्याय—गर्भ, प्रहङ्गति, अवस्थिता अभिमान,
ममता, मान, घितोचित और अर है ।

अधिक धनादि होने पर दूसरेके प्रति जो अवस्था की
जाती है उसीका नाम दर्प है ।

दर्प धन और विद्यादिसे उत्पन्न होता है । एक मात्र
दृष्ट ही सर्वनाशका मूल है । इस संसारमें जब तक
मनुष्यके दर्प नहीं होते, तभी तक वे उत्पत्ति कर
सकते हैं । दर्प होनेके साथ ही भगवान् उसका प्रति-

फल देते हैं । क्या कोटी, क्या बड़ें सभी दर्पो होनेसे
सत्तानीय हो जाते हैं । यहाँ तक कि ब्रह्मा, विष्णु,
महेश्वर, धर्म, यम, गन्ध, बलि, जय, विजय, सुर और
असुर आदि जिनके गर्व होनेसे तत्सगतात् प्रतिकूल
पाय मिले । इसलिये प्रत्येक उत्पत्तिकामोका दर्प परिहार
करना अवश्य कर्त्तव्य है । २ मृगभेद, एक प्रकारका
हरिण । ३ उष्मा, रिम, कोप । ४ उच्छ्वसलत्व, उहड़ता,
अस्वस्थपन । ५ धर्म मर्यादातिक्रम । ६ उक्ताह । ७
कद्गुरो । ८ पातङ्ग, दबाव, रोग ।

दर्पक (स० पु०) दर्पयति दर्पयति मोहयति वा दृप-
णिच्-ण्वत् । १ कामदेव । ये सभी व्यक्तियोंको मोहित
करते हैं, इसीमे इनका नाम दर्पक पड़ा है । (त्रि० २
पङ्कहार और मोहकारक, अभिमान करनेवाला ।

दर्पण (स० स्त्री०) दर्पयति सन्देपयति द-प-णिच्-ण्यु ।
१ चन्द्र, नेत्र, चाँद । २ सन्देपन, उभारनेका कार्य,
उत्तेजना । (पु० स्त्री०) दर्पयति दृप-णिच्-ण्यु (नदि
प्रतीति । पा १।१।१४४) रूपदर्शनाधार, चारमी, पादना ।
इसका पर्याय—सुकुल, पादार्थ, भावदर्श, नन्दर, दर्शन,
प्रतिविम्बता, चक और कर्कर है । इसमें पायुः
शोकात् और पापनाशकका गुण माना है । प्रातःकाल
उठ कर दर्पणमें अपना मुख देखनेसे उस दिन हम होता
है । ४ पर्वतभेद, एक पहाड़का नाम । ५ नदीभेद,
एक नदीका नाम । इस नदीके विषयमें कालिकापुराणमें
इस प्रकार लिखा है—

दर्पण नामका एक प्रसिद्ध पर्वत है । इस पर यज्ञीके
साथ कुबेर नवदा वास करते हैं । इसके मध्यमें रोहित
मकलोक के आकारके जैसा रोहण नामका एक पर्वत है
जिसके पुर्नेसे ही सौदा मोना हो जाता है । इसके पासही
दर्पण नामकी एक नदी है, जो हिमालय पहाड़मे निश्चली
है । इसका फल लोहित्यनदके जैसा है । लोहित्यके
उत्पत्ति होनेसे श्लोकान्ते सब देवताओंके साथ तथा भव
तीर्थोदक द्वारा यहाँ स्नान किया था । इस स्नानसे उनका
पाप और दर्प भिलकुल दूर हो गया था, इसीमे यह
दर्पण नामसे प्रसिद्ध हुआ है । (कालिकापुराण ८१ अ०)

जो आत्तिक्रमाशकी शक-प्रतिपद तिथिको इस
नदीमें धान कर दर्पपावनपर कुबेरको पूजा करते, वे

पर पुनर्जन्मादि नहीं होता। चित् और अचित्के साथ ईश्वरका भेद, अभेद और भेदाभेद दोनों ही विद्यमान हैं। श्रुतिमें जहाँ ईश्वरको निर्गुण कहा गया है, वहाँ उसका तात्पर्य सिर्फ इतना ही है, कि वास्तवमें मनुष्योंकी तरह रागदोषादि गुण ईश्वरमें नहीं हैं और अर्थात् पदार्थके सामान्य-विषयका निषेध किया गया है, उसका तात्पर्य यह है कि ईश्वर चित् और अचित् समस्त वस्तुओंकी भासा है। इसलिए सम्पूर्ण पदार्थ जो ईश्वरका है। ईश्वरसे, प्रत्यक्ष कोई वस्तु नहीं है। इन सब विषयोंका तत्त्वानुसन्धान करके रामानुजने शरीरक-सूत्रका भाष्य बनाया है। बौधायनाचार्यने महोपनिषद्-के मतानुसार एक वृत्ति बनाई है, जो अत्यन्त विस्तृत है। इसलिए रामानुजने उस वृत्तिके मतानुसार एक संचित भाष्य लिखा है। रामानुज देखो।

रक्षेत्पर-दर्शन—पदार्थ-निर्णयके विषयमें प्रत्यभिज्ञा दर्शनके साथ इसका एकमत्व है। प्रत्यभिज्ञादर्शनमें पारद-पदार्थके विषयमें कहीं भी उल्लेख नहीं है। परन्तु इस दर्शनमें उसका विशेषरूपसे निर्देश किया गया है। वस्तु, यही इसमें विशेषता है। जिस प्रकार प्रत्यभिज्ञादर्शनमें महेश्वरको परमेश्वररूप माना है और जोयाका एवं परमात्माका अभेद स्वीकार किया है, उसी प्रकार यह दर्शन भी महेश्वरको परमेश्वर एवं जीवात्माको परमात्मा माननेके लिए प्रवृत्त है। परन्तु यह प्रत्यभिज्ञादर्शनकी तरह कपोल-कथित एक मात्र प्रत्यभिज्ञाकी ही परमपद सुक्तिका साधन नहीं मानता; परम सुक्तिके लिए यह दूसरा ही मार्ग बतलाता है। इस दर्शनका मत है, कि सुसुप्त व्यक्तियोंकी प्रथमतः देहको स्थिरताके लिए यत्न करना चाहिये; पीछे क्रमशः योगाभ्यास करते करते जब शान्तेत्य ही जाता है, तब सुक्ति-रसका आविर्भाव स्वतः ही जाता है। यद्यपि अन्यान्य दर्शनमें भी सुक्तिके साधनके लिए एक एक मार्ग दिखलाया गया है और उन मार्गोंमें परमपद सुक्तिपद पानेकी सम्भावना है; तथापि उन मार्गोंमें लोगोंको प्रवृत्ति नहीं हो सकती। परन्तु इस दर्शनमें पारद-रसद्वारा देहका स्वयं सम्पादन कर क्रमशः योगाभ्यासमें निरत हो सकते हैं, ऐसा होनेमें परमाकाशिक परमेश्वर परितुष्ट

हो कर पारितोषिकस्वरूप सर्व प्रधान सुक्तिपद प्रदान करते हैं। इसलिए सुसुप्त व्यक्तियोंकी प्रथमतः देहको स्थिरताका उपाय करना चाहिये। देहकी स्थिरताके लिए पारदरसही एकमात्र उपाय है, पारदरस-द्वारा देहका स्वयं सम्पादन होता है, ऐसा अन्य किसी भी दर्शनमें उल्लेख नहीं है। इस दर्शनके मतसे, पारद-रसमें देहका स्वयं सम्पादन करनेमें शरीरके रहते ही सुक्ति होती है, इस सुक्तिकी जीव-सुक्ति कहते हैं। प्रथमतः यह शरीर खासकाशादि नाना रोगोंका प्रायश्च है, विगृह्य है, इस कारण समाधिकरण-रूपके सङ्गर्भमें निताप्त भवति है। दूसरी बात यह है कि उसी समय देहका पतन हो जाता है, इसलिए देहमें समाधिका होना पसन्ध है। इसके लिए पहले पारदरस-द्वारा शरीरको दिव्य कर लेना चाहिये; ऐसा कर लेनेके बाद फिर योगाभ्यास आदिके द्वारा परमत्वको स्मृत्तिका होना सम्भव है। यही कारण है जो इस दर्शनमें देहका स्थिरताका साधन बतलाया गया है। यह पारदरस सामान्य धातु नहीं है, कारण महादेवने स्वयं पार्वतोसे कहा है कि पारदरस मेरा स्वरूप है, यह मेरे प्रत्यक्षसे उत्पन्न हुआ है। यह पारद संसाररूप समुद्रके यन्त्रणा-निवृत्ति-स्वरूप है। पार पद्वृत्ता है, इसलिए यह 'पारद' कहलाता है। पारद मेरा बोज है और अभ्रक तुम्हारा। इन दोनों बोजोंका यथारीति मिश्रण कर सकने पर मृत्यु और दारिद्र्य-रक्षा दूर होती है। पारद नाना प्रकारका है, एक एक प्रकारके पारदमें एक एक प्रकारका घसा-धारण गुण है। वह पारद द्वारा मृत्यु मार्गमें चलनेकी शक्ति तथा मृत पारद द्वारा कोवित करनेकी शक्ति प्राप्त होती है, इत्यादि। एक मात्र पारद ही धर्म, धर्म, काम और मोक्ष रूप चतुर्वर्गकी प्रदान करता है। पारद-के सिवा अन्य कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो शरीरको नित्य बना सके। इसी दर्शन, स्वयं, भक्षण, स्मरण, पूजन और दानसे सम्पूर्ण भोज्य मिष्ट होते हैं। पारद-रस अन्यान्य रसोंकी अपेक्षा उत्तम होनेके कारण ही उसका नाम रसेश्वर पड़ा है। इस दर्शनमें रसका गुण विषय रूपसे वर्णित है, इसी कारण यह दर्शन रसेश्वर नामसे प्रसिद्ध हुआ है। रसेश्वर देखो।

गत योग्यपुत्र हो कर ब्रह्मलोकको जाते हैं। इस दण्डपावनके पूर्वमें यन्निमान् नामक एक पर्वत है, जिसका आकार नाव या दोल पड़ता है। पर्वतको जंघारं, मध्यादि और चोहार्द छोमे मरोषा है।

दण्ड (मं० वि०) दणं ददाति दण्डः । १ गवः दायक पदाय, यन्निमान् सत्य करनेवाला । (पु०) २ विष्णु ।

दण्डपत्रक (मं० पु०) कागद्वत्, कुग, छाम ।

दण्डघ्न (मं० वि०) दणं हन्ति घ्न-क्षिपू । १ गवः शरक, यन्निमान् या घमण्ड दूर करनेवाला । (पु०) २ विष्णु ।

दणं (मं० लो०) कम्पूरो ।

दण्यारम्भ (मं० पु०) दण्य आरम्भः इत्यत् । पण्डितारका आरम्भ । इसका नामान्तर मदस्कटि है।

दणित (मं० वि०) दण्डः । पण्डित, पण्डितारके भरा हुआ ।

दण्यो (मं० वि०) दण्डः । दण्यिक, घमण्डी, पण्डितारी ।

दभ (मं० पु०) द धाति विदारयति दभ (इ दन्विना भः । उन्, शि० ५१) कुग । इसका पर्याय—उल्लाप्य और काग है। दभ दो प्रकारका होता है जिनमेंसे एकका पर्याय—क, श, दभ्यं, बहि, सूप्य और यज्ञभूषण तथा दूसरेका दीर्घपद और गुरुपद है। दोनों प्रकारके क, श द्विदोषनाशक, मधुर, कपायस, शीतवीर्य और मूलजलप्र, घमरी, व्याघ्र, वस्त्रिगतगीग, प्रदर तथा रक्त-दीपनाशक है। (माधव०) कौसा ही धमका कात क्यों न किया जाय, उसमें धमका नितान्त प्रयोजन है। आहाति कर्ममें दभमय ब्राह्मण बनाया पड़ता है और घामन भी क, शका हो होता है। काग, कुग, वल्लज, तोण्ड, रोमस, मोक्ष और ग्राह्य ये सब प्रकारके दभ हैं।

क, श परत्रि (कुशलोसे कनिहाके निरं तक) परि-मार्गका होना चाहिये।

वज्रमोय दभ—पद, यज्ञमूत्रि, घामरक, घामन और पिण्डमित दभ वज्रमोय है। पिण्डके निचे जो दभ घामन होता है, उसदभसे यदि कोई पिण्ड तय करे, तो उसका तय न भ्रमण होता है।

घामन, पाँच या ओ क, शमि ब्राह्मण, ब्रह्मा और विष्णु (घामन) बनाया चाहिये। रमसे प्रसिद्ध यह है, कि ब्राह्मण और ब्रह्मा बनानेमें क, शका पचभागके घाम टाई बांध मुड़ कर पचभाग ऊपर रहते हैं, पर बिहतर बनानेमें उसे टाईमें घोर नहीं करके बायो घोर करते घोर पचभागको मोसेका तरफ रहते हैं। २ क, शामन, क, शका घामन

दभक (मं० पु०) घोड़ेके पाँवका एक रोग ।

दभंकुसुम (मं० पु०) क्षमि जाति, कीड़े की एक जाति ।

दभंकोतु (मं० पु०) क, शध्वज, राजा जनकको भाई ।

दभंर (मं० लो०) दभं सं दभं धाटू पटनू । निभृत गृह, भोतरी कीठरी ।

दभंपय (मं० पु०) दभं व्योय पयमस्य । काग, काँस ।

दभंपुष्य (मं० पु०) मयं मेट, एक प्रकारका नाव ।

दभंमय (मं० वि०) दभानकः दभं गरादिं मयट् ।

कुगनिर्मित ग्राह्यपादि, कुगके बने हुए ब्रह्मा, ग्राह्य पादि ।

दभंमूला (मं० लो०) दभं व्योय मूलमव्यां होय । १ घोषधमेट, एक प्रकारको दवा । २ कुममूल, कुगकी जड़ ।

दभंर (मं० पु०) दभं व्योय सविहट देगादि दभं घमादि-त्वात् रः । १ दभंदिने चट्ट देगादि, कुग पादिने निकटस्थ स्थान । २ नाव वसी ।

दभंघट (मं० लो०) पत्तर्द्व, भोतरी कीठरी ।

दभंममट (मं० पु०) दभंदिना घामन, कुगका विकोना ।

दभंमुर (मं० पु०) दभंमुरोऽनुपः संघानुत्वं वि सुम्नादि पाठात् पसे पूर्वपदात् न पत्वं । दभंमुर पण्डितेश भेट ।

दभंस्तब्ध (मं० पु०) दभंदिना गुण्य, कुगका गुहरी ।

दभंमन (मं० पु०) क, शामन, क, शका बना हुआ विकोना ।

दभंमय (मं० पु०) दभं घामने माहय्यात् पा डं ग । मुञ्च लक्ष्मिद, मूत्र नामकी घाम ।

दभि (मं० पु०) एक शक्ति का नाम । महाभारतमें लिखा है, कि इन्होंने यदि ब्राह्मणोंके उपकारके विषे

पर, "सोऽयं नामनः" "वह यही नामन है", ऐसा ज्ञान होता है, नैयायिक आदि इसे ही प्रत्यभिज्ञा कहते हैं। शास्त्र और अनुमानादिके द्वारा ईश्वरके स्वरूप और शक्तिका परिचय कर, वह शक्ति जीवात्मामें भी है, ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लेने पर "स एवेखरो ऽहं" "वह ईश्वर मैं हो हूँ" ऐसा ज्ञान हो जाता है। इस मतके अनुसार जीवात्मा और परमात्मामें कोई भेद नहीं है परमात्मा स्वतः प्रकाशमान है। जैसे आलोकसंयोगादिके बिना हुए गृहस्थित, घटपटादि वस्तुका प्रकाश नहीं होता उस प्रकार परमेश्वरके प्रकाशमें किसी कारणकी आवश्यकता नहीं होती, वे सर्वत्र सर्वदा प्रकाशमान हैं। परन्तु जब 'शुद्धवाक्य व्यवहार कर सर्वत्रत्वदि-रूप ईश्वरका धर्म सुभमें' है, ऐसा ज्ञानका उदय होता है, तब पूर्णभावका आविर्भाव होता रहता है और आत्मा-प्रत्यभिज्ञा उत्पन्न होती है, फिर अन्य किसी भी पदार्थको आवश्यकता नहीं रहती। प्रत्यभिज्ञा देखो।

श्रीकृष्णदर्शन—महर्षि कणादने इस दर्शनका प्रणयन किया है। इनका दूसरा नाम उन्मूक याः इसलिए इन दर्शनकी बोलबचतदर्शन कहते हैं, कणाद भी इसका नाम है। इस दर्शनमें, चन्द्रान्य दर्शनोंका अनभिमत, विशेष नामसे एक स्वतन्त्र पदार्थ माना गया है, इसलिए इसका नाम वैशेषिक दर्शन है। यह दर्शन यह दर्शनमें एक है। इस दर्शनमें अत्यन्त दुःखनिवृत्तिको ही सुख माना है। जिस दुःखको निवृत्ति होनेसे, फिर कभी दुःख न हो, उसको अत्यन्त दुःखनिवृत्ति कहते हैं। यह सुख आत्म-साक्षात्कारस्वरूप तत्त्वज्ञानके बिना नहीं मिलती। किन्तु वह तत्त्वज्ञान सङ्ग-साध्य नहीं है। यथार्थ, मनन और निदिध्यानके द्वारा तत्त्वज्ञानको प्राप्ति होती है। भगवान् कणादने शिष्याके प्रायश्ना करने पर मननका पहिलो साधन-स्वरूप दृश्य-व्याख्यात्मक इस शास्त्रका प्रणयन किया है। इस दर्शनमें सभी व्याख्यायित पाण्डिक नामक दो दो विरामस्थान हैं। इस दर्शनके मतसे प्रत्यक्ष और अनुमानके अतिरिक्त और कोई प्रमाण नहीं है। चन्द्रान्य दर्शनमें जितने भी प्रमाण माने गये हैं, वे श्व-चतुर्मानमें पा जाते हैं। इस दर्शनमें पदार्थ दो प्रकारका माना गया है—माय और समाव।

माय पदार्थ छः प्रकारका है—द्रव्य, गुण, कर्म, जाति, विशेष और समवाय। इनमें द्रव्यपदार्थके नौ भेद हैं—पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिग्, आत्मा और मन। गुणपदार्थ २४ प्रकारका है—रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, घृणत्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, यत्न, शुभत्व, द्रव्यत्व, स्नेह, संस्कार, धर्म और अधर्म। मोल पोतादि वर्णको रूप कहते हैं। रूप वर्णोंके भेदसे नाना प्रकारका है जिस वस्तुका रूप नहीं है, वह दृष्टिगोचर नहीं होता और जिसका रूप है वह दृष्टिगोचर होता है, इसलिए रूपको दर्शनका कारण माना गया है। रस छः प्रकारका है—कटु, कषाय, तिक्त, पक्व, लवण और मधुर। गन्ध, सुरभि और असुरभिके भेदसे दो प्रकार है। बुद्धि शब्दका अर्थ ज्ञान है। ज्ञान दो प्रकारका है—प्रमा और भ्रम। जिसमें जो जो गुण वा दोष हैं, उसको उन गुणों वा दोषोंसे युक्त समझना यथार्थ ज्ञान वा प्रमा है और जिसमें जो दोष वा गुण नहीं हैं उसको उन दोषों वा गुणोंसे युक्त समझना अथवायं ज्ञान वा भ्रम कहलाता है। जैसे, पण्डितकी मुखं वा रज्जुको सर्प समझना। नियम और संशयके भेदसे भा ज्ञान दो प्रकारका है। 'इस भवनमें मनुष्य है' और 'इस भवनमें मनुष्य है या नहीं?' ऐसे ज्ञानोंको यथाक्रमसे नियम और संशय कहते हैं। संशय नाना कारणोंसे हो सकता है। विशेष दर्शनके होनेसे संशयको निवृत्ति होती है। विशेष पदसे, जिस वस्तुका संशय हो, उसके व्यापका बोध करना चाहिये। जिस वस्तुके न होने पर जो वस्तु नहीं रह सकती, वही वस्तु उसकी व्याप्य है। जैसे वज्रिके बिना धूम नहीं हो सकता, इसलिए वज्रिका व्याप्य धूम है, अतएव जब तक धूम न दिखलाई दे तब तक वज्रिका संशय ही रहता है। परन्तु धूमके दिखलाई देने पर वह संशय दूर हो जाता है। सुख और दुःख धर्माधर्मके द्वारा होता है। सुख सबका अभिप्रेत है और दुःख अनभिप्रेत। आनन्द और चमत्कारादिके भेदसे सुख तथा स्नेहादिके भेदसे दुःख नाना प्रकारका है। चमत्कारको इच्छा कहते हैं। यत्र तोन प्रकारका है—प्रवृत्ति, निवृत्ति और जीवन-

तमोगुणात्मक और सद् वा असद् रूपमें अनिर्णय पदार्थ-
विशेषको अज्ञान कहते हैं। यह अज्ञान हो जगत्का
कारण है, इस अज्ञानको धावरण और विशेष ये दो
शक्तियाँ हैं। जैसे मेष परिमाणमें चल्प होने पर भी दर्श-
कोंके नयन बाध्दुच कर बहुयोजन-विस्तृत सूर्यमण्डल-
को भी मानो पाच्छादित कर देता है, उसी प्रकार अज्ञान
परिच्छेद हो कर भी जिस शक्तिके द्वारा दर्शकोंको बुद्धि-
वृत्तिको पाच्छादित कर मानो अपरिच्छेद आकाशको ही
तिरोहित कर देता है, उस शक्तिको धावरणशक्ति कहते
हैं और जिस शक्तिके द्वारा अज्ञान उपादान-कारणरूपमें
जगत्सृष्टि होती है, उसे विशेषशक्ति कहते हैं। यह
अज्ञान वास्तवमें एक होने पर भी अवस्थाभेदसे दो
प्रकारका है—माया और अविद्या।

विशुद्ध अर्थात् रज या तमोगुण द्वाभा रुचमिभूत
मत्स्यगुण प्रधान अज्ञानको अविद्या कहते हैं। मायामें ज
परब्रह्मका प्रतिबिम्ब होता है, वह प्रतिबिम्ब ही सर्वत्र
सर्वशक्तिमान् वा ईश्वर है और अविद्यामें जो प्रति-
बिम्ब पड़ता है, वह उस अविद्याके अशीभूत हो कर
मनुष्यादि यावन् ओषधदवाच है। अविद्या जाना
प्रकारकी है, अतएव उसके प्रतिबिम्ब भी नाश होनेसे
जीव भी नाश है। जीवके नाशत्ववादको मध्व वैदा-
न्तिक लोगार नहीं करते, बल्कि युक्ति द्वारा एकत्ववाद-
का ही प्रतिपादन करते हैं। माया और अविद्याको
ही यथाक्रमसे ईश्वर और जीवकी सुषुप्ति, आनन्दमय
कोष और कारण-शरीर कहते हैं। इस कारण-शरीरमें
अभिमानी ईश्वर और जीव यथाक्रमसे सर्वज्ञ और प्राज्ञ
हो जाते हैं। जोवोंके उपभोगके लिए परमेश्वर जोवोंके
पूर्वजन्त सुकृत और दुष्कृतके अनुसार अपरिमित शक्ति-
त्रिमित, मायाके साथ नामरूपात्मक निखिल प्रपञ्चको
प्रथमतः बुद्धिमें कल्पना कर "ऐसा करनाही उचित है"
इस प्रकारका सङ्कल्प करते हैं। पीछे उस मायाविशिष्ट
आत्मसे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे तेज, तेजसे
मल और मलमें पृथिवी उत्पन्न होती है। इन आका-
शादि पाँच पदार्थोंको पञ्चभूतमूल, पञ्चीकृतभूत और
पञ्चतन्मात्र भी कहते हैं। कारणमें अज्ञान गुण होता है,
तद्वत्त्व गुण कार्यमें भी उत्पन्न होता है, इस न्यायके

अनुसार कारणके सत्त्व, रज और तम आदि गुण हैं और
आकाशादि पञ्चभूतमें संक्रान्ता होते हैं। इन पञ्चभूतोंमें
एक एक सत्त्वाग्नि क्रमशः ज्ञानेन्द्रियपञ्चक उत्पन्न
होता है।

आकाशके सत्त्वाग्नि तेज, वायुके सत्त्वाग्नि त्वक,
तेजके सत्त्वाग्नि चक्षु, जलके सत्त्वाग्नि रसना और पृथिवी-
के सत्त्वाग्नि घ्राणेन्द्रिय उत्पन्न होती है तथा पञ्चभूतोंमें
सत्त्वाग्निमें मिश्र जाने पर, उसके द्वारा अन्तःकरणको
उत्पत्ति होती है। अन्तःकरण अवस्थाके भेदमें दो
प्रकारका है—बुद्धि और मन। जिस समय अन्तःकरण-
की निष्ठायात्मक वृत्ति होती है, उस समय उसे बुद्धि
कहते हैं और जब सङ्कल्प और विकल्पात्मक वृत्ति होता
है, तब वह मन कहलाता है। प्रत्येक पञ्चभूतके रजो-
अंशसे क्रमशः वाक्, पाणि, पाद, वायु और उपस्थरूप
पञ्चकर्मेंद्रियोंकी वृद्धि होती है तथा उन पञ्च भूतोंमें
समुदित रजोअंशपञ्चकसे प्राणवायु उत्पन्न होती है।
पूर्वोक्त बुद्धि ज्ञानेन्द्रियपञ्चकके साथ विज्ञानमय कोष
मन कर्मेंद्रियके साथ मनोमय कोष और प्राण
कर्मेंद्रियके साथ प्राणमयकोष बन जाता है। इन तीन
कोषोंमें विज्ञानमयकोष ज्ञानशक्तिमान् है; कर्तृत्वशक्ति-
सम्पन्न मनोमयकोष इच्छाशक्तिशील एवं कारणत्वरूप
है; और प्राणमयकोष क्रियाशक्तिशील एवं कार्य-स्वरूप
है। पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेंद्रिय, पाँच प्राण, बुद्धि
और मन ये सब सूक्ष्म-शरीर हैं। लिङ्गशरीर इन
सूक्ष्म-शरीरका ही नाम है। लिङ्गशरीर इहलोक और
परलोकगामी है तथा मुक्ति पर्यन्त स्थायी है। एक एक
लिङ्ग-शरीरके अभिमानी जीवको भौवास कहते हैं और
समस्त लिङ्गशरीरके अभिमानी ही हिरण्यगर्भ। ईश्वर
जीवके उपभोग-सम्पादक स्थूल विषयोंके सम्पादनाय
पाँच पाँच सूक्ष्म भूतोंका पञ्चीकरण करते हैं। जिसकी
प्रणाली इस प्रकार है परमेश्वर आकाशादिमें प्रत्येक
को प्रथमतः दो अंशोंमें विभक्त करते हैं। पीछे प्रत्येक
भूतके उस एक एक अंशके चार चार टुकड़े करके पूर्व-
जन्त आकाशके दो खण्डोंमें जो एक एक खण्ड बचा
है, उसमें वायु, तेज, जल और पृथिवीके चार चार
खण्डोंमें मक्का एक खण्ड दे कर स्थूलाकाशकी तथा

योगि । जिस विषयमें जिसको चिन्तोपा होता है, उसे उस विषयमें प्रवृत्ति होती है और जो जिस विषयमें होय करता है, वह उस विषयमें निवृत्त होता है । अतएव प्रवृत्ति और निवृत्तिमें यथाक्रमे चिन्तोपा और होय कारण है । जिस यत्नके करने पर जोवित रहा जाता है उसको जीवयोगिन कहते हैं । जीवयोगिन-यत्नके बिना प्राणी सत्यकाम भी 'जोवित नहीं' रह सकते । इस यत्नके द्वारा ही प्राणियोंके ज्ञान-प्रज्ञाभाति निर्वाहित होती हैं । गुरुत्व पतनमें कारण है तथा दृश्यत्व स्वरूपमें कारण है । यह स्वाभाविक और नैमित्तिकके भेदसे दो प्रकारका है । संस्कारके तीन भेद हैं—वेग, स्थितिसापेक्ष और भावना । वेग क्रिया आदिके द्वारा उत्पन्न होता है । उसकी श्राव्यको आकर्षण करके मोचन करने पर जिस गुणके सङ्भावसे वह पूर्वस्थानमें स्थित होता है, उस गुणकी स्थितिसापेक्ष संस्कार कहते हैं । जिस संस्कारके द्वारा पूर्वानुभूत वस्तुओंका स्मरण हो, वह भावना-संस्कार है । धर्म, गुणादृष्ट और उत्पादि पदवाच्य है । यह गंगास्थान और यागादि धर्म-जनक है । धर्मको दुरदृष्ट और पाप कहते हैं ; यह अवैध धर्मावृत्तान्त करने पर होता है एवं प्रायश्चित्तादि-द्वारा विनष्ट हो सकता है । शब्द दो प्रकारका है—ध्वनि और वर्ण । सद्वक्तादि द्वारा जो शब्द होता है, उसे ध्वनि एवं कण्ठादि द्वारा जो शब्द उत्पन्न होता है, उसे वर्ण कहते हैं । यह वर्णजनक शब्द स्वर और व्यञ्जनके भेदसे दो प्रकारका है । गुणपदार्थ द्रव्यमात्रमें विद्यमान है । क्रियाधीन कर्म कहते हैं । कर्म पदार्थ उत्प्रेषण, अव्यय, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन, इन तरह पाँच प्रकारका है । उर्ध्व-प्रेषणको उत्प्रेषण, अधोविप्रेषणको अवप्रेषण और विस्तृत वस्तुमें विस्तारकी प्रसारण कहते हैं । भ्रमण, ऊर्ध्व-ध्वनन, तिर्यक गमन आदि गमन होमें शामिल हैं । जातिपदार्थ नित्य और अनेक वस्तुमें रहता है । पर और अपरके भेदसे जाति द्विविध है । जो अनेक स्थानोंमें रहती है, उसे परजाति कहते हैं और जो अल्प स्थानोंमें रहती है उसे अपर जाति । जिसके चेतन्य है, वह आत्मा है । आत्मा इन्द्रिय और शरीरकी पध्दता है; आत्माके बिना किसी भी इन्द्रियमें कोई भी काम नहीं हो सकता ।

आत्माके दो भेद हैं—जीवान्मा और परमान्मा । जीवान्मा देखो । इस दर्शनमें विविध पदार्थकी नित्य भावना है । आकाश और परमाणु आदि एक एक नित्यद्रव्यमें एक एक विविध पदार्थ हैं । यदि पदार्थ न होता, तो परमाणुओंके परस्पर विभिन्न रूपका नियम कदापि नहीं हो सकता था । जैसे दो-पत्रयदी वस्तुओं-को, परस्पर अवयवगत विभिन्नताकी देख कर, विभिन्न रूपोंका नियम किया जाता है ; उसी प्रकार यह परमाणु अन्य परमाणुसे भिन्न हैं तथा अन्य परमाणु-में जो विविध है, वह अपर परमाणुमें नहीं है, इसलिए अन्य परमाणु अपर परमाणुसे दृश्य है । इस रीतिसे समस्त परमाणुओंकी परस्परकी विभिन्नताका नियम किया जा सकता है । द्रव्यके साथ गुणका, कर्मके साथ जातिका और नित्य द्रव्यके साथ विविध पदार्थका जो सम्बन्ध है तथा पञ्चवयसे साय पञ्चवयोका जो सम्बन्ध है, उसोका नाम समवाय पदार्थ है । अभाव दो प्रकारका है—भेद और भ-सर्गभाव । यहसे पुष्टक भिन्न है पुष्टक यह नहीं है, इत्यादि स्थानोंमें जो अभाव प्रतीयमान होता है, वह भेद कहलाता है । भ-सर्गभाव तीन प्रकारका है—प्रागभाव, ध्वंसभाव और अत्यन्ताभाव । पहले जो सात पदार्थोंका उल्लेख किया गया है, उनमें भिन्न और पदार्थ नहीं हैं । इन्हींमें तात्पर्य पदार्थ आदि-भूत होता है । अन्यकारादि कोई स्वतन्त्रपदार्थ नहीं है, क्योंकि आत्मोक्त अभाव ही अन्यकार है । इससे भिन्न अन्यकार पदार्थोंमें और कोई प्रमात्र नहीं है ।

वैशेषिक और वृणद देखो ।

मलवाशब्द (न्यायदर्शन) —इस दर्शनमें प्रवेताका नाम महर्षि चण्णपाद और मोतम था, इसलिये इसे चण्णपाद और मोतमदर्शन कहते हैं । इसमें न्याय और तर्क पदार्थका विशेषरूपसे दिग्दर्शन कराया गया है, इसलिये इसके न्याय और तर्कशास्त्र ये दो नाम पड़े गये हैं । इसके दर्शनमें अनुमानकी रीतिका भी विशेष निरूपण है, इसलिये लोग इसे आलोचिकी शास्त्र भी कहते हैं । इस न्यायशास्त्रमें सभी शास्त्रोंकी उपयोगिता बतलाई गई है । कारण दर्शनकारका यह कहना है, कि न्यायशास्त्रके बिना किसी भी शास्त्रका

पूर्ववर्तित बावुके एक चंगमें पाकाया, तब, जब चोर
 धुंधिलोके उन चार चार खण्डोंमें एक एक खण्ड दे-
 ार खूब खाता है। चोर इसी रीतिमें खूब खेत, खूब खन
 चोर खूब खेती भी खटि करते हैं। इस पक्षीजन
 पक्ष भूमीकी जो पक्ष खूब खेत करते हैं। इन खूब
 भूतोंमें जो गन्दादि गुणोंकी अभिवृद्धि होती है। इस
 प्रकार पक्षीजन चोर विहृतकृत खूब खेती जो यथाभवन
 भूः, भुव, स्व, मह, जन, तपः चोर भव्य ये सब लोक
 तथा चतन, वितन, सुतन, रमातन, तनातन, महानन
 चोर पातान उपपन्न होता है। खूब शरीरके चार भेद
 हैं—जरायुज, चण्डज, स्वेदज चोर उद्विज। इन खूब
 देहकी कानि चोर पुष्टिमें कारण है पक्ष चोर पातो-
 यादिका भक्षण। पक्षके उद्विज होते पर उमके खूब खाने
 में पुरीय, मध्यमार्गमें मांस चोर खूब खाने में पक्षी पुष्टि
 होता है। पक्ष पातोयादि वस्तुके खूब, मध्यम चोर
 खूब खाने यथाक्रममें खूब रक्त चोर पातको पुष्टिमें रूपमें
 परिवर्तन होता है।

आश्रयमें परमपक्षके निवा सभी वस्तुएं मिथ्या है, इन
 जगत्में जो कुछ पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं, वे सब रज्जु
 सब की तरह चपटान कल्पित मात्र हैं तथा जोवाक्का
 माय परमात्माका भेद नहीं है, जोवाक्का ही परमात्मा
 है चोर परमात्मा ही जोवाक्का है। चतुर्थम इन जगत्का
 दृष्टिक्रम चोर जोवाक्का एवं परमात्माका विभाग करना
 बन्धनयुक्तके नाम करणकी तरह झालावद है। जैसे
 मायावशे इन्द्रजाल-विधाके द्वारा ऐन्द्रजालिक वस्तुकी
 प्रकाश करता है चोर दृग्गोका दृग्गोक्षुब्ध निवारण
 कर पुनः उन वस्तुकी का संसार करता है, उसी प्रकार
 परमेश्वर पञ्चमय शक्तिशाली मायाके द्वारा जगत्को
 दृष्टि कर प्राणियोंकी वृत्त चोर दुष्कृतका फल प्रदान
 करते हैं चोर फिर वस्तुमें जगत्का प्रलय कर देते हैं।
 प्रलय चार प्रकार है—निरय, प्राकृत, नैमित्तिक चोर
 प्राणमिक। मध्यप्रान-नैमित्तिक परम शक्तिकी प्राणिकी
 प्राणमिक प्रलय कहते हैं। मध्यप्रान दाग संसारके
 मूलकारण मूल चपटानके निवृत्त होने पर फिर संसारकी
 द्यति या पुनरुत्पत्ति नहीं होती। प्रलयका क्रम इस
 प्रकार है—प्रथमतः पृथिवीका सब ऊर्ध्व होता है; पृथिवी

जलका मय निचले, तब जल मय वायुमें, वायुका मय
 आकाशमें, आकाशका मय शीतमें, शीतका मय चरहरा-
 में, चरहराका मय विहृतगर्भाके चरहरामें चोर जलका
 भी मय पक्षानमें होता है।

इस दर्शनके मतमें प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, आगम
 पर्याप्त चोर अनुमानविषय भेदके प्रमाण है; प्रकारका
 है। इन छः प्रमाणों द्वारा सम्पूर्ण पदार्थोंकी निधि
 होती है। इन छः प्रकारके प्रमाणों द्वारा बुद्धिमान्
 व्यक्तिगण ऐकिक चोर पारस्विक सुखमशोपादिके पक्षि-
 रत्नादि दीप देण, परम सुख-स्वरूप परात्पर परब्रह्म
 प्राप्तिके निमित्त तत्प्राप्तोन्मत्त तत्त्वज्ञानेच्छा, जो कर उमके
 उपाय-स्वरूप व्यवसाय, मन्त्र, निदिआसन चोर समाधि
 अनुष्ठानमें प्रवृत्त होते हैं। सविकल्पक चोर निर्विक-
 ल्यकचान, ज्ञेय चोर ज्ञाता इत्यादि तत्त्वज्ञानके विनय-
 निरपेक्षकी सविकल्पक समाधि कहते हैं चोर तत्प्राप्त
 परब्रह्म वस्तुमें निविष्टचित्तकी स्थिरताकी निर्विकल्पक।
 निर्विकल्पक समाधि-दशमें निवृत्तचित्त निर्विद्युत्त दैर्घ्यकृत
 प्रदीप-गिष्वाकी तरह निवृत्त होती है। इस निर्विकल्पक
 समाधिकी निधि होने पर तत्त्वज्ञानो की कर क्रमशः
 जीवमुक्त चोर परममुक्त हो सकते हैं। फिर सम्पूर्ण
 चपटान निरोधित हो जाता है।

वैश्वानर और चन्द्रावर्त देवो।

पद दर्शन की द्विन्दुओंके मोरकका विषय है। इन
 छहों दर्शनोंके प्रथमा मुनिगण विषयगतिज्ञा ज्ञान कर
 परमपदको प्राप्तिके लिये विविध यमगोत्र हैं। एक एक
 दर्शन-सम्बन्धी चनेकानिक यम हैं।

प्राचीन धार्मिकोंकी तरह प्राचीन योग चोर योगदर्शन
 तथा सुखमार्गोंमें दर्शनशास्त्रकी विविध चर्चा थी।
 यथांशमें यूरोप चोर यम रिकामें इनको काफ़ी चर्चा
 हो रही है। दर्शनमें दर्शन दर्शनशास्त्रकी श्रीवीर्य करनके
 पाय दर्शन एवं सुखमार्गों चोर योगोंके दर्शनकी
 पाय तथा यूरोप चोर यम रिकामें दर्शनशास्त्रकी पायाय
 कहा जा सकता है। पायाय दर्शनकी भी मायके
 भेदमें श्रीवीर्य करनके प्राचीन चोर धार्मिक इन छः
 नैविद्योंमें विभक्त किया जा सकता है, जिसमें योग-
 दर्शन दर्शन की प्राचीन है। प्राचीन दर्शन तथा

यथाय तात्पर्य ग्रहण नहीं किया जा सकता। अतएव न्यायशास्त्र समस्त शास्त्रोंका दारस्वरूप है। बहुते-
का कहना है कि इस शास्त्रमें “एकमेवाद्वितीय”
इत्यादि बनेकानिक न्यायविरुद्ध श्रुतियां हैं, परन्तु
इसकी बोद्धाधिकार-विहृत्तिको आद्योपात्त देखनेमें
उक्त कथन मिथ्या प्रतीत होने लगता है
महामहोपाध्याय रघुनाथ शिरोमणिने उन श्रुतियोंका
समन्वय किया है। यह दर्शन ५ अध्यायमें विभक्त है,
प्रत्येक अध्यायमें दो दो पात्रिक हैं। इस मतमें पदार्थ
सोचने माने हैं—प्रमाण, प्रमेय, मंशय, प्रयोजन, दृष्टान्त,
तिष्ठान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा,
हेत्वामात्र, हान, जाति और निरुद्धत्यान। जिसके द्वारा
यथाय रूपसे वस्तुओंका निर्णय किया जाता है, उसे
प्रमाण पदार्थ कहते हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और
शब्दके भेदने प्रमाण चार प्रकारका है। इन चार
प्रमाणोंसे ज्ञानः प्रत्यक्ष, अनुमिति, उपमिति और शब्द-
बोध ये चार प्रमितियां उत्पन्न होती हैं। नयनादि इन्द्रिय
द्वारा यथाय रूपसे वस्तुओंका जो ज्ञान होता है, उसे
प्रत्यक्षप्रमिति कहते हैं। प्रत्यक्षप्रमिति ६ प्रकारकी है—
प्राज्ञ, रासन, चाक्षुष, स्वाच, श्रावण और मानस।
व्याप्य पदार्थकी देख कर व्यापक पदार्थका जो ज्ञान
होता है, उसे अनुमिति कहते हैं। जिस पदार्थके रहने
पर जिस पदार्थका समाव नहीं रहता, उसकी व्याप्य
और जिस पदार्थके न होनेसे जो पदार्थ नहीं रहता,
उसे व्यापक कहते हैं। जैसे—“किसी भी स्थानमें वज्रिके
बिना धूम नहीं रह सकता” यहां धूम वज्रिका व्याप्य
है, तथा “जहां धूम हो, वहां वज्रिका समाव
नहीं हो सकता” यहां वज्रिके धूमका व्यापक
है। यही कारण है जो घबतादि पर धूम देख
कर वज्रिका अनुमान किया जाता है। अनुमान
तीन प्रकारका है—पूर्ववत्, शेषवत् और सामान्यतो
दृष्ट। कारण देख कर कार्यका अनुमान करना पूर्ववत्
(धर्मात् कारणलिङ्गक अनुमान) है। जैसे, भेड़की
उत्पत्तिको देख कर वर्षाका अनुमान करना। कार्य देख
कर कारणका अनुमान करना शेषवत् (धर्मात् कार्य-
लिङ्गक अनुमान) है। जैसे, नदीकी आयत्ता बढ़िकी

देख कर वृष्टिका अनुमान करना। कारण और कार्यके
बिना हो केवल व्याप्य वस्तुको देख कर जो अनुमिति होती
है, उसका नाम सामान्यतोदृष्ट है। जैसे, गगनमण्डन-
में पूर्ण चन्द्रमाके मन्दगमने शक्य पक्षका अनुमान,
क्षियाकी हेतु मान कर गुणका अनुमान और दृष्टिवोल
जातिको हेतु मान कर द्रव्यत्वजातिका अनुमान करना
आदि। किसी किसी शब्दके किसी किसी अर्थमें शक्ति
परिच्छेदकी उपमिति कहते हैं। इन शब्दों द्वारा जो
बोध होना है, उसे शब्दबोध कहते हैं। यह शब्दप्रमाण
दो प्रकारका है—दृष्टार्थक और अदृष्टार्थक। जिस
शब्दका अर्थ प्रत्यक्षसिद्ध है, उसे दृष्टार्थक शब्द कहते हैं
और जिसका अर्थ अदृश्य है, वह शब्द अदृष्टार्थक क-
हाता है। प्रमेयपदार्थ बारह प्रकारका है—पामा,
गरीर, अर्थ, बुद्धि, मन, महिनि, दोष, प्रत्येकभाव, फल,
दुःख और उपवर्ग। इन्द्रियने दो भेद हैं—चक्षुरिन्द्रिय
और वहिरिन्द्रिय। दोष तीन प्रकारका है—राग, द्वेष
और मोह। काम, मत्सर, स्पृहा, लज्जा, लोभ, माया
और दुःखादिके भेदने राग नामा प्रकार है। रसविच्छा-
की काम कहते हैं। अपर्ण प्रयोजनके बिना हो दूसरेके
अभिमत विषयकी निवारणच्छाका नाम मत्सर है।
जिस विषयसे धर्मकी कोई हानि नहीं होती ऐसे
विषयकी प्राप्तिकी अभिलाषाको म्यृहा और भिरे सञ्चित
द्रव्यका अर्थ न हो पताहग इच्छाकी लज्जा कहते हैं।
कार्पण्य आदिके भेदसे लज्जा नामा प्रकारकी है। जिस-
के द्वारा पाप हो सकता है, ऐसे विषय नामका अभि-
लाषाको लोभ कहते हैं। परवचनाका नाम माया है।
किसी अपना धार्मिकत्वादि प्रकट करने अपना उत्क-
टत्व प्रकट करनेको इच्छाको दम्भ कहते हैं। क्रोध,
ईर्ष्या, अशुभा, द्रोह, समर्प और अभिमानादिके भेदने
द्वेष भी नामा प्रकारका है। विपर्यय, मंशय, तर्क,
मान, प्रमाद, भय और शोकादिके भेदने मोह भी नामा
प्रकारका है। बारम्बार उत्पत्तिको पर्याप्त एक बार मरण
और एक बार जन्मग्रहण तथा पुनः मरण और तदन्तर
जन्मग्रहणरूप जन्मग्रहणको पाहृत्तिको प्रेत्यभाय कहते
हैं। जब तक मुक्ति न हो, समस्त जीवोंकी यह प्रेत्य-
भाय दुःख दिया करता है। मुक्तिके भिन्ना इस दुःखने

रोमका दर्शनशास्त्र भी प्राचीन ग्रीक दर्शनशास्त्रके अन्तर्भूत है। दर्शनशास्त्रके इतिहास-लेखकों ने प्राचीन ग्रीक दर्शनशास्त्रको तीन भागों में विभक्त किया है। उनको 'थैलिस' (Thales) को ग्रीकदर्शनका प्रवर्तक माना है। सॉक्रेटिस से सॉक्रेटिस के पूर्व तन दार्शनिकों को प्रथम समयका एवं सॉक्रेटिस (Socrates) अंतो (Plato) और अरिस्टॉटल (Aristotle) को द्वितीय समयका तथा अरिस्टॉटल से नव अंतोनिस्म (Neo-Platonism) नामक दर्शनके तीसरे एवं नव दार्शनिकों को तृतीय अर्थात् तीसरे समय बताया है। सॉक्रेटिस के पूर्ववर्ती दार्शनिकों को पांच विभागों में विभक्त किया गया है—हिलिस्टि (Hilicist), पियागोरियन्, (Pythagorean), एलियाटिक (Eliatic), अटमिस्ट (Atomist) और सफिस्ट (Sophist)। थैलिस (Thales) को प्रथम अर्थोंके दार्शनिकों में स्थानानुसार श्रेष्ठतम दार्शनिकों को प्रथम अर्थोंके प्रायोगिक (Ionic) दार्शनिक भी कहा जा सकता है। परिदृश्यमान जगत् किम तद्वत् और किम भूल उपादानसे उत्पन्न हुआ, उपादान दार्शनिकों का मूल उद्देश्य था। इनमें से किसी किसीने जानकी, किसीने वायुको और किसीने तेज आदिको आदिकारण माना है। थैलिस (Thales) ने ईसा मे ६० वर्ष पहले जन्मग्रहण किया था। ५५० पूर्व ख्रिष्टाब्दको उसको मृत्यु हुई थी। ये क्लिसस (Oraesus) और सोलन (Solon) के समसामयिक थे। इनके मतसे जल ही समस्त पदार्थों की उत्पत्तिमें आदि-कारण है। आनाक्सिमन्दर (Anaximander) और आनाक्सिमैनिस् (Anaximenes) ये दोनों प्रायोगिक (Ionic) दार्शनिक हैं। आनाक्सिमन्दरके मतमें शीतोष्ण अर्थात् तेज और तेजका अभाव तथा आनाक्सिमैनिस्के मतमें महत् ही विभक्तका कारण है। ये दोनों ही व्यक्ति प्रायोगिक दार्शनिकों में विशेष प्रसिद्ध हैं।

पियागोरस्, 'पियागोरियन्' (Pythagorean) नामक दर्शनशास्त्रके प्रवर्तक है। पियागोरसका जन्म ५४० ख्रिष्टपूर्वकी स्पामस नगरीमें हुआ था और ४७० ख्रिष्टपूर्व की मृत्यु हुई थी। इनके द्वारा प्रवर्तित दर्शन-

के मतमें, समसन्धिवेश और समानुपात (harmony and proportion) तथा इन दोनोंकी परिणति संख्या ही (number) पदार्थोंको उत्पत्तिमें कारण है। इस अर्थोंके दर्शनमतका प्रचार मध्यमे पहले फिलोलॉस (Philolaus) ने किया था। सिमियस् (Simmius), मित्रिस् (Cebes), ओकेलस (Oculus), टाइमियस् (Timaeus), एकेक्रेटिस् (Echecrates), अक्रियो (Achrio), अरिस्टॉटल (Archytas), लाइसिस् (Lysis) और यूरिटिस् (Urytus) ये ही व्यक्ति पियागोरियन् दार्शनिकों में स्थातनामा हुए हैं।

पियागोरियनों ने आत्माका अमूर्त स्वरूप स्वीकार किया है। उनके मतमें आत्मा ही हरमनी (Harmony) मात्र है और शरीर उसका कारागार स्वरूप है।

कनोफन देय्यी (Colophon) जेनोफानिस् (Xenophanes), एलियाटिक (Eliatic) दर्शनके प्रवर्तक थे। पूर्व पूर्व दार्शनिकों ने पदार्थका बहुत्व स्वीकार किया है। किन्तु इन लोगों ने पदार्थके एकत्वको स्वीकार करनेका प्रयास किया है। इनके मतमें ईश्वर ही सर्व-नियन्ता है। इनमें पारमिनाइडिस् (Parmenides), जेनो (Zeno), मेसिसस ये ही स्थातनामा दार्शनिक हुए हैं। एक मात्र सत् ही पदार्थ है, अन्तर्ही पदार्थ नहीं है, यही पारमिनाइडिस्का मत है। अर्थात् विशेष विवरण 'पारमिनाइडिस्' और 'पारमिनाइडिस्' शब्दों में देखो।

दर्शनपथ (सं० पु०) दर्शनस्य पन्था इत्यतः। दृष्टिपथ, नगरको पथ इति।

दर्शनप्रतिभू (सं० पु०) दर्शनार्थ प्रतिभूः। प्रतिभूः देह, यह मनुष्य को किसी दूसरेको हाजिर कर देनेका भार अपने ऊपर ले, आभिप्रायकार। इसका विषय याज्ञवल्क्य-संहितामें इस प्रकार लिखा है—भाई, भ्राता, स्त्री, पिता और पुत्र इन लोगोंका धन जब तक एक साथ रहता है, तब तक एक दूसरेमें सहाह लिपे बिना इनमें से कोई भी कामिल नहीं हो सकता है। चाप इसे छोड़ देवे, लहरत पड़ने पर मैं इसे हाजिर कर दूंगा, इसे चाप श्रव दे, यह ठगेगा नहीं, विज्ञातो है, पगर यह नहीं देगा, तो मैं श्रवण सुका दूंगा, चाप किसी बातका डर न करे, जो सोल कर श्रव दे, इस प्रकार दानके

मीन में दमनामि कहे गये हैं। दमन घोर विमानका
 जामिन यदि मर जाय, तो उसके अङ्गुलीको महाजनका
 जल परमोष्ठ करके चारुये, नहीं तो ये पापके भागी
 होत हैं। यदि पतक अति चमक मिट्टी कर बिभी
 एकत्र प्रतिभू हो, तो तो मिन प्रकाशके चमका प्रतिभू
 हुआ हो, उसे बैसा हो देना होगा। फिर यदि एक
 हाथानित हो चयात् विशेष चमक निट्टे न कर सभी
 मिन कर जायोम हो जाय, तो जामिनदार महाजनके
 इच्छामुसार धन देनेको बाध्य है। जामिनदार सबसे
 मामने महाजनको जो कुछ देगा, सबको उचित है,
 कि वह उसका दूना नगा कर प्रतिभूको दे। धानका
 जायो होनेसे प्रतिभूको उसका तिगुना, यन्त्रका घोनुना
 घोर रमना, पठगुना देनेको किया है।

(बाइबलमय २७०) प्रतिभू देखो।

दमना (मं० लो०) नदीविशेष, एक नदीका नाम।

(पृष्ठ ३०)

दमनो (मं० लो०) मैल्कीट, मिनन नामका कीड़ा।

दमनोय (मं० लि०) दमन इति दम-पनीयर, १

दमनोय, देगने मायक। २ मनोहर, सुन्दर।

दमनो द'डो (मं० लो०) दमना घुरी देखो।

दमनोक्ष्मना (मं० लो०) श्वेत जाती हथ, मफिट जाल-
 फलका पेड़।

दमनोपनिपट (मं० लो०) उपनिपट्ट, एक उपनिपट्ट-
 का नाम।

दमनप (मं० लि०) दमन दमनन पिबित पाक। दमन
 मासमे ही पाक देवभेद।

दमनामिनी (मं० लो०) दमनोय जामिनी। तमिया,
 चंधेरो रान, चमावप्पाकी रान।

दमनिय (मं० लि०) दमनोयति दम-दिष्ट-दमि-
 यत्। १ दमन, दिव्यमिना। (पु०) २ हारपाय,
 डोलीदार।

दमनियट्ट (मं० पु०) दमन चमावप्पाकी विपट्ट प्रचायो-
 उदमन यत्। चट्ट, चट्टमा।

दमना (मं० लि०) दमन देखो।

दमनित (मं० लि०) दमनियत्। १ दिव्यपाय दूध।
 २ प्रकाशित।

दमिन् (मं० लि०) दम-विनि। १ दमन, देगनेमाका।

२ विवेचक, विचार करनेवाला। ३ मायाय कारक,
 दमन या मुनाकात् करानेवाला।

दमिन् (मं० लि०) दम 'चमोयवि दमनो' इति
 इवविप्। दम, देगनेमाका।

दमिन्—१ मन्त्रात्र मदेमके पन्मगत नैधुर निमेका एक
 जमींदारो तातुह। इन्का परिमाणक १११ मर्गमोन
 है। तातुका प्रधान नगर दमि है। यह पत्ता ११
 १६ मे १६ १६ उ० घोर देगा ०८ १६ मे ०८ ४८
 पु० मे चयमित है। मोहनग्या ममम ८२४५८ है।
 इसमें ११८ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तातुका एक प्रधान नगर। यह पत्ता ११
 ४८ उ० घोर देगा ०८ ४४ पु० मे चयमित है। दमि
 याता, डाकघर तथा कुछ राजकीय कार्यालय है।

दमि (मं० लि०) दम-यत्। दमनोय, देगने मायक।

दम (मं० लो०) दमनोति दम-पत्। १ दमोप। २

चण्ड, टुकड़ा। ३ पत, घोषोका पत्ता। ४ घन, दोलत।

५ तमामपत्त। ६ दम, पाया भाग। ७ चमकद,

चमके ऊपरका पाच्छादन, कीप, म्यान। ८ चण्ड, दूरी

वोत्र। ९ समूह, भुण्ड, गरोह। १० काष्ठकलहादि-

का भूकल, पट्टरीके पाकारको किमी मनुकी मोटाई।

११ जनन-लक्षविशेष, जनन होनेवाली एक घाम। १२

कलको धपड़ी। १३ मण्डनी, गुह। १४ निगा, जोत्र।

१५ तेजपत्त, तेजपत्ता।

दम—मनके छोटे भाई। मन देखो। इन्को नि वामदेवको
 माननेके लिये एक विधात बाप कोका था, हम पर
 वामदेवके मापमे सभी बाप द्वारा हमके पुत्र होनेजित
 भाई गये।

दमरनामा—बोहलोग दमो एक जातिन बुहका चयनार
 समझते हैं। तिमनको राजधानी नामा नगरके बाहर
 बुहका नामक मन्दिरमें ये वाम करते हैं। इनके मिर्चाको
 गंभीरित या मंभलत बोह कहते हैं।

कामा कश्यमे विमून विधान हैको।

दक (मं० लो०) गुरदो।

दक (मं० पु०) १ नकाको माक करनेका राजगोरोका
 एक यन्त्र। इनका पाकार बुनीमा होता है परन्तु बि

अर्थात् समभावमें अवस्थिते जो संत्व, रज और तमोगुण है, उनका स्वरूप है। मत्त्व, रज और तम ये वैशेषिकोक्त गुण पदार्थ नहीं हैं, किन्तु द्रव्य पदार्थ हैं। पुरुष पशु-वन्धन करता है, इसलिए इसे गुण कहा गया है। यह प्रकृति मत्क्रिय, नित्य, अनाद्यित (अर्थात् किसी प्राययका चवत्सवन बिना लिए हो अवस्थित), असं-युक्त, पवित्रात् स्वतन्त्र (अर्थात् यहद्वारादि तत्त्वान्तरको सहायताके बिना हो स्वकार्यमें समर्थ), अचेतन, अज्ञा-त्मक और परिणामी है। महत्त्वसे ले कर इस द्रव्यमान् महात्मा महाभूतको यदि महाभूत तक सम्पूर्ण पदार्थ मूल प्रकृतिको साक्षात् पश्यमाका परिणाम विशेष है। ये गुणत्रय परस्पर मिल कर जगत्-कार्यका सम्पादन करते हैं। सत्त्वगुण सुख-स्वरूप, लघु और प्रकाशक है, रजोगुण दुःख-स्वरूप एवं उपपन्नक अर्थात् सत्त्व और तम जो अपने अपने कार्यमें प्रवृत्त होता है, उसका प्रव-र्तक है। तमोगुण मोहस्वरूप, गुरु और आवरणक है। जिस समय प्रकृतिका विरूप परिणाम होता है, उस समय प्रकृतिसे महत्त्व, महत्त्वे यहद्वार, यहद्वारसे एकादश इन्द्रिय और पञ्चतन्मात्र तथा पञ्च तन्मात्रसे पञ्च महाभूत, इन प्रकार समस्त सृष्टि होती है। इनके सिवा अन्य कोई पदार्थ नहीं है। महत्त्वस्व बुद्धिस्वरूप है। बुद्धिस्त्वसे द्वारा हो समस्त विषयोके कर्तव्या-कर्तव्यका नियम होता है। इस नियमको अज्यवसाय कहते हैं। अज्यवसाय बुद्धिका धर्म है। पुरुष नित्य, सत्त्वादि त्रिगुण-गुण्य, चेतन-स्वरूप, साक्षी, कूटस्थ, द्रष्टा, विवेकी, सुषुप्त्यादिवे गूढ मध्यस्थ और उदासीन पदवाच्य है। पुरुष शरीरोंके भेदसे ज्ञाना प्रकारका है अर्थात् एक एव शरीरका पवित्राता जीव-स्वरूप एक एक पुरुष है। शरीर दो प्रकारका है—स्थूल और सूक्ष्म। स्थूल शरीर मातापितासे उत्पन्न होता है। मातासे लीम, गोणित और मांस एवं पितासे स्नायु, पस्थि और मज्जाको उत्पत्ति होती है। इस मातापितृज शरीरको वाट्कौमिक शरीर कहते हैं। यह शरीर ही रक्षान्त, भक्षान्त और विष्टान्त होता है। सूक्ष्म शरीर बुद्धि, यहद्वार, एकादशेन्द्रिय और पञ्च तन्मात्र इन भेदादृष्ट तत्त्वोंका समूह है। यह नित्य अर्थात् प्रत्य

पयन्त स्याद्यी और अविच्छेदते अर्थात् अप्रतिहतमति-युक्त है। सूक्ष्म शरीर शिलामें प्रविष्ट हो सकता है तथा इह-लोक और परलोकमें साय रहता है। यह सूक्ष्म शरीर नर, पशु, पक्षी, शिना और हृषादि-स्वरूप स्थूल शरीर धारण करता है। यही शरीर सुख दुःखादिका भोग करता है। इसका विनाश नहीं होता। प्रकृतिमें मग्नके आदिमें एक एक सूक्ष्म शरीरका निर्माण किया था। प्रकृति पुरुषकी विवेकस्याति तक पुरुषके साथ (संयुक्त) रहते है। विवेकस्याति होती ही प्रकृति निवृत्त होती है। जैसे नर्तको नृत्य दर्शन-रूप स्वकार्य सम्पादन कर निवृत्त हो जाती है, उसी प्रकार प्रकृति भी पुरुषको संसाररूप रज्जु दिखा कर उससे निवृत्त हो जाती है। ये सम्पन्नपदार्थ स्वकार्य सम्पादनमें समर्थ है। इसी लिए प्रकृति पुरुषसापेक्ष है और पुरुष भी प्रकृतिगत है। सुख दुःखको आत्मगत समझ कर उसके निवारण-की अभिलाषासे मुक्तिको प्रायश्चा करता है। यह मुक्ति प्रकृतिके माय पुरुषको अग्रयास्याति (अर्थात् भेदज्ञान-स्वरूप तत्त्वज्ञान)के बिना नहीं मिलती। यह तत्त्व-ज्ञान प्रकृतिके द्वारा ही संपादित होता है। इसलिए पुरुष भी प्रकृति-समिप है। पूमान्के तीन भेद है—प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द। सभी कार्य सत् अर्थात् उत्पत्तिके पहले स्व स्व कारणसे सूक्ष्म रूपमें संयुक्त रहते हैं, पीछे जब आविर्भूत होते हैं, तब उसे उत्पन्न कहते हैं और जब तिरोभूत हो जाते हैं, तब विनष्ट। यद्युतः कोई भी कार्य उत्पन्न या विनष्ट नहीं होता। निविध दुःखको अत्यन्तनिवृत्ति ही परम पुरुषार्थ वा मोक्ष है। जिससे इस दुःखकी निवृत्ति हो सके, उसी विषयको इस दर्शनमें विशेष आलोचना की गई है।

वाक्य और वचन देखो।

वातजल-दर्शन—इस दर्शनके पविता भगवान् पतञ्जलि हैं। उनकी नामानुसार इस दर्शनका नाम वातजल-दर्शन पड़ा है। इस दर्शनमें योगका विषय विमेषता निर्दिष्ट होनेके कारण इसको योगशास्त्र भी कहते हैं तथा पदार्थ निर्णयार्थमें मत्त्वके साथ एकमत होनेसे यह मत्त्वप्रवचन भी कहा जाता है। भगवान् कपिलने जो पक्षीय तत्त्व माने हैं, उन्हें पतञ्जलिनं भी स्वीकार किया

पर चिपटा होता है । (स्त्री०) २ कम्प, धरधराहट, धमक । ३ टोम, चमक ।

दलकना (हि० क्रि०) १ फट जाना, चिर जाना । २ छद्मिन हो उठना, चौकना । ३ कांपना, धरना । ४ भौत कर देना, डराना ।

दलकपाट (मं० पु०) फूलका वह कोश जिसके भीतर कलौ रहती है । इसकी पल्लियां धरो होती हैं ।

दलकोमल (स० स्त्री०) पद्म, कमल ।

दलकोप (स० पु०) दलाभ्येय कोषो यस्य । १ कुन्दपुष्प-वृक्ष, कुंदका पोधा । २ मलिकापुष्पवृक्ष, चमेलीकी पेड़ ।

दलकज्जन (स० त्रि०) १ सेनाको मारनेवाला । (पु०) २ एक प्रकारका धान ।

दलकग्न्य (स० पु०) मन्त्रपणं वृक्ष, सतिवन ।

दलगोमा—पासामर्क ग्वालपाड़ा जिलेका एक ग्राम । यह पला० २६° ६' ४०" और देश० ८०° ४८' ५०" में अवस्थित है । यहां प्रतिवर्ष के जनवरी महीनेमें एक बड़ा मेला लगता है । यहां इस जिलेके प्रधान जमींदार बिजौ राजाको एक जमींदारी कचहरी है ।

दलपुवरा (हि० पु०) एक प्रकारको रोटी । इसमें पिछी हुई दाल ममक मसालेके साथ भरो रहती है ।

दलद (स० त्रि०) दल-बाहुं पठन् । विधाकारक, दो टुकड़ोंमें करनेवाला ।

दलपुमन (मं० पु०) बांसका बना हुआ कमखाव बुनने-वालीका एक यन्त्र । इसमें चं कुड़ा घोर नकशा बंधा रहता है ।

दलघिया—गङ्गाज २४ परगनेके पन्तर्गत बसिरहाट मह-कुमेंका एक ग्राम ।

दलदल (हि० स्त्री०) १ कोचड़, पक । २ बहुत गहराई तकको गीली जमीन । यह जमीन इस तरहकी होती है, कि इस पर पैर रखनेसे यह नीचे धंस जाता है । ३ बुढ़ो स्त्री । यह पासकोके कछारोंकी बोली है ।

दलदला (हि० वि०) जिसमें दलदल हो ।

दलदार (हि० वि०) मोटादलवाला ।

दलन (मं० पु०) १ पोंस कर खंड खंड करनेका काम । २ विनाश, संहार ।

दलना (हि० क्रि०) १ धुर्ष करना, खण्ड खण्ड करना, मोड़ना । २ रोंदना, कुचसना, मलना । ३ नष्ट करना, बरबाद करना । ४ पक्षी द्वारा घनाज आदिके दानको दो दलोंमें करना ।

दलनिर्माक (स० पु०) दलतोति दलं वस्त्रं निर्माक इव यस्य । मूर्जपत्रवृक्ष, भोजपत्रका पेड़ ।

दलनी (स० स्त्री०) दल्यतेऽनया दल करणे लुट्-ट्-कोप् । १ सोझ, टोखा । २ भेदकर्ता, विच्छेद करनेवाला ।

दलप (स० पु०) दल्यतेऽसौ दलति धनेन वा दल-कपन् । १ स्वर्ण, सोना । २ मूलमद्वय, इयिगारका छोड़ना । ३ विदारक मात्र । ४ दलपति ।

दलपति (स० पु०) दलस्य पतिः इ-तत् । १ दलका प्रधान व्यक्ति, मण्डलीका मुखिया, सरदार । २ सेनापति ।

दलपुष्पा (स० स्त्री०) दलानि पलाशोव पुष्पाणि यस्याः । केतकी । इसकी फूल पत्तोंके पाकारके होते हैं ।

दलदा—मिहलके काण्ठी नगरमें अहित बुद्धदेवके सचिव दत्त । पोत्तगोलोने १५६० ई० में चमसो दांत विनष्ट कर दिये थे । चमो जो दांत देखे जाते हैं, वे प्रायः दो इस सम्ये विषय हाथी-दांतके सिवा घोर कुछ नहीं हैं । ये देखनेमें बहुत कुछ कुशीरके दांतों से लगते हैं ।

दलपतिराय—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि । ये पहमदा-बादके रहनेवाले थे । इनका जन्म १८२० ई० में हुआ था । इन्होंने "उदेपुर" वाले जगतेश्वर नाम पर यह ग्रन्थ बनाया है । यह ग्रन्थ सद्यपुर घोर जगत्सिंह है । इनकी भाषा बहुत मधुर और भाव बढ़े गभीर होती है । नीचेका दोहा इन्होंने बनाया हुआ है—

"हैं सदा विहसित बिमल परे बाव मृदु मंजु ।

उगयो नहिं पुनि पंके से प्यारी तब मुख क'जु ॥"

इन्होंने धनुमास भी अच्छे रक्ते हैं । इनकी कविता बहुत योड़ी है, परन्तु हैं बड़े छल्लट । इनके बनाये हुए पनेक छन्द भी मिलते हैं । सदाहरणार्थ एक छन्द नीचे लिखा जाता है—

"आली रो निहारि हृषमानुषी दुबारी बहि

रेखि प्राण श्रोतमके प्रेम पावमें परत

भौं इनको करिको भी हेरिको बिहसि मगर

टेरिको कबीधे जब यह मंद मंद मैं मारत ।

है। इनके मतमें, पुनर्प्राप्तिरहित परमेश्वर है; जेवन इतना ही प्रभेद है। इसीलिए कोई मान्य शास्त्रकी सेखर मान्य और निरोधर मान्य कहा करते हैं। सेखर मान्य पातञ्जल है और निरोधर मान्य कपिनसूत्र। मान्यशास्त्रमें ईश्वरकी स्वीकार किया है या नहीं? यह नितास्त दुर्बोध और घनालोच्य है। इसलिये तद्विषयक विचारार्थ यहाँ नहीं दिये गये।

यह दर्शन चार पाठोंमें विभक्त है। इन चार पाठोंमें योगशास्त्र करुणिकी प्रतिष्ठा, योगशास्त्र, योगके उपायस्वरूप अध्याम और वैराग्यका स्वरूप और भेद, सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञातके भेदमें समाधिमें विभाग, मयिस्तार योगोपाय, ईश्वरका स्वरूप, प्रमाण, उपायना और उसका फल, चित्तविशेष और दुःखादिका निराकरणोपाय, समाधिभेद, क्रियायोग, क्षेत्रकर्मका प्रभेद, तत्त्वज्ञान, यम-नियमादि, ध्यान, धारणा, समाधि, सिद्धि-पञ्चक, विज्ञानयाद, निराकरण आदिका दिग्दर्शन काया गया है। एतन्नामिने ह्यसौम तत्त्व माने हैं। इन ह्यसौम तत्त्वोंमें जो सामान्य पदार्थ प्राविर्भूत हुए हैं। इनके सिवा और कोई पदार्थ नहीं है। योगीश तत्त्व और मुख्य इन पक्षीय तत्त्वोंका वर्णन मान्य दर्शनमें हो चुका है। ह्यसौम तत्त्व ईश्वर है परमेश्वर ह्यसौम तत्त्व रहित, जगन्निर्माणार्थ स्वेच्छानुसार शरीर धारण-पूर्वक संसारके प्रवृत्तक और संसारान्तर्गत सन्तापयमान व्यक्तियोंके अनुपादक, यत्सोम लगाने निधान तथा यत्सोमोंके रूपमें सर्वत्र देदीप्यमान हैं। योगिके द्वारा उनको पहचाना जा सकता है। चित्तवृत्तियाँ निरोध वर्णात् विषयसुखमें प्रवृत्त चित्तकी विषयोंमें विनिवृत्त और ध्येय वस्तुमें संस्थापित कर, तन्मात्रका ध्यान करनेका नाम योग है। यमःहरणो विस्तृत कहते हैं। चित्तका पांच प्रयत्नार्थ है—चिन्ता, स्मृति, निश्चिन्ता, निवृत्ति और एकाग्र। चित्तकी प्रयत्नविषयोंकी चित्तवृत्ति कहते हैं। चित्तवृत्ति पांच प्रकारकी होती है—प्रमाण, विषय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। प्रत्यक्ष, अनुमान और आगमके भेदमें प्रमाण तीन प्रकारका है। निष्ठाज्ञानकी विषय कहते हैं। कोई विषय वास्तवमें नितास्त असम्भव होने पर भी तदर्थ प्रतिपादक शब्द व्यवहार करते

हो पायातः तद्विषयकी जो ज्ञान उत्पन्न होता है, उसका नाम विकल्प है। निद्राशब्दमें साधारण निद्रा और धारण शब्दमें स्मृति प्रत्यक्ष चरण करना आहिये। यह पांच प्रकारकी चित्तवृत्ति ही चित्तका परिणाम विषय है और इसीलिए यह चित्तका धर्म है। पाप्मयत्वं नहीं है। परिणाम तीन प्रकारका है—धर्म, मूल्य और प्रयत्न। योगशास्त्र चित्तवृत्तिका निरोध अध्याम और वैराग्यमें होता है। वस्तुतः काल तक निरंतर वादराति-गयके द्वारा किसी विषयमें प्रयत्न करनेका नाम अध्याम है, और विषयसुख विद्युत्का जो वैराग्य कहते हैं। जिसको वैराग्य उपाय होता है वह विचारता है कि 'मैं सुख दुःखजनक विषयोंके योगीभूत नहीं हूँ, सुख-दुःख-जनक विषय मेरे ही योगीभूत हैं।' इसलिये वैराग्यकी योगीकार-शब्दमें भी कहा जा सकता है। विषय दो प्रकारका है, एक दृष्ट और दूसरा आनुययिक। इहलोकमें उपभुज्यमान विषयकी दृष्ट कहते हैं और परलोकमें भोग्य विषयकी आनुययिक। ज्ञानयोगके अधिकारी सभी नहीं होते; जिनका चित्त प्रसन्न है, लक्ष्यका ज्ञानयोगमें अधिकारी है; जिनका चित्त प्रसन्न नहीं, दुःखा है उनके क्रियायोग करना पड़ता है। मन्त्रका संस्कार दम प्रकार है—जनन, ज्योतन, ताडन, योधन, अभिषेक, विमलौकरण, प्रायश्चित्त, तर्पण, दोषन और गुणि इन क्रियायोगोंका अनुष्ठान करनेमें लक्ष्यमें लोचता होता है। योगीशके पाठ भेद हैं—यम, नियम, ध्यान, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। प्राणायामके स्वाभाविक गति विच्छेदकी प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम तीन प्रकारका है—रेचक, पूरक और कुम्भक। विधिके अनुसार योगा-नुष्ठान करनेमें सिद्धि होती है। निश्चिन्ता नाम प्रकारकी है, जिनमें अधिमा, अधिमा, गरिमा, प्राकाश्य, हेमिल, निमित्त और कामावगायित्व ये पाठ निश्चिन्ता महाविधि कहलाते हैं। सभी व्यक्तियोंके लिए संसारका कारण एक मात्र प्रकृतिपुरुषका संयोग है। यह प्रकृति-पुरुष-संयोग अविवर्धक कारण होता है। जब अविवर्धकी नष्ट करनेमें एक मात्र विवेकान्ताति ही समर्थ है। इनके निम्न चमक उपाय नहीं है। जिस प्रकार चित्तका

नीम में द जामिन लड़े मये है । दर्जन धोर विमानका
जामिन यदि सर जाय, तो उसके लड़कोंको मजाननका
लाय परिशोध काय चाहिजे, नहीं तो से पापके भागो
धेने है । यदि चलके लड़के चंग निर्देश कर बिभी
एक प्रसिद्ध हैं, तो जो जिस प्रकार चंगका प्रसिद्ध
दूपा हो, उसे वैसा हो देना होगा । फिर यदि एक
होयाहित हो चंगो विरोध चंग निर्देश न कर सभी
मिन कर बाधोमे हो जाँ, तो जामिनदार मजानन
रक्षागुमार धन देमको बाध्य है । जामिनदार मजानन
मामने मजाननको जो कुछ देगा, सबको सचित है,
कि वह उसका दूना नगा कर प्रसिद्धको दे । धानका
बाधो होमे प्रसिद्धको उसका तिगुना, यद्यका योगुना
धोर रमना, पठगुना देमको सिपा है ।

(बाधवन्धव २७०) प्रसिद्ध देवो ।

दर्जना (मं० लो०) नटीविशेष, एक नटीका नाम ।

(पद्य०)

दर्जानो (मं० लो०) नैलकीट, नैलिन नामका कीड़ा ।

दर्जानोय (मं० लि०) दृग्गति इति दृग्-पनीयर । १

दर्जानोय, देवने भायक । २ मनोहर, सुन्दर ।

दर्जानो दंडो (लि० लो०) दारानी धुरी देवो ।

दर्जानोप्यना (मं० लो०) द्योत जाती हक, मजिद जाय-
फलका पेड़ ।

दर्जानोपमिद (मं० लो०) उपनिषद्, एक उपनिषद्-
का नाम ।

दर्जान (मं० लि०) दर्जन दर्जान विवसि पा-क । दर्जन
मात्रमे हो पाय देवभेद ।

दर्जानामिने (मं० लो०) दर्जानेय यामिने । नमिया,
चंधरो राग, चमायप्याकी रात ।

दर्जानिय (मं० लि०) दर्जानोति दृग्-विष्-दर्जि-
यत् । १ दर्जक, दिगन्तिका । (पु०) २ दारपाय,
बोझदार ।

दर्जानिद (मं० पु०) दर्ज चमायप्या विपद् प्रपायो-
उदमनं पण । चन्द्र, चन्द्रमा ।

दर्जाना (लि० लि०) दारपाय देवो ।

दर्जित (मं० लि०) दृग्-विष्-ज । १ दिगन्ता दूपा ।
२ दारामित ।

दर्जित (मं० लि०) दृग्-विष्-ज । १ दृग्-देवनेभायक ।

२ विवेक, विचार देवनेभायक । ३ माताय कारक ।

दर्जित दारुभाकाय करानेभायक ।

दर्जित (मं० लि०) दृग्-विष्-ज । १ दृग्-देवनेभायक ।

दर्जित—१ मन्त्राण पदेमके पदार्थन मिश्रर त्रिषिका दृग्-
जर्मोदारो तातुज । इन्का परिमाणका ११६ वर्गमेम
है । तातुजका प्रधान नगर दर्जित है । यह पत्ता १२

१६ मे १६११ उ० धोर देगा ०८ १८ मे ०८ १८
पु० मे चयनित है । लोकमं द्या मगम ८२३६८ है ।

इसमे ११८ पाम मने है ।

२ उक्त तातुजका एक प्रधान नगर । यह पत्ता १३

४८ उ० धोर देगा ०८ ४८ पु० मे चयनित है । दर्ज
याता, डाकघर तथा कुछ रासकोय कार्यालय है ।

दर्ज (मं० लि०) दृग्-यत् । दर्जानोय, देवने भायक ।

दर्ज (मं० लो०) दन्तोति दन्-धत् । १ दर्जप । २

गण, टुकड़ा । ३ पत्त, पोषाका पत्ता । ४ धन, दोनत ।

५ तमापय । ६ दर्ज, पापा भाग । ७ पदाब्द ।

चन्द्रके लपरका पाच्छादन, कोय, ध्यान । ८ पद्यम्,

धुरी चोत्र । ९ समूह, भुज, परोक्ष । १० क्षात्रपक्षकादि-

का भूयत्, पटरीके पाकारको किमी मनुषी मोटाई ।

११ जनत्र-लक्षविशेष, जन्मे होनेवासी एक पाग । १२

फूलको पत्तई । १३ मन्त्रनी, गुह । १४ मेला, चोत्र ।

१५ तेजप्रता, तेजप्रता ।

दर्ज—मनके छोटे भाई । मन देवो । इकोने पामदेवको
मारनेके लिये एक विषाक्त बाण फेंका था, इन वा
पामदेवके मापमे उधो बाण द्वारा इनके पुत्र मनेजित्

मारे गये ।

दर्जनामा—बोधयोग इन्मे एक अविन बुद्धका अवतार
ममभति है । तिम्रको राजधानी लामा नगरके बाहर
बुद्धका नामक मन्दिरमें ये धाम करने है । इनके मिनीको

मंजोपित वा मंजुत बोध कहते है ।

लामा दर्जमे विरान विधान देवो ।

दर्जक (मं० लो०) शुद्धो ।

दर्जक (लि० पु०) १ लकायो पाय करमेका राजमोमेका
एक मन्त्र । इनका पाकार धुरीमा होता है दानु बिरे

आन्तरिक रोग, रोग हेतु, पारोप्य और भेदजनक भेदने चतुर्व्यूह रूप है, उसी प्रकार योगशास्त्र भी है, है-हेतु, मोक्ष और मोक्ष-हेतुके भेदसे चतुर्व्यूहामक है। दुःखमय संसार है। प्रकृति-पुरुष-संयोग है-हेतु है। पारमार्थिक प्रकृति-पुरुष-संयोग निवृत्तिरूप कैवल्यकी मोक्ष और निवेकस्थितिस्वरूप दर्शनको मोक्षहेतु कहते हैं। वातजल और वायु देखो।

मीमांसादर्शन—इस दर्शनके प्रणेता महर्षि जैमिनि है, इसलिए इसका द्वितीय नाम जैमिनिदर्शन भी है। इसमें वेदके विषयोंको मोमांसा की गई है, इसलिए इसका नाम मीमांसा दर्शन पड़ा है। मोमांसाके बिना किसी भी विषयका सिद्धान्त नहीं बन सकता। इसलिए प्रत्येक कार्यमें—मीमांसाकी आवश्यकता है। जिस प्रकार वेदके तात्पर्यका निष्पन्न करना कठिन है, उसी प्रकार न्युति और स्मृति आदिका पारस्परिक विरोध भङ्गन पूर्वक दोनोंकी भाग्यता कायम रखना भी कम कठिन नहीं है। इसलिए मीमांसाका प्रयोजन है। मीमांसा करनेवाले को, तो एक मात्र मीमांसादर्शन को उसके लिए उपाय स्वरूप है। न्युतियोंमें जिन स्थानों पर भ्रष्टता और पारस्परिक विरोध था, प्रथमा तादृश न्युतिके साथ जिन स्थानोंमें कल्पशास्त्र और मनु आदि स्मृतियोंकी विप्रतिपत्ति थी, महर्षि जैमिनिने इस दर्शनमें उन्हें भी मोमांसा की है। इस दर्शनका मत इस प्रकार है—वेद अपौरुषेय है और वेद को ब्रह्म है, ईश्वर या मनुष्य कोई भी उसका कर्ता नहीं है। वह नित्य है। जो वेदको धारण और वैदिक कर्मोत्तरण करते हैं वे ही ब्राह्मण हैं। यदि किसी व्यक्ति-द्वारा रचा गया होता, तो उसका कोई भय आवश्यक ही मित्या होता, इसमें सन्देह नहीं। इत्यादि रूपसे वेदका अपौरुषेयत्व प्रतिपादित हुआ है। यह दर्शन बादय आचार्योंमें तथा सहस्र संख्याक अधि-कारणोंमें विभक्त है। उसमें एक एक अधिकारणमें एक एक प्रकार विरोधको मोमांसा है और प्रत्येक अधिकारणमें पाँच पाँच पञ्च हैं—विषय, अविविध, पूर्व पक्ष, उत्तरपक्ष और निरर्थक।

“विश्वोद्विषमस्यैव पूर्ववत्प्रत्यक्षोत्तरः।

निष्पत्तिरपि पञ्चानां सांख्यिकरणं स्मृतं ॥” (मीमांसा)

Vol. X, 60

कैसे—एक न्युतिमें है, ‘हृद्य मन्वन्तीय कुश-द्वारा यज्ञ करना चाहिए’ और दूसरी न्युतिमें है, ‘उत्तम्वर हृद्यजात कुश द्वारा यज्ञ करें’। इस स्थानमें कुश-द्वारा यज्ञ करने-के व्यवहारका नाम विषय है। समस्त प्रकारके हर्षोंके कुशसे यज्ञ होगा या उत्तम्वर हृद्यमन्वन्तीय कुशसे होगा ऐसे सन्देहका नाम अविविध है। सिद्धान्त-विरोध तर्कान्वासाका नाम पूर्व पक्ष है और सिद्धान्तानुकूल विचारका नाम उत्तरपक्ष। निरर्थक शब्दसे महति (अर्थात् सिद्धान्तसिद्ध विचारों वाक्योंमें तात्पर्यवधारण) प्रयत्न लेना चाहिये। देवगण शरीरों या मनुष्य नही हैं; जिस देवके लिये जो मन्त्र वेदमें निर्दिष्ट हुआ है वह देव उसी मन्त्र-स्वरूप है, मन्त्रके प्रतिरिक्त देवताके स्वरूपमें कोई प्रमाण नहीं है, वरं तद्दिशो प्रमाण ही बहुत है। इसमें सन्देह नहीं कि यदि मन्त्रसे भिन्न कोई शरीर देवता होते, और उनको पूजा को जानते तथा वे-आवाइनादि द्वारा कल्याण-पूर्वक घट और प्रतिमा आदिमें अधिष्ठित हो कर पूजादि ग्रहण करते, तो घट या मन्त्र-प्रतिमा आदि ऐरावतके साथ इन्द्र-देवके भारवहनमें प्रयत्न हो कर चूर्ण हो जाती और छोटेसे घटमें तादृश ब्रह्माकार ऐरावतके साथ इन्द्रका समावेश भी कैसे सम्भव हो सकता है? परन्तु देवताको मन्त्रात्मक कहनेसे यह दोष नहीं आता। वेद अपौरुषेय और स्वतःप्रमाण है। ऐसे स्थान पर नैयायिक आदि पण्डितगण कुछ दिया करते हैं कि वेदोक्त विषयमें सत्यता है, इसलिए वेदको नित्य मानना पड़ेगा, ऐसा कोई नियम नहीं। घट कुम्भकार द्वारा बना है, इस वाक्यार्थमें-यायार्थ है; इसलिए जैसे वह वाक्यमें श्रमन्त पुरुषोक्ति है, उसी प्रकार वेद-प्रमाण पुरुषके द्वारा बना है, जिसो म्यक्तिके द्वारा नहीं बना। नैयायिक विद्वानोंने इस प्रकारके अनेक सूक्ष्मासुसन्धान कर वेदका ईश्वर-निर्मितत्व प्रतिपादन किया है, किन्तु ईश्वर परमेश्वरके शरीरादि कुछ भी स्वीकार नहीं करते, यह अत्यन्त आश्चर्यका विषय है। यदि परमेश्वरके शरीरादि नहीं हैं, तो उन्होंने वेदको रचना किस प्रकारसे की? इत्यादि प्रकारसे न्यायकी युक्तियोंका अध्ययन किया गया है। मोमांसा देखो।

२ कण्टक वृक्ष, वज्र पौधा जिसके पत्तीमें कांटी हैं। ३ पत्तीका कांटी।
 दलस्थ (मं० त्रि०) दले तिष्ठति स्था-क । दलमुक्त, जिसमें दल हो।
 दलस्रवा (सं० स्त्री०) दलस्य स्रवा इ-त्त्वं। पत्रगिरा। पत्तकी मस।
 दलहन (हिं० पु०) वह भनाज जिसकी दाल बनाई जाती है।
 दलहरा (हिं० पु०) दाल बेचनेवाला, जो दाल बेच कर अपने रोजी चलाता हो।
 दलहीनफला (मं० स्त्री०) सुलेमानो खजूर।
 दलाक्रान्त (सं० त्रि०) दले आक्रान्तः। दलस्थ, जिसमें दल हो।
 दलाटक (सं० पु०) दलैराट्टक इव। १ खर्यं जात तिल वृक्ष, जंमकी तिल। २ पट्टो, गेरू। ३ नागकीश्वर पुष्प वृक्ष। ४ कुन्द पुष्पवृक्ष। ५ करिफण्डल, गज कर्ण, एक प्रकारका पन्नाश। ६ शिरोय वृक्ष, सिरिमका पेड़। ७ बाल्या बांधी, बांधू। ८ महत्तर, प्रतिष्ठित। ९ फेन। १० घातक। ११ माहुत। १२ कुम्भिका, जलकुम्भी।
 दलाटकी (सं० स्त्री०) १ फणिकम्ब वृक्ष। २ पृश्निपर्णी, पिठवन लता।
 दलाव्य (सं० पु०) दलिन भेदेन बाध्यः। १ पट्ट, कोचड़। २ कुन्दपुष्पवृक्ष।
 दलामल (सं० स्त्री०) दलेन भमलः। १ मन्वक वृक्ष, मन्विका पौधा। २ दमनक वृक्ष, दानिका पौधा। ३ मदन-वृक्ष, मैनफलका पेड़।
 दलाल (सं० स्त्री०) दलेपु भक्तो रमो यस्य। पुत्रमाक, भामनोनी, कोनिया साग।
 दलाग (हिं० पु०) एक प्रकारका मूलनेवाला बिस्तरा। महाद्व लोम इसका व्यवहार लहाज पर करते हैं।
 दलाल (मं० पु०) १ सोदा मोल लेने या बेचनेमें सहायता पहुँचानेवाला भादमी, बिचवर्। २ वह जो स्त्री पुरुषका अनुचित संयोग, कराता हो, कुटमा। ३ जाटोंकी एक जाति।
 दलानी (फा० स्त्री०) १ दलालका काम। २ दलालकी मिलनेवाला इन्ध।

दलाहय (सं० स्त्री०) दल इति आहय्यो यस्य। पत्रक, तेजपत्ता।
 दलि (मं० पु० स्त्री०) दल्यते इति दल इन् (सर्वधातुम् इन् वन, ४।१।७) लोट्, टेला।
 दलिक (सं० स्त्री०) दल्यते भित्तये दल-इन् संज्ञायां कन्। काष्ठ, काठ।
 दलिद्रकोट—स्वाधोन सिक्रिमके दलिय नेचू घोर देधु नदीके पश्चिम तथा तिस्ता नदीके पूर्वमें अवस्थित एक पाषाण्य उपविभाग। १८६४ ई०को भूटानको यात्राके फलस्वरूपमें यह प्रदेश अंगरेजोंके हाथ आया। अभी यह दार्जिलिङ्ग प्रदेशके अन्तर्भुक्त हो गया है घोर कालिमपङ्ग नामके मगहर है।
 अभी यह महकुमा तीन भागोंमें विभक्त हो गया है—१ लपकोके लिए एक भाग। इसकी १०००० एकड़ जमीन साप कर दस सालके लिए बन्दोभस्त की गई है। २ एक वन और सिनकोना उपजानेके लिये गवर्मेण्टकी खास जमीन। ३ चायको खेती कर के लिए ८००० एकड़ जमीन।
 इसमें एक बाजार घोर महकुमेंके कार्यालय है। तिस्ता नदीके ऊपर एक पुल हो जानेसे अभी समयमें पश्चिम दिगामे जाने जानेकी सुविधा हो गई है, इसी कारण घेरी घेरी लोकसंख्या भी बढ़ती जा रही है। इसका परिमाणफल ४८६ वर्ग मील है।
 दलित (सं० त्रि०) दलमस्थ जातं दल तारकादित्वादि-त्त्वं। १ प्रसूटिल, प्रकुल। २ खम्बित, टुकड़ा किया हुआ। ३ बिदोष, रौंदा हुआ, कुचला हुआ। ४ विनष्ट किया हुआ। (स्त्री०) ५ दाल।
 दलिन् (सं० त्रि०) दल सुखादित्वात् मत्वर्थे इति। १ दलमुक्त, जिसमें दल या मोटार हो। २ जिसमें पत्ता हो।
 दलिया (हिं० पु०) वह भनाज जो दल कर टुकड़े टुकड़ोंमें किया गया हो।
 दलीपसिंह (दिनापसिंह)—पञ्जाबके मरी रणजित् सिंहके कनिष्ठ पुत्र। १८२८ ई०में तदामोक्षन गवर्नर जनरल लार्ड आकनेम्ब्रके माय महाराज रणजित् सिंहके साला होनेसे प्रायः तीन महीने पहले दलीपसिंहका जन्म हुआ था। महाराज रणजित् सिंहको बहुत के बाद

भाउ की न जाने ही थी वही वही बली कर
शोक निजानी देवी सब आँसू बरस ।

निपना प्रदीप जाने लगे बली बिसो बड़े
बलि दीन बाले दीन कुबचो बाल ॥

दमयन्त (मं० पु०) मेरु, पौत्र, सायनद्वार ।

दमया (हि० पु०) एक निर्वन, पयो जिसे तोतावाज,
घटेरवाज आदि चरमे वाम रखते हैं । ये इसे दूसरे
पक्षियों में बढ़ा कर और भार विना कद-लन पक्षियों का
माहम बढ़ाते हैं ।

दमयाद भैरवनि—रामनाटक एक राजा । ईश्वर १५०
महात्म्य में प्रसिद्ध रामनाटक-भद्रिका पूर्वोक्त गोपुर निर्माप
किया था । यह राज भी समस्त चरम्य में बढ़ा है ।
तनीय प्रकाश पूर्वोक्त कीटका समापति नामक
भद्रिका भी इसी का बनाया हुआ है ।

दमयादन (हि० पु०) १ बादलों का समूह, बादलों का
गुच्छ । २ भारों सेना । ३ बहुत लम्बा छोटा गमियाला,
बड़ा भागो सेना ।

दमयन्त (हि० कि०) १ कुश्म डालना, रोटना, मोड़
डालना । २ बिगड़ कर देना, भार डालना ।

दमया—ब्रह्मा देवदेव मागभूम जिनके चतुर्गत्त दमया
नामक पर्वतों का एक प्रधान पहाड़ । यह ३४००
फुट लंबा है । यह पर्वत मागका प्रतिद्वन्द्वी समझा
जाता है, किन्तु पर्वत माग पहाड़ के चरम में जैसा
हमने एक भी गूँहा नहीं है । चारों ओर भरिया नाम-
की दो पर्वत श्रृंखला इस पर्वत पर माग करती हैं ।

दमयी—१ युक्तप्रदेश के रायबरेली जिले की एक तहसील ।
२ मीर दमयी, मीरा की माँ । रायबरेली नाम के परगने लगते
हैं । यह पचा० २५° १०' से २६° २२' उ० और देशा०
८०° ४१' से ८१° २१' पू० में पड़लिया है । मुख्यालय ३३
वर्ग मील और जनसंख्या लगभग २००८०० है । इसमें
जून १८५५ नाम की एक नगर पड़ती है ।

३ एक तहसील का एक परगना । इसमें उत्तर में
रायबरेली परगना, पूर्व में सन्तोष, दक्षिण में पतपुर
जिला तथा दक्षिण में रायबरेली और दक्षिण में परगने हैं ।
क्षेत्रफल २५३ वर्ग मील है । यह मीर दमयी के
भार नाम की एक शक्ति रखती है । दिकों में मर्याद, पक्ष-

बाले इसे परगना बनाया । इसमें १० ग्राम पड़ते हैं
जिनमें से मागपत्र भी प्रधान है । प्रधान ग्रामों में एक
नामा है । यहां के ग्रामों की दूरी में के गारादुका नाम
और सोना तथा पतपुर की दूरी भी प्रधान है । यहां
यहां बहुत मोटा तैयार होता था, किन्तु अभी केवल
दो घरों में कुछ कुछ तैयार होता है । यहां प्रतिवर्ष दो
मिले लगते हैं ।

४ एक परगना एक प्रधान नगर और महर । यह
पचा० २६° ४०' उ० और देशा० ८१° १' पू० रायबरेली
नगर से १६ मील दक्षिण में गङ्गा नदी के किनारे पड़-
लिया है ।

कहा जाता है, कि प्रायः २००० वर्ष पहले कन्नौज
के राजा दमयन्त ने यह नगर स्थापन किया । बहुत
दिनों तक यह स्थान भार शक्ति के अधिकार में था । इसके
चारों ओर के प्रदेशों में भार शक्ति प्राप्त सुमनसामांश
विवाद बहुत काम तक चला रहा । लगभग ४००
ई० में भारयोग सुलतान इब्राहिम सरकोने मन्त्र, यह
पराका को गढ़े । यहां बहुत मो शक्ति के तथा भार को भी
के दुर्ग का भगवान् जीव देव में जाता है ।

यहां महादेव का एक मन्दिर, सुगमनामो-
की कई एक शक्ति के तथा प्रायः हैं । गङ्गा में ये का
रायबरेली होता है बहुत लम्बा तक एक पक्षी गङ्गा में
है । यहां वाता, डाकघर, नगर में पर्वत चमरे की निचा
मय तथा छोटा भीषणय है । कानि के संज्ञाति में
यहां प्रतिवर्ष एक बड़ा मेला लगता है । गारा दमयी
परगना एक सुगम के प्रधान है । गदर की भीषण
प्रायः ५६३३ है ।

दमयागिरी (मं० पौ०) कच्छ का गाढ़, कच्छ का नाम
दमयागिरी (मं० पौ०) शक्ति सुगमोत्तम, मन्द सुगमोत्तम
पौषा ।

दमयागिरी (मं० पौ०) भारोत्तम, भार शक्ति के
य, दमयागिरी । सुगम, सुगम, पक्ष ।

दमयागिरी—युक्तप्रदेश के एक राजा की विजय के एक
कवि । इसका जन्म १८२३ ई० में हुआ था । इसमें
"मं गारागिरी" नामक एक पद्य बनाया था ।

दमयागिरी (मं० पु०) दक्षिण सुगमिरी । १ कच्छ, कच्छ ।

तमोगुणात्मक और सद् वा असद् रूपमें अनिर्णय पदार्थ-विशेषको प्रज्ञान कहते हैं। यह प्रज्ञान जो जगत्का कारण है, इस प्रज्ञानकी आवरण और विशेष ये दो शक्तियाँ हैं। जैसे मेष परिमाणमें श्रव्य होने पर भी दर्शकोंके लयन बाधक कर सद्योजन-विच्छेदत स्पर्शमण्डलको भी मानो बाध्यादित कर देता है, उसी प्रकार प्रज्ञान परिच्छेद जो कर भी जिस शक्तिके द्वारा दर्शकोंको बुद्धि-वृत्तिको बाध्यादित कर मानो अपरिच्छेद आत्माको ही तिरोहित कर देता है उस शक्तिको आवरणशक्ति कहते हैं और जिस शक्तिके द्वारा प्रज्ञान उपादान-कारणरूपमें जगत्सृष्टि होता है, उसे विशेषशक्ति कहते हैं। यह प्रज्ञान वास्तवमें एक होने पर भी अवस्थाभेदसे दो प्रकारका है—माया और अविद्या।

विशुद्ध, पर्याप्त रंज वा तमोगुण द्वारा जनमिभूत सत्त्वगुण-प्रधान प्रज्ञानकी अविद्या कहते हैं। मायामें ज परब्रह्मका प्रतिबिम्ब होता है, वह प्रतिबिम्ब ही सर्व स्रष्टाशक्तमान् वा ईश्वर है और अविद्यामें जो प्रतिबिम्ब पड़ता है, वह उस अविद्याके जगोभूत जो कर मनुष्यादि, यावत् जीवपदवाच्य है। अविद्या नाना प्रकारकी है, अतएव उसके प्रतिबिम्ब भी नाना होनेसे जीव भी नाना हैं। जीवके नानात्ववादको मय वैदान्तिक स्त्रोकार नहीं करते, बल्कि युक्ति द्वारा एकत्ववादका ही प्रतिपादन करते हैं। माया और अविद्याकी ही यथाक्रमसे ईश्वर और जीवकी सुषुप्ति, प्रागल्भ्य कीव और कारण-शरीर कहते हैं। इस कारण-शरीरमें अभिमानी ईश्वर और जीव यथाक्रमसे सर्वज्ञ और प्राज्ञ हो जाते हैं। जोर्ध्वीक उपभोगके लिए परमेश्वर जीवोंके पूर्वजन्त सृजत और दुष्कृतके अनुसार अपरिमित शक्ति-विशिष्ट मायाके साथ नामरूपात्मक निखिल प्रपञ्चको प्रथमतः बुद्धिमैं कल्पना कर "ऐसा करनाही उचित है" इस प्रकारका सङ्कल्प करते हैं। पीछे उस मायाविशिष्ट आत्माके प्राकाश, प्राकाशमें वायु, वायुसे तेज, तेजसे जल और जलसे श्रियो उत्पन्न होती है। इन प्राकाशादि पाँच पदार्थोंको पञ्चभूतमूल, पञ्चोद्भूतमूल और पञ्चतन्मात्र भी कहते हैं। कारणमें, जैसे गुण होता है, तद्वत् रूप गुण कार्यमें भी उत्पन्न होता है, इस न्यायके

अनुसार कारणके सत्त्व, रज और तम बादि गुण हैं और प्राकाशादि पञ्चभूतमें संक्रास होते हैं। इन पञ्चभूतोंके एक एक सत्त्वगुणे क्रमशः ज्ञानेन्द्रियपञ्चक उत्पन्न होता है।

प्राकाशके सत्त्वगुणे श्रोत्र, वायुके सत्त्वगुणे त्वक्, तेजके सत्त्वगुणे चक्षु, जलके सत्त्वगुणे रसना और पृथिवीके सत्त्वगुणे घ्राणेन्द्रिय उत्पन्न होते हैं तथा पञ्चभूतोंके सत्त्वगुणोंके मिन जाने पर, समके द्वारा अन्तःकरणकी उत्पत्ति होती है। अन्तःकरण अवस्थाके भेदसे दो प्रकारका है—बुद्धि और मन। जिस समय अन्तःकरणकी निश्चयात्मक वृत्ति होती है, उस समय उसे बुद्धि कहते हैं और जब सहस्र्य और विकल्पात्मक वृत्ति होती है, तब वह मन कहलाता है। प्रत्येक पञ्चभूतके रजो-पञ्चमे क्रमशः वाक्, घ्राण, पाद, वायु और उपस्यरूप पञ्चकर्मेन्द्रियोंकी वृत्ति होती है तथा उन पञ्चभूतोंमें समुद्दिन रजोपञ्चकसे प्राणवायु उत्पन्न होती है। पूर्वोक्त बुद्धि ज्ञानेन्द्रियपञ्चकके साथ विज्ञानमय कीव मन कर्मेन्द्रियके साथ मनोमय कीव और प्राण कर्मेन्द्रियके साथ प्राणमयकीव बन जाता है। इन तीन कीवोंमें विज्ञानमयकीव ज्ञानशक्तमान् है; कर्तृत्वगति-सम्पन्न मनोमयकीव इच्छाशक्तिमान् एवं कारणस्वरूप है; और प्राणमयकीव क्रियाशक्तिमान् एवं कार्य-स्वरूप है। पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच प्राण, बुद्धि और मन ये सब सूक्ष्म-शरीर हैं। लिङ्गशरीर इन सूक्ष्म-शरीरका ही नाम है। लिङ्गशरीर दृढलोक और परलोकगामी है तथा मुक्ति पवन्त स्वाधी है। एक एक लिङ्ग-शरीरके अभिमानी जीवको तैजस कहते हैं और समस्त लिङ्गशरीरके अभिमानी ही हिरण्यगर्भ। ईश्वर जीवके उपभोग-भस्मादक स्थूल विषयोंके सम्पादनाथ पाँच पाँच सूक्ष्म भूतोंका पञ्चीकरण करते हैं। जिसको प्रणाली इस प्रकार है परमेश्वर प्राकाशादिमेंसे प्रत्येक को प्रथमतः दो अंशोंमें विभक्त करते हैं। पीछे प्रत्येक भूतके उस एक एक अंशके चार-चार टुकड़े करके पूर्व-जन्त प्राकाशके दो खण्डोंमेंसे जो एक एक खण्ड बचा है, उसमें वायु, तेज, जल और श्रियीके चार-चार खण्डोंमेंसे सबका एक खण्ड दे कर मूलाकाशकी तथा

राज्यके शासन और परिचालनके विषयमें सिख सदाँर लोग पञ्चायत करके बहुत कुछ सहायता पहुँचाया करने थे। इस दुर्दमहदय उच्छृङ्खल जातिकी निशस्तीमें यावद रण कर उनसे काम लेते, ऐसा व्यक्ति उस समय कोई भी न था। रणजितसिंहको मृत्युके बाद खड्गसिंहको जगह यदि नवनिहालसिंह सिंहासन पर बैठते, तो संभव था कि पञ्चायतका घट्ट-चक्र पलटा खाता और पञ्चायतकी ऐसी अधोगति न होने पाती। होरासिंह समझ गये थे, कि खालसा सेना ही हम समय पञ्चायतको 'प्रभु' है; उनका पक्षधन जिनकी तरफ है, वही राजा है। इसीलिए उन्होंने मिर्च सरदारोंसे मलाह को और खालसा-सेनाके हाथ धाम-समर्पण कर दिया।

खालसा-सेनाने जब तक सुबुद्ध-परिचालित हो कर कार्य किया था; अकर्मण्य ग्रेगसिंहकी मृत्युसे उसने विशेष क्षति न समझी थी। किन्तु कार्यदल मन्त्रो ध्यान सिंहाको हत्यासे वह मिथुनवाले मर्दोंपर विशेष क्रुद्ध हुई और होरासिंहको सहायता करनेके लिए तैयार हो गई।

इसी बीचमें राजनिर्वाह पञ्चमवर्षीय गिरु दलोपकी राजा बना कर खुद यजीर बन बैठे। होरासिंहने करानोसे सेनापति भेज्वा और भावेठा बेनोकी सहायतासे लाहौर घेरनेकी तैयारियाँ कर लीं। लेहनासिंह और राजजितसिंह दलबल-सहित मारे गये। सिर्फ किसी तरह दलबलके साथ अतद् नदी पार हो अंग्रेजों राज्यमें जा, अपने प्राण बचा लिए। मुहमें विजय होनेसे होरासिंहने सैनिकोंकी एक मासका वेतन पुरस्कार दिया और भविष्यमें वेतन बढ़ा देनेकी घोषणा की। लाहौर अधिकार करनेके बाद चौथे दिन शासन और नैतिक विभागके समस्त सम्मान व्यक्तियोंके समक्षमें उनको अनुमतिसे महाराज रणजीतसिंहके एकमात्र जीवितपुत्र दलीपसिंहका 'राज्यभार-प-प' विधोपित हुआ। हरिसिंह उनके यजीर हुए।

महाराजाने भिन्दन दलोपकी गर्भधारिणी माता थीं। पक्षियोंमें भिन्दन ही महाराज रणजितसिंहकी प्रियतमा मझी थी। महाराज इसे "मा: युवा" अर्थात् 'पतिकी साहसी' कहा करते थे। वह बात सत्य

हो सकती है कि चरित्र-दोषसे उनका चरित्र कमजोर था, किन्तु वे वीर्यवती और तेजस्विनी थीं, इस बातको कोई भी असोकार नहीं कर सकता। अंग्रेज इतिहास लेखकोंने अपने लेखनोंके अन्तमें राजी भिन्दनका चरित्र मिथ्या कल्पित कर दिया है।

सुचेतसिंह महाराजाने भिन्दनके प्रियपात्र थे। होरासिंहका यजीर होना सुचेतसिंहको महान दुःखा; वे महाराजोंके बड़े भाई जवाहरसिंहसे इस विषयमें परामर्श करने लगे। महाराजों ने उसमें शामिल हो गईं। गुलाबसिंह इस समय अम्बूसे लाहौर आ गये। परन्तु वेतन छुट्ट कर देनेसे होरासिंह सेनाके प्रिय बल चुके थे, इसलिए वे इनका कुछ कर न सके। एक दिन जवाहरसिंहने महाराजकी हस्तगत करके सेनाके सामने कहा, कि "दिशेप और उनकी माताकी होरासिंह विशेषरूपसे मिष्टोदित कर रहे हैं; यदि आप लोग इसका शीघ्र प्रतिविधान न करेंगे तो शोध हो हमें महाराजकी सेना पर अंग्रेजका आश्रय लेना पड़ेगा।" महाराज रणजितसिंहकी मृत्युके बादसे अंग्रेजोंने लाहौर-दरबारके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया था। १८०८ ई०में अंग्रेज-गवर्नमेंटके साथ महाराज-रणजितसिंहकी प्रथम सन्धि हुई थी। १८१० ई०में जुन महोत्समें अंग्रेज, रणजितसिंह और अफगानिस्तानके अधिपति शाहसुजा इन तीनोंके बीच एक सन्धि हुई; जिसमें मिन्नुदेगके पमोराको स्वाधोनता छोड़ने की गई थी। अंग्रेजोंने सूत्राका पक्ष ली कर मिन्नुदेग हथुप कर लिया। अफगान-युद्ध समाप्त होने पर अंग्रेजों-सेनाने पञ्चायतके भं तर-से लोटनेकी अनुमति मांगी। उस समय नवनिहालसिंह वहाँके प्रधान थे—तो उन्होंने अनुपहस्यक, सिर्फ एक शरके लिए अनुमति दे दी। इसके कुछ दिन बादमाह सूत्राको रचाके लिए फिर अफगानिस्तानमें रसद और सेना भेजनेकी आवश्यकता पड़ी—लाहौर-दरबारकी पूर्ण सन्धितसे पञ्चायत प्रदेगमें सेना भेजी गई। इस समय लाहौरके दुर्गत्त और उदतप्रवृत्त रसिंहदेव अंग्रेज माहबके व्यवहारसे सिख-जाति दिनोदिन उत्तंजित होती आ रही थी; गवर्नर-जनरल लार्ड आकसेण्डने उन्हें स्थानान्तरित करके सिखोंकी शांति कर दिया।

वेदान्त-दर्शन—इसमें सूत्र-रचयिता बेटव्यास हैं। गङ्गाचायने उस सूत्रके आधार पर इस दर्शनका प्रथम किया है, इस कारण इसका नाम गङ्गादर्शन भी है। बेटव्यासके मूल दृष्टिमें परफुट हैं कि किसी प्रकार भी उनका तात्पर्य प्रकृत नहीं किया जा सकता; पर किमका जैसा अभिप्राय है, वह उन्हीं तरहका प्रथम प्रकृत कर सकता है। इसी कारणवश वेदान्तसूत्रके नामा प्रस्थान हैं, पर्यात् रामानुजजित व्याख्यानुसार रामानुजप्रस्थान, मध्वाचार्यजित व्याख्यानुसार माध्व प्रस्थान और गङ्गाचार्यजित व्याख्यानुसार गङ्गाप्रस्थान हुआ है। इनमें मिया और भी अनेक प्रस्थान हैं, जिसका सम्प्रति प्रचलन नहीं है। गङ्गाचार्यने समाधारण प्रतिभादनके इसमें परैतमत संस्थापन किया है। उपनिषद् शास्त्र को भारतीय ब्रह्मज्ञानका पूर्ण-भाण्डार है। इस उपनिषद्को मौर्मासाके मिये वेदान्त सूत्रको सृष्टि हुई है। वेदान्तका विषय कहनेके पक्षमें उपनिषद्का विषय कहना ही उचित है। उपनिषद्का मत ही प्रकार है—द्वैत और चैतन्य। चैतन्यके मतमें, ब्रह्ममें मिथा और कुछ भी नहीं है। द्वैत मतानुसार ब्रह्म भी है और जीव एवं जगत भी हैं। बापाततः ये दोनों मत स्वतन्त्र जान पड़ते हैं, परन्तु स्पष्ट समझमें या ज्ञान पर वह मत भिन्न नहीं जान पड़ता।

गङ्गाचार्यने इस दर्शनमें विशेषतः चैतन्यमतको पुष्टि की है। यह वेदान्तदर्शन चार वादोंमें विभक्त है, जिनमें ब्रह्मको जगत्कार्यवादि परफुटार्थ श्रुतियाँका ब्रह्मपरत्वादि, सांख्यमत-निराकरण, चैतन्य-विश्व श्रुति और स्मृतिका समन्वयादि, आकाशके नितरत्वका श्रुत्युक्त और जगत्त्वका संस्थापन, लोभकी संसारगति, क्रमादि जगत्की व्यवस्थाभेद आदि वेदान्त प्रतिपाद्य विषयोंका विवेचन है। इस दर्शनके मतमें एक मात्र ब्रह्म ही सत्ता है और सम्पूर्ण, जगत् मिथा है; ब्रह्म-ज्ञान होने पर मुक्ति ही आती है। ये सब विषय प्रधान रूपसे श्रुति, स्मृति और मुक्ति दिशना कर ही प्रतिपादित किये गए हैं। इसमें अधिकारी होना आवश्यक ही प्रतीत होता है। जो अधिकारी न हो कर सर्वोपाय निगुण

ब्रह्मोपासनाके लिए चयन होते हैं, उन्हें 'तामाई' मरने पर्यात् केवल शास्त्रज्ञानकी प्राप्ति करना करनेसे मरना जाना पड़ता है। इसादि श्रुतिक अनुसार केवल मार्गको होना पड़ता है।

वास्तवमें प्रकृत कम चतुर्मास भी प्राप्त नहीं होता। ब्रह्मज्ञानके अधिकारी होना संभव नहीं है। श्रुतिमें अध्वयनविधिसे अनुसार बेट और बेटाओंका अध्वयन कर वेदार्थको संपूर्ण तथा स्वयंभूत कर लिया है; श्रुतिमें ही स्वयंभूत या जगत्मात्रा में कार्य और निविष्ट कर्मोंमें निवृत्त हो कर केवल सन्ध्यावन्दनादि रूप नित्य नैमित्तिक कर्म, प्रायश्चित और उपासना पर्यात् शास्त्रविधायिक अनुसार समुक्त ब्रह्मविषयक मानन उपासना आदि चतुर्मासों द्वारा चित्तकी चतारु निर्मल बना लिया है तथा जो माधन चतुष्टय मयल हो कर चतारु हो चुके हैं, वे ही व्यक्ति ब्रह्मज्ञानके अधिकारी हैं। उल्लिखित प्रकारमें ब्रह्मज्ञानके अधिकारी हो कर ज्ञानकाण्डको प्राप्ति करना करनेमें शोध ही ब्रह्म-भाव प्राप्तिस्वरूप सुखिभाजन हो सकते हैं। ब्रह्म सत् पर्यात् सत्त्वस्वरूप है, यिन् पर्यात् चैतन्यस्वरूप है, ज्ञानस्वरूप है, परन्तु पर्यात् चरित्रस्वरूप है, चरित्रोत्पत्ति है तथा निधर्मक पर्यात् ब्रह्ममें ज्ञान वा सुखादि कीर्ति भी धर्म नहीं है। ब्रह्म ही स्वयं ज्ञान और स्वरूप है। यद्यपि 'सत्त्वज्ञानसे परब्रह्म भिन्न है' और 'तुम्हारे ज्ञानमें मेरा ज्ञान स्वरूप है' इस तरहके भेदस्वरूपकारकी श्रुति कर आधारगतः ज्ञानका मान्य हो प्रतीयमान होता है, तथापि विविध रूपसे विवेचना करने पर यह मान्य हो जायगा कि विविध स्वरूप उपाधिसे ज्ञानात्मक कारण को ज्ञानके जगत्त्वका भ्रम होता है, वास्तवमें ज्ञान अनेक नहीं किन्तु एकमात्र है। जैसे एक ही मुक्त तैलमें प्रतिबिम्बित होने पर दूसरी तरहका और जलमें प्रतिबिम्बित होने पर तीसरी तरहका मान्य होने लगता, किन्तु वास्तवमें सुख एक ही प्रकारका है, उसमें भेद नहीं है, तेनादि रूप उपाधिसे भेदसे भेद-व्यवहार हो जाता है, उसी प्रकार ज्ञानका ऐक्य रहने पर भी चट-पटादि विषयस्वरूप उपाधिसे भेदमें ज्ञानमें विभिन्नता प्रतीत होती है। परब्रह्मसे प्रतिबिम्बित ज्ञान, इस और

राज्यके शासन और परिचालनके विषयमें सिख-सदरार लोग पचायत करके बहुत कुछ सहायता पहुँचाया करते थे। इस दुर्दमदय उच्छृंखल जातिको नियमोंमें थावव रख कर उनसे काम लेते, ऐसा व्यक्ति उस समय कोई भी न था। रणजितसिंहको मृत्युके बाद खड्गसिंहको जगह यदि नवनिर्वाहसिंह मिहंसासन पर बैठते, तो संभव था कि पञ्चावका षष्ठ-चक्र पलटा खाता और पञ्चावकी ऐसी अधोगति न होने पाती। होरासिंह समझ गये थे, कि खांसेना सेना ही इस समय पञ्चावकी 'प्रभु' है; उनका पसिवल जिनकी तरफ है, वही राजा है। इसीलिए उन्होंने सिख सरदारोंसे मलाच की और खांसेना-सेनाके हाथ आत्म-समर्पण कर दिया।

खांसेना-सेनामें अब तक सुदृढ़-परिचालित हो कर कार्य किया था; परन्तु शेरसिंहकी मृत्युसे उसने विशेष क्षति न समझी थी। किन्तु कार्यदक्ष मन्त्रो ध्यान सिंहको हत्यासे यह शिन्धनवासी महारों पर विशेष क्रोध हुआ और होरासिंहको सहायता करनेके लिए तैयार हो गई।

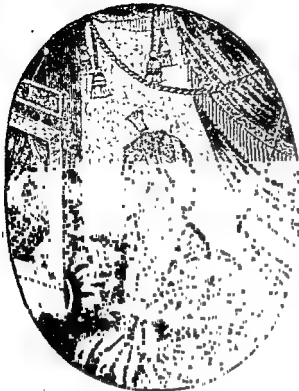
इसी बीचमें राजिमसिंह पञ्चमवर्षीय मिथु दलोपको राजा बना कर खुद यजौर बन बैठे। होरासिंहने करामोसी सेनापति भेखुरा और चाबेटा बेलाकी सहायतासे लाहौर घेरनेकी तैयारियाँ कर लीं। लेहनासिंह और राजिमसिंह दक्षवल्-सहित मारे गये। सिर्फ किमी तरह दलबलके साथ शतद्रु नदी पार हो पंथकी राज्यमें जा, अपने प्राण बचा लिए। शुद्धमें विजय होनेसे होरासिंहने सैनिकोंको एक मासका वेतन पुरस्कार दिया और भविष्यमें वेतन बढ़ा देनेकी व्वाकारता दी। लाहौर अधिकार करनेके बाद चौथे दिन शासन और सैनिक विभागके समस्त सम्मान्ता व्यक्तियोंके समक्षमें उनकी अनुमतिसे महाराज रणजीतसिंहके एकमात्र जीवितपुत्र दलीपसिंहका 'राज्यभार-पर' विधोपित हुआ। हरिसिंह सनके बजोर हुए।

महाराजो भिन्दन दलोपकी गर्भधारिणी माता थीं। पत्नियोंमें भिन्दन ही महाराज रणजितसिंहकी प्रियतमा मणिपी थीं। महाराज उन्हें 'मा' 'बुवा' 'घर्मा' 'पतिको लाहूली' कहा करते थे। यह बात सब

ही सकती है कि चरित्र-दोषसे उनका चरित्र कमजोर था; किन्तु वे वीर्यवती और तेजस्विनी थीं, इस बातको कोई मो पसोकार नहीं कर सकता। पंथेज रतिशम लेखकोंने अपनी लेखनोंके बन्ने रानो भिन्दनका चरित्र मिथ्या कमजोर कर दिया है।

सुचेतसिंह सहा-गो भिन्दनके प्रियणय थी। होरासिंहका बजोर होमा सुचेतसिंहको सहा न हुआ; वे महाराजोके बड़े भाई जवाहरसिंहसे इस विषयमें परामर्श करने लगे। महाराजो भी उसमें शामिल हो गईं। गुलाबसिंह इस समय जन्मसे लाहौर था गये। परन्तु वेतन उठ कर देनेसे होरासिंह सेनाके प्रिय बन चुके थे, इसलिए वे इनका कुछ कर न सके। एक दिन जवाहरसिंहने महाराजकी हस्तगत करके सेनाके सामने कहा, कि "दिशेप छोड़ उनकी माताको होरासिंह विधोपकूपने निरदोष कर रहे हैं; यदि आप लोग इसका शीघ्र प्रतिविधान न करेंगे तो शीघ्र ही हमें महाराजकी से कर पंथेजका प्रायश्चिन्ना पहुँगा।" महाराज रणजितसिंहकी मृत्युके बादसे पंथेजोंने लाहौर-दरबारके साथ पच्छा व्यवहार नहीं किया था। १८०८ ई०में पंथेज-जन्ममें पछके साथ महाराज रणजितसिंहकी प्रथम सन्धि हुई थी। १८१० ई०के जून महानेंमें पंथेज, रणजितसिंह और चक्रगानिस्तानके पधिवति माहसुजा इन तीनोंके बीच एक सन्धि हुई; जिसमें मिन्नुदेयके पमोराकी स्वाधोनता स्वीकार की गई थी। पंथेजोंने सूजाका पक्ष ले कर मिन्नुदेय हृदय कर लिया। चक्रगान-युद्ध समाप्त होने पर पंथेजी-सेनाने पञ्चावके भँतर-से लोहनेकी अनुमति मांगी। उस समय नवनिर्वाहसिंह वहाके प्रधान थे—तो उन्होंने अनुयहपूर्वक, सिर्फ एक बारके लिए अनुमति दे दी। इसके कुछ दिन बादमाह सूजाको रणाके लिए फिर चक्रगानिस्तानमें रसद और सेना भेजनेकी आवश्यकता पड़ी—लाहौर-दरबारकी पूर्ण सहायिसे पञ्चाव प्रदेशमें सेना भेजी गई। इस समय लाहौरके दुर्ग पर और सडनप्रलत रमिडेण्ट पोरेड माहवके व्यवहारसे मिथ-प्राति दिनोंदिन उत्तेजित होती जा रही थी; गवर्नर-जनरल माई पाथ-सेण्डने उन्हें स्थानान्तरित करके सिखोंको शान्त कर दिया।

को राज्यच्युत कर पञ्जाबकी ब्रिटिश गामनाओन कर दिया।



दलीपसिंह

१८४८ ई०, २८ मार्चकी लाहौर-राज-दरबारका शेष अधिवेशन हुआ, इस दिन अमिभावक चंथेजोंके रक्षणधोन रणजितसिंहके पुत्र महाराज दलीपसिंहके पैदा होना सिद्धान्त पर बैठ कर अन्तिम अधिवेशन समाप्त किया। इस अधिवेशनमें सिक्खसद्वारमण दोन दोन घोषमें उपस्थित हुए थे।

अब क्या था, दलीपसिंहके मर्दानागको तैयारियां होने लगी। पर गद्दारीतुल्य चंथेज प्रतिनिधित्व महाराज रणजितसिंहके एक साथ उत्तराधिकारी जोधित पुत्र बालक दलीपसिंहको सन्धि पर हस्ताक्षर करनेके लिए आदेश दिया। दोबारा दोननाथने सिख लुपति पर चंथाधार म करनेके लिए और एक बार प्रार्थना की, किन्तु चंथेज राजपूतोंने उनकी बात पर तनिक भी ध्यान न दिया। अन्तिम बालक दलीपसिंहने, अमिभावक चंथेज-राजको आदेशानुसार अपने सर्वनामपर पर हस्ताक्षर कर दिये। सन्धिवत् पर निश्चिन्तित मर किसी गई थी—

१। महाराज दलीपसिंहने स्वयं एवं उनके उत्तराधिकारियोंकी तरफसे पञ्चायतका मंत्र एक छोड़ दिया।

२। लाहौर-दरबारका कर्ज चुकानेके लिये दरबारकी मारी सम्पत्ति इटलिगुवा कम्पनीको दी जाती है।

३। 'कोहिनूर' इतलेण्टकी रानीकी दिया जायगा और महाराजा दलीपसिंह अपने लिये तथा अपने ज्ञाति एवं अनुचरवर्गके भरणपोषणके लिये कंपनीमें ज्यादासे ज्यादा पांच लाख पौंड कमसे कम चार लाख रुपयेकी वार्षिक-रुनि लिया करेगी।

४। सिख-राज राजगम 'महाराज दलीपसिंह महाराज' यह उपाधि काममें ला सकेंगे। महाराज दलीपसिंह वहीं बाप कर सकेंगे, जहाँके लिए गवर्नर-जनरल आज्ञा दें।

इस प्रकार अन्यायरूपमें सिख-महाराज दलीपसिंह अपने पैतृक सम्पत्तिसे वञ्चित किये गये। अबही देखो।

१८४८ ई०में सिख दलीपके अमिभावक द्वारा सर्वस्वात्ता होने पर लम लोमिन् नामक एक चंथेज ठाकुर उनके सिक्ख और तत्त्वावधारण नियुक्त हुए। दलीपके प्रामाणिक समीप ही उनकी वामस्यान निहित हुई। अब तक दलीपसिंह बारहवें वर्षमें ही थे। १८५० वस उन्मत्त लोहोने कारखी भाषा मोख ली। चंथेजो मोखनेका भी उन्हें आनन्द था।

लोगिनके सदय व्यवहारमें दलीप थोड़े ही दिनोंमें उनके पक्षपाती हो गये। उन्हें हमेशा लोगिनके साथ रहना पसन्द था। बिना लोगिनकी साथ लिये वे कभी भी बाहर क्या जाने नहीं निकलते थे। वास्तवमें लोगिन भी दलीप पर शूक खेद करते थे। वास्तव दलीपने इतनी कम उम्रमें शिष्य-धो-अक्रिका परिषद दिया था, उससे लोगिनको यह स्वीकार करना पड़ा था कि— 'चंथेज बालक हम उन्मत्त ऐसे बुद्धिका परिषद देनेमें पक्षम हैं'। थामोद-प्रमोदमें दलीपको राजपत्नीका अधिकार और चित्रपटादि चढ़ाने का पसन्द था। १८४८ ई०की ११ दिम्बरकी गवर्नर-जनरलने दलीपसिंहको पञ्चायत फतेहगढ़ ससे जानेके लिए आदेश दिया। हमी समय बड़े-छाटे के आदेशानुसार राजा शेरसिंहके ए०-मात्र पुत्र लिसकी उम्र साढ़े छः वर्षकी थी, कुमार

शिवदेव भी दलीपके साथ स्थानान्तरित किये गये। १८५० ई०के करवरो मासमें दलीप, शिवदेव और उनकी माता रानी दखनके साथ फतेहगढ़ आ गये।

गुजराके समीप एक साधारण प्रासाद दलीपके लिए निर्दिष्ट हुआ। दलीपके मित्रक महात्मा लोगिन्ने निकटवर्त्ती बंगेलीको खरोद कर, दलीपके लिए वहां एक सद्यान बनवा दिया। यहाँ दलीपको शिवदेवके साथ गाढ़ी मित्रता हो गई। १८५० ई०में लोगिन्ने दलीपके विवाहके लिए प्रस्ताव किया। परन्तु दलीपको मर्याति न होनेके कारण विवाह स्मृति रहा। लोगिन्की मित्राके प्रभावसे दलीप चम्परेजी मित्रा और अंग्रेजों रीति नीति का अनुकरण करना खूब पसन्द करते थे। योड़े दिनोंमें उन्हें ईसाई धर्म पर यत्ना हो गई और छठे धारण करनेकी अभिलाषा भी जग उठी।

१८५२ ई०में दलीपसिंहको हिन्दुस्थानके प्रधान प्रधान स्थानोंमें परिभ्रमण करनेकी इच्छा हुई। वे प्रकृष्टभावसे थोड़े बादसियोंके साथ फतेहगढ़से निकल पड़े। सिर्फ शिवदेवकी माता उनके साथ नहीं गई थी, वे कुछ दिनोंके लिए पोहरमें रुकी थीं।

दलीप यद्यपि गुप्तभावसे निकले थे, तथापि उन्हें देखनेके लिए रास्तेमें बहुत लोगोंका समागम हुआ था। दिल्ली, आगरा, मेरठ, हरदो, मिर्जापुरा आदि स्थानोंमें परिभ्रमण करते हुए हिन्दुओंके पवित्र तीर्थ हरिद्वार पहुँचे। इस समय हरिद्वारमें यात्रियोंकी बहुत भीड़ थी, नाना स्थानोंमें नाना जातीय लोग उपस्थित थे, इस लिए दलीपके प्रकाशभावसे वहाँ भ्रमणमें गममें गड़की शब्दा हुई। दलीप यद्यपि अति गुप्तभावसे हरिद्वार पहुँचे थे, तथापि कुछ सिखोंने उन्हें पहचान लिया और उनकी मङ्गलकामनाके लिए लघुधनि करने लगे। गममें गड़ते इस समय हिंदू पीछे कुछ गडुवड़ी फेंके, दलीपकी अंग्रेज-मित्रिमें पहुँचा दिया। वर्षाके प्रारम्भमें ये मछरी पड़ने लगे। वहाँ ये प्रतिदिन प्रातः कालके समय ४।५ कोम तक पेटन भ्रमण करते थे। अस्तकाल तक मछरीमें ही बिता कर पीछे ये बाल्य-महित फतेहगढ़ लौट आये।

१८५३ ई०की पर्वी मार्च को, वे अपना धर्म छोड़ कर ईसाई बन गये। जर्डन नदीके जलसे बहसे मङ्गलजन किङ्कलर उनका धर्मांतर-पक्ष कार्य सम्पन्न किया गया। इस समय बहुतसे अंग्रेजों और रस देगके ईसाइयोंने मङ्गलकामनायें इन्हें पत्र भेजी थी। दलीपको विलायत जानेकी इच्छा पहलेसे ही थी। लोगिन्ने यह बात लार्ड डलहौजीको लिखी। १८५४ ई०के प्रारम्भमें कोर्ट-ऑफ-डिस्ट्रिक्टकी अनुमति से का गवर्नर-जनरलने दलीप की विलायत जानेकी आज्ञा दे दी। शिवदेव भी दलीपसिंहके साथ विलायत जानेके लिए तैयार थे। परन्तु १८५४ ई०में (प्रोमोवमें) जब दलीप विलायत जानेके लिए कलकत्ता आये, तब शिवदेवकी माताने शिवदेवकी विलायत-यात्राके विरुद्ध पावेदन-पत्र भेजा, जिससे उनका जाना रुक गया। दलीपकी गवर्नर-जनरलने अपने प्रासादमें आश्रय लेकर उनका खूब स्वागत किया था।

१८५४ ई०, १८ अप्रैलको दलीपसिंह विलायत जानेके लिए जहाज पर सवार हुए। लोगिन् और पण्डित नेमियागोरी नामक एक ब्राह्मण-जातीय ईसाई उनके साथ गये। दलीपसिंह इंग्लैंडमें अपने जातीय योगाक काश्मोरी कुत्ते पर जरीदार मङ्गलकाली कीट और जरीदार पतलून, गिर पर रत्न जड़ित गिरपिच, कानोंमें पत्तोंकी खोरधकी और गलेमें मोतियोंकी तिलड़ी पहना करते थे। इंग्लैंडकी सभाशालीने स्वामी प्रिंस चल्सवट् इन्हें साथ सर्वदा यात्राभाव करते रहते थे और पक्ष-मर इन्हें बकिङ्गहम-प्रासादमें ले जाकर उनकी तस-बोर निवसते थे। एक दिन इस प्रकार चित्र तमबोर उतारते वक़्त मङ्गलरानी बिक्टोरियाने बीबी लोगिन्ने पूछा 'महाराज क्या कोहिनूर के विषयमें कभी कुछ पढ़ते हैं?' इस विषयमें महाराज जो कुछ कहें मुझमें सन्न कहना। 'यद्यपि मिलने पर एक दिन बीबी लोगिन्ने दलीपसे पूछा, 'आप क्या कोहिनूर देखनेकी इच्छा रखते हैं?' दिलीपने उत्तर दिया, 'हाँ, मैं और एक बार छठे हाथमें लेना चाहता हूँ।'

एक दिन दलीपसिंह राजप्रासादमें चित्रकारके पान चुपचाप बैठे थे, इतनेमें महाराणी बिक्टोरिया हादसे

उत्तरसिंह उस कार्यके लिए सम्पूर्ण योग्य पादमी हैं। इसके बाद वे खालसा-सेनाके पास पत्रादि भेजने लगे। किशोरसिंह और पेयोरसिंह भी इस विद्रोहमें मग्न-लित हुए। विद्रोह-दमनके लिये लाहोरसे उभो समय सेना भेजी गई। दोनों तरफसे बड़ी जोरकी लड़ाई हुई। युद्ध-क्षेत्रमें बाबा बोरसिंह, सिन्धनवाले उत्तरसिंह, काश्मीर-सिंह आदि बोरगया पर सदाके लिए भी गए। उपा-यान्तर न देख पेयोरसिंहने लाहोर जा कर शास्त्रम-पण किया। इस तरह हीरामिंह निष्कण्टक हो गए। उनकी शत्रु-कुलका दमन हो गया, विद्रोह प्रयमित हो गया, जिस प्रभुत्वकी प्रत्यागामे, उन्होंने अपने पितृव्य सुचेतसिंहकी भी विनिष्ट कर डाला था, इनने दिन बाद वही प्रभुता उनकी सुहोमें आ गई।

पण्डित जल्ला होरामिंहके बाल्यगुरु थे। जल्ला सद्धत-स्वभाव, चमताप्रयासी और क्रूरकर्मा थे। होरसिंह इस व्यक्तिसे हाथकी कौड़ापुस्तिका मांग थे। होर-मिंहके अभ्युदयके साथ साथ जल्लाकी भी मर्यादा बढ़ती जाती थी। जल्ला जितनी चमताका परिचालन करते थे, उससे चोगुना इठकारिता दिखाते थे। खालसा सेनाने उनके विरुद्ध होरसिंहको कई बार साधधान कर दिया था, किन्तु होरसिंहने उसको परबाह नहीं की; चयथा यों समझिये कि उस विषयमें कुछ निराश्रय कारण उनकी शक्तिके बाहर था। कारण पाछे जो हो; होरसिंहने जब उसका कोई प्रतिविधान न किया, तो मिरडुसेनाकी विलम्बा होने लगे। जल्ला दरबारमें बैठ कर छद सरदार और सामन्तराजीको अवमानना किया करते थे। इस तरह अवमानित हो छद माजितिशा-सरदार सेहनासिंहने हरिद्वारकी यात्रा-के बहाने लाहोर त्याग दिया। महारानो भिन्दनके बड़े भाई जवाहरसिंह इस समय अश्वत्थसहरमें रह कर होरसिंहके विरुद्ध भकावो, भाई आदि रणचण्ड-सम्प-दायकी उत्तेजित कर रहे थे। लाहोर-दरबारमें एक सालसिंहके सिवा और कोई भी चमतागानी, व्यक्ति न था। यह चमता भी होरसिंहकी दो हुई न थी, रानो भिन्दन सालसिंह पर खेद करती थी, उसी शक्ति-से सालसिंह शक्तिमान थे।

जवाहरसिंह अश्वत्थसहरमें अभिनायान्यायो काय-मसाम कर लाहोर लौट पाये। यहाँको उल्लूख खानसा-सेनाने उनकी सहायता करना स्वीकार कर लिया। महारानो भिन्दन और नानसिंह भी होरसिंहके सर्व-नायकके लिए सौका देख रहे थे; उन्हें भी सौका मिल गया।

महाराजो भिन्दन पुत्रको सन्तुलकामनाके लिये एक दिन दान कर रही थी; उस समय जल्ला ने उन्हें अपदम्य और लाजित किया। जवाहरसिंहको मनस्क मना पूर्ण हुई। उन्होंने सेनाके साथ मिल कर होरसिंहसे जल्ला पण्डितको मांगा। होरसिंह पण्डित जल्लाकी छोड़नेके लिये राजो न हुए। ध्यान्तिको सन्भावना होने पर भी कुछ गड़बड़ी न हुई। किन्तु होरसिंह समझ गये थे कि अब उनका समय पूरा हो चुका; अब भाग जानिके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है; लाहोरमें रहनेसे उन-को जानसे भी हाथ धोना पड़ेगा। होरसिंह अपने हल-मल्लित लाहोर छोड़ कर चले गये। जवाहरसिंह-ने सेनाके साथ उनका पीछा किया। तारीख २१ दिन-व्यय मनु १८४४ ई०को होरसिंह अपने दन सहित सारे गए। बहुत दिनोंमें जवाहरसिंहको मनस्कामना पूर्ण हुई, वे बजोर हो गये।

होरसिंह अपने पिता ध्यानसिंहकी तरह मर्ष-गुणा-ल्लि गुणवान् न होने पर भी बुद्धिमान्, विचक्षण और कर्मठ व्यक्ति थे। - माता तरहकी गड़बड़ीके रहने भी उन्होंने इतने-दिनों तक अपने असमाजी समतिहत रखा था, यह साधारण चमताका परिचायक नहीं है। उनकी धर्मनामकेच्छा भी प्रबल थी। रणजित्सिंहकी मृत्युके बाद गुलाबसिंह धनरागिकी माहिधर्मि मर कर जम्मे गये थे। होरसिंहने बजोर होनेके साथ ही रणजित्सिंहके कोषागारसे धातु-चानीस माप रूपये इजम कर लिए। ध्यानसिंहकी मृत्युके बाद यदि सिन्धनवालीके हाथ राज्यका भार रहता, तो यह धन कोषागारमें हो रहता और मिय-गुहने समय उनमें बड़ोका उपकार होता। खालसा-सेनाकी अविश्व-कारितासे होरसिंह-बजोर हुए और राज्यमें विद्रोह, अहयन्य आदि तरह तरहकी गड़बड़ी होने लगे। परन्तु

कोहिनूर लिये दसौपके सामने पहुँचीं। दलीपने बड़े आश्चर्य के साथ उसे हाथमें लिया। इन्हें छेड़खरोने दसौपमें पूछा, "पाप क्या इसे पहनेको भयेया उत्तम देख रहे हैं?" दलीपने धीरतासे यह कह कर "इसको ज्योति तो कुछ बढ़ो है, पर आकार छोटा हो गया है।" कोहिनूर नम्रभावसे महारानी के हाथमें दे दिया और पुनः चित्रकारके पास बैठ गये। इस समय उनके सुहृद्भावात् तनिक भी परिवर्तित न हुआ था। महारानी तथा पन्थान्य सभी उनके आत्मभावको देख कर अमरकृत हो गये थे।

महारानी दलीपके आचरणसे इतनी समुद्र हुई थीं कि उन्होंने कोहिनूरको दसौपका इतिहास लिखने की अनुमति दी। कभी कभी महारानीके पुत्र और राजकुमारियोंने भी दलीपके साथ नामा प्रकार झोड़ा किया करती थीं। धीरे धीरे राजकुमारोंके साथ दलीपका सौहार्द हो गया। महारानी दलीपकी उनके अत्यन्त उल्लसमें बहुमुख्य उद्धार दिया करती थीं। इस तरह इन्हें एक राजपरिवारके होनेमें दसौपसिंह परम सुखसे दिन बिताने लगे। इसी समय जुग-राजकुमारोंके साथ इनकी मुलाकात हुई। जिसो समय कोहिनूर उनके साथ दलीपका विवाह करना चाहते थे। दलीपसिंह उक्त राजकुमारोंके गुणोंके पक्षपाती होने पर भी, उनसे विवाह करनेको इच्छा न रखते थे। इस समय लार्ड हार्डिंज इन्हें एक प्रधान सेनापति थे। उन्होंने दलीपको निमन्त्रण दे कर केम्प नगरमें बुलवाया। वहाँ दलीपने बड़े आनन्दसे ७ दिन बिताये। वास्तवमें इन्हें एक लोग दलीपसिंहका सम्मान वहाँके राजपरिवारके समान करते थे।

यह तक दलीपसिंह आवासिय थे। योद्धा हो बालिव होनि। फिर उनके लिए कैसा बन्दोबस्त किया जायगा, यह जाननेके लिए वे बड़े व्यथ थे। कोहिनूर इस विषयको जाननेके लिये १८५४ ई०के चैत्र मासमें लार्ड कलहोसीको लिखा—“महाराजकी इच्छा है कि भविष्यमें उन्हें कोहिनूर भूस्मृति न दो जाय। १८५८ ई०को सन्धिके नियमानुसार उन्हें पाँच लाखके भीतर रुपये मित्रमें चाहिए। उनके परिवारवर्गमें यदि किसीको मरु-

हो जाय और उसको हस्तिनेत्री रुपये वषे यह दलीपकी मितने चाहिए।” लार्ड कलहोसीने उत्तरमें लिखा, कि दूसरेको हस्तिनेत्री रुपये उन्हें नहीं मिल सकते।

इसके बाद दलीपसिंहने विद्याचर्चा और सत्कार्यमें मन दिया। उन्होंने अत्यन्त निकटवर्ती विद्यालयके छात्रोंको पारितोषिक-वितरणके लिए १८५५ ई०, विमायतमें निःस्वार्थ परोपकारियोंको सभामें १८५५ ई० और इन्हें एक दरिद्रोंको ५००० ई० दिए तथा अपने स्थितिकाल तक वहाँ वार्षिक २५००० ई०के दानका बन्दोबस्त कर दिया।

इसके कुछ समय बाद ये क्लॉटनेरुके मित्रिय दुर्गमें जा कर कोर्ट-आफ-हिरेक्लोरके साथ बड़े आनन्दसे रहे। यहाँ उनके साथ बहुत से मन्त्रालय महिलाओंने वात्सीलाप किया था; किन्तु दलीपसिंह विलायतों समभावोंको प्रशंसामें सुख नहीं हुए थे—रमणीके कृतज्ञानमें उनका चरित्र कलङ्कित नहीं हुआ था। यहाँ दलीपसिंहके महत्त्वका परिचय है।

दलीपसिंह दो वर्षके लिए विमायत गये थे। १८५६ ई०के दिवम्बर महोत्सवमें कोसीपा और फनीरुस हते हुए वे इतनीको राजधानी रोमनगरमें पहुँचे। महाशुभक योगने दलीपके सम्मानार्थ, राजप्रामादमें जहाँ सुन्दर वसतिभूमियाँ थीं वहाँ रागने लगानेके लिए आदेश किया। रोमने फिर वे नैजल, पम्पिर, पान्थेय गिरि बसुवियम गये और जिनैमा होते हुए इन्हें एक पदुंसे।

इन्हें एकमें आकर उन्होंने सुना कि अगोष्ठा त्रिटिमकी भवोन हो गया है। अयोध्याके नवाब साजिदपुरनो शाहकी सख्तीमें १५ लाख रुपयेको हस्ति देना स्वीकार किया है। इसके सिवा उनके परिवारवर्गके भरणपोषणके लिये गवर्नेरको धोर भी बहुत रुपये देने पड़ेंगे। आधोन सिखराज्यके अधिपति दोरवर रच-जितसिंहके पुत्र और उनके परिवारवर्गके लिए कुछ पाँच लाखका बन्दोबस्त होने के बाद उन्होंने पालनी नामका राजकी विभासिताकी लिए त्रिटिम-गवर्नेरका हस्तिस्वरूप १५ लाख रुपये देना दसौपकी बहुत बुरा लगा। उन्होंने इसे अपना परमान पदका। भविष्यमें

वाटमें पेशावरके विपक्षमें गड़बड़ो मची। १८०८ ई०के मन्थिपर्वके चतुमार पेशावर पर रणजितसिंहका अधिकार था। अब शाहसूजाने उस पर कब्जा करना चाहा; अङ्गरेजोंने भी उनका पीठ ठोका। इसी समय शाहसूजा पर एक नई आक्रांता पड़ो। उन्हें अङ्गरेजोंसे सेना माँगनी पड़ी। इस बार भी सेना पञ्जाबके भोतर, हो कर निकल गई। उस समय पञ्जाबके सिंहासन पर शेरसिंह थे; किन्तु उनमें इतनी समता न थी कि वे सिखसेनाको सङ्कुलताको दमन करते। इस समय गवर्नर-जनरलके एजेण्टने शेरसिंहको कहला भेजा कि "हम बारह हजार सेनाके साथ प्रवाच्य मिर्खोंका दमन करना चाहते हैं, पर उसके बदले आपकी नकद चालीस लाख रुपये और शतद्वेके दक्षिणस्थ प्रदेश देने पड़ेंगे।" शेरसिंह इस शर्त पर राजी न हुए। परन्तु यह बात कियो न रही। कुछ दिन बाद ही गवर्नर-जनरलके एजेण्टने घोषणा निकाली कि "लाहौर-दरवारके साथ अब हम किसी भी सन्धि-स्वयं प्रवच्य नहीं हैं, शोध ही पेशावर दखल किया जायेगा।" घोषणाके अनुसार कार्य भी हो गया।

इसके कुछ दिन बाद शाहसूजाका परिवारयगं काबुल जा रहा था, मेजर ब्रडफुट उनके रक्षक थे। उनके साथ कुछ सिखसेना भी भेजी गई थी, किन्तु मेजर साहबके सङ्ग्रहके कारण वह शत्रु समझी गई। मौभाग्यवश इसका परिणाम-जितना भयानक समझा गया था, उतना न हुआ—मामला थोड़ों ही निपट गया। निपट तो गया, मगर अङ्गरेजों पर मिर्खोंकी दृष्टि और भी बढ़ गयी। इसके कई दिन बाद ही अङ्गरेज पक-गानिस्तानसे भगा दिये गये। सिखसेनाको चतुकूलतासे और गुलाबमिंहकी सहायतासे अङ्गरेजोंकी पुनः पक-गानिस्तानमें प्रवेश करानेका अधिकार मिला। पहलेको मन्थि के अनुसार निषिद्ध होने पर भी अङ्गरेजोंने किराज-पुर आदि कई स्थानोंमें सेना सङ्ग्रह कर रखी थी। सिखसेना अङ्गरेजोंके कौगल-जालको अच्छी तरह समझती थी और साथ ही अङ्गरेजों पर उनकी दृष्टि भी उत्तरोत्तर बढ़ती जाती थी।

इन-सब कारणोंसे सिखसेनाने जवाहरसिंहके प्रस्तावकी पक्का न समझा। आठ रात परामर्श

होता रहा, होरासिंहके अनुचरोंने भी मैजिकोंको बहुत सी बातें समझाईं। आखिर यह निर्णय हुआ कि सुचेतसिंह और जवाहरसिंह राज्यके शत्रु हैं। होरासिंह बड़े सख्ते ही जवाहरसिंहके पामसे-हामसे महाराजको ले आये और महाराजको उनके माथ नगरमें प्रविष्ट हुए। जवाहरसिंह कारागारमें डाल दिये गये। महाराजके मामा थे, इसलिये प्राणदण्ड न हुआ। गुलाबमिंह लाहौरमें ही थे। सुचेतसिंह और होरासिंहमें कभी भी मेल नहीं होगा, यह समझ कर वे सुचेतसिंहको साथ ले लम्बू चले गये। महाराज रणजितसिंहके काश्मोरामिंह और पेगोरामिंह नामके और भी दो पुत्र थे, किन्तु इनको वे अपना औरस-पुत्र न मानते थे। इस समय वे लाहौरका सिंहासन पानेकी लिए अपसर हुए। होरासिंह और गुलाबमिंह दोनों मिल कर उन्हें मियांनकोटमें घेर लिया। खालसा-सेना रणजितसिंहके नाम पर इतनी भक्ति करती थी कि रणजितसिंहके पुत्रके विरुद्ध युद्धयात्रा उनको मनःपूर्वक न हुई। होरासिंहको इस युद्धयात्रासे उनकी सेनामें उनके प्रति अत्यन्तका भाव फैल गया। दोहो होरासिंह-ने दोनों भाइयोंकी निरापद जानी दिशा और स्वयं पञ्जाब चले आये। इसी समय जवाहरसिंह कारागार-से भाग गये; इसमें सुचेतसिंहका भी हाथ था। १८४४ ई०में सुचेतसिंह अपनी अभोष्टसिद्धिके लिये सहमा राजधानीमें उपस्थित हुए। होरासिंह सावधान थे; खालसा-सेनाको उन्होंने पुरस्कार देना स्वीकार किया, जिससे वह उनके वय हो गई। सुचेतसिंह जिस मरोमे पर आये थे, वह जड़-चढ़ित नष्ट हो गया। लघायान्तर न देख उन्हींने एक मस्जिदमें प्राण्य लिया और वहाँ सिख-सैनिकोंने उन्हें दल सहित मार डाला।

सिम्हन्वाले उत्तरसिंहने यह दृष्टिके, उस पर भाग कर होरासिंहके क्रोधसे अपनी रक्षा को थी; अब वे मौका देख मांभामें जा कर विद्रोहो बाबा गोरसिंहके साथ मिल गए। बाबा गोरसिंहने घोषणा की कि, पञ्जाबराज्य बहुत; सिखगुरु गोविन्दका राज्य है। दलीप इस समय बालक है, होरासिंह राज्यमन्त्रि-रूप उच्च पदके लिए संपूर्ण योग्य हैं और सिम्हन्वाने

शिवदेव भी दलीपके साथ स्थानान्तरित किये गये। १८५० ई० के फरवरी मासमें दलीप, शिवदेव और उनकी माता रानी दलपू के साथ फतेहगढ़ आ गये।

गङ्गा के समीप एक साधारण ग्रामाट दलीपके लिए निर्दिष्ट हुआ। दलीपसिंह शिवका महाका लोमिन्ने निकटवर्ती बंगलोंको खरोद कर, दलीपके लिए वहाँ एक उद्यान बनवा दिया। यहाँ दलीपको शिवदेवके साथ गाड़ी मिलता हो गई। १८५० ई०में लोमिन्ने दलीपके विवाहके लिए प्रस्ताव किया। परन्तु दलीपको सम्पति न होनेके कारण विवाह स्थगित रहा। लोमिन्नेकी शिक्षाके प्रभावसे दलीप अङ्गरेजी शिक्षा और अंग्रेजों की रीति नौतिका अनुकरण करना खूब पसन्द करते थे। थोड़े दिनोंमें उन्हें ईसाई धर्म पर यत्न हो गई और उसे धारण करनेकी प्रवृत्ति भी जग उठी।

१८५२ ई०में दलीपसिंहकी हिन्दुस्थानकी प्रधान प्रधान स्थानोंमें परिभ्रमण करनेकी इच्छा हुई। वे प्रवृत्तिभावसे थोड़े खादमियोंके साथ फतेहगढ़से निकल पड़े। सिर्फ शिवदेवकी माता उनके साथ नहीं गई थी, वे कुछ दिनोंके लिए पोहरमें रुकी थीं।

दलीप यद्यपि गुप्तभावसे निकले थे, तथापि उन्हें देखनेके लिए रास्तेमें बहुत लोगोंका समागम हुआ था। दिल्ली, आगरा, मेरठ, हरली, मिर्जापुरा आदि स्थानोंमें परिभ्रमण करते हुए हिन्दुधर्मके पवित्र तीर्थ हरिद्वार पहुँचे। इस समय हरिद्वारमें यात्रियोंकी बहुत भीड़ थी, नाना स्थानोंसे नाना जातीय लोग उपस्थित थे, इस लिए दलीपके प्रकाशभावसे वहाँ भजनमें गममें गड़की गड़गड़ हुई। दलीप यद्यपि अभी गुप्तभावसे हरिद्वार पहुँचे थे, तथापि कुछ सिलोंने उन्हें पहचान लिया और उनकी महलकामनाके लिए अथर्वानि करने लगे। गवर्म गढ़ने इस भयसे कि पीछे कुछ गड़गड़की फेजे, दलीपकी घंघोरे-गिवरमें पहुँचा दिया। वर्षाके प्रारम्भमें ये मछरी पड़च गये। वहाँ ये प्रतिदिन प्रातः कालके समय ५११ कोम तक पेंस भ्रमण करते थे। वसन्तकाल तक मछरीमें ही बिता कर दीजे थे शान्ति-सहित फतेहगढ़ लौट आये।

१८५३ ई०की ८वीं मार्च को, वे अपना धर्म छोड़ कर ईसाई बन गये। जर्डन नदीके जलसे धोने गढ़ा-जल टिड्ढक कर उनका धर्मोत्तर-प्रवण कार्य सम्पन्न किया गया। इस समय बहुतसे पेंसों और इस देशके ईसाईयोंने महलकामनायें करने पत भेजे थे। दलीपको विनयायत खानिको इच्छा पड़नेसे ही थी। लोमिन्ने यह बात साईं डलहौसीकी लिखी। १८५४ ई०के प्रारम्भमें कोर्ट-ऑफ-डिस्ट्रिक्टकी अनुमति ले कर गवर्नर-जनरलने दलीप को विनयायत जानेकी आज्ञा दे दी। शिवदेव भी दलीपसिंहके साथ विनयायत जानेके लिए तैयार थे। परन्तु १८५४ ई०में (पोपमृत्युमें) जब दलीप विनयायत जानेके लिए कलकत्ता आये, तब शिवदेवकी माताने शिवदेवकी विनयायत-यात्राके विरुद्ध भावेद-पत्र भेजा, जिससे उनकी जाना रुक गया। दलीपकी गवर्नर-जनरलने अपने ग्रामाटमें आश्रय कर उनका खूब आगत किया था।

१८५४ ई०, १८ अगस्तको दलीपसिंह विनयायत जानेके लिए जहाज पर गवार हुए। लोमिन् और पण्डित नेमियागोरे नामक एक ब्राह्मण-जातीय ईसाई उनके साथ गये। दलीपसिंह इंग्लैण्डमें अपने जातीय योगाक कास्मोरी कुतें पर जरीदार मखमलका कोट और जरीदार पतलून, शिर पर रत्न जड़ित गिरपेच, कानोंमें पत्तोंकी बोरवली और गलेमें मोतियोंकी तिसड़ी पहना करते थे। इंग्लैण्डकी महाराजोंके खामो प्रिय बनवट उनके साथ सर्वदा यातायात करते रहते थे और एक-दूसरे बकिड्ड-प्रसादमें ले जाकर उनकी तस-बोर खिचवाते थे। एक दिन इस प्रकार चित्र तसमोर उतारते वखत महाराजोंके बिस्तरियाने बीबी लोमिन्से पूछा 'महाराज क्या कोहिनूरके विषयमें कभी कुछ पढ़ते हैं?' इस विषयमें सभासज जो कुछ कहें सुनसे सब कहना। 'धनस मितने पर एक दिन बीबी लोमिन्ने दलीपसे पूछा, 'चाप क्या कोहिनूर देखनेकी इच्छा रखते हैं?' दलीपने उत्तर दिया, 'हाँ, मैं और एक बार उसे हाथमें लेना चाहता हूँ।'

एक दिन दलीपसिंह राजग्रामाटमें चित्रकरके पास उपवास बैठे थे, इतनेमें महाराजोंके बिस्तरिया १८६१

उत्तरसिंह उस कार्यके लिए सम्पूर्ण योग्य थादमी हैं । इसके बाद वे खानसा-सेनाके पास पलायित होकर लगे । किशोरसिंह और पेशोरसिंह भी इस विद्रोहमें सम्मिलित हुए । विद्रोह-दमनके लिये लाहोरसे उभो समय सेना भेजी गई । दोनों तरफसे बढ़ी जोरको लड़ाई हुई । युद्धमें बाबा बोरसिंह, सिन्धवासि उत्तरसिंह, काश्मीरसिंह आदि बोरगया पर सदाके लिए भी गए । उषा-यान्तर न देख पेशोरसिंहने लाहोर का कर सामानसंपर्ण किया । इस तरह हीरसिंह निष्कण्ठक हो गए । उनके शत्रु-कुलका दमन हो गया, विद्रोह प्रशमित हो गया, जिस प्रभुत्वकी प्रत्यागमने उन्होंने अपने पित्रव्य सुचेतसिंहकी भी विनित कर डाला था, इतने दिन बाद वही प्रभुता उनके मुहमें आ गई ।

पण्डित जसा हीरसिंहके बाणगुरु थे । जसा उद्यत-स्वभाव, समताप्रयासी और क्रूरकर्मी थे । हीरसिंह इस व्यक्तिके हाथकी कौशुल्यशक्तिका साक्ष्य थे । हीरसिंहके शत्रुद्वयके साथ साथ जसाकी भी मर्यादा बढ़ती जाती थी । जसा जितने समताका परिचासन करते थे, उनसे शत्रुगुणो इतकारिता दिखाते थे । खानसा सेनासे उनके विरुद्ध हीरसिंहको कई बार सावधान कर दिया था, किन्तु हीरसिंहने उसकी परवाह नहीं की ; पथवा यों नमस्त्रिये कि उस विषयमें कुछ निराकरण करना उनकी शक्तिके बाहर था । कारण पाई जो ही ; हीरसिंहने जब उसका कोई प्रतिविधान न किया, तो मित्रसेनाको विवशता होने लगी । जसा दरबारमें बैठ कर हठ सरदार और सामन्तोंको अवमानना किया करते थे । इस तरह अवमानित हो हठ साजितिया-भरदार सिन्हासिंहने दरबारको यात्राके बहाने लाहोर त्याग दिया । महारानी भिन्दनके बड़े भाई जवाहरसिंह इस समय पञ्चतसहरमें रहे कर हीरसिंहके विरुद्ध पकाली, भाई आदि रणचण्ड-सम्पादको उत्तेजित कर रहे थे । लाहोर-दरबारमें एक सात्तसिंहके सिवा और कोई भी समतावासी व्यक्ति न था । यह समता भी हीरसिंहको दी हुई न थी, रानी भिन्दन सात्तसिंह पर खिन्न करती थीं, उसी शक्तिसे सात्तसिंह शक्तिमान थे ।

जवाहरसिंह अत्यन्तमहर्षि अभिनायाभ्यासो कायं समान कर लाहोर मोट प्राये । यहांको उत्कृष्ट खानसा-सेनाने उनकी सहायता करना स्वीकार कर लिया । महारानी भिन्दन और नानसिंह भी हीरसिंहके सर्वनाशके लिए मौका देख रहे थे ; उन्हें भी मौका मिल गया ।

महारानी भिन्दन पुत्रको मरुतकामनाके लिये पण्डित दास कर रही थी ; उस समय जजाने उन्हें पण्डित और लाञ्छन किया । जवाहरसिंहको मनस्कृत सना पूर्व हुई । उन्होंने सेनाके साथ मिल कर हीरसिंहसे जसा पण्डितकी माया । हीरसिंह पण्डित जसाकी छोड़नेके लिये राजा न हुए । पण्डितको सम्भावना होने पर भी कुछ गड़बड़ो न हुई । किन्तु हीरसिंह समझ गये थे कि अब उनकी समय पूरा हो चुका ; अब भाग जानीके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है ; लाहोरमें रहनेसे उनकी जानसे भी हाथ सेना पड़ेगा । हीरसिंह अपने दल-महित लाहोर छोड़ कर चले गये । जवाहरसिंहने सेनासे साथ उनकी पीछा किया । तारीख २१ दिम्बर मन् १८४३ ई०को हीरसिंह अपने दल सहित मारे गए । बहुत दिनोंमें जवाहरसिंहको मनस्सामना पूर्ण हुई, वे बजोर हो गये ।

हीरसिंह अपने पिता ध्यानसिंहकी तरह सर्वगुणोंमें गुणवान् होने पर भी बुद्धिमान्, विचक्षण और कर्मठ व्यक्ति थे । नाना तरहकी गड़बड़ोंके रहते भी इन्होंने इतने दिनों तक अपने समताकी पप्रतिहत रखा था, यह साधारण समताका परिचयक नहीं है । उनकी धर्मन्यायभी प्रबल थी । रणजितसिंहको शत्रुके बाद गुलाबसिंह धनरागिको ग्राहिशमें भर कर जम्मे ले गये थे । हीरसिंहने बजोर होनेसे साथ ही रणजितसिंहके कोषागारमें प्रायः चानोस लाव करके हजम कर लिए । ध्यानसिंहकी शत्रुके बाद यदि सिन्धवासिोंके हाथ राज्यका भार रहना, तो यह धन कोषागारमें हो रहता और मित्र-युद्धके समय उनमें बहुतोका उपकार होता । खानसा-सेनाकी अविश्वस्य कारितामें हीरसिंह बजोर हुए और राजमें विद्रोह, पड़व्य आदि तरह तरहकी गड़बड़ों होने लगे । परन्तु

योग्य है। इस विषयमें मुझे कई एक मार्ट-कम्पायोंकी पण्डितवृत्तकी दिसाया मिली है।" ओषकानमें दलीप फिर ईश्वर पढ़ने लगे।

कुमार शिवदेवने अपने चचाको एक पत्र लिखा कि "मेरी माताजी वृत्तिमें हो इस समय बड़ी तकलीफमें मेरी गुजर होती है।" दलीपने शिवदेवकी वृत्ति बढ़ा देनेके लिए भरतगवर्धनके आशेदन किया। बहुत बादानुवादके बाद शिवदेवके लिए सिर्फ ८०००, १०० की वृत्ति निर्धारित हुई।

१८५८ ई० तारीख २० मईको दलीपसिंहने सुना कि 'प्रिये' जो कानूनके अनुसार वालिग होने पर उन्हें वर्षमें २५००० पौण्ड (करोड़ टाई लाख रुपये) की वृत्ति मिला करेगा। इसके बाद सुना कि उनमेंसे १५००० पौण्ड उनकी जीविनाश्यामें मिलेंगे, शेष शिष्ट १०००० पौण्डमेंसे उनकी स्त्रोके लिए कमसे कम वार्षिक १००० पौण्ड रख कर बाकी ईश्वरके कानूनके अनुसार वे अपने उत्तराधिकारियोंमें बांटे जा सकेंगे। किन्तु यदि कोई उत्तराधिकारी न हो तो जिस रुपयेकी ध्यासे उनकी वार्षिक दशहजार पौण्ड दिये जायेंगे, वे सब रुपये गवर्मेंटके होंगे। परन्तु सिपाही-विद्रोहकी समय उनकी जी सम्पत्ति नष्ट हुई थी, उभको क्षतिपूर्ति स्वरूप उन्हें कुछ भी न मिला।

दलीपने १ नवम्बरको लोग्निन्के लिए एक पत्र लिखा कि "गवर्मेंटने अभी तक मेरे लिए कुछ बन्दो-बन्त नहीं किया है, मैं पस्थिर हो गया हूँ। मुझे डर है, कि कहीं मैं अर्जदार न हो जाऊँ, गवर्मेंटकी इस विषयकी जल्द ताकीद करनी चाहिए।

घोरे घोरे घनके प्रभावसे दलीप व्याकुल हो-उठे। बहुत निष्ठापत्रों कारनेके बाद गवर्मेंटने दलीपकी सब एक सुझावके लिए उनसे १८५० ई०की २०वीं जनवरीकी एक स्थापित पत्र लिखवा लिया, जिसमें लिखा था— 'मैं जीवहत्यामें वार्षिक २५००० पौण्ड और इसकी अन्तर्गत नकद २००००० पौण्ड चाहता हूँ। उत्तराधिकारियोंके प्रभावमें यह पत्र भारतके साधारण-हितकार्यमें व्यय करनेका मुझे अधिकार होगा। इसीसे मेरे सब हक सुक जायेंगे।'।

भारत-समाने दलीपके उक्त स्थापित पत्रको पा कर (२१ मार्चकी) दलीपकी लिखा कि "१८४८ ई०को मन्त्रिके अनुसार वृत्तिका जो चंग महाराजकी मिन सकता था, अब उसमें उनका अधिकार न रहा।" वास्तवमें वृत्तिसे हम समय करोड़ २० लाख रुपये बचे थे। ३ फरवरीको दलीपने उत्तर दिया कि "मा चार्ल्स उड़ने मुलाकात करते समय पत्र पर मेने जो प्रस्ताव किये थे, उसके लिए मैं बहुत दुःखित हूँ। वृत्ति भोगोंकी मध्य होनेसे अब तक कितने रुपये इकट्ठे हुए हैं, इस बातकी बिना जानी मैं अपना प्रयत्न छोड़ नहीं सकता।" करोड़ डेढ़ वर्ष हो गये, दलीपकी प्रपत्ति जीप पत्रका कुछ भी उत्तर नहीं मिला।

१८६० ई०के दिसम्बर मासमें दलीपने माताके वासस्थानका बन्दोबस्त यो व्याघ्र-गिकार करनको रक्कामें भारत यावा की।

गवर्नर-जनरलने दलीपके भारत जानेमें कुछ भी बाधित नहीं की; किन्तु इन्के पञ्जाबराज्यमें प्रवेश करनेके लिए निषेध कर दिया।

१८६१ ई०के जनवरी महीनेमें दलीप भारत आ गये। आते समय वे अपनी अर्जदारों पादिके विषयमें कोर्ट आफ-डिस्ट्रिक्टोंसे लिखापत्री क्रममें भाद लोग्निन् पर छोड़ पाये। परन्तु कोर्ट आफ-डिस्ट्रिक्टोंने लोग्निन्के समता-पत्रको अपनाया किया।

दलीपसिंह कलकत्ता आ कर खेन्सम्-होटलमें ठहरे। यहाँ कुमार शिवदेवके साथ उनकी भेंट हुई। दलीप गवर्मेंटसे निवेदन कर माताको पुनः भारत में आये। बहुत दिन बाद रणजितसिंहकी पत्नी महा-रानी मन्दनने अपने पुत्रका सुह देख कर कहा था "मैं अब अपने पुत्रसे प्रत्यक्ष न रहूँगी।"

दलीपकी भारतवर्षमें रहना प्रस्था न लगा। फरवरी मासमें इन्होंने लोग्निन्को एक पत्र दिया, जिसमें लिखा था— 'भारत बहुत ही जलमय स्थान है। यहाँ मैं पाया हूँ, इसलिए मुझे अनुताप हो रहा है। लोग्निन्को मिला-भेंटों मुझे जरा भी दम नहीं देने देती। उन्हें अनुसर लोग पुरानी बातोंकी देह कर मुझे श्रान दिया करते हैं। भारतवासी बड़े, सिपायादारी, प्रवृत्त और मेरे

इस खालसा-सेनाके भयसे होरासिंहको बहुत सावधान रहना पड़ता था; अन्यथा उनको प्रभुत्व-प्रचेष्टा और पर्यवृत्तता दुर्गमके सर्वोच्चमिथुर पर पहुँचे बिना नहीं रहती। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि इस वंशका प्रभुत्व ही पञ्चावगण्यके अधःपतनका अन्यतम कारण है।

जवाहिरसिंह इस बातको समझ गये थे। वजीर होते ही उन्होंने गुलाबसिंहसे तीन लाख रुपये माँगे और नूतन सुचेतसिंह एवं होरासिंहकी सम्पत्ति राज्यमें मिला ली। गुलाबसिंहने गल्तरन न देख खालसा सेनाकी शरण ली और उसको बहुत रुपये दिये। परन्तु इसने पर भी उन्हें शान्ति न मिली; उन्हें लाहौर जाना पड़ा। वहाँ उन्हें ६००००० रुपये दण्डस्वरूप देने पड़े और न्यायप्राप्त जागोरेके सिपाही और सत्र वापस कर देने पड़े। इस तरह बहुत कुछ हानि सह कर उन्हें जम्बू लोट जाना पड़ा।

गुलाबसिंहकी जमताका डाम ही जानिके कारण अब मुलतानका शासन करना अवश्यकर्त्तव्य हो गया। यहाँ मुलतानका छोटासा इतिहास लिखा जाता है, क्योंकि वह पश्चिम मुलतानमें ही प्रचलित हुई थी, जिससे बादमें पञ्जाब भस्मीभूत हुआ। मुलतान पहले मुसलमान शासनकर्त्ताओंके अधीन था। १८०२ ई०में रणजितने इस पर पहला आक्रमण किया, किन्तु विफल मनोरथ ही उन्हें लौट जाना पड़ा। बहुत कोशिश करने के बाद रणजितसिंहने १८१८ ई०में मुलतान अधिकार किया। उस समय यहाँ 'जमजमा' नामकी प्रसिद्ध और बड़ी तोप व्यवहृत होती थी, जो इस समय लाहौरके अशायद-घरमें मौजूद है। मुलतान अधिकार करनेके बाद वे एक व्यक्तिको नवाब नियुक्त कर लाहौर चले गये। इस समयसे लाहौरमें प्रतिवर्ष नियमित कर चाने लगा। १८२१ ई०में सेवनमल मुलतानके नवाब हुए। वे निश्चय शासनकर्त्ता थे। १८४४ ई०के सितम्बर मासमें सेवनमल मारे गये और उनके पुत्र मूलराज मुलतानके शासकर्त्ता हुए। उन्होंने लाहौर दरबारकी निग्रहानुसार नजदगाना नहीं भेजा और न उसकी आजाकी कुछ परवाह ही की। इस कारण लाहौर-दर-

बारने सेना भेजनेकी तैयारियाँ की। मूलराज डर गये और १८४५ ई०में १८ लाख रुपयेको नज़र भेंट की।

इधर अपमान और अपय्यक्त कारण गुलाबसिंह जम्बू में बैठे हुए खाल-जड़ित सिंहाकी तरह अपने पाप जल कर खाक हो रहे थे। वे जवाहिरसिंहसे बदला लेनेकी इच्छामें पेशौरासिंहके साथ पटवन्धर चले लगे। काश्मीरासिंहको मृत्युके बाद लाहौर-दरबारके विद्रोहमें शामिल रहनेके कारण पेशौरासिंहको अन्य कोई दण्ड न दिया गया था। उन्हें फँसल लाहौरसे निकल जाने और गुजरानवालामें रहनेकी अनुमति दी गई थी। वे वहाँ शान्तिसे रहते थे, किन्तु गुलाबसिंहके परामर्शमें उनको राज्यखालसा बढ़ा दी। फौजके भरोसे तथा बाध्यतावश वे लाहौर गये। रानी फ़िन्दनने उन्हें आदरके साथ रखा। सैनिकोंकी पक्षापत्तीमें भी उनका यथेष्ट सम्मान किया। इससे जवाहिरसिंह बड़े चिन्तित हुए और सेनाकी रूपयोंका लोभ दिया। खालसा-सेना धनके बममें थी; धनके बशोभूत ही उसने पेशौराकी सौट जानिके लिए कहा। पेशौरासिंहकी बाध्य हो कर लाहौर त्याग देना पड़ा। इस समय गुलाबसिंहने जवाहिरसिंहकी पेशौरासिंहकी हत्या करनेके लिए परामर्श दिया। किन्तु महला ऐसा हो न सका। पेशौरासिंह सज्जस घटकदुर्ग अधिकार कर राजाकी उपाधि ग्रहण कर बैठे। लाहौर से सेना भेजी गई, पर उसने रणजितसिंहके पुत्रके विरुद्ध युद्ध करना खोकार नहीं किया। पक्षमें दोनोंमें सन्धि हो गई। सन्धिके बाद ही पेशौरासिंह पकड़े गये और कैदमें डाल कर बं मार दिये गये। यह संवाद जब लाहौर पहुँचा, तो जवाहिरसिंह बड़े आनन्दित हुए। जवाहिरसिंहके मित्रोंने उनको आनन्द प्रकाश करनेके लिए निषेध किया था; किन्तु होनहार बलवान् होती है। गुलाबसिंहके चर खालसा-सेनाकी जवाहिरसिंहके विरुद्ध उत्तेजित करने लगे। सिल-पथायतने जवाहिरसिंहको दरबारमें उपस्थित होनेके लिए आह्वान किया। बहुत लड़ाघोड़ करनेके बाद जवाहिरसिंह दलीपके साथ एक ही हाथों पर सवार हो सेनाके सामने गये। सेनाने उनकी मार डालनेका निश्चय कर लिया था। सज्जस दलीपकी आत्माशान्ति

पञ्चो व्यवस्था हो सकती है, इस आशयसे उन्हें नैतिकता और शक्ति के साथ ही एक पत्र दिया, जिसमें लिखा था—“दश वर्षों के उमर में मैं अपने अभिभावक के पादसे नमस्कार पञ्चावराण्य चढ़ाऊँगे” को देने के लिए बाध्य हुआ था। उस समय अभिभावक और मन्त्रियों के परामर्श से सशक्त शक्ति के पञ्चावराण्य को मालूम पड़ो था। पत्र आया करता था, कि मेरे पूर्वपद और वर्तमान अवस्था का विचार करके मेरे सम्मान के योग्य न्याय्य व्यवस्था की जायगी।” सभापति ने इसके उत्तर में यह लिख भेजा कि “भारतवर्ष से खबर मंगा कर उत्तर दिया जावेगा। किन्तु मन्त्रिक नियमानुसार जो आप अपने इच्छानुसार वास्तविक विषय में पराधीन थे, उससे मुक्त किए जाते हैं।” मई मास तक उधर कर के अपने विषय में कोर्ट-ऑफ़ डिस्ट्रिक्टों से पूछना हो चाहते थे, कि इतने में (जुन मास में) संवाद पड़वा कि “भारतवर्ष में भोषण विगाहो-विद्रोह फैल गया है। इस कारण उन्हें न पत्र लिखना स्थगित रहता।

इस समय विण्डर और असवरन के राजमासाद में प्रायः दलीपका निमन्त्रण हुआ करता था। सुवराज और राजकुमार अलफ्रेड अलबर्टन में आकर दो तोम वार कोर्ट खेले थे और उनकी फीटो लिया करते थे।

१८५६ ई० के अन्त में विनायत के कुछ घूर्तन दलीप के नाम में गानो क्रिन्दनकी पत्र लिखा। उस समय दलीपकी माता निधन में थी। क्रिन्दन बोले। नयोग-वग वर पत्र लक्ष्मणपुर के पास पहुँच गया। उन्हें न केने नेपाल के ब्रिटिश रेसिडेण्ट के पास भेज दिया। बाद में वही पत्र गहनर जनरल के पास जाता हुआ विनायत के डिस्ट्रिक्टों के पास पहुँचा। दलीपकी तरफ से सर जन्म लोगिन ने गर्भमण्डली कहा, “वे पत्र दलीप के नहीं हैं, बाल मातृस पड़ते हैं।”

इसी समय से दलीपकी माता के विषय में कुछ बिना शुरू। नेमिपगोरे भारत लौट रहे थे। दलीपने उनके माता के पास आने के लिए चढ़ाव किया। किन्तु नेमिपगोरे स्वयं न जा कर एक उदासी की मारफत गानो क्रिन्दन के पास पत्र लिख भेजा। इस संवाद से गानो बहुत दुःखित

हुई। सर जन्म लोगिन ने दलीपकी तरफ से नेमिपगोरे पत्र दिया, जिसमें लिखा था—“एक परिचित व्यक्ति महाराज के पास भेजना, यह महाराज की इच्छा नहीं थी। आप स्वयं जा कर महारानी से मिलें और उन्हें समझा कर कहें, कि किस तरह रहना आप पसन्द करते हैं, महाराज किस तरह आप के काम में आ सकते हैं। इस समय नेपाल में रहना हो उनके लिए मजबूत है। भविष्य में जिससे वे आलोच-स्वजन और परिवार में परितुष्ट हो कर सुख में रह सकें, महाराज भारत में आ कर उसका प्रयत्न करेंगे।”

विगाहो-विद्रोह के समय महाराज दलीपसिंह के फतेहगढ़वाला मकान भी लूट गया, जिसमें उनके भारती लौटने के लिए कुछ धन था। इस समाचार से दलीप बहुत दुःखित हुए थे। चण्डेलकी देखरेख में रहने पर चण्डेल-गर्भमण्डली ने उनकी प्रतिपूर्ति नहीं की थी।

१८५७ ई० तारीख २८ डिसेम्बर की, दलीप लोगिन को विचाधोनासे मुक्त हुए। जिस उमर में हिन्दू-राज कुमार बालिग होते हैं, उससे तोम वर्ष ज्यादा होने पर भी पत्रवा युरोपीय राजपुत्र जिस अवस्था में बालिग समझाते हैं उससे एक वर्ष अधिक होने पर भी कोर्ट आफ डिस्ट्रिक्टों ने दलीपकी सूचना दी कि “महाराज को भी जाबालिग हैं, इसलिए विषय-सम्पत्ति के कार्य-समय (उनमें पत्र है।” दलीपसिंह की उन दिनों इस प्रकार उत्तर से कुछ धार्य हुआ था। कुछ भी हो; इस समय भारत-गर्भमण्डली ने लोगिनका विलय बन्द कर देने को दलीपकी वृत्ति में लोगिनकी ४११/५५ दिने के लिए कम्पनी के सेक्रेटरी को लिखा। परन्तु कोर्ट-ऑफ़ डिस्ट्रिक्टों ने इस प्रस्तावका समर्थन नहीं किया।

दलीपसिंह की चष फिर देग-अमणकी इच्छा हुई। वे विक्टोरिया और सन के सामाजी निमन्त्रणको रक्षा करने के लिये चले दिये। रोम, कनस्तालिनोपल आदि स्थानों पर देव कर दलीपकी अध्यक्षता हुई। रोम में कुर्ग-राज कुमारों के साथ उनकी मुलाकात हुई। बोवो लोगिन को बताया था, कुर्ग-राजकुमारों को दलीपका मन पुराने की किन्तु दलीपने एक दिन बात बातों में बोवो लोगिन को कहा—“मैंने चण्डेल-रमण की मेरी पत्नी बनने के

कर दिया गया और दूसरे संवत्सरे बन्दूककी गोलियोंसे जवाहरसिंह मार दिये गये। रानी भिन्दनके विषमय की सोमा न रही। सेना जवाहरसिंहकी मार कर हो शान्त हो गई; इस बार समने और कुछ अधिकारधरण कर अपनी क्षमता कसाई न की। जवाहरसिंह मारे तो गये, पर वजोर बनना अब किसीने भी स्वीकार न किया। गुलाबसिंह, तेजसिंह आदिने, खानसा-सेनाके व्यवहारसे डर कर सचिव पद प्रस्वीकार किया। पन्नामें स्थिर हुआ कि खालसिंहकी मन्त्र-मन्त्रिण और तेजसिंहकी प्रधान सेनापति नियुक्त कर महारानी भिन्दन ही राज्य-शासन करेंगी। इस तरह पञ्चाय-वंशरी रणजितसिंहका समस्त राज्य दो कापुष्य और एक मन्त्रिण सन्त्रियोंके हाथ सौंपा गया।

खालसा-सेनाका प्रताप इस समय उच्छृङ्खलताकी चरम सोमा तक पहुँच गया था। खालसिंह और तेजसिंह समझ गये थे कि जब तक खालसा-सेनाका प्रभुत्व है, तब तक वे किसी तरह भी निरापद नहीं हो सकते। खालसा-सेना उनकी विलास-प्रियतामें मगलाना नहीं पहुँचा सकती। ब्रिटिशराज्यकी सेनाके गिना और किसको भी क्षमता नहीं, जो इस दुर्घट पराक्रमयानी खालसा सेनाओंको बर्ष करे। परन्तु इस बातको वे प्रगत न कर सके। कारण जवाहरसिंहका हत्य उनके सामने नाच रहा था और यह भी निश्चित था कि घोर-केशरी रणजितसिंहकी पुत्रकी खालसा-सेना कभी भी पंथोंकी अधोन्ता स्वीकार करने न देगी। इतने पर भी खालसिंह और तेजसिंहने अपना सर्वश्रय छोड़ दिया था, कि जैसे बने वैसे खालसा-सेनाका विनाश करना हो होगा। वे हथोका मीका टट्टने लगे।

यदि खालसा-सेना इनको उच्छृङ्खल न होती और यदि वह अपने उन्नतप्रभुतिके कारण अपने राजनीति-कौशल व्यक्तियोंका नाश न करती, तो शायद पञ्चाय राज्य इनको जल्दी ब्रिटिश राज्यका शिकार न बनता, शायद अब भी हम पञ्चायके सिंहासन पर दसोपसिंहके वंशधरकी देखते। जैसे रोमन-सेनाको उच्छृङ्खलता रोम राज्यके अधःपतनका प्रत्यक्ष कारण हुई थी, समी

प्रकार खानसा सेनाको उच्छृङ्खलता पञ्चायके विघे हुआ।

जिन सब कारणोंसे सिखोंके राज्यमें पंथोंका प्रावण्य होने लगा था, उनका वर्णन पहले किया जा चुका है। इतनेमें और एक छोटा सा कार्य हो गया है। अभीष्ट माघमें प्रकृतकार्य हो सुचेतसिंह फिरोजपुर भाग गये थे, वहाँ मरते समय वे पन्द्रह लाख रुपये जमोनेमें गड़े छोड़ गये थे। इनके अनुचरों ने उक्त रूपयोंको हजम करना चाहा, किन्तु वे पकड़े गये। लाहोर-दरबारका नियम था कि 'निसम्मान व्यक्तियोंकी सम्पत्ति राज्य-कोषमें मिला ली जायगी।' इसकी सिवा राज-विद्रोहीकी सम्पत्ति भी जप्त कर ली जाती थी। इस नियमके अनुसार लाहोर-दरबारने सुचेतसिंहकी उक्त धन्य पर अपना अधिकार निर्वारित किया। परन्तु व्याधवराज्य ब्रिटिश-सरकारके मतसे स्थिर हुआ, कि सुचेतसिंह राजद्रोही हैं तो, क्या उनकी सम्पत्ति राजकोष-भुक्त नहीं हो सकती और लाहोर-दरबार जिस सम्पत्ति पर अपना अधिकार बतलाता है, उसका विचार ब्रिटिश-प्रदातमें प्रकाशमाचने होगा। सिखों-ने इस तरहके नीतिविरुद्ध आदेशका भी अनुमोदन दिया था। विचार हुआ और भारतीय ऐतिहासिकके अनुसार सुचेतसिंहके धन्य पर लाहोर-दरबारका पूर्ण अधिकार भी प्रमाणित हुआ। किन्तु धन्य छोटाया नहीं गया। उसके बाद सोमाप्रदेशमें पंथोंका लोग क्रमशः अपना बल बढ़ाने लगे। बौद्ध और जससे उन्होंने फिरोजपुरको अपने हाथमें कर लिया; लुधियाना, सिवाय, और पञ्चानामों भी सेना बँटा दी। सिन्धुदेय भी पंथोंके हाथ लग गया। १८३६ ई०में सोमाप्रदेशमें २५०० पंथोंकी सेना थी जो क्रमशः बढ़ती हुई १२००० हो गई। इसके भलावा १०००० सेना मिरठमें रखी गई थी। इन्हीं सब कारण-जलापोंसे सिखोंकी मदद हुआ कि अपने राज्यकी रक्षा करना पञ्चरोंका सर्वश्रय नहीं है; भास-धर्मके राज्योंकी धाम करना ही उनका अभिप्राय है।' इसके सिवा उस समय रचनित-सिंहके राज्यका भविष्य क्या होगा, इस विषयमें भी प्रकाशमय बादविवाद चल रहा था। सर विलि-

थीं । जब औरस्य उन जमींदारियोंका विषय समझानेके लिए दलीपके पक्षमें निवृत्त हुए । परन्तु दुःख है कि बहुत चिन्ताके बाद औरस्य और केरिने जो निर्णय किया भारतसभाको यह स्वीकार नहीं हुआ ।

सन्धि की शर्तोंकी कुछ भी सीमासा न हुई। और तो क्या, दलीपकी पूर्व पैटक सम्पत्ति और सिपाहोविद्रोह-में लूटो जानेवाली फतेहगढ़ स्थावर-सम्पत्तिके विषयमें भी कुछ बन्दोबस्त न हुआ । बहुत विस्था-पट्टोके बाद फतेहगढ़की प्रायः दो लाख रुपयेकी सम्पत्तिके हानिके बदले १०००० रुपये मिले ।

इस समय दलीपसिंहने सुना था कि 'दलीपको मृत्युके बाद उनकी एलमिडन जमींदारों भी बीच दो जावेगो ।' जब वे इस विचारमें पड़ गये कि उनकी मृत्युके बाद उनकी पुत्रादिकों का हालत होगी । उन्होंने यह भी सुना कि उनकी मृत्युके बाद स्पष्ट राजकुमारके भरणपोषणके लिए गवर्नेण्ट सिर्फ ३०००) पोण्ड दिया करेगी । जो दलीपसिंहके पुत्रके लिए निश्चायत कामती है ।

दलीपसिंहने जब कुछ भी सपाय न देखा, तब इंग्लैण्ड-वासियोंसे सुविचार पानेकी यागामे उन्होंने १८८२ ई०, तारीख ११ अगस्तके "टाइम्स" पत्रिकामें एक विज्ञापन प्रकट की, जो इस प्रकार है,—

"भारत-सन्धिके अनुसार अंगरेज-गवर्नेण्टने मेरे राज और राज्यशासनका भार ग्रहण किया था । अंगरेजोंके सुलतानके विद्रोह दमनमें विलम्ब करनेके कारण ही मेरे पञ्चाशमें विद्रोहान्ति प्रवृत्ति हुई थी । विद्रोह दमनके बाद लार्ड डलहौसीने घोषणा कर दी थी कि 'जो लोग विद्रोहमें शामिल नहीं है, उन्हें किसी भी तरहकी सजा नहीं दी जायगी । इस प्रकारकी क्षोषणा निकाशने पर भी शान्ति स्थापन कर लुप्तिके बाद वे एक असहाय गिरफ्तारी सुझावे पा कर अपने लोभको न सन्तान भर्क भंडाल-सन्धिसे अनुसार कार्य न कर उन्होंने पञ्चाश जप्त कर लिया और मेरी सम्पत्ति बीच दो । बीच कर २५००००) पोण्ड उठे, यह धन ब्रिटिश-प्राप्ति सेनाको बांट दिया गया । मैं निर्दोष हूँ, मेरी कनिष्ठपुत्रा भी कभी गवर्नेण्टके विरुद्ध नहीं उठे; किन्तु दोषियोंके

साथ सुभी भी सजा भोगनी पड़ी । मैं अन्त्या रूपसे अपने ऐतिहिक राज्यसे वञ्चित किया गया हूँ । लार्ड डलहौसीके मतसे १८५० ई०में मेरे राज्यकी घामद ५० लाख रुपयेकी थी, जब सम्भवतः घामद और भी बढ़ गई होगी । मैं नावालिग अवस्थामें अभिभावकके चाहेगा-सार राज्यश्रुतिके सम्मिलन पर दम्तासर कारनेके लिए बाध्य किया गया था। मैं उस सम्मिलनको कानूनके विस्वाफ समझता हूँ । इसलिए अब भी मैं पञ्चाशका पक्षधर हूँ । कुछ भी हो, अब उस बातके अन्तिम कुछ लाभ नहीं । अब मैं अपने दयालु इंग्लैण्ड के खरीकी प्रजा बन कर रहना चाहता हूँ । १८८८ ई०की सन्धिके अनुसार मेरी भू-सम्पत्ति जप्त नहीं हुई है । उस सम्पत्तिके राजस्व इस समय १६०००० पोण्ड है, किन्तु दयामय ब्रिटिश-गवर्नेण्ट सुभी दावज्जीवन २५००० पोण्ड वसति दे कर ही मनुष्ट हो गई । इसके पलाया मेरी मृत्युके बाद मेरी जमा-दारी बीच दी जावेगी इस हृदयविदारक शर्त पर अधिष्ठा-में सुभी और भी २००० पोण्ड वसति देना स्वीकार किया है । सुतरां चाफ दोख रहा है कि मेरे पीछे मेरे पुत्रादि का मान-सम्भ्रम सब नष्ट हो जायगा । मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि इस सभर खुदान-जगत्में यदि एक भी न्यायपरायण व्यक्ति विद्यमान है, तो वे मेरी पोरने अंग्रेज-पार्लामेण्टमें मेरे पक्षका समर्थन करें । अथवा मेरा सुविचार और कहा हो सकता है ?

दलीपको इस विनोत प्रार्थना पर किसीने भा ध्यान न दिया । एक दिन १८८१ ई०के लुत्ताई मासमें उन्होंने सीधे लोगिनसे कहा, 'मैंने इंग्लैण्ड और उसकी शठतासे सब सम्बन्ध तोड़ दिया ।' बोवो लोगिनने दलीपको अवस्थाका संवाद सर डेनरो पन्सन्धीकी भारफत महारानो विष्टोरियाकी दिया । महारानोने भारत-सन्धिके दलीपके संरक्षमें विवेचना करनेके लिए अनुरोध किया । परन्तु करोव एक वर्ष बीत गया, भारत-सभामें कुछ भी प्रतिविधान न किया । १८८५ ई०के तारीख २५ जुलाईको दलीपने बोवो लोगिन-की तबवर दी कि 'मैं शीघ्र ही भारत जाऊंगा । दय-सेना करीबन या चुकी है, भारत विपत्तिमें है ; इस

यम मन्टनने घोषणा की थी कि रणजितसिंहके पौत्र-को मृत्युके बाद पेशावर राज्य शाहसूजाको भाँया जायगा। १८४६ ई०में मेजर ब्रडफूट सोमान्तप्रदेशके ब्रिटिश प्रतिनिधि नियुक्त हुए। इन्होंने घोषणा की कि पतियाना आदि लाहोरके अधोनख राज्यों ने 'अंग्रेजों' का साथ्य ग्रहण किया है; इसलिए वे दलोपसिंहको मृत्यु का पदच्युतके बाद ब्रिटिश-अधिकारमें आ लायेंगे। इसी समय शतद्रु नदी पर नावों का पुल बाँधनेके लिए जो नावें बन कर तैयार हुई थीं, उनमें सगुल सेना भर कर फिरोजपुरको तरफ भेज दो गईं। सुझतानके शासनकर्त्ता मूलराजके साथ भी ब्रडफूट शाहसूजा गुप्त-पत्रव्यवहार चल रहा था। निधु-विजिता दर चावस निपियरने भी कहा था, कि 'अंग्रेजों' को पञ्जाबमें प्रवेश करना ही पड़ेगा। इन कार्य-कलापों को देख कर सिख-जातिने यह निश्चय कर लिया कि 'अंग्रेजों' से युद्ध अवश्य-आवै है। दामत्वकामो, विज्ञासघातक दोनों सचिव इस अग्निमें घोका काम करने लगे। इसी समय सोमान्त प्रदेशमें तदानीन्तन गवर्नर-जनरल लार्ड डारिङ्गको शीघ्र आनेको खबर सुन कर सबके सब दंग रह गये। युद्धको अनिवार्य मसभ, १० नवम्बरको सिख जातिने 'अंग्रेजों' के विरुद्ध घोषणा निकाल दी। ११ दिसम्बरको वी शतद्रु पार कर १४ दिसम्बरको फिरोजपुरके पास पहुँच गये और वहाँ पड़ाव डाल दिया। इस तरह प्रथम सिख युद्ध का सुरुवात हुआ।

मुद्दको, फिरोजपुर, बटु गाल, बलीवाल और सोबरा-इन आदि स्थानों में कई एक-भोषण युद्ध हुए। सिख-सेनापतियोंके पड़यन्त्रसे महावीर सिख जाति परास्त हो गई। 'अंग्रेजों' फौज शतद्रुके उस पार धावित हुई। गवर्नर जनरल लार्ड डारिङ्गने कसूरसे १४ फरवरी (१८४६ ई०)को घोषणा की कि "जय तक सिख लोग 'अंग्रेजों' के साथ अपना सन्धि भङ्ग करनेका समुचित दण्ड न देंगे, तब तक पञ्जाब राज्य 'अंग्रेजों' के अधिकारमें रहेगा।" सिखोंने इस बातकी कल्पना भी न की थी, कि सोबराइनमें जय प्राप्त करनेके बाद ही 'अंग्रेजों' लोग इतनी जल्दी शतद्रु पार हो कर लाहोरकी ओर अग्रसर

होगे। अब बड़े लाटको घोषणा सुन कर लाहोर दर-वार बड़े चिन्तामें पड़ गया। जिसमें 'अंग्रेजों' फौज लाहोर न आ सके, ऐसा बन्दोबस्त करनेके लिए गुलाब-सिंह शीघ्र हो कसूर भेजे गये। परन्तु लाटसाहबने गुलाबसिंहको एक मो न मानो और कहा, "लाहोरके सिवा हम अन्य किसी भी स्थान पर सिखोंने सन्धि न करेंगे।" गुलाबसिंह विफल-मनोरथ हो मोट भाये और सोचने लगे, शायद बानक दलोपसिंहको 'अंग्रेजों' विरुद्धमें पहुँचा देनेसे 'अंग्रेजों'का लाहोर चाना रुक सकता है। यह सोच कर वे दिलापको ले चले। उस समय 'अंग्रेजों' सेना कसूरसे रवाना हो कर ललिया नदी पार कर चुकी थी; वहाँ दलोपसिंह बड़े लाटके सामने पहुँचाये गये। महामान्य डारिङ्गने दलोप-सिंहके साथ बड़े सादरका वरताव किया और कहा, "जिस दरपतिने 'अंग्रेजों' के साथ तोस वर्ष तक अवि-च्छिन्नमागसे सहाय रक्ता है, उन्हींके वंशधर पञ्जाबके राजा हों, यही हमारा अभिप्राय है।"

उस समय बड़े लाटने सरदारोंके प्रति लब्ध रह कर कहा था कि "दलोपसिंहको राज्यभिमिक्त किया जायगा; परन्तु विवादा और शतद्रुके मध्यस्थ प्रदेश विजेताके राज्यमें शामिल किया जायगा और युद्धको सतिपूर्तिके लिए पञ्जाबराज्यसे डेढ़ करोड़ रुपये वसूल किये जायेंगे।" बहुत बाद-विवादके बाद, इच्छा न होने पर भी सिख सामन्तोंको लाटसाहबके प्रकाश पर महमत होना पड़ा। परन्तु बड़े लाटने निश्चय किया कि सिखोंको राजधानीमें हो सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर होंगे। लिहाजा सिख सरदारोंको दलोपसिंहके साथ लाहोर खोटा पाना पड़ा। २० फरवरीको 'अंग्रेजों' फौज सिखोंको राजधानीमें उपस्थित हुई। उसी दिन गवर्नर-जनरलके आदेशानुसार सर हेनरी सार्वेस, सर फ्रेडरिक कैरि और विलियम एडवर्ड्स दलोपसिंहको पुनः सिंहासन पर प्रतिष्ठित करनेके लिए भाये। महा-समारोहके साथ दलोपसिंह पञ्जाबके सिंहासन पर अभिमिक्त हुए। दूसरे दिन राज-प्रासादमें एक दरबार लगा; यहाँ दलोपसिंह और उनके समान्त्वर्गमें गवर्नर जनरलके साथ सादर सभायक कर उनके सदायवरण

दुपार के पांच घंटे। इन्हें छह घण्टे के लिए मैं अपना सर्वस्व दे सकता हूँ।”

इस समय एक दिन कुछ सिख-सेना खोजने का काम कर रही थी। राजाजी महाराज पुत्र का आगमन-संवाद मालूम होने ही उसने आनन्द में उलझने की छोटस घेर लिया और उन्हें खरने दलीपको समियादन किया। मिया सेना की राजभक्ति देख कर चण्डो जी की विवशित होना पड़ा था। मयनर-अनरमने दलीपका पक्ष-प्राप्त में जाना बन्द कर दिया और जीव ही उन्हें विला-यत जाने के लिए कहा गया। इस बार दलीपको मा भी विनयायत गई।

कुत्ताई मामने सब विलायत पहुँच गये और लैडर-गैट के पास एक बड़े प्रासाद में ठहराये गये।

कुत्ताई मामने दलीपको सर चार्ल्स उडको एक पक्ष से मालूम हुआ कि “१८५८ ई० तारीख ४ सितम्बर तक किसी किसी हस्त भोगी की मृत्यु हो जाने से कुल ०४४२६९ रुपये की वधत हुई थी।” परन्तु इस विषय में भूल होने के कारण दलीपने एक पूरा और पसली विषय भोजन के लिए लिखा। महीनों बीत गये, पर कुछ उत्तर न आया।

माता के प्रभाव से दलीपसिंह का धर्म-भाव घटने लगा। अब प्रत्येक रविवार को गिरा जाना भी उन्हें अच्छा न लगा। उद्यपि राजपुरुषोंने माता के पास रह कर दलीपसिंह विगड़ जायेगी, इस आग्रह से माता के लिए प्रयत्न, मकान का बन्दोबस्त कर दिया।

दलीपसिंह समझ गये कि अङ्गरेज लोग सब में उन-का सुख-वस्था करने के लिए तैयार नहीं, और तो क्या, उनकी माता की भी बिना दीपके उनमें प्रयत्न कर दिया। इन सब कारणों से अब वे स्थिर न रह सके। माता को भारत भ्रमण के लिए पक्षीर हो छटे। अपने माता की जीवन-गिरामन्दमय हस्त की देख कर दलीप मर्माहत हुए और उन समय कुछ शक्ति की आशा से उन्होंने इन्हें गैट-की माँ-हना रामजी-समाज में अपना चरित्र कल्पित कर दिया।

१८६१ ई० में दलीपसिंह “हार-पच-इण्डिया” को उपाधि से विभूषित हुए।

१८६१ ई० में महाराजों भिन्दन की मृत्यु नगर में मृत्यु हुई। माता का शोक पूरा भी न हुआ था कि दो मास बाद उन्हें जनकोपम उनकी गिलागुल भोगिनका देहान्त हो गया। इस उद्यमदय व्यक्तिकी मृत्यु से दलीप-की पड़ा कष्ट हुआ था। बाकी भोगिन की मातृत्वा देने के लिये कुछ दिन ठहर कर १८६४ ई० में दलीप माता की मृतदेह ले कर बम्बई में उपस्थित हुए। यहां इन्होंने जननी का मयदाह किया और ममदाह के पवित्र जल में उनकी भज डाल कर ये फिर इन्हें गैट की तरफ चल दिये।

राष्ट्र में दलीप इजिप्ट की राजधानी पत्तक-मन्दिरा नगर में उतरे। यहां बोम्बामूर नाम की एक सरल मार्जिन-शाखा से उनका विवाह हो गया। सरला दोहरी और महाराजदलीपकी मङ्गली हो कर भी पूर्ववत् धीरे धीरे शान्त थीं। वे इन्हें गैट की उद्यम-समाज-में मिलना भी पसन्द न करती थीं उन्हें निभृत में पति-सुहाग में समय बिताना बहुत पसन्द था। ये पक्षीर की तिया और कोई भी भाषा न जानती थीं। इसलिए पहले दलीपसिंह को भोजन साथ बातचीत करने में बड़े परेशानी उठानी पड़ी थी। पाँके उन्होंने भी की अङ्गरेजों सिखाने के लिए एक बोधी नियुक्त कर दायी। महाराजों विक्टोरिया के दलीपकी मङ्गीक हुआ था और उनका महिपों के शास्त्रमाय और उद्यमों में उन्हें बड़ा आनन्द हुआ था।

अब महाराज दलीपकी अपनी परिवार की बिना हुई। १८६२ से १८८२ ई० तक नवमंथने दलीप के लिए कुछ भी बन्दोबस्त नहीं किया। आखिर दलीपने उपायान्तर न देख सार जन्म लोरेस पर इस विषय की मोमांसा करने का भार देने के लिए अनुरोध किया। सर जन्म लोरेस १८८२ ई० की मन्त्रिका पक्षों का जानते थे, क्योंकि उन्होंने प्रयत्न से यह समझी हुई थी। सर चार्ल्स उडने दलीप के प्रस्ताव पर सहमत हो कर सर क्रैडरिज के रिकी लोरेस को महायता पद पाने को कहा। रक्षित सिंहा को पक्षाधिक राजा होने में पहले कुछ पौत्रिक समीक्षारी थे। महाराजों भिन्दन जय दलीपकी पति मातिका थीं, तब वे समीक्षारियों के वध करती

को यथेष्ट प्रगंवा की। इस दरबारमें वड़े साठने सप्त-सिद्ध 'कोहिनूर' देखनेको इच्छा प्रकट की। गुलाबमिंद स्वयं सम रहनेको साथ और लार्ड हार्डिंजको दिख-नाया। यथाधिक चंगरेज राजपुरुषोंने उस भुवननीय हीरेको देखा और आश्चर्यान्वित हो कर उसकी बहुत प्रगंवा करने लगे। तारीख ८ मार्चको सिख-दरबार और चंगरेजोंमें पहलो सन्धि हुई, जिसमें स्थिर हुआ कि सिख-महाराज गतद्रु के दक्षिणस्थ प्रदेशोंका स्वत्व विनकुल छोड़ देने विषयाग और गतद्रु के मध्यस्थ प्रदेशों पर चंगरेजोंका अधिकार होगा। युद्धवीर छति-पुर्तियों के लिए छेड़ करीछ रूपये देनेमें सममर्थ होनेके कारण सिख-दरबारने एक करीछ रूपयेके बदले फिल-हाल काश्मीर और हजारोंके साथ विषयाग और सिन्धु नदीके मध्यवर्ती समस्त प्रदेश देना स्वीकार किया तथा बाकी पचास लाख रूपये नगद देने वचन किये। इसी समयसे सिख-राज्यकी १० हजार घन्सारीही और २० हजार प्यादे रखनेको अनुमति दी गई और कहा गया कि ब्रिटिश गवर्मेण्टकी बिना अनुमति लिए यह संहत्या बढ़ाई नहीं जा सकती। ब्रिटिश गवर्मेण्ट सिख-दरबारके आभ्यन्तरिक राजकार्यमें हस्तक्षेप न करेगी। परन्तु यदि किसी विषयमें मध्यस्थताकी आवश्यकता पड़े, तो ब्रिटिश-गवर्मेण्ट सिख-राज्यके अङ्गसके लिए अपने मन्त्राड दे कर सिख-दरबारकी सहायता करेगी।

यहाँ ही दिनोंमें सिख-दरबारने बाकी पचास लाख रूपये चुका दिये। इसी समय महारानी क्रिस्तिनने छहहत्तवभाव मित्रोंकी काशीवर्षीमें डर कर गवर्नर-जनरलको लिख भेजा कि 'इमें और हमारे पुत्र दलीप-की बिल्कोई ह्रायमें न रख ब्रिटिशमैमार्ममें शयवा कल-कर्त्तके गवर्मेण्ट-हाउसमें रहना ही दोनोंके लिए मङ्गलजनक है।' महारानीके अनुरोधानुसार सिख-दर-बारके प्रधान प्रधान राज-पुरुषोंने लार्ड हार्डिंजसे लाहौर दरबारकी रक्षाके लिए अनुरोध किया कि कुछ दिन ब्रिटिश-सेनाकी यहाँ रहने दे, तो अच्छा ही।

तारीख ८ मार्चको गवर्नर जनरलके सिविलमें एक मन्त्रा हुई, जिसमें दलीपसिंह और प्रधान प्रधान सिख-सरदार उपस्थित थे। वड़े साठने सबको सत्य करके कहा

“ब्रिटिश-गवर्मेण्ट मित्रोंके शलकार्यमें हस्तक्षेप करना नहीं चाहती; ब्रिटिश-सेना प्रस्थान करनेसे त्रिप तैयार है। परन्तु लाहौर-दरबारके अनुरोधों हमने उसे कुछ दिन और रखनेके लिए स्वीकारता दी है। गुप्ततर राज-कार्य-मंजीबनके विषयमें मन्त्र-बुरेका भार सिख-दरबार पर छोड़ते हैं। हम यथामाध्य सहायता करनेके लिए तैयार हैं, किन्तु सिख सरदारगण यदि लापरवाश करनेमें तो उनके राज्यका रक्षा करनेमें ब्रिटिश-गवर्मेण्ट किसी तरह भी समर्थ न होगी।” लार्ड हार्डिंजका सटुपदेश सुन कर सभी सरदारोंने क्षतवृत्ता स्वीकार की।

दूसरे दिन लार्ड हार्डिंजने राज-प्रान्तादमें जा कर महाराज दलीपसिंहसे साक्षात् किया।

तारीख ११को एक सन्धि हुई, जिसमें निर्णित हुआ कि सिख-सेनाके मंजीबन और मस्कारणके लिए ब्रिटिश-गवर्मेण्ट वार्षिकमान वर्षके चत्त तक महाराज और लाहौरवासियोंकी रक्षाके लिए अपनी सेना लाहौरमें छो रखेगी।

सिख-राज्यकी रक्षा तो हुई पर नवीन राजा दलीप सिंहके प्रतिनिधि-स्वरूप कोन राज्ययोगन करेगा, यह प्रश्न हल न हुआ। इन समय यदि गुलाबमिंद मन्त्रा बनाये जाते तो कुछ गड़बड़ों न होती; किन्तु सिख-राजमाताके स्नेहवर्धित लालमिंद, महारानी क्रिस्तिनकी छपाये, सबिच बन गये। वे मन्त्रा तो हुए, पर सब चर्के छपाको हटिये देखने लगे। उनके सम्बन्धी और पुगा-मटी लोग निकट उपायांसे प्रजाका खून चूमने लगे। कुछ भी हो, गोष्ट ही लालमिंदका अधःपतन हुआ।

लाहौर देखा।

दरबारके प्रधान सभ्योंने, बालक दलीपसिंहका नाबालिग अवस्था तक, ब्रिटिश-गवर्मेण्टकी पञ्चावका यशसनभार सहाय करनेके लिए अनुरोध किया। लार्ड हार्डिंजने इस अनुरोधको रक्षा की। १६ दिग्भरको और एक सन्धि हुई, जिसमें स्थिर हुआ कि “गवर्नर-जनरलके प्रतिनिधि स्वरूप लाहौरमें एक पंजेज रेमिडेंट रहेंगे। प्रत्येक राजकीय कार्यमें उनकी पूर्ण समता होगी। कोई एक दल व्यक्ति रेमिडेंट पर महारानी कार्य-कर्त्ता बनाये जायेंगे। जिससे पञ्चावकासियोंकी जानाया

थीं । जब भीरेन्द्र उन जमींदारियोंका विषय समझानेके लिए दलीपके पक्षमें नियुक्त हुए । परन्तु दुःख है कि बहुत चिन्ताके बाद भीरेन्द्र और केनिंजी निर्णय किया भारतसभाकी यह स्वीकार नहीं हुआ ।

सन्धिपत्री शर्तोंकी कुछ भी सीमाओं न हुई और तो क्या, दलीपकी पूर्व पैलक्ष सम्पत्ति और सिपाहीविद्रोहमें लूटो जानेवाली फतेहगढ़स्थ खावर-सम्पत्तिके विषयमें भी कुछ हस्तोक्त न हुआ । बहुत मिथ्या-पट्टोंकी वट फतेहगढ़की प्रायः दो लाख रुपयेकी सम्पत्तिके हर्जानेके बदले ३०००० रुपये मिले ।

इस समय दलीपसिंहने सुना था कि 'दलीपकी मृत्युके बाद उनको एलमिडन जमींदारों भी बंध जावेगा ।' जब वे इस विचारमें पड़ गये कि उनको मृत्युके बाद उनके पुत्रादिकों का हालत होमी । उन्होंने यह भी सुना कि उनकी मृत्युके बाद थोड़ा राजकुमारके भरणपोषणके लिए गवर्नेमंटे निकर ३०००) पोण्ड दिया करेगी । जो दलीपसिंहके पुत्रके लिए निश्चायत कामती है ।

दलीपसिंहने जब कुछ भी सपाय न देखा, तब इंग्लैण्ड-वासियोंसे सुविचार पानेकी याचनामें उन्होंने १८८२ ई०, तारीख २१ फगस्तके "टाइम्स" पत्रिकामें एक विज्ञापन प्रकाश की, जो इस प्रकार है,—

'मै रवाल-सन्धिके अनुसार पं गेरेज-गवर्नेमंटेने मेरे शरण और राज्यभारतका भार ग्रहण किया था । पं गेरेजोंके सुलतानके विद्रोह दमनमें विनम्र करनेके कारण की मारे पञ्जाबमें विद्रोहान्ति प्रवृत्ति हुई थी । विद्रोह दमनके बाद लार्ड डलहौसीने घोषणा कर दी थी कि 'जो लोग विद्रोहमें शामिल नहीं है, उन्हें किसी भी तरहकी सजा नहीं दी जायगी । इस प्रकारकी घोषणा निश्चयसे पर भी शांति स्थापन कर चुनेके बाद वे एक असहाय मिश्रकी सुझौमें पा कर अपने ओमको न मन्हाल मुके भैरवाल-सन्धिके अनुसार कार्य न कर उन्होंने पञ्जाब जूट कर लिया और मारो सम्पत्ति बंध दो । बंध कर २५००००) पोण्ड छठे, यह घन ब्रिटिश-पालित सेनाकी बांट दिया गया । मै गिरीब हूँ, मेरी कनिष्ठाहूँस भी कभी गवर्नेमंटेके बिहद नहीं छठे; किन्तु दोषियोंके

माय सुमि भी सजा भोगनी पड़ी । मैं अन्धाय रूपसे अपने पेट्रिक राज्यसे वञ्चित किया गया हूँ । लार्ड डलहौसाई मतसे १८५० ई०में मेरे राज्यकी आमद ५० लाख रुपयेकी थी, जब अन्धवतः आमद और भी बढ़ गई होगी । मैं नावालिम अवस्थामें परिभाषकके पादेगासुसार राज्यच्युतिके सम्पत्ति पर हस्ताक्षर करनेके लिए बाध्य किया गया था । मैं उस सम्पत्तिकी कानूनके विज्ञापन समझता हूँ । इसलिए यह भी मैं पञ्जाबका अधिपति हूँ । कुछ भी हो, जब उस बातके जिक्रसे कुछ लाम नहीं । जब मैं अपने दयालु इंग्लैण्ड के शरीकी सजा बन कर रहना चारता हूँ । १८७८ ई०की सन्धिके अनुसार मेरी भू-सम्पत्ति जप्त नहीं हुई है । उस सम्पत्तिका राजस्व इस समय १३०००० पोण्ड है, किन्तु दशमय ब्रिटिश-गवर्नेमंटे सुमि दावज्जीवन २५००० पोण्ड वृत्ति दे कर ही सन्तुष्ट हो गई । इसके पलावा मेरी मृत्युके बाद मेरी जमींदारी बंध दी जावेगी इस हृदयविदारक शर्त पर अधिच-मैं सुमि और भी २००० पोण्ड वृत्ति देना स्वीकार किया है । सुतरां साफ दोख रहा है कि मेरे पीछे मेरे पुत्रादि का मान-सम्मान सब नष्ट हो जायगा । मैं इंग्लैण्डसे प्रार्थना करता हूँ कि इस समय खुदान-जगत्में यदि एक भी अन्धधरायण व्यक्ति विद्यमान है, तो वे मेरी ओरसे पं गेरेज-पालामेण्डमें मेरे पत्रका समर्थन करें । अन्धधारा मेरा सुविचार और कहाँ हो सकता है ?

दलीपको इस विनोत प्रार्थना पर किसीने भा ध्यान न दिया । एक दिन १८८२ ई०के सुताई सामनें उन्होंने बोवो ओगिनसे कहा, 'मैंने इंग्लैण्ड और उसकी श्रमसे सब सम्बन्ध तोड़ दिया ।' बोवो ओगिन्ने दिलीपको अवस्थाका संवाद सर हेनरो पन्सन्बोकी मारफत महाराजोंको विक्टोरियाकी दिया । महाराजोंने भारत-सचिवको दलीपके सम्बन्धमें विवेचना करनेके लिए पत्रुरोध किया । परन्तु शरीर एक वर्ष बोल गया, भारत-सभामें कुछ भी प्रतिनिधान न किया । १८८४ ई०के तारीख २५ जुलाईकी दलीपने बोवो ओगिन-को खबर दी कि 'मैं योष की भारत वाकंगा । दम-सेना करीबन पा चुकी है, भारत विपत्तिमें है; इस

प्रया और आचार व्यवहारकी रक्षा हो एवं सबका न्याय-मूल्य कायम रहे, उसके लिए ब्रिटिश-गवर्मेण्ट विगिप ध्यान दिया करेगी। रैमिडेण्टके परामर्शानुसार मद्रासगण राजकाय चलावेगी महाराजकी रक्षा और राज्यमें शान्तिस्थापन करनेके लिए गवर्मेण्ट लाहौरमें इच्छानुसार सेना रख सकेगी, जिसके लिए पञ्जाबराज्य वार्षिक २२ लाख नानकशाही रुपये ब्रिटिश-गवर्मेण्टको दिया करेगा। महाराज दलीपसिंहकी जननी और उनके परिचारिकाओंके भरणपोषणके लिए सिख-दरबार वार्षिक छेड़ लाख रुपये दिया करेगा। जब तक दलीपसिंह नाशानिग है, तब तक दोनों पक्षोंको इसी सन्धिके नियमानुसार चलना पड़ेगा।" १८५४ ई०के ४ मितम्बरको महाराज दलीपसिंहके पोद्दारवर्षमें पदार्पण करने पर इस सन्धिके नियमोंसे दोनों पक्ष मुक्त हो गये। इतिहासमें यह सन्धि 'भैखाल' नामसे प्रसिद्ध है।

इस प्रकार बालक दलीप ब्रिटिश-गवर्मेण्टके आश्रित हुए। लार्ड हार्डिंज जब तक भारतमें थे, तब तक उन्होंने सिख राज्यके प्रति यथेष्ट उदारता दिखलाई थी। महामति सर हेनरी लार्सेनसे उस समय पञ्जाबके शासन और बालक दलीपके रक्षण-वैयक्तिक भार ग्रहण किया था। इन्हीं महानुभवके प्रयत्नसे सिख-राज्यमें शान्ति हुई थी। यद्यपि ये महाराज दलीपकी यथेष्ट सहायता दृष्टिसे देखते थे, तथापि महारानी क्रिन्डन प्रतिनिधि-सभाके विरोधमें थी। महारानी क्रिन्डन कई बार रैमिडेण्टकी इच्छाके विरुद्ध कार्य कर चुकी थी, किन्तु लार्सेन उनके विरोधी न हुए थे। चन्तमें लार्ड हार्डिंजकी रानोके आचरणका संवाद मिलने पर, उन्होंने महाराज दलीपकी मातासे पृथक् रहनेका आदेश दिया। दलीपसिंहने, मातासे पृथक् होने पर भी, बंगेलीके साथ पूर्ववत् मित्राचार और नम्रतासे प्रेम चाये। वास्तवमें लार्ड हार्डिंज और सर हेनरी लार्सेन महाराज दलीप पर जनककी तरह स्नेह रखते थे; किन्तु दलीपके दुर्भाग्यसे ये दोनों ही महानुभव योद्धा दिन बाद भारतभूमि त्याग कर विदायत चले गये।

लार्ड हार्डिंजके बाद अब परराष्ट्रसेतुप मार्कोस,

फॉफ डनहोमी गवर्नर जनरल हो कर भारत पधारे। उस समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें पूर्ण शान्ति विद्यमान थी एवं लाहौरके रैमिडेण्ट सर एफ० कैरिथे और उनके सहकारी सर हेनरी लार्सेनके भाई जन सारंगत।

उन दिनों सुलतानदे शासनकर्ता थे मूनराज। ये भी सिख दरबारके आचरणसे असन्तुष्ट हो कर विद्रोही हो गये। इस समय लाहौरके रैमिडेण्ट यदि विलम्ब न करके शीघ्र ही सेना भेज देते, तो सम्भवतः विद्रोह दब जाता; किन्तु उनके विद्रोह दमनमें विनम्र करनेके कारण पञ्जाब राज्यके भावो अनिष्टान्त की सूचना हो गई।

इसो समय महारानी क्रिन्डन ग्रेवोपुर दुर्गमें निर्वासित हुई एवं क्लरसिंह नामक सिख-साम्राज्यके एक विशिष्ट भग्नान्त सरदारको कन्याके माथ जो दलीपका विवाह सम्बन्ध शिर दुधा था, वह भी रैमिडेण्ट द्वारा उपेक्षित हुआ। इसकी सिवा क्लरसिंहके माथ बंगेलीमें बड़ा दुर्व्यवहार किया: जिसके कारण १८५८ ई०में दूसरी बार भिख युद्ध हुआ। यद्यपि यह युद्ध ब्रिटिशगवर्मेण्टकी समायधानताके कारण ही हुआ था, तथापि गवर्नर जनरल डलहौसी इस बार पञ्जाब राज्य शास करनेके लिए पधर चुके। युद्धकी सूचना पाते ही प्रधान सेनापति लार्ड गफ पञ्जाब पहुँचे। दलीपसिंहका सौजन्य देख कर वे मुग्ध हो गये।

रामनगर, साहदुलापुर और धिलियनवालाकी युद्धमें सिखसेनाका बहुत रणभूषण और अजीय ब्रिटिशसेनाको पराजय देख कर ब्रिटिश गवर्मेण्ट और समस्त भारत विचलित हो गया था। इस संवादकी इत्तेफाक पदचर्च पर वहाँके कोर्ट-फाफ-डिरेक्टर लोग सिन्धुविजेता नैपियरको प्रधान सेनापति का पद देनेके लिए तैयार हो गये थे। कुछ ही ही, बोम्बर लार्ड गफके पहुँचने पर क्रौमलसे गुजरातकी युद्धमें सिखसेनाके, पलौकिक वीरता दिखानेके लिए पराजय स्वीकार कर ली। इस युद्ध में लाहौर दरबारकी अधिकांश सरदारोंके योग न देने पर भी और उस समय पञ्जाब-राज्य सम्पूर्णरूपमें ब्रिटिशके कब्जेतधीन होने पर भी लार्ड डलहौसीने दलीप

॥ इच्छाविरुद्ध 'केराना' ह्वास्तसे देवता पालिये।

समय यदि मैं ब्रिटिश गवर्नमेंटकी सहायता कर सकूँ तो सम्भव है कि सरकार मुझ पर मदद हो सकेगी।"

इसके बाद दलीपने पोर भी एक वर्ष तक धैर्य धारण किया। परन्तु उन्होंने १८८१ ई. के मार्च महोत्सवमें तत्कालीन भारत-मन्त्रि लार्ड कार्मार्शकी निम्न—“यदि ब्रिटिश-गवर्नमेंट शोध हो मेरी कुछ सन्तुष्टि न करेगी, तो मैं हमेशा के लिए अपना अनुसन्धान पोर इंग्लैण्डका निवास छोड़ देनेके निश्चय बाध्य होऊँगा। मुझे जो हस्ति मिलती है, उसमें मैं अपना संपादन रक्षा भी नहीं कर सकता।” परन्तु भारत-मन्त्रि ने इसका भी कुछ उत्तर न दिया। अब तो दलीपसिंह ने महान गथा, ये अपना एक मेडन कमींदारो गवर्नमेंट की सौंप कर भारत पानेकी तैयारियाँ करने लगे। सेक्रेटरी-फाक्टेटकी यह विज्ञापन न था कि दलीप सच-मुच हो इंग्लैण्ड छोड़ देंगे। दलीप जब साठवर्ष-उमर में पाने बढ़ने लगे, तब उन्होंने दलीपको सूचना दी कि “बापको अपने हकमें से ५०००० पौण्ड दिये जायेंगे।” दलीप उसने से सन्तुष्ट न हुए पोर इंग्लैण्ड छोड़ कर चले गए। बहुतों ने उसका पछाड़ पोर उनसे इंग्लैण्ड छोड़नेके लिए मना किया था, परन्तु उनको बात पर दलीपने जरा भी ध्यान न दिया। यदि वे उसकी बात मान कर नहीं रहते तो भविष्यमें उनको दुर्दशा न होती।

बहुत पशुनय-विनय करनेके बाद दलीपको भारत पानेकी अनुमति मिली, परन्तु पञ्जाबमें जानेकी पाशा न मिली। जो कुछ भी हो, उन्होंने जहाज पर सवार होनेके पहले स्टेडियमियोंकी एक पत्र दिया, जिसका अभिप्राय इस प्रकार था—

“नियतम स्टेडियमियों। मेरी इच्छा न थी कि मैं भारतमें जा कर रहूँ। परन्तु यहटके दोषसे मुझे भारत जाना पड़ेगा। मैंने अपने पूर्वजोंके धर्मको छोड़ कर विजातीय धर्मको अपनाया है, इससे लिए मैं पाप भोगमें समा पाया हूँ। मैं बन्दे पड़ूँगे तो पुनः ‘पाप’ पक्ष करूँगा। परन्तु पञ्जाबमें जा कर अब मैं पाप कोभी मैं भिन्न न सकूँगा।”

स्टेडियमियों ने किमी किमी समा समय दलीपको

सहायभूति-सूचक पत्र भेज दिया। किन्तु इन पत्रोंके भिन्निके पहले ही दलीपको प्रथम परिचित हो गई थी। उन्होंने उन्होंने पढ़ूँगे ही मिल-धर्म पक्ष कर लिया था। उनके पत्र पोर मित्रोंके मनोभावको देख कर गवर्नमेंट गठित हो गई पोर दलीप पर उनमें दलीपको रास्तेमें रोक दिया। दलीपने सहायको विपरीतियोंको तारसे धारणा की कि ‘प्रकाशभावसे मेरा विचार होना चाहिए।’ साथ ही उन्होंने कोषाभ्य हो यह भी घोषित कर दिया कि “ग्यारह वर्षकी उमरमें मेरे, अभिभावकोंने वनपूषक मुझसे राज्यभूमिके पन्थिपत्र पर हस्ताक्षर करा लिए थे, इस कारण वह पन्थि मुझे स्वीकार नहीं है।” कुछ भी हो, दलीप शोध हो बन्दे कर इंग्लैण्ड पड़ूँगे गए। इस व्यवहारसे वे पद्धतियोंको सजागत, समझने लगे। वास्तवमें बार बार निराशाके दर्शनसे दलीपको कुछ भ्रष्ट हो गई, धैर्य धारण वा चित्तमंथनको समता उनमें न रही। इदयको यथार्थ पोर कोषमें पत्रों की कां उन्होंने पद्धतियोंसे हस्ति लेना भी बन्द कर दिया। कुछ दिन महाकष्टसे इंग्लैण्ड रह कर दलीपसिंह ने प्राप्त करी गये।

दलीपने सोचा था कि उन पर अत्याचार किये जानेंगे। सुखर सुन कर शायद प्राप्त गवर्नमेंट पद्धतियोंके विरुद्ध उन्हें कुछ सहायता पड़ूँगी। इसी दुरागमि उन्होंने प्राप्त-गवर्नमेंटभी सेना-सहित उन्हें पुँदितरी भेजनेके लिए पत्र लिखा। प्राप्त-गवर्नमेंटने उस पत्रका कुछ भी उत्तर न दिया। पाखिर निराग होकर दलीपने पापमें रह-देमोय पादिक-कमी नाम धारण कर समय पत्र (Pass-port) प्राप्त किया पोर प्राप्तसे जर्मनीको राजधानी बार्जिनको चले दिए। यहाँ दलीप बहुतों सुशोभतमें पढ़ूँगे गये—नन्द दपये पोर प्रथमपक्ष में पोरों सजा गया। जर्मनीमें वे रुन राज्यके मोमान्ने उपस्थित हुए, किन्तु Pass-portके बिना राज्यमें प्रवेश करना उनके लिए मुश्किल हो गया। दलीपने उपाय-कार न देकर, ‘मस्कोव’के सम्पादक काटकनकी तारसे अपना पत्रको नाम पोर दुरवस्थाका संवाद भेजा। दलीप जिसने बिना प्रथमपक्षके कियामें प्रवेश कर

मकें, उसके लिए काटू-कुफ़ ने सोमान्त प्रदेशके कर्मचारों
घोर पुनिसको तार दिया तथा दलपको सानेके लिए
एक दूतको भेज दिया।

१८८७ ई०के अग्रिम मासमें टनोपने रूपराज्यमें प्रवेश किया। मद्रासीनगरमें उपस्थित होने पर काट-कफनमें आदरके साथ उनको अन्त्यर्धना की।

“ दलौपनि मस्की रहसि समष्ट इन्वैण्डिके प्रति यथेष्ट पञ्चाक्षर विवेकभाव प्रकट किया था। वे सर्वदा यही कक्षा करते थे कि ‘रूसियाको अधीनता स्वीकार करना हमारा प्रधान कर्तव्य है। मैं मध्य एशियाके विषयमें रूसके लिए सामीलार्थ करनेके लिए तैयार हूँ।’ ”

दत्तोपनिषद् के अनुसार मन्त्रों को निम्न सुग कर हमारे
साथ रख लेना चाहिए । ११वीं जन्म को मन्त्रों के
गहन रक्षणार्थ प्रकाशरूप में दत्तोपनिषद् ध्यान
की थी ।

इसके एक महीने बाद दलीपने सुना, कि उनको प्रियतमा सहियोने, वहाँको विरह-बे-दगमि रह गये। सुने प्राणत्याग दिए हैं। राजाको मृत्यु, से दलीप और भी व्याकुल हो उठे। उनका मरिच्छक विकृतप्राय हो गया।

‘चलो’ मैं भारतवर्ष की प्रथम प्रधान नवाद्यपत्ती में इस पत्रकार को घोषणा निकलवा दो—“एडन में रोह। जालिक कारण मेरो-पंडरिज-भक्ति दाहण छपामें घणित हो गई है। पंडरिजो ने प्रथमय रूपसे मेरा राज्य हरण किया है। इसीलिए मैंने इसके प्राप्ताधोन रक कर कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है।” इससे बाद १८८८ ई० के पगपत्ता सामने चढोने भारतवासियों को सर्वोपेधन करके फिर एक घोषणा निकाली—“मैं भारतवर्ष के प्रथम करोड़ लोगो में, अथे कसे मानिक एक पेसा भोर पञ्चादके प्रत्येक व्यक्तिके एक पाना मानिक देनके लिए प्रार्थना करता हूँ। मैं दुनिया को सहायतासे यूरोपिय सेना से ऊर ग्रीष्म की भारतमें पदार्पण करने को प्रतिष्ठा करता हूँ।”

कुल भो हो, दलोपकी चट्टादिनिर्ताके कारण रूपके
सम्पादने समने, साक्षात् न किया। दलोप भी प्रायः
५२, महाभूति न मानेके कारण १८० ई. में प्रायः
राजधानी पेरिस, लोट बाए। यहाँ भोगविलासमें

उनका चरित्र पौर भी कलुपित हो गया ; उनके' श्रेष्ठ हो एक भौषण रोग हो गया । रोगका म'वाद या कहर उनके पुत्र भिक्कुटर दलोप वरु' देखनेके लिए आए । १८८० ई०में इसो अवस्थामें दलोपने भारत-उच्चिष माड' कृ'गोको एक पथ दिया, सममें लिखा कि "मैं भारतेश्वरो महारानी विकटोरियामें सभा मांग रहा हूँ" । यदि वे सभा कर दें, तो मैं भविष्यमें उनके इच्छुधीन रहना घोकार करता हूँ ।" तारीख १ अगस्तको माड' कृ'मीने दलोपको लिखा कि 'महारानी आप से सभा करती हैं ।' इससे दलोप कुछ निश्चित हुए । दलोप बहुत ज्यादा बोमार थे, इसलिए उनके पुत्रने महारानीको धन्यवाद लिख भेजा ।

१८८३ ई० तारीख २३ पञ्चोत्तरको सिरिसनगरके एक छोटासमे न'न्यामनोगमे दनोपमि'इकी मृग्यु इ'ईयो। तारीख २८ पञ्चोत्तरको उमका नृतनरीर एतमि'इनके प्रासादमे लाया गया पौर वहाँ पन्तरि'टिक्ताग मन्थव की गई।

दशोमृग (मं० पु०) विलेगय शेषोस्य प्राविष्येय ।

दत्तोत्त (च० स्तो०) १ युक्ति, तर्क । २ वहन, वाद-
विषाद । ३ प्रयोजनीय कागज पत्र ।

दशैगन्धि (मं० पु०) दलै गन्धो यस्य, ममाभाता इत्,
मयस्या भलक् । समर्पणो ह्यच ।

दशमंश (हि० मु०) १ बूढ़ा घोड़ा, षट घोड़ा जो
जवान न रह गया हो। २ बड़ पादमो जिनको समर
ठग गई हो।

दशैम (हिं० दशैः) द्विन, कषायद ।

दने (हि. क्रि०) जायोशानो की एक बोली । इसमें जायो
मुँह खोलता जोर खाने लगता है ।

दण्डोद्भव (सं० वि०) दण्डादुद्भवति इदं भू० पक्षः । दण्डज्ञान
मधुमेद, एक प्रकारका शब्द जो पक्षीमें उत्पन्न होता
है ।

दल्भ (सं० पु०) दल्भति विगोषं भवत्यनेन दल्भः ।
 (रदल्भिः ३ अ० १।१५१) १ प्रताप्या, धोषा । २
 पाप, गुणादः । ३ चक्र, चङ्गा, पट्टिया । ४ मुनिभेद, पत
 मुनिश्चा नाम ।

दन्भ्य— दास्यन् देशो :

ननुमुखां दक्षिणसेमुपरिपताम् ॥

एवं विनोदय तौ धम्ममुदीहाभीत इवानवीत् ।
का त्वम् इयमा सती कुत्र यता मर्याणवममा ॥

सद्युवाच ।

न पश्यसि महारिष सती मां पुरतः स्थिताः ।
कथं तवेरजो युधिः किं मां त्वं कथयिष्यस्य ॥

शिव उवाच ।

एवं या यदि सती दक्षकन्या मर्याणवममा ।
कथं तदा कथयन्मां कथं वा भूमयमदा ॥
सर्वास्त्र दिक्षु एताः का देशेतिभ्रवदायिकाः ।
त्वं वाचा कतमा देवि वद मां भयनिह्वनं ॥

सद्युवाच ।

अहम् प्रकृतिः सृष्टमा छदिरिवलभकारिणी ।
अभयत्वंद्विजिताये त्वदप्ये गौरदेहिना ॥
स्वामिन् विभुः पुरः प्राकृत्यैकतवशाच्छिवः ।
आहं पित्रुर्न द्वायः कश्चिन्नाशान् भवानका ॥
अभयं तवन्तु मां नीतिः कुर्वन्मयी महेधर ।
दण् दिक्षु महागीमा या एता दशमूर्तयः ॥
सर्वा मेवैव मां शम्भो भयं कुर्वन्ममते ।
त्वं मर्याणवमो भर्ता तवाहं वनिता सती ॥
त्वं इन्द्राहं महागीतं भावमानः दिशो भयात् ।
परिवाये दिशः सर्वा रतवाहं दत्तात्रा स्थिता ॥

शिव उवाच ।

त्वं मुक्तप्रकृतिः सृष्टमा छदिरिवलभकारिणी ।
वासुदेवा मोहागोदातमत्रियतमं वचः ॥
मथोक्तं तस्महादेवि स्वस्वत् परमेष्ठ्वरि ।
महामहानका एता मूर्तयस्तव याः शिवे ॥
आमां नामानि मे हृदि प्रस्थेकं भीमलोचने ।

देभ्युवाच ।

एता सर्वाः महारिष महाविद्यासप्तप्रभाः ।
आस्तां नामानि ब्रह्मसि श्रुतास्ति महेधरः ॥
काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी ।
भैरवी छिन्नमस्ता च छन्दरी वगलायुधी ॥
भूमावती च मातंगी नामाग्न्यन्त्यास्ति ये शिवे ।

शिव उवाच ।

ब्रह्माः किन्नाम देवि त्वं विदित्व्य च पृथक् पृथक् ।
कथयस्व जगद्वापि श्रुतसामि मे यदि ॥

देभ्युवाच ।

येयं ते पुरतः ब्रह्मा मा काली भीमलोचना ।
इयामवर्णा तु या देवी स्वयमूर्तं व्यवस्थिता ॥
सैयं तारा महाविद्या महाकातस्वरूपिणी ।
दक्षे सम्प्रेतरेयं या विघ्नीयतिभयपटा ॥
इयं देवी छिन्नमस्ता महाविद्या महामते ।
वागेनरेयं या देवी येयं तु भुवनेश्वरी ॥
छट्पत्तव्य देव्येवा वगला जगन्मदनी ।
बहिष्कोणेतरेयं या विषवास्त्रमाश्रिणी ॥
सैयं भूमावती देवी महाविद्या महेधरी ।
नैकं क्षात्रतरे या देवी सैयं त्रिपुरसुश्वरी ॥
वायो या तु महाविद्या येयं मातङ्गनामिका ।
ऐन्द्राब्जां षोडशी देवी महाविद्या महेधरी ॥
जहन्तु भैरवी नीमा शम्भो मा त्वं भयं कुर्व ।
एताः सर्वाः प्रहृष्टास्तु मूर्तये बहु मुक्तिपु ॥
सकला संमजतां तिस्रां चतुर्वैकुण्ठप्रदा ।
सर्वाभीष्टप्रदायिग्यः साधकानां महेधरः ॥
मारणोवाटनसोममोहनदायनामि च ।
बदधस्तम्भनयिदेपावलि प्रेतास्ति कुर्वते ॥
इमां सर्वा गौरनीदा न प्रकराया कदाचन ।
आस्तां मय्यं तथा यन्त्रं पूजाशोमविधि तथा ॥
पुरवधो विधानं च स्तोत्रं च कथं तथा ।
आचारनियमं चापि स्थापकानां महेधर ॥
तदेवायमप्राप्नन्तु लोके कथातं मरिचपति ।
अहं तव श्रियतमा त्वं च मेदुतिश्रियपतिः ॥
पित्रुः प्रजारतेर्द्वैनायायाश्च प्रशास्यहम् ।
त्वमाहारय देवेण त्वं नृणां कृष्णि चेषदि ॥
इति देव समाभीष्टं स्वयन्तुगतपार्श्वम् ।
गच्छामि यद्वाजाय पित्रुद्वन्द्वं प्रजापतेः ॥
इति तस्य वच श्रुत्वा महागीत इव स्थितः ।
प्रोवाच ब्रह्मं शम्भु काली नीमां विनोचनं ॥
यानि त्वां परमेष्ठानि पूर्वा प्रहृष्टितुतामाम् ।
अत्रानता महाभोहापटुलं श्रुन्मुमंरि ॥
त्वमादा परमा विद्या सर्वभूतेष्ववरिष्ठया ।
स्वतन्त्रा पामाशक्तिः कस्ते हि विघ्नितेभ्यः ॥
त्वं वेदसन्निभसि शिवे दत्तवद्विनाशने ।
कामे शक्तिपूर्वा निषेद्धं वयं तज्जानिम वा धमः ॥

दस्मि (मं० पु०) दस्मि विदारयति असुगमिति दस्म-मि ।
 (दस्मिः । उच्. ४ । ४०) १ दम्भः । दम्भतेजनेन । २ दम्भ ।
 दस्मिमत् (मं० ति०) दस्मि विद्यतेऽस्य दस्मि-मत्पु ।
 दम्भगुल, जिममें दम्भ हो ।
 दम्भ (मं० ति०) दम्भस्य चदूरदेगादि दम्भवत्तादित्वात् ।
 य । दम्भे चदूर देगादि, दम्भका मधिकृष्ट स्थान ।
 दम्भान (हिं० पु०) दम्भत देखो ।
 दम्भाना (च० स्त्री०) दम्भो, कूटनी ।
 दम्भानो (हिं० स्त्री०) दम्भानी देखो ।
 दम्भरो (हिं० स्त्री०) दम्भरो देखो ।
 दम्भ (मं० पु०) दम्भोति दोषयति दु-पच् । १ दम्भ, जट्टल ।
 २ दम्भानि, यह पाग जो धर्ममें पापसे पाप लग जातो
 है । ३ दम्भिन, पाग । ४ उन्मत्ता, मरमो । ५ मपताय.
 दुःख, तक्रलीक ।
 दम्भयु (मं० पु०) दुःभावे अभ्युच् । १ परिताप, दुःख ।
 २ दाह, जलन ।
 दम्भयुक्त (मं० स्त्री०) दम्भेन दम्भं सत् कायति प्रकाशते
 कौ-क । रोहित लप, रोहित नामकी धाम ।
 दम्भदम्भ (मं० पु०) दाभानि, दम्भरि, दाभा ।
 दम्भन (हिं० पु०) १ गाय । २ दोना नामका पोषा ।
 दम्भनपापड़ा (हिं० पु०) पितपापड़ा ।
 दम्भना (हिं० स्त्री०) दम्भ करना, जलाना ।
 दम्भनी (हिं० स्त्री०) दम्भनी, मिमहि, मंड़ारि ।
 दम्भा (का० स्त्री०) १ रोग या व्यथा दूर करनेवाली वस्तु,
 पोषण । २ चिकित्सा, उपचार । ३ दूर करनेकी सुक्ति ।
 ४ चयरीधका लपाय, दुःख करानेकी तद्विध ।
 दम्भाङ्गनागा (हिं० पु०) दम्भाङ्गना देखो ।
 दम्भापाना (का० पु०) पोषणाय ।
 दम्भानि (मं० पु०) दम्भाना यन्मां भस्मि, या दम्भ यव
 भस्मिः । दाभानप, नममें भस्मनेवालो धाम ।
 दम्भात (च० स्त्री०) भस्मिपत्र, भस्मिदानी ।
 दम्भानन (मं० पु०) दम्भय घननः । दम्भानि ।
 दम्भानो (च० वि०) स्थायी, जो मटा बना रहै ।
 दम्भानो यंदोषता (का० पु०) जलोमका एक यंदोषता ।
 दम्भमें मरफारी मान्मगुजारी मटाके सिधे गिटल कर दी
 जाती है ।

दम्भारि (हिं० स्त्री०) दम्भानि, दाभानन ।
 दम्भित (मं० ति०) चयमेवामतिचयमे-दूरः दूर-उठन,
 दूर गच्छ स्थाने दम्भितः । सुदूर, बहुत दूरवर्ती ।
 दम्भोयम् (मं० वि०) दम्भमणोरतिचयमे दूरः दूर-ईयवन्
 स्थूर दूरत्यादिना माधुः । सुदूर, चयन्त दूरवर्ती ।
 दम्भ (मं० ति०) दम्भयति दीप्यते दम्भि मादृमधात्
 कनिन् न भोप (दम्भ दम्भने भोपः । उच्. १ । १११
 उगमदत्त) । संख्याविधेय, पंचिता दम्भा, जो गिती-
 में मोसे एक पधिका हो, दम्भ ।

‘‘दिगोदयोकाः पुनस्तथेके वदन्वाहुर्दृष्टार्त्तं पतति ।
 दशैव मातुः निमित्तं गर्भं भवो दशैका दम्भाना दत्ताः ॥’’
 (मारत १।१६४।१०)

दम्भवाचक शब्द ये हैं—दम्भाङ्गुलि, शम्भुबाह,
 रावणमस्तक, क्षपताके तार, दिक्, विष्णुदेव, चयस्था,
 चम्भाम् चोर पक्षि । (कविकलाश्रव) दम्भन, शब्द निम्न
 बहुवचनात्त है ।

द्रव्यकी दम्भ प्रकारकी गुण-क्रिया है । १ शैत्य—
 हमसे छादन, स्नायन, मूर्च्छा, लम्बा चोर दाहकी
 निवृत्ति, होती है । २ उष्ण—यह शैत्यका लक्षणा है,
 किन्तु पावक है । ३ शिथिल—हमेक चोर मादंभवकर, बहुकर
 चोर चपकर है । ४ दम्भ—क्षिधका विपरोत, विम-
 यतः स्नायनकर चोर चुर है । ५ पिच्छिल—भीम-
 नोय, बलकर, मन्थानकर, शैत्य चोर गुह है । ६
 विगद-पिच्छिलका विपरीत, क्षेदगोचक चोर रोपचकर है ।
 ७ तोष-दाहपाक चोर पादावकर है । ८ मृदु—शीत्य-
 का विपरोत है । ९ शुद्ध—चयनम्यता, चयसेव, बलवति
 चोर पुटिजनक है । १० मधु-गुहका विपरोत, क्षेपनकर
 चोर रोपचकर है । द्रव्यके दम्भ प्रकारके गुण १ द्रव—
 क्षेदकर है । २ मान्मस्युल—बन्धनकर है । ३ शय्य—
 पिच्छिलवत् है । ४ कर्कश-विगदवत्, मुगानुबन्धो चोर
 लुप्त है । ५ सुगन्ध—वचिकर चोर मृदु है । ६ दृग्-
 सुगन्धका विपरीत, ज्ञानमक, चयविकर, मारक,
 पन्थोमकारक चोर मटकर है । ७ यथायी—मां
 गरीरमें कैम कर चमे पाक कर देता है । ८ विकारो
 यह पाप्राट चयक कर धातुका बन्धन गिटल कर देता
 है । ९ पायुकारो—यह दम्भानामोके निद प्रलम्भ तेक-

अथोक्तमतिमोहेन प्रत्येकान्नं पतिं तव ।
 तत्तत्क्षमस्य महेद्यानि यथाकृचि तया कुरु ॥
 एवमुक्त्वा महेद्येन तया सा जगदम्बिका ।
 ईषद्वदहास्यवदना वदनं चेदममवीर ॥
 त्वं तिष्ठ सर्वप्रमये प्रदेव महेद्यर ।
 याम्यहं मत्पितृगृहे सम्प्रतं यज्ञदक्षणे ॥
 इत्युक्त्वा सा महादेवं ताराप्युद्वेग्यवरिषता ।
 एरुह्या समभवत् गृहसा तत्र नारद ॥
 अन्यथा मूर्तं यथाशौ सहस्राग्राहिता तदा ।
 भय शम्भुः समालोचय गन्तुमिच्छुं सुरेश्वरी ॥
 प्रमयानाह भगवान् रथमानय चेतमम् ।
 सुताभ्यामुत्तिष्ठेन रत्नजालविराजितम् ॥
 तज्ज्ञात्वा तत्क्षणदेव प्रथमाधिपतिः स्वयं ।
 रथं समानयत् सिंहैर्युदैर्युक्तमाश्रयेः ॥
 तां समारोपयामास प्रमयाधिपतिः स्वयं ।
 तस्मिन् रथेस्थिता काळी विहङ्गा भीमरूपिणी ॥

(महाभागवत ८ म अ०)

ऊपर दश महाविद्याको उत्पत्तिके विषयमें जो विवरण
 बिखरा गया, वह महाभागवत पुराणके सिवा और किसी
 पौराणिक वा तान्त्रिक ग्रन्थमें नहीं मिलता ।

तन्में महाविद्याकी उत्पत्ति और प्रकारसे वर्णित है—

“हठौ हृणत्वमास्ताप शुक्लपि नीलरूपिणी ।
 केल्या वाक्प्रदाचेति तेन नीलसरस्वती ॥
 तारकत्वात् सदा तारा तारिणी च प्रकीर्तिता ।
 भुवनानां पालकत्वाद्भुवनेश्वरी प्रकीर्तिता ॥
 सृष्टिस्थितिकरी देवी भुवनेश्वरी प्रकीर्तिता ।
 भोदाश्री च सदा त्रिधा श्रीविद्या च प्रकीर्तिता ॥
 निर्गुणा च महादेवी योगेश्वरी परिकीर्तिता ।
 भैरवी दुःखखंडिनी यमदुःखत्रिनाशिनी ॥
 कालभैरवभार्या च भरवी परिकीर्तिता ।
 त्रिशक्ति कालदा देवी त्रिधा चैव सुरेश्वरी ॥
 त्रिगुणा च महादेवी मोहिनी मोक्षदा भुवः ।
 धूमावती महामाया धूमासुरनिवृद्धनी ॥
 भूमरूपा महादेवी चतुर्वर्गप्रदायिनी ।
 जगन्माता जगदाश्री जगतामुपकारिणी ॥
 वकारे वाक्प्री देवी वकारे सिद्धिदा सृष्टा ।

वकारे पुनर्वी चैव चैतन्या मे प्रकीर्तिता ॥
 मातं गी मदरीलत्वान्मतं गासुरनाशिनी ।
 सर्पापत्तारिणी देवी मातं गी परिकीर्तिता ॥
 वं कृष्णवासिनी देवी कमला च परिकीर्तिता ।
 पातालवासिनी देवी उद्गीरूपा च सुन्दरी ॥
 एतः दशमहाविद्याः सिद्धिदायाः प्रकीर्तिताः ।”

महादेवोके शक्ता होने पर भी कलिमें लक्षणत्व प्राप्त
 कर नीलरूपिणी हो गई थीं । अब लीलाक्रमसे
 उन्होंने वाक्शक्ति प्रदान की, इसीसे उनका नाम नील-
 सरस्वती पड़ा । सब भूतोंको तारण करनेके कारण
 वे तारा वा तारिणी कहलाईं । ये सब भुवनेश्वरी पालन
 करती हैं इसीसे ये भुवनेश्वरी नामसे प्रसिद्ध हैं तथा
 सृष्टि और स्थितिकारिणी होनेसे भी ये भुवनेश्वरी कह-
 लाईं । महादेवी जो दान करती हैं, इसीसे ये श्रीविद्या
 नामसे प्रसिद्ध हैं । ये त्रिगुणातोता हैं इसीसे इनका
 नाम योगेश्वरी है । ये सब प्रकारके दुःखोंका नाश
 करती हैं, यम-यन्त्रणासे रक्षा करती हैं और भैरवको
 भार्या हैं इसीसे इनका नाम भैरवी पड़ा है । यह
 देवी त्रिशक्तिरूपिणी हैं, मस्तकलिवा हैं, मोहिनी और
 मोक्षदायिनी हैं, इसीसे इनका नाम द्वित्रिमस्ता हुआ
 है । इसी महामायाने धूमासुरका विनाश किया था,
 तथा इनका वर्ण धूम्र है तथा ये धर्म धर्म काम और
 मोक्षको देनेवाली हैं इसीसे ये धूमावती नामसे प्रसिद्ध
 हैं । वकारे शब्दका अर्थ वाक्प्री देवी, वकारे शब्दका
 सब प्रकारकी सिद्धिदायिका और वकारे शब्दका अर्थ
 धृतिवी है तथा ये स्वयं चैतन्यरूपिणी हैं इसीसे इनका
 नाम वगला रखा गया है । महादेवो के चैतन्य महामाया
 हैं, उन्होंने मतङ्ग असुरको मारा है तथा ये सब
 आपदोंसे छदार करती हैं, इसी कारण इनका नाम
 मातङ्गो दे । महादेवो हमेशा वं कुण्डमें वास करती
 हैं, इसीसे इनका नाम कमला और पातालमें रहनेके
 लक्ष्मी नामसे प्रसिद्ध हैं । यह दशमहाविद्या भी
 सिद्धिदाया नामसे वर्णित हैं ।

नारद-पञ्चरात्रमें (१३ प०) लिखा है—

“दशमेदे चतुर्वर्गता या सती लोहविद्युता ।

उपिला दक्ष राक्षसि सती क्षमया कलेवर ॥

वत् गरीरमें बहुत जख्म फैल जाता है तथा १० छोटी छोटी मिराचोंमें भी प्रवेश करता है। (इन्द्रगुणदण्ड)

दशह—म्यालियर राज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह मध्य भारतके भुपावर एजेंसीके अधीन दशह नामक जागिरका प्रधान नगर है। यह भूमभिराजे १० मील उत्तर सर्दापुरसे १२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है।

दशक (सं० ह्री०) दश परिमाणस्य कन्। दश संख्या। मनुके अनुसार धृति, क्षमा, दम, शस्त्रिय, श्रौद्ध, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्षीय ये दश धर्मके लक्षण हैं।

दशकण्ड (सं० पु०) दश कंठा मला यस्य। रावण। दशकण्डजहा (सं० पु०) रावणस्य हारक, श्रीरामचन्द्र। दशकण्डजित् (सं० पु०) दशकण्डं जयति जि-जित्। रावण जिता, राम।

दशकण्डारि (सं० पु०) रावणके शत्रु, श्रीरामचन्द्र।

दशकन्ध (हि० पु०) रावण।

दशकन्धर (सं० पु०) दशकन्धरा यौवा यस्य। रावण।

दशकन्धरजित् (सं० पु०) दशकन्धरं जयति जि-जित्। राम।

दशकन्यातीर्थ (सं० ह्री०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम।

दशकर्म (सं० पु०) दशकर्म-शा-क। दशकर्मके मन्त्रादि विषयोंमें अभिज्ञ, वह जो दशकर्मके मन्त्रादि जानता हो।

दशकर्मन् (सं० ह्री०) दशविधं कर्म। गर्भाधानादि दशविध संस्कारकर्म, गर्भाधानमें लेकर विवाह तकके दश संस्कार यथा—गर्भाधान, पुंसवन, सोमसोमयन, जातकर्म, निष्क्रामण, नामकरण, अक्षप्राशन, चूड़ाकरण, उपनयन, और विवाह।

दशकर्मपटु (सं० पु०) दशकर्मणि पटुः। दशकर्म विषयोंके पारदर्शी।

दशकर्मपति (सं० ह्री०) दशकर्मणा पतिः। दशकर्म-विषयक पति, जिस पुस्तकमें दशकर्मके सभी विवरण लिखे हुए हैं, उसे दशकर्मपति कहते हैं। साम, शत्रु और यशुर्वेदीय—तीन दशकर्मपतियाँ हैं; उनमेंसे भवदेवभट्टने सामवेदीय, पण्डितभट्टने यशुर्वेदीय और कास्यमीन-शत्रुर्वेदीय—दशकर्मपति प्रणयन की।

इन्हीं पतियोंके अनुसार सभी समस्त संस्कार-कार्य किये जाते हैं।

दशकर्मोन्वित (सं० पु०) दशकर्मभिः श्रुतः। १ दशकर्म द्वारा युक्त जो सब कार्यादि करते हैं उन्हें दशकर्मोन्वित कहते हैं। २ दशकर्मोन्वित ब्राह्मण, जो दशकर्म विषयक और अन्यान्य सब प्रकारके योगेदित्यादि कार्य अच्छे तरह जानते हैं, उन्हें दशकर्मोन्वित कहते हैं।

दशकामजयमन (सं० ह्री०) कामने उत्पन्न दश प्रकारके जयमन। श्रुगया, श्रुतकीटा, दिवानिद्रा, परनिद्रा, प्रमदागति, मृत्यु, मोत, मोह, हया भ्रमण और मद्य-पान ये दश प्रकारके जयमन कामज हैं। शान देवो।

दशकुमारचरित (सं० ह्री०) महाकवि दण्डोका बनाया हुआ एक गद्यग्रन्थ। इसमें दश राजकुमारोंके चरित वर्णित हुए हैं, इसीसे इन ग्रन्थका नाम दशकुमारचरित पड़ा है। यह एक भाव्यन्त चापयं उपन्यास ग्रन्थ है। कविने इसमें पञ्चोक्तिक कवित्वशक्ति का परिचय दिया है। यह ग्रन्थ दो भागोंमें विभक्त है—पूर्व और उत्तर भाग। कोई कोई पण्डित कहते हैं कि दशकुमारका पूर्वभाग दो दण्डोका बनाया हुआ है, उत्तराधे किसी दूसरे कविका हात है। इस प्रकारको किंवदन्तीका कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

दशकुलवृक्ष (सं० पु०) दशगुणितः कुलवृक्षः। तन्वीक कुल-वृक्ष दशक, तन्वीके अनुसार दशकुलवृक्ष। निमोड़ा, करफा, धेन, पोपल, कदंब, नेम, बरगद, गूलर, पायला और इसीमें से जो दश कुलवृक्ष हैं। सभी माषकोंकी प्रातःकाल वृक्ष कर इन दश कुलवृक्षोंकी प्रशंसा करना चाहिए।

दशकोपो (सं० ह्री०) रुद्रतानके व्यापक भेदोंमेंसे एक।

दशघोर (सं० ह्री०) दशविधं घोरं। दशविध दुःख, शत्रुनके अनुसार दश अन्तुषोंका दूध। गाय, बकरी, कटनो, भैंस, घोड़ा, भालू, हथिनो, हरियो और गदहो इन दश प्रकारके अन्तुषोंके घोरको दशविध घोर कहते हैं। दुग्ध देवो।

दशगात्र (सं० पु०) १ शरीरके दश प्रधान अंग। २ गृहकर्मस्थानी एक कर्म। यह मनुष्यके शरीरके दोहरे दश दिन तक होता रहता है। इसमें प्रतिदिन विष्णु-दान करते हैं। पुराणके अनुसार इसी विष्णुके द्वारा

अनुग्रह न मेतायी भाता तस्यान्तु सा तदा ।

बाही नाम्नेति विद्याता सर्वथात्रि प्रतिष्ठिता ॥”

मनो दशरथरुमें जन्म ले कर राजर्षि दशके प्रति बरत कुपित हुईं; इसी कारण इन्होंने अपना कर्नेवर छोड़ दिया। पोछे बहुत अनुग्रह करने पर इन्होंने मोनकाके गर्भमें जन्म-ग्रहण किया और उस समय ये सती काली नामसे प्रसिद्ध हुईं।

फिर स्वतन्त्र-तन्त्रके मते—

“महारात्रिनेदुरन्ता नमो जलमेव तत् ।

कालीरूप महेशानी साक्षात् कैवल्यदायकं ॥”

महेश्वरीने भयभीती महारोमें महारात्रिके दिन काली-रूप धारण किया था, इसीसे इनका नाम काली पड़ा है। ये माघाशु कैवल्यदायिनी हैं।

नारदपञ्चतन्त्रमें (शंर ४०) लिखा है—जो दश-रथमें उत्पन्न हुई थीं, उनका नाम सती है, जो ब्रह्मदा-यिनी होनेके कारण उनका नाम एकलता है, वे जो सब भूमीको तारण करती हैं। इसीसे इनका नाम तारा पड़ा है अथवा सीमा क्रमसे वाक्, दान करती हैं इसीसे इनका नाम मोनसरसती और उत्पत्तिके कारण उष-तारिणी नाम पड़ा है।

फिर स्वतन्त्रतन्त्रमें लिखा है—कालरात्रिके दिन दो-पहर रातको इन्होंने उष-चापद्वारे तारण किया था। इसीसे इनका नाम उषतारा पड़ा। मेरुके पश्चिम कूलमें चोल नामक एक महाइन्द्र है। इस इन्द्रमें माता मोनसर स्वर्गीमें जन्मग्रहण किया और यहाँ ये तीन युग तक लप करती रहीं। कर्षवर्जमें तेजोरात्रिके चोलइन्द्रमें गिरे-वे, इससे वर्ष नोला हो गया था, इसीसे ये मोनसर-स्वती नामसे प्रसिद्ध हैं। योङ्गोकी उत्पत्तिका निवरण भास्वपञ्चरात्रमें इस प्रकार लिखा है—

“भूः गच्छ मुनिगच्छ रहस्य परमाद्भुतम् ।

देव बाही महामाया इन्द्रपीतमुपागता ॥

कैलासगिजारे रम्ये वसमाने च शङ्करे ।

इन्द्रय प्रेयसाभाष सर्वपाप्मरुहो मुदा ॥

कामराता महादेवं इन्द्रपुत्रं महादेव ।

इत्येव वचनं भूला तासां च वृषतन्त्रनः ॥

धामाभ्यन्तरिका बाबा वृत्ताश्रयता ततः ।

ईश्वर उवाच ।

पुष्पस्वातिविर्हयः पुरुषो नाम संघवः ।

लोपां वी चातिविर्हेश तस्माद्विष्णु काङ्क्षि ॥

इत्युक्त्वा तत्परं रम्यं विवेक परमेष्ठिनः ।

उवाच कार्यं मगवान्मोक्ष परमेष्ठिनी ॥

ता अप्यबाहुः परमां प्रीति परमदुर्लभां ।

ततो देवी महाकाली विन्तविरा मुहुर्मुहुः ॥

एतद्वृषमपोहाय शुद्धगौरी मशामय ॥

यस्मात् कार्त्तिकी कालीति महादेवः समाह्वयेत् ॥

इति छान्दोग्य मनसा भगवद्भक्तं गता परा ।

महा देवोऽपि कालेव मतोऽग्रतःपुरे विषः ॥

नापश्यन् तदा कालीं तस्मात् तस्मिन् पुरे हरः ।

अप काङ्क्षे कदाचित् आगमस्तत्र नारदः ॥

प्रणम्य गिरजा देवं महादेवं महेश्वरं ।

कृतान्तिलिपुटस्तथैव ततो देवामतो मुनिः ॥

महादेवोऽपि नायेन पाणिना मुनिसत्तम ।

खपस्वपुत्रं तमगच्छः सप बन्धे पुन्यवर्षी कर्णा ॥

कालेन कियता तत्र कथान्ये मुनिसत्तम ।

उवाच सादरः बाक्यं प्रणम्य अगरीश्वरम् ॥

नारद उवाच ।

क गता त्वां परिलज्ज काको कालविनाशिनी ।

प्रत्युवाच महादेवस्तं मुनिं नारदं ततः ॥

अन्तर्द्वारं गता देवी मां हिरवा मुनिसत्तम ।

इति प्रोक्त्वा वषस्तस्य नारदो हर्षवागतः ॥

निवादसमवधारं महाकाश्याय शूक्तिनः ।

इति संविमल्य मगना पदान्माभिधाय नारदः ॥

ददतां तां महाकालीं स्थानवस्तुः समाधितः ।

मुनेतोरत्तरे कथं स्थिता था परमेष्ठिनी ॥

प्रणम्य परया मगना स्वतःसे जगन्मयी ।

देव्युवाच ।

विद्वेना मरीदेव किं करोति मदेष्टारः ।

तस्मैव कुशलं सर्वं कथयन् मुनीश्वर ॥

नारद उवाच ।

सद्योऽं परमं बन्धे मिहारायं महेश्वरः ।

देवदेवी भित्तुते तं निवारय मुमये ॥

इति श्रुत्वा वषस्तस्य सकोप परमेष्ठिनी ।

क्रम क्रममे प्रेतका शरीर वगैरा ऐ शीर दग्धते दिन मृता को ज्ञाता है, वहसे विपुले गिर, दूसरेसे धाँच, भाक, काम इत्यादि भवते हैं।

दशग्राम (मं० स्त्री०) दशग्रामयुक्त परगना।

दशग्रामपति (मं० पुं०) दशग्रामाध्यापक पतिः, उत्तरपद द्विगुण०। दशग्रामके अध्याप, वह को राजाकी शीरसे दश ग्रामोंके अधिपति बनाया गया हो। जिसको पाँचवसे दशग्राम शासित होते हैं, उसे दशग्रामपति कहते हैं। इसका विषय मनुस्मृतिमें इस प्रकार लिखा है—राजा राज्यको सुरक्षाके लिए यद्यमाध्य-दो, तीन, दश वा भी ग्रामोंके मध्य एक दल सैन्य संस्थापन करे और एक दल अधिनायकके लिये उन ग्रामोंके विद्यादिका मार भौषण दे। राजा वहसे पञ्चन प्रत्येक ग्राममें एक एक अधिपति, दोहे क्रमशः उससे अधिक प्रतिष्ठा और योग्यताके अनुष देण कर दश ग्रामोंका अधिपति नियत करे। इसी प्रकार बीस, सहस्र आदि तकके ग्रामोंके शासित नियुक्त कर सकते हैं। जब ग्राममें शीरो आदि किसी प्रकारका अन्याय कार्य उपस्थित हो जाये, तो ग्रामाधिप स्वयं उसका विचारदि करते हैं। यदि सम्यक् रूपसे ये कर न सके, तो दशग्रामाधिपति उसका न्याय कर सकते हैं। यदि वे भी इसमें असमर्थ हों, तो इसी प्रकार उत्तरोत्तर अधिनायकको इसका विचार करना चाहिये। (श्रु ५०) यही जिस प्रकार एक एक शिवा मजिद्वंटेमें शासित होता है, उसी प्रकार वहसे भी ग्राम-पति, दशग्रामपति आदिमें एक ग्राम वा दशग्राम शासित होते हैं।

दशग्रामिक (मं० वि०) दशग्रामा अधिपतित्वेन मन्त्र-युक्तम्। १ दशग्रामाधिप, दशग्रामके मानिक। २ दश-ग्रामादिके अदूर देगादि।

दशग्रामी (मं० पुं०) दशग्रामा अधिपतित्वेन मन्त्रायु-जनि। दशग्रामका अधिपति, दशग्रामका मानिक। दशवीर (मं० पुं०) दश वीरोंका समूह। १ रावण। २ अशुरविभीषण, एक राजसका नाम। ३ दशवीरका एक पुत्र, मिदरादिका भाई। ४ एकदश मन्त्रकारोंमें एकका नाम। ५ दशवीरोंमें मन्त्रकारोंमें एकका नाम। ६ दशवीरोंमें दशवीरोंका नाम। ७ दशवीरोंका नाम। ८ दशवीरोंका नाम। ९ दशवीरोंका नाम। १० दशवीरोंका नाम।

दशग्राम (मं० स्त्री०) दशग्राम।

दशग्रामोत्तिम (मं० पुं०) दशग्रामका महा मन्त्रका। इसमें दश हजार पुत्र हैं। (मन्त्र आदि १ मं०)

दशग्राम (मं० स्त्री०) दश परमापन्न पति। दशग्राम, दशवीर मन्त्राः।

दशग्राम (मं० वि०) दश चतुष्टय यत्न, दशग्राम चतुष्टय वा संज्ञायाः चतुष्टये तत्प०। १ दशग्राम, दशका चक। २ दश संज्ञान्वित, जिसमें दशका चक हो।

दशग्राम (मं० स्त्री०) दशग्रामका दश निपातनात् साधुः। शत संज्ञा, शी।

दशग्राम (मं० वि०) दशग्रामका दश परमापन्न पति। शतग्राम, शी गुणा।

दशग्राम (मं० स्त्री०) पूर्वादि दिक् समूह। यद्यपि पूर्व, पश्चिम उत्तर, दक्षिण, पश्चिम, नैऋत, वायु, ईशान, चतुः शीर छह।

दशदिक्पाल (मं० पुं०) दशदिशः पालयति, पाल-यच्। दश दिशाओंके अधिपति, ये सब दिशय पूर्वदि क्रमसे दश दिशाओंका पालन करते हैं—इन्द्र पूर्वदिशाके पालक, अग्नि अग्निकोणके, यम दक्षिणदिशाके, मित्र नैऋत कोणके, ब्रह्म पश्चिमदिशाके, मरुत् वायुकोणके, कुबेर उत्तरदिशा, ईश ईशान कोण, ब्रह्मा ऊर्ध्व दिशा और अश्वत्थ दिशाके पालक हैं। ये दश दिशोंका दश दिशोंके पालन करते हैं। प्रत्येक पूजा करनेमें इन्द्रादि दश दिक्पालकी पूजा करनेकी पद्धति है।

दशदार (मं० पुं०) शरीरके दश हिस्से, यद्यपि २ कान, २ नासिका, २ नाक, १ मुख, १ श्रोत्र, १ जिह्वा और १ ब्रह्माक्षर।

दशधा (मं० अर्थ०) दशग्राम प्रकारः दशधा (मन्त्राः) विधाने वा। वा ५।५।५। दश प्रकार, दश तरंग।

दशानु (मं० वि०) दशानु वायुं कनिन्। १ मन्त्राविमल, दश। २ दश मन्त्रागुह, जिसमें दश चक हों।

दशानु (मं० स्त्री०) दशग्रामोत्तिम शरीरं दशानु करणे श्रुत्। दश दशानु निद्रेणात् कानिन् कानिन् शीर। १ कनक। (पुं०) २ शिखर। ३ दश, दंत।

दशानु (मं० पुं०) दशानु दशानु कादयति आदि धन्यं इत्यम्। शीर, शीर।

दशानु (मं० स्त्री०) दशानु दशानु पदं। दशानु

आज्ज्वल्यमाना रक्षाक्षी रूपमन्यद्भवो परा ।
 यन्मास्ति त्रिपु लोकेषु सौन्दर्यमपि कुत्रचित् ॥
 दधौ तद्रूपमद्रुलं सर्वपापमधिकं परे ।
 यथास्ते भगवान् देवो देवदेवो महेश्वरः ॥
 सम्रागता क्षणेनैव ततः सा परमेश्वरी ।
 ददर्श हृदये शम्भोः स्वच्छायां परमेश्वरी ॥
 उवाच सा महादेव कोपेन महताहता ।
 कृतघ्नस्त्वं महादेव मया यः समयः कृतः ॥
 त्वत् त्वं लंघितवान् देव किमर्थं परमेश्वर ।
 कृत्वा विवाहं हृदये स्थानं हतं मया शिव ॥
 एतत् श्रुत्वा वचस्तस्याः प्रहस्य परमेश्वरः ।
 उवाच स प्रिया साध्वी प्रेमगूढदया निरा ॥

ईश्वर उवाच ।

नाहं कृतघ्नो कस्यापि नाहं समयलंघकः ।
 हृदये मे त्वया दृष्टा स्वच्छाया नात्र संशयः ॥
 स्थानं कृत्वा महाभागे पश्य त्वं ज्ञानचक्षुषा ।
 स्वच्छाया सैव देवेति ततः सुस्थामवत परा ॥
 उवाच परमेशानं देवदेवं महेश्वरं ।
 परेण प्रेमभावेन जगदीशं जगन्मया ।
 का च्छाया इदि दृष्टा सा तन्मे मुहि जगत्पते ॥
 प्रसोवाच ।

इति श्रुत्वा महादेवः कालिकावचनं परे ।
 उवाच प्रेमभावेन देवदेवं धनातनः ॥

ईश्वर उवाच ।

यस्मात्त्रिभुवने रूपं भेदं कृतवती धिवे ।
 तस्मात् स्वर्गे च मर्त्ये च पातालेऽप्यत्र पावैति ॥
 हृन्दी पद्ममी धीध ह्यमाता त्रिपुरगुह्यदी ।
 सदा पोडशवर्षीया विद्ययाता पोडशी ततः ॥
 यां क्षया हृदये मेऽथ दृष्ट्वा गीता सुरेश्वरि ।
 तस्मात् सा त्रिपु लोकेषु स्थिता त्रिपुरभैरवी ॥
 यावत्सा भगवत्पाव शुभ्यचिता कृपाक्षयी ।
 ततस्तां मुक्तेशानीं रामराजेश्वरीं विदुः ॥
 या चोपमत्तारिणी प्रोक्ता या च दिक्करवासिनी ।
 येषां कलितकान्तायमा दृष्टाता मंगलचण्डिका ॥
 कौमिकी देवदूती च यागान्यामूर्तयाः स्मृताः ।
 या द्यामा सुवनेशानीं तस्या मेदादेरुपा ॥

त्रिपुटा जयदुर्गा च वनदुर्गा त्रिकण्टकी ।
 काल्यायनी महिषघ्नो दुर्गा च वनदेवता ॥
 श्रीरामदेवता वज्रप्रस्तारिणी च शूलिनी ।
 गृहदेवी गृहास्त्रा मेधा राधा च कालिका ॥
 कथिताश्च समासेन तासां भेदाश्च नारद ।
 विस्तारणे ॥ केनैव शक्यते गदितं मुने ॥

जिस समय शङ्कर रमणीय कौत्सास-शिखर पर वास करते थे, उस समय इन्द्रने उनका स्तव करनेके लिए अम्बराभीको भेजा था । अम्बराभीने सा कर जहाँ तक हो सका खूब स्तव किया । इस पर महादेवको सन्तुष्ट हो कर बोले थे, 'पुरुषका प्रतिधि पुरुष है, स्त्रीको प्रतिधि स्त्री है । इस कारण तुम लोग कालीके निकट जावो ।' इतना कह कर महादेव तो रमणीयपुर चले गये और अम्बरागण भी परमदुर्लभ मोति प्राप्त कर वापस आईं । महादेवने यह वृत्तान्त कालीसे कहा । इस पर काली बहुत चिन्ता करने लगी और कालीरूपका परित्याग कर गृह गौरी हो गईं । महादेव भी काली काली कह कर चिन्ताने लगे महादेवने भन्तःपुर जा कर जब कालीको नहीं देखा, तब वे वहाँ रहने लगे । किसी समय नारदजा वहाँ जा पहुँचे । महादेवने नारदके शरारकी बापें हाथसे स्वर्ग कर उनका खूब सत्कार किया और तरह तरहका वात-व्रत की । नारदने महादेवसे पूछा, 'कालिका-शिनी काला आपकी छोड़ कर कहाँ चली गई है ?' महादेवने कहा, 'काला हमें छोड़ कर भन्तहित हो गई है ।' यह सुन कर नारदजी बहुत खुश हुए । उन्होंने अपने ज्ञानचक्षुसे देखा कि सुमेरुके उत्तरपाश्वर्मे महादेवी अवस्थान करती हैं । इस पर नारद महामायाके पास गये और उन्हें प्रणाम कर वहाँ रहने लगे । महादेवीने नारदसे पूछा, 'महादेव मेरे बिना किस प्रकार रहते हैं, उनका कयल सन्वाद हमें कही ।' इस पर नारदजीने कहा, 'हे गिरिधुते ! देवदेव महादेव परम विचारके लिए उद्योग कर रहे हैं, आप उन्हें राकिये ।' यह सुन कर देवी बहुत विगड़ीं और उनका अखि साल नान हो गईं । तब देवीने दूसरा रूप धारण किया । उन्होंने जैसा मोन्द्य धारण किया, वैसा तोनों लोकोंने

संत स्थान, बंद जगह जहाँ दाँतोंके काटनेमें जखम हो गया हो।

दशमवास (सं० स्त्री०) दशनामां वास इव आष्ठादक-त्वात् । भोष्ठ, होठ ।

दशमबोध (सं० पुं०) दशम इव बोधमस्य । दृष्टिभ्य ब्रह्म, धनार ।

दशमोष्ठ (सं० पुं०) दशमस्य अंश इ-तत् । दशमच्योतिः, दाँतोंकी शोभा ।

दशमहा (सं० पुं०) दशमस्य दशमघतस्य अष्टः । दशम-घत, दाँतोंके काटा हुआ जखम या चिह्न ।

दशमाल्या (सं० स्त्री०) दशमः प्राक्यो यस्यां, एतत् सेवनेन हि दन्तस्य दाह्यात् चक्षुः तत्रालं । मुक्तिका,

लोभिया साग ।

दशमाम (सं० पुं०) संन्यासियोंके दश भेद, यथा—तीर्थ, धायम, वन, अरण्य, गिरि, पर्वत, मागद, सरस्वती, भारती और पुरी ।

दशमामो—संन्यासियोंका एक वर्ग । पद्मेतवाट प्रचारक सुप्रसिद्ध महराचार्यके चार प्रधान शिष्य—पद्मवाद, इक्ष्मात्मक, मण्डन और तोटक । इन चारोंके भी फिर भक्त भक्त शिष्य थे । पद्मवादके दो शिष्य थे—तीर्थ और धायम, इक्ष्मात्मकके दो शिष्य—वन और अरण्य, मण्डन-के तीन शिष्य—गिरि, पर्वत और सागर, इसी प्रकार तोटकके भी तीन शिष्य थे—सरस्वती, भारती और पुरी । इन्हीं दश शिष्योंके नामसे दशनामो संन्यासियोंकी उत्पत्ति हुई है ।

जो तत्त्वमसि प्रभृति जलवायविग्रह हैं और त्रिवेणी-मद्रमतीर्थमें तत्त्वाय भावसे स्नान करते हैं, वे तीर्थ कहलाते हैं । जो धायम ग्रहण करनेमें समर्थ हैं और कामनाविवर्जित हो कर जन्म तथा मरणसे निरुक्त होते हैं, उनका नाम धायम है । जो कामना परिशुद्ध हो कर समीचीन निर्भरके पासके वनमें वास करते हैं, वे वन कहलाते हैं । जो अरण्य-प्रत ग्रहण करके मारा संसार छोड़ देते और पानन्ददायक वनमें विरकास तत्र वास करने हैं, उन्हें पार्श्व कहते हैं । जो हमेशा पहाड़ पर रहते, गीताभ्यासे कुशल, अविचलित बुद्धि और गम्भीर हैं, वे गिरि कहलाते हैं । जो पहाड़के नाचे

वास करते हैं, ध्यान और धारण करनेमें समर्थ हैं तथा सारासार ब्रह्मकी जानते हैं, उनका नाम पर्वत पड़ा है । जो सागरके सहाय गम्भीर भावसे रहते हैं, फल-मूलादि बाहार करते हैं और भोक्तृमार्गादाका उत्सहन नहीं करते, उन्हें सागर कहते हैं । जो सर्वदा स्वरसान-विग्रह, स्वरवादी, कवीश्वर और संसार सागरमें सार-ज्ञानविग्रह हैं, वे भस्वती कहलाते हैं । जो शिष्या-भारसे परिपूर्ण हो कर सभी भारोंका त्याग करते हैं और दुःख-भार त्याग दे, उसे जानते तब भी नहीं, उनका नाम भारती है । जो ज्ञानतत्त्वमें पूर्ण हैं, पूर्णतत्त्वपदमें अवस्थित हैं और सर्वदा परब्रह्ममें निरत रहते हैं, वे जो पुरी हैं ।

महराचार्यने चार मठ स्थापित किये थे जिनमें इन दश शिष्योंकी शिष्या-परम्परा चली जाती है । पुरी, भारती और सरस्वतीकी शिष्यापरम्परा शृङ्गेरी मठके भक्त गंत है; तीर्थ और धायम मारदामठके भक्तगंत, वन और अरण्य गोवर्द्धनमठके भक्तगंत तथा गिरि, पर्वत और सागर लोमो मठके भक्तगंत हैं । प्रत्येक दशनामी संन्यासी इन्हीं चार मठोंमेंसे किसी न किसीके भक्त-गंत होता है ।

प्रत्येक मठके दृयक, दृयक, पश्यक हैं जो महन्त कहलाते हैं । प्रत्येक महन्त अपने मठ और तत्संबन्धित भू-सम्पत्तिके अधिकारी हैं ।

दशनामियोंमें अरण्य-सम्प्रदायके संन्यासी प्रायः नहीं कहे जाते हैं । सागर और पर्वत सम्प्रदाय भी बहुत हैं ।

यद्यपि दशनामो मद्र या निर्गुण उपासक प्रसिद्ध हैं पर इनमेंसे बहुतरे शैवसम्प्रदायी होना मिलते हैं । दशनामी संन्यासियोंमेंसे कितने तो ऐमे हैं जो स्वधर्मोचित नियम-का प्रतिपादन नहीं करते । इन लोगोंके प्राय-कक्षाप देखनेसे मान्य पड़ता है कि तीर्थ-भ्रमण और शिष्टिका सेवनके सिवा इनके और कोई कार्य नहीं है । वेदान्तज्ञातज्ञातज्ञान ही इनका प्रधान धर्म है, किन्तु ये लोग तब और योगशास्त्रका अनुशीलन करके तदनुसृत कार्य करते हैं । इनमेंसे कुछ तो शिष्योपश्रीवी हैं और कुछ बादिन्नादि करके अपना मुजारा करते हैं ।

कहीं भी न था। ऐसे चतुर्नय रूपकी धारण कर वे जहाँ भगवान् महेश्वर रहते थे, वहाँ उपस्थित हुईं। महादेवीने गर्भ के हृदयमें अपनी काया देख बहुत गुस्सा कर कहा,—‘हे कृतघ्न! तू मेरे साथ प्रतिष्ठा रूपो पागमे बंधे हुए हो, तो फिर क्यों उसे उल्लङ्घन करते हो? तू ने वियाह करके मुझे अपने हृदयमें स्थान दिया है।’ महादेव कालोकी ऐसी क्रोध भरी बातें सुन कर कुछ सुसज्जरा कर बोले, ‘हे कल्याणो! मैं कृतघ्न नहीं हूँ और न मैंने प्रतिष्ठा को उल्लङ्घन की है, मेरे हृदयमें जो देखतो हो, वह तुम्हारे ही काया है, इसमें सन्देह नहीं। पोछे कालोकी जब मालूम पड़ा कि यह उन्होंने काया है, तब वे कुछ शान्त हुई और महादेवजने बोले, ‘वह काया कौन है? हमें ज्ञातिये।’

यह सुन कर महादेवने कहा, ‘हे गिरी! तूने त्रिमु-
घनमें यह रूप धारण किया था। इसीसे त्र्यम्बे, मर्त्य-
में और पातालमें क्रमशः सुन्दरी, पद्ममी और श्रीत्रिपुर-
सुन्दरी नामसे प्रसिद्ध होगी और सर्वदा पोद्दमवर्णिया को कर जोड़गी नाम भी धारण करेगी। आज मेरे हृदयमें अपनी काया देखकर तू डर गई हो इसीसे तीनों लोकों-
में तेरा नाम त्रिपुरभैरवी होगा। भगवतोकी कृपासमये सुखदित्तार्की जो भवस्या है उसे तू भुवनेश्वरी और राजराजेश्वरी समझो। वह कृपासमयी भवस्या उपतारिणी, दिङ्मरयासिनी, ललितकाला, महानवच्छिन्ना कोपिकी, देवदूतो आदि नामों से प्रसिद्ध होगी। उनका एक नाम भुवनेश्वरी भी होगा जिनके पनेक भेद होंगे। यथा—त्रिपुरा, जयदुर्गा, वनदुर्गा, शिकटको, कात्यायिनी महिषघ्नी, दुर्गा, वनदेवता, आरामदेवता, वज्रप्रस्ता-
रिणी, शूलिनी, वृद्धदेवी, मेधा, राधा, कालिका आदि।

क्षिप्रमन्त्राका उत्पत्ति-विवरण भारदपञ्चरात्रमें इस प्रकार लिखा है—

“एकदा पार्वती देवी कानार्थं गतवत्यपि।

सदा वदत्यस्याहं मन्त्रादिभ्यः त्रये मुदा॥

तय प्राप्ता कामशान्तीयिता च काममयी।

भगवत् कृत्वा सा देवी कामशान्तिरुचरिणी॥

अथ काले कदाचिन्मु ताम्यां वृष्टं महेश्वरी।

देहि मर्त्यं क्षुपाताम्या माताम्यां परममयी।

अन ते च प्रदास्यामि कृपां मे प्रतीक्षन्।

क्षमाह्वतो पुनः वृष्टा देहि भयममयावयोः॥

प्रतीक्षन् प्रकृतां किंचित् कालं स्वराभि च।

क्षमात् परमपुनस्ते देहि भयममयावयोः॥

माता त्वं सर्वजगतां मातरं प्रार्थयेत्पुत्रदुः।

माता ददाति सर्वेषां भोगाच्छादनादिभ्यः॥

अतस्त्वं प्रार्थये भयं मधुर्यं कृणामयि।

इति श्रुत्वा महेश्वरी मयुर वचनं तपोः॥

वृद्धे गत्वा प्रदास्यामि इत्युक्ते वचनं तपोः।

कपटुस्ते पुनस्तु यि दाकिनी वर्णिनी परे॥

जया च जिजया ये तु आर्थां सुनृगिणीभिते।

देहि मर्त्यं जगन्मानसया तृप्ये क्षपामयि॥

तथा कृत्वा जगन्मातर्वरदे देवी वक्षितम्।

इति श्रुत्वा वचः कल्पं क्षपामयि क्षुभिरिमता॥

मधोभिः च चिच्छेदं वासनं स्वधिरसदा।

क्षिप्रमन्त्रं तत्पृथीं धामस्तत्र पयात च॥

कण्ठादिभिः पुनः रक्तं त्रिपारेण तपोधन।

बामदक्षिणभेदेन ये पारे च त्रिभिर्गते।

मन्त्रीषुये॥ संयोज्य मन्त्रधारा रक्षकान्ते।

एवं कृत्वा तु ता स्तत्र गत्वाः सर्वा यथागमम्॥

क्षिप्रं तस्या यतो मुखं क्षिप्रमस्ता ततः स्मृता।”

एक दिन पार्वती देवी महेश्वरीयोंके साथ मन्त्राकिनी-
में खान करने गई थी। खान करनेके बाद वह कामातुर
हो गई। उस समय जगदानन्दकारिणी देवी क्षपा हो
गई। पोछे किसी समय दो महेश्वरीयोंने महेश्वरीने
कहा, ‘हे महेश्वरी! हम लोगोंकी बहुत भूख लगी है,
अतः हमें कुछ खानेकी दाजिये।’ महेश्वरीने कहा था,
‘कुछ काल ठहर जाओ अपनेको दैतो हूँ।’ पोछे कुछ
समय बीत जाने पर दोनोंने फिर देवीके कहा, ‘चाप
नभारकी माता है, गिरि मातासे जो चाप पढायाके
लिए प्रार्थना करता है। माता अपने सभी बच्चोंकी खान
देती है। अतः हे कृपासमयि! चापसे हम लोग खाने-
की कुछ चाहता हूँ।’ यह सुन कर देवीने कहा, ‘वर
जा कर हम लोग भोजन करेंगे।’ दाकिनी, वर्णिनी,
जया, विजयाने फिरसे क्षुधातुर हो कर कहा था, ‘हे

क्रम क्रमसे प्रेतका शरीर वनता है और दशवें दिन पूरा हो जाता है, पहले पिण्डसे शिर, दूसरेसे पाँख, नाक, कान इत्यादि बनते हैं।

दशग्राम (स० स्त्री०) दशग्रामयुक्त परगना।

दशग्रामपति (स० पु०) दशग्राम ग्रामाणां पतिः, उत्तरपद द्विगुण०। दशग्रामके अध्यक्ष, वह जो राजाकी ओरसे दश ग्रामोंके अधिपति बनाया गया हो। जिसको शास्त्रसे दशग्राम शासित होते हैं, उसे दशग्रामपति कहते हैं। इसका विषय मनुस्मृतिसमें इस प्रकार लिखा है—राजा राज्यको सुरक्षाके लिए यथामाध्यन्दी, तीन, दश वा सौ ग्रामोंके मध्य एक दल सैन्य संस्थापन करे और एक एक अधिनायकके ऊपर उन ग्रामोंके विचारादिका भार नौप दे। राजा पहले पहले प्रत्येक ग्राममें एक एक अधिपति, छोटे क्रमशः उससे अधिक प्रतिष्ठा और योग्यताके मनुष्य देख कर दश ग्रामोंका अधिपति नियत करे। इसी प्रकार बीस, सत्स्र आदि तकके ग्रामोंके हाकिम नियुक्त कर सकते हैं। जब ग्राममें चोरी आदि किसी प्रकारका अन्याय कार्य उपस्थित हो जाये, तो ग्रामाधिपत्य उसका विचारादि करते हैं। यदि सम्यक् रूपसे वे कर न सकें, तो दशग्रामाधिपति उसका न्याय कर सकते हैं। यदि वे भी इसमें असमर्थ हों, तो इसी प्रकार उत्तरोत्तर अधिनायकोंको इसका विचार करना चाहिये। (पु ५४०) अभी जिस प्रकार एक एक जिला मजिस्ट्रेटसे शासित होता है, उसी प्रकार पहले भी ग्रामपति, दशग्रामपति आदिसे एक ग्राम वा दशग्राम शासित होते थे।

दशग्रामिक (स० त्रि०) दशग्रामा अधिकृतत्वेन सन्त्यस्य ठन्। १ दशग्रामाधिप, दशगाँवके मालिक। २ दशग्रामादिके अदूर देशादि।

दशग्रामी (स० पु०) दशग्रामा अधिकृतत्वेन सन्त्यस्य इति। दशग्रामका अधिपति, दशगाँवका मालिक।

दशग्रीव (स० पु०) दश शोवा अंश। १ रावण। २ अक्षरविशेष, एक राक्षसका नाम। ३ दमघोषका एक पुत्र, शिशुपालका भाई। ४ एकादश मन्वन्तरमें इन्द्रका शत्रु भेद, ग्यारहवें मन्वन्तरमें इन्द्रके एक शत्रुका नाम। इसका दूसरा नाम ह्य था। (गण्डपु० ६७ अ०)।

दशजटा (स० स्त्री०) दशमूल।

दशज्योतिस् (स० पु०) सुभाजका सहा सटका। इसके दश हजार पुत्र थे। (भारत आदि० १ अ०)

दशत् (स० स्त्री०) दश परिमाणस्य शक्तिः। दशवर्ग, दशकी संख्या।

दशतय (स० त्रि०) दश अवयवा यस्य, दशानां अवयवा वा संख्यायाः अवयवे तत्प०। १ दशसंख्या, दशका अंक। २ दश संख्यान्वित, जिसमें दशका अंक हो।

दशति (स० स्त्री०) दशावृत्ता दश निपातनात् साधुः। शत संख्या, भी।

दशदयी (स० त्रि०) दशावृत्ता दश परिमाणस्य छिनि। शतगुणित, सौ गुना।

दशदिक् (स० स्त्री०) पूर्वादि दिक समुहः। यथा—पूर्व, पश्चिम उत्तर, दक्षिण, अग्नि, नैऋत, वायु, ईशान, अधः और ऊर्ध्व।

दशदिक्पाल (स० पु०) दशदिशः पालयति, पाल-अच्। दश दिशाओंके अधोस्वर, ये सभ देवगण पूर्वादि क्रमसे दशों दिशाओंका पालन करते हैं—इन्द्र पूर्वदिशाके पालक, अग्नि अग्निर्कोणके, यम दक्षिणदिशाके, निर्ऋत नैऋत कोणके, वरुण पश्चिमदिशाके, मरुत् वायुर्कोणके, कुबेर उत्तरदिशा, ईश ईशान कोण, ब्रह्मा ऊर्ध्व दिशा और अनन्त अधःदिशाके पालक हैं। ये दश देवता दशों दिशाओंको रक्षा करते हैं। प्रत्येक पूजामें इन्द्रादि दशदिक्पालकी पूजा करनी पड़ती है।

दशहार (स० पु०) शरीरके दश छिद्र; यथा—२ कान, २ पाँख, २ नाक, १ मुख, १ शूद, १ लिङ्ग और १ ब्रह्माण्ड।

दशधा (स० अर्थ०) दशानां प्रकारः दश-धा (संज्ञायां विधाये वा। पा ३।३।४२) दश प्रकार, दश तरह।

दशन् (स० त्रि०) दन्त्य वाहु० कनिन्। १ संख्याविशेष, दश। २ दश संख्यायुक्त, जिसमें दश अंक हों।

दशन (स० स्त्री०) दश्यतेनेन शरीरं दन्त्य करणे ल्युट्, दश द्यति निदेशात् कचित् कित्यपि न लोपः। १ कवच। (पु०) २ शिखर। ३ दन्त, दाँत।

दशनच्छट (स० पु०) दशनान् दन्तान् क्वादयति आदि घञ् क्तः। पीछ, होठ।

दशनपद (स० स्त्री०) दशनस्य दशनवतस्य पदं। दशन-

कगभातः क्षणमपि । हम सोगोंकी खानेके लिए कुछ दोजिए जिससे सुधा निवृत्त हो ।' क्षणमयी देवोंने यह सुन कर बापों नखायके घपना करण खाट डाला । ऐसा करके उनका महतक बायें हाथ पर गिर पड़ा । कण्ठसे केहके तीन धाराएं निकलीं । बायें और दाहिने ओर की धाराको उन्हींकी दो सखियोंने सुंघमें जगा दिया और बीचकी धाराकी उन्हींने घपने सुंघमें रख लिया । इसी प्रकार मुण्डच्छिन्न हुआ था । उनका हृदयमस्ता नामपड़नेका यही एक कारण है ।

स्वतन्त्रतन्त्रनि लिखा,—

“छिन्नोत्पत्ति प्रवक्ष्यामि तारा सेव च कालिका ।

पुरा कृतयुगे सर्व कृताद्ये पर्वतोत्तमे ॥

महामाया मया सदैव महारतपरायणा ।

शुक्रोत्सारणकाले तु चण्डमूर्तिरभूत्तदा ॥

तदास्वदेहसम्भूते दशशो सम्भवभूवतुः ।

हाकिनी वर्णिनी नाम्ना सर्वान् ताभ्यां स्नाहन्विका ॥

पुष्पमहानदीकूलं जगाम चण्डमायिका ।

मय्याहे च क्षुपातं च चण्डिकां पृच्छतस्ततः ॥

महान् देहि तद्व्युत्पत्तिं विहास्य चण्डिका वृणा ।

विच्छेदं निज मूर्द्धनि कवचोपेति पावती ॥

निज मूर्तिं समाधाय वा पुरा परिकीर्तिता ।

त्रिवर्णां तान्मु दृष्ट्वाहं संहसा कोपमागतः ॥

अन्यः कृतमिदं मत्परा ततः शुभ्राव तथया ।

तदाभूत् क्रोधनो देवी मद्देशः कोपमैरवः ।

वीररात्रिदिने जाता दिनामन्तं परमा कला ।

सखीभ्यां सह देवेभि नवान् तस्यां प्रवण्डिका ॥”

हिंसाकी उत्पत्ति कहता हूँ,—यही कालिका और बहो तारा हृदयमस्ता है । पहली सत्ययुगमें सर्वत्रैलोक्यसाय पर्वत पर महामाया हमारी (मित्रके) साथ महारतपरायणा थी । शुक्रोत्सारणके समय महामायाने चण्डमूर्ति धारण की और उस समय उनकी देहसे दो शक्तियां निकली जिनके नाम हाकिनी और वर्णिनी थे । इन दोनोंमें सखीभाव था, चण्डिका उनकी साथ पुष्पमहानदीके किनारे गई थी । दोपहरके समय उन दोनोंने सुधार्य हो चण्डिकासे कहा था कि, ‘हमें मृत

लगी है । कुछ खानेकी दोजिए ।’ तब चण्डिकाने हंसते हुए अपनी महतक खाट डाला ।

मातङ्गोकी उत्पत्ति नारदपञ्चरात्रमें इस प्रकार लिखी है—

“कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नभिभूषिते ।

उपविष्टो महादेवी सम्मोरेकं प्रिया वती ॥

उवाच श्रीमन्मायेन स्वपतिं परमेश्वरि ।

देवमुवाच ।

त्वत् प्रसादाव्यवनाय न किञ्चिद्दुर्लभं मम ।

यत्तत्सर्वं सर्वदोषहीति सर्वेषां प्रियकारकः ॥

किमवहं गन्तुमिच्छामि मातापित्रोः शुभालये ।

ईश्वर उवाच ।

प्रियं मम तद्देवेशि ममापि गमनं शिवे ।

सन्देहः किंतु मे देवि गन्तासि ह्यनिमज्जिता ॥

इति श्रुत्वा वचः पत्युर्पादभित्त्याह हृदयम् ।

गतायां प्रसि तत्रैव ततो गन्तासि शङ्कर ॥

एतत्ते समयं भद्रे कृतवानस्महं शिवे ।

गतायां स्वमि गच्छामि तवानयनहेतुना ॥

पतस्मिन्न तरे मेना चकारोन्मुषवसुतमम् ।

कौक्षुमात्रेयमास यत्र देवः सदायिषः ॥

ततो दृष्ट्वा महादेवः कौषं तं धरणीगतं ।

वामेन पाणिनोपाय्य समाल्मिय गिरिः सुतं ॥

सुसुप्ते तस्य मूर्द्धनि नेत्राभ्यामिदं किञ्चिद् ।

सांकेतिवैशेषाणामास पूज्वा कुशलमप्ययं ॥

उवाच शृङ्गया वाचा किमप्यहिमागतः ।

कौश उवाच ।

यदि चेदस्मि कृपानाथ मयि दासे जगत्पते ।

हिमालयवृता गौरि तत्र नेष्टुं समुत्सहे ॥

शङ्कर उवाच ।

श्रीघ्नं गच्छ वरारोहे कौषेन सह पावती ।

पुनः प्रणम्य सा देवी देवदेवं महेश्वरं ॥

कच्छेण रथमासन्नं मैनाकिना स्मृतं ययौ ।

सृणात् पितृवहं प्राप्य उत्तीर्णं च पापतटां ॥

जगाम वायुवेगेन कौषेन सह एवरा ।

यत्रास्ते हिमवान् तत्रा वना च वरगणिनां ॥

एवं कुषोपिता तत्र पावती पितृमन्दिरे ।

चितं स्थान, यं ह जगह जगहं दातोके काटनेसे जलम हो गया हो।

दशमवास (सं० स्त्री०) दशनामी वास इव आष्ठाटक-त्वात्। शीठ, हाँठ।

दशमशोभ (सं० पुं०) दशम इव बीजमस्य। दाहिन्ध्व वृक्ष, धनार।

दशनाम् (सं० पुं०) दशमस्य प्रथमः इत्यतः। दशमज्योतिः, दातोकी जीभा।

दशनाह (सं० पुं०) दशमस्य दशमचतस्रः पक्षः। दशम-चत, दातोके काटा हुआ जलम या चित्र।

दशनाद्या (सं० स्त्री०) दशमः आद्यो यस्याः, एतत् सेवनेन हि दशमस्य दाह्यात् भस्म तत्त्वात्। बुद्धिका, लीनिया साग।

दशनाम (सं० पुं०) सन्ध्यासिधौ के दश भेद, यथा—तोम, पान्धम, वन, चरख, गिरि, पर्वत, सागर, सरस्वती, भारती और पुरो।

दशनामो—सन्ध्यासिधौ का एक वर्ग। यहै तत्वा प्रचारक सुप्रसिद्ध गहराचार्य के चार प्रधान शिष्य थे—प्रज्ञपाद, इक्ष्मासक, मण्डन और तोटक। इन चारोंके भी फिर चलग चलग शिष्य थे। प्रज्ञपादके दो शिष्य थे—तीर्थ और धायम, इक्ष्मासकके दो शिष्य—वन और चरख, मण्डन-के तीन शिष्य—गिरि, पर्वत और सागर, इसी प्रकार तोटकके भी तीन शिष्य थे—चरखतो, भारती और पुरो। इन्हीं दश शिष्योंके नामसे दशनामो सन्ध्यालोको उत्पत्ति हुई है।

जो तत्त्वमसि प्रभृति लक्षणविशिष्ट है और त्रिवेणी-सङ्गमतीर्थमें तत्त्वार्थ भावसे स्नान करते हैं। वे तीर्थ कहलाते हैं। जो धायम पक्ष करके समय हैं और क्षामाभिवर्जित हो फर जन्म तथा मरणसे निरुक्त होते हैं, उनका नाम धायम है। जो कामना परिशुद्ध हो कर रमणीय निर्भरुह पार्थक्य वनमें वास करते हैं, वे वन कहलाते हैं। जो चरख-व्रत ग्रहण करके मारा संसार छोड़ देते और पान्धदायक वनमें बिरकास तब वास करते हैं, उन्हें चरख कहते हैं। जो इमेगा पहाड़ पर रहते, गोताभ्यासमें कुशल, पवित्रमिनि बुद्धि और गम्भीर हैं, वे गिरि कहलाते हैं। जो पहाड़के नाचे

वास करते हैं, ध्यान और धारण करनेमें समर्थ हैं तथा सारस्वत ब्रह्मकी जानते हैं, उनका नाम पर्वत पहाड़ है। जो सागरके सद्य गम्भीर भावसे रहते हैं, फल-मूलादि आहार करते हैं और आत्ममर्णादका उत्तम नर्तन नहीं करते, उन्हें सागर कहते हैं। जो सर्वदा स्वरसान-विशिष्ट, स्वरपादो, कवीश्वर और संसार सागरमें मा-ज्ञानविशिष्ट हैं, वे भस्मनो कहलाते हैं। जो विद्या-भारसे परिपूर्ण हो कर सभी भारोंका त्याग करते हैं और दुःख-भार बहा है, उन्हें जानते तक भी नहीं, उनका नाम भारती है। जो ज्ञानतत्त्वमें पूर्ण हैं, पूर्णतत्त्वपदमें अवस्थित हैं और सर्वदा परब्रह्ममें निरत रहते हैं, वे हो पुरो हैं।

गहराचार्यने चार मठ स्थापित किये थे जिनमें इन दश शिष्योंकी शिष्या-परम्परा चली जाती है। पुरो, भारती और सरस्वतीकी शिष्यापरम्परा गुरुकुलो मठके चला गत है। तीर्थ और धायम शारदामठके चलागत, वन और चरख गोवर्धनमठके चलागत तथा गिरि, पर्वत और सागर लोयो मठके चलागत हैं। प्रत्येक दशनामी सन्ध्याधी इन्हीं चार मठोंमें किसी न किसीके चला-गत होता है।

प्रत्येक मठके प्रथम, द्वयक, त्रयचक्षु हैं जो महन्त कहलाते हैं। प्रत्येक महन्त अपने मठ और तत्संलग्न भू-सम्पत्तिके अधिकारी हैं।

दशनामियोंमें चरख-सम्प्रदायके सन्ध्याको प्रायः नहींके बराबर हैं। सागर और पर्वत सम्प्रदाय भी बहुत हैं।

यद्यपि दशनामो ब्रह्म या निर्गुण संपादक प्रसिद्ध हैं पर इनमेंसे बहुतरे मेधमन्त्रकी दोषा सेते हैं। दशनामी सन्ध्यासिधौमेंसे कितने तो ऐसे हैं जो स्वधर्मोचित नियम-का प्रतिपादन नहीं करते। इन लोगोंके कार्य-कलाप देखनेसे भालूम पड़ता है कि तोर्थ-अवग्रह और गान्ध्या मेवमके सिवा इनके और कोई कार्य नहीं है। वेदान्तका तत्त्वानुगीसन हो इनका प्रधान धर्म है, किन्तु ये भीय तन्त्र और योगशास्त्रका अनुगीसन करके तद-मुख्य कार्य करते हैं। इनमेंसे कुछ तो भिद्योपशोभी हैं और कुछ बादिन्यादि करके अपना मुजारा करते हैं।

उषाम कतिपिगमासन् तेषां हर्षेणन्दं च ॥
एतस्मिन्नन्तरे शम्भुः प्रोक्षमादाय देवराट् ॥

रा'पक्षरात्य वेगेन अगाम हिमबद्धम् ॥

विकृतुषामः श'वानां छेदनं विपुलान्नकः ॥

नारीभ्याः प्रददौ शंस पायैले न ददाति च ॥

पायैती प्रणयप्रियौ कृता तस्य च सम्पत्तिः ॥

दास्यामि ते महाभागो यास्या'खं महेच्छति ॥

मया यथावितं मदे-दातव्यं मूल्यमेव तत् ॥

बोद्धुमरथा अगदानौ परिषायं सुनिमलम् ॥

रिच्य' मनोहरं श'खं चारुण्यं पुत्रोत्तमं ॥

श'खकारुणाप्राप्तं मूल्यं देहि शनिमते ॥

देवमुवाच ॥

पिता मे हिमवानग्निर्भू'र्त्सां शम्भुः कृपांमयः ॥

पुत्रः मे गर्जनापाशा आता मैनाक एव च ॥

भ्रातृपुत्रः स्वयं कौक्षी माता च मम मेनका ॥

यत् पायंयति भद्रन्ते तेषांस्यामि न संशयः ॥

शङ्ककार उवाच ॥

पीडितः कामवागेन त्वया साद्रीं बरानने ॥

शीघ्रं वरंय मा भद्रे नाभ्यद पश्य' भूमेस्वित ॥

इति श्रुत्वा वचनतस्य शङ्ककारस्य यावती ॥

सामेव' वचनं दत्तं कः शक्नोति जगन्त्रये ॥

गदिद्वं दृष्ट्वायोर्द्वौ शम्भु' चक्रे मनस्ततः ॥

ततो ध्यात्वा धमास्थाय धर्ममाकम्ब पायैती ॥

ददौ चेष्टितं शम्भोः प्रहस्य परमेस्वरी ॥

ववाच शङ्ककारं तं स्मितपूर्वात्मना ततः ॥

अधुना नृपञ्च भद्रन्ते पूरयामि मनोरथम् ॥

विनातरे महापाशं विध्वंस्य सा जगदिना ॥

द्विपक्षवेद्यमस्यास्य अस्मिन्निः परिवारिता ॥

अगाम यत् देवेभ्यः सम्पत्तां चक्रे महेक्षरः ॥

कृत्वागीतः कामवेदीः पानगोत्रमविस्तारैः ॥

उषास तत्र रमणापेतेन परमेस्वरी ॥

एतस्मिन्नन्तरे शम्भुः वज्रग्या कर्तुं वषास्य चः ॥

मानसाय्य सारस्तीरे गम्या अग्न्या महेक्षरः ॥

इदं तां सखीमिष कामवेगेरग्न्यां पराम् ॥

रक्षदमां रक्षरक्षपीयानां सुनिर्मलाम् ॥

तन्वी विद्यालनदनां पीतोपवपयस्त्वरी ॥

आगत्य समिपौ तस्याः प्राह देवः क्षपोमयः ॥

इन्द्र उवाच ॥

का त्वं सुप्तु बरारोहे क्षिप्रंमिहमागता ॥

मनोरथं ते दास्यामि सत्यं धार्य' कृपा ७७ ॥

वाग्दाल्मुवाच ॥

वाग्दाल्मुयसि धुरभेष्ट तपोर्यमिहमागता ॥

देवत्वमसिद्धाय' मे मा विध्वं' कुत्र एषित ॥

इन्द्र उवाच ॥

शिरोरुद्रं देव देवेति तत्पवित्रकदायकः ॥

अधुना पार्वतीं दृष्ट्वा करिष्ये मात्र संशयः ॥

तदेव काममागेन तदकल्याणि भनस्व मां ॥

कथं विलम्बते देवि देवत्व' यदि वांछति ॥

वाग्दाल्मुवाच ॥

तपोर्यमागता अह देवदेव जगदयते ॥

देवतात्त्वमप्राप्तं' व मा विध्वं' कुत्र परैराट् ॥

इन्द्र उवाच ॥

भविष्यति न ते विध्वं' कायकवेगेन किं तव ॥

अधुना अह देवीत्वं भद्राय' विकृतं नहि ॥

इत्युक्त्वा इत्यमादाय इत्येन परमेस्वरः ॥

सपत्तिरे महादेव स्तस्या आस्तनमुत्तमं ॥

तया साद्रीं महादेव समानिकष्य व तां शिवः ॥

पुत्रुभ्ये वदनं तस्या मैथुनापोपकमे ॥

रममाय त्तया साद्रीं कावेव शिवता हरः ॥

वग्दाल्मुवेद्यमस्य सारः प्राह त्रिया शरी ॥

साद्रीं त्वा शलितुं शक्या केनोपायेन कुत्र विदुः ॥

तं हि देव श्रुत्वेव देवदेव जगत्पते ॥

एवं वानिषाकारेण तपोरुद्र रममाणयो ॥

अमवय तपोः प्रीतिरुद्रता मुनिवत्तम ॥

इत्यन्ते चोपनिषौ तु ततः प्राह परे शरी ॥

अयं कुत्र जगमाय देहि मे बांछितं वरं ॥

इन्द्र उवाच ॥

"यदुमाचरन्दात्मवेगेन मायेवं शम्भुमागता ॥

तत्प्राप्त्युत्तिरिव' मदे मसिष्यति न संशयः ॥

सन्निधयवाग्दाल्मुयस्या अर्षेणोपि मेतिता ॥

इतायां तव पुत्र्यां पुत्रान्ते परमेस्वर ॥

वाग्दाल्मुयसि शिवे अगदवा येव पायैति ॥

दशनामी सन्ध्यामिथी मेंसे घनेत्र सुपण्डित, अन्यकार और अध्ववसायशील पर्याप्तक देखे जाते हैं। शङ्कराचार्य के गिरा आनन्दगिरिने उनके जोवनोविषयक एक प्रबन्ध लिखा है और उनके वनाये हुए सुवभाषा आदि-को टीका भी रची है। सुप्रसिद्ध माधवाचार्य ने सन्ध्याम-धर्म ग्रहण करनेको वाट वेदभाष्य लिखा और तभीसे वे विद्यारण्यस्वामी नामसे प्रसिद्ध हुए। हम सम्प्रदायके अनेक सन्ध्यासी आज भी सेतुवन्ध, वदरिकायम, केदार-नाथ, कैलास पर्वत और मानस सरोवर, यहां तक कि वैतुचिह्नान आदि स्थानोंमें भ्रमण किया करते हैं। पुराणपुरी तिब्बत और कपियासे हो आये थे।

ये लोग कीर्तन पसन्दते हैं। मरने पर श्रवदाह नहीं होता शव या तो नदोमें फेंक दिया जाता या जमीनमें गाड़ा जाता है। ये लोग भिन्न भिन्न पन्था और इत्तिका अवलम्बन करके दण्डी, परमहंस आदि नाम धारण करते हैं। संन्यासी और दण्डी देखी।

दशनोच्छिष्ट (सं० क्लो०) १ निष्ठास, नाक या—सुं हके बाहर निकलनेवाला श्वास। २ अधर चुम्बन, छोटीका चुम्बन।

दशप (सं० पु०) दश ग्रामान् पाति रक्षति पात्रक। दश ग्रामरक्षक, राजनिष्ठ पुरुषभेद। जिस राजपुरुषके ऊपर दस ग्रामोंका रक्षणवैलम्बका भार सौंपा गया हो, उसे दशप वा दशग्रामपति कहते हैं। राजा किसीकी एक ग्रामका, किसीकी दश, बीस वा सौ ग्रामोंका आधि-पत्य देते हैं।

दशपञ्चतपस् (सं० पु०) दशसु इन्द्रियेषु पञ्चसु यज्ञेषु तपो यस्य। इन्द्रियजयपुर्णक पञ्चान्वितपञ्चारी, जो पञ्च ज्ञानेन्द्रिय और पञ्च कर्मेन्द्रियकी जीत कर पञ्चान्वि-साध्य तप करते हैं उन्हें दशपञ्चतपस् कहते हैं।

दशपक्षा—चट्ठीमेंके करद महालोंमेंसे एक छोटा राज्य। यह अक्षा० २०°११' से २०°५५' उत्त० और देशा० ८४°२८' से ८५°०' पूर्वमें अवस्थित है। क्षेत्रफल ५६८ वर्गमील है। इसके उत्तरमें अङ्गुल राज्य, नरसिंहपुर राज्य और महानदी, दक्षिणमें मन्दाज प्रदेशके अन्तर्गत गुप्तसर राज्य, पूर्वमें खड्गवाड़ा और नगगढ़ राज्य तथा पश्चिममें बोंद राज्य है। यह छोटा राज्य पर्वतमय है। इसके

प्रधान पर्वतकी नाम गोपाल टेक है जिसको ऊँचारे २५०५ फुट है। प्रधान शहरका नाम दशपक्षा है।

लोकसंख्या प्रायः ५१८८७ है। हिन्दू और भस्मा निवासियोंमें कथ्य जातिकी संख्या ही अधिक है। राज्य की आय लगभग ७००००) रु०की है जिसमेंसे ६६१) रु० वृत्तिशमरकारको देने पड़ते हैं। यह राज्य दो भागोंमें विभक्त है। महानदीके दक्षिणखण्डको दशपक्षा और उत्तरखण्डको युद्ध वा जोरपक्षा कहते हैं। शेष अंश जोत कर दशपक्षा राज्यके अन्तर्भूत किया गया है। यह अंश पहले अङ्गुल राज्यके अन्तर्गत था।

यहकि राजवंश सूर्यवंशीय क्षत्रिय हैं। इनकी उपाधि भञ्ज और राजचिह्न मयूर है। बोंदराज्यके एक पुत्रने पांच सौ वर्ष पहले यह राज्य स्थापन किया। मयूरभञ्जके राजाको प्रथम १९ वंशके आदिपुरुष मयूरडिम्बसे उत्पन्न हुए हैं। वर्त्तमान कालमें राजाके ५२१ सैन्य और ३१८ पुलिस प्रहरी हैं। इसमें कुल ४८५ ग्राम लगते हैं जिसमेंसे कुलवृत्त प्रधान है। राज्यमें १ दातव्य भोवधालय, १ मिडिल-स्कूल, २ अवर माइसरो तथा १० लोअर माइसरी स्कूल हैं।

दशपारमिताधर (सं० पु०) दश पारमिता धरो येन। बुद्ध।

दशपिण्ड (सं० पु०) अष्टयुके बाद दिये जानेके दश पिण्ड।

दशपुर (सं० क्लो०) दश दिग्ः पिपत्तीति पृ-क। १ कैवर्त्ती मुस्तक, कैवटी मोथा। दश पुरो यत्न। २ दिग्विशेष, मानविका एक प्राचीन विभाग। इसकी अन्तर्गत दश नगर थे। मेघवृत्तमें इसका नाम आया है। इसका वर्त्तमान नाम मन्दशोर है।

दशपुरुष (सं० पु०) दश गुणितः पुरुषः। खज्रनकावधि पुरुष दशक, अपनसे ले कर दश पीढ़ी।

दशपूर (सं० क्लो०) दश दिग्ः प्ररयति पूर-घण्। नगरविशेष। दशपूर देखे।

दशपूर्वध (सं० पु०) दशपूर्वः रधा यस्य। दशरथ।

दशपेय (सं० पु०) दशभिः पुरुषैश्च समं पेयं यत्न।

यज्ञभेद, एक प्रकारका यज्ञ।

दशवल (सं० पु०) दशवलानि यस्य। बुद्ध। दान;

मातङ्गी नाम भूतिरस्ते अविद्यमानं संशयः ॥

सिद्धविद्या महाविद्या यथा त्रिपुरवन्दरी ।

त्रिपुरभैरवी देवी यथा च भुवनेश्वरी ॥

काही ताया महाविद्या यथा ते उत्तमं तन् ॥

भैरवी द्विपमला च तथा धूमावतीतन् ॥

बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी ते तदुत्तिष्ठ ॥

जाना रम्येयं विभूयितं रमणीयं कैलास-गिरि पर
महादेवो शम्भु की मोदने बैठे हुए हैं । रबी समय
छहने बहुत प्रेमभावसे शिवजीसे कहा,—‘हे प्रभो !
पाप सब भूमिलापाओंके देनेवाले हैं । पापकी क्षमासे
हमें कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है । पितृघर जानिकी
पान में ही एकान्त इच्छा है ।’ यह सुन कर महादेव
को बोले,—‘इसमें मेरी अनिच्छा नहीं है और मैं भी
वहाँ जाना चाहता हूँ, किन्तु बिना बुलाये जाना
अचित नहीं है ।’ इस पर पार्वतीने कहा, ‘मेरे जानिके
बाद आप जाइयेगा ।’ फिर महादेवजी बोले, ‘मैं
प्रतिज्ञा करता हूँ, कि तुम्हारे जानिके कुछ समय बाद ही
मैं तुम्हें सानि जाऊंगा ।’

इस समय मैंने काने महोत्सव किया था । इस उप-
वासमें पार्वतीकी सानिके लिये उसने क्रोधको भेजा ।
क्रोधने था कर शिवजीसे निवेदन किया । महादेवने
उसको पक्ष स्वातिर को । क्रोधने महादेवसे कहा
‘जगत्पते ! यदि मेरे प्रति क्षमा करे, तो गौरीको पित्रा-
जय ले चले ।’ यह सुनकर महादेवजीने पार्वतीकी
क्रोधके साथ बहुत जद जानि कहा । पार्वती महा-
देवकी प्रणाम कर रथ पर बैठी और मैंनाकी साथ,
जहाँ राजा हिमवान् और मैंनाकथे तथा जहाँ पार्वती
सुखसे पाली गई थी, उस पितृभवनमें पहुँची । इन्ही
समय देवपति शम्भु, द्वायमें शंख लिये शंखकारका
भेष बना हिमालयके घरमें पधारि और शंख बधनेका
बहाना कर छियाँकी शंख दिखाने लगे । इन्हीने सभीकी
शंख दिया, किन्तु पार्वतीकी नहीं । पार्वतीके शंख
मांगने पर शंखकारने कहा, ‘हे महेश्वर ! मैं इसका
को दाम मांगूंगा वह यदि दो, तो मैं तुम्हें एक
बहुिया शंख दूँ । पार्वतीके शंखकार करने पर शंख-
कारने उन्हें शंख पहना दिया । दाम मांगने पर

पार्वतीने कहा, ‘मेरे पिता पवतये छ हिमयान् हैं, क्षपा-
सागर महादेव मेरे स्वामी हैं, गणपति भादि पुत्र हैं,
मैंनाक भाई हैं, क्रोध भतीजा है, मैंनाका माता है,
अतएव आप जो चाहें सो मैं देनेको तैयार हूँ । यह
सुन कर शंखकारने कहा,—‘हे बरानने ! मैं पत्यन्त
कामपोहित हुआ हूँ, अतः मेरी इच्छा शीघ्र पूरा करो,
इसके सिवा मैं और कुछ भी नहीं चाहता ।’ यह सुन
कर पार्वती बहुत क्रोधांविन हो गयी, ‘विजगत्में मुझे
इस प्रकार कठोर वचन कहनेको किसको शक्ति है ?
यह सोच कर पार्वतीने मन-सोभन उन्हें आप देने
चाहा । पीछे ध्यान करनेसे उन्हें मालूम पड़ा कि शिव-
जीके सिवा यह दूसरा कोई नहीं है ।

बाद महामायाने कुछ रुक कर कहा, ‘प्रभो जावो,
कुछ दिन बाद तुम्हारा मनोरथ पूरा करूँगा ।’ महादेव-
जी तो चले गये । इधर पार्वती किरातका भेष धारण
कर सखियोंके साथ, जहाँ देवपति महादेव सन्ध्या कर
रहे थे, वहाँ नृत्य गात आदि कामसे शिवभूषिता हो
पहुँची । इस समय शिवजी सन्ध्या करनेकी इच्छासे
मानमसरोवरमें गये थे । वहाँ वे कामसे शोचला,
रत्नवर्णा, रत्नवस्त्रपरिधाना, पौनोक्तपयोधरा, सखीपरि-
हृता गौरीको देख, उनके पास गये और बोले, ‘हे शम्भु,
तुम कौन हो ? किस लिये यहाँ आई हो ? तुम्हारा
मनोरथ पूरा करूँगा, सुभ्र पर क्षमा करो ।’ महादेवके
इस प्रकार पूछने पर उस स्त्रीने कहा, ‘मैं चाण्डाल हूँ,
तपस्याके लिये यहाँ आई हूँ, देवल नाम करना ही
मेरी अभिलाषा है । मेरे तपमें विघ्न न डालें, यह आप-
से निवेदन है ।’ इस पर महादेवजीने कहा, ‘मैं देवता-
शिव हूँ और मैं ही तपस्वियोंकी फल प्रदान किया करता
हूँ । प्रभो मैं तुम्हें पार्वतीके समान मानूँगा इसमें
सन्देह नहीं । हे कल्याणि ! प्रभो तुम कामयगसे मेरी
सेवा करो । यदि देवल चाहते हो, तो विलम्ब क्यों
करते ? इस पर चाण्डालने कहा, ‘हे देवदेव जगत्-
पते ! मैं तपस्याके लिए यहाँ आई हूँ, देवल प्राप्त होगा,
इसमें आप विघ्न न डालें ।’ महादेवने कहा, ‘तुम्हारी
तपस्यामें विघ्न न होगा और शरारमें लट देनेका ही
क्या प्रयोजन ! प्रभो तुरन्त देवलकी जावोगी, मेरा
वचन कभी निष्फल होनेकी नहीं ।’ इतना कह कर

शोभ, लसा, बौध, ध्याने, प्रज्ञा, नल, उपाय, प्रविधि
घोर ज्ञान बुद्धि ये दश बल थे, इसीसे इनका नाम
दशबल दया है।

दशनाडु (सं० स्त्री०) दश वाहवोऽस्याः । १ दशभुजा,
दुर्गा । (त्रि०) २ दशवाहुयुक्त, जिसके दश भुजाएँ
हैं।

दशभुजा (सं० स्त्री०) दश भुजा वाहवो यस्याः । दुर्गा ।
वेतावुगमें स्थायभुव मन्वन्तरको देवताघोषी मलार्द्ध
लिए महाभाया दशभुजारूपमें प्रादुर्भूत हुई थीं घोर
उन्होंने स्वयं देवीका नाश किया था।

दशभूमिग (सं० पु०) दशभू भूमिषु दानादिवसेषु गच्छतीति
गमः । बुद्धदेव ।

दशभूमोग (सं० पु०) दशभू भूमिषु दानादिषु ईष्टे
प्रभवति ईशः । बुद्ध ।

दशम (सं० त्रि०) दशार्था पूरणः पूर्ये षट्, ततो नाना-
त्वान्मट् । दश सख्याका पूरण, दशवा ।

दशमदया (सं० स्त्री०) साहित्यके इस निरूपणमें वियोगी-
की एक दया । इसमें बह प्राय कोड़ होता है।

दशमभाव (सं० पु०) जलसन्तर्गमविशेष, तन्वादि बारह
भावोंमेंसे दशवा भाव पर्याप्त कुण्डलीके सम्मले दशवा
घर । जलसे से कर व्यय पर्यन्त बारह राशियोंकी तनु
प्रभृति संज्ञा निर्दिष्ट है । इनमेंसे दशवा घरमें मान,
पादा घोर कर्मविषयक शुभाशुभका विचार किया जाता
है । इस घरमें यदि शुभपक्षादि हों, तो शुभफल घोर
पक्षम पक्ष हों, तो अशुभफल मिलता है । तनु प्रभृति
भावकी दृष्ट गणनाके बिना फलाफल प्रायः ठीक नहीं
होता है । द्वादशमास देखा ।

दशमलव (हिं० पु०) भिन्नका एकभेद । इसके घरमें
दश या उसका कोई घात होता है ।

दश महाविद्या (सं० स्त्री०) शास्त्रीको उपास्य दश इष्ट-
देवमूर्तियाँ ।

चामुण्डात्मने मतमे—

‘काली तारा महाविद्या कोङ्की भुवनेश्वरी ।

भैरवी छिन्नवरदा च विद्या पूज्यती तथा ॥

वगमा सिद्धिदा च मार्गणी कमलारिषका ।

एना दशमहाविद्याः सिद्धिदाया मकीर्तिदा ॥”

Vol. X. 68

काली, तारा, कोङ्की, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्न-
वरदा, धुभावती, वगमा, मातङ्गी घोर कलसा यह दश-
महाविद्या सिद्धविद्या नामसे प्रसिद्ध हैं ।

इन दशमहाविद्याकी उत्पत्तिमें मतभेद है । कुछ
लोग यों कहते हैं,—मतोंने जब दशयज्ञमें जाना चाहा
तब महादेवने निषेध किया । इस पर भगवतीने पहले
कान्छी मूर्ति दिखा कर शिवको डराया । भोमानाथ
भयभीत हो कर भागनेको उद्यत हुए, शिबु महाभायाने
दशों घोर दश मूर्तियोंमें पाविर्भूत हो कर उनका
रास्ता रोक दिया । जिन दश मूर्तियोंमें महाभाया
पाविर्भूत हुई थीं, वही दश महाविद्या हैं । महा-
भागवतपुराणमें इसका उल्लेख यों है—

सत्पुत्राय ।

सहस्रं बह देवेश तथापि विदुःश्रुते ।

शक्तिर्यामि महायज्ञं इष्टुमिच्छुरहं प्रभो ॥

अयि तत्र गतायां स सम्मानं कुरुते यदि ।

तदोपस्था पितरं दुर्गं दापयिष्यति काङ्क्षते ॥

ममामे यदि ते निग्दा करोसति विदुषीः ।

तदा तदय महायज्ञं नाशयामि न संशयः ॥

शिव उवाच ।

न तत्र गमनं युक्तं कदाचिदपि ते घति ।

यिनापमानं सम्मानं तत्र तेन अविशति ॥

अभिन्दनमसंशयते करिष्यति पितु तव ।

प्राणान् दास्यति तच्छ्रुत्वा तदय किं तं करिष्यति ॥

सत्पुत्राय ।

शास्त्रायेव महादेव कर्तुं मर्यादितुमिच्छते ।

स्वमाहापय वा नो वा सत्यं सत्यं वक्षामि ते ॥

शिव उवाच ।

महायज्ञमुत्कृष्य पुनः पुनः किं

प्रवीक्ष्य शत्रुं विदुःश्रुते च ।

प्रवीक्ष्य तत्र भिन्नस्ति ते घति

बुद्धिः कुतः तद वचयेत्तदुत्तरम् ॥

असम्मानं सच देवां निघटे न दुःशासनान् ।

तद्वत् तत्र शत्रुति वज्र सम्मानभावनम् ॥

माग्यैः कदाचिन्म गच्छेत्तदुत्तरं यदि सति ।

अन्तराव न पूजा न चा पूजेति श्रव्यते ॥

उन्होंने चाण्डालोंका हाथ पकड़ा और उसे उत्तम भाषण पर विनोद। महादेव उसमें माय चालिङ्गनादि करके मोड़ा करनेके लिए उतार डो गए और कुछ काल तक मोड़ा करके चाण्डालके हाथों में प्रस्तुत हुए। पोछे मतौने कहा, 'आपकी मैं किसी प्रकार कष्ट नहीं सकतो, आप देवदेव जगत्पति हैं।' इस प्रकार उन दोनोंमें गहरी प्रीति हो गई। इसके पनकार सतीने कहा था, 'हे जगन्नाथ ! जप कीजिये और हमें अभिलषित कर दीजिये।' यह सुन कर महादेवने कहा, 'मेरा रूप चाण्डाल सा हो गया है; अतः तुम भी चाण्डाली होगी, इसमें सन्देह नहीं।' समो शास्त्रोंमें 'तुम गोविता उच्छिष्ट-चाण्डालिनो नामसे प्रसिद्ध होगी। हे देवि ! पूजा करनेके बाद जब तक तुम्हारी पूजा न की जायगी, तब तक पूजा मिट न होगी।' तुम्हारी इस भूतिका नाम सातोंगी रहेगा। जिस प्रकार सिंहविद्या, महाविद्या, त्रिपुरारवो भुवनेश्वरी, काली, तारा, तुम्हारी तनु है उसी प्रकार भैरवी, द्विजमस्ता, धूम्रवती, वज्रना आदि सिंहविद्या भी तुम्हारी तनु होगी।

किर स्तन्यतन्त्रके मतसे—

"भयोच्छिष्टचाण्डालिनी वक्ष्ये श्रुतं सावधानतः ।
नारदः पृष्ठवान् विष्णुं गीतज्ञाने बद्ध प्रभो ॥
तमुवाच हरिः पूर्वं गतोऽहं बहुदं प्रति ।
तत्र दृष्टं त्रिभं शान्तं सारीवगणकुलम् ॥
अनेकसंस्तुतं विविधासाधनैस्तनुम् ।
सामरस्यं तदा भातमुच्छिष्टं भक्तिं मुदा ॥
अनेकपुनःपुनः प्राप्नुस्वैषा कुमादिभिः ।
उच्छिष्टं देहि देहिती वार्यती बहुदेव ॥
समाभ्यां दत्तमुच्छिष्टं प्रसादं प्रीतिपूर्वकम् ।
शिवायै लोचनं तदा कथ्ये त्वां प्रमनितं मे ॥
अप्रीतिमिहारेणं विच्छिन्तितं च मनोरथाः ।
तदा प्रभुतिं चोच्छिष्टमातङ्गीति निषण्णते ॥"

उच्छिष्टचाण्डालिनोका विषय कहता है, 'आज दे कर सुनो। एक समय नारदने यह विषय विष्णुसे पूजा। इसके उत्तरमें विष्णुने कहा, 'एक दिन जब मैं शिव-दर्शन करने गया था, तब मैंने कहीं शिवको शान्त तथा भारीचों और उच्छिष्ट आदिसे घिरा देखा।' उच्छिष्ट दो,

उच्छिष्ट दो, ऐसा कह कर पावें तो महादेवके माय प्रीतिपूर्वक उच्छिष्ट प्रसाद खाने लगीं। इस पर उन्हें दोनों शिव-भक्तियोंने कहा था, 'जो तुम्हारी स्तुति करेगा, जपमोहादि दाग उल्लोके सब मनोरथ सिद्ध होंगे।' तभीसे पावें तोका उच्छिष्ट मातङ्गी नाम पड़ा है।

उक्त विवरणके बाद अन्तर्धर्म दूसरी जगह लिखा है—

"अथ सातङ्गिनीं वक्ष्ये कूर्मभूतभयं करी ।

पुरा कदम्बविपिने नानादृश्यसमाकृते ॥

वक्ष्यार्थं सर्वसुखानां मतं मे नाम्नो मुनिः ।

शतवर्षद्विजायि गतोऽतप्यतः सन्ततम् ॥

तत्र तेजः समुत्पन्नं सुन्दरी नेत्रतः श्रुतिः ।

तेजोराशिमुत्पन्नं द्रव्यं श्रीकालिकाशिवम् ॥

इगमकं कर्मसाधाय राजमातङ्गिनी भवेत् ।"

कूर्मभूतभयद्वरी सातङ्गिनीका विषय कहा जाता है। पहले नामा प्रकारके हस्तोंमें परिपूर्ण कदम्बवनमें समो भूतोंकी वग करनेके लिए मतङ्ग नामक मुनिने हजार वर्ष तक तपस्या की थी। वहाँ पर सुन्दरीके नेत्रसे तेज निकल पड़ा था। वहाँ तेजोराशि पहले श्रीकालिका का धर्मिका पोछे ग्राममय रूप ध्वनित्यन कर राजमातङ्गिनी नामसे प्रसिद्ध हुई है।

धूम्रवतीको उत्पत्तिके विषयमें भी इसी प्रकार मतङ्ग कह है नारदपञ्चरात्रके मतसे—

"एकदा ब्रह्ममन्त्रं कैलाशविधरे हरः ।

अहस्ता गिरिजा तत्र पश्यत्तु सुप्रसन्नजम् ॥

सुप्रसन्ना लोचनानां देहि मोक्षं यमोक्तिम् ।

इति उवाच ।

सर्वं प्रतीक्षा महेते दारवाणि भोजनं मतः ।

इत्युक्त्वा विररांशान् देव देव इति वचः ॥

देव्युवाच ।

देहि भस्त्रं महादेव सुविचारितं वगसते ।

विच्छिद्यं न शक्नोमि विदित्वास्मि महेश्वर ।

इति श्रुत्वा त्रिधावाक्यं पुनः प्राह कृपाविधिः ॥

सर्वं प्रतीक्षा दास्यमिह सत्तुं वादि बद्धिम् ॥

पुनः प्रतीक्षा वा देवी पुनः प्रादत्तवदं वचः ॥

देहि भस्त्रं अग्राध न शक्नोमि विच्छिद्यम् ।

इत्युक्त्वा त्रिधावाक्यं पुनः विचित्रं वा तदा ।

सर्वेन तस्या देहस्य सुप्रसन्नो ब्रह्मवचः ॥

मन्दिनन्दनश्रुतौ मेने श्रीतिरते जायते सति ।
 मन्दिदृक्पृष्ठे कस्मादवयवा गन्तुमिच्छति ॥
 सस्युवाच ।
 तन्मिन्दनश्रुतौ शम्भो न श्रीति जायते मम ।
 तच्छ्रोत्रमिच्छन्तौ वापि तत्र गन्तुं समुत्सहे ॥
 यदैव त्वां परित्यज्य सर्वानाहुं देवतान् ।
 समारभ्यमहायज्ञमस्मान् तदैव हि ॥
 जातं तव त्वमेतत् न समालोक्ये प्रभो ।
 यद्येवं स महादह संशयति मत् पिता ॥
 त्वामनादृत्य दर्पेण तदा ते कापि नो जनः ।
 आहूतिं भद्रयोपेतं सम्प्रदास्यति भूतले ॥
 तदहं तत्र यास्यामि त्वमाज्ञापय वा नवा ।
 श्रप्स्यामि यज्ञभागं वा नाश्विष्यामि वा मखं ॥

शिव उवाच ।

अवारितासि देवि त्वं यथेच्छं कुरु सर्वथा ।
 अथमे स्वयं कृत्वा परं दूषयते कुषीः ॥
 जानामि वानरहिभूतां त्वामहं दत्तकन्यके ।
 यथास्मि कुरु त्वच्च ममार्हा किं प्रतीक्षसे ॥
 एवमुक्ता महेन्द्रेण तदा दाक्षायणी सती ।
 चिन्त्यामास संकुट्वा क्षणमास्फलेचना ॥
 संश्रार्य सामनुप्राप्य पत्नीमायेन शंकरः ।
 मानवहाय यचनं आपतेदुति क्षुदाणम् ॥
 अहो नमपि दर्पिष्ठं पितर्य भ्रजापतिम् ।
 संस्यास्यामि कियत्कालं खल्वानं निज कीर्या ॥
 ततश्च प्रार्थितानेन भूत्वा हिमवतः कुता ।
 शम्भोः पत्नी भविष्यामि भूयोहं स्वयमेव हि ॥
 एवं सन्निध्य मनसा क्षणं दाक्षायणी मुने ।
 मद्याहंस्त्रिमनेत्रे मोक्षयामास शंकरम् ॥
 शम्भुः समीक्ष्य तं देवी कोपविस्फुरिताधराम् ।
 कालानिदुष्यनयनां स्तब्धाक्षः समभ्यमुने ॥
 एवं समीक्ष्यमाना सा शम्भुना भीतचेतसा ।
 सहसा भीमदंष्ट्रायाः पाट्टहासं सदाकरोत् ॥
 तन्निशम्य महादेशो महाभीतो विमुग्धवत् ।
 कटेनोन्मील्य नेत्राणि तां ददर्श भयानकां ॥
 एवं समीक्ष्यमाना सा सहसा तेन नाद ।
 सशस्त्रा हेमी रुचिं प्रासीत् कृष्णायनसम्प्रभा ॥

दिग्भ्यरा मल्लकेना लोठभिन्ना धनुर्मुखा ।
 कामालसलसद्देहा स्वेदाक्षतनुवत्त्वणा ॥
 महाभीमा चोराया मुण्डमात्रा-विराजिता ।
 लघत्पचण्डकोटयामा चन्द्रार्दकपतेखरा ।
 लघदादित्यसेकाहकिरीटोज्ज्वलमस्तका ॥
 एवं समादाय वपुर्भयाङ्कं
 जाग्ज्वत्प्रमानं नित्र तेजसा सती ।
 कृत्वाट्टहासं सहसा महाभयं
 सोत्तिष्ठमाना विराराज सद्युः ॥
 तथाविधाकारवतीं निरीक्ष्यतां
 निहान धैर्यं स महेश्वरस्तदा ।
 चकार बुद्धिं प्रपलायने भयात्
 समभ्यधावय दियोति मुग्धवत् ॥
 तं धावमानं गिरिषं विलोक्य सा
 दाक्षायणी वारयितुं पुनः पुनः ।
 चकार मामै पिति वन्दमुषकैः
 साट्टहासं क्षमहाभयनकम् ॥
 निशम्य तद्वाक्यमतीव सम्मयात्
 तस्यौ न शम्भुः क्षणमप्यमुन वै ।
 दिगन्तमागन्तुमतीव वेगतः
 समभ्यधावदभयविकल स्वदा ।
 एवं पतिं वीक्ष्य भयातिभूतकं
 दद्यान्विता तत्प्रतिशारयेच्छया ।
 सर्वासु दिक्षु क्षणमात्र मध्यादः
 स्थिता च भूत्वा दशमूर्त्यवत्तदा ॥
 मुग्धावमानो गिरिकोटी वेगतः
 प्राप्नोति यां यां दिक्षमेव तत्र तां ।
 भयानकां वीक्ष्य भयेन विह्वलो
 दिशं तथाप्यां प्रति चाभ्यधावत् ॥
 न प्राप्य शम्भुस्तु भयान्वितो दिशं
 तत्रैव संघटितचक्षुरास्थितः ।
 उन्मील्य नेत्राणि ददर्श तां पुरः
 श्यामाक्षसप्तद्वजप्रतिमाननाम् ॥
 दसन्मुखीं पीनपयोपरद्वयां
 दिग्भ्यरां गीमविशाललोचनाम् ।
 विमुक्तेशीं रविकोटिसन्निभां

ततो देहे समुत्पन्ने शोभुस्तु निज मायया ।
 सवाच परमेशानः स्वो प्रियां शृणु जेगने ॥
 पश्य भद्रे महाभाते पुरुषो नास्ति मां विना ।
 त्वदन्या भविता नास्ति पश्य त्वं ज्ञानचक्षुषा ॥
 विषयादि कुल त्यागं शब्दसिन्दुरमेव च ।
 सापेक्षं लक्षणं देवि कुल त्यागं पतिव्रते ॥
 एषा मूर्ति स्तब्ध परा विषयाता वगव्यमुखी ।
 धूमन्वाप्तसरोरासु ततो धृतावती स्मृता ॥

(नाट्य ० ११ अ०)

एक दिन महादेव कैलास-शिखर पर बैठे हुए थे और गिरिजा जनकी गोदे पर बैठी थीं । उन्होंने उपम-ध्वजको पूछा था, 'हे देवदेव महादेव ! मैं भूखसे बहुत व्याकुल हो रही हूँ, कुछ खाद्य पदार्थ दीजिए।' महादेवने कहा, 'कुछ काल ठहर जाओ, खानेको देता हूँ। इतना कह कर शिवजी विरत हो गये। देवीने फिरसे कहा, 'हे देवदेव जगत्पते ! मुझे इतनी भूख लगी है, कि मैं चायकाल भी ठहर नहीं सकती, अतः बहुत जल्द खानेको कुछ दीजिए।' महादेवने प्रियतमा पत्नीको यह बात सुन कर कहा, 'कुछ समय विसरव करो, बाद वाञ्छित खाद्य देता हूँ।' सती फिर भी बोली, 'हे जगन्नाथ ! विसरव करनेकी अब मुझमें शक्ति न रहो, शीघ्र खानेको दीजिए।' इतना कह कर देवीने पतिको एकट्ठ कर अपने मुखमें डाल दिया। शोड़े को समय बाद जनकी शरीरमें धूमराग्नि निकलने लगी। बाद शिवजीने अपनी माया द्वारा देह उत्पन्न कर पत्नीसे कहा था, 'अपि शोभने ! ज्ञानचक्षु द्वारा देखो, भद्रे सिवा कोई पुरुष नहीं है और तुम्हारे सिवा न कोई स्त्री ही है। अभी तुम विधवा हो चुकी, शब्दसिन्दुरका परित्याग करो हे पतिव्रते, अब पातिव्रत्य चिह्न छोड़ दो। तुम्हारी यह मूर्ति वगव्यमुखी नामसे प्रसिद्ध होगी। तुम्हारे मन्त्रसे शरीरमें धूम परित्याग हो गया था। इस कारण तुम्हारा दूसरा नाम धूमावती भी होगा।'

स्वतन्त्रतन्त्रके मतसे—

"दक्षप्रजापतेऽग्निं सर्वपेशारचं वला ।

कुदा देहं विनिष्पिप्य ततो धूमोऽभवत् महावत् ॥

तस्माद्धूमावती जाता सर्वपेश्र विनायिनी ।

कालो काला कालवदन्वा भौमवारे विनायुखे ॥
 प्राप्तेऽस्य हतोयाया जाता धूमावती शिवा ।"

दक्ष प्रजापतिके यज्ञमें मत्तोने अपने "देह" परित्याग कर दो था। पोछे इस देहसे धूमराग्नि निकलने लगी, इसीसे इनका नाम धूमावती पडा है। मङ्गलवार पञ्चम-हतोयाको ग्रामको शिवा धूमावती हो कर उत्पन्न हुई थीं। यह मूर्ति सर्वशत्रुविनायिनी है।

स्वतन्त्रतन्त्रमें वगव्यमुखीको उत्पत्ति इस प्रकार लिखी है—

"अथ वज्राग्निं देवेभिः सङ्कोतरति कारणम् ।

पुरा, कृतयुगे देवि वातप्रोभवप्रस्थिते ॥

चराचर-विनाशाय विष्णुमिन्तापरायणः ।

तत्पश्यन्वाच सन्तुष्टा महाश्रीत्रिपुरास्त्रिका ॥

हरीदाहयं सरो दृष्ट्वा जलक्रीडापरायणा ।

महापीतृद्वन्द्वस्यान्वे सौराष्ट्रं वगव्यम्विका ॥

भोविद्यार्चनम् वेजो विशृम्भति इतस्ततः ।

चतुर्दशी मौमयुता मकारेण समन्वितः ॥

कुलक्षयसमायुक्ता वीररात्रिः प्रकीर्तिता ।

तद्यामेवादेवरात्रौ नृ पीतहृदविनायिनी ।

महाव्रविद्यार्चनता त्रैलोक्यस्तम्भनी परा ॥

ततजो-विष्णुश्च वेजोविद्यारविद्ययोर्नामम् ।"

हे देवेभिः वगव्यको उत्पत्तिका कारण कहता हूँ। पहले सत्ययुगमें चराचर विश्वके विनाशके लिए वात-प्रोभके उपस्थित होने पर विष्णु बहुत चिन्तित हुए थे। पीछे त्रिपुरास्त्रिका तपस्या-धाकसे सन्तुष्ट हो हरि-दाह्य सरोवर देख कर जलक्रीडापरायणा हुई थी उस देवीने महापीतृद्वन्द्वके मध्य श्रीविद्यामन्त्र तैजकी मङ्गलवारकी चतुर्दशी और उसमें कुल नक्षत्रका योग तथा मकार समन्वित होनेसे वीररात्रि हुई। इस वीर-रात्रिके दिन पाँची रातकी त्रैलोक्यस्तम्भिनी पीतद्वन्द्व विनायिनी, देवी उत्पन्न हुई थी। यह तेज विष्णु से निकला था।

महावज्रीकी उत्पत्ति भी स्वतन्त्रतन्त्रमें इस प्रकार लिखी है—

"अथ धीमुत्पत्तौ वज्रा त्रैलोक्योत्पत्तिमाश्रिता ।

पुरा वज्रा जगत्सृष्टं तपोऽप्यतः शङ्कम् ।

तपसा तस्य समुदा शक्तिः सा परमेश्वरी ।
 वनप्रवृत्तनवद्वान्त उग्रता तारिणी स्वयम् ॥
 कोपराशिः शमादृशता स्वस्वस्मिन्मयी शिवा ।
 श्रीरोदासीवर्त्मना मयनदुदयेः पुरा ॥
 विष्णोर्विष्णुः स्वयं नरा च पद्ममनसता रथा ।
 कृष्णाष्टम्या भाद्रपदे शोभापुरमिहृन्मयी ॥
 तस्या तिर्यो समुद्रया महापातगिनी कला ।
 काश्यपेकादशीमुत्ता दुर्गौ मौमे च वा तिथिः ॥
 जाता तस्या दशरथीः सर्वलोकमयदाहिनी ॥

पनन्तर द्वैलोक्यकी उत्पत्तिके विषयमें मातृस्वकथ
 याभुमराका विषय कहता हूँ । पहले ब्रह्माने जगत्को
 सृष्टि करनेके लिए प्रीत तपस्या को छो । उनको तपस्या-
 के धर्मेश्वरीकी पद शक्ति सन्तुष्ट हो गई थीं । पतपव
 चत शक्त नवमोकी तारिणी स्वयं तपस्य कर्त्तु थीं । ये
 नवशक्तिमयी और कोपराशि नामके प्रसिद्ध हुईं । ये
 पहले समुद्रमन्थनके समय शोरोदसमुद्रके निकली थीं ।
 ये विष्णुको वल्लभकल्याणिनी और वामनमता हैं । इन्होंने
 जो भाद्रकी कृष्णाष्टमी तिथिकी कोलासुरकी विनाश
 किया और उसी तिथिमें महासातत्रिनी रूपमें तपस्य कर्त्त
 थीं । काला लामाकी एकादशीतिथिकी, चयया शक्त और
 मद्रमधारकी को तिथि प्रवृत्ती हैं। उसी तिथिमें सर्व-
 लोभायदायिनी महालक्ष्मीका जन्म हुआ था ।

प्रत्येक महाविद्याका फिर भैरव निर्दिष्ट है ।
 तोहमन्तके मतसे—

“अथ चारुंगि धुरम् शक्तिवागाश्च भैरवम् ।
 महाकाशे दक्षिणाया दक्षिणाये प्रवृत्तये ।
 महाकाशेन वै चार्द्धे दक्षिणा रमते सदा ॥
 तादासा दक्षिणे भागे अतोम्यं परिप्रवृत्तये ।
 तेन चार्द्धे महामाया तारिणी रमते सदा ॥
 महाप्रियपुरवर्द्धा दक्षिणे पूजयेत् शिवम् ।
 पञ्चवक्त्रं त्रिवेत्रं च प्रतिवक्त्रं धुरेश्वरि ॥
 तेन चार्द्धे महादेवी सदाशामुद्रयता ।
 जलपुत्र भद्रेशानि पञ्चमोनि प्रधीति ता ॥
 धीमदभुवनमुन्दरी दक्षिणे प्राक्कटं पूजयेत् ।
 भैरवा दक्षिणे भागे दक्षिणामूर्तिं पूजयेत् ॥
 पूजयेत् परमेश्वरं पञ्चवक्त्रं त्रिवेद्रि ॥

विद्यमस्ता दक्षिणांशे वक्त्रम् पूजयेत् शिवम् ।
 कवचपूजनादेवै चर्चविद्विदोदरी भवेत् ॥
 भूपावती मदाविद्या विषाकरूपारिणी ।
 वगवाया दक्षिणाये एववक्त्रं प्रपूजयेत् ॥
 महादेवेति विहवाते जगत्संहारकारम् ।
 मातंगी दक्षिणांशे च मातंग पूजयेत् शिवम् ॥
 तमेव दक्षिणामूर्तिं जगदामन्दहारकम् ।
 चमलाया दक्षिणांशे रिपुरुचं वदामि ॥
 पूजयेत् परमेशानि त्रिवेद्रो नात्र संशयः ।
 पूजयेदभयुर्गाया दक्षिणांशे च रूपकम् ॥
 महालोकेश्वरं देवं दशवक्त्रं वदेत्तम् ।
 दुर्गाया दक्षिणे भागे नारदं परिप्रवृत्तये ॥
 अमरागुप्तं सर्वविघातघ्नं कृपयः परिकीर्तता ।
 स एव वक्त्रा अश्वं च दशमो प्रपूजयेत् ॥

कालिकायें भैरव कालकी पूजा कालोर् दक्षिण भाग-
 में करनी चाहिये । इन प्रकार ताराके दक्षिणमें पक्षोभ्य-
 की, महाप्रियपुरसुन्दरीके दक्षिण पक्षामन शिवकी, भुवन-
 सुन्दरीके दक्षिण प्राक्कटकी, भैरवीके दक्षिण दक्षिणा-
 यत्तिकी, विष्णुनामदाके दक्षिण पक्षम्य नामक शिवकी,
 वगवाके दक्षिण महाकट नामक एकवक्त्र महादेवकी,
 मातङ्गीके दक्षिण मन्त्रनामक शिवकी, कमलाके दक्षिण
 विष्णुकी मदागिवाकी, चमपुर्णाके दक्षिण दगमुच
 महेश्वरकी और दुर्गाके दक्षिण नारद इत्यादि भैरव-
 भूर्तिकी पूजा करने होती है ।

शास्त्रीका कहना है कि द्वायमहाविद्याने ही द्वाय-
 ताररूप धारण किये गे । तोहमन्तके १०५ उल्लाममें
 लिखा है—

“दण्डतारे देयेत् त्रि में जगतां गुते ।
 इदानीं ध्येयमिच्छामि कथयस्व इतिस्मरण ॥
 का वा देवो कथममृता वद मे पयोधर ।
 दिव वशाच ।

तारा देवी मोनरुच्य वगमा कर्ममूर्तिका ।
 भूमनये वराहः स्वादु विषममामूर्तिरिका ॥
 सुरेश्वरी वामनः रत्नामावली राममूर्तिका ।
 त्रिपुरा कामदग्धः स्वादुलभमममूर्तिरिका ॥
 महादेवो भैरवः पुत्रो दुर्गा रत्नम् कर्ममूर्तिरिका ।

यह दिन अत्यन्त पुण्यजनक माना जाता है । इस तिथिमें सब प्रकारके पाप नष्ट हो जाते हैं । इस तिथिमें यदि गङ्गास्नान किया जाय, तो अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है । इस तिथिमें जाड़वी दश प्रकारके तथा दश जन्मकृत पाप हरण करती है । इसी कारण इस तिथिका नाम दशहरा पड़ा है । अदत्तका उपादान, अविधिपूर्वक हिंसा और परदारसेवा ये तीन प्रकारके कायिक पाप हैं, पादुच, अट्टत, पिण्डनता और अश्वमेध प्रत्याप ये चार वाच्य पाप हैं । परद्रव्यचिन्तन, मन ही मन दूसरेका भ्रम गल करनेको चेष्टा और मिथ्याभिनिवेश ये तीन मानस पाप हैं । ये दश प्रकारके पाप गंगासे हरण किये जाते हैं । इसीसे ज्यों ही शुक्ला दशमीका नाम दशहरा रखा गया ।

“अदत्तानामुपादानं” हिंसा विद्याविधानतः ।
परदारोपसेवा च कायिकं त्रिविधं स्मृतम् ॥
पादुचप्रस्तंशेषैश्चैश्वर्यवाणि सर्वशः ।
अश्वमेधप्रत्युपायः पादुचप्रत्युपायश्चैव त्रिविधः ॥
परद्रव्येभ्यश्चिन्तनं मनसानिष्ठचिन्तनम् ।
वित्तप्राप्तिविशेषश्च त्रिविधं कर्ममानसम् ॥
एतानि दश पापानि प्रथमं बान्धु आह्वयि ।
स्नातस्य प्रथमे देवि जले विष्णुपदोद्भवम् ॥
विष्णुपादार्थं धूम्रं गन्धे विषयगामिनि ।
चर्मद्वयीति विदुषावे पापं मे हर आह्वयि ॥
अदत्ता भक्तिरश्ने धीमार्हाणि आह्वयि ।
अनुत्पेदाभुना देवि भार्गीरथि पुनीहि मां ॥ (हरवतल) ”

दशहराके दिन गङ्गास्नान करती समय इस मन्त्रकी पढ़ कर स्नान करना चाहिये । यदि इस दशमीमें हस्ता नक्षत्रका योग हो, तो दश जन्मान्त दश प्रकारके पाप क्षय होते हैं और सप्त तिथि यदि मङ्गलवारमें पड़े, तो दश प्रकारके पाप नष्ट हो कर सौ अश्वमेध यज्ञ करनेका फल प्राप्त होता है । ज्यों ही मासमें यदि सप्तमास हो, तो भी सप्त मासकी शुक्ला दशमी तिथिमें दशहरा होगी । यहाँ पर तिथिमाहात्म्य की प्रवण है । (तिथितत्त्व) यदि दशमी तिथि दो दिन तक व्याप्त रहे और पहले दिन हस्ता नक्षत्रका योग हो, तो उसी दिन दशहरा होगी । यदि पहले दिन हस्ता नक्षत्र न हो तो दूसरे दिन और

यदि पूर्व दिन मङ्गलवार पड़े, तो उसी दिन दशहरा मानी जायगी । बाद दूसरे दिन केवल तिथिमें स्नान करना ही लिये है । यदि इस दिन गङ्गा स्नान न कर सके, तो किसी नदीमें पर्यटन और तपश्चादि करनेमें भी भारीसे भारी पाप दूर हो जाता है । (हस्तपुत्र)

दशहरा तिथिमें गंगासूक्ति ब्रजवा कर गंगापूजा करनी चाहिये । इस दिन गंगापूजा अवश्यकरनी है और मत्स्य, कच्छप, मण्डूक, मकरादि जलजन्तु, सोने, चाँदी आदिके ब्रजवा कर उन्हें गंगामें किंकर्णका विधान है । यदि सोने, चाँदीके न ब्रजवा सके, तो पिटके हो बना कर काम चला सकते हैं और हनुमदोपकी जला कर गंगामें बहा देना चाहिये । इस दिन जो कोई मनुष्य जो नमः शिवाय नारायण्य दशहराय गङ्गाय नमः यह मन्त्र दिन रात जप करे, उसे पाँच हजार दशधर्म फल प्राप्त होता है । दशहराके दिन गङ्गाजलमें बैठ कर जो गंगाका स्तोत्र पाठ करते हैं, वे प्रथम वा दश नष्ट होते । इसी कारण इस दिन दश प्रकारके पापोंको क्षय करनेके लिये गंगास्नान अवश्यकरनी है ।

दश (स० स्त्री०) दशतीति दश्यन्त ततो न लोपः वा दश्यते इति अच् ततष्टाप् । १ भवसा, हासत । २ दोषवर्त्ति, दोषकी वस्ती । ३ विच । ४ वस्त्रात्, कपड़ेका होर । यह दश गद्य बहुवचनान्त है । ५ कालकृत गर्भवासारिख भवसा, यह दश दश प्रकारकी है । मनुष्यको दश दशाएँ हैं,—गर्भवास, जन्म, बाल्य, कुमार, योग्य, यौवन, स्थाविरता, जरा, प्राप्परोक्ष और मृत्यु ये दश मनुष्यकी भवसाएँ इसी दशाके अधीन हैं । (मोक्षप्रदमें गौतमकी) । ६ कामकृत विरहियोंकी भवसा । यह भवसा भी दश है, यथा—नयनप्रोति, चिन्ता, सदृश्य, निद्राच्छेद, तनुता, विषयनिवृत्ति, लज्जानाश, उन्माद, मूर्च्छा और मरण । पहले नायकका दर्शन, बाद उसके लिये चिन्ता, चिन्ता करते करते नायकको पानेका सदृश्य, इस सदृश्यसे निद्राका क्रास, निद्रा क्रास होनेसे जो शरीर क्षीण हो जाता है, शरीर क्षीण हो जानेसे फिर कोई विषय अच्छा नहीं लगता, तब पापसे पाप लज्जा जाती रहती है । बाद एकवारकी उन्माद होना पड़ता है, उन्मादसे मूर्च्छा आ जाती है । इस

“स्वयं मगधती काटी कुरगमूर्तिः समुद्रवा ॥

इति ते वयितं देव्यन्तारं दशमेव हि ।

एतासां पूजनाद्देवि महादेवममो भवेत् ॥”

हे देवेश जगत्पुरु! भुक्ति दशावतारका विषय विस्ताररूपमे कहिये, यह वृत्तान्त सुननेको मुक्ति तोत्र उत्पन्न होता है। कौन कौन देवी किस मूर्ति में आविर्भूत हुई थीं, भो भी कहिये। पावतीके इस प्रश्न पर महादेवने कहा था, ‘तारादेवीने मत्स्यावतार, चगलान् कूर्म, धर्मावतारने वराह, कृत्तमस्ताने नृसिंह, भुवनेश्वरोने वामन, मातङ्गोने राम, त्रिपुरासुन्दरीने जाम्बवन्ध, महालक्ष्मीने बुध, दुर्गाके कल्कि और कालीने लक्ष्मणमूर्ति धारण की थी। इनकी पूजा करनेसे माधक महादेव सहज होता है।’ दशमहाविद्याका ध्यान तत्त्व शब्दों और अक्षरोंपर विषय दम्भ और मन्त्र शब्दों देखो।

दशमांश (मं० पु०) दशवां हिस्सा, दशवां भाग।

दशमान (मं० पु०) जनपदविशेष तथा तज्जनपदवासी, एक देशका नाम तथा वहाँके अधिवासी।

दशमाल (मं० पु०) जनपदविशेष, दशमालिक देश।

दशमालिका (मं० पु०) १ देशभेद, एक प्राचीन देशका नाम। २ दशमालिक देशके राजा। ३ उक्त देशके अधिवासी।

दशमास्य (मं० पु०) दशमासान् गर्भे स्थितः यत्। दश मास तक गर्भमें स्थित बालक। गर्भस्थित बालकके गर्भमें सुखमें जीवन बितानेके लिये ये तीन ऋक् अतलाए गए हैं।

“यथा वातः पुच्छरिभी समिगवति सवैतः।

एवा ते गर्भे एगन्तु निरैतु दशमास्यः ॥”

“यथा वातो यथा वनं यथा समुद्र एजति।

एवा त्वं दशमास्य संहरै हि जरायुषा ॥”

“दशमासाच्छयानः कुमारी अपिमातरि।

मित्रे ह जीवो असौ जीवो जीवन्त्यस्य अपि ॥”

(ऋक् ५।७८।७-८)

कान्ति विष्णु केदार केदारदेवकी परिचायित करती है, उसी शक्ति भुवनेश्वरी का कर्तव्य है और दश मासके बाद जब वह जीव भिन्न होती है। कान्ति का कर्तव्य है, जो कर्तव्य करती है, कर्तव्य करती परिचायित

ही कर स्वयं परिचायित होता है। उसी तरह गर्भस्थित जीव दश मास तक गर्भमें रह कर जरायुधेष्टित हो भूमिष्ठ होवे। जीव दश मास तक अपने जननोके कठरमें अवस्थित रह कर जीवित पचतगरी जननोमें निकल आवे। दशमास सुखसे जननोके कठरमें बाम कर जरायुज जीव निर्गत होवे और जननो भो जीवित रहे। (वायण) चम्पिनौकुमारने गर्भस्थीके सुखप्रसवके लिये इसी प्रकार स्तव किया था।

दशमिकभग्नांश—पद्मगास्तका एक प्रकरण। निम्नके द्वारा भिन्न मात्राकी हो अथवा आकारमें रख सके, उसका नाम दशमिकभग्नांश वा दशमलवभिन्न है। जब भिन्नका हर दश वा दशका कोई घात होता है, तो उसे दशमलवभिन्न कहते हैं। दो वा अधिक भिन्नोकी तुलना करनेमें पहले उन्हें समान हरवाले भिन्नोमें लाना पड़ता है, फिर दूसरे दूसरे हरोंके भिन्नको घण्टा समान हरवाले भिन्नके प्रत्येक सहजमें बनाये जाते हैं। किन्तु जिन सब संख्याओंको ले कर सहजमें हिसाब बनाया जा सकता है, वे सब पद्म १०, १००, १०००, १०००० इत्यादि हैं, क्योंकि १के बाद केवल शून्य ही रखना होता है। इन सब पद्मोंकी दशमलव पद्म कहते हैं। किन्तु एक अथवा रागिकी दशमलवमें पासानोमें ला सकते हैं। जैसे—

$$0.8 = \frac{0.8}{1} = \frac{0.80}{1.0} = \frac{0.800}{1.000}; \text{ अथवा } \frac{800}{1000}$$

$$\text{अथवा } \frac{8000}{10000}।$$

किसी संख्याके अन्तमें एक शून्य घेठाना और उसे दशसे गुना करना दोनों समान है। हम लोग किसी भिन्नके अंशमें घनेक शून्य योग कर सकते हैं, किन्तु जितने शून्य योग करेंगे उतने ही शून्य फिर हरमें भी घेठाने होंगे।

इसी प्रकार सामान्य भिन्नकी दशमलवभिन्नमें ला सकते हैं। मान लो, १/२ को दशमलवभिन्नमें लाना है। अब इसके अंश और हर दोनोंकी क्रमशः १०, १००, १०००, १०००० इत्यादिमें गुना करो। शून्यमध्य क्रमशः

$$\frac{10}{10}, \frac{100}{100}, \frac{1000}{1000} \text{ इत्यादि होगा। यह}$$

सूक्तोंमें मृत्यु तक होनेकी सम्भावना है। विरहवर्षण नामके समय इन दशाधीनमें केवल ८ का ही वर्णन करते हैं, मृत्युका नहीं। (अनुराधा) ७ यद्योकी स्वप्न फल विपाक कालमें दृश्य प्रसव्या। ज्योतिषमें इसका विषय हम प्रकार लिखा है—

मत्स्यगर्भे सारिणीदशा, तेषामि गौरीदशा, हापरमे शीमिनोदशा और कलियुगमें नाचत्रिकी दशा द्वारा मनुष्यके शुभाशुभका विचार होता है। अभी पद्योत्तरो नाचत्रिका दशाका विवरण कहा जाता है।

सूर्यका दशाभोगकाल ६ वर्ष, चन्द्रमाका १० वर्ष, मङ्गलका ८ वर्ष, बुधका १० वर्ष, शनिका १० वर्ष, हस्तप्रतिका १८ वर्ष, राहका १२ वर्ष और शुकका २१ वर्ष है। इनमेंसे प्रत्येक दशाकी अन्तर्दशा है।

एक चतुष्कोण-संज्ञा अङ्कित करके उसमें पूर्वार्ध पट-टिक्, चिह्नित करो। पीछे इस क्षेत्रकी पाठ दिशाओंमें पूर्वदिशामें धारम्भ कर क्षणिकादि नक्षत्र स्थापन करो। पूर्वार्ध चारों ओरमें तोन तीन करके और अर्ध्यादि चार कोणोंमें चार चार करके तोन नक्षत्र रक्खो। यथा,—पूर्वदिशामें—क्षतिका, रोहिणी और मृगशिरा इन तीन नक्षत्रोंमें जन्म होनेमें रविको दशा; अग्नि-कोणमें—पार्श्व, पुनर्वसु, पुष्या और अश्लेषा इन चार नक्षत्रोंमें जन्म होनेमें चन्द्रको दशा, मघा, पूर्वफल्गुणी और उत्तरफल्गुणीमें जन्म होनेमें मङ्गलकी दशा; हस्ता, चित्रा, स्वाता और विशाखा नक्षत्रमें जन्म होनेमें बुधका दशा; चतुर्धा, कर्कठा और मूला नक्षत्रमें जन्म होनेमें शनिको दशा; पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, अभिजित और श्रवणा नक्षत्रमें जन्म होनेमें हस्तप्रतिकी दशा; धनिष्ठा, शतभिषा और पूर्वभाद्रपद नक्षत्रमें जन्म होनेमें राहुको दशा; उत्तरभाद्रपद, ऐश्वरी, अश्विनी और भरणी नक्षत्रमें जन्म होनेमें शुकको दशा होती है। सूर्य, राहु, मङ्गल और शनि इनको दशाओं मनुष्योंको दुःख मठा हस्तप्रति, बुध, पञ्च और शुक इनको दशामें सुख मिलता है। वर्तमान शकाब्दके पहलेमें जन्मकालीन शकका यह चतुर्दशमें जितने वर्ष धरेंगे; उनके प्रतिवर्षमें ३ दिन १५ दण्ड ३१ पल २४ अनुपल जोड़ते हैं, अब योगफल जितना होगा, उतना ही वर्ष समर मान कर दशाका निर्णय करते हैं, इसीकी भावगणना कहते हैं।

जन्मकालमें नक्षत्रका जितना दण्डपल बीत गया है और जितना दण्डपल बच रहा है, उसे जान कर अनुपात द्वारा दशाकालमें कितना अंश बीत गया है और कितना अंश अवशिष्ट है उसका निर्णय करना होगा। जिस तारांश रोहिणी नक्षत्रमें स्थित मनुष्यका जन्म होने में २ वर्ष बीत गया है और चार वर्ष अवशिष्ट है, ऐसा ज्ञानना होगा। अवशिष्ट चार वर्षोंमें रोहिणी नक्षत्रका जितना दण्ड पल बीत जाने पर जन्म हुआ है, उसमें अनुपात करके किनासा अंश अवशिष्ट है, यह स्थिर करना होगा। जन्मके पहले जिस ग्रहकी दशा; होगी उसमें भोगकालके बाद तत्परवर्षों प्रत्येक दशाका भोग होगा। यदि जन्मनक्षत्रका परिमाण ६० दण्ड हो, तो दशाका भुक्त और अवशिष्ट ज्ञाननेके लिए अनुपात नहीं करके निम्नलिखित नियमानुसार भुक्तावशिष्ट स्थिर कर सकते हैं।

जन्मके समयमें नक्षत्रका जितना दण्ड और पल बीत गया है; शमग्रहकी दशा होनेमें उसे छोड़ा और पापग्रहकी दशा होनेमें उसे दूना करके, गुणफलकी पुनर्वाट दशा परिमाणके बहुरे गुणा करते हैं।

पीछे उस गुणफलकी ६० में भाग देनेसे मास भागको १२वें भाग देनेसे वर्ष होगा। इस प्रकार दशा का भुक्त अंश ज्ञान कर दशा परिमाण कालमें वियोग करनेमें ही अवशिष्ट मानून हो जायेगा। जन्मनक्षत्रका परिमाण यदि ६० दण्डसे न्यून अधिक हो, तो अनुपात करके दशा कालका भुक्त और अवशिष्ट यह स्थिर किया जाता है।

नक्षत्रानुसार दशामापका सारविशेष—क्षतिका, रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्रमें जन्म होनेमें पहली रविकी दशा होती है। इन दशाका भोगकाल ६ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें दो वर्ष, प्रति नक्षत्र पादमें ६ मास (नक्षत्रके चार भागोंमेंसे एक भागका नाम पाद है) और प्रति दण्डमें १२ दिन तथा प्रति पलमें १२ दण्ड होते हैं। पार्श्व, पुनर्वसु और पुष्या नक्षत्रमें जन्म होनेमें चन्द्रकी दशा होती है, इस दशाका भोगकाल १५ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें १ वर्ष ८ महीना, प्रति पादमें ११ महीना ७ दिन १० दण्ड, प्रति दण्डमें २२ दिन १० दण्ड और प्रति पलमें २२ दण्ड ३० पल होने

देखा जाता है कि प्रत्येक भिन्न के हर को १६ से भाग देने पर कुछ भी शेष नहीं बचता और भागफल १०, १००, १०००, इत्यादि दशमलव बढ़ जाता है। लेकिन यदि छल भिन्नों में किसी भिन्न का घंश १६ से विभाज्य हो, तो उस भिन्न का घंश और हर दोनों १६ से विभाज्य होगा। यहाँ पर ७०, ७००, ७०००, ७००००, इत्यादि में किसी प्रथम संख्या को १६ से भाग देने पर शेष कुछ नहीं बचता है।

उस सब संख्याओं को १६ से भाग दो।

$$\begin{array}{r} 14) \frac{70}{16} (4 \frac{1}{4} \\ \underline{56} \\ 14 \\ \underline{14} \\ 0 \end{array} \quad \begin{array}{r} 14) \frac{700}{16} (43 \frac{1}{4} \\ \underline{56} \\ 140 \\ \underline{112} \\ 28 \\ \underline{28} \\ 0 \end{array} \quad \begin{array}{r} 14) \frac{7000}{16} (437 \frac{1}{2} \\ \underline{56} \\ 1400 \\ \underline{1120} \\ 280 \\ \underline{280} \\ 0 \end{array}$$

$$\begin{array}{r} 14) \frac{70000}{16} (4375 \\ \underline{56} \\ 14000 \\ \underline{11200} \\ 2800 \\ \underline{2800} \\ 0 \end{array}$$

यह वहाँ देखा जाता है, कि ७०००० को प्रथम श्रेणी है, जिसे १६ से भाग देने पर शेष कुछ नहीं बचता है। किन्तु वहाँ प्रत्येक भागफल का रखना चना-बगल है। केवल अन्तिम भागमें ही काट चला जायेगा।

$$\text{यहाँ } 70000 = 16 \times 4375$$

$$\text{उसके लिये } \frac{70000}{16000} = \frac{16 \times 4375}{16 \times 10000} = \frac{4375}{10000}$$

$$\therefore \text{आवश्यक भिन्न} = \frac{4375}{10000}$$

एक सामान्य भिन्न को दशमलवभिन्न में आने में घंशों में शून्य जोड़ देने हैं और जब तक भाग पूरा पूरा न लग जाय, तब तक भाग देने जारी हैं। जो भागफल होता है उसे ही आवश्यक भिन्न का घंश समझते हैं और जितने शून्य घंशों में ठाति हैं, उतने ही शून्य १ के बाद हर में भी रखने होते हैं।

कई जगह ऐसा भी देखा जाता है, कि घने क भिन्न के घंशों में शून्य बैठाने पर भी वह हर के द्वारा विभाज्य नहीं होता। जैसे ३ को दशमलवभिन्न में लाओ।

$$\frac{3}{16} = 0.1875 \text{ इत्यादि।}$$

$$(3) \frac{3}{16} = 0.1875 \text{ इत्यादि।}$$

हम लोग देखते हैं कि भागफल यथाक्रम १४२८५० से कई 'बढ़' दुहराए गये हैं, इसी कारण ३ को दशमलवभिन्न में नहीं ला सकते हैं। यह जो कुछ हो, यदि हम लोग १४२८५० १४२८५० से कुछ घंशों को ले कर घंश बनाते और जितने शून्यको बैठाने कर घंश बढ़ बने हैं, उतने शून्य १ के बाद रखें, तो जो भिन्न बनेगा वह ३ से कहीं छोटा होगा।

जैसे $\frac{3}{16}$	से	$\frac{3}{16}$	३	१०	बड़ा
$\frac{38}{100}$	"	$\frac{3}{16}$	३	१००	"
$\frac{382}{1000}$	"	$\frac{3}{16}$	३	१०००	"
$\frac{3825}{10000}$	"	$\frac{3}{16}$	३	१००००	"
$\frac{38254}{100000}$	"	$\frac{3}{16}$	३	१०००००	"
$\frac{382540}{1000000}$	"	$\frac{3}{16}$	३	१००००००	"

वहली श्रेणी में जो भिन्न हैं वे ३ से छोटे हैं। यत-एव यथापि हम लोग ३ के समान दशमलवभिन्न रख कर नहीं निकल सकते, तो भी एक ऐसा दशमलव-भिन्न निकाल सकते हैं, जो ३ से बहुत छोटा हो।

भागफल में बढ़ते में चढ़ते जा बारबार घाने का कुछ कारण है। मान लो, कि तुम्हें १००० को २४० से भाग देना है, हम भागका प्रत्येक भागमें २४० से छोटा लाया। चाहे ३ को या २४० के मध्य कोई एक राशि लाया। यदि भागमें शून्य न हो, तो क्रमगत भाग देने रहने में एक भागमें दो बार आवेगा। मान लो, २४६ भाग-में घंशों में घन घन घन आवेगा। जिस तरह २४० भागमें २४० से बड़ा नहीं हो सकता है, उसके लिये यदि हम लोग क्रमगत भाग करने की श्रम तो एक

है, ऐसा जानना चाहिये : मघा, पूर्व फल्गुणी और उत्तर-फल्गुणी नक्षत्रमें जन्म होनेसे मङ्गलकी दशामें जन्म जानना होगा। इस दशाका परिमाण ८ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें २ वर्ष ८ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें ८ मास, प्रतिदण्डमें १६ दिन तथा प्रतिपलमें १६ दण्ड होते हैं।

हस्ता, चित्रा, स्वाती और विशाखानक्षत्रमें जन्म होनेसे बुधकी दशामें जन्म जाना जाता है। इस दशाका परिमाण १० वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें ४ वर्ष ३ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष २२ दिन ३० दण्ड, प्रतिदण्डमें २५ दिन ३० दण्ड और प्रति पलमें २५ दण्ड ३० पल होते हैं।

अश्लेषा, ज्येष्ठा और मूला नक्षत्रमें जन्म होनेसे शनिकी दशा होती है। यह दशाभोग्यकाल १० वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें ३ वर्ष ४ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें १० मास, प्रति दण्डमें २० दिन और प्रतिपलमें १० दण्ड भोग होता है।

पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, अभिजित् और अश्लेषानक्षत्रमें जन्म होनेसे बृहस्पतिकी दशा होती है। इस दशाका परिमाण १८ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें ४ वर्ष ८ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष २ मास १५ दिन, प्रति दण्डमें २८ दिन ३० दण्ड और प्रति पलमें २८ दण्ड ३० पल होते हैं।

अन्यप्रकार—बृहस्पतिकी सप्तदशा १८ वर्ष है। इस दशा परिमितकालको चार भाग करके एक भाग पूर्वाषाढानक्षत्रका और अवशिष्ट तीन भागकी समष्टि अर्थात् १४ वर्ष ३ मासकी दो भाग करके एक भाग अर्थात् ७ वर्ष १ मास १५ दिन उत्तराषाढा नक्षत्रका और ७ वर्ष १ मास १५ दिन अश्लेषानक्षत्रका विभाग जानना होगा। अग्निपुराणके मतानुसार बृहस्पतिकी दशाकी ४ भाग करके एक भागकी पूर्वाषाढा नक्षत्रका और अवशिष्ट अर्धके अर्धको अभिजित् नक्षत्रका और दूसरे अर्धकी अश्लेषानक्षत्रका विभाग जानना होता है। यथा पूर्वाषाढाके ४ वर्ष ८ मास, उत्तराषाढाके ७ वर्ष १ मास १५ दिन, अभिजित्के ३ वर्ष ५ मास २२ दिन ३० दण्ड और अश्लेषाके ३ वर्ष ५ मास २२ दिन ३० दण्ड होते हैं।

धनिष्ठा, शतभिषा और पूर्व भाद्रपद नक्षत्रमें जन्म होनेसे पहले राहुकी दशा होती है। इस दशाका परिमाण १२ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें ४ वर्ष, प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष, प्रति दण्डमें २४ दिन और प्रति पलमें २४ दण्ड होते हैं।

उत्तरभाद्रपद, रेवती, श्रविणी और भरणी नक्षत्रमें जन्म होनेसे पहले शुककी दशा होती है। इस दशाका भोग काल २१ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें ५ वर्ष ३ मास, प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष ३ मास २२ दिन ३० दण्ड, प्रति दण्डमें १ मास १ दिन ३० दण्ड और प्रतिपलमें ३१ दण्ड ३० पल होते हैं। पहले जन्मनक्षत्रमें दशाका निरूपण किया जाता है।

जन्मनक्षत्र	दशा	भोग्यकाल
३ शनिका ४ रोहिणी ५ ज्येष्ठा	रवि	६ वर्ष
६ आश्लेषा ७ पुनर्वसु ८ पुष्या ९ अश्लेषा		
१० मघा ११ पूर्व फल्गुनी १२ उत्तरफल्गुनी		
१३ हस्ता १४ चित्रा १५ स्वाती १६ विशाखा	बुध	१० वर्ष
१७ अश्लेषा १८ ज्येष्ठा १९ मूला		
२० पूर्वाषाढा २१ उत्तराषाढा २२ अभिजित् २३ अश्लेषा	शनि	१० वर्ष
२४ धनिष्ठा २५ शतभिषा २६ पूर्व भाद्रपद २७ उत्तरभाद्रपद २८ रेवती २९ श्रविणी ३० भरणी		
३१ राहु	शुक	२१ वर्ष

इन सब नक्षत्रोंके अनुसार जिस नक्षत्रमें जन्म हुआ है, उसी नक्षत्रकी ति कर दशाका निरूपण करना चाहिए।

“स्वयं” भगवती शाली कृष्णमूर्तिः समुद्रवा ॥

इति ते वयितं देव्यवतारं दशमेव हि ।

एतावता पूजनाद्वि महादेवसमी मवेत् ॥”

हे देविय जगत्पुत्री ! भुम्हे दशवतारका विषय विस्ताररूपमे कहिये, यह वृत्तान्त सुननेको भुम्हे तोव उल्लेखता है । जौन कौन देवी किम मूर्त्ति में आविर्भूत हुई थीं, भो भी कहिये । पावतीने हम प्रश्न पर महादेवने कहा था, ‘ताभ्यदेवीने मत्स्यवतार, वगलान् कूर्म, धर्मावतारने वराह, किन्नमर्दान् रुम्हि, सुवर्न-शरोने वामन, मातङ्गेने राम, त्रिपुरासुन्दरीने जाम-दग्न्य, महालक्ष्मीने बुध, दुर्गाने कल्कि और कालीने कृष्णमूर्त्ति धारण की थी । इनकी पूजा करनेसे माघक महादेव सहज होता है ।’ दशपदाविद्याका ध्यान तत्त्व शब्दमें और अवगार विषय यन्त्र और मन्त्र शब्दमें देखो ।

दशमांश (म० पु०) दशवां हिस्सा, दशवां भाग ।

दशमान (म० पु०) जनपदविशेष तथा तत्त्वजनपदवासी, एक देशका नाम तथा यहाके अधिवासी ।

दशमान (म० पु०) जनपदविशेष, दशमालिक देश ।

दशमालिक (म० पु०) १ देशभेद, एक प्राचीन देशका नाम । २ दशमालिक देशके राजा । ३ उक्त देशके अधिवासी ।

दशमास्य (म० पु०) दशमासान् गर्भं स्थितः यत् । दश मास तक गर्भमें स्थित बालक । गर्भस्थित बालकके गर्भमें सुखसे जीवन बितानेके लिये ये तीन षट्क उत्प्राप गप हैं ।

“यथा वातः पुरश्चरिषी घमि” गति उर्वरतः ।

एषा ते गर्भं एतन्नु निरैतु दशमास्यः ॥”

“यथा वातो यथा वनं” यथा समुद्र एवति ।

एषा त्वं दशमास्य सद्वै हि जरायुणा ॥”

“दशमासाच्छयानः कुमारो अपिमातरि ।

निरैतु जीवी अन्ततो जीवो जीवन्मया अपि ॥”

(ऋक् १०८१०-८)

वायु जिम प्रकार सनाययकी परिधानित करतो है, उसी प्रकार तुम्हारा गर्भ सञ्चालित हो और दश मासके बाद गर्भस्थ जीव निकल पड़े । वायु स्वयं बभ्रमान् हो कर बनेको कल्पित करती है, समुद्र वायुसे परिधानित

हो कर स्वयं परिधानित होता है । उसी तरह गर्भ-स्थित जीव दश मास तक गर्भमें रह कर जरायुवैष्टित हो भूमिष्ठ होवे । जीव दश मास तक भ्रमण जननो-के जठरमें अवस्थित रह कर जीवित पचतगरीर जननोसे निकल जावे । दशमास सुखसे जननोके जठरमें बान कर जरायुज जीव निर्गत होवे और जननो भी जीवित रहे ! (वायु) चम्बिनौकुमारने गर्भिणीके सुखप्रसवके लिये इसी प्रकार स्तवं किया था ।

दशमिकमन्त्रांश—षष्ठ्याष्टका एक प्रकरण । जिसके हा११ भिन्न मात्राको ही षष्ठ्याष्ट पाकारमें रच सके, उसका नाम दशमिकमन्त्रांश वा दशमलवभिन्न है । जब भिन्नका हर दश वा दशका कोई घात होता है, तो उसे दशमलवभिन्न कहते हैं । दो वा अधिक भिन्नोका तुलना करनेमें पहले उन्हें समान हरवाले भिन्नमें लाना पड़ता है, फिर दूसरे दूसरे हरोंके भिन्नको प्रपेक्षा समान हरवाले भिन्नके प्रत्य सहजमें बनाये जाते हैं । किन्तु जिन सब संख्याओको ले कर सहजमें हिसाब बनाया जा सकता है, वे सब षष्ठ १०, १००, १०००, १०००० इत्यादि हैं, क्योंकि १के बाद केवल शून्य ही रखना होता है । इन सब पद्धतियोंको दशमलव षष्ठ कहते हैं । जिनो एक षष्ठ्याष्ट रागिको दशमलवमें पासानोमें ला सकते हैं । जैसे—

$$\frac{७४}{१०} = \frac{७४००}{१००} = \frac{७४०००}{१०००} ; \frac{३}{१०} \text{ पद्यवा } \frac{३००}{१०००}$$

$$\text{पद्यवा } \frac{३०००}{१००००} ।$$

किसी संख्याके घनमें एक शून्य बैठाना और उसे दशसे गुना करना दोनों समान है । हम लोग किसी भिन्नके घनमें घनक शून्य योग कर सकते हैं, किन्तु जिसने शून्य योग करने से घनने ही शून्य फिर हरमें भो बैठाने होंगे ।

इसी प्रकार सामान्य भिन्नको दशमलवभिन्नमें ला सकते हैं । मान लो, १५ को दशमलवभिन्नमें लाना है । अब इसके घन और हर दोनोंको क्रमशः १०, १००, १०००, १०००० इत्यादिमें गुना करो । शुद्धफल क्रमशः $\frac{१०}{१५०}$, $\frac{१००}{१५००}$, $\frac{१०००}{१५०००}$ इत्यादि होगा । यह

दशाफल—रविको दशमें वित्तका परितोष, धन-
हानि, क्षीण, विदेशगमन, रोगमय, अनिष्टपात, दुःख,
जीवनहानि, दम्भन और राजपेड़ा होती है।

चन्द्रको दशमें—मनुष्यका ऐश्वर्य, छोटकादि वाहन,
राजपूजा, रत्न, छत्र, मङ्गल, प्रताप, वीर्यबुद्धि, मिठाव-
भोजन, पानीयपान और वस्त्रमण्ड्या नाम होती है।

मङ्गलको दशमें—दुष्ट मनुष्योंसे आक्रान्ति, दम्भन,
भय, विस्मा, प्वर, विकलता, और भीति, अग्निभय,
विवाद रोग, रक्तोत्ति, प्रताप हानि और धनका विनाश
होता है।

बुधको दशमें—उत्तमा कामिनोत्तमोग, धनागम,
व्यवसाय, सुखनाम, विविध ऐश्वर्य, कोषागारकी हृदि
और मनोरथपूर्ण होता है।

शनि की दशमें—अपवाद, बध दम्भन, आययविनश,
क्षीभय, अग्नि, सर्व तथा राजभय, धानाभङ्ग और कार्य-
हानि होती है।

हृहस्पतिको दशमें—राज्यप्राप्ति, धनागम, पुत्रलाभ,
विविध वस्तुओंका भोग, सुख और धन, धान्यहृदि, विद्या,
सुख्याति, एवं लक्ष्मी प्राप्त होती है।

राहुके दशाक्षरमें—पत्नीके अपराधके कारण विवाह,
दम्भन और अस्वास्वातका भय, अथवा पराक्रम, अत्यन्त
छष्ट, धन और कामनिविहोने शरार होता है।

शुक्रको दशाके समयमें—मन्त्रादि, प्रमदासङ्गलाभ,
अभिज्ञाप पूर्ण, गदान्धता, राजपूजित, हस्ती और अन्न
आदि मवारियों पर जाना, मनोव्यभिचि, अर्थसञ्चय
और राजन्यको लाभ होती है। यह तो स्यूनदशाका
विषय कहा गया, किन्तु प्रत्येक दशमें अन्तर्दशा है।
अन्तर्दशाका फल अन्तर्दशाके अनुसार ही
करता है।

काल—रविको स्यूनदशा ६ वर्ष है जिसमें
रविका अगला दशान्तर ४ मास, चन्द्रका १० मास,
मङ्गलका ५ मास, बुधका १२ मास २० दिन, शनिका ६
मास २० दिन, हृहस्पतिको १ वर्ष २० दिन, राहुका ८
मास और शुक्रका अन्तर्दशा २ वर्ष २ मास है। रविको
दशाके मध्य रविको अन्तर्दशाके राजदण्ड, मङ्गला,
दम्भन, विदेशगमन, शरीरपेड़ा और नागा प्रशस्ति

दुःख प्राप्त होते हैं। रविको दशमें चन्द्रको अन्तर्दशाके
मनुष्यका गन्धर्व, रोगशान्ति, वित्तलाभ और नागा
प्रकारके सुख मिलते हैं। अन्तर्दशाके रविको दशाके मध्य
चन्द्रको अन्तर्दशाके रोग, मङ्गल, दाम, अक्रान्ति,
मनःपीड़ा आदि होती है। रविको दशाके मध्य मङ्गलको
अन्तर्दशाके मनुष्य प्रधान की कर मणिरथ और प्रयाम
आदि पाते हैं। रविको दशाके मध्य बुधको अन्तर्दशाके
मनुष्य दरिद्र और दुःखी होता है एवं उसके गरीब शरीर-
में विचरिका आदि रोग होते हैं और इस प्रकार नागा
प्रकारके शरीरके उपद्रवोंमें बध छष्ट पाता है।

रविको दशाके मध्य शनिको अन्तर्दशाके मनुष्य
शालभय पा कर शक्तिरहित और धैर्यहीन होता है, तथा
उसके सब कार्य निष्फल होते हैं। अन्तर्दशाके रविको
दशाके मध्य शनिको अन्तर्दशाके मनुष्यका समाप,
विश्व बन्धुनाश, पराजय तथा उसके सब कार्य नष्ट हो
जाते हैं।

रविको दशाके मध्य हृहस्पतिको अन्तर्दशाके मनुष्य-
की सम्पत्ति हृदि और रोगशान्ति होती है तथा वह
दूनगोले विश्राम और धर्म लाभ करता है। अन्तर्-
दशाके रविको दशाके मध्य हृहस्पतिको अन्तर्दशाके
मनुष्य धर्म, धर्म और सुख पाता है। इसके बाद वह
कुहादिरोगसे छुटकारा पा कर सुखी होता है।

रविको दशाके मध्य राहुको अन्तर्दशाके मनुष्यके रोग,
शोक, भय, मृत्यु, वित्तनाश और तरह तरहके अप्रसन्न
होते हैं।

रविको दशमें शुक्रको अन्तर्दशाके शिरपेड़ा, उदरा-
मय, स्त्र, अतोमार और गूल आदि रोगोंसे मनुष्यका
शरीर मोघ नष्ट हो जाता है।

चन्द्रमाकी स्यून दशाका काल १५ वर्ष है जिसमें
२ वर्ष १ मास अथवा अन्तर्दशा है। इस समय सम्पत्ति-
की हृदि, स्वर्णभूषिता सीतालाभ और अत्यन्त योगोत्ति
होती है।

चन्द्रको दशमें २ वर्ष १ मास १० दिन मङ्गलको
अन्तर्दशाका काल है। इस समय सर्वदा काल दो-
और भय तथा शरीरमें अनेक तरहके रोग होते हैं। अन्तर्-
दशाके चन्द्रको दशाके मध्य मङ्गलकी अन्तर्दशाके मनुष्यकी

रत्नेपित्तोद्वा और चौरका भय होता है।

चन्द्रकी दशमें २ वर्ष ४ मास १० दिन बुधकी अन्तर्दशाका भोगकाय है। इस समय प्रभुत्व, सुखसम्पत्ति, हाथी और घोड़े की सवारी तथा गोघनादि प्राप्त होता है।

चन्द्रकी दशमें १ वर्ष ४ मास २० दिन शनिको अन्तर्दशाका काल है। इस समय बुधिय, सुदृढ़ेद, विपद् आदि अनेक प्रकारके भयमङ्गल होते हैं। मतान्तरसे चन्द्रकी दशाके मध्य शनिको अन्तर्दशमें छंश, राजभय, विपद्, शोक और सम्पत्ति नाश होती है।

चन्द्रकी दशमें २ वर्ष ७ मास २० दिन बृहस्पतिको अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य धन, धर्म, सुख, वैश्व और अलङ्कार प्राप्त करता है।

चन्द्रकी दशमें १ वर्ष ८ मास राहुको अन्तर्दशाका काल है। इस समय सब प्रकारका रोग और बन्धुनाश होता है तथा बड़ थोड़ा समय भी सुखी नहीं हो सकता है। मतान्तरसे—अग्निभय, दुःख, शोक, बन्धुविच्छेद और घनघय होता है।

चन्द्रकी दशमें २ वर्ष ११ मास शुकको अन्तर्दशाका समय है। इस समय भगुवा उत्तमास्त्रीमङ्गल, धन, धान्य, सुखा, सखि आदि लाभ कर सुखी होता है।

चन्द्रकी दशमें १० मास रविको अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य राजाका अनुग्रह, सुख और भतुल ऐश्वर्य लाभ करता है।

मङ्गलकी छल दशा ८ वर्ष है जिसमेंसे मङ्गलको अपनी दशा ७ मास ३ दिन २० दण्ड है। मङ्गलको इस निजदशाके समयमें बन्धुके साथ कलह, अग्निदाह और शारीरिक पीड़ा होती है।

मङ्गलकी दशमें १ वर्ष १ मास २० दण्ड बुधको अन्तर्दशाका काल है। इस समय दृष्ट, और, शत्रु और अङ्गिजसुखे भय तथा नाना प्रकारके मनस्ताप और प्लवादि होते हैं।

मङ्गलकी दशमें ८ मास २६ दिन ४० दण्ड शनिको अन्तर्दशाका काल है। इस समय धननाश, मनस्ताप, ब्रह्मपीडा आदि दुःख होते हैं।

मङ्गलकी दशमें १ वर्ष ४ मास २६ दिन ४० दण्ड बृहस्पतिको अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य

तीर्थयात्रा, देव-ब्राह्मण पूजा आदि अच्छे अच्छे कार्य करते हैं। किन्तु साथ ही साथ राजभय भी होनेकी सम्भावना है।

मङ्गलकी दशाके मध्य बृहस्पतिकी अन्तर्दशमें मनुष्य पुण्य, धूप, अचवध्मादि द्वारा देवता और ब्राह्मणकी प्रार्थना करता है और राजसुख सम्मान पाता है।

मङ्गलकी दशमें १० मास २० दिन राहुकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय अस्त्रभय, अग्नि, चौर, शत्रुभय और विस्त्रास आदि भयमङ्गल होता है।

मङ्गलकी दशमें १ वर्ष ६ मास २० दिन शुककी अन्तर्दशाका काल है। इस समय धननाश, रोग, शत्रुभय आदि उपद्रव और राजभय होता है।

मङ्गलकी दशमें ५ मास १० दिन रविकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय भतुल ऐश्वर्य, राजसम्मान, स्त्रीनाम तथा पदकी वृद्धि होती है।

मङ्गलकी दशमें १ वर्ष १ मास १० दिन चन्द्रकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय नाना प्रकारको सम्पत्ति, सुख, सुखा और सखि आदि भूयणको प्राप्ति होती है।

बुधकी छल दशा १७ वर्ष है जिसमेंसे २ वर्ष ८ मास ३ दिन २० दण्ड उसको निज दशाका काल है। इस समय मनुष्य धर्म उपाज्जन करता, बुद्धिकी वृद्धि होती है तथा धन, सोभाग्य और भतुल ऐश्वर्य प्राप्त होता है।

बुधकी दशमें १ वर्ष ६ मास २६ दिन ४० दण्ड शनिको अन्तर्दशाका काल है। इस समय वातश्लेष्मा, पीड़ा, बन्धुषीके साथ विवाद और विदेशगमन आदि क्रोध होते हैं।

बुधकी दशमें २ वर्ष ११ मास २६ दिन ४० दण्ड बृहस्पतिकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य रोगसे क्लृप्तकारा, शत्रुभय विनाश, धननाश और सुपुत्र पाता है।

बुधकी दशमें १ वर्ष १० मास २० दिन राहुकी अन्तर्दशाका काल है। इस समय अकस्मात् अग्निभय, बन्धन, विस्त्रास और महाक्लेश होता है।

बुधकी दशमें ३ वर्ष ३ मास २० दिन शुककी अन्तर्दशाका काल है। इस समय मनुष्य पुत्रवान् और धार्मिक होता है।

बुधको दशममें ११ मास १० दिन रविकी चत्वारदशा-
का काल है । इस समय मनुष्य सुख, प्रवास, विपुल
यश, श्रीमान् और दूसरेका धन प्राप्त करता है ।

बुधको दशममें २ वर्ष ३ मास १० दिन चन्द्रकी चत्वार-
दशाका काल है । इस समय मनुष्य शत्रु, और शत्रु-
जन्तुसे भय तथा नाना प्रकारके कष्ट पाता है ।

बुधको दशममें १ वर्ष ३ मास २ दिन २० दण्ड
शुक्रकी चत्वारदशाका काल है । इस समय शिरका रोग,
हृदय पीड़ा, दृष्टि, और तस्करभय एवं लांछ और घेरेमें
पीड़ा होती है ।

शुक्रको स्वर्ण दशमका भोगकाल १० वर्ष है जिसमें
११ मास ३ दिन २० दण्ड शनिकी निजान्तरदशा है ।
इस समय मनुष्य वृत्तवृत्ति अधमस्थन करता है एवं श्री
और पुत्र्यसे नियत, पर्यंत्य, वस्तुविनाश, विदेशगमन
और मित्यापवाद आदि पाता है ।

शनिकी दशममें १ वर्ष ८ मास ३ दिन २० दण्ड
हृत्स्वतिकी चत्वारदशाका काल है । इस समय मनुष्य
देवताओंके प्रति अनुरक्त और शान्त प्रकृति होकर
विविध सम्पत्ति लाभ करता है तथा उसका शत्रु नाश
होता है ।

शनिकी दशममें १ वर्ष १ मास १० दिन राहकी चत्वार-
दशाका काल है । इस समय मनुष्यका विदेशगमन,
वस्तुविशेष, मित्रभय और चक्रमात् चमिदाह आदि
तरह तरहके उपद्रव होते हैं ।

शनिकी दशममें १ वर्ष ११ मास १० दिन शुककी
चत्वारदशाका काल है । इस समय मनुष्यका वस्तु समा-
गम, भाग्य और मित्रलाभ होता है तथा सुख सम्पत्ति
और श्रीभाग्यकी हवि होती है ।

शनिकी दशममें ६ मास २० दिन रविकी चत्वारदशा-
का काल है । इस समय मनुष्यका धनपुत्रविनाश हो
कर दुष्टकी हवि होती है और जीवन तथा बल नष्ट
होता है ।

शनिकी दशममें १ वर्ष ४ मास २० दिन चन्द्रकी
चत्वारदशाका काल है । इस समय मनुष्यका वस्तु-
विच्छेद, शोचिनाथ, कष्ट और नाना प्रकारकी पीड़ा
होती है ।

शनिकी दशममें ८ मास २६ दिन ४० दण्ड मङ्गल-
की चत्वारदशाका काल है । इस समय देशत्याग, पीड़ा
और तरह तरहके दुःख प्राप्त होते हैं ।

शनिकी दशममें १ वर्ष १ मास २० दिन २० दण्ड
बुधकी चत्वारदशाका काल है । इस समय मनुष्य भाग्य-
वान् और सम्मानभाजन हो कर पुत्रलाभ करता है ।

हृत्स्वतिकी स्वर्णदशमका परिमाण १८ वर्ष है
जिसमें १ वर्ष ४ मास ३ दिन २० दण्ड इसकी चत्वार-
दशाका काल है । इस समय मनुष्य संपुत्र, तपस्या,
सुस्थानि, वीर्य, सुख और राजायादि वाहन पाता है ।

हृत्स्वतिकी दशममें २ वर्ष १ मास १० दिन राहकी
चत्वारदशाका काल है । इस समय चक्रमात् भय और
राजपीड़ा आदि उपद्रव तथा वस्त्र और मनमापादि
शारीरिक क्रोध होता है ।

हृत्स्वतिकी दशममें १ वर्ष ८ मास १० दिन शुककी
चत्वारदशाका काल है । इस समय शत्रुभय और
वस्तुनाश हो कर नाना प्रकारके रोग और शोचिविप्लव
आदिमें तरह तरहके दुःख होते हैं ।

हृत्स्वतिकी दशममें १ वर्ष २० दिन रविकी चत्वारदशा-
का काल है । इस समय मित्रलाभ, धनागम, उत्तमा-
श्रीलाभ और राजका प्रियपात्र होता है ।

हृत्स्वतिकी दशममें २ वर्ष ७ मास २० दिन चन्द्रकी
चत्वारदशाका काल है । ऐसे समयमें उत्तमा श्रीलाभ
और शत्रुभय होता है । तथा यह वय प्रकारके रोगोंमें
मृत हो कर राजगुप्त सम्मान पाता है ।

हृत्स्वतिकी दशममें १ वर्ष ४ मास २६ दिन ४० दण्ड
मङ्गलकी चत्वारदशाका काल है । इस समय मनुष्य
पायस क्रोध, शत्रुनाशक और शरीरके जो भाग मयह
दिखनेमें लगता है । तथा यह श्रीभाग्ययुक्त हो कर सुख-
में समय बिताता है ।

हृत्स्वतिकी दशममें २ वर्ष ११ मास २६ दिन ४०
दण्ड बुधकी चत्वारदशाका काल है । इस समय मनुष्य
कभी सुख और कभी चक्रमात् हो कर सुख और दुःख
भोग करता है; शत्रुकी हवि होती है और देवपूजामें
चतुराग उत्पन्न होता है ।

हृत्स्वतिकी दशममें १ वर्ष ८ मास २ दिन २० दण्ड

मासके जिसी पक्षकी दशमी तिथि । २ विमुक्तोपस्था ।
३ मरणोपस्था । ४ अतिशय वयोव्यस्था ।

दशमीस्थ (सं० ति०) दशम्या अवस्थायां तिष्ठति स्था-क ।

१ अतिवृद्ध, जिसकी उमर ८० वर्षसे अधिक हुई हो ।

दशमुख (सं० पु०) दशमुखानि यस्य । रावण ।

दशमुखान्तक (सं० पु०) दशमुखस्य भन्ताकः । राम ।

दशमुखरिपु (सं० पु०) दशमुखस्य रिपुः हन्तृ । राम ।

दशमूलक (सं० स्त्री०) दशानां मूलकानां समाहारः ।

हाथी, भैंस, जट्ट, गाय, बकरा, भैंडा, घोड़ा, गदह, मनुष्य और स्त्री इन दश जीवोंका मूल । उक्त समस्त प्रकारके मूलोंके विषयमें सुस्तमें दस प्रकार लिखा है—

गाय, भैंस, बकरे, भैंडे, हाथी, घोड़े, गदह और जट्टका मूल तोष्ण, कटु, चण्य, तिक्त, पलातुलवण रस, लघु, शोधनकर, कफ, वात, कृमि, मेद, विष, शुक्म, अग्नि, अक्षरोग, कृष्ट, शोफ, अरुचि और पाण्डुरोगका शान्तिकार, हृद्य और अग्निकार है । इसके सिवा दूसरे जीवोंका मूल कटु, तोष्ण, चण्य, लघु, शोधनकर, कफ और वायु शान्तिकार, कृमि, मेद और विषनाशक; अग्नि, अक्षरोग, शुक्म, शोफ, अरुचि और पाण्डुरोगहारो, मेदक, हृदा, अग्निकार तथा पाचक है ।

विशेष विवरण सूत्र चन्द्रसे ले ।

दशमूल (सं० स्त्री०) दशानां मूलानां समाहारः, पात्रादि-त्वात् न डोप् । पाचनविमेष । सविषन, पिठवन, कोटो कटाई, बड़ो कटाई और गोखर ये लघुमूल तथा बेल, सोनापाठा, गंभारी, गन्धियारी और पाठा वृहन्मूल कहलाते हैं । इन दोनोंके योगकी दशमूल कहती है । इन दशमूलोंके ज्ञायमें तीपरका चुण् चाचा तोला मिला कर सेवन करनेसे सन्निपात, ज्वर, कास, खास, तन्द्रा, पाण्डूशूल तथा कण्ठ और हृदयकी वेदना जातो रहतो है ।

दशमूलगुह (सं० पु०) श्लोषविशेष, एक प्रकारकी दवा । दशमूल मिश्रित १२० सेरकी ६४ सेर जलमें डाल कर भाग पर षट्ताते हैं । जब जल सिर्फ १६ सेर बच जाता है तो उसे छतार लेते हैं । बाद इस काढ़ेमें १२० सेर पुराना गुह और ४४ सेर अक्षरकका रस मिला कर उसे भीमी पाचने पाक करती है । कारि सा

घना हो जानी पर उसमें घीवर, पिपराभूल, मिर्च, माठ, हींग, विडङ्ग, वनपत्रवायन, चीताभूल, चई और पञ्च लवण प्रत्येक १ पल डाल कर अच्छी तरह मथते हैं । पाक हो जानी पर उसे छिन्न भाण्डमें रख छोड़ते हैं । इसकी सेवन मात्रा एक तोला है । इससे अग्निमान्द्य, आमल ग्रहणी, प्रोक्ता और ज्वर आदि रोग बहुत जल्द दूर हो जाते हैं । (नेपथ्यर० ग्रन्थवि०)

दशमूलघृत (सं० स्त्री०) चक्रदत्तोक्त ज्वरनाशक घृत भेद । दशमूल १२ सेरकी ६४ सेर जलमें डाल कर आँच देते हैं । पीछे पोपद, पिपराभूल, चई, चीताभूल, मोठ और यवचार प्रत्येकका ८ तोला ले कर चूर्ण बनाते हैं । जो और दशमूलोंके ज्ञायकी एक साथ पाक कर पीछे कल्कद्रव्य पाक करते हैं । बाद जो छान कर ४४ सेर दूधकी साथ पाक किया जाता है । ऐसा करनेसे बाद क्रियासे उप दूध मिश्रित होको क्षाम लेते हैं । इसके सेवन करनेसे विषम ज्वरादि रोग जाता रहता है ।

दशमूलतैल (सं० स्त्री०) चक्रदत्तोक्त अधिरतानाशक तैल श्लोषभेद । प्रस्तुत प्रणाली—कटुतैल ४४ सेर, ज्ञायार्थ दशमूल १२० सेर, जल ६४ सेर, सन्धानकी पर्वीका रस १६ सेर, ज्ञायार्थ दशमूल १ सेर । इस तैलके सेवन करनेसे सन्निपात, शिरका रोग और अस्थिमन्त्रि तुरंत ही शारीर्य हो आती है । दूसरी विधि—कटु तैल ४४ सेर, दशमूलका ज्ञाय १६ सेर, कल्कार्थ दशमूल १ सेर । इस तैलका नस लेनेसे असमय पर बालोंका पकड़ होना बन्द हो जाता है तथा अभ्यङ्ग शिराशूल आदि रोग जाते रहते हैं ।

अन्यप्रकार—कटु तैल ४ सेर, दशमूलका ज्ञाय १६ सेर, दूध ८ सेर, कल्कार्थ जीवक, जट्टमक, मेद, मश-मेद, कांकोल, चौरकांकोली, कटिह, वृदि, प्रत्येक ८ तोला । इसका व्यवहार करनेसे वातशूल, पित्तशूल, कफशूल, शिरोरोग आदि नष्ट हो जाते हैं ।

दशमूलतैल—खण्ड, हृत्त और अभ्यमक भेदसे तीन प्रकारका है ।

खण्ड दशमूल—कटु तैल ४ सेर, दशमूलका ज्ञाय १६ सेर, कल्कार्थ दशमूल १ सेर । इससे शान्तिपातक ज्वर, खास और कांसेरोग जाता रहता है ।

शनि की अंतर्दशा का काल है। इस समय मनुष्य वैशाख महीना में सुखभोग करता है और वित्तविहीन हो कर रुईया अधर्म कार्य में लगा रहता है।

राहु की स्थूल दशा १२ वर्ष है। इसमें राहु का निजभोगकाल १ वर्ष ४ मास है। इस समय स्त्री-विद्योग, वस्तुनाश, शत्रुभय और अर्थनाश होता है।

राहु की दशामें २ वर्ष ४ मास शुक्र की अंतर्दशा का काल है। इस समय ब्राह्मण के साथ मित्रता, स्त्रीलाभ, वित्तसम्पन्न और वस्तुधर्म के साथ झगड़ति होती है।

राहु की दशामें ८ मास रविकी अंतर्दशा का काल है। इस समय शत्रुभय, भयानक रोग, अर्थनाश, राजभय, अतिशय व्यथा और शिरीरोगादि अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं।

राहु की दशामें १ वर्ष ८ मास चन्द्र की अंतर्दशा का काल है। इस समय स्त्रीविनाश, कलह, क्रोध, पापमें अतुराग, कुभोजन, वस्तुविच्छेद और शिष्टका भय उपस्थित होता है।

राहु की दशामें १० मास २० दिन मङ्गल की अंतर्दशा का काल है। इस समय मनुष्य की विषमय, अक्षमय, अग्निभय, चोरभय और तरह तरहके कष्ट होते हैं।

राहु की दशामें १ वर्ष १० मास २० दिन बुध की अंतर्दशा का काल है। इस समय मनुष्य की कफ और वातघटितरोग तथा भयानक शिरःपोड़ा होती है।

राहु की दशामें १ वर्ष १ मास १० दिन हस्त की अंतर्दशा का समय है। इस समय मनुष्य रोगमुक्त और शत्रुभयसे विहीन हो कर देवता और ब्राह्मणपूजामें तत्पर रहता है और नाना प्रकारके धर्म उपाजन करता है।

शुक्र की स्थूल दशा २१ वर्ष है जिसमें ४ वर्ष १ मास इसकी अपनी ही अंतर्दशा का काल है। इस समय मनुष्य सुनीति सीख कर कौत्सि लाभ करता है और स्त्री द्वारा सुख हवि और अर्थलाभ होता है।

शुक्र की दशामें १ वर्ष २ मास रविकी अंतर्दशा का काल है इस समय मनुष्य की चक्षुरोग, वधन, महाभय और सब विषयोंमें अमङ्गल होता है।

शुक्र की दशामें २ वर्ष ११ मास चन्द्र की अंतर्दशा-

का काल है। इस समय मनुष्य की नख, दंत और मस्तकमें पोड़ा होती है तथा वस्तुधर्म के साथ सर्वदा विवाद उपस्थित होता है।

शुक्र की दशामें १ वर्ष ६ मास २० दिन मङ्गल की अंतर्दशा का काल है। इस समय मनुष्य की उत्तमा स्त्री और भूमि-लाभ होता है तथा वीर्य की वृद्धि होती है।

शुक्र की दशामें ३ वर्ष ३ मास २० दिन बुध की अन्तर्दशा का काल है। इस दशामें उत्तमा स्त्रीलाभ, धन धान्यादि सम्मान, शरीरको पुष्टि और स्मरणशक्तिकी वृद्धि होती है।

शुक्र की दशामें १ वर्ष ११ मास १० दिन शनिकी अंतर्दशा का काल है। इस समय मनुष्य उत्तम नगरमें, अत्यन्त मनोहर घरमें, सुन्दरी स्त्री के साथ लीड़ा कीतुक पादि कामोद प्रमोद रहता है तथा शत्रुनाश और मित्रलाभ होता है।

शुक्र की दशामें ३ वर्ष ८ मास, २० हस्त की अंतर्दशा का काल है। इस दशामें मनुष्य उत्तमा स्त्री और धन धान्य लाभ करता है, तथा सर्वदा वस्तुधर्म में चिन्तित हो कर सुखसे समय बिताता है।

शुक्र की दशामें २ वर्ष ४ मास राहु की अन्तर्दशा का काल है। इस समय विदेश गमन, दुःख, अन्तःशक्ति के साथ समामम और पापकर्ममें अतुराग होता है।

इन सब ग्रहों की अन्तर्दशा के अनुसार फलाफल स्थिर होता है तथा दशाकालों में ग्रहों की वक्रावली के ऊपर फलाफल निर्भर करता है।

हरगौरीदशा—हरगौरीदशा को गणमास सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, राहु, हस्त, शनि, बुध, केतु और शुक्र इस प्रणाली द्वारा ग्रहों की गणना करनी होती है। इस दशामें समस्त ग्रहों की दशाभोग के काल की समष्टि १२० वर्ष है। इस दशा की गणना करते समय हस्तिकामें जे कर पूर्व फलनुभो तक के नौ नक्षत्रोंमें सूर्यादि नक्षत्र की दशा का आरम्भ होता है। जो छे उत्तरफलनुभो और उत्तराषाढासे नौ नक्षत्रोंमें एक एक ग्रह की दशा का आरम्भ हुआ करता है। शुक्लपक्षमें जात व्यक्तिके सम्बन्धमें इसी तरह हस्तिका नक्षत्रसे गणना करके दशा के आरम्भ का निरूपण किया जाता है। कृष्ण पक्षमें जात व्यक्तिके

मध्यम दशमूलतैल—कटु, तेज ४ सेर, कायायन दशमूल, करञ्जबीज, सन्धालू का पत्र, जयन्तोपल, धुसूर-पत्र प्रत्येक ४६ पल, जल ६४ सेर, श्रेय १६ सेर, कल्पाय ताप द्रव्य प्रत्येक ६ तोला। इसका सेवन करनेसे शिरो रोग नष्ट हो जाता है।

वृषदशमूलतैल—कटु, तेज ४ सेर, कायायन दशमूल प्रत्येक १० पल, जल ६४ सेर, श्रेय ८ सेर, अदरकका रस ४ सेर, कल्पाय पोषण, विपरासून, चर्द, चोतामूल, मीठ, त्रिकटु, जीरा, कणजीरा, मफेद मरसो, सैन्धव, यवक्षार, निमोय, इक्षुदो, दाक्षदो प्रत्येक २ तोला, पाकका जल ८ सेर। यह तैल चर्मरोग और नसमें ध्वस्त होना है। इससे शिरोरोग और अर्धज्वरगत माना प्रकारके कष्ट दूर हो जाते हैं।

दूसरे प्रकारका वृषदशमूलतैल—कटु, तेज १६ सेर, कायके लिये दशमूल १२४ सेर, श्रेय १६ सेर, धुसूरपत्र १२४ सेर, सन्धालू का पत्र १२४ सेर, जल ६४ सेर, श्रेय १६ सेर, चूर्णके लिये वासकमूलको जाल, वच, देवदारु, कचूर, रास्ना, यष्टिमधु, मिर्च, पोषण, मीठ, कणजीरा, कायफल, करञ्जबीज, कुट, इसमोको जाल, जंगलीसेम, चोतामूल प्रत्येक ८ तोला। इसका व्यवहार करनेसे कर्णशूल, शिरःशूल और नेत्रशूल तुरन्त हो दूर हो जाता है।

महादशमूलतैल—कटु, तेज १६ सेर, काढ़ेके लिये दशमूल १२४ सेर, जल ६४ सेर, श्रेय १६ सेर, बिलीरेका रस १६ सेर, अदरकका रस १६ सेर, धतूरेका रस १६ सेर; चूर्णके लिये पोषण, कुटकी, करञ्जबीज, कणजीरा, जैतमपत्र, वच, मीठ, चोतामूल, कचूर, देवदारु, रास्ना, धुरधुर, कायफल, सन्धालू का पत्र, चर्द, गेहमदी, विपरासून, शुक्लमूला, भजवायन, जीरा, कुट, वन-भजवायन, विहङ्गकमूल प्रत्येक १ पल। इस तैलके सेवन करनेसे कफ, खाँसी और गिरका रोग चंगा हो जाता है। यह प्रत्यक्षमें फल देनावाला है। शिरके रोगमें यह एक प्रधान तैल है।

दशमूलचण्डी—स्वरस शोधभेद। इसकी प्रसुतप्रणाली इस प्रकार है—१२ तोला घनमें २ तोला दशमूल डाल कर आढ़ा बनाते हैं। ८ तोला जल वच जाने पर छे

वतार सेते हैं। पीछे उसमें पाषाणोला सौंठका चूर्ण डाल देते हैं। इसके सेवन करनेसे स्वरान्तिमार और शोधके साथ ग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है। (भैषज्यर०) दशमूलानिजाय (सं० पु०) स्वरनायक, शोधवधियेप। प्रसुत प्रणाली—बिलका, किलका, गंभारी, सोना-पाठा, श्लोनाक, गनियारी, जयन्ती, गोखरू, भटकटेया, छहती, मरिचन, चाकूत्या, रास्ना, पोषण, विपरासून, कुटकी, मीठ, चिरायना, मोथा, गुलज, गुलशकरी, दाख, दुरानमा और शतमूली इन सबका काय सेवन करनेसे वातजनित स्वर तथा अन्य प्रकारके उपद्रव जाते रहते हैं।

दशमूलारिष्ट (सं० पु०) वाजीकरणधिकारोक्त शोध-भेद। प्रसुत-प्रणाली—दशमूल प्रत्येक ५ पल, चोतामूल २५ पल, कुड़ २५ पल, लोध २० पल, गुलज २० पल, चावना १६ पल, दुरानमा १२ पल, खैर, विहङ्ग, इक्षु प्रत्येक ८ पल, कटु, मञ्जिष्ठा, देवदारु, विहङ्ग, यष्टिमधु, कञ्जिका, निर्मली, बहेड़ा, पुनःवचा, चर्द, जटामांघो, प्रियङ्गु, घनशमूल, कणजीरा, निमोय, रेणुक, रास्ना, पोषण, सुपारी, कचूर, इक्षुदो, सुफा, पल्लकाष्ठ, नागेश्वर, मोथा, इन्द्रजो, ककटशुद्धी, लोवक, कटपभक, मेद, महा-मेद, कंकोल, चौरकंकोला, कटहि, छवि प्रत्येक २ पल, पाकके लिए लवण समुदायका ८ गुना जल, श्रेय चतुर्थीय, दाख ६० पल, जल १० सेर, श्रेय २२५ सेर। इन दोनों काढ़ेको एक साथ मिला कर मछोके बरतनमें रखते हैं और पीछे मधु ४ सेर, गुड़ ५० सेर, धवईला फूल १ पल, कंकोल, गुलशकरी, रत्नचन्दन, जायफल, लवङ्ग, दारुचोनी, श्लाघयो, तेजपत्र, नागेश्वर, पोषण प्रत्येक २ पल और शृगनाभि ॥ तोला इन सबको एक साथ मिला कर उस मछोके बरतनमें डाल देते हैं। बाद बरतनको ठक कर एक मास तक जमीनमें गाढ़ रखते हैं। पीछे उसमें निर्मली फल दे कर रसको साफ करते हैं, यह परिष्ट, ग्रहणी, चर्द, वातव्याधि, श्लान, काष्ठ, घातुचय और मेह आदि रोगोंमें विनिये उपकारी है। यह चतुर्थीय पुष्टिजनक, बलकर, शक्रवर्धक और कामोद्दीपक माना गया है।

दशमूलतैल (सं० को०) शोधिय नायक तैल शोध-

मन्थनेमें पश्चिमोत्तम गणना करके किम नक्षत्रमें लग्न होनेमें किम ग्रहकी दशा पड़ने होगी इसका नियम किया जाता है।

हरमोरीकी दशामें ६ वर्ष रविको दशा है। दोहे चन्द्रमाकी दशा १० वर्ष, मङ्गलकी ७ वर्ष, शङ्कूकी १८ वर्ष, हस्तमासिकी १८ वर्ष, जिनकी १० वर्ष, बुधकी १६ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष और शुककी २० वर्ष दशाका भोगकाल है। जिस ग्रहकी दशामें जिस ग्रहको चतुर्दशाका नियम करना होगा, उन दो ग्रहोंकी दशावर्ग मन्थनाकी परस्पर गुणा करके गुणनफलको दशमें माग देते हैं, भागफल जितना होता है उतना सहोना होगा और फिर पञ्चविंशति २५ से गुणा करके दशमें भाग दे कर भागफल जितना होता है, उतना दिन होगा और इसे भी चतुर्दशाका भोगकाल मानना चाहिये। इसी प्रकार हम दशाको चतुर्दशाका निरूपण किया जाता है।

विंशोत्तरी दशा—इस विंशोत्तरी दशामें पड़ने बुधकी, पीछे चन्द्र, मङ्गल, शङ्कू, हस्तमासिक, जिन, बुध, केतु और शुक इस प्रकार क्रमशः दूसरे दूसरे परवर्ती पक्षोंकी दशाका भोग है। इस विंशोत्तरी दशाके मतमें रविको ६ वर्ष, चन्द्रको १० वर्ष, मङ्गलकी ७ वर्ष, शङ्कूकी १८ वर्ष, हस्तमासिकी १६ वर्ष, बुधकी १० वर्ष, केतुकी ७ वर्ष और शुककी २० वर्ष दशाकी भोग प्रथम है। इस सब पक्षोंके दशाकालको समष्टि १२० वर्ष है। जिस मन्थनकी राशिमें समस्त ग्रहोंका दशा-भोग रहता है, वह समुच्च १२० वर्षतक होता है।

इस दशामें और लक्षिका मन्थनमें जिस दशाका चारम्भ होता है, उसमें विवेचता यह है, कि जिस मन्थनका लक्षिका उत्तरफल्गुनी पक्षया उत्तराषाढा-मन्थनमें जन्म होता है, उसको पहले रविको दशा होगी है। इसी प्रकार रोहिणी, हस्ता वा श्रवणमन्थनमें जन्म होनेमें चन्द्रकी दशा होता है। मृगशिरा, चित्रा और धनिष्ठा-मन्थनमें मङ्गलकी; चार्द्रा, स्वाती वा श्रवण-मन्थनमें शङ्कूकी; पुष्या, चतुर्षाढा और उत्तरभाद्रपदमें बुधकी; धनिष्ठा, ज्येष्ठा और श्रवणमें तया मूला

वा पश्चिमोत्तम फल्गुनी, पूर्वाषाढा वा पूर्व-भाद्रपदमें बुधकी और मघा वा मरघो मन्थनमें जन्म होनेमें शुककी दशा पड़ने होगी। पीछे खपरि जिते बुध क्रमावृत्तमें दूसरे दूसरे परवर्ती पक्षोंकी दशा होगी।

विंशोत्तरी दशामें इसी प्रकार चतुर्दशाके कालका निरूपण करना होता है। जिस ग्रहकी दशामें जिस ग्रहको चतुर्दशा स्थिर करना होगा, उन दो पक्षोंके दशाभोगको वर्ष मन्थनाकी परस्पर गुणा करके १२० से भाग देते हैं, भागफल जितना होगा यही चतुर्दशाका वर्ष है। पञ्चविंशति २५ से गुणा करके गुणनफलको १२० से भाग दे कर भागफल जो होगा, वह सहोना होगा। इसी प्रकार दश्यादि भी स्थिर करना होता है।

षाद्रादि षटोत्तरी दशा—षटोत्तरी दशाको गणनाको प्रयोगों प्रायः पूर्वोक्त मन्थनकी दशाको नाई है। किन्तु प्रथम यह है, कि मन्थनको दशामें लक्षिकामें चारम्भ करके मृगशिरा पक्षकी दशा नियम करने होती है, लेकिन हम दशामें चार्द्रामन्थनमें चारम्भ करके दशा स्थिर करने होगी। यथा—

षाद्रादि षटोत्तरी दशा।

जन्ममन्थन	दशा	दशाभोगका काल
षाद्रा, पुनर्वसु, पुष्या, चर्षाया	रविका	६ वर्ष।
मघा, पूर्व फल्गुनी, उत्तरफल्गुनी	चन्द्रका	१५ वर्ष।
हस्ता, चित्रा, स्वाती, विशाखा	मङ्गलका	८ वर्ष
चतुर्षाढा, ज्येष्ठा, मूला	बुधका	१० वर्ष
पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, पश्चिमिन्तु, श्रवणा	शनिका	१० वर्ष।

भेद, एक प्रकारका तेल जिसके सेवन करनेसे बहरापन जाता रहता है। इसकी प्रसुत प्रणाली यों है—तिन तैल ४ सेर, काढ़े के लिये मिश्रित दशमूल १२। येर, जल ६४ सेर, शीघ १६ सेर, दशमूलका चूर्ण १ सेर। यह दशमूलतेल दधिरता नाश करनेमें रामबाण है।

दशमोलि (सं० पु०) रावण।

दशयोगभङ्ग (सं० पु०) दशानां भङ्गानां योगः दशयोगः तस्य भङ्गः। 'स्कारकार्यं न चतुर्वैधविशेष। विवाहादि कोई संस्कार काम दशयोगभङ्गमें नहीं करना चाहिये। जिस नक्षत्रमें सूर्य हो और जिस नक्षत्रमें संस्कारादि काम होनिवाला हो उन दोनों नक्षत्रों के जो स्थान गणना क्रममें हो उन्हें जोड़ देते हैं। यदि जोड़ पड़कर चार, ग्यारह, सत्कोस, सत्ताईस, अठारह तथा दोस भाग, तो दशयोगभङ्ग होगा। (ज्योतिषसार०)

इस दशयोगभङ्गमें कोई कोई प्रतिप्रसव स्त्रीकार करते हैं। यह प्रतिप्रसव भगव्यापत्तमें किया जाता है। जिस नक्षत्रमें दशयोग विघ्न होगा, उसके भागपादमें सूर्य के रहनेसे चतुर्थो घट्टित, द्वितीय पादमें रहनेसे तृतीय पाद दूषित, चतुर्थ पादमें रहनेसे प्रथम पाद दूषित और प्रथम तथा तृतीय पादमें रहनेसे द्वितीय पाद दूषित होता है। इन सब दुष्टपादोंको छोड़ कर अन्यथा पादोंमें सभी कार्य किये जाते हैं। (ज्योतिषसार०)

इस दशयोगभङ्गमें गर्भाधानादिके ले कर विवाह पर्यन्त दश प्रकारके संस्कारोंका करना बिलकुल निषेध है।

दशरथ (सं० पु०) दशसु दिवस रथ, रथगतियं रथ। १ इच्छाकुवशोय एक राजा, अयोध्याधिपति, रामचन्द्रके पिता। पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें दशरथको उत्पत्ति-कथा इस प्रकार लिखी है—सौराष्ट्र देशमें भिक्षु नामक एक ब्राह्मण रहते थे। उनकी स्त्री उनसे हमेशा भैरवहूती रहती थी, यहाँ तक कि एक दिन उसने भावहत्या कर डाली। इस पापसे वह प्रेत हो गई और इधर उधर घूमने लगी। एक दिन धर्मदत्त नामक किसी ब्राह्मणको देख कर वह प्रेत-ब्राह्मणी उसके समीप गई। संयोगवश धर्मदत्तके हाथसे तुलसीपत्रोंका जल उसके शरीर पर टपक पड़ा जिससे उसके पापका बोझ कुछ कम गया।

द्विजपत्नीने ब्राह्मणको प्रणाम कर कहा, 'भाप जगया मुझे कहिए कि अभी मैं कौनसा काम करूँ जिससे मेरा पाप दूर हो जाय।' इस पर धर्मदत्तने कहा, 'तुमने बहुत पाप किया है, अतः कोई पुण्यधर्म करनेका तुम्हें अधिकार नहीं है। जब तुमने हमारी गरण ली है, तो तुम्हें उधार करना हमारा अवश्य कर्त्तव्य है। मैंने आज तक जितने कार्त्तिकव्रत किये हैं, उनमेंमें भाधा तुम्हें प्रदान किया।' इतना कह कर ब्राह्मणने उसे तुलसी मिश्रित जल दिया और हादशाक्षरमन्त्र कढ़ सुनाया। बाद वह द्विजपत्नी दिव्यरूपधारिणी हो गई। उसी समय विष्णुके दूत दिव्यरथ ले कर वहाँ पहुँच गये और द्विजपत्नीको उस रथ पर बिठा लिया। धर्मदत्त यह देख कर बहुत विस्मित हुए। तब विष्णुदूतने उनसे कहा, 'भाप चिन्ता न करे, आपके समान पुण्यवान् कोई देवमेंमें नहीं आता। इस जन्मके बाद आप श्री ममैत वैकुण्ठको जायेंगे। वहाँ बहुत दिन तक रह कर जब पुण्यका खय हो जायगा, तब सूर्यवंशमें दशरथ नामके राजा होंगे। इस कन्याको ले कर आपके तीन स्त्रियाँ होंगी। स्वयं भगवान् विष्णु आपको पिताके जैसा स्त्रीकार करेंगे।' (पद्म० उत्तरख०)

दशरथ सूर्यवंशीय महाराज पञ्चके पुत्र थे। यों तो इनके पनेक स्त्रियाँ थीं, पर कौगल्या, केकयी और सुमित्रा ये ही तीन प्रधान थीं। एक दिन ये शब्देवैधी-बाणकी परीक्षा करनेके लिये बाधो रातको यमुनाके किनारे गये। वहाँ इन्होंने शब्द पर मत्प्य करके बाण फेंका, जिससे अश्वसुनिका पुत्र मारा गया। इस पर अश्वसुनिने दशरथको शाप दिया—'मैं जिस प्रकार पुत्र-शोकसे कातर हो कर प्राणत्याग करता हूँ, तुम्हें भी उसी प्रकार पुत्रके विरहसे कातर हो कर मरना पड़ेगा।' दशरथ ब्राह्मणपुत्रका वध कर दुःखितचित्तसे घरको लौटे। बहुत दिन तक पुत्र नहीं होनेके कारण महा-क्लेशसे इनका समय व्यतीत होने लगा। पीछे वशिष्ठके परामर्शसे इन्होंने वाराणसी हारा अश्वत्थको बुलवा कर पुत्रेष्टि यज्ञ किया। यज्ञोप चरुकी इन्होंने कौगल्या और केकयीको दे दिया। केकयी और कौगल्याने अपने अपने चरुसे एक एक खण्ड सुमित्राको दिया। इसीसे कौगल्यासे

जन्मनक्षत्र	दशा	दशामोयका काल
भनिडा शतमिया पूर्वभाद्रपद	हृहस्पतिका	१८ वर्ष ।
उत्तरभाद्रपद रेवती श्रविणी भरणी	राहुका	१२ वर्ष ।
कृत्तिका रोहिणी मृगशिरा	शुक्रका	२१ वर्ष ।

इसी प्रकार षटोत्तरी दशा स्थिर करनी होगी । अन्तर प्रत्यस्त दशाका काल नाचत्रिकोदशाके जैसा होगा । केषक कहीं कहीं फलाफलमें फर्क पड़ेगा ।

त्रिंशोत्तरी दशाकी गणना इस प्रकार करनी चाहिये । षटोत्तरी नाचत्रिकी दशाकी नाई जन्मके नक्षत्रानुसार पहले दशाका निरूपण करना होगा । किवल दशामोयक कालमें फर्क पड़ता है, नाचत्रिकीदशामें रविका ६ वर्ष, चन्द्रका १५ वर्ष है इत्यादि । इस दशाके नक्षत्रोंमें जन्म होनेमें जिन ग्रहकी दशा होगी, उस ग्रहके दशामोयके कालमें उन सब नक्षत्रोंका भाग देनेसे जितना वर्ष और जितना महीना होगा, उतना ही वर्ष और महीना उस ग्रहके दशामोयका काल जानना होगा ।

यथा रविका २ वर्ष, चन्द्रका १ वर्ष ८ मास, मङ्गलका २ वर्ष ८ मास, बुधका ५ वर्ष ३ मास, शनिका ३ वर्ष ४ मास, हृहस्पतिका ४ वर्ष ८ मास, राहुका ४ वर्ष, शुक्रका ४ वर्ष ५ मास भोगकाल है ।

इन सब दशाओंकी समष्टि ३० वर्ष है । अर्थात् ३० वर्षमें समस्त ग्रहोंका दशामोय गेय होता है । दशामोय गेय हो जाने पर पुनः उन सब ग्रहोंका दशामोय द्वाब करता है ।

त्रिशोत्तरी दशालेख—जिनका जिस नक्षत्रमें जन्म होगा, उस नक्षत्रावधि दशाकी जन्मदशा, जन्म नक्षत्रसे दशम नक्षत्रको दशाकी कर्मदशा और जन्म नक्षत्रसे षोडश नक्षत्रकी दशाकी धाधान दशा कहते हैं । जिस वर्षमें मनुष्यकी जन्म-दशामें रवि वा हृहस्पति, कर्म

दशामें राहु वा रवि और धाधान-दशामें बुध वा शनि अधिपति हों, उस वर्षमें उसकी मृत्यु होती है ।

जिसो मनुष्यका कृत्तिका नक्षत्रमें जन्म होनेमें प्रथम २ वर्ष रविकी दशा, पछि ५ वर्ष ८ मास तक चन्द्रकी दशा, ८ वर्ष ५ मास तक मङ्गलकी दशा, १२ वर्ष ८ मास बुधकी दशा, बाद १६ वर्ष तक शनिकी दशा, २० वर्ष ८ मास तक हृहस्पतिकी दशा, २४ वर्ष ८ मास राहुकी दशा और उसके बाद ३० वर्ष तक शुक्रकी दशा होगी । इस प्रकार ३० वर्ष तक षड्गण दशा-भोग करेंगे, पछि अर्थात् ३० वर्ष के बाद पुनः उन सब ग्रहोंका दशामोय होगा ।

जिनका जो जन्मनक्षत्र होगा, वह तदनुसार इसो प्रकार दशाका काल और ग्रहका निर्णय कर लें । बाद उसके कर्मनक्षत्रको दशाकी गणना करनी होगी । यथा—जिसका कृत्तिका नक्षत्रमें जन्म हुआ है, उधका कर्मनक्षत्र १२ उत्तरफल्गुनी है । पहले मङ्गलका दशा और दशामोयका काल २ वर्ष ८ मासमें ४ वर्ष ३ मास, बुधकी दशा जोड़नेसे ६ वर्ष ११ मास होता है । पछि १० वर्ष ३ मास शनिकी दशा और उसके बाद १५ वर्ष तक हृहस्पतिकी दशा है । फिर उसके बाद १५ वर्ष तक राहुकी दशा, २४ वर्ष ३ मास शुक्रकी दशा, २६ वर्ष ३ मास तक रविकी दशा और उसके बाद ३० वर्ष तक चन्द्रकी दशा है ।

इसके अनन्तर उस मनुष्यके धाधान अर्थात् षोडश नक्षत्रकी गणना करनी होगी ।

कृत्तिकानक्षत्रमें जातश्रुतिका ज्येष्ठानक्षत्र हो धाधान नक्षत्र होगा । इस नक्षत्रमें पहले १ वर्ष ४ मास शनिकी दशा, पीछे ८ वर्ष १ मास तक हृहस्पतिकी दशा, १२ वर्ष १ मास तक राहुकी दशा, १७ वर्ष ४ मास तक शुक्रकी दशा, १८ वर्ष ४ मास तक रविकी दशा, २३ वर्ष १ मास तक चन्द्रकी दशा, बाद २५ वर्ष ८ मास तक मङ्गलकी दशा और उसके बाद ३० वर्ष तक बुधकी दशा होगी ।

इस प्रकार प्रति नक्षत्रमें जातश्रुतिके जन्म, कर्म और धाधान नक्षत्रकी दशाकी गणना करनी चाहिये । किसी मनुष्यके जिस वर्षमें जन्मनक्षत्रका दशाधिपति

राम, क्रिष्णो मे भरत तथा सुमित्रा मे नम्रमणः पौर
शत्रुघ्न उग्रसेन द्रुप । कौगन्धारे गान्धा नामको
एक कन्या भी थी, जिसे दशरथने लोमपादको
दत्ताश्रुपति दिया था । राम जब बड़े हुए, तब
मन्त्रे राज्यमिहामन पर अभिषिक्त करनेका प्रायो-
न्य होने लगा । कमल रामचन्द्रजीको राजगद्दी
मिलेगी, यह शत्रुघ्न मन्त्ररा द्वारा क्रिष्णोको लगे । इस पर
क्रिष्णोने दशरथसे पूर्व ही दो वर माँगे । पहला रामको
चोट-वर्षका वनवास और दूसरा भरतको राज्य ।
दशरथ अपने प्रतिष्ठाको धामन करनेके लिये वैसा ही
करनेको बाध्य हुए । रामसे वन चले जाने पर राजा
दशरथ बहुत दुःखित हुए और पुत्रवियोगसे ही साधो
रातकी पल्लकी प्राप्त हुए । पीछे इनको मृतदेह तैल-
द्रोणीर्मन्त्रों गड़े और ननिहामने भरतने पा कर मन्त्रेष्टि-
क्रिया की । राम देगो ।

२ शानिकके पुत्र, जिनके पुत्रका नाम ऐडुवीहो था
(भाग ०) ६ मन्त्राट, पञ्चोक्तके पुत्र । प्रियदर्शी देखो ।

दशरथसुत (सं० पु०) दशरथस्य सुतः ६-तत् । राम ।
दशरथसुत (सं० पु०) दशरथस्य सुतानि अष्ट । महस्त्र-
किरण, सूर्य ।

दशरात्र (सं० पु०) दशभि रात्रिभि निर्हृतः ठञ् । तस्य
शुक्ति तद्विनाशे हिमो अच् समा० । १ दशरात्रमात्र
यागमेद, एक यज्ञ जो दश दिनोंमें समाप्त होता है ।
(स्त्री०) २ दशरात्र रात्रिना समाहारः । रात्रिदशक, दश
रात । मन्त्रावाचक शब्दके बाद रात्रि शब्द रहनेसे
समाहारविद्यु समागममें स्त्रीबलिक होता है ।

दशरूपक (सं० स्त्री०) दशरूपकाणि दृश्यकान्यानि प्रति-
पाद्यन्ते सङ्गद्य अच् । नाटकादि लक्षण प्रतिपादक
ग्रन्थभेद । इस ग्रन्थमें दशकाव्यके लक्षण और नायक
नायिका पादिके लक्षण तथा नाटकके दोष गुण आदि
विशेष रूपसे वर्णनाये गये हैं ।

दशरथभृत् (सं० पु०) दश-मन्त्रकूर्मवराहदोनि रूपाधि-
विभर्तति भृ-जिप्-तुगामस्य । विष्णु । दशरथार देखो ।
दशरथलक्ष्म (सं० पु०) दश लक्ष्मणानि अष्ट । -धर्म ।
धर्मके दश लक्षण हैं, इसीसे इसे दशलक्षण कहते हैं ।
धर्म, क्षमा, दम, शस्त्रेय, शौच, दम्भनिग्रह, धी,

विद्या, मन्त्र और दक्षिण ये दश धर्मके लक्षण हैं ।

दशवक्त्र (सं० पु०) दश वक्त्राणि अष्ट । रावण ।

दशवाजिन् (सं० पु०) दश वाजिनो अष्टे अष्ट । चन्द्रमा ।
दशवार्षिक (सं० स्त्री०) दशसु वर्षसु भवः ठञ् । उत्तर-
पद दृढिः । दशवर्षभय, जो दश वर्षमें होता हो ।

दशवाह (सं० पु०) महादेव । (भाग १३-१०१५०)

दशविध (सं० स्त्री०) दशविधा प्रकारा अष्ट । दश
प्रकार, दश तरह ।

दशवीर (सं० स्त्री०) दशवीरा अष्ट । मन्त्रभेद, एक
सत्र या यज्ञका नाम ।

दशवज्र (सं० पु०) अष्टभिभेद, एक ऋषिका नाम ।

दशगत (सं० स्त्री०) दशगुणितं शतं । १ दश-
हजार । २ तत्संख्येय, यज्ञ जिसमें हजारको
मंस्या हो ।

दशगतनयन (सं० पु०) दशगतं नयनानि अष्ट । इन्द्र ।

दशगतरश्मि (सं० पु०) दशगतं महस्त्रं रश्मयोऽष्ट ।
सूर्य ।

दशगताक्ष (सं० पु०) दशगतं अक्षौणि अष्ट । इन्द्र ।

दशगताहि (सं० स्त्री०) दशगतं चक्षुः अष्ट । १ शत-
मूलो । २ शतावरी ।

दशगोर्ष (सं० पु०) १ रावण । २ एक प्रकारका अस्त्र
जिससे चलाये हुए पक्ष निष्कल क्रिये जाते हैं ।

दशसत्रा (सं० स्त्री०) दश च मन्त्र च अष्टा विष्णु तो ।
मामवेदके विन्यासके भेदसे एक विदुतिका नाम ।

दशमाहस्त्र (सं० स्त्री०) दशगुणितं महस्त्रं परिमाणस्य
अष्ट उत्तरपददृढिः । १ दशगुणित महस्त्र, अष्टुत, दश
हजार । २ तत्संख्येय, उत्तरीको मंस्याश्रीका ।

दशमाहस्त्रिक (सं० स्त्री०) दश महस्त्राणां प्रमाणं अष्ट-
ततो ठञ् उत्तरपददृढिः । अष्टुत परिमित माणादि,
दश हजारका डिग्रा ।

दशहरा (सं० स्त्री०) दश अष्टतोपादानि सादि दश-
विधानि दशवज्रकृतानि वा पापानि हरतीति अष्ट-
तमटाप । कष्ट मानको हटादगमो । इसी दिन गङ्गाका
अस्त्र हुआ था ।

कष्ट मानको हटादगमो मन्त्रमारकी हटा-
नक्षत्रमें गङ्गा स्वर्गमें मन्त्रकोक पर पड़ारी थी । इसीसे

मनुष्याधी फल होगा। तिथिके परित्याग होने पर फिर वैसे फल नहीं होता, तब फिर गणना करके फल निकालना होगा।

योगिनी दशा—खीय जन्मनक्षत्रमें तीन जोड़ कर ८८ भाग देनेसे जो अवशिष्ट रहेगा, उससे चक्रके अनुसार योगिनी दशा मान ली जायगी। १ अवशिष्ट रहनेसे मङ्गलाकी दशामें, २ रहनेसे पिङ्गलाकी दशामें, ३ रहनेसे धन्याकी दशामें ४ रहनेसे आश्लेषाकी दशामें, ५ रहनेसे मृगशिराकी दशामें, ६ रहनेसे कर्कटकी दशामें, ७ रहनेसे मिथुनकी दशामें और ८ रहनेसे शङ्खकी दशामें जन्म होगा।

मङ्गलाका दशामोग काल १ वर्ष, पिङ्गलाका २ वर्ष, धन्याका ३ वर्ष, आश्लेषाका ४ वर्ष, मृगशिराका ५ वर्ष, कर्कटका ६ वर्ष, मिथुनका ७ वर्ष और शङ्खका ८ वर्ष है।

जन्मनक्षत्रानुसार योगिनी दशाका विभाग—आर्द्रा, चित्रा और श्रवणानक्षत्रमें जन्म होनेसे पहले मङ्गलाकी दशा; पुनर्वसु, स्वाती और धनिष्ठानक्षत्रमें जन्म होनेसे पिङ्गलाकी; पुष्या, विशाखा और शतभिषानक्षत्रमें धन्याकी; अश्लेषा, ज्येष्ठा, मूला और पूर्वाषाढानक्षत्रमें आश्लेषाकी, मघा, ज्येष्ठा और उत्तराषाढानक्षत्रमें मृगशिराकी; कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, मूला और ऐश्वीनक्षत्रमें कर्कटकी; रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी और पूर्वाषाढानक्षत्रमें मिथुनकी, मृगशिरा, ज्येष्ठा और उत्तराषाढानक्षत्रमें जन्म होनेसे शङ्खकी योगिनी दशा होगी। पहले जन्मनक्षत्रानुसार दशाका निर्णय करके जन्मनक्षत्रका मान देख लिया करते हैं। पहले उस नक्षत्रका जितना दण्ड भुक्त हुआ है तथा जितना दण्ड बच रहा है, उससे अनुपात करके मोगका काल निर्णय करते हैं। मङ्गलायोगिनी मनुष्याका सर्वदा मङ्गल करती है, उनको दशामें प्रथम, यशस्व और सब विषयोंमें शुभ होता है।

पिङ्गलायोगिनी सर्वदा मनुष्यों को तरह तरहका कष्ट दिया करती है। इसको दशामें मनुष्य दुःख और धनादिका नाश होता है।

सर्वकल्याणकारिणी धन्यायोगिनीको दशामें सुख,

दुःख, श्रीवृद्धि, प्रबंध, सम्मान और धनधान्यादि प्राप्त होता है।

आश्लेषायोगिनी हमेशा मनुष्यों को दुःख दिया करती है। इनको दशामें विदेश गमन, दुःख, कार्यनाश, मन-घोड़ा आदि नाना प्रकारके क्लेश होते हैं।

मृगशिरायोगिनीकी दशामें सुख, लाभ, यश, धर्म-भोग, स्त्री, पुत्र योग सन्तोष होता है।

कर्कटयोगिनी सब समय मनुष्यों के शोककी वड़ाती है। इनको दशामें तरह तरहके रोग, दुःख, भय, शोक, धननाश, शत्रु, भय और मनस्ताप दुष्सा करता है।

मिथुनयोगिनीको दशामें धन, धान्य, यश, धर्म, सुख, राजपूजा और जन नाधारणसे आदर प्राप्त होता है और सर्व कार्यको सिद्धि होती है।

शङ्खयोगिनी दशामें जीवनका डर रहता है। यदि किसी तरह जीवन रह भोग जाय, तो वह सर्वदा रोग, शोक, मनःपोड़ा और नाना प्रकारके शङ्खसे घिरा रहता है।

योगिगणदशा—जितना वर्ष जिसकी स्थूलदशा होगी, उतने ही चक्रकी उन चक्रोंसे गुणा करके गुणन फलको ३३५ भाग देनेसे जितना भागफल होता है, उतना ही वर्ष उस योगिनीका भवत्तद्दशकाल होगा। जो सब योगिनी शुभ फल देती है, भवत्तद्दशामें भी वे शुभफल ही देंगी।

लाभितद्दशा—दशाज्ञान द्वारा सब प्राणियोंका समास फलका समय जाना जाता है। इससे दशाका निर्णय करना आवश्यक है। वायुशरीर गणना-प्रणाली द्वारा गणना करके जिस चक्रको जितना वर्ष निर्णीत होगा उस चक्रका दशकाल उतना ही वर्ष समझना चाहिये। यहगण अवस्थानुसार अपने अपने दशकालमें शुभाशुभ फल देते हैं। लग्न, रवि और चन्द्र इन तीनोंमें जो धन-धान्य होगा, उसकी दशा पहले होगी। पक्षि जिनको दशा होगी, उसके केन्द्रस्थानमें जो यह रहेगा, उसको दशा समझनी चाहिये।

केन्द्रस्थानमें यदि दो तीन यह रहें, तो उनमेंसे जो यह चलवान् है पहले उसीको दशा होगी। पक्षि क्रमानुसार और दूसरे दूसरे की।

भुक्तोंने पृथ्वी पर उत्पातों आरंभ किया। देवताओंने इनके भत्याचारसे उत्प्रेक्षित हो पुनः विष्णु का स्तव कर उनसे कहा, 'हे प्रभो ! आप इस महावराह मूर्त्तिको मंदार कीजिये तथा इन सब उत्पीड़क प्राणियोंको भी मार डालिये।' इस पर विष्णुने जवाब दिया, 'एक बार को शक्ति मुझसे निकल गई है, उसे मैं मंदार नहीं कर सकता। उस शक्तिको दमन करनेके लिये उससे भी अधिक किसी दूसरी शक्तिकी आवश्यकता है। इनके लिये महादेव उपयुक्त ठहराये गये। देवताओंने भी उन्हें अधिकतर शक्ति समर्पित करनेके लिये अपने अपने शक्ति उन्हें प्रदान की। तब महादेवने चटपट महाकाय धरममूर्ति धारण कर महावराह और उसके वंशको विनाश कर पृथिवी प्राप्त की। दिग्भ्रम देखो।

४४^१ वृषिहावतार ।—हिरण्यकशिपु-ने ब्रह्मासे वर पाया था, कि क्या देवता, क्या मानव, क्या ऋषि प्राणी किसीने भी उसका नाश नहीं होगा और न तो जल, स्थल, जगत् वा आकाशमें जो उसको मृत्यु होगी। इस वरके प्रभावसे वह अपनेको अमर समझ देवताओंकी उपेक्षा तथा उनके प्रति भत्याचार करने लगे। वह इन्द्रादि देवता किसीको भी नहीं समझता तथा विष्णुके साथ द्वेषा, द्वेष रखता था। इसका पुत्र प्रजाद बहुत यचपलसे हो भगवद्भक्त था। इस कारण हिरण्यकशिपु उसके ऊपर बहुत विरक्त रहा करता था। प्रजादको हरिभक्तिये विचलित करनेके लिये हिरण्यकशिपुने पहले उसे अग्निमें हाथ पैर बांध करके जलमें और हाथोंके पैर तले पंक्ति दिया, किन्तु भगवान्की कृपासे प्रजादका वाग वीरता भी न हो सका। दैत्यपतिने जब विरक्त हो कर पूछा कि इस तरह विपद्में वह किस तरह रहा पाता है? तब प्रजादने उसे जवाब दिया कि भगवान् विष्णु, हो उसे उद्धार करते हैं। वे सर्वव्यापी, सर्वदर्शी और सर्वश्रेष्ठ हैं। इस पर दैत्यपतिने कहा, 'तुम्हारा हरि क्या सर्वव्यापी है? क्या वह इस समरप्रत्यक्षके खंभेमें भी है?' प्रजादने बहुत हृदयसे उत्तर दिया, 'अरु, भगवान् इसमें भी हैं।' तब दैत्यपतिने उसको बात पर विश्वास कर पुत्रको मियावादी बतलाया और हरिकी अपमानाये

विचलित करनेके लिये कहा, 'यच्छा हम अभी खम्भेकी दो खंड करते हैं, देखो, तुम्हारा हरि इसमें किस तरह है।' इतना कह कर दैत्यपतिने खम्भेसे खम्भेकी दो खण्ड कर डाला। आश्चर्यका विषय था, कि भगवान् भक्तवाक्य, भक्तविश्वास और भक्तके प्राण वचनिके लिये उसी समय बड़े भिंड़ और बड़े नराकार देह धारण कर उस खम्भेसे निकल पड़े और बिना उपेक्षा किये हुए उस दैत्यपतिके वाग खोंच कर उसे अपने दोनों कर पर रख लिया और नखोंने उसका कृत्ति फाड़ कर उसे मार डाला। उस समय मन्त्रा काल था। दैत्यपतिने इस तरह चटपट एक अभिमग्न जीवाकार मूर्त्तिके ऊपर मन्त्राके समय प्राण त्याग किये। ब्रह्मावाक्य भी सफल हुआ। शूद्रा और द्विगणकगु देखो।

भगवान्ने इसी तरह चौथे अवतारमें तृप्तिमूर्त्ति धारण कर भक्तकी प्राणरक्षा और पृथिवीकी देलकी व्यवस्था उद्धार किया।

५५ वामनावतार । तृप्तिहावतारमें जिस प्रजादको कथा कहो गई है, उसके दोष वल्लि बड़े धार्मिक थे। उनके धर्म और बुद्धिसे प्रसन्न हो कर भगवान्ने उन्हें त्रिशूलका अधिपति बनाया। इस पाधिपतयकी पा कर वे बड़े दानयोगी हो गये। उनके निकट कोई पर्याय विमुख नहीं होता था। उनके न्याय सुमासक और सुपासक भी एकसे एक थे। ऐसा सद्गुण स्वत्व रहने पर भी वे इतने गर्वित थे, कि देवता और ब्राह्मणकी ओर नजर भी नहीं उठाते थे। इस कारण देवताओंने उनसे अनन्त दुष्ट हो कर विष्णुको शरण लो। विष्णुने उन्हें शाखासित कर क्षयपूर्व औरस और अदितिके गर्भसे वामन रूपमें जन्मग्रहण किया। उपनयनके बाद वामन वल्लिके निकट दान पानकी इच्छासे गया। वल्लिके सुदृढाथ ब्राह्मण सन्तानकी अपने सामने प्रार्थिके रूपमें उपस्थित देख पूछा, 'हे दिज ! तुम क्या चाहते हो?' इस पर वामनने कहा 'मैं कद्रदृष्ट स्थापन कर तपस्याका पासन बनानेके लिये सिर्फ तीन कदम जमीन मांगता हूँ।' वल्लिकेले 'ऐसा वामान्य दान मेरे लिये उपहास कर है, तुम पास नगर पादिके लिये प्रार्थना करो।' तब वामनने कहा, 'मेरे अधिक प्रयो-

बुधको दशामें बुधग्रह यदि शुभ हो, तो सोख्य, दोख-
कर्म द्वारा मित्र, गुरु और ब्राह्मणसे धनलाभ होता है,
तथा बह पण्डित, प्रशंसित और कोर्त्तिभाजन होता है
और उसे कांसा, सोना, घोड़ा, जमीन, सौभाग्य और
सुख मिलता है। बुधग्रहके अशुभ रहनेसे मनुष्य उप-
हास, परसेवा, परित्यक्त, बन्धन, शोक और पीड़ाग्रस्त
रहता है।

बृहस्पतिके दशकालमें—यह ग्रह यदि शुभ हो, तो
विद्यादि गुण, सम्मान, प्रादुर्भाव, बुद्धि, कान्ति, प्रताप,
माहात्म्य और उद्यमादि द्वारा धनलाभ; सुवर्ण, अस्त्र, पुत्र,
हस्ती और वस्त्रलाभ तथा गुणवत् राजाके साथ प्रणय
और इनके स्नेहका प्राप्त होता है। बृहस्पतिके अशुभ
होनेसे धनक्षयके अतुल्यमानमें परित्यक्त, कर्ण पीड़ा और
अधार्मिकोंके साथ युद्ध होता है। शुकके दशामें
शुकके शुभ होनेसे मनुष्यके गीतागुण, धर्म, सुमन्त्रि
द्रव्य, अन्न, पानीय, वस्त्र, स्त्री, रत्न, शरीरकान्ति, अग्नि-
लपित द्रव्य, ज्ञान, प्रियवस्तु और बहु इन सबको वृद्धि
होती है तथा वह स्वयम्भूतमें कौशल्य और कृषिकार्य
द्वारा धन उपार्जन करता है। शुकके अशुभ होनेसे राजा,
व्याध और अधार्मिकके साथ अन्न तथा प्रिय वस्तुके
विनाश पर शोकप्राप्ति होती है। शनिके दशकालमें
शनिके शुभ होनेसे मनुष्यको गदहा, ऊँट, पक्षी और हस्त
स्त्री मिलती है तथा वह ग्राम, नगर और पुरी पर अवि-
कार जमा कर सम्मानलाभ करता है। शनि यदि अशुभ
हो, तो श्लेशा, बाहुकोप और मोह प्रभृति विपद् पड़ती
है, तन्द्रा, निद्रा, भालस्य और परित्यक्ति द्वारा क्लेश,
शूल, सन्तान, स्त्री इनसे अपमान तथा अशुद्धि और
पीड़ाजनित क्लेशभोग होता है। जो यह जन्मकालमें
शुभ रहेगा, वह दशकालमें भी शुभफल देगा, अशुभ
होनेसे अशुभ और मित्र होनेसे मित्रफल प्राप्त होता है।
सन्नाधिपति यहही दशके जैसा लग्नदशाका भी फल
होता है।

अशुके दशकालमें दशाधिपति और अन्तर्दशाधि-
पति दोनों ही फल देते हैं, किन्तु अन्तर्दशाधिपति यह
प्रदत्त फल ही मनुष्य भोग करता है।

योगिनी, वार्षिकी, नाचतिथी, शान्तिनी, मुकुन्दा,

विशोत्तरी, त्रिजोत्तरी, पताकी, हरगौरी चौग दिनदशा
दे ही दश दशा हैं। इनमेंसे मनुष्यगममें लग्नदशा, वेतामें
हरगौरी दशा, आपरमें योगिनी दशा और कस्मिमें एव-
मात्र नाचतिथी दशा ही प्रधान है। ज्योतिषियोंका
कहना है, कि पूर्वोक्त विवरण देव दशाफलकी गणना
करके जोवनके शुभाशुभका निर्णय किया जा सकता है।
दशाकर्ष (मं० पु०) दशायावत्काल आकर्षति तैत्तिरीक-
मिति आह्वय-पञ्च। १ प्रदोष, चिराग। २ ब्रह्माक्षत,
जपड़ेका क्षोर या चंचल।

दशाकर्षी (मं० पु०) दशाया आकर्षतीति दशा-क्षप
णिनि। प्रदोष, चिराग।

दशाक्षर (मं० क्षो०) दश अक्षराणि पादेऽत्र। १ पंक्ति-
नामक छन्दोभेद। (ति०) २ दशाक्षरयुक्त मन्त्रभेद
दशाक्षरयुगु (सं० पु०) भावप्रकाशात्त चोपधमेद। त्रिकटु,
चिता, त्रिफला, सुस्तक (मोथा) और शुग्गुल इनके
समान समान भागोंको पका कर खानेसे मेंढोटीप
तथा कफ और आमवातसे उत्पन्न समस्त रोग नष्ट होते
हैं। (भावप्र०)

दशाक्षधूप (मं० पु०) १ अथग्रह पिशाचादि नाशक धूप-
विशेष। यह धूप त्रिदोषनाशक है। घूर देखो। २ पुष्प-
दानके बाद देवताओंको दिये जानिका धूप। मधु, मोथा,
घो, गन्ध, शुग्गुल, अगुरु, श्वेतज, सरल, सिद्ध और
सिंघाय दन्ती दश द्रव्योंको चूर्ण कर दशाक्षधूप तैयार
करते हैं।

इसके बनानेकी दूसरी रीति—कपूर, कुठ, अगुरु,
शुग्गुल, चन्दन, केशर, वासक, पत्र, त्वक् और जातीकाप
इन सब द्रव्योंके चूर्णमें घी मिलानेसे दशाक्षधूप तैयार
होता है।

दशाक्षलेप (सं० पु०) प्रलेप विषयमें दिये जानिका दशाक्ष-
योगविशेष। शिरीष, यट्टिमधु, तगरचण्डो, लालचन्दन,
इन्दायची, जटामांषो, हल्दी, टाकहल्दी, कुठ और वाला
इनको पोसकर घीके साथ प्रलेप देनेसे विमर्ष, कुठ,
ज्वर और शीघ्र जाते रहते हैं।

दशाक्षुला (मं० क्षो०) दश अक्षुल्य इव शिरा चिह्नानि
फलस्यगुपरि सन्त्यज्य, अच्। अक्षुल्य, खरबुजा। भावप्र-
काशके मतसे इस फलके लपर चमेलीकी नाई शिरा-

मालावार उपकूलमें समुद्र-प्रायन बन्द कर भाज भी यहाँ विद्यमान है।

भगवान् ने इस अवतारमें मातृहत्या की थी, अतः इस भाषे परशु उनके हाथमें लगा हो रहा था, इसीसे उनका नाम परशुराम हुआ है। दुर्दान्त क्षत्रियोंका विनाश, समुद्र-वेगकी रोक कर दक्षिण भारतकी रक्षा ये सब काम इसी अवतारमें हुए थे। परशुराम देखो।

७२ राम अवतार।—लङ्कामें रावण नामक राजसराज बहुत दर्पित हो कर त्रिलोकमें उत्पात मचाने लगे। देवताओंकी प्रार्थनासे भगवान् नारायणने राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न नामसे चार अंशोंमें उत्तरकोशलकी राजा दशरथके पुत्र बन कर जन्मग्रहण किया था। लक्ष्मण भी सीताने रूप मिथिलाराजाकी कन्या हुई था। ताराका नामकी एक राक्षसकी उत्पातसे अश्वमेध की कर विष्णुसिद्ध ऋषि भगवान् के अवतार स्वरूप रामकी यास गयी और इनसे सहायता मांगी। राम और लक्ष्मण दोनों ने आ कर ताड़काका विनाश किया और यज्ञ देवनेके बहानेसे मिथिलामें जा शिव-धनु तोड़ कर सीताकी ब्याह। परशुराम इस धनुषकी गच्छित रखे गये थे। उन्हें जब मानूस पड़ा कि क्षत्रियसे यह धनुष तोड़ा गया, तब वे रामका विनाश करनेके लिये उत्पन्न हुए। रामने हंसते हुए भागवतके स्वर्गगमनका शास्त्रा बन्द कर दिया, यह देख परशुराम अज्ञित हो वापिस भागे। विमाताके चक्रान्तमें पड़ कर राम लक्ष्मण और सीताके साथ पञ्चवटी बनकी गये। वहाँ रावणकी बहन सुपर्णखाने लक्ष्मणकी देख कामपीडित हो कर उनसे प्रार्थना की। लक्ष्मणने रामसे इशारा पा कर उसकी नाक काट डाली। सुपर्णखाने रक्तका खरदूधण बाद शुद्ध करने भागे, तब वे दलजलके साथ मारे गये। तब सुपर्णखाने सब हत्तान्त रावणसे कह सुनाया। और वह दुष्ट राक्षस सीताकी हर कर लङ्का ले गया। मारीच राक्षस सेनिका मृग बन रामकी प्रलुब्ध कर बहुत दूर ले गया, इनो बीच रावण योगिके वेशमें सीताकी हर ले गया था। राक्षसों पलौन्द जटापुत्र रावणकी रोका और पीछे लड़ाईमें रामणने उसे मार कर लङ्का प्रस्थान किया। सीता उसके रथमें बैठी हुई सीता और

चपने अश्वद्वारकी के'कनो चलो गई'। पीछे रामने मारीचकी राक्षस जान मार डाला। जब उन्होंने लौट कर कुटोमें सीताकी न देखा, तब वे उनको तलाशमें बाहर निकले और राक्षसोंमें मृतप्रायः पतित जटापुत्रे सब हत्तान्त मालूम हो गया। शत्रुमुख पर्वत पर रावणराजाके भाई सुग्रीवके निकट उन्होंने सीताका एक अश्वद्वार पाया। सुग्रीवने सीताके उद्धारका जोश दिखा कर रामसे वानरराज बालिका वध कराया और स्वयं राज्य अधिकार कर रामकी वानरसेना द्वारा सहायता की। इन्द्रमान्ने समुद्र पार कर सीताकी खोज निकाला और वहाँके राज्ञीयानको तक्षमनहम कर लौटा। मल नामक एक वानरने पशुत कौमलसे समुद्र-को पुलसे बाँध दिया। उसी पुत हारा रामने समस्त लङ्का जा रावणको खर्वश नाम कर उद्धार किया। रावणके भाई विभीषणने लड़ते समयमें ही रामकी सहायता की। अंतमें विभीषण ही लङ्काके राजा हुए। पीछे राम, सीता और लक्ष्मणके साथ मयोध्या लौटे और भरतने उन्हें राज्य सौंप दिया। सीताके दूसरेके घरमें पविक दिन रहनेके कारण इधर उधर काना फूसो होने लगी। रामने सीताको वादमीकीके तपोवनमें छोड़ पानेके लिये लक्ष्मणसे कहा। लक्ष्मणने भी बैधा हो किया। उस समय सीता गर्भवती थीं। ऋषिके प्रायममें कुछ और लव नामक उनके दो पुत्र हुए। इन दोनोंने ऋषिबालकांकी भाई सीतादि और क्षत्रियोंकी नाई धनुर्वेद भी सीखा। वादमीकिने इन्हें पक्षी परिचय न दिया, किन्तु स्वरचित रामायणका गान सीतावर्जन तक सिधला दिया। इधर कुछ दिन बाद रामने पञ्च-मैध यज्ञ आरम्भ कर सब ऋषियोंको निमन्त्रण किया। वादमीकि भी स्वशिष्य कुमन्धवकी साथ से यज्ञस्थलमें पहुँचे। समास्थलमें रामायणका गान होने लगा। क्रमशः ऋषिने उन दोनोंका परिचय दे दिया। सीता पुनः लाई गई'। किन्तु रामचन्द्रने जब चपि परोवा किये बिना उन्हें पुनर्ग्रहण करना न चाहा, तब सीता परोवा देनेके पहले ही पातालकी चली गई'। पीछे कुछ दिन बाद जब राम कालपुरुषके साथ कथोपकथन कर रहे थे, उसी समय लक्ष्मण वहाँ पहुँच गये और राम

विष्णु रहता है, इसीसे इस पक्षका नाम दशगङ्गु नि दूपा है। दश पञ्चमय परिभाषामय इति तद्विनाय दिनाः तत्र तस्य भुक् समामासः चत् प्रत्ययः। दशगङ्गु म परिमित, यह जो दश चन्द्रोका हो।

दशगङ्गु (मं० पु०) दशमूल।

दशगङ्गानि (मं० पु०) १ ज्योतिषोक्त दशगङ्गानि रव्यादिषट्, क्षणित ज्योतिषमें दशगङ्गों के पथिपति यह। दशगङ्गां पशनीनां पथिपतिः। २ दश पदात्मिका पञ्चम, दश मैनिनी या मिवादिगीरा चक्रमर, जमादार।

दशगङ्गा (मं० पु०) दश धामनानि दशगङ्गानि यत्न। रावण।

दशगङ्गिक (मं० पु०) पञ्चमे इति भावे चञ्चु धानो-जोयनं तमिन् इतिः धानिकः दशगङ्गां पञ्चम्यादिगीये धानिकः। दशगङ्गा, जमापगोटा।

दशगङ्गा (मं० पु०) दशगङ्गाः पञ्चः १. तत्। १ बाह्वय, बुद्धा। २ यत्तिकान्त, यत्तिको विष्णु भाग।

दशगङ्गित (मं० लो०) दश यथाचमः पवित्रमिय। आह्वानि देव यथाचम, कपड़े के खंछ जो आह्वानि देव दिवे जाति है।

दशगङ्ग (मं० पु०) दश धामना यत्नान्। बह।

दशगङ्ग—यद्यपि प्रदेशके पञ्चगव्य काटिवाबाहुके धामावर विभक्तका एक सामान्य राज्य। इसमें १० धाम जगते हैं। राजघर मायः १०००० रु० है, जिनमें ११८१८ रु० इष्टिम गममें गङ्गी करके देते पड़ते हैं। इसका परिभाषक २११ वर्गमीन है।

दशगङ्गा (मं० लो०) दशगु द्वादश पारोहति चन्द्रोवांश-तांति बाह्वय-कटाप। केवर्तिका, यह प्रकाशकी लता। यह सामान्य देगमें बहुत होती है और इसमें कपड़े रंगाव जाति है।

दशगङ्ग (मं० पु०) दश गङ्गानि दुर्गभूमयो जलधारा या गत ततो रुदिः। देगविमिय, एक देग लो विमिय पर्वतके पूर्व दक्षिणमें प्रवाहित है। दशगङ्ग नदी इस देग को कर बहती है। उसीमें इस राजाका नाम दोमारण (Damaran) लिखा है। सो बहुत पढ़नेसे पता चलता है, कि बिदिया जमीन इसी दशगङ्ग को राजधानी को। निरुद्ध हो।

(ति०) तमन्वाभिजनः तस्य राजा या पत्नी। ३ उक्त देगमें निवासो। ३ उक्त देगमें राजा। दश पञ्चानि पञ्चानि यत्न। ४ दशगङ्गायाम्भविमिय। (लो०) ५ गदीविमिय, यह नदी प्रिमदा यत्नमान नाम दशगङ्ग है। ६ जैनपुराणमें पञ्चमार एक राजा। इसीमें तोय दूरके दशगङ्ग निमित्त का कर प्रमिमान किया था। इस पर तोय दूरके प्रजाप उच्छे बर्षा १२०३०३११००० रु० और १२१००५२०००००००० इत्यादिवा दिगार पड़ो पोर चमका गर्ब चूर्च हो गया।

दशगङ्ग—दशगङ्ग देवी।

दशगङ्गा (मं० लो०) दशगङ्गा या धामना नामको एक नदी। यह विष्णु पर्वतमें निकल कर बुद्धदेवगङ्गके कुछ भाग-में प्रवाहित हो कर कालको के पास यमुनामें मिल गई है।

दशगङ्ग (मं० पु०) पोरन रोद्धान्न राजाके एक पुत्रका नाम। (दक्षिण ११ अ०)

दशगङ्ग (मं० लो०) दशगङ्गां पर्वत। १ पञ्चमस्था, दशका-प्राधा पोष। २. तत्। मन्त्रोय, पाँच पड़ो का दश-धामानि पर्वतोति गङ्ग-पञ्च। ३ दशगङ्ग बुद्ध, दश गङ्गों में गुरु बुद्धदेव।

दशगङ्ग (मं० पु०) १ लोद्धवर्गाय छट राजाके पुत्र। २ राजा हर्षिके पोष। ३ हर्षिकर्णीय पुत्र। ४ हर्षि-यन्त्रिणोका पथिजित देग। (पु०) ५ विष्णु।

दशगङ्गा—विष्णु के पञ्चगव्य पञ्चगङ्गोंमें दश पञ्चतार बहुत प्रसिद्ध है। इन दश पञ्चतारोंके नाम यों हैं—मन्मा, जूमै, बराह, तृमिन्द, यामन, परदाग, दशरथो राम, पनरम बुद्ध, पोर खरको। विष्णु के जितमें पञ्चतार हैं उनमेंसे पड़ो दश पञ्चतार योंमें मंमारके पति गङ्गट कालमें निधे थे, इस कारण दश-पञ्चतार कहनेमें कंयल इसी दशका पोष होता है।

भगवान् विष्णु कब, कब, किस तरह पोर बर्षा, दश मूर्त्तिधामें दश बार इस पदों पर पञ्चतार बप थे, सोसे लभका मंथिम विवरण दिया जाता है—

१ मा पञ्चतार—पोराधिक धाममें गङ्गामुमार बरा धाम समझमें उतेवगाह नामक जन्म इस रहा है। इसमें पञ्चमि कई लक्ष हो पड़े हैं। प्रतिवर्ष

पथसानके समय एक एक महाप्रलय होता गया है। सृष्टि-वर्षा भी ब्रह्मा इस समय योगनिद्राके वशोभूत थे। प्रलय-कालमें भूत-पादि चौदहों भुवन जलमग्न हो गये, वेदादि भी विनष्ट हुए। अतएवराष्ट्रकल्पके पहले जो कल्प था उस कल्पको प्रवृत्तिके समय जो प्रलय हुआ, उस समय निद्रित ब्रह्माके मूर्ध्नि वेदादि गिर पड़े। हयगोव नामक कोई दानवपति उन समस्त वेदोंको चुरा ले गया। प्रलयकी घटनाके पहले द्वाविड़ देशमें सत्यव्रत नामक अतितेजस्वी विष्णुपरायण एक राजर्षि राज्य करती थे। ये बलविक्रम और तपस्यामें अपने पित्रपिता-महादिवसे भी बड़े चढ़े थे। वर्तमान अतएवराष्ट्रकल्पमें इसी सत्यव्रतने विवस्वतके पुत्र आदित्यदेवके रूपमें जन्म लिया था। भगवान् ने इन्हींको मनुके षट् पर अभिषिक्त किया। एक समय राजा सत्यव्रतने विशालाश्वदरो नामक स्थानमें एक पदसे जख्म वाहू हो, पीछे मरुकाकी कुंजाए चामेय इष्टिसे तपस्या करना आरम्भ किया। इस तरह इनके दस हजार वर्ष व्यतीत हो गये। बाद एक दिन ये क्षतमाला नदीमें (किसी किमीके मतसे तमपा नदीमें) आर्द्रवस्त्रसे पिछलीगोकी जल तर्पण कर रहे थे। तर्पण करनेके लिये जो जल ले रहे थे उसकी एक अञ्चलमें हिलसा नामकी एक छोटी मछली आई। द्वाविड़ेश्वरने अज्ञाञ्चलिके साथ मछलीको पुनः नदीमें फेंक दिया। इस पर मछली कण्ठ खरसे बोल उठी, 'हे राजन् ! आप डीनवत्सल और परमकारुणिक हैं, मैं अत्सल दुर्बल हूँ, अतः आपका आश्रय चाहती हूँ। मकरकुक्षीरादि हिंस्र जन्तुधोंने मेरे आतिथ्यको मार डाला है, इसी भयसे मैंने आपको शरण लो थी, तब आपने क्यों मुझे पुनः इस नदीमें डाल दिया।'

तब द्वाविड़ेश्वर सत्यव्रतने कण्ठाई हो पुनः उसे बाहर निकाला और रक्षाके लिये कलसोके जलमें रख दिया। पीछे तर्पणादि करके वे मछली मर्चित उस कलसोको ले कर घर आये। उसी दिन रातमें वह मछली इतनी बड़ गई कि कलसोमें उसके लिये काफी जगह न रही। तब उसने व्याकुल हो राजासे कहा, अब मैं इसमें सह्यन्तसे रह नहीं सकती हूँ, मुझे किसी दूसरे विस्तृत स्थानमें रख दोइये। तब राजाने उसे मणि-

कच्छजलमें (अन्य पुराणमें मतानुसार कूपमें) रख दिया। मणिकच्छ जलमें रखनेके साथ ही वह मछली एक ही सुहृत् में तीन हाथकी हो गई और जातर हो कर पुनः उसने अन्य विस्तृत स्थानके लिये राजासे प्रार्थना की। इस बार राजाने उसे सरोवरमें डाल दिया, किन्तु वहाँ भी उसकी देह बढ़ने लगी और क्षण भरमें ही सरोवरके आयतनसे ज्यादा हो गई। तब मछलीने पुनः व्याकुल हो कर राजासे कहा, 'महात्मन् ! आपने मेरी रक्षाका भार लिया है और जिन सब जलाशयोंमें मुझे फेंकते आ रहे हैं उनमें मेरे शरीरके बढ़ जानेसे मैं सह्यन्तसे रह नहीं सकती हूँ। अतएव मुझे ऐसे जलाशयमें रख दोइये जिनके जलमें वहित दिवके पाय चक्को तरङ्ग रह सके।'

राजर्षि सत्यव्रत यह देख बहुत विन्मत्त हो गये और उसे एक ढ़दसे दूसरे ढ़दमें देते लगे। इस पर भी कहीं उसके रहनेकी गुंजाइश न देख राजर्षि उसे समुद्रमें फेंकनेके लिये चम पड़े। तब उस प्रलोकिक मछलीने राजासे कहा 'राजन् ! मुझे समुद्रके जलमें मन फेंकिये, क्योंकि वहाँ निश्चयही बलवान् सासुद्रिक जन्तु मुझे मार डालेंगे। मैंने प्राण बचानेके लिये ही आपका आश्रय लिया है। अबो आश्रय होनेकी बात तो दूर रहे जहाँ मेरे प्राणनाशकी सम्पूर्ण संभावना है वहीं आप मुझे फेंकनेको जा रहे हैं।'

यह सुन कर राजा किंकरव्यविमूढ़ हो गये और कुछ काल मोन भावमें रह कर उन्हें ऐसा मानस पड़ा कि यह मछली नहीं हो सकती है, भगवान् ने सिवा ऐसी प्रलोकिक देह धारण करनेको समझा किम जीवमें है ? ऐसा सोच का उन्होंने मस्तिसे पूछा; 'आप कोन हैं ? क्यों आप मुझे इस तरह विमोहित करते हैं। आप एक ही दिनके मध्य समस्त ढ़द सरोवरोंमें भी पक्षिक बढ़ गये। यह ईश्वरोप मायाके सिवा और कुछ नहीं है। मानस पड़ता है कि आप स्वयं नाशयक हैं और प्राणियों के किसी मछलीहृदयके लिये आपने जनघर रूप धारण किया है। अतः हे पुण्योत्तम ! मैं आपका डाम हूँ, क्यों मुझे इस तरह माया दिखला रहे हैं ? अबो किम लिये आपने अद्भुत शरीर धारण किया है, जो मुझे

दिखा सकता। यदि मैं स्वाधोन हो जाऊँ, तो मैं
 पुण्यको मुक्त कर सकता।” गौतमने ऐसे विस्वातोत
 विचार दूर करनेके लिए अपने उपाय किये गये; किन्तु
 सब व्यर्थ हुए। एक दिन जब वे नगर घूमने गये तब
 वहाँ एक करातुर वृद्ध, एक रोगवोदित तथा एक भिक्षु
 मंन्याधोको देख कर उनके मनमें वैराग्य उत्पन्न हो
 गया। एक रातको वे एक नौकरको साथ ले छोड़े
 पर सवार हो राजपाट छोड़ छाड़ कर घरसे निकले।
 इस समय उन्हें राहुल नामका एक पुत्र हुआ था। प्रातः
 काल होने पर गौतमने उस नौकरको अपना चमत्कार,
 परिक्रम और छोड़ा देकर राज्यको लौट जाने कहा।
 बाद वे पहले वैशाली नामक स्थानमें जाकर एक विघ्न-
 ब्राह्मणके शिष्य हो गये। उनकी ज्ञानबुद्धि अपरिमोम
 थी। वैशालीमें जितना समाज कर वे राजगृहके विख्यात
 ब्रह्मचर्यके पास गए। यहाँ भी वे लज्ज न हुए। तब
 वे ब्रह्मचर्यागममें जा कर पाँच सङ्घाठियोंके साथ
 तपस्या करने लगे। तपस्याके बाद उनके साधियोंमें उन्हें
 नास्तिक समझ कर छोड़ दिया। अन्तमें वे अपने
 माधनाई बाद यथार्थ ज्ञान लाभ कर लज्ज हुए। इसी
 समय उन्होंने बुद्ध नाम ग्रहण किया और मायामोहित
 जगत्से लिए एक नूतन ज्ञान-लोक प्रकाश किया। वे
 अपना मत प्रचार करने के लिए कामी गये, वहाँ उनके
 सहाध्यायी पाँच संन्यासी उनकी मत मानने लगे। पोछे
 प्रचारकार्यमें तृती हो कर वे राजगृहमें राजा बिम्बि-
 सारको समानें बुलाये गए। राजाने उनका उपदेश सुन
 कर उनके रहनेके लिए कालान्तक नामक मठ उन्हें
 प्रदान किया। यहाँ रह कर वे अपना उपदेश प्रचार
 करने लगे। इसी स्थान पर उनके प्रधान शिष्य सारि-
 पुत्र कात्यायन और मोद्गल्यायन उनके निकट पाये थे।
 राजा बिम्बिसारके पुत्रमें वे दोनों मारे जाने पर बुद्ध
 राजगृह छोड़ कर यावत्ती नगरको चले गये। प्रयोध्या-
 के राजा प्रसेनजित्ने उनका मत ग्रहण किया। बारह
 वर्ष बाद वे अपने पितासे मुलाकात करनेके लिए घर
 लौटे। उन्होंने अपने राज्यमें कई एक भ्रमासुरों का
 काय करके सब शासकोंको बौद्ध बनाया। स्त्रीजातिके मध्य
 सबसे पहले उनकी स्त्री और आजीने बुद्धमत

ग्रहण किया। ७० वर्ष की अवस्थामें वे फिर राजगृह
 पाये और पिच्छन्ता राजा अजातशत्रुको बौद्ध बनाया।
 पोछे वे वैशाली और वहमि कुशीनगर गये। इस समय
 उन्हें ऐसा मालूम पड़ा कि उनका अन्तिम समय बीत
 रहा है। वैशाखी पूर्णिमाके दिन एक शालवृक्षके तले
 श्रानस्थ हो उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया।

पुराणके अनुसार ये जो बुद्ध नारायणके अवतार थे।
 पुराणमें लिखा है, कि एक दिन दैत्योंने इन्द्रसे पूछा,
 कि किस तरह हम लोग स्याधिभावसे संसार पर राज्य
 कर सकेंगे? इन्द्रने उन्हें पवित्र भावसे शायय्य और
 वेदविहित आचारके अनुवर्ती होने कहा। इसपर जब
 वे एक महायज्ञका अनुष्ठान करने लगे, तब अन्याय
 देवताओंने विष्णुकी शरण ली। विष्णुकी भी जब यह
 माधूम हो गया कि यज्ञफलसे त्रिलोकका
 आधिपत्य दैत्योंने दलित होगा, तब वे एक
 संन्यासीमूर्ति धारण कर अपवित्र वेशमें जायमें
 एक भाड़ लिये यज्ञानुष्ठानोंमें निकट पहुँचे।
 जब उन लोगोंने इनके अपवित्र वेशभूषा देख कर
 इनका परिचय पूछा, तो इन्होंने कोई अन्य उत्तर दिये
 बिना यज्ञमें देवकार्यके लिये प्राणीवध करना बहुत
 अन्याय बतलाया। स्वयं पवित्र होनेके लिये दूसरेका
 प्राण लेना यह बिलकुल अनुचित तथा अन्याय है। मैं
 जब चलता हूँ, तो इसी भाड़से आनेको जमाने साफ
 कर लेता, जिससे कि कोई छुद्र प्राणी मेरे तले दब कर
 मर न जाय। इस तरहके हृदय-भोजकारी दया-चहो-
 पक बचनेसे दैत्योंका हृदय पिघल गया और उन्होंने
 आरम्भ यज्ञकी परित्याग कर, “ब्रह्मिष्ठा परमो धर्मः” यह
 मंत्र अवलम्बन करते हुए वेदमार्ग त्याग दिया। त्रिभु-
 वन दैत्यके प्राप्तिमें बध गया। नारायणका अवतार होने-
 से ही सब फलोन्मूल हुआ। बुद्ध देखे।

१०५ अवतार कृष्ण—कल्की अवतार जब तक भी
 नहीं हुआ है। इसके बाद होगा। कल्कि पत्माधारसे
 पोदित हो कर देवगण विष्णुसे प्रार्थना करेंगे और विष्णु
 दशमप्रामर्शमें विष्णुयुग नामक ब्राह्मणके औरससे
 उत्पन्न होंगे। परराज्यमें उन्हें वेदादि सिखावेंगे और महा-
 देव भक्तविद्या सिखा कर एक सर्वगामो रक्षताम, एक

कहिने। पावको नीचा मुननेमे हो मे भरिताय हो
भाजंगा।

तब महाप्रयोगे कथा, राजा: मे हो नारायण
मं। जोराचार्यया पयडेस केनेर निवे मुगारे पास
पाया मं। पातमे मातरे दिन स्यावर जदमादि
ममस्मिन् यह जगत् प्रलय-पराधिने जनमे निमस्म होगा।
बहुत भावय काम पा रहा है, पयो तुम मेरे उपदेश-
नुसार कार्य करो। क्या स्याया, क्या जदम, क्या जद,
क्या चेतन समाया विनाम भी उर जब जगत्को प्रलय
जनमे निमस्म होत देखोने। तब तुम ममत्ता छोपधि,
बीज, मायी-मिष्टन दोर श्रवियोंको ले का मेरे पयला
करना। प्रलयके भीषण तरङ्ग-मुगारे में एक धड़ो भाव
मिष्टंगा। तुम उठे मे कर उम विनाम नाम पर चढ़
जामा। उम समय धारों धोर मन्त्रकार हा जायगा।
महर्षिदेवे तिमोयममे यह भाव उम पाथोकोम प्रलय-
जनमे भ्रमण करीगे, क्योंकि उमका विनाम नहीं है।
जब प्रलय साधुगमे भाव उममामे मगिगे, तब मे
शुद्धभूत धनोक्तिक शुद्धा मयाके रूपमे उपस्थित हो
जाजंगा। और तुम तत्पामने रूपो रन्मेमे मेरे भीममे
भाव भीष्ट होना। कममयोगिके निद्रावसन तक हम
नोनोंको न वला ले कर प्रलय जनमे पुमाने किनेगे।
उम समय तुम मेरा मन्त्र नामका माहात्म्य ममक
मकीगे। मे हो एक पलन कर तुम्हें मे मरामे पयगा
नक्षत्र दिव्या दूंगा। इतना कण्व कर मन्त्रद्वारे
भगवान् पदार्थ हो गये।

वाहे राजर्षि मन्त्रतत भगवान् नारायणुमा उम गमो
को मं वन कर मनुजके किनारे नृमानन कीया भगवान्
विष्णुकी पनाया करने गते। इनके पनकर प्रलयधारे
मे उमक सुखधारण भम उरगामे मने और मनुजका
सन उम हो मीम यह गया। धार धोर धार दिवने
मने। मनुजमे उरगत ममान तरङ्गे उठो धोर पास
पावकोममा उमान धारित होत करीगे। इन समय
तादृके मुगारे एक विमान तरङ्गे हा पड़ो। तब
राजर्षि विष्णु भगवान् को स्मरण कर मन्त्रधारेके माद
पर मं वरित मनुजी धोर ममानोंको ले कर नावर
बढ़ गये। उर उमो कृष्ण मने धोर उर भाव मनुजमे

तेरने मने। कुछ समय बाद दम उरार मीमन विष्णु
शुद्धभूत उपलम्भय एक महामरुत उमके ममाने पाविभूत
दूपा। राजर्षिमे भगवान् के पादिनागुमार महामरु-
रूपो रन्मेमे उम मन्त्रके शुद्धमे भाव धार कर मनुज
का स्तव किया। भावके मने जाने पर मन्त्र मन्त्र बहुत
नेमामे उमे सुविधने मग।

इन मन्त्रके मन्त्रकारने समय उम मन्त्रके मुगारे
राजर्षि मन्त्रतत मन्त्रधारा, मन्त्रधारा धोर पावक
गुना। मन्त्रधारा देवे। इन मन्त्र कुछ दिन बीत जाने
पर भाव विमान उमके निकट जा पड़ो। प्रलय
जनमे धरापर विमान उठे मनेमे भी पदमे हो विमान
पदके एक विचारका कुछ पंग विष्णुको मायामे न दूपा।
मन्त्रमे उम शुद्धको दिवना कर राजर्षि मन्त्रततने उमो
मिष्टमे भाव धारिते खड़ा। राजर्षिमे भी मेमा हो
किया। यह मिष्टर तमामे भीषण ममाने मनिह पा
रहा है। वाहे मन्त्रद्वारे नारायण पदार्थित हो गये।

इनके पनकर प्रलयकी ममानि हो जाने पर विनाम
यागमिष्टमे उठे धोर उठोने देखा, कि भगवान् की
जगाम जगत्का बीम यह गया है मने किमु धेद पदम
हो गया। ममानि धेदने विरहमे मन्त्रकुल हो विष्णुको
मन्त्र ला। इन पर भगवान् ने तानयेद हयवायको
मन्त्र कर धेद ममानि दे दिया।

वाहे भगवान् ने मन्त्रद्वारे परिव्याग कर श्रवियोंके
निकट पवने रूपको व्याख्या को पारकहा, 'यह तावत्रन
मनुज रूपमे धारिभूत हो कर धर, धर, मा पादि
पदार्थको धारित करेगा। इनके तीव्र तमोमने जगत्
की उपादनमनि देखा होगा।' इतना कहकर भगवान्
पदार्थन हो गये।

यही मन्त्रतत पनमे विषयवत्ने पुत्र पाददेव ममाने
मन्त्रमान कम्पमे प्रादुर्भूत धर धार विष्णुके प्रवादने
मेमन्त्र भावमे मन्त्रमान कम्पमे ममान मनु दूपा।
ये कर्म पवतार। एक दिन दुर्वास मुनि ममानक
ममान मन्त्रधारे कर रहे थे। इनमे समय विचार मन्त्रधारे
ने धारिमान कम्पकी एक ममान दे कर उठो
मन्त्रद्वारा का। मन्त्रधारे दुर्वास जब उम ममानो पदमे
जा रहे थे, तब उठने मनेमे देवान् इष्टको देवा

नियमानुसार नष्ट मणकी परित्याग करनेकी वाञ्छ हुई। लक्ष्मणने सरयू में प्राणत्याग किया और कुछ दिन पछे राम, भरत, शत्रुघ्न तथा अन्याय अनुगत लोगोंको साथ कर सरयू में प्रवेग करते हुए स्वर्ग चले गये।

राम देखो।

८म वलरामावतार—मथुराके राजा उषसेनके औरसमें कंस नामक एक दैत्य उत्पन्न हुआ। कंसने राजा की कर अपने हठ पिता उषसेनको कैद कर लिया। इसके अन्याचारसे सभी लोग तड़ तड़ हो गये। बाद देवताओंकी प्रार्थनावे भगवान् श्रीकृष्णकी भारमुक्त करनेके लिए पुनः अवतीर्ण होना स्वीकार किया। देवकी कंसकी चचेरी बहन थी; जिसका विवाह वृषिब्रह्मेश वसुदेवने हुआ था। कंसकी मारदेसे यह बात मालूम हो गई कि देवकीके पाठवें गर्भसे जो बच्चा उत्पन्न होगा वही उसका प्राणनाश करेगा। इस पर उन्होंने क्रुद्ध हो कर देवकीको पतिके सहित कैद कर रखा और एक एक करके उसने छः बच्चोंको मरवा डाला। जस सातवाँ शिशु गर्भमें आया, तब योगमायाने अपने शक्ति उस शिशुकी देवकीके गर्भसे आकर्षित कर रोहिणीके गर्भमें कर दिया। रोहिणी मथुराके निजटवर्ती गोकुलपति गोपराज नन्दके यहां रहती गई। पाठवें गर्भके समय देवकी पर कड़ा पहरा बैठाया गया। पाठवें महोत्सवमें भाई यदो मष्टमोकी रातकी देवकीके गर्भसे श्रेष्ठतया जन्म हुआ। वर्षा बहुत जोरसे हो रही थी, उसी रातकी पहराधीन हो जाने पर वसुदेव उस शिशुको ले कर नन्दके यहां दे भाये। उसी रातकी नन्दके भी एक कन्या हुई थी। वसुदेवने सतिका गृहमें जा उस कन्याको ला कर देवकीके पास सुला दिया। दूसरे दिन जब कंस उस कन्याकी मारनेके लिए उद्यत हुए, तब वह कन्या उनके हाथसे छूट आकाश जाकर बोलती 'तुम्हारा विनाश करनेवाला गोकुलमें बड़ रहा है।' यह सुन कर कंसने गोकुलके भव बानक और जोष सन्तानकी मार डालनेकी आज्ञा दी। मन्दासूयमें रोहिणीके गर्भजात शिशुका नाम बलराम तथा देवकीके शिशुका नाम श्रीकृष्ण रखा गया। बचपनमें वे दोनों कंसके भयसे इधर उधर हिंसित रहते थे। बाद जब वे

गाय धरानिमें प्रसन्न हुए, तब कंससे नियुक्त दैत्यगण उन्हें मारनेके लिए आने लगे। बलरामके हाथसे धेतुक और प्रलम्ब नामक दो असुर मारे गये। कंसने दोनों भाइयोंकी मारनेके अनेक उपाय किये पर सब व्यर्थ हुए। अन्तमें उसने उन्हें एक यज्ञमें निमन्त्रण किया। नन्द कंसके पचीस एक राजा थे, पतः वे मनुष्य बड़ा पड़से। यज्ञस्थलमें श्रीकृष्ण और बलरामने कंसकी मार उषसेनकी कारागारसे मुक्त कर सिंहासन पर स्थापन किया। पछे वे ही मधुरा राज्यके सर्वे सर्वा हो गये। बाद ब्रह्मसूय (कंसका पुत्र)से मधुरासे भगाये जाने पर वे दोनों द्वारकामें आ ठहरे। बलरामने रवतोसे विवाह किया। जब कृष्णके पुत्र शत्रुघ्न दुर्गंधनको कन्यासन्तानकी धुरानिमें कारावद्ध हुए थे, तब बलरामने ही युध करके उन्हें छुड़ाया था। द्विद नामक बानरका राजा भी इनके हाथसे मारे गये थे। ये दुर्गंधनके अन्तःविधाके शुद्ध से और एक बार तोर्य गये थे। अन्तमें प्रभासके बुद्धमें यदुवंशका नाश होने पर उन्होंने योगावस्थान करके कृष्णके पड़ले ही प्राणत्याग किया।

इस अवतारमें भगवान् श्रीकृष्णके साथ मिल कर अवतारका कर्तव्य पालन किया।

९म अवतार बुद्ध—कपिलवस्तु नगरमें राजा शुद्धोदन और मायादेवीसे निदाघ नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वे अन्तमें शाक्यविश्वनामसे ही पुकारे जाने लगे। इनका एक दूसरा नाम गौतम था। बचपनसे ही वे खेडने विरम निज नवासप्रिय और ध्यानधारणापरायण थे। दण्डवाणिको कन्या गोपसे इनका विवाह हुआ। संसारी होने पर भी गौतम कष्टा करती थे, 'जगत्संस्था ही कुछ नहीं है, सब कुछ नहीं है, काष्ठके चपरेसे उत्पन्न अग्निफलकी नाई' यह जीवन है, यह कभी जल चढ़ता है और कभी सूख जाता है। हम लोग यह नहीं जान सकते कि यह कबसे आता है और कहाँ चला जाता है। यह बोधोद्भूतिके समान है। पण्डित लोग तथा इसका आधान अनुमन्यन करते हैं। क्या ऐसी कोई एक महाशक्ति है जिससे हम लोग विरामलाभ कर सकें? यदि मैं उसका अनुसन्धान करूँ, तो निश्चय है कि मैं उसे मनुष्योंकी

और उन्हेंको यह माला समर्पण की। इन्द्रने महर्षि-
को दो हुई मालाकी श्रृंखला पहन ऐरावतके कुन्धके
ऊपर रख दिया। ऐरावतने पारिजातको गन्धसे प्रसन्न
हो उस मालाको अपने मुखसे जमीन पर फेंक दिया।
महर्षि दुर्वासाने निज प्रदत्त मालाको इस तरह भ्रम-
र्यादा देख मोहित हो कर इन्द्रसे कहा, 'वासव! तूने
महर्षित को कर मेरो दो हुई मालाकी भवहेला की है,
इन कारण आजसे तू ओम्भट होगा और तैरा स्वर्ग भी
ओहीन होवेगा।' दुर्वासाले वचन किसी हालतसे
मिथ्या नहीं हो सकते। लक्ष्मीदेवी उसी समय स्वर्ग
और इन्द्रको छोड़कर पातालमें वरुणके घर चली आई।
देवताओंके ओम्भट हो जानेसे यज्ञादि कार्य विलुप्त
होने लगे। असुरगण प्रवल पराक्रान्त हो उठे। देवता
युद्धमें पराजित हुए। बहुतेरे देवताओंने असुर-युद्धमें
प्राणत्याग किया। तब इन्द्र, चन्द्र, वायु, वरुण प्रभृति
प्रधान देवगण विषम सङ्कटभा भ्रममन देख सँसारको
रक्षाका उपाय सोचने लगे। किन्तु जब वे कुछ धिरे
न कर सके, तब सबके भव कुम्भेदशिखर पर उपस्थित
हुए।

उन्होंने ब्रह्माका स्तब्ध कर उनसे प्रश्न बाँट कर सुनाई
और कहा कि, इस विपद्में हरिके सिवा और दूसरा
कोई उपाय सुझ नहीं पड़ता है। अतः हम लोग उन्हेंके
पाश चले।' इतना कह कर सबके सब विष्णुके पास
पहुँचे और उन्हें स्तब्ध कर प्रसन्न किया। विष्णु भगवान्-
ने कहा, 'हम तुम लोगोंका विपद् दूर करेंगे, किन्तु
अभी तुम्हें एक काम करना पड़ेगा। जब तक असमय
उपस्थित न हो, तब तक तुम लोग दैत्योंके साथ मिल
कर रहो। अभी जगत्को जो भवस्था है, वह अमृतके
सिवा और दूसरे किसीसे भी दूर नहीं हो सकती। अतएव
जिससे समुद्रमन्थन द्वारा अमृत उत्पन्न हो, वे हो काम
करना पड़ेगा। अमृतके सेवन करनेसे मृत भी जीवित
हो जाता है, समुद्र मन्थन बाएँ हाथका खेल नहीं है।
चोरीदसागरमें सभी लतापत्त-भोधि फँको जायँगे
और मन्दरपर्वतको मन्थन दण्ड तथा वासुकीकी रज्जु
बना कर समुद्र मथना होगा। देवासुरमें वैरभाव
रखनेसे यह काम नहीं हो सकता पर' उनकी भी

सहायता इसमें आवश्यक है। अतः तुम लोग असुरों-
से मेल करनेके लिये तैयार हो जाओ। समुद्रमन्थनमें
मन्दरपर्वतका वेग धृष्टी नहीं सह सकता, वह क्षम्यः
रमातलको चली जायँगे। तब मैं कूर्मके रूपमें मन्दरको
अपनी पीठ पर चढ़ा दूँगा। समुद्र मथनेसे अनेक
व्य उत्पन्न होंगे, लोभ नहीं करना, देखो की मर्षातिक
बिना कोई काम न करना तथा कालकूट उत्पन्न होने
पर डरना भी नहीं।' इतना कह कर नारायण भक्त-
हर्षित हो गये।

उस समय बलि दैत्योंके अधिपति थे। देवताओं'न
उनसे सन्धि करनेका प्रस्ताव पेश किया। बलिराजने
इन्द्रसे समुद्रमन्थनकी कर्त्तव्यता और उपकारिता जान
कर परिश्रममें प्रयत्ति दानवों'से सन्नाह ले कर सन्धि
कर ली और वे सागरमन्थन कर अमृतोत्पादनमें ध्यय
हो गये।

गोक्षे सुरासुर दोनों पक्षों'ने समुद्र मथनेका संकल्प
कर मन्दर पर्वतको उखाड़ा और उसे ले कर वे चोरीद-
सागरको ओर रवाना हुए। कुछ दूर जाकर वे पर्वतका
शोभन सह न सके और रास्तेमें ही उसे छोड़ दिया।
मन्दर पर्वतके गिरनेसे अनेक सुरासुर चुर चुर हो
गये। तब गन्धवाहन विष्णुने उन्हें जिला कर
मन्दर पर्वतको उठा गन्धुकी पीठ पर रखा। गन्धुने
भी पर्वतको चोरीदके किनारे रख कर प्रस्थान किया।

इसके अनन्तर देवताओं'ने समुद्रको प्रसन्न करनेके
उद्देश्ये कहा, -'हे वारिधि! हम लोग अमृत निकालनेके
लिये तुम्हारा जल मथेंगे, इसमें तुम अमृतमति दो।' चोरीद-
सागरने कहा, -'यदि आप लोग सुखी अमृतका कुछ भाग
देना स्वीकार करें, तो इसमें सुखी मन्दरादिके भ्रमणसे
जितना कष्ट होगा, उसे सह्य करनेको तैयार हूँ।
इन पर देवगण सहमत हो गये। प्रथम काम पारम्भ
हुआ। वासुकीकी रज्जु बना कर देवताओं'ने उसे
मन्दरके चारों ओर लपेट दिया। नारायणने देवताओंको
वासुकीका भगना भाग और दैत्योंको पिच्छा भाग
पकड़नेके लिये कहा। इस पर दैत्योंने कहा, 'ऐसा क्यों
होगा? हम लोगोंने वेदाध्ययन किया है, अष्टविधार्थ
भी हम लोग निपुण हैं, हम लोगोंका जल कर्म भी

दिखा सकता। यदि मैं स्वाधोन हो जाऊँ, तो मैं प्रयोक्तो मुक्त कर सकता।” गौतमके ऐसे विस्मातोत विचार धूर करनेके लिए अनेक उपाय किये गये, किन्तु सब व्यर्थ हुए। एक दिन जब वे नगर घूमने गये तब वहाँ एक जरातुर बृद्ध, एक रोगग्रस्त तथा एक भिक्षु मन्थाडीको देख कर उनके मनमें वैराग्य उत्पन्न हो गया। एक रातको वे एक नौकरको साथ ले छोड़े पर सवार हो राजपाट छोड़ छोड़ कर घरसे निकले। इस समय उन्हें राहुल नामका एक पुत्र हुआ था। प्रातः काल होने पर गौतमने उस नौकरको अपना चमड़ा, परिच्छेद और छोड़ा देकर राज्यको लौट जाने कहा। बाद वे पहले वैशाली नामक स्थानमें जाकर एक विप्र-ब्राह्मणके शिष्य हो गये। उनकी ज्ञानसुधा अपरिमोक्ष थी। वैशालीमें गिजा समाम कर वे राजगृहके विख्यात श्रेष्ठ पण्डितके पास गए। यहाँ भी वे लग्न हुए। तब वे वसुस्वप्नग्राममें जा कर पाँच सहायकोंके साथ तपस्या करने लगे। तपस्याके बाद उनके साधियोंने उन्हें नास्तिक समझ कर छोड़ दिया। अन्तमें वे अनेक माधनाके बाद धर्माध्ययन लाभ कर लम हुए। इसी समय उन्होंने बुद्ध नाम ग्रहण किया और मायामोहित जगत्के लिए एक नूतन ज्ञान-लोक प्रकाश किया। वे अपना मत प्रचार करनेके लिए कामी गये, वहाँ उनके सहाय्यी पाँच सन्ध्यासे उनकी मत मानने लगे। पोछे प्रचारकार्यमें त्रुती हो कर वे राजगृहमें राजा विम्बिसारको समामें बुलाये गए। राजाने उनका उपदेश सुन कर उनके रहनेके लिए कालान्तक नामक मठ उन्हें प्रदान किया। यहाँ रह कर वे अपना उपदेश प्रचार करने लगे। इसी स्थान पर उनके प्रधान शिष्य सारि-पुत्र कात्यायन और मोद्गल्यायन उनके निकट भाये थे राजा विम्बिसारके पुत्रने वे दोनों मारे जाने पर बुद्ध राजगृह छोड़ कर वायसी नगरको चले गये। प्रयोध्याके राजा प्रसेनजित्ने उनका मत ग्रहण किया। बारह वर्ष बाद वे अपने पितासे मुलाकात करनेके लिए घर लौटे। उन्होंने अपने राज्यमें कई एक भगवानुको काय करके सब शास्त्रोंकी बोध बनाया। प्लौजातिके मध्य सबसे पहले उनकी स्त्री और चाचीने बुद्धमत

ग्रहण किया। ७० वर्ष की अवस्थामें वे फिर राजगृह भाये और पिच्छहत्या राजा अजातशत्रु की बोध बनाया। पोछे वे वैशाली और बहमि कुशीनगर गये। इस समय उन्हें ऐसा मालूम पड़ा कि उनका अन्तिम समय बीत रहा है। वैशाखी पूर्णिमाके दिन एक शालवृक्षके तले श्यानस्थ हो उन्होंने निर्वाण लाभ किया।

पुराणके अनुसार ये जो बुद्ध नारायणके अवतार थे। पुराणमें लिखा है, कि एक दिन दैत्योंने इन्द्रसे पूछा, कि किस तरह हम लोग स्थायिभावसे संसार पर राज्य कर सकेंगे? इन्द्रने उन्हें पवित्र भावसे शगयन्न और वेदविहित आचारके अनुवर्ती होने कहा। इस पर जब वे एक महायज्ञका अनुष्ठान करने लगे, तब अन्त्याय्य देवताओंने विष्णुकी शरण लगे। विष्णुकी भी जब यह मालूम हो गया कि यज्ञफलसे त्रिकोशका आधिपत्य दैत्योंसे दक्षित होगा, तब वे एक सन्ध्यासौमूर्ति धारण कर अपवित्र वेद्यमें जायमें एक भाङ्ग लिये यन्त्राशुडायों दैत्योंके निकट पहुँचे। जब उन शोनोंने इनके अपवित्र वेशभूषा देख कर इनका परिचय पूछा, तो इन्होंने कोई शय उत्तर दिये बिना यज्ञमें देवकार्यके लिये प्राणीवध करना बहुत अन्याय बतलाया। स्वयं पवित्र होनेके लिये दूसरेका प्राण लेना यह विशकुल अनुचित तथा अन्याय है। मैं जब चलता हूँ, तो इसी भाङ्गसे भागीको जमाने साफ कर लेता, जिससे कि कोई सुद्र प्राणी मेरे तले दब कर मर न जाय। इस तरहके हृदय-भेदकारी दया-वहो-एक वचनसे दैत्योंका हृदय पिघल गया और उन्होंने आरब्ध यज्ञकी परित्याग कर, “सद्भिः परमो धर्मः” यह मत अवलम्बन करते हुए वेदमार्ग त्याग दिया। त्रिभुवन दैत्यके पाससे बच गया। नारायणका अवतार होनेसे ही भव फलोन्मूल हुआ। बुद्ध देहा।

१०म अवतार कर्कश—कर्कश अवतार पद्म तक्ष भी नहीं हुआ है। इसके बाद होगा। कलिके अन्त्याचारसे पोहित हो कर देवगण विष्णुसे प्रार्थना करेंगे और विष्णु शम्भलग्राममें विष्णु यथा नामक ब्राह्मणके औरससे उत्पन्न होंगे। परशुराम उन्हें वेदादि सिखावेंगे और महादेव अश्वविद्या सिखा कर एक सर्वगासी स्वताम, एक

पञ्चय पति और एक शरूपछी दान देने। पीछे वे पुत्रों के समस्त स्त्रियों और विधवाओं को विनाश कर पुनः पनातन धर्म को प्रतिष्ठा और हिन्दुराजत्व स्थापन करेंगे। बरह देखो।

इन दश अवतारों में मत्स्या, कूर्म, वराह और वामन को कथा वेद में पाई गई है। मत्स्या और कूर्म को उक्ति यतपय-ब्राह्मण में, कूर्म, वराह और वामन को कथा तैत्तिरीय-ब्राह्मण में है। मत्स्य अवतार में जो प्रलय की कथा लिखी गई है, वह ईसाइयों के बाइबिल में लिखे हुए नोबा के समय के जलप्लावन के इतिहास से मिलता है। भगवान् के आदेश से मत्स्यव्रत ने जिस तरह नाव द्वारा सब जीवों की रक्षा की, ईसाइयों के नोबाने भी वही के आदेश से वैसा ही किया था। मनु और नृपा नोबा मन्द पायाल पणिष्ठति मत से एक व्यक्तिबोधक है। उन लोगों का कहना है, कि पायाय शास्त्र के इतिहास ने देशभेद से रूपाभारित हो कर वेद में स्थान पाया है। प्रलयकाल के जलप्लावन की पण्डित मोक्षमूलर कहते हैं, कि यह पार्ष्विक ऐमन्तिक प्रथवा प्राष्टिक इष्टि-जनित देशविशेष के जलप्लावन के निवा और कुछ नहीं है। प्रथम देखो।

भूतस्ववेत्ता कहते हैं—कि इन दश अवतारों में प्रथम परकी जीवसृष्टि की क्रमविकाश कथा हो लिखी गई। वे यह भी कहते हैं, कि जब भूसृष्टि नहीं हुई थी, तब जलचर जीव के सिवा और दूसरा कोई नहीं था। उस समय भगवान् की सत्ता दिग्विजय के लिये उन की माय्य मूर्त्ति वक्ष्ण की गई है। पीछे जब मागर में से घोड़े जन्मो निकली, तब उभर कर कूर्म वा कच्छप-मूर्त्ति प्रस्थित हुई है। इससे अनन्तर भूमिभाग बढ़ने लगा, जल हट कर बहुत दूर चला गया, किन्तु भूमि उस समय बर्दस मात्र थी। वैभी जमीन में वराह खोला जीव ही रह सकता है, यतः उस युग में भगवान् के वराह अवतार कल्पित हुआ है। इसके बाद जमीन सूख गई जिनसे वराह छोड़ कर अन्य जीव रहने लगे। नर और पशु उत्पन्न हुए, किन्तु तो मो नर और पशु जो विभिन्नता है, पशु नहीं थी। उसी नर और पशु की सृष्टि के प्रथम युग में भगवान् को नर-पशु (नृमिह) मूर्त्ति कल्पित हुई है। पीछे वामन और पराश-

राम अवतार में मनुष्य समाज की उन्नतिका क्रम-विकाश और रामचन्द्र में समाज पूर्ण विकास दिखलाया गया है। वलराम, बुध और कलि में मनुष्य समाज की विभिन्न अवस्था का वर्णन और तदुपयोगी अवतारों को कल्पना है।

यदि यथार्थ में देखा जाय, तो पड़ती चार अवतारों में तीन में खैसा लघु कार्य हुआ है, शेष कोई अवतारों में वैसा नहीं देखा जाता। ये सब अवतार पायाय जगत के Hero-worship रूपान्तर ममके जाते हैं।

अभी उड़ोना प्रभृति स्थानों में दशावतारों की मूर्त्तियाँ देखने में आती हैं, उनमें से बुद्ध की जगह चतुर्भुज जगन्नाथ की मूर्त्ति प्रतिष्ठित हुई है। इसी कारण बहुत से लोग जगन्नाथदेव को बुद्ध ही रूप मानते हैं। किन्तु जगन्नाथ देव के साक्षात्पदशाशक स्कन्दपुराणोप उक्त-खण्ड में दशावतार से जगन्नाथमूर्त्ति का कोई सम्बन्ध नहीं लिखा है—

“अतो दशावताराणां दर्शनार्थं तु यत्कलम्।

तत्कलं समवे मर्यादं दृष्ट्वा श्रोतुं श्योतनम् ॥”

(उक्तखण्ड ० पृ ७०)

दशावतार (मं० पु०) दश अवतारों से युक्त। १ चन्द्रमा। इनके रथ में दश घोड़े लगते हैं। २ इक्ष्वाकु के दण्ड लड़के। (भारत १३२६)

दशावतारमेध (मं० स्तो०) काशी के अन्तर्गत एक तीर्थ। ब्रह्माने राजर्षि दिवोदास को महायज्ञ से काशी में दश अवतारमेध यज्ञ किये थे। जिस स्थान पर ये यज्ञ किये गये वही स्थान दशावतारमेध नाम से प्रसिद्ध है। पड़ती यह तीर्थ रुद्रमरीचर के नाम से मगहर था। ब्रह्माने यज्ञ के पीछे दशावतारमेध कहा जाने लगा। यह स्थान चत्वन पुण्यजनक है। यज्ञ की समाप्ति होने पर ब्रह्माने यज्ञ के दशावतारमेधर नामक गियलिङ्ग स्थापित किया था। यह तीर्थ सब तीर्थों में श्रेष्ठ है। यहाँ ध्यान, दान, जप, होम, वेदपाठ, देवपूजा, मन्त्रोपासना, तपण और यात्रा आदि मन्त्र कर देने से बलघ फल प्राप्त होता है। जो मनुष्य दशावतारमेध में ध्यान कर दशावतारमेधर का दर्शन करे, वह भी समस्त पापों से मुक्त हो जाते हैं। जो छ मास की शक्ता प्रतिपद तिथि में यहाँ ध्यान करने में

एवं स्थानके कालानुसार चन्द्र और सूर्य को यास करता है।

इस तरह भगवान्ने कूर्ममूर्तिमें जगत्को कृता लक्ष्मीका उद्धार किया।

दूसरे पुर्णाममें कूर्मोत्तरका विवरण इस प्रकार है— भगवान् जब जलमें सोये हुए थे, तो उनके गात्रमलसे एक रमणी उत्पन्न हुई। यही रमणी आद्याशक्ति है। भगवान् इन्हें प्रबलस्नान कर इन्हेंके गर्भसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इन तीन मूर्तियोंमें आविर्भूत हुए। आद्याशक्ति तब शबके रूपमें बहती हुई ब्रह्माके निकट पहुँची और उनसे मिलनेको इच्छा प्रकट की। इस पर ब्रह्माने जब चारों ओर देखनेके लिये अपना मुँह घुमाया, तब वे चतुस्र हो गये। पक्षि वे विष्णुके पास गईं, विष्णुने उन्हें तुरत ही आश्रय कर दिया। अन्तमें उन्होंने जब महादेवसे मिलनेको प्रार्थना की, तब महादेवने कहा, 'यदि आप सौ बार अपना शरीर परिवर्तन कर सकें, तो मैं आपको प्रवृत्त कर सकता।' इस पर आद्याशक्ति शिवकी इच्छा पूरी कर उनसे मिल गई।

इस तरह शक्तिके स्थापित होने पर विष्णुने ब्रह्मासे पृथ्वीकी सृष्टि करने कहा। ब्रह्मा पृथ्वीका क्षेत्र नहीं पा कर निर्यत हो रहे। तब विष्णुने अपने कर्णमलसे मधुकैटभ नामके दो दैत्योंको उत्पादन किया। वे उत्पन्न होते ही ब्रह्माको मारने लगे। ब्रह्माने भयभीत हो विष्णुकी ही शरण ली। विष्णुने दैत्योंको मार कर उन्हींके भेदमलसे पृथ्वीकी सृष्टि करने कहा। ब्रह्माने क्षेत्रों का भेद नहीं कर सके, किन्तु जलके ऊपर पृथ्वी बहने लगी। ब्रह्माकी स्थिर करनेके लिये धराधरने पर्वतही सृष्टि की, लेकिन पर्वतके भारसे पृथ्वी उगमगाने लगी। ब्रह्माने तब वासुकी नामको पर्वत पकड़ने कहा, पर जलमें वासुकीका आधार कोन होगा यह सोच कर उन्होंने फिर विष्णुकी शरण ली। तब विष्णुने महाकूर्ममूर्ति धारण कर वासुकीको अपनी पीठ पर ले लिया। पर्वतके साथ पृथिवी स्थिर हुई। ब्रह्माने फिर स्यावरज्जम्बुको सृष्टिको ओर मन दिया।

३५ वराह अवतार—पौराणिक कालके गणनानुसार चतुर्दश मन्वन्तर वा सत्ययुगादिपरिचित ३१ दिव्ययुग-

में एक कल्प हुआ। इस कल्पके अन्तमें महाप्रलय हुआ था। चतुर्दश मनुष्योंमें स्वायम्भुव मनु हो प्रथम थे। जब स्वायम्भुव मनु पहले उत्पन्न हुए, तब उन्होंने ब्रह्मासे पूछा, 'हे पितः ! मैं किस तरह आपकी सेवा करूँ, जो मुझे वतला दोजिये।' ब्रह्माने कहा, 'वत्स ! तम अपनी स्त्रीसे एक पुत्र उत्पादन करो और पृथ्वी शासन तथा यज्ञादि द्वारा यज्ञेश्वरकी भागधना करो।' इस पर मनुने कहा 'पितः ! पुत्रोत्पादनका स्थान कहाँ है ? पृथ्वी कहाँ है ? भगो तो जलमें डूबे हुए हैं।' मनुके वचनसे 'जाना-जाता है, कि उनके जन्मकालमें महाप्रलय हो कर कोई एक कल्प बीत गया है और उन्होंने हो पहले मनुके रूपमें जन्म ग्रहण कर दूसरे एक कल्पका आरम्भ किया है। ठीक उसी समय विष्णुने वराहमूर्ति धारण की।

ब्रह्माने मनुके सुखमें पृथ्वीकी जलमन्नावस्था सुन कर सोचा, पृथिवीका उद्धार कौन कर सकता ? तन्हीने मुझे सृष्टि कार्यमें नियुक्त किया है, उसी भगवान् नारायणके निवा दूसरा कोई भी यह काम करनेमें समर्थ नहीं जान पड़ता है। ब्रह्मा यह सोच हो रहे थे, कि उनको नाकमें एक उँगलीसा वराह निकल पड़ा। ब्रह्मा उसे देख कर विस्मित हो गये। वह शूकर तुरत ही आकाशमें रह कर एक बड़े ज्ञायक समान बह गया। ब्रह्माने इस चमत्कीक शूकरको देख कर ममत्ता कि नारायण यह मायावी देह धारण कर यहाँ पहुँचे हैं। इस समय शूकररूपमें अपना शरीर पर्वतके जैसा बँटा कर बल्यनिको नाई शब्द किया। उसी समय ब्रह्मादिने उन्हें नारायण समझा और नियमितके रूपमें उन्हें ज्ञान कर तीन दिशोंसे उनका स्तव किया। वराहदेवने उन्हें आश्वास देनेके बहानेसे पुनः गर्जन करते हुए जलमें प्रवेश किया।

यज्ञवराह भगवान्ने समुद्रमें प्रविष्ट हो अपने शूरोंमें समुद्रको एक ओरसे दूसरे ओर तक विदारण करके देखा, कि प्रलयकालमें उन्होंने कारण-जलमें शयन कर जिस पृथिवीको गोदमें धारण किया था, वही पृथिवी भगो रसातलमें पड़ी हुई है। आदिवराह यह देख अपने विद्याल दन्ताय पर धरणको बिठा कर जलमें बाहर निकले।

भाजनभक्तते पाप और शक्तादितोयार्थे खाने करनेसे उसी समय दोनों जन्मके पाप नष्ट हो जाते हैं। छैठे मानकी शक्तादशमी तिथि तक जो मनुष्य यथाक्रमसे गद्यां खाने करते हैं, वे तिथिमें ख्या परिमित जन्मसंक्षित पापोंसे छुटकारा पाते हैं।

दशजन्मार्जित पापमोक्षारिणो दशहरा तिथिमें जो मनुष्य दशाश्वमेध तीर्थमें खाने करता है, उसे यमयन्त्रणा भोग नहीं करना पड़ता है। दशहरा तिथिमें दशाश्वमेधखरटा दर्शन करनेसे दशजन्मभक्त पाप जाते रहते हैं। दश अश्वमेध यज्ञ करके भवभूत खाने करनेसे जो फल प्राप्त होता है, दशहरा तिथिकी दशाश्वमेधमें खाने करनेसे भी नियत हो वही फल मिलता है। गङ्गाके पश्चिमो किनारे अवस्थित दशहराखरकी प्रणाम करनेसे मनुष्य कभी दुर्दशाग्रस्त नहीं होते हैं।

(काशीख० ५२ख०) छाती देखो।

दशाश्वमेधिका (सं० स्त्री०) दशअश्वमेध देखो।

दशास्य (सं० पु०) दश आस्यानि यस्य। रावण।

दशास्रजित् (सं० पु०) दशास्रं जयति दशास्रं नि-क्रिप्। यौराम।

दशाह (सं० पु०) दशानां अष्टौ समाहारः दृष्टं समासान्तः समाहारत्वात् नाष्टादशः। १ दश दिन। २ मृतकके कृत्यका दशवां दिन। अष्टासुविंशति मृतक कर्म तोन ही दिनों का माना गया है। प्रथम दिन अग्निदानकृत्य और अस्थिसंक्षय, दूसरे दिन रुद्रयाग और घाटि और तीसरे दिन सपिण्डोत्तरण। स्मृतियोंमें प्रथम दिनके कृत्यका दश दिनों तक बढ़ा दिया है, जिनमें हर एक दिन एक एक-पिण्ड एक एक अड़की पूजित के लिये दिया जाता है। किन्तु ग्यारहवें दिनके कृत्यमें अन्न भी द्विगुणाष्ट संकल्पका पाठ किया जाता है।

दशान् (सं० स्त्री०) दश संख्याः येषां द्विनि। १ दश संख्यायुक्त, दश संकवाला। -दश संख्या प्रमाणं येषां द्विनि। २ दश संख्या प्रमाणक, जो दश अड़कों का हो। (पु०) ३ राजाने नियुक्त दशग्रामाधिपति। -दशवर्त्तिका चन्द्राक्षलं वा भस्तरस्य द्विनि। ४ दशयुक्त दीप, यह चिराग जिसमें दश वत्तियां हो। ५ सदग वक्ष ३, भालरदार कण्ठा।

दशोविटम्, (सं० पु०) दक्षिणस्य देशभेदे, एक देश जो दक्षिणमें अवस्थित है। (भाषा, भीष्म ८ ख०)

दशम्वन (सं० पु०) दश वत्तिका दम्बन काष्ठमिव यस्य। प्रदीप, चिराग।

दशेर (सं० पु०) दशतीनि दन्त्य-परक। निस्त्रयन्तु, जिसका जोड़।

दशेरक (सं० पु०) दशेर मन्त्रायां कन्। १ मन्त्रभूमि। २ तद्देश्य, उन्नी देशका निवास। ३ जनपदविशेष, वत्तमान साहूवार देश। ४ उक्त देशके निवासी। ५ उक्त देशके राजा।

दशेरक (सं० पु०) दशति दुःखानि ददाति दन्त्य परक, ततो कन्। सरदेश।

दशेण (सं० पु०) दशानां ईशः इत्यत्। १ दशापति रवि प्रभृति। दशानां ग्रामाणां ईशः। २ राजाने नियुक्त दशग्रामाधिपति।

दशैकाशिका (सं० स्त्री०) एकादशाद्यैस्त्वात् एकादश-वसुतो दश ये दत्ता दश एकादश भविष्यन्ति ते दशका-दशा। निपातनात् समासान्तोच्चारः। जो मैकहे दश रूपये खूद लेते हैं उन्हें दशैकाशिक कहते हैं।

दशानि (सं० पु०) दश बहवः उच्यो यस्य। बहु-हविष्ठा, बहु जिसके पास बहुत छुनाटि हो।

दशोन्मसि (सं० पु०) वं दोक्षत् गर्भभेदे, वेदेषु अनुनार एक सांपका नाम।

दशोपधकान (सं० पु०) दशविध भोपधकानः मध्यमो-क्षमं वा०। दश प्रकारके भोपधका समय। इसका विषय सन्तुतमें इस प्रकार लिखा है, -निर्मल, प्रागुभक्त, भयो-भक्त, मध्यभक्त, चन्तगभक्त, मन्त्रक, नासुदग, सुहृत्सुहृ, शान और शासान्तर ये दश प्रकारका भोपध-सेवनका समय है।

केवल भोपधसेवन करनेकी निर्भक्त कहते हैं - भय-हीन भोपध भर्त्तात् भोपध सेवन करके कुछ नहीं खानेसे भोपधका धीयं बढ़ जाता है। इससे रोग बहुत अव-शान्त हो जाता है। बालक, वृद्ध, युवती और कोमलाङ्ग व्यक्तिके लिये इस प्रकारका भोपध-सेवन शालक-भोजन कर और वलघयकर है।

प्रागुभक्त - खानेके पहले भोपध

भक्त है। इस तरह शोध सेवन करने में जीव परिष्कार होता है और वस्त्रकी सफाई होती है। छद्म, गिण्ट, भीर और स्त्रियों के लिये इस प्रकारका शोध सेवन विधेय है। पशोभक्त-भोक्षान्तमें शोध सेवनका नाम पशोभक्त है। इसमें शरीरके ऊर्ध्वभागस्थ अनेक प्रकारके रोग गन्त होते हैं और कृत्य भो था जाती है।

मध्यभक्त—जाते समय शोध सेवन करनेकी मध्य भक्त कहते हैं। इसमें शोधका वीर्य सारे शरीरमें फैलता नहीं है, मगर मध्यभागस्थ सभी रोग जाति रहते हैं।

अन्तराभक्त—छानेके पहले वा पीछे शोध सेवन करनेका नाम अन्तराभक्त है। यह हृद्य, बलकर और चरित्रकार है।

समभक्त—शोधके मेलसे भोजन तैयार कर सेवन करनेकी समभक्त कहते हैं। अचला, बालक और ठंडके लिये यह शोध सेवनोपय है।

सामुद्र—भोजनके पहले और पीछे शोध सेवन करनेका नाम सामुद्र है। जब छात्र और अधः दोनों और शोधको गति रहती है, तभी इस प्रकारका सेवन हितकर है।

सुहसुह—घनके साथ हो वा न हो संधंदा सेवन करनेका नाम सुहसुह है। खास, काम, हिक्का और वमनरोगमें इस प्रकारका सेवन करना कर्त्तव्य है।

घासान्तर—पिण्डके साथ मिला कर सेवन करनेकी घासान्तर कहते हैं। वमनोद्य, घूम और खासादि रोगमें लिहनीय शोध इसी प्रकार सेवनोप है। यही दम प्रकारका शोधका समय है।

टट (मं० वि०) दग्ग-क्त। दं गित, दांतसे काटा हुआ। टटपीडित (मं० स्त्री०) टंगनविशेष, दांतसे काटनेका एक भेद।

दम (मं० पु०) दम उपप्रेषि वेदे भावे अच, उपप्रेष, आशेष।

दस (हिं० वि०) १ पाँचका दूना, जो गिनतोंमें नौसे एक अधिक हो। २ कई, बहुतसे। ३ पाँचको दूनी संख्या। ४ उक्त संख्याका सूचक चिह्न।

दसरोग (हिं० पु०) प्रसवकाष्ठकी एक रोगिणी। इसमें

प्रसूता स्त्री दसवें दिन खान कर सौरीके घरमें दूसरी स्त्री में आती है।

दसना (हिं० क्रि०) १ विच्छेद रोग, फौसना। २ विस्तार फौसना, बिछाना। (पु०) ३ विस्तार, बिछाना।

दसमरिया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी वरमानी नाव। यह बहुत बड़ी होती है। इसमें दस तकते सवारों के वेष समी होते हैं।

दसरंग (हिं० पु०) मलबंकी एक कभरत।

दसराग (हिं० पु०) कुठोका एक पेच।

दसवां (हिं० वि०) गिनतोंके क्रममें जिसका स्थान दस पर हो।

दसा (हिं० पु०) चगरवाल वंशोंके दो प्रधान भेदोंमें एक भेद।

दसारी (हिं० स्त्री०) पानोंके किनारे रहनेवाली एक चिट्ठिया।

दसौ (हिं० स्त्री०) १ कपड़ोंके किनारे परका छत, छोर। २ कपड़ेका पता। ३ बेलगाड़ीकी पट्टी। ४ एक प्रकारका थोड़ा जिम्मे चमड़ा होता जाता है।

दसूया—१ पञ्जाबके होशियारपुर जिलेके अन्तर्गत एक तहसील। यह अक्षा० ३१° ३५' से ३२° ५' उ० और देशा० ७५° १०' से ७५° ५८' पू० काङ्गड़ा पहाड़ और विपासा नदीके मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४०१ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग २३८००४ है। इसमें दसूया, मुकेरियन, सिधानी और तन्दावरमर नामके शहर तथा ६३३ ग्राम लगते हैं। इसकी भाषा ४ लाख रुपये से अधिक है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३१° ४८' उ० और देशा० ७५° ४०' पू० होशियारपुर शहरसे २५ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६४०४ है। प्रवाद है, कि घिराट राजा ने यहाँ राजधानी स्थापन की। बाद में इ-अकबरीमें नगरके उत्तर एक प्राचीन गढ़का उत्पन्न है। १८१० ई० में रणजित सिंह ने इस दुर्गको अपने अधिकारमें कर लिया था। १८६० ई० में यहाँ एक म्युनिसिपलिटि स्थापित हुई। यहाँ धाम और तमाछूका व्यवसाय प्रचलित है। नगरमें छोटी पदामत, धाना, डाकघर, बाराह, विद्यालय और सुन्दर नजारिया है।

दशै (हि० पु०) के दू-ते दूका पड़ ।

दशेरक (सं० पु०) दशेरकः मरुदेश सोमिजनोऽस्य, तस्य राजा वा यन् । १ दशेरक, दशेरक देशके निवासी घोर राजा । २ दशेरक देशके सभी मनुष्य घोर राजगण । ३ गर्दभ, गदहा ।

दशै (हि० स्त्री०) दशमी तिथि ।

दशोतरा (हि० वि०) दश ऊपर, दश अधिक ।

दशौधो (हि० पु०) बन्धियों वा चारणोंको एक जाति ।

यि लोग अपनेको ब्राह्मण बतलाते हैं, ब्रह्मभट्ट ।

दस्तादाजो (फा० स्त्री०) दस्तावेज, किसी काममें लिखे काङ् ।

दस्ता (फा० पु०) १ पतला पायवाना । २ हाथ ।

दस्ताक (फा० स्त्री०) १ खटखटानेकी क्रिया । २ घरके भंदरके लोमोंकी । हुलानेके लिये बाहरसे दरवाजेकी कुंडो खटखटानेकी क्रिया । ३ वह पाप्मापत्र जो किसीसे देना या मालगुजारी बखूल करनेके लिए निकाला जाता है, गिरफ्तारी वा बखलीका परवाना ।

दस्ताकार (फा० पु०) वह भाटमी जो हाथमें कारी मरीका काम करता हो ।

दस्ताकारो (फा० स्त्री०) कला मन्विनी सुन्दर रचना जो हाथसे की जाय, हाथकी कारीमरी ।

दस्ताखत (फा० पु०) स्वाक्षर, हस्ताक्षर ।

दस्ताखतो (फा० वि०) जिस पर हस्ताक्षर हो ।

दस्तागोर (फा० पु०) सहायक, मददगार ।

दस्तापनाह (फा० पु०) विमटा ।

दस्तावरदार (फा० वि०) जो किसी वस्तु परसे अपने अधिकार ठठा ले ।

दस्तावरदारो (फा० स्त्री०) १ त्याग । २ त्यागपत्र ।

दस्तायाव (फा० वि०) प्राप्ति, हस्तागत ।

दस्ताखान (फा० पु०) खाना रखे जानेकी चादर धर्यात चौकीकी वह चादर जिस पर मुसलमान लोग भोजनकी थाली रखते हैं ।

दस्ता (फा० पु०) १ वह जो हाथमें पावे । २ सौटा, डंडा । लोग या कवा पर लगानेकी एक प्रकारकी कुंडी । ४ हाथमें या जाने योग्य किसी वस्तुका मन्त्र या पूजा । ५ कागजके चौबीस तावोंकी गण्ठी ।

६ फूलोंका गुच्छा, गुलदस्ता । ७ बीजार आदिका मूठ, बेंट । ८ सिपाहियोंका छोटा दल, गारद । ९ चप-राम, संलाफ । (हि० पु०) १० एक प्रकारका बगना, हरमिला । ११ वस्त्र देखो ।

दस्ताना (फा० पु०) १ हस्तावरणो, हाथका भोजा । २ एक प्रकारकी सोधी तलवार । इसकी मूठके ऊपर कलाई तक पड़नेवाला सोहेका परदा लगा रहता है ।

दस्तावर (फा० वि०) विरेचक, जिससे दस्त भावे ।

दस्तावेज (फा० स्त्री०) व्यवहार सम्बन्धी लेख, वह कागज जिसे लिखकर किसीने कोई प्रतिज्ञा की हो अथवा द्रव्य सम्पत्ति आदिका लेन देन किया हो ।

दस्तावेजो (फा० वि०) दस्तावेज सम्बन्धी, दस्तावेजका । दस्तो (फा० वि०) १ हाथका । (स्त्री०) २ छोटी मूठ, छोटा बेंट । ३ छोटा कलमदान । ४ विजयादशमीके दिन राजासे सरदारों तथा फकरोंके बोच बाँटे जानेका सोमात । ५ कुश्तीका एक पंच ।

दस्तूर (फा० पु०) १ रीति, नियम, रस्म, रवाज । २ विधि, कायदा । ३ पारसियोंका पुरोहित । ४ जहाजके छोटे पाल । ये सबमें ऊपरवाले पालके नीचेको पंक्ति में दोनों घोर होते हैं ।

दस्तूरी (फा० स्त्री०) एक प्रकारका रुक जो नौकर अपने मालिकका सोदा लेनेमें दूकानदारोंसे पाते हैं ।

दस्तना (फा० पु०) चिमटा ।

दस्म (सं० पु०) दस्यति उत्सृपति दक्षिणादिकमिति दमन्मक । १ उपक्षेपक, आक्षेप करनेवाला । २ दर्शनीय, देखने योग्य । ३ यजमान । ४ चौर, चोर । ५ हुतायन, अग्नि । ६ खल, दुष्ट मनुष्य ।

दस्मत् (सं० वि०) दसि दं सन दर्शनयोः, ततो मक् दस्मन्मित्रस्य मकारस्य वर्णव्यापत्त्या तकारः । दर्शनीय, देखने योग्य ।

दस्मवर्चस् (सं० वि०) दस्मवर्चः यस्य । १ दशनीय तेजा, जिसका प्रभाव खूब बढ़ा बढ़ा हो । (पु०) २ इन्द्र । ३ मरुत् ।

दस्म्य (सं० पु०) दस्म स्वायं यत् । दर्शनीय ।

दाता (हि० पु०) एक प्रकारका कर्मगुरु जो दातके
भाकारका होता है ।

दाताकिटकिट (हि० स्त्री०) १ बाग, बुद्ध, भगवा । २ गाली
गलीज ।

दाताकिटकिट (हि० स्त्री०) दाताकिट देखो ।

दातिया (हि० पु०) १ एक। नमक जिसे पोटोके तं वाक्-
में उसको तेजी बढ़ानेके लिये लाते हैं ।

दांती (हि० स्त्री०) १ घास या फसल काटनेका हथिया ।

२ नावके घाट पर गड़ा हुआ बड़ा खूँटा । इससे नावका
रक्षा बंध दिया जाता है । ३ भिड़की लातिका एक
काला कौड़ा । ४ दांतीकी पंक्ति । ५ दो पहाड़के बीचका
तंग स्थान, दर्रा, घाटी ।

दांता (हि० स्त्री०) पक्षी फसलके छंड़कोंको दाना भक्षण
कर देनेके लिये रौदवाना ।

दांवनी (हि० स्त्री०) दामिनी नामका आभूषण ।

दांवरी (हि० स्त्री०) रत्न, डोरी ।

दाक (सं० पु०) ददाति दक्षिणामिति दा-क । १ यज-
मान । २ दाता ।

दाक (सं० पु०) दक्षदेव भण् । १ दक्षसम्बन्ध
वन्नादि । दाक्षिणां सङ्घः भण्णो सचचं वा इज्जतात्
भण् । २ दाक्षिसमुदाय । ३ समका भण् । ४ सचका
सचच । दाक्षे क्षात्राः इत्यर्थ इति भण् । ५ दाक्षिका
क्षेत्रसमूह । दाक्षिरागतः भण् । (त्रि०) ६ दाक्षिणे
भागतः दाक्षियस्ये प्राया हुआ । ७ दाक्षिका दण्ड
प्रधान मानवका प्रतीक ।

दाक्षक (सं० पु०) दाक्षेरिद गोत्रवरणात् पुञ् । १ दण्ड
प्रधान मानवका प्रतीक ।

दाचायण (सं० पु० स्त्री०) दक्षस्य गोत्रायण्यं इज्ज-युनि
फल् । १ दक्षका पुत्रा गोत्रायण्य । २ सुवर्णादि भस्महार,
सोने आदिका आभूषण । ३ भूषण, गहना । ४ दक्षकृत
यज्ञभेद, दक्ष द्वारा किया हुआ एक यज्ञ जिसकी
कथा शतपथ-ब्राह्मणमें है । (त्रि०) ५ दक्षसे उत्पन्न । ६
दक्षके गोत्रका । ७ दक्ष सम्बन्धी ।

दाचायणभक्त (सं० पु०) दाचायणस्य विषयी देशः एष
कार्योदित्वात् भक्तत् । दाचायण यज्ञ सम्बन्धीय देशरूप
विषय ।

दाचायणयज्ञ (सं० पु०) दाचायणस्य यज्ञः । दक्षयज्ञ ।
दाचायण्यिन् (सं० त्रि०) दाचायण-इति । सुवर्णयुक्त,
सोनेका ।

दाचायणी (सं० स्त्री०) दक्षस्य भण्यं श्री दक्ष-फिज्,
गोरा-छीप । १ यज्ञिनीसे लेकर ११वतों तक २० नक्षत्र ।
२ दुर्गा । ३ रोहिणी नक्षत्र । ४ दक्षको कन्या । ५ दक्षी
वृच । ६ कश्यपकी स्त्री, अदिति । ७ कटु । ८ विनता ।
(भारत १।२।५)

दाचायणीपति (सं० पु०) दाचायणीनां अग्निन्यादि
नक्षत्राणां पतिः इत्यत् । चन्द्रमा ।

दाचायणोरमण (सं० पु०) रमयतीति रम-इयु । चन्द्रमा ।
दाचायण्य (सं० पु०) दाचायण्यां अदितौ भवः यत् ।
आदित्य, सूर्य ।

दाचाय्य (सं० पु०) दक्षाय्य एव स्मार्थं भण् । गृध्र,
गिह ।

दाक्षि (सं० पु० स्त्री०) दक्षस्य गोत्रायण्यं इज्ज । दक्षका
भण्य, दक्षको सन्तान ।

दाक्षिकन्या (सं० स्त्री०) दाक्षीणां कन्या, (संहायक-स्यो-
धीनरेपु । वा २।४।२०) इति उभयोनरत्नाभावात् न लोवता
वाचोक्त देशः ।

दाक्षिकार्थ (सं० पु०) ग्रामविशेष, एक गांव का नाम ।
दाक्षिकूल (सं० स्त्री०) एक ग्रामका नाम ।

दाक्षिण (सं० पु०) दक्षिणा प्रयोजनस्य भण् । अष्ट-
गहाङ्ग होमभेद, एक होमका नाम । (त्रि०) २ दक्षिणा
सम्बन्धी, ।

दाक्षिणक (सं० पु०) दक्षिणायां कर्मसमाप्ते द्रव्यदान-
रूपायां क्रियायां प्रसृतः, दक्षिणमार्गेण चन्द्रलोकां
गच्छति वा पुञ् । १ दक्षिणातत्पर । चन्द्रलोकगमन ।
बन्धविशेष, बन्धके तीन भेद हैं—प्राकृतिक, वै कृतिक
और दाक्षिणक । बन्ध देवो ।

दाक्षिणाल (सं० त्रि०) दक्षिण-शालार्थं भण् । दक्षिण-
हारी गृह, वह घर जिसका दरवाजा दक्षिणकी ओर हो ।

दाक्षिणान्य (सं० त्रि०) दक्षिणा दक्षिणस्यां दिशि भवः
दक्षिणा-त्यक् (दक्षिण एवात्र प्रत्ययः । वा ५।१।३८) १ दक्षिण
देशोद्भव, जो दक्षिण देशमें उत्पन्न हो । २ दक्षिणादिक स्थान,
दक्षिणदिशाका । (पु०) ३ नारिकेल, नारियल । ४ दक्षिण

दस्युयमः (मं० पु०) उपद्रवके लिए चोरका अभि-
भावक ।

दस्यु (मं० पु०) दस्युति परस्मान् नाशयतीति दश-युच्
(यत्र मणि मुनिपदसि जनिभ्यो युच् । उण् ३।२०) । १ महा-
साहसिक, हकीम । २ धन, दुष्ट । ३ चोर, चोर ।

ब्राह्मणादि चारों वर्णों की क्रियादिसे रहित हो
जानेके कारण वाद्यजाति कहलाते हैं, वे चाहे साधु-
भावी हों प्रयया स्नेहभावी हों, उनको गिनतो दस्यु में
हो की जा सकती है । द्विजविगर्हित काम करमाही
इन लोगोकी जीविका है । दस्युजातिमें पायोमध
स्त्रोके गर्भसे जो मन्तान उत्पन्न होते हैं वे सैरिन्ध्र
नाम्ने प्रसिद्ध हैं । यह जाति केशरचनादि कामोंमें सु-
चतुर है, वे यथार्थमें दास नहीं, तो न दास कार्योप-
योगी एवं पाग द्वारा भूगादिका वध कर जीविका
निर्याह करते हैं । (मनु १०।११) ॥ कर्मवर्जित,
वह जो अपने कर्मसे प्युत हो गया हो । ५ चसुर,
राक्षस । (त्रि०) ६ उपवेपक, उपेक्षा करनेवाला, विरक्त
रहनेवाला ।

कृकसंहिताके कई मन्त्रोंमें दस्यु शब्दका उल्लेख है ।
कहीं कहीं दस्यु शब्द पदनेसे बोध होता है, कि धार्य
भिस कोई जाति दस्यु वा दास कहलाती थी । इन
लोगोंमें धार्य जातिसे पहले भारतवर्षके 'पाना' स्थानों
पर अपना अधिकार जमा लिया था । कितनेही तो ग्राम
नगरादि भी बसाया था । इनके बाहुयसने धार्यगण
कई बार पनेका कष्ट या चुके थे और वे हो पहले पशु-
रादि कहलाते थे । इन्द्रने मानी उनकी को उस बनानेके
लिये पशुतार लिया था । धार्य लोगोके प्रभावसे 'पनाम'
दस्युगण परान्त हो कुछ तो कइसमें चोर कुछ दूर देगो-
में प्राण ले कर भागे चोर जो बच रहे उन्होंने धार्योंको
पधीनता स्वीकार कर ली और उन्हींके समाजमें मिल
गये । निम्ननिहित मन्त्रसे दस्युके साथ धार्य जातिका
को सा सम्बन्ध था वह जाना जाता है ।

"त्वं ह नु त्वद् भद्रमगो दस्युः रेवः कृतीरनोत्पार्थिव ।"

(ऋक् ६।१८)

हे इन्द्र ! मैंने ही दस्यु लोगोकी अपने बगमें किया
६ चोर तुमने ही धार्य लोगोकी पुत्र दासादि दिए हैं ।

"निश्वसन्वात् सोमपमानिन्द्र दस्युन् विनो दासीरहृषीर प्रशस्ता ।"
(५।२८)

हे इन्द्र ! तुमने ही इन दस्यु लोगोकी समस्त सद्-
गुणों वक्षित किया है, तुमने ही दास मनुष्योंको निन्द-
नीय बनाया है ।

इस लोगोके मित्र, नसदस्यु लोगोकी कठोर पर्वतके
शिखर परसे गिरा दें जो भिस वतावसम्बो हैं, जिनके
मनुष्यत्व नहीं है, जो यथादि नहीं करते प्रयया देव-
ताओंको भी नहीं मानते हैं । (ऋक् ८।५८।१०)

हे इन्द्र ! इस लोगोमें इस यज्ञकी सामग्री, इकठो
की है, छति भर छा लो । इस लोग तुमसे सब चोर
ऐसा, बल चाहते हैं जिससे पमानुषको विनाश कर सकें ।
इस लोगके चारों चोर दस्यु हैं । वे न तो याग यथादि
करते चोर न किसीकी मानते ही हैं, उनके कार्य
स्वतन्त्र हैं, वे मनुष्यमें हो नहीं हैं । हे समिन्ध्र !
उन लोगोका वध करो, उन दासोंको हत्या करो ।

(ऋक् १०।२२।७-८)

हे इन्द्र ! तुमने पहले सूर्यका रथचक्र काटा डाला
था । दूसरा धन प्राप्तके लिये कुलकी दिया था । तुमने
वज्र द्वारा सुखमोन्द्य होन पर्याप्त नाशकारक दस्यु
लोगोको क्षतबुद्धि कर युद्धमें वध किया था ।

(ऋक् ५।२८।१०)

यज्ञहोन, जस्यक, हिंसितवाक, यज्ञाहोन, हविर्गन्ध,
पणिनामक यज्ञरहित दस्युगणको दूर कोजिये । धनि-
की प्रधान कर लो यज्ञ नहीं करते उन्हें । हेय दृष्टिसे
देखिये । (ऋक् ७।६।३)

हे इन्द्रानि ! तुमने एक ही उद्योगसे दासोंकी
८० पुत्रियोंको कम्पित कर दिया था । तुमने दस्यु
शम्बरकी शताधिक अप्रतिम पुरो ध्वंस कर दो है ।

(ऋक् १।२।१६)

जब उनके हाथोंमें वज्र दिया गया था तब उन्हींने
दस्युगणको उससे विनाश कर दिया था । (२।२०।८)

हे इन्द्र ! तुमने कुलितरके अपना दास शम्बरकी
बड़े पर्वतके शिखर परसे पौष्टि मुँह गिरा कर नाश
किया था । (४।१०।१५)

तुमने इस युद्धमें मनुष्यका सुख बढ़ानेके लिये

देगयामी । ५ दक्षिण देगके धरावर्ती । ६ दक्षिणाध्य ।

भारतवर्षके दक्षिणको साधारणतः दक्षिणात्य कहते हैं । विन्ध्य पर्वतमालाके भारतवर्षके दोन मध्यमनमें पूर्वमें पश्चिमकी ओर विन्ध्यन दोनमें भारत-वर्ष उत्तर ओर दक्षिण खण्डोंमें स्वभावतः विभक्त हो गया है । उत्तरखण्डको पार्यावर्त्त ओर दक्षिण खण्डकी दक्षिणात्य कहते हैं । पार्यावर्त्त देशी । जिस प्रकार उत्तरखण्डका पार्यावर्त्त नाम दिया है, उसी प्रकार दक्षिणात्य नाम किसी कारणसे नहीं पड़ा है । केवल दक्षिण दिगामें रहनेमें ही लोग इसे दक्षिणात्य कहते हैं । एक समय नर्मदा नदीमें लक्ष्मा नदीके चत्वार्यत में बह परिवर्तित हो गया है ।

दक्षिणातर भारत एक बहुत उपदीप है । इसके पश्चिममें चरवमागर, दक्षिणमें भारत महासागर, ओर पूर्वमें बड़ोपमागर, वेल्ग उत्तरमें विन्ध्यपर्वतमाला ओर पार्यावर्त्त नामक उत्तरभारत है । यह उपदीप त्रिकोणाकार है । इसके शृङ्गका नाम कुमारिका वा कन्याकुमारी चत्वारोप है जो सर्वदक्षिणाग्रमें भारत महासागरमें प्रविष्ट हुआ है, तथा जिसका भूमिभाग विन्ध्यपर्वतमाला है । यह त्रिभुजाकृति दक्षिणातर स्वभावतः एक दुर्भेद्य दुर्गमत् रचित है । इसके उत्तरमें जिस तरह विन्ध्य पर्वत माला पूर्वपश्चिममें एक समुद्रकुलसे दूसरे समुद्रकुल तक विस्तृत है, उसी तरह पश्चिम पार्श्वमें समुद्रकुलमें थोड़ी दूर पर उत्तर-दक्षिणमें विस्तृत लगभग ४ हजार फुट चौड़ा पश्चिम घाटका महा पर्वतमाला है । ओर उसी तरह पूर्वमें भी पूर्वघाट पर्वत माला ओर दक्षिणमें दोनों पर्वतोंके सट्टमस्थान पर नीलगिरि ओर मलयपर्वत है । पश्चिमघाटके पश्चिममें समुद्रके किनारे जिस प्रकार चण्डमल भूखण्ड उत्तर दक्षिणमें विस्तृत है उसी प्रकार पूर्वघाटके पूर्वमें भी पश्चिमकी अपेक्षा कुछ अधिक विस्तृत भूखण्ड है तथा नीलगिरि ओर मलयपर्वत दक्षिणमें भी वैसा ही है । दक्षिणात्यके पश्चिम उपकुलकी मलयार उपकुल ओर पूर्व उपकुलकी करमलम उपकुल कहते हैं । यहां जितनी नदियां हैं सभी पूर्वकी ओर पूर्वघाटके मध्य

हीनो हुई बड़ोपमागरमें गिरी हैं । प्रधान प्रधान नदियोंमें नर्मदा, ताम्र, मोदावरी, लक्ष्मा, पैवार ओर कावेरी बड़ो ओर गेह हैं । इनमेंसे पहली दो नदियां पश्चिमकी ओर प्रवाहित हो कर चरव मागरमें गिरती हैं । पूर्वोपकुलकी मुमि दनदम है । सेटिन पश्चिमोप-कुलकी वैसी नहीं है । यहां कहीं कहीं पश्चिमघाटका एक एक जाड़ा पर्वत समुद्रतटमें बहुत लंबा है तथा समुद्रोपकुल तक फैला हुआ है यहां तक कि कोई कोई पर्वत ऐसा है जो समुद्रके जलमें प्रविष्ट हो गया है ।

भारतवर्षके प्राचीन इतिहासमें पार्यावर्त्तका जितना वर्णन पाया जाता है, उतना दक्षिणात्यका नहीं । १२वीं शताब्दीमें सुमनसामोंकी मोटो जलनेके पहले प्रयत्नविदोंको गयेपगामे तथा प्राचीन मन्दिर दुर्गादि-के अस्तित्वसे ही यहांका कुछ कुछ इतिहास जाना जाता है । हिन्दू पुत्राणादि तथा बौद्ध ग्रन्थादिमें भी कुछ ज्ञान मान्य होता है । रामायणोक्त रामचन्द्रके दक्षिणात्य-प्रदेशके पहली दक्षिणात्यके विषयमें उतना अधिक विवरण नहीं मिलता । रघुवंशमें रघुके दिग्विजय-उपलक्षमें दक्षिणात्यका जो विवरण पाया जाता है, उसे जोक रामचन्द्रके पहलेका नहीं मानना ही बुद्धिमत्त है, उसे रघुवंशके पत्यकार कालिदासकी समसामयिक मानना अच्छा है । रामायण महाभारतादिके समय दक्षिणात्यके समस्तार्थमें जितने समुच्च रहते थे, उनका प्रमाण मिलता है ।

ईसा जन्मके समयमें से कर १५ विषयका विचार करना सुविधाजनक है । १२वीं शताब्दीके पहलेका दक्षिणात्यके सम्बन्धमें जो कुछ ज्ञान मान्य है, वह हिन्दूशास्त्र, बौद्धशास्त्र, चीनपरिभाषणोंका अध्ययन, प्राचीन एथिनि विधि ओर प्राचीन यौक लोगोंने लिखित विवरणादि द्वारा जाना जाता है ।

यौक लोगोंके वर्चनमें ईसाजन्मका परवर्ती ज्ञान कुछ कुछ जाना जाता है । ८०से ८५ ई०के बीच "पिट्रिम" नामक यौक लोगोंके प्राचिन्य विवरण की पुस्तक लिखी गई । यह वर्तमानका मत है कि यह पत्र पश्चिममें लिखा गया है । पूर्व समयमें जब यौक

दाम नमुचिका मन्त्रक चकनाचूर कर दिया है।

(५।२.०।०)

दासने स्त्रियो को पपना भस्त्रस्वरूप बनाया था। इसकी भवना सेना मेरा क्या कर सकीगो ? यह सोच कर इन्द्र उसकी दो प्रियतमा स्त्रियो की शन्तःपुरमें बांध कर पीछे वस्त्र दस्यु की साथ लड़ाई करने गये थे।

तब, शम्बर और नमुचि ये सब दाम, दस्यु और असुर नामसे वेदमें वर्णित हैं। इससे मान्य होता है ये तीनों शब्द वैदिकयुगमें एक आतिबोधक थे।

नमुचि, शम्बर और ह्य देखो।

छान्दोग्य उपनिषद्में असुर आतिके विषयमें जो कहा लिखा है वह इस प्रकार है—

आज भी जो सव्य दानहोन, यदाहोन वा यजहोन हैं वे असुरधर्मा कहलाते हैं। असुरों का यही सनातनधर्म है, वे शवदेहकी चर्च, वसन, और चनहारसे सज्जते हैं। उन लोगों का ख्याल है कि ऐसा काम करनेसे ही इन लोकका पुनर्प्राप्य मिह होता है।

यद्यप्यं भारतीय पश्य और अलेच्छ जातिमें उक्त प्रथा अब भी प्रचलित है।

ऐतरेयब्राह्मणमें लिखा है—

तुम लोगोंका वंशधर भट होगा। यद्यो पश्य, पुण्ड्र, शबर, मुलिन्द और सुतिव उत्तरदिक्कासो उनके जातिय हैं। विस्त्रामिषसे ही दस्युगण उत्पन्न हुए हैं।

कुल्लूफाटोका में लिखा है, कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जातिमें जो क्रियारहित होनेके कारण आतिष्युत्त हुए हैं वे चाहे स्त्रीभायो हों, चाहे पार्यभायो हों सभी दस्यु कहलाते हैं।

महाभारतके सभापर्वमें इस प्रकार लिखा है—

“वरदानं सह कामांगिरजयत् पादशासतिः।

श्रुतस्य दिष्टं ये च वसन्तशक्तिम् दस्यवः॥”

दरदोंके पाय कामोज और उत्तरपूर्वमें जो सब दस्यु जाति वास करती थीं अज्ञानने उन्हें परास्त किया था। द्रोणपर्वमें भी श्रुतयुक्त दस्युजातिका वर्णन है।

यान्तिपर्वके १६८ अध्यायमें दस्युके विषयमें भोजने एक इतिहास इस प्रकार कहा है—

मध्यदेशीय एक ब्राह्मण ब्राह्मणहोन समुद्रिमाओ एक ग्रामको देख कर भिचाकी चापासे वहां गये। सब वर्षोंका सम्मानधर्म, धर्मशाल, सत्यशरी और दामनिरत एक धनी दस्यु वहां वास करता था। ब्राह्मणने उसीके पास जा कर भिचा मांगो। उस ब्राह्मणका नाम गौतम था। दस्युने नाय रह कर चोरे धीरे वे भी लुट्टीको तरह हो गये। इस प्रकार वे पानन्दपूर्वक दस्यु ग्राममें रहने लगे। इसी बीच एक ब्राह्मणने आ कर उनसे कहा, तुम मोहान्ध हो कर क्या कर रहे हो ? उत्तम मध्यदेशीय ब्राह्मणधर्ममें तुम्हारा जन्म है। किस प्रकार तुमने इन दस्यु भावको ग्रहण किया ?

उक्त विवरण पढ़नेसे जाना जाता है, कि दस्युजाति स्नेच्छ समझो जाती थी और उनके साथ वास करना ब्राह्मणोंके लिए नित्य हेय समझा जाता था।

यान्तिपर्वके १५ अध्यायमें दस्युका कर्त्तव्य इस प्रकार निर्धारित हुआ है—

माता, पिता, चाचाय, गुरु और राजाको सेवा करना जो दस्युका कर्त्तव्य है। वेदके अनुसार इन लोगोंका धर्मकार्य करना ही धर्म है। पित्रयज्ञ, कूप, जलसह, शयन और यथा समय ब्राह्मणोंको दान, चर्हिषा, सत्य, अक्रोध, वृत्ति, ज्ञातिपालन, पुत्रप्रायादिका भरण पोषण, शौच, चद्रोह, सभी यज्ञोंमें दक्षिणा दान और पाकयज्ञादि करना ये सब दस्युके प्रधान कर्म हैं। ये सब कर्म केवल दस्युके हो नहीं; वरं चारों वर्णोंके बतलाए गए हैं। मान्यता कहते हैं, कि सभी वर्णोंमें दस्यु पाये जाते हैं, वे भिन्न भिन्न वेश धारण कर चारों पात्रोंमें वर्त्तमान हैं।

दस्युजत (स० त्रि०) दस्युभिर्जतः। दस्यु द्वारा प्रेरित, जो एकतीसे कुकर्मा में प्रवृत्त हो।

दस्युनर्हण (स० त्रि०) दस्युका दमनकर्त्ता, डकैतोंको दमन करनेवाला।

दस्युता (स० स्त्री०) १ लुटेरापन, डकैती। २ दुष्टता, क्रूर स्वभाव।

दस्युभय (स० पु०) दस्युनां भयः। चोरभय, चोर या डकैतका डर।

दस्युवृत्ति (स० स्त्री०) दस्युनां वृत्तिः। चौर्य, चोरी, डकैती, लुटेरापन।

लोग भारतवर्ष आते थे, तब उन्हें यीससे निकल कर मिय, अरब, अफ्रीका, फारस, बैतुविस्तान आदि देशों के किसी किसी स्थानमें जहाज लगते थे। उक्त ग्रन्थमें उसका धारावाहिक वर्णन है। उसके बाद सबसे पहले भारतोपकूलमें जिन सब स्थानोंका उल्लेख है, उनका विवरण धारावाहिक रूपमें संचित रीतिसे नीचे दिया जाता है। सबसे पहला यमनादेशमें दाक्षिणात्यको अवस्था कैसी थी, वह सालूम हो जायेगा।

१। स्काइथिया (Skythia) (शक) देशके उपकूल-वर्ती सिन्धु (Sinthas) नदीका मुहाना—यही सिन्धु नदीका मुहाना है। पारस (Pasirees) के अन्तर्गत पारिा (Pasira) नामक छोटे शहरसे थोड़ी दूर पर बगिसर (Bagisara) नामका बन्दर था जो वर्त्तमान उर्मरा वा अरबा नामक अन्तरीपके ऊपर अवस्थित था। इस स्थानसे यीकपोत सिन्धु मुहानेमें प्रवेश करता था। यहाँका जल सफेद है। सफेद जल देख कर ही नाविक लोग मावधान हो जाते थे, क्योंकि यहाँके समुद्रजलमें अजल सूर्य बहते हुए दोख पड़ते थे तथा थोड़ी दूर पर पारसको भीर एक प्रकारका विभिन्न जातीय 'ग्राइ' (Graai = ग्राइ) कुभोर पाया जाता था। मध्य सुखके ऊपर 'बर्बरिकन' (Barbarikon) नामका एक विख्यात वाणिज्य बन्दर था।*

२। मीन नगर (Minagar) यह नगर उक्त बन्दरके सामने एक सुदृढ़ द्वीप पर अवस्थित था। इसी नगरमें उस समय शकराज्यको (Skythio) राजधानी थी। पारद राजगण (Parthian Princes) उस समय यहाँ राज्य करते थे। इसके छोटे छोटे राज्योंमें युद्ध विषय सदा हुआ करता था।

३। आरियकि (Ariake) 'मोम्बरोस' (Mombaros) प्रदेशके 'आरियकि' (Ariake) एक विभागका नाम है, 'आरियकि' टलेमीके मतानुसार 'आरिक्' नामसे प्रसिद्ध है। इसका मतलब 'आरिक्' 'लाट' वा 'सार' देश है, गुजरात का अधिकांश प्राचीन कालमें आट नामसे मशहूर था। पण्डित भगवान् लाल इन्द्रजीके मतानुसार 'आरियकि' संस्कृत 'अपरान्तिक' शब्दका ग्रीक नाम है,

पश्चिम समुद्रप्रदेशों प्रदेश पुराणमें 'अपरान्त' नामसे वर्णित हुआ है। 'मोम्बरोस' सेही वर्त्तमान 'मुम्बई' वा 'बम्बई' शब्द उत्पन्न हुआ।

४। अबरिया (Aberia) मोम्बरसके दूसरे देशके मध्य भागमें स्काइथियाका अबरिया अथ अबरियात है। यही संस्कृत 'शामीर' देश है। इस आभोरदेशके सम्मुख वर्त्ती समुद्रोपकूल हो 'सुरास्ट्रेने' (Sarostrane) संस्कृत सुराष्ट्र है। सुराष्ट्र देशको राजधानीका नाम भी उस समय मोननगर था। इसी मोननगरसे बहुत कपड़े बेचनेके लिये बरुगज (बरुकच्छ) शहरमें भेजे जाते थे।

५। अटकप्रा (Astaka pra) यह बरुगज शहरको (Barugaza वर्त्तमान भरोचेके) विपरीत दिगामें अवस्थित है। इस शहरका संस्कृत नाम इसुसकं मतानुसार 'हस्तकवर्म' वा 'हस्तवर्म' है। यही वर्त्तमान भाधनगरके निकटवर्ती 'हायन' नामका स्थान है।

६। मोस (Moais) अटकप्राको एक नदी। इस नदीका मुख बहुत विस्तृत है और बाईं ओर 'अह-ओमिध' नामका एक द्वीप है। 'मोस' नदी वर्त्तमान 'मही' है और होय गावद 'पेरम' द्वीप है।

७। नमनदोयस् (Nannadios) — उक्त द्वीपसे पूर्व को भीर भयसर हो कर इसी नामकी एक नदीमें मिल गई है और बरुगज शहरको चली गई है। यही नदी वर्त्तमान नर्मदा नदी है।

८। बरुगज (Barugaza) शहर यही नर्मदा तीरस्थ एक प्राचीन विख्यात बन्दर है। इसका वर्त्तमान नाम भरोच है। अध्यापक विलसनके मतसे यह 'अशुचेन' वा 'अशुगच्छ' शब्दका अपभ्रंश है। हहत्प्राप्तिमें यह भरुकच्छ नामसे प्रसिद्ध है। अशुव'ग्रीके लोग जहाँ रहते थे, वही अशुचेन है। गुजरातमें, कच्छ प्रदेशमें भीर भरोच जिलेमें आज भी अनेक भाग व ब्राह्मण पास

† Indian Ant., Vol VIII, 1879, 141 'पेरिप्लस' में जो रूपसः दक्षिणकी ओर अमसर होनेकी वर्णना देखी जाती है, उसके नर्मदाके उत्तरवर्ती स्थानका बोध होता है, ऐसा होनेसे 'महन' 'मही' नहीं हो सकता। लेकिन वह सम्भव है, कि यही एक रूप कर अज्ञान उस समय नर्मदामें प्रवेश करता था।

दम्पुसात् (स० अ०) दम्पुनामघोनं भवति सम्पद्यते वा माति । तत्काराधीनः ।

दम्पुहृत् (स० क्री०) दम्पुनां हृत्वा यत् । यह संध्याम जिममें डकैत मारे जाते हैं ।

दम्पुहृन् (स० त्रि०) दम्पुं हन्ति हन्-क्तिप् । पक्षर विघातक इन्द्र ।

दम्पु (स० पु०) दम्पति उत्पत्तिपति पांशूनिति दम्प-रक् । १ खर, गदहा । द्विर्वा आतिवात् डोप् । दम्पति रोगान् चिपति दम्प उपवेपि रक् । २ पश्चिमोक्तुमार । ३ हित्व संध्या, दोहरा संध्या । ४ हित्व संध्येष्ट, दोका समुद्र, जोड़ा । ५ पश्चिमोक्तुमार । (क्री०) ६ दम्प नोय, देखनेयोग्य । ७ हिंस्त्र, हिंसा करनेवाला ।

दम्पदेवता (स० स्त्री०) दम्पो पश्चिमो पश्चिष्ठा देवता यस्याः । पश्चिमोक्तुमार ।

दम्पु (स० स्त्री०) दम्पो पश्चिमो सृते स्-क्तिप् । संध्या, सूर्य की स्त्री । इनके गर्भसे पश्चिमोक्तुमारने जन्म ग्रहण किया है ।

दम्पु (हि० पु०) १ नदीके भीतका गड्ढा, घान । २ कुण्ड, झील । (स्त्री०) ३ ज्वाला, लपट, लौ ।

दम्पु (फा० वि०) दम्प ।

दम्पु (हि० स्त्री०) १ पाग दम्पकनेकी क्रिया, धधक, दाह । २ ज्वाला, लपट । ३ शर्म, लज्जा ।

दम्पकन (हि० स्त्री०) दम्पकनेकी क्रिया ।

दम्पकना (हि० क्री०) १ ज्वालानेके साथ ऊपर उठना, धधकना । २ शरीरका गरम होना ।

दम्पकाना (हि० क्री०) १ धधकाना । २ क्रोध दिलावा, भड़काना ।

दम्पकामस—हृत्पावनका एक ग्राम । यहीं श्रोत्राण्यका लोमास्थान था ।

दम्पुदम्पु (हि० क्री०-वि०) लपट केंकते हुए, धायधाय ।

दम्पुदम्पु (स० स्त्री०) कुमाराशुचरमाधमेन्द्र ।

(भारत वाणि० ४३ अ०)

दम्पु (स० पु०) दम्पतीति दम्प-क्त्वा । १ पग्नि, पाग । २ चित्रकल्प, चोता । ३ भस्मातक मिठाई । ४ दुष्टतेजः, दुष्ट या क्रोधी मनुष्य । (पु०) ५ कपोत, कवूर । ६ दम्प-

मेन्द्र, एक रुद्रका नाम । ७ क्षत्तिकामचक्र । ८ तीर्थकी संख्या । ९ ज्योतिषमें एक योग । यह पूर्वभाद्रपद,

उत्तरभाद्रपद और वैशाख इन तीन मघर्षमें शुक्लके होने पर होता है । १० ज्योतिषमें एक योगः यह पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा मघर्षामें शुक्लके होने पर होती है ।

११ दाह, जलनेकी क्रिया । (त्रि०) १२ दाहक मात्र । (क्री०) १३ दृष्टिकाली । १४ गुग्गुलु । १५ पशुद, पगर हृत् । १६ काश्चिकमेन्द्र, एक प्रकारकी कांजी ।

दम्पुकेतन (स० पु० स्त्री०) दम्पस्य केतनं प्लव इव । धूम, धुआँ ।

दम्पुकेतु (स० त्रि०) दम्पनादिन भूटं प्रोषणं यस्मात् । वैद्यक प्रसिद्ध पदार्थ । (Blister) यह शरीरमें लगाने से पग्निकी भाँई फफोले पड़ जाते हैं ।

दम्पुमिया (स० स्त्री०) दम्पस्य पानेः मिया इ-तत् । आरादेवो, पग्निकी मिया ।

दम्पुमधुल (स० पु०) पग्नि, पाग ।

दम्पुमिष्टवै (स० स्त्री०) साक्षिका, एक प्रकारका पेड़ ।

दम्पुम (स० स्त्री०) दम्पु नाम शब्द । क्षत्तिकामचक्र ।

दम्पुमाल (स० पु०) जलनेवाला ।

दम्पुमारवि (स० पु०) दम्पस्य सारविः इ-तत् । वाइ, हवा ।

दम्पु (हि० क्री०) १ जलना, बनना । २ भस्म करना, जलाना । ३ क्रोध दिलावा, कुदना । ४ धंसना, नीचे बैठना ।

दम्पुगुरु (स० पु०) दम्पनाय पशुद । दाहगुरु, एक प्रकारका मृगमूत्र द्रव्य ।

दम्पुनाराति (स० पु०) दम्पस्य पानेः पुराति शब्दः । जल । पग्निमें जल देनेसे यह बुझ जाती है, इसीसे पग्निका दम्पुनाराति कहते हैं ।

दम्पुनीय (स० त्रि०) दम्पते दम्प-पनीयर । दाह, जलने वा जलाये जाने योग्य ।

दम्पुनीय (स० पु०) दम्पनाय यज्ञगुत्वादन्याय य सपत्नः प्रक्षारणः । सूर्यकात्सर्गि । इस सर्गमें सूर्यकी क्रिया समझनेसे पाग निश्चय पाने की है, इसीसे इसका नाम दम्पुनीय हुआ है ।

पथ यह दिखता था। कि ई-१ जगहके १।६ मी वर्गके भीतर १५ ट्रेगको कैसी पचखायी। ईसा-जन्मके १।६ मी वर्ग पट्टने बुझका समय था। उनके समयका दाक्षिणात्यका बहुत परिचय पाया जाता है।

महावंश पट्टनेसे मान्य होता है, कि विजय नामके जो बहुराजकुमार मिट्टन जा कर पट्टने पट्टन राजा हुए थे, उनका जन्म तथा बुद्धदेवका निर्वाणसम एक ही दिन हुआ था। विजय जब शत्रु से विताडित होकर दक्षिणको चोर चले, तब वे 'मान' (राड़) देगको उपत्यका तथा पर्वतमाला पार कर पयसर हुए। उन्होंने नर्मदाके उत्तर सुदुगिर, सुपार (खोशरक) देगको मानोगिरि (मन्यगिरि) चोर दक्षिणमें पाण्डुगिरिको भी पतिक्रम किया था।

बौद्धग्रंथोंमें महावंश, राजतरङ्गिणी, राजावली, मिनिन्दमत्र, सहस्रनामहार, कायविरतिगीत चोर चनेक बोधजातक पन्थादि, पाहियान चोर युएनचुफङ्का भ्रमण, भक्तिविप्लार, सहस्रपुण्डरीक इत्यादि ग्रन्थ तथा पायात्य पण्डितोंकी शब्दपत्रापूर्ण पुस्तकादि पट्टनेसे जाना जाता है, कि बुद्धके समयमें दाक्षिणात्य प्रधानतः दो गण्टोंमें विभक्त था, एक छप्पानदोका उत्तरोय-खण्ड, दूसरा दक्षिणोय खण्ड। उत्तरोय खण्डमें (१) उहोसा चोर (२) कनिङ्ग ये दोनों राज्य तथा पूर्वार्धमें (३) मान (नाट) देग नर्मदाके दोनों कुंभमें से कर गुजरात तक विस्तृत था। (४) सुनाय-रानाक (स्वर्णपानाक) वा पपराता, (५) पयन्ति चोर (६) नवभूवन ये सब पवित्र कुंभमें नर्मदाके निखट वर्तमान थे। फिर दक्षिणखण्डमें (७) रत्न-चन्दनका देग (८) द्राविड (९) पाण्ड्य चोर समय (१०) मङ्गिर (११) मागोटीया (नागदीप) १२ महिन्नाह ये कई एक राज्य थे। राजावलीमें बौद्ध धर्मविरोधी राज्यमेंसे चोलराज्यका भी नाम है।

गोदावरीकी पयवाहिकामें दाक्षिणात्यका साधारण नाम दक्षिणपथ था। उत्तर-पूर्व राज्योंके दक्षिणार्धको चोरक्षपेय कहते थे। चीनमेंटी वा पक्कार-नदीकी पयवाहिका ही द्राविड नामसे समझी थी। यह पूर्व-

घाट पर्वतमाला चोर पक्कार-नदीको दक्षिण पयवाहिका-से लेकर चोलराज्यको दक्षिणो कोमा तक विस्तृत थी।

इस समय नर्मदा नदीके उत्तरोय किनारे कौट्य प्रदेश (पेय) गङ्गा नदीके कुन तक नागराजका राज्य विस्तृत था। यावदीसे मोटने समय बुद्ध ६५ राज्यमें पट्टने थे। काम्बे उपसागरके पयिमागमें नर्मदाको खाड़ीके ऊपर नास (नाट) देग पयस्थित था चोर एक दूसरा नास (राड़) बहुराज्यके पछीन रहा। * नर्मदाको उत्तर पयवाहिकाके निकट छज्जियेनो वा पयन्ति राज्यका उल्लेख है। यह राज्य बायां वर्तमानार्ध में चोने पर भी दाक्षिणात्यके साथ इसकी घनिष्ठता थी।

गोदावरीकी उत्तरोय पयवाहिका पर चरमक चोर मूलक राज्य था। गुहालिपिमें इसका उल्लेख है। 'मूलक' राज्य को पौराणिक 'मोलिक' राज्य है। गोदावरीके दोनों किनारे तथा डिट्टामें कनिङ्गराज्य था। छप्पा नदीके पूर्वार्धमें उत्तरी किनारे वर्तमान विदर चोर गोदावरीकी संछिरा नामक माघा-नदीके कुंभ तक मछरिह नामक नागराज्य था। बुद्धने इस देगके नागराजको पयना दर्शन दिया था।

दक्षिणार्धमें पाण्ड्यराज को एक मात्र पराक्रान्त सुश्रवस्मिन् राज्य था। यह राज्य वर्तमान मदुरा चोर तिल्लेवेली जिन्ना तक विस्तृत था।

सिंहकोटीमें भी तीन नागराज्य चोर तीन यक्षराज्य थे। सिंहकोटीवर्षे समीप मणिदीपमें भी नागाधि-कार था।

७वीं शताब्दीके शब्दोंमें थोड, दक्षिणकोशल, महा-राज, पाण्ड्य, माघोन, कनिङ्ग, मानव, भद्रकच्छ (भृगुकच्छ वा पेय), धनकटक (छप्पा-नदीके दक्षिणार्धमें पयसिरा) द्राविड (राजधानी काचीपुर), मानकूट (राजधानी कोट्यपुर), पाटि राज्योंमें बुद्धके भ्रमणकी पार्ति लिखी हैं।

१८५३ में मगराजिमें मावदेगमें सिंहपुर (मिहपुर वा सिंहपुरनुर), सुनायराज्यमें मागननुर, भद्रकच्छ (भरोच), छज्जियेनो, चरमक, प्रतिहान, गङ्गा नदी (याम), सुवारीक नगर, सुनुयाराम (याम) :

दहनोक्ता (सं० स्त्री०) दहनस्य उक्ता इत्यतः। धनिके विस्फुलिङ्ग रूप उक्ता।

दहपट (फा० वि०) १ ध्वस्य, चौपट। २ दलित, रौंदा हुआ, कुचला हुआ।

दहपटना (हिं० क्रि०) १ ध्वस्त करना, ढाना। २ दलित करना, कुचलना।

दहवासी (फा० पु०) दम सिपाहियोंका सरदार।

दहर (सं० पु०) दह-धर। १ मृषिका, सुधिया। २ भ्राता, भाई। ३ बालक। ४ नरक। ५ वरुण। ६ कुकूट, मुर्गा। (त्रि०) ७ स्वल्प, छोटा। ८ सुध्म। ९ दुर्वोध।

दहर (हिं० पु०) १ दह, नदीका गहरा स्थान। २ कुंड, झील, गड्ढा।

दहर दहर (हिं० क्रि० वि०) धधकते हुए, धौं धौं।

दहरपट (सं० स्त्री०) तैत्तिरीय संहिताका एक अंग।

दहरपुत्र (सं० स्त्री०) बौद्धोंका एक ग्रन्थ वा सूत्र।

दहराकाश (सं० पु०) दहरा आकाशः कर्मधा०। चिदाकाश, ईश्वर।

दहन (हिं० स्त्री०) भयसे डटना काँप उठनेको क्रिया।

दहलना (हिं० क्रि०) भयसे स्तब्ध होना, डरसे काँप उठना।

दहना (फा० पु०) दम विज्ञोवाला ताग।

दहलाना (हिं० क्रि०) भयभीत करना, डरसे कपाना।

दहलीज (फा० स्त्री०) वह लकड़ी जो दरवाजेके चौखटके बीच जमीन पर रखी है, देहली।

दहगत (फा० स्त्री०) भय, डर, खौफ।

दहसनो (फा० स्त्री०) इस भासके खानेको बही।

दहा (फा० पु०) १ सुहरमका महीना। २ ताजिया। ३ सुहरमकी रीति। ४ तारोखका मस्य।

दहाई (फा० स्त्री०) १ दशका मान। २ अड़ोके स्थानोंकी गणनामें दूसरा स्थान।

दहाड़ (हिं० स्त्री०) १ किसी भयङ्कर जन्तुका घोर गन्ध। २ आर्तनाद, रोनेका घोर गन्ध।

दहाड़ना (हिं० क्रि०) १ गजना, गुर्गना। २ चिल्ला चिल्ला कर रोना। ३ जोरसे चिल्लाना।

दहाना (फा० पु०) १ दार। २ मदकका सुई। ३ नदीका मुहाना। ४ नाली, मोरो। ५ घोड़ेके मुँहकी लपाम।

दहार (सं० पु०) १ प्रान्त, प्रदेश। २ समीपवर्ती प्रदेश, खैरु।

दहिरल (हिं० पु०) एक प्रकारकी चिट्ठिया। यह पाठ अंगुल लम्बी होती और कोड़े मकोड़े खातो है। इससे पैरों पर सफेद और कालो लकीरें होती हैं।

दहिद—बर्बरोंके काठियावाड़के अन्तर्गत एक छोटा राज्य।

दहिना (हिं० वि०) अपसव्य, बायाँका उलटा।

दहिनावर्त (हिं० वि०) दक्षिणावर्त देखो।

दहिने (हिं० क्रि० वि०) दाहिनी तरफका।

दहियक (फा० पु०) दशमांग, दशवां हिस्सा।

दहियत (हिं० पु०) दहना देखो।

दही (हिं० पु०) दहि देखो।

दहेगर (हिं० पु०) दहोका चड़ा।

दहेड़ी हिं० स्त्री०) मटोका भरतन भिसेमें दही रखा जाता है।

दहेज (सं० पु०) विवाहके समय अन्त्यापन्नकी शीर्षे वरपक्षको दिये जानेका धन, यौतुक, दापना।

दहेखा (हिं० वि०) १ दग्ध, जला हुआ। २ संक्रम, दुःखी। ३ आद, भीगा हुआ।

दहोतरवी (हिं० पु०) एक सौ दम।

दहमान (सं० त्रि०) दह-कर्मणि गानच्। दहमाना हो।

दह (सं० पु०) दहतीति, दह-रक्। १ दहक, दहानि। २ नरक। ३ धनि। ४ डर, डहाना काम।

दहानि (सं० पु०) दहस्य पणिः कर्त्तव्यः।

दा (सं० स्त्री०) दाक्षिण्य। १ दान, दक्षिण्य। २ उपताप, उत्ताप, गर्मी।

दा (हिं० पु०) सितारका पर दहना।

दाई (हिं० वि०) १ दाहिनी (बायाँ)। २ दाई दफा।

दाई (हिं० स्त्री०) दाई दफा।

प्रसूताके उपचारके लिये दाई कहते हैं। दाई स्त्रियोंकी बधा करनेवाली स्त्री है जो छोटी छोटी बातें कहकर प्रसूताको आश्वस्त करती है।

केलिंग देशमें चम्पक और मौलिक, दक्षिणा पंथमें माहि-
भती*, मासकूट राज्यमें कौङ्कणपुर, द्राविड़ राज्यमें
काचोपुर और दक्षिण मधुरा (मदुरा) था।

बन्दरादिमें भरुक्क, सिंघपुर (बङ्गराजपुर विजय-
ने इस नगरमें सिंघलको यात्रा की), कागल (विजयके
मरने पर उनका भतीजा सिंघासन पानेकी इच्छासे
यहांसे सिंघलको गये थे), सुपरिका, (इस स्थानमें
सिंघल जाते समय विजयका जहाज ठहरा था), कलिङ्ग
देशमें पाजित्ता (Adzietta) जलदेशीय बौद्धपन्थके भता-
नुसार बङ्गोपसागरमें जहाज ठहरनेका स्थान) आदिका
उल्लेख है।

जलयानमें—“जनवाजातक” यन्त्रमें एक जहाजके
नट होनेको कथा लिखी है, उसमें भाओ, महाइ और
भारोही मिला कर कुल ७ सौ मनुष्य थे। सुपरिक-
बोधिसत्त्व जिस जहाज पर चढ़े कर वाणिज्य करनेके
लिये गये थे, उसमें उन्हें छोड़कर और भी ७ सौ वणिज
थे, ऐसा लिखा है। मेघवाहन-जातकमें एक जहाज पर
५ सौ मनुष्योंको बात लिखी है। तुलसिष्ण पूर्णके भाई
तीन सौ मनुष्योंको साथ ले कर एक जहाज पर गये थे
इत्यादि। इससे जाना जाता है, कि उस समय बहुत
बड़े बड़े जहाज थे और दाक्षिणात्यके बन्दरोंमें आया
जाया करते थे। वे सभी जहाज वायुके बगैरे चलते थे।

पण्य द्रव्योंका विषय सुपरिक-बोधिसत्त्वके विवरणमें
है। उन्होंने सभी स्थानोंसे सब प्रकारका द्रव्यसंग्रह
किया था। रत्नचन्दन, श्वेतचन्दन, मणिमणिक्कादि,
सिंघलकी सुन्ना आदि द्रव्य साधारण पण्यके साथ सभी
कुंक्ष कुक्ष करते थे। मदल बङ्गराजकुमारने विजयकी
जब कुक्षीये चाक्षार्यदान किया, तब उन्होंने जहाज द्वारा
चावल संग्रह कर दिया था। सुतरां उस समय चावल-
की आमदनी और रफ्तानी भी थी। कभी कभी देशीय
द्रव्य ले कर जिन विदेशीय द्रव्योंकी बदलते थे उनमें
चावल, धान, रत्नचन्दन, श्वेतचन्दन, सुगन्धद्रव्य, ओषध,
शङ्ख, चरुष, लोह तथा उसका द्रव्य, कापास, शङ्ख
वस्त्र आदि हो प्रधान था।

● महाभारतके राजा भीमकी राजधानी।

↑ यह भी महाभारतके देश है। यह जापुनिक वैज्ञानिक
भगवत्के मिष्ठ वर्तमान था।

मुक्तके समय जब दाक्षिणात्यमें इतना वाणिज्यव्यापार
रहनेका प्रमाण मिलता है, तब यह स्पष्ट कह सकते हैं
कि मुक्तके पहले कमसे कम ५ सौ वर्ष भी दाक्षिणात्यमें
सभ्यता तथा राजादिको श्रृङ्खला थी। इस प्रकार ई०
सन्के हजार वर्ष पहले भी दाक्षिणात्यमें जो सभ्यता थी
वह बहुत कुछ प्रमाणित है इसके पहले महाभारतका
समय था।

महाभारतके समय भी दाक्षिणात्यमें आर्य सभ्यता
फैली हुई थी। उस समय कलिङ्ग, माहिभती, विदर्भ,
द्राविड़ आदि स्थानोंमें क्षत्रिय राजाओंका राज्य था और
दाक्षिणात्यके चनेक स्थान आर्योंके निकट पुण्यवेत्तपथमें
गिने जाते थे। धनपर्वके तोषां यात्रा पर्वाध्यायमें इसका
विलक्षण प्रमाण पाया जाता है।

जिन्तु भारतीय युगमें भी दाक्षिणात्यके चनेक स्थान
धन जङ्गलोंसे परिबद्ध थे। आर्य सभ्यता ज्यों ज्यों
बढ़ती जाती थी, त्यों त्यों वनजङ्गल ग्राम नगरादिमें
परिणत होता जाता था। इसके पहले हम लोग रामा-
यण और उसके भी पहले वैदिक युगमें भा पहुँचे।

वैदिकयुगमें दाक्षिणात्यमें केवल भनाय जातिका
ही वास था, उस समयमें आर्य सभ्यता वहाँ फैली न
थी। भगवत्पुण्यस्थिति ही पहले दाक्षिणात्यमें आर्य धर्म
प्रचारका सुवर्णत किया तथा परशुराम और रामचन्द्रके
यज्ञसे भनाय जातिमें आर्य सभ्यता प्रचारित हुई। रामा-
यण पढ़नेसे मान्यम होता है, कि यमुना नदीके दक्षिण-
से ले कर समस्त गोदावरी प्रदेश तक दण्डकारण्य ही
विरह्यत था। वहाँ राक्षस प्रभृति भनाय जाति राज्य
करते थे। उस समय राक्षस, वानर आदि चरभ्य
जातिगण तरह तरहके फल वृक्षोंसे समाकीर्ण ग्राम
तथा गिरिदरीवेष्टित कुक्षमय गुहाओंमें रहते थे।
उन लोगोंमें भी राजा थे, सामन्त थे तथा राज्यपरिचाल-
नोपयोगी विधि-व्यवस्था भी थी। उनके बलविक्रमसे
आर्य ऋषिगण बहुत भय तथा कष्ट पाने थे। आर्यावर्त-
वासी क्षत्रियोंको सहायता लेते थे। क्षत्रिय राजगण भी
दाक्षिणात्यके राजाओंकी उतनी उपेक्षा नहीं करते।
राजर्षि जनकने भीता स्वयम्बरके समय दाक्षिणात्य-
राजाओंको भी निमन्त्रित किया था—

दाउद खाना—अब मीरजाह-बंशियो इस्लाम शाह दिल्ली के मन्नाट, ये, उस समय बङ्गाल के मुख्य-धार्मिक चरित्र नवाब गढ़-मुहम्मद की १५६२ ई० में मार कर सुलेमान नामक फरगनीश गढ़ के पठान बङ्गाल के अधिपति हुए। १५७२ ई० में सुलेमान कराणीकी मृत्यु हुई। बाद उनके बड़े लड़के बयाजिद शाहगढ़ी पर बैठे। दूसरे वर्ष बयाजिदको मारकर पठानसरदारोंने बयाजिदके छोटे भाई दाउदको बङ्गाल के मिर्जासम पर अधिपति किया। राजा होने के साथ ही दाउदने देखा कि उनके पास कुल १४००० पदातिक, ४०००० सशस्त्री, २०००० कमल घोर ३६०० हाथी हैं। उस समय गौड़नगर के दूसरे पार में उनकी राजधानी थी। दाउदने अपना सैन्यबल देख कर मिहारे में सब जगह अपने नाम पर स्तुतिवा पढ़ने का हुक्म दिया। पड़ोसी बरकी सुदयाग्राम में इन्होंने गौजीपुर के रसोपत्य जमानिया नामक सुगन्ध दुर्ग पर अधिकार जमाया। इस समय दिल्ली में अकबर सन्ना था। दाउद का विवरण सुनकर अकबरने उनके विरुद्ध अपने प्रधान सेनापति सुनीमखान और राजा टीडरमलको भेजा। सुनीमने पठानोंको जीत कर बङ्गाल में प्रवेश किया। दाउद उड़ीसाकी भाग गये। रास्ते में मिदिनोपुर और अनेश्वर के बीच सुगन्धमारी (तुकारी) नामक स्थान में सुगन्ध और पठान-सेनाकी मुठभेड़ हुई (१५७५ ई० में)। पहले पठानोंकी जयको सम्भावना थी, किन्तु टीडरमल के कीशक ने अन्त में सुगन्धोंकी ही जीत हुई। दाउद उड़ीसा की चला दिये। सुगन्धोंने पोछा किये जाने पर कटक के समीप दाउदने आत्मसमर्पण किया। पीछे सुगन्धोंने उन्हें कटकका शासनकर्ता बनाया। सुनीमखान कोट कर फिर ताण्डाने गौड़ में राजधानी उठा ली और पाप स्य बङ्गालका शासन करने लगे। इस समय गौड़ में महामारी फैली हुई थी, सुनीमखान उसीके शिकार बन गये। बङ्गाल सुगन्धराज्यभूक्त हुआ। गौड़नगर भी पराजित पड़ित होने लगा। सुनीमखानका मृत्यु-सम्वाद सुन कर दाउदने कटक में बङ्गाल पर धावा मारा। सुगन्ध मन्नाट में दुमैल कुली खानको सेनापति बना कर टीडरमल के साथ दाउद के विरुद्ध भेजा। राजमहल के समीप घनघोर लड़ाई हुई। दाउद मारे गये और

सुगन्धोंकी जीत हुई (१५७५ ई० में)। दाउदका हिस्सा मस्तक अकबर के पास भेज दिया गया। दुमैल कुली ही बङ्गाल विहार उड़ीसा के शासनकर्ता हुए।

दाउदनगर—गया जिले के चौरङ्गाबाद उपविभागका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २५° ३' उ० और देशा० ८४° २४' पू० सोन नदी के दाहिने किनारे चौर पटना शहर के बायें किनारे पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८०४४ है। कहा जाता है कि दाउद खान यह नगर स्थापित हुआ है। उन्हींको बनाई हुई दाउद नामको सराय शहरकी प्रधान पञ्चालिका है। शायद यह दुर्ग के रूप में व्यवहार करने के लिये बनाई गई थी। एक छोटा इमामबाड़ा और व्यवसाय के लिये उपयुक्त चोतरा नामक चकवा विख्यात है। यहाँ कपड़ा, मोटा गनोचा और कम्बल तैयार होता है। दाउदनगर में ४ मील दूर गया जग के रास्ते पर एक सुन्दर गिरिधर-विग्रह मन्दिर है।

भविष्य ब्रह्मखण्ड में लिखा है कि, 'सोन नदी के किनारे गया देश में दाउद (दाउद) नगर बसाया जायगा और श्रावस्त्र दाउद नामक एक सुसज्जित इसकी स्थापित होगी। साल भर दाउदनगर में हिन्दू और सुसज्जितों में लड़ाई होगी। पीछे की कटवाशिष्टों को प्रायश्चित्त प्राप्त होगा। दाउद नगरको प्रजा सोन नदीका ही जल काम में लायेगा। काल के दग हजार वर्ष बीत जाने पर दाउदनगर भूगर्भ में जायगा।'

दाउदनगर गया से २० कोस उत्तर-पूर्व में अवस्थित है। इसमें प्रायः ८०० घर लगते हैं। दाउद खान सराय में दो बड़े बड़े फाटक हैं। दाउद के पुत्रका नाम अहमद था। इसीके नामानुसार अहमद गढ़का नाम पड़ा है। चोतरा मकान सोन खनका है। प्रत्येक तल कमरा छोटा है और प्रत्येक तल में दानू छतका बराबर है। यहाँ आजकल भी देगो सफ़ा प्रयुक्त होता है जिसे यहाँ के अधिकांश अपने काममें लाते हैं। यहाँ ताँतियोंकी दुर्भिक्ष के समय में भी सरकारो रिमोक कार्यकी सहायता नहीं लेनी पड़ती है। यहाँ १८८५ ई० में स्थापित विद्यालय स्थापित हुई है।

“दक्षिणराजसंज्ञाय नमो नमः मा भिन्नु ॥”

(सामां ११२२ सं.)

दाक्षिणात्यवासी बनाय आतिथे उपद्रवकी क्या
रामायणमें हम प्रकार किया है—

“द्वयै रघुविभीषणेः कुरैर्भीषिर्नरैः ॥

बानाहरे विंशत्येव रूपैरुपद्रवैः ॥

मन्मथसौ रघुविभिः संश्रुत्य य तान्वाच ॥

प्रतिप्रत्यश्वान् विद्यामन्वाधाः पुनरन्वमः ॥

तेषु सेनाधरास्वानेधबुधमन्वलीय य ॥

रामते तावमांतात् नान्यतोऽन्यचेननः ॥

(सामां २११६ सं.)

किमीका मत है, कि ऐतरेयब्राह्मणमें विष्णुसमिन्ने
पुन चक्षुका पञ्चमे है। इसी चक्षुके दाक्षिणात्यके चक्षु
वा चक्षुभजनपदका नामकरण हुआ है। हममें कोई
कोई अनुमान करते हैं, कि ऐतरेयब्राह्मणके समयमें ही
दाक्षिणपययासी बनायजातिके साथ चार्यजातिका
संस्पर्श हुआ था। रामायणमें दाक्षिणात्यके बनाय त
पाण्ड्य, चेर और चोल इन तीन प्रधान जनपदोंका उल्लेख
है। हरिश्चंगके मतसे ययातिके पुत्र तुवंगुके वंशमें
पाण्ड्य, चेर, चोल और चोल ये चार उत्पन्न हुए थे।

नवरोक्त प्रमाणोंसे सिद्ध होता है, कि चक्षु, पाण्ड्य,
भोज आदि दक्षिणपययन ही संस्कारभट्ट, जातिच्युत
और समाजच्युत जो घर दाक्षिणात्यमें प्रवेष्टपूर्वक
बनाय समाजमें आधिपत्य के लाया तथा अधिक दिन
तक चार्यजातिके साथ रह कर बनायधर्म और बनाय
भावा पक्षकी। उनके वंशधर वैदिक चार्यभाव और
चार्यभावा कुछ समय तक भूल गये थे।

११वीं शताब्दीमें दाक्षिणात्यमें कैसी मज्जि और
मज्जता थी, उसका पालाव धर्मोंमें पता लगता है। उस
समय दाक्षिणात्यमें प्रायः चक्षु, काच आदि राजगण
राज्य करते थे। इसका पक्षपातन हीमें परम, मोर्य,
कट्य, केन्द्रक, कनरुही, गङ्गा, चतुर्प, नाट, मालव,
गुज्जर, पञ्च, वाटुग, राहुकट, जेयसाय, वाटव आदि
वंशीय राजाओंका आधिपत्य फैल गया। कोहल और
जहालमें शिलाहार, मोर्या, राह, वाटव और गोपा
कट्य, केन्द्रकमें सिन्द, गुजालमें गुज, मरिचुमें कोट्ट,

पोरुलमें मण्डपति आदि नामसे राजगण भी एक समय
प्रबल हो गये थे।

११वीं शताब्दी तक समस्त दाक्षिणात्य हिन्दू राजाओंके
शासनाधीन था। १२६० में ११० ई०के मज्ज दिक्कीर
बनाउद्दीनी विजयीमें महाराष्ट्र, मैसूर और कर्णाट पर
पाकमज किया। १३२८ ई०में महम्मद तुगलकने दाक्षि-
णात्यमें हिन्दू प्रभावकी चुर कर डाला। इसके कुछ दिन
बाद ही बाह्यालोचंगका अभ्युदय हुआ। इसके प्रबल
प्रतापमें तैमूरके तथा विजयनगर का कर्णाटके हिन्दू-
राज्यका पक्षमान हो गया। कुछ समय बाद अहमियाहके
कारण बाह्यालोचंग विजयपुर, अहमदनगर, मोलहुवा,
मिटर और बेरार इन चार प्रांतोंमें विभक्त हो गया।
१४३० ई०के पहले ही अलिम हो राज्योंका पक्षित
होय हुआ। गेव तीन शाहजहान और औरंगजेबके यत्न-
में ही इसी साम्राज्यमें मिना मिल गये। १७१० ई०में
महाराष्ट्रने दाक्षिणात्यमें चोप पसल करकेका अधिकार
पाया था। महाराष्ट्रनायकने महारा राज्यका बसाया।
धोके सतारके राजाकी प्रकृत सामगमलि पूर्णके विमर्शके
प्राय लगो। शीघ्र ही महाराष्ट्रका पराक्रम कुछ कम
हो गया।

दाक्षिणात्यके सुलभमाणोंको बेहाने इतरावाहमें
निजामन राठका गृहपात हुआ। इस समय तुलुभट्टा-
के उत्तरवर्ती राजा और सामन्तगण विमर्शकी तथा
दाक्षिणात्यकी राजा निजामकी अधीनता स्वीकार करने
थे। धोके मरिचुर दोरी शक्तिकी अधीनता स्वीकार
करता था, बाद अह इतरावाहके गृहपात। इस समय
केवल त्रिवाङ्गु हके हिन्दूराज आधीनता भोग कर रहे थे
१८वीं शताब्दीमें दाक्षिणात्यकी दोनो पक्षता थी। इस
समय चेन्नमोळ, चोमनाञ्ज, करामी और इटिगनाति
दाक्षिणात्यके उपद्रवमें आधिपत्य करने लगे थे। किन्तु समय
महाराष्ट्र और निजाममें लड़ाई दिहो थी, लमी मज्ज
करामी और इटिगने दोनो पक्षोंकी गहायता देखर और
और चपनी प्रभुता केला ली। यदा समय इटिगका
आम्य बमज उठा लमी प्रायः पन्ध्रभाग होट कर समस्त
दाक्षिणात्य इटिग गवर्नरके शासनाधीन है।

चमी दाक्षिणात्य प्रधानतः मन्त्राज प्रदेशकी

दाउदपुर—मस्जिद, चक्रवरके मंरनेके बाद तथा नादिर-
शाहके अभ्युदयके मध्यकालमें : (१६०५-१७२८ ई०)
दाउद खाने पुत्रागण बहुत प्रबल हो उठे थे। वे दाउद-
पुर नामसे ही प्रसिद्ध हो गए थे, यहां तक कि इनके
सभी वंशधर 'दाउदपुर' कहलाते थे। कपड़ा बुनना
तथा सैनिक हस्ति हो इन लोगोंकी उपजोविका थी।
शिकारपुर प्रान्तमें इनका प्रधान पड़ता था। अमरगोल
जामिकी नाई' ये लोग कभी तो खोपुरमें घोर कभी
तराई, मकर भादि स्थानोंमें रहा करते थे।

महरोंके साथ घनेक युद्धके बाद दाउदपुरमें उत्तर
सिन्धुप्रदेश पर अपनी गोठो जमाई। इस समय ये लोग
एक प्रकार युद्धपातुक्तसे सिन्धुप्रदेश पर शासन करते
रहे, किन्तु निकटवर्ती प्रदेशोंके शासनकर्त्ताओंके साथ
इनका हमेशा युद्ध-विषय हुआ करता था। इसे शास्य
कारनेके लिए अहंगीरने सिन्धु प्रदेश पर अस्थायी राज-
प्रतिनिधि नियुक्त किया। पीछे दाउदपुरीने १६५८ ई० से
ले कर १७८० ई० तक सिन्धुप्रदेश पर शासन किया था,
दाउदपुर—प्रतापगढ़ जिलेका एक ग्राम। यहां दाउद
शान्ति बनाये हुए बहुतसे भवनदुर्ग देखनेमें आते हैं।
कहा जाता है, कि भलाउद्दीन खिलजीके समयमें ये सब
दुर्ग बनाए गए थे
दाऊ (हि० पु०) १ बड़ा भाई। २ कृषके ज्येष्ठ भ्राता,
बलदेव।

दाऊद (हिब्रु, Daud)—दूसरा नाम देविड (David =
पिय) इस्रायलके द्वितीय राजा। ये लुडा जातिभुक्त थे तथा
बैथलम् निवासी जैसौके नवम और सबसे छोटे
बालके थे। वक्षपनमें ये अपने पिताके सेपणालकी रक्षा
करते थे। उन समय पन्ध्र वर्षको अवस्थामें सामुपेलने
उन्हें इस्रायलके राजपद पर अभिषिक्त किया। इस्रायल-
के राजा सल उस समय भी जीवित थे, शायद इस अभि-
षिक्तका विषय नहीं जानते होंगे। दाऊदकी घोषा
बजानेकी प्रलोचनिका शक्ति थी। सल कीध कीधमें पागल
हो जाया करते थे, तभी दाऊद समुद्रर घोषाध्वनि सुना
कर उनकी चम्पत्ता दूर करते थे। पीछे इस्रायल-
जागोके साथ अथ फिलिष्टाइनो का भेगड़ा उपस्थित हुआ
तब सलने सबसेय युद्धयात्रा की। दोनों पक्षोंने जब

युद्धक्षेत्रमें कदम बढ़ाया, तब फिलिष्टाइनोमेंसे एक दुर्घट
बलयाली महाकाय गोलियथ नामक वीरने इस्रायलो-
की युद्ध करनेके लिए खलकाया। इस पर जब किमोने
कदम बढ़ानेका साहसन किया, तब दाऊदने स्वयं
गोलियथके सामने हो उन पर पत्थर फेंका जिससे वह
जमीन पर गिर पड़ा और तब तलवारसे उसका सिर
काट डाला। इस प्रलोचनिका वीरत्वसे इस्रायलामुद्र-
गण सबके सब दाऊदके पक्षपाती हो धन्य धन्य कहने
लगे। सलने भी लड़ाई लीत कर पहले दाऊदकी
खूब तारीफ की थी, पर पीछे उन्हें सभीके प्रेमभाजन
देख उनकी पढ़नेकी प्रीति शीघ्र हो चलाउ हिंसामें पनट
आई। फिर दाऊद सलके सिंहासन पर बैठेगा, इस
चिन्तासे सुलगते हुए भाग और धन्य ठही। उन्होंने
दाऊदकी मार डालनेका संकल्प किया। किन्तु उध-
की एक भी चाल न चली—दाऊदका एक बाल भी
झीका कर न सके। पीछे इस विवादकी निवटानेके
स्थानसे सलने अपनी लड़कीको उन्हें ब्याह दिया।
लेकिन वह ईष्यामल काय बुझनेकी था—मनके भीतर
जल रहा था। सल पुनः दाऊदको मारनेके लिए काटि-
बद्ध हुए। दोनोंमें घनघोर लड़ाई हुई। दाऊद यथा
साधा शस्त्ररक्षा करने लगे। लड़ते समय उन्होंने सलको
दो बार अपने हाथमें पा कर भी उन्हें न मारा। अन्तमें
युद्धक्षेत्रमें सल मारे गये और लड़ाईका भी अवसान
हुआ।

पीछे दाऊद जूडाके सिंहासन पर बैठे। हैबरनमें
उनकी राजधानी बसाई गई। जूडा छोड़ कर और
दूसरी दूसरी जातियोंने सलके पुत्र इस्रोबेथको अपना
राजा मान कर इस बातकी घोषणा कर दी। इस्रो-
बेथके मारे जाने पर दाऊद मसूचे राज्यके अधिहारो हुए
और २०१५ से २०५५ ई० तक राज्य कर आप पञ्चत्व-
को प्राप्त हुए। राजगद्दी पर बैठनेके बाद ही वे सब-
से पहले जेरुसालेमके साथ लड़नेको उताव हो गये और
उन्हें परास्त कर इनका प्रधान नगर जेरुसालेम ले लिया
तथा वहां अपना वासस्थान स्थापित किया। इसी नगर-
में यहूदियोंका प्रधान पड़ता था। बाद दाऊद फिलि-
स्तेइन, अमलेकाइट, एडोमाइट, मोयाबाइट, बंभी-

बम्बई प्रेसिडेन्सीका अधिकांश, हैदराबाद, महिमुद, त्रिवाङ्ग, तथा और कई एक देशोंय राष्ट्रोंमें विभक्त है ।

यद्वाभारत, रामायण और पौराणिककालके दाक्षिणात्य जन-पद समूहका नाम तथा वर्तमान अवस्थान दाक्षिणात्यके विभिन्न शब्दोंमें देखो ।

दाक्षिणापथक (सं० त्रि०) 'दक्षिणापथे' देखे भवः धूम्रादित्वात् बुञ् । दक्षिणापथदेशवात्, दक्षिणा-पथदेशका ।

दाक्षिणा (सं० पु०) बन्धनविशेष, एक प्रकारका बन्धन जो दक्षिणा प्रधान इष्टापूर्त आदि कर्मोंकी कामनावश-करनेसे होता है ।

दाक्षिण्य (सं० स्त्री०) दक्षिण्यभावः दक्षिण्य-व्यञ्जः । १ अनुकूलता, प्रशंसा । २ परहृन्मातृवृत्तान्, दूसरेके वित्तकी किरमी या प्रसन्न करनेका भाव । ३ सरलता, सुशीलता, उदारता । ४ साहित्यदर्पणोक्त नाटक-लक्षणभेद, साहित्यमें नाटकका एक अंक ।

चेष्टा तथा वाक्य द्वारा दूसरेके उदासीन या अप्रसन्न वित्तकी फेर कर प्रसन्न करनेका नाम दाक्षिण्य है । उदाहरण—

“प्रसाधय पुत्रीं मेकां राजा त्वं हि विभीषण ।

कार्येणानुग्रहीतरश्च न विप्रः सिद्धिमन्त्राः ॥”

(साहित्यदर्पण)

हे विभीषण ! तूम लहानपुत्रोंको रक्षा करो तथा सुम की यहकि राजा बनो । इस जगह इसी वाक्य द्वारा विभीषणका वित्त अनुवर्तित हुआ, इसीसे यह दाक्षिण्य हुआ । इसी प्रकार चेष्टा द्वारा भी हुआ करता है । ५ दक्षिणाचाररूप भावविशेष, श्रमग्रानभेदक और उत्पत्तारा प्रभृति देवोंकी वामांशार और दक्षिणाचारमें पूजा करनी चाहिये । ऋषि, देवता, पित्र, मनुष्य, भूत धनूह इन पाँच प्रकारके यज्ञ द्वारा भव प्रकारके श्रम परिशोध कर विधिपूर्वक स्नानदानादि द्वारा सरहस्य की पूजा की जाती है, उसीको दाक्षिण्य कहते हैं । (भाट्टिकापु० ७७ अ०) (त्रि०) ६ दक्षिणार्ह, दक्षिणा-धर्म्यो । दक्षिणे भव दाक्षिण्य-उत्पत् । ७ दक्षिणभव, दक्षिणका ।

दाक्षिण्यद (सं० पु०) जनपदविशेष, एक देशका नाम । दाक्षिण्यद (सं० पु०) एक ऋटका नाम ।

दाक्षी (सं० स्त्री०) दक्षस्य स्त्रियर्थं दक्ष-इञ् । १ दक्षका स्त्री-वपत्य, दक्षकी कन्या । २ पाणिनि मुनिकी माता । पाणिनि देखो ।

दाक्षीपुत्र (सं० पु०) दाक्ष्याः पुत्रः इ-तत् । पाणिनि मुनि ।

दाक्ष्य (सं० पु०) दाक्ष्या वपत्य पुमन्तु दाक्षी-ठक् । (कौमुदीठक् । पा ४।१।२०) दाक्षीपुत्र, पाणिनि मुनि । दाक्ष्य (सं० स्त्री०) दक्षस्य भावः कर्मधा० दक्ष-व्यञ् । दक्षता, निपुणता, पटुता ।

दाख (हिं० स्त्री०) १ खंर, २ मुनका । ३ किशमिश । दाखिल (फा० वि०) १ प्रविष्ट, घुसा हुआ, पैठा हुआ । २ शामिल, शरोक, मिला हुआ । ३ पहुँचा हुआ ।

दाखिलखारिज (फा० पु०) सरकारी कामज परसे किसी भूम्यक्तिके अधिकारोंका नाम काट कर उन पर उसके उत्तराधिकारों वा किसी दूसरे अधिकारोंका नाम लिखनेका काम ।

दाखिलदफ्तर (फा० वि०) बिना विचार किये हुए दफ्तरमें लान रखी हुआ कागज ।

दाखिला (फा० पु०) १ प्रवेश, पैठा । २ वह कार्य की जिसो संख्या, कार्यालय आदिमें सम्मिलित किया गया हो । ३ किसी चीजके दाखिल वा जमा करनेका कागज ।

दाखी (हिं० स्त्री०) दाक्षी देखो ।

दाग (हिं० पु०) १ दग्ध, दाह । २ न्यतकका दाह कर्म, सुर्दा जनानेकी क्रिया । ३ जनन, डाह । ४ जलनेका चिह्न ।

दाग (फा० पु०) १ धब्बा, बिन्ती । २ चिह्न, निगान, पंक्ता । ३ कनह, ऐव, दोष । ४ जलनेका चिह्न । ५ वह चिह्न जो किसी चीजके सङ्ग जाननेसे उस पर पड़ जाता है ।

दागदार (फा० वि०) १ जिस पर दाग लगा हो । २ धब्बेदार ।

दागना (हिं० क्रि०) १ दग्ध करना, जलाना । २ शरीर पर चिह्न देनेके लिये तपे हुए सोहेके किसीके पङ्कको

ग्राइट और मीरोय आदि जातियों को युद्ध में परास्त कर एक और इडली गिरने भूमध्यसागर तक और दूसरी ओर मीरोय में मोहित सागर तक ५० लाख प्रजापूर्ण विस्तोर्ण साम्राज्य के अधीन रह गए। किन्तु इन्होंने बाधमेवाका हरण और उनके स्वामी को बिनट कर अपने विजय-गौरवको कलङ्कित किया। वे बाणिज्य से उत्कर्ष प्राप्त करने लगा हो तथा उसके उत्थित-कल्प में विषेय मनोयोगी थे। उनके राज्य में यहदियोंने शिक्षा, शाण्ड्य, धर्मभौति, राजनीति, समाजनीति, काव्य, इतिहास, सद्गोत्र, आदि की अच्छी उत्थिति की थी। राज्यशासन के लिये हमेशा एक दल नेता तैयार रहते थे। सुचारु रूप से राज्य प्रबालेय लिए उन्होंने बारह शासनकर्त्ताओं को नियुक्त कर हर एक पर दस्तावेजों के विभिन्न जातियों का शासन भार मीपा।

जी लुह ही, दाऊद निरापद से राज्यसत्ताका भोग कर न मर्गे थे। उन्हें अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ा था। उनका पुत्र भी विश्वेही हुआ था और पीके मारा भी गया। इससे उनकी अवशिष्ट जीवन बहुत उदामोन्मत्त भीतता था, इसमें सन्देह नहीं।

दाऊद केवल युवक, राजनीतिविद् और राजा थे, मो नहीं, उनकी कवित्व शक्ति भी प्रगल्भ थी। उनका बनाया हुआ सुति गीतिपुस्तक (Book of psalm) ईसाई जगत में प्रचलनीय है।

दाऊद का जीवन निष्ठाप नहीं था। दुर्दम इन्द्रियों के यकीभूत हो कर वे अपना अधिक समय भोगविभोग में बिताया करते थे। इन सब दुष्कृतियों के हमेशा जर्जर और व्याकुल रहते थे। वे कहते थे, कि गतवाप उनके हृदय में हरवणत जायत रहता है। किन्तु इतने पापों तथा भ्रममग्न मनमयी होने पर भी उनका अक्षय्य हृदयवाग इतिहास में प्रचलनीय है। दुर्दम रिपुओं के उन्मार्गों के जाने पर भी उनकी हृदयवत्ता तुल्य न हो सकी थी। प्रचुर पानन में उनका हृदय दम्य हो कर पवित्र रहता था। कीर्ति पाप करने में वे हिचकते नहीं थे और न शर्क उसे टिपते ही थे। दाऊद का बनाया हुआ जो धर्मगीत है, उसे यहूदों ने भी प्राप्त होता है, कि किस प्रकार इन राजकवियों के अनेक नामों भविष्यत्की

भीषण विभोषिका से भीत, निश्चिन्त समाम्भुष से भरे, आम्भोतिन और पञ्चात पापपातकी पापद्वारे प्राप्त द्वित दोऊर विधुषित होते हैं, अन्त में फिर किस प्रकार उस महा पतविभूषको भीषण भटिका के चपगत होने से दुख, जोर, सन्ताप, मर्मपीड़ा द्वारा विभोषित ईश्वर प्रेम उनके हृदय में उदित हुआ है। ईश्वर में प्रेम, पतन और ऐकान्तिक भक्तिस्वक इन प्रकारका गीत वादविम में बहुत कम देखने में आता है। दाऊद के सुखदुःखसमय अनेक घटनापूर्ण जीवन-चरित उनके गीतों में ही साफ भक्तता है। बहुतसे ऐसे धर्मविद् ईसाई हैं जो दाऊद को योग्यदृष्टका एक स्वरूप मानते हैं। वादविम में दाऊद का मूल लम्बा चौड़ा इतिहास वर्णित है।

दाऊदका मो (फा० पु०) १ एक प्रकारका चावल। २ अधिया सफेद गेहूं।

दाऊदिया (फा० पु०) १ एक प्रकारका गेहूं। २ एक प्रकारका पानिगवाजी।

दाऊदो (फा० पु०) बहुत नरम और सफेद क्लिष्ट का एक प्रकारका गेहूं।

दां (हि० पु०) बार, दफा, वारी।

दां (फा० पु०) ज्ञाता, जाननेवाला।

दांक (हि० स्त्री०) दहाड़, गरज।

दांकना (हि० क्लि०) गरजना, दहाड़ना।

दांग (फा० स्त्री०) १ कः रसीकी तेल। २ दिगा, और।

३ कर्वा भाग।

दांग (हि० पु०) १ नगाड़ा, डंका। २ टोला, कीटा पहाड़ी। ३ पहाड़का शिखर।

दांगर (हि० पु०) दांगर देना।

दांगो (हि० स्त्री०) सुनाहो की एक लकड़ी की कंधों में लगी रहती है।

दाङ्गना (हि० क्लि०) १ दण्ड देना, सजा देना। २ सुरमाणा देना।

दाङ्क (हि० पु०) लसाद।

दांत (हि० पु०) दन्त देना।

दांतघुनुनो (हि० स्त्री०) पोन्ते के दाँतकी मूँघनी। ३ बच्चा पढ़ना दांत निकलने पर बंटी जाती है।

दांतवी (हि० स्त्री०) काग, डाट।

जमाना । १ भगो हरे मन्दूहमें बनो टेना, रंजकमें
पाग मगना । ४ तम सुभमे पंजित करना । २ गरी-
को पुंमो पाटिको जमाने वा सुपानिके लिये तम दबा
मगना । ६ रंज पादिने पंजित करना ।

दागोब (फा० सो०) यह चिह्न जो सड़क बनाने, नींव
गोदनेके लिये कुदाममे भूमि पर किया जाता है ।

दागप्यायनि (मं० पु०) दगुका गोत्रापर्यं ।

दागो (फा० वि०) १ दागयुक्त, जिस पर दाग लगा हो ।

२ जिस पर सड़नेका निशान हो । ३ कपड़ित, दोष-
युक्त, नाशित । ४ दाण्डित, जिसको सजा मिल
चुकी हो ।

दागोब—घोड़ीका एक प्रकारका स्मरणार्थ स्तम्भ । यह
संस्कृत 'धातुगम्भ' शब्दका अपभ्रंश है । पालि भाषामें
इसे 'धातुगम्भ' और तामिलमें 'दागोब' (Dagob)
कहते हैं । जिस प्रकार सभी चैत्य बोडके नाम पर प्रति-
ष्ठित वा उत्सर्ग किये हुए हैं, उसी प्रकार भूत स्थलिको
भस्म ले कर जो सब स्तम्भ वा स्मृतिचिह्न बनाये जाते
हैं उन्हें दागोब कहते हैं ।

दागोबमें तरह तरहकी कारुकार्यविगिट चातु
घोर प्रस्तरनिर्मित पात रहते हैं । प्रायः प्रत्येक दागोब-
में एक एक मीने वा चांदीका चकम रहता है जो कई
प्रकारका होता है । मिनमे घिरे हुए गोलमकी धर्मोप-
देशक मूर्ति बकस पर पड़ित रहती है । यह बकस
नामा प्रकारके रत्नमें मण्डित घोर तरह तरहके विनीमें
चित्रित है । कहीं कहीं तो इन सब बकसोंमें दान,
इन्को घोर भोजन पर लिखे हुए चनेक शब्द दिखनेमें
आते हैं, किन्तु ये सब चमो काममें नहीं आते, क्योंकि
इतने जोर हो गये हैं, कि ठगानेमें हो नष्ट हो जाने-
की सम्भावना है । सिंहलमें चतुःशायुमें बहुतसे
दागोब हैं । मोक्ष पुण्यार्थी लोग इनके चारां तरह प्रवृ-
त्ति करते हैं । इन सब चैत्योंके विषयमें प्रवाद है—
जिसो समय सिंहलराज एकादा बैकगाड़ी पर कहीं
जा रहे थे । रास्तेमें गाड़ीके पहियेमें टकरावा कर
दागोबका एक पत्थर टूट फूट गया । जोड़े राजासे देखा
कि इस स्थानके १२ पत्थर चलन चलन हो गये हैं । इस
पर वे डर गये और पापके प्रायश्चित्तके लिये १००००० रु०
दान किये ।

भारतवर्षके नामा स्थानोंमें नामा प्रकारके दागोब
देखनेमें आते हैं । इनमेंसे चमरावती, चमपट्टा, बचा-
बेडी, चाम्पो, चमयगिटि, महाराज घोर इहमधुवा
दागोब प्रधान हैं । इनके विवा घोर भी चनेक दागोब
हैं जो ब्रह्मचारी बोडोंके सम्पत्ति-मन्दिर सरीसे दोष
पड़ते हैं ।

दाघ (मं० पु०) दह-भावे घट्-त्यदादित्वात्-ङ् । दाह,
जलन, गरमी ।

दाह—यम्बर प्रदेशके मूरत मोलटिकस एजन्सोंके चबोन
एक निस्कोर्ष भूभाग । इनके उत्तरमें बरोदा राज्य,
दक्षिणमें नामिक जिला घोर सरगानराज्य, पूर्वमें
वाग्देय, नामिक जिला घोर बरोदा राज्य तथा पश्चिममें
बोमदा राज्य है । यह पचा० २०° २२' से २१° ५' उ०
घोर देशा० ७१° २०' से ७३° ५२' पू० तक विस्तृत है ।
भूपरिमाण ८८८ वर्गमील है । यह भूभाग उत्तर-
दक्षिणमें ५२ मील लम्बा घोर २८ मील चौड़ा है ।

यह भूभाग १५ भागोंमें विभक्त है । प्रत्येक भाग
एक सरदारके अधोन है । १५ भागोंके नाम ये हैं—
दाक्षिमिमो, बड़वान, केतककदुपड़ा, चमाला, बिजनि,
पिम्पदादेवो, चमामबिहार, घोषर, टेरमोति, गावि,
गिववारा, किर्लो, वाद्युर्वा, बिजबारी घोर चुरगाना । इन
पन्द्रहोंमें १४ मीससरदारोंके अधोन घोर १ कुषयोके
अधोन है । यद्यप्यमें ये सबके सब चापोन हैं, किन्तु कुछ
विषयके समय ये सब गावोंसरदारके अधोन काम करने-
को बाध्य हुए थे । पहले ये सरदारगण मल्लारके प्रधान-
को ७०० रु० कर देते थे । लेकिन कर मधुन करनेमें
समय प्रधानके साथ सरदारोंका विवाद हुआ करता
था । चमो गवर्मेंण्टने इस गड़बड़को दूर करनेके लिये
सरदारोंके प्रायः रुपयेमेंसे कुछ सैकड़ा प्रधानके वंगपर-
को दे देनेको व्यवस्था कर दी है ।

इसमें २१८ ग्राम मयते हैं घोर लोकसंख्या प्रायः
१८६१४ है ।

सरदारोंमें एक मात्र बड़ा बड़का हो जलानि-
कागे होता है । चमो मसदा दाहभूभाग तबमेंण्डने
सरदारोंमें ठेके पर ले लिया है । इसमें यह बात किदा
गवा है, कि सरदार कः मास पहले चुकता है ॥

दाता (हि० पु०) एक प्रकारका जंगूरा जो दातके
धाकारका होता है ।

दाताकिटकिट (हि० स्त्री०) १ धाग, बुझ, झगड़ा । २ गाली
गसोड़ ।

दाताकिटकिट (हि० स्त्री०) दाताकिटकिट देखो ।

दांतिया (हि० पु०) १ हड्डी नमक जिसे पोलिके तंबाकू
में समको तेजी बड़ानेके लिये छालते हैं ।

दांती (हि० स्त्री०) १ घास या फसल काटनेका हथिया ।

२ नावके घाट पर गड़ा हुआ बड़ा खूँटा । इससे नावका
रक्षा बांध दिया जाता है । ३ भिड़की जातिका एक
काला कीड़ा । ४ दाँतोंकी पंक्ति । ५ दो पहाड़के बीचका
तंग स्थान, दर्रा, घाटी ।

दाँना (हि० स्त्री०) पकी फसलके हठलोंको दाना फलन
कर देनेके लिये रोदवाना ।

दाँवनी (हि० स्त्री०) दामिनी नामका धातूयण ।

दाँवरी (हि० स्त्री०) रज्ज, डोरी ।

दाक (सं० पु०) ददाति दक्षिणामिति दाक । १ यज-
मान । २ दाता ।

दाक्ष (सं० पु०) दक्षदेव भण् । १ दक्षसम्बन्धोय
यज्ञादि । दाक्षिणां सङ्घः भण् लक्षणं वा इज्यात्
भण् । २ दाक्षिसमुदाय । ३ उसका भण् । ४ उसका
मन्त्र । दाक्षिः कावाः इज्यं इति भण् । ५ दाक्षिका
ह्राससमूह । दाक्षिरागतः भण् । (त्रि०) ६ दाक्षिणे
प्रागतः दाक्षिणप्रवे आया हुआ । ७ दाक्षिका दण्ड
प्रधान मानवका अन्तर्वासी ।

दाक्षक (सं० पु०) दाक्षेरिदं गोत्रवरणात् पुञ् । १ दक्ष
प्रधान मानवका अन्तर्वासी ।

दाक्षायण (सं० पु० स्त्री०) दक्षस्य गोत्रायणं इज् युनि
फक्तः । १ दक्षका युवा गोत्रायण । २ युवर्षादि बलहार,
सेने आदिका धातूयण । ३ भूयण, गठना । ४ दक्षकृत
यज्ञभेद, दक्ष द्वारा किया हुआ एक यज्ञ जिसकी
कथा शतपथ-ब्राह्मणमें है । (त्रि०) ५ दक्षसे उत्पन्न । ६
दक्षके गोत्रका । ७ दक्ष सम्बन्धी ।

दाक्षायणभक्त (सं० पु०) दाक्षायणस्य विषयो देवः एव
कार्यादित्वात् भक्तन् । दाक्षायण यज्ञ सम्बन्धोय देगरूप
विषय ।

दाक्षायणयज्ञ (सं० पु०) दाक्षायणस्य यज्ञः । दक्षयज्ञ ।
दाक्षायणिन् (सं० त्रि०) दाक्षायण-इनि । सुवर्गयुक्त,
सेनिका ।

दाक्षायणी (सं० स्त्री०) दक्षस्य भपत्यं श्री दक्ष-फिज्,
गोरा-डीप । १ शक्तिसे लेकर रैवतो तक २७ नक्षत्र
२ दुर्गा । ३ रोहिणी नक्षत्र । ४ दक्षसे कन्या । ५ दंतो
वृक्ष । ६ कक्षापको स्त्री, प्रदिति । ७ कट्ट । ८ विनता ।
(भाषत १।२।२५)

दाक्षायणीपति (सं० पु०) दाक्षायणीनां प्रसिन्ध्यादि
नक्षत्राणां पतिः इत्युत् । चन्द्रमा ।

दाक्षायणोरमण (सं० पु०) रमयतीति रम-इण् । चन्द्रमा ।

दाक्षायण्य (सं० पु०) दाक्षायण्यां प्रदितो भयः यत् ।
आदित्य, सूर्य ।

दाक्षाय्य (सं० पु०) दक्षाय्य एव स्वार्थे षण् । गृध्र,
मिड ।

दाक्षि (सं० पु० स्त्री०) दक्षस्य गोत्रापत्यं इज् । दक्षका
भपत्य, दक्षकी सन्तान ।

दाक्षिकन्या (सं० स्त्री०) दाक्षीर्णा कन्या, (संज्ञाकर्त्तृ-
धीनरेषु । वा ३।४।२०) इति उभौनरत्नाभावात् न स्त्रीवता
याज्ञोक्त देश ।

दाक्षिकर्ष (सं० पु०) धामविषेय, एक गांव का नाम ।

दाक्षिकूल (सं० स्त्री०) एक धामका नाम ।

दाक्षिण (सं० पु०) दक्षिणा प्रयोजनमस्य षण् । ऋतु-
ग्रहाङ्ग होमभेद, एक होमका नाम । (त्रि०) २ दक्षिणा
सम्बन्धी ।

दाक्षिणक (सं० पु०) दक्षिणायां कर्मसमाप्ते द्रव्यदान-
रूपायां क्रियायां प्रसृतः, दक्षिणार्ग्येण चन्द्रलोकं
गच्छति वा पुञ् । १ दक्षिणातत्पर । चन्द्रलोकगामो ।
बन्धविषेय, बन्धके तीन भेद हैं,—प्राकृतिक, वै कृतिक
और दाक्षिणक । बन्ध देखो ।

दाक्षिणशाल (सं० त्रि०) दक्षिण-शालायां भयः । दक्षिण-
हारी गृह, वह घर जिसका दरवाजा दक्षिणकी ओर हो ।

दाक्षिणान्य (सं० त्रि०) दक्षिणा दक्षिणस्यां दिशि भयः
दक्षिणा-त्वम् (दक्षिणा एवात्र प्रत्ययः । वा ४।१।३८) १ दक्षिण
देगोह्वय, जो दक्षिण देगमें उत्पन्न हो । २ दक्षिणादिक स्थ,
दक्षिणदिगाका । (पु०) १ नारिकेल, नारियल । ४ दक्षिण

भुभाग पुनः वापिम कर सकते हैं। यहाँका जलवायु पसारायकर है।

दाङ्गलि (दंगलि)—एक सन्धासी सम्प्रदाय। इस संगारमें श्रम के बिना कोई काम सम्पन्न नहीं होता और श्रम का धन सबसे अधिक है। इससे इस सम्प्रदायके सन्धासी भिषागृत्ति छोड़ कर वाणिज्य व्यवसाय प्रयत्न करने लगे हैं। हैदराबाद, पूना, सतारा आदि अनेक प्रसिद्ध नगरों में इनके मठ जोड़े विद्यमान हैं।

पहले कलकत्ते में भी इनके मठादि थे। इनमेंसे एक एक मनुष्य मठाध्यक्ष पर्याप्त महत्ता होते हैं। बहुत-तेरे वाणिज्य व्यवसाय द्वारा विपुल सम्पत्तिके अधीश्वर हो गये हैं। यहाँ तक कि कितने महान्तों के पास करोड़ों रुपयेकी सम्पत्ति है।

मठाध्यक्ष मठमें रह कर मठका काम काज लिया करते हैं। उनके शिष्यलोग देशदेशान्तरोंमें घूम घूम कर वाणिज्य व्यवसाय द्वारा अपना निर्वाह करते हैं। इस प्रकार वाणिज्यसे जो धन जमा होता है, वह सत्कर्म में लगाया जाता है। दाङ्गलि महत्त लोग बालकोंको खरीद कर अपना शिष्य वा चिला बनाते हैं। वे उन्हें यत्नपूर्वक प्रतिपालन और शिक्षा प्रदान करते हैं। कुछ दिन इसी प्रकार प्रतिपालन कर यदि मठाध्यक्ष होनेके उपयुक्त समझते, तो मठका कुल भार उन्हें पर सुपुर्द कर देते तथा अन्यथा उन्हें दशनामी सन्धासियोंको सौंप देते हैं।

दाजन्—पञ्जाबके हैरागाजीखी जिलेके प्रसंगत जैनपुर तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २८° १४' ०" और देशा० ७०° २४' ०"। हैरागाजीखी शहरसे ४८ मील दक्षिणमें अवस्थित है। नाहरोंके बाधितत्वके समय यह नगर बहुत बड़ा चढ़ा था। कुछ समयके बाद गाजोखनि यह शहर अपने अधिकारमें लिया। पोलै यह खेलातके खानोंके हाथ आया। पहले यहाँ बहुत वाणिज्य होता था, अभी उस तरहका नहीं है। यहाँकी लोकसंख्या लगभग ६२११ है। १८०१ ई० में म्युनिसिपालिटी स्थापित हुई। शहरकी आय ६८०० रु० है।

दाङ्गल (सं० पु०) दासयति सुशायन्तरस्यद्वयं विवर्णो करोतीति दल-णिच्-लुक्, सस्य-ङ्। १ दन्त, दात। २ दाङ्ग, दाद।

दाङ्गल—ग्रामविशेष, एक गाँव जो काशीसे दो योजन पश्चिममें अवस्थित है।

अविष्य-वृद्धावधेमें लिखा है कि कल्कि भगवान् स्वर्गलोकों तलवारसे नाश करके शान्तिपूर्वक इसी दाङ्गलदेशमें रहेंगे। दाङ्गल ग्रामके पास ही ताम्बचूड नामक ग्राममें यवन लोग रहेंगे कलिका आधा भाग समग्र होने पर यह ग्राम नष्ट हो जायगा।

(भा० व्रत ४० पृ० ७०)

दाङ्गल (हि० पु०) एक प्रकारका साप।

दाङ्गिम (सं० ली०) दन्तनमिति दाल, तीन निष्ठसः भाव-प्रायन्तादिमप-डलशोरेकत्वं। १ एना, इसायषो। २ फलवृक्षविशेष, अनार।

इसका फल लाल और फल खट्टा लिये कुछ मोठा होता है तथा बीजोंसे भरा रहता है। संस्कृत पर्याय—करक, पिण्डपुष्प, दाङ्गिम्ब, पर्बुरक, स्वादन्त, पिण्डौर, फलशङ्ख, शुकवल्गु, रत्नपुष्प, दाङ्गिमोषार, कुडिम, फलसाङ्ख, रत्नबीज, सुफन, दन्तबीजक, मधुबीज, कुच-फल, रोचन, मण्डिोज, कल्कफन, हृत्तफल, सुनील, नीलपत्र।

भिन्न भिन्न देशोंमें लोग इसे भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारते हैं, जैसे, बङ्गालमें दालिम, दाङ्गिम, डालिम, आनार; पश्चिमाञ्चलमें दालिम, दारिम्ब, अनारका पेड़, वेदाना, नासफल; उड़ीषामें दालिम, दालिम्ब; दक्षिणमें अनार, द्राविडमें मादलै, मदलम्; मिथिजातिमें मदल; तेलङ्गामें दनिम्बा, दादिम दालिम्ब; कर्णाटमें दालिम्बेगिदा, बम्बई प्रदेशमें अनार, दालिम्ब; गुजरातमें दाङ्गम्; पञ्जाबमें दाङ्ग, दाङ्गो; पारस्यमें नर, अनार; परबमें राधा वा रखन। (Punica Granatum)

पारस्य, कुर्दिस्तान, अफगानिस्तान, बलूचिस्तान और भारतवर्षमें सब जगह अनारके पेड़ पाये जाते हैं। कहीं कहीं तो छोटी-छोटी और कहीं बड़ी बड़ी शाखाओं प्रशाखाओंके बड़े बड़े पेड़ देखनेमें आते हैं।

बहुत पहलेसे भारतवर्षके लोग इसे आदर करते आ रहे हैं। इसके फूलोंसे जीका भस्मायो लाभ रंग बनता है जिससे लोग कपड़ा रंगते हैं। फलका छिद्रका चमड़ा रंगानेके और विभिन्नानेके काममें आता है। कभी

राइट थोर मिररोय पादि जातियोंको युद्धमें पराजित कर एक थोर इज्रैलियनमें भूमध्यसागर तक थोर दूरीको थोर मिररोयमें मोहित सागर तक ५० लाख प्रजापुर्ण विस्तार मान्वाज्यके अधीन करे। किन्तु उन्होंने बाघमेयाका १२५ थोर उनके स्वामीको विनष्ट कर अपने विजय-गौरवको कलङ्कित किया। वे बाघमेयसे उत्कर्ष साधनमें लम्बाही तथा उसके उत्पत्ति-कल्पमें विग्रेष मनोयोगी थे। उनके राज्यत्वमें यहूदियोंने गिब्य, नाबिथ्य, धर्मनोति, राजनोति, समाजनोति, काव्य, इतिहास, सङ्गोत, पादि की अच्छी उत्पत्ति की थी। राज्यशासनके लिये हमेशा एक दल सेना तैयार रहता था। सुचारु रूपसे राज्य प्रबन्धन लिए उन्होंने बारह शासनकर्त्ताओंको नियुक्त कर हर एक पर इस्त्रायलकी विभिन्न जातियोंका शासन भार मँपा।

जो कुछ हो, दाऊद निरापदमें राज्यसुखका भोग करने मङ्गे थे। उन्हें अनेक विपत्तियोंका सामना करना पड़ा था। उनका पुत्र भी निद्रोही हुआ था थोर पीछे मारा भी गया। इसमें उनका अवशिष्ट जीवन बहुत उदासोन्मत्तसे बीतता था, इसमें सन्देह नहीं।

दाऊद केवल युद्धवीर, राजनीतिविद् थोर राजा थे, भी नहीं, उनके कवित्व शक्ति भी प्रथममनोय थी। उनका बनाया हुआ सुति गीतिपुस्तक (Book of psalm) ईसाई जगतमें अतुलनीय है।

दाऊदका जीवन अविश्राम नहीं था। दुर्दम इन्द्रियोंके यक्षीभूत हो कर वे अपना अधिक समय भोगविनाशमें क्षिप्त करते थे। इस सब दुःखताएँ वे हमेशा लज्जर थोर व्याकुल रहते थे। वे कहते थे, कि गतपाप उनके हृदयमें हरवृत्त जाग्रत रहता है। किन्तु इतने पापी तथा भ्रमसङ्कुल तामसी होने पर भी उनकी अक्षय्य हृदयार्थम इतिहासमें अतुलनीय है। दुर्दान्त रिपुओंसे लम्बागी किये जाने पर भी उनकी हृदयवृत्ता सुन म भी सकती थी। अग्रत पाननसे उनकी हृदय दम्भ हो कर पवित्र रहता था। पीछे पाप करनेमें वे हिचकते नहीं थे थोर न पररक उसे छिपाते ही थे। दाऊदका बनाया हुआ भी धर्मगीत है, उसे पठनेमें ही शांत होता है। कि किस प्रकार इस राजकुमारकी मर्यादा भाव्यत्की

भीषण विमोचिकासे भीत, निर्विदु तममास्त्रसे सुन्दरसे पार्श्वोन्मत्त थोर प्रभात पापवृत्तकी पापवृत्तसे भात-हित कीकर विधुर्षित होते हैं, पन्तमें फिर किम प्रशा-उम मन्दा अन्तविषयकी भीषण भटिकाके अग्रत होते हैं दुःख, जोष, सन्ताप, मर्मपोड़ा हाग विगोहित ईश्वर-प्रेम उनके हृदयमें उदित हुआ है। ईश्वरमें श्रद्धा, पटन थोर ऐकान्तिक भक्तिधृष्टक इस प्रकारका गीत वादित-में बहुत काम देखनेमें आता है। दाऊदके सुखदुःखमय पनेक घटनापूर्ण जीवन-चरित उनके गीतमें ही साफ भलकता है। बहुतसे ऐसे धर्मविद् ईसाई हैं जो दाऊदको योशुाष्टकका एक स्वरूप मानते हैं। बाइबिलमें दाऊदका मूल मन्त्रा घोड़ा इतिहास वर्णित है।

दाऊदखानो (का० पु०) १ एक प्रकारका वाद्यम् । २ अद्विया मकद गीत ।

दाऊदिया (य० पु०) १ एक प्रकारका गीत । २ एक प्रकारको पालिशवाजी ।

दाऊदो (य० पु०) बहुत नरम थोर मकद विनोदका एक प्रकारका गीत ।

दा (हि० पु०) बार, दफा, बारी ।

दा (का० पु०) माता, जाननेवाला ।

दाक (हि० स्त्री०) दहाड़, गरज ।

दाकना (हि० स्त्री०) गरजना, दहाड़ना ।

दांग (का० स्त्री०) १ का रस्तीकी तौल । २ दिगा, थोर । ३ कठा भाग ।

दांग (हि० पु०) १ लगाइ, डंका । २ टोना, छोटी पहाड़ी । ३ पहाड़का शिखर ।

दांगर (हि० पु०) दांगर देना ।

दांगो (हि० स्त्री०) लुत्ताओंकी एक मकड़ी की कंधीमें लगी रहती है ।

दाङ्गना (हि० स्त्री०) १ दाङ्ग देना, मज्जा देना । २ सुरमाना देना ।

दाङ्क (हि० पु०) जवाड़ ।

दात (हि० पु०) दात देना ।

दातपुंघुनो (हि० स्त्री०) पोन्तेके दातकी हुंघनी । यह बच्चेका पहला दात निकलने पर बड़ी जाती है ।

दातली (हि० स्त्री०) काग, डाट ।

कभी हमें हमसे घोर भीम हमसे साथ भी मिलता दिने है। पश्चिमाश्रममें हमसे दिनमें कदम रंगमैका एक प्रकार का रंग तैयार किया जाता है जिसे कचरेको रंग कहते हैं। हमसे मिले हैं जिससेको पानीमें मिश्र करते हैं घोर बारत पानी में दिनामें पानी जल जल पर मेष पानीको दो काममें लाते हैं। बहुत दिनोंमें भी हमका रंगाया जाता है। हमी कारण मुक्तप्रदेशमें प्रति वर्ष हमसे घोट रंगको जोतो है। यह रूपमें छोट मेरमें मे कर दम गैर तक बिलता है।

पश्चात्त कलकः प्रवर्णन पोषधमें वज्रनेमि को होता था। हिन्दुधर्म प्राचीन वैद्यक पत्रमें, रसायनीके बाद-बलके पाठि भागमें भी पनारका उल्लेख है। राजपूत, पार्थिवोलिम और पार्थिवगिरि व्यावस्थानिधमें तथा पुरातन कीर्तिस्थानमें पनारके चित्र देखे जाते हैं।

पञ्जीररोगमें पनारका रस बहुत दिक्कर है। डाक्टर ऐन्थिका कहता है, कि घेतमें गम बड़े बड़े श्रीके एक जाते हैं, तब उन्हें मट करनीमें हमसे मूलका दिसका बहुत उपकारी है। जोत्र पोर मज्जा क्रमशः पाकस्थानों घोर हृदयिष्ठने मिले फायदात्मक, महोचक घोर मौल्यकारक है। कूल घोर कलर रहनीचक घोर त्वगुपाटक है। हमसे रूममें कांछे गम बरनेका ओ गुप है, यह पने मुरीषिय लोग नहीं जानते हैं। डाक्टर बुकालमरी ब्रह्मन्ने हमका लसिमागक गुण मान्य रूप था। पीछे डाक्टर एन्थमी, पथेमि पाठि एरीगेय चिकित्सकगण हमका व्यवहार करने लगे। सभी यूरोप घोर भारत-वर्षमें सब जगह हमका मूल व्यवहृत होता है। हम-को माता पाप हटाकर एक हटाक तक है। कण्ठगोय मा मूलानां मन्त्रगोय रोगमें भी हमसे काढ़ेका प्रयोग होता है।

पञ्जीर घोर लसिरोगमें कहीं कहीं पनारके पत्ता-का रस घोर कषा फल उपकारी है। हमको उन्को पाम भर भार पोषका प्रयोग करनेमें वायुमयीप्राह (Aeromorphosis) प्रमत्त को जाना है।

यह बहुत पार्थवीय प्रदेशमें बहुत उपजता है। ब्रह्मन्-का पनार छोटा घोर बोलुपुर्ण होता है। हमोंमें एक-दामिहान घोर पनारके छोटे दानेदार, बड़े बड़े पनार

हम देशमें बिलनेको लाये जाते हैं। यहाँ पनार ब्रह्मन्-को पथेया सुहावु घोर गरम होते हैं।

मेघरके मन्थे—पनार रसमें मेघने तीन प्रकारका होता है। मधुर, मधुराक्ष घोर केवल पत्र। हममें मधुर रसयुक्त पनार वायु, गिहा, कक, व्याम, दाह, प्लव, हृदीन, कण्ठगत रोग तथा मुण्डीरोगमाशक, दानिकारक, दमबर्धक, मधु, कुल कषाय रस, धारक, शिथ घोर मीठा तथा बल-वर्धक; मधुराक्ष पनार पश्मिदीमिकारक, क्षयिकारक, शिथिल पित्तवर्धक घोर मधु तथा पत्र पनार पित्तवर्धक, कक घोर वायुनाशक है। (भा.प.)

ब्रह्मदेशमें जो पनार उपजता है, वह पश्चिम दानेदार घोर पत्र रसायक होता है। पटना प्रदेशमें जो पनार जाता है, वह मधुराक्ष रसायक होता है घोर उसे मन्त्रक कहते हैं। काबुल प्रदेशमें पनारमें केवल सीता रस रहता है घोर उसे मेदागा कहते हैं। हमसे मिया एक घोर प्रकारका दादिमका पिक है। शिमका फल देशमें नहीं पाता है। यह घोर रस-वर्ष बहुतमें परिपूर्ण रहता है घोर हममें किमर नहीं होता है। हमी कोई तो म्को-पनार घोर कोई रोहितक कहता है। हमका दूसरा नाम दादिमपुष्पक है।

दादिमपुष्पक (मं० पु०) दादिमपुष्प पत्रमिव पत्रमप्य कवः। रोहितक उच्च, रोहिण्डा।

दादिमपुष्प (मं० पु०) दादिमपुष्प पुष्पमिव पुष्पमप्यः। रोहितक उच्च। यह पिक पनार कूलमें जैमा होता है, हमोंमें इसका नाम दादिमपुष्प हुआ है। (को०) दादि-मप्य पुष्प १-तत्। २ दादिम या पनारका कूल।

दादिमपुष्प (मं० पु०) दादिमपुष्पं द्रियं यच्च। घोर पलो, सुप्ता। यह पनार पाना बहुत पक्क कहता है। दादिममप्य (मं० पु०) मप्यमिति भक्षि-प्य, मप्यको भक्षकः, दादिमप्य मप्यक १-तत्। कोरपको, कक, मुपा, तोता।

दादिमादिपुष्प (मं० को०) मेषकोक पुष्पं पोषकमेदः। दादिमाधुत (मं० को०) एतेषाममेदः। प्रदुत पचानी—घो हृद मेर, सुषुके मिले पनारका दानक विटक, हलहं, चर्द, ओरा, विजला, कोर, पीरक, मोसुदका कोर, पत्रवायन, धनिया, पमसरी, पीरक

मूल, सैन्धवलवण प्रत्येक २ तोला, पाकका जल १६ सेर, इन सबको छतपाक प्रणालीके अनुसार यथोपयुक्तरूपसे पाक करते हैं। उपयुक्त मात्रा में इसका व्यवहार करने से प्रमेह, मूत्राघात, पथरी और मूत्रकण्ड आदि रोग जाते रहते हैं।

इसके सिवा और दो प्रकारके दाहिमाद्यष्टत हैं, महादाहिमाद्यष्टत और बृहदाहिमाद्यष्टत : महादाहिमाद्यष्टकी प्रसृत प्रणाली—छत ५४ सेर, काढ़के लिए दाहिमके बीज ५२ सेर, जल १६ सेर, शेष ५४ सेर, यवतण्डुल ५२ सेर, जल ५६ सेर, कुलघोषरद ५२ सेर, जल १६ सेर, शेष ५४ सेर, शतमूलीका रस ४४ सेर, माषका दूध ५४ सेर, चूर्णके लिए दाख, पिण्डखजूर, त्रिफला, रेणुक, जोषक, श्वभक्त, ककौल, चौरककोल, मेद, महामेद, मृदि, हृदि, देवदार, हलदी, दाहहलदी, मंजोठ, कुठ, इलायची, भूमिकुशाण्ड, चला, गिराजित, दारचीनी, खसकी जड़ और कण्ठाभ्र प्रत्येकका चूर्ण तीन तोला। इन सबको छतपाकके अनुसार पकाते हैं। इस घीके पोनेसे सब प्रकारका मेह जाता रहता है। मेह रोगके लिए यह एक चरकष्ट औषध है।

बृहदाहिमाद्यष्टत—छत ५४ सेर, कायके लिए पका बनार ८८ सेर, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, चूर्णके लिए बनारका दाना, चर्ब, जीरा, बिड़ङ्ग, हलदी, दहाहलदी, दाख, पिण्डखजूर, नीलीतपल, गरजपिप्पली, वनयमानी, महानिन्द, ककौल, सोंठ, वच, देवदार, कुठ, गन्धारीके मूलकी छाल, यष्टिमधु, अनकामूल, ग्वालककड़ीका मूल, मूवा, वंशलोचन, कर्कटशर्ङ्गी, धनिया, कुलघी, महामेद, मोमको छाल, हलदी, भटकटैया, त्रिफला शङ्खको छाल, मंभालुका मूल, भव मिला कर ५१ सेरकी १६ सेर जलमें यथाविधि पाक करते हैं। इसी घीके पोनेसे सब प्रकारका प्रमेह दूर हो जाता है।

(भैषज्यरं प्रमेहाधिहार)

दाहिमाष्टक (स० पु०) वैद्यकमें एक चूर्ण है। इसमें बनारका हिसका पड़ता है।

दाहिमी (स० स्त्री०) दाहिमहृत्, बनारका पेड़।

दाहिमीरस (स० पु०) रसमेद। इसकी प्रसृत प्रणाली—बनारकी घीमें सन्तप्त करके एक बरतनमें रखते हैं। इस

तरह पक जाने पर उसे कपडे में छान कर जो रस निकलता है उसीको दाहिमीरस कहते हैं।

दाहिमीनार (स० पु०) दाहिमी दाहिमोगन्ध सरति प्राप्नोतीति स्र-षण् । दाहिम, बनार।

दाहिम्ब (स० पु०) दाहिम देखो।

दाही (स० स्त्री०) दध्यते फलेऽने कर्मणि घञ्, गौरां ङीष्, लय्यङ् । १ दाहिम, बनार। २ बनारका फल। दाढ़ (स० स्त्री०) १ चौर। २ भीषण शब्द, गरज, दहाड़।

दाढ़ा (स० स्त्री०) देव-योधने दा-क्षिप्, दे शब्दो दानाय वा ढोकते ढोक-ङ । १ दंष्ट्रा, चौर। २ प्रायणा, विनति। ३ समूह, जत्ता।

दाढ़ा (हिं० पु०) १ दावानल, वनको पाग। २ चनि, घाम। ३ दाह, जलम।

दाढ़िका (स० स्त्री०) दादाये केशसमुदाय प्रभवतोति ठक्, लृटाप् । १ स्रज्ज, दाढ़ी। २ दंष्ट्रिका, चौर।

दाढ़ी (हिं० स्त्री०) १ चिबुक। २ ठूँकी और दाढ़ परके बाल।

दाढ़ीजार (हिं० पु०) वह मनुष्य जिसकी दाढ़ी जली हो। यह एक प्रकारकी गाली है जिसे स्त्रियाँ गुस्सा कर पुरुषोंकी देती हैं।

दाण्ड (स० पु० स्त्री०) दण्डस्य षष्ठाङ्गुप्रमेदस्य अपत्यं शिवादि षण् । १ दण्डराजाका अपत्य। स्त्रियाँ ङीष्। दण्डस्य भावः षण् । (स्त्री०) २ दण्डभाव। ३ पायुष-जीविसंघमेद, वह जो हथियार चला कर अपनी जीविका निर्वाह करता हो। दण्डानां समूहः षण् । ४ दण्डसमूह।

दाण्डिक (स० पु०) १ विगत-पायुषजीविमंघमेद, २ दंडका अपत्य, दंडका वंशज।

दाण्डकीय (स० वि०) दांडिक स्वार्थे ङ् । दांडिक। दाण्डप्राहिक (स० पु०) दण्डप्राहस्य अपत्यं देहाह-ठक् । (रेवत्यादिष्यङ् । पा ४।१।४६) दंडप्राहका अपत्य।

दाण्डपाता (स० स्त्री०) दंडस्य पातोऽस्यां तिथी इति घञन्तात् सः (वच्, घांत्वां भिद्येति ङः । पा ४।१।५८) दंडमावस्थित तिथिमेद, जिसे तिथिमें देवले एक दंड रहता है, उसे दाण्डपाता कहते हैं।

दातु (सं० पु०) ददाति दातुं (दाधात्) तु। ण् ३।२२।

१ दाता। २ विक्रान्त। ३ सुख। ४ वायु, हवा।
५ दानक, राक्षस। (क्रो०) ६ दान। ७ वर्षण, बरसनेका
काम। ८ देय धन, देनेयोग्य धन।

दातुद (सं० त्रि०) दातुं ददाति दातु-दात्क। धनदाता,
धन देनेवाला।

दातुमत् (सं० त्रि०) दातुः विद्यतेऽस्य दातु-मत्पु।
हिंसायुक्त।

दानेदार (फा० वि०) जिसमें दाने हो, दवादार।

दानोक्तम् (सं० क्लो०) दानका एक नियम, दान देनेका
एक स्थान।

दान्त (सं० त्रि०) दन्तकर्त्ता रिक्त। १ वहिरिन्द्रिय नियन्त्र-
कर्त्ता, जिसने इन्द्रियोंको घसमें कर लिया हो। २ दन्ति
जिसका दमन किया गया हो। ३ दन्तनिर्मित, जो दान-
के बने हो। ४ दांत सन्तुष्टी। (पु०) ५ शिबिन
वृक्ष, पहाड़ परकी वायली। ६ दन्तक वृक्ष, मैनफल।
७ विदर्भके राजा भीमनेनके दूसरे पुत्र जो दमयन्तोके
भाई थे। ८ दाना।

दान्ता (सं० स्त्री०) अफसराविशेष, एक अफसराका नाम
जिसका उल्लेख महाभारतमें आया है।

दान्ति (सं० स्त्री०) दन्त-जिन्तु। १ तपःश्रेष्ठादि सहि
युक्ता, वह जिसमें श्रेष्ठ आदि सहनेकी शक्ति हो। २
वाह्येन्द्रियनियन्त्र, इन्द्रियोंका दमन। ३ वय्यता, अधी-
नता। ४ नव्यता, विनय।

दान्तिक (सं० त्रि०) गजदन्तनिर्मित, जो हाथीके दांत-
के बने हो।

दाप (हिं० पु०) १ दर्प, अहङ्कार, घमंड, गर्व। २
शक्ति, बल, जोर। ३ उत्साह, समझ। ४ पातक, रोव।
५ मोक्ष, गुस्सा। ६ दाघ, क्लान्त, ताप।

दापक (हिं० पु०) दवानेवाला।

दापनीय (सं० त्रि०) दंडार्ह, सजा देनेयोग्य।

दापयितव्य (सं० त्रि०) दंडके योग्य, सजा देने लायक।

दापित (सं० त्रि०) दापिषु कर्मणि क्त। १ साधित,
जो साधन किया गया हो। २ दण्डित, जिसे सजा
मिली हो। ३ घनादि दाग आघातोंका, जो घन आदि
देकर बसोभूत किया गया हो। (पु०) ४ दापितधनक
प्रतिवादी प्रभृति। ५ भोक्तृ द्रव्य।

दापोली—१ बम्बई प्रदेशके रत्नगिरि जिलेके अन्तर्गत एक
उपविभाग। यह अक्षांश १७° १५' से १८° ४' उ० और
देशांश ७३° २' से ७३° २२' पू०में अवस्थित है। भूपरि-
माण ५०० वर्गमील और जनसंख्या प्रायः १५४६२८ है।
इसके उत्तरमें जखोरा और कुलावा, पूर्वमें कुलावा और
खेड़ा, दक्षिणमें वागिरी नदी ओ विपुलनचे-दापोली-
को अलग करती है। तथा पश्चिममें अरवसागर है।
यहाँ दूसरी दूसरी जातियोंमेंसे कुनबी, मांग, महार और
भन्नी जातिके लोग अधिक रहते हैं। इसमें दापोली
और हरनाय नामके दो शहर तथा २४३ ग्राम सगते हैं।
यहाँका जलवायु स्वास्थ्यकर है। वार्षिक वृष्टिपात १११
इंच है।

समुद्रके किनारे यह विभाग प्रायः ३० मील विस्तृत
है। समुद्रके निकटवर्ती ग्राम अल्प बालुकायुक्त हैं।
समुद्रके किनारे सावित्री और वागिरी नदियोंके सङ्गम
पर बहोत और दामोदर नामके दो बड़े बड़े ग्राम हैं
जहाँ ग्राम और कटहलके वृक्ष विशेष पाये जाते हैं।

२ उक्त विभागका एक सदर। यह अक्षांश १७° ४६'
उ० और देशांश ७३° ११' पू० समुद्रसे ५ मीलकी दूरी
पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २८६० है। १८८०
ई०में यहाँ म्यूनिसिपैलिटी स्थापित हुई। शहरमें एक
मह-जजकी अदालत, अस्पताल, मिशन स्कूल तथा एक
टेकनिकल स्कूल है। कोरूणके मध्य यही स्थान
स्वास्थ्यकर है।

दाव (हिं० स्त्री०) १ दबने या टबानेका भाव, चाप।
२ भार, बोझ। ३ आतंक, अधिकार, रोव।

दावकन (हिं० पु०) लोहारोंके छेदनेके यन्त्रोंका एक
हिस्सा।

दावदार (हिं० वि०) पातक रखनेवाला, प्रभावशाली,
प्रतापी, रोवदार।

दावना (हिं० क्लि०) दवाना देखो।

दावा (हिं० पु०) १ कलम लगानेका काम। इसमें
पोषाकी टहनियोंको मटोमें गाढ़ते या दबाते हैं। २ मिंघ,
गुलप्रदेश और बङ्गालको नदियोंमें मिलनेवाली एक
प्रकारकी मछली जो घाट ओ पंगुल नम्बो होती है।

दाविल (हिं० पु०) एक प्रकारका रुफेद पत्थर। इसकी

चौध दश बारह अंगुल लम्बी और छोर पर पैसेकी तरह गोल और चिपटी होती है।

दावो (हि० ली०) कटो हुई फमलकी पूंसे जो बराबर बराबर बांधे हुए रहते हैं और मजदूरीमें दिये जाते हैं।

दाम (हि० पु०) एक प्रकारका कुत्र, डाम।

दामि—गुजरातकी राजपूत-जातिकी एक प्रधान श्रेणी।

प्रवाद है, कि पूर्व समयमें दामि लोगोंका वामस्थान गजनी, एदर, भीलड़ीगढ़ और खेड़ागढ़में था। दामिअपि इन लोगोंके आदिपुरुष थे। दामिअपिकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसा सुना जाता है,—

श्रीरामचन्द्रने सीताको वनवास दिया। सीता निजवनमें जा कर रहने लगीं। दश मास व्यतीत होनेके पश्चात् उन्होंने पूर्णचन्द्र प्राय एक पुत्र प्रसव किया जिसका नाम रखा गया लव। एक दिन सीता उसे अपि के पाम छोड़ कर खान करनेको चली गईं; किन्तु रास्तेमें एक वनचरीको देख लोट आई और लवको साथ ले पुनः उसी रास्ते खानके लिये निकलीं। दश अष्टिके प्यान टूटने पर लव उन्होंने बालकको अपने समीप न देखा तब वे विचार करने लगे कि, गायद विडाल वा गृगाल अथवा कीड़े ईश्वर जन्तु उसे मार खाया। ऐसा सोच कर उन्होंने दाम (दम्) को एक मुक्ति बनाई और यजुर्वेदका अरण्य कर समका नाम दम् वा दामिअपि रखा। सीताने लोट कर देख कि उन्होंने लड़केके जैसा एक दूसरा लड़का उक्त मुनिके आश्रममें पड़ा हुआ है। अष्टिके पूरने पर उन्होंने कहा “हे शक्ति! अब क्या हो सकती। इन दोनोंको तुम अपना पुत्र समझो।” इस प्रकार कृतयुगका अर्धभाग बीतने पर लव दश मासके क्षणपक्ष सोमवार दिन दुर्गासा सुनिने महाबल दम्को अष्टि की। गङ्गाके गर्-पर्वत पर ८४ अष्टिकोंके भ्रमचमें उसी युगके १५८४ वर्ष बीतने पर दामि उत्पन्न हुए थे। दम् अष्टिकी २०वीं पीढ़ीमें अमरसेनने जन्म ग्रहण किया था। उन्होंने पञ्चोद्वेगमें यात्रा कर चौहान लोगोंको मार भगाया और प्रमाणगढ़ अपने अधिकारमें कर लिया। अमरसेनकी १२ वीं पीढ़ीमें सुरपाल पैदा हुए। ये प्रमाणगढ़को छोड़ कर कुछ दिन काश्मीरमें जा बसे थे। सुरपालकी १६ वीं पीढ़ीके बाद योधाने काश्मीर-

को छोड़ दिया और पड़ियारोंको परास्त कर तमोल पर अधिकार उभाया। उनके १० पीढ़ी नीचे अतिराजने यादवीसे शत्रुअप्य दुर्ग जीता था। देभा (डेभा) अखिराजके ७ पीढ़ी नीचे थे। इन्होंने मन्वत् १३७२ में कोरशोंको मार भगाया और खेड़ागढ़ अपने अधिकारमें कर लिया।

दामि लोग खेड़ागढ़में बहुत दिनों तक रहे। पीछे राठोर लोगोंने इन्हें मार डाला। उनमें ३ शालदामिने किसी प्रकार पाकराजा को और भिमोले (भिममान) में पा कर बस गये। शालदामिके पूर्व वर्त्ती अष्टम पुरुष दुदारके समयमें दामि लोगोंने कच्छबाह भोलासे भीलड़ीगढ़ जय किया था। यहाँ बहुत दिनों तक उन लोगोंकी राजधानी थी। दुदारको प्रथी पीढ़ीमें से शर दामिने जन्म ग्रहण किया था। इन्होंने मेहराज नामक एक कविको सीताम्ना ग्राम दान दिया था। जिनके वंशधर राज भो उक्त ग्रामोंका भोग करते हैं।

शालदामिके प्रपौत्र आमलदामिने रङ्ग-विषादके कारण भिममान छोड़ कर एदरमें आश्रय लिया। यहाँ एदराजने उन्हें दश हजार अश्वारोहीके पद पर नियुक्त किया। यथाक्रम उन्होंने अनेक ग्राम अधिकृत कर भीलड़ीगढ़में वामस्थान बनाया। आमलदामिके पुत्रने एक भील सरदारकी कन्याके रूप पर सुध हो उसका पाणिग्रहण किया, किन्तु अन्तमें समाजके मध्य निन्दित होनेके भयसे वे एदरमें न पा कर आश्रितोंके समीप चोतोपला पहाड़ पर चले गये और वहाँ भाटेखरी देवीको कठोर आराधना करने लगे। देवीने उनको पूजासे समुष्ट हो उन्हें शिरोहोराजके निकट जानेका आदेश दिया। शिरोहोराजने उन्हें रोह-सरोवा चोरासो ग्राम उक्त देवस्थानित किया। भाटेखरीके अनुग्रहसे ही उन्होंने सन्धान लाभ किया था, अतः उन्होंने अपना नाम भाटेखरीय रखा। उनके वंशधर राज भो भाटेखरीय नामसे प्रसिद्ध हैं और वर्त्तमान समयमें भी उक्त स्थान पर वास करते हैं।

दामी (सं० स्त्री०) अनिष्टजनक, बुरा जो ज्ञान पट्टा खाता हो।

दार्ढ्य (सं० त्रि०) १. शासनके योग्य, जो शासनमें आ सके। २. बाधा देने योग्य।

दादूहक (स० पु०) दादूह-स्वार्थ कर्त्तृ । दादूह ।
दादूह (स० पु०) दादूह पयो० साधुः । दादूह पयो,
पयोहा ।

दाद (स० स्त्री०) दाति दाति वानेन दो भवत्पुत्रने द्रुन्
(दाम्न् उच्यते । पा ३।२।८२) १ छेदनवाचन अन्धमेद,
दातो, हंमिया । इसका पर्याय—सन्निध और खड्गक
है । २ दान । ३ दातव्य, देने का काम । ४ दानकर्त्ता,
वह जो दान देता हो ।

दादी (स० स्त्री०) दाद-डोप । १ दानकर्त्री, वह जो
दान देतो हो । २ गङ्गा । ३ हंसिया, दातो ।

दाद (स० पु०) ददातीति दा लृन् (जति दा श्यु किति ।
उ० ४।१०४) १ दाता । २ यत्नकर्म ।

दादा (दादा)—वर्षाईप्रदेशमें काठियावाड़ जिलेके पन्तगं त
एक छोटा राज्य । इसमें २६ ग्राम लगते हैं । राज्यको
ग्रामदानी २५०००, रु० है जिसमेंसे ५०८८ रु० बरोटा-
के गायकवाड़की और २८८ रु० जूनागढ़के नवाबको
कररूप देने पड़ते हैं । भूपरिमाण ५१ वर्गमील
और लोकसंख्या प्रायः दस हजार है ।

दाद (स० पु०) दद-भावे-घञ् । दान ।

दाद (हि० स्त्री०) एक प्रकारका चर्मरोग । दद्रु देखो ।
दादनो (फा० स्त्री०) १ बुझाई या दो जानेकी रकम ।
२ किसी कामके लिये पेशगी दो जानेकी रकम ।

दादमदन (हि० पु०) हिन्दुस्थानके उद्यानोंमें मिलने-
वाला एक प्रकारका चकवड । प्रवाद है, कि यह पेड़
अमेरिकाके टापुमें लाया गया है, इससे इसे विलायती
चकवड भी कहते हैं । इसके पत्तोंकी पीस कर लगानेसे
दाद जाता रहती है ।

दादरा (हि० पु०) १ एक प्रकारका चलता गाना ।
२ एक प्रकारका ताल, जिसमें दो चरममात्राये रहती
हैं । इसमें केवल एक आघात होता है ।

दादस (हि० स्त्री०) सामको मान, ददिया मास ।

दादा (हि० पु०) १ पितामह, पिताका पिता । २ बड़ा
भाई । ३ आदरसूचक शब्द जो बड़े बूढ़ोंके प्रति
कहा जाता है ।

दादाजी कोणदेव—एक प्रसिद्ध दक्षिणी ब्राह्मण । महाराष्ट्र-
नायक शाहजोने पुनर्मां राजधानी स्थापन करके यहाँका

शासनभार दादाजीपर सौंप दिया । ये विचक्षण,
न्यायपर, राजनीतिकुशल और प्रजाप्रिय थे । इनके
शासनके शुभमें थोड़े ही दिनोंमें राज्य सन्नतिकी चरम-
शोभा तक पहुँच गया था । इन्हीं प्रजाकी मासगु-
जारी-दर बहुत कमा दी । पुनाके निकटवर्त्ती जङ्गलोंकी
व्याघ्रादि हिंस्रक जन्तुपक्षि शूय्य कर दिया, इस प्रकार
पहाड़ियों तथा पथिकोंकी खूब भलाई की ।

कोजोबाई और उसके सहके प्रसिद्ध शिवाजीके रहनेके
लिये इन्हीं नाममहल नामक एक ठहर्नु प्रासाद
निर्मात्र किया था ।

शाहजोने दादाजीके ही ऊपर शिवाजीका शिक्षाभार
सौंप दिया था । इन्हींके शिक्षागुणसे शिवाजी ब्राह्मण-
भक्त, हिन्दू-धर्मातुरानी, समरकुशल और राजनीतिज्ञ
हो कर भारतवर्षमें प्रसिद्ध हो गये थे । शाहजोके
मरनेके बाद दादाजीने ही शिवाजीके हाथ पिढाराज्यका
शासनभार भर्षण किया । शिवाजी दादाजीकी खूब
खातिर करते थे । १६४७ ई०में दादाजी इस लोकसे
चल बसे । मरते समय ये शिवाजीको जननो जन्मभूमि-
की स्थापनता, गो-ब्रह्मणकी रक्षा और हिन्दूधर्मकी
जयपताका सठानेका उपदेश दे गये थे । शिवाजी
आजोन शुभके उपदेश मूल नहीं थे । शिक्षाभी देको ।

दादाभाइ—एक विख्यात ज्योतिर्विद् । इनके पिताका
नाम था गङ्गाधरमाधव । इन्हींके किरणावली नामक
सूर्यविज्ञानको टीका तथा सूर्ययन्त्रकी रचना की है ।

दादाभाइ नोरजी—नारोजी दादाभाइ देखो ।

दादो (हि० स्त्री०) पिताकी माता ।

दादो (फा० पु०) न्यायका मार्ग, परियायी ।

दाद्री—१ पञ्जाबकी जिन्ट निजामत और राज्यको दक्षिणीय
तहसील । यह घघा० २८' २४' से २८' ४८' उ० और
दिगा० ७५' ५५' से ७६' १०' पू०के मध्य अवस्थित है ।
भूपरिमाण ५८१ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः
८२३६८ है । इसके दक्षिण और पश्चिममें दुजानाराज्य,
नाभाकी बावस, निजामत, पटिपालकी महेन्द्रगढ़
निजामत और लोहाराज्य, पश्चिममें हिमारा जिला और
पूर्वमें रोहतक है । यहाँका जनबाहु शब्द और गरम
है । इसमें दाद्री, कलाना और बौद नामके तीन शहर

दाम (स० स्त्री०) दो खण्डने वा करणे मन् : दामन् ।
१ पत्रादि बन्धनरज्जु, पशु आदिको बांधनेकी रस्सी ।
इसका पर्याय— सन्धान और रज्जु है । २ मासा, हार ।
३ समूह, राशि । ४ विष्णु, लोक । ५ सन्धान, खोज,
तलाश । (वि०) ६ दाता, देनेवाला ।

दाम (फा० पु०) १ जाच, फन्दा, पाश ।
दाम (हि० पु०) १ एक दमहीका तीसरा भाग । २ धन
रूपया, पैसा । ३ दामनीति, राजनीतिको एक शास्त्र ।
इसमें शास्त्र, धन द्वारा वशमें किया जाता है । ४ मूल्य,
कीमत, मोल । ५ सिका, रूपया ।

दामक (स० पु०) वह रस्सी को गाड़ोके लुपमें लगे
रहती है । २ बागडोर, लगाम ।

दामकण्ठ (स० पु०) गीतप्रवर्तक कविभेद ।

दामकण्ठि (स० पु०) दामकण्ठस्य युवा गोत्रापत्यं
दामकण्ठ-इत्य् । दामकण्ठका युवा गोत्रापत्य ।

दामपत्नि (स० पु०) मल्लराज विराटका सेनापति ।
(भारत विराटप० ११ अ०)

दामचन्द्र (स० पु०) द्रुपद राजाके एक पुत्रका नाम ।
(भारत गीण० १५८ अ०)

दामशालग्रो (स० पु०) सुराष्ट्रके शकवंशका एक
राजा ।

दामन् (स० स्त्री० स्त्री०) दो खण्डने दोयते इति दा-
मनिन् । (धर्मपुत्रा मनिन् । उण् ४।१४५) १ दोहन-
के समय पश्यादिका पादबन्धनरज्जु, वह डोरी जो
गायके दुहते समय उसके पैरमें बांधी जाती है ।
२ मासा, हार । ३ रज्जु, रस्सी । ४ वह रस्सी जिससे
धनिक पशु बांधे जाय । ५ दमनक हथ ।

दामन (फा० पु०) १ चगी, कोट, कुर्ते आदिका निचला
भाग, पक्का । २ पराङ्गिके मोचेकी भूमि । ३ नाव या
जहाजके सामनेको वह दिमा जिस धीर हवाका धक्का
लगता हो । ४ बादवान ।

दामनगौर (फा० वि०) १ यमनेवाला, पक्षे पहनेवाला ।
२ दावा करनेवाला, दावेदार ।

दामनपर्वन् (स० स्त्री०) दमनी दमनवृक्षस्येदमि-
त्यण् प्रत्यये दामनं तद्वृक्षस्येदमि पर्व-यदमिन् ।
१ दमनवृक्षस्य इति, चैत्र शुक्लचतुर्थी । २ चैत्रमासको
शुक्लपक्षी । दमन-इति ।

दामनि (स० पु०) दमनस्यापत्य इत्य् । १ दमनका
अपत्य । २ आयुधजीवि सहभेद ।

दामनी (स० स्त्री०) दामनैव प्रज्ञादिं स्वार्थं यण् चनि
नलोपः ङोप् । पशुमन्धन-रज्जु, रस्सी, डोरी ।

दामनी (फा० स्त्री०) घोड़ोंको पीठ पर डालनेका चौड़ा
कपड़ा ।

दामनीय (स० पु०) दामनि राजन्यादि० क । दमनका
अपत्य ।

दामन्यादि (स० पु०) पाणिनिका गणभेद । दामनि,
भोजपि, नैजगपि, भोजदि, भोजद्वि, बाभ्युत्तति, शाकु-
न्तकि, प्राकिन्दति, भोजवि, काकदन्तकि, शाकुन्तपि,
सावर्षेति, विन्दु, वेन्द्वि, तुलभ, मोक्षायन, का हन्दि
धीर सावित्रीपुत्र ये च दामन्यादि इति ।

दामर (हि० स्त्री०) १ दरार भरनेके लिए नाथोंमें लगाई
जानेकी राल । २ दामर पत्थर । ३ वह भेड़ जिसकी कान
छोटी होती है ।

दामर (हि० स्त्री०) दामरी देखो ।

दामरी (हि० स्त्री०) रज्जु, रस्सी, डोरी ।

दामलिप्त (स० स्त्री०) शमोन्मिप्त नगर । तमोन्मिप्त देखो ।

दामलिप्त (स० पु०) दाम-लेटि लिप्त-कृत् । दाम-
लिप्तक ।

दामा (स० स्त्री०) दामन्-टाप् । दम देखो ।

दामाञ्जन (स० स्त्री०) दामाञ्जनं श्वोदरं दित्वात् नस्य
नः । अम्नादिकी पादबन्धन-रज्जु, वह रस्सी जिससे
घोड़ों आदिके पैर बांधे जाते हैं ।

दामाञ्जल (स० स्त्री०) दाम्नाः पञ्चलमिव । रामाञ्जन देखो ।

दामाद (फा० पु०) जामाता, जमाई ।

दामाभाह (हि० पु०) वह दिवालिया महाजन जिसकी
सम्पत्ति उसके सहनेदारोंके बीच हिस्सेके सुताविक बँट
जाय ।

दामावाही (हि० स्त्री०) किसी रकमका वह नियय
जो दिवालिया महाजनको सम्पत्तिमेंसे एक एक सहने-
दारको मिले ।

दामिनी (स० स्त्री०) दामा सुदामा नमः स एकदेशत्वे न
अक्षरास्य इति-ङोप् (संज्ञार्थं मन्माभ्यां) वा १।२।१०)
१ विद्युत्, बिजली । २ क्षिपिका एक गिरीभूषण,
दावनी ।

तथा १८५ पात सन्ति ६ । - रात्रिस्तु दो मास हयरेमे
परिचया ६ ।

[illegible]

हादुपन्यो—एक विख्यात वैष्णवसम्प्रदाय । हादुपन्यियों की रामानन्दोक्तो एक शाखा कह सकते हैं । हादु इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे इसीसे इसका नाम हादुपन्यो रखा है । प्रवाद है, कि हादु एक कवीरपन्यो के शिष्य थे, क्योंकि कवीरपन्यियों की गुरुप्रणामीमें इनका नाम बड़े स्थानमें पाया है, जैसे—१ कवीर, २ कामान, ३ यमना, ४ विमल, ५ बुद्ध सोर ६ हादु । रामका नाम जपना जो इन वैष्णवोंकी प्रथागत प्रणामना है । ये रामकी प्रणाम प्रणय देवता मानते हैं कही, किन्तु भेदात्मनसिद्ध परमेश्वरी माई उनका निर्गुणस्वरूप वर्णन करते हैं और उनका मन्दिर तथा प्रतिमूर्ति स्थापित करना अनुचित समझते हैं ।

दादु चक्रमहावाटने एक सुनिया सि। १२ वर्षकी
समस्यामी हो ये चक्रमा नगर परिक्रमा कर चक्रमिहरे चक्रा-
माला गन्धर्व नगरमी रहने लगे सि। मन्त्रिणि ये कल्याणपुर-
को गये। चक्रमिहरे ३० वर्षकी चक्रम्यामी जयपुरमी
श्रीमश्रीमद गुरुजी नामक ब्रह्मणमी निवास किया।
कहते हैं, 'जि यहाँ रहने' चाकामावाटो बुझे कि, 'तुम
परमात्मा साधनमी लग जाओ।' - इस बातकी सुन कर
ये गुरुजीने ३ बीघा दूर महाबल पर्वत पर चले गये और
मन्त्रि कृत दिना अक ब्रह्मण सेहो ब्रह्मण निवे मायक
की गये, कीर्ति निज ब्रह्मण रहा। इस दर दादुजी

भोग पहने हैं, तब वे परमेश्वर से भोग को भवते हैं।
 दाविदात्म में लिखा है, कि एक बार वे समस्त दादु दासों
 परांतु सदासीन हो गये थे और पहले हुए साधकों
 में गिने जाते थे। दादुपंथी न तो तिलक लगाने
 और न माथा हो पहनते थे कृष्ण जयमाला साध
 रणमें थे और महाक पर एक प्रसारकी टोपी पहनते
 हैं। यह टोपी कोकोर घटमा गोल कोनी के और
 रक्त मकई रहता है। पीछे में एक भस्मा लटका
 रहता है। ये भोग स्वयं अपने हाथमें टोपा धरते हैं।

हाटुपत्नी लोग येलियों विभक्त है—विशेष, मन्त्र
 और विस्तरवाही। जो विषय समग्र ही कर पर-
 मार्थ पाथर्षी समग्र विज्ञान है, ये लोग विज्ञान ज्ञानार्थ
 है। इन लोगोंके शरीर पर वेतन एक मन्त्र और हाथमें
 कमंडलु रहता है; मन्त्र पर कोई पाथर्षी नहीं
 रहता।

नागा भोग चन्द्रधारी होते हैं, वषट् पं मे मिल जाते
 पर युद्ध करनेको भी मैथार हो जाते हैं। ये सब तुम्ह
 का पं भी बड़े दम होते हैं। बहुतमे राजा नागा भोग
 अपने यहाँ रहते हैं।

विष्णुधाराओ योग भाषाएन मनुष्योंको तरह भाषा प्रचारके व्यवसाय करते हैं। ये तीन भाषाएँ क्रिस्ते विभक्त हो कर कई एक प्रमाणोंमें बँट गई हैं जिनमें से ३२ प्रमाणों प्रमाण हैं। इन ३२ प्रमाणोंमें परस्पर क्या फर्क है, उनका ज्ञानना बहुत कठिन है। दादुपन्थी लोग छयाकालमें गद्य दाढ़ करते हैं, किन्तु इनमेंसे कुछ ऐसे भी धर्मग्रन्थों हैं जो समझते हैं कि गद्यदाढ़ करनेसे कितने छोटे मछीके बराबर बड़े डोम, इस कारण वे मते समग्र चपला गत शरीर पदार्थोंको लिखा देनेके लिए मान्यता का नामोंमें केवल देनेकी कद्व जानते हैं। दानिम्मानमें भी लिखा है, कि किन्हीं के जगत्वाय होने पर दादुपन्थी मनुष्य देनेकी पदसे पीर घर रह देने को। यह कह कर मानासे भीत देने हैं कि हमसे ईश्वर को दूधरे दूधरे प्रमाणोंका समुद्र फोसा हो मरने में है। चरमेर पीर भाषाएँ देनेमें दादुपन्थी बरिच मेल्लामें रहते हैं। जहाँ यामें रह मनुष्यका मनुष्य प्रमाण देकरमान विद्यमान है। जहाँ दादुपन्थी माना पीर दादुपन्थियोंके भाषाएँका माद्व भी रहने हुए हैं। बरिच

बहने से मंटे आदि काम गई है और पीछे इसका वेग मन्द हो गया है।

मानभूम जिलेमें भी दामोदरका वेग जनना कम नहीं है। लेकिन वर्षमान जिलेमें इसका वेग बहुत मन्द हो गया है, इसीसे वहाँ बरखर बालुका चर पड़ा करता है। वर्षमानके दक्षिणमें तथा हुगली जिलेमें इसकी गति मन्द है, सुतरां स्त्रोतसे खार्ड हुई मंटे आदि इस प्रदेशमें तथा पंन्ताकी दूसरी ओर भागीरथीके साथ सङ्गमस्थलमें बहुत कम गई है। फिर इस स्थानसे कई मोल दक्षिणमें रूपनारायण नदीका सङ्गम है। सुतरां भागीरथीका स्त्रोत रुक जानेसे वहाँ बड़ा चर पड़ जाता है, इस कारण जानि पानेमें बहुत असुविधा होती है। पहले जब दामोदर कलकत्तेके उत्तरमें भागीरथीसे मिलतो था, तब सब जल प्रवाहित हो कर नदीका सुझाना परिष्कार रहता था और चर पड़ जानेकी खोई भाग्यवा नहीं रहतो था। स्त्रोतके परिवर्तन हो जानेसे कलकत्तेके उत्तरमें भागीरथीके किनारे जलपथ द्वारा वाणिज्यका बहुत ह्रास हो गया है।

सुझानेसे बहुत दूर तक दामोदरनदीमें नाव घाटि आतो जाती है। वर्षाकालमें रानीगञ्जके ऊपर तक बड़ी बड़ी नावे जा सकती हैं, अन्य समयमें हुगलीके चामता तक नाव जातो है। पहले रानीगञ्जसे बहुतसी नावे पयारियाकोयला लाट कर हबड़ाके पन्तर्गत मङ्गे-रेखा-की जातो थे और वहाँसे ये सब कोयले उलुवेडिया खाड़ी तथा भागोरयो की कर कलकत्तेकी लाये जाते थे। अभी रेल हो जानेसे कोयलेकी रफ्तानोको सुविधा हो गई है।

दामोदर नदीमें बहुत भयानक बाढ़ आतो है, जिनसे ग्राम, शस्यदेव, मनुष्य तथा मवेशी आदि विनष्ट हो जाते हैं। १७७ ई०की बाढ़से वर्षमाननगर प्रायः तहस नहस हो गया था और नदी-किनारेका बाँध टूट जानेसे बहुत क्षति हुई थी। फलतः उस साल घोर दुर्भिक्ष पड़ा था। १८२३ और १८५५ ई०की बाढ़से भी बहुतसे मकान, हथ, मनुष्य तथा पशु आदि बह गये थे और रूपकोंके खेत आदिका धिक्क भी विलुप्त हो गया था जिसके लिये बहुत काज तक सोमानिर्धारण से कर

विवाद चलता रहा था। उक्त बाढ़के बाद वर्तमानके मध्य हो कर रेलपथ स्थापित हो जानेसे रेलवे नारन-की रक्षाके लिये अच्छी वायस्था कर दी गई तथा १८५५ ई०में गवर्नेण्टने बाँधकी रक्षाका भार अपने ऊपर ले लिया; तभीसे वहाँ कोई दुर्घटना न हुई। गंदीके उत्तर-की ओर अभी एक तरङ्गका बचाव हो गया है, किन्तु सब जल एकही ओर बहनेसे दक्षिण दिशाकी घबला और भी शोचनीय हो गई है। उस ओर उर्वर शस्यपूर्ण देशोंकी बाढ़से अक्षर क्षति हुआ कारतो है।

दामोदर भाचार्य—एक विख्यात उपनिषद्-भाष्यकार इनके बनाये हुए ऐतरेय, कठ, वेन, तैत्तिरीय, प्रश्न और मुण्डकोपनिषद्के भाष्य पाये जाते हैं।

दामोदर गार्ग्य—एक वैदिक पण्डित। इन्होंने पारक्त-रानुसारिणी प्रयोगपद्धति रचना की है और अर्क, विष्णु, गङ्गाधर तथा हरिहरका नाम उद्धृत किया है।

दामोदर गुप्त—काश्मीरके एक प्रसिद्ध कवि। इन्होंने ग्रन्थ-नीमत वा कुहनीमत नामका काव्य बनाया है। राजतरङ्गिणीमें ये जयाधोदकवि नामसे प्रसिद्ध हैं। जयाधोदक ७७८ से ८१३ ई० तक काश्मीरमें राज्य किया।

दामोदर ठाकुर—एक प्रसिद्ध समाज पण्डित। इन्होंने संयामथाइके राजल कालमें 'दिव्यनिर्णय' की रचना की है। दानमयूखमें कई जगह उगका मत उद्धृत हुआ है।

दामोदर त्रिपाठी—बालकल्पतन्त्र और शम्भुविनायक-रचयिता।

दामोदर दास—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म सन् १५१५ ई०में हुआ था। इनके विषयमें और किमी विविध बातका पता नहीं चलता।

दामोदर देव—हिन्दी-ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाये हैं, जिनमेंसे कुछ ग्रन्थोंके नाम मोक्षे दिये गए हैं—रस-सरोज, बसभद्रयतक, उपदेशपटक, बलभद्रपचीमो और वृन्दावनचन्द्रसिखनपञ्चाननम् ज्ञेय। ये १८८८ ई०में विद्यमान थे तथा सरका-नरेश जम्शोर सिंहके मृत थे।

दामोदर देवप्र—समाधिनांद और पटपञ्चागिका टीकाकार। केवकी जातकापद्धतिमें शेषोक्त ग्रन्थ उद्धृत हुआ है।

दामोदर पण्डित—कीर्तिचन्द्रोदय नामक धर्मशास्त्रकार।

विधानके साथ उसे दोनोंको पूजा होती है। नरै नके पास जो एक बड़ाह है उस पर छोटा घर बना हुआ है, कहते हैं, कि इसी स्थानमें दादु भक्तार्जन को गये थे। यहाँ प्रति वर्ष फाल्गुनको शुक्ल-पक्षीय प्रतिपदके लेकर दोह मास तक एक बड़ा भारी मेला लगता है। इस सम्प्रदायका विवरण हिन्दो भाषाके कई ग्रंथोंमें लिखा हुआ है। उनके धर्म ग्रंथमें कई जगह कबोर-पंथियोंके धर्मिक वचन उद्धृत हैं।

“दादुरके विश्रामका अङ्ग” नामक एक ग्रंथ है जिसकी कुछ कविता नीचे देते हैं।

“दादु रहते होयगा भे ऊछ रहिये राम।

काहेको कबे मरे दुपौ होय काम।”

राम जो कहते हैं, वह पवय्य हो होगा। अतः तुम क्यों व्यर्थ शोकसे प्राण त्याग करत हो ? यह अत्यन्त दुपक्षीय कर्म है।

“दादु कहे जे तेकिया छवटै रहा जो वं करे।

करग करायण एव वं कीई न देखा दूसरे ॥

मोह इसारः साध्यां जे सबका हानि विचार।”

दादु कहते हैं, कि हे अगदीश्वर ! तूने जो कुछ किया है, सबो रह गया है और जो तू करेगा, सबो होगा। तू कर्ता है, तू हो कारयिता है, दूसरा कोई नहीं। जिनोंने सारी बस्तुओंको सुन्दर बना कर रचा है, वे ही हमारे ईश्वर हैं। जोमन और मरणका विचार उन्होंने हाथ है, अतः उन्होंनेका भद्र समरण करो।

दादुर (हिं० पु०) मँदक, बैग।

दादु (हिं० पु०) १ दादक प्रति प्यारका शब्द। २ भारी आदिके समान एक साधारण संकोधन। ३ एक साधुका नाम इनके नाम पर एक पंथ चला है। प्रवाद है, कि दादु अहमदाबादके धुनिया थे। जब इनकी उमर १२ वर्षकी थी, तभी ये अपना नगर छोड़ कर अजमेर, कल्याणपुर आदि स्थानोंमें कुछ दिनों तक रहे थे। पीछे २६ वर्षकी अवस्थामें ये जयपुरसे २० कोस दूर नरैन नामक स्थानमें जा कर रहे। यहाँ ये आकाशवाणीके अनुसार कई दिनों तक गुप्त थे। कबोरपंथियोंमें प्रसिद्ध है, कि दादु कबोरपंथी थे। इनोंने भो कबोरके समान ही राम नामके रूपमें निर्गुण परब्रह्मकी उपासना चलाई

है। कबोरके समयमें दादुका खूब आदर होता था। इनकी बनाई हुई भनेक कविताएँ मिलती हैं जिनमेंसे एक नीचे देते हैं—

“मौ जल मै बहि जात तवे तिन कटि लिये भाने करि आदु।

और संदेह भिदाइ दिशो सब काननि टेरि मुनाइके नादु ॥

पूर्णप्रा प्रकाश कियो पुनि छुटि गयो यह बाद विबादु।

ऐसी कृपा लु कपी हम उपर छंदरेके उर है एक दादु ॥”

दादु—बम्बईके नरकाना जिल्लाका एक तालुक। यह अक्षा २६ २४ से २७ २० उ० और देशां ६७ ४१ से ६८ ३० पू०के मध्य अवस्थित है। भूवरिमाण २८४ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग ५५३१८ है। इसमें दादु नामका एक शहर और ५३ ग्राम लगते हैं। प्राय ११ लाख रुपये की है। तालुकके उत्तर सिन्ध नदी बहती है। गेह और चना यहाँका प्रधान उत्पन्न द्रव्य है।

दादुदयाल (हिं० पु०) दादु देवी।

दादुपंथी (हिं० पु०) दादु नामक साधुका अनुयायी।

दादुपंथीके तीन भेद हैं—विरक्त, नागा और विम्वार-धारी। विरक्त लोग सिर्फ जसपाव और कौपोन रखते हैं, नागा लोग लड़ाई करते और राजाओंकी सेनामें भरते होते हैं। दादुपंथी देवी।

दाक्षिक (सं० लि०) दक्षि दक्ष वा संज्ञाते दक्षि चरति दक्षि-ठक् । (चरति । पा ४।४।८) १ दक्षिमें संज्ञात द्रव्य, दर्शमें मोधा हुआ पदार्थ । २ दक्षिचारो । ३ दक्षि द्वारा संज्ञात । ४ दक्षिमें उपस्थित । (लो०) ५ दक्षिणोपभेद । इसको प्रस्तुत प्रणाली—विट्, लवण, इनाबचो, कैन्थव, चितक, विकट, औरक (जीरा), हिङ्ग, (हींग), सोबर्चल, यवचार, आम्नातक और अम्नवेतस इन सब द्रव्योंको खटासकी नीबूके रसमें चौगुन दहीके साथ घोंकी पाक करते हैं। इसी घोंका नाम दाक्षिक घी है। इसके सेवन करनेसे गुस्म, झोड़ा और शूल आदि रोग जाते रहते हैं।

दाक्षिक (सं० लि०) दक्षिणा सम्बन्धोय।

दाक्षिल्य (सं० लो०) दक्षिणस्थ विकार अनुदात्तादिस्वात् भञ्ज । १ कपिल्यका विकार, कैथका विकार । (लो०) तस्य परिमाणं भञ्ज । २ कपिल्यपरिमाणं, कैथके बराबर।

दाघोचि (हिं० पु०) दघोचिके वर्णका मनुष्य।

दाघवि (सं० स्त्री०) दघि युक्त, लुप्त, ततो दम् । भवित्रो, पृष्ठो, धरतो।

इन्होंने एकवरके समयमें चूड़मङ्गकी सहायतामें उक्त ग्रन्थ प्रणयन किया है।

दामोदर भट्ट—१ जगन्नाथनन्द? शिष्या और मोनभट्टके पुत्र। इन्होंने तर्कशास्त्रकरसेतु और मुमुक्षुसर्वस्व बनाये हैं। २ मोक्षविषयके रचयिता।

दामोदर मिश्र—कर्णपुरके राजा हेमन्तमिश्रके सभा पङ्क्ति। इन्होंने किरातासुन्दरीकी और वदोपनी नामकी एक टीका बनाई है।

दामोदर शास्त्री—हिन्दी-ग्रन्थके रचयिता तथा सुप्रसिद्ध कवि। ये सन्वत् १८३० में विद्यमान थे। इन्होंने बहुतसे हिन्दी पुस्तकोंकी रचना की है, जैसे—राजलोका, मृच्छकटिक, बालखिल, राधाभाष्य, मैं बड़ो हूँ, नियुक्तियाँ, पूर्वदिग्यात्रा, दक्षिणदिग्यात्रा, नावजका इतिहास, सचिव रामायण और विसौरगढ़। इनकी गिनती नाव्यकारोंमें की जाती है।

दामोदर सहाय—हिन्दीके एक कवि। ये सन्वत् १८६० में मोजूद थे। इनकी मृग्य हासमेंही हुई है। इनके बारेमें और कुछ विशेष बातका पता नहीं लगता।

दामोदर खामो—हिन्दी-ग्रन्थके रचयिता तथा कवि। इन्होंने सन्वत् १६८० में 'नेमवल्लीनी' नामक पुस्तककी रचना की। इनके बनाये हुए नेमवल्लीनी, रेखता, भक्ति विद्वान्त, राधयितास और स्वयं' गुरुप्रताप नामक ग्रन्थ कृत्यमें पाये गए हैं। इनकी कविता सराहनीय होती थी। उदाहरणार्थ एक नीचे दी गई है,—

“श्री हरिश्चन्द्र कृपास लाज पद-नन्दन पदाङ्क”।

हृन्दावनमें यहाँ हीस रहिऊनको भाऊ” ॥

अबका समुद्रा नीर नीर राधापति गाऊ” ॥

मैननि निरकी कुंज रेडु या तन लटाटाऊ” ॥

कडुं झट म बोलीं सति कहीं निरदा सुनौं म कान” ॥

नित पर मुवती जननी गतौं पर धन रह समान” ॥

दामोदरीय (सं० पु०) प्रवर क्षत्रियभेद। (भारत धर्मा ४ अ०)

दाम्पत्य (सं० स्त्री०) दम्पत्योक्ति पत्यन्तत्वात् यत्।

१ दम्पती सम्बन्धी धर्मिणोवादि, दम्पतीसे सम्बन्ध रखनेवाले धर्मिणोवादि कर्म। २ जो पुरुषके बीचका प्रेम या व्यवहार। (स्त्री०) १ जो पुरुष सम्बन्धी, स्त्री-पुरुषका सा।

दाम्पत्यप्रणय (सं० पु०) विवाहित स्त्रीपुरुषका प्रणय, खामी और स्त्रीका परस्पर अनुराग।

दायिक (सं० स्त्री०) दम्पत्येन चरतोति दायिकठक्।

(नरति। पा ४।४.८) १ दम्पत्युक्त, वक्ता, पाखण्डी। २

अवहार, समझो। (पु०) १ यत्, वगला।

दाय (सं० पु०) दा-दाने घञ्, ततो युक् (भातो युक्-

विण् कृतोः। ग ७।३।११. १ योतुकादि-देय धन, दायजे,

दान आदिमें दिया जानेवाला धन। २ विभागाहं

पितादि धन, वारिसोंमें बाँटा जानेवाला धन या मिल-

कियत, दारभाग देखो। दोहरे भावे घञ्। १ भय,

बह जो लेने लायक हो। दो-खण्डने घञ्। ॥ खण्डन,

विभाग। ५ देय धनादि, देनेयोग्य धन। ६ दायमान धन,

बह धन जो दूसरेको दिया गया हो। ७ दान। ८ दाता,

बह जो दान देता हो।

दायक (सं० स्त्री०) ददातोति दा-युक्। १ दाता,

देनेवाला।

दायज (स्त्री० पु०) दायका देखो।

दायजा (स्त्री० पु०) योतुक, दहेज।

दायवस्तु (सं० पु०) दाय-वस्तुः। भूला, भाई।

दायभाग (सं० पु०) दायस्व भागः या दायस्व सम्बन्धि-

भिर्भागो यत्। धनविभाग, पैदा धनविभाग, सौती

धनका आपसमें बाँट, घटारह प्रकारके विवादीमें से एक

प्रकारका विवाद। बहुदेयमें जोमृतवाहनकृत दाय-

भागका विशेष आदर है। यह ग्रन्थ धर्मरत्न का एक भाग

है। जोमृतवाहनने एक एक विषयमें तर्क वितर्क,

विशेष विवेचना और यथायोग्य प्रमाण दिखला कर

दुम्हरका मत खण्डन करने हुए अपना मत स्पष्टादन

किया है। बाद दायनिश्चयन तथा और जितने ग्रन्थ

रचे गये हैं, वे भी जोमृतवाहनके ही आधार पर बने

हैं। सभी ग्रन्थोंमें अपने अपने मतकी प्रामाणिकता और

पीपकताके लिये उन्होंने अनेक अनेक प्रमाण किया है। यहां

तक कि उनमें कई जगह उनका वाक्य इतना उद्धृत

किया गया है। दायभागके साथ साथ दायतत्त्व, ओक्त-

तर्कनिर्वाहकृत दायभाग-टीका और दायक्रमप्रहका

विशेष आदर है। श्रौतयज्ञातं रघुनन्दनकृत दाय-

तत्त्व नितान्त संचिन्त होने पर भी विशेष प्रशंसा है।

दाह्यि (मं० ति०) । अयं यद्वक्तुं मनो हन् । १ धर्मक,
राम कर्तव्यमा। दशमेनाम् । २ चक्षुः शब्द ।
दान(मं० लो०) दा दाने दो घञ् लङ्ते दे प्र मोधने भाषादो
भूट । १ नृपसद, वायोका मद्र । २ पावन । ३ देन ।

अथैव श्रुत्वा तदागते ही जाय । ३ कर, मरहम । ४ राज
भोजने पार क्यापेदिपि एक । ० दहि । ८ इसकोटर
कोटर मधु । यह मधु तो पिड़के कोटरके कोड़ामि बनता
हो । इनका गुण—इस, टापन, कन, कटिं चोर भेज-
नायक है । ८ देवप्राज्ञपादि मन्त्रदानक द्रव्यमोचन ।
यह क्यापार जिनमें किमो यशु परमे पाता पत्य दूर हो
गया हो । इसका पशय-न्याग, विकारिग, लभजन, विम-
जन, विद्यापन, विज्ञान, श्वाजन, प्रतिशदन, प्रादेशन,
निर्षय, पयजन, पंक्ति, दाय, प्रशन, ददन, दसि,
लगाय, पतिवजन, श्वाय, विमर्ग, सदन चोर प्रदेशन
है । दानका लक्षण—

“अर्धोऽन्तुदिते गते पदवा प्रतिगदन्” ।

इति श्रीमद्भगवद्गीतायां अष्टादशोऽध्यायः समाप्तः ॥

(५५५५५५५)

मन्त्राणां देवैः सह सन्निविष्टः शिवः प्रकृतं सत्यं ब्रह्म
 दर्शयति तन्मन्त्रं नाम सत्यं वै । दानं च ६ यज्ञश्चैव, यथा—
 'दत्ता प्रसिद्धिदा न शब्दादेः न धर्मसुखम् ।

हिनदासी य दानावासापुन्येयानि यद्विदुः १" (गुदित०)

दाना, प्रतिपक्षिता यथादेष्ट, धर्मयुक्त, दंष्ट्र पोर काल
 से को ६ दान के पत्र कहें गये हैं । तब दान करना हो,
 तब मन जो मन पातको फिर कर पर्याप्त समुक्त व्यक्ति
 दान देगे ऐसा निश्चय करके सुनो या जल मिला देना
 चाहिये, यदि दानवस्तु एक 'दंष्ट्र' दंष्ट्र चाहिये । इस
 तरहका दान सर्वत्र मिले है, आगरेका यन्त्र भन्ने ही मिल
 जाय, पर इस प्रकारके दानकर्मका पन्ना नहीं मिलता है ।

परीक्षकनियत दाम—यदि वह पात न मिले, तो
नमक मोचरानी, यदि मोचन भी न मिले तो बजुकी,
बजुके बमदायें बजरातकी, यदि बजरात भी न मिले
तो नम दामबजुकी जममें से एक टोका लिया है।

(५५५)

ਦਾਸ ਕਰਮੇ ਤੇ ਸਮਝ ਕਾਮ ਕਰਾ ਵਿਸ਼ਵ ਬਾਨਸੀ ਸੋਭਾ-
 ਸ਼ਿ ਮੰਤ੍ਰ ਮੰ, ਘਾਟ ਪਥ ਲਾਲ ਪਾ ਕੈ ਕਰ ਧਰਮੇ ਦਾਸ ਦੇ
 ਘੋ ਘੇ ਘੇ ਘਾਟ ਮਿਥੇ ਦੁਖਿਯਾ ।

प्रयोगशाला में जो प्रयोग किए जा रहे हैं
उन्होंने बताया कि इन प्रयोगों से पता चल रहा है कि
जो लोग अक्सर सोचते हैं कि वे बहुत ही महान्
कर्म करने वाले हैं, वे वास्तव में बहुत ही छोटे-छोटे
कर्म करने वाले हैं। { मुद्रित }

यह दाम पत्नी पुण्यदायक है और सभी दामों में यह है। जिसको दाम देना हो पहले समझे जा कर दाम देने से घमण्ड गुप्त और बुद्धि का दाम देने से महान् गुप्त प्राप्त होता है। धर्म का कारण है दाम देने से पहले कम मिलता है। जो किसीको धाम दे कर दाम नहीं देता, ये अज्ञानता से पातक कर्त हैं। जो दाम दे कर पीछे लापयता को, ये भी निरयमासे कर्त हैं।

७५ विधानके अनुसार जो दान देते और भित्तें हैं, वे
 दानों की श्रमधामी और समस्त विपरीत चीजों में सरह-
 धामी होते हैं। मन्तविक अनुसार दानके तीन भेद हैं,
 आर्थिक, राजसिद्ध और तामसिक ।

उपकारक व्यक्ति उपकारका त्याग न कर, किंवा दातव्यके त्यागने से उपयुक्त देण, काक धोर दातके चतुःवार दान दिया जाता है, उसे मात्तिक दान, धनुषधारको इच्छामे यथवा यथमात्रको इच्छामे तो दान दिया जाता है, उसे राजम दान धोर देणकाल पातादिका विचार किये बिना जो किमो देणमें, किमो कालमें तथा किमो पादको यत्नधार एवं यत्नधार को मात दान दिया जाता है, उसे ताम्र दान करते है। जिनको प्रजति मात्तिक भावमे मिलत है, वे मात्तिक दान करते हैं, उनमें ताम्रमे राजम धोर ताम्र दान देत है। यह दान निम्न मैमि-
लिकादिने मीदये धार प्रसारका है,--निष्ठ, मैमिलिक, काम्य धोर विमल। इन चारोंमें चतुर्देदान सबसे अधिक है। किमो उपकारको प्रताया न कर प्रतिदिन ब्राह्म-
वादि मन्पादको तो दान दिया जाता है, उसे नितादान को दान पाण्डिको गार्जिक मिले, धर्मो किमो प्रकारके उपकारके किमो मन्पादको दिया जाता है, उसे मैमिलिक दान, मन्पाद, धर्मो धोर धर्मोदिनी कर्मका-
ने को दान दिया जाता है, उसे काम्यदान धोर ईश्वरको मोतिके मिले इच्छादि ब्राह्मणोंको तो दान दिया जाता है, उसे विमल दान कहते है। दानो दान सर्वमे धर्म है। (अर्थः)

इसमें विषय तो सभी हैं, परं वे जोमृतवाहनके मतानु-
मत ही प्रवेष्टा मंथिम यांश्चम प्रकाशित हुए हैं। केवल
किमो निसो विषयमें रघुनन्दनने दायभागसे भिन्न मत
प्रकाश किया है और कहीं कहीं दायभागको चुटि भी
पूरी की है। दायक्रमसंग्रह ओक्षण तर्कानुसारका
मूल ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ दायभागका संग्रह है और
इसका मत दायभाग-टीकाके अनुरूप है।

रामनाथ विद्यावाचस्पतिरुक्त दायरहस्य वा स्मृति-
रत्नावलीका बहुप्रदेशमें कहीं कहीं आदर था, किन्तु
किसी विषयमें उनका मत जोमृतवाहन और रघुनन्दन-
के मतसे भिन्न है।

दायभागकी प्रत्येक टीकाएं हैं जिनमेंसे योग्य-
भाचार्य चूडामणिरुक्त टीका हो सबसे प्राचीन है। यह
टीका यद्यपि कई जगह ओक्षणतर्कानुसारमें उचित,
खण्डित और संशोधित हुई है, तो भी इसकी गिनती
एक उत्तम टीकाओं की गई है। अशुत चक्रवर्त्तिनी भी
दायभागकी एक टीका बनाई है। इस टीकामें कई
जगह उन्होंने चूडामणिका उल्लेख किया है। इसके
सिवा उन्होंने याज्ञवल्क्यकी भी एक टीका रची है।
अशुत और चूडामणिके बाद महेश्वर भट्टाचार्य ने भी
एक टीका प्रणयन की है। यह टीका ओक्षणतर्कानु-
सारके समयकी प्रथमा संस्मृति के कुछ पहलू की है। ओ-
क्षणतर्कानुसार एक प्रधान नैयायिक पण्डित थे।
इन्होंने विविध विवेचनापूर्वक यह टीका प्रणयन की है।
टीका विशेष प्रादुर्भाव और विख्यात है, तथा दायभाग
और दायतत्त्वके बाद ही प्रामाण्य है। रघुनन्दन नामक
एक और पण्डितने दायभागकी टीका बनाई है। कोई
भी है इन रघुनन्दनकी स्मृतिमें संग्रहकर्ता रघुनन्दन
वतमान हैं, किन्तु यह भ्रमात्मक है। क्योंकि स्मार्त्त
रघुनन्दन इस प्रकारकी प्रथम टीका अभी नहीं
लिख सकते। किसी पण्डितने इस टीकाका विशेष
प्रचार होनेके लिये अपना नाम न दे कर रघुनन्दनका
ही नाम दिया था। दायरहस्यकर्ता रामनाथ विद्या-
वाचस्पति मों इसकी एक टीका बना गये हैं। काशीराम
भट्टाचार्य ने भी टीका बनाई है यह दायतत्त्वकी है।
यह टीका दायभागकी टीकासे बहुत कुछ भिन्नता
रखती है।

दायभागका मत परस्पर भिन्न होने पर भी भिन्न
भिन्न देशों में भिन्न भिन्न निवन्धकारियोंके मत प्रचलित
हैं। गौड़ प्रयातृ बहुप्रदेशमें धर्मरत्न प्रयातृ दायभाग,
ओक्षण तर्कानुसार और योग्यभाचार्य चूडामणिरुक्त
दायभाग टीका, स्मृतितत्त्व, दायतत्त्व, विद्यादायवर्णनेतु,
विद्यादासारार्णव और विद्यादभङ्गार्णव ये सब ग्रन्थ विशेष
प्रादुर्भाव और इनके मतानुसार बहुप्रदेशमें दायविषयक
सभी विचार सम्पन्न होते हैं। मिथिला प्रान्तमें मिता-
चरा, विद्यादरदाकर, विद्यादचित्तामणि, व्यवहारविज्ञा-
मणि, हैतपरिगट, विद्यादचन्द्र, स्मृतिभारसमुच्चय और
मदनवारिजान आदिका मत प्रचलित है।

काशीप्रदेशमें मिताचरा, वीरमित्रोदय, माधवीय,
विद्यादताण्डव और निर्णयगिम्बु इन सब ग्रन्थोंका मत
प्रचलित है।

महाराष्ट्र प्रदेशमें मिताचरा, मयूख, निर्णयगिम्बु,
होमादि, स्मृतिकौस्तुभ और माधवीयका मत चलता है।

द्राविड़-प्रदेशमें द्राविड़ और कर्णाटकभागमें मिता-
चरा, माधवीय और सरस्वतीविलास एवं प्रभुभाषामें
मिताचरा, माधवीय, स्मृतितन्त्रिका और सरस्वती-
विलासका मत प्रचलित है।

मिताचरा ग्रन्थ काशी प्रदेशमें प्रचलित मतका संस्था-
पक है और पन्थान्य निवन्धके कई जगह प्रामाण्य है।
काशीप्रदेशसे ले कर भारतवर्षीय पन्थारोपको दक्षिणी
सीमा तक मिताचराका आदर है और यह ग्रन्थ प्रधान
निवन्धके जैसा गल्ले और विशेष मान्य है। काशी
प्रदेशमें पराशरमधव, व्यवहारमधव, मिश्रमिश्ररुक्त
वीरमित्रोदय, वीरेश्वर भट्ट और वासुदेव प्रणीत मिता-
चरा टीका और कमलाकररुक्त विद्यादताण्डव आदि
मिताचराके साथ विशेष प्रादुर्भाव और व्यवहृत होता है।
वहां कहीं प्रयोगोंके मतानुसार दायविभाग सम्पन्न
होता है।

भारतवर्ष के लगभग जोके ग्रामनाथोंमें हुआ, तबमें
ले कर आज तक संस्कृतमें तीन निवन्ध प्रचलित हुए हैं—
पहला विद्यादायवर्णनेतु चारनद्विष्टके समयमें, दूसरा
विद्यादासारार्णव और तीसरा विद्यादभङ्गार्णव साधु
कार्यवाचिकके समयमें। पहला निवन्ध मिथिलानामों

जहां शास्त्राचार्यशास्त्राचार्य गंगादि तीर्थ हैं, वही स्थान दानके लिये प्रशस्त है। शास्त्राचार्य श्रमार्थ सूर्यके चक्षु होनि पर दान करना निषेध है, यदि कोई करे भी, तो उस दानका कोई फल नहीं। जो सामर्थ्यवान् है, उसके पास यदि कोई विपदग्रस्त ब्राह्मण कोई बीज मार्गने जाय और वह उसे फटकार ले, तो वह नरकभोगी होता है।

जीवन अनित्य है; आशु यतन्त चक्षु है, कब मृत्युका घास बन जायेंगे उसका कुछ निश्चय नहीं है। यह सब सोच कर हरएकका मुख्य कर्तव्य है, कि अपना जीवन सर्वदा दानादि पुण्यकर्मोंमें लगा दे। भोजन करके दान करना बिलकुल निषेध है। अभुक्त हो कर दान करना चाहिये। जो पतनसे उबार करता है, उसे दानपात्र कहते हैं। जिसका विद्या और तपमें पूरा दखल है, उसीको दान देना चाहिये और उसीको दान देनेसे दाता पतनसे उबार पा सकता है।

जो सब ब्राह्मण शूद्रके अर्थादि द्वारा औषिका निर्वाह करते हैं, वे दानके प्रपात्र हैं। दानके वे ही पात्र हैं जिनके हृदयमें शूद्राच नही है। किसीका पिण्डादि नोप होति देख कर दयापरवश पुनर्दानका नाम दत्तक है। यह दान सभी दानोंमें उत्तम माना गया है। दत्तक देखो।

समीपस्थ शास्त्रज्ञानसम्पन्न ब्राह्मणकी न दे कर यदि दूरसे ब्राह्मणको कुछ दान दे, तो दाताके सात कुलका बिनष्ट होता है। (शातातप)

मन्त्रपूर्वक दान यदि प्रपात्रमें करे, तो वह नरकभोगी होता है। देवता, अग्नि और ब्राह्मणकी दान देनेमें यदि कोई निषेध करे, तो वह भी बार तिर्यग्योनि प्राप्त कर पोछे चाण्डालकुलमें जन्म लेता है। (पातातप)

यतिगोत्रिका सोना, चाँदी और ताम्र-दान नहीं करना चाहिये, जो कोई करता भी है उसे कुछ भी फल प्राप्त नहीं होता। वाक्य द्वारा जो स्तोकार कर लिया है उसे पूरा नहीं करने पर ऋषी होना पड़ता है।

इस मनुष्यको दान देने यदि ऐसा कहे, तो सबसे पहले उसीको देना उचित है।

जो धन दूसरेकी कट दे कर नहीं, वरं अर्थादि द्वारा उपार्जित हुआ हो, वही धन देय अर्थात् दानका उपयुक्त है, यदि वह काम भी क्यों न हो। (देवक)

जो मनुष्य दूसरेका धन अवहरण कर पोछे उसे दान करना है उसे स्वर्ग प्राप्त नहीं होता और न उसे दानका कोई फल हो मिलता है। लहङ्गे, अम्बे, बहरे, गूंगे एवं व्याधिपोहित अर्थात् महापातक रोगग्रस्त मनुष्योंको दान नहीं देना चाहिये, किन्तु प्रतिपात्न करना अवश्य कर्त्तव्य है। यदि वे लोग अथवस्थादिके अभावसे कष्ट पावें, तो उनका उसी धनसे उपकार करना चाहिये। विग्रह धन सात प्रकारका है, यही सात प्रकारका धन दान कर सकते हैं। अथयनादि द्वारा प्राप्त धन; श्रौयं अर्थात् अर्थादि द्वारा पाया हुआ धन; जप, होम और देवसेवादि करके लब्ध धन, कन्यागत धन, कन्याके साथ आगत स्मृत्युपादि द्वारा लब्ध धन, ग्रन्थगत अर्थात् मुकुन्दविद्यादि द्वारा प्राप्त धन, याव्यागत अर्थात् ऋत्विक् करके प्राप्त धन, अथवागत अर्थात् ज्ञातिमार्गसे लब्ध धन, ये ही सात प्रकारके धन विग्रह हैं। इस धनको सात्विक धन कहते हैं।

राजसिक धन—कुमीद, कर्प, वाणिज्य, शूल्क, शास्त्राचार्यसेवा अर्थात् सेवा टङ्कल और उपकार द्वारा जो धन प्राप्त होता है उसे राजसिक धन कहते हैं। तामसिक धन—शूतकोड़ा, चोय, पाश्र्विक, परपोड़ा, साहच, समुद्र-यान और गिरि-पारोहण, व्याज अर्थात् शूद्रादि हो कर ब्राह्मणोंका वैश्व धारण पूर्वक जो धन उपार्जन किया जाता है, उसे तामसधन कहते हैं। दोनोंमें सात्विक-धनको श्रेय और तामसिकधनको निन्दनीय बतलाया है। इस प्रकारका धन दानमें न लगाना चाहिये। पूर्वोक्त विग्रह जो सात प्रकारके धन कहे गये हैं, वे ही दानके लिये प्रशस्त हैं। चाहे किसी वस्तुका दान क्यों न करे, हरएकके एक एक अपिछात्री देवता हैं। उन्हींका नाम ले कर दान करना चाहिये।

देवद्वयके देवता—भूमि दानके देवता विष्णु, कन्या दानके प्रजापति, गजदानके भी प्रजापति, तुरगके देवता यम, एक चुरविशिष्ट पशुमासके भी यम, धेनु-दानके देवता इन्द्र महिषदानके देवता यम, हाग-दानके देवता अग्नि, मेघदानके देवता वरुण और बराहदानके देवता विष्णु हैं। इसके भिया सभी जन्तुकी पशुपति देवता वायु और असुर जन्तुपति

संसात्तं सर्वैरु त्रिवेदोश्च और दूसरा त्रिवेदोनिवाभो जगन्नाथ तत्पञ्चाननस्य संयुक्तो दुष्पा है । किन्तु ये दोनों यद्यपि परस्पर विभिन्नम ज्ञान सादृश्यके आदिग और उपदेशानुसार रचे गये हैं ।

दायविभागका विषय दायभागमें इस प्रकार लिखा है—लघुके सव पित्रधनतो जो थापमें बांट लेते हैं उसको दाय विभाग है । इस विभागमें जो धन प्राप्त होता है उसे अष्ट विभाग विवादपद कहते हैं, अर्थात् यह धन ले कर नामा प्रकारके विवाद उपस्थित होते हैं ।

पित्रसे प्राप्त धनका नाम पित्रधन वा वपौतो धन है । पिताके मरनेके बाद उस पित्रधनको पुत्रस्वत्व कहते हैं । पित्र और पुत्र ये दोनों पद उपलब्ध मात्र हैं । इनसे सम्पर्कीय समस्त अधिकारियोंका बोध होता है । क्योंकि सम्पर्क मात्रसे ही समस्त सम्पर्कीयोंके धन विभागमें भी दायभाग पदका प्रयोग है । इसी कारण दायभाग विवादपद उपक्रम करके माह प्रभृतिका भी धनविभाग निर्दिष्ट हुआ है । (वीरत इति गुरुस्याराधय सधो ददाति प्रयोग गीणः । जो दान करे इस व्युत्पत्तिसे दाय शब्द निकला है । किन्तु स्मृति धनमें यह लागू नहीं है । अतः दा धातुका प्रयोग गीण है, लक्षणाशक्ति द्वारा जिस प्रकार दानाधोन स्वत्वनाम और परस्वलोत्पत्ति उत्पन्न होती है, उसी प्रकार मरने पर वा पतित होने पर अथवा सन्वासधर्म ग्रहण करने पर सम धनमेंसे उसका स्वत्व नहीं रह कर पुत्रादिका स्वत्व रहता है ।

पूर्व स्वामोका स्वत्वनाम होने पर पोछे तत्त्वानाधोन जिप्त द्रव्यमें श्रवण रहता है, उसी धनमें दाय शब्द प्रसिद्ध है । पहले दाय निरूपण करके उसका विभाग निरूपण करना आवश्यक है । पहले यह देना चाहिये कि दायका विभाग अथवा दाय विभाग अथवा दायके सदित विभाग, इन सब पक्षोंमें कौन पक्ष अधिक है ? प्रथम पक्षको अधिक नहीं कह सकते, क्योंकि ऐसा होनेसे दायविभाग होता है, दूसरा पक्ष भी उपयुक्त नहीं है, संयुक्त द्रव्यमें 'यह मेरा नहीं है, मेरे भाईका विभक्त धन है' इस प्रकार व्यवहार हुआ करता है । संयुक्तका विषय इस प्रकार सामुदायिक स्वत्व उत्पन्न होनेके बाद सम स्वत्वके द्रव्य विभेदमें जो व्यवस्थापन होता है, उसका

नाम विभाग है, यह भी नहीं कह सकते । एक संयुक्त एकका सामुदायिक स्वत्व उत्पन्न कराते समय एक दूसरा तुल्यस्व सम्बन्ध द्रव्यका प्रतिबन्धन होता है, अतः ऐसा न कर एकको अंग स्वत्व उत्पन्न करता है, पोछे विभाग हो उसका व्यञ्जक होता है । फिर समस्त पित्रधनमें सब पुत्रोंके सामुदायिक स्वत्वको उत्पत्ति और विनाशकी कल्पनामें अवल गौरवमात्र है ।

भूमि, सुवर्ण आदि धनमें एक दोगोपात्त अर्थात् उन अंशमें उत्पन्नद्रव्यका यह द्रव्य अमृतका है, यह अमृतकी नहीं है इस प्रकार अवधारण अविवक्षितस्थानमें नहीं रहनेसे वैज्ञानिक व्यवहारको अनुपयुक्तताका बोधा नहीं होनेके बराबर है । आंगिक स्वत्वके गुटिकापातादि द्वारा व्यक्तिकरणको विभाग कहते हैं अथवा विभाग शब्दका योगिक अर्थ यह है—विशेषरूपसे भाग अर्थात् स्वत्वस्थापन, इसीका नाम विभाग है ।

पिताके मरनेके बाद पुत्र धनको आपसमें बांट सकते हैं, ऐसा कहनेसे यही बोध होता है कि विभाग करनेके पहले उस धनमें पुत्रका कोई स्वत्व नहीं रहता और विभागको भी स्वत्वका कारण नहीं कह सकते, क्योंकि अदासीन व्यक्ति और असम्पर्कीयके धनको गुटिकापातादि द्वारा विभाग करने पर स्वत्ववान् हो सकता है, यह भी असङ्गत है । इसीसे ऐसा सिद्धान्त हुआ है । पित्रादिके मरनेके बाद ही यह धन हम लोगोंका है, ऐसा पुत्रगण कह सकते हैं और एक पुत्रादिको जगह विश्व विभाग हो स्वत्व हो जाता है । सुतरां पित्रादिको स्वत्व ही पुत्र प्रभृतिरे स्वत्वका कारण है, इससे पूर्वज्ञति किसी प्रकारकी असङ्गति नहीं है ।

पूर्व स्वामोके मरते समय उत्तराधिकारको जोधन ही उस स्वत्वका कारण है । जोधनपदसे सत्त्वानको गम स्वत्वका भी ज्ञान होता है, केवल गर्भस्थके जन्म लेनेको अपेक्षा रहते हैं । उपाज्जकके उपाज्जन व्यापारको भर्जन कहते हैं । इस भर्जन द्वारा जो उपाज्जित धनका स्वामी होता है, उसका नाम भर्जक है । इमनिष्ट उत्तराधिकारिताको जगह पुत्रका जन्म ही भर्जनपद वाच्य है, इससे पिताके जीवित ही पुत्रका पित्रधनमें स्वत्व ही हो जाय तो भी ऐसा कहनेसे पित्रादिको मरणापेक्षा

नहीं है। इस कारण किसी किसी यन्त्रमें लिखा है, कि जन्म ही अर्जन है। पित्रघन पुत्रका है, ऐसा कहनेसे मनु प्रभृति स्मृतिशास्त्रके साथ विरोध उत्पन्न होता है। मनुने कहा है, कि पिता और माताके मरने पर पुत्र पैटकघनको आपसमें बराबर बराबर बांट ले। पिता माताके जोतिजो पुत्र उस धनको आपसमें नहीं बांट सकते। पदो, पुत्र और स्त्रोत्पन्न ये दोनों चक्षुष माने गये हैं। लोग जो कुछ उपाजन करते हैं, वह धन उनकी होता है। अतः ऐसा स्थिर हुआ कि पिता और माताके जोवित रजने पर पुत्रोंका धनमें कोई अधिकार नहीं है, उनके मरने पर ही उनका सम्मिलित होता है। मृत्युपदमें केवल मरणपात्र विवक्षित नहीं है, किन्तु पतितत्व प्रवृत्तित्वादिका बोधक है। क्योंकि स्वत्व-विनाशक रूपमें क्या भरण क्या पातित्य, क्या संन्यास सभी समान हैं। नारदके वचनानुसार माताको रजोनिवृत्ति और बहनोंको शादीविवाह होनेके बाद तथा पिताके पतित या गृहस्थायुष्यरहित अथवा विषयविरक्त होनेके बाद पुत्रगण पित्रघनको आपसमें बांट सकते हैं। इनमेंसे पतितके सर्वस्व दानादि प्रायश्चित्तशास्त्रमें विहित होने पर यदि पिता प्रायश्चित्त न करे, तो उनका पातित्य ही स्वत्व-विनाशक होता है; लेकिन यदि वे प्रायश्चित्त से से, तो उनका स्वत्व नाश नहीं होता।

“मातृनिवृत्ते रजसि दत्तासु भगिनीषु च।

विनष्टे वापराधे पितृषु परतःपृष्टेः ॥”

(दायभाग)

पिताके मरनेके बाद बड़ा सस्रका ही सर्वधनाधिकारी होगा अन्य लड़के नहीं, इसका क्या कारण? मनुने कहा है, कि बड़ा लड़का ही समस्त पित्रघन पातिका, अथवा भाई पित्रघन उस बड़ेके अनुजोवी होगी।

“ज्येष्ठ एव गृह्णीषात् पित्रं धनमप्येतः।

श्रीवास्तवपुत्रीयेयुर्यस्य तितरे तथा ॥”

इस वचनके ज्येष्ठपदमें पिताका पुत्र

पुत्र ही अभिप्रेत है, यहाँ मान जा।

पिता मनुका वचन है। ज्येष्ठपद ही

पित्रघनके अर्थमें सुक्त होता है। इसी कारण ज्येष्ठ पित्रघन प्राप्त करने योग्य है। जिसने द्वारा श्रवणार्थ ही और स्वयंका आनन्दनाम हो, वही ज्येष्ठ धर्मपुत्र है, अन्य पुत्रोंको कामज बतलाया है। इसका तात्पर्य यह है, कि बड़ा भाई पिताको नाई अनुगत सभी माइयोंका भरणपोषण करे। यदि वे इनमें सममर्थ हों, और छोटा ही भरण पोषण कर सके, तो वही कर्त्ता ठहराया जायगा। संसार प्रभृतिका रक्षणार्थ कार्यमें यदि छोटा समतावान् हो, तो सभीके इच्छाधेन वही छोटा सबका भरणपोषण करेगा। इस कारण ज्येष्ठत्व सब धनाधिकारका कारण नहीं माना जायगा, क्योंकि मनुने फिर एक जगह कहा है, आहतगण भिन्न कर रहें अथवा धर्मवृत्तिको कामनासे प्रयत्न रूपमें रहें, यह उनकी इच्छा पर निर्भर है, इत्यादि कारणोंसे बड़ा भाई धनाधिकारी न हो कर समा भाई पित्रघनको आपसमें बराबर बराबर बांट सकते हैं। इस प्रकार पिताके स्वत्वनाशका काल एक और विभागका काल एक दूसरा है। यदि पिताका स्वत्व नाश न हो, तो उनको इच्छासे ही विभाग हो सकता है। इस तरह पित्रघन विभागके दो समय हैं, एक पिताके मरने पर और दूसरा पिताके विषयके राज्य तथा माताको रजोनिवृत्ति होने पर यदि माताको न तो रजोनिवृत्ति हो और न पिता ही विषयानुरक्त रहे रहित हो, तो धनविभाग उनकी इच्छा पर निर्भर है। इस विभागरामें जो तीन काल कहे गये हैं वे आदरणीय नहीं हैं। क्योंकि माताकी रजोनिवृत्ति और पिताका विषय वैराग्य एक समयमें नहीं होता।

कोई कोई कहते हैं, कि यह पिताके कार्योत्पन्न होने पर पुत्र पित्रघन विभाग कर सकते हैं, किन्तु इस वचनका ऐसा अर्थिप्राय नहीं है। पिताके जोवित रजने पर पित्रघनके ग्रहण या दान अथवा गच्छित करनेका पुत्रका कुछ भी अधिकार नहीं है। पिताके अत्यन्त हठ वा प्रत्याघात अथवा रोगप्रसूत होनेके बाद पैटकघनको करना चाहिये। उनको अनुगत से कर अन्य पुत्र भी सब काम काज कर सकते हैं।

वा, उक्त अथवा रोगप्रसूत ही क्यों न हो
‘पिताकी नाई’ अन्य माइयोंके

४ वेद, अग्नि और व्रतयागी, ५ धन्याय द्वारा उपाजित वसु दान, ६ ब्रह्मवातो, ७ मिथ्यावादोगुण, ८ चोर, ९ पतित, १० छत्रपति, ११ जो सर्वदा ब्राह्मणों के प्रति द्वेष रखता हो, १२ याचक, १३ द्वयलोपति, १४ परिचारक, १५ मूल्य और १६ मिथ्यावादीको दान देना, यही सोलह प्रकारके दान निष्फल हैं।

दानलीला (स० स्त्री०) १ कृष्णको एक लीला। इसमें उन्होंने ग्यासिनो'से गोरक्ष सेचनेका कर वसूल किया था। २ एक पुस्तक जिसमें श्रीकृष्णको इस लीलाका वर्णन किया गया है।

दानव (स० पु०) दनोरपत्य दनु-पण् । (तस्यापत्यं । या ४।१।१२) दनुका अपत्य, क्रमशःपक्षि वे पुत्र जो दनु नाम की पत्नीसे उत्पन्न हुए, असुर, राक्षस।

इन्द्रने अमिपुत्र सोमको पान कर मायावी राक्षसोंको सभी माया नष्ट कर दी थी। भागवतमें दनुके ६१ पुत्र गिनाए गये हैं। जिनमेंसे हिमूहा, शम्बर, अविष्ट, वयवीव, विभावसु, प्रयोमुख, गङ्गाधरा, स्वर्भानु, कपिल, चण्ड, पुलोमा, द्वयपर्वा, एकचक्र, तापन, धूम्र-केश, विरूपाक्ष, विप्रचित्ति और दुर्जय यही १८ प्रधान हैं।

महाभारतके अनुसार दक्षको कन्यां दनुने विप्यात चालोक पुत्र उत्पन्न हुए थे, जिनमेंसे विप्रचित्ति राजा हुए थे। इनके नाम ये हैं,—शम्बर, मनुचि, पुलोमा, अमि-लोमा, केशी, दुर्जय, अवाधिरा, अश्वधिरा, वीर्यवान्, अश्वघट्ट, गगनमूर्धा, वेगवान्, केतुमान्, स्वर्भानु, अश्व, अश्वपति, द्वयपर्वा, अजक, अश्वधोव, धृष्ट, सुदुण्ड, एकपाद, एकचक्र, विरूपाक्ष, महोदर, निचन्द्र, निजुध, क्षुपट, कपट, गरभ, शतभ, सूर्य और चन्द्र। दनुवंशमें जन्म होनेके कारण ये लोग दानव कहलाये। दानवोंमें जो सूर्य और चन्द्र हुए उन्हें देवताओंसे भिन्न समझना चाहिये। (भारत १।६५ अ०)

मनुसंहितामें लिखा है, कि दानव पितरोंसे उत्पन्न हुए थे। (मनु १।२०।१)

मरौचि आदि ऋषियोंसे पितर उत्पन्न हुए थे। फिर पित्रगणोंसे देव दानव और देवताओंसे चराचर जगत् प्रावृत्ति का क्रमसे उत्पन्न हुए हैं। दानवसंघ' अण् । (त्रि०) दानव सम्बन्धीय। अण्वो' अण्व् ।

दानवशुक्र (स० पु०) दानवानां शुक्रः इत्यतः । दानवों के शुक्र, शुक्राचार्य ।

दानवस्य (स० पु०) दाने स्य इव । वैश्वनातिक पात्र-विशेष, एक प्रकारका घोड़ा। महाभारतमें लिखा है, कि इस प्रकारके घोड़े देवताओं और गन्धर्वोंकी सवारोंमें रहते, कभी बड़े नहीं होते और मनकी तरह वेगधाले होते हैं। (महाभारत १।१७। ७०)

दानवप्रिया (स० स्त्री०) नामवली सना, पानकी वेल।

दानवारि (स० पु०) दानवानां वारिः इत्यतः । १ देवता। २ विष्णु। ३ इन्द्र। दानमेव वारि जन्तः । (स्तो०) ४ गजमदलन, हाथीका मट।

दानविधि (स० पु०) दानस्य विधिः इत्यतः । दान देनेका विधान वा नियम।

दानवी (स० स्त्री०) १ दानवकी स्त्री। २ दानवजातिको स्त्री, राक्षसी।

दानवो (हि० वि०) दानवसम्बन्धी, दानवोंको।

दानवीर (स० पु०) १ अत्यन्त दाता, वह जो दान देनेसे न रुटे। २ वीररसभेद। ३ नायकभेद। साहित्यमें वीररसके अन्तर्गत चार प्रकारके जो वीर गिनाये गये हैं उनमें एक दानवीरका भी नाम आता है। दानवीरतामें अत्याह स्वाधोभाव है, याचक आत्मस्थ है, अश्ववनाय और दानसमय ज्ञान आदि उद्दीपन विभाव है, सर्वस्व त्याग आदि अनुभाव तथा हर्ष और हृति आदि न'शरी भाव है।

दानवेन्द्र (स० पु०) राजा अर्ध।

दानवेश (स० पु०) दन्वाः अपत्यं दनु स्त्रियों ऊङ्, ततो ङक् । दक्षकी कन्या दनुका अपत्य।

दानवत (स० स्त्री०) दानवेश व्रत'। दानदो व्रत।

दानवति (स० स्त्री०) दानस्य शक्तिः । दाढल, दान करनेकी क्षमता।

दानशेख (स० स्त्री०) दाने शैल'स्वभावो यस्य । दाता, दानी। इसका पर्याय—वदान्य और वदन्त्य है।

दानयोजिता (स० स्त्री०) स्मृतायता, दान करनेकी प्रवृत्ति।

दानशूर (स० पु०) दाने शूरः वीरः । दानवीरः शास्त्रमुनि।

दानशोण्ड (स० स्त्री०) दानेषु शोण्डः अतिदक्षः । पलस्त वदान्य, बहुत दानी।

धनको रक्षा करेगा, लेकिन उसे धनविभाग करनेका कोई अधिकार नहीं है। अब धनविभागके केवल दो ही समय उपयुक्त समझे गये, एक पिताकी मृत्यु और दूसरा उसकी इच्छा। यदि वे चाहे तो हर समय पुत्रोंके बीच धनविभाग कर सकते हैं। पितामाताके मरने पर पुत्र पित्रधनको आपसमें बांट ले, क्योंकि गार्हस्थ्य चांश्य धनके बिना नहीं चलता, इसी कारण पुत्र पितामाताके रहते स्वाधीन नहीं हो सकते। यदि सभी अपनी अपनी इच्छासे धन खर्च करें, तो धन-चाय हो जाता है और गृहस्थायस नहीं चलता। इसी कारण पितामाताके जीवित रहने पर पुत्र स्वाधीन नहीं हो सकते हैं। अतः उनको जोवद्दाममें पुत्रोंका एक साथ रहना विधेय है। उनके मरनेके बाद वे विभक्त हो कर पृथक्, पृथक्-रूपसे धर्म कर्मकी प्रतिष्ठा कर सकते हैं। हमोलिखे जीवित पितामाताका विभाग निषिद्ध बतलाया है। यह विभाग पुत्र, पौत्र और प्रपौत्रके बीच एकसा समझना चाहिये; क्योंकि पुत्र, मृतपितृक पौत्र और मृतपितृक पितामाताकी प्रवोह इन तीनोंके हो पावे चाधिकारमें धनिपिण्ड योग धनिभोग्य पिण्डद्वय दानमें कोई नहीं है। जिस प्रकार पक्षिण पौलस्त्य पर रहनेकी भाशा करते हैं, उसी प्रकार पिता पितामह और प्रपितामह ये सब जातसन्तानको उपासना करते हैं और यह भाशा रखते हैं, हि सन्तान मधु, मांस, श्राक, दुग्ध और पायम द्वारा यद्यपि नन्दोदकोपनक्षत्रं तथा मघामे उन शीर्षोंका ग्राह करेगी। दायभाग।

इस वचनमें प्रपितामह पक्षधर्मे लिखे पुत्रपदसे से कर प्रवोह तक लाक्षणिक विधाय है। प्रपितामह तक पार्षण ग्राहकाली समझ कर प्रवोह पश्यन्तका धनमें बराबर अधिकार है। इसीसे जीवितपितृक पौत्र और प्रपौत्रके पार्षणमें अधिकार प्रयुक्त पिण्ड प्रदान नहीं करनेसे वे दायधिकार नहीं हो सकते।

उनके पिताका भाग हो अधिकारमें उनका होगा। फिर जहाँ एक पुत्र जीवित है और उसके कई एक पुत्र भी हैं, वहाँ एक भाग उस पुत्रका और एक भाग उन सब पुत्रोंका होगा। इसका कारण यह है कि पितामह धन संवन्धका मूल कारण है, स्वपित्रधन जन्म है, मृतता उस पिताके

जितने धनकी स्वामित्वयोग्यता थी, उतनेके ही वे सब अधिकारी होंगे। फिर 'अनेऽपितृकानां पितृतो भागधनानां' इस वचनका अभिप्राय ऐसा नहीं है। वहाँ पर यदि एक वचनका प्रयोग किया जाय, तो ऐसा समझा जायगा कि वह धन पित्रव्यक्त पिताका ही था, अतः पित्रव्यक्ता ही वह धन होगा, मृतपुत्रका कुछ भी नहीं। फिर 'पितृतो भागधनानां' इस वाक्यका पिता यदि पुत्रवत् भागकी व्यवस्था करे, तो जिस प्रकार पिता के दो भाग प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार पित्रव्यक्त दो भाग और उनके मृतपुत्रका एक भाग होगा है, किन्तु यह भी मिश्रवाचविषय है। अतएव जहाँ एक भाईके छोड़े पुत्र हैं और दूसरेकी धर्मक, वहाँ भी पित्रनुसार भागकी कल्पना करनी चाहिये। अतः यह स्थिर हुआ कि पैतृक धन यदि विभु करना हो, तो सभी पुत्र बराबर बराबर भाग लें, ऐसा न हो कि किसीकी कम मिले और किसीकी अधिक।

याज्ञवल्क्यने कहा है कि पितामाताके मरने पर पैतृक धन और मृष्टको पुत्रगण आपसमें समान भागोंमें बांट लें।

पिताकी मृत्यु के बाद यदि सहोदर भाई पित्रधनको बाँटना चाहे, तो माताको भी पुत्रका बराबर भाग दें। किन्तु सहोदर और वैसाव दोनोंके बीच भाग विभक्त न कर दें। 'समांशहारिणी माता' इत्यादि वचनोंमें मातृपदका मुख्य अर्थ जननी है, न कि विमाता।

यदि माताके पास स्वामी और स्वसुरादिका दिया हुआ कुछ भी स्त्रीधन न रहे, तो उसे पुत्रका समान पंश प्राप्य है। लेकिन यदि स्त्रीधन दिया गया हो, तो बाधा भाग देना उचित है। जहाँ पिता पुत्रोंको समान भाग दें, वहाँ पुत्रहीना सभी स्त्रियोंको भी स्त्रीधन नहीं रहने पर पुत्रका समान पंश दें। वचन विरोधसे यही प्रमाणित हुआ है, कि पिता पुत्रहीना स्त्रियोंको भी पुत्रके जैसा अधिकारिणी बनाये, किन्तु पुत्रवतियोंको नहीं। पितामह धनविभागके समय पौत्र पुत्रहीना पितामहीको समान पंश दें, क्योंकि याज्ञमें पितामहीकी माताके समान कहा है।

अविवाहिता कन्या सिर्फ विवाहयोग्य धन पा सकती

दानसागर (सं० पु०) दानानां सागर इव । महादान विग्रह, एक प्रकारका महादान । इसका प्रचार बङ्ग देशमें है । इसमें भूमि, धानन और सोलह पदार्थोंका दान किया जाता है । दानानां सागर इव प्रतिपादक-तया आधार इव । २ तुलावसुपादि महादानका विधानप्राप्तक स्मृतिनिबन्धमें है ।

दाना (फा० पु०) १ भवका एक कण, घनाञ्जका एक कण । २ भद्र, घनाञ्ज । ३ चर्वण, चर्वेना । ४ बाल, फली या शुक्लेमें लगा हुआ कोई छोटा बीज । ५ उक्त बीजोंमेंसे एक बीज । ये बीज कड़े गूदेके साथ विलकुल मिले हुए भलग भलग निकलते हैं, जैसे घनाञ्जका दाना । ६ एक ही तागमें शूयो, पिरोई या जोड़ी हुई कोई छोटी गोल वस्तु । ७ मात्साको शुरिया । ८ वरतनकी नक्काशोंमें गोल उभार । ९ सुत्रलाने वा रोग आदिसे सप्तम शरीरके चमड़े पर महीनमहीन उभार । १० टटलनेसे भलग भलग मालूम होने योग्य किसी सतह परके छोटे छोटे उभार । ११ कण, कणिका, रवा । १२ वह शब्द वा पद जो गोल या पहलदार छोटी वस्तुओंके लिये मन्त्र्याके स्थान पर आता है, जैसे चार दाने मिर्च । (फा० वि०) ११ बुद्धिमान्, भक्तमन्दी ।

दानाई (फा० स्त्री०) बुद्धिमत्ता, भक्तमन्दी ।

दानाभय (हि० पु०) चोगेके पहने जानिका एक प्रकारका जरदोजीका कपड़ा ।

दानाचारा (फा० पु०) भोजन, भाहार, खाना पाना ।

दानाध्यक्ष (सं० पु०) दानका प्रबन्ध करनेवाला कम-चारी, वह व्यक्ति जिसके द्वारा दान किया हुआ द्रव्य ब्राह्मणोंमें बाँटा जाय ।

दानापानी (हि० पु०) १ दान जल, खान पान । २ भरण पोषणका आयोजन, जीविका । ३ रहनेका संयोग ।

दानापुर—बिहार उड़ीसा प्रदेशके भन्नागर्ग पटना जिलेका एक उपविभाग । यह भक्षा-२५ ३० से २५ ४४ उ० और देशा-८४ ४८ से ८५ ५० में अवस्थित है । भूपरिमाण : ४२४ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ११५६८० है । इसमें दो शहर और ८८१ ग्राम लगते हैं । इसके उत्तरमें गङ्गा तथा पश्चिममें सोननदी प्रवाहित है

२ उक्त विभागका एक प्रधान शहर और सेनानिवास ।

यह भक्षा-२५ ३८ उ० और देशा-८५ ३० पू० दानापुर रेलवे स्टेशनसे ११ मीलकी दूरी पर अवस्थित है । लोकसंख्या ३३६८८ है जिनमें २४५७५ हिन्दू, ८१७५ मुसलमान और १०१८ ईसाई हैं । यह शहर गङ्गापुरसे ३ बीघे दूर है । इसके उत्तरमें गङ्गानदी और दक्षिणमें इटाई डिया रेलवे लाइन है । दानापुर, बाँकीपुर और पटना ये तीनों शहर एक दूसरेसे बहुत समीप हैं और तीनों नगरोंमें रेलवे स्टेशन हैं । १८५० ई० की पटने जिलेमें जो सिपाहीविद्रोह हुआ था, उसका स्वभाव इसी दानापुर-सेनानिवाससे हुआ था । उसी सालके जुलाई महीनेमें यहांके तीन दल सिपाही विद्रोही हो कर अपने अन्धशत्रुके साथ सेनानिवाससे बाहर निकले और दल बांध कर शाहाबादको गये । वहाँ उन्हें कोई बाधा देनेवाला नहीं था, प्रतः उन्होंने पारा पर आक्रमण कर दिया । इसके पहले ही दानापुरसे एक दल गोरा पटन पारा बचानेकी भेजी गई थी । दोनों दलमें घनशेर लड़ाई हुई । यूरोपीय गोरा-सैन्यकोंने विलक्षण पटुता और साहससे युद्ध किया तो मरे, किन्तु अन्तमें सिपाहियोंकी ही जीत हुई । यहाँ १८८० ई०में म्यू निसिपलिटो कायम हुई । शहरकी आय २७००० रु० की है ।

दानाप्रसू (सं० त्रि०) दानकर्म, दान करनेका काम ।

दानाबन्दी (फा० स्त्री०) खेतकी नापनेका काम जिससे खुदो फसलसे उपजका अन्दाज किया जाय ।

दानिन् (सं० त्रि०) दानमंस्थासि दान-इनि । दानयुक्त ।

दानिनी (सं० स्त्री०) दान करनेवाली स्त्री ।

दानिशमन्दखा—छट्ठके एक मशहूर कवि । इन्होंने स्फुट नामक ग्रन्थकी रचना की है । ये १३३० ई०में विद्यमान थे तथा औरङ्गजेबके राज-दरबारमें रहते थे ।

दानिम (फा० स्त्री०) १ बुद्धि, समझ । २ सफाई, राय, सनाह ।

दानि (हि० वि०) १ दान करनेवाला, उदार । (पु०) २ वह जो कर संग्रह करता हो । ३ पहाड़ी नेपालियोंको एक जाति ।

दानोय (सं० त्रि०) दीयतेऽस्मै दा कृष्णदाने पनीयर ।

दानपात्र, दान करनेके योग्य ।

है। कोई कोई कहते हैं, कि पवित्राहिता कन्याको भ्रातृभागका चतुर्थांश मित्रता उचित है। "ममांशमातरं स्वेवं दुरीणांशाय दन्याः।" (हहस्वनि) इस वचनसे चतुर्भाग माताको समान अंश और कन्याको चतुर्थांश मिलना चाहिये अर्थात् पुत्रका तीन भाग और पवित्राहिता कन्याका एक भाग। किन्तु जहाँ स्वयं धन रहे, वहाँ पुत्रोंका स्वामित्व है, अर्थात् पुत्र अपने अपने भागमेंसे कुछ निकाल कर चतुर्थांश कुमारीको दे, अर्थात् अपने हस्त। भगिनियोंको भी अपने अंशसे चतुर्थांश दे कर उनका संस्कार कर्म पढ़े। इन बातका तात्पर्य इस प्रकार है—भगिनियोंको संस्कार-कर्त्तव्यता हो निखो गई है, अधिकारिभाषी क्या नहीं। प्रचुर धन होने पर भगिनियोंको विवाहयोग्य धन होना चाहिये, कोई निर्दिष्ट अंश देनेको व्यवस्था नहीं है। यदि सब जगह चतुर्थांश देनेका नियम कायम रहे, तो जहाँ चार पाँच पुत्र और एक कन्या हो, वहाँ कन्याको प्रचुर धन हाथ लगेगा। फिर जहाँ चार पाँच कन्या और एक पुत्र हो, वहाँ भी पुत्रको कुछ भी नहीं मिल सकता। लेकिन यह उचित नहीं है क्योंकि सर्वत्र पुत्र ही प्रधान है। इहाँ सब कारणोंसे भगिनीको कोई निर्दिष्ट अंश न दे कर देयन विवाहयोग्य धन देना चाहिये। पवित्राहिता भगिनियोंका श्रुतमती होनेके पहले ही विवाह करना कर्त्तव्य है। इससे अंशदिका विग्रह नियम नहीं है, किन्तु उस संस्कारकार्यमें यदि सम्पूर्ण व्यय भी हो जाय, तो भी वह दोषावह नहीं है।

स्त्रीधन-विभाग—प्रथमतः स्त्रीधनका निरूपण करना चाहिये। विष्णुवचनानुसार पित्रदत्त, मातृदत्त, पुत्रदत्त, भ्रातृदत्त, पञ्चाव्युपागत अर्थात् योक्तुक धन, पधिवेदनमन्त्र, मातृसाष्टि दत्त, शस्त्र और अन्वाधेय ये सब स्त्रीधन हैं। विवाहके बाद भर्तृकुल और पित्रमातृकुलमें तथा भर्ता और पितामातासे स्त्रीको जो धन मिलना है, उसको धनको अन्वाधेय धन कहते हैं। पिता और माताके सम्पत्तियोंसे और पितामातासे विवाहके बाद जो धन मिलता है तथा स्वामीसे और स्वामिकुल अर्थात् श्वशुरादिसे जो धन प्राप्त होता है, उसका भी नाम अन्वाधेय है। विवाहके समय योक्तुक धन मिलता है, वह सन्तान

उत्पत्तिसे नहीं बहने पर स्वामीका होता है। नागदे, पद्मिनी, पञ्चाव्युपागत, भर्तृदत्त, भ्रातृदत्त, पित्र और मातृदत्त इन सब प्रकारके धनको स्त्रीधन कहा है। विवाहकालमें पत्निके सामने स्त्रियोंको जो दान दिया जाता है, वही पञ्चाग्नि नामक स्त्रीधन है। दोहरसे ससुरान जति समय स्त्रीको पित्रकुल वा मातृकुलसे जो धन मिलता है, उसे पञ्चाव्युपागत स्त्रीधन कहते हैं। भर्तृदाय शब्दसे भर्तृदत्त धनका बोध होता है, ममांश धनका नहीं। पतिके मरने पर स्त्री अपने हस्तानुसार भर्तृदाय खर्च कर सकती है। किन्तु पतिके रहते वह कुछ भी खर्च नहीं कर सकती।

यागवल्कर कहते हैं, कि पित्रदत्त, मातृदत्त पतिदत्त, भ्रातृदत्त, पञ्चाव्युपात और पधिवेदनिक ये सब स्त्रीधन हैं। द्वितीय पक्षमें विवाह करनेके लिये स्वामी पक्षकी स्त्रीको जो पारितोषिक देता है, उसका नाम पधिवेदनिक है। (पधिवेदन शब्दका अर्थ बहुविवाह उपनयनमें जो कुछ मिले, इससे व्युत्पत्तिसे पधिवेदनिक शब्द निकला है।) हस्ति अर्थात् यागवल्कलानाभिष्ट धन, अलङ्कार, शस्त्र, और सूद ये सब स्त्रीधन हैं। स्त्री बेरोकटोक इन सब धनोंका दानमित्रादि कर सकती है। स्त्रीधनका प्रकृत लक्षण यह है—स्त्री स्वामीको कुछ भी अपेक्षा न कर स्वयं जो धन दान विक्रय कर सके, उसको स्त्रीधन कहते हैं।

स्त्रीका शिल्पकर्मसे तथा पित्रमातृ और भर्तृकुल भिन्न अन्य किसी व्यक्तिसे जो कुछ मिले, वह भी स्त्रीधन कहना होता है। कात्यायन ऋषिने कहा है, कि यथा-विवाहिता हो वा कुमारी हो अथवा पतिके घरमें वा स्वयं पतिसे जो कुछ प्राप्त हो, उसे भोदायिक नामक स्त्रीधन कहते हैं। इस भोदायिक धनमें स्त्रीका पूरा अधिकार रहता है। स्वामी यदि दुर्भिक्षादि सङ्कटमें पड़ जाय और जोविकानिर्वाह करनेका कोई उपाय न रहे, तो उसी क्षणतमें वे स्त्रीधनसे सकत हैं; अन्यथा नहीं। दुर्भिक्षा समय, आवश्यक धर्मकार्यमें और रोग-ग्रस्त होने पर तथा अन्तर्गम्य अथ परिगोधके लिये काराशेष करनेके बाद स्वामी विपदपक्ष को कर यदि स्त्रीधन पञ्चक करे, और पोछे उसे लौटा न दे, तो कोई

दोष नहीं। किन्तु पूर्वोक्त दुर्घटनायतोत्तम यदि स्त्रोधन ग्रहण करे, तो पछि उसे परिशोध कर देना चाहिये, नहीं तो वह राजासे दण्डनीय होता है। स्वामी स्त्रोधन से कर यदि परदाराके साथ सद्व्यवहार तथा पूर्व स्त्रीकी प्रवृत्ति करा करे, तो राजाको उचित है कि उससे स्त्रोधन वस्तुपूर्वक से कर स्त्रीको दिना दे। स्त्राक्षर मरने पर सहोदर भाई और बहन सब कोई मिल कर अथोक्त धनको आपसमें बराबर बराबर बांटें। स्त्रोधनमें उनकी लहकोंका तथा विवाहिता कन्याओंका हक रहता है। किन्तु विवाहिता कन्या पुत्रके रहते अथोक्त धन नहीं पा सकती।

दायाधिकारक्रम। स्वत्वकारण।—पूर्व स्वामिके मरने समय उत्तराधिकारका जोधन हो तत्स्वत्वका प्रतिकारण है। यहाँ पर जोधनके अर्थसे गर्भावस्थाका भी बोध होता है। केवल गर्भस्थके जन्म लेनेकी ही अपेक्षा रहती है। गर्भस्थके भूमिष्ठ होने पर उसका प्रायः धन उसकी वस्तु या मित्रकी जाय तब तब सुपुत्र कर देना चाहिये।

उद्देशरहित व्यक्ति (जिनका किसी प्रकारका उद्देश न पाया जाय) धनमें बारह वर्ष मोतने पर उनके उत्तराधिकारीका स्वत्व हो जाता है।

मरणपातित्य, आश्रमान्तर गमन और उपेक्षा द्वारा धनका स्वत्वनाश होने पर उस धनमें पुत्रका अधिकार रहता है। औरसपुत्रके जन्म लेनेके पहले स्त्रीहीन दत्तक औरसपुत्रके साथ विधवाभागी होता है। सभी औरसपुत्रीका पित्रधनमें समान अधिकार है। जिस पौत्रका पिता तथा जिस प्रपौत्रका पित्रपितामह मर गया हो, वे (धनका) पुत्रके साथ अपना अपना पितृश्रेष्ठ्य अंश विभाग कर लें। पौत्रका पितृश्रेष्ठ्य भाग मिलेगा, न कि सन्धानुसार।

पत्नीका अधिकार—पुत्र, पौत्र और प्रपौत्रके अभावमें पत्नी धनाधिकारिणी होती है। पत्नी यदि व्यक्तिारिणी हो तो अधिकारिणी नहीं हो सकती। जो धन पतिके अधिकारमें था, पत्नी उसी धनको अधिकारिणी होगी। पति भविष्यमें जिस धनका उत्तराधिकारी होता है, पत्नी उस धनकी अधिकारिणी नहीं होगी। यदि दो वा दोसे

अधिके पत्नी रहे, तो सर्वोत्तमा बराबर बराबर हिस्सा होगा। पतिधनमें यदि किसीको स्त्रुष्ट हो जाय, तो उससे अधिकृत पतिधनमें जीवित पतिश्रेष्ठका अधिकार सम्भूत चाहिये। पत्नी पतिका केवल धन भोग कर सकती है, दान विक्रय या वस्तुदत्त रक्षणका उमका कोई अधिकार नहीं है। अमुखा पत्नी विशुद्धव्याया हो पतिश्रेष्ठमें वास कर यावज्जीवन धन भोग करे, पछि उसके मरने पर पतिका उत्तराधिकारी धन ग्रहण करेगा। यदि दोरात्म्यादिके कारण पत्नीका पतिश्रेष्ठमें रहना कठिन हो जाय, तो पितृ प्रभृति कुलमें रह कर वह पतिका धन पावेगी, किन्तु व्यक्तिारिणी होने पर उसे पतिका धन नहीं मिलेगा। स्त्रोत्तराधिकार धनमात्रमें तत्पूर्व स्वामीके सम्पत्तिके हो उत्तराधिकार। होनेसे पत्नीपदमें अधिकारिणी स्त्रीमात्र ही बोध होता है। स्त्री पतिस्त्रान्त धनका केवल उपभोग कर सकती है, अपत्य जिसो ज्ञानसे नहीं कर सकती। यहाँ उपभोगका अर्थ विनाश नहीं है, वर देह धारणोपयुक्त अवस्थ है, धन यज्ञके लिये उस धनसे ले सकती है। पतिका धन यदि उत्तना काफी न हो जिससे अच्छी तरह जीवन धारण कर सके, तो पतिका विधवा वस्तुदत्त दे सकती है, यदि उससे भी गुजर न चले, तो विक्रय कारनेका भी उसे अधिकार है। पति को पारसौकिक क्रियाके लिये यदि वह दान विक्रय करे, तो वह भी सिद्ध होगा।

पतिके ऋणशोध, कन्याके विवाह, प्रवश्य पोष्य परिवारके प्रतिपालन अथवा अन्यवश्यक-हितकार्यमें दानादि करनेसे वह धन निह होगा।

भविष्य उत्तराधिकारी यदि पत्नीका असाक्षात्त एवं अवश्य कर्त्तव्य कार्यका अर्थ दे वा देनेकी राजी हो, तो वह पतिका विधवा विक्रयादि नहीं कर सकती। यदि करे, तो वह निह नहीं होगा। पतिके उपकारार्थ दान और भोगके लिये यदि धन दूसरे दानादिमें खर्च हो, तो वह असिद्ध माना जाता है। सर्वत्र वेच कर यदि जीवन धारण और पतिके ऋणशोधार्थ अवश्य कर्त्तव्य-कार्य सम्पन्न न हो, तो वह भी शास्त्रसम्मत है। किन्तु पारसौकिक कार्याक्रियाके लिये केवल थोड़ा हो अथ दानादिमें खर्च करना अभिमत है, सर्वत्र नहीं। पत्नी

अथवा पापकर्ममें जो दिया जाता है वह अदत्त है।
वस्तुतः दीपयुक्त दान असिद्ध है, किन्तु कारणमूलक दान
सिद्ध है। अतः कृत धर्मार्थ दानको सिद्ध माना है।
मालक कालेक धर्मार्थ दान दक्षिणादि सिद्ध है।

दायभाग सम्बन्धमें जो कुछ लिखा गया, वह प्रायः
वर्त्तमान धार्मिक वस्तुधार है, किन्तु कहीं कहीं कुछ
अदत्त वदल भी हो गया है। दायसम्बन्धमें मिताक्षराका
मत नहीं लिखा गया। मिताक्षराशब्दमें यह विषय लिखा
जायगा। दायभागमें कहीं कहीं धर्मिक विषय ऐसे हैं
जहाँ बहुतेकों का मतभेद है तथा टोकाकारों ने
भी वर्ण्य और भी दुर्लभ कर दिया है। इन्हीं सब
कारणों से कई जगह उनका मत न ले कर केवल दाय
विषयमें दाय सम्बन्धकी व्यवस्थाये दी गई हैं।

शायमुलहस (स० पु०) आज्ञा कौट, काले पानीकी
सजा।

दायर (फा० वि०) १ चलता हुआ, फिरता हुआ। २
चलता, जारी।

दायरा (स० पु०) कुण्डल, मण्डल, गोल चिरा। २ वृत्त।
१ कचा। ४ मण्डली। ५ झकली, खजली।

दाय (हि० वि०) दाहिना।

दायागत (स० वि०) १ जो कुछ बाट बँटनेमें आया हो,
भोरकी दिकोंमें पड़ा हुआ। (पु०) २ पन्द्रह प्रकारके
दासोंमेंसे एक।

दायागरी (फा० स्त्री०) दारिका काम।

दायाद (स० पु०) दाय विभजनोंय धन पादत्त आ-
दाक, दाय चत्ति चद-वण, दायस्य पादः पादकः। १
दायपात्री, दिकेदार। २ पुत्र, बेटा। ३ सपिण्ड कुटुंबो।
(त्रि०) ४ दायधिकारी, धनाधिकारी, जो दायका अधि-
कारी हो। स्त्रियां टाप, १५ कथा। सुष्ववोधके मत-
से पणन्तरके शब्द हीन होता है, ऐसी झलनमें दायो
ऐसा रूप होना चाहिये। लेकिन प्रायः सभी जगह
दायादा ऐसा ही रूप देखा जाता है।

दायापवर्त्तन (स० स्त्री०) दायस्य अपवर्त्तन। संस्तरा-
धिकारित्व लोप कारण, किसी प्रायश्चित्तमें मिलनेवाले
दिकोंकी लप्ती।

दायादवत् (स० त्रि०) पुत्र, बेटा।

दायादी (स० स्त्री०) कन्या, लड़की।

दायाद (स० स्त्री०) दायोदस्य भावः ब्राह्मणादि। अथ।
१ सपिण्ड। दायरूप आद्य। २ सपिण्ड निवन्धन
धन।

दायादता (स० स्त्री०) दायोदस्य भावः भावे तल् ततो
टाप। दायोदका भाव, देनदार होनेका भाव।

दायित (स० त्रि०) दाय-दाने पिच्छ। दायित, दिया
हुआ।

दायित्व (स० पु०) १ दायोदका भाव, देनदार होनेका
भाव। २ जिकेदारी, जवाबदेही।

दायिन् (स० त्रि०) दाय-पणि। दाता, देनेवाला।

दायिनी (स० त्रि०) देनेवाली।

दाये (हि० त्रि० वि०) दाहिनी ओरकी।

दार (स० पु०) दारयति भाटन द-पिच्छ दारि कर्त्तारि
अथ। २ भार्या, स्त्री, पत्नी। 'दारादेनित्य' इस सूत्रके
अनुसार दारशब्द नित्य बहुवचनान्त है। इस शब्दमें एक
वचनका प्रयोग नहीं होता, सदा बहुवचन हुआ करता
है। दारके अर्थ। २ औपसर्ग, एक प्रकारकी
दवा। भावे अर्थ। ३ विदारण, फाड़नेका काम।
'दार' शब्द हिन्दोमें स्त्रीलिङ्ग होता है।

दारक (स० त्रि०) दारयति नाशयति पितृणां द-पिच्छ
अथ। १ पुत्र, बेटा। २ मालक, लड़का, नौका। स्त्रियां
टाप। ३ कथा। ४ शास्त्रगुरु, धरेलू सुपर। (त्रि०)
५ विदारक, फाड़नेवाला।

दारकमन् (स० स्त्री०) दाराणां 'तन्नामस्य प्रतिपादक'
कर्म। भार्यात्वसम्पादक ज्ञान विधिरूप विवाह, जिन
क्रियामें यह मेरी भार्या है ऐसा ज्ञान उत्पन्न हो जाता है
उसीको दारकमन् कहते हैं, विवाह, शादी।

दारकाचार्य (स० पु०) शास्त्रगुरुके गिराणु।

दारकिया (स० स्त्री०) दाराणां क्रिया। दारकमन्,
विवाह।

दारगज—इलाहाबाद नगरके उपकण्ठस्थ एक गहर।
यह अक्षांश २३° ४४' स० और देशांश ८१° २५' पू०में
अवस्थित है। यह गहर गङ्गाके दक्षिणी किनारे पड़ता
है, इसीसे यह इलाहाबादका एक अंग हो समझा
जाता है। इलाहाबादके मजिस्ट्रेट ही यहाँका शासन-

यदि शास्त्र विरुद्ध दानादि करे, तो उसके पतिके उत्तराधिकारोगण इनमें प्रतिवश्यक हो सकते हैं, किन्तु जो मुख्य अधिकारी हैं, वे ही गैकटोक कर सकते हैं। जो गौण उत्तराधिकारी हैं उन्हें छेड़छाड़ करनेका कोई अधिकार नहीं है।

धनस्वामिके उपकारार्थ पत्नी यदि अर्थात्तरूप दानादि करे, तो भविष्य उत्तराधिकारिको सहाह नहीं मिले बिना भी वह सिद्ध होगा।

पत्नी जिस तरह स्थावर धनका अपहार नहीं करती, उसी तरह अस्थायी धनका भी अपहार नहीं कर सकती। क्योंकि दोनों प्रकारके धनसे ही धनमें पतिका उपकार हो सकता है। इसी उद्देशसे प्रचलित दाय-भागाद धनमें जोके अधिकृत संक्रान्त स्थावर अस्थायर धनमें कोई विज्ञेयता नहीं मत्तायी है।

धनस्वामिके अनुपकारमें पत्नी यदि भविष्य उत्तराधिकारीकी मन्त्रतिष्ठ बिना दानादि करे, तो वह असिद्ध होता है।

पत्नी यदि पतिसंक्रान्त धनकी अभियोगादि द्वारा उधार कर ले, तो भी उस धनमें उसकी पहचानसे अधिक क्षमता नहीं होती। पत्नी जिस तरह पतिका संक्रान्तधन दानादि नहीं करती, उसी तरहसे तदुपघातसे उपाजित समस्त धन भी दानादि करनेका उसे अधिकार नहीं है। पत्नीकृत संक्रान्त धनका दानादि असिद्ध होने पर वह धन पत्नीके दखलमें ही रहूँगा। (यदि वह पत्नी अभिचारादि कोई अन्याय कर्म न करे, तब)

उत्तराधिकारीकी उगनेके उद्देशसे पत्नी यदि किसी तरह पतिका धन दूसरेके हाथ लगा लेगी न दे, तो वह असिद्ध होगा। पत्नी पतिके पित्र्यादिको सहाह ले कर अपने पित्रमातृकुलमें भी दान दे सकती है। किन्तु दानादि विषयमें विधवा पतिकुलके ही अधिकार रहेंगे।

पत्नीके मरने पर उसके जीवित निकट सम्बन्धी को पीछे उत्तराधिकारी होगे। पत्नीके अभावमें दुहित अधिकारिणी होती है। दत्ता और पदत्ता कन्याके रहने पर पदत्ता कन्या ही धनाधिकारिणी होती है। यदि भविष्यद्विज्ञा कन्या न रहे, तो पुत्रवती और सम्भावित-

पुत्रा दुहिता दोनोंका बराबर अधिकार होगा। बन्धा और पुत्रहीना दुहिता अधिकारिणी नहीं हो सकती।

जिस कन्याके पुत्र नहीं पर पोत है, जिसके पुत्रकी मृत्यु हो गई है तथा जिसकी केशव कन्या है, वह बन्धा नहीं होने पर भी धनाधिकारिणी नहीं हो सकती।

अधिकारप्राप्त दुहिता चाहे बन्धा हो, चाहे विधवा हो अथवा वह कन्यामात्र हो प्रसव करे, उसका स्वतन्त्र नाम नहीं होता।

दायाधिकारसे अयोग्य दुहिताको यदि कोई जीविका न रहे, तो सङ्कतिके अनुसार उसे प्रसव देना उचित है। [यदि अधिकारयोग्या अनेक दुहिता हों, तो समीका समान अधिकार होगा। उनमेंसे किसी एकके अभावमें उसका अधिकृत धन जीवित सभी अधिकारिणियोंका होगा। सङ्कतो संक्रान्त धनकी शास्त्रीय नियमके भिन्न दानविधायक वा अन्यक नहीं दे सकती, यदि दे, तो वह लायज नहीं होगा।

अधिकारयोग्या दुहितके अभावमें दोहिवका अधिकार होता है। दुहितका अभाव वह पद दत्ता पर पुत्रवती और सम्भावितपुत्रा दुहितका अभावमापक है। क्योंकि बन्धा और पुत्रहीन विधवा दुहितके रहने पर भी दोहिवका अधिकार देखा जाता है।

मातामहका अनाधिकारी हो कर यदि दोहिवकी मृत्यु हो जाय, तो उस संक्रान्त धनमें उसके पुत्र यादिका अधिकार होगा। मातामहका कोई अन्यो अधिकारी नहीं हो सकता। अनेक दोहिवके रहने पर सभी का मातामहधनमें समान अधिकार है, वह विभाग उन्हीं के संस्थानुसार होगा, न कि उनके मातृसंस्थानुसार।

दुहितका दत्तक मातामहके धनका अधिकारी नहीं हो सकता। दोहिवके अभावमें पिता और पिताके अभावमें माता धनाधिकारिणी होती है। विमाता अधिकारिणी नहीं होती। माता शास्त्रीय नियमके प्रतिरिक्त दानविज्ञा यदि नहीं कर सकती है। माताके अभावमें भ्राताका अधिकार, सङ्गोदर भ्राताके अभावमें वैमात्रेयभ्राताका अधिकार होता है। अविभाक्त स्थावर धनमें सङ्गोदर और वैमात्रेय भ्राताका समान अधिकार है। शुभदान

कार्य बनाते हैं और वहाँ की सुनिश्चित इम शहर की जाति
रचा जाती है। नगर भी इलाहाबाद में निवासियों-
के समान है। इलाहाबाद के इन्द्रायामने इसकी पूरी
वैभव २ मील है।

दारपट्ट (सं० स्त्री०) दारपां प्रपट्टं । पट्टोपपण,
विषाह।

दारप (सं० स्त्री०) दारयति भागयति जलमयं धनेन द-
त्ति कर्तुं कृत् । १ कतकफल, निमनोका फल।
यह फल जलमें देनेसे जलको मँस दूर हो जाता है।
द-त्ति भावे कृत् । २ विदारप, धोरने या फाड़ने का
काम, धोर फाड़ । ३ विदारपमाधन घन्नादि, धोरने
फाड़ने का घना या धोआर । ४ त्रपादि स्त्रोतन सम्पा-
दक शोधधर्मिय, यह दवा जिससे लगानेसे कोड़ा घावमें
घाव फूट जाता है। भावप्रकाशमें लिखा है कि कारख,
भक्तक (चिन्विन), दण्डी, चित्ता, शत्रुमारक (कनेर),
कवुर, कोवे धोर गोधरी घोट कुछ एक इष्ट कोड़ेमें
लगानेसे यह घावमें घाव फूट जाता है। चार द्रव्य
पथ्या यवसार पादिके प्रयोगसे भी कोड़ा फूट जाता
है, किन्तु यह बहुत कष्टदायक होता है।

दारद (सं० स्त्री०) दारि देशमें दभवः छिन्नादि० चण् ।
१ दार देशोद्भव विषमैद, एक प्रकारका विष जो दारद
देशमें होता है। २ पारद, पारा। ३ हिङ्गुल, ईङ्गुर।
४ मसुद्र।

दारद (दार्द)—सादक प्रदेशके यद्यिमभागमें सिन्धु नदीके
कृषवर्त्ती भूभागवासी एक जाति। ये लोग पार्थव शक
हैं, जना शाखाधर्मि विभक्त हो कर जना स्थानमें बास
करते हैं। इनमेंसे कितने ऐसे हैं जिन्होंने सुगमजानी
धर्म ग्रहण कर लिया है। मनुदे मज्जाभारतादि ग्रन्थोंमें
इस जातिको संस्कारभट्ट शास्त्र-स्त्रिय वतथाया है।

जमी ये लोग तीन विभिन्न भाषाओंमें बोलते हैं। तीन
भाषाओंमें निवृत्त समग्र पारस्य पश्चर व्यवहृत होता
है। इन तीन भाषाओंके नाम मोना, पशुना और
परिया है। पान्तर, गिनघिट, एवं धोर भी दक्षिणमें
सेना, दारिल, तोहमी एवं पाना प्रभृति सिन्धुनदीके उभय
पक्षवर्त्ती प्रदेशोंमें मोना प्रपञ्च धोर नागर नामक स्थानों-
में बसता तथा विजय धोर दगाशाधर्म परिया भाषा

प्रचलित है। कामोरी लोग इनके मध्य २५ धोर भी
पणो की भाषामें बोलते हैं, किन्तु कामोरी धोर दार्द
भाषा बहुत कुछ एक दूसरेमें मिलती जुलती है।

गिनघिट, पान्तर धोर वन विद्यामें दार्दगण रोह,
मोग, यस्कन, क्रोमिन धोर डोम पादि ये जातियाँ विभक्त
हैं। इनमेंसे मोन धोर यस्कन जाति धो प्रधान है।
क्रोमिपण्य मिश्र जाति है। डोम धोर टोकरा सबसे
गौरव है। बहुतों का मत है, कि यही दार्द जाति पांच
ऐतिहासिक हिरोटीमान, दार्दित दार्दिस (Dardic)
जाति है। किन्तु मार्जम वेलु (Belleu) माधव कहते
हैं कि काकर जातिके साथ चक्रगानिमानमें 'दार्दि'
नामक एक जाति मान करतो है, शायद यही जाति
हिरोटीमन्, पार्थन दार्दिम जाति, होगी। इनो भी
काश्मीर सीमान्तके हिन्दूकुशय दारद प्रदेशका दर्शन
कर गये हैं। पुराणमें भी दारद धोर इस जनपदवासी
दारदों का दर्शन है।

दारद लोग शायक वक्त्र में भी हैं। ये जाय घवने
पेनेके काबिल शराव प्रसृत करते हैं। शरभारकी विष
कर सममें सादक प्रदेशमें मंगाये हुए घावम नामक
एक प्रकारका द्रव्य मिलाते हैं। बाद रने धूर्त पथ्या
चागके समोप १०१२ टिन तक रत कोड़ते हैं। पाकि
इसे हान लेनेसे जो शराव तैयार हो जाता है। पान्तर,
मोन धोर गिनघिट के लोग इस प्रकारका मद्य काममें
लाते हैं। नागरमें भी दारयने एक प्रकारका मद्य बनाया
जाता है।

दारदगण सोष्टुवम एक साथ पारते हैं। पगर दो
पुत्र एक साथ दूध पी लें। तो वे बहुत दिन तक
जाति श्रुत किये जाते हैं।

ये लोग घोटों की पीठ पर चढ़ कर एक प्रकारका खेल
खेलेते हैं, जिसे 'घोली' कहते हैं। पान्तराधर्म इस खेलकी
तोषो धोर गिनघिट में नुशा खपते हैं। इस खेलके निदेश
गोवडे बाइर एक मज्जा घोड़ा मैदान मिश्र रहता है।

मिकारमें जाना ये लोग बहुत पसन्द करते हैं और
धनुर्वीय सज्जानेमें बड़े निदहता है। प्रायः मोनकाममें
ही मित्राव खेलकरते हैं।

ये लोग बन्दूकका व्यवहार करते हैं। इनकी बन्दूक

दत्तक यदि भोरसपुत्र अर्थात् धनीकी मातासे ग्रहण किया जाय, तो वह भी 'सहोदरके रूपमें गिना जाता है। फिर यदि धनीको माता उसे दत्तक न बनावे, तो उसकी मिनती धनीके वैमात्र्यमें होती है। भाईका धन पाकर यदि भाईकी मृत्यु हो जाय, तो उसके अपने लड़के ही उस धनके अधिकारी होते हैं। यदि सहोदर भोर वैमात्र्येय भ्राता मृत भ्राताके संछट्ट न हो, तो सहोदरका धन सहोदर ही पावेगा। जहाँ वैमात्र्येय संछट्टि भोर सहोदर असंछट्टि हो, वहाँ दोनों ही दायधिकारी होते हैं।

यदि सहोदर भोर वैमात्र्य दोनों ही संछट्ट हों, तो केवल सहोदर ही धन पावेगा। सहोदरमेंसे किसी एकके संछट्ट होने पर वही अधिकारी होता है। केवल वैमात्र्येय भ्राताके मरने पर उनमेंसे जिसकी मृतके साथ संछट्ट था, पहले वही उस धनका अधिकारी होगा। उसके अभावमें पसंछट्टि।

आश्रयण विभक्त हो कर यदि पोलि प्रेमवश मिल जाय और फिर पोलि विभक्त हो जाय, तो बराबर बराबर धन बाँट ले, वहीकी अधिक नहीं मिलेगा।

भ्राताके साथ भ्रातृपुत्र एक समय अधिकारी नहीं होते। वैमात्र्येय भ्राताके अभावमें सहोदर भ्राताका पुत्र अधिकारी होता है। सहोदर भ्राताके पुत्राभावमें वैमात्र्येय भ्राताका पुत्र अधिकारी होगा। यदि सहोदर भ्राताका कोई पुत्र संछट्ट और कोई पसंछट्ट हो, तो जो संछट्ट है, वही उन धनका अधिकारी होता है। उसी प्रकार वैमात्र्येय भ्राताका कोई पुत्र संछट्ट और कोई पसंछट्ट हो, तो जो संछट्ट है, वही अधिकारी होगा। यदि सहोदर और वैमात्र्येय भ्राताके पुत्र संछट्ट अथवा पसंछट्ट हों, तो भी दोनों अवस्थामें सहोदर भ्राताका संछट्ट पुत्र अधिकारी है।

भतीजेके अभावमें भाईके पोत्रका अधिकार है। आश्रयणके अधिकारमें भी सहोदर और वैमात्र्येय क्रम एवं संछट्टि और पसंछट्टिका नियम लागू है। मृतपितृक भ्रातृपुत्र और मृतपितृपितामहका आश्रयण यदि अनेक हों, तो सहोदर और वैमात्र्येय संछट्ट और पसंछट्ट क्रमानुसार अधिकार और विभाग होगा।

लेकिन यह विभाग उनके मख्यानुसार होगा, पितृ मख्यानुसार नहीं।

आश्रयणके अभावमें पितृदोहिवका अधिकार है। सहोदर और वैमात्र्येय दोनों प्रकारके भगिनोपुत्रोंका समान अधिकार होगा।

पितादिके जो दोहिवगण धनी अथवा तदुत्तराधिकारोंकी पत्नियोंके निधनकालमें जोवित या गर्भस्थित हैं, वे ही उस धनके अधिकारी होंगे। उनमें बादका गर्भस्थ अधिकारी नहीं होगा। पितृदोहिवके अभावमें आश्रयणदोहिव अधिकारी गिना जाता है।

आश्रयणदोहिवके अभावमें पितामह, पितामहके अभावमें पितामही, पितृमहोके अभावमें पितृसहोदर, पितृसहोदरके अभावमें पिताके वैमात्र्येय भाई, पितृवैमात्र्येयके अभावमें पितृसहोदरके पुत्र और पितृसहोदरके अभावमें पितृवैमात्र्येय आश्रयणधनाधिकारी होता है।

पितृवैमात्र्य आश्रयणके अभावमें पितृसहोदरका पोत्र, पितृवैमात्र्येय आश्रयणके अभावमें पितृसहोदरके पोत्र, पितृसहोदरके पोत्राभावमें पितृवैमात्र्येय भ्राताके पोत्र और पितृवैमात्र्येयके आश्रयणधनाभावमें पितामहकी दोहिवका अधिकार है।

पितामहके दोहिवभावमें पितृव्यकी दोहिव, पितृव्यकी दोहिवके अभावमें प्रपितामहका अधिकार है और प्रपितामहके अभावमें प्रपितामही धनाधिकारिणी होती है।

प्रपितामहके अभावमें पितामहका सहोदर, वैमात्र्येय भाई और उसका पुत्र तथा पोत्र यथाक्रमसे अधिकारी होता है।

पितामहकी पोत्रकी अभावमें प्रपितामहके दोहिवका अधिकार है।

प्रपितामहके दोहिवभावमें पितामहका आश्रयणदोहिव धन पावेगा।

पितामहके आश्रयणदोहिवभावमें पितामहका धनाधिकारी होंगे।

पितामहके अभावमें मामाका अधिकार है। मामाके अभावमें मामाका पुत्र अधिकारी होगा। मामाके पुत्राभावमें मामाका पोत्र धनाधिकारी होगा।

टोपीदार बिलायती बन्दूक सी नहीं होती। उनमें चमक-
स योगसे गोमो छोड़ी जाती है। बन्दूकको गोनिया
फकत सीनेकी न बना कर पल्लरके टुकड़ोंमें छोसा मोड़
कर बनाते हैं। शर भन्थान और बन्दूक चलानेमें ये
लोग बड़े दक्ष होते हैं।

शामोद-प्रमोदके समय ये लोग बाजेके साथ साथ
नाच गान किया करते हैं। अघिचर्मोदि से कर मो ये
दल बांध कर तरङ तरङके खेत दिखवाते हैं।

दारिक लोग मृत शविको बगलमें बैठ कर दाख
सुगरी खादि खाते हैं। यह खाति प्रायः मर्देके मोचे
गुहा बना कर उसमें प्रपञ्चा खाद्य पदार्थ गाड़ रखते
हैं। कद कैसो विपद या विरेमो, शयद इसो पागडा-
से वे रिसा करते हैं। सन्तानके विवाहादिमें गद्दा डुपा
खाद्य पदार्थ निकास कर बन्धु बान्धवोंमें वितरण किया
जाता है। खाद्य पदार्थके साथ घोमो गाड़ रखते हैं।
अधिक दिन ही जानिके कारण लोका स्वाद बदल जाता
और रंग भी लोहो सा हो जाता है, किन्तु दार्द लोग
समझते हैं, कि यह रंग सुन्दर और सुन्दरोका सोभाय-
सुषम है।

दारपरिग्रह (सं० पु०) दाराणा परिग्रहः ग्रहणं। दार-
कर्म, विवाह।

दारपरिग्रहो (सं० त्रि०) दारपरिग्रह-इन्। दारपरिग्रह-
युक्त, जिनमें दारपरिग्रह किया हो।

दारबलिभुज (सं० पु०) दारिण्य बल्लभा घातजन्य विदारणेन
बलिं भुङ्क्ता भुज-क्रियः। यकपक्षी, बगला।

दारमदार (फा० पु०) १ आयय, ठहराय। २ काय का
भार, किछी कामकी जिम्मे दारो।

दारस—एक प्राचीन देश। दारैर देश।

दारस (सं० त्रि०) दारणः विकारः रजसादित्वात् भज्।
१ दाहविकार काष्ठमय पदार्थ, लकड़ोका बना हुआ।
२ काष्ठ सम्बन्धो।

दारसग्रह (सं० पु०) दारान्तं संग्रहः। दारग्रहण,
विवाह।

दारा (हि० स्त्री०) १ भार्या, पत्नी, स्त्री। २ हिन्दुस्तान-
में समुद्रके किनारे निम्नजलोको एक प्रकारकी मछली।
यह समुद्रमें तीन हाथ और तीनमें दस स्यारह सेर
होती है।

दारा—१ पारस्यके कौयानव शके पर्वे राजा। इनका जन्म
रानी दुमायूके गर्भसे हुआ था। इनके राजत्वकालमें
पारस्यमें अनेक युध्विग्रह और प्रधान प्रधान घटनाएँ
घटी थीं। इन्होंने केवल १२ वर्ष तक राज्य किया था।
पोछे इनके लड़के दारा (२य) राजा हुए।

२ दूसरा नाम दाराब। ग्रीक ऐतिहासिकगण इन्हीको
Darius Cadomanus नामसे वतसा गये हैं। ३२१
ई०के पहले महायोर अलेक्सन्दरसे ये लड़ाईमें मारे
गये। ये ही कौयानव शके पन्तिम राजा थे।

३ एक फारसी कवि। इनकी कविताको रचना बहुत
अच्छी होती थी। उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

“रहता हूँ सदा सार्वभौमी दीदार तुम्हारा।
शुद्धतसे मेरा दिल है निरपेक्षर तुम्हारा ॥
उम्मेद यही जानो सहर रखता हूँ दिलमें
रख्य ही देखलवेता दीदार तुम्हारा।
महताब भी शिखरतसे चरखे है बट गया
कया खूब है मुलहा यह तरहरा तुम्हारा ॥
दिल बेनेहो वयार है कितने ही खीदार
कया गर्म है यह हुस्नका बाजार तुम्हारा ॥
यारोको तो मुलहा बरा देखलवो नाजनी
देखा करे यह हुस्न छुबे काम तुम्हारा ॥
यह बात कताकी है तो हम जावे खतनको
है गाज नहीं मुलका हरकाम तुम्हारा ॥”

दाराई (फा० स्त्री०) एक प्रकारका रैयमी कपड़ा,
दरियाई।

दाराह—कच्छ प्रदेशवासी एक थोका सुमलमान। ये
लोग पहले हिन्दू थे।

दाराधिगमन (मं० स्त्री०) विवाह, मादो।

दाराधोन (सं० त्रि०) धौण, जो धोका वशीभूत हो।

दाराग्रह—एक पवि। इन्होंने सन् १७१० ई०में दोहाध्य-
मंथर और मयसंथर नामक दो पुत्रोंके लिखे हैं।

दाराशिकोह—भारतवर्षके सुगलसम्राट्, शाहजहान्के
ज्येष्ठ पुत्र। ये पितामाताके छतीय सन्तान थे, किन्तु
पूर्वमें सधमे बड़े थे। इनकी माताका नाम था अनिया-
बेगम। ये अनियाबेगम ही सुमताज-महलके नामसे

सामान्य पोत्राभावमें मातामहका दोहिय धनाधिकारी होता है।

मातामहके दोहियामावमें प्रमातामह, प्रमातामहके पभावमें उनका पुत्र, प्रमातामहके पुत्राभावमें उनका पोत्र, पोत्रके पभावमें प्रपोत्र, प्रपोत्रके पभावमें उनका दोहिय और दोहियके पभावमें वृद्धप्रमातामह धनाधिकारी होते हैं।

वृद्धप्रमातामहके पभावमें उनके पुत्रका, वृद्धप्रमातामहके पुत्राभावमें पोत्रका, पोत्रके पभावमें प्रपोत्रका और प्रपोत्रके पभावमें उनके दोहियका अधिकार है। धनोक्त भाग हो, इस प्रकार पिण्डदानकर्त्ताके पभावमें मकुल्य अधिकारी होता है। पोत्र प्रपोत्रका पोत्र और उसके बाद प्रपोत्रका प्रपोत्र अधिकारी होता है। उसके पभावमें वृद्धप्रमातामहदि ऊर्ध्वतन सकुल्यका और उनकी सन्ततिर्दीक्षा यथाक्रम अधिकार है। अर्थात् पहले वृद्धप्रमातामह, पभावमें उनके पुत्र, पोत्र, प्रपोत्र और दोहिय क्रमगः अधिकारी होता है। इनके पभावमें अति-वृद्धप्रमातामह, उनके पुत्र, पोत्र, प्रपोत्र और दोहिय क्रमगः अधिकारी होता है। उनके पभावमें अत्यतिवृद्ध-प्रमातामह, उनके पुत्र पोत्र, प्रपोत्र और दोहिय क्रमगः अधिकारी होता है। बहुप्राप्ति सकुल्य और बान्धवके रहने पर उनमेंसे जो अधिक निकट सम्पर्कीय है, वही अपुत्र व्यक्ति धनाधिकारी होगा। इस प्रकार सकुल्य-में पभावमें समानोदकाधिकार होगा।

चोदह पीढ़ी तकके सन्ततिको समानोदक कहते हैं। समानोदक और सकुल्यको जाई पानाति अर्थात् पुत्र, पोत्र और प्रपोत्रादि क्रमगः धनाधिकारी होता है।

समानोदकके पभावमें पाचार्य अधिकारी होता है। पाचार्यभावमें शिष्य, शिष्यके पभावमें सहवेदा-भ्यायोः ब्रह्मचारी, उसके पभावमें सधामस्य सगोत्र, सगोत्रके पभावमें स्वधामस्य समान प्रवर अधिकारी होता है। वह समोके पभावमें वेदश्रुत शुच्युक्त उस धामस्थित ब्राह्मणका अधिकार है। अगर इसका भी पभाव हो, तो ब्राह्मण दोह-कर दूसरेके धनमें राजा अधिकारी होते हैं। गुणवान् ब्राह्मणके पभावमें ब्राह्मण विध धनमें धामस्य ब्राह्मणका अधिकार है। वृद्धप्रामह

गुणवान् ब्राह्मणके पभावमें दूसरे धामके गुणवान् ब्राह्मणका अधिकार होगा। सम्भ्रान्ता ब्राह्मणके धनमें सामान्य ब्राह्मणका अधिकार है। यदि सद्ब्राह्मणका प्रभाव हो, तो ब्राह्मणका धन सामान्य ब्राह्मणके हाथ लगेगा।

पहले स्वधामस्य सामान्य ब्राह्मण, उसके पभावमें शिष्य धामस्य सामान्य ब्राह्मण अधिकारी होते हैं।

श्रामानुषार पाचार्य धनाधिकारी हो सकते; लेकिन गुद नहीं। धनी ब्राह्मणके नहीं होते पर उत्तराधिकारी के पभावमें उसका धन राजाका होता है।

मृतधनोकी शोध देहिक क्रिया करनी चाहिये। मृत व्यक्तिका जो धन पावेगा, वही उसकी शोध देहिकादि कार्य करेगा। यदि एक व्यक्ति धनाधिकारी हो और दूसरा शोध देहिक वि क्रियाधिकारी हो, तो धनाधिकारी व्यक्ति धन दे कर क्रियाधिकारी द्वारा वह कार्य करावेगा।

वानप्रस्थादिका धनाधिकार-ब्रह्मचारीके धनमें पाचार्यका अधिकार है।

वानप्रस्थके धनमें एक तीर्थवासी अथवा एकान्तम-यानो धर्मभ्रान्ता अधिकारी होगा। उसके पभावमें एकत्र वानो अथवा एकान्तयो अधिकारी होते हैं। नैतिक ब्रह्मचारीके धनमें पाचार्यका अधिकार है।

उपकुल्य ब्रह्मचारीका धन उसके पितादिका होता है।

दुलाचारादि—यदि किसी देशमें, प्रान्तमें, धाममें वा समानमें, जातिमें वा कुलमें कोई आचार चला पा रहा हो, तो पूर्वोक्त मसदा नियमापेक्षा साम्य है। किन्तु जो आचार बहुकालका बहुपुद्गममें एकादिकम चला जाता हो, वही पूर्वोक्त नियमकी उपेक्षा विमोष इमाय होगा। जो आचार बहुकालमें क्रमिकरूपमें न पाये, वह उत्तमा मान्य नहीं है। किन्तु धनमें वा अथमावरणमें यदि आचारका पक्षीय हो, तो उसे आचारभङ्ग नहीं कह सकते। औदिकाविषयक मृत धनोके, त्यक्त विषयमें उसका पदमर पोषणमें पक्षधन वा मर्यादा है।

मृत धनोके मरत विषयमें उसकी पवित्रादिना भगिनो वा कन्या विवाहोचित धन धनोकी पवित्रादिनी है।

प्रसिद्ध हुई थीं। इन्हींका समाधि-मन्दिर जगतमें 'ताजमहल'के नामसे विख्यात है। परमो साहबने मुगल-मान ऐतिहासिकोंसे विवरणसे जो कुछ मँगा लिया है, उसमें निष्ठा है कि शाहजहानने पामपक्षा (नूर जहानके भाई)की कन्या ममताजा जमानोके साथ विवाह किया था, इन्हींकी समाधिके लिये ताजमहल बनवाया था और इन्हींके गर्भमें दाराशिकोह, राजा आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे। खोजने मँवतमें दाराका जन्म हुआ, इसका कोई निश्चित विश्रुत नहीं मिलता। विमारिज साहब अपने 'भारतवर्षके इतिहास'में एक जगह लिखते हैं, कि १६५० ई०में दाराकी उम्र ५२ वर्षकी थी और वे चौरङ्गजेबने दो वर्ष बड़े थे। इससे तो यह मालूम होता है कि दाराका जन्मकाल १६१५ ई० है; किन्तु चौरङ्गजेबके समयकावर्षों काफ़ी खाने अपने 'सुनतखब-उल-सुबाब' नामके इतिहासग्रन्थमें चौरङ्गजेबका जन्मकाल १०२८ हिजरी (सर्वात् १६१८ ई०) लिखा है। इस हिमायने दाराका जन्मकाल १६१० ई० ठहरता है। बादशाह-नामाके मतसे, १०२४ हिजरी २८ सफर (१६१५ ई०, २० मार्च)को दाराका जन्म हुआ था। दाराके महीदर भाई पाठ और छः बहनें थीं। शिव मन्तानके प्रसव करते समय, ४० वर्षकी उम्रमें अनिया-बेगमकी (१०४० हिजरी, १६२० ई०में) मृत्यु हुई थी। उस समय दाराको उम्र सिर्फ १३ वर्षकी थी। शाहजहानकी राजगद्दी पर बैठे सिर्फ चार ही वर्ष हुए थे। राजा चौरङ्गजेब, मुराद तथा जहान-पारा, रोग-पारा आदि शाहजहानकी इतिहास-प्रसिद्ध मन्तानें दाराकी महीदर-महीदरा थीं।

खान्सेर के लोहोर आते समय, मार्गमें जब (१६२० ई०) जहांगीरकी मृत्यु हुई थी, उस समय दाराशिकोह, महम्मद, राजा और चौरङ्गजेब नूरजहानके पास हो थे। यद्यपि नूरजहान इस समय अपने दामाद शाहजहानके

लिए दिल्लीका राजमिन्हासन हस्तगत करना चाहते थे और उसमें लिये शाहजहान् मन्त्रोप-जमाई होने पर भी उनके विरुद्ध आचरण करते थे, किन्तु तो भी भीतीको मन्तान होनेके कारण वे शाहजहानके पुर्वोंको अपने महलके पास रख कर उनका आसन प्राप्त करती थीं। इस समय दाराको उम्र १० वर्षकी थी। जहांगीरकी मृत्युके समय शाहजहान् पागरेमें गये, दाहिनायामें से। शाहजहान् को राज्यके अधिकारी होगी, ऐसा प्रायः निश्चित हो चुका। परन्तु मूर्ख शाहजहान् उस समय पिताका धन हस्तगत करनेके अभिप्रायमें लोहोर चले दिये। जहर मन्तो इराद था और सेनापति यामिन-उल्लोहा आसफ खाँ (नूरजहानके भाई) राज्यको विग्रहना किया, सुगढ़ (जहांगीरके ज्येष्ठ पुत्र)को पुत्र बुलाकी-को मिन्हासन पर बैठानेके लिये नूरजहान्को छोड़ अभिप्रायसिद्ध करनेके एक दिन पहले आगरा आये और सबसे पहले सर्वेमें शाहजहान्के पुर्वोंकी राजाके अधिकारसे निश्चित कर आदिख खाँ नामक एक सेनापतिके हाथ सौंप दिया। दोहिनोकी निगबद करके, आसफखाने जामाताके लिए मिन्हासनके रचाय मन्तोके परामर्शसे बुलाकीको मिन्हासन पर बिठा दिया और जामाताको लानेके लिए दाहिनायामें आदमी भेज दिया। ४ महीने बाद (१६२० ई०में) ७ पागरेमें आ कर शाहजहान्के राज्यप्राप्त करनेके ३ वर्ष बाद (सर्वात् १६२० ई० या १०४० हिजरीमें) १३ वर्षकी उम्रमें दाराका विवाह हुआ था। जहांगीरके हितोप पुत्र कुमार परबैरको कन्या आदिरा भी दाराको बहरी गई थी। यह विवाह बड़े मान-मोजतके साथ हुआ था। सर्वे आदिराके गर्भमें सुलेमान-मिकोह और शिपहर मिकोह नामके दाराके दो पुत्र हुए थे। १६२१ ई० (१६२२ हिजरी)में सुलतान शाहजहान्के आदेशसे कुमार चौरङ्गजेब अहमदुर मुस्तानने कन्दाहार जय करनेके लिये गये थे, कानुलने रास्तेमें पन्नामी गाह दुका खाँ नामक सेनापति कन्दाहार जयका परमान और

• Elliot's History of India, Vol. VII. p. 27, and note

† Historical Fragments of the Moghul Empire, p. 137—138.

‡ Beveridge's History of India, Vol. I, p. 28.

• १६२० ई०के मजसूर नामके जहांगीरकी दास हुई थी और १६२० ई०के दरबारी महीनेमें शाहजहान् बिगड़ कर बैठे थे।

पत्नी वा अधीन परिवारका यदि कोई अनुचित कारणसे भ्रष्ट कर दिया गया हो, तो परिवार कर्त्ताके ध्यानमें तब उसकी स्त्रियाँ बाँट वह उस धनसे भ्रष्ट रख पावेगा। जो पोष्यशक्ति न्यायपूर्वक परिवारमें रहे और भ्रातृभ्रादृदि न पावे, वह स्वयं ही कर भ्रष्ट रख पावेगा। श्रुतधनीके श्राद्धांतरा वह केवल उसना हो धन पावेगा जिससे उसका गुजरमात्र हो। केवल भ्रष्टवश ही मिले ऐसा नहीं, वरं विषय काफ़ी रहने पर दूसरे दूसरे भावश्यक एवं धर्मकार्थ धन देना होगा।

यदि कोई स्त्री व्यभिचारको कामना न कर पिता माता या पुत्र्यके घरमें भाग्य ले, तो भी वह भ्रष्ट वस्त्र पानेकी अधिकारिणी है। पतिष्ठा यदि ऐसा आदेश हो, कि पतिश्रुतमें रहनेसे हो श्राव्यकादन मिलेगा, तब वह यदि बिना कारणके किसी दूसरे स्थानमें जा कर वाग करे, तो वह शास्त्राच्छादनको अधिकारिणी नहीं हो सकती।

पतित भिन्न विभागमें धनधिकारी व्यक्ति श्रुत धनीके विषयमें भ्रष्टवश पावेगा। दायधिकारी स्त्री व्यक्तियोंकी यदि भ्रष्टवश न दे, तो राजाको दिना देना उचित है।

धनधिकारी व्यक्तियोंको कन्या जब तक व्याहो न जाय, तब तक वे शास्त्राच्छादन पावेंगे।

उसकी भ्रष्टवशियोंको यदि वे सदाचारो हो, भ्रष्ट वस्त्र मिलेगा, व्यभिचारिणी होने पर नहीं।

पितृकृत विभाग-याग।—पिता स्त्रीपार्जित धनको जब चाहे, विभाग कर सकते हैं। किन्तु पंता-मह विषयमें माताकी रजोनिवृत्ति होने पर जब पिताकी इच्छा हो, तब वे विभाग कर सकते हैं। (माता शब्दसे विमाताका भी बोध होता है)

वशुतः माता और विमाताकी रजोनिवृत्ति बाद पद्यमा पिताकी रतिशक्ति बन्द होनेके बाद जब पिताकी इच्छा हो, तब वे विमाताको बाँट सकते हैं। पितासे धन विभक्त हो जानेके बाद यदि कोई भाई कन्या ले, तो वह भी बराबर भिक्षा पा सकता है।

पितृ कृत स्त्रीपार्जित धनविभाग-स्त्रीपार्जित धनका विभाग पिताकी इच्छा पर निर्भर है। स्त्रीपार्जित

जित धन पिता जितना चाहे, उसना ले सकते हैं।

किसी पुत्रके शुणित्वके लिये सम्मानार्थ भयवा किमो पुत्रके धनके परिवारका पालन करनेके लिये, भयवा कोई पुत्र भयोग्य हो एवं ऊँचा, भक्ति पादिके कारण यदि पिता न्यूनाधिक विभाग करे अर्थात् किमो पुत्रको अधिक और जिसको कम दे, तो भी वह विभाग धर्मतः सिद्ध होगा। किन्तु यदि शुणित्वादिका कारण न हो, तो स्त्रीपार्जित धनका विभाग धर्मसङ्गत नहीं है।

अत्यन्त व्याधि, क्रोधादिके कारण प्राकुलचित्त हो कर भयवा कामादि विषयमें अत्यन्त आसक्त हो कर यदि पिता एक पुत्रको अधिक और दूसरेको कम भाग दे, भयवा कुछ भी न दे, तो वह विभाग अनिष्ट होता है; फिर पिता यदि शुणित्वादिके कारण न्यूनाधिक भाग दे, तो वह धर्मसङ्गत और सिद्ध होता है। यदि रोगादिसे प्राकुलचित्त हो कर सम्पत्ति बाँट दे भयवा किमो पुत्रको कुछ भी भंश न दे, तो वह भी अनिष्ट माना जाता है। शुणित्वादि कारणके बिना तथा रोगादिके लिये अस्वचित्तता भिन्न केवल इच्छासे यदि न्यूनाधिक विभाग कर दे, तो वह धर्मसङ्गत नहीं है, पर सिद्ध है। यदि पुत्र एक हो समय अपने अपने विभागके लिये प्रार्थना करे, तो भ्रातृत्वादिके कारण पिता विषम विभाग न करे। सभी पुत्रोंको समान भाग देनेसे पुत्रहीना पत्नियोंको भी पुत्रके बराबर भाग देना उचित है। स्त्रियोधन न दे कर पत्नीको भी समान भंश दें। यदि स्त्रियोधन हो, तो जित पत्नीकी जितना स्त्रियोधन दिया गया है, बिना उसना हो धन भ्रष्टवश स्त्रीको भी दे। यदि स्त्रियोधन न हो, तो उन्हें पुत्रका समान भंश देना उचित है। किन्तु पुत्रोंको न्यून देने और स्वयं अधिक लेनेसे पिता पुत्रहीना पत्नीका अपने भंशमें पुत्रके बराबर भाग दें। स्त्रियोधन होने पर भ्रष्टवश पत्नीको पाधा देना चाहिये।

भार्या, माता भयवा पितामहोका नृव्यभंश यदि भोग द्वारा चय हो जाय, तो भार्या पुनः श्रौतिका पानेकी अधिकारिणी है। यदि भोगवशित रहें और धनीका श्रौतित धन भोगमें चय हो जाय, तो वे पुत्रादिवत् भार्यासे भा

वहूँ भारी फौजके साथ उनका साथ दिया था। दोनों सेनाओंकी इकट्ठा कर औरङ्गजेबने कन्दाहारकी दुर्ग घेर लिया। दुर्ग सुदृढ़ और अच्छे गश्तसे पूर्ण था, भीतर से अन्नसन्धर्पण होनेके कारण मुगलोंके लिए खड़ा रहना भी मुश्किल हो गया। औरङ्गजेबके अधीन दो तोपें थीं, पर वे भी लगातार चलते रहनेसे फट गईं। भन्नामी शाह दुष्कारिक सेनादलमें औरङ्गजातोय काशिम खाँस अधीन पाँच तोपें थीं; वे भी लगातार चलती रहीं थीं पर उनसे कुछ फल न हुआ। अनर्थक बारूद और गोले नष्ट भ्रष्ट हो गये, दुर्गकी तनिक भी पति न हुई। यह संवाद शाहजहान्के पास पहुँचा और एक विपत्तिका सूत्रपात हुआ। गजनौकी निकटवर्ती सजवैक और अलमान लातोय भफगानोंने विद्रोही हो कर महा प्रतिष्ठ करना शुरू कर दिया। अतएव १६५२ ई०में औरङ्गजेबकी सौट चाना पड़ा।

औरङ्गजेबकी सौट जाने पर, कुमार तुलन्द इकबाल दाराशिकोहने इदृताके साथ कहा कि, मैं 'कन्दाहार पर अवश्य विजय लाभ करूँगा। शाहजहान्ने ज्येष्ठ पुत्रकी बात पर विश्वास कर उसी वर्ष इन्हें काबूल और मुल्तान प्रदेशके शासनकर्ता बना कर बहुत से सेनाके साथ कन्दाहार भेज दिया। दाराने लाहौर पहुँचनेके साथ ही साथ युद्धकी सब तैयारियाँ कर लीं, जिसके करनेमें कमसे कम १ वर्ष लगता, उसे दाराने चार हो महीनेमें कर दिखाया। इनके साथ 'किशवार-कुश' (देशजयो) और 'गद्गमखन' नामकी दो बहुत बड़ी तोपें थीं। इनमें जो गोले दिये जाते थे, उनका वजन १८० (एक मन पाठ सेर) था। और भी एक तोप थी, जिसका वजन ११६ (एक मन सोलह सेर) था। इसके सिवा आपने ५ हजार मन बारूद और २५ हजार मन लोहा भी साथ रखा था। सब तैयारियाँ कर चुकने पर आपने चलनेके दिन पित्तसे अनुमति ली। मुल्तानके रास्तेमें रसद और चासका सुभोता था, इसलिए सेना उसी मार्गसे चली। १६५२ ई०में (हिजरी सन् १०६१ में) दाराने कन्दाहार पबरोध किया और तुस्तके दुर्ग पर अधिकार कर लिया।

इस अवरोधमें ५ महीने बीत गये। बारूद, लोहा,

गोला, गोली सब निवृत्त हो चले। भफगानिकाने यद्यत्तमाला-समाच्छन्न प्रदेशमें शीतके प्रकीर्ण शीतवस्त्र-हीन मुगलसेना बड़ी विरक्त हो उठी। सुनतान शाहजहान्की मालूम पड़ते हो उन्होंने लिख भेजा कि, 'यदि हमें दुर्ग लय करना संभव सम्भवे और दोढ़े दिनमें काम पूरा हो जाय, तो होने दो; नहीं तो हया समय नष्ट करना उचित नहीं, सौट चाना हो अयस्कृष्ट है। दाराके द्वारा नव-निशुक्त तुस्त प्रदेशके शासनकर्ता तुस्त दुर्ग ध्वंस करके सेना सहित दाराके साथ आ मिलें। उन्होंने दुर्गके साथ साथ तुस्तका कारखाना तक उठा दिया। दाराके सौट चलनेका प्रस्ताव करने पर भन्ना सुगन-सेनापति उसमें राजी हो गये और उसी वर्षके शिवराममें पबरोध उठा कर सब हिन्दुस्तान सौट पाये।

जहांगीरके समयमें ऐसा निर्णय हुआ था कि भवसे चित्तौरके कोई भी राना चित्तौरदुर्गका संस्कार न करा सके। १६५२ ई०में राना जगतसिंहने उस आदेशकी कुछ ओर परवाह न कर दुर्गके ओष स्थानोंकी तुड़वा कर मजदूतीके साथ बनवाना शुरू कर दिया। शाहजहान्की मालूम पड़ते ही, उन्हें २० हजार सैनिकोंके साथ भन्नामे शाहदुला खाँकी चित्तौर ध्वंस करनेके लिए भेज दिया।

दाराशिकोह शाहजहान्के प्रिय पुत्र थे, सर्वदा उनके पास रहते थे, यहाँ तक कि मतहत होने पर भी वे दाराके परामर्शानुसार काम करते थे। सम्राट्को यह पुत्रवयताकी बात सर्वत्र फैल गई। राना जगतसिंहकी भी यह बात मालूम हो। शाहदुला खाँके खसोखपुरमें लाकर काबाने डालते हो रानाने शुभभावसे दाराके पास अपना विश्वास आदमी भेजा। उसने दारासे जा कर कहा, 'राना कहते हैं, आप बोचमें पहुँच कर शाह-शाहके क्रोधकी शांति कर दीजिये।' दाराने राना जगतसिंहको और सम्राट्से प्रार्थना की। सम्राट्ने दूतके मास्फत रानाकी कहला भेजा कि, 'राना अपने ज्येष्ठ पुत्रकी मुगल-दरबारमें रख दें और रानाकी एक दल सेना उनकी किशो आसीय व्यक्तिके अधीन दासिगात्यमें रख कर मुगल बादशाहका काम करें।' यदि इस आदेशकी राना न माने तो उसका चित्तौर ध्वंस कर

ले सकते हैं। पत्नीको अपने विभागमें जो धन प्राप्त हुआ हो, उसे वे बिना न्यायकारण दानविक्रय नहीं कर सकते। और न दण्ड्य हो दे सकते हैं। वे केवल भोग मात्र कर सकते हैं, पीछे वह धन पूर्वस्वामिके उत्तराधिकारीका होगा।

स्वोपार्जित और पैतामह-धनमिष्यं।—जो धन पादिमें पितासे उपार्जित हुआ है वह उसका प्रकृत उपार्जित है। पितामहका धन जो ज्ञानिके बाद पिता यदि उसे निज परिचय द्वारा छद्म करे, तो उस धनको वे स्वोपार्जित धनकी भाँति व्यवस्था कर सकते हैं। पैतामह स्थावर भूत रत्न पर अस्थावर पैतामह धनको वे स्वोपार्जित धनके जैसा काममें ला सकते हैं। पिता अपने पितासे जो भूमिनिबन्ध और दामादि पाते हैं, वही प्रकृत पैतामह धन है। क्रमागत धन ही पैतामहवत् व्यवहारार्थ है।

मातामहादिकी श्रृणु होने पर जो धन हाथ लगता है, वह स्वोपार्जित धनको भाँति व्यवहृत हो सकता है।

पितृकृत पैतामह धन विभाग—पैतामह धनको यदि पिता विभाग करे, तो एक एक पंगु अपने पुत्रोंको और दो चयदा डोसे अधिक पंगु पाप लेवे। पूर्वीक गुणवत्त्वादिके कारण पिता पैतामह धनको न्यूनाधिक विभाग नहीं कर सकते और इस प्रकार विभाग करनेका उन्हें अधिकार भी नहीं है। पिता जितना पुत्रको देवे, उतना ही पितृहीन पुत्रको और पिता-पितामहहीन प्रपौत्रको भी उनके पितृपितामह योग्यता देवे।

पुत्रार्जित धनमें पिताका पंगु—पुत्रार्जित धनमें भी पिताके दो भाग हैं। पितृद्रव्यके उपघातमें पुत्र कर्त्तक अर्जित धनका भाग पिताका और इस प्रकार जो उपार्जन करते हैं, उनका दो पंगु और अन्य पुत्रोंका एक एक पंगु होगा।

पितृद्रव्यके उपघातके बिना अर्जित धनमें पिताका दो पंगु और पुत्रका भी उतना ही होगा। अस्याय्य पुत्रोंको इस धनमें कुछ भी नहीं मिलेगा।

विद्याविहीन पिता जनकता मात्र ही पंगु पावेगा।

यदि कोई पुत्र निज परिश्रमसे और किसी भाँति धनके उपघातसे उपार्जन करे, तो उस धनमें पिताका दो

पंगु और उन दो पुत्रोंका एक एक पंगु होगा। फिर यदि वह किसी भाँति धन द्वारा तथा निज परिश्रम से धन द्वारा धन उपार्जन करे, तो उसमें पत्रकका दो पंगु और पिताका भी दो पंगु तथा धन दाताका एक पंगु होगा। दोनों पक्षोंमें ही दूसरे दूसरे भाँति पंगु नहीं है।

जिस पौत्रका पिता जोवित है, उसके अर्जित धनका भाग पितामहका नहीं वरं उसके पिताका होगा। पैतामह धनके उपघातसे यदि अर्जित हुआ हो, तो उपघातित धनानुसार पितामह एक पंगु पावेगा।

मातामहके धनोपघातसे यदि दोहित धन उपार्जन किया हो, तो उपघातित धनानुसार मातामहका एक पंगु और मातृजादिका एक पंगु होगा। किन्तु मातामहके धनोपघातके बिना यदि दोहित धन उपार्जन करे, तो मातामहका कुछ भाग न होगा।

भ्रातृ कर्त्तक विभाग—पिताके मरने पर उनका स्वत्व नाम ही अवस्था स्वत्व रहने पर भी, धनविभाग पुत्रोंको दृष्टा पर निर्भर है। तभीसे भ्रातापौत्रोंका विभाग काल माना जाता है। किन्तु माताके रहते विभाग धर्म सङ्गत नहीं है। यदि माताको अनुमति की जाए विभाग किया जाय, तो वह धर्मसङ्गत ही सकता है।

भ्रातापौत्र पंगुका-परिमाण—सहोदर भादयोंका धनमें समान अधिकार है, यतः वे बराबर पंगु ले लें।

पौरस और दत्तक पुत्रके बीच यदि धनविभाग किया जाय, तो पौरस पुत्रका दो पंगु और दत्तकका एक पंगु होगा। अधिकारी भ्रातापौत्रोंमें यदि कोई एक भी प्रपौत्र छोड़े बिना मर जाय, तो उसका दूसरा भी कोई उत्तराधिकारी होगा, उसे भी योग्य पंगु मिलेगा।

पितृहीन पौत्र और पितृपितामहहीन प्रपौत्र क्रमशः अपने अपने पिता और पितामहके योग्य पंगुका भागी हैं, अपने अपने संस्थाके अनुसार नहीं।

साधारण धनके उपघातमें उपार्जित विपय-भाग—साधारण धनके उपघातमें अर्जित धनमें पत्रकका दो भाग और अन्यका एक भाग होगा। परिवन्ध कुटुम्बीमें यदि किसीके यमसे साधारण धनकी उक्ति हुई हो, तो उसमें उसे दो पंगु मिलना उचित है।

दिया जायगा। राजाने पुनः दाराको संवाद दिया कि, 'छटि पाय अपने दोषानकी भेज दें' तो उनके माय में पुत्रको भेज सकना है।' सम्राट् ने पाशा ने कर दाराने अपने दोषान जीव शत्रुन करामकी वित्तोर भरा। इनमें मातृदुहाकी नाना वित्तोर पर आक्रमण पर मोरभको दोषार चादि लोहना शत्रु कर दिया। राजाने पुनः प्रतिनिधि भेजनेवा नियाय किया, इनमें दाराके दोषान या पट्टे।

राजाने उभी मध्य अपने छेले पुत्रको उनके माय शाटमाहकी भेजाने भेज दिया। दाराको मध्यस्थतामें राजकुमारकी प्रतिभूरूप पा कर शाहजहानने रागाकी लमा कर दिया।

१६५१ ई० के मध्यभागमें शाहजहानने राज्यमें १०६५ दिवस मनुकी दोतने पर एक उक्त कृपा था। उस वक्तमें नाना देवीकी राजा, निमंत्रित हुए थे। इन मन्त्रिगण शाहजहानने अपने छेले पुत्र दाराको एक विशेष विमान दे कर मन्त्रानि किया था। इन विमानों में माय जो चंगरवा दिया था उसको चम्पान और मगजोंमें धाराचिका काम था, जिसमें मोती और मणि मानिकादि लड़े हुए थे। इन चंगरवाकी कीमत ५० प्रजामें ब्यादा ठहराई गई थी। एक शिरपेच (शिरफन्द) दिया गया था, जिसके एक तुल्य और दो मोनियोंके दाम १ लाख २० हजार रुपये थे। इनके निवा लख १३ लाख रुपयेमें दिये गये थे। इन विमानों में बाद दारा माय बुन्द एकवार 'दावा गिकोह' कहलाने लगे। शाहजहानकी यह वधावि जहाजमें निको थी। दारा यह तज दारामें मन्त्राट्टे तजुताक्रमके सामने बैठ करके थे, यह वे तजुताक्रमके दाहिने स्वर्ण-विंशा-लम पर बैठये जाने लगे।

१६६८ ई०में शाहजहान बीमार पड़ गये। इस समय राज्यका भयभर कार्यभार दारा पर था, जिसमें उनके और भाई बिगट्ट ठठे, मध्यमद राजा इस समय गद्दाहमें, औरइलेह दाघिजाममें और मुराद बख्श मुजरातमें शासनरत थे।

दारा शाहजहानके बड़े मित्र थे, क्योंकि वे काको, चरबी और संस्कृत भाषामें विशेष व्युत्पन्न तथा मादवी,

साम्र और बुद्धिमान थे। परन्तु एक बातकी दारामें कमो थी, वे चरविषासदमी थे, जब शिख जामकी महति होतो उसे भट्ट कर डालने थे। शाहजहान दारा पर इतना प्रेम करने थे कि कभी बामो उनके परमार्थानुसार चम्पाय काम नो कर डालते थे। दाराको मन्त्राट्टे चरबी दाघा-के पोहन न होने देने थे। दारामें एक विशेष गुण था कि उन्होंने चकवरकी तरह सुमनमान और हिन्दू धर्मके सार लघ्योका मंचर कर चपला धर्ममन गिर किया था। जिस समय दारा कन्दाहार जय करने गये थे (१०५० हिजरोमें) उस समय काशमिरमें मोलाना माह नामके एक फकीरमें पापकी मुनाकात और जान पड़-वान हुई था। उमो वाकिने पापको हिन्दू सुमनमान और ईसाई धर्मका समन्वय काके चर्चतयादका किया हो थी। इन्हींके द्वारा पापको हिन्दू मानाका रहस्य मान्य कृपा और तमोंसे पापके धर्ममनमें परितेन हो गया। ये चकवरकी तरह सुमनमान फकीर और हिन्दू चम्पामा, मुसाई चादिने माय बैठ कर मधेदा धर्म-लाघना किया करते थे। उवाभनाके समय पाप पन्नाइके बदन 'पसु' शब्द दावेदार करते थे, पसुओं पर ईसा-मुदाते थे और लमाज, रोजा चादिका धानन कुरावड चनुसार नहीं करते थे। इन कारणोंसे सुमनमान समाज दारा पर बहुत गाराज रहता था। दाराका कहना था कि हिन्दू और सुमनमान दोनों धर्मोंका उद्देश एक है। वे और दाराको मोरें यमज न्यायाका तरह मन्त्र पर चमकित है। दारा चपमेंको कहर सुमनमान नहीं कहते थे और नबैसा चारण हो करते थे। इन्हीं सब कारणोंसे, जब पापने जिलाको चरमपतामें राज्यभार पड़च किया, तब राज्यके उभयाना लोका में मनमनो फैल गई। बहुतेकोंके हृदयमें ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि अगर इस समय शाटमाहकी मोत हो जाय, तो दारा सुमनमान धर्मका मूलोच्छेद बिना किये नकहेंगे। इसी कारण सुमनमान ऐतिहासिकोंने दाराको बहुत दुष्ट निन्दा की है। शाहजहानने पट्टेमें दो दाराको चरबी उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। राजा, औरइलेह चादिने मनमें राज्यनिष्ठा थी, जिन पर तक प्रजापति नहीं पाये थे। दाराके भाइयोंमें राजा भरादावा विना-

साधारण धनका उपघात होनेसे, जिसका जितने धनका उपघात हो, उसे उसीके अनुसार भाग मिलना चाहिये।

मिथित धन तथा परिश्रमसे यदि कोई विषय उपार्जित हो और यदि उसके धन तथा श्रमका परिमाण मालूम हो जाय, तो वे तदनुसार अंश भागी होंगे, अन्यथा समभागी।

भाइयोंमें यदि एककी भो इच्छा पृथक् होनेकी हो, तो धन विभाग हो सकता है। यदि माताको औते जो विभाग हो जाय तो, उसे पुत्रके बराबर भाग मिलेगा। माता वा पितामहकी इच्छासे धनविभाग नहीं हो सकता।

स्वामी प्रभृति यदि स्त्रीधन न दे, तो उसमें माताका समभाग प्राप्य है, किन्तु स्त्रीधन देनेसे उसे केवल आधा मिलेगा। यदि पुत्र माताका अंश देनेसे इनकार जाय, तो माता अभियोगादि द्वारा ले सकती है। जहाँ माताके केवल एक पुत्र हो, वहाँ उसे केवल अन्धवत् मिलेगा।

सहोदर और वैमात्र्य भाइयोंके बीच परस्पर विभाग होनेसे माता अंशभागिनी नहीं होती। किन्तु यदि सहोदर भाइयोंके बीच विभाग हो, तो माताकी श्राद्ध-तुल्यता मिलना चाहिये। वैमात्र्य भाइयोंके साथ यदि सहोदर पधवा उनमेंसे कोई अपना भाग पृथक् कर ले, तो उसकी माता और पुत्रकी बराबर अंश मिलेगा।

पैतृक धनके उपघातमें अर्जित विषयका अंश पानेका भाई जिस प्रकार अधिकारी है माता भी उसी प्रकार उसकी अधिकारिणी है।

माता यदि किसी मृत पुत्रकी उत्तराधिकारिणी हो, तो वे तदुद्योग्य तथा मातृत्वके कारण पुत्र तुल्यांश पावेंगे; वे केवल एक पुत्रके अंशकी भागिनी होंगी, वे ना नहीं। पुत्रके विभागमें उन्हें जितना मिल सकता, पुत्र और पौत्रोंके विभागमें भी उतना ही मिलेगा।

पितामहका धन यदि पौत्र विभाग करे, तो पितामहके और पौत्र दोनोंकी बराबर बराबर भाग मिलेगा। पितामहके यदि किसी मृत पौत्रकी अधिकारिणी हो,

तो वह उसी प्रकार उसका योग्य तथा पितामही कह कर अपना योग्य पावेगी। यदि पौत्रमेंसे कोई पौत्र पधवा किसी मृत पौत्रका संबंधी उसका अंश ले, तो पितामहकी उससे अपना अंश पानेकी अधिकारिणी है। स्थावर और अस्थावर सम्पत्ति एक प्रकारसे विभक्त हो जानेसे भी पितामहकी उसी प्रकार अपना अंश पावेगी।

माताकी भाई पितामहकी भी प्राप्त धनको दान विना यादि नहीं कर सकती।

विभाष्य निर्णय - पैतामह और पिताका अर्जित तथा साधारण धनके उपघातसे अर्जित ये तीन प्रकारके धन विभाज्य हैं। दूसरेके व्यापारसे लो धन अर्जित हुआ है, वह केवल व्यापारकारके साथ ही विभाज्य हो सकता है। पूर्ववत् भूमिकी यदि कोई निज परिश्रम द्वारा उद्धार करे, तो उसे चार भागोंमेंसे एक भाग देकर फिर शेष भागोंको आपसमें बराबर बराबर बांट ले।

विद्या उपाधि द्वारा प्राप्त धन साधारण धनके उपघातसे अर्जित नहीं होने पर भी समान है और अधिष्ठ विद्याओंके साथ विभाज्य है। न्यूनविद्या तथा विद्या होन अयोग्यके साथ वह धन विभक्त नहीं हो सकता। उपघातसे अर्जित विद्याधनमें समोका अंश है।

कुलसे वा पितासे शिषित भूतानों द्वारा उपाजित तथा शौच्य द्वारा प्राप्त धन विभाज्य है। पिता और पित्र्यादि भिन्न अर्थान् दूसरेसे शिषित हो विद्या द्वारा जो कुछ अर्जित किया जाता है, वह समविद्वान् तथा अधिक विद्वानोंके साथ विभाज्य है, न्यून विद्वान् और विद्याहीनके साथ विभाग नहीं हो सकता।

यदि विद्वार्जनकालमें उसके परिवारका यदि दूसरा भाई अपने धनसे प्रतिपालन करे, तो वह उस विद्यासे उपाजित धनमें भाग ले सकता है। दो या तीन मूर्ख भाई यदि उसकी स्त्रीका प्रतिपालन करे, तो वे भी उस धनके भागी होंगे। यदि कोई भाई अपने परिवारको दूसरे भाईके हाथमें सौंप धन उपाजन करनेके निवेदित किया हो, तो उसके उपाजित धनमें उसके भाईका भी अंश होगा। जहाँ भागका परिमाण निर्दिष्ट न हो, वहाँ समान भाग समझना चाहिये।

समिय, क्रियु सुववित्-पीर, बुद्धिजोवि-ये, सुराद-केवज
 सानन्दमिय, पो-अवत्य मयमेयो, ये । दादा-पहसेवे-को
 सतके हो गये थे, उन्होंने पिताको स्मारणत भाष्यो को
 मति दूरदेशो के शासनकर्त्ता, नियुक्त कर राजधानीमें बहुत
 दूर-मित्रवा-दिया, था । इसेलिए सुघाटके, सुखसुखोने
 पर जब दाराने राज्यभार ग्रहण किया, तब सखाव
 धमाजमें कुछ गहवही न फैलने, पर सो, परसर एक
 दूसरेको अन्तरङ्ग द्वारा सब संवाद साधन से ही गया-
 बहालमें राजाने पीर-अहमदाबादमें सुरादने अपने अपने
 नामके सिक्के पसा दिये, पीर खतवा पदाने लगे, राजा
 देर-कारना ठोक न समझ कर हाथदंडिके अभिप्रायसे
 पटना पीर बिहार प्रदेश बहालमें मिश्र किया, दादा
 सिक्के पीर-अहमदाको छूट बुद्धि, पीर तो ख-दृष्टिसे करते थे
 पीर दृष्टिपत्ते लगेने लेशा बराबरमिल, दिखाया था,
 उससे भी, ये पीर-अहमदा बसे गङ्गित-ये, गङ्गाजबान पहसेवे
 ही द्वाराके पचापती पीर इस समय अग्यागत, ही कर
 पीर मो उनके निदेशावतर्ती हो पड़े, पीर-अहमदा ठोक
 इसी मोके पर बीजापुर-धरोध किया, उसको सहायता
 के लिए उस समय बहुतसे सेना पीर-सेनापति उपस्थित
 थे । ऐसे मोके पर पीर-अहमदाके घोषाहतनी शक्ति-रखना
 दाराने बुद्धिबलत ल समझा । उन्होंने अपनी स्वभावसिद्ध
 इत-कारिताके साथ उसे कोमलसे घटाने, लिए सुरत, ही
 सुघाटके द्वारा आदेश भिजवा दिया कि "बीजापुरका
 धरोध छोड़ कर समस्त सेना पीर-सेनापतियों के साथ
 राजधानीमें लगे पाओ । पीर-अहमदा इस आदेशका सम
 समझ गये पीर-अहमदासे धरोध-कारना बुद्धिबल समझ
 कर बीजापुरके अधिपति सिकन्दर आदिमहादके प्रदावा-
 सहार समने सखि कर ली पीर राजा अब एवं सन्धिसे
 सुखरूपमें सुकरोह, रुपये से कर सखिदा-मुनियद
 (बीजाबाद) को चल दिये । वहां प्रह्वति, पर उनके
 साल मइया कि दादा दिदीको छोड़ कर पिलखोसागर
 अभिचार करनेके लिए आगरा गये थे । तब ही दादा
 १५२० ईके मीप भागमें राजा बहीरे मारी फोजके
 आद दिदीको पीर परसर हुए । गङ्गाजबान उस समय
 कुछ सुख थे । उन्होंने राजाको सुह करनेके लिये पर
 दादा-सगाई की, परन्तु इसके बाद ही उनके संवाद

निष्कारि, राजा, युधके, लिये, भयसर, हो, रहे हैं, ॥ १॥ पर
 भाष्य हो कर, दाप को, राजा, जयसिंह, (मोरजा) और
 सुलेमान-मिकोह के, अधीन, सेना सैन्यो, पड़ी । राजा
 जयसिंह, जयसेना, सामने, निकर, भागीके, निकट, गङ्गा-
 तीर, जहाँ, बहादुरपुर-पड़ोसे, तब, राजा डेढ़, कोस, की, दूरीमें
 युधके, लिये, तोयार, दिए, ॥ २॥ दूरे, दिन, सूर्योदयसे, पड़ो
 राजा, जयसिंहके, सेना-सहित, आगे, बढ़, कर, प्रसृत,
 भयस्थानि, शोकी, सेना, पर, आक्रमण, किया, ॥ ३॥ राजाकी
 सेना, जयपालकी, मध्य, निद्रामें, भय, पो, ॥ ४॥ शोकी
 भाष्य, सुन, कर, राजाको, सेना, जग, गई, ॥ ५॥ उद, कर, देखा
 तो, वहाँ, सब, सफाया, पाया—धन, रत्न, तोप, गोला, बाण,
 सुब, कुछ, शस्त्र, के, कर्णमें, प्रद, च, लड़ा, था, ॥ ६॥ कुछ, लोग
 तब, भी, हो, चुके, थे, ॥ ७॥ पाण्डुर, सामन्तों, विगड़ने, देख
 राजा, कुछ, सुशस्त्रोंके, साथ, सुवचाप, नाश, पर, उद, कर
 जयसे, सुने, ॥ ८॥ राजा, अपने, राज्यमें, न, गये, इसलिए, चन्का
 राजा, राज्य, दाराके, हस्तगत, हो, गया, ॥ ९॥ शत्रु, कै, दियोकी,
 लो, कर, जयसिंह, पागुर, पड़, ॥ १०॥ दाराने, चन्, कै, दियो—
 को, नगरके, चारों, तरफ, घुमाया, एक, कुछ, लोगोंको, प्राप-
 पण्ड, दिया, गया, और, कुछ, लोगोंके, साथ, काट, दिये, गये, ॥
 ११॥ जिस, दिन, दाराके, पद, सलेमान-मिकोह, और, राजा
 जयसिंहके, राजाके, बिहड़, राजा, लो, गये, चलो, दिन, और
 एक, दल, सेनाके, साथ, महाराज, यशवन्तसिंह, और
 लालसिंह, खाँ, दक्षिणकी, उपाग, हुए, थे, ॥ १२॥ चोरङ्गजिम, और
 सुगद, दक्षिणमें, क्या, कर, रहे, हैं, और, जिस, भयस्थानमें, है,
 ॥ १३॥ बातको, जाननेके, लिये, है, दाराने, ऐसा, किया
 था, ॥ १४॥ शत्रुदल, शत्रु, प्रथम, दावा, की, कर, और
 किसी, तरफ, जाय, तो, इन, पर, आक्रमण, करनेका, भार
 कासिम, पर, बोपा, गया, और, यशवन्तसिंह, पचखा, लेल
 कर, व्यवस्था, करेंगे, ऐसा, निश्चय, हुआ, ॥ १५॥ इसके, पड़ो
 जय, समुल, सम्राट, महाराज, यशवन्तसिंहका, राज्य
 आक्रमण, करनेके, लिए, समय, दे, ये, सब, समय, यश-
 वन्तसिंहने, अपने, राजावलको, पड़ो, तरफ, समझ, कर,
 दारासिंहके, पास, दूत, भेज, दिया, था, ॥ १६॥ चन्ने, दाराकी,
 पास, पड़ो, कर, सब, कुछ, सुनाया, दारा, राजाको, उपायता,
 पड़ो, चानकी, राजा, हो, गये, ॥ १७॥ सम्राट, ने, दाराकी, समझा-
 कर, कुछ, निरकार, और, साधारण, देकर, एक, पत्र, भेजा, ॥

पवित्राज्य निर्णय—अनुपघातमे वर्जित धन वर्जक-
का ही होगा, दूसरेका नहीं ।

साधारण धनके उपघातमे वर्जित धनमें अथ
भ्रातापौका भाग निर्दिष्ट होना अनुपघातमे वर्जित
धनमें भाग नहीं होनेके समान है । जो धन पितादिके
धनकी सहायता न हो कर उपार्जित हुआ है, यह
धनके लिये विभक्त नहीं हो सकता, क्योंकि यह निज
चेष्टामें प्राप्त हुआ है ।

पैतृक धनके उपघाताभावमें द्रव्य द्वारा अन्य भाव्यों-
का उपयोग नहीं है केवल वर्जकने अपने चेष्टामें उसे
प्राप्त किया है । यह समझना आवश्यक धन है, यह
विभक्त नहीं हो सकता । पित्रद्रव्यका स्वर्ध न हो कर
अन्य उपार्जित धन भौदाधिक धन अर्थात् जो धन
अन्यसे जमाईको दिया हो, विद्या द्वारा लब्ध धन शौर्य
द्वारा उपार्जित धन तथा भौदाधिक धन पवित्राज्य है ।

कामागत विषय यदि किसी दूसरेमें से लिया हो और
उसे यदि परिवारमें से किसीने साधारण धनके उपघातमें
बिना तथा और भी दूसरे प्रकारको मदद न हो कर
लोटा लिया हो तो यह धन उसका होगा दूसरेका
नहीं । अर्थात् विभक्त या अविविभक्त द्वारा साधारण धनके
अनुपघातमें एवं दूसरेकी सहायताके बिना भूमिसम्पत्ति
छोड़ कर भी कुछ वर्जित हो यह वर्जकका ही होगा,
उसमें दूसरेका कुछ भी अधिकार नहीं ।

पितृ-पितृव्यादि मित्र दूसरेमें प्राप्त तथा किसी विद्या
द्वारा साधारण धनके अनुपघातमें वर्जित धनमें स्थूल
विद्वान् वा पवित्राज्यका हिस्सा नहीं है, किन्तु समान
विद्वान् वा अधिक विद्वानका हिस्सा है ।

शौर्य द्वारा वर्जित धन, भाव्यधन और विद्याजित
धन तथा छेदप्रयुक्त पितृदत्त धन, ये चारों प्रकारके
धन विभाज्य नहीं हैं ।

वस्त्र, धन वर्जित अर्थात् याहन, धनद्वार, उदक,
ऊनाद, स्त्रीगण, योगसेम अर्थात् अपना अपना व्यवहार-
योग्य स्यामन, भोजनपात्रादि, याज्य, यागस्थान या याग-
प्रतिमा अर्थात् देवोत्तर ये सब विभाज्य नहीं हैं । (मृद)

महामोका पय, माहीका पय, परिधेय वस्त्र, प्रयोध्य
और निषाद्य द्रव्य पवित्राज्य है । प्रयोध्य धन, अर्थात्

जो जिनके कामकी चीज है, यथायुक्त प्रभृतिके वस्त्रादि,
ये सब मूर्खोंके माय विभक्त नहीं हो सकते । पुनः
देखन पण्डितोंकी होगी, मूर्खोंकी नहीं । लेकिन
उनका जो कुछ धन निकलेगा, उसमें से वसना मृद
अथवा अन्य द्रव्य या सकते हैं ।

पिताके जोतको पुत्र यदि गृहस्थानादि लगावे, तो
यह उसका होगा, दूसरेका नहीं । पिता दूसरे कुछ भी
देड़ड़ाइ नहीं कर सकते, विभाग करना या न करना
उसी पर निर्भर है ।

विभागके बाद गर्भस्थपुत्रका भाग यदि पिता पुत्रोंके
बीच धन बांट कर तथा पाप भी यथाज्ञात भाग ले कर
पुत्रोंके साथ धन-संछादव्याप्तमें रहे, तो विभागेके बाद
जातपुत्र पित्रधन को पावेगा और वही उसका धन
होगा ।

यदि धनीको यज्ञान गर्भावस्थामें पुत्र प्रसूत, प्रसूत
हो जाय, तो उससे बाद जातपुत्रका भी भाग भ्रातापौके
भागमें होगा । धनोको लौका गर्भवस्थामें हो जाय और
यदि गर्भस्थकी भूमिछ होनेके पहले उसका भाग पतन
कर दे, लेकिन विभागके बाद पुत्रोत्पादन न हो, तो
पिताका धन सभी पुत्र बराबर बराबर बांट सकते हैं ।
पुत्रोंकी प्रत्यक्ष प्रत्यक्ष, पर किसी पुत्रके साथ संछाद-
व्याप्तमें फिर एक पुत्र उत्पन्न करनेके बाद यदि पिताकी
मृत्यु हो जाय, तो उस धनमें विभक्तोंका ही अधिकार
होगा ।

पिता यदि लौका गर्भ निषय करके भी अपने प्रसूत-
के लिये पुत्रोंकी विभक्त कर दे, तो उसमें पुत्रोंका ही
अधिकार कायम रहेगा, गर्भवस्था नहीं । पितृधनमें
ही केवल उसका अधिकार होगा । विभागेके बाद पुत्री
त्याग होनेमें उसे भी समान भाग मिलेगा । यदि भूमि
पादि पितामह धन भी विभक्त हो जाय, तो विभक्त
उस धनका भाग भ्रातापौमें पावेगा ।

विभाग हुआ है या नहीं इस प्रकार मन्देद उपस्थित
होने पर साति वा अनुपेक्षा अथवा दूसरोंकी सहाय्य
द्वारा अथवा निमित्त कामजादि द्वारा उसका निषय
कर लेना चाहिये । यदि कोई निन्दन या मापी न
हो, तो आनुमानिक प्रमाण माना जाय ।

यद्यप्यसमिन् पत्रके दिमावाक्य मर्मको समझ पोर भी उर गये, उन्होंने दाराको सुझाव स्वीकृत कर मिर्जा राजा जयसिंहको सहायतामें मर्यादने सेना प्राप्त की। मर्यादने उन्हें शाखा करके चकमदाबादको खुदेदारी दे दी। पोर उसकी लिए एक घरमात्र पोर जिनात भेज दी। दाराने इस समय मासवकी अपने वशमें कर लिया पोर उसकी राजघरा दारा सेनापति दे कर सेनाको समुद्र किया। सेना भी वहाँ के धनखादिको देख कर बड़े उत्साहसे मासिकका काम बजाने लगे। इसी बीचमें दाराने पोरदुर्जेबकी बकीसको कौट कर उसका मकान जूट लिया।

इस मुरादबखाने परमदाशाने अपने नामका मित्रा बना दिया पोर सुतवा पढ़नेका बुक जारी कर शाहीनाने खाजा-शाखाज नामक एक खोजके पक्षीन सुरत दुर्ग जय करनेके लिये सेना भेज दी पोर माय बी मर्यादके समझा बचिकोने १५ लाख रुपयेका दावा किया। बहुत तर्क-वितर्क के बाद बचिकोने १ लाख रुपये देनेकी स्वीकारता दी।

उपर जब पोरदुर्जेबने आफराबाद पोर करवाच प्रदेश जय कर बोकापुर पवरोध किया, उस समय मर्याद, शाहजहानने मीरजुमना (उम्दातु-उम सनातनतु-उमक शिर मुवाज्जमखी)-की उनकी सहायताके लिये भेजा। मीरजुमना उनके साथ मिल कर कार्य करने लगे। चारमगीरामामने लिखा है, कि दाराशिकोहने इस समय गुजरोखा बीजापुराधिपति बादिलखी पोर उनके पन्थाय पसीर समरावाकी पोरदुर्जेबके बादेशानुसार कार्य न करनेके लिये पत्र लिखा था। इससे बादिलखाने पोरदुर्जेबकी बात न मानी। इससे बाद दाराने पोरदुर्जेबकी चीनबल करनेके लिये मर्याद के द्वारा मीरजुमनाकी सेना-सहित चारगा झोट पानिके लिए बादेश भिजवाया। तदनुसार मीरजुमनाने चारगा झोटनेकी तैयारी कर ली। पोरदुर्जेब बड़े भारड़े इस बीतमशी समझ गये। उन्होंने मीरजुमना केसे मुदर सेनापतिका उबल सेना-सहित दाराके पक्षमें रहना मुश्किल-सूझ न समझ, उन्हें माममें ही सहायता कर दोलताबादके दुर्गमें कौट कर दिया। मीरजु-

मनाके पुत्र महमूद अमोनाना इस समय दरबारमें मीर-यकजीदे पद पर नियुक्त थे। दाराकी मीरजुमनाके बन्दी होनेका संवाद मिलते ही, उन्होंने अमोनानाके कौट कर लिया। गोले ११४ दिन बाद पन्थाय पत्रमा मासूम होने पर वे कौट दिये गये। दगापतपति "शाहजहाननामा"के अनुसार, इससे कुछ पहले बादिल-खीकी मृत्यु हो गई थी पोर उनके पुत्र महमूद इन्हीं उनके उत्तराधिकारी निर्वाचित हुए थे। पोरदुर्जेबने इसी समय अपने मातुलपुत्रकी, जिन्का नाम था जहान् मायस्ताखी या, माननभार भोग कर होलताबाद भेजा था। इससे पन्थाय बीजापुरके पवरोधकी खाते निर-जमादतु-उम-मुल्क मुवाज्जमखी (मीरजुमना), शाह नवाबखी खरकी (मायस्ताखी के छोटे भाई), महमूद-खी, निजवेतखी, राजा रायसिंह बादिल सेनापति पोर करीब २० हजार पन्थारोही भी उनके साथ गये थे। मुवाज्जमखी (मीरजुमना)ने, इससे कुछ पहले (बादिलखीकी जीवित-पत्न्याने) शाहजहान इस्लाम दाशिकोहके द्वारा प्रेरित दो झोटदासके लिये हुए गुन बादेशके अनुसार बीरा, पन्था, बुकी बादिलने सुगोमित कुछ घोड़े, कर्षातजयके धनरक्ममें कुछ पशु तथा दोनों झोटदासोंकी बादिलखीके पास भेजा था। उपहार पोर दूतोंकी यह व्यव करनेके बाद दो बादिलखीकी मातु-की गई थी। नवभूषणने उन दोनों झोटदासोंके साथ पवोत्तर पोर उपहार दे कर वापस कर दिया था।

'अमल-इ-मानी' नामक इतिहासके मतमें, दाराने मिक मीरजुमनाकी दो झोट पानिका बादेश नहीं दिया था, वरन् पोरदुर्जेबके पन्थाय सेनापतियोंकी भी सुलाया था। तदनुसार मशरुफखी, राय जयमाज तथा अन्य दो बार बादिल पोरदुर्जेबकी पन्थाकी पवोथा न कर झोट पाये थे।

पोरदुर्जेब, जोयलये छोटे भारंगीकी हयागत करनेसे अभिप्रायमें सब दा पन्थादि निष्ठा करने से पोर माद ही उन्हें भारतके भावी सम्राट् बनना कर खुद रक्मकी चेता भी करते थे। वे समझते थे कि यज्ञा बजानमें पक्षने है; यदि उत्तराधिकारी की रक्षा भारमें हुए रहे, तो उन दोनों भारंगीकी हयागतसे कुछ कर रहे

विभागके बाद प्रागत कुटुम्बका भाग—विभक्त हो, या न हो, दायाद उपस्थित होने पर वह साधारण विषय का भाग पावेगा। ऋण, स्रष्ट, श्रेष्ठ, और लेख्य जो जो पैतामह धन हो, चिरकाल विदेशमें रहने पर भी यदि वह फिर घर लौट पावे, तो वह उस धनका भागो होगा। केवल उसीको भाग मिलेगा सो नहीं, उसको सन्तान भी भागहारी होगी।

यदि कोई पादमो अविविभक्तवस्थामें देशान्तर जाय और बहुत समयके बाद लौट पावे, तो वह तथा सातपोढ़ो तक उसकी सन्तान पुत्रपुत्रादिमें तद्देशवासो वा प्रतिपादोके परम्परा परिचित होनेके बाद यथाशक्त्त भंश पावेगा। किन्तु विदेशमें रहते हुए उसकी केवल चार पोढ़ो तक उस धनकी भागी होगी। अविविभक्तवस्थामें धनको हवि वा चय हो कर अितना बचे उतना ही शिष्य है।

ऋण-परिशोध—पिताका ऋण परिशोध कर अितना धन बच रहे, यही विभाज्य है। पितामहके चाचाका अथवा दूम्बरका दायद्वपन यदि दाय सगे, तो पहले उसका ऋण चुका कर दायग्रहण करना चाहिये। उत्तराधिकारी क्रममें जिसका धन प्राप्त होगा, पहले वह उसका ऋण परिशोध करनेकी बाध्य है। किन्तु वह देशमें पिताका वा पितामहका अथवा किसी पूर्व स्वामीका धन जब तक न पावे, तब तक कोई उसका ऋण परिशोध करनेकी बाध्य नहीं है।

पुत्रस्वामोका ऋण परिशोध उसके लाल धनके परिभाषानुसार कर्त्तव्य है। मृत धनोका रयत धन यदि बहुतीके दाय सगे, तो उसका ऋण प्रत्येकको अपने अपने भंशमें चुकाया चाहिये। पितामहके जीवनकालमें पौत्रोंके पैतामह धनाधिकारी होनेसे पहले पितामहका ऋण परिशोध करना कर्त्तव्य है। ऋण चुका कर यदि धन कुछ बच रहे, तो पिताका ऋण भी उसे परिशोध करना होगा। अधिकारी पिताका ऋण समके जीवनकालमें ही पैतामह धनाधिकारी पुत्रोंके चुकाना चाहिये। ऋणप्राप्ति के २० वर्ष तक प्रयासी होने पर उसका पुत्र, पौत्र अथवा धनहारी स्थिति बौध धनके बाद उसका चुकावे।

पिता यदि अपने पुत्रोंके बीच धन और ऋण बांट दे और अपने भंश ग्रहण कर लें तथा पीछे यदि दूसरा पुत्र उत्पन्न हो, तो जातपुत्र पिताका ऋण परिशोध कर दाय पावेगा। अविविभक्त दायादोंमें एकके परिवारके लिये यदि ऋण किया जाय तो समोको वह ऋण चुकाना होता है अथवा वह ऋण साधारण विषयमें चुकाया जायगा। अविविभक्तोक्त ऋण उनमेंसे किसी एकके जोवित रहने पर भी उसे ही देना होता है तथा आतापोंके अविविभक्त होने पर पित्रऋण भी उसो प्रकार परिशोध है। किन्तु विभक्त हो जाने पर वे अपने अपने प्राप्त दायानुसार उसे चुकावें।

असंस्कृत पुत्र-कन्याका संस्कार—जिन भास्योंका संस्कार हुआ है, उन्हें पित्रधन द्वारा असंस्कृत भास्यों और बहनोंका संस्कार करना अवश्य कर्त्तव्य है। धनोको अविविभक्ता कन्या आदिका विवाहादि संस्कार अधिष्ठत धनानुसार होगा। पित्रधन नहीं रहने पर भी भाई अपने अपने धनसे उनका संस्कार करे।

अग्रज व्यवहार विषय—इस देशमें प्रचलित शास्त्रानुसार पन्द्रह वर्षके शिष्य तक अग्रज व्यवहार काल अर्थात् नाबालिगो है। नाबालिग व्यवहार कार्य नहीं कर सकता; यदि किसी तरह कर भी ले, तो वह पसिह तथा निवर्त्तनीय है। जब तक उसकी नाबालिगो दूर न हो, तब तक उसका धन उसके बन्धु वा मित्रके दाय सौंया रहेगा, उसका धन किसी हानतसे खर्च नहीं हो सकता। जो खुद अपनेको तथा अपने धनको बचानेमें असमर्थ है उसका राजा सर्वाध्यक्ष है। अग्रजवर्षे राजा बालकके धनको उसकी नाबालिगी तक देख रख करेगा। राजा आत्मोय स्वजनोमेंसे जिसे योग्य समझे उसीके ऊपर नाबालिगका कुल भार सुपुर्द कर दे। वे बालकके तथा अवश्यपौष परिवारके अग्रजवर्षे लिये आवश्यक होने पर अथवा अनिवार्य कार्य करनेके लिये जितने खर्चका आवश्यकता समझे उतना ही देवे। नाबालिगो दूर हो जाने पर उन्हें उनके धनको प्राय, व्यय, फ़ास और हस्तिका दिसावे देना होगा। यदि वे किसी प्रकार धनको खो दें, तो उसका क्षति पूरण भी करना होगा।

* अर्थात् मान आदि के अनुसार १८ वर्षके शेष तक।

लिये उपस्थित होने पर, अच्छे से दारा या अकबरे राजा बाधा नहीं दे सकती, इसलिये युद्धमें उन्होंने की जय होगी। उसकी बाद कण्टक ने व कण्टकवत्, सुरापायी अपरिणत बुद्धि सुरादकी हठाना विशेष कटकर न होगा। ऐसा विचार कर उन्होंने सुरादकी पत्र लिखा— "मैं फकीर हूँ, प्रवचनापूर्वक मसारा में रहने का राज काय में सदासुख करने की मेरी रचनाओं भी इच्छा नहीं है। परन्तु साथ ही मैं यह भी नहीं चाहता कि अधार्मिक दारा राज्यधिकारी बने। तुम और ही, और ही, राज्यको तुम ही योग्य अधिकारी हो। अधार्मिक दाराने पिताकी अपने वशमें कर लिया है और अभीसे वह हम लोगों पर हुकूम भी चलावे लगा है। हम समय हम लोगोंकी एक साथ काम करना चाहिये और राज्यकी विश्वहला दूर करने चाहिये। पिता को वित्त है, यदि हम लोग मिल कर उनके राज्यमें प्रवृत्ता स्थापित कर सकेंगे, तो वे भी समुद्र होगे। फिर हम लोग उनके दाराके लिये जमा मांगेंगे और उन्हें भका भेजनेकी व्यवस्था करेंगे। फिर हम मानवसे यशवन्तसिंह तुम्हारी राह रोकनेके लिये उपस्थित होगे। तुम उनकी अच्छी तरह काबू करना। मुझे तुम अपना भावाकाश समझना। मैं शीघ्र ही अपने सुवर्ण सेना और बहुतसे तोपों के साथ नर्म दानदीकी किनारे तुम्हारे साथ आ मिलूंगा। तुम अवश्य ही विजय प्राप्त करोगे। परमेश्वरके नाम पर शपथ करके कह रहा हूँ, तुम सुभ पर सन्देश न करना।"

१६५८ ई० में औरङ्गजेब मुरहमपुर पहुँचे। महाराज यशवन्तसिंहकी औरङ्गजेबकी भाविका कुछ भी खबर न थी। पाकिर औरङ्गजेबकी मिना जब खलियनोसे ७ कोसकी दूरी पर पहुँचे, तब उन्हें सन्देश मिला। मन्त्रके अधिपति राजा शिवराजको, सासलम होते ही उन्हें महाराज यशवन्तसिंहकी लिख भेजा कि गुरु की सेना गिरानदी पार हो चुकी है। छहर कासिमखी भी, सुरादकी पक्षसदाबादसे अपनेका संवाद चुन कर आपपर हुए। किन्तु रास्तेमें जब सुना कि वे दूसरे मार्गसे औरङ्गजेबके साथ मिलनेके लिये करीब १८ कोस भागे निकल गये हैं, तब इतना ही कर लौट आये। दारा

दुर्गके पास औरङ्गजेब और सुरादकी सेनाका मिलान हुआ। दारा दुर्गमें दाराकी जो सेना थी, वह डर गई और दुर्ग छोड़ कर महाराज यशवन्तसिंहके दानमें आ मिली। कासिमखी भी आ मिले।

महाराज यशवन्त सिंहने अपनी समस्त सेनाके साथ औरङ्गजेब और सुरादकी मन्त्रों सेनामें छेड़ कोसकी दूरी पर छावनी डाल दी। कृतबुद्धि औरङ्गजेबने इस समय कवि नामके एक ब्राह्मणकी दूत बना कर यशवन्तके पास भेजा। कवि काव्यशायर और हिन्दीके कवि थे। उन्होंने औरङ्गजेबके आदेशानुसार यशवन्तसिंहसे जाकर कहा, "मैं पिछले दर्शनके लिये आ रहा हूँ, अनएव तुम मेरे साथ चल सकते हो वा मेरे मार्ग से सेना सहित दूर चले जाओ, क्योंकि इससे गड़बड़ हो सकती है।" यशवन्तसिंह इस बातकी को समझ कर बड़े क्रुद्ध हुए, उन्होंने इसका जवाब दे दिया। दूसरे दिन (२० फ़रवरी १६५८ ई०) युद्ध शुरू हो गया। राजपूतकलह यशवन्त और कासिमखीकी सेना परास्त हो कर भाग गई। औरङ्गजेबने विजयी हो कर ग्वालियरके मार्गसे प्रस्थान किया।

इस समय बहुत ज्यादा गरमी पड़नेके कारण सम्राट् शाहजहानका स्वास्थ्य कुछ अच्छा था, वे आगरासे देहली चले गये। दाराने बहुत आपत्ति की। इस पर फिर जब यशवन्तसिंहके पराजयकी बात सुनी, तब उन्होंने शीघ्र ही सम्राट्की आगरा भाविका लिए लिखा। इसके बाद दारा ६० हजार सेना और अष्ट सेनापतियोंकी साथ ही कर बुद्धके लिए पयसर हुए। सम्राट् शाहजहानने विशेष किया, समझाया कि अभी हम को वित्त है, इस बुद्धके गतोजा क्या निकलेगा। सिर्फ भाइयोंमें विवाद खड़ा हो जायगा। इस समय मेरी यात्राका आयोजन करना ही ठीक है, मैं आ कर औरङ्गजेब और सुरादकी समझा दूंगा।" पर दारासिंहने उनकी बात न मानी। वे आयपदाओंकी मध्यस्थतामें सम्राट्की मति परिवर्तन करनेकी कोशिश करने लगे। शायस्ताखी सम्राट्की शान्त थी, वे सभी भावनों पर ध्यान करते थे तथा औरङ्गजेबकी बुद्धि और गुणोंकी प्रशंसा करते थे। सम्राट् पुत्रोंके मनोभावकी तादृश्य, वे औरङ्गजेबकी

अद्वैतमें पुरवान् पुरुष पितामह वा स्त्रीपार्जित
म्यावर पक्ष्यावर विषयको पुत्रोंकी सम्प्रतिज्ञे बिना
दान-विक्रय यथा इच्छा कर सकते हैं। धनो मरने समय
अपने धनकी विभक्त करनेका निधम (विन) कर
सकते हैं।

हिस्सेदारोंमें एक वा अनेक यदि साधारण विषय-
ने अपना प्राप्य अंश दानादि कर दे, तो वह वैध
और सिद्ध है। अविभक्तावस्थामें हिस्सेदार नाबालिगको
सन्नाह न हो कर आचारात् पहने पर विक्रपादि कर
सकता है।

जहाँ समान हिस्सेदार प्राप्त व्यवहारादि प्रयुक्त
सम्प्रति देनेमें मर्यादें हों, और अनुपस्थित भो न हों,
वहाँ दानादि कार्य करने पर भी उनकी सम्प्रति भोने
पड़ती है।

दान लेख्य और वाक्य द्वारा दृष्टा करता है।
पहोता जब तक उसे ग्रहण न करे, तब तक दाताका
स्वत्व उस वस्तु पर बना रहता है।

किसी नियमपूर्वक दानमें यदि वह उस नियमसे
पालित न हो, तो दाताका स्वत्व नहीं जाता तथा
पहोताका भी स्वत्व नहीं होता।

दानमें प्राप्त कर कर दो मनुष्योंके एक वस्तुके प्राप्ति
होने पर भी जिसका आगम पहले है वह यदि व्यक्त न
हो, तो जिसको भुक्ति प्रमाणित होती, वही अधिकारी
माना जाता है। किन्तु जिसका भी आगम पूर्वसे
प्रमाणित होनेसे उसकी भुक्ति नहीं रहने पर भी वही
अधिकारी होगा। जो जो विषय दानविषयक, विक्रय
और अन्यक हैं उनमें यही नियम लागू है।

अद्वैत प्रकार—निषेध, श्राव, गच्छित, बन्धक,
याचित और ग्याय कारणके बिना अपने स्वत्वके प्रति-
रिक्त साधारण धन और अनापत्कालमें स्त्रीधनका
दानादि प्रसिद्ध है।

पुतादि रहने पर मर्त्यत्व दान तथा शास्त्रसम्मतके
बिना साधारण विषयमेंसे अपने अंशका दानादि सिद्ध
तो है। लेकिन धर्म है।

दक्षक पुत्र बनानेके किये पुत्रदान, परिजन धान
विपदमें परिजनका पालन करनेके लिये तथा आध-

यक्त धर्म कर्म करनेके लिये पवित्र विषयका
अकीय अंशतिरिक्त और विभक्त स्वकीय अनुदायका और
स्त्रीधनका दानादि सिद्ध तथा धर्मसंगत है।

द्वैत प्रकार—उत्तम रूपमें परिचारका प्रतिपादन
कर जो कुछ वच रहें उस आधार परव्यापार धर्मका
दानादि सिद्ध और धर्मसंगत है।

परिवार पालनके व्याघातमें स्वेच्छापूर्वक अथवा
आम्यधर्मको कामनामें जो दानादि किया जाता है वह
सिद्ध होने पर भी धर्मसङ्गत नहीं है, किन्तु सर्वेश्वर न
विष कर विपदमें त्राण, परिवार पालन अथवा अथवा
धर्म कर्म यदि न किया जाय, तो सोच विचार कर जो
कुछ किया जायगा, वही सिद्ध होगा। भरणपोषण
अन्यतादि न्याय्यकार्यमें यदि कोई स्त्री तात्कालिक
सुख दायवादको स्वाधिष्ठित संभ्राता धन दे दे, तो वह
दान सिद्ध समझा जायेगा।

राज्य अविभाज्य है। योग्य होने पर वही जो राष्ट्रा-
धिकारी होता है। यदि वही अयोग्य हो, तो अन्य भ्राता
राज्याधिकारी होगा।

दत्त प्रकार—भुक्ति, द्रव्यका मूल्य या एतद्वत्त्वमें
अर्थात् विवाहमें, सुष्टिमें वा प्रत्युपकाररूपमें, अर्द्धमें, अनु-
ग्रहमें वा अन्तर्पूर्वक जो कुछ दिया जाय, वह अप्रत्या-
हृत्य है। भुक्तिमें वा अत्यन्त वाञ्छुकतामयुक्त हो कर
यदि अधिक धन देनेको राजा हो जाय, तो वह दातृत्व
नहीं है। वस्तुतः अन्तर्द्वारादिमें और पुत्रके रोगादिमें यदि
कोई किसी भारीको मर्त्यत्व देनेको स्वीकार करे, तो
वह स्वीकार प्रसिद्ध है। किन्तु उपचारके अनुसार
अधिक देना उचित है। अत्यन्त अधिक धन देनेमें प्रति-
श्रुत हो जाने पर यदि वह न दिया जाय अथवा उतना
दे भी दिया जाय, तो भी वह उपरोक्त युक्तिसे पुनर्प्रा-
प्त्योग्य है।

पदसं-प्रकार—ग्यान्वित, श्रोत्रान्वित, कामान्व-
मोहप्रयुक्त, अशक्त, आशं या अमज्जतिव्य अथवा,
अथवा उत्कावकमें, परिहासमें, लोडामें, भ्रममें वा प्रमा-
न्धामें, अथवा बालक अस्वतन्त्र या अपवर्जित द्वारा,
अथवा प्रतिपादके लक्ष्मणों वा अयातकी पातवोधमें अथवा
प्रतिग्रह, प्रतिव्याजुष, निःशब्द, वा प्रति श्रुत द्वारा

परमि दास बुला कर समझाना चाहते थे और हमको
लिए शायस्तापनि मनोह भी लिया करते थे ।

यमयन्त्रिहको पात्रायकी सुकर पानिहो प्रकसे
शायस्तापनि इस विषयमें कोको मनोह होनी थी । पर
शायस्तापनी वही मना करते थे । औरइजिबकी बुद्धि पर
मनोना था । उन्होंने औरइजिबकी समझानेकी कीई पाय
उपकता न समझी । उनके बाद जब यमयन्त्रिहकी
पराभवका संवाद पाया, तब रुखाट, शायस्तापनी पर
बहुत लुब्धकी पानिगमें पाकर शायस्तापनीकी बातों पर
मन जमा दिया और २१ दिन तक उनका मुँह न
थेला । इसके बाद रुखाटने फिर उन्हें बुला कर
वही बात पुनी, परन्तु शायस्तापनि पूर्ववत् परामर्श
ही दिया । मध तैयारिया भी जाने पर भी शायस्तापनी
ने रुखाटकी बुनीके साथ मिलने न दिया ।

यमयन्त्रिहकी परामर्श होमिने बाद १५८८ ई. के
मई महीनेमें दारामिकीने पानीन-सदागो नामक एक
मैनागिकी चघेन दुई मेना छोनपुर भेज दो । चघेन
नदीके पारघाटीकी रक्षाका भार भी उस मैनागिकी पर
ही था । दारा स्वयं पानिगमें गहराके बाँहर रई कर
पनीचा करके गये । गुजरीकी पैगजित कर सुस्मान-
निकीह वही पा कर उभय मिने गे । ऐसी जगहकी
पानो थी, किन्तु ऐसा न हुआ । यहाँ मैनाग सुस्मान
उपस्थित न हो सका । दाराकी बाध्य हो कर चघेन
होना पड़ा । सामुगद नामक स्थानमें दीनी पलकी मेना-
ने एक मोमके कामने घर पहुँच जाने दिना । पानीन-
सदागो पानिगमें रई कर भी लुब्धबाधा न जाने सके ।

दूसरे दिन सुबह ६ गो ७ समझमें १५८८ ई. में)
दारामिकीह पानी मेना समझाने गये । छे दिन बंदो
गमि वही थी । पानी मेनामे मेना पादिह गम हो
जाने तथा पानी न मिलनेके कारण बहुत मो मेना भर
गई । औरइजिब पानिगकी लोपका मोना गिरने योग्य
स्थान छोड़ कर विपक्षी पात्रमन्त्रीकी पनीचा करके गये ।
परन्तु दाराने नामक पानिगही नहीं किया । औरइ-
जिबने छेमी तरह मेनाकी विनाश कर
दिया थी । सुबह तक सुबह होपिहार
दिया । रात होत है । सुबह मैनाग व

औरइजिब गुहार पानिग १५८८ ई. में मजद-मुरारक
पानिग पानिग सरदारानी को कर गई । तब १५८८ ई. में
दुराणा दाहिनी और और औरइजिब पुत्र मजद
पानिग पावो पर बुद्ध कर दीहो । तब १५८८ ई. में

दाराको तब छेमी दितीव पुत्र निदेश-मिहोर
मेनाके मामने थे । उनको मनायताह लिए बहामन
बारह हजार पानिगिहोके साथ दाहिनी और मोर
थे । ये वजने औरइजिबकी मोप पर चला करमेना मजद
करके गये । औरइजिबकी तबमे छेमी पुत्र मजद
सुमताम समुगमानको रक्षाके लिए उपस्थित थे । दुर्भाग्य
वश पानिग ही तरफका मोना लग जानिमे दामनकी
दायो मारा गया । उन मय गुहरी चक्का मोपक मो ।
दामनपानिग कीचने रक्षा गुस्तिमजद न मजद, शत्रुकी
दाहिनी और बहादुर पा पर रक्षा कर दिया । बहा-
दुरपा दामनका पात्रमन्त्र मय न मज, जामन की
हटने गये । औरत गुहरी बाद बहादुरपा काहत लुब्ध
और गुहरी वीह दिया कर भागनेके लिए मजद १५८८ ई. में
दाहिनी औरकी मेना तितर-बितर होने लगी । यह वज
इस्लाम पा, मेना मोर पादि मैनागिकी दानिच पानिग
रक्षके लिए नव-मजद साथ दोई पाये । नव-मजद मय
दामनकी पानिग मेना मजद देर तक लुब्ध न मकी ।
दामनकी मय परामर्श की गये और निदेश-मिहोर
भाग गये ।

मजद पानिगी दाराने दामनकी मनायताह लिए १५८८
हजार पानिगिहोकी निपुत्र किया और स्वयं पोहो
तोके छोड़ने गये । दाराने स्वयं चघेन होने पर और
निबने पानिग दामनके पुत्र मजद-मुरारकी नामने
कर दिया और एक मय मोप दामनके लिए पात्रा दे
दी । दारा मजद इतने मोना-मोनियोंका पात्रमन्त्र
मज न मज और पोहो हट पाये । छे दिन वही तक
कर गुहरी मयद हो गया ।

दूसरे दिन औरत गुहरी पर पानिग विना ।
मनीपतनीकी वही पानिग मजद-मुरारकी नामने
१५८८ ई. में दाराने दामनके पुत्र मजद-मुरारकी नामने
१५८८ ई. में दाराने दामनके पुत्र मजद-मुरारकी नामने

‘म’ सकेगे। हाथी भीगा जाता था। पर सुनादने उसके घेरने
‘ज’ की रस्सों दी। राजपूत सरदार राजा रामसिंह इस
समय अपनी घेतबन्धधारी सेना के साथ भागे बढ़े।
‘श्री’ सुराद पर बरखा कोहतें हुए कहने लगे—“तुम
‘दोस्तिकोद’ के साथ सिंहासन की लेकर खड़ा करने
‘चाहे हो?’” सुरादने ‘संपने’ हाथ से एक तोरें मार कर
‘राजा’ रामसिंह को जमीन पर गिरा दिया। वे मरे गये।
‘उनकी’ अधिकांश पोतबन्धधारी सेना प्रमत्त हस्ती की
‘हारी’ भारी गद्दें मालामे गोरनाम में लिखी—“हे कि शीर-
‘रुजिबने’ इस समय सुराद की सहायता दी थी।” परन्तु
‘सुनाद’ उस वक्त सुनाद के यंत्रकारों ने ‘संपने’ पिता के
(जी कि ‘उसे’ समय शीररुजिब के पास मौजूद थे) सुने थे
‘सुना’ था कि ‘शीररुजिबने’ सुराद को ‘सहायता’ पहुँ-
‘चाने’ का इरादा तो किया था, पर ऐसा हो न सका।
“इसी समय राजेरोंज रूपिहने राजपूत सेना के
साथ शीररुजिब की सेना का मध्यस्थ से ‘आक्रमण’ किया।
‘मध्यमार्ग’ में शीररुजिब स्वयं ‘सिनापति’ थे। रूपिहने
‘युद्ध’ में प्रवेश करने की साथ ही तत्सवार हाथ में से कर
‘विपक्ष’ की सेना के ‘चन्द्र’ हुए पड़े। शीर संपने ‘घोड़े’ को
‘कोड़’ कर विपक्षियों को विनाश करते हुए शीररुजिब के
‘हस्ती’ को ‘संघर्ष’ करके ‘भाग’ बढ़ने लगे। ‘कोड़’ में ‘उन्हें’
‘रोक’ न सके। ‘शत्रु’ रैत में ‘आक्रमण’ करके वे हाथों के पास
‘पहुँच’ गये। शीर ‘घोड़ा’ की रस्सी काट कर उसे गिराने की
‘कोशिश’ करने लगे। शीररुजिबने विस्मय में हो कर इस
‘प्रकार’ का हाथ से बोर की जीवित बन्दी करने का आदेश
‘दिया’, किन्तु वे निकाले ‘उनको’ आशा संभलने से पहले
‘ही’ उस दुर्घटन की रस्सी टूटकर टूटकर ‘छाती’।
‘रुजिब’ को ‘आ’ कर युद्ध की भीषणता शीर भी बढ़ी
‘हो’। ‘इस’ युद्ध में ‘संसार’ शीर राजा ‘हत्या’ मारे गये।
‘दारा’ एक ही युद्ध में इतने ‘सिनापतियों’ मरते देखे गये।
‘इतने’ ही ‘ही’ गये। इसी समय एक गोली ‘आ’ कर ‘उन-
‘के’ ‘होड़’ पर लगी, जिससे ‘दारा’ ‘अकिस’ शीर भयभीत
‘हो’ कर ‘निरस्त’ ‘अवस्था’ में एक घोड़े पर ‘सवार’ हो गये।
‘इस’ शीर भी ‘अनिष्ट’ हुआ। ‘उनको’ सेना का ‘कुछ’ ‘अंश’
‘तो’ ‘उन्हें’ ‘होड़ा’ पर न देखे ‘हताश’ हो गया। शीर ‘कुछ’
‘अंश’ ‘उन्हें’ ‘निरस्त’ ‘अवस्था’ में घोड़े पर ‘सवार’ होते देखे

यह समझ बैठे कि वे भाग रहे हैं। बहुत से सैनिक
‘इस’ विचार में पड़ गये कि अब युद्ध करें या भाग लें।
‘इसी’ बीच में शीर एक दुर्घटना हुई। एक सैनिक दारा को
‘घोड़े’ से एक गंभीर तृण बांध रहा था। वह दाहिने
‘हाथ’ में तृण की धामें हुए बाये हाथ से बांधने का फोता
‘धुमा’ कर ‘आ’ हो रहा था कि इतने में एक तोप का गोला
‘पाया’ शीर वरु तृण सहित दाहिने हाथ को उड़ा ले गया।
‘साथ’ ही वह सैनिक भी मारा गया। इससे आसपास की
‘सेना’ बहुत डर गई। शीर भगाने लगे। ‘उन्हें’ भागते
‘देख’ तथा दारा को हाथों पर सवार न देखे युद्ध नियुक्त
‘बहुत’ से सेना दारा को ‘अपु’ भाग हाथों तितर-बितर हो
‘गई’। ‘दारा’ अपने सेना की सहायता के लिए बहुत
‘कुछ’ कोशिश की। पर जब किसी तरह भी ‘बढ़’ एकत्र न
‘हुई’, तब ‘उन्होंने’ ‘अपनी’ तोपों का ‘आमन’ छोड़ कर
‘प्राण’ देने को अपने भाग जाना हो ‘उचित’ समझा।
‘निपेहार’ मित्र १०१८० ‘अनुचरी’ के साथ उनके साथ
‘जा’ सिले। पीछे शीर भी हजारों सवारों की सेना के साथ
‘हो’ लिए। ‘पिता’ शीर पुत्र दोनों ‘आगरा’ की तरफ चल
‘दिये’। ‘अब’ ‘दारा’ ‘आनन्द’ से विजय प्राप्त करने लगे।
‘शीररुजिब’ ने युद्ध में जीते हो कर ‘आनन्द’ से पहले उपा-
‘सना’ को। बाद में ‘स्वयं’ जा कर दारा के ‘परित्याग’
‘गिरि’ पर अपना कब्जा कर लिया। सुराद के शरीर शीर
‘मुख’ पर तोरों के बहुत से जखम हो गये थे। शीररुजिबने
‘आ’ कर पहले उनके जखमों पर प्रसेध लगाया। शीर
‘सुराद’ के वीरत्व की यथेष्ट प्रशंसा की। ‘अन्त’ में ‘उन्होंने’ भावी
‘सम्पाद’ का कर मुख ‘अभिमान’ राजपूतों की। ‘मुता-
‘दिया’। ‘सुराद’ के ‘होड़’ पर इतने तोर लगे थे कि ‘वह’
‘एक’ बड़ा ‘खेड़’ सा ‘दीखता’ था। ‘अश्व-विद’ यह ‘होड़ा’
‘सुराद’ के वीरत्व का निदग्ध स्वरूप बहुत दिनों तक
(फरकशियर के समय तक) सुगल-राजमण्डल में सुर-
‘जित’ था।
‘युद्ध’ सहित दारा शासन के वस्तु विना शोयनी के अपने
‘प्रासाद’ में पहुँचे। ‘अज्ञात’ मारे वे पिता को अपना सुह-
‘न’ दिखा सके। ‘सम्पाद’ ने जब दारा के ‘आने’ का ‘आवाह’
‘सुना’ तब ‘उन्होंने’ ‘आश्वास’ दे कर परामर्श के लिए अपने पास
‘बुलाया’; ‘तो’ भी दारा उनके ‘आमन’ में ‘आ’ सके। ‘उन्होंने’

इस समय सुलेमान-शिकोह शोगरने राजाके साथमें थे। राजा राजरूपने सम्राट् के बाटिशानुसार शोगरने राजाको लिख दिया कि, "आपने सुलेमानको साथ दिया है, इस कारण सम्राट्, आपसे नाराज़ है, अतएव आप उन्हें अपने राज्यसे निकाल दोजिये।" इसका परिणाम जो कुछ हुआ, वह पहले ही लिखा जा चुका है।

१६५८ ई० में, सेनेवर नामके प्रारम्भमें बहादुरशाही दाराशिकोह और सफ़ोर-शिकोहको से कर सम्राट् के पामंघुले।

सम्राट् ने आदेश दिया—“मिना और पुत्रको जज़ीरों-से बांध कर हाथों पर चढ़ाया जाय और शहरके तमाम बाजारोंमें हुमा कर पुरानो दिलीके खिज़ायाद नामक स्थानमें कैद रक्खा जाय।” बहादुरशाही दोनों कैदियोंको ले आनेके वास्तव काफ़ी इनाम मिना और इकत को गई।

मालिक जोबान, इस घटनाके बाद बख़्तियारशाही नाम धारण कर दिली पहुँचे। मार्गमें, जो लोग मन ही मन दारा पर खेद करते थे, उन लोगों ने तथा साधारण जनता ने मिल कर मालिक जोबानको भारा पोटा गाली-गलौज दो और कीच कंकड़ भी मारे। अन्तमें जानसे मार डालनेकी भी कोशिश की; पर मालिक जोबान दालने अपना सुँह क्रिया कर मोड़में गामिल हो किसी तरह राज-दरबार तक पहुँच गये। रास्तेमें बहुतने साथी मारे भी गए थे, देखेसे कीतवानने पाकर बहुतोंकी बचा लिया। अनुसन्धान किए जाने पर मालूम हुआ, कि कैयतशाही नामक एक आहूदी (रक्तको) ने इस गड़बड़ीका सूत्रपात किया था। उसकी शिर्-च्छेदका दण्ड दिया गया।

१६५८ ई० में, सेनेवर नामके अन्तमें (१०६८ हि० के जैलखर्जमें) दाराशिकोहके लिये प्राणदण्डका आदेश हुआ। व्यवहारजीवियों ने राय दी कि “दारा धर्म-वहिर्भूत, अनाधारी, काफ़िरोंके सहवासी और उनके आचारोंके पाक्षक है; इसलिए मुसलमानों-शास्त्रके अनुसार वे अपराधी हैं।” सम्भाव्यके प्रकृत उत्तराधि-

कारी, भारतको भावी सम्राट् दाराशिकोहका मन्तक आज बातको वास्तवमें धड़से अलग कर दिया गया। उनका क्रिश्च शरीर हाथों पर रख कर नगरमें घुमाया गया और अन्तमें वह हुमायूँ बादशाहकी कब्रमें पास गाड़ दिया गया। सफ़ोर शिकोह ग्वालियर-दुर्गमें कैद रखे गए।

हिन्दू-धन्धु, मुग़ल सिंहासनके प्रकृत उत्तराधिकारी दाराशिकोहका आज इस तरह अन्त हो गया।

पहले ही लिखा जा चुका है कि दाराशिकोह एक विचक्षण विद्वान् थे। काश्-जगत्में इनकी ‘कादिरों’ नामसे प्रसिद्धि है। आपने ‘सफ़ोनत् उस पाउलिया’ नामसे मन्सूदको संक्षिप्त जोवनो, हिन्दू और मुसल-मान-धर्म एकीकरणकी मनवासे ‘मन् मा वल, बहरदन’ नामक एक उल्लेख धर्मग्रन्थ, १०६७ हि० में ‘मुन् खम् शहनामा’, “इस मात् उल परिकोन” आदि कई उल्लेख फारसीग्रन्थ रचे थे। आपने फकीर मौलानाके सुँहसे वेदके सारभूत उपनिषद्का परिचय पा कर काशीसे साधु बन्दासी और प्रधान पण्डितोंकी बुलाया था और उनकी सुँहसे उपनिषद्को व्याख्या सुन, ६ महीने तक कठिन परिश्रम करके १०६७ हि० में (१६५६ ई० में) टिप्पणी-सहित फारसी भाषामें प्रायः सभी प्रधान उपनिषद्का अनुवाद प्रकट किया था।

फारसी विद्वान् मूखी पास्ताई दुपैरोंने उक्त अनुवादित उपनिषद्का फारसीसे भाषामें प्रचार किया था। इस फारसीसे अनुवादको देख कर ही यूरोपियोंका ध्यान इधर आकर्षित हुआ था, अब भी यूरोपीयगण इसका आदर करते हैं। दाराशिकोहके पक्षपातमुख्य धर्ममतको सुन कर हिन्दू लोग उन्हें हिन्दू ही समझा करते थे। कादू, (Catrow) ने लिखा है कि दारा-ने मरते समय खूटीय मत ग्रहण किया था। उप-निषद्की भूमिकामें दाराने वेद और पुराणकी भाषा-चना कर एक बड़ी अच्छी बात लिखी है। *

* अङ्ग्रेजी-अनुवाद इस प्रकार है—: Happy is he, who having abandoned the prejudices of vile selfishness, sincerely and with grace of God renouncing all partiality shall study and comprehend this translation which is to be denominated ‘mighty secrets’

अपने पास बुला कर समझाना चाहते थे और इसकी लिए शायस्ताखिसे सलाह भी लिया करते थे। यशवन्तसिंहकी पराजयकी खबर आनेके पंद्रह शायस्ताखि इस विषयमें काफी सलाह देते थे। पर शायस्ताखी उन्हें मना करते थे। और इजबकी बुद्धि पर भरोसा था। उन्होंने और इजबकी समझानेकी कोई बात प्रयत्न नहीं समझी। उसकी बाद जब यशवन्तसिंहकी परामर्शका सलाह बाधा तब सखाट शायस्ताखी पर बहुत क्रुद्धकी आवेशमें आकर शायस्ताखीकी छाती पर धत जमा दिया और २३ दिन तक उनका सुहा न देखा। इसकी बाद सखाटमें फिर उन्हें बुला कर वही बातें पूछी, परन्तु शायस्ताखीने पूर्ववत् परामर्श ही दिया। मगर तैयारियां हो जाने पर मो शायस्ताखीने सखाटकी प्रतीति साथ मिलाने न दिया। यशवन्तसिंहकी पराजय होनेकी बाद १६५८ ई० के मई महीनेमें दाराशिकोहने खलील-उल्लाखी नामक एक सेनापतिकी अधीन कुछ सेना घोलपुर भेज दो। चम्पन नदीके पारघाटीकी रक्षाका भार भी उन्हीं सेनापति पर हो या। दारा खय आगरमें रहकर बाहर भेज कर प्रतीक्षा करने लगा। शुआकी पराजित कर सुलेमान शिकोह बंधी आ कर उनके मिले। ऐसी तनकी बाधा थी किन्तु ऐसा न हुआ। यथो समय सुलेमान उपस्थित न हो सका। दाराकी बाधा हो कर अग्रसर होना पड़ा। सासुगढ़ नामक स्थानमें दोनों पक्षकी सेना ने एक मोर्चेकी फौजमें परे पड़ावे होने दिया। खलील-उल्लाखी घोलपुरमें रह कर मो कुछ बाधा न हो सका। दूसरे दिन सुबह ७ ता ७ रज्जाम, १६६६ हि० में दाराशिकोह अपनी सेना मसालाने लगे। उस दिन बड़ी गर्मी पड़ो थी। धूपकी गर्मीसे सभी आदिक गर्म हो जाने तथा पानी में मिलनेके कारण बहुत सी सेना भर गई। और इजब अमिमुखी तोपका गोला मारने शीघ्र स्थान छोड़ कर विपक्षके आक्रमणकी प्रतीक्षा करने लगे। परन्तु दाराने शाम तक आक्रमण ही नहीं किया। और इजबने उसी तरह सेनाको विश्राम करनेका आदेश दिया और सुबह तक खूब होशियार रहने के लिये कहा दिया। रात बीत गई सुबह नवाज पढ़नेके बाद हो

और इजब युद्धार्थ प्रसूत हुए। महमूद सुरादेक अपने प्रसिद्ध सरदारोंको ले कर बाई तरफ रहे। वहा दुरखा दाहिनी ओर और और और इजबकी पुत्र महमूद आनिम बायीं तरफ चहुं कर पीछेकी तरफ रहे। दाराको तरफ उनके हितोय पुत्र सिपहर-मिकोह सेनाके सामने थे। उनको सहायताके लिए रस्समखी बाहर हजारा अखारोहियों साथ दाहिनी ओर मोजूद थे। ये पहले और इजबकी तोप पर कमा करनेका प्रयत्न करने लगे। और इजबकी तरफसे उनके पुत्र महमूद खलतान सम्मुखभागकी रक्षाके लिए उपस्थित थे। दुभाग्यवश अपने ही तरफका गोला लग जानेसे रस्समखीका बायीं भार गंवा। उस समय युद्धकी व्यवस्था भीषण थी। रस्समखीने बीसमें रहने युद्धसङ्गत न समझा। शत्रुकी दाहिनी ओर बहादुर खा पर हमला कर दिया। बहादुर खा रस्समखा आक्रमण सह न सके। क्रमशः पीछे हटने लगे। और तर बुद्धके बांद बहादुर खा आहत हुए। और युद्धमें पीठ दिखा कर भागनेके लिए मजबूर हुए। दाहिनी ओरकी सेना तितर-बितर होने लगी। यह देख इस्लाम खा, सेब मोर आदि सेनापति दक्षिण पाखकी रक्षाके लिए नव-बलके साथ दौड़ पाये। नव-बलके साथ रस्समखी केरियांत सेना ज्यादा देर तक जमान सका। रस्समखी पाय परास्त हो गये और सिपहर-मिकोह भाग गये। सुबह पोतेही दाराने रस्समखी सहायताके लिए २ हजार अखारोहियोंको नियुक्त किया और खय पोखसे तीर्थ कोहने लगे। दाराकी स्वयं अग्रसर होने पर और इजबने अपने दलके कुछ बन्दूकधारियोंको सामने कर दिया और एक साथ तोप होमनेके लिए आज्ञा दे दी। दारा सहसा हतने गोला-गोलियोंकी आक्रमण सह न सके और पीछे हट पाये। उस दिन यही तक हो कर युद्ध समाप्त हो गया। दूसरे दिन दाराने सुबाद पर आक्रमण किया। खलील-उल्लाखी बाज दाराके दलमें सम्मुखमें नायक थे। उन्होंने एकवार मो हजारा उजवे तोरन्दाजीकी सुरादेक हाथी मारनेके लिए आज्ञा दी। सुरादेकी सेना और हला एक साथ हजार तोरन्दाजीकी आक्रमण में

दाराशिकोष्ठ प्रकृत तत्त्वज्ञानको प्राप्तिके लिए भिन्न भिन्न कुराणका जो भरोसा नहीं रखते थे। आप हिन्दुओंके वेदोपनिषदादि, ईसायियोंके बाइबिल आदि भी पढ़ा करते थे। उपनिषद्की भूमिकामें आप इस बातकी कबूल कर गये हैं^१। इस भूमिकामें आपने खोकार किया है कि किसी धर्मकी निन्दा वा किसीसे घृणा करना कुराणका अभिमत नहीं है। आपका बनाया हुआ फारसी भाषामें रचित अथर्ववेदोक्त रुद्रस्तव बहुत ही सरस है।

दारि (सं० त्रि०) दृ-षिच्-इन् । दारक, फाड़ने वाला ।

दारिका (सं० स्त्री०) दारक+टाप्+तत्त्वत् । १ कश्या, वेदो । २ बालिका ।

दारिकादान (सं० स्त्री०) दारिकायां दानं । कन्यादान ।

knowing it to be a translation of the words of God, he shall become unperishable and without dread and without solicitude, and eternally liberated."

(a) "And whereas the views of this seeker of plain truth were directed to be origin of the being in Arabic language, and the Syriac, and the Chaldaeic, and the Sanskrit, he was desirous to comprehend these Opnikhats, which are a treasury of monotheism and in which the proficients, even among that tribe, were become very rare by translating without any worldly motive in a clear style word for word."

(b) "And whereas the holy Koran is almost totally mysterious, and at the present day the understanders thereof are very rare, he (Dara) was desirous to collect into view all the heavenly books, that the very word of God itself might be its own commentary; and if in one book it be compendious, in another book it might be found diffusive, and from the detail of one, the other might be comprehensible, he had therefore cast his eyes on the book of Moses, and the Gospels, and the Psalms and other holy pages."

† "And it is also known out of the holy Koran that there is no tribe without a prophet and without a Bible and from sundry passage therein it is proved, that God inflicts no punishment on any tribe until a Prophet hath been sent to them and that there is no country wherein a religion accompanied with prophecy hath not been placed."

दारिकेश्वर—बङ्गालके अन्तर्गत बाँकुड़ा और वर्धमान जिलेकी एक नदी। यह मानभूम जिलेके तिलवेनी पहाड़से निकल कर पूर्व दक्षिणको और बाँकुड़ा, वर्धमान और हुगली जिलेके मध्य होतो हुई भागोरवीके सुहानमें गिरी है। बाँकुड़ा जिला हो कर प्रवाहित होनेके समय इसका स्रोत पूर्वकी ओर चला गया है और दो शाखाओंमें विभक्त हो कर पुनः मिल गया है। इसकी प्रधान उपनदी गन्धेश्वरी बाँकुड़ा प्रहरसे ३ मील पूर्व दारिकेश्वरके साथ मिलती है। वर्धमान जिला हो कर जाते समय दारिकेश्वर ताराशुनी और दामोदर नामको और भी दो उपनदियोंके साथ मिल कर बङ्गाल तरङ्गमें प्रधानतः दक्षिण पूर्वकी ओर गमन करती है। बाद यह हुगली और मेदिनीपुर जिलेको मध्य सोमा होती हुई सुहाना तक चली गई है। वर्धमान जिलेसे दक्षिणत होनेके बाद इसका नाम बदल कर रूपनारायण हो गया है। प्रति मोलमें इसको प्रवसता दामोदरको अपेक्षा कुछ न्यून होने पर भी इसमें दामोदरकी नाई अनेक समय भीषण बाढ़ आया करती है जो प्रायः ४१५ फुट लंबे जलके प्राचौरकी नाई नदी और कूशकी भरती हुई प्रवर वेगसे डगल पड़ जाती है और मनुष्य, पशु घोड़े आदिको जो कुछ सामने पड़ते बहा ले जाते हैं। स्त्रियों नदीके किनारे बालूके ऊपर अपने अपने कलशों रख कर ध्यान करती हैं, ऐसे समयमें सड़ना कलकल गभीर शब्द करतो हुई भीषण वेगसे बाढ़ पड़ जाती और कियों कलशों लेकर किनारे तक भी पड़ने नहीं पातो, कि बाढ़ पड़ कर उठे कलशोंके साथ बहा ले जातो है, इस तरहकी घटना कई बार हो चुकी है। वर्षाकालमें कभी कभी इसमें दो तीन दिन तक ऐसी बाढ़ रहतो है, कि भाग्य जाना बिलकुल बन्द हो जाता है। नदीमें कहीं कहीं बड़े बड़े पत्थर हैं जिनमें टकर खा कर नावें पादि टूट फूट जातो हैं। वर्षाके सिवा दूसरे समयमें अधिक जल नहीं रहता है। शीतकालमें नदीका अधिकतम स्थान बालू से ढँक जाता है। बालू खोदने पर जल मिलता है। इस नदीमें कई जगह बाढ़के समय स्रोतके वेगसे बालू के ढट जाने पर गहरा और बहुत सन्धा दह बन जाता है जिसमें भीषण

'म' कहें 'जायें' भाग जाँतों छी; परें सुभदिने' लुकेके पैरमें
'ल' कीरें 'लसेवां दी'। राँतपूत सरदार रजिाँ रामसिंहें हम
'समय' चंपनी पीतयसनधारी' सेनाको साथ' भांगे बड़े
'घोरे' सुराद पर' बरका' छोड़तें' हुँ' कहने' भेजे' - "तुम
'दोस्तिकोहको' साथ' सिंहासनको लेकर' खाई करन
'साथ' हो'।" सुरादने' अपने' हाथसे' एक तोरें' मार' कर
'राजा' रामसिंहको' जमीन' पर गिरा' दिया; वे' मरे गये।
'उनको' अधिकारी' पोतबसनधारी' सेना' प्रमत्त' हन्दीकी
'द्वारा' मारी गई'। पालमगौर' नाममें लिखा' है कि घोर-
हजीवन' इस समय' सुरादकी सहायता' दी थी। परंतु
सुनतखब' लखनवादी' प्रत्यकारमें' खय' अपने पिताक
(जो कि 'उसे' समय' घोरहजीवकी पाँच सोझ' दू' थे) सुंसे
'सुना' था कि 'घोरहजीवन' सुरादकी' सहायता' पहुँ-
'चाने' का' इरादा' तो किया था, परें' ऐसा' हो न सका।
'इसी' समय' राजेराज' रूपसिंह' ने राजपूत' सेनाको
'साथ' घोरहजीवकी' सेनाको' मध्यस्थल' पोकमण' किया।
'मध्यभागमें' घोरहजीव' स्वयं' सिनापति' थे। रूपसिंह' ने
'युद्धमें' प्रवेश' करने' को' साथ' ही' संस्कार' हाथमें' ले' कर
'विपक्षकी' सेनाको' पन्दर' घुंस' पहुँ' घोर' चंपने' छोड़को
'छोड़' कर' विपक्षियोंको' विनाश' करते हुँए' घोरहजीवको
'हन्दीकी' लख' करके' भांगे' बड़ने' लगे। कीरें' मो' उन्हें
'रोक' न सका। शत्रु' रक्षित' जाल' करके' वे' हाथोंके' पाय
पहुँच' गये' घोर' छोड़को' रखा' काट' कर' सबे' गिराने' की
कोशिश' करने' लगे। घोरहजीवन' विस्मित' हो' कर' इस
प्रकारकी' साहसी' वीरकी' जीवित' बन्दी' करने' को' आदेश
दिया, किन्तु' वे' निकीने' उनको' आधा' संभरने' से' पहँले
हो' उस' दुर्घट' वीरको' टुकड़ा' टुकड़ा' कर' डाला।
'इसमें' लोह' भा कर' सुइकी' भीषणता' घोर' मो' बढ़ा
दी। इस' युद्धमें' रक्षामंडा' घोर' राजा' जितेंगाल' मारे गये।
दारा' एक' ही' युद्धमें' इतने' सेनापतियोंको' मरते' देख' प्रायः
'इतनुवि' से' हो' गये। इसी' समय' एक' गोली' पा कर' उन-
'को' हीदा' पर' लगी, जिससे' दारा' लजित' घोर' भयभीत
हो' कर' निरखें' प्रस्थानमें' एक' छोड़े' पर' सवार' हो' गये।
इससे' घोर' मो' चानिष्ट' हुँगा। उनको' सेनाका' कुछ' पैग
तो' छोड़े' हीदा' पर' न' देख' 'हताश' हो' गया। घोर' कुछ
'पैग' छोड़े' निरखें' प्रस्थानमें' छोड़े' पर' सवार' होते' देख

यह' समझ' बैठों कि' वे' भाग' रहे' हैं। बहुतसे' सैनिक
इस' विचारमें' पड़' गये कि' अब' युद्ध' करें' या' भाग' चले'।
इसी' बीचमें' घोर' एक' दुर्घटना' हुई; एक' सैनिक' दाराको
'पोठसे' एक' शर'पूर्ण' तूथ' बांध' रहा था। वह' दाहिने
'हाथसे' तूथको' धामे' हुए' बाये' हाथसे' बांधने' का' फोता
झुमा' कर' ला' हो' रहा था कि' इतनेमें' एक' तोपका' गोला
'पाया' घोर' वह' तूथ' सहित' दाहिने' हाथको' छड़ा' ले' गया;
'साथ' ही' वह' सैनिक' मो' मारा' गया। इससे' आश्चर्यको
सेना' बहुत' डर' गई' घोर' भगाने' लगे। उन्हें' भागते
'देख' तथा' दाराको' हाथों' पर' सवार' न' देख' 'युद्धनियुक्त'
'बहुत' सो' रीना' दाराको' मृत्यु-भागद्वारे' तितर-बितर' हो
गई। दारा' अपने' सेनातो' सहायन' के' लिए' बहुत
'खुष्ट' कोशिश' को; पर' अब' किसी' तरह' मो' वह' एकत्र' न
हुई, तब' उन्होंने' शत्रु' की' तोपका' सामने' खड़े' हो' कर
'प्राण' देने' को' पपीया' भाग' जाना' हो' उचित' समझा।
मिर्झा' गिकोह' ३०१८०' अनुचरी' के' साथ' उनके' साथ
जा' मिले। पीछे' घोर' मो' हजारों' सवारों' को' उनके' साथ
हो' लिए। पिता' घोर' पुत्र' दोनों' आगरा' की' तरफ' चल
दिये। शत्रु' दल' पानन्दसे' विजयाश्रममें' मत्त' हो' गया।
'घोरहजीवन' युद्धमें' लयी' हो' कर' पानन्दसे' पहँले' उपा-
सना' को; बादमें' स्वयं' जा' कर' दाराकी' परिस्थिति
गिबि' पर' अपना' कक्षा' कर' लिया। सुरादकी' शरीर' घोर
मुख' पर' तीरोंके' बहुतसे' जखम' हो' गये थे। घोरहजीवन
जा' कर' पहँले' उनके' जखमों' पर' प्रसेप' लगवाया। घोर
सुरादकी' वीरत्वकी' यथेष्ट' पश' का' को। फलमें' उन्हें' भावी
सम्प्राट' कह' कर' मुख' श्रमिमात्री' राजपुत्रोंको' फुला
दिया। सुरादकी' बीदा' पर' इनमें' शोर' मची' थी कि' वह
एक' बड़ा' विघट' ही' दुखता था। शर-लक्ष' यह' बीदा
सुरादके' वीरत्वका' निदग्न' स्वरूप' बहुत' दिनों' तक
(फरकगिराके' समय' तक) सुगल-राजभण्डारमें' सुर-
क्षित' था।
युद्ध' सहित' दारा' शमके' वस्त्र' विना' रोमनीके' अपने
प्रासादमें' पहुँचें। लज्जाके' मारे' वे' पिताको' अपना' सुंघ
न' दिखा' सके। सम्प्राट' ने' जब' दाराके' पाने' का' संवाद
सुना' तब' उन्हें' आश्वास' दे' कर' परामर्श' के' लिए' अपने' पास
लुकाया; तो' भी' दारा' उनके' पाम' न' आ' सके। उनमें

कालमें भी प्रचुर जल रहता है। दारिकेश्वरमें नावके द्वारा यात्रिणादि नद्यो होता है। वर्षाकालमें केवल दो चार बड़े बड़े खाट मानभूमसे ब्रह्मा लाते हैं। इसका किनारा बहुत उर्वरा है। वहेमान और दुगलो जिलेमें बाढ़से बचनेके लिए नदीके किनारे बांध है।

दारित (सं० त्रि०) दायते श्मेति ढ-णिवृ-त्त। क्षतदारण, चोरा या फाड़ा हुआ।

दारिद्र्य (सं० स्त्री०) दरिद्रस्य भावः दरिद्र-व्यञ्ज्। दरिद्रता, निर्धनता, गरीबी। दुःखका अनुभव करने सुख मोभा पाता है, लेकिन जो सुखका अनुभव करते दुःख पाता है वह स्वतन्त्र हो कर जीवनधारण करता है। दरिद्रता घनन्त दुःखदायक है। गुणवान् मनुष्य भी जब दारिद्र्य दशाको प्राप्त होते हैं, तब उनके सभी गुण जाते रहते हैं।

दारित-वस्त्रमार्गके प्रयोग। इन्होंने अथर्वपेदीय कौमिक-सूत्रको टीका रचना की है।

दारो (सं० स्त्री०) दारयति पदतन्मिति ढ-णिवृ-त्त। (सं० वाचस्पत्यु। वृण्, ४। १८) ततो स्त्री। सुद्रो-विषय। भावप्रकाशमें लिखा है कि, जो लोग पैदल यात्रिक चलते हैं उनके वायु कुपित हो कर सुखी हो जाती है और पीछे चमड़ा बड़ा होकर फट जाता है, वैसाई, खरवा।

इसको चिकित्सा - इस रोगमें गिराव भूपूर्वक रक्त-मोचण और खड़े खड़े तथा प्रलेप द्वारा चिकित्सा करनेकी चाहिए। मोम, बकरेकी चर्बी और मक्खन, जो और यक्ष्मा इन सबकी मिला कर बार बार प्रलेप देना चाहिए। धुना, मैथुन और लोहा इन सबको घों घों मधुके साथ मच कर उसमें सरसोंका तेल मिलावे और बाढ़ दोनों पैरोंमें लगानेसे दार रोग जाता रहता है। मोम, गिवाजतु, ची, गुड़, गुणस, धुना और गैरुमही, इन सबको घोंम कर प्रलेप देनेसे यह रोग दूर हो जाता है। धतूरेके बीजका मूल कश्क और जलकच्चा सार जल दे कर सरसोंके तेलमें पकावे, बाढ़ उसे पैरोंमें लगानेसे पाददारीरोग नष्ट हो जाता है।

दारी (हिं० स्त्री०) दारी, कड़ाईमें जोत कर लार्ई हुई लोड़ी।

दारोजार (हिं० पु०) १ लोड़ीका खामी - पूर्व समयमें राजा लोग लोड़ी लोड़ी रख लिया करते थे। पीछे उससे अप्रसन्न होने पर उसे किसी दूसरे मनुष्यको सौंप देते थे तथा जीवननिर्वाहके लिये कुछ जागीर भी दे देते थे। जो उस लोड़ीका पति बनता, वह 'दारोजार' कहलाता था। और उससे उत्पन्न सन्तान 'दारोजार' कहलातो थी। २ दासीपुत्र, गुलाम।

दार (सं० पु० स्त्री०) दीर्घावे इति ढ लण् (ह्रस्वनिजनीति। वृण् १। २) १ काठ, काठ, लकड़ो। २ पिस्तल, पोतल। ३ देवदार, देवदार। ४ मिश्री, बड़ई, कारीगर। ५ दारक, वह जो चोरफाड़ करता हो। (त्रि०) दा-दाने दो खण्डने वा-न्व। ६ दामगोल, देनेवाला। ७ खण्डनगोल, टूटने पटनेवाला।

दारक (सं० स्त्री०) दारु-स्वार्थे कन्। १ देवदार, देवदार। (पु०) २ श्रौक्ष्ण्यके एक सारथीका नाम। ये बड़े क्षत्र-भक्त थे। सुमद्राहरणके समय इन्होंने अश्व नचे कहा था कि सुमि बांध कर तत्र आप सुमद्राको रख पर से ऊपर। मैं यादवीके विरुद्ध रथ नहीं हाँक सकता। श्रौक्ष्ण्यके मरने पर ये अश्व नको उनके निशट लाए और बाढ़ कल्लकी चले गए। (भाग० भारत) ३ एक योगाचार जो शिवकी भवसार कहे जाते हैं। ४ काठका पुतला।

दारकच्छ (सं० पु०) १ देगभेद, एक देशका नाम। (त्रि०) तत्र भद्रः कच्छान्तिदेशाधिल्लात् गुञ्। २ दारकच्छक, दारकच्छदेशका।

दारकदली (सं० स्त्री०) दारुवन, काठना कदली। १ वनकदली, जखली केला। २ काष्ठकदली, कठकेला।

दारका (सं० स्त्री०) दारुका काष्ठेन कायति क-का-टाप्। काष्ठमयी स्तो, कठपुतली। इसका पर्याय—पतिहा, दारुकी, शालभक्षिका, शालभञ्जो, शालादी, दारुपुत्रिका, कुरुणो और दारुगर्भा है।

दारुकावन (सं० स्त्री०) वनमयतोयभेद, एक वनका नाम जो पवित्र तीर्थ माना जाता है।

दारुकि (सं० पु०) दारुकस्य अपत्यं किञ्च। दारुकका अपत्य।

दारुकेश्वर (सं० पु०) शिवलिङ्गभेद।

रातको तीसरे पहरके बाटें उन्होंने साहौर पड़ चुनेके अभिप्रायसे दिल्लीकी प्रस्थान किया। साथमें सिपेहर शिकोह, पलो, कन्या और कुछ अनुचर थे। मार्गमें तीन दिनके बाद प्रायः ५ हजार अश्वारोही उनके साथ हो लिए। इसी समय सम्राट के भेजे हुए कुछ भूमीर भी वहां था पड़ते थे और दाराके साथ हो लिए।

जयलामके बाद औरङ्गजेबने पिताको एक पत्र लिखा, जिसमें समस्त घटनाएँ प्रामुखिक लिखीं और पोलिसे परमेश्वरको इच्छासे ऐसा हुआ है, इस प्रकार लिख कर पिताके पास भेज दिया। इसी समय मामा खां जहान्, साथ-साथ और उनके पुत्र महमूद भी मौजूद थे। आकर औरङ्गजेब साथ दिया। ता० १० रमजानको औरङ्गजेबने सामुगढ़ ल्याम दिया और आगरा पहुँच कर नगरके बाहर पड़ाव डाल दिया। इस जगह बादशाहने उन्हें शस्त्रना दे अपने हाथसे एक पत्र लिखा। इसी समय शाहजादो बादशाह-बेगम पिताको अनुमति ले कर भाईको देखने गई और खेहकलसे दो एक बातमें प्रयोग किया। औरङ्गजेबने प्रयोगकी अत्यन्त कुभावसे ग्रहण कर चोड़ी भगिनौको तीस उत्तर दिया। बादशाह-बेगम भाईके व्यवहारसे कुछ हो कर लौट आईं। दूसरे दिन सम्राट ने एक तलवार पर "बालमगीर" शब्द खुदवा कर तथा एक प्रशंसा-सूचक पत्र दे कर अपने एक विश्वस्त अनुचरकी औरङ्गजेबके पास भेज दिया। औरङ्गजेब "बालमगीर" अर्थात् "विश्व-विजिता" नाम पा कर अत्यन्त आनन्दित हुए और अपने पुत्र महमूद सुलतानकी शहरमें शान्ति स्थापनके लिए भेज दिया। इस अवसर पर बहुतसे सभ्य, व्यक्ति उनके साथ मिलने आये थे; औरङ्गजेबने उन्हें पदसिद्धि के साथ साथ बहुत धन-रत्नादि उपहारमें दिया।

ता० १० रमजान (८ जुन) को औरङ्गजेबने पुत्र महमूद सुलतानको कहला भेजा कि "पहले तुम आगरा-दुर्गमें जाना और दुर्गके प्रत्येक द्वारमें अपने विश्वस्त अनुचरकी प्रहरी नियुक्त कर देना। पोलि अपने आवा-के पास जा, और उनमें राजकार्यसे अवसर ग्रहण करने का प्रस्ताव करना। बाहरकी कोई भी खबर हब सम्राट के पास न पहुँचने पावे, इसकी विशेष व्यवस्था करना।"

महमूद सुलतानने पिताको इशारा पा कर अपने बंश (हब शाहजहान्) के हाथसे सम्पूर्ण चमता खोन ली और उनके रहनेके लिये निर्जन स्थानका बन्दोबस्त कर दिया। इसके बाद औरङ्गजेबने दाराशिकोहकी जागोर सेनावात अधिकार करनेके लिए महमूद आफर खांकी भेजा। राजकोपागारमें सुरादको ३६ लाख रुपये और राजाशिकी प्रयोजनकी अन्यान्य सामग्री दे कर उस समय भी उन्हें वशमें रखा और १२वीं रमजानकी खय सेना सहित आगरामें प्रवेश कर दाराशिकोहकी आदालतमें रहने लगे।

इधर दारा साहौर गहरमें भी न घुस सके। उन्हें आग्रह था, कि कहीं औरङ्गजेबकी सेना छिप कर उनका पीछा न करती हो, नहीं तो शहरमें घुसते ही वह उन्हें घेर लेगे। दाराशिकोह बाहरमें रह कर हो चर्च और बल-संग्रह करने लगे। सुलेमान-शिकोह राजाको परास्त कर विहारमें ठहरे हुए थे। औरङ्गजेबकी जय-वार्ता सुन, पिताके साथ जा मिले या नहीं, इसो दुर्भावनामें पड़े हुए थे। हाराने पुत्रको पानेमें चमत्कृत, विश्वस्त होते देख, स्वयं निघेष्ट नहीं रह सके। घर लगा कि किसी दिन औरङ्गजेबकी सेना आ कर उन्हें कैद कर लेगी। आखिर वे १५ हजार सड़कवारोंके साथ पञ्जाबकी तरफ चल दिये। दारा इस समय कातरीक्षिसे अपने विपत्तयवस्थाकी बात लिख कर रोज अपने पुत्रको (विहारमें) पत्र लिखा करते थे और इसी तरह आगरेकी भी पिताके पास अपने दुर्दशाके कारण दुर्द्वि-भ्रमताकी बात लिखा करते थे।

औरङ्गजेबने सोचा था, कि पितासे जा कर समा-मिति और जो कुछ हुआ, सब ईश्वरकी इच्छासे हुआ, ऐसा कह कर प्रबोध देगे; किन्तु दारा पर सम्राट के अत्यधिक छेड़का स्मरण होते ही उनका साहस जाता रहा। फिर उन्होंने अपने मध्यम पुत्र महमूद आजिम-को भेज दिया। आजिमने जा कर ५०० आगरकियों और ४ हजार सिक्के नजर किये। सम्राट ने शोकसे, दुःखसे, क्रोधसे आखिरी पानी भर कर पोतकी आतीसे चुपटा किया। इसके बाद आजिमने पिताकी औरने यत्न्य सुनाया। सम्राट ने "हाँ" या "ना" कुछ भी नहीं

दारुकेश्वरतीर्थ (सं० स्त्री०) शिवपुराणोक्त तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम जिनका चञ्चल शिवपुराणमें पाया है।

दारुगन्ध (सं० स्त्री०) चीड़ा नामक गन्धद्रव्य, विरोजा।

दारुगन्ध (सं० स्त्री०) दारुमयो गर्भों यस्याः। दारुमय स्त्री, कठपुतली।

दारुचीनी (सं० स्त्री०) खनामख्यात गुडत्वक, एक प्रकारका तज। भावप्रकाशके मतसे इसके पर्याय—त्वक, खादु, और दारुसिता, तथा शब्दरत्नावलीके मतसे सूतकाट, भृङ्ग, त्वक, पत्र, वराङ्गक, त्वक, चौख, पत्र, हृद्य, सुरभिषवकल, उत्कट, घोष और गुडत्वक हैं। इसे बङ्गालमें डालचीनी, पञ्जाबमें किरफा वा दारुचीनी, बम्बई प्रदेशमें तज, दालचीनी वा तोखो, तैलङ्गमें दारु-निङ्ग, लवङ्गपत्ता, समलवङ्गपत्ता, द्राविडुमें कर्वा, कर्णाटमें दालचीनी वा लवङ्गपत्त, सिङ्गलमें दारुचीनी वा तल्लिवाहि कहते हैं। गुडत्वक देखो।

यह पेड़ दक्षिण-भारत, सिङ्गल और तेनासरिममें होता है। सिङ्गलसे पश्चिम उपकूलमें भी इसको खेती होता है। भारतवर्षमें यह जंगलोंमें ही मिलता है और लगाया भी जाता है तो बगोचोंमें शोभाके लिये। कोड़ण-से ले कर लगातार दक्षिणकी ओर इसके अनेक पेड़ मिलते हैं। जो पेड़ जङ्गलमें उगता है वह लगाए हुए पेड़से कहीं बड़ा होता है। (Cinnamomum zeylanicum) बाइबिल पुस्तकमें यह दारुचीनी Kinnemon नामसे वर्णित है। (Exodus XXX. 20)

वाणिज्यक्षेत्रमें दो श्रेणियोंको दारुचीनी प्रचलित है, सिङ्गलकी दारुचीनी और चीनकी दारुचीनी। चीनकी दारुचीनी बहुत निष्ठुर समझी जाती है।

सिङ्गल, चीन, श्याम, कांचीन, चीन और यवदोष-से विशेष कर इसकी रपतनी होती है। इनमेंसे सिङ्गलकी दारुचीनी ही बहुत पहलेसे विदेशमें रफ्तानों और पाहत होती आ रही है। १०६८ ई०की (मोलम्दाजाके प्राधिपत्यकाल तक) सिङ्गलमें सब जगह यह पेड़ जंगलो उपजता था, तब भी कोई दारुचीनीकी खेती नहीं करता। गरम जमीनमें जो पेड़ उपजता था वही अद्भुत समझा जाता था और गरम मनालेके लिये यूरोप आदि स्थानोंमें भेजा जाता था।

सिङ्गल और दक्षिणात्यमें जो त्वक, संप्रद करते हैं, वे इससे नो भेद बतलाते हैं—१ नाग, २ कपूर, ३ वास्ते, ४ सवेल, ५ डडुल, ६ निका, ७ मान, ८ तोपत और ९ बेकुरुन्दु।

इसके पत्ते तैजपत्ते होकी तरहके, पर उनसे थोड़े होते हैं। इसमें बहुत छोटे छोटे फूल गुच्छोंमें लगते हैं। फूलों नोचेकी दिखली छ फाफोंकी होती है। सिङ्गलमें दारुचीनीके पेड़ लगानेकी यह रीति है—कुछ कुछ रेतोली करैल मिट्टीमें ४५ हाथके फासले पर इसके बोज होते या कलम लगाने हैं। इन्हें धूपसे बचानेके लिये पेड़की डालियाँ बास पास गाड़ देते हैं। ६ वर्षमें यह पेड़ ४५ हाथ ऊँचा होता जाता है। इस समय इसकी डालियोंकी छिलका उतारनेके लिये काटते हैं। डालियोंमें छुरीसे हलका घीरा इस वास्ते लगा देते हैं कि छाल जल्दी उचट पावे। इस प्रकार घुसक किए हुए कालके टुकड़ोंको जमा करके दवा दवा कर छोटी छोटी चट्टियोंमें बांध कर रख छोड़ते हैं। दो तीन दिन इसी तरह पड़े रहनेके बाद छालोंमें एक प्रकारका छलका खमीर-सा उठता है। इसको सहायतासे छालके ऊपरकी भिन्नी और नोचे लगा हुआ गूदा टेढ़ी छुरीसे हटा दिया जाता है। अन्तमें छालको दो दिन छायामें सुखाने और फिर धूप दिखा कर रख देते हैं।

दारुचीनीको छाल, पत्ते और मूल इन तीन स्थानोंसे तोम प्रकारके तेल निकालते हैं। सिङ्गल और इन्डोनेसिया में छालकी चुषा कर सैकड़ों पीछे पाषाण वा एक भाग तेल निकालते हैं। यह तेल देखनेमें घीनें जैसा लगता है और गन्ध भी काफी रहती है। यह सुगन्धद्रव्यमें व्यवहृत होता है पत्तोंसे जो तेल निकालता है उसकी गन्ध लज्ज से होती है। सिङ्गल देशसे यह 'लवङ्गतैल' नामसे भेजा जाता है। मूलका तेल पोला और पानीसे कुछ घनका होता है। इसमें कपूर और दारुचीनीसी गन्ध रहती है। पहले इस पेड़के फलसे ही एक प्रकारका तेल प्रसृत होता था लेकिन अब कहीं भी देखनेमें नहीं आता।

दारुचीनी दो प्रकारकी होती है, दारुचीनी जीलानी और दारुचीनी कपूरी।

कहा। उसके बाद औरङ्गजेब अपने उयेत पुत्र सुह-
मन्द सुलतान और इसमाइलखीको छह सम्म्राट् का
प्रहरी नियुक्त कर ज्येष्ठ अंशतः प्रमुखस्थानमें प्रहस्त
हुए। खाँ दूरान् इलाहाबाद अधिकार करनेके लिये
भेजे गये।

इधर शाहजहानने काबुलके शासनकर्त्ता महबूबखीको
शुमारोतिसे एक पत्र लिखा, कि "दाराशिकोह लाहौर जा
रहे हैं; वहाँ रुपये और चादमियोंकी कमी नहीं है
और न आपके समान साहसे और ही कोई है। इसलिए
आप अपनी सेनाके साथ दारासे मिलें और यहाँ आ कर
इन दोनों भवाध दुर्दान्त पुत्रोंका शासन कर छह सम्म्राट्
का उद्धार करें।"

सुराद और औरङ्गजेब दाराको खोजते हुए मथुरा
पहुँचे और वहाँ पड़ाव डाल दिया। इसी समय एक
दिन (४थी सवालकी) औरङ्गजेबको तथा भार बहन
ससद्द हो सठा; उन्होंने सुरादको अपने तम्बूमें खोता दे
कर सुलाया और खूब शराब पिला कर धोखेमें उन्हें
कैद करके बाथी पर चढ़ा कर साखिनगढ़के किल्लेमें भेज
दिया। साथ ही लोगोंको सम्बोधन हो इस खयालसे,
हीन हाथो सज्जा कर बाकी तीनों दिशाओंमें भेज दिये।
पेछे उनका धनराशि सर्वस्व हरण कर लिया।

इसी बीचमें दाराने लाहौर आ कर राजकीयागारमें
करीब एक करोड़ रुपये प्राप्त किये और भूमिरोसे भी
उन्हें काफी सहायता मिली। अब वे सेना एकट्ठे करने
लगे। अंश १०८८ हि० में ११वीं जूनकद (ता० २२
जुलाई १६५८ ई०) की औरङ्गजेब समुहर्तमें दिल्लीके
सिंहासन पर बैठ गये। परन्तु अपने नामके सिकी
खाना, विभिन्न देवीय राजाओंको उपहार देना और
अपने नामसे खतवा पदनामा आदि कार्य खगित रखे।

इधर सुलेमान-शिकोह पिताका पत्र पा कर उनसे
मिलने तथा औरङ्गजेबके हाथसे बचनेके अभिप्रायसे हरि-
द्वारके पास सेना-सहित गङ्गा पार कर लाहौरको तरफ
चल दिये। औरङ्गजेबको यह बात मालूम पहुँच ही,
उन्होंने बहादुरखीको उनके गतिरोधके लिए भेजा और
स्वयं नाहोकी और रवाना हुए। सुलेमानने गङ्गा पार
काबुलने पर सुना कि उनके विरुद्ध सेना पा रही है।

इस सम्वादने पाते ही उन्होंने कामाौर जानेका निश्चय
कर लिया और योनगरके पहाड़की सड़क पकड़ ली।
योनगरके राजा उन्हें सहायता भी दे सकते हैं, ऐसी
सुलेमानकी पाशा थी किन्तु ऐसा नहीं हुआ; बल्कि उन-
की निम्नकी सेनाने भी उनका साथ छोड़ दिया; सिर्फ
५०० अम्बारोही मात्र उनके साथ रहे। आखिरकी सुजे-
मान इलाहाबाद लौट आये और वहाँ बीमार पड़ गये।
बोमारोको हालतमें और भी कुछ अनुचरोंने उनका साथ
छोड़ दिया। सुलेमानको डर था कि कश्चे शत्रुके हाथमें
न पँस जाय, इसलिए वे कुछ दो सौ चादमियोंके साथ
फिर योनगर चल दिये। मार्गमें बाटगाह बेगमकी
जागोरके बीचसे जाते समय उन्होंने अपने टोषानसे २
लाख रुपये लिये और उनका मकान चूट लिया। भस्ममें
उन्हें मार भी डाला। इस अवसरसे क्रुद्ध हो कर समस्त
अनुचरोंने उनका साथ छोड़ दिया; सिर्फ महम्मद
शाह कोका अकेले उनके साथ रहे। योनगर पहुँचने पर
वहाँके राजाने घनादि ले कर दूध एक तरफसे काँदीकी
हालतमें रक्खा। बहादुरखीको मालूम होते ही, उन्होंने
राजाकी लिख भेजा कि "बन्दोकी सेनाकी रक्षकतामें
हमारे पास भेज कर आप आगरा चले आइये।"

भमल-श-शानीके मानिये मालूम होता है कि योनगर-
के राजाने सुलेमान शिकोहको बन्दी कर अपने पुत्रके
साथ बहादुरखीके पास भेज दिया था और बहादुरखीने
उन्हें नवीन सम्म्राट् (औरङ्गजेब) के सामने उपस्थित
किया। सम्म्राट्ने उन्हें खालियर-दुर्गमें रख कर कदुर
(पोम्हार शरदत-मृदु विष) खिलानेके लिए आदेश
दिया।

इसी समय अलीनकोके पुत्रोंने सुरादके नाम पर पिछ-
हत्याकी खालिख की। औरङ्गजेबने सम्म्राट्की हैसियतसे
उन्हें खालियर जा कर खूनके बदले खून सेनेका
आदेश दिया। सुराद इस समय खालियरके किल्लेमें कैद
थे। काजो खोग सुरादके दोषानुसन्धानमें प्रवृत्त हुए। इस
पर सुरादने कहा—“सुम्हें क्या सेनेसे राज्यकी कुछ हासिल
नहीं होता। परन्तु यदि सम्म्राट् ही बन्दोकी बखाना
नहीं चाहते, तो फिर क्या पाठम्बरकी क्या आवश्यकता
है? मेरे भाग्यमें जो कुछ है, सोने दो।” अलीनकी

दिवा गन्धा है, वह दारुचीनी चीनी के कपूर के क्लिप्त-
में बहुत ज्यादा सुगन्ध रहती है। हिन्दुस्तानमें इसके
फल देहरादून, नोनगिरि आदि स्थानोंमें खगाए गये हैं।
पहले चीन देशमें इसकी सुगन्धित छाल धातो धो,
इससे उसे दारुचीनी कहते लगे।

यूरोपीय चिकित्सकों के मतसे दारुचीनीका गुण—
सुगन्ध, उत्तेजक, शयुनाशक, उदराधान, उदरगूल,
अंतर्हृत्को पासेपजनक पोड़ा, वल्लहारक उदरामय,
पाकस्थलोका प्रदाह, रजसाधिक्य आदि रोगोंमें विशेष
उपकारी है। दन्तगूल और जिह्वाके लिए यह अत्यन्त
तेजस्वर है। आमाशयरोगमें भी १ ग्राम दारुचीनीके
चूर्णका प्रयोग विशेष फलप्रद है।

दारुण (सं० पुं०) दारुणी जायते कम्भटः। १ मर्दल वाद्य-
भेद, एक प्रकारका बाजा। (त्रि०) २ काष्ठनिर्मित,
लकड़ीका बना हुआ। ३ काष्ठसे उत्पन्न, लकड़ीमें पैदा
होनेवाला।

दारुण (सं० पुं०) दारुणतीति दृ-णिष्-च्च्। १ विशद-
वृक्ष, चीतका पेड़। २ भयानक इस। ३ रौद्र नामक
नक्षत्र। ४ विष्णु। ५ शिव। ६ एक नरकका नाम।
७ राक्षस। (त्रि०) ८ विदारक, फाड़नेवाला। ९ भोषण,
घोर। (सं० दुःसह, प्रचण्ड, कठिन।

दारुणक (सं० स्त्री०) दारुणयत् कायतीति क-क।
महाकाजत उदर रोगविशेष, शिरमें होनेवाला एक
उदरोग जिसमें चमड़ा खुल होकर सफेद भूरीकी तरह
छूटता है, इसी। वायु और कफ कुपित होकर मस्तक-
के स्थानमें जा कर आश्रय लेता है, तब देशभूमि कण्ड-
युक्त, रक्त और कर्कश हो जाता है, अर्थात् ऊपरका
चमड़ा खुलने लगता है, इसीको दारुणक कहते हैं।
इसकी चिकित्सा इस प्रकार है—पियारका बीज, यष्टि-
मधु, कुट्ट, उदर और सैन्धव इन सबकी मधुके साथ मिना
कर मस्तक पर लगाईये दारुणक रोग जाता रहता है।
गुल्फालके चूर्ण और सूँड़राजके रससे तेलकी पका
कर प्रयोग करनेसे भी कण्ड, और दारुणक कुष्ठरोग नष्ट
होता है। आमकी गुठली और हड्डके बराबर बराबर
भागकी दूधके साथ पीस कर उसका प्रलेप भी इस रोग-
का रामबाण है। (भाष्य०)

दारुणता (सं० स्त्री०) दारुणस्य भावः दारुण-तल,
खियां टाप्। दारुणका भाव, कठोरता।

दारुणा (सं० स्त्री०) १ तिथिभेद, चषय-वृत्तोया। २ नर्मदा
खण्डको पश्चिमातों देवी।

दारुणाम्बु (सं० स्त्री०) दुराम्बा, दुष्ट, खोटा।

दारुणादि (सं० पुं०) विष्णु।

दारुण (सं० स्त्री०) १ कावश्य, कुरता, कठोरता।
२ उग्रता, भोषणता।

दारुतोष (सं० स्त्री०) शिवपुराणीय तोषभेद।

दारुणतो (सं० स्त्री०) कठपुतली।

दारुणारो (सं० स्त्री०) कठपुतली।

दारुणिद्या (सं० स्त्री०) दारुणधाना निद्या हरिद्रा।

दारुहरिद्रा, दारुहृवदो।

दारुपत्रो (सं० स्त्री०) दारुणः देवदारुणः पत्रमिष पत्र-
मस्या, डोप्। हिङ्गुपत्रो।

दारुपात्र (सं० स्त्री०) दारुणः पात्रं वा दारुनिर्मितं
पात्रं। काष्ठ जलाधारादि पात्र, काठका बरतन। मनुने
यतियोंको अनाहुपात्र (तुमड़ी) और दारुपात्र रखनेका
विधान किया है।

दारुपोता (सं० स्त्री०) दारुणा काष्ठेन पोता, काष्ठ-
प्रधानत्वात् तयात्। दारुहरिद्रा, दारुहृवदो।

दारुपुत्रिका (सं० स्त्री०) दारुमयो पुत्रिका। काष्ठपुत्र-
निका, कठपुतली।

दारुफल (सं० पुं०) पिस्ता। (Pistachio)

दारुगुल्ल—अगुवाय। अगुवाय देखे।

दारुमय (सं० स्त्री०) दारुनिर्मितं दारु-मयट्। काष्ठ-
निर्मित, काठका बना हुआ।

दारुमुखाध्या (सं० स्त्री०) दारुमुख्यं पात्रयते स्पर्शते पा-
त्रे-पच। गोधा, गोह नामक जन्तु।

दारुमुच (सं० पुं०) एक खाद्यर विषका नाम।

दारुमुय (सं० स्त्री०) दारुप्रधाना मूया। दारुमोचाख्या-
विय, एक खाद्यर विषका नाम।

दारुयन्त्र (सं० स्त्री०) दारुमयं यन्त्रं। काष्ठनिर्मित यंत्र-
भेद, काठका बना हुआ एक योजार।

दारुपोषिता (सं० स्त्री०) कठपुतली।

दारुवध (सं० स्त्री०) दारुमयो वध, विषप्रतिमा

दोनो पुत्रोंके दो आघातसे सुराटको मृत्यु हो गई।
 इसमें बाद मृत्यु-विषको प्रभावसे सुलेमान-शिकोहकी
 मृत्यु होने पर सचा थोर भतो जे दोनोंको उसी किलेमें
 गाड़ दिया गया।
 बाद शत्रुको हस्तगत करनेके लिये दाराने उन्हें प्रति-
 श्रुति दी। भरो हुआ एक पत्र लिखा। शत्रुका भोः बड़े
 भाईको सहायता करनेके लिए टाकाने सेनाको संग्रह
 करने लगे। शत्रु दाराने साहोरे की अपनैकी सम्राट्
 रूपमें प्रसिद्ध करने तथा अपने नामसे सुदृढ़ सचानेका
 विचार किया। किन्तु ऐसा हो न सका। कारण इसी
 बोचमें साहोरेके लोगोंकी मालूम पड़ गयी कि शौरज्जीव
 दिवांके सिंहासन पर बैठा गये हैं, इसलिए शत्रुहीने
 डरसे दाराका पक्ष छोड़ दिया।
 शत्रु शौरज्जीवके साथ सामुगढ़के युद्धमें पराजित
 हो कर महाराज यशवन्तसिंह अपने राजमें भाग गये।
 राजा हतयासको कल्याणको प्रधान महिषी थी।
 सामो युद्धमें पोट दिखा कर भाग पाये हैं, यह सुन कर
 महारानीने स्वामीका बड़ा तिरस्कार किया। महाराज
 यशवन्तसिंहने स्त्रीके द्वारा तिरस्कृत होने पर शौरज्जीव
 से समा मांगे। शौरज्जीवने महाराजको मार्ग ना
 खोकार कर भी, दरबारमें उपस्थित होने पर सम्राट्ने
 उन्हें धनादि द्वारा संवर्धित किया। शौरजनकी मतसब-
 दारी (अखारोही सेनाका नायकत्व) उन्हें ही वापस
 दे दी।
 शौरज्जीवके पक्षाधीनकी तरफ भय डर होने पर दारा-
 शिकोह डर गये। एक तो पदसे ही शौरज्जीवके नामसे
 डर कर बहुतसी सेनाने चन्का साथ छोड़ दिया। दूसरे
 फिर सेना एकट्ठ होने से पदसे ही दिसोकी बड़ी सेनासे
 युद्ध होने की सम्भावना देख, वे एक हजार अखारोही
 शौरको के कर द्वा शौर सुलेमानकी तरफ चला दिये।
 शौरके सिनास काफ़ी दूरी पर शौरज्जीवकी गति रोकने के
 लिए आगे बढ़े। शौरके आगे बढ़ने पर दारा दे गये कि
 शौरको के आगे बढ़ने पर दारा दे गये कि
 शौरको के आगे बढ़ने पर दारा दे गये कि

नामें लुकी करवा जला कर नष्ट कर दे। कुछ दिन
 बाद शौरज्जीवने सुलेमानके पास दाराको नदीके
 किनारे पड़ाव डाल दिया है, यह सुन कर दारा
 कर भकर नामक स्थानमें चले गये।
 इसी बीचमें संवाद आया कि सुलेमानकी सेनात
 शत्रुको परास करके आ रहे हैं। शौर सम्राट्ने यह
 सुनकर सुलेमान सेनाका पोछा कर रहे हैं। शत्रु इसी समय
 दाराकी ओर भोः कुछ सेनाने साथ छोड़ दिया। दाराको
 बांध हो कर धनराशि टाका कुछ भय प्रभाव करने की हुना
 पड़ा शौर महामुक्ति के बोचसे विविधान नामक स्थानको
 अस्थान करना पड़ा। शत्रु शौरने चन्का पोछा किया।
 शत्रुमोर जब उनके बिलकुल पास पहुँच गये तब दारा
 शिकोह शत्रु हजार अखारोहियोंके साथ पड़मदाबाद चले
 गये। शत्रुमोरकी सेना भी जलाभाद शौर प्रयत्नान्तिके
 कारण बस हो गई थी। शत्रु शिकोहकी साथ भाग
 लीयोंको मृत्यु हो जानेसे अधिकारी सेना पैदल
 चलने लगी।
 इसी समय शौरज्जीवने सुलेमानकी दाराशिकोह
 कच्छके रास्ते से पड़मदाबादके सहित पास पड़े।
 है शौर मार्गमें लुकी हो शत्रु हजार अखारोही सेना
 संग्रह को है। शत्रुमोरने जब देखा कि दाराका पोछा
 करना व्यर्थ है, तब वे पक्षाधीनके रास्ते से लोट पड़े।
 मार्गमें साहोरे के आसनकत्ती समीरखाने सम्राट्के
 आदेशानुसार सलोमगढ़से सुपाहकी चन्का साथ स्वाधि-
 यर दुर्गको भेज दिया। वहाँ उनके भाग्यमें जो बड़ा
 था वह पड़मदे ही लिखा था।
 शत्रु दाराशिकोहके कच्छके जमींदारकी रूपसे दे
 कर वधमें कर लिया। शौरजनको कच्छके साथ सपने
 पत्र लिखे शौर (मकोर) शिकोहका विवाह करने का
 वचन दिया। कच्छके असोन्दारने अपने आदेशियोंके
 साथ उन्हें पड़मदाबाद भेज दिया। वहाँ पड़मदे पर
 शौरज्जीवके शत्रु आहतवाला चले। चन्का साथ शौर मित्र
 शौर सुरादवन्का रुखा हुआ करोव दश लाख रुपयेका
 चांदो सोना उन्हें दे दिया। मान हाथमें पड़ने की
 दाराको फिर तब सचय करना प्रारम्भ कर दिया। दारा
 के जब तबुल सेनाप्रतियोंने शौर शौर सरत का

दारुमयो वह रिव या । १ काष्ठपुसिका, कठपुतली ।

२ काष्ठमयो स्त्री प्रतिमा ।

दारुवह (मं० वि०) दारु-वहति वह-भच् । दारुवाहक, लकड़ो देनेवाला ।

दारुधर (सं० पु०) दारुधु धारः श्रेष्ठः । चन्दन ।

दारुसिता (सं० स्त्री०) दारुणि सितेव । शुद्धत्वक, दारु-चोरो ।

दारुहरिद्रा (सं० स्त्री०) दारुप्रधाना हरिद्रा । खनाम-स्थित वृचविशेष, (Curcuma xanthorrhiza) दारु-हलदी । इसका पर्याय पोतद्रु, कालयेक, हरिद्र, दार्वी, पचम्पचा, पर्जन्या, पीतिका, पीतदारु, स्थिराग, कामिनी, कटहट्टेरो, पर्जन्या, पीता, दारुनिशा, कालीयक, काम-वतो, दावपीता, कर्कटीनी, दारु, निशा और हरिद्रा है । यह हिमालयके पूर्व भागसे ले कर आसाम, पूर्व बङ्गाल और तैनामरिम तक होता है । इसमें सफेद फूल गुच्छोंमें लगते हैं । एक प्रकारका पीला रंग इसके जड़के क्लिकके निकलता है । इसको कड़ और डंठलका रंग पोलो होता है ; इसीसे इसका नाम दारुहलदी पड़ा है । यद्यपि यह हल्दी जातिका नहीं है । यह दवाके काममें आता है । इसका गुण-तिक्त, कटु, उष्ण, व्रण, मेह, कण्डू, विसर्प, त्वग, दोष और चतुर्दाप नाशक ।

दारुहलक (सं० पु०) हस्त इव । प्रतिकृतिः कन् । इव-प्रतिवृत्ति । पा ५।३।८६ दारुणो हस्तकः । काष्ठ निर्मित हस्त, काठका बना हुआ हाथ ।

दारु (फा० स्त्री०) १ शीघ्र, दवा । २ मद्य, शराव । ३ वायु ।

दारुकार (फा० पु०) शराव बनानेवाला, कलवार ।

दारिल (दारल) —सिन्धुनदीके पश्चिमकूलवर्ती एक प्राचीन प्रदेश । बहुत प्राचीनकालमें दारिलनगरमें उद्यान राज्यको राजधानी थी । दारुगण इस प्रदेशके प्राचीन अधिवासो थे । इसीसे इसका नाम दारिल पड़ा है । बोहोक प्रादुर्भावके समयमें दारिल अत्यन्त शक्तिशाली था । लोगयात्री फाहियान और युएनचुयंग इस देशको देखने आए थे । इस देशमें नाम रखा है । उन्हींने यहाँ १०० यु बोधिसत्वकी एक बड़ी

युएनचुयंगने इसे उज्ज्वल श्वव वर्णमें रक्षित एवं भना-किक-गुणसम्पन्न बतलाया है । प्रयाट है, कि मथान्तिऊ नामक एक मनुष्यने बोधिसत्वकी तत्त्वावधानमें इस विशाल मूर्त्तिको निर्माण किया था । निर्माताको भावो बोधिसत्व मैत्रेयका आकार प्रकार सूक्ष्मरूपमें दिखाने के लिए मथान्तिऊ-उसे तीन बार तृपित नामक चतुर्थ स्वर्गमें ले गए थे । स्वपतिने वहाँ मैत्रेयकी मूर्त्ति देख कर उसी प्रकारकी दीर्घ आकारमकारादियुक्त काष्ठ-मयो मूर्त्ति बनाई ।

दारोगा (फा० पु०) : १ प्रवन्ध, करनेवाला चफसर ।

२ पुलिसका एक चफसर जो किसी धाने पर अधिकारी हो, धानेदार ।

दारोगाई (फा० स्त्री०) दारोगाका काम वा पद ।

दार्धसत्र (सं० वि०) दीर्घसत्रे भवः दीर्घसत्र-पण्य ततो प्रायश्चित्तात् (देविकाधि) शेषेति । पा ५।३।८६ दीर्घसत्र-यागोत्पन्न, उस यज्ञका जो बहुत दिनों में समाप्त हो ।

दार्जिलिंग—१ बङ्गालके लेफ्टिनेण्ट गवर्नरके शासनाधीन राजशाही कोचबिहार विभागके उत्तरभागका एक जिला । यह अक्षा० २६ ३१ से ३७ १३ स० और देशा० २७ ५८ से ८८ ५३ पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण ११६४ वर्ग मील है । यहाँको लोकसंख्या प्रायः २४८११७ है । इसमें दो शहर और ५६८ ग्राम लगते हैं ।

यह जिला दो भागोंमें विभक्त है—एक भाग पार्श्वतीय और दूसरा भाग तराई वा पर्वतके तलदेशकी, यहाँमें लोग मोरङ्ग कहते हैं । तराई प्रदेश असाधारण-कर है ।

इस जिलेकी समतल क्षेत्र समुद्रपृष्ठसे सिर्फ १०० फुट ऊँचा है, किन्तु उसकी बगलसे ही गिरिमांसा ६००० से १०००० फुट तक ऊँचा चढ़ो है । उसकी पार्श्वभूभाग समुज्ज्वल तुपारमण्डित है । पृथ्वीमें सबसे चबलागिरि और काश्चनजङ्गल इस तुपारमय मितो है । इस पार्श्वतीय प्रदेशमें १२ जैम श्यामल लष्णादि देखे जाते हैं । और

हृत् और देवदारु, निकट मूषवान् शान-

भट्टों 'गादि बन्दों' पर अपना कब्जा कर उसके चारों तरफका प्रदेश भी अधिगत कर लिया। पांच सप्ताहके भीतर दाराने और २० हजार शस्त्रागोष्ठी इकट्ठे कर लिए। फिर क्या था, दाराने जोजापुर और हैदराबादके शासनकर्त्ताओं रुपये और सेना भेजनेके लिए लिख दिया।

इसी बीचमें महाराज यशवन्तसिंह फिर बुन्देलपुरसे सुगल दरबारसे निकाले गये। राजाके साथ युद्ध करने गये थे, किन्तु वहाँ जा कर वे राजासे मिल गये। पीछे राजाके परास्त होने पर यशवन्तसिंह चपमानित हो कर दक्षिणकी ओर भाग गये। दाराको धाशा थी कि ये चपमानित राजपूत और संवाद पाते हो उनका साथ दे सकते हैं। किन्तु वे सुगल दरबारमें पुनः अपना विश्वास कायम करनेके अभिप्रायसे फिर एक विश्वासघातकताके कार्यमें प्रवृत्त हो गये। दारा जब दक्षिणके नवगठित सैन्यदलोंके कैंप आगे बढ़े उस समय यशवन्त सिंहने पत्र द्वारा उनको सूचना दी कि 'मैं आ कर आपका साथ दूंगा।' और राजाजीको इस बातका पता लगते ही वे भजमेरकी ओर चल दिये। मिर्जा राजा जयसिंहने इस समय महाराज यशवन्तसिंहको तरफसे उनकी समा प्रदान करनेके लिए और राजाजीसे बहुत कुछ अशुभ किया था। और राजाजीने उनकी बात मान ली। राजा यशवन्तसिंह दारासे मिलनेके लिए जोधपुरसे २० कोस आगे चले गये थे; उक्त सम्वादके मालूम पड़ने ही वे लौट पड़े और अपने राज्यामें चले आये। दाराने यशवन्तको अपने पक्षमें लानेके अभिप्रायसे देवचन्द नामक एक ब्राह्मणको दो बार तथा सकोर-शिकोहको एक बार उनसे पास भेजा; परन्तु राजाने वाकालास फैला कर उन्हें स्तोकवाक्योंसे शूना दिया।

साहाय्य-विरहित हो कर दाराने भजमेरकी पर्वत-मालाकी चारों तरफसे सुरक्षित स्थानोंकी व्यवस्था की और स्वयं बीचमें रहने लगे, जितने भी पारस्य पय गये थे, सब पत्थर डलवा कर बन्द कर दिये। बीच बीचमें बन्दूक-धारियोंको रख छोड़ा था और कहीं कहीं तोपें भी बैठा दी थीं। और राजाजीके मालूम पड़ने

हो, उन्होंने अपनी सेनाको तोपें भेज कहना भेजा कि जिस तरह ही दाराका व्यूह तोड़ा। तीन दिन तक भीषण युद्ध होता रहा, पर दाराको सेना इस ठंगसे लगे हुई थी कि इन तीन दिनोंमें उनकी विशेष कुछ हानि नहीं हुई। दाराको हथियारों सेना सहसा पाक-मणकारी शब्द के सामने आती और उन्हें हिस भिष करके तुरन्त अपने जगहमें हिय जातो थे। चौथे दिन और राजाजीने सेनापतियोंको बुला कर चर्चावित किया और उन्हें सम्मान संवर्धना का लोभ दे कर, यासुनने कर्मोंद्वारा राजा राजकुमारों प्रथम पाकमणका भार दिया। राजकुमार एक दस माहसो प्यादोंके साथ दाराके सैन्यशूहके पीछे एक छोटेसे पर्वतगिर पर जा कर सुगल-सम्वादको पताला उड़ा दी। दाराके सेनापतिमण यह नहीं जानते थे कि उस स्थान पर आ कर ग्रन्थ, किसे दिन उन पर हमला कर देंगे। कुछ भी हो, राजा राजाकुमार पीछेसे आ कर शाहनवाजखानों पर चढ़ाई कर दी। शाहनवाजके दलके सम्मुखभाग पर जब सेछ और और चपमान-और दिलोरख दोनोंने एक साथ पाक-मण किया, तो वे परास्त हो गये और दामादके युद्धमें परास्त हो जानेके चपमानसे च्युत हो कर युद्धक्षेत्रमें ही उन्होंने अपने प्राण तन दिये।

दारा पराजय और शाहनवाजके प्राण-विषजनका हाल सुन कर सहसा भग्न-हृदय हो पड़े और पुत्र सकोर-शिकोह और फिरोज सेवानो तथा और कुछ भन्तापुर-चारिणोंको साथ ले भाग गये। कुछ हफ्ते कोमतो मणि-माणिकोंके सिवा वे अपना सब कुछ वहीं छोड़ गये और चढमदावादकी तरफ चयसर हुए। जब तीन घण्टे रात बीत चुकी, तब और राजाजीने सुना कि दारा भाग गये। उस समय भी दाराको कोई कोई चपवर्त्ता सेना बुद्ध कर रहे थे। राजा जयसिंह और बहादुर खाने एक दल सेना ले कर उनका पीछा किया। दाराके पांच कोस आगे बढ़ जाने पर उनके कर्मचारियोंमें परस्पर विवाद हुआ और उनकी धनराशिमें से जिसके हाथ जो पड़ा लेकर चम्पत हो गया। शिष्टोंकी रक्षाके लिए जो खीला नियुक्त थे, वे भी उनका कुछ न कर सके; शिष्ट शिष्टोंकी रक्षा करते रहे। परन्तु इन अकृतम सुट्टेरीने

तराई अंग्रेजों में पहली मनेरिया छत्रका विशेष प्रादुर्भाव था। मेच, धोमस, धोर कोच जातिके लोक जङ्गल जला कर उसमें खेतो करते थे। यमो चाय और खेतोबारोके लिये अधिकारी जङ्गल परिष्कार किया गया है।

हटियाधिकृत भूभागमें यहाँ निम्नलोवा पहाड़ ही सबसे ऊँचा है, इसके बहुतने ऊँचे शृङ्ख हैं, जिनमेंसे फलासुम १२०४२ फुट, सुगाँव १०४१० फुट और तङ्गु १००८४ फुट ऊँचा है।

इतिहास - पहले यह जिन्ना निक्किम राज्यकी अन्तर्गत था। गोरखाको राजा प्रयोनारायण जिन समय प्रभूत निक्किमसे नेपाल अधिकार कर अपना राज्य विस्तार करनेको प्रयत्न हुए थे, उसी समय निक्किमके राजाने राज्यच्युत हो कर हटिया गवर्मेण्टको शरण ली थी। इसमें कई वर्ष बाद नेपालके साथ अङ्गरेजोंको लड़ाई हुई। १८१६ ई०में नेपाल राजाने पाल्ता हो कर हटिया सेनापति सरथेभिङ अङ्गरेजोंके साथ सन्धि पर भी। इस सन्धित्त अनुसार निक्किम और उसको दक्षिणार्ध हटियागवर्णनाधोन हुआ। हटियागवर्मेण्टने निक्किम राज्य प्रकृत खलाधिकारीको चरण किया। इसी समयसे निक्किम अङ्गरेजोंके मित्र राज्योंमें गिना जाने लगा। १८१४ ई०को राज्यसोमके लिये नेपाल और निक्किममें विवाद उपस्थित हुआ। अङ्गरेजोंने गवर्नर जेनरलके प्रतिनिधिरूप विवाद निवटा दिया। इस समय थोड़े साइवने निक्किम राज्यकी सूचना दे, कि गवर्नर जेनरल दार्जिलिङ्गके जलवायुका गुण अच्छी तरह पाने के हैं; यदि दार्जिलिङ्ग उन्हें दे दिया जाय, तो वे बहुत खुश होंगे। इस पर १८२५ ई०में निक्किम राजाने दार्जिलिङ्गका पार्यतोय अंग्रेजोंको सङ्गी रजित नदीका दक्षिण-भाग, कालियल, रूसी (बलासन) और छोटी रजित नदीका पूर्वभाग तथा रानाघु और महानन्दा नदीका पश्चिमभाग दत्त दण्डिया कम्पनीको प्रदान किये। उसी थोड़ेसाइवने दार्जिलिङ्गमें पहाड़ काट कर रास्ता निकाल दिया। जिससे जाने पानेको बहुत सुविधा हो गई है। रेलपथ होनेके पहले इसी पथ हो कर लोग दार्जिलिङ्ग जाते थे। प्रिलियुडोसे

दार्जिलिङ्ग पानेके रेलपथको बनानेमें उस पहाड़ी रास्ता देखा जाता है। यमो वह रास्ता केवल भूटिया लोगोंके काम आता है।

उक्त पथ प्रसृत करके थोड़े साइवने सिधल पहाड़में सैनिक मित्र बनाना तथा भूमि आदिका बन्दोबस्त और विचारानयादि स्थापन किया। पोले उन्हीके यत्ने १८२८ ई०में हटिया गवर्मेण्टने नेपालराजासे बलासन और छोटी रजित नदीका पश्चिमार्ध तथा मेचो नदीका पूर्वार्धस्थित भूखण्ड पाया। थोड़े ही दिनोंमें दार्जिलिङ्गको और बङ्गालके राज पुर्वासां हटिया आकर्षित हुई और वह अङ्गरेज यूरोपीय सैनिकोंके सेना निवासमें गिना जाने लगा। इस समय बहुतने घर आदि बनानेके लिये जमोन बन्दोबस्त कर ली, तब भी दार्जिलिङ्गमें चायको खेती प्रचलित नहीं हुई। डाक्टर हुकार हटिया गवर्मेण्ट तथा निक्किमके राजाका आदेश लेकर दार्जिलिङ्गमें सुपरिण्डेण्ट डाक्टर क्लायलके साथ निक्किमराज्य ली गये। यहाँ से राज-मन्त्रीके पदस्थले केन्द्र कर लिये गये। उन लोगोंके अपमानका बदला चुकानेके लिये एक दल हटियासेन्य भेजा गया। हटियागवर्मेण्ट निक्किम-राजको प्रतिनयन रूपया भेजता था, वह भी बन्द कर दिया। इस समय निक्किमको तराई नेकर प्रायः ६४० वर्ग मील जमोन हटियागवर्णनाधोन हुई; पुनः भूटानपुङ्गके बाद १८६४ ई०में तिब्बत नदीके पूर्व पार्यख सभी पार्यतोय भूभाग दार्जिलिङ्गमें मिला दिये गये। यमो निम्निराजके साथ हटिया-गवर्मेण्टको गाढ़ी मित्रता है। निक्किम-राज दार्जिलिङ्गके डिपुटिकमिन्टरकी सलाह ले कर सभी काम करते हैं। हटिया गवर्मेण्टने राजकी वार्षिक हस्त बढ़ा कर यमो १२००० रु० स्थिर कर दिये हैं।

आस्थावासके कारण दार्जिलिङ्गको लोकप्रिया धीरे धीरे बढ़ती जा रही है। विशेषतः नोर्दन-बेङ्गाल स्टेट-रेलवेके हो जानेसे बङ्गाली यूरोपीय लोग निम्न-गैलकी अपेक्षा दार्जिलिङ्गको हो विशेष पसन्द करते हैं।

१८५६ ई०को दार्जिलिङ्गमें सबसे पहले चायके बगीचे लगाये गये। थोड़े ही दिनोंमें यहाँकी चाय सर्वत्र प्रसृत हो जानेसे चायको खेती बहुत बढ़ गई है,

दारुमयो बधिरिव वा । १ काष्ठपुत्तलिका, कठपुत्तलो ।

२ काष्ठमयो स्यो प्रतिमा ।

दारुवष्ट (मं० त्रि०) दारु-वष्टमि वष्ट-प्रचु । दारुवाष्टक,
लकड़ो टोनेवाला ।

दारुमार (सं० पु०) दारुपु मारः श्रेष्ठः । चन्दन ।

दारुमिता (मं० स्त्री०) दारुणि मितिव । गुडूलक, दार-
चोनी ।

दारुहरिद्रा (सं० स्त्री०) दारुप्रधाना हरिद्रा । खनाम-
ख्यात वृक्षविशेष, (*Careuma xanthorrhiza*) दारु-
हनदी । इसका पर्याय घेतद्रु, कालयेक, हरिद्रु, दार्वी,
पचम्पवा, पर्जनो, पीतिका, पीतदारु, स्थिरशग, कामिनी,
कटहट्टरो, पर्जन्या, पीता, दारुनिशा, कालीयक, काम-
बतो, दारुपीता, कर्कटीनी, दारु, निशा और हरिद्रा है ।
यह हिमालयके पूर्व भागमें ले कर आसाम, पूर्व बङ्गाल
और तेनासरिम तक होता है । इसमें सफेद फूल गुच्छोंमें
लगते हैं । एक प्रकारका पीला रंग इसकी जड़की क्लिष्टकमें
निकलता है । इसको जड़ और उठलका रंग पीली होता
है, इसीसे इसका नाम दारुहल्दो पड़ा है । यद्यार्थमें यह
हृन्दी जातिका नहीं है । यह दक्षिण काममें आती है ।
इसका गुण-तिक्त, कटु, उष्ण, त्रिष, मेह, कण्डू, विसर्प,
त्वग्, दोष और पित्त दोष नाशक ।

दारुहस्तक (सं० पु०) हस्त इव प्रतिप्रतिः कन् । श्वे-
प्रतिप्रति । पा ५।१।८६ दारुणो हस्तकः । काष्ठ निर्मित
हस्त, काठका बना चुन्नी हाथ ।

दारु (फा० स्त्री०) १ शीपध, दवा । २ मद्य, शराब । ३
बादल ।

दारुकार (फा० पु०) शराब बनानेवाला, कलवार ।

दारिल (दारल)—सिन्धुनदीके पश्चिमकूलवर्ती एक प्राचीन
प्रदेश । बहुत प्राचीनकालमें दारिलनगरमें उद्यान राज्यको
राजधानी थी । दारदगण इस प्रदेशके प्राचीन अधिवासो
थे । इसीसे इसका नाम दारिल पड़ा है । बोदोके
प्रादुर्भावके समयमें दारिल शब्लक भीमाग्यशाली था ।
चोगवात्रो फाहियान और गुएनचुपङ्ग दोनो ही इस
देशको देखने आए थे । फाहियानने दारिलका तो-नि
नाम रखा है । उन्होंने यहाँ १०० फुट ऊँची मैत्रेय
बोधिसत्त्वकी काष्ठनिर्मित एक बड़ी मूर्ति देखी थी ।

गुएनचुपङ्गने इसे उज्ज्वल खव वर्णमें रक्षित एवं कला-
किक गुणसम्पन्न बतलाया है । प्रवाद है, कि मथानिक
नामक एक मनुष्यने बोधिसत्त्वके तत्त्वावधानमें इस
विशाल मूर्ति का निर्माण किया था । निर्माताकी भावो
बोधिसत्त्व मैत्रेयका आकार प्रसार सूक्ष्मरूपमें दिखलाने
के लिए मथानिक उसे तीन बार तृपित नामक चतुर्थ
स्वर्णमें से गए थे । स्वपतिने यहाँ मैत्रेयकी मूर्ति
देख कर उसी प्रकारकी दीर्घ आकारमकारादियुक्त काष्ठ-
मयो मूर्ति बनाई ।

दारोगा (फा० पु०) १ प्रवन्ध करनेवाला पक्षर ।

२ पुनिसका एक पक्षर जो किसी थाने पर अधिकारी
हो, थानेदार ।

दारोगाई (फा० स्त्री०) दारोगाका काम वा पद ।

दार्घसत्र (सं० त्रि०) दीर्घ सत्रे भवः दीर्घ सत्र-प्रश्न, ततो
आद्य च आत् (देविकाधि-कयेति । पा ५।३।८६) दीर्घ सत्र-
यागोत्पन्न, उस यज्ञका जो बहुत दिनों में समाप्त हो ।

दार्जिलिङ्ग—१ बङ्गालके लेफ्टिनेण्ट गवर्नरक आसना-
धीन राजशाही बोधविहार विभागके उत्तरभागका एक
जिला । यह प्रचा० २६ ११ से ३० १३ उ० और
देशा० २० ५८ से ८८ ५३ पू०में अवस्थित है ।
भूपरिमाण ११६४ वर्ग मील है । यहाँकी लोकसंख्या
प्रायः २४८,११७ है । इसमें दो शहर और ५६८ ग्राम
लगते हैं ।

यह जिला दो भागोंमें विभक्त है—एक भाग पाईतीय
और दूसरा भाग तशई वा पक्षतके तलदेशकी, यहाँमें
लोग मोरङ्ग कहते हैं । तराई प्रदेश अस्वास्थ्य-
कार है ।

इस जिलेकी समतल क्षेत्र समुद्रतलसे सिर्फ १००
फुट ऊँचा है, किन्तु उसकी बगलसे ही गिरिमांता
६००० से १०००० फुट तक ऊपर चढ़ी है । उसका
पार्श्वभूभाग समुज्ज्वल तुपारमण्डित है । पृथ्वीमें सबसे
ऊँची चोटो घबनागिरि और काखनजङ्ग इस तुपारमण्ड
प्रदेशके साथ मिली है । इस पार्श्वतोय प्रदेशमें १२
हजार फुट ऊँचेमें श्यामल ढगानादि देखे जाते हैं । और
उसके ऊपर तालीग्रपन्न जातिका वृक्ष और देवदारु,
पाइन आदि तथा समतलक्षेत्रके निकट मूल्यवान् गंध-
वृक्ष उत्पन्न होते हैं ।

महोंष 'भादि वन्दरों' पर पपना कक्षा कर उसके चारों तरफका प्रदेश भी दक्षिण कर लिया। पांच सप्ताह के भीतर दाराने चौर २० हजार घण्टागोड़ी इकट्ठे कर लिए। फिर क्या था, दाराने बोजापुर और देहराबाद के शासनकर्त्ताओं को रुपये चौर सेना भेजने के लिए लिख दिया।

इसो बीचमें महाराज यमवन्तसिंह फिर बुद्धिदोषसे मुगल दरबारसे निकलने गये। राजाके साथ युद्ध करने गये थे, किन्तु वहाँ जा कर वे राजासे मिल गये। पोलि राजाके परामर्श होने पर यमवन्तसिंह, प्रपमानित हो कर दक्षिण की ओर भाग गये। दाराको छाया यो कि ये प्रपमानित राजपूत चौर से वाद पाते हो उनका साथ दे सकते हैं। किन्तु वे मुगल दरबारमें मुगल प्रपना विग्राम कायम करने के प्रमियाये फिर एक विग्राम-चातकताके कार्यमें प्रवृत्त हो गये। दास जब दक्षिण के लवंगठित सेनादलको ले कर भागे बढ़े उस समय यमवन्त सिंहने पत्र द्वारा उनको सूचना दी कि "मैं भा कर आपका साथ दूंगा।" चौरङ्गजीबको इस बातका पता लगते ही वे अजमेरकी ओर चल दिये। मिर्जा राजा जयसिंहने इस समय महाराज यमवन्तसिंहको तरफसे उनको सम्राट् प्रदान करने के लिए चौरङ्गजीबसे बहुत कुछ प्रशंसा किया था। चौरङ्गजीबने उनको बात मान ली। राजा यमवन्तसिंह दारासे मिलनेके लिए जोधपुरसे २० कोस भागे चले गये थे; उक्त सम्वादके मालूम पड़ने हो वे लौट पड़े और अपने राजासे चले आये। दाराने यमवन्तको अपने पक्षमें लाने के प्रमियाये देवचन्द नामक एक द्राष्टाणकी दो बार तथा सत्तोर-शिकोहकी एक बार उनसे पास भेजा; परन्तु राजाने बाक जाल फैला कर उन्हें श्लोकवाचोंसे भुना दिया।

साहाय्य-विरहित हो कर दाराने अजमेरकी पर्वत-मालाकी चारों तरफसे सुरक्षित रहनेकी व्यवस्था की और स्वयं बीचमें रहने लगे, जितने भी पार्वत्य पय गये थे, सब पत्थर डसवा कर बन्द करा दिये। बीच बीचमें बन्दूक-धारियोंकी रक्त छोड़ा था और कहीं कहीं तोपें भी बैठा दी-थीं। चौरङ्गजीबको मालूम पड़ते

हो, उन्होंने अपनी सेनाको तोपें भेज कटका मित्रा कि जिस तरह हो दाराका ब्यूह तोड़ो। तीन दिन तक मोपण युद्ध होता रहा, पर दाराको सेना इस ढंगसे मगो हुई थी कि इन तीन दिनोंमें उनकी विप्रेय कुछ हानि नहीं हुई। दाराको कियो हुई सेना सहसा पाक-मणकारी शत्रु के सामने आती चौर उठे" ह्वि भिष करके तुरंत अपनी जगहमें ह्वि जाती थी। चौथे दिन चौरङ्गजीबने सेनापतियोंको बुला कर उत्साहित किया और उन्हें सम्मान सर्वश्रमा का मोम दे कर, यामुनसे जमींदार राजा राजरूपको प्रथम आक्रमणका भार दिया। राजरूपने एक दस माहसो प्यादों के साथ दाराके सैन्यशुद्धके पोलि एक छोटेसे पर्वतशिखर पर जा कर मुगल-सम्बन्धको पता का उड़ा दी। दाराके सेनापतिगण यह नहीं जानते थे कि उस स्थान पर जा कर शत्रु, किछो दिन उन पर हमला कर देंगे। कुछ भी हो, राजा राजरूपने पोलिसे जा कर गह-नवाजखी पर चढ़ाई कर दी। गहनवाजके दलके सम्मुखभाग पर जब घेब मीर और अफगान-बोर दिलोरखी दोनोंने एक साथ आक्रमण किया, तो वे परास्त हो गये और दामादके युद्धमें परास्त हो जानेके प्रपमानसे सुख हो कर युद्धक्षेत्रमें ही उन्होंने अपनी प्राय तत्र दिये।

दारा पराजय और गहनवाजके प्राय-विचर्जनका हाल सुन कर सहसा भग्न-हृदय हो पड़े और पुत्र सफोर-शिकोह और फिरोज मेवाती तथा और कुछ पन्तःपुर-चारिणियोंके साथ से भाग गये। कुछ हफ्ते कोमती मखि-माखिकोंके सिवा वे अपना सब कुछ नहीं छोड़ गये और बहमदाबादकी तरफ प्रयसर हुए। जब तीन घण्टे रात बीत चुकी, तब चौरङ्गजीबने सुना कि दारा भाग गये। उस समय भी दाराको कोई कोई प्रयवर्त्ता सेना युद्ध कर रहे थे। राजा जयसिंह और बहादुर खाने एक दल सेना से कर उनका पीछा किया। दाराके पांच कोस भागे बड़े जाने पर उनके काम-चारियोंमें परस्पर विवाद हुआ और उनको धनराशिमें जिसके हाथ जो पड़ा, लेकर चम्पत हो गया। खियोंकी रक्षाके लिए जो खोगा नियुक्त थे, वे भी उनका कुछ न कर सके; सिर्फ खियोंकी रक्षा करते रहे। परन्तु इन अक्षतप्र सुट्टेने

तराई अंशमें पहले मलेरिया ज्वरका विशेष प्रादुर्भाव था। मच, भीमस, और कोच जातिके लोक जङ्गल जला कर उसमें खेतो करते थे। अभी चाय और खेतोबारोके लिये अधिकतर जङ्गल परिष्कार किया गया है।

हटियाधिकृत भूभागमें यहां गिल्लोला पहाड़ ही सबसे ऊँचा है, इसकी बहुतसे ऊँचे शृङ्ख हैं, जिनमेंसे फलालुम १२०४२ फुट, सुगावि १०४२० फुट और तङ्गलु १००८४ फुट ऊँचा है।

इतिहास—पहले यह जिला मिस्त्रिम राज्यकी अन्तर्गत था। गोरखाको राजा पृथ्वीनारायण जिम समय प्रभूत भिक्षुमें नेपाल अधिकार कर अपना राज्य विस्तार करनेको प्रयत्न हुए थे, उसी समय सिक्किमके राजाने राज्यभूत हो कर हटिया गवर्मेण्टकी शरण ली थी। इसमें कई वर्ष बाद नेपालके साथ अङ्गरेजोंको लड़ाई हुई। १८१६ ई०में नेपाल राजाने परास्त हो कर हटिया सेनापति साहेबिन्द्र अष्टरसेनकी साथ सन्धि कर ली। इस सन्धिके अनुसार मिस्त्रिम और उसकी दक्षिणार्ध हटियावासनाधोन हुआ। हटियागवर्मेण्टने मिस्त्रिम राज्य प्रकृत स्वत्वाधिकारोको अर्पण किया। इसी समयसे सिक्किम अङ्गरेजोंके मित्र राज्योंमें गिना जाने लगा। १८१४ ई०को राज्यसोमाके लिये नेपाल और सिक्किममें विवाद उपस्थित हुआ। मेजर ब्रयेडने गवर्नर जेनरलके प्रतिनिधिरूप विवाद निवटा दिया। इस समय ब्रयेड साहबने सिक्किम राज्यकी सूचना दो, कि गवर्नर जेनरल दार्जिलिङ्गके जलवायुका गुण अच्छी तरह पा चुके हैं, यदि दार्जिलिङ्ग उन्हें दे दिया जाय, तो वे बहुत खुश होंगे। इस पर १८१५ ई०में सिक्किम राजाने दार्जिलिङ्गका पार्यतोय अंश अर्थात् बड़ी रंजित नदीका दक्षिण-भाग, कालियल, कसी (बलासन) और छोटी रंजित नदीका पूर्वभाग तथा रंजाय और महानन्दा नदीका पश्चिमभाग इष्ट इण्डिया कम्पनीको प्रदान किये। उसी ब्रयेडसाहबने दार्जिलिङ्गमें पहाड़ काट कर रास्ता निकाल दिया। जिससे जाने आनेको बहुत सुविधा हो गई है। रेलपथ होनेके पहले इसी पथ को कर लोग दार्जिलिङ्ग जाते थे। गिल्लिङ्गोसे

दार्जिलिङ्ग आनेकी रेलपथको वर्तनमें उक्त पहाड़ो रास्ता देखा जाता है। अभी यह रास्ता केवल भूटिया लोगोंके काम आता है।

उक्त पथ प्रसृत करके ब्रयेड साहबने सिक्किम पहाड़में मैनिश शिविर बनाया तथा भूमि आदिका बन्दोबस्त और विचारानुयादि स्थापन किया। पोले लहोई यत्नमें १८२८ ई०में हटिया गवर्मेण्टने नेपालराजासे वशामन और छोटी रंजित नदीका पश्चिमार्ध तथा मेची नदीका पूर्वार्धस्थित भूखण्ड पाया। थोड़े ही दिनोंमें दार्जिलिङ्गको और बङ्गालके राज पुरुषोंकी दृष्टि आकर्षित हुई और यह अरुणख्य यूरोपीय सैनिकोंके सेना निवासमें गिना जाने लगा। इस समय बहुतोंने घर आदि आनिने लिये जमोन बन्दोबस्त कर ली, तब भी दार्जिलिङ्गमें चायको खेतो प्रचलित नहीं हुई। डाक्टर हुकार हटिया गवर्मेण्ट तथा मिस्त्रिमके राजाका आदेश लेकर दार्जिलिङ्गके उपरिगुण्डेण्ड डाक्टर क्वाथमनके साथ सिक्किमराज्यको गये। यहां वे राजमन्त्रीके पर्युम्हसे कैद कर लिये गये। उन लोगोंके अपमानका बदला चुकानेके लिये एक दल हटियासेन भेजा गया। हटियागवर्मेण्ट सिक्किम-राजको प्रतिवर्ष रुपये भेजता था, वह भी बन्द कर दिया। इस समय मिस्त्रिमको तराई लेकर प्रायः ६४० वर्गमील जमोन हटियावासनाधोन हुई; पुनः भूटानगुडके बाद १८१४ ई०में तिब्बत नदोके पूर्व पार्श्वस्थ सभी पार्यतोय भूभाग दार्जिलिङ्गमें मिला दिये गये। अभी मिस्त्रिमराजके साथ हटिया-गवर्मेण्टको गाढ़ी मित्रता है। मिस्त्रिम-राज दार्जिलिङ्गके हेयुटिंकमिन्ट्रकी सलाह ले कर सभी काम करते हैं। हटिया गवर्मेण्टने राजकी वार्षिक वसुलि वृद्धा कर अभी १२००० रु० स्थिर कर दिये हैं।

आस्थायावासके कारण दार्जिलिङ्गको लोकसंख्या धीरे धीरे बढ़ती जा रही है। विशेषतः नोर्दन-बङ्गाल स्टेट-रेलवेके हो जानेसे बङ्गालसे यूरोपीय लोग मिसना-गैलकी अपेक्षा दार्जिलिङ्गको हो विशेष पसन्द करते हैं। १८५६ ई०को दार्जिलिङ्गमें सबसे पहले चायके बगीचे लगाये गये। थोड़े ही दिनोंमें यहांको चाय सर्वत्र प्रसृत हो जानेसे चायको खेतो बहुत बढ़ गई है,

स्त्रियों के भी जबर सतार लिए, उन्हें एक हाथी पर बिठा दिया और उनके ऊँट से कर मरुभूमि के रास्ते से चम्पत हुए। खोजा-लोग उस हाथी से ले कर डेढ़ दिन बाद दारा से जा मिले। भृत्य-विरहित, द्रव्यादि लुण्ठित और अपदस्य दारा एक दल स्वयं, विषय, क्लिष्ट, अत्याचार-पीड़ित स्त्रियों की साथ ले मरुभूमि पार कर ८ दिन में अहमदाबाद पहुँचे। शहर के प्रधान व्यक्तियों ने, औरङ्गजेब की सम्मति के कारण उनके उर से, दारा की शहर में घुसने से रोक। भाग्यतादित दारा वहाँ भी इस प्रकार से अपमानित हो, नगराधिकार की भागा की छोड़ शहर से दो कौस की दूरी पर कारी नामक स्थान की चल दिये। इस जगह दुर्दास्त कोल-सर्दार फाज्जोने इनकी सहायता की और उन्हें साथ ले कर गुजरात के भीतर से कच्छ की सीमा तक पहुँच गये। कच्छ के जमींदार ने इससे पहले जिस प्रकार दारा की सहायता पड़ चाही थी, अबकी बार वैसा नहीं किया। पहले उन्होंने दारा की भाग्य-परिवर्तन के साथ साथ अपने भाग्य-परिवर्तन का भी मीजान लगाया था, परन्तु अबकी बार भाग्यहीन दारा से कुछ भागा करना व्यर्थ जान, उनके साथ मुलाकात तक भी नहीं की। दारा की चाँखों से चाँस गिरने लगे, वे उसी दश में भकर की चल दिये।

जो अब तक इतनी दुर्दशा में भी छाया की तरह दारा के साथ रहती थी, सिन्धु प्रदेश की सीमा में पहुँचते ही उसी फिरोज मेवाती ने जब देखा कि दुर्भाग्य दारा का पीछा न छोड़ेगा, तब वह भी उन्हें छोड़ कर दिल्ली की चल दी। दारा सिर्फ एक पुत्र को ले कर जावियान नामक स्थान में पहुँचे। वहाँ मरुभूमि के छत्तीनों कैद करने के अभिप्राय से इनका रास्ता रोक दिया। इनके साथ युद्ध करके दारा मकाओ जाति के देग में पहुँचे। इस जाति के सरदार मिर्जा मकाओ ने उन्हें आश्रय दिया और अपने बादमियों के साथ १२ दिन का रास्ता तय कर कन्दाहार पहुँचाना चाहा। मिर्जा मकाओ ने ईरान (फारस) जाने के लिए दारा से बहुत कुछ अनुरोध किया, पर दारा दिल्ली के सिंहासन का प्रपन्न न छोड़ सके थे; इसलिए उन्होंने कच्छ के पन्तर्गत दादर के जमींदार

मालिक जीवान के पास जाने की इच्छा प्रकट की। मालिक जीवान बहुत से विषयों में दारा से कतघ था, दाराने कई बार उसकी जान बचा दी थी और बहुतसा उपकार भी किया था। दारा के सपस्थित होने पर यह प्रतिधि-हनुन-कारो कृतन्न नरपण उन्हें अपने घर ले गया। यहाँ दो दिन रहने के बाद दारा की पत्नी नादिश बेगम और कन्या कुमारी परवेजन ने दुर्दशा और दुःखिता के कारण भामा-शय रोग में प्राण तज दिये। अबकी बार कच्छ में प्रवेग करते समय उन्हें के निष्पन्न क्रिये हुए सूरत और भड़ोच के शासनकर्त्ता गुल महम्मद ५० पञ्जाबियों और २५० बन्दूकधारियों के साथ आ कर मिले थे और यहाँ तक बराबर साथ थे। अब दुःख पर दुःख, विपत्ति पर विपत्ति, निराशा पर निराशा भोग कर दारा पांगत से हो गये थे। उनकी बुद्धि मारी गई थी। उन्होंने ऐसे मोके पर अपने एकमात्र सहाय गुल महम्मद की पत्नी और कन्या के मृत-शरीर के साथ लाहौर भेज दिया। विपत्ति के समय में एकमात्र विष्णु की वस्तु की दूर भेज कर कुछ नौकरों तथा चकमण्ड खोजा के साथ वहीं पहुँच रहे।

दूसरे दिन सुबह मालिक जीवान की सहायता से वे ईरान जाने के लिये तैयार हुए। मालिक ने तैयारियाँ भी कर दीं, कृतघ्नता की पानी में बहाकर धन पाने की भागा की बियाये वह कुछ दूर तक दारा के साथ भी गया; किन्तु पीछे से बहाना बतला कर वह लौट आया और अपने भाई के पक्ष में कुछ बहमाय बादमियों को उनके साथ छोड़ आया। कुछ दूर चल कर उस व्यक्ति ने दारा पर संवदा भावा कर उन्हें बन्दो कर लिया। इसके बाद मफीर शिकोह तथा अन्य व्यक्तियों को भी बन्दो कर बहु भाई के पास पहुँचा दिया। मालिक जीवान ने यह संवाद राजा जयसिंह और बहादुरखाने को भेजा। बहादुरखाने भकर के शासन कर्त्ता को यह संवाद शत्रु हो सम्मट के पास भेजने को कहा और उन्होंने स्वयं भी भेजा। दोनों जगह से संवाद पाने पर औरङ्गजेब की विश्वास हो गया, उन्होंने टोल पिठवा कर यह खबर चारों तरफ फैला दी। साधारण लोग मालिक जीवान पर विश्वासघातकता के कारण बड़े विगड़े और उसे घिन्न करने लगे, परन्तु दरबार से उसे २०० घोड़े और एक हजार सज्जवदारी मिली।

इस कारण लोकसंख्या भी बढ़ती जा रही है।

वज्जालकें दूसरे दूसरे स्थानोंकी नाईं यहाँ भी घामन या ऐमन्तिक तथा भासम वा मदई धान होते हैं। तराई-प्रदेशमें दिनों दिन धानकी खेती बढ़ती जा रही है। वज्जाली और निपाती लोग ही यहाँ हल जोतते हैं। पक्षी वन जलाकर 'लूम' प्रणालीमें शस्त्रीत्यादन करना प्रमुख जालिमें प्रचलित था। अभी यह प्रथा उठ गई है। पर्यंत और तराई इन दो प्रदेशोंमें 'हाल' और 'पाटो' इन दो प्रकारकी भूमिकी माप प्रचलित है। जितना जमीनमें जितना हल वा बैल लगता है उसको हाल और जितना बोज बुना जाता है उसको पाटो कहते हैं। अभी कहीं कहीं अंगरेजी माप प्रचलित हो गया है। तराई-पञ्चलकी एक एकड़ जमीनमें प्रायः १२ मन पनाज उत्पन्न होते हैं। निम्ता नदीके पश्चिम खासमहल-में गवर्मण्टने प्रति घरके ऊपर २५० कर स्थिर किया है। किन्तु दार्जिलिङ्ग-ग्रहर दार्जिलिङ्ग-स्म-निषिपै-निटीके कच्चा लाघोन है। अधिवासियोंको यथेष्ट कर देना पड़ता है। इन जिलेमें चायको खेतों और चायका बाणिज्य हो प्रधान है।

यहाँके समस्त चायके बगीचे अंगरेजोंको देखभालमें हैं और उनकी मूलधनसे यह चलाया जाता है।

रैलपथकी सुविधा रहनेसे यहाँकी अधिकांश चाय कलकत्तेकी भेजी जाती है। जिलेमें १८४ चायके क्षेत्र हैं और प्रायः १४ लाख बीघे जमीनमें चायकी खेती होती है। १८११ ई०की इस जिलेमें प्रायः १३९०३२ मन चाय पंदा हुई थी।

१८६२ ई०से यहाँ सिनकोपाको खेती प्रारम्भ हुई है। इस ज्वररोग-प्रपक्षका आदर बढ़ जानेसे अभी इसकी खेती भी खूब बढ़ गई है। कई लोग कुनाइनके बदले सिनकोपाका व्यवहार हो जानेसे प्रति वर्ष इस सिनकोपासे गवर्मण्टको लाखों अधिक रुपयेकी घामदानी होती है।

बाढ़ आदिसे दार्जिलिङ्गकी विशेष क्षति नहीं होती है। यहाँ दुर्भिक्षका सूखपात होनेसे हो पहाड़ी लोग एक स्थानसे दूसरे स्थानकी भाग कर भाग-रचा करते हैं। जिस समय पूर महीनेमें धानका मूल्य बढ़ जाता है,

उसी समय लोग भावी दुर्भिक्षका आशङ्का करते हैं।

बाणिज्य—अभी चाय ही यहाँका प्रधान बाणिज्य द्रव्य है। यहाँके लेपचा लोग एक प्रकारका मोटा सूती कपड़ा तैयार करते हैं जो जिलेके निम्नत्र्योणोंके मनुष्योंके काम आता है। पहाड़ी लोग भिन्न भिन्न स्थानोंसे चीन, प्यान्ता, मूंगा, पकीकका कटोरा और घंटा पादि यहाँ बेचनेकी खाते हैं। यहाँको भूटिया लोगोंकी बनाई हुई कटारों और लेपचा लोगोंको छुरी बहुत मशहूर है। दार्जिलिङ्ग-ग्रहरमें यूरोपीय लोगोंके व्यवहार्य और विनाश-रुपक पनेक द्रव्य पाये जाते हैं, किन्तु दूसरे स्थानोंकी अपेक्षा उनका मूल्य भी अधिक है। खनिजद्रव्योंमें यहाँ कोयला, लोहा, ताँबा और चूना पाये जाते हैं।

तिब्बत ज्ञानिकें रास्ते पर तिस्ता नदीके ऊपर एक सुन्दर कोठीका पुल है। इस जिलेमें विद्याकी खूब वृद्धि है। यों तो यहाँ बहुतसे स्कूल तथा कालेज हैं, पर सेण्टपाल्स स्कूल, सेण्टजोसेफ्स कालेज, डायोसेन-वालिका स्कूल, लोरेटो कौन्मण्ड स्कूल, विक्टोरिया स्कूल तथा डावहिल बालिका स्कूल प्रधान हैं। इसके सिवा यहाँ पक्षताल, चिकित्सालय आदि हैं।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह पचा० २६' ५२" से २०' १३" उ० और देशा० ८७' ५८" से ८८' ५१" पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ७२६ वर्ग मील है। इस उप-विभागका अधिकांश पर्वतमय है और कुछ अंश जङ्गल-से परिपूर्ण है। यहाँकी लोकसंख्या प्रायः १११३८६ है। इसमें इसी नामका एक शहर और १८१ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त दार्जिलिङ्ग जिलेका एक प्रधान नगर और अंग्रेजोंका प्रोपकालनाका स्वास्थ्यावास। यह पचा० २०' ३०" उ० और देशा० ८८' १६" पू०में अवस्थित है।

इस स्थानको उत्पत्तिक विषयमें मतभेद है। कोई कोई जोषके मतमें इसका प्राचीन नाम 'दुर्जनामा' बतलाते हैं। दुर्जे नामके एक साम्राज्य यहाँ बास करते थे। उनमें धार्मिक शक्ति रहनेके कारण भूटिया लोग उनकी विशेष भक्ति यथा करते थे। इसी दुर्जेनामासे दार्जिलिङ्ग नाम हुआ है। फिर कोई कोई हिन्दूके मत से दुर्जयजिङ्ग नामके शिवके नामसे हो वर्तमान नाम

करके हुआ है, ऐसा कहते हैं। कालिकापुराणमें भी एक दुर्जयगिरिका उल्लेख है। वर्त्तमान दार्जिलिंग-से कामरूप तक कि गिरिमाता शायद कालिकापुराणमें दुर्जयगिरि नामसे वर्णित हुई है। फिर किसीने दार्जिलिंग शब्दको इस तरह व्युत्पत्ति की है, द=प्रभर, रजि=येष्ट, लिङ्ग=स्थान वा प्रदेश अर्थात् पवित्र गुहा वा लामाओंका चिह्नित स्थान। दार्जिलिंगको वर्त्तमान पदास्तमें कुछ दूरमें एक गुहा है जहाँ भूटिया लोग कभी कभी पाकर मरुकासकी पूजा करते हैं। वहुतसे संख्याओं भी बीच-बीचमें पाया करते हैं। भूटिया लोग कहते हैं कि इस गुहा हो कर तिब्बतकी राजधानी लासा नयरो तक जा सकती हैं और लामागण भी यह हो कर आते जाते हैं। प्रवाद है, कि नेपालके पुनर्भोलामनी नामक एक राजाके राजत्वकालमें यहाँ लामासराय या गुहा बनाई गई और लामाओंने ही इसका नाम दार्जिलिंग रखा। इसी नामसे अभी सारा जिला प्रसिद्ध है। एक सङ्कीर्ण पहाड़के ऊपर दार्जिलिंग शहर अवस्थित है। इसके साथ तीन शिखर संलग्न हैं। यहाँ रिसवेकी एक स्टेमन है जो समुद्रस्तरसे ७१६६ फुट ऊँचा है। किसी किसी भूगर्भज्ज्ञका विश्वास है, कि दार्जिलिंग शहरमें भी सफ़ेद नगरमें एक ही तरहका शोत-प्रोषण पड़ता है।

दार्जिलिंगका जनबाध बच्छा होनेके कारण लोक-संख्या भी धीरे धीरे बढ़ रही है। आनकसकी लोक-संख्या प्रायः १६८२४ है जिनमेंसे १०२०१ हिन्दू, ४४१७ बौद्ध, १११२ ईसाई और १०४८ मुसलमान हैं।

यहाँके एडेनसानिटोरियम, कोषविहार महाराजका प्रासाद, कोटि नाटका प्रमोदभवन आदि उल्लेख योग्य हैं। इसके सिवा यहाँ बड़ी बड़ी गिर्जा तथा कोटनिकन गार्डन आदि हैं। यह शहर १८१३ ई०में भूगर्भज्ज्ञोंके हाथ लगा।

इसके पास पासमें भी उल्लेखयोग्य अनेक स्थान हैं। ७८८६ फुट ऊँचे जलापहाड़ पर सुन्दर सैन्यनिवास, महाकाल पहाड़की गुहा, भूटियाके धाममें भोटघर-भञ्जित बुधमन्दिर, सिवङ्गमें नूतन वैद्य-संस्थापनायाम और नगरके बीच काकभोरा जलप्रपात देखनेके योग्य हैं। इस प्रपातकी भूगर्भज्ज्ञ लोग विक्टोरिया फल (Victoria

Fall) कहते हैं। कहते हैं कि, यहाँ गोरोदेवी या कर आन करती थीं।

स्वास्थ्यरक्षाके लिए जिस तरह बहुतसे लोग यहाँ आते हैं, उसी तरह व्यवसायके लिए भी अनेक वणिक् और सामान्य दूकानदार सर्वदा आया करते हैं। यहाँको भाव दो लाख रुपयेसे अधिक है। यहाँ प्रति रविवार-को हाट लगती है जिसमें सभी चीजें मँहगी बिकती हैं। शहरमें बहुतसे स्कूल तथा चिकित्सालय हैं।

दाटं च्युत (मं० पु०) १ दृढच्युतका अण्व्य। २ सामभेट। दाटं च्यु (सं० स्त्री०) दृढस्य भावः दृढ-च्युत्। दृढता, मज्जुते।

दाटं च्यु (सं० त्रि०) दृढो भवः उज्ज्। १ दृढिभव, चमडुका। २ दृढ-तमवस्थित, जो चमडुमें रहता हो। दाटुंर (सं० पु०) दटुंरः सत्पात्रभेदः सदाकारो-ऽस्त्वस्य प्रसादि त्वत्पत्न्य। १ दक्षिणावर्त्त शङ्का एक भेट। (स्त्री०) २ लाचा, लाह, लाख। ३ जल, पानी। (त्रि०) दटुंरस्त्रिंशदं षष्। ४ दटुंर सम्बन्धी।

दाटुंरिका (सं० त्रि०) दटुंरः सत्पात्रभेदः शिष्यमस्य उज्ज्। सत्पात्रभेदकारक, कुम्हार।

दार्भ (सं० त्रि०) दर्भस्त्रिंशदं षष्। कुय सम्बन्धी।

दार्भयण (सं० पु० स्त्री०) दर्भस्य गोत्रापत्यं दर्भ-फल्।

दर्भ कृषिका गोत्रापत्य।

दार्भि (सं० पु० स्त्री०) दर्भस्य गोत्रापत्यं इज्। दर्भ कृषिका गोत्रज।

दार्भ्य (सं० त्रि०) दर्भे भवः कुर्वादि० षष्। दर्भमव, कुशका।

दाव (सं० पु०) १ देयभेदः एक देय जो कर्मविभाग-के इशान कोषमें आधुनिक काम्योरके पन्तगत पड़ता था। (स्त्री०) २ तत्त्वस्य नदीभेद, उसी देयकी एक नदी।

दावक (सं० त्रि०) दावेषु दावजनपदेषु भवः। यहु-वचनार्थे बुज्। दावजनपदभव, दाव देशका।

दावट (सं० स्त्री०) दाव इव नियततया निरूपणीय-विषयनिश्चयायै भटस्थत्वं भटघञ्च्यं क। १ चिन्तागृह, यह कोठरी जहाँ एकान्तमें बैठकर किसी बातका विचार किया जाय।

कुत फल लिखा है, एक थोर करनेसे भी काम चल सकता है। तपण करनेके बाद फिरसे ध्यान करके मनिदाताकी प्राप्ति किए सबके सब जलाशयसे बाहर हो जाय और छणवेत्र पर बैठ कर इस प्रकार चिन्ता करें—

इस संसारमें मनुष्य कदोस्तथाके जे सा निःसार है, जोवन विद्युत् चञ्चल है, समो वस्तु क्षणस्थायो है, इनमें मारको कल्पना करना मूर्खोंका काम है। सभी अपने अपने कर्मोंका भोग कर देहत्याग करते हैं और करेगे, इसमें विलाप करनेका क्या प्रयोजन ? पृथ्वी, वसुध, देवता जव इन लोगोंका भोनाश है, तब मानवकी विषयमें चिन्ता ही क्या ? इसके बाद घर या कर नोमके पत्तकी दाँतीसे काट कर "गमी पाथ समयन्तु" इस मन्त्रसे शमीका स्पर्श करें। पोटि 'अग्नेव स्थिरोभूयांस' यह कह कर पाद द्वारा पत्थरका और 'अग्निनः शमय-क्षतु' कह कर अग्निका स्पर्श करनेको लिखा है। बाद गो, हाग, गोमय, उदक और गोरमयष कृ कर घरमें प्रवेश करना चाहिये।

दिनको यदि दाह करने जाय, तो रातकी और यदि रातकी जाय, तो दिनको लौट आवें। यदि ऐसा न हो सके, तो ब्राह्मणकी अनुमति ले कर किसी समय लौट सकते हैं। (श्रुतिवत्) अन्येष्टि देखो।

२ कुपित पित्तज—दृक्क्षन्तापमेद, एक रोग जिसमें शरीरमें 'जलन' मालूम होती है, व्याम लगती है और कण्ठ सूखता है।

भावप्रकाशमें दाहरीग सात प्रकारका लिखा है। इनमेंसे पित्तजन्य दाहरीगमें वै पित्तज्वरके समो लक्षण होख पड़ते हैं, प्रभेद इतना हो है, कि पित्तज्वरमें शरीरकी च्चानि और चामाशय दूषित होता है, इस रोगमें वैसा नहीं होता। इसका भी पित्तज्वरके जैसा प्रतिविधान करना चाहिये।

रक्तजन्य दाह—रक्तजन्य दाह रोगमें सारा शरीरका रक्त बिगड़ कर दाह उत्पन्न करता है, रोगी दाहसे इतना पोहित होता है, कि उसका ममूचा शरीरमानो निकटस्थ प्रज्वलित अग्निसे तापित हो रहा है, ऐसा सामान्य पड़ता है। व्यास अधिक लगतो है, शरीर और दोनों नेत्र तापवर्ण से हो जाते हैं, मुखसे रक्तसो गन्ध निकलती है।

रक्तपूर्ण कोष्ठज दाह—शस्त्रादिवसे चत होने पर उस चतसे रक्तस्राव होता है और कोष्ठप्रदेग जब रक्तसे भर जाता है, तब उसे रक्तपूर्ण कोष्ठज दाह कहते हैं।

मद्यज दाह—मद्यपानजनित उष्मा, पित्त और रक्तके साथ मिल और बढ़ कर जब चर्ममें प्राच्य लेतो है, तब चौरतर दाहरीग उत्पन्न होता है इसको मद्यज दाह कहते हैं, पित्तके कुपित होनेसे जेसा प्रतिविधान प्रावश्यक है, वैसा हो इसका प्रतिविधान करना होता है।

त्वणानिरोधज दाह—जो अबाध मनुष्य व्यास लगने पर जन महान् पोता, उसके रसधातुके घीर्ण हो जाने पर भी पिच्छकी उष्मा बढ़तो है। वह पिच्छीमा शरीरकी भीतर और बाहर दाह उत्पन्न करतो है। इस रोगमें रोगीका गला, तालु और थोठ सूख जाता है।

धातुचयज दाह—धातुचयजन्य दाह रोगमें सूर्पा भाँतो है, व्यास लगतो है, स्वरभङ्ग होता है, और काम काज करनेमें जो नहीं लगता। यदि रोगी दाहसे अत्यन्त पीड़ित हो, तो समझना चाहिये कि उसकी मृत्यु निवाट पड़व गई है।

मर्माभिवातज दाह—मस्तक, हृदय और वस्ति आदि मर्मस्थानोंमें प्राघात पड़वनेसे जो दाह उत्पन्न होता है, उसीको मर्माभिवातज दाह कहते हैं। इस प्रकारका दाहरीग भी असाध्य है।

असाध्य दाह—छत्र प्रकारके दाहरीगियोंके शरीरका यदि बाहरी भाग शीतल और भीतर भागमें जलन देतो हो, तो वैसे रोगीकी चिकित्सा नहीं करनी चाहिये। यही दाहरीग असाध्य दाह कहलाता है। इसका प्रतिविधान करना धूलको रखो बटनेके समान है।

दाहरीगकी चिकित्सा—शतधीत घृत और जोकी मत्तकी मिना कर शरीर पर उसका लेप लगानेसे दाहरीग जाता रहता है।

बैरकी पांठोके गूदेके और आँवलीकी मिला कर उसे काँजो द्वारा पीस कर लेप लगानेसे अथवा काँजी ससित पाद्रव्य द्वारा मारे शरीरको ठंके रखनेसे दाह रोग पारोप्य होता है। उसकी जड़ और रक्तचन्दनकी काँजोके साथ पीस कर शरीर पर लगानेसे तथा पद्मपत्र या कदलीपत्र निर्मित शय्या पर सुला कर चन्दनाक्ष जल

दार्वाष्ट (सं० पुं०) दारुवत् कठिनं चण्डं यस्य । मयूर, मोर । इसका चंड़ा काठको तरह कड़ा होता है ।

दार्वाघाट (सं० पुं०) दारु काष्ठं भाहन्तीति या-इन्द्र-चण्ड-आन्तादेगः । गतपत्रक पक्षी, कठफोड़वा नामकी विडिया ।

दार्वाघात (सं० पुं०) दारुणि भाघानो यस्मात् । १ दार्वाघाट पक्षी । (त्रि०) २ आघातमात्र, काठ पर आघात करवाना ।

दार्वादि (सं० पुं०) औषधभेद, एक प्रकारकी दवा । दारुहृदये, रसाञ्जन, वासकमूलका, क्लृप्तका, मोघा, चिरायता, वैजली और भेलावा हर एक दो दो तोना से कर चाध सेर जलमें उबालते हैं । बाद चाध पाव जल रह जाने पर उसे नीचे उतारते हैं । मधुसे साथ ४५ क्वाथका सेवन करनेसे प्रदरोग दूर हो जाता है ।

दार्वादिलोह (सं० स्त्री०) रसेन्द्रसारसंग्रहोक्त औषधभेद । इसकी प्रसुतमणालो—दारुहृदये, हृदये, हृत्, प्रायला, वहेड़ा, मोंठ, पीपर, मिर्चे, शिङ्ग और उतना ही लोहका एक साथ मिलावे । बाद मधु और चीजे साथ इसका लेहन करनेसे पाण्डू, पीर, कामला रोग जाता रहता है ।

दार्वाका (सं० स्त्री०) दारुयति ह उल्लादिखात् साधुः डोप । १ दार्वा, दारुहृदये । तदिकागोऽपि दार्वा भेदे-पचारात् स्वार्थं कन् टाप । २ दारुहरिद्रा-कायोद्धव तुल्य, दारुहृदये निकाला हुआ तूतिया । ३ रसाञ्जन, रसायन । ४ गोजिह्वाहृत्, वनगोभी, गोजिया ।

दार्वापत्रिका (सं० स्त्री०) दार्वाः पत्रमिव पत्रमस्याः ततः कन् टाप यत इत् । गोजिह्वाहृत्, वनगोभी ।

दार्वा (सं० स्त्री०) दारुयति ह-णिष् चण् स्त्रियां दाहणस्य अययविभागरूपत्वेन गुणयचनत्वात् डोप । १ दारुहरिद्रा, दारुहृदये । २ गोजिह्वा, वनगोभी । ३ देवदाक, देवदार । ४ हरिद्रा, हलदी ।

दार्वाकाजोद्धव (सं० स्त्री०) रसाञ्जनविशेष । दारुहृदये काड़ा और उतना हो दूधको उबालते हैं, पीछे जब बहुत घोड़ा घब जाय, तब उसे उतारते हैं । इन्हीं गाढ़ दार्वाकाटकी रसाञ्जन कहते हैं । चतुर्को लिये यह बहुत उपयोगी है । इसका पर्याय—ताक्ष्यशैल, रसगर्भ और

ताक्ष्यज है । इसका गुण—कटु, तिक्त, रस, उष्णवीर्य, रसायन, हृदन तथा कफ, विष, निवरोध और प्रथमायु है । (भावप्र०)

दार्वातैल (सं० स्त्री०) तैल औषधभेद, तिलतैल ३४ सेर, कल्पाय दारुहरिद्रा, तुलसी, यष्टिमधु, हरिद्रा, दारुहरिद्रा इन सबको मिला कर ९१ सेर तथा ११ सेर जल सबको एक साथ उबालते हैं । इस तैलसे मेदरोग जाता रहता है ।

दार्वादि (सं० पुं०) औषधविशेष, एक प्रकारकी दवा । दारुहृदये, इन्द्रयव, मजोठ, हृत्ती, देवदार, गुण्ड, भूषावला, पिप्पलापड़, श्यामालता, गजपिप्पली, कण्टकारी, नोमकी काल, मोघा, कुट्ट, मोंठ, पद्मकाठ, कपूर, अष्टरूप, सरङ्गाकाष्ठ, चिरायता, भजातक, चक्रवर्त, कुशकी जड़, कुट्टकी, पीपल, धनिया इन सबको एक साथ मिला कर काढ़ा प्रसृत करते हैं । पीछे मधु मिला कर इसे सेवन करनेसे वातिक, पैक्षिक, श्लेष्मिक, शक्तिपातिक, एन्धज, सतत आदि कठिनसे कठिन विषम ज्वर, अमृत्य, वहिःस्थ, धातुस्थ और दैर्घ्यागतिक ज्वर तथा शीत, कम्प, दाह, आर्श, चर्मनिर्गम, क्षमि, प्रह्वो, श्लेष्मिक, कास, श्वास, कामला, शोथ, शोथ, चर्ममांस, चर्बि, अष्ट विधगूल, बीम प्रकारकी प्रमेह, शोषा, अयस्य, यकृत, हृन्मोमक इत्यादि रोग वञ्चान्त इसी दार्वा नष्ट हो जाते हैं । (भावप्र० उवराधि०)

दार्वा (सं० स्त्री०) दार्वा भव' दार्वा प्रयोगे ठज, दार्वाका चण् । १ दार्वा भव, जो दिखनेसे उत्पन्न हो । (त्रि०)

दार्वा नैत्रे भवः चण् । २ नैत्रभव, जो आँखसे उत्पन्न हो । दार्वा निका (सं० स्त्री०) १ दर्शनगात्रवत्ता, दर्शनगात्र जाननेवाला । २ दर्शनशाल सम्बन्धी ।

दार्वापोषमासिक (सं० स्त्री०) दार्वापोषमासां च भवः ठज । दार्वापोषमासभय, जो प्रमावत्या और पूर्वमास हो ।

दार्वागिक (सं० स्त्री०) दार्वा भवः दार्वा-ठज । दार्वाभय, दार्वाप्रयोगमें दार्वा होता है, अर्थात् ठज न हो कर चण् होता है । दार्वापोषमास सम्बन्धी ।

दार्वा (सं० स्त्री०) दार्वागिक ।

दार्वाद (सं० स्त्री०) दार्वादि पिष्ट चण् । पचाराका दार्वा-दुषा ।

महामें १० देवालय और २ मस्जिद देखो जाती है। पोर्तुगोअंके पानिके पक्षमें यहाँ बहुतसे हिन्दूतोर्थ और बड़े बड़े देवमन्दिर थे जो पोर्तुगोअंमें तहमनहम कर डाले गये।

टिउ नगर छोड़ कर हममें और तीन घाम नगमें है—उत्तरमें बच्चारा, दक्षिणमें नगवा और पश्चिममें मोनकवाग। मोनक दो ग्रामोंमें दुर्ग हैं।

कपड़ा बुनना और कपड़ा रंगाना यहाँके लोगोंकी प्रधान जीविका है। यहाँके पनेक पधिवामी मत्स्य-जीवी हैं। वार्षिक भाव प्रायः ४००००, ६० है।

अरब और पारस उपनागरमें वाणिज्यको विशेष सुविधा होगी, यह सोच कर पोर्तुगोअंने यहाँ पाकमण किया, किन्तु वहलौ बार उनको सब 'बेटाए' निकल चुड़े। मुगल-सल्ताद् हुमायुने जब गुजरातके अधिपति बहादुर शाह पर पाकमण किया, उसी समय १५३५ ई०में बहादुरशाहने पोर्तुगोअंमें सन्धि कर लई। इस दोपमें एक दुर्ग निर्माण करनेकी आज्ञा दी। १५३६ ई०को दोनो पक्षोंमें पहचान चल रहा था। १५३७ ई०में पोर्तुगोअंके जहाजों ने लोटने समय गुजरातके अधिपति मारे गये। इसी वर्ष बहादुरके भतीजे श्य महमूदने पोर्तुगोअंके दुर्ग पर चढ़ाई की, किन्तु उनका सहेय सिद्ध न हुआ। १५४५ ई०में महमूदने दूसरी बार चढ़ाई की। इस पर उमजीबा और डिकाट्रो बहुतसे सेना ले कर दोप पड़ें और उन्होंने मुनसमान सेनाओं को पराजय कर हाववासी पोर्तुगोअंको रक्षा की। काट्रोके वारत्त्वसे मारा होय पोर्तुगोअंके अधिकारमें आ गया। १५६० ई०में मुसलमानों ने पनेक समूह चरबों ले आ कर दोप पर पाकमण किया और बोले लूट-मार मगाने हुए से लौट गये। तमोसे वहाँ कीर महबूदो न हुई।

वर्त्तमान दुर्ग मुनसमान अवरोधके बाद डिकाट्रोमें बनवा गया है। इसका मस्थान सुदृढ़, गठन सुन्दर और बहुतसे दोतलके कामानसे सुरक्षित है। पुन पार पर भाटों फाटक हो कर इस दुर्गमें जाना पड़ता है। बाहरी फाटकमें पोर्तुगोअं भाषामें लफ्फों लिपि है।

यहाँके गवर्नर फोउटारो और दोयानी दोनों शासन

विभागके कर्त्ता हैं। ये गोवाके गवर्नर अन्तर्गत अधीन हैं।

दिओदोरस, सिक्लिउस (Díolos Siculus)—एक प्रसिद्ध योक्, ऐतिहासिक। इनका सिमिनी दोपमें पात्रिरियस नामक स्थानमें जन्म हुआ था। उनको लियो हुई पुस्तकके सिवा और कहीं भी इनके जीवनचरितका ज्ञान नहीं मिलता। ये लुनियन, और बगटस, मोजरके समकालविक थे। उन्होंने एशिया और यूरोपके माना स्थानोंमें परिचरमण कर तथा रोमनगरमें बहुत दिनों तक वास कर उन उन स्थानोंका प्राचीन और तत्कालीन ऐतिहासिक विवरण संग्रह किया था। इन सब संहित विश्वरूपमें उन्होंने तीस वर्ष अटूट परियम कर 'बिब्लियोथेका' (Bibliotheca) अर्थात् पुस्तकागार नामक एक बृहत् इतिहास लिखा, जो चालीस खण्डोंमें संपूर्ण है। इसके प्रथम ६ खण्डोंमें डोजान युद्धके पूर्व पर्यन्त पोस और अन्य देशोंय देवदेवीविषयक कहानियोंका वर्णन है। उसके बाद ग्यारह खण्डोंमें ई०सन्के पहले १६८४ वर्ष-से ले कर अलेक्सन्दरके समय तकका इतिहास लिखा है। अवशिष्ट तीस खण्डोंमें वे सभी घटनाएँ वर्णित हैं, जो ईसा जन्मके ६० वर्ष पहले घटी थीं। इन चालीस खण्डोंमें संपूर्ण बृहत् इतिहासका अधिकांश कालक्रमसे लुप्त हो गया है, सभी केवल प्रथम ५ खण्ड और ११ से २० खण्ड तक, यही १५ खण्ड पाये जाते हैं। ५से १० खण्ड तक तो एकबारगी ही लुप्त हो गया है, अवशिष्ट अंशोंका नामा अंग लई जगह मिलता है।

दिओदोरसके इतिहासमें प्राचीन कालका काफी विवरण जाना जाता है। साधारणतः उनकी रचना कल्पनावस्तुयँ और अतिरिचमदोषवर्जित तथा सरल और प्रसादगुणसम्पन्न है, किन्तु उनमें वैसी प्रशंसा भाषाशक्ति थी, ऐसा संभव नहीं। उनका इतिहास सृष्टिनामक जहाँ है, उन्हींमें जो सब विवरण जुने से पथवी अन्यथा ऐतिहासिकोंसे प्राप्त किया या उन सबके सत्यासत्य निर्धारणमें वैसी विचार-शक्ति से दिग्गम न मके है। ऐसा होने पर भी ये ऐतिहासिक विवरण निर्विवाद कर गये हैं, जो कहीं भी नहीं मिलते। किन्तु इनकी बात है कि उनकी पुस्तकें सर्वविधा प्रशंसा

दार्पद्वत (सं० स्त्री०) दृष्यवत्या नद्यास्तीरे कस्यचिद् धनम् ।
समवेद, एक यज्ञ जो दृष्यवती नदीके किनारे किया जाता था ।

दार्पान्त (सं० द्वि०) दृष्टान्त-धनम् । दृष्टान्तयुक्त, जिसमें उदाहरण दे कर समझाया गया हो ।

दार्पान्तिक (सं० द्वि०) दृष्टान्तो न युक्तः उच्यते । दृष्टान्तयुक्त ।

दाल (सं० स्त्री०) दलेभ्यः स्रष्टितं दल-धनम् । वन्यमधु, पेड़के खोहरेमें मिलनेवाला शहद । इसका शुष्क—मधुर, भक्ष्य, कपायरस, सुषुपाशी, घनिदोषिकारक, कफघ्न, हृत्, वक्षिकर, वमि घोर प्रमेहनाशक, स्निग्ध, तथा शरीरका उपचयकर है । (पु०) दले जातं दल-धनम् ।
२ कोद्रव धान्यमेद, कोशी नामका धन । ३ दलन, चूर-चूर करनेका काम ।

दाल (हि० स्त्री०) १ दलौ बुई भरहर मूंग भादि जो सासनकी तरह खाई जातो है । जिन पनाजोंमें कलियां लगती हैं और जिनके बीज दवानेसे टूट कर दो दलों या खंडोंमें हो जाते हैं उसीकी दाल होती है । २ दालके भाकारकी कोई वस्तु । ३ इन्दी, मसालेके साथ पानीमें पकाया हुआ दाला पस । यह रोटी भात भादिके साथ खाया जाता है । ४ किरणोंका समूह जो सूर्यमुखी गीरेसे हो कर आता है । यह इकट्ठा हो कर गोल दालके भाकारका हो जाता है और इसके भाग लग जातो है । ५ चेचक, फोड़े कुंभो भादिके लपरका चमड़ा जो छुल कर चूट जाता है, पपड़ो । ६ पंढे की जरदी । (पु०) ७ हिमालय पट, सिमला तथा पंजाबमें मिलनेवाला एक प्रकारका पेड़ । यह तुल जातिका होता है । इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है जो हर एक काममें खाई जाती है ।

दालचीनो (सं० स्त्री०) दारचीनी देखो ।

दालन (सं० पु०) दालयति दल-णिच्-लृट् । दलनगत-रोगमेद, दांतका एक रोग ।

दालन्य (सं० पु०) एक मुनिका नाम ।

दालमोट (हि० स्त्री०) वह दाल जो घो तेल भादिमें नमक, मिर्चके साथ तली गई है ।

दालव (सं० पु०) दलति दल-लृट्, तस्याय धनम् ।
खावर निष ।

दालवृक्ष—(Don Alphonzo Dalboquerque)

पोर्तुगोल-राजका एक विख्यात सेनाध्यक्ष, लोग उन्हें विशेषकर भालवृक्षकार्कही कटा करते थे । १५०४-१५०८ ई०के मध्य ये भारतकी ओर भेजे गये थे । इन्होंने परवसागरके किनारे मस्कट भादि स्थानोंकी जोत कर १५१० ई०के नवम्बर मासमें दो बार गोवापर आक्रमण किया था । दूसरे वर्ष मलकाका दुर्ग घोर घमंज डाय भो इनके दखलमें आ गया । १५१२ ई०को १२वीं फरवरीको प्रादेम इन्दर पर अधिकार जमानेके लिए ये २० जहाजों पर १००० पोर्तुगोल घोर २००० भारतीय सेनाओंकी साथ ले कर दहां जा पहुंचे, किन्तु उन्हें सिद्ध न हुआ । जो कुछ हो, उसी वर्ष इन्होंने पेरिस होपमें प्रवेश किया । १५१६ ई० तक इनकी चमता एक ही बनी रही । इनके यत्नसे पोर्तुगोलोंका प्राधिरस बहुत दूर तक फैला हुआ था । ऐतिहासिक छि ब्यारस इनके साथी थे ।

दाला (सं० स्त्री०) दल्यते दल कर्मणि घञ् । महाकाल नामको लता ।

दालादार्पिकाया—सिंहलमासी बोहोंका एक उत्सव । इस उत्सवमें बुढ़के दांत यात्रियोंकी दिखलाए जाते हैं । काण्डीराजभवनसंलग्न विशारमें ये दांत दागीभाकारके हैं और कई एक धातुनिर्मित रखरखित बकसमें रखे हुए हैं । इन दांतोंका विषय दाठवंशके दूसरे और तीसरे अध्यायमें इस प्रकार लिखा है—

सैम नामक बुढ़के एक शिष्यने शक्यसिंहके निर्बाणके बाद (५४३ ई० सन्के पहले) उनके दांत कुयोमगरमें लाकर कलिङ्ग देयंक राजा ब्रह्मदत्तको दिए । ब्रह्मदत्त और उनके पुत्र करो तथा पोत्र सुनन्दं शासनकालसे हो कर दूसरे राजाओंके शासन पर्यन्त प्रायः ८०० वर्ष तक ये सब दांत आदरपूर्वक रखे गये । पहली हस्तपुराधिपति शुद्धयिब इन दांतोंके विषयमें कुछ भी नहीं जानते थे, पीछे मालूम होने पर उन्होंने बोधधर्म प्रेषण कर किया । बोधधर्मसे दोषित हो कर उन्होंने अपने राज्यसे पन्ध्र धर्मावलम्बियोंकी निकाल भगाया । हिन्दुधर्म बहुत दुःखित होकर पाटलिपुत्रके राजा पाण्डु की शरण-गो । पाण्डुने शुद्धयिबके विरुद्ध कुछ योद्धा

नोय खण्ड ही तुम हो गए हैं। यदि वे सब खण्ड अभी रहते, तो निःसन्देह घनोत्तकानके नामा तत्त्व जो अभी सन्देहके घोर पन्थकारमें विस्तृत हैं, सबके सामने जग-मगा उठते।

दिक् (स० स्त्री०) दिशा, ओर, तरफ । दिश देखो ।

दिक् (स० वि०) १ विरक्त, हैरान, तंग । २ असख्य, कोमार । (पु०) ३ घबो रोग, तपेदिक ।

दिक् चन (हि० पु०) एक प्रकार की ईख । इसका गुण गहृत प्रच्छा वनता है ।

दिक्-दाह (हि० पु०) दिग्दाह देखो ।

दिक्कोड़ो (हि० स्त्री०) धरें, छडा ।

दिक् (स० पु०) दिगु कायते कै-क । करभ, बीन वर्षा का हाथोका बसा ।

दिक्त (स० स्त्री०) १ कष्ट, तन्त्रो, तकलोक । २ कठिनता, सुदिकत ।

दिक्त्या (स० स्त्री०) दिग् एव कन्याः । दिक् रूप कन्या, दिया रूपो कन्या । सब दिग्मां ब्रह्माकी कन्या माना जाती है । यराहपुराणमें इसको कथा इस प्रकार लिखी है—

एक दिन ब्रह्मा जगत्की सृष्टि करनेके पहले सोचने लगे, कि इस संसारकी सृष्टि कौन करेगा ? इसी बीच उनके कानोंसे महाप्रभावमालिनी दश कन्यायें आविर्भूत हुईं । इनमेंसे पूर्वा, पश्चिमा, प्रणोचो और उत्तरा ये चार कन्यायें अत्यन्त रूपवती और गम्भीर थीं । उन्होंने ब्रह्माको प्रणाम कर कहा, 'हे देव देव जगत्पति ! हमें ऐसा स्थान प्रदान कीजिये जहां स्वामीके साथ हम लोग आनन्दमें रहें' । यह सुन कर ब्रह्माने कहा, 'तुम लोगोंकी भूमिलाया अवश्य पूरी होगी । यह ब्रह्माच्छ बहुत विस्तृत है । इसके अन्तभागमें अभी तुरन्त जा कर तुम लोग अपने इच्छानुसार वास करो, विलम्ब करनेको जरूरत नहीं । तुम्हारे लिये तपस्यो और निष्पाप पतिव्रतीकी सृष्टि करूंगा जिनके साथ तुम लोग खूब चैन काटोगी । अभी तुम लोगोंकी जिधर जानकी इच्छा हो उधर चलो जाओ ।' ब्रह्माके पाञ्चानुसार वे सब एक एक दिग्माकी चली गईं । इस प्रकार ब्रह्मामें उन्हें विदा कर महावल्लभाओ लोकपालोंकी बहुत, अर्द्ध सृष्टि

को । बाद, उन्होंने दशों कन्याओंको बुलाया । लोक-पितामह ब्रह्माने लोकपालोंके साथ उन सबोंको व्याप्त दिया । इन्द्र, अग्नि, यम, निरृति, वरुण, वायु, धनद और ईशान इन अष्टदिक्पालोंकी उक्त पाठ कन्यायें प्रदान कर आप तो ऊर्ध्व दिशामें रहने लगे और शेषकी उन्होंने पश्चोदिशामें व्यवस्थित किया । इसके बाद वे सब दिव्यां इन्द्रादिके साथ आनन्दमें रहने लगीं । (बराह०) दिक्कर (स० पु०) दिग् चादेयं करोति वा दिग् स्त्री-मुखदर्शनं करोति क्लृप्त्य, १ युवा, जवान मनुष्य । २ महादेव, शिव ।

दिक्करवासिनी (स० स्त्री०) दिक्करे तिवे वसतोति वसणिनि, डोप । कामरूपय देवीविगण, दिक्कर चर्चात् महादेवते जो वास करे उसोका नाम दिक्करवासिनी है ।

दिक्करिका (स० स्त्री०) दिक्करिणः दिग्गजस्य सकाशात् कायते प्रोभते इति दिक्करिन् कै-क, ततष्टाप । नदो-विशेष । माटक पर्वत पर मानसरोवरके जैसा एक सरोवर है । महादेव पार्वतीके साथ इसी सरोवरमें जलस्नान करते हैं । इसके पूर्व ओर मध्यभागसे तीन नदियां निकली हैं, पश्चिम भागसे जो नदी निकली है, उसोका नाम दिक्करिका है । यह दिग्गजके क्षेत्रसे निकलती है इसीसे इसका नाम दिक्करिका पड़ा है । इसका वर्तमान नाम दिक्काई है । कामतर देखो । दिक्-दन्तदर्शनं करिका गच्छतरेखा च पस्याः । २ युवती, जवान औरत ।

दिक्करिन् (स० द०) दिक् स्थितः करो । ऐरावत चादि पाठ हाथी, दिग्गज ।

ऐरावत, पुण्डरीक, वामन, कुसुद, अज्जन, पुण्यदन्त, सार्वभौम और सुवतीक ये पाठ हाथी दिग्गज नामसे प्रसिद्ध हैं ।

दिक्करी (स० स्त्री०) दिग्ः वस्तु लाकारा दन्तचत-रेखाकरो च गच्छतरेखा च पस्याः मन्त्रालात् न कपः, वा दिक्करः युवा, ततो डोप । युयती स्त्री ।

दिक्कान्ता (स० स्त्री०) दिग्वा एव कान्ताः । दिक्कान्ता । दिक्कामिनी (स० पु०) दिग् एव कामिन्यः । दिक् रूप स्त्री । दिक्कुमार (स० पु०) जैनियोंके मतानुसार भवनपति नामक देवताओंमेंसे एक ।

भेजे। ये जा कर इन सब दांतों को पाण्डुराजा के पाम लडा जाये। राजाने उन्हें नाड़ फोड़ डालनेको वदत कागिग को, लेकिन ये कुछ कर न सके। चन्तमें उन्होंने भी ब्रह्मधर्म स्वीकार कर लिया। ये सब दांत फिर से दन्तपुर भेज दिए गये। पोछे वे दांत वहासे चतु-
ष्पादपुरमें लाए गए। १५६० ई०में पोचू गीज-युद्धके समय कनष्टान्ताइन डि ग्रागिगाने ये सब दांत नष्ट कर डाले। किन्तु सिंघनवासो बोह लोग इसे स्वीकार नहीं करते। वे कहते हैं, कि जिस समय यह मन्दिर तोड़ा गया था उस समय ये सब दांत मङ्गाराममें थे। चनेक पुरा-
तत्त्वविदों और सिंघनवासो मुत्तुसुमार खामोका कहना है, कि 'यभी जो बुद्धदन्त कह कर दिखलाए जाते हैं, वे किसी हालतमें नष्ट नहीं हैं।

दालान (फा० पु०) मकानका वह हिस्सा जो चारों ओर से घिरा न हो और जिसकी तीन ओर खुली हो, बरामदा, चौधारा।

दालि (म० स्त्री०) दल-इन्। १ दाल। दाल देवी। २ दाहिन्, बनार। ३ देवदासी कता।

दालिका (म० स्त्री०) दानव स्वार्थे कन् टाप्ति पत इत्। महाकालकता।

दालिम (सं० पु०) दाहिमः इत्यल्। दाहिम, बनार।

दाल्म (सं० पु०) दलभ्य दलभगेत्यस्य क्वादादि० षण् यलोपः। दाल्भ्यके सभी क्वात्।

दाल्भ्य (मं० पु० स्त्री०) दलभ्य सुनि गतिपत्यं यज् (गर्गविश्वो यज्। पा ४।१।१०५) १ दलभ्यके गीतका मनुष्य। २ दल नामक सुनि। इन्द्र इनके वस्तु थे।

दाहोने चन्द्रसेन राजाकी गर्भिणी स्त्रीको परशुरामके क्रोधसे रक्षा को दो। इसके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ वही दाल्भ्य कायस्थों के पादिपुरुष हुए।

दाल्भ्यघोष (सं० पु०) पुण्यायमरूप तोयमेद। (भारत वनप- ८० अ०)

दाल्भ्यायि (मं० पु०) दलभ्यस्य यून्धपत्ये फिज्। दाल्भ्य श्रयिका युवा पत्यत्।

दालिम (मं० पु०) दालयति पशुरान् दाल-णिच् बाहु० मि। इन्द्र।

दाय (हिं० पु०) १ दार, दफा। २ अनुकूल संयोग, प्रव-

सर, मौका। ३ भारी, पारो। ४ घान, घेव, वेट। ५ कार्यभावनको शुक्ति, उपाय, चाल। ६ खेलनेको दारो। ७ कल, कपट। ८ जीतका पांश या कोड़ी। ९ ठोर, जगह, स्थान।

दावना (हिं० स्त्री०) दाना भाङ्गनेके लिए माँड़ना।

दावनो (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियाँ अपने माथ पर पहनती हैं।

दांवरी (हिं० स्त्री०) रज्जु, रस्सी।

दाव (सं० पु०) दुनोति उपतापयति दु-ण (दु० गोरपुर-सर्गे। पा १।१।१४२) १ वन, जङ्गल। २ वनवस्त्रि, वन-पाग। ३ पत्ति, धाग। ४ भांघे घल। ४ उपताप, जलन।

दाव (हिं० पु०) १ एक प्रकारका हथियार। २ एक वस्त्रका नाम।

दावत (मं० स्त्री०) १ खोना, भोज। २ निमंत्रण, खोता, ज्वाफत।

दावदी (हिं० स्त्री०) पुलदावदी देवी।

दावन (सं० पु०) दा कर्मभावादे वलि। १ देव, वह जो देवीयोग्य हो। २ दान।

दावन (हिं० पु०) १ दमन, नाथ। २ हथिया। ३ एक प्रकारका देड़ा कुरा, खुरडो।

दावना (हिं० स्त्री०) १ दावना देवी। २ दमन करना, मट करना।

दावनो (हिं० स्त्री०) दावनी देवी।

दावप (हिं० पु०) दाव वनवस्त्रि पाति पाक। पुरुष भेद, एक मनुष्यका नाम।

दावरा (हिं० पु०) दावरा नामका पेड़।

दावसु (सं० पु०) पश्चिमा सुनि एक पुत्रका नाम।

दावा (हिं० स्त्री०) वनके घाँस तथा पेड़ोंकी डालियोंकी रगड़से उत्पन्न धाग।

दावा (मं० पु०) १ किसी वस्तु पर अधिकार प्रगट करनेका काम, किसी चीज पर हक जाहिर करना। २ वह सुकदमा जो किसीके विरुद्ध जायदाद का रुपये पैमेरे लिए चलाया जाता है। ३ स्वत, हक। ४ भविष्य, नाभि। ५ प्रताप, अधिकार, जोर। ६ दृढ़तापूर्वक कथन, जोरके साथ कहना। ७ दृढ़ता।

दावागीर (मं० पु०) वह जो अपना दावा करता हो अपना हक जतानेवाला।

दिकचक्र (मं० क्षो०) दिनेय चक्र । १ चक्रवान् ।

० पाठो दिगाघोका समूह ।

दिकचक्र (मं० पु०) दिकचक्र ।

दिकपति (मं० पु०) दिगा पति । १ दिगधीवर, उद्योतिषके मतानुसार दिगाघोके स्वामी यह । शुक्र चमिकोणके, बुध मङ्गल दक्षिणके, शनि नैर्ऋतकोणके, शनि पश्चिमके, चन्द्रमा वायुकोणके, बुध उत्तरके और बृहस्पति ईशान कोणके पश्चिमपति मानी गये हैं । २ पाठो दिगाघोके पति इन्द्रादि । दिग्भ्या देवो ।

दिग्धान (मं० पु०) दिगा धानयति धानि-यन् । १ पुराणानुसार दशो दिगाघोके धामन करनेवाले देवता । पूर्वके देवता इन्द्र, चमिकोणके चमि, दक्षिणके यम, नैर्ऋतकोणके नैर्ऋत, पश्चिमके वरुण, वायुकोणके मरुत्, उत्तरके कुबेर, ईशानकोणके ईश्वर, ऊर्ध्वदिगाके ब्रह्मा और अधोदिगाके देवता अनन्ता हैं । २ चौथो म मावाघोका एक कन्द । इसमें १२ मावाघो पर विराम होता है । इसकी पंचघो और सत्तरहवो मावाघ लघु होती हैं ।

दिकगुल (मं० क्षो०) दिशि दिगंशे गतो गुलमिथ । एक विंशति दिनोर्नि कुलं विंशति दिगाघोर्नि कालका याम । दिकगुलके दिन नहीं जाना नहीं चाहिए । एक घंटा रविवारमें पश्चिमकी ओर, मङ्गल और बुधवारमें उत्तरकी ओर, मीन और शनिवारमें पूर्वकी ओर तथा बृहस्पतिवारमें दक्षिणकी ओर दिकगुल माना जाता है, पर्याप्त जिस धारका जिस दिशामें गुल होता है, उस धार उस दिगाको ओर नहीं जाना चाहिये । कहते हैं, कि दिकगुलमें याता करनेमें बन्धुसुख प्रभावमानो होने पर भी मनोरथ मिष्ट नहीं होता है, धार्मिक ज्ञान होती है और न कोई रोग उभय हो जाता है और यद्यपि कि कभी कभी यात्राकी मृत्यु भी हो जाती है ।

जिसोके मतसे बुध और बृहस्पतिवारकी दक्षिणकी ओर, बृहस्पतिवारकी चारों ओरकी ओर, रवि तथा शनिवारकी पश्चिम दिशाकी ओर गुल होता है । यहलं ओर प्रधान मतके सम्बन्धमें शीर्षोर्नि एक चौथाई भी इस प्रकार बना हो—मीन मनोघर पुरुष म चाप, मङ्गल

बुध उत्तर दिम काल । पाटित शुक्र पश्चिम दिम शनि, शोके द्दिन मंक दिम दाह ।

दिकसाधन (मं० क्षो०) दिगः साधातो ज्ञानार्थं चनेन ।

दिकज्ञान-साधन उपायभेद, यह उपाय जिसमें दिगाघोका ज्ञान हो । बहुत पहलेमें भारतीय ज्योतिषी सभी दिगाघोके निर्णय करनेका उपाय बहुत सूक्ष्म रीति से कर गये हैं । संस्कृत ज्योतिषिद्वान्त-शास्त्रके गन्ता-ध्यायमें यहि और मद्र, पाटि द्वारा दिगा निरूपणका सूक्ष्म उपाय वर्णित है । जिस दिशामें सूर्योदय होती है वही पूर्व और जिस दिशामें सूर्य पस्त होती है वही पश्चिम दिगा है, इस प्रकार पूर्व और पश्चिमका ज्ञान हो जानेसे सत्तरविंश ० द्वारा उत्तर और दक्षिणका ज्ञान बहुत आसानीसे हो जाता है । फिर ममता भूमण्डलके उत्तर भागमें सूर्य ० है । सूर्योदयके समय सूर्यकी ओर मुख करके खड़ा होनेसे सामने पूर्व, पीठकी ओर पश्चिम, दाहिनी ओर दक्षिण और बाईं ओर उत्तर दिगा पड़ती है । किन्तु सूक्ष्मरूपसे यदि विचार किया जाय, तो सूर्य प्रतिदिन पूर्व दिशामें उदय नहीं होती और न पश्चिममें पस्त हो जाती है । कारण पार्थिव सूर्यमें केवल दो ही दिन पर्याप्त विपुल संक्रान्ति दो दिन सूर्य ठोक पूर्वमें उदय हो कर पश्चिममें पस्त होती है । जो कुछ हो, दूसरे दूसरे समयमें भी सूर्य द्वारा सूक्ष्मरूपमें दिगाका ज्ञान हो सकता है । प्राचीन सूर्यमिहान्तायमें इसकी प्रथाको निम्नलिखित प्रकारसे वर्णित है । जैसे जल द्वारा संगोचित किसी मममल मिलातल पर चढ़वा

० पूर्व और पश्चिममें दो बिंदु डेढा उन्हे फेंक मानो और दोनोंही परस्पर दूरीको व्यापार्य मान पर दो गुल बनाना । इस प्रकार जो दो परिधि बनती है वही सत्तरविंश है । इसे भी दोई शिथि भी कहते हैं, जिस दो बिंदुओं पर दोनों परिधि धारमें पड़ती हैं उन्हें एक रेखाके मिला दो । वही रेखाके रेखा उत्तर-दक्षिणके स्थित करती है ।

† “यन्मोक्षोदयं दिस तत्र पूर्वा

उत्तराधरा वल गतः प्रतिष्ठम् ।

समस्ततोदये च ततो द्दिशान्

मुदकविधौ नेरतिन प्रविष्टम् ।” (गीतापर्व)

दावान्नि (सं० पु०) दावोद्भवोऽग्निः मध्यलो० कर्मधा०।

वोद्भवः अग्निः, वगने सगनेषालो धाम।

दावान्निमोचनवन—एक वनका नाम। इस वनमें शीतलपत्र
दावाग्नि भक्षण कर गये थे।

दावात (सं० स्त्री०) मसिपात्र, खाड़ी रखनेका बरतन।

दावादार (सं० पु०) दावा करनेवाला, अपना हक जताने-
वाला।

दायानन (सं० पु०) दावोद्भवोऽननः। दावाग्नि, वन-
पाग।

दावान्नसकुण्ड—कुण्डविशेष, एक कुंड जो दावान्निमोचन-
वनमें अवस्थित है।

दाविक (सं० त्रि०) देविकाया भवः अण्, ततो आद्य-
घो घात् (देविका शिङ्गतेति। वा ७।३।१) देविकानदो
रभव, जो देविकानदोमें होता है।

दाविकमूल (सं० त्रि०) देविकामूले भः अण् आद्य-
घो घात्। देविकामूलोद्भव, जो देविकानदोके किनारे
होता है।

दाविनी (सं० स्त्री०) १ विजयिनी। २ एक गहना जिसे
स्त्रियां माथे पर पहनती हैं।

दावी (हिं० पु०) धवका पिड़।

दाय (सं० पु०) दशति दिनस्ति मरस्यान् दश० ट, नख
पाच (द० शब्०। वज्र. ५।११) १ धीवर, केशव, मधुवाहा।
निपाद पुरुष और आयोग्य स्त्रीमें उत्पन्न व्यक्तिको
दाय कहते हैं। ये नोका बनाते हैं और कौवर्त या
शिकारी कहलाते हैं। २ भृत्य, गौकर।

दाय (सं० पु०) दश-स्त्रायो कन्। दाश धीवर।
धारण (सं० पु०) दाशप्रधानो धामः। धीवर प्रधान
मन्त्रिणां जिसमें धीवरोंको हो चसती बनती है।

दाय (सं० त्रि०) दाश-धाम-ठञ्। दाशधामके
विशेष।

दाय (सं० त्रि०) दश-भवयवा यस्य तयत्प ततः स्त्राय-
वि, स्त्रियां डोप्। दशावयव अथवे दशहिता।

दायनन्दिनी (सं० स्त्री०) दाशस्य नन्दिनी। धीवरकन्या,
ध्यासको माता, मत्स्यवती।

दायपुर (सं० पु० स्त्री०) दाशान् धीवरान् पूरयति पूर-
अण्। १ कौवर्तमुद्रक, एक प्रकारका मोथा। २
धीवरोकी सन्ती।

दाशफली (सं० स्त्री०) दाशप्रियं फलं यस्याः डोप्।

धोयधिमैद, एक प्रकारकी दवा।

दाशमैय (सं० पु०) देशभेद, एक देश जो उत्तर दिशामें
अवस्थित है।

दाशरथ (सं० पु०) दशरथस्येदं अण्। श्रीरामचन्द्र।

दाशरथेः श्रीरामस्येदं अण्। (त्रि०) २ दाशरथि
उं वन्धोय।

दाशरथि (सं० पु०) दश रथस्थापत्यं अत ईज्। दशरथ
के पुत्र रामचन्द्र आदि।

दाशरथि राय (दाशराय नामसे प्रसिद्ध)—वङ्गदेशके एक
विख्यात कवि। १८०४ ई०में इनका जन्म हुआ था।
बङ्गला साहित्यकी इन्होंने खूब चर्चा कर दासी थी।
ये रामोय नाम्नाय ये; वर्तमान जिसके अन्तर्गत काठोया-
के निकट, वादसुहा नामक ग्राममें इनका पैदावासी था।
पाटु, लोके निकटवर्ती पोला नामक ग्राममें अपने माताके
पहले रह कर इन्होंने पढ़ना लिखना सीखा था। पीछे ये
पं० ग्रेजोको नौलकी कोठीमें किरानोका काम करके
अपना गुजारा करने लगे। वचनसे ही इन्हें गाने
बजानेका पूरा शौक था।

इस समय पोलाग्राममें पचय कटानो (अकावाइ)
नामक नृत्य-गोत-व्यवसायिनी एक नोच जातिकी
छो रहती थी। उसके गाने बजाने पर मोहित हो कर
दाशरथिरायका उसके साथ गाढ़ा प्रेम हो गया था।

कुछ दिन बाद अकवाइने एक उस्तादो कविका इस
संगठन किया। एक दिन दाशरथिने एक सङ्गोत्तम ग्राममें
प्रतिपक्षसे गाथी गनोज सुनी। तमोसे इन्होंने प्रतिज्ञा
करके कविका इस छोड़ दिया। कविदलमें आनेके
पहले विषयकर्मका परित्याग कर दिया था।

इनकी बनाई हुई अनेक कविताएं और छन्द हैं।

१७७८ शक (१८६६ ई०) की ५३ वर्षकी अवस्थामें
आपका देहान्त हुआ। उनके एक भौ पुत्र न था, कन्या
एक थी। प्रसन्नमयो नामकी उनकी स्त्री अनेक दिन
तक जीवित रहें। रामसादके जैसे इनका गान मधुर
और चित्ताकर्षक होता था। आज भी बहुतसे लोग
बड़े बड़े इनके गानका सुर सीखते हैं। कालिदास,
कामोदास देवकीला लिख कर जिस प्रकार बङ्गालकी

किसी प्रकार द्वंद्व प्रक्षेपयुक्त किसी समतल भूमि पर दृष्टानुसार उँगलियों को व्यासार्ध मान कर एक समतल बनाओ; इस वृत्तके केन्द्रस्थलमें बारह उँगलियोंकी एक कोन गाड़ दो। पीछे उसकी छाया पूर्वाह्न और पयराह्नमें जहाँ जहाँ वृत्तकी परिधिसे ऊपर पड़ती है वहाँ एक एक बिन्दु चिह्नित करो। इन दो बिन्दुओं की पूर्व और पश्चिमका बिन्दु मानो अब इन दोनों को अलग अलग केन्द्र मान कर तिमि या मर्याचिह्न द्वारा मध्यस्थलमें उत्तर-दक्षिणकी रेखा चिह्नित करो। इसी प्रकार उत्तर-दक्षिण रेखाके मध्यस्थलमें तिमि चिह्न द्वारा पूर्व-पश्चिमकी रेखा भी खींचो। इन दो रेखाओं द्वारा उत्तर दक्षिण और पूर्व-पश्चिमका ज्ञान हो जानेसे मर्याचिह्न द्वारा उसी प्रकार विदिक् पर्याप्त मध्यवर्ती सभी दिशाओंका ज्ञान हो जायगा।

पूर्वाह्न रूपसे निर्धारित पूर्व-पश्चिम दिशा निरक्ष प्रदेशके सिवा अन्यत्र सभी स्थानोंमें समान नहीं है। अर्थात् निरक्ष प्रदेशमें पूर्व पश्चिम दिशा सब जगह एक रेखाभिमुखी है अर्थात् वहाँ एक स्थान एक ओर स्थानके पूर्व-वर्त्ती होनेसे दूसरा स्थान पूर्व स्थानके ठीक पश्चिममें पड़ता है। ऐसा केवल निरक्ष प्रदेशमें ही होता है दूसरे स्थानमें नहीं। क्योंकि वहाँ एक स्थानसे दूसरा स्थान पूर्व-वर्त्ती होनेसे पूर्व स्थान परोक्ष स्थानके ठीक पश्चिममें नहीं पड़ता। इसका कारण यही है कि सभी स्थानोंके उत्तरमें मेरु अवस्थित है। सुतरां किसी स्थानमें पड़ने उत्तर-दक्षिण रेखा चिह्नित कर पूर्वाह्न रूपसे पूर्व-पश्चिम दिशाका निरूपण करनेमें जो रेखा उपर्युक्त होगी, उसके अन्य किसी बिन्दुमें फिरसे यथाविधि उत्तर-दक्षिणकी रेखा चिह्नित करो। बाट पूर्व पश्चिम दिशाके निरूपण करनेमें श्रेयोक्त पूर्व पश्चिम निर्देशक रेखा प्रयोजक पूर्व पश्चिम रेखाके ऊपर नहीं पड़ती है। इस प्रकार सज्जयिनी नगरसे धृष्यीके एक अनुशाशकी दूरी पर पूर्व की ओर यदि यमकोटि नगर अवस्थित हो, तो यमकोटिके पश्चिममें सज्जयिनी नहीं पड़ेगा। नज्जयिनीके दक्षिण नज़्ज हो उसकी दिक्-वर्त्ती होगी। किन्तु निरक्ष प्रदेशमें उस प्रकारके

असमंजस होनेको कोई ह्म्यायना नहीं है। जो कुछ हो निरक्ष प्रदेशसे समान अचान्तर वृत्तोंकी यदि ठम सब स्थानोंके पूर्व-पश्चिमकी ज्ञापक रेखा करें, तो फिर इस प्रकारको गड़बड़ी होनेको अभावन नहीं है। सुतरां किसी स्थानको किसी स्थानके पूर्व या पश्चिम अवस्थित माननेसे ही, वे दोनों स्थान एक अचान्तर वृत्तमें अवस्थित हैं, ऐसा समझना चाहिये। मार्केटर साइवके प्रसिद्ध मानचित्रमें (Marcator's Projection) इसी प्रकार दिशाओंका निरूपण दृष्टा है। उसमें याम्योत्तर रेखाओंकी उत्तर और दक्षिण मेरु प्रदेशमें संयुक्त तो नहीं किया है वरन् उन्हें परस्पर समान्तर भावसे अचान्तर वृत्तोंकी याम्योत्तर रेखाके साथ समकोण बनाते हुए निरक्षवृत्तके समान्तर भावमें चिह्नित किया है। अतः इसमें पूर्व-पश्चिम दिशाके निरूपणमें कोई गड़बड़ी नहीं है। भ्रुवतारा उत्तरकी ओर मेरुके ऊर्ध्व भागमें अवस्थित है, सुतरां यदि द्वारा भ्रुवकी वेष कर अर्थात् भ्रुवताराकी ओर लक्ष्य करनेके उस यष्टि-को उस स्थान पर गाड़ दें, तो उसके ठीक नीचे जो रेखा पड़ेगी वही उत्तर दिशाकी बतलाती है। कई जगह इसी प्रकार भ्रुवतारा द्वारा उत्तर दिशाका ज्ञान किया जा सकता है। किन्तु यदि खूब गौर कर देखा जाय, तो भ्रुवतारा मेरु प्रदेशके ठीक ऊपरमें नहीं है वरन् इसके समीप ही है। किसी स्थानमें यह ठीक ऊर्ध्वस्थ नहीं है। वह स्थान भ्रुवतारा और सप्तर्षि-मण्डल (सप्त भैया) नामक तारापुञ्जके अन्तिम तारामें से कर दूसरे तारा तक एक रेखा पर अवस्थित है। अतः जब भ्रुवतारा और सप्तर्षिमण्डलका वह तारा ठीक ऊर्ध्व-अधोभागमें अवस्थित रहता है, तभी भ्रुवतारा भौगोलिक उत्तर दिशाकी निर्देश करना है। धृष्यीके आडिक भावचर्चनमें प्रति दिन दो बार इसी प्रकार घटना दृष्टा करती है। सुतरां उसी समय भ्रुववेष द्वारा उत्तर दिशाका पता लग जाता है। जोड़े एक दिशाका पता मालूम हो जानेसे शेष दिशाओंका ज्ञान आपसे आप हो जा सकता है। वही आदि द्वारा मध्योक्त काल निर्धारित करके उस समय सूर्यकी गति लक्ष्य करनेमें ही याम्योत्तर रेखा निकल आयेगी।

भेजे। वे जा कर इन सब दांतों को पाण्डुराज के पास लता पाये। राजाने उन्हें ताड़ फोड़ डालने को बहुत कायिग को, लेकिन ये कुछ कर न सके। अन्त में उन्होंने भी बोधधर्म स्वीकार कर लिया। ये सब दांत फिर से दन्तापुर भेज दिए गये। पोछे वे दांत वहाँ से भुक्तपुर में भाए गए। १५६० ई. में पोत्त, गोज-बुद्ध के समय कनटान्ताइम डि त्रागेज्जाने ये सब दांत नष्ट कर डाले। किन्तु मि'इनवासो बोध लोग इसे स्वीकार नहीं करते। वे कहते हैं, कि जिन समय यह मन्दिर तोड़ा गया था उस समय ये सब दांत महाराम में थे। अनेक पुरातत्त्वविदों और मिहलवासो मुत्तुलुमार स्त्रामोका कहना है, कि अभी जो बुद्धदांत कष्ट कर दिखलाए जाते हैं, वे किसी हालत में नष्ट नहीं हैं।

दानान (फा० पु०) मकानका वह हिस्सा जो चारों ओर से घिरा न हो और जिसकी तीन ओर खुली हो, बरामदा, पोखरा।

दानि (मं० स्त्री०) दल-इन्। १ दाल। दाल देखो। २ दाढ़ि, बनार। ३ देवदासी लता।

दानिका (मं० स्त्री०) दान के लिये कान् टांगि धत इत्। मन्नाकालता।

दानिम (मं० पु०) दाढ़िमः कृत्स्नः। दाढ़िम, बनार।

दात्म (मं० पु०) दलभ्य दलभोग्रस्य कात्रादि० अण्, यतोऽपः। दालभ्य के सभी कात्र।

दलभ्य (मं० पु० स्त्री०) दलभ्य सुनि गांतापत्यं यज्, (गर्दिभ्यो यज्,। पा ३।१।१५) १ दलभ्य के गोत्रका मनुष्य। २ एक नामक सुनि। इन्द्र इनके यन्त्र थे। इन्होंने चन्द्रसेन राजा की गर्भिनी स्त्री को परशुराम के क्रोध से रक्षा की थी। इसके गर्भ से ही पुत्र उत्पन्न हुआ। यही दलभ्य कायस्थों के पादिपुरुष हुए।

दानभ्योप (मं० पु०) पुण्यायनरूप तोयभेद। (भारत इनप० ८० अ०)

दानभ्यायि (मं० पु०) दलभ्यस्य यूयपत्ये फिज्। दानभ्य प्रायिका युवा अण्त्वा।

दानिम (मं० पु०) दानयति अक्षरान् दान-विष् पाठुंति। इन्द्र।

दाय (हिं० पु०) १ दार, दफा। २ अनुकूल संयोग, धन-

भर, मौका। ३ बाँगी, पारो। ४ धान, पेष, दंड। ५ कार्यसाधन की युक्ति, उपाय, चास। ६ खेलने की दारो। ७ हल, कपट। ८ जीतका पाँता या कौड़ी। ९ ठोर, जगह, स्थान।

दायना (हिं० स्त्री०) दाना भाड़ने के लिए सोड़ना।

दायनो (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियाँ अपने माथ पर पहनती हैं।

दायरी (हिं० स्त्री०) रज्जु, रस्सा।

दाय (मं० पु०) दुनोति उपाययति दु-य (दुधीरगु-सर्गे। पा ३।१।१४२) १ वन, जङ्गल। २ वनवाहि, वन-पाग। ३ धनि, पाग। ४ भाँसे घन, ५ उपाय, जलन।

दाय (हिं० पु०) १ एक प्रकारका हथियार। २ एक हथका नाम।

दायत (मं० स्त्री०) १ ज्योत्नार, भोज। २ निम'वण, ज्योता, ज्वाफत।

दायदी (हिं० स्त्री०) शुद्धावदी देखो।

दायन् (मं० पु०) दा कर्मभावादी यनि। १ देव, वप जो देनेयोग्य हो। २ दान।

दायन (हिं० पु०) १ दमन, नाग। २ हँसिया। ३ एक प्रकारका टेढ़ा कुरा, खुल्लो।

दायना (हिं० स्त्री०) १ दायना देखो। २ दमन करना, म-करना।

दायनो (हिं० स्त्री०) दायनी देखो।

दायप (हिं० पु०) दाय वनवाहि पाति पाफ। पु भेद, एक मनुष्यका नाम।

दायरा (हिं० पु०) धायरा नामका पड़।

दायसु (मं० पु०) पत्निरा सुनि एक पुत्रका नाम।

दाया (हिं० स्त्री०) वन के दान तथा पेड़ों की डाँ-रगड़ से उत्पन्न धाग

दाया (मं० पु०) १ किसी वस्तु पर अधिकार प्र-का काम, किसी चीज पर हक जाहिर करना।

सुकदमा जो किसी के निरुद्ध जायदाद या क-लिए चलाया जाता है। २ सत्व, हक।

नानिय। ५ प्रताप, अधिकार, जोर। ६ कथन, जोर के साथ कहना। ७ दृढ़ता।

दायागीर (मं० पु०) वह जो अपना दाया अपना हक जतानेवाला।

दिक् सुन्दरी (सं० स्त्री०) दिग् एव सुन्दर्य । दिक् रूप सुन्दरी, दिक् कन्या ।

दिक् स्त्री (सं० स्त्री०) दिक्, कोण, किसी दिग्वासी कोण ।

दिक् स्त्री (सं० पु०) दिग्वा स्त्री । दिग्वापति ।

दिग्वा (हि० स्त्री०) दीक्षा देनी ।

दिग्वा (हि० वि०) दीक्षित देनी ।

दिग्वा (हि० क्रि०) दिग्वाइ देना, देखनेमें आना ।

दिग्वावाइ (हि० स्त्री०) १ दिग्वावानेके बदलेमें दिवे जानिका धन । २ दिग्वाइ देनी ।

दिग्वावाग (हि० क्रि०) दूसरेको दिग्वावानेमें प्रवृत्त करना ।

दिग्वाइ (हि० स्त्री०) १ दिग्वावानेको क्रिया । २ दिग्वावानेका भाव । ३ दिग्वावानेके बदलेमें दिया गया दूधा धन ।

दिग्वाग (हि० क्रि०) १ दृष्टिगोचर कराना, दिग्वाग । २ अनुभव कराना, मान्य कराना ।

दिग्वाइ (हि० स्त्री०) १ दिग्वावानेका काम । २ दिग्वावानेका भाव । ३ दिग्वावानेके बदलेमें दिवे जानिका धन । ४ दिग्वावानेका काम । ५ देखनेका भाव । ६ देखनेके बदलेमें दिवे जानिका धन ।

दिग्वाग (हि० क्रि०) दिग्वागाना ।

दिग्वा (हि० पु०) १ देखनेका भाव या क्रिया । २ दृष्ट ।

दिग्वाट (हि० स्त्री०) १ दिग्वावानेका भाव या ठग । २ ऊपरी तड़क भड़क, घनाघट ।

दिग्वाटी (हि० वि०) जो भिन्न देखने लायक हो, पर धामने या मने, दिग्वापी ।

दिग्वा (हि० पु०) पाटम्बर, ऊपरी तड़क भड़क ।

दिग्वा (हि० वि०) घनाघटी ।

दिग्वा (हि० वि०) दिग्वापी ।

दिग्वा (सं० पु०) दिग्वा पंगः । दिक्, पंगमिद, तिनितप्रवृत्तका ३६०वां पंगः । १ पंगममें प्रवृत्त और नपत्नी पादिको स्थिति मान्य करनेके निमित्त तिनितप्रवृत्त ३६० पंगममें निमज्ज किया जाता है और जिस पंग या पंगमस्था दिग्वा मानना होता है उस पंगम पंगममिदक और पंगममिदको पंगम करता हुआ एक पंग

वांवा जाता है । यही पंग पंग दिग्वा तिनितप्रवृत्त दिक्वा पंगवा पंगवा जितने पंग पर जाता है उतनी ही उम पंग या पंगमका दिग्वा करने है ।

दिग्वापति (हि० पु०) किसी पंग या पंगमका दिग्वा मान्य करनेका पंग ।

दिग्वा (सं० पु०) दिग्वा पंगः ३६०वां । १ समो दिग्वापति पंगम भाग, दिग्वा पंगका होर । २ शास्त्रीय पंगम पंगम कलाधितित्त मज्जदेगके पंगमिद एक पंग । ३ पंगम पंगमका होर । ४ चारों दिग्वापति । ५ दग्वा दिग्वापति

दिग्वा (हि० पु०) पंगमका कोना ।

दिग्वा (सं० स्त्री०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

दिग्वापति (सं० पु०) दिग्वा पंगम पंगमका पंगम । १ दिग्वापति पंगमका पंगम । २ पंगम दिग्वा दिग्वापति पंगमका पंगम ।

नहीं है। क्योंकि सेवा-टङ्कल करनेके लिये उसकी खट्टि हुई है। दास पन्द्रह प्रकारके माने गये हैं।—गृहजात अर्थात् जो अपने घरमें दासके गर्भसे उत्पन्न हुआ हो, क्रीत अर्थात् मोल लिया हुआ, दायमें मिला हुआ, अस्त्र-कालभूत अर्थात् दुर्भिक्षमें पाला हुआ, आदिज अर्थात् जो स्वामीसे इच्छा धन से कर उसे सेवा द्वारा मुकाता हो, अष्टदास अर्थात् जो अष्ट से कर दासत्वसे बन्धनमें पड़ा हो, युधपाम जिसे लड़ाईमें जीता हो, पथमें जित जिसे लुभामें जीता हो, स्वयं उपागत जो अपने राजी खुशसे दासत्व स्वीकार करने पाया हो, प्रत्यव्यावसित अर्थात् जो संन्याससे पतित हुआ हो, छत अर्थात् छतने दिनों तक आपका दास होलागा, इस तरह जो पाया हो, भक्तदास, बहुवाह्यत (गृहदासोका नाम बढ़ाया है उसको लोभमें जो पाया हो अर्थात् उससे विवाह कर दासत्व कर्ममें नियुक्त होनेको बहुवाह्यत कहते हैं) और आत्मविक्रता, जिसने अपनेको बेच दिया हो। (नारद)

जो दास अपने प्रभुको प्राणपणसे रक्षा करता है, प्रभु उसे पुत्रके समान प्रतिपालन करे और पीछे वह दास दासत्वसे मुक्त हो जाता है। (स्मृति०)

जो आत्मविक्रता है अर्थात् कुछ रुपया ले कर अपने को बिका गया है, उसे सबसे नीच दास समझना चाहिये। यह आत्मविक्रता स्वामीके प्रसादसे बिना अर्थात् स्वामीको खुश किये बिना कभी दासत्वसे मुक्त नहीं हो सकता। (स्मृति०)

गृह स्वामीसे विमुक्त होने पर भी दासत्वसे मुक्त नहीं हो सकता है। दासत्वकर्म उसका सामाविक है। इसी कारण कोई उसे इस कार्यसे विमुक्त नहीं कर सकता।

मनुने सात प्रकारका दास बतलाया है—ध्वजाहृत, अर्थात् जिसे युद्धमें नीत कर लाया हो, भक्तदास अर्थात् जो केवल भात या भोजन पर रखा गया हो, गृहज अर्थात् घरकी दाघीका पुत्र, क्रीत अर्थात् जिसे मोल लिया हो, दत्तम अर्थात् जो दूसरेसे दिया गया हो, दण्डदास अर्थात् राजाहृत दण्डादिके लिये जिसने दासत्व स्वीकार किया हो। (मनु ८।१५)

ये सब दास जो कुछ धन उपार्जन करेंगे वह उनकी नहीं वरन् उनके स्वामीका होगा। मनुका मत

है, कि ब्राह्मण विस्मयविचसे दासगृहका धन ले सकते हैं, क्योंकि गृहका अपना कुछ भोग नहीं है।

ये सब दास यदि अपनाय काम करें और प्रभुको धाम्ना पालन न करे, तो उन्हें दण्ड देना उचित है। मनुके मतानुसार स्त्री, पुत्र, दास, गण्य और महीहर छोटा भाई ये सब यदि कुछ अपराध कर बैठें, तो पतनो रक्षोसे अपराध से छुटसबे उन्हें दण्ड देना चाहिये।

रक्षोसे केवल पोट घाघात करे, भूल कर भोग उत्तम अन्न पर प्रहार न करे। यदि मानिक बहुत गुस्सा कर नुरो तरहसे प्रहार करे तो वह चोरको तरह राजदण्डसे दण्डित होता है। (मनु ८।२३-२४) बलपूर्वक जिसे दासकर्ममें नियुक्त किया हो और चोरने चारो करके जिसे दासके निमित्त सेवा हो वह पूर्वोक्त कारण छोड़ कर भी दासत्वसे मुक्त हो सकता है। (याज्ञवल्क्य)

दासोंके लिये दो तरहके काम बतलाये गये हैं श्रम और प्रथम। दरबारी पर भोजन देना, मल-मूत्र उठाना, जूटा धोना आदि नुरे काम माने गये हैं और श्रम सभी कर्म श्रम हैं। (मिवाक्षराष्ट नारद)

ब्राह्मणका दास चमिय, चमियका वैश्य और शूद्र सभीका दास है।

७ निज गोत्रमें संस्कार व्यतीत नहोतदत्तक, निज बालकका पित्रगोत्रमें ब्रूहदि संस्कार किया गया हो, पीछे उस बालकको यदि कोई दत्तकरूपसे ग्रहण करे, तो उसे दान कहते हैं। ८ द्रव्याहर। ९ दस्यु। दस्यु देको। क्षिया डीप। दासो। (द्वि०) दास अपनेपि भव। १० अपनेपि, अपनेपा या छुना करनेवाला।

दास—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। इन्होंने अनेक सुमधुर कविताएँ रची हैं। उदाहरणार्थ एक गोष्ठी दी जाती है।

“भीगेकुल नाथ निज बपु परा।

भक्तहेत प्रकटे धीवत्तम जगते तिमिर हरी।

नन्दनन्दन भये सब गिरि मोर मन उदरयो।

नाथ विदुक्त छपन हके परमदित अनुचरयो॥

“गति अगाध अणार भवनिधि तारि अयो करयो।

दास साधन आध हले वरण शरणो परयो॥

दास अन्न—हिन्दी-ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने “रैदासकी परचई” और “कबीर माहिकवी परचई” इन दो ग्रन्थ-

प्राण्यादि व्यवहारको उपाधि । समीप दिग्गज नित्य है तथा एक लौकिक व्यवहारके लिये अमुक दिशा पूर्व और अमुक पश्चिम है । इस तरह दिशाओंको उपाधि कल्पित हुई है । यद्यपि दिशाओंको कोई उपाधि नहीं है । दिशा देखो ।

दिग्गज (सं० पु०) दिग्गि स्थितो गजः । १ बाढो दिशाओंमें अवस्थित ऐरावत आदि षाठ हाथों । ये पृथ्वीको दबाए रखने और उन दिशाओंकी रक्षाके लिये स्थापित हैं । इन षाठ हाथियोंके नाम ये हैं,—पूर्वमें ऐरावत, पूर्व-दक्षिणके कोनेमें पुण्डरीक, दक्षिणमें वामन, दक्षिण-पश्चिममें हनुमन्, पश्चिममें भञ्जन, पश्चिम-उत्तर कोनेमें पुण्डरीक, उत्तरमें सावर्भौम और उत्तर-पूर्वके कोनेमें सुप्रतीक । (त्रि०) २ बहुत बड़ा, बहुत भारी ।

दिग्गयन्द् (सं० पु०) दिग्गज ।

दिग्गि—राजपूतानेके जयपुर राज्यके भन्तगत एक नगर । यह जयपुरसे प्रायः २१ कोस दक्षिणमें अवस्थित है । यहाँ महीको दीवारसे घिरा हुआ एक किला है । प्रति-वर्ष कल्याणजीका मेला लगता है जिसमें प्रायः १५ हजार मनुष्य एकत्रित होते हैं ।

दिग्गज (सं० पु०) दिग्गि तत्स्थानो कटपाणां जयः ।

१-जिगीयु राजासे दिक्स्थित राजाओंको जीतना । २-विद्या द्वारा नाना स्थानके मनुष्योंको जीतना । पूर्व समयमें जिस तरह राजा नवीन राज्याभिषिक्त हो कर देगदेगान्तरीको जीतने जाते थे, उसी तरह विद्यार्थी भी पाठ समाप्त कर सब स्थानोंमें पण्डितोंको जीतनेके लिये जाते थे ।

दिग्गज्ञान (सं० स्त्री०) दिग्गो ज्ञानं ज्ञानं । प्राण्यादि ज्ञानसाधन प्रकारभेद, जिनमें समीप दिशाओंका ज्ञान हो ।

दिग्ग्या (सं० स्त्री०) दिग्गो ज्ञा । दिग्गज, दिग्ग्याका होर ।

दिग्दर्शन (सं० स्त्री०) दिग्गो दृश्यतेऽनेन दृश्यं करणे ष्युट् । दिक्-निरूपण करनेका यन्त्रविशेष, एक प्रकारका यन्त्र जिससे दिग्ग्याका ज्ञान होता है । (Mariner's compass) इसकी सहायतासे क्या खलभागमें, क्या अञ्जल समुद्रमें, क्या घनघटाच्छन्न घोर भन्धकार-

मयो रात्रिमें सभी समय आसानीसे दिग्ग्याका निरूपण किया जा सकता है । इसीमें अणुववाही नाविकोंके लिए यह यन्त्रविशेष उपकारी है । यहाँ तक कि अञ्जल समुद्र समुद्र ही कर सदोष यात्रा करते समय इसका साहाय्य अपरिहार्य है । पहले नाविक लोग सूर्य और प्रवतारा आदि नक्षत्रोंको देख कर अभीष्ट दिग्ग्याको और नाव जहाज चलाते थे, किन्तु पाकाय जब मेघाच्छन्न हो जाता था, सूर्य चन्द्र तारे आदि कुछ भी दिखाई नहीं पड़ते थे, तब किम दिग्ग्याको और जहाज जा रहा है, इसका पता नहीं लगता था, जिससे उन्हें बहुत कठिनाइयों मिलने पड़ती थीं । इस कारण वे अञ्जलके किनारे हो रहते थे, जिनारेका पता नहीं लगने पर उन्हें बोच समुद्रमें जहाज से जानेका साहस नहीं होता था । १२वीं शताब्दीके बाद भी युरोपमें दिग्दर्शन यन्त्रका कोई उल्लेख नहीं है । किन्तु उसके भी बहुत पहले भक्ति प्राचीनकालमें योन तथा चन्दाय्य प्राण्यदेवोंके लोग जो सुंक्क एचोका डाल जानते थे, उसके अनेक प्रमाण मिलते हैं । चीनका कहना है, कि २६१४ ई० वन् के पहले सच्चाट्, दुर्गातिरके आदेशानुसार जो दक्षिणदिक् निर्देशक यन्त्र प्रसूत हुआ, वह यही दिग्दर्शन यन्त्र था । ऐसा अनुमान किया जाता है, कि वे लोग पहले पहले खलभागमें हो इसका व्यवहार करते थे । १८० ई०के लगभग इसका व्यवहार समुद्रमें होने लगा । किसी किमाका मत है, कि चीन देगदे लोटते समय मार्क-पोलो सबसे पहले दिग्दर्शन-यन्त्रको यूरोपमें लाये । फिर बहुतेरे कहते हैं, कि नेपल्स राज्यके भन्तगत एमेकलि-निवासी इन्नामा और गिवजाने १२६२ ई०में समुद्र वासीयोंको दिग्दर्शन-यन्त्रका आविष्कार किया । किन्तु इसके पहलेसे ही समुद्रमें दिग्दर्शन यन्त्रके व्यवहारका उल्लेख पाया जाता है । गायद गिवजाने इसीका उपाधि साधन मात्र किया हुआ । जो कुछ ही इसका आविष्कार-काल अनिश्चित है । दिग्दर्शन यन्त्रका आविष्कार हो जानेसे व्यवसाय वाणिज्यको विशेष सुविधा हो गई है तथा नाविकोंको भी समुद्रके बाँच जहाज से जानिका जो भय बना रहता था वह दूर हो गया है । सभी नाविकयष्ट बाँसानेसे समुद्र सागरमें ठीक

की बनाया है। वे जिस समयमें विद्यमान थे, उसका ठीक ठीक पता नहीं जाता।

दास्य (मं० पु०) दास-स्वार्थ क। १ दास, भेवक। २ गोत्रप्रत्ययक श्रयिभेद।

दासकायन (मं० पु० स्त्री०) दासकस्य गोत्रापत्यं श्रयादित्वात् फक्। दासक श्रयिका गोत्रापत्य।

दास गोविन्द—एक भाग्य और हिन्दी-कवि।

दासता (मं० स्त्री०) दासत्व, सेवावृत्ति।

दासत्व (सं० स्त्री०) दासस्य भावं दास त्वतनौ भावे इति त्व। दासका कर्म, पराधीनता, गुलामी।

दास दलमिह—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने सन् १८८० ई०में "दलमिहानन्दप्रकाश" नामक एक पुस्तक लिखी है।

दासनन्दिनी (मं० स्त्री०) दासस्य धीवरस्य नन्दिनी। मत्स्यवती, धीवर-कन्या।

दासपत्नी (मं० स्त्री०) दासपति दास उपदेये भक्ष दासो वृत्तासुरः पतिर्यासं। १ भप, जन्म, दासस्य पत्नी। २ दासकी स्त्री।

दासपग (हिं० पु०) दासत्व, सेवकत्व।

दासपुर (मं० स्त्री०) सेवकसुस्तक, एक प्रकारका मोग।

दासमित्र (सं० स्त्री०) दासस्य मित्रं इत्यत्। दासका मित्र।

दासमित्रि (मं० पु० स्त्री०) दासमित्रस्य भपत्यं इत्य्। दास मित्रका भपत्य।

दासमोय (मं० स्त्री०) दसमि देशभेदे भवः, वा दासं शूद्रं मिमते गान्धर्वमि मैथुनार्थिन्याः ता दासन्यस्तासु भवः इति। १ दसमदेश भवः, दसम देशमें उत्पन्न। (पु०) २ दसमदेशका निवासी।

दासमेघ (मं० पु०) पुराणोद्भव जनपदविशेष, पुराणके चतुर्भार एक प्राचीन जनपद।

दासर—कर्षाटक प्रदेशवासो जातिभेद। यह जाति कश्मिर या कैथन जातिकी एक शाखा मानी जाती है। इनका कहना है कि ये लोग दैत्यसे कर्षाटमें पाकर बस गये हैं।

कर्षाटक प्रदेशके बीजापुर अञ्चलमें बहुतसे दासर

देखे जाते हैं। इनकी दो श्रेणियाँ हैं, तिरमल दासर और गन्धदासर। दोनों श्रेणियोंमें केवल खान पान की सज्जता है, विवाह नहीं। तिरमलदासरकी श्रियोकी अपनी स्वतन्त्रता रहती है, वे वैभ्राह्मण और नाथ मान किया करते हैं, इसमें पुरुषार्थनिक भी भावति नहीं करते। किन्तु गन्धदासरमें यह कुमया प्रचलित नहीं है। इस जातिमें बारह उपाधियाँ हैं, विद्धि, यवक, विनमक, चिन्ताकालवक, इत्यादि।

इन लोगोका भाषार व्यवहार कुछ कश्मिर या धीवरसे मिलता मिलता है। किन्तु ये लोग सनसे कुछ अधिक भसभ्य और परियमो मालूम पड़ते हैं। इन लोगोका भाषा कमाड़ो और तेलुगु है।

ये लोग गाँवके बाहर बसवाये घर बना कर रहते हैं। हिन्दू होने पर भी सुसलमानो पूर्व मोहर्म्ममें इसन होसने लड़ श्रसे, बकरो बलि देते हैं। किन्तु गोमांस कोई नहीं खाता। सभी धर्म कर्म ब्राह्मणोंसे कराते हैं। साहित्य इनके उपास्यदेवता और नागपूजामें, दशहरा तथा गणेशपुर्ण्यो इनके प्रधान पर्व हैं। इन लोगोकी विवाहवृत्ति बिसाड़ी और कर्षाटककी कैथन जाति सी है।

दासरको—हिन्दीके एक विख्यात कवि। इनको कविता कासित्यपूर्ण होती थी, उदाहरणार्थ एक नीचे दी गई है,—

मोहे बेरी मोई रंगमें कान्हा और कीर्ती मोई मनमाना।

मिजबत मझो सब दिन जाना घर करि हूँ मैं कौन बहाना।
कीन अपना कीन निगतारलोमी जादी जाना।

दासरकी देखावट रंगमें बाही सा रंग न आना।

दासराज—एक बनारस राजा। इनकी पालित कन्यावि महाराज गान्तनुका विवाह हुआ था।

दाससेम (सं० पु०) दासस्य दस्योऽर्थः इत्यत्। दस्युनाय, चक्रेतीका मत्यानाय।

दासा (हिं० पु०) १ यह बांध या मुक्ता जो दोवारसे सटा कर उठाया जाता है। यह कुछ लंबा होता है। और इस पर जोड़ वल भी रख सकते हैं। २ यह चतुरा को आँगनेके चारों ओर दोवारसे सटा कर उठाया जाता है। यह आँगनेके पानीकी धर वा दासानमें आनेसे

दिक् सुन्दरी (स० स्त्री०) दिग् एव सोन्दर्यं । दिक् रूप सुन्दरी, दिक् कन्या ।

दिक् स्रस्ति (स० स्त्री०) दिक् कोष, किसी दिशाका कोष ।

दिक् स्वामी (स० पु०) दिशां स्वामो । दिग्धिपति ।

दिक्षा (हि० स्त्री०) दीक्षा देखो ।

दिक्षित (हि० वि०) दीक्षित देखो ।

दिखना (हि० क्ति०) दिखाई देना, देखनेमें आना ।

दिखलवाई (हि० स्त्री०) १ दिखलवानेके बदलेमें दिये जानेका धन । २ दिखलाई देखो ।

दिखलवाना (हि० क्ति०) दूसरेको दिखलवानेमें प्रवृत्त करना ।

दिखलाई (हि० स्त्री०) १ दिखलानेको क्रिया । २ दिखलानेका भाव । ३ दिखलानेके बदलेमें दिया गया हुआ धन ।

दिखलाना (हि० क्ति०) १ दृष्टिगोचर कराना, दिखाना । २ प्रभुत्व कराना, मान्य कराना ।

दिखाई (हि० स्त्री०) १ दिखानेका काम । २ दिखानेका भाव । ३ दिखानेके बदलेमें दिये जानेका धन । ४ दिखानेका काम । ५ देखनेका भाव । ६ देखनेके बदलेमें दिये जानेका धन ।

दिखाना (हि० क्ति०) दिखलाना ।

दिखाव (हि० पु०) १ देखनेका भाव या क्रिया । २ दृश्य ।

दिखावट (हि० स्त्री०) १ दिखलानेका भाव या ढंग । २ ऊपरो तड़क भड़क, बनावट ।

दिखावटो (हि० वि०) जो निर्र देवने लायक हो, पर धामने न था सके, दिखौषा ।

दिखावा (हि० पु०) धाड़स्वर, ऊपरो तड़क भड़क ।

दिखौषा (हि० वि०) बनावटो ।

दिखौवा (हि० वि०) दिखौषा ।

दिगंग (स० पु०) दिक्षु अंगः । दिक् च अंगमंड, चित्तिजहत्तका ३६०वां अंग । आकाशमें यहाँ और नक्षत्रों आदिको स्थिति मान्य करनेके लिये चित्तिजहत्त ३६० अंशोंमें विभक्त किया जाता है और जिस ग्रह या नक्षत्रका दिगंग जानना होता है, उस परसे अधस्तिक और स्वस्तिककी संग्रह करता हुआ एक वृत्त

खींचा जाता है। यही वृत्त पूर्व विन्दुमें चित्तिजहत्तका दक्षिण अथवा उत्तर जितने अंग पर काटता है उतने को उस ग्रह या नक्षत्रका दिगंग कहते हैं ।

दिगंगयन्त्र (सि० पु०) किसी ग्रह या नक्षत्रका दिगंग मान्य करनेका यन्त्र ।

दिगन्त (स० पु०) दिशां प्रन्तः ६-तत् । १ समो दिगांशो भन्त भाग, दिगांशोंका कोण । २ आसीय ज्ञान कम्यु

जनधित्त मध्यदेशके अतिरिक्त एक देश । ३ चित्ति आकाशका क्षीर । ४ चारों दिशाएँ । ५ दशो दिशाएँ ।

दिगन्त (हि० पु०) आकाश कीला ।

दिगन्तर (स० स्त्री०) दिशा प्रन्तर, अवकाशः । १ दिगांशोंके बीचका स्थान । अर्थात् दिक् दिगन्तर २ अर्थात् दिक्, विपरीत दिशा ।

दिगम्बर (स० पु०) दिगीव चम्बर, वस्त्रं यस्य । उन्नत स्वातन्त्र्यात् । १ शिव, महादेव । २ अप्सरक, मंग

रहनेवाला जैन यति । जैन देवता । ३ एक प्रसिद्ध वेदवा करण । गणरत्न-महोदधिमैं इनका प्रकृत नाम देवगन्

धोर इसका नामान्तर दिग्बस्त्र और दिग्बाना लिखा है । ४ दिगांशोंका वस्त्र, तम, अंधेरा । (त्रि०) ५ जिसका वस्त्र केवल दिशाएँ ही, उल्लास, नंगा ।

दिगम्बरतर (स० स्त्री०) नग्नता, नंगावत ।

दिगम्बरानुचर—एक प्रसिद्ध मस्कृत ग्रन्थकार । इसकी बोधप्रक्रिया नामक वेदान्त, दत्तात्रेय महात्म्या बो

जावालीपेनियद्वय प्रकाश नामक जावालीपनियद्वयोटी रचना की है ।

दिगम्बरो (स० स्त्री०) दिगम्बर-डीप । १ दुर्गा, पावती (त्रि०) २ नग्ना, नंगी ।

दिगादि (स० पु०) पाणिनिप्रयोग गणमेद । दिक् वंग, पूग, गण, पत्र, धाव्य, मित्र, मिधा, अन्तर, पयिन्

रहस, अलीक, उल्लास, साचिन, देय, आदि, अन्त, मुख जघन, मेय, यूय, न्याय, वंग, धंग, काल और आका

ये ही दिगादि गण हैं ।

दिगिभ (स० पु०) दिशां भूतः । दिगं हस्तो, दिगन्त ।

दिगीम्बर (स० पु०) दिशां स्वरः ६-तत् । १ रश्मि दिक् पान । २ सूर्य, चन्द्रमा आदि ग्रह ।

दिगुपाधि (स० पु०) दिशा उपाधिः । समो दिगांशो

रीकतां है। ३ वरु पत्थर जो दोवारकी कुरसीके ऊपर बैठाया जाता है। ४ वरु लकड़ो या पत्थर जो दरवाजेके ऊपर दोवारके भारपार रहता है। ५ हंसिया।

दासानुदास (सं० पु०) सेवकका सेवक, बहुत तुच्छ सेवक। यह शब्द नम्रता और शिष्टता प्रगट करनेमें व्यवहृत होता है।

दासिका (सं० स्त्री०) दासति ददाति आत्मानमिति दाम दाने खस, टाप, चत इत्वं। दासी, मौड़ी।

दासी (सं० स्त्री०) दास गौरादि० डोप, १ दासकी पत्नी, नीच जातिको स्त्री। २ परिचारिका, टहलनो मौड़ी। ३ गृह और कोचरको भार्या, धोवर या गृहकी स्त्री। ४ धोवर, मसाहिन। ५ कानन। ६ नीलाम्बान, बाला-कारोठा नामका पौधा। ७ नोलकिण्टो, मोली कट-सरैया। ८ पोतकिण्टो, पीली कटसरैया। ९ वेदो।

दासीत्व (सं० स्त्री०) दास्याः भावः दासी-त्व। दासीका कर्म; सेवावृत्ति।

दासीदास—एक सुप्रसिद्ध हिन्दी कवि। इनकी कविता मराठीय होती थी, उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं।

“शोक छपर साज होरी खेलत नीके समान।

इत श्रीराधासानी गौरी उत खारे ममराज ॥

नाम बचन आभूषण पहनेत गुगल अंग छवि आज।

राजत है गौरश्याम कंग श्रुति कोटि कोटि रतिगाम ॥

मोथो गोर वष आए इन इन विविध मण्डली साज।

चित उमंग सब भावत नाचत बाजत एक स्वर आज ॥

छात रंग गुलाब उदावत नेक न आवत लाज।

कुलकी कान मान गुजरनकी मन कितथो मर भाज ॥

मलिक छल हंस हंस करत परस्पर मनमाने सब काज।

मर मारी अब यह मुख बिलसत कोक अठा कोक आज ॥

हे सुनरी तिर मन्दिर मोरी है देव गिरताम।

दासीदास हिय डर निरन्तर यदि छवि हो विराज ॥”

दासीपाद (सं० त्रि०) दास्याः पाद इव पादो यस्य, इत्यादिवात् नान्तर सोपः। दासतुल्य पादतुल्य, जिसके पाँव दासके जैसे हों।

दासीभारादि (सं० पु०) पाणिनीउक्त शब्दगणविशेष। दासीभार, देवद्वि, देवमोति, वसुमोति, ओषधि और चन्द्रमस ये ही दासीभारादिगण हैं।

दासीमम (सं० स्त्री०) दासीनी सभा ततो कोवलिहत्वं। (जगला च। पा २।४।२४) दासीको सभा, दासियोंका कूण्ड।

दास्य (सं० पु०) दास-स्त्रायें टक्, १ दास, गुलाम-ज्वादा। २ कोचर, धोवर। दासस्य उत्पन्न इति फक्, (त्रि०) २ दासीतुल्य, जो दाससे पैदा हुआ हो।

दास्यो (सं० स्त्री०) दास्य स्त्रियां ओग, मलयती, व्यामकी माता।

दासेर (सं० पु०) दास्या भवत्य टक्, १ दाम, गुलाम। २ कोचर, धोवर। ३ उट्ट, जट। ४ दामिजापल्य, दासीको सन्तति।

दासेरक (सं० पु०) दासेर-स्त्रायें कन्, १ उट्ट, जट। २ दासोद्यत, दासीपुत्र। ३ आतिभेद, एक जातिशा नाम।

दास्तान (फा० स्त्री०) १ हस्तान्त। २ हाल, कथा। ३ वर्णन बयान।

दास्य (सं० स्त्री०) दासस्य भावः दास-प्यल्, भक्ति के नय भेदोंमेंसे एक।

“अर्चने वन्दने मन्त्रजपः सेवनमेव च।

स्मरण कीर्तनं श्रवणं श्रवणमभीष्टतः ॥

निवेदनं स्वरयं दास्यं वक्त्राय भक्तिस्तु ॥”

(महा वैष्णवप्रकृतिके) मणि देवो।

दास्यमाना (सं० त्रि०) दा कर्मणि स्यमानः। भविष्य-दान सम्बन्धी वस्तु, जो दिया जानेवाला हो।

दास्यादि (सं० पु०) भेषज्यरत्नायनिते भतुभार पाचन औपशमिद। प्रसुत प्रयातो—नीलो, कठसरैया, देवदार, इन्द्रिय, मजीठ, श्यामासुता, भकवन, कचूर, चोठ,

खसको जड़, चिरायता, मजपियानी, बलाडूमर, पद्मकाष्ठ,

धनिया, मोथा, सरलकाष्ठ, सोहि जनकी छाल, गुलशकरी,

भटकटैया, चेतवापड़, कुमकी जड़, कुटकी, अमलमूल,

गुड़ख और कुट सब मिला कर २ तोला, इधे ३२ तोले

जलमें चलाते हैं, जब ८ तोना जल बच जाय, तो उसे

उतार लेते हैं। आधा तोला मधुके साथ इसका सेवन

करनेसे धातुस्य विषमज्वर, विदोषजनित ज्वर, ऐकाहिक और द्वादहिक, कामज्वर, शोकजनित ज्वर, वमिक साथ ज्वर, लयसे उत्पन्न ज्वर, सततक, धातुर्धक आदि ज्वर भंति शोष प्रशमित हो जाते हैं।

प्राच्यादि व्यवहारको उपाधि । सभी दिशाएँ निरूपण
तथा एक लौकिक व्यवहारके लिये प्रसक्त दिशा पूर्व
और प्रसक्त पश्चिम है । इस तरह दिशाओंको उपाधि
कल्पित हुई है । यद्यपि दिशाओंको कोई उपाधि
नहीं है । दिशा देखो ।

दिग्गज (स० पु०) दिग्गि स्थितो गजः । १ बाढो दिशाओंमें
प्रवस्थित ऐरावत भादि पाठ छाये । ये पृथ्वीको दशाएँ
रखने और उन दिशाओंकी रक्षाके लिये स्थापित हैं ।
इन पाठ कथियोंके नाम ये हैं,—पूर्वमें ऐरावत, पूर्व-
दक्षिणके कोनेमें पुण्डरीक, दक्षिणमें वामन, दक्षिण-
पश्चिममें कुसुद, पश्चिममें भञ्जन, पश्चिम-उत्तर कोनेमें
पुष्पदन्त, उत्तरमें साधुभीम और उत्तर-पूर्वके कोनेमें
सुप्रतीक । (त्रि०) २ बहुत बड़ा, बहुत भारी ।

दिग्गयन्त्र (स० पु०) दिग्गज ।

दिग्गि—राजपूतानेके जयपुर राज्यके भन्तगंज एक नगर ।
यह जयपुरसे प्रायः २१ कोस दक्षिणमें प्रवस्थित है ।
यहाँ महीको दीवारसे घिरा हुआ एक किला है । प्रति-
वर्ष कल्याणजीका मेला लगता है जिसमें प्रायः १५
हजार मनुष्य एकत्रित होते हैं ।

दिग्गज (स० पु०) दिग्गि तत्स्थानोऽनृपाणां जयः ।
१ जिनोप राजासे दिग्गि स्थित राजाओंको जीतना ।
२ विद्या द्वारा नाना स्थानके मनुष्योंको जीतना । पूर्व
समयमें जिस तरह राजा नवीन राज्याभिषिक्त हो कर
दिग्गिदेशान्तरोको जीतने जाते थे, उसी तरह विद्यार्थी
भी पाठ समाप्त कर सब स्थानोंमें पण्डितोंको जीतनेके
लिये जाते थे ।

दिग्गज्ञान (स० ली०) दिग्गि ज्ञानं ज्ञानम् । प्राच्यादि
ज्ञानसाधन प्रकारभेद, जिससे सभी दिशाओंका
ज्ञान हो ।

दिग्ग्या (स० ली०) दिग्गि ज्ञा । दिग्ग्यः, दिग्ग्याका
क्षेत्र ।

दिग्दर्शन (स० ली०) दिग्गो दृश्यतेऽनेन दृश्य करणे
छुट् । दिग्गि निरूपण करनेका यन्त्रविशेष, एक
प्रकारका यन्त्र जिससे दिग्ग्याका ज्ञान होता है । (Mar-
ner's compass) इसकी सहायतासे क्या स्थलभागमें,
क्या प्रकृत समुद्रमें, क्या घनघटाच्छन्न घोर भन्धकार-

मयो रात्रिमें सभी समय आंमानीने दिग्ग्याको निरूपण
किया जा सकता है । इसमें अर्थव्याही नाविकोंके
लिए यह यन्त्रविशेष उपकारी है । यहाँ तक कि
प्रकृत दुस्तर समुद्र को कर सुदोर्घ यात्रा करते समय
इसका साहाय्य अपरिहार्य है । पहले नाविक लोग सूर्य
और ध्रुवतारा भादि नक्षत्रोंको देख कर अभीष्ट दिग्ग्या-
को और भाव जहाज चलाते थे, किन्तु प्राक्याग जब
मेघाच्छन्न हो जाता था, सूर्य चन्द्र तारे भादि कुछ भी
दिखाने नहीं पड़ते थे, तब किम दिग्ग्याको और जहाज
जा रहा है, इसका पता नहीं लगता था, जिससे उन्हें
बहुत कठिनाइयाँ भिन्ननी पड़ती थीं । इस कारण वे
उपज्ञानके किनारे हो रहते थे, शिन्धारेका पता नहीं लगने
पर उन्हें बोध समुद्रमें जहाज ले जानिका साधन नहीं
होता था । १२वीं शताब्दीके बाद भी युरोपमें दिग्दर्शन
यन्त्रका कोई उल्लेख नहीं है । किन्तु उसके भी बहुत
पहले प्रति प्राचीनकालमें चीन तथा अन्यत्र प्राच्यदेशोंके
लोग जो सुबक चुकोका डाल जानते थे, उसके पनेका
प्रमाण मिलते हैं । चीनका कहना है, कि २६४४ ई० वन्
के पहले सम्राट् हुआतिरके आदेशानुसार जो दक्षिणदिक्
निर्देशक यन्त्र प्रसूत हुआ, वह यही दिग्दर्शन यन्त्र
था । ऐसा अनुमान किया जाता है, कि वे लोग पहले
पहले स्थलभागमें ही इसका व्यवहार करते थे । १८०
ई०के लगभग इसका व्यवहार समुद्रमें हाते सुना गया ।
किसी किमाका मत है, कि चीन देशसे लोटते समय
मार्क-पोलो सबसे पहले दिग्दर्शन-यन्त्रको यूरोपमें
लाये । फिर बहुतेरे कहते हैं, कि नेपोल्स राज्यके भन्त-
गंज एमेलिक-निवासी इलामो और गिवजाने १६६२
ई०में महुद्र यासोपयोगी दिग्दर्शन-यन्त्रका आविष्कार
किया । किन्तु इसके पहलेसे ही समुद्रमें दिग्दर्शन यन्त्रके
व्यवहारका उल्लेख पाया जाता है । शायद गिवजाने
इसीका उपाधि साधन मात्र किया होगा । जो कुछ ही
इसका आविष्कार-काल अनिश्चित है । दिग्दर्शन यन्त्रका
आविष्कार हो जानसे व्यवसाय वाणिज्यकी विशेष
सुविधा हो गई है तथा नाविकोंको भी समुद्रके बीच
जहाज ले जानिका जो भय बना रहता था वह दूर हो
गया है । अभी नाविकगण आसानोसे दुस्तर सागरमें ठीक

दास (मं० की०) दसो देखतेस्य चप० । अग्निनेमचत ।
दास (मं० पु०) दस भावे घञ् । १ दहन, भस्मीकरण,
जलानेकी क्रिया या भाव । २ गव जलानेकी क्रिया,
मुदा कर्त्तृत्वका काम ।

मृत्यु के बाद शवदेह जनानो पड़तो है । इसका
विधान श्रद्धास्वमें इस प्रकार निधा है,—मृत्यु के बाद
पुत्रादि श्रुतगरीरको श्रमग्राममें ले जा कर रखे और
स्नान करके पिण्डदानके लिये चय पकावे । फिर मृतक-
के शरीरमें वो स्नान कर उसे निम्नलिखित मन्त्रशठपूर्वक-
स्नान करावे । बाद नष्ट चक्षुमें सपेटे । उस जगह पर
कुग पिठा कर मृतकका मस्तक दक्षिणकी ओर घुमा
फर रखना होता है ।

मन्त्र—ओं नमोऽग्नि न त्रीर्धनि ये न पुण्याः शिलोच्ययाः ।

कुरुभेष गन्धं न यमुनां च सरिद्वारं ॥

कौमिनी नमः । गन्धं च सर्वशेषप्रकाशिनो ।

महावकाशो गणेशो सर्वं वनसो तथा ॥

वैभवं वराहं च तीर्थं विशालं तथा ।

पृथिव्यां यन्नि तीर्थानि सरितः सागरा रतथा ॥”

इन सब पुण्य तीर्थोंका विषय धारण कर चर्चात
इसका पाठ कर शवको स्नान करावे, बाद एक दूसरा
नवोन वस्त्र पहना कर गलेमें लपयौत और उत्तरोय
छान दे । अनन्तर पाण्ड, कान, नाक, मुँह इन सात
हिंदोंमें थोड़ा थोड़ा मीना डाले ।

इतना हो चुकने पर अग्निदाता चिताभूमिमें जा कर
पिण्डदान करे और जमीन पर थोड़ा गोबर गिरा कर
प्राचीनाभेत हो (जनेजकी दाहिने बाँध पर डाल कर)
बायाँ घुटना टेक कर बैठे । बाद 'यो' चपड़ता सुरा-
रक्षांसि वेदिमद' यह मन्त्र पढ़ कर कुशमूल द्वारा एक
शय्या गींचे । फिर उस शय्या पर कुश बिकावे और 'यो'
एत प्रेत भोम्य गम्भीरेभिः पथिभिः पूर्वि वेदिदे' इत्यम्य'
द्रविण्ये इ भद्रं रथिज नः सर्वेभोर' नियच्छ' इम मन्त्रसे
आधान करे । तदनन्तर सतिन जलपात्र बाएँ हाथमें
टाङ्गिने हाथमें ले कर 'यो चय चमुक गोत्र प्रेत चमुक
देवगर्भन् चयर्त्तमिदम्' इम मन्त्रसे जलकी कुग पर गिरा
दे । इसके बाद तिम सजित पिण्ड ले कर कुश पर
बिसर्जित करे । जब इतना सत्य हो जाय, तब पुत्रादि

चिता तैयार करे और मुँहकी चप ५ दक्षिण ओर
घिर करके लेटा दे । जो सामयदे हो हाथे शय्या
मस्तक उत्तरकी ओर रखे । पुरुष शवको पट करके
और स्त्री शवको चित करके चिता पर लेटा देनेका
विधान है । फिर अग्निदाता अग्नि ले कर 'एतं दहन्'
अग्नि इव दग्ध करे, ऐसा कहे ।

“ओ कृतां तु दुष्करं कर्म जानता वाप्यजानता ।

मृत्युकासवधं प्राप्य नरं न चारमागतं ।

धर्माधर्मसमापुष्कं सोमोद्भवमावृतं ।

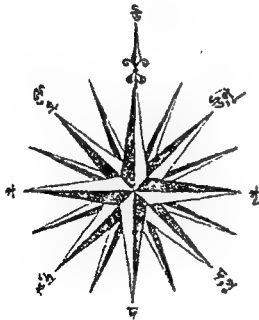
दहेयं सर्वगात्राणि दिव्यान् लोकान् च मण्डु ॥”

इस मन्त्रका पाठ कर तीन बार अग्नि प्रदक्षिण करके
और दक्षिण ओर चपना मुँह करके शवके मस्तकको
और बायं लगा दे । दाह-कर्म समाप्त हो जाने पर
प्रादेगप्रमाणकी सात लकड़ियाँ हाथमें ले कर सात बार
प्रदक्षिण करे और प्रत्येक प्रदक्षिणमें एक एक लकड़ी
चितामें डालना जाय । जब शव जल जाय, तब 'क्षय्या
दाय नमस्तुभ्य' यह मन्त्र पढ़ कर एक बाँससे चिता पर
सात बार प्रहार करे जिससे कपास फूट जाय । इतना
करके चितानिको और ताँके बिना, बायंभाग होते हुए
जदोमें या गङ्गामें स्नान करनेके लिये मयके सब चीजें
जाय । शव सम्बन्धोय वस्त्रादि श्रमग्रामवासो चाण्डालोंके
होते हैं । स्तिका और राजलता पवस्यामें शायीकी
मृत्यु होनेसे 'पापेहिष्टोय वामदेस्यादि' मन्त्र द्वारा
आवाहन कर उसे स्नान करावे और तब दाह कर्म
करे । गर्भवतो स्त्रीको मृत्यु होने पर दूसरी जगह
गर्भ निःसारित करके दाह करना होता है । गर्भवतो
स्त्रीका गर्भ निःसारित किए बिना दाह करना विमो-
होपावह और अधर्मजनक है ।

अनन्तर जलके समोप जा अग्निदाता बड़ोंकी पामि
करके जलमें प्रवेग करे । स्नान कर चुकनेके बाद वस्त्रादि
पहन कर प्राचीनायीत हो दक्षिणमुखमें प्रेतके चरणोंमें
तर्पण करे । जो सामयदे हो, उन्हें पाचमन करके
'यो चमुकगोत्रं प्रेतं चमुक देवगर्भाय' तर्पयामि
इम मन्त्रसे तर्पण करना चाहिये और जो यशुर्वदे हो,
उन्हें इम मन्त्रसे, 'यो चमुकगोत्रं प्रेतं चमुक देवगर्भं
जेतसो तिमोदन् इत्यम्य' तीन बार तर्पण करनेमें

पद्यानुसरण करके अभिलिखित स्थानमें पहुँच सकते हैं।

दिग्दर्शन वा कम्पास यन्त्र लोहेकी मोटी सड़के ऊपर बना हुआ है। इसकी एक घोर धातुमय आवरणसे घोर दूसरी घोर कांचसे आहत रहती है। धातुमय आवरणके भीतर दिक्-निर्देशक रेखा द्वारा विभक्त कागजके ऊपर चुंबकसूची स्थापित होती है। कागजके ऊपर उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम ये चार दिशाएँ तथा ईशान, अग्नि, नैऋत, वायु आदि चार कोण निर्दिष्ट रहते हैं। इस प्रकार कुल १६ वा ३२ दिशाएँ कम्पासमें व्यवहृत होती हैं। उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशाको पहले 'उ', 'पू', 'द' और 'प' सहित द्वारा चिह्नित करके उनके मध्यवर्ती जितने कोण होते हैं वे सचित किये जाते हैं। जैसे—उत्तरपूर्व कोण जानने में 'उपू', दक्षिण पश्चिम कोणमें 'दप' इत्यादि। उत्तर दिशामें जो सूर्य रहती है उसमें हमेशा फल या तागचिह्न अंकित रहता है। इससे उत्तर दिशाका इनाम सहजमें हो जाता है।



दिग्दर्शन-यन्त्र

जैसे-जैसे बायें में दिक्-निर्देशके बदले उत्तरसे ले कर समस्त वृत्तको परिधि ३६० समान भागोंमें विभक्त

रहती है। उत्तरी रेखा पर ईशानका गुरु और वहांसे क्रमागत पश्चिमकी ओर एकादि क्रमसे ३६० तक चढ़ लिखे रहते हैं। ठीक पश्चिममें ८०, दक्षिणमें १८०, पूर्वमें २७० इत्यादि। सुविधाके लिये किमी किमी कम्पासमें चम गोलाकार कागजका फलक चुंबककी सड़के माथ संलग्न रहता है, सुतरां इसका कागज सड़के साथ घुम कर चिह्नित स्थानके सर्वदा उत्तर दिशामें हो पड़ता है।

प्रथम चुंबककी सड़का एक प्रान्त हमेशा उत्तरको ओर रहता है। उल्लेख देवी। सुतरां कागजके उत्तरदिग-ज्ञापक चिह्नकी सड़ और प्रान्त के नीचे लानेसे सभी दिशाएँ निर्दिष्ट हुई। किन्तु चुंबकका काँटा मध्वर्त भौगोलिक उत्तर पर्याप्त याम्योत्तर रेखाके माथ ठीक नहीं रहता। यहाँ तक कि, एक ही स्थानमें विभिन्न समयमें इसका उत्तरी प्रान्त भौगोलिक वा प्रकृत उत्तर दिशाके पूर्व या पश्चिम दिशामें भ्रमर जाता है। इसे चुंबककी अपसृति (Declination of the needle) कहते हैं। पूर्वकी ओर काँटा भ्रमरनेसे प्राचापसृति ओर पश्चिमकी ओर भ्रमरनेसे उषे प्रतोचापसृति कह सकते हैं। पृथ्वीके प्रायः सभी प्रधान स्थानोंमें अपसृति प्रायः सूक्ष्मरूपसे अनेक प्रकारकी परीचा द्वारा निर्धारित हुई है। कम्पास द्वारा ठीक दिशाका निरूपण करनेमें इस विषयको याद देना होता है। यथार्थमें इसी प्रकार दिग्दर्शन द्वारा दिशाका निरूपण किया जाता है। सामान्य पर्य-वेक्षणोंदि द्वारा यह अपसृति सहजमें निकासी जा सकती है। पृथ्वीके प्रायः सभी स्थानोंके चोम्बकौय अपसृति निर्देशक मानचित्र प्रस्तुत हुए हैं। प्रत्येक नाविक अपने अपने जहाज पर उस मानचित्रकी रख कर दिग्दर्शनकी सहायतासे दिशाका निरूपण करते हैं।

इसके सिवा प्रत्येक जहाज पर जितना लोहा देखनेमें आता है उसमें थोड़ा बहुत चुम्बकत्व पा ही जाता है। जहाज परका यह लोहा कम्पास यन्त्रके पास सटा कर रखनेसे पार्थिव चुम्बक-शक्ति अच्छी तरह अपना काम नहीं कर सकती। सुतरां कम्पासके फाटकी उत्तरी दिशामें बहुत फर्क पड़ जाता है। २५ फर्ककी दूर करने-के लिये नाविक स्वयं अनेक प्रकारके उपाय पधनम्यन करते हैं। जहाजके भागे कम्पासके समोप मोड़की वृद्ध

रख देनेसे जहाज परने अन्याय लोगोंको सुव्यवस्थितसे
पाकपेय उत्पन्न होता है, वह बहुत कम जाता है।
कभी कभी जहाजके भगले भाग पर कम्पास न रख कर
जैसे मनुष्य पर रखनेसे जहाजको सुव्यवस्थित करने
कार्यकारी नहीं होती। सुतरां कम्पासका कठिना प्रायः
उत्तरको धोर रहता है। किन्तु इतने उपाय करने पर
भी कभी कभी सुरङ्गे छट जानेसे दिग्दाहको भूल हो हो
जातो है। प्रयाग-महासागरमें सुदोर्घ अन्धधाराके समय
इस प्रकारकी मानान्य भूलसे भारी घनित हो सकता है।
ऐसे समयमें नाविक लोग यात्रागके किसी तारेको धोर
नष्ट करके जहाजके एक पक्षिको घुमाते हैं और कम्पास-
की सुरङ्गी परीक्षा करते हैं। ऐसा करनेसे जहाज परकी
सुव्यवस्थितसे उत्पन्न सुरङ्गी वास्तविकता परिमाण निश्चय
पड़ता है। इसी प्रकार नाविक लोग कम्पासकी निर्दिष्ट
दिशामें संशोधन करके, अभिलषित धोर जानेको समय
होते हैं। कहना फजूल है कि कम्पास द्वारा विमुक्त-
रूपसे दिग्दाह ज्ञान नहीं होनेसे उपकारको बात तो दूर
रहे, विशेष घनित होनेको सम्भावना रहतो है।

स्थलभागमें भी जरीब आदि कार्योंमें कम्पासका व्यव-
हार बहुत उपकारी है। भूमिमें तथा सुरङ्गादिकी खोदने-
में इसका व्यवहार समुद्रयात्राके व्यवहारसे किसी अंशमें
कम नहीं है। दिग्दर्शन भिन्न भिन्न कार्योंमें व्यवहृत
होता है, इस कारण इनको आकृति धोर गठनप्रणाली
भिन्न भिन्न तरङ्गको होतो है। एक कामकी लिये जो
कम्पास बनाया जाता है, वह दूसरे काममें नहीं या
सकता। २ अभिज्ञता, जानकारी। ३ वह जो कुछ
उदाहरण स्वरूप दिखलाया जाय, नमूना। ४ नमूना
दिखानेका काम।

दिग्दाह (सं० पु०) दिग्दाहः। उत्पातविशेष, एक
दो घटना। इसमें सूर्यास्त होने पर भी दिग्दाह साह
जलती हुई हो मालूम पड़तो है।

दिग्दाह यदि घेतवर्ण दोष पड़े, तो राजाका भय और
यदि घनितवर्ण दोष पड़े, तो सारा देश नष्ट हो जानेका
छर रहता है। इस समय यदि दक्षिणो वायु वर्षण वर्ष
हो जाये, तो सारी फसल नष्ट हो जानेको सम्भावना
रहती है। दिग्दाहमें बहुत चमकीली धोर सूर्यसे काया

प्राकाशित होती है, इस प्रकारका दाह राजाका भय और
गन्धप्रकोप सूचना करता है। पूर्वकी धोर दिग्दाह होने-
से राजा और सचिवोंका, घनिकोंमें होनेसे शिल्पियों
और ३ स्त्रियोंका, दक्षिणमें होनेसे उपपुत्रों, वैश्यों, दूतों,
पुनर्भूतों धोर प्रमादोंका, पश्चिममें होनेसे शूद्रों धोर क्षत्रि-
जोषियोंका, वायुकोषमें होनेसे तुल्यके साथ साथ चोरों-
का, उत्तरको धोर होनेसे विप्रोंका, धोर ईशानकोषमें
दिग्दाह होनेसे पाण्डित्यों और वणिकोंका घनित होता
है। यदि आकाश परिवार रहे धोर तारागण निर्मल
मालूम पड़ते रहे तथा वायु पदविषण्ण भावसे बहती हो,
तो वर्षण वर्ष दिग्दाहमें प्रजा तथा राजा दोनोंका मङ्गल
होता है। (उद्भवसं० ११ अ०)

दिग्देवता (सं० स्त्री०) दिग्दा तन्मयीदार्ता देवता साधो-
भूतव। सभी दिग्दाशिके साक्षीभूत देवता।

दिग्ध (सं० पु०) दिग्धत्वे लिप्यते स्म विपद्यादिना दिग्ध-
त्त। १ विपद्या वाण, जहर मिला हुआ वाण। इसका
पर्याय—निद्रक है। २ स्नेह, प्रेम। ३ घनि। ४ प्रवृत्त,
निवृत्त। ५ तैल, तेल। (ति०) ६ विपद्या, जहरमें
सुझा हुआ। ७ लिप्य।

दिग्ध (हिं० वि०) दोर्घ, लम्बा, बड़ा।

दिग्धगद—वर्तमान जित्तेका एक ग्राम। यह चच। २३
२२० और देशां ८७ ४५ ५०में अवस्थित है। पहले
यहां बहुतसे मनुष्योंका वास था। यहांके पोतल धोर
कषिका बरतन बढ़िया होता है।

दिग्घट (हिं० पु०) १ दिग्दाहको वस्त्र। २ वह जो
दिग्दाहको वस्त्र धारण करता हो, दिग्धवर, नङ्गा।

दिग्घति (हिं० पु०) दिग्घाल देखो।

दिग्घाल (हिं० पु०) दिग्घाल देखो।

दिग्घल (सं० स्त्री०) दिग्घ निमित्तं घटायता वल।
सम्पादितसे स्थित घटोंका बल। मङ्गल धोर रविके लगनेसे
दशमें स्थानमें रहने पर दक्षिणदिग्घलो, यनि लगनेसे
भातमें स्थानमें रहने पर पश्चिम दिग्घलो धोर शक्र तथा
चन्द्रमा लगनेसे चौथे स्थानमें रहने पर उत्तर दिग्घलो
मानी जाती है। इसकी सहायतासे दिक्निर्णय धोर
दूसरी कई प्रकारकी गणनाएँ की जाती है।

दिग्बलिन् (सं० पु०) दिग्घ वनं घनस्थाय इति। १ दिग्घ

दिनप्रवेश (सं० पु०) ताजकोल मासप्रवेशकी माई वर्षमास सम्बन्धी दिनका प्रवेश। इसका विषय ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है। जब वर्ष प्रवेश होता है, तभी प्रथम मासका तथा प्रथम दिनका प्रवेश होना समझा जाता है। वर्ष-प्रवेश-कालके रविस्फुटमें एक राशि जोड़ने से जितनी राशि होगी, उसका नाम मासार्क है। मासार्क के निकटस्थ पूर्व परवर्ती किसी समयके रविस्फुटके साथ मासार्कका अन्तर कर जो षष्ठ्य वष रहैगा, उसे कला बनाते हैं। पीछे रविकी गतिसे उसमें भाग देनेसे जो भागफल हो, उसे निकटस्थ जिस दिन घन दण्ड समयमें रविका स्फुट लिखा गया था, उसके साथ योग वा वियोग करती हैं। अर्थात् मासार्क के पूर्व रविस्फुटमें योग और पीछे रविस्फुटसे वियोग किया जाता है। (वाचक)

इस प्रकार योग वा वियोग करनेसे जितने दिन दंडादि होंगे उतने ही दिन दण्डादि समयमें मासप्रवेश होगा। दिनप्रवेश भी इसी नियमसे समझना चाहिए। जिस समय दिनप्रवेश होगा उस समय समस्त ग्रहस्फुट, भाव, सन्धि और बुधनादिका निरूपण कर फलका विचार करना होता है।

दिन-प्रवेशकालमें वर्षप्रवेशादिको माई सूर्यादि ग्रह और द्वादश भावका साधन कर चन्द्र और नवांशाधिपति द्वारा शुभाशुभका विचार करती हैं। सूर्याधिपति, जष-सम्नाधिपति, विराधिपति, दिनरात्रिका अधिपति, दिन-सम्नाधिपति, मास सम्नाधिपति और वर्षलग्नाधिपति इनमें जो दलवान् हो कर दिन लग्नको देखता है, वही ग्रह दिनाधिपति होता है। यदि दिनप्रवेश लग्न वा चन्द्रसे त्रिकोण हो, केन्द्र हो वा ग्यारहवां स्थान बलवान् हो, शुभग्रह कटे स्थानमें तथा तोसरे वा ग्यारहवें स्थानमें पापग्रह हो, तो उस दिन सुख, भाग, अर्थ और वयका लाभ होता है।

कटे, भाठवें वा बारहवें स्थानमें यदि पापयुक्त दिनाधिपति, वर्षाधिपति वा मासाधिपति हो, तो रोग, मान और यमकी हानि होती है। उक्त ग्रह गण-यदि केन्द्र त्रिकोण वा ग्यारहवें स्थानमें हो, तो सुखलाभ-समझना चाहिये। दिनप्रवेश नवांश शुभग्रहयुक्त हो कर यदि चन्द्रमा कर्चुक मित दृष्टि द्वारा देखा जाता हो, तो नोरोग

राज्य लाभ तथा शरीरको पुष्टि होती है। इसका विपरीत होनेसे पूर्ववत् विपरीत फल समझना चाहिये। यदि दिन-प्रवेशकालमें जो भाव नवांश शुभग्रहमें कौह दृष्टि द्वारा देखा जाता हो वा शुभयुक्त हो, तो उस भावका शुभ फल होता है। इसका विपरीत होनेसे अर्थात् पापयुक्त वा पापग्रह कर्चुक शत्रु, हारा देखे जानीसे उस भावका अशुभ फल समझना चाहिए। दशभाव नवांश यदि शुभयुक्त हो, तो रोग और पापयुक्त होने पर भी शुभफल है। अथवा नवांश शुभयुक्त वा शुभदृष्ट हो, तो समझना चाहिए कि अपना स्त्रीमें सदाय होगा। जाया भावके नवांश शुभयुक्त वा शुभदृष्ट होनेसे निजपत्नी द्वारा सुख और पाप दृष्ट वा पापयुक्त होनेसे शत्रुविरोध होता है। यदि जाया भाव दो पावर्क बीचमें पड़ जाय तो शत्रु समझी जाती है।

समभाव नवांश शुभ सम्बन्ध हो, तो अनेक प्रकारके कामिनी-सुख प्राप्त होते हैं। उक्त नवांशमें यदि हृदयति रहै, तो अपनी स्त्रीमें और यदि अन्यग्रह रहै, तो दूसरेकी स्त्रीमें रतिस्पर्धोग होता है। अष्टमभाग नवांश दिनप्रवेश-लग्नका अष्टम स्थान शुभग्रहसे दृष्ट वा युक्त हो, तो रणमें मृत्यु होती है। शुभाशुभयुक्त हो वा दृष्ट हो, तो शुभ फल और यदि पाप दृष्ट वा पापयुक्त हो, तो दुःख मिलता है। दिनप्रवेशलग्नके दूसरे और बारहवें स्थानमें पापग्रह हो, तो हानि, शुभग्रह हो, तो सदाय। पापग्रहके लिये कर्चुरीयोग हो, तो अशुभ तथा रोग और यदि शुभग्रह घटित कर्चुरीयोग हो, तो शुभ होता है। चौथचन्द्रलग्नमें वा भाठवें स्थानमें रह कर पाप दृष्ट वा पापयुक्त हो, तो मृत्यु, अथवा रोग तथा शत्रु से अक्षता भय होता है। मङ्गल-युक्त-चन्द्रके कटे वा भाठवें स्थानमें रहनेसे शत्रु से अक्षता भय और चौथे स्थानमें पापग्रहके रहनेसे गजायादिस पतन और शरीरमें नाश प्रकारके रोग होनेकी आशङ्का रहती है। सातवें स्थानमें शुभग्रहके रहनेसे जय, दूसरे स्थानमें सुख, नवें स्थानमें धर्म, अर्थात्मा और राजसम्मान प्राप्त होता है। दिनप्रवेशके समय चन्द्रमा जिस प्रकार रहते हैं, फल भी उसी प्रकार मिलता है। चन्द्र-स्फुटकी राशिको कौह कर अवशिष्ट भागको रवे गुना

निमित्त बनयुक्त ग्रन्थ ग्रन्थ जो किमो दिशाके लिये लभो हो। २ तादृश राशिभेद, वह राशि जिस पर िमो ग्रहका बल हो।

दिग्भाग (मं० पु०) दिशां भागः। दिग्विभाग।

दिग्भ्रम (मं० पु०) दिशाघोका भ्रम होना, दिशा भूल जाना।

दिग्मण्डल (सं० पु०) सम्पूर्ण दिशाएं, दिशाघोका समूह।

दिग्गम—शहरके दून जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २०° ६' ८०' और देशा० ७७° ४५' पूर्व में अवस्थित है। रानी कपड़ेके व्यवसायके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

दिग्गज (हिं० पु०) दिग्गज देखो।

दिग्गहन (मं० स्त्री०) दिग्भेदे वहनं यस्य। सभी दिशाघोमें स्थित राशिभेद। पूर्वमें मेषराशि, दक्षिणमें वृषराशि, उत्तरमें कर्कटराशि इसी प्रकार चौर सभीको समझना चाहिये।

दिग्गहन (हिं० पु०) दिग्गहन देखो।

दिग्गन्ध (मिं० पु०) दिग्गन्ध रूपं वस्त्रं यस्य। १ महादेव।

२ जैनभेद, चपणक। (त्रि०) ३ लज्ज, नङ्गा।

दिग्गान् (सं० पु०) चौकोदार, पट्टेदार।

दिग्गारण (सं० पु०) दिक्षु स्थितो वारणः। ऐरावतादि दिग्गज।

दिग्वास (सं० पु०) दिग्ग रूपं वासः यस्य। १ महादेव, शिव। २ जैनभेद, नङ्गा रहनेवाला, जैन यति। (त्रि०) ३ उलङ्घ, नङ्गा।

दिग्विजय (सं० पु०) दिशां तत्तत्स्थानलोकानां विजयः। युद्ध द्वारा चतुर्दिक् जयकरण, अपने चौरता दिक्स्थानों और महत्त्व स्थापित करनेके लिए राजाघोका देश-देशान्तरोमें अपने सेनाके साथ जा कर युद्ध करना और विजय प्राप्त करना। जैसे पाण्डव-दिग्विजय। २ विद्या द्वारा चतुर्दिक् जयकरण, अपने गुण, विद्या वा बुद्धि आदिके द्वारा देश देशान्तरोमें अपने प्रधानता अथवा महत्त्व स्थापित करना। जैसे, गहर दिग्विजय।

दिग्विजयगञ्ज—भायवरेली जिलेके अन्तर्गत एक तहसील या उपविभाग। यह अक्षा० २६° १०' २०" से २६° १६' ३०" और देशा० ८१° १' २०" से ८१° १०' पूर्व में अवस्थित

है। इसके मध्यवर्ती दिग्विजयगञ्ज नामक ग्राममें तहसीलदार और पुलिस-इन्स्पेक्टर रहते हैं। इसी ग्रामके नामसे ही तहसीलका नामकरण हुआ है।

दिग्विजयो (सं० स्त्री०) दिग्विजय-इन्। विद्या वा वाङ्मय द्वारा दिग्विजय करनेवाला, जिसने दिग्विजय किया हो, जैसे दिग्विजयो राजा, अर्थात् जिस राजाने भिन्न भिन्न देशोंको युद्धमें जीत कर उन पर अपना आधिपत्य जमा लिया है। जैसे, दिग्विजयो पण्डित अर्थात् जिस पण्डितने गुण, विद्या या बुद्धि आदिके द्वारा देशान्तरोके पण्डितोंको परास्त कर वहां अपनी प्रधानता अथवा महत्त्व स्थापित किया है।

दिग्विदिक (सं० स्त्री०) सकलदिक्, सब दिशाएं।

दिग्विदिकस्थ (सं० त्रि०) दिग्विदिकस्थानक। जो भिन्न भिन्न दिशाघोमें स्थित हो।

दिग्विभाग (सं० पु०) दिशां विभागः। दिग्भाग, दिगा, चौर, तरफ।

दिग्विलोकन (सं० स्त्री०) दिशां विलोकनं। गृह्यहटि।

दिग्विषी (सं० त्रि०) जो सब दिशाघोमें ध्यान हो।

दिग्गत (सं० पु०) जैनियाका एक व्रत। इसमें वे कुछ धर्मोपसमयके लिये प्रतिज्ञा करते हैं कि अमुक दिगामें इतनी दूरसे अधिक न जायेंगे।

दिगिष्ठा (सं० पु०) पूर्वदिगा।

दिगिम्बुर (सं० पु०) दिग्गज।

दिघोच (हिं० पु०) एक प्रकारका पत्थो। इसको कातो सफेद, डेने काले चौर सुनहले होते हैं।

दिङ्ग (मं० पु०) स्कोटनकावे दिङ्ग इति क्त्वा कायते शब्दायते कौक। उत्तुङ्गण्डित्य, जू नामका एक छोटा कोड़ा जो बिरके वालोंमें पहता है।

दिङ्गनक्षत्र (मं० स्त्री०) दिग्दिग्भेदेन स्थितं नक्षत्रं। दिशाघोमें अवस्थित नक्षत्र। कृत्तिका आदि सात नक्षत्र पूर्वदिक्की चौर उदय होते हैं। जिसका नक्षत्र जिस दिशामें रहता है उसी नक्षत्रमें उसका घर शुभ होता है।

दिङ्गनाग (सं० पु०) दिग्गि स्थितो नागः। १ दिग्गज।

२ एक विख्यात बौद्ध ग्रन्थकार। इनका यनाया हुआ प्रमाणसमुच्चय ग्रन्थ पट्टनेसे बौद्धमतके अनेक गुरु विषय

करें और गुणनफल को पूरे भाग दें, तो चन्द्रमा को चयन्य मान लें जायेगा। चन्द्रमा की प्रशासकस्थान में मनुष्यका भी प्रवास, नटावस्थामें विचरना, सृता-यण्यामें सृज्य भय, जयावस्थामें जय, हास्यावस्थामें हसो विलापादि सुख, क्रोधावस्थामें सुख, सुमोघस्थामें निद्रा, मुक्तावस्थामें देशपोड़ा, मय और ताप पादि दुष्ठा करता है। (नीलहण्डोक्त तावक)

दिनचक्र (मं० पु०) दिनस्य चक्रः । १ सूर्य । २ चक्रं हस्त, चाक, मंदार ।

दिनचक्र (मं० पु०) दिने चक्रं यस्य । द्विपदराशि, फलित ज्योतिषमें बारह राशियोंमेंसे पांचवीं, छठो, सातवीं, आठवीं, और बारहवीं ये छह राशियां दिनचक्र या दिनचक्रो मानी जाती है और बाकी रात्रिचक्र ।

दिनमण्ड (मं० पु०) दिनस्य मण्डिरम् । १ सूर्य । २ चक्रं हस्त, चाक, मंदार ।

दिनमण्डल (मं० पु०) दिने मण्डलो यस्य । १ सूर्य । २ चक्रं हस्त, चाक ।

दिनमण्ड (मं० स्त्री०) मास, महोना ।

दिनमान (मं० स्त्री०) दिनस्य मानः । सूर्यदर्शनकालका मानमेव, सूर्योदयसे ले कर सूर्यास्त तकके समयका मान । बारहों मासके प्रति दिनका दिनमान निम्नलिखित नियमसे स्थिर किया जाता है । पहले रविस्फुट करना होता है । जोकि यदि उस रविका स्फुट चयनांग सुरु हो, तो उसमें चयनांग निकाल लेते हैं । ऐसा करने से शून्य समयका चयनांग विषय मंक्रान्तिके रविका स्फुट निकल आयेगा । इन विषयमंक्रान्तिके ले कर तमसः ६ मासके ६ मंक्रान्ति दिनोंका चयनांग वैशाख मासमें विषय मंक्रान्ति-दिवसोय ० शून्य, चैत्र मासकी मंक्रान्तिके दिवसोय ३० तीस, आषाढ़ मासके मंक्रान्ति दिवसोय ५४, आश्विन मासके मंक्रान्ति दिवसोय ६४, भाद्रमासके मंक्रान्ति दिवसोय ५४, आश्विन मासके मंक्रान्ति दिवसोय १० इन छः चक्रोंको विषयको मध्याह्न आया ११० से गुणा करते हैं, बाद उसमें ८० का भाग दे कर भागफल जो होता है उसमें ३० जोड़ते हैं । अब योगफल जो दण्ड होगा, वही यथाक्रमसे छह विषय मंक्रान्ति आदि छः मंक्रान्ति दिवसका दिन-मान माना

जायगा । फिर जो छः मंक्रान्ति यह रहेंगे उनका दिनमान इस प्रकार निकालना होता है, जैसे—जिन ६ मंक्रान्ति दिनोंका दिनमान ६० से नियुक्त करने पर जो बच जायगा वही यथाक्रमसे कार्तिकादि ६ मासके मंक्रान्ति दिनोंका दिनमान होगा । जिन जिन देगोंमें बाह्य भंगुलीके शङ्कुका ५-१० पाँच भंगुल दण्ड व्यङ्ग्य मध्याह्न आया हो उन देगोंका दिनमान इस प्रकार निकालना होता है, जैसे—वैशाख मासके विषयमंक्रान्ति-दिवसोय दिनमान ३० दण्ड होता है । इस ३० दण्डको ६० दण्डमेंसे निकाल लेने पर जो ३० बच जाता है, वही कार्तिक मासके मंक्रान्ति दिवसका दिनमान होगा । चैत्र मासका मंक्रान्ति-दिवसोय दिनमान ११४५ पल है । इन पल्लोंको ६०मेंसे घटा लेने पर २८१० पल बच जाता है, वही अश्वयुज मासके मंक्रान्तिदिवसका दिनमान होगा । आषाढ़ मासका मंक्रान्ति-दिवसोय दिनमान २१६ पल है, ६० मेंसे इसे निकाल लेने पर जो २६५४ पल बच जाता है वही पोष मासके मंक्रान्तिदिनका परिमाण है । आश्विन मासके मंक्रान्ति दिनका परिमाण २१४४ पल है जिसे ६० दण्डमेंसे निकाल लेने पर २६२० पल अवशिष्ट रहता है वही माघ मासके मंक्रान्ति दिवसका दिनमान है । भाद्रमासकी मंक्रान्तिका दिनमान २१६ पल है, इस अङ्कको ६० मेंसे निकाल लेने पर २६५४ पल बच जाता है, वही फाल्गुन मासके मंक्रान्तिदिवसका दिनमान होगा । आश्विन मासका मंक्रान्ति दिवसोय दिनमान ४१४५ पल है इसे ६०मेंसे विभोज करने पर २८१० पल अवशिष्ट रहता है, वही २८१० पल चैत्र-मंक्रान्ति दिवसोय दिनमान होगा । ये सब जो दिनमान कहे गये प्रत्येक ६६ वर्षमें रविका एक चयन-दिन होता है । इसी नियमके अनुसार अभी १० चैत्रको दिनमें सूर्योदयपरेखा पर पाने हैं, १०मेंसे बच दिवसोय दिनमान ३० दण्डका होता है । दूसरी दूसरी मंक्रान्ति उस महोनेके १०वें दिनमें होती है । पहले केवल मंक्रान्तिदिनका दिनमान आया गया ; इसके मध्यवर्ती दिनोंका दिनमान स्थिर करने समय मासका मंक्रान्ति दिवसोय दिनमान निकालते हैं । बाद दूसरे दिनसे ले कर परवर्ती मंक्रान्ति दिनके पूर्व दिन

जाने जा सकते हैं। मत्तिनायने सेचदूतको टोकामें
लिखा है, कि दिङ्नाग कान्तिशसके एक घोर प्रतिद्वन्द्वी
थे। साचस्पति मिथ्यने इनका मत उद्धृत किया है।
वज्रभदेयको सुभाषितावलीमें दिङ्नागको एक कविता
उद्धृत हुई है, किन्तु यह कविता महाभारतमें पाई
जाती है।

दिङ्गलारि (सं० स्त्री०) १ वेष्टा, रण्डो। २ कुलटा,
व्यभिचारिणी।

दिष्णण्डन (सं० त्रि०) दिशा मण्डन। दिक्चक्र,
दिशाभौका समूह।

दिङ्मातङ्ग (सं० पु०) दिशि स्थितो मातङ्गः। दिग्गज।
दिङ्मात्र (सं० स्त्री०) दिग्वे मातृच्। उदाहरण
मात्र, केवल गमूना।

दिङ्मुह (सं० त्रि०) दिशि मुहः। १ दिग्भ्रान्तियुक्त,
जिसे दिग्भ्रम हुआ हो। २ मूर्ख, बेवकूफ।

दिङ्मोह (सं० पु०) दिशि मोहः। दिक्भ्रम, दिशा भ्रम
जाना।

दिङ्गि (सं० पु०) तिङ्गि ह्योदरादित्वात् साधुः।
बाद्यभेद, एक तरहका बाजा।

दिङ्गिर (सं० पु०) दिङ्गिर ह्योदरादित्वात् साधुः।
बाद्यभेद, प्राचीन कालका एक बाजा।

दिण्डी (सं० पु०) उन्नीम मात्राभौका एक छन्दः। इसमें
चत्वारिंशत् दो शब्द होते हैं और जिसमें ८ तथा १० पर
विग्रह होता है।

दिण्डोर (सं० पु०) समुद्रक्षिण, समुद्रकिन।

दित (सं० त्रि०) द्योती स्म दी भवत्पण्डने दी-क्त इति
वत् (यतिव्यतीति। पा ७।१।४०) द्विज, चोरा हुआ।

दिति (सं० स्त्री०) दैत्यमाता, कश्यप ऋषिकी एक स्त्री।
इसके गर्भसे जो सब उत्पन्न हुए, वे ही दैत्य कहलाये।

विष्णुपुराणमें लिखा है कि जब इनके सब पुत्र इन्द्र और
देवताओंसे मारे गये, तब उन्होंने अपने पति कश्यपसे
कहा, कि मैं एक ऐसा पुत्र चाहती हूँ जो इन्द्रका
भी दमन करे। कश्यपने उनकी अभिलाषा पूरी और
साथ ही साथ यह भी कह दिया कि, 'तुम्हें सौ वर्ष तक
गर्भ धारण करना पड़ेगा। इतने समय तक बहुत ही
पवित्रता पूर्वक रहना पड़ेगा, भ्रममें कभी पड़ना
नहीं

करना न होगा।' दिति भी बहुत सावधानीसे धर्म
पालन करने लगी। इन्द्र इन्हें अपनी भावी विपत्ती
आशङ्क कर दितिका व्रत भङ्ग करनेकी ताकमें लगे
रहे। एक दिन रातके समय दिति बिना हाथ पैर धोए
सोनेकी चली गईं। इस अवसरमें इन्द्रने वज्रसे उनके
जरायुके सात टुकड़े कर डाले। गर्भस्थ शिशुने रोनेसे
इन्द्र भी घबरा उठे। छठी समय उन्होंने सातों टुकड़ों-
मेंसे हर एकके फिर सात टुकड़े किये। येही उनचास
खण्ड मरुत कहलाते हैं। मरुत देखो। दो-भावे किन्तु।
२ खण्डन, तोड़ने या फोड़नेका काम। (पु०) ३ राज-
विशेष, एक राजाका नाम। (त्रि०) ४ दाता, देनेवाला।
दितिकुल (सं० स्त्री०) दैत्यवंश।

दितिज (सं० पु०) दितिर्नायने जन-ड। दैत्य, दितिके
पुत्र।

दितितनय (सं० पु०) दितिस्तनयः। दैत्य, चसुर।

दितिसुत (सं० पु०) दितेः सुतः। दैत्य, राक्षस।

दित्य (सं० पु०) दितौ भवः यत्। १ चसुर, राक्षस।

(त्रि०) २ छेदनाई, जो छेदने या काटने योग्य हो।

दित्यवाह (सं० पु०) दित्यं छेदनाई धाम्नादिकं वहति
वह-पित। दिव्यवस्तु पण, दो वर्षका पण।

दित्या (सं० स्त्री०) दातु-मिच्छा द-सन् भावे च। दानेच्छा,
दान करनेकी इच्छा।

दित्सु (सं० त्रि०) दातुमिच्छुः दा-सन् ततो च। दानेच्छ,
जो दान करना चाहता हो।

दित्यार (सं० त्रि०) दान करने योग्य, जो दान किया
जा सके।

दिदार (हिं० पु०) दीदार देखो।

दिदम्भिपु (सं० त्रि०) दम्भ सन् ततो च। ठगनेकी
इच्छा।

दिदित्सु (सं० त्रि०) छोड़ देनेकी इच्छा।

दिदा—लोहर दुर्गाधिपति सिंहराजकी कन्या। काश्मीरकी
राजा चेमगुप्तके मरने पर दिदा अभिमन्यु नामक शिशु
पुत्रको सिंहसन पर बिठा आप सन्तियोंकी सहायतासे
राज-कार्य चलाते लगे। इन्होंने सारा राजकार्य
अपने हाथमें से लिया सही, लेकिन राज्यप्राप्तोप-
योगी बुद्धिका इनमें बिल्कुल अभाव था। ये मन्त्री

तक गणना करके जितने दिन दण्ड होगे उससे पूर्व सन्क्रान्तिसे पर सन्क्रान्ति तक जो दण्डादिको छद्दि होतो है उसे तैरागिक द्वारा दूसरे दूसरे दिवसका दिनमान स्थिर किया जा सकता है।

खं० स्वामी १० पुग शासकी ५४ सुगरतो ६० वेदेवः
५४ कामः । छाया ५१० प्रा खनयोः १० वृत्तपाः खदहनें
१० सुफा सुमानानि पट ॥

दिनमाली (स० पु०) सूर्य ।

दिनमुख (स० स्त्री०) दिनस्य मुखं । प्रभातः, सवेरा ।

दिनसूईन (स० पु०) दिनस्य सूई इव पाय स्थान-
त्वात् । उदयगिरि ।

दिनयोधन (स० स्त्री०) दिनस्य योधनमिव । मध्याह्नः,
दोपहर ।

दिनरत्न (स० स्त्री०) दिनस्य रत्नमिव प्रकाशकत्वात् । १
सूर्य । २ चक्रवर्त्तः आका ।

दिनराज (स० पु०) सूर्य ।

दिनराशि (स० पु०) ज्योतिषोक्त चक्रगण ।

दिनव्यास (स० पु०) दिनस्य पञ्चोरात्रात्मक कालव्यास-
हस्तस्य व्यासः । सूर्यसिद्धान्तके अनुसार पञ्चोरात्र-
वृत्त व्यासको चक्रव्यास ।

दिनश्रेय (स० पु०) दिनान्तः, संध्या, शाम ।

दिनांश (स० पु०) दिनस्य अंशः । १ दिनके प्रातःकाल,
मध्याह्न काल और माघकालमें तीन अंश वा- विभाग ।
२ दिनके पांच अंश या विभाग, जिनके नाम ये हैं—
प्रथम अंशके बाद तीन मुहूर्त्त प्रातः, तीन मुहूर्त्त सङ्कष,
तीन मुहूर्त्त मध्याह्न, तीन मुहूर्त्त अपराह्न और तीन
मुहूर्त्त सायंकाल । दिन इन्हीं पांच अंशोंमें विभक्त है
उनमें प्रातरादि कालको विच्छेदणके उद्देश्यसे कोई कार्य
नहीं करना चाहिये ।

दिनागम (स० पु०) दिनस्य आगमः । प्रभातकाल,
तड़का ।

दिनाह्नः—युक्तप्रदेशमें हमीरपुर जिलेके अन्तर्गत एक
प्राचीन ग्राम । यह कुल पहाड़के ३ कोस पश्चिममें अव-
स्थित है । यहाँ कोट पहाड़के ऊपर चन्देल राजाओंके
समयका शिवमन्दिरका भूसावशेष देखा जाता है ।
इसका काश्कार्य देखने योग्य है । पहाड़के नीचे जैन-

तीर्थहार शास्त्रिनाथकी एक लघु मूर्ति पड़ी हुई है
जिसमें केवल ११८४ संवत् खुदा हुआ है ।

दिनाजपुर—बङ्गालके साटके शासनाधीन राजसाही
विभागके पश्चिमार्धवर्ती एक जिला । यह भूभा २४'
५५" से २६' २३" उ० और दूरा ८८' २३" ८८' १८' पू०
में अवस्थित है । भूपरिमाण ३८४६ वर्गमोल है । इसके
उत्तर-पूर्व में जलपाइगुड़ी, पश्चिममें पुरणिया, पूर्व में
रङ्गपुर, दक्षिण-पूर्व में बगुड़ा, दक्षिणमें राजसाही और
दक्षिण-पश्चिममें मालदा है ।

उत्तर-बङ्गालके अन्यान्य जिलाओंकी अपेक्षा यहाँ-
की जमीन जलप्लावित हुआ करती है । हिमालयसे
ले कर गङ्गाके किनारे तककी भूमि बहुत शुष्क है, इस
कारण नदीका किनारा सड़कमें ही बट नहीं होता
है । जिलेके दक्षिण और वायुकोणमें कुलिक नदीके
तीरवर्ती प्रदेशकी भूमि तरङ्गावृत्त होनेसे १८० फुट
ऊँची पहाड़के आकारमें हो गई है । बहुतसे नदियाँ
जिलेमें बहती हैं । वर्षाकालमें जब बाढ़ आ जाती है,
तब ये सब नदियाँ किनारा पार कर घासपासके स्थानोंमें
पड़ भर देती हैं । जितनी ही पड़ कम जाती है, वर्षा
उतनी ही अच्छी फसल लगती है । वर्षाकालमें उक्त
नदियाँ उमड़ पाती हैं, किन्तु शीतकालमें सूख कर
बहुत सड़के हो जाती हैं । जब उनमें बाढ़ आ जाती
है, तब जल दो मोल स्थान तक फैल जाता है । जिलेके
दक्षिण भागमें महोका पहाड़ है जो चने अंगुलसे परिपूर्ण
है और जहाँ तरह तरहके हिंसक पक्ष दास करते हैं ।

दिनाजपुर जिलेकी सभी नदियाँ प्रधानतः दो अंगियोंमें
विभक्त हैं, एक अंगी दक्षिणकी ओर आ कर महा-
नन्दा में गिरी है और दूसरी दक्षिण-पूर्वकी ओर बगुड़ा
और राजसाही जिलेकी तिस्ता नदीमें । महानन्दा नदी
पश्चिम भौमान्तमें प्रायः ३० मोल तक प्रवाहित है ।
नागर, टाङ्गन और पुनर्भवा इसकी उपनदियाँ हैं, जिनमें
वर्षाकालमें नर्वे आ जा सकती हैं । आतराई (पातकी),
यमुना और करतोया नदियाँ पुरानो तिस्तामें आ गिरी
हैं । विगत शताब्दीमें तिस्ताका स्रोत सदा परिवर्तित
हो कर ब्रह्मपुत्र नदीमें गिरता है, इसी कारण इन सब
उपनदियोंमें बाणिक्यकी बहुत प्रवृत्ति हो गई है ।

फाल्गुन यादि कई एक प्रधान व्यक्तियों के माय बहुत बुरी तरह से पैग पड़े। इस पर ये सबके सब दिहाके विरुद्ध पक्षयन्त्र रचने लगे। अन्तमें इन्होंने ब्राह्मणोंको रिश्वत दे कर बहुत चतुरतासे विवाद माना किया। कुछ दिन बाद पुनः विद्रोह उपस्थित हो गया। इस बार इन्होंने विवादको न निवृत्ता कर सके, न्य दुर्गमें प्राणय ने लड़ाई ठान दी और विजय भी अन्तमें प्राप्त कर ली। किन्तु विद्रोही माने गये और कितने कैद कर लिये गए। कैदी विद्रोही भी कुछ समय बाद यमराजकी अतिथि बनाये गये। अभिमन्यु ११ वर्ष १० मास राज्य कर यक्षारोगसे पशुत्वकी प्राप्त हुए। पीछे दिहाने अपने पौत्र (अभिमन्युके पुत्र) नन्दीगुप्तको राजा बनाया। इन्होंने अपने पुत्रके स्मरणाय अभिमन्युपुर नामक एक नगर बसाया और वहाँ अभिमन्यु स्वामी नामक एक देवमूर्ति को प्रतिष्ठा भी की। इनका हो नहीं, ये अपने नाम पर भी दिहापुर और दिहा स्वामी नामक नगर और देवमूर्ति स्थापित कर गई हैं। इस प्रकार अच्छे अच्छे कामोंके करनेसे प्रजा इन्हें कुछ कुछ चाहने लगी। किन्तु एक वर्षके अन्दर ही इनका पुत्रगोक जाता रहा और इन्होंने अपने पौत्रको मरवा डाला। पीछे इतनीय पोष विभुवनगुप्त राजा हुए, किन्तु दिहाने उन्हें भी यमपुरको भेज दिया। बाद कनिष्ठ पौत्र भीमगुप्तने राजनिर्वाहान सुयोगित किया। दिहाके समयमें पापको जड़ मजबूत हो गई थी। व्यवहार तो मानो इसके अड़का भूयंश बन गया था। नोषते नोच जातिकी भी अपना उपपत्ति बना लेतो थे। धादि धीरे नोगोंको चयडा इसकी चोर इन्होंने लगे। भीमगुप्तकी भी ये सब बातें अपनी माँसे मालूम हुई। वे कहर धार्मिक के, पितामहको ऐसा व्यवहार देख अत्यन्त मर्माहत हो गये और उनका चरित्र सुधारनेका उपाय करने लगे। राजकार्यकी सुदृष्टता भी स्थापन करनेकी इन्होंने खुष कीर्तिश की। पापिता दिहाको यह सब हाल मान लीं पर इसने खुलमखुला भीमकी हत्या कर डाली और स्वयं राजनिर्वाहान भविष्य कर बैठी। इसने प्रधान उपपत्ति लुप्त प्रधान मन्त्री हुआ। यह मनुष्य पहले खुशजातीय मदिपपालक था,

पीछे रानीकी छपासे पाँच भाइयों के साथ राजकार्यमें नियुक्त हुआ। अन्यान्य मन्त्रियोंको बाध हो कर लुप्तकी अधीनता करने पड़ी, किन्तु उनके हृदयमें राज्यनामकी कामना जाग्रत हो गई। लुप्तकी जब इसकी खबर लगी, तब उसने बहुतोंका प्राणवध किया। पीछे दिहाने अपने भतीजे संधामराजकी सिंहासन पर अभिषिक्त किया। इसके कुछ समय बाद रानीकी मृत्यु हुई। संधामराज राजकार्य चलाते रहे। (राजतरङ्गिणी)

दिहापुर—काश्मीरका एक नगर। दिहाने अपना नाम चिरस्मरणाय रखनेके लिये अपने नाम पर यह नगर बसाया।

दिहास्वामी (सं० पु०) दिहाने प्रतिष्ठित देवमूर्ति। दिहाने दिहापुरमें दिहास्वामी नामको एक देवमूर्ति स्थापन की।

दिहचमान (सं० सि०) दृग-मन् दिहच-मानच्। जो देखनेकी इच्छा करता हो।

दिहचा (सं० स्त्री०) द्रष्टुमिच्छा दृग-मन् भावे च। दर्शनेच्छा, देखनेका अभिलाष।

दिहचु (सं० स्त्री०) द्रष्टुमिच्छुः दृग-मन्-ततो च। दर्शन करनेका इच्छा, जो देखना चाहता हो।

दिहवेष्ट (सं० स्त्री०) द्रष्टुमिच्छुः दृग-मन्-ततो च। दर्शन करनेका अभिलाषणाय, जिसकी अभिलाषा देखनेकी हो।

दिहवेष्ट (सं० स्त्री०) दिहचा पक्षेति, दिहचा बाहु उक्त। दर्शनोय, देखनेयोग्य हो।

दिव्य (सं० पु०) दिव्यत् प्रतीक्षादिवात् बाहुः। १ वचः २ बाण।

दिव्युत (सं० पु०) द्युत् किंप्रियां बाहुः। १ दोमिग्रोम, वह जिसमें खूब चमक दमक हो।

दिघचमाण (सं० स्त्री०) दिघच-मानच्। दाहनेच्छा, जिसने दाह करनेकी इच्छा की हो।

दिघचा (सं० स्त्री०) दग्धुमिच्छा। दह-मन्-ततो च। दग्ध करनेकी इच्छा, जलानेकी चाहिग।

दिघचु (सं० पु०) दग्धुमिच्छुः दह-मन्-ततो च। दग्ध करनेकी इच्छा।

दिघि (सं० पु०) धा-दि। १ धेयः २ धारण।

दिधिपाथ्य (सं० पु०) दधाति धानमिति धा-पाथ्य।

जिनमें मय जगह विगोपकर करतोया गढीके किनारे बहुतसे मालके पैठ पाये जाते हैं : इन सब जंगलोंके जमींदारोंको येष्ट पाय होती है। कभी कभी चनाम-में ये सब पैठ बाट कर नदीमें बहा दिये जाते हैं : मतः काठ उतना उमड़ा नहीं होता है। घरएमें मधु, धनत-मूल, गतमूनी घोर जंगलो फूल पाये जाते हैं। जङ्गली कन्धुओंमें बाघ, चिता, सूर, भरना, तरह तरहके हरिय, यन्धिलाह, गोदह, निधली, सङ्कटवधा और गढीमें कुभोर पादि देखे जाते हैं। बाघ घोर चिता जनों लङ्कजमें रहते हैं घोर प्रति वर्ष बहुतसे मनुष्योंको मार खाता करते हैं। भरना, सूर घोर गोदह पादि ईश तथा धामके छिनोंमें बा कर बहुत नुकसान करते हैं। जिनमें भरमें गिरार घोर भयान्य पक्षी तथा तरह तरहकी मन्दकियां पाई जाती हैं। यहां कई जगह बहुत बड़े बड़े प्रान्तर पड़ गये हैं जहां पशुपालनगण बिना करके अपने अपने मवेशीको चराते हैं।

यहांकी लोकसंख्या प्रायः पन्द्रह लाख है जिनमें प्रमथ्य जातिको संख्या हो सबसे अधिक है। ये सब मानद जिताना नोचमायसे हिन्दू धर्ममें रहनेको अपेक्षा निजता मुसलमानोंके धर्म का आश्रय लेना ही पड़ता समझते हैं घोर इससे यहां मुसलमानोंकी संख्या अधिक हो गई है। छोटा नागपुरमें भूमिज, सन्यास, कोल, दरभार, भूँइया पादि जातिक लोग यहां आ कर बहुत यत्नाने तथा जंगल काटनेके काममें लग गये हैं। प्रहत् हिन्दूको संख्याको अपेक्षा हिन्दू सम्प्रदायभक्त भवे हिन्दूये पायो संख्या प्रायः दुगुनी है। ये पाली, राजवंशी घोर क्षेत्र पादि नामसे मगहर हैं। कहते हैं कि कुछ कालमें निवे ब्राह्मण यहां आकर वास करते हैं। सन्यास जातिवर्गमें राजपूत, कायस्थ, घोबर, बनिया, दुसाध, गार्द, ताता, कुहार, लोहार, श्यामा, अंगी घोर चण्डाल हैं। दिनाजपुर महरमें ब्राह्मणमान स्थापित हुआ है, कई एक राजकुमारों वारो इसमें उपासक हैं। कुछ क्षत्री भी यहां आ कर बस गये हैं। भिषाजोयो बैरागी जेष्टवकी संख्या भी कम नहीं है, अनेक पालो इस सम्प्रदायके पालात हैं। अधिकांश मुसलमान लोग छवि-आवा, ये अमींदार वा व्यवसायाका संस्था बहुत कम

है। चनामको कठमोके समयमें कुछ लोग दूसरे जिनमें यहां आ जाते हैं, किन्तु दिनाजपुरसे बहुत कम लोग दूसरे स्थानको जाते हैं।

दिनाजपुर जिनमें एक महर घोर ७८४१ घाम नगते है। अधिकांश अधिवासी छविनीयो हैं जो छोटे छोटे गांवोंमें रहना बहुत पसन्द करते हैं। दूकानदार घोर कारोगर लोग भी अपने अपने व्यवसके सुताबिक चनाम उपजा सेते हैं। धानकी खेती ही यहां प्रधान है, किन्तु उपयुक्त जमीन रहने पर पोड़ा बहुत साग तथा कन-मूलादि भी उपजाया जाता है।

यहांके अधिकांश छवि बधुविवाह करते हैं। ये बाहरमें खेती करते-घोर घरमें छियां कपड़ा बुनते, घन काततो तथा घरके घोर सभी काम अपने ऊपर से लेतो हैं। गढीके किनारे बड़ी बड़ी घाटें हैं जहां धान तथा घोर तरहके चनाम जमा रहते घोर वर्षाके भारभने माव द्वारा दूसरे दूसरे स्थानोंमें भेजे जाते हैं।

धान ही इस जिलेका प्रधान मध्य है। कैमलिह, पाय, बोरो ये-छो तीन प्रकारके धान यहां बुपा करते हैं। इनके निवा लुहरो, बाजरा, तरह तरहका उरद, तमाकू, पटसन, सरस, गुंजा, ईश घोर पान आदि उप-पाये जाते हैं।

दिनाजपुरमें पतिव्रत वा पनाहटि आदि दुष्टता प्रायः नहीं देखी जाती है। वर्षाकालमें नदियां उमड़ कर बहुत दूर तक लज्जावित कर देतो हैं सही, किन्तु इससे उपकार नहीं हो तो मयका उपकार भी नहीं होता है। केवल १८७१ ई०के सुदीर्घ पनाहटिमें इस जिलेमें पामन धान कुछ भी नहीं बुपा पा जिनमें प्रभाको पसोम कष्ट भुगतना पड़ा था। गममें स्थानी रिजोह आये खोल कर इस दुर्भिक्षमें बहुत कुछ सहायता दी।

मदन-ब्रह्मल एट-रेलमय इस जिले को कर गया है। इसको एक गाणा दिनाजपुर महर रोतो दूरी गई है। जिनमें भरमें पक्षी सड़ते हैं। नदी द्वारा पाबिन्नादि चलाता है सही, किन्तु बहुतसी नदियोंमें वर्ष भरमें केवल ११४ महीने तक बड़ी बड़ी नावें जातो पातो है।

पक्षमें कहा आ लुहा है, कि यहाँके अधिकांश अधि-वासो छविजोयो हैं, इसमें मिश्रको प्रचलित बहुत कम

धातोर्हित्व इत्वं युक् च । (दिधिषाभ्यः उण् । १।८०) १
पारोपित बभूव, वनावदो दोस्त । (त्रि०) २ धारक,
धारण करनेवाला ।

दिधिषु (म० पु०) दिधिं धैर्यं स्यतीति सो वाहुलकात्
कुः वा दिधिषुं प्राप्नोति इच्छति सुप प्राप्नोति यच्च, ततो
किप्, वाहु० ऋत्वः । १ हिन्दुदापति, पहले एक बार व्याही
हुई, स्त्रीका दूसरा पति । २ गर्भाधानकर्त्ता, गर्भाधान
करनेवाला मनुष्य ।

दिधिषू (स० स्त्री०) दधाति पापं यदा दिधिं धैर्यं
इन्द्रियदौर्बल्यात् स्यति तज्जतीति दा वा सो क्लृप्तत्वेन
माधुः (अंदरन क्लृप्तिः । उण् १।८५) १ हिन्दुदा, यह
स्त्री जिसके दो व्याह हुए हैं । २ वह स्त्री या कन्या
जिसका विवाह उसको बड़े बहाने के विवाहके पहले
हुआ हो । (त्रि०) ३ धारक, धारण करनेवाला ।

दिधिषूपति (स० पु०) दिधिषुः हिन्दुदा तस्याः पतिः
स्वामी । हिन्दुदापति, दो बार व्याही हुई स्त्रीका पति ।

मनुका कहना है, कि पुत्रोत्पादनके लिये धर्मतः
प्रति ऋतुमें एक एक बार गमन नहीं करके जो मनुष्य
नियम धर्मको उल्लङ्घन कर कामवश अपने स्तु भ्राता-
को पत्नीमें भासना जो जाता है, उसे दिधिषूपति कहते
हैं । स्मृतिमें परपूर्वसे पतिकी दिधिषूपति कहा है ।
धृतराष्ट्र और पाण्डुके जनकत्वके लिये व्यासकी भी
दिधिषूपति कह सकते हैं ।

दिन (म० स्त्री०) दधाति खण्डयति महाकालमिति दो
क्षेदे-इत्वं (बहुलमव्ययम् । उण् २।४८) सूर्यकिरण, प्रका-
शित समय, सूर्यके उदयेसे लेकर अस्त तकका समय,
दिवस, २४ घण्टा परिमित काल, उतना समय जिसमें
सूर्य नितिके ऊपर रहता है । पर्याय—वस्तु, पहनु,
दिवस, वापरा, भाखरा, दिवस, वार, अंशक, घू ।
(अश्व०) वैदिक पर्याय—वस्ती, घू, भानु, वासर, एवसं-
राणि, घंसं, घर्म, घृण, दिन, दिवा, दिवेदिव, रात्रिरात्रि ।
(निण्ड) चान्द्रतिथिरूप काल और मातृय दिन अर्थात्
एक चान्द्रतिथि एक दिन ।

यह समय सर्वदा परिवर्त्तनशील है, इस कारण
ज्योतिषी लोग अहोरात्रिकी एक दिन मानते हैं । पार्थिक-
गति निबन्धन पृथ्वी २४ घण्टोंमें एक बार अपने मेरुदण्ड

(अक्ष) पर घूमती है, यही दिनरात होनेका कारण
है । पृथ्वी गोलाकार है, इस कारण एक बारमें उसके
आधे भाग पर सूर्यका प्रकाश पड़ता है और आधा भाग
अधैरमें रहता है । जिस भाग पर प्रकाश पड़ता है
वहाँ दिन और जो भाग अधैरा रहता है वहाँ रात
होती है । पृथ्वीका पार्थिक आवर्त्तनके लिये दो मेरु
संयुक्त प्रदेश छोड़ कर अन्यत्र समी स्थानोंमें प्रति
दिन एक बार प्रकाश और एक बार अन्धकार पड़ता है ।
कहना फजूल है, कि सूर्य ही दिवारात्रिके कर्त्ता हैं ।
दिवामागमें सूर्य चक्रवाचके ऊपरी भाग पर और रातको
उसके नीचे रहता है, इसी कारण रातको दिवाह नही
पड़ता । सूर्य परिदृश्यमान आकाशमण्डलके किसी
स्थानमें हट कर जत्र फिर उही स्थान पर आ जाता है,
तब उतनेही समयको दिवारात्रि अथवा एक दिनका
मान करते हैं । अब प्रश्न यह उठता है, कि किस समय
दिनकी गणना करगो होगी ? इस विषयमें भिन्न भिन्न
जाति और सम्प्रदायके लोगोंका भिन्न भिन्न ख्याल है,
अतः वे अपने अपने सुमीतिके लिये दिनकी गणना करते
हैं । प्रधानतः सूर्योदय, सूर्यास्त, दिनके दो पहर और
रातके दो पहरसे दिनका आरम्भकाल माना जाता है ।
दिवामागमें समी प्राचीन अपने अपने कामोंमें मग्न रहते
हैं और अन्धकारसमय निगाकात्तमें वे विचाम करते हैं ।
कामके बाद विराम होना स्वाभाविक है । अतः सूर्यो-
दयसे आरम्भ करके सूर्यास्त तकके समयको दिन मानना
सहजविधि और प्रकृतिसङ्गत है । मालूम पड़ता है कि
इसो कारण इस देशके ज्योतिषियोंने सूर्योदयसे दिवसका
गणना करनेको प्रथा प्रचलित की है । आज भी इस देशमें
उही तरहको प्रथा जारी है । प्रायः समी प्राचीन जाति
सूर्योदयसे दिनमानको गणना करती थीं केवल परवर्त
लोग मध्याह्नसे और भिन्नके लोग आधो रातसे दिनकी
गणना करते थे । फिलहाल एशियाकी अधिकांश जाति
और यूरोपके अस्ट्रिया, तुर्क और इटालीके लोग सूर्यो-
दयसे तथा चीनो मध्यरात्रिसे, अरबो मध्याह्नसे और
यूरोपीय अन्योन्य जातिके लोग मध्यरात्रिसे दिनकी
गणना करते हैं । सूर्योदयकाल सूक्ष्मरूपसे प्रत्यक्ष कारना
अपेक्षाकृत, अनिश्चित और दुर्बल होनेके कारण ही

है। नोन तथा रंगमकी एक भी कोठी नहीं है। चीनी-का कारबार भी घोर घोर घटता जा रहा है। खानेय व्यवहारके लिये मोटा कपड़ा कुछ कुछ तैयार होता है। मकसो घामकी बनी हुई चट्टाई बहुत बढ़िया घोर टिकाऊ होती है।

रेल होनेके पहले नदी छो कर 'हो' दिनाजपुर जिनका वाणिज्य होता था। सभी रेल की जानेसे व्यवसायको घोर भी सुविधा हो गई है। चावल, पटसन, तमाकू, चीनी घोर चमड़ेकी रफ्ताने दूसरे दूसरे स्थानोंमें होती है। घामटनीमें नमक घोर बिलायको कपड़ा प्रधान है। जिनके पश्चिम भागसे चावल आदि महानन्दा नदी हो कर बिहार घोर उत्तर प्रदेशोंमें भेजे जाते हैं घोर पूर्वी श-के वा-ज्यद्रव्य निम्नाकी लपनदी तथा नर्मदा बङ्गाल-ष्ट्रेलपय को कर कलकत्ता लाये जाते हैं। शोष-कालमें व्यापारो लोग मारे जिनमें उधर उधर घूम कर चावल बटोरते घोर उसे बैलगाड़ी पथवा बैल पर लाद कर घाटतमें जमा रखते हैं। वर्षाकालमें ये संघ चावल दूसरे दूसरे देशोंमें भेजे जाते हैं। जिनमें रायगञ्ज, नितपुर, चदिगज, विरामपुर घोर धनिराम प्रधान है। नैकमर्द नामक स्थानमें किसी सुसन्मान फकीरके स्मरणार्थ प्रतिवर्ष एक भोला समता है जिसमें प्रायः 'हिट्ठा' काय मनुष्य इकट्ठे होते हैं घोर भारतवर्षके 'मित्र' 'मित्र' प्रान्तों विय, भो-स तथा तरङ्ग तरङ्गके पक्षद्रव्य ला कर 'बे' जाते हैं। घामपुर, डासटिंगो, घोर पलंवार जोषा इन तीन स्थानोंमें भी 'कोठा' मेला लगता है।

मध्यवर्ति घोर पाठशाळाओंमें सरकारी महायता 'मिल'मेंकी व्यवस्था हो जानेसे विद्याभिक्षाकी खूब उत्कृति हो गई है। 'श'गरेजो 'मि'काके लिये भी नाना 'स्थानों'में 'स्कुल' स्थापित हुए हैं।

'निम्न'वर्गीकी अपेक्षा दिनाजपुरका जनबाहु शीतल है। यहाँ बिना घसक्तकालके शेष होनेसे 'गरमो' नहीं पड़ती है। 'बे' मास 'मही'निमें १०।१५ दिन तक रातकी 'काफी' ठण्ड पड़ती है। शीतकालमें रातकी 'पाला' पड़ता है घोर सुबहको 'बारी' 'घोर' कुछुआ 'खा' जाता है जो 'बिना' स-थी दयके दूर लगे 'हीता' है। देखा गया है कि

योगकालमें यह स्थान 'विटो'मियोंके लिये स्वास्थ्यकर नहीं है। वार्षिक हृदिपात ४४ इंच घोर तापमांश ८०-८३.५ है।

जिलेमें नाना प्रकारके ज्वर, कानाज्वर, प्रोहा, उदरामय, भ्रग घोर वसन्त आदि रोग सदा होते रहते हैं। मले रियाका प्रादुर्भाव यहाँ खूब अधिक है। बहुतसे अधिवासी इस रोगसे प्रति वर्ष मरते हैं। 'श'गरेज कम-चारोग्य भी उक्त रोगोंसे आक्रान्त हो कर इस स्थानकी खोङ्गेनेमें बाध्य हो जाते हैं। राजकार्यके परिचालनमें भी बहुत असुविधा हो जाती है। परीचा करके देखा गया है, कि 'म'कई ७५ आदमी रुग्ण रहते हैं जिनमेंसे ५४ जोहारोगसे। दिनाजपुर-भुनिमिपे निटोमें मृत्यु-संख्या प्रति हजारमें वार्षिक प्रायः ४२ मनुष्य मर्यात् सपाननगरसे दुगुन होती है। जिले भरमें मृत्युसंख्या घोर भी अधिक है। दिनाजपुर नगरके सन्निहत तथा अन्य स्थानोंमें जल बाहर निकालने, जङ्गल आदि काटने तथा दातव्य चिकित्सालय स्थापन करनको व्यवस्था करके स्वास्थ्योन्नतिकी घोर विषय ध्यान दिया जा रहा है। कहना नहीं पड़ेगा, कि दिनाजपुरकी भवस्था पहलेसे बहुत कुछ सुधर गई है। दिनाजपुर नगर, राय-गञ्ज, लूङ्गामन, महादेवपुर, मलूरघाट आदि स्थानोंमें 'दातव्य-चिकित्सालय' है।

इतिहास—दिनाजपुरका प्राचीन इतिहास नितास्त भ्रष्ट है। पौराणिककालमें यह स्थान ज्योतिषिक नामसे मशहूर था। योके इसका कुछ भय निवृत्ति घोर कुछ वैश्वभूमके प्रन्तर्गत हुआ। प्रवादके अनुसार इस जिलेका अधिकांश प्राचीन मस्त्वदेशके प्रन्तर्गत था घोर विराट राज यहाँ राज्य करते थे। बहुतसे लोग इसी मन्व्यको महाभारतकी विराट राजका राज्य मतलाते हैं। किन्तु महाभारत पढ़नेमें स्पष्ट जाना जाता है, कि विराट का मन्व्यदेश उत्तर-पश्चिमाञ्चलमें भवस्थित था, न कि इस मन्चलमें। प्रवाद है, दिनाजपुरमें एक समय बाण-राजा राज्य करते थे। इस जिलेके नाना स्थानोंमें प्राणको 'कोर्त्ति' का भग्नावशेष देखा जाता है।

बहुत दिन हुए कि पराक्रान्त बौद्धाग्रगण्य यहाँ राज्य करते थे। जिलेमें कई जगह बौद्धप्रभावके प्रजट-

ज्योतिषी लोग प्रायः मध्यदिन या मध्यरात्रिसे दिनको गणना करते हैं। यूरोपके अधिकांश स्थानोंमें मध्यरात्रिसे दिनकी गणना करने पर भी, ज्योतिर्विद्या-विषयक अधिकांश पथवेचणादि रजनीयोगमें ही दुष्का करता है, इस कारण एक रातमें प्रत्यर्पित भिन्न भिन्न प्रकारकी घटनायें कभी कभी भिन्न भिन्न तारीखको पड़ जाती हैं तथा उससे तरह तरहकी असुविधायें उत्पन्न होती हैं। इसीलिये ज्योतिषी लोग दो पहर दिनसे ही दिनकी गणना करते हैं। सुमेरुके लिये दिनको पूर्वाह्न १२ घंटोंमें भाग न करके एक ही बार २४ घंटे तक गणना की जाती है। इस प्रकार ज्योतिषियोंका मङ्गलवार जब २१ घण्टेका होता है, तब लौकिक और राजकीय व्यवहारमें बुधवार पूर्वोक्त ८ घण्टेका होता है, ज्योतिषियोंका जब बुधवार २ घण्टेका होता है, तब लौकिक व्यवहारमें बुधवार अपराह्न २ घण्टेका अर्थात् ज्योतिषियोंकी तारीख लौकिक व्यवहारकी तारीखसे १२ घण्टेके बाद शुरू होती है। ईसाई धर्मयाजक सूर्यास्त से लेकर सूर्यास्त तक दिनकी गणना करते हैं।

पहले दिनकी विषयमें जो कुछ कहा गया, उसकी भारभक्तानुसंगी विभिन्नता होने पर भी समयका परिमाण बराबर है। ज्योतिषियोंने साधारणतः तीन प्रकारका दिन माना है—(१) नाक्षत्र दिन (२) स्फुट सावन या सौरदिन तथा (३) मध्यम सावन या सौर दिन।

क्रिती नाक्षत्रकी एक बार याम्योत्तररेखा परसे हो कर जानि और फिर दुबारा याम्योत्तर रेखा पर जानिमें जितना समय लगता है, उतने समयको नाक्षत्र दिन कहते हैं। याम्योत्तर रेखाके ऊपर हो कर जानिके बादसे, नाक्षत्रके उदयकालसे लेकर फिर दूसरी बार उदयकाल तकके समयको भी नाक्षत्र दिन कह सकते हैं। किन्तु पूर्वोक्त उपाय ही यन्त्रादि द्वारा दिखनेमें सुविधाजनक मान्य पड़ा है। यह समय ठीक उतना ही है जितनेमें ध्रुवो एक बार अपने चक्र पर घूम सकती है। इसका परिमाण हमेशा एकसा रहता है, सब कभी घटता बढ़ता भी है, तो इतना थोड़ा कि दो एक युगमें कोई फर्क न दोष पड़ता। इसीसे ज्योतिषी-लोग नाक्षत्र दिन-मानका व्यवहार बहुत करते हैं।

ध्रुवी अपने चक्र पर ठीक एक बार घूम चुकी हो नहो, उस विषयमें मनुष्योंको उतना सम्बन्ध नहीं है। प्रकाश और चन्द्रकार ले कर ही उनका दिन है। सूर्यको याम्योत्तर रेखा परसे हो कर जानि और फिर दोबारा याम्योत्तर रेखा पर जानिमें जितना समय लगता है, उतने समयका स्फुट सावन या सौरदिन होता है। यह सौर दिन भारत दिनसे लगभग ४ मिनट ज्यादा होता है। यह ४ मिनट बढ़नेका क्या कारण है, सो लिखते हैं। मान लो, कि एक दिन दोपहरके समय एक नाक्षत्र और सूर्य युगवत् याम्योत्तररेखा पर आ पहुँचे हैं। दूसरे दिन ध्रुवोके ठीक एक बार अपने चक्र पर घूम चुकने पर वह नाक्षत्र याम्योत्तर रेखा पर आवेगा, किन्तु उस समय सूर्य १ घंटा तक आकाशमें पूर्व की ओर टस गया है। अतः सूर्यको दूसरी बार उस स्थान पर जानिमें ध्रुवीको और भी ४ मिनट अधिक घूमना होगा। गणिचक्रमें सूर्यकी इस प्रकारकी पूर्व गति यदि बराबर चालकी होती, तो वह सौर दिन और नाक्षत्र दिनके कैसा सुस्पष्ट हो जाता। लेकिन वैसा नहीं है। क्रान्ति-वृत्तके साथ निरक्षवृत्तकी छेदनके लिये इन दोनोंको वक्रता हमेशा एक हो नहीं रहती। अतः क्रान्तिपथमें दृश्यतः सूर्यकी गति बराबर होने पर भी निरक्षवृत्तमें इनकी संवातगति समान नहीं होती। ध्रुवोकी गति भी वर्ष भरमें सब दिन एक-सो नहो है। इसी सब कारणोंसे दृश्यतः सूर्यकी पूर्व गति बढ़ा हो वैषम्यभाव पावत है। इसीसे सौरदिनका मान भी घटता बढ़ता रहता है। यदि एक चढ़ो यथाविधि प्रकृत सौरदिनका समय मान्य करनेके लिये रखो जाय, तो समाप्त होती न होती देखा जायगा, कि उसमें और सूर्यचक्रोंमें एक सा समय नहीं है, चाहे किसीमें कम होगा या ज्यादा। इसका कारण और कुछ नहीं है, चढ़ो ठीक हो चढ़ रही है, पर हाँ, इतनेमें सूर्यकी दृश्यमान गति परिवर्तित हो कर सौरदिनको विषमता हो गई है, किन्तु ध्रुवचक्र हमेशा सौर दिन ही निर्दिष्ट करती है। यही सब गड़बड़ी देख कर ज्योतिषियोंने सौरदिनका एक परिमाण निर्दिष्ट कर दिया है। सम्यक्तरगत कालको दिनसंख्या से भाग देनेसे जो काल पाया जाता है वही मध्यम

निर्दम पाये जाते हैं। शीघ्रभीमपुराणो पालराजगण दम
पञ्चतम राज्यशासन करते थे। उनको शक्ति प्राप्त हो
दिनाजपुरमें भोज्य है। मुगतलापत्रमें इस निययको
पदोचना को आयको। पाठ्य देते।

पालयोगीय राजाश्रीका पराक्रम घट जाने पर यह
जिला मेहराप्रान्तोंके भाग लगा था। पालवंशकी गई
यहां कीर्ति मेन-राज रहते थे कि नहीं, इसका प्रमाण
नहीं पाया जाता है। किन्तु यहाँकी त्रयपदोत्रोने
नदप्रणमेनका साम्राज्यमन मिशा है। मेनके बाद
यह जिला गौडके सुमलमान अधिपतिके अधिभारमें
पाया। दिनाजपुरके नाम स्थानोंमें उत्कर्ष पारको
थोर थोरसे शिलालिपिमें उसका प्रमाण मिलता
है। दुकानन साहयने लिखा है, कि गणेश नामके एक
राजा यहाँ बहुत प्रबल हो गये थे। भाईन-इ-भकधरोमें
इसका नाम कागिग या गागिग बतलाया गया है।
एक समय ये सारे बङ्गालके अधोग्र हो गये थे।
अर्द्धतमाश नामक ग्रन्थके मतसे—मन्त्री नरसिंह
नाडियालकी सहायसे राजा गणेश सुमलमान बादशाहको
मार कर गोडुंगार बने थे।

दिनाजपुरके वर्तमान राजवंशकी दम तरह इति-
हास पाया जाता है।

चत्तरादीय कायस्थवंशमें पूर्वोक्त गणेशके अंशधर विष्णु-
दत्त नामक एक व्यक्तिको नवाय सरकारसे दिनाजपुरमें
कानूनमो-पद मिला। यहाँ भाग्यलक्ष्मी उन पर खूब प्रसव
हुई। उनके पुत्र श्रीमन्नादत्तने बङ्गालके सूबेदार साह-
स्रभाके यहाँ प्रतिष्ठा पाई चार चौधरो उपाधि पहन को।
उनके एक पुत्र श्री एक कन्हा था। श्रीमन्नादकी मृत्युके
बाद उनके पुत्र श्रीरघुनन्द मनुमदारमें विरक्तभक्ति प्राप्त
को। उनके भाई शुकदेव अपने मामाकी सम्पत्तिकी देख
रेल करते थे। अष्टकायस्थामें श्रीरघुनन्द चौधरोको
मृत्यु होने पर १५६६ शकाब्देमें शुकदेव मामाकी गारी
सम्पत्ति पर अधिकार कर बैठे। उस समय राजमहलमें
बङ्गालकी राजधानी थी। शुकदेवने राजमहलमें साकर
शाहसुलतमें फरमान पहच किया। योहो ही दिनेमि
ये विपुल सम्पत्ति चौधरो हो गये। सब कोई उन्हें
राजा शुकदेव कहा करते थे। उन्होंने सुशमागर नामकी
एक बड़ी दिनी ब्रह्मदाई थी। उनकी पहली पत्नी राम-

देव श्री जयदेव नामके दो पुत्र श्री दूमरीने प्राप्त
उत्पन्न हुए थे। १६०३ शकमें शुकदेवकी मृत्यु होने
उनके बड़े पुत्र रामदेवने ३ वर्ष श्री योहो होटे
जयदेवने भी ३ वर्ष राज्य किया। इस समय घोडा
परगना उनके अधिकारभुक्त हुआ। १६०८ शकमें प्र-
नायने अपने पैमात्रे भाईकी सम्पत्ति पाई।
विरक्त दिल्लीके दरबारमें परिचय लगाया गया था,
कारण उन्हें दिल्ली जाना पड़ा। १६१४ शकमें वे बा-
शाह बालमगोरके निकट पहुँचे श्री योहो निर्दोष
प्रमाण कर उन्हें बादशाहसे 'राजा' की उपाधि पाई।
राजमें ब्रह्मवन्धनको यत्नाने जलमें उन्हें 'राधा' नाम
की एक मूर्ति मिली थी, उस मूर्तिको ला कर उन्हें
उसे अपने घरमें स्थापन किया। मूर्तिको नाम शक्ति
कान्त रखा गया। उन्होंने यत्नसे कान्तनगरमें सुप्रसि-
मन्दिर बनाया गया।

इसके सिवा प्राणनाथने श्री भी कई एक देवा-
तया प्राणसागर नामक एक बड़ा सरोवर निर्मा-
किया। कान्तनगरका मन्दिर उनकी समयमें प्रसू-
रहा। उनकी मृत्युके बाद उनके दत्तक पुत्र रामनाथ
उसे पूरा किया।

रामनाथकी कीर्ति कीर्ति रामनाथ हो कहते हैं। १६६०
शकमें राजा प्राणनाथकी मृत्यु होने पर रामनाथ सा-
सम्पत्तिके अधिकारी हुए। प्रवाद है, कि उनकी बारी
राजाके भवन मकानमें प्रभूतधन हाथ लगा था, उससे
उनकी ओटिह हुई थी। इस समय जब सातवाड़ी के
मनेके जमोदार राजसूय दे न सके, तब नवाब मुर्शिदाबाद
होंने रामनाथको गालवाड़ी परगना अधिकार करने
हुकम दिया। इस पर सातवाड़ीके जमोदारके साथ रा-
नाथका दो बार युद्ध हुआ। प्रथम युद्धमें रामनाथ जी-
नाम कर सातवाड़ीसे फालिका श्री सामुल्लादीकी
मूर्ति लाये। दूसरी बार युद्धमें जमोदार सम्पूर्ण रूप
परास्त हुए श्री सातवाड़ी परगना रामनाथके परि-
कारमें था गया। उन्होंने नवाबके पास अपना विषय
सम्वाद श्री राजसूय भेज दिया। नवाबने समुद्र के
कर उन्हें करदार परगना संपन्न किया। १६६० शकमें
वे कामो, धपाग, ब्रह्मवन्धन तथा दिल्ली गये। दिल्ली

सौरदिन है। यह २४ घण्टे या ६० टनमें विभक्त रहता है।

स्मृति और पुराणके मतानुसार एक चन्द्रमास पितृ-लोकका एक दिन, एक सौर वर्ष देवता और पशुओंका एक दिन और ८४००००००० वर्ष ब्रह्माका एक दिन होता है। २ ज्योतिष्मत्सोक्त राशिभेद, फलित ज्योतिषमें एक राशिका नाम। ३ समय, काल, वक्त। ४ निश्चिन या उचित समय, निवत वा उपयुक्त काल। ५ वह काल जिसके मध्य कोई विशेष वस्तु हो, विशेषरूपसे बिताया जागवाना समय।

दिनकर (सं० पु०) करोतीति कृ-भच्, दिनस्य करः। १ सूर्य। २ चर्क हच, भाक।

दिनकर—१ प्रबोधसुधाकर नामक संस्कृत वैदान्तिक ग्रन्थके रचयिता। २ एक विख्यात नैयायिक। इनका प्रकृत नाम महादेव दिनकर था। इन्होंने तथा इनके पिता बालकृष्णने सिद्धान्तसूत्रावलीप्रकाश नामक सिद्धान्तसूत्रावलीको टीका प्रणयन की है। यह टीका दिनकरो नामसे भी प्रसिद्ध है। इसके सिवा भवानन्दने जो तत्त्वचिन्तामणिका टीका लिखी है, दिनकरने उसकी भी एक हचि की है। ३ मासप्रवेशसारणी नामक ज्योतिषग्रन्थकार। ४ रसतरङ्गिणी-टीकाके रचयिता।

दिनकरकन्या (सं० स्त्री०) यमुना।

दिनकरतनय (सं० पु०) दिनकरस्य तनयः इ-तत्। भक्तानन्दन। १ शनि। २ यम। ३ कर्ण। ४ सुग्रीव। स्त्रियां टाप्। ५ तापतो। ६ यमुना। ७ चित्रगुप्त।

दिनकरदेव (सं० पु०) सूर्यदेव।

दिनकरभट्ट—१ एक विख्यात स्मार्त पण्डित। ये रामेश्वर-भट्टके पुत्र और विश्वेश्वरभट्टके पिता थे। इन्होंने कल-पति श्रियजीके आश्रममें दिनकरोद्योत नामक एक हृदय-स्मृतिनिबन्धकी रचना आरम्भ की। किन्तु वे इसे सम्पूर्ण कर न सके; वरं इनके पुत्र विश्वेश्वरने इसे पूरा किया। इसके अलावा इन्होंने ऋतुसंसार, कर्म-विपाकसार, शान्तिसार और भट्टदिनकर नामक याज्ञ-दोषिकाकी एक टीका प्रणयन की है।

२ वारेण्यवाही मोरव-ग्रीव एक ज्योतिर्विद। इन्होंने १५०० शकमें खेडसिद्ध तथा चन्द्राकी नामक ज्योतिषग्रन्थ

वनाये हैं। ३ पद्माकर भट्टके पुत्र। इन्होंने तक कोसुदे नामक तर्कभाषाकी एक टीका रची है।

दिनकर राव—स्वाधिवरके दोवान वा प्रधान राजमन्त्री। १८५२ ई०में स्वाधिवरके राजा बालिग हुए और उनका राजकार्य चलानेके लिये हटिग गवर्मेंटने युवक दिनकर रावको दोवान बनाया। उनके सुशासनके गुणसे स्वाधिवरराज्यको खूब उत्थति हुई। उन्होंने श्री कुक्ष संस्कार किया, चंगरेजराजपुरुषगण भी सुल्लक्षणसे उसको प्रशंसा कर गये हैं। अन्यान्यरूपने जो कार लिया जाता था, दिनकरने उसे बन्द कर दिया। ऐसा करनेसे अनेक राजकर्मचारियोंका स्वार्थ खोया गया। इस पर राजा उन लोगोंको उत्तेजनासे दिनकर रावको पदच्युत कर आप स्वयं राजकार्य देखने लगे। किन्तु थोड़े ही समयके बाद राज्यमें भगान्ति फैल गई। सुतर्ग सुगुहला स्थापन करनेके लिये दिनकर राव पुनः नियुक्त किये गये। सिपाहो विद्रोहके समय इन्होंने प्राण-पणसे हटिग-गवर्मेंटको सहायता की थी। १८५८ ई०के दिग्दम्बर सहोनेमें उनके स्थान पर बालाजी चिमनाजी दोवान हुए।

दिनकरालाजा (सं० स्त्री०) दिनकरस्य सूर्यस्य आलजा। सूर्यकन्या, यमुना, तपती।

दिनकचू (सं० पु०) दिन करोति कृ-चच्। १ सूर्य। २ चर्क हच, भाकका पेड़।

दिनकृत (सं० पु०) दिन करोति दिन कृ-कृत्, तुका-गमस्य। १ सूर्य। २ चर्क हच, भाक, मंदार।

दिनकेशर (सं० पु०) दिनस्य केशर इव। पन्धकार, आंचेरी।

दिनचय (सं० पु०) दिनस्य तिथेः चयः। तिथिचय।

दिनचर्या (सं० स्त्री०) दिवसका कर्तव्य कर्म, दिन भरका काम धन्धा। प्रति दिन किस प्रकारका आचरण करनेसे शरीर स्वस्थ रह सकता है, इसके विषयमें भाव-प्रकाशमें इस प्रकार लिखा है—

जिस प्रकारके आहार और आचरणादि द्वारा मनुष्योंकी सर्वदा स्वास्थ्य रक्षा हो, वैद्य उसी प्रकारकी उच-सलाह दे। स्वास्थ्य ठोक नहीं रहनेसे जीवन धारण ही विषयवत् हो जाना है। इसी स्वास्थ्यसाधनके लिये

दरबारमें उन्हें 'महाराज' की उपाधि, राजोन्नित खिलनाथ और अपनी राजधानीमें दुर्ग तथा सैन्य रखनेको आज्ञा मिली। वे हन्दावनसे एक गोपालमूर्ति लाये थे। १६०६ शकका गोपालनक्षत्रमें पंचोम मन्दिर निर्माण कर उक्त मूर्ति स्थापित की गई। ब्रह्मालमें इस तरहका मन्दिर विरला ही है।

इसके पहले इन्होंने शुक्रभागरको किनारे पितारके स्थापित शुकेश्वरिका भी एक सुन्दर शिवालय निर्माण किया था। इसके पलावा रामनाथ और भी अनेक मूर्तियाँ कर गये हैं। सुना जाता है कि एक समय यह कल्पवृक्ष हो गये थे।

उस समय सैयद महम्मद नामक एक व्यक्ति रङ्गपुरकी भीमास्तराजाके लिए फौजदार नियुक्त थे। महाराज रामनाथके अतुल ऐश्वर्यका परिचय पा कर दुष्ट फौजदारने एक दिन उनके राजप्रासाद पर आक्रमण किया और उनका सर्वस्व लूट लिया। रामनाथने स्त्री पुत्रके साथ गोविन्दनगर भाग कर भाग्यराजा को। पोछे गङ्गाखानके बहाना करके उन्होंने सुग्रीवादाशना सुवादारसे फौजदारके भत्याचारको कथा कह सुनाई। सुवादारने सैयद महम्मदको पकड़ लानेके लिए एक सैन्यदल भेजा। उसी सैन्यको सहायतासे रामनाथने फौजदारको मार डाला तथा उनके अधिकृत वाताशनादि पाँच परगने अधिकार किये। पोछे वे सुवादारके निराश्रितकद साढ़े चार लाख रुपये और सुत्ता जवाहरात भेज कर उनके भीतिमाजन दूए। रामनाथके चार फौजी, चार पुत्र, चार कन्या और चार जमाई थे। इसीसे वे अपने समस्त द्रव्योंमें ४ विघ्न अर्पित कराते थे। आज भी राजभवनके सभी द्रव्योंमें ये चार विघ्न व्यवहार होते देखे जाते हैं।

१६८२ शकमें रामनाथ पञ्चत्वकी प्राप्ति हुए। उनके जीते जी बड़े नटुकेकी मृत्यु हुई थी। शेष तीन पुत्रोंमें सम्पत्तिके लिए विवाद उठा। रामनाथके दूबरे पुत्र कृष्णनाथ पितारके यादादिके बाद ही सनन्द सानिके लिए दिमोको गये, किन्तु दुर्भाग्यवश दिमोदे लोट पानेके बाद ही करदाश-घरमें सहसा उनकी मृत्यु हो गई। अब उनके तीसरे भाई वैद्यनाथ निरुपद्रवक हो सारो

सम्पत्ति अधिकार कर बैठे। उनके समयमें भीरकासिम बहालके नशाव थे। उन्होंने बहालके समस्त राजाघों तथा जमींदारोंके प्रति राजस्व वृद्धिके लिये हुकम दिया। जब वैद्यनाथ अधिक राजस्व देनेको राजी न हुए, तब भीरकासिमने कौशलक्रमसे मुहुरे पा कर उन्हें कैद कर लिया। इस अवसर पर उनके छोटे भाई कान्तदेवने इष्ट-इच्छया कम्पनोके निकट अपने नाम पर सनन्द पानेकी प्रार्थना की। वैद्यनाथ दुर्ग-रक्षकको रिश्वत दे कर दिनाजपुर भाग भाये और कान्तनाथका पड़वन्त ज्ञान कर उन्हें चलन कर दिया। उनके यत्नसे पानन्द-सागर नामक चरोवर, पानन्दसागर और माताभागरके साथ संयुक्त रामदाड़ा नामक बड़ा खाड़ी और १६८० शकको अपनी राजधानीमें कालियाकान्तजो-व विग्रहका मन्दिर निर्माण किया गया।

वैद्यनाथके समयमें दिनाजपुरका ऐश्वर्य चरम सोमा तक पहुँच गया था। उनके एक भी सन्तान न थी, इसीसे उन्होंने राजानाथ नामक एक सातिपुत्रको गोद लिया था। वृद्धि गयमें एतेके निकट राजानाथने 'राजा बड़ा-दुर' को उपाधि पाई थी। उन्होंने समयमें दिनाजपुर राज्यकी अवसतिका सूत्रपात हुआ। सुगामनकी प्रभावसे इस समय विजयनगर परगना छोड़ कर प्रायः सारा सम्पत्ति धेचो गई। इसी दुःखसे राजानाथका प्राधान्य हुआ। पोछे उनके उत्तकपुत्र गोविन्दनाथ उत्तराधिकारी हुए।

इन्होंने हन्दावनमें कुञ्जयुक्त एक मनोहर मन्दिर निर्माण कर राजाग्राम रायके नाम पर उद्धार किया। १७६२ शककी गोविन्दनाथकी मृत्यु होने पर उनके पुत्र तारकनाथ राजा हुए। महाराज तारकनाथ दिनाजपुर जिलेके जगन्नाथानाथोंमें पक्षी सङ्ग्रह और दिनाजपुर शहर तथा रायगञ्जमें दातय अश्वताल निर्माण कर देशका बहुत उपकार कर गये हैं। १७८० शकमें अपुत्रक अवस्थामें उनको मृत्यु हुई। बाद उनकी स्त्री ग्यामा-मोहिनी सम्पत्तिकी अधिकारिणी हुई। उन्होंने १८०४ ई०के मन्वन्तरके समय बहुत धन दे कर दोन प्रजाकी रक्षा की थी। उनको ऐसी सब दयाके प्रतापसे गव-मँएने उन्हें 'महाराज' की उपाधि दी। इन्हींके यत्न-

दिनचर्या, रात्रिचर्या और ऋतुचर्या लिखी गई है। इस विधिके अनुसार नियम प्रतिपालन करनेमें नियम हो गरीर सुख रक्ष सकता है, इसमें सन्देह नहीं।

यदि वायु, पित्त, कफ, अग्नि, धातु और मनको समता रहे, गरीरानुरुप क्रिया समर्थ हो और आत्मा, इन्द्रिय तथा मनकी प्रसन्नता रहे, तो उसे स्वास्थ्य कहते हैं। हर किसीको स्वास्थ्यरक्षाके लिये व्यायाम मूहर्त्तमें अर्थात् सूर्योदयके दो घण्टाके भीतर बिहावनमें बैठ कर आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक इन प्रकारके दुःखोंको शान्तिके लिये ईश्वरका नाम जपना चाहिये। पछि दधि, घृत, दर्पण, शीतस्पर्श, विश्व, गौराचन और भाष्यका दर्शन तथा स्मरण करना चाहिये। प्रति दिन घोरों क्षायामें अपने गरीरकी देखनेमें आयुको ठहरी होता है। उपाकालमें ही मलमूत्रादि परित्याग करना चाहिये। इस नियमका प्रतिपालन करनेसे पञ्चकूजन अर्थात् प्रातोंकी गुड़गुड़ाहट, पेटका फूलना तथा पेटको शुद्धता जाती रहती है। मलमूत्रादिका वेग कमो रोकना नहीं चाहिये, क्योंकि इससे नाना प्रकारकी बीड़ा उत्पन्न होती है।

मलवेग धारण करनेमें पेटमें गुड़गुड़ाहट तथा वेदना और गुहरदेयमें कर्त्तव्यत्व पोड़ा होता है। वायु वेग धारण करनेसे मलमूत्रनिरोध, उदराधान और शरीरमें यकावट आ जाता है और मूत्रवेग धारण करनेसे मूत्राशय तथा मिश्रदेयमें वेदना, मूत्रकण्ठ, गिरःशूल, शरीरमें नम्रता और यक्ष्णदेशमें प्राकर्मणवत् पोड़ा होता है। इससे मलमूत्रादिका वेग यदि उपस्थित हो जाय, तो अनिवार्यकार्य सामने रहने में उसे रोकना न चाहिये। यदि वेग नष्ट हो, तो उसे बलपूर्वक बाँध कर निकालनेकी कोशिश भी न करनी चाहिये। मलमूत्रादि कर चुकनेके बाद गुहरदेशकी भलीभाँति जलसे पम्पकार कर लेना चाहिये। इससे शरीरकी क्लान्ति जाती रहती है, देश पवित्र होता है और अमलकी तथा कलिकालजात पाप विनष्ट होते हैं।

इसके अनन्तर हाथ और पाँव धो धालना चाहिये, इससे शारीरिक पुष्टिसाधन और चक्षुकी भलाई होती है। बाद दशुयन से कर सुप्त होना उचित है।

दंष्ट्रावन और दंष्ट्राह देखो।

दशुयन कर चुकनेके बाद बार बार कुत्तों परनी चाहिये। ऐसा करनेसे कफ, ढखा और सुप्तगत मन जाता रहता है तथा सुखका भोतरो भाग प्राप्त हो जाता है। प्रतिदिन कटु, पातल नाकमें देनेका अभ्यास करना चाहिये।

किन्तु कफ शान्तिके लिये प्रातःकाल, पित्त शान्तिके लिये मध्याह्नकाल और वायु शान्तिके लिये सायंकाल नख लेना उचित है। नख लेनेसे सुख सुगन्ध, कर स्थिर और सभी इन्द्रियां शान्त होती हैं तथा बलि, पतित और व्यङ्ग्योग जाता रहता है। इसके बाद पाँखोंमें पंचन लगाना चाहिये, इससे पाँखें देखनेमें सुन्दर लगती हैं तथा सूक्ष्म पदार्थ भी भलीभाँति देखे जा सकते हैं। किन्तु जो रातमें जगि हैं, उसमें लिये तथा परित्याग, वमिरोगाक्षान्ता, भुक्त और गिरःघात मनुष्यके लिये नेत्रांजनका व्यवहार निषेध है।

हर पाँचवें दिन गह्वर और दाढ़ी सुँडवाना चाहिये तथा बाल छँटवाना चाहिये। क्योंकि केसादिके छँटानेसे गिरकी शोभा बढ़ती है तथा धन और आयुकी ठहरी होती है। नाकके बाल न उखाड़ना चाहिये; उखाड़नेसे नेत्रकी शक्ति बहुत जल्द घट जाती है। प्रति दिन कंधोंसे बाल झाड़ना तथा व्यायाम करना पचश कर्त्तव्य है। व्यायाम करनेसे शरीरकी लघुता, कर्मसामर्थ्य, विभक्त चमगाव्रता (अर्थात् शरीरका जड़ा अर्द्धपतना और मोटा होना उचित है वहाँ उसका पूरा होना), दीपका नाश और अग्निकी ठहरी होती है। वस्त्र और शोतशत्रुमें व्यायाम करना विगिय उपकारी है। इसके विवा अर्थात् घोषादि शत्रुमें जिसकी जमा धन है उसको बाधो शक्ति लगा कर व्यायाम करना चाहिये। जब तक हृदयस्थित वायु सुखरम्भ, दारु बहिर्गत न हो और मुखगोचर उपस्थित न हो तथा ब्याध, नासिका और गात्रवर्धने पमोना न जाय, तब तक बाधो शक्तिका व्यायाम नहीं समझा जा सकता है। अंगन तथा शृङ्गार कर चुकनेके बाद व्यायाम करना निषिद्ध है। इसके विवा दुसले पतले मनुष्यके लिये तथा काष्ठ, ग्रास, लव, पित्त, रक्तपित्त, घात और धातुगोच

बद्राम देगमें बैरि, मारामम, घोयाटं चादि ईसाके प्रधारकोंके नाम विशेष समझर हो गये हैं। इन्हींमें श्रीरामपुरमें रूढ़ कर भिन्न भिन्न भाषाओंमें वादबलका अनुवाद किया। कहना नहीं पड़ेगा कि इन्हींने जितनी पुस्तकें प्रपचन को भीर विद्यागिद्याकी नूतन प्रणाली पढ़न बढन कर इस देगको कौसी चयति की। बद्राम भाषामें पुस्तक छपानेके लिये इन्हींने पहले बद्रोय सभा तैयार करवाये थे।

दिनेर (दि० पु०) दिनकर, सूर्य।

दिनेग (म० पु०) दिनम्य देगः। १ सूर्य २ चर्यहस, चाक, मंटा ३ सूर्यादि वाराधिपति, दिनके अधिपति यत्।

दिनेग—हिन्दुके एक प्रसिद्ध कवि। ये गया जिलेके डिजारी नामक स्थानमें रहते थे। इन्होंने १८१४ ई०में रमरहस्य और नवमित्र नामक दो ग्रन्थ लिखे।

दिनेगपुष्प (म० स्त्री०) कैरय पुष्प, कुसुम, बघोला।

दिनेगामज (म० पु०) दिनेगस्य चामजः। १ जनि। २ गम। ३ कर्म। ४ सुयोध। क्षियां टापू। ५ तापती। ६ यमुना।

दिनेगर (म० पु०) दिनम्य ईश्वरः। १ दिनेग, सूर्य। २ चर्यहस, चाक। ३ सूर्यादि वाराधिपति।

दिनेपी (हि० स्त्री०) चावका एक प्रकारका रोगः इसमें दिनके समय सूर्यकी प्रखर किरणोंके कारण बहुत कम दिवादि देता है।

दिन्दिगुल—१ मद्राजके मद्रा जिलेका एक उपविभाग। इसमें चार तालुक लगते हैं—दिन्दिगुल, पननी, कोटका-मन और पिर्याकुलम्।

२ यह उपविभागका एक तालुक। यह पचा० १०० से १००८०' और देगा० ७००' ४०' से ८८०' १५' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ११११ वर्ग मील और मोटवईया प्रायः साढ़े चार लाख है। इसमें एक शहर और २०८ ग्राम लगते हैं। १८८२ ई०में यह तालुक इटलिया-कम्पनीके हस्तगत हुआ, कीदर, मागरे चादि कई पड़ छोटी छोटी नदियाँ इसमें प्रवाहित हैं। इसमें पचावा सहस्रोंमें परिपुर्ण चनेक तानाव है। छना जाता है,

कि इन सब पुष्करिणियोंमें पहले सुन्ना और सोप निकले थे। यहाँके उत्पन्नद्रव्योंमें तमाकू, ईसा और कड़ा प्रसिद्ध है। इस तालुकके पत्तगंत गुलम और वनस्पती, नामक स्थानमें सोड़ेका कारखाना एक समय बहुत समृद्धिमानो था।

३ यह तालुकका एक प्रधान नगर। यह पचा० १०° २२' ४०' और देगा० ७०° ५८' पू०में अवस्थित है। इसका प्रगत नाम दिण्डु, कल भयान् दिण्डु, क नामक दानवका शैल है। यह नगर समुद्रतलसे प्रायः ८८० फुट ऊँचेमें अवस्थित है और पननी-पर्वतके कीटाइकाल साम्यानिवाससे ५४ मील और मदुरासे १२ मील दूर है।

अधिकांशियोंकी संख्या २५१८२ है जिनमेंसे १८०१ हिन्दू ११०५ मुसलमान और २८४० ईसाई हैं। १८६१ ई०में यहाँ म्युनिसिपैलिटी स्थापित हुई है।

दिन्दिगुल मद्राज प्रदेशके बड़े बड़े शहरोंके साथ रेल द्वारा संयुक्त है। तमाकू, कड़ा, इलायची और पचुर्चम चादि यहाँमें भिन्न भिन्न स्थानोंमें बीजे लाते हैं। पहले यहाँके शम्शो वस्त्र और उत्कृष्ट मसलिनका खूब आदर था। कसबा नामक जमी कस्बल भी बहुत प्रचलित था। मवाडियजनका मदर होनेसे दिन्दिगल शहरमें समस्त घटालत, पोष्ट-टेलिग्राफ-फाब्रिक, टावर बस्ता, गवर्मेण्ट स्कूल और दातव्य-चिकित्सालय है।

पहले दिन्दिगल नगर मदुरा राजाके नाममात्र प्रचीन एक पुयक राज्यकी राजधानी था। इसका दुर्ग नगरसे पश्चिम समुद्रतलसे १२२१ फुट ऊँचा एक दुर्ग रोड गैलर्रीके ऊपर अवस्थित है और चारों ओर बहुत दूरसे देखनेमें आता है।

राज भी यह दुर्ग सम्पूर्ण अवस्थामें विद्यमान है। दुर्गका अवस्थान स्वाभावतः दुर्गमता और सुदृढ़ है, परन्तु यह मदुरा और कोयम्बतोरके मध्यवर्ती निमित्त वर्धन रहित है। इसी कारण इस दुर्गके लिये कई बार लड़ाई हो चुकी है।

१८२३ से १८४८ ई० तक यह स्थान महापद्म मठि-सुर और मदुरा मेगापोंके रणकोशमको कोलाभूमि हो गया था। उस समय दिन्दिगलके सदांगण मठः १८

इत्यादि रोगाकान्त मनुष्यों के लिये भी व्यायाम निविद वतलाया है।

शरीरकी पुष्टि के लिये प्रति दिन मनुष्य शरीरमें तेल लगाना चाहिये। विशेष कर मस्तक पर, दोनों कानों और दोनों पैरोंमें तेल लगाना फायदा मन्द है।

अभ्यङ्ग विषयमें मरसों का तेल, गन्धतेल और पुष्प वासित तेल प्रयुक्त है। अभ्यङ्ग द्वारा वायु, कफ और श्यान्ति दूर होती है तथा शूल, सुख, निद्रा, शरीरकी कीनस्यता, परमायु वृद्धि तथा शरीरकी पुष्टि होती है। गिर पर तेल लगानेसे शरीर इन्द्रिया लज्ज होती हैं, दर्शन शक्ति बढ़ती है, शरीरकी पुष्टि होती है तथा शरीरगत रोग जाता रहता है।

प्रति दिन कानमें तेल डालनेसे किसी प्रकारका कर्ण रोग नहीं होता। इस प्रकार तेल लगा कर अथवाइन पूर्वक स्नान करना चाहिये। इसमें लोमफूप, गिराजाल और धमनी द्वारा शरीरके भीतर तेल, जल आदिक प्रविष्ट होनेसे देहको क्षति तथा वृद्धि होती है। जिस प्रकार वृक्षके मूलमें जल देनेसे नये पत्ते निकल पाते हैं, उसी प्रकार चेहरे-मण्डित गात्रमें जल देनेसे मनुष्यके रक्त-रक्तादि धातु समृद्ध मुष्ट होता है। शीतल जलानि द्वारा परिषेधन करनेसे वायु उष्ण। प्रतिहत हो कर शरीरके भीतर प्रविष्ट करती है। उष्ण जल द्वारा गिरःश्यान करनेसे चक्षुको दीर्घ बढ़ती है। स्नानके बाद कपडोंसे देहको भूसा भीति रगड़ना चाहिये। ऐसा करनेसे शरीरकी क्षान्ति, कण्डू और त्वग्-रोग विनष्ट होता है। गात्रमद नके बाद शरीर जय स्निग्ध हो जाय, तब कपड़ा पहन लेना चाहिये। खानादि कर चुकनेके बाद यथा-योग्य मनुष्योपनादि कर्त्तव्य है। मनुष्योपनादि बाद यथा विधान शरीरकी भूषित करना चाहिये।

बाद जब क्षान्तिका समय पड़ै, तब मङ्गलजनक सामग्री ग्रहण करनी चाहिये। प्रति दिन ऐसा करनेसे परमायु और शुभादृष्ट बढ़ता है। ब्राह्मण, गो, धनि, पुष्पहार, धृत, सूर्य, जल और रात्र्य ये हो पाठ मङ्गल-जनक पदार्थ हैं।

खानेके पहले और पीनेके खड़ाखका व्यवहार करना उत्तम है, इससे पदगत रोग जाता रहता है तथा चक्षुकी भलाई होती है।

मनुष्योंको स्वभावतः चार मूत्रा वस्तवतो होती हैं—आहार, पान, निद्रा और सुरतेच्छा। भूख लगने पर यदि न खाया जाय, तो अरुचि, श्यान्तिबोध, तन्द्रा, चक्षुकी दुर्बलता, रक्तस्तादि धातुकी जीर्णता और वन-को क्षान्ति होती है। व्यास लगने पर यदि जनन पोषा जाय, तो कण्डूबोध, सुखयोग्य, श्रुतिशक्तिका क्लेश, रक्त-शोष और हृदयदेशमें पीड़ा होती है। नींदको रोकनेसे ऊर्ध्वार्ध, गिर और श्वाखोंका भारीपन, शरीरमें वेदना और तन्द्रा होता है तथा खाया हुआ पदार्थ अच्छी तरह परिपक्व नहीं होता। वायु अग्नि जिस प्रकार दाह्य वस्तुके सम्भावमें धोमो हो जाता है, उसी प्रकार सुधित व्यक्तिको आहार्य वस्तु नहीं भिन्नने पर शारीरिक पाचक अग्नि भी क्षीण हो जाती है। जठराग्नि प्रथमतः भुक्त द्रव्य परिपाक करती है, उसके सम्भावमें कफादि दोष-समृद्धकी, फिर उसके भी सम्भावमें रक्तस्तादि धातुको और बाद धातुके सम्भावमें प्राण तत्त्व परिपाक कर जाती है। यद्ये कारण है कि भूख लगने पर भोजन करना कर्त्तव्य है। प्रति दिन भोजनके प्रारम्भमें लवणार्द्रक अर्थात् नमक और अदरक खाना चाहिये, बाद कोमल द्रव्य और अन्त-में द्रव पदार्थ खाना वा पीना उचित है। इस नियमा-नुसार भोजन करनेसे वक्ष और स्वास्थ्यकी रक्षा होती है। मोक्ष्य वस्तुमें जो जो वस्तु यथाक्रमसे सुखादु हो, पहले उसको खाना चाहिये। एक वस्तु खा लेनेके बाद दूसरी जो वस्तु खानेकी इच्छा होती है; उसीको यथा पर सुखादु वतलाया है। बहुत जल्दसे वा देरीसे भोजन करना मना है। जिस मनुष्यको अग्नि मन्द हो, उसे तीन प्रकारके गुरु द्रव्यका परित्याग करना चाहिये। मात्सा गुरु, स्वभावतः गुरु और संस्कार गुरु यही तीन प्रकारके गुरु पदार्थ हैं। मात्सा गुरु मूत्र आदि है, यह स्वभावतः गुरु नहीं है, पिष्टादि संस्कार गुरु है। गुरु और लघु द्रव्य जितना खानेसे लसिगोध हो, उतना हो खाना उचित है; अर्थात् उरदको पीठो प्राधा मात्रामें और मूत्रादिकी पीठो पूरी मात्रामें खाने चाहिये। पेष्टादि तरल द्रव्य है, तत्त्व पाति कमसे मो, अधिक तरल है, अतः किसी पदार्थमें उसे मिला कर अधिक मात्रामें खानेसे भी उसे गुरु नहीं कह सकते। क्योंकि पेय पदार्थ

कोटे कोटे सदारी के ऊपर आधिपत्य करते थे। चांद साहब, महाराष्ट्रगण और महिसुरको सेनापति यथाक्रम इस गहरकी अधिकार किया। १७५५ ई०में हैदरअलीने इस दुर्गमें सेनासन्निवेश करके निज भावों राज्य स्थापन करकेका सुत्रपात किया। दक्षिणकी ओरसे कोयम्बो-तोरके बाद अवस्थित होनेके कारण हैदरअलीके साथ युद्धमें यह दुर्ग अंगरेजोंके लिये बहुत असुविधाजनक हो गया था। १७६८ ई०में यह अंगरेजोंके हाथ लगा, किन्तु १७६८ ई०में पुनः उनसे छोन लिया गया। १७८३ ई०में अंगरेजोंने दूसरी बार इसे अधिकृत कर १७८४ ई०में मद्रासकी सन्धिके अनुसार महिसुरके राजाको अर्पण किया। १७८० ई०में पुनः सुहकी खबर मानूस होने पर अंगरेजोंने इसे हस्तगत किया। अन्तमें १७८२ ई०को सन्धिके अनुसार यह दुर्ग इष्ट-इण्डिया कम्पनीको दे दिया गया। पहाड़की सबसे ऊँची चोटी पर कई एक ध्वंसावशिष्ट पुरातन देवमन्दिर विद्यमान हैं। दुर्गके प्राचीरके चारों तरफ १४६ गकाद्वित विजयनगरके राजा अच्युतदेवकी मिलालिपि देखी जाती है।

दिन्दिवरम्—१ मन्द्राल प्रदेशके दक्षिण अर्काट जिलेका एक उपविभाग। इसमें तीन तालुक लगते हैं, दिन्दिवरम्, तिरुवन्नामलय और विगुपुरम्। दक्षिण भारतीय रेल-पथ इस तालुक होकर गया है। इसमें तीन स्टेशन हैं, जिनमेंसे प्रधान स्टेशन दिन्दिवरम् और मिर्गि हैं।

२ उक्त विभागका एक तालुक। यह अक्षा० १२° २' से १२° २८' उ० और देशा० ७६° १३' से ८०° ५०' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ८१६ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः साढ़े तीन लाख है। तालुककी आय ७७८००० रु० है।

३ इसी नामकी तालुकका एक प्रधान गहर। यह अक्षा० १२° १५' उ० और देशा० ७८° ३८' पू०में अवस्थित है। इसका यह नाम तिभिडोवनम् अर्थात् हमलोका जङ्गल है। लोकसंख्या प्रायः बारह हजार है।

दिन्दोरी—१ मध्य-प्रदेशके अन्तर्गत नासिक जिलेका एक उपविभाग। इसके उत्तरमें कलवान और सन्नयन पर्वत, पूर्वमें चन्दोर और निफाद, दक्षिणमें नासिक उपविभाग तथा पश्चिममें सद्माद्रि और पेण्ड है। परिमाणफल ५२८ वर्ग मील है।

इस उपविभागका अधिकांश पर्वतमय है; इससे वेल-गाड़ी जाने आनेकी बहुत असुविधा है। सिर्फ सावल गिरिपथसे लेकर वलसार तक एवं आइवन गिरिपथसे लेकर कलवान तक दो पक्की सड़कें गई हैं। वैशाख और जेठ महोर्नेमें जलवायु स्वास्थ्यकर है और दूसरे समयमें ज्वररोगका खूब प्रादुर्भाव होता है।

२ उपरोक्त उपविभागका एक प्रधान नगर। यह नासिकसे १५ मील उत्तरमें पड़ता है। यहाँ अदालत, डाकघर, दातव्य चिकित्सालय आदि हैं।

३ मध्यप्रदेशके मण्डला जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २२° २६' से २३° २३' उ० और देशा० ८०° २०' से ८१° ४३' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण २५४४ वर्ग मील और लोकसंख्या लगभग डेढ़ लाख है। इसमें ८५४ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है।

दिवायाम (सं० पु०) काशीरका एक ग्राम।

दिपालपुर—१ पञ्जाबके पन्तर्गत मोगलगारो जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३०° १८' से ३०° ५६' उ० और देशा० ७३° २५' से ७४° ८' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ८८४ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः दो लाख है। इसमें दिपालपुर नामका एक गहर और ४५८ ग्राम लगते हैं। इसके प्रायः ३ अंशोंमें कृषिकार्य होता है, शेष भाग परती और अशुकर है।

२ उक्त तहसीलका एक प्राचीन और ध्वंसावशिष्ट नगर। यह अक्षा० ३०° ४०' उ० और देशा० ७६° ६२' पू० ओखारा स्टेशनसे १० मील तथा पाकपत्तनसे २८ मील ईशान-कोणमें प्राचीन विपाया नदीके किनारे अवस्थित है। गुरुद्वारापस्त होने पर भी यहसे दिल्लीके पठान राजाओंके समयमें सुवसुद्ध उत्तर पञ्जाबकी राजधानी था। सोलहवीं शताब्दीमें भी नाथरने दिपालपुर नगरकी लोहोरका समकक्ष कष्टकर लूटने किया है। बहुतेरोंका अनुमान है, कि यह नगर ग्राधद देवपाल नामक किमी राजासे स्थापित हुआ होगा और उर्दूकी नाम पर दिपालपुर नाम पड़ा है। किन्तु इसका कोई विवेक प्रमाण नहीं पाया जाता है। प्रवाद है,—इसका आदि नाम यीपुर था। विजयचन्द नामक किसी क्षत्रियने यह नगर स्थापन कर अपने पुत्रके नाम पर इसका नामकरण

नय प्रकारसे लघु गुरुयुक्त है। शुक्ल द्रव्य चिखड़ा पादि, विरुद्ध द्रव्य दूध मछली पादि और विष्टग्नि द्रव्य चना पादि, इन सबको खानेसे जठराग्नि मन्द हो जाती है। भोजनका उपयुक्त समय जित्ना कर चयन भूल नहीं मगने पर खाना उचित नहीं है।

उदरके चार च'शक्तिमें दो च'शक्ति भोज्य द्रव्यसे, एक च'शक्ति अन्नमें भर लेना चाहिये और शेष एक च'शक्ति वायु जाने खानेके लिये खाली छोड़ देना चाहिये। अत्यन्त जलपान करनेसे भुक्त द्रव्य परिपाक नहीं होता तथा बिलकुल जलपान नहीं करनेसे भुक्तद्रव्यको पचनेमें बाधा पड़ जाती है। इसीसे खाते समय जठराग्नि को उद्दीप्त करनेके लिये पुनः पुनः थोड़ा थोड़ा जल पीते रहनेसे शरीर दुर्बल हो जाता तथा अग्नि मदीप्त होती है; भोजनके बाद जल पीनेसे शरीरको भूलसा और कफकी वृद्धि होती है। इसीसे पाश्चात् भोजन कर चुकने पर पानी पीना स्वास्थ्यकर है। दृष्टान्तस्वरूप शक्ति के लिये भोजन और लुपित शक्ति के लिये जलपान बिलकुल मना है। क्योंकि दृष्टान्तस्वरूप भोजन करनेसे शरीररोग और लुपित मनुष्यके जलपान करनेसे अजीर्ण उत्पन्न होता है। इस निबन्धमें भोजन शेष हो जाने पर तनिका करके कुत्ता करनी चाहिये। कुत्ता करते समय दाँतोंमें जो मैस बँधी हो उसे यमपूर्वक धो डालना चाहिये। ऐसा करनेसे मुखको दुर्गन्ध जातो रहती है। यदि कोई पदार्थ दाँतोंमें दृढ़रूपमें सट गया हो, तो उसे दाँत समझ कर निकालनेको कीमिश्रण करने चाहिये।

पाचन करनेके बाद जलसिक्त द्वारा दोनों पाँखोंको धो लेना चाहिये। भोजन कर चुकनेके बाद पाँखोंमें जल छिड़कनेसे तिमिका विनष्ट होता है। इसके अनन्तर जिससे खाना जाय, इसके लिए भगवत्पादि महात्म्याधिक नाम जपने चाहिये। अष्टादश, अगस्त्य, वैष्णव, सूर्य और दोनो पण्डितोंकुमारके नाम से कर पेट पर हाथ फेरनेसे खाये हुए पदार्थोंको पचनेमें किंसा प्रकारकी बाधा नहीं पड़ती। भोजन करनेके बाद प्रमुख पादिके धूँसे कफका नाश कर द्रव्य, कटुतिक्त, कषाय, रसविमिश्र फलको चबा कर मुखको निर्मल रखना चाहिये। धीरे मुगन्धित द्रव्यके साथ पाल चिबानेसे पित्त प्रमत्त रहता है। सम्मत् देखो।

इसके बाद धीरे धीरे एक से एक भोजन नामा कर्त्तव्य है। भोजन करके जो मनुष्य उक्त नियमका पालन न कर बैठ जाता है, उसे तौद निकलती है, जो मो जाता है, उसके शरीरको पुष्टि होती है और जो अन्नपच करता है पर्याप्त धीरे धीरे एक से एक भोजन जाता है, उसको प्रायः बढ़ती है। जो मनुष्य तेजीसे चलता है, उसे नामा प्रकारकी उल्टा व्याधि होती है। इसके प्रयात् जितने देर तक पाठ बार माँस नौ जा सकते हैं, उतने देर तक चित हो कर उससे दूना समय तक दाहिनी करवट से बार और उससे भी दूना बाईं करवट से बार सोना चाहिये। अजीर्ण होने पर बाईं करवट से सोना चाहिये। उक्त नियमके अनुसार प्रतिदिन चलनेसे शरीरको किसी प्रकारकी व्याधि छू तक नहीं सकती।

(भावप्रकार) शक्तिचर्या उद्देश्ये ।

दिनचर्या (हि० पु०) दिनकी चलनेवाला सूर्य ।

दिनज्योति (सं० श्लो०) दिनस्य ज्योतिः । चातप, धृ० ।

दिनदीप (सं० पु०) सूर्य ।

दिनदुःखित (सं० पु० श्लो०) दिने दिवसे दुःखितः दिवाभावे विधौगित्वात्तयात् । चक्रवाकपक्षो, चक्रवा पक्षो ।

दिननाथ (सं० पु०) सूर्य ।

दिननायक (सं० पु०) दिनके स्वामी, सूर्य ।

दिननाह (सं० पु०) दिननाथ देखो ।

दिनप (सं० पु०) दिन पाति पाञ्च । १ सूर्य । २ पर्वद्वय, पाञ्च । ३ शराधिपति सूर्यादि, दिन या वारके पति ।

दिनपति (सं० पु०) दिनस्य पतिः । दिन देखो ।

दिनपाकी अजीर्ण (सं० पु०) एक प्रकारका अजीर्ण ।

इसमें एक वारका किंसा दूधा भोजन पाठ पहरते पचता है और दोषमें भूल नहीं लगती ।

दिनपात (सं० पु०) दिनस्य पञ्चदिनस्य जितिये पाता सयः । दिनघण ।

दिनपान (सं० पु०) सूर्य ।

दिनपिष्ट (सं० पु०) दिनस्य पिष्टः इतत् । ज्योतिर्वोक्त पर्वगण ।

दिनप्रेक्षी (सं० पु०) दिनं प्रपश्यति करोति प्रपश्यति । १ सूर्य । २ पर्वद्वय, पाञ्च ।

किया। जैमरन कनिंइम माइव कहते हैं, कि यही स्थान
मन्मथनः तन्मोयविं त देवमनगर होगा। प्राचीन नगर-
प्राचीरमें कछो कछो भग्न ईंटोंके माथ मकराजाधोंको
सुदा पाई गई है। विरोज गुप्तकने चौदहवीं शताब्दीमें
यह नगर परितः कर-इमके बाहर एक मस्जिद
निर्मापकी घोर गतदु नदीसे थोड़ी काट कर ये नगरके
समीप तक जल लाये थे। तेसुरके पाक्षमणकानमें यह
नगर मयूहिमें मूलतःन छोड़ कर घोर समी नगरीसे बसा
चढ़ा था, उस समय यहां ८४ बुर्ज, ८४ मस्जिद और
८४ झूप थे। प्राचीन नगरको चहार-दीवारी प्रायः २१
मील लम्बी होगी। इसके बाहरमें भी बहुत दूर तक
भग्न ईंटोंका मृत्प देवमेंसे मालूम पड़ता है, कि प्राचीरके
बाहर बहुत समुप्योका बास था। यमो उस विस्तीर्ण
नगरका धर्मसमाप्त रह गया है। वर्तमान दिवापुर-
नगर प्राचीन नगरके ईशान्यकोणमें नदीके दूसरे किनारे
अवस्थित है। नदीके ऊपर तीन गुम्बजका एक पुल है।
यह नगर क्रिम कारण परित्यक्त तथा विनष्ट हुआ इसका
पूरा पता नहीं चलता है, लेकिन अनुमान किया जाता
है कि विषाया नदीका पुरातन स्रोत कुछ जाना ही
इसका एक कारण है। चंगरेजोंके अधिकारमें आने
पर थोड़ा धादि मरगम को गई जिससे दिवापुरके
प्राचीन वाणिज्यकी कुछ तरकी हुई है। यहां तहसोल-
की पदासन, घाना, सराय, स्कूल, शिक्षासमय
धादि हैं।

दिवापुर—मध्यभारतके चम्पारन इन्दौर तथा झीनकर-
राज्यका एक महल। यह घसा २२° ३१' ४०" और
रेखा ८५° ४५' ४५" पूर्वमें अवस्थित है। यहके पूर्वमें
एक बड़ी पुष्करिणी है।

दिपु (सं० वि०) दण्डमन्त्र का दण्डः न भय।
दुष्कृत, जो एगि वा जट पट्टावाग वाहता है।

दिब (हिं० पु०) निर्दोषिता या अपने पवनकी सत्यता
प्रमाणित करनेकी प्रोक्षा, जैसे, चम्पिप्रोक्षा।

दिमंकरकी (हिं० वि०) एक मोटी। इसका व्यवहार
कोटे कोटे लकड़ों पहाड़ोंमें करते हैं, जैसे मसरह के
दिमंकरकी।

दिमाक (हिं० पु०) दिवाग देखो।

दिमाग (सं० पु०) १ मस्तिष्क, विरका मूढ़। २ चमिमान,
धमंड, मोघो। ३ मानसिक शक्ति, बुद्धि, समझ।

दिमागपट (हिं० वि०) जो बहुत अधिक जलवाट करने
दुमरीको व्याकुल कर देता है, बन्नी।

दिमागदार (फा० वि०) १ जिसको मागमिह शक्ति बहुत
पक्की हो। २ चमिमानो, धमंडो।

दिमाग-रोयल (फा० पु०) नाम, सुंघनी।

दिमागो (फा० वि०) दिमागदार देखो।

दिमापुर—पासास प्रदेशके चम्पारन जिल्लागार जिनका
एक ग्राम। यह घसा २५° ५४' ४०" और रेखा
८२° ४४' ५०" पूर्वमें घनेखरी नदीके किनारे अवस्थित है।

लोकमंस्या प्रायः ५६६ है। पहले यहां कड़ाह
रामाधोंकी राजधानी था। अब यह जलमें परिवर्त
हो गया है। आज भी घने जलमें जहां-जहां बड़ी बड़ी
पुष्करिणी घोर दुर्गके प्राचीर-वा धर्मसमय देवमेंसे
पाता है। कुछ समय पहले जब यहां दिवापुर, ग्राम

घोर बाजार स्थापित हुआ, तब उस समय यहां एक
पादनी भी नहीं रहता था। इस ग्राममें पहले निर्मम
जलपूर्ण सुन्दर मरोवर विद्यमान हैं घोर विस्तीर्ण दुर्ग-
के प्राकारका खट चिह्न आज भी दोन पड़ता है। ऐसा
अनुमान किया जाता है, कि एक प्राचीर ईंटोंका बना
था घोर कमसे कम ८ हाथ ऊंचा और ३ हाथ चौड़ा
था। ईंटोंका बना हुआ बहुत फाटल घोर उसकी पल्ल-
की चोखट आज भी दीख पड़ती है। किन्तु आजका
किवाह बहुत दिन पहले सुन हो गया है। प्राचीरमें ईंटों

गिर कर नीचे दोनो बगल टिर हो गई हैं घोर उससे
ऊपर ऊपर तरहकी तरहतादि उपज गई हैं। दुर्ग-
का परिमर दोनो तरफ प्रायः ८०० गज है जो बहुत
कुल समस्ततुर्ग चेतके जैना मालूम पड़ता है। नदी-

की घोर प्राचीरके निकट पाई नहीं है, किन्तु नदीके
विपरीत घोर महरो-पारिका चिह्न देवमेंसे पाता है।
दुर्गमें तीन कोठो कोठो पुष्करिणियोंका वर्तमान रह
गया है। फाटकके भीतर बायीं घोर बहुतसे पल्लके

सम्य एक योनीमें बड़े हैं। कहना नहीं पड़ेगा, कि
यही स्थल-यहांकी प्राचीन कीर्ति-धर्म सबके चर्चित
कोतुहलीदोष घोर विमयजनक है। नदीके

स्त्राभकी ज'वाई १५ फुट और कोटेसे कोटेकी ५ फुट ५ इंच है । मेष-स्त्राभ १२से १३ फुट तथा परिधि १८से २० फुटके भीतर ही है । इनको साधारण गठनप्रणाली एक ही होने पर भी वे एक समान दीख नहीं पड़ते । प्रत्येककी गठन-धोर खोदार्थमें कुछ विषयता है । किस चट्टानसे ये सब स्त्राभ बनाये गये हैं, इसका अनुमान करना कठिन है । इनको असमान ज'वाई और ऊपरमें काढ़वाये रहने पर भी ये प्रासादादिके स्त्राभसे मालूम नहीं पड़ते । बहुत पहलेंसे यह स्थान जलमय हो गया है और यहांके राजवंश भिन्न भिन्न स्थानोंमें जा चले हैं । चूना इन सब प्राचीन कीर्तियोंके विषयमें किसी तरहका विश्वासयोग्य प्रवाद भी नहीं है । और न तो कहीं खोदितलिपि भी पाई जाती है । सम्प्रति कई एक स्त्राभोंका निष्कटवर्ती स्थान जलश काट कर परिष्कार किया गया है और सब जगह दुर्गम भ्रष्ट हैं । धने-धनी नदी हो कर नावकी जाने धानेको सुविधा होनेसे यहां नागाभोजी, सायं कुछ कुछ धानिष्य-व्यवसाय चलता है ।

दिय (सं० वि०) देय-उद्यो० साधुः । देय, देने योग्य ।

दियट (हि० स्त्री०) दीपट, देवी ।

दियरा (हि० पु०) एक प्रकारका पकवान । मीठा मिले हुए भाटेकी सोई बनाते हैं । और उसके बीचमें भंगूठेसे गूदा करने से या तेलमें तल कर बनाते हैं । गूदा करने पर इसका आकार दीये-सा हो जाता है, इसीसे इसका नाम दियरा पड़ा ।

दियार (हि० स्त्री०) दीपार देवी ।

दियार (हि० पु०) दीपार देवी ।

दियानत (हि० स्त्री०) दयानत देवी ।

दियानतदारी (हि० स्त्री०) दयानतदारी देवी ।

दियावली (हि० स्त्री०) दीया जलानेका काम ।

दियारा (प्रा० पु०) १ नदीके घाट जमीन पर किनारेमें जो जमीन-सिक्का भाती है उसे दियारा कहते हैं, कक्षार, खादर । २ प्रदेश, प्रान्त, दयार ।

दियासलाई (हि० स्त्री०) काठकी बहलसलाई जो रगड़नेसे जल छठती है । यह प्रायः एक भंगुल-वा इससे भी

कुछ कम लम्बी होती है । इसके सिरे पर गन्धक आदि कई भस्मकर्मवाले मसाले लगे होते हैं जिसमें रगड़ पड़नेसे धाग निकल आती है । जिस सलाईके सिरे पर गंधक रहतो है, वह हर एक कंठो चोज पर रगड़नेसे जल छठती है । किन्तु दूसरे तरकीबी मसालेयुक्त सलाई-विशिष्ट मसालोंसे लगे हुए तल पर हो रगड़नेसे जलतो है । धाग वा चिनगारोसे यदि उसका सिरा श्रम्यं कराया जाय, तो भी सलाई जल छठती है । लकड़ोके पलाभा एक धोर प्रकारकी मोसको बनी हुई दियासलाई होती है जो लकड़ोकी सलाईसे अधिक समय जलती रहती है । आजकल वैधानिकों द्वारा कागज आदिकी भी सलाई बनाई गई है । धाग सुलगाने और दोया जलानेमें इसका व्यवहार होता है ।

दिर (हि० पु०) सितारका एक बोल ।

दिरम (सं० पु०) १ मिश्र देशका चांदीका सिक्का । २ एक तोल जो सड़ तोन माघीकी मानो गई है ।

दिरमानो (फा० पु०) चिकित्सक, वैद्य ।

दिरहम (फा० पु०) दिरम नामका सिक्का ।

दिरिपक (सं० पु०) कन्दुक, गेद ।

दिरस (हि० पु०) एक प्रकारकी छोट जो महीन कपड़े पर लप्यो होती है, दीरस । २ ठोक करनेकी क्रिया ।

(वि०) १ दुःख, लेश, ठोक किया हुआ ।

दिहम (हि० पु०) दिरम देवो ।

दिल (फा० पु०) १ कलेजा । २ मन, हृदय, चित्त ।

१ प्रवृत्ति, इच्छा । ४ साहस, दम ।

दिलगौर (फा० वि०) १ उदास । २ दुःखो, योकाकुल ।

दिलगोरो (फा० पु०) १ उदासी । २ दुःख, रंज ।

दिलगुरदा (फा० पु०) साहस, हिम्मत, बहादुरी ।

दिलचला (फा० वि०) १ साहसी, दिलेर । २ मूर्ख, धीर ।

३ दाता, दानो । ४ वागल ।

दिलचर (फा० वि०) चित्तार्थक, मनोहर ।

दिलचखो (फा० स्त्री०) १ दिखका लगना । २ मनो-रञ्जन ।

दिलचोर (हि० वि०) जो अच्छी तरह काम नहीं करता हो, कामचोर ।

दिलजमई (सं० स्त्री०) सतीश, तलहो ।

पंथ का बना हुआ है। दिल्लीकी घोर दो मसजिदें सजे खनीय हैं, उनमेंसे एकका नाम काला मस्जिद है। प्रवाद है, किसी अफगान सम्राट् ने इसे बनाया था। इसका रंग घेरे घेरे काला हो जानेके कारण लोग इसे काला मसजिद कहते हैं। दूसरी रसुल-उद्दौलाकी मसजिद है। प्राधुनिक बड़ी बड़ी अदालतोंमेंसे दिल्ली गवर्मेण्ट हाउस, गवर्मेण्ट कालेज, रेसिडेन्स और प्रिन्टिंग प्रेसों की गिरां ये ही चार प्रधान हैं। कर्नल हस्तोवर एक साफ-से अधिक रुपये खर्च करके, संपूर्ण गिरां बना गये हैं। चान्दनीचौक की घोर अर्धपथ पर एक बड़ीका स्थावर और उसके सामने दिल्ली कालेज भवन तथा न्यू जियम वा जादूघर है। चान्दनीचौकके उत्तरमें महारानीका उद्यान है और उससे भी कुछ उत्तरमें पहाड़की मूल तक नगरकी सीमा विस्तृत है। इस पूर्वतक शृंग पर चढ़नेसे दिल्ली शहर और शृंगनका दृश्य बहुत मनोहर लगता है। नगरके पश्चिम-प्राचीरके बाहरमें बहुतसे ग्राम देखे जाते हैं, इनमेंसे एक ग्राममें सम्राट् का समाधिस्थान है। इसमें सम्राट् हुमायून् का बनाया हुआ पत्थर तथा संगमरमरका समाधिमन्दिर देखने योग्य है। नगरसे प्रायः दो मीलकी दूरी पर एक विशाल, उद्यानके चारों ओर प्राचीर है तथा अभ्यन्तरमें कई जगह सुन्दर जलाशय और अनेक मन्दिर हैं। इसके मध्यभागमें २० फुट ऊँचे और २०० फुट चौड़े चतुर्भुजके लघु सुन्दर स्थावरानि सुशोभित हैं तथा श्वेतमर्मर पत्थरका शृंगजयुक्त हुमायून्का समाधिमन्दिर अवस्थित है जो आज तक भी सम्पूर्ण अवस्थामें विद्यमान है। नगरसे और भी कुछ पश्चिम एक मीलकी दूरी पर एक दूसरा समाधि मन्दिर है जिसके अभ्यन्तरमें भी बहुत सुन्दर समाधिमन्दिर तथा छोटी मस्जिद विद्यमान हैं। इनमेंसे सुसलमान फकीर निजामउद्दौलीकी समाधि और धर्मशास्त्रा प्रधान है। सिपाहीविद्रोहके पहले दिल्लीके शीव सम्राट् गण इस फकीरकी समाधिके चारों ओर घेरे रचते थे। प्रत्येक समाधिचेर मर्मरके चिरेमें अवस्थित है। इन सब कब्रिस्तानोंके अलावा दिल्लीमें कुतुबमिनार, लौहस्तम्भ आदि और भी बहुत सी प्राचीन कीर्तियाँ विद्यमान हैं जिनका उल्लेख नोचि दिया गया है।

समृद्धिवाली अमीर तथा अन्याय धनकुवेरीको हर्षा-वली निःसन्देह पूर्व नगरको प्रभुत्व शोभा देती। किन्तु उनमेंसे अभी एक भी भोजन नहीं है। उन सब स्थानोंमें वर्त्तमान सम्भ्रान्त व्यक्तियोंको मनोहर अदालतियाँ बनाई गई हैं। इस नगरमें परिष्कृत जल सब जगह मिलता है। अभी इसको परिष्कृतता तथा स्वास्थ्यवर्धक विषयमें सभीका ध्यान आकर्षित हुआ है।

१७६२ ई०में यहां दिल्लीकालेज स्थापित हुआ। यहाँ विद्यालय १८०७ ई० तक प्रधान गिना जाता था। पहले इसमें केवल देग्रीभाषाको शिक्षा दी जाती थी। देग्रीय सम्भ्रान्त सुसलमानगण बाद दे कर इसका खर्च चलाते और सभा संगठन करके इसकी कार्यावली परिष्कृत करते थे। १८२८ ई०को एक कालेजमें अंगरेजी-शिक्षाविभाग खोला गया और १८५५ ई०को यह सरकारी शिक्षाविभागके अन्तर्गत हुआ। तभीसे दिल्ली-कालेजमें अनेक लोग शिक्षा लाभ कर क्षमविद्य हो गये हैं। १८५७ ई०के सिपाहीविद्रोहके समय विद्रोहियोंने इस कालेजमवनको तहस नहस कर डाला और दुष्प्राय ग्रन्थोंको लूटा। १८५८ ई०में एक दूसरा स्कान निर्माण कर उसमें कालेज स्थापित हुआ जो कलकत्ता विश्व-विद्यालयके अधीन किया गया। अन्तमें १८७७ ई०के फरवरी महीनेमें पञ्जाबकी राजधानी लाहौर नगरके कालेजमें उस प्रदेशकी शिक्षाका केन्द्रोद्भूत बनानेकी क्रिये दिल्ली-कालेजके अध्यापक आदि स्थानान्तरित हुए हैं।

जिस दिनसे प्राचीन पार्श्वगण भारतवर्षमें अपना आधिपत्य जमा कर पुण्यसलिला यमुनाके किनारे रहने लगे, उसी दिनसे यहां बहुतसे राजाओं और राजवंश-वर्चसियोंका उत्थान तथा पतन होने लगा। कई एक राजाओंके बाद राजा, सम्राट् के बाद सम्राट् ने यहां नये नये राजधानी स्थापित करके राज्यशासन किया। बाद के क्रमशः कराल कालके मासमें फँसते गये। पीछे बहुतसी राजधानियाँ स्थापित हुईं और धीरे धीरे तहस नहस हो होती गईं। अतः वर्त्तमान कालमें जहाँ दिल्ली नगर अवस्थित है, उसके चारों ओर एक प्रकाण्ड ध्वंस क्षेत्रके जैसा पड़ा है। विसर्प हिमर साहब इस भग्न-दृश्यका इस प्रकार वर्णन कर गये हैं, "यह दृश्य एक

किया। जैनरस कनिंहुम साहब कहते हैं कि यही स्थान
सम्भवतः टलेमियोपॉलिस टैडेलनगर होगा। प्राचीन नगर-
प्राचीनमें कहीं कहीं भग्न ईंटों के साथ शकराजाश्रीको
सुझा पाई गई है। फिरोज तुगलकने चौदहवीं शताब्दीमें
यह नगर परिदृश्य कर इसके बाहर एक मस्जिद
निर्माण की और शतदु नदीसे खाड़ी काट कर वे नगरके
समीप तक जल लाये थे। तैमुरके शासनकालमें यह
नगर सन्धिमें मुलतान छोड़ कर और सभी नगरोंसे बड़ा
बड़ा था, उस समय यहाँ ८४ बुर्ज, ८४ मस्जिद और
८४ कूप थे। प्राचीन नगरको चहार-दीवारी प्रायः २१
मील लम्बी होती। इसके बाहरमें भी बहुत दूर तक
भग्न ईंटों का स्तूप देखनेसे मालूम पड़ता है कि प्राचीन
बाहर बहुत मनुष्यों का वास था। अभी उस विस्तीर्ण
नगरका भ्रम मात्र रह गया है। वर्तमान दिपालपुर
नगर प्राचीन नगरके ईमान-कोणमें नदीके दूसरे किनारे
अवस्थित है। नदीके ऊपर तीन गुम्बजका एक पुल है।
यह नगर किस कारण परित्यक्त तथा विनष्ट हुआ इसका
पूरा पता नहीं चलता है, लेकिन अनुमान किया जाता
है कि विषाशा नदीका पुरातन स्रोत सूख जाना ही
इसका एक कारण है। अंगरेजों के अधिकारमें आने
पर खाड़ी पादि मरम्मत की गई जिससे दिपालपुरके
प्राचीन वाणिज्यकी कुछ तरफों हुई हैं। यहाँ तहसील
की पदावली, थाना, सराय, स्कूल, बिक्रितालय
पादि हैं।

दिपालपुर—मध्यभारतके भक्तगंत इन्दौर तथा झोलकर-
राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २२° ५१' उ० और
दिगा० ७५° ४५' पू० में अवस्थित है। शहरके पूर्वमें
एक बड़ी पुष्करिणी है।
क्षि० (८०° वि०) दक्षिण स० उ० कान्दशः न भय।
दक्षिण की हानि वा कष्ट पड़ना चाहता है।
दि० (८१° पु०) निर्दोषता या अपने कथनकी सत्यता
प्रमाणित करनेकी प्रवृत्ति, जैसे अग्निप्रवृत्ति।
दिमंकरसी (८१° वि०) एक सो दो। इसका व्यवहार
कोटो कोटो लड़के पहाड़ोंमें करते हैं, जैसे सत्तरह लड़के
दिमंकरसी।
दिमाक (८१° पु०) दिमाग देखा।

दिमाग (८० पु०) र मस्तिष्क, निरका गूदा। २ अभिमान,
धमंढ, झेलो। ३ मानसिक शक्ति, बुद्धि, समझ।
दिमागघट (८१° वि०) जो बहुत अधिक बकवाद करके
दुष्टोंकी व्याकुल कर देता है, बक्को।
दिमागदार (८० वि०) जिसकी मागयिक शक्ति बहुत
अच्छी हो। २ अभिमानी, धमंढो।
दिमाग-नौयन (८० पु०) नास, सुंघनी।
दिमागो (८० वि०) दिमागदार देखो।
दिमापुर—आसाम प्रदेशके अन्तर्गत शिवसागर जिलेका
एक ग्राम। यह अक्षा० २५° ५४' उ० और दिगा०
८३° ४४' पू० में घनेश्वरी नदीके किनारे अवस्थित है।
लोकसंख्या प्रायः ५६६ है। पक्षी यहाँ जङ्गल
राजाओंकी राजधानी था। अब यह जङ्गलमें परिणत
हो गया है। आज भी घने जङ्गलमें जहाँ-तहाँ बड़ो बड़ी
पुष्करिणी और दुर्ग के प्राचीन साधु सावध देखनेमें
आता है। कुछ समय पहले जब यहाँ दिमापुर ग्राम
और बालार स्थापित हुआ, तब उस समय यहाँ एक
पादसी भी नहीं रहता था। इस ग्राममें अनेक निर्मल
जलपूर्ण सुन्दर सरोवर विद्यमान हैं और विस्तीर्ण दुर्ग
के प्राकारका स्पष्ट चिह्न आज भी दृश्य पड़ता है। ऐसा
अनुमान किया जाता है कि उक्त प्राचीन ईंटों का बना
था और कामसे कम ८ हाथ ऊँचा और ४ हाथ चौड़ा
था। ईंटों का बना हुआ सुदृढ़ फाटक और उसकी पत्थर
की चौखट आज भी दृश्य पड़ती है। किन्तु काठका
कियाहु बहुत दिन पहले लुप्त हो गया है। प्राचीनसे ईंटों
गिर कर नीचे दोनों बगल टेर हो गई हैं और उसके
ऊपर कई तरहको तरलतादि उपज गई हैं। दुर्ग
का परिसर दोनों तरफ प्रायः ८०० गज है जो बहुत
कुछ समस्तपुंज के क्षेत्रके लिये मालूम पड़ता है। नदी
की ओर प्राचीनके निरुद्ध खाई नहीं है, किन्तु नदीके
विपरीत ओर गहरी खाई का चिह्न देखनेमें आता है।
दुर्गमें तीन छोटी छोटी पुष्करिणियोंका भ्रम मात्र रह
गया है। फाटकके भीतर बायीं ओर बहुतसे पत्थरके
स्तम्भ एक-दूसरेमें लगे हैं। कहना नहीं पड़ेगा कि
यह स्तम्भ यहाँकी प्राचीन कृति हैं। सबसे अधिक
कीटहलोहोपल और विषयजनक है। बड़ेसे बड़े

अत्यन्त भयानक ध्वंसोत्पत्तिके जैसा दीप पड़ता है, भय-
स्त पूरे वाद भयस्तूप है, समाधिके वाद समाधि है, टूटे
फूटे घरोंकी टूटी फूटी ईंटें और तरह तरहके पत्थरोंके
टुकड़े चारों ओर हललता रहित कठिन मरुभूमिके
समान पृथ्वी पर इधर उधर पड़े हैं ।" ये सब ध्वंसा-
वशित भयस्तूपराशि वर्त्तमान शाहजहानाबाद नगरमें
पांच कोस दूर राजपिथोरा और तोगलकाबाद दुर्ग तक
विस्तृत है । जितनी दूर तक उक्त ध्वंसावशित राजधानी-
समूह देखा जाता है, उसका परिमाणफल ४५ वर्ग-
मील है । वर्त्तमान नगरके प्राचीरमें २ मील दक्षिणमें
जहां इन्द्रप्रस्थ या पुराणकिल्सा नामका ग्राम और
दुर्ग है, पड़ले वहाँ पाण्डवोंका इन्द्रप्रस्थ नगर बसा
हुआ था ।

अब यह देखना चाहिये कि शहरका नाम दिहो किस
प्रकार पड़ा । ई० सन्के प्रायः ५० वर्ष पहलेमें दिहो
अथवा दिहोपुर इसी नामको उत्पत्ति हुई थी । किरिस्ता-
की मतानुसार जिनरल कनिंङम कहते हैं, कि राजा
दिलुवे दिहोका नामकरण हुआ है । ये इन्द्रप्रस्थके
गौतमवंशीय राजाओंके परवर्त्ती मयूरवंशके अन्तिम
राजा थे । उस समय दिहो-नगर वर्त्तमान शहरसे ५ मील
दक्षिणमें अवस्थित था । किन्तु इस विषयमें जितनेो कहा-
नियां कही गई हैं, उनमेंसे तोमरी या बोयो शताब्दीके
राजा धायके द्वारा स्थापित प्रसिद्ध कोटस्तम्भसे जो कुछ
मान्य हुआ है उसे ही प्रमाणस्वरूप ग्रहण करना
चाहिये । यह धातुमय स्तम्भ ठोस है । इसका व्यास १६
इ० और लम्बाई ५० फुट है । इसके पाँचों ओर संस्कृत
अनुशासन भन्नी भांति खोदा हुआ है । केवल यही लिपि
इसके प्राचीन इतिहासके परिचायकके अंश आदर्-
शीय है । प्रिन्स साहवने सर्वमें पहिले इस अनुशासनका
पाठोच्चार किया, जिसका मर्म इस प्रकार है—'राजा
धाय जो अपनी भुजाके बलसे बहुत काल तक सारी
पृथ्वीके अद्वितीय अधीश्वर हुए थे, उन्होंने कीर्त्तिस्वरूप-
में यह स्तम्भ स्थापित हुआ । ये सब खोदितलिपियां
उनकी तीस तनवारसे शत्रुओंकी देहके गहरे चताह-
की नाईं उनकी कीर्त्ति चिरकाय तक घोषणा करें ।'

कनिंङम साहब अनुमान करते हैं, कि ये धातु राजा
शायद ११८ ई०में विद्यमान थे । अब सत्यके गुणवर्धने
अनुशासनके अक्षरोंका टंग देवनेसे भी पता चलता
है, कि ये सब अक्षर गुमराजवंशके समामाधिक हैं ।
किन्तु वंशपरम्परागत प्रवादके अनुसार उक्त सोहस्तम्भ
तोमरवंशके स्थापनकर्त्ता अनन्तपालसे प्रतिष्ठित समझा
जाता है । ऐसा होनेसे इसका प्रतिष्ठाकाल पाठवों
शताब्दीमें पड़ जाता है । कहते हैं, कि यामने राजाको
यह स्तम्भ पृथ्वीमें दृढ़रूपसे गाढ़नेको आज्ञा दी । और
साथ साथ यह भी कह दिया था; कि इसको दृढ़ताके
ऊपर जो उनको राजलक्ष्मणको स्थिरता निर्भर रहेगी ।
उन्हींके कथनानुसार यह स्तम्भ गाढ़ा गया । तब व्यासने
पुनः राजासे कहा, कि स्तम्भका निचला भाग पृथ्वीके
अन्दर बासुकीके मस्तकमें जा घटका है, यतः स्तम्भ
भी अचल रहेगा और राजाको राजलक्ष्मण भी अचल
रहेगा । लेकिन स्तम्भका मूल बासुकीके मस्तक पर जा
घटका है, यह राजाको तनिक भी विश्वास न हुआ
और उन्होंने स्तम्भको उलटवा दिया । स्तम्भके उलटने
को बहामे लोहको धारा निकलने लगी । इस पर
राजा विस्मय हो पड़े और अपने मन्दिर पर पड़ापाप
करने लगे । जो कुछ हो, राजासे व्यासको पुनः बुला
कर स्तम्भको फिरसे स्थापित किया । किन्तु इस बार
किन्ही तरह स्तम्भ पहिलेकी तरह घटल न रह सका, वर
ठोला अर्थात् ऊपरको हो उठा रहा । इसी कारण
तोमरवंशको राजलक्ष्मण भी बोड़े हो समयमें दूसरेके
हाथ लगे । स्तम्भके ढोला रहनेके कारण ही नगरका
नाम दिहो पड़ा । * इस प्रवादमें भी मतभेद है । जो
कुछ हो, यह सब मतसे स्थिर हुआ है कि यह नगर
तोमरवंशीय राजाओंके अभ्युत्थानके समय स्थापित
हुआ । किन्तु स्तम्भमें जो लिपि है उससे प्रवादकी सत्यता
अप्रमाणित हो जाती है ।

* "दिहो तो दिहो मई

तोमर भूते बत हीन ।"

दिहो शर्कार स्वप्न दिहो अर्थात् ढोला हो गया है,
तोमरी इच्छा पूर्ण न होगी ।

स्तम्भकी ऊँचाई १५ फुट और कोटिसे कोटिकी ८ फुट ५ इंच है। शेष स्तम्भ १२से १३ फुट तथा परिधि १८से २० फुटके भीतर ही है। इनको साधारण गठनप्रणाली एक ही होने पर भी वे एक समान देख नहीं पड़ते। प्रत्येककी गठन और छोटाईमें कुछ विशेषता है। किस छहेश्वरसे ये सब स्तम्भ बनाये गये हैं, इसका अनुमान करना कठिन है। इनको पसमान ऊँचाई और ऊपरमें काष्ठशाय रहने पर भी ये प्रासादादिके स्तम्भसे मालूम नहीं पड़ते। बहुत पहनेसे यह स्थान अनगूँथ हो गया है और यहाँके राजवंश भिन्न भिन्न स्थानोंमें जा बसे हैं। सुतराँ इन सब प्राचीन कीर्तियोंके विषयमें किमो तरफ़का विश्वासयोग्य प्रवाद भी नहीं है और न तो कहीं खोदितलिपि भी पाई जाती है। सम्प्रति कई एक स्तम्भोंका भिन्नवर्ती स्थान जङ्गल काट कर परिव्कार किया गया है और सब जगह दुर्गम भ्रष्ट है। धनो यहाँ एक पुलिस भाउट-पोस्ट रह गया है। धनो यहाँ नदी हो कर नावकी जानि भानेकी सुविधा होनेसे यहाँ नागाओंके साथ कुछ कुछ वाणिज्य व्यवसाय चलता है।

दिय (सं० त्रि०) दैय द्यो० साहु। दैय, दैने योग्य।

दियट (हिं० स्त्री०) दीपट देवी।

दियरा (हिं० पु०) एक प्रकारका पकवान। मीठा मिले हुए आटेकी छोई बनाती है और उसके बीचमें अंगूठेसे गूँदा करके घों या तेजमें तल कर बनाती है। गूँदा करने पर इसका आकार दोबेसा हो जाता है, इसीसे इसका नाम दियरा पड़ा।

दिपौर (हिं० स्त्री०) दीपक देवी।

दिया (हिं० पु०) दीया देवी।

दियानत (हिं० स्त्री०) दयानत देवी।

दियानतदारी (हिं० स्त्री०) दयानतदारी देवी।

दियावत्ती (हिं० स्त्री०) दीया जलानेका काम।

दिशारा (फ्रा० पु०) १ नदीके हट जाने पर किनारेमें जो जमीन निकल आती है उसे दिशारा कहते हैं, कहाँ खादर। २ प्रदेश, प्रान्त, देश।

दियासलाई (हिं० स्त्री०) फाटकी बहलवाई जो रगड़नेसे जल उठती है। यह प्रायः एक अंगुल चौड़ाई से भी

कुछ कम लम्बी होती है। इसकी चिरे परे गन्धक आदि कई भस्मकनेयाले मसाले लगे होते हैं जिसमें रगड़ पड़नेसे भाग निकल आता है। जिस सलाईके चिरे पर गंधक रहतो है, वह हर एक कछो चीज पर रगड़नेसे जल उठतो है। किन्तु दूसरे तरफ़की मसालेयुक्त सलाई विभिन्न मसालोंसे लगे हुए तल पर ही रगड़नेसे जलता है। भाग वा चित्तगारोसे यदि उसका चिरा स्याँ कराया जाय, तो भी सलाई जल उठती है। लकड़ोके पन्नावा एक और प्रकारकी मोमकी बनी हुई दियासलाई होती है जो लकड़ोकी सलाईसे अधिक समय जलती रहती है। आजकल वैज्ञानिकों द्वारा कागज आदिको भी सलाई बनाई गई है। भाग सजगाने और दोया जलानेमें इसका व्यवहार होता है।

दिर (हिं० पु०) सितारका एक बीज।

दिरम (अ० पु०) १ मिस्र देशका चाँदीका सिक्का। २ एक तोल को साढ़े तीन मसिकी मानो गई है।

दिरमानो (फा० पु०) धिक्कक, वैद्य।

दिरहम (फा० पु०) दिरम नामका सिक्का।

दिरिपक (अ० पु०) कन्दुक, गेंद।

दिरिस (हिं० पु०) एक प्रकारकी छोट जो महीन कपड़े पर छपी होती है, दरेस। २ बोक कारनेकी क्रिया।

(वि०) १ दुस्स, लैस, ठीक किया हुआ।

दिहम (हिं० पु०) दिरम देवी।

दिल (फा० पु०) १ कलेजा। २ मन, हृदय, चित्त। ३ प्रवृत्ति, इच्छा। ४ साहस, दम।

दिलगौर (फा० वि०) १ उदास। २ दुःखो, शोकाकुल।

दिलगोरो (फा० पु०) १ उदासो। २ दुःख, रंज।

दिलगुरदा (फा० पु०) साहस, हिम्मत, बहादुरी।

दिलचका (फा० वि०) १ साहसो, दिलीर। २ गूर, वीर। ३ दाता, दानो। ४ पागल।

दिलचषा (फा० वि०) चित्ताकर्षक, मनोहर।

दिलचस्वी (फा० स्त्री०) १ दिलका लगन। २ मनो-रक्षण।

दिलचोर (हिं० वि०) जो अच्छी तरह काम नहीं करता हो, कामचोर।

दिलजमई (अ० स्त्री०) चम्की, तसकी।

जेरल कनिं इसका कहना है, कि दिल्ली नगरके बहुत काल तक भग्नावशेषों में पड़े रहनेके बाद अनङ्ग-पालने ७३० ई०में यहाँ राजधानी स्थापित करके नगर-का पुनः संस्कार किया। उनके वंशीय परवर्ती राजा-धोने दिल्लीसे कनौज या कान्यकुब्ज नगरमें जा कर राजधानी बसाई।

राजोर-वंशके स्थापयिता चन्द्रदेवने जब ग्यारहवीं शताब्दीके मध्यभागमें कान्यकुब्ज (कनौज) से तोमरोंको मार भगाया, तब उसी वंशके १२ अङ्गपालने दिल्ली-को लौट कर वहाँ पुनः एक बार तोमर-राजधानी स्थापित की। उन्होंने दिल्ली नगरको फिरसे गृह-प्रासादि द्वारा सुशोभित तथा गार्ड और प्राचीर द्वारा सुदृढ़ किया। आज भी कुतुबमिनारके चारों ओर उस दुर्गके प्राचीरका भग्नावशेष पड़ा हुआ है। राजा धाव-के प्रतिष्ठित लौहस्तम्भमें अनुयासलकी एक दृष्टी पंक्ति है। जिसका मर्म इस प्रकार है—“११८८ सव्वत्से” (१०५२ ई०में) अङ्गपाल दिल्लीकी जनपूर्ण करे। इस लिपिसे अङ्गपालका दिल्लीमें पुनरागमनका समय अनुमान किया जाता है। इसके प्रायः एक सौ वर्ष बाद तोमर वा तुषार वंशके श्रेष्ठ राजा श्व अङ्गपालके राजत्वकालमें अजमेराधिपति चौहान वंशीय विशाल-देवने दिल्ली अधिकार किया। जो कुछ हो, विशालदेव-ने तोमरराजको सामन्तरूपसे दिल्लीमें राज्य करने दिया। क्रमशः दोनों वंश विवाहमन्त्रसे एक हो गये। इसी समय भार्यावर्तके श्रेष्ठ स्वाधोन भूपति महाराज पृथ्वीराजने लक्ष-ग्रहण किया। वे तुषार और चौहान दोनों वंशके उत्तराधिकारी हुए। इन्होंने रायपिथोरा नामक दुर्ग और अङ्गपालके दुर्ग प्राकारके बाहर एक और प्राचीर निर्माण कर दिल्ली नगरको और भी सुदृढ़ कर दिया। आज भी बहुत दूर तक इस प्राचीरका भग्नावशेष देखनेमें आता है। इसके बाद सुसलमान ऐतिहासिकोंने दिल्लीका सख्त विवरण पाया जाता है। ११९१ ई०में शाहबुहान वा महम्मदघोरी (गोरी) ने पहली बार आर्यावर्त पर चढ़ाई की। पृथ्वीराजने अपने प्रभूत पराक्रमी राज्यकी रक्षा को और प्रसिद्ध शनिखरके युद्धमें महम्मद घोरीको सन्पूर्ण रूपसे परा-जित तथा उन्हें भगा कर ८० सौह तक धनुषस्थ किया।

दो वर्षके बाद ही पराक्रान्त महम्मदघोरीने पुनः भारत-वर्ष पर आक्रमण किया। इस बार देव दुर्विपाकसे पृथ्वीराज युद्धमें पराजित हुए। दुर्दन्त सुसलमान-सेना-पतिने बोरबोर पृथ्वीराजको कैद कर निःसहाय अवस्थामें मार डाला। भारतका सोभाग्यरवि उसी दिन भस्म हो गया। हिन्दूके गौडका उसी दिन अथसान हुआ। पा-घोनताको तमोमय घनजालमें उसी भोघण दिनको भारतको भावीने पट्टाकाग आच्छन्न किया। विध-मियोंका विजातोय शासनशेष उसी दिनसे हिन्दूके वक्षस्थलमें गाढा गया।

महम्मद घोरीके प्रतिनिधि कुतबुद्दीन आइबकने पृथ्वीराजकी पराजय कर दिल्ली अधिकार किया और उसी समयसे दिल्ली-नगर सुसलमानोंकी राजधानी हुआ। १२०६ ई०में महम्मद घोरीकी मृत्युके बाद कुतबने अपनेको स्वार्थी राजा कह कर घोषणा की। दिल्लीके गुलाम-राजार्थमें से हो पड़ले थे। इनकी स्थापित की हुई बहुत सी शक्तियाँ अन्धायस्थामें पड़ी हैं। कुतबको मस्जिद ११८६ ई०में दिल्ली जीति आनेके बादसे आरम्भ हो कर तीन वर्षमें समाप्त हुई। पीछे उनके जमाई फलतममने इसका अनेकांश वर्धित किया। मस्जिदको दो प्राङ्गण हैं, एक बाहरमें और दूसरा भीतरमें। भीतरका प्राङ्गण चारों ओर नाना कार-कार्य-खचित स्तम्भयोंसे युक्त चारामदेवे विरा हुआ है। वे ययस्तम्भ प्राचीन हिन्दूदेवमन्दिरको तोड़ फोड़ कर संग्रह किये गये थे। पहले इन स्तम्भोंमें खोदित देव-देवोंकी प्रतिमूर्तियाँ चूने पादिते परिपूर्ण स्थूल आवरणमें भात थीं, किन्तु अब आवरणके गिर जानेसे मूर्तियाँ स्पष्टरूपसे नयनगोचर हो कर हिन्दुओं-के प्राचीन शिल्पगौरवको अच्छी तरह प्रकाश करती हैं। इदम-वस्तुता नामक एक सुसलमान भूमणकारी-ने मस्जिद तैयार होनेके डेढ़ सौ वर्ष बाद उसे देख कर कहा था, कि यह मस्जिद सोन्दर्य और विस्तारमें अतुल-नोय है। मस्जिदके बाहरवाले प्राङ्गणके नैऋतकोण-में कुतबका एक दूसरा शक्तिस्तम्भ है, उसका नाम दिल्लीका कुतबमिनार है। कुतबमिनार देखो। कुतब-मिनारके प्राङ्गणके मध्यस्थलमें राजाधावका प्रतिष्ठित लौह स्तम्भ विद्यमान है। इस मिनारके चारों ओर भग्न

दिलजना (हि० वि०) अत्यन्त दुःखी, जिसका दिल जला हो ।

दिलडरिया (हि० पु०) दरियादिल देखो ।

दिलदरियावा (हि० पु०) दरियादिल देखो ।

दिलदार (फा० वि०) १ उदार, दाता । २ रसिक । ३ प्रेमी, प्रिय ।

दिलदारो (फा० स्त्री०) १ उदारता । २ रसिकता । ३ प्रेमिकता ।

दिलपसन्द (फा० वि०) १ मनोहर, उमदा । (पु०) २ एक प्रकारका कपड़ा जो फुलवर या चुनरोकी तरह होता है । इस पर बेसवूटे आदि छपे हुए होते हैं । ३ एक प्रकारका फल ।

दिलवर (फा० वि०) प्यारा, प्रिय ।

दिलबहार (फा० पु०) खूब खाशे रंगका एक भेद ।

दिलवा (फा० पु०) वह जिससे प्रेम किया जाय, प्यारा ।

दिलबल (हि० पु०) एक प्रकारका पेड़ ।

दिलवाना (हि० क्लि०) दिलावा देखो ।

दिलबारा (दैलवाड़ा)—राजपूतानेके अन्तर्गत उदयपुर राज्यका एक शहर । यह अक्षा० २४°४०' उ० और देशा० ७१°४४' पू० उदयपुर शहरसे १४ मील उत्तरमें अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः २४११ है । उदयपुरके कई सामन्त सरदार यहाँ वास करते हैं । नगरके दक्षिण एक पहाड़के ऊपर उन लोगोंके भवन हैं । इससे थोर भी कुछ दक्षिण १००० फुट ऊँचे श्रव् पहाड़के ऊपर जैनियोंका विख्यात दिलबारा मन्दिर अवस्थित है । यह जैनियोंका पवित्र स्थान माना जाता है । पहले यहाँ शिवलिंगादिकी मन्दिर थे ऐसा प्रतीत होता है, किन्तु उनका एक चिह्न भी रह न गया है । इसमें ८६ पाम समते हैं । यहाँके राजाकी उपाधि 'राजाराना' है । यहाँकी आमदनी ७२००० रु० है तथा ४८०० रु० दरबारकी कारखरूप देने पहुँचे हैं ।

दिलवाला (फा० वि०) १ उदार, दाता । २ बड़ादुर, साहसी ।

दिलवाया (हि० वि०) जो दूसरेको दिसाता हो ।

दिलहा (हि० पु०) दिवा देखो ।

दिलहिदार (हि० वि०) दिलेदार देखो ।

दिसाना (हि० क्लि०) १ देनेका काम किसी दूसरे कराना । २ प्राप्त कराना ।

दिसारखा—जहाँगीरकी दो सेनापति । उनमेंसे एक ५००० और दूसरे ७००० सैन्यकी अधिनायक थे ।

दिलाराम—एक हिन्दी कवि । इनकी कविता सराहनीय होती थी । ये १७७५ स० में विद्यमान थे ।

दिलाल—मिथना-मुहानेकी सन्दीप नामक दीपका एक सुसलमान दख्ख राजा । इनको दख्ख प्रति करनेके लिये अनेक बतनमोगी सेनाएँ थीं । इसका ध्याल था, कि विभिन्न जातीय स्त्री पुरुषोंमें विवाह शादो करनेसे जो सम्मान जन्म लेतो है वह बहुत मजबूत होता है । इसी धारणाकी अनुसार इसकी अधिकारमें जितनी जाति वा सेना थीं, उनमें परस्पर आदान प्रदानकी प्रथा इसने जारी कर दी थी । यह यह भी कहा करता था, कि हिन्दू जो इतने दुबले पतले मालूम पड़ते हैं, इसका कारण यही है, कि वे केवल अपना ही जातिमें आदान प्रदान किया करते हैं । बङ्गालको नवाबको सेनासे पकड़े जाने पर यह मुर्शिदाबादको लाया गया था । यहाँ लोहेके पिंजरेमें कुछ काल कैद रह कर पचत्वकी प्राप्त हुआ । दिलावर (फा० वि०) १ गूर, बड़ादुर । २ साहसी, साहसी ।

दिलावर—पञ्जाबके अन्तर्गत बहवलपुर राज्यका एक दुर्ग । यह अक्षा० २८°४४' उ० और देशा० ७१°१४' पू० पंजनदीके बायें किनारेसे ४० मील दूर मरहूमिमें अवस्थित है । कहा जाता है, कि ८४३ ई० में चङ्गा विश्व भाटने इसे निर्माण किया । १७४७ ई० तक यह दुर्ग जयशालमेरकी राजाओंके अधिकारमें था, वहीं वर्ष दाउदकी सड़कोंने इस पर अपना अधिकार जमा लिया ।

दिलावर खाँ—मासव प्रदेशके सुसलमान राजवंशके आदि पुरुष । इनकी माता सुलतान शाहउद्दीनके यशकी थी । हिन्दू राजाओंके अधःपतन होने पर १११० ई० में दिलोपति गयासुद्दीन बलबन्के समयमें सुसलमानोंने मासव देश पर चढ़ाई कर उसे जीत लिया । उन्नीसवय मासवने दिल्लीसम्राट् की अधीनता स्वीकार कर ली । अन्तमें ११८० ई०को मकबद गाह तुगलकने राजव

राजाग्रीकी समाधि, सोरठ शुभा, मानमहल, मैयट
पाण्डकी समाधि, साव यष्टना, पुराचकिन्ना, सास-
महल, भीलडवि, निरमन्दिर, किन्नाकोषमस्त्रिजद,
कादुलका फाटक, किरोजगाहका कोतला, चणोयका
स्तम्भ, कुगाक-गिहार चोतुह्यो, भूजुनिक, किरोज-
गाहके कोतलाके दक्षिणको निवियुक्त एक मस्त्रिजद, पुराच-
किन्नाके निकट नगरतीरपर और इसके निकटवर्ती निवि-
युक्त मस्त्रिजद, कुतवमिनार, मस्त्रिजद, कुतव-उल-इम-
लाम, सोहस्रम्भ, पसभूर्ण मिगार, छहृ मिगार वा लाट,
कुगाक सबुज, पस्तमसकी समाधि, भस्त्रावहीन खिलजो-
की समाधि, चलाई दरगाहा, इमाम कामिनको समाधि,
महम्मद कुलो शाही समाधि, राजन-का-वहन, सोलाना
जमातकी समाधि और मस्त्रिजद, गयाम्-उद्देन बलवन-
की समाधि, ग्रामगी होज और निकटवर्त्य मन्दिर, दरगाह
दुतबुद्देन, बख्तिशारकी मस्त्रिजद, सोती मस्त्रिजद, पादम
शाही समाधि, योगमाया, भनइपालका लालकोट और
भस्त्रावहीनकृत चनका विष्टार किला, राय पियोग, झाजी
बाधा रोसवोही समाधि, सुलतान गोरीकी समाधि, होज
साध, किरोजगाहकी कन्न, पहाड़के ऊपर सुलतान गोरी-
की समाधिका भग्नावशेष, किस्त्रावायन, मछोणलपुर,
भाकचा, बदि-मस्त्रिज वा विजयमन्दिर, मस्त्रिजद वेगम-
पुर, मठकी मस्त्रिजद, तिरहोनजा, मुबारकपुरकी कोतला
समाधि, बुज, कामा हजरत फतेहा, खैरपुरकी समाधि
और मस्त्रिजद, निक्न्दर सोदोको समाधि, यन्व-मन्व,
कदमगरीकी, महल भूमी भटियारी, मस्त्रिजद सरहिन्द,
निगमशोध घाट, दिल्ली दुर्गस्य सोधमाला, शुभा मस्त्रिजद,
काला वा कलान मस्त्रिजद, दरगाह गाह तुर्कानान,
मस्त्रिजद फकहरवाही, सोनाली मसजिद, जिनव-उल
मसजिद, गरीफ-उद्देलानी मसजिद, फतेपुरी मसजिद,
पञ्चवो कटरा मसजिद, फकर-उल मसजिद, गाजि
छद्दानीका मद्रमा, सोनाली मसजिद कोतवाली, पीक-
पुर और चणकुण्ड, मसीमगढ़ और दुर्गके मध्यवर्तीविनु,
जहांपना, दिल्ली गिरसा, किरोजावाद, सिदि, किलो-
कट्टे, पादि।

दिल्लीवांश (हिं० दि०) १ दिल्ली सल्तनत, दिल्लीना।
२ दिल्लीका रहनेवाला। (पु०) ३ एक प्रकारका
दियो जूता को दिनीमें तैयार होता है।

दिनेदार (फा० दि०) जिसमें दिनहा या दिना लगा हो।
दिव (सं० स्तो०) दोष्यव्यय दिव वादु० पाधारे डिक।
१ सूर्य, सोना। २ भाकाग। १ दिन।

दिव (सं० स्तो०) दोष्यव्ययस्मिन्, दिव चय ये पधि-
करणे क। १ स्वर्ग। २ भाकाग। १ दिन। ४ वग,
जटल।

दिवचम् (सं० त्रि०) १ स्वर्गोय। (पु०) २ इन्द्र।

दिवग्रह (हिं० पु०) देवग्रह देखो।

दिवङ्गम (सं० त्रि०) दिव भाकाग भागों वा गच्छति

दिव वादु० खब मुम्। १ भाकागगामो। २ स्वर्गगामो।

दिवन (सं० पु०) दोष्यव्ययस्मिन्सिति दिवःकनिम्।

(कनिम्, पु हवीति। वग १।१६) दिन, रोज।

दिवराज (सं० पु०) स्वर्गके राजा, इन्द्र।

दिवरानी (हिं० स्तो०) देवतानी देखो।

दिवम (सं० पु० स्तो०) दोष्यव्यय दिव पसच, किच।

(दिवः किर। वग १।१२१) दिन, वासर, रोज।

दिवसकर (सं० पु०) करोतीति ह पच, दिवमस्य करा।

१ सूर्य। २ फकहस्य, मदारका पंड।

दिवसकृत (सं० पु०) दिवस करोति ह-किप, गुगा

गमः। १ सूर्य। २ फकहस्य, पाक।

दिवसनाथ (सं० पु०) दिवसस्य नाथः। सूर्य।

दिवसमर्तु (सं० पु०) दिवसस्य भर्ता। सूर्य।

दिवसमुख (सं० स्तो०) दिवसस्य मुखं। प्रभात, मवेरा।

दिवसमुद्रा (सं० स्तो०) एक दिगका वीतन, एक दिनकी

मजदूरी।

दिवसविगम (सं० पु०) दिवसस्य विगमः। दिवावसान,

सव्याकाल, शाम।

दिवमान्तर (सं० त्रि०) अन्यत् दिवसः। अन्य दिन,

दूसरा दिन।

दिववेग्र (सं० पु०) दिवसस्य वेग्रः। दिगके प्रभु

सूर्य।

दिवस्वति (सं० पु०) दिवः पति फलुक् समाप्तः। तयो-

दय मन्वन्तरइन्द्र, तेरहवें मन्वन्तरके इन्द्रका नाम।

दिवसपुत्र (सं० पु०) दिवः भाकागस्य पुत्रवत् प्रियः वा

दिवः पुत्र वायव्यं ते-फ, चो० साधु। २ सु लोच प्रिय।

२ सु लोचपासक, सूर्य।

कालमें दिलावर खाँ मालवके शासनकर्त्ता नियुक्त हुए। १३६८ ई०में तैमूरलङ्गने जब दिल्ली पर चढ़ाई की, तब सम्राट, मल्लूदशाह भाग कर लगभग ३ वर्ष पहले गुजरातमें और पीछे मालवदेशमें रहे थे। १४०१ ई०में जब सम्राट दिल्लीको लौटे, तब दिलावरने अपने सभासदोंके बीच मालव-राज्य विभाग कर उन्हें वहाँका मामला राजा बनाया और आप स्वाधीन हो कर राज्य करने लगे। धारा नगरमें उनकी राजधानी थी। माण्डु नगरमें भी वे बहुत काल तक रहे थे।

राजा होनेके कई वर्ष बाद १४०५ ई०में दिलावर खाँकी मृत्यु हुई। बाद उनके लड़के पाख खाँ राजसिंहासन पर बैठे। दिलावर खाँने जोसे उनके वंशीय ११ राजाओंने मालवदेशमें राज्य किया। पीछे हुमायूँके पुत्र बीरवर एकदरने मालव देशकी जीत कर उसे दिल्लीके मुगल-साम्राज्यमें मिला लिया।

दिलोप (सं० पु०) सूर्यवंशीय वृषभिशेप। सूर्यवंशमें दिलोप नामक दो राजा थे। हरिवंशमें इन दोनोंका विषय इस प्रकार लिखा है—राजा सगरके पुत्रोंमेंसे पाँच पुत्र पृथ्वीके प्रभोत्तर हुए। इन पाँचोंमें एकका नाम असमंजस था। असमंजसके पुत्र प्रशमान और प्रशमानके पुत्र दिलोप थे। इनका दूसरा नाम खट्वाह भी था। इन्होंने मुहूर्त्तकालके लिए स्वर्गसे आ कर सर्वलोकमें जन्म ग्रहण किया था। किन्तु इतने ही समयके मध्य इन्होंने सत्यधर्म और बुद्धिके बलसे त्रिलोकका अनुसन्धान कर लिया। भगौरय इन्होंने पुत्र थे। पीछे इसी सूर्यवंशमें महाराज भनमित्रके दुर्लिट्ट नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। भनमित्र सर्वविद्याविग्राह थे। इनके भी पुत्रका नाम महाराज दिलोप था। ये दिलोप रामचन्द्रके प्रपितामह और रघुके पिता थे। रघुने अपने बाहुबलसे प्रयोध्यामें राजधानी मारी। (हरिवंश १५ अ०)

लिङ्गपुराणके मतानुसार असमंजसके पुत्र प्रशमान, प्रशमानके पुत्र दिलोप और दिलोपके पुत्र भगौरय थे। पीछे इसी वंशमें ऐलयिलि नामक राजाके औरससे दिलोपने जन्म ग्रहण किया। ये खट्वाह नामसे भी प्रसिद्ध थे; मुहूर्त्तकालके लिए ये स्वर्गसे सर्वलोकमें आते थे। इन्होंने प्रथम और बुद्धिके बलसे तीनों लोकों तथा तीनों भूमियों

की जीत लिया था। इनके पुत्रका नाम रघु था। ये ही रामचन्द्रके प्रपितामह थे। (लिङ्गपुराण १६ अ०)

महाकवि कालिदासने अपने रघुवंशमें दिलोपका विवरण इस प्रकार लिखा है—राजा दिलोप एक बार स्वर्गसे सर्वलोकमें अपने स्त्रीसे मिलनेके लिए आते समय स्वर्गीय भी सुरमिकी पूजा करना भूल गये थे। इसलिए उसमें दिलोपको शाप दिया कि, 'जब तक तुम मेरी नन्दिनीकी सेवा न करोगे, तब तक तुम्हें पुत्र न होगा।' बहुत दिनों तक कोई सन्तान न होनेके कारण राजा बड़े चिन्तित हुए, पीछे पत्नीके साथ लालगुह वगैरहकी शरणमें पहुँचे। अष्टि वगैरहकी योगबलसे माण्डूस हुआ कि सुरमिकी भवहेला करना ही सन्तान नहीं होनेका मूल कारण है, इसलिए उन्होंने राजासे नन्दिनीकी सेवा करनेकी कहा। राजा भी अनन्यकर्मा हो सुरमितभया नन्दिनीकी सेवा करने लगे। एक बार एक घेरने नन्दिनीको खाना चाहा। दिलोपने उसको रक्षाके लिए अपने पापको उस घेरके आगे डाल दिया। इस पर नन्दिनी बहुत प्रसन्न हो गई और उसमें राजाकी वर दिया। उस वरसे उन्हें एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिनका नाम रखा गया रघु। रघुके ही नाम पर रघुवंश नाम प्रसिद्ध हुआ है। दिलोपकी पत्नीका नाम सुदक्षिणा था। रघु जब बड़े हुए, तब दिलोपने उन पर राज्यभार सौंप संसारका त्याग किया।

दिलोप—हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध कवि। ये चैनपुर नामक ग्राममें रहते थे। इन्होंने संवत् १८१६ में रामायण-टीका नामक एक पुस्तक लिखी।

दिलोपराट (सं० पु०) दिलोप एवं राट राजा। दिलोप राजा।

दिलोपसिंह—दलीपसिंह देखो।

दिलौर (सं० स्त्री०) गोमय कल, गोबर कृत्ता, भुईँकोड़।

दिलेर (फा० वि०) १ शूर, वीर। २ साहसी, हिम्मत।

दिलेरी (फा० स्त्री०) १ वीरता, बहादुरी। २ साहस, हिम्मत।

दिल्ली (फा० स्त्री०) १ दिक्षु लगनेकी क्रिया। २ चिह्न-विनोद या हँसने हँसानेकी बात, उद्दामप्रजाक, मसरूरी।

दिव्यपुत्रिका (स० स्त्री) शोध पुत्रिका व दिव्य दिवसा-
देगः । (दिवस्य पुत्रिकां । पा १।१।२०) स्वर्ग भोर
भूमि ।

दिव्यपुत्र (स० पु०) सृष्टि सृष्ट-किन् दिवः सृष्ट-
क-तत् । १ पाद द्वारा स्वर्गस्पर्शी विष्णु । वामनावतारमें
विष्णुने पैरसे स्वर्गको स्पर्श किया था ।

दिवा (स० पु०) १ दिन, दिवस । २ २२ चक्षुषोंका
एक वर्षावृत्त । इसके प्रत्येक चरणमें ७ भगण भौर
१ गुप्त होता है ।

दिवाह-युगावदेयके भक्तगंत मुलन्दगहर जिल्लाका एक समृद्धि
ग्रामी नगर भौर वाणिज्य स्थान । यह भक्षा० २८ १२ स०
भौर देशा० ७८ १६ पु० मुलन्दगहरसे २६ मील उत्तरमें
भवस्थित है । लोकसंख्या लगभग १०५०८ है । कहा जाता
है, कि मुलन्दगढ़ नामक एक प्रधान राजपूतने राजधानीके
उत्तर १०२८ ई०में यह नगर स्थापित किया । भभी
चयोध्या भौर रोहिलखण्ड रत्नपथ इसो नगर को कर
जानिसे इसको दिनों दिन उत्पत्ति हो रहो है । यहवि
मोटे कपड़े, रुई, लो भौर भनाजको रफ्तानी होती है ।
यहां एक फैल्लो वर्माकू भौर एक मिडिल-स्कूल है ।
प्रति सोमवारको एक बड़ी हाट लगती है ।

दिवाकर (स० पु०) दिवा दिन करोतीति कृ०ट ।
(दिवाविमेति । पा १।२।११) १ सूर्य । २ पर्व हस्त,
भाक । ३ काक, कौवा । ४ पुणर्विशेष, एक तरहका
कल ।

दिवाकर—इस नामके अनेक संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम
मिलते हैं निम्नमेंसे निम्नलिखित उल्लेखयोग्य हैं—

१ दिनकरके पुत्र, दानदिनकरके रचयिता ।

२ हस्तरत्नाकरके टीकाकार । भक्तिनाथने ग्रियपाल-
वधकी टीकामें उक्त टीका चट्टाई की है ।

३ प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् । किसी किसी ग्रन्थमें
इन्का दूसरा नाम 'दिनकर' बतलाया है । ये ज्योतिर्विद्
के पुत्र कृष्णदेवधरके पोत भौर दिवाकरके प्रपोत थे ।
इन्होंने तत्त्वचिन्तामणि नामक गणितज्योतिष, जातक-
पद्धति, जातकपद्धतिप्रकाश, पद्मजातक, केशवपद्धतिकी
श्रीवृद्धमनोरमा नाम-टीका, मकरन्दहस्तावली, रथोदता
नामक वर्षगणितपद्धति, वर्षतन्त्र, ज्योतिषप्रकाश,
Vol. X. 114

गणिताद्यतसारणी, जातकपद्धति उदाहरण, रामविनोद-
प्रकाशपद्धति, दिवाकरो भौर १६२० ई०में गोपाराज-
मतखण्डन नामक ज्योतिष ग्रन्थ रचिये ।

४ एक प्रसिद्ध आर्त्त पंडित । इनके पिताका नाम
महादेवभट्ट भौर माताका नाम गङ्गा, पितामहका बाह-
ल्लव्य, प्रपितामहका महादेव भौर हृदप्रपितामहका
नाम नारायण था । इनके केवल एक पुत्र था जिनका
नाम था वैद्यनाथ ।

इन्होंने १६८३ ई०में धर्मशास्त्र सुधानिधि नामक एक
हस्त्युत्पत्तिग्रन्थ (चावाराके, तिथ्यर्क आदि इसीके
भन्तगंत है), प्रायश्चित्तसुक्तावली भौर प्रायश्चित्तसुक्ता-
वलीप्रकाश, मन्त्रमार्तच्छ, आद्यचन्द्रिका भौर १६८४
ई०में हस्तरत्नाकरादिको रचना की ।

५ महादेवभट्टके पुत्र भौरशामेश्वरभट्टके पोत । इनका
उपनाम 'काल' था । ये पूर्वोक्त दिवाकरको माता गङ्गाके
पितामह थे । इन्होंने दानचन्द्रिका भौर आर्त्तप्रायश्चित्त-
की रचना की । ६ पद्यावलीरुद्रत एक विख्यात कवि ।
दिवाकरदत्त—सूक्तिकर्णामृतद्वय एक संस्कृत कवि ।

दिवाकरवत्स—कल्याणमालास्तोत्र एवं विवेकज्ञान नामक
संस्कृत ग्रन्थके रचयिता । शेषोक्त ग्रन्थ अभिनवगुप्तको
ईश्वर-प्रत्यभिज्ञासूत्रनिर्णयिने उद्धृत हुआ है ।
दिवाकरसूत (स० पु०) दिवाकरस्य सुतः । सूर्य पुत्र ग्रामि,
यम, कर्ण, सुग्रीव । स्त्रियां टाप् । यमुना, ताप्ती ।

दिवाकोर्त्ति (स० पु०) दिवा दिवसे एव कोर्त्तिर्यस्य, रात्रौ
चौरकर्मनिर्येधात् । १ नावित, नाई । २ चाण्डाल ।
प्राचीन कालमें नाइयोंको केवल दिनके समय को मगर
आदिमें घूमनेका अधिकार था । नाई भौर चाण्डाल
आदिको स्वयं करनेसे स्नान आदि कर लेना चाहिये ।
दिवा भक्तोर्त्तिर्यस्य । ३ उलूक, चटलू । दिनमें इस-
का नाम लेनेसे भयदृश्य होता हो जाता है, ऐसा प्रवाद
है । इसीसे दिनमें इसका नाम नहीं लेना चाहिये ।

दिवाकीर्त्य (स० को०) दिवा दिवसे कीर्त्य कीर्त्तनीय ।
यद्यप्यस्य गवामयनयनमें विपुलसंक्रान्तिके दिन गो
साममेद, वृद्ध सामग्रान जो साल भरमें होनेवाले गवा-
मयनयनमें विपुल संक्रान्तिके दिन गवाया जाता है ।

दिवाचर (स० पु०) दिवा चरतीति चर०ट । १ पक्षी,
चिड़िया । २ चाण्डाल ।

दिक्षगीवाज (फा० पु०) यह जो हंसो या दिक्षगी करता हो, ममखरा, ममोलिया ।

दिक्षगीवादी (फा० स्त्रो०) दिक्षगी करनेका काम ।

दिक्षा (दि० पु०) किवाटने पक्षमें लकड़ोका एक विगेष चोखटा बना या लड़ दिया जाता है ।

दिक्षो—पञ्चावके अन्तर्गत एक भूभाग । यह अक्षा० २७° ३८' से ३१° १८' उ० और देशा० ७४° २८' से ७४° ४०' पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण १५३८५ वर्ग-मोल और लोकसंख्या प्रायः पांच लाख है । इस विभाग-में दिक्षो, गुरुगांव, कर्णाल, हिष्मर, रोहतक, अम्बाला और सिमला नामके ७ जिले लगते हैं ।

२ पञ्चावके साटके शासनधीन उक्त दिक्षी विभागका एक जिला । यह अक्षा० २८° १२' से २८° १४' उ० और देशा० ७५° ४८' से ७७° ३' पू०में, अवस्थित है । भूपरिमाण १२८० वर्गमोल है । राजा दिलु या बिलुके नाम पर इस जिलेका नाम पड़ा है । इसके उत्तरमें कर्णाल जिला, पश्चिममें रोहतक, दक्षिणमें गुरुगांव जिला तथा पूर्वमें यमुना नदी है । यमुनाके उत्तर-पश्चिम प्रदेशके अन्तर्गत मोरट और सुलन्दरहर जिला पड़ता है ।

दिक्षो जिलेकी एक और यमुना नदीका अववाहिकास्थित पञ्चममय उर्वरा प्रान्तर और दूसरी और राज-पूतानेकी पर्वतश्रेणीको उपग्रहण्य गैलमाला है । इस कारण जिलेकी भूमिको प्रकृति भी विचित्र है । इसका उत्तर-भाग शतद्रु नदीके दक्षिण तीरवर्ती है । निम्न-प्रान्तर प्रायः जलशून्य और अशुभर है, पर इसकी मध्य ही कर यमुना खाई गई है, इसीसे जहाँ तहाँ जल जमा हो कर कोई क्षति नहीं करता अथवा क्षमीने नमक निकल कर उद्भिदका भी उत्तना नुकसान नहीं करता है । ऐसे स्थानोंमें फसल भी अच्छी लगती है । इस अंशमें केवल यमुनाको तीरवर्ती भूमि स्वभावतः बहुत उर्वरा है । पश्चिमी यमुना नदी इस अंशके ५ कोस पश्चिममें जिस स्थान हो कर प्रवृत्ती हो, अथ भी वहाँ नदीका जंघा तट साफ साफ दिखाई पड़ता है । कानून-क्रमसे यमुना नदी इट. कर वर्त्तमान स्थान पर आ गई है और वहाँ एक यह विस्तीर्ण चर या भरना क्रमशः

छोटा हो कर दिक्षीसे एक मोल उत्तर में वातयैलही एक गाँवसे प्रतिष्ठत हो कर प्रवाहित होता है । यह प्रसारमय गैल प्रायः यमुनाके गर्भ तक विस्तृत है । परवली पहाड़की एक शाखा दिक्षी जिलेके दक्षिणकी ओर गुरुगांव होती हुई तोन मोल प्रगल मालभूमिमें परिणत हो गई है और दिक्षो नगरसे १० मोल दक्षिणमें दो भागोंमें विभक्त हुई है, जिनमेंसे एक भाग उत्तरकी ओर दिक्षोके पश्चिमसे आकर अन्तमें यमुनातीरस्थ प्रान्त-में विलीन हो गया है और दूसरा भाग दक्षिण-पश्चिमकी ओर घूम कर पुनः गुरुगांव जिलेमें प्रवेश करता है । यह मालभूमि किसी जगह भी समतल भूमिसे ५०० फुट अधिक ऊँची नहीं है, किन्तु उसमें कहीं भी जल नहीं देखा जाता है । थोड़ी जमीन ऐसी है कि समतल होने पर भी जलके अभावसे वहाँ कोई फसल नहीं लगती । उसमें केवल घास खादि उत्पन्न होती है । पशुचारणसे सिवा यह स्थान और किसी काममें नहीं आता है । वर्षाकालमें पहाड़का जल बहुत वेगसे नीचेकी ओर समतल प्रान्तरमें आ कर जमा हो जाता है और इसीसे आम पासकी जमीन उर्वरा हो जाती है । जिलेके दक्षिण-पूर्वमें नाजकगढ़ नामका एक विस्तीर्ण हिल्सा जनाम्य है । भाद्र तथा आश्विन मासमें यह जलाशय प्रायः ४३४४ वर्गमोल तक फैल जाता है । दिक्षी प्रदेश होनेके पहले ही यमुनाका अधिकांश जल पूर्व और पश्चिम खाई हो कर बह जाता है । इसी कारण यहाँ आ कर यमुना सूख जाती है और वर्षा कालके सिवा दूसरे सभी समयमें पंढर पार कर सकती है । फिर भी दिक्षोके नीचे झोखला शहरके निकट यमुनाका अवशिष्ट जल आगरा खाई हो कर बह जाता है । इन सब खाइयों हो कर बह जानेसे यमुना बिसकुल सूख जाती है, किन्तु बाँध तथा बालूकी रागिके नीचे हो कर बहुत जल निकल कर जमा हो जाता है । इसी कारण स्तित कुछ कुछ चलता रहता है ।

इस जिलेका इतिहास प्रधानतः दिक्षीनगरके इतिहास से ही संलग्न रहता है । सुतरां वह उसी स्थानमें सिखना उपशुक्त होगा । अति प्राचीन कालसे ही यह स्थान भारतवर्षीय महाजन पशुका एक राजधानी थी।

दिवापारी (मं० त्रि०) दिवा चरति चर-णिनि । दिवस-
महारी भूत, दिनमें चलनेवाला ।

दिवातर (मं० स्त्री०) प्रतिपद्येन दिवा प्रकाशः । तरप् ।
चलत्वा प्रकाशक दिवा, बहुत उज्ज्वला दिन ।

दिवानिगान् (मं० स्त्री०) दिवस चोर रात्रि, दिन रात ।

दिवानो (हिं० स्त्री०) १ घरमें होनेवाला एक प्रकार-
का पेड़ । इसको लकड़ो साल होती है और इस पर
भूरो तथा नारंगी रंगका धारिया पत्तो रहता है ।

धीवानी देगो ।

दिवान्य (मं० पु० स्त्री०) दिवा दिवसे अन्यः । १ पेशक,
उत्तम । २ दिवसान्य प्राणिमात्र, वह जिसे दिनमें न
सूझता हो, दिनौधोका रोग । (स्त्री०) ३ बलशुला पत्तो ।

(त्रि०) ४ जिसे दिनमें न सूझि ।

दिवान्यको (मं० स्त्री०) दिवान्य स्वार्थ-क गोरा० डीपू ।
कुपुन्दरो, कुपुन्दर ।

दिवाष्टट (मं० पु०) सूर्य, दिनकर ।

दिवाप्रदोष (मं० पु०) कुक्षित मनुष्य, गुराव चादमी ।

दिवाभिभारिका (मं० स्त्री०) वह नायिका जो दिनमें
अपने प्रेमीसे मिलनेके लिए शृङ्गार करके किसी निर्दोष
स्थानमें जाय ।

दिवाभोत (मं० पु० स्त्री०) दिवा दिवसे भोतः । १ पेशक,
उत्तम । (पु०) २ कुमुदाकर, भक्तिद कामन । ३ चोर,
चोर ।

दिवाभोति (मं० स्त्री०) दिवा दिवसे भोतिर्भव यच्च ।
१ पेशक, उत्तम । (त्रि०) २ दिवस भोतिपुत्र, जो दिनमें
बाहर निकलनेसे डरता हो ।

दिवाभवि (मं० पु०) दिवा दिवसस्य भविरविः । १ सूर्य ।
२ चर्क वृक्ष, पाक ।

दिवासञ्च (मं० स्त्री०) दिवा दिवसस्य मञ्चः । मञ्चाञ्च,
टोपकर ।

दिवायसान (मं० स्त्री०) दिनका शेष भाग, सन्ध्या,
शाम ।

दिवाले (हिं० वि०) देनेवाला ।

दिवाला (हिं० पु०) पूँजी वा धन्य न रह जानेके कारण
शेष परिशोधमें समर्थता, कर्ज न चुका सकना, टाट
उसटना । सब व्यापारीकी अपने व्यापारमें घाटा खाता

१ चयवा समता कष्ट बहुत बढ़ जाता है और वह
उस शृण्णके परिशोध फरलमें चयवो समर्थता जाहिर
करता है, तब उसका दिवाला होगा मर्न लिया जाता
है । पूर्ण समयमें ऐसो जानत हा जाने पर राबो व्यापारी
अपनी दूकानका टाट उलटा कर उस पर एक चोमुला
दोया जला देते हैं । ऐसे करनेसे लोग समझ जाते हैं,
कि अब इनके पास कुछ भी धन नहीं बचा और इनका
दिवाला हो गया । इसी दोया बानने या जलाने
से "दिवाला" शब्दको उत्पत्ति हुई है । मानकम

दिवालेके विषयमें कुछ कानून बन गये हैं । इस समय
कच्ची व्यापारी किसी निश्चित न्यायालयमें जा कर
दिवालेको दर्जाना देता है कि मुझि धाराका जितना
देना है और इस समय जितना धन या सम्पत्ति मेरे पास
बच गई है, वाद न्यायालयको तरफसे एक योग्य चादमी
नियुक्त हो कर उसको बचो हुई धारा सम्पत्ति नोनाम
कर देने हैं और उस रकममें उसका सम्पूर्ण लड़ना
मसूल करके हिसके अनुसार उसका धारा कर्ज चुका
देते हैं । इसमें कृपिको शृण्णके लिए जिस जानेको
भावश्यकता नहीं रह जाती । २ किसी पदार्थका
बिलकुल न रह जाना ।

दिवालिया (हिं० वि०) जिसने दिवाला निकाला हो ।

दिवाली (हिं० स्त्री०) १ धीवानी देगो । (पु०) २ गुराद
या सानमें सपेटनेका एक तस्मा, जो छे सौचनेके
काममें आता है, दयालो ।

दिवावसु (मं० पु०) दिवा वसुः किरणो यस्य । १ सूर्य ।
२ चर्क वृक्ष, पाक, मदार । दीव्यति दिव-किन्त्योः
धावसुः हविरस्य वा दिवाभावमति वसु-उत्तु । ३ दोष-
हविरस्य । ४ धूलोक्तवाचो इन्द्र ।

दिवायय (मं० पु०) दिवा दिवसे जेतो शी-पञ्च । १
दिवास्त्रापयुक्त, वह जो दिनमें मोता हो । २ दिनमें
अपकाशयुक्त, अन्यथा दिन ।

दिवासञ्चर (मं० त्रि०) दिवा दिवसे सञ्चरति सप्त-पर-ट ।

दिवसचारी प्राणिमेद, दिनमें चलनेवाला जानवर ।
इसका पर्याय-श्यामा, शोभे, शमग्र, बन्धु, मिथी, श्री-
कण्ठ, चक्रवाक, नाय, मण्डोरक, चन्द्ररोट, शुक, धांघ,
विविध कपोत, भारद्वाज, कुलान, कुङ्कु, चर, धारात,

समृद्ध राजधानी हो कर आ रहा है। वर्तमान दिल्ली-नगर जिस स्थान पर अवस्थित है, उसके चारों ओर प्रायः १०१२ मील के मध्य में सब राजधानी एक के बाद दूसरी पादि क्रमसे स्थापित हुई है। आज भी बहुतसे भग्नस्तूपारि तत्त स्थानों में देखे जाते और वे प्राचीन राजधानी का सोभाव्य तथा सन्निधि की घोषणा करते हैं। इसका प्रति प्राचीन नाम इन्द्रप्रस्थ है। पाण्डव लोग यहाँ आ कर रहे थे। कुरुपाण्डवकी लड़ाई के बाद यहाँ इन्द्रप्रस्थ नगरी भारतवर्ष के अद्वितीय राजचक्रवर्ती युधिष्ठिरकी राजधानी हुई। इन्द्रप्रस्थ देखो।

युधिष्ठिरके बाद उनके वंशके तीस पुरुषों का पोटि-योंने इन्द्रप्रस्थमें राज्य किया। पीछे पाण्डव-राजमन्त्रोंने निष्कासन अधिकार किया। विमर्षके वंशधरोंके ५०० वर्ष राज्य करनेके बाद पन्द्रहवें गौतमराज इन्द्रप्रस्थके सिंहासन पर बैठे। इस जिलेके साथ भग्नस्तु भाग्यवर्त यथाक्रमसे हिन्दू, पठान, मुगल और अन्तमें महाराष्ट्रोंके हाथ आया। १८०३ ई०में लार्ड क्लाइकी विजयके बाद दिल्ली अङ्ग्रेजोंके हाथ आई और सन्धिके द्वारा तात्कालिक मुगल राजधानी दिल्लीनगरके उत्तर-दक्षिण यमुनाके पश्चिम तीरस्थ विस्लीय भूखण्ड अङ्ग्रेजोंको दिया गया। अङ्ग्रेज गवर्नेरोंने सम्राट् शाह आलमकी महाराष्ट्रोंके हाथ से वचाया था, इस कारण उनके खर्च के लिये सम्राट् ने उन्हें वर्तमान दिल्ली और इसर जिलेका अधिकार प्रदान किया। अङ्ग्रेज वर्मचारोगण सम्राट् के नाम पर दिल्ली प्रदेशमें राज्य करने लगे। केवल बल्लभगढ़ पादि कई स्थानोंके राजा स्वायत्त भावसे अपना अपना राज्य-शासन करते थे। लेकिन हम तरह शासनकार्यमें बहुत ही विशिष्टता उपस्थित हुई। अन्तकी १८३२ ई०में एक आईनके द्वारा दिल्लीका रजिस्ट्रार और चीफ-कमिश्नरका पद ठग दिया गया तथा शासनका भार एक कमिश्नरके हाथ दे कर आगरा-हाइकोर्टके अधीनस्थ किया गया। इसके बादसे ही दिल्लीप्रदेश यद्यपि में इष्ट-इण्डिया-कम्पनीके अधिकारमें आ गया। तभीसे ही कर १८५० ई०के सिपाहीविद्रोहके समय तक यह प्रदेश युक्तप्रदेशके अन्तर्भूत रहा। १८५८ ई०में दिल्ली-जिन्ना पहले पहल संगठित हुआ। उस समय वर्तमान रोहतक जिलेके

कई भाग इसके अन्तर्गत थे। पीछे कर्णाल जिले के अन्तर्गत पानोपत तहसीलके अधिकार तथा बल्लभगढ़ राज्य क्रमशः इसके अन्तर्भूत किये गये। सिपाही-विद्रोहके समयमें समस्त जिन्ना विद्रोहियोंके हाथ आ गया था तथा उत्तरोत्तर अङ्ग्रेजोंके पुनराधिकार करने पर भी जब तक दिल्ली नगर मम्पूर्ण रूपसे अङ्ग्रेजोंके हाथ न आया, तब तक वे दक्षिणभागमें पुनराधिपत्य स्थापन कर न सके थे। १८५८ ई०में सिपाहीविद्रोहको दमन होने पर दिल्ली-जिन्ना अङ्ग्रेज गवर्नेरोंके नवोपार्जित पञ्जाब प्रदेशके छेदे लाट् के अधीन किया गया। बल्लभगढ़की राजा राजविद्रोहिताके अपराधमें दण्डित होने पर, उनका राज्य एक नूतन तहसीलके रूपमें दिल्ली जिलेका अन्तर्भूत हुआ और यमुनाके पूर्व तीरस्थ पूर्व परगना नामक भूभाग युक्त प्रदेशके अन्तर्गत किया गया। कुछ दिनों के बाद सिन्हा-सन्धुत दिल्ली की सम्राट् रंगूनी निर्वासित हुए जहाँ १८६२ ई०में उनका देहान्त हुआ। सम्राट्की स्थानान्तरित करनेके बादसे दिल्ली जिलेमें एक प्रकारकी गति विराजती है।

जिलेमें ४ शहर और ७१४ ग्राम लगते हैं। लोक-संख्या प्रायः सात लाख है जिनमेंसे हिन्दू ५१०५३२, मुसलमान १६०२८० और बौद्ध ७०२६ हैं। इनके सिवा यहाँ मिर्ख, पारो, ईमाई तथा अन्ध-धर्मावलम्बीके लोग वास करते हैं।

इस जिलेमें जितनी जानियाँ वास करती हैं उनमेंसे जाटगण ही प्रधान हैं तथा उनकी संख्या भी सबसे अधिक है। दिल्लीके उत्तरमें अधिकार भूमि इन्हीं लोगोंके अधिकारमें है। यिन्तु बहुत जगहके ब्राह्मण भी अधिकारी हैं। अग्र्यान्व स्थानोंके जाटोंको नाई' ये भी पंग्रियमी, हाथिकुल तथा नियमित मजदूरी पर राजस्व देते हैं। यमुना तीरवर्ती उर्वरा भूमिको अपेक्षा मध्य-भागकी ऊँची भूमिमें ही बहुतसे जाट वास करते हैं। दिल्लीके निकट ये प्रधानतः दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं, यथा-देशवाल या देशस्थ और पाचात्य, येोतल संप्रदाय पश्चिमसे आये हुए हैं। दोनों संप्रदायमें विशेष पार्थक्य नहीं है। इनमेंसे अधिकार ही ये संप्रदायके

शुभ्र, कपि, किरण, पूर्णकूट और चटक है। ये सब दिवाचर हैं।

दिवास्वप्न (सं० पु०) दिवा दिवसे स्वप्नः । दिवानिद्रा दिनको सोना। भावप्रकाशके मतानुसार दिनमें सोना नहीं चाहिये, सोनेसे शरीरमें कफकी वृद्धि होती है। किन्तु शोधकालमें यदि दिनको सोवे, तो कोई दोष नहीं। शोधकालके सिवा और ऋतुओंमें दिवानिद्रा निषिद्ध है। जिसका प्रति दिन दिवानिद्राका अभ्यास है, वे यदि दिवानिद्राका परित्याग करें, तो उनके वायु, पित्त और कफ ये तीनों दोष विगड़ जाते हैं। जो मनुष्य व्यायाम वा स्त्रीमस्तक द्वारा अथवा पथपर्यटनसे ज्ञात हो जाते हैं तथा जो भतिसार, शूल, श्वास, पिपासा, हिक्का, वायुरोग, मदास्थ्य और अजीर्ण इन सब रोगोंसे आक्रान्त हों अथवा लीचदेह, सोषकफ, शिथिल और घृष्ट हों एवं जो रातमें जगे हों, उनके लिये दिवानिद्रा हितकर है। जिन्हें दिवानिद्रा और रात्रिजागरणका अभ्यास हो, उन्हें दिवानिद्रा और रात्रिजागरणमें कोई दोष नहीं होता। (भावप्र०) निद्रा देखो।

दिवानिद्रा कामज व्यसनमें गिनी जाती है।

“हृगदासो दिवास्वप्नः शिवायः शिवो मयः।

श्रीदैर्घिकं प्रपद्या च कामजो दशरोषणः॥” (मनु)

दिवास्वाप (सं० पु०) दिवा दिवसे स्वापः ७-तत् । दिवानिद्रा, दिनमें सोना।

दिवास्वापा (सं० स्त्री०) वल, गुला पछो, बगना।

दिवि (सं० पु०) दोष्यतीति दिव्यु, क्रोडाया दिव-इन्-सच कित् । (१प्र०धात्व कित् । उ० ४।१।२८) चापपचो, मोक्षकपट।

दिविचय (सं० त्रि०) स्वर्गवासी।

दिविचित् (सं० त्रि०) दिवि चयति चि-क्षिप्-तुकागम, अलुक्-समासश्च । स्वर्गवासी, स्वर्गमें रहनेवाला।

दिविगत (सं० त्रि०) दिवि गतः अलुक्-समासः । स्वर्गगत, जो स्वर्गको गया हो।

दिविचर (सं० त्रि०) दिवि आकाशे चरतीति चर-ट । आकाशचारी, आकाशमें घूमनेवाला।

दिविचारी (सं० त्रि०) दिवि चरति चर-णिनि । आकाशचारी।

दिविज (सं० पु०) दिवि जायते जन-उ अलुक्, समासः।

१ यु लोकाज्जात, वह जो स्वर्गमें उत्पन्न हुआ हो। २

कुङ्कुमाशुक्चन्दन, केसरयुक्त अगारचंदन।

दिविजात (सं० त्रि०) दिवि जातः अलुक्-समासः । स्वर्गजात, जो स्वर्गमें पैदा हुआ हो।

दिविता (सं० स्त्री०) दीप बाहु० इतच् घपो० साधुः । दोमि।

दिविकत् (सं० त्रि०) दोमिमत् प्रयोदरादित्वात् साधुः । दोमियुक्त, प्रकाशमान।

दिविदिवि (हिं० पु०) धारवाङ्, कनाड़ा बोजापुर, खानदेय आदि नगरोंमें मिलनेवाला एक प्रकारका छोटा पेड़। यह दक्षिण अमेरिकासे भारतवर्षमें आया है। इसकी पत्तियाँ चमड़ा सिक्काने और रंगनेके काममें आती हैं।

दिवियज् (सं० पु०) दिवि यु लोके स्थितान् इन्द्रादीन् यजते यज-क्षिप्, अलुक्-समासः । यु लोकस्थित देवराजो, वह जो स्वर्गलोकमें रह कर देवताओंका यग करे।

दिवियोनि (सं० त्रि०) स्वर्गजन्मा, जो स्वर्गमें उत्पन्न हुआ हो।

दिविरथ (सं० पु०) १ पुष्यवंशी राजा भूमन्त्युके एक पुत्रका नाम। इनका उल्लेख महाभारतमें आया है। २ हरिवंशके अनुसार अङ्गदेशके अधिपति दिविसाहनके एक पुत्रका नाम।

दिवित्यिद् (सं० त्रि०) स्वर्गमें वास करनेवाला।

दिविपद् (सं० पु०) दिवि भौदतीति मद-क्षिप्, समभ्या अलुक्-पलच् । १ देवता। २ स्वर्गवासी।

दिवितृष्ण (सं० त्रि०) स्वर्गमें स्थापनीय, स्वर्गमें रहने योग्य।

दिविष्टि (सं० स्त्री०) याग, यज्ञ।

दिविष्ठ (सं० त्रि०) दिवि स्वर्गे तिष्ठति स्था-अ-अलुक्-समासः ततो पल्वं । १ स्वर्गस्थ, स्वर्गमें रहनेवाला। २ अन्तरोक्षस्थित। ईशानकोषके एक देशका नाम जिसका विवरण बृहत्संहितामें आया है।

दिविसद्—दिविपद देखो।

दिविस्पृश, (सं० त्रि०) दिवि स्पृशति कित्, न पल्वं । यु लोकस्थायी, जो स्वर्गलोकको स्पर्श करती है।

हिन्दूधर्मावलम्बी हैं और बहुतों ने सुषलमान, सिख आदिका मत अवलम्बन किया है। इनके बाद राज-पूतोंको मंज्या अधिक है। इन लोगों तथा ब्राह्मणोंमें पनेक सुसलमानधर्म में दीक्षित हुए हैं। इनके सिवा ब्राह्मण, बनियाँ, लोहार, चमार, धोबी, खेरो, गूजर, कसाई, माई आदि हिन्दू तथा वैष्णवी, शिख, सैयद, पठान, मुगल, फकीर आदि सुसलमान बान करते हैं। यहां तथा नामके एक दूसरी श्रेणीके ब्राह्मण हैं जो अपने-को गौड़देशीय बतलाते हैं। प्रवाद है, कि तथक कुलका मय्यागात्र करनेके लिये ये लोग यहां बुलाये गये थे। बहुतसे लोग अनुमान करते हैं, कि यह तथकवंश गायड़ बौद्धधर्मावलम्बी शकराजगण हो गये। बनियाँ लोग जिनमें सब जगह भरे हुए हैं और दुकान धंधवा व्यवसाय करके अपने-जोविका निर्वाह करते हैं। गूजर जाति स्वभावतः चालमी और गठ होते हैं। इन लोगोंमें से अधिकांश दक्षिणको और 'अ'ची मालभूमि और पहाड़ पर पशुचारण तथा क्षयिकार्योदि द्वारा जोविका चलाते हैं। ये अधिक काल तक एक जगह नहीं रहते हैं। कहते हैं, कि ये लोग मवेशी आदिको चुराया करते हैं। गोपालक अर्थात् पक्षीरगण अपने-को हिन्दू-समाजमें नितान्त निम्न स्थानके अधिकारी नहीं समझते हैं। सुसलमानोंमें केवल पठांगण ही विशुद्ध सुसलमान यंगोत्र हैं। इस जिलेमें जो चार शहर लगते हैं उनके नाम दिल्ली, सोनपत, फरीदाबाद और बल्लभगढ़ हैं।

जिलेका अधिकांश उच्च प्रभुत्वय अनुवर्ष है तथा कहीं कहीं लवणमय भी है, इस कारण सभी जमीन कृषि-कर्मका सम्पूर्ण अनुपयोगी है। अवशिष्ट जमीन जलके अभावसे परती रहती है। गर्ममें एते खाई काट कर पनेक जगह जल संचयनेकी सुविधा तथा क्षयिकार्यके उत्पत्तिसाधनको अच्छी व्यवस्था कर दी है। उत्तरी भागमें यमुनाकी पश्चिम तीरवर्ती खाई रहनेके कारण अच्छी उपज होती है। कपास, ईख, धान, राजरा, ज्वार, सुन्दरी, गेहूं, जौ, चना आदि प्रधान उत्पन्नद्रव्य हैं। तम्बाकू भी कम नहीं उपजता है। नील और सरसों भी कुछ कुछ उपजाई जाती है। यमुनाके पश्चिमी किनारे विस्तृत पत्तनय खादरमें जल संचयनेका अभाव नहीं

होने पर भी वर्षा खाईके किनारेके जैसा अभाव उत्पन्न नहीं होते हैं।

इस विषयमें कृत्रिम उपायमें निश्चितभूमि यमुना तीरवर्ती भूमिको अर्पणा उत्कट है। खाईके किनारे जो मज्जनाज उपजते हैं, वे सब खादरमें भी उपजते हैं। छोटी गहरी जमीन खोदनेमें हो सुसाद उत्पन्न होता है। दिल्लीके दक्षिणभागको प्रकृति स्वभावतः अनुवर्ष और वर्षातमय है। यद्यपि बागरा खाई इस स्थान को बार काटी गई है, तो भी खाई नोचो रहनेके कारण उसके जलमें ऊपरकी जमीन संचयनेका उत्पन्न नहीं है। नाजफगढ़-भोजन वर्षाकालमें भर जाता है और उसका जल एक खाई ही कर यमुनामें ही चला जाता है। भोजनके कुछ सुख जानि पर जलमें डुबी जमीन बाबाद को जाती है। जो कुछ हो, इस जिलेमें बहुत कम होती है, इसीसे खाई आदिके रहने पर भी क्षयिकार्यकी अच्छी उत्पत्ति नहीं होती है।

दिल्ली बहुत काल तक युद्धप्रदेशके अन्तर्गत था अतएव इस जिलेको जोत जमीन आदिका अभाव बहुत कुछ युद्धप्रदेशके जैसा है। भायाचारा नाम प्रकारकी जोरा खूब प्रचलित है। अधिकांश प्रजावृद्धों जमीन नहीं है। जमीनके उत्पन्न प्रत्येक प्रकार मालगुजारीका निर्बुध भिन्न भिन्न है।

वाणिज्यादि प्रधानतः दिल्ली नगरमें ही अधिक उत्पन्न करता है। इसके सिवा सोनपत, फरीदाबाद और बल्लभगढ़में स्थानीय कय वित्तयके लिये बाट है। जिलेमें शिखादि भी दिल्लीनगरमें ही सीमावृद्ध हैं। नगरवृद्धियों तथा जरोका काम सर्वत्र विख्यात है और यहां का काचमण्डित विक्रीनी महीका वरतन पैसावर को कर भारतवर्षके अन्धान्य स्थानोंके वरतनकी अपेक्षा सबसे बढ़िया होता है। दिल्लीसे कुछ दूर यमुना नदीके पार कर कालका तक रेलवे लाइन चली गई है। यहां वाणिज्यकी अच्छी सुविधा है। जो कुछ हो, उत्पन्न लिये सामान्य अवसुविधा होने पर भी नदी, सुन्दर राजपथ और रैलपथ आदिके द्वारा दिल्ली प्रधान वाणिज्य स्थानसे अलग होने पर भी इसकी उत्तरी उत्पत्ति नहीं होती है। गाजियाबाद जंक्शनसे ले कर यमुनाके उत्पन्न

दिवी (सं० स्त्री०) दिव यादृ० ई । उपजिह्विका कीट, एक प्रकारका कीड़ा ।

दिवेदिवी (पद्म) दिव यादृमकात् द्वित्व । दिवो-दिव ।

दिव्य (सं० पु०) दिवाय ।

दिवीकम्. (सं० पु०) स्त्री; स्वर्गः पाकागो वा भोको यस्य । १ देवता । २ चातक पक्षी, चकवा । (त्रि०) ३ पाकागवामो ।

दिवीजा (सं० त्रि०) दिवो जायते जन-उ, बापु० असुक्त ममामः । जो स्वर्गलोकमें उत्पन्न हुआ हो ।

दिवीदाम (सं० पु०) दिवः स्वर्गात् दासो दानं यस्यै । १ वधव्रतके एक पुत्रका नाम । ब्रह्मर्षि इन्द्रसेनाके वधव्रत नामक एक पराक्रमशाली पुत्र हुए । इन्हीं वधव्रतसे नैनकाके गर्भसे दो यमज सन्तान उत्पन्न हुईं जिनमेंसे एक पुत्र और दूसरी कन्या थी । पुत्रका नाम राजर्षि दिवोदाम और कन्याका नाम यमस्विनी पड़ गया रहा गया । दिवोदामके महर्षि मित्रशु नामक एक पुत्र थे । (हरिवंश ३२ अ०) २ मनुवंशीय रिपुञ्जय नामक एक राजा । इन्हीं कामीमें कठोर तपस्या की । ब्रह्मानि तपस्यामें मन्तुष्ट हो कर धर दिया, “रिपुञ्जय ! तुम इस धृष्टीका पालन करो, नागराज अपने पनङ्गमोहिनो नामकी कन्या प्रदान करते हैं, यह तो तुम्हारी स्त्री होगी । देवता लोग स्वर्गसे तुम्हें पुष्प और रत्न देंगे, इसी कारण तुम्हारा नाम दिवोदाम पड़ेगा । मेरे वरने तुम अत्यन्त वन्यामाली होगे ।” लोकपितामह ब्रह्मा इस तरहका वर देकर स्वस्थानकी चने गवे और दिवोदाम भी कामीमें रह कर अच्छी तरह प्रजापालन करने लगे बासी देखो ।

दिवोदाम चन्द्र वंशीय भोमरथके पुत्र थे । इनके पुत्रका नाम सुदाम और प्रतर्दन था । ये इन्द्रके सहायक थे । इन्द्रने मन्थर पशुरको १०० पुरियोंमेंसे ८८ पुरियाँ भेट करके बाकी एक पुरी इन्हींको दोयी । ये कामोके राजा थे । महाभारतके मतसे इनके पिताका नाम सुदेव था । पिताके मरने पर ये ही राजा बन बैठे । इनके पितामह, धीतृहृष्यके पुत्रोंने इन्हे युद्धमें परास्त किया । पीछे इन्हीं सरहाज सुनिका आश्रय लिया ।

सुनिने इनके लिए एक यज्ञ किया जिसके प्रभावसे इनके प्रतर्दन नामक एक और पुत्र पैदा हुआ जिसने धीतृहृष्यके पुत्रोंको युद्धमें मार डाला । महादेवने इन्हींके कामो मो यो । (भारव अष्टाध्याय ३० अ०) ३ दिशोटासप्रकाय नामक धर्मशास्त्रके प्रणेता । निर्वाणमित्र और ग्राहमयुक्तमें यह ग्रन्थ उद्धृत हुआ है । ४ चिकित्सादर्पणकार । ब्रह्मर्षि वर्णपुराण और सुश्रुतमें इस ग्रन्थका उल्लेख है ।

दिवोदुह (सं० त्रि०) दिवोपुत्र, स्वर्गमें दूधका गिरना ।

दिवोहव (सं० त्रि०) दिवे स्वर्गे उडवति उद-भू-पण् । १ स्वर्गजात, जो स्वर्गमें उत्पन्न हुआ हो । (स्त्री०) दिवि यने उडवो यस्याः । २ एना, इनायवो ।

दिवोदृष (सं० त्रि०) चाकाममें दोशिमोल, जो चाकाममें चमकता हो ।

दिवोल्हा (सं० स्त्री०) दिया जाता उल्हा । यह उल्हा या चमकीला पिण्ड जो दिनके समय चाकाममें गिरता हो ।

दिवीकम्. (सं० पु०) दिवः स्वर्गं पाकागो वा भोकोऽवस्थानं यस्य । १ देवता । २ चातकपक्षी । (त्रि०) ३ स्वर्गवासी, स्वर्गमें रहनेवाला ।

दिवीकस (सं० पु०) भोक्स्, शब्दो बदन्तोऽप्यस्ति दिवः भोक्तोऽप्य । देवता ।

दिव्य (सं० त्रि०) दिवि मवः यत् । १ स्वर्गभव, स्वर्गमें मय्यश्च रहनेवाला । २ चाकामभव, चाकाममें मव्यश्च रहनेवाला । ३ प्रकाशमान, चमकीला । ४ अत्यन्त सुन्दर, बहुत बढ़िया । (पु०) ५ यम । ६ गुणगुण । ७ तान्त्रिक आचार विशेष, तान्त्रिकीका आचार जिसे दिव्य-भाव कहते हैं । सब तान्त्रिककार्य तोन भायोंके होते हैं, दिव्य, पशु और वीरभाव । सत्य और सैताके प्रचमार्थ तक दिव्य है ; वीरभावमें तान्त्रिककार्य करनेकी विधि निर्दिष्ट है । पञ्चमकार साधन, अग्निमानसाधन और चित्तासाधन दिव्य तथा वीरमायासुमार होते हैं । ये सब आचारय पञ्चमायमें नहीं करना चाहिये । तन्त्र देखो । ८ सत्पातमद, चाकाममें होनेवाला एक प्रकारका उत्पात । ९ नायकमद, वह नायक जो स्वर्गाय या परोलोक हो । यह नायक दिव्य और अदिव्यसे भेदमें कई प्रकारका है । इनमेंसे इन्द्रादि दिव्यनायक, इन्द्राकी पादि दिव्या

लोहके पुल पर होती हुई दिक्षी शहर तक दृष्ट-
दृष्टिदा-कम्पनीके रेलपथकी एक शाखा बाँट है। यह
शाखा पञ्जाब रेलपथके साथ मिली हुई है। राजपूताना
स्टेट-रेलवे दक्षिणभागमें कुछ दूर तक जिलेके मध्य
होती हुई गुर्गावकी ओर गई है। वर्षाकालमें बड़ी
बड़ी नालें यमुनामें पाती जाती हैं। दिक्षीसे साहोर,
भागरा, जयपुर और हिमाल तक प्रभरमय जलछट राज-
पथ गये हैं। इनके निवा व्यवसायिकों के जाने आनेके लिये
बहुतसी सड़कें प्रत्येक शहर और प्रधान प्रधान छाट
तक चली गई हैं। भांगपत, खाना, मण्डियारपुर और
मुन्दपुरमें नावके पुल हैं।

शासन और राजस्व विभागमें यहां १ डेपुटिकमिश्नर, १
सहायरी मजिस्ट्रेट और २ अतिरिक्त सहायरी मजि-
स्ट्रेटकमिश्नर, १ स्माल जज, २ मुख्य और १ तहसील-
दार हैं। इनके निवा शान्तिरक्षा, स्वास्थ्य तथा राजस्व
आदि वसूल करनेके लिये आवश्यकतीय दूसरे दूसरे कर्म-
चारी हैं। यह जिला ३ तहसीलों तथा शान्तिरक्षाकी
सुविधाके लिये ११ थानाधीन विभक्त है। इस जिलेमें
विद्याको खूब उत्पत्ति है। यहां २ पार्टिकुलर, १४
सेकेंडरी, ११० प्राइमरी, १ इंजिनिंग, १११ एलिमेण्टरी
स्कूल तथा ७०० बालिका-विद्यालय हैं। इस विभागमें
प्रतिवर्ष लगभग दो लाख रुपये व्यय होते हैं। इनके
निवा अफिरन अखतार और ८ चिकित्सालय हैं। १८०६
ई०के दिनस्मर महीनेमें विकटोरिया मेमोरियल जनाना
अखतार एक लाख रुपये खर्च करके बनाया गया है।

ग्रथान्य जिला मेंके साथ दिक्षीके जलवायुका विशेष
मेल नहीं है। ज्यैष्ठ मासके दारुण शोषके समयमें
क्षायामें वृत्तापका परिमाण फा० ११६ तक हुआ करता
है और पौषमासमें मिश्रण व्या फा० ४६ ४ तक रहती
है। वार्षिक वृष्टिपात २०से ३० इंच है। ज्वर और उद-
रामय पीड़ा सचराचर हुआ करती है। कभी कभी
वसन्तारोगसे बहुत मनुष्योंका मृत्यु होती है।

३ दिक्षी जिलेकी सदर तहसील। यह अक्षा०
२८°३०' से २८°५१' उ० और देशा० ७६°५१' से ७७°
१०' पू० यमुनानदीके पश्चिममें अवस्थित है। भूपरिमाण
४२८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २०८५४७ है।
दिक्षी शहर इसी तहसीलके अन्तर्गत है।

४ उक्त दिक्षी विभागके अन्तर्गत दिक्षी जिलेका
एक प्रधान नगर तथा भारतवर्षकी वर्तमान राज-
धानी। यह अक्षा० २८° ३८' उ० और देशा० ७७°
१५' पू० यमुनानदीके बायें किनारे अवस्थित है।
यह शहर कलकत्तेसे ८५६ मील, बम्बईसे ८८२ मील
और कांचीसे ८०० मील दूर है। भूपरिमाण ५५०
वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २३२८१० है, जिनमेंसे
हिन्दू और मुसलमानकी संख्या ही सबसे अधिक है।
शहरका दूसरा नाम शाहजहानबाद है। इसकी उत्तर,
पश्चिम और दक्षिण-दिशासन्नाट, शाहजहानको बनाई
हुई बहुत ऊँची पत्थरकी दीवारसे घिरा हुआ है तथा
पूर्वकी ओर पुष्पतीया यमुनानदी प्रवाहित है। उक्त
प्राचीरका परिमाण ३१ मील है। वर्तमान अन्तःसर्वो
गतान्तीके प्रारम्भमें अहमदशाही खाई तथा प्राचीरसे नगर
और भी दुर्गम हो गया है। इसके दम सिंहद्वार हैं
जिनमेंसे उत्तरमें काश्मीर और मोरोहार, पूर्वमें लाहल
और लाहौरद्वार तथा दक्षिणमें अजमेर और दिक्षी-द्वार
प्रधान हैं। मुगलसन्नाटका राजप्रासाद नगरके पूर्वमें
यमुनानदीके किनारे अवस्थित है और अभी यह दुर्गके
रूपमें व्यवहृत होता है। इसके तीन और लोहितवर्ण
रेतोमें पत्थरके बनाये हुए ऊँचे प्राचीर हैं एवं पश्चिम
तथा दक्षिणमें एक सिंहद्वार है। १८५७ ई०में सिपाही-
विद्रोहके बाद प्रासादका कुछ भाग तोड़ा फोड़ कर गोरा
सेनाधीके रहनेके लिये मकान बनाये गये हैं। उक्त दुर्गके
दक्षिण दरियागञ्ज नामक स्थानमें दियो सिपाही सेनाधी-
के लिये एक सेनानिवास है। यमुनाके दूसरे किनारे
मोहहवीं गतान्तीमें सलोमयाहका बनाया हुआ सलोम-
गञ्ज नामकी एक दुर्ग है जो अभी भग्नदमामें पड़ा
हुआ है। सलोमगढ़के एक कोने हो कर दृष्ट-दृष्टिदा-
रेलवे-कम्पनीके रेलपथ एक सुरम्ह लोहके पुलसे यमुना
पार कर दिक्षी नगरके अन्तर्गत स्थित होनेकी जाती है, बाद
उक्त रेलपथ राजपूताना-स्टेट-रेलवे नामक नगरके उत्तर-
पश्चिम कोनेमें प्राचीरको छेद कर बाहर निकल गया है।
नगरके उत्तर-पूर्व कोनेमें कोषामार और अग्रान्य सर-
कारों आफिस तथा दरियागञ्जका सेनानिवास है। दुर्गके
पश्चिमकी ओर कम्पनीका बगोचा है। सेनानिवास, दुर्ग,

नायिका; माधव आदि अदिव्य नायक, मोक्षतो; आदि अदिव्या नायिका है। (रघुवंजरी) १० लवङ्ग, लौग। (को०) ११ हरिचन्दन। १२ गङ्गात्रयादि स्वर्णपूर्वक शपथभेद। गङ्गाजन हूँ कर की भूत बोलता है, वह जब तक ब्रह्माकी स्मृति भोप नहीं होगी, तब तक नरक में काम करता है। गङ्गाजल स्वर्ण कर शपथ नहीं खाना चाहिये। यदि कोई गङ्गाजल स्वर्ण करा कर शपथ खाने लगे, तो दोनों ही नरकगामी होते हैं।

गङ्गादेक, ताम्र, गोमय और गोरजस्वर्ण कर यदि कोई मृत्यु वा मृत्यु शपथ करे, तो करने और कराने वाले दोनों ही नरकभोगी होते हैं। (गायत्रीतन्त्र ५१०) १३ व्यवहारभेद, व्याख्यानमें प्राचोन कालको एक प्रकारकी परीक्षा जिनमें किसी मनुष्यका अपराधी या निरापराधी होना सिद्ध होता था। जब बाढ़ो और प्रतिवादीका नौकिक तथा लेख प्रमाण आदि नहीं रहते थे, तब तुला आदि के द्वारा विधानानुसार परीक्षा की जाती थी। वृहस्पतिके मतानुसार ये परीक्षाये नौ प्रकार की हैं,—

घट, अग्नि, उदक, विष, कोप, तण्डुल, तन्ममापक, फल और धर्मज। इनमें तुला या घट, अग्नि, जल, विष और कोप ये पांच परीक्षाएँ कठिन अपराधोंके लिये। तण्डुल और कोपके लिये, तन्ममापक बड़े भारो और कोपके लिये और फल तथा धर्मज साधारण अपराधोंके लिये हैं। यह दिव्य ब्राह्मण आदि वर्णभेदके भिन्न भिन्न प्रकारका है। ब्राह्मणकी परीक्षा घटविधि या तुलासे, क्षत्रियकी अग्निसे, वैश्यकी जलसे और शूद्रकी विषसे परीक्षा लेनी चाहिये।

बालक, वृद्ध, पातुर और स्त्री इन लोगोंको परीक्षा तुलाविधिमें ही लेनी चाहिये। विष्णुसंहितामें लिखा है, कि स्त्रियोंकी विषपरीक्षा, इन्द्रभरोगी और प्रजासकाश रोगीकी जलपरीक्षा, कौटिल्यकी अग्निपरीक्षा और शरावियों, कपटों, लुपारियों, घूर्तों तथा नास्तिकोंको कोपपरीक्षा कदापि न लेनी चाहिये।

धर्मज और घटधारण परीक्षा सब ऋतुओंमें ही सकती है। वर्षा, हेमन्त और शिशिरकालमें अग्नि, कोप, धर्मज अलकी, और शीतकालमें विषको परीक्षा करनेका

नियम है। शीतकालमें जल, शोधकालमें अग्नि, वर्षाकालमें विष और प्रभातके समय तुलाको परीक्षा नहीं लेनी चाहिये। अग्नि, घट और कोपपरीक्षा सबरे, जलपरीक्षा दोपहरकी और विषपरीक्षा रातको लेनी चाहिये। वृहस्पतिके समय सिंहास या मकरस्थ हो भयवा शृगु पक्ष हो उन समय कोई परीक्षा नहीं करने चाहिये। मन्मथामें और अष्टमो तथा चतुर्दशो की भी परीक्षा नहीं लेनी चाहिये। दिव्य या परीक्षाके दिनसे एक दिन पहले परीक्षा देनी और लेनेवाले दोनोंका उपवास करनेका नियम है। कुछ विशिष्ट नियमोंके अनुसार राजसभामें एकत्रित मनुष्योंके सामने परीक्षा लेनी चाहिये। क्रिमोका मत है, कि इससे बलावा 'तुल्यो' नामका एक और प्रकारका दिव्य मोक्ष है, पर इसकी विषयमें कोई विशेष बात नहीं मिलती।

तुलापरीक्षामें अभियुक्त एक बड़े तराजू पर बैठता और दो बार पदल बदल कर तोला जाता था। यदि वह दूसरी बारको तोलमें बढ़ जाता, तो निरापराध और बराबर उतर जाता, या घट जाता ता दोपो समझा जाता था। अग्निपरीक्षामें तथ लोहेको चक्रलोमें ली कर सात मण्डलोंके भीतर धीरे धीरे चलना पड़ता था। बिना हाथ जले यदि वह काम हो जाता, तो चौर निर्दोष समझा जाता था। जलपरीक्षामें अभियुक्त जलमें गाता लगाता था। गोता खाने समय तीन बाण छोड़े जाते थे। जब अभियुक्त जलमें डूबता, ठोक उस समय तीसरा बाण चलाया जाता था। जिस वक्त बाण छूटता था, उसी वक्त एक आदमी बहुत तेजसे अहाँ बाण गिरता उसी स्थान पर पहुँच जाता था और एक दूसरा आदमी उस बाणको लेकर उस स्थान पर बहुत धैर्यसे दोड़ कर आता था अहाँसे बाण छूटा था। इतने समय तक यदि अभियुक्त जलमें ही रहता तो वह निर्दोष समझा जाता था। विषपरीक्षामें अभियुक्तको विष अधिक खिलाया जाता था। विष पच जाने पर अभियुक्त निर्दोष ठहराया जाता था। कोपपरीक्षामें अभियुक्तको किसी देवताके स्थानका नोन भोजन जल पोनेके लिये दिया जाता था। एक पक्की अभ्यन्तर उल्लेखिताके क्रोधसे यदि अभियुक्त किसी और दुःखमें न पड़ता, तो वह सच्चा माना जाता था।

रेलपथ और बगोचा नगरके प्रायः पांच भागकी चोरी हुए हैं। इस भागमें लोकरसंख्या कम है, किन्तु दूसरे भागमें बहुत अधिक है।

दिल्लीका स्थापत्य शिल्पका गौरव जगद्विख्यात है। इस जगह सम्पूर्ण विवरण देना असंभव है। यथार्थमें दिल्लीको बड़ी बड़ी इस्लामिकाओंका निर्माणकौशल बहुत प्रतीयजनक है, जो यथार्थमें प्रकाश नहीं किया जा सकता। मि० फार्गुसनने अपने भारतीय और प्राचीन-रूप-विद्याके इतिहास (History of India and Eastern Architecture) में इन प्रासादोंका खूब सुन्दर वर्णन किया है। शाहजहान्का राजप्रासाद आगराके राजप्रासादसे विद्वत्चिन्त तथा आश्चर्यमें कम होने पर भी इसकी गठनप्रणाली समभावोपय है और भारतीय सर्वप्रधान स्थापतिप्रिय सम्मोहने बनाई गई है। इस प्रासादकी लम्बाई उत्तर-दक्षिणमें ३२०० फुट और चौड़ाई पूर्व पश्चिममें ५१०० फुट है। इसके चारों ओर लाल पत्थारके बनाये हुए ऊँचे प्राचीर हैं और कहीं कहीं गुम्बज भी दिये गये हैं। प्रवेशद्वार बहुत सुन्दर है। मि० फार्गुसनका कहना है, कि यह प्रवेशद्वार संसारके यावतीय प्रासादोंमें प्रवेशद्वारसे कहीं बड़ा पड़ा है। यह प्रासाद बहुतसे स्थान, फुहार आदिने अलङ्कृत है तथा नाय्यालाना, मञ्जीतगाला आदि अनेक अंगोंमें विभक्त है। दूसरे दूसरे मकानोंकी बात छोड़ देने पर भी दीवानोखाम अर्थात् सम्मोहका मन्त्रणागार शाहजहान्की बनाई हुई अत्यन्त ममस्त अष्टालिकाओंकी अपेक्षा सुन्दर नहीं होने पर कारुकायमें समीपे बढ़ कर है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। यमुना नदीके ठीक ऊपरमें एक घर अवस्थित है जिसके भीतरी भागका निर्माणकौशल और फनपुष्पादिके चित्र आदिका कल्पनाचातुर्य बहुत प्रशंसनीय है। दीवानोखामकी छतके चारों तरफ लिखा हुआ है, 'शुभीमें यदि खर्ग है तो यही एक है' वास्तविक-में इस तरहका अनुपम सौन्दर्यमय कस श्रुत्योक्त यावतीय राजप्रासादोंमें कहीं नहीं है, यदि ऐसा कहे, तो कोई शक्य नहीं होगी।

प्रासादके मध्यस्थसे समस्त दक्षिण भागमें १००० फुट परिमित स्थानमें सम्मोहका अन्तःपुर था। जिसका परिसर एरोपके बड़े बड़े राजप्रासादोंसे भी हगुण

था। प्रासादके अर्धशाय कक्षादि तटस्थ नहम हो गये हैं, अभी जा कुछ बच रहे हैं उनके नाम इस प्रकार हैं, प्रवेशकक्षा, नौबतखाना, दीवानो-खाम, दीवानोखाम और रद्दमहल। इसके सिवा और भी दो घर विद्यमान हैं। कहना नहीं पड़ेगा कि, यही सब मकान प्रासादोंमें सर्वोत्कृष्ट हैं, किन्तु तिस पर भी इनके सामनेका प्रासाद और एक दूसरेकी मिलानियासे पय आदिका कोप जाननेसे इनकी भी बहुत कुछ जाती रहे। अंगरेजों के न्यूवासको इस्लाम्यतीमें जो विचित्र काश्चगुणिक क्रिये हुए थे, वे सब गहरे हैं।

शहरके जिस अंगमें देगोय लोगोंका वास है, वहाँ की अष्टालिकादि ईंटकी हैं लेकिन बहुत सुन्दर और सुदृढ़ दोष पड़ते हैं। बहुत से गतिप्रां तथा छोटे छोटे रास्ते टेढ़े हैं, किन्तु खराब होने पर भी भारतवर्ष के दूसरे दूसरे शहरोंमें दिल्ली जैसा उत्कृष्ट बड़ा रास्ता नहीं है। इसके प्रधान प्रधान दग हजूर राजपथ अर्थात् तरफ पत्थरसे बंधे हुए हैं। जल बाहर निकलनेके निगमदाकी व्यवस्था और रातमें रोशनी आदिका व्यवस्था बहुत अच्छा है। चान्दनोचक वा रजतराय नामक पय सबसे प्रसिद्ध है, जो ७४ फुट लंबा है और दुर्गसे ले कर लाहोरके तोरण-द्वार तक प्रायः १ मोल लंबा है। इसकी मध्यस्थित जलप्रणालीके दोनों तरफ नीम और पोपलके वृक्ष लगे हैं। पहलें इसी प्रणाली को कर राजप्रासादमें जल लाया जाता था अभी इस ऊपर ऊँचे सड़क बनाई गई है। चान्दनोचकके दक्षिण एक खण्ड ऊँचे भूमिके ऊपर विस्तृत लुम मस्जिद है, सम्मोह शाहजहान्ने अपने राजत्वके चार वर्ष बाद इसका निर्माण प्रारम्भ किया और दस वर्षों में समाप्त किया था। इसके सामनेमें ४५० वर्ग फुट प्रमाण अक्षरभूमि समस्त पत्थरसे बंधी हुई है और चारों ओर दीवार है। इस स्थानसे उत्तरकी ओर दृष्टिपात करनेसे समस्त दिल्ली नगर देखनेमें आता है। मस्जिदकी लंबाई २६१ फुट है। इसके तीन गुम्बज मक़द मस्जिद पत्थरों बने हैं। नीचेसे ले कर मस्जिद तक पत्थरकी सीढ़ी गई है। छतके ऊपर सामने भागमें दो कोठोंमें दो लंबे विश्वर हैं। मस्जिदका अर्धतर भाग मक़द मस्जिद

इती प्रकारके और भी दिष्य है। १४ तावदेताः (सो०)
१५ पाममकी, पामना। १६ वन्द्याकटिकी, वाम
कटोडा। १७ मतामरी, मतामर। १८ मशमिदा। १९
माम्नी। २० मतेद्वी, मतेद्वी। २१ मतेद्वी, मतेद्वी। २२ पुता, मुता। २३ मन्वतो। (पु०) २४ मन्मजोरिक,
मन्मजोरा। (तो०) २५ दैयदिन। २६ दैयदिनका
परिमाण। २७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। २८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। २९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३१ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३२ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३३ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३४ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३५ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३६ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ३९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४१ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४२ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४३ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४४ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४५ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४६ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ४९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५१ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५२ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५३ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५४ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५५ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५६ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ५९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६१ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६२ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६३ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६४ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६५ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६६ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ६९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७१ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७२ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७३ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७४ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७५ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७६ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ७९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८१ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८२ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८३ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८४ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८५ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८६ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ८९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९१ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९२ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९३ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९४ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९५ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९६ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९७ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९८ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। ९९ मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो। १०० मन्मजोरिक, वह जो स्वर्गमें लय
लया हो।

दिष्यङ् (म० पु०) १ सर्वभेद, एक प्रकारका भाव। २
जन्तुभेद, एक प्रकारका जन्तु।

दिष्यङ्कट (म० स्त्री०) प्रतीचीष्ट पुरभेद, प्राचीन
कालका एक देश। इसका वर्तमान महाराष्ट्रमें है। यह
पश्चिम दिशामें अवस्थित था।

दिष्यङ्गवच (म० पु०) १ देवताओंका दिया हुआ
वाक्य। २ स्तोत्रविशेष, एक प्रकारका स्तोत्र जिसका
पाठ करनेसे भगवत्प्राप्ति हो।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) दिवां पुण्यमदत्वात् पत्युत्कटं
कृणु। कामरूपमें लोभकर्मके पूर्व भागकी एक
पुष्करिणीका नाम। कामरूपमें दुर्जय पर्वतके दक्षिण-
पूर्व-कोणमें वाराणसी नामका एक नगर है। इसीके
दक्षिणमें लोभकर्म का अवस्थित है। पहाड़ पर सात पत्थर
के ऊपर स्वर्ण देवी विराजती है और इसी पहाड़को
उपत्यकाभूमिमें दिवाङ्गु है जिसमें खान कर देवीको
पूजा करनेको पड़ती है। जो मोभाग्यान्नी मनुष्य दिवा
ङ्गुमें खान कर पत्थरपुष्करिणी देवीका पूजन करते है
उनका पुनर्जन्म नहीं होता है। (काव्यप्र० ८१ प०)

दिष्यङ्गि (म० स्त्री०) दिष्यङ्क दाग परोक्षा लेनेकी
क्रिया।

दिष्यङ्ग (म० पु०) दिष्य गन्धः यस्य। १ गन्धक-
दिष्यः गन्धः। २ मनोहर गन्ध, जिसकी गन्ध अच्छी हो।
(स्त्री०) ३ नरक, स्त्री०।

दिष्यङ्गा (म० स्त्री०) दिष्यः गन्धो यस्यः। १ गन्धक-
वर्ण रसायनी। २ महापदार्थ, बड़ी संख्या का।

दिष्यङ्गाय (म० पु०) दिष्यः स्त्रीयः गायनः। स्त्रीयगायक,
गायिका।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) दिष्यं चमोक्षिकं पत्युत्कटं।
१ ज्ञानवस्तु। गीतामें ब्रह्मज्ञाने पत्युत्कटे कदा है, 'हे
पत्युत्कट'। तुम इस धर्मवस्तुद्वारा भगवत् ऐश्वर्य
रूपको नहीं देख सकते हो। हम तुम्हें दिष्यङ्गु
देते हैं, जिसमें तुम भगवत् ऐश्वर्यरूप को प्रभावको
पछो तरफ देख सकते हो। दिष्यं स्त्रीयं मनोक्षं वा
पत्युः। २ स्त्रीयवस्तु। ३ सुन्दर मोहन, पछो प्राण।
४ सपत्न्य, चम्पा। ५ मर्कट, बन्दर। ६ सुगन्ध-
मैत्र, एक प्रकारका गन्धद्रव्य। (स्त्री०) दिष्यं चाकाश-
भूतं पत्युयो यस्य। ७ चम्पा, जिनसे कुछ भी दिखाई
न दे।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) हरिचन्दन।

दिष्यङ्गा (म० स्त्री०) १ देवभाव। २ दिष्यका भाव।

३ उत्तमता, सुन्दरता।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) पलायुर्भेद, एक प्रकारका कट्टा।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) दिष्यं तेजो यस्याः। ब्राह्मी गायक।
इसके नियम करनेसे स्त्रीय भोगोंसे जैसा तेज हो जाता
है, इसीसे इसका नाम दिष्यतेजस्व, पदा।

दिष्यङ्गी (म० स्त्री०) दिष्यं चमोक्षिकपदार्थं पत्युत्कटं
हमन्नि। चमोक्षिक पदार्थ दमक।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) दिष्यं पत्युत्कटं हमन्नि। दिष्य-
पदार्थ देखनेवाला।

दिष्यङ्गी (म० स्त्री०) पुराणके पत्युत्कट एक देवीका नाम।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) दिष्यं स्त्रीयं दोषदं चमोक्षिको
यस्य। उपाधित, वह पदार्थ जो जिसमें चमोक्षिको
निहित चमोक्षिक के लिये देवताको पवित्र किया जाय।

दिष्यङ्गु (म० स्त्री०) दिष्यङ्गु देवो।

दिष्यङ्गी (म० पु०) सुगीन, जेक, अच्छा।

दिष्यङ्गु (म० पु०) देववती नगरी।

दिष्यङ्गी (म० स्त्री०) दिष्यङ्गी नदी। पाशावद्वीप।

दिष्यङ्गी (म० स्त्री०) दिष्यङ्गी, पत्तना।

दिष्यङ्गाय (म० स्त्री०) पदाणां पत्युत्कटं तस्य पत्युत्कटं
गुणवत्पदाणां समाहारः। पदायुक्त, वह द्रव्य, दूध,
घी, चीनी, और जल इन पाँच चीजोंको मिला कर
बनाया जाता है।

दिष्यङ्गु (म० पु०) दिष्यं मनोक्षं पुष्पं यस्य।

१ करबोर, कनेर । (स्रो०) २ मनोहर पुष्प, सुन्दर फूल ।
दिव्यपुष्पा (सं० स्रो०) दिव्यानि पुष्पानि यस्याः । महाद्रोणा,
बड़ा गुमा । इसका पेड़ मनुष्यके बराबर ऊँचा और
फूल साल होता है ।

दिव्यपुष्पिका (सं० स्रो०) दिव्यपुष्प संप्रायां कन्-टाप् ।
अतस्त्वत् । लोहितवर्णं चर्कवत्, साल रंगका मदार
या भाक ।

दिव्यप्रभ (सं० पु०) दिव्याः प्रभः । अनागतप्रापक प्रभ ।
दिव्यमान (सं० स्रो०) दिव्यां मानं । देवमान ।

दिव्ययमुना (सं० स्रो०) दिव्या यमुना तत्तुल्यकल-
प्रदत्वात् । नदीविशेष । यह कामरूपमें दमनिका
नदीके पूर्वमें अवस्थित है । दमनिका नदीके पूर्वोत्तर
कोशमें यमुनाके समान फलदायिनी दिव्ययमुना नामक ।
एक बड़ी नदी है जो दक्षिण पर्वतसे निकल कर दक्षिण
समुद्रमें जा गिरी है । जो इस नदीमें एक मास तः
स्नान कराता है, उसे सुनि और तरह तरहके सुख सोभाय
प्राप्त होते हैं । विशेष कर धार्मिक मनुष्योंमें इस नदीमें
स्नान करनेसे मोक्ष मिलता है । (कालिकापु० ७१ अ०)
कामर देवी ।

दिव्यरत्न (सं० स्रो०) दिव्यां चिन्तामित्रं तदयं प्रदायक-
त्वात् अमोक्षितं रत्नं । चिन्तामणि । इसके विषयमें
प्रसिद्ध है, कि वह सब कामनाएँ पूरी करता है ।

दिव्यरथ (सं० पु०) दिव्याः स्वर्गस्य अन्तरोष् वा रथः
श्रीमयान, देवताओंका विमान ।

दिव्यरस (सं० पु०) दिव्याः रसः नित्य कर्मधा० । १ पारद,
पारा । २ मनोहर रस (त्रि०) दिव्याः रसः यस्य
१ मधुररसयुक्त, जिसका रस मोठा हो ।

दिव्यरत्ना (सं० स्रो०) दिव्यवर्णभवा रत्ना । १ मूर्त्ति
रत्ना, मूरहरी, सुनहार । २ मनोहर रत्नामय ।

दिव्यवक्ष (सं० पु०) दिव्यां वक्षमिव, अभिधानात्
पुंस्त्वत् । १ सूर्य शोभा, सूर्यका प्रकाश । (स्रो०)
दिव्यां वक्षं । २ मनोहर वक्ष, बढ़िया कपड़ा । दिवि
भव यस्य, दिव्यां वक्षं । ३ दिविमय वक्ष, स्वर्गीय
वक्ष । (त्रि०) दिव्यां सुन्दर वक्षं यस्य । ४ सुन्दर
वक्षयुक्त, जिसके भस्मा कपड़ा हो ।

दिव्यवाक् (सं० पु०) आकाशवाणी, देववाणी ।

दिव्यवाह (सं० स्रो०) उपमानु गोपको ऊह कन्याशोभि-
से एक ।

दिव्ययौत (सं० स्रो०) बड़ कान जिससे सब कुछ
सुना जाय ।

दिव्यसरित् (सं० स्रो०) दिव्या सरित् । आकाशगङ्गा ।

दिव्यसाधु (सं० पु०) दिव्याः साधुर्यस्य । १ विष्णुदेव-
भेद । २ दिव्यमानुष गिरि ।

दिव्यसार (सं० पु०) दिव्याः सारो यस्य । शान्तनय, साधु-
का पेड़ ।

दिव्यसिंह—श्रीहट जिलेके उत्तर-पश्चिमकी फैला हुआ
सुनामगञ्ज नामका एक उपविभाग । यहाँ लाठड़
का जङ्गल प्रसिद्ध है । ५०० वर्ष पहले यहाँ जो राजा
राज्य करते थे, उन्हेंका नाम दिव्यसिंह था । इन्होंने
ब्राह्मणकुलमें अश्वघृहण किया था । अर्धतमसुके
पिता कुबेर इनके मन्त्री थे । इसी कारण दिव्यसिंह
अर्धतमसुके राज्यचरितसे पच्छी तरह अवगत थे । काल
क्रमसे अर्धतमसु लाठड़ छोड़ कर शान्तिपुर चले गये ।
उनकी ख्याती चारों ओर फैली हुई थी । बाद हट
राजा दिव्यसिंह अपने लड़केको राज्य पीप कर आप
शान्तिपुरमें आ कर अर्धतमसुके साथ रहने लगे । राजा-
के वैराग्यकी देख कर अर्धतने उनका 'क्षणदास' यह
नया नाम रखा । बैष्णवोंमें से इसी नामसे परिचित है ।
राजा दिव्यसिंह (क्षणदास)ने संस्कृत भाषामें अर्धत-
की वाद्यलोला रचना की ।

दिव्यसुरि (सं० पु०) रासानुज सम्प्रदायके बारह आचार्य ।
इनके नाम ये हैं, कामार, भूत, मरु, भक्तिमार, शठारि,
कुलशेखर, विष्णु चित्त, भक्तान्त्रिण, सुनिवाह, चतुष्क-
वीष्ट, रामानुज और गोदा देवा ।

दिव्यस्त्री (सं० स्रो०) दिव्याङ्गना, अम्बरा ।

दिव्यश (सं० पु०) सूर्य ।

दिव्या (सं० स्रो०) दिवि भवा मनोमत्त गुणावत्वात्
दिव्येव । १ चान्ते, धाय । २ वन्द्या कर्कटिकी, वामक
ककोड़ा । ३ शतावरी, गतावर । ४ मशामेटा । ५ त्राक्षी
जड़ी । ६ खल जीरक, बड़ा जोरा । ७ श्वेतदूर्वा,
सफेद दूब । ८ हरीतकी, हड़ । ९ नायिकाभेद, तोम
प्रकारकी नायिकाशोभिसे एक ।

विशारद एक ब्राह्मण थे। ये राजमात्र्य और बहुधन सम्पत्तिके अधीश्वर थे तथा अपनी समय सार्वनिक और वेदाध्ययनमें विताते थे। ४ स्वीकृतदोच, वह जिसने दीक्षा स्वीकार की हो।

दीक्षितायनी (सं० स्त्री०) दीक्षितः स्वनामख्यात ब्राह्मण एव अयम् गतिर्यस्याः स्त्रियां टित्वात् ङीप्। काम्यल नगरके दीक्षित नामक ब्राह्मणकी स्त्री।

(काशीख० ११ ल०)

दीक्षित (सं० पुं०) दीक्ष (सुरदोषतीक्ष्ण) वा १२११५१) इति सूत्रेण युक्तं वाचिस्ता श्रीसाधे छप्। दीक्षाश्रील, वह जिसने शुरूसे मन्त्र लिया हो।

दीक्षना (हिं० स्त्री०) दृष्टिगोचर होना, दिखाई देना।

दीवी (हिं० स्त्री०) दीर्घिका, पोखरा, तालाब।

दीठ (हिं० स्त्री०) १ नेत्रकी ज्योति, देखनेकी शक्ति। २ टुकड़ा, नजर, निगाह। ३ टुकड़ा, चाँखकी ज्योति-का प्रसार। ४ देखनेमें प्रवृत्तनेत्र, देखनेके लिये खुल्लो हुई चाँख। ५ अच्छी वस्तुपर ऐसी दृष्टि जिसका प्रभाव बुरा पड़े। ६ निरीक्षण, देखभाच, देखरेख। ७ सङ्कल्प, उद्देश्य, विचार। ८ पहचान, परख, तमीज। ९ कृपा-दृष्टि, मिहिरबानीकी नजर।

दीठवंद (हिं० पुं०) नजरवंद, जादू।

दीठवंदी (हिं० स्त्री०) नजरवंदी, जादू।

दीति (सं० स्त्री०) दीप-क्षिप्त धेटे पक्षीपः। दीप्ति, प्रकाश, रौशनी।

दीदवान—रामपूतानेके जोधपुर राज्यके अन्तर्गत इसी नामके जिलेका एक सदर। यह पचा० २८°१४' ८०' और देशा० ७४°१३' पू० जोधपुर गहरसे १३० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या दस हजारके लगभग है। इसका प्राचीन नाम हुदवानक है। कहते हैं कि यह पहले शाश्वरके चौहानराजके अधिकारमें था, पछे मुगलोंके हाथ आया। तदनन्तर १८वीं शताब्दीमें जोधपुरके महाराज वसुधेन्द्रने इसे अपने अधिकारमें कर लिया। शहर चारों ओर पत्थरकी दीवारसे घिरा हुआ है। यहां मनोहर पटालिकाएँ, छाकघर, वर्नाकुलर स्कूल तथा एक चिकित्सालय है। सख्तवरकी बनाई हुई मसजिद ही सबसे अधिक कारुण्यविशिष्ट है। मसजिदके पलावा कितने देवमन्दिर भी हैं।

Vol. X, 118

दीदा (फा० स्त्री०) १ दृष्टि, नजर। २ दर्शन, देखा-देखो। (पुं०) ३ नेत्र, चाँख। ४ अनुचित साहच, ठिठाने।

दीदार (फा० पुं०) साक्षात्कार, दर्शन।

दीदिवि (सं० पुं० लो०) दिव्यान्तर्नेनेति दिव्य-क्षिन् अभ्यासस्य च दीर्घस्य (दिबोद्रे दीर्घाभ्यासस्य लृ० ४।५५) १ अक्ष, अनाज। २ हृदयसि। ३ स्वर्ग। ४ भक्ष्यद्रव्य, खानेको चीज। (त्रि०) पुनः पुनः भृशं वा दोवति दिव-यङ् लुक्-इत् न गुणः अभ्यासदीर्घः। पुनः पुनः, फिर फिर।

दीदो (हिं० स्त्री०) ज्येष्ठ भगिनोके लिये सम्बोधन शब्द, बहूँ बहनकी पुकारनेका शब्द।

दीधिति (सं० स्त्री०) दो धोते दोप्यते इति दोधो स'घायां क्षिप् दृट्। १ सूर्य चन्द्रमा आदिकी क्षिरण। २ नैया-यिक प्रवर रघुनाथ शिरोमणिने विन्तामणिकी एक टीका प्रस्तुत की है, इस टीकाका नाम दीधिति है। ३ अङ्गुल च'गमी।

दीधितिकृत् (सं० पुं०) दीधितिं करोति कृ-क्षिप-। चिन्ता-मणि-टीकाकारक रघुनाथ शिरोमणि।

रघुनाथ-शिरोमणि देवो।

दीधितिमत् (सं० पुं०) दीधितयः भूम्ना सन्तप्तस्य मतुप-। सूर्य।

दीन (सं० त्रि०) दीयते स्मिति कर्त्तरि क्त ततो निष्ठा मस्य नः (ओरिदत्त) वा ८।२।४५) १ दुःखित। २ दरिद्र, गरीब। ३ कातर। ४ मोच, उदास। ५ चीन। ६ सुख। ७ सन्तप्त। ८ मन्त्र, विनीत। (स्त्री०) ८ नगरपुष्प।

दीन (सं० पुं०) धर्म विद्यास, मत, मन्त्रद्वय।

दीनकण्ठदास—बङ्गालके एक प्राचीन पद्यकर्त्ता। बहुतसे लोग इनके रचित पद्यांकी कण्ठदास कविराज-रचित-पद्य कहते हैं, किन्तु ऐसा कहना नितान्त भूल है।

दीनता (सं० स्त्री०) दीनस्य भावः दीन-तल-ततो टाप-। १ दैख्य, दरिद्रता, गरीबी। २ कातरता। ३ घोम, उदासी, शिथिलता। ४ सन्ताप।

दीनदयाल (हिं० वि०) दीनदयालु देवो।

दीनदयाल—१ एक प्रसिद्ध हिन्दी-कवि। ये जातिके कायस्थ थे। इनका स० १८८५ में पल्लोद जिलेके कोयल नामक ग्राममें जन्म हुआ था।

दिशारिध (सं० पु०) दिशः स्त्रीलिङ्गः पश्चिम । १
नायकभेद (स्त्री०) २ नायिकाभेद ।

दिशायदान (सं० स्त्री०) दौध पचान पदभेद ।

दिशायम (सं० पु०) पुण्यायमविशेष । कुशसेवका
द्वारा चरके उल्लेखित दिशायमको गये थे । यह पवित्र
पायस, घाम, पाकर, मर, बैल, कटहल आदि वृक्षों से
समाधीन है । यहां ब्रह्मचारिणी कुमारी शान्ति-
दुष्टिमाने घोर तपस्या करके मिष्टि पाई थी । महात्मा
बनदेव कटिपथके मुलने यह वृक्षान्त चुन कर वहां
संन्यासि कायं करके हिमालय गये थे ।

दिशायम (सं० स्त्री०) घामभेद, तन्त्रके अनुसार एक
प्रकारका घामन ।

दिशायम (सं० पु०) १ देवताओं का दिया हुआ हथि-
यार । २ वह हथियार जो मन्त्रों से चलाया जाता है ।

दिशेयक (सं० पु०) सर्पभेद, एक सांपका नाम ।

दिशेयक (सं० स्त्री०) दिशः पश्चिमोत्तर उदकं ।
पाकागन्धन । इसका वर्ण—सुवर्ण, पाकागन्धन,
यामोदक और पश्चिमोत्तर-जल है । इसका गुण—तिडोय-
नाशक, मधुर, पच्य, धर्म क्षिकार, अग्नि उत्पन्न, खाना
घोर में उपायक है । मधोभूमिष्ठ जलका गुण—रक्तुय
घोर दोषनाशक है ।

दिशेयकादुक्त (सं० स्त्री०) दिशः भयः दिश-यत् (पृ० १००)
पादुरक पक्षीके घर । १ ४२।१०) उपपद-वज्र । (मय
पक्षीके घरि । पृ० १२।१५४) दिशायामो उपपादुकेति ।
देव, विष्णु सातापिताके वापस देवता ।

दिशेय (सं० पु०) दिशः स्त्रीलिङ्गः गुणः शोधः
मन्त्रोपदेय । गुरुद्विषय, एक प्रकारका गुह ।

दिशेयधि (सं० स्त्री०) दिशः शोधधिः । मनःविना,
मनसि ।

दिग्—पाषाणके मध्योत्तर जिले की दक्षिणदिशि एक
नदी । यह दिग्गद नगर के निकट ब्रह्मपुत्र नदीसे जा
गिरी है । इसी नदीसे नामसे इसमें तीरस्थ दिग्गद
नगरका नाम पड़ा है ।

दिग्गद—पाषाण प्रदेशके मध्योत्तर जिलेका
एक उपविभाग । यह पक्ष २०° ०' से २०° ५२'
४०' और देश ८४° १०' से ८५° ५' पूर्व पर स्थित

है । उपरिसे १२५४ वर्गमील है । इसमें तीन
घोर पर्वत हैं । लोकसंख्या प्रायः २८५०२ है । इसमें
दिग्गद नामका एक मण्डल और ८०० ग्राम समेत हैं
उपविभागकी प्रायः लगभग ४०१०००, ४० है ।

२ उक्त विभागका एक प्रधान नगर । यह पक्ष
२०° २८' ४०' और देश ८४° ५५' पूर्व में दिग्गद नदीके
बायें किनारे अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ११२००
है । यहां हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, बौद्ध घोर
योग वास करते हैं । ब्रह्मपुत्र नदीका घाटी नाम दिग्गद
मुल बर्षात् दिग्गद नदीके मुहाने तक जाता जाता है
दिग्गद ही जन्मपथमें वाणिज्यको चलाता बीमा है
इस नगरसे घाटी घोर कुबुक नामका एक प्रकारके गाँव
को रक्तुगे होते हैं घोर घामनदीमें कपड़ा, घामन
नमक घोर तेल प्रधान है । यहां एक वेलाविनाश है ।

दिग्ग (सं० स्त्री०) दिगति पथकार्यं ददाति या दिग्गः
किन् प्रत्येन साधुः । (अरिष्टदृष्टि । १। १२।५८) ।
पाशा, पूर्व-पश्चिम दक्षिणदिक्पा । वर्णय-कृष्ण, पाश
पाशा, हरित, निदिग्गो, दिग्ग, कृष्ण, हरित, गो
वैदिकमतसे दिग्ग नाम इस प्रकार है, —

“दिव्यमवधि तरादिमं पूर्व पश्चिम” ।

इति दिग्गो निरिषेयं तथा सा दिगिति रज्जुना ॥”

पश्चिम बर्षात् नियम करके तुम पूर्व की, तुम पश्चिम
की, इस प्रकार निर्दिष्ट हुआ, इस कारण ‘दिग्ग’ ऐसा
शब्द हुआ है । दिग्गका ठीक ठीक नाम घाम करनेसे
निये चित्रित वृक्ष चार भागोंमें विभक्त किया गया है,
जिनको पूर्व, पश्चिम, उत्तर घोर दक्षिण कहते हैं ।
प्रत्येक दो दिग्गोंके बीच एक कोष भी होता है ।
पूर्व घोर दक्षिणके बीचके कोष अग्निरोध, दक्षिण घोर
पश्चिमके बीचके कोषकी केशरत्न, पश्चिम घोर उत्तरके
बीचके कोषकी वायव्यकोष घोर उत्तर तथा पूर्वके
बीचके कोषकी ईषाण कहते हैं । जिस घोर एवं वदय
होते हैं उस घोर सुंदर चरके यदि कोई हो, तो नामने-
की घोर पूर्व, पश्चिम, उत्तर घोर दक्षिण घोर
बादें घोर उत्तर होता है । इनके प्रतिदिग्ग दो दिग्गों
को भी माने जाती हैं—एक निरिषेय ठीक उत्तर की घोर
दूसरी घोरके ठीक बीचकी घोर जिसे ‘क्षमा’ जन्म घोर

३ हिन्दोई एक कवि । ते निम्न राजमहोदय रचने से पोर हमरे पितृका नाम या भील कवि ।

६ एक सुप्रसिद्ध हिन्दोई कवि । इन्होंने बहुतसी कवि-गाएँ रची हैं, उदाहरणार्थ एक भीषे देते हैं,—

“कहाँ गिरा मोहन गज चराई

छरी बाग सुब ओमुख गार्ग ।

महुट बनर मुहरी घर तिरे

मोहना मोहना मोहना ॥

मुहुट मतक हग हँसि मतक

सुख भद्र भद्र गणसे मोहना मोहना ।

मह पवि निगत मित्र कदा

पुर मारद चीन के सुब मोहना ॥

दीन-दयाल बराल भव

मःकी लगन भगोबर पाटे ।

नवावा शान बाह मद्र

मोहना मोहना मोहना ॥”

दीनदयालमिरि—हिन्दोई एक सुप्रसिद्ध कवि । इन्होंने मध्यम १८८८ में पनुरामनाम तथा मं० १८९२ में पनोतिरश्मिद्वय ये दो पुस्तकें लिखीं । इनके निवास-स्थानका ज्ञान इन्होंने दो धन्यपत्र लिखित होता है । पनुरामनाममें इन्होंने श्रीछण्डिका चरित्र संक्षेप रूपमें वर्णन किया है । इनमें उद्भवका श्रीछण्डिका गोविन्दापीठे सम्प्रदायका वर्णन बड़ा अच्छा छोड़ा है और इनमें गुरदासको भीति इन्होंने भी उद्भवका वंशोद्भूत होना लिखा है । इन पुस्तकमें वधि प्रशंसा है, जिसमें चारों श्रीछण्डिका कथा वर्णित है और पाँचवें देवताओंकी स्तुति है ।

ये कमजोर बड़े प्रेमी थे । इन्होंने धन्य कार्यात्मिका भी वर्णन किया है, जिसकी कथा साहित्य-रोजिनी भीषी है । इनके लगन जगह पर प्राकृतिक वर्णन भी अच्छे दोष रहते हैं इनकी पनुरामनाम नामक पुस्तकमें लिखी हुई रंगम गुग्गुलु कहितालीमेंसे एक उदाहरण-सदृश भीषे देते हैं—

“मैंने कल्प के बड़ा दिव मौखि गुग्गुलु ।

विहम विहम कुरक मुकण्ड को दी ॥

मुकण्ड को दीर दिरे तोही बाग न बाग ।

मह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह

मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह

मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह

मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह मोह

दीनदयालमिरि—हिन्दोई एक कवि तथा भक्तधर्मनाम-मण्डलके सचिव बड़े व्याख्याता । इनकी पदव्यासायः २३ वर्षकी होनी । इन्होंने पुन पुन भर माता-वर्षके सभी प्राचीन व्याख्यान लिखे हैं तथा अच्छी सज्जता प्राप्त की है ।

दीनदयाल (मं० वि०) दीन दयाल । १ पुनित पद दयाल, दोनों पर दया करनेवाला । (पु०) २ ईश्वरका एक नाम ।

दीनदयाल पाठक—मुकण्ड भैरव नामक संस्कृत ज्योतिषार्थवेद रचयिता ।

दीनदयाल वाक्पेयी—रघुवरनंदिता नामक संस्कृत वाक्पेयी ।

दीनदयाल—काशीमें एक कवि । इनका जन्म-स्थान कुंठिनगछ या पोर ये १८०५ मं० में निवसमान थे तथा मारवाड़ नगरी महाराज मानमिहर्षके यहाँ रहते थे । दीनदार (फा० वि०) जो अपने धर्म पर विश्राम रखता हो, धार्मिक ।

दीनदास (फा० ज्यो०) धर्माचार्य ।

दीनदास—हिन्दोई एक कवि । इनकी गोमन्थाम नामक धन्य लिखा ।

दीनदुनी (पं० ज्यो०) जीव परमेश्वर ।

दीननाथ (मं० पु०) दोनामी नाथः । पुनित जन्मनाथ, वह जो कुविद्याकी रक्षा करता हो ।

दीननाथ—१ गोमन्थाम नामक संस्कृत काव्यके रचयिता । २ पूर्वमंचक नामक संस्कृत ज्योतिषवेद रचयिता ।

दीननगर—पञ्जाबके गुजरातपुर जिल्लाका एक शहर । यह पचा० १६८८ मं० पोर देगा० ०५ ३८ पु० गुजरातपुर शहरसे ८ मीलकी दूरी पर अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः १८८१ है । १०१० ई० में यह शहर चटोपदेवसे व्यापित हुआ । यह रणप्रतिद्विषा लोकप्रख्यावा नासनाशका । बहुतों नामकी मठों यहां प्रस्थापित हैं । १८६० ई०की महरमें मन्त्रिमन्त्रिकी कानि

प्रेमः कहते हैं। इस प्रकार कुछ देश दिग्गज हैं। वैशेषिकका मत है कि वास्तवमें दिग्गज एक ही है, काम चलायके लिये उसके भेद कर लिए गए हैं। संख्या, परिमाण, प्रयत्न, संयोग और विभाग इसके गुण हैं। २ दन्तचत, दंतिका जखम। ३ दन्तसंख्या। ४ योत्राधिष्ठित देवताभेद, एक देवता को कानके अधिष्ठाता देवता माने जाते हैं।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गतोति दिग्गजः। दिग्गजः दिग्गजः।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। १ नियत स्थानके प्रतिरिक्त शेष विस्तार, घोर, तरफ। २ क्षितिज वृत्तके किये हुए चार कल्पित विभागोंमेंसे किसी एक विभाग-को घोरका विस्तार। दिग्ग देखो। ३ रुद्र-पद्मोभेद, रुद्रको एक स्त्रीका नाम।

दिग्गज (सं० पुं०) दिग्गाया स्थितो गजः। दिग्गजः।

दिग्गज (सं० पुं०) गजद्वाम्भल भेद, गजद्वके एक पुत्र-का नाम।

दिग्गज (सं० पुं०) दिग्गा पालयति पालि-भण्। १ दिग्गजः। २ मन्त्रा कर्त्तृक नियोजित वैराजादि प्रजा-पति-पुत्र, ब्रह्मादे नियुक्त किये हुए वैराजादि प्रजा-पतिके पुत्र। ये लोग सभी दिग्गजोंका पालन करते हैं। हरिवंशमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है—लोक पितामह ब्रह्मानि सम्पूर्ण जगत् विभाग करके दिग्गजों को स्थापित किया, पूरे दिग्गजों रक्षाके लिये विराट् के लङ्के सुधन्वा, दक्षिणमें कटंभ प्रजापतिके पुत्र शङ्खपद राजा, पश्चिममें महाका राजःपुत्र केतुमान और उत्तर औरमें प्रजापति प्रजंभ्यके लङ्के राजा हिरण्यरोमा नियुक्त हुए। इस तरह गणपति और दिग्गजोंसे स्थापित प्रदेश यथाविधि भावद्वाम्भलमें भाज तक पालित होता है। (हरिवंश ४ अ०।)

दिग्गज (सं० पुं०) दिग्गजः।

दिग्गजकायकव्रत (सं० पुं०) जैनियोंका एक प्रकारका व्रत। इसमें वे सदैव यह नियम कर लेते हैं कि पाज व्रतभ्रसुक दिग्गजमें व्रतनी दूर तक लायेंगे।

दिग्गज (सं० पुं०) दिग्गजः देखो।

दिग्ग (सं० स्त्री०) दिग्ग देखो।

दिग्गज (सं० पुं०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० पुं०) दिग्गजः।

दिग्गज (सं० पुं०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

दिग्गज (सं० स्त्री०) दिग्गजः-क्षिप-टाप्। दिग्गजः देखो।

हुई। जम्बून तथा शाक के लिये यह शहर प्रसिद्ध है। यहाँ एक चिकित्सालय और एक मिडिल स्कूल है। शहरकी आय प्रायः ८०००, रु० है।

दीननाथ पण्डित—पञ्चावकीशरी महाराज रणजित् सिंहके राजस्व-सचिव। इनके पिता भक्तमल दिलो नगरमें एक उच्चपदस्थ सचकारी कर्मचारी थे। पञ्चावके दीवान गङ्गारामके साथ इनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। १८१४ ई०में गङ्गारामने दिल्लीमें इन्हें लाहोरमें बुलाया। उसी समय गङ्गाराम लाहोरमें राज-सचकारके हस्ताक्षरार्थी थे; अतः इन्होंने दीननाथको एक पद पर नियुक्त किया। शीघ्र ही इनकी सहायकारण धीमाति तथा पथ्यवसाय सब लगभग मालूम हो गया। १८२६ ई० में सट्ठ दीवान गङ्गारामको मृत्यु के बाद उनके पद पर ये जो राजकीय सुद्राध्यक्ष और सैनिकविभागके प्रधान कर्मचारीके पद पर नियुक्त किये गए। पीछे १८३४ ई०में दीवान भवानीदासके मरने पर वे प्रधान राजस्वसचिवके पद पर नियुक्त हुए। रणजित् सिंहकी मृत्यु के बाद भी वे बहुत दिनों तक मिश्रान्त्यके प्रधान दीवान रहे। वे सुवक्ता, धर्मकुशल, कूटनीतिवित्, सूक्ष्मदर्शी तथा परिश्रमी थे।

दीननाथसूरि—क संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने राष्ट्रकूट-वंशीय भैरवनाथके आदेशसे भैरव-नवसरत्न नामका संस्कृत ग्रन्थ बनाया है।

दीनधनु (सं० पु०) १ वह जो दुर्जियाको सहायता करता हो। २ ईश्वरका एक नाम।

दीनधनुमित्र—बङ्गालके एक विख्यात ग्रन्थकार और कवि। चौबीस परगनेके अन्तर्गत बेनिनी ग्राममें इनके पूर्व-पुरुष वास करते थे। इनका जन्म ई० १८३० सालके चैत्र मासमें हुआ था।

बचपनमें इनके कायस्थ पाठगालामें लिखना पढ़ना समाप्त करनेके बाद इनके पिताने इन्हें अमोदासे सिरी-स्त में सामान्य वेतन पर नियुक्त करा दिया। किन्तु इस और इनका तमिळ भी ध्यान न था, अतएव पिताकी बात प्रन्यूनो कर ये कमलज-बाग्ये और यहाँ इन्होंने भगवद्गीतो मीखना आरम्भ कर दिया। छोड़े हो दिनोंमें इन्होंने हियर-स्कूलकी उच्चतम क्रांतिक-परीक्षापास की

और १८५१ ई०में कालेज छोड़ दिया। ये १८५५ ई०को पटनामें मासिक १५० रु० पर पोष्ट-माष्टरके पद पर नियुक्त हुए। इनकी कार्यकुशलता देख गवर्नेट सरकार बहुत प्रसन्न हुई और धीरे धीरे वे कालकत्तेमें जैनरत्न पोष्ट-माष्टरके प्रधान सचकारीके पद पर नियुक्त हो गये।

सुसाइ सुहमे लोट आने पर १८७१ ई०में इन्हें राय-बहादुरको पदवी मिली और १८७२ ई०की १ली नवम्बर की इन्होंने विषम बहुमुख रोगसे आक्रान्त हो कर अपना कलेश्वर बटना। इनके बनाये हुए नौलदर्पण, लोलावती, हादश कविता, कमलैकामिनो नामक ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध हैं।

दीनभवानन्द—एक प्राचीन पदकर्ता। इनकी बनाये हुए बङ्गला पद वैयाकरणों के लिए बड़े हो रोचक हैं। दीनहाट—बङ्गालके कोचबिहार राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २६° ८' उ० और देशा० ८८° २८' पू० रङ्गपुर सड़क पर अवस्थित है। जनसंख्या एक हजारके करीब है। यहाँ एक हाई स्कूल है।

दीनसाधन (सं० पु०) महादेव।

दीना (सं० स्त्री०) दीन-टाप। १ मुपिका, सूना, चूना। (त्रि०) २ दरिद्रा, गरीब।

दीननाथ—एक प्रसिद्ध हिन्दी-कवि। ये बुन्देलखण्डमें रहते थे। इन्होंने १८११ सं० में भक्तिमञ्जरी नामक पुस्तक लिखी।

दीननाथशत्रुघ्न—एक हिन्दी-कवि। इनका सम्बन्ध १८०६में जन्म हुआ था तथा सं० १८००में ब्रह्मोसर-खण्ड नामक ग्रन्थ लिखा गया।

दीनार (सं० पु०) दोयते इति। १ स्वर्णभूषा, सोनेका गहना। २ निष्ककी परिमाण, निष्ककी तोल। ३ दो सुवर्ण कर्ष। ४ स्वर्णमुद्रा, मोहर। ५—माप चतुष्टय-मान। ५ माया।

दीनार (सं० पु०) १ स्वर्णभूषण, सोनेका गहना। २ निष्ककी तोल। ३ स्वर्णमुद्रा, मोहर। ४ एशिया और यूरोपके नाना स्थानोंमें प्रचलित प्राचीन मुद्राविशेष। यह कहीं सोनेका और कहीं चांदीका बना होता था, दिग्भेदसे इनके मूल्यमें भी भेद था। अभी भारतवर्षमें यह कहीं भी प्रचलित नहीं होता, किन्तु सुसज्जनोंके

यह सारे नदी के किनारे धर्मो नगर में १० मील की दूरी पर अवस्थित है।

दिङ्ग - धामामने धमामने मन्मोपुर जिले की एक नदी।

जिन तीन नदियों के योग से ब्रह्मपुत्र नदी उत्पन्न हुई है,

दिङ्ग उर्गावे प्रधान है। इसमें धोर सबकी नदियों की

प्रतीक्षा अधिक जल आता है। तिब्बत देश में मागपो नाम की

नी नदी है, मधोका विष्णुम है कि नदी नदी हिमालय के

पश्चात समस्त राज होती हुई बहुत दूर जाने के बाद परब

पर्वत के गङ्गापर्वत निकली है धोर पश्चात धामाम या

पर दिङ्ग नाम धारण किया है।

दिङ्गो (हिं० सो०) दही की दही।

दिङ्गो (हिं० पु०) १ दुर्गंत, बुरी क्षाप्त।

दिङ्गो (हिं० सी०) १ दिन। २ दिन भर की सज-
दूरी।

दिङ्गो (हिं० सो०) देहाव देहो।

दिङ्गो (हिं० वि०) देशी देहो।

दिङ्गोपन (हिं० पु०) देहाव देहो।

दिङ्ग—धामामने धमामने मन्मोपुर जिले की दो नदियां।

इनके नाम गोधा (मय) दिङ्ग धोर बड़ी दिङ्ग है।

इन दो नदियों तथा दिङ्ग नदी के योग से ब्रह्मपुत्र नदी

उत्पन्न हुई है। गोधा दिङ्ग पूर्व भाग में सिंधी पर्वत से

निकल कर पश्चिम की धोर सदिया शहर से कुछ

ऊपर में ब्रह्मपुत्र नदी से मिली है। बड़ी दिङ्ग

मन्मोपुर जिले के धनिकोष में पटकार पर्वत से

उत्पन्न की कर पश्चिम की धोर जयपुर शहर के

समीप होती हुई पश्चात शिवसागर धोर मन्मोपुर जिले के

मध्य ब्रह्मपुत्र नदी में गिरी है। मधोका नदी बड़ी दिङ्ग

की धर जयपुर तक लपका जाता आता है। विष्णुम

नामध धाम के निश्चल जलित साड़ी लाट कर दो दिङ्ग

नदियों में मिला दी गई है। बड़ी दिङ्ग नदी के किनारे

विष्णुम स्थान पर पश्चिम की धोर मिहो के तैल की

धान है। यहाँ का कोपना बहुत समदा होता है तथा

विष्णुम भोजन की भी अच्छी कृषि है। १८८६ ई० में

कोयले धोर मिहो तैल की धाम एक की बार लोभो गई।

विष्णु धर्म के दिन बाद धाम धर्म की गया। जयपुर

धोर साकुम धाम के धाम में धाम की धार की धाम नदी

गई है। धामामने धोर दिङ्ग धर्म की धामामने

धर्म है। इस धर्म की धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

धर्म धामामने धामामने धामामने धामामने धामामने

१. हिन्दोरे एक कवि । ये जिनका सातवें सोम वसन्ते
से सोम वसन्ते जिनका नाम था भोज कवि ।

२. एक सुप्रसिद्ध हिन्दोरे कवि । इन्होंने बहुतसो कवि-
ताएँ रची हैं, उदाहरणार्थ एक भीरे होने हैं,—

“मन्त्रे शिवः भोजः सखः पारः

सोम नाम सुप्र भोजस्य गारः ।

सुप्र भोजः सुप्र भोजः भोजः

सोमः भोजः भोजः भोजः

सुप्र भोजः सुप्र भोजः भोजः

सुप्र भोजः सुप्र भोजः भोजः भोजः ।

सुप्र भोजः भोजः भोजः भोजः

सुप्र भोजः भोजः भोजः भोजः

दीनदयालु भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः

दीनदयालुगिरि—हिन्दोरे एक सुप्रसिद्ध कवि । इन्होंने
सन् १८८८ में चतुर्दशवाग तथा सन् १८९२ में
चतुर्विंशत्युगम से दो पुस्तकें लिखीं । इनसे जिनका-
न्यायका नाम इन्होंने दो पुस्तकें लिखित होता है ।
चतुर्दशवागमें इन्होंने चतुर्विंशत्युगका चरित्र मण्डि-
तवर्षे वर्णन किया है । इनमें चतुर्विंशत्युगमें
गोपिकाओंके गण्डमका वर्णन बड़ा अच्छा बोझा है
और उसमें सुप्रभोजों की भक्ति इन्होंने भी चतुर्विंशत्युगमें
भक्त बोझा दिया है । इन पुस्तकमें पाँच अध्याय हैं,
जिनमेंसे चारमें चतुर्विंशत्युगका कथा वर्णन है और पाँचवेंमें
देवताओंकी स्तुति है ।

ये पुस्तकें बड़े प्रेमी हैं । इन्होंने चतुर्विंशत्युगका
भी वर्णन किया है, जिसकी कथा साहित्य-गोपिकाओं
की है । इनके लगभग लगभग पर प्राकृतिक वर्णन भी
अच्छे दोष रहते हैं इनको चतुर्दशवाग नामक पुस्तकमें
निर्वाह है चतुर्विंशत्युगमें कविताओंमें एक उदाहरण-
वाक्य भी है—

“मन्त्रे भोजः भोजः भोजः भोजः ।

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः भोजः

जिसमें आचार्य गायत्री मन्त्र का उपदेश देते हैं। श्लो-
पनीत देखो। इ शुरुके निकट तन्त्रोक्त दृष्टमन्त्रग्रहण।

गोतमोय तन्त्रमें लिखा है, कि जिससे विमल भान
घोर दिव्यत्व का लाभ हो, सभी कर्म वासनाएं चौपट हो
तथा पापसमूह जाय हो, उसीका नाम दीक्षा है। दीक्षा
ग्रहण करना अवश्य कर्त्तव्य है। दीक्षित नहीं होनेसे
देह पवित्र नहीं होता, इसी कारण प्रत्येक वर्षका दोषा
ग्रहण करना मुख्य कर्त्तव्य है पिता, मातामह, कनिष्ठ-
सहोदर घोर शत्रु पक्षसे मन्त्र लेना उचित नहीं।

"नितुमं श्र" न दृष्टोयात् तथा मातामहश्च न।

सोदरस्य कनिष्ठस्य वैरिपक्षधितस्य च॥" (योगिनीतंत्र)

स्वामी पत्नीको, पिता पुत्रकन्याको घोर भारें भारेंको
दीक्षा नहीं दे सकते। पति यदि सिद्धमन्त्रकं हो, तो
पत्नीको दीक्षित कर सकते हैं।

"न पत्नी दीक्षयेद्भर्ता न पिता शीतयेत् पुत्रं।

न पुत्रं च तथा भ्राता भ्रातरं न च शीक्षयेत्॥

सिद्धमन्त्रो यदि पतिवन्दनं पत्नीं च शीक्षयेत्॥" (दक्ष-संह)

यति, पिता, वनवासी घोर विविताश्रमी अर्थात्
संसारत्यागीसे याद दीक्षा लो जाय, तो वह दीक्षा
कल्याणदायिका नहीं होती।

"यदेर्षिता पित्रुर्लक्ष्मा शीक्षा च वनवासिनः।

विविकाप्रथिनी सौता न सा कल्याणदायिका॥"

(गणेशविमर्षिणी)

ये सब निषेध वचन रहनेके कारण उक्त व्यक्तिमें
दीक्षा नहीं लेनी चाहिये। लेकिन वे सब निषिद्ध
व्यक्तिगण यदि सिद्ध हों, तो उनमें दीक्षा ले सकते हैं,
वह दीक्षा अशुभ नहीं होती, यत्किन् कल्याण कर
होती है।

यदि मायागुप्तार, सिद्ध-विद्याका नाम हो, तो बिना
शुद्धा विचार किए ही दीक्षा ले सकते हैं। यदि
किरीने प्रमाद वा भ्रष्टानतावश पितासे मन्त्र ले लिया
हो, तो उसे प्रायश्चित्त ले कर पुनः दीक्षा ग्रहण करनी
चाहिये।

"प्रमादवत्प्राप्तं तदा पुनर्लक्ष्मा समाचरेत्।

प्रायश्चित्तं तथा हत्वा पुनर्लक्ष्मा समाचरेत्॥"

(गणेशविमर्षिणी)

यहां पर पितृपदको उपलक्षण जानना चाहिए
अर्थात् मातामह आदि पहले जो जो निषिद्ध वनवासे
गये हैं, उनमें यदि मन्त्र लिया जाय, तो प्रायश्चित्त करके
फिरसे मन्त्र लेना विशेष है।

ग्रहमें इस प्रकार दीक्षा-ग्रहण करना प्रायश्चित्त दश
हजार सावित्री जप बतलाया है।

सुद्रयामन्त्रमें यतिसे भी दीक्षा लेनेका विधान है,
किन्तु विशेषता यह है कि वे तीर्थाचारगुप्त मन्त्रतन्त्र-
विशारद, सर्वतन्त्रिय घोर निष्ठ कार्यतन्त्र यति हो।
पिताका मन्त्र निर्वाण है अर्थात् पितासे दीक्षित होनेसे
यदि उस मन्त्र द्वारा जप पूजादि को जाय, तो किसी
फलकी आशासे हाथ धो कर बैठना पड़ता है। किन्तु
शेष घोर शास्त्र मन्त्रके विषयमें कोई दोष नहीं।
"पितासे दीक्षित न होना" यह वचन कौल-दीक्षापर
है अर्थात् कौलाचार विहित दीक्षामें पितासे
भी मन्त्र ग्रहण कर सकते हैं, तद्विन्न सर्वत्र
नहीं। क्योंकि योगिनीतन्त्रमें शक्रादि विद्या का लक्ष्य
करके जो पितादिसे दीक्षा ग्रहण निषिद्ध बतलाया
है; अथवा "श्रीं वा शास्त्रं न दुष्यति" इस स्थानके शास्त्र-
पदको केवलमात्र तारादि विद्या विषयमें जानना चाहिए
अर्थात् तारादिका मन्त्र पितादिसे ग्रहण किया जा
सकता है। मन्त्राशुक्तमें इस प्रकार लिखा है, - "पिता
ज्येष्ठपुत्रको मन्त्र दे सकते हैं, इसमें कोई दोष नहीं।
गङ्गा घोर कायो आदि महातोषोंमें तथा चन्द्र सूर्य-
ग्रहण कालमें पितादिसे मन्त्रग्रहण करनेमें किसी दोषका
विचार नहीं किया जाता। स्वप्रलम्ब घोर स्त्री प्रदत्त
मन्त्रका पुनर्वास संस्कार करनेमें जो यह शब्द होता है।
यदि स्त्रियाँसे मन्त्र लेनेकी इच्छा हो, तो उनमें निम्न-
लिखित गुणोंका रहना आवश्यक है, - भावो, सदाचार-
तत्परता, शुद्धे प्रति भक्तिगोला, जितेन्द्रिया, सर्वसन्मार्थ
तत्त्वज्ञा, सुशीला घोर पूजादि कार्यमें अनुरक्ता अर्थात्
इन सब गुणसम्यक् स्त्रियोंसे दीक्षा ग्रहण कर सकते
हैं। किन्तु विधानमें वे सब गुण रहने पर भी, यह दीक्षा
देनेकी योग्य नहीं है। स्त्री-शुरुसे मन्त्र लेनेसे शम फल
प्राप्त होता है, विशेषतः मातासे दीक्षित होनेसे अष्टगुण
फल मिलता है। यदि माता अपना उपासित मन्त्र

हुन। जखन तथा शालके लिये यह शहर प्रसिद्ध है। यहाँ एक चिकित्सालय और एक मिडिल स्कूल है। शहरकी प्रायः प्रायः ८०००, २० है।

दीननाथ पण्डित—पञ्चावलीयों महाराज रणजित् सिंहके राजस्व-साधक। इनके पिता भक्तमल दिलो नगरमें एक लघुपदस्थ सहाकारी काम चारी थे। पञ्चावली देवान गङ्गारामके साथ इनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। १८१४ ई०में गङ्गारामने दिल्लीमें इन्हें लाहौरमें बुलाया। उसी समय गङ्गाराम लाहौरमें राज-सहायके कर्ताकर्ता थे; अतः उन्होंने दीननाथको एक पद पर नियुक्त किया। शीघ्र ही इनकी सहायता धीमाति तथा सध्वसाय सब लक्ष्य मालूम हो गया। १८२६ ई० में सुदृष्ट देवान गङ्गारामको स्वयंके बाद उनके पद पर ये हो राजकीय सुदृष्ट और सैनिकविभागके प्रधान कामचारीके पद पर नियुक्त किये गए। पीछे १८३४ ई०में देवान भवानीदासके मरने पर ये प्रधान राजस्वसाधकके पद पर नियुक्त हुए। रणजित् सिंहकी स्वयंके बाद भी ये बहुत दिनों तक सिखराज्यके प्रधान देवान रहे। ये स्वयंका धर्म कुशल, कूटनीतिविद, सज्जनर्तक तथा परिचयमे थे।

दीननाथसूरि—एक संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने राष्ट्रकूट-वंशीय भैरवनाथके पादशेष भैरव नवसरत्न नामका संस्कृत ग्रन्थ बनाया है।

दीनधनु (सं० पु०) १ वह जो दुनियाको सहायता करता हो। २ ईश्वरका एक नाम।

दीनधनुमित्र—बङ्गालके एक विख्यात ग्रन्थकार और कवि। चौथोस परगनेके अन्तर्गत बेलिनो ग्राममें इनके पूर्व-पुरुष वास करते थे। इनका जन्म ई० १८३० सालके चैत्र मासमें हुआ था।

बचपनमें इनके कायस्थ पाठशालामें लिखना पढ़ना समाप्त करनेके बाद इनके पिताने इन्हें जमौंदारी सिरो-स्तमें सामान्य वेतन पर नियुक्त करा दिया। किन्तु इस और इनका तनिक भी ध्यान न था, अतएव पिताको बात धनप्रसूनी कर ये कलकत्ते आये और यहाँ इन्होंने अंगरेजों से खूब आश्रय कर दिया। थोड़े ही दिनोंमें इन्होंने ईश्वर-सङ्कलको उत्तम आचरणसे परोक्षा पास की

और १८५१ ई०में कालिज छोड़ दिया। ये १८५५ ई०को पटनामें मासिक १५० रु० पर पोस्ट-मास्टरके पद पर नियुक्त हुए। इनकी कार्यकुशलता देख गवर्मेण्ट सरकार बहुत प्रसन्न हुई और धीरे धीरे ये कलकत्तेमें जैनरत्न पोस्ट-मास्टरके प्रधान सहायके पद पर नियुक्त हो गये।

सुसाई सुखसे नोट खाने पर १८७१ ई०में इन्हें राय-बहादुरको पदवी मिली और १८७३ ई०की १० नवम्बर को इन्होंने विषम बहुसूत्र रोगसे आक्रान्त हो कर अपना कलेवर बटवा। इनके बनाये हुए नोबलपत्र, लोभावती, दादश कविता, कमलकामिनी नामक ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध हैं।

दीनमवानन्द—एक प्राचीन पदकर्ता। इनके बनाये हुए बङ्गला पद वैष्णवोंके लिए बड़े ही रोचक हैं। दीनघाट—बङ्गालके कोचबिहार राज्यका एक शहर। यह अक्षां २६° २०' और देशां ८८° २०' पू० रङ्गपुर सड़क पर अवस्थित है। जनसंख्या एक हजारके करीब है। यहाँ एक हार्ड स्कूल है।

दीनसाधक (सं० पु०) महादेव।

दीना (सं० स्त्री०) दीन-टाप। १ श्रुतिका, भूमा, चूडा। (वि०) २ दरिद्रता, गरीब।

दीननाथ—एक प्रसिद्ध हिन्दी-कवि। ये बुन्देलखण्डमें रहते थे। इन्होंने १८११ सं० में मक्तिमच्छरी नामक पुस्तक लिखी।

दीननाथसम्भर्यु—एक हिन्दी-कवि। इनका सम्बन्ध १८०६ में जन्म हुआ था तथा सं० १८०० में ब्रह्मोत्तर-खण्ड नामक ग्रन्थ लिखा गया।

दीनार (सं० पु०) दोयते इति। १ स्वर्णभूषा, सोनेका गहना। २ निष्ककी परिमाण, निष्ककी तोल। ३ ही सुवर्ण कार्य। ४ स्वर्णमुद्रा, मोहर। ५ भाग चतुष्टय-मान। ६ माथा।

दीनार (सं० पु०) १ स्वर्णभूषण, सोनेका गहना। २ निष्ककी तोल। ३ स्वर्णमुद्रा, मोहर। ४ एशिया और यूरोपके माना स्थानोंमें प्रचलित प्राचीन मुद्राविशेष। यह कहीं सोनेका और कहीं चांदीका बना होता था, देयमें देवे इसके मूल्यमें भी भेद था। अभी भारतवर्षमें यह कहीं भी प्रचलित नहीं होता, किन्तु मुसलमानोंके

प्रदान करे, तो यष्टगुण कम, नहीं तो शून्य कम होता है। किन्तु किन्तु तत्त्वविद्वत्ता कहना है कि मित्र मन्त्र ग्रन्थ कार्त्तमें गुह्यका विचार करना नहीं होता। विषया श्रोको मन्त्र देनेका अधिकार नहीं है, हमके प्रतिपक्षमें हम प्रकार दिया है,—विषया श्रो पुत्रकी प्राप्ति के कर, दम्प्या पिताको प्राप्ति के कर मन्त्र दे सकती है, नहीं तो दत्त श्रुतमन्त्र नहीं है। गर्भयन्त्री श्रोमें मन्त्र देनेमें कोई दोष नहीं। किन्तु दण्डम साम गर्भयन्त्री श्रोमें यदि मन्त्र दिया जाय, तो रोरव नरक होता है।

मन्त्र यदि स्मरणमें न्याम है, तो वह मन्त्र सद्गुरुके पुत्रः पहन करना चाहिये। यदि सद्गुरु न मिले, तो जन पूर्ण क्षमनमें प्रायः प्रतिष्ठा करने एक यष्टपत्र पर कुट्टम द्वारा वह मन्त्र लिखे और पीछे उस पत्रको उल्ट करके जलमें डाल दे। तदनन्तर मन्त्र महित उस यष्टपत्रके उठा कर ग्रन्थ वह मन्त्र पहन करे। स्मरणमन्त्र मन्त्रमें मन्त्रपरीक्षा प्रत्यागम्य है।

दीक्षाधीन बराहण—दीक्षारानीत मन्त्रजप दूषित होता है, इसमें पहली दीक्षाका निष्फल करना प्रायः शक्य है। दीक्षा अनुष्णको दिव्य ज्ञान देने की है और पाप रागिनी ध्वज करती है। यही कारण है कि ब्रह्मचर्यादि सभी प्रायश्चित्तों दीक्षाकी प्रायश्चित्तता है। कारण दीक्षा ही जप, तपस्या आदिको जड़ है। बिना दीक्षाके जप तपस्यादि कोई कार्य ही नहीं हो सकता। इसलिये सभी प्रायश्चित्तों दीक्षित हो कर रहना चाहिये। शिवा दीक्षित हुए जो मनुष्य जपमुक्तादि कार्य करता है, उनका वह कार्य पथा पर शीघ्र मोनेके समान निष्फल होता है।

दीक्षाविहीन व्यक्ति को मित्रि वा महनि कुछ भी नहीं होती। प्रत्यक्ष पदुत समपूर्वक गुरुके प्रथम दीक्षित होता चाहिये। यद्यप्याय दीक्षित होनेसे वह दीक्षा प्रायश्चित्तके मध्यम उपगत्य और कीटि महापातक दण्ड करती है। जो गुरुमें दीक्षित न हो कर प्रत्येक मन्त्र देखे कर रहने दीक्षित होता है, वह नारायण महस मन्त्रकारमें भी निष्फल नहीं होता। अदीक्षित व्यक्ति को तपस्या, नियम, व्रत, तीर्थगमन तथा शारीरिक परिश्रम

द्वारा कोई कार्य मित्र नहीं होता। अदीक्षित व्यक्ति प्रायः मित्रादि समान, जल मूत्रके समान और तत्कृत यात्रादि भी निष्फल है। (तन्त्रः)

गुरुको दीक्षाके विषयमें जो प्रसिद्ध है वह हम प्रकार है—प्रत्यक्ष और प्रत्यक्षद्वारा मन्त्र गुरुको नहीं देना चाहिये। जो ब्राह्मण गुरुको प्रायश्चित्त, गुरुका मन्त्र, प्रत्यक्षमन्त्र, यात्रा और प्रत्यक्षमन्त्र देता है, उस ब्राह्मणको प्रत्यक्षद्वारा दीक्षा दीक्षा और मन्त्रपठिता गुरु भी निरयमात्म होता है। मन्त्री मन्त्र (जो) का लेना श्रो और गुरुके अधिकार नहीं है। गुरुको गोदान, महेश्वर, दूरी, धर्म और प्रथमका मन्त्र देना चाहिये। कारण गुरु यही वह मन्त्र देनेके अधिकारी है। इसको प्रत्यक्ष कारणोंमें से प्रायः भाग्य होता है। जिन जिन देवताके मन्त्र देनेका अधिकार है, उनमेंसे प्रत्यक्ष मन्त्र पहन करना चाहिये। दीक्षाके समय ताराचक्र, रागिचक्र और नामचक्रका विचार करना होता है।

स्मरणमन्त्र मन्त्र, श्रोमें प्रतीत्य मन्त्र, मातामन्त्र और ताराचक्रमन्त्र देनेमें मित्रादिका विचार नहीं करना चाहिये मनुष्यक मन्त्र, धर्मका पञ्चाक्षर, पञ्चाक्षर, एकाक्षर, द्वाक्षर और ताराचक्र मन्त्रका मित्रादि विचार नहीं करना। जिस मन्त्रके प्रथम 'हुं' 'कट' 'रहे' 'उमे' 'पुं' मन्त्र, जिसके प्रथम 'स्वाहा' 'रहे' 'उमे' श्रो मन्त्र और जिसके प्रथम 'ममः' 'रहे', 'उमे' मनुष्यक मन्त्र कहते हैं। सुभा मन्त्र तीन प्रकारका है।

जो जो महाविद्या देवा पर दीव्यगिरिगुह्या है, हमका विषय हम प्रकार निम्न है। काली, मौला, महादुर्गा, त्वरिता, ह्रियमन्त्रा, वाय्वादिनी, चक्रपूजा, प्रायश्चित्त, कामाख्यावामिनी, वाला, मातङ्गी, भैरवामिनी आदि देविणी कविकालमें प्रायश्चित्तकी पूर्ण फल प्रदान करती है। ये सब देवता मित्रमन्त्र हैं, सुभा कविकालमें हमको प्रत्यक्षमन्त्रमें प्रत्यक्ष परिश्रम उठाया नहीं होता प्रत्यक्ष "कलो मन्त्राचक्रगुरु" इत्यादि प्राप्तिपुमार कविकालमें जप पूजादि की जो चतुर्गुणमन्त्रा निर्दिष्ट है, वह करने नहीं होती। कारण ये सब महाविद्या कविकालमन्त्रा नहीं हैं।

हम महाविद्या मन्त्र देनेमें मित्रादि विचार, मन्त्र

चक्रादि विचार, वगैरादि जोधन और परिमितादिका विचार करना नहीं होता। दीक्षाके सप्रथ इन्का मन्त्र ग्रहण करनेसे शुभ होता है। कोई कोई कहते हैं, कि इस प्रथमा-वाक्यका विचार सर्वत्र ही आवश्यक है। क्योंकि दुरदृष्टकर्मसे यदि स्वप्नमें कभी वैरिमन्त्र मिल जाय, तो उससे दोष दृष्ट होता है। इसी कारण विचारका आवश्यक है।

दीक्षाके समय नामग्रहणप्रणाली—दीक्षा ग्रहणके समय पितामातासे जो नाम रखा है, उसी नामकी देवशर्मा आदि उपाधि और ओका परित्याग कर अन्यान्य सभी वर्ण नाम ग्रहण करें। नाम ग्रहणके विषयमें पित्राला-तन्त्रमें इस प्रकार लिखा है—जिसका जो प्रसिद्ध नाम रहता है प्रथमा जन्मकालमें जो नाम रखा जाता है उसे वही नाम लेना होता है और यदि लोगोंके लिए वही नाम लेना उचित है जो उनकी शुभ पुण्यात्त द्वारा रखते हैं। ब्रह्मामन्त्रमें लिखा है, कि जो नाम ले कर पुकारनेसे निद्रित शक्ति लग उठता है, दूसरे जवाब देता है और जो नाम ले कर पुकारनेसे श्रममनस्क अवस्थामें प्रयु-त्तर देता है वही नाम ग्रहण कर दोचा कार्यका प्रबु-द्धान करना चाहिये। किस देवताके मन्त्रग्रहणमें कि प्र-चक्रका आवश्यक है, वह इस प्रकार है,—विष्णुमन्त्र-ग्रहणमें नक्षत्रचक्र, शिवमन्त्रमें कीटचक्र, विष्णुमन्त्रमें राशिचक्र, गोपालमन्त्र और राममन्त्रमें भक्तचक्र, गणेशमन्त्रमें हरचक्र, वराहमन्त्रमें कीटचक्र, और महा-लक्ष्मीमन्त्रमें कुलाकुलचक्रका विचार कर दीक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

चक्र विचारका वास्तव्य विषय तत्त्व चक्र शब्दमें देखो।

दीक्षाग्रहण—दीक्षाके समय निर्दिष्ट दिनमें शुभ शिथको बुला कर पवित्र कुशग्रन्था पर बिठावे और निद्रामन्त्रसे उसका मित्रावस्थान करें। शिथ शयनके समय यह निद्रामन्त्र तीन बार पढ़े और उपवासी तथा जितेन्द्रिय हो कर ओ शुभके पादुका ध्यान करते, दुष्ट हो जाये। निद्रामन्त्र—“ॐ हिलिहिलि शुलपायये स्वाहा” अथवा

“नमो जय त्रिनेत्राय पित्राय महात्मने।

रामाय विद्मरुषाय स्वप्नाधिपतये नमः॥

Vol. X. 117

स्वप्ने कथ्य में तत्त्वं सर्वकार्येष्वसेवतः।

क्रियाविधि विचारस्थानि त्वत् प्रसादान् महेतरः॥”

यह मन्त्र पढ़ कर शयन करे। दूसरे दिन सवेरे शुरु शिथसे स्वप्नदृष्ट शुभाशुभ ज्ञान पूछे। शिथ यदि स्वप्नमें कन्या, छत्र, रथ, प्रदोष, सहाजिजा, पत्र, नदी, हस्ती, हथ, मातृ, मसृष्ट, सर्प, हथ, पर्वत, घोटक, कोई पवित्र द्रव्य, आसमान, मट और आसन इन्मेंसे कोई एक वस्तु देखे, तो उसका मन्त्र सिद्ध होगा, ऐसा समझना चाहिए।

दीक्षाके विषयमें काल-निर्णय—चैत्रमासमें दीक्षाग्रहण करनेसे पुण्यार्थमिद्धि, वैशाख मासमें रत्ननाभ, ज्यैष्ठ मासमें शूल, आषाढ़में वसुनाग आश्विनमें रत्नसूय, कार्तिक और अग्रहायणमें मन्त्रमिद्धि, पौषमें शत्रुपीडा, माघमें मेघावृद्धि और फाल्गुनमें सब प्रकारको कामनाएँ मिद्धि होती हैं। यदि चैत्र विहित मासमें मनमास पड़े, तो उस मासको छोड़ देना चाहिए। कभी भी मनमासमें दोषग्रहण न करें। चैत्र मासमें दीक्षाका जो विधान कहा गया है, उसे गोपालमन्त्र ग्रहणके विषयमें जानना चाहिए। क्योंकि किमो तन्त्रमें लिखा है, कि चैत्रमासमें दीक्षाग्रहण करनेसे भरण और दुःख होता है। भाद्र और नवव्रमासमें भी मन्त्र लेना निषेध है। इनका कारण दीक्षाके सम्प्रत्यमें औरमास याद्य है।

दीक्षाके सम्प्रत्यमें बार निर्णय—रविवारको दीक्षाग्रहण करनेसे वित्तसम्पन्न, सोमवारको शान्ति, मङ्गलवारको आयुःवृद्धि, बुधवारको सोम्यप्राप्ति, वृहस्पतिवारको ज्ञानव्याप, शक्रवारको सौभाग्य और शनिवारको यशका नाय होता है।

विधिरूपण—प्रतिपदमें दीक्षाग्रहण करनेसे ज्ञाननाथ, द्वितीयां ज्ञान, तृतीयां पवित्रता, चतुर्थीमें वित्तनाथ, पञ्चमीमें बुद्धिबुद्धि, षष्ठीमें ज्ञाननाथ, सप्तमीमें सुख, अष्टमीमें बुद्धिनाथ, नवमीमें शरीरसूय, दशमीमें राजवत् सौभाग्यनाथ, एकादशीमें पवित्रता, द्वादशीमें सर्वमिद्धि, त्रयोदशीमें दरिद्रता, चतुर्दशीमें तिर्यकयोगिप्राप्ति, अमावस्यामें मानहानि और पूर्णिमा तिथिमें मन्त्र लेनेसे धर्मकी वृद्धि होती है। किन्तु इन सब तिथियोंमें अन्वा-ध्याय तिथि वर्जित है। जिस दिन सन्ध्यागर्जन,

श्रीभक्त, अर्चियुक्त, भूमितापविर्वर्जितः, सुविष्ट, शब्द-
शून्य, धूमरहितः अनति ह्रस्व और दक्षिणावर्त्त वर्त्ति-
युक्त दीपदान हो मङ्गलजनक है। दीप यदि हृद्य पर
स्थित हो और पात्र यदि स्नेह द्वारा पूरित रहे, यत्नी
यदि दक्षिणावर्त्त में अवस्थित हो खर उज्ज्वलभावसे जले,
तो यही दीप सबसे श्रेष्ठ है। इस प्रकारका दीप देव-
तापोंका तुष्टिप्रद माना जाता है। यदि इस प्रकारका
दीप हृद्य पर न हो, तो उसे मध्यम दीप और यदि उस
दे.पमें तेल न रहे, तो उसे अधम दीप कहते हैं। शण-
मुख वा हृद्यको त्वकनिर्मित, पथया जीर्ण, शक्त वा
मलिन यक्ष सलताओ काममें न लाना चाहिये। यौ-
हृद्दिने लिए सर्वदा तुलाकी सलता प्रसृत करने
चाहिये। हृत और तैलादि मिला कर दीपको न बालना
चाहिये। जो मनुष्य हृत और तैलादि मिला कर दीप
बालते हैं उन्हें तामिस्र नरकमें जाना पड़ता है। यथा,
मन्वा और अग्नि नियास प्रभृति प्राणियोंके पद्मसमुद्र
स्नेह द्वारा डोहा जलाना निषिद्ध है, जो ऐसा करता है
उसे मारक भुगतना पड़ता है। योवृद्धिको इच्छा रखते हुए
अग्निनिर्मित अथवा दुर्गन्धादियुक्त पात्रमें दीप रखे।
यत्नपूर्वक कामो भी लक्षणयुक्त और देवताके निमित्त
वस्थित दीप न बुझाना चाहिए और न ज्ञानपूर्वक अथवा
लोभादि वशीभूत हो कर उसे बुराना हो चाहिए।
क्योंकि दीप बुरानेदे. अन्धा होता है और जो दीप बुझता
है वह काला होता है। (कालिकापु. ७८ अ.)

पुरुषके दोष बुझानेसे और ओके कुभाण्ड दिहन करनेसे निन्द्य ही वंश नाश होता है। पुरुष देवदत्त दोष बुझा सकते हैं।

कात्तिक मासकी कृष्ण, चतुर्थी तिथिकी नरकसे छुटकारा पानेके लिये दोषदान करना चाहिये। देवताकी दोषदान करते समय घण्टा भव्य बजाना चाहिये।

“झाने धूमो तथा दीपे नैवेद्ये भूषणे तथा !

षण्ढानांदिं प्रकुर्वीत तथैवा नीराजनेऽपि च ॥”

(विधानपरिभाषा)

एकाम्रोतखट्ट कालिकापुराणके वचनासुसार
देवताके निमित्त कल्पित दीपका मो बुझाना मना है।

“नेव निर्वापयेद्दीपं देवायंमुप कल्पितं ।

दीपहर्तामवेदग्धः काणो निर्वपको भवेत् ॥”

(एकादशीत •)

देवार्थ उपकल्पित दीप सुराना नहीं चाहिये, सुरानेव यस्या होता है। हृदयभङ्गितामं दीपका लक्षण इस प्रकार लिखा है,—वामावर्त्त, मलिन-किरण, स्फुलिङ्गयुक्त और अष्टमूर्त्ति दाय विमल स्नेह भो वसिष्ठाकल्पित होने पर भी शीघ्र नाम मग्न होता है। जो दीप कष्टमान और अष्टयुक्त होता है, विशेषरूपसे उसकी प्रसारित शिखा होने पर भी शक्त वा मन्वत्-विहीन हो कर शीघ्र मग्न होता है। इस प्रकारका दीप पाप फल देनेवाला है। दीपादि संज्ञित मूर्त्ति, चायत तदु, कपतलोजन, दोष्मिमान, निःशब्द, सुन्दर प्रदक्षिण गति अर्थात् जिसकी गति दक्षिणकी ओर हो, वैद्युत् और स्वर्ण सहस्र अंश निमग्न और त्वरित दीप शम्भकनक माने जाते हैं। (हृदयभङ्गिता ८४ अ०) प्रतीय देवो। दीपक (सं० श्लो०) दीपयति दीप-पिच्छन्त्र, ज्। १ वाक्यालङ्कार। इसका लक्षण साहित्यदर्पणमें इस प्रकार लिखा है—जहां प्रसृत और अप्रसृतका एक ही धर्म कहा जाता है अथवा बहुत से शिपायोंका एक ही कारक होता है, वहां दीपशालङ्कार होता है। अप्रसृतका अर्थ भवर्षनीय विषय और प्रसृतका अर्थ वर्षनीय विषय है। उदाहरण—

“बलावलेपादधुनापि पूर्ववत्

प्रवाच्यते तेन जगत्त्रिजगत्पुणः ।

सती च योयित् प्रकृतिश्च निरवकाः

‘दुर्माससम्भ्येति भवंान्तरेष्वपि ॥’ (सादित्यद०)

जगन्निधीयु वह, शिखपाल पहिलेकी तरह (चर्चातु
पूर्व जन्ममें हिरण्यकशिपु भाटिके रूपमें जिस प्रकारका
संसारको कष्ट देता था) चाल मी भइहारके साथ इस
संसारको कष्ट देता है । सती स्त्री और निजना प्रकृतिने
जन्मास्तरमें मी (इस पुरुषको पाया था । निजला
प्रकृति और मती स्त्री परजन्ममें मो उसका परित्याग
नहीं करती तथा उसका आश्रय ग्रहण करती है । यहाँ
पर वर्ष नीय विषय दुर्वा-शिखपाल संसारको कष्ट देता
है, पूर्व जन्ममें जब हिरण्यकशिपुने राजपादि रूपमें जन्म

भूमिस्थ पौर वस्त्राधारण री. वही दिन वस्त्राधारण
वस्त्राधारण है। सुन्या इस वस्त्राधारण दिनेमें तथा योदीक्ष
वस्त्राधारण वस्त्राधारणमें दोषाधारण दिनेमें है। दिनीया,
पदमी, पदमी, दादमी पौर विजोदमी तिथि दोषाधारण निवे
प्रकाश है। किन्तु पदमी पौर विजोदमी तिथिमें वस्त्राधारण
मंत्र पौर पदमी तिथिमें विरमंत्र प्रकाश कर सकते हैं।
इसमें पौर वस्त्राधारण तिथिको दोषाधारण निवे निविद वस्त्रा
धारण है। (भैरवचर)

मन्त्र-निर्णय—चरित्रो नचतमें दोषाधारण करनेमें
सुन, भरणीमें शरद, क्षतिजामें दुःख, रोहिणीमें शक्र-
धनित्य, मृगशीर्षमें सुखमामि, आर्द्रामें मनुनाम, पुनर्वसु-
में धनमममि, पुष्यामें शक्र, मघा, चरित्रो वस्त्राधारण, मघा
दुःखनाम पौर पुनर्वसुमें मीर्यमामि, उत्तरफल्गुनी-
में शक्र, श्रवणमें धन, विशाखमें शक्रममि, आश्विमें
मनुनाम, मिथुनामें सुन, दनुवाधामें मनुनाम, ज्येष्ठामें
मनुनाम, मृगशीर्षमें क्षति, पुष्यापादा पौर उत्तराषाढ़ा-
में क्षति, श्रवणमें दुःख, धनिष्ठामें शरद, मगमिथामें
शक्र, पुष्यामात्रमें सुन, उत्तरमात्रमें दुःख, पौर श्रवण
नचतमें क्षति, श्रवणमें क्षति है। यहाँ आर्द्रा पौर क्षति
को विशेष वस्त्राधारण है वस्त्राधारण पौर यज्ञिके इतर
विषयमें निवे यथात् मिथ पौर यज्ञिकमन्त्र सेनेमें पद
दीर्घा नचत दोषाधारण नहीं है। शरद वही पर मिथ
पौर यज्ञिकमन्त्र प्रकाशके विषयमें आर्द्रा पौर क्षति
नचतको प्रकाश वस्त्राधारण है।

चरित्रो, भरणी, श्रवण, विशाखा, श्रवण, ज्येष्ठा,
पुष्यामात्रपद, उत्तरफल्गुनी पौर उत्तराषाढ़ामें दोषा-
धारण शुभमन्त्र है। यहाँ पर ज्येष्ठा पौर भास्वनीनचतमें
दोषाधारण जो विधान है, वस्त्राधारण राममन्त्रमें निवे।
चरित्रो—शुभ, मिथ, आश्विमान, धन, मोति,
मोमम, रुद्रि पौर श्रवणयोग दोषाधारणमें शुभमन्त्र
है। राममन्त्रमें निवे है कि मोति, आश्विमान, मोमम,
मोमम, रुद्रि, शक्र, सुकर्म, पाय, शक्र, श्रवण,
श्रीमान्, मिथ, मिथ पौर शक्र में मोमम योग दोषा-
धारणमें शुभमन्त्र है।

चरित्रो—शक्र, शक्र, शक्र, शक्र, शक्र पौर
चक्रि के शुभ शरद दोषाधारणमें शुभ है।

मन्त्र निर्णय—शुभ, मिथ, शक्र, धन पौर मोम
इन सब नचतमें तथा वस्त्राधारण शरितमें दोषाधारण
कर सकते हैं। विष्णुमन्त्र सेनेमें शक्रमन्त्र यथात्
शुभ, मिथ, शक्रि पौर शक्र में पौर मन्त्र प्रकाश है।

मिथमन्त्र सेनेमें भार मन्त्र यथात् मिथ, शक्र, शक्र, शक्र
पौर शक्र में पौर मन्त्र तथा वस्त्राधारण दोषाधारण
मन्त्र यथात् मिथ, शक्र, धन पौर मोम में पौर मन्त्र
शुभमन्त्र है। मन्त्रमें यथात्, पद पौर पदाम्बु शक्रामें
पापपद तथा मन्त्रमें यथात्, मन्त्र, शक्र, मन्त्र, पौर
पदम यथात्में शुभमन्त्र शक्रमें दोषाधारणमें शुभ पौर
है। शक्र दोषाधारणमें शक्रमन्त्र चरित्राधारण है,
इसको वस्त्राधारण प्रकाश करवा चाहिये।

चरित्रो—शक्रमन्त्रमें दोषाधारण प्रकाश करतो
है पौर शक्रमन्त्रमें पदमी तिथि मन्त्र को दोषाधारण
दोषाधारण नहीं है। वस्त्राधारणमें वस्त्राधारणमें
पौर शुभिफामोको शक्रमन्त्रमें मन्त्र निवे चाहिये।
पुनर्वसु निविदमन्त्रमें पौर तिथि मिथमें मन्त्र प्रकाश
कर सकते हैं, इन विषयमें वस्त्राधारणमें इस प्रकार निवे
है—मन्त्रमन्त्रमें पदमी, चरित्रमन्त्रको शक्राचतुर्दशी,
शक्रिफाली शुक्रा नचतमें पदममन्त्रको शक्राचारण, शक्राचारण
शक्राचारण, शक्राचारण शक्राचारण, चरित्रमन्त्रको शक्रा-
चतुर्दशी, शक्राचारण पदम यथात्, ज्येष्ठको शक्राचारण,
पुष्याचतुर्दशी पौर शक्राचारणको शक्राचारणमें इन
मन्त्र शक्रमन्त्रमें जो दोषाधारण की जाती है, वस्त्राधारण-
धारणमें दोषाधारणमें मन्त्राचारण शक्राचारणको शक्राचारण
है। इन सब शक्रमन्त्रमें मन्त्राधारण करनेमें मन्त्र,
मिथ, पौर शक्राचारण कुल भी विचार नहीं किया
जाता। मिथकोमें वस्त्राधारण है, शक्राचारणमें मन्त्र-
धारण करनेमें शक्र, नचत, मन्त्र पौर तिथिदि दोष तथा
योगधारणदि दोषाधारणका विचार नहीं करना
चाहिये। शक्राचारणको मन्त्र है, शक्राचारणको शक्रा-
चतुर्दशी, यथात् शक्राचारण पदमको, शक्राचारणको शक्रा-
चतुर्दशी, यथात् शक्राचारणको, शक्राचारणको शक्राचतुर्दशी,
आर्द्रा शक्राचारणको, चरित्रमन्त्रको शक्राचारणको, शक्राचारणको
शक्राचारणको, शक्राचारणको शक्राचारणको, शक्राचारणको शक्रा-
चारणको शक्राचारणको, शक्राचारणको शक्राचारणको

यहां भानिके बहुत दिन पड़नेसे इसका प्रचार था। ज़रियंग, मलाबोरचरित आदिमें इसका उल्लेख है। मॉचीमें बौद्धभूषका जो बड़ा खण्डहर है उसने पूर्वद्वार पर मन्नाट् चन्द्रगुप्तका एक लेख है जिसमें दोनारका नामोल्लेख पाया जाता है। अमरकोषमें भी दोनार शब्द मिलता है और निष्कर्ष बराबर अर्थात् दो तोनिका माना गया है। रघुनन्दनके मतानुसार दोनार ३२ रत्ती सोनिका होता था। एकवरके समयमें जो दोनार नामका सोनिका मिला प्रचलित था उसका मान एक मिसकाल अर्थात् पाच तोनिके बन्दाज था।

हिन्दुस्तानकी तरह अरब और फारस देशमें भी दोनार नामको खण्डमुद्रा प्रचलित थी। बहुतोंका अनुमान है कि फारस और भारतवर्षको दोनार-मुद्रा सम्भवतः रोमके दिनागियमके नामसे ही प्रचलित थी। धातुव्यं पर ध्यान देनेसे भी दोनार शब्द आर्यभाषाका ही प्रतीत होता है। अब प्रश्न यह होता है कि यह सिक्का भारतमें फारस अरब होते हुए रोममें गया अथवा रोमसे इधर आया। यदि चन्द्रगुप्तका लेख तथा हरिवंश आदि संस्कृत ग्रन्थोंकी अधिक प्राचीनता स्वीकार की जाय, तो दोनारको इसी देशका मानना पड़ेगा।

दीनारी (दि० पु०) लोहारोंका उच्चारण।

दीप (सं० पु०) दीप्यते दीपयति वा स्वं परचेति दीपि वा दीप च। वर्तिस्रज्ज्वलदग्निशिखा, जलती हुई वस्त्रो, दीया, चिराग। पर्याय—प्रदीप, छेड़ाग, दीपक, कञ्चन-ध्वज, शिखातट, गृहमणि, ज्योत्स्नाहव, दग्धश्न, दीपा-तिनक, दीपास्य, नयनोक्त्व।

जलदाता द्रुमि, अमदाता पद्मय सुख, तिलदाता मनो-मत सन्तान सन्तति और दीपदाता उत्तम चतुल्लाम करते हैं। इसका विषय पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें इस प्रकार लिखा है—चन्द्रसूर्यपक्षमें तथा नर्मदा और कुक्षेत्रमें तुलापुरुषदान करनेसे जो पुण्य होता है, कार्तिक मासमें दीपदान करनेसे उससे कहीं अधिक पुण्य प्राप्त होता है। कार्तिक मासमें विष्णुके आगे जो दीपदान करते हैं उनका अश्वमेधघ्न निष्प्रयोजन है और एक दीपदान करनेसे समस्त यज्ञका फल मिलता है। जो कार्तिक मासमें विष्णुके आगे दीपदान नहीं

करते, उन्हें चारों ओरसे पाप घिर लेता है और जो करते हैं उन्हें अश्वमेध फल प्राप्त होता है। कार्तिक मासमें दीपदान करनेसे विष्णु, जैसा प्रमत्त होते हैं वैसा गयामें पिण्डदानसे नहीं होते।

“मन्त्रदीनं किशदीनं शुद्धिदीनं जनार्दन।

अथ सम्पूर्णतं यातु कार्तिके दीपदानतः॥”

इसो मंत्रसे विष्णुके आगे दीपदान करना चाहिये। वनि कार्तिक मासमें विधिपूर्वक विष्णुके आगे दीपदान करके सब पापोंसे मुक्त हुए हैं तथा स्वर्गको चले गए थे। दीपका स्वर्ग करके कोई वैधकार्य करना निषेध है, करनेसे मरणपाप होता है।

“दीपं दृष्ट्वा तु सो देवि मम कर्माणि धारयेत्।

तत्परापराधाद् भूमे पापं प्राप्नोति मानवाः॥”

(बराहपु०)

दीपार्थ छेड़ादिका नियम—घृत और तैलसे दीप प्रलुप्त करना चाहिये, दूसरे छेड़ पदार्थोंसे नहीं। (अभिनु०)

दीप द्वारा लोक जय होता है—यह तिजोमय और चतुर्वर्गप्रद है इसीसे यत्पूर्वक दीप द्वारा देवताओं की पूजा करनी होती है। दीप ७ प्रकारका है—घृत-प्रदीप, तिलतैलयुक्त प्रदीप, सार्प तैलयुक्त, फलनिर्यास-जात, राजिकाजात, दधिजात और बल्लज। यक्षसूत्रमव, दंड, गंधसूत्रमव, गणज, वादर और कोयोद्धव ये पांच प्रकारको वस्त्रो दीपकार्यमें व्यवहृत होते हैं। तैलम, टाकमय, लौहनिर्मित, स्वयमय और नारिकेलजात पात्र दीपके लिये प्रयुक्त हैं। प्रदीपका आधार तैलपादिका होना चाहिये अथवा हवके ऊपर दीपदान करना चाहिये। भूल कर भी जमीन पर दीपदान न करे, घृष्टो मय कुछ नष्ट कर सकती है; केवल दो वस्तु मटन नहीं कर सकती—एक बिना कारण पदाघात और दूसरी दीप-ताप। इस कारण घृष्टी जिससे ताप न पड़े, इस प्रकार दीपदान करना चाहिये। जो ऐसा नहीं करता उसे ताम्रताप नामक नरक होता है। शोभनवस्त्राकार वर्तिस्रज, सुच्छेड़, अमनवाचमें स्थित, सहगम, सुच्छाद्य, इस प्रकार हवकोषमें यत्पूर्वक दीपदान करना होता है। जिस दीपका ताप चार उंगलियोंको दूरीसे पाया जाय, वह दीप नहीं, वह पापवर्द्धि है। नेत्रादिका आन्नादकर,

मघ तिथियां दोचाकार्य के लिए प्रयुक्त हैं। उत्तरायण और दक्षिणायनादि नक्षत्रान्तर, चन्द्र सूर्य ग्रहण, युगाद्या तिथि और मन्वन्तरा तिथि तथा महापूजा दिन दोचाकार्य में शुभप्रद है। चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठ्योरी और षष्ठ्योरी ये सब तिथियां भी दोचाग्रहण के लिए प्रयुक्त माने गई हैं। यहां पर चतुर्थी और षष्ठ्योरी को शक्ति-दोचामें तथा षष्ठ्योरी को गणेशमन्त्रदोचाके विषयमें जानना चाहिये। दोचाके लिए सूर्यग्रहणके जैसा उत्तम समय और दूसरा नहीं है। चन्द्रग्रहण-ग्रहणकालमें वार-तिथ्यादिका विचार नहीं किया जाता। सूर्यग्रहणकालमें शक्तिदोचा और चन्द्रग्रहणकालमें विष्णुदोचा नहीं लेनी चाहिये। रुद्रयामलके घटनामुसार शिव्याके भिन्न भिन्न विद्याके विषयमें जानना चाहिये अर्थात् सूर्यग्रहणमें शिव्याका मन्त्र और चन्द्रग्रहणकालमें गोपाल मन्त्र ग्रहण कर सकते हैं। गौतमोय तन्त्रमें कहा है, कि पर्वयोगमें और चन्द्रग्रहणकालमें सभा प्रकारको दोचाएं प्रयुक्त हैं। गौतमोय तन्त्रमें तारायामलका विषय इस प्रकार लिखा है—क्षत्रपक्षको षष्ठ्योरी तिथि, शुभलग्न, पूर्वभाद्रपद नक्षत्र और मित्रतारामें दोचा ग्रहण करनी चाहिये।

चन्द्र और सूर्य-ग्रहणकालों दोचा ग्रहणका कुछ भी विचार नहीं किया जाता। सूर्यग्रहणकालमें शिव्या और दुर्गा मन्त्रग्रहण करनेसे मनुष्य सुखिलाभ करता है। यदि सोमवारको भस्मावस्था, मङ्गलवारको चतुर्थी और रविवारको सप्तमी तिथि पड़े, तो यह तिथि शत सूर्यग्रहण समान होती है, इसमें दोचादि कार्य अत्यन्त प्रयुक्त है। कुलायनमें लिखा है कि रविवारको सप्तमी, सोमवारको भस्मावस्था, मङ्गलवारको चतुर्थी और बृहस्पतिवारको षष्ठ्योरी तिथि होनेसे देवतुल्य पर्व होता है, इस कारण यह तिथि दोचाके लिये अत्यन्त प्रयुक्त है।

गङ्गादि पुण्यतीर्थ, कुरुक्षेत्र, पोखरान, प्रयाग, कैलास पर्वत और काशीक्षेत्र इन सब स्थानोंमें मन्त्र ग्रहणका कुछ भी विचार नहीं किया जाता। विष्णुयामलमें लिखा है, कि देवोंके बोधनेसे लेशर नवमी तथा जितनी तिथियां पड़ती हैं, प्रत्येक तिथिमें दोचाग्रहण करनेसे समस्त भयोद्विह होती हैं। श्रावणमासको शुक्लपक्ष

तिथि दोचाके लिए विशेष प्रयुक्त है क्योंकि इस समय जगद्भाघर घर विराजतो है। षष्ठ्योरी इस समयमें दोचा ग्रहण करनेसे यष्टि फल प्राप्त होता है, इसमें मास और नक्षत्रादिका विचार नहीं किया जाता। फिर भी लिखा है कि दुर्गादेवोंके बोधनेमें, षष्ठ्योरीकाटमौमें, रामनवमीमें तथा शुद्धे पाषाणुषार मंत्र लेनेमें कालाकालादिका विचार नहीं करना चाहिये।

उक्त किछो एक लम्ब वा तिथिमें दोचाग्रहण कर सकते हैं।

इसमेंसे जिस किसी लम्ब वा जिस किसी तिथिमें जो दोचाग्रहण को जाती है, वह दोचाग्रहण नहीं होता। मङ्गलवारको चतुर्थी पड़नेसे तथा बृहस्पति दिनमें लम्बादिकी बिना विवेचना किए ही मन्त्र ले सकते हैं। समयाचार तन्त्रमें लिखा है, कि युगाद्यतिथि, जन्मदिवस और सप्त-रायण तथा दक्षिणायन सन्क्रान्तिको दोचाग्रहण करनेमें शुभाशुभका कुछ भी विचार नहीं किया जाता। शुद्धदेव शिष्यको बुद्धा कर क्षणपूर्वक यदि दीक्षित करें, तो लम्बादि का कुछ भी विचार नहीं करना होगा। जय मन्त्रग्रहण शुद्ध स्वयं उपस्थित हो कर शिष्यको दीक्षित करें, तब समस्त वार, ग्रह, नक्षत्र और राशि शुभफल देती हैं।

दीक्षाध्यानका गिरण—गोयाला, शुद्धका भजन, देवालय, कानन, पुष्पक्षेत्र, उद्यान, नदीतीर, घासलकी और विष्वक्चक्र समीप, पर्वतपथ, पर्वतशुद्धा और गङ्गातट इन सब स्थानोंमें दोचाग्रहण करनेसे कोटिशुभ फल प्राप्त होता है। गया, भास्कराक्षेत्र, विराजातीर्थ, चट्टायामें चन्द्र-प्राथ पर्वत, मत्तकदेश और कन्यागट इन सब स्थानोंमें मन्त्र नहीं लेना चाहिए। वाराणसीतन्त्रमें लिखा है कि यदि शुद्ध अस्तगत अथवा हवास्थानें हो, अथवा यदि शुद्ध और रवि एक घरमें हो, तो मध्य, हृदिक और सिद्धिमें मन्त्रग्रहण करनेसे दोष नहीं होता। कालो तारादि महाविद्याके मन्त्रग्रहणमें कालाकालादिका विचार नहीं किया जाता। यह विषय सुण्डमासतन्त्रमें इस प्रकार लिखा है—महाविद्याका मन्त्र लेनेमें कालादिना विचार नहीं किया जाता और न अरिमन्त्रादि दोषके विचारको ही प्राथम्यता होती है। (तंत्रधार)

शोभन, चर्चित, श्रुतिपाविर्जित, सुविष्ट, शब्द-
शून्य, धूमरहित, धनति जल्व, और दक्षिणावर्त्त चर्चित-
युक्त दीपदान ही मङ्गलजनक है। दीप यदि हृत्त पर
स्थित हो और पात्र यदि स्नेह द्वारा पूरित रहे, यत्ती
यदि दक्षिणावर्त्त में अवस्थित हो कर उज्ज्वलभावसे जले,
तो वही दीप सबसे श्रेष्ठ है। इस प्रकारका दीप देव-
ताओंका तुष्टिप्रद माना जाता है। यदि इस प्रकारका
दीप हृत्त पर न हो, तो उसे मध्यम दीप और यदि उस
दोपमें तेल न रहे, तो उसे अधम दीप कहते हैं। शण-
धुव वा हृत्तको त्वक, निर्मित, घयवा जीर्ण, शल्ल वा
मलिन यत्त सज्जिताकी काममें न लाग्ना चाहिये। औ-
ष्ठिके लिए सर्वदा तुलाकी सज्जिता प्रसुत करने
चाहिये। हृत्त और तैलादि मिला कर दोपको न बालना
चाहिये। जो मनुष्य हृत्त और तैलादि मिला कर दीप
बालते हैं उन्हें तामिस्र नरकमें जाना पड़ता है। वसा,
मल्ला और अक्षि नियास प्रसुति प्राणियोंके शङ्कसमुद्भव
स्नेह द्वारा डोया जलाना निषेध है, जो ऐसा करता है
उसे मारक भुगतना पड़ता है। योष्ठिको इच्छा रखते हुए
अक्षिनिर्मित घयवा दुर्गन्धादियुक्त पात्रमें दीप रखे।
यत्तपूर्वक कमो मो मध्ययुक्त और देवताके निमित्त
स्थित दीप न बुझाना चाहिये और न ज्ञानपूर्वक घयवा
ओमादि वशीभूत हो कर उसे घुराना ही चाहिये।
क्योंकि दीप घुरानेसे भस्मा होता है और जो दीप बुझता
है वह काला होता है। (कालिकापु. ७८ अ०)

पुरुषके दीप बुझानेसे और स्त्रोके कुम्भायुद्ध हटन
करनेसे निषेध ही वंश नाम होता है। पुरुष देवदत्त
दीप बुझा सकते हैं।

कार्तिक मासकी कृष्णा चतुर्दशी तिथिकी नरकसे
कुटकारा पानेके लिये दीपदान करना चाहिये। देवता-
की दीपदान करते समय घण्टा अथवा बजाना चाहिये।

“माने धूमो तथा दीपे नेत्रेभ्यो मूषणे तथा ।

घण्टानादं प्रकीर्तयन्तीराजनेदुषि च ॥”

(विधानपारिजात)

एकादशीतत्त्वहत कालिकापुराणके वचनासुसार
देवताके निमित्त कल्पित दीपका भी बुझाना भला है।

“नेत्रं निर्वापयेद्दीपं देवायमुप कल्पितं ।

दीपहर्षावदेदग्धः कणो निर्वापको भवेत् ॥”

(एकादशीत०)

देवाय उपकल्पित दीप घुराना नहीं चाहिये, घुरानेसे
भस्मा होता है। हृत्तमङ्गितामें दीपका सत्त्व
इस प्रकार लिखा है,—वामावर्त्त, मलिन-किरण,
स्फुल्लिङ्गयुक्त और अक्षमूर्त्ति दीप विभक्त स्नेह और
चर्चितकाष्ठित होने पर भी शोभनाश प्राप्त होता है।
जो दीप क्षणमान और शब्दयुक्त होता है, विशेषरूपसे
उसकी प्रसारित शिखा होने पर भी शल्ल वा मलत्-
विहीन हो कर शोभनाश होता है। इस प्रकारका
दीप पाप फल देनेवाला है। दीपादि वंशत मूर्त्ति,
पायत तनु, कपनहोन, दोर्मिमान, निःशब्द, सुन्दर
प्रदक्षिण गति धर्यात् शिखो गति दक्षिणकी ओर हो,
वैद्युत और स्वर्ण सहस्र धातमय और वरि दीप शम्भ-
जनक माने जाते हैं। (हरदत्तदिता ८४ अ०) प्रदीप देमो।
दीपक (स० श्लो०) दीपयति दीप-पिच-यत्तुज्ज् ।
१ वाक्कावहार। इसका सत्त्व साहित्यदर्पणमें इस
प्रकार लिखा है—जहाँ प्रसुत और अप्रसुतका एक
ही धर्म कहा जाता है अथवा बहुत से ज्ञियाओंका
एक हो मारक होता है, वहाँ दीप मालहार होता है।
अप्रसुतका अर्थ ध्वंशनीय विषय और प्रसुतका अर्थ
वर्णनीय विषय है। उदाहरण—

“वकावलेपादधुनापि पूर्ववत्

प्रवाप्यते तेन जगज्जिगीषुणा ।

सती च योषिर्द प्रकृतिश्च निश्चया

धुमांश्चस्य्यति भवान्तरभवति ॥” (वाहियद०)

जगज्जिगीषुं वह, मिथुपाल पहलकी तरह (धर्यात्
पूर्व जन्ममें हिरण्यकशिपु पाटिके रूपमें जिस प्रकारका
धंसारको कट देता था) धान भी प्रहृष्टारके साथ इस
धंसारको कट देता है। सती स्त्री और निधना प्रकृतिने
जन्मान्तरमें भी उस पुरुषको पाया था। निधना
प्रकृति और सती स्त्री परजन्ममें भी उसका परित्याग
नहीं करती तथा उसका आश्रय ग्रहण करती है। यहाँ
पर वर्णनीय विषय धुमां-मिथुपाल धंसारको कट देता
है, पूर्व जन्ममें वह हिरण्यकशिपुने रावणादि रूपमें जन्म

पड़न किया था और जिस प्रकार वह संसारको कष्ट देता था, आज भी मिश्रपालके रूपमें उसी प्रकार कष्ट देता है। शिरस्थकमिषु रासवादिकी परबोद्धावधिपला प्रकृतिने इस मिश्रपाल-रूपमें जगमग्रहणके समय भी उसका परित्याग नहीं किया अर्थात् यही यहाँ पर वर्णनः य विषय हुआ। यहाँ पर वर्णनः य विषय हुआ—सतो स्तो जगन्तारमें भी उनका परित्याग नहीं करते। इन दो वर्णनीय और वर्णनीयका सर्वाभिसंबन्धके कारण दीपक चलद्वार हुआ। अनेक क्रियाओंका एक कारक होनेसे दीपक चलद्वार होता है। उदाहरण—

“दूर समागतवति स्वयं जीवनाये

मित्रा मगोमवतरेण तपस्विनी सा।

सतिष्ठति स्वयं वसिष्ठं त्वदीय

मायाति याति हसति स्वयं वसिष्ठेन ॥”

(साहित्यद)

हृदयनाथ ! तुम्हारे चले जाने पर वह दोना काम शरपोहित हो कर कभी उठती है, कभी मोती है, कभी भंगती है और कभी न वो सांस भरती है। यहाँ पर एक नायिकाके उद्यानादिके अनेक क्रियासंबन्ध हेतु दीपक चलद्वार हुआ।

तुल्ययोगितामें भी एक धर्मका कथन होता है पर वह या तो रूढ़ प्रसूती या कई प्रसूतीका होता है। दीपक में प्रसूत और प्रसूतके एक धर्मका कथन होता है। दीपक चार प्रकारका होता है—आहृतिदीपक, कारक-दीपक, माला दीपक और देहलीदीपक। आहृति दीपकमें या तो एक ही क्रियापद भिन्न भिन्न अर्थोंमें बार बार आता है अथवा एक ही अर्थके भिन्न भिन्न पद आते हैं। कारक दीपक भी ठीक इसी तरहका है। माला दीपकमें अक्षरों और दीपकका मेल होता है। देहली दीपकमें एक ही पद दो और लगता है। २ रागविशेष, महीतमें का रागोंमें एक। हनुमन्के मतमें यह कः रागोंमें दूसरा राग है। यह राग सूर्यके नेत्रोंसे निकलता है और सम्पूर्ण जानिका है तथा पड़न स्वरसे चारफर होता है। इसके गानेका समय योग्यस्तुका मध्याह्न है।

इसका स्वरप्राम यह है—स रे ग म प ध नि स।

इसकी पाँच रागिकियां माने जाती हैं—देगो, कामोदे, नाटिका, केदारी और कान्हा। पुत्र पाठ है—कुमार, कमल, कलिका, चम्पक, कुसुम, राम, लहिन और हिमाल। भरतके मतसे दीपककी पत्नियां हैं केदारा, गौरी, गौडी, गुजरी और कदापी तथा पुत्र हैं कुसुम, टट्ट, नटनारायण, विहागरा, विरोदस्त, रमसमझला, मङ्गला-एक और भट्टाना। ३ तालविशेष, एत तालका नाम। इसमें द्रुत लघु और द्रुत होते हैं। ४ प्रदोष, दीया, चिराग। ५ पक्षीविशेष, माज नामका पक्षी। ६ यमानौ, भजवायन। ७ ध्रुव, म, विसर। ८ मयूरगिरि। ९ एक प्रकारकी भातिगवाजी। (त्रि०) १० दीपकारक, प्रकाश करनेवाला, सजाला फैलानेवाला। ११ जठ-रागिकी दीप करनेवाला, पावनकी पत्नीकी तेज करनेवाला। १२ उच्च जठ, गौरीमें वेग या समग सानेवाला। दीपकमाला (सं० स्त्री०) १ दगाधरशुक्र कन्दोर्मेद। एक वर्णहस्तका नाम इसके प्रत्येक चरणमें भगण, भगण, जगण और शुक्र होता है। २ दीपकचलनकारका एक भेद।

दीपकपूरज (सं० पु०) कपूर, कपूर।

दीपकलिका (सं० स्त्री०) दीपस्य कलिकेव। १ दीप-मित्रा, दीपकी टिम। शूलपाणिज्ञान याज्ञवल्क्यसंहिता-की प्रसिद्ध टीका।

दीपकली (हि० स्त्री०) दीप मित्रा, चिरागकी ली।

दीपकहस्त (सं० पु०) १ एक प्रकारका बड़ा दीपक। इसमें दोरे रखनेके लिए कई शाखाएँ अथवा उधर निकलती रहती हैं। २ भाङ्ग।

दीपकसुत (सं० पु०) कज्जल, काजल।

दीपकाल (सं० पु०) दीया बालनेका समय, सन्ध्या।

दीपकाहृति (सं० पु०) १ दीपक चलद्वारका एक भेद। २ पनसाया।

दीपकटि (सं० स्त्री०) दीपस्य कटिः। दीपजात कज्जल, काजल।

दीपकूपी (सं० स्त्री०) दीपस्य कूपोव तैलधारकत्वाम्। दीपवर्ति, दीपकी बत्ती।

दीपखोरी (सं० स्त्री०) दीपं खोरयति गत्याघातं करोति स्थितोऽनतीति खोर गत्याघाते शिष्-पच् गोरादित्वात् खोय्। दीपकूपी, दीपकी बत्ती।

दीपकर—कुहक श्रवतारिसे एक श्रवतार ।

दीपकर श्रोत्रान्तरि—एक विख्यात बौद्ध यति । ये ८८० ई० में मोड़राज्यान्तर्गत विक्रमपुर नगरमें उत्पन्न हुए थे । इनका पाटि नाम चन्द्रगर्भ था । इन्होंने प्रवृत्त जेतारिसे शिला प्राप्त की थी । ये हीनयान श्रावकोंके त्रिपिटक, वैशेषिक दर्शन, महायान मतानुसंगियोंके तीन पिटक, साध्यमिक और योगान्तर सम्प्रदायभूत बौद्धोंके दुरुद्ध व्यायदर्शन तथा चार तन्त्रोंसे भरी भाति जानकार थे । इन्होंने तोरिणोंके शास्त्रमें भी सम्प्रदाय पारदर्शिता प्राप्त कर एक ब्राह्मणको तर्क-वितर्कमें परास्त किया था । पेरि इन्होंने सांसारिक सुखभोग विवर्जन, धर्म, ध्यान और आध्यात्मज्ञानसम्बन्धित त्रिभिन्ना नामक बौद्धोंके तन्त्रग्रन्थ पढ़नेकी इच्छा प्रगट की । इसके लिए वे क्षत्रगिरिके विहारस्थ राहुलगुप्तके पास गए । यहां बौद्धोंके गुह्यतन्त्रसे दोषित हो कर इन्होंने अपना नाम गुह्यज्ञानवन्ध रखा । उसोस वर्षकी अवस्थामें दन्तपुरीके महासाहिबाचार्य शीलरक्षितने इन्हें पवित्र बौद्धमन्दिरमें दोषित कर दीपकरश्रोत्रान्तरि उपाधिसे भूषित किया । इसीस वर्षकी अवस्थामें श्रोत्रान्तरि उद्यतम मिश्रकी पदवी प्राप्त की और धर्म-रक्षितने इन्हें बोधिसत्व मन्त्र धारण कराया । इन्होंने उस समयके समस्त बौद्धपण्डितोंसे शिला प्राप्त की थी । बाद इन्होंने बौद्धधर्मके प्रधान आचार्य चन्द्रगिरिसे शिला प्राप्त करनेकी इच्छा प्रगट की । तदनुसार वे एक वषिकपोत पर चढ़ कर सुवर्णदीपको पट्टसे और वहां बारह वर्ष तक विरुद्ध बौद्धधर्म लोख कर वन्यासनस्थ (बोधगया) महाबोधिके मठमें आ कर रहने लगे ।

अतीव दीर्घ ।

दीपचन्द्र—इन्होंने एक प्रसिद्ध कवि । इन्होंने सं० १७५० में परमात्मापुराण, चिहिलास और ज्ञानदर्पण नामक ग्रन्थ लिखे ।

दीपदान (सं० पु०) १ किसी देवताके सामने दीपक जलानेका काम । दीपदान पूजनका एक अंग सम्प्रदाय जाता है । शक्तिचक्र मण्डपमें बहुतेरे दीपक जलानेका काम जो विशेष कर राधादामोदके लिये किया जाता है । शरणासक्त यत्निका एक काम । इसमें

उसके हाथसे घाटेके अन्तर्गत हुए दीपको सङ्कल्प कराया जाता है ।

दीपदानो (सं० स्त्री०) वह द्विविधा जिनमें घी घत्तो घाटि दीया जलानेकी सामग्र्य रखी जाती है ।

दीपध्वज (सं० पु०) दीपस्थ ध्वज इव । फलज, काजल, दीपम (सं० पु०) दीप्यते इति दीप-लु । १ तगरमूल, तगरकी जड़ । २ कुङ्कुम, केसर । ३ मयूरशिखा वृक्ष । ४ शालिष्ठ शाक, एक प्रकारका माग । ५ काममर्द, कर्कोदा । ६ पलाण्डु, प्याज । ७ पाश्चात्य सङ्स्कारभेद, मन्त्रके उन दश सङ्स्कारोंमेंसे एक जिनके बिना मन्त्र सिद्ध नहीं होता । जनन, जोषण, तोड़न, बोधन, अभिषेक, चिमनीकरण, आध्यायन, तर्पण, दीपन और गुग्नि दे हो दश मन्त्रके सङ्स्कार हैं । ८ प्रकाशन, प्रकाशित करनेका काम । ९ रसेश्वरदर्शनके अनुसार पारेका सानवा सङ्स्कार । १० जठराग्निकी तीव्र करनेकी क्रिया, भूषणको उभारनेका काम । ११ उत्सर्जन, आवेग उत्पन्न करना । (वि०) १२ दीपयिता, दीपन करनेवाला ।

दीपमग्न (सं० पु०) जठराग्निकी तीव्र करनेवाली पदार्थोंका वर्ग । इस वर्गके अन्तर्गत चीता, धनिया, अजमोदा, जीरा, राजखैर इत्यादि हैं ।

दीपनी (सं० स्त्री०) दीप्यते जठरवह्निरनयाः दीप-लुच्-लुट् स्त्रियां डोप-लुट् स्त्रियां, भियो । १ यमानो, अजवायन । २ पाठा । ३ कर्कटिका, ककड़ी ।

दीपनीय (सं० पु०) दीप्यते जठरवह्निरनेन टोप-लुच्-लुट् स्त्रियां, भियो । १ यमानो, अजवायन । २ औषधवर्ग विशेष ।

दीपनग्न दीपो (वि०) १ दीपनयोग्य । ४ सत्सजने योग्य ।

दीपनीया (सं० स्त्री०) यमानो, अजवायन ।

दीपनोद्योष (सं० स्त्री०) धान्येय औषध ।

दीपपादप (सं० पु०) दीपस्थ पादप इव । दीपवृक्ष, दीपट ।

दीपपुष्प (सं० पु०) दीप इव पुष्प इव । चम्पक वृक्ष, चंपा ।

दीपभाजन (सं० स्त्री०) दीपस्थ भाजन इतत् । दीपपात्र । दीपमाला (सं० स्त्री०) दीपानां माला इतत् । श्रेणी-भूत दीप, जलते हुए दीपोंकी पंक्ति ।

दीर्घश्रिमिक (सं० पु०) दीर्घा श्रिमिक यसा कप ।
चव, एक प्रकारकी राई ।

दीर्घशूक (सं० पु०) दीर्घः शूकः अग्रं यसा । शालिभेद,
एक प्रकारका धान ।

दीर्घशूकक (सं० पु०) दीर्घं शूकं यसा कप ।
राजाय, अंध देशके भामन धानको राजाश्रक कहते हैं ।
दीर्घश्मयु (सं० त्रि०) दृढश्मयुक्त, जिमकी बड़ी बड़ी
ढाढ़ो हो ।

दीर्घश्वस (सं० पु०) दीर्घं श्वो यसा । दीर्घं तमा
अपिने एक पुत्रका नाम । इन्होंने अनाहृष्टि होने पर
जीविकाके लिये वाणिज्य कर लिया था जिनका सर्वोत्तम
प्रत्येदम् है । (पु०) २ दीर्घकर्ण, लंबा कान ।
(त्रि०) ३ दीर्घकर्णयुक्त, जिसके लंबे कान हों ।

दीर्घश्रुत (सं० त्रि०) १ जो दूर तक सुनाई पड़े । २ जिस
का नाम दूर तक विख्यात हो ।

दीर्घसक्त (सं० त्रि०) दीर्घं सक्तयिनी यसा बहुलो
स्वाहात् च । दीर्घा, जिनकी जांच लंबी हो ।

दीर्घसत्त (सं० स्त्री०) दीर्घं बहुकालसाध्यं सत्त । १ यंत्र-
विषय, एक यंत्र जो बहुत दिनोंमें समाप्त होता था ।
२ तीर्थविषय, एक तीर्थका नाम । इस तीर्थमें ब्रह्मादि
देवता और परमार्थसिद्धि आदिने यथानियम वास किया
था । इस तीर्थमें केवल जानिसे ही अश्वमेध और राज-
सूययज्ञका फल प्राप्त होता है । (भारत ११.३१.०४)
३ यावज्जीवन कर्त्तव्य अग्निहोत्र यज्ञ । (त्रि०) ४
दीर्घसत्त यज्ञकर्त्ता, जिसने दीर्घसत्त यज्ञ किया हो ।

दीर्घारण्य (सं० स्त्री०) दीर्घं अरण्यं । निविड वन,
घना जङ्गल ।

दीर्घालक (सं० पु०) दीर्घालक इव । खेतमन्दा-
रक दृष्ट, संक्षेप मदार ।

दीर्घाश्र (सं० त्रि०) दीर्घं आश्रं यसा । १ आश्र-
मुख, बड़े मुखवाला । (पु०) २ शिवांशुवरमेद, शिव-
के एक अनुचरका नाम । ३ हम्पी, हाथो । दीर्घ आश्रं
यत्र देश । ४ पश्चिमोत्तर देशभेद ।

दीर्घाहन् (सं० पु०) दीर्घाणि अहन्ति यत् । निद्रास
समय, योगकाल ।

दीर्घिका (सं० स्त्री०) दीर्घं दीर्घां अत्रावां कन् टाप् ।

अत इत्वं । १ अंलाययमेद, बावली, छोटा तालाब ।
किसी किसीके मतसे २०० धनुष लंबे अंलाययको
दीर्घिका कहते हैं । २ अंलाययमात्र । ३ छिद्रपत्र ।
दीर्घावर (सं० पु०) दीर्घां अवरः । उद्गरोन्मत्ता, लंबी
ककड़ी । २ महालाघु, बड़ा कद्दू ।

दीर्घाचारण (सं० स्त्री०) दीर्घं चचारणं । गुरु सचारण ।
दीर्घ (सं० त्रि०) दृ-विदारि ल । विदारित, फटा हुआ,
टरका हुआ ।

दीघट (हिं० स्त्री०) दीघा रखनेका आधार जो पातल,
लकड़ी आदिका बना होता है, शिरागदान ।

दीवान (सं० पु०) १ राजसभा, दरबार । २ मंत्री,
बजीर । ३ गजलों के संग्रहकी पुस्तक ।

दीवानघाम (सं० पु०) १ घाम दरबार । २ घाम दर-
बार लगानेका स्थान ।

दीवानदागा (फा० पु०) बड़े पादमोके बैठने तथा सब
लोगोंसे मिलनेका घरका बाहरी कमरा ।

दीवानखालसा (सं० पु०) वह कर्मचारी जिसने पास
राजा या बादशाहकी सुहर रहती है ।

दीवानखास (सं० पु०) १ खास दरबार । २ खास दर-
बार लगानेका मकान ।

दीवाना (फा० वि०) विचित्र, पागल ।

दीवानापन (फा० पु०) विचित्रता, पागलपन ।

दीवानो (फा० स्त्री०) १ दीवानका पद । २ सम्पत्ति
आदि सबको खर्चका निर्णय करनेका न्यायालय ।
(वि०) ३ पगलो, बावली ।

दीवार (फा० स्त्री०) १ प्राचीर, भीत । २ ऊपर उठा हुआ
किसी वस्तुका घेरा ।

दीवारगीर (फा० स्त्री०) दीघा आदि रखनेका आधार
जो दीवारमें लगाया जाता है ।

दीवारगीरो (फा० स्त्री०) दीवारमें लगाये जानेका छपा
हुआ कपड़ा, पिछवाई ।

दीवाल (हिं० स्त्री०) दीवार देखो ।

दीवालदण्ड (हिं० पु०) एक प्रकारकी कमरत । यह
दीवार पर हाथ टिका कर की जाती है ।

दीवाला (हिं० पु०) दीवाल देखो ।

दीवाली (हिं० स्त्री०) एक उत्सव जो कार्तिककी अमा-

दीपमासी (‘हि० स्त्री०’) दीवांसी ।

दीपवत् (‘म० त्रि०’) दीप चत्त्वयं मनुष्य मन्त्र व । दीप-
युक्त गृहादि, जिसके घरमें दीप जलते हैं ।

दीपवती (‘म० स्त्री०’) दीपवत् स्त्रियां डोप । कामाख्या-
स्थित नदीविशेष । यह शाश्वती नदीके पूर्वमें अवस्थित
है और हिमालय पर्वतसे निकलती है । यह नदी
दीपकी नाई चम्पकार दूर करती है, इसीसे देव-मनुष्य
समाजमें इसका नाम दीपवती हुआ है । इसके पूर्वमें
गुप्ताट-नामका एक प्रतिष्ठ पर्वत है । (कालिकापुराण ८२।३)

दीपवृक्ष (‘म० पु०’) दीपस्य वृक्ष इव आधारः । दीपा-
धार, दीपट, दीपट । इसका पर्याय—दीपतर ज्योत्स्ना
वृक्ष और दीपपादप है ।

दीपगन्ध (‘म० पु०’) दीपस्य गन्ध इति । कीटभेद,
पतंग, फलिंग ।

दीपगिर्या (‘म० स्त्री०’) दीपस्य गिर्या कारणत्वेन
अस्त्यस्याः चट्टाप । १ चल्चल, काजल । दीपस्य
गिर्या । प्रदीप ज्वाला, चिरागकी लौ ।

दीपगृहला (‘म० स्त्री०’) दीपानां गृहस्थेव । दीपांशो,
दीवांसी ।

दीपमञ्च (‘म० पु०’) चित्रकहच, चीता ।

दीपहत (‘म० पु०’) कलस, काजल ।

दीपान्नि (‘म० पु०’) आचका एक परिमाण जो धूमाग्निसे
चौगुना माना जाता है ।

दीपान्वित (‘म० त्रि०’) दीपैः श्रितः । दीपयुक्त ।

दीपान्विता (‘म० स्त्री०’) कार्तिक मासकी अमावस्या
जिसके प्रदीपकालमें लक्ष्मीका पूजन और दीपदान चाहिये
होता है, दीवाली । इस दिन लक्ष्मीका पूजन किया
जाता है और यथाशक्ति घरमें भीतर, बाहर, पथ, हाट,
अग्राम, नदीतटकी दीधमालासे सजाते हैं । सूर्यके
तुलारामिमें कानिसे अर्घ्यात् कार्तिक मासकी अमावस्या
तिथिकी नाना प्रकारके उपकरणों द्वारा पार्वणयाह
करे और अथरात्र समयमें रात्रा नगरके मन्त्र किसीसे
लक्ष्मीपूजा तथा उत्सवादान करनेकी घोषणा करे ।

सप्तमीरात्री स्मरणा ।—यदि अमावस्या दो दिन
पड़े, तो प्रदीप धार्मिक द्वारा समयका नियंत्रण करना
होता है अर्थात् जिस-दिन अमावस्याका प्रदीप अस्म्य हो

उसी दिन लक्ष्मीपूजा होती है । इसका प्रमाण—

“द्विजाधिरक्षसहर्षागौ प्रदीपे भूतदण्डयोः ।

उत्सवा इत्या नराः कुपुः पित्र्यां प्राणैर्दण्डेनम् ॥”

(शिवित०)

किन्तु यदि प्रदीप दोनों दिन पड़े, तो दूसरे दिन
लक्ष्मीपूजा करना चाहिये । इसका प्रमाण—

“उभयवत् प्रदीपप्राप्ते परदिन एव पुनराव ।

दं देवैकवर्जनीयोगो दर्शास्य स्वात् परेऽहनि ।

तदा विहाय पूर्वम् पुनरिह सुखरात्रिका ॥”

(शिवित०)

दोनों दिन प्रदीपप्राप्ति होनेसे दूसरे दिन लक्ष्मीपूजा
होगी । अमावस्या यदि दूसरे दिन एक दण्ड रात तक
रहे, तो पूर्व दिनका परित्याग कर परदिनमें लक्ष्मीपूजा
विधाय है । इसका नाम सुखरात्रिका है । यदि दो दिन
प्रदीपकी प्राप्ति न हो, तो पार्वणयाहके अनुसार दोहरे दूसरे
दिनमें उत्सवादान और पूर्व दिनमें लक्ष्मीपूजा होगी ।

“अमावस्या यदा रात्रौ विषममे चतुर्दशी ।

पूर्वनीया तदा लक्ष्मीर्दिक्षेया सुखरात्रिका ॥”

(शिवित०)

दोनों दिन प्रदीप नहीं पानेसे उत्सवादान पार्वण-
याहके अनुसार दूसरे दिन करना होगा । भूत-चतु-
दशीके दिन जो मुख्य उत्सवादान करता है, उसको पित्र-
गण निराह हो उसे दाक्ष माप देकर चले जाते हैं ।
इसमें लक्ष्मीके लिए उत्सवादानकी अवश्य कल्पित है । जिस
दिन पित्रगणके उद्देशसे पार्वणयाह किया जायगा
उसी दिन उत्सवादान विधाय है । इसी कारण दूसरे
दिन पार्वणयाह किये जाने पर उसी दिन शामकी
उत्सवादान करना होता है और पूर्व दिन लक्ष्मीपूजा ।
कारण यदि रातकी अमावस्या पड़े और दिनमें चतुर्दशी
रहे, तो उसी दिन रातकी लक्ष्मीपूजा करना होगा इसी
का नाम सुखरात्रि है । पित्रकृत्यके कारण दक्षिणकी
ओर प्राचीनासीत हो उत्सवादान करना चाहिये ।
उत्सवाप्रवृत्तिका मंत्र—

“सुखाद्वाहतामर्च भूतानां भूतदण्डयोः ।

सज्जकज्योतिषा देहं दहेयं योगवर्द्धना ॥”

उत्सवादानका मंत्र—

यमामें होता है। इसमें शामको घरमें भीतर बाहर बहुत-से दीप जला कर पत्तियोंमें रची जाते हैं और भस्मीका पूजन होता है। जिस दिन प्रदोषकालमें समावसा रहैगी, उसी दिन दीवासी होती है और सन्धीकी पूजा की जाती है। जब समावसा लगातार दो दिन प्रदोष-कालमें पड़ती है तब दूसरे दिनकी रातको दीवासी मानो जाती है और यह रात सुवरात्रिका कहलाती है। यदि समावसा प्रदोषकालमें न पड़े, तो प्रथम दिन सन्धी-पूजा और दूसरे दिन दीपदान होता है; क्योंकि पार्वण-याह उसी दिन होता है। इस दिन लोग चक्कर लगा देना करती हैं।

दीर्घमलौ (स० पु०) दीर्घसत्रकारी, वह जिसमें दीर्घ-मल यज्ञ किया हो।

दीर्घसुरत (स० पु०) दीर्घ बहुकालवशात्क सुरतं यस्य। १ कुङ्कुम, लुप्ता। २ गूकर, सुपर। (त्रि०) १ पायत सुरत, देरतक रति करनेवाला।

दीर्घसुप्त (स० पु०) दीर्घशासी सुप्तेति। प्राचा-यामभेद।

दीर्घसूत्र (स० त्रि०) दीर्घेण बहुकालेन सूत्रं कार्या-रम्भः यस्य। १ चिरक्रिय, प्रत्येक काममें बिलम्ब करने-वाला।

मास्यपुराणमें लिखा है, कि सभी काम जल्दी करना चाहिये। यदि राजा दीर्घसूत्र हो तो उसकी बहुत खराबी होती है, किन्तु राग, काम, क्रोध, पापकार्य और अग्रिय कर्ममें दीर्घसूत्र हो अवलम्बन करना चाहिये, अर्थात् इन सब दुष्कर्ममें दीर्घसूत्री होनेसे ये सब काम नहीं हो सकते, इसीसे उक्त कर्मोंमें दीर्घसूत्रका विधान है। जो मनुष्य किसी उपस्थित कार्यके कारणोंसे देर लगाते अथवा पाससे दूसरे दिनके लिये छोड़ देते हैं, उन्हें दीर्घसूत्र कहते हैं। जो अपने स्वयं चाहते हैं, उन्हें यत्नपूर्वक दीर्घसूत्रताका परिहार करना चाहिये। दीर्घसूत्र होनेसे कदापि स्वयं प्राप्त नहीं कर सकते हैं। (लो०) २ दीर्घसूत्र, लम्बा सूत्र।

दीर्घसूत्रता (स० स्त्री०) दीर्घं सूत्रस्य भावः दीर्घसूत्र-तम्-टाप्। चिरक्रियता, प्रत्येक काममें बिलम्ब करने-की आदत।

दीर्घसूत्री (स० त्रि०) सूत्रं बहुकालं व्याप्य कामारम्भोत्पत्त्यं दीर्घं सूत्र-इति। दीर्घसूत्र, देरमें काम करनेवाला।

दीर्घस्वयं (स० पु०) दीर्घः स्वयं यस्य। तात्तुल्य, ताड़का पेड़।

दीर्घस्वर (स० पु०) दीर्घः स्वरः। दीर्घ देखो।

दीर्घा (स० स्त्री०) दीर्घ-टाप्। सुविपरी, पिठयन।

इमका प्रयाय—पृथक्पर्वी, माङ्गुली, कौटुमुष्किडा, धामनि, कनसी, तन्वी, गूषा, कौटुक मेघना, दीर्घा, मृगान्विषा, ओषधी, निम्बपुच्छिका, दीर्घपत्रा, चति-सुहा, दृष्टिमा और चित्रपर्विका है।

दीर्घाङ्गुर (स० पु०) राजमासी, राजाङ्ग।

दीर्घाङ्गी (स० स्त्री०) शासपर्वी।

दीर्घाङ्गु (स० स्त्री०) शासपर्वी।

दीर्घाध्वज (स० पु०) दीर्घं धावतं प्रधानं गच्छति गम-ञ्छ। १ पत्रवाङ्क। २ चट्ट, लट।

दीर्घाङ्गु (स० त्रि०) दीर्घं धावुयंस्व। १ चिरजीवी, बहुत दिनों तक जीनेवाला। (पु०) २ शासनको हथ-सेमरका पेड़। ३ काक, कोवा। ४ मार्कण्डेय। ५ जौनक हथ।

दीर्घाङ्गुल (स० स्त्री०) दीर्घाङ्गु देखो।

दीर्घाङ्गुध (स० पु०) दीर्घः धावुधः। १ लुप्ताङ्ग। दीर्घं धावुधो इव दण्डो यस्य। २ गूकर, सुपर।

दीर्घाङ्गुष्ठ (स० पु०) दीर्घाङ्गुधो भवः दीर्घाङ्गुष्ठ-इति। बहु-काल धावु, बहुत दिनों तक जीवित रहना।

दीर्घाङ्गुण (स० पु०) दीर्घं धावुणं जीवनं यस्य। १ द्यौत-मन्दारक, सफेद मदार। (त्रि०) २ दीर्घाङ्गुल, जिसकी धावु बढ़ी हो।

दीर्घाङ्गुम (स० पु०) दीर्घं धावुयंस्व। दीर्घाङ्गुमवुल, चिरजीवी, वह जिसकी धावु बढ़ा हो, बहुत दिनों तक जीनेवाला मनुष्य।

समुत्तममें लिखा है कि जिसके गरीरमें गिरा, धावु वा सन्धि गूढभावसे निहित हो जिसका अंग प्रत्येक परस्पर दृढ़रूपसे मीट्ट हो; सभी दृष्टियाँ किर हो और गरीर सभरोसर सुदृढ होता जाता हो, वही मनुष्य दीर्घाङ्गु है। जो जन्मकाष्ठसे ही पदरोग हो, जिसके गरीर का ज्ञान और विज्ञान दिनों दिन बढ़ता जाता हो, वही

“अग्निदग्धाथ ये जीवा वेद-उदग्धाः कृते मम ।

उज्ज्वलज्योतिषा दग्धास्ते यास्तु परमां गतिं ॥”

उल्काविसर्जनका मंत्र—

“यमलोके परित्यज्य मागता ये ममान्ये ।

उज्ज्वलज्योतिषा दग्धे प्रयन्तो ब्रह्मन् ते ॥”

इसी मंत्रमें उल्काग्रह का दान और विसर्जन करना होता है। इस दिन रात और आसुरिक सिद्धांत कालों के दिनमें न खाना चाहिये। प्रदोषके समय यथाविधान लक्ष्मीपूजा करके देवताके घरमें दीपग्रह प्रदान करे और पीछे चतुर्पथ, श्मशान, नदी, पर्वत, सानु, हृषमूल, गोष्ठ, चत्वर, गृह और ज्ञान-विक्रय स्थानको दीप पंक्तिसे अच्छी तरह सुशोभित करे। इस प्रकार चारों ओर रोशनी करनेका नाम दीवाली है। शुक्लप्रदशमें यह त्योहार खूब धूमधामसे मनाया जाता है।

दीपान्विता अमावस्याके दिन लक्ष्मीपूजाप्रयोग—घरमें उत्तराशुकी ओर लक्ष्मीका पूजन करे। पहले खासि-वाचन करके सङ्कल्प करे। “ॐ तद्दसद् भो भवोत्यादि भक्तु गोत्र भक्तु देवर्षाम परम विभूतिलाभकामः लक्ष्मीपूजनमहं करिष्ये” इस प्रकार सङ्कल्प करके माल-धाम या घटादिख जलसे लक्ष्मीपूजा करे। ‘पाशाच’ श्रद्धादि मंत्रसे ध्यान करके यथागति, दग्ध या योद्धृगोप-चारसे पूजा करनेका विधान है। अनन्तर—

“भो नमस्ते सर्वे देवानां वरदासि हरिप्रिये ।

या गतिस्तव प्रपन्नानां मा मे भूयास्तवर्धनात् ॥”

इस मंत्रसे तीन बार मुष्पाङ्गली छे कर निम्नलिखित मंत्रसे प्रणाम करे।

“भो विरहपत्य माश्रयि पश्य पद्माक्षये शुभे ।

सर्वतः पादि मां देहि महाद्विष नमोऽस्तु ते ॥”

इसके बाद कुबेरादिका पूजन करना होता है। पूजा की जानेके बाद घरमें दीप जलावे हैं। दीपका मंत्र—

“अग्निज्योतिः श्विज्योतिश्चन्द्रज्योतिस्तथैव च ।

वस्तुमः सर्वे ज्योतिर्नां दीपोऽयं प्रतिग्रह्यतां ॥”

बाद-ब्राह्मण और मनुस्मृतियोंकी खिचापिटा कर सङ्कल्प भोजन करती हैं। लक्ष्मीपूजा देखो।

फाली कुलधर्म नामक सांख्यिकग्रन्थके मतसे—

Vol. X. 120

इस दिन महाभिषाको कालीपूजा की जाती है। विशेष विवरण इगामा ग्रन्थमें देखो।

दीपाली (सं० स्त्री०) दीपानां आलो। दीपश्रेणी, जलते हुए दीपकी पंक्ति।

दीपावती (सं० स्त्री०) रागिणीविशेष। यह दीपक और सरस्वतीके योगसे उत्पन्न हुई है।

दीपावलि (सं० स्त्री०) दीपानां आवलिः ६-तत्। १ दीप-श्रेणी, दीपोंकी पंक्ति। २ दीपाली।

दीपिका (सं० स्त्री०) दीपयति प्रकाशयति दीप-पिच-पुष्प, टापी अत इत्वं। १ महिम्नापमोय शोनिवासकृत ज्योतिर्धन्य। २ रागिणीविशेष। यह रागकी पत्नी मानी जाती है और प्रदोषकालमें गाई जाती है। (त्रि०) १ प्रकाश करनेवाली, उजाला फैलानेवाली।

दीपिकातैल (सं० स्त्री०) तैलशोधनमद्। इसको प्रसृत प्रचाली—देवदार, सखई या चोड़की सात पाठ अंशुल लक्ष्मी लकड़ीकी सेती और सगे दूध आदिसे छलनी-की तरह चारों ओर छिद्र करते हैं। फिर उसमें रश्मि लपेट कर तैलमें खूब डुबावे और बत्तीको तरह जलाते हैं। इस प्रकार प्रज्वलित बत्तीमेंसे जो गरम गरम तैल बूंद बूंद गिरता है, उसीका नाम दीपिकातैल है। कामका दर्द दूर करनेके लिये यह तैल बहुत उपकारी है॥

दीपित (सं० त्रि०) दीपयतीति दीप-पिच-पुष्प। १ दीप्ति-कर्त्ता, प्रकाश करनेवाला। २ प्रकाशित, प्रज्वलित। ३ चमकता हुआ। ४ उत्तेजित।

दीपीय (सं० त्रि०) दीप अपूपदित्वात् द्वितीयं क्। दीपेयित।

दीपोक्षव (सं० पु०) दीपैरुक्षवः। १ दीपसेतुक उक्षव, दीवाली। २ दीपान्विता अमावस्या।

दीप (सं० त्रि०) दीपः। १ प्रकाशान्वित, जगमगाता, हुआ। २ प्रज्वलित, जलता-हुआ। (स्त्री०) १-स्वयं, सोना। ४ हिङ्, धौग, ५ निमनुक, नीवू। ६-सिंह। ७ नासिकागत रोगविशेष, नाकका एक रोग। ८ इसमें नाकसे भापकी तरह गरम गरम हवा निकलती है और मधुमेहि जलन होती है। (त्रि०) ७ उज्ज्वल, सफेद। ८ आलोकमय, प्रकाशमय।

भी दीर्घायु समझना चाहिए। चिकित्सकको चिकित्सा करते समय यह ज्ञान लेना परमावश्यक है कि रोगी अस्वास्थ्य है या दीर्घायु। दीर्घायुके निरूपणके विषयमें सुश्रुतमें और एक जगह इस प्रकार लिखा है—जिसके हस्त, पाद, पात्र, घट, स्नानके अवभाव, दशन, वदन, स्नान और सलाट विद्युत् हो; जंगुलिके पर्व, वच्छास, बाहु और चक्षुर्दीर्घ हो; भ्रू और दोनो स्नानके मध्य तथा वक्षस्थल विस्तीर्ण हो; जह्वा, भेटू तथा शीवा ऊँच हो; नाभि और वृद्धि गभीर हो दोनो स्नान चतुष्टय और दृढ़ भाव गठित हो; कर्ण दीर्घ लोमो से विशिष्ट हो, मस्तिष्क मस्तकके पद्याङ्गामें हो तथा ज्ञान और मनुष्य-पन करनेसे जिसका शरीर मस्तकसे निम्नभाग तक क्रमशः शुष्क हो जाय और सबके अन्तमें हृदयदेश शुष्क हो, उसी मनुष्यको दीर्घायु समझना चाहिए।

दीर्घास—गौड़ ब्राह्मण सभ्रादायका एक भेद। इस नामके ब्राह्मणोंकी लोकसेवा वीकाने, मारवाड़ और नाथ-द्वारमें अधिक पाई जाती है। राजपूतानेमें देवास नामका खेट है, वहाँसे ये लोग उपर्युक्त स्थानकी चली पाये और देवास वा दीर्घास नामसे प्रसिद्ध हुए।

दोवि (सं० पु०) नीलकण्ठ नामका पक्षी।

दीनना (हिं० क्रि०) दृष्टिगोचर होना, दिखाई देना।

दोसा—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत गुजरात प्रदेशके पालनपुर राज्यका एक शहर और अंगरेजों सेनानिवास। यह अक्षां २४° १४' ३०" उ० और देशां ७२° १२' ३०" पू० माननगरसे ३०१ मील उत्तर-पश्चिम नीमचरसे २५१ मील पश्चिम तथा बम्बईनगरसे ३८० मील उत्तर बानन नदीके किनारे अवस्थित है। पहले इस शहरका नाम फरीदाबाद था। शहरसे उत्तर-पश्चिम ३ मील की दूरी पर बानन नदीके किनारे अंगरेजों सेनानिवास है। पूर्व समयमें यह शहर सुट्ट प्राचीरसे घिरा था और बरीदा गायकवाड़ तथा राधनपुरकी सेनाके आक्रमणसे यह जरा भी नष्ट भ्रष्ट न हुआ था। अभी यह प्राचीर कई जगह टूट फूट गया है। यहाँ छाकसर और टेलिग्राफ-आफिस है।

दुंका (हिं० पु०) छोटा कण, कन, दाना।

दुंगरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका मोटा कपड़ा।

दुंद (हिं० पु०) १ युद्ध, भयङ्ग। २ युग्म, जोड़ा। ३ जघम, उरगत, हलचल। ४ दुंदुभि, नगाड़ा।

दुंवा (फा० पु०) पञ्चाव और काश्मीरसे ले कर अफगानिस्तान तथा फारस तकमें मिलनेवाला एक प्रकारका भेदा। इसकी दुम चकोके पाटको तरह गोल और भारी होती है। इसका जल बहुत उमड़ा होता है। दुंवाल (फा० पु०) १ चोड़ी पूँछ। २ नावकी पतवार। ३ जहाजका पिछला हिस्सा।

दुर्गुर-हिमालयके किनारे सेनाबने ले कर पूरवकी ओर होनेवाला एक प्रकारका पेड़। यह गूनरको जातिका होता है। बङ्गाल, उड़ीसा और बरमाको नदियों या नालोंके किनारे भी यह पेड़ देखनेमें आता है। इस पर साख पाई जाती है। इसके किल्लेकी रेशोंसे छपरको काँड़ो घान पादि बाँधी जाती है। इसके फल वर्षा-ऋतुमें पकते और खाये जाते हैं। फल तो देखनेमें अच्छे मालूम पहने पर स्वाद फोका होता है। इसके पत्ते कुछ लवरे होते हैं और काठ माजनेके काममें आते हैं।

दुःकुल (सं० पु०) चोर नामक गन्धद्रव्य।

दुःख (सं० स्त्री०) दुः, दुष्ट, खनतीति खन-ड वा दुःखय-तोति दुःख अच्। १ संसार। २ व्याधि, रोग, बीमारी। ३ कष्ट, श्लेश, तत्कलोक। [पर्याय—व्याधा, अमानस्य, प्रसूतिज, कष्ट, कष्ट, आभोल, अग्नि, आर्त्ति, आर्त्ति, पौडन, अवाधा, वाधन, आम-नस्य, आमानस्य, विवाधन, पौडिन और विह्वलन] ये सब सब दुःखद हैं—पारतन्त्र्य, दूसरेके अधीन रह कर जीवन धारण करना, आधि (मानसिक श्लेश), व्याधि, मानस्युति, शत्रु, कुर्माया, नैःस्व, धनराहित्य, कुप्राप्त-वास, कुस्वामिसेवन, बहुकन्या, दुर्दल, पररुद्धवास, वर्षाप्रवास, भार्याहय, कुस्व, दुर्दलकरणक हादि और कविकल्पलता ये सब मनुष्योंके दुःखप्रद हैं। ४ आख्यादि मतसिद्ध प्रतिकूल वेदनीय रजोकार्य चित्त-धर्मभेद। न्याय और वैशेषिक दर्शनके मतसे दुःख आत्माका धर्म है और सांख्य वेदान्त आदि दर्शन शास्त्रोंमें दुःखको बुद्धि-धर्म अर्थात् चित्त-धर्म मतलया है।

दीप्तक (मं० स्त्री०) गुंडकांश धातु, खड्ग कांश ।
 दीप्तक (सं० स्त्री०) दीप्तमेव स्वार्थे कन् । स्वर्ण, सोना ।
 दीप्तकिरण (मं० पु०) दीप्ताः किरणाः यस्य । १ सूर्य ।
 २ चक्रे वृत्त, भाक, मंदार ।
 दीप्तकीर्त्ति (सं० त्रि०) दीप्ता कीर्त्तिर्यस्य । १ प्रकाश-
 मान यस्यस्य, जिसका प्रकाश बहुत दूर तक फैल गया हो ।
 २ कात्तिर्केय ।
 दीप्तकेतु (मं० पु०) १ नृपभेद, एक राजाका नाम । २ दक्ष-
 सावर्णि मनुके एक पुत्रका नाम । दीप्ताः केतुः कर्मधा० ।
 ३ दीप्तध्वजा । दीप्ताः केतु र्यस्य । (त्रि०) दीप्त ध्वजक,
 जिसको ध्वजा प्रदीप्त हो उसे दीप्तकेतु कहते हैं ।
 दीप्तजिह्वा (मं० स्त्री०) दीप्ता जिह्वा यस्य । उल्का-
 सुवी शृगाली, माटा गोदह, सियारिल । गोदहकी सुईका
 भगना भाग कुछ काला होता है, इसीसे इसका नाम
 उल्का या सुपाठा सुल पड़ा है । उल्काका दूसरा पद
 जलता हुआ पिण्ड या प्रकाश है । इसी अर्थसे दीप्तजिह्वा
 नाम रखा हुआ जान पड़ता है ।
 दीप्तपिङ्गल (सं० पु०) दीप्तपिङ्गलस्य दीप्ता स्वर्णं तद्वत्
 पिङ्गलो वा । सिंह ।
 दीप्तपुष्पा (सं० स्त्री०) नाइलो वृक्ष, कनियारी ।
 दीप्तमूर्त्ति (मं० त्रि०) दीप्ता मूर्त्तिर्यस्य । १ प्रकाशान्वित
 मूर्त्ति, जो मूर्त्ति बहुत सफेद हो । (पु०) २ विष्णु ।
 दीप्तरस (मं० पु०) दीप्त उज्ज्वलः रसो यस्य । किच्छुलक,
 कंजुषा । रातन समय चंघरेमें कंजुषके शरीरके रससे
 एक प्रकारकी चमक निकलती है, इसीसे इसका नाम
 दातरस पड़ा ।
 दीप्तरौम (सं० पु०) विश्वदेवभेद, एक विश्वदेवका नाम ।
 दीप्तलोचन (सं० पु०) दीप्ते लोचने गमने यस्य । विहास,
 शिरी ।
 दीप्तलोह (सं० स्त्री०) दीप्ता लोहमिव । १ कांस्य, कांसा ।
 २ ज्वलित लोह, तपाया हुआ लाल लोहा ।
 दीप्तवर्ण (सं० त्रि०) दीप्ता स्वर्णमिव वर्णो यस्य । १
 स्वर्णस्य, जिसका वर्ण सोनेसा चमकता हो । (पु०)
 २ कात्तिर्केय ।
 दीप्तशक्ति (सं० त्रि०) दीप्ता शक्तिर्यस्य । १ प्रकाशमान
 सामर्थ्य, जिसका प्रभाव बहुत फैल गया है । (पु०) २
 कात्तिर्केय ।

दीप्तांश (मं० पु०) दीप्ता अंशोऽस्यां । १ सूर्य । २ चक्रे-
 वृत्त, भाक, मंदार ।
 दीप्ता (सं० स्त्री०) दीप्ता-टाप् । १ लाङ्गलिका वृक्ष,
 कनियारी । २ ज्योतिष्मती सता, मानकंगनी । ३ मातना
 नामक वृक्ष । (वि०) ४ प्रकाशयुक्ता, चमकती हुई ।
 ५ सूर्यसे प्रकाशित ।
 दीप्ताद्य (सं० पु०) दीप्ते पक्षिणो यस्य । १ विहास,
 विह्वो । (त्रि०) २ दीप्तिशोचनावित, उज्ज्वल पक्षि गृध्र,
 जिसको पक्षि चमकती हो ।
 दीप्ताग्नि (मं० पु०) दीप्ताः पग्निर्यस्य । १ पगल्यमूर्ति ।
 रत्नेन समुद्रकी पो लिया या घोर वाताय नामक रास्य-
 को पचा डाला या, इसीसे इसका नाम दीप्ताग्नि पड़ा
 है । अगस्त्य देखो । (त्रि०) २ दीप्तजठराग्निमुक्त,
 जिसको पावनशक्ति बहुत प्रबल हो । ३ प्रबलित
 पग्नि, जिसकी भूख जगो हो, भूखा ।
 दीप्ताह (सं० त्रि०) दीप्ता पद्म यस्य । २ दीप्तिमुक्त देह,
 जिसका शरीर चमकता हो । (पु०) २ मयूर, मोर ।
 दीप्ति (सं० पु०) दीप्तिर्यस्य । दीप्ता, उज्ज्वल, रोशनी ।
 इसका पर्याय—प्रभा, रश्मि, रश्मि, त्रिप, भा, भाव, कवि,
 श्रुति, रोचिष, घोर रोचि है । २ स्त्रियोंका चयनज
 शुभ ।
 चयनशोभ, देवकास घोर गुणादिवारा जो कान्ति
 बहुत सहोम होती है, उसीकी दीप्ति कहते हैं । ३ पक्ष्यादि
 चतुर्ष्वार स्त्रियोंको शारीरिक कमनीयता उत्पन्न होती है,
 उसोका नाम दीप्ति है । ४ चमकान्ति, प्रकाश । प्रकाश
 जिससे विवेक उत्पन्न होता है घोर चक्षानन्दवी चक्षुष्य
 दूर हो जाता है । दीप्ति चक्षुषोऽस्ति । ५ लावा,
 नाव । ६ कांस्य, कांसा । ७ कान्ति, रोमा, कवि ।
 ८ विश्वदेवभेद, एक विश्वदेवका नाम ।
 दीप्तिक (सं० पु०) दीप्ता कायमोति के-क । दुग्धपापाच-
 वृक्ष, मिरगोला ।
 दीप्तिकिरण तोय (मं० स्त्री०) दीप्तिर्यस्य तोयं ।
 तोयभेद, एक तोयका नाम ।
 दीप्तिमत् (सं० त्रि०) दीप्ति विद्यतेऽस्य, दीप्ति-प्रभुत्वं ।
 १ दीप्तिमुक्त, चमकता हुआ । २ कान्तिगुण, रोमा-
 गुण । (पु०) ३ चक्षुष्यमात्रे गर्भसे उत्पन्न जो कान्ति
 एक पुत्रका नाम ।

मुक्ति, सुख, दुःख और इच्छा से सब पाप्माये धम है । यह दुःख प्रथम में उत्पन्न हुआ करता है ।

दुःखसे प्रति प्रथम करना दुःखका कार्य है, कार्य और कारणसे भाव नियमबन्ध रहनेके कारण प्रथम पावरण करनेसे ही दुःख अव्यभिचारी है । अतः प्रथम ही दुःख समोका प्रथममेव है । समुप्यकी जितने प्रकारकी चेष्टाएं देखी जाती हैं, समीक्षा उद्देश्य दुःखनिष्ठ है । इसी दुःखकी निष्ठितिके लिए समुप्य कितने प्रकारके कसेय सहते हैं, यह प्रथमनीय है । किन्तु जिस पदका पात्रय करनेसे दुःखनिष्ठ है, उसका निवर्ण कर पद पदमें चलना दुःख सुगतता पड़ता है । इसीसे न्याय और वैशेषिक दर्शनमें निष्ठा है 'प्रथमजन्म दुःखं स्यात्' प्रथम पावरण करनेसे ही दुःख होता है । कृशादिके भेदसे दुःख कई प्रकारका है । सब समीक्षा प्रथममेव है, यही कारण है, कि सभी प्राणी सुखको तत्तागमें सर्वदा प्रवृत्त रहते हैं । इस वस्तुसे हमारे सुख-दुःखको निष्ठित होगी, ऐसा ज्ञान हो जानिसे सुख-दुःखको निष्ठितकी इच्छा उत्पन्न होती है ।

जिसके द्वारा जो निष्पन्न होता है, उसे उसका फल कहते हैं, जैसे रसोईका फल भय, शास्त्रासुगोपनका फल ज्ञानोदय, इत्यादि । फल पदार्थ भी मुख्य और गोचर के भेदसे दो प्रकारका है । चरमफलको मुख्य फल कहते हैं । मुख्य फल सुख और दुःखका भोग है । इनके प्रतिरिक्त सभी फल गोचर हैं, क्योंकि सभी कर्मोंके चरममें सुख या दुःखके भोगस्वरूप फल-पर्याप्तमान होता है । स्वयं द्वारा प्रयत्नमें जब भोजन करनेसे तन्मिद्वय सुख तथा शास्त्रकी धारणा करनेसे ज्ञानोदय होता है, तब प्रथम विद्यानन्दरूप दुःखका भोग होता है । फिर थोड़ी चाटिसे दोपसे दूषित हो कर कारागाररूप अग्रेय यन्त्रपाखण्डरूप दुःखका भोग होता है । इस प्रकार द्विपक्षय करनेसे यह माफ अस्मत्ता है कि सभी कर्मोंका चरमफल सुख भोग पड़ता दुःखभोग है । प्रत्यक्ष दुःखनिष्ठता होनेसे मुक्ति होती है । यही मुक्ति एक मात्र सभीको प्रथममेव है । इसी मुक्तिके लिये सभी चेष्टित रहते हैं, किन्तु पथ को जानेसे समुप्य

माना प्रकारके उपाय प्रथममेव कर प्रथम प्रकारके फल पाते हैं ।

सांख्यदर्शनमें मतमें—दुःखनिष्ठितिके लिए ही शास्त्रकी निष्ठाया हुई है । समुप्य प्रथम दुःखमें सर्वदा पोषित हो कर क्रमागत लक्ष्यमुद्घुष्ट दुःखमें प्रथम होने लगा, तब परम कारकिक क्षितिदेवने भूनेके प्रति दिया करके दुःखोद्धारके उपायस्वरूप प्रथम तत्त्वज्ञानके विषयका उपदेश दिया । उसका ज्ञान ही अन्तिम दुःखका हत्य होता है । यदि यह संसारमें दुःख नामका कोई पदार्थ न रहता, निष्कपदार्थके प्रेमा यदि उसकी निष्ठित न होती और हम दुःखका परिहार यदि प्रत्यक्ष अटसाध्य होता, तो माननिष्ठायाको प्रावर्ण्यताम ही । दुःखोत्पत्ति होती है, जब ऐसा देखा जाता है, तब फिर दुःख-धर्म भी होता है, इसीसे "दुःखप्रथमिपानिष्ठायाः तदवपातके देतो ।

हृदयार्थो वेत्ते नैकाग्रतापततो माना ॥"

(उत्पत्तिवृत्ति)

दुःखप्रथमका विनाश ही यहां पर जानना चाहिए है । दुःख तीन प्रकारका है—प्राकृतिक, प्राधिदैविक और प्राधिभौतिक । इनमेंसे प्राकृतिक दुःख फिर दो प्रकारका है, शारीरिक और मानसिक । वात, पित्त और श्लेष्माकी कमी भेदों होनेसे जो दुःख होता है, उसे शारीरिक दुःख कहते हैं, क्राम, क्रोध, लोभ और मोहादि निबन्धन-दुःख मानसिक दुःख है । प्राधिभौतिक दुःख भी चार प्रकारका है—सभी भूतोंमें उत्पन्न, जरावृद्ध, कण्डूज, कोदज और उद्विजने उत्पन्न, जैसे मनुष्य, पशु, पक्षी, मरोष्ठव, दंश, ममक आदि मावरादिनित्त दुःख है । प्राधिदैविक पदार्थ देवतासे उत्पन्न, जैसे—भूत, वज्र, वात, वर्षा और वषट्पतनप्रणित क्रोध ।

इन तीन प्रकारके दुःखोंका विनाश ही एकमात्र शास्त्रनिष्ठायाका उद्देश्य है, जिससे इन तीनों दुःखोंका नाश हो, यही उद्देश्य है । इस सब दुःखोंका अद्विक नाश होनेसे देखा जाता है । कोई कोई कहते हैं, कि इन सब दुःखोंके विनाशके लक्ष्य उपाय है । शारीरिक दुःखनिष्ठितिके लिये चिकित्सक द्वारा माना प्रकारके उपाय निर्धारित है । मानसिक दुःखके लोकार्थ

दीप्तिमान् (हि० धि०) दीप्तिमत् देखो ।

दीमोद (सं० पु०) दीप्तं उदकं यत् उदकस्य उदादेशः ।

१ तोर्यभेद, एक तोर्यका नाम । इस तोर्यमें बधूसर नामकी एक नदी है जिसमें स्नान कर दानादि करनेसे समस्त पाप दूर हो जाते हैं । यहाँ शृगुनन्दन परशुरामने स्नान करके अपना खोया हुआ तेज फिरसे प्राप्त किया था । देवयुगमें शृगुने यहाँ घोर तपस्या की थी । (भारत वन ८८ अ०)

दीमोवत् (सं० पु०) दीप्तः सूर्यकिरणमयकात् ज्वलितः वपनः । सूर्यकांति मणि ।

दीप्य (सं० त्रि०) दीप्ताय दीपनाय हितं गवादि यत् । दीप्तिहित, जो जलाया जाने को हो । २ जो जलाने योग्य हो । (पु०) दीपाय अग्निदीपनाय हितं अपूपादित्वात् पठे यत् । ३ यमानो, अजवायन । यह बहुत अग्निकारक होता है, इससे इसका नाम दीप्य पड़ा । ४ जोरक, जीरा । दीप तत्र साधु रति यत् । ५ मयूरगिष्ठा । ६ रुद्रजटा ।

दीप्यक (सं० स्त्री०) दीपाय हितं साधुरिति वा । दीपयत् सुतः स्वयं कन् । १ अजमोदा । २ यमानो, अजवायन । ३ मयूर-गिष्ठा । ४ साचमस्तक हथ, रुद्रजटा । ५ रत्नाचक्रक, लाल चीता । ६ कुङ्कुम, वीसर । ७ तगर । ८ निम्बकहड, नोवूका पेड़ । ९ ध्वेन पत्रो ।

दीप्यका (सं० स्त्री०) यमानो, अजवायन ।

दीप्यमान (सं० त्रि०) प्रज्वलित, चमकता हुआ ।

दीप्यवल्ली (सं० स्त्री०) अजमोदा ।

दीप्या (सं० स्त्री०) १ पिण्डखजुरी, पिण्ड खजूर । २ क्षणजोरकमैद, एक प्रकारका कांसा जोरा । ३ यमानो, अजवायन ।

दीप्यन् (सं० त्रि०) दीप्यते इति दीप्यन् (निष्कन्धाति । पश । १६७) दीप्तिशील, प्रकाशयुक्त ।

दीमक (फा० स्त्री०) एकही आदिमें सत्य एक प्रकारका कोड़ा । यह चोटकी तरह होती है और इसे जालीदार पर निकलते हैं । मलीक देखो ।

दीपट (हि० पु०) दीपट देखो ।

दीपमान (सं० त्रि०) दीप्यते इति दा कर्मणि शानच् । जिसे किसीकी देना हो, जो देनेके लिये हो ।

दीया (हि० पु०) १ वह वस्तु जो प्रकाशके लिये जलाई जाती है, चिराग । दीप देखो । (स्त्री०) २ वह परतन जिसमें तेल डालकर जलानेके लिये वस्ती दी जाती है ।

दीयासनाई (हि० स्त्री०) दीयासनाई देखो ।

दीर्घ-चिन्दोके एक कवि । ये जातिके ब्राह्मण तथा कामी-वामी थे । इन्होंने सन्वत् १८७८ में दो ग्रन्थोंकी लिखा जिनके नाम दृष्टान्तरङ्गिणो और वंश-वर्णन हैं ।

दीर्घ (सं० त्रि०) दीर्घातोति दृ-विदारणे बाहु० वच् । १ आयतलम्बा । परीमाण देखो । (पु०) २ लतामालहृत् ।

३ इलाट, एक प्रकारका छुप । ४ माड़हव । ५ उड़, ऊँट । ६ रामयर, भरकट । ७ ज्योतिषमें पांचवीं, छठो, सातवीं और आठवीं अर्थात् सिंह, कन्या, तुला और वृश्चिक राशिको दीर्घराशि कहते हैं । ८ हिमावर्षण, वह वर्ष जिसका उच्चारण खींच कर हो । भा, ई, ऊ, अ, ए, ऐ, ओ, औ ये दीर्घस्वर कहलाते हैं । सङ्गीतमें मो दो मात्राओंका नाम दीर्घ है, यथा अ—प्रको एक साथ उच्चारण करनेमें जो काल लगता है, वह दीर्घ काल कहलाता है ।

दीर्घकथा (सं० स्त्री०) दीर्घा कथा नित्यकर्मधा० । गौरजोरक, सफेद जोरा ।

दीर्घकण्टक (सं० पु०) दीर्घः कण्टको यस्य । बवूर-हथ, बबूलका पेड़ ।

दीर्घकण्ड (सं० पु०-स्त्री०) दीर्घः कण्डो यस्य । १ वक-पत्ती, बगला । २ दानव भेद, एक दानवका नाम । (त्रि०) ३ आयत कण्डमात्र, जिसकी गरदन लम्बी हो ।

दीर्घकण्डक (सं० पु०) दीर्घकण्ड-कप । वकपत्त, बगला ।

दीर्घकन्द (सं० स्त्री०) दीर्घः कन्दो यस्य । १ मूलक, मूली । २ मालाकन्द ।

दीर्घकन्दक (सं० स्त्री०) दीर्घकन्द-कप । मूलक, मूली । दीर्घकन्धिका (सं० स्त्री०) दीर्घकन्दक टापू टापि भत इत् । शालमूली, मुसली ।

दीर्घकम्बर (सं० पु०) दीर्घः कम्बरो यस्य । १ वकपत्त, बगला । (त्रि०) २ दीर्घकम्बरयुक्त, जिसको गरदन लम्बी हो ।

दीर्घकण (सं० त्रि०) दीर्घा कणं यद् । १ जिसके कान

मनोच प्रो, पान, भोजन आदि उपाय बतलाया है। नीति शास्त्राभ्यास-कुशलता आदि प्रयत्नजन्य कारणोंसे आधि-भौतिक दुःखनिवृत्ति होता है। आधिदैविक दुःखके प्रतीकारके लिये सन्निवन्धीपथादि सज्ज उपाय हैं।

इन सब दुःखोंके प्रतीकारके उपाय सत्य तो हैं, लेकिन हमसे चणिक निवृत्ति होती है, एकान्त और अत्यन्त निवृत्ति नहीं होती। एकान्त और अत्यन्त दुःखकी निवृत्ति जो सभी दर्शनशास्त्रोंका प्रधान उद्देश्य है। जिस तरह भूल लगने पर भोजन करनेसे भूख जाती रहती है, फिर कुछ देरके बाद भूख लग जाती है, उसी तरह उक्त उपायोंसे दुःखकी निवृत्ति होने पर भी एकान्त और अत्यन्त दुःख-निवृत्ति नहीं होती। खैर, मान लिया, कि दृष्टोपायसे दुःखनिवृत्ति नहीं होती, लेकिन आनुश्रविक अर्थात् वैदिक क्रियाकानाप द्वारा दुःखकी निवृत्ति हो सकती है। इस विषयमें तत्त्वकोमुदो-र्म इस प्रकार लिखा है—

दृष्टके जैसा आनुश्रविक भी चरमण्य कारण है, वह भी अविशुद्ध और चयातिशययुक्त है और इसके विपरीत है अर्थात् व्यक्त अत्यन्त तया अत्यन्त ही है, निविध दुःख कुछ भी नहीं रहेगा, कभी भी पुनरुत्पन्न नहीं होगा, इस प्रकारका भाव जब विनिवृत्त या श्रित हो जाता है, तब उसे आत्यन्तिक दुःखकी निवृत्ति कहते हैं।

मानसौ तीर पर दुःख निवृत्ति होना साधारण पुत्रपाथ है, किन्तु आत्यन्तिक दुःखका निवृत्तिकी आत्यन्तिक पुत्रपाथ कहते हैं। इसका दूसरा नाम परमपुत्रपाथ भी है। इसका कारण यह है, कि इन प्रकारकी दुःख-निवृत्ति ही दुःखनिवृत्तिकामग्नको चरमसीमा है। दृष्ट उपाय द्वारा अर्थात् लौकिक उपकरण द्वारा आत्यन्तिक दुःखकी निवृत्ति नहीं होती, लौकिक उपकरण द्वारा आत्यन्तिक दुःखकी निवृत्ति होनेसे भी उसका अनुवर्तन रहता है। धनादि द्वारा उपस्थित दुःख मिट जाता है सही, लेकिन उससे कुछ देर बाद ही फिर उसी प्रकारका दुःख पट्टे च जाता है। अतएव यह कह सकते हैं, कि लौकिक उपायसे चणिक दुःख निवृत्ति होता है, न कि आत्यन्तिक दुःख। चणिक दुःखकी निवृत्ति होनेसे भी

वह अपुत्रपाथ नहीं है, क्योंकि पुत्र्य वह भी चाहता है और यह भी आज भ्रमर सुधाका प्रतिकार किया जाय, तो कल फिरसे सुधा उत्पन्न होगी, यह सोच कर क्या कोई कभी उदास हो सकता है? क्या कभी खानेकी इच्छा नहीं करता? अतएव प्रति दिनकी सुधाको जगह जिस प्रकार उस सामयिक सुधाकी निवृत्तिकी पुत्रपाथ मानते हैं, उसी प्रकार लौकिक उपाय और तत्साध्य सामयिक दुःखनिवृत्ति इन दोनोंकी भी पुत्रपाथ मान सकते हैं।

सभी जगह और सभी समय दुःखनिवारक लौकिक उपाय नहीं रहता और रहनेकी सम्भावना भी नहीं। अगर रहे भी, तो उससे दुःखकी आत्यन्तिक निवृत्ति नहीं होती। यही कारण है, कि शास्त्रतत्त्वज्ञ लोग दुःखनिवारक लौकिक उपायकी हीय और तुच्छ समझते हैं। वे लोग स्त्री, अन्न-पान और भोजनादि दृष्ट उपायका परित्याग और शास्त्रीय उपायका अवलम्बन करते हैं। लौकिक उपायसे दुःख मिटता है, उसका तारतम्य वा उत्कर्षोपकार्य है। किन्तु वह दुःखनिवृत्ति-स्वरूप सुक्ष्म नहीं है। इसीसे सुक्ति ही सर्वोत्कृष्ट है। इसका सात्यय यह है, कि सुक्ष्मकी उत्कर्षता जान कर अभिन्न पुत्र्य चणिक दुःखनिवृत्ति और तत्साध्य लौकिक उपकरणको तुच्छ समझते हैं और सुसुप्त हो कर शास्त्र-पथ अवलम्बन करते हैं। धनादि दृष्ट उपाय और वैदिक क्रियाकलाप दोनों ही एक-से हैं। धनभोग जैसा नष्ट है, पुण्यभोगभी वैसा ही नष्ट है। अतः शास्त्रीय उपायोंमें क्रियात्मक उपाय आत्यन्तिक दुःखनिवृत्तिकी कारण नहीं है। शास्त्रने मोक्षका उपदेश बतलाया है, यह बात ठीक है; परन्तु उसमें अनेक ग्रन्थ और अनेक विचार हैं।

कोई कोई कहते हैं कि इस दुःखका भोग कौन करता है? आत्मा वा और कोई दूसरा। किन्तु आत्मा किसी प्रकारके धर्म में लिप्त नहीं है, वे त्रिगुणातीत हैं, प्रकृति-को माया पर मोहित हो कर प्रतिविम्बके तौर पर सुख दुःखादि भोग करता है। जीवात्मा देखो।

चाहे जीवके साक्षात् सन्धर्म हो, चाहे परम्परा सन्धर्म हो, एक बार सुखासुख होनेसे ही दूसरे समयमें वह याद रहेगा। प्रत्यक्ष याद रहेगा। सुखामिष्ट मनुष्य

बड़े बड़े हों। (पु०) २ जातिविशेष, एक जातिके नाम।

दीर्घकाण्ड (सं० पु०) दीर्घः काण्डो यस्य। गुण्ड वृण, गेटला।

दीर्घकाण्डा (सं० स्त्री०) १ पातान्गण्डकीनता, तिर-
हिटा। २ तिष्ठाद्वा, एक प्रकारकी बेन।

दीर्घकाय (सं० वि०) दीर्घः कायः यस्य। पायत
शरीरो, लम्बे चौड़े शरीरवाला।

दीर्घकाल (सं० स्त्री०) दीर्घः कालः। अनेक दिन।

दीर्घकील (सं० पु०) दीर्घः कीलः शलादण्डो यत्।
पहोठहथ, पंकीलका पेड़।

दीर्घकीलक (सं० पु०) दीर्घकीलः स्वार्थे कन्। पहोठ
हथ, पंकीलका पेड़।

दीर्घकुषा (सं० स्त्री०) गजपिप्पली।

दीर्घकूरक (सं० स्त्री०) दीर्घः कूरकं चम्प। राजाक,
पागुरेशमें होनेवाला एक प्रकारका धान।

दीर्घदेश (सं० पु० स्त्री०) दीर्घः देश इव सोम यस्य।
१ भन्तुक, भानू। २ देशभेद, एक देश जो कूर्म-
विभागके पचिमोत्तरमें अवस्थित है। (त्रि०) १ पायत-
केशयुक्त, जिसके लम्बे लम्बे बास हों।

दीर्घकीमिका (सं० स्त्री०) दीर्घकीमो यस्याः कपः, कापि
भत इव। मिनायिका, सतुही। इसका पर्याय—दुर्गामा
घोर शक्ति है।

दीर्घस्वरच्छन्द (सं० पु०) इच्छन्द, एक प्रकारका छुप।
दीर्घगति (सं० पु०) दीर्घः गतिर्यस्य। उद्ग, ऊँट।
यह लम्बे लम्बे डेग रखता है, इसीसे इसका नाम दीर्घ-
गति हुआ है।

दीर्घगमन (सं० त्रि०) दीर्घं गच्छति दीर्घं-गम-णिनि।
जो बहुत तेजीसे जाता हो।

दीर्घयन्त्रि (सं० पु०) दीर्घयन्त्रि पत्रं यस्य। गजपिप्पली।
दीर्घयोग (सं० पु०) दीर्घां योग्या यस्य। १ उद्ग, ऊँट।

२ नीलकील, शारस। ३ देशभेद, एक देशका नाम।
यह कूर्म-विभागके दक्षिण-पचिमकी ओर अवस्थित है।
(त्रि०) जिसकी गरदन लम्बी हो।

दीर्घघाटिक (सं० पु० स्त्री०) दीर्घां घाटां चम्प्रादि

ठन्। १ उद्ग, ऊँट। २ वक्र, बगला। (त्रि०) १ लंबो
गरदनवाला।

दीर्घचक्षु (सं० पु०) दीर्घां चक्षुः यस्य। पचिमें द, एक
किस्मकी चक्षुयां।

दीर्घच्छन्द (सं० पु०) दीर्घाच्छन्दो यस्य। १ उद्ग, ऊँट।
(त्रि०) २ दीर्घच्छन्दक, जिसके लम्बे लम्बे पत्ते हों।

दीर्घच्छन्दप (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, बड़ा छन्द।

दीर्घसङ्गल (सं० पु०) दीर्घं यथा तथा लङ्गको गति-
योगः। सक्ताविशेष, बड़ा भीगा।

दीर्घजङ्घ (सं० पु०) दीर्घां जङ्घा यस्य। १ वक्र, बगला।
२ उद्ग, ऊँट। (स्त्री०) १ दीर्घ जाँघ, लम्बी टाँग।

(त्रि०) ४ पायत जातयुक्त, जिसकी टाँगे लम्बी हों।

दीर्घजातुक (सं० पु०) दीर्घः जातुपस्य ततो जप।
दीर्घजङ्घ, लंबी टाँग।

दीर्घजिह्व (सं० पु०) दीर्घां जिह्वा यस्य। १ मयं, माँस।
२ दानवविशेष, एक दानवका नाम। (त्रि०) १ जिसकी
लंबी जीभ हो।

दीर्घजिह्वा (सं० स्त्री०) दीर्घजिह्व-टाप। १ राक्षसो-
भेद, विरोचनकी पुत्री एक राक्षसी जिसे इन्द्रने मारा
था। २ कुमारानुत्तर मातृगणभेद, मातृगणभेदमें एक
जो कात्तिबेयकी चतुचरी है।

दीर्घजिह्वी (सं० पु०) १ कुक्कुट, कुक्का।

दीर्घजीविन् (सं० त्रि०) दीर्घं बहुकालं जीवति जीव-
णिनि। बहुकालजीवी, जो बहुत दिनों तक जीव।

राजा यदि न्यायपूर्वक दण्ड दे, मन्त्रापातकीसे धन न
ले और वेदपाराग ब्राह्मण यदि प्रभु हों, तो ऐसे समयमें
वे दीर्घजीवी होते हैं। दीर्घजीवन लाभ करनेमें
विद्युद्वाधारीकी आवश्यकता है। विद्युद्वाधारी घोर लक्ष्म-
परायण होने पर निश्चय ही दीर्घ-जीवन प्राप्त हो सकता
है। यद्येच्छाधार जो पकान मत्स्यका प्रतिफल है,
इसमें से मत्स्यादि सभी शास्त्रों की विद्युद्वाधारीकी परीक्षा
देखी जाती है और पकान मत्स्य के बाद उद्देश्य करनेमें
जो इस प्रकार लिखा है—विहितकर्मका चतुष्टय,
निन्दितका सेवन, इन्द्रियका अनुपेक्ष, धानक घोर पक्ष
ये सब जो एकमात्र पकान मत्स्य के कारण हैं। जो ये
चतुष्टय नहीं करते, पर्याप्त स्वर्गपरायण हो कर रहते
हैं, वे ही दीर्घजीवन प्राप्त कर सकते हैं।

जो बार बार सुख भोगको इच्छा रखता है, भोगको कामना करता है और सुखसाधनद्वयमें समामग्न रहता है, उसका उस इच्छाको, उस कामनाको वा यैसी पामनिका नाम राग है। इस प्रकार सुखेच्छाको नाई दुःखके प्रति अनुग्रह या अनुवृत्ति देना चाहती है। "इत्यानुवृत्तिः" (पाप० भा०) पूर्वोक्तभूत दुःखका स्मरण होनेके माय हो दुःखप्रद वस्तुके प्रति विवृत्ति, अनिच्छा वा अनभिप्राय उत्पन्न होता है। उसको प्रतिघात चेष्टा भी होती है। उस प्रतिघात चेष्टा वा अनिच्छा विषयको दिय कहते हैं। जिस वस्तुमें एक बार दुःख हो चुका है, उस वस्तुके प्रति दिय अवश्य उत्पन्न होता है। इस प्रकारका दिय होने में जिसमें वह फिर उत्पन्न हो, उसको चेष्टा होती है अर्थात् पयस्य ही उसको प्रतिघात चेष्टा उत्पन्न होगी। कौथ, जिसा पोर विप्रतिष्ठा अर्थात् प्रसारणाकी इच्छा ने सब दियके स्वरूपस्वरूप है। जिसमें हमें दुःख न हो, प्रति दिन यही चेष्टा रहती है और दुःखका परिवर्त्य होई करनेमें संमर्थ नहीं है। समस्त जोष बार बार मरणदुःखका भोग कर जोषके चित्तमें उसी प्रकारका संस्कार वा वासनामें निहित वा बहमूल होती या रहे है। इस सब वासनारहितका नाम धर्म है। इसी धर्म-के द्वारा ज्ञानी, पञ्चानो सभी जीवोंके चित्तमें उसी प्रकारका भाव अर्थात् अवलम्ब रूपमें मरणदुःखको छाया वा स्मृति नामक स्वरूपस्वरूप प्रति पादु है। उस पादुवृत्तिका नाम अनिनिवेश है। एकबार दुःख-सुख ही जानने इस दुःखप्रद वस्तुके प्रति विद्वेप उत्पन्न होता है, जिसमें वह फिर न हो, उसमें निवे चेष्टा वा इच्छाविशेषका प्रादुर्भाव होता है, उस इच्छाविशेषको भी अनिनिवेश कह सकते हैं।

दुःखको वृत्तान्त भीमा मरण है। मरण ही दुःखकी प्रकाशा या धर्मभीमा है। यही कारण है, कि जोषको मरनेका अधिक डर है और उनमें चित्तमें "जिसमें मैं न मरूँ" ऐसी जो अनुवृत्ति है, वह अन्याय वृत्तियोंके मूलमें निगूढ़ भावमें विद्यो है।

प्राविमार्गमें ही मरनेके कारण—इन्द्रियके लहर "दह" इस प्रकारका भयके स्थिर है, कारण प्राणिमय देह और इन्द्रियमें दहक, होता नहीं चाहते। केवल

यही नहीं, धनादिका लभ भी है नहीं चाहते, दहक यही स्वाम तथा प्रायश्चित्त करते हैं कि जिसमें उनका मरण किसी प्रकार न हो। विषयगत मरणदुःखको अनुवृत्ति अर्थात् "मैं जिसमें न मरूँ" ऐसी प्रायश्चित्त भीमके हृदयमें हर वक्त जागृत है। क्या जानो, क्या सुनें, क्या इतर प्राणी सभीकी मरनेका डर है। यमः सभी प्राणी इस प्रकारकी प्रायश्चित्त करता है। जीवोंमें ऐसा संस्कार रहनेमें धर्मिक प्रकारका दुःख होता है और धर्म कामों भी किसी प्रकारका दुःखमें नहीं डर सकते। ऐसा लोगता उपाय है जिसमें "मैं न मरूँ" पोर हर समय अच्छा बन कर रहें। यह चित्ता हरवक्त सोचते रहती है। महर्षि पतञ्जलि और अन्याय वृत्तियोंमें इस प्रकारका मरण-वास देना कर हमें पूर्व जन्मका गन्ध अर्थात् पूर्व जन्मका भोग स्थिर किया है।

पहले कहा जा चुका है, कि सुखका एक बार अनु-भूत हो जानेमें किसी उसको इच्छा बढ़ती है और दुःखका अनुभूत हो जानेमें उसके प्रति विद्वेप उत्पन्न होता है। जोषको जब मरनेके प्रति इतना विद्वेप है, तब यह निःसन्देह अनुमित होता है कि मरणमें कोई पयस्य लोभस्वरूप यन्त्रणा है और जीवने उस कठोरता, दुःखका कभी न कभी पयस्य भोग किया है। मरणमें यदि दुःख नहीं रहता पोर जोष यदि उसका भोग नहीं किया होता, तो जोषको मरणके प्रति इतना विद्वेप नहीं रहता। मरणका विद्वेप केवल अनुग्रहमें नहीं वरन् कौटालि पोर मयोज्ञात विद्येमें भी है। अनुग्रह जब एक ही बार मरता है, दो बार नहीं, तब मरनेका इतना डर क्यों ? इसमें यह पयस्य सिद्ध होता है, कि मरणमें एक अनिवार्यता दुःख है जिसका भोग जोषने किया है। वर्तमान देहमें उसको अनुवृत्ति होता है, वह अनुवर्तन वासनारके स्मरणमें आती रहती है। निगूढ़तम वासनामें स्मरणमें वहनेके कारण जोष उसे स्पष्ट समझ नहीं सकता अर्थात् मैं ऊँचे बार मर चुका पोर ऊँचे बार मरणदुःख भोग कर चुका, यह स्पष्ट रूपमें नहीं जान सकता है। इन्द्रिय द्वारा यदि हमका प्राण हो जाता, तो यह पयस्य समझमें आ सकता था। किन्तु यह इन्द्रिय द्वारा उत्पन्न नहीं होता है। दूसरा उपाय प्राण नहीं होने की

दीर्घतन्तु (सं० पु०) दीर्घस्तन्तुः सुतयो यस्य । १ प्रभूत-
सुतिका देवादि, वह देवादि जिसमें अनेक सुत हों । २
दीर्घकालव्यापको सन्तानक । ३ दीर्घ तन्तु, लंबा तागा ।
दीर्घतमस (सं० पु०) दीर्घं बहुकालव्यापकं तपो
यस्य । १ बहुकालव्यापक तपस्कं प्रायुर्वशीय वृषभेदः
हरिवंशके अनुसार प्रायुर्वशीय एक राजा । इन्होंने
बहुत काल तक तप किया था, इसीसे इनका नाम दीर्घ-
तमस पड़ा है । (त्रि०) २ जिसने बहुत दिनों तक
तपस्या की हो ।

दीर्घतमस (सं० पु०) १ काशोराजके पुत्र धन्वन्तरिके
पिता, उत्तथके पुत्र । महाभारतमें इनकी कथा इस
प्रकार लिखी है—उत्तथ नामक एक धीमन्मय मुनि थे ।
इनको स्त्रीका नाम समता था । समता जिस समय पूर्ण
गर्भवती थी उस समय उत्तथके छोटे भाई देवताओं-
के पुरोहित ब्रह्मसति समताके पास पहुँचे और सह-
वासकी इच्छा प्रकट करने लगे । इस पर समताने ब्रह्-
मसतिसे कहा, 'मैंने तुम्हारे बड़े भाईसे गर्भधारण किया
है, अतः इस समय तुम जाओ । मेरी इस सन्तानमें गर्भमें
ही रह कर पड़रूवेद अध्ययन किया है, तुम्हारा धीर्य
भी धर्मोप है, एक कुचिमें दो सन्तानका रहना असम्भव
है । इसलिये तुम अभी चले जाओ ।' लेकिन ब्रह्मसति
पति तेजस्वी हो कर भी कामके धर्ममें आ कर अपनेको
रोक न सके और सहवासमें प्रवृत्त हुए । इस पर गर्भस्थ
बालकने भोतरसे कहा, 'हे तात ! शान्त हो, एक गर्भमें
दो बालकाँकी स्थिति नहीं हो सकती ।' जब ब्रह्मसतिने
इतने पर भी सुना, तब उस तेजस्वी गर्भस्थ शिशुने
अपने पैरोंसे धीर्य की रोक दिया, जिससे वह धीर्य नीचे
जमीन पर गिर पड़ा । इस पर भगवान् ब्रह्मसतिने क्रु-
ह हो कर गर्भस्थ बालकको बाप दिया, 'तुमने सुझे ऐसे
समयमें इस तरहकी बात कही, इसलिये तुम दीर्घ-
तमसमें प्रविष्ट हो अर्थात् अन्धा हो जा ।' ब्रह्मसतिके
बापसे यह बातक अन्धा हो कर जन्मा और दीर्घतमा
नामसे प्रसिद्ध हुआ । प्रदोषो नामकी एक ब्राह्मण-
कन्यासे इनका विवाह हुआ । इस स्त्रीके गर्भसे इन्होंने
मौतम आदि कई पुत्र उत्पन्न हुए जो सबके सब धीम-
और भीड़के वयोभूत थे । दीर्घतमा सुरभि-सन्तान काम-

धेनुने गोधर्म शिवा प्राप्त करके उससे गृहापूर्वक मैथुन
आदिमें प्रवृत्त हुए । दीर्घतमाकी इस प्रकार मर्यादाभङ्ग
करते देख आश्रमके मुनि लोग उनके विरुद्ध हो गये ।
उनकी स्त्री प्रदोष भी बहुत विरक्त हुई । एक दिन दीर्घ-
तमाने स्त्रीको अपसव देख कर पूछा, 'तू सुभवे क्यों
दुर्भाव रहती हो ?' इस पर प्रदोषीने जवाब दिया, 'वशासे
स्त्रोका भरण पोषण करते हैं इसीसे उन्हें भर्ता या
पति कहते हैं । पर आप अन्ध हैं, कुछ कर नहीं
सकते । इतने दिनों तक मैं आपका तथा आपसे पुत्रोंका
भरण पोषण करते रहते थक गई, अब आगे सुभवे
यह काम नहीं हो सकता ।'

दीर्घतमाने क्रुह हो कर कहा, 'आजसे मैं यह मर्यादा
बांध देता हूँ कि स्त्री एक मात्र पतिसे ही अश्रुत
रहे । पति चाहें जीता हो या मरा, वह कदापि दूसरा
पति नहीं कर सकती । यदि कोई स्त्री दूसरा पति
ग्रहण करेगी, तो वह पतित हो जायगी ।' स्वामीके ऐसे
वचनोंसे क्षुणित हो कर ब्राह्मणोंने अपने लड़केसे कहा,
'तुम लोग अपने अन्ध पिताको बांध कर गङ्गामें फेंक
आओ ।' माताके आशानुसार वे उन्हें गङ्गाकी धारमें डूबा
पर चढ़ा कर बहा आये । दीर्घतमा गङ्गामें बहुत दूर
तक बह कर चले गये । संयोगवश वलि नामक एक
राजा गङ्गास्नानकी आये हुए थे । वे ऋषिको ऐसी
अवस्थामें देख अपने घरको ले गये । बाद उन्हें तेजस्वी
जान कर राजाने उनमें प्रायश्चात् की, 'हे महाभाग !
मेरी स्त्रीसे महावास कर एक योग्य सन्तान उत्पन्न
कौजिये जिससे मेरी वंशको रखा हो ।' जब ऋषि
स्थित हुए, तब राजाने अपनी सुदेष्णा नामकी रानीसे
उनके पास भेजा । किन्तु रानी उन्हें अन्धा और बुढ़ा
देख कर उनके पास न गई; लेकिन उसने अपनी दासीको
भेज दिया । ऋषिने उस शूद्रा दासीसे कबीधान् आदि
व्याख्य पुत्र उत्पन्न किये । राजाने यह जान कर पुनः
अपनी स्त्री सुदेष्णाको उनके पास भेजा । दीर्घतमाने
रानीका सारा धर्म टूटोले कर कहा, 'आज, तुम्हें अत्यन्त
तेजस्वी पुत्र होने और वे अंग, अंग, कर्जिग, पुण्ड्र और
सुन्न नामसे प्रसिद्ध होंगे । इस भूमण्डलमें उनके नाम-
से एक बड़ा देश विख्यात होगा । अंगके नामसे अंग

जीव स्रष्टृ रूपसे समर्थ नहीं सकता, कि मैं एक बार मर चुका या और अनिवार्य कठोरतम दुःख भी भोग चुका या। इसमें जोषकी मरनेकी इतनी अनिच्छा है। यदि मरण ही सब प्रकारके दुःखोंमें प्रधान हो, तो किस प्रकार इस दुःखसे छुटकारा पाया जाय तथा इसका वारण ही क्या? संसारका चित्र देखनेसे मालूम पड़ता है, कि सभी जीव जन्म ले कर मरनेको दुःख मितते हैं और फिर मृत्यु सुखमें पतित होते हैं—एक बार मर कर फिर दूसरी बार जन्म लेते हैं। दुःखको बात तो दूर रहे, नासारिक जो सुख है, वह भी दुःखमय है। इस कारण हम दुःखमयित सुखको दुःख ही समझना होगा। नाथ्यदृष्टान्तमें विद्याभित्तुने लिखा है, "तत्तु दुःखमे निमित्तयोगीः" अर्थात् वह सुख भी दुःखमें गिनने योग्य है। सभी दुःखन्यायोंमें दुःख-निवृत्तिका कारण देखा गया है। कोई कोई कहते हैं कि प्रकृति और पुरुषका संयोग ही दुःखका प्रतिकारण है। फिर कोई कहते हैं, कि अविद्या वा मायावशसे ही दुःख भोग हुआ करता है। जो कुछ हो, इन सबमें सामान्य मतभेद रहने पर भी मूल समीक्षा एक है। किसेका मत यह भी है, कि प्रकृति और पुरुषका सम्यक् ज्ञान ही जानिसे दुःख निवृत्त होता है। फिर कोई कहते हैं, कि भ्रान्तीोपहित चैतन्यकी माया-रूप उपाधि तिरोहित हो जानिसे दुःख दूर हो जाता है। इस प्रकार दुःखके भट होनेकी मुक्ति वा मोक्ष कहते हैं। मुक्ति और मोक्ष देखो। दुःखका कारण क्या है, यह विषय कुछ विषय रूप बतनाया जाता है। हम लोग जो कामकाज करते हैं, उसका एक संस्कार आत्मामें दृढ रूपसे अहित होता है। योही वह संस्कारातुरूप सुख दुःखका भोग हुआ करता है। अतएव सुख और दुःखके मूलको कर्माग्य कहना चाहिये। इसी पर भगवान् पतञ्जलिने कहा है, "कर्मण्युल्लेखं कर्माग्यः दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः" (पा. २. २१२)। अर्थात् मुख्य कर्माग्य दो प्रकारका है, एक दृष्टजन्मवेदनीय, दूसरा अदृष्टजन्मवेदनीय अर्थात् वृत्तमान शरीर द्वारा तथा जन्मास्तरीय शरीर द्वारा ज्ञात। चिरकाल जीवित रह कर भूता बुरा काम करो और उसका फल भोगो। अभी जीव क्षणसे बाध्य हो कर ही भले बुरे काम

करते हैं और वे सब काम फिर सनके नये क्षेप वा कम मूलको स्रष्टि करते हैं। कम फलके अनुभव द्वारा जो विचित्रवत्प सुख, दुःख आदिका चित पूरण होता है वा नूतन राग, द्वेषादि रूप कम बीज होता है, इसीको योगी लोग कर्माग्य, प्राज्ञिक लोग स्रष्टृ, पशुव, पाप, पुण्य वा धर्माधर्म कहा करते हैं। कोई उसे संस्कार भी कहते हैं। यह संस्कार जब तक रहेंगा, तब तक दुःख अनिवार्य है। इस संस्कारके रहनेसे ही उसको फलस्वरूप ज्ञाति, जन्म, मरण, जोवन और भोग भवश्य होगा। उक्त कर्माग्य क्रिया यदि योगादिके द्वारा जीर्ण, शोण वा दम्बकल्प न हो, तो उसे बाध्य हो कर भवश्य ही विविध प्रकारके अच्छे बुरे काम करने होंगे तथा उसे अपने किए हुए कर्मोंका अच्छा बुरा फल भी भोगना होगा। बार बार जन्म, बार बार मरण और बार बार मर, नर और तिथक योगिनिमें एतन्, बार बार स्वर्गकाल और बृहत्काल जीवन धारण तथा बार बार सुख दुःखादि का भोग हुआ करेगा। जहाँ सुखका उल्लेख है, वहाँ वह साधारिक दुःखमयित सुख है अर्थात् दुःख नामक सुख है। क्योंकि योगियोंने विषय मात्रको ही दुःख माना है।

परिणाममें दुःख अर्थात् भोगकालमें दुःख और अथात् वा मरणकालमें भी दुःख होता तथा सत्त्वादि गुणोंके आपसमें अभिभूत करते देख कर योगियोंने सभी वस्तुओंकी दुःखमें गिनती की है, किन्तु अनभिज्ञ, अयोगी और अविवेकी मनुष्य ही मोहसे मुख और भ्रमाश्रय हो कर इसमें सुख होता है, इसमें दुःख होता है, ऐसा निर्णय करते हैं। जो नहीं जानता है, वही विद्यात्रको सुखादुःख समझ कर भ्रमण करता है किन्तु जो जानता है, वह उसे भ्रमण नहीं करता। उसी तरह जो नहीं जानता है, वह दुःखमयित सुख भोग करता है और जो जानता है वह उसे भोग करना नहीं चाहेंगा। जिस तरह खूब वारोक्त तथा खूब कोमल मकहोके सूतेके स्वर्गसे आँसुकी दुःख होता है, उसी तरह योगी लोग वा विवेकी लोग दुःखानुविद्ध भोगकी दुःसह समझते हैं। अत्यंत दृष्टमें वा अत्यंत भोगमें, परिमाणदुःख, तापदुःख और संस्कारदुःख एक साथ पश्चित हैं।

देश, वंगसे वंग देश, पुण्ड्रसे पुण्ड्र देश और मुद्गसे मुद्ग देश। (भारत आदिपं० १०४ अ०) नोति-मन्त्रोमे लिङ्गा है—यै तन पाटि भृत्यो नो दोर्घतमाको पहले पन्निमें जान दिया, किन्तु पन्निनीकुमारकी रक्षामे इस बार वच गये। सन्निने पुनः दीर्घतमाको जलमें फेंक दिया, इस बार भी इनका कुछ भी पन्निट न हुआ। बाद यै तनने इनके मन्त्रक, वच और दोनों साधुओं पर पाघात किया या पन्निमें बहुत बहुतम हो कर ऋषिने पावकद्वारा कर जाओ।

दीर्घतन् (सं० पु०) दीर्घः तन्। १ तानुवच, ताड़का पेड़। २ दीर्घतन् मात्र, लंबा पेड़।

दीर्घता (सं० स्त्री०) दीर्घस्य भावः दीर्घ-तल-टाप, आयति, लम्बाई।

दीर्घतिमिया (सं० स्त्री०) दीर्घतिम वा कियन् ककटो, ककड़ो।

दीर्घतुण्ड (सं० स्त्री०) दीर्घं तुण्डं यस्या। १ छुन्दरो, छट्टूँदर। (त्रि०) २ दीर्घतुण्डयुक्त गजादि, जिसका मुँह लम्बा हो, जैसे हाथो चादि। (कौ०) ३ दीर्घतुण्ड, लम्बा मुँह।

दीर्घदण्ड (सं० पु०) दीर्घं दण्डमिव, पमिजानात् पुंस्त्वं। १ पक्षिवाह दण्ड, एक प्रकारकी घास जिसकी पानिसे पशु दुर्बल हो जाते हैं। (कौ०) २ दीर्घदण्ड, लम्बी घास।

दीर्घदण्ड (सं० पु०) दीर्घा दण्ड इव काण्डावच्छेदेन। १ परण्डुल, चंडीका पेड़। २ तालवृक्ष, ताड़का पेड़।

दीर्घदण्डो (सं० स्त्री०) दीर्घदण्ड गौरादित्वात् ङोप, गोरसी, गोरल इसकी।

दीर्घदग्निता (सं० स्त्री०) दीर्घं दग्निं भावः दीर्घं दग्निं तस्य, बहुतसिद्ध भोजः ततो टाप, बहुदग्निता, बहुत दूर तकको यात्राका विचार।

दीर्घदग्नी (सं० पु०) दीर्घं दीर्घात् वा पथति णिनि। १ वह जो दूर तक सत्र यात्राका परिणाम मोचता हो, पण्डित। २ भक्त, भाल, १ रथ, गोध। (त्रि०)

४ दूरदग्नी, बहुत दूर तक सोचनेवाला।

दीर्घदल (सं० पु०) मासाकम्प।

दीर्घदृष्टि (सं० पु०) दीर्घा दृष्टिर्दृग्ममस्य। १ पण्डित,

वह जो दूर तककी बात सोचता हो। २ दूरवोचन नामक यन्त्रमें दूरवोन।

दीर्घदृष्ट (सं० पु०) दीर्घं चासौ द्रष्टुं चेति। तानुवच, ताड़का पेड़।

दीर्घदृष्ट (सं० पु०) दीर्घो दृष्टः। शास्त्रलिख, नेमरका पेड़।

दीर्घद्वार—भविष्य ब्रह्मपण्डित विशास देशान्तर्गता एक जनपद। यह गण्डकी नदीके किनारे अवस्थित माना जाता था। पहले इसमें भात हजार पाम और तोस गहर लगते थे।

दीर्घनख—बुद्धके सामयिक एक ब्राह्मचारी। इनोंने 'दीर्घ-नख परित्राजक-परिच्छा' नामकी पुस्तक रची है। दीर्घनाट (सं० पु०) दीर्घः दूरगामित्वात् विस्तीर्णः नाटो यस्य, लुम्भादित्वात् न पत्वं। १ गड। २ आद्यत-शब्द, जोरकी भाषा। (त्रि०) ३ बहुकालायायी शब्दयुक्त वण्टादि, जिसमे भारी शब्द निकले।

दीर्घनाल (सं० पु०) दीर्घं नालं यस्य। १ दायनाल, प्यार। २ गुण्डलण, गोंदला घास। (कौ०) ३ दीर्घ-रोहिष्क, रोहिंस घास।

दीर्घनास (सं० त्रि०) दीर्घा नासा यस्य। दीर्घनासिका, युक्त, जिसकी नाक लम्बी हो। २ दीर्घनासिका, लम्बी नाक।

दीर्घनिद्रा (सं० स्त्री०) दीर्घा निद्रा। १ नृशु, नीत। २ दीर्घकालव्यापिनी निद्रा, बहुत देर तक रहनेवाली नींद।

दीर्घनिष्ठाव (सं० पु०) लम्बी साँस जो दुःख या शोकके प्राथमिक कारण ली जाती है।

दीर्घनिष्ठन (सं० पु०) गड।

दीर्घपक्ष (सं० पु०) दीर्घो पक्षो यस्य। १ कश्चिद्वाय, कनिंग पक्षो। २ दीर्घपक्षयुक्त पक्षिमात्र, वह पक्षी जिसके छेने सन्धे हो।

दीर्घपटोलिका (सं० स्त्री०) दीर्घा पटोलिका। सताकल विषय। इसका गुण—स्निग्ध, कटु, विटम्बो और शुष्क। वायु, पित्त, श्लेष्मा, रुचि, भेदकारक, मधुर और शीतल है।

दीर्घपत्र (सं० पु०) दीर्घं पत्रं यस्य। १ राजपत्राण्ड,

परमिष्ठ मोक्षार्थं मनुष्य तमे नर्ही समर्थ मयते ।
यद्ये कारण है कि ये सम पर सुख होते, चामर होते
तथा मोग करनेसे नित्य ध्यातिव्यस्त रहते हैं । किन्तु जो
उत्ते ममत्त गये हैं, वे क्या कभी उसके पास जा सकते ?
कभी नहीं । मद्यपाय द्वारा उत्पन्न मनोविकार जिस तरह
शराधीके निजट सुख ममत्ता जाता है, उसी तरह विष-
येन्द्रियके मद्योग द्वारा पर्याप्त चक्षु पादिके साथ यो
मूर्च्छा पादिके मद्योगादि द्वारा जो मनोविकार उत्पन्न
होता है उसे चविवेकी लोग भूलसे सुख मानते हैं ।

चविवेकी जिसे सुख कहते हैं, विवेकी उसको दुःख
मानते हैं । जो परिणाम दुःख, तापदुःख और संस्कार-
दुःखमें जड़ित हैं, जो धनस मगता विकार मात है, जो
केवल सत्वगुणके कसुप परिणामके निवा और कुछ नहीं
है, यह सुख नहीं है, सुख नामक दुःख है । भोगमें जो
सुख नहीं है, प्रत्येक भोगके साथ साथ जो परिणाम-
दुःख, तापदुःख और संस्कारदुःख भुगतना होता है,
यह जाननेके लिये थोड़ा ही विचार काफी है ।
मान लो, एक दिन तुमने किसी एक दिव्याङ्गनासे सह-
वास किया । उस समय तुम्हें जो मनोविकार उत्पन्न
हुया, उसको तुम सुख समझने लगे । मनोविकार जब
तक रहा, तभी तक तुमने सुखका अनुभव किया । किन्तु
उसके कुछ देर बाद ही फिर जो दुःख या यही दुःख है ।
वह काम करनेसे तुम्हारा प्राण जो चय हुई, उसके
नित्य तुम्हें एक और घटक दुःख हुआ । फिर भी देना,
कि तुम्हारा वह मनोविकार वा सुख स्थायी न रहा,
यह त जन्म नष्ट हो गया । सुख नहीं रहा, नष्ट हो गया,
यह सोच कर भी तुम्हें एक दूसरा दुःख उत्पन्न हो
पाया । तुमने जो उस अनुचित मनाविकारकी थोड़ी
कामने लिये सुख माना था, उसके प्रभावसे दूसरे दिन
फिर यही पानेके लिये आनायित हुए । सुखके लिये
आनायित हो-से कितना क्रोध, कितना दुःख, कितना
पादास और कितना पाप करना होता है, वह भी गौर
नर देखो । उस सुख नामक मनोविकार वा भोगको दोष
करनेके लिये तुम दबड़क ही जा नहीं ? चयय हो ।
जिसा गतिसे यदि तुम्हारी सम कष्टाकी पूर्ति न हो,
पर्याप्त समके दृष्टानुसूय उपकरण न मिले, चयय

भोगका भद्रोप या उमकी चययता हो, तो तुम्हें कितना
दुःख होगा, यह भी सुन्दर हुए बिना एक सुखमे नहीं
कह सकते ।

मान लो, तुम्हारे भोगका भद्रोप या चययता न हुई,
हृदि ही हुई । किन्तु यहाँ जो भोग बढ़ा, स्थायी उमने
साथ साथ रोग भी उत्पन्न हुआ । "भोगे रोगमय"
पर्याप्त भोगके साथ रोगका भय चयय होता है । चययता
भोग करनेसे रोग चयय होता, सुता उमने दुःख भी
होगा । चयय यह सिद्ध हुआ कि प्रत्येक भोगका परि-
णाम दुःखमय है । हमने मन्देद नहीं । हम पर थोड़ा
विचार करनेसे भोगका परिणाम जो दुःख है वह मान्य
हो जायगा । यहाँ तक कि चयमानमें पर्याप्त भोग-
कामने भी तुम मँकड़ों दुःख वा मँकड़ों परिणामसे
पाकाल्य वा जड़ित रहते हो । पोटि यह नष्ट हो जाता
है, किस प्रकार यह स्थायी रहनेगा, किस प्रकार यह
बढ़ेगा, किस प्रकार हमका व्याघात नहीं होगा इत्यादि
प्रकारके चयनिक चिन्तामय वा तापजनक चिन्ताएं उप-
स्थित हो कर तुम्हें परेशन करती हैं । इसके निवा
उपको प्रासुष्टिक विविध पापमय मनोवृत्ति पर्याप्त
राग, द्वेष, क्रोध पादि उदित हो कर तुम्हारे हृदयमें
चयनिक प्रकारके भगिया दुःखोंका बीज मद्धार करते हैं ।
अतएव दुःखभोगके साथ साथ जो चयनिक प्रकारके ताप
वा दुःख भोगने होते हैं, वह यह भिर हो गया ।
हम विषयमें और भी एक उपारण है । सुख भोग
करनेके साथ जो चित्तमें उसका संस्कार चयय हो जाता
है, यह संस्कार तुम्हें बार बार उस भोगको और सोच
ने जाता है । यही कारण है, कि तुम पुनः पुनः पुनः
भूत सुखके समान सुखभोगको दृष्टा करते हो, जब तक
उस सुखको नहीं पाओगे, तब तक चयय रहते हो ।
अतएव सुखभोगका संस्कार भी दुःखजनक है । मोग
क्या है, हमका विचार करनेसे मान्य पड़ता है कि भोग
कुछ नहीं है । यह केवल एक प्रकारका सामयिकार
है । सुता चयपरिणामो मय, रज और तमोमुखी
सत्त्विक परिणामकय चयमभूत भोगमात्र ही दुःख है ।
इसी सब कारणसे पर्याप्त प्रत्येक भोगने ही परिणाम,
ताप और संस्कार प्रथित रहनेसे तथा परकार विरोधी

लोह ध्याज । २ विष्णुजम्द । ३ हरिदर्म, एक प्रकारका फल । ४ कुपौतुहल, कुचला । ५ हनुमेट, एक प्रकारकी ईख ।

दीर्घपत्रक (स० पु०) दीर्घपत्र संज्ञायां कन् । १ रत्न लयन, लाल लवण । २ एरण्ड, रेंड, शंडी । ३ पिज्जल-हल, मसुद्रफल । ४ वेतसहल, वेत । ५ कुरीरहल, टेटी-का पेड़ । ६ जलज मधुकहल, जलमधुषा । ७ लयन, लहसुन ।

दीर्घपत्रा (स० स्त्री०) दीर्घ पत्रं यस्याः । १ चित्रपर्णिक, मंजोठ । २ क्लृप्तश्रुतल, छोटा जामुनका पेड़ । ३ पृश्निपर्णिलता, पिठवन । ४ गन्धपत्रा । ५ वेतकी । ६ शालपर्णी, सरिवन । ७ डोरीसुप, एक प्रकारकी लता ।

दीर्घपत्रिका (सं० स्त्री०) दीर्घपत्र संज्ञायां कन् टाप, पत्र इत्वं । १ श्वेतवचा, सफेद बच । २ घृतकुमारो, घीकुधार । ३ शालपर्णी, सरिवन । ४ श्वेत पुनर्षवा, सफेद गदहपुरना ।

दीर्घपत्रो (स० स्त्री०) दीर्घपत्र गौरादि० ङोप् । १ पलायोलता, खिरनी । २ महाचवु, गाक, एक किष्कका साग ।

दीर्घपर्ण (स० त्रि०) जिसके लम्बे पर्ने हों ।

दीर्घपर्णी (स० स्त्री०) दीर्घ पर्णं यस्या गौरादि० ङोप् । पृश्निपर्णी, पिठवन ।

दीर्घपल्लव (स० पु०) दीर्घः पल्लवो यस्याः । १ शनहल, सनका पेड़ । (त्रि०) २ पायतपल्लव, लम्बा पत्ता ।

दीर्घपाद (स० पु०) दीर्घः पादो यस्या समासनाः भक्त्युपः । १ काहपक्षी । २ कारस । (त्रि०) ३ दीर्घ पदयुक्त, लम्बो टांगवाला ।

दीर्घपादप (स० पु०) दीर्घपादो पादपश्चेति । १ तान, ताड़का पेड़ । २ पूग, सुपारीका पेड़ ।

दीर्घष्ट (स० पु०) दीर्घः ष्टं यस्याः सप, सप ।

दीर्घप्रज्ञ (स० पु०) हापरगुप्तं असुरावतार हवर्षा नामक नृपति, हापरके एक राजा हवर्षा जो असुरके अथतार पी । ये अत्यन्त दूरदर्शी थे, इसीसे इनका नाम दीर्घप्रज्ञ पड़ा । (त्रि०) दीर्घः प्रज्ञा यस्याः । २ दूरदर्शी ।

दीर्घफल (स० पु०) दीर्घफलं यस्याः । आरव्यहल, भ्रमलतास ।

दीर्घफलक (सं० पु०) दीर्घफल संज्ञायां कच् । भगवत्पत्रक, भगवत्पत्रा पेड़ ।

दीर्घफला (सं० स्त्री०) दीर्घानि फलानि यस्याः । १ मालव-देवप्रसिद्ध जलुका नामकी लता । २ कपिलद्राक्षा, शंगूर ।

दीर्घफलिका (सं० स्त्री०) दीर्घफल-कप् टाप, कापि पत्र इत्वं । १ कपिलद्राक्षा, लम्बा शंगूर । २ जलुका । ३ मेघशृङ्ग नामकी लता । ४ तिक्तासाधु, तीता कड़ू ।

दीर्घशाला (सं० स्त्री०) दीर्घः शालः केशो यस्याः । चमरी, मूरागाय ।

दीर्घबाहु (सं० पु०) दीर्घो बाहु यस्याः । १ शिमानुचर-भेद, शिवके एक अनुचरका नाम । २ धृतराष्ट्रका-पुत्रभेद, धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (त्रि०) ३ पावत बाहु-युक्त, जिसकी भुजा खंभो हो ।

दीर्घबाहुक (सं० पु०) लहदाराक लता ।

दीर्घबाहुर्वित (सं० पु०) दीर्घभेद, एक अनुचरका नाम ।

दीर्घभुज (सं० पु०) दीर्घो भुजो यस्याः । १ शिमानुचर-भेद, शिवके एक अनुचरका नाम । (त्रि०) २ दीर्घ बाहुयुक्त, जिसकी भुजा लम्बी हो ।

दीर्घमात (सं० पु०) दीर्घः पश्चिमसमयस्यापो मातः निःश्वासवायुयस्याः । हसो, हासो ।

दीर्घमुख (सं० पु०) दीर्घमुखं यस्याः । १ यक्षभेद, एक यक्षका नाम । २ दीर्घमुखयुक्त, जिमका मुँह लम्बा हो ।

दीर्घमूल (सं० पु०) दीर्घं मूलं यस्याः । १ मोरटलता, एक प्रकारकी बेल । २ विष्णुवत्तल, (कु०) ३ साम-ल्लकटण, एक पोखी घास जो बेनाकी तरह होती है । ४ यासहल, जवाब । ५ विस्वहल, बेलका पेड़ । ६ विभी-तकहल । ७ इन्द्रयव, कुड़ा । ८ मूलक, मूलो ।

दीर्घमूलक (सं० स्त्री०) दीर्घमूल-संज्ञायां कन् । मूलक, मूलो ।

दीर्घमूला (सं० स्त्री०) दीर्घः मूलं यस्याः टाप । श्यामा-लता, कालोसर । २ शालपर्णी, सरिवन ।

दीर्घमूलिका (सं० स्त्री०) दीर्घमूल-कप् टाप, कापि पत्र इत्वं । दुराक्षमा, लवाच, घमाषा ।

दीर्घमूलो (सं० स्त्री०) दीर्घं मूलं यस्याः ङोप् । दुरा-लमा, लवाच ।

गुणपरिणाम वतमान रहनेसे योगो भोग तथा विवेकी भोग उसे दुःख मानते हैं। वे उसे कभी भी सुख नहीं मानते। ऐसा होनेसे सुख नहीं है, मनोविकारके नष्ट होनेसे ही सुख है, ईश्वर और आत्मतत्त्वमें चित्तके स्थिर होनेसे ही सुख है, मनोसय होनेसे और भी सुख है। वह सुख दृश्यभोगमें नहीं है, इस कारण योगी भोग दृश्य समुदायको दुःख माना है। यही सबका उद्देश्य है, इसीमें सब कोई व्यतिव्यस्त रहते हैं। किन्तु प्रकृतिमार्ग-का अवलम्बन न कर सकनेके कारण अनोस दुःखको रोकनेके लिये जो चेष्टा को आता है, वह हथा है। क्योंकि दुःखको जब उत्पत्ति होती है, तब दुःखके प्रथम क्षणमें उत्पत्ति, द्वितीय क्षणमें स्थिति और तृतीय क्षणमें दुःख आपसे आप नष्ट हो जाता है। दुःख जब आपसे आप विनष्ट हो जायगा, तब उसके लिये चेष्टा करना निष्प्रयोजन है। अतीत दुःख तो विनष्ट हो चुका है, उसके लिए भी साधन करना निष्प्रयोजन है। इसीसे शास्त्रमें अतीत और वर्तमान दुःखका प्रतिकार न कर प्रनागत दुःखके प्रतिकारकी व्यवस्था है।

"द्विप दुःखनागतः।" (पाठ २।१६) अनागत पर्याप्त भविष्य दुःख को द्विप है, जिससे भविष्यमें फिर कोई न होवे, वह करना ही कर्तव्य है। इसका परिणाम यह है, कि प्रारम्भभोग पर्याप्त जिसका भोग प्रारम्भ हुआ है, वह दुःख बिना भोग किये निवृत्त नहीं होता। किसी प्रकारके योग वा यत्न द्वारा उसे नष्ट भी नहीं कर सकते। अतः योगीके प्रति उपदेश यह है, कि वे प्रनागत पर्याप्त भविष्य दुःखके निवारणको चेष्टा न करें। योग द्वारा दुःखका राज दाय कर डालनेसे ही वह सुसिद्ध हो जायगा। दुःखवीजरूप अज्ञानके नष्ट हो जानेसे दुःखदूर कहसि होगा। दृष्टा आत्मा और दृश्य पर्याप्त अन्तःकरण उन दोनों का संयोग रहना ही दुःखका कारण है।

तात्पर्य यह कि सुख, दुःख और मोक्ष ये सभी बुद्धि-व्यक्त विकार हैं। बुद्धिद्वय वा अन्तःकरण, इन्द्रिय सम्बन्ध द्वारा विषयाकारमें और सुख दुःखादि आकारमें परिणत होनेके साथ ही वह चित्प्रज्ञा द्वारा प्रज्वलित होता है। इस प्रकारकी प्रदीप्ताकी भाषाकार

चित्प्रज्ञाका प्रसिद्धात्म वा चित्तको आयापति वतनाते हैं। नोकव्यवहारमें उसे 'दर्शन' वा 'मुलाकात' कहते हैं। अतः परिणाम स्वभाव बुद्धिसत्त्व वा अन्तःकरण पदार्थ दृश्य है और उसके निकटवर्ती अपरिणामी चित्प्रज्ञा उसको दृष्टा है। वही दृश्य और दृष्टा है—इन दोनों का जो संयोग कहा गया है, अर्थात् वे दोनों जो एक ही भाव हो रहे हैं, वही संसारो जीवके उल्लिखित दुःखसमूहका मूल है; अर्थात् बुद्धिके ऊपर पुरुष वा आत्माको समेदभान्ति वा आत्मसम्पर्क कल्पित होता है, यही जान कर पुरुष सुखदुःखादिके विकारमें विवृत्त प्रायः होते हैं। सुतरां बुद्धिके साथ उस प्रकारके मिथ्या-सम्बन्धको घटगा रहनेसे ही पुरुषका क्षणमय भोग उप-चारकमें से उत्पन्न होता है।

जब तक प्रकृति पुरुषका तत्त्वज्ञान और अज्ञानोप-हित चैतन्यकी माया उपाधि दूर नहीं होगी, तब तक दुःख कुछ भी निवृत्त नहीं होगा। पहले कहा जा चुका है, कि वैदिक क्रियाकलाप द्वारा दुःखकी निवृत्ति नहीं होती, इसका तात्पर्य यह है कि इससे आत्यन्तिक दुःख-निवृत्ति नहीं होती। ऐसा कह कर वैदिक क्रिया-कलाप परित्यक्त नहीं है। इससे चित्त-शुद्धि होती है, चित्तशुद्धि होनेसे सम्यक्ज्ञानका उदय होता है, तभी दुःखकी निवृत्ति होती है, ऐसा माननेसे वैदिक क्रिया-कलाप भी दुःखनिवृत्तिका कारण है। 'असम खम' अस्या अयम' इत्यादि श्रुतियोंमें हम लोग सोमरस पान करके देवल लाभ करेंगे, ऐसा लिखा है। वैदिक क्रिया-कलापमें स्वर्गादिका लाभ होता है, वहां पर सुखका अनुभव करके फिर अत्यन्त दुःखनिवृत्तिके प्रति यत्न नहीं रहता। इनका पुण्य जब चोप हो जाता है, तब फिर लज्जयहण करना पड़ता है। इसी सब कारणादि क्रियाकलापको निन्द्या को गढ़े है। इसके सिवा और कुछ नहीं है। वैदिक क्रियाकलाप ही एकमात्र चित्त-शुद्धिका उपाय है। चित्तशुद्धि नहीं होनेसे तत्त्वज्ञानादि नहीं होते।

मनुष्यको भाषा ही दुःखका कारण है। भाषा जब तक रहेगी; तब तक अनन्त दुःख समुता ही होगा। जब कोई प्रकाश भाषा न रहेगी, तभी यथार्थमें दुःख-का नाश होगा।

दीर्घयज्ञ (म० ति०) दीर्घः बहुकालव्यापको यज्ञो यमा । १ बहुकालव्यापक यज्ञकारी, जिसने बहुत काल तक यज्ञ किया हो । (पु०) २ आपरसुनरे एक ययो-ध्याधिति । (भारव समा० २८ व०)

दीर्घयाघ (म० ति०) या-कर्मणि य, दीर्घकालेन याघः गत्यर्थः । दीर्घकाल द्वारा गन्तव्य, बहुत काल तक जाने योग्य ।

दीर्घरदा (म० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी ।

दीर्घरत (म० पु०) रुक्मर, कुसा ।

दीर्घरत (म० पु०) दीर्घा रतो दन्तो यमा । १ शूकर, सुन्दर । २ दीर्घदन्त, लम्बा दाँत । (ति०) ३ पायत-दन्तमुल, जिसके निकले हुए लम्बे दाँत हो ।

दीर्घरथ—लज्जानके एक राजा । ये लज्जतविजयी महा-राज जनमेजयके पुत्र थे । जनमेजय देखो ।

दीर्घरसन (म० पु०) दीर्घा रसना जिह्वा यस्य । संप, साप ।

दीर्घरागा (म० स्त्री०) दीर्घः अधिककालस्याद्यो रागः यस्याः । हरिद्रा, हलदी ।

दीर्घराज (म० स्त्री०) दीर्घः प्रचुरा राजयः सन्तार, पर्याप्तित्वादयः । चिरकाल, अधिक समय ।

दीर्घराव (म० ति०) दीर्घः रावः यस्य । उच शब्दकारो, जो भारी शब्द करता हो ।

दीर्घरोगिन् (म० ति०) चिररोगी, जो बड़ा रोगसे ग्रसित रहता हो ।

दीर्घरोम (म० पु०) दीर्घाणि रोमानि यस्य । १ भालू, भालू । २ गिरासुचरभेद, गिरके एक धनुचरका नाम ।

दीर्घरोक्षिण (म० स्त्री०) दीर्घः रोक्षिणं ततः स्वार्थं मन्त्रार्था वा कन् । सुगन्धि यक्षविशेष, मानव, राजपूताना और मध्यप्रदेशमें सोनेवासी एक प्रकारको रोक्षिण घास । इसमेंसे बहुत अच्छी रुग्ण निरुपतो है जो नोड़ की सुगन्धिसे मिलती जुलती है । इसका संज्ञित पर्याय—हृदकपण्ड, हृदकपण्ड, यष्ट, दीर्घनाम और तिरुसार है । इसका गुण—कटु, खटु, कण, वात, भूतघ्न और विदग्धाग्रक तथा बलवन्त और उपग्रस-कारक है ।

दीर्घतदाहुम (म० पु०) धर्मज्ञां धृष्टं, मत्तानाम् ।

दीर्घनोचन (म० ति०) दीर्घनोचनं यमा । १ पायत-नेत्र, बड़ी आँखवाला । (पु०) २ गिरासुचरभेद, गिरके एक धनुचरका नाम । ३ हनराष्ट्र पुत्रभेद, हनराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (स्त्री०) पायतं नोचनं । ४ लम्बी आँख ।

दीर्घनोक्षितवटिका (म० स्त्री०) रत्नदण्ड, मान लज्ज ।

दीर्घवयं (म० पु०) दीर्घा वयं इय । १ लज्ज, नरकट । २ मत्तत कुन । ३ प्राचीनवंशसम्भूत, यह जो प्राचीन वंशमें लम्बे दुषा हो ।

दीर्घवक्त्रः (म० पु० स्त्री०) दीर्घः वक्त्रः सुष्ठं यमा । १ हस्तो, हाथो । (स्त्री०) दीर्घः वक्त्रः । २ पायत वदन, लम्बा मुँहवाला ।

दीर्घवक्त्रिका (म० स्त्री०) दीर्घवत् शीकते विचरति शोक-क एपीदशां क्वचः । कुम्भोर, घड़ियाल ।

दीर्घवर्षाभू (म० पु० स्त्री०) दीर्घा वर्षाभूः । शीत पुन-र्षवा, चिराटिका ।

दीर्घवक्त्रो (म० स्त्री०) दीर्घा वक्त्रो । १ मण्डूदावपी, बड़ा हन्त्रायन । २ पातालमन्दकोषता, छिटा । ३ पलाशो-लता, बोटिया पलाश ।

दीर्घवृक्ष (म० पु०) दीर्घः वृक्षः । १ गामवृक्ष, माकड़ा पेड़ । २ ताम्रवृक्ष, ताड़का पेड़ ।

दीर्घवृत्ता (म० पु०) दीर्घः वृत्ता यस्य । १ शीतलक वृक्ष, सोनापाठा । २ शीतलक प्रभेद, एक दूसरे प्रकारका सोनापाठा । ३ मत्तहुम, लतागान ।

दीर्घवृत्तक (म० पु०) दीर्घवृत्त स्वार्थे कन् ।

दीर्घवृत्त देखो ।

दीर्घवृत्ता (म० स्त्री०) दीर्घः वृत्ता यस्य । १ वृक्ष-विभिन्नोपता ।

दीर्घवृत्तिका (म० स्त्री०) दीर्घः वृत्ता यस्य । कप-टापि पतदलं । एनापयो ।

दीर्घगर (म० पु०) दीर्घः गरः । यादनाल धाम्य, लवार, सुन्दरी ।

दीर्घशय (म० पु०) गाय कन ।

दीर्घशाण (म० पु०) दीर्घो शाणा यस्य । १ शयन, सनका पेड़ । २ शयनवृक्ष, मायुका पेड़ ।

दीर्घशाणिका (म० स्त्री०) दीर्घो शाणा यमाः क्षपि-पतदलं । मोलाशोषण, मधुवनपुष्प ।

अनभिष्ट मोहार्थं मनुष्य उसे नहीं समझ सकते । यही कारण है कि वे उस पर सुख होते, आसक्त होते तथा भोग करनेके लिये व्यतिथ्यस्त रहते हैं । किन्तु जो उसे समझ गये हैं, वे क्या कामों उसके पांव आ सकते ? कामों नहीं । मद्यपान द्वारा उत्पन्न मनोविकार जिस तरह शराबीके निकट सुख समझा जाता है, उसी तरह विष-वेन्द्रियके संयोग द्वारा अर्थात् चक्षु आदिके साथ स्त्री मूर्त्ति आदिके संयोगादि द्वारा जो मनोविकार उत्पन्न होता है उसे अविवेकी लोग भूलसे सुख मानते हैं ।

अविवेकी जिसे सुख कहते हैं, विवेकी उसीको दुःख मानते हैं । जो परिणाम दुःख, तापदुःख और संस्कार-दुःखमें लक्षित हैं, जो केवल मंगला विकार मात्र है, जो केवल सत्वगुणके कणुप परिणामके सिवा और कुछ नहीं है, वह सुख नहीं है, सुख नामक दुःख है । भोगमें जा सुख नहीं है, प्रत्येक भोगके साथ साथ जो परिणाम-दुःख, तापदुःख और संस्कारदुःख सुगतता होता है, वह जाननेके लिये थोड़ा ही विचार काफी है । मान लो, एक दिन तुमने किसी एक दिव्याङ्गनासे सह-वास किया । उस समय तुम्हें जो मनोविकार उत्पन्न हुआ, उसीको तुम सुख समझने लगे । मनोविकार जब तक रहा, तभी तक तुमने सुखका अनुभव किया । किन्तु उसके कुछ देर बाद ही फिर जो दुःख या बड़ी दुःख है । वह काम करनेसे तुम्हारा आशु जो चय हुई, उसके लिये तुम्हें एक और पृथक् दुःख हुआ । फिर भी देखो, कि तुम्हारा वह मनोविकार वा सुख स्थायी न रहा, बहुत जल्द नष्ट हो गया । सुख नहीं रहा, नष्ट हो गया, यह सोच कर भी तुम्हें एक दूसरा दुःख उत्पन्न हो आया । तुमने जो उस अनुचित मनोविकारकी थोड़ी कालके लिये सुख माना था, उसके प्रभावमें दूसरे दिन फिर बड़ी पानेके लिये लाज्यायित हुए । सुखके लिये लाज्यायित होकर कितना क्रोध, कितना दुःख, कितना आयास और कितना पाप करना होता है, वह भी गौर कर देखो । उस सुख नामक मनोविकार वा भोगको दोष करनेके लिये तुम इच्छा कर हो वा नहीं ? अवश्य हो । किसी गतिसे यदि तुम्हारी उस इच्छाका पूर्ति न हो, अर्थात् उसके इच्छानुरूप उपकरण न मिले, अथवा

भोगका सङ्कोच या उसकी अल्पता हो, तो तुम्हें कितना दुःख होगा, वह भी सुट हुए बिना एक सुखसे नहीं कह सकते ।

मान लो, तुम्हारे भोगका सङ्कोच वा अल्पता न हुई, ठहरी ही हुई । किन्तु ज्यों ही भोग बढ़ा, त्यों ही उसके साथ साथ रोग भी उत्पन्न हुआ । “भोगे रोगमय” अर्थात् भोगके साथ रोगका भय अवश्य होता है । अत्यन्त भोग करनेसे रोग अवश्य होगा, सुतरां उससे दुःख भी होगा । अतः यह सिद्ध हुआ कि प्रत्येक भोगका परिणाम दुःखमय है । इसमें सन्देह नहीं । इस पर थोड़ा विचार करनेसे भोगका परिणाम जो दुःख है वह मान्य हो जायगा । यहाँ तक कि वर्षा मानमें अर्थात् भोग-कालमें भी तुम सैकड़ों दुःख वा सैकड़ों परितापसे आक्रान्त वा लक्षित रहते हो । पछे यह नष्ट हो जाता है, किस प्रकार यह स्थायी रहेगा, किस प्रकार यह बढ़ेगा, किस प्रकार इसका व्याघात नहीं होगा इत्यादि प्रकारोंके अनेक चिन्तामूल वा तापजनक चिन्ताएँ उपस्थित हो कर तुम्हें परितप्त करती हैं । इसके सिवा उसको आनुसङ्गिक विविध पापमय मनोवृत्ति अर्थात् राग, द्वेष, क्रोध आदि उदित हो कर तुम्हारे हृदयमें अनेक प्रकारके भविष्य दुःखोंका बीज संचार करते हैं । अतएव दुःखभोगके साथ साथ जो अनेक प्रकारके ताप वा दुःख भोगने होते हैं, प्रबल हो स्थिर हो गया । इस विषयमें और भी एक उपाख्यान है । सुख भोग करनेके साथ ही विषयमें उसका संस्कार श्राव्य हो जाता है, यह संस्कार तुम्हें बार बार उस भोगको और जीव ले आता है । यही कारण है, कि तुम पुनः पुनः पूर्वोक्त भूत सुखके समान सुखभोगको इच्छा करते हो, जब तक उस सुखकी नहीं पाओगे, तब तक व्यकुल रहते हो । अतएव सुखभोगका संस्कार भी दुःखजनक है । भोग क्या है, इसका विचार करनेमें मालूम पड़ता है कि भोग कुछ नहीं है । यह केवल एक प्रकारका मानसविकार है । सुतरां अणुपरिणामो सत्य, राज और तमोगुणका ध्वजिक परिणामरूप अणुभङ्ग भोगमात्र ही दुःख है । इन्हीं सब कारणोंसे अर्थात् प्रत्येक भोगमें ही परिणाम, ताप और संस्कार स्थित रहनेसे तथा परस्पर विरोधी

गुणपरिणाम वृत्तमाने रहनेमें योगी लोग तथा विवेकी लोग उसे दुःख मानते हैं। वे उसे कामो भो सुख नहीं मानते। ऐसा होनेसे सुख नहीं है, मनोविकारके नष्ट होनेसे ही सुख है, ईश्वर और आत्मतत्त्वमें चित्तके स्थिर होनेसे ही सुख है, मनोमय होनेसे और भी सुख है। वह सुख दृष्टभोगमें नहीं है, इस कारण योगी लोग दृष्ट्य समुदायको दुःख माना है। यही सबका ग्रहण है, हमीमें सब कोई व्यतिव्यस्त रहते है। किन्तु प्रकृतिभाग्य-का अवलम्बन न कर सकनेके कारण असीम दुःखको रोकनेके लिये जो चेष्टा को जातो है, वह दृष्टा है। क्योंकि दुःखकी जब उत्पत्ति होती है, तब दुःखके प्रथम क्षणमें उत्पत्ति, द्वितीय क्षणमें स्थिति और तृतीय क्षणमें दुःख चापसे चाप नष्ट हो जाता है। दुःख जब चापसे चाप विनष्ट हो जायगा, तब उसके लिये चेष्टा करना निष्प्रयोजन है। अतः दुःख तो विनष्ट हो चुका है, उसके लिए भी साधन करना निष्प्रयोजन है। इसीसे शास्त्रमें अतोत और वृत्तमान दुःखका प्रतिकार न कर घनागत दुःखके प्रतिकारकी व्यवस्था है।

"द्वि" दुःखमनागत" (पात० २।१६) अनागत अर्थात् भविष्य दुःख को ही है, जिससे भविष्यमें फिर कोई न होवे, वह करना ही कर्तव्य है। इसका अभिप्राय यह है, कि प्रारब्धभोग अर्थात् जिसका भोग पारम्भ हुआ है, वह दुःख बिना भोग किये निवृत्त नहीं होता। किसी प्रकारके योग वा यत्न द्वारा उसे नष्ट भी नहीं कर सकते। अतः योगीके प्रति उपदेश यह है, कि वे अनागत अर्थात् भविष्य दुःखके निवारणको चेष्टा न करें। योग द्वारा दुःखका रोज दण्ड कर डालनेसे ही वह सुख हो जायगा। दुःखबीजरूप अज्ञानके नष्ट ही जानसे दुःखादूर कहामे होगा। दृष्टा आत्मा और दृष्ट्य अर्थात् अन्तःकरण उन दोनोंका संयोग रहना ही दुःखका कारण है।

तात्पर्य यह कि सुख, दुःख और मोक्ष ये सभी बुद्धि-व्यक्ती विकार हैं। बुद्धिद्वय वा अन्तःकरण इन्द्रिय सम्बन्ध द्वारा विषयकारमें और सुख दुःखादि आकारमें परिणत होनेके माध्यम ही वह चित्तगति द्वारा प्रवृत्त होता है। उस प्रकारकी प्रदीप्तताको शास्त्रकार

चित्तगति का प्रतिकार वा चित्तको क्षायापत्ति वतलाते है। नोक्तव्यवहारमें उसे 'दर्शन' वा 'सुखाकात' कहते हैं। अतः परिणाम स्वभाव बुद्धिसत्त्व वा अन्तःकरण पदार्थ दृष्ट्य है और उसके निकटवर्ती अपरिणामी चित्तगति उसको दृष्टा है। वही दृष्ट्य और दृष्टा है—इन दोनों-का जो संयोग कहा गया है, अर्थात् वे दोनों जो एक ही भाव हो रहे हैं, वही संसारो जीवके उल्लिखित दुःखसमूहका मूल है; अर्थात् बुद्धिके क्षण पुण्य वा आत्माकी प्रमदभ्रान्ति वा आत्मसम्पर्क कल्पित होता है, यही जान कर पुण्य सुखदुःखादिके विकारमें विनष्ट प्रायः होते हैं। सुतरां बुद्धिके माध्यम उस प्रकारके मिथ्या-संस्पर्शको घटा रहनेसे ही पुण्यका क्षीयमान भोग उप-चारकर्मसे उत्पन्न होता है।

जब तक प्रकृति पुण्यका तत्त्वज्ञान और अज्ञानोप-हित चेतन्यकी माया उपाधि दूर नहीं होगी, तब तक दुःख कुछ भी निवृत्त नहीं होगा। पहले कहा जा चुका है, कि वैदिक क्रियाकलाप द्वारा दुःखकी निवृत्ति नहीं होती, इसका तात्पर्य यह है कि इससे भ्रातृन्तिक दुःख-निवृत्ति नहीं होती। ऐसा कह कर वैदिक क्रिया-कलाप परित्यज्य नहीं है। इससे चित्त-शुद्धि होती है, चित्तशुद्धि होनेसे सम्यक् ज्ञानका उदय होता है, तभी दुःखकी निवृत्ति होती है, ऐसा माननेसे वैदिक क्रिया-कलाप भी दुःखनिवृत्तिका कारण है। 'अग्राम सोम' अमृता अमृत' इत्यादि श्रुतियोंमें हम लोग सोमरस पान करके दिव्य काम करेंगे, ऐसा लिखा है। वैदिक क्रिया-कलापमें स्वर्गादिका लाभ होता है, वहां पर सुखका अनुभव करके फिर अत्यन्त दुःखनिवृत्तिके प्रति यत्न नहीं रहता। इसका पुण्य जब चाप हो जाता है, तब फिर लक्ष्यपहण करना पड़ता है। इन्हीं सब कारणोंसे क्रियाकलापको निन्दा को गढ़े है। इसके सिवा और कुछ नहीं है। वैदिक क्रियाकलाप ही एकमात्र चित्त-शुद्धिका उपाय है। चित्तशुद्धि नहीं होनेसे तत्त्वज्ञानादि नहीं होते।

मनुष्यको भाषा ही दुःखका कारण है। भाषा जब तक रहेगी; तब तक अनन्त दुःख भुगतना ही होगा। जब कोई प्रकाश भाषा न रहेगी, तभी यथार्थमें दुःख-का नाश होगा।

“आशा हि परमं दुःखं नैराशं परमं सुखं ।

तथा यमं ह्यियं कान्तायां सुखं दुःखं गणितम् ॥”

(मांख साधु)

पाशा हो परम दुःख है, नैराश्य ही सुख है, पिछला
वेन्या अपने कान्ताको आशा न रख सुखसे सोई थी । जब
हम लोगोंको सब पाशा तिरोंहित हो जायेगो और किसी
विषयको लक्ष्मरत न रहेगी, तभी दुःखको निवृत्ति होगी ।
आशाको मोड़नी मायासे विमोहित हो कर हम लोग
लगातार दुःख भोगते हैं । जिस दिन पाशा दूर हो
जायेगी, उसी दिन और क्षीय भुगतना न होगा । बराह-
प्राणमें इन सबको दुःख बतलाया है—पहलारी जोव
मोहसे बाह्यत हो कर हमें (ईश्वर) या नहीं सकते, इससे
और अधिक दुःख क्या होगा, जो सर्वांगी है, सब विज्ञेता
है, नमस्कार वि-वर्जित है और जो हमें प्राप्त नहीं कर
सकते, इससे और अधिक दुःख क्या है ? घरमें दोपहरके
समय अतिथिके उपस्थित होने पर जो अतिथिसेवा न
कर पाय भोजन कर लेते हैं, इससे और अधिक दुःख
क्या हो सकता ? कोई तो भाममांभ खाता है, कोई दूध,
घोका सेवन करता है और कोई मूला मांस खाता है,
कोई दुग्धकेणनिभ शय्या पर सोता है, कोई छणयय्या
पर दिन बिताता है, कोई विद्वान् है, कोई कृता है,
कोई सर्वशास्त्रविगारद है, फिर कोई मूर्ख है, इससे
और अधिक दुःख क्या होगा ?

दुःखकर (स० वि०) दुःख उत्पन्न करनेवाला, क्षीय
पड़ जानेवाला ।

दुःखकोट्रवा (स० स्त्री०) मसूरिकाभेद, एक प्रकारका
मसर ।

दुःखपाम (स० पु०) १ दुःखानां पामी यत् । संसार । संसार
ही सब प्रकारके दुःखका कारण है, या संसार ही दुःख
मय है । बिना संसारके निवृत्ति हुए दुःख निवृत्त नहीं
हो सकता है, इसीसे संसारको दुःखपाम कहते हैं ।

दुःखानां पामः ६-तत् । २ दुःखं समुदायः, दुःखका समूह ।

दुःखजात (स० वि०) जातं दुःखमप्य परनिपातः ।
१ संजात दुःख, जिससे कष्ट हो । (स्त्री०) दुःखानां जातं
६-तत् । २ दुःखसमुदायः, दुःखका ढेर ।

दुःखजीवी (स० वि०) जो कष्टसे समय व्यतीत
करता हो ।

दुःखता (स० स्त्री०) दुःखस्य भावः दुःख-तमः, ततो
टापः । दुःखत्व, दुःखका भाव ।

दुःखत्रय (स० स्त्री०) दुःखानां त्रयं । त्रिविध दुःख, प्राधा-
त्मिक, प्राभिभौतिक और प्राधिदैविक ये तीन प्रकारके
दुःख । दुःख त्रयेः ।

दुःखद (स० वि०) दुःखं ददाति दा-क । दुःखदायी, क्षय
पड़ जानेवाला ।

दुःखदग्ध (स० वि०) दुःखेन दग्धः । परितप्त, कष्टमें पड़ा
हुआ ।

दुःखदयन (स० पु०) दूष, मोघ ।

दुःखदाता (स० पु०) वह मनुष्य जो दुःख पड़ जाता हो ।
दुःखदायक (स० वि०) दुःख-दा-यि-व-त्त्व-सः । दुःख-
कार, कष्ट पड़ जानेवाला ।

दुःखदायो (स० वि०) दुःख देनेवाला ।

दुःखदिर (स० पु०) दुष्टः खदिरः । महासार खदिर-
भेद, एक प्रकारका खैर ।

दुःखदोष्ठा (स० स्त्री०) दुःखेन दुष्कृतं इति दुःख-
करता, वह गाय जो कठिनतासे दुही जा सके ।

दुःखनिवह (स० वि०) दुःख-ह, चत्यन्त कष्टदायक ।

दुःखप्रद (स० पु०) दुःखद, कष्ट देनेवाला ।

दुःखपूष (स० पु०) दुःख पूष, क्षीयसे भरा हुआ ।

दुःखभञ्जन—हिन्दीके एक कवि । इन्होंने राजा चन्द्र-
सेखरजी विपाठीके आश्रानुसार चन्द्रसेखरकाव्य
नामके एक ग्रन्थ बनाया था । उसमें कुछ खगोलत हो
गया था जिसकी पूर्ति रघुवीर कविने की ।

दुःखभाग (स० वि०) दुःख-भञ्ज यिनि । दुःखभोगी, जो
कष्ट भोगता हो ।

दुःखभाषित (स० वि०) कष्ट उच्चारित ।

दुःखभोग (स० पु०) दुःखस्य भोगः । दुःखानुभव, दुःख-
का सहना ।

दुःखमय (स० वि०) दुःख स्वरूपे मयट् । १ दुःख
स्वरूप । २ दुःखपूष, क्षीयसे भरा हुआ ।

दुःखमय्य (स० वि०) दुःखेन नय्यः । दुःखसाध्य, जो
कठिनतासे मिल सके ।

दुःखनयिका (स० स्त्री०) १ वह वधु जो कठिनतासे
प्राप्त हो । २ राजाभेद, एक रानी ।

विरेचन और बन्धित्वियाके समान गुणकर, वाण्ड, दाह, गृष्णा, इदोम, गूल, उदावर्त्त, शुष्म, यक्ष्मिगतरीम, गुदा-
द्वार, रक्तपित्त, पित्तमार, योनिरोग, यम, रुम और
गर्भस्थावर्मे सर्वदा हितकर है। बानक, वृष, चत, सीप
रोगप्रसू, गुधातुर और मैथुन द्वारा लग्न
इन सब व्यक्तियोंके लिये दूध सर्वदा हितकारी है।

गोदुधके गुण—मधुर रस, मधुर विपाक, शीतल,
स्नग्धवर्धक, सिध्य, वातघ्न, रक्तपित्तनाशक, दोष, धातु
मूल और श्रोतोममूकका दूधत् क्लिष्टतामप्यादक एवं
गुरु है। प्रतिदिन इसका सेवन करनेसे जरा और ममस्त
रोग जति रहते हैं। सभी दूधमें गोदुध ही श्रेष्ठ है।
इसमें भी काली गायका दूध वायुनाशक और अत्यन्त
गुणकारी है। पीली गायका दूध पित्त और वायु
नाशक, मफेद गायका दूध कफकारक और शुद्ध मान
तथा विशिष्ट रंगों वाली गायका दूध वायुनाशक
माना गया है। बालवत्ता पर्याप्त जिम गायका बड़का
बहुत छोटा है और जो बिना घसोकी है वही गायका
दूध द्विदोषजनक है। यह दूध कदापि सेवन नहीं
करना चाहिये। जंगली, तराई और पहाड़ी गायका
दूध गुरु और सिध्य है।

पाकार विविधमें गुण विविध—जो सब गाय बहुत
काम खाती है उनका दूध गुरु, कफकारक, बलजनक
अत्यन्त गुरुवर्धक और सुख व्यक्तियोंके लिये गुणकारी
है। जो सब गाएँ पनाम लुण और कपासके बीज खाती
है उनका दूध रोगियोंके लिये हितकर है।

भैंसका दूध—मधुर रस, शुक्लवर्धक, गुरु, निद्रा-
जनक, अभिगन्दी, गुधाजनक, शीतवीर्य है, तथा
गायके दूधमें इसमें विविध चरबी रहती है।

बकरीका दूध—कपाय, मधुररस, शीतवीर्य, मंशाही,
लघु, रक्तपित्त, पित्तमार, अयकाम, और क्षयरक्त शान्ति-
कारक है तथा सब प्राणियोंमें इसका दूध कुछ विविध
फायदाप्रद है।

भूगादिके दुग्धगुण—मृतादि जंगली पशुओंका दूध
बकरी दूधके जैसा उपयोगी है।

मैंड़ीका दूध—मधुर रस, सिध्य, उत्प्रेषण
अम्लरोगनाशक, अक्षय, यक्ष्मिक, केशका हितजनक,

यक, पित्त और कफवर्धक, गुरु और वायुजनक, का
रोगमें तथा दुधरे दोषोंके मर्गविहीन वायुरोग
प्रसू है।

घोड़ीका दूध—घोड़ीका दूध तथा एक सुरमा
जन्तुओंका दूध रुच, मन्त्रावीर्य, बलकारक, पञ्चजन
मधुररस, लघु, शीत और वायुनाशक है।

जैटोका दूध—लघु, मधुर, मधुररस, अभिगन्दी,
कारक, मारक और क्षमि, कुष्ठ, कफ, श्वाहा, मो
तथा उदर रोगनाशक है।

हथिनीका दूध—शरीरका उपचर्षकारक, मधु
कपायक, गुरु, शुक्लवर्धक, बलकारक, शीतवीर्य
सिध्य, चक्षुका हितशरक और स्थिरतामप्यादक है।
गरीका दूध—लघु, शीतवीर्य, अभिगन्दीकारक
वायु, पित्त तथा चक्षुगुणविनाशक है। यह नम्य
चक्षुसमाधन कियामें प्रसू माना गया है।

धारीण दुग्ध—पर्याप्त दुधनेके बाद जब तक दूध
उत्पन्न रहता है, तब तक उसका गुण बलकारक, शीतवीर्य,
अत्यन्तके समान गुणकारी, अभिगन्दीकारक
और द्विदोषनाशक है, किन्तु ठण्डा हो जाने पर
पीना निषेध है। गायका दूध धारीण अवस्थामें उ
कारी है; किन्तु भैंसका दूध धारीण अवस्था
पर्याप्त दुधनेके बाद ठण्डा हो जाने पर; भैंसका दूध
शीतोष्ण अवस्थामें (पर्याप्त उबाल कर जब तक दूध
ठण्डा न हो तब तक) और बकरीका दूध उबाल कर
ठण्डा हो जाने पर गुणदायक है। गाय और भैंस
दूध कोंह कर सभी भयक्त दूध अभिगन्दी, गुरु, कफ
वर्धक, आमजनक और प्रहितकारी है। भयक्तशरीर
दूध हितकारक है। लेकिन उबाले जाने पर यह
अहितजनक हो जाता है।

दूधको उबाल कर उष्ण अवस्थामें सेवन करनेसे क
और वायु नष्ट होती है और ठण्डा हो जाने पर उस
पित्तको जानो होती है। पर्याप्त जलके साथ पाक कर
जो दूध बच जाता है वह पक्का दूधसे लघु होता है।

जलरहित दूध जितना ही उबाला जाय उतना ही
बद गुरु, सिध्य, लघु और अत्यन्त होता है।

मधुप्रघृता गायके गाढ़े दूधको १ घोंघ (घंघम)

दुःखलोक (स० पु०) दुःख लोके जहाँ दुःख भोगना पड़े स सार ।

दुःखवर्द्धन (स० पु०) कर्णपात्रीरोग, कानकी लोम होनेवाली एक बीमारी ।

दुःखगोच (स० त्रि०) दुःखं शीलयति शील-घण ।

दुःखानुभवमीनकक्षा, जिनका दुःख भोगनेका स्वभाव हो, भयात् जो सब दा दुःख अनुभव करता हो ।

दुःखसंचार (स० पु०) १ कष्टमे समयका विताना । २ कष्टभोग ।

दुःखसागर (स० पु०) दुःखार्ता सागर । दुःखका समुद्र, अस्थान्त क्षीय ।

दुःखमाध (स० त्रि०) दुःखसे होने योग्य, जिनका करना कठिन हो ।

दुःखहरा (स० स्त्री०) दुःख हरति ह-धच्-टाप् । दुःख नाशिनो दुर्गा ।

दुःखाकर (स० पु०) दुःखत्व आकर । १ दुःखकी खान, स सार । (त्रि०) २ दुःखदायक, कष्ट पहुँचानेवाला ।

दुःखाचार (स० त्रि०) १ दुःखभाव । २ दुःशासन ।

दुःखान्त (स० पु०) दुःखस्य अन्तः । १ दुःखका अन्त, क्षीयकी समाप्ति । (त्रि०) २ जिसके अन्तमें दुःख हो । ३ जिसके अन्तमें दुःखका वर्णन हो । प्राचीन युगकी साहित्यग्रन्थोंमें नाटकके दो भेद, वतलाये गये हैं—यहला सुखान्त (Comedy) और दूसरा दुःखान्त (Tragedy) । इसलिपे युरोपके साहित्य, नाटक वा उपन्यास दो प्रकार के कहे गये हैं । लेकिन भारतके आचार्योंमें इस प्रकार का भेद नहीं किया है ।

दुःखान्वित (स० त्रि०) दुःखेन पन्वितः । दुःखयुक्त जिसे कष्ट हो ।

दुःखायतन (स० पु०) स सार ।

दुःखार्त (स० त्रि०) दुःखेन आर्तः पोद्भितः दुःखपोद्भित कष्टसे व्याकुल ।

दुःखित (स० त्रि०) दुःख मञ्जातमस्य, दुःख तारकादि-त्वान्तरितत् । मञ्जात दुःख, जि कष्ट या तकलीक हो ।

दुःखिन् (स० त्रि०) दुःखमस्यास्तीति इति । दुःखान्वित, क्लेशित, पोद्भित ।

दुःखिनो (स० त्रि०) जिन पर दुःख पड़ा हो, दुःखिया ।

दुःप्राय (स० त्रि०) दुःखेन प्राप्यते आप-खत् । दुःख-लभ्य, जिस पर दुःख पड़ा हो ।

दुःशकुन (स० स्त्री०) दुष्टं शकुनं । प्रशमस्तक निमित्तभेद, बुरा शकुन । यात्रामें बुरा शकुन दिखाई पड़नेमें काम सिद्ध नहीं होता है ।

वस्त्रा, चर्म, तुप, शस्त्रि, सर्प, त्वण, चङ्कार, दन्धन, क्षीव, विट्, नैल, कम्पत्त, वसा, पोष, शत्रु, जटित, प्राष्ट, छण, व्याधित, नग्न, तैलाभ्यङ्ग, विकसाङ्ग, सुधात्त, रक्त, स्त्रीपुष्प, शरट, स्त्र्यट्टहाट, माजोरयुद्ध, सुत, कापाय-वस्त्रधारी, गुड, तन्न, पङ्क, विधवा, कुल, कुटम्ब, वस्त्रादि-का स्वस्वन्, लक्षणधन्य, कपास, वस्त्र, दक्षिणकी ओर गर्दभरथ, गर्भिणी, सुष्ठितमस्तक, चाद्रं वस्त्रपरिधायी, दुर्बल, अन्ध, अधिर और उदको ये सब दुःशकुन हैं अर्थात् इन-को देख कर यात्रा कामसे अमङ्गल होता है । कालो यदि कासा वस्त्र पहने हुए यात्राकानमें दिखाई पड़े, तो अपयशुन होता है । (शब्दार्थवितामणिपुष्पा बाध)

यात्राके समय पक्षी आदिके द्वारा पुरुषोंमें जन्मान्तर-जत शुभाशुभ कर्मप्रकाश होते हैं, इसोका नाम शकुन कहते हैं । (हरत्त्वद्विवा ८५।१० अ०) विशेष विवरणके लिये शाकुन शब्द देखे ।

दुःशला (स० स्त्री०) १ राजा छतराष्ट्रकी एक मात्र कन्या । यह गाथासरोके गर्भसे उत्पन्न हुई थी और विन्धुराज जय-द्रथको व्याधो थो । जब क्रुचसेवकी सहाईमें जयद्रथ मारे गये, तब दुःशलाने अपने कोटे लड़केको जो राज-निंदासन पर बिठा कर बहुत दिनों तक राजकार्य चलाया था । उसके लड़केका नाम सुरय था जो क्रमशः राजकार्यमें बहुत विचक्षण हो गया था । पाण्डवोंके अश्व-मेध यज्ञके समय जब अर्जुन यज्ञका घोड़ा लेकर विन्धुदेगमें पहुँचे, तब जिस अर्जुनके हाथसे उसके पिताको मर्य, हुई थो वही अर्जुन युद्धार्थी होकर आये हुए है, यह सुनकर सुरय मयसे मूर्च्छित हो पड़े और पक्षत्वकी प्राप्त हुए । अर्जुनने इस बातकी सुन कर सुरयके वाचक पुत्रकी निंदासन पर अमिथित किया । (भात) (पु०) २ छत-राष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

दुःशासन (स० त्रि०) दुःखेन मियतेसो शास कर्मणि युच । १ जिस पर शासन करना कठिन हो, जो किसी

कहते हैं। फटे हुए दूधको उबालनेसे जो पिण्डाकृति ग्रंथ बन जाता है उसे किलाट वा किना तथा थपका फटे हुए दूधको चौरशाक कहते हैं। दही वा मट्ठेसे दूधको फाड़ कर उसे कपड़ेसे निचोड़ लेनेसे जो भाग बच जाता है उसे तक्रपिण्ड और द्रवभागको भीरट (किनेका पानो) कहते हैं। पीयूष, किलाट, चौरशाक और तक्रपिण्ड ये सब शुक्लवर्णक, शरीरका उपचयकारक, बलवर्धक, शूल, कफ, जलनक, हृदयवाही, वायु और पित्तनाशक हैं तथा जिसका अग्नि तेज है और जिसे नींद नही लगती है अथवा जो मैथुन कर्मसे बौण हो गया है उसके लिए ये बहुत उपकारी हैं। घोनी मिश्रित मोरटका गुण लघु, बलकारक, रुचिजनक, सुखमोक्ष, पिपासा, दाह, रक्तपित्त, और ज्वरनाशक है।

दुग्धका सर—शुद्ध, शीतवीर्य, पुष्टिकारक, रक्तपित्त और वायुनाशक, तृप्तिकारक, शरीरका उपचयकारक, क्षिप्र, कफ, बल और शक्तदायक है।

गुणसंयुक्त दुग्ध—शुक्लवर्णक और विदोषनाशक है। शुद्ध संयुक्त दुग्ध—मृदुलपचनाशक, पित्त और कफ वर्धक है। रात्रिकालमें सोमगुण अधिक है इसीसे सभी प्राणियोंकी देह सोमात्मक रहती है और उस समय किसी प्रकारकी शरीरिक क्रिया नहीं होती, इस कारण दैहिक धात्वादि सोमगुण विशिष्ट होते हैं। यही कारण है कि प्रभातकालका दूध सायंकालके दूधसे शुद्ध और शीतवीर्य होता है। दिनके समय सूर्यको किरणोंसे प्राणियोंका शरीर सत्पन्न हो जाता है, सुतर्षा सभी धात्वादि आन्तरिक गुणान्वित होते हैं। विशेषतः व्यायाम और वायुका सेवन किया जाता है, इस कारण प्रभात कालके दूधको अपेक्षा सायंकालका दूध लघु और वायु तथा कफनाशक होता है।

प्रातःकालमें दूध पीनेसे पुष्टि, उपचय और अग्नि प्रदीप्त होती है, मध्याह्नकालमें पीनेसे बल और अग्नि की वृद्धि होती है। वचपनमें दूध पीनेसे शरीरकी वृद्धि, स्वास्थ्यामें पीनेसे अथका निवारण, वृद्धावस्थामें पीनेसे शक्तकी वृद्धि तथा रात्रिकालमें पीनेसे शरीरको भलाई, अनेक प्रकारके दोषोंका नाश और रक्तका विशेष उपकार होता है। रातको खाते समय दूधकी किसी चीजमें न

मिला कर उसे केवल पी जाना ही उचित है। यदि किसी खाद्य पदार्थमें मिला कर इसे पीया जाय, तो वह अच्छी तरह परिपक्व नहीं होता।

मानवगण दिनके समय बिटाहो अथवा पानीय द्रव्य खाते हैं, उन बिटाहको अग्निके लिए प्रतिदिन दूध पीना चाहिए।

श्रम, बालक और वृद्ध व्यक्तियोंके लिए तथा जिनकी अग्नि प्रदीप्त है उनके लिए दूध अत्यन्त फायदामन्द है, क्योंकि इससे अथ शक्तकी वृद्धि होती है।

मथित दूधका गुण—गाय अथवा बकरीके दूधको मथ कर कुछ उष्ण अवस्थामें पीनेसे बल लघु, शक्तजनक और स्वर, वायु, पित्त और कफनाशक होता है। गाय अथवा बकरीके दूधसे जो फेन निकलता है वह त्रिदोषनाशक, रुचिकारक, बलवर्धक, अग्निवृद्धिकारक, हितकर, मधुतृप्तिकारक, लघु और अतीसार, अग्निमान्द्य तथा जोषंज्वरमें प्रयुक्त है।

निन्दित दुग्ध—जिस दूधका रंग बदल गया हो, जो खड़ा हो गया हो, जिससे दुग्धघ्न पातो हो और जिसमें खड़ा तथा जलक मा स्वाद पाता हो, वह निन्दित अर्थात् दूध कहलाता है। इस प्रकारका दूध सेवन करनेसे हानि होती है तथा कुष्ठदि रोग उत्पन्न होनेकी सम्भावना रहती है। (भावप्र० पूर्व००)

दूधका विषय सुद्युतमें इस प्रकार लिखा है—गाय, बकरी, जैटनी, मेहो, भैंस, नारी और हथिनी, ये सब अनेक प्रकारकी औषधियाँ खाती हैं, इस कारण इनका दूध प्रमथ, वायुशक्तजनक, शुद्ध, मधुर, पिच्छिल, शीतल, क्षिप्र, निर्मल, मारक और मृदु है। जो मनुष्य प्राणी केवल दूध पी कर जीवन धारण करते हैं, उनके लिए उक्त प्रकारका दूध ही अनुकूल और सेवनीय है। किसी प्रकारका दूध उनके लिए निषेध 'मही' है। क्योंकि दूध उन सब प्राणियोंका जातीय आहार है। वायु, पित्त, शोणित और मानसिक विकारमें दूधका पोना अच्छा है। जीर्णज्वर, काश, खास, चय, शुष्म, रुग्णाद, उदरी, मूर्च्छा, श्म, मत्तता, दाह, पिपासा, हृद्दोग, वृद्धि-रोग, पाण्डू, पक्ष्म, धर्म, शूल, वृद्धावस्था, अतीसार, प्रवाहिका, योनिरोग, गर्भश्याय, रक्तपित्तयम और क्षेम,

दुःख

दुःख (सं० पु०) कुसङ्ग, तुरासाय, मुरी सोहवत ।

दुःस्थान (सं० पु०) केयपदासके अनुसार काश्चन एक रस । यत्तु जगह पर होता है जहां एक तो चट्टान होता है और दूसरा प्रतिफल एक तो सैनको बात करता है, दूसरा विगाहको ।

दुःसह (सं० त्रि०) दुःखिन सह यत्तु सौ दुःसह खल ।

१ दुःखद्वारा सहनीय, जिसका सहन करना कठिन हो ।

(पु०) दुःखद्वारे एक पुत्रका नाम ।

दुःसहा (सं० स्त्री०) नागदमनी ।

दुःसाध (सं० त्रि०) दुःखिन साध्यतेऽसौ खल, तत्सार्थं खल ।

वा । दुःसाध्य, जिसका करना कठिन हो ।

दुःसाध्य (सं० त्रि०) १ कटसाध्य, जिसका साधन कठिन हो । २ जिसका उपाय कठिन हो ।

दुःसाधित् (सं० त्रि०) दुष्ट साधयति साधि-षिनि ।

१ दुष्टसाधक । (पु०) २ दारपाक, षोडशद्वार ।

दुःसाहस (सं० पु०) १ अनुचित साहस, ऐसी बात करने

को हित्यत जो पछो न ममभी जाती हो । २ व्यर्थका

साहस, ऐसी हित्यत जिसका परिणाम कुङ्ग न हो ।

दुःसाहसिक (सं० त्रि०) अगम साहसिक, जिसके लिये

हित्यत करना बुरा हो ।

दुःसम (सं० त्रि०) दुःख स्वप-क्त वा पक्ष । १ दुष्ट

स्वपुत्र । (स्त्री०) २ दुष्टस्वप्न, खराब सपना ।

दुःस्त्री (सं० स्त्री०) दुष्टा स्त्री, खराब धीरत ।

दुःस्थ (सं० त्रि०) दुष्ट तिष्ठति स्था-क । १ दुर्गसाध, जिसकी स्थिति बुरी हो । २ मूर्ख । ३ दुःखमें प्रवृत्त,

दुर्ग । ४ सुख, मोक्ष ।

दुःस्थित (सं० त्रि०) दूर-स्था-क्त । दुःखमें अवस्थित, दूरि-

गरीय ।

दुःस्थिति (सं० स्त्री०) दूर-स्था-क्ति । दुरवस्था, दुर्दशा,

बुरी हालत ।

दुःस्पर्श (सं० त्रि०) दुःखिन स्पर्शतेऽसौ दुःस्पर्श-कर्मणि

खल । १ दुरासह, जिसे पाना कठिन हो । २ स्पर्श करनेमें

पयस्य, जिसका छूना कठिन हो । (स्त्री०) ३ स्पर्श

करत् । ४ कपिकच्छ, केवाच । ५ आकाशगर्ग ।

६ कष्टकारी, भटकटोया ।

दुःस्फोटक (सं० पु०) दुष्ट स्फोटयति स्फुट-पक्ष । पक्ष-

विशेष, एक प्रकारका हथियार ।

दुःख (सं० पु०) कुसङ्ग, तुरासाय, मुरी सोहवत ।

दुःस्थान (सं० पु०) केयपदासके अनुसार काश्चन एक

रस । यत्तु जगह पर होता है जहां एक तो चट्टान

होता है और दूसरा प्रतिफल एक तो सैनको बात करता

है, दूसरा विगाहको ।

दुःसह (सं० त्रि०) दुःखिन सह यत्तु सौ दुःसह खल ।

१ दुःखद्वारा सहनीय, जिसका सहन करना कठिन हो ।

(पु०) दुःखद्वारे एक पुत्रका नाम ।

दुःसहा (सं० स्त्री०) नागदमनी ।

दुःसाध (सं० त्रि०) दुःखिन साध्यतेऽसौ खल, तत्सार्थं खल

वा । दुःसाध्य, जिसका करना कठिन हो ।

दुःसाध्य (सं० त्रि०) १ कटसाध्य, जिसका साधन कठिन

हो । २ जिसका उपाय कठिन हो ।

दुःसाधित् (सं० त्रि०) दुष्ट साधयति साधि-षिनि ।

१ दुष्टसाधक । (पु०) २ दारपाक, षोडशद्वार ।

दुःसाहस (सं० पु०) १ अनुचित साहस, ऐसी बात करने

को हित्यत जो पछो न ममभी जाती हो । २ व्यर्थका

साहस, ऐसी हित्यत जिसका परिणाम कुङ्ग न हो ।

दुःसाहसिक (सं० त्रि०) अगम साहसिक, जिसके लिये

हित्यत करना बुरा हो ।

दुःसम (सं० त्रि०) दुःख स्वप-क्त वा पक्ष । १ दुष्ट

स्वपुत्र । (स्त्री०) २ दुष्टस्वप्न, खराब सपना ।

दुःस्त्री (सं० स्त्री०) दुष्टा स्त्री, खराब धीरत ।

दुःस्थ (सं० त्रि०) दुष्ट तिष्ठति स्था-क । १ दुर्गसाध, जिसकी स्थिति

बुरी हो । २ मूर्ख । ३ दुःखमें प्रवृत्त, दुर्ग । ४ सुख, मोक्ष ।

दुःस्थित (सं० त्रि०) दूर-स्था-क्त । दुःखमें अवस्थित, दूरि-

गरीय ।

दुःस्थिति (सं० स्त्री०) दूर-स्था-क्ति । दुरवस्था, दुर्दशा,

बुरी हालत ।

दुःस्पर्श (सं० त्रि०) दुःखिन स्पर्शतेऽसौ दुःस्पर्श-कर्मणि

खल । १ दुरासह, जिसे पाना कठिन हो । २ स्पर्श करनेमें

पयस्य, जिसका छूना कठिन हो । (स्त्री०) ३ स्पर्श

करत् । ४ कपिकच्छ, केवाच । ५ आकाशगर्ग ।

६ कष्टकारी, भटकटोया ।

दुःस्फोटक (सं० पु०) दुष्ट स्फोटयति स्फुट-पक्ष । पक्ष-

विशेष, एक प्रकारका हथियार ।

इस सब रोगोंमें दूध प्राप्तिकर है तथा यह पापनामक, मन्जर, हृष्य, कामेन्द्रिका सत्तज्ज, रमायन, मिषा-जनक, मन्त्राभ्यापन, यद्यभ्यापन, वायुकर, पुष्टिकर यमन और विरेचनमें दितकर और पोषःपातुर्वहेक है। मानक, हृद, शत, क्षीय और सुधादे निय तथा स्त्रोमर्ग और परियमने को हाना हो नयं छ, उनके लिए दूध ही उत्तम पद है। शक्तिरूपमें चन्द्रमादे शुचमे और व्यायामके समाधाने प्रातःकालका दूध प्रायः भारी और शीतल होता है। दिनके समय सूर्यके तापमें वा मनने, वायुनेवनादि कारणोंसे अपराध कालका दूध वायुका चतुर्लोककर, याशितानामक और चक्षुका टोमि-कर है। दूध उबाने जाने पर मधु होता है, केवल भारी का दूध ही चक्का चक्कामें दितकर है। चक्का दूधमें शरीरके दूध की शुष्कतादि है, दुधनेके बाद उष्ण हो जाने पर इसमें विपरीत गुण हो जाता है। उबाना हुआ सभी दूध भारी और पुष्टिकर है। दुर्गन्धित घाह, तथा नमकीना दूध पीना विलकुल मना है। (सुश्रुत)

दूधको दधत्तिका विषय ज्ञातमहितामें इस प्रकार लिखा है। जो जो वस्तु ग्राह्यं जातो है, वह और शिरामें चतुर्गत हो कर पित्त द्वारा मूर्च्छित और लठगाम्नि द्वारा परिपक्व होती है। इस प्रकार परिपक्व हो कर जर समका मार मृत्युपाहिनी शिरामें पहुँचता है। तब उसे दूध कहते हैं। यह चतुर्गते समान तब जर प्राच्योके जीवन तथा वस-कारक है। तब तबने चतुर्गत्तमें पहुँच कर अपनी पित्तविषयका और यह दूध किस प्रकार रमकी सम्पत्ति है। सुधाजार इसको हृदि होती है। यह दूध रमकी रमने पर पाण्डु वर्णका होती होता है। कमारी, कमारी दूध मही, जिनका स्वा, कारण

स्त्रोतकी विषय होतो है, रसादि, बहुत जल्द दूध उत्पन्न हो जाता है। मध्यमघृता स्त्रोका दूध प्रौढिक रहता है, इसीसे उस दूधका परित्याग करना सद्वि-त है। स्त्रियोंका अविपक्व दूध वसकारक और दोष-मायक है। (हरीतक-प्रथम स्थान ८८०)

पूर्वाह्नमें गायका दूध और अपराह्नमें भैरका दूध प्रशस्त है। दूधके साथ चीनी मिला कर खाने से वसका हृदि होती। (राजनि०)

दूधको सब समय गरम करने पीना चाहिये। दूधके साथ मदनो, मान, शुक्र, मुत्र, और मूत्रक खानेसे कोढ़ होता है, माक और जँबीरो नीचूके रसके साथ सेवन करनेसे तुरन्त मृत्यु होती है। माक, चक्र, पल, पिप्पलाक, कुल्लभ, मवच, धामिय, करोर, दधि और मांस मिला हुआ दूध अहितकर है। (राजनि०)

दूधको उबाने कर उसे कुछ चक्का चक्कामें हो पीना अच्छा है। उबाला हुआ यदि तीन सुशर्त तब छोड़ दिया जाय, तो वह चतस्र समझा जाता है, इस प्रकारका दूध दूधित है। दूधको चोवाई भाग जलसे सिद्ध करके पान करनेसे शरीरकी भलाई होती है। दूधका नर वायुनामक, दधितकर, वसकर, तेजस्कर, स्निग्ध, कविकर और स्वादु है; परिपक्व होने पर वह मधुर, रक्त-पित्तनामक और गुहपाक होता है। दुग्धाद्य चक्षुहित-कर, वसकर, पित्तनामक और रसायन है। चतुर्पित्त पर्याप्त बाधो दूध शुक्र, विटथो और दुर्जर होता है।

यथा अश्वनेके बाद जब तक सात दिन पूरा न हो, तब तक गायका दूध पीना निषेध है।

दुग्धवैद्यिका (४०० खो०) दुग्धदूधः माधनत्वेन चक्षुषा दग्ध-कूप-उन्-टागः। पिट्त-विषय, एक प्रकारका दूधको प्रसूत-प्रदाको इस

दुःखप्र (स० पु०) दुष्टः स्वप्नः प्रादिग्रामास । अथमसुचक
स्वप्नमेदं, दुरा स्वप्नः, ऐसा मयना जिनका फल दुरा माना
जाता हो । निद्रावस्थामें क्या क्या स्वप्न देखनेसे क्या क्या
फल होता है, यह त्रिद्वैवर्त्तपुराणमें इस प्रकार
लिखा है—

स्वप्नमें यदि कोई, हमें वा विवाद देखे अथवा नाचना
गाना सुने, तो समझे कि विपत्ति आनेवाली है । यदि
दान वा टूटना एवं विचरण करवा देखा जाय, तो
शारीरिक पीड़ा होती है । यदि अपनेको तेल मखते,
गदहे, भैंस या जूट पर सवार हो कर दक्षिण दियाको
जाने देखे, तो समझना चाहिये कि मृत्यु, निशङ्क है ।
स्वप्नमें चूण, लवापुष्प, अगोक्र, कारबोरतेन और नमक
देखनेसे विपत्ति; नन्दा स्त्री, ह्रिचनामा, शूद्रको विधवा,
धौड़ी और तालफल देखनेसे शोक; रुष्ट ब्राह्मण और
कोपावृत्ति ब्राह्मणों को देखनेसे घरसे पवित्रात् सत्त्वो-
त्थाग तथा वनप्रवेश, रक्तपुष्प, पलाश, कपास और शूल-
वस्त्र देखनेसे दुःख होता है ।

स्वप्नमें स्त्रियोंको घँसते, गान करने तथा कृष्णवस्त्र
परिधाना विधवाको देखनेसे मृत्यु; देवताका भाव गान
और हँसो तथा चञ्चलता, झुंझना वा दोड़ना देखनेसे
उभय दिशा शीघ्र विनाश; बमि और मलमूत्रत्याग तथा
वेद्य, सोना और चाँदीका देखना एवं कृष्णवस्त्रपरिधाना
श्री आलिङ्गन ऐसा देखनेसे उसको अवश्य मृत्यु
होती है । मृत वस्त्रमें मृग वा नरमुण्ड तथा अश्विमांसा
देखनेसे 'अमङ्गल' अश्विमाला घाता है, ऐसा देखनेसे
विपत्ति; घो, दूध, मधु, छाक वा गुड़से अपनेको लिपा
देखनेसे पीड़ा; जूट वा गदहेके रथ पर चक्की अपनेको
बैठा हुआ देखनेसे मृत्यु; लाश वस्त्र पहनी हुई तथा
शाल अतुल्यपनसे विभूषिता स्त्रीको स्वप्नमें आलिङ्गन
करनेसे व्याधि एवं पतित नख और केश, शङ्खर तथा
मस्मपूर्ण चिता देखनेसे मृत्यु होती है ।

अग्निमान, शूलकाष्ठ, लण, लोह और रथवत् कृष्णमसो
स्वप्नमें देखनेसे दुःख; पादुका, फलक, रक्तपुष्पमाला, माप
मसूर और मुह देखनेसे व्रण; कण्टक, सरलकाष्ठ, काक,
भल्लूक, यानर, खर, पूय (पीप) और गात्रमज देखनेसे
व्याधिका कारण; भग्न और घत, माण्ड, शूद्र और गलत्-

कुष्ठरोगो, रक्तवस्त्र, जटिल, शूकर, मडिप, खर महाघोर
अस्वकार, मृतजीव और योनिनिद्रा देखनेसे विपत्ति ।
जुवेयधारी, स्नेच्छ, पाण्डुर, और यमदूत देखनेसे
अवश्यमृत्यु; ब्राह्मण-ब्राह्मणी, बालक बालिका और पुत्र
कन्या ये सब रागावृत्ति हो कर बिदा हो रहे हैं, ऐसा
देखनेसे दुःखनाम; कृष्णपुष्प और कृष्णपुष्पमाला,
अस्त्रमालावारी, विलतकाया स्नेच्छहामिनो देखनेसे
अवश्य हो मृत्यु; मृत्युगीत, वाद्य, रक्तवस्त्र, मृदङ्गध्वनि
और सुख देखनेसे निश्चय हो दुःख; मस्त्रादि
पकड़नेसे भाईको मृत्यु एवं कथस्थ, सुक्तकेशी,
क्षिप्र और मृत्युकारी ये सब देखनेसे मृत्यु, होती
है । मृत वा मृता स्त्री वा कृष्णवर्णा स्नेच्छपत्नीका
आलिङ्गन देखनेसे भी अवश्य मृत्यु होती है । स्वप्नमें
दाँतोंका टूटना वा बालोंका गिरना देखनेसे शारीरिक
पीड़ा; मृत्नी वा दंष्ट्रो पाकमय करनेको वयत है, ऐसा
देखनेसे राजभय; ह्रिचवृक्ष, गिलावृष्टि, तुप, रत्नाहार,
मसृष्टि, पतितमृष्ट, भयानक धूमकेतु, हृषका भग्नस्वस्थ
आदि देखनेसे दुःख; रथ, रथह, शैल, हंस, गो, हस्तो,
तुरग और खरसे अपनेको दृष्टो पर गिरा देखनेसे विपत्ति;
उच्च स्थानसे गत, भस्म, शङ्खर, चिता, चारकुण्ड और
चूण में गिरा देखनेसे मृत्यु; बलपूर्वक किसीका मस्तक
वा मस्तकसे छत्र ग्रहण कर रहा है, ऐसा देखनेसे पितृ-
नाश; सवस्त्रा गो प्रसूता हो कर खरसे जा रहो है, ऐसा
देखनेसे सत्त्वोदोष; यमदूत पायसे बांध कर ले जा रहे
हैं, मणक, ब्राह्मण, ब्राह्मणी और मुह रुष्ट हो गाप दे कर
जा रहे हैं, भैंस, गदहा, भालू, जूट और खर रुष्ट हो
कर दौड़ रहे हैं, ऐसा देखनेसे विपत्ति तथा कौशा,
कुत्ता, भालू लड़ते भगवद्भी शरीर पर आ कर गिर रहा
है, ऐसा देखनेसे मृत्यु, होती है ।

जो सब स्वप्नोंकी कथाएँ ऊपर कही गईं, वे सभी
दुःखप्र हैं । विशेष विवरण स्वप्न शब्दमें देखो । स्वप्न
देखनेसे ही तदनुसार फल होगा, सो नहीं, सभी स्वप्न
फलनाम नहीं करते । स्वप्न यदि प्रथम याममें देखा
जाय, तो एक वर्षके भीतर फल प्राप्त होता है ; दूसरे
याममें देखनेसे ८ महीनेमें, तीसरे याममें तीन महीनेमें,
चौथेमें आध महीनेमें, अक्षय्योदयकालमें स्वप्न देखनेसे दश

दुग्धकूपिका कहते हैं। इसका गुण—बलकारक, पित्त और वायुनाशक, पुष्टिजनक तथा शरीरका उपचयकारक है। इसके सेवन करनेसे दम्य नमस्ति बढ़ती है। (भावप्र०)

दुग्धतालीय (सं० स्त्री०) दुग्धस्य तालाय प्रतिष्ठायै हितं।

१ दुग्धात, दूधका फेन। २ मलाई।

दुग्धतुम्बी (हिं० वि०) क्षीरालातु, सफेद कद्दू।

दुग्धत्रय (सं० स्त्री०) गो-महिष-कागदुग्ध, गाय; भैंस और बकरोका दूध।

दुग्धटा (सं० स्त्री०) दुग्धं ददाति या दुग्धद स्त्रियां टाप्। १ वह जो दूध देती है। २ चणिका-टण, एक प्रकारकी घास।

दुग्धपरिमापक यन्त्र—(Galactometer or Lactometer) दूधके गुणागुण और विशुद्धताकी परीक्षा करनेका एक यन्त्र। प्रायः सभी जगह ज्वालेसे विशुद्ध दूध नहीं मिलता। दूधवीक्षण यन्त्र द्वारा देखनेसे दूधमें मिले हुए अनेक अन्त्यान्त्र द्रव्य पाये जाते हैं। खाद, गन्ध आदिसे भी उसका कुछ कुछ पता लग जाता है। दूधमें मक्खनका अंश अथवा इसमेंका मिश्रित जलका परिमाण मापकर करनेके लिये दुग्धपरिमापक यन्त्रका प्रयोजन होता है। इस यन्त्रकी गठन और व्यवहार बहुत सहज है। एकं सूक्ष्मकाँचका नल १०० अंशोंमें विभक्त रहता है। जिस दूधकी परीक्षा करनी होगी उसे इस नलमें अच्छी तरह भर देते हैं। कुछ काल तक उसमें रहनेके बाद मक्खनका कुल भाग ऊपर उठ आयेगा। तब वह मक्खन नलमें जहाँ तक आ गया है, नलके चिह्नित अङ्कों को देखनेसे ही दूधमें मैकाहे कितना मक्खन है, वह मालूम हो जायेगा। डीकिल साहबने दूधकी परीक्षा करनेके लिये जिस परिमापक यन्त्रका आविष्कार किया है, वह दो इस लम्बा और २० अंशोंमें विभक्त है। विशुद्ध जलमें देनेसे उस यन्त्रका ० चिह्न तक डूबता है और आपेक्षिक गुरुत्व १.०२२ होता है। यहाँ तक कि किसी द्रव पदार्थमें देनेसे २० चिह्न तक डूब जाता है। दूध निजल होने पर वह यन्त्र १४० अंश चिह्नित स्थान तक डूबता है। कहना नहीं पड़ेगा, कि दूधमें आपेक्षिक गुरुत्व जलकी अपेक्षा कुछ अधिक है। जल मिलानेसे ही इसका आपेक्षिक गुरुत्व कम जाता है। सुतरां दुग्धपरिमापक यन्त्र अधिक डूब जाता है।

दुग्धपाचन (सं० को०) पच्यतेऽस्मिन्निति पच अधिकरणे न्युट्। दूध गरम करनेका वस्तु।

दुग्धपाषाण (सं० पु०) दुग्धं क्षीरं पाषाण-इव कठिनं यस्य। हृषविशेष, एक किस्मका पौष्ट। इसका पर्याय—दुग्धपाषाणक, दुग्धाम्बा, क्षीरो, गोमिदसमिध, वज्राभ, दीपिक, दुग्धो और क्षीरचव है। इसका गुण—रसि-कारक, ईषदुष्ण, क्ष्वर, पित्त, जठोग, शूल, कास और आधान-विनाशक है।

दुग्धपुच्छी (सं० स्त्री०) दुग्धवत् शुभ्रं पुच्छं मूलदेशे यस्याः गोरादित्वात् ङोप्। हृषविशेष, एक पौष्टका नाम। इसका पर्याय—सेवक्तालु, गिरामङ्गा और नम-हरो है।

दुग्धपोष्य (सं० वि०) दुग्धेन पोष्यः। १ जो केवल दूध पो कर रहता हो। (पु०) २ ग्रियु, बच्चा।

दुग्धफेन (सं० पु०) १ दुग्धस्य फेन इव फेनो यत्र। २ क्षीर-त्रिण्डोर, एक पौष्ट। इसका नामान्तर शाकर है। ३ दूधका फेन।

दुग्धफेनी (सं० स्त्री०) दुग्धवत् शुभ्रं फेनो यस्याः गोरादि-त्वात् ङोप्। सुद्र सुपरिचर्य, एक छोटा पौष्ट। इसका पर्याय—पयःफेनी, फेनदुग्धा, पयस्फिनी, क्षूतारि, व्रण-केतुस्रो और गोजापणी है। इसका गुण—कटु, तिक्त, शीतल, विषप्रणनाशक और रसिकार है।

दुग्धवटो (सं० स्त्री०) गोयवटो।

दुग्धवन्धक (सं० पु०) दुग्धाव्यं बन्धः ततो कन्। दुग्ध दोहनार्थं गोवन्ध, दूध दूहनेके लिये गायका बांधना।

दुग्धवीजा (सं० स्त्री०) दुग्धवत् शुभ्रं वीजं यस्याः। यवनालादयः ऋतुल, ज्वार, जून्नी। इसके दो दानोंमेंसे सफेद दूध निकलता है।

दुग्धसक्तानिका (सं० स्त्री०) दुग्धसर।

दुग्धसमुद्र (सं० पु०) समुद्रविशेष, क्षीरसमुद्र।

दुग्धाघ (सं० पु०) दुग्धवत् शुभ्रं अघं निव चिह्नविशेषो यस्य। उपचयविशेष, एक प्रकारका नग या पत्थर। इस पर सफेद सफेद छोट्टे होते हैं।

दुग्धाब्धि (सं० पु०) दुग्धसमुद्र, क्षीरसागर।

दुग्धाब्धितनया (सं० स्त्री०) दुग्धाव्यं तनया। नक्षत्री।

दुग्धाम्बुधि (सं० पु०) दुग्धसमुद्र, क्षीरसागर।

दिनमें और रातःकालमें देखनेमें उसी समय जगने पर फल मिलता है। किन्तु रातःकालमें दुःस्वप्न देखनेमें जाग उठना उचित नहीं, स्वप्न दर्शनके बाद सो जाना ही कर्त्तव्य है। चिन्ता और व्याधिसे समायुक्त हो कर यदि स्वप्न देखे, तो वह निष्फल होता है। जड़, सूख और पुरोध द्वारा अर्थाव्यय, भयाङ्कन, दिग्भ्रम और सुखके अग्रे एसी अवस्थामें स्वप्न देखनेमें कोई फल नहीं मिलता। काश्यापगोत्र, नीच व्यक्ति, मूर्ख और मग्न आदि कि समीप स्वप्नप्रवृत्ताता नहीं करना चाहिये।

पूर्वोक्त दुःस्वप्न देखनेमें उसकी शान्ति करना चाहिए। शान्तिका विषय अथवा वस्तु पुराणमें जो लिखा है वह इस प्रकार है,—

रत्नचन्दनके काष्ठकी छताक कर होम और सहस्र बार गायत्री जप करे। ऐसा करनेमें दुःस्वप्नका फल नहीं मिलता और सहस्र बार मधुसूदन नामक जप करनेमें भी दुःस्वप्न स्वप्न हो जाता है। पूर्वमुक्त हो कर श्रौतव्यका नामाष्टक भक्तिपूर्वक पढ़नेमें भी दुःस्वप्न स्वप्नमें परिणत हो जाता है।

दुःखभाव (मं० पु०) १ दुःशीलता, बुरा स्वभाव, ब्रह्म-जात्रो। (वि०) २ दुःशील, दुष्ट स्वभावका।

दुःस्वप्ननाम (मं० पु०) एक प्रकारका पापकर्म। इसके उद्भव होनेसे प्राणियोंके कठोर और हीनस्वर होत हैं।

दु (हिं० वि०) 'दो' शब्दका छोटा रूप।

दुपन (हिं० पु०) डूबन देना।

दुषा (मं० स्त्री०) १ मायका, विनती, याचना। २ पाशो-वांटे, असीम। (हिं० पु०) १ एक प्रकारका गहना जो गलेमें पहना जाता है।

दुषाव (हिं० पु०) दुष्टाव देखो।

दुषामा (का० पु०) वह प्रदेश जो दो नदियोंके बीचमें पड़ता हो।

दुषाल (फा० स्त्री०) १ धर्म, धर्मदा। २ रिकामका तममा।

दुषामा (हिं० पु०) सड़कीका एक बेचना। यह सुनहरी लपेटे हुए लोहके लार्णको बँडानेके लिए फैरा जाता है।

दुषानी (फा० स्त्री०) शानकी बड़ी, छरादका तममा।

दुषहदा (हिं० वि०) १ जिसका दाम दो दमड़ी या एक

हदाम हो। २ तुच्छ, गरीब। १ अनाहत, गीह, कर्मोना।

दुसड़ा (हिं० पु०) १ एकमें लगी हुई दो वस्तु, जोड़ा। २ दो दमड़ी, एक पैसिका चौपाई, भाग, हदाम। ३ वह जिसमें किसी वस्तुका जोड़ा हो।

दुसड़ी (हिं० वि०) १ जिसमें किसी वस्तुका जोड़ा हो। (स्त्री०) २ दो वृष्टियों वाला तागका पत्ता। ३ चारपाई की बुनावट। इसमें दो दो बांध एक साथ बुने जाते हैं। ४ वह गयी जिसमें दो छोड़े लोते जाते हैं। ५ दो कड़ियोंकी लगाम।

दुकान (फा० स्त्री०) वह स्थान जहाँ बिकनेके लिये तरह तरहकी चीजें रखी हों, बूट, हट्टी।

दुकानदार (फा० पु०) १ दुकानका मालिक। २ ठीगर व कर रुपया प्राप्त करनेका काम।

दुकान (हिं० पु०) पच कटका समय, पकाव।

दुकुको (हिं० स्त्री०) चमड़ा मढ़ा हुआ एक प्रकारका पुराना बाजा।

दूकूल (मं० स्त्री०) दुःखलव, दुःख, दुष्ट। कूलमि कूल भावस्थिक द्रव्यो वा साधु। १ चौम वस्त्र, सन या तीखीके रेशेका बना हुआ कपड़ा। २ सूत्र वस्त्र, सहीन कपड़ा; धारीक कपड़ा। ३ वस्त्र, कपड़ा।

दुकूल—बौद्धोंके ग्राम जातकके अनुसार एक बौद्ध ऋषि।

ये गौतम वा श्यामके पिता थे। इनका विवरण ग्राम जातकमें इस प्रकार लिखा है—श्यामके जन्मके बाद दुकूल अपने स्त्री परिकाके साथ एक दिन फलमूलकी तलाशमें परल्लमें गये और वहाँ देवदुर्गिपाकसे दोनों पंचे हो गये। श्याम उन्हें ढूँढ़ कर अपने पायमकी से पाये और अनन्यभाव तथा एकाग्रचित्तसे पिता-माताको सेवा करने लगे। एक दिन वे सन्ध्या समय नदीमें जल स्नाने गये। वहाँ किसी राजाने उन्हें धर्म समझ कर तीर चलाया। श्याम राजाने अपने पसन्दाय माता-पिताके भावी दुःख सम्पूर्ण कहने में नायक थे, कि उनको प्राणवायु उड़ गई। बाद राजाने उनके शब्दों मातापिताके पास पहुँच कर मंत्र समाचार कह सुनाया। इसके पश्चात् दुःखसे कातर वे सर्वत्र सब जगत् श्यामके पास आए। परिकाने कहा, "यदि मेरा पुत्र

इन सब रोगोंमें दूध शक्तिहर है तथा यह पाचनाशक, दमहर, हृष्य, कामेन्द्रियका उत्तेजक, रसायन, मिधा-जनक, स्थायव्यायन, वयःव्यायन, वायुत्तर, पुष्टिकर, गमन और विरचनमें हितकर और भोजनधातुवर्धक है। शामक, हृद, क्षत, चीन और सपाठे स्थि तथा स्तोमसर्ग और परिचयमें जो क्षाम हो गये हों, उनमें निम्न दूध ही उत्कृष्ट पद्य है। रात्रिकालमें चन्द्रमाई गुप्तमें और व्यायामके आभावमें प्रातःकालका दूध प्रायः भारी और शीतल होता है। इसके समय सूर्यके तापमें वा लनमें, वायुनेवनाटि कारकोंमें अपराध कालका दूध वायुका चतुर्गोचर, गालिनाशक और चतुर्का दोमि-कर है। दूध उबाले जाने पर सघु होता है, देवन भारी का दूध ही चयन चक्षुष्यामें हितकर है। चयन दूधमें घासीका दूध ही गुणविशिष्ट है, दुधनेके बाद ठण्डा हो जाने पर इसमें विपरीत गुण हो जाता है। उबाला हुआ सभी दूध भारी और पुष्टिकर है। दुर्गन्धित उबाला, तथा ममकीना दूध पीना विनकुल मना है। (सुश्रुत)

दूधको उत्पत्तिका विषय आगेतत्संहितामें इस प्रकार लिखा है। जो जो वस्तु खाई जाती है, वह और गिरामें चतुर्गत हो कर विष द्वारा मूर्च्छित और जठराग्नि द्वारा परिपक्व होती है। इस प्रकार परिपक्व हो कर जब समया मार सत्ययाहिनी गिरामें पड़ जाता है, तब उसे दूध कहते हैं। यह चमूतके समान तथा सब प्राणिशोके जीवन तथा वल-कारक है। शरीरमें चमममूममें पड़ कर अपने विषासे पूजा गा, 'गमो! यह दूध किस प्रकार इसको सम्पत्ति है और किस प्रकार इसको वृद्धि होती है? यह दूध श्रवणवत्ता ग हो कर वाष्प, वर्णका क्यों होता है तथा कुमारी और बाँभकी दूध नहीं होनेका क्या कारण है?' इससे उत्तरमें पिताने कहा था, 'रक्तपित्तमें परि-पाक हो कर रक्त हो गेतेवर्ण ही जाता है, दूधके रक्त-र-हीनेका यही कारण है। कुमारी और बाँभकी दूध धातु और चमपवन है, इसीसे उनको दूध नहीं होता। वस्त्राको और गहरी बातमें परिपूरित रहती है और चार्त्तवका परिमाण अधिक रहता है, इसीसे इसे कुमारी प्रवृत्ति नहीं होती। घायोके प्रसूना होने पर

श्रोतकी विरहि होती है, इसीसे बहुत लम्बे दूध उत्पन्न हो जाता है। मध्यमवृत्ता श्रोतका दूध शैथिल रहता है, इसीसे उस दूधका परित्याग करना उचित है। घायोका अधिकृत दूध वनकारक और दोष-नाशक है।' (हारीदत्त-प्रथम स्थान ८४०)

पूर्वाह्नमें गायका दूध और अपराह्नमें भैंसका दूध प्रशस्त है। दूधके भाव चीनो मिला कर पानेमें हो वनको वृद्धि होती। (राजनि०)

दूधको सब समय गरम करके पीना चाहिये। दूधके साथ मदमो, मांस, गुड़, सुत्र, और मूलक पानेसे कोढ़ होता है, शाक और जंजीरो जीवूके रसके साथ सेवन करनेमें तुरन्त मृत्यु होती है। शाक, चत, पल, पिप्पलाक, कुलथ, लवण, पामिय, करोर, दधि और मांस मिला हुआ दूध अधिकतर है। (राजवज्रम)

दूधको उबाल कर उसे कुछ लघु चक्षुष्यामें जो पीना अच्छा है। उबाला हुआ यदि तीन मुहूर्त्त तक छोड़ दिया जाय, तो वह चतम समझा जाता है, इस प्रकारका दूध दूषित है। दूधको चोपाई भाग जलमें छिड़ करके पान करनेसे शरीरकी भलाई होती है। दूधका नर वायुनाशक, टसिकर, वलकर, तेजस्कर, क्षिप्त, रुचिकर और स्वादु है; परिपक्व होने पर यह मधुर, रक्त-पित्तनाशक और शुद्धपाक होता है। दुग्धान्न चक्षुषि-कर, वलकर, पित्तनाशक और रसायन है। पदूषित चर्वात् बासी दूध गुण, विटम्बो और दुर्जर होता है।

वशा जन्मसेके बाद जब तक सात दिन पूरा न हो, तब तक गायका दूध पीना निषेध है।

दुग्धवैदिकी (अ० खो०) दुग्धवैदिकी साधनत्वेन चमपत्त्या इति दुग्ध-क्षुप-ठन्-टाप्। पिट-रविमेष, एक प्रकारका पक्षि। भावप्रकाशमें इसको प्रचुत-प्रवाको इस प्रकार लिखे है—पाककुशल मनुष्य द्विनेके भाप चावलके घुणकी अच्छी तरह पोवे। बाद उसको मोठ छोड़ बना कर चममें गड़ा करे। फिर इस मोठकी घीमें थोड़ा तल कर चमके गह्वेमें धूप गाड़ा दूध भर दे और गह्वेका मुँह मँदेमें बन्द कर दे। चतकर इस दूध भरे हुए बड़ेकी घीमें तल कर चायामोमें डाल दे और कुछ कालके बाद उसे चत-र निकाल ले, इसीको

येथाय' ब्रह्मचारी रहा हो, यदि उस 'भक्तमिला' किया-
कलापको अतन्द्रितभावसे किया हो, यदि बुद्धदेवमें
उसको सबो भक्ति रही हो, तो उस पुण्यके फलसे मेरा
पुत्र जो जाय।" दुकूलके भी इस तरह सत्यक्रिया करने
पर याम की उठे। ऐसे समयमें एक देवीने प्रकट हो
कर उनके माता-पिताको बहुत दान किया।

यह सपन्यास रामायणमें दिये हुए दशरथ द्वारा
अन्धक मुनिने पुत्र सिन्धुवधके शाख्यानका अनुकरण है।
अनन्तर इतना है कि रामायणमें सिन्धु वाष्पाघातसे गताष्ट
हो गये थे और पुत्रग्रोकसे अन्धक मुनिने प्राणतपस्य
किया था, पर यामजातकमें ग्रामका उठना और अन्धका
दृष्टि पाना लिखा गया है।

दुकुला (हि० वि०) जो पकेला न हो।

दुकुले (हि० क्लि० वि०) दूसरे व्यक्तिको साथ लिये।

दुकड़ (हि० पु०) १ एक प्रकारका बाजा जो तबलेकी
तरह होता है और सहनाईके साथ बजाया जाता
है। २ एकमें लुढ़ी हुई या साथ पटो हुई दो नावों का
जोड़ा।

दुक्का (हि० वि०) १ जो पकेला न हो। २ जिसमें कोई
दो वस्तु एक साथ हों। ३ जो एक साथ दो हो।

दुक्की (हि० स्त्री०) दो बूटियोंवाला तायका एक पचा।

दुखण्डा (हि० वि०) दो तन्ना, जिसमें दो खन हों।

दुखड़ा (हि० पु०) १ दुःखका उच्चात्तन, दुःखकी कथा।

२ कष्ट, विपत्ति, तकलीफ, सुशोचत।

दुःखदाई (हि० वि०) दुःखदायी देवी।

दुखना (हि० क्लि०) पीड़ायुक्त होना, दर्द करना।

दुखाना (हि० क्लि०) १ कष्ट पहुँचाना, पीड़ा देना।

२ किसीके पके घाव आदिको छू देना।

दुखारा (हि० वि०) वीक्षित, दुःखी।

दुखोया (हि० वि०) दुःखसे पीड़ित। जो दुःखमें पड़ा हो।

दुखोयारा (हि० वि०) १ जिसे किसी बातका कष्ट हो,
दुखीया। २ जिसे कोई शारीरिक कष्ट हो, रोगी।

दुखी (हि० वि०) १ जिसे कष्ट हो। २ जिसे मानसिक

कष्ट हुआ हो, जिसके दिखमें रंज हो।

दुखोला (हि० वि०) दुःखपूर्ण, जो दुःख भोगता हो।

दुगरे (हि० स्त्री०) बरामदा, बीसारा।

दुगड़—बम्बईके थाने जिलेके अन्तर्गत भिवन्दी तालुकका
एक ग्राम। यह अक्षांश १८° २०' उत्तर और देशांश ७३°
०' पू० भिवन्दी शहरसे ८ मील उत्तरमें अवस्थित है।
लोकसंख्या प्रायः ७३७ है। १७८० ई०में जैनरत्न हटलेने
महाराष्ट्रकी इसी स्थान पर पराजय किया था।

दुगड़िया—मध्यभारतके भूपालराज्यके बन्दोवस्तुक्षालमें
विण्डारो सरदार चोतुके भाई राजाखाने अपने जो वड्या-
में भोग करनेके लिए सजावलपुरका कुछ भाग जागीरमें
पाया था। १८२५ ई०में राजा खोंके मरने पर उनके
कायनातुसार इष्टिय गवर्मेंण्टने सारी सम्पत्ति उनके पाँच
पुत्रोंमें बराबर बराबर बाँट दी। दुगड़िया राजा खोंके
तीसरे पुत्रके अंशमें पड़ा।

दुगदुमी (हि० स्त्री०) १ गरदनके नीचे और छातीके
ऊपरका भाग जो कुछ गहरा सा होता है। २ एक
प्रकारका भाम्भूषण जो गर्लेमें पहना जाता है और छातीके
ऊपर तक नटका रहता है।

दुगना (हि० वि०) द्विगुण, दूना।

दुगदं नियावै ठक (हि० स्त्री०) कुम्भीका एक पेश।
जब पहलवानका एक हाथ जोड़की गरदन पर होता है
और जोड़का वही हाथ पहलवानकी गरदन पर होता
है, उसी समय यह पेश किया जाता है। इसमें पहल-
वान दूसरा हाथ बढ़ा कर जोड़के जड़ोंमें देता है और
बैठक करके गरदन दशाते हुए उसे फेंक देता है।

दुगाड़ा (हि० पु०) १ वह बन्दूक जिसमें दो नलियाँ समो
रहती हैं। २ दोहरी गोली।

दुगारि—राजपूतानेके अन्तर्गत मुन्दी राज्यका एक ग्राम।
यह अक्षांश २५° ४०' और देशांश ७५° ४८' पू० इन्दी
शहरसे २० मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या
प्रायः १५११ है। १८वीं शताब्दीमें यह ग्राम महाराज
राजा लखेदेवजीके छोटे लड़केको जागीरकी रूपमें दिया
गया था। आज भी यह सन्दीके उत्तराधिकारीके अधीन
है। कनकधारा नामका यहां एक बड़ा जलाशय है
जिसका क्षेत्रफल लगभग तीन वर्ग मील होगा। यहां
बहुतेरे हिन्दू-देवालय तथा दो जैन-मन्दिर हैं।

दुगासरा (हि० पु०) किसी दुर्गके किनारेका गांव।

दुगूल (म० स्त्री०) दुकूल प्रयोदशवित्तात् मासः।

दुकूल देखो।

दुग्धकूपिका कहते हैं। इसका गुण—वक्षकारक, पित्त और वायुनाशक, पुष्टिजनक तथा शरीरका सपचयकारक है। इससे सेवन करनेसे दम्य नशक्ति बढ़ती है। (भावप्र०)

दुग्धतालीय (सं० स्त्री०) दुग्धस्य तालाय प्रतिष्ठायै हितं। १ दुग्धास, दूधका फेन। २ मखाई।

दुग्धतुम्बी (हिं० वि०) घोरालातु, सफेद कद्दू।

दुग्धत्रय (सं० स्त्री०) गो-महिष-काशदुग्ध, गाय; भैंस और बकरोका दूध।

दुग्धटा (सं० स्त्री०) दुग्धं ददाति या दुग्धद स्त्रियां टाप्, १ वह जो दूध देती है। २ चषिका-द्वय, एक प्रकारकी घास।

दुग्धपरिमापक यन्त्र—(Galactometer or Lactometer) दूधके गुणागुण और विग्रहताकी परीक्षा करनेका एक यन्त्र। प्रायः सभी जगह खालिसे विशुद्ध दूध नहीं मिलता। दूधबीचण यन्त्र द्वारा देखनेसे दूधमें मिले हुए अनेक अम्यान्त्र द्रव्य पाये जाते हैं। खाद, गन्ध आदिसे भी उसका कुछ कुछ पता लग जाता है। दूधमें मखनका अंश अथवा इसमेंका मिश्रित जलका परिमाण मालूम करनेके लिये दुग्धपरिमापक यन्त्रका प्रयोजन होता है। इस यन्त्रकी गठन और व्यवहार बहुत सरल है। एक घुस्पर्काचका नल १०० अंशोंमें विभक्त रहता है। जिस दूधकी परीक्षा करनी होगी उसे इस नलमें अच्छी तरह भर देते हैं। कुछ काल तक उसमें रहनेके बाद मखनका कुल भाग ऊपर उठ आयेगा। तब वह मखन नलमें जहाँ तक आ गया है, नलके विहित चङ्की को देखनेसे ही दूधमें सैकड़ों कितना मखन है, वह मालूम हो जायेगा। डोफेल साइमने दूधकी परीक्षा करनेके लिये जिस परिमापक यन्त्रका आविष्कार किया है, वह दो इंच लम्बा और २० अंशोंमें विभक्त है। विशुद्ध जलमें देनेसे उस यन्त्रका ० चिह्न तक डूबता है और आपेक्षिक गुरुत्व १.३८३ होता है। यहाँ तक कि किसी द्रव पदार्थमें देनेसे २० चिह्न तक डूब जाता है। दूध निर्जल होने पर वह यन्त्र १४० अंश चिह्नित स्थान तक डूबता है। कहना नहीं पड़ेगा, कि दूधमें आपेक्षिक गुरुत्व जलकी अपेक्षा कुछ अधिक है। जल मिलानेसे ही इसका आपेक्षिक गुरुत्व कम जाता है, तबतः दुग्धपरिमापक यन्त्र अधिक डूब जाता है।

दुग्धपाचन (सं० स्त्री०) पच्यतेऽस्मिन्निति पच अधिकारणे च्युट्। दूध गरम करनेका बरतन।

दुग्धपाषाण (सं० पुं०) दुग्धं चौरं पाषाण-इव कठिनं यस्य। हृत्त्वविशेष, एक किट्टमका पेंड। इसका पर्याय—दुग्धपाषाणक, दुग्धाश्मा, चौरा, गोमेदसन्निभ, वष्याभ, टोमिक, दुधो और चौराचव है। इसका गुण—रूचिकारक, ऐपदुग्ध, क्ष्वर, पित्त, ऊद्वेग, शूल, कास और आधाम-विनाशक है।

दुग्धपुच्छी (सं० स्त्री०) दुग्धवत् शुभ्रं पुच्छं मूलदेशो यस्याः गौरादित्वात् ङोप्। हृत्त्वविशेष, एक पेंडका नाम। इसका पर्याय—सेवकातु, गिरामङ्ग और नस-हरी है।

दुग्धपोथ (सं० स्त्री०) दुग्धेन पोषा। १ जो केवल दूध पो कर रहता हो। (पुं०) २ मिश्र, वषा।

दुग्धफेन (सं० पुं०) दुग्धस्य फेन इव फेनो यत् १२ चौर-निष्पन्न, एक पौधा। इसका नामान्तर शार्कर है। ३ दूधका फेन।

दुग्धफेनी (सं० स्त्री०) दुग्धवत् शुभ्रः फेनो यस्याः गौरादित्वात् ङोप्। शुद्ध गुणविशेष, एक छोटा पौधा। इसका पर्याय—पयःफेनी, फेनदुग्धा, पयस्फेनी, लूतारि, त्रण-केतुषो और गोत्रापणौ है। इसका गुण—कटु, तिक्त, शीतल, विषत्रणनाशक और रुचिकर है।

दुग्धबटो (सं० स्त्री०) शीघ्रबटो।

दुग्धबन्धक (सं० पुं०) दुग्धाद्यं बन्धः ततो, कम्। दुग्ध दोहनार्थं गोधन्स्य, दूध दूधनेके लिये पायका बांधना।

दुग्धबीजा (सं० स्त्री०) दुग्धवत् शुभ्रं बीजं यस्याः। यवनालादा तण्डुल, क्ष्वर, लुहरी। इसकी दो दानोंमें सफेद दूध निकलता है।

दुग्धसन्तानिका (सं० स्त्री०) दुग्धसर।

दुग्धसमुद्र (सं० पुं०) समुद्रविशेष, चौरसमुद्र।

दुग्धाच (सं० पुं०) दुग्धवत् शुभ्रं अचं नेत्रं चिह्नविशेषो यस्य। उपशविशेष, एक प्रकारका नम या पत्तर। इस पर सफेद सफेद छोटे छोटे होते हैं।

दुग्धाब्धि (सं० पुं०) दुग्धसमुद्र, चौरसागर।

दुग्धाब्धितनया (सं० स्त्री०) दुग्धाब्धि-तनया। अम्बी।

दुग्धाम्बुधि (सं० पुं०)

दूध (म० क्र०)। दुधत् स्म दुग्धं कर्मणि स्म । स्तोत्रातिरिक्तं स्तनैर्मि निःसृतं द्रव्यं दूधविशेषः, मरुद्वै रंगका यद्द प्रसिद्धं तस्मिन् पदार्थं जो स्तनपायो जीवोंको माताके स्तनोंमें रहता है और जिसमें समके बच्चोंका बहुत दिनों तक पोषण होता है। इसके संस्कृत पर्याय—घोर, पोषूय, उपम्य, स्तन्य, पर घोर घानजोन है। (भाववशात्)

स्तनपायो जीव जन्म लेनेके बाद बहुत दिनों तक केवल दूध पो कर जोगे है और उसीसे उनका पुष्टिमाधन होना है। परमेश्वरके चरण कौगलने तकको माताके स्तनोंमें समके जीवन धारणोपयोगी समष्टि दूध रहता है। उस समय शिशु दूधके सिया घोर कोड़े खाद्य पचा नहीं सकता, उसे अन्य खाद्यका प्रयोजन भी नहीं पड़ता। माताके दूधमें ही उसके सभी स्रावोंका समावेश जाता रहता है। शरीर धारण करनेके लिये जितने पदार्थोंको पाच्यगता है, वे सभी पदार्थ दूधमें मौजूद हैं। यतः केवल दूध पी कर ही जीवन धारण किया जा सकता है। इसीसे बहुतरे डाक्टरोंने दूधको खाद्य माना है।

माताके शरीरका रस प्रक्रियाविशेषमें स्तनोंमें दूधके रूपमें परिणत हो जाता है और कुचाग्र (टिपनी) को कर गिर पड़ता है। गाय, भैंस आदि रोमन्त्यक प्राणियोंके कुचाग्रमें केवल एक एक छेद रहता है, लेकिन मनुष्योंमें वे सा नहीं है। उनके स्तनोंमें दूध निकलनेके लिये अनेक छेद रहते हैं। वे सब छेद अनेक शाखायाँ प्रगाढाग्रोसि युक्त हैं। विशेष विवरण एतन् दृष्टान्ते देखो।

मायः सभी प्राणियोंका दूध अस्वच्छ, शुभ्रवर्ण, परिशुद्ध, अम्लीय कुछ भारी, कुछ मोठा और विलक्षण रसको गन्धयुक्त होता है। यह गन्ध दूधमें अनेक प्रकारके घन घोर चराशु पदार्थोंके रहनेसे उत्पन्न होते हैं। उल्लेख्य चण्डोत्पन्न यन्त्रद्वारा देखनेसे तबका दूधमें अम्लीय शुभ्रवर्ण चण्डाकार विष्य देखे जाते हैं। इन सब विषयोंका व्यास १ इंचके १० इंचा मापोंके एस भागके लगभग होता है। सुतरां मनुष्यगोषितके चण्डाशु उनके दूधमें भी पधिन है। यह शुद्ध शुद्ध चण्डमिट या तैल चण्डाशु नान्यवत् पदार्थमय है तथा अशुद्ध नान्यवत् पदार्थोंमें रहता है। दूधके एस अकोवांशमें चण्डाशु मय भाग

है। इसी कारण दूध जब थोड़ी देर तक पों हो छोड़ दिया जाता है; तब वह तैलमय चण्ड या चरमे जग या ज्योते है और बहो परिवर्तित हो कर मलाई वा मरुज बन जाते हैं। छोड़ि सम दूधमें मरुजका भाग बहुत कम रह जाता है। दूधको समय पर भी चरबी एक माय मिल जाती है और वहने लगते हैं। इस प्रकारके दूधको माडा दूध कहते हैं और यह बहुत कम मोलमें बिकता है। दूधमें जब चण्डाशुका चण्ड मिल जाता है; तब थोड़ी देरमें यह जम कर टहो बन जाता है। कभी कभी ऐसा भी होता है, कि दूधमें ही जल घोर लघुके संयोजक चण्ड चलन हो जाते हैं। इसे दूधका फटना कहते हैं। उसी समय मो जलमें शर्करा घोर नाभा जातीय खनिज पदार्थ तथा लयणादि रह जाते हैं। जोचे बहुतसे प्रधान प्रधान प्राणियोंके दूधका पृथक् पृथक् उपादान लिखा गया है। १०० भाग दूधको विशिष्ट करके उसमें जो जो वस्तु पाई जाती है, दूध स्तनमें उसकी तालिका दी गई है।

	अर्धमात्रा	तैलानि पत्रा	छेदा	शर्करा	तापानि कतिन पत्रा
गीरदूध (मीलत)	८८१.६	१६.१	१४.१	४८.१	१.१
.. (उत्तम संस्था)	११४.०	२४.०	४६.१	१६.४	१.०
.. (निम्नसंस्था)	८६१.४	८.०	१६.६	१६.२	१.६
.. (गिमु १ प्रतिनका)	८०६.८४८	४६.६६८	१६.११६	४१.११६	१.०६
गायका दूध	८६०.०	४०.०	४१.०	४८.०	६.१
गरीका दूध	८१६.१	१.१	१८.१	६.८	१.४
बरीका दूध	८६८.०	११.१	४०.१	२१.८	६.८
नरीका दूध	८६६.१	४१.०	४६.०	४०.०	६.८

इस मापोंके दैर्घ्यमें भैंसके दूध, दूधो घोर घीका प्रमाण बहुत ज्यादा है। भैंसके दूधमें तैलका भाग अधिक रहनेके कारण उसमें मरुज घोर घी ज्यादा निकलता है। थोड़ेके दूधमें शर्कराका भाग अधिक है, यतः उसमें एक प्रकारका आमय तैयार होता है।

स्तनपायी जीवोंके दूध बहुत दिनों तक केवल दूध पो कर हो रहते हैं और उसीसे उनके शरीरको पुष्टि होती

दुग्गामिम (मं० प्रो०) दुग्ध तानीय, मखाई ।

दुग्गामिम (मं० पु०) दुग्ध चोर चरमा मय्यर हव कतिम
यय । दुग्गामिमा, एक पेड़ ।

दुग्गिका (मं० प्रो०) दुग्ध शिखी बहलतया विदति
यथाः दुग्ध-ठन्-टाप, च । १ हृषविमेष, दुग्धो नामका
पेड़, गिरनी । २ मरा पयाय—मादुपची, चोराको
चोरिनी, दुग्धो, चोरो चोर चोरामिका है । ३ मरका
गुन—उप, गुह, कष, मातम, गर्भकारक, स्वादुचोर,
कट, तिल, मनमूत्रोपसर्गकारक, पट, स्वादु, बिट्ठो,
मय्यर एवं कक, गुह चोर कतिमागक है । २ मरिका
हृष । ३ मरका पयाय—उत्तमा, गुमकला चोर उत्तम-
कनिनी है ।

दुग्गिन् (मं० वि०) दुग्धमरकाल्य इति । चोरहृष, एक
पकारका पेड़ ।

दुग्गिमिका (मं० प्रो०) रजापामाग, मानविचरा ।

दुग्धो (मं० प्रो०) दुग्ध चोर बहलतया चरित्याः इति
भगं चादिवाटच गोरादि० डोय । १ चोराको, दुग्धिया
नामको घाम । २ मरका पयाय—उत्तमा, दुग्धिका, दुग्धो,
कनि०तमा, कनिनी चोर दुग्धयाया है । (वि०)
२ दुग्धमाना, जिसमें दुग्ध हो ।

दुग्ध (मं० वि०) दुग्ध-क डस्य य । दोहनकर्ता, दुहनमाना-
दुग्धिया (वि० वि०) दो चट्टीका ।

दुग्धिया सुग्ध (वि० पु०) डिण्डिकासुग्ध देतो ।

दुग्गामिनी—पञ्चम प्रदेशकं कञ्जाम जिनके मध्य एक छोटा
महाद्वाराम । यह पचा० १४६ ई० उ० चोर देगा० ०१
२३ पू० में अवस्थित है । घोषजालमें चंगरज लोग यहां
आ कर कुछ दिनों तक रहते हैं । यहां एक छोटेम,
काकर चोर एक छोटा गिरजा है ।

दुग्धट (का० वि०) दिगुण, दूना ।

दुग्धना (वि० पु०) यह दल जिसमें दोनों चोर दान हो ।

दुग्धित (वि० वि०) १ चम्पिरिधल, जिसका चित्त एक
बात पर गिरा हो । २ चित्तित, कित्तमद ।

दुग्धिता (वि० वि०) १ चम्पिरिधल, जो दुग्धित हो ।
२ चित्तित, जिसमें चित्तमें चटका हो । १ मन्देहमें
पड़ा हुआ ।

दुग्ध (मं० पु०) दुग्धताये भाषि किय, तुह, च द्युत्

दुग्धतायः तसिधारये गजोनीति मय्य-पयायाच, १ मय्य
नामक मय्यद्वारियेय । २ कपूर कचरो । ३ तानिमाग ।

दुग्धुन (मं० वि०) दुग्ध उच्छ्रमः गादिम० प्रयोदरादिवा
भाय । दुग्ध उच्छ्रम, जो बहल कल गवा दो ।

दुग्धुन (मं० पु०) दुग्धः मय्य-पयादमामः प्रयोदरा०
भाय । दुग्ध कचर, चरमा कृता ।

दुग्ध (वि० प्रो०) तमपार ।

दुग्धो (वि० प्रो०) कटारी ।

दुग्गाम—१ दिक्को विभागके कमिश्नरके चपीम पञ्चारका
एक देसीय राज्य : यह पचा० २८ ई० में २८ ई०
उ० चोर देगा० ०१ ई० में ०१ ई० पू० में अवस्थित है ।
भूपरिमाण १०० वर्गमील चोर कोऊस ग्या प्रायः २४१०४
है । २ ममें दनी नामका एक गहर चोर ३० घाम भगते
है । चंगरज मेनापति कोऊ मेकने चरदुन समद चरके
चार्यमें मसुट हो कर चरने नया उनके मय्यकोरो
आजोवन भोग करनेके निम्ने यह ग्याम प्रदान किया
या । १८०१ ई० में गवर्नर जिनममें चरने एक चर-
स्यायो मनद दो यो । २ म समय कविमान जिनको कई
जमींदारो इस मनदके चरगांत हुई । बाद उन कई
एक चामोंमें जमींदारो बढने चरदुन समदमें रोहमक
जिमके दुग्गाम चोर मेवाना घाम चरण किये । दुग्गाम
घाम दिसीमें पचिम ३१ मीलको दूरा पर अवस्थित है ।
भवाव कमनपनीमें १८५० ई० में मिषादी-विद्रोहके समय
गवर्मेण्टको चरको मरायता चरवाई यो । १८८२ ई० में
मय्यमान नवाब सुवताजपनी इस राज्यके अधिकारी
हुए । नवाब हटिय गवर्मेण्टको दो गो चरगाकोमे
मरायता चरवाचनेमें बाध्य है । राज्य-कार्यको चरिवाके
निये यह राज्य दुग्गाम चोर माहर नामको दो तहसीली-
में विभक्त है । यहां एक चरको-चरगाचर-मरिचिध-
मन है । राज्यकी आय ७०१० रुपये है ।

२ चर राज्यका एक प्रधान गहर । यह पचा० २८
ई० उ० चोर देगा० ०१ ई० पू०, दिक्कोमें १० मीलको
दूरा पर अवस्थित है । दुग्गाम गाह नामक जिनो कचो-
ने यह गहर ग्यामि कृता है । चरको नामादुवार गहर
का नाम दुग्गाम कृता है ।

दुग्गाट (का० वि० वि०) दोनी चट्टनीके चरको

है। अतः यह कह सकते हैं, कि दूधमें प्राणियोंके पुष्टि-जनक सभी पदार्थ विद्यमान हैं। तदनुसार डाक्टर प्रौट (Prout) साहबने दूधके उत्पादनके अनुसार खाद्यके पर्यायोंका विभाग करनेका प्रस्ताव किया। जैसे—

१ जलीय खाद्य (जल), २ अण्डलालमय खाद्य (छिना), ३ तैलमय खाद्य (मखन), ४ शर्करामय खाद्य (दुध-शर्करा) और ५ चारमय खाद्य, यह भी दूधमें विद्यमान है। हेडलेन साहबने दूधके चारोंपक्षका विशेषण करके उसमें चूना, जमक, यवचार, सोडा, म्याग्नेसिया आदि पदार्थ पाये हैं।

दूध सज्जमें हो किसी विशेष उद्देश्यजनक बिना बच्चोंके पेटमें पच जाता है। इसके सभी उत्पादन बातकी बातमें परिवर्तित हो कर शरीरके पोषणमें लगे रहते हैं। चूना आदि दूधका कठिनांश बच्चोंको हड्डियाँका पोषण करता और उन्हें मजबूत बनाये रहता है। इसी प्रकार तैलमय छिना और तरल शर्करासे शरीरके दूसरे दूसरे भागोंको पुष्टि होती है। बच्चोंको कब तक माताका दूध पीना उचित है, उसका कोई ठोका नहीं है। उन्को शारीरिक पुष्टि आदि द्वारा इसमें फर्क पड़ जाता है। कमसे कम ८ मास तक दूध पीनेका समय निर्धारित है। इसके बाद दूध पीनेसे शिशु और प्रवृत्ति दोनोंकी हानि हानिकी सम्भावना है।

बच्चा जब माताका दूध छोड़ दे, तब भी उसे माय, भैंस, बकरी आदिका दूध पिलाना तथा खाद्य पदार्थक माय देना उचित है। कबल दूध पी कर शरीरकी सम्यक् पुष्टि नहीं भी हो, तो भी सभी भवस्थानोंमें मनुष्य-देहके लिये दूध प्रतिगुण पुष्टिजनक है। रुग्ण, दुर्बल, विशेषतः कायरोगप्रक्षोभके लिये दूध अमृतके समान है।

दूधिया आदि कोई आसव विष खा कर शरीर यदि विप्राप्त हो गया हो, तो दूध पीनेसे वह प्रशमित हो जाता है।

पहले कहा जा चुका है, कि दूरबीनयुक्त सहायतासे ताजे दूधमें छोटे छोटें अनेक मेदमय अण्ड देखे जाते हैं जिनमेंसे अधिकांशका व्यास $\frac{1}{10000}$ इंचसे ले कर $\frac{3}{20000}$ इंच; कभी $\frac{1}{10000}$ इंच तक देखा जाता है। किन्तु किसी किसी डाक्टरने परीक्षा करके दूधमें

$\frac{3}{10000}$ इंच तक कि $\frac{1}{10000}$ इंच व्यासका अण्ड देखा है। वे सब छोटे छोटे मेदमय अण्ड फिर भी सूक्ष्म आवरणोंसे आवृत होते हैं। वे सब आवरण तैलमय नहीं हैं, क्योंकि ताजे दूधमें एसिटिक एमिड मिलानेसे वे सब अण्डोंके आकार बिल्कुल बदल जाते हैं। आवरण यदि यह मेदमय रहता, तो ऐसा परिवर्तन कदापि नहीं होता। फिर इधर मिलानेसे भा वे मेदकों तरह गल नहीं जाते।

प्रसवके बाद ही स्तनसे जो दूध निकलता है, उसका उत्पादन परिवर्त्ती समयके दूधसे बहुत भिन्नक है। यह दूध तीन चार दिन तक खूब गाढ़ा रहता है, इस प्रथम्यामें उसे 'मेवस' कहते हैं। डाक्टरोंने परीक्षा करके देखा है, कि मेवसमें भवेच्छाक्त अनेक मेदमय अण्डाणुके सिवा पोतवर्ष वस्त्राकार बहुसंख्यक छोटे छोटे मेद और अण्डलालमय अणुआदि विद्यमान हैं, इधर मिलानेसे वे सब मेदभाग बहुत जल्द गल जाते हैं। १४ दिनों तक वे सब कण अधिक मात्रामें रहते हैं, छोटे कामया काम हो कर २१ दिनके भीतर बिल्कुल गायब हो जाते हैं। कभी कभी २० दिनों तक वे सब कण दूधमें देखे गए हैं।

स्वास्थ्यके सिवा, प्रवृत्तिके खाद्यके ऊपर भी स्तन-दूधका गुणगुण बहुत कुछ निर्भर है। यह सभीको मालूम है, कि जब शिशु केवल दूध पी कर प्राणको रक्षा करता है, तब उसे शारीरिक कष्ट हानि पर माता उपवास करती है और स्वयं पोषणका सेवन करती है। इसीसे शिशु शारीर्य हो जाता है। शिशुके पोषित होने पर माताको ही व्यापक विचार करना होता है। डाक्टरोंने परीक्षा की है, कि एक कुत्तो जब सिर्फ प्रमाज खातो था, तब उसके दूधमें मखन और शर्करा अधिक पाया जाता था; फिर उसे जब मांसादि खानेकी विमर्श लगा, तब उसके दूधमें कठिन पदार्थकी मात्रा अधिक देखी गई। अतः यह स्पष्ट है, कि रसयुक्त खाद्य देनेसे दूधमें मखनका भाग अधिक होता है। यह नियम अन्य प्राणियोंमें भी लागू हो सकता है। फिर भेके-यर साहबने देखा है, कि गाय भैंस आदि जब घरमें

दुट्टक (हि० वि०) खण्डित, दो टुकड़ोंमें किया हुआ ।

दुह्रि (स० स्त्री०) दुलिल लख छः । कच्छपी; कछुई ।

दुण्डुक (स० त्रि०) दुण्डुभ इव कायति कै-क एपो-मनोपः । दुष्टचित्त, खोटा दिलवाला ।

दुण्डुभ (स० पु०) दोड़ति मज्जति भुङ्ग मज्जने च म गुन रलोपच । दुण्डुभ सर्प, छिड़का मयि ।

दुण्डुभा (स० स्त्री०) सर्वपक्ष, एक प्रकारकी सरसो ।

दुण्डुभि (स० पु०) दुन्दूभि एपो० साधुः दुन्दुभि ।

दुत (स० त्रि०) दु-उपतापे क । पोडित, जिसे तक-लोक हो ।

दुत (हि० शब्द०) १. तिरस्काराद्यर्थक एक शब्द जो छटानेके समय प्रयोग किया जाता है । २. घृणास्वक शब्द ।

दुतकार (हि० स्त्री०) तिरस्कार, फटकार, धिक्कार ।

दुतकारना (हि० क्ति०) १. दुत् दुत् शब्द करने किसीकी अपने पाससे छटाना । २. तिरस्कार करना, धिक्कारना ।

दुतर्का (का० वि०) दोनों पक्षका, दोनों ओरका ।

दुतारा (हि० पु०) दो तार ली हुए एक प्रकारका वाजा ।

यह उंगलीसे धितारको तरह बजाया जाता है ।

दुति (हि० स्त्री०) पुति देखो ।

दुतियां (हि० स्त्री०) पलकी दूसरी लिय, पूज ।

दुतिवत् (हि० वि०) १. आभायुक्त, चमकीला । २. मनो-हर, सुन्दर ।

दुत्योत्पदोप (स० पु०) नौलक्षण-ताजिकोक्त वर्ष-प्रवेश-विषयक योगभेद, नौलक्षणताजिकके मतानुसार वर्ष प्रवेशमें एक योग ।

दुघरी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी मछली ।

दुदन्त (हि० वि०) १. दिदन्त, जिसके टूटने या फूटने पर दो बराबर दन्त या खंड हो जाय । (पु०) २. दाल ।

३. हिमालयके कम ऊँचे स्थानोंमें तथा नैलमिर पर्वत पर होनेवाला एक प्रकारका पेड़ा । इसकी जड़ शीघ्रपक्षे काममें आते हैं । जिरकी बीमारो, श्वस, चर्मरोग आदिमें यह बहुत उपकारी होती है । कोई कोई इसे कानफूल और बरन मो कहते हैं ।

दुदहङ्गा (हि० स्त्री०) दुग्धहंसी देखो ।

दुदामो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी सुती कपड़ा । पहले इस तरहका कपड़ा मालवदेशमें बहुत बनता था ।

दुदाहि (दुग्धे)—गुलफदेशके ललितपुर जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम । यह अक्षा० २४° २५' उ० और देशा० ७८° २३' पू० ललितपुर शहरसे २० मील दक्षिण-में अवस्थित है ।

यहाँके प्रभूत धर्मशास्त्रियों देखनेसे इस ग्रामको प्राचीन मन्दिरका यथेष्ट परिचय पाया जाता है । रामसागरके किनारे यहाँकी पूर्व कीर्ति का चिह्न दृष्टिगोचर होता है ।

यहाँके बराह-मन्दिर और ब्रह्मा-मन्दिर सर्वश्रेष्ठ हैं । भारतवर्षमें ब्रह्माका मन्दिर बहुत कम पाया जाता है, किन्तु यहाँके सुगठित और शिष्टने पुष्पयुक्त मन्दिर-ने यह अभाव दूर कर दिया है । प्रायः १००० ई०में चन्द्रवराह यथोक्तकी पीठ देवलक्षिमें यह ब्रह्मा-मन्दिर निर्माण किया है । मन्दिर जगमोहन, भोगमण्डप और गर्भगृह इन तीन भागोंमें विभक्त हैं । गर्भगृह बहुत बड़ा है और इसके बीचके फाटकी निकट नवप्रह रचित चतुर्भुज ब्रह्ममूर्ति हंसके ऊपर विराजित है । १०वीं शताब्दीमें लक्ष्मी कुटिलाचरकी कुछ मिला-लिपियाँ इस मन्दिरमें लक्ष्मी हैं ।

इस ग्राममें दो भग्न जैन-मन्दिर भी देखे जाते हैं । एकमें पत्नी भो-हाय जंभो एक दिगम्बर जिनमूर्ति विद्यमान है । दूसरेमें पूर्व समयकी तोर्यहरको २४ मूर्तियाँ स्थापित थीं । ब्राह्मणोंके उत्पत्तसे जैन मूर्तियोंका पक्षित्व शेष हो गया है ।

यहाँसे एक पावको दूरी पर 'बनियाका बरात' नामक एक जंगल पड़ता है । जिसमें बहुतसे प्राचीन मन्दिरों का धर्मशास्त्र देखनेमें आता है ।

चन्द्रवराह मल्लचणनिहकी एक खंड खोदने लिपिमें यह स्थान 'दुग्धकुलग्राम' नामसे वर्णित हुआ है ।

दुदुषा—जलपईगुहो जिलेमें प्रवाहित एक नदी । गैर-काटा और ननाई नदीके मिलनेसे इस नदीकी उत्पत्ति हुई है । इसके किनारे गर्मगढ़के खास वन-विभागके काठादि विक्रयकी एक आदत है । इसकी कई एक सपनदियाँ हैं, यथा—गुलन्दी, कपूषा, रेश्ती, बहुवाक, देमदेमा और ताषाति । ये सब नदियाँ भूटानकी गिरि-मालासे निकली हैं ।

पायी जातो है, जब लगे दूधमें अधिक मसुन रहता है और जब ये मैदानमें चरनेको छोड़ दो जातो है, जब दूधमें मसुनका भाग कम जाता है। वर्षाकालकी कटी हुई घुसो घासको चपेवा घोसकालको ताजी घास पिलानेमें भी दूधमें चपेवाला मसुनका भाग ज्यादा रहता है।

किरियर गाइवने परीक्षा करके कहा है, कि शिशुके दूध पीनेके समय नारोका दूध यथावि क्रमयः बढ़ना करता है, तो भी उसमें नवनेतका चंग बराबर रहता है, कभी भी घटता बढ़ता नहीं। यथा ज्यों ज्यों बढ़ता जाता है, त्या नीं मातृदुग्धके कृनेका भाग भी बढ़ता जाता है। इधर गऊराजा भाग कम होता पा रहा है और इधर चारागको छिड़ो तो आ रहे है।

दूधको विशुद्धताका निष्पत्त करके जिये चनेक प्रकारके यन्त्र आविष्कृत हुए है। इवका विवरण रुपपरि-मारक चित्रमें देखा।

पगियाके पूर्व और दक्षिणागमें केवल हिन्दू छोड़ कर और कोई जाति गाय भैंसका ताजा दूध नहीं खातो। यहां तक कि चीन, ब्रह्मदेश, मलय और भारतके पूर्व प्रान्तस्थ खसिया, गारो, नागा, जावा (यवदोय), सुमात्रा, जावाग आदिके देशोंके लोग ताजा दूध पीना तो दूर रहे, कै माफिक उससे घृणा करते है। वे लोग दूधको शुष्क कर चपवा नड़ा कर उससे पनीर, छिना आदि सुखाय द्रव्य बना लेते है। कहना फजूल है कि उनके बनाये हुए पनीरदि इस देशके लोगोंके लिए मोतिकर नहीं हो सकते। हिन्दू छोड़ कर बहुत प्रत्य-मन्यज जाति मधनोत या मसुनको गला कर घी तैयार करती है और उसे संपादिय खाद्यके जैसा व्यव-हार करती है। यूरोपीयण मसुनका व्यवहार बहुत करते है, वोको चतना पसन्द नहीं करते। बहुत सी ऐसी जाति है जो दुग्धविक्रयको नितास्त होनहसि समझते है। चरबो दूधके बदले पाल लेते है, किन्तु बेचते नहीं। मज्जान (दुग्ध-विक्रीता)को ये लोग पति हृषित तथा मधन्य समझते है। बावकोर साहबका अनुमान है कि हम देशमें बिना घैसा लिए पतिघिको दूध देनेका तो नियम है उसीसे विक्रय-प्रदा दतनो

हृषित समझो गई है। आज भी मझा नगरमें मिसे-रोय एक निरुद जातिके मिवा दूसरो कोई जाति दूध नहीं बेचतो।

पयिम और मध्य एशियाकी चनेक जाति आज भी खंडनोका दूध पीतो है। यहां कितने ऐसे है जो केवल खंडनोका दूध पी कर हो जोवन धारण करते है। बहुत प्राचीन कालसे खंडनोका दूध व्यवहृत होते सुना गया है। साहबलने लिखा है कि याकुबने अपने भार-इंगानी पत्न्याय यमुपोंके साथ १० दुग्धवती खंडनो दो यो। हमने मारित होता है, कि यमुदोगण बहुत पहलसे ही उद्दुग्धका व्यवहार करते थे।

चीनके उत्तर भागमें विग्रेपतः मन्त्रोलिया प्रदेशके लोग ताजा दूध पीते है और उससे-छिना, मसुन आदि भी तैयार करते है। मन्त्रोलियामें गौको मंस्या अधिक है। गोदुग्धके सिवा ये लोग घोड़ोका दूध भी पीते है। घोड़ोके दूधमें कठिन चारादिका भाग चैकड़े लगभग १७ और गऊरा लगभग ८ चंग है, इस कारण गऊराभाग सज्जमें ही चन्तरोखेक द्वारा सुआसारमें परिचित हो जाता है। यही कारण है, कि मन्त्रोलिया तथा तातार-बासी घोड़ोके दूधसे कुमिस नामक अपने जिये कई प्रकारके बढ़ियां चासम प्रयुत करते है। कानबंगीय सम्राटोंके राजत्वकालमें चीन देशमें कुमिस प्रचलित था। कालमक तातारगण गाय और घोड़ोके दूधको उबाल कर खा हीने देते है और पीछे उसे चनेक तरहमें गला कर शराब तैयार करते है। यही सादक द्रव्य घोसकालमें यहां बहुतघतमें व्यवहृत होता है। चीनकालमें लगभग २४ चण्डे मझा रखनेके बाद चुपानेसे ही शराब बन जाती है। ग्रीसकालमें २४ दिन तक दूध सड़ाया जाता है।

भैंसका दूध भारतवर्षमें बहुत व्यवहृत होता है। इसका दूध गाढ़ा और मोठा होता है तथा गोदुग्धकी चपेवा मसुनका भाग हममें ज्यादा रहता है। बहुतसे ऐसे घुस खाते है जो गायके दूधमें घोड़ा भैंसका दूध मिला कर उसे गायका दूध कह कर बेचते है। यहां नहीं, ये लोग भैंस और गायके दूधको एक साथ मिला कर हमने मसुन निकालते है। जो कुछ हो, चनेक

दुह (मं० पु०) यन्त्रजोय न्यामद. यन्त्रजोय एक राखाका नाम ।

दुहो (हिं० श्री०) १ एक प्रकारकी घास जो जमीन पर बहुत दूर तक फैल जाती है । इससे छंढनोंमें छोड़ी छोड़ी दूर दूर गांठें होती हैं जिनसे दोनों ओर एक एक पत्ती होती है । इस घासमें फुल्लेंजि गोम गोम गुच्छे लगते हैं । इससे दो भेद हैं. एक वही दुहो ओर दूसरो छोटी दुहो । पहलीमें दो ठारि चंगुल लम्बी ओर एक चंगुल छोड़ी पत्ती होती है; दूसरीकी पत्तियां बहुत सछोल ओर दोनों दिशां पर मोल होती हैं । यह घास गरम. भागी. रुखी. गाढी ओर बहुत होती है तथा कोढ़ ओर छमिकी दूर करती है । छोटे छोटे लट्ठके बड़ी दुहोमें मोटना मोटनीका रोग भी उगलते हैं । ये इससे दूधमें कुछ निष्य कर इस पर कोयला घिसते हैं जिससे काले चिह्न बन जाते हैं ।

२ मन्दाज, मध्य प्रदेश ओर राजपूतानामें कोनेवाला एक प्रकारका पेड़ । इसकी लकड़ी रुकित ओर चकड़ी होती है तथा बहुतसे कामोंमें लाई जाती है ।

३ भारतवर्षके मध्य गरम प्रदेशोंमें विगिय कर पन्नाय ओर राजपूतानामें कोनेवाला घृक्षकी जातिका एक छोटा पोषा । इसका दूध दममें दिया जाता है । ४ एक प्रकारकी सकेद मरी. चाड़िया मरी । ५ मारिया लता । ६ जंगली ओल ।

दुहम (मं० पु०) दुर दुहोदुमः पणोदरादित्वात् रमोपः । १ हरित् पलाण्ड, इरा प्याज । २ कन्दविगिय ।

दुधविदवा (हिं० पु०) एक प्रकारका पक्षवान । यह शुद्ध दूध मँदेकी लम्बी लम्बी बत्तियोंकी दूधमें पकाने में लगता है ।

दुधपुर—बम्बई प्रदेशमें ईवाकात्याके धन्तगत एक छोटा नामक राज्य । भूप्रमाण २ वर्गमोम है । यहको सरदार शहोर राजपूत हैं । राज्यकी प्राय प्रायः १८३४० ब० है जिसमें ११००, ब० इटिमयमें पड़को ओर ८७, ब० जूनामकुके नवाबकी देन पड़ते हैं ।

दुधदल—गुजरातमें अन्नासार प्रान्तके मध्यवर्ती एक छोटा नामक राज्य । इसमें केवल दो ग्राम लगते हैं । प्राय प्रायः १८३४०, ब० है जिसमें ११००, ब० इटिमय-

में पड़की ओर ८७, ब० जूनामकुके नवाबकी देन पड़ते हैं ।

दुधदंडो (हिं० श्री०) दूध रखने या गरम करनेका तरीका छोटा बरतन ।

दुधधारो—एक संन्यासी सम्प्रदाय । ये केवल दूध पी कर जीवन धारण करते हैं ।

दुधार (हिं० वि०) १ दूध देनेवाली । २ जिसमें दूध हो ।

दुधार (हिं० वि०) १ जिसमें दोनों तरफ धार हो । (पु०) २ दो तंत्रधारोंका एक प्रकारका चोड़ा चौड़ा या तलवार ।

दुधारो (हिं० वि०) १ दूध देनेवाली, जो दूध देती हो । २ जिसमें दोनों ओर धार हो । (श्री०) १ एक प्रकारकी कटारो जिसमें दोनों ओर तंत्र धार हो ।

दुधि (मं० वि०) दुधि हिंसाकमं रति भाष्योक्तः दुध-हिंसायां कि । हिंसक, मारनेवाला ।

दुधिय (मं० पु०) दुधच्छ, वह जो दूध खाता हो ।

दुधित (मं० वि०) दुधित, बिरक्त, रुद्धा ।

दुधिया (हिं० वि०) १ दूध सिना हुआ, जिसमें दूध पड़ा हो । २ दूधसा सकेद, सकेद जातिका । (श्री०) १ दुधो नामकी घास । ४ बड़ोदेकी तरफ होनेवाली एक प्रकारकी ज्वार या बरी जो बोवायोंको गिराई जाती है । ५ छड़िया मरी । ६ कलियाशकी जातिका एक निय । ७ एक प्रकारकी विदिया । कोई कोई इसे लटेरा भी कहते हैं ।

दुधियाकंछे (हिं० वि०) १ जो मोलापनके लिए कुछ भूला हो । (पु०) २ एक प्रकारका रंग । यह मोलापन लिए हुए भूला होता है । चंगरेज इस रंगमें रंगनेके लिए कपड़ोंको पहले जूरेके काढ़में डुबाने और पोछे धूपमें सुखा कर कर्मोंमें रंगते हैं । ऐसा करनेसे इसका रंग पुन लाता है ।

दुधियापत्तर (हिं० पु०) १ एक किसका भुवापन सकेद पत्तर । इससे पच्छे पच्छे घासे पादि बनते हैं । २ राज लग या रख ।

दुधियाविप (हिं० पु०) कनिषोरोक्षी जातिका एक निय । इससे सुन्दर पोषे कामोरी बिनाक वृक्षारो पहाड़ों तथा हिमालयके पक्षियों आदिमें पाये जाते हैं ।

इसका घोषा कलियारी हो को तरहका सुन्दर फूलोंसे सुशोभित होता है। घोषिकी जड़में ही विष रहता है। इसकी जड़ कलियारीकी जड़से कोटो घोर मोटो होती है। हजारों लोग इसे मोहरी घोर काश्मोरके बन-बन-नाग कहते हैं।

दुधेली (हि० स्त्री०) दुदो देखो।

दुधैल (हि० वि०) लो बहुत दूध देती है।

दुध (सं० वि०) दुध बाहु० रक्। दुष्ट वा घारगति, छ-क प्रयोद्धारदि० साधुः। १ हिंसक, मारनेवाला। २ प्रेरक, भोजनेवाला। ३ दुर्हर, प्रचण्ड, प्रबल। ४ दुर्द्विष, जिसका हनन करना कठिन हो। ५ दुष्टव्यवस्थापक।

दुधकत् (सं० वि०) दुध कायेंकारी, खराब काम करने-वाला।

दुधवाच (सं० वि०) दुध कथा, कटु वचन।

दुधवा (हि० पु०) दो नदियोंका सङ्गमस्थान।

दुधाली (हि० वि०) १ जिसमें दो मल लगी हों। (स्त्री०) २ वह बन्दूक जिसमें दो दो गोलियाँ एक साथ भरी जायें।

दुनियाँ (सं० स्त्री०) १ संसार, जगत्। २ जनता, लोग। ३ जगत्का प्रबंध, संसारका जंजाल।

दुनियाई (हि० वि०) १ सांसारिक। (स्त्री०) २ संसार, जगत्।

दुनियादार (फा० पु०) १ वह मनुष्य जो सांसारिक भाँझटोंमें फँसा हो, गृहस्थ। (वि०) २ व्यवहारकुशल, जो दंग रच कर अपना काम निकाल लेता हो।

दुनियादारी (फा० स्त्री०) १ गृहस्थीका जंजाल, दुनियाँका कारबार। २ वह दंग जिससे अपना मतलब चिह्न हो। ३ बनाबटो व्यवहार।

दुनियासाज (फा० वि०) १ स्त्राय साधक, जो दंग रच कर अपना मतलब निकाल लेता हो। २ चापलूस, लालो चप्यो करनेवाला।

दुनियावाजी (फा० स्त्री०) १ स्त्राय साधनकी हति, अपना मतलब निकालनेका दंग। २ चापलूसी, बात बनानेका ढंग।

दुन्द (सं० पु०) दुन्द इत्यथ्यन्त्रादेन मणति शब्दाद्वे इति मण, शब्दे छ। दुन्दुभि, नगाड़ा।

दुन्द (सं० पु०) १ वसुदेव, श्रीकृष्णके पिता। २ दुन्दुभि वाद्य, घोंसा, नगाड़ा।

दुन्दुभि (सं० पु०) दुन्द इत्यथ्यन्त्रादेन भातीति भावाद्गन्त्रात् कि। १ छद्मदण्डका, बड़ा दोन, नगाड़ा। इमका पर्याय—मेरो और शानक है। २ वरुण। ३ टैलमेद, एक टानबका नाम। ४ राक्षसमेद, एक राक्षसका नाम।

५ घाटप्रविशेष, एक प्रकारका बाजा। ६ विष, जहर। ७ कुक्षुरवर्णीय गन्धमय एक पुत्र। ८ कौशुहोपाधिपतिके पुत्र। ९ कौशुहोपाका देवमेद, कौष दौपका एक विभाग। १० पर्वतविशेष, एक पहाड़का नाम। ११ भसुरविशेष, एक राक्षसका नाम। रामायणमें लिखा है, कि इसे शानिने मार कर श्वापसूक पर्वत पर फेंका था। इस पर महर्षि मतङ्गके शापसे शानि उस पर्वतके पास नहीं जा सकता था। (स्त्री०) १२ एक गन्धर्वी।

मन्नाभे पादशे इसने सत्यरा हो कर जन्म ग्रहण किया था। इसीके पङ्कजम्बे रामचन्द्रजी ननरी गये थे। (भारतवन २०५ पं०) १३ भक्षविशेष, पासेका एक दाव। १४ एक प्रकारका पाचोन शानद यन्त्र।

दुन्दुभिक (सं० पु०) कोटमेद, एक प्रकारका कोडा।

दुन्दुभिनिर्हाद (सं० पु०) दुन्दुभेरिव निर्हादो यस्य। टानबमेद, एक भसुरका नाम।

दुन्दुभिषेख (सं० पु०) दुन्दुभिः सेनाया यस्य। नृपमेद, एक राजाका नाम।

दुन्दुभिस्वन (सं० पु०) दुन्दुभेर्वाद्यभेदस्य स्वनी यत्र विषचिकित्सायां। सुश्रुतोक्त विषचिकित्साभेदे, सुश्रुतमें लिखा है एक प्रकारकी विषचिकित्सा। वध, प्रशक्कण, तिनिग्र, पिशुमर्द (नीम), पाटली, पारिमर्दक, आन्ध, हंसर, करहाट (कमलको जड़), ककुभ (पशुनका पेड़), सज्जक, आश्वातक, शेषातक, चटोट, घामलक, प्रघट, कूज, शमी, कुपित्त, यशमान्तक, चिरविस्त्र, महाघट, स्तुडो छच, भलातकछच, श्लोनाछच, सधुर, रत्नयोभा-स्त्रन, मूर्ख, तिलक, गोचुरक, गोपत्रपट्टा और परिमेद इन सबकी मलमाका गोमूत्रमें चार घना कर कपड़ेमें छेदे खान लें। पीछे पिप्यनोमूल, मण्डनीयक, धन्व-वेतध, घोषक (छाल), गुडत्वक, मन्त्रिषा, वारजिका, गजपिप्ली, मिर्च, उत्पल, श्यामालता, विह्व, काली,

तत्कर आदिकी कुछ भी शिकायत न हो, वही स्थान दुर्ग के लिये प्रयुक्त है। उक्त दुर्गमेंसे कोई दुर्ग क्यों न हो, उसके चारों तरफ खाई अवश्य रहनी चाहिये। पोछे प्राकार और अष्टालकसंयुक्त करके उसके चारों ओर सैकड़ों यतज्ञो-यन्त्रोंका रहना परमावश्यक है। उसमें मनोहर सफाई गोपुर बना कर उसे पताकादि द्वारा सुशोभित कर दें और इसके मध्य भी चार लम्बो चौड़ी बौधिका बनावे। पहलो बौधिकाके अग्रभागमें सुदृढ़-भावसे देवताका घर, दूसरी बौधिकाके आगे राजवेश्म, तीसरीके आगे धर्माधिकरण अर्थात् विचारालय और चौथी बौधिकाके अग्रभागमें गोपुर बनाना चाहिये। पुरका चौकीन प्रायताकार वा वृत्ताकार होना अच्छा है। इसे त्रिकोण, व्यवस्थ, चर्चचन्द्राकार वा लम्बाकार भी बना सकते हैं। नदीके किनारे यदि पुरादि बसाना चाहें तो उसे चन्द्राकारका ही बनाना चाहिये, इसके सिवा और किसी प्रकारका शुभदायक नहीं है। राजगृहके दक्षिण ओर कोयागार और उसके भी दक्षिणमें गजस्थान बनावे। चनिर्कोषमें अष्टागार, महानस, अन्याय कर्म-शालाएँ, पुराहितका घर; राजगृहके बाईं ओर मन्त्रो, वेदविद ब्राह्मण, धिक्कितक, कोठागार, गो और पशु-स्थान रहे। अश्वशालाके उत्तर वा दक्षिणकी ओर श्रेणी प्रयुक्त है, दूसरी ओर नहीं। अश्वशालामें सारी रात दोष लक्षता रहे और उसमें कुङ्कुम, वागम, मक्खन और सवसा धनु भी रख देंगे, गज और अश्वशालामें सूर्यके छत्रों पर सनका पुरोष के। राजा इसी तरह दुर्गमें यथाक्रमसे घोडा, शिखी, मन्त्रो, गोवैद्य, अश्ववैद्य, गजवैद्य आदिका अवस्थान निर्दिष्ट कर दें। दुर्गके मध्य तरङ्ग तरङ्गके षट् होनेको सम्भावना रहती है, इसीसे उसके प्रतीकारके लिये षट्ोंका रहना परमावश्यक है। दुर्गमें नामा प्रकारके प्रहरणयुक्त सहस्रघाती अर्थात् जिसने सहस्रोंको युद्धमें मार डाला है, वैसे, मनुष्यके ऊपर दुर्गका कुल दारमदार रहे। दुर्ग-दार घुसुर रहना चाहिये और इसका कार्यकलाप जिससे कोई न जाण सके, इसका पूरा मन्दोवस्था रहे। दुर्गमें सब प्रकारके आयुध, धनुष, तोमर, खड्ग, कवच, वषा, लाठी, गेंद, लोहेकी बली, गद्दाएँ, प्रस्तर, सुहर,

त्रिशूल, पट्टिम, कुठार, शूल, शक्ति, करसा, चक्र, वर्म, कुदाल, रज्जु, वेद, पौड़ा, भूसी, हंसिया आदि सब प्रकारके अस्त्र शस्त्रादिका पूरा इन्तजाम रहे। सब प्रकारके बाजी, सब प्रकारकी घोष, प्रचुर यवस, इन्धन, गुड़, तेल, वषा, गोरस, मज्जा, छाया, चखि, गोचर्म, पटङ्ग, धान, जौ, गेहूँ, रत्न, सब प्रकारके वस्त्र, उरद, सूँघ, कनाय, चना, तिष्ठ, प्रभृति सब प्रकारके शय्य, पांशु, गोमय, यण, सजरस, भूज, जतु, लावा, टङ्कण, चागोविप द्वारा कुम्भ, ब्याल, सिंहादि मृगपक्षी इन्हें दुर्गके मध्य यथा-स्थान पर रख दिया करें। इनके सिवा वहाँ नामा प्रकारके फल भी एकत्रित रहें।

भीत, प्रमत्त, क्षुपित, विमानित, कुम्भय और पापाश्रय लोगोंको दुर्गमें कदापि रहने न दें। (मत्स्यपु० २१० व०)।

दुर्ग राजाधीका प्रधान सहाय है। दुर्गके नहीं रहनेसे राज्यकी कुछ भी रक्षा नहीं हो सकती। राज्यरक्षा करनेमें दुर्गको उत्तमरूपसे सुदृढ़ रखना नितास्त प्रयोजन है।

दुर्गका विषय महाभारतमें इस प्रकार लिखा है—
राजाओ कैसे पुरमें रहना चर्चित है, युधिष्ठिरके इस प्रश्न पर भीष्मदेवने ऐसा कहा था, दुर्ग ६ प्रकारका है—
धनुर्दुर्ग, महीदुर्ग, गिरिदुर्ग, मनुष्यदुर्ग, जलदुर्ग और वनदुर्ग। यही छः प्रकारके दुर्ग बना कर उनमें समृद्धि-सम्पन्न पुरो बसावे। जो पुरो दुर्गके मध्य अवस्थित तथा दुर्गके प्राकार, सुदृढ़ खाई, हाथो, छोड़े और रचये समा-कीर्ण रहेंगे। जहाँ धनेक विद्वान्, मिथी और सुनि-पुण धार्मिकोंका वास होगा, जहाँ पशु-पक्ष तज्जली मनुष्य एवं हाथी, घोड़े, चत्वर और वाजार रहेंगे, वहाँ किसी बातका डर नहीं है। दुर्गके मध्य कोप, सैन्य और मित्र परिवर्द्धन तथा विचारालय संस्थापन करके अन्यान्य गगर और ग्रामोंसे दोषकी वाहक निकाल देनेकी हमेशा कोशिश रहे। दुर्गमें अस्त्रसंख्या तृति, धान्यादि चण्ड और यन्त्र तथा चर्मन हमेशा मौजूद रहना चाहिए। काष्ठ, लोह, तप, चट्टार, शूद्र, अस्थि, वंश, मज्जा, तेल, सधुकम, घोषण, यण, सजरस, शर, वर्म, छाया, वेद, सूत्रा और बज्र-संयुक्त, पुष्करिणी तथा कूप आदि नामा प्रकारके सहाय्य, षट्, घोषल आदि हथौकी यक्ष्मूक

पद्ममूल, मोमरत्न, निर्मल, कुंकुम, मासपट्टी, केसर, शोभनरत्न, नक्षत्रल, मेथुननक्षत्र, पाकर, विजयनक्षत्र, मेतम, सुविपरीति, कलाप्रिया, चन्द्रिनिवा, पदमिवा, ह्रींतीकी, भद्रदाह, दुष्ट, चन्द्रिवा, सच चौर और एवं इस सब दुर्गो को उक्त नामों द्वारा दे' पोर लेव बनाये । इस मंत्रको दुन्दुभि, पनाका, तोरच इत्यादिमें पोते । ऐसे तोरच, दुन्दुभि आदिमें यज्जन, टर्गन वा श्रद्धासे विपका प्रभाव दूर हो जाता है । यन् रासमयी, यम, वायुजन रासम, काम, मूल, उदरी, चण्डी, चण्डी, चण्डी चौर सब प्रकारके शोक तथा श्वास रोगमें भी दुग्धका निवध किया जाता है । (सुश्रुत दुन्दुभिचनीय विरिणितराणाय) दुन्दुभिरा (सं० पु०) दुन्दुभिका मन्त्र, गंगाई को धावात्र ।

दुन्दुभिराराज (सं० पु०) दुग्धका एक नाम ।
दुन्दुभ्य (सं० पु०) दुन्दुभो दाजवमन्त्रे धिये वादामेदे वा भवः प्रकृतो वा यत् । १ रुद्रमन्त्र । दुन्दुभये महादमाय मापु यत् । २ दुन्दुभिवामन-साधनमन्त्रमन्त्र, एक प्रकारका मन्त्र ।

दुन्दुमार (सं० पु०) धुनुमार एवोदरा नाम्नाः । धुनु-मार, राजा त्रिगुह के एक पुत्रका नाम ।

दुपहा (हिं० पु०) १ दो पाट को चदर । २ सह लम्बा कपड़ा जो कपड़े या मर्चे पर रखा जाता है ।

दुपहा (हिं० स्त्री०) दुहाई देना ।

दुपद (हिं० पु०) द्विप देना ।

दुपदी (हिं० स्त्री०) दोनो' चौर पदों' संग दूध मिश्रित फगुरो वा भीमस्त्री ।

दुपहर (हिं० स्त्री०) दोहर देनी ।

दुपहरिदा (हिं० स्त्री०) १ मध्याह्न, दो पहर । २ छेद दो काम अथवा एक प्रकारका पोषा । यह एक भीषे क'ल्लक' रुद्रमें होता है और फूलों के लिये बगोचोंमें खनाया जाता है । दूसरे दूसरे पोषोंको गार्हे इसमें घासा' पा टहरिया' नहीं निकलती है । इससे फल पाठ दण्ड च'गुन कथ्य, एक छेद च'गुन थोड़े चौर गहरे हरे रंगके होते हैं । इससे फूल कटोरों के पादारके गीन चौर गहरे लाल रंगके होते हैं । फूलों में भद्र जाने पर जो बीज-बीज रह जाता है उसमें राई के दानेमें कासे

कासे बीज रहते हैं । इसका गुण—मन्त्रीपद, कृष्ट गरम, भारो, कफकारक, ज्वरभादक, तथा वातरिक्त-लागक है । ३ दुष्ट, पात्रो, चरामकाटा ।

दुपहरी (हिं० स्त्री०) दुपहरिदा देनी ।

दुग्धमयी (हिं० स्त्री०) दोनो' कदमों में लपट धोमिवाता ।
दुग्धविकृत (सं० स्त्री०) भीमक'स्तामिको' सर्वप्रदेश योग भेद । मन्त्रमणि यह यदि पद्य ध्येतादि रहित हो कर भीमगति यहके माघ इत्यामान भीमविकृति को चौर यदि उक्त भीमगति यह चक्षुमन्त्र, भीमगन्त वा मन्त्र-गतन हो, तो यह योग होता है । इस योगमें सभी काम भव्य होते हैं । इस योगका नाम 'दुग्धविकृत' भी है ।

दुग्धमयी (हिं० स्त्री०) मानसभक्तो एक कमार । इसमें रेतको दोनो' बगनो'में निकाल कर हाथ ऊँचे करके लगे इस तरह लपेटे जाते हैं कि एक' कुंडल ना बन जाता है । इसके बाद दोनो' पैरों को निचो' चौर उठाते हुए सभी गीन क'ल्लमणि निकाल कर कलावाश्रीं मांघ मोचे गिराये जाते हैं ।

दुग्धा (हिं० पु०) एक प्रकारको घास औ' चोपायो के खानेके काममें पानो है ।

दुग्धा (हिं० स्त्री०) १ चन्द्रिवा, चित्तकी चम्पिरता । २ चमक'जम, चागा घोडा । ३ मन्द' मंगय । ४ गिला, मटका ।

दुग्धाजपुर-वद्वामके चौरभूम जिनके चामागत एक नगर । यह पत्ता-२१'४८' ७०' चौर दिशा-८०'२४' पू' मिडकोमे १४' मोन दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है । यहां सुसको पदागत, घामा चौर एक बड़ा बागार है । यहां बहुतसे नानाह' है जिनके किनारे पत्तक ताड़ के पेड़ोंमें लाड़ो निकाली जाती है । नगरके दक्षिणमें दामेदार पत्तर तथा काने चकरकका वहाह है । इसके ऊपर चट्टानें पाय-आय, राजमहल चौर पण्डित वहाह इत्यादि होते हैं । यहांके ऊपर पट्टर काट कर एक सुन्दर गिजापद बनाया गया है ।

दुग्धाचमयी (हिं० पु०) तोपका च'कोतरा गोधा ।

दुग्धाचमय (हिं० पु०) घासको एक स्त्री । इसे भीष' कर घामको पेटको कपा निकाली जाती है ।

दुग्धा (हिं० स्त्री०) १ जग, चीज चौराहा । २ चमक, कामजोर ।

दुस्लापन (हि० पु०) क्षयता, पीणता ।
दुस्वादन (हि० स्त्री०) दूधको स्त्री ।
दुस्वाग (हि० पु०) मनकी मोटो रस्सी ।
दुस्वारा (हि० क्रि०-वि०) दोहारा देखो ।
दुस्वाला (हि० वि०) दोहाला देखो ।
दुस्वाहिया (हि० पु०) वह घोड़ा जो दोनों हाथों से तबधार चलाता हो ।

दुविधा (हि० स्त्री०) दुश्चा देखो ।
दुविस्त्रो (हि० स्त्री०) गधमैष्टकी थोरसे दिये जानिका एक प्रकारका कमोगन । इसमें बोन रूपयेके लगान पर दो रुपये दिये जाते हैं ।

दुवे (हि० पु०) ब्राह्मणोंकी एक उपाधि । यह शब्द द्विवेदीका अपभ्रंश शब्द है । द्विवेदीका नाम संक्षेप भाषा भाषियोंमें दीवें रखा था जिसका भी अर्थ था दो वेदका ज्ञाननेवाला । यही दीवे शब्द भाषामें दुवे हो गया ।

दुभाखो (हि० पु०) दुभाषी देखो ।
दुभापिया (हि० पु०) वह जो दो भाषाओंकी जानता हो ।
दुभाषी (हि० पु०) दुभापिया ।

दुम'जिहा (फा० वि०) दो खंजा, जिसमें दो खन हो ।
दुम (फा० धो०) १ पुच्छ, पूंछ । २ किसी कामका सबसे श्रेष्ठ थोड़ासा भाग । ३ वह आदमी जो किसीके पीछे लगा रहता है, पिच्छलगू । ४ वह वस्तु जो पूंछकी तरह पीछे लगी या बंधी होती है ।

दुसका-१ विहार और लद्दीयके अन्तर्गत मन्थाल परगने जिलेका एक सदर उपविभाग । यह पचास २३ ५८ से २४ १८ व० और देशा ८६ ५४ से ८७ ४२ पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण १४२८ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ४१६८६१ है । इसमें दुसका नामका शहर और २१५ ग्राम लगते हैं ।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान शहर । यह पचास २४ १६ व० और देशा ८७ १५ पू०में अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ५३२६ है । अङ्गरेजों राज्यके आरम्भसे ही दुसकामें अङ्गरेज गवर्मेण्टके यानिका नाम देखनेमें आता है । १७६८ ई०में दुसका औरभूमके अधीन एक घाटवाली याना था । १७८५ ई०में राजमहल पावस प्रदेश पर शासन करनेके लिये इसे भागलपुरके अधीन

एक 'कोरिखानी' याना बना दिया गया । १८५५ ई० तक इसका नाम दुसका ही सुना जाता था । इसी साल सन्ताल-विद्रोहके समय यहाँकी छावनीकी भंगरेजी सेनाने इसका नाम नयादुसका रखा । आज भी लोग इसे केवल दुसका ही कहते हैं । नयादुसकाका नाम बहुत कम सुना जाता है । १८५६ ई०में दुसका 'मन्थाल परगना' जिलेका सदर हुआ, किन्तु कुछ दिनोंके बाद उक्त जिलेका प्रत्येक सबडिविजन जब प्रधान जिला हो गया, तब दुसका केवल दुसका-सबडिविजनका सदर रहा । यहाँ जिलेकी सन्तान्तर पदावत आदि हैं । और नदीके किनारे यहाँका बाजार अवस्थित है । १८०१ ई०में यहाँ स्युनिपैर सिटी स्थापित हुई । शहरकी पाय प्रायः ७७०० व० है ।

दुमची (फा० स्त्री०) १ पूंछके नीचे दबा हुआ छोड़के साजका एक तसमा । २ मुँहके बीचकी हड्डी ।

दुमदार (फा० वि०) १ जिसे पूंछ हो । २ जिसकी पीछे पूंछकी तरह कोई वस्तु लगी या बंधी हो ।

दुमन (हि० वि०) अपसक्त, खिन्न, चममना ।

दुमता (हि० वि०) १ नुरो माता । २ सीतैली मा ।

दुमाला (हि० पु०) पाय, फंदा ।

दुम्बक (न० पु०) दुम्ब, एक प्रकारका भेंड़ा ।

दुर'गा (हि० वि०) १ जिसमें दो रङ्ग हों । २ दो पक्ष व्यवस्थान करनेवाला, दो तरहको पाल चलनेवाला ।

दुर'गो (हि० स्त्री०) द्विविधा, कभी एक पक्षका और कभी दूसरे पक्षका व्यवस्थान ।

दुर (सं० धन्य) दु-इक् सुक् या । १ दुष्ट । २ निद्रा । ३ निषेध । ४ दुःख । ५ ईषदय । ६ लक्ष्मणार्थ । ७ लज्ज, दुःख । ८ असम्पत्ति । ९ सहृष्ट । क्रियाके साथ मिश्रने से दुर'वा दुस्-शब्द उपमर्ग हो जाता है ।

दुर (सं० वि०) दू-क्षिप् । हार, दरवाजा ।

दुर (सं० वि०) दु-वाह् कुर । दाता, देनेवाला ।

दुर (हि० धन्य) एक शब्द जिसका प्रयोग तिरस्कार पूर्वक किसीकी कृत्यके लिये होता है । इसका प्रयोग विशेष कर कुसोके लिए होता है । कभी कभी भोग वचों आदिमें यो' की प्यारसे भी कह देते हैं ।

दुर (फा० पु०) १ सुता, मोती । २ नाकमें पहननेका मोतीका सटकन, शोक्क । ३ छोटी बावी ।

दुर्ग—वासुदेवकी पुत्र, इंद्रादयः शोकीने टीकाकार ।

दुर्ग (सं० पु०) दुःस्थितो गतो यत्र लोकानां । देशभेद, एक देशका नाम । मोक्षमिलनोऽस्य, तस्य राजा वा, पण । दुर्गल, दुर्गल देशके राजा वा अधिवासी ।

दुर्गलज्जन (सं० पु०) दुर्ग दुर्गमस्थानं मरुभूम्यादि तच्छतेऽनेन लङ्घि करिष्येत् । १ लङ्घ, कंठ ।

दुर्गवाल—यह गोडु माछाणोंका एक कुल-नाम है जो आजकल मामन भी कहता है । गोड़ुके १४४४ ग्रामों-में यह भी एक ग्रामका नाम है और वहाँके रहनेवाले गोड़ुके एक भेद दुर्गवाल हुए ।

दुर्गसंस्कार (सं० पु०) दुर्गस्य संस्कारः । दुर्गका संस्कार, दुर्गकी मर्यादा करना । दुर्गकी मर्यादा नहीं रहनेसे राजाकी पद पद पर पराजयकी सम्भावना रहती है । इसी कारण सदैव दुर्ग संस्कार करना विमोघ आवश्यक है ।

दुर्गसंचर (सं० पु०) दुर्गसंचर्यते अनेन सम्-चर करणे भव । संक्रम, दुर्गम स्थानों तक पहुँचानेका साधन, मोड़ो, पुल, ब्रिजा आदि ।

दुर्गसंचार (सं० पु०) दुर्गनद्यादि दुर्गमस्थानं तच्छर्यते गम्यतेऽनेन सम्-चर-चञ्च । दुर्गसंचर देखो ।

दुर्गसिंह—कातन्त्रादिसिंहे रचयिता । मल्लिनाथ, विह्वल, भट्टोजी, दुर्गादास, सोपदेश, हेमाद्रि आदिने इनका मत उद्धृत किया है । इन्होंने कलापव्याकरण और परिभाषा-हस्तिकी रचना की है । २ विषयात निरुक्तभाषाकार । ये जम्बूद्वीपनिवासी नामसे प्रसिद्ध हैं । ३ एक प्राचीन ज्योतिर्विद् । 'दृष्टि' के वर्णने इनका मत उद्धृत किया है ।

दुर्गसिंह कवि—कातन्त्र-व्याकरणकी हस्तिकी रचयिता एक जैन कवि ।

दुर्गसेन—वसुभेदेवकी 'सुभाषितावलोक-पुं' एक प्राचीन संस्कृत कवि ।

दुर्गा (सं० स्त्री०) दुर्-गम्-ङ (सुदुरोरधिकरणे) । (पा ३।१।४८ शतित्वात्) शतशब्द । १ आद्याशक्ति । इनका नामां-तर—उमा, कात्यायनी, गौरी, काली, हैमवती, ईश्वरा, शिवा, भवानो, रुद्राणी, शर्वाणी, सर्वमङ्गला, चर्पणा, पार्वती, मृदाणी, चण्डिका, चम्बिका, गारुडा, चण्डो,

चण्डवती, दण्डा, चण्डनार्यिका, गिरिजा, मङ्गला, नारा-यणो, महामाया, वैष्णवी, महेश्वरी, महादेवी, शिखी, ईश्वरी, कोटवी, पद्मो, माधवी, नगनन्दिनी, जयन्ती, मार्गवी, रथा, चिह्नरथा, सती, आमारो, दण्डकन्या, मर्दिनी, चैरम्बजननी, सावित्री, क्षणपिञ्जला, उषा कपायी, सत्या, छिमरी राजा, कर्त्त-यप्रसू, प्राद्या, निष्ठा, विद्या, शुभङ्गरी, सात्विकी, राज्ञी, तामसी, भीमा, नन्दनन्दिनी, महामाया, शुलभारा, सुनन्दा, शुभवातिनी, स्त्री, पर्वतराजतनया, हिमालयसुता, महेश्वरविनाया, सला, भगवती, ईशानो, सनातनो, महाकाली, शिवानी, हरवल्लभा, उषचण्डा, चामुण्डा, विधात्रो, प्रानन्दा, महामाया, महासुम्ना, माङ्गी, भीमो, कल्याणी, क्षणा, मानदात्री, मदावला, मानिनी, चार्वाङ्गी, वाणी, ईशा, वनेश्री, भ्रमरी, भूया, फाल्गुनी, यती, ब्रह्ममयी, भाविनी, देवी, चविन्ता, विनेता, विगूला, चञ्चिका, तीला, नन्दिनी, नन्दा, धरित्रो, मातृका, चिदानन्दस्वरूपिणी, मनस्विनी, महादेवी, निद्रारूपा, भवानिका, तारा, नोत-नरस्वतो, वालिका, उग्रतारा, क्रानेश्वरी, सुन्दरी, मेरवा, राजरत्नेश्वरी, भुवनेशो, स्वरिता, महालक्ष्मी, राजीव-नीचनी, धनदा, वागेश्वरी, त्रिपुरा, स्वास्तीमुखी, वगला-सुखी, विद्विद्या, अन्नपूर्णा, विद्यालक्ष्मी, सुभगा, मधुषा, निगुणा, धवल, गौरी, शैतवाद्यमिश्रा, अज्ञानवासिनी, अज्ञाह्वानिनी, चोरा, प्रेमा, चटेश्वरी, कोर्त्तदा, बुद्धिदा, चवीरा, पण्डितालवासिनी, मण्डिता, भवक्षरा, क्षणा-रूपा, वलिप्रिया, तुमुला, कामिनी, कामरूपा, पुष्पदा, विष्णुचक्रधरा, पद्ममा, हन्दावनस्वरूपिणी, प्रयोध्यारूपिणी, मायावती, जामुलवसन्ता, जगन्नाथस्वरूपिणी, कर्त्त-वसना, विद्यामा, यमलाज्जुनी, यामिनी, प्रगोदा, यादवी, जयती, क्षणजावा, सत्यभामा, सुमद्रिका, लक्षणा, दिगम्बरी, पृथुका, तीक्ष्णा, आचारा, धम्परा, आङ्गवी, गण्डकी, ध्या, कृष्णो, मोहनो, विकारा, चर-वासिनी, चञ्चिका, पविका, पविका, तुलसी, प्रतुला, जानकी, चम्बा, कामना, नारसिंही, गिरीया, साधो, कल्याणी, कमला, कान्ता, शान्ता, कुला, वेदमाता, कर्षदा, सन्या, त्रिपुरसुन्दरी, रागेशो, दध्यध्वनिना-शिनी, धनन्ता, चमेश्वरी, चक्रेश्वरी, लज्जना,

दुःख (मं० पु०) दुष्टो यः प्रादुर्भवः । १ कष्टदायकः ।
 दाया, पीडकः । २ दुःखित, दुःखी भिन्नाः ।
 दुःखता (हिं० पु०) शोक, तद्वत्, मर्मता, महत् रक्षादिनी
 लक्षणो मुखान्तरादिना एक प्रकाशना कर्मणा ।
 दुःखम् (हिं० पु०) दशोक्तं तन्त्रेण दोषो धर्मो यो यत्र
 योष्यते । यद्दुःखमेव विद्या शान्ता दे, किं वै दुःखम् न
 जायते ।
 दुःखिज्ज (मं० वि०) दुःखेन परिश्रम्यतेऽसौ दुःख-चरि-
 त्तमः पण्डितः । १ यद्दुःखमोय, त्रिभक्ता उत्सृष्टमनो न दो मर्क ।
 २ चरित, जिते धीर्दो मोन न मर्क । ३ चरित, त्रिभक्ता
 पार पाना कठिन दो । (पु०) ४ विष्णु ।
 दुःख्य (मं० वि०) दुःखेन चरितो दुःख-चरि-पण्डितः ।
 दुःखिज्जमोय, त्रिभक्ता पार पाना कठिन दो ।
 २ दुःखित, त्रिभक्ता चरित्तम न दो मर्क ।
 दुःख्येत्तु (मं० वि०) दुःख-चरि-पण्डितः । दुःखि-
 त्तमोय ।
 दुःखदुरासा (हिं० वि०) निष्कार्यपूर्वकं दूर करना ।
 दुःखदुष्ट (मं० को०) दुःख, दुष्टं यदुष्टं । दुःखं, दुष्टं त्रिभ-
 म् । पाण्डित्ये दुःखदुष्टं लक्षणं योना है । जो कोर्द काय
 जिया जाता है, समता एक मन्त्राररुता है । समी
 मन्त्राररुता 'यदुष्ट' कहते हैं । यद्दुष्टं यथायथं कर्म,
 भाव्य है । यथं कर्म यथायथं कर्म करनेसे दुःखदुष्ट
 और पाप कर्म करनेसे दुःखदुष्ट होता है । यतः पाप
 जो यद्दुष्टं भाव्य दुःखदुष्टा कारण है । यदुष्टं योना ।
 दुःखदुष्टा (मं० को०) यद्दुष्टं भाव्य मन्त्राररुता, दुष्टा
 यदुष्टं प्रादुर्भवः । दुःखं, दुष्टं त्रिभम् ।
 दुःखिज्ज (मं० वि०) दुःखेन परिश्रम्यतेऽसौ दुःख-चरि-
 त्तमः पण्डितः । १ दुःखमोय, त्रिभक्ता त्रिभक्ता कठिन
 दो । २ दुःख्य, त्रिभक्ता त्रिभक्ता कठिन दो ।
 दुःखिज्ज (मं० वि०) दुःखेन परिश्रम्यतेऽसौ दुःख-चरि-
 त्तमः पण्डितः । १ दुःखमोय, जो यद्दुष्टं भाव्य
 दो । २ दुःख्य, जो मन्त्राररुता बाहर दो ।
 दुःखिज्जित (मं० वि०) दुःख-चरि-पण्डितः । १ त्रिभक्ता
 मन्त्राररुता मन्त्राररुता जो यद्दुष्टं भाव्य बाहर दो ।
 (पु०) २ यद्दुष्टं भाव्य मन्त्राररुता ।
 दुःखिज्ज (मं० को०) दुष्टं यदुष्टं प्रादुर्भवः । दुष्टा यदुष्टम् ।

जो यद्दुष्टं भाव्य मन्त्राररुता मन्त्राररुता जो यद्दुष्टं
 मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता ।
 यदुष्टं मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता ।
 मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता ।
 दुःखदुष्ट (मं० वि०) दुःखेन परिश्रम्यतेऽसौ दुःख-चरि-
 त्तमः पण्डितः । १ यद्दुष्टं भाव्य मन्त्राररुता, जो यद्दुष्टं
 मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता मन्त्राररुता ।
 दुःखदुष्ट (मं० पु०) दुःख, दुष्टं यदुष्टं । दुःखं, दुष्टं त्रिभ-
 म् । पाण्डित्ये दुःखदुष्टं लक्षणं योना है । जो कोर्द काय
 जिया जाता है, समता एक मन्त्राररुता है । समी
 मन्त्राररुता 'यदुष्ट' कहते हैं । यद्दुष्टं यथायथं कर्म,
 भाव्य है । यथं कर्म यथायथं कर्म करनेसे दुःखदुष्ट
 और पाप कर्म करनेसे दुःखदुष्ट होता है । यतः पाप
 जो यद्दुष्टं भाव्य दुःखदुष्टा कारण है । यदुष्टं योना ।
 दुःखदुष्टा (मं० को०) यद्दुष्टं भाव्य मन्त्राररुता, दुष्टा
 यदुष्टं प्रादुर्भवः । दुःखं, दुष्टं त्रिभम् ।
 दुःखिज्ज (मं० वि०) दुःखेन परिश्रम्यतेऽसौ दुःख-चरि-
 त्तमः पण्डितः । १ दुःखमोय, त्रिभक्ता त्रिभक्ता कठिन
 दो । २ दुःख्य, त्रिभक्ता त्रिभक्ता कठिन दो ।
 दुःखिज्ज (मं० वि०) दुःखेन परिश्रम्यतेऽसौ दुःख-चरि-
 त्तमः पण्डितः । १ दुःखमोय, जो यद्दुष्टं भाव्य
 दो । २ दुःख्य, जो मन्त्राररुता बाहर दो ।
 दुःखिज्जित (मं० वि०) दुःख-चरि-पण्डितः । १ त्रिभक्ता
 मन्त्राररुता मन्त्राररुता जो यद्दुष्टं भाव्य बाहर दो ।
 (पु०) २ यद्दुष्टं भाव्य मन्त्राररुता ।
 दुःखिज्ज (मं० को०) दुष्टं यदुष्टं प्रादुर्भवः । दुष्टा यदुष्टम् ।

दुरपनेय (स० त्रि०) दुःखेन अपनीयतेऽसौ दुर-अपनो
यत । जिसका हटना कठिन हो ।

दुरप्रमिह (स० पु०) दुःखेन अभिसृष्येन गृह्यतेऽसौ
दुर-प्रमि-ग्रह-खल । १ अपामार्ग, चिचट्टो । (स्त्री०)
२ दुःखभा, ज्वामा । ३ कपिकच्छ, केवाच, कौक ।
(त्रि०) ४ दुःख द्वारा घाघ्रा, जो कठिनतासे प्राप्त हो ।
दुरभिगाह (स० त्रि०) दुःप्रवेश्य, जटिल, जिसका जानना
कठिन हो ।

दुरभिसन्धि (स० स्त्री०) दुष्ट घट-चक्र, मिल जुल कर जो
हुई कुमन्त्रणा ।

दुरसुख (हि० पु०) एक प्रकारका छंटा जो गदाके
आकारका होता है । इसके नीचे पत्थर या लोहेका
भारी टुकड़ा लगा रहता है । यह कंकड़ या मट्टी
पोट कर बैठनेके काममें आता है ।

दुरवगत (स० त्रि०) दुर-भव-गम-क्त । जो कठिनतासे
जाना जा सके

दुरवगम (स० त्रि०) दुर-भव-गम-खल । दुर्ज्ञेय, जिस-
का जानना कठिन हो ।

दुरवघात (स० त्रि०) दुःखेन अवगृह्यतेऽसौ दुर-भव-
ग्रह-खल । जो दुःखसे ग्रहण किया जाय ।

दुरवशोध (स० त्रि०) दुःखेन अवबुध्यतेऽसौ दुर-भव-
बुध-दल-घर्ष-घल । दुर्बोध, जो कठिनतासे मालूम हो
सके ।

दुरवरोह (स० त्रि०) दुःखेन अववृह्यतेऽसौ दुर-भव-वह-
खल-घल । दुरारोहणोद्य, जो कठिनतासे चढ़ा
जाय ।

दुरवयद (स० स्त्री०) विवद मोलने या निन्दा करनेके
पक्षमें कष्टकर, जिससे सङ्गमें कटु-वचन न निकले ।

दुरवस्था (स० त्रि०) दुर-दुष्टा अवस्था यस्य । दुर्दशा-
पथ, जो अच्छे दर्शाने न हो ।

दुरवस्था (स० स्त्री०) दुष्टा अवस्था प्रादिस० । दारि-
द्रादि मन्द अवस्था, बुरी दशा, खराब हालत ।

दुरवाप (स० त्रि०) दुःखेन अवप्यतेऽसौ अव-आप-खल ।
दुःप्राप्य, जो कठिनतासे प्राप्त हो सके ।

दुरवेचित (स० स्त्री०) दुष्ट अवेषित । मन्द दृष्टि, बुरी
निगाह ।

दुरम (हि० पु०) महीदर भाई ।

दुरभ्यु (स० त्रि०) दुःख देने वा अनिष्ट करनेमें
इच्छा ।

दुरङ्ग (स० पु०) दुर निन्दितं चरः । दुर्दिन, खराब दिन ।

दुराक (स० पु०) दुःनातोति दुःन उपतापे भाकः । १
स्नेच्छ विषये, एक स्नेच्छ जातिका नाम । २ स्नेच्छ-
देशविषये, एक स्नेच्छदेशका नाम ।

दुराकाङ्क्ष (स० त्रि०) दुर दुष्टा आकांक्षा यस्य । दुर-
प्रत्यागो, जो खराब विषयको प्राप्ता करता हो ।

दुराकाङ्क्षा (स० स्त्री०) दुःप्राप्य विषयको अभिलाषा ।

दुराकृति (स० त्रि०) दुर-दुष्टा आकृतियस्य । १ मन्द
आकृतिविशिष्ट, जो देखनेमें खराब हो । (स्त्री०) दुष्टा
आकृति । २ मन्द आकृति, खराब स्वरूप ।

दुराक्रन्द (स० चण्व०) दुःखेन आक्रन्द्यतेऽसौ आक्रन्द-खल ।
अति दुःखसे क्रन्दन, बहुत दुःखसे रोना ।

दुराक्रम (स० त्रि०) दुःखेन आक्रम्यतेऽसौ दुर-आ-क्रम-
खल । दुःख द्वारा आक्रमणोद्य, जो बहुतसे कठिनतासे
आक्रमण किया जाय ।

दुराक्रम्य (स० त्रि०) दुर-आ-क्रम-खल । दुःखसे आक्रम-
णीय, जिस पर सङ्गमें चढ़ाई न की जा सके ।

दुराक्रोय (स० पु०) दुःखेन आक्रुष्यतेऽसौ दुर-आ-
क्रुश खल-घल । आसनाद, दुःखका रोना ।

दुरागत (स० त्रि०) दुःखेन आगतः । जो बहुत कष्टमें
पड़ा हो, दुःखित ।

दुरागम (स० पु०) मन्द उपायने उपाजने, बुरी रीतिसे
रासित करना ।

दुरागमन (हि० पु०) दुरागमन देखो ।

दुरागोन (हि० पु०) बघाका दूसरी बार अपनी ससुराल
जाना ।

दुराग्रह (स० पु०) दुःखेन आग्रह्यतेऽसौ दुःआ-ग्रह-
खल । १ मन्द विषयमें आग्रहयुक्त, किसी बात पर
बुरे ढंगसे पहना, ठट, झिड़ । २ अपने मतके ठीक न
सिद्ध होने पर भी उस पर स्थिर रहनेका काम ।

दुराग्रही (हि० वि०) १ जो बिना उचित अनुचित
विचारके अपनी बात पर चढ़ जाता है, दबो, जिहो । २
जो अपने मतके ठीक न सिद्ध होने पर भी उस पर स्थिर
रहता है ।

विश्वीकी अधिपतितो देवी सावित्री है, वे ही अन्निकी दाहिका शक्ति, सूर्यकी प्रभाशक्ति, पूर्ण चन्द्रकी शोभा शक्ति, जनकी शीतलाशक्ति, धराकी धारणा और शस्त्र-प्रसूति शक्ति हैं, वे ही ब्राह्मणोंकी ब्राह्मणशक्ति, देवताओं की देवशक्ति, वे ही तपस्वियोंकी तपस्वा, गृहस्थोंकी गृह-देवी, सुक्तोंकी सुक्ति और सांसारिकोंकी मायाशक्ति हैं, वे ही भक्तोंकी भक्तिशक्ति और हम लोगोंके प्रति सर्वदा भक्तिमयी हैं, वे ही राजाओंकी राज्यलक्ष्मी, वणिकोंकी लब्धकरिणी हैं, संसारसागरको पार करनेमें वे ही दुस्तर-तारिणी ब्रह्मदेवी हैं, सज्जनोंकी वे ही बुद्धि और मेधाशक्ति-स्वरूपा हैं, वे ही श्रुतिशास्त्रकी व्याख्याशक्ति, दाताकी दानशक्ति, अग्निदाहिकी विप्रभक्ति और सतीकी पतिभक्ति हैं। हम तरहको जो शक्ति हैं उन्हें मैं महादेवकी दान दिया है।

देवीका परिचय :- सबसे पहली वाक्यमयसंहिता (छन्द यजुर्वेद ३।१७)में अम्बिकाका उल्लेख पाया जाता है—

“एव ते रुद्र भागः सह स्वामिभक्त्या न” (यजुर्वेद स्वाहा।)”

हे रुद्र! आप अपनी भगिनी अम्बिकाके साथ हम लोगोंके लिए हुए इस पुरोडासकी कृपाय ग्रहण कीजिए।

(तैत्तिरीय-ब्राह्मण १।१।१०)

यहाँ भाष्यकार महीधरने इस प्रकार लिखा है—

‘अम्बिकाया रुद्रमग्निनीलं श्रुतिम्’ (यजुर्वेद १।१७।१५), ‘अम्बिका है नामास्य स्वसा तयास्वैष सह भाग इति शोडशं ब्रह्मण्यः कुरी देवस्तत्र विरोधितं हं तु भिच्छामि। भवति तदान्धया भगिन्या रुद्रदेवतया प्राधनमूतका तं दिनसि। सा अम्बिका शूर-धूर्व प्राप्य अरादिहमुत्पात तं विरोधितं हन्ति। रुद्राण्यिकयो-रक्षममेव हविषा गन्तं भवति। तया च तित्तिरिः। एव ते रुद्र भागः सह स्वामिभक्त्या सह स्वाहा’ अम्बिका सा भिषा एषा दिनसि यं दिनसि तयैवैव सह शामयसीति ॥

का० ५।१-११३

अम्बिकाके रुद्रभगिनोत्पत्तिमें ही कहा गया है कि अम्बिका उन्हींकी भगिनोका नाम है-उनके साथ उनका भी यज्ञभाग है। यह रुद्र नामक क्रूरदेवता अपने विरोधियोंकी मारनेकी इच्छा करते हैं। उसी तरह साधनभूता क्रूरदेवी अपनी भगिनोके साथ विरोधी-को मारती है। यही अम्बिका शस्त्रग्रहणपूर्वक अरादि

उत्पादन करके अपने विरोधीको विनाश करती है। रुद्र और अम्बिकाका चतुर्थ हविर्ग राशान्त हो। तित्तिरि श्रुतिमें लिखा है कि, ‘हे रुद्र! यही आपका भाग है, भगिनी अम्बिकाके साथ ग्रहण कीजिये। यही अम्बिका शस्त्र रूप धारण कर इनका नाश करती और तुम्हारे सहित पुनः शान्त करती है।’

उक्त प्रमाणसे जाना जाता है कि देवी अम्बिका पहले रुद्रकी भगिनी रूपमें गिनी जाती थीं। पीछे तत्त्वकार-उपनिषद्में उमा हैमवतीकी उत्पत्तिके विषयमें इस तरह लिखा है—

एक समय ब्रह्माने देवताओंके लिये युद्धमें जयलभ को, किन्तु यह जयलभ उन लोगोंके सामान्य बलसे ही संचटित हुआ है, ऐसा समझे अनुमान किया। ब्रह्मा उन लोगोंका यह भ्रम दूर करनेके लिये प्रगट हो गये; किन्तु देवताओंने उन्हें न पहचाना। उन्होंने पहले अम्बिकाको पीछे बांधुको उमका स्वरूप मालूम करनेके लिये भेजा। जब वे ब्रह्माके पास पहुँचे, तब ब्रह्माने उनका परिचय पूछा। अम्बिने कहा, ‘मैं सब चीज ज्ञाता सकती हूँ।’ बांधुने कहा, ‘मैं सब चीज उद्धा सकती हूँ।’ तब ब्रह्माने उन्हें एक घास दी। दोनों देवता उस घासको कुक कर न सके। बाद देवताओंने रुद्रसे कहा, ‘मघवन्! घम कर देखिये कि यह भक्तिका कौनसा पदार्थ है।’ रुद्र उसे देखनेके लिये ज्यों ही भ्रमसर हुए, त्यों ही वे (ब्रह्म) चट्टन हो गये। वह ब्रह्म बहुत शोभायमाना उमा हैमवती स्त्रीकी मूर्त्ति धारण कर ऊपर आकाशकी ओर चल पड़े। उनकी माते देख रुद्रने उनसे पूछा, ‘आप कौन हैं?’ इस प्रकार उन्होंने (स्त्रीरूपाने) कहा, ‘यही ब्रह्म हैं। इसी ब्रह्मको विजय-के प्रभावसे ही तुम लोगोंने महत्व प्राप्त किया है।’ तभीसे उन्हींने ब्रह्मको पहचाना।

कैनेपनिषद्के उक्त विवरणके अनुसार यह जाना जाता है कि उमा हैमवती ही ब्रह्मविद्या हैं। मायाकारने यहाँ उमा हैमवती शब्दोंके इस प्रकार व्याख्या की है— ‘हैमवती हैमकृताभरणवतीमिव बहुशोभमानामित्यर्थः। ययवा उमैव हैमवती दुहिता हैमवती नित्यमेव सर्वत्र ईश्वरेण सह सन्तंति इति।’

दुग्धपर (मं० वि०) दुग्धोक्त आचर्यते इत्यौ दुग्ध-पा-पर-
श्च । १ दुग्धपर, जो कठिनतासे आचरक किया जाय । २
दुग्धाचार मुख, थोड़ा कठोरधारवाला ।

दुग्धाचरक (मं० पु०) दुग्ध कचकाय, बुरा चालचलन ।

दुग्धाचरित (मं० स्त्री०) दुग्धोक्त आचरितं । जो बहुत
कठिनतासे किया गया हो ।

दुग्धाचार (मं० पु०) आचर्यते इति चर भावे भवः ।

दुग्धुट्टः पाषाणः । १ दुग्ध पाषाण, बुरा चालचलन ।

दुग्धाचर-रामायणं (मिमांसे) कि कलिकालमें ममो
मदुग्ध दुग्धार्थमें रचित होगे, ममदा कदाच काममें
नहीं रहेंगे और बहुत कोमेंगे । (ति०) दुग्धः पाषाणी-
यम् । २ दुग्धाचामुक्त, जिसका चालचलन सराब हो ।

दुग्धाचारी (हिं० वि०) दुग्ध आचरक करनेवाला, बुरे
चालचलनका ।

दुग्धाज (हिं० पु०) १ दुग्ध आसन, बुरा राज्य । २ वह
राज्य या शासन जो एक ही स्थान पर दो राजाओंका
हो । ३ वह स्थान जिस पर दो राजाओंका राज्य हो, दो
राजाओंकी चमकदारी ।

दुग्धाजो (हिं० वि०) दो राजाओंका, जिसमें दो राजा
हो ।

दुग्धाच्छर (मं० वि०) दुग्धोक्त आच्छरं कियते कर्त्तव्य-
पदे लभः सुम् । दुग्ध द्वारा चलाटा, दुग्धित,
घेड़ित ।

दुग्धात्मभाव (मं० स्त्री०) दुग्धोक्त चलाटोक्त आच्छर-
भूयते, उपपदे भावे लभः सुम् । जो बहुत कट करके
बुरी चमकवासे चमकें चमकवासे चला हो ।

दुग्धात्मता (मं० स्त्री०) दुग्धात्मो भावः दुग्धात्म-तत्त्व-
ताय । दुग्धात्मका कार्य या भाव ।

दुग्धात्म (मं० वि०) दुग्धः आत्मा चलाच्छरं दत्तः ।

दुग्धात्मकरक, मोचामय, थोड़ा । बहुतसे मनमें जो
मनुष्य कल्याण होय किया कर कल्याण करता है,
वही दुग्धा है और कल्याण दान निष्कल होता है ।

दुग्धात्म (मं० वि०) जो कटके धरक किया जाय ।

दुग्धादौ (हिं० पु०) दोन, बिगाड़ ।

दुग्धाधन (मं० पु०) दुग्धाधने एक सुवका नाम ।

(भाट आदि० १० अ०)

दुग्धाधर (मं० पु०) दुग्धाधने एक सुवका नाम ।

(भाट १११० अ०)

दुग्धाधर (मं० पु०) दुग्धाधन आचर्यते इति ।

धुव-धव । १ धुवधव, मज्जेद मरसी । २ विष्णु-
(वि०) १ धवधव, जिसका धमन सराब । कठिन हो
३ धवधव, धमिमानी ।

दुग्धाधरता (मं० स्त्री०) धवधवता, धमनता ।

दुग्धाधर (मं० स्त्री०) दुग्धाधर-ताय । धुट्ठिमिनीय ।

दुग्धाधर (मं० वि०) दुग्धोक्त आधर्यते दुग्ध-आधर-
कर्मणि लभः । १ दुग्ध द्वारा आधर्यते, जो कठि-
नतासे मद्धा या मने । २ विष्णुनीय । (पु०) ३ मद्धा-
देव, मित्र ।

दुग्धाधि (मं० पु०) दुग्धुट्टः पाषाणः । जो मज्जेद, जिसमें
दुग्ध हो ।

दुग्धाधो (मं० वि०) मद्धा धेदाकारी, दुग्ध आधर्यता ।

दुग्धाधन (मं० वि०) दुग्धोक्त आधनम् दुग्ध-आधन-विष्णु-
कर्मणि लभः । दुग्ध द्वारा आधनमीय, जो बहुत कठि-
नतासे मद्धा किया जाय ।

दुग्धाध (हिं० वि०) १ दूर होना, घटना । २ चमकित
होना, दिपना । ३ दूर करना, घटना । ४ त्यागना,
छोड़ना । ५ गुप्त रहना, दिपना ।

दुग्धाधो—चकमानिद्यानको सुवका नाम आधनमीय एक
जाति । इसका दूसरा नाम चवटमी है । दुग्धाधो
मद्धा धारण्य मायाने निश्चला है । इसका शौलिक चवट
'मुक्तामन्त्रमीय' है । चवटमी जाति चवट दारिने काममें
काटो कोटी मुक्ताधोमि कदा दूधा कुल्लभ घटनती है,
इसमें इन शौलिक प्रथम राजा और चवट मद्धा मद्धा
चवटमीने 'दुग्धाधन' चवटमी मुक्ताधोमि को मुक्ताधो
चवटमी पाई हो । मधोमि मधो चवटमी जाति दुग्धाधो
नामने कटनती पा रही है । यह जाति माहोत्तर,
पुनःप्राद, बारकप्राद, इन शौलिक, दुग्धाध, ईमाकप्राद,
धोर धमनमी पादि कई एक आधर्यमी निश्चला है । इस
का पादि नामस्थान कट्टाधर (माधोमि माधोमि) प्रदेमने
पा । मधोमि में मधो बहुत दिन दूध चमकत होय
चवटमी मद्धा कट्टाधर होय दूध मधोमान चवटमी
प्रदेमने चवट दूध मधो है । काकुलमे मधो कट्टाधर

प्रदेशों की भीष कहीं कहीं दो एक दुरानीका बास है। इन सब स्थानोंमें सभी जगह इनमेंसे कुछ तो जमींदार हैं और कुछ सैनिक विभागकी वृत्तिभोगी। कोई भी सामान्य प्रजाके रूपमें नहीं है।

प्रसिद्ध सम्राट शाह अबदली (जोहें दुरानी) ने अपने अधिपत्य के दौरान और अधिपत्यके प्रभावमें इस जातिको प्रवल पराक्रान्त, शक्तिशाली और दिग्विजयी बना दिया था। वह सब शाह अबदली देखो। उनकी समय में यह जाति उत्तरीकी चरम सीमा तक पहुँच गई थी। पूर्वमें भारत और सिन्धु नदीके किनारेसे लेकर पश्चिममें पारसकी मरुभूमि तक और उत्तरमें पामू वा अफगानिस्तान, दक्षिणमें अरबसागर तकके प्रदेशोंमें दुरानी शासन विरह्य था। यह सबके चार चार इस मरुभूमि पर चढ़ाई करनेसे यह जाति राजपदमें उत्तरी और महाभारतदिशाकी हो गई। जितने पञ्चपालक और दक्षिणदिशाके सदाय, वे मरुभूमिमें नियुक्त हुए। किन्तु अन्ध अशिक्षित अवस्था द्वारा दैव क्रमसे हठात् धन-सम्पत्ति और समताप्राप्त कर वे लोग अधिक दिन ठसे रह न सके। सम्राट शाहके मरनेके बाद ही उनके पुत्र विनासो, दुर्बलसेता और निरक्षर तेमूरके राजत्वकालमें उनके अनेक प्रदेश अधिकारसे निकल पड़े। तेमूरकी मृत्युके बाद उनके पुत्रोंने सारा राज्य आपसमें बाँट लिया, किन्तु गृहविवादके कारण शीघ्र ही वे सबके सब मर-हीन हो गये और बारकजाई वंशीय होम्स महमदने काबुलके सिंहासन पर अधिकार जमा लिया। उनके भाइयोंने कन्दाहार, खिलात आदि स्थानोंमें राज्य स्थापित किया। इसी प्रकार सहोजाई वंशसे अफगानिस्तानका राज्य-शासन बारकजाईके हाथ लगा। सहोजाई वंशीय महमद शाह दुरानीके वंशधर सुजा अंगरेजोंके आग्रित होकर सुविधानोंमें रहते थे।

भारत-सरकारने हमेशाके आक्रमणमें बचनेके लिये दोस्त महमदके साथ सन्धि स्थापनका प्रस्ताव किया, किन्तु दोस्त महमद हममें राजी न हुए। अतः सर्वसंगठने १८२८ ई०में सुजाको काबुलके सिंहासन पर बिठाया। दोस्त महमदने तुरत ही अंगरेजोंकी शरण की और अंगरेजोंने उन्हें भारतवर्ष की भेज दिया। किन्तु हमके

बाद ही काबुल युद्धके समय १८४२ ई०में सुजा दुर्दान्त अफगानोंसे मारे गये। उसी वर्ष काबुलकी सभी अंगरेजों सेना मारी गई। इसका बदला लेनेके लिये अंगरेज गवर्नरोंने पन्ध्र साहस्रके अफगान वहाँ सेना भेजा जब वह सेना अच्छी तरह बदला लेकर भारतको लौटा, तब यहसे दोस्त महमद अफगानिस्तानके अमीर बना कर भेज दिये गये। युद्ध-प्रिय अफगानोंने साहसो, धीरे दोस्त महमदकी आदर पूर्वक अभ्यर्चना की। तमोसे उनकी वंशधर राज्य करते आ रहे हैं।

दुराप (सं० त्रि०) दुःखेन आपद्यते दुर-आप-खन् । १ दुःप्राप्य, कठिन्तासे मिलनेवाला । (कौ०) भावे खल । २ दुःप्राप्ति ।

दुरापन (सं० त्रि०) दुर-आप ल्युट् । दुःप्राप्य, कठिन्तासे मिलनेवाला ।

दुरापादन (सं० त्रि०) दुःखेन आपद्यते दुर-आ-पाद-ल्युट् । दुःख द्वारा आपादनार्थ, जो कठिन्तासे आ सके ।

दुरापूर (सं० त्रि०) दुःखेन आपूर्यते आ-पूर-खन् । १ दुःपूर, जो बहुत कठिन्तासे पूरा किया जाय । २ दुःख द्वारा पूर्यमान, जो चारों ओर दुःखसे घिरा हो ।

दुरावाध (सं० त्रि०) १ जो दुःख वा पीड़ा देनेके योग्य नहीं हो । (पु०) २ शिव, महादेव ।

दुराभ्याय (सं० त्रि०) जो बहुत कठिन्तासे वशीभूत किया जाय ।

दुराध्य (सं० त्रि०) दुःप्राप्य, जो कठिन्तासे प्राप्त हो ।

दुरारक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन आरक्ष्यते दुर-रक्ष-यत् । दुःख द्वारा रक्षणीय, जो बहुत कठिन्तासे बचाया जा सके ।

दुराराध (सं० त्रि०) दुःखेन आराध्यते आ-राध-यत् । १ दुःख द्वारा आराधनीय, जिसको पूजना वा मस्तुष्ट करना कठिन हो । (पु०) २ दिव्य ।

दुरारिहन् (सं० पु०) दुष्टमयित्ति दुर-रिह-णिनि । दुरारी दुर्गमो अश्वरः तं हन्ति-हन्-क्तिप् । दिव्य ।

दुरारुह (सं० पु०) दुःखेन आरुह्यतेऽथ दुर-आ-रुह-यत् । १ विष्वक्, विलोक-पेड़ । २ नारिकेल-वृक्ष, नारियलका पेड़ । ३ दुरारोहनीय जिस पर चढ़ना कठिन हो ।

दुरारुहा (सं० स्त्री०) १ खजूरो वृक्ष, खजूरका पेड़ । २ ताजवृक्ष, ताड़का पेड़ । ३ अश्व, घोड़ा ।

जगत् उत्पन्न होता है। मैं शुन्य और अशून्य हूँ, मैं भानन्द और अभानन्द हूँ, मैं विज्ञान और अविज्ञान हूँ, मैं ब्रह्मा और अब्रह्मा हूँ, आर्यवृत्तियों यही निर्दिष्ट है। मैं ही पद्मभूत और अपद्मभूत हूँ, मैं ही अखिल जगत् हूँ, मैं ही वेद और अवेद हूँ, मैं ही रुद्रगण और वायुगण हूँ, मैं आदित्य और मित्रदेव हूँ, मैं इन्द्र और अग्नि हूँ, मैं ही दोनों अश्विनो कुमार हूँ, मैं ही सोम, त्वष्टा, पूषा और भग हूँ, मैं ही विष्णु, ब्रह्मा और प्रजापति-को धारण करती हूँ, जो यज्ञ करते हैं, उन्हें यजमानोंको मैं प्रभुर धन दान करती हूँ, मैं सप्त राज्यमें बास करती हूँ, जगत्के पिताको मैं ही पक्षे उत्पन्न करती हूँ, मनुज-जलने मन्त्र मेरा जन्म है, सुप्ति जो पञ्चानता है वह देवीपदको प्राप्त होता है। बाद देवताओंने कहा, 'ये ही आत्मशक्ति, विद्यविमोहिनी, पाषाण्ड्य और धनुर्बाण धारिणी हैं, ये ही श्रीमहाविद्या हैं। जो इन्हें मानते या पञ्चानते हैं वे शोकसे निश्चर पाते हैं।

ब्रह्मचोपनिषद्में ऐसा परिचय पाया जाता है—

देवी ही सबके भागि एक मात्र थी। उन्होंने ही ब्रह्माण्डकी सृष्टि की और वे कामकला और गृह्यारकला नामसे विख्यात हुई हैं। उन्होंने ब्रह्मा, विष्णु, रुद्रगण, गन्धर्वगण, अचरागण, किन्नरगण और सब स्थानोंको वादिवशादिगण जन्म ग्रहण करते हैं। उन्होंने ही 'सर्व भोग्य उत्पादन किये हैं, वास्तविक शक्तिये ही सब उत्पन्न हुए हैं। अण्डज, खेदज, लज्जित और जगज्जुज तथा आसुर, कौम और मनुष्यादिने इन्होंने ही जन्म प्राप्त किये हैं। यही देवी पराशक्ति, शाश्वती, विद्या, कादि-विद्या, ज्ञादिविद्या, सादिविद्या, रहस्य और ओहारादि वाक्प्रतिष्ठा हैं। वे ही दोनों पुर और दोनों शरीरमें व्यापित हो कर देश काम और वस्तुके आसक्तिके लिये भीतर और बाहरमें प्रकाशित हैं। वे ही 'महात्रिपुर-सुन्दरी, प्रत्यक्षैतन्य हैं, वे ही आत्मा हैं, वे ही अन्य पक्षमें असत्य बनाका हैं। यही देवी ब्रह्म सन्धित्, भावा-भावकासविनिर्मुक्त, चिद्बिद्बितीय, ब्रह्मसन्धित्, सच्चिदानन्दसहरो, महात्रिपुरसुन्दरी, भीतर और बाहरमें अनुपर्वय कर स्वयम् एकरूप प्रकाशमान हैं। जो कुछ सत् है, जो कुछ चित् विद्यमान है, जिसका भोगन्द ही

प्रिय है, वह यही सर्वकारा महात्रिपुरसुन्दरी हैं। सकल विश्वके सब देवगण सर्वभाधारण महात्रिपुरसुन्दरी हैं। ये ही सत्य ललिता नामसे प्रसिद्ध हैं। यथायत्न ये ही अद्वितीय अखण्ड पर ब्रह्म हैं। इन्होंने पञ्चरूप परि-त्याग करके अखरूप धारण किया था। वही महादादि सत् एक परतत्त्व है। मैं ही प्रज्ञान ब्रह्म हूँ, मैं ही ब्रह्म और तत्त्वमसि हूँ, मैं ही आत्मा वा परब्रह्म हूँ, मैं ब्रह्म ही हूँ, जो मैं हूँ वही मैं हूँ, जो यह है वही मैं हूँ। इस तरह जो कहा जाय वा सोचा जाय वे सभी वे हो हैं, वे ही पोटुशी, ओविद्या, पञ्चदगाचरी, योगशास्त्रिपुरसुन्दरी, बालास्थिका, वगला, मातङ्गी, स्वयंवरकल्याणो, भुवनेश्वरी, वासुष्ठा, चण्डा, वाराही, तिरस्कारिणी, राजमातङ्गी, शकश्यामला, लघुश्यामला, अश्वारूढा, प्रत्यङ्गिरा, धूमा-वती, सावित्री, गायत्री, भरखती और ब्रह्मानन्दक्षणा हैं।

देवीका वैदिक परिचय ऊपरमें लिखिए हुआ। महाभारत और हरिवंशमें भी इस तरह वर्णित है। यमो वीराधिक विवरण वर्णन किया जाता है।

महाभायाका आभिर्भाव।—कालिकापुराणके मतसे ज्योतिर्मय परब्रह्मके अंश स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर आभिर्भूत हुए।

ब्रह्मा और विष्णुने सृष्टि स्रष्टिके सर्वस्वरूपके लिए अपनी अपनी शक्ति ग्रहण की, किन्तु महेश्वरने वैसा नहीं किया। वे योगमें लवलोन ही रहे। ह्रस्वमगर-के प्रभावसे ब्रह्मा अपनी सृष्टि स्रष्ट्याके प्रति अश्रुत हुए इस कार्यके लिए महादेवने उनकी खूब हँसो चढ़ाई। 'महादेव भी किसी तरह शक्तिके साथ सम्मिलित होवे' इसके लिए ब्रह्मा भी यथेष्ट चेष्टा करने लगे। इस महादेवके पाणिग्रहण किये बिना सृष्टिकी रक्षा नहीं हो सकती है चहो, किन्तु महादेवकी जीवनसंगिनी होनेकी कोई उपयुक्त रमणो न थी। अतः सब कोई बहुत चिन्तित हुए।

अन्तमें बहुत सोच विचारके बाद ब्रह्माने दक्ष और मरुचि पाण्डिसे यह बात कही, 'सन्ध्या और सावित्रीको पाराश्र्व देवी विष्णु मायाके सिवा ऐसी कोई दूसरी स्त्री नहीं है जो शिवको मोहित कर सके। मैं उनको सुति करता हूँ, वे ही शिवकी मोहित

दुर्गा (मं० पु० स्त्री०) दुर्गेन चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । १ मरु, निरुह । निरुहो आनिष्ठात् ट्प्रत्यये ।
 (ति०) २ शोभनी । ३ शान्तमिच्छ, वैमरुका पेटु । ४ शान्त
 हस, जादुका पेटु । ५ शत्रुघ्नो हस, शत्रुघ्नका पेटु ।
 (ति०) ६ दुर्गारोच्ये, तिम पर चटुना कठिन हो ।
 (पु०) ७ दुर्ग दारा चारोहय, यह तिम पर चटुना
 कठिन हो ।

दुर्गा (मं० स्त्री०) १ शोभनीहय । २ मरु, निर-
 ह । ३ शत्रुघ्नो हस, शत्रुघ्नका पेटु ।

दुर्गम (मं० ति०) दुर्गेन चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । शोभन कठिनमने टोपा पेटु ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गेन चान्नमने चान्नम-यम् ।
 दुर्गम, तिमका तिमका कठिन हो ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्गम-टाप् । चान्नमन्यात कण्ठक
 मुक्त लक्ष्म चय विनीय, जयमा, धमाया, किंमुपा । १ म-
 का मरुत योय—दुर्गमभा, धमयाम, साम्भुना,
 कण्ठरा, दुर्गमा, धम्यी, धम्यदायक, प्रयोधनी, शुष्म-
 दन्त, विह्वला, दुर्गमयका, दुर्गमा दुर्गमया, याग, यवाम
 दुर्गम, कुलमक, रोदनो, चन्मसा, भुजुलगा, गामागी,
 कपाया, धनुर्धाम, दुर्गम, कण्ठरा, विह्वलक चोर य-
 मुयो ६ । ७ मका मुच—मारक, कवर, कटि, धंका,
 पिता, तिमरु चोर चेटनानामक ६ । भावप्रकाशके
 मने ७ मका मुच—कट, तिङ्ग, कण, चार, चर, मयुर,
 मात, शुष्म चोर मने ७ मका ६ । २ योय, कपाय ।

दुर्गम (मं० ति०) दुर-पा नम-यम् । दुर्गम,
 तिमका तिमका कठिन हो ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गटा चान्नमः । १ कट, यवाम,
 चुरा काय शीत, शमी । (ति०) दुर्गटा चान्नमो यम् ।

२ कट मायो, दुरा यवाम शोभनीयाम ।

दुर्गम (मं० ति०) १ चटुकाय, चटु मकट । (पु०)
 २ चटुकाय, चमक ।

दुर्गम (मं० पु०) १ चटुकाय का भवके कारण चिह्निमे
 यात दुर्ग रणनेका भाव, चिह्नाय । २ कट, हल ।

दुर्गम (मं० ति०) शोभन कठिनमने दुर्गमा । ता
 यम् ।

दुर्गम (मं० ति०) १ चटुकाय का भवके कारण चिह्निमे
 यात दुर्ग रणनेका भाव, चिह्नाय । २ कट, हल ।

दुर्गम (मं० पु०) १ चटुकाय का भवके कारण चिह्निमे
 यात दुर्ग रणनेका भाव, चिह्नाय । २ कट, हल ।

दुर्गम (मं० ति०) शोभन कठिनमने दुर्गमा । ता
 यम् ।

दुर्गम (मं० ति०) १ चटुकाय का भवके कारण चिह्निमे
 यात दुर्ग रणनेका भाव, चिह्नाय । २ कट, हल ।

दुर्गम (मं० ति०) शोभन कठिनमने दुर्गमा । ता
 यम् ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) चान्नमनो भावे चटु दुर्ग चान्न
 मतिः । दुर्गमति, चान्न विचार ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गटा चान्न यम् । दुर्गमति,
 तिमि चटुको कटोच न हो ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गटा चान्नमः । १ दुर्ग चान्न, चुरे
 मोयन । (ति०) २ दुर्गमयच, तिमको मोयन चुरे
 हो, चोटा ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्गटा चान्न । दुर्गमोय, चुरे चो
 चान्न, भूको कटोच ।

दुर्गम (मं० ति०) चटुय, तिमि कोटि शीत न मने ।

दुर्गम (मं० ति०) दुर्गेन चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । १ दुर्गम, तिमका तिमका कठिन हो ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्ग-पा-न-ह-यम् । १ यवाम चर
 रणे योय न हो । २ यवाम चान्नम ।

दुर्गम (मं० ति०) दुर्गेन चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । दुर्ग दारा चारोहय, तिमके तिमके चटु
 कट हो ।

दुर्गम (मं० ति०) दुर्गम, चान्न ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्ग-चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । १ यवाम । २ यवामक, चोटा यवाम । (ति०)
 ३ यवामक, यवाम ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गम चान्न । यवामक, यवाम
 कटमा ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्ग-चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । १ यवाम । २ यवामक, चोटा यवाम । (ति०)
 ३ यवामक, यवाम ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गम चान्न । यवामक, यवाम
 कटमा ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्ग-चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । १ यवाम । २ यवामक, चोटा यवाम । (ति०)
 ३ यवामक, यवाम ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गम चान्न । यवामक, यवाम
 कटमा ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्ग-चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । १ यवाम । २ यवामक, चोटा यवाम । (ति०)
 ३ यवामक, यवाम ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गम चान्न । यवामक, यवाम
 कटमा ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्ग-चान्नमने दुर-पा-न-ह-
 यम् । १ यवाम । २ यवामक, चोटा यवाम । (ति०)
 ३ यवामक, यवाम ।

दुर्गम (मं० पु०) दुर्गम चान्न । यवामक, यवाम
 कटमा ।

तं सिरियं आरख्यकके भाष्यमें गायत्र्याचार्यने भी इस प्रकार लिखा है, "हिमवत्पर्वता गौरा ब्रह्मविद्याभिमानिरूपत्वाद् गौरीवाचक उमाशब्दे ब्रह्मविद्यामुपलक्षयति । अतएव तन्मयकारोपनिषदि ब्रह्मविद्यामूर्ति-प्रस्तावे ब्रह्मविद्यामूर्तिः पश्यते 'वष्टुगोभमानासुमां हैमवतीं तां होवाच' इति तद्विषयः तया उमया सह वक्तुं मानत्वात् सोमः ।"

हिमवान्की कन्या गौरीका ब्रह्मविद्याभिमानो रूप रहनेसे गौरीवाचक उमाशब्द द्वारा ब्रह्मविद्या ही उपलक्ष होता है । इसी कारण तत्त्वकार उपनिषद्में ब्रह्मविद्याकी मूर्ति वर्णित हुई है । 'उस वष्टु गोभमाना उमा हैमवतीने उन्हें कहा' इस तरहसे उमाके साथ वक्तुं मान हुँतु सोम नाम दिया है ।

पुनः उक्त आरख्यकके ३८ अनुवाकके सायण भाष्यमें इस प्रकार लिखा है—

"उमा ब्रह्मविद्या तथा सह वर्तमान सोम परमात्मन्"

इ परमात्मन् सोम ! उमा ब्रह्मविद्या है और तुम्हारे साथ वक्तुं मान हैं । उस आरख्यकके १८ अनुवाकमें 'भस्त्रिकापनये' शब्द है, यहाँ भी भाष्यमें 'भस्त्रिका जगन्माता पार्वती तस्या भवति' ऐसा व्याख्या है ।

कैवल्योपनिषद्में इस तरह वर्णित है—

"उमा सहाय परमेश्वरं प्रभुं भिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तं ।"

तैत्तिरीय आरख्यकके नवम अनुवाकमें दुर्गाके विषयमें स्पष्ट आभास पाया जाता है ।

"कात्यायनाय विष्णवे कन्याकुमारिः धीमदि ततो दुर्गि प्रचोदयात् ।"

गायत्र्याचार्यके मतसे यही त्रैलोक्य दुर्गा गायत्री है । उन्होंने लिखा है, 'पसाददुर्गा गायत्री । हैम प्रख्यामिन्-वष्टुगोभमोत्तिमत्वागमप्रसिद्ध मूर्तिधरा दुर्गां प्रार्थयति कात्यायनाय इति । कृतिं वक्ष्ये इति काव्यो वद ।...स एव यानमभिधानं यस्या सा कात्यायनी भयवा कतस्य शरपविशेषस्य अपत्यं काव्यः ।...कुस्मितमनिष्टं मारयति इति कुमारी कन्या दोष्यमाना चासी कुमारी च कन्या-कुमारी । दुर्गिः दुर्गा । निद्रादि व्यत्ययः सर्वत्र छान्दसा द्रष्टव्यः ।"

वेदों दुर्गा गायत्री कहता है । सुवर्ण सहाय मन्त्रक-में चर्दचन्द्रभूषिता इत्यादि 'आगमप्रसिद्ध' मूर्तिधारिणी

दुर्गाकी प्रार्थना करता है । कृति पाच्छादन करते हैं, इसीसे इसका दूसरा नाम काव्य है । वे जिसके अधिष्ठान हैं, वे ही कात्यायनी हैं । भयवा कत नामक शरपविशेषका अपत्य होनेके कारण काव्य नाम हुआ है । कुस्मित अनिष्ट मारते हैं अर्थात् विनाश करते हैं, इसीसे उनका नाम कुमारी है; कन्या अर्थात् दोष्यमाना दोनोके मिल जानेसे उनका नाम कन्याकुमारी हुआ है । दुर्गि जो दुर्गा है, ऐसा निद्रादि व्यत्यय वेदमें भव जगत् देखा जाता है ।

नारायणोपनिषद्में दुर्गा गायत्री इस तरह है—

"कात्यायनावै विष्णवे कन्याकुमारिः धीमदि,

ततो दुर्गा प्रचोदयात् ॥"

कृत्वेद-परिगिटके रात्रि-परिगिटमें दुर्गाके विषयमें इस प्रकार लिखा है—

"स्तोत्र्यामि प्रयतो देवीं शरण्या वद, ह्रवमियम् ।

सहस्रमन्त्रितां दुर्गां जातयेदसि हननाम सोमम् ॥५

शान्त्यर्थं द्विजातिनाम्निभिः सोमप्राप्तिः ।

कृत्वेदेत्यम् वस्तुतयाऽऽरति यवी निदधति देवः ॥६

ये त्वाम् देवि प्रपश्यन्ते ब्राह्मणाः हृष्यवाहीनम् ।

अविषा वष्टुविषाः या ता नः परीदति दुर्गाणि विष्वा ॥७

अभिवर्णां दुर्गां सौम्यां कीर्तिं विष्वाति वे द्विजाः ।

ताम् सारयति दुर्गाणि नाथैव सिंघुं दुरितास्यभिः ॥८

दुर्गेषु विषये धीरे संग्रामे रिपुर्लङ्घते ।

अभिवोरनिषावेतु दुष्टप्रहनिवारणे ॥

दुर्गां विषयेषु त्वां यं प्राप्तेषु वनेषु च ।

सोदयित्वा प्रपश्ये तेषां मे अभयं कुरु ॥

केशिणी सर्वभूतानां वंशकीति च नाम च ।

स मां प्रवा-निद्राः देवीं सर्वतः परिरक्षतु ॥ ओम् नमः ।

तामप्रिवर्णां तपसा उर्वरतीं वीरोचनीं वनेषु युधाम् ।

दुर्गां देवीं करुणामहं प्रपश्य सुतरसि तरुणे नमः ।

सुतरसि तरुणे नमः ॥

दुर्गां दुर्गेषु स्थानेषु नो देविमिष्ये ।

यः इमं दुर्गास्तवं शुभ्य रात्रौ रात्रौ सदापठेत् ॥

देव्युपनिषद्में महादेवोक्ता ऐसा परिचय है—

भव देवताधोने उनके चारों ओर बैठ कर उनसे पूजा या, 'आप क्या महादेवि है ?' इस पर उन्होंने जवाब दिया, 'मैं ब्रह्मन्त्रधारिणी प्रकृतिगुह्यात्मक जगत् है', मुझमें ५१

नरकमें जाते हैं। २ पाप, पातक। सगनाकी सृष्टिनि पातकोंको दुरित कहा है।

दुरिष्टकृत (सं० पु०) दुरिष्टं अभिचारयज्ञं करोतोति कृत्स्नः, युगागमः। अभिचार-यज्ञकर्त्ता, वह जो अभिचार यज्ञ करता हो।

दुरिष्ट (सं० स्त्री०) दुष्टा इष्टिः। अग्रास्त्रीय यज्ञ, अभिचारार्थ यज्ञ।

दुरिष्ट (सं० त्रि०) सयमनयोरेषां वा पतियमेन दुःमिन्दितः। पतिमन्द, खोटा, खराब।

दुरोध (सं० पु०) दुष्टः ईशः प्रभुः। निन्दित प्रभु।

दुरीपया (सं० स्त्री०) दुर्दृष्टा ईपया इच्छामि शंसनं। शाय, बहदुष्ट। २ अहित कामना, बुरी नीयत।

दुष्ट (सं० पु०) मयं तमेष्ट, एक पहाड़का नाम।

(भारत भट्ट १६५ अ०)

दुष्टता (सं० स्त्री०) दुष्टं तत्। दुष्टवचन, खराब वचन।

दुष्टता (सं० स्त्री०) दुष्टा तत्तिः। कटु, वाक्य, कटु, रं वात।

दुष्टता (सं० वि०) १ जिसके दोनों ओर सुंदर हो। २ जिसके दोनों ओर कोई विद्वत् हो। ३ जिसके दोनों ओर दो रंग हों।

दुष्टचार (सं० त्रि०) दुःखेन सन्ध्यायतिऽसौ दुर-वत्-चर खलु यं घञ्। अनुध्याय, अशील, सज्जालनक, फूटड़।

दुष्टचार्य (सं० त्रि०) दुर-वत्-चर-स्तत्। जो सहजमें अध्यापन न किया जा सके।

दुष्टच्छेद (सं० त्रि०) दुःखेन चच्छिद्यतेऽसौ दुर-वत्-च्छिद्य कर्मणि खलु। १ दुर्वार, जो कठिनतासे उखाड़ा जा सके।

दुष्टच्छेद (सं० त्रि०) दुर-वत्-च्छिद्य-स्तत्। दुष्टछेद, जो सहजमें उखाड़ा न सके।

दुष्टत्तर (सं० त्रि०) दुःखेन उत्तोयतेऽसौ दुर-वत्-त्तर कर्मणि खलु। १ उत्तर, जिसे पार पाना कठिन हो। २ अनुत्तर, जिसका उत्तर देना कठिन हो। दुष्टं उत्तरं (स्त्री०) ३ दुष्ट उत्तर, खराब जवाब।

दुष्टतोष्य (सं० त्रि०) दुःखी, जो बहुत कठिनतासे उठाया जा सके।

दुष्टरुष्ट (सं० त्रि०) दुःख, जो सहने योग्य न हो।

दुष्टदय (सं० त्रि०) १ जो अच्छी तरह दीख न पड़े।

२ दुर्निरोध्य, जिसे देखते न बने, भयंकर, खोपनाक।

दुष्टदाहर (सं० त्रि०) दुःखेन उदाह्रियते दुर-पा-ह कर्मणि खलु। जिसका उदाहरण सहजमें न दिया जा सके।

दुष्टदह (सं० त्रि०) दुःख, जो सहने योग्य न हो।

दुष्टधरा (सं० स्त्री०) योगमंद, जन्मकुण्डलोका एक योग। इसमें धनका और सुनका दोनों योगोंका मिल जाता है।

जन्मकालमें यदि सूर्यको छोड़ कोई दूसरा ग्रह चन्द्रमासे बारहवें घरमें हो, तो धनका योग और यदि सूर्यको छोड़ चन्द्रमासे दूधरे घरमें हो, तो सुनका योग होता है। यदि ये दोनों योग हों अर्थात् सूर्यको छोड़ कोई दूसरा ग्रह लग्नसे बारहवें घरमें रह कर चन्द्रमासे दूधरे घरमें अवस्थान करे, तो दुष्टधरायोग होता है। इस दुष्टधरायोगमें जिसका जन्म होता है वह बड़ा भारी बक्ता, धनी, और और विख्यात, स्वाधीन, सोम्य मूर्ति, उत्तम सोभाग्यवाली, सुखोपभोगी, दाता, कुटुम्ब प्रतिपालक, सुबुद्धि और उत्तम ऐश्वर्यसम्पन्न पुरुष होता है।

दुष्टपक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन उक्तम्यतेऽसौ दुर-उप-पक्ष खलु। दुरासद, दुर्गम, जहां जाना कठिन हो।

दुष्टपचार (सं० त्रि०) दुर-उप-चर-घञ्। अनुध्याय, खराब व्यवहार।

दुष्टपयोग (सं० पु०) अनुपयुक्त व्यवहार, दुरा उपयोग।

दुष्टपक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन उपपत्त्यतेऽसौ दुर-उप-पक्ष खलु। दुर्निरोध, जिसे देखते न बने।

दुष्टपक्षी (सं० त्रि०) दुःखेन उपसर्प यत् उप-सर्प-णिनि। अतर्कित भावसे आगत, जो भकध्यात् पा पड़ेंवा हो।

दुष्टपक्षान (सं० त्रि०) दुष्प्राप्य, जिसका मिलना कठिन हो।

दुष्टपाय (सं० पु०) दुष्टः उपायः। दुष्टोपाय, खराब विचार।

दुष्टफ (पु०) नीलकण्ठताम्रिकके मतानुसार फलित ज्योतिषका एक योग।

जगत् उत्पत्ति होता है। मैं शून्य और अशून्य हूँ। मैं धानन्द और अनानन्द हूँ, मैं विज्ञान और अविज्ञान हूँ, मैं ब्रह्मा और अब्रह्मा हूँ, आद्यवैश्वतित्तं यक्षी निर्दिष्ट है। मैं ही पञ्चभूत और अपञ्चभूत हूँ, मैं ही अखिल जगत् हूँ, मैं ही वेद और अवेद हूँ, मैं ही रुद्रगण और वायुगण हूँ, मैं आदित्य और विश्वदेव हूँ, मैं इन्द्र और अग्नि हूँ, मैं ही दोनों अश्विनो कुमार हूँ, मैं ही सोम-त्वष्टा, पूषा और भग हूँ, मैं ही विष्णु, ब्रह्मा और प्रजापति-को धारण करती हूँ, जो यज्ञ करते हैं, उन्हीं यजमानोंको मैं प्रचुर धन दान करती हूँ, मैं सब राज्योंमें शास करती हूँ, जगत्के पिताको मैं ही पहले उत्पन्न करती हूँ, समुद्र-जलके मध्य मेरा लम्ब है, मुझे जो पहचानता है वह देवौपदको प्राप्त होता है। बाद देवताघोने कहा, 'ये ही आत्मशक्ति, विश्वविमोहिनी, पाशाङ्गुश और धनुर्बाण धारिणी हैं, ये ही श्रीमहाविद्या हैं। जो इन्हे मानते या पहचानते हैं वे शोकसे निस्तार पाते हैं।

ब्रह्मोपनिषद्में ऐसा परिचय पाया जाता है—

देवी ही भवते धामि एक मात्र यो। उन्हेनी ही ब्रह्माण्डकी सृष्टि की और वे कामकला और गृह्यारकला नामसे विख्यात हुई हैं। उन्हींसे ब्रह्मा, विष्णु, रुद्रगण, गन्धर्वगण, अम्बरगण, किन्नरगण और सब स्वर्गोंकी वादित्वादिगण जन्म ग्रहण करते हैं। उन्हेनी ही सब भोग्य उत्पादन किये हैं, वास्तविक शक्तिसे ही सब उत्पन्न हुए हैं। अणुज, सूक्ष्मज, अद्विज और जगद्युज तथा स्वावर, जंगम और अनुप्यादिन इन्हींसे ही जन्म प्राप्त किये हैं। यही देवी पराशक्ति, शाश्वती, विद्या, कादि-विद्या, हादिविद्या, सादिविद्या, रहस्य और-बोद्धारादि वाक्प्रतिष्ठा हैं। ये ही तोनों पुर और तोनों शरीरमें व्यापित हो कर देश काल और वस्तुके आसन्नके लिये भीतर और बाहरमें प्रकाशित हैं। ये ही महात्रिपुर-सुन्दरी, प्रत्यक्षैतन्य हैं, ये ही पाप्मा हैं, ये ही अन्य पक्षमें असत्य अनात्मा हैं। यही देवी ब्रह्म-सम्बन्ध, भावा-भावकासविनिर्मुक्त, विहिद्वितीय, ब्रह्मसम्बन्ध, सच्चिदानन्दस्वर, महात्रिपुरसुन्दरी, भीतर और बाहरमें अनुभवेश कर स्वयम्-एकस्वरूप प्रकाशमान हैं। जो कुछ सत् है, जो कुछ चित् विद्यमान है, जिसका धानन्द ही

प्रिय है, वह यही सर्वाकारा महात्रिपुरसुन्दरी हैं। मकल विश्वके सब देवगण सर्वसाधारण महात्रिपुरसुन्दरी हैं। ये ही सत्य ललिता नामसे प्रसिद्ध हैं। यथायत्न ये ही अद्वितीय अखण्ड परब्रह्म हैं। इन्हीं पञ्चरूप परि-त्याग करके अखरूप धारण किया था। वही महादादि मत् एक परतत्त्व है। मैं ही प्रज्ञान ब्रह्म हूँ, मैं ही ब्रह्म और तत्त्वमसि हूँ, मैं ही आत्मा वा परब्रह्म हूँ, मैं ब्रह्म ही हूँ, जो मैं हूँ वही मैं हूँ, जो यह है वही मैं हूँ। इन तरह जो कहा जाय वा मोचा जाय वे सभी वे ही हैं, वे ही योगेशी, ओविद्या, पञ्चदशाक्षरी, श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी, वालाखिका, वगला, मातङ्गी, स्वयंवरकल्याणो, भुवनेश्वरी, वामुण्डा, चण्डा, वाराही, तिरस्कारिणी, राजमानङ्गो, शक्यामला, लघुश्यामला, अश्वारूढा, प्रत्यङ्गिरा, धूम्रा-वती, आवित्री, गायत्री, सरस्वती और ब्रह्मानन्दकला हैं।

देवोका वैदिक परिचय जपरमें लिखित हुआ। महाभारत और हरिवंशमें भी इस तरह वर्णित है। सभी पौराणिक विवरण यहाँ न किया जाता है।

महामायाका आविर्भाव।—कालिकापुराणके मतसे ज्योतिर्मय परब्रह्मके अंश स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु और महा-श्वर आविर्भूत हुए।

ब्रह्मा और विष्णुने सृष्टि स्रष्टिके संस्करणके लिए अपनी अपनी शक्ति ग्रहण की, किन्तु महेश्वरने वैसा नहीं किया। वे योगमें लवलीन हो रहे। कुसुमगर-के प्रभावसे ब्रह्मा अपनी सृष्टि सन्ध्याके प्रति अतुरल हुए इस कार्यके लिए महादेवने उनकी खूब हंसी उड़ाई। 'महादेव भी किसी तरह शक्तिके भाव सम्मिलित होवे' इसके लिए ब्रह्मा भी यथेष्ट चेष्टा करने लगे। इधर महा-देवके पाणिग्रहण किये बिना सृष्टिकी रक्षा नहीं हो सकती है उल्टे, किन्तु महादेवकी जीवनशक्तिने हीने-की कोई उपयुक्त रमणो न थी। अतः सब कोई बहुत चिन्तित हुए।

अन्तमें बहुत सोच विचारके बाद ब्रह्माने दक्ष और मरुचि आदिसे यह बात कही, 'सन्ध्या और सावित्रीको आराध्य देवी विष्णु मायाके सिवा ऐसी कोई दूसरी स्त्री नहीं है जो शिवको मोहित कर सके। मैं उनको सुति करता हूँ। ये ही भवश्य शिवकी मोहित

दुग्ध (वि० पु०) घनमे पोर अन्ने दादिका एक प्रकारका
द्रव्य है ।

दुग्ध (वा० वि०) १ जो पच्यो पच्यमान हो, सोढः
२ दिला दापका प्रियमे नियम हो। ३ उदित, सुभा-
मित । ४ मन्त्रार्थ, माधविक ।

दुग्धो (वा० स्तो०) भोगोपम, सुधार ।

दुग्ध (गं० वि०) दुग्धिल घनमे दुग्ध दशकमेति घनम् ।

दुग्धिल, जो दिलासि नदो न चा मरे, मृत्, उदित ।

दुग्ध (वि० पु०) शिष्ट रसो ।

दुग्धा (गं० वि०) दुग्ध बाहु० अ० दुग्ध दाग मय, जडा
जाला कलित हो ।

दुग्ध (गं० वि०) दुग्ध पीको ममपापी पयः। दुग्ध,
जडा रहने सोय न हो ।

दुग्ध (गं० पु०) मृद, घर ।

दुग्धः (गं० पु०) दुग्ध चा ममपादुग्धमय । १
घृतकार, गुणरो । २ पय, दाग । ३ पय, दाग ।
(स्तो०) ४ घृत, गुण ।

दुग्ध (गं० पु०) भाग्यमेव हय ।

दुग्धा (वि० पु०) दश लक्षो जो दशानिडे कपामे
रहनी है, मीठा ।

दुग् (गं० पु० स्तो०) दुग्धिल मयमेति दुग्ध गम बाहु० अ० ।
मनिक राजापीका बाधवपाय होर, मृद, जिभा ।
जाजिकापुत्रासिमे दुग्धका विषय दम प्रकार लिखा है—
राजा ममारमे मदीय हो प्रकार, पालिका पोर मोरन
दाग भुजित दुग्ध प्रसार । नगर घर घटि हिमो नरक
गत, पदार्थ कर दे, तो दुग्धमे पादय ले कर समझा
मममा करे । दुग्ध राजापीका प्रथम मदाय है ।
दुग्धका एक धनुर्दारा दुग्धे लासक भी मनुष्यमे पोर
दुग्धे एक भी मनुष्य, मादरके जगत् मनुष्यमे सुद नर
मकन है । इसी कारण सभी जगत् दुग्धको प्रमसा की
गई है । जलदुग्ध, भूमिदुग्ध, उददुग्ध, वनदुग्ध, मरुदुग्ध
पोर पर्वतदुग्ध इन छः प्रकारके दुग्धमे दियेके पदुसार
करे दुग्ध बना मकन है, मने नरकमेदमे मरुतदुग्ध,
मरुतमे मरुदुग्ध इत्यादि । दुग्ध धनुर्दारे जोका
विशेष या मीक बनाता पादिके, इसका विशा
पोर दुग्धे प्रकारका न बनने । मरुतदुग्ध

दुग्ध बनाता विष्णुसुत मना है, जो कि दम
प्रकारका दुग्ध बुलनामक मना गया है । राधु-
दास बाधवका महादुग्ध मरुतदुग्ध पादिकी या । मने
मनाकर मीथितदुग्धमे ममीमग दुग्ध ता पा मनी, मनेम
मममा प कृति पदु-मो दा । दुग्धमे मने मोरन पोर
महाविजित बाधम विष्णु दुग्ध । इत्यादुग्धमे पाद राजापीका
पयोजा नगर मनुष्यमे जोका मिकीय गा, इसीमे यह
मने दा मनुष्य ददा । राजा दुग्ध भूमिमे घटि दुग्धेदुग्धको
पोर दुग्धेदुग्धमे दिग्दुग्धको पादार्थविष्णु करे, तो
विषय दाग कर मकन है । राजा मय, हरि पादिकी
कामनामे दुग्धका निर्माण करे । (वाग्विष्णु २४ अ०)

राजापी उचित है, कि दुग्ध ममीमनि प्रयुक्त कर
ममे पाय बाध करे तथा ममी पालिका घेत पोर
मृद, पय मादय तथा पमेक कर्मचारिको भी रहनेका
म्यान है । मने म्यानमे दुग्ध बनाता ममार है, जडा
गत, पदार्थ पान मने, जडा मना प्रकारके कलवुपादि
मुमीमित हो पोर जडा मान तथा मरुत पादिका दूध
मो उददुग्ध न हो । जडा मक हो गा । मरुतमामीमे
देगमे ही दगका बनाता पय है । धनुर्दुग्ध, ममीदुग्ध,
मरुदुग्ध, मरुदुग्ध, पय, दुग्ध पोर मिकिदुग्ध मने कः
प्रकारके दुग्ध है । दुग्धमे किमा एक दुग्धका निर्माण
कर समे राजा बाध करे । दल कः प्रकारके दुग्धमे
मनुदुग्ध ममीमन, पमीय पोर मनुदुग्ध है । जडा
भूमिके मने दुग्ध, लाकट, पदुपमापममयक बाग
इत्यादि तथा दिग्दुग्धमे विभिन्न पदु लायन करे ।

(अथिपु०)

किर मरुतपुत्रासिमे लिखा है, कि राजा जल मनुष्य
धन मयति, दली, पय, ममीम जलमयक हो काय,
तो दुग्ध बनाये पोर समे पाय बाध करे । दुग्ध निर्माण
के लिये दिला म्यान प्रमाण है—जडा पमेक मोरन पोर
मृद, पय मादय पोर मरुतदुग्ध कर्मकार मकन हो,
जडा मनुष्य मनुष्य बाध करे हो, जडा मरुत कर्मकार मने
मिकि म हो पोर राजा मनुष्यको दा, जडा भूमि
पदु ममारक हो, इत्यादि कलक सोमये मृद मने हो
पोर पदुपमाका पदुपय दा, जडा मय, पादि इत्यादि
मनेम कल मकन हो पोर जडा मीथय, बाध पोर

करेंगी। हे दत्त ! तू भी उस जगन्मयीको पूजा करे जिसमें वे तुम्हारे कन्या धन कर शिवकी स्त्री हो।" ब्रह्माकी आज्ञासे दत्त प्रजापतिने तीन हजार दिव्य वर्ष तक कठोर तपस्या की थी। महाभाया पहले ब्रह्मा, पोछे ध्यानस्थ दत्तके सामने उपस्थित हुईं। उन्होंने स्त्रोकार किया कि वे ब्रह्माकी कामना पूर्ण करेंगी और दत्तसे हम प्रकार बोली, मैं बहुत शोभ तुम्हारे स्त्रीके गर्भसे तुम्हारी कन्याके रूपमें जन्मग्रहण करके गङ्गाकी चक्षुधर्मिनी हो जाऊँगी। जहाँ तू मेरा निरादर करोगे तभी मैं तेह त्याग करूँगी।" ऐसा कह कर देवीने दत्त-पक्षी घोरिणीके गर्भमें लज्ज लिया। क्रमशः महाभाया शैशवावस्थाके पश्चात् यौवनावस्थाको प्राप्त हुईं। महादेवकी पानिके लिये वे माता पिताकी आज्ञा ले कर उनकी पूजा करने लगीं। जो महादेव विवाह करनेसे छुड़ा करते थे सभी वे सतीके रूप और पूजासे सुख हो कर उन पर आसक्त हो गये। उन्होंने सतीकी दर्शन दिये और सतीने वरकी प्रार्थना की। दायायणोको कथा समाप्त न होने पाई थी कि महादेव बार बार कहने लगे कि, 'तुम मेरी स्त्री बनो।' तब सती हँस हँस कर बोली, 'मेरे पिताकी सूचित कर मुझसे विवाह कीजिये।' यह कह कर सती अपनी माताके पास लौट आई। महादेव भी हिमालय पर्वत पर जा कर सतीके विरहसे व्याकुल हो पड़े और उन्होंने ब्रह्माने अपना हान कह सुनाया। ब्रह्माका मनोरथ फलीभूत हुआ। उन्होंने दत्तसे पास जा कर शिवके मनोभावकी कह सुनाया। दत्त भी प्रसन्न चित्तसे सतीकी उन्हे शर्पण किया। प्रकृति प्रवृत्ता मिलत हुआ, कैलासगिरि फन्दर और हिमालय पर महाकोपी नदीके प्रपातके निकट शिवा शिवाणोके साथ अनेक प्रकारसे विहार करने लगे। इस तरह कुछ दिन व्यतीत हो गये। दत्तने महायज्ञका अनुष्ठान किया। सब देवता उस यज्ञमें निमग्नित हुए मिया महादेव कपालीके। यज्ञमें बुझाने योग्य नहीं हैं ऐसा भीच कर दत्तने उन्हें निमग्न्य नहीं दिया था। सती दत्तकी प्रियतमा होने पर भी कपानोकी भार्या होनेके कारण उस यज्ञमें दोषदर्शी दत्तने उन्हें पाहान नहीं किया। जब सतीने अपने पिताके उस दुष्ट-वहारकी कथा सुनी, तब उस भर भी उनकी

जीवन धारण करनेकी इच्छा न रही। कोपारजनयना सतीने योगवस्त्रसे शरीरके सब धार बन्द कर कुम्भक किया। उस महा कुम्भकी छेद कर उनको प्राणवायु निकल गई। महादेवने घर पा कर विजयामे सतीके प्राणत्यागका कारण सुना। इस पर रोष-पूर्ण महावद्व पति गोध दत्तपक्षमें उपस्थित हो कर यज्ञ भंग करनेकी उद्यत हुए। दत्तवत् देखो। तब रुद्रभोज यज्ञ ब्रह्मलोकासे पा कर अपने मायावस्त्रसे सतीके मृत शरीरमें प्रविष्ट हुए। यज्ञातुगामो रुद्र सतीके पास पहुँच कर और उन्हें मृत देख यज्ञकी भूल गये और उस मृत देहको बगलमें बैठ कर शोक करने लगे। उनके नेत्रके जलसे वैतरणी नदीकी उत्पत्ति हुई। महादेव सतीको लाशकी कंधे पर रख कर विलाप करते हुए पुरुषकी ओर जाने लगे। तब ब्रह्मा, विष्णु और एनि इन तीन देवताओंने सतीके शरीरमें प्रवेश कर उसे खण्ड खण्ड कर छाड़ा। जहाँ जहाँ सतीका रंग गिरा वही स्थान पुण्य तोय वा महापीठ हुआ। शिव साक्षात् मोहित हो कर सतीके शोकमें विलाप करते थे। जगज्जननी माया ही इसका कारण था। जब तक सती पुनः जन्म ग्रहण न करेंगी, तब तक वे निष्कल परब्रह्मके ध्यानमें निमग्न रहें, ब्रह्मादि देवगण ऐसा शोक कर महाभायाकी स्मृति करने लगे। उन लोगोंकी स्मृतिसे सन्तुष्ट हो महाभायाने योगनिद्रा शिवका हृदय परित्याग किया। शिव प्रकृतित्य होकर पुनः योगासोन हुए। दत्त हिमालयकी छो भिनका पुत्रके लिए सत्कार्य वर्ष तक महाभायाकी पूजा करती रही। पहलेसे ही दायायणो गिरिराज-महिषीके प्रति सुवचन थीं। सभी उनको ऐकान्तिक भक्तिसे प्रार्थित हो कर उनके सामने प्रकट हुईं। भिनकाने प्रार्थना की, "हे देवि ! मैं वीर्यवान् और पायुषान् शत पुत्र और पानन्दरूपा विभुवनमोहिनी एक कन्याके लिये प्रार्थना करता हूँ।" भगवतोने उनकी प्रार्थना पूरी की और भिनकाको कन्याके रूपमें जन्म लिया। इस प्रकार वसन्त कालमें नृगगिरि नक्षत्रकी नवमी तिथिमें चर्चराविके समय महाभायाका जन्म हुआ। हिमालयमें उनका नाम 'काली' और घाटमोने 'पार्वती' रखा।

एक दिन नारदने हिमालयकी अपना परिचय दे कर

कहा, 'यदि आर्यो लङ्को काली तपस्या द्वारा शिवजी-
को प्रसन्न कर ले, तो वह सुवर्णाभा और सुवर्ण की नाईं
गोराङ्गो विष्णुसदृशो हो जाये'गे। शिवजी ही इनके
योग्य घर हैं।' उस समय महादेव हिमानयको ओषधि
प्रखनगरके निकट ध्यानमें गम्भ थे। एक दिन गिरि-
राजने यहाँ आ कर विधानपूर्वक महादेवकी पूजा
की। महादेव उनको पूजा ग्रहण कर लेते, "मैं गोप-
नीय स्थानमें तपस्याके लिये आया हूँ, किन्तु जिससे कोई
व्यक्ति यहाँ आने न पावे, वैसा ही काम चाप कोलिय।
गिरिराजने उसकी आज्ञा मान ली, केवल वे धपगो
लङ्कोकी महादेवकी पूजाके लिये वहीं छोड़ चले
गये। काली भी भक्तिपूर्वक प्रतिदिन शम्भुकी सेवा
करने लगी। किन्तु इस बार भोखानायका मन तनिक
भी न लुभाया। देवीको साथ साथगये महादेवने देख
करके भी न देखा।

इधर तारकासुर प्रसन्न हो स्वर्गशाल्य अधिकार धर
बैठे। सब देवगण व्याकुल हो पड़े। इस समय महा-
देवके शोरसजात पुनर्के सिवा कोई भी तारकासुरको
मारनेमें समर्थ नहीं है, यह बात ब्रह्माने सभीसे कह
दी। महादेवको मोहित करनेके लिये मदन रति और
वसन्तकी साथ भेजे गये। इस बार कुसुमाशुषका शर-
सन्धान व्यर्थ हुआ। महादेवकी क्रोधानलसे वे उसी
जगह भस्म हो पड़े। इससे भगवतीकी विरह-ज्वाला
और भी बढ़ गई। वे पक्षतया धरके लीण और मज्जिन
हो पड़ी। (हरिवंशमें लिखा है, कि मेनकाने कन्याकी
उस पक्षस्थाको देख कर कहा था, 'उमा' और प्रविक,
तपस्या मत करो, उससे भगवतीका नाम उमा पड़ा।)

आशुतोष पदा अथ स्थिर, १६ सूक्तं १.. उन्होंने
देखोसे कहा, "हे सुभने! मैं तुम्हारे विरहसे बहुत
दुःखित हूँ। मेरे नेत्रानलमें दग्ध, मदन भस्म रूपमें मेरे
ही अङ्गमें बाम करता है। यह मानो बदला चुकानेके लिए
तुम्हारे समक्षमें ही सुखि दग्ध कर रहा है। अब तुम सुभ
पर प्रसन्न होगी।" इस पर देवी और बला बोल सकती।
इशारेसे उन्होंने सखियोंसे अपना मनोभाव कह सुनाया,
पिता हो कन्याको सम्पन्न करते हैं। इस समय पिताको
कहनेसे ही सब दिग्गजोंको रक्षा हो सकती है। इतना

कह कर लज्जासे सिर झुकाये पार्श्व ती अपने-पिताके घर
चली गई। मरौधि पादि-वृत्तियोंने महादेवके आदेश-
से उनको इच्छा पूरी करनेकी कहा। यह सुन कर गिरि-
राजने भानो स्वर्ग पा लिया। बहुत समारोहके साथ
उन्होंने पार्श्व तोका विवाह शिवके साथ कर दिया। पीछे
महादेव कालीको साथ ले कौशाब जा कर आनन्द-
पूर्वक रहने लगे। एक दिन महादेवने उर्वशी पादि
स्वर्ग वेश्याओंको देख कर पार्श्व तोसे कहा, 'हे भिक्षा-
ज्जगज्जामले कालि! तुम उर्वशी पादिके साथ आकाप
करो।' इतना कह कर वे कालीके निकटसे दृष्ट गये।
'मित्राञ्जनश्यामला काली' यह सुन कर भगवतीको
क्रोध आ गया। उन्होंने पक्षराजोंके सामने महादेवकी
उस वानसे अपनेको निन्दित समझा और गौलशिवर पर
शुभ हो कर वे प्रकृतिभावसे रहने लगीं। बहुत तलाश
करने पर भी महादेवने उन्हें न पाया, इससे वे बहुत
व्याकुल हो गये। महादेवकी बहुत दुःखित जान घटोने
उन्हें अपना दर्शन दिया। महादेव उनका मान-भङ्ग
कारनेके लिये उनके पास गये, किन्तु कालीने कहा, "जब
तब मेरा शरीर सोनेके समान गौर न हो जावेगा, तब
तक मैं आपकी साथ सदास नहीं कर सकती।" इतना
कह कर महामाया महाकौशोपपात नामक हिमालयके
शिवर पर चली गईं। यहाँ उन्होंने एक सो वर्ष तक
तपस्या की। अन्तमें वे भीतर और बाहर सब जगह
महादेवकी छोटे करने लगीं। अब देवीका भरोष्ट सिद्ध
हुआ। आकाशगङ्गाके जलमें स्नान कर काली विष्णुसु-
सदृश गौरवर्णा गौरी हो गईं। (कालिकापु० ४४ अ०)
कालिक और गणेश इनके पुत्रके नाम हैं। उन्होंने
महिलाभर्त्तिनोके रूपमें महिषासुरका नाश किया।
देवीभागवतमें देवीकी सत्यविके विषयमें इस प्रकार
लिखा है—

देवगण महिषासुरके दुष्टों परास्त हो कर ब्रह्माके
शरणपाप्य हुए। ब्रह्मा सो शिव और देवताओंको साथ
ले विष्णुलोकको गये। वहाँ उन्होंने विष्णुसे कहा
कि, 'ब्रह्माके वरसे महिषासुर सुदृढसे अवस्थित है। सुतरा
वरदानके प्रभावसे वह बहुत ही उद्यत और नर्बल
हो गया है। इससे ही कोई भी देखनेमें नहीं

भोर महाराष्ट्रके साथ दोस्ती कर कोटा पर चढ़ाई कर दो। इस समय महावीर दुर्जनशाल अपने विपुल विक्रमसे राज्य-रक्षा कर रहे थे। तोन मास भवरोधके बाद ईश्वरोत्तिङ्गकी सब चेष्टाओं व्यर्थ हुईं और वे निराश हो कर लौट आये। इस युद्धमें महाराष्ट्र-दलके अत्यन्त नैता जयप्या सिन्धियाका एक हाथ तीरसे काट गया था। प्रधान सेनापति हिममतसिङ्गके गुणसे दुर्जनशालने वालो-रावसे नाहरगढ़का दुर्ग पाया था।

ईश्वरोत्तिङ्गके भाग जानी पर बीरवर दुर्जनशालने पुर्व गन्तुताकी भूल कर समेदतिङ्गकी उनके पैलक बुन्दो-राज्यमें अभिषिक्त करनेके लिये खुब चेष्टा की। उस समय इनके परामर्शसे समेदतिङ्गने झोलकरको सहायता से कर बुन्दो-राज्यको वापिस लिया सही, किन्तु इस उपकारमें इन्हें भी झोलकरको स्वाधोन्तता स्वीकार करनी पड़ी थी। पीछे इन्होंने अनेक देश जोत कर कोटा राज्यमें मिला लिये। १८१० मंभत्की हर घोर खीची इन दो जातिधर्म घमसान युद्ध उपस्थित हुआ। इस युद्धमें समेदतिङ्गने दुर्जनशालको खूब सहायता की थी।

तोन वय राज्य करनेके बाद दुर्जनशाल इन लोकसे चल बसे। जिस गुणके रहनेसे राजपूत प्रशंसनीय होती हैं, वे सभी गुण इनमें पाये जाते थे। प्रमादिकता, चदारता और साहसिकता इनमें एकका भी इनमें प्रभाव न था। वे गुण और विस्वास वड़े पचपाती थे। उनके समयमें यह नियम प्रचलित था, कि सन्ध्याके बाद कोटाका नगरद्वार बन्द हो जायगा, फिर कोई भी नगरमें प्रवेश न कर सकेगा। संयोगवश एक दिन वे युद्धसे लौट कर नगरद्वार पर उपस्थित हुए। उन समय रात हो चुकी थी, दरवाजा बन्द हो गया था। उनके कहनेसे नौकरोंने फाटकमें धक्का दिया और इन्होंने अपना परिचय दे कर फाटक खोलनेकी कहा। द्वार-रक्षकने भीतरसे जवाब दिया कि, 'रातमें दरवाजा खोलनेका हुक्म नहीं है, अतः आप रात भर कहीं दूसरो जगह जा कर रहें।'।

सबेर जब दुर्जनशालने नगरमें प्रवेश किया, तब द्वार रक्षकने उनके घरको पर भस्म कर रख कर, उनसे

समा-प्रायना को। दुर्जनशालने उसके कर्त्तव्यकार्यसे खुश हो कर उसे छेष्ट पारितोषिक दिये। इनके गुणके विषयमें अनेक दन्त-कथाएं प्रचलित हैं।

दुर्जय (सं० त्रि०) दुःखेन जययतेसो दुर्-जि-खत् ।
१ अय करनेमें अशक्य, जिसे जीतना बहुत कठिन हो।
(पु०) २ विष्णु। ३ कात्तवीर्य वंशमें उत्पन्न भगन्त राजाके एक पुत्रका नाम। (कर्मपुराण) ४ दामवविशेष, एक असुरका नाम। ५ राजसका नाम।

दुर्जयगिरि—कामरूपका एक विख्यात पहाड़। कालिका-पुराणमें इस पहाड़का विषय लिखा है। कामरूप है।
दुर्जयन्त (सं० पु०) नृपमैद, एक राजाका नाम।

दुर्जर (सं० त्रि०) दुःखेन जीयति जू-यच् । बाटपि-पाथ, जो कठिनतासे पछे।

दुर्जरफल (मं० स्त्री०) कर्कटिक, ककड़ी।

दुर्जरा (सं० स्त्री०) दुर्जर-टाप् । ज्योतिषतीलता, मानकगनी।

दुर्जाति (सं० स्त्री०) दुष्ट जात प्रा० म० । १ व्यसन। २ भ्रमभ्रमा, कठिनता, मंकट। 'त्रि०' ३ जिह्वा तथा बुरी रीतिसे हुआ हो। ४ जिसका जन्म हुआ हुआ हो। ५ प्रमाणा, नीच।

दुर्जाति (सं० त्रि०) दुःस्थिता जाति रस्य । १ निन्दित-वशीय, बुरे कुलका। दुःस्थिता जातिर्जन्म यस्य । २ जिमका जन्म बुरी रीतिसे हुआ हो। ३ जिसकी जाति विगड़ गई हो। दुष्टा जातिः । ४ बुरी या नीच जाति।
दुर्जाति (सं० त्रि०) दुःस्थितो जीवो जीवनीपाथो यस्य ।
१ परमकायपूज्यो, दूसरेके दिये अन्न पर रहनेवाला।
दुर् जीव भावे खल् । (स्त्री०) २ निन्दित जीवन, बुरा जीवन। दुःखं जीवति जीव-यच् । ३ दूसरेके अधान होकर जीवनधारण।

दुर्जय (सं० त्रि०) दुःखेन जययतेसो दुर्-जी-खत् ।
दुर्जय, जिसे जीतना अत्यन्त कठिन हो।

दुर्जय (मं० त्रि०) दुःखेन जययते प्रा कर्मपि यत् ।
दुर्वीर्य, जो जल्दी समझमें न आ सके।

दुर्जय (मं० पु०) दुष्टो नयः प्रादिमं सतो पत्न्ये । १ दुष्टा नोति, बुरो पालन। दुःस्थितो गयो यस्य । (त्रि०) २ दुष्ट नोतिशुद्ध, बुरी चालवाला।

दुर्ग (मं० वि०) दुःखिन भवति दुर्-गम च्च येदे
वत् । कट दारा नट, जो बहुत मुदिरने मट हो ।

दुर्गामन् (मं० स्त्री०) दुःखित नामोऽयम् 'वनपटान्
मं' प्राप्य 'इति कर्त्तुं प्राप्ति कृम्यादिवाक्य मं' इति
वैधित्, येदे तु लट् म यणोहयते । १ दोषकोशिका,
शक्ति नामक जननम्, सुगरी । २ चर्मरोग, बवा-
मीरको बीमारी । यद्वा पाप करनेसे चर्मरोग होता है,
यतः पाप हो चर्म रोगका कारण है । इसीसे इसे
निम्नित समझ कर इसका नाम दुर्गामन् हुआ है ।

दुर्गोति—दुर्गोति देवी ।

दुर्गम (मं० वि०) दुःखिन दम्यतेऽपि दुर्-दम-कर्मणि
पल । १ चटमनोय, जो जल्दी दबाया या नीता न जा
सके । २ प्रचण्ड, प्रबल । (पु०) ३ रोहिणीके गर्भसे
उत्पन्न बसुदेवके एक पुत्रका नाम ।

दुर्गमम (मं० वि०) दुःखिन दम्यतेऽपि वाहु-युष्, दुःखिन
दमनं यस्य इति वा । १ दुःख दारा दमनोय, जिसका
दमन करना बहुत कठिन हो । २ जनमेजययुगं ज्ञात
शशांगीकालज युधमेद, जनमेजयके वंशमें उत्पन्न शता-
नके राजाके पुत्र ।

दुर्गमनोय (मं० वि०) १ जिसका दमन करना बहुत
कठिन हो । २ प्रचण्ड, प्रबल ।

दुर्गम्य (मं० वि०) दुःखिन दम्यते दमयत् । १ चटम-
नोय, जो जल्दी दबाया या नीता न जा सके । (पु०)
२ वसुधारा, गायका नटवा ।

दुर्गप (मं० पु०) मशालक हस्त, भिन्नावा ।

दुर्गम (मं० वि०) दुःखिन दम्यतेऽपि दुर्-दम-कर्मणि
पल । १ दुःखदारा दमनोय, जिसे देखना चखना
कठिन हो । २ जो देखनेमें भयंकर हो ।

दुर्गम (मं० वि०) दुःखिन दमनं दमयत् । १ दुर्गम,
जो जल्दी दियार न पड़े । (पु०) २ कौरवोंका एक
सेनापति ।

दुर्गमा (मं० स्त्री०) दुर्गा दगा । दुर्गम्या, सुग्री दगा,
व्याघ्र राजन ।

दुर्गम (मं० वि०) दुःखिन दमनं दमयत् । १ दुर्गम-
नोय, जिसका दमन करना कठिन हो । २ प्रचण्ड,

प्रबल । (पु०) ३ वसुधारा, गायका नटवा ।

१ गिय, मराठेव ।

दुर्गम (मं० स्त्री०) दुर्गं दिनं । १ गीताच्छन्न दिन, ऐसा
दिन जिसमें बादल छाए हों । २ घनाशुकार, बहुत
अन्धकार । ३ दुष्टि, बरसा । ४ दुर्गित दिनमाय, दुर्ग
दिन । जिस दिन भगवान्का नाम मनमें लिया जाता
यही दिन दुर्दिन है, मेघाच्छन्न दिन, दुर्दिन नहीं है ।
(सारदाचरिते भूत) ५ दुर्दशाका समय, बुरा माह ।

दुर्दिनम (मं० पु०) दुष्टः दिवसः प्रादिमं । दुर्दिन,
गराम दिन, बरसातका दिन ।

दुर्दरिया—ब्रह्मन् मदेगके दाका जिनके पलायन एक
प्राचीनविश्वस्त नाम । भूदरा रातामंजरी यथाया दृष्टा
दुर्गका ध्वंसायैव पाज भी देखनेमें आता है । लोग
इसे रातोवाहो भी कहते हैं । एक समय यह दुर्ग चर्च-
बन्दाकामें आया था । इसके चारों ओर घनार नदी
बहती थी । १८१८ ई०में भी प्रायः २ मील तक १२ से
१४ फुट लंबी घनार-दीवारी थी । दुर्गको पराजित
देखनेमें मानूस पड़ता है, कि एक समयदो मकान चोर
एक बुज्र थे । इस घामसे पास ही पड़ने एक मगर था ।
चमो टूटो फूटो ईटें आदि लपटा परिधय देतो है ।

दुर्दुष्ट (मं० वि०) दोनयति ललितयति आत्मिकता-
मिति दोनि वाहु-कृतमन्ययेन साधुः । नास्तिक ।

दुर्दुष्टा (मं० स्त्री०) वह जिसके दृष्टनेमें कठिनता हो ।

दुर्दुष्ट (मं० स्त्री०) दुष्टं धृतं प्रादिमं । कष्ट धृत-
क्रांति, कष्टसे प्राप्ता स्थिति ।

दुर्दुष्ट (मं० स्त्री०) दुर्, दमनं कर्मणि दृक् । दुर्दुष्ट
नोय विष, वह विष जो जल्दी दियार न पड़े ।

दुर्दुष्ट (मं० वि०) दुष्टं दृष्टं । रागादि दोष दुष्ट, जिसका
राग, मोह आदिने कारण मय्यत्, मित्रय न हुआ हो ।
यात्रयत्का-स्थितिमें लिया है कि दोष मुक्तदमको राता
पुनः निरासय करे चोर यदि चन्द्याय दृष्टा हो, तो
यात्राकोय तथा मुक्तदमा जीतनेवालोंकी समष्टा दृष्टा
दृष्टं जितना धारनेवालोंकी चन्द्यामें दृष्टा हो ।

दुर्दुष्ट (मं० स्त्री०) दुष्टं दंष्ट । १ दुर्दुष्ट, दुर्मात्र ।

२ पाप । ३ दुष्ट मंयोग, दिनांका बुरा कर ।

दुर्दुष्टयत् (मं० वि०) दुर्दुष्टं विधत्तेऽयं दुर्दुष्ट मय्य

भी सन्देश नहीं और साथ साथ दुःख भी नहीं है। पहले मेरे पिताने मेरे लिये आपके साथ शम्भू की आराधना की थी, उसीसे मेरा जन्म हुआ है। मैंने इन्द्रत्व को पाया है और अखण्ड ब्रह्माण्ड का आधिपत्य निर्विवादपूर्वक उपभोग किया है; सुतरां अब मुझे आपके आश्रय के सिवा और किसी चीज की अभिलाषा नहीं है। निखिल यज्ञमें जिससे मैं पूज्य होऊँ, वही ही कीजिये। जब तक सूर्य रहे तब तक मैं आपका पदत्याग न करूँ, यही वर मुझे प्रदान कीजिये। इस पर महादेवीने कहा, 'यज्ञका ऐसा एक भाग भी नहीं है जो अभी मैं तुम्हें दे सकूँ। किन्तु तुम्हें सुझावे सारे ज्ञान पर भी तुम कभी मेरा पदत्याग नहीं करोगे। जहाँ मेरी पूजा होगी उन्हीं जगह तुम्हारे इस शरीर की भी पूजा होगी।

तब महिषासुरने देवीको प्रणाम कर पूछा, 'हे परमेश्वरि! यज्ञमें आपको किस किस मूर्तिके साथ मैं पूज्य होऊँगा?' इस पर देवीने कहा, 'अथर्वणा, भद्रकाली और दुर्गा इन तीन मूर्तियोंमें तुम सर्वदा मेरे पादलाल होकर मनुष्य, देव और राक्षसी पूजे जाओगे। आदि सृष्टिमें मैंने पञ्चादशभुजा अथर्वणा की। मूर्तिमें द्वितीय सृष्टिमें इस (पौण्ड्रभुजा) भद्रकालीके रूपमें तुम्हें मारा है और अभी मैं (दशभुजा) दुर्गाके रूपमें अनुचरोंके साथ तुम्हें मारूँगी।'

दुर्गाकी उत्पत्तिके विषयमें काशीखण्डमें इस प्रकार लिखा है—

पुराकालमें दुर्गा नामक वृद्धके एक पुत्र था। उस महादेश्यने तपस्त्रात्र, वससे तीनों लोक जीतकर अपने अधीन कर लिये तथा इन्द्र, वन्द, वायु, वरुण आदिके पद भी लीन लिये थे। उसके भयमें श्रृण्वियोंने तपस्या और ब्राह्मणोंने वेद पाठ करना छोड़ दिया। देवताओंने बहुत दुःखित होकर महेश्वरकी शरण ली। महेश्वरने उस दुष्ट चसुरकी मारनेके लिये देवीको भेजा। महादेवी देवताओंकी प्रभय देकर युद्धका उपयोग करने लगी। पहले उद्वाने कालरात्रि नामकी वृद्धाणीको उस दैत्यकी पकड़वानेके लिये भेजा। दुर्गासुर उस मनोरमा वृद्धाणीके रूपसे मोहित हो गया और उसने इन्हें अन्तर्पुर पकड़ कर ले जाके काट दिया। दैत्यकायमें आई हुई

ऐसा करने पर भी उनकी बात न सुनी गई। दैत्यके प्रचुर व्योहो कालरात्रिकी पकड़नेके लिये प्रयत्न हुए, तथा हो देवीके दुष्टारसे वे सबके सब भयमें होने लगे। तब दुर्गासुरके आदेशसे दश हजार चसुरोंने आ कर उस देवीको पकड़ना चाहा। देवीकी निःश्राम वायुसे दैत्यगण व्याकुल हो कर दश उधर गिरने लगे। देवी भी उस स्थानकी छोड़ कर आकाशमार्ग की चली गई। दुर्गासुरने अपने दैत्यवीरोंको साथ ले उनका पीछा किया। कुछ समयके बाद महासुरोंने विष्णुवाचल पर आ कर सद्यस्सुजा, महातिज्ञा और महाप्रहरणा महादेवीको देखा। उन्होंने यह भी देखा कि कालरात्रि आ कर देवीके निकट समस्त विरह कुछ कर रही हैं। दुर्गासुर महामायाका रूप देख कर कामग्रसे पोषित हो गया और उसने अपने अनुचरोंकी प्रतीभन दे कर कहा कि, 'तुममेंसे जो कोई उन्हें पकड़ कर ला सकेगा उसे विशेष रूपसे पारितोषिक दूँगा।' तब दैत्यवीरगण भगवतीको पकड़वानेके लिये दूटे। किन्तु कोई भी महामायाके सामने न हो सका। सभी परास्त हो गये। पीछे दुर्गासुर स्वयं महादेवीसे लड़नेमें प्रवृत्त हुआ।

महादेवीके शरीरसे अनेक शक्तियाँ उत्पन्न हो कर दैत्यसेना भ्रष्ट करने लगी। दुर्गासुर अपने सेनापियोंकी दुर्दशा देख महागजकी मूर्ति धारण कर देवीको और दौड़ा। महादेवीने पायाल्लके प्रहारसे उसके भोम-हृदयकी दो खण्ड कर डाला। तब दैत्यपतिने फिर महिषरूप धारण कर देवी पर आक्रमण किया, किन्तु देवीने त्रिशूलके आघातसे उसे ध्वस्त कर लीटा दिया। फिर बहुत शीघ्र ही वह दैत्य महेश्वरसुख पुरषको मूर्ति धारण कर प्राणपणसे युद्ध करने लगा। इस बार भी देवीने एक महाध्वज के क कर उसे खण्ड खण्ड कर डाला। दुर्गासुर मारा गया। स्वर्गमें दन्तुभिः वज्रने लगे। दैत्यगण देवीकी स्तुति करने लगे। सभी दिग्गज महादेवी दुर्गाके नामसे प्रसिद्ध हुई हैं। (काशीव ६ ७२७०) कालिकापुराणमें एक जगह लिखा है—दशभुजा जग-पात्रीने हो महिषासुरको विनाश किया था, ये ही पाश्चिम मार्गमें कण्ठपथको चतुर्दशैकी मातृभूत हुई थी। पीछे शक्तपथकी सप्तमीकी देवताओंके तेजसे उन्हीं ने

मस्य वः । दुरदृष्टयुक्त, अभंगाः, बुरे किसमतवाला ।
 दुर्दिता (स० स्त्री०) एक लताका नाम ।
 दुर्दम (स० पु०) दुष्टो दुःसः । पलायः, व्याज ।
 दुर्हर (स० पु०) दुर्दुःखेन ध्रियते दृ-कर्मणि केल् । १
 नरकविशेष, एक नरकका नाम । २ अष्टभोपधि । ३
 पारदः, पारा । ४ भस्मानकं, मिलावां । ५ महिषासुरका
 एक सेनापति । ये भगवतीदेवोके साथ युद्धमें मारे गये ।
 (मार्क० पु० ८३।१८) ६ छतराष्ट्रका पुत्रभेद, छतराष्ट्रके
 एक पुत्रका नाम । ७ शम्भरासुरके एक मन्त्रीका नाम ।
 ८ विष्णु । ९ रावणका सेनापति । शशोकवाटिकाके उजा-
 हनेके समय जब हनुमान्ने जायसे बहुतसे रचक मारे
 गये तब रावणने उसे पकड़नेके लिये दुर्हर आदिको भेजा
 था । यह रावण हनुमान्के जायसे मारा गया था ।
 (त्रि०) १० जिसे कठिनतासे पकड़ सके । ११ प्रबल,
 प्रचण्ड । १२ दुर्ज्ञेय, जो कठिनतासे समझमें आवे ।
 दुर्हरा—महाराज चन्द्रगुप्तको पटरानी । चाणक्य शत्रु
 जायसे बचानेके लिये चन्द्रगुप्तको प्रतिदिन थोड़ा थोड़ा
 करके विषपानका अभ्यास कराती थे ; किन्तु चन्द्रगुप्तको
 इसका पता नहीं । स योगवश एक दिन रात्री दुर्हरा
 उनके साथ खानेको बैठे । उस समय वे पूर्णगर्भा यौं
 और विष खानेका उच्छ् अभ्यास भी न था । अतः
 विषास भोजन करते समय चाणक्य आ पड़से और 'वह
 क्या कर रही हो' ऐसा कहते न कहते रात्रो पक्षत्व-
 को प्राप्त हुई । बाद चाणक्यने उनके गर्भको फाड़ कर
 गर्भस्थ बासकको बाहर निकाल लिया और वही बासक
 पोछे बिन्दुमार नामसे प्रसिद्ध हुआ ।
 दुर्हरीत (स० पु०) दुर-ष्ट वा० ईतुन । दुर्हरणीय, वह
 जो जल्दी पकड़नेमें न आ सके ।
 दुर्हर्त (स० त्रि०) दुर्हर, जिसे कठिनतासे पकड़ सके ।
 दुर्दम (स० त्रि०) दुःस्त्रितो धर्मो यस्य, समासान्तविधे-
 रनितत्वात् धार्येन कश्चित् अनिच् समा० । दुष्ट
 धर्मयुक्त ।
 दुर्दम (स० त्रि०) दुःखेन दृष्यतेऽस्मिन् दुर-ष्ट्य कर्मणि
 खलु । १ धर्मघनीय, जिसका दमन करना कठिन हो । २
 दुर्ज्ञेय, जिसे परास्त करना कठिन हो । ३ प्रबल, प्रचण्ड,
 वज्र । (पु०) ४ छतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (भारत
 Vol. X. 137

१।११-७।३) ५ रावणके दलका एक राजस ।
 दुर्दम्य (स० त्रि०) दुर-ष्ट्य-युच् । दुःख द्वारा घर्षणीय,
 जिसे जलदो वधमें न ला सके ।
 दुर्दम्यता (स० स्त्री०) दुर्दम्य भावः दुर्दम्य तत्-टाप् ।
 दुर्दम्यका भाव ।
 दुर्दम्य (स० स्त्री०) दुर्दम्य-टाप् । १ नागदमनो, नाग-
 दोना । २ कन्यारी वृक्ष ।
 दुर्दा (स० स्त्री०) दुर-धा-भावे च । दुष्टधान ।
 दुर्दाय (स० त्रि०) दुःखेन धार्यते धारि-यत् । दुर्दोष,
 जो जलदो समझमें न आ सके ।
 दुर्दाव (स० त्रि०) दुर-धाव-यत् । दुःशोधनीय, जिसका
 संशोधन करना कठिन हो ।
 दुर्दिन (स० त्रि०) दुर-धा कर्मणि क्त, वेदेन धावो
 हिः । दुष्टभावसे स्थापित ।
 दुर्दो (स० त्रि०) दुःस्त्रिता धोर्ग्यस्य । दुष्टवृत्तियुक्त, बुरे
 वृत्तिका ।
 दुर्दुर (स० त्रि०) दुर-धुर्व हिंसने कर्मणि क्तिप् ।
 दुःख द्वारा हिंसनीय ।
 दुर्दुःख (स० पु०) दुर-धुर्व लट् प्रपो० साधुः । युक्ति
 बिना शुक्वाक्य भ्रमाग्यकारो शिष्य, वह शिष्य जो
 शुद्धी बात जलदो न माने ।
 दुर्नय (स० पु०) दुर-मो-अच् । नीति निरुदाहरण,
 कुनोति, बुरी चाल ।
 दुर्नाद (स० पु०) १ प्रमिय ध्वनि, बुरा शब्द । (वि०)
 २ कर्कशध्वनि करनेवाला ।
 दुर्नामक (स० पु०) दुष्ट नामा यस्य । अयं रोग, बवा-
 योरकी बीमारी ।
 दुर्नामन् (स० पु०-स्त्री०) दुःनिन्दितं नाम यस्य । १ दोष-
 कोपिका, सीप, सुतही । २ कुत्साति, बुरा नाम, बद-
 नामी । ३ दुष्ट वचन, गाली ।
 दुर्नामारि (स० पु०) दुर्नामः अयं रोगस्य परिः शत्रुः ।
 शूरण, जोमोक्षद । यह अयं रोगको दूर कर देता है ।
 दुर्नाम्नी (स० स्त्री०) दुर-निन्दितं नाम यस्याः डीप् ।
 दुर्नामा, शक्ति, सोप ।
 दुर्निग्रह (स० त्रि०) दुःखेन निग्रह्यते दुर-निग्रह-
 खलु । दुर्दम, जिसे जलदो वधमें न ला सके ।

देवीकी मूर्ति धारण की थी। चट्टीमें जो देवताओं ने उन्हे तरह तरहसे प्रसन्नकारी से सजाया था। नवमीको महादेवने जाना प्रकारके उपचारोंमें पूजित हो महिषासुरको विनाश किया और दुर्गाको के देवताओंसे विष्ट हो कर प्रसन्न हो गई। पुराणोंमें माय, भूय, मन्वन्तरमें दुर्गाभूजा भगवतो देवताओंसे पूजी गई थी। समग्रतोचण्डीके मतसे—स्वारीचिप मन्वन्तरमें सुरय राजा और समाधि वैश्वने देवीका पूजन किया था। देवीभागवतके मतसे भारतभूमिमें सबसे पहले सुवरा राजाने हो देवीकी पूजा की थी।

देवीभागवत, महाभागवत, कालिकापुराण, बृहन्मन्दिरेश्वरपुराण और बृहद्भर्मपुराणमें रामचन्द्रने जो शरत्कालमें देवीकी पूजा की थी, वह क्या लिखी है। कालिकापुराण और बृहद्भर्मपुराणमें लिखा है—रामके प्रति पशुपति और रावणकी वध करनेके लिये ब्रह्माने रात्रिकालमें महादेवको समर्पण कर कहा था। महाभागवतमें लिखा है—रामचन्द्र पठहत्तर हो नौलक्ष्य द्वारा देवीकी पूजामें प्रवृत्त हुए, किन्तु देवीने उन्हे कलके लिए एक पत्र दिया रखा। तब रामचन्द्र अपनी एक पाँखों निकाल कर देवीके महाशयमें प्रवेश करनेकी प्रमत्त हुए। देवीने उन्हे निरस्त कर उनको मनोकोष्ठा पूरी की।

किसीका मत है कि, 'रावणने वसन्तकालमें दुर्गाकी पूजा की थी, इसीसे वह 'वामनोपूजा' नामसे प्रसिद्ध है। वायव्योपूजा शब्दमें निरुद्ध विवरण देखो।

दुर्गासमेविधि।—शरत्कालमें वार्षिक जो महापूजा की जाती है, उसे शारदीया महापूजा कहते हैं। इस पूजाके चार प्रधान कर्म हैं, स्नान, पूजन, होम और वसिदान। यह पूजा तीन तिथि तक करना पड़ता है।

प्रतिवर्ष 'पाम्निमासमें प्रत्येकको यह पूजा करना चाहिये। जो लोग मोक्ष, पालन्य और दम्भ वा देवपुत्रक पूजा नहीं करते, उन पर देवी भगवतो क्रुद्ध होकर उनमें मय मनोरथ नष्ट कर देती है। इस शरत्कालमें दुर्गा पूजाकी निम्नता मय प्रकारसे प्रतिपादित हुई है जिनके नहीं करनेमें प्रत्यक्षप्राप्ति होना पड़ता है। (विहित०)

दुर्गापूजा करनेमें सब देवता प्रसन्न होते हैं और जो विधिसे पशुपति पूजा करते हैं, वे पशुपति विभूति और चतुर्वर्गफल पाते हैं। धर्म, धन्य, काम और मोक्ष इनमें जो वे चाहते, वही उन्हे शीघ्र मिल जाता है। समाधि नामक वैश्यने पूजा करके निर्वाण और सुरय राजाने राव्यादि पाया था। जो जिन पामिनापसे देवीकी पूजा करते हैं, उनका यह पामिनाप पूरा हो जाता है। रोगी रोगसे मुक्त होता और सुसुप्त सुनि नाम करता है। इन्हीं सब कारणोंसे प्रत्येकको या पूजा करना अवश्य कर्त्तव्य है। इस पूजाके ७ कल्प कहें, गये हैं—इन सातोंमें 'पामिनाप'नुसार किसी कल्पमें पूजा करने चाहिये।

नवम्यादि कल्प।—भाद्रमासकी कल्याणवमीसे लेकर पामिनापकी महानवमी तक जो पूजा की जाती है, उसे नवम्यादि कल्प कहते हैं। पामिनापकी शक्ता प्रतिपदसे लेकर महानवमी तक जो पूजा की जाती है, उसे प्रतिपदादि कल्प; पामिनाप शक्तापछोसे लेकर महानवमी तककी पछादिकल्प; सप्तमीसे लेकर महानवमी तककी सप्तम्यादि कल्प; महाष्टमीसे लेकर महानवमी तककी अष्टम्यादि कल्प; केषल महाष्टमीके दिनकी अष्टमीकल्प और महानवमीके दिनकी नवमीकल्प कहते हैं। ये हो सात प्रकारके कल्प हैं। इन्हीं सात कल्पों द्वारा इनका नित्यत्व प्रतिपादित हुआ है। जो जिन पक्षोंके हैं, वे इन सात कल्पोंमें किसी एक कल्पमें पूजा कर सकते हैं।

कल्याणरथके बाद यदि पशोच हो जाय, तो पूजाके प्रतिवर्ष नई होना चाहिये। क्योंकि लिखा है—

‘वतवहविवादेयु प्रादे तेमेज्ज्वने जये।

आरुने सुतके वस्वादनारुणे ह्य मृतक ॥’

(तमित०)

व्रत, यज्ञ, विवाह, याद, होम, चर्चन और जपे पारम्भ हो जाने पर सुतक पशोच नहीं होता, पारम्भ होने पर सुतक पशोच माना जाता है।

दुर्गावषकी व्रत कहा गया है। यह पूजा शारिणी, राजसी और सामसी तीन प्रकारकी है। पामिनीकी पूजा में निगमिष नैवेद्य, जप और यज्ञादि, पुराणदिमें

दुर्निमित्त (मं० ति०) दुर्-नि-मित्तः । १ दुष्टभावन
रिपु, जो दुष्ट व्याप्त्ये किंकटित्य गरा हो ।

दुर्निमित्त (मं० स्त्री०) दुष्टं निमित्तं । भावि रिटवृत्त
गङ्गामंड, कोनेवाले परिटको सूचित कामेवाला पद-
द्वय, युग मगुल । विषय पानेके पहले हो युग मगुल दोष
पड़ने हैं । ऐसी क्षणतमे हमको यादगि करनी चाहिये ।

दुर्निमित्त (मं० ति०) दुर्-नि-मित्त-युत् । दुःख द्वारा
नियन्त्रण, जिसे बहुत कठिनतासे पछान कर मंड ।

दुर्निरोध (मं० ति०) दुःखेन निरोध्यते नि-रोध-यत् ।
बहुत कष्टसे जो निरोधण किया जाए, जिसे देखते
न पते । १ भयद्वार । २ कुदृष्ट ।

दुर्निरोध (मं० ति०) दुःखेन निरोध्यते नि-रोध-यत् ।
दुर्निरोध दंडो ।

दुर्निवृत्त (मं० ति०) दुःखेन निवृत्त्यते दुर्-नि-वृत्त-
यत् । जो दुःखसे निवृत्त हो, जो बहुत मुश्किलसे
किया जाय ।

दुर्निवार (मं० ति०) दुर्-नि-वृ-ज्यः । जो बहुत कष्टसे
निवारण किया जाय, जो जल्दी रोका न जा सके ।

दुर्निवार्य (मं० ति०) दुर्-नि-वृ-ज्यत् । १ जो बहुत
कष्टसे निवारण किया जाय, जो जल्दी रोका न जा
सके । २ जो जल्दी हटाया न जा सके । ३ जिसका होना
प्रायः निश्चित हो ।

दुर्निप्रवृत्त (मं० स्त्री०) दुःखेन निप्रवृत्तति दुर्-नि-
प्र-वृत्त-यत्, अतिगहमे तत्पर्युद्धे तत्कारणोपः । दुःख
द्वारा निष्क्रान्तर, जो जल्दी टल न सके ।

दुर्नीति (मं० स्त्री०) दुर्-नी-भावे-त्तः । १ नीतिविपरीतपरप,
बुरी नीति, कुपाप । (ति०) २ दुर्नीतियुक्त, बुरे चालवाला ।

दुर्नीति (मं० स्त्री०) दुर्-दुष्टा नीतिः । दुर्-नीति-
दुष्टानीति, पन्थाय, समुक्त पाषण्ड । पन्थायो कोनेसे
पनेज तरफसे कष्ट मोलने पड़ते हैं, इसलिये हरएकका
दुर्नीति परिहार करना मुख्य कर्त्तव्य है । यदि रागा
दुर्नीतियुक्त हो तो हमका राज्य बहुत जल्द नष्ट हो
जाता है । दुर्नीति चरममूल्य कर जो कोई काम किया
जाय, वही टपटप हो जाता है । नीति देखो ।

दुर्नीतिभाव (मं० पुं०) दुर्नीत्याः भावः । दुर्नीतिका
भाव ।

दुष्टं (मं० पुं०) दुष्टः मयः । कुराखा, बुराव या पन्थायो
राजा ।

दुष्टं (मं० पुं०) दुष्टो वधताः । हवाकर, मानो ।

दुष्टं (मं० ति०) दुष्टं वधः । १ दुष्टभावेन वध, जो
पराव तरफसे बांधा गया हो ।

दुष्टं (मं० ति०) दुर्निमित्तं वनं यम्य । १ लग्न, दुष्टभा
यतना । २ समाज-पर्याय—पार्श्व, फात, चाना, गित,
ज्ञान, धन्य और धन्यतन्त्रयुक्त है ।

सभी कामोंमें धन्य समुत्त जय प्राप्त करते हैं, किन्तु
दुष्टं समुत्तको नीत देवमंथोने हो होतो है ।

'बनीरवा हि दुष्टं' बापये । १ इति न्यायात् । बलवान्मे
दुष्टं वगाजित होता है, हम न्यायसे समुत्तार प्रत्येक

धनवान् समुत्त दुष्टंको सत्ता मकता है और कई जगह
प्रीकृत होते देख्य गया है । इसलिये 'दुष्टंमय्य वनं'

राजा' पर्याय दुष्टंकोका परमात्र राजा हो वन है, ऐसा
भी कहा है । राजाको सबटा मजलके हाथसे दुष्टंको

वधाना चाहिये । २ गिरिय, कमजोर । ३ दुष्टमां, जिसके
धमके पर रोग हुआ हो ।

दुष्टं (मं० स्त्री०) दुष्टंमय्य भावः दुष्टं-मय्य, टाप ।
१ दुष्टंमय, बसकी कमी, कमजोर । २ लग्न, दुष्टमा-
यन ।

दुष्टं (मं० स्त्री०) दुष्टं भावे-त्तः । दुष्टंमय ।

दुष्टं (मं० स्त्री०) दुष्टं-टाप । १ धन्य, गिरासिका,
जननिरिमका पंज ।

दुष्टंभावाय—परिभावेन्दुमीवरटोका, मय्य वा और
कुदिका नामको उसकी टोका और दुष्टंभावाय

मंस्कृत व्याकरणके रचयिता ।

दुष्टं (मं० ति०) दुष्टो वानो यम्य । १ दुष्टं रोगमुक्त,
जिसके धमके पर रोग हो । (पुं०) २ धन्य, राजा ।

३ कुटिलवैद्य, दुष्टरामे वान ।

दुष्टं (मं० स्त्री०) दुष्टं वीरवः । दुष्टवीरव लक्ष्मण-
एक प्रकारकी वान ।

दुष्टं (मं० स्त्री०) दुष्टा दुष्टिः । १ दुर्माति, बुरा दुष्टि ।
(ति०) दुष्टा दुष्टियं । २ मन्त्रदुष्टिगुण, लक्ष्मण, दुष्ट ।
दुष्टं (मं० ति०) दुष्टेन दुष्टंमं दुष्टं-वधं वः ।
दुष्टं विल, दुष्टे विलका, दुष्ट ।

कीर्ति भवतोका' माहात्म्य पाठ' और 'देवीसूक्त जप प्रशस्ति करने पड़ते हैं' । वसिष्ठान और सोमपन नैद्यादि हाहा जो पूजा को जाते हैं उसे राजसी पूजा कहते हैं । जबयज्ञ के बिना सुशामासादि उपचारसे जो पूजा की जाती है, उसे तामसा पूजा कहते हैं । इस तरहको पूजा 'श्रेष्ठ और दयः' गण्य करते हैं । (तिथि०)

जिस जगह पूजा के स्थान पर पूजकका तपोयोग अधिक रहना है और पूजाका 'आधिक्य' तथा 'देवप्रतिष्ठातिशय' स्वरूप होता है, उसी जगह देवता पड़च जाते हैं । (तिथि०)

नवग्रहादि कल्प-रवि के कथा राममें जानेंसे अर्थात् चास्त्रिनमासके कल्पपक्षकी 'चाष्ट्री' नक्षत्रसुक्त नवमोतिथिमें देवीका वीधन करना चाहिये । यदि नवमीमें 'चाष्ट्री' नक्षत्र न पड़े, तो किस नवमीमें वीधन होगा ? कालिका-पुराणके मतमें नवमीमें अष्टादशभुजाका वीधन और पछीमें दशभुजाका ध्यान करना 'अत्यव्य' है । स्मार्त के मतमें 'यह संगत नहीं है', क्योंकि 'कामाख्या-पञ्चमूर्ति' प्रकरणमें 'इस प्रकार लिखा है—

'शरत्कालके पुरा धर्मात् नवग्रहा बोधिता इति ।

'शरदा या अमावस्या पीठे लोकं च भावतः ॥

'कर्मस्वाः सुरा श्रेष्ठं सिंहपदं दश बाहुभिः ।

'कर्मैवं दशभुजं पुरो कर्तुं विधिस्तदेव ।

'सप्तचक्रिणी सा मूर्तिः सप्तकांती त्वहं पुनः ।

'यथा मूर्त्तौ त्वां दृष्ट्वेति सादुर्भेति प्रकीर्तिता ॥' (तिथि०)

पहले शरत्कालमें नवमोतिथिमें देवताओंने जो 'देवीका ध्यान किया है उसका नाम शरदा है । ये दश-बाहुयुक्त और 'सिंहपाद'नी हैं, इत्यादि पूर्वाक्त वचना-नुसार मदिपासुरके पादलक्षणके कारण पूजाका विषय पहले लिखा गया । किन्तु अष्टादशभुजामें मदिपासुरके प्रतिपादलक्षणको सम्भावना नहीं है। इत्यादि कारणोंसे नवमी या पछीमें दशभुजाका ध्यान करना उचित है ।

नवमीमें ध्यान करके 'च्य' स्थानचक्रको पछीमें विष्णु हृत्में धामन्त्रक; मूलानचक्रको सप्तमीमें पत्रिकाप्रवेश, पूर्वापादाकी 'अष्टमीमें पूजा' बीम और उपवास, उत्तरा-पादानचक्रकी नवमीमें 'भनेक तरहको बलि' द्वारा शिवा-की पूजा और त्र्यम्बकचक्रकी 'दशमीमें प्रणाम करके

विसर्जन करना चाहिये । पहले जो मन्त्र पढ़ते हैं उसे 'सप्त' तिथियोंमें यदि उन सब नक्षत्रोंका योग न हो तो उन्हीं सब तिथियोंमें कार्यादि करनेका विधान है । नक्षत्रको बात जो कही गई है वह सिर्फ फलान्ति-शयके लिये है । यदि उन तिथियोंमें पूर्वाक्त नक्षत्रका योग हो तो पूजामें भी विशेष फल होता है । (तिथि०)

प्रतिवर्ष 'कन्याराशिमें सूर्य' के रहनेसे अर्थात् चास्त्रिन-मासमें कर्त्तव्यत्वकी अनुपपत्तिके लिये सिद्धको अर्थात् भाद्रमासमें ध्यान तथा तुलामें अर्घ्यात् कार्त्तिकमासमें 'स्थापनादिक करना चाहिये, किन्तु सप्तमासमें करना निषेध है । यदि चास्त्रिनमास सप्तमास हो तो उस मासमें पूजा नहीं करके कार्त्तिकमासमें करनी चाहिये । ऐसी स्थानमें भाद्रमासमें ध्यान और कार्त्तिक मासमें पूजा होगी । भाद्रकी कृष्णानवमीसे प्रतिदिन देवीमाहा-त्म्यका पाठ और पूजादि करनी पड़ती है । (तिथि०)

कृष्णानवमीमें जो ध्यान होगा वह 'देवचक्रत्वके लिये पूर्वाङ्कमें होना चाहिये । यदि दोनों 'दिन पूर्वाङ्कमें नवमी पड़े, तो पूर्व 'दिनमें और पूर्व 'दिनमें यदि चाष्ट्रीनक्षत्र हो तो पूर्व 'दिनके पूर्वाङ्क-ममयमें देवीका ध्यान होगा । ध्यान करनेमें जो रात्रिपद उल्लिखित हुआ है उसे 'देव-रात्रिपद समझना चाहिये । दक्षिणायन देवताओंकी रात्रि है-इससे रात्रिपद व्यावहृत हुआ है । यदि दूसरे दिन चाष्ट्रीनक्षत्र हो, तो उसी दिन ध्यान करना चाहिये और यदि पूर्वाङ्क समय चाष्ट्रीनक्षत्र हो, तो चाष्ट्रीनक्षत्र के 'अनुरोधसे पूर्वाङ्क समयमें ही ध्यान करना होगा ।

'पछीमें यदि ध्यान करना चाहे, तो सायंकालमें करना चाहिये । जो नवमीमें ध्यान करनेमें समय नहीं है, वे ही पछीके सायंकालको ध्यान करते हैं ।

पछीके सायंकालका विवृत्तचक्रमें देवीका ध्यान करना चाहिये । जिस समय मंथरा स्थल न हुई हो, तारी अन्धेरी तरह दिखाई न पड़ते हो 'वहो समय प्रकृति ध्यानका काल है ।

पछीमें सन्ध्या समय ध्यान और धामन्त्रण करना चाहिये । पत्रिकाप्रवेशके पूर्व दिन यदि सायंकालमें पछी हो तो एक ही दिन ध्यान और धामन्त्रण होगा । किन्तु पत्रिकाप्रवेशके पूर्व दिन सन्ध्या समय पछी न हो, तो उसके

दुर्वाच (सं० त्रि०) दुःखेन वृध्यते वृध-कर्मणि खलृ ।

दुर्वाच, जो जल्दो समझने न पावे, गूढ़ ।

दुर्वाच्य (सं० त्रि०) दुःखेन वृध्यते वृध ण्यत् । दुर्वाच्य, जिसका बोध कठिनतासे हो ।

दुर्वाहण (सं० पु०) दुष्टो ब्राह्मणः । निन्दित ब्राह्मणभेद । जिसके तीन पुरुषसे देवपाठ और विहित होम शेष हो गया है, उसे दुर्वाहण कहते हैं ।

दुर्भक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन भक्ष्यते दुर भक्ष-खल । १ कष्ट द्वारा भक्षणीय, जो जल्दी खाया न जा सके । २ खानेमें बुरा । (पु०) ३ दुर्भिक्ष, वह समय जिसमें भोजन कठिनतासे मिले ।

दुर्भक्ष्य (सं० त्रि०) दुर भक्ष-ण्यत् । दुर्भक्ष, जिसका कठिन हो ।

दुर्भग (सं० त्रि०) दुःस्थितो भगो भागं यस्य । दुष्ट भाग्यान्वित, जिसका भाग्य बुरा हो, अभाग ।

हरिवर्धनं लिखा है, कि जो पाप करता है वही दुर्भग ही कर जन्मग्रहण करता है ।

दुर्भगत्व (सं० क्लृ०) दुर्भगस्य भावः दुर्भगत्व । दुर्भगता ।

दुर्भगा (सं० क्लृ०) दुर्भग-टाप । १ पतित हरिहता स्त्री, वह स्त्री जो अपने पतिके छोड़के वर्धित हो । इसका पर्याय-विरक्ता, विह्वला, निष्ठा और सोभाग्यरहिता स्त्री है । (त्रि०) २ मन्द भाग्यवाली, अभागिन ।

दुर्भन (सं० त्रि०) दुष्टो भनः । जो सड़जमें टूट न सके ।

दुर्भर (सं० त्रि०) दुःखेन म्रियते दुरभ-खलः । १ दुःसह, शुद्ध, भारी । २ जिसे उठाना कठिन हो, जो काढ़ा न जा सके ।

दुर्भरा (सं० क्लृ०) ज्योतिष्प्रतोत्तता ।

दुर्भागी (हि० वि०) अभाग, मन्द भाग्यका ।

दुर्भाग्य (सं० क्लृ०) दुष्ट भाग्यं । प्रादिसं० । १ दुर्दृष्ट, मन्द भाग्य, खोटी किस्मत । २ पाप । (त्रि०) दुःस्थित भाग्यं यस्य । ३ दुष्ट भाग्ययुक्त, मन्द भाग्यका । ४ हत भाग्य, अभाग ।

दुर्भाव (सं० पु०) १ दुरा भाव । २ द्वेष, मनोमालिन्य, मनमोटाप ।

दुर्भाविना (सं० स्त्री०) दुष्टा भावेना । १ दुश्चिन्ता, बुरी भावना । २ चिन्ता, चन्दे शा, खटका ।

दुर्भाव्य (सं० क्लृ०) दुःखेन भूयते दुर भू-ण्यत् । अभावनीय, जिसकी भावना सहजमें न हो सके ।

दुर्भाषित (सं० त्रि०) दुष्टः भाषितः । १ मन्दकथन, खराब बचन । दुर्भाषितं यस्य । २ कर्कशभाषी, कटु वचन बोलनेवाला ।

दुर्भाषित (सं० त्रि०) दुःखेन भाषते दुर भाष-णिनि । दुष्टभाषी, कटु वचन बोलनेवाला ।

दुर्भिच (सं० क्लृ०) मिचायाः अभावः अश्रयोभावसमासे अश्रं अश्रयत्वं । मिचाया अग्रानि काल, ऐसा समय जिनमें मिचा या भोजन कठिनतासे मिले, अकाल, कहत । जिस देशमें जितना शय्य होना आवश्यक है, उस देशमें शयना नहीं होनेसे दुर्भिच होता है । जो कुछ पहले उत्पन्न हुआ था, उससे निवृत्त होनेसे चेष्टा करने पर भी फिर स्वाद्य द्रव्यादि नहीं मिलता, इसलिये दुर्भिच था पहुँचता है । दुर्भिचकारक वर्ष का विषय ज्योतिष्शास्त्रमें इस प्रकार लिखा है—

षष्टि संवत्सरके मध्य १७ प्रमाणों नामक संवत्सरमें राष्ट्रमहः, दुर्भिच, चोरका उपद्रव और चोर विपद्य होता है । २० व्यय नामक संवत्सरमें, ३४ शर्वरी संवत्सरमें, ३५ ज्ञवत्संवरमें, ५० अनल संवत्सरमें दुर्भिच पड़ता है । ५१ पिङ्गल संवत्सरमें नर्मदाके किनारे, ५५ कुम्भ ति नामक संवत्सरमें सामान्यरूपसे दुर्भिच ५६ रक्षा संवत्सरमें, ५८ क्षौद्र संवत्सरमें और ६० अश्व संवत्सरमें विषम दुर्भिच तथा तरङ्ग तरङ्गके उपद्रव हुआ करते हैं ।

जिस समय अज्ञानसे मोदक, कुत्ते आदि मांस और हज्जो लेकर नगरमें प्रवेश करें अथवा उसे घरमें छोड़ भाग जाय, उस वर्षमें दुर्भिच पड़ता है; अथवा अज्ञान भूमिमें परिणत हो जाता है ।

“मावात्पिनी अमादाय अज्ञानाद अश्रवायसा ।
अश्रवायलोपवा सप्ये पुरयश्च प्रविशन्ति चेत् ॥
निरिन्ति गृहादौ च अज्ञानं सा मही मवेत् ।

अथामात्र महायोगे दुर्भिसमाकृतया ॥” (ज्योतिषतत्त्व)
दुर्भिच आदि राष्ट्रविप्लवमें यदि अशोधादिका विमेष नियम उल्लङ्घन किया जाय, तो, वह दोषावह नहीं है ।

पूर्व दिन मन्त्रा समय ध्यान और दूसरे दिन मन्त्रा के समय सामन्त करना होगा। जिस समय दोनों दिन मन्त्रा समय यही हो वही समय दूसरे दिन मन्त्रा समय ध्यान करना चाहिये। यदि दोनों ही दिन मन्त्रा समय पड़ो न हो; तो पूर्वाह्न-पठोंमें बोधन करना होगा। (विधि-०)

प्रतिपदादि कल्प-याग्रिमसामके शुरुषमें नवरात्रक-विधिका अनुष्ठान और प्रतिपदादि क्रमसे महा-नवमी तक विधिपूर्वक पूजन करना चाहिये। प्रतिपदमें कल्प चारभ करके महानवमी तक देवीमाहात्म्यका पाठ और पूजन करना चाहिये। प्रतिपदमें वेशभूषण, द्रव्य, हितोद्यामें पट्टोर, ततोद्यामें दर्पण, सिन्दूर-और चमकक, चतुर्थीमें मधुपर्क, तिसरक और-नेत्रमण्डल, पद्योंमें भद्रराम और यथाशक्ति चमकक, पठोंमें विल-हकमें ध्यान, मद्यमीमें पूजन, चट्टीमें उपवास और चट्ट-गतिकी पूजा, नवमीमें-उद्यनगडा और चान्द्या देवना-ओंकी पूजा, वलिदान-और कुमारोपूजा करना चाहिये। दशमीमें पूजा करके विसर्जन करना पड़ता है।

इस तरह विधिपूर्वक जो भगवतीकी पूजा करते हैं उनके सब क्रिये जाते रहते हैं तथा ये पुत्र, धारा, धन और चान्द्यादि विविध सुखोंको प्राप्त करते हैं, और भगवतीमाय हम देवकी परित्याग कर भगवतीके गर्भमें गिने जाते हैं, सभी विधानकी नवरात्रक कहते हैं।

पठादिकल्प-पठोंके दिन प्रातःकालमें वस्त्रारम्भ करके मन्त्रा समय विलगावा-और फलमें ध्यान करना चाहिये। समझमें बोधन, विलगावा-ना कर पूजा करनी पड़ती है। चट्टीमें पूजा और ज्ञानरत्न, नवमीमें प्रभुत वलिदान और पूजा तथा दशमीमें शायरोत्सव नाम विसर्जन करना चाहिये।

साधारणतः प्रायः ये दो तीन कल्प देखे जाते हैं, नवम्यादिकल्प, प्रतिपदादिकल्प और पठरादिकल्प। कई जगह इन तीन कल्पोंमें किसी एक कल्पसे अनु-मार दुर्गाकी पूजा की जाती है, किन्तु कुलाचारके अनु-सार जिसका जिस कल्पका विधान है वो उसी कल्पसे अनुसार पूजा करते हैं। क्योंकि कुलाचार उल्लङ्घन करना शास्त्रमध्यत नहीं है।

जिस दिनमें कल्पारम्भ हो उस दिनमें नैऋत मन्त्रा नवमी तक पूजन और विद्या दशमीमें विज्ञान करना पड़ता है, तथा प्रतिदिन देवीमाहात्म्य और कल्प-श्रुत्यादिका पाठ करना होता है।

पुराणादिमें जोचित भगवतीका साक्षात् पढ़नेसे सब प्रकारकी कामनाएँ मिट होती हैं। मार्कण्डेय-पुराणात्सर्ग चण्डोमें इस प्रकार लिखा है—

“शरत्काले महापूजा कियते या य वापि न।

तस्यां भवेत्समाहास्यं नृणां भक्तमन्वितः॥

उवाचापाशिविपु को वनचाम्पवृणाश्रितः।

मनुष्यो मत्पूजनेन अधिपति न संशयः॥” (चं. ६)

शरत्कालमें जो महापूजा होती है उसमें चण्डो-माहात्म्य पचस्य पठनीय है, जो भक्तिपूर्वक देवी-माहात्म्य पढ़नेवा सुनते हैं, वे सब प्रकारकी विपदाएँ मुक्त होते हैं।

नवम्यादि कल्पारम्भसे मन्त्रानवमी तक प्रतिदिन एक बार करके देवीमाहात्म्यका पाठ करना चाहिये। कोई कोई कहते हैं, कि देवीमाहात्म्यका एक ही बारका पाठ काफी है, प्रति दिन पाठ-कारनको कोई जरूरत नहीं। इस पर रहनुन्दनने कहा है, कि एक बार पाठ करनेसे माध्याय, मिट होता है; तो भी फल-वाट्स्यके कारण पुनः पुनः पाठ करना आवश्यक है।

प्रतिपदादिकल्पमें प्रतिपदमें महानवमी तक और पठा-दिकल्पमें पठोंसे महानवमी तक पाठ करे। नवम्यादि कल्पमें नवमीमें बोधन-करके पद्यप्रयोगसे पूर्व दिन पर्याप्त पठोंमें सायंकालकी सामन्तय और अधिपान करें। यदि नवमीरे दिन बोधन न कर सके तो यहीके दिन बोधन, सामन्तय और देवीता अधिवास करना होता है।

बोधन और सामन्तयका मन्त्र भेदानुसार एक नहीं है, भिन्न भिन्न है। बोधन-मन्त्र—

“भीष्टसे बोधयामि त्वां यावत् पूजां करोमह” ॥

ये शब्द नवरात्रक शायरोत्सवमात्रमात्रमात्र ॥

अथवा बाटनी बोधो देव्यास्तयि हतः पुरा ॥

महामयापिने तद्वत् बोधयामि सुरेश्वरी।

... शब्दोपनि य. स बोधय. प्रातः शायरोत्सवमात्रमात्र ॥

"इतिहासकाराणां च मूलतः धर्मोक्तिरिति वा ।

॥१॥ य न कुर्वन्ति दानपयस्तेभ्यः ॥”

(गद्यपद्य २३४ भा)

जो ताँ पयने दीहामे ई पोर उल्ला शिरागमन
नहीं कृपा है, हमने पयने यदि पदाम पद लाय, तो
यनि हमे पयने घरमे ला सकता है, इसमें कोई दोष
नहीं है।

“एवमादि पशुः प्राणिभिरुच्चैः सद्युच्यते ।

परिना नीयमानायाः पुत्रशुद्धौ न दुःश्रुतिः ॥" (उद्योतिसुम्ह)

तस्मादहं त्वां प्रतिबोधयामि विमृश्याम्यप्रतिपदिहेतोः ।
 'बोधेन' रामेन इतो दशास्य सत्येव शत्रून् विनिपातयामि ॥"

चामन्त्रणका मन्त्र—

'भिरुम' दार' कैलेंधेदिमवच्छिदरे गिरौ ।

'जातः' भीकलेहस्तव' अ' भिकोयाः सदा प्रियाः ॥

भीरीहशिकरे जातः । भीकलः भीनिकेतनः ।

भैरवोऽपि मया 'सक्त' पूज्यो दुर्गा स्वहस्तः ॥"

समस्त्योदिकल्पः—याज्ञिकमासकोद्देशका समामीसे महा-
 नवमी तक देवीकी पूजा करने होती है। सममी
 तिथिमें कल्याण करके नवपत्रिका और 'समस्त्यो भग-
 वतोकी प्रतिमापूजा तथा' चष्टमीमें महास्नान कराना
 होता है। पद्मगन्ध, गायत्रो, कवाय, गन्धादि, तीर्थ-
 वारि, सब प्रकारकी ओषधि, शृङ्गार, कलस, पुष्परत्नादि
 तीर्थ प्रभृति तथा गीत, वादित, नाच द्वारा महास्नान कया-
 नेका विधान है। बाद पूजा, नाना प्रकारके उपवासादि
 द्वारा नैवेद्य और तिलधान्यादि संयुक्त विस्वपत्र द्वारा
 होम करना होता है। स सारमें जो सब काय्य सज्ज है,
 वे इनो होम द्वारा प्राप्त होती है, इतना ही नहीं, मनुष्य
 दोषार्थ, पुत्र और विपुल धनधान्यादि संमन्वित होते है।
 नवमीमें इसी विधिके अनुसार पूजा की जाती है और
 देवीको प्रसन्न करनेके लिये बलि चढ़ाई जाती है। इस
 प्रकार विधिके अनुसार पूजा करनेसे इस जन्ममें विविध
 भोग करके भन्तमें स्वर्गको प्राप्त होती है।

पत्नीप्रवेश-व्यवस्था—मूलानुष्ठययुक्त सममी तिथिमें
 या केवल सममीमें पूर्वाह्न समय पत्नीप्रवेश यथावत् नव-
 पत्रिकाकी स्थापना करने होती है। दोनो दिन यदि
 पूर्वाह्न लाभ की, तो दूसरे दिन पत्नीप्रवेश होगा। इनमें
 तिथियुग्मादिका विचार नहीं किया जाता।

पूर्वाह्न समयमें नवपत्रिकाप्रवेश अत्यन्त शुभ और
 सिद्धिदायिनी है। मध्याह्न समयमें पत्नीप्रवेश करनेसे जन-
 वेद न और चय तथा सायाह्नकालमें वध, बन्धन और
 नाना प्रकारके अशुभ होते है। इसीसे पूर्वाह्न समयमें
 नवपत्रिका प्रवेश प्रशस्त माना गया है।

नवपत्रिका—कंदरी, दाड़िम, धान्य, जरिरा,
 मानके, कज्जू, चिन्त, चम्रो और मयत्तीपत्र वे ही नौ
 नवपत्रिका है। नवपत्रिका देवी ।

पत्नी स्थापन करके 'समस्त्यो' सूक्ति को प्राणप्रतिष्ठा
 करने होती है। क्योंकि देवप्रतिमामें प्राणप्रतिष्ठा नहीं
 करनेसे उसमें देवत्व नहीं होता। प्राणप्रतिष्ठाके बाद
 यथाविधि नाना प्रकारके उपहार द्वारा देवीका पूजन
 किया जाता है।

महाष्टमीके दिन उपवास, नाना प्रकारके उपहार
 और बलि द्वारा भगवतीकी पूजा करने होती है।
 चष्टमीमें भी धनिदानका विषय व्यवस्थापित हुआ है,
 किन्तु देवीपुराणके सूचनानुसार चष्टमीको धनिदान
 करनेसे वशनाग होता है। इस पर श्रुतमन्त्रने कहा
 है कि चष्टमीमें बलिदान जो निषिद्ध बतलाया है, वह
 सन्धिपूजाके बाद, कारण सन्धिपूजा चष्टमीके शेष दण्ड
 और नवमीके प्रथम दण्डमें होती है।

सन्धिपूजा—चष्टमी और नवमीकी सन्धिमें योगि-
 निर्वोके साथ देवीकी पूजा करने होती है। इनमें चष्टमी-
 के जेपदण्ड और नवमीके प्रथमदण्डमें जो देवीकी पूजा-
 की जाती है, वह अत्यन्त फलदायक है। चष्टमी और
 नवमीकी सन्धि रात्रिभागमें हो प्रशस्त, अर्द्धरात्रिमें दग-
 गुण, सन्ध्यापरात्रमें द्विगुण फलदायक है। इस सन्धि-
 कालकी उमासहस्ररतिथि कहते हैं।

महाष्टमी तिथिको पुत्रवान् व्यक्ति उपवास न करे।
 नवमीमें विविध बलि प्रभृति उपहार द्वारा देवीकी पूजा
 करे। चष्टमी वा नवमी इन दो दिनोंमें से किसी एक
 दिनमें होम करना होता है, किन्तु महाष्टमी दिनका
 होम प्रशस्त है। वष और स्त्रीय पाठ करके नवमीके
 दिन दक्षिणास्त करना चाहिए। देवीके पूजोपहारके
 विषयमें जिनकी भी मौ शक्ति है, उन्हें उसो प्रकार पूजा
 करने चाहिये।

महाष्टमीके दिन की उपवास करनेका विधान है।
 महाष्टमी पूजाके दूसरे दिन यदि सन्धिपूजा हो, तो उस
 दिन उपवास नहीं होगा।

महानवमी पूजाकल्प—याज्ञिक मासमें महानवमी-
 की भगवतीकी पूजा की जाती है।

"तस्यासिद्धेको वरदा शुक्ले चाश्व मुनस्य च ।

तस्मात् सा तत्र संपूज्या नवमी चण्डिका मुने ॥"

(सिद्धि०)

होती है। इसका विषय निम्न यस्मिंशुमें इस प्रकार लिखा है—चाण्डाल, उदक, सर्प, ब्राह्मण, विद्युत्, दंष्ट्री और पयसे पापियोंको जो मृत्यु होती है, उसे दुर्मरण कहते हैं। इस प्रकार जिनकी मृत्यु होती है, उनके उद्देश्यसे यदि उदकादि क्रियाएँ की जायें, तो वे विफल होती हैं। जो क्रोधमें आ कर अग्नि, अग्नि, विष, वह्मन्, जल, गिरि और हस्तसे पतन, इनमेंसे किसी एक उपायसे प्राण स्वाग करे, तो इस प्रकारको मृत्यु भी दुर्मृत्यु कहलाती है।

ऐसे व्यक्तिका दाह, अश्वेष्टिक्रिया आदि कोई संस्कार नहीं होता। यदि कोई मोहवश दाहादि करे, तो उसे प्रायश्चित्त ले कर शुद्ध होना पड़ता है।

दुर्मृत्यु के लिये दानादि करने होते हैं। इसका विषय विश्वप्रकाशादिमें इस प्रकार लिखा है,—सर्प द्वारा मृत्यु होनेसे काश्चन, वस्त्री द्वारा निहन होनेसे चार निष्क सुवर्ण, राजासे हत होनेसे चिरभय पुत्रव, औरसे मारे जानसे धेनु, शत्रुसे हत होनेसे यथायाज्ञिकाश्चन, शय्यासे मृत्यु होनेसे शय्या, ग्रीवहोन पवस्थानमें मृत्यु होनेसे दो निष्क सुवर्ण, संस्कारहीन हो कर मरनेसे ब्राह्मण शालिकको उपनयन, अश्व द्वारा हत होनेसे तीन निष्क सुवर्ण-निर्मित शय्य, कुकुर द्वारा हत होनेसे शक्तिसे पशुसार सेवपासका स्थापन, शूकर द्वारा हत होनेसे सदस्त्रिण महिष, उच्छ्वानसे गिर कर मरनेसे धान्य पर्वत, विष स्वाकर मरनेसे सुवर्णनिर्मित मेदिनी, उच्छ्वान द्वारा मृत्यु होनेसे कनकनिर्मित कपि, प्रस्तर द्वारा निहत होनेसे सवक्ता पयस्विनी धेनु, जल द्वारा मृत्यु होनेसे क्षेमवक्ष्ण, विषुचिकारोगसे मृत्यु होनेसे शत ब्राह्मण-भोजन, कासरोगसे मृत्यु होनेसे अष्ट कच्छवत, अतिचाररोगसे मरनेसे लाख गायत्रिका जप, अन्तरीक्षसे मृत्यु होने पर वेदपारायण, विद्युत्पात द्वारा मृत्यु होनेसे विद्यादान और पतित हो कर मृत्यु होनेसे षोडश प्राजापत्यका अनुष्ठान करना होता है। कंपरमें जितने प्रकारकी मृत्यु बतलाई गई हैं, समी दुर्मृत्यु हैं। इस प्रकारकी मृत्युसे तथा अपलरहित हो कर मरनेसे नवति लक्ष्मणाभ्याय करना होता है। ये सब अनुष्ठान कर चुकनेके बाद मृत्युयाज्ञिकी शौचदेहिक क्रियायें की जाती हैं। मृत्यु देखो।

दुर्मरण (सं० स्त्री०) दुर्-मृ-च्छुट्। बुरे प्रकारसे होनेवाली मृत्यु। दुर्मर देखो।

दुर्मरत्व (सं० स्त्री०) दुर्मरस भावः दुर्मर-त्वः दुर्मरता, दुर्मृत्युका भाव।

दुर्मरा (सं० स्त्री०) दुर्मर-टाप्। १ दूर्वा, दूब। २ खेत-दूर्वा, सफेद दूब। ३ शतमूली।

दुर्मर्ष (सं० पुं०) दुःखेन मृत्यते दुर्-मृष कर्मणि ललृ। दुःख द्वारा मर्षणीय, जिसे सहन करना कठिन हो।

दुर्मर्षण (सं० पुं०) दुर्-मृष भाषायां लृन्, वाधित्वात् युच्। १ वह जो बहुत कठिनतासे सहन किया जाय। २ विष्णु। ३ छतराष्ट्रका पुत्रभेद, छतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।

दुर्मर्षित (सं० त्रि०) दुर्-मृष-त्त। वैरता-साधनमें उत्तेजित, जो बदला चुकानेकी घातमें हो।

दुर्मलिका (सं० स्त्री०) दृग्यकाव्यरूप सपरूपकर्मद। नाटिका, मोटक, गोष्ठो, सटक आदि अनेक तरहके दृश्य नाट्य हैं, दुर्मलिका उनमेंसे एक है। इसमें दाक्षरस प्रधान होता है और यह चार बहनोंमें समान होता है। इसमें गर्भाङ्ग नहीं होती, बल्कि नायक होता है। प्रथम पङ्क्तिमें त्रिनालि होती है जो विष्की स्त्रीहृदसे पूर्ण रहती है। द्वितीय पङ्क्तिमें पञ्चनालि और विद्रूपकका विषय, तृतीय पङ्क्तिमें पञ्चालि और पौष्मदनका विषय तथा चतुर्थ पङ्क्तिमें दम्पनालि और क्षौद्रित नायक होता है। जिसमें ये सब लक्षण पाये जायें, उसे ही दुर्मलिका कहते हैं। जैसे, विन्दुमतो।

दुर्महो—दुर्मलिका देखो।

दुर्माक्षय (सं० स्त्री०) दुष्ट माक्षयं। दुष्ट माक्षय, ईर्ष्या, डाह।

दुर्मायुध (सं० त्रि०) दुष्टान्यायुधानि मिन्वन्ति मि सेधे चन्। दुष्टायुधसेपक, खराब अस्त्र के कनेवाला।

दुर्मित्र (सं० पुं०) दुष्ट मित्रं प्रादिस्० पमितवत् पुंस्त्वं। १ अमित्र, शत्रु। (त्रि०) दुःस्वितं मित्रं यच्। २ दुष्ट-बन्धुबन्धु, जिसके खराब मित्र हो।

दुर्मित्रिय (सं० त्रि०) दुर्मित्राय अमित्रत्वाय साधु। पमित भावसे अवस्थित।

दुर्मिल (सं० पुं०) १-भरतके पुत्रविशेष, भरतके सात

जाती है। इस तिथिमें राजाओंकी विजययात्रा अत्यन्त श्रमदायक होती है। इस दिन यदि वे यात्रा न करें, तो उनके राज्यमें वर्ष भरके भीतर कोई दिजय नहीं होगी।

(तिथि १०)

यदि राजा स्वयं यात्रा करनेमें थक जायें, तो खुद्दादिकी यात्रा करानी चाहिये। इस विजययात्रामें दो दिन दुर्गानामका जप करनेसे विशेष फल प्राप्त होना है। कौनो ही विपत्ति क्यों न आ पड़े, दुर्गानामका जप करनेसे वह जाती रहती है।

‘‘दुर्गा दुर्गेति दुर्गेति दुर्गानामं १२ मनुं ।

यां जपेत् सप्ततं वशिष्ठ जीवन्मुक्तः ॥ १३ मानवः ॥

महोत्पातं महारोगं महाविषमं मृदयेत् ।

महादुःखं महाशोकं महाभयसमुत्थितं ॥

यः सरेष्ट सप्ततं दुर्गां जपेत् यः परमं मनुं ।

स जीवन्मोक्षं देवैश्च नीलकण्ठवज्रपाशपाद ॥’’

(सुब्रह्मसंहिता)

प्रातःकालमें सठ घर जो दुर्गानामका चरण करते, उनके भी सब हकीरा जाते रहते हैं। दुर्गा नाम भव-समुद्र पार करनेका तारिखल्प है। भक्तिपूर्वक जो दुर्गानाम लेते उन्हें भूभोष्ट फल प्राप्त होते हैं। दुर्गानामसे सब विपत्तियां दूर हो जाती हैं। दुर्गादेवीका विमर्जन हो जानेके बाद घर भी कर पिता, माता और पुत्रकी पणाम तथा प्राप्तीय, स्वजन तथा वन्धुबान्धवोंके साथ प्रेमसिंहन करना चाहिये। दुर्गास्वयं हिन्दुओं-



का एक प्रधान उत्सव है। लेकिन, बहुतोंमें यह उत्सव जिस समारोहसे मनाया जाता है, वेमा और किसी देशमें देवनेमें नहीं आता। हिन्दूगण अपना अपना

कामकाज छोड़ कर तीन दिन तक इस महोत्सवमें लगे रहते हैं। उनका कहना है, कि ऐसा दिन मानके भीतर गौर कभी नहीं आयेगा। जो लोग दूर दूर देशोंमें नौकरी करते हैं, वे भी इस उत्सवमें घर आनेसे बाज नहीं आते, खर्चकी कुछ परवाह नहीं करते तथा उत्सवमें योगदान दे कर अपने जीवनकी धन्य समझते हैं। देवी विजयनके बाद वे आनन्दसागरमें गोते मारते हैं, यहाँ तक कि कहर शत्रु भी अपराध भूल कर छले गले गले मिलते हैं।

दशभुजा दुर्गाकी स्थायी प्रतिमाका पूजन सब जगह नहीं होता। बङ्गालमें इसकी भरमार है। भार्या-वर्त्त तथा दाक्षिणात्यके दूसरे दूसरे स्थानोंमें जहाँ भगवतोकी शक्तिवृत्ति प्रतिष्ठित है, वहाँ विगेष कर देवी-पूजा और उत्सवादि होते हैं। बहुत जगह तो घट-स्थापन करके ही महादेवीकी पूजा की जाती है। बङ्गाल भिन्न अन्य स्थानोंमें इस उत्सवकी दृश्या कहते हैं। दक्षिण प्रदेशमें इस दिन कहीं कहीं चण्डीपाठके बदलेमें वेद पाठ होता है। महाविषय, धारणीपूजा और शर्वती पूजा आदि शब्दोंमें अपराध विवरण देखो।

दुर्गा—हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म १८६० स० में हुआ था तथा इन्होंने १८८५ स० में बहुतसो कविताएँ रचीं ।

दुर्गाचरण रचित—एक बङ्गाली वक्ता, गोविन्दचन्द्र रचितके पुत्र । १८४७ ई० में चन्दननगरमें इनका जन्म हुआ था। पिताके मरने पर ये कलकत्तेके किसी सोदागरकी यहाँ नौकरी करने लगे। साथ साथ इन्होंने स्वाधोन व्यवसाय भी धारण कर दिया। थोड़े ही समयके अन्दर वक्ता समाजमें इन्होंने खूब नाम कमाया। मरीच शहर, यदो तथा प्रान्तके अन्यत्र शहरोंमें ये स्वाधान भावसे वाणिज्य-कर-प्रभृत धनशाली हो गए। इन्होंने अपने स्वयंमें कई एक विद्यालय तथा धर्म शालाएँ बनवाई थीं। १८७२ ई० में चन्दननगरके ग्रामन घोर विधिकी व्यवस्था करनेके लिये जो ‘नोकन कौंसिल’ स्थापित हुई थी उसीसे ये सम्बन्धनाएँ गए। १८७८ से १८८५ ई० तक ये सत्र मभाके समापन रहे और इन्हींके परामर्श-नुसार सर्वकाम काज चलता रहा। १८८३ ई० में फराम

होती है। इसका विषय निम्न उक्तिधुमें इस प्रकार लिखा है—चाण्डाल, उदक, सर्प, ब्राह्मण, विद्युत्, दंष्ट्री और पयसे पापियोंको जो मृत्यु होती है, उसे दुर्मरण कहते हैं। इस प्रकार जिनकी मृत्यु होती है, उनके उद्देश्यसे यदि उदकादि क्रियाएँ की जायें, तो वे विफल होती हैं। जो क्रोधमें आ कर शस्त्र, अग्नि, विष, हृदय, जल, गिरि और हस्तसे घतन, इनमेंसे किसी एक उपायसे प्राण त्याग करे, तो इस प्रकारकी मृत्यु भी दुर्मृत्यु कहलाती है।

ऐसे व्यक्ति का दाह, अन्येष्टिक्रिया आदि कोई संस्कार नहीं होता। यदि कोई मोहवश दाहादि करे, तो उसे प्रायश्चित्त से कर शुद्ध होना पड़ता है।

दुर्मृत्यु के लिये दानादि करने होते हैं। इसका विषय विश्वप्रकाशादिमें इस प्रकार लिखा है,—सर्प द्वारा मृत्यु होनेसे काष्ठान, हस्ती द्वारा निहत होनेसे चार निष्क सुवर्ण, राजासे हत होनेसे छिरण्यपुत्र, घोरसे मारे जानेसे चेतु, शत्रुसे हत होनेसे यथाशक्ति ब्राह्मण शालककी उपनयन, शय्य द्वारा हत होनेसे तीन निष्क सुवर्ण—निर्मित पशु, कुहूँर द्वारा हत होनेसे शक्तिसे अनुसार सेवपालका स्थापन, शूकर द्वारा हत होनेसे सदक्षिण मण्डप, उद्वेगानसे गिर कर मरनेसे धान्य पर्वत, विष श्वाकर मरनेसे सुवर्णनिर्मित मेदिनी, उद्वेग द्वारा मृत्यु होनेसे कनकनिर्मित कवि, प्रस्तर द्वारा निहत होनेसे सवस्त्रा पयस्विनी चेतु, जल द्वारा मृत्यु होनेसे क्षेमदक्ष, विस्त्रिकारोगसे मृत्यु होनेसे यत ब्राह्मण भोजन, कासरोगसे मृत्यु होनेसे षट् कृष्णव्रत, भेतिमारोगसे मरनेसे लाख गायत्रीका लघ, चर्म रोगसे मृत्यु होने पर वेदपारायण, विद्युत्पात द्वारा मृत्यु होनेसे विद्यादान और पतित हो कर मृत्यु होनेसे षोडश प्राजापत्यका अनुष्ठान करना होता है। उपरमेजितने प्रकारकी मृत्यु बतलाई गई हैं। सभी दुर्मृत्यु हैं। इस प्रकारकी मृत्यु से तथा अपत्यरहित हो कर मरनेसे नवति कृष्णान्द्रायण करना होता है। ये सब अनुष्ठान कर मुक्तनेके बाद मृत्युशक्तिकी औषध देखिके क्रियासे की जाती है। मृत्यु देवी।

दुर्मरण (सं० स्त्री०) दुर्मृत्युवृत् । वृत्तिप्रकारसे होनेवाली मृत्यु । दुर्मर देखो।

दुर्मरत्व (सं० स्त्री०) दुर्मरत्व भावः दुर्मरत्व । दुर्मरता, दुर्मृत्युका भाव।

दुर्मरा (सं० स्त्री०) दुर्मरटाप् । १ दूर्वा, दूब । २ मृत-दूर्वा, सफेद दूब । ३ शतमूली ।

दुर्मर्य (सं० पु०) दुःखेन मृयते दुर-मृत्यु कर्मणि खल ।

दुःख द्वारा मर्त्यणीय, जिसे सहन करना कठिन हो।

दुर्मर्य (सं० पु०) दुर-मृत्यु भाषाया खल, यात्रित्वात् युच् । १ वह जो बहुत कठिनतासे सहन किया जाय । २ विष्णु । ३ छतराष्ट्रका पुत्रभेद, छतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।

दुर्मर्यत (सं० त्रि०) दुर-मृत्यु-त । वैरता-साधनमें उत्तेजित, जो बटना मुक्तानेको घातमें हो।

दुर्मरिका (सं० स्त्री०) दृग्प्रकाश्यरूप उपरूपकभेद।

नाटिका, नोटक, गोष्ठो, सटक आदि अनेक तरहके दृग्प्रकाश्य हैं, दुर्मरिका उनमेंसे एक है। इसमें दाक्ष-रस प्रधान होता है और यह चार पहलमें समाप्त होता है। इसमें गर्भाह नहीं होती, सत्य नायक होता है।

प्रथम पहलमें विनालि होती है जो विटकी क्रीड़ासे पूर्ण रहती है। द्वितीय पहलमें पञ्चनालि और विद्रूपकका विषय,

तृतीय पहलमें पञ्चालि और योत्तमदेनका विषय तथा चतुर्थ पहलमें दृग्प्रकाश्य और शोभित नायक होता है।

जिसमें ये सब लक्षण पाये जाति, उसे ही दुर्मरिका कहते हैं। जैसे, विन्दुमती।

दुर्मरि—दुर्मरिका देखो।

दुर्गासहाय—एक प्रसिद्ध मंजुल पण्डित। इन्होंने चण्डरत्न
चोर मुहूर्त रचन नामक मंजुल ज्योतिष ग्रन्थ तथा सप्त-
गिरि चम नामक लक्ष्मीप्रयत्न रचे हैं।

दुर्गास्मरण (मं० स्त्री०) दुर्गाया स्मरण १ तत्। दुर्गा
नाम स्मरण, दुर्गाका नाम चयन। तत्प्रकारमें लिखा
है, कि परिहृयमान मन्त्रों जगत् हो दुर्गामय है वा
नहीं हो इस मंसारके कारण है, उन्हींमें मंसारकी उत्पत्ति
हुई है। मैं दुर्गास्मरण पर्याप्त समझे हूँ, ऐसी विस्तारको
दुर्गास्मरण कहते हैं।

दुर्गाञ्ज (मं० स्त्री०) दुःखेन प्राप्तो गाह-एतत्। जिम-
का चबगाहन करना कहते हैं।

दुर्गाञ्ज (मं० पु०) दुर्गा पाञ्जा यस्य। भूमिज गुग्गुलु,
भूमिगुग्गुलु।

दुग्गुल (मं० पु०) दुट्ठगुल, दोष, ऐष, बुराई।

दुर्गभि (मं० स्त्री०) दुःखेन गृह्यतेऽसौ दुर्ग-यष्ट कर्मणि
कर्मणि कि, सम्प्रसारणं वेदेऽस्य भः। दुर्गाह, जिसे
कठिणतासे पकड़ सकें।

दुर्गेश (मं० पु०) दुर्गाध्वज, किलेश्वर।

दुर्गलम्ब (मं० पु०) दुर्गायाः लम्बः। दुर्गापूजा निमित्त
लम्ब, दुर्गापूजाका लम्ब जो भवरासमें होता है।

दुर्गह (मं० स्त्री०) दुःखेन गृह्यतेऽसौ दुर्ग-यष्ट कर्मणि
यत्नः। १ दुःख द्वारा प्रचोय, जो कठिनी पकड़नेमें न
पावे। २ दुर्गह, जो कठिणतासे सम्भक्त पावे। ३
दुरात्मक। (स्त्री) ४ उपामार्ग, चिपट्टी।

दुर्गहा (मं० स्त्री०) १ मुक्ता, मोथा। २ उपामार्ग, विचट्टी।

दुर्गाञ्ज (मं० स्त्री०) दुःखेन गृह्यतेऽसौ दुर्ग-यष्ट कर्मणि
एतत्। यष्ट करनेमें पराजय, जिसे कठिणतासे पकड़
सकें।

दुर्गट (मं० स्त्री०) दुःखेन घट्यतेऽसौ दुर्ग-यष्ट कर्मणि
यत्नः। दुःखप्रय, मुश्किलमें होने जायत।

दुर्गटना (मं० स्त्री०) दुर्गटना घटना घटना। १ पराजय
घटना, ऐसी बात जिसमें होनेमें बहुत कष्ट या पीड़ा
हो। २ विपद्, पावन।

दुर्गीय (मं० पु०) दुर्गटः पीडो निगादी यस्यः। १
भयङ्कर, भयान। २ दुर्गट, कट, घटन। (स्त्री) ३
दुर्गटगुल, जिमसे कट, या कटने बचन निकाले।

दुर्जन (मं० पु०) दुष्टो जनः घादिनः। दुष्टजन, लम्ब,
पीटा चादमो।

यदि दुर्जन विधाभूयित भो हो, तो भो उसका मंग
नहीं करना चाहिये। मविभूयित मर्ष क्या भयङ्कर नहीं
होता? दुर्जन विधावादी होने पर भो उस पर विद्याम
नहीं करना चाहिये, क्योंकि उसकी मुचमें तो मनु है, पर
हृदयमें हलाहल विष भरा है। इन्हीं सब कारणोंसे
दुर्जनको दूरसे ही परित्याग करना चाहिये। दुर्जन
सर्पसे भी बड़ कर भयङ्कर है। अतः दुर्जनसे मर्ष
चयन हो रहना चाहिये। (वाचस्पत्य)

कुमारसम्भावमें लिखा है, कि दुर्जन उपकार हाथ
हो जाता होता है न कि उपकारसे। दुर्जनका उपकार
करना अच्छा नहीं है। जो दुर्जनका मंग करता है,
यह महापातक है।

दुर्जनता (मं० स्त्री०) दुष्टता, पीटापन।

दुर्जनदास—एक हिन्दो कवि। इन्होंने एक पुस्तक निजो
जिमका नाम रागमाता है।

दुर्जनगाल—राजपुतानेके अन्तर्गत कोटाके एक प्रसिद्ध
राजा। ये कोटाराज भोमसिंहके तोमरे लड़के थे।
पिताके मरने पर पहले इनके बड़े भाई अर्जुनसिंह
राजा हुए थे, किन्तु चार वर्ष राज्य करनेके बाद नि-
सन्तान अवस्थामें उनकी मृत्यु हो गई। पीछे मन्त्रेण्यम्
सिंह चोर छोटे दुर्जनगाल से दोनों भाई सिंहासनके
निये भगदुनी लगे। अन्तर्गत दोनोंमें खूब भारी लड़ाई
दिड़ी। बुद्धिमें अन्त्यमसिंह मारे गये, इस पर दुर्जनगाल
के जोकका पाराशर न रहा। अन्तर्गत १००० मन्त्रोंको
शोकमन्त्र हृदयसे ये पिछे सिंहासन पर पादुका हुए।

मुगल-सम्राट् महमूद शाह इन्हें बहुत चाहते थे।
इनके साथ नानुमार महमूद शाह ने यह दुष्क रचना दिया
या कि यमुनाके किनारे जहाँ जहाँ दरजानि बाध
करती है, वहाँ वहाँ मुगलसाम्रज्य मोहता नहीं पर
सकते।

१८५५ मन्त्रमें हरराज दुर्जनगालके नाव महापाद-
भाषक पेशवा बाजीरावने मिलना को। किन्तु यह
मिलना स्याही न रही। १८०० मन्त्रमें, हरराज
ईश्वरसिंहने कोटाको दखनमें आनेको इच्छामें आट

दुर्लभस्थायी (सं० पु०) वाग्मीरके श्रीनगरमें प्रतिष्ठित
देवमूर्त्तिविशेष ।

दुर्लभा (सं० स्त्री०) १ जोवन्तो । २ श्वेत कण्टकारी,
सफेद भटवटैया । ३ रत्नदुरालभा, खान जवासा ।

दुर्लक्षित (सं० स्त्री०) दुर्-लक्ष ईश्वर्या भावे क्त ।
१ दुर्घटना, बुरा काम । २ दुर्घटित, दुष्कर्म, पाप । (त्रि०)
३ दुष्कर्म करनीवाला । ४ चपल, चंचल ।

दुर्लभित (सं० स्त्री०) दुर्-लभ-क्त । दुर्घटा, बुरा
काम ।

दुर्लभ (सं० पु०) दुःखिन लभ्यते दुर्-लभ-वच् । दुःख
द्वारा लाभ, बहुत कठिनतासे प्राप्त होनेवाला ।

दुर्लक्ष्य (सं० स्त्री०) दुष्टं लिख्यं । १ गहिं त लेख्य-पत्र,
भावस्थकीय कागज पत्रादिक नष्ट हो जाने पर जो दूसरी
बार कागज लिखा जाता है, उसे दुर्लक्ष्य कहते हैं ।
नारदके मतानुसार निपिकी बचर मोप कर दुष्ट भावसे
भूठ बना कर जो लिखा जाता है उसे दुर्लक्ष्य कहते हैं ।
अर्थात् कागजमें जैसा लिखा था, वैसा न लिख कर
अपनी भावस्थकताके अनुसार भूठ बना कर लिखना ।
(त्रि०) २ जो बुरा लिखा हुआ हो, जिसको लिखावट
बुरी हो ।

दुर्वच (सं० त्रि०) दुर्दुःखिन वच्यते दुर्-वच-खल् ।
१ जो दुःखसे कष्टा जा सके, जिसके कर्मानमें कष्ट हो ।
२ जो कठिनतासे कष्टा जा सके । (पु०) ३ दुर्वचन,
गाली ।

दुर्वचन (सं० पु०) दुर्वाच्य, कष्ट, वचन, गाली ।
दुर्वचस् (सं० स्त्री०) दुष्टं वचः । गहिं त वाच्य, कष्ट
वचन ।

दुर्वारा (सं० पु०-स्त्री०) दुष्टो वाराहः प्रादिसं० । गहिं त
वाराह, पालतू सूअर ।

दुर्वर्ण (सं० स्त्री०) दुर्-निन्दितं-शुवर्णाद्यपेक्षया वर्णं
यस्य । १ रजत, चांदी । २ एतद्वातुका, पशुवा । (त्रि०)
३ निन्द्यवर्ण युक्त, खराब जातिका । ४ खराब रंगका ।
५ खेतकुछी, जिसे सफेद कोढ़ हुआ हो । (पु०) दुष्टो
वर्णः । ६ निन्दनीय ब्राह्मणवर्ण । ७ दुष्ट पक्षर,
खराब पक्षर ।

दुर्वर्त्ता (सं० त्रि०) दुर्-व-कर्मणि लृत् । दुर्वार, जिसका

निवारण कठिन हो, जो जल्दी रोकान जा सके ।

दुर्वस (सं० त्रि०) दुःखेनोच्यतेऽत्र दुर्-वम वाहु० धाधारे
खल् । कष्टसे वामयोग्य, जहां रहनेमें बहुत कष्ट हो ।
दुर्वमति (सं० स्त्री०) दुःखेन वमतिः । दुःखमें अवस्थिति,
जहां रहनेमें बहुत तकलीफ होती हो ।

दुर्वह (सं० त्रि०) दुःखेन वह्यते अनेन दुर्-वह कर्मणि
खल् । दुःख द्वारा वहनीय, जिसे उठाकर ले चलना
कठिन हो ।

दुर्वहक—सुभाषितावलोष्टत एक प्राचीन मंस्कृत कवि ।
दुर्वच- (सं० स्त्री०) दुर्दुष्टा निन्दिता वाक् । १ निन्दित-
वाक्य, बुरा वचन । दुष्टा वाक्यस्य । (त्रि०) २ निन्दित
वचनान्वित, जिसकी बोली बहुत कर्काश हो ।

दुर्वाच्य (सं० स्त्री०) निन्दं वाच्यं प्रादिसं० । अपवाद,
अकीर्ति, निन्दा ।

दुर्वाद (सं० पु०) दुष्टो वादः प्रादिसं० । १ अकीर्ति,
अपवाद, बदनामी । २ स्निग्धक प्रमियवाक्य, स्तुति
द्वारा कष्टा हुआ प्रमिय वचन । ३ निन्दित वाक्य, अनु-
चित वचन ।

दुर्वान्त (सं० स्त्री०) दुष्टं वान्तं प्रादिसं० । १ विधानाति-
क्रम द्वारा वसन, अनियमित उत्तरी । दुःस्थितं वान्तं
यस्य । २ दुष्टवसनयुक्त, जिसे अनियमित उत्तरी होती
हो ।

दुर्वार (सं० त्रि०) दुःखेन वार्यतेऽगौ दुर्-वारि-खल् ।
कष्टसे वारणीय, जिसका निवारण कठिन हो ।

दुर्वारण (सं० त्रि०) दुःखेन वारणमस्य । १ कष्टसे वार-
णीय, जो जल्दी रोकान न जा सके । (पु०) २ मिव,
महादेव ।

दुर्वारि (सं० त्रि०) दुर्दुःखेन वारिवारिणं यस्य । कस्योज
देवीय योधभेद, कस्योज देवका एक वीर की महा-
भारतकी लड़ाईमें लड़ा था ।

दुर्वारित (सं० त्रि०) मन्दभावसे निवारित वा शासित ।
दुर्वार्त्ता (सं० स्त्री०) दुष्टा निन्दिता वार्त्ता । दुष्टवार्त्ता,
बुरी खबर ।

दुर्वार्य- (सं० त्रि०) दुःखेन वार्यतेऽगौ दुर्-वारि-खल् ।
अति कष्टद्वारा वारणीय, जो जल्दी रोकान न जा सके ।

दुर्वासना (सं० स्त्री०) दुर्दुष्टा वासना । १ दुष्ट वासना,

यदा तथा महापातकादि दोषयुक् दूषित है, उसकी साक्षी ग्राह्य नहीं है। यही सब साक्षी दुष्टभाषी कहलाते हैं। सूफकार तथा उसी प्रसारका कार्यक्रम जोवी, नटादि-चतुर्वेदज्ञ, ब्रह्मचारी वा संन्यासी, दाम, लोक विगृहीत व्यक्ति, निषिद्धकर्मकारी, वृद्ध गृह्य, चण्डालादि, नीचजाति, अन्य खस्तादि किंचेन्द्रिय, घात, मत्स, उभय, सुधा हवामि पोद्धित, पश्यमसे ज्ञान, कामातुर, क्रुद्ध और तस्कर इन्हें भी साक्षी बना नहीं सकते। इन लोगोंकी भी दुष्टसाक्षीमें गिनना ही गड़ है। (मठ ८१४-१५) विशेष विधान संज्ञित शब्दमें देखो।
दुष्टाचार (सं० पु०) १ कुकर्म, कृचास, छोटा काम। (त्रि०) २ दुष्टाचारी, दुष्ट काम करनेवाला।
दुष्टाचारी (सं० त्रि०) कुकर्मी, जोटा काम करनेवाला।
दुष्टाका (सं० त्रि०) जिस १ भन्तःकरण दुरा हो, छोटी प्रकृतिका।

दुष्टास (सं० पु०) १ दुष्ट अथ, विगडा हुआ अन्न, बामी घमाज। २ कुक्षित अन्न। ३ वह अन्न जो पापकी कमाई हो। ४ नीचका अन्न।

दुष्टि (सं० स्त्री०) दुष्-क्षिच्। दोष, ऐष।
दुष्ट (सं० त्रि०) दुर्निन्दित तिष्ठति दुर-स्या कु-पत्वं।
पविनीत, जो विनीत न हो, चहत।

दुष्ट (सं० अथ०) दुर-निन्दित तिष्ठति दुर-स्या-कु-पत्वं।
ततो पत्वं। निन्दा, शिकायत।

दुष्ट (सं० त्रि०) दुर्दुष्टः निन्दितः सुतः वेदे पत्वं।
निन्दित भावसे स्तुत, जिसको बड़ाई दुरो तरफसे की गई है।

दुष्पथ (सं० त्रि०) दुःखेन पथति दुर-पथ-पत्वं। १ जो कठिनासे पके। २ जो जल्दी न पके।

दुष्पथन (सं० स्त्री०) दुष्ट पतत्यनेन पत करणे वृष्ट्। १ अपयद्ध, कुचास, गालो। (स्त्री०) दुर-पथ भावे वृष्ट्।
वृष्ट दुःखसे पतन, वृष्ट सुखिकलसे गिरनेका भाव।

दुष्पथ (सं० पु०) दुष्टानि पथाणि यस्य। १ चोर नामक गन्धद्रव्य। २ चण्डाल-कन्द।

दुष्पद (सं० त्रि०) दुःखेन पथति दुर-पद कर्मणि खल्।
पथत्य दुःखसे प्राप्य, जो बहुत कठिनासे मिले।

दुष्प्राप्य (सं० त्रि०) दुःखेन पराजयतेऽतो दुर-प्रा-जि

कर्मणि खल्। १ अथ करनेमें भगव्य, जिसका जोतगा कठिन हो। (पु०) २ दृढाष्टके एक पुत्रका नाम।

दुष्परिग्रह (सं० त्रि०) दुःखेन परिग्रहतिऽतो दुर-परिग्रह कर्मणि खल्। १ परिग्रह करनेमें भगव्य, जो जल्दी पकड़में न आ सके, जिसे वधमें लाना कठिन हो। (स्त्री०) २ निन्द्यभार्या, बदचलन स्त्री। (त्रि०) दुःस्थितः परिग्रहो भार्या यस्य। ३ दुष्टभाष्यक, जिसकी स्त्री खराब हो।

दुष्परिहन्तु (सं० त्रि०) दुर-परि-हन् खलर्थे तुन्। अन्धन्त दुःखसे नाशयितव्य, जिसे मरना कठिन हो।

दुष्परोक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन परोक्षते दुर-परि-ईक्ष-यत्।
पथत्य दुःखसे परीक्षणीय, जिसे जांचना कठिन हो।

दुष्परा (सं० त्रि०) दुर-स्पृष्ट कर्मणि खल्-वा विसर्ग-लोपः। १ दुःखसे स्पर्शनीय, जिसे स्पर्श करना कठिन हो, जिसे छूते न बने। २ दुष्प्राप्य, जो जल्दी हाथमें न गते। (स्त्री०) ३ दुरालभा, जवाना, धमामा।

दुष्परा (सं० स्त्री०) दुरालभा, जवाना।

दुष्पान (सं० त्रि०) दुःखेन पीयतेऽतो खलर्थे कर्मणि युच्। दुःखसे पीय, जो बहुत कठिनासे पिया जा सके।

दुष्पार (सं० त्रि०) १ दुस्तर, जिसे जल्दी पार न कर सके। २ दुःसाध्य, कठिन।

दुष्पुत्र (सं० पु०) दुष्टः पुत्रं कर्मधा०। १ कुपुत्र, खराब लड़का। (त्रि०) दुष्टः पुत्रः यस्य। २ दुष्ट पुत्रपुत्र, जिसकी खराब लड़का हो।

दुष्पुरुष (सं० पु०) दुष्टः पुरुषः कर्मधा०। निन्दित पुरुष, छोटा मनुष्य।

दुष्पूर (सं० त्रि०) दुर-पूर कर्मणि खल्। १ पूरण करनेमें भगव्य, जो जल्दी पूरा न हो सके। २ पणिधार्य, जो निवारकके योग्य न हो। मनुष्यकी भागा दुष्पूर है और वे इसकी मोहिनी भाषामें विमोहित होकर पद पद दुःख पाते हैं। भाषा एक मो पूरी नहीं होती है। एक भाषा पूरी भी हो जाती है, तो फिर तुरत ही उसकी जगह एक दूसरी भाषा उत्पन्न हो जाती है।

दुष्प्रकम्प्य (सं० त्रि०) दुःखेन प्रकम्प्यते दुर-प्र-कम्प-यत्।
जो सहजमें न कंप सके।

दुष्ट—दुष्ट देखो ।

दुष्टदिर (मं० त्रि०) दुष्टः खदिरः प्रादिभ्यः । कानस्कन्द, एक प्रकारका खैर । इसका पेड़ छोटा होता है । इसका मंस्कृत पर्याय—ख्योजी, कानस्कन्द, गोंगट, घमरज, पकतक, बहुसार, खदिर, मझासार और सुद्रखदिर है । इसका गुण—कटु, उष्ण, तिक्त, रक्तत्रणोत्प्रेषक, कण्डूति, विष, विमर्ष, ज्वर, कूट और चन्माद-नाशक है ।

दुष्ट (सं० त्रि०) दुष्-क । १ दुर्वल, कमजोर । २ अधम, नीच, छोटा । ३ दोषाश्रित, जिसमें दोष हो । ४ पिप्सादि दोषयुक्त, जिसे पित्त आदि दोष हो । (५ को०) ५ कूट, कोढ़ ।

दुष्टगज (मं० पु०) दुष्ट गजः । गन्धर्वदेवों हस्ती, बटमाश हाथी ।

दुष्टचारिन् (मं० त्रि०) दुष्टं चरति चरणि । १ दोषयुक्त कर्मकारी, बुरा आचरण करनेवाला । २ दुर्जन, खल ।

दुष्टचेता (मं० त्रि०) १ बुरी चिन्ता करनेवाला, बुरे विचारका । २ चङ्छितागांवा, बुरा चाहनेवाला । ३ कपटी ।

दुष्टता (सं० स्त्री०) दुष्टस्य भावः दुष्ट-तन्त्र ततो टाप । १ दुर्जनता, बदमाशी । २ दोष, गुण, ऐव । ३ बुराई, खराबी ।

दुष्टत्व (मं० को०) दुष्टस्य भावः दुष्ट भावे-क । दुष्टता, खोटाई ।

दुष्टनु (सं० त्रि०) दुष्ट्या तनुयं सा प्रादि बहु० वदे पत्व । दुष्ट देख्युक्त, खराब शरीरवाला ।

दुष्टपना (मं० पु०) दुष्टता, खोटाई ।

दुष्टपोनम (मं० पु०) पोन्मरोग ।

दुष्टप्रतिग्रहाय (सं० पु०) नामारोगविशेष, नाककी एक प्रकारकी बीमारी ।

दुष्टयोग (मं० पु०) दुष्टः योगः । १ वैद्विष्यति व्यतिपात प्रभृति निन्दित योग । इस योगमें हानन दानादि सभी शुभ कर्म वर्जित हैं । २ परिटसुचक गोचरविज्जनादि स्थित ग्रहयोगमेंट ।

दुष्टर (मं० त्रि०) दुःखिनः तोयतेऽसौ कर्मणि घृत्तु वदे पत्व । दुष्टार, जिसे पार करना कठिन हो ।

दुष्टरक्तक (मं० त्रि०) दुष्टा रक्ता च हृगस्य । पिप्सादि दोषजनक । पिप्सादि दोष उत्पन्न होनेमें पीछे सान हो जाते हैं, इसीको दुष्टरक्तक कहते हैं । जो अत्यन्त श्लो बाधक है, वो दुष्टरक्तक होकर जन्मग्रहण करते हैं ।

दुष्टगीत (मं० पु०) दुष्ट-त-सुखवदे ६ दोषय तलोपत्व । बहुत दुःख द्वारा तरणीय, जिसे पार करना कठिन हो । दुष्टहृष (मं० पु०) दुष्टः हृषः । यह वीर जो सामर्थ्य होने पर भी शोभन छोड़ न मके, मद्धर बोल । इसका पर्याय गति है ।

दुष्टव्रण (सं० पु०) दुष्टः व्रणः । अचिकित्स्य व्रणमेंट, वह घाव जो चक्का न हो सके । यह रोग चिकित्सा करने पर भी चारोग्य नहीं होता है । जिसमें पूर्व जन्ममें घोर पाप किया है, उसे ही यह रोग होता है । ६०में यदि श्रुत्यु हो जाय, तो प्रायश्चित्त किये दिग्ग दाहादिकार्य नहीं होता है । यदि कोई मोहवश उसको दाहादि किया कर बैठे, तो दाहाकारीको भी प्रायश्चित्त करना पड़ता है नहीं तो वह किसी तरहका धर्म-कर्म का अनुष्ठान नहीं कर सकता है ।

दुष्टव्रण, गण्डमांसा, पक्षाघात प्रभृति रोग दा-पातकज है । रोगी यदि जीवित कालमें इस रोगका प्रायश्चित्त न करे, तो उस घरके लोग भी व्रतनियमादि किमो धर्म-कर्म का अनुष्ठान नहीं कर सकते हैं । किन्तु प्रायश्चित्त करने पर पाप नष्ट हो जाता है और पीछे रोग भी धीरे धीरे घटने लगता है । इसी कारण सभी पात-कज रोगोंमें सबसे पहलें प्रायश्चित्त करना आवश्यक है ।

दुष्टसाधिन (मं० पु०) दुष्टः साधो कर्मधा० । नारदादि कथित असाधिव्रत प्रयोजक दोषयुक्त साधो, कूटसाधो । जो गवाह सब्बो गवाहो नहीं देते, उन्हें दुष्टसाधो कहते हैं । सभी वर्णोंमें जो सत्यवादी हैं, जिन्हें कर्त्तव्य कर्मका ज्ञान है और जो धर्मधर्म हैं, उन्हें साधो बना सकते हैं । किन्तु इसका विपरीत गुणवत्सम्भी-शरीरमें उन्हें त्याग कर देना चाहिये । जिसके साथ धर्मका सम्बन्ध है, जो मित्र, साहाय्यकारी, साथ और प्रकृति शत्रु है, जिन्होंने पहले झूठी गवाही दी है, जो शत्रु-

दुर्लभस्यामी (सं० पु०) काश्मीरके चीनगरमें प्रतिष्ठित
ःस्वस्तिविशेष ।

दुर्लभा (सं० स्त्री०) १ जोधन्तो । २ श्वेत कण्टकारी,
ःस्फेद भटकटैया । ३ रक्तदुर्लभा, लाल जवासा ।

दुर्लभित (सं० लो०) दुर्-लभ ईप्सायां भावे क्त ।
१ दुष्टेष्टा, दुरा काम । २ दुष्टेष्टित, इक्ष्म, पाप । (त्रि०)
३ दुष्कर्म करनेवाला । ४ चपल, चंचल ।

दुर्लभित (सं० लो०) दुर्-लभ-क्त । दुष्टेष्टा, दुरा
काम ।

दुर्लभ (सं० पु०) दुःखेन लभ्यते दुर्-लभ-वच् । दुःख
द्वारा लाभ, बहुत कठिनायि प्राप्त होनेवाला ।

दुर्लभ्य (सं० लो०) दुष्टं लेख्यं । १ गहिं त लेख्य-पत्र,
भावशक्तिय कागज पत्रादिके नष्ट हो जाने पर जो दूसरी
बार कागज लिखा जाता है, उसे दुर्लभ्य कहते हैं ।
नारदके समानुसार लिपिका अक्षर लोप कर दुष्ट भावसे
झूठ बना कर जो लिखा जाता है उसे दुर्लभ्य कहते हैं ।
धर्मात् कागजमें जैसे लिखा था, वैसे न लिख कर
अपनी आवश्यकताकी अनुसार झूठ बना कर लिखना ।
(त्रि०) २ जो दुरा लिखा हुआ हो, जिसको लिखावट
दुरी हो ।

दुर्लभ (सं० त्रि०) दुर्दुःखेन लभ्यते दुर्-लभ-वच् ।
१ जो दुःखसे कष्टा जा सके, जिसके कष्टनेमें कष्ट हो ।
२ जो कठिनायि कष्टा जा सके । (पु०) ३ दुर्लभ, गालो ।

दुर्लभ (सं० पु०) दुर्लभ्य, कष्ट, वचन, गालो ।
दुर्लभस् (सं० लो०) दुष्टं वचः । गहिं त वाक्य, कष्ट
वचन ।

दुर्लभाह (सं० पु०-स्त्री०) दुष्टो वराहः प्रादिसं । गहिं त
-वराह, पातल सुघर ।

दुर्लभा (सं० लो०) दुर्-निन्दितं स्वर्णायपेक्षया वर्ण
यस्य । १ रजत, चांदी । २ एलवातुक, एलवा । (त्रि०)
३ निन्द्यवर्ण युक्त, खराब जानिका । ४ खराब रंगका ।
५ श्वेतकुडी, जिसे मफेद कोट्टा हुआ हो । (पु०) दुष्टो
वर्णः । ६ निन्दनीय ब्राह्मादिवर्ण । ७ दुष्ट पक्षर,
धुराव पक्षर ।

दुर्लभा (सं० त्रि०) दुर्-ल-कर्मणि नृत् । दुर्लभा, जिसका

निवारण कठिन हो, जो जल्दी रोकान जा सके ।

दुर्लभ (सं० त्रि०) दुःखेनोपेतोऽत्र दुर्-लभ वाहु० आधारे
खल । कष्टसे यामयोग्य, जहां रहनेमें बहुत कष्ट हो ।

दुर्लभित (सं० स्त्री०) दुःखेन वसतिः । दुःखमें अवस्थिति,
जहां रहनेमें बहुत तकलीफ होती हो ।

दुर्लभ (सं० त्रि०) दुःखेन लभ्यते अनेन दुर्-लभ कर्मणि
खल । दुःख द्वारा बहुतनीय, जिसे उठाकर ले चलना
कठिन हो ।

दुर्लभक—सुभाषितावलोष्टत एक प्राचीन मंथित कवि ।
दुर्लभ- (सं० स्त्री०) दुर्दुष्टा निन्दिता वाक् । १ निन्दित-
वाक्, दुरा वचन । दुष्टा वाक् यस्य । (त्रि०) २ निन्दित
वचनावित, जिसकी बोली बहुत कष्टा हो ।

दुर्लभ्य (सं० लो०) निन्द्यं वाक्यं प्रादिसं । अपवाद,
अकीर्ति, निन्दा ।

दुर्लभ (सं० पु०) दुष्टो वादः प्रादिसं । १ अकीर्ति,
अपवाद, बदनामी । २ स्तुतिपूर्वक अप्रियवाक्य, स्तुति
द्वारा कष्टा हुआ अप्रिय वचन । ३ निन्दित वाक्य, अनु-
चित वचन ।

दुर्लभ (सं० लो०) दुष्टं वास्तं प्रादिसं । १ विधानाति
क्रम द्वारा यमन, अनियमित ललटो । दुःस्थितं वास्तं
यस्य । २ दुष्टवमनयुक्त, जिसे अनियमित ललटो होती
हो ।

दुर्लभ (सं० त्रि०) दुःखेन वार्यतेऽत्र दुर्-वारि-खल ।
कष्टसे वारणीय, जिसका निवारण कठिन हो ।

दुर्लभ (सं० त्रि०) दुःखेन वारणमस्य । १ कष्टसे वार-
णीय, जो जल्दी रोकान जा सके । (पु०) २ शिव,
महादेव ।

दुर्लभ (सं० त्रि०) दुर्दुःखेन वारिवारणं यस्य । कम्बोज
देशीय योषधेद, कम्बोज देशका एक वीर जो महा-
भारतको लड़ाईमें लड़ा था ।

दुर्लभित (सं० त्रि०) मन्दभावसे निवारित वा प्राप्ति ।
दुर्लभा (सं० स्त्री०) दुष्टा निन्दिता वाक्ता । दुष्टवाक्ता,
दुरी खबर ।

दुर्लभ्य (सं० त्रि०) दुःखेन वार्यतेऽत्र दुर्-वारि-खल ।
अति कष्टद्वारा वारणीय, जो जल्दी रोकान जा सके ।

दुर्लभना (सं० स्त्री०) दुर्दुष्टा वासना । १ दुष्ट वासना,

यन्त तथा महापातकादि दोषसे दूषित हैं, उन ही साक्षी-
प्राप्त नहीं है। यही सब साक्षी दुष्टभाषी कहलाते
हैं। सूचकार तथा उसी प्रकारका काव्यकर्मजीवी,
नटादि-वस्तुवैद्य, ब्रह्मचारी, वा संन्यासी, दाम, लोक-
विगृहीत व्यक्ति, निषिद्धकर्मकारी, ब्रह्म शिष्य, चण्डा-
लादि, नीचजाति, अन्य खच्चादि विकनेन्द्रिय, भ्रातृ,
मत्स्य, उभयस्य, सुधा लक्ष्मिसे पोषित, पथथमसे क्लान्त,
कामातुर, फल और तस्कर इन्हीं भी साक्षी बना नहीं
सकते। इन लोगोंकी भी दुष्टसाक्षीमें गिनती की गई
है। (मनु ८।६४-६५) विशेष विवरण भर्तृहृदयमें देखो।
दुष्टाचार (सं० पु०) १ कुकर्म, कुचाल, खोटा काम।
(त्रि०) २ दुष्टाचारी, दुष्ट काम करनेवाला।
दुष्टाचारो (सं० त्रि०) कुकर्मी, खोटा काम करनेवाला।
दुष्टात्मा (सं० त्रि०) जिस १ अन्तःकरण द्वारा छे, खोटी
प्रकृतिका।

दुष्टाक्ष (सं० पु०) १ दुष्ट अक्ष, विगुडा दुष्टा अक्ष, बामी
अक्ष। २ कुक्षित अक्ष। ३ बह अक्ष जो पापकी
कसाई हो। ४ नीचका अक्ष।

दुष्टि (सं० स्त्री०) दुष्-क्षिच्। दोष, ऐश।
दुष्ट (सं० त्रि०) दुर्निन्दित तिष्ठति दुर्-स्था कु-यत्।
अविनीत, जो विनीत न हो, उद्धत।

दुष्ट (सं० अर्थ०) दुर्-निन्दित तिष्ठति दुर्-ग्या-कु-
ततो पत्वं। निन्दा, शिकायत।
दुष्टन (सं० त्रि०) दुर्दुष्टः निन्दितः सुतः वेदे पत्वं।
निन्दित भावसे स्तुत, जिसको बड़ाई-सुरो तरहसे की
गई है।

दुष्पथ (सं० त्रि०) दुःखिन पथति दुर्-पथ-खल। १ जो
कठिनतासे पके। २ जो जन्दी न पके।

दुष्पथन (सं० स्त्री०) दुष्ट पतत्यनेन पत करषे वृष्ट। १
अपगन्ध, कुवाण्य, मानो। (स्त्री०) दुर्-पथ भावसे वृष्ट।
बहुत दुःखसे पतन, बहुत मुश्किलसे गिरनेका भाव।

दुष्पथ (सं० पु०) दुष्टानि पतानि यस्य। १ चोर नामक
गन्धद्रव्य। २ चण्डाल-कन्द।

दुष्पद (सं० त्रि०) दुःखिन पथति दुर्-पद कर्मणि खल।
अत्यन्त दुःखसे प्राप्य, जो बहुत कठिनतासे मिले।

दुष्पराज्य (सं० त्रि०) दुःखिन पराजोयतेऽनो दुर्-परा-जि

कर्मणि खल। १ जय करनेमें प्रगल्भ, जिसका जीतगा
कठिन हो। (पु०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।

दुष्परिग्रह (सं० त्रि०) दुःखेन परिग्रह्यतेऽनो दुर्-परि-ग्रह
कर्मणि खल। १ परिग्रह करनेमें प्रगल्भ, जो जल्दो
परिग्रहमें न आ सके, जिसे वधमें लाना कठिन हो।
(स्त्री०) २ निन्द्यार्थाय, बदचलन औरत। (त्रि०)
दुःस्थितः परिग्रहो भार्या यस्य। ३ दुष्टभाषक, जिसकी
स्त्री खराब हो।

दुष्परिहन्तु (सं० त्रि०) दुर्-परि-हन्तु खल्यते तन्। अत्यन्त
दुःखसे नाशयितव्य, जिसे मरना कठिन हो।

दुष्परोक्ष (सं० त्रि०) दुःखेन परोक्ष्यते दुर्-परि-ईक्ष-यत्।
अत्यन्त दुःखसे परोक्षणीय, जिसे जानना कठिन हो।

दुष्प्राय (सं० त्रि०) दुर्-स्पृष्ट कर्मणि खल-या विषय-
लोपः। १ दुःखसे स्पर्शनीय, जिसे स्पर्श करना कठिन
हो, जिसे छूते न बने। २ दुष्प्राप्य, जो जल्दी हाथमें
न लगे। (स्त्री०) ३ दुष्टालभा, जवाना, धमाला।

दुष्प्राय (सं० स्त्री०) दुष्टालभा, जवाना।

दुष्प्राण (सं० त्रि०) दुःखेन पीयतेऽनो बहुार्थे कर्मणि
युच्। दुःखसे पीय, जो बहुत कठिनतासे पिया जा
सके।

दुष्पार (सं० त्रि०) १ दुस्तर, जिसे जल्दो पार न कर सके।
२ दुःसाध्य, कठिन।

दुष्पुत्र (सं० पु०) दुष्टः पुत्रं कर्मधा०। १ कुपुत्र, खराब
नहका (त्रि०) दुष्टः पुत्रः यस्य। २ दुष्ट पुत्रयुक्त, जिसके
खराब नहका हो।

दुष्पुरुष (सं० पु०) दुष्टः पुरुषः कर्मधा०। निन्दित पुरुष,
खोटा मनुष्य।

दुष्पूर (सं० त्रि०) दुर्-पूरि कर्मणि खल। १ पूरण करनेमें
प्रगल्भ, जो जल्दो पूरा न हो सके। २ अनिर्धार्य, जो
निवारणसे योग्य न हो। मनुष्यकी आगा दुष्पूर है और
वे इसकी मोहिनी मायामें विमोहित होकर पद पद
दुःख पाते हैं। आगा एक भी पूरी नहीं होती है। एक
आगा पूरी भी हो जाती है, तो फिर गुप्त हो उसकी
जगह एक दूसरी आगा उत्पन्न हो जाती है।

दुष्प्रकम्प्य (सं० त्रि०) दुःखेन प्रकम्प्यते दुर्-प्र-कम्प-यत्।
जो सहजमें न कंप सके।

ऐसा कामना जो कभी पूर्ण न हो सके। रघु-
पाश्र्वर, दुर्वासा ।

दुर्वासा (मं० पु०) दुर्दृष्टः निद्रुमिति वाय रव भर्मा
वरपत्न्यं दत्तः । १ एक भूमि। इनकी नामनिर्दिष्टि
विषयमें हम प्रकार निष्ठा है, जिसका धर्ममें दुर्दृष्टिमान
को पुनः दुर्वासा कहते हैं ।

‘दुर्दृष्टिमानं धर्मं यं तं दुर्वासां विदुः ।’

(भारत अष्ट ४० अ०)

दुर्वासा चतुर्मुखि दुष्ट चोर मिर्मात्रमश्वत्थ ये ।
इत्येता वामान बहुत दण्ड था। चोर्मुखि की दम्भा
काल्पनीय इत्येता विनाश हुआ था। विनाशके समय
इन्होंने प्रतिष्ठा को छोड़, कि धर्मों की चरमाथ जमा
करने में। तदनन्तर इन्होंने धर्मों को चरमाथ कर चुक-
के बाद लज्जा को मानने भ्रम कर दिया ।

हम पर चोर्मुखीने बहुत दुर्वासा को ‘तेरा धर्म-
मान चुर होना’ ऐसा धमिगाय दिया। तदनन्तर
महाराज चरमाथमें रहने धर्ममान चुर हुआ। एक
‘हम भ्रमण करने समय इन्होंने किसी चरमाथे छावमें
पर मन्त्रात्मक पुत्रमायाको देना समझे मान लिया।
मायाको मग इन्होंने पेशावतके मन्त्र पर डाला, मग
दिखाइने लगे जमीन पर झेंक दिया। हम पर दुर्वासा-
ने बहुत कुटिल होकर दण्डको माग दिया जिसमें वे ओ-
भक्त हो गये। इन्होंने मायमें मन्त्रमाया दुर्वासामें परिवर्तित
हुई थी। इन्होंने दुर्वासाको मन्त्रमें दुर्वासा की प्रतिष्ठामें
तुष्ट हो कर लगे को महाभारत प्रदान किया था, जमाके
प्रमाणमें पाण्डवोंका जन्म हुआ। इन्होंने बाधिकाकी
प्रकृति जान कर जयमकु राजाके निकट गये की भूमि
प्रदान की ।

दुर्वासा पर गुप्त होकर वे काम्यकर्ममें प्रोत्थोके
चरमाथे बाद भीतम करने लगे थे। एक समय भ्रमण
करने हुए इन्होंने श्रीकृष्णका चातिल्य पश्य किया था ।

दुर्वासा पाण्डव वामानके थे, इन्होंने कभी किसी काम
की मगल्य न की। कभी तो वे बहुत मनुष्यों राजाजन
था में ही चोर लगे होकर ही था कर भीतम मन्त्रक काम
थे। एक दिन इन्होंने ब्राह्मण दण्डम भीतम करने समय
श्रीकृष्णके कथा कि, “हम पाण्डवों को चरमाथमें मगल

कोनिये।” कल्पने लगे समय मैला हो दिया, वेतम
ब्राह्मणके प्रति मन्त्रिमगलः घेरने लगे न मगल्य। हम
पर चरमाथे इत्येताको देवमें पाण्डव मगल कर लगे रहते
कामया चोर पाण्डव पर चर कर इत्येताको मगल्य
कामें लगे। इत्येता पाण्डवके रण शीघ्र कर मग
कामा हो गये, तब दुर्वासा कृष्ण होकर रण परने लगे
चोर् इत्येताको चोर लगेने मगल्य हुए। पीछे श्रीकृष्णने
मन्त्राट किसे जाने पर इन्होंने मगल्य था, “पाण्डवोंके
है, हमारे करने पाण्डव चोर इत्येताको दोनो मगल्य भीतम
प्रिय होने। पाण्डवों को घेरने लगे पाण्डव लगे मैला
लगेने हम बहुत चरमाथ हुए हैं। जो कुछ हो, पदतम
होकर पाण्डवों को मगल्य चरमाथ हुआ।” इन्होंने
मायमें मायमें यदुवर्ग मन्त्रक मगल्य मगल्य किया था
चोर इन्होंने यदुवर्गका धर्म हुआ। (भारत, मन्त्र-
मन्त्राट) ।

२ पाण्डवोंको, देवी मन्त्रिमगल्य, परमिमगल्य-
मगल्य, मन्त्रिमगल्य चोर इत्येताको मगल्य मगल्य
मन्त्रक मगल्य रचयिता ।

दुर्वासा (मं० प्रो०) दुर्बल, जिसे लज्जा के चरमा
कलित हो ।

दुर्बलमन्त्र(मं० प्रो०) जो लोभ या दुर्बल धर्ममान
धर्मक मगल्य ।

दुर्बलमन्त्र (मं० प्रो०) दुर्बल धर्ममान धर्मक मगल्य
कामें विमान । दुर्बलमन्त्र, जिसकी माय लज्जा न लगे
मने ।

दुर्बलमन्त्र (मं० प्रो०) दुर्बल धर्ममान धर्मक मगल्य
कामें । दुर्बलमन्त्र, जिसका मगल्य मगल्य करमा चरमा
को ।

दुर्बलमन्त्र (मं० प्रो०) दुर्बल धर्ममान धर्मक मगल्य
कामें । जिसका मगल्य मगल्य करमा चरमा को ।

दुर्बलमन्त्र (मं० प्रो०) दुर्बल धर्ममान धर्मक मगल्य
कामें । जिसका मगल्य मगल्य करमा चरमा को ।

दुर्बलमन्त्र (मं० प्रो०) दुर्बल धर्ममान धर्मक मगल्य
कामें । जिसका मगल्य मगल्य करमा चरमा को ।

दुर्बलमन्त्र (मं० प्रो०) दुर्बल धर्ममान धर्मक मगल्य
कामें । जिसका मगल्य मगल्य करमा चरमा को ।

दुष्प्रकाश (मं० त्रि०) दुष्टः प्रकाशः प्रादिभ० । अन्धकार, अंधेरा ।
 दुष्प्रकृति (मं० त्रि०) दुःस्था प्रकृति यंस्थ । १ दुःशूल, बुरे स्वभावका । (स्त्री०) २ बुरी प्रकृति, खोटा स्वभाव
 दुष्प्रजस (सं० त्रि०) दुःस्था प्रजा यस्य बहुलो हो अमिच, समाधानतः । निन्द्य प्रजायुक्त, जिसको प्रजा छोटी हो ।
 दुष्प्रज्ञ (सं० त्रि०) निर्बोध, अनजान ।
 दुष्प्रज्ञान (मं० त्रि०) दुःखेन प्रज्ञायतेऽसौ दुर-प्र-ज्ञा-
 खल्वर्थं कर्मणि युच् । १ जो सहजमें जाना न जा सके ।
 (स्त्री०) दुष्टं प्रज्ञानं । २ निन्दनीय ज्ञान, खराब बुद्धि ।
 दुष्प्रतिग्रह (सं० त्रि०) प्रतिग्रहके पक्षमें बहुत कठिन,
 जो जल्दी ग्रहण न किया जा सके ।
 दुष्प्रतिशोधनोय (मं० त्रि०) दुःप्रति वि-ईच्छ चनोयर् ।
 जो बहुत कष्टसे देखा साय, जो जल्दी दीख न पड़े ।
 दुष्प्रतिवृत्ति (सं० त्रि०) दुःखेन प्रतिवृत्त्यते दुःख-प्रति-
 वि-ईच्छ कर्मणि-यत् । जो बहुत कठिनतासे दिखाई पड़े ।
 दुष्प्रधर्म (सं० त्रि०) दुष्करः प्रधर्मोऽस्य । १ अत्यन्त
 दुःखमें धर्मणोय, जो जल्दी धर पकड़ने न पा सके ।
 (पुं०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (भारत भीष्म० ६८
 पं०) (स्त्री०) ३ दुरात्मता, जबाबा, धमासा । ४ शत्रु, रा-
 गजूर ।
 दुष्प्रधर्म (सं० त्रि०) दुःप्र-धर्म भाषायां युच् । १ अत्यन्त
 दुःखमें धर्मणोय, जो जल्दी पकड़ने न पा सके । (पुं०)
 २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । (स्त्री०) ३ शत्रुको ।
 दुष्प्रधर्म (सं० स्त्री०) १ दुरात्मता, जबाबा, शत्रुता ।
 २ शत्रु, रागजूर ।
 दुष्प्रधर्मिणी (सं० स्त्री०) दुष्प्रधर्मोऽस्यस्याः इति-
 ङोप । १ कष्टकारी, भटकाटेया । २ हड़तो, बैगन,
 भंटा ।
 दुष्प्रधृष्ट (सं० त्रि०) दुःखेन प्रधृष्टतेऽनेन, दुर-प्र-धृष्ट
 कर्मणि यत् । अत्यन्त दुःखमें धर्मणोय, जो बहुत मुश्किल-
 से पकड़ने पा सके ।
 दुष्प्रमय (सं० त्रि०) जो सहजमें नापा न जा सके ।
 दुष्प्रमय (सं० त्रि०) दुःखेन प्रमयते दुर-प्रमय-खल्वर्थं

जो सहजमें ठगा न जा सके । २ जो सहजमें मात्र न हो सके ।
 दुष्प्रवाद (सं० पुं०) दुष्टः प्रवादः प्रादिभ० । १ दुष्ट
 प्रवाद, बुरी प्रफवाह । दुष्टः प्रवादो यस्य । २ निन्द्य
 प्रवादयुक्त, जिसको बुरी प्रफवाह हो ।
 दुष्प्रवृत्ति (सं० स्त्री०) दुष्टा प्रवृत्तिः प्रादि-सं० । दुष्टा
 प्रवृत्ति, बुरी प्रवृत्ति ।
 दुष्प्रवेश (सं० त्रि०) दुष्करः प्रवेशोऽस्य । दुःखमें
 प्रवेश्य, जिसमें घुसना कठिन हो ।
 दुष्प्रवेशा (सं० स्त्री०) कन्यारो वृक्ष ।
 दुष्प्रसह (सं० त्रि०) दुःखेन प्रसह्यतेऽसौ दुर-प्र-सह
 कर्मणि खल्वर्थं । १ दुःसह, जिसका सहन करना कठिन
 हो । २ भोषण, भयानक । (पुं०) ३ एक प्रसिद्ध
 जनाचार्य ।
 दुष्प्रसाद (सं० त्रि०) जो सहजमें प्रसन्न न हो, जो बहुत
 मुश्किलसे खुश किया जाय ।
 दुष्प्रसादन (सं० त्रि०) दुष्प्रवाद देखो ।
 दुष्प्रसाध्य (सं० त्रि०) दुःखेन प्रसाध्यतेऽनेन दुर-प्रसाध-
 यत् । साधन करनेमें अशक्य, जो बहुत कठिनतासे
 किया जाय ।
 दुष्प्रसाह (सं० त्रि०) दुःखेन प्रसह्यतेऽनेन खल्वर्थं चञ्च ।
 दुःसह, जिसका सहन करना कठिन हो ।
 दुष्प्रसह्य (सं० त्रि०) दुष्करः प्रसह्योऽस्य । १ दुष्कर
 प्रसह्ययुक्त, जो सहजमें प्रसन्न न हो । (पुं०) २ धृतरा-
 ष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।
 दुष्प्राप (सं० त्रि०) दुःखेन प्राप्यतेऽसौ दुर-प्र-प्राप-
 खल्वर्थं । दुर्लभ, जो कठिनतासे प्राप्त हो ।
 दुष्प्रापन (सं० त्रि०) दुष्प्राप्य, जो सहजमें न मिल सके ।
 दुष्प्राप्ति (सं० स्त्री०) दुःखसे प्राप्ति, वह चीज जो बहुत
 कठिनतासे मिले ।
 दुष्प्राप्य (सं० त्रि०) दुःखेन प्राप्यतेऽसौ दुर-प्र-प्राप
 कर्मणि यत् । दुरात्म्य, जिसका सिनना कठिन हो ।
 दुष्प्रावी (सं० स्त्री०) १ दुष्प्राप्य । २ पदमञ्जर ।
 दुष्प्रोति (सं० स्त्री०) दुष्टा प्रोतिः । १ अपाति, कुप्रेम, बुरी
 सहज्यता । (त्रि०) दुष्टा प्रोतिर्ग्रन्थः । २ दुष्ट प्रोति-
 युक्त, जिसमें बुरा प्रेम हो ।

सोच कर स्थिर न किया जा सके, जिसके निश्चय करने में कठिनाता हो।

दुर्विद (सं० वि०) १ दुष्प्रैय, जिसे जानना कठिन हो।
दुर्विदम्ब (सं० वि०) दुष्टो विदम्बः प्रादिसं० । १ गर्वित
अध्वारी । २ जो अशक्ती तरह जला न हो, अधजला । ३
जो पूर्ण परिपक्व न हो।

दुर्विदग्धता (सं० स्त्री०) पुरो निपुणताका अभाव, अध-
कचरापन।

दुर्विद्वत् (सं० वि०) विद-लाभे विद-ज्ञाने वा बाहु० अत्र,
विद्वत् सभ्य धन ज्ञान वा प्रादिसं० । १ दुर्धनक । २
दुर्ज्ञानक।

दुर्विद्य (सं० वि०) दुर्विद-यत् । अत्र, अगिचित्त,
मूर्ख।

दुर्विध (सं० वि०) दुस्सा विधा अस्त्व । १ दविद्र । २ खल ।
३ मूर्ख।

दुर्विधि (सं० पु०) दुष्टः विधिः । १ दुर्भाग्य । २ कुनियम,
बुरो विधि।

दुर्विधिया (सं० स्त्री०) कपूरशठी।

दुर्विनय (सं० पु०) दुर्-वि-नी भावेऽच । विनय राहित्य,
बुरा शिष्टाचार।

दुर्विनीत (सं० वि०) दुर्-वि-नी कर्त्तरि क्त । विनय
शून्य, अशिष्ट, उद्धत, रुक्छड़।

दुर्विनीति (सं० स्त्री०) दुर्-वि-नी भावेऽक्तिन् । विनय-
राहित्य, अशिष्टाचार, उद्धतपन।

दुर्विपाक (सं० पु०) दुष्टः विपाकः । १ मन्द परिणाम,
बुरा फल । २ दुर्घटना, बुरा संयोग।

दुर्विभाग (सं० पु०) दुष्टो विभागः प्रादिसं० । मन्द
विभाग, वज्र जो त्रस्दी विभक्त न किया जाय।

दुर्विभाव्य (सं० वि०) दुर्दुःखेन विभाव्यते दुर्-वि-भू-
यत् । दुर्विध, जिसका अनुमान न हो सके।

दुर्विभाव (सं० स्त्री०) दुष्टा विभावा यत्र । दुर्विध, बुरा
वचन।

दुर्विभोचन (सं० वि०) दुःखेन विभोचनं यस्य । १ बहुत
कष्टसे मोचनीय, जिससे छुटकारा पाना मुश्किल हो।
(पु०) २ छतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।

दुर्विलसित (सं० स्त्री०) दुष्टं विलसितं । दुष्कार्य,
बुराव काम।

दुर्विवक्तु (सं० पु०) दुष्टः विवक्ता । मन्दवक्ता, कट,
वचन बोलनेवाला।

दुर्विवाह (सं० पु०) दुर्निन्दितो विवाहः । आसुर
आदि चार प्रकारके विवाह । ब्राह्म प्रभृति चार प्रकारके
विवाहमें गुणवान् पुत्र उत्पन्न होते, इसीसे इस प्रकारके
विवाहको सुविवाह कहते हैं और आसुर प्रभृति चार
प्रकारके विवाहमें ब्रह्महर्षो तथा धर्महर्षो पुत्र
उत्पन्न होते, इसीसे उसे दुर्विवाह कहते हैं। निन्दिता
स्त्रीको व्याहनेसे निन्दितसन्तान होती है, वर भी दुर्वि-
वाह है।

दुर्विप (सं० पु०) दुःखितो विपो यस्य । विपक्वत विकार,
शून्य शिष्य, महादेव । समुद्र मयनेके समय महादेवने
विपपान किया था, पर विपक्षा प्रभाव उनपर कुछ भी
न पड़ा, इसीसे महादेवका नाम 'दुर्विप' पड़ा है।

दुर्विपक्ष (सं० वि०) दुःखेन विपक्षतोऽसौ दुर्-वि-सह
कर्मणि खल । १ अत्यन्त दुःखसे सहनीय, जिसे सहना
कठिन हो। २ असह्य । (पु०) ३ शिष्य, महादेव।
४ छतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम।

दुर्विपहर (सं० वि०) दुःखेन विपहयते वि-सह-यत् ।
अत्यन्त दुःखसे सहनीय, जिसे सहना कठिन हो।

दुर्विच (सं० स्त्री०) दुष्टं वृत्तं प्रादिसं० । १ निन्दित पाच-
रण, बुरा व्यवहार । दुःखितं वृत्तं यस्य । २ दुर्जन,
जिसका पाचरण बुरा हो।

दुर्वृत्ति (सं० स्त्री०) दुष्टा वृत्तिः । मन्द व्यवहार,
निन्दित पाचरण, बुरा काम।

दुर्वेद (सं० स्त्री०) दुःखेन विद्यते लभ्यतेऽसौ दुर्-विद्
नामे कर्मणि खल । दुर्लभ, जो कठिनातासे मिल सके।

दुर्व्यवसा (सं० स्त्री०) कुप्रवश्य, बद्-वन्तजामी।

दुर्व्यवसायक (सं० पु०) दुष्टो व्यवसायकः । दुष्ट व्यव-
सायक, कुप्रवश्यकर्त्ता।

दुर्व्यवहार (सं० पु०) दुर्दुष्टो व्यवहारः । १ राग और
लोभादि द्वारा असम्यक् निर्णीत व्यवहार, वज्र मुक्तमा
जिसका कोई सला वृक्ष अदावत आदिके कारण ठीक न हुआ
हो। २ मन्द पाचरण, बुरा व्यवहार। ३ दुष्ट पाचरण।

दुर्व्यसन (सं० पु०) दुष्ट आदत, बुरी लत।

दुर्व्यसनी (सं० वि०) दुष्ट अभ्यासयुक्त, बुरी लतवाला।

दुष्प्रस (स० वि०) दुःखिन प्रेक्ष्यते दुर्-प्र-इत्त-कर्मणि
एत् । १ दुर्दृशं, जिसे देखना कठिन हो । २ मौषण,
भयङ्कर ।

दुष्प्रसणीय (स० वि०) दुर्दृशनीय ।

दुष्प्रस्व (स० वि०) दुःखिन प्रेक्ष्यते दुर्-प्र-इत्त-कर्मणि
यत् । बहुत कष्टसे दर्शनीय, जिसे देखना कठिन हो ।

दुष्मन्त (स० पु०) पौरवर्णीय एक राजा, चन्द्रवर्णीय
ऐतिराजाके पुत्र । ये पत्यन्त धर्मपरायण थे । उनकी
कथा जो महाभारतमें लिखी है, यह इस प्रकार है—एक
दिन राजा दुष्मन्त (दुष्यन्त) शिकार खेलते खेलते एक
कार कण्डसुनिके प्रायमके पास जा निकले । यहाँसे
वे अमात्यवर्गको बिदा कर आप धकेले कण्डसुनिके
आश्रममें गये । इस समय महर्षि कण्ड प्रायममें न
थे । उनकी पाली हुई लड़की शकुन्तलाने राजाका
उचित सत्कार किया । इस प्रकार पूजित हो कर राजा-
ने शकुन्तलासे पूछा, 'भद्र ! मैं कण्ड ऋषिका दम्भन
करने आया हूँ, वे कहाँ गये हैं ?' शकुन्तलाने जवाब
दिया, 'पिता फल फूल शान्तिके लिये गये हैं कुछ-काल
ठहर जाइये, तब उनसे दर्शन होगा ।'

राजा शकुन्तलाके असामान्य सौन्दर्य देख कर उस
पर मोहित हो गये और फिर पूछने लगे, 'शुभ ! तुम
ऐसी रूपसम्पन्ना हो कर इस जङ्गलमें क्यों और कहाँसे
पारि हो ? यदि कोई बाधा न हो, तो हमें सब हस्तान्त
कह सुनाओ जिससे हमारा कौतूहल दूर हो जाय ।' यह
सुन कर शकुन्तला बोली, 'मैं अश्वत्थके गर्भसे उत्पन्न
हुई हूँ, महासुनि शीघ्रिक मेरे पिता हैं । मैं कर्ष-
रता भगवान् कण्वकी पात्रिकाव्या हूँ ।' राजाने
शकुन्तलाको अश्वत्थ-गर्भसे उत्पन्न जान कर उससे विवाह
करनेका प्रस्ताव किया । इस पर शकुन्तलाने कहा, 'यदि
गम्यर्थविवाहमें कुछ दोष न हो और यदि आप मेरे
ही पुत्रको युवराज बनायें, तो मैं आपसे विवाह करनेकी
सम्मत हूँ ।' राजा दुष्मन्तने 'ऐसा ही होगा' स्वीकार कर
यथाविधान गम्यर्थ-भतसे शकुन्तलाका पाणिग्रहण किया ।
महर्षि कण्ड जब प्रायममें आये, तब यह हस्तान्त
सुन कर बहुत खुश हुए । विवाहके बाद शकुन्तलाने
गर्भ धारण किया । तीन वर्ष बीत जाने पर उसके

एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम ऋषियोंने सर्वटमन
रखा । कुछ दिन बाद महर्षि कण्वने ऋषीने साथ शकु-
न्तलाको राजाके पास भेज दिया । शकुन्तला राजाके
पास पहुँच और यथोपयुक्त उनका सत्कार कर बोली,
'राजन् ! यह आपका पुत्र मेरे गर्भसे उत्पन्न हुआ है ।
देवतुल्य यह आपका और भगवत् है, इसे युवराज बना-
इये ।' राजाको सब बातें याद तो थीं, लेकिन लोक-
मिन्दुके भयसे उन्होंने उन्हें छिपानेको चेष्टा की और
शकुन्तलाका तिरस्कार करते हुए कहा, 'रे दुष्ट तप-
स्विनी ! तू किसको पसो है ? तुम्हारे भाग्य धर्म, धर्म
और कामके विषयमें मैंने कभी कोई सम्बन्ध नहीं किया ।
अतः तुम्हारी इच्छा सब जहाँ जानिको हो, वहाँ
चलो जा ।'

राजाका ऐसा कठोर बचन सुन कर शकुन्तलाने भी
लज्जा झोड़ कर जो जमीं आया खूब कहा । दुष्मन्तने
भी जमीकटो बातोंसे शकुन्तलाका तिरस्कार किया ।
अन्तमें निरान्त क्रोधित हो कर शकुन्तलाने लगती
बातोंमें राजासे कहा, 'राजन् ! आप स्वयं दुर्जन हो
कर सज्जनोंका तिरस्कार करते हैं, जिस प्रकार कुपित
भुजङ्गसे डर लगता है, उसी प्रकार सत्यधर्म-व्युत्पन्न पुत्रसे
आस्तिकोंकी बात तो दूर रहे, नास्तिक लोग भी डरते
हैं । जो कुछ हो, जो मनुष्य पुत्र उत्पादन कर उसे
स्वीकार नहीं करता, भगवान् उसे यथोचित फल देते
हैं ।' इतना कह कर शकुन्तलाने अपने राह ली । उसी
समय देवबाणी हुई, 'महाराज ! शकुन्तलाने जो कुछ
कहा, पचरागः सत्य है । यह पुत्र आपका ही है, इसे
ग्रहण कीजिये । हम लोगोंके कहनेसे आप इसका भरण
करें और इसका भरत नाम रखें ।' देवबाणी सुन कर
राजाने शकुन्तलाको ग्रहण किया । शकुन्तलाके यह
पुत्र आगे चल कर सावर्भौम राजचक्रवर्ती हुए । उसी
भरतसे भारत नाम पड़ा है । (महाभारत आदि १८-७४)

महाकवि कालिदासकृत अभिज्ञान-शकुन्तला नामक
नयनमें दुष्मन्ता को धाँस लिखा है, वह महाभारतसे
बिल्कुल एक है । महाभारतमें यह लिखा है, कि दुष्मन्त
ने देवस्य लोकान्दि के भयसे शकुन्तलाको अच्छो तरह
जानते हुए भी उसे परित्याग किया था । शिशु कालि-

दामने कीमतने राजा दुष्मन्ताको दुष्ट भावक होनेसे बचाने के निम्ने दुर्धमात्रे गायको कम्पना की है और यह दिखलाया है, कि उसी भाषने प्रभावसे राजा सब वाने भूल गये जिससे शकुन्तालाको साधार हो कर लौट जाना पड़ा। फिर भी कविने राजाको बतलाते हुए यह कहा है, कि उस समय शकुन्ताला गर्भवती थी, किन्ती धर्मभोक् व्यक्तिके बिना गर्भिणी स्त्रीको कौन अपने स्त्री बना सकता है ? इसके सिवा शकुन्ताला जब राजाकी दो हुई चम्पूटी चम्पू स्वयं दिखानेकी राजी हुई और पीछे न दिखना मन्गी, तब राजाका सन्देह और भी बढ़ गया और शकुन्तालाको लौट जाना पड़ा।

समाधारतमें लिखा है, कि शकुन्तलाने भी लज्जा छोड़ कर पुंथानेकी नाईं गान्धर्वीकी लोकाङ्ग राजा पर की थी, किन्तु शानिदामने शकुन्तालाकी मूर्तिमती लज्जा बतलाया है।

“अत्रासता मूर्तिमतीव सतिवा ।” (शकुन्तला)

शकुन्ताला कालिदामकी एक अपूर्व छटि है।

विशेष विवरण शकुन्ताला चरित्रमें देखो।

हरिवंशमें दुष्मन्ता जो विवरण लिखा है, वह इस प्रकार है—महाराज सरोधके औरस और उपदानवाके गर्भसे दुष्मन्ता उत्पन्न हुये थे। दुष्मन्तके पुत्र भरत के जिनका जन्म शकुन्तालाके गर्भसे हुआ था।

(हरिवंश ३२ अ०)

दुष्बोद्ध (मं० पु०) एक प्रकारका उदर-रोग। यह सिंघ आदि पशुओंमें नख और रोएँ चघवा मल, मूत्र, पाचन-सिद्धि न बच वा एक साथ मिना हुआ। वही और मधु गाने तथा गन्दा पानी पीनेसे उत्पन्न होता है। इस रोगमें त्रिदोषके कारण रोगी दिन-दिन दुबला और पीछा होता जाता है, उसमें गरीरमें जलन होती है और कभी कभी उसे मूर्च्छा भी आती है। बटनीके दिन यह रोग प्रायः हमरता है।

दुषद (मं० वि०) अमरु, जो सड़ा न जाय।

दुसाध (मं० पु०) १ दो कमखे निकले हुए एक प्रकार-पकड़में २ एक प्रकारकी छोटी लकड़ी जो छटेके टुकड़े में ३ है। इसके छोर पर दो कमखे फूटे हैं।

दुसाध (मं० पु०) १. सुपरवानो हिन्दुधर्ममें एक मौख जाति। यह पण्डित पुत्र मोक्षमेंनेक धनुचरोंसे उत्पन्न है, ऐसा प्रवाद है। यह जानि पाठ सम्प्रदायोंमें विभक्त है—कनौजिया, मगधिया, भोजपुरिया, पैसवार, कामर वा कानवर, कुरो वा कुरो, चाढ़ा वा धार, गिनोटिया और बाहलिया।

उक्त सम्प्रदायोंमें परस्पर गानगान होता है, मगर विवाहका आदान प्रदान नहीं होता। किसी गानेमें देवात् एक गायकी मार लाना था, इसीसे यह पादो-दुसाध नामसे प्रसिद्ध हुआ। इसी कारण कन्याय दुसाध धाड़ियोंके भाग मिलकर भोजनादि नहीं करते हैं। कामर वा कानवर सम्प्रदाय भी गोमांस खानेके दोषसे दूरी तरह बहिर्गत थे; किन्तु अभी उक्त दोषसे बिसुद्ध हो कर ये पायसमें खाने पीने लगे हैं। कोई कोई बाहलियों की दुसाध नहीं मानते हैं, उन लोगोंका कहना है, कि ये वैदियाकी नाईं एक विभिन्न जाति हैं। दुसाधमें यह रिवाज है कि यह जब चाहे तब अपने कन्याका विवाह कर सकता है, अधिक उमर होने पर भी यदि कन्याका विवाह न करे, तो कोई शिकायत नहीं होती। लेकिन किसी किसी सम्प्रदायमें ऐसा भी है कि अविवाहिता कन्याकी उमर ज्यादा हो जाने पर उसका विवाह विधवा-विवाहके जैसा होता है। इस लोगोंका विवाह हिन्दूके मतसे हो होता है। केवल धनी दुसाध विवाहके समय अपने पुरोहितको बुलाते हैं। कन्या यदि बचपनमें ही व्याही जाय, तो श्रुतमते हुए बिना वह पसुरात नहीं जाती है। पुरुषमें केवल एक विवाह है, किन्तु स्त्री यदि चिरहन्ता, बन्ध्या वा स्तवन्ता हो, तो वह दूसरा विवाह कर सकता है। मन्वाल परगमें तीन विवाह तज करने को प्रथा है। विधवा विवाहमें भी कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु विधवा अपने दूसरेसे विवाह कर सकती है। यदि विधवा किसी दूसरेसे विवाह करे, तो वह न तो अपने स्त्रीकी सम्पत्तिकी अधिकारिणी होती और न मन्वानकी अपने साथ ही ले जा सकती है। इस लोगोंने पचायत है। पचायत सामाजिक दोषका विचार करनी है। इस जातिमें विवाह-विच्छेदकी प्रथा भी है। मन्वाल परगमें और प्रायामोमें गानसे पत्नी काह

का मतलब
साधारण हो
गता है।

दुस्तारभाषाचार्य—प्रसिद्ध व्याययन्य गटाधरीको कोड़ नामक टीकाके रचयिता।

दुलारा (हिं० वि०) १ प्यारा, लाइला। (पु०) २ प्रिय पुत्र, लाइला बेटा।

दुलारो (हिं० वि०) १ प्यारो, लाइली। २ प्रिय कन्या, लाइली बेटो।

दुलोचन्द—हिन्दुकी एक कवि। इनका जयपुरमें निवास स्थान था। इन्होंने स० १८०० के लगभग महाराज रामसिंह जयपुरनरेशकी आज्ञासे "महाभारत भाषा" नामकी एक पुस्तक लिखी।

दुलोचा (हिं० पु०) आसनविशेष, गलीचा, कालोन।
दुलोडुड (सं० पु०) दिलोपराजाके पिता, चनमित्रके पुत्र। (हरिवंश १५ अ०)

दुलौचा (हिं० पु०) गलीचा, कालोन।

दुलोल—सूक्तिकर्णायितृष्टम एक कवि।

दुलोही (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी तनवार। यह लोहेके दो टुकड़ोंको जोड़ कर बनाई जाती है।

दुल्लल (सं० त्रि०) दु-क्षिप, दुतं शलति लल-अच्, रोसय।

दुल्ला नवाब—एक विख्यात साधु। १७५४ शकमें ये कलकत्तेके निकटवर्ती शिवपुरसे भूकौलासमें लाये गये। उस समय ये समाधिस्थ थे। कितने बङ्गाको और साधवोंने इनके ध्यान भङ्गको चेष्टा की। नाकके पास चमोनियाका प्रयोग करनेसे भी इनका ध्यान भङ्ग न हुआ।

कवितक ये समाधिस्थ रहे, इसका कुछ विचय नहीं है उस समय ये कुछ भी जानते पीते नहीं थे। बहुत सुरिकलसे दो चार बुन्द दूध गलेके भीतर डाला जाता था। जो कुछ हो, उन माधारणके उच्छेजनासे कुछ दिनेके बाद ही उनका ध्यानभङ्ग हुआ। ५१० दिन कीमिग करने पर ये दो एक बात बोले थे। नाम पूछने पर ये 'दुल्लानवाब' अपना नाम बतलाते थे। कोई कोई उन्हें पञ्जाबी समझता था। जब वे समाधिस्थ थे, तब उनका वर्ष तम काष्ठभङ्गे जैसा उज्ज्वल था। किन्तु ध्यानभङ्गके बाद उनकी पहली सुखयौ और शरीरको च्योति जाती रही। १७५५ शकमें चदरभङ्ग हो कर उनकी मृत्यु हुई।

समाधिकानमें योगीश्वर जो महा खंछेद भोग करते हैं एवं इस दुष्टनेके समय भी जो भारतमें सिद्ध योगीका प्रभाव नहीं है, यह माधु उमका निदर्शन स्वरूप है।

दुख—तिव्यतमें बोझोंका विनयगाल।

दुखी—अयोध्या प्रदेशके खेरी जिलेका एक नगर। यह चौका नहरसे दो कोस उत्तर पूर्वमें अवस्थित है। पहले यहाँ जमींदारका एक बड़ा मकान था। सिपाही-विद्रोहके समय यह चर्चे जैके अधिकारभुक्त हुआ।

दुखी (हिं० स्त्री०) दूसरे नम्बरका गान्धी, गोलोक खेलमें नीर गोलोक पोछेकी गोली।

दुवन (हिं० पु०) १ दुःख, बुरा आदमी। २ राक्षस, दैत्य। ३ शत्रु, बरो।

दुवस (सं० स्त्री०) दुवस परिरक्षणे कण्टादि, यक, दुखस किप् चलोपयलोपो भावः। १ हविः। २ परिवरण, टहल, खिदमत।

दुवस्य (सं० त्रि०) दुवस्य शक्यार्थे यत् चलोपयलोपो। परिवर्थाहं, सेवा करन योग्य, खिदमत करने काविल।
दुवस्यु (सं० त्रि०) दुवः परिवरणमिच्छति क्वचु ततो वन्। परिवरणीच्छायुत, जिनको इच्छा सेवा करनेको हो, जो टहल करना चाहता हो।

दुवस्तत् (सं० त्रि०) दुवो हविः परिवरणं वास्तस्य मनुष्यस्य वः सान्तरवान् न पदकायै। १ हविषुत। २ परिवरणयुत।

दुवाज (हिं० पु०) एक प्रकारका घोड़ा।

दुवाल (फा० स्त्री०) चमड़ेका तसमा। २ रिवाजका तसमा।

दुवालबंद (फा० पु०) कमर आदिमें लपटनेका चमड़ेका तसमा।

दुवाली (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारका घोड़ा। यह रंगे वा लपे कपड़ों पर चमका लानेके लिए घोंटनेके काममें जाता है। २ बन्दूक, तलवार आदि लटकानेका चमड़ेके चौड़े तसमेका परतसा।

दुवालीबंद (फा० पु०) वह सिपाही जो परतसा आदि लगाये तैयार रहता है।

दुवोधा (सं० स्त्री०) पुजा।

करें तथा एक लकड़ीको दो खण्ड करके पतिपत्नीका सम्बन्ध तोड़ा जाता है।

ये लोग अपनीकी हिन्दू बतलाते हैं। अनेक जिनोमें से श्रीनारायणो, कवोरपन्थी, तुलसीदास, गोरचनाथ वानानकके सम्प्रदायभूत हैं। किन्तु यह बहुत आधुनिक है। पहले राहु ही दुग्धाक्षके एकमात्र उपास्य देवता थे। अभी भी पगहन, माघ, फाल्गुन और वैशाख महोत्सवके किसी किसी दिन राहुकी पूजा होनी है। पटनेके समीप सेरपुरमें विख्यात दुग्धाक्ष गौड़ियाके नामसे एक मन्दिर है। वहाँ गौड़ियाको देवता मान कर पूजते हैं।

बिहारमें भीमसेनके हारी सालाहम वा गैलिय, मिरजापुरमें विश्वाश्वर, पटनेमें पोर, भैरव, जगदा मा, कालो और केतु तथा अन्यथा स्थानोंमें चौरासल दुग्धाक्षके उपास्य देवता हैं।

—वहुतसे कनोजी वा मैथिली ब्राह्मण ही दुग्धाक्षके पुजित हैं। पूर्व बङ्गालमें शाकदीपी ब्राह्मण भी दुग्धाक्षको पुजितकरते हैं। चतुर्भुज रूपधारी विश्वरूपित ज्ञानसागर पुष्पक इन लोगोंका धर्मग्रन्थ है। ये लोग यवकी जलाते पोर कभी जमीनमें भी गाड़ देते हैं। मृत्युके बाद स्यारहवें दिनमें स्वाहकर्म किया जाता है। स्वान्ता उत्पन्न होने पर स्त्रियां ६ दिन तक पशुचरितो हैं और बारह दिन हुए बिना वे सांसारिक कार्य नहीं कर सकतो हैं।

दुग्धाक्ष होम, धीवो और पमार छोड़ कर सभी जातिका पक्ष खाते हैं। उक्त जातियोंके अतिरिक्त और सभी हिन्दू जातिके लोग दुग्धाक्ष हो सकते हैं। दुग्धाक्ष होत समय इनके सम्मान्त व्यक्तियोंकी वराह या मांस खिचाना पड़ता है तथा श्राव भी देना पड़ता है। पर विरसे ही अपना इच्छामें दुग्धाक्ष होता है। इन लोगोंका जातिपेशा चौकीदारो है। पर अश्वरक्षक, माहुल, कुला, दरबानके काममें भी ये लोग नियुक्त होते हैं। बहुतसे दुग्धाक्ष साहबकी घरकी और खानसामा भी होते हैं। साधारणतः दुग्धाक्ष कुकर्मी और चोर कह कर भयङ्कर हैं, रक्षोसे पुलिस इन लोगोंके ऊपर कड़ी निगाह रखतो है।

दुग्धाक्ष लोग साधारणतः छलपुट होते हैं। बङ्गालके नवाब अनियर्तोंके समयमें अनेक दुग्धाक्ष सैनिक का काम करते थे। क्राइवर्क समयमें भी दुग्धाक्ष सैनिक थे। बङ्गाल, कोचबिहार, दार्जिलिङ्ग, त्रिपुरा, पटना, गया, तिरहुत, मन्दास परगना, मोहरङ्गा, सिम्रूम, मानसूम, युक्त प्रदेशमें कई जगह तथा गाजोपुरमें बहुतसे दुग्धाक्ष वास करते हैं। (वि०) २ अधम, दुष्ट, मोघ। दुसार (हि० पु०) १ चार पार छेद, वह छेद जो एक ओर से दूसरी ओर तक हो। (क्रि० वि०) २ चारपार, बारपार।

दुसाल (हि० पु०) आर पार छेद।

दुसाड़ा (हि० पु०) वह खेत जिसमें दो फसलें हों, दोफसली खेत।

दुसतो (हि० स्त्री०) पञ्चावमें तैयार होनेवाली एक प्रकारको मोटो चादर। इसमें दो तागीका ताला और बाना होता है।

दुसेजा (हि० पु०) पलंग, बड़ी खाट।

दुस्तर (सं० वि०) १ जिससे पार करना कठिन हो। २ दुर्घट, विकट, कठिन।

दुस्त्राज (हि० वि०) जिसका त्यागना कठिन हो, जो कठिनाईसे छोड़ा जा सके।

दुस्त्र (सं० त्रि०) दुर्-स्त्राक, बाहुलकात् विसर्गलोपः।

दुःखसे अवस्थित, जिसका रहना कठिन हो। २ कुकुट, मुर्गा। ३ कुकुर, कुत्ता।

दुस्पष्ट (सं० क्लो०) दुष्टं पृष्टं वा विसर्गलोपः। मन्द भावसे जिज्ञासित, जो बुरो तरहसे पूछा गया हो।

दुसर्ग (सं० पु०) दुरालभा, जवाबा।

दुसर्गी (सं० स्त्री०) १ कपिकच्छु। २ रक्त दुरालभा, लाल जवाबा। ३ पाटल वृक्ष। ४ बाकामयवर्णी मत्ता। ५ कण्टकारी, भटकटैया।

दुस्कोट (सं० पु०) १ दुष्ट वृष, बुरा धाव। २ शस्त्र-भेद, एक प्रकारका हथियार।

दुस्सह (हि० वि०) दुःसह देखो।

दुहता (हि० पु०) विटोका विटा, नातो।

दुहत्या (हि० वि०) १ दोनों हाथोंसे किया हुआ। २ जिसमें दो मूठें या इष्टी हों।

दुःखेय (मं० ति०) द्वयः परिचर्यामिच्छति स्वयं यदे
यादृशमर्थं ततो यद् । परिचर्यामिच्छ, सो दुःखं या
येवा स्वयं यादृशो ।

हुमना (का० वि०) १ पुष्ट, कठिन। २ दुःख, शो
मयन वरमें दीप्त न हो।

सूक्तश्रुति (प्रा० श्रुति०) अष्टमिका :

दुःखान् (दि० पु०) पाप्मनोश्चो जहोवा मोहा । दमनं
 दिनां पाप्मनोश्चो रंन विरंनो जेहे वमो रमो ॥
 ज्ञानोश्चो दोर विमोदरं दुःखान् जहल नै पार होला ॥
 पाप्मनोश्चो दुःखान् दमनो दोर जोमोश्चो होला ॥

दृष्टान्तयोग (भा. वि०) १ यमोत्तर । २ श्री यक्ष्मा कथना
यक्ष्म कथना । ३ श्री दृष्टान्त योगे श्री ।

दुर्गाभा-फरीश (का० प०) दुर्गाभा के भवनेवाला ।

ਦਫਤਰ (ਮੰ. ੧੦) ਜੀਲਾ, ਜੰਮਸ਼ਾਹੀ ।

दुष्य (सं० ति०) दुःखिन जातिमो दुर्-पुत्र कर्मणि
 यत् । १ दुःखः, त्रिपक्ष करमा कर्मणि हो । २ दुःखिन,
 जहाँ नागा कर्मणि हो । दुःखिन दुष्ट या पाणि धर-यत् ।
 ३ शम्भक, भंग । ४ भक्त क, भाव ।

दुष्टादि (मं० श्री०) दुष्टरस भागः स । दुष्टका भावः,
दुष्टता ।

सुचरितं (नं० द्वी०) सुदृढं चरितं प्राद्विश० । १ सुप्रसन्नं ।
प्राप्तं ।

मनुष्ये विद्या है, कि इस जगत् का पुनर् जन्म सुधारित
द्वारा मनुष्य कोड़ी, सुखी पादि होत है यद्यत् वाय
कारिका पत प्रत्ये चरमा को भुलना पड़ता है । जिस
तरह महाभारतमें देवा के कर्ममें यह दुष्ट जाता है, वसी
तरह यह सुधारित होत है दुष्ट ज्ञान है, यद्यत् वेदवाक्य पौर
वेदीय विद्यावलादका अनुष्ठान करनेमें यह सुधारित ज्ञान
होत है । जो यद्यपि विदित वेदवाक्य पौर वेदिक विद्या
का अनुष्ठान करने है जन्म वापसी पौर ज्ञान नहीं
रहता है वह नृक्षत पात दूर हो जाते हैं । २ सुध-
रित, दुरा काचरण, बहवर्णिता । (जि०) दुःखित
चित्तः । ३ दुःखमें पावतपोत, बहुत कष्टितनाशे ज्ञानमें
हीन । ४ वह पावतपोत, बहवर्णिता ।

इष्टिनिष्ठ (क० सि०) धारावाहक ।

द्वितीयः (२० दि०) द्विदिनिकं चरितं यत् । । मन्त्र-

जतिन, सुरा जतिनवाणा, अद्वयमनः (५०) २ सुतामने,
नरो नाम ।

दुधमंजु (मं० पृ०) मुठ' यामे दय्य। दय्यमुठिपू.
यह दुधय तिमही मिठ्ठिमुठिने गुण पर दावेदेवता
बनना न हो। हमका धर्या-दिग्गक, बन्त दोर
मिठिविठ है। मुठमोहरय करके मुधमा होता है
ओ मजापावकका बिष्ट है।

इस प्रकार के भाग प्रत्यक्ष ही बिना इस समझ के नहीं
है। यही सुझावों को बिना प्राथमिक किंवा द्वितीय क्रमिक
कार्यका अधिकार नहीं है। यहाँ तक कि बिना प्राथ-
मिक किंवा द्वितीय क्रमिक कार्य का अधिकार ही नहीं
है। यहाँ तक कि बिना प्राथमिक किंवा द्वितीय क्रमिक कार्य का अधिकार ही नहीं

दुष्कर्म (वि० को०) दुःखदय, मोटी पाप ।
 दुर्वाचि (मं० कु०) गरिष्ठमेव वाचं यत्, वाचि,
 दुष्टं वाचिम् । १ दुष्ट वाचि, पाप । (वि०) दुर्वाचिम्
 वाचिष्ठमम् । २ दुष्टवाचिष्ठक, बद्धकर्म ।

दुयत्रिका (मं० वि०) दुः, विजिता-वृत्तः । अविजिता,
जितमां विजिता कतिम वा ।

बुद्धिबल (म० पा०) बुद्धिबल बुद्धिबल : बुद्धिबल
 बुद्धिबल, बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल
 बुद्धिबल : बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल
 बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल
 बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल
 बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल
 बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल
 बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल बुद्धिबल

मिथिलिनि (मं० शि०) दुर्दिक्कम म । पदिदिक्कमोद,
त्रिमको मिथिलाना वरुओ कदिगान्ने को मने । त्रिम दाम-
मं दुर्दिक्कमिनि व्याधि पादुग लोम रकने नी. वप दाम-
मि दाम लको कदिगान्ने ।

(पत्रिका) (सं० १३)) दूर-विज्ञान कार्यें मज्जा, सुखी
विश्वामूर्तिदूर-विज्ञान कार्यें दिव्य । हृत्त पुःस्वर्ग
विज्ञानमूर्ति, विज्ञान (विज्ञान) विज्ञानमूर्ति ही प्रथम ।
(पत्रिका) (सं० १४)) अन्त्ये एतेषां शक्ति, वरिष्ठ

विष्णु (अ० पु०) । दुर्बिन्दा, वाग्बिन्दा, पदबिन्दा । २ वाक्

विष्णु । (५० पौ०) बुद्धिमान्, दानवान्, विष्णु

दुहरी (हि० स्त्री०) मानसबन्धकी एक कसरत । इसमें खिनाहो मानसबन्धकी दोनो शायेमें कुछनौ तक मये-
टना है और जिधरका हाथ ऊपर होता है उधरकी टांग-
की उठा कर मानसबन्ध पर सवारो बांधता है और हाथ
पेटके नीचे निकाल लेता है ।

दुहना (हि० क्रि०) १ दूध निकालना । २ तख निकालना, निचोड़ना, मार खींचना ।

दुहना (हि० स्त्री०) दूध दुहनेका बरतन, दोहो ।

दुहरना (हि० क्रि०) दोहरना देखो ।

दुहरा (हि० वि०) दोहरा देखो ।

दुहराना (हि० क्रि०) दोहराना देखो ।

दुहाई (हि० स्त्री०) १ घोषणा, पुकार । २ सहायताके लिये पुकार । ३ शपथ, कसम, शौगन्ध । ४ गाय भैंस आदिको दुहनेका काम । ५ दुहनेकी मजदूरी ।

दुहाग (हि० पु०) १ दुर्भाग्य । २ वैधव्य, रेखावा ।

दुहागिन (हि० स्त्री०) विधवा, सुहागिनका उल्टा ।

दुहाऊ (हि० वि०) १ जो पहनो स्त्रीके मर जाने पर दूसरा विवाह करे । २ जो पहले पतिके मर जाने पर दूसरा विवाह करे ।

दुहादि (सं० पु०) दुह आदि यन्त्र । धातुगणविशेष । लकार निर्णयके लिये यह गण निर्दिष्ट रूपा है । दुह, याच, रुध, प्रवृष, भि, बि, मू, गास, जि, दण्ड, मय, वद ये सब धातु दुहादिगण हैं । "अप्रधान दुहादीनां" पाणिनिके शासनानुसार जहाँ द्विकर्मक धातुका कर्म उक्त होगा वहाँ दुहादि धातुका अप्रधान कर्म उक्त होगा । गौणकर्मकी अप्रधान कर्म कहते हैं । अप्रधान कर्म उक्त होनेसे 'उत्तेकर्मणि प्रथमा' इस नियमके अनुसार दुहादि धातुका अप्रधानकर्म पर्याप्त गौणकर्ममें द्वितीया विभक्ति होगी । द्विकर्मक धातुका मुख्यकर्म उक्त होता है, वस्तु 'अप्रधान दुहादीनां' इस विशेष नियमके अनुसार ऐसा नहीं होगा ।

दुहाना (हि० क्रि०) दूध निकलवाना ।

दुहाव (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी प्रथा । इसमें जमींदार प्रतिवर्ष जगमाटमी आदि त्योहारोंके उपसत्तमें किसानोंको गाय भैंसका दूध दुहा कर ले लेता है । २ यह दूध जो इस प्रथाके अनुसार किसान जमींदारको देता है ।

दुहावनी (हि० स्त्री०) गाय दुहनेके लिये खासकी दिये जानेका धन, दूध दुहनेकी मजदूरी ।

दुहिता (हि० स्त्री०) दुहितृ, कन्या, लड़की ।

दुहितृपति (सं० पु०) दुहितृः पतिः वा पटगः पलुक् समावाप्तः । दुहिताका पति, कामाता, डोमाद ।

दुहितृ (सं० स्त्री०) दोषि विषादाटिकाले धनादि-
कमाक्षय गृहहानौति वा दोषि ना इति दुह लृप् । नन्वेष्टृत्वद्दुहेष्ट वाच्य आमाह मातृ विद्ध दुहितृ । नन् २।६१ निपातनात् गुणाभावः । कन्या, चेटो, लड़की ।

लड़कीकी यमपूर्वक पालन कर उसे उपयुक्त पात्रके हाथ में प देना चाहिये । विशेष रूपसे पात्रकी विधेचना करके कन्यादान करना उचित है । कन्यादानके पात्रापात्रका विषय इस प्रकार सिखा है—गुणहीन, वृद्ध, पंचांगी, दरिद्र, मृदु, रोगी, कुत्सित, पत्न्यन्त क्रोधी, पत्न्यन्त दुर्मुख, चापल्य, चण्डहीन, पश्य, वधिर, जड़, सुर्ध्व, क्षोबस्तुल्य और पापी इनके साथ कन्याका विवाह करनेसे ब्रह्महत्याका पाप होना है । उक्त पात्रकी कन्यादान कदापि नहीं देना चाहिये ।

शान्त, गुणो, युवक, पण्डित और वैष्णव ये सब पात्रके योग्य हैं । इनके साथ कन्याका विवाह करनेसे कन्यादाताकी दमभाषी दान करनेका फल प्राप्त होता है ।

उक्त रूप गुण और दोषको विशेष रूपसे परीक्षा कर कन्यादान करना चाहिये । यदि कोई जन्म पालन कर उसे विक्रय करे, तो उसे कुम्भीपाक जरूर होता है । उस मरकमें जाकर वह मूत्र और विष्टा खाता है तथा जब तक चोटह इन्द्र पवस्थान करेगी, तब तक इसी दुर्दमामें रहेगा । बाद व्याध योगिनी उसका जन्म होता है । इस व्याधजन्मकी प्राप्ति कर रात दिन यह मांसका भार वहन करता और भेचता रहता है ।

यद्योक्तरूपमें कन्यादान करनेमें उसे नामा प्रकारके पुष्ट प्राप्ति होती है । वेदम, त्रिषन्ध्या करनेवाला, पण्डित, सत्यवादी, जितेन्द्रिय इस प्रकारके सद्गुणव्यक्त पात्रको कन्यादान करना श्रेय है । अपात्रकी भूम कर भी कन्यादान न करे ।

जो धनकी कन्याको विष्णु वा महादेवकी मूर्तिके

दुःखित्य (सं० त्रि०) दुःखेन चिन्तायै चिन्ति कर्मणि
यत् । अति दुःख द्वारा चिन्तनीय, जो कठिनायै समझ
में आवे ।

दुष्टेष्टा (सं० स्त्री०) कुचेष्टा, बुरा काम ।

दुष्टं दित (सं० क्लृ०) दुर्निन्दितं चेष्टितं । १ निन्दित
चेष्टित, दुष्कर्म, पाप । २ मन्द कार्य, छोटा काम ।

दुश्चावन (सं० पु०) दुःसहं च्यवनं चालनमस्य वा
दुर्दुष्टचावनः शिवो यस्य दुर-च्यु-ल्लु । १ इन्द्र ।

इन्द्र बहुत काल तक स्वर्गमें राज्य करनेकी वाद
अग्नि स्थानसे च्युत हुए थे, इसी कारण इन्द्रका नाम
दुश्चावन पड़ा है । एक एक मन्वन्तरमें चौदह इन्द्र होते
हैं । क्रमसे क्रम पाँच हजार युग तक एक एक इन्द्र
अग्नि स्थान पर रहते हैं । कल्पमेदसे प्रत्येक इन्द्रका
नाम भिन्न भिन्न है । इन्द्र देखो । (त्रि०) २ अविचाय्य,
जो जल्दी विचलित न हो ।

दुश्चास (सं० त्रि०) दुःखेन च्यायतेऽनी दुर-च्यु-णिव-
कर्मणि खलु । १ अति कष्टसे व्यावनीय, जो जल्दी
च्युत न किया जा सके । (पु०) २ शिव, महादेव

दुश्मन (फा० पु०) शत्रु, वैरी ।

दुश्मनी (फा० स्त्री०) शत्रुता, वैर ।

दुश्चयव (सं० क्लृ०) दुःखेन च्युतेऽसौ दुर-च्यु-ल्लु ।
श्रुतिदुःखावह पर्यवर्णयुक्त काव्यदीपभेद । जहाँ शब्द
विचार सुननेमें बहुत कठोर मालूम पड़े, वहाँ यह दोष
होता है ।

दुष्कार (सं० त्रि०) दुःखेन क्रियते दुर-क्त कर्मणि खलु ।
१ भयान्त दुःखसे करणाय, जिसे करना कठिन हो ।
(स्त्री०) २ आवाय । भाव खलु । ३ दुःखसे कारण,
वह काम जो कठिनायै किया जा सके ।

दुष्कारवर्ग्य (सं० स्त्री०) दुष्कार कार्यके अधोल ।

दुष्कारण (सं० त्रि०) जो भुग्न क्लेशसे हो सके ।

दुष्कर्ण (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

दुष्कर्मन् (सं० क्लृ०) दुष्टं कर्मं प्रादिसं । १ पाप ।

दुर्निन्दितं कर्म यस्य । २ पापकर्म कारक, बुरा काम
करनेवाला ।

दुष्कर्मी (हिं० वि०) १ दुराचारी, बुरा काम करनेवाला ।
(पु०) २ पापी ।

दुष्कलेवर (सं० पु०-क्ली०) दुष्टं निन्दितं कलेवरं ।

१ कुलित कलेवर, खराब शरीर । २ बग़ायमय देह ।

दुष्काल (सं० पु०) दुष्टः कालः प्रादिसं । १ निन्दित-
काल, जिस कामके लिये जो काल निर्णीत है, वह काम
उस समयमें न कर किसी दूसरे समयमें करनेसे कालका
दुष्टत्व होता है । दुःमहः काली कलनमस्य । २ महादेव ।
३ दुर्गिष्ठ, अकाल ।

दुष्कौत्ति (सं० त्रि०) दुष्टा कोत्तिं यंस्य । १ दुष्टकौत्तिं युक्त,
जिसे अपयय हो । (स्त्री०) दुष्टा कौत्तिः । २ कुकौत्तिं,
अपयय, बदनामी ।

दुष्कूल (सं० क्ली०) दुष्टं कुलं प्रादिसं । १ निन्दित
कुल, नीच कुल, बुरा खानदान । २ चौरक नामक गन्ध
द्रव्य । दुष्टं कुलं यस्य । (त्रि०) १ नीच कुलजात,
नीच कुलका, तुच्छ घरानेका ।

दुष्कुलो न (सं० त्रि०) दुष्कुले भवः दुष्कूलोऽङ्कः । निम्न
कुलभव, नीच घरानेका ।

दुष्कृतृ (सं० क्ली०) मन्दकार्यं, बुरा काम ।

दुष्कृत (सं० क्ली०) दुष्टं कृतं प्रादिसं । १ पाप । २ बुरा
काम ।

दुष्कृतकर्मन् (सं० क्लृ०) दुष्कृतं कर्म यस्य । १ दुष्कार्यं,
बुरा काम । (त्रि०) २ पापी, बुरा काम करनेवाला ।

दुष्कृताम्बु (सं० त्रि०) दुष्कृतं चात्मा स्वभावो यस्य ।
पापात्मा, दुरात्मा, खोटा ।

दुष्कृति (सं० त्रि०) दुष्टया कृतियंस्य । १ दुष्कर्म कारक,
दुष्कर्मी, पापी । २ दुष्कर्म, बुरा काम ।

दुष्कृतिन् (सं० त्रि०) दुष्कृतमवस्थस्य अवस्थार्थं इति ।
दुष्कृतकारो, बुरा काम करनेवाला ।

दुष्कृष्ट (सं० त्रि०) दुर-क्षय-क्त । जो दुःखसे क्षयित
हुआ हो, जो बहुत कठिनायै खींचा गया हो ।

दुष्क्रिया (सं० स्त्री०) दुष्टा क्रिया । कुकार्य, बुराकाम ।

दुष्क्रियाचरण (सं० क्ली०) दुष्क्रियाका अनुष्ठान, बुरे
कामका करना ।

दुष्क्रियारत (सं० त्रि०) दुष्क्रियायां रतः ० वत् । कुकार्यमें
अतिनिविष्ट, जो बुरे काममें लगा रहता हो ।

दुष्क्रीत (सं० त्रि०) दुर्दुःखेन क्रीयते स्म इति दुर-क्री-
तः । दुर्दुःख, महंगा ।

लिये दान करते हैं, वे नारायण स्वरूप होते हैं, यह कथा श्रुतिमें लिखी है।

मन्वादिषंहितामें भी अपात्रको कन्या देना निषिद्ध बताया है।

दुहितृत्व (सं० स्त्री०) दुहितृभावः, दुहितृत्वः। कन्याका भावः।

दुहितृपति (सं० पुं०) दुहितृः पतिः। जामाता, दामाद।
दुहितृमत् (सं० त्रि०) दुहितृ विद्यतेऽस्य अर्थः
मत्पुत्रः। दुहितृ युक्त, गिमके लड़को हो।

दुहोता (हिं० स्त्री०) १ दुःखदायी, दुःसाध्य, कठिन।
(पुं०) २ दुःखदायक कार्य, विकट खेल।

दुहोतरा (हिं० पुं०) कन्याका पुत्र, नातो।

दुह्य (सं० स्त्री०) दुह्यते इति दुह्-कर्मणि क्वप् (एषिष्ठ
शास्त्रे हट् उपः क्वप्, पा ३।१।१०८) इति ध्रुवस्य 'ग्र'सि
दुह्यं शुद्धिभ्यो वा' इति कार्गिकोक्तः क्वप्। दोहन
योग्य, दुहनेयोग्य।

दुह्यमान (सं० त्रि०) दुह्यते इति दुह् कर्मणि मानच्।
दोहनविशिष्ट, जो दुहा जाय।

दुह्यु (सं० पुं०) ययाति राजाके एक पुत्रका नाम।
इन्होंने अग्निहोत्रके गर्भसे जन्मग्रहण किया था। राजा
ययाति जब द्विजविशय कर चुके, तब उन्होंने भूमिको
अपने पुत्रोंमें बांटा था। पश्चिम दिशाके देश दुह्युको
मिले थे। राजा ययातिसे जब अपना दुहाया देकर
इन्से जवानों भागो यो, तब इन्होंने अश्वोत्तार कर दिया
था। इस पर ययातिने शाप दिया था, कि मेरे हृदयसे
जन्म लेकर भी अपना यौवन मुझी नहीं देते हो, इसलिये
तुम्हारे कोई प्रिय चमत्कारा पूर्ण न होगे।

ययाति देखो।

दू (सं० पुं०) रोग, बीमारी।

दूषा (हिं० पुं०) १ कलारि पर पहननेका एक प्रकारका
गहना। यह सब गहनोंके पीछेको थोर पहना जाता
है। २ दो बूटियोंका तागका एक पत्ता। ३ किसी
खेल विशेषतः जुएवाले खेलका एक दौंव। यह दो
चक्रों, बूटियों या कौड़ियों आदिसे सम्बन्ध रखता है।
(स्त्री०) ४ डूषा देखो।

दूकान (हिं० पुं०) दुकान देखो।

दूकानदार (हिं० पुं०) दुकानदार देखो।

दूकानदारी (हिं० स्त्री०) दुकानदारी देखो।

दूग (हिं० पुं०) हिमालयकी तराईमें मिलनेवाला एक
प्रकारका बकरा।

दूज (हिं० स्त्री०) द्वितीया, किमो पक्षको दूसरीतिथि।

दूहभ (सं० त्रि०) दूट्, खेन दभ्यते इति दूर-टभ-खल
(दूरोदाशनास दभ्ये पूर्वपुनरुदादेः, त्वच्। पा
३।१।०८) इत्येति वार्त्तिकोक्ता जत्व भक्ष इत्यच्।

१ अत्यन्त दुःखसे दण्डनीय। २ व्यननप्राप्त विपद्गुप्त,
जो व्यननी होनेके कारण दुःखी हो। ३ द, दं, दं, नाश
करनेमें अशक्य।

दूहाम (सं० त्रि०) द, खेन दास्यते यः दूर-दाशि-खल
'द्योदरादीनि ययोपदिष्ट' इत्ययं दूरोदाशनाशेति'
इति वार्त्तिकोक्ता जत्व इत्यच्। पोहायुक्त, दुःखित।
दूकी (सं० त्रि०) दट् ध्यायति दूर-धौ चित्तात्मा सम्प-
दादित्वात् भावे कर्त्तरि वा क्तिप्। दूहभ शब्दवत्
कार्यं। १ दट्, ध्यायी। २ दट् बुद्धि।

दूख्य (सं० त्रि०) दुःखेन ध्यायति दूर-धौ-क दूहभ शब्द-
वत् क कार्यं। दूट्, ध्यायी, प्रथम।

दूषाम (सं० त्रि०) दुःखेन नश्यतेऽसौ दूर-नाशि-खल
(दूरोदाशनाशेति। पा ३।१।०८) इत्यस्य वार्त्तिकोक्ता
जत्व इत्यच्। जो बहुत कठिनतासे मट या बराबद हो।

दून (सं० पुं०) दूयते वार्त्तिकोक्तादिना दूक दोषश्च (दू-
निर्वा दोषश्च। उण् ३।८०) १ वार्त्तिक, सम्वाद पङ्क्ति
वा लानेवाला। पर्याय—मन्द, सन्दिग्धकथक। राजा
जब सन्धिविशेष आदिका अनुष्ठान करते हैं अथवा कोई
सम्वाद भेजते हैं, तब दूतका प्रयोजन होता है।

“वारेत्तगः दूतमुखः।” राजाओं का दूत मुख स्वरूप
है, चर चक्षु है अर्थात् राजा जो कुछ कहते हैं वह
दूतके मुखसे। दून थोर चर राजाओंके प्रधान सहाय
हैं। दूतके बिना सन्धि विषय आदि कोई काम शृङ्खलाके
साध नहीं होता। इससे दूतका अभाव अच्छी तरह देख
सुन कर उसे अपने यहां नियुक्त करें। दूतका विषय
पुराणमें जो लिखा है, वह इस प्रकार है—

जिम दूतको नियुक्त करें, उसके पास ये सब गुण
रहना आवश्यक हैं,—यथोक्तवादी, देशभावाविगारद,

दुहती (हि० स्त्री०) मानवधर्मको एक कसरत । इसमें पित्तको मानवधर्मको दोनो शरीरों में कुण्डी तक लपेटता है और जिधरका हाथ छपर होता है उसकी टांगको ठठा कर मानवधर्म पर सवारो बांधता है और हाथ में ठेके मोले निकाल देता है ।

दुहना (हि० क्रि०) १ दूध निकालना । २ तब निकालना, निखोड़ना, मार खींचना ।

दुहना (हि० स्त्री०) दूध दुहनेका वस्तु, दोही ।

दुहरना (हि० क्रि०) दोहरना देखो ।

दुहरा (हि० वि०) दोहरा देखो ।

दुहराना (हि० क्रि०) दोहराना देखो ।

दुहाई (हि० स्त्री०) १ घोषणा, पुकार । २ सहायता के लिये पुकार । ३ गणप, कर्म, सौम्य । ४ गाय भैरव आदिको दुहनेका काम । ५ दुहनेकी मजदूरी ।

दुहाग (हि० पु०) १ दुर्भाग्य । २ वैधव्य, रंड़ावा ।

दुहागिन (हि० स्त्री०) विधवा, सहागिनिका उल्टा ।

दुहाज (हि० वि०) १ जो पहलो स्त्रीके मर जाने पर दूसरा विवाह करे । २ जो पहले पतिके मर जाने पर दूसरा विवाह करे ।

दुहादि (म० पु०) दुह आदि संज्ञा । धातुगणविशेष । लकार निष्कर्ष के लिये यह गण निर्दिष्ट हुआ है । दुह, याच, वृष, प्रवृष, भि, वि, मृ, ग्राम, जि, दण्ड, मन्त्र, यह ये सब धातु दुहादिगण हैं । "अप्रधान दुहादीनां" पाणिनिके शासनानुसार जहाँ हिक्मक धातुका कर्म उक्त होगा वहाँ दुहादि धातुका अप्रधान कर्म उक्त होगा । गोपकर्मको अप्रधान कर्म कहते हैं । अप्रधान कर्म उक्त होनेसे 'विकर्मणि प्रथमा' इस नियमके अनुसार दुहादि धातुका अप्रधानकर्म पर्याप्त गोपकर्म में दितोया विभक्ति होगी । हिक्मक धातुका सुषकर्म उक्त होता है, किन्तु 'अप्रधान दुहादीनां' इस विशेष नियमके अनुसार ऐसा नहीं होगा ।

दुहाना (हि० क्रि०) दूध निकलवाना ।

दुहाव (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी प्रथा । इसमें जमींदार प्रतिवर्ष जमादमी आदि न्योहारोंके उपलक्ष्यमें किसानोंको गाय भैरव आदि दूध दुहा कर से लेता है । २ यह दूध जो इस प्रथाके अनुसार किसान जमींदारको देता है ।

दुहावनी (हि० स्त्री०) गाय दुहनेके लिये खासकी दिने जानेका धन, दूध दुहनेकी मजदूरी ।

दुहिता (हि० स्त्री०) दुहितृ, कन्या, लड़की ।

दुहिःपति (म० पु०) दुहितृः पतिः वा पट्टाः पतुः समासतः । दुहितृका पति, जामाता, डोमाद ।

दुहितृ (म० स्त्री०) दोष विवाहादिकाने धनादि कमाकृष्य गृह्णातीति वा दोषि मा इति दुह-तृच् (नन्) नेच् स्वट् दोह पाठ आह जानाह मात् पिह दुहितृ । वग, २।८६) निपातनात् गुणभावः । कन्या, चेट्टी, लड़की ।

लड़कीको यमपूर्वक पालन कर उसे उपयुक्त पात्रके हाथ मोप देना चाहिये । विशेष रूपसे पात्रकी विवेचना करके कन्यादान करना उचित है । कन्यादानके पात्रापात्रका विषय इस प्रकार लिखा है—गुणहीन, छद्म, चञ्चली, दरिद्र, मूढ़, रोगी, कुलित, पत्न्याकीवी, पत्न्या दुर्मुख, चापल, चक्रहीन, अश्रु, वधिर, जड़, सुर्ख, क्षोवतुल्य और पापी इनके साथ कन्याका विवाह करनेसे ब्रह्महत्याका पाप होता है । उक्त पात्रकी कन्यादान कदापि नहीं देना चाहिये ।

शान्त, गुणी, युवक, पण्डित और वैष्णव ये सब पात्रके योग्य हैं । इनके साथ कन्याका विवाह करनेसे कन्यादाताके दमबाजी दान करनेका फल प्राप्त होता है ।

उक्त रूप गुण और दोषको विशेष रूपसे परीक्षा कर कन्यादान करना चाहिये । यदि कोई अन्या-पालन कर उसे विक्रय करे, तो उसे कुम्भीपाक नरक होता है । उस नरकमें जाकर वह मृत्यु और बिछा खाता है तथा जब तक बोदक इन्हें पचस्यान करेगी, तब तक वही दुर्दशा में रहेगा । बाद व्याध योनिमें उसका जन्म होता है । इस व्याधजन्यको प्राय कर रात दिन यह मांसका भार वहन करता और बेचता रहता है ।

यथोक्तरूपसे कन्यादान करनेसे उसे माना प्रकारके पुण्य प्राप्त होते हैं । वेदज्ञ, त्रिमत्या करनेवाला, पण्डित, सत्यवादी, जितेन्द्रिय इस प्रकारके सब पुरुषसम्बन्ध पात्रको कन्यादान करना योग्य है । अपात्रकी भूम कर भी कन्यादान न करे ।

जो अपनी कन्याको विष्णु वा महादेवकी प्रतिमा

लिये दान करते हैं, ये नारायण स्वरूप होते हैं, यह कथा श्रुतिमें लिखी है।

मन्वादिषष्टितामं भो अपातकी कन्या देना निषिद्ध वतनाया है।

दुहितृत्व (सं० स्त्री०) दुहितृर्भावः, दुहितृ-त्व। कन्याका भाव।

दुहितृपति (सं० पुं०) दुहितृः पतिः। जामाता, दामाद।
दुहितृमत् (सं० त्रि०) दुहितृ विद्यतेऽस्य अस्त्वर्थं मत्पुत्रः। दुहितृ युक्त, जिसके सड़को हो।

दुहोता (हिं० त्रि०) १ दुःखदायी, दुःसाध्य, कठिन। (पुं०) २ दुःखदायक कार्य, विकट खेल।

दुहोतरा (हिं० पुं०) कन्याका पुत्र, नातो।

दुष्टा (सं० स्त्री०) दुष्टते इति दुष्ट-कर्मणि क्त्वा (एविष्य ग्राह्यं ह्युपः क्वप्। पा १।१।२०८) इति सूत्रस्य 'शंसि दुष्टि गुडिभ्यो वा' इति काग्यिकोक्तः क्वप्। दोहन योग्य, दुहनेयोग्य।

दुष्टमान (सं० त्रि०) दुष्टते इति दुष्ट कर्मणि मानच्। दोहनविषय, जो दुष्टा जाय।

दुष्टयु (सं० पुं०) ययाति राजाके एक पुत्रका नाम।
इन्होंने शर्मिष्ठाके गर्भसे जन्मग्रहण किया था। राजा ययाति जब दिग्विजय कर चुके, तब उन्होंने भूमिको अपने पुत्रोंमें बांटा था। पश्चिम दिशाके देश दुष्टयुको मिले थे। राजा ययातिमें जब अपना बुढ़ापा देखकर इनसे जबानी मांगो थी, तब इन्होंने अश्लोकार कर दिया था। इस पर ययातिने शाप दिया था, कि मेरे हृदयसे जब लेकर भी अपना यौवन सुमि नहीं देती हो, इसलिये तुम्हारी कोई श्रिय अभिनाया पूर्ण न होगी।

ययाति देखो।

दू (सं० पुं०) रोग, बीमारी।

दूषा (हिं० पुं०) १ कलाई पर पहननेका एक प्रकारका गहना। यह सब गहनोंके पीछेको ओर पहना जाता है। २ दो नूटियोंका तागका एक पत्ता। ३ किसी खेल विशेषतः शृणवाले खेलका एक दांव। यह दो चिह्नों, नूटियों या कौड़ियों आदिसे सम्बन्ध रखता है। (स्त्री०) ४ दूषा देखो।

दूकान (हिं० पुं०) दुकान देखो।

दूकानदार (हिं० पुं०) दुकानदार देखो।

दूकानदारी (हिं० स्त्री०) दुकानदारी देखो।

दूग (हिं० पुं०) हिमालयकी तराईमें मिलनेवाला एक प्रकारका बकरा।

दूज (हिं० स्त्री०) द्वितीया, किन्तु पक्षको दूसरी तिथि।

दूडम (सं० त्रि०) दुष्टः खेन दभ्यते इति दुर्-दभ-खल्ल (दुरोदागनाश दभ्ये पृथ्वरूपदादिः इत्यञ्च। पा ६।३।१०८) इत्यस्येति वाचिर्कोत्तया जलं भक्ष्यं हलश्च। १ भक्ष्यन्त दुःखसे दण्डनीय। २ व्यसनप्राप्त विषदुग्ध, जो व्यसनही होनेके कारण दुःखी हो। ३ दुर्दृष्ट, नाश करनेमें अशक्य।

दूहाय (सं० त्रि०) दुःखेन दास्यते यः दुर्-दासि-खल्ल 'एषोदरादीनि यथोपदिष्ट' इत्यञ्च दुरोदागनाशेति' इति वाचिर्कोत्तया जलं हलश्च। पोड़ायुक्त, दुःखित।
दूही (सं० त्रि०) दुष्टं ध्यायति दुर-धौ चिन्तायां सम्पादित्वा भावे कर्त्तरि वा क्त्वा। ईदृश शब्दवत् कार्य। १ दुष्टध्यायी। २ दुष्ट बुद्धि।

दूख (सं० त्रि०) दुःखेन ध्यायति दुर-धौ-क दूडम मन्दवत् वा कार्य। दुष्टध्यायी, भ्रम।

दूयाग (सं० त्रि०) दुःखेन मय्यतेऽमो दुर-नाशि-खल्ल (दुरोदागनाशेति। पा १।१।१०८) इत्यस्य वाचिर्कोत्तया जलं भल्लश्च। जो बहुत कठिन्तासे मर या बरबाद हो।

दून (सं० पुं०) दूयते वासनावहनादिना दूतः दोषश्च (दून-निर्वा दोषश्च। उण् १।८०) १ वात्ताहर, सम्पाद पद्वानि वा मानेवाला। पर्याय—मन्द्रेय, सन्दिष्टकथक। राजा जब सम्बन्धविषय पादिका भन्तृहान करतें हैं यद्यवा कोई सम्वाद भिजत है, तब दूतका प्रयोजन होता है।

“चरैस्त्वाम् दूतमुखः।” राजाश्रीं हा दूत मुख स्वरूप है, चर चक्षु है अर्थात् राजा जो कुछ कहते हैं वह दूतके मुखसे। दून और चर राजाओंके प्रधान सहाय हैं। दूतके बिना सम्बन्ध विषय आदि कोई काम श्रद्धाके साथ नहीं होता। इससे दूतका स्वाभाव अच्छी तरह देख सुन कर उसे अपने यहां नियुक्त करें। दूतका विषय पुराणमें जो निम्ना है, वह इस प्रकार है—

जिध दूतको नियुक्त करे, उसके पास ये सब गुण रहना आवश्यक है,—यथोक्तवादी, दयामायामहारद,

बधाविधि चासद-गुह्यादि करके गणेशादि देवताका पूजन करे। इसके बाद हस्त्युका ध्यान करना होता है।

ध्यान—

“भीमोत्पलदलदशमं चतुर्बाहुं क्रिपितं।

शङ्खचक्रादा द्वापरिणं वामास्त्रिनं॥

श्रीवराहलक्ष्मणेयं धिया चान्या समन्विता॥”

इस तरह ध्यान और मानसोपचारसे पूजा कर “श्रीं कृष्णाय नमः” इस मन्त्रसे पाद्यादि द्वारा पूजा करना चाहिये।

इसके बाद धारण-देवताको पूजा करना होती है। शची, दुर्गा, गौरी, श्री, सरस्वती, गङ्गा, दिति, घटिति, सुषेणा, चरन्धती, मन्दोदरी, सुभद्रा, शार्ङ्गिणी जया, विजया, रमा, होला, देवती, दमयन्ती, जोला, सुकेया, रक्षा, वासुदेव, देवकी, विष्णु, महादेव, ये सब धारण-देवता हैं। पूजा करके दूर्वाका ध्यान करना होता है। ध्यान—

“श्री भीमोत्पलदलदशमं सर्वदेवगिरिपुत्रं।

विष्णुदेहोद्भवं पुण्याममृतिरमिषिषितां॥

सर्वदेवाचारं दूर्वाममरं विष्णुकर्षिणीं।

विष्णुसन्तानसंदात्री परमायुषाममोक्षदां॥”

पौछे यद्योपचारसे दूर्वाका पूजन करके उसे प्रणाम करना चाहिये। प्रणामका मन्त्र—

“त्वं दूर्वेऽमृतनामासि पूजितासि घृशासुरैः।

सौमन्यसन्ततिं दत्त्वा सर्वकार्यकरीमयः॥

बबा शास्त्राप्रशास्त्राणि विस्तृतानि महीगले।

तथा ममापि सन्तानं देहिस्वमजामरं॥”

इसी प्रकार प्रणाम, भोज्य और उक्त्य करना होता है। पौछे बायें हाथमें खीर पकड़ कर व्रतको कथा सुनते हैं। व्रत-कथा—

युधिष्ठिर उवाच।

“व्रतमेकं समाचक्ष्व विचार्य मधुसूदन।

मेन सन्ततिविच्छेदो जायते न कदाचित्॥

श्रीकृष्ण उवाच।

मासि मादपदेऽध्यां शुक्लपक्षे युधिष्ठिर।

दूर्वाष्टमीनां नाम या करोषि पतिव्रता॥

न तस्याः क्षयमाप्नोति सन्तानं चाप्तवैश्वर्यं।

नन्दते वन्दते निश्च यथा दूर्वा तथा कुलं॥

युधिष्ठिर उवाच।

कथमेवा समुत्सवा कस्माद्दूर्वाचिरायुषो।

कस्मात् बन्धा पवित्रा च न्येके धन्या महीतले॥

मेन वा तस्मिन् देव चरितं केन हेतुना।

श्रीकृष्ण उवाच।

क्षीरोदसागरे पूर्वं मन्दमानेऽमृतार्चिना।

विष्णुना बाहुबन्धन्यां विधुतो मन्दरो गिरिः॥

क्रमता तेन वेगेन लोमान्पापिषितानि वै।

कर्मिस्तानि रोमाणि चोत्सृष्टानि ततान्तरे॥

अजायत घृषा दूर्वा रम्या हरितशाला।

एवमेवा समुद्रभा दूर्वा विष्णुन हूया॥

तस्या सपरि विन्यस्तं मवितामृतमुत्तमं॥

देवदन्तवन्धनं यक्षविद्यापराक्रमः।

तत्र येऽप्लुक्तमस्य निपेक्षुर्वाविन्दवः॥

ते रियं स्वरा मासाय दूर्वा वैवाज्रमरा।

बन्धा पवित्रा देवैस्तु सर्वशम्भुर्विता तथा॥

पूजयेतां प्रयत्नेन हव्ये नानाविधैरपि।

अष्टम्यां प्लवुरैस्तु शुभाहं नीरुकेनकैः॥

मासा हरीतकीमिश्र मोचकैर्जयकैस्तथा।

नागरेणैव जम्बोरे वीजपुष्पैश्च क्षीमनैः॥

दधत्ततैः पयोमिश्र पूषनैश्चयरीचकैः।

मन्त्रेणानेन राजेन्द्र शृङ्गेष्वक्षयिभ्यः मया।

त्वं दूर्वेऽमृतनामासि भदितासि सुरासुरैः॥

सौभाग्यं संततिं दत्त्वा सर्वकार्यकरी भव।

यथा शास्त्राप्रशास्त्राणि स्तुतासि महीतले।

तथा ममापि संतानं देहि स्वमजामरं।

एवमेव पुरा वार्य पूजिता विदद्योतमैः॥

सर्वा पत्नीभिरनिजं भगिनोभित्तयेव च।

पूजिता च तथा गौर्या देव्या रत्न धिया तथा।

धरत्स्वला मङ्गया च दिवादिन्या सुदीकया।

विन्दुमरया वेशवत्या इन्दुमरया सुधीरया॥

मन्दोदर्या चण्डिका मायया दीक्षया तथा।

मय्येकोके च देवता दमयन्त्या सुधीरया॥

सुकेशया वृताया च रम्भया निमगेशया।

दुःखी (हि० स्त्री०) मानवश्रमको एक करतर। इसमें विनाशो मानवश्रमको दोनो शायेंमें कुछनी तक मये-
टना है और श्रमकरका हाथ खपर होता है उधरकी टांग-
को उठा कर मानवश्रम पर सवारो बांधता है और हाथ
पेटके भीचे निकाल लेता है।

दुःखना (हि० क्लि०) १ दूध निकालना। २ तत्त्व निका-
लना, निचोड़ना, मार खींचना।

दुःखना (हि० स्त्री०) दूध दुःखनेका वरतन, दोहा।

दुःखरना (हि० क्लि०) दोहरना देखो।

दुःखरा (हि० वि०) दोहरा देखो।

दुःखराना (हि० क्लि०) दोहराना देखो।

दुःखादि (हि० स्त्री०) १ खोपखा, पुकार। २ सहायताके
निये पुकार। ३ जपथ, कमम, भोगम्व। ४ गाय भौम
पादिको दुःखनेका काम। ५ दुःखनेकी मजदूरी।

दुःखग (हि० पु०) १ दुर्भाग्य। २ वैधम्य, रूढ़ावा।

दुःखगिन (हि० स्त्री०) विधवा, सुहागिनका छुटा।

दुःखज्ञ (हि० वि०) १ जो पक्षीको छोके मर जाने पर
दूसरा विवाह करे। २ जो पहले पतिके मर जाने पर
दूसरा विवाह करे।

दुःखादि (मं० पु०) दुःख आदि र्थस्य। धातुगणविशेष।
नकार निर्णयके लिये यह गण निर्दिष्ट हुआ है। दुः,
याच, रुच, प्रच्छ, भि, वि, मृ, ग्रास, जि, दण्ड, मन्त्र,
वद ये सब धातु दुःखादिगण हैं। "अप्रधान दुःखीनां"
पाणिनिके ग्राममासुसार जहाँ द्विकर्मक धातुका कर्म
उक्त होगा वहाँ दुःखादि धातुका प्रप्रधान कर्म उक्त
होगा। गौलकर्मको प्रप्रधान कर्म कहते हैं। प्रप्रधान
कर्म उक्त होनेसे 'द्विकर्मणि प्रथमा' इस नियमके अनु-
सार दुःखादि धातुका प्रप्रधानकर्म प्रयात् गौलकर्मन
द्वितीया विभक्ति होगी। द्विकर्मक धातुका मुख्यकर्म
उक्त होता है, किन्तु 'अप्रधान दुःखीनां' इस विशेष नियम-
के अनुसार ऐसा नहीं होगा।

दुःखाना (हि० क्लि०) दूध निकालना।

दुःखाय (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी प्रथा। इसमें खमी-
दार प्रतिवर्ष कन्यादमी आदि लोहारोंके उपनयनमें
विमानोंको गाय भेजना दूध दुःखा कर ले लेता है। २
यह दूध जो इस प्रथाके अनुसार किसान खमींदारको
देता है।

दुःखायो (हि० स्त्री०) गाय दुःखनेके लिये मालेकी दिने
जानेका धन, दूध दुःखनेकी मजदूरी।

दुःखिता (हि० स्त्री०) दुःखित, कन्या, लड़की।

दुःखिःपति (मं० पु०) दुःखितः पतिः वा पट्टाः पत्न्यु-
पमाभावात्। दुःखिताका पति, आमाता, दोसाद।

दुःखित (मं० स्त्री०) दोषि विवाहादिकानि धनादि-
कामाक्षय गृह्णातीति वा दोषि मा इति दुःखितश्च (मनु
मेष्टृष्वद् दोष्ट पाठ आठ गवाष्ट गात् विष्ट दुःखित। इम,
२।८६) निवागनात् गुणाभावः। कन्या, चोटी, लड़की।

लड़कीको यज्ञपूर्वक पालन कर उसे उपयुक्त पात्रके
हाथ मोप देना चाहिये। विधाय रूपमें पात्रको विधे-
चना करके कन्यादान करना उचित है। कन्यादानके
पादापात्रका विषय इस प्रकार लिखा है—गुणहीन,
रुह, प्रज्ञानी, दरिद्र, मृदु, रोगी, कुक्षित, पत्यन्त क्रोधी,
पत्यन्त दुर्मुख, चापल, चण्डहीन, पन्थ, वशिष्ठ, जड़,
सुर्य, क्रोधतुल्य और पाषो इनके साथ कन्याका विवाह
करनेसे ब्रह्महत्याका पाप होता है। उक्त पात्रको
कन्यादान कदापि नहीं देना चाहिये।

शान्त, सुधी, युवक, पण्डित और वैष्णव ये सब
पात्रके योग्य हैं। इनके साथ कन्याका विवाह करने-
से कन्यादाताके दणवापी दान करनेका फल प्राप्त
होता है।

उक्त रूप गुण और दोषको विशेष रूपमें परीक्षा कर
कन्यादान करना चाहिये। यदि कोई कन्या पालन कर
उसे विक्रय करे, तो उसे कुभीषाक मरक होता है। उस
मरकमें जाकर वह मृत्यु और बिछा खाता है तथा जब
तक चोटह इन्ध अवस्थान करेगी, तब तक उसी दुर्दशामें
रहेगा। बाद व्याध योनिमें उसका जन्म होता है। इस
व्याधजन्मको प्राप्त कर रात दिन यह मसिका भार वहन
करता और बेचता रहता है।

यथोक्तरूपमें कन्यादान करनेमें उसे जाना प्रकारके
पुण्य प्राप्त होते हैं। वेद्व, त्रिमय्या करनेवाला,
पण्डित, सत्यवादी, जितेन्द्रिय इस प्रकारके महद्गुणमन्त्र
पात्रको कन्यादान करना योग्य है। अपात्रको मूल कर
भी कन्यादान न करे।

जो अपनी कन्याको विष्णु या महादेवकी शीति

ऐ पदशा निमि दण्ड मंजोगल विष देता है पयवा जो
 कति दूतन जलपान या दूतोजिब भयव काला है, जम-
 वा यातादि दीव पोरे रत दूतन को कर मोघ को
 पताका पोरेतर ये दोपिक उदरयोग हावक करता है।
 मोतनवायु पोरे दुर्दिनमें घट रोग पोरे भी बड़ जाता
 है। रोमिओ व्याम पधिक लगती है, बार बार सूखी
 जाती है, गरीर पोषा को जाता है पोरे व्यामने गया
 घाय जाता है। इमे मासिगतिज उदर भी कहते हैं।

(भाष्य)

दूतना (हिं० कि०) दूतना देवे।

दूतरा (हिं० वि०) १ दितोय, पक्षेके बाटका। २
 धन्य, चपट, पोरे, गैर।

दूदड़—दूदड़ राजा चागधानके ल्ये सुप्र। पिताको
 मरुके बाद दूदड़ अपने पैतृक सम्पत्तिके अधिकारी
 हुए। परन्तु उसका हृदय उस राज्यके पानेसे व्यग्र नहीं
 हुआ। प्राचीन कबोज-राज्य पर दण्डन जमाने की उम्रको
 बड़ी प्रवण इच्छा थी। पिताके राज्य पर बैठ कर दूदड़
 अपने अधिपत्यकी पूर्ण करनेका प्रयत्न करने लगे।
 परन्तु सनडा प्रयत्न विफल स्वयं हुआ। कबोजराज्यके
 उद्वार करनेमें निष्फलप्रयत्न होकर दूदड़ने मंढोर-राज्य
 पर अधिकार जमानेकी नितास चेटा की। इस चेटामें
 ये लिखन समफल हो नहीं हुए किन्तु कराल कालके
 गालमें फंस गए।

दूदना (हिं० कि०) दुदना देवो।

दूदनी (हिं० स्त्री०) देवी देवो।

दूदण (मं० स्त्री०) दूद-लुण्ट, दूदकरण, मजदूर करने
 की क्रिया।

दूदित (मं० वि०) दूद-त, दूदित, बढ़ाता हुआ।

दूक (मं० स्त्री०) दीयेमें लुटि दू-विटारे वाहुनका लूक,
 १ हिट्ट, डिट। २ नेत्र, पाँख।

दूक (हिं० पुं०) बीरा।

दूकाव (मं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त राशिका दूतीय दूमा-
 द्य चंद्र, अमित ज्योतिषमें एक राशिका तीसरा भाग
 को दूग चंद्रिका होता है।

दूकच (मं० पुं०) इतो नैमावेय कर्त्तों चमक। चप,
 मणि।

दूकमे (मं० स्त्री०) दूकमे दूकामें। मण, पदोका
 दूकमे ज्योतिषोक्त दूमाचंद्र चमक, ज्योतिषमें यह क्रिया
 या मंकार को दूकको चपने ज्योतिष पर ज्योतिष विधि
 किया जाता है। इसमें पदोके योग, चंद्रमाको दूमा-
 चति तथा दूक को चोर नलतोके उदयाभावा तथा चतता
 है। इस मंकारके दो भेद हैं, चापदक, चोर चापद-
 दक।

दूकाव (मं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त राशिका दूमाचंद्र दूती-
 यां, एक राशिका तीसरा भाग को दूग चंद्रिका होता
 है। प्रत्येक राशिमें तीन तीन दूकाव होते हैं। राशि-
 की तीन भागमें विभक्त करके एक एक भागको दूकाव
 कहते हैं। जो यह जिन राशिका चपोगर होता है,
 वही उस राशिके प्रथम दूकावका नामो होता है, उसमें
 पाँचवा राशिका चपोगर दिनाय दूकावका चोर उसमें
 नवों राशिका दूतीय दूकावका चपिपति होता है,
 चपोगर गिय राशिका चपोगर मज्जल है। अतः मियराशि-
 के प्रथम दूकावका चपिपति मज्जल, दितोय दूकावका
 रवि ज्योतिष यह मियरे पाँचवों राशि चंद्रिका चपिपति
 है चोर दूतीय दूकावका उदयजि होमा कर्त्तक यह मिय-
 से नहीं राशि धनुका नामो है। इसा प्रकार तब प्रयुति
 सभी राशियोंके विषयमें जानना होमा। मियादि जग
 परिमावको तीन भाग करनेमें दूकाव मालूम हो
 जायगा। दूकाना—कलकत्तादि प्रदेशोंमें चपनाम मोचित
 मियलनका परिमाव ४ दण्ड, ७ पल, ७ विपल है; सब
 तीन भाग करनेमें प्रत्येक भाग १ दण्ड, २१ पल, २१
 विपल, २० चतुपल होता है। चतुपल मियलनके प्रथम
 भागमें जग होमिसे उसका मज्जलके दूकावमें जग होमा
 कहते हैं। प्रथम भागके बाद २ दण्ड ४४ पल ४४ विपल
 १० चतुपलमें जग होमिसे उसका रविक दूकावमें जग
 होमा आवित होता है। कर्त्तक मियरे प्रथम राशि की
 चिह्न है, उसका चपिपति रवि है चोर रवि को उस
 मियरे दितोय दूकावके चपिपति है। २ दण्ड ४४ पल
 ४४ विपल ४० चतुपलके दोत जान पर जिसका प्रथ
 होता है उसका उदयजि के दूकावमें जग माला
 जायगा, कारण मियरे नहीं राशि धनु ५ चोर उस
 धनुके चपिपति उदयजि है। चपनाम मोचित सभी

दूति (सं० स्त्री०) दूयते नायकोदियासौहरणादिनेति ।
दुःखादुतिदोषश्च । दूतो, कुटनी ।

दूतिका (सं० स्त्री०) दूतिरेव स्थायी कन् तन्तष्टाप चत-
स्त । दूतो, कुटनी ।

दूतो (मं० स्त्री०) दूति कृदिकारादिति वा डोप । दोत्य
कर्म में नियुक्ता स्त्री, स्तोमुखको वात्तावाहिनी, कुटनी,
कुटनी, संचारिका । पर्याय—मारिका, दूतिका, दूतोका ।
माहित्यदर्पण में दूत और दूतिका विषय इस प्रकार
लिखा है—

“निष्ठष्टापी मितार्थं तथा सन्देशहारकः ।

कार्यार्थं व्यतिष्य । दूतो दूतव्यापि सहायिणः ॥”

(साहित्यदं १।८६)

प्रयोजन पड़ने पर जो मुख भेजा जाता है, उसे दूत
कहते हैं । यह दूत तीन प्रकारका है—निष्ठष्टापी,
मितार्थ और सन्देशहारक । दूतो की भी इसी प्रकार
ज्ञानता चाहिये ।

जो सब दूत वा दूती दोनों के अर्थात् जिसने भेजा है
और जिसके पास भेजा गया है, भाव विशेषरूपसे समझ
कर सब संसर्ग उत्तर भी दे दे तथा अपना काम
निकाल ले, उसे निष्ठष्टापी, जो थोड़ा ही कह कर अपना
काम निकाल ले उसे मितार्थक और जो केवल प्रभुकी
कथा ही कह दे, उसे सन्देशहारक दूती कहते हैं ।
स्त्रियों को भावामिश्रित दूतीकरण द्वारा जानी
जाती है ।

मन्त्री, नर्स ही, दास्य, धातोकन्या, प्रतिवेशिनी,
अप्रीदा कन्या, सन्धासिनी, धोबिन, चित्रकारादि स्त्री,
तंबोलिन, गंधिन आदि स्त्रियाँ दूती के कामके लिये उप-
युक्त समझी जाती हैं । नायिका वियय में ये सब दूती
होती हैं, किन्तु इन्हें नायक विषय में भी दूतो समझना
शोभा ।

दूतियों के ये सब गुण रहना आवश्यक है—नृत्य
गैतादि कार्य दक्षता, उत्साह, हृदय यत्न, भक्ति, स्मृति,
चित्तप्रज्ञा अर्थात् चित्त देख कर जो भवगत हो सके,
कर्तव्याय हसरण, माधुर्य, नर्म विज्ञान अर्थात् परि-
शाभाभिज्ञता, वाग्मिता और मधुरमायित्व जो इन सब
गुणों से सम्पन्न है उन्हें दूतो कहते हैं । गुण के तार-

तम्यानुसार दूतियाँ तीन प्रकारकी हैं—उत्तमा, मध्यमा
और अधमा ।

दूतियों की बोखचासमें कुटनी कहते हैं । इनके
जालमें पड़ कर कितने जितेन्द्रिय पुरुष धर्म से व्युत्त हो
गये हैं ।

दूत (मं० स्त्री०) दूतस्य भावः कर्म वा (दूत वणिग्-
भाष्य । वा ५।१।१२६) इत्यस्येति वार्त्ति कीलगा यः
वैदिकेत् (दूतस्य भागवतर्ण । वा ४।४।१२०) इति य ।
१ दूतकर्म, दूतका काम । २ दूतका भाव ।

दूतकर्म (फा० स्त्री०) १ वह माग जिससे धुषाँ बाहर
निकल जाय, धुषाँकर्म, चिमनी । २ एक प्रकारका दम-
कल । इसके द्वारा धुषाँ दे कर पोषाँ में लगी दुप-कोई
छुड़ाये जाते हैं ।

दूदमा (हिं० पुं०) एक प्रकारका पेड़ ।

दूध (हिं० पुं०) दूग्ध, दूधो ।

दूधचटो (हिं० वि०) जिसके स्तनों में दूध पड़नेसे बह
गया हो ।

दूधनाथ—हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म सं० १८२५ में
बुधा तथा सं० १८४५ में इन्होंने हररामपट्टीसी और
हरिहरधतक नामक दो ग्रन्थ लिखे ।

दूधनाथ उपोपध्याय—एक हिन्दी कवि । इन्होंने गोरपा पर
एक पुस्तक लिखी ।

दूधपिलायो (हिं० स्त्री०) १ वह दाई जो दूध पिलाती
है । २ विवाहकी एक प्रथा । इसमें बारातके समय
बरकी छोड़ी या पालकी आदि पर चढ़नेके पड़ली माता
बरकी दूध पिलानेकी सो मुद्रा करती है । ३ वह धन
या निग जो माताकी उन्नत क्रियाके बदलेमें मिलता है ।

दूधपूत (हिं० पुं०) धन और धन्यता ।

दूधबहन (हिं० स्त्री०) वह बालिका जो किसी ऐसी
स्त्रीका दूध पी कर पली हो जिसका दूध पी कर कोई
और बालिका या बालक भी पला हो ।

दूधभाई (हिं० पुं०) ऐसे दो बालकोंमेंसे कोई एक जो
एक ही स्त्रीके स्तनका दूध पी कर पला हो, पर जिनमें
कोई एक बापका दूसरे मातापितासे उत्पन्न हो ।

दूधमसहरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका रंगती कापड़ा ।
दूधमुहा (हिं० वि०) जो अभी तक माताका दूध पीता
हो, छोटा बच्चा, बालक ।

कर्मीको विभाग कर संहज र्पयसे द्रोणाक्ष नाम म करनीके लिए एक तालिका नीचे दी गई है जिसमें सन्मानको तीन भाग करके जिसका किम भागमें जन्म हुआ है, यह देखनेसे हो सज्जमें मालूम हो जायगा।

तालिका—

राधिके नाम प्रथम द्रोणाक्ष	द्वितीय द्रोणाक्ष	तृतीय द्रोणाक्ष	चतुर्थ द्रोणाक्ष
मेघ	मङ्गल	रवि	बृहस्पति
हय	शुक्र	बुध	शनि
मिथुन	बुध	शुक्र	शनि
कर्कट	चन्द्र	मङ्गल	बृहस्पति
मिथु	रवि	बृहस्पति	मङ्गल
कन्या	बुध	शनि	शुक्र
तुला	शुक्र	शनि	बुध
हृदिक	मङ्गल	बृहस्पति	चन्द्र
धनु	बृहस्पति	मङ्गल	रवि
मकर	शनि	शुक्र	बुध
कुम्भ	शनि	बुध	शुक्र
मीन	बृहस्पति	चन्द्र	मङ्गल

शुभग्रहोंके द्रोणाक्षका नाम जन्म है और शुभग्रहोंके द्रोणाक्षका नाम दहन। जन्मद्रोणाक्षमें जिनका जन्म होता है, उसकी मृत्यु जन्ममें होती है और दहन द्रोणाक्षमें जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु अग्निमें होती है। शुभग्रहोंके द्रोणाक्षमें पापग्रहयुक्त होनेसे उसको सखिल और मिथ मन्त्रा होती है।

सौम्यरूप द्रोणाक्ष—मिथुनके एवं मीनलग्नके प्रथम द्रोणाक्षका; कर्कट और धनुलग्नके द्वितीय द्रोणाक्षका तथा कन्यालग्नके तृतीय द्रोणाक्षका नाम सौम्यरूप द्रोणाक्ष है। इन सब द्रोणाक्षोंमें जन्म होनेसे मनुष्य सुखी होता है।

रक्तभाण्डाश्रित द्रोणाक्ष—कर्कट लग्नके प्रथम द्रोणाक्ष का नाम रक्तप्रणयुत है। इस द्रोणाक्षमें जिसका जन्म होता है, वह फलप्रणयुत घरमें वास करता है। धनु-लग्नके द्वितीय द्रोणाक्षका और तुला लग्नके प्रथम द्रोणाक्षका नाम रक्तभाण्डाश्रित है। इसमें जन्म होनेसे रक्तभाण्ड प्राप्त होता है।

रौद्रद्रोणाक्ष—ज्येष्ठलग्नके द्वितीय और तृतीय द्रोणाक्ष,

हृदिकके द्वितीय और तृतीय, मिथुन और तुलाके तृतीय, मानसलग्नके द्वितीय और सिंहलग्नके प्रथम तथा द्वितीय द्रोणाक्षका नाम रौद्र द्रोणाक्ष है।

उद्यताक्ष द्रोणाक्ष—मिथुन, मेष, मकर, कुम्भ इनके प्रथम द्वितीय और तृतीय द्रोणाक्ष तथा धनुके प्रथम और तृतीय, तुलाके द्वितीय, सिंह और कन्याके द्वितीय द्रोणाक्षका नाम उद्यताक्ष द्रोणाक्ष है। इन सब द्रोणाक्षोंमें जिसका जन्म होता है, उसकी अक्षाघातसे मृत्यु होती है।

सर्पनिगड द्रोणाक्ष—मीन और कर्कटके शेष द्रोणाक्ष और हृदिकके प्रथम और द्वितीय द्रोणाक्ष का नाम सर्प-निगड द्रोणाक्ष है। इन सब द्रोणाक्षोंमें जिस मनुष्यका जन्म होता है उसे सर्प डँसता है।

व्याड द्रोणाक्ष—कुम्भ और हृदिकके प्रथम और द्वितीय, कर्कट और मीनके तृतीय, सिंहके प्रथम और तृतीय, मकरके तृतीय, तुलाके द्वितीय और तृतीय द्रोणाक्षका नाम व्याड द्रोणाक्ष है। इसमें जन्म होनेसे उसको बिन्दु मनुष्यसे मृत्यु होती है।

पायधारिपल्लि-द्रोणाक्ष—धनुके प्रथम और मकरके प्रथम तथा तृतीय द्रोणाक्षका नाम पायधारि-द्रोणाक्ष है। इसमें जन्म होनेसे पायधारी अर्थात् पाण विशेषसे मृत्यु होती है। तुलालग्नके द्वितीय और तृतीय एवं सिंह और कुम्भके प्रथम द्रोणाक्षको पल्लि-द्रोणाक्ष कहते हैं। इन द्रोणाक्षोंमें जिसका जन्म होता है उसको मृत्यु पक्षीसे होती है।

द्रोणाक्षमें जन्मफल—प्रति लग्नमानको तीन भाग करके उसकी जिस द्रोणाक्षमें पुरुष होगा और जिसमें स्त्री एवं उसकी कन्या प्राकृति होगी तथा दूत या नष्ट वस्तुकी प्रशङ्गाएनासे और पुरुष है वा स्त्री और उसकी कन्या प्राकृति है तथा परिच्छेदादि कैसा है उसका विषय हृद-व्यातकमें इस प्रकार लिखा है—

मेषके प्रथम द्रोणाक्षमें जन्म होनेसे पुरुष पैदा होता है। वह मनुष्य अपने कमरमें सफेद वस्त्र सपटायें रहेंगा तथा कण्ठ वस्त्र, क्रीची, विपद्पद्म व्याक्तिकी वधानि-में समर्थ, भोयष स्वाभावयुक्त, कुठारधारी तथा रक्तचक्र युक्त होगा।

महो उमे भोजना योगा, यहाँको भाषामें सुशक्ति, कार्य-
कुशल, क्रमशः, देशकालविमानविद् यद्योत् किम समय
किम तरङ्गे काम करनेमें कनटावक योग, वह जो
विशेष करने जानना हो तथा नोतिशयसे यथा इस
प्रकारका मन्त्राक्रान्त प्रमुख दूत होनेके योग्य है चाय
यमे दूतता विषय इन प्रकार कहा है—

“मेघादी वाहपुङ्गवः प्राणः परितोत्तरतः ।

धीरो यथोत्तरीय एव दूतो विधीयते ।”

(भागवत १०६)

जो पाल्य बुद्धिमान, वाक्पटु, उत्तम बुद्धिमत्त्व
तथा दूतका ज्ञेय ज्ञानमें विशेष पारदर्शी है,
धीर धीर यथोत्तरीय है, इस प्रकारके गुणमय्यव पुष्ट
दूत बनाये जा सकते हैं। गुणिन्यतममें दूतका विषय
इस प्रकार निम्ना है—जो शत्रु, भोका शत्रु धीर द्वारा
देख कर सब भाव समझ मने तथा जो प्रयुक्तव्यमति,
धीर, दक्षिण, मध्य, मरुत्तम, कार्यकुशल, राजाके
प्रति दृढ़ पशुता, विदुष स्वभावमय्य, मेघादी, देश-
काविद्, वपुमान्, निर्भोक्, वाग्मा वादि गुणमय्य
पुष्ट दूतने योग्य है धीर यद्यो दूत प्रगल्भ माने गये हैं ।
यह दूत तीन प्रकारका होता है—विश्वधाय, मिताय
धीर सामनहारक । इनमें जो कार्यकाममें केवल
प्रभुको प्राप्त प्रियानन करते हैं, उन्हें विस्मयः आ
कार्य मात्र कर कर चलाए जाते हैं, उत्तर पशुतर
कृष्ट भो नहीं देते, उन्हें मिताय धीर जा नेत्य पत्रादि ले
कर जाते हैं, उन्हें शासनहारक कहते हैं। दूत किसी
विषयका विषय नहीं कर सकते हो न वह कोई विषय
निय हो सकते हैं। दूतको जब उनके प्रभुका विषय
क, प्रभु प्राप्त, जो उमे प्रभुका किसी प्रकारका हिट्ट
प्रकाश न करगा चाहिये; यदि वह जा कर अपने
मात्रिका लेन एवं ओ, विद्वत् धीर उत्पन्नकर वाय्व,
शत्रु की चोभकर घेटा, प्रमपचायता कार्य उचता धीर
निर्भोक्ता ये सब विषय वर्जित करें। कामन्दकीमें जो
दूतका विषय निम्ना है, वह १५ प्रकार है—मन्त्रवा-
कुशल, मन्त्र, धर्म, मेघादी, वाग्मा धीर गुणविष्ट
इस प्रकारके गुणमय्य व्यक्ति दूत होनेके उद्युक्त है।
धैरे दूतरी दूताभिमानोंके समीप भिजना चाहिये। राजा-

धोके धर दो प्रकारके हैं— वक्ता, धीर वक्ता । जो
वक्ताभावसे राजाके कार्यादि करते हैं, उन्हें दूत धीर
जो वक्तामित्र रहते हैं, उन्हें धर कहते हैं।

यहसे दूत द्वारा मन्त्राने कर का प्रेष करे, तब
यह दो उपायोंसे पराङ्मत्ता समुदय उत्तात मान्म हो
मत्ता है। जो राजा स्वयं या परपक्ष पालिका
नहीं जान सकते, वे जगते हुए भो-वाय्व निश्चित हैं,
कयो उनकी यह निद्रा टूट नहीं सकती धीर योके को
दिनें वे विनष्ट हो जाते हैं। इसीसे दूत धीर धर
नियुक्त कर जेसे पराङ्मत्ता वे को पराङ्मत्ता समुदय ममो
उत्तात जानना चाहिये। दूत मध्य नहीं है। दूतको
व्यानादि प्रदर्शन कर उसमें सब उत्तात सुन लेना
चाहिये। राजपरी देखा।

२ किमोका भो कष्ट ज्ञान हो, उसे ज्ञान कर जो
वे कष्टमें जाता है, उसे वे कष्टको दूत कहते हैं। उसमें
सुखने सुन कर चिकित्सक रोगका निषेध करे।

वैद्यक दूतका लक्षण ।—सुख, धर्म, मूक, धीर,
वामन, स्त्री, कृष्ण, लघित, शोण, गन्त, सुधास, दीन,
प्रोधा वादि दोषयुक्त व्यक्ति दूत नहीं हो सकते यद्यपि
इन्हें वैद्यकमें भिजना न चाहिये।

३ प्रेमोका सन्देशा भेजिका तथा या प्रेमिकाका
सन्देशा प्रेमो तब पद धर्मिणामा समुप्य।

(मि०) ४ प्रेषमात्र, भिजनेके योग्य।

दूतन (म० पु०) दूत सार्थे क्व । १ दूत । २ रात्रप्रदत्त
शामनादि प्राप्त करनेके प्रधान काम धारी, यह काम
धारी जो राजाको दो दूरे वाग्माया सर्व माधारक
प्रचार करता है।

दूतकत्व (म० पु०) १ दूतका काम । २ दूतका काम ।
दूतकर्म (म० पु०) दूतत्व, धर पद धर्मिणामा काम ।
दूतज्ञी (म० स्त्री०) दूत दु उपताये भावे भोषादिक ज्ञा,
दोषं च, दूत उपताये हन्तीति हन्-ठक्-प्रोप् । कदम्ब-
पुष्पो, गोरक्षमुन्डी । (Micholia Kadamba)

दूतता (म० स्त्री०) दूतत्व, दूतका काम ।
दूतत्व (म० स्त्री०) दूतत्व भावा दूत भावे त्व । दूतका
काम ।

दूतगम (म० पु०) दूतका काम ।

मित्र हितोय द्वेकायमें भी प्रथम होता है। उसे मानवस्य पदमनेको तथा भूयस्य चौर भोजनोय दूयको विमित्र मान्यता होगी। यह कुम्भीदरी, चरममुको, विषाभा-युता और चरम होनी। मित्र यतोय द्वेकायमें प्रथम उत्पन्न होता है। यह प्रथम कृत्, चतुष्टयिक्रमाभिष्ट, कविलयके, सर्वदा काममें अभिलाषी, निवस पाप्मन करनेमें समर्पण, वयस्य दण्डकृत, शत्रुव्यपारिधानमित्र और लोभा होगा।

प्रथम प्रथम द्वेकायमें भी उत्पन्न होता है। उस कोश शत्रु कुम्भीय और मन्, चरम कुम्भीय तथा यह पदमें योगी और चरमद्वार पदोक्तनेमें सर्वदा अभिलाषी होता है।

प्रथम द्वितीय द्वेकायमें प्रथमका जन्म होता है। यह प्रथम कवि, भाष्य, शत्रु, चतुष्टयिक्रमाभिष्ट प्रथम करेगा तथा यह पवित्र, कम और गाड़ी चरमनेमें दण्ड, सुधासं चौर मन्त्रिण नवधारी होगा।

प्रथम तृतीय द्वेकायमें भी प्रथम उत्पन्न होता है। उस प्रथमका शरीर चायोंके जेमा लक्ष्म, दंत पाण्डु, वय, चरम लक्ष्म, वयं विद्वान् तथा यह मित्र और मृगमत्त वासिको बहुत पदम् करेगा।

मित्रप्रथम प्रथम द्वेकायमें भीका जन्म होता है। यह को सुधासंममें अभिलाषी, सुन्दरी, चामरस्य पदोक्तने और चरमोक्तनेमें दाक्षिणाता, मन्त्रिणको तथा चरम कागर्भा होता है।

मित्रप्रथम द्वितीय द्वेकायमें प्रथम उत्पन्न होता है यह प्रथम धनुर्वाणी एवं वनवान् होगा और लोहा, पुत्र और चरमद्वार चादिकी विषासमें सर्वदा वासिष्ठ्य रहेंगे।

मित्रप्रथम तृतीय द्वेकायमें प्रथम पैदा होता है। यह प्रथम चरमद्वार विभूषित, यह चरमोक्तने, धनुर्वाणी, मृग-मोक्षदि कुम्भीय और पवित्राष्ट होता।

कच्छेत्त प्रथम द्वेकायमें जन्म होनेमें प्रथम होता है। यह प्रथम चायोंके समान चरमाम् और चरमद्वारनवाम मित्र होगा, तथा चरमका मुँह चरमके जेमा और चरमोक्तने होगा।

कच्छेत्त द्वितीय द्वेकायमें जन्म होनेमें कोकी उत्पत्ति

होगी है। यह भी कच्छममाया और सुन्दरीता होने पर भी रोदनमोक्ष होगी।

कच्छेत्त तृतीय द्वेकायमें प्रथम उत्पन्न होता है। यह प्रथम चरमके चामरस्य में मित्र विमित्र मानिष्य रहेंगे।

मित्रप्रथम प्रथम द्वेकायमें प्रथम जन्म होता है। यह प्रथम मन्त्रिण नवधारी एवं विद्वामद्वितीयमन्त्रिण हो कर रोदनपरायण होता है।

मित्रप्रथम द्वितीय द्वेकायमें प्रथम होता है। उस प्रथमको चरम चरम चाक्षति, मन्त्रिणमें पाण्डु वयं मान्य युक्त उत्पन्नार जन्म, कच्छममाया, दुर्गात तथा जन्मको भाकका चरम भाग सुखा होगा।

मित्रप्रथम तृतीय द्वेकायमें प्रथमका जन्म होता है। यह प्रथम वानरके जेमा चरमामाया, मन्त्रिण गाड़ी वाना तथा कुम्भीय होगा।

कच्छेत्त प्रथम भागमें भी जन्म होता है। यह चरम मन्त्रिण नवधारी, चरमोक्तनेमें चरमोक्तने और सुन्दर मन्त्रिण होगी।

कच्छेत्त द्वितीय भागमें प्रथम होता है। उसमें चाय-मन्त्रिण, मन्त्रिणमन्त्रिण मन्त्रिण चरमोक्तने पदित तथा यह धनुर्वाणी और लोभमा होगा।

कच्छेत्त तृतीय द्वेकायमें भी जन्म होता है। यह चरम मोक्षमन्त्रिण, चरमोक्तने चाक्षतिता और चरमोक्तने चायवयं होगी।

सुधासं प्रथम द्वेकायमें प्रथम उत्पन्न होता है। यह प्रथम चरमके वर सुधा दण्ड धारण पर विद्वामदि दण्ड लोभियः मित्रके करेगा तथा सुधासंममें विमित्र दण्ड होगा।

सुधासं द्वितीय द्वेकायमें प्रथमका जन्म होता है। उस प्रथमका सुधा वयं जेमा होगा। यह सर्वदा सुधा विषाभासित हो कर सुधासंममें मन्त्रिण करेगा रहेंगे।

सुधासं तृतीय भागमें भी प्रथम जन्म होता है। यह प्रथम चरमका चरमके चरमोक्तनेमें विभूषित होगा और चरमको चाक्षति कुम्भीय होगी।

प्रथम प्रथम द्वेकायमें भीका जन्म होता है। यह को चरम चामरस्यमिता होता है और चरम चरमके कच्छ वयं करेगी है। कच्छेत्त द्वितीय भागमें को

दूरग (सं० त्रि०) दूरं गच्छति दूर-गम-ङ। १ दूरगामी, बहुत दूर तक जानेवाला। (पु०) २ उग्र, कंट। ३ गदमं, गदहा।

दूरगत (सं० त्रि०) दूरं गतः द-तत्। जो बहुत दूर तक चला गया हो।

दूरगामी (सं० त्रि०) दूरं गच्छति दूर-गम-णिनि। जो बहुत दूर चला गया हो।

दूरगण्य (सं० क्लो०) बहुत दूरसे ग्रहण वा दर्शन करने की शक्ति।

दूरद्वरण (सं० क्लो०) एक स्थानसे दूसरे स्थानको जानेकी क्रिया।

दूरक्रम (सं० त्रि०) दूरं गच्छति गमं बाहुलकात् वेदे, क्रमन्। दूरगामी, बहुत दूर तक चलनेवाला।

दूरचर (सं० त्रि०) दूरे चरतोति चर-ट। दूरविचरणकारी, दूर तक चलनेवाला।

दूरकम् (सं० क्लो०) वेदूर्यमणि।

दूरतम् (सं० अव्य०) दूर-तम्। दूरसे।

दूरल (सं० क्लो०) दूरस्य भावः दूर भावे ल। दूर होनेका भाव, प्रसार, दूरी, फासला।

दूरदर्शक (सं० त्रि०) दूरं दृष्टुं दृष्टुं वा। (पु०) २ पण्डित, बुद्धिमान्।

दूरदर्शन (सं० पु०-स्त्री०) दूरदर्शिनो दृष्टिर्दृश्यः। १ गृह, गीघ। (पु०) २ पण्डित। दृष्ट-भावे शब्द-ट। (स्त्री०) ३ दूरसे दर्शन। ४ दूरवीक्षण-यन्त्रमें से दूर-दर्शन।

दूरदर्शिता (सं० स्त्री०) दूरको बात सोचनेका गुण, दूरदर्शी।

दूरदर्शी (सं० त्रि०) दूरान् पश्यति कार्योत्पत्तिः प्राक् पश्यति जानाति वा दृश्य-णिनि। १ दूरदर्शक, बहुत दूरको बात सोचनेवाला, दूरदर्श। (पु०) २ पण्डित, बुद्धिमान्। ३ गृह, गीघ।

दूरदृष्टि (सं० त्रि०) दूरान् पश्यति दृष्ट-क्विप्। १ दूरदर्शी। (पु०) २ पण्डित। ३ गृह, गीघ।

दूरदृष्टि (सं० त्रि०) दूरं दृष्टुं दृष्टुं वा। १ दूरदर्शी, दूर देखनेवाला। २ दूरदर्शन, भविष्यका विचार।

दूरवीक्षण (सं० पु०) दूरदर्शन नामक यन्त्र।

दूरवा (सं० पु०) दूरसे देखो।

दूरवीन (फा० स्त्री०) एक प्रकारका यन्त्र।

दूरवीक्षण देखो।

दूरमूल (सं० पु०) दूरे भूखण्डके मूल यन्त्र। १ सुखदण्ड, मृज। २ दुरालभा, जवासा, धमासा।

दूरयात्री (सं० त्रि०) दूरे याति या-णिनि। दूरगामी, दूर तक चलनेवाला।

दूरवर्त्ती (सं० त्रि०) दूरे वर्त्तते दूर-वर्त्त-णिनि। दूरस्थित, जो दूर हो।

दूरवस्त्रक (सं० त्रि०) दूरे वस्त्रं यन्त्र। वस्त्रहीन, उलङ्घन गा।

दूरवासो (सं० त्रि०) दूरे वसति वस-णिनि। दूरदेशवासी। दूरदेशमें रहनेवाला।

दूरवीक्षण (सं० क्लो०) दूरं वोच्यतेऽनेन दूर-वि-दृश्य-शब्द-ट। (Telescope) यन्त्राद्वारा यन्त्रविधिसे, एक प्रकारका यन्त्र जिससे दूरकी चीजें बहुत पास और स्पष्ट या बड़ो दिखाई देती हैं, दूरदर्शन।

जिन सब यन्त्रोंसे जीवसमूहका विषय कच्चाप दुपा है, उनमेंसे दूरवीक्षणयन्त्र भी एक है। दूरवीक्षण यन्त्रकार पहले पहले शीशे के दृष्टिमें सर्ववर्ती यन्त्राद्वारे के आरम्भमें दुपा था। एक बार एक चर्मनेवाला अपने दो बालों पर बड़ा दुपा काम कर रहा था तबमें उसका सहका जो अपने शीशेमें दो शीशे लगा कर खिल रहा था, सहका चिल्ला चठा कि देखो। वह कामनेका बुझ किता पाम था गया। चर्मनेवालेने देखा कि उसका सहका दो शीशोंको पारी पोछे रख कर देख रहा है। जब उसने भी उसो प्रकार उन शीशोंको रख कर देखा, तब उसे समझा उपयोग जान पड़ा। इसके उपरान्त उसने अपने प्रकारको परीक्षा करके कुछ सिद्धान्त खिर किए और उन्होंने धनुषी दूरवीक्षणका आविष्कार दुपा। १५७० ई०में लान्डर कीने परिपक्वित शीशे (Perspective glasses) का विचार प्रचल किया था। पोछे दूरवीक्षणयन्त्रके आविष्कारके विषयमें चने के परीक्षाएं हुईं। शीशे के दो चर्मने पहले दूरवीक्षणका आविष्कार दुपा है, किन्तु लान्डर कीने लीनोकार करते हैं। लघुपरिचय, ज्ञान-

होती है, वह स्त्री सुखामितायिणी होगी।

दृष्टिके तृतीय द्रेकाणमें पुरुष होता है। वह पुरुष अत्यन्त प्रतापान्वित होगा और उसे देखनेसे सभी भय करेंगे।

धनुर् प्रथम भागमें पुरुषकी उत्पत्ति होती है। वह पुरुष घोड़े के सदृश बलवान् होगा और धनुर्धारण कर तपस्वियों के यज्ञीय द्रव्यकी रक्षा करेगा।

धनुर् द्वितीय द्रेकाणमें स्त्री होती है। वह स्त्री मनोरमा अत्यन्त सुन्दरी और रोमाञ्चयान्त्रिणी होगी।

धनुर् तृतीय द्रेकाणमें पुरुष जन्म लेता है। वह पुरुष अत्यन्त सुन्दराकृतियुक्त होता है और नागों प्रकार के सुख सम्पदका भोग करता है।

मकरके प्रथम द्रेकाणमें पुरुष होता है। वह पुरुष रोमश, मकरदन्त और शूकर सदृश देहसम्पन्न होता है।

मकरके द्वितीय भागमें स्त्री जन्म लेती है। वह स्त्री कला काननेवाली तथा नागों प्रकारके विचित्र वस्तुओंकी अभिजायिणी होती है।

मकरके तृतीय द्रेकाणमें पुरुष होता है। वह पुरुष सुन्दराकृतियुक्त तथा अर्थ सम्पद लाभ करता है।

कुम्भके प्रथम द्रेकाणमें पुरुषका जन्म होता है। वह पुरुष धान पी के चित्तानें सर्वदा व्याकुल रहेगा।

कुम्भके द्वितीय द्रेकाणमें स्त्री जन्म लेती है। वह स्त्री दुर्भाग्याश्रितिणी होगी।

कुम्भके तृतीय भागमें पुरुषका जन्म होता है। वह व्यामर्ष होगा और उसके कान लोमयुक्त होंगे।

मोर्गके प्रथम द्रेकाणमें पुरुष जन्म लेता है, वह पुरुष भोगाश्रयमानो होगा।

मोर्गके द्वितीय द्रेकाणमें स्त्री जन्म लेगी, वह स्त्री बहुत सुन्दरी होगी।

मीनके तृतीय द्रेकाणमें पुरुष होता है। वह पुरुष नागों प्रकारके कष्ट भोगता है, विशेष यह है कि द्रेकाणाधिपति स्त्रीप्रह यदि दुर्बल है और लग्नाधिपतिप्रह यदि पुरुष हो अथवा पुरुषप्रह देखा जाता हो, तो स्त्री द्रेकाणमें पुरुष जन्म लेता है, एवं बलवान् स्त्रीप्रह यदि उस सन्तर्पण रहे, तो पुरुष द्रेकाणमें स्त्री जन्म लेती है। किन्तु स्त्री द्रेकाणमें पुरुषके जन्म होने पर उस पुरुष-

का स्वभाव स्त्रीके जैसा और पुरुष द्रेकाणमें स्त्रीके जन्म होने पर, उस स्त्रीका स्वभाव पुरुषके जैसा होता है। (दीपिका)

सन्तर्पण किसे द्रेकाणमें जन्म होनेसे स्त्री और पुरुष जन्म लेते हैं, उसका पूरा विवरण दिया गया। अब कोष्ठीप्रदोषके मतसे—मेषके प्रथम द्रेकाणमें जन्म होनेमें पुरुष टाता, भोजी, तंजस्त्री, उग्र, उत्पतिहोन, प्रभुप्रिय, और कोधी होगा। मेषके द्वितीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे वह स्त्री चञ्चल, रतिमान्, गीतप्रिय, प्रशस्तमना, मित्रधर्माभोगी और सुख तथा तृतीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे शुग्गवान्, परदोषकर, नर-रुचिही, स्वजनप्रिय, पतिप्रिय धार्मिक और राजप्रिय होगा।

मृगके प्रथम द्रेकाणमें जिस पुरुषका जन्म होता है, वह पानभोजनप्रिय और नारायिण-सन्तापयुक्त, स्त्री-कर्मानुगारी तथा वस्त्रावहारयुक्त होगा।

द्वितीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे उत्तम धनसम्पन्न, मित्रतायुक्त, सुखसम्पन्न, भोजी, भूतचरित, धनवान्, स्थिर प्रकृतियुक्त, मनस्वी, लोभी और स्त्रीप्रिय तथा तृतीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे पतुर, पक्ष भाग्यधर, महान तथा स्वजातियोंको ग्रहण करके पीछे परित्यापित होता है।

मिथुनके प्रथम द्रेकाणमें जन्म होनेसे स्थूल मस्तक-सम्पन्न, बलवान्, प्राघ, गुणवान्, धूर्त, विनाशो, राजलक्ष्मणानो और वाग्मी होता है। द्वितीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे सुख और सुन्दर गठनयुक्त, स्वामि, विद्यात, शुद्ध, महाधोसम्पन्न, प्रतापान्वित, बलशाली और यशस्वी तथा तृतीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे कोमल नयनयुक्त, उत्तम शरीरसम्पन्न, हृद्द मस्तकविशिष्ट, निर्जनप्रिय और भ्रमणशोन होता है।

कर्कट राशिके प्रथम द्रेकाणमें जन्म होनेसे देवता और ब्राह्मणभक्त, चपल, गोरवर्ण, सुधोर मूर्ति और स्त्री-पुत्रप्रिय होता है। द्वितीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे लोभो, सुन्दर स्त्रीरत, पक्षरुचि, स्त्रीजित, अभिमानो, भ्रातृ-पूजित, विद्यावी, चपल और बहुभोजी होगा तथा तृतीय द्रेकाणमें जन्म होनेसे स्त्रीचञ्चल, भाग्यवान्, विदेशप्रिय, मित्र और पुत्रादिका प्रीतिकर तथा स्वार्थ होता है।

सिंहाके प्रथम द्रेकाणमें जिसका जन्म होता है, वह

दूधमुत्र (हि० वि०) छोटा जमा. बाहरक ।

दूधराज (हि० पु०) १ भारत, चकगानिपतान और मुक्ति-
स्थानमें पाई जानेवाली एक प्रकारकी बुलबुल ।

कीरे कीरे हमें गाए. बुलबुल भी कहते हैं । २ एक
प्रकारका माँव जिनका फल बहुत बड़ा होता है ।

दूधवाना (हि० पु०) वह जो दूध बेचता हो, ब्याना ।

दूधहंजो (हि० स्त्री०) दूध गरम करनेका महीका बर-
तन, सेटिया ।

दूधा (हि० पु०) १ चगहन महीनेमें होनेवाला एक
प्रकारका धान । इसका चावल सर्वोत्तम रस भजता है ।

२ बनावके कच्चे दानेमेंका रस । यह दूधके रंगका
होता है ।

दूधभानी (हि० स्त्री०) विवाहकी एक रसम । इसमें
घर और कुन्दा दोनों अपने अपने हाथमें एक दूसरेकी
दूध और भात दिखाते हैं । यह रसम विवाहके चौदह दिन
होती है ।

दूधिया (हि० वि०) १ दूध सम्बन्धी, जिनमें दूध मिला हो ।

२ मीठ, मफेद । (पु०) १ एक प्रकारका मफेद चटिया
पत्थर । यह पिकला और चमकीला होता है और इसकी
गिनती रत्नोंमें होती है । इसका रंग कभी कभी बदला
करता है पर्याप्त मान, भूरा और पुरा भी हो जाता है ।

इसमें रेतका भाग अधिक होता है और कुछ मोटा भी
होता है । इसमें कई भेद हैं और इसमें धूप-काँइकीभी
चमक होती है । इसका लग भू-गुठियेमें जड़ा जाता
है । ४ प्यालियाँ बाँटि बलाई जानेका एक प्रकारका
मफेद चटिया सुलायम पत्थर । ५ एक प्रकारका दलुपा
मोहन । इसमें दूध मिला रहता है, इस कारण यह कुछ
गरम हो जाता है ।

दूधिया स्त्री (हि० पु०) मफेद राखका सा रंग ।

दूध (म० पु०) दूध उपतापि 'दुधो दीर्घ' इति
साधिकाश्या तस्य न दीर्घः । १ प्यालिका नाम आना,
यह जो घनमें घनमें द्रव गया हो । २ उपतप्त, दूध जो
तबकीफमें पड़ा हुआ हो । ३ दुग्धिताम्रित, दूध जो
दुग्धमें व्याकुल हो ।

दूध (हि० स्त्री०) १ दूधका माप । २ माधारणमें कुछ
कन्दो जन्दी गाना । (पु०) ३ सराई, छाटी ।

दूधभरित (हि० पु०) हिमालय पर्वत पर मिमनेवाला
मफेद चिरमका पेड़ । यह बहुत लंबा होता है और
इसे बहुतमें डेढ़े नहीं लगता है । इसका किन्ना करा-
वन मिले मफेद होता है । इसकी लकड़ोमें, जो भूरी
चमकटा और मजबूत होती है, रस घेरनेका कोरक,
सूधन, पहिप, चायके सन्दूक और सेतोके बीजार बनाये
जाते हैं । इसका कोयला भी बनाया जाता है । इसके
फल बड़े सुगंधित होते हैं । इसमें तेज बहुत निक-
लता है ।

दूना (हि० वि०) दिगुण, दुगुणा ।

दूनाराय—हिन्दीके एक कवि । इन्होंने म० १०५४ ई पूर्ण
बहनेकी अच्छी कविताएँ रचीं । इनका नामोल्लेख सुदन-
कवि दाग भी पाया गया है ।

दूज (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी चरत प्रसिद्ध धान ।
दूरा देवी ।

दूधदू (हि० स्त्री०-वि०) गामने नामने, मुकाबिलेमें
दूधिया (हि० वि०) एक प्रकारका पुरा रंग ।

दूबे (हि० पु०) दिवेटो माधन ।

दूभर (हि० वि०) दुःसाध्य, कठिन, सुगन्धित ।

दूमा (हि० पु०) एक छोटा पैला जो चमड़ेका बना
होता है । इसमें तिन्त्रतसे चाय भर कर पाती है । इसमें
कमसे कम तीन घंटे चाय पाती है ।

दूरदेग (फा० वि०) दूरदर्शी, चपगोथी, चागा पोडा
मोचनेवाला ।

दूरदेगो (फा० स्त्री०) दूरदर्शिता ।

दूर (म० स्त्री०) देव शरी वापुनकात् नृ । १ प्राचरूप
देवतामिद, उपामकीने गरीमें अवस्थित प्राचरूप देवता
'दूर' नामसे प्रसिद्ध है । ३ उपामकीको शत्रुको दूर
करते हैं, इसीसे उनका नाम दूर, पड़ा है । (त्रि०)

दुदुःखिनेयत प्राप्यते इति दूर-इय. (क्षीयो लोचन ।
वन् २२०) इति रत्न-धर्तृमोपध । अनिकट, बहुत
कायने पर । इसका पर्याय—विप्रकट और चनामक है ।

वैदिक पर्याय—चाक, पसाक, पराच, पार और परा-
वत है ।

दूरक (म० वि०) दूर-वर्षि कम् । दूर, जो घामने
पर हो ।

दूराग (सं० त्रि०) दूरं गच्छति दूर-गम-इ । १ दूरगामी,
वदुत दूर तक जानेवाला । (पु०) २ सट्ट, कंठ । ३
गदंभ, गदहा ।

દૂરગત (મં ૦ ત્રિ ૦) દૂર ગતઃ ૬-તત્ । જો યદ્યત દૂર તથા
ચલા ગયા હો ।

दूरगामी (स० त्रि०) दूरं गच्छति दूर-गम-षिनि । लो-
बद्धत दूर चत्ता गया हो ।

दूरग्रहण (सं० लो०) बहुत दूरसे ग्रहण या दर्शन करने की शक्ति।

दूरदूर (स० स्त्री०) एक स्थानसे दूसरे स्थानको जानेकी क्रिया ।

दूरद्वय (स० त्रि०) दूरं गच्छति गम बाहुलकात् घेदे ख,
ममव । दूरगामी, दूरतः दूरतः चलनेवाला ।

दूरधर (सं० त्रि०) दूरे चरतोति चर-ट। दूरविचरणकारो,
टा तक चलनेवाला।

दूरजम् (स० स्तो०) वैद्यभूषणि ।

दूरतसः (स० अथ०) दूर-तसः । दूरे ।

दूत्व (सं० क्त०) दूरस्य भावः दूर भावे त्व । दूर इनेका
भाव, अन्तर, दूरो, फासला ।

दूरदर्शक (स० वि०) : दूर तक देखनेवाला । (पु०)
२. पण्डित, बुद्धिमान् ।

दूरदर्शन (सं० पु०-स्रोः) दूरसि दर्शनं दृष्टिर्षयः ।
 १ गृह, गीढ । (पु०) २ पण्डित । दृग्-प्रायेऽभ्युट्-
 (क्री०) ३ दूरवे दर्शन । ४ दूरवोचन-यन्त्रभेद, दूर-
 वोन ।

दूरदर्शिता (सं० स्त्री०) दूरको बात सोचनेका गुण,
दूरदृष्टी ।

दूरदर्शो (स० त्रि०) दूरात् पश्यति कार्योत्पत्तिः प्राक्
पश्यति ज्ञानाति वा दृग्-गतिः । १ दूरदर्शक, वदत दूर-
को वात सोचनेवाला, दूरदेयः । (पु०) २ पण्डितः बुद्धि-
मान् । ३ ग्राह्य-शीलः ।

दूरदृष्टम् (सं० त्रि०) दूरात् पथ्याति दृश्य-क्षिन् । १ दूर-
दर्शी । (प्र०) ३ पण्डित । ३ ब्रह्म. गिह ।

दूरदृष्टि (सं० वि०) दूरे दृष्टिर्दृश्य । १ दूरदर्शी, दूरं देय ।
(स्त्री०) २ दूरदर्शनम्, भविष्यका विचारः ।

निरोधः (सं. पु.) दूषीन नामक यन्त्र ।

दूरवा (हि० पु०) दूर्वा-देखो ।
दूरवीन (फा० स्त्री०) एक प्रकारका यन्त्र ।

दूषीचण देखी !

दूरमूल (सं० पु०) दूरे भस्मविकटे मूलं यस्य । १ सुश्रुतस्य,
मृज । २ दुरालभा, जवासा, धमासा ।

दूरयायो (स० त्रि०) दूरे याति या यिनि । दूरगामो,
दूर तक चलनेवाला ।

દૂરવર્તી (સં. ત્રિ.) દૂરે વર્તતે દૂર છત-ણિનિ । દૂર-
સ્થિત, જો દૂર હો ।

दूरवस्तव (सं० वि०) दूरे यस्तं यस्य । वस्तुहीन,
उलङ्घ्य, भंगा ।

दूखासो (म० वि०) दूरे वसति वस-पिनि । दूरदेश-
वासो । दूरदेशमें रहनेवाला ।

दूरवोक्षण (सं० कला०) दूरं बोध्यते। नमः दूर-वि-
ज्ञ-सू-ट। (Telescope) यन्त्राकार यन्त्रविशेष, एक
प्रकारका यन्त्र जिससे दूरकी चीजें बहुत पाम और
स्पष्ट या बड़ो दिखाई देती है, दूरवोक्ष ।

जिन सब यन्त्रोंसे जीवसमूहका विशिष्ट कल्याण हुआ है, उनमेंसे दूरवोक्षणयन्त्र भी एक है। दूरवोनका आविष्कार पहले पहले होचैँ है जिनमें सबसर्वीं यन्त्राद्योविधाश्रमों द्वारा था। एक-बार एक चर्मवाला भपनो दूकान पर बैठा हुआ काम कर रहा था तबनेमें उसका लड़का जो भपनो पांखोंमें दो शीशे लगा कर खिल रहा था, सहसा चिल्ला उठा कि देखो ! वह सामनेका वृक्ष कितना पास पा गया। चर्मो-वालेने देखा कि उसका लड़का दो शीशोंको पागे पोछे रख कर देख रहा है। जब उसने भी उसी प्रकार उन शीशोंको रख कर देखा, तब उसे उनका उपयोग ज्ञान पड़ा। इसने उपरांत उसने भनेका प्रकारको परी-चाएँ करके कुछ विज्ञान स्थिर किए और उन्हें अनु-सार दूरवोक्षणका आविष्कार हुआ। १५०० ई.में लास्टर जीने परिचित शीशे (Perspective glasses)-का विषय वर्णन किया था। पोछे दूरवोक्षणयन्त्रके आविष्कारके विषयमें भनेक परीचाएँ हुईं। होसँडेसे जो सबसे पहले दूरवोक्षणका आविष्कार हुआ है, ऐसा चक्रेज लोग स्वीकार करते हैं। जकारियस, ज्ञान-

शुक्रके ट्रेकापमें जन्म होनेसे सुन्दर शरीरसम्पन्न, राजमन्त्री, सर्वज्ञ, दाता और साधुओंका प्रतिपालक, धनी, दयालु, शक्ति और धार्मिक होता है।

शनिके ट्रेकापमें जन्म होनेसे मलिन, क्रूर, मृदु, तस्कर, दुश्चरित्र, स्वपण, गुणहीन, पापात्मा, सुवङ्गनागामी, प्रतिशय रहन, क्रोधी, निर्दय, रोगार्त्त, सुखर, कुरुप और कामातुर होता। (कोष्ठीप्रदीप)

हृक्तेप (सं० पु०) दशांशेपः इत्यतः। १ दृष्टिपात, धन-लोकन। २ सूर्य सिद्धान्तोक्त हृक्तेपसंख्यान्तरालस्य शर-रूपेण, दशम लक्षके नतांशकी भुजज्या। इसका काम सूर्य ग्रहणके स्थीतिकरणमें पड़ता है। मध्यज्याको उदय-ज्यासे गुना कर गुणनफलसे त्रिज्यासे भाग दिया जाता है। फिर भागफलको वर्ग करके और उसमें मध्यज्याके वर्गको घटा कर जो शेष संख्या रह जाती है उसका वर्गमूल निकाला जाता है। इसी मूलके चंको हृक्-तेप कहते हैं।

हृक्पय (सं० पु०) दशांशपत्वा इत्यतः। दृष्टियोग्य स्थान, दृष्टिका मार्ग, दृष्टिको पड़ूँच।

हृक्प्रद (सं० स्त्री०) सीविराज्जन।

हृक्पात (सं० पु०) दशांशपातः इत्यतः। दृष्टिपात, धन-लोकन।

हृक्प्रसादा (सं० स्त्री०) ह्यौ नेत्रौ प्रसादयति प्र-मद-पिच-भण्टाप। कुलत्या, कुलत्याञ्जन। आँखमें यह लगानेसे आँख साफ होती है, इसीसे इसका नाम हृक्प्रसादा हुआ है।

हृक्प्रिया (सं० स्त्री०) ह्योः प्रिया इत्यतः। शोभा, सुन्दरता, खूबसूरती।

हृक्शक्ति (सं० स्त्री०) हृक्-प्रकाशनमेव शक्तिः। १ प्रकायरूप चेतन्य। २ तद्युक्त सर्व प्रकाशक चेतन पुद्गल, आत्मा।

हृक्श्रुति (सं० पु०) ह्यो एव श्रुति कर्षी यस्य। सर्प, साँप।

हृग (हिं० पु०) १ आँख। २ दृष्टि, देखनेकी शक्ति। ३ दोकी संख्या।

हृगल (सं० पु०) पक्षक।

हृगध्वज (सं० पु०) ह्योः नेत्रयोरध्वजः पवित्राष्टदेवः।

सूर्य। सूर्यसे प्रकाश प्राप्त होता है। इसी प्रकाशमें देखनेकी शक्ति उत्पन्न होती है।

हृगमिचाव (हिं० पु०) आँख मिचोनीका खेल।

हृगल (सं० स्त्री०) ह्यो द्यग्नाय भलति भल-भच। शकल खण्ड, पुरोडाग।

हृगगणित (सं० पु०) ग्रहोंका वेध करके गणित करना।

हृगगणितेव (सं० पु०) ग्रहोंको किसी समय पर गणितसे खट करके पुनः उसे वेध कर निकालनेकी क्रिया। जब न्यूना या अधिकता प्रतीत हो, तो उसमें संस्कार करना पड़ता है जिससे वहाँके वेध और खटमें बागि भेदन पड़े।

हृगगति (सं० स्त्री०) ह्योगतिः इत्यतः। १ चक्षुको गति, दृष्टिकी पड़ूँच। २ सूर्यसिद्धान्तोक्त ग्रहखण्डोपयोगी हृगगति-भेद। ३ दशमलक्षकी नतांशकी कोटिज्या। इसका काम सूर्यग्रहण निकालनेमें आता है। इसका तरीका इस प्रकार है—मध्यज्याको उदयज्यासे गुना करते और गुणनफलको त्रिज्यासे भाग देते हैं। जो छे भागफलका वर्ग करते और वर्गफलसे त्रिज्याका वर्ग घटाते हैं। इस प्रकार जो शेष चंको बच जाता है उसका वर्गमूल हृगगति कहलाता है।

हृगगोचर (सं० स्त्री०) जो आँखसे दोख पड़े।

हृगगोल (सं० पु०) खगोलके अन्तर्गत एक गोल, हृक्-पङ्कन।

पः सि खलक्षितक और चधःभक्षितक ये दो खलक्षित करते हैं, जो छे सन्तर्गत दो भन्तःकोलक बना कर श्लक्ष्णरूप से गाढ़ देते और तब हृक्पङ्कन बनाते हैं। इस हृक्पङ्कनकी पूर्वद्विपक्षे कुछ छोटा बनाना होता है जिससे यह खगोलके बीच पक्की तरह बूम सके। इसमें यदि एक ही ग्रहगोल हो, तो एक हृक्पङ्कन होगा। जो जो ग्रह लक्षां अक्षां व्यवस्थान करता है, उस उस ग्रहके ऊपरी भागमें हृगज्या और शङ्कुादि करना होगा अथवा भिन्न भिन्न रूपसे पाठ हृक्पङ्कन बनाना होगा। बाद भटम और हृक्ज्येपण्डल उस खगोलमें ध्रुवचिह्नको दो नज्जिकाओंकी बाँधते और नज्जिकाके आधारजमें खगोल करके तीन संगोकी दूरी पर हृगगोल बनाते हैं।

क्रान्तिमण्डलादियुक्त खगोलवृत्त और भूगोलवृत्तसे

मिन, दामनिमार्ग, जेम्स वा दार्वुल मितिकर्म, पाटि कुछ स्थिति दूरबीनके आविष्कारकर्ता माने जाते हैं। बोके भुवनविज्ञान में लियोनो इमका विषय ज्ञान कर दूरबीनचयनको खटि करने की यद्योग्य रूप। उन्होंने १६०८ ई० में एक बालके समझें दोनों घोर दूरदृष्टि-मापक योमी बैठा कर एक प्रहल दूरबीनचयन यन्त्रकी खटि की घोर लभमे ये पाकायमण्डलस्य चन्द्र, सूर्य, तारे आदिको देखने लगे। इस यन्त्रकी सहायतासे उन्होंने यह पता लगाया कि वृहस्पति ग्रहके चारों घोर चार चन्द्रमा भ्रम रहे हैं, सूर्य अपने मेण्डल पर घूमते हैं और उनमें कितने प्रकारके दाग हैं। चन्द्रमा में पर्यंत घोर उपत्यका है तथा मामास्य चतुर्मे षण्णोचर चनेक ज्योतिष्क पाकायमण्डलमें विराजमान हैं। १६१० ई० में प्रकृत दूरबीनचयनकी खटि हुई। सबसे दूरबीनचयन बनाने के काममें परापर उत्पत्ति होती पाई है।

ज्योतिर्विद हर्गेल साधवर्जित दूरबीनचयन द्वारा जो वस्तु देखे जाते हैं वह अपने स्वाभाविक रूप यन्त्रकी सहायता १०० गुण बढ़ी होती है। महातेजः पुष्ट शक्तिप्रद लभ यन्त्रमे ऐसा स्पष्ट दोष पड़ता है। मानो हम लोग पक्षमिश्र ४०००००००० कोम परचर को कर उन्हें देखेंगे हैं। १ घट्टे में यदि हम लोग २५ कोम परचर को घोर जा सकें, तो ४००००००० कोम जानेंगे हम लोगों की १८० वर्ष कीमा, किन्तु हम यन्त्रकी सहायतासे इतने दूरस्थित होने पर भी उन्हें स्पष्टरूपसे देख सकेंगे हैं। इसको सहायतासे हम लोगों की बहुत दूरस्थ पदार्थों पर ज्योतिष्क घोर उत्पत्ति प्रकाश देखने में जाता है। दूरबीनचयन यन्त्रकी खटि होनेसे ज्योतिष्मापक की विविध उत्पत्ति हुई है। पहले जिन सब दाग, उपदाग, मण्डल घोर भूमिभूतका दाग अनुया स्वप्नमें भी नहीं जानमें थे, सभी दूरबीनचयनकी सहायतासे हमने उनका आविष्कार कर डाला है। इसकी दिनों दिन उत्पत्ति होती जा रही है। चन्द्र घोर वृहस्पति कई प्रकारके दूरबीनचयन हैं।

जिह्वा भागमन्दिरके दो बाय व्यासपुत्र दूरबीनचयन घोर आविष्कारके बाद बाय व्यासपुत्र यन्त्र को चालकन घुमाते भर्ते सबसे बड़ा यन्त्र बना आता है। इनमेंसे दूसरे

(मार्क रनके) यन्त्रका व्यास परिमाण पहलेसे दूसरे होने पर भी निष्कर्ष प्रतिक्रम दूरबीनचयन (Reflecting telescope) यन्त्रकी सहायता इसकी परिमर छविकारो मन्त्रि बहुत कम है। इस प्रकार निष्कर्ष भागमन्दिरके दूरबीनचयन यन्त्रकी सहायतासे उत्पन्न प्रतिक्रम वत-नाया ये घोर अपने ज्ञानित दूरबीनचयन की समताको हमें यन्त्रके साथ तुलना की है। उन्होंने मथना करके देखा है, कि नूतन यन्त्रकी रश्मिपुञ्जोरणमन्त्रि (Light-gathering Power) निष्कर्ष यन्त्रकी सहायता एकचतुर्दशी अधिक होगी।

दूरबीनचयन एक मोन नमके आधारका होता है जिसमें चारों घोर पोछे दो मोल शोमे लगे रहते हैं। पानीवाले मोल की प्रधान लेम्मा घोर पोछेवाले शोमे की उपनेत्र वा चतुर्लेम्मा कहते हैं। प्रधान लेम्मा अपने चतुर्मुख पदार्थका प्रतिबिम्ब प्रकाश करके पोछेवाले लेम्मा पर केंद्रता है घोर पोछेवाला लेम्मा या उपनेत्र उस प्रतिबिम्बकी विस्तृत करके चारों ओर सामने उपस्थित करता है। आविष्कारकानुसार प्रधान लेम्मा चारों ओर वृद्धावा बढ़ाया भी जा सकता है। दर्शनीय पदार्थकी प्राकृतिको छोटाई या बड़ाई रनों दोनों लेम्माकी दूरी पर निर्भर रहती है।

विज्ञानको उत्पत्तिके साथ साथ जितने नये नये यन्त्रों का आविष्कार हो रहा है उनको सुमार नहीं। वैज्ञानिक लोग एक ऐसा दूरबीनचयन बनाया चाहते हैं, जिसमे ज्योतिष्कमण्डलका समस्त विवरण प्रत्यक्षगोचर हो।

दूरवेधी (सं० पु०) दूरत् वेधी इत्यस्य इति । १ दूरवे लक्ष भेदक, वद जो दूरमे नियाना मारता है।

दूरसंख्य (सं० वि०) दूर संख्या स्थितियस्य । दूरक, दूरवर्ती, दूरस्थित ।

दूरसंस्थान (सं० जो०) दूर संस्थान । १ दूरकता, वद जो दूरमें हो । २ दूरमें स्थिति, दूरका मार्ग ।

दूरस्य (सं० वि०) दूर स्थिति दूर-स्था-क । दूरस्थित, दूरका ।

दूरमापत (सं० वि०) दूरमापतति दूर मा-पत-य । दूर पानी पछा, वद पछा जिसे दूरमे किं कर मारा जाय ।

दुर्गातिन् (स० वि०) दूर' आपतति आपत-णिनि ।
 दुर्निक्षेप परत, दूरसे फेंके जानेका अर्थ ।
 दुर्गात्रय (स० ति०) दूरे प्राप्तावो यत् । दु०से उत्पन्न
 प्रदानकारी, जो दूरसे उकलता हो ।
 दूरावस्थित (स० वि०) दूरवर्त्ती, जो दूरमें हो ।
 दूरो (हि० स्त्री०) दूरत्व, भन्तर, फासला, बीच ।
 दूरीकरण (स० स्त्री०) बाह्यकृतकरण, बाहर निकाल
 देनेकी क्रिया ।
 दूरीकृत (स० वि०) तादृशित, जो निकाल दिया गया हो ।
 दूरीकृत (स० वि०) तादृशित, निकाला हुआ ।
 दूरदृष्टा (स० वि०) दूर-दृष्ट-ज्ञा रिके परे पूर्वाणो दीर्घः ।
 दूरदूरीविषय ।
 दूरे चमित्र (स० पु०) दूरे चमित्र यत्र यं स्य वेदे समग्याः
 भलक् । एकीनपञ्चायत् मरुत्के मध्य मरुत्भेद, उन्न-
 चास मरुत्तमिसे एक मरुत्का नाम ।
 दूरैव (म० वि०) दूरे भवः एव । दूरभव, दूरस्थ, जो
 दूरमें हो ।
 दूरेपाक (स० वि०) दूरे पचति पच-थ न्यङ्कादित्वात्
 कुल्व, समग्याः भलक् । दूरसे पचाने या पकानेवाला ।
 दूरेपाक (स० वि०) पच-लथ, न्यङ्कादित्वात् कुल्व
 समग्याः भलक् । दूरेपाक देखो ।
 दूरेभा (स० वि०) जो दूरसे चमके ।
 दूरेयम (स० वि०) जो यमकी पहुँचसे बाहर हो, जहाँ
 यम न जा सके ।
 दूरेरितचय (स० वि०) दूरे ईरित ईचय' येन । केकर,
 कौया, ऐं चा ताना ।
 दूरेवध (स० वि०) जो दूरसे प्रहार करे ।
 दूरीह (स० पु०) दुःखिन रुद्धतेऽनी दूर-रुह कर्मणि खल-
 रिके परे पूर्वाणो दीर्घः । १ दुःख द्वारा रोहणीय, आदित्य-
 लोक जहाँ चढ़ कर जाना असम्भव है । (ति०) २ दूरा-
 रोहभाव, जिस पर चढ़ कर जाना सुश्रिक्त हो ।
 दूरीहण (स० पु०) दुष्कर आरोहणं यत् । १ आदित्य,
 सूर्य । (स्त्री०) २ रुद्धमेद, एक प्रकारकी रुद्ध । (ति०)
 ३ दूरारोहणीय जो चढ़ने योग्य न हो । ४ जिस पर
 चढ़ना बहुत कठिन हो । ५ दुःसाध्य रोहण, जिस पर
 चढ़ना असम्भव हो ।

दूर्व (म० स्त्री०) दूरे उक्तायै दूर्-यत् । १ पुरीष, विष्टा ।
 सबेरे उठ कर जैष्ठतकोषमें खुड़ा हो कर तोर छोड़नेसे
 वह जितने दूर तक जाय, उतना स्थान छोड़ कर विष्टा
 त्याग करना चाहिये, इसीसे पूरीपका नाम दूर्व पड़ा है ।
 २ सुदृढ़ कर्चूर, छोटा कचूर ।
 दूर्व (स० पु०) नृपभेद, एक राजाका नाम ।
 दूर्वा (स० स्त्री०) दूर्वति- रोगान् भनितं वा दूर्व
 हिंसायां पच-रिके परे पूर्वाणो दीर्घः । (Panicum
 dactylon) खनामख्यात दृग्भेद, दूर्व नामकी घास ।
 पर्याय—शतपर्णिका, महस्रवीर्या, भागवती, रुद्धा, घनन्ता,
 तिलपर्णी, दूर्मरा, चहुवीर्या, हरिता, हरिताली और कच्छ-
 सहा । श्वेत दूर्वाके पर्याय—शतवीर्य, गण्डाली, शकुला-
 चक, गोमोमो, शतपर्वा, सितदूर्वा, शिता, नन्दा घोर,
 महावरा । भावप्रकाशके मतसे दूर्वा घोर गण्डदूर्वा तोन
 प्रकारकी होती है—नीलदूर्वा, श्वेतदूर्वा, घोर गण्डदूर्वा ।
 रुद्धा घनन्ता, भागवती, शतपर्णिका, शय्य, महस्रवीर्य
 और शतवीर्यो ये सब नीलदूर्वाके पर्याय हैं । इसमें शीत-
 वीर्य, तिल, मधुर, कषाय, रस और कफपित्त, रक्तदोष,
 वीर्य, दृष्ट्या, दाह और चर्म रोगनाशक गुण माना
 गया है ।
 मोनोकी और शतवीर्या श्वेतदूर्वाके नामान्तर हैं ।
 इसका गुण—कषाय, तिल, मधुररस, व्रणनाशक, मोनो-
 घातुवर्द्धक, शीतवीर्य, वीर्य, रक्तदोष, दृष्ट्या, पित्त,
 कफ और दाहनाशक है ।
 गण्डाली, मत्स्याघो और शकुलाचक ये गण्डदूर्वाके
 नामान्तर हैं । गुण—शीतवीर्य, मोहद्रावक, धारक,
 लघु, तिल, कषाय, मधुर रस, वायुवर्द्धक, कटु, विषाक
 और दाह, दृष्ट्या, कफ, कुष्ठ, रक्तपित्त और क्ष्वरनाशक
 है । (भावप्रकाश)
 यह चास पथिमी पञ्चावर्के घोड़ेने वातुमय भागको
 छोड़कर शेष समस्त मारतसे घोर पड़ाइें पर पाठ हजार
 फुटकी उँचाई तक बहुत उपजतो है । सब स्मृत तथा
 सब जमीनमें यह लगती है तथा बहुत जल्दी घोर सहज-
 में फैल जाती है । गाय घोर घोड़ा इसे बहुत प्रेमसे
 खाता है और इससे चसका वन खुद बढ़ता है । कहीं
 कहीं जपक इसे मुष्णाकर वर्षों तक रहती है । इससे

ये परपुररूप नामक राजाको कन्याके गर्भमे उत्पन्न हुए थे। इनका नाम हट्टाशह भो है। (भागवत ४।२८ अ०)
हट्ट, तह (सं० पु०) हट्टः तहः कर्म धा०। धवत्त, धवका
पेड़।

हट्ट, ता (सं० स्त्री०) १ हट्टत्व, हट्ट होनेका भाव। २
भजवृत्तो। ३ स्थिरता। ४ प्रकापन।

हट्ट, लण (सं० पु०) हट्टं कठिनं लणं यस्य। सुष्मालण,
मूँज नामकी घास।

हट्ट, लण (सं० स्त्री०) हट्टं लणं यस्याः। वल्गजा लण,
सागे बागे।

हट्ट, त्व (सं० स्त्री०) हट्ट, स्य भावः हट्ट, भावे त्व। हट्ट, ता।

हट्ट, त्वच (सं० पु०) हट्टा त्वच, यस्य। १ यावनालग्र,
ज्वारका पेड़। २ सुष्ठलण, मूँज। (त्रि०) ३ कठिन
चर्मशुक्त, जिसकी त्वचा या काज़ कड़ी हो।

हट्ट, दंशक (सं० पु०) हट्ट, यथा तथा दंशतीति दंश-
कत्वात्। जलजन्तुविशेष, चड़ियाल।

हट्ट, दस्यु (सं० पु०) हट्ट, द्युतके पुत्र, एक ऋषिः।

हट्ट, धन (सं० पु०) हट्ट, धनं निययकपसम्पत्तिर्यस्य।
शाक्यमुनि, बुद्ध।

हट्ट, धनुस् (सं० पु०) शाक्यमुनिके एक पूर्व-पुरुष।

हट्ट, धनुस् (सं० पु०) हट्टं धनुर्यस्य, धनुः समासान्तः।
१ हट्ट धनुष्क, जो धनुष चलानेमें हट्ट हो। २ धीरव नृप-
भेद, एक पुत्रवंशीय राजाका नाम। (सात १।१८६ अ०)

हट्ट, धनो (सं० त्रि०) हट्ट धनुयुक्त, जिसका धनुष हट्ट हो।

हट्ट, धुर (सं० त्रि०) १ हट्ट धुरायुक्त, जिसका वम या डंडा
भजवृत्त हो। २ जो बोझ ढोनेमें समर्थ हो।

हट्ट, नाम (सं० पु०) माया-भक्त रोकनेका सम्प्रभेद। इसे
विश्वामित्रजीने रामचन्द्रको बतलाया था।

हट्ट, निधय (सं० पु०) हट्टः कुतर्करभिभवितुं अयक्यतया
स्थिरः निधयो वहं ब्रह्म-पस्मि इति निधयो यस्य।
स्थिरप्रज्ञ, वह जो अपने सङ्कल्प पर हट्ट रहै, जो अपनी
वात पर जमा रहै।

हट्ट, नीर (सं० पु०) हट्टं कालेन हट्टतां प्राप्तं नीरं यस्य।
नारिकेल, नारियल। इसके भीतरका जल धीरे धीरे जम
कर कड़ा हो जाता है।

हट्ट, नेत्र (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्रका नाम।

हट्ट, नेमि (सं० पु०) १ अजमेन्द्र संशोय सत्यवृत्ति नृप-
पुत्र नृपभेद, अजमेन्द्र वंशके एक राजाका नाम जो
सत्यवृत्तिके पुत्र थे। (शिवग २० अ०) हट्टा नेमियस्य।

२ हट्टनेमिका रथ, वह रथ जिसकी धुरी भजवृत्त हो।

हट्ट, पत्र (सं० पु०) हट्टं पत्रं यस्य। १ बंश, बांस। २ सुष्ठ
लण, मूँज नामकी घास। (त्रि०) ३ हट्टपत्रयुक्त,
जिसके पत्ते हट्ट हो।

हट्ट, पत्रो (सं० स्त्री०) हट्टपत्र गौरादित्वात् लोपः।
वल्गजा लण, सागे बागे।

हट्ट, पद (सं० पु०) हट्टेस मात्वाघोका एक मात्रिक छन्दः।
इसमें १२ धीरे १० मात्वाघों पर विग्राम होता है।
अन्तमें दो शुरु होते हैं।

हट्ट, पाद (सं० त्रि०) हट्टः पादः पदमं ज्ञानं यस्य। १
हट्टनिश्चय, विचारका पक्का। (पु०) २ वैधर्म, ब्रह्मा।

हट्ट, पादा (सं० स्त्री०) हट्टः पादो मूलं यस्याः, समा-
सान्त विधेरनित्यत्वात् नान्त्यलोपः। यवतिक्ता।

हट्ट, पादी (सं० स्त्री०) हट्टपाद-लोपः। भूम्यामलकी,
भूर्धावला।

हट्ट, पुष्पा (सं० स्त्री०) शुल्लच्छकन्द, शुद्धकन्द, कन्द
धाक।

हट्ट, पृष्ठक (सं० पु०) कच्छप, कतुषा।

हट्ट, प्ररोह (सं० पु०) हट्टः प्ररोहः पशुरो यस्य। वट-
वृक्ष, बरगद।

हट्ट, फल (सं० पु०) हट्टानि फलानि यस्य। नारिकेल,
नारियल।

हट्ट, धन्विनी (सं० स्त्री०) हट्टं यथा तथा वध्नातीति धन्वि-
नि-लोपः। १ श्यामानता, अन्तःमूलकी जता।
(त्रि०) २ धानियल बन्धकारक।

हट्ट, बालुक (सं० स्त्री०) एलबालुक, सुमध्वर।

हट्ट, भागवक (सं० स्त्री०) होरक, होरा।

हट्ट, भूमि (सं० पु०) हट्टा भूमिरयस्या यस्य। योगशास्त्रमें
मनको एकाग्र धीरे स्थिर करनेका एक पद्धति। इसका
विषय दातञ्जलयोगशास्त्रमें १६ प्रकार लिखा है—

चित्तको स्थिर करनेके लिये जिससे राजम धीरे ताम्रम
वृत्तिका उदय न हो, ऐसे यज्ञ विषयको पद्म्यास कहते
हैं। विषयाभिमित्रैश्वर्यो धरित्याग-करके चित्तको यज्ञपूर्वक

दृढस्थिति (सं० पु०) नैरिकेल हृद्य, नैरिकेलका पेड़।
दृढस्यु (सं० पु०) लोपासुद्धा कि गर्भसे उत्पन्न भ्रमस्य
अधिके एक पुत्रका नाम। ये दृढवाह नामसे भी
प्रसिद्ध हैं।

दृढचतु (सं० पु०) भजमोह वंशीय नृपमंद, भजमोह
वंशके एक राजाका नाम।

दृढहस्त (सं० पु०) दृढः हस्तः हस्तवापापो यस्य।
१ खड़ादि धारण विषयमें दृढ़ हस्तयुक्त योद्धा पुरुष, वह
योद्धा लो हथियार आदि पकड़नेमें पक्का हो। २ हस्त-
राष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत १।६० अ०)

दृढा (सं० स्त्री०) सुपत्नी, मूलपत्नी।

दृढाङ्ग (सं० त्रि०) दृढः अङ्गः यस्य। १ कठिनाङ्गयुक्त,
जिसके अंग दृढ़ हों, दृढ़पुष्ट। (स्त्री०) २ जोरक,
बौरा।

दृढादि (सं० पु०) पाणिभूक्त शब्दमण विशेष,—दृढः,
परिहृष्टः, भ्रम, हृद्य, वक्रः, शुक्रः, पुष्कः, प्राज्ञः, कृष्णः, सवर्णः,
ताम्रः, मोतः, लघुः, जडः, वधिरः, पण्डितः, मधुरः, मूर्धः,
सूक्तः, जवन ये सब शब्द दृढादिगण हैं।

दृढाना (त्रि० त्रि०) १ दृढः कारणा, पक्का करना। २ पुष्ट
होना, कड़ा होना। ३ स्थिर या पक्का होना।

दृढायु (सं० पु०) १ क्षणीय मनु सावर्णिके एक पुत्रविशेष,
क्षणीय मनु सावर्णिके एक पुत्रका नाम। २ सर्वशो-
भर्तृजात ऐल नृपुत्रमंद, सर्वशोभे गर्भसे उत्पन्न ऐल
राजाके एक पुत्रका नाम।

दृढायुध (सं० पु०) दृढः आयुधो तद्व्यापापो यस्य।
१ योद्धा। २ हस्तराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (त्रि०)
३ अक्ष प्रवर्ण वारनेमें पक्का, युद्धमें तत्पर।

दृढारङ्गा (सं० स्त्री०) स्फटिकारिका, फिटकरी।

दृढाश्व (सं० पु०) धनुमार नृपपुत्रमंद, धनुमारके
एक पुत्रका नाम।

दृढेयु (सं० पु०) अग्निमंद, एक ऋषिका नाम।

दृढेयुधि (सं० पु०) दृढेऽयुधि यौन। १ वक्रतुण्णक
योध, वह योद्धा जो लड़नेके लिये तरकरा आदि लिए हों।
२ राजमंद, एक राजाका नाम।

दृढ (सं० त्रि०) दृढः। १ चादरयुक्त, सम्पन्नित।
दृढविदरि का पांडुलकात् फलः। २ विदोष, फाड़ा
हुआ।

दृढा (सं० स्त्री०) द्विधत्वे स्मैति दृढ-कर्मणि क्त-टाप्।
जोरक, जौरा।

दृढि (सं० पु०) दृढातोति दृढिद्वारे इति तिङ्प्रत्यय
(दृढाते कृत्प्रत्यय) उण्-४।१८३ १ चर्मपुटक, खान
का बना हुआ पात्र। चर्मपात्रमें अनेक छिद्र नहीं
रहने पर भी जिस तरह केवल एक छिद्रके दोपसे उसका
सब जल निकल जाता है, उसी तरह इन्द्रियोंमें यदि
एक भी इन्द्रिय सन्नित हो, तो उसीसे परम ज्ञान नष्ट
हो जाता है। २ मुख्य, मकली। ३ गमकम्बज, वह
चमड़ा जो गाय, बैल आदिके गलेके नीचे झूलता है।
४ मेघ, बादल। ५ मयक। ६ सत्रविशेषधारक
यजमानमंद। ७ रोमश चर्म, रोषा लगा हुआ
चमड़ा।

दृढिधारक (सं० पु०) दृढिधर्मपुटस्तदाकारं धारयतीति
धारि-धृत्-लृ- (धृन्-लृत्) पा १।१।१३१ हृद्यविशेष,
एक पेड़का नाम है। इसका प्रयोग—धानन्दी,
मृषिकाराहु घोर वामन है।

दृढिवातवधोरयन (सं० स्त्री०) यज्ञमंद, एक यज्ञका नाम।

दृढिहरि (सं० पु०) दृढि चर्ममवद्वश्यं हरतीति दृढि-
हृ-हृन्। कुचकुर, कुत्ता।

दृढिहार (सं० पु०) मयक लेनीवाला, मिथो।

दृढ्य (सं० त्रि०) दृढकर्मणि-कृत्-टाप्। १ चादरणीय, जिसको
इच्छत हो। (स्त्री०) भावो कृत्-। २ चादर, सम्पन्न।

दृढ्य (सं० स्त्री०) दृढता या मजबूतीसे पकड़नेकी क्रिया।

दृन् (सं० प्रत्यय) १ दृिंसा। २ दृढार्थ।

दृन्फ (सं० स्त्री०) दृन्फ कृ निपातनात् न नलोपः। १
सर्प जाति। २ वध।

दृन्मु (सं० स्त्री०) दृन्फतोति दृन्फ निपातनात् कृप्रत्ययेभ
साधु। (अन्टू रम्भ अन्मु कम्बु कफेड कंक पू दिगिपु। उण्,
१।८५) १ सर्प, सांप। २ वध, पड़िया। (पु०) ३ वध।
४ सूर्य। ५ राजा। ६ भक्तक, नाश करनेवाला।

दृन् (सं० त्रि०) दृन्फवर्णं दृन् च वर्त्तमाने क्त। १ गर्वा-
न्वित, इतराया हुआ। २ हर्षसे फूला हुआ।

दृन् (सं० त्रि०) दृन्फति वाधते इति दृन्-परक। (स्फाभित-
खोति। उण्-२।१३) १ दृन्फलयुक्त, प्रचण्ड, प्रमल।
२ धमण्डो, इतराया हुआ।

दृष्टिबन्ध (सं० पु०) दृष्टिजाले, जादू, दोखबंदी ।
 दृष्टिबन्धु (सं० पु०) दृष्टिने प्रत्यक्ष बन्धुरिव सादृश्यापाद-
 नात् । खद्योत, लुगन ।
 दृष्टिमण्डल (सं० स्त्री०) दर्शन ।
 दृष्टिमत (सं० लि०) दृष्टिर्विद्यते अथ दृष्टि-मतपु ।
 दृष्टियुक्त, जिसे दृष्टि हो ।
 दृष्टियोगि (सं० पु०) ईर्ष्यक, श्रोत्र ।
 दृष्टिरोग (सं० पु०) नेत्ररोग, आँखको बीमारी ।
 दृष्टिरोध (सं० पु०) १ दृष्टिको रोक, नजर पहुँचनेमें
 रुकावट । २ रावधान, बाध, भोट ।
 दृष्टिधन (हिं० वि०) १ दृष्टिवाला । २ ज्ञानी, जानकार ।
 दृष्टिधर्म (सं० स्त्री०) आँखकी पलक ।
 दृष्टिवाद (सं० पु०) जैनदर्शनानुसार चक्रप्रविष्ट श्रुतके
 हाथमें अज्ञानसे वारंवार चक्र । ये हाथग्राह्य जैन-
 धर्मके मूल पत्र हैं । श्वारह अक्षर तथा यह दृष्टि-
 वाद मिश्रता नहीं । जैनचार्य सकलकौत्सि रचित
 तत्त्वार्थसारोपक्रम इसका जो सङ्ग्रह है उससे पाया
 जाता है, कि इसमें चन्द्र सूर्य आदिकी गति, प्रायु आदि,
 प्राणापान भ्रूतिक्षा, मन्त्र तन्त्र तथा अनेक प्रकारके
 विषय सम्मिलित हैं ।
 दृष्टिवादमें क्रियावादियोंका मत विस्तृत भावसे
 आलोचित हुआ है । यह पाँच भागोंमें विभक्त है—परि-
 क्रम, स्व, प्रयत्नयोग, पूर्वगत और चूलिका ।
 परिक्रमके मध्य—
 १ । चन्द्रप्रश्न—इसमें जिनाधिप चन्द्रको शक्ति, गति
 प्रायु, विभूति आदिका वर्णन है । इसको पदसंख्या
 ३६५००० है ।
 २ । सूर्यप्रश्न—इसमें सूर्यको प्रायु, परिवार, चार
 और वेदादिस्मृद् वर्णित है । पदसंख्या ५०१०० है ।
 ३ । जम्बूद्वीपप्रश्न—इसमें जम्बूद्वीपका भोग, भूमि
 और कुलपर्वतादिका विषय वर्णित है । इसको पद-
 संख्या ३२५००० है ।
 ४ । दीपवाधिप्रश्न—इसमें अश्वत्थ दीप, समुद्र और
 पर्वतादिका विषय वर्णित है । पदसंख्या ५२३६०० है ।
 ५ । व्याख्याप्रश्न—इसमें छः प्रकारके द्रव्योंका गुण-
 पर्याय और लक्षणादिका वर्णन है । पदसंख्या
 ८४३६०० है ।

कुल मिला कर परिक्रमकी पदसंख्या १८१५०००० है ।
 स्व—मानव द्वारा कर्मके कर्तृत्व और भोगादि जो
 सब दुष्पा करते हैं, स्वमें वही सब विषय वर्णित है ।
 इसकी पदसंख्या ८८००००० है ।
 प्रयत्नयोग—इसमें ६३ शलाका पुरुषोंके स्वरूपादि
 वर्णित हुए हैं । पदसंख्या ५००० है ।
 पूर्वगतके मध्य—
 १ । उत्पादपूर्व—इसमें जोवादिकी उत्पत्ति, नाश और
 स्थितिका विषय वर्णित है । पदसंख्या १०००००० है ।
 २ । अप्रायणीपूर्व—इसमें चक्रसमूहकी विषय और
 मुख्य तात्पर्य निर्णयित हुए हैं । पदसंख्या ८६००००० है ।
 ३ । धीवर्षवादपूर्व—चक्रों, केवलो और देवादिका
 शक्तिज्ञान और बोधोदि निर्दिष्ट हुए हैं । पदसंख्या
 ७०००००० है ।
 ४ । अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व—इसमें द्रव्यकी पञ्चास्ति-
 कायका अस्तिनास्तिका विषय आलोचित हुआ है । पद-
 संख्या ६०००००० है ।
 ५ । ज्ञानप्रवादपूर्व—इस ग्रन्थमें पञ्चज्ञान और तीन
 प्रकारका अज्ञान तथा जो ज्ञानाज्ञान धारण करते हैं,
 उन्हींका विषय वर्णित है । पदसंख्या ८८८८८८८ है ।
 ६ । सत्यप्रवादपूर्व—वाग, गुप्ति पर्याय, वाक, संयम,
 श्रुत और सत्यादिका विषय लिखा है । पदसंख्या
 १०००००० है ।
 ७ । आत्मप्रवादपूर्व—इस ग्रन्थमें जीवीके कर्म,
 कर्तृत्व और भोक्तृत्वादि निरूपित हुए हैं । पदसंख्या
 २६०००००० है ।
 ८ । कर्मप्रवादपूर्व—इसमें मानवके कर्मसम्बन्धमें
 बहुतसी बातें लिखी हैं । पदसंख्या १८०००००० है ।
 ९ । प्रत्याख्यानपूर्व—इसमें जीवीका प्रत्याख्यान, प्रत-
 नियमादि स्वरूप वर्णित हैं । पदसंख्या ८४००००० है ।
 १० । विद्यानुवादपूर्व—इसमें सब विद्याओंके
 निमित्तादि अष्टाङ्गका विषय लिखा है । पदसंख्या
 ११०००००० है ।
 ११ । कल्याणपूर्व—इसमें ६३ शलाका पुरुषोंके
 कल्याणकर कर्म मनुष्यका विषय वर्णित है । पदसंख्या
 २६०००००० है ।

उपाधि। १ देवगह, देवदार। २ पुत्र्य व्यक्ति। ८ दोम, सिमोमय व्यक्ति। ९ पराका। प्रधानतः भर्माबाघीकी देव या देवता कहते हैं। १० मंभारमें भी अष्ट व्यक्ति देव कहलाने हैं, जिनमें तरह भूदेव पश्चात् ब्रह्मण, नरदेव पश्चात् राजा। कोई कोई देव शब्दकी अर्थार्थवाचक कहते हैं, जैसे नरदेव नरचन्द्र। देवता रंभमें निरुद्ध विरह देखो। १० एक प्राचीन वैयाकरण। ११ आसुर-संन्यासकारिका नामक धर्मशास्त्रकार। १२ देवर। १३ ज्ञानेन्द्रिय। १४ ऋत्विक्।

देव (का० पु०) देव्य, राक्षस।

देव—१ हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। वे जिज्ञा मैमपुरीके नामने गांवके रहनेवाले थे। इनका जन्म मंभत् १६११ में हुआ था। वे हिन्दी भाषा काव्यके आचार्य माने जाते हैं। विषमिंह-गरोजके कर्त्ताकी इनकी बनाई ७२ पुस्तकोंका पता चला था जिनमेंसे कुछ ग्रन्थोंके नाम ये हैं—प्रेमतरङ्ग, भावविनास, रमयिनास, रमानन्दचहरी, सुजागविनोद, काव्यरमायन, पिङ्गल, षष्ठ्याम, देवमाया-प्रपञ्चनाटक, प्रेमडीपिका, सुमित्रविनोद और राधिका-विनास।

२ इनका दूसरा नाम काष्ठजिह्वास्वामी था। वे काशीमें रहते तथा मंभत्तके बड़े पण्डित थे। एक बार उन्होंने शास्त्रार्थमें अपने मुहको परास्त किया था जिनसे इन्हें बड़ा कष्ट हुआ। तभीसे इन्होंने काष्ठकी जोभ बना कर मुंहमें डाल ली। वे पाठो पर लिपि कर लोगोंने धातुघोत किया करते थे। काशीनरैग महाराज ईश्वरो-नारायणसिंहने इनमें उपदेश किया था। इन्होंने 'विभया गत' पादि अनेक भाषाओं ग्रन्थ बनाये हैं।

देवचंगी (गि० वि०) जो देवताएं चंगमे उत्पन्न हो। देवराज (मं० पु०) देवतापोंधि जिये कर्त्ता, यज्ञादि। देवस्यम (मं० पु०) देवयामो षष्ठमयेति नित्यकर्मका प्रकृतियह्वावः। धर्मकी स्त्री आनुगमं जान पुत्र, वे कश्यपकी कन्या थीं।

देवस्यि (मं० पु०) देवतां स्वयिः सृज्यताम् प्रकृति-यह्वावः। देवर्षि नारदादि। नारद, अत्रि, मरीचि, भर-दाज, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, अगु इत्यादि ऋषि देवर्षि माने जाते हैं।

देवक (मं० पु०) १ एक यदुक गोत्र राजा। ये श्रीकृष्णके मातामह थे। इन्होंने गन्धर्वपतिसे पंगायतार रूपमें जन्म ग्रहण किया था। इनके चार पुत्र और सात कन्याएँ थीं जिनका विवाह वसुदेवके साथ हुआ था। लघुसेन इनके बड़े भाई थे। २ युधिष्ठिरके एक पुत्रका नाम। ३ देव, देवता।

देवक—एक हिन्दी-कवि। सूर्यमल नामक कविने इनका नाम अपने १८८० सं०में बनाये हुए ग्रन्थमें लिखा है। इससे प्रकट होता है कि वे सं० १८८० में विद्यमान थे। देवकन्या (मं० स्त्री०) देवताकी स्त्री, देवी।

देवकपाम (हिं० स्त्री०) रामरूपाम, नरामा, मनमा।

देवकर्ण—१८५० ई०में जो सिपाहो-विद्रोह हुआ था, उसमें देवकर्ण चंगरेज गवर्मेण्टके विपक्षमें थे। इन्होंने चेठा और यवसे मयूरमें चारों ओर विद्रोहको आग धधकाने लगी थी। ५ चत्तूरकी चंगरेसे मजिस्ट्रेट साहब सेना सामन्त लेकर मयूरा पर चढ़ाई करनेके लिये पहुँच गये। विद्रोही-सेनापति देवकर्ण मजिस्ट्रेटमें कैद कर लिये गये। पोलि कर्नल कटनर मयूरसे भीतर जा कर विद्रोहियोंकी सार्वजन्य देते हुए आगो तक चले गये। तभीसे मयूरमें और कोई गड़बड़ न मची।

देवकदंभ (मं० पु०) देवमियः कदंभ इव। सुगन्धि द्रव्यविशेष। यह चन्दन, अगर, कपूर और केशरकी एकम मिलावसे बनता है।

देवकर्म (मं० पु०) वह कर्म जिसमें देवता प्रसन्न किये जाय।

देवकलि-रागिणी विशेष। इसका नामान्तर देवगिरि है। देवगिरि देखो।

देवकवि—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने १८८० सं०में रागमाला नामक एक पुस्तक लिखी है जिसमें इन्होंने अमीरखाँकी अपनी आश्रयदाता बतलाया है।

देवकांडर (हिं० स्त्री०) एक बहुत छोटी पीछा। इनकी पत्तियों और डंडोंमें रस्सीकी-सी भान होती है। यह खड़े करारों बाँतो यही मदीयों किनारे पाई जाती है। पत्तियाँ कटावदार और फाँसोंमें विभक्त होती हैं। छमरी इन्हें गिलहरी बैठानेमें यह पोषा बहुत उपयोगी है।

देवकावशा (मं० स्त्री०) देवकस्य पावना कन्या। देवकी।

शक्ति द्वारा प्रवर्तित हो जाती है। सुतरां परिणाम स्वभाव बुद्धिसत्त्व वा अन्तःकरण पदार्थ दृश्य और तत्त्व-सन्निविष्ट अवस्थाओं में चित्प्रवृत्ति उसको दृष्टा है।

दृश्य और दृष्टा इन दोनोंका जो संयोग है अर्थात् ये दोनों को एक ही भावसे गटे हुए है, वहीं संसारो जीवों के दुःखसमूहका मूल है। "प्रकाशक्रियास्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्मकं भोगावगोचरं दृश्यं" (पात० २।१८) प्रकाश स्वभाव सत्त्व, क्रियात्मक रजः, दोनोंका प्रतिरोधक अचल स्वभाव तम, एतत् क्रियात्मकः भूत और इन्द्रिय ये सब दृश्य हैं। पुरुष भिन्न परिदृश्य जगत्में जो कुछ दृष्टि-गोचर होते हैं, वही दृश्य है। ये सभी पुरुषके भोग और अपवर्ग प्रदानके लिये उद्यत हैं। सत्त्व, रज और तम यह गुणत्रयात्मक प्रकृति और तदुत्पन्न जो कुछ भूत भौतिक हैं, सभी पुरुषके भोग और अपवर्गके कारण हैं। यह दृश्य परिवर्धकी भोग और विविधीके मोक्ष प्रदानके लिये उद्यत है। इसका विशेष विवरण प्रकृति चर्चमें देखो। (पु०) ५ देखनेकी शक्त, नदोंका विषय, बाँझोंके सामनेका पदार्थ। ६ दृष्टिके सामनेका मनोरञ्जक व्यापार, तमाशा। ७ अभिनय द्वारा दर्शकोंको दिखाये जानिका काव्य, नाटक। ८ गणितमें ज्ञात वा दो हुई संख्या।

दृश्यकाव्य (सं० ह्री०) काव्यविशेष, जो काव्य नाट्य-शास्त्रमें नट लोगोंसे दिखलाया जाता है, उसे दृश्यकाव्य कहते हैं।

काव्य दो प्रकारका है—दृश्य और अदृश्य। जो अभिनीत होता है, उसे दृश्यकाव्य कहते हैं। इसे जन-साधारण नाटक कहते हैं, किन्तु साहित्यदर्पण आदि भक्तिकार शास्त्रोंके मतानुसार नाटक दृश्यकाव्यका एक भेद मात्र है।

नाट्यशास्त्रमें नट लोग जो जो मुद्रा अभिनय करते हैं, वे सभी दृश्यकाव्यके अन्तर्गत हैं। जो नाट्यशास्त्र दृश्यकाव्यका प्रापञ्चरूप है, उसे भरत मुनिने बनाया था। कहते हैं, कि उन्होंने यह ब्रह्मसे सोच कर गन्धर्व और अप्सराओंको सिखलाया था। धीरे धीरे यह प्रचलित हो गया। दृश्यकाव्य दो भागोंमें विभक्त है, रूपक और उपरूपक। इनमेंसे रूपकके दृश्य और उपरूपकके अदृश्य भेद हैं।

नाटक, प्रकरण, भाण, वार्तायोग, समयकार, डिम, ईहामृग, भट्ट, वीर्य और प्रहसन ये दृश्य रूपक हैं तथा नाटिका, वोटक, गोटी, रुटका, नाट्यरामक, प्रस्थान, उल्लास्य, काव्य, प्रहण, रासक, संलापक, योगदत्त, शिष्यक, विलासिका, दुर्भिक्षिका, पञ्चरङ्गिका, हस्तीय और भाणिका ये अदृश्य उपरूपक हैं।

दृश्यकाव्यमें नाटक सबसे प्रधान है। इसका मुख्य योगात्मक विवरणसे लिया जाता है तथा कुछ अंग कपोल-कल्पित रहता है। इसका नायक दुष्मन्त सरीला राजा, रासचन्द्र सरीला बलौकिक चमतामम्पन्न और शोण्डण्य सरीला देवता होगा। शृङ्गार वा वीररस इसका प्रधान वर्णनीय विषय रहेगा। अभिज्ञान-शाकुन्तल, सुद्रागधर, वैद्योन्मत्त, अन्तर्वासिष्ठ आदि अन्य नाटक-यैशोभुक्त हैं। प्रकरणका लक्षण नाटकके जैसा है, केवल इसके अन्तर्गत समाजको प्रकृति और प्रेम-विषयका वर्णन रहेगा। प्रकरण दो अंगोंमें विभक्त है, गृह और सहोष। गृहप्रकरणका नायिका वेश्या और सहोष प्रकरणकी नायिका किसी भद्रवर्गकी प्रतिपत्ति-प्रतिष्ठा कामिनी वा सहचरी होगी। प्रकरणका नायक नाटकके जैसा उक्त यैशोभुक्त नहीं रहेगा, इसका नायक मन्त्री, ब्राह्मण वा चमत्कान्तवाणक होगा। मृच्छकटिक, मानतोमाधव आदि प्रकरण लक्षणान्तर हैं। भाण यह एक चरित्र सम्पूर्ण होगा, इसका भाषा विशुद्ध होगी, प्रारम्भ और शेषमें सज्जित रहेगा। नाट्यका केवल नायक ही अभिनय कोड़ा करेगा। उसे रङ्गभूमिमें आ कर नाना स्वर और नाना भावभङ्गों द्वारा विविध व्यक्तियोंको सम्बोधन कर सम्बन्धनोंको मनोरञ्जन करना होगा। लालामधुर और सारदातिलक नामक अन्य भाणयैशोभुक्त हैं।

वार्तायोग यह भी एक चरित्र सम्पूर्ण है। युद्ध-वर्णन इसका उद्देश्य है, प्रेम और उद्वेगको वर्णन इसमें नहीं है। इसका नायक बलौकिक चमतामम्पन्न पुरुष होगा। जामदग्न्यजय, सौगन्धिकाहरण, चमत्कव्यविजय आदि संस्कृत अन्य व्यायोगमें गिने जाते हैं।

समयकार तीन अङ्गोंमें सम्पूर्ण होता है। देवता और पशुरोंका सुदृश्यन इसका प्रधान वर्णनीय विषय

देवकार्य (सं० स्तो०) देवप्रियार्थं कार्यं। देवप्रियार्थं होम पूजादि कार्य, देवताओंको प्रसन्न करनेके लिये किया हुआ काम।

देवकालो—तिरहुत जिलेमें सोतामारो रास्तेके ऊपर अवस्थित एक ग्राम। यहां कई एक बड़े मन्दिर हैं जिनमें एक शिवलिंग प्रतिष्ठित है। फावगुन मासमें दस दिवस-लिंग पर जल चढ़ानेके लिये बहुतसे लोग समागम होते हैं।

देवकाष्ठ (सं० स्तो०) देवप्रियं काष्ठं। देवदार, देवदार। इसका पर्याय—भूतिकाष्ठ, मद्रकाष्ठ, सुकाष्ठक, सिन्धुदारुक और काष्ठदारुक है। इसका गुण—तिक्त, उष्ण, वक्ष, श्लेष्म और वायुनाशक है।

देवकिरि (सं० स्त्री०) देवं मेघं किरतोति कृ-क गौरादित्वात् कृप्। एक रागिणी जो भेषरागकी भावो-मानी जाती है।

देवकिलिख (सं० स्तो०) देवेन कृतं किंविषं अमिष्ट-कर्म, देवकृत-अमिष्ट कार्य।

देवकी (सं० स्तो०) देवक-डोय्। देवकी की कन्या, वसु-देवकी स्त्री। पर्याय—देवकी, लण्णजननी और देवका-कन्या। जब वसुदेवकी साय इनका विवाह हुआ, तब नारदने पाकर मधु राक्षस, राजा कंससे कहा, 'मधु राक्षस जो तुम्हारी चचेरी बहन देवकी है उसके पाठसे गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होगा वही तुम्हारा वध करेगा। अतः तुम अभीसे सावधान हो जाओ।' इतना कहकर नारद चल दिये। कंसने क्रोधसे अधिक, होकर अपने पालीय तथा सचिवोंसे कहा, 'तुम लोग देवकीका गर्भ नष्ट करनेमें सावधान रहना, एक एक करके देवकीके सब गर्भ नष्ट कर देना। देवकी विषमस्त इन्द्रसे स्नेहानुसार हमारे अन्तःपुरमें रहे और अन्तःपुरकी स्त्रियां, उसकी अच्छी तरह सेवा सुखदा करती रहे।' कंसने एका एक करके देवकीके सब बच्चोंको मरवा डाला। जब सातवां प्रिय-गर्भमें आया, तब योगमाया ने अपनी शक्तिसे उस शिशुको देवकीके गर्भमें छिप कर रोहिणीके गर्भमें कर दिया। इधर तो यह तथामा होने लगी कि देवकीका सातवां गर्भ मर चुका होगा। इसी बीच देवकीको पाठसे गर्भका पहरा हुआ। इस समय उस पर कड़ा पहरा, बैठाया-

गया। समय पूरा भी न होने पाया था, कि देवकीके गर्भसे आठवें मासमें हो भादो वदी अष्टमीकी रातको श्रीलण्णका जन्म हुआ। उसी रातको यशोदाके एक कन्या उत्पन्न हुई। वसुदेव रातों रात देवकीके शिशु श्रीलण्ण-की गोदमें लेकर यशोदाके पास दे भाये और यशोदा-की कन्याको लाकर उन्होंने देवकीके पास सुला दिया। बाद वसुदेवने कंसके पास जा कर कहा, कि उन्हें एक कन्या उत्पन्न हुई है। यह सुनकर कंसने उस कन्याको ले कर ज्यों ही पथर पर पटकनेकी था, त्योंही वह कन्या जो योगमाया हो उसके हाथसे छूट कर ऊपरसे बोली, 'तू इस पापसे बहुत जल्द नष्ट हो जायेगा।' इतना कह कर वह धाकाय-भागसे उड़ कर, विन्ध्यपर्वत पर चला बैठे। पीछे लण्णने कंसका वध कर देवकी और वसु-देवकी उद्धार किया। देवकी और वसुदेव पूर्वजन्ममें क्रमशः पृथ्वी और सुतपा नामसे प्रसिद्ध थे। भगवान्की वरसे उन्होंने प्रदिति और कश्यप हो कर वामनरूपो भगवान्को पुत्र रूपमें प्राप्त किया। प्रदितिनने जब कश्यप-की वरुणकी गाय लौटा देनेसे रोका था, तब वरुणाके आपसे मांगुपे योनिमें उनका जन्म हुआ और वे देवकी नामसे प्रसिद्ध हुए। वसुदेव, लण्ण और कंस देखो।

मधुर में इनकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। दर्शन करनेसे सब प्रकारके पाप जाते रहते हैं। (पराण)।

देवकीनन्दन (सं० पु०) देवक्याः नन्दनः ६-तम्। वसु-देवकी स्त्री देवकीकी पुत्र श्रीलण्ण।

देवकीनन्दन—१ एक हिन्दी-कवि। इनकी निम्नी नाट्यकार्योंमें होतो धी तथा इन्होंने जयनरसिंहको, होलीखोगी और चतुर्दान नामक ग्रन्थ लिखे।

२ हिन्दीके एक कवि-। इनका जन्म संवत् १८१८ में सुजफरपुरमें हुआ था। २४ वर्षकी अवस्था तक ये सुजफरपुर-तथा गया जिलेमें रहे और इसके पीछे ये काशमें रहने लगे। इन्होंने कंगलोंकी अच्छी धैर की थी। अपने देखे हुए स्थानों तथा जंगलोंका वर्णन इन्होंने अपने उपन्यासोंमें बखूब किया है। इनके बनाये हुए चन्द्रकान्ता, चन्द्रकान्तासन्तति, नरेन्द्रमोहनी, कुसुम-कुमारो, वीरेन्द्रवीर, काजरकी कोठरी आदि उपन्यास परम लोकप्रिय तथा मनोहर हैं। इनके उपन्यास-पेसे

रीयक है कि बहुतसे लोगो'ने उन्हें पढ़ कर जो हिन्दी मोथो । इन्होंने पठित साधवप्रसादके सम्पादकत्वमें गुटान नामक एक पञ्चम भाषिकपत्र भी निकाला था, पर वह बन्द हो गया । इनकी भाषा बहुत सरल होती है और वह मनोहर भी है । इनका जन्म ही परमेश्वर नाम हुआ है ।

१ कनोजमें एक मोनको दूरो पर मकरन्द नाम नामक घाममें कविभूषण देवकीनन्दनका जन्म मं० १८०१ में हुआ था । इनके पिताका नाम था सुपौरो शुक्ल देवकीनन्दनजी अवधूतसिंह रहामल जिला हर-दोईके यहां रहते थे । इन्होंने गृह्यारचरित और अवधूत-भूषण नामक ग्रन्थ यथाक्रम मं० १८४१ और १८५०में लिखे । प्रथमोक्त पुस्तकमें नायक तथा नायिकाका भेद, मायादि, नाव, गुण, अनुवास और अनङ्कारका वर्णन है । यह ग्रन्थ अच्छा तथा इनकी भाषा सज्जन है । चर्ल-कार विभाग प्रायः दोहेमें कहा गया है । इनकी कवितामें दो एक जगह कूट भी पाये जाते हैं । शिष्योक्त अवधूत-भूषण नामक पुस्तकमें कवि तथा राज्यशका पूरा वर्णन किया गया है । तदनन्तर अर्धालङ्कार एवं शब्दानङ्कार-का खोरा है । देवकीनन्दनकी कविता सराहनीय है । उसमें ऊँचे भाव बहुतायतसे आए हैं । काव्यांगिका चम-त्कार इन कविने अच्छा दियाया है और पाठकोको विचारशक्ति भी पैरो फरमेका समाना छन्दोंमें रखा है । इनका अनेक अङ्गट कविताओंमेंसे एक उदाहरणार्थ नीचे देते हैं,—

“मोहितकी माछ तोरि' और सब पीरि डारे
फेरि है न बौहो झालो धुःख विचारै हैं ।
देवकीनन्दन कहै योखे गाल बौवनके
अच्छे प्रसून मोनि नाचि निरबारे हैं ।
मानि सुख बन्द भाव चोच दई अवरन
तीनों बे निङ्गन मैं एकै तार तारे हैं ।
और और कोल मराठ मनबारे वैसे
मारे मन्बारे त्यों बचारे मनबारे हैं ॥”

देवकीनन्दन कविराज—एक प्रसिद्ध वैष्णव गुरुकार ।
इन्होंने पाचार्यचिन्तामणि, एकादशीव्रतनिर्णय, चरित-
चिन्तामणि, नामरत्नविषय, कालबोध, रक्षाभिषेक मंत्र-

काव्य और वैष्णवामाधान आदि संस्कृत ग्रन्थ प्रचलन
किये हैं ।

देवकीनन्दन शुक्ल—एक सुप्रसिद्ध हिन्दोकवि । ये मकर-
न्दपुर जिला कागपुरके रहनेवाले हैं । इनका जन्म मं०
१८००में हुआ था । इनकी कविता सरल और मनोहर
होती थी । इनके और दो भाई थे, ये तीनों की कविता
कार्त्तिकमें पढ़े विषय थे । इनका बनाया “नक्षत्रिक”
नामक एक ग्रन्थ है ।

देवकीपुत्र (मं० पु०) १ देवकीनन्दन शीलपू । २ पुत्र
यज्ञदग्न विषयमें और नामक पाश्चिमासे ग्रन्थ लक्ष ।
इनकी माताका नाम भी देवकी था ।

देवकीमाछ (मं० पु०) देवकी माता यस्य । समाना-
विधिरनित्यत्वात् न कपः । शीलपू ।

देवकीय (मं० त्रि०) देवसेई गहादित्वात् क । देव मन्त्र-
धीय, देवताका ।

देवकीर्त्ति—१ एक प्राचीन संस्कृतके ज्योतिषी । भट्टो-
त्पन्नने इनका मत बहुत किया है । २ वर्षदेग्ना नामक
संस्कृत ब्राह्मणके रचयिता । रायसुकुने इनकी
कथा बहुत की है ।

देवकुण्डक (मं० पु०) सुनिषक्त शास्त्रभेद, एक प्रकार-
का साग ।

देवकुण्ड (मं० स्त्री०) देवज्ञतं कुण्ड । १ वह जनाग्रय
जो किसी देवताके निकट था नाम पर होनेके कारण
पवित्र माना जाता है । २ मातृकिक जनाग्रय, वह गङ्गा
या ताल जो पापसे पाप बन गया हो ।

देवकुलुभ्यक (मं० पु०) महाद्रोषपुत्र ।

देवकुम्भ (मं० पु०) स्वनामख्यात वृचविशेष, तुम्बा ।

देवकुम्भ (मं० पु०) लङ्गूरोपके छह गण्डोमेंसे एक कुम्भ ।
यह समुद्र और निषधके बीच माना गया है ।

देवकुम्भवा (मं० स्त्री०) महाद्रोषी, बड़ा गुमा ।

देवकुम्भ (मं० स्त्री०) देवाय कोलतीति कुम्भ संज्ञाते क ।

१ देवपुत्रभेद, एक प्रकारका देवमन्दिर त्रिमूर्ति द्वारा
प्राप्यता होता है । देवार्वा कुम्भ । २ देवताओंका मं० ।

३ देवताममूह ।

देवकुम्भा—प्रभावशाली पवित्र नदी ।

देवकुम्भा (मं० स्त्री०) देवकुम्भा कुम्भा पञ्चसरित् । १ देव-

जैसा है। 'हमोश'—इसमें पाद्योपान्त सहित और नृत्य रहता है। आजकल इसे 'थेपेर' कह सकते हैं। यह एक भङ्गमें समाप्त होता है। एक पुरुष और ८-१० स्त्रियोंमें यह स्वरूपक खेला जाता है। केनिरैयतक नामक संस्कृत ग्रन्थ इसी खेलोका है। भाषिका एक भङ्गमें सम्पूर्ण होता है और छात्सरससे परिपूर्ण है। कामदत्ता नामक संस्कृत ग्रन्थ इसकी लक्षणान्तात् है।

संस्कृत दृष्टकाव्योंमें यही सब लक्षण पाये जाते थे। नाटक-रचनामें भाषादिका भी विशेष नियम था। नाटक भङ्ग और गभोङ्गमें विभक्त है। नाटोक्तिरहित व्यक्तियोंमें नान्दी, विदूषक, सूत्रधार, पंरिपाक्षिक और नट नटोंका उल्लेख रहता। पुरुषोंको भाषा संस्कृत और स्त्रियोंकी प्राकृत भाषामें अधोपकरण होना आवश्यक है। ये सब विषय साहित्यदर्पणमें इस प्रकार लिखे हैं। उच्च-पदस्थ पण्डितोंकी वल्लभ भाषा संस्कृतमें होगी। इसी प्रकार स्त्रियोंके विषयमें औरसेनी एवं गाथा भङ्गमें सम्पूर्ण होता है और छात्सरससे परिपूर्ण होता है। सम्पर्कमें महाराष्ट्री भाषा प्रयुक्त होगी। राज-भन्ता-पुर-चारियोंकी भाषा मागधी होगी और राजपुत्र, राज-परिचारक तथा श्रेष्ठियोंके सम्पर्कमें भद्रमागधी। विदूषकके लिए प्राच्य, धूर्तके लिए अवन्तिका और योद्धा तथा नागर आदिके लिए दाक्षिणात्य भाषाका प्रयोग करना उचित है। शकार आदि अन्त्याज जातिके लिए शकारो, बाह्योके लिये बाह्योकी, दाविडुके लिए दाविडुकी, आभीर देशीयके लिये आभीरो, पञ्चव और समी प्रकारको जातिके लिये आण्डाणी रीतिकी भाषा व्यवहार्य है। काठवा, टण-पर्णादिस्त्रीको व्यक्तिके विषयमें आभीरो वा आण्डाणी तथा पञ्चरकारक नीच व्यवसायियोंकी भी यही भाषा प्राप्य है। कुलितवाक् मूर्खोंके लिए पैशाचो और उच्च-पदाभिप्रेत चेट और भेटियोंके लिए गोरसेनी व्यवहार्य है। बाह्यक, सम्भक्त, पण्ड और आचर्य व्यक्तियोंकी औरसेनी और कहीं कहीं संस्कृतका व्यवहार करना भी कर्त्तव्य है। ऐश्वर्यमय मत्त एवं दरिद्र मिथु आदिके लिये प्राकृत भाषाका प्रयोग करना आवश्यक है। उच्चमागध व्यक्तिके, कपट-संन्यासो आदि, देवी, मन्त्रिकन्या और

वैद्या इन सबके लिए संस्कृत भाषा उपयुक्त है। यदि किसी दूधरी भाषाका भी प्रयोग हो, तो कोई दोष नहीं। स्त्री, सखी, बालक, धूर्त, वैद्या और पक्षपातियोंकी अपनी भाषा व्यवहार करते समय बीच बीचमें अपनी पुरुराई दिखानेके लिए संस्कृतका भी प्रयोग करना चाहिये। (साहित्यदर्पण)

विशेष विवरण नाटक और तत्तत् सन्दर्भमें देखो। दृष्टमान (सं० त्रि०) १ जो दिखाने पड़ रहा हो। २ चमकीला, सुन्दर।

दृष्टादृष्ट (सं० त्रि०) दृष्टाक्ष अदृष्टाक्ष इत्यसं। दृष्टा और अदृष्ट।

दृष्टादृष्टा (सं० स्त्री०) १ किसी अंशमें दृष्ट चन्द्र और किसी अंशमें अदृष्ट चन्द्र। २ तदभिमानो देवतामिद। ये चङ्गिराको तीसरी कन्या हैं।

दृष्टन् (सं० त्रि०) दृष्ट-न लिपि। दर्शक, देखनेवाला।

दृष्टव् (सं० स्त्री०) दृष्ट-व रेडो।

दृष्टार (सं० स्त्री०) दृष्ट-दः पापाणस्य सार इव सारो यस्य। सुण्डास्य।

दृष्टद् (सं० स्त्री०) दीर्घसं भवौ इति द-भादिपुग-कृतस्य (हणादेः पुग-कृतस्य। उण्. १।१३१) १ पापाण, पर्वतको चटान। २ सिल, पट्टो। ३ प्रसार, प्रत्यार।

दृष्टदिमायक (सं० पुं०) मायः शक्तत्वेन द्रोयते कन् दृष्टदि पीपण, व्यवहारो राज्ञो देवः मायकः अलुक् समानः। पीपण व्यवहारमें राजदेव मायरूप कर, एक प्रकारका कर जो पत्थरके व्यवसायमें राजाको दिया जाता है।

दृष्टव् (सं० त्रि०) दृष्ट-दः सम्प्राप्तिन् भूम्ना मनुष्य-मस्य वः। १ दृष्टदुष्कृत, मिलायुक्त। (पुं०) २ एक राजाका नाम।

दृष्टवती (सं० स्त्री०) दृष्टवत् स्त्रियां डोप. १ एक नदीका नाम। सरस्वती और दृष्टवती ये दोनों देवनद्यां हैं और इनका मध्यस्थान ब्रह्मवर्च नामसे प्रसिद्ध है।

कुश्चेतनमें यह नदी प्रवाहित है। भट्टक-पंडिताके अनुसार यह पुण्ड्रसलिला नामसे मगधर है। महाभारतमें इसकी गिनती महातापोंमें की गई है। इसे आजकल चम्बर और राखी कहते हैं। यह यानेश्वरसे १३ मील दक्षिणमें प्रवाहित है। कुश्चेत-देवी। २ विश्वामित्रकी एक पत्नीका नाम। (त्रि०) ३ पर्योनी।

नदी गङ्गा । २ मरोचि और पूर्णमासी कन्या ।
देवकुसुम (सं० स्त्री०) देवप्रियं कुसुमं पुष्पं यस्य ।
सुवङ्ग, लोण ।

देवकूट (सं० स्त्री०) १ शशिष्ठाथम सचिकटस्थित आथम
भेद, एक पवित्र आथम जो शशिष्ठके आथमके निकट
था । २ मेरुके पूर्व स्थित एक पर्वत ।

देवकृष्ण—हिन्दीके एक कवि । इनकी कविता सराहनीय
होती थी । उदाहरणार्थ एक नोचे देते हैं—

‘द्वारे द्वारे किरें नहीं सुष राम भजनकी ।

औरनकी उपदेश करत है अरे सुषन रही तनमनकी ॥

लोभ ग्रस्मो रहत निशि बाधर जाया लागी है धनकी ।

देवकृष्ण प्रभुको स्मरण कर छे गैल गही श्रीहृन्दावनकी ॥’

देवकोटर (सं० पुं०) सुर पुत्राग, एक प्रकारका पुत्राग ।

देवकोट—दिनाजपुरके भन्तर्गत एक प्राचीन नगर । मह-
म्मद-ई-बख्तियारके गौह आक्रमणके बाद कुछ दिनों तक
इन्होंने यहाँ राजधानी बनाई थी । इसी स्थानमें ६०२
हिजरीकी अलीमदेनने उन्हें मार डाला था । इमदमेके
निकट गझारामपुरमें जो ध्वंसावशेष है, वहीँ श्लोकस्थान
साक्ष्यके मतानुसार प्राचीन देवकोट अवस्थित था । अभी
भी इसके निकटवर्ती समस्त स्थान देवकोट परगनेके
अधीन हैं ।

देवचक्र (सं० स्त्री०) देवानां चक्रं चलं यत्र । यत्र ।

देवचैत्र (सं० स्त्री०) देवानां चैत्रं । १ देवताओंका चैत्र,
पुण्यस्थान । २ चक्र ।

देवधेम (सं० पुं०) विधानकाय नामक ग्रन्थके रचयिता ।

देवधात (सं० स्त्री०) देवेन धातं, अक्षतिमत्वाद्ध्यतयात् ।

देवधातक, अक्षतिम जलाशय, ऐसा ताल या गड्ढा जो
आपसे आप बन गया हो । मनुने लिखा है, कि नदी,
देवधात, तद्भाग, सरोवर, गर्भ और प्रसवस्थमें नित्यस्थान
करना चाहिये ।

देवधातक (सं० पुं० स्त्री०) देवधातमेव धातु-कन् ।

१ अक्षतिम जलाशय । इसका पर्याय—पाखात, धात
और देवनिर्मित है । २ गुहा, कन्दरा ।

देवधातविल (सं० स्त्री०) देवधातं अक्षतिमं विलं नित्य-
कर्म धा० । गुहा, कन्दरा ।

देवगङ्गा—पासाममें प्रवाहित एक नदी । इसका अन्त-
काम नाम दिवङ्ग है ।

देवगढ़—१ बम्बई प्रदेशके पछोन रत्नगिरि जिलेके भन्त-
र्गत एक उपविभाग । यह भचा० १६° ११' से १६° २५'
३०' और देशा० ७३° १८' से ७३° ५७' ५०'में अवस्थित
है । भूपरिमाण ३२५ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः
१४३०५० है । इसमें ११८ ग्राम लगते हैं । इस उप-
विभागके मध्य देवगढ़ नगर समुद्र तौरवर्ती एक सुन्दर
बन्दर है । यहाँ दुर्गका एक भग्नावशेष है । प्रायः ठाई
और वष पहले महाराष्ट्र दक्षिणसे यह दुर्ग निर्माण किया
है । १८८२ ई०में वार्मल होमलकसे अङ्गिरा पकड़े
गये । १८७५ ई०में खैरापत्तनसे मक्कामा उठा कर यहाँ
लाया गया ।

२ उक्त उपविभागका एक बन्दर । यह भचा० १६°
२३' ३०' और देशा० ७३° २२' ५०' बम्बईसे १८० मील-
की दूरी पर अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः १०२१ है ।
पानोकी गहराई १८ फुट है ।

३ बम्बईके जखोरा राज्यका एक ग्राम । यह ओ-
वईनसे १ मील दक्षिणमें अवस्थित है । लोकसंख्या लग-
भग १११० है । यहाँ कालभंरवका एक मन्दिर है जहाँ
जानेसे भूत प्रेतसे ग्रसित प्रभुष अर्घ्य हो जाते हैं ।
महाशिवरात्रि और कार्तिक शुद्धके उपलक्षमें यथाक्रम
फरवरी और नवम्बर महीनेमें दो मेले लगते हैं ।

देवगढ़ो (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी ईप ।

देवगण (सं० पुं०) देवानां गणः इ-तत् । १ देवसमूह ।

२ नक्षत्रभेद । ३ देवपक्ष । ४ देवानुचरादि, किसी देवता-
का अनुचर ।

देवगणग्रह (सं० पुं०) सुश्रुतोक्त देवादि गणरूप ग्रह ।
देवग्रन्थ विषय सम्भावके होते हैं, इसीसे ये ग्रह नहीं
हो सकते । अतः देवगण देवग्रह मानी गये हैं । इस-
का विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—

रोगोके किया-शुद्धता, विषमता, अमानुषिकता और
सहिष्णुता होनेसे उसे ग्रह कहते हैं । भंसंख्यग्रह और
प्रहायिपतिगण अशुचि, अमर्यादक, अत वा अचत लोको-
के हिंसाकारी हैं । ये सब्हार पानेकी पमिलायासे धर
उपर भ्रमण करते हैं । ये ग्रहगण भिन्न भिन्न आकारके
होते हैं और पाठ भागमें विभक्त हैं । देव, अमर, गन्धर्व
यक्ष, पित्र, रक्ष, सुगन्ध और पिशाच, ये ही पाठ प्रकार हैं ।

मन्त्र, धर्म, संस्कार, मन्त्र, तन्त्राद्यो, विग्रह, मन्त्रमायी, मन्त्रो, स्त्रिष्टि, वरदाता, मन्त्रिणा, मीस ये सब देवपदाविष्ट के मन्त्र, पौर, धर्मा, दिग, गुह तथा देवनिन्द, कुटिलनेत्र, निर्मय, विषम दृष्टि, पचवाने पचमुष्ट पौर दुष्टवृद्धि ये सब पचुरपदाविष्ट के मन्त्र हैं।

जिन प्रकार द्यौपादिमें जाया, प्राणियोंकी देहमें जीतीया, मृगकालामणिमें धूपरसि और देहमें जीव पचपित मायसे प्रवेश करना है, वदगण भी उसी प्रकार प्ररोहके मध्य प्रवेश करते हैं। देवपद गोचरमासी तिथिमें पाविष्ट होते हैं। यद्यपि जो देवगणभूत हैं उनमें देवताकी मत्ता रहनेके कारण ये देवपद कहलाते हैं। उन सब शक्तिमान् देवपदोंको देवताके समान नमस्कार और प्रार्थना करनी चाहिये।

किन्तु ये सब देवपद, दिव्यभाव धारण कर हिंसाके लिए विचार करते हैं, इसीसे दहने भूत भी कहते हैं। इनकी शान्तिके लिए यकाश्चिन्ना हो कर जप, होम पादि क्रियाओंका अनुष्ठान करना होता है।

उन सब पदोंकी रक्षण गन्धमाल्य, सम प्रकारके भस्म, द्रव्य, यक्ष, मद्य, सोम, रक्त, पादि जिनका जो पशुपित पदार्थ है, उन्हें दही दे। जो टिवाभागमें मनुष्यकी हिंसा करते हैं, उन्हें दिव्यभागमें ही मत्तिप्रदान करें। देवपद होनेसे देवताके रहनेमें होम करके बलिदान देना होता है। देवपदकी जगह किमो विषयका पशुपदसे प्रयोग न करें, नहीं तो वह पद क्रुद्ध हो कर वैद्य और प्रातुर दोनोको हो मार डालता है।

(सुष्ठु, उत्तरतम, १० अ०)

देवगणदेव—एक प्राचीन संस्कृत कवि।

देवमणिका (सं० श्री०) शर्वेश्वर, कृष्ण।

देवपति (सं० श्री०) १. मरनेके उपरान्त उत्तमगति, स्वर्गनाम। २. मरने पर देवयोगिकी प्राप्ति।

देवगन्ध (सं० श्री०) रोहिण्यक्ष, रोहिण नामकी घास

देवगन्धर्व (सं० पु०) देवगान् गन्धर्व, दत्त। देवताधर्म

के निकट मान करनेवाला गन्धर्व।

देवगन्धा (सं० श्री०) देवमित्री गन्धी यक्षा, रुद्रमिन्द्र।

देवगन्धर्व (सं० पु०) देवगान् गन्धी यक्ष, देवदत्त गन्धर्व, देवगान्

यक्ष मनुष्य जो देवताके गोचरमें लपकती है। (श्री०)

२. कुशलोयकी एक बढोका नाम। (भागवत ११.१२२)

देवगाय—युद्धपदेगर्क यात्रीमगद जिनेकी एक तरहकी।

यक्ष घन्ता १५ ३० से २५ ५० ३० तथा देगा २२ ४८ से २१ २१ ५० में पचव्यति है। भूपरिमाण

३८८ घन्तीस और मोहनरत्ना मगमग २४८५१ है।

यक्ष तहसोन देवगाय, धनदोस्त, पाट और धनहावा से

कर संगठित है। इसमें ७०२ घन्ता लगते हैं, महर एक

भी नहीं है। यहाँको पाय २५१००० है। यहाँकी प्रधान

नदियां मगनी, बेस, पौर गापी है।

देवगाभार (सं० पु०) देवप्रियः देवयोग्योक्त गाभारः।

एक रागरा नाम। यह मेरव रागका पुत्र माना जाता

है। यह मन्त्रपूर्ण जातिका राग है। इसमें चारम

और देवत कोमल लगते हैं। इसका स्वरपाम इस प्रकार

है—ग म प ध नि म रे।

देवगाभारी (सं० श्री०) योरागकी भार्या। यह मिगिर

भूतमें तोमरे पहरने सेकर पाधी रात तक गाई जाती

है।

देवगायक (सं० पु०) गन्धर्व।

देवगायन (सं० पु०) देवगान् गायनः दत्त। गन्धर्व।

देवगिरा (सं० श्री०) देववाणी, मन्त्रत।

देवगिरि (सं० पु०) देवगान् विग्रः गिरिः। एक पहाड़का

नाम। यहाँ धर्मके देवमूर्तियाँ हैं, इसीसे उस पर्वतका

नाम ऐसा पड़ा है।

देवगिरि—हिराबाद रागके पौराबाद तातुक पौर

जिनका एक नगर पौर दुर्ग। इसीसे दोनताबाद नामसे

प्रसिद्ध है। यह घन्ता १८ ३० ३० देगा ०५ ११

पूमें पचव्यति है। मोहनरत्ना प्रायः १३५० है।

देवगिरि दुर्ग पचव्यति प्रसिद्ध है। दासिवात्यमें हिन्दू

राजाओंके समयमें यहाँ बहुतसे प्रथम पराक्रान्त राजा

वास करते थे। हिंदू की मुट लंबे कोषाकार पत्थर पर

दुर्ग का दुर्ग संगठित है। इसका बाहरी घेरा प्रायः ६४

कोष है। दुर्ग और प्राकारके मन्त्रधर्मी व्यासमें बहुतको

खाइयाँ हैं। महर फाटके भिन्ना भीतर प्रवेश होनेका

और कोई दूसरा दरवाजा नहीं है। बाहरी बाहर मोड़ों

की दूर पर २१ मुट लंबा एक विहार है। १२८४ ई. में

हरण इन दोनोंके शब्द एकसे तो नहीं है, पर कुछ प्रणिधान करके देखनेसे दोनोंकी समानता स्पष्टरूपसे मालूम हो जायेगी। यहाँ दो विषय हैं, एक सत्त्वविभूषित और दूसरा मालतीमाला। सत्त्वविभूषितकी जगह 'सविदितगण' गुण अर्थात् भयार्थि दोष नहीं होने पर भी कर्णोंमें मधुधारा खपे और दूसरा मालतीमाला इस पदमें 'घनभिगतपरिमाला' गन्धपरिष्ठात नहीं होने पर भी नेत्रहरण इन दो विषयोंकी समता यद्यपि एक ही नहीं है, तोभी प्रधान अर्थात् कुछ मनोयोगपूर्वक देखनेसे ये दोनों एकसे मालूम पड़ते हैं। इसी कारण दृष्टान्त यहाँ पर अलङ्कार हुआ। साधर्म्य और वैधर्म्य अर्थात् वैपरीत्यमें यह अलङ्कार होता है। पूर्वोक्त जो उदाहरण दिया गया, वह साधर्म्य द्वारा हुआ। अब वैधर्म्यका उदाहरण यों है—

“त्वयि दृष्टे कुरङ्गादृश्या यं सते मदनव्यापा।

दृष्टानुदयमानिभौ ग्लानिः कुमुदसं हते ॥”

(साहित्यदर्पण १० परि०)

तुम्हारे प्रकट होनेसे कुरङ्गाचोकी मदनव्यापा दूर होती है। इन्दुके उदित नहीं होने पर कुमुदमंजरीकी ग्लानि देखो जाते हैं। यहाँ पर दोनोंकी विपरीत भावसे समता हो जानेसे दृष्टान्तालङ्कार हुआ। इस लोकमें कुरङ्गाचोकी मदन व्यापाका नाम और कुमुदसं हतिकी ग्लानिका दर्शन, एकका दुःखनाम और दूसरेका दुःखदर्शन इन दो पदोंको विपरीत भावसे प्रणिधान द्वारा समता हो जानेसे दृष्टान्तालङ्कार हुआ। दृष्टान्त और प्रतिबस्तूपमा प्रायः एकसे हैं, फर्क केवल यही है, कि जहाँ एक क्रियाका उद्यक निर्देश होगा, वहाँ प्रतिबस्तूपमा अलङ्कार होगा। प्रतिबस्तूपमा देखो।

५ गौतमसूत्रोक्त पौड्य पदार्थके मध्य पदार्थभेद, व्यायके नीलव पदार्थमेंसे एक पदार्थ। व्यायके अनुसार जिस पदार्थके विषयमें लौकिक जनों और परोक्षोंका एक मत हो उसे दृष्टान्त कहते हैं। जिस प्रत्यक्ष बातकी सभी जानते या मानते हैं, वही दृष्टान्त है, “जहाँ धुंध होता है वहाँ आग होती है” इस बातको कह कर किसीने कहा “जैसे रसोई घरमें” तो यह दृष्टान्त हुआ। व्यायके अर्थमें उदाहरणके लिये इसकी कल्पना होती

है अर्थात् जिस दृष्टान्तका वायवहार तर्कमें होता है, उसे उदाहरण कहते हैं।

दृष्टान्त (सं० त्रि०) दृष्टान्त-स्वरूप गृहीत, जो उदाहरण वा मिसालमें लिया गया हो।

दृष्टार्थ (सं० त्रि०) दृष्टः अर्थो येन। १ जिसने अर्थ देखा हो। २ जिसका अर्थ स्पष्ट हो। (पु०) ३ वह शब्द जिनके व्यवहारे श्रोताको किसी ऐसे अर्थका बोध हो जिसका प्रत्यक्ष इस संसारमें होता हो। जिस तरह ‘गङ्गा’ शब्दके सुननेसे ही ऐसी नदीका बोध हो जाता है जो हिन्दुस्थानके उत्तरी भागमें प्रवृत्त देवी जाती है।

दृष्टि (सं० स्त्री०) दृश्य-भावे क्तिन्। १ दर्शन, देखनेकी शक्ति। २ दृक्पात, चक्कोकन, निगाह, टक। ३ प्रकाश। ४ चक्षुः। ५ पहचान, चटकल, चन्दाज। ६ क्षापादृष्टि, मिहरबानीको नजर। ७ ध्यान, अनुमान, विचार। ८ चायाकी दृष्टि, चास, उखोद। ९ उद्देश्य, नीयत।

दृष्टिभूत (सं० पु०) दृष्टभूत देखो।

दृष्टिक्त (सं० त्रि०) दृष्टि करोति क्तिप्, तुगागमय।

१ दर्शक, देखनेवाला। (स्त्री०) २ स्थलपद्म।

दृष्टिचप (सं० पु०) दृष्टेः चपः। दृष्टिपात, चक्कोकन।

दृष्टिगत (सं० पु०) दृष्टि गतः विषयतया प्राप्त रयतत्। १ मेधाका विषय। २ नेत्रगत रोगभेद, आँखकी एक बीमारी। (त्रि०) ३ जो दिखाई न पड़े, जो देखनेमें न आया हो।

दृष्टिगुण (सं० पु०) दृष्ट्या गुण्यते पश्यत्यते यत्र गुण सभ्यासे पच वा घञ्। १ वाषादिलक्ष्य, मोर आदिका नियाता। २ नेत्र-गुण।

दृष्टिगोचर (सं० पु०) दृष्टेर्गोचरः। नेत्रगोचर, वह जो देखनेमें आ सके।

दृष्टिधृक् (सं० पु०) राजा इत्याहुके एक पुत्रका नाम।

दृष्टिनिपात (सं० पु०) दृष्टे निपातः। दृष्टिनिःक्षेप, चक्कोकन।

दृष्टिप (सं० पु०) दृष्टिं पिवति पा-क्। देखगमभेद।

दृष्टिपय (सं० पु०) दृष्टेः पयः। दृष्टिका पय, नजरको पड़च।

दृष्टिपात (सं० पु०) दृष्टेः पातः। दृष्टिनिःक्षेप, चक्कोकन।

सुसलमानोंने सबसे पहले इस स्थान पर चाक्रमाण किया और इसी स्मरणार्थ यह मिनार बनाया गया है। अभी भी उस मिनार का कोई भाग बरबाद नहीं हुआ है। इसके शिखर पर चढ़ने से निकटवर्ती प्रदेश का दृश्य बहुत मनोरम लगता है। मिनार के पास ही बहुत प्राचीन और बड़े जैन मन्दिर का अंश अवशेष पड़ा है तथा मन्दिर के निकट चीनीमहल का खंडहर भी देखने में आता है। गोलकुण्डा के अन्तिम सुलतान अबुल होसेन (तानशा नाम से प्रसिद्ध) और द्रजिबसे इसी स्थान पर बन्दे हुए थे। इसके सिवा प्राचीन राजासाहदका भग्नावशेष पूर्व सम्झिका परिचय देता है।

जिस पहाड़ के ऊपर देवगिरि दुर्ग स्थापित है, वह प्रायः ६०० फुट ऊँचा होगा। खार्द भी लगभग ३० फुट विस्तृत होगी जिसे एक छोटे पत्थर के पुल से कर पार करते हैं।

देवगिरिमगर कब स्थापित हुआ है, इसका पता नहीं चलता है। यहाँ की यादवराजाओं के अभ्युदयकाल से देवगिरिका नाम और सम्झि भारतविख्यात हुई है।

प्रसिद्ध कलसुरी वंशका जब अधःपतन हुआ, तब इसके पास पासका आरा प्रदेश होयसल बमाल और दार सुमुद्र के यादवराजाओं के हाथ आया। इस समय उत्तर भाग एक दूसरे यादववंश के हस्तगत हुआ। उन्होंने देवगिरि में राजधानी स्थापित की। कई मिला लेखों में जो इन यादवराजाओं की वंशावली मिली है, वह इस प्रकार है—

सिंघन (१ला)

समुद्रगि

भिक्षम (शक ११०८-१११३)

जैतुगि (१ला), जैतमिह या जैतवा

(शक १११३-११३१)

सिंघन (२रा)

[सिंघ, सिंघल, सिंघन या तिसुवनमग्न]

(शक ११३१-११६८)

जैतुगि (२रा) वा चैतपाल

कल्या वा कान्दार
(११६८-११८३)

रामचन्द्र वा रामदेव
(११८३-१२३१ शक)

महादेव
(दूसरा नाम वरग साव भीम,
११८२-११८३ शक)

अभयन

शहर

(१२३१-१२३७ शक)

भीम

कल्या

(हरिपाल के साथ व्याही)

यादवराज १म सिंघन ने महाबलशाली कर्णाटक के राजाको पराजय किया। प्रवाद है, कि भिक्षम के जौने की उनसे लड़के जैतुगि धारवाड़ जिले के अन्तर्गत लक्ष्मणी नामक स्थान में होयसलराज द्वितीय बल्लाल से पराजित हुए। जैतुगि ने विजयपुर में राजधानी स्थापित की। उन्होंने त्रिकलित्वा के राजाको पराजय कर उनका राज्य अपने अधिकार में कर लिया। पीछे धारवाड़ तक इनकी राज्यसीमा फैल गई थी।

द्वितीय सिंघन के राजत्वकाल में हो देवगिरि यादवों की राजधानी कह कर प्रसिद्ध हुआ। उनके समय में ३८ मिला लेख पाये गये हैं, जिनके पढ़ने से मालूम होता है, कि उन्होंने त्रिलङ्ग कलसुरी और अन्धराजकी जीता था। उनके समय में देवगिरिका यादवराज्य बहुत बढ़ बढ़ गया था। २य सिंघन के बाद उनके पोते कल्या राजा हुए। उनके महाप्रधान वा प्रतिनिधिके सेवित मिला लेख से जाना जाता है, कि उनके पिता (यादवसेनापति) ने ३६ कोटि लक्ष कादम्ब, सुत्ती के पाण्डु और होयसलराजको पराजय कर कावेरी के किनारे जयस्थल स्थापन किया था।

द्वितीय सिंघन के बाद महादेव ने अपने यादवबल से राजसिंघासन अधिकार कर लिया। महादेव के समय देवगिरिसभामें अपने महापण्डित रहते थे, जिनमें से महापण्डित हेमाद्रि और योगदेवका नाम बहुत प्रसिद्ध है। महादेव के बाद उनके लड़के यश्वन्त के भाष्य में राज्य सम्पद बढ़ा नहीं था, इसलिये कल्या के पुत्र रामचन्द्र सिंघासन पर बैठे। उन्होंने अपने यादवबल से यशमान बम्बई प्रदेशका समस्त दक्षिण और मध्यभाग अपने कब्जे में कर लिया। १२३६ शक (१२८४ ई०) में फलाग्रहोत्सव हुआ

पद्मादीश्रीको साथ में देवगिरि पर अष्टमात् चढ़ाई कर दी। राजा जहाँ तक पहुँचे वहाँ तक पहुँचे, पर तीन मघाच तक पद्मादीश्री सुख कर चुकने के बाद जब दुर्ग के भीतर आगये घट गई, तब उन्होंने आत्मसमर्पण किया और विजिता विजिता के साथ सन्धि कर ली। यहाँ सबसे पहला समय था कि देवगिरि के यादववंश ने सुमन-मार्गों को अधीनता स्वीकार की। देवगिरिपति कर देने की बाध्य हुए। १२२८ शक में रामचन्द्र ने कर देना स्वीकार किया। उस समय पद्मादीश्री अपने बंधुओं को मार कर दिल्ली के सिंहासन पर बैठ चुके थे। उन्होंने एक भाग पद्मादीश्री के साथ मानिक कापुर को दक्षिण भेजा। इस बार भी रामचन्द्र विजुल सुमनमान-वादिनी के साथ सुख कर अधीनता स्वीकार न करें और बाध्य हो कर उन्होंने अधीनता स्वीकार कर ली। बाद में दिल्ली भेज दिये गये।

पद्मादीश्री ने सम्मानपूर्वक उन्हें फिर देवगिरि भेज दिया। तीन वर्ष के बाद जब मानिक कापुर और दुर्ग की ओतने गये थे, तब राजा रामचन्द्र ने बहुत समा-रोह में उनकी अभ्यर्चना की थी। १२२९ शक में राजा शहर ने अपने को अधीन कर कर प्रचार किया और सुमनमानराज की कर देने से स्वीकार किया। पुनः १२३४ शक में मानिक कापुर ने शहर पर आक्रमण कर दिया, शहर पराजित हुए और मार डाले गये। इस समय मानिक कापुर दक्षिण के ओर राखी में मूट पाट करने लगे। देवगिरि उनकी सदर हुआ। कुछ दिन ओतने पर जब ये दिल्ली को सुलाये गये, तब राजा रामचन्द्र के आमाता हरिपाल दक्षिणावर्त के जना स्थानों से दत्तवश में रह कर सुमनमार्गों को मार भगाया और भाव देव-गिरि के सिंहासन पर अधिकार कर बैठे। कुछ वर्ष तक उन्होंने पूरे प्रताप के साथ राज्य किया। पद्मादीश्री १२४० शक में दिल्ली के बादशाह सुबारजने मर गये था कर उन पर चढ़ाई की। यहूय्य और विष्णुसंघातकता से हरि-पाल पराजित हुए। बाद सुमनमार्ग ने उनकी मरणा-दो चला कर नगर के द्वार पर गिरा दिया। इस प्रकार यादव-राज्यों को समाप्त हुई। पीछे दिल्ली के प्रिय-पात कर एक स्थिति पद्मादीश्री देवगिरि के सिंहासन पर

बैठे। गंगानदी के पुत्र शक्यद तुलनक १२२९ ई० में दिल्ली के सिंहासन पर आरोहण हुए। इतिहास दिल्ली नगर के अस्तित्व न लगा। पतः १२३८ ई० में उन्होंने देवगिरि में राजधानी स्थापन करने का महत्त्व किया और दिल्लीवासीयों को दुर्ग दिया कि वे पति गोष्ट दिल्ली छोड़ कर देवगिरि को चले जायें। दिल्ली देवगिरि ४०० से कोस दूर था, पतः दिल्लीवासीयों को उनको दूर की याता करने में कैसा कष्ट भिन्ना पड़ा था, वह चकनोय है। सोचमति सुबारजकी बुद्धि होय है दिल्ली नगर जनगण्य और शोभत हो गया और देवगिरि की समृद्धि बहुत बढ़ गई। इस समय देवगिरि का नाम 'दोस्तताबाद' पद्मादीश्री भाग्यमायी नगर बना गया। तब-पर वासी इतन्वतुता देवगिरि को समृद्धि देय कर सुख-कण्ठ से तारोफ कर गये हैं। तुलनक-वंश के बाद देव-गिरि कुलवर्गों और विदर के बादमीवंश के शासन अधीन हुआ। १५२६ ई० तक यह स्थान बादमीवंश के अधीन रहा। पीछे देवगिरि का दुर्ग अहमद नगर के निजाम-शाही वंश के हाथ आया। उनके अधःपतन के बाद यह मुगलों के अधीन हुआ। १७०३ ई० में बोरज्जियकी शत्रु-के बाद वर्तमान निजाम-वंश के स्थापिता आमतुलने सुमनाधिकृत प्रदेशों के साथ साथ देवगिरि भी अपने अधिकार में कर लिया। यहाँ के दुर्ग में अभी केवल १०० सेन्य हैं।

देवगिरि—बारबाड़ के पश्चात् एक गण्डवाम। यह कर-जगो में तीन कोस पश्चिम में अवस्थित है, यहाँ के कादम्ब राजाओं के समय के बहुत से ताम्रशासन पाये गये हैं। एक समय यहाँ सेना की प्रधानता थी। लजनाचार्य निर्मित यहाँ का यक्षमाहा मन्दिर विख्यात है।

देवगिरि (४०० स्था०) रागिनीविशेष, एक रागिनी की कोमलरस के मत से यक्षरा राग की भावी भाती गई है। भरत के मत से ये हिन्दोस राग के पुत्र, नागजनि की सङ्गत-द्वय के मत से गङ्गापार की ओर अनुमत के मत से मात-कोय राग की भावी है। यह देवता ऋतु में दिन के चौथे घण्टे से कर आधी रात तक गाई जाती है। इसी का मत है, कि यह रागिनी मकर है और यह पूर्वी तथा मारुत के मेष के ओर फिर किसी से मत्तानुसार करती,

दृष्टिवन्ध (स० पु०) दृष्टान्त, जादू, दोखवाँदी ।
दृष्टिवन्ध (स० पु०) दृष्टिनेत्रस्य बन्धुरिव सादृश्यापाद-
नात् । खद्योत, सुगन् ।

दृष्टिमण्डल (स० श्लो०) दशन ।

दृष्टिमत् (स० वि०) दृष्टिर्विद्यते अस्य दृष्टि-मत्तुप ।

दृष्टियुक्त, जिसे दृष्टि हो ।

दृष्टियोनि (स० पु०) ईर्ष्या, शीघ्र ।

दृष्टिरोग (स० पु०) नेत्ररोग, आँखको बीमारी ।

दृष्टिरोध (स० पु०) १ दृष्टिको रोक, नजर पहुँचनेमें
रुकावट । २ व्यवधान, बाध, मोट ।

दृष्टिवन्त (हि० वि०) १ दृष्टिवाला । २ ज्ञानी, जानकार ।

दृष्टिवर्त्त (स० श्लो०) आँखकी पलक ।

दृष्टिवाद (स० पु०) जैनदशानुसार भद्रप्रविष्ट नुतके
हादय अङ्गमेंसे वारहवाँ अङ्ग । ये हादयाङ्ग जैन-
धर्मके मूल ग्रन्थ हैं । ग्यारह अङ्ग तथा यह दृष्टि-
वाद मिश्रता नहीं । जैनाचार्य सकलकीर्तिरचित
तत्त्वावधारोपक्रम इसका जो अङ्ग है उससे पाया
जाता है, कि इसमें चन्द्र सूर्य आदिकी गति, आयु आदि,
प्राणायाम चिकित्सा, मन्त्र तन्त्र तथा अनेक प्रकारके
विषय सम्मिलित हैं ।

दृष्टिवादमें क्रियावादियोंका मत विरुद्ध भावसे
आलोचित हुआ है । यह पाँच भागोंमें विभक्त है—परि-
क्रम, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत और चूलिका ।

परिक्रमके मध्य—

१. चन्द्रप्रज्ञप्ति—इसमें जिनाधिप चन्द्रको शक्ति, गति
आयु, विभूति आदिका वर्णन है । इसको पदसंख्या
३६५०००० है ।

२. सूर्यप्रज्ञप्ति—इसमें सूर्यको आयु, परिवार, चार
और चौदादिस्मद् वर्णित है । पदसंख्या ५०३००० है ।

३. जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति—इसमें जम्बूद्वीपका भोग, भूमि
और कुलपर्व आदिका विषय वर्णित है । इसको पद-
संख्या ३२५००० है ।

४. द्वीपवर्षप्रज्ञप्ति—इसमें चसंख्य द्वीप, समुद्र और
पर्व आदिका विषय वर्णित है । पदसंख्या ५२३६००० है ।

५. व्याख्यानप्रज्ञप्ति—इसमें छः प्रकारके द्रव्योंका गुण-
पर्याय और लक्षणादिका वर्णन है । पदसंख्या
८४३६००० है ।

कुल मिला कर परिक्रमकी पदसंख्या १८६५०००० है ।
सूत्र—मानव द्वारा कर्मके कर्तृत्व और भोगादि जो
सब हुआ करते हैं, सूत्रमें वही सब विषय वर्णित है ।
इसको पदसंख्या ८८००००० है ।

प्रथमानुयोग—इसमें ६३ शलाका पुरुषोंके स्वरूपादि
वर्णित हुए हैं । पदसंख्या ५०००० है ।

पूर्वगतके मध्य—

१. सत्त्वादपूर्व—इसमें जोवादिकी उत्पत्ति, नाग घोर
स्थितिका विषय वर्णित है । पदसंख्या १००००००० है ।

२. अणायवीपूर्व—इसमें अणुसमूहके विषय और
सूक्ष्म तात्पर्य निर्णयित हुए हैं । पदसंख्या ८६०००००० है ।

३. वीथेप्रवादपूर्व—चक्री, केवलो घोर, देवादिका
शक्तिज्ञान और वीथीदि निर्दिष्ट हुए हैं । पदसंख्या
७००००००० है ।

४. अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व—इसमें द्रव्यके पक्षास्ति-
त्यायका अस्तिनास्तिका विषय आलोचित हुआ है । पद-
संख्या ६००००००० है ।

५. ज्ञानप्रवादपूर्व—इस ग्रन्थमें पञ्चज्ञान और तोन
प्रकारका अज्ञान तथा जो ज्ञानाज्ञान धारण करते हैं,
उन्हींका विषय वर्णित है । पदसंख्या ८८८८८८८८ है ।

६. सत्यप्रवादपूर्व—साग, गुमि अर्थात् वाक, संयम,
सुदृढ और सायादिका विषय लिखा है । पदसंख्या
१०००००००० है ।

७. आत्मप्रवादपूर्व—इस ग्रन्थमें जीवाँके कर्म,
कर्तृत्व और मोक्षत्वादि निरूपित हुए हैं । पदसंख्या
३६००००००० है ।

८. कर्मप्रवादपूर्व—इसमें मानवके कर्मसंस्पर्धमें
बहुतसी बातें लिखी हैं । पदसंख्या १८००००००० है ।

९. प्रत्याख्यानपूर्व—इसमें जीवोंका प्रत्याख्यान, व्रत-
नियमादि स्वरूप वर्णित हैं । पदसंख्या ८४०००००० है ।

१०. विद्यानुवादपूर्व—इसमें सब विद्याओंके
निमित्तादि अष्टाङ्गका विषय लिखा है । पदसंख्या
११००००००० है ।

११. कल्याणपूर्व—इसमें ६३ शलाका पुरुषोंके
कल्याणकर कर्मसमूहका विषय वर्णित है । पदसंख्या
३६००००००० है ।

मालत्री और गान्धारीके सेलसे बनी है। यह सम्पूर्ण जातिकी रागिणी है और इसमें सब शुद्ध स्वर संगते हैं। स्वरधाम इस प्रकार है—“म ग म प ध नि स”।

देवगुप्तसूरि—१ उक्तेशगच्छसम्भूत एक विख्यात जैनाचार्य, कन्नडसूरिके एक शिष्य। इनका दूसरा नाम जिनचन्द्र था। इन्होंने पहले “नवपत्र” वा नवपदप्रकरण नामक जैनशास्त्रीय ग्रन्थ प्रकाश किया; पीछे १८७३ सम्बत्में ‘आवकाशन्द’ नामक नवपत्रकी एक विस्तृत संस्कृत टीका लिखी। इनकी कुलचन्द्र नामक एक और भी उपाधि थी।

२ एक जैनाचार्य, सिद्धसूरिके शिष्य। इनके दो शिष्य थे, योगेश और सिद्धसूरि। प्रथम शिष्यने ११०४ संवत्में अष्टवर्गविवरण और द्वितीय शिष्यने ११२२ सम्बत्में हस्तवेदसमासवृत्तिकी रचना की।

देवगृह (सं० पु०) १ देवताओंके गृह, हृदयस्थिति। २ देवताओंके गृह भर्थात् पिता, कश्यप।

देवगृही (सं० स्त्री०) सरस्वती।

देवगृह (सं० त्रि०) देवानां गृह इत्यतः। देवताओंके प्रति हृदय, जो देवताओंके अत्यन्त गुप्त विषय हैं। जिससे प्राणियोंके वैराग्य उत्पन्न न हो और देवताओंके मध्य यह विषय छिपा रहे, इसी कारण इसका नाम देवगृह हुआ है।

देवगृह—गयाका एक पुण्यस्थान। यहां च्यवनोद्यम था।

देवगृह (सं० स्त्री०) देवानां गृह इत्यतः। देवालय, देवमन्दिर। इसका विषय हृदयस्थिति है इस प्रकार लिखा है—

देवगृह यदि वनवाण जाड़े, तो उसके मध्य जलाशय और उपवनका रचना परमावश्यक है। श्वापूत द्वारा जो सब लोक लाभ होते हैं, एक देवगृह देवानोंसे वही सब लोक मिलते हैं। इससे लोकभूषण और देवतापुष्टि दोनों हो जाते हैं। संतान और उद्यानयुक्त मनुष्यकृत वा दैव सम्पादित स्थानके समीप देवतागण स्वयं पा पड़ते हैं। जिस सरोवरमें मलिनोदय कृत्तव्य द्वारा सूर्यकी किरण पड़ती है, जिस निमल जलमें हंसके स्नान द्वारा श्वेतपद्मके नीचे तर्ग मारते हैं, जिस सरोवरमें हंस, कारकप, शौच और चक्रवाकगण शब्द करते हैं

तथा जिसके तोरस्थ निचुल हृदयको छायामें जलचारी प्राणिगण वियाम करते हैं उस सरोवरके समीप देवगण सुखी रहते हैं। श्रोत्रस्थ जो जिसको काशीकलाप है, कलहंमका कलखन जिसका शब्द है जल जिसका वस्त्र है, स्फुरित जिसकी मेखला है, तोरस्थ प्रफुल्ल हृदय जिसके कर्णभूषण हैं, जल और स्थलका महामस्थान जिसका ओषधी है, पुनिन जिसके उदय स्थान हैं और हंस जिसके छाया हैं। इस प्रकार निम्नगामिनो नदियोंके समीपवर्ती स्थानोंमें देवगण उपस्थित हो जाते हैं।

वनके उपाय स्थानमें, नदी, शैल और निर्भरको उपाय भूमिमें और उद्यानयुक्त पुर प्रदेशमें देवगण नित्य रति लाभ करते हैं। देवगृह निर्माणका स्थान निरूपण करनेमें वास्तुविद्यामें जो सब भूमिमाप्योंकी कड़ी गई है, देवमन्दिरके निये वही सब भूमि प्रगल्भा है। देवगृहमें सर्वदा चतुःपटिपद वास्तुमण्डलका करना कर्त्तव्य है।

इसमें समष्टिक स्थित मध्यस्थलमें द्वार बनावे। जिसका विस्तार जितना होगा, उसे उसके दूने परिमाणसे उन्नत करे। उन्नतिका एकद्वितीयांश कटि हो, विस्तारका अर्धक गर्भगृह और चतुर्दिकस्य समी दीवारें हों। गर्भ एक चतुर्थांश चौड़ा और उसमें दूना लंबा हो। लंबाईके चतुर्थांशमें विस्तोर्ण शाखा और उपरितन अर्धके दिग्गन्तकी ममभावमें निर्माव कर उसका विस्तार एक चतुर्थांश करे और उसके चरेकी विस्तारका चतुर्थांश बनावे भर्थात् दोनो शाखाओंका दैर्घ्य विस्तारका चौड़ाई हो। तोन, पाँच, सात और नौ शाखाओंका आयतन ही प्रगल्भा है। अथःस्य शाखाके चार भागोंमें दो द्वारदेश बनावे। इसका शेषभाग मङ्गलसूचक विहङ्गम, आहुत, स्वस्तिका, वट, मिथुन, पञ्चवक्त्र और प्रमयगणसे उपशोभित हो। द्वारके परिमाणसे षाट्वां भाग कम और पिण्डिकायुक्त प्रतिमा हो। प्रतिमायुक्त पिण्डिकामें दो भाग प्रतिमा और द्वितीयांश पिण्डिका रहे। मंत्र, मन्दार, कशाप, विमानच्छद, नन्दन, समुद्र, पद्म, गन्धर्व, नन्दिर्वहन, कुम्भार, गुहाराज, हय, हंस, सर्वतोमङ्ग, वट, सिंह, हृत्, चतुष्कोण, पौद्गमास्त्र और षट्पञ्च ये बीस प्रकारकी देवगृहकी संज्ञा हैं। यथाक्रम इनका नक्षत्र लिखा जाता है—

हटिपुत्र (मं० श्लो०) १ ओ देखनेमें शक हो। २ जिनमें देखनेमें पावे पवित हो।

हटिपुत्रना (मं० श्लो०) सड़की का छो-बहविशेष।

हटिमटा (मं० श्लो०) निन्नरोग, पाँखकी बीमारी।

हटिफल (मं० श्लो०) एक रागिमें स्थित शकके दूसरी रागिमें स्थित यह धर हटि करनेसे जो फल होता है, उसे हटिफल कहते हैं। हड़ल्लातकमें हटिफलका विषय इस प्रकार लिखा है—

निवरागिस्थित चन्द्र यदि मङ्गलसे देखा जाय, तो भूपाल, बुधसे पण्डित, हड़स्पतिसे राजकुमार, शुकसे गुणवान्, रागिसे तस्कर और रविसे भृत्य होता है। हड़-रागिस्थित चन्द्र मङ्गलसे देखे जाने पर धनहीन, बुधसे और, शुकसे माननीय, शुकसे भूपाल, रागिसे धनवान् और रविसे भृत्य होता है।

निय न रागिस्थित चन्द्र मङ्गलसे दृष्ट होने पर शास्त्र-व्यवसायो, बुधसे चित्तपति, शुकसे पण्डित, शुकसे भू-धीन, रागिसे तन्तुनर्माकारो और रविसे दृष्ट होने पर धनहीन होता है। कर्कट रागिस्थित चन्द्र मङ्गलसे दृष्ट होने पर योद्धा, बुधसे कवि, हड़स्पतिसे पण्डित, शुकसे भूपाल, रागिसे अष्टाश्रीयो और रविसे धनहीन होता है।

मिहारागिस्थित चन्द्र यदि बुधसे देखा जाय, तो मनुष्य ज्योतिषवेत्ता, शुकसे धनवान्, शुकसे नरसंहार, रागिसे भुरकम कर, रविसे नराधामक और मङ्गलसे दोष पड़ने पर प्राधिपातक होता है।

हृदिक रागिस्थित चन्द्र बुधसे दृष्ट होने पर युगल कलाभोक्त्यादक, हड़स्पतिसे दृष्ट होने पर कुल्लाह, शुकसे बल्लाहा रागकर्त्ता, रागिसे पण्डित, रविसे धनहीन और मङ्गलसे दृष्ट होने पर भूपाल होता है।

धनुरागिस्थित चन्द्र बुधसे दिपाई पड़ने पर ज्ञातिघो-का चक्षीभर, हड़स्पतिसे चित्तिनाथ, शुकसे मनुष्योका पायवस्थन तथा रागि, रवि और मङ्गलसे देखे जाने पर ज्ञातवालक दार्मिक और गठ होता है।

मकररागिस्थित चन्द्र बुधसे दृष्ट होने पर राजा-धिराज, हड़स्पतिसे दृष्ट होने पर राजा, शुकसे पण्डित, रागिसे धनवान्, शुकसे दरिद्र और मङ्गलसे भूपति होता है।

कुशरागिस्थित चन्द्र यदि बुधसे देखा जाय, तो ज्ञात-वालक भूपाल, शुकसे राजतुल्य और शुक, रागि, रवि तथा मङ्गलसे परस्त्रीमें पागल रहता है।

मोनरागिस्थित चन्द्र बुधसे देखे जाने पर उपधाव-वेत्ता, हड़स्पतिसे नरपाल, शुकसे पण्डित एवं रागि, रवि और मङ्गल इन पापयहोमें दृष्ट होने पर मनुष्य पापाका होता है।

मेयादि द्वादशरागिके चर्च भागकी जोरा कहते हैं। यह जोरा रवि और चन्द्रमाका दुष्ठा करता है।

सूर्यादि यहगण अपनी अपनी अधिष्ठित रागिके जिस जोरमें रहेंगे, यदि चन्द्रमा उस समय ज्योत अधिष्ठित मेयादि द्वादश रागिको किनो एक रागिमें सूर्यादि यहके अधिष्ठित जोरमें रह कर उन सब ग्रहोंसे देखे जाय, तो शुभफल होगा।

मेयादि द्वादश रागिको किसी एक रागिमें चन्द्रमा यदि रविके जोरा भागमें रहें और मेयादि द्वादश रागिके रविके जोराभागास्थित रवि चादि ग्रहोंसे देखे जाय, तो फल्यक्त होता है। फिर मेयादि द्वादश रागिको किसी एक रागिमें चन्द्रके जोराभागास्थित सूर्यादि ग्रहोंसे देखे जाने पर भी शुभकर होता है। इसका विपरीत होनेसे अर्थात् रविके जोराभागास्थित ग्रहोंसे तथा चन्द्रके जोरा-भागास्थित चन्द्र सूर्यके जोराभागास्थ ग्रहोंसे दृष्ट होने पर अशुभ होता है। अधिपति शुभग्रहसे देखे जाने पर शुभ और पापग्रहसे देखे जाने पर अशुभफल प्राप्त होता है। यदि रवि चादि यहगण मित्रमित्र और स्वमित्र गत हो कर हटिप्रदान करें, तो शुभ होता है। फिर शत्रुमित्र गत हो कर हटिप्रदान करनेसे अशुभ फल मिलता है।

ग्रहोंको हटिके अनुसार जो मय फल लवर मिले गये, वे जो मन्त्रके फल दुष्ठा करते हैं। (हड़गतातक)

जिस रागिमें राहु रहता है, उस रागिसे दक्षिण-वर्षाको गणनासे पञ्चम, सप्तम, नवम और द्वादश रागि-में राहुको पूर्ण हटि; द्वितीय और द्वायम रागिमें त्रिगद हटि; तृतीय, पञ्च, चतुर्थ और षष्ठम रागिमें चर्चहटि रहतो है और जिस रागिमें राहु रहता है, उस रागिमें फिर ग्यारहवें स्थानसे राहु और केतुको हटि नहीं रहती। इन सब हटि और ग्रहोंके बलावलके अनुसार फलकण-का विचार किया जाता है। (ज्योतिषसूत्र)

जो देवगृह पट्टा नाम, दशमीय, सुन्दर कुहरागुप्त जोर
 यत्नीय वायु मय्या जो तथा जिसमें चार दरवाजे भजे हैं,
 वे में देवगृहका नाम 'मिह' है। जो भोज वायु विस्तीर्ण,
 दश भोजगुप्त तथा चूड़ावायु जो, उमें 'मन्दर' कहते हैं।
 मन्दर मध्यका देवगृह यदि १८ हाथ विस्तीर्ण और
 पाठ भोजगुप्त जो, तो उसे 'कौशाम' कहते हैं। जो ज्ञाना-
 कृति गणपतिविगिट तथा २१ हाथ विस्तीर्ण का उभय
 नाम 'विमान' है। जो ११ हाथ विस्तीर्ण और १६ चूड़ा-
 गुप्त जो तथा जिसमें ६ भोज भजे हैं, उसे 'मन्दर' कहते
 हैं। गौलाकार एक यज्ञ और एक भोज देवालयका नाम
 'मनुज'; एक भूमिज; एक यज्ञ, यथाकृति और चट्टमाय
 देवगृहका नाम 'यज्ञ' मन्दरको तरह पाकृतिविगिट देव-
 गृहका नाम 'मन्दर'; २४ हाथ विस्तीर्ण सप्तमीय और
 २० चण्डिमें विभूषित देवगृहका नाम 'मन्दिरवहन'; गज-
 घटकी तरह पाकारधारी और भूमिमे चारों ओर १६ हाथ
 विस्तीर्ण देवालयका नाम 'कुम्हार', १६ हाथ विस्तीर्ण और
 तीन चट्टमायाधर्मि विगिट यन्मोदेय, ऐसे देवालयका
 नाम 'गुहाज'। बारह हाथ विस्तीर्ण, गौलाकार, एक यज्ञ
 और एक तैमियुक्त देवालयका नाम 'हय' इसी प्रकारके
 गौलाकार देवगृहका नाम 'हय', हंभाकार देवगृहका
 नाम 'हंम', ८ हाथ विस्तीर्ण कलभाकार देवालयका नाम
 'घट', ४ हाथ तथा चनेके चूड़ाविगिटका नाम 'सर्वतो-
 मन्द', ८ हाथ विस्तीर्ण, दादग कोण तथा सिंहा विष्णु-
 समन्वित देवालयका नाम 'मिह' और जिस देवालयके
 ५ चण्डिमें ४ लक्ष्मणके हैं उभयका नाम 'चतुरस्र'
 है। (हरतुण्ड उर म०)

चन्द्रिगुणमें इसका विषय इस प्रकार निम्ना है—
 पहले स्थानका निष्पन्न कर चोकोन चैवकी कोनका भागो-
 में विभक्त करके मध्यस्थित चार भागों का पायत और गेव
 बारह भागों की भित्तिके लिये वर्णित करे। लक्षा चतु-
 र्भांग परिमित वर्णित, अर्द्धादि दिगुक्त लक्ष्य मध्यमी और
 मध्यमी के चतुर्ण भागमें प्रदक्षिण परिमाण को। उभय-
 पार्श्वमें सम वा दिगुक्त शोभासम्पादनानुसृत पद भूमि-
 का विस्तार को। मण्डपके पाँचों दो सर्वभूत विस्तीर्ण
 और चतुर्णोंमें पश्चिम दक्षिण पार्श्व द्वारा सुव्यवस्थित
 बनाये। पीछे इसकी पट्टाका वायु करके मण्डपका

पार्श्व करे। प्रथिमा प्रमाणाका सम विस्तीर्ण बना कर
 उभय पश्चिम भागमें गर्भ विस्तीर्ण करे। उभय गर्भों के बरा-
 बर सभी भित्तियाँ, भित्तिके पायामके बराबर लक्ष्य,
 भित्तिके चतुर्णमें दूना मिश्र, मिश्रसे चोमुना मध्य-
 भूमि, मिश्रका चौदाई भाग सामनेका सुव्यवस्थित, गर्भ-
 का पाठवा भाग वय निरुत्तरेका द्वार और परिधि के
 भागके बराबर रख रहे। देवगृहमें तीन रथों का रहना
 परमावश्यक है और तीनों रथ तीन घोड़ों की मर्बदा
 लगाये रहें। वेदिकामें कुछ लक्ष्यमें लक्ष्यकी स्थापना
 करे। प्रागटके चतुर्णों में परिमाणमें प्राकारकी लक्ष्य
 और पादोनपरिमिति गोपुरकी लक्ष्य पारें होगी।

(मनु० २६८८)

मिथेय विवरण प्रागट और मन्दिर प्रागट देवो।

देवगृह (म० पु०) भूतपर्वविमो। जो मध मनुष्य जागते
 वा सोने देवताओंकी देखते हैं, वे उभो समय लक्ष्य को
 जानते हैं, दक्षिणकी देवगृह कहते हैं।

देवगृह—विपुलाके पत्तगर्त एक प्राचीन धर्म। यह
 राधानगरके दक्षिणमें अवस्थित है।

देवगृह—१ चन्द्रांशमें यमोदरके मध्यस्थी एक मण्डपाम।
 २ हिमालय पहाड़ पर स्थित देवप्रयागके निकटवर्ती एक
 प्राचीन तीर्थ। स्कन्दपुराणके हिमवतपर्वमें इसका
 माहात्म्य वर्णित है। (दिग्बर ८८८, ४४१४४)

देवघन (दि० पु०) बगोधीमें लगाये जानेका एक पेड़।

देवघर—१ विहार और उड़ीसेके मन्नाम परगनेका एक
 लक्ष्यभाग। यह पचा० २४' ३' और २४' १८' उ०
 तथा देशा० ८६' २८' और ८०' ४' पू० अवस्थित है।
 भूपरिमाण ८५२ वर्गमील और लोकसंख्या २८७४०६
 है। इसमें देवघर और मनुपुर नामक दो महरों और
 २३६८ ग्राम भगते हैं।

२ उक्त विभागका एक महर। यह पचा० २४' १८'
 और देशा० ८६' ४२' पू० इट दक्षिण ११०' की कोट
 नाईनेके चार मील पूर्वमें अवस्थित है। मोक्षमन्त्र
 ८८२८ है। यहां २२ मिश्रमन्दिर हैं। जिसमें केच-
 नायका मन्दिर प्रसिद्ध है।

विशेष विवरण—देवगृह प्रागट देवो।

देवउम (म० ति०) देव मच्छति यस्य भेदेक। देव-
 नामों की देवताके पक्ष को।

देवचक्र (सं० स्त्री०) १ यज्ञाङ्ग अभिप्रायभेद, गवामयन यज्ञके एक अभिप्रायका नाम। २ यामलोत्र देवताके भेदसे उपामनाष्टायक चक्रमेद।

देवचन्द्र—विख्यात जैन ग्रन्थकार हेमचन्द्रके शिष्य। इन्होंने शान्तिनायकस्य नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ बनाया है। मुनि-देवचरिते उसीको मंचिमें संस्कृत भाषामें प्रकाश किया है।

देवचन्द्रगणि—एक प्रसिद्ध जैन पण्डित। इन्होंने १६४८ सम्बत्में अपने शिष्य मुनिचन्द्रके लिये यमकस्तुति और उसीकी टीका रची है।

देवचर्या (सं० स्त्री०) देवार्नां चर्या इत्यत्। १ देवचरित। २ देवार्थ चरण घोमादि।

देवचाक्षी (सं० पुं०) इन्द्रतानके ऋष भेदांसे एक। देवचिकित्सक (सं० पुं०) १ देवताओंके चिकित्सक, यक्षिनोद्गुमार। २ द्विच संह्या, दोको संह्या। ३ अष्टिनीनचक्र।

देवच्छन्द (सं० पुं०) देवैश्चल्यते आकाङ्क्षते छन्द-घञ्। चारविशेष, एक प्रकारका चार। यह किसोके मतसे १०० या १०८ लड़ियोंका और किसीके मतमें ८१ लड़ियोंका होता है।

देवच्छन्दस (सं० स्त्री०) देवप्रियं छन्दः तच्च समाम्नातः। वैदिक छन्दोभेद।

देवज (सं० पुं०) देवाज्जायते जन-ङ। १ देवजात, देवतासे उत्पन्न। (स्त्री०) २ मानभेद। ३ कृशाग्रके भाई सुव-वशोय संयम नृपतिके एक पुत्रका नाम।

देवजम्भ (सं० त्रि०) देवैरच्यते इति चद-ङ्ग जम्भादेयः। (अश्वमेधवर्णनिकृति)। पा २।४।१६। १ देवताओंसे भक्षित। (स्त्री०) २ कक्षपूष, सोमधिया, एक सुगन्धदार घास। ३ रोहिण्यक्ष, रोहिण घास।

देवजम्भक (सं० स्त्री०) देवजम्भ-स्यार्थे कन्। कक्षपूष, एक प्रकारकी सुगन्धित घास।

देवजन (सं० पुं०) देवस्वरूपे जनः। १ देवरूप जन, देवताके सहाय मनुष्य। देवार्नां जनः। २ उपदेव, गन्धर्व।

देवजनविद्या (सं० स्त्री०) देवजनानां विद्या। गन्धर्व-विद्या, नाच गान आदि।

देवजाति (सं० त्रि०) देवैश्चो जातः। १ जिन्होंने देवतासे

जन्म ग्रहण किया हो। (पुं०) देवार्नां जातः। २ देवगण। देवजामि (सं० स्त्री०) देवार्नां जामिरिच। १ देववन्धु। २ देवतार्थोंकी स्त्री।

देवजित-पञ्चास्तिकाय-टीका नामक जैन ग्रन्थके रचयिता। देवजुष्ट (सं० त्रि०) देवैर्जुष्टं। देवसेवित, देवताको चढ़ा हुआ।

देवट (सं० त्रि०) दिव्यतोति दिव-घटन् (शुक्रादिभ्यो अटन्। ण ४।८१) शिखी, जारोगर।

देवदो (सं० स्त्री०) देवैर् देवग्रन्थ ग्रहण अतिप्राम-तोति घट-भण-यक्षन्नादित्वादलोपः गौरादित्वात् ङीप्। गङ्गाचिह्नो, एक प्रकारकी चोल।

देवठान (हिं० पुं०) १ विष्णु भगवान्का सो कार ठठाना। २ कार्तिक शुक्ला एकादशी। इस दिन विष्णु भगवान् सो कार ठठते हैं, इसीसे इसका माहात्म्य माना जाता है।

देवड़ा—पञ्चावके कन्नडपुर राजकी एक राजधानी। यह अक्षां ३४° ७७' और देशां ७७° ४४' पू० पावर नदीके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग २५० है। जहाँ जहाँ खेतों होते हैं और नदियाँ बहती हैं वहाँ लोगोंका वासस्थान है। यहांकी राना निकटवर्ती पहाड़के ऊँचे शृङ्ख पर बने हुए राजप्रासादमें रहते हैं जो समुद्रस्तरसे ६५५० फुट ऊँचे पर अवस्थित है।

देवदो (हिं० स्त्री०) घोड़ी देवी।

देवतर (सं० त्रि०) अतिवयेन देवः दोमः देवकी वा तरप-। १ अत्यन्त दोम, बहुत चमकीला। २ अति देवक।

देवतरणो (सं० स्त्री०) राजतरणोपुपुष्टल।

देवतरु (सं० पुं०) देवप्रियः तरुः। १ मन्दार। २ हृद्यं। स्वर्गके हृद्य पाँच माने जाते हैं—मन्दार, पारिजात, संतान, कल्यतरु और हरिचन्दन। २ चैत्यवृक्ष, गोम-का कोई प्रसिद्ध वृक्ष, अश्वत्थ वृक्ष, पीपल।

देवतर्पण (सं० पुं०) वज्रा, विष्णु आदि देवताओंके नाम से से कर पानी देनेकी क्रिया।

देवता (सं० स्त्री०) देवस्यार्थे तत्त्व वाचित्वादिनां अपि प्रत्ययाः प्रकृतितो विद्वच्चनान्यति वर्तन्ते इति भाष्योक्तः पुंस्त्वानिक्कमेण स्त्रीत्व-। देव, निर्जर।

नारद मुनि, भृगु, अक्रिशा, विष्णु, लोकपाल, विष्णु, वासुदेव, सहस्रर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुध, काम, साय, देवकी, यमोदा, गोपाल, बुद्ध, कल्कि, नर-
नारायण, हरि, हयग्रीव, कपिल, व्यास, वासुदेव, दत्तात्रेय, धन्वन्तरि, जलमायौ, गरुड, रुद्र, सूर्य, इंद्र, अर्धनारीश्वर, दक्षिणामूर्ति, उमासहस्रर, हरिहर, विष्णुश्वर, रुद्रभेद, एकपाद, अष्टिर्भुज, विरुपाक्ष, रैवत, हर, बहुरूप, त्र्यम्बक, सुरेश्वर, जगन्नाथ, अपराजिता, कन्द, भैरव, महाकाल, नन्दि, घोरभद्र, ज्वर, वसु, भूव, वाय, अनिल, अनल, प्रलय, प्रभास, दादगादिल, धातु, मित्र, अर्यमा, रुद्र, वरुण, सूर्य, भग, विवस्वान्, पूषा, सूर्य, त्वष्टा, विष्णु, ४८ मन्त्र, रेवन्त, यक्ष राक्ष-
सादि, गन्धर्व, वासुकि, तक्षकादि, विद्वग्ण, सभी विष्णु-
देव, समसमुद्र, होपादि दिक्पति, भस्मिन्, यम, वरुण, वायु, धनद, आकाश, भूव, नवग्रह, त्रिभि, नक्षत्र, योग, करण, राशि, काल, मूलाक्ष, सित, सजय, आयुर्भट, साधिव, वैराज, गन्धर्व, अभिजित, रोहिण्य, वल, विजय, सम्भ्रम, वरुण, सुभग, विक्रम, त्रय, चित्रभाण्ड, सुभाण्ड, ताराण, अय्यग, सर्वजित्, देव, मन्त्र, इन्द्रभग, विलम्ब, विकाशी, प्रव आदि पनेल देवताओंका उल्लेख है। इन सब देव-प्रतिमाकी यथाविधान प्रतिष्ठा करनेसे धर्म चरित्र लाभ होते हैं। प्रतिमा-लक्षण तत्तत् शब्दमें देखो।

देवताप्रतिष्ठा (सं० क्रो०) देवतानां प्रतिष्ठा इ-तत्। देव-
ताओंकी प्रतिष्ठा। देवताओंकी विधिक अनुसार प्रतिष्ठा करनेसे देवप्रतिमामें देवत्व आ जाता है। देवप्रतिमाकी प्रतिष्ठा किये बिना पूजादि नहीं होता। पहले देव-
मूर्ति का निर्माण कर पीछे यथाविधि प्रतिष्ठा करते हैं।

“लौकिकी राजतो वापि तावतो रत्नमयी तथा।

शैलवाहमयी वापि लोहशङ्खमयी तथा॥

रीतिका वायुयुक्ता च ताम्रकांक्षमयी तथा।

सुमदाहमयी वापि देवताध्वनी प्रशस्तये॥”

(प्रतिष्ठातृत्व)

सुवर्ण, रत्नत, ताम्र, रत्न, पाषाण, दाह, लोह, शङ्ख, रीतिका और कसि द्वारा देवप्रतिमा बना कर प्रतिष्ठा करते हैं। इन सब प्रतिमाओंकी भावादर्ने प्रतिष्ठा करनेसे अधिक शुभ होता है। प्रतिमामें देवत्वकी

कल्पना नहीं करनेसे साधकोंको उपासनामें क्याथात पहुँचता है। इसीसे चैतन्यस्वरूप, अद्वितीय, अशरीरी ब्रह्मके उपासकोंके कार्यके लिये रूपकी कल्पना को जाती है।

“विन्दममस्याद्वितीयस्य निर्विकल्पाशरीरिणः।

उपासकानां कार्यार्थं ब्रह्मणो रूपकल्पना॥”

‘रूपकल्पना रूपस्थानां देवतानां पुंवा’णादि इत्यादि।’

(देवप्रतिष्ठातृत्व)

स्वर्णज प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करनेसे मुक्ति लाभ और संजोनिमित्त दाहनिमित्त तथा रैत्तिको-प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करनेसे शुभ होता है। देवप्रतिमाकी तरह शास्त्रादि विद्या और शिवलिङ्गादिही भी प्रतिष्ठा करनेको होती है। ज्योतिषोक्त दिनमें तथा कालशुद्धिमें प्रतिष्ठा करने-
का विधान है। मन्त्रमासादि पशुभकालमें प्रतिष्ठा नहीं होती। प्रतिष्ठा देखो।

देवतामणि (सं० पु०) महाभेद।

देवतामय (सं० क्रि०) देवतात्मक देवतामयत्। १ देव-
तात्मक, देवतास्वरूप। (पु०) २ हरिण्यगर्भरूप देवताभेद।
देवतायतन (सं० क्रो०) देवतानां आयतन इ-तत्। देव-
गृह, देवालय।

देवतामय (सं० पु०) देवतानां आलयः इ-तत्। देवगृह।

देवतावेश्मन् (सं० क्रो०) देवतानां घरेण इ-तत्। देव-
गृह, देवालय।

देवतिथि (सं० पु०) पुरुषगोत्र अक्षोघ्नके एक पुत्रका नाम।

देवतिलक—कल्याणमन्दिरस्तोत्रके टीकाकार।

देवतोष (सं० क्रो०) १ पवित्र तीर्थभेद। २ देव पूजा-
का उपयुक्त समय। ३ अंगुलिका अथभाग, अंगुठेकी छोड़ चँगलियोंका अगला भाग जिससे डो कर संकल्प या तर्पणका जल गिरता है।

देवत्त (सं० क्रि०) देवता कर्त्तृक दत्त, जो देवतासे दिया गया हो।

देवत्व (सं० क्रि०) देवसम्बन्धीय, देवताका।

देवत्या (सं० पु०) पशुभेद, वैष्णवके अनुसार एक प्रकार-
का पशु।

देवता (सं० अर्थ०) देवाय देय करोति सम्बन्धते देवे

यसो देवता कल्पमें जगत्सामी समस्त प्राणीका वीर्य
होता है। यामें सब प्राणि जोग ऐसा समझते हैं कि
मर्त्य, इन्हीं प्राण कल्प है। आत्मायन प्राणिमं जगत्-
महितायी अनुकूलविकारों निष्ठा है—

"एव प्राणव" गच्छिः वा तेनोपवर्ते मा देवता । तेन
वाक्येन प्रतिपाद" इत्युक्ता मा देवता ।"

जिनको क्या या वाक्य है वही प्राणि है। जिनका
विषय जगत्में प्राप्त होता है, वही देवता है। प्राणि-
तापन प्रतिपाद को वस्तु है, वही देवता है।

प्राणि, इन्द्र और देवता इन्हीं तीन में कर विट बना
है। जो वस्तु हम भोग मकराया देखते हैं, चन्द्र, सूर्य,
पृथ्वी, मित्रि, नदी, वनस्पति आदि जिनके द्वारा वैदिक
प्राणियों ने बहुत उपयोग पाया है, प्रकृतमहिताये व
देवता नामसे प्रसिद्ध है।

मिहकृष्णकार यास्तम, देवता शब्दका ऐसा अर्थ किया है—

"हानाद्वा दीनाद्वा पुरुषानो भवतोऽपि वा यो देवः सा
देवता ।" (५, १३)

हान और दीपनमें निचे को वा स्थानगत की, वही
देव और देवता है।

मायनाचार्यने जगत्महिताये प्रथम सत्यके भावमें
'देव' शब्दको ऐसा व्याख्या की है,—

"तदा देवनाम ईश्वरि प्राप्तिमिती देवशब्द इतिव दाम्भा-
नते । देवनामै देवोऽग्रेष्ठोऽपि ईश्वरानो देवत्वमिति ।"

देवनामै तिष्ठताप्राप्ति देव शब्द निष्कला है, इन्हीं
देवता नाम कहा है। देवशब्द देव देवता हुआ है इन्हीं
निचे देवतावांका टिप्पण है। योगी याच्यव्यक्ताने निष्ठा
है— "ईश्वरते जीवने नमस्तस्मै गोचरे योगते गिरि ।

तस्माद्देव इति प्रोक्तः सूर्यते सर्व ईश्वरः ॥"

जो दीर्घ प्राप्ति है, कोला कान्ति है, स्वर्गमें मोक्षते है
और वा तितिविष्ट है कि भी देवता कहलाते है तथा ये
को सब देवतावांमे प्रगमिती कोम है।

देव शब्दका मूल धातुर्वापोतमान् वा दीप्तिमान्
है। ('दीप्तिवर्तः') मनुजीव इत्युक् ३०।१।१०) प्राण
प्राणियोंके नामसे जो दीप्तिमान् हुए हैं, पक्षमें जगत्की
जब भीमोंने देवता माना था। यमा देव शब्दको जैभी
विशेषता है, पक्षमें वैदिकयुगमें देवता-प्राणान् प्रकृति-

प्राणियोंमें जो विविधता प्राप्तिमिती करी ली। और
और सूर्य, चन्द्रमा, चानि आदि का स्थापित देव कर तथा
इन सब प्रकृतिपुरुषोंमें मंभारके निच उपकार और निच
प्रयोजनोपयताये सुख को प्राणियोंने उनके प्रति विविध देवत्व
प्राप्तिमिती किया। देवत्वप्राप्ति यही मूल तोल है। प्रकृ-
तिमहिताये जिन सब देवदेवियोंके नाम प्राणों हैं उनमेंसे
सुख ये हैं।—चानि, वायु, इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, इन्द्र,
विश्वदेवगव, मरुत्तगव, वातुगव, प्रद्युम्नसति, सोम,
त्वष्टा, सूर्य, विष्णु, उग्र, यम, वज्रम्, पर्यमा, पूषा, इन्द्र,
इन्द्रगण, वसुगण, आदिगण, उग्रमा, मित्र, तैत्ति, पक्षि-
गुंभ, पञ्च एकपातु, सन्ध्या, गुरुमान् ये सब देव हैं और
संस्तोते, सन्तुता, इमा, इन्द्राणी, होता, पृथिवी, उषा,
प्राणी, रोदसी, राका, मिनामानो और सूर्य, ये सब
देवियां।

हता भीने पर भी देवत्व सब वैदिकयुगमें नहीं
हुआ। देवतावांकी सख्या घो। भी पश्चात् मान्तिव्यके
विषयमें वैदिक प्राणियोंमें भी समझें ग। इन विषयमें
मिहकृष्णकार यास्तम ऐसा निष्ठा है—

"देवता तोल है, प्रलोमें चानि, पमारीसमें इन्द्र ना
वायु और आकाशमें सूर्य। बाकी देवता या तो इन्हीं
तोनोंके पमाभूता है, पक्षमा कोला, पक्षपुं, ब्रह्मा,
हता आदि के समझेंके निच इन्हीं तोनोंके पमग
पक्षग नाम है। योंकि पमग्य भावमें उनको सृति की
गई और भिच भिच नाम दिने गये हैं।" (मिहकृष्ण ५३)

जगत्महिताये रस, पम और पम मण्डलके पक्षके
सूक्तोंमें १३ देवतावांका उल्लेख है।

"ये देवता इतिवैश्वदेव्य सृष्टिमायानेवैश्वदेव्य ।

महाविद्यो मंदिनेवादाय देवताय सृष्टिमायानेवैश्वदेव्य ॥"

(यजु. ३।१८।११)

जो देवता स्वर्गमें व्यापक, प्रलोमें व्यापक और पक्ष
वीक्षमें भी व्यापक है वे यमों पक्षमी महिमाये सब सेवा
करते हैं।

"ये विश्वानि प्रवररी देवताये वद्विगवन् ।

विश्वर विगवन् ॥" (यजु. ५।१८।११)

जो तोम और तोम पक्षमा ३३ देवता वद्वि (मण्ड, ५)
पर बड़े हैं, वे हैं पक्षगम को प्राणि और दो पक्षरका
भग्न दास करी।

म. ५. १. कायादि विषयस्य देवताको नित्यं योगः । २
देवतायोगः । (२) देवतां यन्त्रं देवतां योगः । विनोदात्मन्
यन्त्रात्मन् देवतायोगः । ३ यन्त्रादि कार्यस्य
देवताः । ४ यन्त्रादि देवताः । (३) देवता योगः
योगः । ५ देवता योगः ।

निश्चयान्—यथाभावेन दोषास्तत्रैव सक्त भावकारः । निश्चयः
निम्न कोर मन्त्रकारोक्तुमेषां यद भाव उद्भूत इत्यादि ।
निश्चयः (यन् पुं) प्रज्ञा, निम्न कोर निम्न इति भावः ।
निश्चयः यथा यदुक्तम् ।

देवता (मं. प्रो.) देवता भावः भावः तव । देवता भावः, देवता भावः ।

દેવદાસ (મં. ૧૦) સીરિઝ અલ્પ, સંદિપ ગ્રામ ।

ॐ नमः शिवाय । (मं० पौ०) देवाय नमः शिवाय । यथा ।
ॐ नमः शिवाय ।

देवः शोचसा (गी. पौ.) भाग्यना ।

दिवदत्ता (मं पु ०) देवा दत्तं देवावसिति मन्त्रायां
 (निष्क ० लो १ व १३५) (१३५) १ मन्त्रा गन्ध प्रसि-
 द्धा यशोदत्ता, जिम जगद आमादि मातृम मं श्री. लम
 जगद दिवदत्ता यं श्री गन्ध प्रसिद्ध विद्या आता है, लोम
 दिवदत्ता प्रसिद्ध करता है ।

जिस तरह मायावत कलमने मायावायें नहीं है,
 वही तरह देवदत्तादि माया निरापेक्ष पर्याय समझा कोरे
 धारा नहीं है। २. यह सत्यनि को देवताके निमित्त
 दान की गई हो। ३. देवदत्त जन्मनर मायुमेद,
 भोको वर मायुमेदिमे एक जिनके जन्माई पातो है।

४ यज्ञं चैव दधत्तं तं नाम । १ यज्ञं च दधत्तं तं नाम ।
 दधत्तं । (वि०) दधत्तं दधत्तं । १ दधत्तं च दधत्तं
 दधत्तं दधत्तं । १ दधत्तं च दधत्तं दधत्तं दधत्तं ।
 दधत्तं दधत्तं । १ दधत्तं च दधत्तं दधत्तं दधत्तं ।
 दधत्तं दधत्तं । १ दधत्तं च दधत्तं दधत्तं दधत्तं ।

[illegible]

यसो धरम विरहा कानि होइ अन्धकार को ना। बिजु येने पाये
उरुं दम दम किया होर के मिरास की चदन को
मई। इत पर दोहदा बहम विरह को सोर लखा धनि
करमने लग गये। किम प्रका बुद्धि धनि कर बहने
मि हमेगा दही मोहा दुःखने लगे। गमनाम विर-
भार के पुन भगनाम, दोहदा के पास मिले। कल-
दुःख-वदनाम निपा है, कि भगनाम, नि पाये मिल दो-
दा को नामने पद कर चपने विना बिनिपा को मार छापा
दा। विर चदनामनामने भी पद लग के निपा है, कि
जब बुद्ध भगनामने उरने भे, तब बुद्धि निवदनाम बहने
पात को को उरुं मार दानने के निपा भेला गा। बिजु
ये लखा ब्रह्म बीजा भी कर न गये। दोहदा होर
भगनामने मिल कर बुद्ध भगने विदह कई पद दान
भो प्रकाशित रिपे मि। भद्रकल्याणदनाम निपा है, कि
मिरास के संभारनाम कामि पर लखा निवदना माया
यसो धरा को घामने निपे दोहदनाम लगे बहम प्रलोभन
दिया दा। पर जब लखा बहमा पुगी न बुद्धि, तब ने
उरुं मार दानने के निपा गा लपन को गये दि।

जो कुछ भी, मिश्रित विषय हमारे जिनमें शामिल
 बनाई सब मिश्रित हुई। इनके लिए चलाया, जो
 कुछ ही टोचिए हुए थे। एनी इस दुर्गम देवदत्तों को
 अधिक दिन रग न मचा, एक दिन वह विद्या की को
 गई। देवदत्तों ने मरकती मरकती भुगतने में
 जोड़ी के अनेक चरवाहा चलो में लिखा है, कि कुछ जिनमें
 बार चलाए हुए हैं, उनमें बार देवदत्तों में चलाया गम
 को बार लकड़वाह दिया था।

अप्रदेशात् बौद्ध भाग देवः तस्मै श्री योगेश्वर्यै नमः
 है । किं न्यायवादिषां विचार है, कि देवदत्त
 पुरोहित एक देवता हैं ।

देवता—१ एव हिन्दो जविः । निमिर्दयोममि निमिः
 के हि दनका भगवा जविर्दयोममि निमिः ।
 १०५५ मी के विद्यालय ।

३ से भी दूर हिन्दोस बनि है। यह १०५६ ई
बनवा गया था। इसका मन्दा 'मोहनपुर' नामक
दर दर है।

३ दिवसीय एट नदि । प्रातः ७-१५ मी .

ये ३३ देवता कौन कौन हैं ? इसके विषयमें ऋक्-संहितामें तो कोई बात नहीं लिखी है, पर गतपञ्च-ब्राह्मणमें इसका जो उल्लेख है वह इस प्रकार है—

“इतमे ते ययन्ति शदित्यष्टौ नवम एकादश द्वादश-
त्रिंशस्त एकत्रिंशत् इन्द्रश्चैव प्रजापतिश्च ययन्ति शदिति ॥”

(शतपथब्रा० ११।६।३।५)

८ वसु, ११ रुद्र, १२ आदित्य तथा इन्द्र और प्रजा-
पति यही ३३ देवता हैं।

फिर ऐतरेयब्राह्मणमें ३३ सोमय और ३३ असोमय
इन ६६ देवताओं का उल्लेख है।

अष्ट, वसु, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, प्रजापति और
अष्टकार ये ३३ सोमय हैं और एकादश प्रयाज, एका-
दश अनुयाज और एकादश उपयाज ये ३३ असोमय।
सोमयायी सोमसे लस होती हैं और असोमयायी यज्ञीय
पशुओं से। (ऐतरेयब्रा० २।१८)

ऋग्वेदमें एक स्थान पर देवताओं की संख्या ३३९८
कही गई है।

“श्रीणिशता त्री सदस्यश्विनि” त्रिंशच्च देवा नव चासपथन् ।”

(ऋक् ३।४।५)

तोन हजार तोन सौ तीस और नौ देवगणश्च अग्नि-
की पूजा करते हैं।

शतपथब्राह्मण (११।६।३।४), शाङ्खायनश्रौतसूत्र
(८।२।१।४) आदि वैदिक ग्रन्थोंमें भी ३३९८ देव-
ताओं का उल्लेख है। मानसूत्र पढ़ता है कि देवताओं-
की इस प्रकारकी संख्याके विषयमें मतभेद देख कर
ही कोई कोई ऋषि फिर देवताओंके अस्तित्वमें सन्देह
कर गये हैं। ऋक्संहितामें लिखा है—

“असु स्तोमं भगवत वा जयत इन्द्राय सत्यं वदि सत्यमस्ति ।
नेत्रं। असीति नेम उः रत्न आह क ईं दवर्ष कमभिष्टवाम ॥”

(८।१०।३)

हे जयामितायो व्यक्तित्वन् ! इन्द्र हैं, यह यदि सत्य
ही, तो इन्द्रके वरुणसे सत्यभूत सोमका उच्चारण करो।

४ घायणवायने माधमें लिखा है, कि देवता केवल
३३ ही हैं, ३३९८ नाम भ्रमिमाप्रकाशक है। किन्तु ऋक्-
संहिताके १०म मण्डलके ५२ सूक्तमें भी इन ३३९८ देव-
ताओं का उल्लेख है।

नेम ऋषि कहते हैं, इन्द्र नामका कोई नहीं है। किमने
उन्हे देखा है ? हम लोग किसकी सुति करेंगे ?

इस प्रकारका सन्देह छोड़ें ही दिनोंमें ऋषियोंके
हृदयमें दूर हो गया था। वे जानते थे, कि देवता लोग
सोमरस पान करते हैं और मनुष्यों से भिन्न हैं।

ऋग्वेदमें स्पष्ट लिखा है—“हं यमुर वरुण । देवता
हो वा मर्त्य (मनुष्य) हो तुम सबके राजा हो।” (यज्ञो
देवता और मनुष्यमें प्रथकता निरूपित हुई।)

(ऋक् २।२७।१०)

ऋक्संहितामें मझोच भाव भी प्रगट हुआ है।
ऋक्षन्वमें बतलाया है कि भिन्न भिन्न देवता एक पर-
मात्माके नाम मात्र हैं।

“इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुषो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ।
एकं सदिषा बहुधा वदन्त्यग्निं मम” मातरिश्वानमाहुः ॥”

(१।१६।४६)

पण्डित लोग इन्द्र, मित्र, वरुण और अग्नि कहा
करते हैं। ये सब स्वर्गीय सुपर्ण और गरुत्मान् हैं तब
एक होने पर भी बहुधाका बोध होता है। इसीकी अग्नि,
यम और मातरिखा कहते हैं।

“सुपर्णे विधाः कवयो प्रबोधिरेकं सन्तं बहुधा कथयन्ति ।”

(१।११।४।५)

सुबोध धर्मासु पक्षों एक ही है, बुद्धिमान् पण्डित लोग
उसका काव्यनामके अनेक अनेक बतलाते हैं।

अन्तर्ही जो दो ऋक्ष, उहत्त हुए हैं यही उपनिषद्
और वेदान्तप्रतिपाद्य एकात्मवादकी मूल बीज हैं।
पुराणमें जिन अगण्य देव देवियोंको वर्णना है, वे कुछ
नहीं हैं, वे केवल एक परमात्मा वा ईश्वरकी ही सद्दिमा-
व्यञ्जक रूपकोंको वर्णना हैं। ऋक्संहिताके चतुर्दो
मन्त्रोंमें उनका सुलसुब प्रकटित हुआ है। अधिक
कहना नहीं पड़ेगा, कि देव-देवीका उपासनामूलक
वर्णमान हिन्दूधर्म चतुर्दोऽर्चनेमें प्रतिष्ठित है। मोमांसा-
दर्शनके मतसे देवताओंके वास्तविक रूप वा विग्रह नहीं
हैं। देवगण सम्भावक हैं। अनुमान प्रत्यक्ष मन्त्र ही
देवता हैं। गौणिक देवत्व अल्पमें निरूपित विवरण देखो।

मनुष्यहोतामें लिखा है—

काशीरके महाराज कुमारे राजराजके कहनेसे श्रोणपव नामक एक ग्रन्थ लिखा ।

४ एक सुप्रसिद्ध हिन्दी-कवि । ये इटावाके रहनेवाले सनाढ्य ब्राह्मण थे । इनका जन्म-संवत् १०२० में हुआ था और स० १८०२में इनका देहान्त होना अनुमान-सिद्ध है । ये केवल १६ वर्षकी बाल्यावस्थासे ही उत्कृष्ट कविता करने लगे थे । इनको कभी कोई उदार पात्रय-दाता नहीं मिला और इसीकी खोजमें अथवा अन्य किसी कारणसे ये प्रायः समस्त भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्त घूमे । इसका प्रभाव इनकी कविता पर बहुत हो अच्छा पड़ा और प्रत्येक स्थानके निवासियोंका इनको सच्चा वर्यन किया । अपने समस्त पात्रयदाताओंमें भोगी-लालका हाल इनोंने सबसे विशेष ब्यहस्युक्त लिखा । कोई कोई तो इन्हें ५२ ग्रन्थोंका और कोई ७२ ग्रन्थोंका रच-यिता बतलाते हैं । जो कुछ हो, इनके बनाये कुछ ग्रन्थोंके नाम नीचे देते हैं—भावविलास, प्रेमतरङ्ग, सुखसागर-तरङ्ग, सुजानविनोद, काव्यसाधन, तत्त्वदर्शनपथीसी, रत्नानन्दलहरी, देवमंथाप्रपञ्चलाटक, सुमिलविनोद प्रेमचन्द्रिका और नीतिगतक ।

इनकी कवितामें उत्तम छन्द बहुतायतसे पाये जाते हैं । इनकी भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है और वह भाषा-सम्बन्धी प्रायः सभी आभूषणोंसे सुसज्जित है । इन्होंने तुलान्त भा बड़े ही मनोहर रखे हैं ।

५ जैन भक्तानुसार सूर्यके एक पुत्र ।

६ एक विख्यात ज्योतिर्विद् । इन्होंने संस्कृत भाषामें ब्रह्माध्वमशाय नामक एक ग्रन्थकी रचना की ।

७ शृङ्गाररसविलास नामक असह्यार-ग्रन्थके रच-यिता ।

८ गुजरवासी हरिके पुत्र । इन्होंने वासुदेवभाषा नामक संस्कृत वेदक-ग्रन्थ लिखा है ।

देवदत्तक (सं० पु०) देवदत्तो मुख्य एषां इति कान् । देवदत्त-प्रधानक ।

देवदत्त शास्त्री—एक हिन्दी कवि । ये लखनऊ जिलेके मुरन्दर नामक ग्राममें रहते थे ।

देवदत्त शास्त्री—हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म संवत् १८०८ की कानपुरमें हुआ था । इन्होंने वैशेषिकदर्शन-

भाष्य और ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिकेतूपराग नामक दो ग्रन्थ लिखे ।

देवदत्तायज (सं० पु०) देवदत्तस्य वयजः । शास्त्र बुद्ध । देवदत्त (सं० त्रि०) देव पश्यति दृश्य-अण् । १ देवता-दर्शक, देवताका दर्शन करनेवाला । (पु०) २ ऋषि-भेद, एक ऋषिका नाम ।

देवदर्शन (सं० त्रि०) देव पश्यति दृश्य-णुन् । १ देव-दर्शन । (पु०) २ ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम । (ज्ञो०) १ देवताका दर्शन ।

देवदर्शन (सं० पु०) देवदर्शनप्रोक्तं परोक्षे इति देव दर्शन-णिनि । वह जो देवदर्शन ऋषिप्रोक्त शास्त्र अध्यायन करते हैं ।

देवदानो (सं० स्त्रो०) देव गोधर्मे भावे ह्युट्, देवस्यैव दानं ह्यद्विष्यः गोदादित्वात् डोप् । गोपकाङ्क्षति, बड़ा तरौई ।

देवदार—गुजरातके अन्तर्गत एक पर्वत खोबोत सुद्ध राज्य । यहाँ अधिकार राजपूत और कोलजातिका वास है । पहले इस राज्यमें केवल डकैतोंका अड्डा था । इनके उत्थातसे निकटवर्ती देशवासो तंग या गये थे । १८५८ ई०में ब्रिटिश गवर्नेण्डने उन्हें यहाँसे निकाल बाहर किया । तभीसे यह राज्य गवर्नेण्टकी देखरेखमें है । किन्तु ब्रिटिश गवर्नेण्ट राज्यके आभ्यन्तरिक किसी विषयमें हस्तक्षेप नहीं करतो । यह अक्षां २४' ८" स० और देशां ७१' ४८" पू०में अवस्थित है ।

देवदार (हि० पु०) एक बहुत ऊँचा पेड़ ।

देवदार देखो ।

देवदार (सं० स्त्री०) देवाना दार तेषां नियत्वात् । वृक्ष-विशेष, एक बहुत ऊँचा पेड़ । संस्कृत पर्याय—गन्धु-पादप, पारिमद्रक, मद्रदार, हुकिमिन्, पौडदार, दार, पूनिकाष्ठ, सुरदार, दारक, सिन्धुशर, भमरदार, शाश्व, मृतदारि, मयदार, मद्रक्षु, रन्द्रदार, मप्तदार, सुरमूरुह, सुराक्ष और देवकाष्ठ ।

हिन्दीमें इसे किलनू, देवदार वा किलनूका पेड़, पञ्जाबमें देवदार, कशाईनू, दादा, काशीरामें दार वा देवदार, हिमाचल-प्रदेशमें दिशार, देवदार, ददार, तिब्बतमें गियमू, तामिसमें देवदारी चेड़ी, तोङ्गमें देव-

त्राय । १ कणादि विषयमें देवताको देने योग्य । २ देवताधीन । (पु०) देव' बन्दे देवे रमे वा इतोयान्तात् मन्मत्तात् न देवमन्दात् वा । ३ बन्दे' आदि कर्मयुक्त देवता । ४ रक्षणविषय देवता । (त्रि०) देवान् त्रायते वाचक । ५ देवता-रक्षक ।

देवदातृ—शास्त्रानुयान यौतसूत्रके एक भाष्यकार । निर्णय सिन्धु घोर संस्कारकोशुभमें यह भाष्य उद्धृत हुआ है । देवतयो (म० पु०) ब्रह्मा, विष्णु घोर शिव इस तीन देवताओंका मनुष्य ।

देवत्व (म० कु०) देवस्य भावः भाव' त्व । देवताका भाव, देवताका धर्म ।

देवदग्ध (स० स्त्री०) रोहिण्यष्टय, रोहिण्यष्टय ।

देवदण्डा (म० स्त्री०) देशात् मेघात् दण्डो यस्याः । नागवध्या, मं गीरन ।

देवदण्डोत्पत्ता (म० स्त्री०) नागवध्या ।

देवदत्त (म० पु०) देवा' एन' देवासुरिति म'त्रायां (किच' लौ व स'गाया । पा ३।३।२०४) । स'त्रा शब्दप्रतिपाद्य नरभेदा, जिस जगह भामादि मालूम न हो, उस जगह देवदत्त यंत्री शब्द प्रयोग किया जाता है, जैसे देवदत्त प्रस्तुत करता है ।

जिस तरह ब्राह्मण कर्मसमें ब्राह्मणाद्य' नहीं है, उसी तरह देवदत्तादि याण्य निरर्थक घर्थात् इनका कोई प्रय' नहीं है । २ वध सम्पत्ति जो देवताके निमित्त दान की गई हो । ३ दैरिग्यित जन्मनकर वायुभेद, शरीरकी वायु वायुओंमेंसे एक जिसमें ज' भाई पातो है । ४ चक्षु'नके एक रंजकानाम । ५ घण्टकुल नागोंमेंसे एक । (त्रि०) देवेन दत्ताः १-तत् । १ देवमन्त्र, जो देवतामें दिया गया हो । ७ जो देवताके निमित्त दिया गया हो ।

देवदत्त—शाक्यवंशीय एक राजकुमार, शरीरदत्तका भतीजा । जिस प्रकार दुर्गाधन युधिष्ठिरादिके मत' थे, उसी प्रकार देवदत्त भी शाक्यबुद्धके घोर शत्रुतागत' रहे । जिस जिस बौद्ध ग्रन्थमें बुद्ध शाक्यनि'हका विवरण' है, उसी उसी ग्रन्थमें देवदत्तके भी 'अनेकी' परिचय मिलते हैं । बुद्धके साथ सहकपनमें हो पाले दोसे जाने पर भी तेजःवीर्य विद्याबुद्धि सभी विषयोंमें शाक्यनि'हको बढ़ा-दिता है' कर देवदत्त बहुत असते थे । पहले इनकी

यमोधरासे विवाह करनेकी इच्छा को थी, किन्तु यमोधरासे उन्हें पसंद न किया और वे सिद्धार्थकी पटनको हो गईं । इस पर देवदत्त बहुत विगड़े और उनका घनिष्ट करनेमें लग गये । किस प्रकार बुद्धका घनिष्ट कर सकते, वे हमेशा यही मोका ढूँढते लगे । मगधराज विभि' सारके पुत्र भज्जातगत', देवदत्तके परम मित्र थे । कल्प-द्रुमावदानमें लिखा है, कि भज्जातगत' ने अपने मित्र देवदत्तकी बातमें पड़ कर अपने पिता विभिमारको मार डाला था । फिर भयदानगतकर्म भी एक जगह लिखा है, कि जब बुद्ध जीतवनमें रहते थे, तब दुर्द्ध'त देवदत्तने बहुतसे घातकों'की उन्हें मार डालनेके लिये भेजा था ; किन्तु वे उनका वास बाँका भी कर न सके । देवदत्त घोर भज्जातगत' ने मिल कर बुद्ध मर्तेके विरुद्ध कई एक ग्रन्थ भी प्रकाशित किये थे । भद्रकल्याणदानमें लिखा है, कि सिद्धार्थके संसारत्याग करने पर उनकी प्रियतमा भार्या यमोधराकी पानेके लिये देवदत्तने उन्हें बहुत प्रलोभन दिया था । पर जब उनकी इच्छा पूरी न हुई, तब वे उन्हें मार डालनेके लिये भी उद्यत हो गये थे ।

जो कुछ हो, सिद्धार्थके विरुद्ध इनकी जितनी क्षाने' चलाने' सब निष्फल हुईं । इनके मित्र भज्जातगत', भी बुद्धसे दोषित हुए थे । एवों इस दुर्द्ध'त देवदत्तको घोर अधिक दिन रख न सका, एक दिन वह विदोष' हो हो गई । देवदत्तकी नरककी यंत्रणा भुगतनी पड़ी । बोझीके अनेक भयदान ग्रन्थोंमें लिखा है, कि बुद्ध जीतने वार उत्पन्न हुए थे, अंतर्गत वार देवदत्तने उनका मत्त' हो कर जन्मग्रहण किया था ।

ब्रह्मदेयांघ्र बौद्ध लोग देवदत्तकी ही योग्यवृष्ट मानते हैं । फिर श्यामवासियोंका विश्वास है, कि देवदत्त यूरोंपके एक देवता है ।

देवदत्त—१ एक हिन्दी कवि । शिवसिंहसरोजमें लिखा है कि इनका बनाया सलितकाव्य' प्रसिद्ध है । म० १००५ में ये विद्यमान् थे ।

२ ये भी एक हिन्दीके कवि थे । स० १००२ में इनका जन्म हुआ था । इनका बनाया 'योगतत्त्व' नामक एक ग्रन्थ है ।

३ हिन्दीके एक कवि । इनकी स० १८१८ में

ये ३२ देवता कौन कौन हैं ? इसके विषयमें ऋक्-संहितामें तो कोई बात नहीं। लिखो है, पर शतपथ-ब्राह्मणमें इसका जो उल्लेख है वह इस प्रकार है—

“इतमे वे प्रयत्नि शदित्यष्टौ वयव एकादश रुद्रा द्वादशा-
दिलास्त एवमि शद इन्द्रवैव प्रजापतिश्च प्रयत्नि शदिति ॥”

(शतपथब्रा० ११।६।३।५)

८ वसु, ११ रुद्र, १२ आदित्य तथा इन्द्र और प्रजा-
पति यही ३२ देवता हैं।

फिर ऐतरेयब्राह्मणमें ३३ सोमप और ३२ असोमप
इन ६५ देवताओं का उल्लेख है।

अष्ट, वसु, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, प्रजापति और
वपट्कार ये ३३ सोमप हैं और एकादश प्रयाज, एका-
दश अनुयाज और एकादश उपयाज ये ३२ असोमप।
सोमपायी सोमवे दत्त होते हैं और असोमपायी यज्ञीय
पशुओं हैं। (ऐतरेयब्रा० २।१८)

ऋग्वेदमें एक स्थान पर देवताओं की संख्या ३३२८
कहो गई है।

“श्रीगिराता श्री वृहस्पतिर्गमि विंशत्य देवा नव चासपेयन् ॥”

(ऋक् १।६।९)

तो न हजार तो न सो तीस और नौ देवगणः अग्नि-
की पूजा करते हैं।

शतपथब्राह्मण (११।६।३।४), शाङ्खायनश्रौतसूत्र
(८।२।१।४) आदि वैदिक ग्रन्थोंमें भी ३३२८ देव-
ताओं का उल्लेख है। मानसूत्र पड़ता है कि देवताओं-
की इस प्रकारकी संख्याके विषयमें मतभेद देख कर
हो कोई कोई ऋषि फिर देवताओंके अस्तित्वमें सन्देह
कर गये हैं। ऋक् संहितामें लिखा है—

“प्र सु स्तोमं भरत वा जयत इन्द्राय सखं वदि सख्यमस्ति ।
मेमः अस्तीति नेम सः त्व आह क ई दस्वै कर्मणिष्ठवाम ॥”

(८।१००।३)

हे जयामितायो व्यक्तियुद्ध ! इन्द्र हैं, यह यदि सत्य
हो, तो इन्द्रके उद्देश्यसे सत्यभूत सोमका उच्चारण करो।

४ सायणाचार्यने माध्यमें लिखा है, कि देवता केवल
इस ही हैं, ३३२८ नाम महिमाप्रकाशक हैं। किंतु ऋक्-
संहिताके १०० मण्डलके ५२ सूक्तों में भी इन ३३२८ देव-
ताओं का जिक्र है।

नेम प्रयत्नि कहते हैं, इन्द्र नामका कोई नहीं है। किमने
उल्लेख देखा है ? हम लोग किसकी स्तुति करेंगे ?

इस प्रकारका सन्देह छोड़ो ही दिनोंमें ऋषियोंके
हृदयमें दूर हो गया था। वे जानते थे, कि देवता लोग
सोमरस पान करते हैं और मनुष्यों से भिन्न हैं।

ऋग्वेदमें स्पष्ट लिखा है—“हे असुर वरुण ! देवता
हो वा मर्त्य (मनुष्य) हो तुम सबके राजा हो।” (यजुः
देवता और मनुष्योंमें पृथक्ता निरूपित हुई।)

(ऋक् २।२७।१०)

ऋक् संहितामें महोद्योग भाव भी प्रगट हुआ है।
ऋक्षन्त्रमें बतलाया है कि भिन्न भिन्न देवता एक पर-
मात्माके नाम मात्र हैं।

“इन्द्र मित्रं वरुणमग्निमादुरवो दिव्यः स सुपर्णो गरुडमान् ।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं मम मातरिश्वातयान् ॥”

(१।६।४।६)

पण्डित लोग इन्द्र, मित्र, वरुण और अग्नि कहा
करते हैं। ये सब स्वर्गीय सुपर्ण और गरुडमान् हैं तथा
एक होने पर भी बहुधाका बोध होता है। इसीको अग्नि,
यम और मातरिश्वा कहते हैं।

“सुपर्णं विप्राः ब्रह्मवै प्रचोमिरेकं सत्यं बहुधा वदन्त्यग्निं ॥”

(१३।११४।५)

सुपर्ण अर्थात् पक्षी एक ही है; सुविमान् पण्डित लोग
उपाकी कल्पनाके बलसे अनेक बतलाते हैं।

अन्तर्ज्ञे जो दो ऋक्, उद्धृत हुए हैं यही उपनिषद्
और वेदान्तप्रतिपाद्य एकात्मवादके मूल बीज हैं।
पुराणमें जिन पण्डित्य देव देवियोंको वर्णना हैं, वे कुछ
नहीं हैं, वे केवल एक परमात्मा या ईश्वरकी ही महिमा-
व्यञ्जक रूपकको वर्णना हैं। ऋक् संहिताके उक्त दो
मन्त्रोंमें उनका भूतसूत्र प्रकटित हुआ है। अधिक
कहना नहीं पड़ेगा, कि देव-देविका उपासनामूलक
वर्तमान हिन्दूधर्म उक्त दो मन्त्रोंमें प्रतिष्ठित है। मोक्षा-
दर्शनके मतसे देवताओंके वास्तविक रूप वा विग्रह नहीं
है। देवगण मन्त्रात्मक हैं। चतुर्धात पदयुक्त मन्त्र ही
देवता है। गौतमिक देवतत्त्व शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

अष्टसंहितामें विद्या है—

काशीरके महाराज कुमार वंजराजके कहनेसे द्रोणपत्र नामक एक ग्रन्थ लिखा ।

४ एक सुप्रसिद्ध हिन्दी-कवि । ये दृष्टावाके रहनेवाले सनाढ्य ब्राह्मण थे । इनका जन्म-संवत् १७२० में हुआ था और स० १८०२में इनका देहान्त होना अनुमान-सिद्ध है । ये केवल १६ वर्ष की वाल्यावस्थासे ही उल्लट कविता करने लगे थे । इनको कभी कोई सदार पात्र्य-दाता नहीं मिला और इसीकी खोजमें अथवा अन्य किसी कारणसे ये प्रायः समस्त भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्त घूमे । इसका प्रभाव इनकी कविता पर बहुत ही अच्छा पड़ा और प्रत्येक स्थानके निवासियोंका इन्होंने सच्चा वेषन किया । अपने समस्त पात्र्यदाताओंमें भोगी-लालका हाल इन्होंने सबसे विशेष उदाहृत लिखा । कोई कोई तो इन्हें ५२ ग्रन्थोंका और कोई ७२ ग्रन्थोंका रच-यिता बतलाते हैं । जो कुछ हो, इनके बनाये कुछ ग्रन्थोंके नाम नीचे देते हैं—भावविमोक्ष, प्रेमतरङ्ग, सुखसागर-तरङ्ग, सुज्ञानविनोद, काव्यरसायन, तत्त्वदर्शनपंचोसी, रसामन्दलहरी, देवमायाप्रपञ्चनाटक, सुमिलविनोद प्रेमचन्द्रिका और नीतिमत्तक ।

इनकी कवितामें उत्तम कन्द बहुतायतसे पाये जाते हैं । इनकी भाषा शुद्ध मजभाषा है और यह भाषा-सम्बन्धी प्रायः सभी आभूषणोंसे सुसज्जित है । इन्होंने तुकात्त भा बड़े ही मनोहर रचे हैं ।

५ जैन मतानुसार सृष्टिके एक पुत्र ।

६ एक विख्यात ज्योतिर्विद । इन्होंने संस्कृत भाषामें ग्रहलाघवप्रकाश नामक एक ग्रन्थकी रचना की ।

७ गङ्गा-रसविलास नामक अलङ्कार-ग्रन्थके रच-यिता ।

८ गुजरवासे हरिके पुत्र । इन्होंने धातुरत्नमाला नामक संस्कृत व्याकरण-ग्रन्थ लिखा है ।

देवदत्तक (स० पु०) देवदत्तो मुख्य ग्रन्थ इति क्व । देवदत्त-प्रधानक ।

देवदत्त बाणपेयी—एक हिन्दी कवि । ये सखनज जिलेके पुरन्दर नामक ग्राममें रहते थे ।

देवदत्त शास्त्री—हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म संवत् १८०८ की कानपुरमें हुआ था । इन्होंने वैशेषिकदर्शन-

भाष्य और ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिकेनूपराग नामक दो ग्रन्थ लिखे ।

देवदत्ताग्रज (स० पु०) देवदत्तस्य अग्रजः । भाव्य सुह । देवदत्त (स० लि०) देव पश्यति दृष्ट-अण् । १ देवता-दर्शक, देवताका दर्शन करनेवाला । (पु०) २ ऋषि-भेद, एक ऋषिका नाम ।

देवदर्शन (स० लि०) देव पश्यति दृष्ट-अणु-लृ । १ देव-दर्शक । (पु०) २ ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम । (कृ०) १ देवताका दर्शन ।

देवदर्शनम् (स० पु०) देवदर्शनप्रोक्त चलोपनि इति देव दर्शन-णिनि । वह जो देवदर्शन ऋषिप्रोक्त शास्त्र अध्ययन करते हैं ।

देवदानो (स० स्त्री०) देव शोधने भावे वृद्धः, देवस्य व दानं इति ध्रुवः स्याः सौरादित्वात् डोप । शोधवाक्यति, बड़े तरोई ।

देवदार—गुजरातके अन्तर्गत एक बड़े स्वाधोग क्षुद्र राज्य । यहाँ अधिकांश राजपूत और कोलजातिका वास है । पहले इस राज्यमें वेवेल डकैतोंका प्रभुता था । उनके अत्याचारे निरादरता देशवासों रंग आ गये थे । १८५८ ई०में ब्रिटिश गवर्मेंण्टने उन्हें यह शि-निकास बाहर किया । तमोसे यह राज्य गवर्मेंण्टकी देखरेखमें है । किन्तु ब्रिटिश गवर्मेंण्ट राज्यके आभ्यन्तरिक किसी विषयमें हस्तक्षेप नहीं करते । यह अक्षां २४° ८' ७०' और देशां ७१° ४८' पूर्वमें अवस्थित है ।

देवदार (हि० पु०) एक बहुत कंचा पेड़ ।

देवदार हीं ।

देवदारु (स० स्त्री०) देवानां दारु तेषां मिश्रत्वात् । वृक्ष-विशेष, एक बहुत कंचा पेड़ । संस्कृत पर्याय—गन्धु-पादप, पारिमद्रक, मद्रदारु, द्रुकिमि, पोड़दारु, दारु, पूतिकाष्ठ, सुरदारु, दारुक, छिन्धदारु, पमरदारु, माधव, मृतदारु, भवदारु, मद्रवृक्ष, दम्भदारु, मत्स्यदारु, सरभूरुक्ष, सुराष्ट्र और देवकाष्ठ ।

हिन्दीमें इसे किलनू, देवदार या किलनूका पेड़, पञ्जाबमें देवदार, कलान्, दादा, काशीमें दार या देवदार, हिमाचल-पञ्चसमे दियार, देवदार, ददार, तिब्बतमें गियम, तामिसमें देवदारी बेड़ी, तेहरांमें देव-

प्रवेश करती है। जिसका राजपूतानेमें नागर नामसे ८१०
 म्यान है जिनमेंसे तीन गड्डामें गिने जाते हैं। एक गड्डर
 जयपुर राज्यमें ८, दूसरा सावाड़ राज्यमें ५ और तीसरा
 मिह रणथम्बरमें ५ कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित
 है। मथान परगनेमें भी दुर्ग समन्वित, नागर नामका
 एक विख्यात ग्राम है। चक्रगानिष्ठानके चत्तर्गत
 काबुल जिनके पार्वत्य प्रदेशमें नागर नामकी एक जाति
 भी रहती है। एक समय ब्रिटिश गडमें गडके साथ उसकी
 लड़ाई भी हो चुकी है। किसी व्यक्तिने इसी नागर-
 जातिका अनुसन्धान पा कर स्थिर किया है, कि उसीके
 नामानुसार हम मागसाधरका नामकरण हुआ है। उनका
 विग्राम है कि जिस तह-पाचोनतम पायें लाग मध्य-
 पश्चिममें था वर धीरे धीरे भारतवर्षमें बग गये उसो
 तरह इस नागर जातिसे हो किसी तरह नागराक्षका
 भारतवर्षमें प्रचार हुआ होगा। किन्तु उक्तमत समर्थन
 करने योग्य नहीं है। वह नागरजाति अभी हम ज्ञात
 धर्मावलम्बी होने पर भी सभी राजपूत हैं। वे राजपू-
 तानेमें ही अपना घाटि निवास धत्ताते हैं। हम
 विज्ञानमें काबुलके छात्रांगमें जो नागराक्षर हम देगमें
 पाया है उसकी कल्पना करना भी असम्भव है।

राजपूतानेके विस्तारके समीप नागरो नामक एक
 पत्थरका प्राचीन नगर है। ईसा जन्मके कई महीने
 की यह नगर अवस्थित है, इसका पता शुभमिह कनिङ्ग
 हम साधने हम स्थानमें पाविष्कृत जिनो-विज्ञान
 (Jinnich-marked) मुद्रा द्वारा ज्ञाया है; किन्तु उसके
 मतसे इस स्थानका प्राचीन नाम ताव्यती नगरी है।

ऊपर जो सब नाम उद्धृत किये गये, उन सब
 स्थानोंमें ऐसी कोई बात पाया जा अनुसङ्गिक ऐसा कोई
 प्रमाण नहीं मिलता, जिससे नागराक्षरके उत्पत्तिस्थानका
 ठोक ठीक पता लग सके।

प्रगतवर्षके बर्तमानका मत है, कि इसका प्राचीन नाम
 रकोटनगर है। प्रवाद है, कि राजा मुमुक्षुने यह नगर
 दत्ताया था। यद्यपि हिन्दूनामोंके समर्थी बहुत प्राचीन उक्त
 हमार मुद्राके आभिर्भूत हुई हैं।

इ स्थानीय लोगोंके मतसे मागसाधरके वर्तमान नागर नाम
 पड़ा है।

उपरोक्त देशोंके सिवा बम्बई प्रदेशके पश्चिमदुनगर
 जिलेमें नागर नामक एक विस्तृत विभाग है जिसका
 भूपरिमाण ६१८ वर्गमील है। वहाँ नागर नामक एक
 ज्योतीके प्राद्वण भी रहते हैं। स्थानीय मनुष्य पश्चिम-
 दुनगरको केवल नगर कहा करते हैं। उनका कहना
 है, कि सुसतान पश्चिमदुनगर १४११ ई०में पश्चिमदुनगर
 स्थापित होनेके पहले भी यह स्थान नागर नामसे प्रसिद्द
 था। यहांके नागर प्राद्वण स्कन्दपुराणके नागरखण्डकी
 अपना प्रधान परिचायक ग्रन्थ मानते हैं। नागरखण्डमें
 लिखा है—सरस्वती नदीके तीरवर्ती हाटकेक्षेत्रके
 दूसरा नाम नागर है। नगर विभागके नागर प्राद्वण
 लोग कहते हैं, कि उक्त विभागमें सरस्वती नदीके किनारे
 जोगुण्डोनगरमें जो प्राचीन हाटकेक्षेत्र मन्दिर है, वही
 नागरखण्ड वर्णित हाटकेक्षेत्र है जिनके क्षेत्रका विस्तार
 पाँच कोस तक है। एक समय नगर या पश्चिमदुनगर
 इसी विस्तृत क्षेत्रके चत्तर्गत था। उन लोगोंका
 विश्वास है कि नागरखण्डमें जिन बहुतसंख्यक तीर्थोंका
 उल्लेख है, वे उक्त नगरविभागमें हो पड़ते थे। सुन-
 माग राजाओंके घोर पत्थाचारने उनमेंसे अधिकांश तहम
 नष्ट तथा विधुत हो गये हैं अभी सिद्धेश्वर नागनाथ,
 हाटकेक्षेत्र आदि थोड़े मन्दिर विद्यमान हैं।

उक्त नगरविभाग और वहाँके प्राद्वणोंकी बातों पर
 विश्वास करनेसे ऐसा कह सकते हैं, कि यही स्थान
 नागरखण्डोक्त प्राचीन नगरक्षेत्र है और वही नागर
 प्राद्वण और मागसाधरका नामकरण हुआ है। किन्तु
 हाटकेक्षेत्रके पण्डा लोगोंके अपने नाम लादिए करनेके
 लिए ऐसा क्षेत्रमाधारा प्रकाश करने पर भी वर्तमान
 जोगुण्डोनगरका हाटकेक्षेत्र नागरखण्डोक्त प्राचीन हाट-
 केक्षेत्र नहीं है। पूर्वतन हाटकेक्षेत्रस्थित होनेके
 वृत्त पीछे उक्त मन्दिर बनाया गया। नागरखण्डमें
 एक जगह लिखा है, कि चम्पारामा नामके एक नागर
 प्राद्वणने पुण्य नामक किसी व्यक्तिने दान ग्रहण किया
 था, इस कारण वे समाजच्युत किये गये। वे जाति
 बन्धुत्वमें परित्यक्त हो कर नगर छोड़ सरस्वती नदीके
 दाहिने किनारे जा कर रहने लगे। उनमेंसे पंचधर यादव-

प्रकार सब देवता चार वर्णोंमें विभक्त हुए हैं।
ब्रह्मदेवता के मतसे—देवताओंमें केवल ऊँ हो प्रधान हैं—

“गणेशश्च दिनेशश्च वरुणं विष्णुं शिवं शिवान्म॥

देवपटङ्कश्च संपूज्य नमस्कृत्य विचक्षणः ॥” (ब्रह्मवे०)

गणेश, सूर्य, अग्नि, विष्णु, शिव और दुर्गा ये ही देवपटङ्क हैं। इन छहोंको पूजा और प्रणाम करना जरूरतका कर्त्तव्य है।

मासविशेषसे देवताविशेषको पूजा निर्दिष्ट है।
मन्त्रमहोदधिके मतसे—

“यथा यथोद्देशेषु दुर्गा भक्तिः समेषते।

प्रापते तै रत्यर्थेन मनोऽमीड” तथा तथा ॥

शुचौ तत्तद्देह कुर्याद्देव मन्त्रपनोत्सवम्।

ऊर्जे तंषैव देशानामुत्पादनमिति सुधीः ॥

माघकृष्णाचतुर्दशी विशेषाच्छिवपूजनम्।

आदिबनापनवाहेषु दुर्गा पूज्यामवाधिपि ॥

गोपालं पूजयेद्दिवाग्रहः कृष्णाष्टमीदिने।

रामं चैव शिवे पक्षे नारासिंहं प्रपूजयेत् ॥

मजेच्छुक्लचतुर्थांस्तु गणेशं भाद्रमासयोः ॥

महालक्ष्मीं यजेद्दिवाग्र भाद्रकृष्णाष्टमीदिने।

माघस्य शुद्धवत्सरां विशेषाद्दिननायकम् ॥

या कान्तिर्यसमी शुद्धा विवारयुतां यदि।

तस्यां दिनेषं संपूज्य दद्यादर्घ्यं भूरीदितम् ॥

तत्तत् कल्पोदितान्मन्त्रान् देवतागतिवर्द्धनान्।

विशेषनियमान् कृत्वा भजेद्देवमनन्वयाः ॥

आपादो कान्तिर्भीमो वैश्वप्रियममाचरेत्।

देवसमीपे विद्वान् जप पुनादितराः ॥

एवं यो भजते विष्णुं स्वं दुर्गां गणाधिपम्।

भास्वरं भद्रया नित्यं यः कदाचिज्जीवति ॥”

‘जिस प्रकार इष्टदेवोंमें भक्ति तथा यज्ञ किये बिना मनुष्योंको भीमोत् साध हो सकता है, उसका विषय कहते हैं—मोक्षकालमें पहले देवताओंका प्रक्षपणोत्सव और मोक्षे उनका उत्थापन करे। माघमासकी कृष्णचतुर्दशी तिथिमें शिवपूजा करे। आश्विनमासमें प्रतिपदसे लेकर नवमी तक दुर्गापूजा, यावषकी कृष्णाष्टमीमें गोपालपूजा, वैशमासके शुक्लपक्षकी मयमी

तिथिमें रामपूजा, वैशाखकी कृष्णचतुर्दशी तिथिमें गणेशपूजा, भाद्रमासकी कृष्णाष्टमी तिथिमें महा-लक्ष्मीपूजा, माघमासकी शुक्ल सप्तमी तिथिमें दिननायक-को पूजा, यदि किसी शुक्लसप्तमीमें रविवार पड़ जाय तो उस वारमें गणेशपूजा करनी चाहिये। आषाढ़ और कार्तिकमासमें कोई निग्रम आचरण कर सकते हैं। देवताकी खुश करनेके लिये जपपूजादिमें तथर हो कर यदि विष्णु, रुद्र, दुर्गा, गणेश और सूर्य इनको नित्य पूजा की जाय, तो जो पूजा करते हैं, वे कामो भवसम नहीं होते।’

वर्त्तमान हिन्दुओंमें कुलदेवता, इष्टदेवता, गृह-देवता, ग्राम्यदेवता, स्थानदेवता आदिकी पूजा देखी जाती है।

कुलक्रमानुसारसे जो देवता पूजित होती आ रहे हैं, वे ही कुलदेवता हैं। शिव, विष्णु, दुर्गा इनमेंसे कोई एक किसी ज्योषीके हिन्दु परिवारके कुलदेवता माने गये हैं। जो जिस देवताके मन्त्रसे दोचित होते हैं, वे ही मन्त्र-प्रतिपाद्य देवता इष्टदेवता हैं। घरके अधि-छात्री स्वरूप वास्तु पूजित होते हैं, वही गृहदेवता हैं। ग्राम्यदेवताका कोई विशेष रूपादि निर्दिष्ट नहीं है। रघुनन्दनने लिखा है—

ग्राम्यदेवताका स्थितिकाल कलिका प्रथम २००० वर्ष है। इस समयके बादसे फिर ग्राम्यदेवताका देवत्व नहीं रहता।

“वन्देद्देव सदस्त्राणि विष्णुस्त्रिषष्ठित भूतके।

तददं जाह्नवीतोयं तददं ग्राम्यदेवता ॥”

ऐल्य आदि वृषादिके तले जिस देवताका पूजन होता है, उसीको ग्राम्यदेवता कहते हैं।

दाक्षिणात्यमें जो ग्राम्यदेवताकी अधिक प्रधानता है। वहाँके निम्नज्योषीके हिन्दुमें जो ग्राम्यदेवताके प्रति विशेष यत्ना है। वे सब ग्राम्यदेवता कहीं तो सृष्टि होन काष्ठखण्डमें और कहीं गिलाखण्डमें पूजित होते हैं।

दाक्षिणात्यके दक्षिण और पश्चिममें ये देवता अथवा अथन या अथार तथा पयिस और उत्तरायमें सट्टाह, भेरो, मधोवा, चासुण्डा, अमरा, आह, मरियाई आदि नामसे पुकारे जाते हैं। जनसाधारण विपद् पड़ने पर

नागर' नामसे प्रसिद्ध हुए। उन्हीं बाह्य नागरोंने वर्तमान नगरविभागके अन्तर्गत ओगुण्डो * नामक नगर-में पूर्वतन हाटकेश्वरक्षेत्रके आदर्श पर सरस्वती नदीके दाहिने किनारे हाटकेश्वरादि स्थापन किये और वे वर्तमान अहमदनगरकी ही प्राचीन 'नगर' मानने लगे। नागरखण्डके मतसे नगरक्षेत्र पञ्चक्रोशी हाटकेश्वरक्षेत्रके अन्तर्गत है और सरस्वती नदीके उत्तरोप किनारे पर अवस्थित है, किन्तु वर्तमान अहमदनगर ओगुण्डोसे पाँच कोस दूरमें पड़ता है। अहमदनगरके समीप सरस्वती नदी भी नहीं बहती, इस हिसाबसे नगरविभागके अन्तर्गत अहमदनगरकी नागर ब्राह्मणोंका आदि निवास नगरक्षेत्रके जैसा नहीं मान सकते। इसी स्थानसे नागराचारकी उत्पत्ति हुई है इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

तब यह कहा जा सकता है, कि प्रकृत नागरीत्यक्तित्थान कहाँ है ?

गुजरातमें एक अनुपम लिखा है, कि यहांके नागर-पण्डित लोग कहते हैं कि नागरी अक्षर उनके पूर्व-पुरुषों'से उत्पन्न हुआ है।

गुजरातमें आज भी बहुत-स्यक नागर ब्राह्मणोंका वास है। वे ही अपनी ओर सब ब्राह्मणोंसे श्रेष्ठ समझते हैं। यहां तक कि वे किसी अन्य श्रेष्ठोंसे ब्राह्मणोंका अवज्ञा यक्ष्य नहीं करते। गुजरातके हिन्दू-राजगण प्राचीन कालसे जो कर आज तक भी इन नागर ब्राह्मणोंका विशेष आदर सत्कार करते आ रहे हैं। मन्त्रिज आदि सभी राजकीय कार्योंमें नागरब्राह्मण ही नियुक्त किये जाते हैं। ये लोग स्कन्दपुराणके भागर-खण्डकी ही अपनी प्रधान परिचायक धर्मग्रन्थ मानते हैं।

नागरब्राह्मणोंकी उत्पत्तिके विषयमें नागरखण्डमें इस प्रकार लिखा है, —आनर्त्ताधिप सफेद कुशरोगसे आक्रान्त हुए। इस रोगसे घबनेका कोई उपाय न देख वे हताश हो पड़े। एक दिन उन्होंने विश्वामित्रके आश्रममें जा कर उनसे अपनी दुरवस्थाको कथा कह सुनाई। आश्रममें

जितने मुनि थे, उन्हींमें राजाकी कातरोंक्तिसे दयाद्रवित्त हो उन्हें शङ्कतीर्थमें स्नान करनेको कहा। शङ्कतीर्थमें स्नान कर राजा कुशरोगसे मुक्त हुए। बाद उन्होंने उस शङ्कतीर्थको समीप चमत्कारपुर नामक एक कोस विस्तृत एक नगर बसाया। यहां वे विविध सुरम्य उष्य बनवा कर वेदवित् कुले न. और धार्मिक ब्राह्मणोंकी ला कर बसाये लगे। कुछ समय बाद उनमेंसे चित्रधर्मा नामक एक वेदवित् ब्राह्मणने जन्म लिया। चित्रधर्माने तपस्यादि द्वारा देवादिदेवको समुष्ट किया। महादेव उनकी मनोवाञ्छा पूरी करनेके लिये पातालके हाटके-श्वर मूर्तिमें आविर्भूत हुए। मित्र भिन्न देगोंसे यात्रि-गण उस अनुपम हाटकेश्वर निद्राकी देखने आने लगे। चमत्कारपुरवासी दूसरे दूसरे ब्राह्मणोंने सोचा कि चित्रधर्माने और हम लोगोंमें कुछ भी प्रभेद नहीं है। वह चिरस्थायी कौत्ति स्थापन करके जनतामें पूज्य हुआ, तो हम लोग भी क्यों न होयें ? ऐसा सोच कर वे सबके सब बहुत कठोर तपस्या करने लगे। महादेवने समुष्ट हो कर अपना दर्शन दिया। उस समय चमत्कारपुरवासी ब्राह्मणोंमें ६८ गोत्र थे। महादेवने उन ब्राह्मणोंसे कहा, 'कुल ६८ शैव क्षेत्र हैं। मैं ६८ भागोंमें विभक्त हो कर उन सब स्थानोंमें रहना हूँ। अभी तुम लोगोंको अभीष्ट-सिद्धिके लिये मैं ६८ मूर्तियोंमें इस क्षेत्र पर आविर्भूत होऊंगा।' तदनुसार यहां ६८ देवमासाद बगये गये और एक एक गोत्र एक एक देवकी भेषामें नियुक्त हुए। (नागरखण्ड १०६ और १०७ अध्याय ।)

किसी समय आनर्त्ताधिपतिही मालूम हुआ कि उनके पुत्रके दुष्ट ग्रहके कारण विरयान्तिमय मन्त्रि-शास्त्री राज्यमें महाविष उपस्थित होगा। इस पर उन्होंने प्रधान प्रधान दैवज्ञोंको बुलवाया। दैवज्ञने राजासे उपयुक्त ब्राह्मणों द्वारा इसको शान्ति करानेको कहा। इसके पड़ले ही आनर्त्ताराजने चमत्कारपुरमें सुन्दर सोधा-वनी निर्माण कर ६८ गोत्रज ब्राह्मणोंको बसाया था। अभी उन्होंने दैवज्ञोंके कथनानुसार चमत्कारपुरमें जा कर उन ब्राह्मणोंसे अपनी भावीपुत्रके कल्याणकी शान्तिके लिये बहुत अनुरोध किया। इस पर १६ ब्राह्मण शान्ति और बीस कार्यमें नियुक्त हुए। इधर तो याग यज्ञ होने

समा. उधर पानस राजको राजधानीमें भी मनुष्यके जमीन-उपलब्धिमें बहुत धूमधाम होने लगी, किन्तु इस पानसोट प्रमोदमें पुनः निरानन्द होय पड़ा। राज-पुत्रके यह होयमें राजादे राख्य, हाथी घोड़ेके पानसा-नादि सभी चीज होने लगे। इस पर चमत्कारपुरमें ब्राह्मण बहुत गुस्सा गया। उन्होंने सोचा, कि हम लोग प्रतिमान १६ मनुष्य मिल कर यथाविधि होमादि कर रहे हैं, किन्तु उधर कोई फल देखनेमें नहीं आता। अतएव हम लोग अग्निदेवको चयन हो जाय देंगे। इस पर अग्निदेवने अपना दशन दे कर उनमें कहा, 'ब्राह्मण-गण! कौधमें या कर हमें क्यों' अर्थ ब्राह्मण दे रहे हैं। मास मासमें जो १६ आदमी होम किया करते हैं उनमें विज्ञात नामक एक ब्राह्मणके दोषसे सभी द्रव्य नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण सूर्यादि यह गण आपके दिये हुए द्रव्यको ग्रहण नहीं करते। यही कारण है कि राज्यमें रोग शोक दिनों दिन इतना बढ़ रहा है। उस बीच ब्राह्मणको छोड़ कर होम करनेमें जो राजा आरोग्य और पुत्रादि नाम कर सकते हैं तथा उनके शत्रुओं का भी विनाश हो सकता है।' यह सुन कर ब्राह्मणगण बहुत लज्जित हो कर बोले, 'किस प्रकार मालूम होगा कि हममें एक मनुष्य होमद्रव्यका दोषित कर रहा है।' अग्निने उत्तर दिया, 'होमकुण्डमें मेरे पसोनेके पागोसे खान कर सभी पविष्ट होयें, खान करनेके बाद जिसके शरीरमें विस्फोटक निकल पावेगा, समझिये, कि उसीसे द्रव्य नष्ट हो रहा है।' अग्निने कथनानुसार एक एक करके १६ ब्राह्मणोंने होमकुण्डमें पैठ कर खान लिया। उनमेंसे केवल विज्ञातके शरीरमें विस्फोटक निकला। इस पर विज्ञात लज्जासे अपना मुँह ऊपर उठा सके। निताल दुःख, रोद और लज्जासे ये जन-माना हो गये। सब पृथिवी तो विज्ञात एक बँदेविरा मड़ा पाण्डित्य है। केवल मानाके दोषसे जो उनको ऐसा दुर्दशा हुई हो। अपनी पचखा जान कर वे निज जन-भूमिमें लौट लपट्टा करने लगे।

महादेवने नन्गुट हो कर उन्हें अपना दर्शन दिया। विज्ञात उन्हें पेरों पर गिर कर बोले, 'देवादिदेव! मैं मातृदोषसे चमत्कारपुत्रवामे ब्राह्मणों और पानस-

राजसे बहुत लज्जित हुआ हूँ। जितने मैं सब ब्राह्मणोंमें यह सब प्राम कर सकूँ, उमका उपाय पाय जरा कर बता दें।' महादेवने कहा, 'कृप कान तक मय रह्यो, तुम्हारा पानसोट अवश्य ही पूरा होगा।' इतना कह कर देवादिदेव अन्तर्हित हो गये। उधर चमत्कारपुरमें महाविभाट, उपस्थित हुआ। मोक्ष गोज देवराजके पुत्र कप नामक एक ब्राह्मण और ब्राह्मणोंके साथ नागपक्षीके दिन खान करने गये। सामान्य जलमय सनभ कर उन्होंने साठसे नागकुमार कद्रमानको मार डाला। इस पर नागराजके दूतने अपने विपक्ष चमत्कारपुरमें कुण्डके कुण्ड उपस्थित हुए। विपक्षके विषम लतातसे पाशा-हृदयगिता सभी घर छोड़ भागने लगे। सैकड़ों ब्राह्मण साँधके काटनेमें परलोकको सिधारे। बाद बहुतसे ब्राह्मण अत्यन्त भयभीत हो, जिन्हें यन्त्र विज्ञात रहते थे, उनमें यन्त्र चले गये। विज्ञातने उनके दुःखको बात सुन कर कहा, 'तुम लोग डर मत करो।' वे फिर देवादिदेवके ध्यानमें निमग्न हुए। महादेवने दर्शन दे कर कहा, 'तुम्हें एक मिष्ट मन्त्र देता हूँ। इस मन्त्रके उच्चारण करनेसे ही महा विपक्ष भी विषहीन हो जायगा।

“गरं विपक्षि शोकं न दत्ताश्रितं च सज्जनम्।

मयप्रसादात्स्वया श्रितदुषार्थं ब्राह्मणोत्तमम् ॥

॥ गरं न गरं वैतत् श्रुत्वा ये पतनापन्नाः।

तत्र स्वास्वयन्ति ते वक्ष्या भविष्यति यथा सुखम् ॥

अथ प्रवृत्तिं तत्स्वानं नगरादयं धरातले।

भविष्यति सुविषयात् तब कीर्तिविशद्वनम् ॥

तथाभोऽपि यो भो विप्रो नागरः शृणुः श्रुतः।

नगरादयेन मन्त्रेन अभिमन्त्र्य त्रिणा पठम् ॥

शान्तिं शतवृष्टयमपि शृणुः श्रुतः गतः।

प्रहरिष्यति जीवनं प्रतिपद्य वदने स्वयम् ॥”

(नागरखंड ११०।०८-८२)

पश्चात् 'गर शब्दमें विपक्ष बोध होता है, किन्तु पानो मर्दा पर विप नहीं है। लव तुम 'न गरं' 'न गरं' (विप नहो' विप नहो) यह मन्त्र उच्चारण करोगे, तब उसे सुन कर जो पक्षपात मड़ा रहेगा, उसे तुम मेरे अनुपक्षमें बहुत पागोसे मार सकोगे। इस धरातल

निष्क्री वृत्तपरिधिकी मूत्र द्वारा दध्यै परिमित कर-
के उसे तीन भागोंमें विभक्त करे। उसका एक भाग मूल-
का परिमाण हो। किन्तु मूल चोकोष रहे, उस पर
विशेष ध्यान देना चाहिये। दूसरे भागमें अष्टास्रिके
मध्य और तीसरे भागमें ऊर्ध्वस्थान बनाना चाहिए।
निष्क्रीका निचला चोकोष भाग पिण्डिका छिद्रके बीच इस
प्रकार विन्यस्त रहे कि वह गर्तसे ले कर पिण्डिकाके
उच्छ्राय भाग तक चारों ओर दोख पड़े। उक्त निष्क्रीके
ऊपरदोर्ध्व होनेसे वह देशनाशक, पाखें झीन होनेसे पुर-
नाशक एवं क्षतमस्तक होनेसे सर्वाका अग्निहृत्कार
होता है।

माह्यगणको स्वरूप देवताके अनुसूक्त चिह्नयुक्त
करना कर्त्तव्य है। सूक्ष्म पुत्र रेवन्त भग्नारुद्र, नृगया-
मोहादित्युक्त, महिषारुद्र और वरुणपाशधारी तथा
हंसारुद्र; कुबेर नरवाहजारुद्र, लक्ष्म कृत्तियुक्त और
सुन्दर क्रिरोटधारी हैं। प्रथमाधिपति गणेश गजमुख,
प्रलम्ब जठर, कुठारधारी, एकदन्त तथा मूलक कन्द और
सुनील दल कन्द धारणकारी हैं। (हृदयं ५८ व ५९)

अग्निपुराणमें देवप्रतिमाका लक्षण इस प्रकार लिखा
है—भगवान् नारायणकी ओ मत्स्यावतार धारण शिवा
या, उस मत्स्याका आकार प्राप्त मत्स्यके जैसा। कूर्म-
का आकार कूर्मके जैसा; वराहका आकार मनुष्यके
जैसा चन्द्रमत्स्यविशिष्ट हो, हाथमें शङ्ख, चक्र, गदा और
पद्म हो, दाहिने और बायें पाखें में शङ्ख, लक्ष्मी वा पद्म
और श्री हो तथा चरणतलमें श्रियो और अनन्त हो।

तृविंशका वदन व्यादित, वाम करुमें दानव चत
विषत, गलेमें माना हाथमें चक्र और गदा है। इसी
अवस्थामें वे देवपतिक्षा वध विदारण कर रहे हैं।

वामनकी णाकृति कुल, मस्तक पर हस्त, हाथमें दन्त
और चार बाहु हैं। परशुरामावतारके हाथमें शय्य शरा-
सन, खड्ग और परशु है। रामायतारमें दो भुजा हैं और
उन दो भुजाओं में धनु, शर, खड्ग और शङ्ख सुयोमित हैं।
वत्सलरामकी चार बाहु लाङ्गल और गदासे सुयोमित है।
इनमेंसे बायें हाथोंके ऊपरके हाथमें लाङ्गल, नोचेंमें
सुयोभन शङ्ख और दाहिने हाथोंके ऊपरके हाथमें मूलक
और नीचेके हाथमें चक्र है।

भगवान् सुहृदी मूर्त्ति अच्युत शान्त, कान लम्बे, चन्द्र
गौरवर्ण, परिधान सुन्दर वस्त्र, आभन ऊर्ध्वपद्म है। वे
वर और अभयदान दे रहे हैं। भगवान् कल्किकी मूर्त्ति
ब्राह्मणकी है। वे घोड़ेके ऊपर बैठे हुए हैं, हाथमें धनु,
तून्, खड्ग, शङ्ख, चक्र और शर है। दक्षिणोर्ध्वमें गदा,
वामोर्ध्वमें चक्र, दोनों पाखें में ब्रह्मा और महेश्वर हैं, इसी
प्रकार वासुदेवकी मूर्त्ति बनाना चाहिये।

चण्डोके दोस हाथ हैं, जिनमेंमें दाहिने हाथों में शूल,
षष्ठि, शक्ति, चक्र, पाश, खेट, चापुध, अभय, डमरू और
शक्ति तथा बायें हाथों में नागपाश, खेटक, कुठार,
शङ्ख, धनु, चण्डा, ध्वज, गदा, आदर्ग और सुहर है।
कहाँ जहाँ चण्डोके दम हाथ भी लिखे हैं। उनमें नोचें
क्षिप्तमूर्त्ति पतित महिष है। कौंधसे मर कर उनमें हाथों-
में अस्त्र शोभते हैं। उस महिषके गलेमें एक पुरुष
निधला हुआ है, जिसके हाथमें शङ्ख है, मुखसे रक्त वमन
हो रहा है तथा उसे वंश और माना है, दोनों बाँधे
लाल हैं, गन्धा पाशबद्ध है और वह सिंहासे आक्रान्त है।
चण्डोका दाहिना चरण सिंहके कर्णपर और बायाँ पैर
चमुरकी पीठ पर है। ये त्रिनेत्रा और समष्टा हैं।

चण्डोकी एक और मूर्त्ति है जिसे भठारह बाहु हैं।
इनमेंसे दाहिने हाथों में मुख, खेटक, आदर्ग, तर्जनी,
चाप, ध्वज, डमरू और पाश है तथा बायें हाथों में शक्ति,
सुहर, शूल, वस्त्र, खड्ग, शङ्ख, गदा, चक्र और शलाका
है। अवशिष्ट मूर्त्तियाँ के १५ बाहु हैं। शङ्खचण्डादि
नो मूर्त्ति के हाथों में डमरू और तर्जनी छोड़ कर उक्ति-
खित समो भस्त्र है। शङ्खचण्डा, प्रचण्डा, चण्डोपा,
चण्डनायिका, चण्डा, चण्डवती, चण्डरूपा, भतिचण्डिका
और उग्रचण्डा इनका वर्ण यथाक्रम रोचनाम, चरुण,
चरित, नील, शुक, धूस, पीत और श्वेत है। ये समो
सिंहके ऊपर बैठे हुए मूर्त्ति द्वारा महिष और उसके
शोभा सम्भूत शङ्खशालो पुरुषका, कच (बाल) प्रहण कर रही
है; इनका नाम नवदुर्गा है। ललितार्के बायें हाथमें स्तम्भ
और मस्तक तथा दाहिने हाथमें दर्पण है। लक्ष्मीके
दाहिने हाथमें पद्म और बायें हाथमें श्रीकल है। सर-
स्वतीके हाथमें पुस्तक, अम्बामाला और वीणा है। जाङ्गवी-
के हाथमें कुम्भ और पद्म है, उनका वर्ण श्वेत और

पर आजसे तुम्हारा कीर्ति वरुँक यह स्थान 'नगर' नामसे प्रसिद्ध होगा । जो कोई विशुद्ध नागर ब्राह्मण इस नगर मन्त्रको उच्चारण करके तीन बार जल ले कर मरणामय प्राणोंके मुखमें देगा, उसके भी प्राण तुरन्त लौट आयेगे । इस मन्त्रके उच्चारण वा स्मरण करनेमें स्थावर, जड़म, कृत्रिमार्थ सभी धिय जाते रहते हैं । इतना कह कर भगवान् चट्टन हो गये । विज्ञात उन ब्राह्मणोंको साथ ले चमत्कारपुरमें आये । मय कोई मिल कर उच्चैः स्वरसे 'नगर' 'नगर' यह शब्द बोलने लगे । सिद्धमन्त्र सुन कर चमत्कारपुरके सभी विषय निर्बिषय हो पड़े । एक भी भाग न सका । हजारों मर्ष मारे गये । सभी विज्ञातके सम्मानका पारावार न रहा । जो एक दिन कलावनत-मुखसे दुःखित हो देग छोड़ गये थे, आज उन्हींके हृदयमें आनन्दका स्रोत बहने लगा । आज उन्हींसे चमत्कार-पुर 'नगर' नामसे प्रसिद्ध हो गया और वहाँके ब्राह्मण नागर कहलाने लगे ।

नागरखण्डके मतसे—नगरका पहला नाम चमत्कार था । राजा चमत्कारने अनेक कोष निर्माण कर वहाँ ब्राह्मणोंको बसाया और उन्हींके नाम पर चमत्कारपुरका नामकरण हुआ । इस स्थानका दूसरा नाम षाटक्षेत्र-क्षेत्र भी है जो पानर्षा देशके नैर्ऋतीकोणमें अवस्थित है । यह पुष्प-धाम पाँच कोष तक विस्तृत है । (नागर-खण्ड ४१५-५२ ।) इसके पूर्वमें गयागोप, पश्चिममें विष्णुपद और दक्षिण-पश्चिममें गोकर्णेश्वर है ।

(नागरखण्ड १६३-६४ ।)

नागरखण्डके दूसरे स्थानमें लिखा है—उक्त क्षेत्र पञ्चकोश होने पर भी नगरका आयतन केवल एक कोश है । (नागरखण्डः ११६३-६४ ।) उक्त पञ्चकोशो षाटक्षेत्रमें भृगुक्षेत्र, गोकर्णेश्वर, गद्यामीय, मार्कण्डेयेश्वर, चित्रेश्वर, धुम्रमारीश्वर, ययातोश्वर, कलनेश्वर, कपिलेश्वर, पानर्षाश्वर, शूद्रक्षेत्र, भजपालोश्वर, वाणेश्वर, लक्ष्मणेश्वर, विज्ञातेश्वर, अश्वारिपतो, केदारेश्वर, हयमनाथ, सत्यसन्धेश्वर, भटेश्वर, धर्मराजेश्वर, मिटाक्षेत्र, विद्याक्षेत्र, अमरकेश्वर, भटेश्वर, भृगुश्वर, पुष्पादित्य आदि देवमन्दिर हैं और पातालमण्डप, गङ्गा-यमुना, प्राचीनरक्षसी, नागतीर्थ, यक्षतीर्थ, शृगलीय,

Vol. X. 158

लिङ्गभेदोद्भवतीर्थ, रुद्रावर्षा, रामहृद, शक्रतीर्थ, मातृ-तीर्थ, सुधारतीर्थ आदि सैकड़ों तीर्थ हैं ।

नागरखण्डके मतसे—

नैमिषारण्य, केदारनाथ, पुष्कर, भूमिजाङ्गल, वाराणसी, कुशसेव, प्रभास और षाटक्षेत्र इन षाठ सर्वप्रधान पुष्पक्षेत्रोंमें जो यहापूर्वक स्नान करता है उसे सर्वतीर्थ-स्नान करनेका फल मिलता है । इन षाठ क्षेत्रोंमें षाटक्षेत्रक्षेत्र ही प्रधान है । यहाँ पितृकी आज्ञामें सभी तीर्थ परिचित हैं । कलिकालमें सुसुप्त व्यक्तिसाम्राजा ही सर्वतीर्थ-वेष्टित यह षाटक्षेत्र क्षेत्र सेवनीय है ।

(नागरखण्ड १०३५-१०४ ।)

बिलसन साहबने अपने भारतीय जातितत्त्व (Indian Caste) नामक ग्रन्थमें लिखा है—

“नागर शब्द पुरमाचक नगर शब्दका विशेषण रूप है । नागर कहनेमें गुजरातके प्रधान ६ ग्रामोंका बोध होता है । उक्त प्रदेशके उत्तर-पूर्व भागके किसी किसी नगरसे उनका नामकरण हुआ है ।” (१)

पहले ही कहा जा चुका है कि नागरखण्डके मतसे विज्ञात द्वारा षाटक्षेत्रका क्षेत्र जय विषय होन हो गया, तब उसका नाम नगर रखा गया और उससे जो ब्राह्मणगण इस देशमें लाये गये थे, उनके वस जानेसे ही नगर नाम पड़ा था । (२)

गुजरातके नागर ब्राह्मण कहते हैं, कि आनन्दपुर वा वर्तमान बड़ानगर नामक स्थान ही उनका आदि निवास है जो गुजरातमें अन्तर्गत काङ्गो जिलेमें अवस्थित है । यहाँ वह बरोदा गायकवाड़-राजके अधिकारमें था गया है । कोई कोई पुरावित् आनन्दपुर भी उसका

(1) "The word Nagar is the adjective form of Nagar, a city. It is applied to several (six) principal castes of Brahmans in Gujrat, getting their designations respectively from certain towns in the north eastern portion of the province."

(Wilson's Indian Castes, Vol. 11. p. 98.)

(2) नागरखण्डमें भी लिखा है कि विज्ञातके आनेके पहले वहाँके उरवसे षाटक्षेत्रक्षेत्र जनमुक्त हो गया था । पीछे विज्ञातने भिन्न भिन्न स्थानों पर ६४ गोत्रके ब्राह्मणोंको वा कर वहाँ बसाया । (नागरखण्ड १०८ अ०)

नाम वतमान हैं। (३) ज्ञान पट्टा है कि ममात्रयुत याज्ञा नागर भोगनि सक्त नगरके नामानुसार जब धर्मस्थ नगर बसाया, (४) तब धानन्दपुरवासी नगरोंने अपने निवासभूमिको पृथक् समाप्तमें लिये उसका बहानगर नाम रखा था।

वर्तमान बहानगरमें आज भी प्रसिद्ध हाटकेसर मन्दिर विराजमान है। आज भी यहाँके नागर ब्राह्मण अपने अधिपति गायत्र्याहुके कल्याणके लिये शान्तिपाठ किया करते हैं। आज भी पश्चिम भारतके हजारों यात्री यहाँ आया करते हैं।

बहानगर और उसके चारों ओर पञ्चकोशके भीतर नागरगण्डवर्णित पुरातन देवमन्दिर और तीर्थ आज भी विद्यमान हैं (५)। यहाँको सरस्वती नदी स्थानीय लोगोंके निकट गङ्गाको भाई पुण्यप्रदा है। जिस कदमाक नामक नागकुमारके कल्याणयुक्त पूर्वतम ब्राह्मण गृहस्थानो हो गये थे, उसी कदमाकके मन्दिरका भग्नावशेष इस पञ्चकोशी हाटकेसरक्षेत्रके मध्य सिंहपुर नामक स्थानमें सरस्वती नदीके किनारे आज भी दृश्यकण्ठके नयनों आकर्षित करता है। नागरब्राह्मणोंका कहना है, कि एक समय ऐसा था, भारतके सभी स्थानोंमें जागो तीर्थयात्री नगर वा हाटकेसरक्षेत्रमें आया करते थे। यहाँकी पण्डा लोगोंके चतुर्धर भारतवर्षके सब जगह यात्राके चतुर्विधाभने जाते थे। सब पूजिये तो आज भी दाक्षिणात्यके नाना स्थानोंमें नागर ब्राह्मण देखे जाते हैं। ये लोग आज भी केवल नागराक्षरमें ही अपने धर्मपत्र लिखा करते हैं। यहाँ तक कि दूरस्थ ब्राह्मण और कर्षाट चक्षुषमें—जहाँ दूसरे कोई जाति नागरा-

क्षरकी काममें नहीं जाती,—वहाँ उन नागर ब्राह्मणोंके कई गतायुद्ध रखकर अपने मातृभावा छोड़ दो है मधी, किन्तु ये अपने आतीय मगराक्षरको आज भी छोड़ नहीं मर्क है। आज भी ये नागराक्षरका व्यवहार करते हैं। प्रसिद्ध फोडलटन टोक साक्षुषने विजयनगर और धानगुण्डेके निकटवर्ती नागर ब्राह्मणोंके विषयमें लिखा है, "विजयनगर और धानगुण्डे राजाधोंके प्राधान्य जानमें ये लोग इस चक्षुषमें आकर रहने लगे, ये कषाडो भाषा बोलते हैं, किन्तु पुस्तकादि लिखते समय देवनागरी चक्षर को काममें लाते हैं" (६)।

पहले जो लिख चुके हैं, उसे आयोगाक्त गोरसे पढ़नेसे यह निःसन्देह स्थिर हो जायेगा, कि तिजान द्वारा जो ब्राह्मण लाये गये थे, वे नगर नामक पुरमें रह कर नागर (७) नामसे प्रसिद्ध हुआ। उसको व्यवहृत भाषा नागर और चक्षर नागर वा नागरी नामसे जननाधारणमें प्रचलित हुआ। उनके साथ नागराक्षरका जो विमिश्र मंथन है, वह बहुत दिनोंमें विदेशवासी नागरोंका व्यवहृत चक्षर हो प्रकट उदाहरण है।

नगरके पुरवासी नागरब्राह्मण धर्मपरायण प्राचीन हिन्दू राजाधोंके समयमें गुजरातमें सब जगह फैल गये। उनमेंसे कितने तो कोमनाथ पत्तनमें आकर रहने लगे। प्रभाव वा कोमनाथपत्तनका प्राचीन नाम देवनगर भी है। देवनगर देखो। इसी देवनगरके वासी नागर ब्राह्मणोंने जिस चक्षरसे अपने धर्मपत्रादिकों लिपित किया, मातृम पट्टा है, कि परवर्ती कालमें यही देवनागर नामसे प्रसिद्ध हुआ। चक्षर नागरी लिपिको बहु विधुति होनेसे चक्षर इससे अधिको देवनाग्रात्म्य स्वरूप ग्राह्योय प्रत्य लिखे जानेंसे महिमापाचक देवशब्दके योगसे नागरी 'देवनागरी' नामसे प्रसिद्ध हुई।

(१) Epigraphia Indica, Vol. I, p. 295.

(५) नागराक्षरमें भी लिखा है, कि धर्मस्थयुत नगरवासी और उनके सहचरोने सरस्वती नदीके दाहिने किनारे नागरेश्वर और नगराक्षर नामक मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा की। (नागराक्षर १५५ अ०) इस विमिश्रित ब्राह्मणगोत्री को वहाँ की नगर नामक एक पुर बसाया था, वह कलसम्भव नहीं है।

(६) Campbell's Bombay Gazetteer, Vol. VII, and List of the Antiquarian Remains in the Bombay Presidency, by J. Burgess, p. 169.

(७) Indian Antiquary, 1874, p. 220.

(८) नागर ब्राह्मण आज भी अपनेको सब ब्राह्मणोंके ऊँचे वतलाते हैं। विष्णुके प्रमाण स्वरूप ये एक स्त्रीक ३७ प्रकार देते हैं—

"अथ गान्धर्वः पञ्चगव्यं यथा पशुमसमुद्भवम् ।

विद्यानामिह सर्वेषां तथा ब्रह्मा हि मानवः ॥"

(नागराक्षर १६८ अ०)

नागराक्षरकी उत्पत्ति कबसे हुई यह स्थिर करना बहुत कठिन है। इस देखके ब्राह्मण पण्डितोंका विश्वास है, कि जबसे लिखनेकी प्रणालीकी सृष्टि हुई है तभीसे नागराक्षरका उत्पत्तिनिर्णय करना होगा। उदयपुर वासी प्राचीन लिपिशास्त्रके प्रणेता पण्डित भोगेश्वरजी भी यही मत प्रकाश किया है, किन्तु हम लोगोंके ख्यालसे उक्त पण्डितोंका मत समाचीनता प्रतीत नहीं होता।

जिन सब प्राचीन ग्रन्थोंमें भारतीय प्राचीन लिपियोंका नामोल्लेख है, उन सब ग्रन्थोंमें नागरी लिपिका कुछ भी उल्लेख नहीं है। उदाहरण स्वरूप यहाँ कुछ प्रमाण उद्धृत करते हैं—

प्राचीनतम बौद्धग्रन्थ ललितविस्तरमें लिखा है, विष्णामित्राक्षरकाचार्य मिहार्थको जब लिपि मिलाने प्राये; तब मिहार्थने शिक्षा-यष्टणके पहले ही मुक्तके निकट निश्च ४४ प्रकारकी लिपियोंका परिचय दिया था—यथा १ ब्राह्मी २ खरोष्टी ३ पुष्करसारी ४ अङ्गलिपि ५ बङ्गलिपि ६ मगधलिपि ७ माल्लवलिपि ८ मसुण्डलिपि ९ अङ्गुलीयलिपि १० शकारलिपि ११ ब्रह्मवक्त्रलिपि १२ द्राविडलिपि १३ किनारिलिपि १४ दक्षिणलिपि १५ उत्तरलिपि १६ मन्थ्यालिपि १७ पशुलोमलिपि १८ चर्ष्वदेवलिपि १९ दरदलिपि २० खासलिपि २१ चीनलिपि २२ हण्डलिपि २३ मध्याक्षरविस्तरलिपि २४ मुण्डलिपि २५ देवलिपि २६ नागलिपि २७ यक्षलिपि २८ गन्धर्वलिपि २९ किन्नरलिपि ३० महोरगलिपि ३१ अक्षरलिपि ३२ गुरुलिपि ३३ गुरुचक्रलिपि ३४ चक्रलिपि ३५ बाहुमरुलिपि ३६ भीमदेवलिपि ३७ अन्तरीक्षदेवलिपि ३८ उत्तरकुक्षदीपलिपि ३९ अक्षरगोडलिपि ४० पूर्वविदेवलिपि ४१ उत्तरेपलिपि ४२ निक्षेपलिपि ४३ त्रिक्षेपलिपि ४४ प्रक्षेपलिपि ४५ सागरलिपि ४६ वक्षलिपि ४७ लेखप्रतिक्षेपलिपि ४८ पशुहुतलिपि ४९ आक्षरावर्त्तलिपि ५० गणनावर्त्तलिपि ५१ अक्षिपावर्त्तलिपि ५२ निक्षेपावर्त्तलिपि ५३ पाटनिक्षितलिपि ५४ द्विचक्रपदसन्धिलिपि ५५ दशोक्षरपदसन्धिलिपि ५६ अष्टाक्षरिणीलिपि ५७ सर्ववृत्तसंयोज्यलिपि ५८ विद्यानुलोमलिपि ५९ विमिश्रितलिपि ६० अक्षितपदमा ६१ रोचमाना परपोषणलिपि ६२

मधौपधिनिखन्दा ६३ मन्सारसंयष्टणी चोर ६४ मन्भूतवृत्तयष्टणीलिपि। (उद्धितविस्तर १० अ०)

जैनिर्णयके प्राचीनतम एकादशाक्षरके मध्य समवाय नामक ग्रन्थ अङ्गमें लिखा है, कि आदिभिन मृगम देवकी लङ्घकी ब्राह्मीके आधार पर जो लिपि तैयार हुई, वही ब्राह्मी कहलाई। ब्राह्मी आदि १८ प्रकारकी लेखन प्रक्रियाके नाम ये हैं—१ ब्राह्मी २ यवनानो ३ दागपुरिका ४ खरोष्टी ५ पुष्करशारिका ६ पार्वतोया ७ वक्षतुरिका ८ अक्षरपुस्तिका ९ भोगवयखा १० वेयणतिहा ११ निराहदया १२ बङ्गलिपि १३ गणितलिपि १४ गन्धर्वलिपि १५ आटर्मलिपि १६ माहिषरलिपि १७ दामलिपि चोर १८ योनिदिहलिपि। (समवायसूत्र)

जैनिर्णयके ग्रन्थ उपान्व प्रज्ञापनासूत्रमें भी १८ प्रकारकी लिपियोंका उल्लेख है। यथा—१ ब्राह्मी २ यवनानो ३ दागपुरी ४ खरोष्टी ५ पुष्करशारी ६ भोगवहिका (१) ७ पार्वतोया ८ अक्षरकरी ९ अक्षरपुस्तिका १० वेयनिया (१) ११ निहदया १२ बङ्गलिपि १३ गणितलिपि १४ गन्धर्वलिपि १५ आटर्मलिपि १६ माहिषरी १७ द्राविडी चोर १८ योनिन्दालिपि (८)। अब कोई कोई यह भी कहते हैं, कि उपरोक्त लिपियोंमेंसे देवलिपि, भीमदेवलिपि चोर अन्तरीक्षदेवलिपि इन तीन प्रकारकी लिपियोंका उल्लेख तो है, पर इनमेंसे कौन देवनागर हो सकता है तथा नागर नाम देवलिपिके पड़ा है वा भीमदेवलिपिके। किन्तु अब हम लोग नागर शब्दका कोई उल्लेख नहीं पाते, तब किंचित देव शब्दको लेकर नागरी लिपिकी कल्पना करें वह भी युक्तिसिद्ध नहीं है।

(८) टीकाकार मलयगिरिने लिखा है—

“ब्राह्मीयवनानोयादयो लिपिमेदास्तु सप्रदायाद्वेदेनाः।” जैनिर्णयके मतके महावीरके समयमें ही अङ्गसमूह प्रचलित था और वह महावीरके निर्वाणके १६० वर्ष बाद अर्थात् ३६३ ई०सनके पहले पाटलीपुत्रके श्रीसंघमें संरक्षित हुआ। चंद्रिय समय मान लेने पर भी यह कह सकते हैं, कि ई०पू०के २वीं शताब्दीके पहले नागरी लिपिका प्रचार नहीं था। समवायाङ्गमें “यवनःखिया” का जो उल्लेख है, वही पाणिनि-वर्णित यवनानी लिपि समझी जाती है।

देवयानपथसे ब्रह्मलोककी जाते हैं। यही पथ ब्रह्मलोक-
गमनका प्रसिद्ध पथ है। साधक प्रथमतः अर्चि तेजः-
सम्पन्न होते हैं, पीछे अर्चिसे दिनदेवतामें जाते हैं।
ब्रह्मलोक जानिका केवल एक ही पथ है जिसका नाम है
देवयान। उपासक इसी देवयान पथका अवलम्बन करके
प्रथमतः अग्निलोककी गमन करते हैं। इसके सिवा और
भी अनेक प्रकारके पथोंका विषय उल्लिखित है। अनेक
प्रकारके पथ होनेसे अब यह सन्देह होता है कि वे
सब पथ एक हैं वा भिन्न भिन्न? क्या नृत्तिमें सबसुख
विभिन्न पथोंका उल्लेख है अथवा एक ही पथ नाना
प्रकारके विशेषणोंसे विभक्त हुआ है? सामान्य दृष्टिसे
देखनेसे मालूम पड़ेगा कि वे सब पथ विभिन्न हैं, पर
बहुत गौर कर देखनेसे वे सब पथ एक हैं, विभिन्न नहीं
ऐसा जान पड़ेगा। ब्रह्मजिज्ञासुमात्र ही पहले अर्चिः
पीछे अथ इस प्रकार गमन करते हैं। कारण यह है, कि
वही पथ प्रथित ब्रह्मलोकके मध्य प्रसिद्ध है। छान्दोग्य
उपनिषद्की पञ्चाग्निविद्याप्रकरणमें लिखा है कि जो
परस्पर रक्ष कर रहा और तपको उपासना करते हैं,
वे अर्चि रादि पथों को कर जाते हैं। किन्तु यह सभी
उपासकोंके जानिको पथ नहीं है। शास्त्रमें जिन सब
उपासनाओंके फलस्वरूप निर्दिष्ट गति अभिहित नहीं
हुई है, उन्हीं सब उपासनाओंके उपासक अर्चि रादिको
पाते हैं। भिन्न भिन्न स्थानोंमें भिन्न भिन्न पथबोधक
शब्दोंके उच्चारित होने पर भी वस्तुतः उन सबका अग्नि-
पथ एक है अर्थात् पथ एक है। यही एक पथ विभिन्न
स्थानोंमें विभिन्न विशेषणोंसे विशेषित हुआ है। उन
विशेषणोंका विशेषभूत पथ एक है, अधिक नहीं।
हरएक जगह वह शास्त्रवर्धित देवयान पथके जैसा
जान पड़ता है अर्थात् वे सभी पथ एक हैं। सुतरां
एकलोक पथके साथ अन्यलोक पथ विशेषणोंका
सम्बन्ध होना ही संज्ञित है। सभी शास्त्रोंमें स्तिर
हुआ है कि ब्रह्मगमन पथ एक है। किन्तु जिस जिस
प्रकरणमें जिस प्रकार पथ विशेषण वा पथबोधक शब्द
उच्चारित हुए हैं वे सभी इसी ब्रह्मपथके विशेषण हैं।
नृत्तिने देवयान और पित्रयान इन दो पथोंका वर्णन
कर पीछे कहा है, कि उभय पथभट्टियोंका स्थान चात

कष्टकर है और वह तृतीय पथमें गिना गया है। नृत्तिके
उक्त कष्टदायक तृतीय स्थानकी बात कहनेसे ही जाना
जाता है कि पित्रयान पथसे अतिरिक्त देवयान नामक
एक दूसरा पथ है और वह पथ अर्चि आदि अनेक
पथोंयुक्त हैं। इसका तात्पर्य यह कि अभ्यस्य यदि
अनेक होते, तो नृत्ति तृतीय पथका होना नहीं बनता।
अर्चि नृत्तिमें लिखा है, कि इन पथके अनेक पर्व वा
विभाग हैं। उपासक लोग ब्रह्मलोकमें जाते हैं। उनका
वह ब्रह्मलोक जानिका पथ किस प्रकार सन्निवेश विशिष्ट
है वा किस प्रकार एक ही पथ नृत्तिमें नाना विशेषणोंसे
विशेषित हुआ है? इसके उत्तरमें ऐसा सूत्र विनिवद
हुआ है—

“वायुमन्त्राद्विशेषविशेषाद्भा” (वेदान्तसूत्र ४।३।२)

ब्रह्मलोक जानेवाले देवयान पथ या कर पहले
अग्निलोकमें, पीछे वायुलोकमें, वरुणलोकमें, इन्द्र-
लोकमें, प्रजापतिलोकमें और ब्रह्मलोकमें, पाते
हैं। इसमें प्रथमतः अग्निलोकगमनका उल्लेख
है। अन्य नृत्तियोंमें प्रथमतः अर्चिः प्राप्तिका
विषय लिखा है जिसे देखनेसे प्रतीत होता है कि अर्चिः
शब्द और अग्निलोक दोनोंका एक अर्थ है। अर्चिः और
अग्नि शब्दसे वर्णन (भागकी ली)का बोध होता है,—
सुतरां अर्चिः और अग्नि दोनोंका एक अर्थ होना किसी
प्रकार असंभव नहीं है। छान्दोग्याल देवयान पथके
वर्णनमें वायुलोकगमनका उल्लेख नहीं है, किन्तु वायु-
लोक और देवयान पथका एक पर्व है,—छान्दोग्यमें उस-
का उल्लेख नहीं है, वह किस प्रकार हो सकता है? इसका
उत्तर यही है, कि उपासकगण पहले अर्चिको पाते हैं,
अर्चिसे पछे, अथवा वायुवर्णनाथ वा यज्ञपथ, वायुवर्णनाथ
पथसे उत्तरायणके ऋः महीनोंको, उत्तरायणसे संवत्सर,
संवत्सरसे आदित्यकी, आदित्यसे चन्द्रमाकी, चन्द्रमासे
विद्युत्की प्राप्ति होते हैं और वहाँ अमानव (अर्थात्
देव) हो जाते हैं। इन सब नृत्तियोंमें जो संवत्सर और
आदित्य शब्द हैं, उन दोनोंके मध्य वायुका सन्निवेश
है अर्थात् संवत्सरसे बाद वायुमें सम्भूत होते हैं और
पीछे आदित्यलोककी जाते हैं। इस नृत्तिने सामान्यतः
वायुलोक जानिकी कथा कही है, किन्तु किस प्रकार

इस प्रसंग में जो प्रमाण उद्धृत करने वसपा गुरु है, कि भारतवर्ष में इतिहास प्रमाणों में (१२वीं शताब्दी में) महादेव प्रकाश की अवधि में भाषाओं में से नागर, देवनागरी और देव नामक तीन स्वतन्त्र भाषाया उत्पन्न किया है। जो वस्तुतः है, कि जिस प्रकार तीन भाषाओं 'ही' उन्नी प्रकार तीन तरह के अक्षर भी प्रयुक्त थे। अनन्तविस्तर में जिस मोमदेवलिपिका वर्णमाला है, या तो उसकी देव नाम या देवभाषा के अक्षरों में भाषा समानता हो सकती है।

किन्तु देवलिपि लक्ष्मण ने नागराक्षरका ही मोम दे सकता है, ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता। नागर लक्ष्मण ने जिस प्रकार 'देवनागरका' नाम होता है, उस प्रकार देवनागर लक्ष्मण ने नहीं होता।

६० मनुके १२ शताब्दी के अन्त में अनन्तविस्तर रचा गया। कैलियों का धर्म उपाङ्ग प्रमाणनामक ग्रन्थ (१२ कालकाव्य) द्वारा प्रणीत हुआ। खरतरगच्छीय पद्यात्मक मल्लिकार्जुन-निर्वाणके १०६ वर्ष छोड़ि श्यामर्षि भाविर्भूत हुए। जैन शास्त्र देखो। पतः यह स्वीकार करना पड़ेगा, कि प्रायः दो हजार वर्ष पहले किसी अक्षरका नागरी नाम नहीं था।

यह प्रत्यक्ष उक्त सकता है, कि नागर वा नागरी नाम कभी पहले प्रयुक्त प्रचलित हुआ।

कैलियों के धर्मशास्त्र नन्दोद्यम में हम लोग सबने पहले नागरीलिपिका उत्पन्न पाते हैं। कैल पण्डित लक्ष्मण-वसुधामणि ने अक्षरित कल्पसूत्रकल्पद्रुमकविका नामक कल्पसूत्रकी व्याख्या में लिखा है—

“यद्यप्यक्षरमन्वेन ज्ञायो दक्षिणवर्णन प्रकटय निगमो दर्शिताः। नन्दोद्यमे उक्ता यथा—१ हंमलिपि २ भुल्लिपि ३ यक्षलिपि ४ राक्षसोलिपि ५ उद्योलिपि ६ यावलिपि ७ तुल्योलिपि ८ कोरोलिपि ९ दादिल्लोलिपि १० गैर्योलिपि ११ साल्योलिपि १२ नडोलिपि १३ नागरीलिपि १४ पारमोलिपि १५ नाटोलिपि १६ पलि मिश्रलिपि १७ पाण्डोलिपि १८ मोलदेमी। देव-विमोचक्या अपि लिपयः तद्वया—१ माटी २ खोटी ३ टाटली ४ कालली ५ गुरी ६ मोरली ७ मरहली ८ कोटली ९ पुरामानी १० मागली ११ मंजली १२ हादी

१३ कोरी १४ हम्मीरी १५ परमोरी १६ ममी १७ मानवी १८ महावीरी इत्यादयो लिपयः पुनश्चातो गणितकला दर्शिताः बाणभूषण सुन्दरी प्रतिनिधि दर्शिताः।

नन्दोद्यम और नन्दोद्यमकी रचनाप्रमाणों प्रायः एक मो है। जैनशास्त्रों में कहते हैं, कि कल्पसूत्र के एक पक्ष में नन्दोद्यम रचा गया। कल्पसूत्र आनन्दपुर में (वर्षमान प्रमाणमें) ब्रह्मराज भूषणके कहने में खरनिर्वाणके ८८० वर्ष छोड़ि (४५१ ई० में) सङ्कलित हुआ। प्रायः उन्नी समय या उन्नी एक पक्ष में नन्दोद्यम भी सङ्कलित हुआ होगा। इस विषय में ४थी या ५थी शताब्दी में हम लोग नागरीलिपिका सम्मान पाते हैं। ४थी या ५थी शताब्दी के पूर्व वर्षों किसी ग्रन्थ में नागरी लिपिका आज भी कोई सम्मान नहीं मिलता। इस लोकोका भी अनुमान है, कि ४थी शताब्दी के पहले किसी विवेक लिपिका नागरी नाम नहीं हुआ।

जय ४थी शताब्दी के पूर्व वर्षों प्राचीन ग्रन्थों में नागरी लिपिका कोई उल्लेख नहीं मिलता तथा कवच नागराक्षरका वारम्भ हुआ है, उसका भी जय कोई निश्चय नहीं है, तब भारत के भिन्न भिन्न स्थानों में जो नागराक्षरों में उत्कर्ष प्राचीनतम गिनानिधि, सास्त्रशास्त्रादि तथा नागरी अक्षर में लिखित प्राचीन हस्तलिपि भाविष्कृत हुई हैं वे जो प्रमाणस्वरूप हैं। पतः उन्नी को यहाँ दिखाना देना उचित है। केवल दो एक प्राचीन खोदितलिपि वा हस्तलिपि में काम नहीं चल सकता। एगिप्टीयन लिपि की वारम्भ में न कर बाज तक प्रत्यक्षविदों के ग्रन्थों जितनी खोदितलिपियाँ वा हस्तलिपियाँ संप्रेषित हुई हैं तथा निज सम्मान द्वारा जहाँ तक भाविष्कृत हो सका उनके अक्षरविन्यासकी गोर में देखना एकान्त भावश्यक है। मुनरा नागराक्षर के पूर्वोपर लिपिविन्नासका स्थिर करना बहुत अनुमान और अशुभ है।

उपस्थित छोटी कोज में जहाँ उन्नीका यहाँ पर अक्षरों में वैदिक समय में भारतवर्ष में लिखित या उद्धृत आज तक भी या मत है, कि वैदिक

अन्यथायें पुनीं : इमी बीच इन्हे मानुका दण्ड धारण कर दोनोके साथ एक साथ कर दिये। गर्मिहाति अन्तो-
मि देवा नहीं। और जमने मिटव कर देवयानोके कण्ठ
पर नथि। इस पर दोनोके भयङ्ग दृष्टा और गर्मिहाति
देवयानोको कृपामें टवने दिया। गर्मिहाति यह समझ
कर कि देवयानो सर गई, अपने घर चली आई। इमी
बीच मनुक राजासे पुत्र यथाति मिहार देनेने पाये थे।
अन्तमें देवयानोको कृपामें मित्राना और समने दो पार
जाते करके यह चयने मगरही और चले गये। हार
देवयानोके पुत्रिका नामक एक दामोने चयना मय
पुत्राना राजाचार्यके पास कहना भेजा। पुत्रिकाके
दौत्य-ममामें पदुत कर राजाचार्यके सारी बातें कह
गुनाई। राजाचार्य यह सब या कर देवयानोके पास
पाये और पर चलमिडे जिने बहुत कष्ट, पर समने एक
भो न समी और माय माय यह भो कष्ट, 'बाहे में रो
निहाति हो पाहे न हो, हममें कोई चति नहीं', में
पह दोनोको राजधानीमें बहावि न जाऊँगी, क्योंकि
गर्मिहाति बहुत जमी कटो बातोंमें पायका तिरस्कार
दिया है और कहा है, कि तुम्हारा पिता दोनोका
मुनिपाठक और गावक है।'

यह सुन कर राजाचार्य भी दोनोको राजधानी
को हूँ चलाय जानिको तैयार हुए। यह सबर जब हय-
यानोकी मगो, तब ये राजाचार्यने बहुत विनति करने
करी। राजाचार्यके कष्ट, देवयानोको प्रमथ करो। तब
हययानो देवयानोके पास आकर समे प्रमथ करनेको पीटा
करने लगी। देवयानोने कहा, 'मेरी इच्छा है, कि
गर्मिहाति मनुक और कन्याओंके साथ मेरी दामो हो।
जहाँ मेरी पिता मुझ दान करे यहाँ यह मेरी दामो हो
कर जाय।' हययानो इस पर मन्थत हुए और लक्ष्मि
मन्थर कन्याओंके साथ गर्मिहाति देवयानोकी दामो
मन्थर राजाचार्यके पर भिन्न दिया। एक दिन देवयानो
रुपना गई दामिनीके साथ जमी मममें छोड़ा कर रही
थी, इमी बीच राजा यथाति वहाँ या पहुँचे। अपने
देव कर देवयानोने कहा, 'मेरा बहुत भाव्य है, कि दो
रत्ना कन्याओं और गर्मिहाति साथ मात्र में पावकी
चयीना होती है, पाव मंग मला और मर्ता होना

को हार करे। राजा यथातिने इसे को हार कर दिया
और वह सबर राजाचार्यको चला भेजा। राजाचार्यने
पा कर यथातिके साथ देवयानोका विवाह कर दिया।
मेरे पदुनेमें मन्था प्रकारके लक्ष्मण या कर यथाति
देवयानो पाटिके साथ चयमी राजधानीकी चले गये।
कुछ दिन पीछे यथानिमें गर्मिहातिको एक पुत्र हुआ। देव-
यानोने गर्मिहातिका पुत्र देव कर समने पूजा, कि तुममें
कामनुष्य हो कर चलाय पाचरव दिया है। इस पर
गर्मिहाति बोली, कि यह मनुका मुझ एक मित्रकी प्राप्ति-
ने हुआ है। देवयानो इस पर विमाम करके पुत्र रह
गई। इनके उपरान्त देवयानोके समने बहुत और तुर्बु
मामके दो पुत्र और गर्मिहातिने समने दूध, चला और
पुत्र ये तीन पुत्र हुए। यथानिमें गर्मिहाति तीन पुत्र
हुए हैं, यह जान कर देवयानो चलाया कुचित दुई और
समने चयने पिताके पास बहुत मन्थारभेजा। राजा-
चार्यमें भी जोधमें पा कर यथानिकी साथ दिया कि,
'तुमने धर्मच हो कर चयम दिया है, इसलिये तुम्हें
बहुत मीठ बुढ़ाया चरेगा।' यथातिने राजाचार्यके
विनयवृत्तक कहा, 'मनवन्। मैंने कामयना हो कर ममा
नहीं किया, दामर दुष्टता गर्मिहाति मन्थमनो होने
पर मनु रसाके लिये प्रायना को। समको प्रायनाको
पक्षो हार करना मैंने पाव समझा। हममें मेरा कुछ भी
दोष नहीं है। यदि कोई को मन्थरसाके लिये प्रायना
करे और समकी मुरो न को जाय, तो यह मन्थर
कहनाता है। इस प्रकार कातर हो कर यथाति राजा-
चार्यके चयनय विनय करने लगी। इस पर राजाचार्यने
कहा, 'तुम्हें इस विनयमें चयनति मेगा उपनि पा।
यव तो मेरा कहा हुआ निष्कट हो नहीं मन्थर, किन्तु
यदि कोई तुम्हारा बुढ़ाया मे मेगा और चयना दोषन दे
देगा, तो तुम फिर यहाँ यों मन्थर हो जाओगे।'

यथाति और गर्मिहाति देवा।
देवयान (मं० वि०) देव याति यः-वचिन्। देवताओं
के प्रतिमन्थः जो देवताके लक्ष्ममें पाया करे।
देवयि (मं० वि०) दिव-विन्, परिदेवने सच, परि-
देवक।
देवयु (मं० वि०) देव याति उपायलोन प्राप्ति मः

नहीं थी, सभी एक दूसरे के सुनते आ रहे थे, इसी कारण वेदका दूसरा नाम श्रुति हुआ है। पाश्चात्य पण्डितोंकी धारणा है कि पाणिनिमें जो "यवनानि लिपि" का उल्लेख है, उससे ज्ञान पड़ता है कि भारतमें प्रथमतः यवन-लिपि ही प्रचलित हुई और वही लिपि पीछे भारतीय-लिपि कहलाने लगी है (८)। पण्डित सत्यव्रत सामा-ज्यमीने प्रमाण दे कर यह साबित किया है, कि मूल वेद और उपनिषद्में रहे जानके बाद तथा वेदके निरुक्तकार ब्राह्मणों पक्षसे पाणिनि प्राविभूत हुए थे। उनके गभीर गवेषणापूर्ण प्रबन्ध पढ़नेसे ज्ञान पड़ता है, कि कमसे कम तीन हजार वर्ष पक्षसे पाणिनि विद्यमान थे। (१०) पाणिनिके १२।२१ सूत्रमें "लिपिकर" शब्दका उल्लेख है। अतः उनके समयमें लिपिप्रणाली प्रचलित थी, इसमें सन्देह नहीं। पण्डित गोल्डस्टुकरके मतसे पाणिनिमें जो "यवनानि" शब्दका उल्लेख है वह Cuneiform writing भी कह सकता है (११)। किछोका अनुमान यह भी है, कि पाणिनिके समयमें ब्राह्मणोंका प्रवर्तित ब्राह्मी अक्षर प्रचलित था। उस अक्षरके साथ धृक्, क्, तां दिखलानेके लिये ही पाणिनिने यवनलिपिका उल्लेख किया होगा। पीछे खरोष्ठी आदि लिपियां निकली हैं। ब्राह्मी-लिपि नागरीसे भी प्राचीनलिपि होने पर भी बिना विशेष प्रमाणके उसको हम लोग भारतका आदि अक्षर नहीं मान सकते। जैनिदोंके प्रज्ञापनासूत्रमें लिखा है, कि जिससे भईमागधी भाषाका प्रकाश हो सके, उसीकी ब्राह्मीलिपि कहते हैं (१२)। किन्तु जो लिपि वेदव्यास वाचमीकीकी अष्टमयों सेछनौसे निकली थी, वह कौन सो लिपि है, आज तक मालूम नहीं।

शुद्धके समय भारतमें तरह तरहके अक्षर प्रचलित थे, इसका पता हम लोगोंको सज्जितविस्तरसे लगता है। उनके बादसे ही भारतवर्ष पर मगध-राज्यकी बढ़ती दीख पड़ी। उस समय यहांके सम्राट् गुप्त स्थानीय मगधलिपिकी ही काममें लाते थे, हममें मन्देह नहीं। समस्त भारतवर्षमें ही जब मगध राजाओंका आधिपत्य विस्तृत था, उस समय मगधलिपि ही सब जगह प्रचलित होगी इसमें भी सन्देह नहीं। इसीसे हम लोग सिन्धु नदीके पश्चिम पार छोड़ कर सभी जगह एक ही प्रकारके उत्थोर्ण चमोक्कीकी अनुशासनलिपि देखते हैं। उक्त मगधलिपिमें धोरे धोरे उत्थति स्थाप कर यथाक्रम शाह, गुप्त, बलभी, चालुक्य आदि वैदेशीय राजाओंके समयकी उत्थोर्ण लिपियोंका आकार धारण किया है। उन सब लिपियोंमें जिस प्रकार गुप्ति स्थाप को है वह इस प्रबन्धमें नहीं दिया जाता है। ब्राह्मी और वर्णमाला देखो।

प्राचीन मगध-लिपिसे ही मैथिल (पूर्व विदेह), बङ्ग आदि लिपियां उत्पन्न हुई हैं। नागरी लिपि भी मगध-लिपिसे ही निकलती है। किन प्रकार और कबसे भागधोलिपिसे नामरायकरका प्रकाश हुआ है हमों उसी का प्रमाण देना उचित है।

पराक्रान्त गुप्तराजगुप्त ४थी शताब्दीसे लो कर ७थी शताब्दी तक मगधके सिंहासन पर बाहुद थे। उनके समयके अनेक लिपिध-गुप्त मित्राफणका और ताम्र-शामन प्राविष्कृत हुए हैं। उनसे ज्ञाना जाता है, कि ४थी शताब्दीसे लो कर ७थी शताब्दी तक भारतवर्षके पश्चिम प्रान्तसे पूर्व प्रान्त बङ्ग उत्तल पर्यन्त गुप्तमगध-लिपि, व्यवहृत होती थी (१३)।

(१३) गुप्तराजोंके समयमें यह लिपि भारतवर्षके सब स्थानोंमें प्रचलित थी, इसी कारण इसका 'गुप्तलिपि' नाम रखा गया। यथार्थमें वही लिपि गुप्तराजोंके समयसे बहुत पहले प्रचलित थी। पञ्जाब, गुजरात और मयुरा प्रान्तसे माह (शक)-राज्योंके समयमें उत्पन्न थे यह प्राचीन शिलालिपि और मुद्रादि आधिकृत हुई हैं वही गुप्तलिपिका निर्दशन है। जोरुदेके गुप्तिगुप्ति पहाड़से प्रबन्ध प्रजापत्नीकी गुप्त-प्रमाट्, पमुट्-गुप्तके पूर्ववर्ती महाराज चन्द्रवर्माकी जो शिलालिपि लनी प्रावि-ष्कृत हुई है उसमें भी गुप्तलिपिका पूर्ण विकास देखा जाता

(८) Max Muller's Ancient India, Weber's Indisch Studien, IV. p. 544.

(१०) एशियाटिक सोसाइटीसे प्रकाशित निरुक्तके ४थे भागमें "कः कानो यास्कस्य ?" प्रबन्ध इष्टम्।

(११) Prof. Goldstucker's Manava-kalpasutra, preface, p. 16.

(१२) "से किं तं माय-रिया १ जेन" अष्टममहाए भाषाए साधेति धर्य म न इन्दीलिपि पवह" (प्रज्ञापनासूत्र)

कु (सम्भारयक्ष । उग्न १।३८) १ धार्मिक । २ लोक
यात्रिक । (पु०) ३ देवना । देव यौति यु-क्षिपु..। ४
वक्रादि द्वारा देवताओंका मिथीकारक ।

देवयुग (स० पु०) देवप्रिय युग । सत्ययुग ।

देवयोनि (स० पु०) देवानामिव योनिः यस्य । १ विद्या-
धरादि । विद्याधर, अक्षरा, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर,
पिशाच, गुह्यक और सिद्ध ये देवयोनि के भन्तर्गत हैं ।
२ देवजाति ।

देवयोषा (स० स्त्री०) देवानां योषा इ-तत् । देवताओंको
स्त्री ।

देवर (स० पु०) दीव्यत्वमेव दिव-भर (पति) इति प्रसीति ।
उग्न १।१२२ । १ पतिका कोटा भाई । पर्याय—देवा,
देव, देवार, देवान, सुरागाव, और देवको । २ पतिका
आठमात्र, पतिका भाई, कोटा या बड़ा ।

मनुस्मृतिमें लिखा है, कि यदि विधवाको अपने पति-
से कोई सन्तान न हो, तो वह अपने देवर या पतिके
किसी भन्धु सपिण्डसे एक सन्तान उत्पन्न कर सकतो है,
एकसे अधिक नहीं । फिर किसीका कहना है, कि वह
दो सन्तान तक पैदा करा सकतो है । किन्तु कामधरा
यदि ऐसा आचरण करे, तो उसे दोष लगता है । पर
“इमान् धर्मान् वज्रानाहुः कलौ युगे” पराशरके इस
वचनानुसार कलिकालमें इसका निषेध है । देवरके लिये
बड़े भाईकी स्त्री माताके समान और कोटीकी स्त्री बड़ेके
समान है ।

देवर—राजपूतानिके उदयपुर राज्यके भन्तर्गत एक क़द ।
यह अक्षा० २४° १८' ७०" और देशा० ७४° ४' पू०में
उदयपुर शहरसे १५ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है ।
यहाँके लोग इसे ‘जयसमन्द’ या जयसमुद्र कहते हैं ।
१५८१ ई०में राना जयसिंहने अपने नाम पर यह बड़ा
लक्षाय बनवाया । यह पूर्वे-पश्चिममें प्रायः ८ बा १०
मील विस्तृत है और इसकी परिधि प्रायः १० मील है ।
यह चारों ओर बड़े बड़े पत्थरसे बसा हुआ है । इसमें
सहस्री जिनारे चोवरोंकी एक सुन्दर कुञ्जवाटिका है ।
इतना बड़ा कृत्रिम लक्षाय संसारमें बहुत कम देखने-
में पाता है ।

देवरक (स० पु०) देवर स्वार्थे कन् । देवर, पतिका
कोटा भाई ।

देवरचित (स० स्त्री०) देवैः रचितः । १ जो देवताओं
द्वारा रचित हो । (पु०) २ देवक राजाकी एक पुत्रका
नाम । देवक राजाकी चार पुत्र और मात कन्या थीं । ३
एक राजा जो ताम्रनिर्ममें राज्य करते थे ।

देवरचिता (म० स्त्री०) देवकको एक कन्या, देवकीकी
बहन ।

देवस्थ (स० स्त्री०) देवस्य चादित्यस्य रयः । १ सूर्यका
रथ । २ प्रवरान्तर्गत ऋषिभेद । देवानां रयः । ३ देव-
ताओंका रथ, विमान ।

देवरहस्य (स० स्त्री०) देवानां रहस्यं । देवताओंका
रहस्य ।

देवराज (स० पु०) देवेषु राजते राज-क्रिप् । इन्द्र ।

देवराज (स० पु०) देवानां राजा इ-तत्, ‘राजाहसवि-
भ्यटच्’ इति टच्-समासान्तः । सुरराज इन्द्र । इसका
नामान्तर—इन्द्र, सुरपति, शक्र, दितिज, पवनाप्रज,
सप्तस्वाय, भगाह, लक्ष्मणाम्भज, विडोला, सुनासोर,
मन्त्रवृ, प्राक्यासन, जयन्मजनक शचीश, दैत्यसूदन,
वज्रइन्द्र, कामसखा, गौतमोन्नतनाशन, हजडा, वासव,
दक्षिदेवहिम्लुक, विष्णु, वामनभारता, पुरङ्गन, गुप्तर,
दिव्यपति, शतमुख, सुवासि, गोवजित्, विशु, श्रीखर्भ,
बलारारि, जम्भेदी, सुराध्य, मङ्गलन्द, दुधारवन, मेघ-
वाहन, भाग्यलज्ज, हरिहर, नमुचि-प्राणनाशन, वृद्धयवा,
वृष और दैत्यवर्धनसूदन है । इसका नाम उच्चारण
करनेसे सब पाप नाश हो जाते हैं ।

देवराज (हि० पु०) १ कोटा मोटा देवता । २ एक प्रकार-
का पटसन जो सुतली बगानेके काममें पाता है ।

देवराज—प्रसिद्ध हिन्दू राजा डाल्हरिके बाघाका लड़का ।
कोई कोई इनके पिताका नाम चन्द्र बतलाते हैं । ये
ब्राह्मणायादये ८१ मील दूर पोकरण के निकटवर्ती गौरी
नामक स्थानमें राज्य करते थे । महम्मद-ग़िज़नामिके
समीप जब डाल्हरि पराजित होर मारे गये, तब उनके
अनेक कुटुम्बोंने देवराजके यहां आश्रय लिया था ।

देवराज—टाछिणाथके एक हिन्दू राजा । विजयनगर,
महिसूर और गुादव राजवंश देखो ।

देवराज—एक मञ्जुत कवि, चन्द्रिन्दरचित, पार्यमसूरी,
नामकचन्द्रोदय आदि काव्योंके रचयिता । २. निम्न-

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

इन्होंने अधिकरणकौमुदी, अधिकरणसार और स्मृति-
कौमुदी नामक कई ग्रन्थ बनाये हैं।

इनकी अधिकरणकौमुदीमें यौद्धका रत्नाकर, हरि-
नाथका कल्पतरु और वाचस्पतिमिश्रका मत उद्धृत
हुआ है।

देवनाथ तर्कपंचानन—काव्यकौमुदी नामक काव्यप्रकाश-
के एक विख्यात टीकाकार।

देवनामन् (सं० पु०) १ कृगहोपपति हिरण्यरेताके एक
पुत्रका नाम। २ कृगहोपके एक वर्षका नाम।

देवनामक (सं० पु०) देवतेति नाम यस्य कप्। देवयोनि
विद्याधरादि।

देवनायक (सं० पु०) सुरपति, इन्द्र।

देवनायक (सं० पु०) नर एव नारः ततः स्त्रावो कन्।

देवरूप नर, देवजन।

देवनारायणखत्री—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म सं०
१८३४में जौनपुर जिलेमें हुआ था। इन्होंने रामयमनो-
रञ्जनी, वियोगवाराधि, प्रेमपदावली आदि कई एक
ग्रन्थ प्रणयन किये। इनकी कविता भक्ती होती थी,
उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं,—

“गङ्गा तरङ्ग सौं कब बीचमें गङ्गा उमा भरगङ्गा बधी है।

गङ्गा हूँ अंग अनङ्गन संग भुवङ्गम युवण भाल सधी है ॥

‘ध्यारे छला पग वेवत ही तब सेवकी विपदा विनकी है।

संकट भाय सहाय करी अब मेरी हंसी नहीं चेरी हंसी है ॥”

देवनारायण साक्षि—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म सं०
१८३३ में हुआ तथा इन्होंने रामयमनोरञ्जनी नामक एक
मुसक लिखी है।

देवनास (सं० पु०) नलएव स्वार्थः अथ, देवइव अत्र-
तात् नामः। नलोत्तम, देवनल, बड़ा नरकट।

देवनिर्काय (सं० त्रि०) देवानां निर्कायः इ-तत्। १ देव
समूह। २ देवस्नान, स्नान।

देवनिन्द (सं० त्रि०) देवनिन्दति निन्द-कृप्। देव-
निन्दक, देवताओंको निन्दा करनेवाला।

देवनिर्मित (सं० त्रि०) देवेर्निर्मितः इ-तत्। १ देवतासे
रचित, जो देवतासे बनाया गया हो। (स्त्री०) २ गुह्य, छि-
पे।

देवनिर्मिता (सं० स्त्री०) गुह्य, छिपे।

देवनीय (सं० पु०) सप्तदशपादयुक्त मन्त्रमेद, एक प्रकार-
का मन्त्र जिसमें सत्तरह चरण होते हैं।

देवत्यल—एक ग्राम। यह अघा ३२' १' सं० और देगा०
७०' २' पू० पञ्चावके अन्तर्गत सुवायसे विमला जामिके
रास्ते पर गव्वर नदीके किनारे अवस्थित है। इस स्थान-
को स्थिति और दृश्य बहुत रमणीय है।

यहसे १५ मील दूर देवत्यल नामका एक दूसरा
प्रसिद्ध स्थान है जहाँ १८१५ ई०में अजरल चौकरनोगैके
साथ गोरखापोंका भोवण संयाम हुआ था। युद्धकी बाद
हो मोरखा लोग दृष्टि, गवर्मेष्टके साथ सन्धि करनेको
वाप्य हुए।

देवपञ्चराम (सं० पु०) पञ्चाह यागमेद, पाँच दिनमें
होनेवाला एक प्रकारका यज्ञ।

देवपण्डित—एक संस्कृत-ग्रन्थकार। इन्होंने पथ्यापथ्य-
निघण्टु, नामक एक वैद्यक-ग्रन्थ बनाया है।

देवपति (सं० पु०) देवानां पतिः इ-तत्। इन्द्र, देव-
ताओंके स्वामी।

देवपतिमन्त्रिन् (सं० पु०) देवपते मन्त्रो इ-तत्। इन्द्रके
मन्त्री, वृहस्पति।

देवपत्तन—काठियावाड़के अन्तर्गत एक प्रसिद्ध देव-
स्थान। इसका वर्तमान नाम सोमनाथ है।

पुराणादिमें यह स्थान प्रभास और प्राचीन खोदिग
लिपिमें देवपत्तन नामसे वर्णित हुआ है। १३वीं शताब्दी-
में उल्लेख सारङ्गदेवकी प्रशस्तिमें लिखा है, कि पहले
यह स्थान देवनगर नामसे भी प्रसिद्ध था। १४वीं
शताब्दीमें जयसिंह देवचरिके कुमारपालचरित्रमें इस
देवनगरका उल्लेख है।

किसी किसीका मत है, कि गुजरातकी नागर प्राञ्चाली-
के नाम पर अमिहित नागराचर इसी स्थान पर सबसे
पहले नागरी नामसे प्रसिद्ध हुआ। सोमनाथ, प्रभास,
देवनगर आदि शब्द देवो।

देवपत्नी (सं० स्त्री०) देवानां पत्नीव प्रियदर्शनत्वात्।

१ सन्ध्यालुका, एक प्रकारका कपड़। देवानां पत्नी वा देवः
पतियस्याः। २ देवताकी स्त्री।

देवपथ (सं० पु०) देवानां पथः इ-तत्। १ देवताओंका
पथ, आकाश। इसका पर्याय—आयपथ, सोमपारा
और नमःसरित् है।

मन्त्र ब्राह्मणों के साथ इनका भोजन व्यवहार एक है।
देवर्षि (सं० पु०) जैनों के एक प्रसिद्ध स्वविरका नाम।
रहने जैनसिद्धान्त लिखिह किया था।
देवर्षि (सं० पु०) देवदत्त ऋषि: देवानां ऋषिर्वा। १
नारदादि ऋषि। नारद, ऋषि, मरुचि, भरद्वाज, पुलस्त्य,
पुलह, ऋतु, ऋतु इत्यादि ऋषि देवर्षि माने जाते हैं।
२ व्यायादि कर्त्ता कणादादि।

देवस (सं० पु०) देव नामति ऋह्याति निज जीविकाप्र देव
ला-क। १ देवानां, वह जो देवताओं को पूजा करके
जीविका निर्वाह करता है, पुजारी, पंडा।

मनुने लिखा है, कि चिकित्सक, देवस, भागविक्रयो,
व्यवसायी, ये इत्यक्षर्यसे वर्ज्योय है। देवस ब्राह्मण
द्वारा आह्वादि करानेसे वह सिद्ध नहीं होता है। दोष्यति
भानन्देनेति दिव-कलत् (हृपादिप्यन्विद। वग. १।१०८)।
२ धार्मिक पुन्य। ३ नारद मुनि। ४ देवर, पतिका
छोटा भाई। ५ धर्मशास्त्रज्ञा मुनिविशेष, धर्मशास्त्रके
वक्ता एक मुनि। ये ऋषितके पुत्र और वेदव्यासके शिष्य
माने जाते हैं। ये रक्षाके शापसे अष्टवक्र हुए थे। ६
प्रत्यय ऋषिके एक पुत्र। ७ एक ऋषितिकार।

देवस (हिं० पु०) देवमन्दिर, देवालय।

देवस—चिन्मन्त्रोके मुहाने पर अवस्थित एक बहुत प्राचीन
बन्दर। अभी उसका चिह्नमात्र भी नहीं है। यह
समुद्रसे तीन कोस दूर पड़ता था। पहले यहाँ बहुतसे
मत्स्य रहते थे। भिन्न भिन्न देशोंसे वणिक्गण वाणिज्य
करनेके लिये यहाँ आते थे।

७१२ ई०में महम्मद-बिन् कासिम् मसैय्य इस नगरमें
आये थे। सुलतमान ऐतिहासिक यत्नात्रोने लिखा है,
कि महम्मद परमारल होते हुए चिन्मन्त्रोके बन्दर देखनेकी
आये थे। यहाँ अरबोंने एक बौद्धमन्दिरकी ऊँची
पताका देखो तो जिवे उन्होंने तोड़ फाड़ कर गद्दर
अधिकार कर लिया। ध्वनमाके मतानुसार ८३ हिजरी
रजब मास अर्थात् ७१२ ई०के मई मासमें देवस बन्दर
कासिमके पुत्र महम्मदसे अधिकृत हुआ।

देवस—मन्त्राजके नीलगिरि जिलेके भन्तगंत गृदलूर तातुक-
का एक ग्राम। यह अक्षा० ११° २८' उ० और देशा०
७६° २१' पू० काकर घाटसे ४० मीलकी दूरी पर अव-

स्थित है। पूर्व समयमें यह एक समृद्धिमानो स्थान था।
जबसे मोनिता कारवार यहसे छठ गया है, तबसे इसकी
दशा बहुत शोचनीय हो गई है। अभी यहाँकी लोक-
मंख्या प्रायः पाँच सौ है।

देवसक (सं० पु०) देवल एवं स्वार्य कन्। देवल, पुजारो,
पंडा।

देवलगाँव—मध्यप्रदेशके चन्द। जिलेके भन्तगंत एक छोटा
ग्राम। इसको समोप एक सुन्दर पहाड़ है। यह अक्षा०
२०° २३' उ० और देशा० ८०° २' पू० रेखागदसे ५ कोस
दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। पहाड़ पर बहुत उमदा
लोहा पाया जाता है।

देवलगाड़ा—१ मध्यप्रदेशके वर्धा जिलेका एक छोटा ग्राम।
यह वर्धानदीके किनारे अवस्थित है। यहाँको रुक्मिणी-
देवीका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। प्रति वर्ष कार्त्तिकामास-
में यहाँ एक बड़ा मेला लगता है जिसमें नागपुर, पूना,
नासिक, जम्बलपुर आदि स्थानोंसे अनेक तोर्ययात्री और
वणिक्, समागम होते हैं। मेला प्रायः २५ दिन तक
रहता है। इस मेलेसे देवालका बहुत धामदनी होती
है। इसी ग्रामको पास भागवतोन्न प्राचीन कुण्डिनपुर
अवस्थित था। यहाँ विदर्भराज भोसल राज्य करते थे।

२ बरारके इलिचपुर जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा०
२१° १८' उ० और देशा० ७०° ४५' पू० इलिचपुरसे प्रायः
सात कोस दूर पूर्ण नदोके किनारे अवस्थित है। पहले
यहाँ बहुतसे लोग रहते थे, अभी बहुत छोड़ हैं। दो
एक प्राचीन मन्दिर और तीन सौ वर्ष पहलेको एक
मस्जिदकी सिंवा और दूसरा कोई चिह्न नहीं है जिससे
प्राचीन सन्निधिका परिचय प्राप्त हो। हिन्दूक मन्दिरमें
शिव-मन्दिर उल्लेखयोग्य है। इस मन्दिरके पास ही
'करगुहतीर्थ' है। प्रवाद है, कि नरसिंह हिरण्यकशिपुको
मार कर अपने हाथके लेह कहीं भो धो न सक। भन्तमें
उन्होंने देवलगाड़ामें आ कर अपना हाथ धोया। जिन
स्थान पर उन्होंने हाथ धोया था, वही सरोवर अभी
'करगुहतीर्थ' नामसे प्रसिद्ध है।

देवलता (सं० स्त्री०) देवप्रिया लता। १ नयमस्त्रिका,
जंबारी। देवलस भावः तल, टाप। २ देवलत, उप-
जीविकाके लिये देवपूजन।

देवपाय मनु रमनेय है, किन्तु उस पर जो कर साम्रमण नहीं आ सकते हैं। २ तोयविनेय, एक तोयका नाम। देवपादनाथमें जाकर विधिवत् एक स्नान दानादि करनेसे देवमरुटा कम नाम होता है।

देवपादि (मं० पु०) पाणिपुत्र मण्डप विनेय। देव-पय, हंसपय, धारिपय, रघुपय, रत्नपय, करिपय, चक्र-पय, राजपय, जलपय, गङ्गापय, सिन्धुपय, सिद्धिगति, छद्मोय, वायव्य, हस्त, इन्द्रपय, पुष्य, मकर ये सब पपादि हैं।

देवपद्मिनी (मं० स्त्री०) पाकामने बहनेवाली गङ्गाका एक नाम।

देवपर (मं० त्रि०) देवः परो यस्य। देवायत्त, सिद्धि-चिन्ता, जो संकट पड़ने पर कोई उद्योग न करे, देवल्लो देवताका भरोसा किये बैठा रहे।

देवपर्ष (मं० स्त्री०) देवप्रियं पर्षे यस्य। शुरपर्ष, माधोपर्ष।

देवपट (मं० पु०) देवाय उत्पटः पटः। १ देवताके छद्मसे उत्पट पट, वह पट जो देवताके नामपर उक्तगो किया गया हो। २ देवताका उपासक।

देवपाय (मं० स्त्री०) देवानां पायं देवैः पीय-तेन या पाधारे द्रव्यं पानि।

देवपान (मं० पु०) देवैः पीयतेऽनेन पा-करवे द्रव्यं। चमन, भोजपान करनेका एक पाय।

देवपान (मं० पु०) १ गजहोषका वर्षपर्वतभेद।
(भागवत ५.२.१२८)

२ पालवमीय एक प्रथम पराक्रान्त और विख्यात राजा, मोहके प्रथम पालवमीय राजा धर्मपालके पुत्र। मुद्ररसे प्राप्त देवपालका ताम्रमासन पढ़नेसे ज्ञाता जाता है, कि कामरूपसे मे कर छद्मोमा तक राजा आधिपत्य के लो दृष्टा था(१)। लिखतके मोह ऐतिहासिक ताराभाषका मत है कि हिमालयसे विद्या और ज्ञानभरये समुद्र तक समस्त उत्ताभारत कामरूप विजेताके हाथमें था गया था (२)।

यद्यपि मंत्रि मन्त्र मोहपाशराशो ने मोहमें राज्य किया उनमेंसे यम, मान, पराक्रम और विद्या बुद्धिसे देवपालने ही मन्त्रोपेक्षा स्वाति मांम की थी। हरिमित्र नामक राष्ट्रीय ब्राह्मणों की कुलाचार्यकारिकामें देव-पालकी यथेष्ट सुख्याति देखी जाती है। मन्त्र पूरिये तो ये मोह राजा ही कर भी यदंके ब्राह्मणोंका यदेट पाटर करते थे। यहां तक कि भट्टारायच-वंगीय ब्राह्मणगण इनसे मन्यो थे। एक ताम्रमासनसे ज्ञान होता है कि ब्राह्मणमन्त्रोंके कोमरसे ही इनका राज्य इतनी दूर तक विस्तृत था। दिनागपुरसे पाणिपुत्र मन्त्रोपासका ताम्रमासन पढ़नेसे भासू म होता है कि जयपाल नामक देवपालके एक भाईने भी पनेक राज्य जय किए थे (३)।

देवपाल किस समयमें मोहके विंहासन पर बैठे, इस विषयमें कनेक मतभेद है। दारि भी वर्ष पड़ने लिखित ब्रह्मखण्ड नामक एक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है—

“चतुर्वर्षं सत्प्राग्वे देवपाथो महावृषः।

कथो भामान् चगिर्दे श्वापयिष्यति वानहव॥”

(ब्रह्मखण्ड २.१.४४)

कालिकासे चार हजार वर्ष बीतने पर महाराज देवपालने चतुर्दशमें पाठ प्राप्त स्थापन किये थे। चमी कालिका ५०२६ वर्षों तक चोत रहा है। इस हिमाचले प्रायः हजार वर्ष पड़ने लखों शताब्दोंके शिवभागमें किसी समय देवपाल विद्यमान थे। बिहारके निकटवर्ती गोवराजान नामक स्थानसे पाणिपुत्र भीदिन निधि पढ़नेसे ज्ञाता जाता है कि मोहदेव नामक एक मोह परित्याजक बिहारमें (यगोवर्मपुरमें) महाराज देव-पालके पनुपड़ने पनेक दिन ठहरे थे (४)।

गोहाधिपति देवपालने पड़से कान्यकुब्जमें यगोवर्म नामक एक प्रथम पराक्रम राजा राज्य करते थे। उन्होंने पढ़ने बिहारके मोहके किमी राजाको पराजय और हिकीकी बंध किया था। इनो छद्म पर उनके गंगाक कवि वाकपतिने “मोहवध” नामक दाहक काव्यकी

(1) Asiatic Researches, Vol. I, p. 123.

(2) Cunningham's Arch. Sur. Report, Vol. XV, p. 151.

(3) Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1895, p. 82.

(4) Indian Antiquary, Vol. XVII p. 309.

रचना की। माधूम होता है, उक्त यशोवर्मा हो गोहर्षरकी पराजय कर अपने नाम पर यशोवर्मापुर स्थापन कर गए हैं। यशोवर्माके पुत्रका नाम धामराज था। राजशेखरको प्रबन्धचिन्तामणि पट्टनेसे जाना जाता है, कि गोहाधिप 'धर्म' जो माधव्यं वष्यभट्टशूरिके मिश्रा धामराजको जानो दुस्मन थे। वष्यभट्टशूरिका सरस्वती-क्षेत्र पट्टनेसे मालूम होता है, कि वीर-निर्वाणके ११०० वर्ष पछि यह ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ था। ८८५ सम्वत्में जनकौ मृत्यु हुई (५)। राजशेखरके प्रमाणानुसार गोहाराज धर्म जब धामराजको समसामयिक होते हैं, तब वे भी ८१० से ८८५ सम्वत्के मध्य जीवित थे, इसमें सन्देह नहीं। गोहाराज धर्मपालने बहुत दिन तक राज्य किया। धर्मराज देवो। इस-से जनके पुत्र देवपाल ८८५ सम्वत्के बाद राजा हुए थे, ऐसा अनुमान किया जाता है। ब्रह्मण्डमे देवपालका जो समय दिया गया है, वह बहुत कुछ इस समयसे मिलता है। तान्त्रासतमें देवपालके पुत्रका नाम राज्यपाल, तिब्बतकी तारानाथके मतमें रामपाल और उक्त ब्रह्मण्डके मतमें शरण्याल मतलाया है। दिनाजपुर और मुहुरे प्रान्तमें देवपालको अनेक कोत्ति यां देखनेमें पाते हैं।

१ कान्यकुब्जके एक विख्यात राजा, हरम्बपालके एक पुत्र। चित्तिपालके बाद ये कनौजके सिंहासन पर बैठे। सोयडोनोकी खोदित लिपिके अनुसार ये १०६५ संवत्में राज्य करते थे (६)।

४ पद्माल (बदायन)-के एक विख्यात राष्ट्रकूट-वंशोय राजा। ये गोपालदेवके पुत्र और मदनपालके अनिष्ट सहोदर तथा उत्तराधिकारी थे। ये प्रबल पराक्रान्त राजा थे और १२०५ संवत्में राज्य करते थे, यह खोदित लिपिसे जाना जाता है। (७)

५ हरिपालके पुत्र, काठकट्टप्रचल-भाषाके रचयिता।

(k) Peter-on's Report on the Search of Sanskrit M., 1886 92, p. LXXXII.

(६) Epigraphia Indica, Vol. I. p. 130, 170.

(७) Indian Antiquary, Vol. XX. p. 310.

Vol. X. 161

देवपालित (सं० त्रि०) देवेन भोगानुमा पालितः। १ देवमाहक देव, वह देव जिसमें इष्टिके लक्षमें देतो आदिका काम चलता है।

देवपोषु (सं० पु०) देवदेष्टा असुर।

देवपुत्र (सं० पु०) देवानां पुत्रः ६-तत्। १ देवकुमार। (स्त्री०) २ देवस्य पुत्रोव प्रियत्वात्। ३ एना, दशा-यवो। ४ देवकन्या।

देवपुर (सं० स्त्री०) धमरावती।

देवपुरो (सं० स्त्री०) देवानां पुरो ६-तत्। धमरावती।

देवपुष्प (सं० स्त्री०) लवङ्ग, लोम।

देवपुष्पो (सं० स्त्री०)। हृत्तविशेष, एक पेड़का नाम।

देवपूजा (सं० स्त्री०) देवताओंका पूजन।

देवपूज्य (सं० पु०) देवानां पूज्यः ६-तत्। सुराचार्यं हृत्तसति।

देवप्रतिहति (सं० स्त्री०) देवानां प्रतिहतिः प्रतिमा ६-तत्। देवप्रतिमा।

देवप्रतिमा (सं० स्त्री०) देवानां प्रतिमा ६-तत्। देव-प्रतिमूर्ति। देवताप्रतिमा देखो।

देवप्रयाग—हिमालयके तिबरो जिलाके भन्तगंत गङ्गा और बलकनन्दा नदीके सङ्गम पर अवस्थित एक पुष्क-स्थान। स्तम्भपुराणके हिमवत्खण्डमें (४०।५०) और ६१ अध्यायमें इस पुष्क-भूमिका माहात्म्य वर्णित है। यो तो यज्ञां यज्ञेय पुष्कतोयं है, पर देवप्रयाग और ब्रह्मपुण्ड्र यही दो तोय प्रधान हैं। भागीरथीके उत्तरमें शिवसिद्ध, दो नदियोंके मध्य स्वयम्भूजिङ्ग, नदीसङ्गम पर बैतालिक गिला, वंतासकुण्ड, शिवतोयं, सूर्यकुण्ड, आगिहतोयं, वाराहोतोयं, वाराही गिला, पुष्पमःलातोयं, प्रद्युम्न-स्थल, प्रद्युम्नस्थलके समीप वैजयायनसेन तथा गुहाके मध्य विष्णुमूर्ति प्रतिष्ठित हैं। यहांसे बाध कोवही दूरी पर शङ्खाचक्रके समीप दिव्यतोयं है। सूर्यकुण्डके उत्तरमें श्रविकुण्ड, गङ्गाके दक्षिणी किनारे शीरकुण्ड, नदीके दक्षिणी किनारे तण्डुलसिद्ध, वहनि ४ धनुके फावसे पर दानवती नदीके किनारे दानवेश्वर-मन्दिर, दानवतीके मुहानेके समीप विष्णेश्वर महालिङ्ग, तारकेश्वर, तुष्को-श्वर और दानवेश्वरलिङ्ग हैं। देवप्रयागके दक्षिणमें लडां नवालिककी घाटी भागीरथीकी घाटीसे मिले है, वहां

देवर्षिचरित्र (सं० वि०) वि० अष्टमोऽध्यायः कसन् देवर्षिचरित्रः
३० तत् देवता कर्त्तृक व्यासः ।

देवव्रत (सं० पु०) १ भोषणं देव । २ गेय सामभेदः, एक
प्रकारका सामगानः । (श्री०) ३ देवत्व साधनव्रतः ।
देवव्रतान् (सं० वि०) : देवतायै व्रतं अर्चयत्यस्य इति ।
देवार्थव्रतयुक्तः, जो देवताके निमित्त व्रत धारण करता
हो ।

देवशत्रु (सं० पु०) देवानां शत्रुः ६-तत् । १ देवारिः,
असुर । २ सुशुभोक्त देवगणयज्ञभेदः । देवगण देवो ।

देवशर्मन् (सं० पु०) देव इव शर्मा अशुभनाशकः ।
१ ब्राह्मणका उपनामः, ब्राह्मण जातिको एक उपाधिः ।
ब्राह्मण्योके नामकरणके समय नामके अन्तमें देवशर्मन्
ऐसा रखा जाता है । २ ऋषिभेदः, एक ऋषिका नामः ।
३ एक वैदिक ब्राह्मणः । इनके कोई सम्मान न रहनेके
कारण इनकी स्त्री सदा चिन्तित रहती थी । इसलिये
इन्होंने मन्त्रके अन्तमें देवताको समुत्त कर एक पुत्र
प्राप्त किया, इस पुत्रका आकार संप-सा था, किन्तु
ब्राह्मणो उसे ही यज्ञमें पाँसतो थी । उसके साथ एक
ब्राह्मण-कन्याका विवाह हुआ था । इस समय उस
संप-रुद्री ब्राह्मण-तनयने पुरुषमूर्त्ति धारण की और संप
देव भस्म हो गई । ४ पाटलीपुत्रनगरवासो एक
विद्वान् ब्राह्मणः । इनके कालनेमि और विगतमय नामके
दो मित्र थे जिनके साथ इन्होंने अपने दो कन्याओं-
का विवाह करा दिया ।

देवशस्त्र (सं० पु०) देव वाहुः शस्त्रम् । देवता ।

देवशाक (सं० पु०) एक सहस्र रागः । यह शहरा-
भरण, कान्हड़ा और मन्तारसे मिल कर बना है । इसमें
गांधार कीमत् संगता है । इसकी गानिका समय १७
दण्डसे २० दण्ड तक है ।

देवशिल्पिन् (सं० पु०) देवानां शिल्पी । विश्वकर्मा ।

देवशुभो (सं० स्त्री०) देव इव प्रभावान्विता शुभि ।

देवशुभ्य प्रभावयुक्ता शुभि, देवलोकी की कृतिया, सरमा ।

इस देवशुभ्य की कथा महाभारतमें इस प्रकार लिखी

है—परीक्षितके पुत्र राजा जगमेजयने कुबेरिन्द्रमें एक

ब्रह्मका अनुष्ठान किया । यज्ञ करने समय एक कुत्ता

बहल था पड़वा । जगमेजयके भाइयोंने उसे मार कर

मर्ग दिया । उस कुत्तेने अपने माता सरमासे जाकर
कहा, 'मैंने न तो कोई अपराध किया था और न
यज्ञकी कोई सामगो ही हुई थी, इस पर भी बिना
अपराधके मुझे लोगोंने मारा है ।' देवशुभ्यो सरमा यह
सुन कर जनमेजयके पास जा कर बोली, 'मैंने इस पुत्रने
कोई अपराध नहीं किया था, तुम्हारा घो आदि कुछ
भी नहीं खाया था, तिस पर भी बिना अपराधके तुम
लोगोंने इसे मारा, इससे तुम्हारे ऊपर अकस्मात् कोई
दुःख पड़ेगा ।' यह श्राप दे कर देवशुभ्यो चली गई ।

(भारत आदि० ३ अ०)

देवशेखर (सं० पु०) देवः श्रीहृदप्रदः शिखरी यस्य । १

दमनक, दोनेका पोषा । (श्री०) देवानां शिखरः ।

२ देवताका मस्तक ।

देवशेष (सं० स्त्री०) पनम् ।

देवशुभ्य (सं० पु०) १ विष्णुमित्रके एक पुत्रका नाम ।

२ वसुदेवके भाई ।

देवशो (सं० पु०) देवान् अयति हविर्दानेन सेवते यो-

क्षिपः । १ यज्ञः । (श्री०) देवानां यो । २ देवताओं की

कक्षी ।

देवशुभ्य (सं० वि०) देवेषु श्रूयते शु-क्षिपः तुक् । देव-

ताओंमें प्रसिद्ध ।

देवशुभ्य (सं० पु०) देवेषु श्रूयता विख्यातः । १ ईश्वर ।

२ नारदः । ३ शक्रः । ४ अवसर्पिण्योके एक जिनका

नामः । ५ शुक्राचार्यके एक पुत्रका नाम ।

देवशोषी (सं० स्त्री०) देवानां शोषः च । १ भूवीक्षता,

मरोरफलो, सुरा । २ देवताओं की पंक्ति ।

देवशोष्ठ (सं० पु०) १ द्वादश मनुका पुत्रभेदः, बारहवें

मनुके एक पुत्रका नाम । देवेषु शोष्ठः । २ देवताओंमें

अष्ट ।

देवसख (सं० पु०) देवानां सखा "राजाहः सखिभ्यश्च ।"

इति टच. समासन्तः । देवताओं का सखा या मित्र ।

देवसखा (सं० पु०) उत्तर दिशाका एक पर्वत ।

देवसंगीतयोगिन् (सं० वि०) नारदः ।

देवसन् (सं० स्त्री०) यज्ञभेदः, एक यज्ञका नाम ।

देवसत्त्व (सं० वि०) देव इव सत्त्वः यस्य । देवताके जैश

समानवाला ।

रन्ध्रप्रयोगों, रन्ध्रद्वारा और प्रयोगों है। समस्त
भी दक्षिणमें धनुषको, मध्यमरा और रन्ध्रप्रयोग
है। गणानिकेत पुरमें शिखरको है। शिखरको के
दक्षिणमें उत्तरीका मही को संकेत नदी है। इन दो
नदियों के मध्यम पर रन्ध्रप्रयोग, इनके दक्षिणमें
विभाजित नदी, नदीमध्यम पर भाविकदेवको
मन्दिर, मन्दिरके बाएँ ओर मन्दिर नदी और दक्षिण की
राजेश्वरी नदी है। इन दो नदियों के मध्यम पर धनुष-
को संकेत नदी है। दक्षिणमें ऊपर के मन्दिर के ऊपर
कविप्रता नदी, पूर्वमें रन्ध्रद्वारा और देवप्रयोग के
मध्यम पर रन्ध्रको नदी है। इनके बाट नदीमध्यम है
जहाँ मन्दिरप्रयोग प्रतिष्ठित है। मन्दिरके दक्षिण-
पश्चिममें मन्दिर नदी प्रवाहित है और इनो नदी के
मध्यम पर भीमतीर्थ पड़ता है। देवप्रयोगमें यही मध्य
तीर्थ है। जितने हिन्दू, मुस्लिमों और हिमालयवासी
हिन्दू लोग इन मध्य तीर्थों का दर्शन करने आते हैं।

देवप्रसूति—एक प्रतीक जहाँ नाचाया। इनका दक्षिण-
मध्यम, मध्यममाया, शीशुवाचनकुन और धनुषको मध्य
मा। गुर्जरराज मिश्रराजके समामयिक कुम्हारके
मिथ विजयमिथ, विजयमिथ के मिथ चन्द्रपुर, चन्द्र-
पुर के मिथ सुनिचन्द्रपुर और सुनिचन्द्रके मिथ देव-
प्रम है। इनके पान्थवर्षित और म्हावर्षित नामके
कई पन्थ रहे हैं। यमोद और नरपन्थ देवप्रमके लिए
पान्थवर्षितका मीमांस किया था।

देवप्रसूति (सं० पु०) देवप्रसूति प्रसूति वा देवानां पर-
देवताणां प्रसूतिः। १ पञ्चनद्यादि घटित त्रिषामा, नर-
प्रसूति जो पञ्च, नक्षत्र, ग्रहण आदिके सम्बन्धमें हो। २
युगाद्युग सम्बन्धी प्रसूति। यह किसी देवताके प्रति समर्पण
जाता है और इनका उत्तर दिमी विमेष मुक्ति
निकाला जाता है।

देवप्रसूति (सं० प्रि०) देवताके जात, जो देवताके उत्पन्न
हवा हो।

देवप्रसूति (सं० पु०) भैरवादि राजाको पुत्री। यह सुन-
सेतके पुरमें पशुपति मा।

देवप्रसूति (सं० पु०) देवानां प्रियः इत्यम्। १ पौनःपुन्य

राज, पौनःपुन्य मीमांसा। २ यक्षप्रसूति, यमप्रसूति। ३
नागप्रसूति मता। ४ मन्दाट, पौनःपुन्यको उपाधि।

देवप्रसूति (सं० पु०) देवानां प्रियः इत्यम्। पञ्चम।
देवप्रसूति (सं० पु०) देवानां पर देवताको प्रिय
भवती। यह सुम मन्थन गिनी जाती है। शिव प्रिये
यह भवती ही उर्वर ओर कई तरफके दीप इति भी
ये निष्कल समझे जाते हैं।

देवप्रसूति (सं० पु०) देवप्रिय, एक शक्ति का नाम।
देवप्रसूति (सं० पु०) देवानां प्रिय प्रसूतिः। १ स-
देवीमता, सन्देहना नामकी पुत्री। २ तावमाणा मता,
एक प्रकारकी भैरव।

देवप्रसूति (सं० पु०) देवानां प्रियः। देवताका प्रिय निमित्त
उपहार।

देवप्रसूति (सं० पु०) देवानां प्रिय और पाशामें हो-
माणा एक प्रकारका भोजन। यह १५वे २० वाय ओर
४०वे ४५ वाय भी खाया जाता है। यह मन्थन होता
है और मन्थनो की मन्थनमें मन्थना जाता है। यद्यपि
पादि इनके मन्थन जाते हैं। इनके मन्थन कर्त्तव्य
पञ्चर भी पड़ता है।

देवप्रसूति (सं० पु०) १ यदुर्गोय कर्त्तव्यप्रसूति, यदु-
र्गोय के कर्त्तव्य राजाके एक पुत्रका नाम। २ शक्ति, एक
शक्ति का नाम।

देवप्रसूति (सं० पु०) मन्थनप्रसूति एक टोकाकार।

देवप्रसूति—एक शक्तिप्रसूति।

देवप्रसूति (सं० पु०) देव प्रसूति। मन्थन।

देवप्रसूति (सं० पु०) देवप्रसूति मन्थन। देवप्र, नर
मन्थन की प्रिय देवताकी पुत्री करके शक्ति निर्वाह
करे।

देवप्रसूति—१ एक मन्थनप्रसूति जहाँ नाचाया, मन्थनप्रसूति
मिथ और मन्थनप्रसूति के विष्णु टोकाकार मन्थ-
नके मुख। इनके प्रमाणप्रमाण, शक्तिप्रसूति पादि
प्रसूति के रचना की। ये १२४२ सम्बन्धके पञ्च विष्णु-
मान हैं।

२ राजा भोजनके समामयिक एक कवि।

३ एक प्रसूति जहाँ मन्थन। इनके मन्थन
माया में 'पञ्चमन्थन' (पञ्चमन्थन), मन्थन

द्वितीयः (अं. नि.) मंदरागः सप्त रिता, द्वितीयः सप्तः ।
द्वितीयः ।

१. विष्णु (१००) २. विष्णु (१००) ३. विष्णु (१००) ४. विष्णु (१००) ५. विष्णु (१००) ६. विष्णु (१००) ७. विष्णु (१००) ८. विष्णु (१००) ९. विष्णु (१००) १०. विष्णु (१००)

१३३३ (१००) देवता मण्डप । देवता मण्डप । देवता
मण्डप ।

देवमहा (मं० पौ०) देवता मया : १ देवताका
मया : २ मया पयो—सुधमा पौ सुधमा ३ : २ रा
मया : ३ सुधमा नामक मया जिने मयमे चर्तु मया
मयिजिनेके लिए मयाया यः ।

देवमास्य (भ० ति०) देवस्य क्रोडायाः सभा तस्या
 मोदति इति या० । क्रोडासभाय, सुखं उपलब्धम् ।
 दशकः पद्याय—समिधं पोर देवमासाजिह्वये ।

देवमन्त्र (गं० पु०) सुप्रसंगी नायकी मभा .

निम्नलिखित (१०० स्त्री०) गणना करो ।

दसम व (सं० पु०) देवमित्रः सर्वपदः । त्वमेव, एक
प्रकारको गरीबी, दसका पर्याय—पञ्चाक्ष, बदर, रज-
शुक्ल, सुरमयपद, शुद्धदम, निजदसपद और
दसवादि, है । दसका शुच—कटु, कषा, ककदीप और
(आभासपञ्चमक है) ।

देवघर (अ० ला०) देव' सहित सह-पत्र। १ मित्रा-
गुप्तदि। (अ०) २ दत्तात्रेयपत्रि। सविद फलका
दत्तात्रेय। (पु०) ३ मोमाकर घनतमदः। देव
घरत वरारजी कोर विष्णुन दे कोर उन घर सपुर मोम
सद्वर होता है।

द्वितीय (२०००) दशक में ।

द्विधा गणना—एक जैन पण्डित । इन्होंने १६१० ई. में
 चरितार्थानुसंधानावली 'सुसुगतामहाकर' नामक एक
 टीका बनाई है।

देवतात् (यं० यत्०) देवतात् करोति देवतात् ।
 देवतात् मिदित् देव, आ देवतात् अयम् विद्यात् ।
 देवतात् (यं० शी०) देवेन साधुत्वं मन्दितम् ।
 देवत् ।

द्विमास (पृ० ५०) रम्यतापूर्ण अः भिद्योमये पत्र ।

देवमायवि (धं. पु.) मन्त्रमं. देवदेवे मन्त्रमाय ।
देवमिह—मन्त्रमायदेवे मन्त्रमं. मन्त्रमाय विमिहं मन्त्रम

મામલે સ્વામીને દરજ્જા અવગણી કાઢવાનો (૧૯૪૨ રૂ.૩૫૫)
 માયાં સજાદાસોએ (૩૨) જનશરોએ। શોડિય દસ દિવાલિય
 પાવિત્ર્યન દરે છે। દર મિત્ર મહાંકે રામચન્દ્રને સ્મરણ
 વાળો છે। હમણે જાના જાના છે, કિ મામલાનું દરકો
 વરુદ્ધ માયાને કાઢુ શાલિજ મામલે વર નિહાલ
 મોરને જણ કિયા તા। તે સવળન મુખાનું જાના વર।
 હમણે વાલુદેવ મામલે વર કોટે ખારે ચોર માલિય,
 દેવલ તથા સામિત્ત મામલે સોન પુત્ર છે। દરમેયે કોટે
 મહાંકે સામિત્તને મહાનિય ચોર કિહા। ૫દિય જોના યા।
 દેવલિય તથા કોટે કોટે મહાંકે છે। દરમેયે મહાંકે ખારે
 સવળને દાણોર વરદેય વર ચોર હવંનિ કોમે
 મામલે મળળ વર અધિકાર કિયા યા। દેવલિયે વર
 પુલિધ્યાત મોર જગવાલ તા જગવાલ સવળા કાકરાન-
 ને મળે સવળ વર છે। અવવાત દેશો।

देवगि'रुह पोर भी दो पुत्र थे जिसका नाम माजम
 पोर लगगुमि'रु था। इनके देवराज नामक भक्तो बड़े
 हो गये थे। उनकी मन्त्रवा-रुमये लगगुमादि तीनों
 भाई बहुत प्रतापवालो हो गये थे पोर कई एक राज्य
 जीते थे।

देवचन्द (मं० पु०) श्रीमाधवार इत्यादि ।

दिसम्बर-१ तयामुखक एक विप्लव सेनाकार्य ।
 इसीमे १९८६ संसुममे जय, १५० संसुको सङ्ग
 याममे प्रत और १९९० संसुको सङ्गिपसाममे सङ्गि-
 पद प्राम किया सा । इनके सङ्ग विप्लव प्रधान ६-७५-
 सङ्ग, सङ्ग, सङ्ग, सङ्ग, सङ्ग, सङ्ग और सङ्ग ।

२. भक्त्यामरस्वीतः टोकाकार एक जैन पद्यकतां ।

द्वितीय (म० पु०) द्विः प्राचादिभिः मर्यादाः कृति
 दारः प्राचादि दारः मर्यादाय नृदयः दारमिदं यत्र
 दारं यत्र द्वि ।

द्विष्य (मं० पु०) सुमन्ति यमुत्तमनि सुखिन्, देवा-
ने सुमन्ति कर्मपाथः । यमुत्तमनि द्विष्येत् ।

(वतिदिनभरों) की रचना की है।

२ एक विद्यान जे माचार्य । मुनिपदपरिनि विद्या ।
११४१ संवत्सरे एतका जका, ११४२ संवत्सरे

कोस (कधारलकोश), वोरचरिय (योरचरिय), सखेगरङ्गशाला, पाधारणशास्त्र यदि ग्रन्थों को रचना की है। इनमेंसे कधारणकोस ११२२ सख्युकी और वोरचरिय ११६८ सख्युकी भरोचनगरमें सम्पूर्ण हुआ था। इनके शुरूका नाम प्रद्वचन्द्र और उपाध्यायका नाम सुगति था। इन्होंने अभयदेव धर्मिक कहनेसे विज्जोरमें मन्त्रावारेके मन्दिरमें 'जिनवत्तम'को प्रतिष्ठा की थी।

४ उपदेगरलकोशके टीकाकार।

देवमन्त्र पाठक—एक वेदविद् पण्डित। इनके पिताका नाम वनमन्त्र और माताका नाम भागीरथी था। इन्होंने कालायनकल्पसूत्रको 'कालायनप्रयोगशार' नामक एक पत्र लिखी है।

देवमन्त्र (सं० स्त्री०) देवार्ना भवनं इत्यतः १ स्वर्ग। २ अख्यल्लक्ष, पीपल। ३ देवप्रतिमालय, देवालय।

देवभाग (सं० पुं०) देवार्ना भागः इत्यतः १ देवताओंका भाग। सूर्यसिद्धान्तमें लिखा है, कि लवणसमुद्रसे ली कर उत्तरस्थित भूगोचका ऋषि लम्बुकोप तक देवताओंका विभाग है। देवाव देशो भागः। २ देवताको देव धमादि भागमें, किन्हीं वस्तु या सम्पत्तिका वह अंश जो देवताके लिये निकाला गया हो। ३ देवताओंका भाग।

देवभावा (सं० स्त्री०) संस्कृत भाषा।

देवमिषक (सं० पुं०) अस्त्रिनोक्तसार।

देवभोति (सं० स्त्री०) देवभो भोतिः। १ देवताका भय। २ देवताके भय, देवताके डर रहना।

देवभू (सं० पुं०) देव देवत्व भवति मृत्क्रिपः। १ देव, देवता। देवार्ना भू निवासभूमिरुत्पत्तिसानं वा यव। २ स्वर्ग।

देवभूति (सं० स्त्री०) देवात् देवलोकात् भूतिरुत्पत्तिर्यस्याः। मन्दाकिनो। देवार्ना भूतिः इत्यतः २ देवताओंका ऐश्वर्य।

देवभूमि (सं० स्त्री०) देवार्ना भूमिः इत्यतः १ स्वर्ग। २ देवताओंकी प्रिय भूमि।

देवभूय (सं० स्त्री०) देवस्य भावः भू-व्यपः। (भूगो-

भावे। पाश१।०७) १ देवत्व। २ देवसाधुत्व। देवभूत् (सं० पुं०) देव विभक्तिं पालयति मृ-क्रिपः। १ इन्द्र। २ विष्णु।

देवभोज्य (सं० स्त्री०) देवेव भोज्यं। अमृत।

देवभाज (सं० पुं०) देवेव भाजते भाजःक्रिपः। सूर्यवंशीय देवभेद।

देवमन्त्र (सं० स्त्री०) कीर्तुमन्त्रः।

देवमणि (सं० पुं०) देवेषु मणिविधः। १ भग्न, सूर्य।

देवः द्योतनशीलः मणिः। २ कीर्तुम। ३ चन्द्रोमावर्त्त, घोड़ेकी भँवरी। ४ मन्त्रमिदा।

देवमणि—एक हिन्दो-कवि। इन्होंने १६ अध्याय तक चाणक्यनीतिभाषा रची है।

देवमत (सं० त्रि०) देवार्ना मतः इत्यतः १ देवसम्पन्न, देवताकी राय। (पुं०) २ ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

देवमन्दिर (सं० पुं०) देवप्रतिमालय, देवालय।

देवमन्त्रां (सं० स्त्री०) मन्त्रमिदा।

देवमाष्ट (सं० स्त्री०) देवार्ना माता इत्यतः १ देवता जननी, देवताकी माता। २ चदिनि। ३ दाचावर्षा।

देवमाष्टक (सं० त्रि०) देवी हृष्टिर्मातिव मय्योत्पादनं पालकत्वात् जननेव यस्य कपः। हृष्टाख्यस्यत्र माष्टि-पालित देय, वष्ट देय जिसमें खेती आदिके लिये वर्षाका हो जन यष्ट हो। देश तीन प्रकारके हैं, देवमाष्टक, नदीमाष्टक, और वनमाष्टक। इनमेंसे जो देश हृष्टि द्वारा हो सम्पन्न होता है, उसे देवमाष्टक देश कहते हैं।

देवमादन (सं० पुं०) देवमोहनकारी सोम, वष्ट सोम जिससे देवता मोहित या मत्त हो जाते हैं।

देवमान (सं० स्त्री०) देवार्ना मानं काष्ठपरिच्छेदः। १ दिव्यमान, काष्ठकी गणनामें देवताओंका मान, मनुष्योंके एक सोर वर्षोंका देवताओंका एक दिन। इष्ट तर्क १० दिनका एक महीना और १२ महीनेका वर्ष होता है, इसी परिमाणको देवमान कहते हैं।

ब्राह्म, दिव्य, पित्र्य, प्राजापत्य, शुद्ध, सोर, मावन, चान्द्र और ऋष ये नौ प्रकारके मान हैं। देवेषु मानोऽस्य रमणीयत्वात्। २ देवयोग्य वृक्षादि।

देवमानक (सं० पुं०) देवेषु मानो यस्य कपः। संज्ञार्थ कन् वा। कीर्तुमन्त्र, देवमणि।

दीक्षा और ११७४ संवत्में शत्रु दुई थी। यष-
हिसपत्तनमें जयसिंह सिधराजकी समामि स्त्रियों
की सुत्तिकी विषय घर दिग्गम्भराचार्य कुमुद-
चन्द्रकी साथ इनका खूब तर्क विर्तक हुआ था।
इस तर्कमें जय लाभ कर इन्होंने दिग्गम्भरा की नगरमें
निकास भगाया था। १२०४ संवत्को इन्होंने फलवर्द्धि-
धाममें एक जिनविम्ब, एक चैत और आराधन नामक
स्थानमें नेमिनायको प्रतिष्ठा की।

ये स्याहादरक्षाकर नामक एक सुन्दर प्रमाण ग्रन्थ भो-
वना गये हैं। इनको शिष्य रत्नप्रभसुर रत्नाकरावतारिका
नामक स्याहादरक्षाकरकी एक टीका लिखा है। ११२६
संवत्में इनका देहान्त हुआ।

देवस्य (सं० मि०) देवेन स्यः। देवता कर्तृक स्यः,
जो देवतासे बनाया गया हो।

देवस्य (सं० स्त्री०) देवाय क्रीडार्थं स्यः। मद्य,
मदिरा।

देवसेन (भट्टारक देवसेन) — एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार,
रानधनके शिष्य। ८५१ संवत्में इनका जन्म हुआ था।
इनकी बनाये हुए दशभनसार (दशभनसार), भावसंग्रह
और तत्त्वसार नामक प्राकृत ग्रन्थ, धाराधनसार (धारा-
धनसार) आदि प्राकृत संस्कृत मिश्रित ग्रन्थ और धन-
संग्रह नामक संस्कृत ग्रन्थ पाये जाते हैं।

देवसेना (सं० स्त्री०) देवाना सेना। १ देवसैन्य, देव
ताम्राणी सेना। २ प्रजापतिकी कन्या जो याज्ञिकीके
गर्भसे उत्पन्न हुई थी। इनका दूसरा नाम पत्नी वा महा-
पत्नी भी है। ये मातृकाओंमें अष्ट हैं और शिशुओंका
पालन करनेवाली हैं। इनकी बहनका नाम देवसेना
है। एक बार केशी दानव इन्हीं से गया, किन्तु
इन्होंने इनकी रक्षा की। एक दिन इन्होंने स्कन्दको बुला
कर कहा, 'हे सुरोत्तम! आपकी अन्न लेते न लेते स्वयम्भू
ने इस कन्याको आपकी पत्नी निर्दिष्ट कर रक्ता है,
अतः आप इनके साथ विवाह कीजिये।' इन्होंने लज्जामें
स्कन्दने यथाविधि देवसेनासे विवाह कर लिया। विवाहमें
वृद्धसन्तिने होम और जप किया था। ब्राह्मणने इन्हें
पत्नी, लक्ष्मी, धामा, सुचन्द्रा, सिन्धोपासी, कुण्ड, मदहसि
और अपराजिता नामोंसे पुकारा। जिस समय स्कन्दके

साथ इनका विवाह होता था, उस समय लक्ष्मीदेवीने
मूर्त्तिमतो से कर इन्हें आग्रह दिया था। जिसे
पद्ममी तिथिकी स्कन्द श्रियुक्त हुए थे, वह श्रियुक्तमो
कहलाई और जिस पक्षीकी स्कन्द कृतज्ञाये हुए थे, वह
पक्षी वा महापक्षी कहलाई। (भारत वन० २८८ अ०)

देवसेनापति (सं० पु०) देवसेनायाः पतिः इत्यतः। स्कन्द,
कर्त्तिक।

देवस्थलि — पञ्चायतन्त्रं रचयिता।

देवस्थान (सं० पु०) देवानां स्थानमिव स्थानं यस्य।
१ एक सिद्ध महर्षि। इन्होंने पाण्डवोंकी वन जाति समय
सदुपदेश दिया था। पौल्ले जन्म युधिष्ठिरने राज्य प्राप्त
किया, तब इन्होंने अनेक प्रकारके उपदेश करके उन्हें
राज्य छोड़नेसे रोका था। (भारत वाणि १-२० अ०)

२ देवताओंके रहनेकी जगह। ३ देवालय,
देवमन्दिर।

देवस्मिता — धर्मशुभशणिकी कन्या। ये अपनी
इच्छासे गुहसेनसे विवाह करनेके लिये पितामातासे
विना कहें सुने उनके साथ भाग गईं। ये पंचग-
पतिपरायणा थीं और स्वामीकी कमी विदेश जाने न
देती थीं। एक बार गुहसेन जब कटाक्षहोममें व्यापार
करने गये, तब वहाँके अनेक शणिक पुत्रोंने भा कर देव-
स्मिताका सतिव नष्ट करनेकी चेष्टा की। इन कामके
लिये उन दुष्टोंने योगकरण्डका नामक एक परिव्राजिका-
को शरण ली। परिव्राजिकाके सिद्धिकरी नामकी एक
गिथ्या थी। उसीको नाथ ले वे देवस्मिताके घर पहुँचीं।
वहाँ जा कर परिव्राजिका देवस्मिताको परपुण्यासना
करनेके लिये कोशिश करने लगी। देवस्मिता इस
बातकी ताड़ गईं। उन्हें उपयुक्त दण्ड देनेका हठ
सहस्य करके उन्होंने दासोंके द्वारा धुरा मिली हुई शराव
और कुक्कुरपद चिन्नुत एक सुहर बनवाई। पौल्ले दमारा
करके उन्होंने परिव्राजिकासे शणिक पुत्र लानेकी कहा।

इसर देवस्मिता परिचारिकाने उन्हीं का भेष बना
उस शणिक पुत्रको शराव पिना कर बेहोश कर दिया
और उस सुहरकी भागमें तथा कर उसके कपास पर छाप
दे दिया और मड़की किनारे गड्डमें फेंक दिया।

इस प्रकार एक एक करके वे चारों अपनी किए हुए

देवमाया (मं० स्त्री०) देवता माया १-तत्त्व। भविष्य-
वन्देयु पाणिनीयको माया। माया ही सब प्रकारके
मन्त्र-मन्त्रादि कहिये। २-माया देवी।

देवमाय (मं० पुं०) देवोपमा (यतो मायः)। १ चर्चिषादि
देवविहित, देवयज्ञ पद। २ देवविहित पदमात्र।

देवमाय (मं० पुं०) देवाय भूयस्य कोटिनाय यो मायः
यत् हि श्रुतेरुत्तमस्य प्रादुर्भावात् गर्भस्य कोटिनादित्वात्
तथात्वं। १ गर्भस्था पट्टममाय, गर्भका पातका महीना।
पातकं महीनेर्गर्भस्य श्रुतिं पोर योजयामासुर्गो उत्पत्ति
ही जाता है, इसीसे उसे देवमाय कहते हैं। इसका
पर्याय गर्भादस्य है। देवता माय। २ मनुष्य परि-
माप २० वर्षका एक देवमाय, देवतापोंका महीना
को मनुष्योंसे तोम तर्पित कराकर होते हैं।

देवमित्त (मं० पुं०) देवो मित्तं यस्य। १ मन्त्राभेदयुक्त
मनुष्यादि। २ मातृक्य श्रविका एक नाम। ३ यजुर्ग-
हस्य, पाक या मदारका पेड़। (श्री०) ४ कुमारानुसर
मातृभेद, कुमार यजुषो एक मातृका।

देवमातृ (मं० पुं०) १ यदुष्यं शोच्यं श्रुतिभेद, यदुष्यं शोच्यं
एव राजाका नाम। २ मिथिनाके एक प्राचीन राजा।
जो राजा रघुवंश के पुत्र पोर जनक या मोक्षमर्क पूर्वक थे।
देवमातृप (मं० पुं०) १ दृष्टीके एक पुत्रका नाम।
२ मनुदेवके पितामहका नाम।

देवमुकुन्दनाभ—हृदीके एक कवि। इन्होंने संवत्
१८०० में कर्जन्द विम नामक एक पुस्तकका रचना की।
देवसुमि (मं० पुं०) देव इव सुमिः। १ देवर्षि-नार-
दादि। २ सुरास्य शक्ति।

देवसुक्त (मं० पुं०) देव इत्यस्मिन् यत्त-वाधारे शिवः।
देवसुक्त-यत्त-वाधारे शिवः।

देवसुक्त (मं० स्त्री०) देवा इत्यस्मिन् यत्त-वाधारे शिवः।
१ वेदशास्त्र, धर्मका वेद। शिवही देव। २ धर्मो।
३ दामाधिकार्यमान, यह ध्यान लक्ष्मी धर्म किया
जाय।

देवसुमि (मं० पुं०) देव इत्यस्मिन् यत्त-वाधारे शिवः।
देवसुमि-यत्त-वाधारे शिवः।

देवसुमि (मं० पुं०) देवता माय १-तत्त्व। भविष्य-
वन्देयु पाणिनीयको माया। माया ही सब प्रकारके
मन्त्र-मन्त्रादि कहिये। २-माया देवी।

जो पांच यज्ञोभिने एक है और गुरुतीता परिनिर्वाण
कहा गया है। गुरुत्वोकी प्रतिदिन देवयज्ञ, भूयस्य, विद-
यस्य, तद्वयस्य और मनुष्यवस्य इन पांच यज्ञोंका अनुष्ठान
करना चाहिये। ये प्रतिदिन पदपूजाजनित जो पांच
कर्म करते हैं, यह इस पदव्यय द्वारा गुरु ही जाता है।
प्रतिदिन इष्टदेवताके उद्देश्यसे जो होम किया जाता है,
उसे देवयस्य, उन्मत्त उद्देश्यसे जो उपवासादि दान किया
जाता है उसे भूतवस्य और विष्णु उद्देश्यसे जो ग्राह्य-
वादि किया जाता है, उसे विष्टवस्य कहते हैं। विष्ट-
पूर्वक वेदाध्यायनका नाम ब्रह्मवस्य तथा चतुर्विधा पोर
दानका नाम मनुष्यवस्य है। इन पांच यज्ञोंमें दैनन्दिन
पक्षपातक जाता रहता है। (भाष० ८० ३।१।११)

देवयज्जा (मं० स्त्री०) देवता यज्यः यागः टाव, देव-
तायोंने निवे याग किया।

देवता मं० (स्त्री०) देवतागणको प्रायविता, जो देवताओं-
की या मन्त्रे।

देवयत्त (मं० स्त्री०) देव देवत्वं यात। देवत्व प्राप्त,
जो देवता हो गया हो।

देवयाया (मं० स्त्री०) देवता याया। देवीयवादि।

देवयामिन् (मं० पुं०) दानमभेद, एक यजुषका नाम।

देवयामि (मं० स्त्री०) यायतेऽनेन या करमं क्युट्, देवता
यामं १-तत्त्व। १ देवतापोंका गतिसाधन रत्नभेद,
विमान। देवः परमः यायतेऽनेन मार्गेन या करमं
क्युट्, २ चर्चिषादि मार्गकपट्य, शरीरमें पक्षम होने-
के उपरान्त जोवाप्याके जनेके निवे दान मार्गमिमे यह
मार्ग जिसमें होता हुआ यह ब्रह्मलोकको जाता है।

वेदात्मकमार्गमें चर्चिषादि पदका विवरण, इस प्रकार
विधा है—प्राची पोर पश्चाती दानों को उक्तानि पर्याप्त
शास्त्रोक्त प्रथाओंमें शरीर स्वयं करते हैं। पश्चाती भी
उक्तानि होते पर्याप्त एक लोकमें दूसरे लोकको जाते हैं
पोर प्राची भी। प्रमत्त इतना ही है कि प्राचीने उक्त
मन्त्रका पद मिल है जिस को घर पश्चाती नहीं जा
सकते। किन्तु शास्त्रोंमें इसका जोश करनेमें पना कहा
है, कि उक्तानि के बाद प्राचीने उक्तानि को गति पोर
नकापट्य एक प्रकारसे नहीं, निम्न भिन्न प्रकारसे है।
जो ब्रह्मलोकमें जाते हैं वे सभी चर्चिषः हैं। चर्चिषः

१ पञ्चारिणी जाता । २ अथनपर्णी, विजयसार । ३ मूर्वा, मुरी । इसका पर्याय—तेजनी, पिनुनो, देवा, तिक्तवल्ली, पृथक्त्वचा, धनुःश्रेणी, मधुरसा और निन्दनी । ४ पट-मन ।

देवा-१ अयोध्या प्रदेशके बड़वाँकी जिलेका एक परगना । १२० ई०में सेवट सालार मसाउदने इस भूभाग पर अधि-कार किया । बहुत दिनों तक यहाँ मुसलमानों की प्रधा-नता थी । पोछे जनबाके राजपूत लोग प्रवल हो उठे और उन्होंने इस परगनेका अधिकांश जीत लिया । पन्तमे स्थानीय राजाने बहुतसी सेना भेज कर इसके सरदार-को पकड़ मंगाया और इस स्थानको दखल कर लिया । जनबाके राजपूत लोग अपनेको वैश-सन्निव वतयाने हैं । यहाँका भूपरिमाण १४१ वर्ग मील है । इस परगने-का भाषा तालुकदारी और भाषा कर्मोदारी है ।

२ सप्त बड़वाँकी जिलेका एक नगर । यह बड़वाँकी नगरसे ४ कोसकी दूरी पर अवस्थित है । यहाँ बहुत प्राचीन ग्रेक मुसलमान राजाओंके वंशधरका वास है । यहाँके काँचके बरतन बहुत मशहूर हैं ।

देवाकवि—हिन्दूके एक कवि । ये राजपूतानेके रहने वाले कहे जाते थे । स० १८५५ में इनका जन्म हुआ था । ये कवि कल्यादास पावहारो गलताजीवालेके मित्र और उदयपुरके पास एक मन्दिरमें चतुर्भुजस्वामीके पुजारी थे ।

देवाक्रोड (स० पु०) देवा आक्रोडुल्लव, आक्रोडु आधारे घञ, देवाना आक्रोडः । देवोद्यान, देवताओंका उद्यान, इन्द्रका बगीचा ।

देवागार (स० पु०) देवाना आगारः । देवताओंका स्थान, देवालय ।

देवागारिक (स० त्रि०) देवागारी गिबुकः अगारान्तात्वात् ठन् । जो देवालयका काम काज करता है ।

देवाङ्ग—दक्षिणप्रदेशके ताँतियोंका एक भेद । ब्रह्माण्ड संपुराणके अन्तर्गत देवाङ्गचरित्रमें इस जातिका उत्पत्ति-विषय इस प्रकार लिखा है—

मानवींकी जड़ उठि हुई, तब वे सबके सब बध्-जोन थे । एक दिन सदाशिवने सोचा, कि किस प्रकार इन नववट प्राणियोंकी बधादि मिलेगी ? इसी समय

उनके प्रीतिसे एक पुत्रको उत्पत्ति हुई । देवताके पद्मसे उत्पन्न होनेके कारण उनका नाम देवाङ्ग रखा गया । देवाङ्गकी विष्णुसे सुता और मयदानवीसे ताँत आदि कपड़ा बुननेकी कुल सामिधियाँ मिलीं । बाद उन्होंने स्वर्ग, मर्त्य और पाताल इन तीन लोकोँके उपयोगी वस्त्रादि तैयार कर दिये । मर्त्यवासियोंने खुश हो कर उन्हें आमोदपत्तन वा आमोदपुरका राजा बनाया । देवताओंने सूर्यको एक कन्या और शेषकी एक कन्या इन दो कन्याओंके साथ उनका विवाह कर दिया । नागराज-कन्याके एक पुत्र और सूर्यकन्याके तीन पुत्र उत्पन्न हुए । नागराजके दोहिनने सोराष्ट्रदेश पर आक्रमण किया और सूर्यकन्याके पुत्रगण कुछ दिन तक आमोदपुरमें ही राज्य करते रहे । पोछे पन्थान्य राजाओंने जब उनका राज्य कौन लिया, तब वे नितान्त हीनावस्थाको प्राप्त हुए । पन्तमें वे सब कपड़े बुन कर अपना गुजारा करने लगे । इसी प्रकार इनके वंशधरोंने देवाङ्ग नामक तन्तुवाय श्रेणीकी उत्पत्ति हुई ।

देवाची (स० स्त्री०) देवानध्वति वेदे वाहु० न स्त्रीपः नाङ्गादयश्च डीप । १ देवताओंके प्रतिगमनयौला, देवताओंके उद्देश्यसे चलनेवाली । २ देवपूजिका, देवता-का पूजन करनेवाली ।

देवाजीव (स० स्त्री०) देवेन देवप्रतिमासेवनेन आजीव-तोति आ जीव-चच । देवल, पुजारी, पंडा ।

देवाजीविन् (स० त्रि०) देवेन आजीवतोति आ-जीव-चिनि । देवल, देवताओंको पूजा करके जीयिका चलाने-वाला ।

देवाट (स० पु०) घट गती भावे घञ, देवाना घट गमनं यत्न । १ हरिहरक्षेत्र । बराहपुराणमें लिखा है, कि जहाँ नदी महादेवका गोघन से भर रहते हैं, उची हरिहरात्मक क्षेत्रमें सब देवता परिभ्रमण करते हैं, इसीसे इसका नाम देवाट हुआ है ।

देवातिथि (स० पु०) कुपयं योय अक्रोधनका पुत्र ।

देवातिदेव (स० पु०) देवानतिक्रम्य दोष्यति अति-दिव-चच । विष्णु ।

देवात्मन् (स० पु०) देव आत्मा अधिष्ठातृदेवता यस्य ।

१ अन्तर्ब्रह्म, पीपल । २ देवस्वरूप ।

३ एक हिन्दी-कवि । इनका जन्म स. १८२२ में हुआ था । ये जातिके ज्ञात्रण थे ।

४ हिन्दीके एक कवि । इन्होंने नरहरिचम्पू नामकी एक पुस्तक लिखी ।

५ सुप्रसिद्ध एक हिन्दी-कवि । इनका बनाया हुआ बैतालपक्षीसी नामक १८८ छंदोंका एक सुन्दर ग्रन्थ है । इसकी कविता मुस्लिमपुर और मनोहर है । इन्होंने यह ग्रन्थ स. १८१२ में लिखा है । इसमें विविध छन्दोंमें कविता हुई है । सदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

“जै गन नायक बीर बिकट दुष्टन संहारन ।

जै गन नायक बीर साधु जन विपति विदारन ॥

जै गन नायक बीर बीर निरमल भति दासक ।

जै गन नायक बीर विपन बदन दाहन नायक ॥

सुम एक रदन गल बदन जै के अखंड आनन्दमय ।

कवि देवीदत्त दयाल ज गिरिज नन्द सुखदय जय ॥”

देवीदत्ताराय—एक हिन्दी-कवि । इन्होंने महाभारत-भाषा नामक एक पुस्तक रची है ।

देवीदास—१ एक हिन्दी-कवि । ये मुन्दलखण्डी तथा स. १७४२ में सत्तम हुए थे । इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाए हैं । यादववंशी करौलीके महाराज भैया रतनसिंहजोकी समामे ये १७४२ संवत्में गए और तबसे मरणपर्यन्त वहाँ रहे । इन्होंने नाम पर इन्होंने ‘प्रेम-रत्नाकर’ नामक एक ग्रन्थकी भी रचना की है । इनके नीति सम्बन्धी दोहे बहुत सुन्दर हैं ।

२ सिद्धान्तसारसंग्रह और तत्त्वार्थसूत्र-टोका नाम जैन-ग्रन्थके रचयिता । ये बसन्त नामके स्थानमें रहते थे और जातिके खण्डेलवास थे । इनका पहला ग्रन्थ १८४४ संवत्का रहा हुआ है ।

३ परमानन्दविलास, छन्दावह, प्रवचनसार छन्दोबद्ध, चिह्नासवचनिका और चौबोसोपूजापाठ नामक जैन-ग्रन्थोंके प्रणेता । ये दुगोदर केलगर्वा (जिला भांसा) के रहनेवाले और स. १८१२ में विद्यमान थे ।

४ प्रसिद्ध जैन-कवि छन्दावनदासके समसामयिक एक कवि । आपके बनाए हुए बहुतसे भजन या पद प्रब. भौ. जैन-समाजमें प्रचलित हैं ।

देवीदीन—हिन्दीके एक कवि । ये विलग्रामीके यासी थे तथा इन्होंने नखविश्व और रसदर्पण नामके दो ग्रन्थ लिखे ।

देवान्धियक (सं. पु०) देवों धिया इत्यादिप्रतीकग्रन्थोपस्थित अत्र अनुवाक अध्याये वा गोपदादित्वात् जुन् । देवीधिय इत्यादि प्रतीकयुक्त अनुवाक वा अध्याय ।

देवीपुर—मानसरोवर जिलेके प्रकसरपुर परगनेके अन्तर्गत एक ग्राम । यहाँ महाहमें एक बार छाट लगती है । यहाँकी जनबाध पक्का नहीं है । आपाद, यावण और भाद्र इन तीन महीनोंमें चरका प्रकोप अधिक रहता है ।

देवीपुर—दिनाजपुर जिलेके सन्तोष परगनेका एक ग्राम । देवीपुराण (सं० स्त्री०) देवी भगवतीके माहात्म्यादि युक्त संपुराणभेद, यह संपुराण जिसमें देवीका माहात्म्य वर्णित है । पुराण देखो ।

देवीप्रसाद—१ एक हिन्दी-कवि । ये कायस्थ-जातिके थे । इनका जन्म संवत् १८८० में हुआ था तथा इन्होंने स. १८२५ में वैद्यकल्प नामक एक ग्रन्थ लिखा । स. १८४६ में इनका स्वर्गवास हुआ ।

२ हिन्दीके एक कवि । ये विलग्राम जिला हर-दोईके रहनेवाले थे तथा इनका जन्म स. १८०० में हुआ था ।

३ एक हिन्दी-कवि तथा गद्यलेखक । आप मुज-फ्फरपुरके वासी थे तथा आपने प्रबोधपथिक नामक एक पुस्तक लिखी है ।

देवीप्रसाद चौधरी—हिन्दीके एक कवि । ये भागरा प्रान्तके रहनेवाले थे । इनकी कविता मनोहर होती थी ।

देवीप्रसाद सुंशी—एक सुप्रसिद्ध हिन्दी-कवि । इनका जन्म संवत् १८०४ की हुआ था । इनके पिताका नाम कल्याणदे सुंशी था । ये कायस्थ-जातिके थे । इनके पूर्वज मुसलमानों राज्यसे सम्बन्ध रहनेके कारण फारसी-सेवा थे । किन्तु इनके पिता और मातादोनों हिन्दीका कुछ कुछ अभ्यास था । इन्होंने अपने पितासे उर्दू और फारसी तथा अपनी मातासे साधारण हिन्दी सीखी थी । १६ वर्षको अवस्थामें भरबी और फारसीका

कर्मों का संचित दण्ड पा कर अपने घर लौट पाये। यहाँ हिमाली के सामने घने जंगल थे। यहाँ देव-स्मिताने उस परित्राजिका और शिवाको इसी प्रकार गराव पिना कर बेहोश कर दिया और उनको नाक, कान काट कर उन्हें जंगल के स्थान पर फेंक दिया। इसके बाद देवस्मिताने सोचा, कि शायद वे बधिक-पुत्र उनके स्वामी का कोई भण्ड भी न कर पायें, इस स्थानसे वे बधिक-पुत्र को धारण कर कटाहदीपको गढ़ें। यहाँ जाकर उन्होंने राजासे कहा, 'मेरे चार चित्रित नौकर आपके राज्यमें भाग पाये हैं, उन्हें मुझे तलाश कर दें।' राजाने जब उन्हें तलाश करने कहा, तब बधिक-पुत्र धारो देवस्मिताने उन चार बधिक-पुत्रोंको दिखला दिया।

इस पर बधिक के सभी लोग, विशेषतः वे चारों बधिक-पुत्र बहुत क्रोधित हुए। देवस्मिताने कहा, 'राजन्! मेरे नौकरोंके कण्ठ पर कुत्तेके पैरका चिह्न है, देखने-को आसानी मिले।' अनन्तर देवस्मिताने आसानीपूर्वक कुल बाते राजाके सामने कह सुनाई। इस पर वहाँ जितने मनुष्य खड़े थे, सब कोई इनकी भूमिसे प्रशंसा करने लगे और राजाने भी पातिप्रत्यक्ष उपहारस्वरूप उन्हें प्रचुर सम्पत्ति दी। बाद देवस्मिताने गुप्तसेनकी साथ ली तात्कालिक जा कर सुखसे रहने लगे।

(कथापरिवर्णन)

देवस्व (सं० स्त्री०) देवाना स्त्री। १ देवप्रतिमाके लिये उत्कृष्ट धन, वस्त्र आदि जो किसी देवताको पूजा आदिके लिये समर्पित निकाल दिये जाय। २ यज्ञयोग मनुष्यका धन। जो इस धनकी सहायता से करता है, वह परलोकमें मोक्षका जूटा खा कर जाता है।

देवस्वत्व (सं० पुं०) देवस्वत्वति धाराग्रन्थोत्पत्ति अनुवाकिके अर्थात् वाचन। देवस्वत्वादि प्रतीकशुद्ध अर्थात् वाचनवाक्य।

देवस्वामी—१ एक विख्यात भाष्यकार। उन्होंने आश्वलायनश्रौतसूत्र, आश्वलायनगृह्यसूत्र और शौचायनसूत्रका भाष्य रचा है। २ भक्तिकल्पतरु नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

देवस्व (सं० पुं०) एक प्रकारकी वस्त्र।

देवस्वरिया (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी नाव।

देवस्व (सं० पुं०) देवाय स्वयं यत्न। स्वयमेव, एक स्वयिका नाम।

देवस्वराज्य नामा जिलेके महाद्वारी परगनेका एक छोटा शहर। यह भू-भाग २२° ३३' १०" उ० और देगा ७८° ०' १५" पू० यमुना नदीके किनारे अवस्थित है। लोक-संख्या प्रायः ७ हजार है। यहाँ एक म्युनिमिपैलिटी है। शंख बजा कर यहाँ चुनाव तैयार होता है। इसी चुनावके व्यवसायके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

देवस्वरिया (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी नाव।

देवस्व (सं० स्त्री०) देवाना वा देवी-हित। १ देव-ताम्रिका हित। २ देवताओंसे प्राप्त हित।

देवस्व (सं० स्त्री०) देवाङ्गणम् इति सम्पत्ति-भावे-कर्त्तरि वा क्तिय। १ देवाङ्गण, देवताओंका आङ्गण। २ मोहिपूर्ण शकट, भनाजसे भरो गाड़ी। ३ वामकर्त्त, बायां कान। स्वयमेव, एक स्वयिका नाम। (त्रि०) ४ देवाङ्गणकर्त्त, देवताओंका आङ्गण करनेवाला।

देवस्व (सं० स्त्री०) स्वायम्भुव मनुको कन्या। महर्षि कदम्बके साथ इनका विवाह हुआ था। महर्षिने इनकी सेवासे प्रसन्न हो कर उन्हें दिव्यज्ञान दिया। इनके गर्भमें नौ कन्याएँ और एक पुत्र हुआ। सांख्य शास्त्रके कर्त्ता कपिल इनकी पुत्र हैं। (मागवत)

कदम्ब और कपिल देवी।

देवस्व (सं० पुं०) देवा-ङ्गणम् इति सम्पत्ति-भावे-कर्त्तरि वा क्तिय। यत्र आचार्य भवति।

देवाङ्गणम् नाम, देवता और राजसकी लड़ाई।

देवस्व (सं० स्त्री०) देवा-भावे-कृत्य देवाना कर्त्तव्य-सम्पत्ति। देवताओंके अवयवस्वरूप उपद्रव।

देवस्व (सं० स्त्री०) देवाना हित। देवाङ्गण।

देवस्व (सं० पुं०) तथोदात्त मन्त्रान्तर्गते योग्यस्वरूप हरि-के पिता।

देवस्व (सं० पुं०) शीघ्रतस्मिन् तीर्थ भेद। इसमें संयत-चित्त हो कर स्नान करनेसे परमेश्वर यज्ञका फल होता है। इस पर्यन्त पर महादेव देवीके साथ और ब्रह्मा सब देवताओंके साथ वास करते हैं।

देवा (सं० स्त्री०) दिव्यत्वनाया दिव्य-धन, तत्तत्प्राप्य।

दुषा। यह बन्दोबस्त पंगरेजों के साथ हो किया गया।
 हेटिंग्सने पृथ्वी लूथ कटाटा दर पर बन्दोबस्त करके
 प्रत्येक जिलेमें एक एक पंगरेज कमकर नियुक्त किया
 और उनमें तत्पर राजस्व वसूलका कुल भार बोधा।
 इनका फल यह हुआ, कि कमकरसाहब स्वयं ही बं-
 मानी करके इजारा लेने लगे। बड़ोतरी मालगुजारी जो
 कुछ बंधन होती थी उसमें ये कम्यूनिको न दे कर स्वयं
 हड़प करने लगे। हेटिंग्स भी इसमें कुछ कर न सकते,
 क्योंकि यदि वे उन्हें कुछ कहते भी तो उनकी चपलो
 गो पील चुन जानेकी सम्भावना थी। इसी डरसे वे
 उन्हें दिङ्काड़ नहीं करते थे। किन्तु राजस्व वसूल नहीं
 होनेसे औरतर विपत्तिका सम्भावना है, ऐसा स्थिर कर
 उनकी निरमै इस काममें देगीय लोगोको नियुक्त
 किया और उनको देखभालके लिये छः समितिवा
 स्थापित हुई। मुर्मिदाबादमें देवोसिंह और कमकत्ते-
 में हेटिंग्सके प्रिय-पात्र गङ्गागोविन्दसिंह दोबान बनाये
 गये।

गङ्गागोविन्दसिंह को हेटिंग्सके स्वरूप से। परि-
 दर्शन-समितिके सभापति हो कर हेटिंग्स पूर्णिया देखने
 गये। गङ्गागोविन्द भी हेटिंग्सके साथ थे। देवो-
 सिंहाका गङ्गागोविन्द पहले हीसे जानते थे। किन्तु
 पारस्परिक दोनारमें मनोमालिन्य हो गया। देवोसिंहको
 जय यह मालूम हुआ, कि हेटिंग्स गङ्गागोविन्दसिंहके
 परामर्शानुसार सभी काम कर रहे हैं, तब वे भी गङ्गा-
 गोविन्दकी शरणमें पहुँचे। गङ्गाजल छू कर उन दोनों
 ने आपसमें मित्रता कर ली। गङ्गागोविन्दसिंहको
 सुधारिणमें ही देवोसिंह पूर्णियासे निकाल दिखे जाने
 पर भी १८०६ ई०में मुर्मिदाबादको प्रादेशिक-समितिके
 दोबान बनाये गये।

दोबान हो कर देवोसिंहने देखा कि प्रादेशिक-
 समितिके सम्मग्न उस पर अपना दबाव डाल सकते हैं
 ऐसा होनेसे अपने-अपने करनेमें उन्हें बाधा पड़ने
 से। यह सोच कर वे कूटनीति पथमध्यमपूर्वक उन्हें
 चुन करके अपना काम निकास लेनेमें तत्पर हुए।
 प्रादेशिक-समितिके सभी सम्मग्न पक्षबद्धक, कार्यनि-
 मित्त और चामोदमिय थे। देवोसिंह तो यही चाहते

हो थे। ये उन्हें चुन करनेके लिये सत्तमोत्तम विचा-
 यतो शराव और चन्दो खोजकी सा कर उन्हें देने
 लगे। अपरिणत चीचनस्तिक्त पंगरेजदल इन्द्रियग्रन्थि
 उपकरणस्वरूप उन सब में टीको पादर घट्टप करने
 लगे। देवोसिंहको इच्छा पूरी हुई, पंगरेजदल चामोद
 प्रमोदमें ललित रहते थे। अब देवोसिंह बिना रोकटोक-
 के राजस्व वसूल करने और अपना पैट भरने लगे।

किन्तु निरवच्छिन्न सुदृढमोग किमोके भाग्यमें बदा
 न था। समितिके पंगरेजदल राजस्व सम्मग्नोय हिमाव-
 यत वा नियमावली कुछ भी समझते न थे और न सम-
 भनको कोशिश ही करते थे। कुछ दिन बाद रिगवत-
 का बँटवारा ठोकने न होनेके कारण आपसमें विरोध
 शुरू हो गया। तमगः यह विवाद इतनी तात्त बढ़
 गया, कि १८०७ ई०में समितिके मध्य लीगोंने देवोसिंह
 को पदच्युत करनेका संकल्प किया। देवोसिंहने कोई
 दूसरा उपाय न देख गङ्गागोविन्दसिंहकी शरण ली।

हेटिंग्सने कुछ वर्षोंमें प्रादेशिक-राजस्व-समिति
 द्वारा अपना स्थाय विर होता न देख प्रादेशिक समिति-
 को ठग देनेके लिये बिलायत कोर्ट-भाफ-डिरेक्टरीको
 लिख भेजा। किन्तु उनका प्रस्ताव असोकार किया
 गया। इन पर हेटिंग्स बहुत असमन्वयमें पड़ गये। इधर
 कोई उपाय नहीं करनेसे देवोसिंहके ऐसा कामठ
 मनुष्य हाथसे जाता है, यह सोचकर हेटिंग्स और भी
 उद्विग्न हुए। इस समय एक सुयोग उपस्थित हुआ।

१८०८ ई०में दिनाजपुरके राजा एक दत्तकपुत्र पदच्युत
 कर परमोक्तकी सिधारे। राजाके भाई और दत्तकपुत्र
 उत्तराधिकारी होनेके लिये आपसमें लड़ने लगे। हेटिंग्स
 ने नाबालिग दत्तकपुत्रको ही उत्तराधिकारी कायम
 किया और इस मेहनतानेमें उन्हें चार लाख रुपये
 मिले। राजाको नाबालिग जान कर हेटिंग्सने उससे
 राज्यकी सुव्यवस्था और रचनायेचयका भार गुडगाड
 नामक एक अपरिणत वयस्क युवकके हाथ सुपुर्द किया।
 इसी मोर्में उन्होंने देवोसिंहकी गुटलाट साहबके
 दोबान बना कर उन्हें राजस्व समितिके कोषमें बचाया।
 गुडगाड साहबके हाथ केवल राज्य-रचनाका भार
 ही नहीं था, बल्कि उनमें माय साथ वे रङ्गपुर और

१ पञ्चारिषो जाता । २ अथनपर्णी, विजयसार । ३ भूर्वा, भूर्वा । इसका पर्याय—तेजनी, पित्रुगो, देवा, तिलवल्ली, पृथक्त्वचा, धनुःश्रेणी, मधुरसा और निर्दंनो । ४ पट-मन ।

देवा-१ अयोध्या प्रदेशके बहुवांकी जिलेका एक परगना । २० ई०में सेवट सालार मसाउने इस भूभाग पर अधिकार किया । बहुत दिनों तक यहां मुसलमानों की प्रधानता थी । पोछे जनवाले राजपूत लोग प्रवल हो उठे और उन्होंने इस परगनेका अधिकांश जीत लिया । पन्तमे स्थानीय राजाने बहुतसी सेना भेज कर इसके सरदारों को पकड़ मंगाया और इस स्थानको देखल कर लिया । जनवाके राजपूत लोग अपनेको वैश-चत्रिय बतवाते हैं । यहांका भूपरिमाण १४१ वर्ग मील है । इस परगनेका भाषा तालुकदारी और भाषा जमींदारी है ।

२ जल बहुवांकी जिलेका एक नगर । यह बहुवांकी नगरसे ४ कोसकी दूरी पर अवस्थित है । यहां बहुत प्राचीन श्रेष्ठ मुसलमान राजाओंके वंशधरका यास है । यहांके कांचके वरतन बहुत मशहूर हैं ।

देवाकवि—हिन्दोके एक कवि । ये राजपूतानेके रहने वाले कह्ये जाते थे । स० १८२५ में इनका जन्म हुआ था । ये कवि कल्यादास पावहारो मलताजीवालेके शिष्य और उदयपुरके पास एक मन्दिरमें चतुर्भुजस्वामीके पुजारी थे ।

देवाक्रोड (स० पु०) देवा भ्राक्लोडत्वत्, भा-क्रोड भाधारे घञ्, देवानां भ्राक्लोडः । देवोद्यान, देवताओंका उद्यान, इन्द्रका बगीचा ।

देवागार (स० पु०) देवानां आगारः । देवताओंका स्थान, देवालय ।

देवागारिक (स० त्रि०) देवागारी नियुक्तः भगवत्पूजात्वात् उन् । जो देवालयका काम काल करता है ।

देवाङ्ग—दक्षिणप्रदेशके तंत्रियोंका एक भेद । ब्रह्माण्ड संपुराणमें भन्तगेत देवाङ्गधरित्रमें इस आत्मिका उत्पत्ति विषय इस प्रकार लिखा है—

मानवोंकी जड़ सृष्टि हुई, तब वे सबके-सब ब्रह्म-होन थे । एक दिन सदाशिवने सोचा, कि किस प्रकार इन नवसृष्ट प्राणियोंकी ब्रह्मादि मिलने में इसी समय

उनके शरीरसे एक पुंस्यको उत्पत्ति हुई । देवताके भङ्गसे उत्पन्न होनेके कारण उनका नाम देवाङ्ग रखा गया । देवाङ्गकी विष्णुसे सत्ता और मयदानवोंसे तांत आदि कपड़ा बुननेकी कुल सामियों मिलीं । बाद उन्होंने स्वर्ग, मर्त्य और पाताल इन तीन लोकोंके उपयोगो ब्रह्मादि तैयार कर दिये । मर्त्यवासियोंने खुश हो कर उन्हें भामोदपत्तन वा भामोदपुरका राजा बनाया । देवताओंने सूर्यको एक कन्या और शेषकी एक कन्या इन दो कन्याओंके साथ उनका विवाह कर दिया । नागराज-कन्याके एक पुत्र और सूर्यकन्याके तीन पुत्र उत्पन्न हुए । नागराजके दोहिरने सोराष्ट्रदेश पर आक्रमण किया और सूर्यकन्याके पुत्रगण कुछ दिन तक भामोदपुरमें ही राज्य करते रहे । पोछे पन्थान्य राजाओंने जब उनका राज्य झौन लिया, तब वे नितान्त हीनावस्थाको प्राप्त हुए । पन्तमें वे सब कपड़े बुन कर पपना गुजारा करने लगे । इसी प्रकार इनके वंशधरोंने देवाङ्ग नामक तन्त्रवाय यंत्रियोंकी उत्पत्ति हुई ।

देवाची (स० स्त्री०) देवानक्षति के देवाहु० न लोपः आह्ममदेश लोपः । १ देवताओंके प्रतिगमनयोला, देवताओंके सहेमसे चलनेवाली । २ देवपूजिका, देवताका पूजन करनेवाली ।

देवाजीव (स० स्त्री०) देवेन देवप्रतिमासेवनेन भाजीव-तोति भा जीव-भच । देवल, पुजारी, पंडा ।

देवाजीविन् (स० त्रि०) देवेन भाजीवतोति भा-जीव-चिनि । देवल, देवताओंको पूजा करके जीविका चलाने-वाला ।

देवाट (स० पु०) घट गती भावे घञ्, देवानां घट गमनं यत् । १ हरिहरसेव । वराहपुराणमें लिखा है, कि जहाँ नदी महादेवका गोधन ले कर रहते हैं, उधो हरिहरात्मक चेतनें सब देवता परिभ्रमण करते हैं, इसीसे इसका नाम देवाट हुआ है ।

देवातिथि (स० पु०) कुपवर्ग्योय भक्रोधनका पुत्र । देवातिथेय (स० पु०) देवानतिक्रम्य दोष्यति अति-दिव-भच । विष्णु ।

देवात्मन् (स० पु०) देव भाका अधिकारदेवता यम् । १ भक्तवत्सल, पीपल । २ देवलरूप ।

दिनाजपुर जिलेके कलकट्टरी पद पर भो नियुक्त हुए थे। इस बार योग्य मनुष्योंका जोड़ा था। इन दोनोंने राजाके पुराने कर्मचारियोंको बरखास्त कर उनके स्थान पर नये कर्मचारीको नियुक्त किया। राजाका बहुत खर्च घटा दिया गया। धर्मनुष्ठान आदिके लिये रानी जो कुछ पातो थी, वह बन्द कर दिया गया। राजाको मासिक मोलह सो रुपये जो गुजारेके लिये मिलते थे वह कम कर छः सो बनाया गया। यहाँ तक कि जब कभी रानीका पिता वा अन्य कोई आसीय आते थे, तो उन्हें राजभवनमें खानेको नहीं मिलता था। पूर्णियाँ देवीसिंहको अशुद्धित आत्माचार कप्तानी यहाँके किसीसे भो छिपो न थी। उसी देवीसिंहके अधीन ही कर दिनाजपुर-रङ्गपुर छरमें काँप उठा।

जिस आग्रहसे लोग काँपा करते थे, कालक्रमसे वह अब कार्यके रूपमें परिणत हो गई। १७८२ ई०में देवीसिंहने फर्जी करके एक मुसलमानके काम पर रङ्गपुर दिनाजपुर और एटाकपुरका इजारा लिया। इजारा लेनेके साथ ही उन्होंने सभी जमींदारोंसे ज्यादा जमा देनेके लिये तत्त्व किया। इसर १७७७ ई०के दुर्भिक्षसे लोकसंख्याका घास हो जानेसे जमींदारोंकी भाय कम गई थी। फिर १७७२ ई०में पंचसाला बन्दोवस्तके समय छिटसँवे अधिक दर पर जमीन लेनी पड़ी थी; क्योंकि कोई भी पैदाक जमींदारीका परित्याग नहीं कर सकते थे। किन्तु जिस बड़ोतरी पर जमीन ली गई थी, उसना भी कम्पनीको चुका नहीं सकते थे, फो साल कुछ न कुछ बाकी पड़ हो जाता था। ऐसी अवस्थामें जमाकी फिरसे बढ़ हो जानेसे जमींदार लोग उसे देनेमें बिलकुल असमर्थ थे। फल यह हुआ, कि जो सभी कबूलियत देनेसे इनकार गये उन्हें देवीसिंहने पकड़वा कर कैद कर लिया। फिर जिन्होंने इस्तीफा देना चाहा, वे भी बाकी राजस्व चुकाये बिना इस्तीफा दे नहीं सकते थे। इस कारण वे भी कैद कर लिये गये। किसी और अत्याचारसे रक्षा पानेका उपाय न देख वे सबके सब कबूलियत करनेको बाध्य हुए।

कबूलियत करनेको कुछ दिन बाद ही देवीसिंहके कर्मचारियोंने खजाना वसूल करना शुरू कर दिया।

उस समय नारायणी रूपयेका प्रचार था। कम्पनीके रूपयेके हिसाबसे उस रूपये पर देहा लगाया गया। इस प्रकारसे राजस्व घोर भो बढ़ गया, कोई भो उसे चुका देनेमें समर्थ न हुए। जमींदार और प्रजा दोनों हो छत हो कर देवीसिंहके कठोर शासनरूपो भूमिमें खाहा होने लगे। दिनाजपुरमें चारों ओर हाहाकार मच गया। उस समय आजकलके जैसा कारागार नहीं था। बिना छतवाले घरोंमें कैदो रखे जाते थे और वहीं पहरा बैठता था। देवीसिंहके प्रतापसे क्या धनी क्या गरीब सभी एक हो रखीसे बांध कर रखे गये। अन्तमें जब कारागारमें रहनेकी गुंजाइश न रही, तब वे आगमनमें बखरी हुईं मछोके ऊपर रखे गये।

देवीसिंहको दिनाजपुरमें हो रहना पड़ता था। कलकट्टरीके दीवान, राजा तथा राज्यको देवभालका भार उन्हें पर सुपुर्द था। इच्छा रहते भी वे रङ्गपुर नहीं जा सकते थे। इस कारण उन्होंने क्षणप्रसाद नामक एक प्रतिनिधिको रङ्गपुर भेज दिया। प्रतिनिधि द्वारा जब जमींदारोंको कर बढ़ाका दास सामूम हुआ, तब वे देवीसिंहके समीप आ कर अपना अपना दुःखड़ा रोने लगे। कम्पनीने उस साल सालगुजारी बढ़ानेसे निषेध कर दिया था।

देवीसिंहने कम्पनीकी आज्ञाको उल्लङ्घन कर उन सब जमींदारोंको कैद करके रङ्गपुर भेज दिया और अपने प्रतिनिधित्वमें क्षणप्रसादके बदले हररामको नियुक्त किया।

हररामने यहाँ कदम रखते न रखते सभी जमींदारोंको तलब को। सब कीर्द जमाहज्जिकी कबूलियत करनेसे इनकार गये। इस पर हररामने उन्हें सजा देनेकी आज्ञा दे दो। फिर कहा था, अर्थलोभुष कर्मचारियोंने उन्हें बेल पर चढ़ा नगरकी परिक्रमा कराई। इस प्रकारका यदि सामाजिक दण्ड होता तो उन्हें जातिथत होना पड़ता। दो बार जमींदारोंकी ऐसी दुर्दशा देख शेष सभी जमींदारोंने कबूलियत कर दो। कबूलियत होनेके बाद ही वे रूपया वसूल करने लगे। कोई भो रूपया दे न सके, जमींदारोंको जमोनको भीमत नाममात्र दे कर देवीसिंह उसे बेनामीमें खरोदने लगे। किसीके पास

देवाधिदेव (स० पु०) देवानां अधिदेवः इ-तत् । १ सर्वेश्वर, परमेश्वर । २ महादेव, शिव । ३ इन्द्र ।

देवाधिप (स० पु०) देवानामधिपः । १ सर्वनियन्ता परमेश्वर । २ ह्यपरयुगके एक राजाका नाम । ३ इन्द्र ।

देवान (फा० पु०) १ राजसभा, दरबार, कचहरो । २ रमाय, मन्त्री । ३ प्रबन्धकर्त्ता ।

देवानन्दसूरि—एक जैनचार्य । इन्होंने सिद्धसारस्त व्याकरण प्रणयन किया है । जिनप्रमसूरिके तोर्यक्ष्य पदमेंसे जाना जाता है, कि १२६६ संवत्में देवानन्दसूरिने एक जिनप्रतिष्ठा की थी ।

देवानुहसि (देवनुहसि)—१ महिसुरके बह्नलोर मिलेका एक तालुक । यह भस्मा० १३५ से १३२२ व० और देगा० ७७ से ७७५ पू०में अवस्थित है । भूपरिमाण २३५ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग ६०५३० है । इस तालुकमें दो गहर और २८४ ग्राम लगते हैं । साय १२१०० रु०की है । पिनाकिनी नदी इस विभाग हो कर प्रवाहित है । यहां कहीं कहीं पोसा, मिलायतो चालू और छल्लूट ईव उपजाये जाती है । टोपू सुलतानके यत्नमें किसे चीन द्वारा यहां ईखकी खेतीकी उन्नति हुई है ।

२ उक्त तालुकका एक प्रधान गहर । यह भस्मा० १५१३ व० और देगा० ७७४३ पू० बह्नलोर शहरमें २३ मील उत्तरमें अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ६६४८ है ।

पहले यहां पलिंगारोंकी राजधानी थी । वे अपनेका मोर सुयोद्धा जातिके बतलाते थे । पठिशार देगे । उक्त पलिंगार सरदारगण गोड़ नामसे परिचित थे । १७५८ ई० में महिसुरके हिन्दूराजासे अंतिम गौड़ पराजित हुए । इस युद्धमें हैदराबादीने अम्बारोहोके रूपमें अपने बोरत्वका परिचय देकर हिन्दूराजासे मुखातिब पाई थी । इसी गहरमें टोपू सुलतानका जन्म हुआ था । हैदराबादी यहां एक पत्थरका दुर्ग निर्माण कर गये हैं । १८८१ ई०में साई कर्मशासिने इस दुर्ग पर आक्रमण किया था । यहां प्रति सप्ताह बुधवारको जाट लगते हैं ।

देवानाम्रिय (स० पु०) देवानां म्रिय इ-तत् । 'देवानां म्रिय इति च मृषे' इति वाङ्मलात् भक्तप्रसासः । १

मृषे । २ देवताओंको म्रिय । ३ हाग, बकरा । ४ धर्मशोक । अथोक्तदेखे ।

देवाना (हि० वि०) १ दीवाना देखो । (पु०) २ एक चिट्ठिया ।

देवानोक (स० पु०) १ सावर्धि नामक तोषरी मनुके एक पुत्रका नाम । २ सगरवंशोय नृपभेद, सगरवंशके एक राजाका नाम । ३ देवताओंको सेना ।

देवानुक्रम (स० पु०) वैदिकमन्त्राणां देवताप्रापका अनुक्रमो यत्र । वैदिकमन्त्रका देवताप्रापका प्रत्यभेद । देवानुचर (स० खो०) देवानुचरति अगुचर-ट । देवताओंके पद्यात्मगानो, देवताओंके साथ चक्षुनेवाले विद्याधर आदि उपदेय ।

देवानुयायिन् (स० पु०) देवान् अनुयाति अनुया-पिनि । देवानुचर ।

देवान्तक (स० पु०) देवानां भन्तकः इ-तत् । १ राक्षसभेद, एक राक्षसका नाम । २ दैत्यभेद, एक असुरका नाम ।

देवान्धस् (स० स्त्री०) देवानां अन्ध इव दृग्नेन प्रीतिकरं । १ अमृत । २ देवने वैद्यके लिए कल्पित पत्र ।

देवान (स० पु०) चर, हवि ।

देवापि (स० पु०) पुत्रवंशीय प्रतोयराजपुत्र नृपभेद । महाराज प्रतोपके तीन पुत्र थे, देवापि, शान्तानु और वाह्लोक । तोनोंमें देवापि बड़े धर्मपरायण थे । इन्होंने संसारी विषयोंमें आसक्त न हो कर तपोव्रतसे ब्राह्मण्य प्राप्त किया । अचपनसे ही ये संसारी विषय छोड़े हुए थे । आजकल ये सुमेरु पर्वतके कलापग्राममें दोगीके वेशमें रहते हैं । कलिके समाप्त होने पर सत्ययुगमें ये चन्द्रवंश स्थापित करेंगे । (भारत १८५१/४४-४५)

वैदिकमतसे—मृष्टिसेन राजाके दो पुत्र थे, देवापि और शान्तानु । दोनोंमें देवापि बड़े थे, पर राज्य शान्तानुको मिला और देवापि तपस्यामें लगे । शान्तानुके कप्यातिशयके लिए उनके राज्यमें बारह वर्षको अनाहट हुई । इस पर ब्राह्मणोंने उन्हें कहा, 'तुमने अधर्म आचरण किया है, बड़ेके रहते तुम राजसिंहासन पर बैठे हो, इससे देवता लोग अप्रसन्न हो कर जल नहीं भर साते हैं ।' तब शान्तानुने देवापिको सिंहासन पर आस-

बयान न था। यथाचार मया यथामाने प्रजगित हो कर बहुत मनुष्य प्राणत्याग करने लगे। इनके बाद जयकीर्ति ऊपर पत्थाचार दण्ड हुआ। कोई सपाय न देव क्षत्रहीने देवकी छोड़ देना चाह। उन्हें रोकने के लिये हरामने हरएक गांवमें पहरा बैठाया। फिर इन पहरियों को तनवाहके लिये 'बोकीबन्दी' नामक एक नए प्रकार की सृष्टि हुई। उधर दिनाजपुरमें देवीमिह १८ प्रकारके कर वसूल करते थे और उधर हरामने रणपुरमें इकोन प्रकारके करों की सृष्टि की।

इस प्रकार पत्थाचार द्वारा हरराम कुछ कुछ रुपये प्रशूल करने लगे। किन्तु इतने पर देवीमिह काब मनुष्य होनेकी थे। उन्हें हररामकी कार्यदत्तता पर श्रद्धा न थी, पर उन्हें मदद देनेके लिये सूर्यनारायण नामक एक दूसरे मनुष्यकी भिजा। सूर्यनारायणने पाते ही रोद्रमूर्ति धारण कर ली। जमोदारों को बात तो दूर रहे, क्षियों के ऊपर भी वे घोर पत्थाचार करने लगे। पत्तापुरको रमणियाँ खुले मैदानमें भाई गईं। देवीमिहके दुष्ट अनुचर वनपूर्वक उन सब कुल-कामिनीयों के शरीर परने पलट्टार उतारने लगे। कितनी क्षियाँ तो न गो करदे सपके सामने खड़े हो गईं। शो-जातिका जो पत्ताम पपमान थे वह सबके सामने होने लगा। हजारों कुलजनानोंमें शोभ, शेष और यथामान धामहत्या कर डाली। कितनीने तो लम्बो सांस भर कर ईश्वरके सिंहासनको तप्त कर डाला। उन सब स्त्रियोंकी नंगी करके उनकी धँसे खुरली गई। बामके टुकड़ों को प्रवेष्टप्रकारमें बना कर उन्हें उनकी दानों-दानोंमें भिद कर छोड़ देते थे। इस प्रकारका कलङ्कित दण्ड इस संसारमें कभी नहीं देखा गया। इस प्रकार की आरक्षीय घटनामें कभी भी इतिहासका कल्लेवर कलङ्कित न हुआ था। इतने पत्थाचार पर भी जब पागालुहण फल न हुआ, तब देवीमिहने अपने भेदधारी मिहकी रणपुर भिजा। १०८६ ई-से १०८७ ई-तक (पंचदश मास तक) तो इन्हीं तरङ्गरहा। १०८७ ई-से देवीमिह 'मय' कार्यमें पड़ा। यथाचार देवदे-लिये नये नये सपाय निष्कास कर ज्ञायक रूपमें परिचित होने लगे। इसलिये शिष्टहीन, अत्यधिक प्रजाके प्राणोंमें देव

बध था। हरएक गांवमें, हरएक गोदमें, हरएक घरमें पत्थाचकी मृतिवाँ बोलने लगे। १०८९ ई-में तिरोह प्रजाने जब भागनेका भी कोई रास्ता न देखा, तब उनके मरनेका भय जाता रहा और वे सबके सब देवीमिहके विरुद्ध उठ गए। उन्होंने पापममें प्रतिज्ञा कर ली कि वे कम्पनीके माफ़ोंकी देयमें रहने न देंगे। जिस दिन प्रकारमें हो, चाहे उन्हें मार भगावे पत्थाचार शत्रु रक्षेत-में मर मिटे।

पूटानुपुष्टव गुडनाह साहबका काम केवल पत्ता और सोना था, देवीमिह को सब काम करते थे। देवीमिहका कीर्ति-कलाप वे देख करके भी नहीं देखते थे, सुन कर भी पनसुनो कर देते थे। रिशबनकी माया कौन कष्ट सकता है? यथासमय गुडनाहके कानोंमें इन सब बातोंकी भगत पड़ी। उन्होंने सुना, कि सारी प्रजा नूरल महमदकी 'मवाब'के पद पर नियुक्त कर बादा हो गई है। उन्होंने तुरंत सेक्रेटरीट मेंकडीनाह-साहबको दसवसके साथ यहाँ भिजा। विद्रोही-दल एक स्थानमें थे नहीं, साहब जिसके साथ युद्ध करते? गुडनाहने यह दृष्ट निकाया, कि मेंकडीनाह साहब जिस किसीकी पकड़ेगी उसीकी मार डाल सकते हैं। इस पर भी विद्रोह-दलन न हुआ। सेक्रेटरीट साहबको जब मालूम हुआ कि नूरल महमद सुलतानमें है, तब वे उसी और चल दिये। नूरल महमदके साथ सुलतान हाटमें केवल ५० मनुष्य थे, उनका दसवस पाटप्राममें था। मेंकडीनाहने बिना सोचे विचारें सुलतानमें उन पर चढ़ाई कर दी। दानोंमें एक छोटा लड़ाई हुई, जिसमें नूरल महमदकी सगुल हाट लगा और वे इस क्रोडमें चल बसे। इस समय गुडनाह साहबने यह घोषणा कर दी, कि प्रजा यदि पक्षता त्याग कर दे, तो उन्हें पचास दान दे सकते हैं। इतना ही नहीं राजमने लिये उन पर भी पत्थाचार होता था रहा है वह बन्द कर दिया जायगा। १०८० ई-में वे जिस हिवाबने मान-गुजारी देते थे, उसी हिवाबने देना होगा, बढ़ोतरी नहीं लिया जायगा। यह सुन कर कितने तो घर बाहिर पाये, जो कुछ बंध रहे उन्हें सेक्रेटरीट साहबने पा कर विनष्ट कर डाला। जो कुछ थे, देवीमिहके पत्ता-

विज्ञ किया। देवापिने शान्तनुषे कहा था, 'तुम यज्ञ करो, हम तुम्हारे पुरोहित होंगे।' देवापिने यज्ञ कराया जिससे खूब हटि हुई थी। (निष्क २।१०)

देवास (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी लैट। यह घीमर, गोंद, चूना, बीजान और पानो मिलाकर बनाई जाती है। देवामियोग (स० पु०) किसी दुष्ट देवताका शरीरमें प्रवेश। इस देवताके प्रवेश होनेसे मनुष्य बुरा काम करने लगते हैं।

देवामीष्ट (स० त्रि०) देवानां प्रमीष्टः। १ देवताओंके प्रमिलित। स्त्रियां टाप्। २ ताम्बूली, पान। ३ पूज हथ, सुपाहोका पेड़।

देवायतन (स० स्त्री०) देवानां आयतनं। देवप्रतिमालय, देवमन्दिर।

देवायुध (स० स्त्री०) देवस्य इन्द्रस्य आयुधं इत्यतः। १ इन्द्र धनुष। सृजन्ने धनुषा आकाशमें सूर्यकिरण प्रति- विम्बित होनेसे धनुषाकारका पदार्थ उत्पन्न होता है, उसीको इन्द्रधनुष कहते हैं। २ देवताओंका अस्त्र। देवायुध (स० स्त्री०) देवानां आयुधः अस्त्र, समासान्तः। देवताओंका जीवनकाल।

देवारण्य (स० स्त्री०) देवप्रियं देवभूयिष्ठं वा अरण्यं। तोयभेद, एक तोयका नाम। देवानां अरण्यं। २ देव- ताओंका स्थान।

देवाराधन (स० पु०) देवताओंकी पूजा।

देवार्ति (स० पु०) देवानां अर्तिः इत्यतः। पुर।

देवार्पण (स० स्त्री०) देवेषु अर्पणं। १ देवताके निमित्त किसी वस्तुका दान। देवेष्व्योऽपान्ते वैः अधिकारो वृद्धः। २ अग्निदादि।

देवाय (स० पु०) अहं प्रथमेऽहं, अहं तुके एक गणका नाम।

देवार्ह (स० त्रि०) देवानर्हति अर्ह-दाने अण्। १ देवताओंके निमित्त दानयोग्य। (स्त्री०) २ सुरपण, माचोपस।

देवार्हा (स० स्त्री०) देवार्ह-टाप्। अहं देवीनता।

देवालय (स० पु०) देवानां आलयः आवासः। १ स्वर्ग। २ देवगृह, मन्दिर।

देवाला (स० स्त्री०) देवानपि आवाति स्वायत्तो करोति आ-ला-क। रागिणीविशेष।

देवाला (हि० पुं०) देवाला देवो।

देवाला—मन्द्राज प्रदेशके नीलगिरि जिलेके अन्तर्गत नम्बलकोट संशका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० ११° २८' ४०" और देशा० ७६° २३' ५०" में अवस्थित है। कइयोंके श्रवसायके लिये पहले यह स्थान बहुत प्रसिद्ध था। बैनाटुके सोनेकी खानके निकट होनेके कारण यहां की लोकमश्या घीरे घीरे बढ़ती गई और यह एक प्रधान नगरमें गिना जाने लगा। यहां पान्यनिवास, घाना, टेलिग्राफ, डाकघर और मजिस्ट्रेट सांशका आवास है।

देवाला—मध्यप्रदेशके चम्पा जिलेके अन्तर्गत एक छोटा ग्राम। यह अक्षा० २०° ६' ४०" और देशा० ७८° ६' १०" पू० भाण्डकसे तीन कोसकी दूरी पर अवस्थित है। सुन्दर शिखर पुष्पा और स्यापला युक्त देवालयके भग्नावशेषके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है। माण्डक देखो।

देवालिया—काठियावाड़के भालाबार प्रान्तके मध्यवर्ती एक छोटा राज्य। यहांके सामन्तके अधीन दो ग्राम हैं। ये हटिया गवर्मेण्टकी प्रविष्य ४६०) ४० और जुनागढ़के नवाबकी ५६ ४० कर देते हैं। यहांकी वार्षिक आय प्रायः ६ हजार रुपयेकी है।

देवावतार (स० पु०) देवानां अवतारः इत्यतः। देवताओंका अवतार।

देवावास (स० पु०) देवानां आवासो वासस्थानः। १ अश्वत्थवृक्ष, पोपलका पेड़। २ स्वर्ग। ३ देवप्रतिमा-लय। ४ समुद्र।

देवावो (स० पु०) देवानवति अव-प्रोणने औपादिक ई। देवतपक सोम।

देवाह्व (स० पु०) देवा वहतेऽह्य ह्य-क्षिप-पूर्वपद दोर्घः। पर्वतभेद, एक पहाड़का नाम।

देवाह्व (स० पु०) देवा वहन्तेऽनेन। सावित नृपभेद, हरिवंशके अनुसार एक राजाका नाम।

देवाव (स० पु०) देवस्य इन्द्रस्य अश्वः। अश्वःयथा, इन्द्रका घोड़ा।

देवास—१ मध्यभारतके मालपुर एजेन्सीके रघुपाधीन एक देगोय राज्य। यह अक्षा० २२° १६' से २३° ५१' ४०" और देशा० ७५° १४' से ७६° ४६' पू० में अवस्थित है। भूपरिमाण ८८६ वर्गमील है।

धारं परं निरोहं वंगालीं प्रजानि भी भूषणं धारणं
किया था।

रंगपुरका विद्रोह जितना सहजमें मिटा, उतनी
जल्दी बात न मिटी। कलकत्ता कौंसिलने इस विद्रोह-
का कारण जाननेके लिये पिटरसन साहबकी रंगपुरमें
भेजा। पिटरसन साहबने आकर प्रमाण संघट्ट करनेकी
जितनी चेष्टाएँ कीं सब व्यर्थ निकलीं। अन्तमें
उन्होंने जमींदारोंको उपस्थित होनेका इन्तहार दिया।
अधिकांश जमींदार देय छोड़ कर भाग गये थे, एकके
सिवा और कोई हाजिर न हुआ। पिटरसन साहबने
उसका इन्तहार ले कर उसे गुडलाड साहबके पास भेज
दिया और गुडलाड साहबने भी उसे देवीसिंहके जिये
कर दिया। इसके बाद और कोई भी साह्य देनेको हाजिर
न हुआ। पिटरसन साहबके जमा-यसूलकी बाकीकी
तलब करने पर देवीसिंहने उसे दाखिल किया। गुड-
लाड साहबने उसकी नकल रखनेका बहाना करके उसे
ले लिया और फिर लौटा कर न दिया। इस तरह नाना
प्रकारसे व्यर्थ मनोरथ हो कर भी पिटरसन साहबको
सब धाते मालूम हो गईं, और उन्होंने अपना मन्तव्य
लिख भेजा। ईष्टिस साहबने पिटरसन साहबकी
मिथ्यावादी समझ कर एक नई कमोशन १७८६ ई०में
बिठाई। १७८६ ई०में ईष्टिस साहब भारत छोड़ कर
चले गये।

साई कर्नवालिस भारतवर्षमें गवर्नर जनरल हो
कर आये। उन्होंने आकर रंगपुर विद्रोहके विषयमें
अनेक बातें सुनीं। १७८८ ई०में कमोशनका काम शेष
हुआ। देवीसिंहको चाहे रखनेके लिये हो, चाहे
और दूसरा कोई कारण हो, बहुताने झूठी गवाही
दो। फलतः देवीसिंहका अपराध साबित न हुआ, हर-
रामने ही भत्याचार किया है यही प्रमाणित हुआ।
हरराम एक वर्षके लिये कैद किये गये। देवासिंहका
अपराध प्रमाणित नहीं होने पर भी साई कर्नवालिसने
उन्हें कम्पनीकी नौकरीसे सदाके लिये हटा दिया।
देवीसिंहके कर्मजीवनका यही पर शेष हुआ।

जीवनके शेष काल तक देवीसिंह सुर्गिदाश्वतके
पत्तार्गत नभीपुर नामक स्थानमें आ कर रहने लगे।

श्रीपावस्यामें उन्होंने अनेक दान और प्रतिष्ठा की थी।
इसी नभोपुरमें देवीसिंहके उत्तराधिकारोगण आज भी
वास करते हैं।

देवीसिंह—हिन्दीके एक कवि। देवीसिंह राजा देहे।
देवासिंह राजा—हिन्दीके एक कवि। ये चन्देरीके रहने-
वाले थे। इन्होंने वृमंहलोला, प्रायुर्वदविलास, रहस-
मोला, देवोसिंहविलास, अर्जुनविलास और वारहमासों
नामक ग्रन्थ लिखे।

देवोसुक्त (सं० को०) देख्यः तद्देवताकं सुक्तं ऋक्-
समुदायः। ऋग्वेदमें शाकल्यहिताके मध्य पद्यन्त प्रसिद्ध
देवोदेवताकं सुक्तम्। ऋग्वेद शाकल्यहिताका एक
सुक्त जिसका देवतादेवो है।

देवोमाहात्म्य पढ़ते समय पहले रात्रिसुक्त, तब सम-
शतो और सबसे पीछे देवोसुक्त पढ़ना चाहिये, देवो-
सुक्त पाठ किये बिना चण्डोपाठ निष्फल होता है।

देव (सं० पु०) दिव-अ। देवर, पतिका कोटा भाई।
देवज (सं० पु०) देव यज्ञते यज्ञ-क्षिप्। देवयष्टा, यज्ञ
जिसने देवताओंका यज्ञ किया हो।

देवेज्य (सं० पु०) देवानां इज्यः पूज्यः। सुरार्चायें इह-
स्यति।

देवेन्द्र (सं० पु०) देवानां इन्द्रः इ-तत्। सुरेन्द्र, ऐम-
ताओंके राजा इन्द्र।

देवेन्द्र—कई एक संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम। १ त्याग-
राजाष्टकके रचिता, २ सङ्गतमुक्तावलीकी रचयिता।
३ स्नातभूतिप्रकाशके रचयिता। ये गौर्वाणिन्द्रवरक्षती और
अमरेश्वर मुनिके शिष्य थे। ४ यमोदररास नामक जैन-
ग्रन्थके रचयिता।

देवेन्द्रकीर्ति—सांगानेरकी गद्दीके एक भट्टारक। ये सं०
१६६२में विद्यमान थे। इन्होंने आदित्यप्रतोद्यापन,
बुद्धाष्टम्युद्यापन, नन्दोदरविधान, पुष्पाञ्जलिविधान,
केशवचान्द्रायणोद्यापन, पद्मप्रतोद्यापन, कल्याणमन्दिर-
ोद्यापन, विषाणहारपूजाविधान, विषाणयन्त्रोद्यापन,
नन्दोदरसप्तपूजा, सिद्धचक्रपूजा, रंजितकथा और व्रत-
कथा कोश नामक जैन ग्रन्थोंको रचना की है।

वर्तमान राजवंशके पूर्वपुरुष कातुजीने पैयवा घाजो-
रायकी खुश करके उनसे देवास, सारङ्गपुर और बहुतसे
भूभाग पाये थे। कातुजीके दो पुत्र थे, तुकोजी और
जीवाजी। राज्य पानेके लिए दोनों भाइयोंमें विवाद
पारंगत हुआ जिससे यह राज्य दो भागोंमें विभक्त हो
गया। तभीसे यह दो भागोंमें चला आ रहा है। बड़े
पुत्रके उत्तराधिकारी बाबा-साहब और छोटेके दादा साहब
नामसे प्रसिद्ध थे। बड़े वंशका जो सम्मान अधिक होता
है। १८१८ ई०में दोनों सरदारोंने आपसमें मिल कर
हटिय गवर्मेंण्टका प्रायश्रुति लिया और वे अपनी अपनी
मैगमें हटिय गवर्मेंण्टको सहायता पहुँचानेमें राजी
हुए। अन्तमें गवर्मेंण्टने ३५६०० रु० वार्षिक कर
नियत कर दिया। १८२८ ई०में देवासके सरदारोंने
बगन्द परगना हटिय गवर्मेंण्टकी देख रेखमें छोड़ दिया
और इसके बदले गवर्मेंण्टसे सब खर्च काट मार कर
साढ़े छः हजार रुपये पाने लगे।

सिपाहीविद्रोहके समय देवासके राजाओंने हटिय
गवर्मेंण्टको खूब सहायता की थी। इसी कारण इन्हे
दत्तकपुत्र ग्रहण करनेका अधिकार मिला है।

बड़े वंशके अधिष्ठाता १म तुकोजी राव थे। १७५३
ई०में उनके स्वामीरोहणके बाद उनके दत्तकपुत्र कृष्णजी
राव पुनर राजगद्दी पर बैठे। वे बाबासाहब नामसे
भी प्रसिद्ध थे। १७६१ ई०में पानोपतकी सहाईमें
इन्होंने अपनी खुब वीरता दिखाई थी। १७८८ ई०में
उनकी मृत्यु हुई। पीछे उनके पोया पुत्र २य तुकोजी-
राव राजसिंहासन पर अभिविक्त हुए। इस समय दोनों
वंशकी अवस्था शोचनीय थी; काण, पिण्डारी, सिन्धिया
और चोलकर जहाँ तहाँ इनके राज्यों पर अधिकार कर
बैठे थे। तुकोजीरावके मरने पर ३य तुकोजी १८००
ई०में राजसिंहासन पर अधिकृत हुए। इन्दौरके दली
कालेजमें और पजनेरके मियो कालेजमें इन्होंने विद्या
पिशा प्राप्त की। सम्प्रति यहाँ बड़े वंशके राजा हैं।

इनका पूरा नाम है,—II. H. महाराज स्विय-कुला-
वतंस समग्रदत्त मेनापति प्रतिनिधि सर तुकोजीराव
पुनर बाबासाहब महाराज के, सो, एस, साह। इन्हे १५
तोपोंकी सलाामी मिलती है। इनके अधीन ६२ बख्ता-

रोही, ७८ पैदातिक, ६८ सिवन्दी और १८ गोदन्दाज
हैं। इसके पचासा ६०० साधारण पुलिस हैं।

छोटे वंशके अधिष्ठाता जिवाजी राव थे। १७७५ ई०में
उनकी मृत्यु हुई। तबसे ले कर १८८१ ई० तक २४
वंशके इतिहासका पना नहीं चलता। पीछे १८८२
ई०में मलहारराव पुंवार राजसिंहासन पर बैठे और
फिलहाल यही बहजि राजा हैं। इनका पूरा नाम II.
H. महाराज सर मलहार राव बाबासाहब पुनर
के, सि, एस, साह है। इन्हे हटिय गवर्मेंण्टको और १५
तोपोंकी सलाामी मिलती है। इनके अधीन ८० बख्ता-
रोही ८८, पैदातिक और २० गोदन्दाज तथा २६८
साधारण पुलिस हैं।

यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ५४८०४ है, जिनमेंसे सैकड़
८५ हिन्दू, १० मुसलमान और शेषमें अन्यथा जाति हैं।
इनमें दो शहर और २३७ ग्राम लगते हैं। यहाँकी भाषा
हिन्दी, उर्दू और मराठी है। राज्यकी प्रधान उपज
ज्वार, चना, ऊँह, गेहूँ, दलहन और अफीम है।

यहाँके राजा विशुध राजपूतवंशके होने पर भी महा-
राष्ट्रोंके साथ वैवाहिक सुत्रमें भावद्वी हो जानेसे राजपूत-
समाजमें मोच समझे जाते हैं। दोनों वंशका राजस्व
मिला कर तीन लाख रुपयेसे अधिक है।

२ उक्त देवास राज्यका एक प्रधान शहर। यह
पचासा २२ ५८ रु० और देगा ७६ ४ पू०
इन्दौरसे प्रायः १० कीस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है।
लोकसंख्या प्रायः १५४०२ है। देवासके दो राजा
हो यहाँ भिन्न भिन्न प्रशासन रहते हैं। शहरके
पास हो चामुण्डा नामका एक पहाड़ है जो समुद्रपृष्ठसे
३०० फुट लंबा है। इस पहाड़का नाम देवोवासिनी
भी है। कहते हैं कि इस पर देयता पास करती थी। शायद
इसी देववासिनी पहाड़के नामानुसार नगरका नाम
करण हुआ है। १७१८ ई०में जबसे यह शहर महा-
राष्ट्रोंके हाथ आया या तभीसे इसकी उन्नति हो रही है।
चामुण्डा पहाड़ पर एक सुन्दर मूर्ति है जो पत्थर काट
कर बनाई गई है और वहाँ मन्दिरके पास हो एक
तालाब है। तालाबकी एक बगलमें एक छोटा गिव-
मन्दिर है। दूर दूर स्थानोंसे लोग देवीके दर्शन करनेकी

देवेन्द्रनाथ—१ (देविन्द्र नामसे प्रसिद्ध) जैनियों के उद्भवकाल के एक पात्रावै, पानन्दमूर्तिके मिले। इन्हीं में प्राकृत भाषा में पाण्ड्यानमविकीय और वीरधारित तथा वसाराध्यमस्तुको टीका रखी है। जिनचन्द्रके मिथर पान्द्रदेवधर पाण्ड्यानमविकीयको टीका मिल गये हैं।

२ एक जैन चर्यकार। इन्हीं में प्राकृत भाषा में 'अन्यचन्द्रोरंगचक्रका'की रचना की है। ये चरतरंगचक्रके १८वें पहासायं सप्तोत्तमके प्रथम और पान्द्रदेवके मिथर थे।

३ एक जैन चर्यकार। इन्हीं में प्राकृत भाषा में दानकुलक, शीलकुलक, तपःकुलक और भावनादुलक आदि ग्रन्थ बनाये हैं।

४ पद्मसंघके रचयिता।

५ जिनचन्द्रके मिथर पान्द्रदेव मूर्तिके एक मिथराका नाम। इन्हीं में प्राकृत भाषा में 'वसयथसाह्वार'की रचना की है।

देवेन्द्रनाथठाकुर - ब्रह्मासके सुप्रसिद्ध साहित्यिक रवेन्द्रनाथ ठाकुरके पिता और पारि-ब्राह्मणमात्रके अन्यतम प्रवर्तक। आपका जन्म ब्रह्मासके सुविख्यात ठाकुर-वंशमें (१८०० ई०में) हुआ था। आपके पिताका नाम द्वारकानाथ ठाकुर था। आपके पाँच पुत्र थे—दिजेन्द्रनाथ, सायेन्द्रनाथ, जेनेन्द्रनाथ, ज्योतिरिन्द्रनाथ और रवेन्द्रनाथ।

ब्रह्मासके प्रसिद्ध राजा राममोहनराय १८२८ ई०में जब बिलायत गये थे, तब आपकी उम्र कुल १२ वर्षकी थी। राममोहनरायने बालक देवेन्द्रनाथको देख कर एक दिग्भ्रमका था कि "यहो बालक भविष्यमें कैरी गरीका अधिकारी होगा।" बिलायत जाते समय राजा साहब ब्राह्मणमात्रका कार्यभार इन्हीं पर सौंप गये थे। बिजायतमें छंद वर्ष बाट लगकी मृत्यु हो गई। उनकी भविष्यदाको फल हुई। राजा साहबकी मृत्युके कई वर्ष बाद ब्राह्मणमात्रका कार्यभार इन्हीं पर पड़ा, राजा साहबके कथानुसार देवेन्द्रनाथ की उमरकी गरी-के अधिकारी हुए।

प्राथमिक शिक्षा पानिके बाद आप हिन्दू कालेजमें प्रविष्ट हुए और चम्पास छात्रोंकी धर्मशास्त्रतम

योग्यताके साथ विद्याभ्ययन करने लगे। चम्परेकी छत्र पर भी आपका धर्मभाव हृदयमें दूर न हुआ। क्योंकि प्राथमिक शिक्षा आपकी राजा राममोहनरायके विद्याभयमें मिली थी।

चषधनमें आप मूर्तिपूजा करते थे और उस पर आपकी आन्तरिक श्रद्धा भी थी। किन्तु एक दिन नक्षत्रचिन्तितपुत्र पाकाशकी देव घर आपने स्थिर किया, कि इससे रचयिता कोई परिमित देवमूर्ति नहीं हो सकते। तभीमें आप मूर्तिपूजाकी श्रद्धा समाप्त करने लगे और इन उद्देश्यके प्रचारायं तन-मग-धनसे ब्राह्मणमात्र की सेवा करने लगे।

१८३८ ई०में एक दिन आपकी समयान जाना पड़ा, वहाँ आपने हृदयमें वैराग्यका हृदय हुआ। वहाँ एकदमात् उपनिषद्का फटा एक पत्र आपके हाथ पड़ गया। उसमें ईशोपनिषद्का प्रथम मन्त्र लिखा था। इस पत्रकी आप ब्राह्मणमात्रके तदासीमान आचार्य श्रीरामचन्द्र विद्यासागीयके पास ले गये। उसका अर्थ मालूम किया, जिससे आपकी हृदयमें एक पानन्दमय नूतन भाव उदित हुआ। इसमें पहले आपकी हृदयमें यह भावित्य थी कि 'हमारे हिन्दू-शास्त्रोंमें पोसलिकताके सिवा निराकार निर्विकार सत्यस्वरूपका निर्देश नहीं है।' अब यह भावित्य दूर हो गई और उपनिषद् एवं वेदों पर श्रद्धा उत्पन्न हुई।

अब आप निवसितरूपसे विद्यासागीय महाशयके पास उपनिषद् आदि पढ़ने लगे। जनवर, १८३८ ई०में आपने एक सभा स्थापित की, जिसका नाम रखा गया "तत्त्वबोधिनी सभा।" यह सभा अब भी मौजूद है। इसका उद्देश्य पोसलिकता दूर करना है। पहले पञ्चन इसके सभामन्द इने-गिने हो थे। इन सभासदोंकी अपनी आमदनीका सोलहवाँ हिस्सा सभाको देना पड़ता था। फिर सईमान-महाराज महतावषट् बणादुर, राजेन्द्रमान मिश्र, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि मण्डमान्य पुरुष भी इसके सभामन्द हो गए। इस तरह सभा अपनी सक्रिय करती रही।

इन सभाकी स्थापनासे पहले हिन्दू-कालेजमें उशीर्ष काशीने चम्पास छात्रोंके साथ मित्र कर एक

भाते है। यहाँ स्कून, संस्थिताय और पायनिवास है।

देवाहार (सं० पु०) देवयोग्य आहारः। देवताके योग्य आहार, भक्ष्य।

देवाह्वय (सं० पु०) १ वृषभेद. एक राजाका नाम। २ देवदाहृष, देवदार।

देविक (सं० पु०) अनुकम्पितो देवदत्तः मनुष्यनाम वक्त्रकल्त्रेण ननु द्वितीयादयः परस्पर लोपः। अनुकम्पित देवदत्त।

देविका (सं० स्त्री०) दोष्यतीति दिवन्लृक्-टाप्, टाप् भूत इत्यं। १ नदीभेद, चाधरा नदी। पुराणके अनुसार यह चाधा योजन चौड़ी और पांच योजन लम्बी है। इसमें देवर्षिगण स्वर्गदा परिव्रत रहते हैं। मत्स्यपुराणके मतसे यह नदी हिमालयके पाददेशसे निकली है।

कालिकापुराणमें लिखा है—इस नदीके साथ सरयू मिली हुई है। यह एक प्रधान तीर्थ है। इसमें स्नान करनेवाले का भवदेवको भर्चना करनेसे सब कार्य सिद्ध होते हैं और यज्ञ करनेका फल मिलता है। देविका पीठ स्थानमेंसे एक है, भगवतो यहाँ जन्दिनीके रूपमें विद्यमान हैं।

२ युधिष्ठिरकी एक स्त्रीका नाम। युधिष्ठिरने इन्हें स्वयंवरमें जीता था। इनके गर्भसे यौधेय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। (भारत १.८५ अ०) ३ धूसर, धनुरा। (त्रि०) ४ देवसम्बन्धो।

देविषा (सं० पु०) धूसररुष, धनुराका पेड़।

देवित (सं० पु०) दिवन्लृक्। भवकीड़ाकारी, लुभा खिलनेवाला।

देविन् (सं० त्रि०) दिवन्-णिनि। क्रोड़ाकारक, खेलनेवाला।

देविय (सं० पु०) अनुकम्पितो देवदत्तः वक्त्रकल्त्रेण नामत्वात्, द्वितीयादयः परस्पर लोपः। अनुकम्पित देवदत्त।

देविल (सं० त्रि०) दिव देवने इत्यच्. दोष्यति भान्-देनेति दिवन्-इत्यच् (प्रगदिभ्यः ङि। ण्। १। ५०) १ धार्मिक।

(पु०) अनुकम्पितो देवदत्तः इत्यच्। २ अनुकम्पित देवदत्त।

देवो (सं० स्त्री०) दोष्यतीति दिवन्-लृक्-तो ङोपः। वा

देवयति प्रवृत्ति-निवृत्तौ पदेभ्यः यथाधिकारं व्यवसाययति सर्वान् देव-णिच्-भच्-ङोपः। १ दुर्गा। देवोभागवतमें लिखा है, कि एक बार महापूजा कर देवीका पाठ-

ल्ल जेनेसे सब प्रकारके दुःख जाती रहते हैं। जो भगवन्-चित्त हो कर देवीकी भाक्ति करते हैं उन्हें अपराध करने पर मो दुःख नहीं भोगना पड़ता है वरं सदा सुख ही मिलता है। क्योंकि उनके परिव्रता स्वयं शिवजी हैं।

२ देवपत्नी, देवताकी स्त्री। ३ क्षताभिप्रेका राजमहिषी, वह रानी जिसका राजाके साथ अभिप्रेक हुआ हो, पटरानी। ऐसी रानीको देवी कहना चाहिए।

४ ब्राह्मण-स्त्रियोंके नामोपपद, ब्राह्मणकी स्त्रीके नामके अन्तमें देवो शब्द प्रयोग करना चाहिये। ५ मूर्धा, मरीरफली, सूर। ६ प्रजा, एक प्रकारकी सुगन्धित घास, असवरग। ७ बादित्यमज्ञा, कुलकुल, डुरडुर।

८ सिद्धिनी, पंचगुरिया। ९ वम्बाककीटकी, वाभ-खण्डा। १० शालपर्णी, सरिखन। ११ महाद्रोणी, बड़ गूमा। १२ पाठा। १३ नागरमुद्गा, नागर-मोया। १४ मृगवीरका, मकंद इन्द्रायण। १५ हरीतकी, चड़, चरं। १६ अतसा, तोसा। १७ श्यामा पक्षी। १८ रविस्त्रांति। यह बहुत पुण्यजनक समझी जाती है, इसीसे यह समय देवीके स्वरूपमें कहा गया है। देवीपूजा करनेसे जिस तरह सर्वार्थसिद्धि होती है उसी तरह इस संक्रान्तिमें किया हुआ कार्य फलदायक होता है। ये सब विषय रघुमन्दनज्ञत एकादशोत्सवमें लिखे हुए हैं।

देवोपुराणमें लिखा है, कि संक्रान्तिमें पुण्यकार्य करनेसे बड़े कीटियुग फलदायक होता है।

देवो—उद्योतानि प्रवाहित एक नदी। कटक जिलेकी काठमुड़ी नदीकी दाहिनी बगलसे छोटी और बड़ी देवी नामकी दो छोटी नदियाँ निकली हैं और वे कुछ दूर आ कर एक दूसरीसे मिल पुरी जिलेमें प्रवेश करती हैं।

बाद यह कटक जिलेकी दक्षिणी ओरसे निकट बल्लोप-छागमें गिरी है। इस नदीके विस्तृत मुहानेके समीप कई वर्ष पहले एक भालोक गड बनाया गया था।

नदीके मुह पर बाधू पड़ जानेसे, पानी जानेका पथ दुर्गम हो गया है। बाढ़के समय यहाँ प्रायः २१४ हाथ

समा कायम की, जिसका नाम रक्ता The society for the acquisition of general knowledge.

पर्यात् "साधारण ज्ञानोपाजिका समा"। १८३८ ई०, ता० १६ मईसे इसका काम चालू हुआ। करीब २०० युवक इसके सभासद थे, जिनमें श्रीमान देवेन्द्रनाथ ठाकुर भी शामिल थे।

पहले 'ब्राह्मसमाज' और 'तत्त्वबोधिनो समा' पृथक् पृथक् थी। १८४१ ई०में दोनों समाएँ देवेन्द्रनाथके उद्योगसे एक हो गईं और जोरसे अपना कार्य करने लगीं। १८४२ ई०में "तत्त्वबोधिनोपत्रिका" प्रकाशित हुई, जो अब भी विद्यमान है। अब समाका प्रायः सम्पूर्ण कार्य प्रत्यक्ष वा परोक्षभावसे देवेन्द्रनाथ को करने लगे। स्वर्गीय अन्नयकुमारदत्तको आपने पत्रिकाका सम्पादक नियुक्त किया। पत्रिकामें साहित्य, विज्ञान, इतिहास, दर्शन, जीवनचरित आदि नाना विषयके अच्छे अच्छे लेख प्रकाशित होने लगे। शोध हो इसने अपने उन्नति कर ली।

इसके बाद आपने एक "ग्रन्थ-समा" (Literary Committee) कायम की जिसके ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि प्रमुख विद्वान् सभासद थे। जो कुछ ग्रन्थ वा लेख आदि प्रकाशित होते थे, वे सब पहले; इस समा द्वारा पात्र करा लिये जाते थे।

१८४४ ई०में पत्रिकाका कार्यभार आपने अपने ऊपर ले लिया और नाना प्रकारसे उसकी सवृत्ति की। बादमें वंशघाटी ग्राममें आपने "तत्त्वबोधिनो पाठशाला" स्थापित की; जो तीन चार वर्ष चल कर बन्द हो गई।

आपके पिताने आपको लमोदाराका काम सिखानेके लिए बहुत कोशिश की, मगर आपका उस तरफ जरा भी ध्यान न था, हिप कर आप वेदान्त पढ़नेके लिये नियत जाया करते थे। आपने स्वर्गीय आनन्दचन्द्र वेदान्त बागोश और स्वर्गीय गिरीशचन्द्र मधायकी अपने खर्चसे वेद-वेदाङ्गके अध्ययनार्थ काशी भेजा था।

इस समय (१८४५ ई०) डफ् साहब बड़े जोरसे ईशाई धर्मका प्रचार कर रहे थे। दो एक भद्र परिवार लड़ ईशाई हो गये, तो ब्राह्मसमाजमें इसका आन्दोलन हुआ। आपने ईशार्योंके विरुद्ध व्याख्यान दिलवाये और उनके

स्वीतमें बहुत कुछ बाधा डाली। इस उद्योगसे प्रसन्न हो कर कायस्थसमाजपति राजा राधाकान्तदेव बहादुर-ने आपको "Defender of the national religion" (जातीय धर्मके रक्षक) की उपाधि दी थी। हमके बात आपने "हिन्दू हितैषी विद्यालय" की स्थापना की। कुछ वर्ष बाद कोपाध्यक्षके देवालिया हो जानेसे इसका काम दोना हो गया था।

इसके बाद आपने काशीसे लौटे हुए पण्डितोंके साथ पालोचना करके ब्राह्मसमाजसे कुछ भ्रान्त सिद्धान्तोंका परिहार किया। इसी वर्ष आपने ऋग्वेदका वङ्गला-भाषामें अनुवाद करना शुरू किया था; किन्तु संक्ष-मूलरके सभापति ऋग्वेदके प्रकट होने पर आपने यह काय बन्द कर दिया।

उधर ब्राह्मणोंकी संख्यावृद्धि होनेसे लोगोंमें मतभेद होने लगा और क्रमशः कार्यक्षेत्रमें अशान्तिको घुसना हुई। यह सब देख-भाल कर १८५५ ई०में आप योग-साधनके लिये हिमालयको चल दिये। इसके एक वर्ष बाद ही सिपाहीविद्रोह उपस्थित हुआ। १८५८ ई०में विद्रो-हान्तिके निर्वापित होने पर आप कलकत्ते पधारे और ब्राह्मधर्मका बचावदान दिया। इसी समय स्वर्गीय वंशघ-चन्द्रसेनने ब्राह्मसमाजमें योग दान किया। १८६१ ई०में आपकी कन्याका विवाह हुआ जिसमें अपने पयोत्त-लिख हिन्दू-अनुष्ठानका प्रथम सुवर्णपत्र किया। इसी साल "साधारण ब्राह्मसमाज"ने आपको "प्रधानाचार्य" की उपाधि प्रदान की।

केशवचन्द्र सेनके साथ आपकी अपूर्व प्रीति था। किन्तु वह स्थायी न हुई। उपवोत-अस्कारकी से कर दोनों-में मतभेद हो गया। केशवचन्द्र चाहते थे कि किसी भी उपवोतचारोसे आचार्यका काम न लिया जाय; किन्तु देवेन्द्रनाथ सबको शामिल रख कर काम करना चाहते थे। देवेन्द्रनाथने केशवचन्द्रसे समाजके कार्योंसे अवसर ग्रहण करनेके लिये अनुरोध किया। वस्त्र, फिर क्या था विरोधान्त प्रवृत्तित हो उठी। केशवचन्द्रने "नवविधान" नाम रख कर एक पृथक् ब्राह्मसमाजकी स्थापना की, जो अब भा माज, २६। केशवचन्द्र सेन देखो।

केशवचन्द्रने "इण्डियन मिरर" नामक पत्र की पत्र-

वर्तमान राजवंशके पूर्वपुरुष कालुजीने देवावा बाजी-
रावकी खुश करके उसने देवास, सारङ्गपुर और बहुतमे
भूभाग पाये थे। कालुजीके दो पुत्र थे, तुकोजी और
जीवाजी। राज्य पानिके लिए दोनों भाइयोंमें विवाद
पारभ हुआ जिससे यह राज्य दो भागोंमें विभक्त हो
गया। तभीसे यह दो भागोंमें चला पा रहा है। बड़े
पुत्रके उत्तराधिकारी बाबा साहब और छोटेके दादा साहब
नामसे प्रसिद्ध थे। बड़े वंशका हो सम्मान अधिक होता
है। १८१८ ई०में दोनों सरदारोंने आपसमें भिन्न कर
हटिया गवर्मेंण्टका आग्रह लिया और वे अपनी अपनी
सेनासे हटिया गवर्मेंण्टको सहायता पहुँचानेमें राजी
हुए। अन्तमें गवर्मेंण्टने १५,६०० रु० वार्षिक कर
निश्चित कर दिया। १८२८ ई०में देवासके सरदारोंने
बगन्दारगना हटिया गवर्मेंण्टकी देख रेखमें छोड़ दिया
और इसके बदले गवर्मेंण्टसे सब खर्च काट मार कर
माफ़े ह। हजार रुपये पाने लगे।

सिपाहीविद्रोहके समय देवासके राजाजीने हटिया
गवर्मेंण्टको खूब सहायता की थी। इसी कारण इन्हें
दत्तकपुत्र पदवा करनेका अधिकार मिला है।

बड़े वंशके अधिष्ठाता १म तुकोजी राव थे। १०५३
ई०में उनके स्वामीरोहणके बाद उनके दत्तकपुत्र लख्ताजी
राव पुनर राजगद्दी पर बैठे। ये बाबासाहब नामसे
भी प्रसिद्ध थे। १०६१ ई०में मानोपतको मझारिमें
इन्होंने अपनी खूब बौरता दिखाई थी। १०८८ ई०में
उनकी मृत्यु हुई। पीछे उनके पोषा पुत्र २य तुकोजी-
राव राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इस समय दोनों
वंशकी अवस्था शीघ्रनोच थी। काण, पिण्ठारी, सिन्धिया
और होलकर जहाँ तहाँ इनके राज्यो पर अधिकार कर
वैठे थे। तुकोजीरावके मरने पर १५ तुकोजी १८००
ई०में राजसिंहासन पर अधिकार हुए। इन्दौरके दली
कासिजमें और अजमेरके मेयो कानिजमें इन्होंने विद्या
पिया प्राप्त की। सम्प्रति यद्यो बड़े वंशके राजा हैं।
उनका पूरा नाम है,—II. H. महाराज अखिय-कुसा-
वतम समसदस्य मेनापति प्रतिनिधि सर तुकोजीराव
पुनर बाबासाहब महाराज के, मो, एस, बाइ। इन्हें १५
तोषोंकी सलासी मिलती है। इनके अधीन ६२ थाना-

रोही, ७८ पदातिक, ६८ सिवन्दी और १८ गोलन्दान
हैं। इसके अलावा ६०० माधारण पुलिस हैं।

छोटे वंशके अधिष्ठाता जिवाजी राव थे। १००५ ई०में
उनकी मृत्यु हुई। तबसे से कर १८८१ ई० तक इस
वंशके इतिहासका पता नहीं चलता। पीछे १८८२
ई०में मसहाराव पुनर राजसिंहासन पर बैठे और
फिस्तहान यही वहन्ति राजा हैं। इनका पूरा नाम II.
H. महाराज सर मसहाराव बाबासाहब पुनर
के, सि, एस, बाइ है। इन्हें हटिया गवर्मेंण्टको औरसे
१५ तोषोंकी सलासी मिलती है। इनके अधीन ८० थाना-
रोही ८८, पदातिक और २० गोलन्दान तथा २६८
माधारण पुलिस हैं।

यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ५४८०४ है, जिनमेंसे सेकड़
८५ हिन्दू, १० मुसलमान और शेषमें अन्यथा जाति हैं।
इनमें दो शहर और २३० ग्राम लगते हैं। यहाँकी भाषा
हिन्दी, उर्दू और मराठी है। राज्यकी प्रधान उपज
ज्वार, चना, फर्र, गेहूँ, दलहन और अफीम है।

यहाँके राजा विशुद राजपूतवंशके होने पर भी महा-
राष्ट्रोंके साथ वैवाहिक सन्धमें बाबब हो जानेसे राजपूत-
समाजमें मोच समझी जाती है। दोनों वंशका राजस्व
मिला कर तीन लाख रुपयेसे अधिक है।

२ उक्त देवास राज्यका एक प्रधान शहर। यह
अक्षां २२° ५८' ८" और देशां ७६° ४' ४" पू०
इन्दौरसे प्रायः १० कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है।
लोकसंख्या प्रायः १५४०१ है। देवासके दो राजा
हो यहाँ भिन्न भिन्न प्रशासन रहते हैं। शहरके
पास हो बामुण्डा नामका एक पहाड़ है जो समुद्रपृष्ठसे
३०० फुट ऊँचा है। इस पहाड़का नाम देववासिनी
भी है। कहते हैं कि इस पर देवता वास करतें थीं। शायद
इसी देववासिनी पहाड़के नामानुसार शहरका नाम
करण हुआ है। १०३८ ई०में जबसे यह शहर महा-
राष्ट्रोंके हाथ आया था तभीसे इसकी उन्नति हो रही है।
बामुण्डा पहाड़ पर एक सुन्दर मूर्ति है जो पत्थर काट
कर बनाई गई है और यहाँ मन्दिरके पास हो एक
तालाब है। तालाबकी एक बगलमें एक छोटा गिर-
मन्दिर है। दूर दूर स्थानसे लोग देवीके दर्शन करनेको

को हस्तगत कर लिया। इस पर देवेन्द्रनाथने "मेमनम-
परा" नामक च'देओ म'सादपत्र निकालना शुरू कर
दिया। इसके बाद चापने फिर हिमालयकी प्रवृत्त
किया। इस, इसी समयमें चापने सांसारिक सभी कार्या-
में अपना हाथ पीछे निवा, देशभक्त्य करके रगे। श्री.
समाजके कार्यकर्त्ताओंको सफलता प्राप्त प्रवृत्त दिया
करते थे, यह काम चाप ही को अनुमति अनुसार दुपा
करते थे।

१८०२ ई.में, कलकत्ते में जातीय सभा (National
Society) का एक अधिवेशन हुआ, जिसके चाप समा-
पति हुए। १८०६ ई.में जब चाप हुगली जिलेके जु'गुड़ा
नामक स्थानमें रहते थे, साधारण ब्राह्मणमात्रमें चापकी
पवित्रमन्त्र किया, जिसके उच्चारमें चापने उपदेशपूर्व उप-
हार प्रदान किया। इसके बाद चाप बोमार की गये:
जीनेकी यात्रा न होने पर भी इस बार चाप बच गये।

इसके बाद चापने अपने जीवनके जीव भागका एक
कार्य किया। १८८८ ई.के फाल्गुन मासमें चापने सर्व-
साधारणके उपकारार्थ 'बीरभूम जिलेके बोधपुर नामक
स्थानमें एक आश्रमकी स्थापना की, जिसने यह भी
"शान्तिनिकेतन"के नामसे अपना पदित्व कायम रखा
है। यहाँ देवेन्द्रनाथके दोषाण्डकके दिन (ब'गवा
ता० ७ पोषको) प्रति वर्ष उत्सव हुआ करता है।

इसके शिष्य चापने कई घर पुस्तक भी रची है। जो
छोटी होने पर भी भारपान्थ और गणेशरताकी लिए हुए
है। जैसे—'वास्तवविद्या, ब्राह्मणधर्मका मत और विज्ञान
ज्ञान और धर्मकी उत्पत्ति, परलोक और मुक्ति इत्यादि।'।
देवेन्द्रसुतोत्तर—ब्रह्मप्रेमयोगचरित एक ग्रन्थकार। ये
महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इन्होंने अपने भारी भोला
और गेवनामके अनुरोधमें प्रयात्तररसमाप्तावृत्तिको
रचना की।

देवेन्द्रमि'द—पद्यग्रन्थके एक विद्वान् जैनाचार्य। ये
वज्रितमि'द शूरिके ग्रन्थ तथा धर्मप्रसङ्गके शुरु है। मेक-
तुङ्गके पट्टपटि अनुसार इनका म'वा १२८८ में जन्म,
१२०६ में दोषा. १२२३ में शूरिपट, १२३८ में गच्छेत्तर
तदा म'वा १२०१ में म'वा हुई थी।

देवेन्द्रपुरि—१ एक विद्वान् जैनाचार्य। ये कण्ठग्रन्थके

ग्रन्थ तथा विद्याग्रन्थके शुरु है। इन्होंने कर्मविद्या, कर्म-
भूतव, बन्धनान्तर, पदुमीतिक, मतक और भव-
तिक नामक प्राक्त भाषाके छः कर्मग्रन्थके साथ साथ
प्रथम पाँच ग्रन्थोंकी टीका, यादरिक्तव्य और यादक-
दिनकृत्यका मूल तथा टीकाकी रचना की। इन्होंने
मयतिकके जीव भागमें लिखा है, कि एक पद्य ग्रन्थम-
त्तरका बनाया हुआ है। किन्तु इन्होंने इसमें केवल १८
कहानियों योग की है।

२ तपागच्छके एक पदाचार्य। पदाचार्यके देवनेमे
जाना जाता है, कि ये प्रतीय विजयचन्द्र पदुगच्छके
'सिद्धकर्मकृत' ग्रन्थी है। इनके बनाये हुए कई पद्य
ग्रन्थ हैं—याददिनकृत्यसूत्रवृत्ति, मयकर्मपद्यग्रन्थ-
वृत्ति, सुदयनपदित, विभाष्य, योष्टपमयमान प्रवृत्ति
भूत। मानवमें स'वा १२२०की इन्होंने मानवलोभा
सम्बरण की। इसके बाद इनके ग्रन्थ निर्यागन्ध शूरि-
पटकी प्राप्त हुए।

३ एक जैन पद्यकार। इन्होंने १२४० ई.में देव-
चन्द्रके गन्धानुगासनको अनुगामवृत्ति रची है।

देवेन्द्रायम—पुराणव्यञ्जिकाके रचयिता। इसके शुद्धता
नाम विपुदेन्द्रायम था।

देवेग (मं० पु०) देवाना ईयः १. तत्। १ देवनिष्ठा,
देवताओंके राजा इन्द्र। २ विशु। ३ महादेव। ४ पर-
मेश्वर। ५ जियां टोप। ६ देवीकी, दुर्गा।

देवेगतांथ (मं० ली०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम।

देव'गय (मं० पु०) देव' पथिहाटतया जिते श्री-पथ
पल्लव' गमास। परमेश्वर, विशु।

देवेगो (मं० ली०) १ पार्थिवी। २ देवी।

देवेश्वर (मं० पु०) देवाना ईश्वर। १ महादेव।
२ एक प्राचीन कवि। इन्होंने गोविन्दराज, भोजप्रभृतिके
नाम समेध किये हैं। ३ गद्गाटकप्रसिद्ध। ४ कविकल्प-
मताके रचयिता। ये पाग'मटके पुत्र थे।

देवेष्ट (मं० लि०) देवाना ईष्टः। १ देवताओंके प्रिय।
(पु०) २ महाभिक्षा। ३ गुप्त, गुप्त, गुप्त।

देवेष्टा (मं० ली०) १ महाभिक्षा, यज्ञा विजोरा। २ जैन
सोष्टपूरुष।

देवोत्तर (मं० पु०) देवताको वज्रित किया हुआ धन,

भाते हैं। यहाँ स्कूल, अस्पताल और पात्रनिवास है।

देवाहार (स० पु०) देवयोग्य आहारः । देवताके योग्य आहार, अन्न ।

देवाग्र्य (स० पु०) १ नृपभेद. एक राजाका नाम । २ देवदासवृत्त, देवदार ।

देविक (स० पु०) अनुकम्पितो देवदत्तः मनुष्यनाम वस्त्र-चक्रत्वेन ठगु द्वितीयादयः परस्पर लोपः । अनुकम्पित देवदत्त ।

देविका (स० स्त्री०) दोष्यतीति दिव-खल-टाप. टापि भत इल । १ नदीभेद, छात्रा नदी । पथपुराणके अनुसार यह आधा योजन चौड़ी और पांच योजन लम्बी है । इसमें देवविमर्ष सर्वदा परिहृत रहते हैं । मत्स्यपुराणके मतसे यह नदी हिमालयके पाददेशसे निकली है ।

कालिकापुराणमें लिखा है—इस नदीके साथ सरयू मिली हुई है। यह एक प्रधान तीर्थ है । इसमें स्नान कर चढ़पाक करके महादेवको अर्चना करनेसे सब कार्य सिद्ध होते हैं और यज्ञ करनेका फल मिलता है । देविका पीठ स्नानसे एक है, भगवतो यहाँ नन्दिनीके रूपमें विद्यमान हैं ।

२ युधिष्ठिरकी एक स्त्रीका नाम । युधिष्ठिरने इन्हीं स्त्रियोंमें जीता था । इनके गर्भसे योधिय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था । (भारत १।८५ अ०) ३ धुस्तर, धतूरा । (त्रि०) ४ देवसम्बन्धो ।

देविया (स० पु०) धुस्तरवृत्त, धतूराका पेड़ ।

देविष्ठ (स० पु०) दिव-वृक्ष । भयभीटाकारो, लुभा खेलनेवाला ।

देविन् (स० त्रि०) दिव-विणि । क्रोड़ाकारक, खेलने-वाला ।

देविय (स० पु०) अनुकम्पितो देवदत्तः वस्त्रचक्रमनुष्य-नामत्वात् च, द्वितीयादयः परस्पर लोपः । अनुकम्पित देवदत्त ।

देविल (स० त्रि०) देह देवने इत्यच. दोष्यति भानुदेनेति दिव-इत्यच. (शगदिव्यः दिव. वपु. १।५०) १ धार्मिक ।

(पु०) अनुकम्पितो देवदत्तः इत्यधु. २ अनुकम्पित देवदत्त ।

देवो (स० जो०) दोष्यतीति दिव-भच् ततो लोपः । या

देवयति प्रवृत्ति-निवृत्तौ पदमेतन् यथाधिकारं व्यवहारयन्मि मर्वाण-देव-णिवच्-भच-लोपः । १ दुर्गा । देवोभागवतमें लिखा है, कि एक बार महापूजा कर देवीका पाद-जल पीनेसे सब प्रकारके दुःख जाते रहते हैं । जो अनन्य-चित्त हो कर देवीकी भक्ति करते हैं उन्हें अपराध करने पर भी दुःख नहीं भोगना पड़ता है वर सदा सुख ही मिलता है । क्योंकि उनके परित्राता स्वयं मित्रजो हैं ।

२ देवपत्नी, देवताकी स्त्री । १ कृताभियेका राजमण्डपो, वह रानी जिसका राजाके साथ अभियेक हुआ रहे, पटरानी । ऐसी रानीको देवी कहना चाहिए । ४ ब्राह्मण-स्त्रियोंके नामोपपद, ब्राह्मणकी स्त्रीसे नामके अन्तमें देवो शब्द प्रयोग करना चाहिए । ५ सुर्वा, मरीरफली, सूर्य । ६ वृक्षा, एक प्रकारकी सुगन्धित घास, भसवरग । ७ आदित्यमन्त्रा, हुलहुल, हुरहुर । ८ त्रिङ्गिनी, पंचगुरिया । ९ वन्द्याककौटकी, वाम-खण्डसा । १० शालपर्णी, सरिवन । ११ महाद्रोणी, बड़ गुमा । १२ पाठा । १३ नागरमुष्ठा, नागर-मोया । १४ मूरीशर्बका, मफेट इन्द्रावय । १५ हरीतकी, हड़, हरे । १६ भतसा, तोसो । १७ ग्रामा पर्वी । १८ रविचक्रान्ति । यह बहुत पुण्यजनक समझो जानो है, इसीसे यह समय देवीके वस्त्ररूपमें कहा गया है । देवीपूजा करनेसे जिस तरह सर्वाधि सिद्ध होता है उसी तरह इस संक्रान्तिमें किया हुआ कार्य फलदायक होता है । ये सब विषय रघुनन्दनकृत एकादशोत्सवमें लिखे हुए हैं ।

देवोपुराणमें लिखा है, कि संक्रान्तिमें पुण्यकाय करनेसे वह कीटिगुण फलदायक होता है ।

देवो—उड़ोसामें प्रवाहित एक नदी । कटक जिलेकी काठमुड़ी नदीकी दाहिनी बगलसे छोटी और बड़ी देवी नामकी दो छोटी नदियाँ निकली हैं और वे कुछ दूर जा कर एक दूसरेसे मिल पुरो जिलेमें प्रवेश करती हैं । बाद वह कटक जिलेकी दक्षिणी सीमाके निकट बहोप-सागरमें गिरती है । इस नदीके विस्तृत मुहानेके समीप कई वर्ष पहले एक बालोक-गड बनाया गया था । नदीके मुँह पर बालू पड़ जानेसे पानी जानैका पथ दुर्गम हो गया है । बाढ़के समय यहाँ प्रायः ३१४ हाथ

वह सम्पत्ति जो किसी देवताके नाम पर अलग निकाल दी गई हो और जो प्रतिष्ठित देवताको नित्य-मेवा, लक्ष्म्यादि तथा मन्दिर और पूजाकादिका खर्च चलानेमें लगती हो। इसके सिवा देवप्रतिमाको सज्जादि, तैलसादि वा फलद्वारादिको भी देवीचर कहते हैं।

वङ्गप्रदेशमें देवीचर भूमिसम्पत्ति बहुत है। पश्चिमोत्तर भारतमें देवमन्दिरादिकी संख्या अधिक है सही, पर जन्में प्रतिष्ठाता लोग भूमिसम्पत्तिकी अपेक्षा नकद ही अधिक दान कर गये हैं। देवमन्दिरको चायसे जमीन देवताके नाम पर जमींदारी खरीदी जाती है, किन्तु साधारणतः इन सब जमींदारियोंको भी लोग देवीचर सम्पत्तिके जैसा मानते हैं।

प्रतिष्ठाताका दान नहीं होनेसे देवीचर नहीं होगा सो नहीं, कोई भी अगर प्रतिष्ठित देवता या प्राचीन देव-लयके लक्ष्यसे दान कर दे, वही देवीचर कहलायेगा।

पहले इस प्रकारकी प्रदत्त भूमिसम्पत्तिका कर राज सरकारमें नहीं देना पड़ता था। १७५६ ई०में ई०-इण्डिया कम्पनीको जब वङ्गाल, बिहार और बङ्गोलाको दीवान्नी मिली तब वह भी इस प्रकारकी जमीनमें कर नहीं लेती थी। किन्तु दोषान्नी लेनके बादसे कम्पनीने ऐसी जमीन पर कर निर्धारित कर दिया। धार्मिक किन्तु जमींदार या धनी लोग आज भी देवता, देवमन्दिर और मठादिकी प्रतिष्ठाके समय भूमिसम्पत्ति देवीचरके रूपमें दान करते हैं, सही, अगर उन्हें राजसरकारमें कर देना पड़ता है। पर हाँ, जो मालगुजारी से प्रजामें लेते थे, उसे वे निजमें खर्च न कर उसी देवमन्दिरमें चढ़ा देते हैं जिसमें उन्होंने वह भूमि दान कर दी है।

सभी देवीचर-सम्पत्तिकी देखभाल दाता अपने हाथ नहीं रखते। ये अपने मंथरोंके प्रतिष्ठित वा प्रतिष्ठित देवताके लक्ष्यसे जो सम्पत्ति दान करते हैं, प्रायः उसीको देखभाल दाता स्वयं करते हैं। फिर जहाँ किसी साधारण देवमन्दिरमें तथा किसी क्षत्रके प्रतिष्ठित देवमन्दिरमें जो सम्पत्ति दान की गई है, वहाँ दाताको उसका कोई भार लेना नहीं पड़ता है।

जो सब मन्दिर बिना मालिकके हैं अर्थात् जिन देव-मन्दिरोंमें प्रतिष्ठाद्वयका कोई मन्त्र नहीं है वा

प्रतिष्ठाताका उद्देश नहीं है, उन सब मन्दिरोंके देवी-चरका रक्षणार्थ चण पुजारो वा मन्त्र हो करते हैं। कई जगह मन्त्र लोग ऐसे हैं जो निरुपद्रु विषयविरत संन्यासो यणोंके होने पर भी देवमन्दिरकी सम्पत्ति पा कर ऐसे विषयासक्त हो जाते हैं कि उनका आचार व्यवहार देख कर जमींदार लोग दत्तों चंगुली फाटते हैं। ऐसे भ्रष्टाचारी मन्त्र लोग देवीचरको चायसे अपना भोग बिनासका खर्च चलाते हैं। महर्षिों इस दुष्प्रवृत्तियोंको रोकनेके लिये कोई सामाजिक विधि यत्न मान हिन्दू समाजमें हो नहीं है।

उपनिषद्के समय देवीहृदयसे प्रदत्त द्रव्योंको 'देवता' कहते थे। देवता देखो।

देवीद्यान (सं० स्त्री०) देवानां द्यानं। देवताओंके बगीचे जो चार हैं, नन्दन, चैत्ररथ, वैभोज और सर्व-तोमर। त्रिकाण्डशेषके अनुसार चार देवीद्यानके नाम ये हैं—वैभोज, चैत्ररथ, मिथुन और सिद्धायायन।

देवीस्नाद (सं० पु०) एक प्रकारका स्नाद। इसमें रोगो पवित्र रहना है, सुगन्धित फूलोंको माला पहनना है, आँखें बन्द नहीं करना और संस्कृत बोलना है। देवताके शोधसे यह रोग सत्य हो जाता है। सुश्रुतमें भूतविधार्म अमाशुय प्रतिषेधके अन्तर्गत इसका वर्णन है।

देवीकम् (सं० स्त्री०) देवानां योक्तः ५-तत्। देवस्थान, समस्त पर्वत।

देव्य (सं० स्त्री०) देवस्य भावः यज्ञ, बँदे बाहुलकात् न वृत्तिः। देवत्व।

देव्या (सं० स्त्री०) १ सुरा। २ वाक्की श्रुत।

देव्यस्नाद (सं० पु०) एक प्रकारका स्नाद या रोग। इसमें पचाघात होता है, शरीर सूख जाता है, मुख और हाथ पाँव टेढ़े हो जाते हैं तथा स्मरणशक्ति जाती रहती है। कहीं कहीं इसे विजासनी देवी या सावस्या भी कहते हैं।

देग (सं० पु०) दिगति दिग्-पक्षः। १ भूगोलानामागत विभागमेद, प्रत्येका दृष्ट विभाग जिसका कोई अलग नाम हो, जिसके अन्तर्गत कई प्रान्त, नगर, ग्राम आदि हो, जनपद। देश तीन प्रकारके होते हैं—आज्ज्य, अनूप और साधारण। इसके सिवा और तीन प्रकारके देग

जन ऊपर उठता है। वर्षाकालमें नदीका जल बहुत बढ़ जाता है। शोषकालमें नदीमें १४ कोस तक खार जाता है। इस समय धान और चावलसे नदी हुई बड़ी बड़ी गाँव नदी हो कर जाती आती है। नदीके सुदानके चारों तरफ जङ्गल है, याम एक भो नहीं है। देवी (हिं० स्त्री०) १ अज्ञातके किनारे पर लकड़ी या मोड़को दे कर चोंचको तरह बाहरको ओर झुके हुए खंभे जिनमें घिरनियाँ लगी होती है। इन घिरनियों पर पड़े हुए रस्सोंके द्वारा किशियाँ लपका पर सड़ाई या लपकासे उतारी जाती हैं। २ लकड़ीका एक मजबूत ढोखा जिसमें दो ढाड़ें खंभोंके ऊपर बाधा बना लगा रहता है। यह मस्तूल आदिके सभारके लिये होता है। देवीकवि—हिन्दीके एक कवि। इनकी बनाई अज्ञातको कविता बहुत उत्तम होती थी।

देवीकृति (सं० स्त्री०) गोदावरी तटस्थित एक देव उद्यान। एक कच्छप देवबाघी एक ब्राह्मणने भगवतो विन्यवासिनोके आदेशसे प्रतिष्ठापनपुरके निकट देव-मन्दिरके सामने यह उद्यान लगाया था। (कथासरित्सागर ५।०२) देवीकोट (सं० पुं०) नागरनाथानी गोपितपुरका नामान्तर। दिनाग्रपुरके अस्तगत वर्तमान देवाकोट। देवीकोट—तक्षीर जिलेका एक प्राचीन भग्न दुर्ग। यह भूभाग ११° २२' ४०" और देशां ७८° ४८' ५०" तांजूरसे १२ कोस उत्तरमें अवस्थित है। इट इण्डिया-कम्पनी भारतवर्षमें आ कर पहले पहल यहां व्यापार करने आई थी। यहांका दुर्ग पहले तक्षीरके हिन्दू राजाओंके अधिकारमें था। इसके अनरोधके समय क्राइसने अपनी खुब बौरता दिखाई थी। दुर्ग १२ हाथ ऊँचे प्राचीरसे घिरा हुआ है और इसका चरा प्रायः आधकोस होगा। इट-इण्डिया-कम्पनीने यहां फोर्ड कीटो स्थापित नहीं की थी। १०५८ ई०में फरासीसियोंने जब इस दुर्ग पर आक्रमण किया, तब अज्ञात लोग इसे छोड़ भाग गये थे। बाद यन्दीवासकी लड़ाईमें सर बायर कूटने फरासीसियोंको परास्त कर उनसे यह दुर्ग छीन लिया।

२ मन्दाज प्रदेशके मधुरा जिलेका एक नगर। यहांकी लोकसंख्या प्रायः ८ लाख है।

३ नीलतन्त्र-वर्णित एक षोडशान।

देवीघट (सं० स्त्री०) देव्याः गृहः इत्यत्। देवीका मन्दिर। देवीघाट—नेपास राज्यके नयाकोटके निकटस्थ एक शुद्ध ग्राम। मान भरने में मन्दीना महादेव और कुन्दार कीड़ कर यहां और कोई नहीं रहता। यह तोहो नदीके किनारे पर अवस्थित है। नदीके ऊपर एक पुस बना हुआ है। लमीं'दारके सिया और किस्कीको यह पुस पार होनेका दुकान नहीं है। देवी भैरवी यहांकी पवित्रात्मी देवी है। यह पवित्र स्थान है, पर देवीभैरवीके अनुगृहीत होने पर भी यहां देवीका मन्दिर नहीं है। विगल-गङ्गा और तोहोके सङ्गम पर देवीके सम्मानार्थ निर्मा एक बंदी लकड़ीके स्तम्भमें सेरी हुई है। नयाकोटमें देवीका मन्दिर है। मयाद है, कि यह मन्दिर देवीके कर्णसे ही बनाया गया है। देवीघाट समुद्रतलसे २००० फुटसे भी नीचेमें अवस्थित है। १२वीं सदीके आरम्भमें कर्णार्थकर्मके हरिदेव नेपासके राजा हुए। एक समय हरिदेवने अपने एक नौकरको बरखास्त कर दिया। इस पर यह नौकर अपने मासिकके व्यवहारसे क्रोध हो कर सुकुन्दसेनको राज्यमें बुला लाया। सुकुन्दसेन हरिदेवकी परास्त कर मत्स्येन्द्रनाथके मन्दिरसे भैरवी-सुर्गको प्राप्तपामें उठा ले गये। इस पर देवादिदेव विगल बहूत विगल, जिससे सुकुन्ददेवकी सारी सेनायें विचित्रा-रोगसे गट हो गईं। सुकुन्दसेनने भी प्रकैला यतिके वंशमें भाग कर इसी देवीघाटमें प्राण त्याग किये।

वैशाखमासमें देवीका एक उत्सव होता है। उस समय देवीप्रतिमा नयाकोटसे देवीघाटमें लाई जाती है। यह उत्सव पाँच दिन तक रहता है।

देवीचन्द—एक हिन्दी-कवि। इनोंने सं० १०८७ के पूर्व हितोपदेशभाषा नामक एक ग्रन्थ प्रपद्यन किया।

देवीतन्त्र (सं० स्त्री०) तन्त्रभेद, एक तन्त्रका नाम।

देवीत्व (सं० स्त्री०) देव्याः भावः देवी भावे त्व। देवीका भाव।

देवीदत्त—१ हिन्दीके एक कवि। इनकी शास्त्रस तथा सामयिक कविताएं अच्छी होती थीं।

२ एक हिन्दी-कवि। इनोंने सम्वत् १८०८ में भरकपथीसी नामक एक पुस्तक लिखी।

को हस्तगत कर लिया। इस पर देवेन्द्रनाथने "मैगमल-पैपर" नामक पत्रोंको संपादित निकालना शुरू कर दिया। इसके बाद आपने फिर हिमाचलकी प्रस्थान किया। वस, इसी समयसे आपने सांसारिक सभी कार्यों से परमा हाथ खींच लिया, देशभ्रमण करने लगे। हाँ, समाजिक कार्यकर्ताओंकी सन्धति आदि अवश्य दिया करते थे; सब काम आप ही को अनुमति अनुसार हुआ करते थे।

१८७२ ई०में, कलकत्तेमें जातीय सभा (National Society) का एक अधिवेशन हुआ, जिसके आप सभा-पति हुए। १८८६ ई०में जब आप हुगली जिलेके लु'लुहा नामक स्थानमें रहते थे, साधारण ब्राह्मणमाजने आपकी अभिनन्दन किया, जिसके उत्तरमें आपने उपदेशपूर्ण उप-हार प्रदान किया। इसके बाद आप बोमार हो गये; जीर्नीकी आशा न होने पर भी इस बार आप बच गये।

इसके बाद आपने अपने जीवनके शेष भागका एक कार्य किया। १८८८ ई०के फागुन मासमें आपने सर्व-साधारणके उपकारार्थ बीरभूम जिलेके बोलपुर नामक स्थानमें एक आश्रमकी स्थापना की, जिसने अब भी "शान्तिनिकेतन"के नामसे अपना अस्तित्व कायम रखा है। यहाँ देवेन्द्रनाथके दीक्षाग्रहणके दिन (वंगना ता० ७ पोषको) प्रति वर्ष उत्सव हुआ करता है।

इसके दिवा आपने कई एव पुस्तक भी रची है। जो छोटी होने पर भी सारधान और गभीरताकी लिए हुए हैं। जैसे—'भारततत्त्वविद्या, ब्राह्मधर्मका मत और विद्यास-ज्ञान और धर्म की उत्पत्ति, परलोक और सुक्ति इत्यादि।' देवेन्द्रमुनीश्वर—रुद्रपञ्चयोगचक्रके एक ग्रन्थकार। ये सहासिकके शिष्य थे। इन्होंने अपने भाई भोला और खेवनामाके पतुरोधसे अश्वत्थरत्नमाहात्म्यकी रचना की।

देवेन्द्रसिंह—पञ्चलगच्छके एक विख्यात जैनाचार्य। ये अजितसिंहसूरिके शिष्य तथा धर्मप्रमके गुरु थे। मेरु-तुर्गके पटपटि अनुसार इनका संवत् १२८८ में जन्म, १३०६ में दोषा, १३२३ में सूरिपट, १३३८ में गच्छेश्वर तथा संवत् १३०१ में मृत्यु हुई थी।

देवेन्द्रसूरि—१ एक विख्यात जैनाचार्य। ये जगन्मन्दके

शिष्य तथा विद्यानन्दके गुरु थे। इन्होंने कर्मविपाक, कर्मस्तय, अन्धत्वामित्य, पदगीतिका, शतक और मन्-तिक नामक प्राकृत भाषाके छः कर्मग्रन्थोंके साथ भाष्य प्रथम पाँच ग्रन्थोंकी टीका, आर्यदिगन्तव्य और व्याव-दिगन्तव्यका मूल तथा टीकाकी रचना की। इन्होंने ममतिके शेष भागमें लिखा है, कि उत्तम पन्थ चन्द्रमह-त्तरका बनाया हुआ है; किन्तु इन्होंने इसमें केवल १८ कहानियाँ योग की हैं।

२ तपागच्छके एक पट्टाचार्य। पट्टावलीके देखनेसे जाना जाता है, कि ये सतीर्थ विजयचन्द्र वल्लभालके 'विध्यकर्मकृत' मन्त्री थे। इनके बनाये हुए कई ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं—आर्यदिगन्तव्यसूत्रसहित, नवकर्मग्रन्थपञ्चकसूत्र-सहित, सुदर्शनचरित्र, विभाष्य, श्रोत्रपञ्चमवर्तमान प्रवृत्ति-स्तव। सालयमें संवत् १३२७को इन्होंने सागवलीला सम्बरण की। इनके बाद इनके शिष्य नित्यानन्द सूरि-पटकी प्राप्ति हुए।

३ एक जैन ग्रन्थकार। इन्होंने १२४० ई०में हेम-चन्द्रके गण्डानुशासनको अनुव्यामसहित रची है। देवेन्द्रनाथ—पुरचरणचन्द्रिकाके रचयिता। इनके गुरुका नाम विपुदेन्द्रनाथ था।

देवेश (सं० पु०) देवाना ईशः ईशत्। १ देवनिष्ठा, देवताओंके राजा इन्द्र। २ विष्णु। ३ महादेव। ४ पर-मेश्वर। छियाँ होप। ५ देवेशी, दुर्गा।

देवेशतोष (सं० कौ०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम। देवेश्य (सं० पु०) देवे अधिष्ठातृतया श्रुति शी-पच-चलुक समाप्त। परमेश्वर, विष्णु।

देवेशी (सं० स्त्री०) १ पार्वती। २ देवी।

देवेश्वर (सं० पु०) देवाना ईश्वर। १ महादेव। २ एक प्राचीन कवि। इन्होंने गोविन्दराज, भोजप्रभृति-के नाम सर्वोच्च किये हैं। ३ गङ्गाटकप्रदेश। ४ कविकल्प-लताके रचयिता। ये बागभटके पुत्र थे।

देवेट (सं० त्रि०) देवाना इष्टः १ देवताओंके प्रिय। (पु०) २ महाभेदा। ३ गुणसु, गुणसुत।

देवेटा (सं० स्त्री०) १ महाभेदा, महा विजोरा। २ वन-बीलपूरतप्त।

देवीश्वर (सं० पु०) देवताको अर्पित किया हुआ धन,

वह सम्पत्ति जो किसी देवताके नाम पर, अलग-अलग दी गई हो, और जो प्रतिष्ठित देवताको नित्य-सेवा, उत्सवादि तथा मन्दिर और पूजाकादिका खर्च चलायें लगी हो। इसके सिवा देवप्रतिमाको सजादि, तेजसादि वा चमत्कारादिको भी देवीचर कहते हैं।

वृहन्नक्षत्रमें देवीचर भूमिसम्पत्ति बहुत है। पश्चिमोत्तर भारतमें देवमन्दिरादिकी संख्या अधिक है, मही, पर उनमें प्रतिष्ठाता लोग भूमिसम्पत्तिकी अपेक्षा नकद हो अधिक दान कर गये हैं। देवमन्दिरकी आयसे कभी कभी देवताके नाम पर जमींदारी खरीदी जाती है, किन्तु साधारणतः इन सब जमींदारियोंकी भी लोग देवीचर सम्पत्तिके जैसा मानते हैं।

प्रतिष्ठाताका दान नहीं होनेसे देवीचर नहीं होगा सो नहीं, कोई भी अगर प्रतिष्ठित देवता या प्राचीन देवालयके उद्देश्यसे दान कर दे, वही देवीचर कहलायेगा।

पहली इस प्रकारकी प्रदत्त भूमिसम्पत्तिका कर राज सरकारमें नहीं देना पड़ता था। १७५६ ई०में ई०-इण्डिया कम्पनीको जब बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाकी देवायानी मिली तब वह भी इस प्रकारकी जमीनसे कर नहीं लेती था। किन्तु देवायानी लेनेके बादसे कम्पनीने ऐसी जमीन पर कर निर्धारित कर दिया। धार्मिक हिन्दू जमींदार वा धनो लोग आज भी देवता, देवमन्दिर और मठादिकी प्रतिष्ठाके समय भूमिसम्पत्ति देवीचरके रूपमें दान करते हैं सही, मगर उन्हें राजसरकारमें कर देना पड़ता है। पर हाँ, जो मालगुजारी से प्रजासे लेते थे, उसे वे निजमें खर्च न कर उसी देवमन्दिरमें चढ़ा देते हैं जिसमें उन्होंने वह भूमि दान कर दी है।

सभी देवीचर-सम्पत्तिकी देखभाल दाता अपने हाथ नहीं रखते। वे अपने वंशधरोंके प्रतिष्ठित वा अप्रतिष्ठित देवताके उद्देश्यसे जो सम्पत्ति दान करते हैं, प्रायः उसीकी देखभाल दाता स्वयं करते हैं। फिर कहीं किसी साधारण देवमन्दिरमें तथा किसी दूसरेके प्रतिष्ठित देवमन्दिरमें जो सम्पत्ति दान की गई है, वहाँ दाताकी उसका कोई भार लेना नहीं पड़ता है।

जो सब मन्दिर बिना मानिकके हैं अर्थात् जिन देव-मन्दिरोंमें प्रतिष्ठाद्वयका कोई संशय नहीं है वा

प्रतिष्ठाताका उद्देश नहीं है, उन सब मन्दिरोंके देवी-चरका रक्षणवर्चण पुजारो वा महन्त ही करते हैं। कई जगह महन्त लोग ऐसे हैं जो गिरुद्ध विषयविरत संन्यासोद्योगिके होने पर भी देवमन्दिरकी सम्पत्ति पा कर ऐसे विषयासक्त हो जाते हैं कि उनका आचार व्यवहार देख कर जमोदार लोग दतीं चंगली काटते हैं। ऐसे चलाचारी महन्त लोग देवीचरको आयसे अपना भोग विनासका खर्च चलाते हैं। महन्तोंके इस दुष्ट व्यवहारको रोकनेके लिये कोई सामाजिक विधि वस्तुमान हिन्दू समाजमें हो नहीं है।

उपनिषद्के समय देवोद्देश्यसे प्रदत्त द्रव्योंको 'देवता' कहते थे। देवता देवो।

देवीद्यान (सं० स्त्री०) देवार्ण उद्यान। देवताओंके योगीसे जो चार हैं, नन्दन, चैत्रध, वैभ्राज और सर्वतोभद्र। त्रिकाश्रयीयके अनुसार चार देवीद्यानके नाम ये हैं—वैभ्राज, चैत्रध, मिथक और त्रिप्रकाशण।

देवीस्नाद (सं० पु०) एक प्रकारका स्नाद। इसमें रोगोपशान्त रहना है, सुगन्धित फूलोंकी माला पहनना है, शीखें बन्द नहीं करता और संस्कार सेवना है। देवताके लोभसे यह रोग उत्पन्न होता है। सन्तुष्टमें भूतविधामें प्रमाणुय प्रतिपेक्षके भन्तर्गत इसका उल्लेख है।

देवीकम् (सं० स्त्री०) देवार्ण शोकः ६-तत्। देवस्थान, समेर पर्वत।

देव्य (सं० स्त्री०) देव्य भावः व्यज, वेदे वाङ्मनकात् न हृदिः। देवत्व।

देव्या (सं० स्त्री०) १ सुरा। २ माझी चुप।

देव्युस्माद (सं० पु०) एक प्रकारका स्नाद या रोग। इसमें पचाघात होता है, अरोर सूख जाता है, सुंघ और हाथ पांव टेढ़े हो जाते हैं तथा स्मरणशक्ति जाती रहती है। कहीं कहीं इसे विज्ञासनी देवो या मावस्या भी कहते हैं।

देग (सं० पु०) दिगति दिग-भयः। १ भूगोलानामेत विभागमेत, प्रलोका दह विभाग जिसका कोई पत्तन नाम हो, जिसके भन्तर्गत कई प्रान्त, नगर, ग्राम आदि हों, जनपद। देश तीन प्रकारके होते हैं—जात्यय, अनुप और साधारण। इसके सिवा और तीन प्रकारके देग

सहै तवादी स्मार्त और कोई है तवादी भागवत भी है । ये लोग सभी देवदेवोका पूजन करते हैं तथा व्रतउपवासदि भी किया करते हैं । आलम्बो, इलाहाबाद, कागो, गया, जेसुरो, नामिक, पण्डरपुर, रामेश्वर और तुलजापुर इनके पवित्र तोर्थ माने जाते हैं । जो लोग घरका काम सन्हालती हैं । इनमें परदेकी रियाज प्रायः नहीं के बराबर है, वे बहुत कुछ स्त्रापोन रहती हैं । भक्तानके जन्म लेने पर माताको दस दिन तक पशोच मानना पड़ता है । समर पानेके पहले ही लड़कियां ब्याहो जाती हैं और पुत्र का विवाह बचपे से कर तोस वर्ष के भीतर होता है । मृतका पन्तिस्कार होता, विधवा विवाह नहीं होता, पर बालविवाह और बहुविवाह प्रचलित है । विधवा सिर सुड़ाये रहती है । सामाजिक गृहबद्धोंमें गृहेश्वरके गृहाराचार्य को प्रभुमति ही सर्व श्रेष्ठ है । जो उसकी पयइला करता, वह जातिशून्य किया जाता है । पहले उस लोगोंके हाथमें बहुत अधिकार थे, पर अभी सामाजिक व्यवहारमें कुछ कम गया है । जगदे दो और यजुर्वेदो देगख एक दूसरेके साथ खाते पीते हैं सही, पर पापसमें विवाह नहीं होता । स्त्रगोत्रमें भी ये लोग विवाह नहीं करते । अभी देगख बालकगण भंगरेजी स्कूलमें पढ़रैजी-बिया पढ़ते हैं ।

मतारा देगख ब्राह्मणोंको पाथर्व नामक एक और शाखा है । वे अधिकार्य जिलेके पूर्व भागमें रहते हैं । यहांकी विवाहिता स्त्रियां भाद्रमासमें शुभोद्देश्ये वीला सुता अपने गलेमें पहनती हैं ।

गोलापुरके देगख ब्राह्मण बहुत ही अपरिष्कार और अपरिच्छन्न रहते हैं । भइमदाबादके देगख गृहपात्य सभी जन्तुर्षका पालन करते हैं; किन्तु गोलापुरके देगख एक पक्षी तक भी नहीं पालते । इनमेंसे कुछ ग्राह है । ग्राहके प्रतिरिष्ठ और कोई भी गराव नहीं पोता । पुरुष लोग गससुच्छा तो नहीं रखते, पर जूड़ा पयस्य बांधते हैं । स्त्रियां बनावटी बालका व्यवहार करती हैं । इनके गृहदेवताके नाम करया और यलभ आदि है, जो द्राविडी देवताके जैसे मान्य पढ़ते हैं ।

देमगावके देगखोंमें पापम्भ नामक एक और

शाखा देखनेमें पातो है । भाँजिके साथ लड़कीकी व्याहता ये लोग गोरवका विषय समझते हैं । जहाँ कहाँ तो मामा भाँजोसे विवाह कर लेता है । काष्ठग्राहोंके देगखगण पहले बहुत हीय समझे जाते थे, पाज कन उन्होंने ही समाजमें उत्पत्ति कर ली है । छाण्यशुर्वेदो और शुक्लयजुर्वेदो इनमें एक दूसरेके साथ विवाह गादो नहो होते ।

बीजापुरके देगख ब्राह्मण स्मार्त, वैष्णव और सोयाग इन तीन भागोंमें विभक्त है । स्मार्त और वैष्णव देगखमें खानपान चतता है, पापसमें भादानप्रदान भी जारी है । किन्तु वैष्णवदेगख स्मार्तदेगखकी पयनो कन्या नहो देते । सोयागदेगख वैष्णव और स्मार्त देगखकी पको रसोई खाते हैं, पर स्मार्त वा वैष्णव देगख उनकी पको रसोई नहो खाते । सोयाग देगखकी उत्पत्तिके विषयमें प्रवाद है, कि किसी ब्राह्मणने बागोश कीड़ते समय एक चढ़ा कीयला पाया । उन्होंने समझा कि यह चढ़ा पहले सोनेसे भरा था, उनके कर्मके दोषसे हो सोना कीयला हो गया है । पीछे उन्होने उस चढ़ीको दरवाजेके सामने इस ब्यानसे लटका दिया, कि यदि किसीको सुदृष्टि होगी, तो कीयला फिरसे सोना हो जायगा । एक समार पयनो लड़कीकी साथ लिए उसी राहमें जा रहा था । लड़कीकी दृष्टिसे कीयला सोनेमें पलट गया । इस पर ब्राह्मणने उस समारकी लड़कीसे गादो कर लो, जिससे वह जाति भट हो गये । बाद उन्होंने १२५ प्रकोष्ठोंमें विभक्त एक घर बनवाया और उसमें पयने १२५ वन्धुओंको छिपके खानेके लिये निमन्त्रण किया । उनमेंसे सब किसोने, मैं ही चढ़ेला निमन्त्रित हुआ हूँ ऐसा समझा था ।

भोजन कर चुकनेके बाद सुंद धोते समय वे सबके सब एक साथ मिल गये । यह रहस्य हर किधीने जान लिया । पीछे जातिभट हो कर उन्होने सोयाग नामक एक नवीन विभागको छटि की ।

पहले जिन सब तोर्थस्थानोंको कन्या जिन्की गदे हैं, सभी उन्होंने सब तोर्थोंकी मानते हैं । इससे सिधा घाटामो, गोकर्ण और श्रीमैत्र स्मार्तोंके तथा दारका, मयुरा-

माने गये हैं। देवमातृक, नदीमातृक और उभयमातृक। पर्याय—जनपद, नोदतु, विषय, संपवर्त्तन, प्रदेश, और राष्ट्र। (अ० २०) देशका विषय वर्णन करते समय इन सब विषयों के वर्णन करने होते हैं, रत्न, खान, द्रव्य, पत्थ, धान्य, करेन्द्रय, दुर्ग, ग्राम, जनाधिक्य, नदीमातृकादि, भता, वृक्ष, सरोवर, पशुपुष्टि, चैत्र, परचद, वेदार, यमियो-सुख और विभ्रम। (कविबल्लवता) २ भागविशेष। यह किसीको मतमें तो सम्पूर्ण जातिका और किसीको मतमें पाहुँद या कट यजित है।

स्वरग्राम - ग म प ध नि म ० ग ० :

चयवा—ग म प ध नि स ऋ ग ० :

चयवा—स ० ग म प ध नि म ० :

सूक्ति—“आस्कोटमाविष्टतो महर्षः”

निगुहभोलो हि विद्यालवाहः।

प्रोशुप्रवशवृत्तिरेमगौरः

देशाद्वरागः स हि मन्त्ररागः ॥” (धंगीतर०)

१ विस्तार, जिसके भीतर सब कुछ है, दिक्। न्याय वा वैशेषिक के मतानुसार जिसमें भागे, पोछि, ऊपर, नीचे, उत्तर-दक्षिण आदिका प्रत्यय होता है वह देश वा दिग्द्रव्य कहलाता है। कालके समान मंख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग और विभाग देशके भी गुण हैं। देशके विभु और एक होने पर भी सर्वाधिके भेदसे उत्तर-दक्षिण, भागे पोछि आदि भेद माने गये हैं। देश-सम्बन्धी ‘पूर्व’ और ‘पर’का विपर्यय हो सकता है, लेकिन काल सम्बन्धी पूर्वोपरका विपर्यय नहीं हो सकता। पश्चिमो दार्शनिकोंमें कान्ट आदिने देशकी भन्तःकरणका आरोप मात्र कहा है, न कि इसे मनसे बाहरकी कोई वस्तु माना है। ४ शरीरका कोई भाग। ५ जैन शास्त्रानुसार चौथा पञ्चक। इसके द्वारा धर्मासुखान काके तपस्या चर्मात् सार, जन, गुण, प्रमाण और वृद्धी होती होती है। ६ एक ही राजा या शासक के अधीन भूभाग, राष्ट्र। ७ खान, जगह।

देशक (सं० त्रि०) दिशतोति दिग्-गुल्फ्। शास्त्रा, उप-ट्टा, उपदेश करनेवाला।

देशकली (सं० स्त्री०) एक रागिणी। इसमें गांधार कोमल और धाको मय स्वर रह लगते हैं।

देशकार—मध्यम जातीय राग। यह सबैरे एक दण्डके पाँच दण्ड दिन चढ़े तक गाया जाता है यह राग परज, सोरठ और सरस्वतीके मेलसे बनता है। यह दोपक रागका पुत्र माना जाता है। इसका स्वरग्राम इस प्रकार है—
स ऋ ग म प ध नि +

चयवा—ध नि स ऋ ग म प +

देशकारी (सं० स्त्री०) रागिणीविशेष। यह अनुमते मतसे मेघरागकी पत्नी और किसी किसीके मतमें हिंदोल रागकी पत्नी मानी जाती है। यह सम्पूर्ण जातिकी है। इसका स्वरग्राम इस प्रकार है—

स ऋ ग म प ध नि स +

इसके गानका काल वर्षाकृतुका निशांत वा प्रातःकाल है।

देशगान्धार (सं० पु०) सबैरे एक दण्डके पाँच दण्ड तक गाये जानेका एक राग।

देशचारित्र (सं० पु०) जैन शास्त्रानुसार गार्हस्थ्य धर्म। इसके बारह भेद हैं—(१) प्रायातिपातविरमणव्रत, (२) स्थूलसूत्रावाटविरमणव्रत, (३) शुलभदत्तदानविरमणव्रत, (४) मयुनविरमणव्रत, (५) स्थूलविरमणव्रत, (६) दिग्परिमाणव्रत, (७) भोगोपभोगविरमणव्रत, (८) भनयदण्डविरमणव्रत, (९) सामयिकव्रत, (१०) दिशावकाशिकव्रत, (११) पोपधोपवासव्रत, (१२) पतिविधिविभागव्रत।

देशज (सं० त्रि०) देश-जन-ज। देशजात, देशमें उत्पन्न। देशज (हिं० पु०) शब्दके तीन विभागोंमेंसे एक, वह शब्द जो न संस्कृत हो, न संस्कृतका अपभ्रंश हो बल्कि किसी प्रदेशमें लोगोंकी बोल-चालसे प्राप्त निकल गया हो।

देशज्ञ (सं० पु०) वह जो देशका हाल जानता हो। देशधर्म (सं० पु०) देशानुरूप धर्मः। देशोचित धर्म, देशकी रीतिरिवाज आचार व्यवहार। जिस देशमें जैसा आचरण प्रचलित रहे, वही उस देशका धर्म है। देशधर्म परित्याग नहीं करना चाहिये, किन्तु देशाचारके साथ यदि धर्मशास्त्रका विरोध उपस्थित हो, तो धर्मशास्त्रका मत ग्रहण करना उचित है। किन्तु जहाँ देशधर्म पालन करनेमें धर्मशास्त्रका कोई नियम उल्लंघन

पष्टादश और बाह्यगिरि वैष्णवोंके प्रिय तीर्थस्थान हैं।

हिन्दूके दश प्रकारके मंस्कारोंमें केवल पांचको ही ये सब मानते हैं। दश और ग्यारह वर्षके अन्दर लड़कों का उपनयन मंस्कार होता है। इन लोगोंमें जन्माशोच ग्यारह दिनमें और श्वाशोच तेरह दिनमें सम्पन्न होता है।

धारदारमें वैष्णव देगखोंका दूसरा नाम माध है। इस जन्मेके देगखगण ग्राम-घोर नगरमें रहते हैं। छोटे छोटे गाँवोंमें ये लोग रहना पसन्द नहीं करते।

१२वीं शताब्दीमें हनुमान्ने मध्याचार्य नामसे जन्म ग्रहण किया। उन्होंने मङ्गलूरके उडिपिनगरमें, मध्यतन्त्रमें घोर सुप्रसन्नमें हीन मन्दिर निर्माण किये घोर संन्यासियोंको ध्यामो नाम दे कर प्रत्येक मन्दिरके कर्तृत्वमें नियुक्त किया। केवल उडिपिनगरमें षाठ मन्दिर स्थापित किये गये थे। प्रति दूसरे वर्ष सूर्यके मकरभास्त्रमें प्रवेश करते समय इन षाठ मन्दिरोंके एक एक मनुष्य पर्याय-क्रमसे उद्गूँप श्रीकृष्णकी अर्चनामें नियुक्त होता था। मध्याचार्यके घोर भी कई एक नाम थे, यदा-ओमदा-चार्य, पूर्णबोध, सर्वज्ञाचार्य। वे सगिण्य भारतमें अमण्य करके जगद्गुरु नामसे प्रसिद्ध हुए। उनके बनये हुए ३० संस्तत ग्रन्थ प्राज्ञ भी वस्तुमान हैं। प्राज्ञो वर्ष तक धर्मकार्योंकी परिचालना कर उन्होंने अपने गिण्य पन्ननाम-तीर्थजं ऊपर कुल भार भीप माघी शुक्लवर्षमें बदरि काश्रमकी यात्रा की। लोगोंका विगमन है, कि वे जब भी जोवित भवस्थानें बहामौजू टूट हैं। पन्ननामके मरने पर नरहरितीर्थ स्वामीके पद पर बैठे। स्वामियोंका कल होता है। प्रत्येक स्वामीके मरने पर उनके शत्रु या अनुचर लोग उनके नाम पर एक एक सम्प्रदायकी स्थापति करते हैं। इस प्रकार पठारह सम्प्रदायकी उत्पत्ति हुई है। १२वीं शताब्दीमें लेकर लखोसवीं शताब्दीके शेष भाग तक ३५ मनुष्य स्वामीके पद पर अभिषिक्त हुए हैं। इन पठारह सम्प्रदायोंमें पाचवमें विवाहकी प्रथा नहीं है। केवल मत्स्यबोध, राजेन्द्र तीर्थ और यज्ञभेन्द्र सम्प्रदायमें एक दूसरेके साथ पादान प्रदान होता है। स्वामीत्वोंमें भी विवाह करना निषेध है। ये लोग एकादशी करते, पान खाते घोर तमाकू भी पीते हैं। इसके विवाह घोर हिमो

प्रकारका मादकद्रव्य काममें लीं जातीं। ये लोग केवल मित्रता ही रखते हैं, टाटो नहीं। स्त्री-पुरुषमें मिय भिन्न प्रकारका चलद्वार व्यवहान होता है। स्त्रियाँ मावित्री-व्रत करती हैं। गणेशवत्सुदंगो, दमहरा, दोधानी, तनि-पर्व, मकरसंक्रान्ति, महाशिवरात्रि आदि जन्म वष्टन समारोहमें किये जाते हैं। उपवास हो धर्मका पट्टा है। पर्यं घोर व्रतके दिन ये प्रायः उपवास किया करते हैं। विधवा घोर कर्मक्षत्र प्राप्ति एकादशी होती है। तिर-पतिका बँट्टरमण, पशुवत्तका नरमिह, उडिपिका-लण्य, काश्चिका बरदराज, कालहस्तोका कालहस्ते-श्वर, रामेश्वरका श्रीराम, श्रीरहका श्रीरत्ननाथ, तुलजा-पुरका अम्बाभवानी, गोकर्णका महावत्सेश्वर, कोनापुर-का मङ्गलप्रभो आदि अनेक स्थान हो देगखोंके पवित्र तीर्थ हैं। इन लोगोंके सोनह मंस्कार होते हैं। सनातन-के मरने पर दशदिन तक शरीर रहता है।

षाठवें वर्षमें लट्टकेका उपनयनमंस्कार होता है। अन्त्यान्ध देगखोंके सैसा इनमें भी विवाहको नहीं प्रथा है। विवाहके समय चायलका नैवेद्य सात जगह पूज कर कन्याको उग्र पर सात बार सुमाते हैं। इसकी मत्तपदो कहते हैं। इसके होनेसे जो विवाह समाप्त हो जाता है। अन्त्यान्ध देगखोंमें ऐसी प्रथा है, कि छोटे प्रथम रजोदहन होनेके उत्तरार्धमें दिनमें द्वितीय विवाह सम्पन्न होता है, पर माध लोगमें ऐसी प्रथा नहीं है, उनमें केवल पाँच ही दिनमें अनुष्ठाना होती है तथा इस उत्सवकी बँजोम फलशोभन कहते हैं। अन्त्यान्धोंके विवाह घोर धर्मोका दाहकर्म होता है। श्वाशोच ग्यारह दिन तक मानते हैं। ब्राह्मणकी मृत्यु होने पर लक्ष तक श्रुतदेहकी दूसरी जगह नहीं से जाते, तब तक उस जगहके भयवा उस सामने ब्राह्मण जनवान नहीं कर सकते हैं। इन्हें भी यथाविधि आहादि करना होता है। मन्त्यान्धोंकी मृत्यु होने पर केवल एक दिन तक शरीर रहता है। अन्त्यान्ध देगखोंकी श्रियोंमें ऐसी स्थाधीमता है, वेभी वैष्णव देगख-श्रियोंमें नहीं। प्रियेय हर बुधतो श्रियोंके साथ सुसार हुई या अथ पाई हुई श्रियोंमें बातचीत करनेकी प्रथा नहीं है।

समाजमें जब किसी प्रकारकी गड़बड़ हो पा पड़ती

नहीं होता ही, वहां देशाचार प्रतिपालन करना ही कर्तव्य है।

देशना (स० स्त्री०) दिश-पिच् युच् टाप् । नियोग विधि प्रथति ।

देशनिकासा (हि० पु०) देशसे निकास दिये जानेका दण्ड ।

देशनिर्णय (स० पु०) देशस्थ निर्णयः । देशनिरूपण । देशपरिच्छिन्न (स० स्त्री०) देशन परिच्छिन्नः इत्तत् । सर्व-व्यापी, जो सब जगह फैल गया हो ।

देवपाली—रागिणीविशेष, देशकारी रागिणीका दूसरा नाम ।

देशधनु चित्तरत्न दास—स्वनाम प्रसिद्ध देशनायक । ५ नवम्बर सन् १८०० ई० की कलकत्ता पटलडांगा स्टोर्टमें आपका जन्म हुआ था । भुवनेश्वर दास आपके पिता थे । उनका आदि निवास विक्रमपुरके अन्तर्गत तिलि-बाग ग्राममें था । विक्रमपुरके उक्त दायवर्ग एक समय पूर्व बङ्गका शासन करते थे ।

चित्तरत्न आपने पिताके हितोय पुत्र थे । आपके जन्मके कुछ समय बाद ही भुवन बाबू भवानोपुरमें आ कर रहने लगे । भुवनमोहन कलकत्ता हाईकोर्टके नामो वकील थे । उन्होंने कुछ समाचारपत्रोंके सम्पादनमें भी बड़ी योग्यता दिखाई दी । भुवनमोहन बहुत ही निर्भीक प्रकृति, तीजस्वी, स्पष्टवादी और बड़े दानी पुरुष थे । अपनी दानशीलताके कारण ही वे सदैव श्रेष्ठ-यशस्वी रहे और अन्तमें दिवालिया होना पड़ा । अपने वंशकी इस परम्परा, इन संस्कारों और संसर्गका देशधनुके चरित्र पर भारी प्रभाव पड़ा । कदाचित् है, “होनहार बिरवानके होत चौकने पात ।” सि० चार० दासके बचपनमें ही यह भासू म हो गया था कि वे आगे चल कर बहुत बड़े धादमी होंगे । सुप्रसिद्ध परिवारमें जन्म लेनेके कारण उनकी मिथा-दीचाका समुचित प्रशस्त किया गया था । आपने भवानोपुरके लन्दन-मिशनरी-सोसाइटीके स्कूलसे एण्ट्रेस पास किया और १८२०में कलकत्तेके प्रेसीडेंसी कालेजसे बी० ए० पास किया । शालिन्में आपकी विशेष अभिरुचि थी । आप प्रेसीडेंसी कालेजकी शालिन्सभाके प्रधान कार्यकर्ता

थे । इसी समामें देशधनुने पहले पहल व्याख्यान देना मोखा था । बादमें देशधनु भाइ० सि० एस० की परोक्षा देनेके लिये विदायत गए । जिन दिनों आप सिविल सर्विसकी परीक्षाकी तैयारियां कर रहे थे, उन दिनों स्वर्गीय दादा भाई नोरोजी पार्लियामेण्टको मेम्बरोके लिये खड़े हुए थे । सि० चार० दासने चारों ओर घूम घूम कर दादाभाईके घरमें वक्तृताएं दीं । विदायतके कई समाचार-पत्रोंने आपकी इन वक्तृताओंको सुन्नकपहसे प्रशंसा की । १८२२ ई०में पार्लियामेण्टके जेम्स मेकलियन नामके एक मेम्बरने अपने भाषणमें हिन्दू-मुसलमानोंके प्रति कुछ कुवाक्य कहे । इस पर देशधनुने लन्दनके एकमत हालमें एक सभा करके उस भाषणकी बहुत ही तीव्र पालीचना की । फलस्वरूप भारी आन्दोलन उठ खड़ा हुआ । अन्तमें इङ्ग्लैण्डके एक प्रधान मन्त्री सि० स्टाडटोनके सभा-पतित्वमें ओरिङ्टासमें एक विराट, सभा हुई जिसमें जेम्स मेकलियनको अपने अपराधके लिये क्षमा मांगनी पड़ी । इस सभामें देशधनुदासने जो भाषण दिया था उसे सुन कर सि० स्टाडटोन तक्र सुन्न हो गये थे । कहते हैं, कि इसी तीव्र भाषणके कारण आपकी सिविल सर्विसमें हाथ धोना पड़ा । उक्त परीक्षा पास करने पर भी आपका नाम प्रवेशनर लिस्टसे काट दिया गया । तदनन्तर आपने इनरटेम्पलमें बैरिस्टरो पढ़ना प्रारम्भ कर दिया और थोड़े ही दिनोंके मध्य सफलता प्राप्त कर आप स्त्रेडियकी लीटे ।

१८२३ ई०में स्ट्रेडिय लीटे कर देशधनुदासने कलकत्ता हाईकोर्टमें बैरिस्टरो प्रारम्भ कर दो । शुरु शुरुमें आपकी अपनी योग्यताका सिद्धा जमानेमें बड़ी कठिनाई पड़ी । परन्तु जब योगिराज बरबिन्दचोय परम-भाजीका सुकदमा चलाया गया तब देशधनुने सुकदमा अपने हाथमें लिया और इसी सुकदमकी नीतसे आपकी प्रतिभा चमकने लगी । इसी समयसे आपके हाथ-कठिनसे कठिन सुकदमें आने लगे । पट्टयन्त्रकारियों, गनरबन्दों और दूसरे राजनैतिक अपराधियोंके कई सुकदमोंकी आपने पौरखी की । इनमेंसे अधिकांशमें आपकी सफलता मिली और इनमेंसे अधिकांश अभियोग

है, तब उसकी सीमांसा उसी सम्प्रदायसे होती है। अधिक मोलमांल होने पर व स्वाभो (मन्दिरके प्रधान पुरोहित) के पास जाते हैं। स्वामो जिसका दोष पावे, उसे शर्य दण्ड देते हैं। कभी कभी दोषो समाजस्थित भी किया जाता है। किन्तु जिसे शर्य दण्ड होता है, वह फिरसे समाजमें से लिया जाता है। गत कई एक वर्षों में शंकरजी गिचाने प्रभावसे कितनेनै सामाजिक आचार व्यवहारको परित्याग कर दिया है। यहांके समाज-भागवतोका आचार व्यवहार अन्य जिलोंके भागवत सरोखा है।

देशस्य ब्राह्मणोंका प्रायः एक सा आचार व्यवहार देखनेमें जाता है। पर हां, जिस देशमें जै सी व्यवस्था है उस देशमें वैसी ही है। सुधसमानके शर्य में वे चतना दोष नहीं मानते। जमाकृत्य, उपनयन, विवाह, सता-गोष समो इसी देशके ब्राह्मणोंके जैसा है। बङ्गालो ब्राह्मणोंके जैसा उन लोगोंमें भी अनेक साम्प्रदायिक मत हैं। कौन किस सम्प्रदायके हैं, वह उनके ललाटस्थित त्रिपुण्ड्र आदि रेखा देखनेसे ही मान्य हो जाता है। म्हावेदो ब्राह्मण या तो सरकारो नौकरी करते या अपने देशमें खजानो वा सुधाररका काम करते हैं। यमुवेदो ब्राह्मण सरकारो नौकरी करनेकी अपेक्षा व्यवसाय करना अधिक पसन्द करते हैं।

सुधसमानोंके समयमें देशस्य ब्राह्मण कामजाद रखनेमें इतने चालाक थे, कि उस कार्यमें देशस्यब्राह्मणके सिवा और कोई नियुक्त नहीं होता था। इतना ही नहीं, बल्कि कामजाद भी पारसो, भाषाके बदले उन्हींको भाषामें लिखे जाते थे। सम्प्रद प्रदेयमें जितनी जातियां रहती हैं उसमेंसे देशस्य ब्राह्मणकी ही संख्या अधिक है। देशांकी (हिं० स्त्री०) एक रागिणी। इयुमतके मतानुसार इसका स्वर घाम यो है— ग म प ध नो सा ग, अथवा ग म प ध नो सा रे ग।

देशा—एक गन्धर्व। इन्होंने सोमेश्वरके निकट सन्नेत विद्या सीखी थी।

देशाका (सं० स्त्री०) रागिणी विशेष। इसका स्वरघाम यह है— ग म प ध नि सा +

देशापो (सं० स्त्री०) रागिणीविशेष। इयुमतके मतसे

यह हिंदोनको दूसरी रागिणी है। यह पादुव जातिकी है। स्वर गान्धार होता है। गानेका समय यमना श्रुतुका मन्थाष्ट है। इसका रूप सुन्दर, चन्दके जैसा यदन, क्रोधनस्वभाव, सर्वदा कलहप्रिय तथा वचःस्थल धूनि-युक्त है।

देशाचार (सं० पु०) देशकी चाल या व्यवहार।

देशाटन (सं० पु०) देशभ्रमण, भ्रम भ्रम देशोंकी यात्रा।

देशान्तर (सं० स्त्री०) अन्यो देशः मयूरवशकादिवश-समासः। १ देशभेद, विदेश, परदेश। स्मृतिमें देशान्तरका विषय इस प्रकार लिखा है।

जहांकी बोली परस्पर विभिन्न है अर्थात् जहां स्वरका तारतम्य देखा जाता है तथा जहां बड़ो बड़ो नदी घोर पहाड़ बीचमें पड़ा है, उसे देशान्तर कहते हैं। नदी घोर देशके भिन्न भिन्न होने पर यदि वह नजदोक भी रहे, तो भी उसे देशान्तर कहेंगे। अथवा जहां दस दिनोंमें समाचार नहीं पहुँचता है वह भी देशान्तर कहलाते हैं।

कोई कोई कहते हैं, कि ६० योजन दूर स्थित देशान्तर कहलाता है। फिरकोई कोई १० या ४० योजन दूरस्थ स्थानको ही देशान्तर बतलाते हैं।

२ सुमेरु घोर लहाके मध्यरेखा स्वरूप देश घोर खदेशका अन्तर योजन भूगोलमें ध्रुवोंसे जो कर उत्तर दक्षिण गई हुई किसी सर्व-मान्य रेखासे पूर्व या पश्चिमकी दूरी।

सुमेरु पर्यंत घोर लहाकी मध्यगत भूमिके ऊपर जो कर जो रेखा उत्तर दक्षिणकी घोर विक्षीर्ण कक्षित हुई है, उसे मध्य रेखा कहते हैं। उस रेखासे चपना देय जितना योजन दूर रहेंगा, उतने योजनको दमसे गुणा कर गुणनफलमें फिर तेरहवें भाग देनेसे जो भागफल होगा, वह पल होगा। वह पल यदि साठसे अधिक हो, तो उसे दण्ड बना कर मध्य रेखाके पूर्व देशमें जोड़ घोर मध्य रेखाके पश्चिमदिक्में घटाव करना होगा। जैसे, कलकत्ता देय मध्य रेखासे २०० सो योजन पूर्वमें है, अतएव इस देशमें देशान्तर २ दण्ड १४ पल होगा।

(शिष्टान्तसिरोमणि)

पापने बिना फीस दिए या नाममात्रकी फीस ले कर किये थे। इमर्रावराजके राज्यमें कानून मामलेंमें पापने वैरिस्टरी की और नागपुरके होमरूलके सिल्टेरी मि० जेयको अपोलमें मुक्त किया। ब्रह्मदेशमें जब डाक्टर मेहता Defence act में पकड़े गये, तब पापने ही सुकदमेंकी पैरवी करने उन्हें छुटकारा दिया। देगके वैरिस्टरीमें आम्नानीसे मि० चार० दासका मन्त्र पालन हो गया। पिछले चार वर्षोंमें पापकी आमदनी प्रतिमास लगभग पचास हजार रुपयेकी हो गई थी। इतनी आमदनी इसमें पहले देगके और किसी वैरिस्टरीको नहीं पुरे थी। खुद सरकार एक सुकदमेंमें पापकी पचास हजार नकद और डेढ़ हजार रोज उसके घलावा देनेकी तैयार थी। किन्तु भारतमाताकी भलाईके लिये आपने वकालत छोड़ कर इस आमदनीको ठुकरा दिया और सहायोग आन्दोलनमें साथ दिया।

दानवीरता—चित्तरंजन योग्य पिताके योग्य पुत्र थे। इनको आप ऐसे थे, कि दान, दुःखियों, भनायों और गरीब विद्यार्थियोंको सेवामें आपने कितने हजारोंका शुभदान किया है, इसे कोई नहीं जानता। आपने कितने आत्मीय स्वजनोंको धार्मिक सहायता दी, कितने कल्याण स्टदियोंके लिए भवनवस्त्रादिकी व्यवस्था की और कितने दरिद्र विद्यार्थियोंके पढ़नेका प्रबन्ध किया—इसका हिसाब कौन लगा सकता है ? ब्राह्म-विद्यालयका आपने नया घर निर्माण किया, बेलगछिया मेडिकल हॉल बनवानेमें प्रबुर धर्म व्यय किये। बङ्ग भाषाकी चरितके लिये आप धर्मव्यय करनेमें जरा भी हिचकते नहीं थे। पुरस्कारोंमें आपके पिताका प्रतिष्ठित एक भनाय आयम् है जिसमें आप प्रति मास मायः दो हजार रुपये खर्च करते थे। एक दूसरे भनायायम्को आपने दो लाखका दान दिया और इस दानकी खबर आपकी पत्नी तकको न चल पाई। सुरेशचन्द्र समाजपति धर्माभावके कारण जब साहित्यपत्रिका चला न सके थे, तब आपने ही काफी पूंजो दे कर पत्रिका चलानेमें सहायता की थी। फरीदपुरके अभिविधनमें आप बिना फीसके जाने सुने डेढ़ हजार रुपये दान कर पाए थे। दरिद्रोंको आप अनुपम ज्ञान कर दान नहीं देते थे। आप

कहा करते थे कि, “जब मैं दरिद्रको कुछ देता हूँ। उस समय मुझे ऐसा मान्द पड़ता है मानो स्वयं नारायण ही था कर मेरे इस सुख देगको ले जाते हैं।”

धर्ममत—चित्तरंजनके पिता भुवनमोहन ब्राह्म थे। उस समय पंगरेको मिश्रित बहुतेरे लोग राजा राम-मोहन राय द्वारा प्रवर्तित ब्राह्म धर्म ग्रहण करके मत्स्यका श्रद्धेयण करते थे। खुद ब्राह्मणों को चित्तरंजन ब्राह्म परिवारमें जन्म ले कर भी हिन्दू हो गए थे। आपने पुत्र और कन्याका हिन्दू-रीतिसे विवाह किया था। आपका हिन्दुत्व केवल दिखावटी न था, मल्लि आप वैष्णव शुरु से दोहा ग्रहण कर कहर वैष्णव हो गये थे। सर्व-व्यापी गिराकार ब्रह्मकी चिन्ता कर चित्तरंजनका चित्त ठब न हुआ। आपने भगवान्को भक्तवाञ्छा पूर्णकारी नरूपमें देखना चाहा था। आप विष्णुके पक्षे भक्त थे, कीर्त्तन गानकी प्राणसे भी बड़ कर चाहते थे। पदा-बलीकीर्त्तन सुनते सुनते आपको आँखोंमें जल डब डबा आता था। बहुत रुपये खर्च करके आपने अपने दुःप्राप्य वैष्णव ग्रन्थ संग्रह किए थे। इतना ही नहीं, आपने भी गिराकार परब्रह्मके विषयमें अनेक पद बनाये थे, जिन्हें सुन कर लोगोंका चित्त भक्तिच्छूक होने पर भी उस और आकृष्ट हो जाता था।

चित्तरंजन हिन्दू होने पर भी जाति भेद नहीं मानते थे। वे कहते थे, ‘मैं हिन्दू हूँ’ सही, लेकिन जातिभेद पर मेरा विश्वास नहीं है।’ आपने अपना विवाह ब्राह्मणकन्यासे, बड़ी लड़कोंका कायस्थ पात्रसे और अपने लड़के चित्तरंजनका विवाह पश्चिम बङ्ग के वैश्यवंशमें किया था।

साहित्यनीवन—देशबन्धु बड़े भारी कवि और साहित्य-सेवी भी थे। मालख, माला, सागर-सङ्गीत, चरत्तार्यो भी कियोर किशोरो आपको हो कीर्त्तियाँ हैं। रवीन्द्रनाथकी और चित्तरंजनको कवितामें प्रेम यही है, कि रवीन्द्रनाथकी कविता वैष्णवोय आदर्शमें लिखी रहने पर भी वह ब्राह्म भावमें पुष्ट है और चित्तरंजनको कविता वैष्णवकी साधना वा भक्तिका सूक्ष्म विषय है।

आपकी साहित्यसाधना परवर्त्तमानमें राजनीतिक समस्याके साथ सम्मिश्रित होती जा रही थी। आप

देवनागरी-देवनागरी प्रदेशवासी नावटुवांके लैसा एक प्रशस्ती गीत ज्ञाति । ये लोग कई वर्ष पहले बङ्गालमें स्थानांतरित था करते हैं । तेनगु इनकी भाषा है । ये भाषा, बङ्ग, कुर्ख, मुरमी आदि की पानते हैं । माधारणतः इनका प्रधान भोजन चावल और जौ है । कभी कभी ये लोग मांस भी खा लेते हैं । शराब पीनेकी प्रथा इस जातिमें पवित्र है । भद्र, गोत्रा आदि एक मन्त्र भी छूटने नहीं पाता । पुरुष गिरा धारण करते और स्त्रियां गिरने दाहिने किनारे जूड़ा बांधती हैं । जित्नु बनावटो घासका व्यवहार इन लोगोंमें नहीं है । ये लोग बहुत माले कुचेते रहते हैं । जितने देवता हैं सभी इनके उपास्य हैं । लेकिन गिराजोके प्रति इनकी विशेष भक्ति रहती है । देवस्य द्वाप्राण भी इनके पुरोहित होते हैं । हर काममें पुरोहितकी जरूरत होती है । रोटी और त्रिफल तैयार कर सभीसे अपना गुजारा करते हैं । छोटे छोटे लहड़े स्नानमें पढ़ने जाते हैं । इनके शुभ नहीं होते, तोययात्रा भी ये लोग नहीं करते हैं । जन्म-वातिको ये लोग जलाते नहीं, गाड़ते हैं ।

देविक (मं० पु०) देश प्रमितः देश-उक्त । १ पयिक, यटोही । देश उपदेशः तत्र प्रसितः उक्त । २ शुभ प्रभुति उपदेश ।

देवित (मं० वि०) दिग्-विच-कर्मणि क्त । उपदेश-प्रेरित, वह जिसका उपदेश लिया गया हो ।

देविन् (मं० वि०) दिगतीति दिग्-आदेशे णि । देविक, आदेशकारी ।

देविनी (मं० स्त्री०) देविन् स्त्रियां टोप् । १ पंशुष और मध्यमार्क शोचकी, पंशुजि, तर्जनी पंशुनी । २ पक्षी ।

देवो (मं० स्त्री०) १ रागिनीविशेष, हनुमत्के मतसे दीपकरागको भाषा । पद्मः-वर्जित, प्रथम, पद्म चंश और ग्यास । शीघ्रतया मध्यमार्काल इसके प्रजत मान-या ममय है । शोभितार्क मतसे यह वल्लभारगको पयो है । मत्तान्तरये धैर्यत वर्जित है । (मंगीतमार्ग०) यह मनुष्यापह, मारुत, पक्षाडी या टोरो-और चट्टीगमि उत्पन्न हुई है । संपूर्ण म बायी है—

य सम्पाटी षट् नि (संगीतरंग) ।
 षट् म प ध नि म ॥ रागरिषेव ।
 षट् ग म ॥ नि स ॥ मीमांसा ।
 श्रुति—“निद्रास्ये वा करुते कान्त” शिषोपयन्तो द्वेगोमुदेव ।
 गोपी मनोहा शुद्धपुष्पवत्त कथाय य देवी रत्नपुष्पिणी ।
 (संगीतसार०)

यह सुरतोत्सुकाको नार्दं निद्रास्य कान्तको हल पूर्वक जगा रही हैं तथा गोरी, मनोहा, शुभ वल-धारिणी और चित्तरममें परिपूर्णा हैं ।

स्वरपाम—षट् ग म ध नि म षट् ॥

मध्यम श्रुतिं भेद—

“गणपतिगतिवेणी शोपनेन्दोवराहो
 पृथुलरनिगम्यालम्बिणेभुक्ता ।
 तनुत(मनुवहो) वीतकौमुद्याग
 इयमुदरति देवी रागिणी वाहवा ॥”

(संगीतसार०)

२ सङ्गीतभेद ।

गीत, वाद्य और नर्तन इन तीनोंका नाम सङ्गीत है । यह सङ्गीत मार्ग और देवकी भेदये दो प्रकारका है । दृष्टिपने जिसका अनुमन्थान किया था, भरतसे जो प्रयुक्त हुआ था और महादेवके मानमें जो गाया गया था, सभी रीति द्वारा जो देव देवमें लोकानुरक्तनके लिये गाया जाता है, उसे देवी कहते हैं । (संगीतरंग)

देशीय (मं० वि०) देशी भवः गहादित्यात् ण । १ देशज, देशका । २ स्वदेशका । ३ अपने देशमें उत्पन्न या बना हुआ ।

देशीयवराहो (मं० पु०) रागिणीभेद । गीतगोविन्दमें इसका उल्लेख देखनेमें आता है, यथा—“देशीय वराहो रूपकतालेन गीयते” (गीतगोविन्द)

देश्य (मं० स्त्री०) दिग्यते इति दिग्-धर्मणि क्त । १ पूर्वपण । (वि०) २ देशार्थ । देशे भवः इति दिग्-दिभ्यो यत् । दिग्-यत् । ३ देशमय, देशदा ।

देष्टु (मं० वि०) दिग्-यच् । दमक ।
 देष्ट (मं० पु०) १ मत्प, पाप्मा । २ मत्प, पक्षम ।
 (देविक)

आपने जीवनको कभी भी खेड़ विच्छिन्नरूपमें देख नहीं सकते थे। धर्म साहित्य और राजनीति का आपके हृदयमें खूब समावेश था।

बङ्गालके साहित्यिक समाजने आपको प्रतिभाका परिचय पा कर भागलपुर, टाका और मुर्शेगञ्जमें आपको बङ्गोय साहित्य सम्मेलनका विभिल सभापति बनाया था। जब कभी आपको कुछ अवसर मिल जाता था, तब आप साहित्यकी चर्चा करके आनन्द लाभ करते थे। यहां तक कि दार्जिलिङ्गमें मृत्युके दो दिन पहले भी आपने कविताकी रचना करके उसे अपनी स्त्री और कन्याको सुनाया था।

राजनीतिक जीवन—१८०५ ई०में बङ्गविभाग होनेके बाद देशकी राजनीति धर्मनोति हो उठे। टादा भाई जोरीजीने १८०६ ई०की कलकत्ता-कांग्रेसमें जातीय पक्षकी ओरसे स्वायत्ततासमर्थकी इच्छा प्रकट की। १८०६ ई०के पूर्व पर्यंत कांग्रेसकी रीतिनोति सुष्टी भर सम्प्रदायोंके हाथ थी। देशके जनसाधारणके साथ इसका सतना सम्पर्क नहीं था। १८०५ ई०की ६वीं जुलाई-की इटिश-इण्डियन-एसीसोसियेशन-ग्रुपमें कांग्रेसकमिटीको जो सचिवेशन हुआ उसमें स्टेण्डिंग कांग्रेस-कमिटी गठन और अध्ययन समितिगठन से कर नवोन दल और प्राचीन दलमें विवाद उपस्थित हुआ। नवीन दलके मुखिया थे चित्तरञ्जन, श्यामसुन्दर, विपिनचन्द्र, हेमचन्द्र, प्रसाद बादि और प्राचीन दलके सुरेन्द्रनाथ, भूपेन्द्रनाथ बादि। ११वीं जुलाईकी इसका कैमला हुआ, नवीन दलकी ही जीत हुई। यही भारतवर्षमें गणतन्त्र-प्रतिष्ठानका प्रथम सत्रपात था।

१८०५ ई०से ही चित्तरञ्जन बङ्गालके नवीन पक्षो जातीय दलके नेता हुए थे। १८१० ई०की कलकत्तामें जो कांग्रेस हुई उसकी नेता कोम होमि यह से कर विवाद खड़ा हुआ। चित्तरञ्जनके दलने पनी वेसेण्टीको और प्राचीन दलने महम्मूदाबादके राजाकी सभापति बनाना चाहा, पक्षमें चित्तरञ्जनके दलकी ही विजयपताका लड़ी। एनी-वेसेण्टी की कांग्रेसकी सभापति निर्वाचित हुई। इसी समयसे नरम और गरम दल चलन चलन हो गया।

१८२० ई०के सितम्बर मासमें कलकत्तामें कांग्रेसका

एक विशेष अधिवेशन हुआ। उस कांग्रेसमें सराज्य-लाभ, पञ्चाव-हत्याकाण्डका प्रत्येकार, खिलाफतके अन्यान्य व्यवहारका संशोधन से कर तोम आलोचना हुई। महात्मागांधीने इस कांग्रेसमें असहयोग नीति का प्रचार किया। स्वयं कांग्रेसके सभापति लाला लाजपत-राय, चित्तरञ्जन, विपिनचन्द्रपाल बादि सम्भवानोंने इसका प्रतिवाद किया। किन्तु वोटसे महात्माजी का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

इसके पनन्तर चमो सालके दिसम्बर मासमें नागपुरमें कांग्रेस बैठी। इस कांग्रेसमें सारा बङ्गाल महात्माके असहयोग प्रस्तावके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ, इसका खूब पान्दोलन चला। गजब था, चित्तरञ्जनने बङ्गालसे २०० 'गोण्डा' बोसप्लीयरोंकी किराये पर मंगाया और असहयोगप्रस्तावको निर्मूल करनेकी एक भी कसर उठा न रखी। विजयराघवाचार्य भी महात्माके विरुद्ध उठ खड़े हुए। भारटिया और गुजरातीके साथ हत्यावादी तक भी चल गई थी। किन्तु भगवान्को इच्छाकी कौन रोक सकता? कांग्रेसमें महात्माका असहयोग-पान्दोलन सर्वसम्मतिसे पास हुआ और सबसे पाथवका विषय यह था कि स्वयं चित्तरञ्जनने भी सहयोगकी नीति का पतित्याग कर असहयोगनैतिकी ग्रहण किया। सुनते हैं, कि महात्माने चित्तरञ्जनको असहयोगकी प्रयोजनोद्यता पर बहुत देर तक समझाया था। फिर क्या था, चित्तरञ्जन जब जिसको सत्य समझ लेते थे, तब वे उसके लिए अपना सर्वस्व निष्ठावर करनेको तैयार हो जाते थे। असहयोगनैतिको सत्यता जब उनकी समझमें चढ़ने लगे तो वह भी गई तब आप देयसताको सेपाके लिए बैरिटरी छोड़ फकीर हो गए। आप देयसताके लिये सन्ध्यावीके विषमें तमाम धूमने लगे।

१८२१ ई०की ११वीं नवम्बरकी भारतसरकारके पामन्त्रणसे मि०-पाय-वेल्स भारतवर्षमें पधारे। उन दिन सारे हिन्दुस्तानमें हड़तालकी घोषणा कर दी गई। चित्तरञ्जनने भी इस हड़तालका जो खोल कर समर्थन किया। कुछके कुछ खेच्छासेवक धूमने लगे, सारे भारतवर्षमें हड़ताल मनाने लगे। इस पर भारतसरकार पागवदूला हो गई और बङ्गाल गवर्मेंटने चित्तरञ्जनके स्वयंसेवक

देह (स० त्रि०) प्रतिग्रयेन दाता दातृ-प्रतिग्रायने इदम्
द्वगोलोपे गुणः । प्रतिग्रह दाता, बहुत दानो ।

देह्य (स० त्रि०) दा-दृष् च. गुणः । (गदान्यामिषु च ।
अ० ३।१६) दाता, देनेवाला ।

देस (हि० पु०) देश देखो ।

देसकार (हि० पु०) देशकार देखो ।

देसवाल (हि० वि०) १ स्त्रदेसका । (पु०) २ एक
प्रकारका पटसन ।

देसवालो—शुजरातो ब्राह्मणोंका एकभेद । खेड़ा जिलेमें
इन ब्राह्मणोंकी बस्तो विभेद है । प्रदेशोंमें एक देसके
लोग अपने ही देसके लोगोंको भी देसवालो कहते
कहाते सुने जाते हैं ।

देसाई-महाराष्ट्र ब्राह्मण समुदायान्तर्गत देशस्थ ब्राह्मणों-
में लौकिक श्रेणीके ब्राह्मणोंका एक कुल नाम ।

देह (स० पु० क्त०) देहि प्रतिदिनं दिह दृष्टौ घञ् ।
१ शरीर । हिन्दीमें इस शब्दको स्त्रीलिङ्ग माना है । प्रति-

दिन दृष्टि प्राप्त होती है, इसीसे देह नाम पड़ा है ।

वाल्म, भीमार, यौवन और वाक्के दृष्टादिमें देह परि-
णाम प्राप्त होती है, इसीसे देहका नाम शरीर भी है ।

देह प्रतिष्ठा की परिणत होती है । कभी तो इसकी
वृद्धि होती और कभी घट्य होता है । यह देह सूक्ष्म,

सूक्ष्म और कारणके भेदसे तीन प्रकारकी है अर्थात् स्थूल
देह, सूक्ष्मदेह और कारणदेह । न्यायके मतसे पार्थिव-

देह दो प्रकारकी है, योनिज और अयोनिज । फिर
योनिज देहके भी दो भेद हैं, जरायुज और पण्डज ।

शुक्रोपित सन्निपातके लिये योनिज है, इसके लिये
मनुष्यादिजा शरीर प्रत्यक्ष प्रमाण है । स्वेदज और

उष्णिकादि अयोनिज है । एक और प्रकारका शरीर है,
उसे भी अयोनिज कहते हैं । यह शरीर शुक्रोपितज-

सन्निपात-लोडकर धर्म विमोचने बना-हुषा परमाणुप्रभव
है, इस प्रकारके शरीर नारदादिके हैं । ना-कियाँके

शरीर भी अयोनिज हैं, जलोय देह भी अयोनिज है, इस
प्रकारकी देह वरुणलोकमें पाई जाती है । तैजस और

तेजोमय देह अयोनिज है, जो सूर्यलोकमें प्रसिद्ध है । वाय-
वीच देह भी अयोनिज है, इस प्रकारको देह पिशाची-

की हैं । विनेष विवरण शरीर शब्दमें देखो ।

सावित्रीने यमसे पूछा था, 'प्रभो ! देहका जब अव-
सान हो जाता है, तब वस्तुवाच्य उसे भस्मसात्

कर घर लौट पाते हैं । भस्मसात् हो जाने पर देहमें
शुभाशुभ भोग हुआ करता है, कोई देह तो स्वर्गमें अनु-

पम सुख भोग करती है और कोई नरकमें अतुलनीय
यन्त्रणा । अब बतलाइये कि देह हो किस प्रकारको है

तथा देहधारी हो अधिक काल तक क्लेश भोग कर किस
प्रकार विनष्ट हो जाता है ?' इस पर यमने कहा था,

"सावित्री ! देहका विवरण कहते हैं, सुनो ! धृन्वो, वायु,

आकाश, तेज और जल यही पाँच देहधारियोंके देह-
बीज हैं । विधाताकी सृष्टिके ये ही पाँच कारण हैं ।

इन्हीं पञ्चभूतोंसे जो देह बनाई गई है, वह कृत्रिम और
नश्वर है । भस्मसात् होनेका यही कारण है । जब यह

पाञ्चभौतिक देह भस्मसात् हो जाती है, तब उद्वाङ्मुक्त
प्रमाण जीव सूक्ष्म देह धारण करता है । इस सूक्ष्म देह-

को न तो अग्नि भस्म कर सकता, न यह जलमें हो
गट होतो और न शूल, पत्थर, तीक्ष्णकण्टक, तम्रद्वय,

तम्रलोह, तम्रापायण आदि हो इसका कुछ अनिष्ट कर
सकता है । यही सूक्ष्मदेह शुभाशुभ फल भोगती है

अर्थात् स्वर्ग नरकादिको पातो है । परिदृश्यमान इस
सूक्ष्म देहमें सुख दुःखादिका भोग प्रत्यक्षसिद्ध है । फिर

सूक्ष्मदेहमें स्वर्ग नरकादिका विषय शास्त्र वाक्यसे
सिद्धान्त हुआ है ।" (ब्रह्मवैवर्तपु०)

सांख्यप्रकृतियनके मतसे देह तीन प्रकारको है,
स्थूल, सूक्ष्म और भूत । स्थूलदेहको हमलोग माता और

पितासे प्राप्त करते हैं । इसीसे इसको मातापितृज शरीर
भी कहते हैं । इसका नाम पाट-कौशिक शरीर है,

क्योंकि यह पट-कोश द्वारा उत्पन्न हुआ है । मातासे हम
लोग लोम, मोषित और मांस तथा पितासे छान्द, पस्त्रि

और मज्जा प्राप्त करते हैं । इन्हीं पट-कोशोंसे स्थूल देह
बनी है । अतः इस स्थूलदेहका नाम पाट-कौशिक शरीर

भी है । मातापितासे पाट-कौशिक शरीरको पा कर भोज-
नादि द्वारा इसकी सृष्टि करते हैं । जो सब वस्तुएँ खाई

जातो हैं उन्हींसे यह स्थूल देह परिपुष्ट होती है । खाये
हुए पदार्थका अवशोषण मल-मूत्रादि होता है और सारांश-

से रस, रससे शोषित, शोषितसे मांस, मांससे मूद, मूदसे

चापने बिना फीस लिए या नाममात्रकी फीस से कर लिये थे। सुभारंगराजकी राज्यभक्तान्त सामन्तमें चापने बैरिस्टरी की और नागपुरके होमरूलके सिक्रेटरी मि० बैरकी यपोसमें मुक्त किया। ब्रह्मदेशमें जब डाक्टर मेहता Defence act में पकड़े गये, तब चापने की सुकदमकी पैरवी करके उन्हें छुटकारा दिया। देगके बैरिस्टरीमें चापानेमे मि० चार० दागका नम्बर प्रबल हो गया। पिछले चार वर्षोंसे चापकी चामदनी प्रतिमास लगभग पचास हजार रुपयेकी हो गई थी। इतनी चामदनी इससे पहले देगके और किसी बैरिस्टरकी नहीं हुई थी। खुद सरकार एक सुकदममें चापकी पचास हजार नकद और छेड़ हजार रोज उसके बलावा देनेकी तैयार थी। किन्तु भारतमाताकी भलाईके लिये चापने एकालत छोड़ कर इस चामदनीकी ठुकरा दिया और प्रसहयोग आन्दोलनमें साथ दिया।

दानवीरता—चित्तरञ्जन योग्य पिताके योग्य पुत्र थे। दानी चाप ऐसे थे, कि दीन, दुःखियों, बनार्यों और गरीब विद्यार्थियोंकी सेवामें चापने कितने हजारोंका शुभदान किया है, इसे कोई नहीं जानता। चापने कितने प्राचीय स्त्रजनोंको पार्षिक सहायता दी, कितने कङ्गाल गृहस्थोंके लिए भक्तवत्सादिकी सुव्यवस्था की और कितने दरिद्र विद्यार्थियोंके पढ़नेका प्रबन्ध किया—इसका हिसाब कौन लगा सकता है ? ब्राह्म-विद्यालयका चापने नया घर निर्माण किया, बेलगछिया मेडिकल कालेज बनवानेमें प्रभुर श्रम व्यर्थ किया। बङ्ग मायाकी उन्नति के लिये चाप श्रमव्यर्थ करनेमें लरा भी हिचकते नहीं थे। पुत्रकियामें चापके पिताका प्रतिष्ठित एक बनाम चायस है जिसमें चाप प्रति मास प्रायः दो हजार रुपये खर्च करते थे। एक दूसरे बनामायसकी चापने दो लाखका दान दिया और इस दानकी खबर चापकी पत्नी तकको ग चल पाई। सुरेशचन्द्र समाजपति अर्थभावके कारण जब साहित्यपत्रिका चला न सके थे, तब चापने ही काफ़ी पूँजी दे कर पत्रिका चलानेमें सहायता की थी। फरीदपुरके अभियेननमें चाप बिना किसी मोर्के जाने सुने छेड़ हजार रुपये दान कर चाप थे। दरिद्रकी चाप मनुष्य जान कर दान नहीं देते थे। चाप

कहा करते थे कि, “जब मैं दरिद्रकी कुछ देता हूँ। उस समय सुनते ऐसा मानूँ पड़ता है मानो स्वयं नारायण ही चा कर मेरे इस तुच्छ दानकी ले जाते हैं।”

धर्ममत्त—चित्तरञ्जनके पिता भुवनमोहन ब्राह्म थे। उस समय अंगरेजों मिश्रित पद्धतमें लोग राजा राम-मोहन राय द्वारा प्रवर्तित ब्राह्म धर्म ग्रहण करके मत्स्यका अन्वेषण करते थे। यह ब्राह्मणी चित्तरञ्जन ब्राह्म परिवारमें जन्म ले कर भी हिन्दू हो गए थे। चापने मुख और कन्याका हिन्दू-रौतिसे विवाह किया था। चापका हिन्दुत्व केवल दिखावटी न था, भक्ति चाप वैष्णव शुरुमे दोला ग्रहण कर कष्ट वैष्णव हो गये थे। सर्व-व्यापी निराकार ब्रह्मकी चिन्ता कर चित्तरञ्जनका चित्त लग्न हुआ। चापने भगवान्की भक्त्यावस्था पूर्णकारी नरूपमें देखना चाहा था। चाप विष्णुके पहले भक्त थे, कीर्त्तन गानकी प्राणसे भी बड़ कर चाहते थे। पदा-वलीकीर्त्तन सुनते सुनते चापको पाँखोंमें जल डब डबा आता था। बहुत रुपये खर्च करके चापने अनेक दुर्गप्राय वैष्णव ग्रन्थ संग्रह किए थे। इतना ही नहीं, चापने भी निराकार परब्रह्मके विषयमें अनेक पद बनाये थे, जिन्हें सुन कर लोगोंका चित्त चमिच्छुक होने पर भी उस और ब्राह्म हो जाता था।

चित्तरञ्जन हिन्दू होने पर भी जाति भेद नहीं मानते थे। वे कहते थे, ‘मैं हिन्दू हूँ’ सही, लेकिन जातिभेद पर मेरा विश्वास नहीं है।’ चापने अपना विवाह ब्राह्मणकन्यासे, बड़ी लड़कीका कायस्थ पादसे और अपने लड़के चित्तरञ्जनका विवाह पश्चिम बङ्गके वैद्यवर्धनमें किया था।

साहित्यजीवन—देशबन्धु बड़े भारी कवि और साहित्य-सेवी भी थे। मालव, माला, सागर-सङ्गोल, अस्तर्थांसी और किंगोर किंगोरो चापको हो कीर्त्तियाँ हैं। रवीन्द्रनाथकी और चित्तरञ्जनकी कवितामें प्रभेद यह है, कि रवीन्द्रनाथकी कविता वैष्णवीय आदर्शमें लिखी रहने पर भी वह ब्राह्म भावसे पुष्ट है और चित्तरञ्जनकी कविता वैष्णवकी साधना वा भक्तिका मूल विकास है।

चापकी साहित्यसाधना परवर्त्तयुगमें राजनीतिक समस्याके साथ सम्मिश्रित होती आ रही थी। चाप

अग्नि, अग्निमें मन्त्र और मन्त्रमें श्रुतीत्वन्ति होती है। इसी श्रुतिमें मन्त्र होता है। गायत्र्य ही एक मात्र गरीरका प्रतियोगक है। पञ्चाभोजन करनेमें देह सबन और गराग भोजन करनेमें ही देह चोप होता है। यह संसार त्रिगुणमय है, अतएव हम संसारमें जितने पदार्थ हैं सभी त्रिगुणमय हैं। इसीमें जो सब मनुष्य खापी जाती है, उनमें मर, रजः या तमः इनमेंसे जिस गुणकी अधिकता जिस वायु यन्त्रमें रहती है वही यद्यु प्रति दिन श्रुतिमें देह वा प्रकृति उसी ही तरह होती है। अर्थात् सात्विक भोजन करनेसे सात्विक प्रकृति, राजसिक भोजन करनेसे राजसिक प्रकृति वा तामसिक भोजन करनेसे तामसिक प्रकृति होती है। देह भी तदनु रूप होती है। पुरुष सूक्ष्मभूतके साथ पाटकोमिक देह परिपक्व करके अपने अपने पट्टागुसार सब दुःख पाता है। देहके बिना भोग नहीं हो सकता। यह पाटकोमिक शरीर रसात्ता, भस्मात्ता वा विघ्नात्ताके रूपमें परिपक्व होता है, अर्थात् इस देहके अवसान हो जानेसे जब धन्व-दास्य उसे भस्मात्ता करते हैं तब वह भस्मात्ता या जब मरेमें गाड़ते हैं तब रसात्ता या जब कोई प्राणी हम जोषदेहकी खा लेता है, तब वह विघ्नात्ताके रूपमें परिपक्व होता है। इस सूक्ष्मदेहके अभाव हो जानेसे एक दूसरा शरीर बनता है जिसे सूक्ष्म शरीर कहते हैं। प्रत्येक पुरुष एक न एक शरीर अवश्य अवलम्बन करता है। जिस प्रकार चित्त आश्रयके बिना ठहर नहीं सकता उसी प्रकार पुरुष भी जब तक आश्रयरूप देहको अवलम्बन नहीं करता, तब तक वह ठहर नहीं सकता है। जिस तरह जीक एक दूसरी घासकी एकड़ नहीं खेतो तब तक पशुभी घासकी छोड़ता नहीं है, उसी तरह पुरुष एक देहका आश्रय किये बिना अपनी पूर्व देहका परिव्याग नहीं करता है। देहके अवसान होनेके पक्षमें एक भावनामय गरीर उत्पन्न होता है, अर्थात् मृत्युके अभी संस्कार का कर उपस्थित होते हैं और उस समय केन्द्रों शरीर का पट्टावर्तन है। उस समय अपने अपने कर्माश्रु रूप एक शरीर परिपक्व करके पुरुष पूर्व देहकी परिव्याग करता है। यह सूक्ष्म शरीर प्रत्येकाल तक

भी स्थायी रहता है। यह जन्म, अग्नि आदि किमोमें भी नष्ट नहीं होता। प्रकृतिमें यदि एटि काममें प्रत्येक पुरुषके लिये हम सूक्ष्म शरीरकी एक एक सृष्टि की थी। जब तक उसे पुरुषके मरुपका धाम नहीं होता तब तक यह शरीर पुरुषकी नहीं छोड़ता है। बुद्धितत्त्व, पञ्चकार, पञ्चमानेन्द्रिय, पञ्चकर्मेन्द्रिय, मन और पञ्चगमाय हम सबको ममटिका नाम सूक्ष्म शरीर है। यह सूक्ष्म शरीर धर्म और अधर्म, ज्ञान और अज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्यगुण रहता है। यह सूक्ष्म शरीर भूत शरीरके साथ पाटकोमिक शरीरमें आश्रय ले कर बार बार जन्मपदव्य करता है और मृत्यु सुषुप्ति पतित होता है। अभी भूतशरीर पञ्चमहाभूतोंमें लीन होते हैं और पाटकोमिक शरीर पूर्वोक्त रसान्तादि रूपमें परिपक्व होता है। किन्तु यह सूक्ष्म शरीर किमी रूपमें परिपक्व नहीं होता। नाय्यरूप रंगभूतिमें जिस प्रकार गट कमो तो रास और कमो रासकला रूप धारण कर अभिव्य करता है, उसी प्रकार यह सूक्ष्म शरीर भी अपने अपने पट्टागुसार कमो देयता, अभी यद्यु और अभी बनस्पति आदि रूपोंमें परिपक्व होता है। किन्तु सूक्ष्म शरीरका ही पुनः पुनः त्याग और प्रवच दुःख करता है। किन्तु जब तक महाप्रलय न होगा या प्रकृति पुरुषका साक्षात्कार न होगा तब तक यह सूक्ष्म शरीर मोक्षदरुणा। इसका ध्वंस वा परिवर्तन कुछ भी नहीं होगा। परिवर्तन इसी पाटकोमिक शरीरमें हुआ करता है, भूत शरीरमें कुछ भी नहीं होता। यह महाभूतोंमें निविष्ट हो कर रहता है और इष्टे लिङ्ग भी कह सकते हैं। क्योंकि ये समय या कर सब प्राप्त होती हैं। जब प्रकृतिपुरुषका विवेक साक्षात्कार होता है, तब सूक्ष्म शरीर प्रकृतिमें पञ्चगमाय और एकादश इन्द्रिय पञ्चहातत्त्वमें पञ्चहात मरुत्तत्त्वमें और मरुत्तत्त्व प्रकृतिमें लीन हो जाता है, उस समय सूक्ष्म शरीर यदि कुछ भी नहीं रहता।

अष्टबुद्धि नास्तिकोंका कहना है, कि देहके अनितरित और कोई प्रत्यक्ष प्राणा नहीं है। जिस तरह चूना और रोरके मिसनेसे क्षमायतः रक्तवर्षका संसार होता है उसी तरह पञ्चभूतोंको समाममरूप देहके गठित होनेसे

अपने जीवनको कभी भी खिण्ड विविधरूपमें देख नहीं सकते थे। धर्म साहित्य और राजनीतिका आपके हृदयमें खूब समावेश था।

बङ्गालके साहित्यिक समाजने आपको प्रतिभाका परिचय पा कर भागलपुर, ढाका और मुम्बईगञ्जमें आपको बङ्गोय साहित्य सम्मेलनका विभिन्न सभापति बनाया था। जब कभी आपको कुछ अवसर मिल जाता था, तब आप साहित्यकी चर्चा करके आनन्द लाभ करते थे। यहाँ तक कि दार्जिलिङ्गमें रह्युके दो दिन पहले भी आपने कविताकी रचना करके उसे अपनी स्त्री और कन्याको सुनाया था।

राजनीतिक जीवन—१८०५ ई०में बङ्गविभाग होनेके बाद देशकी राजनीति धर्म नोति हो चली। दादा भाई श्रीजीने १८०६ ई०की कलकत्ता-कांग्रेसमें जातीय पक्षकी ओरसे स्वायत्तशासनकी इच्छा प्रकट की। १८०६ ई०के पूर्व पर्यन्त कांग्रेसकी रीतिनोति सुदृढ़ भर-सम्पादकी ही रही थी। देशके जनसाधारणके साथ इसका सतना सम्पर्क नहीं था। १८०५ ई०की ६ठी जुलाईकी हटिङ्ग-रिजल्ट-एग्रीसीमेंशन-रिजल्टमें कांग्रेसकमिटीको, जो अधिवेशन हुआ उसमें हटिङ्ग कांग्रेस-कमिटी गठन और अध्ययन समितिगठन से कर नवीन दल और प्राचीन दलमें विवाद उपस्थित हुआ। नवीन दलके मुखिया थे चित्तरंजन, श्यामसुन्दर, विपिनचन्द्र, हेमिन्द्र, प्रसाद आदि और प्राचीन दलके सुरेन्द्रनाथ, भूपेन्द्रनाथ आदि। ११वीं जुलाईकी इसका फैसला हुआ, नवीन दलकी ही जीत हुई। यही भारतवर्षमें गणतन्त्र-प्रतिष्ठानका प्रथम सुदृढाव था।

१८०५ ई०से ही चित्तरंजन बङ्गालके नवीन पक्षो जातीय दलके नेता हुए थे। १८१० ई०के कलकत्तामें जो कांग्रेस हुई उसके नेता कोन हीम यह से कर विवाद खड़ा हुआ। चित्तरंजनके दलने एनी बेसेण्टकी ओर प्राचीन दलने महासूदावादके राजाकी सभापति बनाना चाहा, पक्षमें चित्तरंजनके दलकी ही विजयपताका लड़ी। एनी बेसेण्ट ही कांग्रेसकी सभापति निर्वाचित हुई। इसी समयसे गरम और गरम दल चलन चलन हो गया।

१८१० ई०के सितम्बर मासमें कलकत्तामें कांग्रेसका

एक विशेष अधिवेशन हुआ। उस कांग्रेसमें खरोन्ग-लाम, पञ्चाव-हत्याकाण्डका प्रतीकार, खिलाफतके अन्याय व्यवहारका संग्रोधन से कर तोत्र आलोचना हुई। महात्मागान्धेने इस कांग्रेसमें प्रसहयोग नीतिका प्रचार किया। स्वयं कांग्रेसके सभापति लाला लाजपत राय, चित्तरंजन, विपिनचन्द्रपाल आदि सम्मानान्तेन इसका प्रतिवाद किया। किन्तु वोटसे महात्माजीका प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

इसके अनन्तर उसी सालके दिसम्बर मासमें नागपुरमें कांग्रेस बैठी। इस कांग्रेसमें सारा बङ्गाल महात्माके प्रसहयोग प्रस्तावके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ, इसका शूब आन्दोलन चला। गजब था, चित्तरंजनने बङ्गालसे २०० 'गोण्डा' वोलण्टीयरोंको किराये पर मंगाया और प्रसहयोगप्रस्तावकी निन्तुल करनेकी एक भी कसर छोड़ा न रखी। बिजयराघवाचार्य भी महात्माकी विरुद्ध उठ खड़े हुए। माटिया और गुजरातीके साथ हत्याकांडों तक भी चल गई थी। किन्तु भगवान्को इच्छाकी कौन रोक सकता? कांग्रेसमें महात्माका प्रसहयोग-आन्दोलन सर्वसम्मतिसे पास हुआ और सबसे आखिरका विषय यह था कि स्वयं चित्तरंजनने भी प्रसहयोगकी नीतिका परिहास कर प्रसहयोगनैतिकी ग्रहण किया। सुनते हैं, कि महात्माने चित्तरंजनको प्रसहयोगकी प्रयोजनोपता पर बहुत देर तक समझाया था। फिर क्या था, चित्तरंजन जब जिसकी सत्य समझ लेते थे, तब वे उसके लिए अपना सर्वस्व निष्ठावर करनेकी तैयार हो जाते थे। प्रसहयोगनैतिकी सत्यता जब उनकी समझमें अच्छी तरह आ गई तब आप देशमाताको सेवाके लिए बैरिटरी छोड़ फकीर हो गए। आप देशीयताके लिये सन्ध्याशोक वेगमें तनम घूमने लगे।

१८२१ ई०की ११वीं नवम्बरको भारतसरकारके सम्मुखसे प्रिन्स-प्राव-वेलेस भारतवर्षमें पधारें। उस दिन सारे हिन्दुस्तानमें हड़तालको घोषणा कर दी गई। चित्तरंजनने भी इस हड़तालका जो खौन कर समर्थन किया। भण्डके मुख्य सेवासिधक घूमने लगे, सारे भारतवर्षमें हड़ताल मनायी गई। इस पर भारतसरकार पागवबूला हो गई और बङ्गाल गवर्नरने चित्तरंजनके लिये सेह

ही भौतिक स्वभाव वशतः चैतन्यका प्रकाश दुष्प्रा करता है। उनका मत है, कि जब तक सूक्ष्मदेहका विकास है तभी आत्माका विकास रहेगा, देहके विनष्ट होनेसे ही आत्मा नष्ट हो जायेगी। जीवात्मा देखो। देहके छः प्रकार हैं—जन्म, अस्तित्व, वृद्धि, परिणाम, अपवय और विनाश। किन्तु जो आत्मा है वह यह भाव विकाररहित है।

पट्ट देह और इन्द्रियके साथ जो सम्बन्ध होता है उसीका नाम जन्म है। उत्पत्तिकालसे ले कर मरणकाल तक जो सामयिक विद्यमानता है वह उसका अस्तित्व है। देह की वृद्धि प्राप्त होती है, परिणत होती है, क्षोभ होती है और अन्तमें विनष्ट होती है। ये चार भाव विकास देहमें ही देखे जाते हैं। इस सूक्ष्मदेह या शरीरको अन्तमय कोष, सूक्ष्मदेह प्राणमय कोष और कारणदेह मनोमय कोष जानना चाहिये। वेदान्तदर्शनके मतानुसार त्रिष्टवृक्षत अर्थात् पञ्चोक्त भूत ही देहका उत्पादक है। देह द्वात्मक है अर्थात् भूतद्वयका परिणाम है, क्योंकि देहमें तैज, जल और पृथ्वी इन तीनोंके ही काम देखे जाते हैं। द्वात्मकताका अन्य निदर्शन त्रिधातु अर्थात् वायु, पित्त और श्लेष्मा है। इनही तीनोंके देह जलकी बुद्धि है। अतः विना भूतान्तरके योगसे केवल जलसे देह नहीं हो सकती। यदि देह केवल जलज होती, तो दूधमें मायव्य और तैजस कार्य नहीं रहता। इत्यादि कारणोंसे जाना जाता है, कि त्रिष्टवृक्षत अर्थात् पञ्चोक्त भूत ही देहका उत्पादक है। शरीर देखो। २ ज्योतिषोक्त लम्ब, ज्योतिर्दले एक लम्बका नाम। (पु०) ३ दिह भाष घञ्। ३ श्लेखन्। ४ शरीरका कोई अङ्ग। ५ जीवन्, जिह्मो। ६ विग्रह, मूर्ति, चित्र।

देह (फा० पु०) ग्राम, गाँव, खेड़ा, मीजा।

देहकच (स० त्रि०) देह करोति कच-छ। १ देहकारक धृवा प्रभृति भूत समुदाय। २ ईश्वर। ३ सूर्य।

देहकान (फा० पु०) १ क्षपक, किसान। २ गवार।

देहकानी (फा० वि०) ग्रामीण, गँवार।

देहकृत् (स० त्रि०) देह करोति कृ-किप्। १ देहकारक धृतिव्यादि भूत। २ परमेश्वर।

देहकोष (स० पु०) देहस्य कोष इव आवरणत्वात्। १ देहावरण, पचियोंके डेने। २ त्वक्, धमड़ा।

देहचय (स० पु०) देहस्य चयो यस्मात्। १ रोग। रोग होनेसे शरीर चय हो जाता है, इसीसे रोगका नाम देहचय पड़ा है। देहस्य चयः इ-तत्। २ देहका नाश। देहज (स० पु०) देहाज्जायते घञ-ङ। १ तनुज, पुत्र, बेटा। (स्त्री०) २ पुत्रो, सङ्को, बेटो। (त्रि०) ३ देहजातभाव, जो शरीरसे उत्पन्न हो।

देहत्याग (स० पु०) देहस्य त्यागः इ-तत्। प्राणनाश, मृत्यु। मनुने नि-। है, कि पुरस्कारको प्रत्यागा न करके जो गो, ब्राह्मण, स्त्री और बालक इनमेंसे किसी एकको विपद्से बचानेमें अपना प्राण दे दे वह यदि नोचवे नीच जातिका भी क्यों न हो तो भी सिद्धिमान कर सकता है।

देहद (स० पु०) देह दायति दायति, देह देहप्रति ददाति रसायनेन वा दै शोधने दा-दाने वा क। १ पारद, पारा। यह धातु देहका परिपोषण करता तथा इसे मजबूत बनाये रखतो है। २ देहदाता।

देहदुर्गन्धता (स० स्त्री०) देहस्य दुर्गन्धता इ-तत्। १ शरीरको दुर्गन्ध, शरीरको बुरो महक। २ शरीरदुर्गन्धनाशक औषध, एक प्रकारको दवा जिससे शरीरकी दुर्गन्ध जाती रहती है।

देहधारक (स० स्त्री०) देह धारयति धारि-गुन्। (भुल. छवी। पा १। १। १३१३३) १ अस्थि, हड्डी, हाड। २ आहार, भोजन। (त्रि०) ३ देहधारी, शरीरको धारण करनेवाला। देहधारण (स० स्त्री०) देहस्य धारण इ-तत्। प्राणधारण, शरीररक्षा।

देहधारी (स० त्रि०) देह धारयति धारि-णिनि। शरीर, शरीरको धारण करनेवाला।

देहधि (स० पु०) देहो धीयतेऽस्मिन् देहधा आधारि दि। देहाधार, पचियोंका पंख।

देहधृज (स० पु०) देह धर्जति सधरति धृज-किर्। वायु, हवा।

देहधर्माति (स० स्त्री०) देहस्य धर्मातिः। देहोत्पत्ति। रस, रक्त, मांस, मूत्र, पथि, मज्जा और शुक्रादि धातु ही जो उत्पत्ति होते हैं, उसे देहधर्माति कहते हैं।

देहपात (स० पु०) मृत्यु, मोत।

दुआने घोर वानगिटार होनेको घोषणाको गैरकानून वतनाया। देवबासियों में गवर्नरने इस मन्त्रशक्ती सेच्छात्ममुक्त तथा अन्योन्य ममता। प्रादेशिक कांग्रेस-कमिटीको एक सभाने कांग्रेस और खिलाफत-कमिटीको सनाइ लें ऊर दे। वस्तु पर कांग्रेसका सभो भार सौंप दिया।

२री दिसम्बरको प्रापने 'हम लोगोंके देवबासियों प्रति' शीर्षकसे एक लेख छपवा कर १० लाख वानगिटारोंकी बुलाया था। ३वीं दिसम्बरको अन्योन्य पुरुष वानगिटारोंके साथ आपकी पत्नी वस्तो देवो, बहन तथा एक और महिला पुलिसको गिरफ्तार करनेका सुपसमर दे स्वेच्छासेयक रूपमें बाहर निकलीं। सरकारने उन्हें इस कामसे रोकनेकी यष्टि कोशिश की, लेकिन कुछ भी फल न निकला। आप्रिकी पुलिस उस गिरफ्तार करनेकी बाध हुई। वे सब प्रेसिडेन्सी जेलमें रखे गये, लेकिन उसी रातको सरकारके आदेशसे छोड़ दिए गये। इसी दिनसे स्वेच्छा-सेयक दल बांध कर घूमने लगे और एक एक कर सब पकड़े गये तथा जेलमें ठूस दिये गये। १० दिसम्बरको शनिवारके दिनके साढ़े चार बजे चित्तरञ्जन भी गिरफ्तार हुए। इसी दिन श्रीमान् वारेन्डनाथ श्याम-सक, मोलाना अबदुल कलाम खाजाद, मोलाना चसरफ खां आदि नेता भी गिरफ्तार किये गए। गिरफ्तारके समय चित्तरञ्जनके पारिवारिकोंने आपसे पूछा था, क्या आपने खानेके लिए भोजन घरसे लायागा ? इस पर आपने गम्भीर भावमें जवाब दिया था, नहीं। उसका कोई लक्ष्य नहीं। साधारण जेल कैदोका भोजन ही मेरे लिए यष्टि होगी। एक पंथक चावल चनेसे ही काम चल जायगा।

गिरफ्तार होनेके पहले चित्तरञ्जन अमदावाद-कांग्रेसके सभापति निर्वाचित हुए थे। किन्तु कारावह हो जानेके कारण आप सभापति हो न सके, इसीम भज-मलखों सनकी जगह पर सभापति हुए। सब आप कारा-गारमें थे, तब पण्डित सदनमोहन मालवीये कचकसे पा कर सरकारके साथ देशकी राजनीतिक व्यवस्थाके निपटने एक अधिवेशन करनेकी चेष्टा की। देवबन्धु

इस प्रस्तावमें सहमत हो गये थे। किन्तु महात्मा गांधी-ने १८ दिसम्बरको तार द्वारा यह सूचना दी कि वे इस प्रस्तावमें शामिल नहीं हो सकते। अमदावाद-कांग्रेस-को बैठक होनेसे पहले ही देवबन्धुदासने महात्मा गांधी-के पास एक लेख भेजा था जिसे उन्होंने 'यंग-इण्डियामें छपवा दिया था। उस लेखमें आपने अपनेको अखण्डयोग-बान्धोन्नतका कंठर पक्षपाती वतनाया था और यह भी कहा था, कि क्या कारण है कि भारतवासी इस आन्दोलनके द्वारा किसी प्रकारका लाभ उठा नहीं सकते। उस लेखमें यह भी था कि जब तक इस देशवासीकी स्वायत्त नहीं मिलेगा, तब तक वे अहिंसा बान्धोन्नतकी छिड़ नहीं सकते। जेलसे छूटनेके बाद बहवासियोंने एक स्वरसे चित्तरञ्जनको पबिस वादित नेता खोकार दिया था। देशके कल्याणके लिये आपने जो बसाधारण स्वाध्याय किया था, देवबासियोंने उनके प्रति सम्मान दिखानेके लिए गया-कांग्रेसमें उन्हें सभापति बनाया। इसके पहले सपुं पर तीन कांग्रेसके अधिवेशनोंमें कौन्सिल-हकि-कारका प्रस्ताव पास हो चुका था। देवबन्धुदासने गया-कांग्रेसमें उस प्रस्तावका खण्डन किया और कौन्सिल-प्रवेश करनेका जोरदार भाषण दिया। किन्तु आपका प्रस्ताव सब समितिसे पास न हुआ। इस समय आपने स्वराज्य-दल-गठनकी ओर ध्यान दिया। दासियालके नामा स्थानोंमें घूम घूम कर आपने अपना मत प्रचार किया। देशके अधिकांश लोगोंने आपका मत खोकार कर लिया। इसके बाद दिवो कांग्रेसके विरोध अधिवेशनमें आपका जो चेष्टासे कौन्सिल-प्रवेश सद्गुणतोसे पास हुआ। मोलवा अबुल कलाम खाजाद उस सभाके सभापति थे।

इसके बाद कोकनद कांग्रेसमें जो अधिवेशन हुआ, उसमें भी कौन्सिल-प्रवेशका प्रस्ताव खोकात हुआ। फलस्वरूप स्वराज्यदलने कौन्सिलमें प्रवेश किया। देव-बन्धुने राष्ट्रीय व्यवस्थापक सभामें भी प्रवेश किया था। मध्यप्रदेश और बङ्गाल देशमें स्वराज्यदल सचमुच हैत-यासमका महार करनेमें समर्थ हुआ। चित्तरञ्जनकी यह सफलता भारतके राजनीतिक इतिहासमें अद्वैत-विशेष सञ्जस चरित्रों में मिली रहने

देहरादून (मं० सि०) देह' मज्जते भवन्ती । देहो, जीव ।
देहभुज (मं० सि०) देह' भुज्जते कर्मफलानि भुज-
जित् । देहरादूनमनो जीव । देह' भुज्जते भोजयति
कर्मफलानि भुज्जित् । २ सूय ।

देहभूत (मं० पु०) देह' विभक्तिं राक्षसानुसारं भु-
ज्जित् । राक्षसमय । १ जीव, अपने अपने कर्मांनुसार देहाधिष्ठाता
कर्मात्माजीव । २ विवेकशालाग्राह्य धर्मियायुक्त जस-
त्वाभिमानो जीव । भि देवता हं, भि मनुष्य हं, भि
प्राण्य हं, भि इत्येव हं इत्यादि धर्मिमानयुक्त जीवको
देहभूत कहते हैं । यह जीव तोम प्रकारका है । जो
रागादि दोषकी प्रवृत्तता यम काय्य निषिद्ध प्रवृत्ति यथेष्ट
कर्मका आचरण करने, ये प्रवृत्त यथेष्ट हैं । फिर जो पूर्ण
शमकी वृत्ति यमरागादि दोष चीन होने पर निषिद्ध
घोर काय्य कर्मका परित्याग करके नित्य घोर नैमित्तिक
कर्मफलानिभिराश्रित हो कर कार्यानुष्ठान करने, इस
तरहके गोच संन्यासो द्वितीय यथेष्ट हैं । पुनः
जिनके नित्य नैमित्तिक कर्मांनुष्ठान करके चित्तकी
मनिकता दूर हुई है घोर जो मम कामोंकी विधिपूर्वक
परित्याग कर प्रज्ञानिष्ठ शुद्धका अनुसरण करते हैं, वे
तृतीय यथेष्ट हैं ।

देहधर (मं० सि०) देह' विभक्तिं भु-वा० जप-मुमु च ।
देहोपेक, अपने ही शरीरका पोषण करनेवाला ।

देहायात्रा (मं० सो०) देहस्य यात्रा लोकान्तरगमनं । १
यमपुरीगमन, मृत्यु, मोक्ष । देहाय देहरचनाय वा यात्रा
उपमादिः । २ भोजन । ३ भरण पोषण ।

देहर (हि० सो०) नदीके किनारेकी भोधी भूमि ।

देहरा (मं० पु०) देहमन्दिर, देवालय ।

देहरादून—१ सुवर्णदेवकी मोरट विभागका एक जिला ।
यह पत्ता २८°५०' से २९°३०' और देशा० ७०°३५' से
७०°१०' पू० में अवस्थित है । भूपरिमाण १२०८ वर्ग मील
है । इसमें उत्तर-पूर्वमें टेहरी राज्य, दक्षिण-पूर्वमें गढ़-
वाल जिला, उत्तरपश्चिममें सिरमौर, रबौल, तरोश और
पञ्जाबका जम्मूखुर राज्य तथा दक्षिण-पश्चिममें साहरान-
पुर जिला है । हिमालय और मिथिलािक पहाड़के रहनेके
कारण जिलेका अधिकांश ठाण्डा है । यमुना और गढ़ा
यहां बहुत बड़ेमें बहती हैं, वहीमें इसका किनारा बहुत
गहरा हो गया है ।

यहांके मिथिलािक पहाड़ पर धान लहरी बहुत
मिलती है । जंगलमें बाघ, चीता, भालू, हरिण और
तरु तरुके बन्दर पाये जाते हैं । प्रिये भरमें तापिक
हटियात ८२ दण होता है ।

इतिहास । देहरादून महादेवका भावान-स्थान
केदारगुप्तका एक पंग है । रामचन्द्र-जन्मि पापका
प्रायश्चित्त करनेके लिये राम और सप्तपत्नी यहां पा कर
पूजन पादि किये थे । महाप्रस्थान जाने समय पाण्डव
योग भी यहां पाये थे । नागपंगोय नागमने नागागण
पर्यंत पर कुछ खान तक राज्य किया । हरिपुरके निज-
टस्य विख्यात कालको मिलाके जयर पंगोकेकी एक
निधि छत्तोप' है, जिसमें जाना जाता है कि यही
देहरादून एक समय भारत घोर चीन साम्राज्यका
सीमा निर्देशक था । गुप्त-शुभंगजय भारतवर्षमें पाये
थे, तब उन्होंने यहां कोई नगर हो नहीं देया । कहते
हैं, कि श्वारहवीं शताब्दीमें जब बखाराका एक दल
इस राह हो कर जा रहा था, तब इस स्थानकी सीमा
से मुग्न हो उन्होंने इस वसतिग्राह्य तथा लोकसमागम-
ग्राह्य स्थानमें अपना चिर वासग्राह्य निश्चित किया ।
सत्रहवीं शताब्दीके पहलेका इसका कोई यथार्थ इति-
हास नहीं पाया जाता है । उस समय देहरादून गढ़-
वाल राज्यके अधीन था । सिवगुह रामराय पञ्जाबमें
भगाये जाने पर मन्दाट, पोरकूजेवसे प्रयागवाट लेकर
गढ़वाल राजाके यहां गये । रामराय देखो । राजा
फतेहाने रामरायको गुरुद्वारमें एक मन्दिर बनवा दिया
घोर उनके रहनेके लिये कुछ सम्पत्ति भी दे दी । फतेहा-
के मरने पर उनके भाषानिग पोद मताप मा १६८८
ई० में मिर्जासम पर बैठे । राज्यकी हडि देन कर साह-
रानपुरके शासनकर्त्ता नाजीब-उद्दौलाने राजद्वार अपना
निधा । उनके समयमें गुरुद्वार घोर भी बड़ चढ़ गया ।
नाजीबके मरने पर देहरादूनको पदस्था बहुत मोघमोय
हो गई । मोमानके जातिमनुष्यके क्लामात पाकमन्धने
देशकी दया घोर भी मिर गई । इसी साल १८०६ ई० में
गोरखाजालिने देहरादून पर पाकमन्ध किया । राजा
पर्यमान मा ओनमरने दून घोर फिर बहागे साहजन-
पुरकी भाग गये । गोरखा लोगोंने देहरादून पकसी



देवावन्धु चित्तरत्न दाश

महात्मा गांधीने चहमदाबाद निखिल भारतवर्षीय काँग्रेस-कमिटीमें कौन्सिल-प्रवेशका प्रस्ताव समर्पण किया। गांधी और देवकी मिलनेका फल यह हुआ कि खाज्यदलको ही कौन्सिलमें कार्यसका कार्य परिचालित करनेका भार सौंपा गया। स्वराज्यदल और स्वतन्त्र-दलने मिल कर कई बार सरकारको पराम्श किया। बंगालके मन्त्रीको बेटन देनेका जो प्रस्ताव पेश किया गया था, वह दो बार बर्पाश हुआ। मध्यप्रदेशमें देशवासन बचल ही गया।

इन सब परिश्रमोंसे विस्तरञ्जनादासका स्वातंत्र्य सिद्ध गया। इस पत्रस्थानमें भी आपका ध्यान अणुकाल-के लिए भी देश सेवाकी ओरसे विचलित न हुआ था। जब पत्रनेमें आप स्वास्थ्य लाभके लिए गये, तब वहां आप कुछ अच्छे हो गए थे। इसी वीथ सरकारने चार्डिनास ज़ारो कर घर पकड़ भारभ कर दी ओर सब स्वेच्छाचारमूलक चार्डिनासकी प्राइमें मानके लिए एक पाण्डुलिपि ब्रह्मोय व्यवस्थापक मनामें देग की। अब देगबन्धु पत्रनेमें स्थिर रहने लगे। 'सभी

तरह जीत लिया। उनके शासनकालमें गुलामी प्रथा थारभ हुई जिससे दैयको - दगा पहलेसे भी अधिक ग़ोवनीय हो गई।

गोरखा लोगोंके व्यवहारसे उकता कर १८१४ ई०में पंगरेज गवर्मेण्टने उनके विरुद्ध लड़ाई थान दी और देहरादून सहज दोमें अधिकार कर लिया। कर्मयः विधेय क्षतिप्रप्त होने पर भी पंगरेज गवर्मेण्टने कालिगद्गुगं हस्तगत किया। १८१५ ई०को देहरादूनमें पूर्ण रूपसे पंगरेजोंका शासन शुरू हुआ।

इन जिलेमें ६ शहर और ४१६ ग्राम लगते हैं। लोक-संख्या प्रायः १७८१८५ है। जिनमेंसे सैकड़ें ८२ हिन्दू, १४ सुसलमान और शेषमें अन्यान्य जाति हैं। यहांको प्रधान उपज धान, तिल, गेहूं, जौ, ज्वार, जून्वरो आदि है। यहांमें टिम्बर, बांस, चूना, कीचले, धान और चाय-कोरफतनी और दूसरे दूसरे देशोंमें कपड़े, कम्बल, नमक, गुड़, बनाना, तमाखू और मसालोंको धामदनो होती है। सारा जिला देहरा और चकराता इन दो तहसीलोंमें विभक्त है।

जिनके प्रधान शासनकर्त्ताको सुपरिटेण्डेंट कहते हैं। जो दो नरकारो सुपरिटेण्डेंटों द्वारा विचार कार्य करते हैं। देहरा और चकराता हर एक तहसीलमें एक एक तहसीलदार है। चकरातमें कनटोन्मेण्ट मजिस्ट्रेट भी हैं जिन्हें जजकी समता है और सामान्य सामान्य अपराधोंका विचार करते हैं। यहां १८ स्कूल, १ जेल और ११ अस्पताल हैं।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह पचा० २८° ५०' से ३०° ३२' उ० और देश० ७०° ३५' से ७८° १८' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ७२१ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १२००८४ है। यह तहसील दो परगनोंमें विभक्त है। इसमें चार शहर और ३०० ग्राम लगते हैं। यहां चायके १५ बड़े बड़े उद्यान हैं।

३ उक्त तहसीलका एक प्रधान शहर। यह पचा० २८° १८' उ० और देश० ७८° २' पू० सहस्रवृक्षसे २३०० फुट ऊंचेमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २८०८५ है जिनमेंसे १८२४६ हिन्दू, ८०४० सुसलमान, ११०० ईसाई और कुछ यूरोपीय हैं।

यह शहर १८वीं शताब्दीमें सम्प्रदायके गुरु रामरायसे स्थापित हुआ है। १६८८ ई०का बना हुआ गुरुका मन्दिर आज भी विद्यमान है जिनमें गुरुको श्रद्धा अच्छी तरह रक्षित है।

१८६० ई०में यहां म्युनिसिपलिटो स्थापित हुई है। शहरको प्राय तोस हजार रूपयेसे अधिककी है। यहां कुल १३ स्कूल हैं।

देहनचण (सं० स्त्रो०) देहस्य लचणं यत्र १ सामुद्रिक-शास्त्र। देहस्य लचणं २ शरीरके जपरका चिह्न, तिल, मसा।

देहना (सं० स्त्रो०) देहं जनि देहस्य पुष्टिं ददाति देह-ला-क टाप। मद्य, शराब।

देहलि सं० स्त्रो०) दिह-भावे जन्। देहो-लेपस्तं लाति यद्वशातोति देह-ला-वाहुलकात् को। देहली देवा।

देहलो (सं० स्त्रो०) देहलि गौरादित्वात् डीप। १ दार-पिण्डिका, दारको चोखटको वह लकड़ी जो मोचे होती है, दहलोज।

देहली—श्रीतो देहो।

देहलोदीपक (सं० पु०) १ वह दीपक जो देहलो पर रखा हुआ रहता है और भीतर बाहर दोनों ओर प्रकाश फैलाता है। २ एक भर्षालह्वार इसमें किसी एक मध्यस्थ मन्दका अर्थ दोनों ओर लगाया जाता है।

देहवन्त (हिं० वि०) १ शरीर, जिसके देह हो। (पु०) २ शरीरधारी व्यक्ति, वह जो शरीरवान् हो।

देहवत् (सं० वि०) देह-प्रत्ययं मनुष्य मस्य वः। देहाका-मिमानी लोव।

देहवान् (सं० वि०) १ शरीरधारी। (पु०) २ शरीरधारी व्यक्ति, देहो। ३ सजीव प्राणी।

देहवायु (सं० पु०) देहस्यो वायुः। देहस्थित वायु, प्राणादि वायु पांच हैं—प्राण, अपान, सनात, उदान और व्यान।

देहगढ़ (सं० पु०) प्रस्तर, साध, पत्थरका खंभा।

देहसचारिणो (सं० स्त्रो०) दुहित, कन्या, सहको।

देहमाय्य (सं० स्त्रो०) देहानां साम्यं। १ पक्षसमूहका समत्व, शरीरकी समता।

देहसार (सं० पु०) देहस्य सारः १ तत्त्व। मज्जा, धातु।

देहात (फा० स्त्रो०) ग्राम, गांव।

पत्न्य स्वप्नानि पाप कोशितानि पट्टे । बह्वीय कोशितानि जिन दिन बहुमंदाः कोटिभिः मरुतारको पराप्ताः कियं तम दिन पापने कलाया 'इमं वार निशय है, कि मेरा रोग जाता रहेगा ।'

इसके पश्चात् पाप घटस्य भवत्याने हो फरोटपुर प्रादेशिक समितिमें सभापति हो कर गए । सभामें पापने राजता दो यो कि, 'मैं चान्दमयानको रक्षा करने हुए राजारक्षि भाग भगयो गिता करनेको प्रस्तुत हूँ, ' लाड दाकि नहं छने छने इस रत्नमयारी से कर दिनायतको लाड सभामें पानोचना को यो ।

इसके पश्चात् पाप द्वाष्टानाम करनेके लिये टाजि-निष्ठ गए । घटा पापवा शरीर कमगः अच्छा होता जात था । लेकिन १८२५ ई० को १५वीं जून सोमवारको यकायक बुझार पाया और दूसरे दिन तारीख १६ जून मङ्गलवारको ग्रामको ५१० वजे देगका चिराग बुझ गया । संधेय प्रभुकारको घटा टा गई । दोन दु विधोके मझारे, भारत माताके दुसारे, मै गिकोंके प्यारे देगवन्तु-दाग इस चमारी देगनी भावकी मंभधारिं छोड़ कर चल बसे ।

देगवन्तुदागका गव १८ जून बृहस्पतिवारको स्यास-दह स्टेशन पर ७। वजे पहुँचा । उस समय जो दृश्य देखनेमें आया, वह कलकत्तेमें पहने कभी नहीं देखनेमें आया था । रातके दो बजेसे ही लोग इकट्ठे होने शुरू हो गये और मंभरे छः बजे तक कमसे कम चार लाख लोग इकट्ठे हो गये थे । कलकत्तेमें तमाम बाजार बन्द रहे । मरकतो फोत्रो भण्डे भी देगवन्तुदागके शयका मयान करनेके लिये झुका दिये गये थे । जुलूस घाट घण्टेमें शमगानघाट पर पहुँचा । कलकत्तेमें ऐसी भीड़ पाज तक न कभी देखी गई और न सुनी गई थी । हिन्दुस्तान भरमें टूकामें तथा स्त्रुज भादि बन्द रहे, शोक-मभाएँ करके सदाभूमि प्रकट की गई ।

यूरोपके एक चमाराण बुद्धिमान महापुरुषका कहना है कि, 'जय तक किसी मनुष्यके जीवनका भक्त न देख लो, तब तक उसे सुखी मत कहो ।' वस्तु देगवन्तु चित्त-रक्षमदागके जीवनः पत्नको भी देव कर हम दाविके माय पक्ष कक्ष मकते है डि वे सुखी सैनिक (Happy warrior) है ।

देगाया (मं० खो०) देगोय भाषा, यह भाषा भी किसी देग या प्रानामें हो बोली जाती है ।

देगमुपग—एक जैन कवि । ये सातिहे योगान और मं० ७१५ तक विद्यमान थे ।

देगमन्तार—स्मृत्युक्तं जातीय रागविधि । इसमें मध स्वर मकते हैं ।

देगराज (मं० पु०) चाँदा जदमने पिनाका नाम । ये राजा परमानन्द मानन्तानि थे ।

देगराजचरित (मं० को०) गणपयमयामक चम्पूभेद । साहित्यदर्पणमें इस पुस्तकका उल्लेख है ।

देगक्षय (मं० को०) दिग-कर्मणि चक्ष-देवस्य दिग्मानस्य उचितस्य रूपं । उचित, सुनातिव ।

देगसमाप्त्यवधि (मं० को०) इन्द्र यय ।

देगस्य (चं० त्रि०) देग-स्या-ड । १ देगमें परावित, देगमें रहनेकाल । (पु०) २ महाराष्ट्र ब्राह्मणोंका एक भेद ।

देगस्य नाम क्यो पड़ा इसका निर्णय करना कठिन है या तो इस देगमें उत्पन्न होनेके कारण या पूर्वतवासी ब्राह्मणोंसे समतलभूमिवासी ब्राह्मणोंको प्रयत्न प्रयत्न करनेके कारण देगस्य नाम पड़ा है ।

चममदनगर और पूना जिलेमें देगस्य ब्राह्मण दो भागोंमें विभक्त हैं—

श्रम्बेदोय और यलुवेंदोय । यहाँ यलुवेंदोयोंको दो शाखाएँ हैं, माध्यन्दिन और कायल । इनमें माध्यन्दिन शाखा ही अधिक देखी जाती है ।

नौच जातिको ये लोग कृते तक भो नहीं और न उन्हें अपने घरको चढ़ने देते ।

कोटिसे बड़े सभी भङ्ग पोते हैं । इसके सिवा और किसी प्रकारको मादक वस्तु व्यवहार नहीं करते । ये लोग बड़े ही चानसो और निकम्मे होते हैं ।

इनमेंसे कोई तो वैदिक, कोई पौराणिक और कोई ब्रह्मण्य हैं । ब्रह्मण्य लोग नाना प्रकारके काम काज किया करते हैं । लमो-दारो, महाजनो, सरकारी, पोरोहित्य भादि सभी कामोंमें इनका अधिकार है ।

श्रम्बेदोय देगस्य सुबह गाम प्राक्रिक करते हैं । यलुवेंदोय देगस्य केवल मध्य दिन या दो पहरको प्राक्रिक करते हैं, इसीसे इनका दूधरा नाम माध्यन्दिन भी है ।

ये लोग चमयवोके ब्राह्मणोंमें गिने जाते हैं । अन्यत्र ब्राह्मण इन लोगोंको अपने-आमात्मिक प्रथामे निकट है । इनमेंसे कोई तो

देहरादून (मं० वि०) देश भूतने गन्त-ली। देशी, ज्योष।
देहरादून (मं० वि०) देश भूतने कर्म कर्मानि भूत-
जित्। १ देशभित्तानो ज्योष। देश भूतने भोमयति
यम मातित्वात् भूत-जित्। २ यत्।

देहरादून (मं० पु०) देश भित्तानि गन्तमानां गन्त-जित्,
गुहागमय। १ योष, यत्ने यत्ने कर्मानुसार देशभित्ताना
कर्ममाज्योष। २ विवेकज्ञानगुण्य भविष्यायुक्त ज्ञान-
ताभित्तानो ज्योष। भेदेकता ज्ञं, भेदे मनुष्य ज्ञं, भेदे
प्राज्ञ ज्ञं, भेदे गुरु ज्ञं इत्यादि पश्चिमायुक्त जीवको
देहरादून कहते हैं। यह ज्योष तोम प्रकारका है। जो
रागादि दोषको प्रयत्नता यम काय्य निषिद्ध प्रभृति यष्ट
कर्मका पाषाण करते, वे प्रथम योषोके हैं। फिर जो पूर्व
ज्ञानको सुकृति यम रागादि दोष चीन होने पर निषिद्ध
चीन काय्य कर्मका परित्याग करके नित्य चीन नैमित्तिक
कर्म कर्माभिगन्धिरहित हो कर कार्यानुष्ठान करते, इस
तरहके गोष संन्यासो द्वितीय योषोके हैं। पुनः
जिनके नित्य नैमित्तिक कर्मानुष्ठान करके वित्तको
मनिकता दूर हुई है चीन जो मय कामोको विधिपूर्वक
परित्याग कर मन्त्रानिष्ठ शुद्धका अनुसरण करते हैं, वे
तृतीय योषोके हैं।

देहरादून (मं० वि०) देश भित्तानि गन्तमानां गन्त-जित्,
गुहागमय। १ योष, यत्ने यत्ने कर्मानुसार देशभित्ताना
कर्ममाज्योष। २ विवेकज्ञानगुण्य भविष्यायुक्त ज्ञान-
ताभित्तानो ज्योष। भेदेकता ज्ञं, भेदे मनुष्य ज्ञं, भेदे
प्राज्ञ ज्ञं, भेदे गुरु ज्ञं इत्यादि पश्चिमायुक्त जीवको
देहरादून कहते हैं। यह ज्योष तोम प्रकारका है। जो
रागादि दोषको प्रयत्नता यम काय्य निषिद्ध प्रभृति यष्ट
कर्मका पाषाण करते, वे प्रथम योषोके हैं। फिर जो पूर्व
ज्ञानको सुकृति यम रागादि दोष चीन होने पर निषिद्ध
चीन काय्य कर्मका परित्याग करके नित्य चीन नैमित्तिक
कर्म कर्माभिगन्धिरहित हो कर कार्यानुष्ठान करते, इस
तरहके गोष संन्यासो द्वितीय योषोके हैं। पुनः
जिनके नित्य नैमित्तिक कर्मानुष्ठान करके वित्तको
मनिकता दूर हुई है चीन जो मय कामोको विधिपूर्वक
परित्याग कर मन्त्रानिष्ठ शुद्धका अनुसरण करते हैं, वे
तृतीय योषोके हैं।

देहरादून (मं० वि०) देश भित्तानि गन्तमानां गन्त-जित्,
गुहागमय। १ योष, यत्ने यत्ने कर्मानुसार देशभित्ताना
कर्ममाज्योष। २ विवेकज्ञानगुण्य भविष्यायुक्त ज्ञान-
ताभित्तानो ज्योष। भेदेकता ज्ञं, भेदे मनुष्य ज्ञं, भेदे
प्राज्ञ ज्ञं, भेदे गुरु ज्ञं इत्यादि पश्चिमायुक्त जीवको
देहरादून कहते हैं। यह ज्योष तोम प्रकारका है। जो
रागादि दोषको प्रयत्नता यम काय्य निषिद्ध प्रभृति यष्ट
कर्मका पाषाण करते, वे प्रथम योषोके हैं। फिर जो पूर्व
ज्ञानको सुकृति यम रागादि दोष चीन होने पर निषिद्ध
चीन काय्य कर्मका परित्याग करके नित्य चीन नैमित्तिक
कर्म कर्माभिगन्धिरहित हो कर कार्यानुष्ठान करते, इस
तरहके गोष संन्यासो द्वितीय योषोके हैं। पुनः
जिनके नित्य नैमित्तिक कर्मानुष्ठान करके वित्तको
मनिकता दूर हुई है चीन जो मय कामोको विधिपूर्वक
परित्याग कर मन्त्रानिष्ठ शुद्धका अनुसरण करते हैं, वे
तृतीय योषोके हैं।

देहरादून (मं० वि०) देश भित्तानि गन्तमानां गन्त-जित्,
गुहागमय। १ योष, यत्ने यत्ने कर्मानुसार देशभित्ताना
कर्ममाज्योष। २ विवेकज्ञानगुण्य भविष्यायुक्त ज्ञान-
ताभित्तानो ज्योष। भेदेकता ज्ञं, भेदे मनुष्य ज्ञं, भेदे
प्राज्ञ ज्ञं, भेदे गुरु ज्ञं इत्यादि पश्चिमायुक्त जीवको
देहरादून कहते हैं। यह ज्योष तोम प्रकारका है। जो
रागादि दोषको प्रयत्नता यम काय्य निषिद्ध प्रभृति यष्ट
कर्मका पाषाण करते, वे प्रथम योषोके हैं। फिर जो पूर्व
ज्ञानको सुकृति यम रागादि दोष चीन होने पर निषिद्ध
चीन काय्य कर्मका परित्याग करके नित्य चीन नैमित्तिक
कर्म कर्माभिगन्धिरहित हो कर कार्यानुष्ठान करते, इस
तरहके गोष संन्यासो द्वितीय योषोके हैं। पुनः
जिनके नित्य नैमित्तिक कर्मानुष्ठान करके वित्तको
मनिकता दूर हुई है चीन जो मय कामोको विधिपूर्वक
परित्याग कर मन्त्रानिष्ठ शुद्धका अनुसरण करते हैं, वे
तृतीय योषोके हैं।

देहरादून—१ गुह्यमदेयके मोरट विभागका एक जिला।
यह पचास २८'५०" में ११'२०" उ० चीर देगा ००'१५" में
८८'१८" पू० में अवस्थित है। मृपरिमाण १२०८ वर्गमील
है। इसके उत्तर-पूर्वमें टेहरी राज्य, दक्षिण-पूर्वमें गढ़-
वाल जिला, उत्तरपश्चिममें मिरमूर, रबैन, तरीच चीर
पञ्चायतका जन्मपुर राज्य तथा दक्षिण-पश्चिममें माहलान-
पुर जिला है। हिमालय चीर निवासिक पहाड़के रङ्गनेके
प्रायः जिनका अधिकांश जाल्पा है। यमुना चीर गङ्गा
यहो यद्गत वेगमें बहती है, इसीमें इसका किनारा बहुत
महरा हो गया है।

यहांके सिर्वाजिक पहाड़ पर मान लकड़ो बहुत
मिलती है। जमने बाघ, चीता, भालू, हरिण चीर
तरह तरहके बन्दर पाये जाते हैं। जिनमें भरमें वार्षिक
हटियात ८१ लाख होता है।

इतिहास। देहरादून महादेवका पायास स्थान
देहरादूनका एक पर्वत है। रायचरण-जित पायका
प्रायचित्त करनेके लिये रात चीर सम्पत्ति यहां पा कर
पूजन पादि किये थे। महाप्रस्थान जाते समय पायच
भोग भी यहां पाये थे। नानयंत्रोपवासमें नागप्राय
पर्यंत पर कुछ काल तक राय्य किया। हरिपुरके निक-
टस्थ विष्णुवात कालको मिलाके ऊपर चमोदकी एक
निधि छनोष है, जिसमें जाना जाता है कि यही
देहरादून एक समय भारत चीर चीन साम्राज्यका
सीमा निर्देशक था। गुप्त युवग जब भारतपर्यंत पाये
थे, तब छनोषे यहां कोई नगर ही नहीं देया। कहते
हैं, कि ग्यारहवीं शताब्दीमें जब बङ्गालका एक राजा
इस राह हो कर जा रहा था, तब इस स्थानको सीमा
में गुप्त हो छनोषे में इस वसतिगुण्य तथा लोकसमागम-
गुण्य स्थानमें अपना चिर वासस्थान निश्चित किया।
सत्रहवीं शताब्दीके पक्षेका इसका कोई यद्यप्य इति-
हास नहीं पाया जाता है। उस समय देहरादून गढ़-
वाल राज्यके अधीन था। सिंगुद रामराय पञ्चायते
भगये जाने पर मन्नाट, चीरहजेबने प्रमंसायत लेकर
गढ़वाल राजाके यहां गये। रामराय देको। राजा
कतेगाने रामरायको गुह्यदारमें एक मन्दिर बनवा दिया
चीर उनके खर्चके लिये कुछ सम्पत्ति भी दे दी। कतेगा-
के मरने पर उनके भागानि पोत प्रताप शा १६८८
ई० में मिर्जापुर पर बैठे। राज्यको छवि देव कर माह-
रामपुरके शासनकर्ता नासीब-छट्टोमाने राजद्वार परगना
निया। उनके समयमें गुह्यदार चीर भी बहुत बढ़ गया।
नासीबके मरने पर देहरादूनको चमस्या बहुत मोचमोच
हो गई। सोमानाके जातिममूहके कर्मागत पाकमयमें
देगको टगा चीर भी गिर गई। इनो साल १८०१ ई० में
गोरखाजातिने देहरादून पर पाकमय किया। राश
पर्यंत साल शा योगमरमें दून चीर फिर मराने माहलान-
पुरको भाग गये। गोरखा लोगोंने देहरादून पकको

रह जीत-लिया। उनके गामन-कालमें गुलामी प्रथा
राम्रुद्ध जिसमें देयको - दगा-पहलेसे भी अधिक
चनीय हो गई।

गोरखा लोगों के व्यवहारसे उकता कर १८१४ ई०में
गैरज गवर्मेण्टने उनके विरुद्ध लड़ाई ठान दी और
हरादून महज दोमें अधिकार कर लिया। क्रमशः
वैधाय चर्चाप्रदा होने पर भी गैरज गवर्मेण्टने
अलिङ्गादुर्ग हस्तगत किया। १८१५ ई०को देहरादूनमें
एक रूपसे गैरजों का शासन शुरू हुआ।

इस जिलेमें ६ शहर और ४१६ ग्राम लगते हैं। लोक-
संख्या प्रायः १०८८५ है। जिनमेंसे सैकड़ ८३ हिन्दू,
४ मुसलमान और शेषमें अन्यान्य जाति है। यहांको
धान उपज धान, तिल, गेहूं, जौ, ज्वार, लुहरो आदि
हैं। यहांसे टिब्बर, बाँस, चूना, कोयले, धान और चाय-
तोकरफ तनी और दूसरे दुमरे देशोंसे कपड़े, कम्बल,
अमक, गुड़, भनाज, तमाखू और मसालोंको आमदनो
होती है। सारा जिला देहरा और चकराता इन दो
तहसीलोंमें विभक्त है।

जिलेके प्रधान शासनकर्त्ताको सुपरिण्डेण्ट कहते हैं।
जो दो नरकारो सुपरिण्डेण्टों द्वारा विचार कार्य
करते हैं। देहरा और चकराता हर एक तहसीलमें एक
एक तहसीलदार है। चकरातमें कनटोन्सिड मजिस्ट्रेट
होते हैं जिन्हें जजकी समता है और सामान्य मामान्य
अपराधोंका विचार करते हैं। यहां ३८ स्कूल, १ जील
और ११ पचताल हैं।

२ तहसिलकी एक तहसील। यह पचा० १८
५०से ३० ३२' ७" और देगा० ७० ३५'से ७८ १८'
पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ७३१ वर्गमील और
लोकसंख्या प्रायः १२००८४ है। यह तहसील दो पर
गनोंमें विभक्त है। इसमें चार शहर और ३०० ग्राम
लगते हैं। यहां चायके १५ बड़े बड़े उद्यान हैं।

३ तहसिलका एक प्रधान शहर। यह पचा०
३० १८' ७" और देगा० ७८ २' पू० समुद्रस्तरसे
२३०० फुट ऊँचेमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः
२८०८५ है जिनमेंसे १८२४१ हिन्दू, ८०४० मुसलमान,
११० ईसाई और कुछ यूरोपीय हैं।

यह शहर १८वीं शताब्दीमें सम्प्रदायके गुरु रामरायसे
स्थापित हुआ है। १६८८ ई०का बना हुआ शुकका
मन्दिर आज भी विद्यमान है जिसमें शुकको शय्या अच्छी
तरह रक्षित है।

१८६० ई०में यहाँ म्यूनिमपलिटो स्थापित हुई है।
शहरको प्राय तोष हजार रूपयेमें अधिककी है। यहां
कुल १२ स्कूल हैं।

देहसन्धन (सं० स्त्रो०) देहस्य सन्धनं यत्न। १ सामुद्रिक-
शास्त्र। देहस्य सन्धनं। २ शरीरके ऊपरका चिह्न, तिन,
मसा।

देहना (सं० स्त्रो०) देहं लानि देहस्य पुष्टिं ददाति देह-
नाक टाय। मय, भराव।

देहलि (सं० स्त्रो०) दिह-भावे घञ्। देहो-लेपनां लानि
गृह्णातीति देह-ला-बाहुलकात् को। देहकी देहो।

देहलो (सं० स्त्रो०) देहलि गोरादित्वात् ङीप्। १ हार-
पिण्डिका, हारको चोखटकी वह मकड़ी जो गोचे होती
है, देहलोज।

देहलो—देहो देखो।

देहलोदीपक (सं० पु०) १ वह दीपक जो देहलो पर रखा
हुमा रहता है और भीतर बाहर दोनों ओर प्रकाश
फैलाता है। २ एक अर्थोक्तद्वार इसमें किसी एक
मध्यस्थ शब्दका अर्थ दोनों ओर लगाया जाता है।

देहवन्त (हिं० वि०) १ शरीर, जिसके देह हो। (पु०) २
शरीरधारी व्यक्ति, वह जो शरीरवान् हो।

देहवत् (सं० वि०) देह-भक्ष्यं मत्तुं मस्य यः। देहात्मा-
मिमानी जीव।

देहवान् (सं० वि०) १ शरीरधारी। (पु०) २ शरीरधारी
व्यक्ति, देहो। ३ सजीव प्राणी।

देहवायु (सं० पु०) देहस्यो वायुः। देहस्थित वायु, प्राणदि
वायु पाँच हैं—प्राण, अपान, सनात, उद्यान और ध्यान।

देहगह्व (सं० पु०) प्रस्तर, स्तम्भ, पत्थरका छंभा।

देहसन्धारिणी (सं० स्त्री०) दुहित, कन्या, मङ्गली।

देहमाय (सं० स्त्री०) देशानां साम्यं। १ पट्टसमूहका
समत्व, शरीरकी समता। २

देहसार (सं० पु०) देहस्य सारः ६-तत्। मज्जा, धातु।

देहात (का० स्त्री०) ग्राम, गाँव।

देवताओं की की हुई। ३ भाकस्मिक, प्रारब्ध या संयोगसे होनेवाली। ४ सात्विक।

दैवोगति (सं० स्त्री०) १ ईश्वरकी की हुई बात।

२ प्रारब्ध, भावी, होनहार।

दैवदासि (सं० पु०) दिवोदासस्य अपत्यं इज्ज। दिवो-
दासका अपत्य।

दैवोद्यान (सं० स्त्री०) दैवानां देवानां उद्यानं। देव-
ताओंका उद्यान।

दैवोपहतक (सं० त्रि०) दैवेन उपहतः कन्। हतभाग्य,
अभागा।

दैव्य (सं० स्त्री०) देवस्येदं देव-यज्। १ देव, देवता।

२ भाग्य, नसीब। (त्रि०) ३ देवसम्बन्धीय।

दैयिक (सं० त्रि०) देयेन निष्ठः स तस्येदं वा ठज्।

१ देयकृत। २ देयसम्बन्धीय। ३ सम्बन्धविशील।

दैयिक परत्वं बहुततर स्य संयोगान्तरितत्वज्ञानवे
त्पत्त्य होता है अर्थात् जहाँ स्यके संयोगमें अनैक
व्यवधान हो उसे दैयिकपरत्वं कहते हैं। पाल देखो।

दैयिकविशेषणता (सं० स्त्री०) दैयकृत अभावीय
स्वरूप सम्बन्धमेदं।

दैष्टिक (सं० त्रि०) दिष्टं भाग्यमिति मतिर्यस्य इति
ठक्। भाग्यप्रमाणक दैवपर, भाग्यके भरोसे रहने-
वाला।

दैष्टिक (सं० त्रि०) देहस्य इदं देहभवः वा देह-ठज्।

१ देह सम्बन्धीय, शारीरिक। २ देहभव, शरीरसे
उत्पन्न। मनुने लिखा है, कि वसा, रेत, रक्त, मज्जा,

मूत्र, विष्टा, नागिकासम, कथंसल, स्रग्वा, नेत्रजन,
नेत्रमल और चर्म ये बारहों दैष्टिक मल हैं। 'इह'

सर्वदा परिष्कार रखना चाहिये।

दैष्ट (सं० त्रि०) देहे भवः देह-पञ्च। देहभव जोव।

दोकना (हिं० त्रि०) गुरांना।

दोकी (हिं० स्त्री०) धो०कनो।

दोरे (हिं० पु०) एक प्रकारका साँव।

दो (हिं० वि०) तीनसे एक कम, एक और एक।

दो-पातया (फा० वि०) जो दो बार खींचा या उतारा
गया हो। एक बार भर्क या ग्राव खादि खींच चुकने
पर कभी कभी उसको बहुत मोज करनेके लिये फिरसे

खींचते या चुभाने हैं जिसे दो-पातया कहते हैं।

दोषाघ (फा० पु०) यह प्रदेश जो दो नदिशिके बीचमें
पड़ता हो।

दोषाघ—युक्त प्रदेशमें साहरानपुर, मुजफ्फरनगर, मोरठ,
मुलन्दगढ़, भलोगढ़, इटावाका कुछ अंश, मथुराका
कुछ अंश, कानपुर, फतेपुर और इलाहाबाद जिलेका कुछ
अंश इस भूभागके अन्तर्गत है। युक्त प्रदेशमें यहाँ
दोषाघ सबसे अधिक सर्वरा है और यहाँ कुछ कुछ
भनाज मो दुषा करता है। यहाँ बहुत लोग रहते हैं
जिनमेंसे अधिकांश क्षत्रियजोवि हैं। मोरठ, कानपुर,
भलोगढ़ और इलाहाबाद ये चार प्रधान वाणिज्य-स्थान
हैं। रेलपथकी विस्तृतिके कारण स्थल पथ हो कर हो
भनाजोंकी रफ्तारी और आमदनीकी विशेष सुविधा है।
दोषाघ तीन भागोंमें विभक्त है। साहरानपुरसे भलोगढ़
तक एक भाग मथुरा और इटावे से कर इटावा और
इलाहाबाद तक दूसरा भाग तथा कानपुरसे ले कर
इलाहाबाद तक तीसरा भाग है। गङ्गा और यमुनासे नहर
काट कर छेत खींचनेकी जो व्यवस्था की गई है उससे
दोषाघकी जमीन बहुत सर्वरा है तथा भनाज मो काफी
उपजता है।

१८२३ ई०में यमुनाकी नहरका काम आरम्भ हो कर
१८३० ई०में समाप्त हुआ था। पहले दोषाघमें काफी
भनाज नहीं उपजनेसे प्रतिवर्ष भसकाट होता था, अतः
यमुना जलसे जमीन खींचनेके उद्देश्यसे हो नहर काटी
गई। उक्त नहरके काटे जानेसे प्रचुर भनाज उपज
छोते देख गङ्गासे भी एक नहर काटनेका प्रस्ताव किया
गया।

१८३०-३८ ई०में युक्त प्रदेशके पञ्चलमें बहुत भयानक
दुर्मिच पड़ा, जिसमें गवमें रहने उक्त प्रस्ताव कार्यमें
परिणत करनेका संकल्प किया।

१८४२ ई०में आरम्भ हो कर १८५४ ई०में उत्तरांगका
काम और १८७३-७४ ई०में आरम्भ हो कर १८७८ ई०-
में नहर काटनेका काम समाप्त हुआ।

दोषाघ (फा० पु०) दोषाघ देवो।

दोक (हिं० पु०) दो धर्मको सम्यक दहेदा।

देहान्तो (मं० वि०) १. धामान्, गीर्षमं दृष्टमेवासा । २. धाममन्मयी, गीर्षका । ३. गन्धर्व ।

देहान्तो (मं० पु०) देहं देहाध्यासं पतीतः । देहाभि-
मान्मन्यु विद्वान्, यद् विद्वान् जिने शरीरको समता
न को ।

देहात्मयदो (मं० पु०) देहं धामान् यदनेति यद-
विनि । धार्याक, यद् जो शरीरको का धामा माने ।

देहात्मन्यय (मं० पु०) देहस्य धामतया ग्रन्थः । देहमें
धामत्वामिमान्, शरीर को धामा है ऐसा अभिमान ।

देहाध्यास (मं० पु०) देहस्य तद्वर्त्म्य वा धामतया
तद्वर्त्मता वा ध्यासः भ्रमः । देहधर्मों का धाका
समझनेका भ्रम ।

देवाना (मं० पु०) मृत्यु, मोत ।

देहात्मा (मं० पु०) देहात् धामतः । देहात्माध्यासि,
मृत्यु ।

देहावरण (मं० पु०) शरीरका पाच्छादन, गंधियोंका
पंख ।

देहिना (मं० स्त्री०) देहोति दृष्ट-दृष्टो मृत्युः, टापि
यत् इत्वं । मोटविशेष एक कोरका नाम । इसका
पर्याय—बाट, लपादिह, लपजिहिका, लपाटिका, लप-
टिका और दिवो है ।

देहान् (मं० पु०) देहाः सर्वे भूतमविव्यक्तमाना
जगत्समन्वयसि मोक्षस्य सन्तीति इति । शरीर, देहधारी,
देहतादात्म्या, धाममन्मय जीव, देहाधिष्ठाता जीव, धामा
प्रकृति पुरुषका स्वरूप जाननेके लिये उसके समीप जाना
प्रकारके रूपमें उपस्थित होती है वही जीवका संसार
है । जब उसके स्वरूपका ज्ञान हो जाता है तो प्रकृति
भाष ठहरे साक्षात् नहीं होती, तब-शरीरगति कुछ भी
नहीं रहता है । यह जीव बुद्धि, सत्य, दुःख, इच्छा,
द्वेष, दम, संस्कार, स्वर्ग, परिमाप, पुरुषत्व, संयोग,
भावना, धर्म और पदार्थ इन मोटह गुणोंमें मुक्त रहता
है । यही दृष्टिवादिका अधिष्ठाता है, पुष्पापाणदिका
पादप है जो प्रसूत्यादिक द्वारा अनुभव है । (भाषापरि०)
भोग्या देहो । देहमें चैतन्यादि कुछ भी नहीं है, किन्तु
धामा है । देहाधिष्ठाता जीव देहका धामत्व करके कुछ
गुण खादिका भोग करता है । देहमें यदि चैतन्य रहता

तो शरीरमें इसका ध्यामिकार देहा नहीं जाता । जो
कुछ हो देहो पर्याय देहाधिष्ठाता जीव ही देहो अध-
माता है ।

‘देही निजमन्मयपुरुष’ देहें सर्वत्र भवतः ।

लप्ताय सर्वानि भूतानि न हं लीयिष्यमर्हसि ॥

(गीता २।३०)

देही नित्य धम्य है । सभी देहोंमें एक नित्य धम्य
धामा रहती है । जिस तरह घटके फूट जाने पर घटा-
कायका नाम नहीं होता, उसी तरह प्रलयमें नि कर
विघोलिका तब कोई देह का न विनष्ट हो जाय पर
उसमें धम्य शरीर वा धामाका विभाग नहीं होता ।

विज्ञानमें धोर विभोक्तमें जितने प्रकारको देह
सम्भूत होती है, जो तत्सात्वत् देह धारण करने है व
हो देहो है । धामा विभुक्त रूपमें सभी देहोंमें विराज-
मान है । निरक एक धामा ही है वाचक हं, मैं युवा
हं, मैं लह हं इत्यादि तीन धम्याओं का अनुभव करती
है । देह विभागावयव है महा, लेकिन जो धामा है वह
वाचककाधमें जिन प्रकार धो योगमजाममें यह उभो
प्रकार है तथा लहा धम्याधमें भो सभी प्रकार रह्यो ।
दैहिक धम्याधमें धम्यकता तो देहो जाती है पर धम्या-
धन जाननेमें कुछ भी विनिश्चया नहीं होती ।

देही स्वभावस्थामें कितनी विविध देहोंमें विहार
करता है, लेकिन वही धोर कभी भी धामाधामको
धन्यता नहीं होता । शरीरतत्त्वविदोंका मत है कि
शरीरका परमाणुपुच्छ प्रति १०।१२ वर्षोंमें नष्ट
हो जाता है । धतपय बाष्पादि धम्याधमें भी
शरीरका नाम रूप करता है, किन्तु देहोकी कुछ भा
विक्रति नहीं होती । ‘न जायते न म्रियते’ इत्यादि श्रुति
द्वारा देहोका जिमो प्रकारका विकास हो नहीं होता ।
जिन प्रकार वन्य पुराणा धोमें पर गया धन्य पदमने है
सभी प्रकार देही धम्य कोमार खादि धम्याधका भोग
करके पीछे लह जोग पर देहकी लोह कर शरीर देह
धारण करता है ।

देह—धामनिधेय, एक गीर्षका नाम ।

देहम्बर (मं० पु०) देहाधिष्ठाता, धामा ।

देहोदय (मं० पु०) देहजन्त, शरीरमें उत्पन्न ।

देहोद्भूत (सं० पु०) देहजात ।

दैच (सं० त्रि०) दोचा-प्रश्न । दोचासम्बन्धीय ।

दैत्य (सं० पु० स्त्री०) दितेरपत्यं ठक् । १ दितिका

पत्न्य, दितिको मन्ति, दैत्य । स्त्रियां ङोप् । २

राहुका एक नाम । (त्रि०) ३ दितिसे उत्पन्न ।

दैत्य (सं० पु०) दितेरपत्यं दिति-एष (दित्यदित्यदित्य

पर्युत्तरपदा ण्य । पा ४।१।८५) १ असुर, कश्यपके से पुत्र

जो दिति नामकी स्त्रीसे पैदा हुए, ये देवताओंके विरोधी

हैं । २ अनाधारण यज्ञज्ञा मनुष्य । ३ शक्ति करनेवाला

आदमी । ४, दुराचारी, दुष्ट व्यक्ति । ५ लोह, लोहा ।

(त्रि०) ५ दितिसम्बन्धी ।

दैत्यगुरु (सं० पु०) दैत्यानां गुरुः । गुरुःचार्य ।

दैत्यदानवमदनं (सं० पु०) दैत्य और दानवोंके दमन-

कारी, इन्द्र ।

दैत्यदेव (सं० पु०) दैत्यानां देवः । तत् । १ वरुण ।

२ वायु ।

दैत्यहोप (सं० पु०) गरुडात्मजभेद, गरुडके पुत्रोंमेंसे

एक ।

दैत्यपह (सं० पु०) असुर पक्ष ।

दैत्यधूमिनी (सं० स्त्री०) मुद्राभेद, तारादेवीकी ताम्रिक

छपासनमें एक मुद्रा ।

द्यौमि, भूमिनी, बीजाख्या, दैत्यधूमिनी और सेलि-

शाना ये पाँच मुद्राये ताराचर्ममें उल्लिखित हैं । दोनों

हाथोंकी सम्पूर्ण रूपसे परिवर्तन कर कनिष्ठाङ्गुलिकी

मध्यमाकी प्राज्ञपूर्ण करते हैं । दोनों अनामिकाकी

गोथे और दोनों तर्जनीकी श्यक-रूपसे रखते हैं तथा

अंगुलके अग्रभागमें अनामिका फँसाते हैं । ऐसा करने-

से दैत्यधूमिनी मुद्रा बनती है ।

दैत्यनिमुद्रन (सं० पु०) दैत्यान् निमुद्रयति हिंस्ति

नि-मुद्रि-क्यु । विष्णु ।

दैत्यपति (सं० पु०) दैत्यानां पतिः । तत् । १ हरिश्च-

क्रगिपु ।

दैत्यपरोक्ष (सं० पु०) दैत्यानां परोक्ष । तत् । गुरु-

चार्य, दैत्योंके परोक्षित ।

दैत्यपुत्र्य (सं० पु०) दैत्यानां पुत्र्यः । तत् । दैत्यीके

पुत्रोंपु गुरुचार्य ।

दैत्यमात्र (सं० स्त्री०) दैत्यानां माता । तत् । दैत्यीकी

माता, दिति ।

दैत्यमेदज (सं० पु०) दैत्यस्य मेदात् आयते जन-ड ।

१ युग्म, युगल । स्त्रियां टाप् । २ प्रथियो । प्रथिबो

मधु और कौटम्बके मेदसे उत्पन्न हुई थी, इसीसे पुत्र्योका

नाम दैत्यमेदजा पड़ा है ।

दैत्ययुग (सं० स्त्री०) दैत्यानां युगं । तत् । दैत्योंका

युगविगण, देवयुगको नाई १२ हजार वर्ष ।

दैत्यसेना (सं० स्त्री०) प्रजापतिकी कन्या और देव-

सेनाकी बहन । यह दैत्योदानवकी बहुत चाहती थी ।

केशो इसे हर ले गया था और उसने इसके साथ विवाह

किया था ।

दैत्यह्न (सं० पु०) मशदेव । (भारत १३।१।४५)

दैत्या (सं० स्त्री०) दितेरिव्यं इति प्ल, ततट्ठाप् । १ सुरा

नामक गन्धद्रव्य, कपूरकचरो, सुरा । २ चण्डौषधि । ३

मद्य, मराव । ४ दैत्य जातिकी स्त्री ।

दैत्यारि (सं० पु०) दैत्यानां अरिः । तत् । १ विष्णु ।

२ देवता मात । ३ इन्द्र ।

दैत्याहोरात्र (सं० पु०) दैत्यानां अहोरात्रः । तत् ।

दैत्योंका एक रात दिन । यह मनुष्यके एक वर्षके

बराबर होता है ।

दैत्येज्य (सं० पु०) दैत्यानां इज्यः । तत् । दैत्यके गुरु

गुरुःचार्य ।

दैत्येन्द्र (सं० पु०) दैत्यानां इन्द्रः । तत् । १ दैत्यके

प्रभु, दैत्योंके राजा । २ गन्धक ।

दैत्येन्द्रस्त (सं० स्त्री०) हिङ्गुस ।

दैधिपत्य (सं० पु०) श्लोक दूधरे पतिका पुत्र ।

दैर्घ्य (सं० स्त्री०) दीर्घत्व भावः षण् । १ दीर्घता, दीर्घ

चोन्का भाव । दिनस्य इदं दिन-षण् । (त्रि०) २

दिवस सम्बन्धी, दिनका ।

दैर्घ्यदिन (सं० त्रि०) दिनं दिनं भव्यं इत्यण्, निपातनात्

साधुः । प्रतिदिनका, नितराका, दिन दिन होनेवाला ।

दैर्घ्यदिनपमय (सं० पु०) दिनदिनपमयो प्रत्यययेति ।

ब्रह्माके प्रतिदिनावसानमें सब वस्तुओंका अत्यल्प प्रलय ।

चतुर्दश इन्द्रावच्छिन्नकाल ब्रह्माका दिन है, अर्थात् जब

तक चौदह इन्द्र रहेंगे, तब तक ब्रह्माका दिन और

दोता (हिं पु०) दोती देखो ।

दोतारा (हिं पु०) १ एक प्रकारका दुगला । २ एक प्रकारका वाजा जो एकतारेकी तरहका होता है । इसमें एकतारेकी चपेचा विशेषता यह है कि इसमें बजानेके लिये एकके बदले दो तार होते हैं ।

दोसि—जुमलाके दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित एक बहुजन-कोण प्रदेश और नगर । इसके मध्य हो कर कर्णाली नदी प्रवाहित है । यह प्रधान नगर रायबरेलीसे साढ़े ४२ कोस पूर्वोत्तरमें अवस्थित है ।

यह प्रदेश चयोध्याकी बालुकामय प्रस्तरयुक्तो द्वारा और रोहिलखण्डकी काली नदी द्वारा विभक्त करता है ।

दोदरी (हिं स्त्री०) दारजिलिङ्ग, सिक्किम, भूटान और पूर्वी बंगालमें मिलनेवाला एक प्रकारका सदाबहार पेड़ । इसकी लकड़ी काली, चिकनी और कड़ी होती है और इमारतके काममें पाती है ।

दोदल (हिं पु०) १ चनेकी दाल या तरकारी । २ लक्ष-भारकी कलियां जो तरकारीके काममें भी पाती है ।

दोदुस्खाखिलान (फा० पु०) ताशके तुल्यके खेलमें किसी एक खिलाड़ोका एक साथ बाकी दोनों खिलाड़ियोंको मात करना ।

दोदबलामुर—१ मडिचुरके बल्लौर जिलेका उत्तर-पश्चिमोत्तर तालुक । यह भवा ११° ०' से १२° १०' ०' और देशा ७०° १८' से ७०° ४०' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ३४१ वर्गमील और जनसंख्या करोड़ पच्ची हजारके है । इसमें इसो नामका एक शहर और ३४२ ग्राम लगते हैं । तालुकका पूर्वोत्तर भाग पर्वतमय है । सारे तालुकमें शरकावतीके जलसे काम चलता है ।

२ उक्त तालुकका एक शहर । यह भवा ११° १८' ०' और देशा ७०° १३' पू० बल्लूर शहरसे २३ मील दूर शरकावती नदीके किनारे अवस्थित है । जनसंख्या ८ हजारके करीब है । १२वीं शताब्दीमें यह भाषिण्यका प्रधान केन्द्र था, लेकिन १५वीं शताब्दीके प्रारम्भमें यह नगर बसाया गया है । १७६१ ई०में हैदरअलीने इस पर अपना अधिकार जमाया । १८७० ई०में मुनिस्सप-लिटी स्थापित हुई है ।

दोदा (हिं पु०) एक प्रकारका वड़ा कीया । यह दो छेद हाथ लम्बा होता है । इसका रंग काला तथा चोच या पैर चमकीले होते हैं । यह गाँवों तथा जंगलोंमें बहुत पाया जाता है । इसकी चादनें मामूलो खोवेको सो होती हैं । इसका घोंसला ऊँचे वृक्ष पर बना रहता है और यह पूरसे फागुन तक चँडे देता है । एक बार ८ इसके पाँच चँडे होते हैं ।

दोदाना (हिं स्त्री०) किसीको दोदनेमें प्रवृत्त करना, दोदनेका काम दूसरेसे कराना ।

दोदामी (हिं स्त्री०) इदामी देखो ।

दोदिन (हिं पु०) रीठेकी जातिका एक पेड़ । इसके फल सावुनकी तरह चपड़े भाफ करनेके काममें पाते हैं और पत्तों चौपायोंकी खिलाये जाते हैं और बीज दवाके काममें पाते हैं ।

दोदिना (हिं स्त्री०) जिसका चित्त एकाग्र न हो, दो चित्त ।

दोदिलो (हिं स्त्री०) चित्तकी अस्थिरता, दोषित्ता ।
दोदुन्यमान (सं० स्त्री०) दुःख-यक्ष्, दोदुन्य-ग्रान्त, पतान्त दोनायमान, जो बार बार भुलता हो ।

दोव (सं० पु०) दुःख-पच, निपातनात् साधुः । गोवक्ष, गायका वक्षा । २ गोप, स्वाना, गहोर । ३ वक्षकवि जो पुरस्ताके लिये कविता करता हो ।

दोधक (सं० स्त्री०) छन्दोमेद, एक वर्णवृत्त । इसमें तीन भगण और पन्तमें दो गुरुवर्ण होते हैं ।

दोधार (हिं पु०) भाला, बरका ।

दोधारा (हिं स्त्री०) १ जिनके दोनों ओर धार हो । (पु०) २ एक प्रकारका गृहर ।

दोधूयमान (सं० स्त्री०) पुनः पुनः चरितगयेन वा धूयते धू-यञ् । दोधूय धानु ग्रानच् । पुनः पुनः कम्पनविशिष्ट, जो बार बार कांपता हो ।

दोन (हिं पु०) १ वह नोचो जमीन जो दो पहाड़ोंके बीचमें पड़ती है । २ दोपावा, दो नदियोंके बीचकी जमीन । ३ दो नदियोंका संगम स्थान । ४ दो नदियोंके मेल । ५ दो वस्तुओंका मेल । ६ एक प्रकारका काठका श्रम्य और नोचसे जोड़ना टुकड़ा । इसमें धानके खेतों में चिंवाई की जाती है । इसका आकार धान कूटनेको

मृत्प्रतिमिवाव प्रज्ञाद्यो गति है। इमं प्रज्ञाकोटमे
 चर्चाव्यक्तममो मोक्ष निमग्न होत है। चोर प्रज्ञात्मा
 यो जगत् पर प्रज्ञा पुनः गति करते हैं। इम प्रज्ञा
 निमग्न हो प्रमद होता है, उसे सुखदमय करते हैं। इम
 प्रमदमें देवता, मुक्ति चोर जरादि ममो जाय होत है।
 पुराण ३० दिनों का प्रज्ञाका एक महीना चोर १२
 महीनों का वर्ष होता है। प्रज्ञाके इम तरह पन्द्रह
 वर्ष बीस आने पर देव प्रमदमय होता है। वीटविटो-
 ने इमोने दिन रात माना है। इम प्रमदमें भद्रा कीदि
 दिगाहर, चादिय, यधु, रुद्र, मनु प्रगृति ममो विमट
 करते हैं। देविप्रमदमय मोतमें पर प्रज्ञा पुनः ममो
 मोक्षो का गति करते हैं। इम तरह मो वर्ष प्रज्ञाको
 परमपु है। (महर्षि वसु ३०)

देनार (मं. वि०) दोनार भव दोनारपेट धेति-पण।
 दोनारपरिमित कर्षण जात यधु।

देनिक (मं. वि०) दिने भवः इति कम्। १ दिनभय,
 जो रोज रोज हो। २ दिन मयमय। ३ प्रतिदिनका,
 रोज रोज। (का०) ४ एक दिनको तनपाट।

देन्य (मं. पु०) १ दमिष्टना, दोनता। २ पट्टकारके
 प्रतिज्ञाभात, विनोतभाव। ३ दायके सखारो भावमिधि
 एक। इममें दुःसादि विष बहुत लग्न हो जाता है।

देयाम्यति (मं. पु०) देयाम्यति शब्दका मोतावय।

देयं पररा (मं. पु०) दोषं वाते च, निहंशः कृपा-पण,।
 यह कृपा जहाँ पानी निकालनेके लिये एक बड़ा रखा
 रखा जाता है।

देयं (मं. वि०) दोषं वा भावः पात्रं। दोषं ता,
 कष्टादि।

देमोपि (मं. पु०) दिमोपलापय दिमोप-इज्। दिमोपका
 पण्य।

देन (मं. वि०) देवदेव देव-पण्य। (तत्त्व०)।
 पा ३। १२०) १ देतात्, दाहिने हाथको 'संमोक्ष'
 पण्य भागका नाम देवतोय है। (सु० २। ४८)

देवप्रमदके मुख्य प्रयोगममो प्रज्ञाकोटि, क्षितिप्रमदके
 मुख्य भावः प्रमदप्रतिपत्ति चोर प्रमद पञ्चप्रयोग-
 के प्रयोगममो नाम देवतायें हैं। प्रज्ञाकोटि यह भाव
 प्रज्ञा, प्रज्ञाप्रतिपत्ति वा देवतोय के प्रयोगममो करना चाहिये।

देविवाहविमोच, वाहदेवादि विवाह पाठ प्रज्ञाका
 है। (सु० १। २८)

पण्यविमोच प्रमोतिमोमादि ममके चारप्रयोगमें
 पर उम यममें यदि कमकर्ता प्रमोतिमो मम पण्यविमो-
 के मम कयादाग करे, तो उम देवविवाह जगत् है।
 देव पण्यको निहिका कामममें यह विवाह किया
 जाता है, इममें इमका नाम देवविवाह पण्य है। देव
 विवाहोपण्य पुन पण्यमें पूर्व प्रमोति ० पुन्य चोर पण्य
 ० परपुन्य इम चोटके पुन्यको उधार करना है चोर
 को ममता इम विवाहमें उधार जतो, यह प्रमोतिमो
 ममय होता है। विवाह देवो। ३ देवतामममो।

प्रमोतिमोमादि ममो ममें पर ममो प्रमोतिमो
 है। जगतके यम पूरा न हो, तब तक देव मममो वा
 प्रमोतिमममो मम ममो करना चाहिये। देवता मम-
 तादागत् पण्य। ४ भाग्य, प्रमय, पण्य।

प्रमोतिमममोपण्यममो ममो है कि मम, मम, मम
 चोर पण्य ममो देवके पण्यममो है। देवक यम ममो,
 मम मम मम ममो एकमात्र देवपण्य है। इम
 कारण देवके पण्य चोर को देव ममो है। यह देव
 एक मात्र योक्तके पण्यममो है, मम ममो देवके पण्य
 का पण्य है। इमो देव उम परमाका देवका मम मम
 ममो है। ये देवमममममममें ममम है तथा पण्य
 ममो द्वारा मम मम मम ममो है, इममें कृणमममम
 देवके पण्यममो है। ये मम मम कयापममो द्वारा
 मम मममम ममो मममि विमो मम मम ममममो है।

ममोपण्यममो देवका विमय इम ममो ममो है—
 एक ममय ममो मममो पूरा, कि देव चोर पुन्य मममें
 कान पण्य है। इममें मम मम ममो है। इम पर
 ममममें ममम दिया मम, कि देवतामममो को मममो
 ममम मम, है ममको देव ममो है पण्य पुन्य मममें मम
 मम पुन्य मम ममो है, ये मम मम मम ममममें देव
 वा भाग्य कयापमो है। इम कारण ममममि पुन्य
 ममको पण्य मममो है। पुन्यकार को मम भाग्यका
 मम कारण है, तब ममो मम मममो ममो है। पुन्यकार
 ममो मममें भाग्य ममम मममो मम ममो है। पूरा
 मममें मम मम मम मममो ममो है, इम मममें

कर्मों भी पुण्यकारके बिना वे सब माय्य कुछ भी फल नहीं दे सकते हैं। पौरुषवर्जित मनुष्य देवको ही मानते हैं अर्थात् वे केवल देवके ऊपर ही निर्भर रहते हैं। देव सम्पत् पुण्यकार करनेसे फल देता है। देव, पुण्यकार और काम वे तीनों मिल कर फल देते हैं। देव, पुण्यकार या काम इनमेंसे कोई भी अकेला फल नहीं दे सकता है। जिस तरह छवि छटिके योगसे फल देतो है, उसी तरह देव भी पुण्यकारके योगसे फल देता है। इसलिये हमेशा बहुत यत्नसे पुण्यकार अवलम्बन करना चाहिये। इस तरह जो आलस्यग्न्य ही कर पुण्यकारका अवलम्बन करते, वे परलोकमें शुभ फल पाते हैं। पुण्यकारहीन व्यक्ति केवल देवपरायण होनेसे फल प्राप्त नहीं कर सकता है। इसलिए सर्वदा यत्नपूर्वक पुण्यकारका अवलम्बन करना चाहिये। जब पुण्यकारके बिना देव भी फल नहीं दे सकता, तब देवसे भी पुण्यकारको बढ़ कर समझना चाहिये। देव यदि प्रतिकूल हो, अत्यन्त पुण्यकार करनेसे वह नामो नहीं सकता है, अर्थात् प्रतिकूल देव अनुकूल होता है। अतः जो सर्वदा आलस्यरहित हो कर पुण्यकार अवलम्बन करते, लक्ष्मी उन पर प्रसन्न रहते हैं।

(मत्स्य १८५७०)

जो कोई कार्य किया जाता है, उसका एक संस्कार रहता है, इसी संस्कारके नाम वासना; संस्कार घट्ट वा देव इत्यादि हैं। कामके लिये जो संस्कार है उसका नाम देव है। ज्ञेय हो जोवोंको कर्म प्रवृत्तिका मूल है, अतएव ज्ञेय नामक प्रधान प्रहकार, समता, रागद्वेष प्रवृत्ति वृत्ति निश्चय ही उत्पन्न करेगा। ऐसा ज्ञान मनुष्य है जो प्रवृत्तिके अर्थात् काय करते हुए भी उसका फल न भोगे। यह सब देख कर योगी-योग कहते हैं, कि सभी जीव ज्ञेयसे बाध्य हो कर अच्छा बुरा काम कर डालते हैं। और वे सब काम देव, घट्ट या संस्कार इत्यादि नाम धारण कर कर्ममूलकी छटि करते हैं। याज्ञिक लोगोंने उसे पूर्व, अष्ट, पाप पुण्य, धर्माधर्म या देव नामसे उल्लेख किया है। जोव वहाँ सब अज्ञित कर्माधर्मोंको प्रेरणासे बारम्बार बहो सब काम करनेको इच्छा कर जो जाता है। इसका सार यह है कि यह काम

करनेके साथ ही जोवोंके सूक्ष्मशरीरमें या चित्तक्षेत्रमें एक प्रकारको शक्ति वा गुण उत्पन्न होता है। यही कर्म-बीज प्रवृत्ति ही कर जोवोंको बार बार अवस्थान्तर करता है और नये नये रागद्वेषादिके सूक्ष्म सूक्ष्म बीज उत्पादन करता है। उन्हीं भव कर्म बीजोंका नाम कर्माधर्म है। इसका दूसरा नाम धर्माधर्म, घट्ट, भाग्यप्रभृति है। कर्म करनेसे ही जोवोंके सूक्ष्मशरीरमें कर्मके लिये प्रायय, धर्माधर्म नामक गुण वा शक्ति अवश्य ही उत्पन्न होगी। धर्माधर्म नामक गुण उत्पन्न हो कर वह अपने प्राययोभूत जीवको निश्चय ही अवस्थान्तरमें पतित करेगा। अब और किस अवस्थामें पतित करेगा, उसका निश्चय नहीं है। लेकिन कभी न कभी अवश्य ही करेगा, कोई नियारण नहीं कर सकता। इस अवस्थान्तर-प्राप्तिका नाम कर्मफल है। यह कर्मफल या तो किसीके वर्तमान शरीरमें प्राप्त होता, या किसीके जन्मान्तर वा शरीरान्तर में। यह तरह फलभोगका नाम भाग्यफलभोग है। यह भाग्यकर्मफलभोगके मूलमें पुण्यकार रहता है, अतएव पुण्यकारके प्रति सर्वदा यत्न करना होगा अर्थात् सत्कार्यमें पुण्यकार करनेसे शुभ देव वा शुभाष्ट होगा; अतः उसका फल भी शुभ ही होगा। उल्टा वा तोत्र तम पुण्यकार या कर्म करनेसे तत्पन्नित प्रायय और तोत्रतम शक्तियाँ वा वेगमानो होगा। इस तरह पुण्यकार करनेसे घुरघट नाश होता और बहुत जल्द शुभफल मिलता है। इसलिये पुण्यकार ही देवसे अच्छा है। नावमात्रका जो जिससे शुभाष्ट हो, वैसा ही पुण्यकार करना विधेय है।

१ देवसग रूप सगभेद। ॥ देवसग आठ प्रकारका है—विबुध, पित्रगण, असुर, गन्धर्व, अप्सरा, विह, यक्ष, राक्षस, भूतप्रेतपिशाच, विद्याधर किशरादि यद्यपि प्रकारके देवसग हैं। (भागवत) आत्यन्तव कोमुदेके मतसे ब्राह्म, प्राजापत्य, ऐन्द्र, ऐश, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और पैशाच ये आठ प्रकारके देवसग हैं।

देवो देवभेदो देवताऽस्य ध्वजः। ७ आहभेद, देवताके चहेश्च जे आह किया जाता है, उसे देव-आह कहते हैं।

विज्ञातियोंको देवकार्यको अपने-पित्रकार्यविधेय-

विष्णु' दोहाखित' दृष्टा त्रिकोणरूपेण भवेत् :

तस्मात् कार्यघट'लक्षणा दोहादे उत्पन्नं कृत् ॥" (पद्म०)

जो ऊर्ज (कार्तिक मास) में रथ, मधुमास अर्थात् चैत्र मास में दोहायात्रा, श्रावण मास में भूजन, चैत्रमास में मदनक पारंप नर्तन करते उनको प्रयोगिता होता है। विष्णुका दोहास्थित देखनेसे त्रैलोक्यका उत्सव होता है, इसलिये अपने भौकड़ों कार्य छोड़ कर दोहास्यके दिन दोहास्य करना चाहिये।

दोहायात्राका विषय हरिमक्तिविनाम में जो लिखा है, इस प्रकार है—

चैत्रमासकी शुक्लाष्टमीके दिन प्रातः कार्य तथा नित्य पूजादि करके दोहास्य करना चाहिये। इस दोहास्यविधिके लिये अपने प्रकारके उपकरणोंदि नंग्रह करके तथा वैष्णवोंके प्रति सम्मान दिखाना करके नृत्य गीत आदि द्वारा प्रभुको दोहा पर चढ़ाना चाहिये। अति उत्तम वस्त्रोंदि प्रातः यथाविधि स्थापित करके पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार पूजा करके एक एक पहर में प्रभुको भुजाना चाहिये और यमपूर्वक गाना प्रकारके मञ्जीस्य कर दिन और रात जगते रहना चाहिये। वैष्णव लोग इस प्रकार जागरणादि करके प्रभुको प्रणाम, प्रार्थना आदि कर दोहावेदिकासे अपने घर से जाते हैं।

चैत्रमासकी शुक्लपक्षीय छठोया तिथि में रमावति विष्णुका दोहापर चढ़ा कर यथाविधि पूजा करके एक मास तक भुजाने रहना चाहिये।

फाल्गुनमासकी राकादिमें यदि उत्तरफल्गुनी नक्षत्र पड़े, तो उसी दिन दोहास्य करना उचित है।

चैत्र मासकी शुक्लपक्षीय तीसरे दिन जो दोहा होता है, उसे रामनवमीका दोहा कहते हैं।

फल्गूस्य और रामनवमी देखो।

भारतवर्ष में सभी जगह दोहायात्रा वा होलीकी धूम-धाम होती है। विभिन्न: शुक्लप्रदेय और उत्तम प्रदेशों में हो होलीका आमोद कुछ अधिक देखा जाता है। दोहाके दिन हिन्दू स्त्रीपुरुष आपस में पबोर छिड़कते तथा तरह तरहके रंगोंसे कोड़ा करते हैं। इस प्रकारके बीमका दृश्य रहस्यजनक काण्डका भी और दूसरे दूसरे देशों-

में उतना अधिक प्रचार नहीं देखा जाता। कोई कहते हैं, कि भगवान् विष्णु ने शङ्खचक्र वा होलिकाका वध कर यह होली-उत्सव शिष्या था। फिर कोई कहते हैं कि यही प्रधान वसन्तोत्सव है। वसन्तागमन में प्रकृति सती नये नये सज्जोसे सज्जित हुई हैं, चेतन अचेतन सभी छट-जगत्के ऊपर प्रकृतिने मानी अपना आधिपत्य फैला लिया है। उनो वासन्तो प्रकृतिकी पूजाके लिये ही इस प्रकारका भुजाना हुआ करता है। एक समय यूरोपीय अपने-अपने जातियाँ भी इस प्रकारका वासन्तिक आमोद प्रमोद किया करती थीं। पहले रोमराज्य में Festum Stultorum, Matronalia, Festa Lupercales Festa (on the Ides of March), वाचियोत्सव (Feast of Bacchus), अन्नपूर्णा (Anna Perenna) का पूजन आदि जो सब मञ्जीस्य होते थे, उनमें होली उत्सवको तरह धूमधाम होनी थी। प्रथम तीन उत्सवों में युवकगण उभसत हो नर्तन कर, पथ में घाटमें घोर मन्दिर में छल्लते झूदते थे। इससे निवा the Abbot of Unreason, the Carnival, the Passover और the day of All-fools ये सब जो परिवामजनक आमोद यूरोप में प्रचलित थे, वे इस देशके पबोर-उत्सव सेरीछे थे। एक समय जर्मनी में भी यहाँके जैसा होली-उत्सवका प्रचार था। जॉन्नेस (Jouannes Boemus Aghanus) ने लिखा था कि, 'सभी जर्मनी पान भोजन और रसरंग में अपनेकी भूल जाते थे। वे सोचते थे, कि आजके शेषा दिन फिर कभी पानकी नहीं। अधिवासिगण मूँह पर नकाब डाल कर, लज्जवेष बना कर, समुचे शरीरको लाल और काले रंगोंसे रंग कर दधर दधर नर्तन घूमते फिरते थे।'

नेवगेरुसने (Naogeorgus) यूरोपीय कार्निवल (Carnival) नामक जिस उत्सवकी बात लिखी है, वह ठीक भारतकी होलीके जैसा प्रतीत होता है। उन्होंने जो कुछ लिखा है, उससे कुछ पंग नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

"Then old and young are both as much
as guest of Bacchus' feast;
And four days long they tipples, square
feed and never rest.

ओषधी काष्ठका बसा हुआ भद्रासन होना चाहिये, यह उषस्य पौन वा तीन दिन तक किया जाता है। चतुर्दशी रात्रिके निगमसुखमें दोनमण्डपके पूर्व भागमें वस्त्रि उषस्य करना होता है। यह वस्त्रि उषस्य दोलयात्रा का एक अङ्ग है। पाचार्यको वरण और भूमि संरुत करके विधिवत् ढागरागि मन्त्रित करते हैं। जो इस समय हरिका चमलोकन करते हैं, वे सय पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। जब तक दोलयात्रा समाप्त न हो, तब तक इस अग्निको बहुत यत्नपूर्वक रखना होता है। चतुर्दशीके यामावसान होने पर सर्वात् परशोदयके समय शुभा गोविन्द प्रतिमाको सुगन्ध द्रव्योंसे अधिवासित कर नाना प्रकारके उपचार द्वारा उनकी पूजा करते हैं। उन्हें रंग विरंगकी माला तथा अच्छे अच्छे वस्त्र समर्पण करते तथा द्वित्र्योऽङ्गण गोविन्दको परश्रद्धा मानकर मन्त्र पाठ करते हैं। इस समय देवप्रतिमा स्वयं पुरुषोत्तम रूपमें विराजित रहते हैं। पीछे उस प्रतिमाके रत्नान्दोलिका द्वारा स्नानमण्डपमें लाते हैं। इस समय चनेक प्रकारके तूर्य-निनाद, गङ्गाध्वनि, जयगन्ध, स्तोत्रपाठ, ध्वज, पताका, चामर और ध्वज नचादि तरह तरहके उपकरणोंमें मधोस्वय करते हैं। इस समय देवगण पिता-महको आगि करके उस स्थान पर पहुँच जाते हैं। ऋषि लोग भी यह उषस्य देखने आते हैं। भद्रासन पर गोविन्दके अधिवासित कर उपचार द्वारा उनकी पूजा करती और महास्नानकी विधिके अनुसार उन्हें स्नान कराते हैं। यथाविधि महास्नान हो जाने पर गन्ध, तोय और औसृज द्वारा उनकी अभिषेक करना होता है। स्नानके बाद गोविन्दकी वस्त्र, पलहार और मालादि द्वारा विभूषित कर उनकी पूजा करनी होती है। इस प्रकार पूजा करके प्रामादका परिवेष्टन करते हैं। पीछे ममज्ञत्व करके गोविन्दकी दोल पर विठा कर भातधार भीचे और लपर भुजाने हैं। दोलयात्रा समाप्त होने पर इकीस बार उन्हें सुमति हैं। यही भगवान्‌की सोला है। स्वयं पितामहने ऐसा कहा है। राजर्षि इन्द्र-युग्मने पहली पहल यह दोलीस्वय किया था। गोविन्द-का ध्यान—

“अनघेऽप्रपटित-कु-दोलोमाधितनुति।

यथास्थानं यथाशोभं दिग्गच्छकारासनं ॥

विदधामनुमन्यस्व” विशरपात्राग धिया पुत्र।

सखचक्रगदाशदमपरिणं पनमाजिनं ॥

सुप्रध्वनं सुनास-भू पीनवस्त्र-ध्वसोऽग्नयत् ॥

पुरोभ्योमस्थिते देवैर्भक्ष्यैर्नैवदन्तरीः ॥

हतांशमुद्रेमं कथा जयगन्धर्वनिष्ठुतं ॥

गन्धर्वैरुपरोमिद्वर किन्तुः सिद्धचारिणैः ॥

हाहाहूह प्रवृत्तिभिः सत्वरि दिग्गगायनैः ॥

अहं पूर्विकाया नृत्यगीतवादिनचारिभिः ॥

नेत्राम्बुजसदृशैस्तु पूज्यमानं मुदास्मिन्तैः ॥

विद्विदग्निः सर्वदिक्षु गन्धर्वदन्तः रजः ॥

उपवेष्टाय गोविन्दं पूजयेदुपचारकैः ॥

बल्लभो इन्दमध्यस्थं कदम्बतटमूलमम् ॥

हावहास्वविलासैश्च कीदृशान् बनान्तरे ॥

गोपीमित्रैश्च गोपालैर्होताशोचकया नगं ॥

चिन्तयित्वा जगन्नाथं विद्विरेदुःस्वचूर्णकैः ॥”

दोलोत्सवमें इसो ध्यानसे गोविन्दको पूजा करनी होती है। जो इस अवस्थामें ओहाचक्रा दर्शन करते हैं उनकी मुक्ति होती है। योगोविन्ददेवको तीन बार दोल प्रदान करना होता है। इस दोल प्रदानमें सब पाप जाते रहते हैं। तीन बार दोलोत्सव देखनेसे पाश्चात्तिक, पश्चिदैविक और पश्चिमतैतिक इन तीन प्रकारके तापोंसे मानव मुक्त हो जाते हैं। जो राजा यह दोलोत्सव करते हैं, वे चक्रवर्ती होते हैं। ब्राह्मण वेदविद्वद् हो कर मुक्तिलाभ करते हैं।

(सन्दपु० उरदलप० ४२ अ०)

चैत्र मासमें भी दोलयात्रा होती है—

“चैत्रमासि सिते पक्षे दक्षिणामुखं हरि।

दोलाहटं सगम्येन मासमान्दोलयेत् कलौ ॥”

(गर्ह३०)

चैत्रमासके शुक्लपक्षमें हरिका दक्षिणमुख करके दोल पर बैठना चाहिये। इस दोलोत्सवकी नित्यता पद्म-पुराणमें इस प्रकार लिखी है—

“कर्म रूपं मयौ दोला धारयेत्तद्वर्षे च।

चैत्रे मदनकारोपमङ्गलानी यमत्रयः ॥

ग्रहब्राह्मणान् चामयानान् नवान् गोशान् तदुदाहार्य
पथविशेषाधिकग्रन्थिताः कर्मका अष्टमत् ॥
साम्यसूत्रो ज्योतिषिको दैवज्ञो गणकोपि च ।
ग्रहविप्रो द्वित्रयेष्टः सर्वग्राह्यविशारदः ।
आचार्यो ब्राह्मणग्रन्थ षट्कः सार्वेतिदिक् ॥
सुखी शास्त्री नमस्योऽभिः षट् कर्मा ग्रहभूषणः ।
मोक्षस्तिकथ मोक्षतः शान्ति कार्त्तिकथ स ॥
अपरं च । यद्वाग्यमर्चनान्द्वयोः शास्त्रीयसमुद्भवः ।
ब्रह्मवैवर्तपुराणवेत्तम दैवज्ञो ब्राह्मणो भूव ॥
सर्वे ग्रहविज्ञाः पृथग्वेत्तास्तथा सामिकविज्ञाः ।
नाडीज्ञा द्वापरे विशा निरमिन्नाक्षराः कलो ॥
ज्योतिषाचार्यनं पूजा वेदशास्त्रशक्तिनं ।
यज्ञः प्रतिपदो भिक्षा पट्ट ग्रहविज्ञलक्षणं ॥
अभिः पट्ट भिर्विहीनो यो ग्रहविप्रः सुवेदविप्रः ।
अष्टग्राह्यज्ञः श्रेष्ठः सोऽन्यथा कथयामि ते ॥

मार्कण्डेय, माण्डूक्य, गार्ग्य, पराशर, अथर्व, सनातन,
पश्चिमा और जङ्गु ये षाठ् सुभि शक्तिहोषमें रहते थे ।
उनके सहायिता पुत्रगण प्रतिदिन ग्रह चालन करते थे ।
देव कथाके आदेशानुसार गरुड जब उठे घड़ि ले
जाये, तब वे शास्त्रके धर्ममें सुन पड़े । उनके नाम ये छि-
वराह, सोम, ईशान, शान्ति, शुक्र, धनञ्जय, दनु और
वसुन्धर । ग्रहदानमें ये ही आठ व्यक्ति ब्राह्मण थे ।
ग्रहदान ग्रहण करनेके कारण ये ग्रहविप्र नामसे प्रसिद्ध
हुए । सूर्य और बुधसन्तिके दानमें वराह, चन्द्रके दानमें
सोम, मङ्गलके दानमें ईशान, बुधके दानमें शान्ति, शुक्रके
दानमें शुक्र, शनिके दानमें धनञ्जय, राहुके दानमें दनु
और वस्तुके दानमें वसुन्धर दान-ग्रहणकर्त्ता हुए थे ।
उनके गीत इस प्रकार थे—वराहका काश्यप, सोमका
कौशिक, ईशानका गोतम, शान्तिका वाका, अमुका
भरद्वाज, धनञ्जयका पराशर, दनुका शान्तिह्वय और
वसुन्धरका मोक्षव्य ।

परमेश्वर कह रहे हैं—महत्समुच्च ब्रह्मनि सर्व प्रकार
भूमिकी सृष्टि कर ग्रहमान्तिके निमित्त मध्य, ऊर्ध्व और
अधोभागके प्रकाशानुसार एक से पञ्चोस सुलोसि ग्रहोंके
धर्मोंमें एक एक करके एक भी पञ्चोस ग्रहब्राह्मणोंको
सृष्टि की थी । वे ही चार वेदोंके ज्ञाता हो कर ग्रह-

ब्राह्मण हुए । ये सामवेदके ज्ञान गा सकते हैं । इनके
नौ प्रकारके गोत्र थे । वेदोंके ब्रह्मनि-१२५ कथाएं उत्पन्न
कीं, जिनमें साथ उनका विवाह हुआ ।

ग्रहविप्रोंके ये इकोन नाम निर्दिष्ट थे—१ माध्यन्तर,
२ ज्योतिषिक, ३ दैवज्ञ, ४ गणक, ५ ग्रहविप्र, ६ द्विज-
येष्ट, ७ सर्वशास्त्रविशारद, ८ आचार्य, ९ ग्राह्यविप्र, १०
षट्क, ११ सार्ववेदिक, १२ सुखी, १३ शास्त्री, १४ नमस्य,
१५ शान्ति, १६ षट् कर्मा, १७ ग्रहभूषण, १८ मोक्षस्तिक,
१९ मोक्षतः, २० ज्ञानो और २१ कार्त्तिक । *

और भी कहा गया है, कि यज्ञोंकी पूजाके लिये
शास्त्रोंमें ब्रह्मोंके मुखसे दक्ष उत्पन्न हुए थे, उनको
नियत हो ब्राह्मण समझना चाहिये । सत्ययुगमें ग्रहविप्र,
जो तामें शास्त्रिक ब्राह्मण, द्वापरमें नाडीज्ञ ब्राह्मण और
कलियुगमें निरग्नि ब्राह्मण मूल्य हैं ।

ग्रहविप्रोंके ज्योतिष अध्यापन, पूजा, वेदगायकधन,
यज्ञ, दान-ग्रहण और भिक्षा ये छः प्रकारके लक्षण हैं ।
छः कर्मोंसे वर्जित ब्राह्मणका ग्रहविप्र नहीं कहा जा
सकता ।

जन्मपत्तिना (जन्मपत्र) लिखवा कर जो व्यक्ति
ग्रहविप्रोंको सबसे परिश्रमानुसार दक्षिणा नहीं देते, वे
पितरोंके साथ सो वर्ष तक कुम्भीप्राप्त नामक नरकमें
वास करते हैं ।

देवालिया लोग गणकोंसे और गताय वारि चिकि-
त्सकोंसे द्वेष करते हैं ; गतया वारि और गताय वारि
ब्राह्मणमात्रसे ही द्वेष करते हैं । (ग्रहयामन)

राजमार्गमें निजा है—

“ग्रहविज्ञास्तुष्टवमा वदन्ति यत्तद्व्याहः कर्मभिराचरन्ति ।

सुष्टे तु शुद्धाः सततं भवेयुर्गोशानिषु चरासुपुण्याः ॥

ग्रहयोगतो विप्रो यो हस्तार्थेन बुध्यते ।

यद्व्यवृत्तिं यद्व्यवृत्तिं शान्तिवर्ति ग्रहाः स्वयं ॥

ब्रह्मन् ग्रहमात्राणां ग्रहदानं ग्रहापेनम् ।

ग्रहोपदेष्टिणा च तद्ग्रहब्राह्मणाय वै ॥

दयात्वं सर्वं च तद्व्यवृत्तिं ग्रहमात्रगोत्रनम् ।

इत्येवं ग्रह-हस्त कथ्यादिष्विदं ग्रह- ॥”

ग्रहविप्र समुत्पन्न हो कर आ कुछ कहते हैं, ग्रहगण

* ये इन्द्रोस नाम ब्रह्मापुत्रजन्मों भी दाने जाते हैं ।

विष्णु' दोहास्थित दृष्टा त्रिलोकेश्वरसौ भवेत्,
तस्मात् कार्यं यत् 'सर्वथा दोहादे उत्सव' कुरु ॥" (पद्मा०)
जो उत्सव (कार्तिक मास) में रथ, मधुमास अर्थात् चैत्र
मासमें दोलयात्रा, श्रावण मासमें भूजन, चैत्रमासमें
मदनक शारेप नहीं करते उनको अवगति होती है।
विष्णुको दोहास्थित देखनेसे त्रैलोक्यका उत्सव होना है,
इसलिये अपने सैकड़ों कार्य छोड़ कर दोहाखवके
दिन दोहाखव करना चाहिये।

दोलयात्राका विषय हरिभक्तियानासमें जो लिखा है,
इस प्रकार है—

चैत्रमासकी शुक्लाद्वादश्याके दिन प्रातः कार्य तथा
नित्य पूजादि करके दोहाखव करना चाहिये। इस
दोहाखविके लिये अनेक प्रकारके उपकरणोंदि मंच
करके तथा वैष्णवोंके प्रति सम्मान दिखाना करके नृत्य
गीत आदि द्वारा प्रभुको दोल पर चढ़ाना चाहिये।
अतः उत्सव वहिर्बदिका पर यथाविधि स्थापित करके
पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार पूजा करके एक एक
पक्षमें प्रभुको झुलाना चाहिये और यत्पूर्वक नाना
प्रकारके मद्योत्सव कर दिन और रात जगते रहना
चाहिए। वैष्णव लोग इस प्रकार जागरणादि करके
प्रभुको प्रणाम, प्रार्थना आदि कर दोलवेदिकासे अपने घर
से जाते हैं।

चैत्रमासकी शुक्लपक्षीय छतोया तिथिमें रमापति
विष्णुको दोलपर चढ़ा कर यथाविधि पूजा करके एक
मास तक झुलाते रहना चाहिये।

फाल्गुनमासकी शक्तादिमें यदि उत्तरफल्गुनी नक्षत्र
पड़े, तो उसी दिन दोहाखव करना उचित है।

चैत्र मासको शुक्लनवमीको दिन जो दोल होता है,
उसे रामनवमीका दोल कहते हैं।

फल्गूखव और रामनवमी देखो।

भारतवर्षमें सभी जगह दोलयात्रा वा होलीको धूम-
धाम होती है। विषेयतः युक्तप्रदेश और उत्तर प्रदेशमें
हो होलीका आसोद कुछ अधिक देखा जाता है। दोलके
दिन हिन्दू स्त्रीपुरुष आपसमें धरोर छिड़कते तथा तरह
तरहके रंगोंसे झोड़ा करते हैं। इस प्रकारके बीभक्ष
दृश्य रहस्यमय कालका अभी और दूसरे दूसरे देमो-

में उनका अधिक प्रचार नहीं देखा जाता। कोई कहते
हैं, कि भगवान् विष्णुने शङ्खचूड़ वा होलिकाका वध
कर यह होली-उत्सव किया था। फिर कोई कहते हैं कि,
यहो प्रधान वसन्तोत्सव है। वसन्तागमनमें प्रकृति मती नये
नये सज्जोंसे सज्जित हुई हैं, चेतन प्रचेतन सभी छट-
जगत्के ऊपर प्रकृतिने मानो अपना आधिपत्य प्रतीत किया
है। उनो वासन्तो प्रकृतिकी पूजाके लिये ही इस प्रकारका
प्रतुष्टान हुआ करता है। एक समय यूरोपीय अनेक
सभ्य जातियां भी इस प्रकारका वासन्तिक आसोद प्रतीत
किया करती थीं। पहिले रोमराज्यमें Festum Stul-
torum, Matronalia, Festa Lupercalia Festa
(on the Ides of March), बाचियोत्सव (Feast of
Bacchus), अन्नपूर्णा (Anna Perenna) का पूजन
आदि जो सब मद्योत्सव होते थे, उनमें होली उत्सवको
तरह धूमधाम होती थी। प्रथम तीन उत्सवोंमें युवकगण
उत्सव हो नये हो कर पथमें, घाटमें और मन्दिरमें
उल्लसते कूदते थे। इसके सिवा the Abbot of
Unrcason, the Carnival, the Passover और
the day of All-fools ये सब जो परिश्रमजनक
आसोद यूरोपमें प्रचलित थे, वे इस देशके धरोर-उत्सव
सरीखे थे। एक समय जर्मनीमें भी यन्त्रोंके जैसा होली-
उत्सवका प्रचार था। बाबेनस (Jouannes Boe-
mus suhanus) ने लिखा था कि, 'मभी जर्मनी पान
भोजन और रसरंगमें अपनेकी भूल जाते थे। वे
सोचते थे, कि आजके असा दिन फिर कभी आनेको
नहीं। अचिर्वागिण सुंघ पर नकाश डाल कर, छत्रवेग
बना कर, ममूचे शरीरको लाल और काले रंगोंसे रंग
कर इधर उधर नये घूमते फिरते थे।'

नेवगर्गसने (Naogeorgus) यूरोपीय कार्निभन
(Carnival) नामक जिस उत्सवकी बात लिखी है,
यह ठीक भारतकी होलीके जैसा प्रतीत होता है।
उन्होंने जो कुछ लिखा है, उसके कुछ पंथ नीचे उद्धृत
किये जाते हैं—

"Then old and young are both as much
as guest of Bacchus' feast;
And four days long they tipples, square
feed and never rest.

आये-जाया वेमः की धामन्य रहने है । यहविदेहि
 मृत जाने पर भी मरनेदि घर मुक्त नहीं होती । यहविद-
 मय जन्मादि दामा जो पुताद लोग जाने है तथा जो
 कुछ घरन जाने पर भासन करने है, यहाँ की यहाँ
 मान होता है । यहविदेही पुता जानेमें ही पनीका
 पुता की भासो है । यःकोमं भी कुछ देखिका दा
 यःत है, यह तथा यहसकी समस्त सामग्री परविम
 की देना चाहिये । यहयज्ञमें यहविदेही भीमन
 कराना चाहिये है । इन प्रकार यहयज्ञ जानेमें साम्यादि
 यज्ञ में निवृत्त होते हैं । तत्पश्चात् यहविदेही ।
 देवता (मं० सा०) देवता-टाव । देवता-पयो, प्योतिरा-
 की यो । इसका पयो-मिष्टाका कोर ईदपिका है ।
 यत (मं० जो०) देवतैव साधे चप । १ देवता ।
 देवताओं समूहः चप । २ देवतासमूह । (ति०) देव-
 ताया इदं चप । ३ देवता समूहो । ४ देवता-समूहोप-
 प्रतिमादि । ५ निदलका यह भीम निमये बेटमस्योके
 देवतायाका परिचय होता है ।
 यतस्य (मं० ति०) देवैर्भायं तस्य प्रधानं यय ।
 भाव्याधीन ।
 यतपति (मं० पु०) देवताओं देवाना पतिः इ-तत् ।
 इन्द्र ।
 यत-निमा (मं० सा०) देवताओं देवाना प्रतिमा
 इ-तत् । देवता,समूहोप प्रतिमा ।
 यतरा (मं० पु०) प्रवरसाधिमिद ।
 यतरा (मं० पु० सा०) देवतास्य अठदेवस्य चयय
 द्वाभ्योदित्यात् अठ । अठ देवताका चयय ।
 यति (मं० पु० सा०) देवतस्यापय इव । देवताकी
 मलति ।
 यताय (मं० पु०) पापमन करनेमें उगमिदाह चय-
 भासका नाम, उगमिदो की लोक ।
 यय (मं० ति०) देवता गायें यय । देवता ।
 यदल (मं० ति०) देवदलस्य दायः चप । १ देव-
 दलः दायः देवदलः अतिरय, यतिपताभावात् न
 कः, हिन्नु चप । २ देवदल भस्मिपुव ।
 यदति (मं० पु० सा०) देवदलस्यायय देवदल-
 यय । देवदलका चयय, देवदलकी मलति ।

देवदलान् (मं० पु०) देवदलानि यतिपता इदं चय-
 यने मोनदादित्यात् यति । देवदलान् यतिपता समस्त
 दायोदित्यात् ।

देवदाल (मं० ति०) देवदालोर्विदालः चप । देवदः
 उल्लेखिना मुच्यते ।

देवदीप (मं० पु०) देवः सूर्याभिप्रायिको दीपः । १ यय,
 मय, चयय ।

देवदुर्मिषाक (मं० पु०) देवकी प्रतिपुत्रता, भाव्यको
 योटाह ।

देवद्वायन (मं० पु०) देवका यादू मोर्षे यय, ततो-
 युनि यय । साधेय मोर्ष प्रवर यतिमिद ।

देवद (मं० ति०) देव भाव्यं परं चित्तं यय । देव-
 निवृत्त । इसका पयो ययविषय है ।

देवदय (मं० पु०) दिवि चाकामो भयः देवः देवः
 प्रयः कर्मपा । १ यभायुभ कर्मको निपाता । २ देव-
 यापी । जो भय यभायुभ वाय चाकामन चुने जाय,
 उसे देवदय कहते हैं ।

देवमति (मं० पु० सा०) देवमतस्य अर्थपरय इव ।
 १ देवमत मयिका, चयय । (यति) होय । ततोयुनि
 यय । २ देवमतायन, देवमत ययिका मुपा चयय ।

देवमिति (मं० पु० सा०) देवमिदस्य अर्थपरय देव-
 मित इव । देवमित ययिका चयय ।

देवयति (मं० पु० सा०) देवा देवाया यतो यय तथा-
 यता इव । १ देवाय-ययकारकं चयय । (यति)
 होय । देवयतायन ।

देवयुग (मं० सा०) देवस्य इदं चप, देव युगं कर्मपा ।
 दिव्ययुग । मनुष्यों के चारों युगों के बराबर एक दिव्ययुग
 होता है ।

मनुमें लिखा है कि मनुष्यों के एक वर्ष का देवताओं
 का एक रातदिन होता है । इसी देव परिमाण के बार
 हजार वर्ष का मनुयुग होता है । इस युगकी मर्यादा
 चौर मर्यादा बार भी वर्ष के होती है । चय्याम लोग
 युगोंमें इनकी मर्यादा चौर मर्यादा एक हजार एक भी
 वर्ष कम होते हैं चय्याम लोग हजार वर्षमें होतायुग,
 लोग भी वर्ष चयकी मर्यादा चौर लोग की वर्ष । चयवा
 मर्यादा । दो हजार वर्ष, हाउयुग चौर हजार वर्ष

—fear and shame away ;

The tongue is set at libertie, and hath no kind of stay.

All things are lawfull then and done, no pleasure pass'd by.

That in their minds they can devise, as if they then should dies,

Some naked run about the streets, their faces hid alone,

With-visars close, that so disguised they they may of none be known

* * * * *
No matron old nor sober man can freely by them Come”*

नेवगर्गसने जैसा विवरण लिखा है, हन्दावनमें भाज भो होनो-उत्सवमें वै मा ही वीमल व्यापार हुआ करता है। वहाँ आवाजतुहवनिता मानसम्भ्रम मोकलजा छोड़ कर इस उत्सवमें उत्सव हो जाते हैं। इस समय पच्छे हुरका गान नहीं रहता। भवोर लगा कर नाना रंगीमि भूयित हो कर वे पछोल भाषामें गान करते, बाजा बजाते तथा दधर उधर चकर लगाते हैं। इस समय बहुत सी हिन्दू-स्त्रियाँ दरवाजा बन्द किये रहती हैं। रंगमें रंगो जानिके भयसे वे बाहर नहीं निकलतीं। पर हाँ, घरके भीतर भो फाग खेलने, भवोर-गुलाब चढ़ाने तथा नाच गान करनेसे वे बाज नहीं पातीं।

विशेष विवरण दोली अधूरे देखो।

दोलहा (हि० वि०) दो लहँका, जिसमें दो लड़े हैं।

दोलहो (हि० पु०) दुलही देखो।

दोला (सं० स्त्री०) दोल्यतेऽस्यामिति, दोलि-घञ-टाप्। १ उद्यानमें क्रोड़ाके निमित्त काठादिमय हिन्दोलक, हिंडोला, झूला। २ यात्राखट्टा, डोली। इसका प्रयोग—महोदय, दोलो, खट्टाला, दोलिका, घोष और हिन्दोला है दोलाद्वारा भ्रमणगुण—वातकोप, चहकाल स्वयं और वस्तुनिवारक है।

हयवीरपञ्चरात्र, ज्ञानरत्नकोष और विग्रहकर्मयन्त्रिणमें दोलिकायानकी निर्माण-प्रणाली लिखी है।

दोलायन्त्र (सं० पु०) वयोका एक यन्त्र। इसको सरा-धतासे वे औपधियोंके पक्ष उतारते हैं। एक चढ़ेमें कुछ तरलपदार्थ भर कर उसे भाग पर चढ़ाते हैं। घड़ेके मुँह पर एक लकड़ी रखी रहती है उसी लकड़ीमें बाँध कर कुछ औपधियोंकी घोटलीको इस तरह लटकाते हैं कि वह घोटली उस तरल पदार्थके बीचमें रहे, मगर घड़ेकी पंटीसे न छू जाय। इस तरह उन औपधियोंका पक्ष उस तरलपदार्थमें उतर पाता है।

दोलायमान (सं० त्रि०) दोनां करोति दोला-कण्ड, ततः गानच्। दोलनयिगिट, झुनता हुआ, झिलता हुआ।

दोलायमान गोविन्द, मधुस्थित, मधुसूदन और रयस्थित धामनका दर्शन करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता है।

दोलायुद्ध (सं० स्त्री०) दोलेय युद्ध। अनियत जयपराजययुक्त युद्ध, यह लड़ाई जिसमें बार बार दोनों पक्षोंकी हारजित होती रहे और जबदे किसी एक पक्षकी अंतिम विजय न हो।

दोलिका (सं० स्त्री०) दोला-स्त्राय कन् टाप् पत इत्वं। हिन्दोला, हिंडोला, झूला। २ डोली।

दोलो (सं० स्त्री०) दोल्यतेऽनया दोलि-इन् ततो डोप्। दोला, डोली।

दोलोत्सव (सं० पु०) दोल्योत्सव का एक त्योहार। इसमें वे अपने ठाकुरजीके मूर्तियोंके हिंडोले पर सजाते हैं। यह उत्सव फागुनकी पूर्णिमाके मनाया जाता है।

दोल्का—पहमदाबादसे ११ के।म दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित एक शहर। यहाँ दो सुन्दर मस्जिद हैं जो लगभग १५ फुट चौंवे हैं। मस्जिदका सम्पूर्ण भाग ५ गुम्बज और तीन शुभ्रयुक्त दीवारसे घिरा है।

दीवाहार—हादय माद्राका नाव।

दोम (हि० पु०) एक प्रकारका फल। इसका व्यवहार रंग बनानेमें होता है।

दोगमान (फा० पु०) कसार्का अंशका वा तोलिया।

दोशावा (फा० पु०) १ दोषवर्तियोंका शमादान, दोषोंकी दीवारगौर। २ भाग धानका लकड़ी। इसमें दो शब्दों होती हैं और फाको बाँधकर भाग काममें हैं।

दोशाका (हि० पु०) दुशाका देखो।

दोष (सं० पु०) दुष्यते इति दुष प्रेक्षत्ये बिष् भावे ङञ्। १ दुष्य, दुरापन, खराबी, दुष्ट।

कलियुगका प्रमाण है। मनुष्यों के ये हो चार युगों की संख्या है। इसका बारह हजार वर्ष देवताओं का एक युग होता है।

दैवयोग (सं० पु०) देवस्य योगः फलोन्मुखतया सम्बन्धः।

भाग्यका आकाशिक फल, संयोग, इतिहासक।

दैवरय (सं० पु०) देवरयस्य देवरय-अण्। देवरय-सम्बन्धो।

दैवराजिक (सं० त्रि०) देवराज भवः काश्चादित्यात् ठञ्।

दैवराजभक्ष, जो देवराजसे उत्पन्न हो।

दैवराति (सं० पु० स्त्री०) देवरातिस्थापतः इञ्। १ देवरातिका अपतत। २ जगत्काराजके पिता।

दैवल (सं० पु०) देवस्यस्थापतः शिवादित्यात् अण्।

दैवल ऋषिका अपतत वा सन्तति।

दैवलक (सं० पु०) देव देवयोगिन् याति शृङ्गानि पूज्यत्वेन कुक्षितार्ये वा क। १ भूतसेवक। देवलकस्य इदं अण्। २ देवल सम्बन्धो।

दैवसेवक (सं० पु०) दैव देवनिमित्तप्रभाशम् निष-
तीति सिद्धि-युज्। भौहृत्सिक्त, गणक, ज्योतिषो।

दैववश (सं० पु०) देवानां देवानां वशः इ-तत्।
देवताओं का वश।

दैववर्ष (सं० पु०) देवताओं का वर्ष जो १११५२१ सौर
दिनों का होता है।

दैववग (हिं० त्रि० वि०) अक्षस्मात्, दैव योगसे।

दैववगात् (हिं० त्रि० वि०) दैववग देखो।

दैववाणो (सं० स्त्री०) दैवी आकाश-सम्बन्धिनो वाणो।

१ आकाशवाणो। इसका पर्याय—विशक्ति, सुषुम्नकटी।

दैवप्रश्न और उपन्युति है। २ संकतवाक्य।

दैववादी (सं० पु०) १ यह जो भाग्यके भरोसे रहता
हो। २ निरुद्योगी, आलसी।

दैवविद् (सं० पु०) दैव वेत्ति विद-क्लिप्। दैवज्ञ, गणक,
ज्योतिषो।

दैवविवाह (सं० पु०) स्मृतियों में लिखे पाठ प्रकारके
विवाहों में से एक।

दैवगमि (सं० पु० स्त्री०) देवगमिणोऽपत्यं ततो वाह्या-
दित्यात् क्तिञ्। देवगमिका अपतत।

दैवग्राह (सं० पु०) देवताओं के उद्देश्यसे किये जानेका
ग्राह।

दैवगर्ग (सं० पु०) देवः गर्गः कर्मधा०। देवादि
गर्गभेद, देवताओं की सृष्टि। इनके अन्तर्गत पाठ भेद
हैं—ब्राह्म, प्राशापत्य, ऐन्द्र, पैत्र, गाम्भर्व, यक्ष, राक्षस
और पैशाच।

दैवसृष्टि (सं० स्त्री०) देवस्योद् अण्, दैवो सृष्टिः
कर्मधा०। स्वयम्भू कृत देवताओं की सृष्टि।

दैवस्थान (सं० पु० स्त्री०) देवस्थानस्य ऋषेरपत्यं इञ्।

दैवस्थान ऋषिका अपतत।

दैवद्वय (सं० पु०) देवद्वयस्य देवद्वयनामक ऋषिर-
पतस्य क्तावाः ऋषादित्यात् अण्, यङोत्पुप्। देवद्वयके
समस्त छात्र।

दैवहोम (सं० त्रि०) देवेन भाग्येन होमः इ-तत्। शुभ-
भाग्यहोम, जिसके भाग्यके कोई शुभ लक्षण न हो। जो
अतन्त्र व्यसनी, अधर्मी और तीर्ण उत्पातसे उत्प्रेक्षित
है, वे ही दैवहोम हैं।

दैवाकरि (सं० पु०) दिवाकरस्यापत्यं सुमान् दिवाकर-
इञ्। १ शनि। २ यम। (ज्यो०) इ यमुना।

दैवागत (सं० त्रि०) आकाशिक, सहस्र होनेवाला।

दैवागारिक (सं० त्रि०) देवागारे नियुक्तः 'तव नियुक्तः'
इत्यधिकारी ठक्। देवागारमें नियुक्त, जो देवालयमें
नियुक्त हुआ हो।

दैवात् (सं० अर्थ०) इडात्, अक्षस्मात्, अचानक,
इतिहासके।

दैवाल्य (सं० पु०) दैवकृतोऽप्ययः उत्पातः। दैवकृत-
उत्पात, अचानक आपसे आप होनेवाला अचर्य।

दैवादिक (सं० पु०) दिवादिगण्ये पठितः ठक्। दिवा-
दिगण्यपठित धातु। दिवादिगण्य धातुमें जो सब धातु
है, उन्हें दैवादिक कहते हैं।

दैवाष्टप (सं० पु०) अष्टका गोत्रापत्य।

दैवारिप (सं० पु०) देवारिणं वसुरान् पाति आश्रय-
दानेन पाक देवारिणः समुद्रः तत् भवः अण्। यद्।

दैवान्—भारतीय पद्यविशेष। अंगरेजों गकुनयाफ्तमें
यह दण्डोपवेशो पद्यो जातिके मध्य टुरीडो (Tur-
didao) ग्राष्काको रुटिसेल्लिनो (Raticellini) सद्य-
ग्राष्काके अन्तर्गत कप्सिकस (Copsychus) विभागके
मध्य गिना जाता है। इसका नाम कप्सिकस सलेरिस

“अदाता वंशदीयेण कर्मदोषोद्धारितां ।

उन्मादो मातृदोरेण पितृदोरेण मूर्खता ॥” (वाणवप ४८)

वंशदीपये चदाता, कर्मदीपये दरिद्र, माछदीपये उन्माद और पिछदीपये मूर्ख होता है ।

दुष्टत्यनेनेति दुः करणं घञ् । २ पाप, जिससे मनुष्य दूषित होता है, इसे दीप कहते हैं । इसीसे दीपका नाम पाप पड़ा है । ३ वैद्यकके अनुसार शरीरमें रहनेवाले चान, पित्त और कफ जिनके कुपित होनेसे शरीरमें विकार पथवा व्याधि उत्पन्न होती है । ४ जो बल, गायका बलका । ५ अभियोग, लगाया हुआ अपराध, साक्ष्य । ६ नव्यन्यायमें यह त्रुटि जो तर्कके अवयवोंका प्रयोग करनेमें होती है । यह तीन प्रकारकी होती है—पतिव्याप्ति, पथ्याप्ति और असद्वभाव । ७ न्यायके अनुसार वह मानसिक भाव जो मिथ्या ज्ञानसे उत्पन्न होता है और जिसकी प्रेरणासे मनुष्य भले या बुरे कामोंमें प्रवृत्त होता है । ८ भागवतके अनुसार घात वस्तुओंमेंसे एकका नाम । ९ प्रदीप । १० अपराध, कसूर, लुप्त । ११ अपकर्ष—प्रयोजक वस्तुनिष्ठ धर्मभेद, साहित्यमें ये बातें जिनसे काव्यके गुणमें कमी हो जाती है ।

साहित्यदर्पणमें लिखा है, कि रसपक्षपातका नाम दीप है । यह पहले पाँच प्रकारका है—पददीप, पदांगदीप, वाक्यदीप, अर्थदीप और रसदीप । पाँचो दीप पुनः नाना भागोंमें विभक्त हैं ।

पददीप और पदांगदीप १६ प्रकारके हैं—दुःख, त्रिविध असौख्य, अनुचितार्थ, अप्रयुक्तता, घाम्य, अप्रतीत, सन्दिग्ध, नेपथ्य, निहतायता, अवाचकत्व, क्लिष्टत्व, विरह, अतिकारिता, अविश्रुत विषयांश, निरर्थक, असमर्थत्व और व्युत्पत्तिकारिता ।

जहाँ पर अतिशय परवर्णनका प्रयोग रहता है और उस परवर्णन-प्रयोगके कारण श्रुतिका अत्यन्त दुःखावह होता है, अर्थात् सुननेमें बहुत कैठोर लगता है वहाँ पर दुःखदीप होता है ।

अनुचितार्थ—जहाँ पर अविभाज्य शब्दका प्रयोग नहीं होता, वहाँ पर यह दीप होता है ।

अप्रयुक्तता—प्रसिद्ध अविवरण जिसका प्रयोग नहीं करते अर्थात् जो शब्द अभिधानमें हैं, किन्तु साधारण स्थानमें जिन

का प्रयोग नहीं है, उन सब शब्दोंका प्रयोग करनेसे अप्रयुक्तता नामक दीप होता है ।

अप्रतीतत्व दीप—जो सब शब्द एक देशमें प्रसिद्ध हैं, उन सब शब्दोंका प्रयोग करनेसे यह दीप होता है ।

सन्दिग्धता—जहाँ पर अर्थबोधक कालमें निश्चयरूपसे अर्थ प्रतीत नहीं होता, वहाँ पर यह दीप लगता है ।

घाम्यतादीप—अपकृत भाषाओंमें जो शब्द व्यवहृत होता है, उसे घाम्यशब्द कहते हैं और जहाँ पर घाम्य शब्द प्रयुक्त होता है अथवा घाम्यार्थबोधक पदकी रचना होती है, अर्थात् किसी प्रकार चमत्कारित वर्णित न हो कर केवल अर्थन समनादि चिन्तादिमें पर्यवसित होता है, वहाँ पर घाम्यशब्दका प्रयोग दीपरूपमें गिना जाता है ।

निहतायता—अनेकार्थक शब्दका अप्रसिद्ध अर्थमें प्रयोग करनेसे निहतायदीप होता है अर्थात् उभयायक शब्दका अप्रसिद्ध अर्थमें प्रयोग करनेसे यह दीप लगता है ।

क्लिष्टता—जहाँ पर अर्थबोध करनेमें कष्ट होता है वहाँ पर यह दीप होता है ।

विरहमतिकारिता—जहाँ पर विरहाय का बोध होता है अर्थात् विपरीत बुद्धिके अनुसार अर्थका बोध होता है, वहाँ पर यह दीप लगता है ।

निरर्थकता—जो शब्द केवल श्रोतके पादपूरणार्थ प्रयुक्त होता है तथा जो अर्थशून्य है, उसका प्रयोग करनेसे ही यह दीप होता है ।

वाक्यगतदीप २१ प्रकारका है—वर्णप्रतिकूलता, सुप्तविषयता, आहतविषयता, अधिकपदता, व्युत्पत्तिपदता, इतच्छ्रुता, पतत्प्रकृतता, सहचरभिरता, सन्धि-विशेष, सन्ध्यश्रुता, सन्धिकटता, अर्थान्तरैकपदता, समासपुनरावृत्तता, अवयवसमन्वय, पक्षप्रमता, अमत-पदार्थता, वाच्यमभिधान, अमनप्रकृतता, प्रसिद्धित्वांग, अज्ञानमें पदव्यास, सङ्कोचता, गर्भितता कथितपदता और अज्ञानमें समासव्यास ये सब दीप केवल वाक्यगत ही हुआ करते हैं ।

प्रतिश्रुतवचनता—जिस रममें जिन अर्थोंका प्रयोग करना उचित है, वहाँ उनका प्रयोग न कर यदि विप-

(*Chrysomela sinensis*) है, मायापत्ता चंदीकीमें
इसे मायाई के दिन (*Maya—Din*) कहते हैं।
भायगर्भमें यह निच निच आसोमें दुमारा जाता है।
हिन्दीमें इसे देवाप, मयारमें देवाल, मेलगुमें पिदान,
अथवा महेलागडू, मेलगुमें कविटकी और जड़में महे-
लपदे कहते हैं।

यह पत्ता देवदेवीं सुन्दर होता है। इसके मरवा
निर, छाने, मया और चन्द्री भायके पर निचकुल काये
पेट और पूंछके निचल पर महेल और देवी आसोमें
है। मायाई जेमें और पूंछ धूमा रंगकी होती है,
मेलिग या महेल जैसा महेल होता है। इसकी पाँच
छानों और छह महेल होती हैं। मयमा मारन और
मोलागिण पर्वता प्रदेगमें इस पत्तीके ममी मरने एक
प्रकारके होते हैं। मेलगिग प्रदेग तथा मिचलमें वनमें
वन पड़ भा जाता है, तो भी इसका अन्धाविभाग नहीं
होता जाता। यह पत्ता मिनुटेम और पञ्जाब-काश्मीरमें
उत्ती भा देता नहीं जाता तथा निकोबार द्वीपमें भा
यह नहीं मिलता है।

देवाल कीड़े मकीड़े तथा चगाय या कर चउगा
पेट घातता है। मैमागमे मै कर ग्यायन लठ माता
उपकोटर भा दीशमने छेदमें चंडि धारता है, एक एक
भाय ४५ चंडि देती है। यह पत्ता बहुत चामानीमें दोन
मायता है। इसकी बीसी बड़ी मोठी होती है। मैमा
और मोतीकी तरह यह भी मनुष्यको बीसी प्रमाहता और
पीयता है।

देवापुर (मं० छी०) देवापुर मेरे पच्। १ देवता
और चतुर्गोत्री मरता। देवापुरमन्त्री देवताय चतुर्गोत्री
पच्चाय ना विमुवादिताएय, २ देवापुरमन्त्रीय
चतुर्गोत्री ना पच्चाय।

देवादीश (मं० पु०) देवः देवमन्त्रीय पच्चायः।
देवतादीश एक दिन भी मनुष्यका एक वर्ष
देता है।

देविक (मं० ति०) देविक पच् देवे भयो वा दृक्।
१ देवमन्त्रीय, देवतादीश। देवदुर्गय मनुष्य या
दृक्, २ देवतादीश महेलमें हिंदी जमिका भाव।

देवी (मं० दी०) देवय १० देवपय, लोकोटय, १

१ देवमन्त्रीय। २ देवविवाह द्वारा पवित्रता को, महे
को जो देव-विवाह द्वारा पवित्रता महे हो। ३ देविका-
विमेय। देवी, चातुरी और मातुको देवीन प्रचारकी
देविका है। देव-कोटय, ४ देवीय मन्त्रीय है।

इस मन्त्रीयमें मोतीकी प्रकृति लोण प्रचारकी है—
देवी, चातुरी और रायकी। ये मोती लमका मय, रज
मन्त्रीयमें निकले हैं। इन्हींमें मोती की प्रकृति का
उत्तराय मे कर मन्त्रीयय करने, उत्तरी चातुरीयति वा
मुखादि होती है। यमय, मयमन्त्रीय, प्राग और योमके
विषयमें निडा यकी देवी है। उत्तरायनादि ममी पवि-
त्रता और मय प्रचारके पवित्रय मया प्रतिपदादि की
परित्याग कर केवलमाय चरेमा में इस तरह जामित
रम्भा, इस तरह मिमय की कर आ रचता है। उन्हींमें
एक प्रकारके ललाहविमयका नाम चमय है। चम-
करकी निमलता यदीय मन्त्रीययके चातुरीय पवि-
रपुरयकी उपयुक्तता को मयमन्त्रीय है। चातुरीयदि
प्रचारके चातुरीय प्रकृति लायके पदय कर आ मन्त्रीय-
विमय लायकी होता है, उन्हींका प्राग कहते हैं। उप-
प्रागकायमें पवित्रय करानेके निचे यदीय देवादि महे
पदायके चातुरीय चातुरीयके चतुर्गोत्रीय निचे भी चित्तै।
एकपत्ताका यदीय निडा जाता है, उन्हीं योग कहते हैं।
किर इस प्रागके योगमें मन्त्रीय निडा रचनेका नाम
प्रागयोगनिडा है। यदीकी देवीमन्त्रीय कहते हैं। ये
मय परममन्त्रीयमें मन्त्रीय निडाय होते हैं। दाम
महि, दमगहि, यममन्त्रीय चातुरीय-प्राग और लय मात
ये मा देवीमन्त्रीय है। ये यदीयमन्त्रीय चतुर्गोत्रीय की
विचरित होती हैं। इसमें विवा चातुरीय, चंडिगा, माय,
पच्चाय, रवाग, माति, यदीय, मयभूगदाय, चतुर्गो-
दय, मनुष्य, लला, यदीय, मैर, चमा, छान, मोय
पार चमगिनादि मन्त्रीय भा देवीमन्त्रीय कहलगे
है। यह देवीमन्त्रीय प्रागकादि चतुर्गोत्रीय भा निच-
मित हो मकता है। आ पूव जमके यदीयप्राग देवी
प्रकृति का बीज के कर मन्त्रीयय करने, उत्तरी पवि-
त्राममें बहुत कुछ मयावता या कर ये मय मन्त्रीय पवि-
रपुर होता है। २ एक मन्त्रीय मन्त्रीय।

देवी (हि० जि० वि०) १ देवमन्त्रीय। २ देवमन्त्रीय,

रोग वर्णों का प्रयोग द्विवचन में, तो वहाँ प्रतिज्ञानवर्णन दोष लगता है।

सुप्रविमर्गता—जहाँ पर केवल विसर्ग का लोप करने पदका प्रयोग किया जाता है, वहाँ यह दोष होता है; जैसे "गता निग्रा इमा वासे" यहाँ पर "गताः" 'निग्राः' 'इमाः' इन तीनों पदका विसर्ग लोप कर प्रयोग किया गया है, इसीसे यह दोष हुआ।

धातु-विमर्गता—जहाँ पर विसर्गों का भोकार करके पदप्रयोग किया जाता है, वहाँ पर यह दोष लगता है यथा—"धैरो धरो नरो याति" यहाँ पर 'धैरः' 'धरः' 'नरः' इन तीन पदोंके विसर्गके स्थानमें भोकार करके प्रयोग किया गया है, इसीसे यह दोष हुआ।

अधिकपदता—जहाँ पर दो एक पद अधिक रहते हैं, वहाँ पर अधिकपदता दोष होता है। यथा 'पल्लवाक्षति-रहोष्ठी' यहाँ पर 'रहोष्ठी' इसका प्रयोग करनेसे ही काम चल जाता, किन्तु 'पल्लवाक्षति' यह पद अधिक हुआ है, इसीसे यहाँ पर यह दोष हुआ।

न्यूनपदता—जहाँ पर दो एक पद हीन हो, वहाँ पर न्यूनपदता दोष होता है।

कमागुनरासता—जहाँ पर वाक्य अर्थात् कर्त्ता, कर्म और क्रियादिका दोष करके पुनः पद वा वाक्य गृहीत होता है, वहाँ पर यह दोष लगता है।

दुष्कमता, सन्धिस्थता, अनुचितता, सहचरभिरता, अर्थपुनरुक्तता आदि भेदसे अर्थदोष नाना प्रकारका है।

दुष्कमता—क्रमविपर्यायको जगह दुष्कमता नामक दोष होता है अर्थात् जिस क्रमसे कहा जाता था, उसके विपरीत भावमें कहनेसे यह दोष होता है, यथा—

"द्विहि मे वाजिनं राजन् गजेन्द्रं वा मदावधे ।"

राजन् । मुझे एक भयंकर अथवा एक भल्य उत्तम गजेन्द्र दीजिये; यदि यह न दे सके, तो उसके बदलेमें राज्य का अर्पण या राजमहिमासना का धिपत्य हो दीजिये।

यहाँ पर याचकोंको चाहिये था, कि वह पहले सिंहा-सनाधिपत्य लिये, उसके नहीं मिलने पर गजके लिए और समझसे थोड़े एक भयंकर के लिए प्रार्थना करता, लेकिन यहाँ पर उसका विपरीत हुआ है। इस कारण दुष्कमता दोष लगा।

व्याहृतता—पहले किसी विषयके संक्षेप या संयोजन का वर्णन कर थोड़े समयका प्रतिपादन करनेसे व्याहृतदोष कहते हैं।

अनुचितता—देय काल प्राप्त व्यवहारादिसे विपरीत वर्णनको जगह अनुचितता दोष होता है।

कालानौचित्य—भाषिकालकी घटनाकी घतीत वर्त्तमान कालकी घटना माननेसे यह दोष लगता है।

सहचरभिरता—उत्तम वस्तुके पर्यायमें अधम वस्तुका अथवा अधमवस्तुके पर्यायमें उत्तम वस्तुका समावेश होनेसे सहचरभिरता नामक दोष होता है।

अर्थपुनरुक्तता—जहाँ पर एक विषयका बार-बार वर्णन देखा जाता है, वहाँ पर अर्थपुनरुक्तता दोष लगता है।

प्रसिद्धिविह्वलता—आकाश और पापमें मलिनता, यम धवलता, क्रोधमें रक्तिमा, वर्षाकालमें हर्षिका मानस सरोवरमें गमन, कन्दर्पका पुष्प-धनु, भ्रमरपङ्क्तिमें लब्धा, पक्षवाण, कामगार और शिखरोंके कटाक्षमें युवजनों हृदयभेद, दिवसमें पद्मोन्मेष और कुसुदनमौलन निशाकालमें पक्षका निमोलन और कुसुदका प्रकाश सूर्यको प्रिया पद्मिनी और छाया, चन्द्रप्रणयिणी कुसुदिनी और तारकावली, मेघगर्जनमें मयूरीका नृत्य अक्रवाक मिथुनका रात्रिविरह, कामिनीके शरवाघातमें अशोकपुष्पका विक्राय और उनकी सुखाभ्युत्थने वकुलका उदम, वसन्तकालमें जातोपुष्पका अदम्य, चन्द्रनतक फलपुष्पहोन ये सब कवियोंको प्रसिद्ध हैं। इन प्रसिद्ध विषयोंका व्यतिक्रम वर्णित होनेसे ही प्रसिद्धिविह्वलता नामक दोष होता है।

अनुचितस्थिति—जहाँ पर व्याकरणदृष्ट शब्द देखा जाता है, वहाँ पर अनुचितस्थिति दोष होता है।

असमर्थता—जिस शब्दमें जिस अर्थका बोध नहीं होता है, उस अर्थमें उस शब्दका प्रयोग करनेसे असमर्थता नामक दोष होता है।

निरर्थकता—जो शब्द केवल शोकके पादपूर्वाभास प्रयुक्त होता है और जो अर्थगूण है उसका प्रयोग करनेसे यह दोष होता है।

रहदोष—कुरुणादि रस, शोकादि स्थायिभाव और निर्वेदादि व्यभिचारिभावके वर्णनकालमें यदि स्व स्व नाम निर्देशपूर्वक उस रसादिका वर्णन किया जाय, तो उसे स्वशब्दवाच्य दोष कहते हैं।

विरुद्धरसभावदोष—जिस रसमें जो स्थायिभावादि प्रतिकूल है, उस रसमें उसका वर्णन होनेसे विरुद्धरस नामक दोष होता है।

चरणादोष—जहाँ पर चार चरणोंके मध्य तीन चरणोंमें यमक है, एक चरणमें नहीं, वहाँ यमकदोष लगता है। उपमासङ्गारमें उपमान और उपमेयगत जाति प्रमाण और गुणादिको न्यूनता, अधिकता वा अनो-विषादिके घटनेसे उपमादोष होता है।

रौतविपरीत—जिस रौतके अनुसार सचराचर प्रयोग देखा जाता है, यदि उसका विपरीत देखा जाय, तो उसे रौतिविपरीत नामक दोष कहते हैं।

यद् शब्दका प्रयोग करनेसे तद् शब्दका प्रयोग करना ही होगा। किन्तु जहाँ केवल तद् शब्दका प्रयोग है, वहाँ यद् शब्दको लक्ष्य नहीं। प्रसिद्धादिमें तद् शब्दका प्रयोग हुआ करता है। किन्तु केवल यद् शब्द रहनेसे तद् शब्द देना ही होगा, नहीं देनेसे बाक्य शेष नहीं होगा।

दूरान्वयदोष—जहाँ पर कर्मकर्ता आदि कारक निज क्रियाके संचित न हो कर अन्य वाक्यान्तमें भयवा बहुत दूरमें देखे जाय, वहाँ दूरान्वयदोष हुआ करता है।

हृन्दीदोष—हृन्दीदोष नामा प्रकारका है जिसमेंसे अधिकार, न्यूनार और यतिमङ्ग आदि भेदसे कोई प्रकार देखे जाते हैं। इनमेंसे जो सब प्रसिद्ध हैं उनका केवल पद्यमें व्यवहार होता है, गद्यमें नहीं। यदि उनका व्यवहार गद्यमें किया जाय, तो दोष लगता है।

अश्लीलादोष—सुरतारम्भ और गोष्ठादिमें अर्थात् जहाँ पर सभोगार्थ की-पुरुष समीप दृष्टि हुए हैं, वहाँ यह दोष गुण हुआ करता है, अर्थात् ऐसे स्थान पर अश्लीलाका वर्णन करनेसे दोष नहीं होता।

निहतार्यता और अप्रयुक्ता दोष श्लेषादिकी जगह दोषरूपमें गिना नहीं जाता। यन्त्रा और श्रोता यदि

दोनों ही आरम्भ विषयसे जानकार हों, तो अप्रतीतता-दोष गुणरूपमें गिना जाता है।

जहाँ पर स्वयं किसी विषयका परामर्श अर्थात् कथन होता है, वहाँ पर अप्रतीततादोष नहीं होता।

विहितके अनुवात्यत्व, विषाद, विस्मय, क्रोध, दैन्य, लाटानुप्रास, अनुकम्पा, प्रसादन, हर्ष, अवधारण और अर्थान्तर संक्रान्तिके वर्णनमें पदतादोष गुणस्वरूप गिना जाता है।

व्याजमुक्तिका वर्णन करनेसे सन्दिग्धतादोष नहीं होता, बल्कि वह गुणमें गिना जाता है।

व्याकरणविद्वत्का प्रतिपाद्य विषयका वर्णन करनेसे कट्टा और दुःश्रुतता दोष नहीं होता। मोक्ष लीलाका चर्चिके वर्णनको जगह आभ्युदयका प्रयोग दोष न हो कर गुण होता है। प्रसिद्ध अर्थमें निश्चितता दोष नहीं लगता।

आनन्द प्रभृतिमें मन्त्र व्यक्तियोंका कभी भी न्यून-पदता दोष न हो कर गुण हुआ करता है।

विषाद, विस्मय, दैन्य और हर्ष प्रभृतिकी जगह पुनरुक्ति दोषरूपमें गिनी नहीं जाती।

स्वाय विद्यावत्तादिके परिचयकी जगह क्लिष्ट शब्दका प्रयोग भी गुण होता है।

पद्यपुराणके पातालखण्डमें ३२ प्रकारके दोषोंका विषय लिखा है—

यान वा पादुका द्वारा देवशृङ्गमें गमन, देवताके पहने सेवा, देवताके समोपमें प्रमाण नहीं करना, अशोच अवस्थामें और छिच्छट द्रव्योंसे भगवद्दर्शन, एक हाथसे प्रणाम, एक बार प्रदक्षिण, देवताके आगे पादप्रसारण, पर्यङ्कन, गमन और भक्षण, मिथ्याभाषण, अति उच्चस्तरसे कथन, वृथाज्ञाप्य, रोदनादि, विग्रह, निग्रह और अनुग्रह, स्त्रियोंके साथ क्रूरभाषण, कर्मसावरण, परनिन्दा, परशुति, गुरुजनके प्रति मोनावलम्बन और देवताओंको निन्दा ये सब दोष दद्यात् हैं। आततायि-शत्रुका यदि वध किया जाय, तो उसमें कोई दोष नहीं लगता।

दोषक (सं० पु०) दोष एव स्वर्यं कन्। गोपक, गोक्षा वक्षा, वक्ष्णु।

दौशर्म्य (स० स्त्री०) दुयर्म्यो भावः यज् । स्वभावतः भनाट्टकमैदृ, एक प्रकारका रोग जो जन्मसे ही होता है । मनुने लिखा है, कि जो गुरु-पत्नी हरण करता है, उसीको यह रोग होता है ।

दोष्क (स० त्रि०) दोषाचरति इति 'दोष उपसंख्यान' इत्यस्य वार्तिकोक्त्या ठन् ततो पठम् । बाहु द्वारा जिघ्रणकारो, जो केवल दोनो 'बाडी' के आधारसे तैरता या पार होता हो ।

दोष्कुल (स० त्रि०) दुष्टं कुलमस्य दुष्कुल स्वार्थे षण् । दुष्टकुलयुक्त, जिसका कुल खराब हो, निन्दित वंशका ।

दोष्कुलिय (स० पुं०) दुष्कुलस्यापत्यं तत्र भवो वा ठक् । १ दुष्कुलजात, जिसका जन्म निन्दित कुलमें हुआ हो । २ प्रत्यिपण् मूल ।

दोष्कुल्य (स० त्रि०) दुष्कुल-यज् स्वार्थे णत् वा । दुष्टकुलयुक्त, निन्दित वंशका ।

दोष्कृत्य (स० स्त्री०) दुष्टता, मन्द स्वभाव ।

दोष्टव (स० स्त्री०) दुष्टोः अविवेकितस्य भावः षण् । अविवेकित, दुष्टका व्यवहार ।

दोष्पद्वय (स० स्त्री०) दुष्टः पुरुषः तस्य भावः स्वार्थे वा यज् । १ दुष्ट पुरुष, खराब आदमी । २ दुष्ट पुरुषका भाव ।

दोष्मन्त (स० पुं०) दुष्मन्तस्यापत्यं शिवादिवादाद्यन् । दुष्मन्त राजाका अपत्य, दुष्मन्तका पुत्र भरत ।

दोष्मन्ति (स० पुं०) दुष्मन्तस्यापत्यं दुष्मन्त-रज् । दुष्मन्तका अपत्य, भरत ।

दोष्मन्थ (स० त्रि०) दुष्मन्तस्यायं ण्य । दुष्मन्त सम्बन्धीय, दुष्मन्तका ।

दोष—राजपूतानिमें जयपुर राज्यके भन्तर्मां ॥ इसी नामको तरसील और निजामतका एक शहर । यह भवा० २६° ५४' स० और देशा ७६° २१' पू०में अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ७५४० है । यहां एक समय चम्बरको राजधानी थी । प्राचीन हिन्दू-मन्दिर और पहालिकापोंके भग्नावशेष पूर्व सम्झिका परिषद देते हैं । १८५६ ई०में सिपाहीविद्रोहके शेषमें विद्रोही-नायक तातिया तोपोको अंगरेजों दो दल सेनाने इसी स्थान सेपर रा था । यहां ७ स्कूल और एक अस्पताल है ।

दोष्ट (स० स्त्री०) दुष्टां स्त्री तस्यां भावः शुवादिवादाद्यन् । दुष्टा स्त्रीका भाव या कर्म ।

दोहिक (स० त्रि०) दोहं षहन्ति ठक् । निःश दोहार्ह, प्रतिदिन दुहनेके योग्य ।

दोहित्व (स० पुं० स्त्री०) दुहितुरपत्यं विदादिवादाद्यन् । १ दुहिताका अपत्य, लड़कीका लड़का, नाती । धर्मशास्त्रमें पौत्र और दोहित्वमें कुल भेद नहीं माना गया है, क्योंकि एक ही व्यक्तिसे पुत्र और कन्या उत्पन्न हुई है । पौत्रके समान दोहित्व भी पिंडदान आदि द्वारा परलोकमें सहाय कर सकता है । जबतक दोहित्व न हो जाय, तब तक पिताकी कन्याके घर भोजन आदि न करना चाहिये, यदि करे तो वह नरकगामी होता है । दोहित्व हो जाने पर भोजन करनेमें कोई दोष नहीं है ।

गूदका दोहित्व दत्तक हो सकता है, किन्तु ब्राह्मणादि तीनों वर्ण यदि दोहित्वको दत्तक ग्रहण करे, तो सिद्ध नहीं होता है । तत्त्व देखो ।

दोहित्व मातामहका धनाधिकारी हो सकता है, दुहिताके नहीं रहते दोहित्व धन प्राप्त कर सकता है । शायभाग देखो । (स्त्री०) २ खट्वादि, तलवार आदि । ३ तिल । ४ गन्धद्वय, गन्धका घे ।

दोहित्वक (स० त्रि०) दोहित्वसम्बन्धो ।

दोहित्ववत् (स० त्रि०) दोहित्वः विद्यतेऽस्य मनुष्यः सम्यक् । दोहित्वयुक्त, जिसके नाती हो ।

दोहित्वायण (स० पुं० स्त्री०) दुहितुरपत्यं शुवा विदादि-त्वात् षज् षधि युनि फक् । दुहिताका युवा अपत्य ।

दोहद (स० पुं०) दोहद, वह इच्छा की श्रियोंकी गर्मिंशी होनेको दमामे होती है ।

दोहदिनी (स० स्त्री०) गर्भवती भारी । गर्भके समय स्त्रीको घपना और गर्भका हृदयसे कर दो हृदय हो जाता है, इसीसे उसे दोहदिनी कहते हैं ।

दाहिवेदी—एक वैदिक पण्डित । इन्होंने १५५० सम्बत् में नीतिमन्त्रो नामक एक ग्रन्थ प्रणयन किया है ।

दागनिराय—हिन्दो भाषाके एक जेनी कवि । इन्होंने सम्बत् १७८० में धरमबिलास, एक्रीमोनभाषा तथा एकी-भवभाषा नामक तीन ग्रन्थ प्रणयन किये ।

धाविद्यवि (स० स्त्री०) दिवस, दिन ।

दीपकर (म० पु०) मकुपह्व ।

दीपद्वय - माघीन गुमवंगीय राजाघोके मन्त्रो । यद्यो-
दस दम वंशके पाटि पुत्र्य ये । ये स्नेह गुमवंगीय
राजाघोके पथोग-विष्य पौर पारिपात्र पर्वतमे पासमुद्र
विष्टन भूमागके पचिपति ये । दीपकुम्भ रविकोर्त्तिके
तोसर पुत्र पौर प्रसिद्ध पमयदत्तके छोटे भाई ये । इन-
के धर्मदीप पौर दस नामक दो पुत्र ये । दस राजा
विष्णुवर्माके यहाँ मन्त्रीका काम करते थे ।

दीपवाही (म० त्रि०) दीप्यं गृह्णाति ग्रह-णिनि । खन,
दुर्ग, दुट । इसका पर्याय - पुरोमागी, डिज्ज पौर
मन्त्रो है ।

दीपघ्न (म० त्रि०) दीप्यं वातादिविकारं हन्ति इम-टक् ।
धायै यस्यरूप दीपनाशक दीपघादि, वह दवा जिससे
दुग्धिन कफ, वात पौर पित्तका दीप शान्ति हो ।

दीपघ्न (म० पु०) दीप्यं कर्षय्याकारणे दीप्यं लानाति
शा-क । १ पण्डित । २ वैद्य, चिकित्सक ।

दीपघ्न (म० त्रि०) दीप्यि भवः दीप-यत् दीपणादेयः ।
बाहुभव, बांहमे उत्पन्न ।

दीपता (म० स्त्री०) दीपका भाव ।

दीपद्वय (स० स्त्री०) दीपाणां द्वयं इ-तत् । वायु, पित्त
पौर कफ ।

दीपत्व (स० स्त्री०) दीपस्य भावः "त्वत्तो भावे" इति
त्व । दीपका धर्म वा भाव ।

दीपपत्र (स० पु०) किसी अपराधीके अपराधीका
विवरण लिखा हुआ कागज ।

दीपपाचन (म० पु०) कपित्थपत्र, कैयका पेड़ ।

दीपवत्प्रवृत्तः (म० पु०) शिगमिगीप, एक प्रकारकी
बामारो ।

दीपमेद (म० पु०) दीपस्य मेदः इ-तत् । शुश्रुतीका इर
प्रकारके दीपोंमेंसे एक ।

दीपन (म० त्रि०) दीप मत्वर्थे निष्पत्ति । दीपयुक्त, जिसमें
दीप हो ।

दीपन (स० स्त्री०) दीप-पक्ष्ण । रात्रि, रात ।

दीपा (म० स्त्री०) दीप्यतेऽभ्यकारेणेति दीप-घञ्-टाप् ।
१ रात्रि, रात । दम-दीपि, टाप् । (शेर्द्विषिः । ख. २।६८)
भागुरि मते टाप् । २ भुज, बांह । दुष्पत्यवेति

दुप-पा (भाः प्रथिनविषि-भा । उन् ४।१०४) इति ध्रुवस्य
उज्ज्वलदक्षोर्ध्वे पा । १ नक्ष, रात्रि । ४ निगामुष ।

दीपाकर (म० पु०) दीपा रात्रौ करो यस्य वा दीपा
करोति दीपा-कृ-वाङ्मकात् ट । १ चन्द्रमा । दीपाणां
पाकरः । २ दीपका पाकर, पचगुण वा ऐश्वरी खान ।
दीपाक्षिणी (म० स्त्री०) दीपां भुजं क्षिप्रातीति क्षिग-
घञ्-गौरादित्वात् डोप् । यनवर्तुषिका, यमहुनमी ।

दीपाङ्गु (म० पु०) दीपाणां कावादीपाणां बहु, य
इव, निरासकत्वात् । चन्द्रानोक्तिः काव्यदीपनिवारक
कार्यधर्मभेद ।

दीपाचर (सं० पु०) चमियोग, लगाया हुआ अपराध ।

दीपातन (म० त्रि०) दीपा रात्रौ भवः दीप टु-
तुट् । रात्रिभव, जो रातमें हो ।

दीपातिन्नक (स० पु०) दीपा रात्रौस्तिन्नक इव । प्रदीप,
दीपक, दीपा ।

दीपान्ध (म० पु०) दृष्टिरागभेद, आँखकी एक बीमारी,
दीपामृत (स० त्रि०) रात्रिमें परिपत ।

दीपामान्य (स० त्रि०) रात समभक्तकर ।

दीपावस्तर (स० पु०) १ पालोका, प्रकाश । २ चमिकी
छपाधि ।

दीपावह (स० त्रि०) दीपयुक्त, दीपपूर्ण, जिसमें
दीप हो ।

दीपास्य (म० पु०) दीपा रात्रिभास्यमिव यस्य । दीपा-
तिन्नकत्वादस्य तथात्वं । प्रदीप, चिराग ।

दीपिक (स० पु०) दीपाः वातपित्तकफाः कारणत्वेन
मन्त्रास्थिनि ठन् । रोग, बीमारी ।

दीपिन् (स० त्रि०) द्युष्यतीति द्युप-घिनुष वा द्युप-णिनि ।
१ दीपयुक्त, अपराधी, कसूरवार । २ पापी । ३ चमियुक्त,
मुजरिम ।

दीपैकद्वय (स० त्रि०) एवैकस्मिन् ननु गुणवद्द्वैदक-
ग्रानमस्येति वा दीपमेव एकं केयव पश्यतीति द्वय-
क्षिप । दीपमात्रदर्शो, जो शुष्प आदिकी न देख कर
केयव दीप ही देखता हो ।

दीम् (स० पु० स्त्री०) दम्पत्येनेन दम् छोनि । बाह, बांह ।
दीपा (हि० पु०) पानीमें जोनेवाली एक प्रकारकी घास ।

धामाधमा (स० स्त्री०) द्योय धमा य दिवो धावा-
देगः । स्वर्गं चोर पृथिवी ।

धावापृथिवी (स० स्त्री०) द्योय पृथिवी च, दिवो धावा-
देगः । स्वर्गं चोर पृथिवी । वृषका वैदिक पर्याय—सध,
पुं० प्री, धियव, रोदयो, चापो, चण्णसी, नमसी, रजसी,
रुदसी, मद्रना, दृतवती, दहृन्, गभीर, गभीर, चोमूनी,
चम्प, पाग, महो, धर्वा, धृत्वी, धादिति, चर्षी, दूर, धमत्,
धवार, धर धोर धार ह ।

धावाभूमि (स० स्त्री०) द्योय भूमिध, दिवो धावादेगः ।
स्वर्गं चोर पृथिवी ।

ध (स० स्त्री०) दिव-उन् क्रिय या द्योति इति द्यु-
जिप् । १ दिन, राज । २ गगन, आकाश । ३ स्वर्ग । (पु०)
४ धनि । ५ धूर्तलोक ।

द्युक् (स० पु०) धेयक ।

द्युकारि (स० पु०) काक, कौवा ।

द्युध (स० स्त्री०) दिवि द्युनि धधति धि निवासे ह । १
स्वर्गलोकधामो । २ सौमित्रल ।

द्युधवध (स० स्त्री०) स्वर्गिय देवताका नाम उधारण ।

द्युन (स० पु० स्त्री०) द्युनि दिवि आकाशे वा गच्छति
गम-उ । १ पयो, चिह्निया । क्षिप्यं जातिवत् डोय ।

(ति०) २ आकाशगामिमात्र, आकाशमें विचरण करने-
वाला ।

द्युगध (स० पु०) द्युयां दिवां वा दिनानां गधः । यक्षो-
को मध्य गतिके साधक धर्म दिन ।

द्युगत् (स० स्त्री०) द्यु-गम-जिप् । शीघ्र, जल्दी ।

द्युधर (स० स्त्री०) दिवि आकाशे धरति धर-उ । १ धर ।
२ पयो ।

द्युध्या (स० स्त्री०) यक्षोरातहसको व्याकरण ध्या ।

द्युत् (स० पु०) द्युत-जिप् । १ किरण । (ति०) २ द्योत-
मान, चमकता दृषा ।

द्युत (स० स्त्री०) द्युत क । द्योतमान, प्रकाशवान् ।

द्युतान (स० स्त्री०) द्युत-आनव वेदे गण्यत्ववात् श्यो-
तज् । द्योतनशील, प्रकाशवान, चमकीला ।

द्युति (स० स्त्री०) द्यत-उन् । १ दीप्ति, कान्ति, चमक ।
२ मोना, क्षति । ३ दिवजत कान्ति, दिवधा नावत् ।

४ रश्मि, किरण । ५ अतुल्य मनुके समय क्षति, एक

अधिका नाम जो अतुल्य मनुके समयमें है । १ नाममें
मुनेके एक पुत्रका नाम ।

द्युतिहर (स० पु०) करोतीति क-घच् द्युतिः करः । १
धुव । (ति०) २ दीप्तिहारक प्रकार, छापक करनेवाला ।

द्युतव (स० पु०) कल्पवृक्ष ।

द्युतित (स० स्त्री०) द्युत-भावो ज्ञ वादुतज्ञात् न धुवः ।

१ दीप्ति, कान्ति, चमक । द्युत कर्षारि ज्ञ । (ति०) २
दीप्तिपुत्र, प्रकाशवान् ।

द्युतिधर (स० पु०) द्युतिं देहगतां कान्तिं धारयति
धनमूर्तत्वाय ध-घच् । १ विशु । (ति०) २ प्रकाश
या कान्तिको धारण करनेवाला ।

द्युतिमधि (स० पु०) चक्रवृक्ष, आकका पेड़, मदार ।

द्युतिमत् (स० स्त्री०) द्युति प्रशंसायां धत्त्यर्थं वा
मत्पु । १ प्रशंसा कान्तिपुत्र, जिसमें चमक वा आभा
हो । (पु०) २ स्त्रायधुव मनुके एक पुत्रका नाम । ३

मेघसावर्ण्यमन्त्रार्थमें धर्तयिंमिद । ४ मददृष्टभेद । ५
मात्स्यदेगके एक राजाका नाम । ७ मियव्रतके पुत्र । इनके

पिताने दक्षे लोचनोपकां मासम-भार सोपा या ।

द्युतिसा (स० स्त्री०) द्युतिः कान्ति सा-क । शोधयिद, एक
प्रकारकी देवा ।

द्युधुनि (स० स्त्री०) स्वर्ग-नदी, गङ्गा ।

द्युन (स० स्त्री०) लग्नसे सप्तमराशि ।

द्युनिवाम (स० पु०) दिवि द्युनि वा निधानो यस्य ।
देवता ।

द्युनिय (स० स्त्री०) द्यु च निगा च तयोः समाहारः ।
यक्षोरात, दिन रात ।

द्युनिवादिन् (स० पु०) द्युनि स्वर्गं निवसतीति वस-
चिनि । देवता ।

द्युपति (स० पु०) द्युनो दिनस्य पतिः । १ दिनपति,
सूर्य । द्युनो स्वर्गस्य पतिः । २ इन्द्र ।

द्युपथ (स० पु०) द्युनो मत्वा इ-तत् । आकाशपथ, स्वर्ग-
मार्ग ।

द्युमधि (स० पु०) द्युनो गगनस्य अधिरिच । १ सूर्य । २
चक्रवृक्ष, आकका पेड़ । ३ परिमोषित तान्त्र, मोषा दृषा
तांवा ।

द्युमत् (स० स्त्री०) द्योः कान्तरस्यादि दिव-मत्पु । दिव
पत्न्यः । कान्तिपुत्र, चमकदार ।

इसका बहुत अधिक अंश पानेमें लूटा रहता है और इसमें एक प्रकारके दाने अधिकतासे होते हैं।

दीसाध (हि० पु०) दुवाध देखो।

दीसाल (हि० पु०) बरमाके हाथियोंकी एक जाति।

यह कुमरियासे कुछ छोटा होता है और साधारणतः लकड़ियाँ आदि दोने या सवारी आदिके काममें आता है।

दीसाही (हि० बि०) जिनमें वर्षमें दो फसले पैदा होतीं।

दीखतो (हि० खो०) एक प्रकारकी मोटी चादर जो विज्ञानिके काममें आती है।

दीप्त (फा० पु०) १ धनु, मित्र, स्नेही। २ वह जिससे अनुचित सम्बन्ध हो, धार।

दीप्ताधली—मुगलसम्राट् के शासनकालमें अधिकृत प्रदेशों पर कब्ज करनेके लिये और अधोल राजाधर्म देय कर वसूल करनेके लिए सूत्राधार रहती थी। दिल्लीसे फरमान पाए बिना कोई भी राजा या नवाब नहीं मानी जाते थे। औरङ्गजेबकी मृत्युके साथ साथ मुगलसाम्राज्य की दृष्टि विस्तृत रहते भी चमताका कास हो गया था। इसी समय दक्षिण प्रदेशमें निजाम-उल-मुल्क सुबादार नियुक्त हुए। वे अपनेकी यहांके एक प्रकारका राजा ही समझने लगे। उनकी चमता पर छेड़छाड़ करनेकी किसीकी शक्ति न थी। कर्णाटक और चर्काटके नवाब यद्यपि दिल्लीके अधोल थे, तो भी उन्हें दाक्षिणात्यके सुबादारके कथानानुसार चलना पड़ना था। नवाब शादतुल्लाहकी कोई सन्तान न रहनेके कारण उन्होंने अपने दो भतीजोंको गोद लिया। बड़े दीप्ताधलीकी कर्णाटका नवाब और छोटे बकराजो की बकरा दुर्गाधिपति बना कर थाप १७२२ ई०में इस नीतसे चल बसे। मरते समय अपनेकी मिय महियो के भाई गुलाम, हुसैनको भी दीवानो देनेकी आज्ञा दे गये थे। इस पर निजाम-उल-मुल्क बहुत खोचने पड़ गये। उनकी पूरी इच्छा थी कि वे अपना प्रभुत्व फौला कर लय राज्यवासन चलावें। मुगलसम्राट् से वे डरते तो नहीं थे, पर उन्हें पचास करके शादतुल्लाह जो शासनकी व्यवस्था कर गये, उसे वे बरदाश्त

कर न सके। लेकिन छठान् ने कुछ कर भी नहीं सकते थे, क्योंकि उस समय दुरानो पठान भारतवर्ष पर चढ़ाई करने आ रहे थे। दिल्लीमें सिंहासनको ले कर बहुत गड़बड़ी चल रही थी। अतः इस समय निजाम-उल-मुल्क उन्हें सब काममें लिपटे रहे। किन्तु उन्होंने पड़व्य करके दीप्ताधलीको फरमान मित्रनें बाधा डाल दी।

दाक्षिणात्यके दिचिनापली और तन्होरके राजा वसुनः दिल्लीके अधोल होने पर भी उनके राजल पक्षण करनेका भार चर्काटके नवाबके ऊपर सौंपा गया था। १७२६ ई०में दिचिनापलीके राजाको मृत्यु होने पर बताया राजल वसुन करनेके लिये दीप्ताधलीने दीवान चांद साहबकी भेजा। चांद साहबने गुलाम हुसैनको अपने लड़की ब्याहो था, अतः गुलाम हुसैनने शादतुल्लाहकी आज्ञानुसार चर्काटका दीवानोपद थाप न ले कर चांद साहबकी प्रदान किया। चांद साहबने छलबल और कोसलसे दुर्गमें प्रवेश कर उसे अधिकार कर लिया। यह सुन कर निजाम-उल-मुल्क और भी आग उबलता की गये।

दुर्गविजयके बाद सुवेदार-अली चर्काटको लोट गये। चांद साहब दिचिनापलीका कुछ दारमदार अपने ऊपर ले कर यहां रहने लगे। सुवेदार-अलीने चर्काट लोट कर पितासे सब बातें कह सुनाई। इस पर दीप्ताधलीने चांद साहबके बड़े भोर आसदको दीवान नियुक्त किया। नूतन दीवान आसद चांद साहबकी अच्छी तरह पहचानते थे। चांद साहबकी राज्य पानेकी जो प्रवृत्ति इच्छा हुई थी उसे उन्होंने दीप्ताधलीको कह सुनाया। दीप्ताधलीने इस समय कोई विवाद खड़ा करना उचित न समझा, अतः इस विषयमें कुछ भी छेड़छाड़ न की। चांद साहब मो ताड़ गए और दिचिनापली दुर्गको अच्छी तरह सुदृढ़ और अभिरक्षित करने लगे।

इस समय महाराष्ट्रकी मुत्तो चारों ओर घेन रही थी। वे इस समय गिवाजोके कथानानुसार काम नहीं करके देग देशमें कर वसूल करनेके बड़ानेगे दृष्टि करती थे। १७२८ ई०में निजाम-उल-मुल्कके काननें पा कर महाराष्ट्र-नायक रजुजो मोलनें देग हजार

य मत्सेन (सं० पु०) शास्त्रदेशके एक राजा। इनके पुत्रका नाम सत्यवान् था। दैवदुर्विपाकसे ये नेत्रहीन हो गये थे, उस समय सत्यवान् बचा था। इस समय सबोंने पड़वन्त करके इन्हे राज्यभूत कर दिया। इस पर ये अपनी स्त्री और सत्यवान् को ले कर वनवासो हो गये।

सत्यवान् अनन्यकर्मा हो कर पितामाताकी सेवा करने लगे। एक समय मद्रदेशके राजा अश्वपति वनमें इनके समीप गये और अपनी लड़की सावित्रीका विवाह उन्होंने सत्यवान् के साथ कर दिया। इसी प्रकार कुछ दिन बीत गये। सत्यवान् की भायु धीरे धीरे छटने लगी। सावित्रीके समक्षमें लकड़ी काटते समय उनको प्राणवायु छड़ गई। सावित्रीने अपने पातिव्रत्यसे यमको विमोहित कर दिया और उन्हें लाचार हो कर वर देना पड़ा। उनके वरके प्रभावे द्युमत्सेनके नेत्र और राज्य पलट आये तथा सत्यवान् भी जीवन काम किया। सावित्री और सत्यवान् देखे। द्युमत्सेन राज्य पा कर समानको तरह प्रजाका पालन करने लगे।

एक समय राजा द्युमत्सेन वधयोग्य श्युतिका जब वध करनेमें उतारु हुए थे, तब सत्यवान् ने कहा था, 'तंतु! इन्हे वध करना आपका कर्त्तव्य नहीं है। धर्म कभी अधर्म और अधर्म कभी धर्म हो सकता है। किन्तु वध कभी धर्मपदवाच्य नहीं हो सकता।' इस पर द्युमत्सेन ने कहा, 'वत्स! यदि तू वधके अवधको धर्म कहते हो, तो द्रष्टु किस प्रकार शक्ति होगा? सुतरां दुष्टका दमन जब तक नहीं होगा, तब तक किस प्रकार लोकयात्रा निर्वाह होगी? सत्यवान् ने जवाब दिया, 'पितः! सत्य, वैश्य और शूद्र इन तीन वर्णोंकी ही ब्राह्मणोंके अधीन करना उचित है। इन लोगोंके धर्म-पाशसे पावह होनेसे ही सुतमागधादि सभी धर्माचरणमें प्रवृत्त हो जायेंगे। जिससे किसीका देहनाश न हो, उसी प्रकारका शासन आवश्यक है। ऐसा दण्ड कभी नहीं होगा चाहिये जिससे देशका विनाश हो। सत्य, मर्यादा सुष्ठम आदि द्वारा दण्ड देना विधेय है और उन्हें सत्य पर आनेकी चेष्टा करना उचित है।' यह सुन कर द्युमत्सेनने कहा था, 'इस प्रकारका शासन सत्यादि गुणों

किये या, आजकल इस प्रकारके दण्डने द्रष्टु शक्ति नहीं हो सकता।' फिर सत्यवान् ने कहा, 'पितः! यदि आप बिना हिंसा किये द्रष्टुकी अधीन नहीं कर सकते, तो नरमेघघ्न द्वारा उन्हें संशार कीजिये। जब देखा जाता है, कि जिसका वध किया गया, उसका कोई उपकार नहीं हुआ, क्योंकि इसके बाद भी पुनः उसीके जैसा दूसरा दोषी देखनेमें आता है, तब मेरे स्थानसे भारी अपराध करनेवाले दोषीको धार्जोदन काशवह करके उनके मनके कलुषितभाव को दूर करनेकी चेष्टा करना ही उचित है।' द्युमत्सेनने कुछ दिन राज्य करके सत्यवान् के उपर राज्यभार भौप गतो ग्रैव्याके साथ याम-प्रस्थ चलनारम्भ किया। (भारत आदि, शान्ति, वनपर्व) द्युमद्गान (सं० स्तो०) सामगानभेद, एक प्रकारका सामगान।

द्युमयी (सं० स्तो०) विश्वकर्माकी कन्या, सूर्यपत्नी।

द्युम्न (सं० स्तो०) द्युमन्ति मन्ति पथ्यमन्त्यो नाम।

१ धन। २ वन। ३ सूर्य। ४ धन।

द्युलोक (सं० पु०) चोरिव लोकः दिव उत्पल। स्वर्ग-लोक। वैदिक ग्रन्थोंमें द्युलोककी तीन कक्षाएँ कही गई हैं, पहली उदन्वतो, दूसरी पोतुमति और तीसरी प्रद्यो है। इन्हीं तीन कक्षाओंको भाक, जगँ और पित्रलोक कहते हैं। उदन्वतो कक्षामें चन्द्रमा है, पोतुमती कक्षामें सूर्य है और तीसरी कक्षामें पनेक लोक लोकान्तर हैं। इन लोकोंमें जाना ही पथमेधादि बड़े बड़े यज्ञोंका फल होता है।

द्युवन् (सं० पु०) द्योति द्यु-कनिन्, (कनिन् पु वृणीति। वण्, १।१०५) १ सूर्य। २ स्वर्ग।

द्युपद (सं० पु०) दिवि स्वर्गे सोदतोति सद-तिष्ठ। कन्द्वि पल्लोः सुजुः पल्लवः। १ देव, देवता। २ नक्षत्र। ३ पद।

द्युसगन् (सं० पु०) द्युः सग्न यस्य। स्वर्ग।

द्युसरम् (सं० स्तो०) स्वर्गस्य ऋद्विद्येय, स्वर्गके एक जलाशयका नाम।

द्युमरित् (सं० स्तो०) स्वर्गवती मर्यादिकी।

द्युमिन्नु (सं० स्तो०) मर्यादिकी।

सेनापति माय मे चर्खाट पर चढ़ाई कर दी। दोस्त-चनोको सेना उस समय खुशतार-चनोके धधोन दसिब प्रदेगमें थी। वे ४००० चमारोहो और ६००० हजार पदातिक सेनाको माय से रणक्षेत्रमें ला पड़्ये। इस समय चांद माहबकी मशायमा देगको इच्छा रहते भी उधोने मशायता न दो। ऐसी चयस्थाने दोस्त-चनोने दमनसेही नामक स्थानमें छावनी डाली। एक विगनास-घातक कर्मचारीकी शठतासे दोस्त-चनोका सत्यानाश हुआ। शत्रु पोलोकी घोरसे लन पर दूट पड़े। हार चवय्य होगी, ऐसा जानते हुए भी दोस्त-चनो घोर कुसेन चनो कीनों रणक्षेत्रमें रेत रहे। खुशतार-चनोको राक्षोंमें ही इसकी लुवर लगी। मशायामें तब तक चर्खाटको न छोड़ा जब तक खुशतार-चनो उन्हें एक कोटि कपया देनेका राजो न हुए। पोलो से ही लवाबके पट पर अभिषिक्त हुए।

दोस्तदार (फा. पु.) १ वयुमाय। २ वायव्य।

दोस्तदारी (हि. स्तो.) दोस्ती देखो।

दोस्त महम्मद—काबुलके अधिपति तैमुरशाहके मरने पर मिहामनके लिए उनके तोनों पुत्र आपसमें भगड़ने लगे। चन्तमें शाह महम्मदने ही मिहामन पर अधिहार जमा कर अपने भाई जमानशाहकी दो पार्खें निकलवा लीं। दूसरा भाई शाहसुजा जान ले कर भागा। शाह महम्मदके मखी फतेखों सुजाकी पायप देनेके कारण घटक और काश्मीरके राजाके लपर बहुत विगड़ें और इसका बदला लेनेके लिए कोशिश करने लगे। किन्तु पन्नायमें उस समय वीरकेशरो रणजित्-मिह अपना आधिपत्य फैला रहे थे। चन्तः फतेखोंने उधोंने मेल कर लिया और दोनोंने मिल कर काश्मीर पर चढ़ाई कर दी।

रणजित्के भागमें जो कुछ पड़ा उसे वे न ले कर घटक पर अधिहार कर बैठे और काश्मीर फतेखोंके हाथ लगा। घटक लने पर भी रणजित् खत न हुए। पन्नायिन शाहसुजाको उधोने अपने राज्यमें बुलाया। विनः लामने रणजित् कोई काम ही नहीं करते थे। शाहसुजाको हाथमें करके उधोने उनसे “कोहिनूर” ले लिया। जब शाहसुजाने देखा, कि पिटराण्य पानक

कोई पाया नहीं है, तब १८१६ ई०में वे खदरेजाधि-लत सुधियाना भाग गये।

१८१६ ई०में फतेखों युद्धकी कामनासे खारामान बसे गये। उस समय हिराटमें शाह महम्मदके भाई फिरोज उद्दीन शाह महम्मदके नामसे राज्य करते थे। फतेखों भी काबुलके बरकजाह नामक विगिटबंगको मन्तान थे। बुद्धिविवेचनासे उस समय ये काबुलमें अधितीय थे। हिराटकी अपने अधीन करनेकी इच्छामें उन्होंने अपने छोटे भाई दोस्त महम्मदको यहाँ भेजा। दोस्त महम्मदने विगनासघातकता और कौशल द्वारा अपना काम तो निहाल लिया, पर इस अत्याचार पर शाह महम्मद बहुत क्रोधित हुए। दोस्त महम्मद काश्मीरकी भाग गये। शाह महम्मदने अपने पुत्रोंकी मलाह से कर फतेखोंकी बहुत बुरी तरहसे मरवा डाला। इस पर बरकजाह-यंगने हर किसोने पन्त धारण किया। दो चार छोटी छोटी मशायोंके बाद शाह महम्मद पुत्रोंको माय मे हिराटकी भाग गये। बाद विजेतापति राज्यकी पायपमें बांट लिया। आजिमखोंकी काश्मीर, दिलखोंकी कन्दहार और दोस्त महम्मदकी काबुल मिला। भाइयोंमें आजिम खों सबसे बड़े थे, इस कारण वे ही काबुल-मिहामन पर बैठना चाहते थे। अपना मनोरथ पूरा करनेके लिये उन्होंने शाह सुजाकी प्रतीभन दिया और दोस्त महम्मदने लड़नेके लिये उसे अपने साथ जानेकी कहा। शाह सुजा भी इसमें राजो हो गये, पर वे भी आजिम-खोंसे लड़ाई करनेकी तैयार थे। बाद आजिम-खोंने पायुत् नामक एक व्यक्तिको काबुलका राजा बना देनेका भरोसा देते हुए अपने साथ ले लिया। उधर ताहित राजा शाह महम्मद हिराटमें काबुल पर चढ़ाई करनेके लिये चयसर हुए। किन्तु अपनी सेनापों-में विवाद हो जानेके कारण वे हिराटकी मोट पाए। इस प्रकार बृह-विवाद होनेसे मखीका सत्यानाश होगा, यह नियत कर उन्होंने आपसमें भगड़ा शान्त कर लिया। पायुत् काबुलके राजा हुए और आजिमया उनके मखी बने।

दिलखों कन्दहारमें हो रहे, दोस्त महम्मद गजनी-की चले गये। मुलतान महम्मद नामक रनके एक और भाई थे जिन्हें पैशावर मिला था।

यू. (मं० ति०) दिव्यति दिव्य-ति०-कट०। देवक, लोहक,
लुपा येनेवाला, लुपारो।

यू. (मं० ति०) दिव्य लोहाया भावो ऋ, लट्-व।
यामादि लोहा, यामादीहरण लोहा, यह येन
त्रिषीं दाव वदा लाय घोर हारनेवाला धोतनेवालेको
बुद्ध दे, लुपा। पर्याय—पचवतो, कैतव, पच। यह
मृत चण्डिकर है। मनुने इसका विषय इस प्रकार
लिखा है—

राजाको चाहिये कि लुपा घोर परवर्षियोंका दण्ड
परने राज्यमें न होने दे। द्यूत घोर समाह्वय से दोनों
दोष राजा तथा राज्यके हानिकारक हैं। यह लुपे घाम
को चोरा है। इसीसे इसका रोक्ता जहाँ तक हो सके
छविन है। पचयमाकादि घमासो द्वारा जो खेल खेला
जाता, उसे द्यूत घोर परवर्षियों द्वारा बाजो रख कर
जो खेल खेला जाता है, उसे समाह्वय कहते हैं। जो
मनुष्य द्यूत-लोहा तथा समाह्वय करे करता है, या
दूमरीसे कराता है, राजा उन्हें अपराधानुसार सभी
प्रकारके दण्ड दे सकते हैं। द्यूत घोर समाह्वयकर्ता
तथा मट्टसज्जियों पादिको महर या गावमें बसने नहीं
देना चाहिये, नहीं तो ये भीभीभासो प्रजाको ठग कर
उन्हें अनैक प्रकारके कष्ट देंगे। द्यूतको पुराणदिमें
भी चण्डिकर बतलाया है। इसीसे बुद्धिमान् मनुष्योंका
चाहिये कि हमीमें तथा जो बहानाके विषये भी लुपा
न खेले। प्रमादद्वये या प्रचण्डभावसे जो लुपा
खेले हैं, राजा उन्हें चण्डिकर दण्ड देवे। यात्रवस्त्रा-
मंजिताके द्यूतसमाह्वयप्रकारसे इस प्रकार लिखा
है—**यू. लुपारो प्रति दावमें मोमे कमकी बाजी नहीं
लगाता।** ममिक चण्डिकर द्यूत-मभाध्यय उसके जयसव्य
सकड़े पोड़े दोम भागका एक भाग लेगा। राजा उस
द्यूतमभाध्ययको धृत लुपारोके दावमें बचाए रखे।
ममिक भी राजाको चण्डिकर भाग दे। कहा राजा
निर्दिष्ट चण्डिकर पाने हैं, यहाँ उन ममिकयुक्त ममिक धृत
यमात्रमें राजाको छविन है कि पराजित द्रव्य जीतने-
वालेको दिला दें। यदि धृतसमाज न हो, तो
राजाको दितानेकी जरूरत नहीं। राजा द्यूतलोहाको
अथ पराजयका निहण्य करनेके लिए कोई नौबतों-

को मापीद्वये निवृत्त कर दें। जो कपटसे या उगनेको
दण्डसे मन्त्रोपपादि दाव लुपा खेले, उन्हें राजाको
छविन है कि यात्रादि चित्राणि चित्रित कर अपने
राज्यमें निरुत्तवा दे। राजा एक मनुष्यको द्यूतसमाजमें
पचय बनावे। समाह्वय नामक द्यूतलोहामें भी इसी
प्रकारकी विधि बतलाई है। (दाहरणार्थ २१२०-२१२५)

मनुने राज्यमें द्यूतलोहाका अधिकार सम्पूर्ण रूपसे
दिया है। किन्तु यात्रवस्त्राने येमल मट्ट-द्यूतको निषिद्ध
बतलाया है।

पच पर्यात् पागा, यत्र धर्मपटिका, मलाका चण्डिकर
दण्डादिनिर्मित दीर्घ चतुरस्रा, इन सब घमासिद्वारा
बाजो रख कर जो खेल खेला जाता है, उसे द्यूत घोर
परवर्षियों द्वारा जो खेल खेला जाता है, उसे समाह्वय
कहते हैं। लुपा खेलना मात्र ही द्यूतलोहामें गिना
जाता है। घमादि लोहाकी कामज-व्ययमें गिनती
की गई है, इसीसे हरएक व्यक्ति को इस लोहासे चलाय
रचना छविन है। द्यूतलोहासे कितने प्रकारके चण्डिकर
हो सकते हैं, यह वर्णनातीत है। पुराणमें इसका
आव्यवस्थान प्रमाण दिया गया है। धर्मराज बुधधिर
घोर मत्स्यमय नवकी इसी खेलसे प्रमाणसे कितने
प्रकारकी कठिनाइयाँ छिन्नो पड़े गी यह सबको
विदित है।

द्यूतकर (मं० ति०) करोतीति कृ-पच, द्यूतव्य करा
इ-तत्। द्यूतकर्ता, लुपा खेलनेवाला, लुपारो। इसका
पर्याय—घात, धूर्त, पचवृत्त, पचदेशी, दुरीदर,
द्यूतहत, कितव घोर लज्जकोहन है।

द्यूतकार (मं० ति०) द्यूत कारयति कृ-विष, पच-।
द्यूतकारयिता, लुपारो। इसका पर्याय—ममिक घोर
समीक है।

द्यूतकारक (मं० ति०) द्यूत कारयतीति द्यूत-कृ-विष,
पच-। द्यूतकारयिता, लुपा खेलनेवाला।

द्यूतकृत् (मं० ति०) द्यूत करोति कृ-विष, तुगानमच।
द्यूतकर, लुपारो।

द्यूतदाव (मं० पु०) वह दाव जो लुपको जीतने
मिला हो।

द्यूतपूर्विका (मं० स्त्री०) द्यूतव्य या पूर्विका।

१८२३ ई० में आज़िमखाने के मरने पर पुनः गृह विवाद उपस्थित हुआ। दोस्त महम्मदने इस विवादको भी जकड़ दिया। काबुल प्रायः उनके हाथमें पा गया था, इसी समय दिनखी और सुलतान महम्मदने उन्हें छोड़ दो। अब वे जो एक प्रकारसे काबुलमें प्रभुत्व करने लगे। किन्तु न तो दिल खो और न सुलतान महम्मद ही शासन कार्यमें विशेष पटु थे, अतः मोलामाल जारो हो रहा। फिरसे नूतन व्यवस्था हुई। दिनखाने कम्दहार पर और दोस्त महम्मदने गजनो पर अपना अधिकार किया। सुलतान महम्मद पैगावर छोड़ कर काबुल की राजा हो गये। इसी बीच कम्दहारने दिनखाने को मृत्यु हुई। अब दोस्त महम्मदने काबुल लेना चाहा। सुलतान महम्मदने अपनी को दोस्त महम्मदसे अकेला सहनेमें असमर्थ समझ कर १८२६ ई० में उन्हें काबुल दे दिया और आप पैगावरको लौट पाये। शासनकार्यमें दोस्त महम्मद विशेष पटु थे। कई वर्ष उन्होंने काबुल को सुशासनमें रखा था।

इस समय ग्राहसुजा रणजितुंविंके साथ सन्धि करने काबुल जीतनेकी अप्रयत्न हुए। रणजितुंविं ने भी सेना भेजी। ग्राहसुजा पराजित हो कर सुधियाना की लौट पाए। इसी मौकेमें रणजितुं सुलतान महम्मदकी मार भगा कर पैगावर दखल कर लिया। दोस्त महम्मदकी जब यह बात मालूम हुई, तब वे सेनाकी साथ ले भागे बड़े। सुलतान महम्मदने भी दम हजार सेनाओंसे उनकी सहायता की। रणजितुं वारों घोरसे विपद्में घिरा देख दोस्त महम्मदकी सेनाकी बहुत कुछ क्षमा दिया। सुलतान महम्मदने सेनाके साथ प्रस्थान किया। युद्धके दिन सबसे दोस्त महम्मदने देखा, कि उनके पास जितनी सेनाये थीं, उनमेंसे अनेक कहीं चको गई हैं। इस पर वे विपक्ष विचित्र काबुल लौट पाये। बाद सुलतान महम्मद सिधोने मिल गये और उन्हेंकी सहायतासे काबुल जीतनेकी अप्रयत्न हुए। इस पर दोस्त महम्मदने अपने पुत्र अफ़जलखान और अकबरखानको सुलतान महम्मदके विरुद्ध खड़ा करनेके लिये भेजा। १८३० ई० में यह युद्ध खड़ा था। विपक्षीय परास्त और तहम नहस हो गई। इस समय

पारसराजने शिवाट और काबुल जीतनेकी विचार। दोस्त महम्मदने कोई दूसरा उपाय न देख अंगरेजोंसे सन्धि करनेका प्रस्ताव पेश किया। उस समय नाइट अकलैण्ड भारतवर्षके गवर्नर जनरल थे। उन्होंने सार्वभौमिक सन्धि करना तो न चाहा, किन्तु वाणिज्य सम्बन्धी सन्धि करनेकी सलाह दे दी। कार्य भी उन्होंने केयमानुहार हुआ। व्यवसायके विषयमें कयावास्ता करनेके लिये सर चलेकसन्दरने वार्नेस नामक एक व्यक्ति को दखलके साथ काबुल भेजा। दोस्त महम्मदको बात भीतसे मालूम पड़ा, कि अंगरेज उनको विपद्में न तो उन्हें मदद देने और न रणजितुं पैगावर सेनेमें उनकी पक्ष ही लेने।

किन्तु उस समय ऐसी भयनाह फैली, कि रुसियासे एक दूत काबुल जा रहा है। इस पर अंग्रेज लोग डर गये। इङ्गलैण्ड और रुसियाके बीच इस विषयमें बातचीत होने लगी। अन्तमें ऐसा मालूम पड़ा कि रुस-गवर्नेण्टने काबुलमें दूत नहीं भेजा है। भिकोभिचो नामक एक रुस-कर्मचारी आपसे आप यह काम कर रहा है। यह गड़बड़ो शान्त हो गई, लेकिन कम्दहार बाद स्थानोंसे राजा पारस-राजके साथ सन्धि करनेकी विशेष उत्सुक हुए। वार्नेस काबुलकी व्यवस्थासे जानकारी थे। अतः वे उन सब राजाओंकी सहायता देनेमें राजी हुए और उन्हें पारस-राजके साथ सन्धि न करने दी। नाइट चलेकलैण्ड यह सन्वाद सुनकर बहुत विगड़े और उन्होंने इसी विषयमें एक पत्र वार्नेसको लिख भेजा कि उन्हें ऐसा प्रस्ताव पान करनेमें बिल्कुल चमत्ता न हो। उन्होंने चमत्ताका अपव्यवहार किया है, अंग्रेज गवर्नेण्ट काबुलपतिकी किसी प्रकार सहायता कर ही नहीं सकती। उस पत्रमें और भी लिखा था, कि दोस्त महम्मद यदि किसी दूसरे पश्चिमी राजाके साथ सन्धिवन्धन करें, तो उन्हें मित्रता टूट जायगी, यह बात उन्हें समझा देने की चाहिये। फिर कम्दहार राजाओंकी सहायता देनेकी बात दे दो गई है, उसका प्रत्याहार करना होगा। इससे साथ साथ दोस्त महम्मदको भी एक पत्र लिखा गया था। वार्नेसने यह पत्र पा कर अपनी बात लोटा ली। दोस्त महम्मद भी पत्र पढ़ कर बहुत चिन्तित हुए। वे अंगरेज

कोजागरी, आग्निनकी पूर्णिमा । इस दिन प्राचीन कालमें लुधा खेला जाता था और लोग रातको जागते थे ।

द्युतप्रतिपत् (मं० स्त्री०) द्यूताय क्रीडार्थं या प्रतिपत् । कार्तिकमासकी शुक्लप्रतिपत् । इस दिन सबेरे लोग लुधा खेलते हैं ।

प्राचीनकालमें महादेवने एक मनोहर द्यूतकी खटि की और कार्तिकमासके शुक्लपक्षके प्रथम दिनमें पार्वतोई साथ बड़ी द्यूत खेला । इसमें पार्वतोको जीत हुई, महादेव हार गये । इस पर महादेव दुःखी और पार्वतो सुखी हो कर रहने लगे । इसी कारण द्यूतप्रतिपदके दिन सबेरे लुधा खेलनेकी लिखा है । इस खेलमें जिसको जीत होती है, उस वर्ग उसे सुख और जिसकी हार होती है, उस वर्ग उसे पद पदमें दुःख होता है, यहां तक कि उसका संचित धर्म भी जाता रहता है । शिवजीने इस दिन द्यूतक्रीडा की थी, इसी कारण इस प्रतिपद तिथिका नाम द्यूतप्रतिपत् पड़ा है ।

इस प्रतिपदका दूसरा नाम कोमुदी भो है । यथा—

“दृष्ट्वायं कार्तिके तस्य दृष्ट्वा या प्रतिपत्तिः ।

शिरोदर्शना मही तत्र कौमुदी वा स्थिता बुधेः ॥

कुशब्देन मही हेतुः मुदा ह्यं च ये द्विनः ।

धातुस्यैः धर्मशब्दः सा च यैः कौमुदी स्थिता ॥”

(पाद्योत्तरखण्ड)

कार्तिकमासको शुक्लप्रतिपद तिथिको कौमुदी कहते हैं । कु शब्दका अर्थ भेटिनो और मुदाका अर्थ वर्ण है । इसीसे समस्त धातुप्र तथा सर्वशब्दविदोंकी इस तिथिमें प्रातःकाल लुधा खेलना उचित है । लुधाके बाद बलि और दैत्यपूजादि करनेका विधान है ।

यथाविधि मङ्गलपूजादि करके शाखपाम वा जलको ‘एतदुपायं मन्यते नमः’ इत्यादि क्रमसे पायादि द्वारा पूजा करनी चाहिये । पीछे इस मन्त्रसे तीन बार पुष्पाञ्जलि देनी होती है । मन्त्र यथा—

“ओ बहिरान् । ममलुभ्य विरोचनसुत प्रभो ।

मविष्येभ्य सुरारति पूज्यैः प्रतिपुष्ठां ॥”

इस प्रकार पूजा करके उसवर्षके साथ दिन बिताना

चाहिये । क्योंकि इस दिन जो जिस प्रकारसे रहता है, उस वर्ष उसका उसी प्रकारसे दिन बरानेता होता है । इस दिन शोक दुःखका परित्याग कर धानम्बुके माथ रहना चाहिये ।

“भो यो यास्य भावेन तिष्ठत्यस्यां पुष्टिश्च ।

इषंदेव्यादिना तेन तस्य वर्षं प्रशान्ति हि ॥”

(हायतत्त्व)

यह तिथि अतिथय पुष्पा मानो गई है । इस दिन खानदानादि करनेसे सौम्य फल मिलते हैं ।

“महापुण्या विधिरियं बहिरास्यप्रवर्द्धनी ।

स्नानं दानं शतशुभं कार्त्तिकेऽस्यां तिथौ मयेव ॥”

(हायतत्त्व)

द्युतफलक (मं० पु०) धामा खेलनेका तख्ता, वह चौको जिस पर लुधकी भीड़ी फेंकी जाय ।

द्युतबीज (सं० स्त्री०) द्यूतस्य बीज कारणं । १ कपड़का, कोड़ी । २ द्यूतका कारण ।

द्युतवृत्ति (सं० पु०) द्यूतं वृत्तिर्जीविका यस्य । ममिक, द्यूतोपजीवी, वह जो लुधा खेल कर अपना जीवन-निर्वाह करता हो ।

द्युतभूमि (सं० स्त्री०) लुधा खेलनेका घड्डा, लुधा-खाना ।

द्युतमण्डल (सं० पु०) १ लुधारियोंकी मंडली । २ लुधा खेलनेका घर, लुधाखाना ।

द्युतवैतनसिक (सं० पु०) वह जो प्राणियोंका युद्ध देख कर जोवन व्यतीत करता हो ।

द्युतसमाज (सं० पु०) पक्षक्रीडाका स्थान, वह स्थान जहां लुधा खेला जाय ।

द्युत (सं० स्त्री०) १ समन्यायसे मातृर्षी राशि । दिव-ज (दिवोऽवित्रिणीयायां) वा ८२।४८ निठरा तस्य न तस्य कटः । (त्रि०) २ पोष, कमजोर ।

द्यो (सं० स्त्री०) द्योतकी देवा यत्र द्यूत वाङ्मल्लकात् हो । १ स्वर्ग । २ आकाश । (पु०) ३ घटयमुका पन्थ-तम, गतपथमाह्वय और देवोभागवतके अनुसार पाठ बहुचर्चित एक ।

देवोभागवतमें लिखा है, कि इन्होंने षष्ठिके माथसे धृष्टी पर भीष्मके रूपमें अश्व चढ़ा किया था । किसी

महम्मद ने माय मित्रता कायम रखने के लिये विशेष ध्यान न दे किन्तु चंघेज गवर्मेण्ट ने यह बात याद न की। पोर उन्हे चंघेजी राजा के ऐसा मान कर अन्य राजाओं के साथ मित्रता करने में मना किया। चंघेज ने किम लिये वा क्या मोघ कर ऐसा कहा, यह कोई भी समझ न सका। ऐसा कठोर पत्र पा कर भी दोस्त महम्मद ने पुनः लाई चकमैण्ड को एक पत्र लिखा। किन्तु अपने पत्र का उत्तर न पा कर उन्होंने भिकोभिषी से सहायता पाने के लक्ष्य से उनकी शरण ली। वार्नेसको इन सब बातों को पत्र लग गई। इसके बाद भी एक मास तक बर्मा अपने ही शरके १८३८ ई० की २५वीं अप्रील को उन्होंने काबुल छोड़ दिया।

इस समय ब्रिटेन में गोलमाल चल रहा था। शाह महम्मद के मरने पर उनके पुत्र कामरान ब्रिटेन में राज्य करते थे।

पारस्यराजने ब्रिटेन जोतने की इच्छा से चर्चा चला डाला। चंघेज ने मध्यस्थ होकर इस विवाद को नियत दिना। पारस्यराज की ब्रिटेन न मिला। लाई चकमैण्ड काबुल के विरुद्ध युद्धात्मा करने लगे। शाहसुजा इतने दिनों तक सुधियाना में थे। जब शाहसुजा, रणजित् सिंह और चंघेजी के बीच एक एक सन्धि इस गर्त पर हुई, कि चंघेजी से काबुल जीते जाने पर शाहसुजा काबुल के राजा होंगे और रणजित्ने चकगानिस्तान के जो सब प्रदेश अधिलक्षित किये हैं, वे उन्हीं के होंगे।

यह सब बात बिनकुल ठीक ही जाने पर १८३८ ई० की ११वीं मार्च की चंघेजी सेना चकगानिस्तान पहुँची। २४वीं अप्रील की चंघेजी सेना केन्दहार की जीत लिया। केन्दहार में लड़ाई न हुई, प्रभूत, चर्च हटि में केन्दहार का मिहदार उत्सुक हो गया। २७वीं जून की चंघेज केन्दहार छोड़ कर गजनी की गतने लिये चपमर हुए। गजनी का दुर्ग अत्यन्त दृढ़ और कौशल से बना था। पतः सहा सहा कुछ भी चणित न हुआ। चकगानिस्तान लोग दुर्ग में हो रहे, युद्ध करने बाहर न निकले। पतने दुर्ग पर चढ़ाई का के छने जीत लिया। गजनी-विजय का सम्बाद पा कर दोस्त महम्मद बहुत डर गये। अपने चतुर्धरी में किमो पर भी ये विजय कर न सके। इस

समय सन्धिका प्रस्ताव करना भी चपमर था। पतः कोई दूसरा उपाय न देख दोस्त महम्मद २१वीं अगस्त को काबुल छोड़ कर कहीं भाग गये। शाहसुजाने भी ३० वर्ष बाहर रहने के बाद काबुल में प्रवेश किया।

शाहसुजा को राजपद पर स्थापित करके चंघेजी सेना काबुल छोड़ न सकी, पारस्य, ब्रिटेन और रुमिया सभी चपना चपना स्थाय मिह करने पर हैं, यह नाम कर चंघेजी सेना ने चकगानिस्तान का त्याग न किया। शाहसुजा शोते के भय से जमानावाट में भा कर रहने लगे। शासन-कार्य में बहुत गड़बड़ी होने लगी। उस समय दोस्त महम्मद पुरम में थे। खिजरी लोग बागो होने पर उतावू थे। केन्दहार में प्रहृयन्त चलने लगा, शाहसुजा के कर्मचारी लोग भी बन्धाचार करने लगे। हटिया गवर्मेण्ट बहुत तंग था गई। सेतुवियों ने चंघेजी के विरुद्ध अस्त्र धारण किया। उन्हीं ने लगभग २०० चपना-रोहियों और पदातिकों के प्राण नाश किये। इस समय विद्रोह चारों ओर फैल गया। चक्का मोका देख कर दोस्त महम्मद चंघेजी पर टूट पड़े। चारों ओर से विपक्ष से चरे रहने पर भी चंघेजी ने दोस्त महम्मद को परास्त किया। दोस्त महम्मद ने कोई उपाय न देख कर चंघेजी की शरण ली और मैकनेटन साहब को पासम-पण किया। इस पर नीच शाहसुजाने उनकी बहुत निरुत्कार किया। पासमपण के दस दिन बाद दोस्त महम्मद चंघेजी सेना से रचित हो कर भारतपर्व की भेज दिये गये। गवर्नेर जनरल ने उन्हें दो लाख रुपये की हस्तक्षीकार की।

दोस्तमहम्मद—१८०८ ई० में नागपुर के राजाने सिन्धिया के चतुर्गुहोत पिण्डारी-नायक होरा पोर वारण नामक दो व्यक्तियों को भूपाल के लयाव से विरुद्ध लड़ाई करने भेजा था। पिण्डारी दैतो। लड़ाई में वे ही विजयी हुए और धन श्वादि यथेष्ट संग्रह कर अपने साथ लाये। उन दोनों के कोट जाने पर नागपुर के राजाने बाह्यकी कैद कर लिया। होरा भाग गया किन्तु तुरंत ही यमराज का मिहमान बन गया। होरा के पुत्र दोस्तमहम्मद अपने भाई मामिस महम्मद के साथ पिता का व्यवसाय करने लगा। १८०८ में १८११ ई० तक दोस्तमहम्मद के उत्पात से मध्यभारत

दममें भा गया। १८१२ ई०में इन्होंने बुन्देलखण्डको मुठ कर गया तत्काल देवांशो बरबाद कर दिया था। यह विधिय कर मालव देशके पूर्वमें ही रहता था और वहाँसे देश विदेशको लूटने लाया जाता था। अन्तमें अपने भाई वामिलमहम्मदके हाथ काय-भार सौंप कर पाप पञ्चत्वको प्राप्त हुआ।

दोस्ताना (फा० पु०) १ मित्रता, दोस्ती। २ मित्रताका व्यवहार। (वि०) ३ मित्रताका, दोस्तीका।

दोस्ती (फा० स्त्री०) १ मित्रता, स्नेह। २ अनुचित सम्बन्ध।

दोस्तीरोटो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी रोटी। यह पाटेकी दो लोइयोंके बीचमें घोलगा कर और एकको दूसरी पर रख कर बैकत और तब तब पर घोलगा कर पकाने हैं। जब यह पक जातो है, तब इसमें दोनों लोइयों भलग भलग हो जाती हैं।

दोख (सं० पु०) दोष दोषांपर तिष्ठति स्था-क। १ खेवक। २ शोचक, खेस करनेवाला। (त्रि०) ३ बाध-स्थित, जो बाध पर हो।

दोह (सं० पु०) दोग्धि दधिमविति, दुह-पाधारे घञ्। १ दोहनपात्र, दुहनेका बरतन। दुधने, इति दुह-कर्मणि घञ्। २ दुध, दुध। दूह मार्गे घञ्। ३ दोहन, दुहनेका काम।

दोहज (सं० त्रि०) दोहान् दोहनाज्जायते जन-ड। १ दोहनजात, दुहनेसे जो निकले। (ज्ञा०) २ दुध, दूध। दोहड़िका (सं० स्त्री०) मातृवृत्तविधेय। इसके प्रथम चरणमें ११, दूसरेमें भी ११, तीसरे और चौथेमें ११ मात्राएँ होती हैं।

दोहव्यङ्ग (हि० स्त्री०) वह व्यङ्ग जो दोनों हाथोंसे मारा जाय।

दोहवा (हि० त्रि० वि०) १ दोनों हाथोंसे, दोनों हाथोंके द्वारा। (वि०) २ जो दोनों हाथोंसे हो।

दोहद (सं० पु० स्त्री०) दोह पाकयं ददाति दा-क। गर्भिणीका अभिलाष, गर्भवती स्त्रीकी इच्छा, लकीरा। इसका पर्याय—दोहद, यहा, लालसा और जातुज है।

गर्भावस्थामें जिन सब वस्तुओंकी इच्छा होती है, वे सब वस्तु यदि गर्भिणीको न दो जाय, तो गर्भ वैकल्प

एव मरण वा अन्यान्य दोष होता है, इसीमें गर्भिणी स्त्रीका प्रिय आचरण करना चाहिये। (याह० ११८८) सुदृढ-में दोहदका विषय इस प्रकार लिखा है—स्त्रियोंके गर्भ होनेसे चौथे मासमें सब प्रकारके भक्ष्यप्रत्यक्ष और जैन्य शक्तिका विकास होता है। चेतनाका आधार जो हृदय है वह भी चौथे महीनेमें उत्पन्न होता है। इसी समयसे इन्द्रियोंकी कोई कोई विषय भोग करनेकी इच्छा होती है। इस अभिलाषपूर्वकी ईप्सित वस्तु देना कहते हैं। इस समय स्त्रियोंको दोह दो हृदय विमिष्ट (पर्याप्त भवना और गर्भस्थ सन्तानका) होती है, अतः तात्कालिक अभिलाषकी दोहद कहते हैं। यदि लम्बा यह अभिलाष पूर्ण किया जाय, तो गर्भस्थ सन्तान कुल, कृषि, खेज, जड़, वामन, विहताच भवया चम्प होती है। इसलिए गर्भावस्थामें स्त्रियोंकी अभिलाषित वस्तु देना अवश्य कर्त्तव्य है। गर्भिणीके दोहद प्राप्त होने पर सन्तान बसवान् और भागुष्मान् होती है। गर्भावस्थामें इन्द्रियोंका जो वस्तु भोग करनेका अभिलाष उत्पन्न होता है, गर्भपोहा होनेको प्रायःइस वस्तु अभिलाष अवश्य पूरा करना चाहिये। गर्भवती स्त्रीकी ईप्सित वस्तु मिल जाने पर वह शुणवान्-पुत्र प्रसव करती हैं, नहीं तो गर्भके विषयमें अवश्य स्वयं डर बना रहता है। गर्भिणीके जिस जिस इन्द्रियका अभिलाष पूरा नहीं होता, सन्तानके भी उसी इन्द्रियका पीड़ा उत्पन्न होती है। गर्भिणीकी इच्छा यदि राजदमनकी हो, तो सन्तान महाभाग्यवान् और धनवान् होती है। दुकूल, रेशमी वस्त्र भवया भण्डारकी इच्छा हो, तो सन्तान सुन्दर और भण्डारप्रिय; आश्रमकी इच्छा हो, तो पुत्र धर्मशील और सयत्ताका। देवप्रतिमाकी इच्छा हो, तो सन्तान देवमुख्य। सर्पादि व्याल-जाति देखनेकी इच्छा हो, तो सन्तान हिंसाशोल, गोहका मांस खानेकी इच्छा हो, तो निद्रासु और स्थिरचित्त; भैंसका मांस खानेकी इच्छा हो, तो गूर, रक्ताच और सोमय; हरिचका मांस खानेकी इच्छा हो, तो बन-चर; बराहका मांस खानेकी इच्छा हो, तो निद्रासु और गूर; समरका मांस खानेकी इच्छा हो, तो अविन्य तथा तीतरका मांस खानेकी इच्छा हो, तो सन्तान बहुत मोह होती है। इन सब वस्तुओंकी दोह कर यदि भव

डोय.। हृदयविशेष, एक प्रकारका पीडा। लोग कहीं कहीं इसे चंगोना कहते हैं। यह शोचघने काममें पाता है।

द्रवत्व (सं० स्त्री०) द्रवस्य भावः द्रवत्व। न्यायोल्लेख संश्लेषक गुणभेद, पानोको तरह पतला होनेका भाव। इसके दो भेद हैं—सांख्यिक अर्थात् स्वाभाविक और नैमित्तिक अर्थात् जो कारणोंने उत्पन्न हो। लोगोंका मत है, कि स्वाभाविक वा सांख्यिक द्रवत्व केवल जलमें है और द्रव्योमें नैमित्तिक द्रवत्व है जो अग्निसे संयोग से आ जाता है। प्राधुनिक विद्वान्के मतानुसार द्रवत्व द्रव्यका एक रूप या उसकी अवस्था मात्र है। इसका कोई स्थाय भाकार नहीं है, किन्तु जिस वस्तुके आकारमें यह रहता है उसीके आकारका वह हो जाता है। जिस तरह पानो जब बोलतमें भर दिया जाता है, तब बोलतके आकारका और जब कटोरे लोटे आदिमें रहता है, तब उसी आकारके आकारका होता है। द्रवत्व और विभुत्व में केवल भेद रहता ही है कि द्रव्यपदार्थ परिमित अवकाशकी चरता है और विभुपदार्थ पूरे अवकाशमें व्याप्त रहता है। (स्त्री०) द्रव्य भावे तल, टाप। द्रवता, बहना, टपटना।

द्रवद्रव्य (सं० स्त्री०) द्रवतीति द्रव' द्रव्य' कर्मधा०। १ दुग्ध, दधि, घाघ्य, तक्र, आसव, जल और तैलादि द्रवपदार्थ। २ दैहिक सूत्रादि।

द्रवता (सं० स्त्री०) द्रवतीति द्रु-शब्द डोय.। १ एक गदो। २ सूयिकपर्णी, सूपाकापी। इसका अर्थ—शुद्धरो, चित्रा, पत्रार्थो, आरुकाणिका, सूयिकपर्णी, प्रतिअर्ध-शिफा, मृदस्त्रमूली और चित्रास्ता है। इसका गुण—मधुर, शीतल, रसवन्धकायक, लवर, कृमि, शूलनाशक और शक्यता है।

द्रवरम (नं० वि०) द्रवयुक्तो रसो यस्य। सार्द्र'रस, गोकारम।

द्रवरमा (सं० स्त्री०) साचा, साख, साह।

द्रवाधार (सं० पुं०) द्रवाणां द्रवाणां आधारः। १ सुलुङ्ग, पञ्जनि, पुङ्गु। २ द्रवद्रव्यरपापव, तरलपदार्थ रखनेका वस्तुतन।

द्रवाय (सं० वि०) द्रु-भाय.। द्युतिमील, वसकीला।

द्रवि (सं० वि०) द्रवयति अभाभूतपदार्थं द्रु-वन्, सर्पादि श्रावक, सोना आदि गन्धद्रव्य।

द्रविड (सं० पुं०) १ खनामख्यात देगमेद। दक्षिण भारतका एक देग जो उदोसाके दक्षिण पूर्वीय सागरके किनारे रामेश्वर तक विस्तृत है। तैरा राजा सोऽपि जनोऽस्य वा अण.। २ द्रविष देगके राजा। ३ पिशादिक्रमसे द्रविड देगवासी।

मनुने द्रविड़ोंको सवर्णा छोडे उत्पन्न प्रात्य क्षत्रियोंकी संतति कहा है, यथा—भक्ष, मज्ज, निच्छिवि, नट, करण, खस और द्रविड.। मन्नाभारतमें भी लिखा है, कि परशुरामके मयसे बहुतसे क्षत्रिय दूर दूरके पहाड़ों और जंगलोंमें भाग गये, वहाँ भी वे डरके मारे वैदिककायका अनुष्ठान नहीं कर सके थे, इस कारण अपने कर्म ब्राह्मणोंके पदगर्भ आदिके कारण भूल गये और वृषालत्वको प्राप्त हो गये। वे ही द्रविड, आभीर, श्वर, पुण्ड्र आदि हुए। बहुतपु अणो-लुक्.। ४ ब्राह्मणभेद, इसके अन्तर्गत पाँच ब्राह्मण हैं—पश्चि, कर्णाटक, गुजर्, द्रविड और महाराष्ट्र।

द्रविड़ो (सं० स्त्री०) द्रविड गौरादित्वात् डोय.। रागिणी-विशेष, एक रागिणीका नाम।

द्रविष (सं० स्त्री०) द्रवति गच्छति द्रवति प्रापते वेति द्र-वन् (द्रु-वन्तिन्यामिनन्। वण. २। ५०)। १ धन। २ काष्ठन, सोना। ३ धन। ४ पराक्रम। (पुं०) ५ पृथु भाजाके एक पुत्रका नाम। ६ धुर नामक वस्तुके एक पुत्रका नाम। ७ कुम्हरीपक्षित सीमाना गिरिभेद, कुम्हरीपक्षी का एक सोमापर्वत। ८ कौचहीपक्ष एक वर्ष, कौचहीपक्ष अन्तर्गत एक वर्ष।

द्रविषक (सं० पुं०) वस्तुसुता, अन्तिनी एक स्त्रीका नाम। द्रविषनाग्रज (सं० स्त्री०) द्रविष' नाग्रयति नागि-व्युट.। योमाञ्जन, सङ्गजनका पेड़। यह खानेसे धन लाभ होता है, इसीसे इसका नाम ऐसा पड़ा है।

द्रविषप्रद (सं० वि०) द्रविष' प्रददाति प्र-दा क.। १ धन-दायक, धन देनेवाला। (पुं०) २ विष्णु। वे अमिन-पितृकन्-देते, इमोसे इनका नाम द्रविषप्रद हुआ है।

द्रविषम (सं० वि०) द्रविषमिच्छति आसतायां काचि सक्-द्रविषयति ततः भावे लिप्-पतो लोपे लो लुने न-स्यानिबद्धवति इति यलोपः। धनेच्छा, जिधकी इच्छा धन पानेकी हो।

कर अपने मनो वक्ष्य तात्या और दोलतराव सिन्धिया-
को मर्यादायें बुलवा भीता । ये दोनों यथासमय
पा पड़े। नाना-फड़नवीस इन दोनोंमें से जो हटते थे
फड़नवीसने परशुरामभाऊको अपने पास बुला लिया।
परशुराम और फड़नवीसको तरफके लोगोंने परामर्श
करके बाजीरावके पक्षमें मिलना ही युक्तिमूलक समझा
तथा परशुराम शपथ छठा कर बाजीरावके पूना में
गये। इधर वक्ष्य तात्या परशुरामके इस प्रकार पाच-
रूप करने पर, अपने लक्ष्यकी विफलता समझ विमना-
को चण्याको पूना में गये और उन्हें यथाशीति विधयाके
दत्तकपुत्रस्वरूप ग्रहण कर १७०६ ई०की १०वीं
मईकी पैगवाही गहो पर बिठा दिया। इस तरह विम-
नाको चण्या ही पैगवा बनाये और जाने गये। परशुराम
राजकार्य निर्वाह करने लगे। नाना-फड़नवीस इससे
पहले ही, अपनेकी विषय समझ कर किमो कामके
बहाने बाहर चले गये थे। परशुरामने समझोता करनेके
निये नाना-फड़नवीसमें पूना जानेके लिए अनुरोध किया।
फड़नवीस शाहवा प्रदेगमें रह गये। वक्ष्य तात्याने चारों
ओर विपक्ष देल कर बाजीरावको दिल्लीकी तरफ भेज
दिया। बाजीराव अपने अनुचर छाटगय छिरीजीरावके
साथ परामर्श करने लगे। इस परामर्शके अनुसार छाट-
गयने दोलतराव सिन्धियाके साथ अपनी कन्याका पाणि-
ग्रहण करना स्वीकार कर लिया। बाजीरावने वक्ष्य
तात्याके परामर्शानुसार कार्य नहीं किया; वे दिल्ली न
गये, बीमारोका बहाना कर वहीं ठहर गये।

इधर नाना-फड़नवीसने पैदराबादके निजामके साथ
मन्त्रि कर बाजीरावको पैगवाके पद पर बिठानेका मार्ग
निजाम लिया। घरारके रघुजी भीमसले तथा गवर्नेरमें
बाजीरावकी तरफ अपना समर्थन दिया। सब ठोक ही
बुझने पर, दोलतरावने पहले वक्ष्य तात्याको कैद
किया। परशुराम मरण देख कर विमनाओकी से कर
कहाँ भाग गये। २५ नवम्बरको नाना-फड़नवीस पूना
मोटे। बाजीराव १७१६ ई०में ४ दिसम्बरको पैगवा-पद
पर समर्थित हुए।

बाजीराव कूटनीति-विशारद थे। राज्यमें समतामाकी
व्यतिरिक्तको न रहने देना ही उनका सङ्कल्प था और

“कष्टकर्मैव कष्टत्रे” उनका मूलमन्त्र था। उन्होंने दोलत-
रावको समझाया, कि नाना-फड़नवीसको बिना दूर
किये हम लोगोंका मङ्गल नहीं हो सकता। इच्छा न
रहने पर भी, बाजीरावने अपने अग्ररुके अनुरोधने बाध्य
हो कर इस कार्यमें अपना मत दिया। दोलतरावने नाना-
फड़नवीस और अन्यत्र समतापक्ष शक्तिवैकी पक्षमद-
मगरके कारागारमें भेज दिया।

१७०८ ई०के मार्चमासमें छाटगयकी कन्या बेजा-
बाईके साथ दोलतरावका विवाह हो गया। बाजीरावने
दोलतरावको दो लाख रुपया देना कबूल किया था।
उन्होंने पूनाके शब्दव्यापक लोगोंसे छत्त रुपये वसूल
करनेके लिए कह दिया। दोलतरावके अग्ररु और मनो
छाटगय नाना प्रकारके शब्दव्यापार करके रुपये इकट्ठे
करने लगे। परन्तु इतने पर भी जय दोलतराव पूनासे
न हटे, तब बाजीराव कुछ चिन्तित हुए।

बाजीरावने नाना-फड़नवीसके स्थान पर अमृतरावको
नियुक्त किया था। दोलतरावके व्यवहारसे भोत हो कर,
उन्होंने अमृतरावमें दोलतरावकी मारनेके लिए कहा।
यह व्यवस्था रखा गया, परन्तु ठोक समय पर कार्य न
हुआ, दोलतराव बच गये। बाजीरावके साथ दोलत-
रावका मनोमालिन्य हो गया। बाजीरावने निजामके
साथ सन्धि कर ली। दोलतरावकी चारों ओरसे विप-
क्षियोंमें घेर लिया। इनको सेनाकी बहुत दिनोंसे बेतन
न मिला था। दोपू सुलतानने उन्हें सहायता न दी।
अन्तमें यह सोच कर कि इस विपक्षिमें नाना-फड़नवीसके
सिवा अन्य कोई भी उद्धार नहीं कर सकता, ये दग
लाछ रुपये वर्ष करके उन्हें छुड़ा लाये। इसी समय
आपने छाटगयके शब्दव्यापारसे भ्रूङ्गना कर उन्हें कैद
कर लिया। अब तो पैगवा डर गये और द्विप कर नाना-
फड़नवीससे मुलाकात करने लगे। बाजीरावको पक्षमें
आकर नाना-फड़नवीसने मन्त्रि-पद ग्रहण कर लिया।
किन्तु दोलतरावके सुझने यह सुन कर कि गुप्त रीतिसे
बाजीराव उन्हें कैद करनेके लिए दोलतरावको
उत्सजित कर रहे हैं, वे भावधान हो गये। दोलत-
राव और बाजीरावने परामर्श करके दोपू सुलतानसे
राज्य पर आक्रमण करनेकी तैयारियाँ कीं। किन्तु इसी

ममय वसुधाय चयनो चयनो नित्येति सायं क्रीडा करति
द्वय गतिः प्रयति चायममं पदं चोर लोके कर्तुमे
द्यो नित्येनो गायको सुरा से गये । गगितकी जय यह
हान मालम दुषा, तव चर्चने आप दिया जममे चर्चने
पृथो पर भीषके चपमे जम्ब ग्रहण किया । भीष देखो ।

(देवोभागवत २।३ स्कन्ध, भारत १।८८ पं०)

महाभारतमें इनका नाम 'द्यु' बतलाया है ।

द्योकार (सं० त्रि०) द्योतयान् प्रसादादीन् करोति
छ-षण् । प्रसादादिकर गित्यभिद, वह कारीगर जो
प्रसादादि बनानेका काम करता हो, राजगीर ।

द्योत (सं० पु०) द्युत् भावे घञ् । १ प्रकाश । २ पातप,
धूप ।

द्योतन (सं० स्त्री०) द्युत् शोभाय युच् । १ शोभन-
शील, प्रकाशमान । (स्त्री०) द्युत् भावे ल्युट् । २
दग्ध । ३ प्रकाशन । (पु०) द्युत्-युच् । ४ दौघ, दौघा ।
५ दिग्दर्शन, दिखानेका काम ।

द्योति (सं० त्रि०) द्युत्-षिच्-चनि । प्रकाशक,
जिसमें प्रकाश हो ।

द्योतिता (सं० त्रि०) प्रकाशित ।

द्योतिरिक्षण (सं० पु०) द्योतिरिक्षण उपोदरादित्वात्
माधुः । १ द्योत, लुगन् ।

द्युभूमि (सं० पु०) द्योराकाशं भूमिरिव यस्य । १ पथी,
चिढ़िया । (स्त्री०) द्योद्य भूमि । २ स्वर्ग और
पृथिवी ।

द्युपद (सं० पु०) द्युमि स्वर्गे भोदतीति सद-क्षिपे-
देवता, स्वर्गवासी ।

द्योत (सं० स्त्री०) दिव्यत्वान्निति दिव-द्रुन् (दिवर्ष्य) ।
चण्, भा० ६०) द्युदादिगः ततो ह्रिय । १ ज्योतिः-
पदार्थ, चमकौल वस्तु । २ शीज ।

द्योतीक (सं० पु०) द्योति लोकाः द्योतीकाः उपोदरादि-
त्वात् माधुः । द्युतीक, स्वर्ग ।

द्राह (सं० पु०) द्रेति गृह्ति गृह-षच् । वायव्यग्रीप,
एक जाति, दगड़ा । इसका पर्याय प्रतिपत्तयु है ।

द्राह्य (सं० स्त्री०) द्राह्यत्वेनेति, द्राह्य-प्राकाश्याय ल्युट्-
उपोदरादित्वात् ऋस् । तोलक, तोला । इसका पर्याय—
कोल, बटक और कपाई है ।

द्रव (सं० पु०) पुरोभिद, वह नगर जो पत्तनमें भड़ा
घोर कर्चरवे छोटा हो ।

द्रदिमन् (सं० पु०) दृढस्य भावः दृढ इमनिच् (दृग्+दिग्
इमनिच् वा । पा ५।१।२२) ततो प्रकाशस्य रकारः ।
दृढता, मजबूती ।

द्रदिह (सं० त्रि०) द्यमनयोरेवा वा पतिगयेन दृढः
इति षष्ठन् । पतिगय दृढ, बहुत मजबूत ।

द्रघम (सं० स्त्री०) परिच्छद, पोशाक ।

द्रष्य (सं० स्त्री०) दृष्यति कपोऽमनं दृषं वाङ् कम्-
चतो रः । १ वह पदार्थ जो गाढ़ा न हो । २ तक्र, मट्टा ।
३ रस । ४ शक्त । (त्रि०) ५ द्रुतगतिगुण, तेज चलने
वाला ।

द्रष्या (सं० स्त्री०) दृष्यत्यनेनेति 'दृष्य पद्मादयश्च' इति
निपातनात् माधुः । १ वह पदार्थ जो गाढ़ा न हो । २
शक्त । ३ रस । ४ तक्र, मट्टा, छाँह । (त्रि०) ५ द्रुत-
गमनशील, तेज चलनेवाला । ६ द्रुतजनशील, बहुत
जल्द मारने योग्य ।

द्रमिल (सं० पु०) देशभेद, एक देशका नाम ।

तामिल देखो ।

द्रव्य (सं० पु०) लीलाययुक्त द्योदृश्यवत् श्रुतकी सुद्रा,
सोलह पणं मूल्यकी एक सुद्रा ।

द्रव (सं० पु०) द्रु-षच् । १ द्रवण । २ पलायन, दौड़ । ३
परोक्ष, हँसो । ४ गति । ५ चरण, बहाव । ६ पावस ।
७ वेग । ८ रस । ९ द्रवत्व । (त्रि०) १० चार्द्र, गोला ।
११ तरल, पानीकी तरह पतला । १२ पिघला हुआ ।

द्रवक (सं० त्रि०) द्रु शीतायै ष्वुल् । १ पलायनशील,
भागनेवाला, भगेट् । २ चरणशील, बहनेवाला ।

द्रवज (सं० पु०) द्रवाज्जायते जन-ङ् । १ गुड़ । २ द्रव-
कात वस्तुमात्र, वह वस्तु जो रससे बनाई जाय ।

द्रवण (सं० स्त्री०) द्रु-भावे ल्युट् । १ गमन, गति,
दौड़ । २ चरण, बहाव । ३ अनुताप, गर्मी । ४ विमानन
या पंखीजनकी क्रिया । ५ हृदय पर लक्ष्मणाप्य प्रभाव
पड़नेका भाव, चित्तके कोमल होनेकी हति ।

द्रवत् (सं० त्रि०) द्रु गच्छ । १ चरणगुण, बहनेवाला ।
(स्त्री०) २ शीघ्र, जल्दी ।

वर्षपथी (सं० स्त्री०) द्रु-पथं रंकाः गौरादित्वा

भूमय टोप सुनतानकी मृत्यु हो गई, जिससे उन्हें यह सहज होड़ देना पड़ा।

१८०० ई० में नाना-फड़नवीसकी मृत्यु हुई। राज्यमें बड़े भारी गड़बड़ हो फैल गई। दौलतरावने इस बहाने से कि नाना-फड़नवीस पर हमारे एक करोड़ रुपये पावने हैं, उनकी जानोर हड़पनेकी कोशिश की और उनकी (नाना-फड़नवीसकी) खोकी दत्तक ग्रहण करने की सलाह दी। वल्लभ तात्याके इस समय मन्थपद पर अभिषिक्त होने पर दौलतरावने श्वशुरके परामर्शानुसार उन्हें पकड़ कर भद्रमदनगर भेज दिया और वहीं उनकी मृत्यु हो गई। पेशवा बाजीराव दौलतरावके इस कार्यसे डर गये थे, किन्तु सपायान्तर न देख हुए रह गये। इस समय तयोवन्तराव होलकरने दौलतरावके अधिकारभक्त प्रदेश पर आक्रमण किया। युद्धमें पहले होलकर ही की जय हुई, किन्तु पोछे दौलतरावने इन्दौरके पास एक युद्धमें होलकरकी परास्त कर दिया। होलकर इसमें हारे नहीं। उन्होंने दिगुण लक्षावधके साथ दौलतरावके खानदेय पर आक्रमण किया और क्रमशः पूना तक आ पहुँचे। अक्टोबर मासमें होलकरके साथ दौलतराव और पेशवाकी सेनाका युद्ध हुआ। पेशवा और दौलतराव परास्त हो कर भाग गये। नाना स्थानोंमें परिभ्रमण करनेके बाद पेशवाने बेसिनमें अङ्गरेजोंसे एक सन्धि की। इस सन्धिके अनुसार स्थिर हुआ कि पेशवाकी रक्षणार्थ कुछ अङ्गरेजी सेना उनके राज्यमें रहेगी और उनके खर्चके लिए २५ लाख रुपये एक सम्पत्ति उन्हें दी जायेगी। इससे सभी मराठे नाचुस हो गये। नाना-फड़नवीस २५ वर्ष तक जिस कार्यके विरह खाँके थे, अब उनकी मृत्यु हो जानिसे यहजैसे यह काम हो गया। दौलतराव बरारके राजाके साथ मिल कर समय महाराष्ट्र जातिकी साथ लै चंगरेजोंके विरुद्ध युद्ध करने की तैयारि करने लगे। अङ्गरेजोंको इस बातका पता लग गया। चंगरेज पेशवाकी गद्दी पर बैठानेके लिये प्रायः २० हजार सेनाके साथ पूना आये। बाजीराव अपने सिंहासन पर बैठ गये। होलकर मालम गये हुए थे, वे नहीं आये। दौलतराव, क्या करे

क्या नहीं करे, कुछ नियम नहीं कर सके। चंगरेजोंने इनके विरुद्ध युद्ध करनेका निश्चय कर लिया। जनरल वेल्सिलो पर इस युद्धका भार सौंपा गया। उन्होंने पहले भद्रमदनगर अधिकार किया। अब दौलतराव महाराष्ट्र सेनाके साथ युद्धक्षेत्रमें प्रवर्तित हुए। समारं-सेतमें वेल्सिलीके साथ युद्ध हुआ, जिसमें वे पराजित हो कर भाग गये। कर्नल स्टिवेनसनने मोघ ही वाहन-पुर और पायोरगढ़ दुर्ग पर अधिकार कर लिया। चंगरेजोंके साथ क्रमशः दिल्ली, आगरा और नागवारीमें दौलतरावका युद्ध हुआ और प्रत्येक युद्धमें उनकी पराजय हुई। कटक, बरार आदि स्थानोंमें भी चंगरेजोंने अपनी मङ्गायत्तिका परिचय दिया। दौलतरावने अब सन्धिका प्रस्ताव किया; पर सन्धि न हुई। रघुजी भोंसले और दौलतरावकी सेना पुनः चंगरेजों द्वारा आक्रान्त और पराजित हुई। इस युद्धमें महाराष्ट्रकी अन्तिम आशा पर पानी फिर गया।

१८०४ ई० में दौलतरावने चंगरेजोंसे सन्धि कर ली। यह सन्धि सुर्जी चंगमगांवमें हुई थी। सन्धिके शर्तोंके अनुसार दौलतरावने दो लाख और भव्यान्ध बहूतसे खान होड़ दिये तथा छह हजार चंगरेजी सेनाके खर्चका भार अपने ऊपर ले लिया।

अब इनके पास राजपूतानेमें जयपुर और जीधपुर तथा दक्षिण और खानदेयमें पैठळ सम्पत्तिके सिवा और कुछ भी न रहा। १८०५ ई० में चंगरेजोंके भरतपुर-दुर्ग विजय करनेके बाद सिन्धियाने होलकरके साथ मिल कर फिर गड़बड़ मचानेकी कोशिश की, पर लार्ड क्लेकके साथ युद्धमें पराजित हो भाग गये। उस समय लार्ड कर्नलालिब गवर्नर-जनरल थे; उन्होंने दौलतरावके साथ सन्धि कर ली। परन्तु ये गिरफ्तार करनेवाले न थे। १८१५ ई० में, जब चंगरेज नेपाल-राजकी साथ युद्धमें निवृत्त थे, तब होलकर, पेशवा और दौलतराव सब चंगरेजोंके विरुद्ध युद्धार्थ तैयार हो गये। उस समय दाक्षिणात्यसे चंगरेजोंकी सेना न पाती तो मायद ये लोग युद्ध करते; किन्तु सेनाके आ पहुँचने पर अपने अपना अपना रास्ता लिया।

१८१७ ई० में गवर्नर-जनरल लार्ड डेविलिंघम पिण्डारों-

डोय । द्वयविशेष, एक प्रकारका पौधा । जोग कहीं कहीं इसे चंगोनी कहते हैं । यह औषधके काममें जाता है ।

द्रवत्व (स० स्त्री०) द्रवस्व भावः द्रवत्व । न्यायिक संघा-
दक गुणभेद, पानोकी तरह पतला होनाका भाव ।
रमके दो भेद हैं—सांस्थिक अर्थात् सामाजिक और
नैमित्तिक अर्थात् जो कारणोंसे उत्पन्न हो । लोगोंका
मत है, कि सामाजिक वा सांस्थिक द्रवत्व केवल जलमें
है और द्रव्यमें नैमित्तिक द्रवत्व है जो अन्निके संयोग-
से भा जाता है । प्राधुनिक विद्वान्के मतानुसार द्रवत्व
द्रव्यका एक रूप या लक्षण अवस्था मात्र है । इसका
कोई खास आकार नहीं है, किन्तु जिस वस्तुके आधारमें
वह रहता है उसीके आकारका वह हो जाता है । जिस
तरह पानी जब बोटनमें भर दिया जाता है, तब बोट-
के आकारका और जब कटोरे में तोटे आदिमें रहता है,
तब उन्हीं पात्रोंके आकारका होता है । द्रवत्व और विभुत्व
में केवल भेद रहता है कि द्रवपदार्थ परिमित अथ-
वा असीमित होता है और विभुपदार्थ पूरे अवकाशमें व्याप्त
रहता है । (स्त्री०) द्रव्य भावे तल-टाप । द्रवता, बहना,
टपना ।

द्रवद्रव्य (स० स्त्री०) द्रवतीति द्रवं द्रव्यं कर्मधा० । १
द्रव्य, दधि, माज्य, तक्ष, पाचय, जल और तैलादि द्रव-
पदार्थ । २ दैहिक मूलादि ।

द्रवता (स० स्त्री०) द्रवतीति द्रु-शब्द डीप् । १ एक नदी ।
२ मृत्पिकपर्णी, मृपाकायी । इसका पर्याय—शम्भरी,
चित्री, पत्रश्रेणी, आशुकाणिका, मृत्पिकपर्णी, प्रांत्य-
शिला, सहस्रमूली और विक्रान्ता है । इसका गुण—मधुर,
गोतल, रसमयकारक, ऊवर, क्षमि, शूलनाशक और
रक्षायन है ।

द्रवरस (स० द्वि०) द्रवयुक्तो रसो यस्य । सार्द्ररस, गोला-
रस ।

द्रवरसा (स० स्त्री०) साचा, साछ, साह ।

द्रवाधार (स० पुं०) द्रवाणां द्रवाणां आधारः । १ सुलुङ्ग,
चंजलि, चुङ्ग । २ द्रवद्रव्यरक्षापात्र, तरलपदार्थ रखने-
का बरतन ।

द्रवाय (स० द्वि०) द्रु-आय । द्युतिमयी, चमकीला ।

द्रवि (स० द्वि०) द्रावयति अस्मार्त्तत्पर्थे द्रु-इन्-
सर्गादि श्रावक, सोना आदि गन्धद्रव्य ।

द्रविङ् (स० पुं०) १ सनामख्यात देवदेव । दक्षिण भारतका
एक देव जो उल्लोमाके दक्षिण पूर्ववि सागरके किनारे
रमेश्वर तक विस्तृत है । तैत्तिरीय सोऽभि जनोऽप्य
वा अण् । २ द्रविण देवके राजा । ३ पितादिकमते द्रविङ्
देवशासो ।

मनुने द्रविङ्गोंको सवर्णा स्त्रोसे उत्पन्न मान्य क्षत्रियो-
की संतति कहा है, यथा—भक्ष, भक्ष, निच्छिधि, नट,
करण, खल और द्रविङ् । महाभारतमें भी लिखा है, कि
परशुरामके मयसे बहुतदे क्षत्रिय दूर दूरके पहाड़ों और
जंगलोंमें भाग गये, वहाँ भी वे डरके मारे वैदिककाव्य का
अनुष्ठान नहीं कर सकते थे, इस कारण अपने कर्म
ब्राह्मणोंके अदम्य आदिके कारण भूल गये और व्रज-
सत्वकी प्राप्ति हो गये । वे ही द्रविङ्, आभोर, मयूर, पुण्ड्र
आदि हुए । बहुत पण्य-शुक् । ४ ब्राह्मणभेद, इसके
अन्तर्गत पाँच ब्राह्मण हैं—आधि, कर्णाटक, शुभर,
द्रविङ् और महाराष्ट्र ।

द्रविङ्गो (स० स्त्री०) द्रविङ्गो गोरादित्वात् डीप् । रागिणी-
विशेष, एक रागिणीका नाम ।

द्रविण (स० स्त्री०) द्रवति गच्छति द्रवति प्रापति वेति
द्र-इन् (द्रु-इन्) द्रवति गच्छति । १ धन ।
२ काश्चन, सोना । ३ धन । ४ पराक्रम । (पुं०) ५ पृथु
राजाके एक पुत्रका नाम । ६ धुर नामक वस्तुके एक पुत्र-
का नाम । ७ कुयरीपस्थित सीमान्त गिरिभेद, कुयरीप-
का एक सीमापर्वत । ८ कौबरीपक्ष एक वर्ष,
कौबरीपक्ष अन्तर्गत एक वर्ष ।

द्रविणक (स० पुं०) वसुधता, अन्निकी एक स्त्रीका नाम ।
द्रविणनामन (स० स्त्री०) द्रविणं नामयति नागि-व्युट् ।
गोभाजन, सज्जनका पेड़ । यह खानेसे धन लाभ होता
है, इसीसे इसका नाम ऐसा पड़ा है ।

द्रविणपद (स० द्वि०) द्रविणं प्रददाति प्र-दाप् । १ धन-
दायक, धन देनेवाला । (पुं०) २ विष्णु । ये अमि-
यितफल देते हैं, इसीसे इनका नाम द्रविणपद हुआ है ।

द्रविणम् (स० द्वि०) द्रविणमिच्छति सास्रमायां काचि
सक-द्रविणम्यति सतः भावे क्तिप्-पतो खोपे को तुभे
न खानिब्रह्मति इति खोपः । धनेच्छा, जिप्तकी इच्छा
अन पानकी हो ।

दमनर मिले जलमहत्सं को दोलनरावने साथ युद्धमें
 गमन हुए। दोलनरावको इच्छा न होने पर भी चंचोज
 गमनमें दृढ़ इच्छामुसार कार्य करने लगे। वे नेपालियों
 को चंचोजों के विरुद्ध उत्तेजित कर रहे थे। उन्होंने
 पिंगवासे चंचोजों की विपत्ति करने के लिये प्रायः २५
 लाख रुपये लिये थे। किन्तु जब सुना कि गमनर-जनरल
 नेना सहित उनके राजा के सीमाक्षेत्रों पर पहुँचे हैं, तब
 पाव भीम जो चंचोजों के अभिप्रायानुसार कार्य करने
 लगे। इसी समय पेशवा युद्धार्थ चंपनर को गये। जब
 तक वे विण्डारियों को सुगरीत्या सहायता पहुँचाते थे,
 किन्तु जब देखा कि उन्होंने विण्डारियों के भ्रष्टों के लिये
 चंचोजों के कमर कस ली है, तब वे चंचोजों के
 विरुद्ध युद्धार्थ चंपनर हुए। प्रत्येक युद्धमें चंचोजों की
 विजय होने लगी। दोलनराव इस समय कार्य निरस्त थे,
 पर उन्होंने अपने सेनाध्यक्ष यशोवन्तरावको पिंगवाको
 सहायता देनेको आज्ञा दी थी, यह बात प्रकट हो गई।
 इस पर चंचोजोंने दोलनरावका भगीरद अधिकार कर
 लिया। धीरे धीरे चम्परेजीका प्रमुख देश भरमें फैल गया।
 दोलनराव सिन्धिया समर्थोपदिहवीय भुजङ्गमकी तरह
 कालातिपात करने लगे और बाहिर १८२७ ई० में उनकी
 मृत्यु हो गई।

दोलनरावको विधवा पत्नीने एक ज्ञाति पुत्रको दत्तक
 ग्रहण किया। प्रवाद है, कि सिन्धियावंश के राजा अपुत्रक
 होते हैं। यह बात प्रायः तक सत्य होती चली आ रही
 है। सिन्धियावंश के राजगण अपुत्रक होने के कारण
 राजा तक दत्तकपुत्रों की ही अपना अपना राज्य देने
 गये हैं।

दोलतगाह—समरकन्द के बलूतगाह के पुत्र । हिाट
 के चकुल गाँवों महादुर उर्फ सुलतान दुवेम मिर्जा के
 समयमें इनका पशुपद हुआ। इनको, निखो दुई
 'ताजकिरा दोलतगाही' नामक एक कविवीरणी है।
 इस पुस्तकमें दस पाशोः कवि-भोर एक ओ चोतीस
 पाशों के कवियों के जीवनचरित वर्णित हैं।—सुलतान
 दुवेम मिर्जा के समझासीम ६ मल्ल-कवियों की जीवनी
 भी इसमें दो गई हैं। कविवीरणी १८८६ ई० में लिखी
 गई थी। १८८५ ई० में दोलतगाहका देशान्त हुआ।

दोलतगाह—निजामशाहका एक शहर। यह हैदराबाद
 में २८ मील की दूरी पर अवस्थित है। हिन्दू राजाओं के
 समयमें इसका नाम देवगढ़ या देवगिरि था।

देवगिरि देखो।

दोलेय (स० पु०) दुलेयवाय ठक । कच्छ, कच्छा।
 दोलेयारू—मन्द्राज के गोदावरी जिले के अन्तर्गत राज-
 महेन्द्री तातुक्का एक शहर। यह अक्षांश १५° ५०' स०
 और देशांश ८१° ४०' पू० राजमहेन्द्री में ५ मील की दूरी
 पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २०,१०४ है।
 मन्द्रावरी और सोनहरी गताप्ती में राजमहेन्द्री के सेतु-
 पति राजाओं के साथ इसी राजे मुसलमान राजाओं का
 युद्ध इसी स्थान पर हुआ था। गोदावरीका जल संचय
 करने के लिये जो छतिय उपार्थ अवलम्बित हुआ है,
 यह कल इसी शहरमें स्थापित है। यहाँ पहाड़ों के पत्थर
 काट कर बाहर निकाला जाता है।

दोलेन (स० पु०) दुलेय अवस्थित दुलेन-इज्ज । इन्द्र ।

दोवारिक (स० पु०) द्वारि नियुक्त ठक, (तम नियुक्त)
 वा ४४४८८) तलीन द्वारि: चो पागमय । १ द्वारद्वय,
 द्वारपाल । इसका संस्कृत पर्याय—द्वारस्थ, द्वार, द्वयो,
 द्वैतधर, द्वौदार, द्वित्यार, द्वयक, द्वार, द्वैतान, द्वार-
 पालक, दोःसाधिक, द्वारक, द्वारक, द्वारक, द्वारक,
 द्वारस्थित, द्वारक चो द्वारवाचो है।

दोवारिकका लक्षण—सज्जन, सुन्दरालतिविगट,
 कार्यकुशल, अनुष्ठितप्रज्ञति और परचित्तपादक इस
 तरह के अनुष्ठित प्रतीहार वा द्वारपाल के उपयुक्त हैं।
 नातिकुशल आचरण के दोवारिकका भ्रष्ट इस तरह
 बतनाया है—जो इसारा और आकार देन कर
 सभों के मनका भाव समझ सकें और जो बलवान्, प्रिय-
 दमन, प्रमादगुण और पायदच हो; वे जो प्रतीहार के
 उपयुक्त हैं। जो अजगदकुशल, हठान्न और पालन-
 शून्य हो, वे भी प्रतीहार के योग्य हैं। उपरोक्त लक्षण-
 युक्त मनुष्यों की द्वाररक्षा के कार्यमें नियुक्त करना
 चाहिये। प्रतीहार देखो। १ एकामोतिवदक वासुदेव-
 भेट, एक प्रचारका वासुदेव जिन्हें इसामी पाल है।
 दोवारिक (स० पु०) १ द्वैतमें, एक द्वैतका नाम । २
 दोवारिक द्वैत के राजा और अधिवासी।

द्रविणस्तु (सं० त्रि०) द्रविणं पात्रं नो सानमया दक्षति
स्वयं मुक्तं द्रविणस्य सत्यं। सातवापूरक धनकामो।
द्रविणोदत्त (सं० त्रि०) १ धनदाता। (पु०) २ धनि।
यराहपुराणमें लिखा है, कि जो बल और धनप्रदान करते
हैं, वन्होंका नाम द्रविणोदा है।

ध्वज और यक्षमुक्तमें धनार्थी श्रविक, हाथमें पत्थर
से ढर द्रविणोदा देवको स्तुति इस प्रकार करते हैं—हे
द्रविणोदा! संसारमें जितने धन हैं, वे हमें दे। हम
सोम सम धनको यक्षके लिये ग्रहण करेंगे।

द्रविणोदित (सं० त्रि०) जो धन और बल देते हैं।

द्रविणोद् देखो।

द्रविट (सं० त्रि०) द्रु-गट। गतिगोल, चलनेवाला।

द्रविरतु (सं० त्रि०) द्रु-गतो दत्तुश्च। गतिगोल, चलने-
वाला।

द्रवोत्तरण (सं० क्री०) अद्रवस्य द्रवकरणं इति चि प्रत्य-
येन साध्यं। गलनेकी क्रिया।

द्रवोद्धत (सं० त्रि०) अद्रवस्य द्रवद्धतं। जो गलाया
गया हो।

द्रवीभाव (सं० पु०) अद्रवस्य द्रवभावः। गलनेका भाव।

द्रवोभूत (सं० त्रि०) १ जो द्रव हो गया हो, जो पानी-
की तरह पतला हो गया हो। २ पिघला हुआ, गला
हुआ। ३ दयालु, दयालु, पमोजा हुआ।

द्रव्य (सं० क्री०) द्रविर्य द्रु-यत् प्रत्ययेन निपातमात् माधुः
(द्रव्यरूप भावे)। पा ५।१।१०४। १ वस्तु, चीज। २ पिघल,
पातल। ३ विषा, धन। ४ पृथिव्यादि नव पदार्थ।
५ विलेपन। ६ भोजन, भोजन, दवा। ७ द्रुमविकार।
८ द्रुमसम्बन्धी ९ जल, माह। १० विनय। ११ मद्य,
शराब।

द्रव्यके लक्षण भाषापरिवर्तमें इस प्रकार लिखे हैं—

चित्ति, वपु, तेजः, महत्, श्रोम, कान, दिक्, देही
और मन इन नवोंका नाम द्रव्य है। केवल नाम वत
सानेसे इसका कुछ भी पता नहीं चलता। व्यायदर्थनमें
इस विषयकी विशेषरूपसे आलोचना की गई है।

विदेन विवरण लेख्य ग्रन्थमें देखो।

चित्ति-द्रव्य ही गिनतीमें पहला है। इससे अनेक
लक्षण हैं, जैसे-गन्धवत्त्व, रसवत्त्व, रूपवत्त्व, दृढवत्त्व

रसवत्त्व और पाकजस्यवत्त्व। प्रत्येक मित्रा और विंसी
पदार्थमें गन्ध नहीं है, इसलिये गन्धवत्त्व कहनेसे प्रत्येक
वोध होता है। सुगन्ध और दुर्गन्ध आदि जितने प्रकार-
को गन्ध है, वे सभी प्रत्येकमें होते हैं, दूसरे पदार्थमें नहीं।

रूपवत्त्व नामाजातीय रूप, चित्तिके सिवा और
किसीमें नहीं है। इसीसे नाना जातीय रूपवत्त्व प्रत्येकका
लक्षण है। अन्न और तेजमें जो दृढ है, दृढ मज्जेद है।

रसवत्त्व—रस प्रकारके रस केवल पार्थिव पदार्थमें
हो विद्यमान हैं, इसीसे पृथुविष रसवत्त्व चित्तिके
लक्षण है। जलका स्वाभाविक रस मोठा, ऊँचा और
खारा है। रस पार्थिवयोगके योगसे लपट होता है।

पाकज स्यवत्त्व—पाकजस्यवत्त्व चित्तिके सिवा और
किसीमें नहीं है, इसीसे पाकजस्यवत्त्व प्रत्येकका लक्षण
है।

चित्तिके चौदह प्रकारकी गुण हैं—रूप, रस, गन्ध, स्पर्श,
मंथ्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अप-
रत्व, वेग अर्थात् संस्कारविशेष, शुक्ल और नैमित्तिक
द्रवत्व। इनमेंसे रूप, रस, गन्ध और स्पर्श ये चार विशेष
गुण हैं।

चित्ति दो प्रकारकी है, मित्य और चित्तिय। पार्थिव
परमाणु मित्य है। अनित्य प्रत्येक तीन प्रकारमें विभक्त
की जा सकती है—देह, इन्द्रिय और विषय। पार्थिव
देह चार प्रकारकी है—जरायुज, पण्डज, स्वेदज और
उद्भिज्जः प्राणिन्द्रिय हो पार्थिवेन्द्रिय है। जिस इन्द्रिय
द्वारा गन्धका अनुभव होता है वही प्राणिन्द्रिय है। जो
न तो देह है और न इन्द्रिय हो है, अथवा प्रत्येक वही
विषय है। सूक्ष्मः इसे भोग्य प्रथिवी भी कह सकते।

अप द्रव्य-गन्धनाम दूधरा है। अनेक भी अनेक
लक्षण देखे जाते हैं, जैसे—शुक्लरूपवत्त्व, मधुररसवत्त्व, मोतम-
स्यवत्त्व। स्नेहवत्त्व और मांमिहक द्रवत्व।

अन्तमें शुक्लरूपके सिवा और किसी प्रकारका रूप
नहीं है। पृथिवीमें अनेक प्रकारके रूप हैं। अन्तमें और
कोई रस नहीं है, केवल मधुर रस है। मधुर रसमात्र-
विशिष्ट कहनेमें अन्तका ही बोध होता है, इसीसे मधुर-
रसमात्रवत्त्व अन्तका लक्षण है।

स्नेहवत्त्व—स्नेह मंथ्यता है, मंथ्यता अन्त

गुण है, खेह किशोमें भी नहीं है। छत तैलादिमें जो खेह है, वह भी तैलके अन्तर्गत है और जलोर्वागका गुण है। इसीसे स्नेहविशिष्ट कचनेसे लक्षका बोध होता है, यतएव खेहवत् जनका लक्षण है।

सांसिद्धिक द्रवत्वपर्यात् सामाविक तरलता। सामाविक तरलता जलके सिवा और किशोमें भी नहीं है। इसीसे सांसिद्धिक द्रवत्ववत्त्व जलका लक्षण है। जलमें कुल १४ गुण हैं, जैसे रूप, रस, स्पर्श, संख्या, परिमाण, घृण्यत्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, वेग, शुद्धत्व, सांसिद्धिक द्रवत्व और खेह। इनमेंसे रूप, रस, स्पर्श, सांसिद्धिक द्रवत्व और खेह ये पांच विशेष गुण हैं। जल दो प्रकारका है, नित्य और अनित्य। जलोप परमाणु नित्य है, अपर समुदाय जल जो अनित्य है। इसी जलोप परमाणुसे अनेक बड़ी बड़ो जलनिधियोंकी सृष्टि हुई है। हिमालयकी धवलभूषण गुफाराजि भी इसी परमाणुसे उत्पन्न हुई है। स्थूल जलके सभी गुण जलोप परमाणुमें हैं, केवल ये ही नहीं, इसमें क्रिया भी है।

अनित्य पृथिवीके जैसा है, अनित्य जल भी तीन प्रकारका है—देह, इन्द्रिय और विषय। जलोप देह अयोनि है, जलोप देह वक्ष्यलोकवासियोंकी है। सन्-न्द्रिय ही जलोप इन्द्रिय है, जिस इन्द्रियसे रसास्वादन क्रिया जाता है, वही रसनेन्द्रिय है। जो देह भी नहीं है, इन्द्रिय भी नहीं है, केवल जल है, यही विषयात्मक जल है। यतः इसे भोग जल भी कह सकते। हिम-कपाये से कर मत्स्यसमुद्र तक सभी विषय हैं।

तेजः—द्रव्यगणनामें तीसरा है। इसका लक्षण उष्ण, स्पर्शवत् आस्तरणरूपवत्त्व और नैमित्तिकद्रवत्ववत्त्व है। जिसमें उष्णस्पर्श है, आस्तरणरूपवत्त्व है और नैमित्तिक द्रवत्व है, उसीका नाम तेज है। तेजमें और कोई स्पर्श नहीं है, केवल उष्णस्पर्श है, यद्धि और स्पर्शविषय इसका उदाहरण है। उष्णस्पर्श और किशोमें नहीं है, केवल तेजमें है, उष्णस्पर्शविशिष्ट कचनेसे केवल तेजका ही बोध होता है। इसलिये उष्णस्पर्शवत्त्व तेजका लक्षण है। तेजमें और कोई रूप नहीं है, केवल आस्तरणरूप है, हीरकादि इसके उदाहरण हैं। आस्तरणरूप भी तेजके सिवा और किशोमें भी नहीं

है। सुतपं आस्तरणरूप कचनेसे तेज ही समझा जाता है। इसीसे आस्तरणरूपवत्त्व तेजका लक्षण है।

तेजमें सामाविक द्रवत्व नहीं है, किन्तु नैमित्तिक द्रवत्व है; सुवर्णादि इसके उदाहरण हैं। यतः नैमित्तिकद्रवत्वविशिष्ट कचनेसे तेजका बोध होता है। नैमित्तिकद्रवत्वका अर्थ वस्तुन्तरयो साहाय्यसम्भूत तरलता है। अग्निही गरमसे सुवर्णादि तेजः पदार्थ गल जाता है, किन्तु यह जलकी तरह सामाविक तरल नहीं है। इसलिये नैमित्तिक द्रवत्ववत्त्व तेजका लक्षण है।

तेजमें कुल मिला कर ११ गुण हैं, जैसे—स्पर्श, संख्या, परिमाण, घृण्यत्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, रूप, द्रवत्व और वेग। इनमेंसे स्पर्श और रूप ये दोनों विशेष गुण हैं। तेज, दो प्रकारका है, नित्य और अनित्य। तेज परमाणु नित्य तेज है और दूसरा दूसरा तेज ही अनित्य है। पृथिवीसे बड़ा सूर्यमण्डल, मेकड़ों नक्षत्रमण्डल और सुवर्ण हीरकादि तेज परमाणुसे उत्पन्न हुए हैं। स्थूल-तेजके सभी गुण और सभी क्रियायें परमाणुमें वर्तमान हैं। अनित्य पृथ्वीके जैसा है, अनित्य तेज भी तीन प्रकारका है—देह, इन्द्रिय और विषय। तेजसदेह अयोनि है जो स्वर्गवायुओंकी मानो जाता है। चतुरिन्द्रिय जो तेजस इन्द्रिय है। जो देह नहीं है, इन्द्रिय भी नहीं है, केवल तेज है, यही विषयात्मक तेज है। अग्नि, सुवर्ण, सूर्य ये सय विषय हैं।

वायु—द्रव्यगणनामें चौथो है। वायुका लक्षण एक वा दो सुक्तावलीकारका अभिप्रेत है। वायुका प्रथम लक्षण अणुकाजगुणाद्योतस्पर्शवत्त्व है, दूसरा लक्षण तिर्यकगमनवत्त्व है। वायुमें रूप नहीं है, रस नहीं, स्पर्श नहीं है, स्पर्श पचय है, किन्तु वह स्पर्श एक प्रकारका नहीं अनेक प्रकारका है, यथा—कठिनस्पर्श, कोमलस्पर्श, वाष्पस्पर्श, उष्णस्पर्श और शोतस्पर्श। सूक्ष्मतः वायुके ये पांच प्रकार स्पर्शभेद किये जा सकते हैं। कठिन, कोमल और वाष्पस्पर्श परस्पर विरुद्ध हैं तथा उष्णस्पर्श भी परस्पर विरुद्ध है। किन्तु इनमेंसे कोन स्पर्श वायुमें वर्तमान है ? अणुकाजगुणाद्योतस्पर्श वायुमें विद्यमान है। इव वायवस्पर्शकी

पकते हैं। इसी कारण इसकी लताकी पक्के घरकी दीवारमें लगा देते हैं। वहाँ सूर्यके तापसे तथा दीवारकी गर्मीसे फल अच्छी तरह पक जाते हैं। विभिन्न देशोंमें जलवायुके भेदसे इसी तरह दो एक सामान्य परिवर्तन कर दाखको खेती की जाती है।

दाखके फलसे किशमिश बनता है। इसके प्रसृत करनेके दो नियम हैं, पहले उन्हें धूपमें सुखा लेते हैं, जब तक ऊँठल भलीभाँति सुख न जाय तब तक किशमिशमें खाद नहीं आता है और रस भी कम हो जाता है। एक दूसरे प्रकारका किशमिश होता है जो दाखके फलको डाल समेत तोड़कर घरकी छत पर रखनेसे बनता है। इस तरहकी किशमिश सबूज रंगका होता है। प्रायः ३०४० दिनोंके भीतर दाखके फल किशमिशमें परिणत हो जाते हैं। कच्ची अवस्थामें दाखके फलको सुखा लेनेसे ही किशमिश बनता है।

सुपल दाखके फलसे मुषका बनता है। फलके भलीभाँति पक जाने पर ऊँठल समेत उसे तोड़ लेते हैं। कड़ाहीमें जल दे कर उसे उबालते हैं। जब पानीका खोलना शुरू हो जाता, तब उसमें लगभग ५५ सेर ईंधन और कुछ देर बाद ५२ सेर चूना डाल देते हैं। पोछे कड़ाहीको नीचे उतार रखते हैं। जलके उछला हो जाने पर धीरे धीरे उसे एक दूसरे बरतनमें ढाल देते हैं। उसो जलका नाम तेजाब है। पोछे फिर एक दूसरो कड़ाहीमें जल डाल कर उसे भाग पर चढ़ाते हैं। जब जल खोलने लग जाता है, तब उसमें तीन सेर अम्लज तेजाब मिला देते हैं। बाद दाखके फलको उसमें डूबो कर निकाल लेते हैं। उस खोलते हुए जलमें फलको एक मिनटसे अधिक समय तक नहीं रखना चाहिये। इस तरह तीन बार डूबाये जानेके बाद दाखके फलको स्वच्छ जलमें भलीभाँति धो देते हैं।

सुशुत और चरकचर्चितामें दाखका उल्लेख है। इसका गुण—शीतल, मिट और रीचक है तथा स्नेह्या, सर्दी, यक्षा आदि रोगोंमें बहुत हितकर माना गई है। इससे श्राचरिट नामक एक प्रकारका चरित भी तैयार होता है। सुसलमान नाम इस पाचक और रक्तपरिशोधक मानते हैं। इसके ऊँठलकी जला कर जो राख बनती

है उसे लगाने या खानेसे पथरी, मन्दर आदि रोग जाते रहते हैं। दाखका शरबत शरीरकी स्निग्ध करता, दाखको निवारण करता तथा मन्दानि, चामाशय आदि रोगोंके काममें आता है। डंठल काट देनेसे वमन-कालमें उससे एक प्रकारका रस निकलता है जो पहले चर्मरोगमें ব্যবহृत होता था। अब मो यूरोगमें जन साधारण इसे नेत्ररोग (Ophthalmia) में लाते हैं। इसके मिरकेसे मन्दानि, पेटदर्द और कभी कभी हैजा चारोग्य हो जाता है। इसको नमकके साथ खानेसे चलटी भी आती है।

संस्कृत-साहित्यमें दाखका जो लेख पाया गया है उससे जाना जाता है कि तीन हजार वर्ष पहले भी भारतवासी दाखका नाम जानते थे, किन्तु इसकी उत्पत्ति-दशविधि शायद वे नहीं जानते थे। चिकित्साशास्त्रमें दाखके संयोगसे प्रसृत जिन सब औषधियोंका उल्लेख है, उनमें ताकी दाखकी आवश्यकता नहीं पाई गई है। सुतरां इससे अनुमान किया जाता है कि उस समय भारतवर्षमें दाखको खेती नहीं होती थी।

मुसलमान राजाओंके पहले दाखकी खेतीका कोई विवरण नहीं मिलता है।

मुसलमान लोग जब कभी कोई देश विजय करते, तब उस देशकी दाखकी लताकी निर्मूल कर डालते थे। भारतवर्षमें जो सब जङ्गलों दाख पाई जाती हैं वे सब प्रायः इन्हीं मुसलमान राजाओंके अधिकारके समयमें तहस नहस कर डाली गई थीं, किन्तु यह कह नहीं सकते कि वे पोछे शुल्मकी भाँति बिना परिश्रमसे बड़ कर इस अवस्थामें प्राप्त हो गईं हो।

कामूरमें ही चार प्रकारको उत्तम, पाठ प्रकारकी निकट और तीन प्रकारकी जङ्गली दाख पाई जाती है। उत्तमसे उत्तम जङ्गली दाख मुगलसम्राट्, जहान्गोरके समयमें काबुलसे लाई गई थी। मुगल-राजाओंको दोने योग्य शराब इसी उत्तम दाखसे बनाई जाती थी। जहान्गोरकी मृत्युके बाद औरङ्गजेबने मुसलमानों पाधारके अनुसार दाखकी लताको ध्वंस कर डाला। भारतमें दाखकी खेती तभीसे फ़ास हो गई है।

ग्रीक लोगोंने वैमित्तिक जातिसे दाखकी खेती

मनुष्यमन्त्राको वायुस्वरूप कह्य गया है । स्वर्ग के विषय-
में विद्वानाचार्यने कहा है—

“धनुष्वा शीतशीतोष्णमेशरः प्रविष्टो मनः ।” (भाषावर्ण)

स्वर्ग तीन प्रकारका है, धनुष्वाशोत, शीतल और
उष्ण । कठिन और कोमलस्वर्ग पृथ्वीमें है, कठिन और
कोमलस्वर्गमें भी धनुष्वाशोतस्वर्गके अन्तर्गत है ।
पृथ्वीमें जो धनुष्वाशोतस्वर्ग है, उसको नामान्तर
कठिनस्वर्ग और कोमलस्वर्ग है । एक और प्रकारका
धनुष्वाशोतस्वर्ग वायुमें है । हमने इस धनुष्वाशोत
स्वर्गका पृथक् भावसे उल्लेख न कर उसकी जगह
कठिनस्वर्ग, कोमलस्वर्ग और वायुस्वर्ग इन तीन
प्रकारके स्वर्गका उल्लेख किया है । वायुका धनुष्वा-
शोतस्वर्ग ही वायुस्वर्ग है । यह अणुकण है—धनु-
ष्वाशोतस्वर्ग वायुमें है, ‘अणुकणानुष्णशोत स्वर्गवान्’
कहनेमें ही वायुका बोध होता है । इसीसे अणुकणानु-
ष्णशोतस्वर्ग अथवा वायुका लक्षण है । तिर्यक्, गमन
वायुमें है । तिर्यक्, गमनका अर्थ वक्रगति है, वायुमें न
तो भ्रमण गति, न ऊर्ध्व गति और न अधोगति हो है ।
वायुकी गति केवल वक्र है । इसीसे तिर्यक् गमनवान्
कहनेमें वायुका ज्ञान होता है ।

प्राचीन मतानुसार कोई कोई षण्ढत कहते हैं, कि
वायुका दूसरा लक्षण ‘स्पर्शानुमेयत्व’ है ; स्पर्श आदि
द्वारा जिसका अनुमान होता है, वही स्पर्शादि अनुमेय
है । अतएव स्पर्शानुमेयत्व वायुका लक्षण है । वायुमें ८
गुण हैं जैसे—स्पर्श, संह्या, परिमाण, पृथक्, संयोग,
विभाग, परत्व, अपरत्व और वेगाद्यसंस्कार । इनमेंसे
केवल स्पर्श ही विग्रेय गुण है । वायु दो प्रकारकी है,
नित्य और अनित्य । वायुकी परमाणु नित्यवायु है,
इसके बिना और समो वायु अनित्य है । वायुपृथ्वी
परिव्यापक वायु इसी वायुकी परमाणुसे उत्पन्न हुई
है । स्थूलवायुमें समो गुण वायुकी परमाणुमें वर्तमान
है । अनित्य पृथिव्यादिके जैसा अनित्यवायु तीन प्रकार-
का है, देह, इन्द्रिय और विषय । वायुकी देह अयो-
निज है, यह देह प्रोतपिमाघाटिकी है । त्वग्निद्रिय ही
वायुकी इन्द्रिय है । जो देह भी नहीं है, इन्द्रिय भी
नहीं है, अथवा वायु है, यही विषयात्मक वायु है ।
इसके ४८ भेद माने गये हैं ।

आकाश द्रव्यगणनामें पांचवा है । आकाश में कर
नथ्य और प्राचीन दुर्वा प्रकारके दार्शनिक सम्प्रदायमें
विवाद चलता आ रहा है, यहां पर उसका उल्लेख करना
निष्प्रयोजन है । नैयायिकोंके मतानुसार आकाशके
अवयव नहीं है, अथवा सर्वव्यापक है आकार नहीं है,
अथवा गुणवान् है । इसी आकाशके साथ ब्रह्मका सादृश्य
देखा जाता है । आकाश अमल, अपरिमोम, अनादि
और अमय है । जितने प्रकारके मूर्त द्रव्य हैं समोमें
आकाश संयुक्त है । मूर्तका अर्थ किंमोका परिमाण
स्थिर करना है । पृथ्वी, जल, तेज, वायु, इन सब
भूतोंकी अपेक्षा जो विराट्, तथा विमलवापक है, जो
पृथक्, तेज तथा जलके भीतर बाहर है और जो वायुके
सर्वत्र प्रोतप्रोतभावसे अवस्थित है वह नित्य, निर्विकार,
निराकार, निर्लेप, परम महत् पदार्थके लक्षण ब्रह्मत्वाये
गये हैं, यही महत् पदार्थ आकाश है ।

आकाशके लक्षण—‘अद्वैतान्यत्व’ आकाशत्व’ । जो
शब्दका आश्रय है वह आकाश है । शब्दका आश्रय और
कोई नहीं है, केवल आकाश है । शब्द और किसी
द्रव्यमें नहीं रहता, केवल आकाशमें ही रहता है ।
आकाशके कई एक गुण हैं—संख्या, परिमाण, पृथक्,
संयोग, विभाग और शब्द । आकाश नित्य द्रव्य है,
आकाशका विग्रेय गुण मात्र शब्द है । आकाश नित्य
द्रव्य है, आकाशके अवयव नहीं है और देहादिके भी
विभाग नहीं है । आकाश स्वरूप इन्द्रिय है । इस
इन्द्रियका नाम कर्ण है ।

काल द्रव्य गणनामें छठा है । नैयायिकोंके मतसे
कालके विषयको पदार्थोपपत्ति नहीं की जा सकती ।
कामकी कोई अवरोधोंसे देख नहीं सकता, न
कोई अर्थ करके उसका अस्तित्व समझ सकता,
और न कोई प्रमाण से कर उसकी सत्ता हो या सृष्टता
है । फिर कालको कौन नहीं जानता ? कालका आश्रय
ले कर कोई कभी उसका मधुर रमनासे परिपूर्ण नहीं हो
सकता, मधुर शब्दके जैसा कर्ण भर कर कोई कभी
कामासुर पान नहीं कर सकता, तो भी कालकी
कथा, कालको सत्ता सबोंके प्राणमें प्रथित है । जन-
कत्व ही कालका लक्षण, काल अन्य मात्रका ही जनक

मोनों की। प्रियोपामे दास पहले विविध पादि ईशानेन आनिशमें प्रसारित हुई। ये ही धोक मोनों-के मिश्रक हुए। पीछे रोमकजातिने धोक मोनोंसे श्रमन्ता व्यवहार सीधा। रोमकराज म्यूसरके समयमें भी दासका रम भव काममें नहीं लाया जाता था। दक्षिण इटलीमें ही पहले पहन दासकी गैनी शुरू हुई। पापवों प्रताप्योने इटलीका दान बहुत समझर हो गई। रोमक-प्रजातन्त्रको समाप्तिके समय दासका पादर वहाँ तक बढ़ गया था कि वहाँके लोग चनाज पादिकी न बी कर इसीको रीतो करत थे। यूरोपके चनाम्य देशमें विगेषतः फ्राणमें सोजरके अधिकारके माय माय दासके व्यवहारको बूझ हडि हुई थी। फ्राणमें जर्मनोंमें पोर तब खोसमें इसका व्यवहार प्रचलित हुआ।

रोमक-साम्राज्यके ध्वंसके बाद ही इटलीमें दासकी रीती गिरने लगी। वहाँ इसके रमने की श्राव्यनतो ही समता चनादर होने लगा पोर दक्षिण फ्राणको श्रावका पादर बढ़ गया। फ्रांस भी दक्षिण फ्राणमें इसके रमने बनी हुई श्राव श्रावोंको भां समझी जाती है। पहले भारतवर्षमें भी दासके श्राव बनाई जाती थी जिनमें लोग मार्दिक कहते थे।

पन्नाबमें बारह प्रकारकी दास देवो जाती है। यहाँका भी दास यूरोपीय दासके समान फल देने के सही, किन्तु भातृ बांध कर जंगल हो जाती है। यद्यपि रीति रीतों नहीं करना ही इसका प्रधान कारण है। पन्नाबमें बढ़िया दास उत्पन्न होने पर भी श्रावके लिये इसको गिरा नहीं की जाती है। विगेषतः पन्नाबकी दास जिस समय पकती है, सम, समय इतनी गरमी पड़ती, कि समका रम गरमीसे बड़ा हो जाता है। पन्नाबके मध्य विगावरकी दास सर्वोत्तम है। अजारा देशमें भी चार पाँच प्रकारके पन्नाब पाये जाते हैं। भारतके मध्य कामोरेमें दासकी जै भी रीतो होती है, वे भी पोर दूसरी जगह नहीं होती। सुगन्मान-राज्यके पहले कामोरेमें दासकी किस तरह रीती होती थी, समता पन्नाब तरफ बता नहीं चलता। सुगन्-मन्नाट, पन्नाब बादिभ्यतिथि थे। इन्हीं की पहले पहल

कामोरेमें दासकी रीतीकी व्यवस्था की। अर्थात्, दासका पोर श्राव्यनमामें कामोरेमें एवं पागिन, कार्मिक पोर पन्नाबवर्षमें काबुनमें दास मंगाई जाती थी। सुगन् मन्नाट, या समरावगण कामोरी दासकी श्राव पोते थे। कामोरेमें इसकी रीतीमें यष्ट राग्य बल्ल होता था। मन्नाट पन्नाबके यष्टे लापोर, टिको, पागरी, इनाहाबाद पादि स्थानोंमें भी दासकी रीती होने लगी थी।

मन्नाट, जहानगोरके समयमें कामोरी दासकी विगेष वसति हुई। वहाँमें काबुनमें चार प्रकारकी बढ़िया दास ला कर कामोरेमें रोपा था। सब समय इस देशके लोग दासके प्रस्तुत श्राव पोते थे। पोरइजबके समयमें दासकी रीती दोनो पड़ गई। १८०६ ई०में किसी माहबमें कामोरी जहानगोर दासके श्राव बना कर चले कामोरेके राजा प्रतापसिंहके पास भेजा था। यह देख कर राजाने एक बेलजियनके ऊपर श्राव तैयार करनेका भार दिया। १८०० ई०में पहले पहल मध्य प्रस्तुत हुआ पोर १८८५ ई० तक होता रहा। किन्तु इसमें किसी प्रकारकी पामदनी न देव इसको प्रया बन्द कर दी गई।

१८८६ ई०में कामोरेके राजाने अपने राज्यमें सुगामन चयानिके लिये पन्नाब गवर्मेण्टको सहायता मांगी। गवर्मेण्ट भी इसमें सहमत हो गई। दासकी रीतीका हाल अच्छी तरह जानने-हुए पन्नाब गवर्मेण्टने १८८० ई०में यूरोपमें कुछ मोनोंको भेजा कर कामोरेमें दासकी रीती करनी पारम्भ कर दी। अभी कामोरेमें दासके एक प्रकारकी गटनी पोर एक प्रकारकी अच्छे पोनेयोम्य श्राव बनती है जिसकी प्रगता देगविदेशमें हो रही है।

पविमोसर प्रदेश पोर पयोप्याके जना स्थानोंमें दास उत्पन्न होती है। मन्नाट पन्नाबमें पागरी, इनाहाबाद पादि स्थानोंमें बढ़िया दास मंगा कर रोपा था। इस देशकी समतल भूमिमें दास यष्ट फल देने की। पागरी, इनाहाबाद, कामनूर, कायी, मजगन, पादि स्थानोंमें उत्तम दास होती है, किन्तु सब प्रकारकी दासोंमें श्राव नहीं बन सकता। जहावर प्रदेशमें बहुत पहले दासकी रीती होती है। यहाँ दासके पन्नाब

है, अर्थात् जिन सब पदार्थोंकी उत्पत्ति है, वही जन्म है, जाल तत्समुदायका ही जनक या कारण है । इसीसे जनकत्व कालका लक्षण है । काल जो जन्म मात्रका ही जनक है, वह एक प्रकारसे वस्तुके ऊपर ही देखा जाता है । कालमें उत्पत्ति है, कालमें मय है, किन्तु वस्तुओंका विकास होता है, फिर ये कालमें विलीन हो जाते हैं अतएव समीका मूल काल है । आज चहा बनता है, काल वस्तु तैयार होगा, इन सब बातोंमें जाना जाता है, कि वहु और वस्तुकी उत्पत्तिका अधिकरण कालको करता है । आज, कल आदि ये सब शब्द कालके परिचायक हैं । जिस जिस वस्तुकी उत्पत्तिका अधिकरण जिस वस्तुमें होता है, उस वस्तुका जनकत्व वा कारणत्व उसी वस्तुमें रहता है । अतएव घट पटादिकी उत्पत्तिके जैसा काल भी घटपटादिका कारण हुआ है । मूल बात यह है, कि जो उत्पत्तिका अधिकरण है वही उत्पत्तिका कारण है, जो वस्तु जिस वस्तुकी उत्पत्तिका कारण है, वह वस्तु उसका भी कारण है । अतएव काल जन्म पदार्थका कारण है । खण्डकालके खण्डकार्यका, कारणत्व ले कर ही सामान्यतः जन्म जनकत्व कालका लक्षण हुआ है ।

काल नित्य है । नित्य कालका नामान्तर महाकाल है । यह महाकाल एक है । काल चाहे एक ही, चाहे अनेक ही रस काल खोकारकी प्राप्यकता हो क्या है ? न्यायका मत है, कि पदार्थविहित्वी एक युक्ति लाघव है ।

दिक् द्रव्यगणनामें सातवां, देहोपाठवां और मन नवां है । दिक्, जीवार्मा और मन देखो ।

ये ही नौ प्रकारके पदार्थ नैयायिकोंके द्रव्य पदार्थ हैं । (माधवरी० और विदालतमुखावली)

नैयायिकोंके मतमें द्रव्य के लक्षण पाँच प्रकारके बतलाये गये हैं ।

रसगुण, बोध, विपाक और शक्ति इनके समाहारका नाम द्रव्य है । इन द्रव्यका विषय सृष्टिमें इस प्रकार निरा है—कोई कोई आचार्य ऐसे हैं जो द्रव्यको ही प्रधान मानते हैं । क्योंकि पदार्थ द्रव्य व्यवस्थित और रस आदि पदार्थवस्थित है, जैसे, अणुजगत्तमें जिस तरह रस-गुण आदिकी उपलब्धि होती है, एकफलमें उस तरह

नहीं होती । दूसरा, द्रव्य निरा है और रसगुण आदि अनित्य, कारण कल्पादिको जगह द्रव्य, रस और गन्ध-विशिष्ट अथवा रस और गन्धहीन हुआ करता है । तोसरा, द्रव्य जातीय गुणको नित्य भवन्मय करता है । चौथा, पञ्चेन्द्रिय द्वारा द्रव्य ही गृहीत होता है, रसादि नहीं । पाचवां, द्रव्य आश्रय है और रस आदि उसमें आश्रित है । छठा, बोधधका एव वर्णन करनेमें द्रव्यका नाम उल्लेख कर आश्रय करना होता है । सातवां, शक्त प्रमाण हेतु है । आठवां, रस आदिके गुण द्रव्यकी अवस्था अपेक्षा सापेक्ष है, जैसे तरह द्रव्यका तरहरस, एक द्रव्यका एक रस आदि । नवां, द्रव्यके एकान्तमें भी प्राधि शान्ति हुआ करता है । इन्हीं सब कारणोंसे द्रव्य ही प्रधान है, ऐसा श्लोक्त हुआ है । क्रिया और क्रियाके गुणको नार्ह द्रव्य और द्रव्यका लक्षण समवायिकारण है अर्थात् किस द्रव्य द्वारा क्या फल होगा, वह द्रव्य और उसका गुण दोनों को अपने फलके उत्पादनके कारण है । सुतरां द्रव्य और गुण परस्पर समवायिकारण है, अर्थात् दोनों ही उस फलके दायक हैं ।

कोई कोई इसे खोकार न कर रसको ही प्रधान मानते हैं । फिर किसी पण्डितके मतमें बोध ही प्रधान है, यह श्लोक्त हुआ है । फिर बहुतसे पण्डित ऐसे हैं जो इसे भी खोकार नहीं करते, वे विपाकको ही प्रधान मानते हैं । इसका विवरण तत्तद् ग्रन्थमें देखो । पण्डित-गण लक्ष पार प्रकारको भी प्रधानता खोकार नहीं करते । कोई द्रव्य धेवन करनेसे दोषका कुण्ड अथ द्रव्य द्वारा, कुण्ड उसमें रस द्वारा, कुण्ड उसमें बोध द्वारा और कुण्ड उसमें विपाक द्वारा शान्ति या हृदि हुआ करता है ।

बोधके बिना पाक नहीं होता, इसके बिना बोध नहीं रहता और द्रव्यके बिना रस भी नहीं रहता है । सुतरां द्रव्य ही प्रधान है । देह और देहकी स्थिति जिन तरह परस्पर सापेक्ष है, उसी तरह द्रव्यके बिना रस नहीं होगा और रसके बिना भी द्रव्य नहीं होता है । बोध कहनेसे शीत उष्मादि आठ प्रकारके गुणका ही बोध होता है । वह आठ प्रकारके बोध द्रव्यके साध्य किये हुए हैं । ये सब गुण निरुन्ध रसमें कभी भी

नाम दखन और लताका नाम लान' है। यहाँकी दाखसे जो शराब बनतो उसे भिख कहते हैं। इससे एक प्रकारका मादक भी बनता है जिसका नाम रक वा भरक है। पहलेसे कनावर प्रदेशमें अंगूरकी खेती चली आ रही थी। १८५५ और १८६० ई०में इसकी फसलमें एक प्रकारका रोग हो गया जिससे अनेक दाखके उद्यान बरबाद हो गये, तभीसे इसकी खेती बहुत कुछ कम गई है।

मध्यभारतके असीरगढ़ और उसके निकटवर्ती स्थानोंमें दाख उपजाई जाती है। फल लगनेके साथ ही इसे लोग बेच डालते हैं और किसी प्रकारके काममें नहीं लाते। खाण्डवामें भी दाख लगाई जाती है।

सिन्धु प्रदेशमें भी दाख उत्पन्न होती है। यहाँ उससे किशमिथ नहीं बनाया जाता, किन्तु दो रकमको शराब तैयार होती है। एक प्रकारकी शराबका नाम किशमिथी शराब है जो दाखके सुखानेसे बनती है; दूसरेका नाम चांगूरी शराब है। यह पकी दाखसे तैयार होती है। हैदराबाद, मिहवान, शिकारपुर आदि स्थानोंमें भी चांगूरी शराब बनती थी।

बम्बई प्रदेशमें दाख कम लगाई जाती है, यह ठोक कोक नहीं कह सकते हैं। खानदेशके राजस्वसंग्राहक (Collector) वहाँ दाख खर्च लगाते हैं। पूना, अहमदनगर, औरङ्गाबाद आदि स्थानोंमें भी दाखकी खेती होती है। कुछे सा या बदलीके समय दाखका बहुत तुकमान होता है, इसी कारण पूर्वघाट पर्वतके दक्षिणमें दाख नहीं उपजती है। नासिक और मातपुरा आदि स्थानोंमें भी दाखको खेती होती थी, किन्तु कुछ दिन पहले उसमें रोग हो जानेसे बहुतसे खेत नष्ट हो गये हैं।

बङ्गालमें अधिक हट्टि होनेके कारण दाख न तो अधिक उपजती और न सुखाडू होती है। बिहारमें विशेषतः दानापुर और तिरहुतका जलवायु उत्तर-पश्चिम प्रदेशका जलवायुसा है, इस कारण वहाँ दाख काफी उपजती है। १८३६ ई०में फतान मिलनगरे कलकत्तेके पास अपने उद्यानमें दाख लगाई थी और बहुत यत्नसे फल प्राप्त किया था। बङ्गाल देशमें किसी किसी घनो मनुष्यके उद्यानमें दाखकी लता देखी जाती है, किन्तु उसकी खेती नहीं होती।

आसाममें अंग्रेजोंके समयमें ही दाख लगाई गई थी। वहाँके गवर्नर जेनरलके एजेंट मर्जर जे'किन्सन सबसे पहले गोहाटोमें दाख उत्पन्न की। उन्होंने दाखके फलकी पकानेका एक नया नियम बताया था।

मन्दाजामें कठिन परिश्रम और यत्न किये बिना दाख नहीं उपजती है। किन्तु नीलगिरि और उसकी उपत्यकामें यथेष्ट फल लगते हैं। यहाँ चौदह प्रकारकी देशीय दाखोंको खेती होती है। १८८८ ई०में बिलायतसे जो दाख मंगा कर लगाई गई है उनमें भी काफी फल लगते हैं। कुछ दिन पहले स्पेनसे भी दाख मंगा कर रोपो गई है।

ब्रह्मदेशमें अंग्रेज लोग जो दाख उपजाते हैं उसमें सुखाडू फल लगते हैं। किन्तु वहाँके जलवायुके दोपसे दाखकी खेती होना एक तरह असम्भव है।

इस देशमें बहुतसे ऐसे सुन्दर स्थान हैं जहाँ दाख लानेसे चाशायित फल पाये जाते हैं। दक्षिण यूरोपमें दाख जिस तरह बहुतकी जोविकाके रूपमें परिगणित हुई है, उस तरह कुछ कुछ काश्मीर और पञ्जाबके उत्तर-पश्चिम प्रदेशके सिवा भारतवर्षमें और कहीं भी वाणिज्य द्रव्यके उद्देश्यसे दाख नहीं उपजाई जाती है। मणिपुरमें ऐसे बहुतसे स्थान हैं जहाँ जलवायु और मटोके गुणसे दाख अच्छी लग सकती है। गवर्मेण्टको कृपासे काश्मीरमें अभी दाखकी खेती होती है। वहाँ यह वाणिज्य द्रव्यके उद्देश्यसे लगाई जाती और उसीसे बहुतकी जोविका चलती है; किन्तु साधारणतः दाखसे किशमिथ, सुमहा आदि प्रयुत हो कर बड़े वाणिज्य द्रव्य हो गया है। सुल-सम्राट् अकबरसे ले कर शाहजहानकी राजत्वकाल तक काश्मीरी दाखकी शराब बहुत आदरनीय थी। औरंगजेबके समयसे ही इसकी चयनति होने लगी। कलकत्तेके अन्तर्जातिक-प्रदर्शनमें काश्मीरी शराबमें स्वर्णपदक पुरस्कार दिया गया था। इसके सिवा अन्य दो प्रदर्शनमें भी काश्मीरका मद्य विशेष प्रशंसित हुआ है। वाणिज्यकी और इस देशके लोगका लक्ष्य रहनेसे भारतवर्षमें दाखकी खेती एक प्रधान व्यवसाय हो जायगी।

द्राक्षाघृत (सं० क्रो०) द्राक्षामिश्रण पक्का घृत। चर्क-दत्तोक्त प्रतीपधविशेष।

मूलमन्त्राको वाचस्वर्ग कहा गया है। स्वर्ग के विषय-
में विज्ञानायने कहा है—

“अनुष्ठा पीतशीतोष्णभेदाश्च त्रिविधो मगः ।” (भाष्यम्)

स्वर्ग तीन प्रकारका है, अनुष्ठाग्निक, शीतल और
उष्ण। कठिन और कोमलस्वर्ग पृथ्वी में है, कठिन और
कोमलस्वर्ग में भी अनुष्ठाग्निकस्वर्ग के भन्नागत है।
पृथ्वी में जो अनुष्ठाग्निकस्वर्ग है, उसको नामान्तर
कठिनस्वर्ग और कोमलस्वर्ग है। एक और प्रकारका
अनुष्ठाग्निकस्वर्ग वायु में है। हमने हम अनुष्ठाग्निक
स्वर्ग का प्रथम, मावसे उल्लेख न कर उसकी जगह
कठिनस्वर्ग, कोमलस्वर्ग और वाचस्वर्ग इन तीन
प्रकारके स्वर्गों का उल्लेख किया है। वायुका अनुष्ठा-
ग्निकस्वर्ग ही वाचस्वर्ग है। यह प्रमाण है—अनु-
ष्ठाग्निकस्वर्ग वायु में है, “अपाकजानुष्ठाग्निक स्वर्गवान्”
कहनेसे ही वायुका बोध होता है। इसीसे अपाकजानु-
ष्ठाग्निकस्वर्ग वस्तु वायुका लक्षण है। तिर्यक्, गमन
वायु में है। तिर्यक्, गमनका अर्थ वक्रगति है, वायु में न
तो सरल गति, न ऊर्ध्वगति और न अधोगति हो है।
वायुकी गति केवल वक्र है। इसीसे तिर्यक्गमनवान्
कहनेसे वायुका ज्ञान होता है।

प्राचीन मतानुसार कोई कोई पण्डित कहते हैं, कि
वायुका दूसरा लक्षण ‘स्पर्शाद्यनुमेयत्व’ है; स्वर्ग आदि
द्वारा जिसका अनुमान होता है, वही स्पर्शादि अनुमेय
है। अतएव स्पर्शाद्यनुमेयत्व वायुका लक्षण है। वायु में ८
गुण हैं जैसे—स्पर्श, संहत्या, परिमाण, प्रयत्न, संयोग,
विभाग, परत्व, अपरत्व और वेगाध्यमस्कार। इनमेंसे
केवल स्पर्श ही विशेष गुण है। वायु दो प्रकारकी है,
नित्य और अनित्य। वायवीय परमाणु नित्यवायु है,
इसके निवा और समो वायु अनित्य है। व्याघाट्यो
परिव्याप्त वायु इसी वायवीय परमाणुसे उत्पन्न हुई
है। स्वभावयुक्त समो गुण वायवीय परमाणु में वर्णमान
है। अनित्य प्राविद्यादिके जैसा अनित्यवायु तीन प्रकार-
का है, देह, इन्द्रिय और विषय। वायवीय-देह प्रयो-
जित है, यह देह प्रेतपिशाचादिकी है। त्वग्निन्द्रिय ही
वायवीय इन्द्रिय है। जो देह भी नहीं है, इन्द्रिय भी
नहीं है, प्रथम वायु है, यही विषयात्मक वायु है।
इसके ४८ भेद माने गये हैं।

आकाश द्रव्यगणनामें पांचवा है। आकाश ने कर
नव्य और प्राचीन दोनों प्रकारके दार्शनिक सम्प्रदायोंमें
विवाद चलाया हुआ है, यहां पर उसका उल्लेख करना
विशेषोपयोग है। नैयायिकोंके मतानुसार आकाशके
प्रथम नहीं है, प्रथम सर्वव्यापक है, आकार नहीं है,
प्रथम गुणवान् है। इसी आकाशके साथ प्रकाश साक्षर्य
देखा जाता है। आकाश अमल, अपरिमित, पनादि
और प्रथम है। जितने प्रकारके मूर्तद्रव्य हैं वहीमें
आकाश संयुक्त है। मूर्तका अर्थ किमोका परिमाण
स्थिर करना है। पृथिवी, जल, तेज, वायु, इन सब
भूतोंको घेरेला जो विराट, तथा विश्वव्यापक है, जो
एषा, तेज तथा जलके भीतर बाहर है और जो वायुके
सर्वत्र प्रोतप्रोतभावसे प्रचलित है वह नित्य, निर्विकार,
निराकार, निर्लेप, परम महत् पदार्थके लक्षण बतलाये
गये हैं, यही महत् पदार्थ आकाश है।

आकाशके लक्षण—“अदृश्यादित्यत्वं आकाशत्व”। जो
अदृश्याभाव है वह आकाश है। अदृश्याभाव और
कोई नहीं है, केवल आकाश है। अदृश और किसी
द्रव्यमें नहीं रहता, केवल आकाशमें ही रहता है।
आकाशके कई एक गुण हैं—संहत्या, परिमाण, प्रयत्न,
संयोग, विभाग और अदृश। आकाश नित्य द्रव्य है,
आकाशका विशेष गुण मात्र अदृश है। आकाश नित्य
द्रव्य है, आकाशके प्रथम नहीं है और देहादिके भी
विभाग नहीं है। आकाश स्वरूप इन्द्रिय है। इस
इन्द्रियका नाम कर्ण है।

काल द्रव्य गणनामें छठा है। नैयायिकोंके मतसे
कालके विषयकी पर्यालोचना नहीं की जा सकती।
कामकी कोई प्रथमी पाँचोंसे देव नहीं सकता, न
कोई अर्थ करके उसका अनित्य समझ सकता,
और न कोई प्रमाण ले कर उसकी सत्ता ही पसकता
है। फिर कामकी कौन नहीं जानता? कालका आकाश
ले कर कोई कभी उसका मधुर रसनासे परिग्रह नहीं हो
सकता, मधुर अदृश जैसा कर्ण भर कर कोई कभी
कालानुगत पान नहीं कर सकता, तो भी कालकी
कथा, कालको सत्ता सबोंके प्राथम्यमें पणित है। जन-
कत्व ही कालका लक्षण, काल जन्म मात्रका ही जनक

प्रासादिराष्ट्रादि काय (मं० पु०) काय चोपधमेद । इसकी प्रमुख प्रणाली—जिगमिग, गुनव, कबु, कबु, काहदायरी, मोया, लावचरुन, मोदि, फटको, पाक-मादि, पिनायता, जवाहा, धनिया, पदहाठ, बाला, भट-कटेया, पैनामून, पुनरमून और मोम इन सब द्रव्योंको एकत्र कर काय बनाते हैं । इसका सेवन करनेमें जीर्णत्व, शक्ति, श्वास, काम और मोघ जाता रहता है ।

प्राचारिष्ट (मं० पु०) परिष्ट चोपधमेद । इसकी प्रमुख प्रणाली—प्रासा १। मेरको १२८ मेर पानोमें पकाने हैं; १२ मेर पानी रह जाने पर उसे निकाल लेते हैं । बाद इस कायमें २५ मेर गुड़, दारचोनी, रसायचो, मेजपसा, मागिरा, प्रियङ्गु, मिर्च, पोषल और विदुह प्रत्येक १ तोला देकर मयते हैं, बाद छतमाष्टमें १ मास सुँट बांध कर रखा छोड़ते हैं । चरुमें उसे पक्की तरह ढाल लेते हैं । यही प्राचारिष्ट है, इसे सेवन करनेसे ऊरःघत, चयरीग, काम, श्वास और मलरोग निराकृत तथा बल-वृद्धि और मनशुद्धि होती है ।

प्राचिमन् (मं० पु०) दोर्घस्य मानः दोर्घ-प्रमनिष् । दोर्घस्य प्राचादेगः । दोर्घत्व, मन्माष्ट ।

प्राचिमा (मं० पु०) १ दैर्घ्यं, दोर्घता, लम्बाई । २ वे कल्पित रेखाएँ जो भूमध्य रेखाके समानान्तर पूर्व और पश्चिमकी मानो गई हैं । (Longitude) इस स्थानके प्राथमिक प्राचिमाके पूर्वकी ओर होनेसे पूर्व-प्राचिमा-न्तर और पश्चिमकी ओर होनेसे पश्चिम-प्राचिमान्तर होता है । संस्कृत ज्योतिषमें इसे 'दिमान्तर' कहते हैं ।

जिज्ञासत इमं भागं जी प्राचिमान्तर शोकार कर्तते, यह चोपधोपेक्ष मानमन्दिरकी मध्यरेखासे गिना जाता है । किन्तु फरामोही भोग पारि-गृहके ओर पश्चिमि रिकन बासिं टनके मानमन्दिरकी मध्यरेखाकी मान कर प्राचिमान्तरको गणना करते हैं ।

विपी स्वानका प्राचिमान्तर निगमनेका उपाय ।

१। योःपयोचका समय रखता हो, ऐसा एक टाँकट काममानदन्ता (Chronometer) से कर यहाँकी एक घड़ीके साथ मिला कर देवो । दोनोंमें

समयका जो फर्क पड़ेगा, यही समय मान कर प्राचिमान्तरके पायकाका निदण्य हो मन्त्रा हो ।

२। किसी एक स्थानमें जिस समय तार द्वारा मन्त्राद भिन्ना जाता है और जिस समय मन्त्राद पहुँच जाता है, दोनों समयके फर्कमें भी प्राचिमान्तर निकाला जाता है ।

३। किसी एक मनुष्यने निर्दिष्ट जंघो भूमि पर रोशनी की, दूरस्थ दूसरे मनुष्यने ज्यों की रोशनीकी लम्बा देवा, त्यों की लम्बने चपनी घड़ोमें समय देकर रखा । प्रकाशका जलना और दूरस्थ मनुष्यका देखना, इसमें जितने समयका फर्क पड़ता है, उस दिनाबसे भी प्राचिमान्तरा निदण्य किया जाता है ।

उदाहरण—१। क ओर न दो मनुष्य टेनिपाक तारके परस्पर विभिन्न दिशामें हैं । कने ठाक दो पहरकी तार द्वारा मन्त्राद भिन्ना, किन्तु धने पान वह मन्त्राद नाके दग बजे पहुँचा । यही यह देखना होगा, कि क कने पूर्वमें था या पश्चिममें और दोनोंमें कितने च'ग (Degree)-का फर्क था ? दोनों स्थानका समय भेद १२-१०' २०"-११' १०" पर्याप्त छेड़ चपटा है ।

किन्तु प्राचिमान्तरका एक च'ग=४ मिनेट समयका फर्क । दोनों स्थानका फर्क चर्गात् प्राचिमान्तरिक दूरत्व $= \frac{११ \times ४०}{४} = १२ \frac{१}{२}$ । कका समय अधिक होनेसे क कने पश्चिम होता है ।

२। मान लो, कलकत्तेमें ग्रामका कः बजे पश्चिमिकाके निवर्षोर्कमें तार दिया गया । यही तार दूसरे दिन सवेरे ७ बजे कर १० मिनेट २० सेकण्डमें पहुँचा । यह कलकत्तेका प्राचिमान्तर होता है ८८° २०' ५०, तो निवर्षोर्कका प्राचिमान्तर क्या होगा ?

निवर्षोर्कका समय बहुत पोछे पड़ता है, इस कारण निवर्षोर्क कलकत्तेसे पश्चिममें पधरित है ।

कलकत्तेकी ग्राम कः बजे और निवर्षोर्ककी सुबह ७ घण्टा १० मिनेट २० सेकण्ड, यद्यपि १० घण्टा ४८ मिनेट ४० सेकण्डका फर्क पड़ता है ।

∴ यह दोनों स्थानका प्राचिमान्तरिक दूरत्व $= \frac{१० \text{ घं० } ४८ \text{ मि० } ४० \text{ से०}}{४ \text{ मि०}} = १६२' २२"$ । किन्तु

है, अर्थात् जिन सब पदार्थोंकी उत्पत्ति है, वही जन्म है, काल तत्समुदायका ही जनक या कारण है। इसीसे जनकत्व कालका लक्षण है। काल जो जन्म मात्रका ही जनक है, वह एक प्रकारसे वस्तुकी ऊपर ही देखा जाता है। कालमें उत्पत्ति है, कालमें लय है, कितने वस्तुओंका विकास होता है, फिर वे कालमें विलीन हो जाते हैं अतएव सभीका मूल काम है। आज चहा बनता है, कल वस्त्र तैयार होगा, इन सब बातेंसि जाना जाता है, कि वही और वस्तुकी उत्पत्तिका अधिकरण कालको करता है। आज, कल आदि ये सब शब्द कालके परिचायक हैं। जिस जिस वस्तुकी उत्पत्तिका अधिकरण जिस वस्तुमें होता है, उस वस्तुका जनकत्व या कारणत्व उसी वस्तुमें रहता है। अतएव घट घटादिकी उत्पत्तिके जो मा काल भी घटघटादिका कारण हुआ है। मूल बात यह है, कि जो उत्पत्तिका अधिकरण है वही उत्पत्तिका कारण है, जो वस्तु जिस वस्तुकी उत्पत्तिका कारण है, वह वस्तु उसका भी कारण है। अतएव काल जन्म पदार्थका कारण है। खण्डकालके खण्डकार्यका, कारणत्व ले कर जो सामान्यतः जन्म जनकत्व कालका लक्षण, हुआ है।

काल नित्य है। नित्य कालका नामान्तर महाकाल है। यह महाकाल एक है। काल चाहे एक हो, चाहे अनेक हो इस काल स्त्रोकारकी आवश्यकता ही क्या है? न्यायका मत है, कि पदार्थविदिकी एक युक्ति लाघव है।

दिक् द्रव्यगणनामें सातवां, देखो षाठवां और मन नवां है। दिक्, जीवार्मन और मन देखो।

ये ही मो प्रकाशके पदार्थ नैयायिकोंके द्रव्य पदार्थ है। (भाषापरि. और सिद्धांतमुक्तावली)

वैश्विकके मतमें द्रव्यके लक्षण पाँच प्रकारके बतलाए गये हैं।

रसगुण, वीर्य, विपाक और शक्ति इनके समाहारका नाम द्रव्य है। इन द्रव्यका विषय सन्तुष्टमें इस प्रकार लिखा है—कोई कोई आशय ऐसे है जो द्रव्यकी ही प्रधान मानते हैं। क्योंकि पहला द्रव्य व्यवस्थित और रस आदि अकारवस्थित है, जैसे, अपक्वफलमें जिस तरह रस-गुण आदिकी उपलब्धि होती है, पक्वफलमें उस तरह

नहीं होती। दूसरा, द्रव्य नित्य है और रसगुण आदि अनित्य, कारण कल्पादिको जगह द्रव्य, रस और गन्ध-विशिष्ट अथवा रस और गन्धहीन हुआ करता है। तीसरा, द्रव्य जातीय गुणको नित्य अवलम्बन करता है। चौथा, पञ्चेन्द्रिय द्वारा द्रव्य ही गृहीत होता है, रसादि नहीं। पाचवां, द्रव्य आशय है और रस आदि उसके आश्रित है। छठा, शोषका पथ वर्णन करनेमें द्रव्यका नाम उल्लेख कर आरम्भ करना होता है। सातवां, शास्त्र प्रमाण हेतु है। षाठवां, रस आदिके गुण द्रव्यकी अवस्था पसेवा सापेक्ष है, जैसे तद्वत् द्रव्यका तद्वत् रस, पक्व द्रव्यका पक्व रस आदि। नवां, द्रव्यके एकाग्रमें भी घटाधि शान्ति हुआ करता है। इन्हें सब कारणोंने द्रव्य ही प्रधान है ऐसा स्त्रोहित हुआ है। क्रिया और क्रियाके गुणको नाई द्रव्य और द्रव्यका लक्षण समवायिकारण है अर्थात् किस द्रव्य द्वारा क्या फल होगा, वह द्रव्य और उसका गुण दोनों ही उनके फलके उत्पादनके कारण हैं। सुतरां द्रव्य और गुण परस्पर समवायिकारण हैं। अर्थात् दोनों ही उस फलके दायक हैं।

कोई कोई इसे स्त्रोकार न कर रसको ही प्रधान मानते हैं। फिर किसी पण्डितके मतमें वीर्य ही प्रधान है, यह स्त्रोहित हुआ है। फिर बहुतसे पण्डित ऐसे हैं जो इसे भी स्त्रोकार नहीं करते, वे विपाकको ही प्रधान मानते हैं। इसका विवरण तत्तद् शब्दमें देखो। पण्डित-गण वक्त प्रार प्रकारको भी प्रधानता स्त्रोकार नहीं करते। कोई द्रव्य सेवन करनेसे दोषका कुछ श्रम द्रव्य द्वारा, कुछ उसके रस द्वारा, कुछ उसके वीर्य द्वारा और कुछ उसके विपाक द्वारा शान्ति या वृद्धि हुआ करते हैं। वीर्यके बिना पाक नहीं होता, इसके बिना वीर्य नहीं रहता और द्रव्यके बिना रस भी नहीं रहता है। सुतरां द्रव्य ही प्रधान है। देह और देहको स्थिति जिन तरह परस्पर सापेक्ष है, उन्ही तरह द्रव्यके बिना रस नहीं होता और रसके बिना भी द्रव्य नहीं होता है। वीर्य कहनेसे शीत उष्णादि षाठ प्रकारके गुणका ही बोध होता है। वह षाठ प्रकारके वीर्य द्रव्यके आशय किये हुए हैं। वे सब गुण निगुण रसमें कभी भी

पहले हो कहा जा चुका है कि कलकत्ते का द्राघिमान्तर ८८° २७' ५०" है।

गित्योक्त का द्राघिमान्तर = (१६२° २५' - ८८° २७') = ७३° ५८' ५०"।

द्राघिष्ठ (सं० त्रि०) अतिप्रयेन दीर्घ इति दीर्घं-इष्टन् दीर्घस्य द्राघादेशः। १ अतिदीर्घ, बहुत लम्बा। (स्त्री०) २ दीर्घ रोहिषद्वय, लम्बो रोहिष नामकी सुगन्धित घास। द्राघ (सं० त्रि०) द्रा कर्त्तरि ऋ निष्ठा तस्य नः ततो णत्वः। १ सुप्त, सोया हुआ। २ पलायित, भगेड़। (स्त्री०) ३ खजूर। ४ पलायन, भागना।

द्राप (सं० पु०) द्रापयति द्राणिष, पुगागमे द्रापि षच। १ पड़, कौचड़। २ पाकाग, ३ कपदी, कौड़ी। (त्रि०) ४ सूख। ५ सुप्त, सोया हुआ।

द्रामिल (सं० पु०) द्रमिलस्थो देवोऽभिजन्तोऽपण्। १ चाणक्य मुनि। २ पित्रादिक्लमसे द्रामिलदेशवासी।

द्राव (सं० पु०) द्रु गतो द्रु-घञ्। १ गमन। २ घरण, बहाव। ३ अमुताप, गर्मी। ४ बहने या पसीजनेकी क्रिया।

द्रावक (सं० पु०) द्रवति द्रावयति वा द्रु द्रावि वा खलु। १ चन्द्रकान्तमणि। (त्रि०) २ हृदयपाही। ३ द्रव-रूपमें करनेवाला। ४ बहाने वाला। ५ हृदय पर प्रभाव डालनेवाला। ६ चतुर, चालाक। ७ पीछा करनेवाला, भगानेवाला। (स्त्री०) ८ ध्वनिवाही, जार। ९ सोम। १० सुहागा। ११ श्लोकाद्यौपधमेद, श्लोकारोगकी एक दवा।

महाद्रावक और शब्दद्रावक नामक श्लोकाग्रयक औषधका मध्यमद्रावकीमें उल्लेख है। प्रस्तुत प्रणाली—यवचार दो भाग और फिटकरी तीन भाग इन दोनोंकी बड़के मूतमें पीस कर सुखाना होता है। पीछे किसी बीसेके बरतनमें कपड़े और मट्टीका प्रलेप दे कर उनमें बड़ फूटा हुआ पदार्थ रख छोड़ते हैं। इस प्रकारके दूसरे बरतनके ऊपर इसे अथोमुख करके दोनोंके मुँह पर लेप लगा देते हैं। नीचेके बरतनके पैरोंमें एक छेद रहना चाहिये। अब दोनों बरतनकी उन्नी भवस्थानें एक गट्टेमें रख देते हैं। उस गट्टेमें एक और बरतन रहता है। इस प्रकार स्थापन करके ऊपरी भागसे भाँच लगाते

हैं अब भाँगी गरीबीसे उस बरतनका मोतरो पदार्थ गल कर उसका रस गट्टे के बरतनमें टपक पड़ेगा।

इसके अनन्तर उस रसकी लवङ्गचूर्ण या जड़ित ताम्बेके साथ मिला कर एक रस्तीकी गोली बनाते हैं। इसके सेवन करनेसे श्लेष्मा आदि रोग द्रवोन्मूत हो जाता है। शिबिर और दह्र आदि रोगोंमें इसका स्थानिक प्रयोग भी किया जाता है। किन्तु इससे भाँगी तरह ज्वामा निकलती है। इसीसे द्रविके साथ इसका प्रलेप देना आवश्यक है।

अटखप, चितामूल, अषाढ़, इमलोका क्लिफा, कौड़के का छ'ठन, घूँघरकी जड़, तालजटा, पुनर्ष वा और वेतवृक्ष इन सबकी मसमकी पातो मीठकी रसमें मिला कर हान लेते हैं। पीछे उस चार द्रव्यकी कड़ो घूपमें सुखने देते हैं। यह चार २ पल, यवचार २ पल, फिटकरी १ पल, निम्बादन १ पल, सैन्धव ४ तोला, सुहागा २ तोला, हीराकस १ तोला, सुश्रामण्ड १ तोला और समुद्रफेन १ तोला, इन सब द्रव्योंकी एक साथ चूर कर बकयन्त्रसे बुधा करके भरक निकालते हैं। इसका नाम महाद्रावक है। इसके ११७ विन्दु जलमें डाल कर सेवन करनेसे यक्षत, श्लेष्मा और शुष्मादिरोग जाते रहते हैं। अन्यविध—स्वर्णमाषिक, काँधा, सैन्धव, खवण, रसास्त्रन, समुद्रफेन, यवचार, सुहागा, साँचि चार, साधनचार, धातुकासोस, पत्रकामोस और हीराकस इन सबका बराबर बराबर भाग ले कर घूप करेते हैं। पीछे उसे क्लिब वस्त्र और मट्टी द्वारा लेपित कर्षके बरतनमें रखकर बकयन्त्रमें क्रमशः तेज भाँचने, यथामिधान पाक करके उसका रस सुखा लेते हैं। महाद्रावक प्रस्तुत करनेका यही तरीका है। इसके भी फिर तीन श्रेद हैं, खल, मध्य और हृहत्। फिटकरी, सुहागा, यवचार और हीराकस इन चार द्रव्योंके समान घूपकी मित्रा कर जो भरक बनता है उसे खलद्रावक कहते हैं। इसी प्रकार सुहागा, निम्बादन, फिटकरी, यवचार, धातुकासोस, पत्रकामोस और हीराकस इन सात द्रव्योंके भरककी मध्यमद्रावक कहते हैं। फिर स्वर्णमाषिक आदि समुदाय द्रव्यके भरकका नाम महाद्रावक है। यह औषध सौंठ या लवङ्गचूर्ण के साथ ७८ विन्दु सेवन-

पायय ने कर नहीं रह सकते। द्रव्यसे ही द्रव्य परि-
पाक होता है निम्न रस सम प्रकार नहीं होता। इसी
मम तारसे ही द्रव्य ही प्रधान है। रस, बोध और पाक
समस्त पायय जिये हुए है।

द्रव्यका विभेद विधान—पृथ्वी, जल, तेज और वायु
इन सबके मितनेमें द्रव्य उत्पन्न होता है। इनमेंमें जिस
भूतको अधिकता रहती है, वह उसी नामसे पुकारा
जाता है। जैसे—पृथिवी भागकी अधिकतासे पार्थिव,
जल भागकी अधिकतासे पायय और उसी तरह तेजस,
वायव्य और पाकागीय कह कर द्रव्यके नाम दिये जाते
हैं। इनमेंमें जो सब द्रव्य सन्धारविशिष्ट सान्द्र, मन्द,
विद, स्पर्, गुरु, कठिन, गन्धवद्गुण, कृष्ण कपाय वा सधुर-
प्राय है, उन्हें पार्थिवद्रव्य कहते हैं। पार्थिवद्रव्य
स्थिरतामगद्धात और सन्धारक, विभेदकः पधोगमन-
शील है।

जो द्रव्य शीतल, पार्थ, स्थि, मन्द, गुरु, भारक,
सान्द्र, मृदु, पिच्छिल, रसवद्गुण, ईपत्कपाय, भस्त्र वा
मवण रसविशिष्ट पथवा सधुरप्राय है, उन्हें जलोयद्रव्य
कहते हैं। जलोयद्रव्य खेद, हर्ष, क्रीड और संश्लेष-
कर तथा क्षरणशील है। जो द्रव्य उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म,
रस, स्पर्, मृदु, विगदरूप, गुणवद्गुण, ईपत्पथ्य और
मवणरसविशिष्ट पथवा कुरमप्राय विशेषतः लब्ध गमन-
शील है, उसे तेजस कहते हैं। तेजसद्रव्य दहन, पचन,
दारण, तापन, प्रकायक, प्रभा और वर्णकर है। जो
द्रव्य सूक्ष्म, द्रष्ट, मृदु, धाम्यधर्मका उत्तमक, भवत-
रस पथवा मृदुवद्गुण है उसे पाकागीय द्रव्य कहते हैं।
पाकागीयद्रव्य मृदु, मृष्टिद्र और सपु है। इन सब
सुखों द्वारा जगत्के सभी द्रव्योंकी बोध कह सकते
हैं। शुक्ति और प्रयोजनके अनुसार सेवित होनेसे तथा
धोय और गुणविशिष्ट होनेसे सभी द्रव्य कार्यकर होते
हैं। इन सब बोधधीका मेधन करनेमें जिस समय काम
होता है उस समयकी काम, काम करनेवालेकी कर्म,
जिसके द्वारा किया जाता है, उसे वीथ, जहाँ यह काम
होता है, उसे अधिकरण, जिस तरह कहा जाता है, उसे
उपाय और उस कामका ओ परिणाम निश्चयता है, उसे
फल कहते हैं। इन सब बोधधीके मध्य विरचन द्रव्यमें

पार्थिव और जलोय गुण ही अधिक है, पृथिवी और जल
गुण है, यह गुणोंके कारण पधोगमो है। इन पधोगुण-
की अधिकतासे ही विरचन द्रव्य करता है। वमन
द्रव्यमें पमि और वायु गुण को अधिक है। पमि और
वायु मधु है, इसीसे यह मधुतामगुण लब्ध गमो-है। पत-
न्य लब्ध गुणके वादुत्यमें ही वमन द्रव्य करता है। वमन
और विरचन इन दो प्रकारके गुणविशिष्ट द्रव्योंमें लब्ध-
गमिता और पधोगमिता ये दो प्रकारके गुण ही अधिक
रहते हैं, उसी तरह मममन द्रव्योंमें पाकागुण लब्ध
है और वायुका शोषण गुण है। इन कारण से पाकद्रव्य-
में वायुका गुण अधिक है। दोमिकर बोधधर्म पमिनी
और पुष्टिकर बोधधर्म पार्थिव तथा जलोयगुणकी
अधिकता देखी जाती है।

भूमि, पमि और जलोय द्रव्यों द्वारा वायुकी, भूमि,
जल और वायुजात द्रव्योंमें पित्तकी और पाकाग, पमि
तथा वायुजात द्रव्योंमें श्लेष्माकी शक्ति होती है। पाकाग
और वायुद्रव्यसे वायुकी, श्लेष्मा द्रव्यसे पित्तकी और
पार्थिव तथा जलजात द्रव्यसे श्लेष्माकी शक्ति द्रव्य करता
है। प्रत्येक द्रव्यके ही इसी प्रकार गुणादिका विचार
करके दोषमें प्रयोग करना होता है। शीतल, उष्ण, स्थि,
रस, मृदु, तीक्ष्ण, पिच्छिल और विगद-द्रव्योंके इन सब
गुणोंकी वीथ कहते हैं।

द्रव्यमें पमिगुणकी अधिकता रहनेसे तोष्णीयवोय,
जलोयगुण रहनेसे शीत और पिच्छिल वीथ, पार्थिव
और जलोयगुण रहनेसे स्थिवोय, जल और पाकाग-
गुण रहनेसे मृदुवोय, वायुगुण रहनेसे सूक्ष्मवोय और
चित्ति तथा वायुगुण रहनेसे विगद वीथ कहनाता है।
उष्ण, स्थिवोय, वातघ्न, शीत, मृदु या पिच्छिलवोय,
पित्तघ्न और तीक्ष्ण रस वा विगदवोय श्लेष्मघ्न है।

गुरुपाकसे वातपित्तकी शक्ति होती है एवं मधु-
पाकसे श्लेष्माकी शक्ति होती है। मृदु, शीतल और उष्ण-
गुण शर्म द्वारा जाना जाता है। पिच्छिल, और विगद
दग न शर्म द्वारा, स्थि और रसगुण दर्शन द्वारा तथा
सुख और दुःख उत्पादन द्वारा शीत एवं उष्णगुणका ज्ञान
होता है। गुरुपाकसे विहामुल रस हो जाता है तथा
लब्धगत कफजन्य पोड़ा होती है। मधुपाकसे विहा-

द्राविण (द्राविण) काव्य (मं० पु०) काव्य चोपधमेत ।
 इसको प्रमुख वषादी—विश्वमिग, शुभय, कुरु, कुरु,
 काकड़ागुनी, मोघा, मानवन्दन, मीर, कट, गो, पाव,
 नादि, निरायना, जहादा, प्रिया, पद्मराज, वासा, भट-
 पटेरा, भेलाभूत, पुष्करभूत और नीम इन सब
 वृक्षोंको एकत्र कर काव्य बनाते हैं । इसका जेवन
 करनेमें ओषध, चरवि, ग्रास, काव्य और मोघ जाना
 रहता है ।

द्राविण (मं० पु०) परिच चोपधमेत । इसको प्रमुख
 वषादी—द्राविण १। मीरको १२० सेर वामोंमें पकाते हैं;
 १२ सेर वामी रस जानें पर उसे निकाल लेते हैं । बाद
 इस काव्यमें २५ मीर गुड़, दारपीनी, इलायची, तेजपत्ता,
 मीरग, प्रियङ्गु, मिर्च, पोपन और विट्ठल प्रत्येक १
 तोना दे कर मयते हैं, बाद एतमात्रमें १ माघ सुंर बांध
 कर रस झोड़ते हैं । फलमें उसे घड़ो तरङ्ग हाग लेते
 हैं । यही द्राविण है, इसे जेवन करनेमें चरचित,
 चवरोग, काव, ग्रास और मन्त्रो निराहत तथा वन-
 हृदि और मन्त्रुहि होता है ।

द्राविण (मं० पु०) दोषंष भावः दोषं-इमनिष् ।
 दोषंष द्रावादिगः । द्रोघंष, मन्त्रादि ।

द्राविण (मं० पु०) १ दैर्घ्य, दोषंषा, लम्बाई । २ वो
 कल्पित रेखा जो भूमध्य रेखाके समानांतर पूर्व और
 पश्चिमकी मानो गई है । (Longitude) इस स्थानके
 प्राथमिक द्राविणके पूर्वकी ओर होनेसे पूर्व-द्राविण-
 मार और पश्चिमकी ओर होनेसे पश्चिम-द्राविणमार होता
 है । संस्कृत ज्योतिषमें इसे 'दिगांतर' कहते हैं ।

जिनका इस भाग की द्राविणमार जोकार करते
 हैं, यह दोषोषके मानमन्त्रिको मन्त्रेवासे गिना
 जाता है । किन्तु करामाकी मोग पारि-गहरके ओर पश्चिम
 रिखन मानिंटनके मानमन्त्रिकी मन्त्रेवाकी मान कर
 द्राविणमारको गणना करते हैं ।

(इसी स्थान पर द्राविणमार निहायनेका उदाहरण ।)

१। दोषोषका समय रखता हो, ऐसा एक
 लघुत घाटमानयका (Chronometer) से कर
 यही एक घड़ीके साथ मिला कर देखो । दोनोंमें

समयका जो फर्क पड़ेगा, वही समय मान कर द्रावि-
 मारके पापका निदण्य हो सकता है ।

२। किसी एक स्थानमें जिस समय तार द्वारा
 मन्त्राद भिजा जाता है ओर जिस समय मन्त्राद पढ़ा
 जाता है, दोनों समयके फर्कमें भी द्राविणमार निकाला
 जाता है ।

३। किसी एक मनुष्यमें निर्दिष्ट जंघी भूमि पर
 रोगनी की, दूरस्थ दूरी मनुष्यमें ज्यों ही रोगनीकी
 लपता देना, ज्यों ही समयमें पचो घड़ोंमें समय देना ।
 प्रकाशका लपना और दूरस्थ मनुष्यका देना, इसमें
 जितने समयका फर्क पड़ता है, उस दिमागमें भी
 द्राविणमात्रा निदण्य किया जाता है ।

उदाहरण—१। क ओर स दो मनुष्य टेनिवाक
 तारके परस्पर विभिन्न दिशामें हैं । कम ठाक दो पर-
 की तार द्वारा मन्त्राद भिजा, किन्तु उनके पास एक मन्त्राद
 साढ़े दग बजे पड़ता । पचो यह देना होगा, कि
 स कने पूर्वमें या या पश्चिममें ओर दोनोंमें जितने चंज
 (Degree) का फर्क था ? दोनों स्थानका समय भेद
 १२—१०° ३०'—११° पचास छेड़ घण्टा है ।

किन्तु द्राविणमारका एक चंज—४ मिनट समयका
 फर्क, दोनों स्थानका फर्क पचास द्राविणमारिक
 दूरत्व = $\frac{11 \times 60}{4} = 22 \frac{1}{2}$ । लका समय अधिक होने-
 में ल कने पश्चिम होता है ।

२। मान लो, ललकत्तोंमें ग्रामका ल बजे पमेरिका-
 के निजबोर्कमें तार दिया गया । वही तार दूसरे दिन
 सवेरे ७ बजे कर १० मिनट २० सेकेण्डमें पड़ता । यह
 ललकत्तोंका द्राविणमार होता है २०° २०' पू०, तो
 निजबोर्कका द्राविणमार क्या होगा ?

निजबोर्कका समय बहुत पीछे पड़ता है, इस कारण
 निजबोर्क ललकत्तोंसे पश्चिममें अवस्थित है ।

ललकत्तोंकी ग्राम ल बजे ओर निजबोर्ककी लपट
 ७ घण्टा १० मिनट २० सेकेण्ड, इसमें १० मण्टा ४८
 मिनट ४० सेकेण्डका फर्क पड़ता है ।

∴ यह दोनों स्थानका द्राविणमारिक दूरत्व ।

= $\frac{10 \text{ घं० } ४८ \text{ मि० } ४० \text{ से०}}{४ \text{ मि०}}$ — १६२° २५' । किन्तु

मृदु बन्ध हो जाता है और उसकी वायु कुपित हो जाती है। जिस द्रव्यका जैसा रस है, उसका गुण भी उसीके अनुसार होता है। जैसे मधुररस होनेसे शुक्रपाक और पार्थिवगुण विविष्ट तथा मधुर और स्निग्ध होनेसे जलीय गुणविशिष्ट होता है। द्रव्यके जिस प्रकारके गुण होंगे, शरीरमें वे उसी प्रकार कार्य करेंगे। द्रव्यके गुणसे ही देहकी स्थिति, लय और वृद्धि हुआ करती है।

(संयुक्त सूत्रस्थान ४०।४१ अ०)

द्रव्यक (सं० त्रि०) द्रव्यं हरति वहति आवहति वा।

द्रव्यकण्। १ द्रव्यहारक। २ द्रव्यवाहक।

द्रव्यकण् (सं० पु०) वेद्यकोक्त कल्पादिपञ्चक।

द्रव्यगण (सं० पु०) द्रव्याणां गणः इतत्। संयुतोक्त भोग्य विशेषके ३० प्रकार गणमेद।

द्रव्यगुण (सं० पु०) द्रव्यस्य गुणः प्रतिपाद्यतया यत्। १ द्रव्यका गुणज्ञापक ग्रन्थमेद, वह पुस्तक जिससे द्रव्योंके गुण आदि मासुम हो।

द्रव्यत्व (सं० पु०) द्रव्यका भाव, द्रव्यपण।

द्रव्यपति (सं० पु०) द्रव्यमेतानां पतिः। वृहत्संहितोक्त द्रव्योंके पति। वृहत्संहितामें इसका विवरण इस प्रकार लिखा है—

जो जो राशि जिस जिस द्रव्यकी अधिपति हो कर शुभ और अशुभ फल देती हैं उनका विवरण कहा जाता है।

मिदराशि—वज्र, मेघकम्बल, छागकम्बल, मसुर, गेहूँ, शालवृक्ष, जौ, खलसम्भूत भोग्य और स्वर्ण इन सब द्रव्योंकी अधिपति है।

हृदराशि—वज्र, गोधूम, कुसुम, शालिधान्य, यव, महुष और गौकी अधिपति है।

इसी प्रकार धान, मर्यादा द्रव्य, लता, शालुक और कपास मिथुनके अधीन है। कोद्रव (कोर्दे), कदला, दुध, फल, मूत्र, पत्र और त्वक् ये सब कर्कटराशिमें अधीन हैं। तुप, धान, रस, गुड़ और सिंहादि त्वक् सिंह राशिमें अधीन है। तोषो, कलाय, कुलयो, गेहूँ और मूँग इन सबकी अधिपति तुलाराशि है। ईख, मिक्खल द्रव्य, लोह और अजायिक हथिकके तथा अश्व, लवण, अम्बर, अज्र, तिल, धान और मूल धनुराशिमें अधीन है। तरु शूलमादि तथा मिक्खल द्रव्य, ईख, स्वर्ण और

क्षणलौह इन सबका अधिपति मकर है। सलिलजात फल, पुष्प, रत्न, चित्र और रूप ये सब कुम्भके अधीन हैं। कपालसम्भव रत्न, अम्बुद्वीप वज्र, नाना रूपयुक्त स्नेह द्रव्य और मक्षारमृद मोनराशिमें अधीन है।

जिस राशिमें दूसरे, चौथे, पाचवें, सातवें, नवें, दशवें, ग्यारहवें वा स्थानमें वृहस्पति होंगे, अथवा दूसरे, पांचवें, आठवें, दशवें वा ग्यारहवें स्थानमें बुध रहेंगे; उस राशिमें जो सब द्रव्य ऊपर कहे गये, उनकी वृद्धि होती है। इसी प्रकार शुक जिस राशिमें छठे वा सातवें चरमें रहेंगे उस राशिमें द्रव्योंकी क्षान्ति तथा शुक भूमिज राशिमें गत होने पर उनकी वृद्धि होती है।

जिस मूल पर यदि उपचय गत हो अर्थात् छतोय, पछ, दशम और एकादश गत हो, तो शुभप्रद होता है। तथा तद्विषय यदि अम्यराशिमें हो, तो क्षान्तिजनक होता है। बलवान् मूल परगण जिस राशिमें पोहूँ स्थानमें अर्थात् उपचय भिन्न स्थानमें स्थित होते हैं, उस राशिमें अधिपति द्रव्य बलवान् तथा दुर्लभ हो जाते हैं। बलवान्, शुभपरगण जिस राशिमें दृष्ट स्थानमें अर्थात् उपचय स्थानमें रहते हैं, उस राशिमें अधीनस्थ द्रव्योंकी वृद्धि होती है तथा वे बहुतायतसे मिलते हैं। गोचर-मोहानें भी यदि सभी राशि बलवान्, शुभपरगणों में देखी जाय, तो वे कष्टकर नहीं होते, किन्तु मूल परगणों में देखी जाने पर, उसका विपरीत फल होता है।

(वृहत्संहिता ४१ अ०)

द्रव्यमय (सं० त्रि०) द्रव्य-प्रापुर्ण मयट्। द्रव्यसाधनक यज्ञादि।

द्रव्यधान् (सं० त्रि०) धनवान्, धनी।

द्रव्यविशेष (सं० पु०) संयुतोक्त धर्मविशेष द्वारा पार्थिव-त्वादिविशेष। इत्थं देखो।

द्रव्यशुद्धि (सं० स्त्री०) द्रव्याणां शुद्धिः। मृत्पालनादि द्वारा द्रव्यादिका मलापनयन, जल, मदी आदि द्वारा मलुषांको साफ या पवित्र होना।

“वेतवृद्धिं प्रवेद्यामि द्रव्यशुद्धिं तत्रैव च।

वृत्तार्णसिपि वर्णानां यथावेदवर्णः यः॥”

(मनु ४।१०)

बङ्गालनागपुर-रेलवे जिलेके मध्य हो कर गई है। जिलेमें कुछ जमींदारी राज्य पड़ता है जिसका चैतफल प्रायः १०४० वर्ग मोल होता है। जिलेकी आय चार लाख रुपयेसे अधिक की है।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह १८०६ ई० में रायपुर तथा बिलासपुर से कर संगठित हुई है। यह भूभाग २०° ५१' से २१° ३३' उ० और देशा० ८२° ६' से ८१° ३०' पू० में अवस्थित है। भूपरिमाण १८११ वर्ग मोल और लोकसंख्या प्रायः ३१३५०८ है। इन तहसीलमें दुग नामका एक शहर और ४८३ ग्राम लगते हैं। यहांकी जमीन बहुत उपजाऊ है। धानकी खेती ही अधिक की जाती है। तहसीलको कुल आय एक लाख रुपयेसे ज्यादाकी है।

३ उक्त जिलेकी एक प्रधान शहर। यह भूभाग २१° २१' उ० और देशा० ८२° १०' पू० बम्बईसे ८५८ मील की दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४००२ है। नझाराद्वेजे १७४०-४१ ई० में जब कच्छीसगढ़ पर आक्रमण किया, तब इसी नगरमें उन लोगोंका भण्डा था। उन्होंने यहां एक सुदृढ़ दुर्ग निर्माण किया था जिसके चारों ओर जंजीरोंद्वारा जोड़े जाते थे। यहां एक मन्ना-बख्शमें पड़ा है। यहां उत्कृष्ट कपासके कपड़े प्रसृत होते हैं।

दुधन (सं० पु०) दुर्बलः हन्यतेऽनेनेति हन-अप-घना-देश्य, ततो षत्वः, दुधनमयो घनः इति वा। १ सुहर। २ सुवधारके सुहराकार लोहाश्चविशेष, सुवधारका लोहेका चयियार जो सुहरके आकारका होता है। ३ वैशम्पायनीत धनुर्वेदके मतानुसार परशु-भक्तित्वविशिष्ट लोहाश्च-विशेष, परशु या फरसेके आकारका एक अस्त्र। यह पचास अंगुल लम्बा लोहेका बना होता था। इसका सिरा बड़ा और गला टेढ़ा होता था। इसके छोकाने, गिराने, फोड़ने और चोरनेका काम लेते थे। दुःसंचारवृत्ति हन्यतेऽनेनेति। ४ दण्डा। ५ दुहार, कुल्हाड़ी। ६ भूमि-चम्पक, भूचम्पा। ७ द्रुममय घन।

दुध (सं० स्त्री०) दुधति हिन्सीति दुध-क। १ धनु, धनुष। २ खट्वा। (पु०) ३ इयिक, बिच्छू। ४ अङ्ग, अङ्गो कोड़ा। ५ भ्रमर, भौंरा। ६ मधुमक्षिका, मधुमक्खी। ७ पिपुल।

दुधस (सं० त्रि०) दुग्ध दोर्घा नासिका यस्य। अथ समाधानः ततो नासिकाया नसादेश्य पूर्वपदादिति षत्वः। दोर्घनासिकायुक्त, जिसकी नाक लम्बी हो।

दुधह (सं० पु०) दुधं खड्गं हन्ति गच्छतीति हन्-गतो ड। खड्गविधान, तलवारका ग्यान।

दुधा (सं० स्त्री०) दुग्धं घनराशयत्वेनाप्यस्याः अथ टाप। ग्वा, धनुषकी डोरी।

दुधि (सं० स्त्री०) दुधति जलादिकमिति द्रव-गतो इत् (इष्टपपात् कित्। उग. ४। ११८) द्रोणो, पिटारा, मंजूषा।

दुधो (सं० स्त्री०) दुग्ध-इन् वाहुनकात् ङीप्। १ कर्ष-जलौका, कनखजूर। २ काच्छरा, कछुहो। ३ काठाम्बु-वाहिनी, कठवत।

द्रुत (सं० त्रि०) द्र-क्त। १ ज्ञातद्रव, गता द्रुषा। इसका पर्याय—चवदोण, विलोम चोर विद्रुत है। २ शीघ्र, तेज। ३ शीघ्रगामी, तेजीसे चलनेवाला। ४ पतायित, भागा हुआ। (पु०) ५ इयिक, बिच्छू। ६ हथ, पैड़। ७ बिह्वल, बिहो। ८ तालकी एक मात्राका आधा। इसका चिह्न ० है। इसके देवता शिव और इसको उत्पत्ति जनमे मानी जाती है। इसका उच्चारण पक्षीकी बोलीके समान होता है। इसका पर्याय—विन्दु, व्यञ्जन, सन्ध, अर्धमात्रा, आकाश, रूप और वलय है। ८ यह लय या मध्यमसे कुछ तेज हो, द्रुत। १० हरिण। ११ शयक, खरहा।

द्रुतगति (सं० त्रि०) शीघ्रगामो, तेज चलनेवाला।

द्रुतगामी (सं० त्रि०) शीघ्रगामो।

द्रुतवारिन् (सं० त्रि०) द्रुतं वरति चर-यिनि। जो जमीन पर बहुत तेजसे चलता हो।

द्रुतवित्तानो—कोई कोई इसे जोपालो कहते हैं।

कीबाबी देखी।

द्रुतपद (सं० स्त्री०) द्रुतं शीघ्रगामि पदं। १ शीघ्रगामि-पद। २ छन्दोभेद, एक छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें बारह अक्षर होते हैं; जिसमें चौथा, ग्यारहवां और बारहवां अक्षरगुरु और शेष लघु होते हैं। (त्रि०) ३ द्रुतगामि-पदवृत्त, जिसमें द्रुतगामिपद हो।

द्रुतमध्या (सं० स्त्री०) अर्धसमवर्णवृत्तभेदः। इसके प्रथम चोर द्वितीय तथा द्वितीय चोर चतुर्थ पद समान

रजत घोर सुवर्णादि धातु, मरकतमणि घोर पाषाण-
मण्डप्य मय घोर जलमे पथवा महीसे शब्द होते हैं।
गच्छिष्ठादिका प्रसेव रहित सुवर्ण पात्र जल द्वारा शब्द
होता है। गह्र सुहादि जलज पाषाणमय पात्र घोर
शब्द पात्र यदि रेषादिबुल न हो, तो जलमे धी डालनेसे
ही वे शब्द हो जाते हैं। जल घोर पम्पिडे मंयोगसे
जोमे घोर पांटीकी उत्पत्ति हुई है। इसी कारण स्त्रिय
उत्पत्तिस्थान जल घोर पम्पि द्वारा सोने घोर पांटीकी
शब्द प्रगट्न होती है। मोहा जल द्वारा, कांवा मय
द्वारा, तांवा घोर पोतल पम्प द्वारा शब्द होता है। घो,
तेल द्रव पदार्थ यदि काक कोटादिसे दूषित हो जाय,
तो उसे प्रदिग प्रमाणके कुमपत्रमे डाल कर विशुद्ध करते
हैं। गव्यादिके जैमा सुलभ-युक्त मंघतद्रव्यमे जल
डाल कर शब्द करते हैं घोर काहमय द्रव्य यदि पत्यन्त
उपहत हो जाय, तो उसे कील सिनेमे डोबह शब्द हो
जाता है। यक्षीय चमन पर्यात् जलपात्रको घोर सोम-
नताके पात्रको पक्षसे हाथमे रगड़ कर पीछे ठक्के जलमे
धो लेनेमे हो वे शब्द हो जाते हैं। चरुम्याओ, मुक,
सुय, श्वय, रज्जुकार काष्ठ, शूर्प, शकट, मुपल घोर
उदूषल पादि यक्षीय द्रव्य यदि छत तैलादिसे चिकने
हो गये हों, तो उच्यजन द्वारा प्रचालन करनेसे हो वे
शब्द हो जाते हैं। किन्तु अन्य धान्य वा वस्त्रको जलमे
प्रचालन करके उसे शब्द करते हैं। पादुकादि रुष्ट पशु-
धर्म घोर वेत्रवंगादि लघुनिर्मित भासन पादिकी
शब्द वस्त्रको नाई घोर गाक, मूल तथा फल पादिकी
शब्द धानकी नाई होती है। कोषिय पर्यात् रेशमी वस्त्र,
पाविक पर्यात् शैपलीमज्जल कव्यसादि स्त्रार घोर
मही द्वारा शब्द होते हैं। कुतप पर्यात् नेपालदेयका
कव्यल निर्वकलके चूर्ण द्वारा, चंदण्ड पर्यात् वस्त्रल-
विशेषका वस्त्र निर्वकलके निर्पांस द्वारा घोर सोम पर्यात्
तोभी कुलके क्षिप्रका बना हुआ कपड़ा अंतमर्षपचूर्ण
द्वारा विशुद्ध होता है। लघ, पाकका काष्ठ, पलान
ये सब वेचल जलमे डी पवित्र होते हैं। माज्जल घोर
गोमयादिके खेपन द्वारा शब्दशब्द घोर श्रवण पात्रकी
शब्द पात्र द्वारा होती है। सुख्यपात्र यदि मय, मूव,
विहा, जेम्मा, पूर घोर मोचितद्वारा उपविन हो, तो वह

घुनः पात्र द्वारा शब्द नहीं हो सकता। सफाज न, गोम-
यादि द्वारा विनेपन, गोमूरीदकादि द्वारा वेचल, उम्मे वन
(दिनने) घोर एक पक्षोरात गामोका धाम इन वीच
उपादीसे भूमि शब्द होती है। पयो कर्क के लक्ष्मट,
गामोर्क के पाघात, वक्तावन वा पदद्वारा क्यूट, पम्पुत
पर्यात् जिनके ऊपर दूक पादि पड़ गया हो घोर की
केटकीटादि द्वारा दूषित हो गया हो, इस प्रकारका
सायद्रव्य मही डाल कर शब्द किया जाता है। विहा
मूलादि अपवित्र निम्न द्रव्यमे जलतक गम्य घोर सेव
रहता है, तब तक उसे मही घोर जल द्वारा मल कर
शब्द कर सकते हैं। पचना चट्ट पर्यात् जिन द्रव्यका
उपघात वा संस्पर्श दोष जाना नहीं जाता, दूसरा जो
जल द्वारा प्रचालित किया गया है घोर तीमरा मिटजन
जिन्हे पवित्र कहा करते हैं, ग्राहणीसे लिये ये तोनी
पदार्थ शब्द माने गये हैं। जितने जलसे गोकी घ्याम
बुल मने, उतना जल यदि विशुद्ध भूमिगत घोर ग्यामा-
विक गम्यवर्ष घोर रसयुक्त हो तथा वह अपवित्र
द्रव्यसे निम्न न हुआ हो, तो वह पवित्र गिला जा सकता
है। काष्ठकरके हाथ जब काष्ठकार्यमें नियुक्त हों, तब
वे हमेशा शब्द रहते हैं। जो द्रव्य वेचनेके लिये बाजार
गया है, वह द्रव्य बहुतोंसे छुप जाने पर विशुद्ध रहता
है। ब्रह्मचारियोंका भिषालाभ पदार्थ हमेशा शब्द रहता
है। स्त्रियोंके सुंदकी सर्वदा शब्द समझना चाहिये।

काकादिकी चोंचके पाघातमे जो फल डंठलसे
नीचे गिर गया हो, वह शब्द है। दूध दुहते समय
बढ़ेका सुंद घोर नृगमारपके समय कुत्ताका सुंद
शब्द रहता है। जो पशु वा पक्षी कुत्ते से डर हुआ हो,
उसका मांस शब्द है, ऐसा मनुष्य भी कहा है। मांस-
कीवी अन्योन्य पशु पक्षी भी जो मांस खाते हैं, वह भी
शब्द मांस है। नामिके ऊपरो भागमें जो सब इन्द्रिय-
हिष्ट हैं, वे सभी पवित्र हैं। यतः उन्हें स्वर्ग करनेमें
कीर्त दोष नहीं है। किन्तु नामिके नीचेके सभी इन्द्रिय-
हिष्ट अपवित्र माने गये हैं, यतः उन्हें स्वर्ग करनेमें हाथ
अपवित्र हो जाता है। देखें जो मय मय भक्तन हैं वे सब
भी अपवित्र हैं। मच्छिका, मुख निर्गत रुद्र जलकका,
काया, गो, चमक, सुखिरण, धूमि, भूमि, बायु घोर

ਮੇਰਾ ਹੈ । ਦੂਜੀ ਪਾਤਿਸ਼ਾਹ ਪਾਤਿਸ਼ਾਹਿ ਬੀਰ ਯਕੁਮ, ਤੇਜਾ
ਪਾਤਿਸ਼ਾਹ ਮੁਕਾਰਫ਼ੇ ਰੀਸ ਮਾਮਾ ਜੀ ਮਾਮਾ ਹੈ । (ਮੈਂਦਾਦਰ)

मृदा में आयनात्मक रूप से मौजूद Acid मूलका पदार्थों को हम Acid मूलक मानते हैं। जिस पदार्थ में Acid में हाइड्रोजन की परमाणु नहीं है। परन्तु, वे पदार्थ जिनमें मूल-द्रव्य, महाद्रव्यकारिका जैसे रूखों में पाए जाने वाले Acid का पदार्थ मात्रक मात्रा में आ सकता है।

प्रायश्चित्तम् (मं० पु०) प्रायश्चित्तो वाच्यो यत्र । तत्रैव यत्र,
नित्यायम् ।

श्रायणा (स० मी०) श्रायं सुवर्णादेर्द्रव्यं करोति श्रमं ।
 यीतिनेति श्रायः क० ट । श्रेतेट् श्रायः, सुश्राया ।

ज्ञापकवर्ग (मं० पु०) द्वाराकर दृश्यरूपक । मेष, धौ आदि
तरल पदार्थ ।

द्वावय (मं० ३०) द्वावयति कलमयं शरत्पञ्चमेति-दु-
 चित्तं दुच. १ कलकज्ज, रोडा। द्वावि-पुट्. २
 निद्राम, द्रवोभूत करनका कार्यं या भावः। द्वावय-
 तीति द्वावि-पु. ३ मगनिका कामः।

प्राथमिक (मं० पु०) टहलघार, सुहागेका गार ।

श्रमिका (मं० शो०) दायक-टाण, चतुर्थ। १ भासा,
मार। २ मोम।

द्रविड (मं० वि०) द्रविडो देगोमित्रलोऽप्येति यणः ।
 १ देगमित्रोपशान्त, जो द्रविड देगमें लपक हुआ हो । २
 पितादि स्वर्णमें द्रविड देशवासो । द्रविड, कर्नाट,
 गुजरा, महाराष्ट्र और सिन्धु से बाँध लटकने द्रविड है ।
 यह देग मित्राचार्यके दलिकमें व्यवस्थित है । सामिक
 मन्द देसो । (पु०) १ म'ल्यामेट । ४ मेघमुखा, बामिया
 इन्दी । ५ यधरा, यधर ।

दातिङ्—१२०। मशालीके पक्षने प्राप्नुभूत स्मृतिप्रदोप
नामक पद्यके रचयिता ।

द्वाविंश (सं० १०) द्वाविंश यव, शायं कनः । १ धेधुमन्, कविता रन्धी । २ गिट्, मृग, मोचर नमक ।

श्राविहमौद (नं० ५०) शानति समय गादि जालिका यह
शान । समी नुसार और मोरम कथित गाया जाता है ।

प्राविशभूमिः (पं० पु०) प्राविश यत् भूविश्वरूपसिद्धयम्
१३ । प्राविशत्, विट् कथयत्, भूविश्व इत्ययम् ।

प्रा. १० (गं. ५०) दुर्गिहो मया दुर्गिह-पण, ५०३ ।

एना, सोडो इनायषो, इमहा एनाय—मुक्ता, मु-
कुटिका, मुष्टा, कौश्लो, द्राविहो धोर मुटे है ।

१. द्रविड़ (हि. यो.) २. द्रविड़ आदिभो यो। (वि.)
 ३. द्रविड़भयभो, द्रविड़ दिग्भा।

द्राविणोदम, (स० ति०) दक्षिण, देशो ।

द्राघित (मं० वि०) द्राविणः । १ साहिज, भगवाय दृषा ।
२ द्रयोहत, गन्वाया या विप्रवाया दृषा ।

प्राप्य (मं० वि०) दृष्ट्वात् । १ अतस्तु नामनीय । २
अतस्तु चरणीय । ३ अतस्तु मुत्तमनीय ।

द्वाद्वायस्य (सं० पु०) द्वाद्वास्य भवेत्तात्प्राप्तम् । तुषादि-
 तात् पञ्च, य्पि पञ्च । श्रयि विगीय । ये द्वाद्वायस्ये
 मोक्षं लप्स्य इव हि । इदं हि नामनेदं हि कल्प, योत्
 फोर गृह्यसुव वनाये हि ।

ब्राह्मण्यस्युपमाय (मं० स्तो०) धत्विन् कृतद्राक्षावत्सुखा
भाष्य ।

द्राक्षायवि (मं० पु०) द्राक्षायश्च गोदायश्च ।

शास्त्रायनीय (मं० वि०) शास्त्रायनसूत्र, शास्त्रायन
परिभाषाया दृष्ट्या ।

दृ (मं० पु०) द्रवति अर्धे मण्डति द्रु-मितद्रु-यादिवात्
 ड, । १ छव, पिद । २ मारा, जाल । (पा००) इ गति ।

द्रुक्किमिन् (व० श्लो०) किमस्मिन्नेति किम् प्रत्याह-
नयोः द्रिज-नाह-न्यात् किमपि । द्रुपु उपेयु किमिन् ।

देवदाक सुख, देवदार । इसका संस्कृत पर्याय—देव-
दारु, पुष्यज, भद्रदारु, देवकाष्ठ, पीतदारु और दाह वै ।

हुग-१ मध्य प्रदेश के कसोमगढ़ विभाग का प्रिमा : यह
पक्षा० २०° २१' से २३° ४०' और देशा० ८०° ४२' से

८२० २० पु० मी पतनित है । भूपरिमाण १८०६ मी मीम
है । इनके उत्तरी छोर रागढ़, समरघाटा तथा धोर विस्तृत ।

पुर जिना, पूर्व में रायपुर जिला, दक्षिण में छद्दराज्य,
 चौर पश्चिम में औरंगाबाद, मध्यप्रदेश राज्य तथा पश्चिम में चौर

बानाघाट सिमा है । प्रेमिका पत्रिकांग शङ्खलभ है ।
 यहाँ लभदत्ता मठों प्रवाहित है । इमजो प्रमाण प्रवर्तिया

पदरा, घरा, ओमदरगा और चंमरा १। जिनेद गामो
बदल पदरा २। बापि क मटिमात मराम ३०। दप १।

इस प्रिये एक घर था २०५० धाम समेत
१। लोकमित्रा माय २०५०११ ई। महोदय प्रधान

ਦਰਸ਼ਨ ਪਾਠ, ਸ੍ਰੀ ਯੋਗੀ ਦੱਤ ਜੀ ਦੇ ।

चरितं इह' स्पर्श करनेमें भी कोई दोष नहीं है ।
(मनु ५ अ०)

द्रव्यात्मक (स० त्रि०) धनवान्, धनाढ्य ।

द्रवाधोय (स० पु०) कुबेर ।

द्रवान्तर (स० स्त्री०) अन्यत् द्रवां द्रवान्तरं । अपर
द्रव्य, दूसरी वस्तु ।

द्रव्य (स० त्रि०) दृग्-तत्त्व । १ दर्शनीय, देखने योग्य ।
२ साक्षात्कर्त्तव्य । ३ जिसे दिखाना हो, जो दिखाया
जानेवाला हो । ४ जिसे धतलाना या जताना हो ।

द्रष्टृ (स० त्रि०) दृग्-लक्ष् । १ दर्शक, देखनेवाला । २
साक्षात्कारक, सामने खानेवाला । ३ प्रकाशक, जाहिर
करनेवाला । (पु०) ४ सांख्यमतोक्त पुरुष । "ऋष्टृ दृश्ययोः
संयोगो ह्यपेक्षः ।" (पात० २।१७) द्रष्टा आत्मा और दृश्य
भूतःकरण इन दोनोंका संयोग रहनेसे द्रष्टा अर्थात्
पुरुषके दुःखका कारण है । अभिप्राय यह है, कि सुख,
दुःख और मोह ये सभी बुद्धि द्रव्यके विकार हैं । बुद्धि
द्रव्य वा भूतःकरण इन्द्रिय सम्बन्ध द्वारा विषयाकारमें
और सुखदुःखादि आकारमें परिणत होनेके साथ ही
द्रष्टृ, यज्ञि द्वारा प्रज्वलित हो जाता है । उस प्रकारके
प्रज्वलन वा उस प्रकारको प्रदीपताको शास्त्रकारोंने
चित्प्राप्ति का प्रतिफल और चिच्छायापत्ति धतलाया
है । लोक मोलचालमें उसे दर्शन वा मुलाकात, ज्ञान
वा समझना कहा करते हैं । सुतरां परिणामस्वभाव
बुद्धिस्वत्व वा भूतःकरण पदार्थ दृश्य है और तत्-
त्वविधिसु अपरिणामी चित्प्राप्ति उसकी द्रष्टा है ।
इस दृश्य और द्रष्टाका जो संयोग है अर्थात् इन दोनों-
में जो एकीभाव है, वही संसारी जीवोंका लक्षित
दुःखसमुहका मूल है । अर्थात् बुद्धिके ऊपर द्रष्टाको
अभेद भ्रान्ति वा आत्मसमर्पण कल्पित हुआ है, इसी
कारण पुरुष सुखदुःखादिके विचारमें विवृतप्राय
होते हैं ।

"द्रष्टा दृग्मात्रः शब्दोति प्रत्ययानुपपन्नः ।" (पात० २।२०)

पुरुषकी चित्प्राप्ति बुद्धिमें प्रतिविम्बित हो कर भोग
होता है । इस प्रकार जिसे द्रष्टा कहते हैं, यथार्थमें से
द्रष्टा नहीं हैं । क्योंकि वे चिद्रूपी और अपरिणामी हैं ।
सुतरां परिणमन-स्वभाव भूतःकरण ही ज्ञानादि धर्म-
का आधार है ।

निर्विकार स्वभाव चैतन्य मनं आत्मा वा पुरुष
जब उस प्रकारकी बुद्धिमें स्वरूप होते हैं, बुद्धिके साथ
एकीभूत होते हैं अर्थात् जब वे सम्बिधान वशतः बुद्धि-
वृत्तिमें प्रतिविम्बित वा अभिश्यक्त होते हैं, तभी उन्हें स्पर्श-
चारक्रमसे द्रष्टा कहते हैं । बुद्धि वा भूतःकरणका परि-
णाम वा विषयाकारता नहीं रहने पर उनका कुछ भी
द्रष्टृत्व नहीं रहता । तात्पर्य यह कि बुद्धिवृत्तिमें प्रति-
विम्बित होनेसे उनका दर्शन हो ही सकता है और
दूसरे प्रकारसे नहीं । पुरुष देखो ।

द्रष्टृत्व (स० स्त्री०) द्रष्टृभावः त्वत्तत्त्वो भावे इति त्व ।
द्रष्टाका भाव, देखनेवाले का भाव या क्रिया ।

द्रष्टृ (स० पु०) द्रष्टृ शब्दोदरादित्वात् साधु । अगाध-
जन ऊट, बड़ ताल या भोल जिसमें गहरा जल हो ।
द्रष्टृत् (स० त्रि०) दृग्-लक्ष्-सट्-बन्धे निपातनात् साधु ।
द्रष्टिकरण ।

द्राक (स०-पञ्च०) द्रा-वाङ्मन्त्रात् कु । हुत, ग्रीष्म, तिज ।
द्राणा (स० स्त्री०) द्राह्-ल्यप्ते काङ्-ल्यप्ते इति द्राहि-
ल्यप् । आगममासनस्याग्नित्वात् न लोपः । फल-
विशेष, दाख, च'गूर । इसका संस्कृत पर्याय—खट्टीका,
गोखनी, खट्टो, मधुरसा, चारफला, कण्ठा, मिथाला,
तापसप्रिया, शुक्लफला, रसाला और अमृतफला है ।
वैद्यकके मतसे इसका गुण—पित्त मधुर, शूल, शीत,
पित्तपीडा, दाख, और सूखदोषनाशक है । राजनिघंटुके
मतानुसार यह रुचि, बलकार, सन्तर्पण और श्लेष्म
है ।

इसका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है—
द्राघा, खादुफला, खट्टोका, चारफला और गोखनी ये
सब द्राघाके पर्याय हैं । एकी दाख अर्थात् च'गूरका
फल सारक, मधुर, विपाक, कषाय, मधुररस, स्वरप्रदायक,
अमृतमूलनिःसारक, वायुजनक, शुक्लवर्णक, कफकारक,
शरीरको पुष्टि और क्विजजनक तथा विपासा, ज्वर, खास,
वायु, वातरक्त, कामला, मूत्रकण्डू, रक्तपित्त, मोह, दाख,
शोष और मदातयरोगनाशक है । कच्ची दाख एकीसे कुछ
कम शुण्युक्त, अम्लरस और रक्तपित्तकारक होती है ।

गोखनी द्राघा-अर्थात् सुनका शुक्लवर्णक, गुरु, कफ
और पित्तनाशक है । खट्टी दाख जिसके दोष कोटि
होते अर्थात् जिसकी विषमिष कहते हैं, सुनकाके
समान शुण्युक्त होता है ।

बङ्गालनागपुर-रेलवे जिलेके मध्य हो कर गई है। जिलेमें कुछ जमींदारी राज्य पड़ता है जिसका क्षेत्रफल प्रायः १०४० वर्ग मील होगा। जिलेकी आय चार लाख रुपयेसे अधिक की है।

२. उत्तर जिलेकी एक तहसील। यह १८०६ ई० में रायपुर तथा बिलासपुर से कर संगठित हुई है। यह भूभाग २०° ५१' से २१° ३३' ०" और देशा० ८१° ६' से ८१° ३०' पू० में अवस्थित है। भूपरिमाण १८११ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः ३१३५०८ है। इस तहसीलमें दुग नामका एक शहर और ४८३ ग्राम लगते हैं। यहांकी जमीन बहुत उपजाऊ है। धानकी खेती भी अधिक की जाती है। तहसीलको कुल आय एक लाख रुपयेसे ज्यादाकी है।

३. उत्तर जिलेकी एक प्रधान शहर। यह भूभाग २१° ११' ०" और देशा० ८१° १०' पू० बम्बईसे ८५८ मील की दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४००२ है। महाराष्ट्रने १७४०-४१ ई० में जब कत्तोसगढ़ पर आक्रमण किया, तब इसी नगरमें उन लोगोंका भण्डा था। उन्होंने यहां एक सुदृढ़ दुर्ग निर्माण किया था जिसकी चारों ओर जंजीरोंद्वारा जो। यमो वह भग्नावस्थामें पड़ा है। यहां उत्कृष्ट कपासके कपड़े प्रसृत होते हैं।

दुधन (सं० पु०) दुर्बलः हन्यतेऽनेनेति हन-अप् घनादेश्य, ततो णत्व, दुधमयो घनः इति वा। १ मुहर। २ सूत्रधारके सूत्राकार लोहास्त्रविशेष, सूत्रधारका लोहेका इधियार जो सूत्रके आकारका होता है। ३ वैशम्पायनीका घटुवंदकी सतासुसार परशु-माहतिविशेष लोहास्त्रविशेष, परशु या फरसेके आकारका एक भस्त्र। यह पचास अंगुल लम्बा लोहेका बना होता था। इसका सिरा बड़ा और गला टेढ़ा होता था। इससे भुक्ताने, गिराने, फोड़ने और चोरनेका काम लेते थे। दुः संसारहृत्तो हन्यतेऽनेनेति। ४ ब्रह्मा। ५ कुंडार, कुल्हाड़ा। ६ भूमिचम्पक, भूचम्पा। ७ द्रुममय धन।

दुष्ण (सं० स्त्री०) दुष्पति दिनस्तीति दुष्ण-क। १ धनु, घनु। २ खड्ग। (पु०) ३ वैयिक, बिच्छू। ४ बृह, भृङ्गो कीड़ा। ५ भ्रमर, भौरा। ६ मधुमक्षिका, मधुमक्खी। ७ पिपुल।

दुष्ण (सं० वि०) दुर्वि दोषां नासिका यस्य। अच समाधानः ततो नासिकाया नसादेश्य पूर्वपदादिति णत्व। दोषनासिकायुक्त, जिसकी नाक लम्बी हो।

दुष्पह (सं० पु०) दुष्ण खड्गं हन्ति गच्छतीति हन-गतो ङ। खड्गविधान, तलवारका म्यान।

दुष्पा (सं० स्त्री०) दुष्ण घनुरायत्वेनास्त्वस्याः णच्, टाप्। ज्या, घनुपकी डोरी।

द्रुणि (सं० स्त्री०) द्रुणति कसादिकमिति द्रुण-गतो इत् (इणपात् क्ति। उग. ४। ११८) द्रोणी, पिठारा, मंजूषा।

द्रुणो (सं० स्त्री०) द्रुण इन् वाहुनकात् ङीप्। १ कर्ण-जलौका, कनखजूर। २ कच्छुगो, कटुहो। ३ काष्ठानु-वाहिनी, कठवत।

द्रुत (सं० वि०) द्रु-त्वा। १ जातद्रुत, गत्ता डूपा। इसका पर्याय—घवदोष, विनोत और विद्रुत है। २ शोध, तेज। ३ शोधगामी, तेजसे चलनेवाला। ४ पनायित, भागा हुआ। (पु०) ५ वैयिक, बिच्छू। ६ बृह, पेड़। ७ विहाल, बिक्रो। ८ तालकी एक मात्राका आधा। इसका चिह्न ० है। इसके देवता शिव और इसको उत्पत्ति जलसे मानी जाती है। इसका उच्चारण पचोकी बीलौकी समान होता है। इसका पर्याय—विन्दु, व्यञ्जन, सन्ध, अर्धमात्रक, आकाश, क्षूप और वलय है। ८ वह लय या मध्यमसे कुछ तेज हो, दून। १० हरिण। ११ मयक, खरहा।

द्रुतगति (सं० वि०) शोधगामी, तेज चलनेवाला।

द्रुतगामी (सं० वि०) शोधगामी।

द्रुतवारिन् (सं० वि०) द्रुतं चरति चरन्निनि। जो जमीन पर बहुत तेजसे चलता हो।

द्रुतविताला—शोई कोई इसे जोवालो कहते हैं।

कौशली देखो।

द्रुतपद (सं० स्त्री०) द्रुतं शोधगामि पदं। १ शोधगामि-पद। २ कन्दोभेद, एक कन्द जिसके प्रत्येक चरणमें बारह भवर होते हैं, जिसमें चौथा, ग्यारहवां और बारहवां भवरगुरु और येप सधु होते हैं। (त्रि०) ३ द्रुतगामि-पदयुक्त, जिसमें द्रुतगामिपद हो।

द्रुतमध्या (सं० स्त्री०) अर्धमयस्य उत्तमं द। इसके प्रथम और उत्तम तथा द्वितीय और चतुर्थ पद समान

पक्ष पर अन्यत्र द्वाका प्यान् जहारो मयु. पक्षाम.
यक्ष पोर पित्रकारक मानो गई है।

कामटिका प्यान् खरोटो जहारो समान गुप-
दायक है।

मिष मिष देगोमि मिष मिष प्रकारकी दाघ (Vitis
Vinifera) उत्पन्न होती है। दाघके जिनमें भेद है
उपश्रुति मिष यत्रना कठिन है। हिमालयके पश्चिमोप
भागोंमें यह पायने पाय होती है। भारतके गुरुप्रदेशमें
इसको पीतो होती है। दक्षिण यूरोपमें दाघ भव जगह
उपजती है; किन्तु इसको सत्ता देगान्तरमें रोपनेसे यथा-
रूप फल नहीं लगता है। शीतपधान देगमें फाई हुई
दाघ यदि यौनपधान देगमें रोपो जाय, तो पायानुरूप
फल नहीं लगती है।

इसकी पीतो मिष मिष देगोमि मिष मिष तरहमें
होती है। एगिया-माहरकी दाघकी सत्ता जमोन
पर सत्ताकी तरह फैलती है। स्पेन पोर कैसिलिया
देगमें सत्ता काट कर छोटी कर देनेसे बंध फैलती नहीं
पौ। सुतरां छोटी चाटिकी जल्दतर भी नहीं पड़ती।
इन्नेके पत्तार्थी इटालिया पोर कम्पेनिया प्रदेशमें
दाघकी सत्ता लक्षों पर पोर इन्दुमियूम रेखीकी मचाग
पर चढ़ा दी जाती थी जहाँ यह दत्त मरीचा बन जाती
थी। इन्नेका प्रदेशमें ही पक्षमें पक्ष श्रुंटी या किमी
पक्ष प्रकारका पक्षलग्न दे कर दाघकी सत्ताको उसके
ऊपर चढ़ा दी जाती थी। पक्ष भी उक्त उपायकी पक्ष
ममक्ष कर लोग इने काममें लाते हैं।

याम् मिमी हुई महीमें ही दाघ पक्षी उपजती है।
कछी जमीनमें यह पक्षी नहीं लगती। इस कारण दो
भाग महीमें एक भाग याम् बांधा चाटि मिलाया पड़ता
है पोर दो हाथ गद्दा करके उसमें मही, घोषा पोर
याम् चाटिके पक्षारसे मही नैयार करनी पड़ती है।

दाघके शीतमें पीने नहीं लगती पर उसमें ठंडककी
काट कर गाढ़ देते पोर एहीमें थंडुर निकलते हैं।
पार पाँच ठंडककी एक पोरकी महीमें ठंड देते पोर
दूसरी पोरमें मोहर या कौचइ इसप्रिये लगा देते हैं,
जि उसमें कछी हम न निकल जाय। हम ही दिनमें
ठंडकीमें थंडुपा निकलने लगता है। जिष जमीनमें

दाघकी सत्ता संगानो हो, उसे पक्षमें हमने पक्षी तरह
जीत हाने पोर उसमेंसे टने पोर क'कड़की बाहर पेक
दे। जमीन तैयार हो जाने पर अन्त हाथकी दूरी पर
एक एक गद्दा गोदना पड़ता है। पोछे उसमें ठंडक
देकर पानी देना पड़ता है। जब ठंडकमें थंडुपा निक-
लने देखे, तब उसके चारों पोर चार श्रुंटी गाढ़ कर
रेखो उसमें बांध दे। पाँच महीनेमें यह सत्ता पाटमी-
के बराबर हो जाती है; तब उसे एक हल-कान्धमें
पटका देना चाहिये। एक तुर महीनेमें लज कौड़ कर
शुनी थवल्यामें १५१६ दिन तक रखना चाहिये। गाढ़
छाटनेके प्रथम समाहके बाद ही किरिये थंडुपा निक-
लने लगता है। इस समय जड़में पक्षी तरह खाद देकर
उसे महीमें ठक देना चाहिये। इस समय दिनमें दो बार
जल देना पड़ता है। जब दाघ फलने लगे, तब लड़में
पानी देनेका प्रयोजन नहीं पड़ता, पगर चेतमें पानी
कछी जमा भी हो गया हो, तो उसे बाहर कर देना ही
पक्ष है। उस समय किसान प्रतिदिन सुबहमें पेत जा
कर पोषिकी कुल कुल हिला देते हैं जिससे कि उसमें
पानी, कोड़ा, घुषा पत्ता चाटि गोचे गिर जाय। जो
गोचे गिर पड़ते हैं उन्हें वे जमा हानते हैं। दाघका
फल गद्दा हो जाने पर १५ दिन काट भी मानी देनेमें
काम चल सकता है। पक्षवर महीनेमें भी सत्ता
छाटी जाती है, जलथीमें उसके फल पकने लगते हैं।
गाढ़ छाटनेके पाँच समाह वा छेड़ माघके बाद फल
पाने योग्य हो जाता है। सुतरां जनयरी महीनेमें गाढ़
छाटनेमें पश्चिम महीनेमें उपश्रुति फल खा सकते हैं।
वर्ष भरमें दो बार सत्ता नियमसे फल मिल सकता
है, किन्तु उससे पोषिकी तेजो जाती रहती है।

गाढ़ टाकनेके पहले वर्षके पानेमें ही उसमें बहुत
सुष्ण फल निकलने दिखाई देता है। पोछे प्रसिध्द यह
पूरा होता जाता है। जमक, मीठकी विष्टा, मीठका
मैत्र पोर लवणाल माल इसका पक्षी खाद है। कछी
कछी जड़के कौड़ कर किल्ल पाँच-छः दिन तक उसे
शुनी थवल्यामें रखते हैं। माभारपत्ता इमी नियमसे
दाघ लगाई जाती है।

पाशाममें जलवायुके कारण दाघ पक्षी तरह नहीं

राजा अनन्यकर्मा ही उनको उपासना करने लगे। इस प्रकार एक वष बीत गया, किन्तु उपायजने द्रुपदका पौरोहित्य स्वीकार न किया और कहा, 'तुम यात्रके समीप जाओ, उन्हींसे तुम्हारा मनोरथ निवृत्त होगा।' राजा उपायजने कथनानुसार यात्रके आश्रममें गये और बहुत विनीत भावसे बोले, 'मैं जिमसे कर्म द्वारा संश्राममें दुर्जय और द्रोणविनाशक पुत्र प्राप्त कर सकूँ, आप वही उपाय कर दीजिये।' 'याज्ञ तथाम्बु' कह कर यज्ञका आयोजन करने लगे और इस कार्यमें उन्होंने उपायजने भी रुहायता मांगी। उपायज भी उन्हें सहायता देनेमें राजी हुए। पोछे उन दोनों स्नातकोंने मिल कर श्रोतःग्नि माध्य यज्ञारम्भ किया। यज्ञके समाप्त होने पर याज्ञने रामीको कहला भोज, 'हे राजा! तुम इविष्यं वषके लिये शीघ्र मेरे समीप आओ।' यह सुन कर रानीने वाहा, 'मैंने अङ्गरामादि धारण किया है, ततः मैं अभी अश्वत्थि ज्ञं, कुक्षि काल विलम्ब जाइये, शुचि हो कर इविर्माग प्रवृत्त करती हूँ।' याज्ञ बोले, 'इदं वस्तु उपायज द्वारा मन्त्रपुत्र हो कर तुम्हसे पाक हो गई है, चाहे तुम आओ चाहे न आओ, अवश्य ही उससे तुम्हारी कामना निवृत्त होगी।' इतना कह कर याज्ञने वृताग्रनर्म संस्कार वस्त्रको आहुति प्रदान की। आहुति देनेके माघ ही उम अग्निसे स्वाहावर्ण, भौषणाहति किरौटभूषण उत्तम कवचयुक्त खड्ग और धनुर्बाणधारी देव महद्य एक कुमार उत्पन्न हुआ। जन्म लेनेके बाद ही यह कुमार सिंहनाद करते हुए प्रधान रथ पर आरोहित हुए और इधर उधर विचरण करने लगे। इसी समय पाकाश्रमाणी हुई, 'राजकुमारने द्रोणका वध करनेके लिये जन्म लिया है, यह पुत्र पाश्चात्तिके यमस्तर, भयनाशक और राजाका मोकावह होगा।' पोछे वंदीमेसे भीमाश्वशालिनी श्वानाह्नी एक कुमारी निकली। यह कुमारी अश्वामान्या रूपवती थी। इस समय फिर भी आकाशवाणी हुई, 'यह लक्ष्मी सब रमणियोंमें श्रेष्ठा और धनिक चतुरियोंकी स्यकारिणी होगी तथा इससे देवकार्यं सम्पन्न होगी।' पोछे ब्राह्मणेने द्रुपदसे कहा, 'राजन्! यह कुमार द्रुपद अर्थात् प्रगल्भ, अतिदृष्ट अर्थात् विपक्षियोंके उत्कर्षका महिष्य और द्युम्नादि अर्थात् कवच कुण्डलादिके साथ

उत्पन्न हुआ है, अतएव इसका नाम द्रुपदयन्त्र हुआ और कुमारी लक्ष्मण्यणी हुई है, इसीसे इसका नाम लक्ष्म्या हुआ।' राजा द्रुपद द्रोण-निहन्ता पुत्रको पा कर विशेष आनन्दित हुए। इनके मुख्ण्डो नामक एक और पुत्र थे। द्रुपद भारतयुद्धमें द्रोणके हाथसे मारे गये।

(भारत आदिश्लोक ०)

२ काष्ठका देयमेदः। सायण १ काष्ठमय पादुका, खड्गजः।

द्रुपदा (सं० स्त्री०) द्रुपदं तत्कृद्देश्यस्त्री कृपि अच्। वैदिक मन्त्रविशेष, एक वैदिक ऋचा जिसके आदिमें द्रुपद शब्द आता है। यदि प्रमादपूर्वक भुक्ताच्छिष्ट चाण्डाल और श्वपचादिको स्पर्श करे, तो पाठ हजार गायत्री वा सौ द्रुपदाजप करके पवित्र होना चाहिये। द्रुपदाम्बुज (सं० पुं०) द्रुपदस्य आम्बुजः। द्रुपदके पुत्र, मुखण्डा और द्रुपदयन्त्र। लिङ्गं टापः। द्रोपदी।

द्रुपदादित्य (सं० पुं०) द्रोपदीसे प्रतिष्ठित कामीश्व आदित्यलिङ्गविशेष। इसका विषय कामोत्पन्नमें इस प्रकार लिखा है—पाचों पाण्डव कौरवोंसे प्रतारित हो कर जब वनवासी हुए थे, उस समय पतिव्रता पाश्चात्तोर्न सूर्य की आराधना को यो। सूर्यने प्रसन्न हो कर द्रोपदीको करकी ओर टकनेके साथ अचयण्यालिका (वटलाई) दे कर कहा था, 'जब तक तुम्हारा भोजन श्वेद न होना, तब तक जितने व्यक्ति अश्वर्था हो कर आवेंगे, इस वर-तनके प्रभावसे कोई भी भूखा न लौटेगा, सभी ढमि भर खा लेंगे। तुम्हारे स्वामिके बाद वह वरतन खाली हो जायगा। इसके अतिरिक्त विश्वेश्वरके दक्षिण-भागमें तुम्हारे सामने अवस्थित हमारी जो मनुष्य आराधना करेगा उसको सुधाजनित पीडा जातो रहेगी।' सूर्यने पुनः द्रोपदीसे कहा, 'हे पतिव्रते पाश्चात्ति! भगवान् विश्वेश्वरने प्रसन्न हो कर हमें जो वर दिया है, उसे कहता हूँ सुनो, हे रत्न! जो मनुष्य पहले तुम्हारी पूजा करके पोछे मेरा दर्शन करेगा उसका दुःख तुम बहुत जल्द दूर कर देना।' मैं विश्वेश्वरके इस वरसे मनुष्योंका पाप मोचन करता हूँ। हे द्रोपदी! कामोंमें जो तुम्हारा दर्शन करेगा, उसे कभी भी व्याधिलजित सुधाजन्य वा द्रव्या सम्यक्त केश भुगतना न पड़ेगा। (कामोत्पन्न ४८, ब०)

पाण्डवों ने नारदके सामने प्रतिज्ञा की थी, 'हम पाँचों में से किसी एकके पाम द्रौपदी जब रहेगी, उस समय कोई भी उस कीटो में नहीं जा सकता। जो इस नियमका उल्लंघन करेगा। उसे ब्रह्मचारी हो कर बारह वर्ष वन में रहना पड़ेगा।' अर्जुन दैवकर्मसे एक बार इस नियमका भङ्ग करके बारह वर्ष तक वन में रहे थे। अर्जुन और युधिष्ठिर देखो।

किसी समय युधिष्ठिर दुर्योधनके साथ जुषा खेलनेको बाध्य हुए। दुर्योधनके मामा शकुनिके कपटव्यूतसे युधिष्ठिर अपना सब कुछ हार गये। यहाँ तक कि वे अपने भाइयोंको, अपनेकी तथा द्रौपदीकी भी हार गये। बाद दुर्योधनने प्रातिकासोको भरी सभामें द्रौपदीको नाने भेजा। उस समय द्रौपदीने प्रातिकासोसे कहा था, 'राजामें पूछ पावो, कि पहले उन्हीं अपनेको भयवा हमें बाजीमें रखा था।' प्रातिकासोको युधिष्ठिरसे जब इसका कोई उत्तर न मिला, तब दुर्योधनके कहनेसे वह पुनः द्रौपदीको पकड़ने आया। द्रौपदीने फिरसे यह कह कर उसे लौटा दिया कि, 'तुम सभामें जा कर माननीय व्यक्तियोंसे पूछो, कि अभी हमें क्या करना कर्तव्य है?'

इसपर फिर भी प्रातिकासोकी लौट आया देख दुर्योधन उस पर बहुत विगड़े और उसी समय उन्हीं दुःशासनको द्रौपदीको पकड़वाने भेजा। दुर्घत दुःशासनने द्रौपदीको एक भी बात न सुनी और वह उन्हें चोटी पकड़ घसीटता हुआ भरी सभामें आया। दुर्योधनके हुक्मसे दुःशासनने द्रौपदीको नंगा करना चाहा। किन्तु लक्ष्मणने लक्ष्मणकी लाज रख ली। इस समय द्रौपदीके करुण रोदनसे भीम बहुत उत्तेजित हो उठे और सभाके बीच उन्हीं प्रतिज्ञा की, 'हे दुर्योधन! यद्यपि तेनीको जो क्षांघ दिखलाई है, नियम जानो उस अंघाको चूरचूर कर डालूंगा। जिस दुःशासनने लक्ष्मणका ऐसा अपमान किया है, उसके शचाःश्वलको फाड़ कर यदि लेह न पीऊँ और उससे द्रौपदीके बात न रगाऊँ, तो मेरा नाम भीम नहीं।' यथायथमें क्रुचैत्रके मैदानमें भीमसेनने अपना प्रतिज्ञा पूरी की थी।

अपने पुत्रोंके इस दुर्घटवहारेसे द्रौपदी भी विचलित

हुए थे। उन्हींने द्रौपदीको उसी समय कोड़ देने कहा। इस समय द्रौपदीने भी द्रौपदीसे पतिका राज्य लौटा लिया तथा दासत्व मोचन कराया।

द्वाराद्र और युधिष्ठिर देखो।

पेछि फिरसे युधिष्ठिर शकुनिके कूटव्यूतमें परास्त हो कर वनवासो हुए। इस समय द्रौपदी भी पञ्चपाण्डवोंके साथ वन गई थीं जहाँ उन्हें अनेक कष्ट भिन्नने पड़े थे। जन जानते समय द्रौपदीने स्वर्णसे एक घाली पाई थी। यालोमें यह गुण था, कि जब तक उनका भोजन शेष नहीं होता था, तब तक वह भरो रहती थी। सुतरा उनके भोजनके पक्षसे कितने ही मनुष्य कों न पा जाते कोई भूखा लोटने नहीं पाता था। दुर्योधनको यह बात मालूम थी। एक दिन उन्हींने महर्षि दुर्योधाको विशेषरूपसे तुष्ट कर द्रौपदीके भोजन कर चुकनेके बाद वनमें जा कर उनके यहाँ शान्तिस्थानों तार करनेका असुरोध किया। दुर्वासा भी सगिय पाण्डवोंके पाम पक्षसे और उन्हें भोजन करानेकी कहा। उस समय लक्ष्मण खा चुको थी। शतः भोजनका प्रबन्ध नहीं होने पर वे सबके सब दुर्वासाके शापसे भयम हो जायगे, इस डरसे वे बहुत विनम्र हो पड़े। बाद लक्ष्मणकी शान्तनादसे लक्ष्मणने आ कर, उस पाकस्थलीमें एक जगह एक कण सटा हुआ था, उसे जो ग्रहण कर लिया। वहीसे सगिय दुर्वासाकी चुषा निवृत्त हो गई।

दुर्वासा देखो।

दुष्ट जयद्रथने एक बार द्रौपदीकी हरण करनेकी चेष्टा की, किन्तु उनको भागा पर पानी फिर गया।

दुर्वासा देखो।

अज्ञातवासके समय द्रौपदी विराट-राजमहिषोको सँरिन्धो हुई थीं। उस समय कीचकने उन पर नजर गड़ाई थी। धन्तमें इन्हींको प्ररोचनासे भीमने कोचकका वध किया।

महाभारतकी लड़ाई होनेके बाद कुछ काल तक इन्हीं पत्नियोंके साथ सुख भोग किया। महाप्रस्थानके समय ये भी पञ्चपाण्डवोंके साथ हो लीं। और सब पत्नियोंसे ये अर्जुनकी व्यादा पसन्द करती थीं। इनसे दोषसे हिमालयको छपर सबसे पहले इन्हींके प्राप छूटे।

द्रुहण (सं० पु०) द्रं सभारगतिं हन्ति हन-घञ् ।
 (पूर्वपदात् संशयामगः । पा ८।४।२) इति ण्वल् । ब्रह्मा ।
 द्रुहिण (सं० पु०) द्रुह्यति द्रुष्टव्य इति द्रुह-दन्तन्,
 गुणाभावश्च । (बहुलमन्यत्रापि । सण् २।४८) ब्रह्मा ।
 द्रुही (सं० स्त्री०) द्रुह्यति पित्रे विवाहकालोन्मथना-
 ग्रहणादिना, द्रुह-क, ततो होय । दुहिता, कन्या,
 बेटौ ।

द्रुष्टु (सं० पु०) ययाति-पदो शर्मिष्ठाका बड़ा लड़का ।
 ययातिने द्रुष्टुको हजार वर्ष तक अपना बुढ़ापा
 सनेको कहा था, किन्तु इन्होंने यह कहते हुए भली-
 कार किया था, कि जरायुस्त याज्ञि जोषं भवस्थामें
 हाथी, घोड़े, रथ, और स्त्री आदिका भोग नहीं कर
 सकता है और उसका वाक्य भी अष्टफुट ही जाता है ।
 भतः बुढ़ापे को नहीं ले सकता । यह सुनकर ययातिने
 गाव दिशा था, “तुम मेरे हृदयमें जन्म ले कर भी
 भ्रपनी भवस्था मुझे प्रदान नहीं करते, इस कारण
 तुम्हारी प्रियतर अभिलाषा कहीं सिद्ध न होगी । जहां
 घोड़े, रथ, हाथी, राज्यके योग्य सवारो, गाव, गदहे,
 बकरे, पालकी आदि द्वारा ममनाममन न हो सके, जहां
 नवदा बड़ा तथा कूद फाड़ कर चलना पड़े और जहां
 राजा शब्दका व्यवहार नहीं है, वहाँ पर तुम्हें पारवार
 सहित रहना पड़ेगा ।” द्रुष्टुके वंशमें कोई राजा
 नहीं हुए । इनके वंशमें भाजगणमें जन्म लिया था ।

त्रिपुरा देखो ।

द्रु (सं० पु०) द्रु-क्षिप् दाश्च । खण, सोना ।
 द्रुघण (सं० पु०) द्रुघण प्रयोदरादित्वात् साधु । द्रुघण
 सुतर ।

द्रुण (सं० पु०) द्रुण प्रयोदरादित्वात् साधु । द्रुणिक,
 विच्छू ।

द्रेका (सं० स्त्री०) महानिम्ब, बकायन ।

द्रेक (सं० पु०) द्रेकाण प्रयोदरादित्वात् साधु । द्रेकाण
 लम्न रात्रिना एतौयां ।

द्रेकाण (सं० पु०) लम्नके तृतीय भागका एक भाग ।

द्रुघण देखो ।

द्रेश (सं० त्रि०) द्रेश-कर्मणि खण् प्रयोदरादित्वात्
 साधु । द्रेश ।

द्रेकाण (सं० पु०) द्रेकाण प्रयोदरादित्वात् साधु ।
 द्रुघण देखो ।

द्रोम्य (सं० त्रि०) द्रुह-तव्य । व्यथित, हिंसाकारक ।
 दोगष्ट (सं० त्रि०) द्रुह-लृच । धोषो, डाह करनेवाला ।
 द्राघ (सं० त्रि०) द्रुह-कर्मणि-वज्-वाट् विदे कुलं ।
 १ द्रोह विषय । २ द्रोहसूचक वाक्यादि ।

द्रोघमित (सं० पु०) चतितकर वस्तु, लुकमान पट्ट-चानिका
 दोस्त ।

द्रोघवचस (सं० स्त्री०) अनिटकारी वचन ।

द्रोघ (सं० पु०-स्त्री०) द्रुघ्येति द्रु-गता नित् । (ह ह
 कृषि द्रुपय निवृत्तिभ्यो नित् । उण् ३।१०) १ आद्रुक
 परिमाण । एक प्राचीन माप जो चार आद्रुक या १६
 सेर, किमो किसीके मतसे ३२ सेरकी मानो जातो थी ।
 इसका संस्कृत पर्याय—घट्ट, कलस, लम्पान, लवण
 और धर्मण है । २ अरणीवाष्ट, अरणीको लकड़ी ।
 ३ कादनिमित्त कलस, लकड़ोका एक कलस या
 बरतन जिसमें वैदिक कालमें सोम रखा जाता था ।
 ४ जल आदि रखनेका लकड़ोका बरतन, कठवत ।
 ५ द्रुमय रथ, लकड़ोका रथ । ६ दण्डकाक, डोम
 कोषा, काना कोषा । ७ द्रुहिक, विच्छू । ८ वतुःशत
 धनु परिमित जलाशय, वह जलाशय या तालाब जो बार
 सौ धनुष लम्बा चौड़ा हो । ९ सिधनायक भेद । जिस
 वर्ष वर्षा न होना या कम होता है, उस वर्ष बहुत अच्छी
 वर्षा होती है और उपज भी खूब लगती है । १० द्रुम,
 हल । ११ वर्षपर्वतभेद, एक वर्ष पर्वतका नाम ।
 १२ चोरोदसमुद्रस्थित पर्वतविशेष, द्रोणाचल नामका
 पहाड़ जो रामायणके अनुसार चोरोद समुद्रके किनारे
 है और जिस पर विश्वकर्माणे नामका सज्जनोना जड़ो
 पाई जाता है । १३ मन्दपानके पुत्र । इनके पुत्रोंके
 नाम पिङ्गाच, चवरोघ, सुसुप्त और सुपुत्र थे जो वसु
 नामको अश्वराके गर्भसे उत्पन्न हुए थे । (मार्कण्डेयपु०)
 १४ पुष्पविशेष, एक फूलका नाम । दुर्गा पूजाके समय
 द्रोणपुष्पसे दुर्गाकी अर्चना करनेसे विशेष फल होता है ।
 यह फूल शरत् कालमें पाया जाता है । १५ वसुपुत्र
 विशेष, वसुके एक पुत्रका नाम । १६ कदली, केला ।
 १७ नीलका पोधा । १८ महाभारतमें सुविख्यात

भाव समास ही दो पदमें होता है। इन्द्र और बहुव्रीहि भी बहुपदमें जाता है, तत्पुरुष प्रायः सभी जगह दो पदमें आया करता है। कहीं कहीं बहुपदमें भी पाते देखा गया है। इस इन्द्र लक्षणमें उभय शब्दकी जगह अनेक शब्दोंका समावेश आयाशक है, अर्थात् उभय और बहुपदमें इन्द्रसमास होगा। इसके दो भेद हैं, इतरेतर और समाहार। परस्पर योग समझे जानिये इन्द्रसमास होता है। उदाहरण - हरिहर, यहां पर हरि और हर पदार्थमें परस्पर योग समझा जाता है। इसीसे यहां इन्द्र-समास हुआ। 'धवखदिरपलास' यहां पर धव, खदिर और पलास इन तीन पदार्थोंका परस्पर योग समझा जाता है। इतरेतर इन्द्रसमास होनेसे दो पदके साथ यदि समास हो, तो द्विवचन और यदि बहुपदके साथ समास हो, तो बहुवचन होता है। जैसे—'हरिहरो' 'धवखदिरपलासः' इत्यादि। दो या अनेक पदार्थोंका समाहार होनेसे इन्द्रसमास होता है। समाहार इन्द्र-समासमें क्लौषलिङ्ग और एकवचन होता है। किन्तु इतरेतरइन्द्रमें परपदका लिङ्ग होता है। इन्द्रसमासमें प्रायश्च, तुर्याङ्ग और सेनाङ्गवाचक पदका समाहार होगा, यथा—'पाण्ड्य पादय पाण्ड्य' यहां पर इतरेतर इन्द्र-समास होनेसे 'पाण्ड्य' ऐसा हुआ। लिङ्गका भेद रहनेसे नदीवाचक शब्दका समाहारइन्द्र होगा। पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग वा क्लौषलिङ्ग परस्पर विभिन्न लिङ्ग होने पर भी होगा। यथा—'गङ्गा च गोण्य गङ्गा-शील' यहां पर पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग गोण्य और गङ्गा शब्दका समास हुआ, इस कारण विशेषसूत्रके अनुसार समाहारइन्द्र हुआ। शिन्तु 'गङ्गा च यमुना च गङ्गायमुने' ऐसा होगा, क्योंकि गङ्गा और यमुना दोनों स्त्रीलिङ्ग शब्द हैं। यहां पर लिङ्गभेद न होनेके कारण - इतरेतर-इन्द्र हुआ, समाहार नहीं।

लिङ्गभेद रहने पर देशवाचक शब्दका समाहार होता है। यथा—'कुरुवय कुरुचेत्र' यहां पर पुंलिङ्ग और क्लौषलिङ्गका भेद होनेसे समाहार हो कर 'कुरुकुरुचेत्र' ऐसा हुआ।

बहुवचनमें पशुवाचक, शकुनिवाचक और सुद्वन्द्व-वाचक पदके विकल्पमें समाहार होता है। यथा—'गावश्च

महिषाश्च' यहां पर पशुवाचक शब्द भी बहुवचन हुआ है, इसीमें 'गोमहिष' ऐसा समाहारसमास हुआ। शिन्तु यह यदि एकवचन होता, अर्थात् 'गोय महिष' ऐसा वाक्य होता, तो समाहारइन्द्र न हो कर 'गोमहिषी' ऐसा इतरेतरइन्द्र होता। बहुवचनमें पशुवाचक, लघु-वाचक और तदुवाचक पदका विकल्पमें समाहार होता है।

जो सब जन्तु परस्पर नित्यविरोधी हैं उनके बहु-वचनमें तद्वाचक पदका नित्य समाहार होता है। गवाक्ष आदिका नित्य समाहार होता है। पूर्वापर आदिका विकल्पमें समाहार हुआ करता है।

परस्पर विरुद्ध पदार्थोंका विकल्पमें समाहार होता है। शूद्रवाचो पदका नित्यसमाहार हुआ करता है। द्विवचन आदिका समाहार नहीं होता।

समास करनेसे समासके बाद जो प्रत्यय लगाये जाते हैं, उन्हें समासान्त कहते हैं। इन्द्रसमासमें जिसका उत्तर समासान्त होता है उसका विषय कहते हैं। समाहार इन्द्रमें चवर्गान्त, दकारान्त, यकारान्त और झान्त शब्दोंके उत्तर च होता है, यथा 'वाक् च त्वक् च' यहां पर त्वक्, इव शब्दोंके शेषमें एक अकार हुआ, इसीमें 'वाक् त्वक्' ऐसा शब्द बना। विद्या सम्बन्ध और गोत्र सम्बन्ध रहनेसे तथा ऋकारान्त शब्द परवर्त्ती होनेसे ऋकारान्त शब्दके उत्तर डा होता है। डकारका शेष होता है, आकार रह जाता है, यथा—'होता च पोता च' यहां पर समास होनेसे होतपोत्त ऐसा होगा, किन्तु इस सूत्रके समानुसार होतके ऋकारके स्थानमें डा हो कर होता हुआ, पीछे 'होतापोत्त' ऐसा हो कर द्विवचनमें 'होतापोतारो' ऐसा बना।

इन्द्रसमासमें पुंव शब्द यदि पीछे रहे, तो ऋयुक्त शब्दके उत्तर डा होता है। यथा—'पिता च पुत्रश्च' यहां पर पित्रपुत्र न हो कर पित्रके ऋकारके स्थानमें डा हुआ, अतएव 'पितापुत्री' ऐसा पद बना। देवतावाचोपदका इन्द्र होनेसे पूर्वपदके उत्तर डा होता है, यथा 'देवा-वरुण' 'मित्रावरुण' इत्यादि। ब्रह्मप्रजापतिके उत्तर डा नहीं होता। यथा—'ब्रह्मा च प्रजापतिश्च' यहां पर 'ब्रह्मप्रजापति' ऐसा न हो कर 'ब्रह्मप्रजापति' होगा।

ह्याग्नि (सं० पु०) चित्रकवृक्ष, लाल चीता ।

ह्यातिग (सं० त्रि०) ह्यं अतिगच्छति अतिक्रामतीति ह्य-प्रति गम-ड । रजस्तमोगुणगुण्य, सत्त्वगुणगुण्य, जिनके सत्त्वगुणने शेष दो गुणों अर्थात् रजः और तमो-गुणको दवा लिया हो । जिसमें सत्त्वगुण प्रधान हो, और शेष दो गुण दब कर अधोन हो गये हों । समस्त गुण एक दूसरेको दवानेकी चेष्टा करते हैं । सत्त्वादि गुण अन्य गुणोंको दवा कर अपना धर्म प्रकाश करता है, तब उसी गुणका प्राधान्य समझा जाता है और अन्यान्य गुण उसने अधोन हो जाते हैं । उसी तरह जो विशुद्ध सत्त्वप्रधान है, उन्हीं ह्यातिग कहते हैं अर्थात् रजः और तमोगुण सत्त्वके अधोन रह कर अपना विक्रमादि प्रकाश नहीं कर सकते हैं और और और उनके समस्त कार्य सत्त्वगुणके अधोन हो जाते हैं । इस तरह अग्न्या प्राप्त कर सकने पर अचिरात् चित्तशुद्धि होती है, चित्तशुद्धि होने पर धीरे धीरे अज्ञानरूप अन्धकार ज्ञान-रूपी प्रकाशसे दूर हो जाता है । तब सुख, दुःख और मोहको भावबुद्ध करके रख नहीं सकते हैं । अचिरात् बलुका स्वरूप ज्ञान होता है । विवेकज्ञानके साथ हो मुक्ति आपसे आप प्राप्त हो जाती है ।

ह्याविन् (सं० त्रि०) ह्यमस्त्यस्य वेदे 'बहुल' छन्दसि' मत्वर्थे विनि, पूर्वपददर्शक । द्वित्युक्त, जिसमें दोको संख्या हो ।

ह्यु (सं० पु०) द्वाभ्यां प्रकाराभ्यां युक्ता हि-यु-हु, एयो-दरादित्वात् साधुः । प्रत्यक्षमें द्वित्वादे और परोक्षमें अप्रियवादी शत्रु ।

हर (सं० त्रि०) हृ-प्राप्तौ भव । १ आवरणहारक, टकनेवाला । २ विघ्न हारनेवाला ।

हारः (सं० पु०) हारि तिष्ठतीति स्था-क । १ हारपात्र, छोटीदार । २ मन्दिकेश्वर ।

हारिस्थित (सं० वि०) हारि स्थितः । हारपाल, जो दर-वाजिकी रचा करे ।

हारिस्थितदर्शक (सं० त्रि०) हारपाल ।

हारिस्थितदर्शिन (सं० त्रि०) हारिस्थितः सन् दृश-णिनि । हारपाल ।

हाचत्वारिंश (सं० त्रि०) हाचत्वारिंशतः पूरणः डट ।

जिसमें हाचत्वारिंशत् संख्या पूर्ण हो, बयालिसवां । हाचत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) हाधिका चत्वारिंशत् दिग्दम्बस्य वाहुनकात् आत्व । १ हाधिका चत्वारिंशत् संख्या, बयालीसकी संख्या, ४२ । (त्रि०) २ जो संख्यामें चालीस-से दो अधिक हो, बयालीस ।

हाज (सं० पु०) द्वाभ्यां जायते जन ड, एयोदरादि-त्वात् साधुः । छोका वह पुत्र जो उसने पतिसे उत्पन्न न हो, दूसरे मुखसे उत्पन्न हो. शारक, दागला । भागवतमें लिखा है, कि वृहस्पतिने कामातुर हो कर रंथयका स्त्री समतासे गर्भावस्थामें संभोग किया ; लेकिन वह वीर्य पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसी समय एक कुमारने जन्म लिया । स्वामी व्यभिचारिणी समझ कर मुक्ति परित्याग कर देगे, इस भयसे समता उस भक्तान्त्री छोड़ जानेके लिये उद्यत हुई । इसी बीच देवगणमें उस स्थान पर पहुँच कर समतासे कहा, 'हे ममते ! यह बालक एककं वायंसे और दूसरेके वेदसे उत्पन्न हुआ है अर्थात् हाज है । अन्याय रूपसे दो मनुष्यसे उत्पन्न हुआ है, इस कारण तुम स्वामीका भय न रहो, वरं इसे तुम अपने स्वामीका पुत्र समझो और इसका भरण पोषण करो ।' इस पर ममताने वृहस्पतिसे कहा, 'बाप भी इसका पोषण कीजिय, क्योंकि हम दोनोंसे अन्यायरूपसे यह बालक उत्पन्न हुआ है । मैं एकलो इसका भरण पोषण क्यों करूँ ?' इस तरह ममता और वृहस्पतिमें विवाद कड़ा और दोनों नवजात बालकको नहीं छोड़ चल गये । वहाँ बालक भरद्वाज नामसे प्रसिद्ध हुआ था । (भागवत ८।२० अ०) भरद्वाज देखो ।

हात्रिंश (सं० त्रि०) वत्तीसवां ।

हात्रिंशत् (सं० स्त्री०) हाधिका त्रिंशत्, ततो आत्व । (द्राष्टव्यः द्व्यध्यायाः । पा ६।१।४७) वह संख्या जो तीससे दो अधिक हो, वत्तीसको संख्या, ३२ ।

हात्रिंशदपराध (सं० पु०) हात्रिंशत् अपराधः कर्मधा० । ३२ प्रकारके अपराध । देवताके निकट जूना पहने जाना तथा वहाँ जा कर देवताको प्रणाम न करना आदि ३२ प्रकारके दोषका विषय तन्त्रसारमें लिखा हुआ है ।

देखो ।

हात्रिंशत्तचण (सं० पु०) हात्रिंशत् तचणानि शुभलक्ष-

इन्द्रममामे मोम चौर मरुत मरुत यदि चोति रहे, तो चरित मरुत के उत्तर रत्न होना है, त (इत्) चरा जाता है, तबच इत्तर रत्न जाता है। दिव्य मरुत के साथ ममाम होनेसे पुनर्वर्ती दिव्य मरुत हो जगत् व्याप्त होता है। यथा—“लोच भूविष” यहाँ पर दिव्य मरुतको जगत् व्याप्त करने के कर ‘व्याप्तमो’ ऐसा हुआ। यदि एवो मरुत चोति रहे, तो दिव्यको जगत् व्याप्त चौर दिव्य होता है। यथा—“व्याप्तदिव्यो दिव्यपृथिव्यो” इन्द्रममामे ‘मातापितरो’ यह पदनिपात प्रयुक्त विध होना है। जाया चौर पति मरुतमें ममाम होनेसे ‘दम्पती’ सम्पत्ती चौर जायपत्नी’ ये तीन पद होंगे। इन्द्रममाम होनेसे ‘मातुंम’ पादि पद निपात प्रयुक्त विध होते हैं।

एकरीपदमरु—एक विभक्ति होनेसे समावाकार चरित पदोंका एक मात्र सच जाना है। द्वन्द्वका एकरीप होनेसे चरमिगिट पद बहुवचनाना होता है। यथा—‘तद्वच तद्वच तद्वच’ यहाँ पर एक तद्वच चरमिगिट रत्न गया चौर दो पद के साथ ममाम हुआ है, इस कारण ‘तद्वच’ द्विवचनाना हुआ। बहुवचन फलसु फलसु फलसु फलानि’ यहाँ पर तीन पदोंके साथ ममाम हो कर एक पद चरमिगिट रत्न गया चौर फल मरुतमें बहुवचन हो कर ‘फलानि’ ऐसा पद बना।

ममावाकार क्षोभाचर पदके साथ ममाम होनेसे पुरुषवाचक पद चरमिगिट रहता है। यथा—‘ब्राह्मणसु ब्राह्मणो च ब्राह्मणो’ यहाँ पर पुरुषवाचक ब्राह्मणपद चरमिगिट रत्न चौर सममें द्विवचन हो कर ‘ब्राह्मणो’ ऐसा हुआ। क्षोभिक निमित्तक पाप, ईष, पादि विगिय यातिरिक्त चरमाम्य पदोंमें ममावाकार होना आवश्यक है। किन्तु मरुतका स्वतन्त्रता येनपत्य रहनेसे नहीं होता, यथा—‘हंमच भारमो च’ ‘हंमचार्यो’ ऐसा पद हुआ।

कालि विगियके ममावाचक पदका एकरीप नहीं होता। यथा—‘इन्द्र इन्द्रानी च’ यहाँ पर एकरीप हुआ ‘इन्द्रेन्द्राण्यो’।

नारद के साथ मरुतका चौर दृष्टिके साथ पुनर्वा ममाम होनेसे भाव चौर पुन पद चरमिगिट रत्न जायगा। यथा—‘माता च इत्तरा च’ यहाँ पर भाव मरुत चरमिगिट रत्न

चौर दिव्यचरमें ‘भारतरो’ बना हुआ। ‘पुनप दृष्टिता च पुनो’ यहाँ पर पुन पद चरमिगिट रत्न। मरुत मरुत के साथ ममाम होनेसे पुन मरुत विकल्पसे चरमिगिट रहता है।

यथा—माता च विना च, इस याचमें ‘विनरो’ चौर ‘मातापितरो’ ये दो पद होंगे।

मरुत मरुत के साथ ममाम होनेसे मरुत मरुत विकल्पसे चरमिगिट रहता है। यथा—‘मरुत मरुत’ इन दो पदोंमें ‘मरुतरो’ चौर ‘मरुतारो’ ये दो पद होंगे। मरुतमक विषके साथ मरुतमका ममाम होनेसे मरुतमक मरुत चरमिगिट रहता है चौर तदुत्तरचरमें विकल्पसे एकवचन होता है। किन्तु मरुतमका मरुतमकके साथ ममाम होनेसे एकवचन नहीं होता। सुप्रबोधनगुरुचरमें इन्द्रममामको ‘व’ ऐसो ममा को गई है। हिन्दीमें यह ममाम ‘चौर’ पादि संयोजक पदोंका लोप बनाया जाता है, जैसे, ‘हाथ चौर पाँव’ में ‘हाथ-पाँव’ रत्न चौर दिन में ‘रात दिन’। इत्यादि।

इन्द्रमरुत (मं० पु०) इन्द्रोक्तो मरुतः। रागदोषादि रूप रोग।

इन्द्रवर (मं० पु०) इन्द्रोक्त चरतोति चर-वर, चरमवच, चरमवच। यह लक्ष्य जाना है। यहाँ चोको साथ निगे करता है, इसीसे इसका नाम इन्द्रवर पड़ा है।

इन्द्रचारिन् (मं० पु०) इन्द्रोक्त चरतोति चर-चारिन्। चर-वाच, चरमवच।

इन्द्रज (मं० ति०) इन्द्रोक्त जायते जग-उ। १ यायु, वित चौर कफ नामके त्रिदोषोंमें से दो दोषमें उत्पन्न रोग। २ सुप्त, दुःख, रागदोष पादि इन्द्रोक्त उत्पन्न।

इन्द्रगुह (मं० स्त्री०) इन्द्रोक्त गुहं। यह मरुत के दो पुरुषोंके बीचमें से, कुत्तो।

इय (मं० स्त्री०) इन्द्रोक्त इयं चरमवच तद्वच (मं० गवा मरुतके तद्वच। पा ५।२।२) १ इयमक, दो। इयका यथा—उम, दि, युमन, दितय, युग, इत, यम, इन्द्र, युमन, यमन चौर यामन है। विगिय इन्द्रोक्त चरमवच इयं चरमवच। (ति०) २ इत्यादि, दोह-राया हुआ।

इयम (मं० ति०) इन्द्रोक्त इयं चरमवच, यामनिका एक इयम।

कांकारका काठकी प्याला, डोकिया । ४ दोनियां, छोटा दोना । ५ नीलीवृत्त । ६ पर्वतमेद, एक पहाड़का नाम । ७ दो पर्वतोंकी सन्धि । ८ इन्द्रचिमिंटो, इन्द्रायण । ९ श्रीषीजवण, एक प्रकारका नमक । १० नदीविशेष, एक नदी । ११ हिस्सूपपरिमाण, एक परिमाण जो दो चूप् या १२८ सेरका होता था । इसका पर्याय—वाह और गोणो है । श्रेण-पत्नी डीप । १२ श्रेणाचार्यको स्त्री क्षो । १३ कदलो, केला । १४ हुत, शीघ्रता ।

श्रीषीज (सं० स्त्री०) श्रेणोलवण, एक प्रकारका नमक । श्रेणोदल (सं० पु०) श्रेण्या इव दलं यस्य । केतकीपुष्प, केतकीका फूल ।

श्रेणोमुख (सं० स्त्री०) श्रेणीव मुखं यस्य । श्रेणमुख । श्रेणोलवण (सं० स्त्री०) श्रेणोसम्भूतं लवणं । उपकर्णाट देशप्रसिद्ध लवणविशेष, एक प्रकारका नमक जो कर्णाटक देशके पासपास होता है । इसे विविधा लोन भो कहते हैं । इसका पर्याय—श्रेणिय, वाहंय, श्रेणीज, वारिज, वारिभय, श्रेणो, चित्रकूटलवण है । इसका गुण—उष्ण, तिक्त, क्षिप्त, शूलनाशक और अल्प-पित्तवर्द्धक है ।

श्रेणोदन (सं० पु०) शिंहचक्रके पुत्रका नाम जो शाक्य वृक्षके चाचा थे ।

श्रेण्य (सं० त्रि०) श्रेणः द्रुममयं यूपमर्हति यत् । द्रुममय यूपार्हः पक्षादि ।

श्रेण्यख (सं० त्रि०) श्रेणिं हुतं अश्रुते यस्य व्याप्नो वाहु० व । हुतव्यापक, बहुत जल्द फैल जानेवाला ।

श्रेण्यामय (सं० पु०) शरीरके आभ्यन्तरिक रोगमेद, शरीरके भीतरका एक रोग ।

श्रेणिज (सं० पु०) चाणक्य मुनि ।

श्रेण (सं० पु०) दुष्ट-भावे घञ् । १ जिघांसा, दूसरेका अहित चिन्तन, वैर, हँप । २ छद्मवध, छल या धोखेसे मारना । ३ हिंसामात्र । मनुने लिखा है कि प्रत्येक समयकामीको श्रेण परित्याग करना उचित है ।

श्रेणचिन्तन (सं० स्त्री०) श्रेणस्य चिन्तनं । १-तत् । परानिष्ठचिन्ता, प्रतिहिंसाका भाव ।

श्रेणघट (सं० पु०) श्रेणाय घटतोति अट-अच । १ वैहाय

प्रतिक, ऊपरसे देखनेमें साधु पर भोतर बुराई रखनेवाला । २ मृगलुब्धक, मृगलुब्धा । ३ वेदशाखामेद, वेदकी एक शाखा ।

श्रेणिम् (सं० पु०) श्रेणोऽस्त्यस्येति ङिति, वा दृष्टतोति णिनि । श्रेणक, वह जो बुराई चाहता हो, वैरो, शत्रु ।

श्रेण (सं० त्रि०) श्रेणं सम्भवति श्रवहरति पचति वा ण्य । १ श्रेणपरिमित धान्यादिके निज द्रव्यमें समावेशक । २ तदपहारक । ३ तदपाचक ।

श्रेणायण (सं० पु०) श्रेणस्य अण्यत् पुमान् फक् । अण्यत्यामा ।

श्रेणायणि (सं० पु०) अण्यत्यामा ।

श्रेणि (सं० पु०) श्रेणस्यापत्यं श्रेण-इज् । १ अण्यत्यामा ।

२ एक ऋषि जो पुराणानुसार सनतोसर्वे हापरमें होंगे ।

श्रेणिक (सं० त्रि०) श्रेणस्य श्रेणपरिमितवोजस्य वाप इति श्रेण (तस्य वापः । वा ५।१।४५) इति ठक् । श्रेणपरिमित वोजवपनयोग्य चैव, वह खेत जिसमें एका श्रेण या ३८ सेर वोज मोया जाय । श्रेणिम क्रोतः निष्पादितत्वात् ठक् । २ श्रेणक्रोत । श्रेणं श्रेणपरिमितद्रव्यं पचतोति पच-ठज् । (सम्मवरयवहरति पचतीति । वा ५।१।५२) ३ श्रेणपाचक ।

श्रेणद (सं० पु०) द्रुपदस्यापत्यं पुमान् द्रुपद शिवादिस्त्वात् ण्य । द्रुपदराजपुत्र, द्रुपद राजाका लड़का ।

श्रेणदी (सं० स्त्री०) द्रुपदस्यापत्यं स्त्री द्रुपद-अण्य-डीप । द्रुपदराजकन्या । पर्याय—वाचाक्षो, क्षणा, सैरिन्नी, नित्य-यौवना, वेदिजा और शास्त्रसेवी ।

इनका प्रकृत नाम क्षणा है । द्रुपदकी कन्या होनेके कारण इनका नाम श्रेणदी पड़ा । राजा द्रुपदने श्रेणसे मर्मपौष्टिन को कर श्रेणनिष्ठक्या पुत्रसामके लिये याज और उपयाज नामक दो ब्राह्मणोंको ला कर पुत्रेष्टि यज्ञ किया । द्रुपद और लोग वन्द देखो । उस यज्ञकी अग्निसे छटद्युम्न और क्षणाकी उत्पत्ति हुई ।

छट्युम्न देखो ।

महामारतमें लिखा है, कि क्षणा आजन्म-युवतो रही । उनका वर्षं श्यामल, पद्मपासकके सदृश सुन्दरनेत्र, नील और कुक्षित केय तथा सुमनोहर दोनों भौं थीं । उनके शरीरसे नीलोत्पल गन्ध निकलती थी । भूमिष्ठ होते समय

सुनारसै, संविण्ड, मगोत्र, सवर्ण या उत्तमवर्णसे उत्पा-
दित पुत्र चेतन है, यह दूसरा है। लड़कीका लड़का
तोसरा है। इसका जो पुत्र होगा, वही मेरा पुत्र होगा,
अर्थात् आदादि कार्य कारो होगा, यह कह कर पितासे
जो कन्या दी जाती है, वही पुत्रिका है। भ्रातृहोना
कन्याको भी पुत्रिका कह सकते हैं।

चौथा पोतर्भव पुत्र। पुनः संस्कृता अर्थात् जो पात्रा-
न्तरके साथ परिणीत, अथवा अर्थात् यमुपभुक्ता होने पर
भी वागदत्ता हो, उसे पुनर्भू कहते हैं और परोपभुक्ता
पुनःसंस्कृता अर्थात् जिसका एकसे साथ वागदान और
दूसरेके साथ विवाह ऐसा नहीं होने पर भी जो केवल
दूसरे पुत्रके संगसे दूषित हो गई हो वह भी पुनर्भू
कहलाती है। ऐसी स्त्रीसे जो पुत्र उत्पन्न होता है उसे
पोतर्भवपुत्र कहते हैं। पांचवां कानोनपुत्र अर्थात् वह
पुत्र जो किसी कन्याको कुमारो भवस्थानमें पैदा हुआ
हो। ऐसा पुत्र उस पुत्रपका कानोन पुत्र कहलाता है
जिसको वह कन्या व्याहो जाय। छठा शूद्रोत्पन्नपुत्र
अर्थात् पतिके घर रहते हुए भी पत्नीने जो पुत्र किमो
गुप्त आरसे पैदा किया हो उसे शूद्रोत्पन्नपुत्र कहते हैं।
जिस पत्नीसे वह पुत्र उत्पन्न होगा, वह पुत्र उसीका सम्-
भन्ता चाहिये। मातृवां सहोदपुत्र, जो स्त्री गर्भावस्था-
में व्याहो जाय, उसने उस गर्भाशय पुत्रको सहोदृ कहते
हैं। वह पुत्र पाणिप्राहकका होता है। आठवां दत्तक-
पुत्र, मातापिताने अपना पुत्र जिसे दे दिया हो, वह
पुत्र उसीका कहलाता है। दसवें देखो। नवां क्रीतपुत्र,
जिससे जो बालक खरीदा गया हो वह उसीका पुत्र
होता है। दशवां स्वयमुपागत, जिस बालकने अनाथय
हो कर पित्रसम्बोधनपूर्वक स्वयं किसी दूसरेको ग्रहण
लो हो, उसे स्वयं उपागत कहते हैं। जिसका आशय
लिया है, वह उसीका पुत्र होता है। ग्यारहवां अपविष्ट
पुत्र, मातापितासे परित्यक्त पुत्रको अपविष्ट कहते हैं।
जो इन पुत्रको ग्रहण करता, वही उसका पिता सम्भन्ता
जाता है। किसी दूसरी स्त्रीसे उत्पादितपुत्र बारहवां
है। इन बारहोंमें परोक्षपुत्रको अपेक्षा पूर्वपुत्रको
पुत्र ही प्रधान है। वे सब पुत्र पिताके धनाधिकारी होते
हैं। (विष्णुवं. १५ मं.)

वगिहसंहितामें भी बारह प्रकारके पुत्रोंका उल्लेख
है। यथा—व्याहो हुई अपनी स्त्रीके गर्भसे स्वयं जो पुत्र
उत्पन्न करे, वही पहला है। इस पुत्रके नहीं होनेसे
निष्कृष्ट अपनी पत्नीका गर्भजात चेतन पुत्र दूसरा है।
पुत्रिकापुत्र तीसरा है। अभिसन्धिपूर्वक किमो पात्रको
दो हुई भ्रातृहोना कन्या पिताका पुत्र सम्भन्ती जाती है।
उस कन्यासे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह मातामहका
पुत्रत्व प्राप्त करता है कहा भी है कि, 'मैं तुमको भ्रातृ-
शून्या पलंक्षता कन्या दान देता हूँ, इससे गर्भसे जो
पुत्र होगा वह मेरा पुत्रकार्य करेगा।' पोतर्भव पुत्र
चौथा है, जो स्त्री वागदानदिष्ट हुए स्वामीको परित्याग
कर दूसरेके साथ महावास करतो है, उसे पुनर्भू कहते
हैं, एवं जो स्त्री लोव, पतित वा लग्नभक्त स्वामीको परि-
त्याग कर अथवा अपने स्वामीके मरने पर दूसरे पुत्रसे
विवाह करतो है, उसे भी पुनर्भू कहते हैं। कानोनपुत्र
पांचवां है। कुमारो भवस्थानमें पिताके घर जो पुत्र उत्पन्न
हो, उसे कानोन कहते हैं। पण्डितोंका कहना है, कि
उसे मातामहका पुत्र सम्भन्ता चाहिये और वह पुत्र
मातामहका पिण्ड देता और धनाधिकारी होता है।
गुप्त आरसे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह छठा है। बारह
प्रकारके पुत्रोंमेंसे यह पुत्र उत्तराधिकारी होता और
पिताको विपद्से परित्राण करता है। शेष छः प्रकारके
पुत्र धनाधिकारी नहीं होते हैं। पहला सहोद पुत्र,
गर्भावस्थामें व्याहो हुई स्त्रीके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न
होता है, उसे सहोदृ कहते हैं। दूसरा दत्तकपुत्र, पिता
और मातासे प्रदत्त पुत्रका नाम दत्तक है। तीसरा ज्ञात
पुत्र, शनःसेफविवरणमें इस पुत्रका उल्लेख है। पूर्व
समयमें राजा हरिश्चन्द्रने अज्ञातको कुछ मन्त्रों तथा
धनादि दे कर उनका पुत्र खरीदा था। चौथा स्वयमुपागत
पुत्र, इसकी कथा शनःसेफविवरणमें इस प्रकार लिखी
है,—पूर्व समयमें यूपकाष्ठमें बंध होकर शनःसेफने
देवताओंका स्तव किया। जब देवताओंने उसे दन्त्यनसे
मुक्त कर दिया, तब ऋत्विक्करण करने लगे, कि यह
बालक हम लोगोंका पुत्र होगा। इस पर किसीने
ऋत्विक्से कहा, कि आप लोग इसे अपना पुत्र तो
बनाना चाहते हैं, पर यज्ञतोका एक पुत्र होना असम्भव

पाण्डवों ने नारदकी सामने प्रतिज्ञा की थी, 'हम पाँचों में से किसी एकके पास द्रौपदी जव रहेगी, उस समय कोई भी उस गोठरों में नहीं आ सकता। जो इस नियमका उल्लङ्घन करेगा। उसे ब्रह्मचारी हो कर बारह वर्ष वनमें रहना पड़ेगा।' अर्जुन दैवक्रमसे एक बार इस नियमका भङ्ग करके बारह वर्ष तक वनमें रहे थे। अर्जुन और युधिष्ठिर देखो।

किसी समय युधिष्ठिर दुर्योधनके साथ लुभा खेलनेको बाध्य हुए। दुर्योधनके मामा शकुनिके कपटद्यूतसे युधिष्ठिर अपना सब क्लृप्त हार गये। यहाँ तक कि वे अपने भाइयोंको, अपनेकी तथा द्रौपदीको भी हार गये। बाद दुर्योधनने प्रातिकासोको भरी सभामें द्रौपदीको जाने भेजा। उस समय द्रौपदीने प्रातिकासोसे कहा था, 'राजासे पूछ पावो, कि पहले उन्होंने अपनेको भयवा हमें बाजीमें रखा था।' प्रातिकासोकी युधिष्ठिरसे जब इसका कोई उत्तर न मिला, तब दुर्योधनके कहनेसे वह पुनः द्रौपदीको पकड़ने आया। द्रौपदीने फिरसे यह कह कर उसे लौटा दिया कि, 'तुम सभामें जा कर माननीय व्यक्तियोंसे पूछो, कि अभी हमें क्या करना कर्तव्य है ?'

इधर फिर भी प्रातिकासोको लौट आया देख दुर्योधन उस पर बहुत विगड़े और उसी समय उन्होंने दुःशासनको द्रौपदीको पकड़ जाने भेजा। दुर्धन दुःशासनने द्रौपदी की एक भी बात न सुनी और वह उन्हें 'चौंटी पकड़ घसीटता हुआ भरी सभामें आया। दुर्योधनके हुक्मसे दुःशासनने द्रौपदीको नंगा करना चाहा। किन्तु क्षत्रिय क्षत्र्याकी आज रख ली। इस समय द्रौपदीके कर्ण रोदनसे भीम बहुत उत्तेजित हो उठे और सभाके बीच उन्होंने प्रतिज्ञा की, 'हे दुर्योधन ! यात्रसेनीको जो लांघ दिखलाई है, नियम जानो उस ऊँचाको चूरचूर कर लाऊंगा। जिस दुःशासनने क्षत्र्याका ऐसा अपमान किया है, उसके घातस्थलको फाड़ कर यदि लेह न पोक' और उससे द्रौपदीके बाल न रंगाऊँ, तो मेरा नाम भीम नहीं।' यथार्थमें कुरुक्षेत्रके मैदानमें भोमसेनने अपना प्रतिज्ञा पूरी की थी।

अपने पुत्रोंके इस दुर्घटवहारे धृतराष्ट्र भी विचलित

हुए थे। उन्होंने द्रौपदी की उसी समय छोड़ देने कहा। इस समय द्रौपदीने भी धृतराष्ट्रसे पतिका राज्य लौटा लिया तथा दासत्व मोचन कराया।

धृतराष्ट्र और युधिष्ठिर देखो।

पौष्टि फिरसे युधिष्ठिर शकुनिके कूटद्यूतमें परास्त हो कर वनवासो हुए। इस समय द्रौपदी भी पञ्चपाण्डवोंके साथ वन गई थीं जहाँ उन्हें अपनेका कष्ट झेलने पड़े थे। वन जाते समय द्रौपदीने सुयसे एक थाली पाई थी। थालीमें यह गुण था, कि जब तक उनका भोजन शेष नहीं होता था, तब तक वह भरो रहती थी। सुतरां उनके भोजनके पहले कितने ही मनुष्य क्यों न था जाते कोई भूखा लौटने नहीं पाता था। दुर्योधनको यह बात मालूम थी। एक दिन उन्होंने महापि दुर्वासाको विमोचकसे तृप्त कर द्रौपदीके भोजन कर चुकनेके बाद वनमें जा कर उनके यहाँ प्रातिपक्ष को तार करनेका अनुरोध किया। दुर्वासा भी सविषय पाण्डवोंके पाम पहुँचे और उन्हें भोजन करानेको कहा। उस समय क्षत्र्या खा चुकी थीं। अतः भोजनका प्रबन्ध नहीं होने पर वे सबको सब दुर्वासाके प्रापसे भक्ष्य हो जायँगी, इस डरसे वे बहुत चिन्तित हो पड़े। बाद क्षत्र्याकी आर्त्तनादसे क्षत्र्यने भी कर, सम पाकस्थलीमें एक जगह एक कण सटा हुआ था, उसे ही ग्रहण कर लिया। इसीसे सविषय दुर्वासाकी लुधा निवृत्त हो गई।

दुर्वासा देखो।

दुष्ट जयद्रथने एक बार द्रौपदीको हरण करनेकी चेष्टा की, किन्तु उनको आगों पर पानी फिर गया।

दुर्वासा देखो।

अज्ञातवासके समय द्रौपदी विराट-राजमहिषोको सैरिन्धो हुई थीं। उस समय कीचकने वन पर नजर गड़ाई थी। अन्तमें इन्होंने प्ररोचनासे भोमने कीचकका वध किया।

महाभारतकी लड़ाई होनेके बाद कुछ काल तक इन्होंने पत्नियोंके साथ सुख भोग किया। महाप्रस्थानके समय वे भी पञ्चपाण्डवोंके साथ हो लीं। और सब पत्नियोंसे ये अर्जुनको च्याटा पसन्द करनी थी। इसी दोषसे हिमालयके ऊपर सबसे पहले इन्हेंक प्राण छूटे।

नुसारै संपिण्ड, संगोत्र, सन्धर्ष या उत्तमवर्णसे उत्पादित पुत्र चेतन है, यह दूसरा है। लड़कीका लड़का तोसरा है। इसका जो पुत्र होगा, वही मेरा पुत्र होगा, अर्थात् आदि कार्य कारो होगा, यह कह कर पितासे जो कन्या दी जाती है, वही पुत्रिका है। भ्रातृहोना कन्याको भी पुत्रिका कह सकते हैं।

चौथा पौनर्भव पुत्र। पुनः संस्कृता अर्थात् जो पात्रान्तरके साथ परिणीता, ससता अर्थात् अनुपशुक्ता होने पर भी वागदत्ता हो, उसे पुनर्भू कहते हैं और परोपशुक्ता पुनः संस्कृता अर्थात् जिसका एकके साथ वागदान और दूसरेके साथ विवाह ऐसा नहीं होने पर भी जो रैखल दूसरे पुरुषके संगसे दूतित हो गई हो वह भी पुनर्भू कहलाती है। ऐसी स्त्रीसे जो पुत्र उत्पन्न होता है उसे पौनर्भवपुत्र कहते हैं। पांचवां कानोनपुत्र अर्थात् वह पुत्र जो किनो कन्याको कुमारी अवस्थामें पैदा हुआ हो। ऐसा पुत्र उस पुरुषका कानोन पुत्र कहलाता है जिसको वह कन्या ब्याही जाय। छठा गृहोत्पन्नपुत्र अर्थात् पतिके घर रहते हुए भी पत्नीने जो पुत्र किनो गुप्त जगहसे पैदा किया हो उसे गृहोत्पन्नपुत्र कहते हैं। जिस पत्नीसे वह पुत्र उत्पन्न होगा, वह पुत्र उसीका सम्भन्ना चाहिये। मातृवां सद्योदपुत्र, जो स्त्री गर्भावस्थामें ब्याही जाय, उसके उस गर्भह्वय पुत्रको सद्योद कहते हैं। वह पुत्र पाणिग्रहणका होता है। घाठवां दत्तकपुत्र, मातापिताने अपना पुत्र जिसे दे दिया हो, वह पुत्र उसीका कहलाता है। दत्तक देखो। अर्थां क्रीतपुत्र, जिससे जो बालक खरीदा गया हो वह उसीका पुत्र होता है। दसवां स्वयमुपागत, जिस बालकने अनन्य हो कर पितृसम्बोधपूर्वक स्वयं किसी दूसरेको शरण ली हो, उसे स्वयं उपागत कहते हैं। जिसका आश्रय लिया है, वह उसीका पुत्र होता है। ग्यारहवां अपविष्ट पुत्र, मातापितासे परित्यक्त पुत्रको अपविष्ट कहते हैं। जो इन पुत्रको ग्रहण करता, वही उसका पिता सम्भन्ना जाता है। किसी दूसरे स्त्रीसे उत्पादितपुत्र बारहवां है। इन बारहमेंसे परोक्षिखितको अपेक्षा पूर्वलिखित पुत्र ही प्रधान हैं। ये सब पुत्र पिताके धनाधिकारो होते हैं। (विष्णुसं० १५ अ०)

वशिष्टसंहितामें भी बारह प्रकारके पुत्रोंका उल्लेख है। यथा—ब्याही हुई अपनी स्त्रीके गर्भसे स्वयं जो पुत्र उत्पन्न करे, वही पहला है। इस पुत्रके नहीं होनेसे निपुत्र अपनी पत्नीका गर्भजात चेतन पुत्र दूसरा है। पुत्रिकापुत्र तीसरा है। अभिसन्धिपूर्वक किसी पात्रको दो हुई भ्रातृहोना कन्या पिताका पुत्र सम्भन्नी जाती है। उस कन्यासे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह मातामहका पुत्रत्व प्राप्त करता है कहा भी है कि, 'मैं तुमको भ्रातृगन्या अलंकृता कन्या दान देता हूँ, इससे गर्भसे जो पुत्र होगा वह मेरा पुत्रकार्य करेगा।' पौनर्भव पुत्र चौथा है, जो स्त्री वागदानद्विष्टे हुए स्वामीको परित्याग कर दूसरेके साथ महावास करतो है, उसे पुनर्भू कहते हैं, एवं जो स्त्री क्रोध, पतित वा उन्मत्त स्त्रीको परित्याग कर अथवा अपने स्वामीके मरने पर दूसरे पुरुषसे विवाह करतो है, उसे भी पुनर्भू कहते हैं। कानोनपुत्र पांचवां है। कुमारी अवस्थामें पिताके घर जो पुत्र उत्पन्न हो, उसे कानोन कहते हैं। पण्डितोंका कहना है, कि उसे मातामहका पुत्र सम्भन्ना चाहिये और वह पुत्र मातामहका पिण्ड देता और धनाधिकारी होता है। गुप्त जगहसे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह छठा है। बारह प्रकारके पुत्रोंमेंसे यह पुत्र उत्तराधिकारी होता और पिताको विपद्से परिचाय करता है। श्रेष्ठ छः प्रकारके पुत्र धनाधिकारो नहीं होते हैं। पहला सद्योद पुत्र, गर्भावस्थामें ब्याही हुई स्त्रीके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होता है, उसे सद्योद कहते हैं। दूसरा दत्तकपुत्र, पिता और मातासे प्रदत्त पुत्रका नाम दत्तक है। तीसरा क्रीत पुत्र, शनैः फलविवरणमें इस पुत्रका उल्लेख है। पूर्व समयमें राजा हरिश्चन्द्रने अशोकको कुछ मन्त्रों तथा धनादि दे कर धनका पुत्र खरीदा था। चौथा स्वयमुपागत पुत्र, इसकी कथा शनैः फलविवरणमें इस प्रकार लिखी है,—पूर्व समयमें यूपकाष्ठमें वह ही कर शनैः फल देवताओंका स्तव किया। जब देवताधीने उसे वन्यनसे मुक्त कर दिया, तब श्रद्धालुगण कहने लगे, कि यह बालक हम लोगोंका पुत्र होगा। इस पर किमीने श्रद्धालुसे कहा, कि आप लोग इसे अपना पुत्र तो बनाना चाहते हैं, पर बहुतोंका एक पुत्र होना असम्भव

३। हाद यकी में यह स्थिर कर दिया कि यह स्वयं
निमग्न पुत्र होनेको इच्छा करता, यही हाद पुत्र
कहायोग्य। उस यज्ञमें विराजित होता है, स्वामिक
उपदेश पुत्र को दिया। यही हाद पवित्र पुत्र है, जो पुत्र
माता-पितामें परिग्रह हो कर दूसरे घरमें माता-पिता
जाता है, वही पवित्र कहते हैं। कठो मुद्रापुत्र है। ये
हाद प्रसारण पुत्र धर्माधिकारी मन्त्री को मन्त्रते। यहमें
हाद; यही वेदिके हाद यही बारह प्रकारके पुत्र हैं। यदि
पुत्र-मन्त्री को कोई धर्माधिकारी पुत्र न रहे, तो ये सब
धर्माधिकारी को मन्त्रते हैं।

हादमन्त्रण (मं० वि०) हादम मन्त्रण मन्त्रण चयुः।
हादम मन्त्रणपुत्र मुद्रातो मन्त्राभेद। इसका विषय
मुद्रामें इस प्रकार लिखा है—एक चयनेश्वर यो दो
पसर मन्त्रको मन्त्रते हैं। हाद यज्ञमें दो पसर खेद टाम
कर पुनः मन्त्रते हैं। पक्षी तार मन्त्रे जानें हाद एक
पसर कण्ठ, बार पसर कण्ठ यो पसर मन्त्रे दृष्ट दो
पसर क्षाम देते हैं। इस तरह यन्त्राद्वय बाहर पसरका
कल्पित हुआ है। पूर्वमात्रका यही परिमाण है।
मात्रके कम होनेसे यज्ञमें चतुर्भार मन्त्र (पसर) भी
कम होगी। इस तरह यदि भैश्वर्यसे कर तरण
पदायके महयोगसे निरुद्ध यज्ञिका कल्पना को जाय, तो
उनका परिमाण यज्ञमें चतुर्भार समझना चाहिये।
(मन्त्र विधिप्रवृत्त ३८ मं०)

हादमन्त्रण (मं० पु०) हादम मन्त्रण भावः। यद्यपि-
स्वायत्त तन्त्रादि हादमन्त्रण, कल्पित यद्यपि तन्त्रमें ज्ञान
मुद्राको बारह बार। ज्ञानकायके स्वयम्भुवने तनु
चादि रागियों के बारह नाम निर्दिष्ट हुए हैं, इन्हींमें
इसको हादमन्त्रण कहते हैं। इसका विषय दीपिकामें इस
प्रकार लिखा है—जन्मकायके स्वयम्भुवने यज्ञमें तनु
चर्मात् मन्त्रे योय होता कि स्वयम्भुवने कि निम्न,
मन्त्रा कि माटा तथा निर्दिष्ट कि इच्छा विचार करना
चाहिये। मन्त्रमें दूसरे घरमें धन योय हृदय; तीसरेमें
गुरु योय विष्णु। चौथेमें यन्त्र, पावन, पुत्र योय
चान्द्र, पाँचवेंमें बुद्धि, मन्त्रा योय पुत्र; छठेमें धन
योय मन्त्र; सातवेंमें क्षाम, योय योय पद; आठवेंमें पात्र,
मन्त्र, यन्त्र या पाविका; नवेंमें दृष्ट, माता, पिता,

तनु चर्मात् पुत्र, भाव योय मन्त्र; दशवेंमें भाव, पात्र
योय मन्त्र; बारहवेंमें प्राप्ति योय पात्र (यन्त्राधिकारके
मन्त्रे विद्या योय यज्ञको प्राप्ति) तथा बारहवें घरमें
मन्त्रा योय स्वयम्भुवने विचार किया जाता है।

यह जो बारह भावके विषय कहे गये यज्ञमें पूर्वाज्ञ
भावस्थित प्रहमय यदि यज्ञ यह ही योय यज्ञमें यज्ञमें
भावके अधिपति यज्ञमें देते जाते ही या मन्त्री भी देते
जाते ही यज्ञमा मन्त्रे हुए ही, तो उन भावको ज्ञान मन्त्र-
भक्तो चाहिये। जिसजिस भावमें जो सब विचार कहे
गये हैं, उनका कलाकल निर्वह करने समय उन भावा
यज्ञ रागि यज्ञ यज्ञके अधिपति पुनः मोक्ष इत्यादि यज्ञ-
का यज्ञ योय प्राप्तिज्ञा मन्त्रे रक्षाभा प्रभृति, यन्त्रा,
योय यज्ञ यज्ञ रागि यज्ञाभा योय योय जिस तरहके
कल देतेमें समय हैं इस मन्त्रको विवेचना करके उक्त
कलाका विचार करना पड़ता है।

यद्यपि यज्ञ अधिपति यज्ञमें देते जाते पर जिस
कलका अधिपति कहा गया है, उनका वास्तव्य भा
समझा जाता है। छठे स्थानमें यज्ञ योय मन्त्र, पाठमें
यज्ञ, यद्यपि या पात्र; बारहवेंमें यज्ञको इसका वि-
रोध समझना चाहिये। इसका तात्पर्य यह है, कि—
यदि कोई यज्ञ छठे स्थानमें रक्ष कर यज्ञमें देता
जाता ही या युक्त हो, तो सब योय मन्त्राको बुद्धि न ही
कर उनका ज्ञान होता है। फिर यह यह यदि यज्ञो
स्थानमें रक्ष कर पाविका देखा जाता हो यद्यपि युक्त ही
तो उनको बुद्धि समझना चाहिये। पाठमें या बारहवें
स्थानमें यदि ऐसे यद्यपि योय यज्ञके अधिपति यज्ञमें
देखा जाता हो, तो कलको ज्ञान योय यदि पाविकामें
देखा जाता हो या संयुक्त हो, तो कलका अधिपति
समझना चाहिये। पाठमें स्थानमें यज्ञ, यज्ञ यद्यपि
विपरीत कल कहा गया है। इसमें केवल यज्ञों दोको
विपरीत कल होगा न कि पाविका। बारहवें स्थानमें
यज्ञ माय यद्यपि विपरीत कल कहनेसे मन्त्र मन्त्राका
विपरीत कल होता है न कि मन्त्राका।

तनु मन्त्रा जो बारह प्रकारके भाव कहे गये हैं
यज्ञमें समस्त भावयज्ञ यज्ञको स्पष्ट मन्त्राके मन्त्रा
यज्ञके कलाकलका विचार मन्त्रा को मन्त्रा है। जिस

तरह लग्न स्थानकी तनुभाव और उसके पोछेकी राशिकी धनभाव कह कर उस स्थानमें जो ग्रह रहेगा उसे धनभाव समझ कर यदि उसका फलाफल कहा जाय, तो शास्त्रीय फलसे भेद पड़ जाता है। यदि ग्रह स्फुट करके गणना की जाय तो सब फलके साथ एकसा होता है। इसी कारण रविप्रभृति ग्रहका स्फुट, पोछे भाव और भावधर्मि इत्यादिकी गणना करना उचित है। पहले ग्रहोंकी स्फुट गणना करके पोछे फलाफलका विचार करना चाहिये।

तन्वादि बारह भावोंके जिस जिस भावमें जो ग्रह रहे, वे यदि सब प्रकारसे सुखित प्रयत्न चोभित हों, तो वह मनुष्य दुःख पाता है। पण्डितोंको तन्वादि बारह भावोंके सभी भावोंमें ग्रहोंकी स्थिति द्वारा उनके क्लृप्तादि भावकी विवेचना तथा उन सब ग्रहोंके बलाबलका विचार करके फलका निर्णय करना चाहिये। यदि तन्वादि बारह स्थानोंके किमो स्थानमें दो वा उससे अधिक ग्रह रहे और विभिन्न भावके हों, प्रयत्न एक क्लृप्त एवं गणित इत्यादि हो प्रयत्न तीन भावोंसे युक्त हों, तो मिश्रफल समझना चाहिये। यदि वे सब ग्रह दुर्बल हों, तो फलकी जाति और यदि सब हों, तो सम्पूर्ण फल होता है। जिसके कर्म अर्थात् दशके स्थानमें क्लृप्त, दणित, सुखित प्रयत्न चोभित कोई ग्रह रहे, तो वह मनुष्य दुःख पाता है। जिसके पाँचवें स्थानमें क्लृप्त कोई ग्रह रहे उसकी मध्यमता नष्ट हो जाती है केवल एक बची रहती है। सुमित प्रयत्न चोभित कोई ग्रह यदि उसके लग्नसे सातवें स्थानमें रहे, उसकी स्त्रीका नाम होता है।

ग्रहोंके शयनादि बारह भाव हैं, यथा-शयन, उपवेशन, निद्राणि-प्रकाशक, गमनेच्छा, गमन, सभासमिति, आगमन, भोजन, नृत्य, विद्या, कौतुक और निद्रा। रवि आदि नवग्रहके शयनादि बारह भावका यदि निरूपण करना हो, तो उस समय ग्रहगण किस नक्षत्रमें रहते हैं, समये पहले उसीका विचार करके उसी ग्रहाधिष्ठित नक्षत्र द्वारा ग्रहकी गुणा करना चाहिये और ग्रहगण स्वयं अधिष्ठित जिस नवाग्रमावमें रहते हैं उसी नौ ग्रहसे उक्त गुणनफलकी गुणा करना पड़ता है। पोछे

ग्रहोंके अपने अपने लग्ननक्षत्रको उस च'कमें जोड़ कर लग्नलग्नकी संख्या तथा उदयावधि जातदण्ड उसमें मिलाया पड़ता है। इस तरह जो ग्रह बनेगा उसे १२से भाग देनेमें उस ग्रहसंख्याका बारहवां भाव माना हो जायगा। अर्थात् यदि शेषाष्ट १ रहे, तो शयनभावकी विवेचना करनी चाहिये।

रविग्रहके शयनादि भावको गणना करते समय बारह ज्ञतावधिष्ट ग्रहमें ५ जोड़ना पड़ता है और चन्द्र-ग्रहके तीन, मङ्गलके दो, बुधके तीन, बृहस्पतिके पाँच, शुकके तीन, शनिके तीन, राहुके चार और केतुके पाँचको जोड़ कर भावका विचार करना चाहिये। युक्ताष्ट यदि बारहसे अधिक हो, तो पुनः उसे १२से भाग दे कर जो शेष बचे रहे उससे भावका बोध होता है। यदि ज्ञत शेषाष्ट एक हो, तो शयनभाव इसी तरह भागसे विनिर्णय कर लेना चाहिये।

रविकी १६ विभागा, चन्द्रकी ३ क्लृप्ता, मङ्गलकी २० पूर्वापार्द्धा, बुधकी २२ श्रवणा, बृहस्पतिकी ११ पूर्व-फल्युनो, शुककी ८ पुष्या, शनिकी २७ रेवती, राहुकी २ भरणी और केतुकी ८ अश्लेषा ये सब ग्रहोंके जन्मनक्षत्र नामसे प्रसिद्ध हैं।

इस शयनादि द्वादशभावमें बहुत मतभेद देखा जाता है। मतान्तरसे शयनादि द्वादशभाव। शयनादि द्वादश भावका यदि विचार करना हो, तो रविप्रभृति ग्रहगण जिस राशिमें हों, उस राशिके ग्रहसे सूर्यादि ग्रहसंख्यक ग्रहकी गुणा करना चाहिये। फिर उस पङ्क्तिको ८८से गुणा कर जिस ग्रहके भावकी गणना करनी हो, उसी ग्रहका जन्मनक्षत्र उसमें जोड़ देना चाहिये। पोछे लग्नकी संख्या और जातदण्ड परिमित ग्रह उसमें जोड़ कर १२से भाग दे कर जो शेष बचे उससे क्रमशः शयनादिभावों स्थिर करना चाहिये।

दूसरा भेद। जिस राशिमें ग्रह रहे, उसी राशि परिमित ग्रहसे ग्रहकी संख्याको गुणा कर फिर उसे ८से गुणा करते हैं और जिस ग्रहका भाव जानना हो, उस ग्रहका जन्मनक्षत्र एवं जातदण्ड और लग्नपरिमित ग्रह गुणनफलमें जोड़ कर १२से भाग देते हैं। शेष जो बचे उसीकी भावबोधक समझना चाहिये।

मोक्षार्थं ।—जिस शक्तिमें यह रही, उस यहको दूना करके १३वें चले गुणा करने से बाद जिस मन्त्रमें यह हो उस मन्त्रमें यहको पुनः गुणनक्रममें जोड़ कर १३वें भाग देने से, यह भागमें जो चले उसीमें द्वादशादि भावका योग भाग है, यह मान्य हो जाता है । एक द्वादशम टैनेमें जो मात्र मात्र मान्य हो जाता है ।

मान्यो, कि कोई ज्ञानज्ञ गुणनक्रममें ये द्वादश ही और उस मान्यको जगत्कालोत्तरागिमें रवि यह है । यह उस यहका द्वादशभाज यह तरहमें निष्पन्न करता है । भिन्नभिन्नभिन्न यह एक है और रविपक्षका परिमित यह भी एक है । यहाँ भिन्नभिन्न परिमित एक यहमें रविपक्षके एक यहको गुणा करनेमें गुणनक्रम एक होगा । फिर इस गुणनक्रमकी ८वें गुणा करने से गुणनक्रम ८ होगा । यह पञ्चादिके ज्योतिषाचार्य योग करनेकी गैरि दिखलाई जाती है । रविपक्ष नक्षत्र विभागा है और इसका परिमित यह १६ है । पूर्वार्ध गुणनक्रम ८को १३वें जोड़नेमें २१ होगा । यह उस मान्यका द्वादशादि ज्ञानदण्ड परिमित यह ६ है । इसे गुणनक्रम परिमित यहमें जोड़नेमें ८ गुणा । यह ८को १३वें जोड़नेमें १३ होगा । इस १३को १२वें भाग देनेमें शेष १ होगी और शेष ८ यथेगा । शेषको जोड़ कर मीमांसने भावका विचार करना चाहिये । यहाँ पर मीमांसने जो रहनेमें यहका भोजन भाग समझा जाता है । यत्तपन उस ज्ञानका रविपक्ष भोजन भागमें है, ऐसा स्थिर करना चाहिये । जिस तरह रविपक्षको मन्त्रादि भाव-गणनाका द्वादशम दिया गया, यदि रवि में पञ्चागिमें न रह कर उपादि किसी शक्तिमें रही, तो १३वें द्वादशिक क्रममें १२ तक यह होगा और रवि प्रकृति यहका राह तथा केतु से कर भी ८ तक यह होगा । इस तरह द्वादशमासको गणना करके यहको

गणना कर दो द्वादशमासका विषय स्थिर कर मीमांसना चाहिये । (०२३वें श्लोक)

द्वादशमास (मं० १००) द्वादशभिन्नं मन्त्रं । पुनः
गोत्र द्वादशभिन्नं मन्त्रं, पुनः पुनः मन्त्रांशुमार १२
पञ्चागि गोत्र । कट्टरम, दण्ड, मन्त्र, पञ्च, ताव,
तिलम, माधो, द्वादशाधो, मीमांसने रविपक्षका
मन्त्र १३वें विभागादिकी मन्त्र है । यह मन्त्र बहुत
निष्ठम समझो जाती है ।

द्वादशमास (मं० १००) द्वादशगुणितो मन्त्रः । पश्चिध्विजाके
पञ्चमासमनुष्योक्तं वारह प्रकाशके मन्त्र ।

रवा (चर्चो) रेत, रक्त, मन्त्र, मूल, विद्या, माधका मन्त्र,
कालका मन्त्र, मन्त्रका मन्त्र, मोक्ष, पौषका मन्त्र और
मन्त्र यही वारह शारारिक मन्त्र है । जो इसको राजाई
रचना चाहते, उनका कर्तव्य है, कि विद्यामूल त्याग
करके निष्ठम एक बार, गुह्यमें तीन बार, बायें बायें
दस बार और दोनों कायमें मात बार जलके भाग मन्त्रों
हैं । यह श्रोत्र नियम गृहस्थके लिये है । मन्त्रपाठो-
र लिये इसका दूना, यानमन्त्रावलीके लिये तिगुना
और यतिके लिये चोगुना दिया गया है । विद्यामूल
त्याग करनेके बाद यह को पाचमन करके मन्त्र द्वादश
क्रिष्टोको स्वर्ण करना चाहिये । ये द्वादशमन्त्रके समस्त तथा
यानिके बाद मन्त्र दाहनी तरह पाचमन करना चाहिये ।
ऐसा करनेमें एक बारहके मन्त्रकी शुद्धि होती है ।

(मन्त्र ६ मं०)

द्वादशमास (मं० १००) द्वादश गुणितो मासः पञ्चादि
१२ मास । वारह मन्त्रोंका मन्त्र होता है, किन्तु कभी
कभी १३ मन्त्रोंका भी मन्त्र हो जाता है, प्रायः वारह
ही मन्त्रोंका मन्त्र दूना करता है । टाई मन्त्रके बाद जग
मन्त्रमास होता है, तब १३ मन्त्रोंका मन्त्र होता है ।

